

भारतानु रोड
श्री अ. ए. ए. वे. म्भानकवासी
नेम्याओदर सधिति
६. अयेमिह ह्या रोड, श्रीन. कोण पासे
राजकोट, (गोरापूर)

Published by
Shri Akhila Bharat S. S.
Jain Shastroddhara Samiti,
Garedla Kura Road RAJKOT
(Saurashtra) W Ry India

+

ये नाम केविदिह न प्रथयन्त्यवज्ञां
जानन्ति ते किमपि तान्प्रति नैष यत्नः
उत्पत्स्यतेऽस्ति मम कोऽपि समानधर्मा
कालोक्षय निरवधिर्विपुला च पृथ्वी ॥१॥

(हरिगीतिपाठः)

करते अवज्ञा जो हमारी यत्न ना उनके लिये
जो जानते हैं तत्त्व कुछ फिर यत्न ना उनके लिये ।
जनमेगा मुझसा व्यक्ति कोई तत्त्व इससे पायगा
है काल निरवधि विपुल पृथ्वी ध्यानमें यह लायगा ॥१॥

+

प्रथम आवृत्ति : अ. १०००
बी. स. व. १८८८
बि. म. स. व. २०१८
इ. स. व. : १९६२

१ मु. ६
आवृत्ति प्रथम आवृत्ति १९६८
- प्रथम आवृत्ति
बी. स. व. : अ. म. स. व. १९६८

આવમુરખીશ્રી



વચ્ચે બેઠેલા

- ૧ મોટાભાઈ શ્રીમાન મૂલચંદ્ર જવાહીરલાલજી બરડિયા
- ૨ બાબુમા બેઠેલા ભાઈ મિશ્રીલાલજી બરડિયા
- ૩ ઉભેલા સોથી નાનાભાઈ પૂનમચંદ્ર બરડિયા

श्रीमान सेठश्री वरडियाजी सा. का संक्षिप्त परिचय

राजस्थान (भारतवर्ष) के एक सुन्दर शहर अलवर में ओमवाल समाज के वरडिया खानदान में लालाजी सा. जवाहरलालजी हजारीलालजी सा. का जन्म हुआ ये दोनों सगे भाई थे और धर्म के बड़े प्रेमी थे, बड़े भाई जवाहरलालजी के ३ तीन पुत्र हैं, तथा छोटे भाई हजारीलालजी के ३ तीन पुत्रियां हैं। ज्येष्ठ भाई के पुत्रों के नाम श्री मूलचंदजी, मिश्रीलालजी, पूनमचंदजी हैं, इन तीनों भाइयों का जन्म अलवर में ही हुआ आपके पिताजी तथा चाचाजी अलवर में तपस्वी श्री सुन्दरलालजी के मकान में रहते थे इनके साथ सामाजिक तथा आंतरिक बहुत घनिष्ठ सम्बन्ध था तथा दूर में रिस्तेदार भी लगते थे, करीब ३०-३५ वर्ष साथ में रहे, तपस्वीजी का प्रेम प्रशसनीय था। श्री मूलचंदजी, मिश्रीलालजी, पूनमचंदजी के दादाजी श्री प्रेमसुखजी पहिले जयपुर रियासत में वरखेडा नाम के गाँव में रहते थे तथा वहाँ लेनदेन का कामकाज करते थे, वहाँ पर आपकी जमीन जायदाद पक्की हवेली, पक्के कुएँ, दुकाने वगैरह थी, तथा आपकी १ हवेली जयपुर में भी थी, आप तीन भाई थे बड़े भाई छगुलालजी, गोपालजी प्रेमसुखजी, दोनों बड़े भाइयों के कोई संतान नहीं हुई आप फिर अलवर में आकर बस गये, तथा तब से तमाम कुटुम्ब वहीं पर ही रहने लगे। आप का स्वर्गवास हुवे काफी समय हुआ। श्री मूलचन्दजी वरडिया वचपन से ही बाहर रहने लगे तथा बीकानेर के प्रसिद्ध मोहता खानदान के साथ आपका करीब ३० वर्ष तक बड़ा घनिष्ठ संबंध रहा, आप इनके यहाँ बहुत से कामों में मेनेजर रहे आखिर में आप यहाँ उनके कपड़े के मील में जनरल मेनेजर थे, आप सन् १९४९ में उनसे अलग हो कर बड़े उत्साह से यहाँ अहमदाबाद में ही अपना खुद का कामकाज वरडिया ब्रदर्स के नाम से शुरू कर दिया और यहाँ पर ही आप तीनों भाई सहकुटुम्ब रहने लगे, आप तीनों भाई एक साथ ही रहते हैं तथा कामकाज भी आप तीनों भाइयोंका साथ में ही है आप का निवासस्थान अहमदाबाद में मशहूर कांकरिया तलाव के सुन्दर रमणीय बगीचे के नजदीक, 'रामबाग-(मणीनगर)' में है जो

पश्चिमा निधान के नाम से मन्दि है, आर की माताजी भी जैन
 वर्ण, चर्चने भी शम्भुजी दिगन्तों है वे धर्म की बहुत ही धन्य
 हैं आरके वर के समेषान हमेशा होता ही रहता है तथा आर तीनों भाइयों
 की तनान मन्तान धर्मप्रिय हैं आर तीनों भाइयों में बहुत घनीष्ठ प्रेम
 है लक्षण न यही प्रार्थना है कि हमेशा ऐमा विप्रम और स्नेह भावना
 कायम रहे ।

आत तौनों मर्यादे पत्रिारों के नाम—

श्रीमान मृणालजी मा का परिवार-आपके पश्चिमी अ मौ
श्री कचनपाई हैं आन के दो पुत्रीयें और चार पुत्र हैं. जिनके नाम
मरदान कुवराप्पेन और मरगप्पेन पुत्रीक नाम थी ज्ञानचंदजी श्री
रमचंदजी श्री रामचंदजी भी यशरत्नकुमारजी

श्रीमान मिश्रजी सा के परिवार के नाम-आपकी धर्मपत्नी
 श्रीमती, श्री अक्षरजपाइ आपके दो पुत्र हैं तीन पुत्रीयें हैं पुत्र श्री
 नवग्रन्मज्जी श्री रुमाद्वज्जी पुत्रीयें श्री सुजितादेवी श्री सराजदेवी
 श्री सवितादेवी

श्रीमान् पुनमचडजी सा के परिवार के नाम-आप के धर्मपत्नी
म मौ भी चांदकुमारदाई आपके पार्श्व दुश्रीया है और ६१ पुत्र है-
भी शशिकलादेवी भी इंदुतलादेवी भी स्नहलतादेवी भी शारदादेवी
जीलादेवी पुत्रों के नाम भी राजकुमार भी सतीशकुमार है यह सारा
हि परिवार बड़ा बिनपशीलबिनीत धर्म के मन्त्रालु और धर्मप्रेमी है.
बड़ीभाग तो यह है कि आप के परिवार में साप्रदायिक बंधन नहीं है दुष्टा
नुरागी मन भ्रमेद भाव से सभी मुनिवरों व सा धर्मीयों की सेवा
यनासे रहते हैं.



श्री तपस्वीराज श्री सुंदरलालजी म. सा. का संक्षिप्त जावनचरित्र

स्वनाम धन्य श्री ओसवाल कुलभूषण श्री भैरव दासजी छाजेड ने दत्तग्राम ग्राम (जयपुर) राजस्थान में है अपनी धर्मपत्नी श्री अन्गीवाई (चौक का वरवाडा जिलासवाई माधोपुर) के साथ अपने सांसारिक सम्बन्ध स्थापित करते हुए २ दो पुत्ररत्न व १ पुत्री को जन्म दिया। जिनमें से बड़े पुत्र का नाम श्री कल्याणचक्सजी तथा बछोटे पुत्रका नाम सुन्दरलालजी सा. और पुत्री का नाम सुन्दरवाई रखा। जो विवाहयोग्य होने पर देहली आदिकी थी। श्री सुन्दरलालजी का जन्म सं. १९३२ में हुआ था और अपने बाल्यकाल में ही अलवर में श्री गोकुलचन्द्रजी सा. संचेती के यहां दत्तक पुत्रके रूप में सं १९५४ में आये थे। श्री गोकुलचन्द्रजी सा. एक बहुत ही धर्मप्रेमी सज्जन थे। और उन्होंने श्री सुन्दरलालजी का लग्न श्री उत्तमचन्दजी मा. तातेड की सुपुत्री श्री हुलासीवाई ग्राम चाटमु (जयपुर) के साथ किया था। युवावस्था में आप बहुत शौकीन तवीयत के थे। बाद में लालाजी चिरंजीलालजी पालादत के एवं साधु सन्तों के सम्पर्क में आने जाने से धर्मप्रवृत्ति की ओर विशेष झुकाव होने लगा और अणुव्रत आदि धारण करते हुवे त्यागवृत्ति की ओर प्रवृत्ति बढी और व्यापार में भी सदा सत्य बोलने का निश्चय किया। आप हमेशा एक ही भाव (रेट) ग्राहक को बतलाते थे और वस्तुकी जैसी परिस्थिति होती उसी रूप में बतला देते थे। और ग्राहक भी इनकी बातों पर विश्वास करते थे। आपका व्यापार श्री मांगीलालजी छोटेलाजी (दिगम्बर) जैन के साथ में था। एक समय की बात है कि उनके परिवार के श्री चन्दनमलजी संचेती के पुत्रवियोग होने पर दुकान की देखरेख करने का कार्य आपको सौंपा। एक ग्राहक ने छोट मांगी और ग्राहक को दुकान के दूसरे आदमीने पक्की बतलाकर देदी, आपने बीच में ही रोककर कहा लो या ना लो यह आपकी इच्छा उपर है परंतु यह छोट कच्ची है, पक्की नहीं हैं। गृहस्थ जीवन में रहते हुए ही उन्होंने एक दफा अपनी धर्मपत्नी से दीक्षा के भाव प्रगट किये, तब वे बोली कि मैं मौजूद हूं

तब तक तो दीक्षा नहीं ली। घर पर रहते हुए ही धर्मध्यान करो।
 तब उन्होंने ज्योतिषी वगैरा से देखा कि इनकी आयु अधिक नहीं है
 और उन्होंने अन्त्यकाल के बाद दीक्षा लेने के आग्रह आपस में प्रकट
 कर दिये। कि मैं घर से दूरलोभ होजाने के बाद दीक्षा लूंगा। और
 इतने दिन तक महीने में १७ दिन स्थानक में ही धर्मध्यान में व्यतीत
 करने और १३ दिन बुकान पर व्यापार के लिये जाऊंगा और रात्री
 को पूरे महीने ही नहीं जाऊंगा चाँये वगैरे सब छोड़कर बहुत
 अगस्त से लिये हुए ये अर्थात् शीलव्रत का मन्त्र दिया था। चौदस के
 चौदस को पोषण करते थे और हमें गा मुपह नाम के समय पाठक्रमण
 करते थे अर्थात् दश गी रायगो प्रतिक्रमण करते थे आप आयबिल का
 प्रकार से कात रहेते थे, इस प्रकार तपश्चर्या में दक्षिणस्थ रहने से लोग
 आपको “तपस्वीजी” कहने लगे। शत्रुओं में भी उत्तराध्ययन व दक्षिण
 कालिक व पुच्छिभुण, भक्तान्तर आदि स्वयं कण्ठस्थ पाद किये थे थोकेहों
 के भी बहुत जानकार थे, और मुन्त्रों का नियमानुसार मन्त्राय करते थे
 और तपस्या भी आप असंज्माय का समय छोड़ कर दिनभर
 मन्त्राय करते थे और कोई भी उनका सम्पर्क में आता तो धर्म
 चर्या का प्रमाण करते रहते थे। एक समय की घटना है कि जिन
 माइले (चौमुख) में आप रहते थे उसके पास ही मैं एक ब्राह्मण का घर
 पर एक पत्नी आकर बैठा उसको बैठा देख कर कहा कि आज इस मकान
 में किसी का द्वारा इत्यादि जाना है और उसी दिन देखते हैं कि उन
 घर की ब्राह्मणी को उसका एक प्रमी द्वारा बलि कर दिया गया है इसी
 प्रकार एक समय स्थानक में पोषण किये हुए कई आश्रम बैठे थे कि
 अचानक १ यिष्ट न मधरे में भाषक कीयान पन्नामाल जी को काट ल्याया
 और वे बहुत ही दर्द से बैचन हो गये नरकाय मन्त्रादि से उन्हें न उसका
 दद मित्र दिया, इस बात को जब पर मिलने वालों ने इस संघ को
 पृछा पर तुम को इन्कार कर दिया कि मेरा यह पेशा नहीं है वह
 पोषण में बैठे थे और उसमें अज्ञानता होती। भक्षत्र व तारा का ज्ञान
 भी तपस्वी जी को बहुत था रात्री को आकाश की और देखकर समय
 व काल मही पकल्ला दते थे, कि उनके इतने बनकर इतने मित्र हुए
 हैं। इस तरह की बहुत सी घटनाएँ तपस्वी जी की सदस्य जीवन की हैं।

इन महापुरुष ने समाज में भी अच्छी इज्जत प्राप्त की थी, पंच, पंचायती में भी इनकी राय ऊँची मानी जाती थी, ये नीति से व्यापार करते थे, फिर भी वैराग्य इनको बहुत प्रिय था पूज्य श्री लालजी महाराज के पास ब्रह्मचर्य का खंघ किया था युवानवय में सपत्नी नौ वर्ष तक संसारावस्था में अखंड ब्रह्मचर्य पाला था बाद में पूज्य आचार्य श्री जवाहर-लाल जी महाराज के पाम वि. सं. १९७८ में दीक्षा ली, प्रथम चौमासा रत-लाम में था जिसमें इन्होंने चालीस दिन की तपस्या की थी, दूसरे साल अहमदनगर (दक्षिण) में चौमासा था उसमें इकसठ दिन की तपस्या की, उस मौके पर नगरसेठ दाराबजी ने सारे शहर की जीव दया रक्खी थी, शहर भर के कतलखाने बन्ध रखाये थे यहाँतक कि गौरे लोगों की छावनी में भी कतलखाने सेठ साहेब ने बन्धरखवाये थे। दक्षिणवेलापुर में चातुर्मास किया उसमें उगनसठ दिन की तपस्या की वहाँ भी सारे शहर में जीवदया पाली तथा मच्छीमारों का कामकाज वगैरह पारणा के ऊपर बन्ध रहा। व्यावर (नयाशहर) में चौमासे के अन्दर पिचोत्तर उपवास किये, बड़ा भारी जीवदया का उपकार हुआ, बीरानेर चातुर्मास में बड़ी तपस्या की, आदर्श धर्मध्यान हुआ, उदयपुर चातुर्मास किया, बड़ो वहाँ चौसठ और पीचोतेर दिन की तपस्या की, सारे मेवाड में अगता रहा पाखी पलाई, भूपालसिंह जी महाराणाजी ने जीवदया का डंका बजाया और ओं गान्ति कराई, राणा जी ने इनके दर्शन किये। गणा जी के दीवान साहेब श्री तेजसिंह जीसा. ने इनके पास समकित ली यानी इनको गुरु बनाया। नव्यासी में गोगुना में ८३-९० मे सेमलगाम मे ९० दिन की तपस्या की कुचेरा (मारवाड) में वि. सं १९९१ में चातुर्मास किया, ९१ एकानु दिन की तपस्या की और उस मौके पर कुचेरा में भैरु जी के स्थान की जीवहिंसा सदा के लिये बन्द करवाई। सं. १९९२ में करांची चातुर्मास किया उसमें इन्होंने तीन महिने की तपस्या की लाखों जीवों का उपकार हुआ, दूसरे साल करांची में ही विराजे, छनु दिन की तपस्या की, करांची का कतलखाना चौबीस घंटे के लिये बन्ध रहा। करांची संघने बड़ी सेवा बजाई, सेठ जमसेद जी नसरवान जी महेता पारसी कोम के अग्रेसर जो सोलह सालतक करांची के मेयर थे उन्होंने कतलखाना बन्ध करवाने का बड़ा प्रयत्न किया

तब तक तो दीक्षा नहीं ली। घर पर रहते हुए ही धर्मध्यान करो। तब उन्होंने ज्योतिष जगैरा से देखा कि इनकी आयु अधिक नहीं है और ठाढ़ों ने अन्तकाल के बाद दीक्षा छेने के भाव आपस में प्रकट कर दिये। कि मैं घर से दवलोक होजाने के बाद दीक्षा लूंगा। और इतने दिन तक महीने में १७ दिन स्थानक में ही धर्मध्यान में व्यतीत करने और १३ दिन दुकान पर व्यापार के लिये भाऊगा और रात्री को पूरे महीने ही नहीं जाऊगा चौथे मठ के समोड़े पञ्चम्याण बहुत अरसे से लिये हुए थे अयात् श्रीलक्ष्मण का स्तुति किया था। चौदस के चौदस को पोषण करते थे और हमेशा सुबह शाम के समय पाठक्रमण करते थे अर्थात् देव जी रायगो प्रणिफनग करते थे आप आयबिल का प्रकार से काते रहते थे, इस प्रकार तपधर्या में दक्षचित्स रहने से लोग आपको "तपस्वीजी" कहने लगे। शाम्नों में भी उत्तराध्ययन व दक्षै कालिक व पुच्छिभुज, मरुतामर आदि स्वयं कण्ठस्थ पाठ किये व थोकहों क भी बहुत जानकार थे, और सुधों का नियमानुसार सम्भाल करते थे और तपस्या भी आप असम्भाल का समय छोड़ कर दिनभर सम्भाल करते थे और कोई भी उनके सम्पर्क में आता तो धर्म धर्या का प्रसारण करते रहते थे। एक समय की घटना है कि जिस माछे (बीलक) में आप रहते थे उसके पास ही मैं एक ब्राह्मण क घर पर एक पत्नी आकर घेगा उसको बैठे देख कर कहा कि आज इस मकान में किसी क डारा इत्या ज्ञाना है और उसी दिन देखते हैं कि उन घर की ब्राह्मणी को उसक एक प्रेमी डारा कत्ल कर दिया गया है इसी प्रकार एक समय स्थानक में पोषण किय हुए कई आबक बैठे थे कि अणानक १ विद्वत् ने मधुर में भायक दीयान धन्नामाल जी को काट लिया और वे बहुत ही दर्द से बैथेन हो रहये नवकर मन्त्रादि से उन्होंने न उसका दर्द मिटा दिया, इस बात को जन कर मिलने शालो ने इस मन्त्र को पाठा परतु मय को इन्कार कर दिया कि मेरा यह पेशा नहीं है पर पोषण में बैठे थे और उसमें अशामना होती। नक्षत्र व धारा का ज्ञान श्री तपस्वी जी को बहुत था रात्री को आकाश की और देखकर समय व काल मही पसला देते थे, कि उनक इतने बमकर इतने मिनिट हुए हैं। इस तरह की बहुत सी घटनाएं तपस्वी जी की सुदृश्य जीवन की हैं।

श्री. समवायार्जसूत्रकी विषयानुक्रमणिका

अनुक्रमाङ्क	विषय	पृष्ठाङ्क
१	मङ्गलाचरण	१-२
२	अवतरणिका	३-८
	पहला समवाय	
३	वारह प्रकारके गणिपिटक का निरूपण	९-११
४	आत्मा अनात्मा के स्वरूप का निरूपण	११-१९
५	आत्मा के क्रियात्व अथवा अक्रिय आदिका निरूपण	२०-२१
६	लोकालोक का निरूपण	२१-२२
७	धर्माधर्म का निरूपण	२३-२४
८	पापपुण्य का निरूपण	२५-२८
९	बंधमोक्ष का निरूपण	२९-३४
१०	आस्रव और संवर का निरूपण	३५-३६
११	वेदना और निर्जरा का निरूपण	३७-३८
१२	सप्तमूत्रीद्वारा आश्रय विशेष का निरूपण	३९-४०
१३	चार गति के आश्रयी रहनेवाले जीर्वा की स्थिति आदि धर्म का निरूपण	४१-४६
१४	देवों के स्थित्यादि का निरूपण	४७-५०
	दूसरा समवाय	
१५	दंडादिका निरूपण	५०-५१
१६	दोसंख्या विशिष्ट देवादिको की स्थिति का निरूपणम्	५३-५४
१७	तीन संख्याविशिष्ट तीसरा समवाय में तीन प्रकार के दण्डादिका निरूपण	५५-६०
१८	तीसरा समवाय में नारकियों के स्थित्यादिका निरूपण	६१-६४
१९	चौथे समवाय में कषायादि का निरूपण	६५-७०
२०	चौथे समवायमें नारकियों की स्थित्यादि का निरूपण	७१-७२
२१	पांचवे समवाय में क्रियादि का निरूपण	७३-७७
२२	पांचवे समवाय में नारकियों के स्थित्यादि का निरूपण	७८-८०
२३	छठे समवाय में लेश्यादि का निरूपण	८१-८८
२४	छठेसमवाय में नारकियों की स्थित्यादि का निरूपण	८९-९०
२५	सातवे समवाय में इहलोकभय परलोकभय का निरूपण	९१-९८

काजी खुदाबक्स भी उस समय करांची के मेयर थे उन्होंने गुमरात नगर में हुसे मारने का काम बन्व कराया था। नेटी, जेटी दरिया के भागपर हमेश के मिय मछी मारना वहाँ के गोरे कमिशनर सा ने बन्व कराया, हिन्दु समाज के नेता डोक्टर हिंगुरानी तथा संकेटरी भी दयालसिंह जीने जीवदया कराने का पट्टा ही लाभ लिया। करांची से बिहार कर चालोसरा पधारे वि सं, १९०४ में वहाँ चीरासी उपवास किया, पारणा के उपलक्ष्य में सोलह सौ गाँव में अगला पला पारणा करके पीछे तेबिहार सधारा किया लगभग पचास दिन का सधारा आया, आसोज छुदि दशम के दिन सुबह देवबोक छुचे जिसमें तमाम गाम वालोंने अपना समग्र कार्य बन्व रखा

पूज्य आचार्य भी आगमोद्धारक जैन धर्म दिवाकर भी घासीलालजी म सा का सयोग मिलन से तथा वर्तमान समय में जीनवाणी सेवा का अपूर्व कार्य भी अइमदावाद में आगमोद्धारसमिति कर रही है यह भी उन्हीं महाभाग उपस्वीरामजी आकांक्षा और आशीर्वाद का ही शुभफलरूप में स्थानकवासी जैनसमाज के संमुत्त है। तथा पञ्जाब केसरी आगम वारिषि आदि अनेक पदवीयों से बलंकृत अथवा सघ के प्रधानाचार्य आत्मारामजी म सा की वि सं १९९१ साल में किशनगढ़में कृत प्रयत्नप्रेरणाकाही कम स्वरूप है ऐसे प्रभाविक महात्मा पुनः पुनः इस भारत भूमि को पावन करने के हेतु परिपूर्ण हो यही शुभ भावना।



- ५४ इक्कीस वे समवाय में नारकियों के स्थित्यादिका निरूपण २६२-२६४
- ५५ बाईस वे समवायमें बाईस परीषदादिका निरूपण २६४-२७४
- ५६ बाईस वे समवायमें नारकियों के स्थित्यादिका निरूपण २७५-२७७
- ५७ तेईस वे समवाय में सूत्रकृताङ्ग के अध्ययनादिका निरूपण २७८-२८०
- ५८ तेईसवे समवाय में नारकियों के स्थित्यादि का निरूपण २८०-२८१
- ५९ चौव्वीसवे समवाय में चौईस तीर्थङ्करों का निरूपण २८२-२८५
- ६० चौव्वीसवे समवाय में नारकियों के स्थित्यादिका निरूपण २८५-२८७
- ६१ पच्चीसवे समवाय में पांच महाव्रत की पचीस भावना
आदि का निरूपण २८७-२९९
- ६२ पच्चीसवे समवाय में नारकियों के स्थित्यादि का निरूपण ३००-३०१
- ६३ छव्वीस वे समवायमें दशाश्रुतादि के अध्ययनादिका
निरूपण ३०२-३०४
- ६४ सत्ताईस वे समवायमें अनगार के गुणों आदिका निरूपण ३०५-३१२
- ६५ सत्ताईस वे समवाय में नारकियों के स्थित्यादिका निरूपण ३१३-३१४
- ६६ अट्ठाईसवे समवाय में आचारकल्पादिका निरूपण ३१५-३२६
- ६७ अट्ठाईसवे समवाय में नैरयिकों की स्थितिका निरूपण ३२७-३२८
- ६८ उन्तीसवे समवाय में पापश्रुतका निरूपण ३२९-३३३
- ६९ उन्तीसवे समवाय में नारकियों के स्थित्यादिका निरूपण ३३४-३३६
- ७० तीसवे समवाय में मोहनीय स्थान का निरूपण ३३७-३५२
- ७१ तीसवे समवाय में तीस मुहूर्त के नाम का निरूपण ३५३-३५६
- ७२ इक्तीस वे समवाय में सिद्धादिकों के गुणों का निरूपण ३५७-३६२
- ७३ इक्तीसवे समवाय में नारकियों के स्थित्यादि का निरूपण ३६३-३६५
- ७४ चत्तीसवे समवाय में योग सग्रहादिका निरूपण ३६५-३७१
- ७५ बचीसवे समवायमें नैरयिकों की स्थितिका निरूपण ३७१-३७३
- ७६ तैतीस वे समवाय में तैतीस आशातना दोषका निरूपण ३७३-३८२
- ७७ तैतीस वे समवाय में सूर्यमंडलका निरूपण ३८३-३०७
- ७८ तैतीस वे समवाय में नारकियों की स्थिति का निरूपण ३८७-३८९
- ७९ चौंतीस वे समवाय में तीर्थकरों के अतिशय का निरूपण ३८९-३९८
- ८० चौंतीस वे समवाय में चक्रवर्त्यादि का निरूपण ३९९-४००
- ८१ पैतीस वे समवायमें सत्यवचन के अतिशय का निरूपण ४०१-४०२

- २६ सातवे समवाय में नारकियों आदि के स्थित्यादिका निरूपण ९९-१०३
- २७ आठवे समवाय में मदस्थानादि का निरूपण १०४-१११
- २८ नव वे समवाय में नव ब्रह्मचर्य गुप्ति आदि का निरूपण ११२-११८
- २९ नव वे समवाय में नारकियों की स्थित्यादि का निरूपण ११९-१२४
- ३० दशवे समवाय में भ्रमणभूमौदि का निरूपणम् १२५-१३२
- ३१ दशवे समवाय में नारकियों के स्थित्यादि का निरूपण १३३-१३७
- ३२ ग्यारहवे समवाय में ग्यारह उपान्तक प्रतिमादिका निरूपण १३८-१४६
- ३३ ग्यारहवे समवाय में नारकियों के स्थित्यादि का निरूपण १४७-१४८
- ३४ बारह वे समवाय में मिश्रप्रतिमा आदिका निरूपण १४९-१६५
- ३५ बारहवे समवाय में नारकियों के स्थित्यादिका निरूपण १६५-१६७
- ३६ तेरहवे समवाय में तेरह क्रियास्थानादिका निरूपण १६७-१७२
- ३७ तेरहवे समवाय में नारकियों के स्थित्यादि का निरूपण १७३-१७५
- ३८ चौदहवे समवाय में चौदह जीवसमूह का निरूपण १७५-१९०
- ३९ चौदह वे समवाय में नारकियों के स्थित्यादिका निरूपण १९१-१९३
- ४० पंद्रहवे समवाय में पंद्रह परमात्मिकों का निरूपण १९३-२०४
- ४१ पंद्रहवे समवाय में नारकियों के स्थित्यादि का निरूपण २०५-२०७
- ४२ सोलहवे समवाय में गाथा पोख्यादि का निरूपण २०७-२१५
- ४३ सोलहवे समवाय में नारकियों के स्थित्यादिका निरूपण २१५-२१७
- ४४ सतरहवे समवाय में सतरह अंत्यमादि का निरूपण २१७-२०
- ४५ सतरहवे समवाय में अष्टाचारणादि मुनियों के गत्यादिका निरूपण २२०-२२८
- ४६ सतरहवे समवाय में नारकियों के स्थित्यादिका निरूपण २२०-२३१
- ४७ अठारहवे समवाय अठारह प्रकार के ब्रह्मचर्यादिका निरूपण २३१-२३६
- ४८ अठारहवे समवाय में नारकियों के स्थित्यादिका निरूपण २३६-२३८
- ४९ उन्नीसवे समवाय में उन्नीसज्ञाताभर्मकथा आदिका निरूपण २३९-२४४
- ५० उन्नीसवे समवाय में नारकियों के स्थित्यादिका निरूपण २४५-२४६
- ५१ बीसवे समवाय में बीस भसमाधि स्थानादिका निरूपण २४७-२५१
- ५२ बीसवे समवाय में नारकियों के स्थित्यादि का निरूपण २५१-२५३
- ५३ एकबीसवे समवाय में एकबीसशेषादि का निरूपण २५३-२६२

- ५४ इक्कीस वे समवाय में नारकियों के स्थित्यादिका निरूपण २६२-२६४
- ५५ बाईस वे समवायमें बाईस परीषदादिका निरूपण २६४-२७४
- ५६ बाईस वे समवायमें नारकियों के स्थित्यादिका निरूपण २७५-२७७
- ५७ तेईस वे समवाय में सूत्रकृताङ्ग के अध्ययनादिका निरूपण २७८-२८०
- ५८ तेईसवे समवाय में नारकियों के स्थित्यादि का निरूपण २८०-२८१
- ५९ चौब्बीसवे समवाय में चौईस तीर्थङ्करों का निरूपण २८२-२८५
- ६० चौब्बीसवे समवाय में नारकियों के स्थित्यादिका निरूपण २८५-२८७
- ६१ पच्चीसवे समवाय में पांच महाव्रत की पचीस भावना
आदि का निरूपण २८७-२९९
- ६२ पच्चीसवे समवाय में नारकियों के स्थित्यादि का निरूपण ३००-३०१
- ६३ छब्बीस वे समवायमें दशाश्रुतादि के अध्ययनादिका
निरूपण ३०२-३०४
- ६४ सत्ताईस वे समवायमें अनगार के गुणों आदिका निरूपण ३०५-३१२
- ६५ सत्ताईस वे समवाय में नारकियों के स्थित्यादिका निरूपण ३१३-३१४
- ६६ अट्ठाईसवे समवाय में आचारकल्पादिका निरूपण ३१५-३२६
- ६७ अट्ठाईसवे समवाय में नैरयिकों की स्थितिका निरूपण ३२७-३२८
- ६८ उन्तीसवे समवाय में पापश्रुतका निरूपण ३२९-३३३
- ६९ उन्तीसवे समवाय में नारकियों के स्थित्यादिका निरूपण ३३४-३३६
- ७० तीसवे समवाय में मोहनीय स्थान का निरूपण ३३७-३५२
- ७१ तीसवे समवाय में तीस मुहूर्त के नाम का निरूपण ३५३-३५६
- ७२ इक्कीस वे समवाय में सिद्धादिकों के गुणों का निरूपण ३५७-३६२
- ७३ इक्कीसवे समवाय में नारकियों के स्थित्यादि का निरूपण ३६३-३६५
- ७४ बत्तीसवे समवाय में योग सग्रहादिका निरूपण ३६५-३७१
- ७५ बत्तीसवे समवायमें नैरयिकों की स्थितिका निरूपण ३७१-३७३
- ७६ तैंतीस वे समवाय में तैंतीस आशातना दोषका निरूपण ३७३-३८२
- ७७ तैंतीस वे समवाय में सूर्यमंडलका निरूपण ३८३-३८७
- ७८ तैंतीस वे समवाय में नारकियों की स्थिति का निरूपण ३८७-३८९
- ७९ चौंतीस वे समवाय में तीर्थकरों के अतिशय का निरूपण ३८९-३९८
- ८० चौंतीस वे समवाय में चक्रवर्त्यादि का निरूपण ३९९-४००
- ८१ पैंतीस वे समवायमें सत्यवचन के अतिशय का निरूपण ४०१-४०२

- ८२ छत्तीस वे समवाय में उत्तराध्ययन के अध्ययन आदि
के नाम का निरूपण ४०३-४०४
- ८३ सैंतीस वे समवाय में सत्तरहवे तीर्थंकर कुण्डुनाथ
भगवान के गण और गणपर आदि का निरूपण ४०५-४०६
- ८४ अड़तीस वे समवाय में पार्श्वनाथ अर्हत के गण और
गणपर आदि का निरूपण ४०६-४०८
- ८५ उनचालीस वे समवाय में मध्विज्ञानियों
की सस्था आदि का निरूपण ४०८-४१०
- ८६ चालीस वे समवाय में अरिष्टनेमि अर्हत के साध्वि
आदि का निरूपण ४११-४१२
- ८७ इगतालीस वे समवाय में नमिनाथ अर्हत के साध्विकायें
आदिका निरूपण ४१२-४१३
- ८८ बयालीसवे समवाय में भ्रमण भगवान् महावीर के
आमण्य पर्यायादिका निरूपण ४१३-४२३
- ८९ तैंतालीस वे समवाय में कर्मविपाकके अध्ययनादि
का निरूपण ४२३-४२५
- ९० चौवालीस वे समवाय में कृपिमापित अध्ययनका निरूपण ४२६-४२६
- ९१ पैतालीसवे समवाय में समय क्षेप्रादिका निरूपण ४२७-४२९
- ९२ छियालीस वे समवाय में वष्टिवाद के स्वरूपका निरूपण ४२९-४३०
- ९३ सैंतालीस वे समवाय में प्रचन मातृका के अक्षरादि का
निरूपण ४३१-४३२
- ९४ अड़तालीस वे समवाय में अक्षरर्त्ती के नगरादि का
निरूपण ४३३-४३४
- ९५ उनचास वे समवाय में मिश्रप्रणिमा आदिका निरूपण ४३४-४३६
- ९६ पचासवे समवाय में बीसवे मुनिमुदत नाथ के साध्वि
आदिका निरूपण ४३६-४३०
- ९७ इष्यावन वे समवाय का निरूपण ४३९-४४१
- ९८ पानवे समवाय में मोहनीयकर्म के वाचन नामादिका
निरूपण ४४२-४४६
- ९९ निरपन समवाय में देवक वत्तरकुस्त्रेयके जीवा आदिका
निरूपण ४४६-४४९

१०० चौवन संख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	४४९-४५०
१०१ पचपन संख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	४५१-४५५
१०२ छप्पन संख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	४५५-४५६
१०३ सत्तावन संख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	४५६-४५९
१०४ अठावन संख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	४६०-४६२
१०५ उनसठ संख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	४६२-४६४
१०६ साठ संख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	४६४-४६६
१०७ इकसठ संख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	४६६-४६९
१०८ बासठ संख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	४७०-४७५
१०९ तिरसठ संख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	४७६-५७८
११० चौसठ संख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	४७८-४८२
१११ पैंसठ संख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	४८२-४८३
११२ छासठ संख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	४८३-४८५
११३ सरसठ संख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	४८५-४९३
११४ अडसठ संख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	४९३-४९७
११५ उनहत्तर संख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	४९७-५०१
११६ सत्तर संख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	५०१-५०५
११७ इकोत्तर संख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	५०५-५०९
११८ बहत्तर संख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	५०९-५२३
११९ तिहोत्तर संख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	५२४-५२५
१२० चौहत्तर संख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	५२५-५२८
१२१ पचहत्तर संख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	५२८-५२९
१२२ छियोत्तर संख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	-५३०
१२३ सतहत्तर संख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	५३०-५३४
१२४ अठहत्तर संख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	५३५-५३९
१२५ उन्नासी संख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	५४०-५४३
१२६ अस्सी संख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	५४४-५४५
१२७ इक्कासी संख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	५४६-५४७
१२८ ब्यासी संख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	५४८-५५०
१२९ तिरासी संख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	५५१-५५२

१३० चौरासी सख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	५५३-५६०
१३१ पचासी सख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	५६१-५६४
१३२ छियासी सख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	५६४-५६५
१३३ सत्तासी सख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	५६६-५६९
१३४ अठ्ठासी सख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	५७०-५७३
१३५ नवामी सख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	५७३-५७५
१३६ दश सख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	५७५-५७८
१३७ इकाणव सख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	५७८-५८६
१३८ बानव सख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	५८७-५९०
१३९ तिरानवे सख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	५९१-५९२
१४० चौराणव सख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	५९३-५९४
१४१ पचाणवे सख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	५९४-५९६
१४२ छद्यानवे सख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	५९७-५९८
१४३ सत्तानव सख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	५९९-६०१
१४४ अठानवे सख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	६०२-६०३
१४५ नन्नानवे सख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	६०६-६१०
१४६ सौ सख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	६११-६१४
१४७ एकसौ पचाम सख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	-६१४
१४८ दो सौ सख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	-६१५
१४९ अर्धसौ सख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	-६१६
१५० तीनसौ सख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	६१६-६१८
१५१ साठे तीनसौ सख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	-६१८
१५२ चारसौ सख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	६१०-६२०
१५३ साठे चारसौ सख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	६२०-६२१
१५४ पाँचसौ सख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	६२१-६२४
१५५ छहसौ सख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	६२५-६२६
१५६ सातसौ सख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	६२७-६२८
१५७ आठसौ सख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	६२९-६३१
१५८ नवसौ सख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	६३२-६३३
१५९ एक हजार सख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	६३४-६३९

१६० ग्यारह सौ संख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	-६४
१६१ दो हजार संख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	-६४
१६२ तीनहजार संख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	६४१-६४
१६३ चार हजार संख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	-६४
१६४ पांचहजार संख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	-६४
१६५ छह हजार संख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	-६४
१६६ सात हजार संख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	६४४-६४
१६७ आठ हजार संख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	६४५-६४
१६८ नव हजार संख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	६४६-६४
१६९ दश हजार संख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	-६४
१७० एक लाख संख्याविशिष्ट और दो लाख संख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	-६४
१७१ तीनलाख और चार लाख संख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	-६४
१७२ पांचलाख संख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	-६५
१७३ छह और सात लाख संख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	-६५
१७४ आठ लाख और दसलाख संख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	-६५
१७५ एक करोड़ संख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	६५३-६५
१७६ सागरोपम कोटाकोटि संख्याविशिष्ट समवाय का निरूपण	-६५
१७७ द्वादशांग के स्वरूप का निरूपण	-६५
१७८ द्वादशअंगों में प्रथम अंग आचारांग के स्वरूप का निरूपण	६५७-६७
१७९ दूसरेअंग सूत्रकृताङ्ग के स्वरूप का निरूपण	६७६-७०
१८० तीसरेअंग स्थानाङ्ग के स्वरूप का निरूपण	७०१-७०
१८१ चतुर्थाङ्ग समवायाङ्ग के स्वरूप का निरूपण	७०९-७३
१८२ पांचवे अङ्ग व्याख्याप्रज्ञप्ति (भगवती) के स्वरूप का निरूपण	७२३-७३
१८३ छठवे अङ्ग ज्ञाताधर्मकथाङ्ग के स्वरूप का निरूपण	७३६-७४
१८४ सातवे अङ्ग उपासक दशाङ्ग के स्वरूप का निरूपण	७६१-७७
१८५ आठवे अङ्ग अन्तकृतदशाङ्ग के स्वरूप का निरूपण	७७३-७८
१८६ नव वे अङ्ग अनुत्तरोपपातिकदशाङ्ग के स्वरूप का निरूपण	७८३-७९

१८७ दशवे अङ्ग प्रश्न-याचरण के स्वरूप का निरूपण	७९६-८०७
१८८ ग्यारह वे अङ्ग विपाकयुक्त का निरूपण	८०७-८३३
१८९ आचाराङ्गादि ग्यारह अङ्गों के पदसमूह दर्शक कोष्टक	-८३४
१९० पारह वे अङ्ग दृष्टिवाद के स्वरूप का निरूपण	८३५-८७६
१९१ पारह वे अङ्ग की विराधना से और चाराधना से क्या फल होता है उनका निरूपण	८७५-८८८
१९२ जीवराशी और अजीवराशी का निरूपण	८८९-९९२
१९३ असुरकुमारादिकों के आचारादिक का निरूपण	८९२-९४२
१९४ नैरयिक जीवों की स्थिति का निरूपण	९४२-९५१
१९५ नारकादि जीवों के अवगारना का निरूपण	९५१-१००६
१९६ अवधिज्ञान के स्वरूप का निरूपण	१००६-१०२०
१९७ जीवों के आयुबन्ध के स्वरूप का निरूपण	१०२१-१०३३
१९८ जीवों के मस्थान संज्ञनन वदादि के स्वरूपका निरूपण	१०३४-१०५०
१९९ समग्रमरण के स्वरूप का निरूपण	१०५०-१०५१
२०० कुलहरा के महापुरुषों के नामादि निरूपण	१०५२-१०५३
२०१ तीर्थहर के पिता आदि के नामका निरूपण	१०५३-१०७६
२०२ तीर्थहर के प्रथम मित्रा दाताओं के नामका निरूपण	१०७६-१०७७
२०३ तीर्थहरा के श्वेतपुत्र के नामका निरूपण	१०७७-१०८०
२०४ तीर्थहरों के प्रथम शिष्य के नामका निरूपण	१०८१-१०८३
२०५ तीर्थहरों के प्रथम शिष्यों के नामका निरूपण	१०८३-१०८६
२०६ पारह चक्रवर्तियों के नामका निरूपण	१०८५-१०८६
२०७ पारह चक्रवर्तियों के माताओं के नामका निरूपण	१०८७-१०८८
२०८ चक्रवर्तियों के और उनके मित्रों के नामका कथन	१०८८-१०९०
२०९ पारह और वासुदवों के मातापिताओं के नामका कथन	१०९०-१०९३
२१० गुणनिर्देश पूर्वक पारह और वासुदेव के नामका कथन	१०९४-१११०
२११ पारह और वासुदेव के पूर्वमर्षीय नामका कथन	११११-१११२
२१२ पारह और वासुदेव के ९नव धर्मोपायों के नामका निरूपण	१११३-१११४

२१३ नव वासुदेवों के निदानभूमिके नाम का निरूपण	१११४-१११९
२१४ चौव्वीस तीर्थकरों के नामका निरूपण	१११९-११२२
२१५ भविष्य कालके सात कुलकरों के नाम का कथन	११२२-११२४
२१६ भविष्य काल के चौव्वीस तीर्थकरों के नामका निरूपण	११२४-११२६
२१७ भविष्यकाल के चौव्वीस तीर्थकरों के पूर्वभव के चौव्वीस नामका कथन	११२७-११३२
२१८ भविष्य काल के चक्रवर्तियों के नामका निरूपण	११३२-११३४
२१९ भविष्यकाल के बलदेव वासुदेव के मातापिता के नामका कथन	११३४-११४०
२२० भविष्य काल के तीर्थकरों के होने वाले नामका कथन	११४०-११४३
२२१ भविष्य काल के बारह चक्रवर्तियों के नामका कथन	११४४-११४७
२२२ इस अधिकृतशास्त्र-समवाङ्मय के गुणनिष्पन्न नामका कथन	११४७-११५२
२२३ शास्त्रप्रशस्ति	११५३-११५४

समाप्त

આવમુરબીશ્રીઓ



(૨૫.) શ્રી લક્ષ્મણજી કાડીયાસ વાર્શિયા
ભાણુવડ.



કાઠારી લક્ષ્મણજીભાઈ જેવંદ
રાજકોટ.



શ્રી ગાંતિલાલ ભગનદાસભાઈ
અમદાવાદ.



(૨૬.) શ્રી ધારશીભાઈ જીવલુલાલ, (૨૭) શ્રી છગનલાલ શામળદાસ ભાવસાર
વારસી.



અમદાવાદ.



સ્વ. શ્રીમાન શેઠશ્રી મુકેશચંદ્ર મા
ખાલિયા પાલી મારવાડ

(સ્વ.) શેઠ રંગજીભાઈ માલનલાલ શાહ
અમદાવાદ.



(સ્વ.) શેઠશ્રી દિનેશભાઈ કાંતિલાલ શાહ
અમદાવાદ.



શેઠશ્રી જેમિજલાઈ પેઝાલાલભાઈ
અમદાવાદ.



સ્વ. શેઠશ્રી આત્મારામ માણેકવાલ
અમદાવાદ

શ્રી અખિલ ભારત શ્વેતામ્બર સ્થાનકવાસી
જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ.

*

ગરેડીયાકુવારોડ-ગ્રીન લોજ પાસે,
રાજકોટ

*

દાતાઓની નામાવલી

*

શરૂઆત તા. ૧૮-૧૦-૪૪થી તા. ૩૧-૧૨-૬૧ સુધીમાં
દાખલ થયેલ મેમ્બરોનાં મુખ્યારક નામો.

*

લાઇફ મેમ્બરોનું ગામવાર કક્કાવારી લિસ્ટ.

*

(નાની ભેટની રકમો આપનારનું, તથા રૂ. ૨૫૦થી ઓછી
રકમ ભરનારનું નામ આ યાદીમાં સામેલ કરેલું નથી.)

આધ

મુરબીશ્રીઓ



(સ્વ) શ્રી રામભાઈ વેંતભાઈ વીરાળી
રાજકોટ



શ્રી રામભાઈ રામભાઈ વીરાળી
રાજકોટ

(સ્વ) વિનોદકુમાર વીરાળી
રાજકોટ
(દીશા લીધા પર્વણ શાસ્ત્રાભ્યાસ કરતા)



શ્રી મિત્રીનાથ તાસયદલ સા હુબ્લિયા
તથા શ્રી જેવતરાજલ તાસયદલ સા

- ૧૬ શેઠ મીશ્રીલાલજી જેવંતરાજજી લૂણીયા ચંડાવલવાળા અમદાવાદ ૫૫૦૨
 ૧૭ શેઠ રામજીભાઈ શામજી વીરાણી એન્ડ સમરતબેન
 રામજી વિરાણી ટ્રસ્ટ રાજકોટ ૫૦૦૧
 ૧૮ એક જૈન ગૃહસ્થ અમદાવાદ ૫૪૨૫

નોટ:-ઘાટકોપરવાળા શેઠ માણેકલાલ એ. મહેતા તરફથી અમદાવાદમાં
 'પોલડી' ખસ સ્ટેન્ડ પાસે પ્લોટ નં. ૨૫૦ વાળો ૬૯૮ ચો. વાર
 જમીન સમિતિને ભેટ મળેલ છે. અને જેનું રજીસ્ટર તા. ૨૩-૩-૬૦
 ના રોજ થઈ ગયેલ છે

મુરબીશ્રીઓ-૨૫

(ઓછામાં ઓછી રૂ. ૧૦૦૦ ની રકમ આપનાર)

નંબર	નામ	ગામ	રૂપિયા
૧	વકીલ જીવરાજભાઈ વર્ધમાન કોઠારી હા. કહાનદાસભાઈ તથા વેણીલાલભાઈ કોઠારી	જેતપુર	૩૬૦૫
૨	દોશી પ્રભુદાસ મૂળજીભાઈ	રાજકોટ	૩૫૦૪
૩	મહેતા ગુલાબચંદ પાનાચંદ	રાજકોટ	૩૨૮૯૧૧-૧૧
૪	મહેતા માણેકલાલ અમુલખરાય	ઘાટકોપર	૩૨૫૦
૫	સંઘવી પીતામ્બરદાસ ગુલાબચંદ	જામનગર	૩૧૦૧
૬	લલ્લુભાઈ ગોરધનદાસ ચેરીટેબલ ટ્રસ્ટ ' હ. શેઠ. વાડીલાલ લલ્લુભાઈ '	અમદાવાદ	૨૫૦૦
૭	નામદાર ઠાકોર સાહેબ લખધીરસિંહજી બહાદુર	મોરબી	૨૦૦૦
૮	શેઠ હરેચંદ કુંવરજી હા. શેઠ ન્યાલચંદ હરેચંદ	સિદ્ધપુર	૨૦૦૦
૯	શાહ છગનલાલ હેમચંદ વસા હા. મોહનલાલભાઈ તથા મોતીલાલભાઈ	મુંબઈ	૨૦૦૦
૧૦	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ હા. શેઠ ચન્દ્રકાંત વીકમચંદ	મોરબી	૧૯૬૩
૧૧	મહેતા સોમચંદ તુલસીદાસ તથા તેમનાં ધર્મપત્ની અ. સૌ. મણીગૌરી મગનલાલ	રતલામ	૨૦૦૦
૧૨	મહેતા પોપટલાલ માવજીભાઈ	જામજોધપુર	૧૫૦૨
૩	દોશી કપુરચંદ અમરશી હા. દલપતરામભાઈ	જામજોધપુર	૧૦૦૨
૧૪	બગડીયા જગજીવનદાસ રતનશી	જામનગર	૧૦૦૨
૧૫	શેઠ માણેકલાલ ભાણુજીભાઈ	પોરબંદર	૧૦૦૧
૧૬	શ્રીમાન ચંદ્રસિંહજી સાહેબ મહેતા (રેલ્વે મેનેજર)	કલકત્તા	

આપ્તમુરબીશ્રીઓ-૧૮

(બોધામાં ઓછી રૂા ૫૦૦૦ની રકમ આપનાર)

નંબર	નામ	ગ્રામ	રૂપિયા
૧	શાંતીલાલ મગજરાસભાઈ બળીતા મીલભાલીક	અમદાવાદ	૧૫૦૦૦
૨	શેઠ હરખચંદ કાળીદાસભાઈ વારીયા દા. શેઠ લાલચંદભાઈ, નગીનભાઈ વૃજલાલભાઈ તથા વજ્રભદ્રાસભાઈ	ભાવૃદ	૬૦૦૦
૩	ઠેકાદારી નેચર અજશમર દા. હરબોવિંદભાઈ નેચરભાઈ	રાજકોટ	૫૨૫૧
૪	શેઠ પારથીભાઈ જીવનભાઈ	ભારસી	૫૦૦૧
૫	સ્વ પિતાશ્રી ઉત્તનલાલ શામલદાસના રમરજીયે દા. શ્રી ભોગીલાલ ઉત્તનલાલભાઈ ભાવસાર	અમદાવાદ	૫૨૫૧
૬	સ્વ શેઠ દિનેશભાઈના રમરજીયે દા. શેઠ કાલિદાસ મળીલાલ નેશી મલાઈ	અમદાવાદ	૫૦૦૦
૭	શેઠ આત્મારામ મણેકલાલ દા. શેઠ શ્રીમનલાલભાઈ શાંતીલાલભાઈ તથા પ્રમુખભાઈ	અમદાવાદ	૬૦૦૧
૮	શ્રી શામજી વલજી વીરાળી અને શ્રી ક. ગોનાઈ વીરાળી રમારક ૮૨૬ દા. શેઠ શામજી વેલજી વીરાળી	રાજકોટ	૫૦૦૦
૯	શ્રી શામજી વલજી વીરાળી અને શ્રી કલવીનાઈ વીરાળી રમારક ૮૨૮ દા. માતૃશ્રી કલવીનાઈ વીરાળી	રાજકોટ	૫૦૦૦
૧૦	શેઠ પોચાલ ત પીતામહરાય	અમદાવાદ	૫૨૫૧
૧૧	શાદ રમજીભાઈ મોદનલાલ	અમદાવાદ	૫૦૦૧
૧૨	શ્રી શામજી વેલજી વીરાળી અને શ્રી કલવીનાઈ વીરાળી રમારક/૨૮ દા. શેઠ દુર્લભજી વીરાળી	રાજકોટ	૫૦૦૦
૧૩	શ્રી શામજી વેલજી વીરાળી અને શ્રી કલવીનાઈ વીરાળી રમારક/૨૮ દા. શ્રીમતિ મણીકુ વરમેનદુર્લભજીવીરાળી	રાજકોટ	૫૦૦૦
૧૪	શ્રી શામજી વલજી વીરાળી અને શ્રી કલવીનાઈ વીરાળી રમારક/૨૮ દા. ઉદાતાતા શામજી વીરાળી	રાજકોટ	૫૦૦૦
૧૫	સ્વ માતૃશ્રીના રમરજીયે દા. ભાવસાર ભોગીલાલ ઉત્તનલાલ અને કુટુંબીજનો	અમદાવાદ	૫૦૦

- ૧૬ શેઠ મીશ્રીલાલજી જેવંતરાજજી લૂણીયા ચંડાવલવાળા અમદાવાદ ૫૫૦૨
 ૧૭ શેઠ રામજીભાઈ શામજી વીરાણી એન્ડ સમરતણેન
 રામજી વિરાણી ટ્રસ્ટ રાજકોટ ૫૦૦૧
 ૧૮ એક જૈન ગૃહસ્થ અમદાવાદ ૫૪૨૫

નોટ:-ઘાટકોપરવાળા શેઠ માણેકલાલ એ. મહેતા તરફથી અમદાવાદમાં
 પાલડી ખાસ સ્ટેન્ડ પાસે પ્લોટ નં. ૨૫૦ વાળી ૬૬૮ ચો. વાર
 જમીન સમિતિને લેટ મળેલ છે. અને જેનું રજીસ્ટર તા. ૨૩-૩-૬૦
 ના રોજ થઈ ગયેલ છે.

મુરબીશ્રીઓ-૨૫

(ઓછામાં ઓછી રૂ. ૧૦૦૦ ની રકમ આપનાર)

નંબર	નામ	ગામ	રૂપિયા
૧	વકીલ જીવરાજભાઈ વર્ધમાન કોઠારી હા. કહાનદાસભાઈ તથા વેણીલાલભાઈ કોઠારી	જેતપુર	૩૬૦૫
૨	દોશી પ્રભુદાસ મૂળજીભાઈ	રાજકોટ	૩૫૦૪
૩	મહેતા ગુલાબચંદ પાનાચંદ	રાજકોટ	૩૨૮૬૧૧-૧૧
૪	મહેતા માણેકલાલ અમુલખરાય	ઘાટકોપર	૩૨૫૦
૫	સંઘવી પીતામ્બરદાસ ગુલાબચંદ	જામનગર	૩૧૦૧
૬	લલ્લુભાઈ ગોરધનદાસ ચેરીટેબલટ્રસ્ટ હ. શેઠ. વાડીલાલ લલ્લુભાઈ	અમદાવાદ	૨૫૦૦
૭	નામદાર ઠાકોર સાહેબ લખધીરસિંહજી બહાદુર	મોરબી	૨૦૦૦
૮	શેઠ દહેરચંદ કુંવરજી હા. શેઠ ન્યાલચંદ દહેરચંદ	સિદ્ધપુર	૨૦૦૦
૯	શાહ છગનલાલ હેમચંદ વસા હા. મોહનલાલભાઈ તથા મોતીલાલભાઈ	સુબઈ	૨૦૦૦
૧૦	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ હા. શેઠ ચન્દ્રકાંત વીક્રમચંદ	મોરબી	૧૯૬૩
૧૧	મહેતા સોમચંદ તુલસીદાસ તથા તેમનાં ધર્મપત્ની અ. સૌ. મણીગૌરી મગનલાલ	રતલામ	૨૦૦૦
૧૨	મહેતા પોપટલાલ માવજીભાઈ	જામજોધપુર	૧૫૦૨
૩	દોશી કપુરચંદ અમરશી હા. દલપતરામભાઈ	જામજોધપુર	૧૦૦૨
૧૪	બગડીયા જગજીવનદાસ રતનશી	જામનગર	૧૦૦૨
૧૫	શેઠ માણેકલાલ ભાણુજીભાઈ	ચોરખંદર	૧૦૦૧
૧૬	શ્રીમાન ચંદ્રસિંહજી સાહેબ મહેતા (રેલ્વે મેનેજર)	કલકત્તા	

૧૭ મહેતા સોમચંદ નેણુચીભાઈ (કર્ણાબીવાળા)	મોરબી	૧ ૦૧
૧૮ શાહ હરિલાલ અનોખચંદ	ખભાત	૧૦ ૧
૧૯ મોદી દેશવલાલ હરિચંદ્ર	અમદાવાદ	૧ ૧
૨ કોઠારી છત્રીલદાસ હરખચંદ	સુભઈ	૧૦
૨૧ કોઠારી રત્નલદાસ હરખચંદ	ભાવનગર	૧ ૦
૨૨ શાહ પ્રેમચંદ માણેકચંદ તથા જી સો સમસ્તજીને	અમદાવાદ	૧૦૦૩
૨૩ શેઠ હરમચી જેઠાભાઈ સોમીયા હા જી સો સાક્ષરજીને	સુભઈ	૧ ૦
૨૪ શેઠ પાપટલાલ ચત્રચંદ કોઠારી	સુરેન્દ્રનગર	૧૦૦૧
૨૫ શ્રી સ્વા, જેન હીમલી સપ્તમના કુમારજી નીધી પૂજ્ય શ્રી લાધાલ સ્વામીના શીખ્ય પ્રખર પંડિત જન શ્રી ઉત્તમચંદલ મહારાજના રમણુએ પૂજ્ય લાધાલ સ્વામી પુસ્તકાલય તરફથી હ શેઠ જેઠીજીભાઈ પોચાલાલ	અમદાવાદ	૧ ૦

સહાયક મેમ્બરો-૧૨૫

(જોછામાં જોછી રૂા. ૫ ની રકમ આપનાર)

નંબર	નામ	ગ્રામ	રૂપિયા
૧	શ્રીસ્વા જેન સમ હા બુઝાભાઈ વેલચીભાઈ	વડવાણુશહેર	૭૫
૨	શેઠ નરોત્તમદાસ જોષદભાઈ	જોશવરનગર	૭૦૦
૩	શેઠ રતનચી હીરજીભાઈ હા. જોશધનભાઈ	લમ્બોદપુર	૫૫૫
૪	ભાટવીયા ગીરધર પરમાણુ હા અમીચંદભાઈ	ખાખીભળીયા	૫૨૭
૫	મોરબીવાળા સમવા દેવચંદ નેણુચીભાઈ તથા તેમનાં ધર્મપત્ની જી સો મણીભાઈ તરફથી હા મૂળચંદ દેવચંદ સમવી	મહાદ	૫૧૧
૬	વેશ મણીલાલ પોપટલાલ	અમદાવાદ	૫૦૨
૭	જોસલીયા હરીલાલ લાલચંદ તથા વપાજેન જોસલીયા	"	૫૦૨
૮	શાહ મનહરલાલ પ્રાણીજનદાસ	સુભઈ	૫ ૧
૯	શેઠ ઇશ્વરલાલ પુરપોત્તમદાસ	અમદાવાદ	૫ ૧
૧૦	શેઠ અદુલાલ છમનલાલ	"	૫૦૧
૧૧	શાહ શાંતિલાલ માણેકલાલ	"	૫ ૧
૧૨	શેઠ ચીવલાલ ટમરભાઈ (કર્ણાબીવાળા)	હીમલી	૫ ૧
૧૩	કામદાર વારાચંદ પોપટલાલ પોશાળવાળા	શાજકોટ	૫
૧૪	મહેતા મોદનલાલ કપુરચંદ	"	૫

૧૫ શેઠ ગોવિંદજીભાઈ પોપટભાઈ	રાજકોટ	૫૦૦
૧૬ શેઠ રામજી શામજી વીરાણી	,,	૫૦૧
૧૭ સ્વ પિતાશ્રી નંદાજીના સ્મરણે હા વેણીચંદ શાંતિલાલ (જાળુઆવાળા) મેઘનગર		૫૦૧
૧૮ શ્રી જનસ્થા. સંઘ હા. શેઠ ઠાકરશી કરશનજી	ચાનગઢ	૫૦૧
૧૯ શેઠ તારાચંદ પુખરાજજી	ઔરંગાબાદ	૫૦૦
૨૦ શ્રી સ્થા જન સંઘ	,,	૫૦૦
૨૧ મહેતા મૂળચંદ રાઘવજી હા. મગનલાલભાઈ તથા દુર્લભજીભાઈ ધ્રાક્ષા		૭૫૦
૨૨ શેઠ હરખચંદ પુરૂષોત્તમ હા. ઇન્દુકુમાર	ચૌરવાડ	૫૦૦
૨૩ ,, કેશરીમલજી વસ્તીમલજી ગુણવીયા	મલાડ	૫૦૧
૨૪ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હા, બાટનીયા અમીચંદ ગીરધરભાઈ ખાખીજાળીયા		૫૦૧
૨૫ શ્રી ખીમજીભાઈ બાવાભાઈ કુલચંદભાઈ ગુલાબચંદભાઈ નાગરદાસભાઈ જમનાદાસભાઈ	સુંબઈ	૫૦૧
૨૬ શેઠ મણીલાલ મોહનલાલ ડગલી હા. મૂળજીભાઈ મણીલાલભાઈ સુંબઈ		૫૦૧
૨૭ સ્વ કાંતીલાલભાઈના સ્મરણાર્થે હા. શેઠ બાલચંદ સાકરચંદ ,,		૫૦૧
૨૮ કામદાર-રતીલાલ દુર્લભજી (જેતપુરવાળા)	,,	૫૦૧
૨૯ શાહ જયંતીલાલ અમૃતલાલ	શીવ	૫૦૧
૩૦ વેરા મણીલાલ લક્ષ્મીચંદ	,,	૫૦૧
૩૧ શેઠ ગુલાબચંદ ભૂદરભાઈ તથા કસ્તુરબેન હા. ભાઈ અનોપચંદ ખારડોડ		૫૦૧
૩૨ મહાન ત્યાગી બેન ધીરજકુ વર ચુનીલાલ મહેતા	ધ્રાક્ષા	૫૭૧
૩૩ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ	ધ્રાક્ષા	૫૦૧
૩૪ શ્રી મગનલાલ છગનલાલ શેઠ	રાજકોટ	૫૦૧
૩૫ શેઠ ચતુરદાસ ઠાકરશી તથા અ. સૌ. નંદકુવરબેન	જામનગર	૫૦૩
૩૬ શેઠ દેવચંદ અમરશી (બેન ધીરજકુ વરની દીક્ષા પ્રસંગે લેટ) ભાણુવડ		૫૦૧
૩૭ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ (બેન ધીરજકુ વરની દીક્ષા પ્રસંગે લેટ) ભાણુવડ		૫૦૧
૩૮ વકીલ વાડીલાલ નેમચંદ શાહ	વીરમગામ	૫૦૧
૩૯ મહેતા શાન્તિલાલ મણીલાલ હા. કમળાબેન મહેતા	અમદાવાદ	૫૫૬
૪૦ શ્રીચુન લાલચંદજી તથા અ. સૌ ધીસાબેન	,,	૫૦૧
૪૧ શેઠ મોહનરાજજી મુકુન્દચંદજી બાલીયા	,,	૫૦૧
૪૨ સ્વ. શેઠ ઉકાભાઈ ત્રીલોવનદાસના સ્મરણાર્થે તેમના ધર્મપત્નીલક્ષ્મીબાઈ ગીરધર તરફથી હા. મરઘાબેન તથા મગુબેન		અમદાવાદ ૫૦૧

- ૪૩ પારેખ જયતીલાલ મનમુખલાલ રાજકોટવાળા હા વિનુભાઈ ॥ ૫૦૧
- ૪૪ શ્રી રથા જૈન સમ વાંકાનેર ૫૦૧
- ૪૫ શ્રી રથા જૈન સમ ગોદાદ ૫૦૧
- ૪૬ શેઠ ગુરુમલજી શેખમલજી જોષર (બરોડા) ચીંપળગાવ ૫ ૧
- ૪૭ સ્વ. દુરખીલાલ લહેરચંદ માણેકચંદના સ્મરણાર્થે તેમનાં
ધર્મપત્ની જીવતીબાઈ તરફથી હા ભાઈ
જયતીલાલ તથા પૂનમચંદભાઈ વડોદરા ૫ ૧
- ૪૮ શાહ જયસદાસ શુકનરાજજી હા શુકનરાજજી અમદાવાદ ૫ ૧
- ૪૯ ભાવસાર ખેરીદાસ જલેશભાઈ ધ્રુવકા ૫૦૧
- ૫ અ સૌ હીરાબેન માણેકલાલ મહેતા ઘાટકોપર ૫ ૧
- ૫૧ મહેતા શાંતીલાલ મગનલાલ તથા અ સૌ પદમાવતી
શાંતિલાલ મહેતા અમદાવાદ ૫૦૦
- ૫૨ શેઠ હીરાજીજી વનેજીજી કરાવીયા હુબલી ૫ ૧
- ૫૩ શેઠ છોટુભાઈ હરજોવિંદાસ કરોડીવાળા સુબર્ષ ૫ ૧
- ૫૪ પારેખ રતિલાલ નાનચંદ મોરબીવાળા તરફથી તેમના
પિતાશ્રી નાનચંદ બોલિંદજીના સ્મરણાર્થે તથા તેમનાં
ધર્મપત્ની અ સૌ વસંત જલેનના આશરવ નિમિત્તે
હા સુપતલાલ રતિલાલ અમદાવાદ ૫૫૨
- ૫૫ સ્વ. શાહ ત્રીલોચનદાસ મગનલાલના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્ની
શીવકુવરબાઈ તરફથી હા રતિલાલ ત્રીલોચનદાસ શાહ અમદાવાદ ૫૧૧
- ૫૬ શ્રીમાન નાથલાલ માણેકચંદ પારેખ સુબર્ષ (માટુગા) ૫ ૧
- ૫૭ શ્રી લીમટી સંપ્રદાયના ગજાધીપતિ પૂ આચાર્ય
પદ રાજ શ્રી લાખાજી સ્વામીના સ્મરણાર્થે હા
શેઠ જેસીંગભાઈ પોઆલાલ (મહારાજ શ્રી
ઉદયચંદજી સદાનંદજીના ઉપદેશથી) અમદાવાદ ૫ ૧
- ૫૮ સ્વ શ્રી વિનયમુર્તિ શ્રી લક્ષ્મીજીજી મહારાજના સ્મરણાર્થે
હા શેઠ જયીંગભાઈ પોઆલાલ (મહારાજશ્રી ઉદાલાલજી
સદાનંદીના ઉપદેશથી) અમદાવાદ ૫ ૧
- ૫૯ બા. પ્ર. પ્રભાવતીબેન દેસવધાલ ઉબ્બેનવાલા તરફથી
તેમની દીકરા પ્રસન્ને વીરમગામ ૫૫૧
- ૬ શેઠ શ્રીમુલ હરજીવનદાસ રાવચંદ હા છબીલાલ હરજીવન અમદાવાદ ૫ ૧
- ૬૧ શેઠ પાંડતલાલ હ સરાજ તથા દિવાળીબેનના સ્મરણાર્થે
હા શેઠ બાણુલાલ પાંડતલાલ અમદાવાદ ૫ ૨

- ૬૨ અ. સૌ. લીલાવંતીબેન ઈશ્વરલાલ અમદાવાદ ૫૦૨
- ૬૩ હેમાણી પ્રભુદાસ લાણુજી કલકત્તા ૫૫૧
- ૬૪ શેઠ લક્ષ્મણદાસ સેજરામ અમદાવાદ ૫૦૧
- ૬૫ શ્રી સ્થા. જૈન મોટા સંઘ રાજકોટ ૫૦૧
- ૬૬ શેઠ ચાદમલ જીરધોચંદ 'નાસિક સીટી ૫૦૧
- ૬૭ ઝવેરી માણેકચંદજી પન્નાલાલ છજવાણી
હ. ધનવંતીબેન તથા કિરણબેન દિલ્હી ૫૦૧
- ૬૮ શેઠ હ સરાજજી પૂર્ણમલજી ઠાકરીયા ગોગોળાવ ૫૦૧
- ૬૯ શ્રી રવે. સ્થા. જૈન સભા કલકત્તા ૫૦૧
- ૭૦ શેઠ તેજસિંહજી કૃતેલાલજી છાજેડ ઉદેપુર ૫૦૧
- ૭૧ શેઠ રતનચંદ લક્ષ્મીચંદ મુંબઈ ૫૦૦
- ૭૨ શાહ ઉમરશી ભીમશીભાઈ (સ્વ. પિતાશ્રી ભીમશીભાઈ
તથા માતૃશ્રી પાદાબાઈ તથા ધર્મપત્ની પાનબાઈના સ્મરણાર્થે) મુંબઈ ૫૫૨
- ૭૩ શાહ શામલભાઈ અમરસીભાઈ અમદાવાદ ૫૦૨
- ૭૪ મહેતા ચન્દ્રકાન્ત નૌતમલાલ મુંબઈ ૫૦૧
- ૭૫ શેઠ ભીખચંદ્ર લાલચંદ્ર પીપલગામ ૫૦૧
- ૭૬ બેન મોહનીબેન મહેતા મુંબઈ ૫૦૧
- ૭૭ શ્રીમતી મોઘીબેન નવલચંદ શાહ લીમડી (સૌરાષ્ટ્ર) ૫૦૧
- હ. મોતીબેન
- ૭૮ શ્રીમતી વિમલાજી સૂરજમલ મહેતા બેલગામ ૫૦૧
- ૭૯ ઉદ્રાણી નિહાલચંદ્ર હાંકેમચન્દ્ર વકીલ
બી. એ. એલ એલ. બી, રાજકોટ ૫૦૧
- ૮૦ સ્વ. કોઠારી મગનલાલજી કુન્દનમલજીના
સ્મરણાર્થે હ. તેમનાં ધર્મપત્ની રાજકુવરબેન સતારા ૭૫૧
- ૮૧ શેઠ મોહનલાલજી મંછલાલજી હ રમણીકલાલ
(પૂ મુનિશ્રી કૃતેચંદ મ.ના શિષ્ય પં મુનિશ્રી
કનયલાલજી મ. ના ઉપદેશથી) જયપુર ૫૦૧
- ૮૨ કનૈયાલાલજી સોહનલાલજી કાવેડિયા ધારડી ૫૦૧
- ૮૩ શેઠ પ્રતાપમલજી કપુરચંદજી સાહેરાવાળા [પૂજ્ય
કૃતેચંદજી મ ના શિષ્ય મિશ્રીલાલજી મ
ના શિષ્ય ચાદમલજી મ ના ઉપદેશથી] અમદાવાદ ૫૦૧

- ૪૩ પાંચ જયતીલાલ મનમુખલાલ રાજકોટવાળા હા વિનુભાઈ ૫ ૫૦૧
- ૪૪ શ્રી સ્થા જૈન સભા વાંકાનેર ૫૦૧
- ૪૫ શ્રી સ્થા જૈન સભા બોટાદ ૫૦૧
- ૪૬ શેઠ સુદામલજી ચેવમલજી બેવર (જરા) પીવળજાવ ૫ ૧
- ૪૭ સ્વ. દુરખીયા લહેરચંદ માણેકચંદના સ્મરણાર્થે તેમનાં
ધર્મપત્ની જીવતીબાઈ તરફથી હા બાઈ
જયતીલાલ તથા પૂનમચંદભાઈ વડોદરા ૫ ૧
- ૪૮ શાહ અબલદાસ શુકનરાજજી હા શુકનરાજજી અમદાવાદ ૫ ૧
- ૪૯ ભાવસાર ખેડીદાસ જલેશભાઈ બ્રહ્મકા ૫૦૧
- ૫ ન સૌ હીરાબેન માણેકલાલ મહેવા ઘાટકોપર ૫ ૧
- ૫૧ મહેના શાતીલાલ મનનલાલ તથા અ સૌ પદમાવતી
શાતીલાલ મહેવા અમદાવાદ ૫૦
- ૫૨ શેઠ હીરાચંદજી વનેજીજી ક્યારીયા હુબલી ૫ ૧
- ૫૩ શેઠ ડાહુભાઈ હરજોષિદાસ કોરીવાળા સુભઈ ૫ ૧
- ૫૪ પારેખ રતિલાલ નાનચંદ મોરબીવાળા તરફથી તેમના
પિતાશ્રી નાનચંદ મોવિજીના સ્મરણાર્થે તથા તેમનાં
ધર્મપત્ની અ સૌ વસંત બહેનના આકાંક્ષિતપ્ર નિમિત્તે
હા ભુપતલાલ રતિલાલ અમદાવાદ ૫૫૨
- ૫૫ સ્વ શાહ ત્રીલોચનદાસ મગનલાલના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્ની
શીવકુવરબાઈ તરફથી હા રતીલાલ ત્રીલોચનદાસ શાહ અમદાવાદ ૫૧૧
- ૫૬ શ્રીમાન નાથલાલ માણેકચંદ પારેખ સુભઈ (માટુ જા) ૫ ૧
- ૫૭ શ્રી લીમડી સ પ્રદાવના ગજાધીપતિ પૂ આવાઈ
મહારાજ શ્રી લાખાજી સ્વામીના સ્મરણાર્થે હા
શેઠ જીજીગજાઈ પાખાલાલ (મહારાજ શ્રી
ઉદાસજી સદાનંદજીના ઉપદેશથી) અમદાવાદ ૫ ૧
- ૫૮ સ્વ શ્રી વિનયમુર્તિ શ્રી લક્ષ્મીજીજી મહારાજના સ્મરણાર્થે
હા શેઠ જીજીગજાઈ પાખાલાલ (મહારાજશ્રી ઉદાસજીજી
સદાનંદજીના ઉપદેશથી) અમદાવાદ ૫ ૧
- ૫૯ બા ધ્રુ પ્રભાવતીબેન કેશવલાલ ઉત્તેનવાલા તરફથી
તેમની દીકરા પ્રસન્ને વીરમગમ ૫૫૧
- ૬ શેઠ શ્રીપુત દરજીવનદાસ રામચંદ હા છબીલદાસ હરજીવન અમદાવાદ ૫ ૧
- ૬૧ શેઠ પાપટલાલ હંસરાજ તથા દિવાળીબેનના સ્મરણાર્થે
હા શેઠ બાણુલાલ પાપટલાલ અમદાવાદ ૫ ૨

નંબર	નામ	જામ	રૂપિયા
૬૮	શ્રી વર્ધમાન સ્થા. જૈન શ્રાવક સંઘ ૯. પ્રમુખ બંસીલાલ કટારીયા	હિંગણધાટ	૫૦૧
૬૯	લાલાજી રામલાલજી ઝેશનલાલજી (અનેક શુભાંલકૃત મહાસતીજી મોહનદેવીના ઉપદેશથી)	દીલ્હી	૫૦૧
૧૦૦	સ્વ. મહેતા મંગળજી મણીલાલના સ્મરણાર્થે હ. તેમના ધર્મપત્ની ગુણવંતીબહેન મહેતા	ગોંડેચેરી	૫૦૧
૧૦૧	૧૦૮વીયા વનેચંદ અમીચંદ [મહાવીર ટેક્સટાઇલ રોડ] બેંગલોર	પપ્પટ	૫૫૩
૧૦૨	શ્રીયુત તારાચંદ ગેલડા દસ્ત	મદ્રાસ	૫૦૧
૧૦૩	શેઠ ગુજરાજી પુનમચંદજી મહેતા	કીનસગઢ	૫૫૧
૧૦૪	શેઠ અગરમલ્લજી ત્રીકમચંદજી	દંદોર સીટી	૫૫૧
૧૦૫	કાનુગા ધીંગડમલ્લજી સુલતાનમલ્લજી કંવાડ ગઢસીયાણાવાળા	અમદાવાદ	૫૦૧
૧૦૬	લાલાજી નરરતનચંદજી ચોરડીયાનાં ધર્મપત્ની શ્રીમતી રાજકુમારીબેન	દીલ્હી	૫૦૧
૧૦૭	શેઠ ચીમનલાલ રૂપમચંદ	અમદાવાદ	૫૦૧
૧૦૮	શેઠ કાન્જી પાનાચંદ ભીમાણી દસ્ત	કચકતા	૫૦૧
૧૦૯	શેઠ ગીરધરલાલ હસરાજ કામાણી	„	૫૦૧
૧૧૦	અનેક શુભાંલકૃત મહાસતી મોહનદેવીજીના ઉપદેશથી સ્વધર્મી બંધુઓ તરફથી	દીલ્હી	૫૦૧
૧૧૧	સ્વ વિનયચંદજી પારેખના સ્મરણાર્થે દાસા પૂર્ણચંદજી રતનચંદજી પારેખની વતી હ શ્રીમતી પ્રેમાદેવી [શાંત સ્વભાવી મહાસતીજી કુલદ્વંધરબાઈના ઉપદેશથી]	દીલ્હી	૫૦૧
૧૧૨	શ્રીમતી બદામબાઈ મીત્રીલાલજી લૂણીયા ચંડાવલવાળા	અમદાવાદ	૫૦૧
૧૧૩	શેઠ ભરતકુમાર મણીલાલ દલાલ	„	૫૦૧
૧૧૪	શાહ હરખચંદ અમરચંદ	„	૫૦૧
૧૧૫	શાહ જગજીવનદાસ વન્દ્રાવનદાસ	„	૫૦૧
૧૦૬	શેઠ હંસરાજ દક્ષીચંદ કામાણી જૈનભૂવન	કચકતા	૫૦૧

૮૪ શ્રીમાન લાલાલ શાયનલાલ સમ દરલાલ
ક મોતીલાલ

બટોલ ૫ ૧

૮૫ શ્રીમાન જૂરમલ ઇલીયટ સાંકરિયા (પૂ. મ. જી
સ્વામીદાસજીના સપ્રદાય પૂ. મ. શ્રી કૃતેયજી મ. ના
શિષ્ય પ. મુનિ શ્રી કૌશલાલ મ. ના ઉપદેશથી સાંકેરાવ ૫૦૧

૮૬ સ્વ. ગૌરીશંકર કાળીદાસ દેવાઈના સ્મરણાર્થે ક
જૂરમલ મોરીશંકર ઇંદોર ૫ ૧

૮૭ શેઠ આહોબ શ્રી નવોશમભાઈ ક સુશાન્નભાઈ કમાણી જમશેદપુર ૫ ૧

૮૮ સ્વ મહાસતીશ્રી શ્રી ધનદેવીશ્રી મ. સા. ના સ્મરણાર્થે
સ્વ જૂજમલ સજલાલનાં ધર્મપત્ની શ્રીમતી જય
દેવી તરફથી [મહાસતીશ્રી શ્રી મુશ્યાનામતિશ્રી તથા
કુલમતીજીના ઉપદેશથી] રિલ્કી ૫ ૧

૮૯ શ્રીમાન લાલાલ કપુરજી બોયરાના ધર્મપત્ની
શ્રીમતી વસુ તરેવી કા. લાલા શામલજી હેમચંદ્રજી
તરફથી (મહાસતીશ્રી શ્રી મુશ્યાનામતિશ્રી તથા કુલમ
તિશ્રી મહાદેવીના ઉપદેશથી) રિલ્કી ૫ ૧

૯૦ સ્વ મહાસતીશ્રી શ્રી દ્રૌપદાદેવીશ્રી મ. સા. ના સ્મરણાર્થે
શ્રી જોસ. જોસ. જૈન મહિલા સંઘ તરફથી [જનેક બુલાલ કૃત
મહાસતીશ્રી શ્રી મોહનદેવીશ્રી મ. સા. ની પ્રાર્થનાથી] રિલ્કી ૫૦૧

૯૧ સ્વ લક્ષ્મીચંદ્રજીના સ્મરણાર્થે નમ્રિનાદેવી મુજવીના તરફથી હસ્તે
સઘવી હેમવતુમાર જૈન રિલ્કી ૫૦૧

૯૨ સ્વ. પિતાશ્રી લાલા ઝવેરી વલોમલજી મુશ્યાનામતિના સ્મરણાર્થે
હસ્તે શ્રીમતી નમ્રીના દેવી રિલ્કી ૫ ૧

૯૩ લાલાલ કસ્તુરચંદ્રજી ગુણચંદ્રજી સંયોગી ક. જ્ઞાનચંદ્રજી અલવર ૫ ૧

૯૪ સ્વ. પુન્ય પિતાશ્રી કુલંબજી સોમચંદ્ર કુલંબરી
ક. ગૌરીશંકર કુલંબજી કુલંબરી સુબર્ષ ૫

૯૫ શેઠ સોમચંદ્ર બેઠાલાલ ચાલાણી ક.
મુનીલાલભાઈ બેઠીલાલાના સુબર્ષ ૫ ૧

૯૬ શેઠ હેમચંદ્રજી મુલવાનપિંડજી જાવહીલા અમદાવાદ ૧ ૧

૯૭ શેઠ છગનલાલ શામલ વીરાણી તથા
શ્રીમતી વૃજુવરજેન છગનલાલ વિરાણી દુરદેહક
તરફથી શેઠ છગનલાલભાઈના સ્મરણાર્થે રાજકોટ ૫ ૧

નંબર	નામ	ગામ	રૂપિયા
૬૮	શ્રી વર્ધમાન સ્થા. જૈન શ્રાવક સંઘ ૯. પ્રમુખ બંસીલાલ દટારીયા	હિંગણધાટ	૫૦૧
૬૯	લાલાજી રામલાલજી ગેશનલાલજી (અનેક શુભાલકૃત મહાસતીજી મોહનદેવીના ઉપદેશથી)	દીલ્હી	૫૦૧
૧૦૦	સ્વ. મહેતા મંગળજી મણીલાલના સ્મરણાર્થે હ. તેમના ધર્મપત્ની શુભવંતીબહેન મહેતા	ગેડોચેરી	૫૦૧
૧૦૧	૧૧૮વીયા વનેચંદ અમીચંદ [મહાવીર ટેક્સટાઇલ ટ્રેડર્સ	બેંગલોર	૫૫૩
૧૦૨	શ્રીચુત નારાયંદ ગેવડા ટ્રસ્ટ	મદ્રાસ	૫૦૧
૧૦૩	શેઠ ગુરુરાજજી હુનમચંદજી મહેતા	કીનસગઢ	૫૫૧
૧૦૪	શેઠ અગરમલજી ત્રીકમચંદજી	દંડોર સીટી	૫૫૧
૧૦૫	કાનુગા ધીંગડમલજી મુલતાનમલજી કંવાડ ગઢસીયાણાવાળા	અમદાવાદ	૫૦૧
૧૦૬	લાલાજી નરતનચંદજી ચોરડીયાનાં ધર્મપત્ની શ્રીમતી રાજકુમારીબેન	દીલ્હી	૫૦૧
૧૦૭	શેઠ ચીમનલાલ રૂપમચંદ	અમદાવાદ	૫૦૧
૧૦૮	શેઠ કાન્જી પાનાચંદ ભીમાણી ટ્રસ્ટ	કલકત્તા	૫૦૧
૧૦૯	શેઠ ગીરધરલાલ હંસરાજ કામાણી	,,	૫૦૧
૧૧૦	અનેક શુભાલકૃત મહાસતી મોહનદેવીજીના ઉપદેશથી સ્વધર્મી બંધુઓ તરફથી	દીલ્હી	૫૦૧
૧૧૧	સ્વ વિનયચંદજી પારેખના સ્મરણાર્થે દાસા પૂર્ણચંદજી રતનચંદજી પારેખની વતી હ. શ્રીમતી પ્રેમાદેવી [શાત સ્વભાવી મહાસતીજી કુલકુંવરબાઈના ઉપદેશથી]	દીલ્હી	૫૦૧
૧૧૨	શ્રીમતી બદામગાઈ મીશ્રીલાલજી લૂણીયા ચ ડાવલવાળા	અમદાવાદ	૫૦૧
૧૧૩	શેઠ ભરતકુમાર મણીલાલ દલાલ	,,	૫૦૧
૧૧૪	શાહ હરખચંદ અમરચંદ	,,	૫૦૧
૧૧૫	શાહ જગજીવનદાસ વન્દ્રાવનદાસ	,,	૫૦૧
૧૦૬	શેઠ હંસરાજ દક્ષમીચંદ કામાણી જૈનભૂવન	કલકત્તા	૫૦૧

૧૧૭ પૂ. દાદાજી સ્વ. હપુરજીજી તથા દાદીજી દેસરજેન મોરડીયાના રમણજીઈ કે લાખા કુપચજી અને શીમતી વીમલકુવરી જીવેલી ની બતી નામતી નમ્રીનારેલી [મદામતીજી કુવમતીજીના ઉપદેશથી]	દીલ્લી ૫ ૧
૧૧૮ શેઠ નમ્રીનરાય છાટાલાલ	અમદાવાદ ૫૦૧
૧૧૯ શ્રી રથા જન સમ કે શેઠ બજેશમજી શુભાભયજી	બરોડા ૫૦૧
૧૨૦ શ્રી રથા જન સમ	ભદેસર ૫ ૧
૧૨૧ શ્રી સરાઈ જન વિદ્યાવધ	કુમારડી ૫ ૧
૧૨૨ ગાંધી ભુરાલાલ નાનચંદ	સુભર્ષ ૫૦૧
૧૨૩ શીમાન કિ મલસિકજી સાહેબ ગજુડીયા જોડીસનન કમીરનર અબમેર ડી.જી.ન. ગાના મમ્પલની બ. સો માણેકજીવરજેન વરદશી કે ખુશામસિકજી ગજુડીયા	જયપુર ૫૫૧

૫૮૪-સાઈફ મેમ્બરો

અમદાવાદ તથા પરાઓ

નંબર	નામ	મામ	રૂપિયા
૧	શાહ મ રખરલાલ હરમચંદ		૨૫૧
૨	શેઠ છિદાલાલ વળનચંદ હા. ફરીશજીભાઈ		૨૫૧
૩	શાહ કાંતિલાલ ત્રીલોચનરાય		૨૫૧
૪	શાહ પેાપટલાલ મોહનલાલ		૨૫૧
૫	શેઠ પ્રેમચંદ સાકરચંદ		૨૫૦
૬	શાહ રતીલાલ બાદીલાલ		૨૫૧
૭	શેઠ લાલભાઈ મંગળરાય		૨૫૧
૮	૨૧ અમૃતલાલ વધ માનના રમણજીઈ કે. કાનજીભાઈ અમૃતલાલદેસાઈ	૨૫૧	
૯	શાહ ન/વરલાલ ચંદુલાલ		૨૫૧
૧૦	શાહ નરસિકલાલ ત્રીલોચનરાય		૨૫૧
૧૧	શાહ શીખીનચંદ તથા ઉમાકાંત ગુનીલાલ બેપાણી		૩૦૧
૧૨	શ્રી શંકરજી દરિયાપુરી આકેડેમી રથા લેન ઉપાધ્યક્ષ કા. વડીવટ કાંતો શેઠ હપુરજીજી પુરોષોત્તમરાય		૨૫૧

- ૧૩ શ્રી છીપાપોળ દરીયાપુરી આઠઠોટી રથા. જૈન સંઘ
હા. શેઠ ચંદુલાલ અચરતલાલ ૨૫૨
- ૧૪ શાહ ચીનુભાઈ બાલાભાઈ C/o. શાહ બાલાભાઈ મહાસુખલાલ ૨૫૧
- ૧૫ શાહ ભાઈલાલ ઉજમશી ૨૫૧
- ૧૬ શ્રી સુખલાલ ડી. શેઠ હા. ડો. કુ. સરસ્વતીબેન શેઠ ૨૫૧
- ૧૭ શ્રી સોરાપ્ટ્ રથા. જૈન સંઘ હા. શેઠ કાંતિલાલ જીવણલાલ ૨૫૧
- ૧૮ મોદી નાથલાલ મહાદેવદાસ ૨૫૧
- ૧૯ શાહ મોહનલાલ ત્રીકમલાલ ૨૫૧
- ૨૦ શ્રી છઠોટી રથા. જૈન સંઘ હા. શેઠ પોચાલાલ પિતાંબરદાસ ૨૫૧
- ૨૧ દેસાઈ અમૃતલાલ વર્ધમાનના સ્મરણાર્થે હા. ભાઈલાલ અમૃતલાલ ૨૫૧
- ૨૨ શાહ નવીનતરાય અમુલખરાય ૨૫૧
- ૨૩ શાહ મણીલાલ આશારામ ૨૫૧
- ૨૪ શેઠ ચીનુભાઈ સાકરચંદ ૨૫૧
- ૨૫ શાહ વરજીવનદાસ ઉમેદચંદ ૨૫૧
- ૨૬ શાહ રજનીકાંત કસ્તુરચંદ ૨૫૧
- ૨૭ સંઘવી જીવણલાલ છગનલાલ ૨૫૧
- ૨૮ શાહ ચાંતિલાલ મોહનલાલ પ્રાંગધાવાળા ૨૫૨
- ૨૯ અ. સો. બેન રતનબેન નાદેયા હા. શેઠ ધુલજી ચંપાલાજી ૨૫૧
- ૩૦ શાહ હરિલાલ જેઠાલાલ ભાડલાવાળા ૨૫૧
- ૩૧ શ્રી સરસપુર દરીયાપુરી આઠ ઠોટી રથા. જૈન ઉપાધ્ય
હા. ભાવસાર ભોગીલાલ છગનલાલ ૨૫૧
- ૩૨ શેઠ પુખરાજી સમતીરામજી પુ મિયા સાદડીવાળા ૨૫૧
- ૩૩ સ્વ. પિતાશ્રી જવાહરલાલજી તથા પૂજ્ય ચાચાજી હજારીમલજી
બરડીયાના સ્મરણાર્થે હા. સુળચંદ જવાહરલાલજી બરડીયા ૨૫૧
- ૩૪ સ્વ. ભાવસાર બખાભાઈ (મંગળદાસ) પાનાચદના સ્મરણાર્થે
હા. તેમનાં ધર્મપત્ની પુરીબેન ૨૫૧
- ૩૫ સ્વ પિતાશ્રી રવજીભાઈ તથા સ્વ. માતૃશ્રી સુખીબાઈના સ્મરણાર્થે
હા. કકલભાઈ ઠોઠારી ૩૦૧
- ૩૬ ભાવસાર કેશવલાલ મગનલાલ ૨૫૧
- ૩૭ શાહ કેશવલાલ નાનચંદ બખડાવાળા હા. પાવંતીબેન ૨૫૧

૩૮ શાહ છટે દુમાર વાડીલાલ માણેકચંદ શાહસીવાપુરવાળા	૨૫૧
૩૯ શ્રી શાગરમતી રથા જેન સવ હો યેકે મણીલાલભાઈ	૨૫
૪૦ ભાવસાર બિટાલાલ છમનલાલ	૨૫૧
૪૧ ભાવસાર ચકરાભાઈ છમનલાલ	૨૫૧
૪૨ બ. સૌ. બેન છમોબેન રતિલાલ હા ભાવસાર રતિલાલ હરજોબિ દલાસ	૨૫૧
૪૩ ભાવસાર ભોગીલાલ જમનાલાલ પાટણવાળા	૨૫૧
૪૪ સવલી બાણભાઈ કમળશી તથા તેમનાં બર્મપત્નીઓ બ. સૌ બ. પુત્રેન તરફથી તથા નસતબેન તરફથી	૨૫૧
૪૫ બ. સૌ. વિદ્યાબેન વનેચંદ દેનાઈ વર્ધીવણ તથા આઈ પ્રસાદે હા. ભુપે દુમાર વનેચંદ દેસાઈ	૨૫૭
૪૬ શાહ નરવરલાલ બેઝળલાલ	૨૫૧
૪૭ બ. સૌ. સરસ્વતીબેન મણીલાલ છમનલાલ	૩૫૧
૪૮ બ. સૌ. કુબેન (ભાવસાર ભોગીલાલ છમનલાલનાં બર્મપત્ની)	૩૬
૪૯ બ. સૌ. સચિદ્રાબેન (જમતીલાલ ભોગીલાલનાં બર્મપત્ની)	૨૫૧
૫૦ બ. સૌ. સાંતાબેન (રીતુભાઈ ભોગીલાલનાં બર્મપત્ની)	૨૫૧
૫૧ બ. સૌ. મુનદાબેન (રમણલાલ ભોગીલાલનાં બર્મપત્ની)	૨૫૧
૫૨ શેઠ હીરાજી રૂઝનાચંદના રમણભાઈ હા. વાચમણજી રૂઝનાચંદ	૩૦૧
૫૩ શેઠ મણીલાલ બિલાભાઈ	૨૫૧
૫૪ વરવા મુમિદમણજી અનોપચંદ બેધપુર જાં. ૧	૩૦૧
૫૫ રવ. માણેકલાલ જનમાગીલાલ શેઠના રમણભાઈ હા. રમણલાલ માણેકલાલ	૨૫૧
૫૬ રવ. શાહ ધનરાજજી જેમરાજજીના રમણભાઈ હા. રૂનોલાલાલ ધનરાજજી	૩૧
૫૭ શ્રી સારંગપુર હા. બ. હા. રથા જેન સવ હા. શાહ રમણલાલ જગુભાઈ	૨૫૧
૫૮ દોસહી રણજનલાલ છપરાજ તથા લક્ષ્મીભાઈ મહેસાવળા રમણભાઈ હા. દોસી મનહરલાલ રણજનલાલ મુળીવાળા	૨૫૧
૫૯ શાહ પુનમચંદ દુતેચંદ	૨૫૧
૬ શ્રીમુલ જગુભાઈ નદલાલ	૨૫૧
૬૧ શ્રીમુલ અમૃતલાલ ઇશરલાલ મહેતા	૨૫૧
૬૨ શાહ નરણજી મોહનલાલ તથા શાહ શ્રીમનલાલ અમુલમલાઈ	૨૫૧

- ૬૩ અ સૌ. બેન લાલુબેન મગનલાલ હ. શાહ અમૃતલાલ ધનજીભાઈ
બહવાણુ શહેરવાળા ૩૦૧
- ૬૪ અ. સૌ. બેન કાન્તાબેન ગોરધનદાસ (ચાંદમુનિના ઉપદેશથી) ૨૫૧
- ૬૫ દોશી કુલચંદ મુખલાલભાઈ ખોટાદવાળાના સ્મરણાર્થે
હ. દોશી છબીલાલદાસ કુલચંદભાઈ ૨૫૧
- ૬૬ લાલાજી રામકુંવરજી જૈન ૨૫૧
- ૬૭ શેઠ છોટાલાલ ગુલાબચંદ પાલનપુરવાળા ૨૫૧
- ૬૮ શાહ ધીરજલાલ મોતીલાલ ૨૫૧
- ૬૯ સંઘવી સૂર્યકાંત ચુનીલાલના સ્મરણાર્થે
હ. સંઘવી જીવણલાલ ચુનીલાલ ૨૫૧
- ૭૦ ભાવસાર મોહનલાલ અમુલખરાય ૨૫૧
- ૭૧ મહેતા મૂળચંદ મગનલાલ ૨૫૧
- ૭૨ વૈદ્ય નરસિંહદાસ સાકરચંદનાં ધર્મપત્ની રેવાભાઈના સ્મરણાર્થે
હ. હરીલાલ નરસિંહદાસ ૨૫૧
- ૭૩ શાહ કુલચંદભાઈ મુલચંદ હ. હસમુખભાઈ કુલચંદભાઈ ૨૫૧
- ૭૪ શેઠમી મિશ્રીલાલજી જવાહીરલાલજી ખરડીયા ૨૫૧
- ૭૫ શાહ લલ્લુભાઈ મગનભાઈ ચુડાવાળા હ. જશવંતલાલ લલ્લુભાઈ ૩૦૧
- ૭૬ કુમારી પુષ્પાબેન હીરાલાલ (ચાંદમુનિના ઉપદેશથી) ૨૫૧
- ૭૭ શાહ મણીલાલ ઠાકરચી હ. કમળાબેન મણીલાલ લખતરવાળા
(ચાંદમુનિના ઉપદેશથી) ૨૫૧
- ૭૮ કુમારી નલીનીબેન જમતીલલ ૨૫૧
- ૭૯ સ્વ. ઉમેદરામ ત્રીભુવનદાસનાં ધર્મપત્ની કાશીભાઈના સ્મરણાર્થે
હા. શાંતિલાલ ઉમેદરામ (ચાંદમુનિનાં ઉપદેશથી) ૨૫૧
- ૮૦ સ્વ. ભાવસાર મોહનલાલ જગનલાલનાં ધર્મપત્ની દીવાળીભાઈના
સ્મરણાર્થે હ. રતીલાલ માણેકલાલ (ચાંદમુનિના ઉપદેશથી) ૨૫૧
- ૮૧ મહેતા દેવીચંદજી ખુબચંદજી ધોડા ગઢસીયાણાવાળાના સ્મરણાર્થે
હ. મહેતા ચુનીલાલ હરમાનચંદ ૨૫૧
- ૮૨ ધાસીલાલજી મોહનલાલજી કોઠારી કે. લક્ષ્મી પુસ્તક ભંડાર ૨૫૧
- ૮૩ સ્વ શેઠ નાથલાલ રતનાભાઈ મારફતીયાના સ્મરણાર્થે
પુનાબેન તરફથી હ. કરચનભાઈ (ચાંદમુનિના ઉપદેશથી) ૨૫૧

- ૮૪ શાક મળીલાલ છમનલાલ ૨૫૧
- ૮૫ ભાવસાર જ્યતીલાલ ચોગીલાલ ૨૫૧
- ૮૬ ભાવસાર દિનુભાઈ ચોગીલાલ ૨૫૧
- ૮૭ ભાવસાર રમણલાલ ચોગીલાલ ૨૫૧
- ૮૮ ભાવસાર કનુભાઈ સાકરચંદ ૨૫૧
- ૮૯ શેઠ ભેદમલલ સાહેબ ભેપપુરવાળા ૨૫૧
- ૯૦ ૨૫ બેનણી વધેમાન રામજીભાઈ કુલ્લણીવાળા રમણચાંદ
ક. શાંતિલાલ વધેમાન ૨૫૧
- ૯૧ ૨૫ કચરાભાઈ લહેરાભાઈના રમણચાંદ
ક. શાંતિભાઈ કચરાભાઈ ૨૫૧
- ૯૨ ભેદસ્વધર્મી જમુ ક. શાક રીખજલાલજી જયવિલાલજી ૨૫૧
- ૯૩ જ. સો સરસ્વતીબેન મળીલાલ ચતુરભાઈ શાક
(સદાનદી ડોટાલાલ મહારાજશ્રીના ઉપદેશથી) ૨૫૧
- ૯૪ ચીમનલાલ મળીલાલ શાક (દરીયાપુરી સમવાયના ૫ તપસ્વી
મહારાજશ્રી માણેજીજીના ચિધ્ધ મુનિશ્રી મનનલાલજી
મહારાજશ્રીના રમણચાંદ) ૨૫૧
- ૯૫ બેન જેકુવર મજલ લ પારેખ ૨૫૧
- ૯૬ શેઠ મુનમજલજી જવાહીરલાલજી જરદીવા ૨૫૧
- ૯૭ જ. સો લીલાવતી ખીરજલાલ મહેતા
કે રા. ખીરજલાલ ત્રીકમલાલ મહેતા ૩૦૧
- ૯૮ શેઠ રાજમલજી ધામીલાલજી ડેઠાણી કેશીચલવાળા ૨૫૧
- ૯૯ શેઠ મુનીલાલ ભગવાનજી કે રતીલાલ મુનીલાલ ૨૫૧
- ૧૦૦ ભામવતી જરવી કુમાર કે જાસ્વી કુમાર સરરાભાઈ જાવસાર ૨૫૧
- ૧૦૧ જ. સો જયજબેન મનમુખલાલ
ક. મનમુખલાલ જેઠલાલ રૂપેશ ૨૫૧
- ૧૦૨ ૨૫ આસીજાઈ તથા વસ્તીમલજી ભોમાણના રમણચાંદ
ક. શેઠ મીશીમલજી કેવજલજી બોસવાલ કેરવાળા ૨૫૧
- ૧૦૩ ૨૫. શેઠ કીશનમલજી મટોતના રમણચાંદ
ક. શીરમલજી કીશનમલજી ચોખ્ખાવાલા ૨૫૧
- ૧૦૪ ૨૫. શેઠ વડતાવરમલજીના રમણચાંદ
ક. શેઠ વીસાલજી મુકનરાજજી સીવારીવા (બિધપુરવાલા) ૨૫૧

૧૦૫ શાહ મહાસુખલાલ લાઈલાલ (મદાનદી, પંડિત મુનિશ્રી છાટાલાલજી મહારાજના ઉપદેશથી)	૨૫૧
૧૦૬ અ. સૌ. કાંતાબેન કાળીદાસ ઠે. કુમાર બુકબાઈન્ડીંગ વર્ક્સ	૨૫૧
૧૦૭ સ્વ. હીમતલાલ મગનલાલના સ્મરણાર્થે તેમના સુપુત્રો મેસર્સ દ્વારકાદાસ એન્ડ પ્રધર્સ તરફથી	૩૦૧
૧૦૮ અ. સૌ. કાંતાબેનના સ્મરણાર્થે હા. ભાવસાર નાગરદાસ હરજીવનદાસ	૨૫૧
૧૦૯ શ્રી ઉમેદચંદ હાકરથી ઠે. યુ. ટી. ગોપાણી એન્ડ સન્સ	૩૫૧
૧૧૦ પૂ. માતુશ્રીના સ્મરણાર્થે હા. ભાવસાર લોગીલાલ છગનલાલ	૨૫૧
૧૧૧ શાહ શાંતીલાલ મેહુનલાલ	૨૫૧
૧૧૨ સરસ્વતી પુસ્તકભંડાર હા. પ્રભુદાસ મહેતા	૨૫૧
૧૧૩ સરસ્વતી પુસ્તક ભંડાર હા. શાહ ભુરાલાલ કાળીદાસ	૨૫૧
૧૧૪ સ્વ. પિતાશ્રી મોતીલાલજીના સ્મરણાર્થે હા. મહેતા રણજીતલાલજી મોતીલાલજી ઉદેપુરવાળા	૨૫૧
૧૧૫ શેઠ પરસોતમદાસ અમરસીનાં ધર્મપત્ની સ્વ. કુસુમબેનના સ્મરણાર્થે તથા અ. સૌ. સર્વજીતાબેનના માસખમણના નિમિત્તે હા. શેઠ સોમચંદ પરસોતમદાસ (પાટી મુદાનવાળા)	૩૦૧
૧૧૬ શ્રીમાન જોરાવરમથજી ધર્મચંદ્રજી ડુંગરવાલ રાજજી કાકેરડાવાળા (મુનિશ્રી માંગીલાલજીના ઉપદેશથી)	૨૫૧
૧૧૭ ઠે. ધનજીભાઈ પરસોતમદાસ	૨૫૧
૧૧૮ સરસ્વતી પુસ્તક ભંડાર	૩૫૧
૧૧૯ સરસ્વતી પુસ્તક પુસ્તક ભંડાર	૩૫૧
૧૨૦ સરસ્વતી પુસ્તક ભંડાર	૩૫૧
૧૨૧ શેઠ ગેરિલાલજી સુગનલાલજી ઉદેપુરવાળા	૨૫૧
૧૨૨ શેઠ કનૈયાલાલજી સુરાણા પીપલોદાવાળા	૨૫૨
૧૨૩ કામદાર વાડીલાલ રતીલાલ (સાળરમતી)	૨૫૨
૧૨૪ કુમારી ચંપાબેન લોગીલાલ ભાવસાર	૨૮૦
૧૨૫ કુમારી ઉષાબેન જયંતીલાલ ભાવસાર	૨૫૧
૧૨૬ કુમારી ચંદ્રાબેન જયંતીલાલ ભાવસાર	૨૫૧
૧૨૭ કુમારી જયશ્રી રમણલાલ ભાવસાર	૨૫૧
૧૨૮ શાહ ડાહ્યાભાઈ અંબાલાલ	૩૫૧

- ૧૨૬ જરદીયા આદમજીભાઈ જવાહીરભાઈભાઈ ૩૫૧
 ૧૩૦ શ્રી વીજવદાન સુરેન્દ્રભાઈ જ્ઞાનમંદીર ધૌધધયાળા ૩૫૧
 ૧૩૧ શેઠ પાનાજીદ કવેશ્વર સારંગપુર ઉપાધ્યક્ષ ટ્રસ્ટ
 ૬ વહીવટ જાણુભાઈ હીમવત્તાલ ૩૫૧

અમલનેર

- ૧ શાહ નામરદાસ વલ્લભભાઈ ૨૫૧
 ૨ શ્રી રશા જેન સુભ હા મોદાગ્રાહ શીખાલાલ ૨૫૧

અજમેર

- ૧ શેઠ જુનાલાલ મોદનલાલ ડુંગરવાલ ૨૫૧

અડવર

- ૧ શ્રીમતી જવાહેરી ડ જુહાપલ્લી રવનમલ્લી સચેત્રી ૨૫૧
 ૨ શેઠ આદમજીભાઈ મહાવીરપ્રસાદ પાલાવલ ૨૫૧
 ૩ શ્રીમુલ રૂપભદ્રમાર સુમતિભદ્રમાર જેન ૨૫૧

આસનમોક્ષ

- ૧ જાવીશી મણીલાલ જગજીવના રમણદાસે તેમનાં મર્મપત્ની
 મણીભાઈ વરદાસી હા રસિકલાલ, જનિલકાંત, વધા વીરેન્દ્રસાથ ૨૫૧

આટ્ટોટ

- ૧ મહેતા સુનીલાલ નારણદાસ ૩ ૧

આણંદ

- શેઠ રમણીકલાલ જો કપાસી હા મનમુખલાલભાઈ ૨૫૧

આણેવા

- શેઠ રમણલાલ શાવળ જગમોશા ડે. મેશસ જગમોશા દાસ જો ૬
 કુલ (૫) સદાનવી મુનિશી ઇલાલાલ મહાશયના ઉપદેશથી ૨૫૧

ઇમિતપુરી

- ૧ શેઠ જતાલાલ જાનીજીદ જેન ૨૫૧

ઇન્દોર

- ૧ અ. સો. જેન દવાજેન મોદનલાલ દેવાઈ જેવપુરવાળા
 (અ. સો. જેન વિદ્યાજેનના વર્ષોત્તમ નિમિત્તે)
 હા જગવિંદ્રમાર વધા હવેન્દ્રમાર ૨૫૧
 ૨ શ્રીમુન રાડલાલ ઇચનગ્રાહ તુરખીયા ૩૫૧

ઉદયપુર

૧ શેઠ રણજીતલાલજી મોતીલાલજી હિંગડ	૨૫૧
૨ શ્રીમતી સોહિનીબાઈ કે રણજીતલાલજી મોતીલાલજી હિંગડ	૨૫૧
૩ અ સૌ બેન ચન્દ્રાવતી તે શ્રીમાન બહોતલાલજી નાહરના ધર્મપત્ની, હા શેઠ રણજીતલાલજી મોતીલાલજી હિંગડ	૨૫૧
૪ શેઠ છગનલાલજી બાગેચા	૨૫૧
૫ શેઠ મગનલાલજી બાગેચા	૨૫૧
૬ સ્વ શેઠ કળુલાલજી લોઢાના સ્મરણાર્થે હા શેઠ દોલતસિંહજી લોઢા	૨૫૧
૭ સ્વ શેઠ પ્રતાપમલજી સાખલાના સ્મરણાર્થે હા પ્રાણુલાલ હીરાલાલ સાખલા	૨૫૧
૮ શેઠ ભીમરાજજી ચાવરચંદજી બાફળા	૨૫૧
૯ શ્રીયુત સાહેબલાલજી મહેતા	૨૫૧
૧૦ શેઠ પન્નાલાલજી ગણેશલાલજી હીંગડ	૨૫૧
૧૧ શેઠ દીપચંદજી પન્નાલાલજી લોઢા	૨૫૧
૧૨ શેઠ કેસુરચંદજી નારમલજી	૨૫૧
૧૩ શ્રી યુ. એલ. કોઠારી	૩૦૧
૧૪ બાબુ પરશુરામ છગનલાલજી શેઠ	૨૫૦
૧૫ શેઠ કનૈયાલાલજી દારૂલાલજી જૈન	૨૫૧
૧૬ શ્રી વર્ધમાન સ્થા. જૈન શ્રાવક સઘ આમડ	૩૫૧

ઉપલેટા

૧ શેઠ જેઠાલાલ ગોરધનદાસ	૨૫૧
૨ સ્વ. બેન સંતોકબેન કચરા હા. ઓતમચંદભાઈ, છોટાલાલભાઈ મથા અમૃતલાલભાઈ વાલજી (કલ્યાણવાળા)	૨૫૧
૩ શેઠ ખુશાલચંદ કાનજીભાઈ હા. પ્રતાપભાઈ	૨૫૧
૪ દોશી વીક્રમજી હરખચંદ	૨૫૧
૫ સંઘાણી મુળશંકર હરજીવનભાઈના સ્મરણાર્થે હા. તેમના પુત્રો જયતીલાલ તથા રમણીકલાલ	૨૫૧

ઉમરગાવ પોંડ

૧ ચાક મોહનલાલ પોપટલાલ પાનેલીવાળા ૨૫૧

એડન કેમ્પ

૧ મહેલ પ્રેમજીભાઈ માણેજીભાઈના સ્મરણાર્થે

હા. રામચંદ્રભાઈ, પોપટલાલભાઈ તથા રમીકભાઈભાઈ ૨૫૧

૨ ચાક જગજીવનદાસ પુરસોતમદાસ ૨૫૧

૩ ચાક ગોકળદાસ ચામણી ઉઠાણી ૨૫૧

કલકત્તા

૧ શ્રી કમલકાન્ત જન સ્વે સ્થા (ગુજરાતી) સમ ૨૫૧

કલોલ

૧ શેઠ મોહનલાલ જોશીભાઈના સ્મરણાર્થે

હા. શેઠ આત્મશામ મોહનલાલ ૨૫૧

૨ ડૉ. મયાવંદ મનનલાલ શેઠ હા. ડૉ. રતનવંદ મયાવંદ ૨૫૧

૩ સ્વ. નાથાલાલ ઉમેશજીના સ્મરણાર્થે હા. ચાક રતીલાલ નાથાલાલ ૨૫૧

૪ શેઠ મણીચંદ તલકજીના સ્મરણાર્થે

હા. મારફતીલાલ ચંદુચંદ મણીલાલ ૨૫૧

૫ સ્વ. શ્રીકૃત વાઢીલાલ પરીસોતમદાસના સ્મરણાર્થે

હા. પેમાભાઈ તથા આત્મશામભાઈ ૨૫૧

૬ ચાક નાગરદાસ કેશવલાલ ૨૫૧

૭ શ્રી સ્થા જૈન સમ હા. શેઠ આત્મશામભાઈ મોહનલાલભાઈ ૨૫૧

કટી

૧ શ્રી સ્થા દક્ષિણગી ન સમ

હા. જાવસાર હામીદરદાસભાઈ હંશરજાભાઈ ૨૫૧

૨ પાવતીબેન ડે જોસીજીભાઈ હંશરજાભાઈ ૨૫૧

કરજીધુ

૧ શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સમ મીર્ચાગામ કરજીધુ ૨૫૧

કઠોર

૧ સ્થા. જૈન સમ હા. જોસીજીભાઈ પાપાલાલ તરફથી

(માધવસિંહજી મહારાજશ્રીના ઉપદેશથી)

હા. કાઠોરભાઈ રામજી ૨૫૧

કત્રાસગઢ

- ૧ શ્રી શ્રવે સ્થા. જેન સંઘ હ. શેઠ દેવચંદ અમુતખભાઇ ૨૫૧

કલ્યાણ

- ૧ સંઘવી ઠાકરશીલાઇ સંઘજીના સ્મરણાર્થે
હ શાહ હીંમતલાલ હરખચંદ ૨૫૧

કાનપુર

- ૧ શાહ રમણીકલાલ પ્રેમચંદ ૩૦૦

કુંદણી-(આટકોટ)

- ૧ દોશી રતીલાલ ટેકરશી ૨૫૧

કોલકી

- ૧ પટેલ ગોવિંદનાથ ભગવાનજી ૨૫૧
૨ પટેલ ખીમજી જેઠાલાઇ વાઘાણી
(તેમના સ્વ સુપુત્ર રામજીલાઇના સ્મરણાર્થે) ૩૦૨

કમ્પાલા

- ૧ સ્વ. શેઠ નાનચંદ મોતીચંદ પ્રાંકાવાળાના સ્મરણાર્થે
હ. તેમના સુપુત્ર જમનાદાસ નાનચંદ શેઠ ૨૫૧
૨ શ્રીમતી હીરાબેન, રતીલાલ નાનચંદ શેઠ પ્રાંકાવાળા ૨૫૧

કુશાળગઢ

- ૧ શેઠ ચંપાલાલજી દેવચંદજી ૨૫૧

ખાખીનળીયા

- ૧ ખાટવીયા ગુલાબચંદ લીલાધર ૪૦૧

ખારાધોડા

- ૧ સ્વ પિતાશ્રી હરજીવનદાસ લાલચંદ શાહ તથા
સ્વ. અ. સૌ બેન જમકુખાઇ તથા લીલાખાઇના
સ્મરણાર્થે હ નરસિંહદાસ હરજીવનદાસ ૨૫૧
૨ સ્વ. શેઠ ઓઘડલાલ શક્તીચંદના સ્વ. લાઈચંદ ઓઘડલાઇ ૨૫૧

ખીચન

- ૧ શેઠ હીસનાલ મૃત્તીરાજ માણ ૩૫૨

ખુરદીડ

- ૧ શેઠ ગીરધારીજી જી સીતારામજી જેઠપવાળા ૩૦૦
૨ શેઠ નરસિંહરાય શાંતિદાસજી સોશવાળા
(કુનિશ્રી ચાંદમજીના ઉપદેશથી) ૨૫૧

ખખાત

- ૧ શેઠ માણેકલાલ ભગવાનદાસ ૨૫૧
૨ શેઠ ત્રીલોચનદાસ મંગલદાસ ૨૫૧
૩ શ્રી સ્વા દેવ સધ ૨૫૧
૪ શાહ જુહાલ હરીલાલ ૨૫૧
૫ શાહ ચાંદચંદ મોહનલાલ ૨૫૧
૬ શાહ ચાંદચંદ ડેવચંદ ૨૫૧
૭ શાહ સુખલાલ રોહતક ૨૫૧
૮ બાંધી જાપુલાલ મોહનલાલ ૨૫૧
૯ જૈન દલિતા માણેકલાલ ૨૫૧

ગાધીગામ

- ૧ શાહ મોશારજી નાગજી જોડે ૧૫૧

ગુદાવા

- ૧ શાહ માલશી મેલાભાઈ ૨૫૧

ગુલાબપુરા

- ૧ શ્રી સ્વા દેવ વધ માન સધ
હ માગીલાલજી ઉદામજી ખનોપવાળા ૨૫૧
૨ શ્રી જોસલાલ પચાસત હ ગુલાબચંદજી મોરહીયા ૨૫૧

ગોડલ

- ૧ સ્વ ભામદા વચ્છરાજ તુલસીદાસનાં ખમંપત્ની કમલબાઈ
તરફથી હા. માણેકચંદભાઈ તથા કપુરચંદભાઈ ૨૫૧
૨ પીપળીયા હીલાધર હામોદર તરફથી તેમનાં ખમંપત્ની જી સદ
લીલાવતી ચાંદચંદ હેઠારીના બીજા વખીંતપત્ની પ્રચાલીમા ૩૦૧

૩ કામદાર જુઠાલાલ કેશવજીના સ્મરણાર્થે હા

હરીલાલ જુઠાલાલ કામદાર

૩૦૧

૪ સ્વ. કોઠારી કૃપાશંકર મ જીવચંદના સ્મરણાર્થે

હા. તેમના ધર્મપત્ની પ્રભાકુંવરબેન

૨૫૧

૫ કોઠારી ગુલાબચંદ રાયચંદ રંજીતવાળા

૨૫૧

૬ બ સાણી રૂગનાથભાઈ નાનજી હા. ચુનીલાલભાઈ

૨૫૧

૭ માસ્તર હકમીચંદ દીપચંદ શેઠ

૨૫૧

ગોંદીયા

૧ સ્થા. જૈન સંઘ હા શાહ પ્રેમચંદ છોટાલાલ (શેઠ પોપટલાલભાઈ તરફથી) ૨૫૧

ગોધરા

૧ શાહ ત્રીભોવનદાસ ઇગનલાલ

૩૦૧

૨ સ્વ પ્રેમચંદ ઠાકરશીના સ્મરણાર્થે હા શાહ ચુનીલાલ પ્રેમચંદ

૩૦૧

ઘટકણ

૧ શાહ રંડુલાલ કેશવલાલ

૨૫૧

ઘોલવડ (થાણા)

૧ મહેતા ગુલાબચંદ ગ ભીરમભજી

૩૦૦

ઘોડનદી

૧ શેઠ ચંદ્રભાણુ શોભાચંદ ગાંધીયા

૨૫૧

ચુડા

૧ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હા રતીલાલ મગનલાલ ગાંધી

૨૫૧

ચોટીલા

૧ શાહ વનેચંદ જેઠાલાલ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘને ભેટ

૩૫૧

ચારભુજરોડ

૧ શેઠ માગી ભટ્ટ હીરાચંદ બાળેલ

૩૦૧

જમશેદપુર

૧ દોશી અવેરચંદ વલમજી

૨૫૧

જલેસર (ખાલાસોર)

૧ સંઘવી નાનચંદ પોપટભાઈ ચાનગઢવાળા

૨૫૬

જયપુર

- ૧ શ્રીમાન શેઠ શ્રીરમણજી નવલખાના ધમ પત્ની જી સૌ પ્રેમસતાદેવી ૨૫૧

જમવન્તગઢ

- ૧ શ્રીમાન મુન્દરલાલજી નેમીચંદ્રજી તલેસરા ૩૫૧

જામખણીયા

- ૧ શેઠ વસનજી નારણજી ૨૫૧
 ૨ શ્રી સ્વા. જૈન સમ્મત મહેતા રણછીરદાસ પરમાણુજી ૨૫૧
 ૩ સમ્મતી પ્રાણલાલ જીવજીભાઈ ૨૫૧

જામનગર

- ૧ શાહ હોટાલાલ કેશવજી ૨૫૧
 ૨ વોરા ચીમનલાલ દેવજીભાઈ ૨૫૧
 ૩ ડૉ. આલેખ પી. પી. શેઠ ૨૫૦
 ૪ શાહ રંગીલદાસ પોપટલાલ ૨૫૧
 ૫ વહીવટ મણીલાલ જેઠાલાલ પ્રનાતર ૨૫૧

જુનારદેવ

- ૧ મેલાણી ત્રીકમજી લાખાભાઈ ૨૫૧

જુનાગઢ

- ૧ શેઠ મણીલાલ મીઠાભાઈ હં દરિયાલભાઈ (હાગીનામ જીવાવાગા) ૨૫૧

જામજોધપુર

- ૧ શ્રી સ્વા. જૈન સમ્મત મહેતા પોપટલાલ માવજીભાઈ ૩૮૭
 ૨ શાહ ત્રીલોચનદાસ જામવાનજી પાનેલીવાળા ૨૫૧
 ૩ કોશી માણેકચંદ્ર ભવાન ૨૫૧
 ૪ પટેલ લાલજી જુનાભાઈ ૨૫૧
 ૫ શેઠ જાવનજી જોશીભાઈ ૨૫૧
 ૬ શેઠ મધલાલ ચુનીલાલ ૨૫૧

જેતપુર

- ૧ કોશીરી ડોલરકુમાર વેણીલાલ ૨૫૧
 ૨ જી. ડૉ. જૈન સુરજકુમાર વેણીલાલ કોશીરી ૨૫૧

- ૩ શેઠ અમૃતલાલ હીરજીભાઈ હ. નરસેરામભાઈ (જસાપુરવાળા) ૨૫૧
 ૪ દોશી છોટાલાલ વનેચંદ ૨૫૧

જેતલસર

- ૧ શાહ લક્ષ્મીચંદ કપુરચંદ ૨૫૧
 ૨ કાદાર લીલાધર જીવરાજના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્ની
 જબકબેન તરફથી હ. શાંતિલાલભાઈ એંડલવાળા ૨૫૧

જોધપુર

- ૧ શેઠ નવરત્નમલજી ધનવતસિંહજી ૨૫૦
 ૨ શેઠ હસ્તીમલજી મનરૂપમલજી સામસુખા ૨૫૧
 ૩ શેઠ પુષ્પરાજજી પદ્મરાજજી ભાંડારી ૨૫૧
 ૪ શેઠ વસ્તીમલજી આનંદચંદજી સામસુખા ૨૫૧

જોરાવરનગર

- ૧ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હ. શેઠ ચંપકલાલ ધનજીભાઈ ૨૫૧

ઝરીયા

- ૧ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હ. શેઠ કનૈયાલાલ બી મોદી ૨૫૧

ડોંડાયયા

- ૧ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ ૨૫૦

દસા

- ૧ દસાગામ સ્થા. જૈન સંઘ હ. એક સદ્ગૃહસ્થ તરફથી ૨૫૧
 ૨ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હ. બગડિયા નરસેરામ જેઠાલાલ (દસા જંકશન) ૨૫૧

તાસગાંવ

- ૧ સ્વ. ત્રુનીલાલજી દુગડના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્ની
 હોદુંબાઈ તરફથી હ. શેઠ રામચંદજી ૩૫૧

થાનગઢ

- ૧ શાહ ઠાકરશીભાઈ કરશનજી ૨૫૧
 ૨ શેઠ જેઠાલાલ ત્રીલોવનદાસ ૨૫૧
 ૩ શાહ ધારશીભાઈ પાશવીરભાઈ હ. સુખલાલભાઈ ૨૫૧
 ૪ હંસાબેન અરવીંદ હા ભાઈ રવીચંદ માણેકચંદ ૩૦૧

દહાણુસોડ

૧ ગાદ હરજીવનદાસ જોખઠ ખંધાર (કર્ણવીવાળા) ૨૫૧

દોહોડ

૧ ચેઠ માલેકલાલભાઈ ખેઝારજી ૨૫૧

દિલ્હી

૧ લાલાજી પૂર્ણચંદલ જન (સિન્દૂલ બેઠવાળા) ૮૫૧

૨ શ્રીયુત કાંશનચંદજી મહેતાજીચંદજી જોરડીયા

હા શ્રીમતી નમીનાદેવી તથા શ્રીયુત મહેતાજીચંદ જન ૧૫૧

૩ જી સૌ સજ્જનબેન હરમલજી પારેખ ૧૫૧

૪ લાલાજી ગીર્ણલાલજી જૈન જો ઠ ધન્ય ૩૦૧

૫ લાલાજી શુભચંદલાલજી જૈન જો ઠ સન્ન ૩ ૧

૬ બેન વિજ્યાકુમારી જન ઠે મહેતાજીચંદ જન

(વમોવૃદ્ધ સગ્લ સ્વભાષી કુલમતીજી મહાસતીજીની પ્રેરણાથી) ૨૫૧

૭ શ્રીમાન લાલાજી વતનજીજી જન ઠે આઈ સી હોલીયરી ૧૫૧

૮ સ્વ. લાલાશ્રીચંદજી હુઝરીયાના સમરજીભેઈ શબ્દસ્થાન ન્યાયાધિકારી

દુકમજીજી જનના મુખ્ય જીતેન્દ્રકુમાર વહીવટી મુખ્ય અનિલકુમાર

તરફથી લેટ બ વિનયકુમારી ૩૫૧

૯ સ્વ. લાલાજી ચંપાલાલજી જોરડીયાના સમરજીભેઈ લલચંદજી

તથા હીરાલાલજી તરફથી હા ચાંતાદેવી ૩૫૧

૧૦ એક સમજસજ તરફથી હા મહેતાજીજી જન ૩૦૧

૧૧ એક સ્વધર્મી જયુ તરફથી હરને વિજ્યાકુમારી બેન ૩ ૧

૧૨ બાળુ નિરજન સિંહજી જૈન ૧૫૧

મીઠા

૧ ચેઠ મળીલાલ જેચલભાઈ ૧૫૧

ધાર

૧ ચેઠ સામરમલજી પનાવાલજી ૧૫૧

ધાગધા

૧ ભાવદોશિન જી સૌ રૂપાળીબેન હિંમતલાલ સઘવીની તપસ્વીયેઈ

મધની સીમનકાલ પ્રસોતમદાસ સઘવી તરફથી ૩૦૫

૨ સંઘવી નરસિંહદાસ વખતચંદ	૩૦૧
૩ શ્રી સ્થા. જૈન મોટા સંઘ હ. મંગળજી જીવરાજ	૨૫૧
૪ ઠક્કર નારણદાસ હરગોવિંદદાસ	૨૫૧
૫ કોઠારી કપુરચંદ મંગળજી	૨૫૧

ધોરાજી

૧ મહેતા પ્રભુદાસ મુળજીભાઈ	૩૫૧
૨ અ. સૌ બચીબેન બાબુભાઈ	૨૫૧
૩ ધી નવસૌરાણ્ડ ઓઇલ મીલ પ્રા. લીમીટેડ	૨૫૧
૪ સ્વ. રાયચંદ પાનાચંદના સ્મરણાર્થે હ. ચીમનલાલ રાયચંદ શાહ	૩૦૧
૫ ગાંધી પોપટલાલ જ્યેંદભાઈ	૨૫૦
૬ દેસાઈ જગનલાલ હાદ્યાભાઈ લાઠવાળાના ધર્મપત્ની દિવાળીબેન તરફથી હ. કુમારી હસુમતી	૨૫૧
૭ એક સદ્ગૃહસ્થ હ. મહેતા પ્રભુદાસ મુળજીભાઈ	૨૫૧
૮ શેઠ દલપતરામ વસનજી મહેતા	૨૫૧
૯ સ્વ. પિતાશ્રી ભગવાન કચરાભાઈના તથા ચિ. હંસાના સ્મરણાર્થે હ. પટેલ દલીચંદ ભગવાનજી	૩૦૧
૧૦ મહેતા હેમચંદ કાળીદાસ જામખંભાળીયાવાળા	૨૫૧

ધંધુકા

૧ શેઠ પોપટલાલ ધારશીભાઈ	૨૫૧
૨ સ્વ. ગુલાબચંદભાઈના સ્મરણાર્થે હ. વોરા પોપટલાલ નાનચંદ	૨૫૧
૩ શ્રી ચત્રભુજ વાઘજીભાઈ વસાણી	૨૫૧

ધુલીયા

૧ શ્રી અમોલ જૈન જ્ઞાનાલય હ. શેઠ કનૈયાલાલ જાજેડ	૨૫૧
--	-----

ખડીયાદ

૧ શાહ મોહનલાલ ભુરાભાઈ	૨૫૧
-----------------------	-----

નારાયણ ગામ

૧ શેઠ મોતીલાલજી હીરાચંદજી ચોરડીયા બોરીવાળા	૨૫૧
--	-----

નંદુરબાર

૧ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હ. શેઠ પ્રેમચંદ ભગવાનલીલ	૨૫૧
---	-----

નાગોર

- ૧ શ્રીપાલભાઈ જો ક કુલ સામરગલજ લુક' જરવાળા તરફથી ૨૫૧

પાવનપુત્ર

- ૧ બેન લક્ષ્મીભાઈ હ મહેતા હરીલાલ પીતાંજરદાસ ૪૫૧
૨ લોહાગરજ રથા જેન પુસ્તકાલય હ કેશવલાલ જી ચાહ ૨૫૧

પાપુસંગા

- ૧ શ્રી રથા જેન સમ હ ચાહ ઊટાલાલ પુજભાઈ ૨૫૧

પાવેજ

- ૧ સ્વ મનસુખલાલ મોહનલાલ સમથીના સ્મરણાર્થે
હ ભાઈ ખીરજલાલ મનસુખલાલ ૩૦૧

માતીજ

- ૧ રથા જેન સમ હ શ્રીયુત જબાલાલ ગદાસુખરામ ૨૭૦

પૂના

- ૧ શેક હિતમચદજ કેવળચદજ પીકા ૧૫૧

કાવના

- ૧ મહેતા પુખરાજજી હરતીમલજી ચાહરીવાલા ૩ ૧
૨ મહેતા કુદનમલજી જમરચદજી ચાહરીવાલા ૨૫૧

બમરા

- ૧ શેક પાપનલાલ શમવજી રાવરીવાળા
હ નાનચદ પ્રેમચદ ચાહ ૨૫૧
૨ સ્વ માતૃથી જનકભાઈના સ્મરણાર્થે
હ કેશાઈ વૃજલાલ કાળીદાસ ૨૫૧

બરવાળા-ધેલાળા

- ૧ સ્વ મોહનલાલ નરસિંહરામના સ્મરણાર્થે
હ તેમના ખર્મપત્ની મુરજબેન મોરારજી ૨૫૧

બદનાવર

- ૧ શ્રી વર્ધમાન રથા જેન આવક સમ હ મિત્રીલાલ જેન વહીલ ૨૫૧

ખાલોતરા

- ૧ શાહ જેઠમલજી હસ્તીમલજી ભગવાનદાસજી લણસારી ૨૫૧

ખીદડા

- ૧ શાહ કાનજી શામજીભાઈ ૨૫૧

ખીકાનેર

- ૧ શેઠ લેરદાનજી શેઠીયા ૨૫૪

ખેરાબ

- ૧ શેઠ ગાગજી કેશવજી (જ્ઞાનભંડાર માટે) ૨૫૧

ખેલારી

- ૧ શ્રી સ્થા જૈન સંઘ હે શેઠ હબરીમલજી હસ્તીમલજી રાંકા ૨૫૧

ખેરમો

- ૧ શ્રી ખેરમો સ્થા જૈન સંઘ હે. મહેતા નવલચંદ હાકેમજી ૨૫૧

ખેંગલોર

- ૧ શેઠ કીશનલાલજી કુલચંદજી સાહેબ ૨૫૧

- ૨ અબમેરા છાટાલાલ માનસિંગ ૨૫૧

ખોટાદ

- ૧ ૨૫ વસાણી હરગોવિંદદાસ છગનલાલના સ્મરણાર્થે
હા તેમના ધર્મપત્ની છબલબેન ૨૫૧

ખોડેલી

- ૧ શાહ પ્રવીણચન્દ્ર નરસિંહદાસ સાણુંદવાળા ૨૫૧

- ૨ શાહ ગીરધરલાલ સાકરચંદ ૨૫૧

ભાણુવડ

- ૧ શેઠ જ્યેઠલાઈ માણેકચંદલાઈ ૩૫૨

- ૨ સઘવી માણેકચંદ માધવજી ૨૫૧

- ૩ શેઠ લાલજી માણેકચંદ લાલપુરવાળા ૨૫૧

- ૪ શેઠ રામજી જીણાભાઈ ૨૫૧

- ૫ શેઠ પદમશી લીમજી ફેફરીયા ૨૫૧

- ૬ ફેફરીયા ગાડાલાલ કાનજીભાઈ હા. અ. સૌ. શાંતાબેન વસનજી ૨૫૧

- ૭ ૨૫ મહેતા પુનમચંદ ભવાનના સ્મરણાર્થે હા. તેમનાં
ધર્મપત્ની દિવાળીબેન લીલાધર (ગુંદાવાળા) ૨૫૧

ભાવનગર

૧ ૨૧ કુવરણ બાવાભાઈના સ્મરણાર્થે હા. શાહ લહેરચક કુવરણ ૪૦૧

ભાદરણ

૧ શ્રી સ્વા. જૈન સમ હા ૧૭૬ કુલાભાઈ ઝવેરભાઈ ૧૫૧

ભીલવાડા

૧ શ્રી શાંતી જૈન રસ્તકાલય હા ચાંદમલજી જાનમલજી સમગી ૨૫૧

૨ ચેક સીમરાજી ભીખીલાલજી ૩ ૧

ભીમ

૧ ચ પકવાલ જૈન પુસ્તકાલય હા ચેક ધિરામલજી ભંજીલાલજી ૧૫૧

ભુસાવલ

૧ ચેક રાજમલજી નવાલાલજી મેરીટબલટ્રસ્ટ ૨૫૧

ભોબખ

૧ જ્ઞાન મંદિરના સેકેટરી શાહ કુવરણ લખરાજ ૨૫૧

મદ્રાસ

૧ ચેક મેલરાજી દેવીચંદલ મહેતા ૧૫૧

૨ મહેતા મણીલાલ બાઈચંદ ૧૫૧

૩ મહેતા મુરજમલ બાઈચંદ ૧૫૧

૪ મહેતા બાપાલાલ બાઈચંદ ૧૫૧

મનકુવા

૧ સ્વા. છોકોટી સ્વા. જૈન સમ ૨૫૧

મનેર

૧ શાહ ચેરમલજી દેવાચંદલ ન ચાવતમલવાળા

હા પુનમચંદલ ચેરમલજી ભાદવા ૨૫૧

માનકુવા

૨૫ મહેતા કુવરણ નાથાલાલના સ્મરણાર્થે હા તેમનાં પ્રમંપત્ની

કુવરણાર્થે હરખચંદ (માનકુવા સ્વા. જૈન સમ માટે) ૧૫૧

માડવી

૧ શ્રી સ્વા. છોકોટી જૈન સમ હા મહેતા મુનીલાલ વેલજી ૨૭૭

માંડવા

- ૧ શ્રી માંડવા સ્થા. જૈન સંઘ
હ. અ. સૌ. કંચનગૌરી રતીલાલ ગોસલાયા (ગઢડાવાળા) ૨૫૧

માંલેગાંવ

- ૧ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હ. કુતેલાલ માલુ જૈન ૨૫૧

માંગરોલ

- ૧ શાહ ત્રીલોવનદાસ નાનજી ૨૫૦
૨ દોશી ગીરધરલાલ જેઠાલાલ ૨૫૦

મુંબઈ તથા પરાંઓ

- ૧ સ્વ શ્રી પિતાશ્રી કુંદનમલજી મોતીલાલજી મુથાના સ્મરણાર્થે
હા. શેઠ મોતીલાલજી જુબરમલજી (અહમદનગરવાળા) ૨૫૧
૨ વર્ધમાન સ્થા. જૈન સંઘ હ. કામદાર રૂપચંદ શીવલાલ (અંધેરી) ૨૫૧
૩ અ. સૌ કમળાબેન કામદાર હ. કામદાર રૂપચંદ શીવલાલ (અંધેરી) ૨૫૧
૪ સ્વ. માતુશ્રી કડવીબાઈના સ્મરણાર્થે હ. તેમના પૌત્ર
હકમીચંદ તારાચંદ દોશી (અંધેરી) ૨૫૧

- ૫ શાહ હરજીવન કેશવજી ૨૫૧
૬ શાહ રમણીકલાલ કાળીદાસ તથા અ. સૌ. કાન્તાબેન રમણીકલાલ ૨૫૧
૭ સંઘવી હિંમતલાલ હરજીવનદાસ ૨૫૧
૮ વોરા પાનાચંદ સંઘજીના સ્મરણાર્થે
હ. ત્રંબકલાલ પાનાચંદ એન્ડ પ્રધર્સ ૨૫૧
૯ શાહ રામજી કરચનજી ચાનગઢવાળા ૨૫૧
૧૦ સ્વ જટાશંકર દેવજીભાઈ દોશીના સ્મરણાર્થે
હ. રણછીડદામ (બાબુલાલ) જટાશંકર દોશી ૩૦૧
૧૧ ઘેલાણી વલસજી નરસેરામ હ. નરસીંહદાસ વલસજી ૨૫૧
૧૨ કપાસી મોહનલાલ શીવલાલ ૨૫૧
૩ ત્રીલોવનદાસ માનસિંગભાઈ દોદીવાળાના સ્મરણાર્થે
હ. શાહ હરખચંદ ત્રીલોવનદાસ ૨૫૧
૧૪ ખેતાણી મણીલાલ કેશવજી (વડીયાવાળા) ઘાટકોપર ૨૫૧
૧૫ ૨૧ પિતાશ્રી શામળજી કલ્યાણજી ગોંડલવાળાના સ્મરણાર્થે
હા. વૃજલાલ શામળજી બાવીસી ૩૦૧
૧૬ શાહ રવિચંદ સુખલાલભાઈ (દંદર) ૩૫૧

૧૭ સ્વ. આચાર્યશ્રી ગીરજશાસ્ત્રીના સ્મરણાર્થે હા શાંતિસભા	
આચાર્યશ્રી વતી જયવત્સલા શાંતિસભા	૨૫૧
૧૮ ગાંધી દાંતીલાલ માણેકજી	૨૫૧
૧૯ શાંતિ સ્વરૂપભાઈ તથા ભાઈલાલભાઈની કુર્બાની (કાંઠીવલી)	૨૫૧
૨૦ જી. સી. લાલુભેન હા સ્વરૂપભાઈ શામળ	૨૫૧
૨૧ સ્વ. માતૃશ્રી માણેકજીના સ્મરણાર્થે હા શેઠ વલ્લભાસ નાનજી	૨૫૧
૨૨ શેઠ સુરજીવલ્લભ હા શેઠ સુરજીવલ્લભ માણેકજી	૨૫૧
૨૩ શેઠ ખુશાલભાઈ જેઠાભાઈ	૨૫૧
૨૪ શેઠ ચુનીલાલ નરસેરામ વેકરીવાળા	૨૫૧
૨૫ સ્વ. માતૃશ્રી જોમતીભાઈના સ્મરણાર્થે હા શાંતિ સંપાદકશ્રી પાનાબજી	૨૫૧
૨૬ ડૉ. આ. જયવત્સલાલ રણછોડાસ સોભાગજી હા જુનાગઢવાળા	૨૫૧
૨૭ વેરા ડાકરશી જયરાજ	૨૫૧
૨૮ ડૉ. ડા. સુખલાલજી પુનમજી	૨૫૧
૨૯ જી. સી. ભેન કુન્ડગોરી મનજી	૨૫૧
૩૦ ડૉ. ડા. રમણીલાલ હસ્તુરજી	૨૫૧
૩૧ દેશાઈ જમુનલાલ વર્ધમાનના સ્મરણાર્થે	
હા હાલિયલ જમુનલાલ દેશાઈ	૨૫૧
૩૨ સ્વ. જી. ભોવનલાલ જયપાળ વીહીરાજાના સ્મરણાર્થે	
હા હાલિયલ જયપાળ ત્રિભોવનજી જયભેરા	૨૫૧
૩૩ તેલંગી કુમેરજી પાનાબજી	૨૫૧
૩૪ શેઠ સુરજીવલ્લભ દેવીચંદ્ર હાલેડીયા (સાંઠીવાળા)	૨૫૧
૩૫ શેઠ નેમજી સ્વરૂપજી અભાતવાળા હા ભાઈ જોશીલાલ નેમજી	૨૫૧
૩૬ શાંતિ ડૉ. રામજી હાલેડીયા	૨૫૧
૩૭ શ્રીમતી મણીભાઈ વૃજલાલ પારેજી શેરીટોળલ દુર્ગા દેવ	
હા વૃજલાલ દુર્ગાભાઈ પારેજી	૨૫૧
૩૮ હાલિયલ જમુનલાલ મોતીચંદ	(ધાટકોપર) ૨૫૧
૩૯ ડૉ. રામજી સુરજી	૪૦૧
૪૦ ડૉ. રામજી જુનલકીશીર વાળજી	૪૦૧
૪૧ ડૉ. રામજી પ્રવિણજી જયજી	૪૦૧
૪૨ શેઠ મનુભાઈ માણેકજી હા જાડગીયા નરસેરામ મોદરજી	૨૫૧
૪૩ શાંતિ સંપાદક મગનલાલ	૨૫૧

૪૪ શેઠ મણીલાલ ગુલામચંદ	(ઘાટકોપર) ૨૫૧
૪૫ શેઠ છગનલાલ નાનજીભાઈ	૨૫૧
૪૬ શાહ શીવજી માણેકભાઈ	૨૫૧
૪૭ મેસર્સ સવાણી ટ્રાન્સપાટ્ કુા. હા. ગેઠ માણેકલ લ વાડીલાલ	૨૫૧
૪૮ શાહ નગીનદાસ કલ્લાણજી (વેરાવળવાળા)	૨૫૬
૪૯ મહેતા રતીલાલ ભાયચંદ	૨૫૧
૫૦ શાહ પ્રેમજી હીરજી ગાલા	૨૫૧
૫૧ બેન કૈશરભાઈ ચંદુલાલ જોશી ગભાઈ શાહ	૨૫૧
૫૨ પારેખ ચીમનલાલ લાલચંદ સાયલાવાળાના ધર્મપત્ની અ. સૌ ચંચળભાઈના સ્મરણાર્થે હા. સારાભાઈ ચીમનલાલ	૨૫૧
૫૩ ધી મરીના મોડર્ન હાઈસ્કુલ ટ્રસ્ટ ફ ડ હા. શાહ મણીલાલ ઠાકરશી	૨૫૧
૫૫ મહેતા રોસર્ હા. અનોપચંદ ડી. મહેતા	૨૫૧
૫૫ શેઠ રસીકલાલ પ્રભાશંકર મોરખીવાળા તરફથી તેમના માતૃશ્રી મણીબેનના સ્મરણાર્થે	૩૦૧
૫૬ શ્રીયુત જસવંતલાલ ચુનીલાલ વોગ	૨૫૦
૫૭ શાહ કુંવરજી હંસરાજ	૨૫૧
૫૮ દડીયા જેમી ગલાલ ત્રીકમજી	૨૫૧
૫૯ મોદી અલ્લેચંદ સુરચંદ રાજકોટવાળા હા. ડોસાલાલ અલ્લેચંદ	૨૫૧
૬૦ શાહ જેઠાલાલ ડામરશી ધ્રાંગધ્રાવાળા હા. શાહ વાડીલાલ જેઠાલાલ	૨૫૦
૬૧ સ્વ. પિતાશ્રી લગવાનજી હીરાચંદ જસાણીના સ્મરણાર્થે હા. લક્ષ્મીચંદભાઈ તથા કૈશવલાલભાઈ	૩૫૧
૬૨ સ્વ. પિતાશ્રી શાહ અંબાલાલ પુરુષોત્તમદાસના સ્મરણાર્થે હા. શાહ બાપાલાલ અંબાલાલ	૨૫૧
૬૩ સ્વ. કસ્તુરચંદ અમરશીના સ્મરણાર્થે હા. તેમના ધર્મપત્ની અવેરબેન મગનલાલ વતી જયંતીલાલ કસ્તુરચંદ મશકારીયા (ચુડાવાળા)	૨૫૧
૬૪ શેઠ ડુંગરશી હંસરાજ વીસરીયા	૨૫૧
૬૫ શાહ રતનશી મોણીશીની કુાં.	૨૫૧
૬૬ શેઠ શીવલાલ ગુલામચંદ મેવાવાળા	૨૫૧
૬૭ શાહ ચંદુલાલ કૈશવલાલ	૨૫૧
૬૮ સ્વ. પિતાશ્રી વીરચંદ જેસીંગ શેઠ લખનગવાળાના સ્મરણાર્થે હા. કૈશવલાલ વીરચંદ	૨૫૧
૬૯ ચંદુલાલ કાનજી મહેતા	૨૫૧

૭૦	જા વધાન દશા જેન સમ	
	દા દેશરીમલછ અનેપવદછ શુભમીયા	(મતાઈ) ૨૫૧
૭૧	સ્વ. પિતામી પતુભાઈ મોનાભાઈના સમરજુર્થે	૨૫૧
	દા શાહ કાનછ પતુભાઈ	, ૨૫૧
૭૨	અ સી. પાનભાઈ દા શેઠ પદમશી નરસિંદભાઈ	, ૨૫૧
૭૩	સ્વ. નામશીભાઈ રોજપાતાના સમરજુર્થે શામછ નામશી	, ૩૦૧
૭૪	સ્વ બોઠા વજારશી ત્રીલોવનલાસ સરસઈવાળાના સમરજુર્થે	
	દા જગજીવન વજારશી બોઠા	, ૨૫૧
૭૫	સ્વ કાનછ મુજછના સમરજુર્થે તથા માતુમી દિવાળીના	
	૧૬ ઉપવાસના પારજા પ્રસંભે દા જમતિલાલ કાનછ	૨૫૧
૭૬	શાહ પ્રેમછ માલશી બમર	, ૨૫૧
૭૭	શાહ સી જેસીજભાઈ છાસરાવાળા તરફથી તેમનાં જમપત્ની	
	સ્વ નાનભાઈના સમરજુર્થે	, ૩૦૧
૭૮	સ્વ પિતામી શામશી વેલશીના સમરજુર્થે	
	દા શાહ શામછ શામશીભાઈ	, ૩૦૧
૭૯	શાહ વરજીભાઈ સીવછભાઈ	, ૨૫૧
૮૦	શાહ ખીમછ મુમછ મુજ	, ૨૫૧
૮૧	અ સી. સમનાબેન શાંતિલાલ કે શાંતીલાલ ઉજગશી શાહ	, ૨૫૧
૮૨	સ્વ. કેસવલાલ વણશાજી દોઢાશીના સમરજુર્થે શુરજબેન તરફથી	૨૫૧
	દા તનશુજલાલભાઈ	, ૨૫૧
૮૩	સ્વ. પિતામી દ. સરાજ દીરાના સમરજુર્થે	
	દા દેવશી દ. સરાજ કચ્છ બીરદાવાળા	, ૨૫૧
૮૪	પેલામી પ્રભુલાલ તીકમછ	(ગિરીવમી) ૨૫૨
૮૫	શેઠ ત્રલકલાલ કસ્તુરલાલ લીમડી આજસાગર શાસન દારને લેટ (માટુ ગા)	૨૫૧
૮૬	અ સી. બેન રજનમોરી કે શાહ ચંદુલાલ લક્ષ્મીચંદ	, ૨૫૧
૮૭	શાહ નટવરલાલ દીપમદ તરફથી તેમનાં જમપત્ની અ સી	
	મુશીલ બેનના વર્ષાંતપત્ની મુશામીમાં	, ૨૫૧
૮૮	દોશી બીખાલાલ તુજલાલ પાળીયાદવાળા	, ૨૫૧
૮૯	શાહ મોપાળછ માનસજ	, ૨૫૧

૯૦ દોશી કુચ્યંદ માણેકચંદ	”	૨૫૦
૯૧ શેઠ ચ પકલાલ ચુનીલાલ દાદલાવાળા	”	૨૫૧
૯૨ શ્રી વર્ધમાન સ્થા. જૈન શાવક સંઘ		
હ શાહ રવિચંદ સુખલાલ	(દાદર)	૨૫૧
૯૩ શાંતીલાલ ડુંગરશી અદાણી	”	૨૫૧
૯૪ શાહ કરશન લધુભાઈ	”	૨૫૧
૯૫ કીસનલાલ સી. મહેતા	(શીવ)	૨૫૧
૯૬ માતુશ્રી જીવીભાઈના સ્મરણાર્થે		
હ. શામજી શીવજી કચ્છ ગુંદાળાવાળા	(ગોરેગાંવ	૨૫૧
૯૭ સ્વ. શાહ રાયશી કચરાભાઈના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્ની		
નેણુભાઈ વતી હ. જેઠાલાલ રાયશી	”	૨૫૧
૯૮ શુશીલાબેન શકરાભાઈ ઠે. નવીનચંદ્ર વસંતરાવ શાહ (વીરેપાકે)		૨૫૧
૯૯ બેન ચંદનબેન અમૃતલાલ વારિવા		૨૫૧
૧૦૦ સ્વ કાળીદાસ જેઠાલાલ શાહના સ્મરણાર્થે		
હ. સુમનલાલ કાળીદાસ (કાનપુરવાળા		૩૦૧
૧૦૧ શાહ ત્રીલોચન ગોપાળજી તથા અ. સૌ. બેન કમુંબા		
ત્રીલોચન (ધાનગઢવાળા)	(શીવ)	૨૫૧

મુળી

શેઠ ઉજ્જમશી વીરપાળ હ. શેઠ કેશવલાલ ઉજ્જમશી	૩૦૧
---	-----

ભોરખી

૧ દોશી માણેકચંદ સુંદરજી	૩૫૧
-------------------------	-----

ભોમ્બાસા

૧ શ્રીયુત નાથલાલ ડી. મહેતા	૨૫૧
૨ શાહ દેવરાજ પેશરાજ	૨૫૦

મહેસાણા

૧ શાહ પદમશી સુરચંદના સ્મરણાર્થે હ. શીવલાલ પદમશી	૨૫૧
---	-----

યાદગીરી

૧ શેઠ બાદરમલજી સુરજમલજી બેંકસ	૨૫૦
-------------------------------	-----

૭૦ શ્રી વધીમાન રથા- જૈન સમ	
હા કેશરીમલ્લ અનોપચલ્લ ગુળધીમા	(મલાઈ) ૨૫૧
૭૧ સ્વ. પિતામી પતુભાઈ મોનાભાઈના સ્મરણાર્થે	૨૫૧
હા શાહ કાનંદ પતુભાઈ	, ૨૫૧
૭૨ જા. સૌ પાનબાહ હા શેઠ મદમશી નરસિંહભાઈ	, ૨૫૧
૭૩ સ્વ. નાગશીભાઈ સેજપાણના સ્મરણાર્થે રામજી નોગશી	, ૨૫૧
૭૪ સ્વ. ગોઠા વણારશી ત્રીલોવનદાસ સરસઈવાળાના સ્મરણાર્થે	
હા જજીવન વણારશી ગોઠા	, ૨૫૧
૭૫ સ્વ. કાનંદ મુળજીના સ્મરણાર્થે તથા માતૃમી શિવાળીના	
૧૬ ઉપવાસના ખારણા પ્રસન્ને હા જજીવિલાલ કાનંદ	૨૫૧
૭૬ શાહ પ્રેમજી માલશી જાગર	, ૨૫૧
૭૭ શાહ શ્રી જેસી મભાઈ છાસરાવાળા તરફથી તેમનાં ધર્મપત્ની	
સ્વ. નાનભાઈના સ્મરણાર્થે	, ૩૦૧
૭૮ સ્વ. પિતામી રામશી વેલશીના સ્મરણાર્થે	
હા શાહ કામજી રામશીભાઈ	, ૩૦૧
૭૯ શાહ વરજીભાઈ શીવજીભાઈ	, ૨૫૧
૮૦ શાહ ખીમજી મુગજી પુજા	, ૨૫૧
૮૧ જા. સૌ સમતાલેન શાંતિલાલ કે શાંતિલાલ ઉજમશી શાહ	, ૨૫૧
૮૨ સ્વ. કેશવલાલ વણરાજ કોઠારીના સ્મરણાર્થે મુરજીવન તરફથી	૨૫૧
હા તનસુખલાલભાઈ	, ૨૫૧
૮૩ સ્વ. પિતામી હંસરાજ હીરાના સ્મરણાર્થે	
હા દેવશી હંસરાજ કમ્પ બીરદાવાળા	, ૨૫૧
૮૪ પેલાણી પ્રભુલાલ ત્રીકમજી	(ગિરીવંશી) ૨૫૨
૮૫ શેઠ ત્રણજીભાઈ કસ્તુરબાઈ લીમડી જાજરામર સાસલ દારને લેટ (માટુ બા)	૨૫૧
૮૬ જા. સૌ. બેન રજનગીરી કે. શાહ અંદુલાલ લક્ષ્મીચંદ	, ૨૫૧
૮૭ શાહ નટવરજીભાઈ દીપચંદ તરફથી તેમનાં ધર્મપત્ની જા. સૌ	
સુશીલ બેનના વર્ણવપત્ની ખુશાલીમાં	, ૨૫૧
૮૮ દોશી લીખાલાલ વૃજલાલ પાળીયાદવાળા	, ૨૫૧
૮૯ શાહ ગોપાળજી માનસજ	, ૨૫૧

૯૦ દોશી કુચંદ માણેકચંદ	”	૨૫૦
૯૧ શેઠ ચંપકલાલ ચુનીલાલ દાદલાવાળા	”	૨૫૧
૯૨ શ્રી વર્ધમાન સ્થા જૈન શ્રાવક સંઘ		
હ. શાહ રવિચંદ સુખલાલ	(દાદર)	૨૫૧
૯૩ શાંતીલાલ ડુંગરશી અદાણી	”	૨૫૧
૯૪ શાહ કરશન લઘુભાઈ	”	૨૫૧
૯૫ કીસનલાલ સી. મહેતા	(શીવ)	૨૫૧
૯૬ માતૃશ્રી જીવીભાઈના સ્મરણાર્થે		
હ. શામજી શીવજી કચ્છ ગુંદાળાવાળા	(ગોઝેગાંવ)	૨૫૧
૯૭ સ્વ. શાહ રાયશી કચરાભાઈના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્ની		
નેણુભાઈ વતી હ. જેઠાલાલ રાયશી	”	૨૫૧
૯૮ શુશ્રીલાબેન શકરાભાઈ ઠે. નવીનચંદ્ર વસંતલાલ શાહ (વીડેપાડે)		૨૫૧
૯૯ બેન ચંદનબેન અમૃતલાલ વારિવા		૨૫૧
૧૦૦ સ્વ. કાળીદાસ જેઠાલાલ શાહના સ્મરણાર્થે		
હ. સુમનલાલ કાળીદાસ (કાનપુરવાળા)		૩૦૧
૧૦૧ શાહ ત્રીલોચન ગોપાળજી તથા અ. સૌ. બેન કમુંબા		
ત્રીલોચન (ધાનગઢવાળા)	(શીવ)	૨૫૧

મુળી

શેઠ ઉજ્જમશી વીરપાળ હ. શેઠ કેશવલાલ ઉજ્જમશી	૩૦૧
---	-----

ભોરખી

૧ દોશી માણેકચંદ સુંદરજી	૩૫૧
-------------------------	-----

ભોમ્બાસા

૧ શ્રીયુત નાથ લાલ ડી. મહેતા	૨૫૧
૨ શાહ દેવરાજ પેશરાજ	૨૫૦

મહેસાણા

૧ શાહ પદમશી સુરચંદના સ્મરણાર્થે હ. શીવલાલ પદમશી	૨૫૧
---	-----

યાદગીરી

૧ શેઠ બાદરમલજી સુરજમલજી બેંકસં	૨૫૦
--------------------------------	-----

રતનામ

- ૧ જાનેક સહતજનો તરફથી હ ઓગ્રાન કેશરીમળ હ
(શ્રી કેવળચંદ્ર મુનિશ્રીના ઉપદેશથી) ૧૫૧

રાણપુર

- ૧ શ્રીમતી માતૃષી સમરતજાઈના સમરજાયે
હ દે. નરેવમદાસ મુનીશ્રીના કાપડીયા ૧૫૧
- ૨ સ્વ પિતાશ્રી સહેરાભાઈ ખીમજીના સમરજાયે
હ શેઠ કાળીદાસ સહેરાભાઈ વસાળી ૩૦૧

રાણીવાસ

- ૧ શેઠ જવાનમજી નમીયાજી હા બાણુ રંખમજી ૩ ૧

રાયચુર

- ૧ સ્વ માતૃષી મોંધીભાઈના સમરજાયે
હ શાહ શીવજીના જુલાનચંદ્ર વડવાજીવાળા ૧૫૧
- ૨ કાણુસમજી વ્યાંકમજી સ શેતી ૧૫૧

રાજકોટ

- ૧ વાઠીજીવ દાર્જિંગ પ્રિન્સીપ વર્કસ ૪
- ૨ શેઠ રવીશ્રીજી ન્યાયચંદ્ર શ્રીતરીયા ૧૫૧
- ૩ શેઠ મનુભાઈ મુગચંદ્ર (જો છાનીમર સાહેબ) ૧૫૧
- ૪ શેઠ શાંતિદાસ પ્રેમચંદ્ર તેમનાં પ્રમીંતજીના વર્ષીંતવ પ્રસન્ન ૧૫૧
- ૫ શેઠ પ્રજાસમ વીરુજી ૧૫૧
- ૬ મેન સમુનાળા નૌવમજીવ જસાણી (વર્ષીંતવની જુલાલો) ૧૫૧
- ૭ મોઢી સોભાજીવ શેતીચંદ્ર ૧૫૧
- ૮ જસાણી શ્રીમજી વેલજી તરફથી તેમનાં પ્રમીંતજીના જ. શ્રી
સમરવમેનના વર્ષીંતવ નિમિત્તે ૧૫૧

- ૯ દોશી મોનીચંદ ધારશીભાઈ (રીટાયેડ ઓફીસીયરીવ એન્જનીયર) ૨૫૧
- ૧૦ કામદાર ચંદુનાથ છવરાજ (ધ્રાંગધ્રાવાળા) ૨૫૦
- ૧૧ હેમ શ્રી વેન્નાભાઈ સવચંદ ૨૫૧
- ૧૨ દક્તરી પ્રભુલાલ ન્યાલચંદ ૨૫૧
- ૧૩ સ્વ. મહેતા દેવચંદ પુરૂષોત્તમના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્ની
હેમકુંવરભાઈ તરફથી હ. જયંતીલાલ દેવચંદ મહેતા ૨૫૧
- ૧૪ પારખ શીન્દલાલ ઝુઝાભાઈ મોરખામાવાળા હ. અ. સૌ. કંચનબેન ૨૫૨

રાપર

- ૧ પૂજ્ય વાલજીભાઈ ન્યાલચંદભાઈ ૨૫૧

રામપુરા

- ૧ શેઠ તેજમલજી મનોહરલાલજી જોંકર ૩૫૧

રાવટી

- ૧ શેઠ મીયાચંદજી જીહારમલજી કટારિયા ૩૫૧

લખતર

૧. શાહ રાયચંદ ઠાકરશીના સ્મરણાર્થે હ. શાંતિલાલ રાયચંદ શાહ ૨૫૧
- ૨ ભાવસાર હરજીવનદાસના સ્મરણાર્થે
હ. ત્રીલોવનદાસ હરજીવનદાસ ૨૫૧
- ૩ શાહ તલકશી હીરાચંદના સ્મરણાર્થે
હ. ભાઈ અમૃતલાલ તલકશી ૨૫૧
- ૪ શાહ ચુનીલાલ માણેકચંદ ૨૫૧
- ૫ શાહ બદવજી ઓઘડભાઈના સ્મરણાર્થે હ. શાંતિલાલ બદવજી ૨૫૧
- ૬ દોશી ઠાકરશી ગુલાબચંદના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્ની
સમરતબેન તરફથી હ. જયંતિલાલ ઠાકરશી ૨૫૧

લાલપુર

- ૧ નેમચંદ સવજી મોદી હ. ભાઈ મગનલાલ ૨૫૧
- ૨ શેઠ મુલચંદ પોપટલાલ હ. મણીલાલ તથા જેસીંગભાઈ ૨૫૧

લાખેરી

- ૧ માસ્તર જેઠાલાલ મોનજીભાઈ હ. અમૃતલાલ જેઠાલાલ
(સીવીલ એન્જનીયર સાહેબ) ૨૫૧

લાકડીયા

- ૧ શ્રી લાકડીયા સ્થા. જૈન સંઘ હ. શાહ રતનસી કરમણ ૨૫૧

ଶ୍ରୀମତୀ (સીરામ)

૧ શાહ મુકુન્દભાઈ શુભાષ ૨૫૧

શ્રીમતી [પરમહાસ]

૧ શાહ મુકુન્દભાઈ શુભાષ ૨૫૧

૨ હાલદેવ વાસીરામ શુભાષ ૨૫૧

૩ શેઠ વીરચંદ્ર પન્નાલાલ ૨૫૧

૪ શ્રી રામ જૈન સમ હ શાહ ચાંતીલાલ શુભાષ ૩૫૧

સોનાવાલા

૧ શેઠ મનરાજભાઈ શુભાષ ૨૫૧

દુધીયાના

૧ બાલુ રાજેન્દ્રભાઈ જૈન દીક્ષીવાલા ૨૫૧

વડવાળુ રાદેર

૧ શેઠ દીક્ષીપદ્મભાઈ સવાઈલાલ ઠે. શાહ સવાઈલાલ ૨૫૧

૨ હામદાર મનલાલ બોલદાસ ૨૫૧

૩ સમવી મુજબદ મેસરભાઈ ૨૫૧

૪ શેઠ ઠાંવિલાલ નાગરાજ ૨૫૧

૫ વોરા ઘનશ્યમ મનલાલ ૨૫૧

૬ સમવી ચીંપલાલ હીમલભાઈ ૨૫૧

૭ શાહ દેવચીભાઈ દેવદાસ ૨૫૧

૮ વોરા દેસાભાઈ લાલચંદ્ર રામ જૈન સમ

હ વોરા નાનચંદ્ર ચીંપલાલ ૨૫૧

૯ વોરા ધનશ્યમભાઈ લાલચંદ્ર રામ જૈન સમ

હ વોરા પાનાચંદ્ર બોલદાસ ૨૫૧

૧૦ દોશી વીરચંદ્ર મુરચંદ્ર હા. દોશી નાનચંદ્ર ૨૫૧

૧૧ રામ વોરા મણીલાલ મનલાલ તથા વોરા રામજી મણીલાલ ૨૫૧

૧૨ શાહ વાઘીલાલ દેવભાઈ ૨૫૧

૧૩ હામદાર મેસરમનલાલ મનલાલનાં પત્ની

અ સી હમજાનિન રામજીલાલ ૨૫૧

૧૪ શ્રી ગુજરાલ મુખલાલ ૨૫૧

વડોદરા

૧ હામદાર દેવલાલ હિમવરામ મેસર ૨૫૧

- ૨ વકીલ મણીલાલ કૈશવલાલ શાહ ૨૫૧
 ૩ સ્વ. પિતાશ્રી કૃકીરચંદ પુનંભાઈના સ્મરણાર્થે
 હા. શાહ સમણલાલ કૃકીરચંદ ૨૫૧

વડીયા

- ૧ શેઠ ભવાનભાઈ કાળાભાઈ પંચમીયા ૨૫૧

વલસાડ

- ૧ શાહ ખીમચંદ મુલશુભાઈ ૨૫૧

વણી

- ૧ મહેતા નાનાલાલ છગનલાલના ધર્મપત્ની સ્વ. ચંચળબેન તથા
 પુત્રીબેનના સ્મરણાર્થે હા. મનહરલાલ નનાલાલ મહેતા ૨૫૧

વટામણ

- ૧ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હા. પટેલ ડાયાભાઈ હલુભાઈ ૨૫૧

વડગાંવ

- ૧ શેઠ માણેકચંદ શાજમલશ બાફણા ૨૫૧

વાંકાનેર

- ૧ ખંઢેરીયા કાંતિલાલ ત્રંબકનાથ ૨૫૧
 ૨ દક્ષતરી ચુનીલાલ પોપટલાલ મોરખીવાળા
 હા. પ્રાણલાલ ચુનીલાલ દક્ષતરી ૨૫૧

વીંછીયા

- ૧ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હા. અજમેરા રાયચંદ વ્રજપાળ ૨૫૧

વીરમગામ

- ૧ માસ્તર વીઠલભાઈ મોદી ૨૫૧
 ૨ શાહ નાગરદાસ માણેકચંદ ૨૫૧
 ૩ શાહ મણીલાલ શુવણલાલ શાહપુરવાળા ૨૫૧
 ૪ શાહ અમુલખ નાગરદાસનાં ધર્મપત્ની અ. સૌ. બેન લીલાવતીના
 વર્ધીતપ નિમિત્તે હા. શાહ કાંતિલાલ નાગરદાસ ૩૦૦
 ૫ સ્વ. શેઠ ઉજ્જમશી નાનચંદના સ્મરણાર્થે હા. ચુનીલાલ નાનચંદ ૨૫૧
 ૬ સ્વ. શેઠ મણીલાલ લક્ષ્મીચંદ આરાઘોડાવાળાના સ્મરણાર્થે
 તેમના પુત્રો તરફથી હા. ખીમચંદભાઈ ૨૫૧
 ૭ સ્વ. શેઠ હરિલાલ પ્રભુદાસના સ્મરણાર્થે હા. અનુભાઈ ૨૫૧

લીબડી (સૌરાષ્ટ્ર)

૧ શાહ ચક્રભાઈ શુભાચદ ૨૫૧

લીબડી [પચમહાલ]

૧ શાહ કુવરજી શુભાચદ ૨૫૧

૨ છાત્રેદ વાસીરામ શુભાચદ ૨૫૧

૩ શેઠ વીરચંદ પન્નાલાલજી કરણાવટ ૨૫૧

૪ શ્રી રથા. જૈન સંઘ હ. શાહ ચાંતીલાલ શુભાચદ ૩૫૧

લોનાવાડા

૧ રેઠાં ખતરાજી મુલચંદજી મુશા ૨૫૧

હુધીયાના

૧ બાબુ રાજેન્દ્રકુમાર જૈન દીક્ષીવાળા ૨૫૧

વઢવાણ રાહો

૧ શેઠ હીલીપકુમાર સવાઈલાલ ઠે. શાહ સવાઈલાલ ત્રાજકલાલ ૨૫૧

૨ કામદાસ મનનલાલ બેઠકદાસ હ. રવીલાલ મનનલાલ ૨૫૧

૩ સમવી મુળચંદ બેચરભાઈ હ. જીવણલાલ બેચરદાસ ૨૫૧

૪ શેઠ કાવિલાલ નાગરદાસ ૨૫૧

૫ વોરા ચત્રકુબ મનનલાલ ૨૫૧

૬ સમવી શીવલાલ હાંમજીભાઈ ૨૫૧

૭ શાહ દેવશીભાઈ દેવકરજી ૨૫૧

૮ વોરા ડોસાભાઈ લાલચંદ રથા. જૈન સંઘ

હ. વોરા નાનચંદ શીવલાલ ૨૫૧

૯ વોરા ખતજીભાઈ લાલચંદ રથા. જૈન સંઘ

હ. વોરા ચાનાચંદ બેચરદાસ ૨૫૧

૧૦ દોશી વીરચંદ મુરચંદ હા. દોશી નાનચંદ ઉચ્છવશી ૨૫૧

૧૧ રવ વોરા મણીલાલ મનનલાલ તથા વોરા ચત્રકુબ મણીલાલ ૨૫૧

૧૨ શાહ વાસીલાલ દેવજીભાઈ ૨૫૧

૧૩ કામદાસ બેચરદાસ મનનલાલનાં ખર્મપત્ની

ચા. સી કમળાબેન રાગુનવાલા ૨૫૧

૧૪ શ્રી વૃન્દલાલ મુળલાલ ૨૫૧

વડોદરા

૧ કામદાસ દેશવલાલ હિમવતરામ પ્રિદેશર ૨૫૧

સાણુંદ

- ૧ શાહ હીરાચંદ છગનલાલ હ. શાહ ચીમનલાલ હીરાચંદ ૩૦૧
- ૨ ય. સૌ. ચંપાબેન હા. દોશી ૭૫૧૪ લાલચંદ ૨૫૧
- ૩ પટેલ મહાસુખલાલ ડોસાભાઈ ૨૫૧
- ૪ શાહ સાંકરચંદ કાનજીભાઈ ૨૫૧
- ૫ પુરીબેન ચીમનલાલ કલ્યાણજી સંઘવી લીંગડીવાળાના સ્મરણાર્થે
હા. વાડીલાલ મોહનલાલ ઠાકારી ૨૫૧
- ૬ પારેખ નેમચંદ મોતીચંદ મુળીવાળાના સ્મરણાર્થે ૨૫૧
હા. પારેખ ભીખાલાલ નેમચંદ
- ૭ સંઘવી નારણદાસ ધરમશીના સ્મરણાર્થે હા. જયંતિલાલ નારણદાસ ૨૫૧
- ૮ શાહ કસ્તુરચંદ હ હરજીવનદાસ
હા. ડો. માણેકલાલ કસ્તુરચંદ શાહ
- ૯ શેઠ મોહનલાલ માણેકચંદ ગાંધી ચુડાવાળા તરફથી
તેમના ધર્મપત્ની મંછાબેન લલ્લુભાઈના સ્મરણાર્થે ૩૦૧
- ૧૦ સંઘવી કાન્તિલાલ મરખચંદ ૩૦૧
- ૧૧ શાહ ભીખાલાલ નાગરદાસ ૨૫૧

સાલખની

- ૧ દોશી ચુનીલાલ કુલચંદ ૨૫૦

સાદડી

- ૧ શેઠ દેવરાજજી જીતમલજી પુતનીયા ૨૫૧

સાસવડ

- ૧ ચંદનમલજી મુથાનાંધર્મપત્ની ય. સૌ. રજુભાઈ મુથા તરફથી
હ. અમરચંદજી મુથા ૨૫૧

સિંગાપુર

- ૧ દોશી વનેચંદ વછરાજ ૨૫૧

સુરત

- ૧ શ્રી સ્થા જૈન સંઘ હા. શાહ રતિલાલ લલ્લુભાઈ ૨૫૧
- ૨ શ્રી કલ્યાણજી માણેકચંદ હડાલાવાળા ૨૫૧
- ૩ શ્રી હરીપુરા છોકાટી રૂપા જૈન સંઘ હા. બાણુલાલ છાટાલાલ ૨૫૧

સુરેન્દ્રનગર

- ૧ શેઠ ચાપ્પશીભાઈ સુખલાલ ૨૫૧
- ૨ ભાવસાર ચુનીલાલ પ્રેમચંદ ૨૫૧

- ૮ અવધી જેયદલાઈ નારણદાસ ૨૫૧
- ૯ સ્વ શાહ વેલચીભાઈ આકરજી કયાસગઢવાળાના સમસ્જાઈ ૨૫૧
- ૧૦ ધીમનલાલભાઈ ૨૫૧
- ૧૧ પારખ મણીલાલ ગેઠરચી લાલીવાળા (મોટીબેનના સમસ્જાઈ) ૨૫૧
- ૧૨ શાહ નારણદાસ નાનલભાઈના પુત્ર વાડીવાદલાઈના ખર્મપત્ની ૨૫૧
- ૧૩ સો નારગીબેનના વર્ષોત્પ નિમિતે હ શાલિનાથ નારણદાસ ૨૫૧
- ૧૪ સ્વ. છત્રીલાસ બોઠગદાસના સમસ્જાઈ તેમનાં ખર્મપત્ની ૨૫૧
- ૧૫ કમળાબેન વરદશી હ મજુલામુખારી ૨૫૧
- ૧૬ શ્રી સ્વા. જેન જાનિકા સબ હ- સ્વાબેન વાડીવાદ ૨૫૧
- ૧૭ સ્વ ત્રિલોચનદાસ કેવચ હ વધા સ્વ. ચલગબેનના સમસ્જાઈ ૨૫૧
- ૧૮ ડો હિંમતલાલ સૂખલાલ ૨૫૧
- ૧૯ શાહ મુગજી કાનલભાઈ હ- શાહ નારણદાસ જોગદલાઈ ૨૫૧
- ૨૦ શેઠ મોહનલાલ ચિવાબરાસ હ ભાઈ કેલવલાલ વધા મનમુખલાલ ૨૫૧
- ૨૧ શ્રીમતી હીરાબેન નમુભાઈના વર્ષોત્પ નિમિતે /
- ૨૨ હ નમુભાઈ નાનચ હ શાહ ૩૦૧
- ૨૩ શેઠ મણીલાલ શીવલાલ ૨૫૧
- ૨૪ સ્વ. મણીવાર પરચોવમદાસ મુદરલના સમસ્જાઈ ૨૫૧
- ૨૫ હ આકરજી પરચોવમદાસ શાહ ૨૫૧
- ૨૬ સ્વ. મોહનદાસ શુકાભાઈના સમસ્જાઈ હ- તેમનાં ખર્મપત્ની /
- ૨૭ નામીભાઈ વરદશી હ- ચાકરલાલ વધા ચાલીલાલ ૨૫૧

વીજયનગર

- ૧ શ્રી વર્ધમાન શ્વે. સ્વા. જેન જાનિકા સબ ૨૫૧
- ૨ હ ટોટુમલ જાનિકા હ ૨૫૧

વેરાવળ

- ૧ શાહ કેશવલાલ જેયદલાઈ ૨૫૧
- ૨ શાહ ખીમજી સોભાગજી ૨૫૧
- ૩ સ્વ શેઠ મકનલ જેયદલાઈના સમસ્જાઈ તેમનાં ખર્મપત્ની ૨૫૧
- ૪ શાહ વરજાઈ વરદશી હ ખીરજીલાલ મકનલ ૨૫૧
- ૫ શ્રી સ્વા. જેન સબ હ શાહ ચોલેચક કંચનલ ૨૫૧
- ૬ શાહ હરિચંદનદાસ મુલચક કાનપુરવાળા ૨૫૧

સરા

- ૧ શ્રી સરા સ્વા. જેન સબ હ રોશી પાનાચક સોમચક ૨૫૧

॥ श्रीवीतरागाय नमः ॥

‘जैनाचार्य’-जैनधर्मदिवाकर’-पूज्यश्री-वासीलालव्रति-विरचितया
भावबोधिण्याख्यया व्याख्यया समलङ्कृतम्—

श्री-समवायाङ्गसूत्रम् ॥

मङ्गलाचरणम् ।

स्याद्वादसार्थैश्च नयैः प्रमाणै-
र्जीवादिभावप्रतिबोधको यः ।

यः शोभतेऽनन्तचतुष्टयैश्च,
वन्दे मुनीन्द्र तमहं जिनेन्द्रम् ॥ १॥

कमलकोमलमञ्जुपदद्विकं
विमलबोधदवाधविबोधकम् ।
मुचलसद्वरदोरकवस्त्रिकं,
गुरुवर प्रणमामि विशोधकम् ॥ २॥

समवायाङ्गसूत्र का हिन्दी अनुवाद प्रारंभ—
मङ्गलाचरण—

जिन जिनेन्द्रदेव ने स्याद्वादसिद्धान्त के सार्थभूत नयों और प्रमाणों से जीवादि पदार्थों के वास्तविक स्वरूप का प्रतिपादन कर उन्हें समझाया है और जो स्वयं अनन्त चतुष्टयों से विराजमान हैं, ऐसे उन मुनीन्द्र जिनेन्द्र को मैं नमस्कार करता हूँ ॥१॥

जिनके दोनों मनोहर चरण, कमल के जैसे कोमल हैं, विमलबोधि को प्रदान करने वाले बोध को जो जगाने वाले हैं, तथा मुख पर जिनके सदोरकमुखवस्त्रिका सदा शोभित होती रहती है तथा और जो अपनी और पर की आत्मा के विशोधक हैं ऐसे गुरुवर को मैं प्रणाम करता हूँ ॥२॥

समवायांग सूत्रનો ગુજરાતી અનુવાદ પ્રારંભ—

મંગલાચરણ—

જે જિનેન્દ્ર દેવે સ્યાદ્વાદના સિદ્ધાંતના સહાયક નયો અને પ્રમાણો દ્વારા જીવાદિ પદાર્થોના વાસ્તવિક સ્વરૂપનું પ્રતિપાદન કરીને તેમને સમજાવ્યા છે, અને જે પોતે અનંત ચતુષ્ટયોથી વિરાજમાન છે, એવાં એ મુનીન્દ્ર જિનેન્દ્રને હું નમન કરૂં છું ॥૧॥
જેમના બન્ને મનોહર ચરણ, કમલ સમાન કોમળ છે, વિમલ જ્ઞાન અને બોધના જે દેનાર છે, જેના મુખ પર દોરા સહિત મુદ્રપત્તી શોભે છે અને જે પોતાના તથા અન્યના આત્માના વિશોધક (શુદ્ધ કરનાર) છે, એવા ગુરુવરને હું પ્રણામ કરૂં છું ॥૨॥

૩ સ્વ દેશવશાલ મુળલભાઈનાં ધર્મપત્ની અમરતભાઈના	
૪ સમરજીઈ હા, ભાઈલાલ દેશવશાલ શાહ	
૫ શાહ ન્યાયમદ હરમમદ	૨૫૧
૬ શાહ વાઠીલાલ હરમમદ	૨૫૧
શ્રી સ્વા. લેન સઘ	૩૦૧

સુવર્

૧ સાવળા શામલ હીરલ તરફથી સદાનદી લેન ગુનિત્રી ઇટાલાલ	
મહાશબ્દના ઉપદેશથી સુવર્ સ્વા લેન સઘ જ્ઞાનમદારને લેટ	૨૫૧

સન્નેલી

૧ શાહ હુવાળ શુભાવશભાઈ	૨૫૧
૨ શ્રી સ્વા. લેન સઘ હા. શાહ પ્રેમમદ હલી ૧૬	૨૫૧

સોજત ૪

૧ જા. સા, ધીસાલેન લાલમદ મહેતા (ફતેહનગર સઘને લેટ)	૩૫૧
--	-----

હારીજ

૧ શાહ અમુલખ મુળલભાઈ હા મહાશબ્દ અમુલખભાઈ	૨૦૧
૨ સ્વ લેન મદ્રકાવાના સમરજીઈ હા માલ અમુલખ મુળલભાઈ	૩ ૧

હાટીના માળીયા

૧ શેઠ બોપાલભાઈ મીઠાભાઈ	૨૫૦
૨ શ્રીમતી જ્ઞાનહીરી અમવાનદાસના સમરજીઈ	
હા, તેમનાં નાનાલેન જા, શ્રી, મલુલાલેન અમવાનદાસ	૨૫૧

૭

તા ૩૧-૧૨-૬૧ સુધીના મેમ્બરોની સંખ્યા

૧૭ આય મુસ્લમીશ્રી

૨૫ મુસ્લમીશ્રી

૧૨૩ સહાયક મેમ્બરો

૫૮૬ સાધક મેમ્બરો

૫૪ બીજા ઠંઠાસના લુગા મેમ્બરો

૮૦૩

૬૬૬ હાતાબેનો સમિતિ તરફથી જાહેરાત માનુ હુ,

લી. સેવક,

૧૯૬૬ તા ૩૧-૧૨-૬૧

સાકરમદ સપાઈવેડ શેઠ

મત્રી

कृत्तमस्माभिरतस्तज्जिज्ञासुभिस्तत्र द्रष्टव्यम् । जीवाजीवादिपदार्थममुदायस्य संख्या-
नमस्मिन्नङ्गे प्रतिपाद्यतया वर्तते, अतएवास्य समवायाङ्गमिति संज्ञाऽन्वर्था भवति ।

तत्र—किं श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य श्री वर्धमानस्वामिनः पञ्चमो
गणधरः श्री सुधर्मास्वामी श्री जम्बूनामानं स्वान्तेवासिनं समवायाङ्गस्यार्थं विवक्षुः
स्वधर्माचार्यस्य तस्य भगवतो महावीरस्य महिमानं प्रदर्शयन् केवलालोकमाभा-
त्कृतलोकालोकस्वरूपस्य वीतरागस्य वचनमनुसृत्य प्रवृत्तस्य स्वकीयवचनस्य
प्रामाण्यं श्रद्धयन्तं चापि समुद्भूतयन्निदमाद्यं सूत्रमाह—

मूलम्—सुयं मे आउसं तेणं भगवया एवमक्खायं ॥ सू. १॥

टीका—‘आउसं’ आयुष्मन् ! हे चिरजीविन ! जम्बू : , आयुष्मन्निति पदं जिप्यस्य
जम्बूस्वामिनः कोमलवचनामन्त्रणं विनयित्वबोधनार्थम् । किं च तस्याशेषश्रुतज्ञानो-

में मैने किया है । अतः जिज्ञासु इस विषय को उसमें से जान सकते हैं ।
तात्पर्य कहने का यह है कि जीव अजीव आदि पदार्थ समूह की
गणना इस अंग में प्रतिपाद्यरूप से करने में आई है, इसलिये इसकी
समवाय यह संज्ञा सार्थक है ।

श्रमण भगवान् महावीर श्री वर्धमान स्वामी के, पंचम गणधर
श्री सुधर्मास्वामी, अपने शिष्य जंबूस्वामी के प्रति, समवायांग के अर्थ
को कहने की इच्छा से, निज धर्माचार्य उन भगवान् महावीर की महिमा
को दिखलाते हुए, अपने वचन में कि जो, केवलज्ञान रूप आलोक
(प्रकाश) से लोक और अलोक के स्वरूप को साक्षात् करने वाले ऐसे
वीतराग प्रभु के वचन के अनुसार ही प्रवृत्त हुए अपने वचन में
प्रमाणता और श्रद्धयता प्रकट करने के अभिप्राय से इस प्रथम सूत्र
को कहते हैं—‘सुयं मे इत्यादि ।

स श्रवणी टीकाभा में कहेव छे-तो जिज्ञासु ते विषयने त्थार्थी ज्वल्ली शके छे
तात्पर्य ओ न छे के आ अगमा श्रव, अश्रव आदि पदार्थसमूहनी गणुना
प्रतिपाद्यरूपे क्वाभा आवी छे तेथी तेनी समवाय ओ संज्ञा सार्थक छे

श्रमण भगवान् महावीर श्री वर्धमान स्वामीना पाचमा गणधर श्री, सुध
र्मास्वामी, पोताना शिष्य न ज्बूस्वामीने, समवायगतो अर्थ समजववानी छेच्छथी,
पोताना धर्माचार्य ओवा ते महावीर प्रभुने महिमा जतावता, केवलज्ञानरूप प्रका-
शथी लोक अने अलोकनु स्वरूप प्रत्यक्ष जेथे शकनारा वीतराग प्रभुना वचनानुसार
न प्रवृत्त थयेव पोताना वचनोभा प्रमाणता अने श्रद्धयता दर्शाववानी छेतुथी आ
प्रथम सूत्र कहे ने—“सुयं मे” इत्यादि ।

સમવાયાગ્નસૂત્રસ્ય, વૃત્તિ સરસ્વમાપયા ।

ઘાસીલાલેન મુનિના, ક્રિયત માત્રવાપિનો ॥ ૩૧ ॥

મ્યાનાગ્ન્યતતૃતીયાદ્યાનન્તર મમત્રાયનામકમિદં ચતુર્થમદ્વ ક્રમપ્રાપ્તમેવાસ્તિ ।

અથ ક મમત્રાયાગ્નચ્ચાર્થ ૧ ઉચ્યતે-સમ્=સમ્પદ, અવ=સ્વરૂપમર્યાદયા, અવ.=અવનં-પરિચ્છેદ સમ્પાદન જીવાત્રીયાદિપદાર્થમદ્વદાયમ્ય યન્ન સ સમવાય । યદ્વા-મમવચન્તિ સંમિશ્રન્તિ જીવાત્રયા માત્રા વિપયતયા-પ્રતિપાદતયા યન્ન સ સમવાય ઇતિ । મમત્રાય પદાગ્ન-સમત્રાયોગમ્ । ન્દ ઠિ પ્રવચનરૂપસ્ય પુરુષસ્ય ચામમ દ્વાસ્થાનાયં મરતિ । પ્રવચનાગ્નાર્ના સવિસ્તરવર્ણનમુપામકદ્વદ્વાસૂત્રપ્રવ્યાસ્યાયાં

મં મુનિ ઘાસીલાલ મમવાયાગ મુત્ર ક ડુપર મરલ માપા મેં માવ પોધિની નામકી વૃત્તિ રચતા હું ॥૩૧॥

સ્થાનાગ્ન નામક તૃતીય અગ કે અનન્તર સમવાયાગ નામ કા યદ્વ ચૌથા અગ ક્રમપ્રાપ્ત છે । કસ સમવાયાગ શબ્દ કા ધાન્યાર્થ કયા છે ? કસ પ્રશ્ન કા ઉત્તર કસ પ્રકાર છે સમવાય પદ્ મેં સમ્ 'અવ' 'અવ' એસે ય ત્રીન શબ્દ છે મો 'સમ્' કા અર્થ સમ્પદ 'અવ' કા અર્થ સ્વરૂપ મર્યાદા ઓર 'અવ' કા અર્થ પરિચ્છેદ-સંખ્યા છે । કસસે યદ્વ તાત્પર્ય નિકલ્પતા છે કિ કસ શાસ્ત્ર મેં જીવ અર્જીય આદિ પદાર્થ સમૂહ કી અચ્છી તરફ સે કન કે સ્વરૂપ પ્રદર્શન પૂર્વક સમ્પા-ગણના કી ગઈ છે । અથવા જીવાદિક પદાર્થો કા કસમેં પ્રતિપાદન કિયા ગયા છે । કસલિયે પ્રતિપાદન રૂપ સે લે મય કસમેં નિષ્ક્રિય દ્રુષ્ટ છે । યદ્વ સમવાયરૂપ અગ પ્રવચનરૂપ પુરુષ કી ચામજેયા કે સ્થાનાપન છે । પ્રવચનરૂપ પુરુષ કે સમસ્ત અર્થા કા મધિસ્તરવર્ણન ત્રયામકદ્વયાગ મુત્ર કી અગારધર્મ સર્જીવની ત્રીકા

દુ મુનિ ઘાસીલાલ " સમવાયાગ સૂત્ર " ઉપર સ્પષ્ટ ભાષામાં "માત્રવાપિની" નામની વૃત્તિ-ટીકા રચુ છું ॥૩૧॥

અનુક્રમે લેતા, સ્થાનાગ્ન નામના ત્રીજા અગ પછી સમવાયાગ નામનું આ ચોથું અગ આવે છે આ સમવાયાગ શબ્દનો બાહ્યાર્થ શો ? આ પ્રશ્નનો જવાબ આ પ્રમાણે છે-

સમવાય પદમા સમ્ 'અવ' અને 'અવ' એ ત્રણ શબ્દો છે 'સમ્' નો અર્થ સમ્પદ 'અવ' નો અર્થ સ્વરૂપમર્યાદા અને 'અવ' નો અર્થ પરિચ્છેદ-સંખ્યા છે તેનો ભાવાર્થ એ છે કે આ શાસ્ત્રમાં જીવ, અજીવ આદિ પદાર્થસમૂહની સારી રીતે, તેમના સ્વરૂપ પ્રદર્શન પૂર્વક સમ્પા-ગણના કરવામાં આવેલ છે અથવા આ શાસ્ત્રમાં જીવાદિક પદાર્થનું પ્રતિપાદન કરાતું છે તેથી તે સૌ પ્રતિપાદન રૂપે આમાં નિષ્ક્રિય ધર્મો છે આ સમવાયરૂપ અગ પ્રવચન રૂપ પુરુષની યાત્રી જવાના જેવું છે પ્રવચન રૂપ પુરુષનાં સમસ્ત અંગોનું સવિસ્તરવર્ણન ત્રયામક દર્શાગ સૂત્રની અગારધર્મ

स्तवचनश्रवणं च नोपपद्यते । भगवया भगवता=भग-ज्ञान सकलपदार्थविषयकम्
(१), माहात्म्यम्=अनुपममहनीयमहिमसम्पन्नत्वम् (२), यशः-विविधानुकूलप्र-
तिकूलपरीषदोपसर्गसहनसमुद्भूता जगद्रक्षणप्रज्ञासमुत्था वा कीर्तिः (३) वैराग्यं=
सर्वथा कामभोगाभिलाषराहित्यम्, यद्धा-क्रोधादिरूपायनिग्रहलक्षणम् (४), मुक्ति-
सकलकर्मक्षयरूपो मोक्षः (५), रूपं-सुरासुरनरनिरुहृदयहारि सौन्दर्यम् (६),
वीर्यम्-अन्तरायान्तजन्यमनन्तसामर्थ्यम् (७), श्रीः-घनघातिकर्मपटलविघटनननि-
तानन्तचतुष्टयरूपीः (८), धर्मः अपवर्गद्वारकपाटोद्घाटनसाधनं श्रुतचारित्रलक्षणम्

से यह बात अपने आप लभ्य हो जाती है कि मैंने गुरु के समीप
निवास किया है । क्यों कि गुरु के पासमें निवास किये बिना उनके
चरणकमलों का स्पर्शपूर्वक अभिवादन करना और उनके मुखारविन्द से
निकले हुए वचनों का सुनना इन नहीं सकता है । 'भगवान्' पद में जो
'भग' शब्द है उसके दश अर्थ हैं उनसे युक्त को 'भगवान्' कहते हैं जैसे
-ज्ञान-सकल पदार्थों को विषय करने वाले ज्ञान से१, माहात्म्य-अनुपम
महनीय महिमा से२, यश-विविध अनुकूल एवं प्रतिकूल परीषद् और उप-
सर्गों को सहन करने से उत्पन्न हुई कीर्ति से, अथवा जगत् को रक्षण करने
वाली प्रज्ञा से उत्पन्न हुई कीर्ति से३, वैराग्य-सर्वथा कामभोगों की अभि-
लाषा के त्याग से, अथवा क्रोधादिरूपायों के निग्रह से४, मुक्ति-सकल-
कर्मक्षयरूप मुक्ति से५, रूप-सुर और असुरों के हृदय को हरण करने
वाले सौन्दर्य से६, वीर्य-अन्तरायकर्म के अन्त होने से जनित अनन्त
शक्ति से७, श्री-घनघातिकर्मों के सर्वथा क्षय से जन्य अनन्तचतुष्टयरूप
अन्तरंग लक्ष्मी से८ धर्म-मोक्ष के कपाट को उद्घाटन करने में साधन अत

छे गुरुना पासे निवास कया बिना, तेमना यच्छकमलाना स्पर्शपूर्वकनु अलिवादन अने
तेमना सुभारविदमाथी निजगना वयनानु श्रवणु शक्य अनतु नथी "भगवान्"
पदमा जे 'भग' शब्द छे तेना दस अर्थ छे, ते अर्थथी जे युक्त होय ते भगवान् कहिये य
छे ते दस अर्थ नीचे प्रमाणे जे [१] ज्ञान-सघणा पदार्थोने विषय करनार ज्ञान.
[२] "माहात्म्य"-अनुपम महनीय महिमा [३] यश-विविध अनुकूल अने प्रतिकूल
परीषद् अने उपसर्गों सहन करवाथी प्राप्त थयेकी कीर्ति अथवा जगत्तु रक्षण
करनार प्रज्ञाथी उत्पन्न थयेकी कीर्ति [४] "वैराग्य"-सर्वथा कामभोगोनी छुट्टाने
त्याग अथवा क्रोधादि कषायेना निग्रह [५] "मुक्ति"-सकल कर्मोना क्षयरूप मुक्ति
(६) रूप-सुर असुरोना हृदयने हरनार सौन्दर्य (७) वीर्य-अन्तराय कर्मोना नाश
थवाथा पेदा थयेल अनन्त शक्ति (८) श्री घनघातिक-कर्मोना तदन क्षय थवाधी
पेदा थयेल अनन्त चतुष्टयरूप अन्तरंग लक्ष्मी (९) धर्म-मोक्षना द्वाजाना कमाउ

પદેશ્વરવળ-ગ્રહણપારણ-રત્નપ્રચારાધન-મોક્ષમાધનયોગ્યતામાપ્ત્યર્થમેતદ્વચનમ્ ।
 વિનાઽઽયુષા ધ્રુતધ્રુવણાદિમોક્ષપર્યન્તસિદ્ધિર્ન કસ્યપિત્ત સમવર્તીતિ માષ । एत
 દ્રવચનપ્રમાણાદેવ જમ્બૂસ્વામી મોક્ષપદ તસ્મિન્નેષ જન્મનિ પાપ । ધ્રુતે=ધ્રુવણાવિ
 પયીકૃતે, 'મ' મયા, સાક્ષાઙ્ગગત્ત્વનાત્ નહુ પરમ્પરયા, પતો ગણધરાણામનન્તરાગમો
 મવતિ । 'મયાધ્રુતમ્' इत्यनेन 'गुरुस्समीपे निवसता मया' इत्यर्थं सुतरां लभ्यते ।
 ગુરુસ્સમીપે નિવાસમ તરેણ હિ ગુરુધરણસરોજસ્પર્શપૂર્વકામિત્રાદનં તન્મુત્તારચિન્દધિનિ

ટીકાર્થ-(આડસં) હે ધિરજીવિન્ જન્મ! (મે)મૈને (મુય) સુનાઈ (તેણ) મગ
 વયા દ્વમક્ત્વાયં) ઠન મગવાન ને પેસા કહ્યા હૈ । સૂત્ર મેં “આડસં” यह पद
 શિષ્ય જંબૂસ્વામી કો કોમલધ્રુવણ કરને કે લિયે પ્રયુક્ત ક્રિયા
 ગયા હૈ જો ઠનમેં વિનીતતા પ્રકટ કરતા હૈ । “આયુષ્મન્” इस संघोधन
 પદ સે મો ધ્રુવણસ્વામીને અપન અન્તેવાસી જંબૂસ્વામી કો સંયોધિત ક્રિયા
 હૈ ઠમસે यह उनकी इच्छा उनके प्रति जाहिर होती है कि वे अशेष
 ધ્રુતજ્ઞાન કે ઉપદેશ કા અવળ કરને કી, ઠમે ગ્રહણ કરને કી, ધારણ
 કરને કી રત્નપ્રયકો આરાધન કરને કી મૌર મોક્ષ કે સાધને કી યોગ્યતા
 પ્રાપ્ત કર લેવે । ક્યોં કિ વિના આયુ કે ધ્રુતધ્રુવણાદિ સે લેકર મોક્ષપર્યન્ત
 કી સિદ્ધિ કિસી મી જીવ કો સંમલિત નહિં હોતી હૈ । इस वचन के
 પ્રમાણસે હી જમ્બૂસ્વામી ને મોક્ષપદ ઠસી મઘ મેં પ્રાપ્ત કર લિયા ।
 “મૈને સુના હૈ” इस वाक्य का तात्पर्य ऐसा है कि मैंने जो सुना है वह
 સાક્ષાત્ મગવાન કે મુલસે હી સુના હૈ પરંપરા સે નહિં, કારણ ગણધરો
 કા આગમ મનન્તર આગમ હોતા હૈ । मैंने सुना है” इस तरह के कथन

ટીકાર્થ-“આડસં” હે ધીર્મો જન્મ! “મ મુય” સાંભળ્યું છે “તેમ મગવા
 દ્વમક્ત્વાયં” તે ભગવાને આ પ્રમાણે કહ્યું છે સૂત્રમાં “આડસં” शिष्य જ
 સ્વામીને મુદ્રવચ્ચનેથી સંબોધવાને વચનમાં છે, ને તેમની નમ્રતા દર્શાવે છે
 “આયુષ્મન્” આ સંબોધનથી શ્રુધર્માં સ્વામીએ પોતાના જ તેવાસી જંબૂસ્વામીને
 સંબોધ્યા છે, તેથી તેમની એ ઇચ્છા પ્રગટ થાય છે કે તેઓ સમસ્ત જ્ઞાનજાનના
 ઉપદેશને સાંભળવાની, તેને ગ્રહણ કરવાની, ધારણ કરવાની, રત્નપ્રયનું આરાધન કરવાની
 અને મોક્ષ સાધવાની યોગ્યતા પ્રાપ્ત કરેકારણકે આયુષ્મ વિના ધ્રુતધ્રુવણ આદિથી લઈને
 મોક્ષ સુધીની પ્રાપ્તિ મોઘ પણ થવને માટે શક્ય નથી. આ વચનને પ્રમાણે જ જંબૂસ્વામીએ
 એ જ અવમાં મોક્ષપદ પ્રાપ્ત કરી લીધું એ સાંભળ્યું છે” આ વાક્યનો અર્થ એ
 છે કે મેં ને સાંભળ્યું છે તે પ્રત્યક્ષ ભગવાનને મુખે સાંભળ્યું છે પરંપરાથી નહીં
 કારણકે મધુધરના આગમ ત્યાર પછીના આગમ હોય છે “મે સાંભળ્યું છે” આ
 પ્રકારના કથનથી એ વાત આપોઆપ સમજાય છે કે મેં મુઠેની પાસે નિવાસ કર્યો

सृतवचनश्रवणं च नोपपद्यते । भगवया भगवता=भग.-ज्ञानं सकलपदार्थाविषयकम् (१), माहात्म्यम्=अनुपममहनीयमहिमसम्पन्नत्वम् (२), यशः-विविधानुकूलप्रतिकूलपरीपहोपसर्गसहनसमुद्भूता जगद्रक्षणप्रज्ञासमुत्था वा कीर्तिः (३) वैराग्यं=सर्वथा कामभोगाभिलाषापरहित्यम्, यद्वा-क्रोधादिरूपायनिग्रहलक्षणम् (४), मुक्ति-सकलकर्मक्षयरूपो मोक्षः (५), रूपं-सुरासुरनरनिकरहृदयद्वारि मौन्दर्यम् (६), वीर्यम्-अन्तरायान्तजन्यमनन्तसामर्थ्यम् (७), श्रीः-घनघातिकर्मपटलविघटनमनि तानन्तचतुष्टयलक्ष्मीः (८), धर्मः अपवर्गद्वारकपाटोद्घाटनसाधनं श्रुतचारित्र्यलक्षणम्

से यह बात अपने आप लभ्य हो जाती है कि मैंने गुरु के समीप निवास किया है । क्यों कि गुरु के पासमें निवास किये बिना उनके चरणकमलों का स्पर्शपूर्वक अभिवादन करना और उनके मुखारविन्द से निकले हुए वचनों का सुनना इन नहीं सकता है । 'भगवान्' पद में जो भग शब्द है उसके दश अर्थ हैं उनसे युक्त को भगवान् कहते हैं जैसे -ज्ञान-सकल पदार्थों को विषय करने वाले ज्ञान से१, माहात्म्य-अनुपम महनीय महिमा से२, यश-विविध अनुकूल एवं प्रतिकूल परीपह और उपसर्गों को सहन करने से उत्पन्न हुई कीर्ति से, अथवा जगत् को रक्षण करने वाली प्रज्ञा से उत्पन्न हुई कीर्ति से३, वैराग्य-सर्वथा कामभोगों की अभिलाषा के त्याग से, अथवा क्रोधादिरूपायों के निग्रह से४, मुक्ति-सकल-कर्मक्षयरूप मुक्ति से५, रूप-सुर और असुरों के हृदय को हरण करने वाले मौन्दर्य से६, वीर्य-अन्तरायकर्म के अन्त होने से जनित अनन्त शक्ति से७, श्री-घनघातिक कर्मों के सर्वथा क्षय से जन्य अनन्तचतुष्टयरूप अन्तरंग लक्ष्मी से८ धर्म-मोक्ष के कपाट को उद्घाटन करने में साधन भूत

छे गुरुना पासे निवास कया बिना, तेमना अगुणकमलना स्पर्शपूर्वकतु अलिवादन अने तेमना सुखारविन्दमाथी निकलना वचनानु श्रवणु शक्य अनतु नथी "भगवान्" पदमा जे 'भग' शब्द छे तेना दस अर्थ छे, ते अर्थथी जे युक्त होय ते लगवान् कहिय छे ते दस अर्थ नीचे प्रमाणे छे [१] ज्ञान-सधना पदार्थोने (वधय करनार ज्ञान. [२] "माहात्म्य"-अनुपम महनीय महिमा [३] यश-विविध अनुकूल अने प्रतिकूल परीपह अने उपसर्गो सहन करवाथी प्राप्त थयेली कीर्ति अथवा जगत्तु रक्षण करनार प्रज्ञाथी उत्पन्न थयेली कीर्ति [४] "वैराग्य"-सर्वथा कामभोगोनी छुट्ठाने त्याग अथवा क्रोधादि कषायोना निग्रह [५] "मुक्ति"-सकल कर्मोना क्षयइप मुक्ति (६) रूप-सुर असुरोना हृदयने हरनार मौन्दर्य (७) वीर्य-अन्तराय कर्मोना नाश थवाथी चेदा थयेल अनन्त शक्ति (८) श्री घनघातिक-कर्मोना तदन क्षय थवाथी चेदा थयेल अनन्त चतुष्टयइप अन्तरंग लक्ष्मी (९) धर्म-मोक्षना द्वाजना कमाड

(७) ऐश्वर्य-गोत्रप्रगाधिपत्य चाग्यामीति भगवान् (१०), तेन भगवता-
मानादियुत्तेन, 'तेज' तेन तीर्थकरण वक्ष्यमाणार्थस्य तीर्थकरभाषितत्वात् तच्छ
स्वनाप्र तीर्थकर परामर्शः । उक्तं च—

‘अथ भाम्भ्र भरिदा, गुप्त गंधनि गणहरा जिउणा ॥’ इत्यादि,

भगवत्तात्पर्यपदिष्टमथरूपमागममुपादाय मध्यायना गणपरामुखरूपमागम
निषधस्तार्यथा ।

‘वक्षे’ वक्ष्यमाणप्रकारेण, ‘अस्वार्थ’ आख्यातं वक्षितं द्वादशपरिपद्यु ।

भगवत्तीर्थकरवक्षितार्थज्ञातमयानुसृत्य वक्ष्यमाणं वाक्यं वदिष्यामीति

भुगवत्प्रियं भगवत्, ऐश्वर्य-तीन लोच क आधिपत्य से १० जो युत
होत है च भगवान् वक्षे जाते ह । तारपर्यं यत् है कि भगवत् क य जो
मानादिरूप द्वा अथ मत्त किय गय है, भगवत् उन स्वस्व अर्थों से स्वप्न
होत है । ‘तेज’ यत् पद भगवान् का विशेषण है जो इस बात को
कहता है कि ये भगवान् तीर्थकर थे । जो भी विषय इस ज्ञान में
कहा जायगा यत् उन तीर्थकर प्रभु-भगवान् द्वारा भाषित ही कहा
जायगा कहा भी है—‘अथ भाम्भ्र भरिदा, गुप्त गंधनि गणहरा जिउणा’
इति । अर्थात्-सर्व प्रथम अर्हंत प्रभु ही मर्षरूप आगम की प्ररूपणा करत
हैं और बाद में निपुण गणवर उस अर्थ को मूल प्ररूप में आगमरूप में
प्रणिन करते हैं । भगवान् ने क्या कहा ? यत् कहत हैं—भगवान् ने इस
रूप से-वक्ष्यमाण प्रकार से-बारह प्रकार की परिपद में कहा है अतः
उन भगवत् तीर्थकर वक्षित अर्थ के अनुसार ही मैं वक्ष्यमाण-आगे कहे
जोतयाना शासनरूप भुतधारित्ररूप धर्म अन (१०) ऐश्वर्य त्रय दाउनु अधिपत्य
आ होते जान आदि इस भुजोभी के भुक्त कोच उ तेमने अमवान कहे उ कहेवानु
तारपर्यं अ उ है ‘अथ’ शब्दना आ के जानादिरूप इस अर्थ जनाभ्या उ, अ
मध्या अर्थाभी अमवान भुक्त दोष उ ‘तेज’ आ पद अमवाननु विशेषण है
के अने वत अनाय उ है अमव नतीथ कर कता के कोउ निषध आ शास्त्रों कहेवां
आनहीं ने विषय तीर्थ कर अमवान द्वारा भाषित कहे कहे पवुछि—‘अथ भाम्भ्र
भरिदा, गुप्त गंधनि गणहरा जिउणा’ अतएव के सोमी पदों अर्थात् प्रभु अ
अर्थात् आगमनी प्रायजा करे उ, अने त्वाक पात्रा निपुण जयधरे त अथ ने गुण
-सुलक्ष-अंगित करे उ अमवान सु कहे उ । अमवाना विसरपे तेआ कहे उ है
अमवान आ प्रभावे-नीथ द्वाअया प्रभावे-ज्वा प्रकाशनी परिपदेमां कहेव उ ते त
तीर्थ कर अमव ने कहेव अथ प्रभावे अ दु आगम द्वाअवां आवना अथ

वाक्यार्थः । आगमोक्तार्थस्य काल्पनिकत्वाभावाद् द्रव्यार्थिकनयेनार्थरूपोऽयमाग-
मोऽनादिरिति भावः ।

एषा परम्परा परिपाटी वरीवर्ति सर्वेषां गणधराणाम्—यद् विनातैः
स्वस्वान्तेवासिभिर्मोक्षमार्गं सविनयं पृष्ट्वा गणधराः ‘सुयं मे’ इति वाक्यं प्रथमं
वदन्ति । उक्तं च—

निपुणशिष्यगणैर्विनयान्वितै-

विमलभावयुतैः परिसेवितैः ।

गणधरैरखिलैः प्रथमं वचः,

खलु ‘सुयं मे’ इति प्रतिभाषितम् ॥सू० १॥

जाने वाला अर्थ कहूंगा । आगमोक्त अर्थकल्पित नहीं होता है । वह तो
तीर्थंकर परंपरा से जैसा भाषित होना हुआ चला आता है वैसा ही
गणधर आदि द्वारा प्रकाशित किया जाता है—वे अपनी ओर से उसमें
कुछ भी परिवर्द्धन या परिवर्तन नहीं करते हैं । इसीलिये आगमोक्त
अर्थ में काल्पनिकत्व का अभाव होने से वह अर्थरूप आगम द्रव्यार्थिक
नय की अपेक्षा से अनादि माना जाता है । समस्त गणधरों की
परंपरा से ऐसी ही परिपाटी चली जाती है कि जब विनीत अपने २
शिष्य उनसे मोक्षमार्ग को विनय के साथ पृच्छते हैं—तब वे उनसे सर्व
प्रथम “सुयं मे” इस प्रकार से कहते हैं ! कहाभी है—

“निपुणशिष्यगणैर्विनयान्वितैः विमलभावयुतैः परिसेवितैः ।

गणधरैरखिलैः प्रथमं वचः—खलु ‘सुयं मे’ इति प्रतिभाषितम्” ॥१॥

भावार्थ—इस सूत्र द्वारा पंचम गणधर श्री सुधर्मास्वामी अपने

કહીશ. આગમોક્ત અર્થ કલ્પના હોના નથી. તે તો તીર્થંકર પરંપરાથી જે પ્રમાણે
કહેવાતો આવે છે એજ પ્રમાણે ગણધર આદિ દ્વારા પ્રકાશિત કરવામાં આવે છે—
તેઓ પોતાનું કંઈ પણ તેમાં ઉમેરતા નથી કે તેમાં કંઈ પણ પરિવર્તન કરતા નથી
તેથી આગમોક્ત અર્થમાં કાલ્પનિકપણાનો અભાવ હોવાથી તે અર્થરૂપ આગમ દ્રવ્ય-
ાર્થિક નયની અપેક્ષાએ અનાદિ મનાય છે. સમસ્ત ગણધરોની પરંપરાથી એવી રીતે
ચલી આવે છે કે જ્યારે તેમના પોત પોતાના શિષ્યો તેમને મોક્ષમાર્ગ વિષે વિનયથી
પૂછે ત્યારે તેઓ સૌથી પહેલા તેમને “સુયં મે” (મે તીર્થંકર પ્રભુ પાસે સાક્ષાત્
એ રીતે તેમના જવાબની શરૂઆત કરે છે કહ્યું પણ છે—

“નિપુણશિષ્યગણૈર્વિનયાન્વિતૈઃ, વિમલભાવયુતૈઃ પરિસેવિતૈઃ

ગણધરૈરખિલઃ પ્રથમં વચઃ, खलु “सुयं मे” इति प्रतिभाषितम्” ॥१॥

ભાવાર્થ—આ સૂત્રમાં પાંચમા ગણધર શ્રી સુધર્માસ્વામી પોતાના શિષ્ય શ્રી

(૯) ऐश्वर्य-गोष्ठप्रयात्रिपत्य चास्यास्तीति भगवान् (१०), तेन भगवता-
ज्ञानादियुक्तेन, 'तेण' तेन तीर्थकरणे वक्ष्यमाणार्थस्य तीर्थकरमापितत्वात् तच्छ
अनात्र तीर्थकर परामर्शः । उक्तं च—

‘अथ भासइ अरिहा, सुच गंयति गणहरा णिउणा ॥’ इत्यादि,

भगवत्तીર્થकराપદિષ્ટમર્થરૂપમાગમપ્રવાદાય મેઘાધનો ગણધરામૂલરૂપમાગમ
નિષપ્ત્વંતીતર્યઃ ।

“एवं” वक्ष्यमाणप्रकारेण, ‘अवसायं’ आख्यातं कथितं द्वादशपरिपन्सु ।

भगवत्तीर्थकरकथितार्थजातमेवानुसृत्य वक्ष्यमाणं वाक्यं वदिष्यामीति

શ્રુતચારિત્રરૂપ વર્મ સે૯, ऐश्वर्य-तीन लोक के आधिपत्य से १० जो युक्त
होते हैं वे भगवान् कहे जाते हैं । तात्पर्य यह है कि भग शब्द के वे जो
ज्ञानादिरूप दश अर्थ प्रकट किये गये हैं, भगवान् उन समस्त अर्थों से संपन्न
होते हैं । “तेण” यह पद भगवान् का विशेषण है जो इस बात को
कहता है कि वे भगवान् तीर्थकर थे । जो भी विषय इस शास्त्र में
कहा जायगा यह उन तीर्थकर प्रभु-भगवान् द्वारा भाषित ही कहा
जावेगा कहा भी है—“अथ भासइ अरिहा, सुच गंयति गणहरा णिउणा”
इति । अर्थात्—सर्व प्रथम अर्हत प्रभु ही मर्थरूप आगम की प्ररूपणा करते
हैं और बाद में निपुण गणधर उस अर्थ को मूल सूत्ररूप में आगमरूप में
प्रथित करते हैं । भगवान् ने क्या कहा ? वह कहते हैं—भगवान् ने इस
रूप से—वक्ष्यमाण प्रकार से—बारह प्रकार की परिपद में कहा है अतः
उन भगवत् तीर्थकर कथित अर्थ के अनुसार ही मैं वक्ष्यमाण—आगे कहे

મોક્ષવાના સાધનરૂપ શ્રુતઆદિવરૂપ મર્મ અને (૧૦) ऐश्वर्य ત્રણ લોકનું અધિપત્ય
આ રીતે જ્ઞાન આદિ દસ શુદ્ધોદ્ધી જે મુક્તિ લેવા છે તેમને ભગવાન કહે છે કહેવાતું
તાત્પર્ય જે છે કે ‘જગ શબ્દના આ ને જ્ઞાનાદિરૂપ દશ અર્થ’ બતાવ્યા છે એ
સમગ્રા અર્થોદ્ધી ભગવાન મુક્તિ લેવા છે ‘તેણ’ આ પદ ભગવાનનું વિશેષણ છે
જે એ વત બતાવે છે કે ભગવત્ તીર્થ કરે કતા જે કોઈ વિષય આ શાસ્ત્રમાં કહેવામાં
આવશે ને વિષય તીર્થ કરે ભગવાન દ્વારા ભાષિત હશે. કહ્યું પણ છે—“અથ ભાસइ
મરિહા, સુચ ગંયતિ ગણહરા ણિઉણા” એટલે કે સોધી પહેલાં અર્હંત પ્રભુ જ
અર્થરૂપ આગમની પ્રાપ્તિ કરે છે અને ત્યાર પછી નિપુણ અણુધરા તે અર્થને મૂળ
—સૂત્રરૂપે—પ્રાપ્તિ કરે છે ભગવાને શું કહ્યું છે ? એ પ્રશ્નના ઉત્તરરૂપે તેઓ કહે છે કે—
ભગવાને આ પ્રમાણે—નીચે દર્શાવ્યા પ્રમાણે—બાર પ્રકારની પરિપદોમાં કહેલ છે તેા તે
તીર્થ કર ભગવને કહેલ અથ પ્રમાણે જ હું આગળ દર્શાવવામાં આવેનેા અથ

મૂલમ્—ઇહ ચલુ સમણેણં ભગવયા મહાવીરેણં આઙ્ગરેણં
નિત્થગરેણં સયં સંવુદ્ધેણં પુરિસુત્તમેણં પુરિસસીહેણં પુરિસવ-
રપુંડરીણં પુરિસવરગંધહત્થિણં લોગુત્તમેણં લોગનાહેણં લોગહિણં
લોગપઅર્હવેણં લોગપજ્જોગરેણં અભયદણં ચક્કહુદણં મગ્ગદણં
સરણદણં જીવદણં ધમ્મદણં ધમ્મદેસણં ધમ્મનાયગેણં ધમ્મ-
સારહિણં ધમ્મવરચાટરંતચક્કવટ્ટિણં અપ્પહિહયવરનાણદંસજધરેણં

ભગ શબ્દ કે દગ્ગ અર્થ કહ્યા છે. જો ભગ શબ્દ કે ડન અર્થો
સે યુક્ત છે. એ હી ભગવાન હોતે છે. શબ્દ ઓર ડનના અર્થ
અનાદિ છે. એ કિસી કે દ્વારા કિયે હુએ નહીં છે. પરંતુ તીર્થંકર
ભગવાન ઉસ અર્થરૂપ આગમ કે ઉપદેશ હોતે છે, ડસ અપેક્ષા એ ઉસ
અર્થરૂપ આગમ કે કર્તા માને જાને છે. ડસ તીર્થંકરોપદિષ્ટ અર્થરૂપ આગમ
કો લેકર હી મેધાવી ગણધર મૂલરૂપ આગમ કો રચના કરતે છે, અનઃ
પર્યાયાર્થિક નયની અપેક્ષા આદિમાન હોતા હુઆ મી આગમ દ્રવ્યાર્થિક
નયની અપેક્ષા સે અનાદિ કહ્યા જાતા છે. ડસ સૂત્ર મેં જો “સુયં મે”
એ પદ આવે છે એ ડસ ગણધરોં કી પરંપરા સે ચલી આઈ પરિપાટી કે
પરિચાયક છે, કિ જવ એ અપને શિષ્ય જનોં કો પૂછને પર મોક્ષમાર્ગ કા
ઉપદેશ દેતે છે તો સર્વ પ્રથમ એ ઉસ સમય ડનસે એમા હી કહતે છે.
ડસસે ડનકે વચનોં મેં પ્રમાણતા ઓર શ્રદ્ધેયતા આ જાતી છે ॥મૂ. ૧ ॥

ભગવાન શબ્દનો વ્યુત્પત્તિલભ્ય અર્થ કહેલ છે. ‘ભગ’ શબ્દના એ અર્થોથી જે
યુક્ત હોય છે તેઓ જ ભગવાન કહેવાય છે. શબ્દ અને તેમનો અર્થ અનાદિ છે
તે કોઈના વડે કરાયેલ નથી પણ તીર્થંકર ભગવાન તે અર્થરૂપ આગમના ઉપદેશ
હોય છે, તે અપેક્ષાએ તેમને તે અર્થરૂપ આગમના કર્તા માનવામા આવે છે તીર્થ-
ંકરો વડે ઉપદેશાયેલ તે અર્થરૂપ આગમને આધારે જ મેધાવી ગણધરો મૂલરૂપ
આગમની રચના કરે છે તેથી પર્યાયાર્થિક નયની અપેક્ષાએ આદિમાન હોવા છતાં પણ
દ્રવ્યાર્થિક નયની અપેક્ષાએ આગમેને અનાદિ કહેવામા આવે છે આ સૂત્રમા
આવેલ “સુયં મે” પદો તે ગણધરોની પરંપરાથી ચાલતી આવતી તે રૂઢિના સૂચક
છ કે જ્યારે તેઓ પોતાના શિષ્યો વડે પૂછતા મોક્ષમાર્ગનો ઉપદેશ દે છે ત્યારે
સૌથી પહેલાં તેમને તેઓ એ પ્રમાણે “સુયં મે” જ કહે છે તેથી તેમના વચનોમા
પ્રમાણતા અને શ્રદ્ધેયતા આવી જાય છે. ॥સૂ. ૧॥

शिष्य श्री जंबुस्वामी को 'समयापाद्र' में क्या २ विषय प्रतिपादित हुआ है' इस बात को समझाने के लिये सर्वप्रथम उन्हें कहते हैं कि इस अंग में जो भी विषय में प्रतिपादित करूँगा-यह भगवान के मुखारविन्द से जैसा मैंने सुना है वैसा ही करूँगा-अपनी तर्क से उसमें कुछ भी कमी घेरी नहीं करूँगा। 'आयुष्मन्' शब्द में जो सुधमा स्वामी ने उक्त आमंत्रित किया है इससे यह बात जाहिर होती है कि जपू स्वामी बहुत अधिक विनयी थे। अपने विनीतशिष्य में प्रत्येक गुरुजन की यही भावना रहा करती है कि समाग शिष्य अशेष भुक्तज्ञान के उपदेश को भवण करने योग्य बन जावे, उसे अपन हृदय में उतारन की शक्ति वाला हो जावे, उसकी स्मृति इतन अधिक विकसित हो जावे कि जिससे वह उस गृहीत उपदेश को विष्मृत न कर सक, सदा उसके अंतःकरण में उसकी धारणा बनी रहे-निरतिवार रत्नप्रप की आराधना करने में वह पटु हो जाये और मोक्ष के साधने की उसमें अधिक से अधिक योग्यता का विकास हो जाये। यह प्राकृतिक नियम है कि यदि भावना का असर अवश्य ही होता है-यही हुआ। गुरुमहाराज की सभी भावना के प्रभाव ने जपूस्वामी को इस योग्य बना दिया-और उन्होंने उसी भव में मुक्ति प्राप्त करली। भगवान शब्द का व्युत्पत्तिलभ्य अर्थ सूत्रकार ने

जपूस्वामीने "अभवाभांगमां क्वा क्वा विषयेषु प्रतिपादन करणु छे" अर्थात् समस्तभवनाने भागे छोरी पदार्थ तेमने के बतावे छे के आत्मजमां ने केछ विषय पदु छे प्रतिपादन करीश। ते अभवानना अध्याशविन्दमांभी से ने शीते साधयेछ छे त प्रभाति ज कदीश भाइ पीतानु तेमा कछ पक्ष उभरीय नदी सुधमांस्वा भीजे तेमने 'आयुष्मन्' शब्दभी ने समोध्य छे तेधी के बात प्रभट भाष छे के जपूस्वामी अत्यंत विनयी हवा पीताना विनीत शिष्य प्रथं प्रत्येक गुरुजननी जीवी भावना रहै छे के आशेष शिष्य अशेषभवनानना उपदेशनु भवतु करवाने योग्य जने तेने पीताना हृदयमां उवाचवाने शक्तिमान जने, तेनी स्मृति केवली जभी विकसे के ते अदृष्ट करैछ उपदेशने जूही न जाय, तेना अवाकरवुमां छ भेषां तेनी धारणा कथम रहै निरतिवार रत्नप्रपनी आराधना करवामां ते निपुण जने, जने मोक्ष प्राप्त करवा भागैनी तेनामां वधाइमां वधाइ योग्यताये। विकास साथ दुश्चरितो केवो निषय छे के साखी भावनानी अग्र अग्रय साथ छे-जेवु ज न सु गुरुमहाराजनी साखी भावनाना प्रभावे ज जपूस्वामीने तेने योग्य जनानी दीया-तेमजे के ज अवमां मोक्षनी प्राप्ति करी दीधी। 'भग' शब्दना इस अर्थ बतावने सूत्रकार

सूत्रकृतम् २, स्थानम् ३, समवायः ४, विवाहप्रज्ञप्तिः ५, ज्ञाताधर्मकथाः ६, उपासकदशाः ७, अन्तकृद्दशाः ८, अनुत्तरोपपातिकदशाः ९, प्रश्नव्याकरणम् १०, विपाकश्रुतम् ११, दृष्टिवादः १२। तत्र खलु यत् तत् चतुर्थमङ्गं 'समवाय' इति 'आहि ए' आख्यातम्, तस्य खलु अयमर्थः प्रज्ञप्तः, नद् यथा ॥ सू. २ ॥

भगवता यदाख्यात तदाह—'एगे आया' इत्यादि ।

मूलम्—एगे आया ॥ सू. १ ॥

टीका—'आया' आत्मा-जीवः, 'एगे' एकः—एकत्वसंख्यावान्, कथंचिदिति भावः । यद्यपि जीवस्य सिद्धसंसारिभेदेन द्वैविध्याद् उभयरूपत्वमस्ति, यथाप्युपयो-

वह इस प्रकार से है—(आयारे १ मृगगडे २ ठाणे ३ समवाए ४ विवाह-पन्नत्ती ५ णायाधम्मकहाओ ६ उवासकदसाओ ७ अंतगडदसाओ ८ अणु-त्तरोववाइदसाओ ९ पण्हावागरणं १० विवागसुयं ११ दिट्ठिवाए १२)

आचारांग १ सूत्रकृतांग २ स्थानांग ३ समवायांग ४ विवाह प्रज्ञप्ति ५ ज्ञाताधर्मकथांग ६ उपासकशांग ७ अंतकृद्दशांग ८ अनुत्तरोपपातिकदशांग ९ प्रश्नव्याकरण १० विपाकश्रुत ११ और दृष्टिवाद १२। (तत्स्थणं) इनमें (जे से) जो यह (चउत्थे अंगे) चौथा अंग (समवाए ति) 'समवाय' इस नाम से (आहि ए) कहा गया है (तस्सणं) उसका (अयमट्ठ) यह अर्थ (पण्णत्ते) कहा है (तं जहा) वह इस प्रकार ॥ सू. २ ॥

अब सूत्रकार उसी भगवान् द्वारा कथित प्रकार को प्रकट करते हैं—'एगे आया' इति ।

टीकार्थ—(आया एगे) कथंचित्—किसी अपेक्षा से—जीव एक है । यद्यपि सिद्ध और संसारी जीव की अपेक्षा से जीव के दो प्रकार हैं तो भी उपयो-

ते आ प्रमाणे छे—आयारे १, मृगगडे २, ठाणे ३ समवाए ४, विवाहपन्नत्ती ५, णायाधम्मकहाओ ६, उवासकदसाओ ७, अंतगडदसाओ ८ अणुत्तरोववाइदसाओ ९, पण्हावागरण १० विवागसुयं ११ दिट्ठिवाए १२) (१) आचारांग, (२) सूत्रकृतांग (३) स्थानांग (४) समवायांग, (५) विवाहप्रज्ञप्ति, (६) ज्ञाताधर्मकथांग (७) उपासकदशांग, (८) अंतकृद्दशांग, (९) अनुत्तरोपपातिक दशांग, (१०) प्रश्नव्याकरण, (११) विपाकश्रुत अने (१२) दृष्टिवाद. 'तत्स्थणं' तेजोभाषी 'जे से' आ जे 'चउत्थे अंगे' चौथे अंग 'समवाए ति' 'समवाय' नामनु 'आहि ए' कहेल छे 'तस्सणं' तेनो 'अयमट्ठे' आ अर्थ 'पण्णत्ते' कहेल छे. 'तं जहा' ते अर्थ आ प्रमाणे छे ॥ सू. २ ॥

इसे सूत्रकार भगवान् द्वारा कथित ते अर्थ प्रकट करे छे—'एगे आया' इति

टीकार्थ—'आया एगे' अमुक दृष्टिसे जेता एव अेक छे जे के सिद्ध अने संसारी एवनी अपेक्षासे एवना जे प्रकार क, छता पण्ण उपयोगनी दृष्टिसे जेता तेमनाम्

वेयदृच्छउमेणं जिणेण जावण तन्नेणं तारण वुद्धेण बोहणं
मुत्तेण सोयगेण सञ्चन्नुणा सव्वदरिसिणा सित्र-मयल-मरुय-
नणत-मस्खयमव्वावाहमपुणरावित्ति सिद्धिगहनामधेय टाण सपा
विउकामेण इमे दुवालसगे गणिपिटगे पन्नत्ते, त जहा-आयारे १,
सूयगडे २, टाणे ३, समवाण ४, विवाहपन्नत्ती ५, णायाधम्मकहाओ ६,
उपासगदसाओ ७, अतगढदसाओ ८, अणुत्तरोववाइदसाओ ९,
पण्हावागरण १०, विवागसुय ११, दिठ्ठिवाण १२, । तत्थण जे से चउत्थे
अगे समवाणत्ति आहिण तस्स ण अयमट्टे पन्नत्ते त जहा ॥ सू २॥

टीका—“इह खलु समणेण” इत्यादि । इदं च प्रथमसूत्रसंघटीतायस्यैव
सविस्तरप्रतिपादनपरम् । ‘समणेण’ इत्यारम्भ्य ‘संपाविउकामेण’ इत्यन्तस्य
व्याख्या आतापमकयाइयुमे प्रागेवकृताऽस्माभिरिति विस्मयते । जिज्ञासुमिस्त
प्रावृत्तौ कनीया । इदं आदशाइ गणिपिटकं प्रकृतम्, उद्यथा आचारा १,

अथ सूत्रकार द्वितीय सूत्र को कहते हैं—“इह खलु” इत्यादि ।
टीकार्थ—यह सूत्र प्रथम सूत्र द्वारा संघटीत सूत्र अर्थ का ही विस्तार पूर्वक
प्रतिपादन करने के लिये कहा गया है । इस सूत्र में जो “समणेण”
पद से लेकर “संपाविउकामेण” तक मिलाने भी पद वृत्तीयान्त विभक्ति
पाले आये हुये हैं इन सबको व्याख्या आतापमकयाइयुमे सूत्र में हमने
पहिले ही कर दी है । अतः यहाँ इनकी व्याख्या नहीं की है । जिन्हें
इनके अर्थ को जानने की इच्छा होवे वहाँ से जान ले । (इमे दुवाल
सगे गणिपिटगे पन्नत्ते) इन पूर्वोक्त विशेषणों से विराजित भ्रमण भग
वान् महावीर ने यह आदर्शांग रूप गणिपिटक प्रकृति किया है । (त जहा)

द्वे सूत्राणि जीलु सूत्र कहे ३—“इह खलु” इत्यादि

टीका—आ सूत्र पढेता सूत्र आशा प्रकृत कस्येत अर्थऽतु न विस्तारधी प्रतिपादन
करवाने भाटे कहेतायु ३ आ सूत्रमां “समणेण” पढी वधने “संपाविउकामेण”
सुधीन व्रील विमज्जिनां नेटवां पढे आख्यां ३ जे जथा पढेनी व्याख्या ताता
धमकयाइयुमे सूत्रमां आ आताइ आधी दीपेव ३ तेधी तेभनी व्याख्या जदी आपी
नधी तेने आधं अकपानी जेभने छिछा डोव नेजे तेने आधं ते सूत्रमां
वांधी वे “इम दुवाणसगे गणिपिटगे पन्नत्ते” जे पूर्वोक्त विशेषणों की विस्तारित
अभय अभयान भदावीरे आ आदर्शांग रूप गणिपिटकी प्रकृता करी ३ “त जहा”

हैं वह अनादिसिद्ध स्वतन्त्र द्रव्य है। तत्त्विक दृष्टि से अरूपि होने के कारण उसका ज्ञान इन्द्रियों द्वारा नहीं हो सकता है तथापि साधारण जिज्ञासुओं के लिये एक ऐसा लक्षण कह देना आवश्यक हो जाना है कि जिससे आत्मा की पहिचान की जा सके। उसी अभिप्राय से प्रस्तुत सूत्र में उसके टीकाकार ने उसका लक्षण उपयोग कहा है। और इसी उपयोग लक्षण की एकता से उसमें एकत्व प्रकट किया है। आत्मा लक्ष्य और उपयोग उसका लक्षण-जानने का उपाय है। जगत अनेक चेतन जड पदार्थों का मिश्रण है। उसमें से जड और चेतन का विवेक पूर्वक निश्चय करना हो तो उपयोग के द्वारा ही हो सकता है। क्यों कि यह उपयोग तरतमभाव से सभी जीवों में पाया जाता है। जड में यह उपयोग नहीं पाया जाता। बोधरूप व्यापार का नाम ही उपयोग है। आत्मा में हा बोधरूप क्रिया होती है-जड में नहीं होती-इसका कारण चेतनाशक्ति है। आत्मा जब स्वतंत्रद्रव्य है तो उसमें अनेक गुण होना चाहिये, फिर उपयोग को ही लक्षण क्यों कहा? तो इस शंका का समाधान यह है कि आत्मा में अनंतगुणपर्याये हैं, पर उन सबमें उपयोग ही मुख्य है, क्यों कि स्व पर प्रकाशरूप होने से उपयोग ही अपना तथा इतर पर्यायों का ज्ञान करा सकता है। आत्मा जो कुछ भी जानता है-

तत्त्विक दृष्टिसे ज्ञेयता से अज्ञेयता होवानी इन्द्रियों द्वारा तेनु ज्ञान यद्य श-तु नथी, छता पण साधारण जिज्ञासुओं भाई ओठ ओठ लक्षण ज्ञानानी देवानु अ-
श्यक यद्य पडे छे के जेनाथी आत्माने ओणणी शक्य ते कारणे न आ सूत्रना
टीकाकार तेनु लक्षण उपयोग ज्ञानावेत्त छे अने ओ न उपयोग लक्षणानी ऐक्यताथी
तेमां ऐक्यत्व दर्शावु छे आत्मा लक्ष्य छे अने उपयोग तेनु लक्षण ज्ञानवाने
उपाय छे जगत अनेक चेतन अने जड पदार्थोनु मिश्रण छे तेमाथी जड अने
चेतनने विवेकपूर्वक निश्चय करवे। होय तो उपयोग द्वारा न यद्य शके छे जानवु
ते उपयोग वधु ओछा प्रमाणना समस्त ज्ञेयता नजरे पडे छे जडमा ते उपयोग
नजरे पडतो नथी ओषड्य व्यापारनु नाम न उपयोग छे आत्माभा ओषड्य क्रिया
थाय छे-जडमा थता नथी- तेनु कारण चेतनाशक्ति छे आत्मा जे स्वतन्त्र द्रव्य
होय तो तेमा अनेक गुण होवा जेधये, तो पछी उपयोगने न लक्षण केम कहु ?
तो ते शकानु समाधान ये छे के आत्माभा अनंतगुण पर्याये छे, पण तेसीमा
उपयोग न मुख्य छे, कारणके स्व तथा पर प्रकाशरूप होवानी उपयोग न पोतानु
तथा अन्य पर्यायेनु ज्ञान करावी शके छे. आत्मा जे कंठ मले अ-अनुसवे छे

ગરુડત્વન તયોર્મેદાઽમજ્ઞાત્ । કિં ષ-દ્રવ્યાર્થયાઽઽત્મન એકત્વમ્, એકદ્રવ્યત્વા
 ાત્મનઃ દ્રવ્યાર્થતા નામ પ્રત્યક્ષગણપર્યાયાધારતા, અર્થાર્થદ્વયમેત્યર્થ, પ્રત્યક્ષાર્થતયા
 તુ અનેકત્વમાત્મન, અસંસ્ક્રિયાતપ્રવેશાત્મકત્વાત્ તસ્ય । સકલસદ્ધાર્થોનાં જ્ઞાનાદિમિધિ
 પયીકરણાદાત્મનઃ સ્વેતરપદાર્થોવક્ષયા પ્રાધાન્યમસ્વીત્યતઃ પ્રથમતર્થિર્દેશ ॥૨૧॥

ગરુડ તે અનેક મેદ કા અસંજ્ઞાત છે અતઃ ષદ્દેશ અપેક્ષા એક મી છે,
 તથા-દ્રવ્યાર્થિક નય કી અપેક્ષા સે આત્મા મેં એક દ્રવ્યાર્થતા હોને સે
 એકત્વ માના જાતા છે । પ્રવેશ, ગુણ ઓર પર્યાયોં કી આધારતા કા નામ
 હી દ્રવ્યાર્થતા-દ્રવ્યાર્થિક નય છે । યદ્દેશ દ્રવ્યાર્થતા મુખ્યરૂપ સં એક અસંજ્ઞ
 દ્રવ્ય કો હી વિષય કરતી છે । ડસ વિષયમૂલ દ્રવ્ય મેં પ્રવેશ ગુણ ઓર
 પર્યાયે રહતિ છે । ઇન પર ડસકી દૃષ્ટિ નહીં રહતી છે । ઇન સમ પર દૃષ્ટિ
 રહને ચાલી પ્રવેશાર્થતા-અસંસ્ક્રિયાતપ્રવેશયુક્તતા-પર્યાયાર્થિકનય છે । ડસકી
 અપેક્ષા આત્મા મેં અનેકતા માની જાતી છે । આત્મા એક પ્રવેશવાલા નહીં છે
 ષદ્દેશ તો અસંસ્ક્રિયાત પ્રવેશોં ચાલા છે । આત્મા સકલ પદાર્થોં કા જ્ઞાનાદિગુણોં
 દ્વારા વિષયકરતા છે હમલિયે ડસકી અપને સે મિન્ન પદાર્થોં કી અપેક્ષા
 પ્રધાનતા છે । હસીલિયે સુત્રકારને યદ્દેશ સવં પ્રથમ ડસકા નિર્દેશ કિયા છે ।

નાવાર્થ-સુત્રકાર ને હસ સુત્ર દ્વારા આત્મા કા જો એક કહા
 છે ડસકા કારણ ઉપયોગ લક્ષણ કી અમિન્નતા છે । યયોં કિ જીવ કા
 ઉપયોગ કહા ગયા છે । જીવ જિસે આત્મા ઓર ચેતન મી કહસે
 એકનો અભાવ છે, તેથી જો અપેક્ષાએ તે એક પણ છે તથા-દ્રવ્યાર્થિક નયની
 અપેક્ષાએ તે આત્મામાં એક દ્રવ્યાર્થતા હોવાથી એકત્વ મનાય છે દ્રવ્યાર્થતા
 દ્રવ્યાર્થિક નય એટલે પ્રવેશ શુદ્ધ અને પર્યાયોં અવલબન તે દ્રવ્યાર્થતા મુખ્યરૂપે
 એક અજ્ઞ દ્રવ્યને વિષય કરે છે તે વિષયમૂલ દ્રવ્યમાં પ્રવેશ, શુદ્ધ અને પર્યાયોં
 રહે છે તેમના પર તેની દૃષ્ટિ રહેવી નથી જો બધા પર દર્શન અભાવી પ્રવેશાર્થતા-
 અનભાવ પ્રવેશયુક્તતા-પર્યાયાર્થિક નય છે તેની અપેક્ષાએ આત્મામાં અનેકતા
 મનાય છે આત્મા એક પ્રવેશવાળો નથી તે તો અનેક પ્રવેશવાળો છે આત્મા
 અમરત પદાર્થોંને જ્ઞાનાદિ ગુણોં દ્વારા વિષય કરે છે તેથી ચેતના કરતા મિન્ન
 પદાર્થોંની અપેક્ષાએ તેની પ્રધાનતા છે તે કારણે સુત્રકાર સૌથી પહેલાં અહીં તેનો
 નિર્દેશ કર્યો છે

નાવાર્થ-સુત્રકાર આ સુત્ર દ્વારા આત્માને જે એક બતાવ્યો છે તેણે કારણ
 ઉપયોગ લક્ષણની અમિન્નતા છે કારણકે જીવન લક્ષણ ઉપયોગ બતાવવામાં આવેલ
 છે જીવ ને જોને આત્મા તથા ચેતન પણ કહે છે તે અન્યથા શિદ્ધ સ્વતંત્ર દ્રવ્ય છે

मूलम्—एगे अणाय ॥ सू. २ ॥

टीका—‘अणाय’ अनात्मा=आत्मभिन्नः घटादिपदार्थः, ‘एगे’ एकः—
एकत्वसंख्यावानस्मिन् कथंचिदित्यर्थः, अनात्माऽपि यद्यपि प्रदेशार्थतया कश्चिन्
संख्यातप्रदेशः, कश्चिदसंख्यातप्रदेशः, कश्चिदनन्तप्रदेशोऽप्यस्ति, तथापि परिणा-

को यहां सूत्रकार ने एक कहा है—और कहीं २ पर अनेक भी प्रकट किया
है—तो फिर इस प्रकार से यह मान्यताएँ परस्पर में विरुद्ध दिखलाई
देती हैं। ऐसी स्थिति में प्रश्न हो सकता है कि इन दोनों मान्यताओं में
परस्पर विरुद्धता वास्तविक है या अवास्तविक है। तब नयवाद यह
कहता है कि यह ऊपर से दिखनेवाली विरुद्धता वास्तविक नहीं है,
क्यों कि द्रव्यार्थिक नय की अपेक्षा आत्मा में एकत्व है और प्रदेशार्थता—
पर्यायार्थिक नय की अपेक्षा आत्मा में अनेकत्व है। यही विषय संक्षेप में
टीकाकार ने इस सूत्रद्वारा समझाया है ॥ सू. १ ॥

‘एगे अणाय’ इति ।

टीकार्थ—(अणाय एगे) आत्मा से भिन्न घट पटादिपदार्थ रूप अनात्मद्रव्य
किमी अपेक्षा से एकत्वसंख्या विशिष्ट है। जिस अपेक्षा से यह अनात्म-
द्रव्य एक है वह अपेक्षा परिणामित्वरूप एक द्रव्यार्थता है। पुद्गलद्रव्य,
धर्मद्रव्य, अधर्मद्रव्य, आकाशद्रव्य और काल ये सब अनात्म-अजीव-
द्रव्य हैं। इनमें यद्यपि कोई द्रव्य संख्यात प्रदेशवाला, कोई द्रव्य असं-
ख्यातप्रदेशवाला और कोई द्रव्य अनन्त प्रदेशवाला भी है तौ भी इस

छे अच्छी सूत्रकारे आत्माने क अताव्यो छे अने ईर्ण ईर्ण स्थणे अनेक पत्र
अताव्यो छे, ता ओ रीते ते मान्यताओ ओक भावनी विरोधी ज्ञाया छे ओ परि
स्थितिमा ओवो प्रश्न उद्भववी शके के ते मान्यताओ वच्येनी विशुद्धता वस्तविक
छे के अवास्तविक छे ? तो नयवाद ओ दर्शावे छे के उपर्युक्ती देखाती ते विशुद्धता
वास्तविक नथी, कारणके द्रव्यार्थिकनयनी अपेक्षाओ आत्माभा ओकत्व छे अने प्रदे-
शार्थता-पर्यायार्थिकनयनी अपेक्षाओ आत्माभा अनेकत्व छे ओ ओ विषय साक्षसना
टीकाकारे आ सूत्र द्वारा समझाव्यो छे ॥ सू. १ ॥

‘एगे अणाय’ इति ।

टीकार्थ—‘अणाय एगे’ आत्मा करता भिन्न घट पट (घडो, पडहो) आदि पदार्थरूप
अनात्मद्रव्य कथी दृष्टिओ ओकत्व छे ? ओ अपेक्षाओ ते अनात्मद्रव्य ओक ते परिणामित्वरूप
ओक द्रव्यार्थता छे। पुद्गलद्रव्य, धर्मद्रव्य, अधर्मद्रव्य, आकाशद्रव्य, अने
काल ओ भाओ अनात्म-अजीवद्रव्य छे। तेमनाभा ओ के केछी द्रव्य संख्यात प्रदेश-
वाणु, केछी द्रव्य असंख्यात प्रदेशवाणु, अने केछी द्रव्य अनन्त प्रदेशवाणु पणु

અનુભવ કરના હૈં વહ સય ઉપયોગ સે હી કરતા હૈં । ઇસલિય યહ શી સય પર્યાયોં મેં પ્રધાન હૈં । દ્રવ્યાર્થિકતા કા તાત્પર્ય એક અર્થહ દ્રવ્ય સે હૈં । દ્રવ્યાર્થતા મેં દ્રવ્ય ક આધાર રહ હુગ પ્રવેશ, ગુણ ઓર પર્યાય, ઇન પર દષ્ટિ નહીં જાતી હૈં, પ્રત્યુત કેવલ એક દ્રવ્ય પર હી દષ્ટિ રહતી હૈં । ઇસી દષ્ટિ કા નામ દ્રવ્યાર્થિક નય હૈં । દ્રવ્યાર્થિક નય અપન વિષય કો પ્રશ્ન કરતે સમય ઠમમ રહે હુગ અન્ય ગુણાદિશોં કા સ્પેષ નહીં કરતા હૈં, પરન્તુ ઉન્હેં ગોળ કર રેતા હૈં ઓર અપને વિષય કો મુખ્ય ।

કિન્ત્રી સી એક યા અનેક સ્ત્રીઓં કે ધારે મેં એક યા અનેક વ્યક્તિયોં ક વિચાર અનેક તરહ કે હોતે હૈં । અર્થાત્ એક વસ્તુ ક વિષય મેં ભિન્ન ૨ વિચારોં કી પરિગણના કી જાવ તા હેં અપરિમિત પ્રતીત હોંગે, અતઃ સવિષયક પ્રત્યેક વિચાર કા ષોષ કરના અશક્ય હો જાતા હૈં । ઇસલિય ઉનકા અતિમક્ષિત ઓર અતિવિમ્નૃત પ્રતિપાદન છોડ કરકે મધ્યમમાર્ગ સ પ્રતિપાદન કરના યહી નયવાદ કા કામ હૈં । જૈન ધર્મન મેં દ્રવ્યાર્થિક, ઓર પર્યાયાર્થિક, એમ દો નયોં કા ઉપદેશ દુઆ હૈં । યદ્યપિ દ્રવ્ય કો વિષય કરને ચાલા દ્રવ્યાર્થિક નય હૈં ઓર પર્યાય કો વિષય કરન ચાલા પર્યાયાર્થિક નય હૈં, કિન્ત્ર સી ગુણોં કો વિષય કરને ચાલા ગુણાર્થિક નય જો નહીં માના હૈં ઉમકા કારણ યહી હૈં કિ પર્યાયાર્થિક નય મં હી ઇમકા અન્તર્માલ હો જાના હૈં । કયોં કિ ગુણ સહમાસી પચાય હૈં । અતમા

તે બધુ કપયોગથી જ કરે છે તેથી તેજ સ્વભાવી પદાર્થોમાં મુખ્ય છે દ્રવ્યાર્થિક હતા એટલે એક અર્થક દ્રવ્ય દ્રવ્યાર્થતામાં દ્રવ્યને આધાર રહેલ પ્રદેશ, ગુણ અને પદાર્થ પર દષ્ટિ જતી થી બધુ કેવળ એક દ્રવ્ય પર જ દષ્ટિ રહે છે એ દષ્ટિનું નામ જ દ્રવ્યાર્થિક નય છે । દ્રવ્યાર્થિક નય પોતાના વિષયને પ્રત્યક્ કરતી બળને તેમાં પ્રદેશ જ જ શુદ્ધોને દોષ કરતો નથી પણ તેને જોખ અણે છે અને પોતાના વિષયને મુખ્ય અણે છે ।

કોઈ એક કે અનેક સ્ત્રીએ વીરે એક અથવા અનેક અગ્નિઓના વિચાર અનેક જાતના દોષ છે । એટલે કે એક જ વસ્તુની જાણતમા ભિન્ન ભિન્ન વિચારે ની ગણતરી કરવામાં આવે તો તે અપરિમિત લાગશે, તેથી તે જાણતના દરેક વિચારનેા ભાષ કરવો અશક્ય થઈ જાય છે, તેથી તેમનું અતિમક્ષિત કે અતિવિસ્તૃત પ્રતિપાદન કરવાનું કોઈ દહને મધ્યમમાર્ગથી પ્રતિપાદન કરવું એ નયવાદનું કામ પ્રતીત દર્શનમાં દ્રવ્યાર્થિક અને પદાર્થાર્થિક એવા નયનેા ઉપદેશ આપયો છે । એ કે દ્રવ્યનેા વિષય કરનાર દ્રવ્યાર્થિક નય છે અને પદાર્થને વિષય કરનાર પદાર્થાર્થિક નય છે । છતાં પણ શુદ્ધોને વિષય કરનાર ગુણાર્થિક નયને નહીં માનવાનું કામજ એ છે કે પદાર્થાર્થિક નયમાં જ તેનેા સમાવેશ થઈ જાય છે, કારણકે ગુણ સદા જ પા ।

मूलम्—एगेअणाया ॥ सू. २ ॥

टीका—‘अणाया’ अनात्मा=आत्मभिन्नः घटादिपदार्थः, ‘एगे’ एकः—
एकत्वसंख्यावान्नि कर्वाचिदित्यर्थः, अनात्माऽपि यद्यपि प्रदेशार्थतया कश्चिन्
संख्यातप्रदेशः, कश्चिद्वसंख्यातप्रदेशः, कश्चिदनन्तप्रदेशोऽप्यस्ति, तथापि परिणा-

को यह्वा सुवहार ने एक कहा है—और कहीं २ पर अनेक भी प्रकट किया
है—तो फिर इस प्रकार से यह मान्यताएँ परस्पर में विरुद्ध दिखलाई
देती हैं। ऐसी स्थिति में प्रश्न हो सकता है कि इन दोनों मान्यताओं में
परस्पर विरुद्धता वास्तविक है या अवास्तविक है। तब नयवाद यह
कहता है कि यह ऊपर से दिखनेवाली विरुद्धता वास्तविक नहीं है,
क्यों कि द्रव्यार्थिक नय की अपेक्षा आत्मा में एकत्व है और प्रदेशार्थता—
पर्यायार्थिक नय की अपेक्षा आत्मा में अनेकत्व है। यही विषय संक्षेप में
टीकाकार ने इस सुवहारा समझाया है ॥ सू. १ ॥

‘एगे अणाया’ इति ।

टीकार्थ—(अणाया एगे) आत्मा से भिन्न घट पटादिपदार्थ रूप अनात्मद्रव्य
किमी अपेक्षा से एकत्वसंख्या विशिष्ट है। जिस अपेक्षा से यह अनात्म-
द्रव्य एक है वह अपेक्षा परिणामित्वरूप एक द्रव्यार्थता है। पुद्गलद्रव्य,
धर्मद्रव्य, अधर्मद्रव्य, आकाशद्रव्य और काल ये सब अनात्म-अजीव-
द्रव्य हैं। इनमें यद्यपि कोई द्रव्य संख्यात प्रदेशवाला, कोई द्रव्य असं-
ख्यातप्रदेशवाला और कोई द्रव्य अनंत प्रदेशवाला भी है तौ भी इस

छे अच्छी सूत्रकारे आत्माने क भताये छे अने काज डोई स्थणे अनेक पत्र
भताये छे, ता अे रीते ते मान्यताआ अेक भावनी विरोधी ज्ञाय छे अे परि
स्थितिमा अेयो प्रश्न कइलवी शेटे डे ते मान्यताआ वर्येनी विरुद्धता वस्तविक
छे डे अवास्तविक छे ? तो नयवाद अे दर्शावे छे डे उपर्युक्त देखाती ते विरुद्धता
वास्तविक नथी, कारणे डे द्रव्यार्थिकनयनी अपेक्षाअे आत्मामा अेकत्व छे अने प्रदे
शार्थता-पर्यायार्थिकनयनी अपेक्षाअे आत्मामा अनेकत्व छे अे जे विषय साक्षरमा
टीकाकारे आ सूत्र द्वारा समझाये छे ॥ सू. १ ॥

“एगे अणाया” इति ।

टीकार्थ—‘अणाया एगे’ आत्मा करता भिन्न घट पट (घडो, पडहो) आदि पदार्थरूप
अनात्मद्रव्य कयी दृष्टिअे अेकत्व छे ? जे अपेक्षाअे ते अनात्मद्रव्य अेक ते परिणा-
मित्वरूप अेक द्रव्यार्थता छे। पुद्गलद्रव्य, धर्मद्रव्य, अधर्मद्रव्य, आकाशद्रव्य, अने
काल अे भधा अनात्म-अजीवद्रव्य छे। तेमनामा जे क कछ द्रव्य संख्यात प्रदेश-
वाला, कछ द्रव्य असंख्यात प्रदेशवाला, अने कछ अनंत प्रदेशवाला यहु

મિત્રરૂપેકદ્રવ્યાર્થતયા એક એવેતિ ભાવ । ધર્માભિક્ષાયાદીનામનાત્મનાં તદ્વશ્વપ
રિણામવત્ત્રાપેક્ષયા મુ કથંચિક્ષિન્મરુપાણામપિ અનુપયોગરૂપેકસ્વભાવસ્વાદંકત્વ
પોષ્યમ્ ॥ સૂ. ૨૥

પરિણામિત્વરૂપ એક દ્રવ્યાર્થતા કી અપેક્ષા યે સચ્ચી એક છે । ધર્માભિ
ક્ષાયાદિક અનાત્મદ્રવ્યોં મ સદશપરિણમન કી અપેક્ષા સે કથચિન્ન મિન્ન
સ્વરૂપતા હ તા મી અનુપયોગ રૂપ એક સ્વભાવ સે યુક્ત હોન ક કારણ
એકત્વ જાનના ચાદિયે ।

‘માયાર્થ’—જીવ કે લક્ષણ સે જો ગુન્ય હોતા હે ઘટ અજોષ હ ।
હસી કા નામ અનાત્મા હે । યહ આત્મા—જીવ કા ધિરોષી માયાત્મક તત્ત્વ
હે ઘટ કેચલ અનાયાત્મક નહીં હે । યહ અમીવતત્ત્વ પાંચ પ્રકાર હે । પુદ્ગ
લાસ્તિકાય, ધર્માભિક્ષાય, અધર્માભિક્ષાય, આકાશાસ્તિકાય ઓર કાલ ।
અસ્તિકાય કા તાત્પર્ય હે પ્રદેશોં કા સમૂહ । ધમ, અધર્મ, ઓર આકાશ યે
૩ તીન દ્રવ્ય તો પ્રદેશ સમૂહ રૂપ હે ઓર પુદ્ગલ અવયવરૂપ તથા અવ
યવ સમૂહરૂપ હે । કાલ કો અસ્તિકાય નહીં કહને કા યહી તાત્પર્ય હે કિ
વહ પ્રદેશસમૂહ રૂપ નહીં હે । યદિ હમ પ્રકાર કી માન્યતા સે
ઉસે અસ્તિકાય નહીં કહા જાનાહે—તો કિર પુદ્ગલ પરમાણુ કો અસ્તિ
કાય આપ કેસ કહ સકતે હો ? સો હમ પ્રકાર કી ઠાકા કરના
ઉચિત નહીં હે, કારણ કિ—પુદ્ગલ કા પરમાણુ યપિ એક પ્રદેશવાલા

હા છતાં પણ આ પરિણામિત્વરૂપ દ્રવ્યાર્થતાની અપેક્ષાએ તે જપા એક જ છે
ધર્માભિક્ષાય આદિ અનાત્મ દ્રવ્યોનાં સમાન પરિણમનની અપેક્ષાએ ભિન્નસ્વરૂપતા
જ, છતાં પણ અનુપયોગરૂપ એક સ્વભાવ (લક્ષણ)થી યુક્ત હોવા ને કારણે એકત્વ
અવગુ એપ્રેક્ષે

ભાવાર્થ—જીવના લક્ષણથી ૭ સંદિત હોય તે અજીવ કહેવાય છે એટલે જ
નામ અનાત્મા છે તે આત્મા—જીવનું વિશેષી ભાવાત્મક તત્ત્વ છે, તે કેવળ આત્મા
વાત્મક નથી તે અજીવ તત્ત્વ પાંચ પ્રકારનું છે—પુદ્ગલસ્થિતિકાય, ધર્માભિક્ષાય,
અધર્માભિક્ષાય, આકાશસ્થિતિકાય, અને કાળ. આસ્થિકાયનું તાત્પર્ય પ્રદેશોને સમૂહ
થાય છે ધમ, અધર્મ અને આકાશ એ ત્રણ દ્રવ્ય તો પ્રદેશસમૂહરૂપ છે, અને
પુદ્ગલ અવયવરૂપ તથા અવયવસમૂહ રૂપ છે કાળને અસ્તિકાય નહીં કહેવાનું કારણ
એ છે કે તે પ્રદેશસમૂહરૂપ નથી એ તે પ્રકારની માન્યતાથી તેને અસ્તિકાય કહે
વાય નહીં તો પુદ્ગલ પરમાણુને આપ કેવી રીતે અસ્તિકાય કહી શકે ? ના
એ પ્રકારની યક્ષ કરની એ કીક નથી, કારણકે પુદ્ગલનું પરમાણુ એ કે એક

होता है तो भी वह अनेक स्कंधों का कारण होने से बहुप्रदेशी उप-
चार से माना गया है। ऐसा काल नहीं है। जितने आकाशक्षेत्र में एक
अविभागी पुद्गल परमाणु रहता है उस भाग को प्रदेश कहते हैं। एक
जीव द्रव्य के धर्मास्तिकाय और अधर्मास्तिकाय के असंख्यप्रदेश हैं।
पुद्गल द्रव्य में कोई पुद्गल संख्यात प्रदेशी, कोई असंख्यातप्रदेशी और
कोई अनंत प्रदेशी होता है। प्रदेश का दूसरा नाम निरंश अंश भी है।
पुद्गल और दूसरे द्रव्यों के बीच इतना अन्तर है कि पुद्गल के प्रदेश
अपने स्कंध से अलग रह सकते हैं पर अन्य चार (जीव, धर्म, अधर्म-
और आकाश) द्रव्यों के प्रदेश अपने स्कंध से भिन्न-अलग-नहीं हो
सकते हैं। इसका कारण यह है कि पुद्गल के सिवाय अन्य चारों द्रव्य
तथा काल अमूर्त और अप्रदेशी माना गया है। जो अमूर्त होना है उसका
स्वभाव खंडित होने का नहीं होता है। मूर्त द्रव्य का ही खंड हो सकता
है, क्योंकि संश्लेष और विश्लेष के द्वारा मिलने की तथा अलग होने
की शक्ति मूर्तद्रव्य में देखी जाती है। इसी के कारण पुद्गल द्रव्य के
छोटे बड़े सभी अंशों को अवयव कहते हैं।

जिस प्रकार पराणु पुद्गल का अविभाज्य अंश है
उसी प्रकार प्रदेश भी एक अविभाज्य अंश-भाग है तब परमाणु और

प्रदेशवाणुं होय छे, तो पणु अनेक स्कंधोनुं कारण होवाधी तेने औपचारिक रीते
अहुप्रदेशी मानवामा आवेय छे काण आवेय नथी जेटला आकाशक्षेत्रमा एक
अवलागी पुद्गल परमाणु रहे छे ते लागने प्रदेश कहे छे एक एव द्रव्यना
धर्मास्तिकाय अने अधर्मास्तिकायना असंख्यात प्रदेश छे पुद्गलद्रव्यमा कहे
पुद्गल संख्यात प्रदेशी, कहे असंख्यात प्रदेशी अने कहे अनंत प्रदेशी होय छे
प्रदेशनुं भीणु नाम 'निरंश अंश' पणु छे पुद्गल अने भीणु द्रव्योवरये जेटलु
अंतर छे के पुद्गलना प्रदेशो स्कंधधी अलग अलग थछ शके छे पणु भीणु आर
(एव धर्म, अधर्म अने आकाश) द्रव्योना प्रदेशो पोत पोताना स्कंधधी अलग थछ
शकता नथी, तेनु कारण जे छे के पुद्गल सिवाय भीणु आर द्रव्यो तथा काण अमूर्त
अने अप्रदेशी मानवामा आवेय छे न अमूर्त होय तेना अडित थवाने स्वभाव
होतो नथी मूर्त द्रव्यना जे अडथछ शके छे, कारण के संश्लेष अने विश्लेष
द्वारा भगवानी तथा अलग थवानी शक्ति मूर्त द्रव्यमा न नजरे पडे छे ते कारणे
पुद्गल द्रव्यना नाना मोटा गंधान अशोने अवयव कहे छे.

जेम पुद्गलनुं परमाणु पुद्गलने अविभाज्य अंश छे जे न रीते प्रदेश पणु

वस्तु या तो स्थिररूप प्रतीत होती है या अस्थिररूप। एतावता इतने मात्र से वस्तु का पूर्ण यथार्थरूप नहीं सध सकता है—वह दोनों अशों की ओर दृष्टि देने से ही सधता है। इसी का नाम परिणामिनित्य है और यह परिणमन प्रत्येक वस्तु में हर एक समय होता रहता है—इस परिणमन से कोई भी वस्तु किसी भी समय में अच्छी नहीं रहती है। अतः इस परिणमन की अपेक्षा समस्त अनात्मा पदार्थ एक है। परिणमन दो प्रकार का होता है—एक सदृश परिणमन और एक विसदृश परिणमन,—जीव और पुच्छल इन दो द्रव्यों में दोनों प्रकार का परिणमन होता रहता है। पर धर्मास्तिकायादिक द्रव्यों में केवल सदृशपरिणमन ही होता है, विसदृश परिणमन नहीं। इस अपेक्षा धर्मास्तिकायादिक द्रव्य अपने २ सदृश परिणमन की अपेक्षा आपस में भिन्न २ है—फिर भी इन सबमें अनुपयोग रूप एक स्वभावता रहने से इस अपेक्षा वे सब एक हैं। यही टीकाकार का अभिप्राय है। इस प्रकार इस भावार्थ द्वारा प्रदेश, परिणामि नित्यत्व और सदृशपरिणमन के ऊपर यह संक्षिप्त विवेचन किया है। इस तरह अनात्म द्रव्यों में एकत्व के बोधक परिणामिरूप एक द्रव्यत्व और अनुपयोगरूप एक स्वभावत्व है, यह बात सध जाती है ॥मृ०२॥

अथ छे त्वादे ते वस्तु कातो स्थिर रूप लागे छे अथवा अस्थिर रूप लगे छे तो એમ કરવા માત્રથી જ તે વસ્તુનું પ્રભુ યથાર્થ રૂપ બાણી શકાતું નથી તે બાણવા માટે તો બન્ને અશે તરફ દૃષ્ટિ પડવી બોધએ એનું નામ જ પરિણામિનિત્ય છે. અને તે પરિણમન દરેક સમયે અથવા કરે છે—આ પરિણમનથી કાંઈ પણ વસ્તુ કાંઈ પણ સમયે અલિપ્ત રહી શકતી નથી તેથી તે પરિણમનની અપેક્ષાએ સમસ્ત અનાત્મ પદાર્થ એક છે.

પરિણામ એ પ્રકારના હોય છે—સદૃશ પરિણમન (સમાન પરિણમન) અને વસદૃશ પરિણમન (અસમાન પરિણમન) જીવ અને પુદ્ગલ એ બન્ને દ્રવ્યોમા બન્ને પ્રકારના પરિણમન થયા કરે છે પણ ધર્માસ્તિકાયા આદિ દ્રવ્યોમા ફક્ત વસદૃશ પરિણમન થતું નથી તે દૃષ્ટિએ બેતા ધર્માસ્તિકાયાદિક દ્રવ્ય પોતપોતાના સદૃશ પરિણામનની અપેક્ષાએ અન્યોન્ય ભિન્ન ભિન્ન છે—છતાં પણ તે બધામા અનુપયોગરૂપ એક સ્વભાવતા હોવાથી તે દૃષ્ટિએ બેતા તે બધા એક જ છે એજ ટીકાકારના કથનનું તાત્પર્ય છે. આ રીતે ભાવાર્થ દ્વારા પ્રદેશ, પરિણામિનિત્યત્વ, અને સદૃશ પરિણમન ઉપર સંક્ષિપ્ત વિવેચન કરવામાં આવ્યું છે એ જ પ્રમાણે અનાત્મદ્રવ્યોમા એકત્વના બોધક પરિણામિરૂપ એક દ્રવ્યત્વ અને અનુપયોગરૂપ એક સ્વભાવત્વ છે, તે વાતની પ્રતીતિ થાય છે ॥સૂ. ૨॥

આત્મના નિષ્ક્રિયત્વે કેશિદ્વિહીકૃત, તનિગકરણાયાત્મનઃ ક્રિયાવત્ત્વ સ્વ્ય માણ મુપકાર ક્રિયાજનકત્વેન પ્રથમ ણ્ડમ્બરુપમાદ—

મૂલમ્—एगे दहे ॥ सू ३ ॥

તીકા—‘દહે’ દણ્ડઃ—દણ્ડયતે=જ્ઞાનાવપહારેણ પીઠયત નિ સા રીક્રિયત્ત્વા આત્માડનેનેતિ દણ્ડઃ, સ ચ દ્રશ્યતા યદિ ભાવતા દુષ્પ્રયુક્તમનોવા ક્ષાયરૂપઃ, હિંસારૂપા વા, સ ચ ‘एगे’ एङः, एकत्वमस्य सामान्यनयापक्षया । एवमन्यथापि सर्वप्रकृषं पोष्यम् ॥ सू ३ ॥

મૂલમ્—एगे अदहे ॥ सू ४ ॥

તીકા—‘અદહે’ અદણ્ડઃ—પ્રવ્રણ્તયોગપ્રયરૂપ, અહિંસારૂપા વા । સામાન્ય નયાપક્ષયા એકત્વમદણ્ડમ્યતિ માયઃ ॥સૂ ૪॥

આત્મા મં સર્વથા નિષ્ક્રિયસ્થ કિતનેક યાદિયો ન અગીકાર ક્રિયા હે પરન્તુ યદ્ ડનકી માન્યતા ટીક નહીં હે, કયાં કિ આત્મા સક્રિય હે । ડસી ધાનકો દિશ્વસ્થાને કે સ્થિત મુપકાર વદ કા સ્વરૂપ કહતે હે—‘एगे दहे’ इत्यादि ।

જ્ઞાનાદિયો કે અપકાર સે આત્મા જિસકે દ્વારા પીઠિત ક્રિયા જાણા હે,અથવા સારગદ્ધિત ક્રિયા જાતા હે ડમકા નામ વદ્દ હે । યદ વદ્દ દો પ્રકાર કા હોતા હે એક દ્રવ્યવદ્દ યૌર વૃમરા ભાવદ્દ હે । યદિઆદિક વાક્ય પદાર્થ દ્રવ્ય વદ્દ હે યૌર મન ચચન જગં વાય કી દુષ્પ્રવૃત્તિ ભાવદ્દ હે । અથવા હિંસા રૂપ વ્યાપાર ભાવદ્દ હે । યદ્ વદ્દ મી સામાન્ય કી અપેક્ષા એક હે । ડસી તરફ સે અન્યથ મી એકત્વ કી મિદ્ધિ જાનના ચારિયે ॥સૂ૦૩॥

‘एगे अदहे’ इति ।

પ્રવ્રણ્ત યોગમયરૂપ અવદ્દ મી સામાન્યનય કી અપેક્ષા એક હે ॥સૂ૦ ૪॥

કેટલાક કોયે મત ધરાવે છે કે આત્મા સર્વથા નિષ્ક્રિય છે, પણ તેમના તે મા વતા બરાબર નથી, કારણ કે આત્મા સક્રિય છે તે વાત ડસીવવાને માટે સૂત્રકાર હેતુ સ્વરૂપ બતાવે છે—“एगे दहे” इत्यादि ।

તીકા—જ્ઞાનાદિના અવધારમાં આત્માને જના દ્વારા પીઠવામાં આવે છે, અથવા સારગદ્ધિત કરવામાં આવે છે તેને હેતુ કહે છે તે હેતુના બે પ્રકાર છે—(૧) દ્રવ્યવદ્ અને (૨) ભાવવદ્ લોકકી વર્ણે આજ્ઞા પદાર્થ દ્રવ્યવદ્ છે અને મન, વચન અને કાવાનો દુષ્પ્રવૃત્તિ ભાવવદ્ છે અથવા દિ સારૂપ પ્રવૃત્તિ ભાવવદ્ છે તે હેતુ પણ સામાન્ય નયની અપેક્ષાએ એક છે એ જ રીતે અન્યથ પણ એકત્વ ગ્રાહ્યમેષુ માનયુ ॥સૂ ૩॥

“एग अदहे” इति

પ્રવ્રણ્ત યોગમયરૂપ અથવા અદિ નારૂપ અવદ્ પણ સામાન્ય નયની અપેક્ષાએ એક છે ॥સૂ૦ ૪॥

मूलम्—एगा किरिया ॥ सू. ५ ॥

टीका—‘किरिया’ क्रिया=कायिकी प्रभृतयः आस्तिक्यवा । संग्रहनयाश्रित-
सामान्यरूपापेक्षया एकत्वमस्ति क्रियाया अपीतिमात्रः ॥ सू. ५ ॥

मूलम्—एगा अकिरिया ॥ सू. ६ ॥

टीका—‘अकिरिया’ अक्रिया=योगनिरोधरूपा, नास्तिकत्वं वा ॥ सू. ६ ॥

मूलम्—एगे लोए ॥ सू. ७ ॥

टीका—‘लोए’ लोकाः, ‘एगे’ एकः, यद्यपि लोकस्य त्रैविध्यम्, असंख्या-
तप्रदेशकत्वं च, तथापि द्रव्यार्थतया एकत्वमितिमात्रः ॥ सू. ७ ॥

‘एगा किरिया’ इति ।

टीकाथ—कायिक आदि क्रियाओं में अथवा अस्तिकाय में संग्रहनय के
अश्रित सामान्य रूप की अपेक्षा से एकता है ॥ सू. ५ ॥

‘एगा अकिरिया’ इति ।

योगों को निरोध करने रूप अक्रिया में अथवा नास्तिकत्व में भी
इसी तरह से एकता है ॥ सू. ६ ॥

‘एगे लोए’ एगे अलोए’ इति ।

टीकार्थ—लोक एक है । अलोक एक है—यद्यपि उर्ध्वलोक, तिर्यग्लोक
और अधोलोक, इस प्रकार से लोक के तीन भेद किये गये हैं । तथा लोक-
असंख्य प्रदेशवाला माना गया है । फिर भी द्रव्यार्थिकता की अपेक्षा
उसमें एकत्व आ जाता है । इसी तरह अलोक में भी प्रदेशार्थता को
लेकर यद्यपि अनेकता है फिर भी द्रव्यार्थिकता की अपेक्षा उसमें एकता

“एगा किरिया” इति—

कायिक आदि क्रियाओंमा अथवा आस्तिक्यमा संग्रहनयने आश्रित सामान्य
रूपकी अपेक्षासे एकता छ ॥ सू. ५ ॥

“एगा अकिरिया” इति—

योगोना निरोध करवाइय अक्रियामा अथवा नास्तिकत्वमा पणु ओण नीते
एकता छ ॥ सू. ६ ॥

“एगे लोए” “एगे अलोए” इति—

लोक एक छ अलोक एक छ—जे के उर्ध्वलोक, तिर्यग्लोक अने अधोलोक,
ओवा लोकना पणु लेह पडाय छ तथा लोकने असंख्यात प्रदेशवाणो मानवामा
आओ छ तो पणु द्रव्यार्थिकतानी अपेक्षासे तेमा एकत्व रहल छ ओण प्रमाणे
अलोकमा पणु प्रदेशार्थताने लीधे जे के अनेकता छ, छांतां पणु द्रव्यार्थिकतानी

एगे अलोए ॥सू ८॥

टीका—‘अलोए’ अलोक, ‘एगे’ एक द्रव्यलोकस्य प्रत्येकार्यतयाऽनेक स्वमस्ति, अनन्तप्रदेशरूपात्, तथापि द्रव्यार्थतया स एक एवास्तीति भाषः । यद्वा य केचिद् लोका अलोका अपि षडप इति मन्यन्ते, तन्मतनिराकरणार्थमिदं, लोकासोकप्रोक्तत्वं नास्तीति भावः ॥सू ८॥

હી છે। અથવા જો કોઈ ‘લોક ઘણું છે અલોક મી ઘણું છે’ એસા માનતે હેં તેનકી વજાનતરૂપમાન્યતા કા નિરાકરણ કરને કે લિય યહ સૂત્ર કહા ગયા હે। લોક ઓર અલોક મેં અનેકતા નહીં હે।

માર્થ—આકાશ દ્રવ્ય કે હી ય દો મેદ સિદ્ધાન્તકાર્નેને કહે હેં, એક લોક ઓર દુસરા અલોક । इनमें लोकाकाश असण्यात प्रदेशवाला और अलोकाकाश अनन्तप्रदेशवाला माना गया है। जिस में जीव पुद्गल आदि द्रव्य रहते हैं वह लोक है और जिसमें केवल आकाश ही आकाश है वह अलोक है। तात्पर्य यह है कि जीव पुद्गल आदि द्रव्य समग्र आकाश में नहीं रहते हैं किन्तु अमुक परिमित भाग में ही रहते हैं। जितने भागमें इनका निवास है उतना आकाशभाग लोक और इसके बाहर बाँटों ओर अनन्त आकाश विद्यमान है वह अलोक है। यद्यपि देव नारकी और मनुष्यादि के निवास की अपेक्षा लोक के सि उर्ध्वलोक-अधोलोक एवं तिर्यग्लोक, इस तरह तीन मેદ માને ગયે હેં પરન્તુ દ્રવ્યપિંક્તા-દ્રવ્યરૂપ લોકાકાશ કી અપેક્ષા સે इनमें अमेद-एकत्व मा

અપેક્ષાએ તેમાં એકતા જ છે અથવા ને કોઈ “લોક ઘણું છે અલોક પણ ઘણું છે” એવી માન્યતા ધરાવે છે તેમની એકાન્તરૂપ માન્યતાનું નિવા જી ઠરવાને માટે આ સૂત્ર કહેવામાં આવ્યું છે લોક અને અલોકમાં અનેકતા નથી.

ભાવાર્થ—આકાશ દ્રવ્યના જ આ બે લેહ સિદ્ધાન્તકારોએ બતવ્યા છે—(૧) લોક અને (૨) અલોક તેઓમાં લોકાકાશ અસખ્યાત પ્રદેશવાળું અને અલોકાકાશ અનન્ત પ્રદેશવાળું માનવામાં આવેલું છે જેમાં જીવ, પુદ્ગલ આદિ દ્રવ્ય રહે છે તે લોક છે, અને જેમાં ફક્ત આકાશ જ છે તે અલોક છે તેનું તાત્પર્ય એ છે કે જીવ, પુદ્ગલ આદિ દ્રવ્ય સમગ્ર આકાશમાં રહેતું નથી, પણ અમુક પરિમિત ભાગમાં જ રહે છે જેટલા ભાગમાં તેમનો નિવાસ છે એટલો આકાશભાગ લોક કહેવાય છે અને તેની બહાર આસપાસ, યોગેશ જે અનન્ત આકાશ આવેલું છે તેને અલોક કહે છે એ કે દેવ નાશકી અને મનુષ્ય આદિના નિવાસની અપેક્ષાએ લોકના પણ ઉર્ધ્વલોક અધીલોક અને તિર્યગ્લોક એ ત્રણ ભેદ માનવામાં આવ્યા છે તેા પણ દ્રવ્યપિંક્ત-દ્રવ્યરૂપ લોકાકાશની અપેક્ષાએ તેમનીમાં અલોક-એકત્વ આવી જાય છે

मूलम्—एगे धम्ममे ॥सू. ९॥

टीका—‘धम्ममे’ धर्मः=धर्मास्तिकायः, एकः । जीवपुद्गलाः स्वभावतः सक्रियाः सन्ति, तेषां गतिपरिणामवतां तत्स्वभावं यो धारयति स धर्म इत्युच्यते, स चास्तीनां प्रदेशानां संघातरूपत्वात् कायः, अतोऽसावस्तिकाय इति व्यपदिश्यते । धर्मास्तिकायस्यासंख्यातप्रदेशकत्वेऽपि द्रव्यार्थतया स एक एवेतिभावः ॥सू. ९॥

एगे अधम्ममे ॥सू. १०॥

टीका—‘अधम्ममे’ अधर्मः—अधर्मास्तिकायः ‘एगे’ एकः द्रव्यत इतिभावः । न धर्मः—अधर्मः, जीवपुद्गलानां गत्युपपत्त्यन्तको धर्मस्तद्विपरीतः स्थित्युपपत्त्यन्तत्वादधर्म इत्युच्यते ॥सू. १०॥

जाता है। इसी प्रकार अनंतप्रदेशात्मक अलोकाकाश है—अतः अनंतप्रदेशों की अपेक्षा उसमें अनेकता आती है फिर भी अलोकाकाशरूप द्रव्यत्व की अपेक्षा उसमें भी एकत्व बन जाता है। जिस प्रकार ब्राह्मण, क्षत्रिय आदि की अपेक्षा मनुष्यों में अनेकता होने पर भी मनुष्यत्व की अपेक्षा एकता घटित होती है। द्रव्यों को अपने में अवकाश देने रूप कार्य से इस आकाश की सिद्धि होती है ॥७॥८॥

‘एगे धम्ममे’ ‘एगे अधम्ममे’ इति ।

धर्मास्तिकाय एक है, अधर्मास्तिकाय एक है। स्वभावतः गतिक्रियाशील जीव और पुद्गलों को चलनेमें जो निमित्त कारण होता है वह धर्म-द्रव्य है। द्रव्य प्रदेशों का संघातरूप है इसलिये इसको अस्तिकाय कहा है। इस तरह धर्मास्तिकाय में असंख्यातप्रदेशात्मकता होने पर भी द्रव्यार्थता की अपेक्षा एकत्व माना गया है। स्थिति क्रिया परिणत जीव

એ જ પ્રમાણે અનંત પ્રદેશવાળું અલોકાકાશ છે તેથી અનંત પ્રદેશોની અપેક્ષાએ તેમાં અનેકતા લાગે છે છતાં પણ અલોકાકાશરૂપ દ્રવ્યવત્ની અપેક્ષાએ તેમાં પણ એકત્વ આવી જાય છે જેમ બ્રાહ્મણ, ક્ષત્રિય અદિની અપેક્ષાએ મનુષ્યોમાં અનેકતા હોવા છતાં પણ મનુષ્યતાની અપેક્ષાએ તેમનામાં એકતા ઘટાવી શકાય છે દ્રવ્યોને પોતાનો અદર સ્થાન દેવાના કાર્યથી તે આકાશની સિદ્ધિ થાય છે. ॥૭॥૮॥

“एगे धम्ममे” “एगे अधम्ममे” इति—

धर्मास्तिकाय એક છે, અધર્માસ્તિકાય એક છે સ્વભાવે જ ગતિ ક્રિયાશીલ જીવ અને પુદ્ગલોની ગતિમાં જે નિમિત્ત કારણરૂપ હોય છે તે ધર્મદ્રવ્ય છે તે દ્રવ્ય પ્રદેશોના સંઘાતરૂપ છે, તેથી તેને અસ્તિકાય કહેલ છે એ ગીતે ધર્માસ્તિકાયમાં અસંખ્યાત પ્રદેશાત્મકતા હોવા છતાં પણ દ્રવ્યાર્થતાની અપેક્ષાએ તેમાં એકત્વ માનવામાં આવ્યું છે સ્થિતિ ક્રિયા પરિણત જીવ અને પુદ્ગલોને થોભવામાં જે

ઔર પુદ્ગલોં કો જો ટરને મેં નિમિત્ત-સહાયક હોતા હે વહ અઘમદ્રવ્ય
હે। યદ અધર્મદ્રવ્ય મી ધર્મદ્રવ્ય કી તરહ અસહ્યાત પ્રવેશાલા હે યદ
મી દ્રવ્યાર્થતા કી અપેક્ષા માના ગયા હે।

ભાવાર્થ—ધર્મ, અધર્મ ઔર આકાશ યે ત્રીનો અમૂર્ત હોને સ ઘટ
પદાદિ કી તરહ ઇન્દ્રિયગમ્ય નહીં હે। ઇસલિયે ઇનકી સિદ્ધિ લૌકિક પ્રત્યક્ષ
સે નહીં હો સકમી હે। યદિ ફહા જાવે કિ આગમપ્રમાણ સે ઇનકી
સિદ્ધિ હોની હે સો યહ પાત તા ઠીક હે પરન્તુ આગમાશ્રય હેતુ ડમ
મિદ્વાન્ત કે અનુવાયિયોં મ હી અપની મહત્તા કા પ્રસ્યાપક હો સકતા
હે। અગમોક્ત અર્થ કો પોષણ કરને ચાલી યુક્તિ મી તો હોની ચાહિયે,
વહી યુક્તિ યહાં ટીકાકાર ને ઉપસ્થિત કી હે—જગનમેં ગતિશીલ ઔર
ગતિપૂર્વક સ્થિતિ શીલ પદાર્થ જીવ ઔર પુદ્ગલ યે દો હી હે। ધર્માસ્તિકાય
યા અધર્માસ્તિકાય ઇન ઢોનોં દ્રવ્યોં કો પ્રેરણા કરકે ન ચલાતે હે ઔર
ન ઢહરાતે હે। યદિ યે ચલતે હે તો ધર્માસ્તિકાય ઇન્હે ચલનેમેં મદદ
કર દેતા હે, જસ ચલને કે સ્વમાવધાહે મત્સ્યોંકો ચલનેમેં જલ
સહાયક હો જાતા હે। ઇસીતરહ જીવ ઔર પુદ્ગલ યદિ ઢહરાતે
હે તો છાયા મિસ પ્રકાર પથિયોં કો ઢહરને મેં સહાયતા પહુંચાની
હે ડસી પ્રકાર ડન્હે ઢહરને મેં અધર્માસ્તિકાય સહાયક હો જાતા
હે સસ યહ ફલિતાર્થ નિકલ્તા હે કિ ગતિ ઔર સ્થિતિ કા ઉપા

નિમિત્ત-સહાયક હોય છે તે અધર્મ દ્રવ્ય છે તે અધર્મ દ્રવ્ય પણ ધર્મ દ્રવ્યની જેમ
અત્ર ખ્યાત પ્રદેશશુ છે તેને પણ દ્રવ્યાર્થતાની અપેક્ષાએ એક માનવાના આવ્યું છે
ભાવાર્થ—ધર્મ અધર્મ અને આકાશ એ ત્રણે અમૂર્ત હોવાથી ઘટ, પદ
અદિની જેમ ઇન્દ્રિયગમ્ય નથી તેથી લૌકિક નજરે તેમને સિદ્ધ કરી શકતા નથી
એ એમ કહેવામાં આવે કે આગમ પ્રમાણથી તમનુ પ્રતિપાદન કરી શકાય છે તે
ત વાત બરાબર છે પણ આગમોને આધાર ત સિદ્ધાંતના અનુવાયિયોમાં જ તેની
મહત્તા ઠસાવી શકે છે તેથી આગમોક્ત અર્થને યુદ્ધિ આપનાર યુક્તિ પણ દોવી એકઠી
એ યુક્તિ જ ટીકાકારે અહીં યોજી છે—જગતમાં ગતિશીલ અને ગતિપૂર્વક સ્થિ
તિશીલ પદાર્થ છે અને પુદ્ગલ એ બે જ છે ધર્માસ્તિકાય કે અધર્માસ્તિકાય એ
બન્ને દ્રવ્યોને પ્રેરણા આપીને ચલાવતાં નથી કે અટકાવતાં નથી એ તે બાદે તો
ધર્માસ્તિકાય તેમને ચાલવામાં મદદ કરે છે જેમ ચાલવાના સ્વમાવધાજા મત્સ્યોને
ચાલવામાં પાણી સહાયક થાય છે તેમ ધર્માસ્તિકાય તેમને ચાલવામાં સહાયક થાય છે એવ
પ્રમાણે છે અને પુદ્ગલ એ થોભે તો જેમ યુગાકરોને ચાલવામાં છાયો સહાયક થાય
છે તેમ તેમને ચાલવામાં અધર્માસ્તિકાય સહાયક થાય છે તેથી એ સાબિત થાય છે કે

મૂલમ્—એગે પુણ્ણે ॥સૂ. ૧૧॥

ટીકા—‘પુણ્ણે’ પુણ્ય—‘પુણ શુભે’ इति वचनात् पुणति-शुभं-करोति-
आत्मानं पवित्रीकरोतीति पुण्यं-शुभकर्म तच्च ‘एगे’ एकम् । यद्यपि अन्नपुण्यादिभेदेन
नवप्रकारकमस्ति, यद्वा-पुण्यानुबन्धि पापानुबन्धि चेति द्वित्रयमपि, यद्वा-

दान कारण जीव और पुद्गल ही हैं । तथापि निमित्त कारण जो कार्य
की उत्पत्ति में अवश्य अपेक्षित है वह उपादान कारण से भिन्न होना
ही चाहिये । इसीलिये जीव पुद्गल की गति में निमित्तरूप से धर्मा-
स्तिकाय की और स्थिति में अधर्मास्तिकाय की सिद्धि हो जानी है ।
इसी अभिप्राय से “गतिस्थित्युपग्रहो धर्माधर्मयोरुपकारः” ऐसा कहा
गया है । आकाशद्रव्य की सिद्धि के विषय में बतला ही दिया गया है कि-
‘आकाशस्यावगाहः अपने में इन धर्मादिक द्रव्यों को स्थान देना आकाश
का कार्य है । इस कार्य से उसकी भी अवधि सिद्धि हो जाती है ॥९॥१०॥

‘एगे पुण्णे’ ‘एगे पावे’ ।

एक पुण्य है, एक पाप है । पुण धातु से पुण्य बनता है । पुण का
अर्थ शुभ होता है । जो आत्मा को पवित्र करे उसका नाम पुण्य है ।
शुभ कर्म ही आत्मा को पवित्र किया करते हैं, अतः शुभ कर्म ही पुण्य है ।
यह पुण्य भी सामान्य की अपेक्षा एक है । यद्यपि पुण्य प्रकृतियों के भेद
से पुण्य नौ प्रकार है, तथा पुण्यानुबन्धी पुण्य और पापानुबन्धी पुण्य के

गति અને स्थિતિનું ઉપાદાન કારણ જીવ અને પુદ્ગલ જ છે. છતાં પણ નિમિત્ત કારણ
કે જે કાર્યની ઉત્પત્તિમાં અવશ્ય અપેક્ષિત છે તે ઉપાદાન કારણથી જુદું હોવું જ
જોઈએ. તેથી જીવ, પુદ્ગલની ગતિમાં નિમિત્તરૂપે ધર્માસ્તિકાય અને સ્થિતિમાં
નિમિત્તરૂપે અધર્માસ્તિકાય સિદ્ધ થઈ જાય છે. આ જ કારણે “ ગતિસ્થિત્યુપગ્રહો
ધર્માધર્મયોરુપકારઃ ” એવું કહેવાયું છે આકાશ દ્રવ્યની સિદ્ધિના વિષયમાં એ બતાવી
દેવામાં આવ્યું છે કે-“આકાશમ્યાવગાહઃ” પોતાની અંદર એ ધર્માદિક દ્રવ્યોને
સ્થાન દેવાનું કાર્ય આકાશનું છે તે કાર્યથી તેની પણ સિદ્ધિમાં મુશ્કેલી નડતી નથી ॥૯॥૧૦॥

‘એગે પુણ્ણે’ ‘એગે પાવે’ इति

પુણ્ય એક છે, પાપ એક છે ‘પુણ’ ધાતુમાંથી પુણ્ય બને છે. પુણ્ય એટલે
શુભ આત્માને જે પવિત્ર કરે તેનું નામ પુણ્ય છે. શુભ કર્મ જ આત્માને પવિત્ર
કર્યા કરે છે, તેથી શુભ કર્મ જ પુણ્ય છે. તે પુણ્ય પણ સામાન્યની અપેક્ષાએ એક
છે જો કે પુણ્ય પ્રકૃતિઓના લેહ પ્રમાણે પુણ્ય નવ પ્રકારનું છે. તથા પુણ્યાનુબંધી
પુણ્ય અને પાપાનુબંધી પુણ્ય એવા બે પ્રકારના પણ લેહ છે અથવા પ્રત્યેક જીવમાં

मतिमयी गिन्नगिन्नपयार्क भवति, तत्तन्नाम तमेदमप्यस्ति, तथापि गामप्य
विनाया तदेकमिति भावः ॥११॥

गणे पाये ॥सू० १२॥

‘पाय’ पापम्—अथ भर्गो, ‘गणे’ एकम् अस्ति । तत्र यद्यपि कामोत्तरं
जीयादिरूपमनेकप्रकारेण, पुण्यामुष्यपिर्वापापुष्यपिर्भेदात् द्विषिषम्, अनन्तजी-
याभितत्तादनन्तमपि अधुगत्यरूपसामान्यविषयता एकमिति भावः । गे० १२॥

भेद दो प्रकार का भी है । अथवा हर एक जीव में पुण्य प्रकृति का तब
तमसाय से सञ्जाय होने से उनकी अपेक्षा यह अनन्त प्रकार का भी
हो सकता है, इस तरह अनन्त जीवों में इसका अस्तित्व पाया जाने के
कारण यह अनन्त भेद वाला भी हो जाता है । फिर ‘भी पुण्यस्य सामान्य’ की
अपेक्षा यह एक माना गया है, क्यों कि सामान्य अपने विशेष परिणामों में
रहता है । इसी तरह ज्ञानायोणीय आदि अशुभकर्म भी अनन्त प्रकार का
होने पर भी अशुभलक्ष्य सामान्य की अपेक्षा से एक है ॥११॥

पाप शब्द का अर्थ अशुभ कर्म है । यह भी ज्ञानायोणीय अदि
पापप्रकृति का अपेक्षा से अनेक प्रकार का, पुण्यानुषंगी ‘पाप,’ पापानु-
संगी पाप के भेद से दो प्रकार का, और अनन्त जीवों में भागित होने से
अनन्त प्रकार का भी होता है जो भी सामान्य की अपेक्षा से एक होने
में इसमें कोई बाधा नहीं है ।

नायार्थ—जात्र में अशुभ आदि भेद से पुण्य नौ प्रकार का कहा
है । तथा जिस पुण्य से पुण्य का संग हो वह पुण्यानुषंगीपुण्य, और जिससे

पुण्यप्रभृतिना न्यून है अथवा प्रमाणात् अज्ञान होने की अपेक्षा से अनेक
प्रकार का पुण्य होता है, जो होते अनन्त लोकोत्तरेण तत्तत् अस्तित्व होने के कारण
ते अनन्त लोकात् पुण्य नाम है उता पुण्य सामान्य पुण्यत्वनी अपेक्षा से तेने अनेक
लोकवासी आवे, कारण है सामान्य पीतानी विशेष अस्तित्ववासी रहे है जो के
प्रमाणे ज्ञानायोणीय आदि अशुभ कर्म पुण्य अनेक प्रकार का होता है उता पुण्य अशु-
भलक्ष्य सामान्यनी अपेक्षा से जो है ॥११॥

पाप शब्दना अर्थ अशुभकर्म है । ते पुण्य ज्ञानायोणीय आदि पापप्रभृति
मानी अपेक्षा से अनेक प्रकार का है पुण्यवासी न भी पाप अने पापानुसंगी पापना
हेतु है ते प्रमाण है, अने अनेक लोकोत्तरेण अस्तित्व होने की अपेक्षा से ते अनन्त प्रकार का
पुण्य है ते पुण्य सामान्यनी अपेक्षा से तेने अनेक लोकवासी हेतु बाधा नहीं ।

नायार्थ—जात्र में अनन्त पुण्य आदि भेद भी पुण्य नव प्रकार का है, तथा
ने पुण्यवासी पुण्यवासी न भी नपाप ते पुण्यवासी पुण्य अने नपाप पापना

પાપ કા, વંધ, હો વ્રહ્ પાપાનુવંધી પુણ્ય હસ પ્રકાર સે, પાપ દો પ્રકાર કા
મી હોતા, હૈ। તથા મિન્ન ૨, જીવોં મેં પુણ્યકર્મ કી સત્તા હીનાધિકહો
મેં પાઈ હી, જાતી હૈ, અતઃ હસ અપેક્ષા વહ અનંતભેદ વાલા મી હૈ।
ફિર મી યહાં પર સૂત્રકાર ને હન સવ ભેદોં કો પુણ્યત્વરૂપ સામાન્ય
મેં અન્તર્હિત કર, ઉસે એક હી માના હૈ, વયોં કિ સામાન્ય મેં સમસ્ત, અપને
ભેદોં કા સમાવેશ હો જાતા હૈ।

હસી તરહ પાપ મી પ્રાણાતિપાત આદિ કે ભેદ સે અઠારહ પ્રકાર
કા, પુણ્યાનુવંધી પાપ, પાપાનુવંધી પાપ કે ભેદ સે દો પ્રકાર કા ઓર
અનંતજીવોં મેં રહને કી અપેક્ષા અનંત પ્રકાર કા હૈ, ફિર મી પાપત્વરૂપ
અશુભ સામાન્ય કી અપેક્ષા ચે સવ એક હૈ।

જિન ૨ કર્મોં કા વધ હોતા હૈ, ઉન સમી કા વિપાક કેવલ શુભ
યા અશુભ હી નહીં હોતા વલ્કિ અધ્યવસાય રૂપ કારણ કી શુભાશુભતા
કે નિમિત્ત સે વે શુભાશુભ, દોનોં પ્રકાર કે નિર્મિત હોતે હૈ। શુભ અધ્ય-
વસાય સે નિર્મિત વિપાક શુભ હોના હૈ ઓર અશુભ અધ્યવસાય સે નિર્મિત
વિપાક અશુભ હોતા હૈ। જિસ પરિણામ મેં સંકેશ જિતના હી કમ હોગા, યહ
ઉતના હી અધિક શુભ, ઓર જિસ પરિણામ મેં સંકેશ જિતના અધિક
હોગા વહ પરિણામ ઉતના હી અશુભ હોગા। શુભ પરિણામ સે પુણ્યપ્ર-

પ્રથમ બંધાય-તે પાપાનુવંધી પુણ્ય, એ પ્રમાણે પુણ્યતા એ પ્રકારના લેહ થાય છે
તથા બુદ્ધા શુભાશુભા પુણ્ય કર્મના સત્તા ઓછા વધુ પ્રમાણમાં બેવા મળે
છે, તેવાં તે દૃષ્ટિકોણથી બેતા તે અગત લેહવાળું પણ છે છતાં પણ સૂત્રકરે અહીં
તે બધા ભેદોને પુણ્યત્વરૂપ સામાન્યમાં સમાવી લઈને એક જ માનેલ છે. કારણ કે
સામાન્યમાં તેના સઘળા ભેદોનો સમાવેશ થઈ ગય છે

એ જ પ્રમાણે પાપ, પણ પ્રાણાતિપાત આદિના લેહથી અઠાર પ્રકારનું છે.
પુણ્યાનુવંધી પાપ અને પાપાનુવંધી પાપના લેહથી એ પ્રકારનું, અને અનંત
જીવોમાં રહેવાની અપેક્ષાએ અનંત પ્રકારનું છે તો પણ પાપત્વરૂપ અશુભ સામાન્ય
અપેક્ષાએ તે બધા એક જ છે

જે જે કર્મોનો બધ પડે છે તે બધાનો વિપાક (ફળ) કેવળ શુભ કે અશુભ
જ નથી હોતો પરંતુ અધ્યવસાયરૂપ કારણની શુભાશુભના નિમિત્તથી તે શુભાશુભ
બંને પ્રકારનું થાય છે. શુભ અધ્યવસાયથી થયેલ વિપાક શુભ હોય છે અને અશુભ
અધ્યવસાયથી નિર્મિત વિપાક અશુભ હોય છે. જે પરિણામમાં સંકલેશ જેટલો
ઓછો હશે, તે પરિણામ એટલું જ વધારે શુભ હશે. જે પરિણામમાં સંકલેશ
વધારે હશે તે પરિણામ એટલું જ અશુભ હશે શુભ પરિણામથી પુણ્યપ્રકૃતિઓનો

કૃતિયોંં કા યથ હોતા હૈ, ઓર અશુભ પરિણામ સે પાપ પ્રકૃતિયોંં કા યથ હોતા હૈ, યેસા જો જ્ઞાત્રીય વિધાન હૈ વહ આપેક્ષિક હૈ। યયોંં કિ જૈસે અશુભ અધ્યવસાય કે સમય પ્રથમ આદિ ગુણસ્થાનોંં મૈં જ્ઞાનાવરણીય આદિ સમી પુણ્ય પાપ પ્રકૃતિયોંં કા યથાસંભવ યથ હોતા હૈ વૈસે હી છદ્દે આદિ ગુણસ્થાનોંં મૈં શુભ અધ્યવસાય કે સમય મી સમી પુણ્ય પાપ પ્રકૃતિયોંં કા યથાસંભવપ હોતા હી હૈ, અતઃ શુભ અધ્યવસાય સે પુણ્ય કા ઓર અશુભ અધ્યવસાય સે પાપ કા યથ હોતા હૈ, વહ કથન ઇકાન્તતઃ સંગત કૈસે માના જા સકતા હૈ, હસલિયે ઇહ કથન આપેક્ષિક હી માનના ચાલિય। ઓર અનુભાગ ઇવ સ્થિતિપથ કી અપેક્ષા હસકી સગતિ કર હેની ચાહિય। કોઈ મી ઇક પરિણામ ઇસા નહીં જો ઇકાન્તતઃ શુભ યા અશુભ કહા જા સકે। હરઇક પરિણામ શુભ, અશુભ, અથવા ઉચ્ચરૂપ હોને પર મી ડસમૈં જો શુભત્વ, અશુભત્વ કા વ્યવહાર કિયા જાતા હૈ વહ ગૌણ મુખ્ય ભાવ કી અપેક્ષા સે સમજના ચાહિયે, હસી લિયે જિસ શુભ પરિણામ સે પુણ્ય પ્રકૃતિયોંં મૈં શુભ અનુભાગબંધતા હૈ ડસી પરિણામ સે પાપ પ્રકૃતિયોંં મૈં અશુભ અનુભાગ મી બંધતા હૈ। હસકે વિપરીત જિસ પરિણામ સે અશુભ અનુભાગ બંધતા હૈ ડસી પરિણામ સે પુણ્ય પ્રકૃતિયોંં મૈં શુભ અનુભાગ મી બંધતા હૈ। અન્તર હતના હી હૈ—જૈસે પ્રકૃષ્ટ શુભ પરિણામ સે હોને વાલા

જાંધ બધાવ છે, અને અશુભ પરિણામથી પાપપ્રકૃતિયોનાં જાંધ બધાવ છે એવું ને જ્ઞાત્રીય વિધાન છે તે આપેક્ષિક છે કારણ કે જેમ અશુભ અધ્યવસાય વખતે પ્રથમ આદિ ગુણસ્થાનોમાં જ્ઞાનાવરણીય આદિ સર્વળી પુણ્ય પાપ પ્રકૃતિયોનાં ને પ્રમાણે જાંધ બધાવ છે એ જ પ્રમાણે છદ્દ વગેરે ગુણસ્થાનોમાં શુભ અધ્યવસાયને વખતે પણ સર્વળી પુણ્ય પાપ પ્રકૃતિયોનાં સ્થાપિત જાંધ બધાવ છે જ તેા શુભ અધ્યવસાયથી પુણ્યનો અને અશુભ અધ્યવસાયથી પાપનો જાંધ બધાવ છે, તે કથન એકાન્તતઃ સંગત કેવી રીતે માની શકાય ? તેથી તે કથન આપેક્ષિકઃ જ માનવું એમ છે અને અનુભાગ અને સ્થિતિપથની અપેક્ષાએ તેની સત્યતા સમજી લેવી એમ છે કારણ પણ એક પરિણામ એવું નથી કે ને એકાન્તતઃ શુભ કે અશુભ કહી શકાય હરેક પરિણામ શુભ, અશુભ અથવા જન્ને રૂપ હોવાં છતાં પણ તેમાં ને શુભત્વ અશુભત્વનો વ્યવહાર કરવામાં આવે છે તે ગૌણ ગુણ જાવની અપેક્ષાએ માનવો એમ છે તેથી ને શુભ પરિણામથી પુણ્યપ્રકૃતિયોમાં શુભ અનુભાગ બધાવ છે એ જ પરિણામથી પાપપ્રકૃતિયોમાં અશુભ અનુભાગ પણ બધાવ છે તેથી ઉલ્લેખ ને પરિણામથી અશુભ અનુભાગ બધાવ છે એ જ પરિણામથી પુણ્યપ્રકૃતિયોમાં શુભ અનુભાગ પણ બધાવ છે તેમાં જરૂરો જ વધાવત છે કે—જેમ પ્રકૃષ્ટ શુભ

મૂલમ્—‘એગે’ બંધે ॥સૂ, ૧૩॥

ટીકા—‘બંધે’ વન્ધઃ—વન્ધનં વન્ધઃ, યદિ જીવઃ કષાયવાન્ ભવતિ તદા સ કષાયસદ્ભાવાત્ કર્મણો યોગ્યાન્ પુદ્ગલાન્ ઉપાદત્તે ગૃહ્ણતિ, સ કર્મપુદ્ગલસંશ્લેષો વન્ધ ઇત્યુચ્યતે, સ ‘એગે’ એકોઽસ્તીત્યર્થઃ । વન્ધસ્ય પ્રકૃતિ-સ્થિતિપ્રદેશાનુભાવભેદાદ્વાતુર્વિધ્યમસ્તિ, તથાપિ સામાન્યતઃ સ એક ઇતિ ભાવઃ । યદ્વા-દ્રવ્યભાવભેદાદ્ વન્ધો દ્વિવિધઃ—દ્રવ્યતો નિગડાદિભિઃ, ભાવતસ્તુ કર્મણા, તયોશ્ચ વન્ધનસામાન્યવિવક્ષયા એકો વન્ધ ઇતિ ભાવઃ ॥સૂ. ૧૩॥

શુભ અનુભાગ પ્રકૃષ્ટ હોતા હૈ ઓર અશુભ અનુભાગ નિકૃષ્ટ હોતા હૈ વૈસે હી પ્રકૃષ્ટ અશુભ પરિણામ સે બંધને ત્રાલા અશુભ અનુભાગ પ્રકૃષ્ટ હોતા હૈ ઓર શુભ અનુભાગ નિકૃષ્ટ હોતા હૈ । ઇસી તરહ સ્થિતિબંધ મેં ભી યહી વાત સમજના ચાહિયે । ઇસ તરહ પુણ્ય પાપ પ્રકૃતિયોં ભિન્નતા આને પર ભી ડનમેં જો શાસ્ત્રકાર ને એકતા કા કથન કિયા હૈ વહ પુણ્યત્વ ઓર પાપત્વરૂપ સામાન્ય કો અપેક્ષા સે કિયા હૈ ॥૧૧॥૧૨॥

‘એગે’ બંધે ‘એગે મોક્ષે’ ઇતિ ।

બંધ એક હૈ મોક્ષ એક હૈ । યદિ જીવ કષાય યુક્ત હોતા હૈ તો વહ કષાય કે સદ્ભાવ સે કર્મ કે યોગ્ય પુદ્ગલોં કો ગ્રહણ કરતા હૈ વહ બંધ કહલાતા હૈ । યહ બંધ એક હૈ । યદ્યપિ પ્રકૃતિબંધ, પ્રદેશબંધ ઓર અનુ-ભાગબંધ, ઇસ તરહ સે બંધ કે ચાર ભેદ હૈં તો ભી વહ સામાન્ય કી અપેક્ષા એક હૈ । અથવા દ્રવ્યબંધ ઓર ભાવબંધ ઇસ પ્રકાર સે ભી બંધ

પરિણામથી થનાર અનુભાગ પ્રકૃષ્ટ (ખજવાન) હોય છે અને અશુભ અનુભાગ નિકૃષ્ટ (નખજો) હોય છે એ જ પ્રમાણે પ્રકૃષ્ટ અશુભ પરિણામથી બધાનાર અશુભ અનુભાગ પ્રકૃષ્ટ હોય છે અને શુભ અનુભાગ નિકૃષ્ટ હોય છે એ જ પ્રમાણે સ્થિતિબંધમા પણ એ જ વાત સમજવાની છે. આ રીતે પુણ્ય પાપ પ્રકૃતિયોમાં ભિન્નતા હોવા છતાં પણ શાસ્ત્રકારે જે એકતા દર્શાવી છે તે પુણ્યત્વ અને પાપત્વ રૂપ સામાન્યની અપેક્ષાએ દર્શાવેલ છે ॥૧૧॥૧૨॥

‘એગે’ બંધે, ‘એગે મોક્ષે’ ઇતિ—

બંધ એક છે, મોક્ષ એક છે જીવ કષાય યુક્ત થાય છે તો કષાયના સદ્ભાવથી કર્મનાં યોગ્ય પુદ્ગલોને ગ્રહણ કરે છે, તેને બંધ કહે છે તે બંધ એક છે જો કે પ્રકૃતિબંધ, સ્થિતિબંધ, પ્રદેશબંધ અને અનુભાગબંધ, એ રીતે બંધના ચાર ભેદ પણ છે, છતાં પણ સામાન્યની અપેક્ષાએ તે એક છે અથવા દ્રવ્યબંધ અને

एगे मोक्षे ॥सू. १४॥

‘મોક્ષે’ મોક્ષઃ—મોચનમ્—આત્મન કમવાસાદ્ વિયોગન મોક્ષ, ‘એગે’
 એકઃ, જ્ઞાનાવરણીયાદિકર્માપેક્ષયા ત્વત્કર્મતો મોક્ષોઽપ્યવશિષ્ઠઃ, તથાપિ મોચ
 નસામાન્યાપેક્ષયા સંધૈક ઇતિભાવઃ । યદ્વા દ્રવ્યપ્રાપ્તિમેશ્વર ટેવિષ્યેઽપિ મોક્ષસામા
 ન્યાપેક્ષયા એક ઇતિ ભાવઃ । યદ્વા જીવસ્ય મીક્ષઃ સકુલેવ મરતિ, તથા ધૈનૈકસ્ય
 જીવસ્ય એકેક એવ મોક્ષઃ, મુક્તસ્ય પુનર્મોક્ષામાવાસ, તદપેક્ષયા એકો મોક્ષ
 ઇતિ ભાવઃ ॥સૂ. ૧૪॥

દો પ્રકાર કા હૈ । નિગદ આદિ સે જો યજન હોતા હૈ વહ દ્રવ્ય યંચ હૈ ।
 તથા કર્મ પુલ્ગલોં કા ઔર આત્મપ્રદેશોં કા એકસેવાવગારૂપ સંગ્લેષ
 હોતા હૈ વહ માધ્યંચ હૈ । સ પ્રકાર સે યંચ દો પ્રકાર કા હોકર મી
 યંચન સામાન્ય કો વિવલા સે એક હી હૈ ॥૧૩॥

આત્મા કા કર્મરૂપ પાઠ સે ઈલગ હોના । સકા નામ મોક્ષ હૈ ।
 યદ્ મોક્ષ યથાપિ જ્ઞાનાવરણીય આદિ ઓઠ કર્મોં મેં સે તત્કર્મોં છૂટને
 સે ઓઠ પ્રકાર કા હૈ, ફિર મી મોચન સામાન્ય કો અપેક્ષા સે વહ
 એક પ્રકાર કા હી હૈ । અથવા દ્રવ્ય ઔર ભાવ કે મેદ સે વહ મોક્ષ દો
 પ્રકાર કા મી હૈ તો મી મોક્ષસામાન્ય કો અપેક્ષા યહ એક હી હૈ ।
 સ્મિમેં મદ નહીં હૈ । અથવા જીવ કી મુક્તિ એક હી વાર હોતી હૈ, વાર ૨
 નહીં હોતી । સ્મલિય એક એક જીવ કા એક એક હી મોક્ષ હૈ । મુક્ત
 હુય જીવ કો પુનઃ મોક્ષ કા અમાવ હૈ । સ અપેક્ષા સે મોક્ષ એક હૈ ॥૧૪॥

ભાવાર્થ—સૂત્રકાર ને સૂત્ર દ્વારા યંચ ઔર મોક્ષ મેં સામાન્ય

ભાવજ ય નામના પજુ તેના બે લેહ છે. નિમેઠ આદિથી બે બધ બધાં બધ છે તે
 દ્રવ્યબધ છે, તથા કર્મપુલ્ગલોના અને આત્મપ્રદેશોના બે લેહ । સેવાવગારૂપ હપે
 અદેશ યાંચ છે તે ભાવજ બે આ પ્રમાણે બે પ્રકારના બધ હોવા છતાં પજુ
 સામાન્યની અપેક્ષાએ બધ એક જ છે ॥૧૩॥

કર્મરૂપી બધનથી આત્માનુ બલગ થયુ તે મોક્ષકહેવાય છે, તે મોક્ષ પજુ
 જ્ઞાનાવરણીય આદિ આઠ કર્મોમાંથી તે તે કર્મોના છૂટવાને લીધે આઠ પ્રકારનો છે
 પજુ મુક્ત થવા હપે સામાન્યની અપેક્ષાએ તે એક પ્રકારનો જ છે અથવા દ્રવ્ય અને
 ભાવ, એ બે લેહથી મોક્ષ બે પ્રકારનો પજુ છે, છતાં મોક્ષ સામાન્યની અપેક્ષાએ એક
 પ્રકારનો જ છે તેમાં લેહ નથી. અથવા જીવની મુક્તિ એક વાર જ થાય છે. વાર
 વાર નહીં તેથી પ્રત્યેક જીવનો એક એક જ મોક્ષ છે મુક્ત થયેલ જીવને ફરી
 મોક્ષનો અભ્યાસ હોય છે તે અપેક્ષાએ મોક્ષ એક જ છે ॥૧૪॥

ભાવાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્ર દ્વારા બધ અને મોક્ષમાં સામાન્યની અપેક્ષાએ એકતા

की अपेक्षा एकत्व-भेदाभाव-कहा है। बंध का लक्षण-“सकपाय-त्वात् जीवः कर्मणो योग्यान् पुद्गलान् आदत्ते स बंधः” अर्थात् जीव जीव कपाय से संतप्त होता है तब वह अनेक प्रकार की पौद्गलिक वर्गणाओं में से कर्मरूप परिणाम को प्राप्त करने की योग्यता रखनेवाली वर्गणाओं को ग्रहण करता है। और ग्रहण करके उन्हें आत्मप्रदेशों के साथ विशिष्टरूप से जोड़ लेता है। यद्यपि जीव स्वभावतः अमूर्त है और पौद्गलिक कर्मवर्गणाएँ मूर्त हैं, अतः अमूर्त के साथ मूर्त का विशिष्ट रूप से जुड़ना असंभव जैसी बात है फिर भी आत्मा अनादि काल से कर्म संबंध वाला होने के कारण मूर्त जैसा हो जाने से मूर्त कर्मपुद्गलों को ग्रहण कर लेता है और उन्हें कर्मरूप में परिणाम लेता है। जिस प्रकार खाये हुए भोजन का विविध रस रुधिर आदि रूप में परिणमन हो जाता है उसी प्रकार गृहीत कर्मवर्गणाओं का भी ज्ञानावरणीय आदि रूप से परिणमन हो जाता है। आत्मप्रदेशों के साथ कर्मरूप में परिणत हुए पुद्गलों का यह संबंध ही-संयोगरूप संबंध ही-बंध है। शास्त्र में मिथ्यादर्शन, अविरति, प्रमाद, कषाय और योग, ये कर्मबंध के हेतु कहे गये हैं। तात्पर्य यह है कि प्रकृतिबंध, स्थितिबंध, अनुभागबंध और प्रदेशबंध, इस प्रकार से जो चार प्रकार का

दर्शावी छे अथवा लक्षण आ प्रमाण छे-सकपायत्वात् जीवः कर्मणो योग्यान् पुद्गलान् आदत्ते स बंधः अथवा के लिये छे कषाययुक्त थाय छे त्वारे ते अनेक प्रकारनी पौद्गलिक वर्गणाओं आर्था कर्मरूपी परिणामन प्राप्त करवाने योग्यतावाणी वर्गणाओं ने ग्रहण करे छे अने तेमने ग्रहण करीने आत्मप्रदेशन साधे विशिष्ट नीते लेडी हे छे ले के छे स्वभावशी अमूर्त छे अने पौद्गलिक कर्मवर्गणाओं मूर्त छे, तेथी अमूर्तनी साथे मूर्तनु विशिष्ट नीते लेडापु ते बात असंभवित जेवा लागे छे छता यथु आत्मा-अनादि कालशी कर्मसंबंधवाणे होवाने कारणे मूर्त जेवा धर्म जवाशी मूर्त कर्मपुद्गलोंने ग्रहण करी ले छे, अने तेने कर्मरूपे परिणामावे छे जेम आधित मोहनने विविध प्रकारने रस रक्त आदि रूपे परिणमे छे जे न प्रमाणे ग्रहण करायेल कर्मवर्गणाओं यथु ज्ञानावरणीय आदि रूपे परिणमे छे आत्मप्रदेशानी साथे कर्मरूपे परिणत थयेल पुद्गलोंने ते संबंध-संयोगरूप न ‘अ’ गणाय छे शास्त्रेमां मिथ्यादर्शन अविरति, प्रमाद, कषाय अने योग, अ यधाने कर्मबंधना हेतु बताये छे तेनु तात्पर्य अ छे के प्रकृतिबंध, स्थितिबंध, अनुभागबंध, अने प्रदेशबंध अ प्रमाणे चार प्रकारना जे अथवा दर्शावी छे तेमाना प्रकृति

बंधतत्त्व पता गया है उनमें प्रकृतिबंध और मदेक्षयध, य दो योग सं होते हैं, तथा स्थितियंध, और अनुभाषध य दो कषाय से होते हैं। बंधतत्त्व के प्रकार प्रत्यक्ष ही कर्म में समक्षित चार अंशरूप हैं। गुणस्थानों को छेद कर कर्मध के कारणों का विचार किया जाता है तब चार्ण पर ऐसा विचार किया जाता है कि प्रथमगुणस्थान में बंध का कारण मिथ्या दर्शन है, चौथे गुणस्थान तक अविश्रुति, छठवें गुणस्थानतक प्रमाद, दशवें गुणस्थान तक कषाय और तेरहवें गुणस्थान तक योग। इस तरह इन पांच बंध हेतुओं में से जहां २ पूर्व २ के बंध हेतु होंगे, वहां उसका बाद के भी समझी होंगे ऐसा नियम है। परन्तु जब उत्तर का होगा तब पूर्व का बंध हेतु दो भी और न भी हो। इस तरह बंध में मिथ्यात्व आदि अनेक कारण कहते हैं फिर भी यहां जो “मकषायसंज्ञायात् कर्मणार्योग्यान् पुद्गलान् उपादत्त स पुद्गलसंश्लेषो बंधः” ऐसा कहा गया है वह अन्य हेतुओं की अपेक्षा कषाय की प्रधानता प्रदर्शित करने के लिये ही कहा गया जानना चाहिये।

उक्त—कषाय से जो कर्मबंध होता है वह तो दशवें गुणस्थान तक ही होता है, परन्तु योग से जो बंध होता है वह तेरहवें गुणस्थान तक होता है, इस तरह यह हेतुओं से कषाय में प्रधानता न बनकर केवल योग में ही प्रधानता आती है ?

जब अने प्रदेशध, जो अने भोजनी धाय है स्थितियंध अने अनुभाषध जो अने कषायधी धाय है अधस्तन आ आदि प्रकार के कर्मों में समक्षित चार अक्षय है गुणस्थानों के अने जो कर्मों के कारणों विचार करवाभा आये तो पहला गुणस्थान में अने कारण मिथ्यादर्शन है तथा गुणस्थान शुद्ध अविश्रुति। उक्त गुण स्थान शुद्ध प्रभाव, दशमा गुणस्थान शुद्ध कषाय अने तेरहमा गुणस्थान शुद्ध योग आ हीते जो यंध जब हेतुओं में भी अने तथा पूर्वना (आश्रयना) जब हेतु दशे तथा तेमनी पाणीना पञ्च अथवा जब हेतु दशे केवे नियम है पञ्च कषाये पछीना—दशे त्वाये पूर्वना आश्रयता जब हेतु दशे पञ्च अथवा अने न पञ्च पञ्च आ हीते जब भी मिथ्यात्व आदि अने कारणों दशेता दशे है उक्त पञ्च अक्षी के “मकषायसंज्ञायात् कर्मणार्योग्यान् पुद्गलान् उपादत्त स पुद्गलसंश्लेषो बंधः” हेतु कषेवाभा आश्रय है ते अन्य हेतुओं करता कषायनी प्रधानता दशवें स्थाने भा है कषायानु है तेम ममज्जानु है

उक्त—कषायधी कर्मों के जब है ते तो दशमा गुणस्थान शुद्ध अथवा कषाय है पञ्च भोजनी के कर्म अथवा कषाय है ते तेरहमा गुणस्थान शुद्ध अथवा है अथवा दशमा कषायनी प्रधानता अथवा भोजनी प्रधानता शु आनी अती नही ?

समाधान—योग के निमित्त से जाग्रतान् प्रकृति और प्रदेशबंध आत्मा को उतना पराधीन नहीं बनाति है कि जितना पराधीन स्थितिवंध और अनुभागबंध बनाते हैं अतः बंधों में इन दो बंधों की मुख्यता प्रदर्शित करने के लिये ऐसा कहा गया है

कर्म पुद्गलों में जो आत्मा के ज्ञानादिक गुणों को रोकने की तथा सुख दुःख आदि देने की प्रकृति की निर्मिति होती है—स्वभाव-बनना है—इसी का नाम प्रकृतिबंध है १। प्रकृति का कर्मपुद्गलों में अमुक समय तक च्युत नहीं होना—इसी प्रकृति का उनमें अमुक समय तक बने रहने का निर्माण होना इसका नाम स्थितिवंध है २। तीव्रता मंदता आदि रूप में कर्मपुद्गलों का फल देना इसका नाम अनुभागबंध है ३। कर्मपुद्गलों में स्वभावानुसार अमुक २ परिमाण में बट जाने का निर्माण होना इसका नाम प्रदेशबंध है ४। प्रकृतिबंध और प्रदेशबंध में यही अन्तर है कि आत्मा के साथ बंधजगत् को प्राप्त हुए कर्मपुद्गलों में जो ज्ञानादिगुणों को रोकने का स्वभाव निर्मित होता है वह तो है प्रकृतिबंध, और कर्मपुद्गल जो आत्मा के साथ बंध को प्राप्त हुए हैं वे कितने हुए हैं, इस प्रकार प्रदेशगणना का नाम प्रदेशबंध है। इस तरह यह बंध अनेक प्रकार का है, फिर भी बंध सामान्य की अपेक्षा वह एक है। उसमें भेद नहीं है। चाहे प्रकृतिबंध हो, चाहे प्रदेशादि-

समाधान—योगना निमित्तवी पेदा थयेल प्रकृति अने प्रदेशबंध आत्माने ओटवो पराधीन बनावता नथी डे ओटवो पराधीन स्थितिबंध अने अने अनुभागबंध बनावे छे, तेथी भ घोभा ते भे भ धानी प्रधानता बनाववाने भाटे ओवु कडेवायु छे कर्मपुद्गलवोमा आत्माना ज्ञानादिक गुणाने रोकवानी तथा सुखदुःख आदि देवानी जे प्रकृतिनु निर्माण थाय छे स्वभाव बने छे तेनु नाम ज प्रकृतिबंध छे. (१) प्रकृतिनु कर्मपुद्गलवोमा अमुक समय सुधी च्युत न थवु—जे ज प्रकृतिनु तेमनामां अमुक समय सुधी स्थिर रहैवानु निर्माण थवु—तेनु नाम स्थितिवंध (२) तीव्रता मंदता आदि रूपे कर्मपुद्गलवोनु इण देवु तेनु नाम अनुभागबंध छे (३) कर्मपुद्गलवोमा स्वभावानुसार अमुक प्रमाणमा वडेयां जवतुं निर्माण थवु तेने प्रदेशबंध कडे छे (४) प्रकृतिबंध अने प्रदेशबंधमा ओटवो ज तदावन छे के आत्माना साथे भ धदशा पावेल कर्मपुद्गलवोमा जे ज्ञानादिक गुणाने रोकवाने स्वभाव निर्मित थाय छे ते प्रकृतिबंध छे, अने आत्माना साथे भंध प्राप्त जे कर्मपुद्गलवो छे ते कंडला थया छे, ते प्रदेश गणनाने प्रदेशबंध कडे छे आ रीते ते भ धना अनेक प्रकार छे, छता पणु भंध सामान्यनी अपेक्षाजे ते ओक छे तमा भेद नथी बडे प्रकृति-

વધ હો-ફોઈ મી વધ હો હી તો વઢ સામાન્યતયા વધ હી, અન ડમ વિવક્ષા સે વઢ વ્ક હૈ । ઇસીલિયે સુપ્રકારન “વ્ગે વધે” વૈસા કહ્વા હૈ ॥૧૩॥

જ્ઞાનાવરણીય આદિ અપ્રવિધ કર્મો યા આત્મ સે આત્મન્ટિક વિનાશ હોના ઇમદ્દા નામ મોક્ષ હૈ । વ્ક વાર વધા જુઆ કર્મ કર્મી તો ક્ષય વો પ્રાપ્ત હોતા હી હૈ, પર વૈસે કર્મ કા વધન ફિર સમય હો અથવા ડસ પ્રકાર કા ફોઈ કર્મ અમી હોપ હો તો તેસી સ્થિતિ મેં ‘કર્મ કા આત્મન્ટિક સય જુઆ હૈ’ વૈમા નહીં કહ્વા જા નક્કતા । આત્મન્ટિક ક્ષય કા તાત્પર્ય હૈ પૂર્વપદ્ધર્મ કા ઓર નવીન કર્મ કે વાધને કી યોગ્યતા કા અભાવ । મોક્ષ કી પ્રાપ્તિ આત્મન્ટિક કર્મક્ષય જુવ વિના કદાપિ સમ્ભવ નહીં હો સક્તી હૈ, ઇસલિયે જ્ઞાનાવરણીય આદિ જાઠ કર્મો કે ક્ષય કી અપેસા મોક્ષ મી જાઠ પ્રકાર કા માના જા સક્તા હૈ પરંતુ કર્મયિમો વ્યન રૂપ સામાન્ય કી અપેસા વઢ મી વ્ક હૈ । અથવા જો જીવ વ્ક વાર મોક્ષ પ્રાપ્ત કર લેતા હૈ વઢ ફિર સે સંસાર મેં જન્મ વ કારણો કા અભાવ હોને સે જન્મ ઘારણ નહીં કરતા હૈ, અતઃ જો સ્થિતિ પ્રાપ્ત હો ગઈ વઢ સાદિ હોકર મી અવર્ણવસિત યની રહતી હૈ, ડમલિય વુનઃ પ્રાપ્તિ કા અમાવ હોને સે મોક્ષ વ્ક હી હૈ ॥૧૪॥

જંધ હોવ ઠે પ્રદેશાદિ જંધ હોવ-ઠાઈપજુ જંધ હોવ-પજુ આમ ન્ધ શીતે તો તેમ જ ન હૈ, આ દષ્ટિકાવુથી જોવાં તે જોક જ હૈ તેથી સુપ્રકારે એમ કહુ છું ॥૧૩॥

જ્ઞાનાવરણીય આદિ જાઠ પ્રકારનાં કર્મોને આત્મામાંથી તદ્દન નાશ થયે તેનું નામ મોક્ષ છે જોક વાર જ ધાવેલ કર્મોને કથારેક તો ક્ષય થાય છે જ, પણ જોવાં કર્મનું જંધન ફરીથી સંભવિત પણ છે-અથવા જોવા પ્રકારનું ઠાઈ પજુ કર્મ હલ થેવ હોય તો જોવી સ્થિતિમાં કર્મોને આત્મન્ટિક ક્ષય થયે છે” એમ કહી શકાય નહીં આત્મન્ટિક ક્ષય નું તાત્પર્ય એ છે કે પહેલાં જ ધાવેલા કર્મોને તથા નવીન કર્મો જ ધાવાની યોગ્યતાને જાણત આત્મન્ટિક કર્મક્ષય વિના મોક્ષની પ્રાપ્તિ કરી પણ સંભવી શકતી નથી, તેથી જ્ઞાનાવરણીય આદિ જાઠ કર્મના ક્ષયની અપેક્ષાએ મોક્ષ પણ જાઠ પ્રકારનો માની શકાય છે, પણ કર્મવિમોચન રૂપ સામાન્યની અપેક્ષાએ તે પણ જોક જ છે અરેકે કે જે હવે જોક વાર મોક્ષ પ્રાપ્ત કરી લે છે તે હવે સંસારમાં ફરી જ મ ધારણ કરવાના કારણોના અભાવ દોવાથી ફરી જ મ ધરણ કરવે પડતો નથી તેથી જે સ્થિતિ પ્રાપ્ત થઈ તથ તે સાદિ હોવા છતાં પણ અવર્ણવસિત (અનન્ત) જની વ્યય છે, આ શીતે વુનઃ પ્રાપ્તિના અભાવને કારણે પણ મોક્ષ જોક જ છે ॥૧૪॥

મૂલસૂત્ર—એગે આસત્રવે ॥સૂ. ૧૫॥

ટીકા—જીવસ્ય પુણ્યપાપકર્મભ્યાં સહ ચ સંયોગઃ સ વન્ધઃ ઇત્યુક્તં, તસ્ય કારણં નિરૂપયિતુમાહ—‘એગે આસત્રવે’ ઇતિ । એક આસત્રવઃ, આસત્રવન્તિ =પ્રવિશન્તિ યેન કર્માર્ણ્યાત્મનિ સ આસત્રવઃ કર્મવન્ધકારણમિત્યર્થઃ । આસત્રવસ્ય મિથ્યાત્વાદિભેદાદનેકવિધત્વેઽપિ આસત્રવસામાન્યાદેકત્વમિતિ ભાવઃ ।

યદ્વા—દ્રવ્યભાવભેદાદાસત્રવો દ્વિવિધઃ, યથા જલોપરિવર્તિનાવાદૌ છિદ્રદ્વારેણ જલપ્રવેશો ભવતિ, યથા વા નાલીરૂપેણ માર્ગેણ સરસિ જલસ્ય પ્રવેશઃ તત્ર છિદ્રા-
દ્રવ્યાસત્રવઃ, ભાવાસત્રવસ્તુ ઇન્દ્રિયાદિઃ. તેન દ્વારેણ હિ જીવપ્રદેશેષુ કર્મપુદ્ગલાનાં સંશ્લેષો ભવતિ । એવાસત્રવસ્ય દ્વિવિધ્યેઽપિ સામાન્યાદેકત્વમિતિ ભાવઃ ॥સૂ. ૧૫॥

‘એગે આસત્રવે’ ઇતિ ।

એક આસત્રવ હૈ, એક સંવર હૈ । જીવ કા પુણ્ય ઓર પાપ કે સાથ જો સંવંધ હોતા હૈ ઉસકા નામ વંધ હૈ, એસા જો અમી કહા હૈ સો ઇસ વંધ કા જો કારણ હૈ વહ “આત્મા મેં જિસસે કર્મ પ્રવેશ કરતે હૈ” ઇસ વ્યુત્પત્તિ કે અનુસાર આસત્રવ હૈ । યહ મિથ્યાત્વ આદિ કે ભેદ સે અનેક પ્રકાર કા હૈ, તો મી સામાન્ય કી અપેક્ષા સે એક હૈ ।

અથવા—દ્રવ્ય ઓર ભાવ કે ભેદ સે મી આસત્રવ દો પ્રકાર કા હોતા હૈ । જલ કે ઉપર રહી હુઈ નાવ મેં છિદ્ર દ્વારા જલકા આના નાલી માર્ગ સે તાલાવ મેં પાની કા આના યહ સ્વ જૈસે દ્રવ્યાસત્રવ હૈ । ઇસી તરહ ઇન્દ્રિયાદિ દ્વારા જીવ કે પ્રદેશોં મેં જો કર્મપુદ્ગલોં કા સંશ્લેષ હોતા હૈ યહ ભાવાસત્રવ હૈ ઇસ તરહ આસત્રવ મેં દ્વિવિધતા હોને પર મી સામાન્ય કી અપેક્ષા યહ એક હી હૈ ॥૧૫॥

‘એગે આસત્રવે’ ઇતિ’

આસત્રવ એક છે સવર એક છે જીવને । પુણ્ય અને પાપની સાથે જે સંબંધ થાય છે. તેનું નામ બંધ છે, એવું હમણા કહેવામા આવ્યું છે તો તે બંધનું જે કારણ છે તે “આત્મામા જે વડે કર્મ પ્રવેશ કરે છે” તે વ્યુત્પત્તિ પ્રમાણે આસત્રવ છે તે મિથ્યાત્વ આદિના ભેદથી અનેક પ્રકારના છે છતાં પણ સામાન્યની અપેક્ષાએ એક છે અથવા દ્રવ્ય અને ભાવ, એ જે ભેદથી પણ આસત્રવ બે પ્રકારના છે પાણી ઉપર તરતી હોડીમા છિદ્ર દ્વારા જલનું પેસવું, નાળામા તળાવમા પાણીનું આવવું, એ બધા જેમ દ્રવ્યાસત્રવ છે તેમ ઇન્દ્રિયાદિ દ્વારા જીવના પ્રદેશમા જે કર્મપુદ્ગલોના સંશ્લેષ થાય તે ભાવાસત્રવ છે આ રીતે આસત્રવમાં દ્વિવિધતા હોવા છતાં પણ સામાન્યની અપેક્ષાએ તે એક જ છે ॥૧૫॥

૫મો સર્વરે । સુ ૧૬॥

આત્મપ્રતિષ્ઠા મંચર નિરૂપયન્તિ—‘૫મ સર્વર’ इति, ૫મ સર્વર । મંચરિયત નિરૂપયત કર્મણ કારણ પ્રાણાતિપાતાનિ યત પરિણામન મ મંચર । આત્મય નિરાશ इत्यर्थ । મ ય ગુણ્યાદિમિશ્ન્યાંયમ્પ્રતિ । સર્વરાયાપમૂતાનાં ગુણ્યાદાં નામનકે, મેદા મન્તિ, તાન્ મેદાનાબિલ્યમવરાડનકવિધા, ઈ ચ દ્રવ્યમાત્રમેદાવ મંચરમ્ય દ્રવિયમ્ મયાપિ સર્વસામાન્યાદર इति માત્ર ॥મ ૧૬॥

‘૫મો સર્વર’ इति ।

આત્મના પ્રતિષ્ઠાની તત્ત્વ સર્વર છે । પ્રાણાતિપાત આદિ જો કર્મ કે જ્ઞાન કારણ છે એ જિમ આત્મપરિણામદ્વારા રોક દિય જાતે છે એ આત્મપરિણામ સર્વર છે । અધાત્મ આત્મયના નિરાશ હોના હી મંચર છે । યદ મંચર ગુણિ આદિ ઉપાયો દ્વારા હોતા છે । મંચર કે ઉપાયમૂલ ગુણિ આદિ ક અનક મદ્ છે, અત્ત હન મદાં કી અપેક્ષા મંચર ની અનક પ્રકાર કા છે, તથા દ્રવ્યમંચર, ઓર આત્મચર હમ મરદ્દ સે ની મંચર દો પ્રકાર છે તા ની મંચર સામાન્ય કી અપેક્ષા યદ યદ હી છે ।

માર્ગાર્થ—જિમ પ્રચાર છિદ્ર દીના નાચ મ પાની આના છે હસી પ્રકાર મિશ્ન્યાચ આદિ દ્વારા આમા મેં કર્મરૂપપાનિ કા આના જાના છે । યદ આના હી આત્મય છે । યદ આત્મય સમાર કા કારણ છે । આત્મય સે વચ્ચ હોના છે, અત્ત આત્મય કો વચ્ચ કા કારણ માત્ર ગયા છે । યદ કર્મચર હેતુ રૂપ જા આત્મય છે યદ મિશ્ન્યાચાદિ કે મેદા સે બિચિત્ર પ્રકાર કા છે— ઈતિ ની યદ્દા જો ઉસે સૂત્રપ્રકાર ન યદ્દા કહ્યા છે । યદ આત્મય સામાન્ય કી અપેક્ષા સે કદા છે । જિમ પ્રકાર બિચિત્ર વૃક્ષો મે વૃક્ષત્વ સામાન્ય

‘૫મો સર્વર’ इत्यादि

આત્મવધી હલદો શબ્દ સર્વર છે પ્રાણાતિપાત આદિ કર્મને આવવાના જે કારણો છે તેમને જે આત્મપરિણામ દ્વારા યોગ્યતામાં આવે છે તે આત્મ પરિણામન સર્વર કહે છે એટલે કે આત્મવતો નિરોધ થવો તે જ સર્વર છે તેમજ શુભિ આદિ રૂપ થો દ્વારા થાય છે સર્વરના ઉપચાર શુભિ આદિના અનેક બદ છે તેથી તે બેદોની અપેક્ષાએ સર્વર થતુ અનેક પ્રકારના છે તથા દ્રવ્યસર્વર અને સ્વાચ્છર્વર એવા તેના બે ભેદ થતુ છે છતાં સામાન્યની અપેક્ષાએ તે એક જ છે

ભાવાર્થ—જેમ નવમાં છિદ્ર દ્વારા પાણી પ્રવેશે છે તેમ આત્મામાં મિશ્ન્યાત્વ આદિ દ્વારા હમ પુદ્ગલોના પ્રવેશ થાય છે આ પ્રમાણે આત્મવ અને જ આત્મય કહે છે આ આત્મવ જ અસારનુ કારણ છે આત્મવથી બધ ન થાય છે, તેથી આત્મ વને બધનુ કારણ મનાય છે તે કર્મબધના હેતુરૂપ જ આત્મવ છે તે મિશ્ન્યાત્વ આદિના મેદાથી વિવિધ પ્રકારના જ, છતાં થતુ તેને સૂત્રપ્રકાર એક દર્શાવેલ છે તે આત્મવ સામાન્યની અપેક્ષાએ દર્શાવેલ છે જેમ જુદાં જુદાં વૃક્ષમાં એક વૃક્ષત્વ

मूलम्—एगा वेयणा ॥सू. १७॥

टीका—‘एगा वेयणा’ एका वेदना, स्वभावेन, उदीरणा कारणेन वा उदयाव-
लिकाप्रविष्टस्य कर्मणोऽनुमन्नं वेदना । यद्यपि-ज्ञानावरणीयादिभेदात् कर्मणोऽष्ट-
विधत्वे तद्वेदनाऽष्टविधा भवति, किं च विपाकोदय-प्रदेशोदय भेदाद् वेदनाया
द्वैविध्यम्, तथापि वेदनासामान्यादेका भवतीति भावः ॥सू. १७॥

रहता है और उस अपेक्षा के समस्त वृक्ष एक माने जाते हैं उसी प्रकार
मिथ्यादर्शन आदि में तथा द्रव्यास्रव, भावास्रवरूप एक सामान्यधर्म
रहता है। इस कारण वह भी एक है। भिन्न २ नहीं।

संवर का अर्थ है—आस्रव का रुकना—जिन मार्गभूत कारणों से कर्मों
का आना होता था उन मार्गों का बंद हो जाना इसी का नाम संवर है। यह
संवर गुप्त्यादिक उपायों द्वारा साध्य होता है। यहां आदि पद से समिति,
धर्म, अनुप्रेक्षा परीषह जय और चारित्र्य का ग्रहण हुआ है। गुप्ति समिति
आदि के भेद से यह संवर तत्त्व अनेक प्रकार का है फिर भी आस्रव
प्रतिपक्ष रूप संवर सामान्य की अपेक्षा यह तत्त्व एक ही है ॥१६॥१६॥

‘एगा वेयणा’ इति ।

टीकार्थ—एक वेदना है, एक निर्जरा है। स्वभाव से अथवा उदीरणा कारण
से उदयावलिका में प्रविष्ट हुए कर्म का अनुस्रव करना इसका नाम वेदना
है। यह वेदना ज्ञानावरणीय आदि के भेद से आठ प्रकार के कर्मों की

सामान्य रहने के अने ते अपेक्षाओं समस्त वृक्षों के एक माननामा आवे छे,
ये न प्रमाणे मिथ्या दर्शन आदिमा तथा द्रव्यास्रव, भावास्रवमा आस्रवद्वय
एक सामान्य धर्म रहने के ते कारणे ते पणु एक छे तेमनामा भिन्नता नथी

संवर ओटवे आस्रवने रोकवा ते—ये मार्गभूत कारणोत्थी कर्मोनु आगमन थतु
छतु ते मार्गोनु अध थर्छ नु तेनु नाम संवर छे ते संवर गुप्ति आदि उपा-
योत्थी साधी शक्य छे अही ‘आदि’ पदथी समिति, धर्म, अनुप्रेक्षा, परीषह, जय
अने चारित्र्य ग्रहण करवामा आवेल छे- गुप्ति, समिति आदिना लेदथी ते संवर
तत्त्व अनेक प्रकारनु छे छता पणु आस्रवथी उदटो ‘संवर’ तो सामान्य धर्मनी
अपेक्षाओं ते तत्त्व एक न छे ॥१६॥

“एगा वेयणा” इति ।

टीकार्थ—वेदना एक छे निर्जरा एक छे स्वभावथी अथवा उदीरणा कारणोत्थी
उदयावलिकामा प्रदेश थयेछ कर्मोना अनुस्रव करवा तेनु नाम वेदना छे ते वेदना
प्रत्येक छवने ज्ञानावरणीय अ आठ प्रकारना कर्मोनी होय छे कर्म आठ प्रकारना

ગંગા ગિજરા ॥૨૫॥

અનાયા મગ્યામામ્મપન્નામ્મ કર્મગિજરાતીનિ વન્નાનન્નર કમપ્પિ-
ગન્નમ્પાં નિર્જરાં નિરુપયતિ-‘ગંગા ગિજરા’ મ્મિ । પકા નિજરા-નિર્જગ્ગા નિર્જરા
વિગ્ગમ્પ પરિગ્ગમ્મિત્થયઃ યદ્ધપિ માડ્ડનકવિષા-તથાદિ-અગ્ગવિષકર્મમેનાત્ત તન્નિ
જેરાડ્ડપ્પટ્ઠવિષા, કિંચ-મા દ્વાદ્વગ્ગવિષતપામ્મન્નતયા દ્વાદ્વગ્ગવિષા, કિંચ-અમામ
શ્ચુરિપમામી ધીનાપ્પામન્નશ્ચચર્યધારણામ્મિ નાનાવિષકારણન્નતયા નાનાવિષા,
કિંચ-દ્રવ્યના નિર્જરા વચ્ચામાત્તનમ્મ કર્મણામ્મ દ્રવ્યમાત્તમ્મદ્ ટિવિષાડ્ડપિ
મન્નમિ પરન્ત નિર્જરા-મામાન્નાત્તકા મન્નમીનિ માય ।

પ્રત્યક્ષ જીવ કો હોતો છે-અમ કર્મ આટ પ્રકાર કા જ્ઞાન સ ઉત્તર
વેદના મી આટ પ્રકાર ફી હોતો છે । તથા વિષાકોદય ઓર પ્રદેશોદય
ક મેદ સે યદ યદના કો પ્રકાર ફી મી હોતો છે । અમ તરહ વેદના મેં
વિચિષ્ણના આન પર મી યદ વેદના સામાન્ય ફી અપમા સ ગદ્દ ફી છે ॥૧૭॥
‘ગંગા ગિજરા’ મ્મિ ।

ગીકાથ-વેદના ક જ્ઞાન પર આન પ્રદેશ સે જો ક મોં કા પરિગ્ગમ્મ-અલ્પ
હોના જોના છે હસી કા નામ નિર્જરા । યદ નિર્જગ્ગા મી આટ પ્રકાર ક કર્મોં
મેં સ તત્ત્વકર્મોં કે અગ્ન સે આટ પ્રકાર ફી, તથા પારહ પ્રકાર કે ત્વ
સ જન્મ જ્ઞાન સે યાગ પ્રકાર ફી, ઓર વિના કિમ્મા અલ્પ ક શુદ્ધા,
વિષામા, ડીમ, ડળા કે સજ્જન કરન સ ગ્ગ પ્રત્યક્ષ ક યાગ્ગ જ્ઞાન
આદિરૂપ નાના પ્રકાર ક કાર્ગ્ગાં સ ઉત્પદ્ધ હોન સે નાના પ્રકાર ફી છે ।
તથા દ્રવ્ય નિર્જગ્ગા ઓર માત્ર નિર્જગ્ગા કમ તરહ સ કો પ્રકાર મી છે ।
કનમેં વચ્ચાદિકોં ફી નિજગ-જીર્ણદ્વા-દ્રવ્યનિર્જગ્ગા ઓર કર્મોં ફી નિજગ
કે વાધી તમની વેદના પલ્લ આઠ પ્રકારની હાથ છે, તથા વિષાકોદય અને પ્રદેશોદયના
કાદ્ધો તે બે પ્રકારની હાથ છે આ ફીતે વેદનામ્મ વિવિધતા દેવા છતાં પલ્લ વેદના
સામાન્યની અપમાએ એક જ છે ॥૧૭॥

‘ગંગા ગિજરા’

વેદના કમિયાન આત્મપ્રદેશોમાંથી કર્મોંનુ જ પરિગ્ગમ્મ-અલ્પ દાવાની કિયા
થાય છે તે નિજગ પલ્લ આઠ પ્રકારના કર્મોંમાંથી તે તે કર્મોંના બ વાધી-શુદ્ધવાધી
આઠ પ્રકારન અને બાર પ્રકારનાં તપથી પેદા થયેલ દાવાથી બે પ્રકારની તથા
કેમ પલ્લ પ્રકારની કર્મોં વિના કાયા (જીવ) તૃષ્ણા ધીન અને ઉચ્ચના ચલન કરવાથી
અને પ્રદેશ્ય ધારણ કરવા આદિ રૂપ વિવિધ પ્રકારના કાર્ગ્ગોંથી ઉત્પદ્ધ થવાથી અનેક
પ્રકારની છે તથા દ્રવ્યનિજગ અને આવનિજગ એવા તેના બે ભેદ છે તેમા વચ્ચાદિકની
નિજગ આપ નિજગ-શુદ્ધ દશા-ક નિજગ છે અને કર્મોંની નિજગ આપ નિજગ

નતુ નિર્જરામોક્ષયોઃ કો ભેદ ? इति, उच्यते—देशतः कर्मक्षयो निर्जरा, सर्वथा सकलकर्मक्षयो मोक्ष इति ॥सू. १८॥

इतः प्रभृति आश्रयविशेषवोधकानि मत्प्रमत्ताण्यह—

મૂલમ્—જંબૂદ્વીવે દીવે એમં જોયણસયસહસ્સં આયામ વિક્કલંભેણં
પણત્તે । ૧। અપ્પઙ્કટ્ટાણે નરણ એમં જોયણ સયસહસ્સં આયા-
મવિક્કલંભેણં પળત્તે । ૨। પાલણ જાણવિમાણે એમં જોયણ-
સયસહસ્સં આયામવિક્કલંભેણં પળત્તે । ૩। સઘ્વટ્ઠસિદ્ધે
સહાવિમાણે એમં જોયણસયસહસ્સં આયામવિક્કલંભેણં
પળત્તે ॥૧-૪॥

ટીકા—ઉક્તરોત્વાઽઽત્માદીના સર્વપ્રવચનગતાનામર્થાના પ્રત્યેકયેકત્વમ્-
ત્તવાઽઽત્મપરિણામરૂપાણામર્થાનામેકત્વ નિરૂપયતિ—“જંબૂદ્વીવે” इत्यादि । जम्बू-
द्वीपो द्वीपः—जम्बूद्वीपनामको द्वीपः, ‘एमं जौयणसयसहस्सं’ एकं योजनश-
तसहस्रं लक्षैकयोजनप्रमाण इत्यर्थः, ‘आयामविक्कलंभेणं’ आयामविष्कम्भेण—आया-
मेन दैर्घ्येण, विष्कम्भेण—विस्तारेण च ‘पणत्ते’ प्रज्ञप्तः—प्रवेदितः । सू. १॥

ભાવનિર્જરા છે । રસ તરહ સે યહ નિર્જરા યદ્યપિ અનેક પ્રકારકી છે—
ફિર ખી અપને ભેદોં કી અપેક્ષા ન કરકે યહ સ્વરૂપ સામાન્ય સે એક
હી છે । નિર્જરા મેં કર્મોં કા એક દેશ સે ક્ષય હોતા છે ઓર મોક્ષ મેં
સમ્પૂર્ણરૂપ સે ક્ષય હોતા છે ॥૧૮॥

અવ મત્રકાર યહાં સે આશ્રય વિશેષ કો બોધ કરાને વાલે સાત
સૂત્ર કહતે હું—“જંબૂદ્વીવે દીવે” इत्यादि ।

ટીકાર્થ—જંબૂદ્વીપ નામકા દ્વીપ લવાઈ જોડાઈ કી અપેક્ષા એક લાગ
યોજનકા કહા ગયા છે । અપ્રતિષ્ઠાન નામકા નરક—સસસ નરક ભૂમિ કા

છે આ રીતે તે નિર્જરા જે કે અનેક પ્રકારની છે, તે પણ ભેદોની અપેક્ષાએ ન
જેતા સ્વરૂપ સામાન્યની અપેક્ષાએ જેતા તે એક જ છે નિર્જરામા કર્મોનો એકદેશય
ક્ષય થાય છે અને મોક્ષમા સંપૂર્ણપણે ક્ષય થાય છે ॥૧૮॥

હવેના સાત સૂત્રમા સૂત્રકાર આશ્રય વિશેષની સમજૂતી આપ છે—

‘જંબૂદ્વીવે’ इत्यादि ।

ટીકાર્થ—જંબૂદ્વીપ નામના દ્વીપની લગ્યાઈ તથા પહોળાઈ લાખ લાખ યોજનની દર્શાવી
છે. અપ્રતિષ્ઠાન નામની સાતમી નરક ભૂમિના મધ્યમ આવાસની લગ્યાઈ તથા પહોળાઈ

एगा गिज्जरा ॥सू १८॥

चेदनायां मत्यामात्ममतेऽभ्याः कर्मपरिहन्तीनि यदनानन्तरं कर्मपरिहन्तरूपां निर्जरां निरूपयति—‘एगा गिज्जरा’ इति । एका निजरा—निर्जरण निर्जरा विशरण परिहटनमित्यर्थः यद्यपि माऽनेकविधा—तथाहि—अष्टविधकर्मभेदात् तन्निर्जराऽप्यष्टविधा, किंच—सा द्वादशविधतपोज—यतया द्वादशविधा, किंच—अष्टम छुत्तिपासा शीतोष्णसन्नघ्राण्यर्षधारणादि नानाविधकारणज—यतया नानाविधा, किंच—द्रव्यतो निर्जरा वस्त्रादभायतस्तु कर्मणाम्बु द्रव्यभावभेदाद् द्विविधाऽपि भवति परन्तु निर्जरा—सामान्यान्का भवतीति भावः ।

प्रत्येक जीव को होती है—अतः कर्म आठ प्रकार का होने से उनकी चेदना भी आठ प्रकार की होती है । तथा विषाकोदय और प्रदेणोदय के भेद से यह चेदना दो प्रकार की भी होती है । इस तरह चेदना में विविधता आने पर भी यह चेदना सामान्य की अपेक्षा से एक ही है ॥१७॥

‘एगा गिज्जरा’ इति ।

नीकार्थ—चेदना के होने पर आत्मप्रदक्षों से जो कर्मों का परिहटन—अलग होना होता है इसी का नाम निर्जरा है । यह निर्जरा भी आठ प्रकार के कर्मों में से तत्कालकर्मों के करने से आठ प्रकार की, तथा पारलं प्रकार के तपस जन्म होने से पारलं प्रकार की, और विना किसी रूच्छा के धुआ, पिपासा, शीत, उष्ण के सन्न करने से एवं घ्राण्यर्ष के धारण करने आदिभ्य नाना प्रकार के कारणों से उत्पन्न होने से नाना प्रकार की है । तथा द्रव्य निर्जरा और भाव निर्जरा इस तरह से दो प्रकार भी है । इनमें वस्त्रादिकों की निर्जरा—जीर्णदशा—द्रव्यनिर्जरा और कर्मों की निर्जरा

सावाधी तेभनी वेदना पण आऽ प्रकाशनी दोष छ तथा विषाकादय अन प्रदेणोदयना वेदधी ते जे प्रकाशनी दोष छ आ शीते वेदनामां विविधता दोषा छत्ता पण वेदना सामान्यनी अपेक्षाये जेऽ ७ जे ॥१७॥

‘एगा गिज्जरा’

वेदना हरिगियान आत्मप्रदेशोभांथी कभीनु जे परिहटन—अलग होवानी किया थाय छ ते निरुंश पण आऽ प्रकाशनी कभीभांथी ते ते कभीना अरवाथी—छटवाथा आऽ प्रकाशन अने आऽ प्रकाशनी तपथी चेदा थोला सोवाधी अर प्रकाशनी तथा छेत्ता पण प्रकाशनी अरुणाविता शुधा (भुज), लुधा शीत, अने उष्णता सन्न करवाथी अने प्रदक्षय धारण करवा आदि इय विविध प्रकाशना कारणोत्ती उत्पन्न सवाथी अने प्रकाशनी छ तथा द्रवनिर्जरा अन भावनिर्जरा जेवा तना जे वेद छ तेमा वस्त्रादिकनी निर्जरा आऽ निर्जरा—छट्टा—द्रव निर्जरा छ अने कभीनी निर्जरा भावनिर्जरा

નતુ નિર્જરામોક્ષયોઃ કો ભેદ ? ઇતિ, ઉચ્યતે—દેગતઃ કર્મધયો નિર્જરા, સર્વથા સકલકર્મધયો નોહ ઇતિ ॥૪. ૧૮॥

ઇતઃ પ્રમૃતિ આશ્રયવિશેષવોધકાનિ સપ્તમુત્રાણ્યાહ—

મૂલમ્—જંબૂદ્વીવે દીવેણં જોયણસયસહસ્સં આયામ વિક્કલંભેણં
પણ્ણત્તે । ૧। અપ્પહટ્ટાણે નરણં જોયણ સયસહસ્સં આયા-
મવિક્કલંભેણં પળ્ણત્તે । ૨। પાલણં જાણવિમાણેણં જોયણ-
સયસહસ્સં આયામવિક્કલંભેણં પળ્ણત્તે । ૩। સત્વદ્ધસિદ્ધે
મહાવિમાણેણં જોયણસયસહસ્સં આયામવિક્કલંભેણં
પળ્ણત્તે ॥૧-૪॥

ટીકા—ઉક્તરીત્યાઽઽત્માદીનાં સર્વપ્રવચનગતાનામર્થાનાં પ્રત્યેકમેકત્વમુ-
ક્ત્યાઽઽત્મપરિણામરૂપાણામર્થાનામેકત્વ નિરૂપયતિ—“જંબૂદ્વીવે” ઇત્યાદિ । જમ્બૂ-
દ્વીપો દ્વીપઃ—જમ્બૂદ્વીપનામકો દ્વીપઃ, ‘જોયણસયસહસ્સં’ એકં યોજનશ-
તસહસ્સ લઘૈર્યોજનપ્રમાણ ઇત્યર્થઃ, ‘આયામવિક્કલંભેણં’ આયામવિક્કલંભેણ—આયા-
મેન દૈર્ઘ્યેણ, વિક્કલંભેણ—વિસ્તારેણ ચ ‘પળ્ણત્તે’ પ્રજ્ઞપ્તઃ—પ્રવેદિતઃ । મુ. ૧॥

માવનિર્જરા હૈ । ડસ તરહ સે યહ નિર્જરા યદપિ અનેક પ્રકારકી હૈ-
કિર ખી અપને ભેદોં કી અપેક્ષા ન કરકે યહ સ્વરૂપ સામાન્ય સે એક
હી હૈ । નિર્જરા મેં કર્મોં કા એક દેશ સે ક્ષય હોતા હૈ ઓર મોક્ષ મેં
સમ્પૂર્ણરૂપ સે જ્ઞાત હોના હૈ ॥૧૮॥

અવ સૂત્રકાર યહાં સે આશ્રય વિશેષ કો ચોષ કરાને વાલે સાત
સૂત્ર કહતે હું—‘જંબૂદ્વીવે દીવે’ ઇત્યાદિ ।

ટીકાર્થ—જંબૂદ્વીપ નામકા દ્વીપ લવાઈ ચૌડાઈ કી અપેક્ષા એક લાન્ઘ
યોજન કા કહા ગયા હૈ । અપ્રતિષ્ઠાન નામકા નરક—સસલ નરક શૂચિ કા

છે આ રીતે તે નિર્જરા જો કે અનેક પ્રકારની છે, તો પણ ભેદોની અપેલાએ ન
જોતા સ્વરૂપ સામાન્યની અપેલાએ જોતા તે એક જ છે નિર્જરામા કર્મોનો એકદેશય
લય થાય છે અને મોહમા સપૂર્ણપણે લય થાય છે ॥૧૮॥

હવેના સાત સૂત્રમા સૂત્રકાર આશ્રય વિશેષની સમજૂતી આપ છે—
‘જંબૂદ્વીવે’ ઇત્યાદિ ।

ટીકાર્થ—જંબૂદ્વીપ નામના દ્વીપની લગભગ તથા પહોળાઇ લાખ લાખ યોજનની ઈર્થાવી
છે અપ્રતિષ્ઠાન નામની સાતમી નરક શૂચિના મધ્યમ આવાસની લગભગ તથા પહોળાઇ

‘अप्पट्ठाणे णरए’ अप्रतिष्ठानो नरकः—अप्रतिष्ठाननामका नरक—मत्तम्या नरकभूम्या मध्यम आवास इत्यर्थः । ‘एरां मायणमयसइस्स’ एकं याजन शतसइस्स—लक्षैकयोजनप्रमाण इत्यर्थः ‘आयामविक्खमेण’ आयामविक्खमेण—द्वैष्ट्यविस्तारेण ‘पण्णत्ते’ पञ्चसु ॥सू. २॥

‘पालए’ पालक—सौधमैन्द्रसम्यग्धी आगियागिक पालकनामकी दवस्वत्कृतं यद् वैक्रियं तत् पालक, ‘जाणविमाणे’ यानविमान यान—गमन, तदर्थं विमान मित्यर्थः यद्वा—यायत्तेऽनेनेति यान—वाहन, तदेष विमान परियानिकमित्यर्थः । एक योजनशत—सहस्रमायामविक्खमेण पञ्चसु । सु ३॥

‘सब्बइसिद्धे’ सर्वार्थसिद्ध अनुत्तरदेवलोकासम्बन्धि सर्वार्थ—सिद्धनामक पञ्चमं विमान तत् सर्वतः श्रेष्ठमस्तीत्याह—‘महाविमाणे’ महाविमानम्, एकं योजनशतसहस्रम् आयामविक्खमेण पञ्चसु ॥सू. ४॥

मूलम्—अदा—नक्खत्ते एगतारे पण्णत्ते ॥सू. ५॥

चित्ता—नक्खत्ते एगतारे पण्णत्ते ॥सू. ६॥

सात्ति—नक्खत्ते एगतारे पण्णत्ते ॥सू. ७॥

मध्यम आवास—पीथ का प्रस्तर—पाथडा—लपाई चौड़ाई की अपेक्षा एक लाख योजन का कहा गया है। इसी तरह आयाम और विष्कंम की अपेक्षा पालक नामका यानविमान एक लाख योजन का कहा गया है। सर्वार्थ सिद्ध नामका पांचमां महाविमान भी आयाम और विष्कंम की अपेक्षा एक लाख योजन का कहा गया है।

भावार्थ—यह कि लंबाई चौड़ाई की अपेक्षा जम्बूद्वीप नामकी प्रथम द्वीप अप्रतिष्ठान नामका सातवीं नरक भूमि का मध्यम आवास, सौधमैन्द्र का पालक नामका यानविमान, और अनुत्तर लोक सर्वार्थ सिद्ध नामका पंचमविमान ये चारों एक-एक लाख योजन के हैं ॥१-४॥

लाभ लाभ योजननी जतावी छे जेव शीते पावक नामनु यानविमान आयाम जने विष्कंमनी अपेक्षाके छेक लाभ योजननु जवाय छे सर्वार्थसिद्ध नामनु पावक महाविमान पञ्च आयाम जने विष्कंमनी अपेक्षाके छेक लाभ योजननु कहेव ॥

भावार्थ—ल लाभ पञ्चलाभनी अपेक्षाके जम्बूद्वीप नामकी पहिली द्वीप अप्रतिष्ठान नामकी सातवीं नरकभूमिना मध्यम आवास सौधमैन्द्र पावक नामनु यान विमान जने अनुत्तर देवलोकांनु सर्वार्थसिद्ध नामनु पांचसु विमान, ते अरे छेक छेक लाभ योजनना छे ॥१-४॥

टीका—‘अदानकवत्ते’ आर्द्रानक्षत्रम्, ‘एगतारे’ एकतारं पण्णत्ते’ प्रज्ञप्तम् ॥स्र. ५॥

‘चित्तानकवत्ते’ चित्रानक्षत्रम् ‘एगतारे’ एकतारं ‘पण्णत्ते’ प्रज्ञप्तम् ॥स्र. ६॥

‘सातिनकवत्ते’ स्वातिनक्षत्रम् एकतारं प्रज्ञप्तम् ॥स्र. ७॥

इतः प्रभृति अष्टादशसूत्राणि आश्रयिणां स्थित्यादिधर्माणां बोधकान्याह—

मृच्छ—इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरइयाणं

एगं पलिओवमं ठिई पण्णत्ता ।१। इमीसेणं रयणप्पभाए पुढवीए

नेरइयाणं उक्कोसेणं एगं सागरोवमं ठिई पण्णत्ता ।२। दोच्चाए पुढवीए

नेरइयाणं जहन्नेणं एगं सागरोवमं ठिई पण्णत्ता ॥३॥

टीका—‘इमीसे ण’ इत्यादि । अस्यां खलु ‘रयणप्पभाए’ रत्नप्रभायां ‘पुढवीए’ पृथिव्याम् ‘अत्थेगइयाणं’ अस्त्येकेषाम्—अस्ति—विद्यते, एकेषां—केषांचित्, ‘नेरइयाणं’ नैरयिकाणां—नारकिणाम्, ‘एगं’ एकं, ‘पलिओवमं’ पल्योपमं, ‘ठिई’ स्थितिः, इति कृत्वा ‘पण्णत्ता’ प्रज्ञप्ता—प्रवेदिता जिनैरित्यर्थः । सा पल्योपमस्थितिश्चतुर्थे प्रस्तटे मध्यमाऽवगन्तव्या ॥१-३॥

‘अदानकवत्ते’ इत्यादि ।

टीकार्थ—आर्द्रा नक्षत्र एकतारा वाला कहा है । चित्रा नक्षत्र एक नारावाला कहा है । स्वातिनक्षत्र एक तारावाला कहा है ॥७॥

अब यहाँ से लेकर आश्रयी जीवों की स्थिति आदि धर्मों के बोधक अठारह सूत्रों को सूत्रकार कहते हैं—‘इमीसेणं रयणप्पभाए’ इत्यादि ।

टीकार्थ—इस रत्नप्रभा पृथिवी में कितनेक नारकियों की एक पल्य की स्थिति जिनदेव ने कही है ॥१॥ इस रत्नप्रभा पृथिवी में नारकियों की उत्कृष्ट स्थिति एक सागर की कही है ॥२॥ द्वितीय पृथिवी में नागकियों की जघन्य स्थिति एक सागर की कही गई है ॥३॥

‘अदानकवत्ते’ इत्यादि ।

टीकार्थ—आर्द्रा नक्षत्र એક તારા વાળું છે. ચિત્રા નક્ષત્ર એક તારા વાળું છે. સ્વાતિ નક્ષત્ર પણ એક તારા વાળું છે. ॥७॥

હવે પછીન અઠાર સૂત્રોથી સૂત્રકાર આશ્રયી જીવોની સ્થિતિ આદિ ધર્મોની સમજૂતી આપે છે—‘इमीसे णं रयणप्पभाए’ इत्यादि ।

टीकार्थ—આ રત્નપ્રભા પૃથ્વીમા કેટલાક નારકીઓની સ્થિતિ જિનદેવે એક પલ્યની કહી છે ॥૧॥ આ રત્નપ્રભા પૃથ્વીમા નારકીઓની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ એક સાગરની કહેલ છે ॥૨॥

બીજી પૃથ્વીમા નારકીઓની જઘન્ય સ્થિતિ એક સાગરની કહેલ છે. ॥૩॥

માયાર્થ—લોક ક બધ મધ્ય ઓર ઉર્ચ, કમ પ્રકા ત્રીન માગ હ ।
 અધામાગ મેસ્વયત ક મમતલ કે નીચે નૌમૌ યોજન થી ગહરાઈ કે પાટ
 ગિના જાતો હૈ । જા આકાશ મ ઓંધિ કિયેદુગ મકોર ક મમાન નીચે ૨
 યિમ્સીર્ણ હૈ । મમતલ કે નીચે ક તથા ઉપર કે નૌ મૌ નૌ મૌ યોજન
 પ્રયાત કુલ અટાગ મૌ યોજન કા મધ્યલોક હૈ । જો આદ્ય મેં આલર
 કે મમાન ધગપર હંપાઈ બોઢાઈ ઘાલા હૈ । મધ્યલોક ક ઉપર કા સમ્પૂર્ણ
 લોક ઉર્ચલોક હૈ જા પ્રકાર મેં પમ્વાવન—સુદ્ધ વિશેષ કે મમાન હૈ । અધોલોક
 મ નરકમુમિયાં હૈ । યે સાન હૈ, જો મમથેણિ મ ન હોદર ગ્વ ગ્વ ક નીચે હૈ ।
 કનકાવિશેષ ધનન ધ્રાન્નો મેં હૈ । પહિલી મુમિ કા નામ રત્નપ્રમા હૈ । હસ્ત
 તેરહ પ્રસ્તર હૈ । યે મજિગ્ધાલે ઘર કે તહે મમાન હોત હૈ । કનમેં જો ચોંધા પ્રસાર
 હૈ કનમેં મધ્યમ સ્થિતિ ગ્વ પળ્ય ફી હૈ । હસી પ્રપેલા મૂંચકાર ને યહા ગ્વ
 પલ્ય ફી સ્થિતિ “કિતનેક નારકિયોં ફી હૈ” જેવા વદા હૈ । હસી પ્રથમ નરક
 મેં નારકિયોં ફી ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ ગ્વ સાગગંપમ ફી હૈ । પ્રત્યક ગતિ કે જીર્ણો
 ફી સ્થિતિ જગન્ય ઓર ઉત્કૃષ્ટ દો તરહ સે ફહી જા મચ્છી હૈ । નિસસ
 કમ ન પાઈ જો મકે ઉસે જગન્ય ઓર નિમસે અધિક ન પાઈ જા મક
 ઉસે ઉત્કૃષ્ટ પદ્ધતે હૈ । ગ્વ સાગગંપમ ફી જો ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ પથમ નરક

માયાર્થ—દોકના ત્રણ ભાગ છે—અધોલોક, મધ્યલોક અને ઉર્ચલોક એક પર્વ
 વના સુમતલની નીચે નવસો ચોલનની જગાઈ પછીના ભાગને અધોભાગ ગણવામા
 આવે છે, જે આકાશમાં હોંધા પડેલા શકેશના જેમ નીચે બધ તેમ વિસ્તીર્ણ
 થતો બધ છે સુમતલની નીચે તથા ઉપરના ત્રણ નવસો ચોલને એકલ કે કુલ
 આદારસો ચોલનનો મધ્યલોક છે, જે આકાશમાં આવરના જેવો બરાબર લબ ઇંદ
 ગાઈ વાળો છે મધ્યલોકના ઉપરનો બધો ભાગ ઉર્ચલોક કહેવાય છે, જેનો આદર
 મુદગ જેવો છે અધોલોકમાં નરકમુમિયો છે તે સાત છે તે એક જ દારમા નથી
 પણ એકની નીચે બીજી એવી રીતે આવેલ છે તેનું બધું વર્ણન આત્રોમાં છે પહેલી
 મુમિનું નામ રત્નપ્રમા છે તેમાં તેર પ્રસ્તર—ધર—કે જે માળ વાળા ધન્ય તા
 સમાન દોષ છે તેમાં જે શિયુ પ્રસ્તર છે તેમા મધ્યમ સ્થિતિ એક પદ્ધતી છે
 જે અપેક્ષાએ સુતકારે કેટલાક નારકીઓની” એક પદ્ધતી ત્યાં સ્થિતિ છે એમ કમ્યુ
 કે જે જ પડેલી નરકમા નારકીઓની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ એક આપેશપમની છે પ્રત્યક
 પ્રકારના છવોની સ્થિતિ જગન્ય અને ઉત્કૃષ્ટ એમ બે પ્રકારે કહી શકાય છે તેના
 કર્ણાં બોધી સ્થિતિ મળે નહીં તેને જગન્ય કહે છે અને જેનાથી વધારે ન મળી
 શકે તે સ્થિતિને ઉત્કૃષ્ટ કહે છે પ્રથમ નરકમાં જે એક સાગરની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ

मूलम्—असुरकुमाराणं देवाणं अत्थेगइयाणं एगं पालिओवमं
ठिई पणत्ता ॥४॥ असुरकुमाराणं देवाणं उक्कोसेणं एगं साहियं
सागरोवमं ठिई पणत्ता ॥५॥ असुरकुमारिंदवज्जियाणं भोमिज्जाणं
देवाणं अत्थेगइयाणं एगं पालिओवमं ठिई पणत्ता ॥सू. ६॥

टीका—‘असुरे’त्यादि ! असुरकुमाराणां देवानाम् ‘अत्थेगइयाणं’ अस्ति=
विद्यते, एकपां=केपाचित् एकं पल्योपमं स्थितिः प्रज्ञप्ता । ‘अस्ति’ इत्यस्य ‘प्रज्ञप्ता’
इत्यनेन सठान्वयः । असुरकुमाराणां देवानाम् उत्कर्षेण एक साधिकं सागरोपमं
स्थितिः प्रज्ञप्ता । ‘असुरकुमारिंदवज्जियाणं’ असुरकुमारेन्द्रवर्जितानां=चमरवलिव-
र्जितानामित्यर्थः, ‘भोमिज्जाणं’ भूमिजानां-भूमौ=रत्नप्रभाभिधाया पृथिव्यां जाय-
मानत्वाद् ‘भूमिजाः’ उच्यन्ते, भूमिजाः=भवनवासिन इत्यर्थः, तेषां, एकं
पल्योपमं मध्यमा स्थितिः प्रज्ञप्ता ॥मू. ४-६॥

में कही है वही द्वितीय नरक में जघन्यस्थिति है ॥सू. १ २-३॥

‘असुरकुमाराणं’ इत्यादि० ।

टीकार्थ—असुरकुमारों में कितनेक असुरकुमारों की एक पल्य की स्थिति है ॥४॥
असुरकुमार देवों में कितनेक असुरकुमार देवों की उत्कृष्ट स्थिति एक
सागरोपम से कुछ अधिक है ॥५॥ असुरकुमारों के इन्द्रों को छोड़कर
भूमिजों की एक पल्योपम की स्थिति है ॥६॥

भावार्थ—ये भवनवासी निकाय हैं—असुरकुमार, नागकुमार, सुपर्णकुमार,
विद्युत्कुमार, अग्निकुमार, क्षीपकुमार, उदधिकुमार, दिशाकुमार
पवनकुमार और स्तनितकुमार । इन में कितनेक असुरकुमारों की स्थिति—
उत्कृष्ट स्थिति—एक पल्योपम की है । तथा-दक्षिणार्ध और उत्तरार्ध के असुरेन्द्रों

કહા છે એ જ બીજી નરકમાં જઘન્ય સ્થિતિ છે ॥સૂ. ૧-૨-૩॥

‘અસુરકુમારાણ’ ઇત્યાદિ ।

ટીકાર્થ—અસુરકુમારોમાં કેટલાક અસુરકુમારોની એક પલ્યની સ્થિતિ છે ॥૪॥
અસુરકુમાર દેવોમાં કેટલાક અસુરકુમાર દેવોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ એક સાગરોપમથી
સહેજ વધારે છે ॥૫॥ અસુરકુમારોના ઇન્દ્રોને બાદ કરતા ભૂમિજોની એક પલ્યો-
પમની સ્થિતિ છે ॥૬॥

ભાવાર્થ—ભવનવાસી નિકાય આ પ્રમાણે છે—અસુરકુમાર, નાગકુમાર, સુપ-
ર્ણકુમાર વિદ્યુતકુમાર, અગ્નિકુમાર, ક્ષીપકુમાર, ઉદવિકુમાર, દિશાકુમાર, પવનકુમાર
અને સ્તનિતકુમાર તેમના કેટલાક અસુરકુમારોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ એક પલ્યોપમની છે

માવાર્થ—લોક ક્ક અષઃ મધ્ય ઓર ઉર્ધ્વ, હમ પ્રકાર ત્રીન માગ હૈ । અષામાગ મેઋર્ધત કં સમતલ કે નીચે નૌસૌ યોજન થી ગહરાઈ કે પાઘ ગિના જાતો હૈ । જો આકાશ મેં ઓંધે કિયે જુગ સકોરે કે સમાન નીચે ૨ વિસ્તીર્ણ હૈ । સમતલ કે નીચે કે તથા ઊપર કે નૌ સૌ નૌ સૌ યોજન અર્થાત્ કુલ અઠારહ સૌ યોજન કા મધ્યલોક હૈ । જો આકાર મેં જ્ઞાલર કે સમાન પરાપર લંબાઈ ઓંઘાઈ વાલા હૈ । મધ્યલોક ક્ક ઊપર કા સંમ્પૂર્ણ લોક ઉર્ધ્વલોક હૈ જો આકાર મેં પચ્ચાત્રજ-ચૃદ્ધ વિશેષ કે સમાન હૈ । અધોલોક મેં નરકભૂમિયાં હૈ । યે સાત હૈ, જો સમગ્રેણિ મેં ન હોકર ઇક ઇક કે નીચે હૈ । હનકાવિશેષ વર્ણન કાન્ત્રોં મેં હૈ । પરિલી ભૂમિ કા નામરત્નપ્રમા હૈ । હસમેં તેરહ પ્રસ્તર હૈ । યે મંજિલવાલે ઘર કે તહે સમાન હોવે હૈ । હનમેં જો ઓંધા પ્રસાર હૈ હસમેં મધ્યમ સ્થિતિ ઇક પરચ કી હૈ । હસી અપેસા સૂત્રકાર ને યહાં ઇક પરચ કી સ્થિતિ “કિતનેક નારકિયોં કી હૈ” એસા પઢા હૈ । હસી પ્રથમ નરક મેં નારકિયાં કી ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ ઇક સાગરોપમ કી હૈ । પ્રત્યેક ગતિ કે જીર્ણોં કી સ્થિતિ જઘન્ય ઓર ઉત્કૃષ્ટ દો તરહ સે રહી જા સકતો હૈ । જિસસે કમ ન પાઈ જો સકે હસે જઘન્ય ઓર જિસસે અધિક ન પાઈ જો સકે હસે ઉત્કૃષ્ટ રહતે હૈ । ઇક સાગર કી જો ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ પ્રથમ નરક

માવાર્થ—લોકના ત્રણ ભાગ છે—અધ લોક, મધ્યલોક અને ઉર્ધ્વલોક મેરુ પર્વતના સમતલની નીચે નવસો ચોળનની છ શાષ પછીના ભાગને અધોભાગ અશ્વરામા આવે છે, જે આકાશમાં જોધા પડેલા ચક્રોશની જેમ નીચે અથ તેમ વિસ્તીર્ણ થતો અથ છે સમતલની નીચે તથા ઉપરના નવ નવસો ચોળને એટલે કે કુલ અઠારસો ચોળનને મધ્યલોક છે, જે આકાશમાં કાલસ્ના જેવો વશાવર લગઈ રહે જાઈ વાળો છે મધ્યલોકના ઉપરનો ભાગ ભાગ ઉર્ધ્વલોક કહેવાય છે, જેનો આકાર મુકજ જેવો છે અપોલોકમાં નરકભૂમિયો છે તે સાત છે તે બેક જ કારમાં નધી પણ એકની નીચે બીજી એવી રીતે આવેલ છે. તેનું વધુ વર્ણન શાસ્ત્રોમાં છે પહેલી ભૂમિનું નામ રત્નપ્રમા છે તેમાં તેર પ્રસ્તર-ચર-જે જે માળ વાળા પ્રસ્તા તળ સમાન હોય છે તેમાં જે ઓણ પ્રસ્તર છે તેમાં મધ્યમ સ્થિતિ એક પરચની છે જે અપેસાએ સૂત્રકારે કેટલાક નાશીઓની” એક પરચની ત્યાં સ્થિતિ છે એમ કહ્યું છે જે જ પહેલી નરકમાં નાશીઓની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ એક સાગરોપમની છે પ્રત્યેક પ્રકારના જીવોની સ્થિતિ જઘન્ય અને ઉત્કૃષ્ટ એમ બે પ્રકારે કહી શકાય છે જેના કરતાં ઓછી સ્થિતિ મળે નહીં તેને જઘન્ય કહે છે અને જેનાથી વધારે ન મળી શકે તે સ્થિતિને ઉત્કૃષ્ટ કહે છે પ્રથમ નરકમાં જે એક સાગરની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ

पण्णत्ता १९। जोइसियाणं देवाण एगं उक्कोसेणं एगं पलिओवमं
वाससयसहस्समव्वभहियं ठिई पण्णत्ता ॥सू. १०॥

टीका—‘असंखिज्जे’ त्यादि । ‘असंखिज्जवासाउयसन्निपंचिन्द्रियतिरिक्ख
जोणियाणं’ असंख्येयवर्षायुष्कसंज्ञिपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकानाम्, असंख्येयानि वर्षाणि
आयुर्येषां ते, असंख्येयवर्षायुष्काः, संज्ञिनः=समनस्काः, पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकाः=
पञ्चेन्द्रियाः=पञ्चेन्द्रियाविशिष्टाः तिर्यञ्चो योनिर्येषां ते, एषा कर्मधारयः,
हैमवतैरण्यवतवर्षयोत्पन्नानामित्यर्थः, केषाचित् एकं पल्योपमं स्थितिः प्रज्ञप्ता ।
‘असंखिज्जवासाउयगव्वभक्कंतियसंणिमणुयाण’ असंख्येयवर्षायुष्कगर्भव्युत्क्रान्तिक
संज्ञिमनुजानाम्, असंख्येयवर्षायुष्काः, गर्भव्युत्क्रान्तिकाः=गर्भे व्युत्क्रान्तिरुत्प-
त्तिर्येषां ते, गर्भोत्पन्नाः, इत्यर्थः, संज्ञिनः=समनस्काः, मनुजाः=मनुष्याः, एषा
कर्मधारयः, एकेषां केषाचित् एकं पल्योपमं स्थितिः प्रज्ञप्ता । ‘वाणमंतराणं’ व्यन्त-
राणां अन्तरं नामावकाशः, तच्चेह स्थानरूपं ज्ञेयम्, विविधं भवननगरावासरूप
अन्तरं स्थानं येषां ते, व्यन्तराः, तत्र भवनानि रत्नप्रभायाः प्रथमे रत्नकाण्डे
उपर्यधश्च योजनशतमपहाय शेषे अष्टयोजनशतप्रमाणे मध्यभागे सन्ति । यद्
वा विविधम् अन्तरं पर्वतान्तरं कन्दरान्तरं वनान्तरं वा क्रीडाया आश्रयरूपं
स्थानं येषां ते व्यन्तराः, पर्वतादि स्थानेषु एते क्रीडाप्रिया भवन्ति, अतो
व्यन्तरा उच्यन्ते । अथवा ‘वाणमन्तरा’ इत्यस्य ‘वानमन्तरा’ इतिच्छाया । व्युत्प-
त्तिस्तु वनानामन्तराणि वनान्तराणि, तेषु भवाः वानमन्तराः । अत्र मकारागमः
आर्षत्वाद्वा पृषोदरादित्वात् तेषाम् उत्कृष्टा एका पल्योपमा स्थितिः प्रज्ञप्ता ।
‘जोइसियाणं’ ज्यौतिष्काणां देवाना चन्द्रविमानदेवानामित्यर्थः, उत्कर्षेण ‘वाससय-
सहस्समव्वभहियं’ वर्षशतसहस्राभ्यधिकम् एकं पल्योपमं स्थितिः प्रज्ञप्ता ॥सू. ७-१०॥

‘असंखिज्जवासाउय’ इत्यादि ।

टीकार्थ—असंख्यातवर्ष की आयुवाले संजीपवेन्द्रियतिर्यचों की-अर्थात् हैमवत
और ऐरण्यवतवर्ष में उत्पन्न हुए कितनेक तिर्यञ्च योनि वालों की-एक
पल्योपम की स्थिति है॥७॥ असंख्यात वर्ष की आयुवाले गर्भजसंजी मनुष्यों
में से कितनेक मनुष्यों की स्थिति एक पल्योपम की है ॥८॥ व्यन्तर देवों

“असंखिज्जवासाउय” इत्यादि ।

टीकार्थ—“असंख्यात वर्षानां आयुष्यवाणा संजीपवेन्द्रियतिर्यचोनी-अष्टके के
हैमवत अने ऐरण्यवत क्षेत्रमा उत्पन्न भयेव केटलाक तिर्यञ्च योनिवाणानी अष्ट
पल्योपमनी स्थिति होय छे ॥७॥ असंख्यात वर्षानां आयुष्यवाणा गल्लंज संजी
मनुष्योमाथी केटलाक मनुष्योनी स्थिति अष्ट पल्योपमनी ॥८॥ व्यन्तरदेवानी

મૂલ્ય—અસલિજ્ઞાસાડયસલ્પિષ્ચિદિયતિરિવજોગિયાણ
અત્થેગદ્ધયાણ ણમં પલિઓવમ ઠિઈ પળ્લન્તા ।૭। અસલિજ્ઞાસાડય
ગન્ધમવક્કતિયસણિમણ્યાણ અત્થેગદ્ધયાણ ણમં પલિઓવમ ઠિઈ
પળ્લન્તા ।૮। ઘાણમતરાણ દેવાણ ઉક્કોસેણ ણમં પલિઓવમ ઠિઈ

ફી ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ ક્રમજાઃ ણમં સાગરાપમ ફી ઓર ણમં સાગરોપમ સે
કુલ્લ અધિક ફી ફે । દક્ષિણાધ ફા અધિપતિ ચમર ઓર ઉત્તરાધ ફા
અધિપતિ પલિ ફે । અગુરકુમરો ફે ફન દો ફન્દ્રો ફો ઓડકર વાકો નો
મયનવામિયો ફી જો ણમં પમ્પોપમ ફી સ્થિતિ ફી ફે યદ્ મધ્ય
મસ્થિતિ ફી અપેસા ફી ગઈ જાનના ગાદિય । અગુરકુમાર મુમિજ નહો
ફહલાતે ફે ફયો ફી યે વહુત ફરકે ભાવામો મં ઓર ફમી મયનો મે
વસતે ફે । તથા નાગકુમાર આદિ નો મયનપતિ વાયઃ મયનો મે ફી રહતે ફે ।
આવાસ રત્નમના ફે પૃથ્વીવિંદ મં સે ઉપર નીચે ફે ણમં ણમં હજાર યોજન
ઓડકર ધોય ફે ણમં લાઘ્ય અઠસાર હજાર યોજન પરિમાણ ભાગ મે
મય જગદ ફે પર મયન તો રત્નમના ફે નીચે નમ્બ હજાર યોજન
પરિમાણ ભાગ મે ફી રાતે ફે । માયામ વહે મંદપ જેસે જોતે ફે ઓર
મયન નગર મરજ । મયન વાહર સે ગોલ મીતર સ મમવતુષ્કોણ ઓર
તલે મે પુષ્કરકર્ણિકા જેસે જોતે ફે ॥૫૦૪।૧।

તથા દક્ષિણાધ અને ઉત્તરાધના અગુરન્દ્રોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ કમથ એક સાગરો
પમની અને એક સાગરોપમથી ઘેરી વધારે છે દક્ષિણાધના અધિપતિ ચમર અને
ઉત્તરાધના અધિપતિ બલિ છે અગુરકુમારોના એ એ ઇન્દ્રો મિવાવના બાહીના
નવ ભવનવાદીઓની જે એક પચ્ચોપમની સ્થિતિ જતાવવામાં બાધી છે તે મધ્યમ
સ્થિતિ ॥ અધિકારને જતાવેલ છે તેમ સમજવું અગુરકુમારે મુનિજ કહેવાતા નથી
કારણકે તેઓ ગોરે બાવે આવાસોમાં અને ક્યારેક ભવનોમાં વસે છે તથા નામ
કુમાર આદિ નવ ભવનપતિ સામાન્ય રીતે ભવનોમાં જ રહે છે રત્નમનાના પુષ્કરી
પિંડમાંથી ઉપર પીંધેના એક એક દાનવ યોજન ઊંડી રહીને વચ્ચેના એક ટાપ
આસેતેર દાનવ યોજન પરિમાણ ભાગમાં બધી જગ્યાએ આવાસો છે, પણ ભવન
તો રત્નમનાની નીચેના નેવું દાનવ યોજન પરિમાણ ભાગમાં જ દ્રવ્ય છે આવાસ
ગોટા મંદપ જેવાં હોય છે, અને ભવન નગર જેવાં હોય છે ભવન જદારથી
બાજ અદરથી સમવતુષ્કોણ અને તળિયેથી પુષ્કરકર્ણિકા જેવાં હોય ॥ ૫૦૪-૫-૧ ॥

पणत्ता १९। जोइसियाणं देवाण एगं उक्कोसणं एगं पलिओवमं
वाससयसहस्समव्वमहिंयं टिई पणत्ता ॥सू. १०॥

टीका—‘असंखिज्जे’ इत्यादि । ‘असंखिज्जवासाउयमन्निपंचिउयतिरिव ख
जोणियाणं’ असंख्येयवर्षायुष्कसंज्ञिपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकानाम्, असंख्येयानि वर्षाणि
आयुर्येषां ते, असंख्येयवर्षायुष्काः, संज्ञिनः=समनस्काः, पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकाः=
पञ्चेन्द्रियाः=पञ्चेन्द्रियविशिष्टाः तिर्त्यञ्चो योनिर्येषां ते, एषा कर्मधारयः,
हैमवतैरण्यवतवर्षयोरुत्पन्नानामित्यर्थः, केषाचित् एक पल्योपमं स्थितिः प्रज्ञप्ता ।
‘असंखिज्जवासाउयगव्वमव्वकंतियसंणिमणुयाण’ असंख्येयवर्षायुष्कगर्भव्युत्क्रान्तिक
संज्ञिमनुजानाम्, असंख्येयवर्षायुष्काः, गर्भव्युत्क्रान्तिकाः=गर्भे व्युत्क्रान्तिरुत्प-
त्तिर्येषां ते, गर्भोत्पन्नाः, इत्यर्थः, संज्ञिनः=समनस्काः, मनुजाः=मनुष्याः, एषा
कर्मधारयः, एकेषां केषाचित् एकं पल्योपमं स्थितिः प्रज्ञप्ता । ‘वाणमंतराणं’ व्यन्त-
राणां अन्तरं नामावकाशाः, तच्चेह स्थानरूपं ज्ञेयम्, विविधं भवननगरावासरूपं
अन्तरं स्थानं येषां ते, व्यन्तराः, तत्र भवनानि रत्नप्रभायाः प्रथमे रत्नकाण्डे
उपर्यधश्च योजनशतमपहाय ज्ञेये अष्टयोजनगतप्रमाणे मध्यभागे सन्ति । यद्
वा विविधम् अन्तरं पर्वतान्तरं कन्दरान्तरं वनान्तरं वा क्रीडाया आश्रयरूपं
स्थानं येषां ते व्यन्तराः, पर्वतादि स्थानेषु एते क्रीडाप्रिया भवन्ति, अतो
व्यन्तरा उच्यन्ते । अथवा ‘वाणमन्तरा’ इत्यस्य ‘वानमन्तरा’ इनिच्छाया । व्युत्प-
त्तिस्तु वनानामन्तराणि वनान्तराणि, तेषु भवाः वानमन्तराः । अत्र मकारागमः
आर्पत्वाद्वा पृषोदरादित्वात् तेषाम् उत्कृष्टा एका पल्योपमा स्थितिः प्रज्ञप्ता ।
‘जोइसियाणं’ ज्योतिष्काणां देवानां चन्द्रविमानदेवानामित्यर्थः, उत्कर्षेण ‘वाससय
सहस्समव्वमहिंयं’ वर्षशतसहस्राभ्यधिकम् एकं पल्योपमं स्थितिः प्रज्ञप्ता ॥सू.७-१०॥

‘असंखिज्जवासाउय’ इत्यादि ।

टीकार्थ—असंख्यातवर्ष की आयुवाले संज्ञीपंचेन्द्रियतिर्यचों की-अर्थात् हैमवत
और ऐरण्यवतवर्ष में उत्पन्न हुए कितनेक तिर्त्यञ्च योनि वालों की-एक
पल्योपम की स्थिति है॥७॥ असंख्यात वर्ष की आयुवाले गर्भवजसज्ञी मनुष्यों
में से कितनेक मनुष्यों की स्थिति एक पल्योपम की है ॥८॥ व्यंतर देवों

“असंखिज्जवासाउय” इत्यादि ।

टीकार्थ—“असंख्यात वर्षना आयुष्यवाणा सज्ञीप चन्द्रिय तिर्य योनी-अष्टले ३
हैमवत अने ऐरण्यवत क्षेत्रमा उत्पन्न थयेल डेटलाक तिर्त्यञ्च योनिवाणानी अष्ट
पल्योपमनी स्थिति होय छे ॥७॥ असंख्यात वर्षना आयुष्यवाणा गल्लं सज्ञी
मनुष्योमाथी डेटलाक मनुष्योनी स्थिति अष्ट पल्योपमनी ॥८॥ व्यतरदेवोनी

પી ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ એક પલ્લોપમ કી છે ॥૧॥ ડ્યોનિયક દેર્ધા પી-ચન્દ્રવિમાન
દેર્ધો પી-ઉત્કૃષ્ટસ્થિતિ એક લાવ્યવર્ષ અધિક એક પલ્લોપમ કી છે ॥૧૦॥

માયાર્થ—અસંખ્યાત વર્ષજીવી મોગમૂમિયા મનુષ્ય ઓર તિર્યક
દી હોતે હૈં । હૈમયત ઓર પેરણયત ય ક્ષેત્ર મોગમૂમિ હૈં । મોગમૂમિ
મેં અમંજીજીવ નહીં હોતે હ । અસંખ્યાત વર્ષ જીવી મનુષ્ય તોમ અવર્મ
મૂમિયો મેં છપ્પન અન્તર્યામો મેં ઓર કર્મમૂમિયા મેં ઉત્પન્ન યુગલિક
હી હ, પરન્તુ અસંખ્યાતવર્ષ જીવી તિર્યક તો ઉત્ક ક્ષેત્રોં કે બલાયા
દાર્દ્રવીપ કે પાદર કે દીપ સસુદ્રા મેં મી વાય જાતે હ । અર્મમૂમિયો
આદિ મ ઉત્પન્ન મનુષ્ય ઓર તિર્યક કી મવસ્થિતિ એક મી નહીં છે ।
એક પલ્લુ સે મી અધિક છે । કિમકી કિતની ૨ છે । ? ગદ્ અવધાત્રોં
સે જાની જા મવતી છે । ગદ્ તો અસંખ્યાતવર્ષ જીવી જિન સંઝી પંચે
ન્દ્રિય મનુષ્યોં કી એ તિર્યકોં કી સ્થિતિ એક પલ્લોપમ કી કહી ગદ્
છે ઉનકા નિર્દેશ છે । હૈમયત ઓર પેરણયત ક્ષેત્રોં ક સંઝી પંચેન્દ્રિય તિર્યક
ઓર ગર્મજ સંઝી પંચેન્દ્રિય મનુષ્ય હન દોનોં પી એક પલ્લોપમ પી સ્થિતિ-
મવસ્થિતિ કહી છે । યેસે તો તિર્યકોં ઓર મનુષ્યોં પી સ્થિતિ ઉત્કૃષ્ટ
તોન પલ્લુ કી માની ગદ્ છે । યન્તર દેર્ધોં કે મપન, ઓર નગર રૂપ

ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ એક પલ્લોપમની છે ॥૬॥ નધિતિય દેવોની-ચ દ્ર વિમાન દેવોની
ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ એક પલ્લોપમ કરતાં એક લાખ વર્ષની વધારે હોય છે ॥૧૦॥

માયાર્થ—લોગમૂમિયા મનુષ્ય અને તિર્યક જ બસ ખ્યાત વર્ષનાં આયુષ્ય
વાળા હોય છે હૈમયત અને પેરણયત એ લોગમૂમિનાં ક્ષેત્ર છે લોગમૂમિનાં
અવસ્થા હવ પાતા નથી અવખ્યાત વર્ષ હવનાશ મનુષ્ય ત્રીસ અઠગમૂમિગોમાં
છપ્પન અતર્દાપેમ અને કમમૂમિયોમાં ઉત્પન્ન થતા મુમતિકે જ છે, પણ અસ
ખ્યાત વર્ષ હવનાશ તિર્યક તો ઉપરોક્ત ક્ષેત્ર ઉપરાંત બી દીપની બદાશતા
દીપ યગુદ્રોમાં પણ ગળે છે અઠગમૂમિયો આદિમાં જ ગેલા મનુષ્ય અને તિર્યકની
અવસ્થિતિ એક રાશી નથી એક પલ્લુમાં પણ અધિક છે કોની કેટકેટલી છે તે
બીજા શાસ્ત્રોની મદદથી બળી શકાય છે બીજો તો અવખ્યાત વર્ષનાં આયુષ્ય
વાળા જે રાશી પશ્ચિદ્રિય મનુષ્યોની અને તિર્યકની સ્થિતિ એક પલ્લોપમની
બતાવવામાં આવી તેમનો નિર્દેશ કયો છે હોમયત અને પેરણયત ક્ષેત્રોના
સહી પશ્ચિદ્રિય તિર્યક અને બજાંજ રાશીપશ્ચિદ્રિય મનુષ્ય એ બન્નેની એક
પલ્લોપમની અવસ્થિતિ કહાયી છે આગ તો તિર્યક અને મનુષ્યોની સ્થિતિ ઉત્કૃષ્ટ
પલ્લુ પલ્લુની માનવામાં આવે છે અ તરદેવોનાં બવન, અને નગરરૂપ આવાસ અનેક

મૂલમ્—સોહસ્મે કપ્પે દેવાણં જહન્નેણં એનં પલિઓવમં ઠિં
પણ્ણત્તા ૧૧૧। સોહસ્મે કપ્પે દેવાણં અત્થેગઙ્ગ્યાણં એનં પલિઓવમં

આવાસ અનેક પ્રકાર કે હોતે હૈં इसलिये ये देव व्यन्तर कहलाते हैं। इनकी वि-विविधं, अन्तरं-स्थानं येषां ते व्यन्तराः” इस प्रकार व्युत्पत्ति है। इनके भवन रत्नप्रभापृथिवी का जो प्रथम रत्नकाण्ड है उसमें ऊपर नीचे सौ सौ योजन छोड़कर शेष आठ सौ (८००) योजन प्रमाण मध्य-भाग में हैं। अथवा ये विविध प्रकार के पहाड़ और गुफाओं के अन्तरो में बसने के कारण व्यन्तर कहलाते हैं। या ये सब स्थान इनको क्रीडा करने के होते हैं, क्योंकि ये पर्वतादि स्थानों में क्रीडाप्रिय होते हैं, इसलिये भी व्यन्तर कहे जाते हैं। अथवा “वाणमन्तरा” इसकी संस्कृतछाया ‘वानमन्तरा’ भी होती है। उनों के अंतरो में जो हों वे वानमन्तर हैं। यहाँ पृषोदरादि से “म” का आगम हुआ है। इन व्यन्तरदेवों की स्थिति एक पल्योपम की मानी गई है। ज्योतिष्क देवों से यहां चन्द्र के विमान के देव गृहीत हुए हैं, क्योंकि उन्हीं की स्थिति कुछ अधिक एक पल्योपम की कही हुई है। वैसे तो ग्रहों की उत्कृष्ट स्थिति एक पल्योपम की है। नक्षत्रों की उत्कृष्ट स्थिति अर्ध पल्योपम की है। तारों की उत्कृष्ट स्थिति पल्योपम का चौथा भाग है ॥७।८।९।१०॥

પ્રકારના હોય છે, તેથી તે દેવોને વ્યન્તર કહેવાય છે તેમની વ્યુત્પત્તિ આ પ્રમ ભૂ છે—વિ=વિવિધં, અન્તરં-સ્થાનં યેષાં તે વ્યન્તરાઃ તેમના ભવનો રત્નપ્રભા પૃથ્વીને જે પહેલો રત્નકાંડ છે તેમા ઉપર અને નીચે સો સો યોજન છોડીને બાકીના આઠ સો યોજન પ્રમાણુ મધ્યભાગમા છે અથ વિવિધ પ્રકારના પહાડો અને ગુફાઓના અન્તરોમાં (સ્થાનોમાં) તથા વનોની અદર વસવાને કારણે તેમને વ્યન્તર કહે છે અથવા તે સઘળા સ્થાનો તેમની ક્રીડા કરવાને માટે હોય છે કારણકે પર્વતાન્ સ્થાનોમા ક્રીડા કરવી તેમને ગમે છે, તેથી પણ તેમને વ્યન્તર કહે છે. અથવા “વાણમન્તરા” ની સંસ્કૃત છાયા “વાનમન્તરા” પણ થાય છે વનોમા સ્થાનોમા જે હોય તેમને વાનમન્તર કહે છે અહીં પૃષોદરાદિથી “મ” નો આગમ થયો છે. તે વ્યન્તરદેવોની સ્થિતિ એક પલ્યોપમન માનવામા આવે છે જ્યોતષ્ક દેવોથી અહીં ચન્દ્રના વિમાનના દેવો ગ્રહણ કરેલ છે, કારણકે તેમની સ્થિતિ એક પલ્યોપમ કરતા કંઈક વધુ કહેલ છે આમ તો અહોની ઉત્કૃષ્ઠસ્થિતિ એક પલ્યોપમની છે. નક્ષત્રોની ઉત્કૃષ્ઠસ્થિતિ અર્ધ પલ્યોપમની છે તારાની ઉત્કૃષ્ઠ સ્થિતિ પલ્યોપમના ચોથા ભાગની છે. ॥૭-૮-૯-૧૦॥

ટિર્ઠ પળ્લતા ૧૨૩. ઈસાણે કપ્પે દેવાણ જહ્લ્લેણ સાહરંગ ત્ત્ત પલ્લિ
 ઓપમ ટિર્ઠ પળ્લતા ૧૨૩. ઈસાણે કપ્પે દેવાણ અત્થેગહ્લ્લયાણ ત્ત્ત
 માગરાપમ ટિર્ઠ પળ્લતા ॥ સૂ. ૧૮॥

ટીકા—‘માદમ્મ’ इत्यादि । सौषर्मे कल्पे दयानां जयन्त्येन एकं पल्लोपमं
 स्थितिः प्रवृत्ता । सौषर्मे कल्पे एकयां केषांचिद् दयानामकं सागरोपमं स्थितिः
 प्रवृत्ता । ईशाने कल्पे जयन्त्येन मानिष्कम्=साधिकम् एकं पल्लोपमं स्थितिः
 प्रवृत्ता । ईशाने कल्पे एकयां केषांचिद् दयानाम् एकं सागरोपमं स्थितिः
 प्रवृत्ता । ॥ सू. ११-१८॥

‘सौषर्मे कल्पे’ इत्यादि ।

ટીકા—સૌષર્મકલ્પ મં દેવાં કી જયન્ત્ય સ્થિતિ એક પલ્લોપમ કી સૌષર્મ
 કલ્પ મં કિમનક દ્વાં કી ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ એક સાગરોપમ કી છે । ઈશાનકલ્પ
 મં દેવોં કી જયન્ત્યસ્થિતિ કુલ અધિક એક પલ્લ કી છે । ઈશાનકલ્પ મં
 કિમનક દ્વાં કી જયન્ત્યસ્થિતિ એક સાગરોપમ કી છે ॥

માયા—સૌષર્મકલ્પ મં દ્વાં કી ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ દો સાગરોપમ કી
 ઓર ઈશાનકલ્પ મં કુલ અધિક દો સાગરોપમ કી પક્ષી ગઈ છે । સો
 સૌષર્મકલ્પ મં કિમનક દ્વાં પેસે છે કિ જિનકી સ્થિતિ એક હી સાગર
 કી હોતી છે । ઈસાં તરહ ઈશાનકલ્પ મં મી જાનના વાઙ્મિયે । જયન્ત્યસ્થિતિ
 સૌષર્મકલ્પ મં એક પલ્લોપમ કી, ઓર ઈશાનકલ્પ મં કુલ અધિક
 એક પલ્લોપમ કી છે ॥ ૧૧-૧૮॥

“માદમ્મ કલ્પ” इत्यादि ।

ટીકા—સૌષર્મકલ્પમાં દેવાની જયન્ત્ય સ્થિતિ એક પલ્લોપમની છે સૌષર્મકલ્પમાં
 કેટલાક દેવાની કલ્પ સ્થિતિ એક સાગરોપમની છે ઇશાન કલ્પમાં દેવાની જયન્ત્ય
 સ્થિતિ એક પલ્લથી થોડી વધારે છે ઇશાનકલ્પમાં કેટલાક દેવાની જયન્ત્ય સ્થિતિ
 એક સાગરોપમની છે

બાવાક—સૌષર્મકલ્પમાં દેવાની કલ્પ સ્થિતિ એ સાગરોપમની અને ઇશાન
 કલ્પમાં એ સાગરોપમથી થોડી વધારે બતાવી છે સૌષર્મકલ્પમાં કેટલાક દેવા પલ્લ
 દેવો છે કે ૭મની સ્થિતિ એક જ સાગરની હાથ છે કિ જ પ્રમાણે ઇશાનકલ્પમાં
 એક પલ્લોપમથી થોડી વધારે છે ॥ ૧૧-૧૮॥

मूलम्—जे 'देवा सागरं सुसागरं सागरकंतं भवं मणुं साणुसो-
रं लोगहियं िनं देवात्ताए उववण्णा, तेसिं णं देवाणं उक्को-
सेणं एगं सागरोपमं उई पण्णता ।१५। ते णं देवा एगस्स अद्धमा-
सस्स आणमंति वा पाणमंति वा उस्ससंति वा नीससंति वा ।१६।
तेसिं णं देवाणं एगस्स वाससहस्सस्स आहारद्वे समुपज्जइ ।१७।
संतेगइया भवसिद्धिया जे जीवा ते एगे णं भवग्गहणेणं सिज्झि-
स्संति बुज्झिस्संति मुच्चिस्संति परिनिव्वाइस्संति सव्वदुक्खाणमंतं
करिस्संति ।सू० १८॥

टीका—'जे देवा' इत्यादि । ईशानाभिधेयस्य द्वितीयदेवलोकस्य सप्तमे
प्रस्तटे स्थितानि यानि सागर-सुसागर-सागरकान्त-भवमनु-मानुपोत्तर-लोक-
हिताख्यानि सप्तविमानानि सन्ति, तत्र उत्पन्ना ये देवास्तेषामुत्कर्षेण एक
सागरोपम स्थितिः । अत्र देवानामेव एक सागरोपमं स्थितिः, न तु देवीनाम
तासां सागरोपमस्थितेरभावात् । ते खलु देवा अर्द्धमासस्यान्ते आनन्ति=
अन्तरुच्छ्वासं गृह्णन्ति, प्राणन्ति=अन्तर्निःश्वासं गृह्णन्ति, उच्छ्वसन्ति=बाह्यमुच्छ्वास

'जे देवा सागरं' इत्यादि ।

टीकार्थ—ईशान नामक द्वितीय देवलोक के सातवें प्रस्तर में सागर, सुसा
गर सागरकान्त, भव, मनु, मानुपोत्तर और लोकहित, ये सात विमान हैं ।
इन विमानों में उत्पन्न हुए जो देव हैं उवकी उत्कृष्टस्थिति एक सागरोपम
की होती है । सागरोपमकी स्थिति देवों की ही होती है,
देवियों की नहीं । ये देव एक पक्ष के अन्त में भीतर में उच्छ्वास
लेते हैं और एक पक्ष के अन्त में ही भीतर में निःश्वास लेते हैं इसी प्रकार

"जे देवा सागरं" इत्यादि ।

टीकार्थ—ईशान नामका भीष्म देवलोकना सातवा प्रस्तरमां सागर, सुसागर,
सागरकान्त, भव, मानुपोत्तर, अने लोकहित, ये सात विमान छे ते विमानोमा
उत्पन्न भयेला जे देवा छे तेमनी उत्कृष्ट स्थिति ओके सागरोपमनी होय छे,
देवानी न स्थिति सागरोपमनी होय छे देवीओनी नही ते देवा ओके पणवाडियाने
अते अंदर उच्छ्वास ले छे अने ओके पणवाडियाने अते अंदर निःश्वास ले छे

શુદ્ધન્તિ, નિશ્વર્સાત=શ્વાનિશ્વાસ શુદ્ધન્તિ, તેપામાદારસજ્ઞા ય મદસ્યર્પાનતર
મરતિ । ‘સર્ગગદયા’ સત્તિ એકં ય કચિદ્ ભવસિદ્ધિશ્ચ બીજાસ્તે એકન
ભવગ્રહણેન સસ્સ્યમિ, માસ્સ્યતિ, માદ્યન્તિ, પરિનિર્વામ્યતિ, સર્વદુઃખ્યાના
મન્તં કરિષ્યન્તિ ॥૧૫-૧૮॥

સામાન્યનયમાશ્રિત્ય અથ ટિલીય સમવાયાદ્રમ્ એક-એન વસ્તુ યમિધાય
સામ્પત વિશપનયમાશ્રિત્ય ટિલ્પેન વસ્તુ-યાદ્ર—

મૂલ્મ—દો દહા પદ્મતા, ત જહા—અદ્વાદહે એવ અળદાદહે એવ ।
દુવે રાસી પળ્લતા, ત જહા—જીવરાસી એવ અજીવરાસી એવ । દુવિદે
વન્ધણે પળ્લતે, ત જહા—રાગવધણે એવ દોસવધણે એવ । પુવ્વાફ
મ્ગુળી નવસ્વત્તે દુતારે પળ્લતે, ઉત્તરાફમ્ગુળી નવસ્વત્તે દુતારે પળ્લતે ।
પુન્વામહવયા નવસ્વત્તે દુતારે પળ્લતે । ઉત્તરામહવયા નવસ્વત્ત ।
દુતારે પળ્લતે ॥સૂ૦ ૮॥

एक महिने के अन्त में बाहर में उच्छ्वास लेते हैं और एक महिने
के अन्त में बाहर में निश्वास लेते हैं। हमें आहारसंज्ञा एक प्रकार का
पाद होती है। कितनेक ऐसे जीव होते हैं जो भ्रमसिद्धिफ होते हैं, वे
एक ही भय करके सिद्ध अवस्थानों प्राप्त करने वाले होंगे, समस्तकर्मों से छुटने
वाले होंगे, सब प्रकार से कृतकृत्य हो जायेंगे, और सब प्रकार के
दुःखों का अंत करने वाले होंगे ॥१८-१८॥

इस प्रकार सामान्य नय की अपेक्षा से वस्तुओं में एक संख्या
का फलन कर भय मृत्रकार उनमें विशेष नयकी अपेक्षा लेकर द्वितीय
आ प्रमाणों के अतिरिक्त अनेक अनेक उच्छ्वास दे छ अने अने अतिरिक्त अने
अतिरिक्त निश्वास दे छ तेमने अनेक अनेक वस्त्र पछी आहार संज्ञा पाय ॥ १८॥
अथ एवो एवो छ के ने भवसिद्धिफ छाय छ नेमो अनेक भय करीने सिद्धि अवस्था
प्राप्त करना शक्य, आत्मना अनंत ज्ञानादि सुखाना उपभोग करना शक्य, समस्त
कर्मोभावी छटना शक्य, इष्टे शक्ते कृतकृत्य शक्य अने अथ प्रकाशमा द्वाभेना
अत एवना शक्य ॥१९-१८॥

આ પ્રમાણે સામાન્ય નયની અપેક્ષાએ વસ્તુઓમાં એક સંખ્યાનું કલન કરીને દ્વય
સૂત્રકાર તેમનામાં વિશેષ નયની અપેક્ષાએ કરીને દ્વિતીય સમવાયમાં બે, બેની

टीका—‘दो दंडा’ इत्यादि । द्वौ दण्डौ प्रज्ञप्तौ, तद्यथा—अर्थदण्डश्च अनर्थदण्डश्च । दण्डः प्राणातिपातादिः, अर्थाय=इन्द्रियादिप्रयोजनाय यो दण्डः सोऽर्थदण्डः, तदभिन्नो दण्डोऽनर्थदण्डः । द्वौ राशी प्रज्ञप्तौ, तद्यथा—जीवराशिश्च, अजीवराशिश्च । द्विविधे बन्धने प्रज्ञप्ते, तद्यथा रागबन्धनं च दोषबन्धनं च । पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्रद्वितारं प्रज्ञप्तम् । उत्तराफाल्गुनी नक्षत्रद्वितारं प्रज्ञप्तम् । पूर्वभाद्रपद नक्षत्रद्वितारं प्रज्ञप्तम् । उत्तराभाद्रपद नक्षत्रद्वितारं प्रज्ञप्तम् ॥सू. ८॥

मूलम्—इमीसे णं रयणप्पहाए पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरयियाणं दो पलिओवमाइं ठिई पणत्ता । दोच्चाए पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरइयाणं दो पलिओवमाइं ठिई पणत्ता । दोच्चाए पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरइयाणं दो सागरोवमाइं ठिई पणत्ता । असुरकुमाराणं देवाणं अत्थेगइयाणं दो पलिओवमाइं ठिई पणत्ता । असुरकुमारिंदवज्जियाणं भोमिज्जाणं देवाणं उक्कोसेणं देसूणाइं दो पलिओवमाइं ठिई पणत्ता । असंखिज्जवासाउयसन्निपंचेदिंय तिरिक्खजोणियाणं अत्थेगइयाणं दो पलिओवमाइं ठिई पणत्ता । असंखिज्जवासाउय-

समवाय में दो दो की संख्या का कथन करते हैं—‘दो दंडा पन्नत्ता इत्यादि ।

टीकार्थ—दंड तीर्थंकरों ने दो प्रज्ञप्त किये हैं वे इस प्रकार हैं—एक अर्थदंड और दूसरा अनर्थदंड । राशी दो कही हैं, वे इस प्रकार हैं—एक जीवराशि दूसरी अजीव राशि । बंधन दो प्रकारके कहे हैं, वे ये हैं—एक रागबन्ध और दूसरा द्वेषबन्ध । पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र दो तारोंवाला उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र दो तारोंवाला, पूर्वाभाद्रपद नक्षत्र दो तारोंवाला और उत्तराभाद्रपदनक्षत्र दो तारोंवाला कहा है ॥८॥

संख्यातु कथन करे छे—दो दंडा पन्नत्ता इत्यादि ।

टीकार्थ—तीर्थंकरोंने ६३ छे भनाव्या छे ते आ प्रमाणेछे-पडेदी अर्थ ६३ अने भीजे अनर्थदंड राशी छे भतावी छे-पडेदी छव राशि अने भीछे अणव राशि अ धन छे प्रकारना छे—(१) रागबन्ध अने (२) द्वेषबन्ध पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र छे तारावाणु उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र छे तारावाणु, पूर्वाभाद्रपद नक्षत्र छे तारावाणु, अने उत्तराभाद्रपद नक्षत्र छे तारावाणु दर्शाव्यु छे ॥८॥

ગત્તવકતિય સન્નિમાણુસ્સાણ અત્યેગહ્યાણ દો પલિઓવમાહ ઠિઈ
પણ્ણત્તા ॥ સૂ ૧ ॥

ટીકા—‘ઈમીસે’ ઇત્યાદિ । નૈરયિકાણાં રત્નપ્રમાયાશ્વર્થે પ્રસ્તુત દ્વિપ
વ્યોપમા મધ્યમા સ્થિતિ, તથા દ્વિતીયાયા પૃષ્ઠે પ્રસ્તુતે દ્વિસાગરોપમા મધ્યમા
સ્થિતિર્લેખ્યા । અસુરકુમારેન્દ્ર (ચમરચન્નિ) યર્જિતમધનવાસિનામૌદીચ્યનાગકુમારાદીનાં
‘દેશુણે’ દેશાને કે પલ્લોપમ સ્થિતિ પ્રશ્નતા । હરિર્નર્પરમ્યકચર્પાત્પદ્મામસંગ
યાયુપાં પદ્મન્દ્રિયાણાં તિરસ્થાં માનુષાણાં ચ દ્વિપલ્લોપમા સ્થિતિર્લેખ્યા ॥૧॥

‘ઈમીસે ણ’ ઇત્યાદિ ।

ટીકાર્થ—અત્ત રત્નપ્રમા પૃથિવી મેં કિત્તનેક નારકિયાં કી ઓપે પ્રસ્તર મેં
દો પલ્લોપમ કી મધ્યમ સ્થિતિ કહી ગઈ હૈ । ત્રિતીય પૃથિવી મેં કિત્તનેક
નારકિયોં કી ‘મી’ સ્થિતિ દો પલ્લોપમ કી કહી ગઈ હૈ । ઓર ઇસી ઠિતીય
પૃથિવી મેં કિત્તનેક નારકિયો કી દો સાગરોપમ કી સ્થિતિ કહી ગઈ
હૈ । સો યહ છઠવે પ્રસ્તર કી અપેક્ષા મધ્યમસ્થિતિ કહી હુઈ હૈ ગેસા
જાનના ચાહિયે । અસુરકુમાર દેવોં મેં કિત્તનેક દેવોં કી પલ્લોપમ કી
સ્થિતિ કહી ગઈ હૈ । અસુરકુમારોં કે ચમર ઓર બલિ, હન દો ઇન્દ્રોં
કો છોડકર જો ઉત્તરાર્થ કે નાગકુમાર આદિ મધનવાસી દેવોં કે મૃતા
નદ આદિ નથ ઇન્દ્ર હૈ ઉનકી દેશોન દો પલ્લ કી સ્થિતિ કહી ગઈ
હૈ । અસરુયાતવર્ષ કી આયુષાલે હરિ વર્ષ ઓર રમ્યકચર્પ મેં ઉત્પન્ન
કિત્તનેક ભોગમુમિયાં પદ્મન્દ્રિય તિર્યચોં કી દો પલ્લોપમ કી સ્થિતિ કહી
ગઈ હૈ । ઇમી તરહ અમનયાત વર્ષ કી આયુષાલે ગર્ભજ મંજો પદ્મન્દ્રિય

‘ઈમીસે ણ’ ઇત્યાદિ ।

ટીકાર્થ—અત્ત રત્નપ્રમા પૃથ્વીમાં કેટલાક નારકીઓની શિથિ પ્રસ્તરમાં જો પદ્મોપમની
સ્થિતિ બતાવવામાં આવી છે બીજી પૃથ્વીમાં કેટલાક નારકીઓની સ્થિતિ પદ્મ જો પદ્મો
પમની કહેલ છે અને જો જ બીજી પૃથ્વીમાં કેટલાક નારકીઓની સ્થિતિ જો સાન
શાપમની કહેલ છે તો તે છતાં પ્રસ્તરની અપેક્ષાએ મધ્યમ સ્થિતિ કહેલ છે તેમ
સમજવું અસુરકુમાર દેવોમાં કેટલાક દેવોની પાદોપપમની સ્થિતિ કહેલ છે અસુર
કુમારોના ચમર અને બલિ જો જો છદ્મો સિવાયના ઉત્તરાર્થના નાગકુમાર અથવા
બલનવાસી દેવોના મૃતાનદ અથવા નવ ઇન્દ્રો છે તેમની જો પદ્મથી સહેજ ઓછી
સ્થિતિ બતાવી છે અસપ્તાત વર્ષનાં આયુષ્યવાળા હરિવર્ષ અને ૬૨૫૩ વર્ષનાં
ઉત્પન્ન થયેલ કેટલાક મામમુગિના પદ્મન્દ્રિય તિર્યચોની સ્થિતિ જો પદ્મોપમની કહેલ
છે જો જ પ્રમાણે અસપ્તાત વર્ષનાં આયુષ્યવાળા ગર્ભજ મંજો પદ્મન્દ્રિય જોવા

मूलम्—सोहम्मे कप्पे अत्थेगइयाणं देवाणं दो पलिओवमाइं
ठिई पण्णत्ता । ईसाणे कप्पे अत्थेगइयाणं देवाणं दो पलिओवमाइं
ठिई पण्णत्ता । सोहम्मे कप्पे अत्थेगइयाणं देवाणं उक्कोसेणं दो
सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता । ईसाणे कप्पे देवाणं उक्कोसेणं साहियाइं
दो सागरोमाइं ठिई पण्णत्ता । सणकुमारे कप्पे देवाणं जहण्णेणं दो
सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता । माहिंदे कप्पे देवाणं जहण्णेणं दो
सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता ॥ सू. १० ॥

टीका—‘सोहम्मे’ इत्यादि । सौधर्मे ईशाने च कल्पे केषांचिद् देवानां
द्विसागरोपमा स्थितिः । सौधर्मे कल्पे केषांचिद् देवानामुत्कृष्टतो द्विसागरोपमा
स्थितिः । ईशाने कल्पे तु देवानामुत्कृष्टतः साधिका द्विसागरोपमा स्थितिः
प्रज्ञप्ता । सनत्कुमारे कल्पे देवानां जघन्यतो द्विसागरोपमा स्थितिः : माहेन्द्रे
कल्पे तु देवानां जघन्यतः साधिका द्विसागरोपमा स्थितिरवसेया ॥ मृ. १० ॥

कितनेक मनुष्यों की दो पल्योपम की स्थिति कही गई है । यह स्थिति
भी हरिवर्ष और रम्यक वर्ष क्षेत्र की अपेक्षा कही गई जाननी चाहिये ॥ ९ ॥

‘सोहम्मे कप्पे’ इत्यादि ।

टीकार्थ—सौधर्मकल्प में और ईशानकल्प में कितनेक देवों की दो सागरोपम
की स्थिति कही गई है सो सौधर्मकल्प में कितनेक देवों की उत्कृष्ट स्थिति
दो सागरोपम की है, परन्तु जो दूसरा ईशानकल्प है उस में देवों की स्थिति
दो सागरोपम से कुछ अधिक स्थिति है । सनत्कुमार कल्प में देवों की
जघन्य स्थिति दो सागरोपम से कुछ अधिक है ॥ १० ॥

केटलाक मनुष्ये नी स्थिति जे पल्योपमनी कहेल छ ते स्थिति पणु हरिवर्ष अने
अने रम्यकवर्ष क्षेत्रनी अपेक्षाजे कहेवाभा आवी छ तेम समज्जु ॥ ९ ॥

‘सोहम्मे कप्पे’ इत्यादि ।

टीकार्थ—सौधर्मकल्पमां अने ईशानकल्पमां केटलाक देवोनी जे सागरोपमनी स्थिति
कहेल छ ते सौधर्मकल्पमां केटलाक देवोनी उत्कृष्ट स्थिति जे सागरोपमनी छ. पणु
जे भीणु ईशानकल्प छ तेमा देवोनी स्थिति जे सागरोपमधी थोडी वधारे छ.
सनत्कुमार कल्पमां देवोनी जघन्य स्थिति जे प्रकारनी छ, पणु माहेन्द्रकल्पमां देवोनी
जघन्य स्थिति जे सागरोपमधी थोडी वधारे छ ॥ १० ॥

मूत्रम्—जे देवा सुभ सुभकत सुभवण सुभगध सुभलेस सुभफास
सोहम्मवडिसग विमाण देवत्ताण उवणणा, तेसि ण देवाण उक्को
सेण दो सागरोवमाई ठिई पणत्ता, ते ण देवा ढोह अद्धमासाण
आणमति वा पाणमति वा ऊससति वा नीससति वा, तेसि देवाण
दोहि वाससहस्सेहि आहारहे समुपज्जइ । अत्थेगइया भवसिद्धिया
जीवा जे दोहि भवग्गहणेहि सिद्धिस्सति, बुद्धिस्सति मुच्चिस्सति
परिनिव्वाइस्सति सव्वदुक्खवाणमत करिस्सति ॥ सू ११॥

टीका—‘जे देवा’ इत्यादि । य देवाः शुभ-शुभकान्त-शुभवर्ण-शुभगन्ध-
-शुभलेश-शुभस्पर्श-सौधर्मावतंसकनामकेषु सप्तयु विमानेषु देवत्वेन उत्पन्ना,
त खलु देवा वाङ्माभ्यन्तरिकापुष्पातनिश्वासी इन्द्राभ्यामर्पमासाभ्याम्-मास
नेत्यर्थः । आहारसंज्ञा च तेषां द्विसहस्रवर्षान्तरमुत्पद्यते । य खलु तत्र भवसिद्धिका
जीवाः सन्ति तं द्विमश्वमेणेन सत्स्यन्ति, मात्स्यन्ति, परिनिर्वात्यन्ति
सर्वदुःखानामर्प करिष्यन्ति ॥ सू ११॥

‘जे देवा’ इत्यादि ।

टीकार्थ—जो देव शुभ, शुभकान्त, शुभवर्ण, शुभगन्ध, शुभलेश, शुभस्पर्श
और सौधर्मावतंसक, इन सात विमानों में जो जीव देवरूप से उत्पन्न
होते हैं उनकी स्थिति उत्कृष्टरूप से वो सागरापम की होती है । ये देव
दो पक्षमें अर्थात् एक माह में—वाङ्माभ्यन्तरिक उच्छ्वास निश्वास
लेते हैं । उन देवों को आहार संज्ञा दा हजार वर्ष के अनन्तर उत्पन्न
होती है । जो वहाँ भवसिद्धि जीव होते हैं वे मनुष्य के दो भय
करके सिद्धिगति को प्राप्त करेंगे, आत्मा के अनन्य ज्ञानादिक गुणों का

‘जे देवा’ इत्यादि ।

टीका—शुभ शुभकान्त, शुभवर्ण, शुभगन्ध, शुभलेश, शुभस्पर्श, अने सौधर्माव
त संक, जे सात विमानों में जे एते देव रूपे उत्पन्न जाय छ तेमनी स्थिति उत्कृष्ट रूपे
जे सागरापमनी होय छ ते देवो जे पञ्चवाहियागो जेठवे के मद्दिने—अक्षर तथा
अक्षर उच्छ्वास निश्वास ले छ ते देवाने जे हजार वर्ष जाह जाहार एता उत्पन्न
जाय छ तथा जे भवसिद्धि एव होय छ तेणो मनुष्यना जे बाव करीने सिद्धिगति
प्राप्त करये, आत्माना अनन्य ज्ञानादिक गुणोना उपलोग करये, समस्त

અથ તૃતીયસમવાયાજ્ઞમાહ—

મૂલમ્—તઓ દંડા પળ્ણત્તા, તં જહા—મળદંડે, વયદંડે, કાયદંડે ।
તઓ ગુત્તીઓ પળ્ણત્તા, તં જહા—મળગુત્તી, વયગુત્તી, કાયગુત્તી, ।
તઓ સલ્લા પળ્ણત્તા, તં જહા—માયાસલ્લેણં, નિયાણસલ્લેણં, મિચ્છાદં-
સળસલ્લેણં । તઓ ગારવા પળ્ણત્તા, તં જહા—ઇચ્છીગારવે ણં રસગારવે
ણં સાયોગારવે ણં । તઓ વિરાહણા પળ્ણત્તા, તં જહા—નાળ વિરાહણા,
દંસળ વિરાહણા, ચરિત્તવિરાણા । મિગસિર નક્ખલ્લે તિતારે પળ્ણલ્લે
પુસ્સ નક્ખલ્લે તિતારે પળ્ણલ્લે, જેટ્ઠા નક્ખલ્લે તિતારે પળ્ણલ્લે, અભિઙ્ઠ
નક્ખલ્લે તિતારે પળ્ણલ્લે, સવળ નક્ખલ્લે તિતારે પળ્ણલ્લે, અસ્સિણિ
નક્ખલ્લે તિતારે પળ્ણલ્લે, ભરિણી નક્ખલ્લે તિતારે પળ્ણલ્લે ॥૧૨॥

ટીકા—‘તઓ દંડા’ इत्यादि । दण्डयते=चारित्र्यादिविनाशेन निःसारी
क्रियते आत्मा येनासौ दण्डः, स हि त्रिविधः-मनोदण्डः, वचोदण्डः, कायदण्डश्च ।
दुष्प्रयुक्तेन मनसाऽऽत्मसंबन्धो दण्डः मनोदण्डः, एवमितरात्रपि विज्ञेयौ । त्रिस्रो
गुणतयः-मनोगुणितः, वचोगुणितः, कायगुणितश्चेति । गुणितर्गोपनम्-अशुभप्रवृत्ति-
निरोधपूर्वकं शुभप्रवृत्तौ प्रवर्तनम्, त्रीणि शल्यानि प्रज्ञप्तानि-शल्यं हि शल्यते—

उपभोग करेंगे, समस्तकर्माँ से आत्यंतिक रूप में छूट जावेंगे । तदा
कृतकृत्य हो जावेंगे और समस्तप्रकार के दुःखों का अन्त करेंगे ॥११॥

अब सूत्रकार तृतीय समवाय को प्रकट करते हैं ‘तओ दंडा’ इत्यादि ।

ટીકાર્થ—ચારિત્ર આદિ કો વિનાશ કે દ્વારા નિઃસાર બનાવી જાતી છે
उसका नाम दंड है, यह दंड तीन प्रकार का भगवान् ने कहा है । वे
उसके तीन प्रकार ये हैं—मनोदंड, वचनदंड और कायदंड । गुणित—तीनप्रकार
की है, जैसे—मनोगुणित, वचनगुणित और कायगुणित । शल्य तीन प्रकार के हैं,
कर्मेना आत्यंतिक क्षय कर्से, तथा कृतकृत्य થઈ જશે, અને સમસ્ત પ્રકારના
દુ ખોનો અન્ત લાવશે ॥૧૧॥

હવે સૂત્રકાર ત્રીજી સમવાય પ્રગટ કરે છે—“તઓ દંડા” इत्यादि ।

ટીકાર્થ—ચારિત્ર આદિના વિનાશથી આત્માને જેનાથી નિસાર બનાવી દેવામાં
આવે છે તેનું નામ દંડ છે તે દંડ ત્રણ પ્રકારના ભગવાને બતાવ્યા છે—(૧) મનોદંડ,
(૨) વચનદંડ (૩) કાયદંડ શુદ્ધિ ત્રણ પ્રકારની છે—(૧) મનોશુદ્ધિ, (૨) વચનશુદ્ધિ

મૂલમ્—જે દેવા સુમ સુમકત સુમવળ્લ સુમગધ સુમલેસ સુમફાસ સોહમ્મવડિંસગ વિમાણ દેવત્તાણ ઉવવળ્ણા, તેસિં ણ દેવાણ ઉક્કો સેણ દો સાગરોવમાઈ ઠિઈ પળ્ણત્તા, તે ણ દેવા દોઘ્હ અદ્ધમાસાણ આણમતિ વા પાણમતિ વા ઝસસતિ વા નીસસતિ વા, તેસિં દેવાણ દોહિં વાસસહસ્સેહિ આહારઠે સમુપજ્જહ । અત્થેગઢ્યા મવસિદ્ધિયા જીવા જે દોહિં મવગ્ગહણેહિં સિઝ્ઝિસ્સતિ, બુઝ્ઝિસ્સતિ મુચ્ચિસ્સતિ પરિનિવ્વાહસ્સતિ સવ્વદુક્ખાણમત કરિસ્સતિ ॥ સૂ ૧૧॥

ટીકા--‘જે દેવા’ इत्यादि । य देवाः शुभ-शुभकान्त-शुभवर्ण-शुभगन्ध-शुभलेख-शुभस्पर्श-सौषर्मावतमकनामकेषु सप्तसु विमानेषु देवत्वेन उत्पन्ना, ते खलु देवा बाह्याभ्यन्तरिकावुत्पत्तिनिश्वासी इत्याभ्यर्षमामाभ्याम्-मास नेत्यर्थः । आहारसहा च तेषां द्विसहस्रवर्षान्तररुत्पद्यत । य खलु तत्र भवसिद्धिका जीवा सन्ति ते द्विमवप्रहणेन सेत्स्यन्ति, मास्स्यन्ति, परिनिर्वाप्त्यन्ति सर्वदुःखानामतं करिष्यन्ति ॥ सू ११॥

‘જે દેવા’ इत्यादि ।

ટીકાર્થ—જો દેવ શુભ, શુભકાન્ત, શુભવર્ણ, શુભગંધ, શુભલેખ, શુભસ્પર્શ ઓર સૌષર્માવતમક, इन सात विमानों में जो जीव देवरूप से उत्पन्न होते हैं उनकी स्थिति उत्कृष्टरूप से दो सागरोपम की होती है । ये देव दो पक्षमें अर्थात् एक माह में—बाह्य आभ्यन्तरिक उच्छ्वास निश्वास लेते हैं । उन देवों का आहार संज्ञा या हजार वर्ष के अनन्तर उत्पन्न होती है । जो यहाँ भवसिद्धिक जीव होते हैं वे मनुष्य के दो भव करके सिद्धिगति को प्राप्त करेंगे, आत्मा के अनन्य ज्ञानादिक गुणों का

‘જે દેવા’ इत्यादि ।

ટીકાર્થ—શુભ શુભકાન્ત શુભવર્ણ, શુભગંધ શુભલેખ શુભસ્પર્શ અને સૌષર્માવ તમક, જે સાત વિમાનોમાં જે છતાં દેવ રૂપે ઉત્પન્ન થાય છે તેમની સ્થિતિ ઉત્કૃષ્ટ રૂપે બે સાગરોપમની હોય છે તે-દેવો બે પખવાડિયામાં બેઠકો કે મહિને—બહાર તથા અંદર ઉચ્છ્વાસ-નિશ્વસ લે છે તે-દેવોને બે હજાર વર્ષ બાદ બાહ્યર સહા ઉત્પન્ન થાય છે ત્યાં જે ભવસિદ્ધિક છત્ર હોય છે તેણે મનુષ્યના બે ભવ કરીને સિદ્ધિગતિ પ્રાપ્ત કરશે, આત્માના અનન્ય જ્ઞાનાદિક ગુણોનો ઉપયોગ કરશે, સમગ્ર

भावार्थ—जिम्हक संबंध से आत्मा अपन चारित्र का विनाश कर निस्सार बन जाता है उस का नाम दंड है। दुष्प्रयुक्त मन के संबंध से आत्मा में कर्म वर्गणाओं का जो कर्मरूप से परिणमन होता है इसका नाम मनोदंड है। इसी तरह दुष्प्रयुक्त वचन के द्वारा और दुष्प्रयुक्त काय के द्वारा भी आत्मा को दंड का पात्र होना पड़ता है इसलिये मन वचन और काय के भेद से दंड को तीन प्रकार का कहा गया है। मन वचन और काय का भले प्रकार निरोध करना इसका नाम गुप्ति है। यह गुप्ति भी तीन प्रकार की है—मनोगुप्ति—मन को अशुभ प्रवृत्ति से हटाकर शुभ प्रवृत्ति में लगाना, वचनगुप्ति—वचन को अशुभ प्रवृत्ति से हटाकर शुभ प्रवृत्ति में लगाना अर्थात्—बोलने के प्रत्येक प्रसंग पर या तो वचन का नियमन करना या प्रसंग पाकर मौन धारण कर लेना वचनगुप्ति है। कायगुप्ति—किसी भी चीज के लेने व धरने में अवस्था बैठने, उठने, चढ़ने आदि में कर्तव्य अकर्तव्य का विवेक हो ऐसे शारीरिक व्यापार को नियमन करना ही कायगुप्ति है। गुप्ति का जीवन के निर्माण में बड़ा हाथ है। क्योंकि अनवधान से सुप्ति इसके बिना नहीं मिलती। गुप्ति में मात्र अशुभ प्रवृत्ति से हटकर शुभप्रवृत्ति में प्रवृत्त होना होता है। चारित्र के साथ

छे जयेष्ठा नक्षत्र त्रय तारावाणु छे अश्विनी नक्षत्र त्रय ता। गेवाणु छे अने भरणी नक्षत्र त्रय तारावाणु छे

भावार्थ—जेना संधधर्मी आत्मा पोताना चारित्रना विनाश करने निस्सार भनी जय छे तेनु नाम दंड छे दोषयुक्त मनना संधधर्मी आत्मना कर्मवर्गणाओनु जे कर्मरूपे परिणाम थाय छे, तेनु नम मने दंड छे ओ जरीने दोषयुक्त वचन द्वारा अने दोषयुक्त काया द्वारा पणु आत्मने दंडने पत्र थवु पडे छे तेथी मन, वचन अने कायाना भेदधी दंडना त्रय प्रकार दर्शाव्या छे मन, वचन, अने कायाना सारी रीते निरोध करवो तेने गुप्ति कहे छे। ते गुप्ति पणु त्रय प्रकारनी छे—मनोगुप्ति—मनने अशुभ प्रवृत्तिथी ह्म राखीने शुभ प्रवृत्तिमा जेऽवु वचनगुप्ति—वचनने अशुभ प्रवृत्तिमाथी उटावी लधने शुभ प्रवृत्तिमा जेऽवा, ओटके के ओलवाना हरेड प्रसंगे वाणीनु नियमन करवु के प्रसंगे पात मौन धारण करवु ते वचनगुप्ति छे कवगुप्ति—कौध पणु चीज लेवामा के राखवामा अथवा ओसवा ठठवा, आलवा आदि क्रियामा कर्तव्य अकर्तव्यनो विवेक रहै ओ रीते शारीरिक प्रवृत्तियोनु नियमन करवु ते कायगुप्ति कहेवाय छे जवननिर्वाणुमा गुप्तिने मोटो क्षणे रहै छे कारण के तेना बिना लवम धनमाथी मुक्त छे शकतु नथी गुप्तिमा मात्र अशुभ प्रवृत्तियोथी ह्म रहीने शुभ प्रवृत्तियोमा प्रवृत्त थवानु होय

—वाध्यते अननेति श्रवणम्, तच्च द्रव्यमावमदाहिरिषम् । द्रव्यश्रवणम्=तोमरादि ।
 मावश्रवणं तु—मायाश्रवणं निदानश्रवणं, मिथ्यादर्शनश्रवणं चेति त्रिविधम् । 'ण'
 इति वाक्यालङ्कारे । माया=परब्रह्मणा सैव श्रवणम्=माया श्रवणम् । निदान=
 देवादीनाम् ऋद्धीवद्वा भुक्त्वा ममादि वक्ष्ययादेरनुष्ठानादेता मयासुरित्यध्यवसाय,
 तदेव श्रवणम्=निदानश्रवणम्, तच्च मोक्षफलोच्छिद्यम् । मिथ्यादर्शनम्=अतत्त्वार्थ
 भ्रमदानम्=वदेवश्रवणम्=मिथ्यादर्शनश्रवणम् । त्रीणि गौरवाणि प्रह्वस्तानि, तद्यथा—
 ऋद्धि गौरवम्, रसगौरवम्, साता गौरवम् । 'वं' इति अप्रापि वाक्यालङ्कारे ।
 गौरवम्=मानसोभकपायजनिसमात्मनोऽशुभमावगच्छन्, तच्च वस्तुगतिसंसारपरि-
 भ्रमणद्वय कर्म—कारणं भवति । तत्र ऋद्ध्या=रन्द्रादिपूजासंज्ञया पूजयावायोदि
 पदमाप्ति लक्षणयावाऽभिमानद्वारणगौरवम्=ऋद्धिगौरवम् ऋद्धि—प्राप्त्यभिमानेन
 तदमाप्ति प्रार्थनया च आत्मनोऽशुभमावगौरवम् इत्यर्थः । रसगौरवम्=रसो
 रसनेन्द्रियविषयमनोहमपुरादिलक्षणः, तत्प्राप्त्या गौरवम्—अभिमानकरणम्,
 तदमाप्तिप्रार्थनयाऽऽत्मनोऽशुभमावगौरवम् च रसगौरवम् । सातेन गौरवम्=सात
 गौरवम्=अहमेव सुखीत्यभिमानम् सातप्राप्त्यभिमानेन तदमाप्तिप्रार्थनया च
 आत्मनोऽशुभमावगौरवमित्यर्थः । तिस्रो विराचनाः=स्वप्नना प्रह्वस्त्याः, तद्यथा—
 ज्ञानविराचना, दर्शनविराचना, चारित्रविराचना । ज्ञानस्य विराचना=ज्ञाननिन्दया
 गुर्वादि निहवेन च विराचना । एवमितरे अपि । तत्र दर्शन—सम्पदधनम् दर्श-
 नस्य—मिनप्रवचनादि रोचनलक्षणस्य स्थायिकादौ विराचना=दर्शनविराचना तत्प्रत्य-
 नीकृतानिहवदिरूपा । चारित्रस्य=सामयिकादेर्विराचना=चारित्रविराचना, प्रतादि
 स्वप्ननमित्यर्थः । मृगशिरो नक्षत्र प्रितारं प्रह्वस्तम् । एव पुण्यनक्षत्राऽभिभिच्छ्रव-
 नाश्विनीमरणी नक्षत्राणि प्रिताराणि प्रह्वस्तानि ॥सु १२॥

जैसे—मायाश्रवण, निदानश्रवण और मिथ्यादर्शनश्रवण । तीन गौरव हैं वे
 ये हैं—ऋद्धिगौरव, रस गौरव और साता गौरव । तीन विराचना हैं वे
 ये हैं—ज्ञानविराचना, दर्शनविराचना और चारित्र विराचना । मृगशिरा
 नक्षत्र तीन ताराओं वाला है । पुण्यनक्षत्र तीन ताराओं वाला है । उपेक्षा
 नक्षत्र तीन ताराओं वाला है । अभिभिच्छ्रव नक्षत्र तीन ताराओं वाला है ।
 अश्विननक्षत्र तीन ताराओं वाला है । अश्विनो नक्षत्र तीन ताराओं वाला
 है, भरणी नक्षत्र तीन ताराओं वाला है ।

अने (३) कायगुप्ति शब्द त्रय प्रदर्शनां छे—(१) मायाशब्द, (२) निदान शब्द, अने
 (३) मिथ्या दर्शन शब्द और त्रय छे—(१) ऋद्धिगौरव (२) रसगौरव अने (३) साता
 गौरव । विराचना त्रय छे—(१) ज्ञान विराचना, (२) दर्शन विराचना अने (३)
 चारित्र विराचना । मृगशिरा नक्षत्र त्रय तारावाला छे । पुण्य नक्षत्र त्रय तारावाला

अस्थिर चित्त और लक्ष्य से व्यग्र बना देता है उसी प्रकार ये शल्य भी व्रती को अपने व्रतों की सच्ची आराधना करनेरूपलक्ष्य में अकुशल परिणाम और व्यग्र बना देते हैं। व्रतों को प्राप्त करना और बान है और उन्हें अपने जीवन में उतार लेना और बात है।

शल्यों के सद्भाव में व्रती अपनी मानसिक स्थिति का सन्तुलन खो बैठता है, अतः व्रतों के आराधन के लिये मानसिक स्वास्थ्य ठीक रखना इन शल्यों के अभाव का कार्य है। व्रतों के पालन करने में कपट, ढोंग और ठगने की वृत्ति का बना रहना मायाशल्य है। देवादिभों की ऋद्धियों का अवलोकन कर या सुनकर सा मन में सरूप करना की मुझे भी ब्रह्मचर्य आदि व्रतों के अनुष्ठान से ये ऋद्धियां प्राप्त हों इसका नाम निदानशल्य है। यह निदानशल्य मोक्षरूप फल को उन्छे करने वाला होता है। व्रतों का पालन करते हुए भी सत्यपर श्रद्धा न लाना अथवा असत्यका आग्रह रखना मिथ्यादर्शनशल्य है। मानकषाय और लोभकषाय से जनित अशुभभावों की गुरुता का आत्मा में होना इसका नाम गौरव है। यह गौरव ऋद्धि गौरव, रसगौरव, और सात गौरव के भेद से तीन प्रकार का है। यह गौरव चतुर्गति रूप संसार में परिभ्रमण कराने के कारणभूत कर्म का हेतु होता है। नरेन्द्र आदि द्वारा पूजित होने

કરી નાખે છે એ જ પ્રમાણે એ શલ્ય પણ વ્રતીને પોતાના વ્રતની સાચી આરાધના કરવા રૂપી લક્ષ્યથી અકુશલ પરિણામ યુક્ત તથા વ્યગ્ર બનાવે છે વ્રતોને અગી. કાર કરવા તે એક વાત છે અને તેમને પોતાના જીવનમાં ઉતાવળા તે અલગ વાત છે આ શલ્યેના સદ્ભાવમાં વ્રતી પોતાની માનસિક સ્થિતિનું સમતોલપણ ગુમાવા બેસે છે તેથી વ્રતોની આરાધનાને માટે માનસિક સ્વસ્થ બનવું નાખવું તે શલ્યોનો અભાવ હોય તોજ સલામી શકે છે વ્રતોનું પાલન કરવામાં કપટ ઢોંગ, અને ઠગવાની વૃત્તિ રાખવી તેનું નામ માર્યા શલ્ય છે દેવા દેહોની ઋદ્ધિયોનું અવલોકન કરીને કે તેનું વર્ણન સાલ જીને મનમાં એવો સંકલ્પ કરવો કે મને પણ પ્રલ્લયર્થ આદિ વ્રતો આચરવાથી તે ઋદ્ધિયો પ્રાપ્ત થશે, તેનું નામ નિદાન શલ્ય છે તે નિદાનશલ્ય મોક્ષરૂપ ફળનો ઉન્છેદ કરનાર હોય છે વ્રતોનું પાલન કરતી વખતે પણ સત્ય પર શ્રદ્ધા ન રાખવી, અથવા અસત્યનો આગ્રહ રાખવો તે મિથ્યાદર્શન શલ્ય છે માનકષાય અને લોભકષાયથી ઉપન્ન થયેલ અશુભ ભાવોની ગુરુતાનું આત્મામાં અસ્તિત્વ હોવું તેનું નામ ગૌરવ છે ગૌરવના ત્રણ પ્રકાર છે-ઋદ્ધિગૌરવ રસગૌરવ અને સાત ગૌરવ તે ગૌરવ ચાર ગતિરૂપ સંસારમાં પરિભ્રમણ કરાવવાના કારણરૂપ કર્મોનો હેતુ હોય છે નરેન્દ્ર આદિ દ્વારા પૂજવાનું

સંબધ હોને કે કારણ इसमें अप्रशस्त क्रियाओं का निग्रह करना इष्ट होता है। समिति में सक्रिया में प्रवर्तन मुख्य होता है। तात्पर्य यह है। प्रशस्त क्रियाओं में भी मन का नियमन करना, मौन धारण करना और शारीरिक क्रिया को नियमन के जीवन की रक्षा करना क्रमशः मनोगुप्ति, वचनगुप्ति और कायगुप्ति है। शब्द शब्द का अर्थ कौटा या वैसी कोई तीक्ष्ण वस्तु है—जो शरीर में चुभने पर शरीर को और मन को अस्वस्थ बना देती है, और आत्मा को किसी भी कार्य के करने में एकाग्र नहीं होने देता है अतः आत्मा शब्द से बाधित होता रहता है। ये शब्द तीन हैं—माया, मिथ्या, निदान। ये तीनों भावस्थ हैं। बाँण आदि पात्र चुभने वाली वस्तुएँ द्रव्यशब्द हैं। प्रती बनने के लिये आवश्यक है कि वह इन तीन भावस्थों का सर्वथा परित्याग कर दे। जहाँ प्रती बनने का विधान है वहाँ उस प्रती आत्मा को इन सबका सर्वथा परित्याग करने का उपदेश इसलिये है कि इनका प्रभाव से अवगत भी प्रती के जैसे प्रतीत होता है। अहिंसा आदि प्रती को अंगीकार कर लेने मात्र से कोई सच्चा प्रती नहीं बन जाता है। सच्चा प्रती बनने के लिये उस इन शब्दों का सर्वथा परित्याग कर देना आवश्यक हो जाता है। जैसे—स्वस्थ भी मनुष्य के पैर आदि में लगा हुआ फौटा उसे

છે આસ્ત્રની સાથે સંબધ હોવાને કારણે અપ્રશસ્ત ક્રિયાઓના નિગ્રહ કરવો તે ઉપશાંતિ છે સમિતિમાં સક્રિયામાં પ્રવર્તન મુખ્ય હોય છે તેનું તાત્પર્ય એ છે કે પ્રશસ્ત ક્રિયાઓમાં પણ મનનું નિયમન કરવું, મૌન ધારણ કરવું, અને શારીરિક ક્રિયાઓનું નિયમન કરીને ભૂલોનું રક્ષણ કરવું તે અનુક્રમે મન શુદ્ધિ વચનશુદ્ધિ અને કાયશુદ્ધિ છે શબ્દ એટલે કાટો અથવા એવી જ કેઈ ટીક્ષ્ણ વસ્તુ, કે જે શરીરને વાગતા જ શરીર તથા મનને અસ્વસ્થ કરી નાખે છે, અને કેઈ પણ કાર્ય કરવા માટે આત્માને એકાગ્ર થવા દેતી નથી તેથી આત્મા શબ્દથી બાઢખીલી હોયગ્યા કહે છે તે શબ્દના ત્રણ પ્રકાર છે માયા મિથ્યા, અને નિદાન એ ત્રણે બાવશબ્દ છે બાહ્ય આદિ બહાર લોકાતી વસ્તુઓ દ્રવ્યશબ્દ છે પ્રતી બનવાને માટે તે જરૂરી છે કે તેણે ત્રણે બાવશબ્દોનો સંપૂર્ણ પરિત્યાગ કરવો જોઈએ. જ્યાં પ્રતી બનવાનું વિધાન છે ત્યાં તે પ્રતી આત્માને તે શબ્દોનો સંપૂર્ણરીતે પરિત્યાગ કરવાનો આદેશ એ કારણે છે કે તેના પ્રભાવથી અવગત પણ મતના જેવા હાથે છે માત્ર અહિંસા આદિ મતો અંગીકાર કરવાથી જ કેાઈ સાચી પ્રતી બની જતો નથી સાચી પ્રતી બનાવને માટે તેણે એ શબ્દોનો તરત પરિત્યાગ કરવો બાવશ્યક છે જેમ કે-સ્વસ્થ મનુષ્યના પગ આદિમાં વાગેલા કાટો તેના ચિત્તને અસ્થિર બનાવી નાખે છે અને લક્ષણી ધ્યક્ષ

અસ્થિર ચિત્ત ઔર લક્ષ્ય સે વ્યગ્ર બના દેતા હૈ ડસી પ્રકાર યે શરૂ
મી વ્રતી કો અપને વ્રતોં કી સચી આરાધના કરનેરૂપ લક્ષ્ય મેં અકુશલ
પરિણામ ઔર વ્યગ્ર બના દેતે હૈ। વ્રતોં કો પ્રાપ્ત કરના ઔર બાત
હૈ ઔર ઉન્હેં અપને જીવન મેં ઉતાર લેના ઔર વાત હૈ।

શરૂઓં કે સદ્ભાવ મેં વ્રતી અપની માનસિક સ્થિતિ કા સન્નુલન
સ્વો બૈઠતાં હૈ, અતઃ વ્રતોં કે આરાધન કે લિયે માનસિક સ્વાસ્થ્ય ટીક
રખના ઇન શરૂઓં કે અભાવ કા કાર્ય હૈ। વ્રતોં કે પાલન કરને મેં કપટ,
ઢોંગ ઔર ઠગને કી વૃત્તિ કા બના રહના માયાશલ્ય હૈ। દેવાદિકોં કી
કૃદ્ધિઓં કા અવલોકન કર યા સુનકર સ્વા મન મેં સંકલ્પ કરના કી
મુશ્કેલી મી બ્રહ્મચર્ય આદિ વ્રતોં કે અનુષ્ઠાન સે યે કૃદ્ધિઓં પ્રાપ્ત હોં
ઇસકા નામ નિદાનશલ્ય હૈ। યહ નિદાનશલ્ય મોક્ષરૂપ ફલ કો ઉન્છેદ
કરને વાલા હોતા હૈ। વ્રતોં કા પાલન કરતે હુએ ઓ સત્યપર શ્રદ્ધા ન લાનો
અથવા અસત્યકા આગ્રહ રખના મિથ્યાદર્શનશલ્ય હૈ। માનકષાય ઔર
લોભકષાય સે જનિત અશુભભાવોં કી શુરૂતા કા આત્મા મેં હોના ઇસકા
નામ ગૌરવ હૈ। યહ ગૌરવ કૃદ્ધિ ગૌરવ, રસગૌરવ, ઔર સાત ગૌરવ કે
ભેદ સે ત્રીન પ્રકાર કા હૈ। યહ ગૌરવ ચતુર્ગતિ રૂપ સંસાર મેં પરિભ્રમણ
કરાને કે કારણભૂત કર્મ કા હેતુ હોતા હૈ। નરેન્દ્ર આદિ દ્વારા પૂજિત હોને

કરી નાખે છે એ જ પ્રમાણે એ શલ્ય પણ વ્રતીને પોતાના વ્રતની સાચી આરાધના
કરવા રૂપી લક્ષ્યથી અકુશલ પરિણામ યુક્ત તથા વ્યગ્ર બનાવે છે વ્રતોને અગી-
કાર કરવા તે એક વાત છે અને તેમને પોતાના જીવનમાં ઉતાવળા તે અલગ વાત છે

આ શલ્યેના સદ્ભાવમાં વ્રતી પોતાની માનસિક સ્થિતિનું સમતોલન પણ શુભાવા બેસે
છે તેથી વ્રતોની આરાધનાને માટે માનસિક સ્વસ્થ બગબર નાખવું તે શલ્યોને અભાવ
હોય તોજ સલાવી શકે છે વ્રતોનું પાલન કરવામાં કપટ ઢોંગ, અને ઠગવાની વૃત્તિ રાખવી
તેનું નામ મૂઝા શલ્ય છે દેવા દેકોની કૃદ્ધિઓનું અવલોકન કરીને કે તેનું વર્ણન સલા-
ળીને મનમાં એવો સંકલ્પ કરવો કે મને પણ બ્રહ્મચર્ય આદિ વ્રતો આચરવાથી તે કૃદ્ધિઓ
પ્રાપ્ત થશે, તેનું નામ નિદાન શલ્ય છે તે નિદાનશલ્ય મોક્ષરૂપ ફળનો ઉન્છેદ
કરનાર હોય છે વ્રતોનું પાલન કરતી વખતે પણ સત્ય પર શ્રદ્ધા ન રાખવી, અથવા
અસત્યનો આગ્રહ રાખવો તે મિથ્યાદર્શન શલ્ય છે માનકષાય અને લોભકષાયથી ઉપન્ન
થયેલ અશુભ ભાવોની શુરૂતાનું આત્મામાં અસ્તિત્વ હોવું તેનું નામ ગૌરવ છે ગૌરવના
ત્રણ પ્રકાર છે—કૃદ્ધિગૌરવ રસગૌરવ અને સાત ગૌરવ તે ગૌરવ ચાર ગતિરૂપ સંસારમાં
પરિભ્રમણ કરાવવાના કારણરૂપ કર્મનો હેતુ હોય છે નરેન્દ્ર આદિ દ્વારા પૂજવાનું

रूप अथवा पूज्य आचार्य आदि की पक्षी प्राप्ति होने रूप अभिमान द्वारा अपना गौरव प्रदर्शित करना इमहा नाम ऋद्धिगौरव है। ऋद्धि प्राप्ति के अभिमान से और उसकी अप्राप्ति में अशुभभाव करने से यह ऋद्धिगौरव टोता है। रसना इन्द्रिय के विषयमूल मनोज्ञ मधुर आदि रसों की प्राप्ति में आनन्द मानना और उनकी अप्राप्ति में आत्मा में आकुल व्याकुलरूप अशुभ परिणति करना यह रसगौरव है। 'मैं ही सुखी हूँ' इस प्रकार का अभिमान करना सातगौरव है। इस सातगौरव में अपने को सुखी होने का अभिमान रहता है और दूसरों का ऐसा सुख प्राप्त न हो ऐसी मायना रहनी है। विराघना शब्द का अर्थ है नाश करना। यह निन्दा अथवा निन्द्य से होती है ज्ञान विराघना, दर्शनविराघना और चारित्र्य विराघना, इस प्रकार से यह विराघना तीन प्रकार का है। ज्ञान ही निन्दा करना अथवा ज्ञान के साधनमूल गुणोंदिका का निन्द्य (छिपाना) करना यह ज्ञानविराघना है। क्षाधिक सम्पत्तव आदि की निन्दा या उनके धारकों का निन्द्य करना यह दर्शन विराघना है। सामयिक आदि चारित्र्य की निन्दा करना यात्रा आदि का स्रङ्गन करना इसका नाम चारित्र्यविराघना है। सू० १२।

अथवा पूज्य अथवा आदिनी पक्षी प्राप्ति यवानु अभिमान दशानाने पोतानु औरव प्रदर्शित कृपु तेने ऋद्धिगौरव कहे छे ऋद्धि प्राप्तिना अभिमानधी जने तेनी अप्राप्तिना अशुभ अव करवावो ते ऋद्धिगौरव पेशायव छे स्वादेन्द्रियना निषय ज्ञान मनोज्ञ, मधुर आदि रसोना प्राप्तिना आनन्द भाषुवा जने जेभनी अप्राप्तिभा आत्माभा आकुल व्याकुल जनरा रूप अशुभवृत्ति यवी तेने रसगौरव कहे छे "हूँ व सुखी छु" आ प्रकारनु अभिमान करवु ते सातगौरव छे सात गौरवभा सुधी होवानु पोताने अभिमान कहे छे, जने जेवा सुख जीजने प्रप्त न याव जेवी जावना कहे छे विराघना कोटवे नाश करवो। ते निन्दा अथवा निन्द्यधी-विपरीत तत्व जताववाधी याव छे ज्ञान विराघना दशन विराघना, जने चारित्र्य विराघना, जेवा तेना त्रय प्रकार छे ज्ञाननी निन्दा करवी अथवा ज्ञानदाता अनादिहेतु निन्द्य करवु (वपरीत तत्व जताववु) तेने ज्ञान विराघना कहे छे क्षाधिक सम्पत्तव आदिनी निन्दा अथवा ते धारण करनारनु निन्द्य करवु ते दशन विराघना छे सामयिक आदि चारित्र्यनी निन्दा करवी अथवा मत आदिनु जटन करवु तेने चारित्र्य विराघना कहे छे पस १२॥

मूलम्—इमीसे णं रयणप्पहाए पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरइयाणं
तिणि पलिओवसाइं ठिई पण्णत्ता । दोच्चाए णं पुढवीए नेरइयाणं
उक्कोसेणं तिणिण सागरोवसाइं ठिई पण्णत्ता । तच्चाए णं पुढवीए
नेरइयाणं जहण्णेणं तिणिण सागरोवसाइं ठिई पण्णत्ता । असुरकु-
माराणं देवाणं अत्थेगइयाणं तिणिण पलिओवसाइं ठिई पण्णत्ता ।
असंखिज्जवासाउय सत्तिपंचिदियतिरिक्खजोणियाणं उक्कोसेणं
तिणिण पलिओवसाइं ठिई पण्णत्ता । असंखिज्जवासाउयसत्तिगवभवक्कं-
तियमणुस्साणं उक्कोसेणं तिणिण पलिओवसाइं ठिई पण्णत्ता ।
सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु अत्थेगइयाणं देवाणं तिणिण पलिओवसाइं ठिई
पण्णत्ता । सणकुमार माहिंसेसु कप्पेसु अत्थेगइयाणं देवाणं तिणिण
सागरोवसाइं ठिई पण्णत्ता ॥ सू० १३ ॥

टीका—‘इमीसे णं’ इत्यादि । अस्यां खलु रत्नप्रभाया पृथिव्याम् अस्ति
एकैषां नैरयिकाणा त्रीणि पल्योपमानि स्थितिः ज्ञप्ता । द्वितीयस्या खलु पृथिव्या
नैरयिकाणामुत्कर्षेण त्रीणि सागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । तृतीयस्या खलु
पृथिव्या नैरयिकाणा जघन्येन त्रीणि सागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । असुर-
कुमाराणां देवानामस्त्येकेषा त्रीणि सागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । असं-
ख्येयवर्षायुष्कर्मजिपञ्चन्द्रियतिर्यग्योनिकानामुत्कर्षेण त्रीणि पल्योपमानि स्थितिः

‘इमीसे णं’ इत्यादि ।

टीकार्थ—इस रत्नप्रभा पृथिवी में कितनेक नारकियों की स्थिति तीन
पल्योपम की होती है । द्वितीय पृथिवी में नारकियों की उत्कृष्ट स्थिति तीन
सागरोपम की होती है । तीसरी पृथिवी में नारकियों की जघन्यस्थिति
तीन सागरोपम की है । असुरकुमार देवों में कितनेक असुरकुमार देवों
की तीन पल्योपम की स्थिति है । असंख्यातवर्ष की आयुवाले भोगभूषिता

‘इमीसे णं’ इत्यादि ।

टीकार्थ—आ रत्नप्रभा पृथ्वीमा डेटलाक नारकीओनी उत्कृष्ट स्थिति त्रण पल्योपमनी
होय छे, भील पृथ्वीमा नारकीओनी उत्कृष्ट स्थिति त्रण सागरोपनी होय छे,
त्रील पृथ्वीमा नारकीओनी जघन्य स्थिति त्रण सागरोपमनी छे असुरकुमार
देवोमा डेटलाक असुरकुमार देवोनी त्रण पाल्योपमनी स्थिति छे असंख्य त वर्ष ।

મૂમ્મ- જે દેવા આમકર પમકર આમકરપમકર ચદ ચદાવત
 ચદપ્પમ ચદકત ચદવળ્ણ ચદલેસ ચદજ્જય ચદસિંગ ચદસિહ
 ચદકૂહ ચવુત્તરવહિસગ વિમાણ દેવસાપ્પ ઉવવળ્ણા, તેસિં ણ દેવાણ
 ઉક્કોસેણ તિણિણ સાગરોપમાહ ઠિઈ પળ્ણન્તા, તે ણ તિણ્હ અદ્ધમાસાણ
 આણમતિ વા પાણમતિ વા ઝસસતિ વા નીસસતિ વા, તેસિં ણ દેવાણ
 ઉક્કોસેણ તિહિં વાસસહસ્સેહિં આહારદ્દે સમુપ્પજેહ્મિં । સતેગહ્મયા ભવ
 સિદ્ધિયાં જીવાજે તિહિં ભવગ્ગહ્મણેહિં સિચ્છિસ્સતિ, બુચ્છિસ્સતિ મુચ્છિ
 સ્સતિ પરિનિવ્વાહસ્સતિ, સબ્બદુક્ખાણમંત કરિસ્સતિ ॥૧૪॥

ટીકા—‘જે દેવા’ इत्यादि । ये देवा आमकूर१, पमकूर२, आमकूर
 पमकूर३ चन्द्र४, चन्द्रावर्त५ चन्द्रपम६, चन्द्रकान्त७, चन्द्रवर्ण८, चन्द्रलेह्य९,
 चन्द्रध्वज१०, चन्द्रभृंग११, चन्द्रसृष्ट१२ चन्द्रकूट१३ चन्द्रोत्तरावतसक१४ चन्द्र
 विमानं=एतेषु चतुर्दशसंख्यकेषु विमानेषु देवत्वेन उत्पन्नाः, तेषां तल्ल
 देवानामुत्कर्षेण त्रीणि सागरोपमानि स्थिति मवप्ता, ते तल्ल देवाः ‘तिण्ण
 अद्धमासाण’ त्रयाणामर्धमासानाम्-ते आनन्ति वा प्राणन्ति वा उच्छ्वसन्ति वा,
 हे । अतः यहाँ जो तीन सागरोपम की स्थिति कितनेक देवों की प्रकट
 की गई है वह मध्यमस्थिति की अपेक्षा कहीं गई जाननी चाहिए ॥सू० १३॥

‘જે દેવા’ इत्यादि ।

ટીકાર્થ—જો દેવ આમકર, ૧ પમકર, ૨ આમકર-પમકર ૩ ચન્દ્ર, ૪ ચન્દ્રા
 વર્ત, ૫ ચન્દ્રપમ, ૬ ચન્દ્રકાન્ત, ૭ ચન્દ્રવર્ણ, ૮ ચન્દ્રલેહ્ય, ૯ ચન્દ્રધ્વજ, ૧૦
 ચન્દ્રભ્રંગ ૧૧ ચન્દ્રસૃષ્ટ ૧૨ ચન્દ્રકૂટ ૧૩ ઓર ચન્દ્રોત્તરાવતસક ૧૪ વિમાનો
 મેં દેવકી પર્યાપ્ત સે ઉત્પન્ન હોતે હે, સન દેવોં કી ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ ત્રીન
 સાગરોપમ કી હોતી હે । એ દેવ એક માહ કે અન્ત મેં યાદ આમ્યન્ત

શાપમથી યોદી વધારે છે તેથી બહી ને કેટલાક દેવોની સ્થિતિ ત્રણ સાગર
 શાપમની પ્રગટ કરવામાં આવેલ છે તે મધ્યમ સ્થિતિની અપેક્ષાએ દેવોમાં આવેલ
 છે એમ સમજી લેવું ॥સૂ ૧૩॥

ટીકાર્થ—‘જે દેવા’ इत्यादि ।

ટીકાર્થ—જે દેવો બાકા ૪૧ ૧ પ્રકા ૪૨ ૨ બાકા ૪૨-પ્રકા ૪૨ ૩ ચન્દ્ર, ૪ ચન્દ્રાવર્ત ૫,
 ચન્દ્રપમ, ૬ ચન્દ્રકાન્ત ૭ ચન્દ્રવર્ણ ૮ ચન્દ્રલેહ્ય, ૯ ચન્દ્રધ્વજ, ૧૦ ચન્દ્રમગ,
 ૧૧ ચન્દ્રસૃષ્ટ, ૧૨ ચન્દ્રકૂટ, ૧૩ અને ચન્દ્રોત્તરાવતસક ૧૪ જે વિમાનોમાં દેવની પચાસથી
 પેદા થાય છે, તે દેવોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ ત્રણ સાગરોપમની ક્રોધ છે તે દેવો દોહ

तेषां खलु देवानामुत्कर्षेण त्रिभिर्वर्षसहस्रैः 'आहारदे' आहारार्थः—आहारसंज्ञेति समुत्पद्यते। सन्त्येके भगमिद्विका जीवा ये त्रिभिर्भवग्रहणैः सेत्स्यन्ति भोत्रयन्ति मोक्षयन्ति, परिनिर्वास्यन्ति. सर्वदुःखानामन्तं करिष्यन्ति ॥१४॥

अथचतुर्थसमवायाद्गमाह—

मूलम्—चत्वारिकषाया पणत्ता, तं जहा—कोहकसाए, माणकसाए, मायाकसाए, लोभकसाए। चत्वारि ज्ञाणा पणत्ता, तं जहा—अट्ट-ज्झाणे, रुद्धज्झाणे, धम्मज्झाणे, सुक्खज्झाणे,। चत्वारि विकहाओ पणत्ताओ, तं जहा—इत्थिकहा, भत्तकहा, रायकहा, देसकहा। चत्वारि सण्णा पणत्ता—तं जहा—आहारसण्णा, भयसण्णा, मेहुणसण्णा, परिग्गहसण्णा। चउव्विहे बंधे पणत्ते—तं जहा—पगइबंधे, ठिइबंधे, अणुभावबंधे, पएसबंधे। चउगाउए जोयणे पण्णणे। अणुराहानवखत्ते चउत्तारे पणत्ते। पुव्वासाढानक्खत्ते चउत्तारे पणत्ते। उत्तरासाढानक्खत्ते चउत्तारे पणत्ते ॥ १५ ॥

टीकार्थ—'चत्वारि कषाया' इत्यादि। चत्वारः कषायाः प्रज्ञप्ताः तद्यथा—क्रोधकषायः, मानकषायः, मायाकषायः लोभकषायः। चत्वारि ध्यानानि—प्रज्ञप्तानि तद्यथा—अर्तध्यानम्, रौद्रध्यानम्, धर्मध्यानम्, शुक्रध्यानम्। ध्यानं हि—अन्तर्मुद्घर्त्तं यावच्चि

रिक श्वासोच्छ्वास ग्रहण करते हैं। उन देवों को आहारसंज्ञा तीन हजार वर्ष के बाद उत्पन्न होती है। उनमें कितनेक देव ऐसे भी होते हैं जो भव सिद्धि होते हैं। वे तीन भव करके सिद्धिगति को प्राप्त करेंगे, आत्मा के अनंत ज्ञानादिक गुणों का भोग करेंगे, समस्त कर्मों से आत्यंतिक रूप में छूट जावेंगे। तथा कृतकृत्य बन जावेंगे और समस्त प्रकार के दुःखों का अन्त करने वाले होंगे ॥सू० १४॥

भासने अन्ते अहर तथा णडार श्वासोच्छ्वास ग्रहण करे छे. ते देवाने त्रयु डअर वर्ष णाह आहार संज्ञा उत्पन्न थाय छे तेमनाभाथी डेटवाक देवा जेवा डोय छे डे जे अवसिद्धि डोय छे, तेज्जा त्रयु अव कराने सिद्धि गति प्राप्त करथे, आत्मानाअनंत ज्ञानादिक गुणोने उपभोग करथे, समस्त कर्मोने आन्य तिक रीते क्षय करथे, कृतकृत्य थाने समस्त प्रकारना दु जेाने अंत करनार थथे ॥सू० १४॥

મહાસા । અસંલપયવર્ણાયુષ્સંશિર્ગર્ભયુત્ક્રાંતિક્રમનુપ્યાણામુત્કર્ષેણ પ્રીણિ પર્યો-
પમાનિ સ્થિતિ મહાસા દત્તકુરુત્તરકુરુમમનામસંભ્યેયવર્ણાયુષાં પશ્ચેન્દ્રિયવિરચાં
મનુપ્યાણાં ચ ઉત્કર્ષાં પ્રિ પર્યોપમા સ્થિતિર્જિજ્ઞેયત્યયઃ । સૌષર્મશાનેષુ અસ્તિ એકેષાં
દેવાનાં પ્રીણિ પર્યોપમાનિ સ્થિતિઃ મહાસા । સનત્કુમારમાહેન્દ્રેષુ કલ્પેષુ અસ્ત્યે
કેષાં દેવાનાં પ્રીણિ સાગરોપમાનિ સ્થિતિ મહાસા ॥૧૩॥

સહી પશ્ચેન્દ્રિય તિર્યમ્ભતિ કે જીવાંની ઉત્કૃષ્ટસ્થિતિ ત્રીણપર્યોપમની કહીતી
હે । હસો તરહ અસસપાતર્ણની આયુષાલે મોગમૂમિયા (મકર્મમૂમિ) ગર્ભજ
સહી મનુપ્યાંની મી ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ ત્રીણ પર્યોપમની હે । સૌષર્મ જ્ઞાન
દેવલોકોં મેં કિત્તનેક દેવોંની ત્રીણ પર્યોપમની સ્થિતિ કહી ગઈ
હે । સનત્કુમાર માહેન્દ્રકલ્પોં મેં કિત્તનેક દેવાની ત્રીણ સાગરોપમ
ની સ્થિતિ કહી ગઈ હે ।

ભાષાર્થ—પહેલી પૃથ્વી મેં નારકિયોંની અધન્યસ્થિતિ દશાઠનાર
ર્ણની ઓર ઉત્કૃષ્ટસ્થિતિ એક સાગરોપમની કહી ગઈ હે । પર યહાં
જો કિત્તનેક નારકિયોંની સ્થિતિ ત્રીણ પર્યોપમની કહી ગઈ હે વહ
મધ્ય સ્થિતિ કો લક્ષ્ય મેં રચ્ચકર કહી ગઈ હે । દુસરી પૃથ્વી મેં
ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ ત્રીણ સાગરોપમની હે વહી ત્રીસરી પૃથ્વી મેં અધન્ય
હે । ત્રીસરી પૃથ્વી મેં ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ સાતસાગરોપમની હે । અસુર
કુમાર દેવોં મેં જો કિત્તનેક દેવોંની સ્થિતિ યહાં ત્રીણ પર્યોપમની
કહી ગઈ હે વહ મધ્યમ સ્થિતિ કો અપેક્ષા કથનની હે । વ્યોંની
અસુરકુમારોંની સ્થિતિ એક સાગરોપમ ઓર એક સાગરોપમ સે કુછ

આમુ વવાળા ભોગમૂમિયા સહી પશ્ચેન્દ્રિય તિર્ગ્મ્ય યોનિના લલોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ
ત્રણ પર્યોપમની હોય છે એ જ પ્રમાણે અસ જ્યાવ વર્ણના આમુવવાળા ભોગમૂ
મિયા મળ જ સહી મનુષ્યોની પણ ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ ત્રણ પર્યોપમની છે સૌષર્મ
અને ઇશાન દેવલોકના ડેટલાક દેવોની ત્રણ પર્યોપમની સ્થિતિ દશોત્રી છે સનત્કુમાર
અને માહેન્દ્ર કલ્પોમાં ડેટલાક દેવોની પણ સાગરોપમની સ્થિતિ બતાવી છે

ભાષાર્થ—પહેલી પૃથ્વીમાં નારકીઓની અધન્ય સ્થિતિ હસ દશાઠ વર્ણની અને
ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ એક સાગરોપમની કહેલ છે પણ અહીં જે ડેટલાક નારકીઓની
સ્થિતિ ત્રણ પર્યોપમની દશોત્રી છે તે મધ્યમ સ્થિતિને ધ્યાનમાં લઈને દશોત્રેલ
છે ત્રીજી પૃથ્વીમાં ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ ત્રણ સાગરોપમની છે, એ જ ત્રીજી પૃથ્વીમાં
અધન્ય છે ત્રીજી પૃથ્વીમાં ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ સાત સાગરોપમની છે અસુરકુમાર દેવો
માંના ડેટલાક દેવોની સ્થિતિ અહીં જે ત્રણ પર્યોપમની બતાવી છે તે મધ્યમ
સ્થિતિનો અપેક્ષાએ કહેલ છે કારણ કે અસુરકુમારોની સ્થિતિ એક સાગરોપમ અને

અધિક કહી ગઈ છે. ભોગભૂમિ કે ઉત્તમ મધ્યમ ઓર જઘન્ય કી અપેક્ષા ત્રણ ભેદ છે. જઘન્ય ભોગભૂમિ મેં એક પલ્યોપમ કી. મધ્યમ-ભોગભૂમિ મેં દો પલ્યોપમ કી ઓર ઉત્કૃષ્ટ ભોગભૂમિ મેં ત્રણ પલ્યોપમ કી ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ હોતી છે. મો દેવકુરુ ઓર ઉત્તર કુરુ મેં તિર્યચ્છો ઓર મનુષ્યો કી યહ સ્થિતિ હોતી છે. વિદેહક્ષેત્ર મેં મેરુ ઓર નીલ પર્વત કે વીચ કા અર્ધચન્દ્રાકાર ભાગ, કિ જિસકી પૂર્વપશ્ચિમ સીમા વહાં કે દો પર્વતોં સે નિશ્ચિત હોતી છે વહ ઉત્તરકુરુ કહલાતા છે. ઓર મેરુ તથા નિષધ પર્વત કે વીચ કા વૈસા હી અર્ધચન્દ્રાકાર ભાગ દેવકુરુ કહલાતા છે. દેવકુરુ ઓર ઉત્તરકુરુ બે દોનો ક્ષેત્ર વિદેહ ક્ષેત્ર કે હી ભાગ હૈં. પરન્તુ ઉન ક્ષેત્રોં મેં યુગલિયોં કી વસ્તી હોને સે બે ભિન્નરૂપ સે જાને જાતે હૈં. સૌધર્મ ઓર ઈશાન કલ્પ મેં દેવોં કી ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ દો સાગરોપમ કી ઓર દો સાગરોપમ સે કુછ અધિક કી કહી હુઈ છે. અતઃ યહાં જો ત્રણ પલ્યોપમ કી સ્થિતિ કહી હુઈ છે વહ મધ્યમસ્થિતિ કહી હૈં. જઘન્યસ્થિતિ યહાં એક પલ્યોપમ કી ઓર એક પલ્યોપમ સે કુછ અધિક કી છે. સનત્કુમાર ઓર માહેન્દ્રકલ્પ મેં ઉત્કૃષ્ટસ્થિતિ ક્રમશઃ સાત સાગરોપમ કી ઓર સાતસાગરોપમ સે કુછ અધિક કી છે. ઓર જઘન્યસ્થિતિ દો સાગરોપમ કી ઓર દો સાગરોપમ સે કુછ અધિક કી

એક સાગરોપમથી થોડી વધારે દર્શાવેલ છે ભોગભૂમિના ઉત્તમ, મધ્યમ અને જઘન્યની અપેક્ષાએ ત્રણ ભેદ છે જઘન્ય ભોગભૂમિમા એક પલ્યોપમની, મધ્યમ ભોગભૂમિમા બે પલ્યોપમની અને ઉત્કૃષ્ટ ભોગભૂમિમા ત્રણ પલ્યોપમની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ હોય છે. દેવકુરુ અને ઉત્તરકુરુમાં તિર્યચ્છો અને મનુષ્યોની આ સ્થિતિ હોય છે. વિદેહ ક્ષેત્રમાં મેરુ અને નીલ પર્વતની વચ્ચેનો અર્ધચન્દ્રાકાર ભાગ કે જેની પૂર્વ પશ્ચિમ સીમા ત્યાંના બે પર્વતોથી નિશ્ચિત થાય છે, તેને ઉત્તર કુરુ કહે છે અને મેરુ તથા નિષધ પર્વતની વચ્ચેનો એવો જ અર્ધચન્દ્રાકાર ભાગ દેવકુરુ કહેવાય છે. દેવકુરુ અને ઉત્તરકુરુ એ બંને ક્ષેત્રો વિદેહ ક્ષેત્રના જ ભાગ છે પણ તે ક્ષેત્રોમાં યુગલિયોની વસ્તી હોવાથી તેમને ભિન્ન રૂપે ઓળખવામાં આવે છે સૌધર્મ અને ઇશાન કલ્પમાં દેવોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ બે સાગરોપમની અને બે સાગરોપમથી થોડી વધારે બતાવેલ છે. તેથી અહીં જે ત્રણ પલ્યોપમની સ્થિતિ કહેવામાં આવી છે તે મધ્યમ સ્થિતિ કહેલ છે. તથા જઘન્ય સ્થિતિ એક પલ્યોપમની અને એક પલ્પમથી થોડી વધારે છે સનત્કુમાર અને માહેન્દ્રકલ્પમાં ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ ક્રમશઃ સાત સાગરોપમની અને સાત સાગરોપમથી થોડી વધારે છે, અને જઘન્ય સ્થિતિ બે સાગરોપમની અને બે સાગરોપમથી થોડી વધારે છે.

મૂલ્ય- જે દેવા આમકર પમકર આમકરપમકર ચદ ચદાવત
 ચદપ્પમ ચદકત ચદવળ્લણ ચદલેસ ચદજ્જય ચદસિંગ ચદસિદ્ધ
 ચદકૂઢ ચદુત્તરવડિસગ વિમાણ દેવસાણ ઉચ્ચવળ્લા, તેસિં ણ દેવાણ
 ઉક્કોસેણ તિણિણસાગરોવમાઈ ઠિઈ પળ્લણ્ણા, તે ણ તિણ્ણ અદ્ધમાસાણ
 આણમતિ વા પાણમતિ વા ઊસસતિ વા નીસસતિ વા, તેસિં ણ દેવાણ
 ઉક્કોસેણ તિહિં વાસસહસ્સેહિં આહારદ્ધે સમુપ્પજ્ઞેઈ । સતેગઈયા મવ
 સિદ્ધિયાં જીવાજે તિહિં મવગ્ગહણેહિં સિજ્ઞિસસતિ, બુજ્ઞિસસતિ મુધ્ધિ
 સસતિ પરિનિવ્વાઈસસતિ, સઞ્ચદુક્ખાણમત કરિસસતિ ॥૧૪॥

ટીકા—‘જે દેવા’ इत्यादि । ये देवा आमकूर१, ममकूर२, मामकूर
 रममकूर३ चन्द्र४, चन्द्रावर्त५ चन्द्रमम६, चन्द्रकान्त७, चन्द्रवर्ण८, चन्द्रलेइय९,
 चन्द्रध्वज१०, चन्द्रभृग११, चन्द्रसृष्ट१२ चन्द्रकूट१३ चन्द्रोत्तरावतसक१४ चन्द्र
 विमानं=एतेषु चतुर्वक्षसख्यकेषु विमानेषु देवत्वन उत्पन्ना, तेषां सुख
 दवानामुत्कर्षेण प्राणि सागरापमानि स्थिति प्रकृता, ते सुख देवाः ‘तिण्ण
 अद्धमासाण’ व्रयाणामर्धमासानाम ते आनन्ति वा प्राणन्ति वा उच्छ्वसन्ति वा,
 है । अतः यहाँ जो तीन सागरोपम की स्थिति क्लितनेक देवों की प्रकट
 की गई है वह मध्यमस्थिति की अपेक्षा कहीं गई जाननी चाहिए ॥सू० १३॥
 ‘जै देवा’ इत्यादि ।

ટીકાર્થ—જો દેવ આમકર, ૧ મમકર, ૨ આમકર—મમકર ૩ ચન્દ્ર, ૪ ચન્દ્રા
 વર્ત, ૫ ચન્દ્રમમ, ૬ ચન્દ્રકાન્ત, ૭ ચન્દ્રવર્ણ, ૮ ચન્દ્રલેહ્ય, ૯ ચન્દ્રધ્વજ, ૧૦
 ચન્દ્રભૃગ ૧૧ ચન્દ્રસૃષ્ટ ૧૨ ચન્દ્રકૂટ ૧૩ ઓર ચન્દ્રોત્તરાવતસક ૧૪ વિમાનો
 મેં દેવકી પર્યાય સે ઉત્પન્ન હોતે હે, ઊન દેવોં કી ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ ત્રીન
 સાગરોપમ કી હોતી હ । એ વંશ હેઠ માદ્ કે અન્ત મેં વાચ્ય આમ્યન્ત

૧.૫મથી થોડી વધારે છે તેથી અહીં જે કેટલાક દેવોની સ્થિતિ ત્રણ સાગરોપમની પ્રમટ કરવામાં આવેલ છે તે મધ્યમ સ્થિતિની અપેક્ષાએ દેવોમાં આવેલ છે એમ સમજી લેવું ॥સૂ. ૧૩॥

ટીકાર્થ—‘જે દેવા’ इत्यादि ।

ટીકાર્થ—જે દેવો આમ કર, ૧ મમ કર, ૨ આમ કર—મમ કર, ૩ ચન્દ્ર, ૪ ચન્દ્રાવર્ત ૫,
 ચન્દ્રમમ, ૬ ચન્દ્રકાન્ત ૭ ચન્દ્રવર્ણ ૮ ચન્દ્રલેહ્ય ૯ ચન્દ્રધ્વજ, ૧૦ ચન્દ્રભૃગ
 ૧૧ ચન્દ્રસૃષ્ટ, ૧૨ ચન્દ્રકૂટ ૧૩ અને ચન્દ્રોત્તરાવતસક ૧૪એ વિમાનોમાં દેવની ૫મથી
 વેળા થાય છે, તે દેવોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ ત્રણ સાગરોપમની હોય છે તે દેવો દોઢ

तेषां खलु देवानामुत्कर्षेण त्रिभिर्वर्षसहस्रैः 'आहारदे' आहारार्थः—आहारसंज्ञेति समुत्पद्यते। सन्त्येके भयमिद्विका जीवा ये त्रिभिर्भवग्रहणैः सेत्स्यन्ति भोत्रयन्ति मोक्षयन्ति, परिनिर्वास्यन्ति. सर्वदुःखानामन्तं करिष्यन्ति ॥१४॥

अथचतुर्थसमवायाद्ब्रूमाह—

मूलम्—चत्वारिकपाया पणत्ता, तं जहा—कोहकसाए, माणकसाए, मायाकसाए, लोभकसाए। चत्वारि ज्ञाणा पणत्ता, तं जहा—अट्ट-ज्झाणे, रुद्धज्झाणे, धम्मज्झाणे, सुक्खज्झाणे,। चत्वारि विकहाओ पणत्ताओ, तं जहा—इत्थिकहा, भत्तकहा, रायकहा, देसकहा। चत्वारि सण्णा पणत्ता—तं जहा—आहारसण्णा, भयसण्णा, मेहुणसण्णा, परिग्गहसण्णा। चउव्विहे बंधे पणत्ते—तं जहा—पगइबंधे, ठिइबंधे, अणुभावबंधे, पएसबंधे। चउगाउए जोयणे पणणे। अणुराहानवखत्ते चउत्तारे पणत्ते। पुव्वासाढानवखत्ते चउत्तारे पणत्ते। उत्तरासाढानवखत्ते चउत्तारे पणत्ते ॥ १५ ॥

टीकार्थ—'चत्वारि कपाया' इत्यादि। चत्वारः कपायाः प्रज्ञायाः तद्यथा—क्रोधकपायः, मानकपायः, मायाकपायः, लोभकपायः। चत्वारि ध्यानानि—प्रज्ञप्तानि तद्यथा—अर्तध्यानम्, रौद्रध्यानम्, धर्मध्यानम्, शुद्धध्यानम्। ध्यानं द्वि—अन्तर्मुहूर्तं यावच्चि

रिकं श्वासोच्छ्वासं ग्रहणं करते हैं। उन देवों को आहारसंज्ञा तीन हजार वर्ष के बाद उत्पन्न होती है। उनमें कितनेक देव ऐसे भी होते हैं जो भव सिद्धिक होते हैं। वे तीन भव करके सिद्धिगति को प्राप्त करेंगे, आत्मा के अनंत ज्ञानादिक गुणों का भोग करेंगे, समस्त कर्मों से आत्यंतिक रूप में छूट जावेंगे। तयो कृतकृत्य बन जावेंगे और समस्त प्रकार के दुःखों का अन्त करने वाले होंगे ॥सू० १४॥

भासने अन्ते अ हर तथा णहार श्वासोच्छ्वासं ग्रहणं करे छे. ते देवाने त्रयुं हजार वर्षं भाद आहार संज्ञा उत्पन्न थाय छे तेभनामाथी डेटलाक देवा ओवा डोय छे डे ने अवसिद्धिक डोय छे, तेओ त्रयुं अव करीने सिद्धि गति प्राप्त करशे, आत्मानाअनंत ज्ञानादिक गुणोने उपभोग करशे, समस्त कर्मोने आत्यंतिक रीते क्षय करशे, कृतकृत्य थयने समस्त प्रकारना दु.ओने अंत करनार थशे ॥सू. १४॥

મૂમ્મ- જે દેવા આમકર પમકર આમકરપમકર ચદ ચદાવત
 ચદપ્પમ ચદકત ચદવણ્ણ ચદલેસ ચદજ્ઞાય ચદસિંગ ચદસિદ્ધ
 ચદકૂઢ ચદુત્તરવહિસગ વિમાણ દેવત્થાપ્પ ઉવવણ્ણા, તેસિં ણ દેવાણ
 ઉક્કોસેણ તિણિણ સાગરોવમાહ ઠિઈ પણ્ણત્તા, તે ણ તિણ્ણ અદ્ધમાસાણ
 આણમતિ ઘા પાણમતિ ઘા ઝસસતિ ઘા નીસસતિ ઘા, તેસિં ણ દેવાણ
 ઉક્કોસેણ તિહિં ઘાસસહસ્સેહિં આહારદ્ધે સમુપ્પજેહ્મ । સતેગહ્મયા ભવ
 સિદ્ધિયા જીવાજે તિહિં ભવગ્ગાહ્મણેહિં સિઙ્ગિસ્સતિ, બુઙ્ગિસ્સતિ મુઘ્ધિ
 સ્સતિ પરિનિવ્વાહિસ્સતિ, સઠ્ઠવદુક્ખાણમત કરિસ્સતિ ॥૧૪॥

ટીકા—‘જે દેવા’ इत्यादि । ये देवा, आमकूर १, प्रमकूर २, आमकूर
 प्रमकूर ३ चन्द्र ४, चन्द्रावर्त ५ चन्द्रप्रम ६, चन्द्रकान्त ७, चन्द्रवर्ण ८, चन्द्रलेह्य ९,
 चन्द्रध्वज १०, चन्द्रभृंग ११, चन्द्रसृष्ट १२ चन्द्रकूट १३ चन्द्रोत्तरावतसक १४ चन्द्र
 विमानं=एतेषु चतुर्दशसंख्यकेषु विमानेषु देवत्वन उत्पन्ना, तेषां स्वच्छ
 देवानामुत्कर्षेण त्रीणि सागरापमानि स्थिति मङ्गला, ते स्वच्छ देवाः ‘तिष्ठ
 अद्धमासाण’ त्रयाणामर्धमासानाम ते मानन्ति वा माणन्ति वा उच्छ्वसन्ति वा,
 है । अतः यहाँ जो तीन सागरोपम की स्थिति कितनक द्रव्यों की प्रकट
 की गई है वह मध्यमस्थिति की अपेक्षा कही गई जाननी चाहिये ॥सू० १३॥

‘જે દેવા’ इत्यादि ।

ટીકાર્થ—જો દેવ આમકર, ૧ પ્રમકર, ૨ આમકર—પ્રમકર ૩ ચન્દ્ર, ૪ ચન્દ્રા
 વર્ત, ૫ ચન્દ્રપ્રમ, ૬ ચન્દ્રકાન્ત, ૭ ચન્દ્રવર્ણ, ૮ ચન્દ્રલેહ્ય, ૯ ચન્દ્રધ્વજ, ૧૦
 ચન્દ્રભૂંગ ૧૧ ચન્દ્રસૃષ્ટ ૧૨ ચન્દ્રકૂટ ૧૩ ઓર ચન્દ્રાવરાવતસક ૧૪ વિમાનો
 મેં દેવકી પર્વાય સે ઉત્પન્ન હોતે હે, ઊન દ્રવ્યો કી ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ ત્રીન
 સાગરોપમ કી હોતી હ । એ દેવ હેઠ માહ કે અન્ત મેં યાદ્ય આમ્યન્ત

શાપમઘી ઘોરી વધાય ॥ તેથી અહીં જે કેટલાક દેવોની સ્થિતિ ત્રણ સાગર
 શાપમની પ્રગટ કરવામા આવેલ છે તે મધ્યમ સ્થિતિની અપેક્ષાએ ઉદ્દેશમા આવેલ
 ॥ એમ સમજી લેવું ॥સૂ. ૧૩॥

ટીકાર્થ—‘જે દેવા’ इत्यादि ।

ટીકાર્થ—જે દેવો આમ કર ૧ પ્રમ કર ૨ આમ કર—પ્રમ કર, ૩ ચન્દ્ર, ૪ ચન્દ્રાવર્ત ૫,
 ચન્દ્રપ્રમ ૬ ચન્દ્રકાન્ત, ૭ ચન્દ્રવર્ણ ૮ ચન્દ્રલેહ્ય, ૯ ચન્દ્રધ્વજ, ૧૦ ચન્દ્રમઝ,
 ૧૧ ચન્દ્રસૃષ્ટ, ૧૨ ચન્દ્રકૂટ, ૧૩ અને ચન્દ્રોત્તરાવતસક ૧૪એ વિમાનામાં દેવની પધોઘી
 વેળા થાય છે તે દેવોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ ત્રણ સાગરોપમની હોય છે તે દેવો દેહ

भाववधे' 'पणसंवधे' प्रदेगवन्धः=सकषायजोवेन मनोवागादिद्वारेण क्रियाविशेषस्य कर्त्रा भिन्नभिन्नस्वभावानां कर्मपुद्गलानां स्वभावानुसारं तत्तत्परिमाणभागेन संवन्धः=प्रदेगवन्धः, इति चतुर्विधो वन्धः । 'चउगाउए' चतुर्गव्यूत योजनं प्रज्ञप्तम् क्रोशचतुष्टयस्य योजनं भवति । अनुराधानक्षत्रं चतुस्तारं प्रज्ञप्तम् । पूर्वाषाढानक्षत्रं चतुस्तारं प्रज्ञप्तम् । उत्तराषाढानक्षत्रं चतुस्तारं प्रज्ञप्तम् ॥१५॥

योजनं कहा गया है । अनुराधानक्षत्र चार ताराओं वाला, पूर्वाषाढा नक्षत्र चार ताराओं वाला, और उत्तराषाढानक्षत्र चार ताराओं वाला कहा गया है ।

भावार्थ—चारित्र्यरूप आत्मपण्डितों में अनिर्मलता का नाम ही कषाय है । कषायमोह के उदय से क्रोध, मान, माया और लोभ, ये चार कषायें उत्पन्न होती हैं । मिथ्यात्व गुणस्थान से लेकर यह कषाय-न्यूनाधिक्य में दूसरे गुणस्थान तक पाई जाती है । आगे के गुणस्थानों में या तो चारित्र्यमोहनीय का उदय नहीं रहता या चारित्र्यमोहनीय कर्म ही नहीं रहता इसलिये आगे यह नहीं पाई जाती । ध्यान शब्द का अर्थ है अन्तर्मुहूर्त तक चित्त की एकाग्रता । उत्तमसहनन वालों के यह चित्त की एकाग्रता प्रशस्तरूप में रहती है और इनके अनिरिक्त जीवों में अप्रशस्तरूप में रहती हैं । प्रशस्त रूप ध्यान में ही संसार और निर्जरा का हेतु होता है, अप्रशस्त ध्यान नहीं इसीलिये ध्यान के ये चार भेद किये हैं—आर्त्तध्यान, रौद्रध्यान, और शुक्लध्यान । ज्ञान नाम दुःख का है, जिसके होने में दुःख का उगम अथवा तीव्रता निमित्त हो या

भतांयो छे अनुराधा नक्षत्र चार ताराओ वाणु पूर्वाषाढा नक्षत्र चार ताराओ वाणु, अने उत्तराषाढा नक्षत्र चार ताराओवाणु भतांयुं छे

भावार्थ—चारित्र्य आत्मपण्डितों में अनिर्मलता का नाम ही कषाय है । कषायमोहना उदयशी क्रोध, मान माया अने लोभ, ये चार कषायें उत्पन्न होय छे मिथ्यात्व गुणस्थानधी लभने इसमा गुणस्थान सुधी कषाय वधु ओछा प्रमाणमा रहेल होय छे पछीना गुणस्थानोमा का तो चारित्र्य मोहनीयनो उदय रहेनो नथी अथवा तो चारित्र्य मोहनीय कर्म न थो रहेता, तेथी पछीना गुणस्थानोमा कषाय होतो नथी ध्यान ओटवे अन्तर्मुहूर्त सुधी चित्तनी ओकाग्रता उत्तम सहनन वाणा ओने चित्तनी ते ओकाग्रता प्रशस्त रूपमा रहे छे अने ते सिवायना लोभना

प्रशस्त रूपे रहे छे प्रशस्त रूप ध्यान न सार अने निर्जाने हेतु होय छे, अप्रशस्त ध्यान नही, तेथी ध्यानना आ चार लेल कहेल छे—आर्त्तध्यान, रौद्रध्यान, धर्मध्यान, अने शुक्लध्यान 'ज्ञान' ओटवे दुःख न थवाने माटे दुःखनो उदय

तस्यैकाग्रताकाम् । तत्र चतुर्विधध्यानेषु आर्तध्यानं निष्णोति-अतः=दुःखम्, तस्य निमित्तं तत्र भवति वा आत्तम्, आर्तं च तद्दधानम् आर्तध्यानम्, अथवा आर्तस्य =दुःखितस्य वा ध्यानम्=आर्तध्यानम्=मनोक्षामनाङ्गवस्तुसंयोगवियोगादि निवर्धन चिन्तविकलताकाम् । रौद्रध्यानम्=रौद्रव्यन्यपरानिति रुद्र=माण्ड्युपघातादि परिणतो जीवस्तस्य कर्म=रौद्रम्=विसाधतिक्लृप्ता रूपम्, तद्रूप ध्यानम्=रौद्रध्यानम् । धर्म ध्यानम्=धर्मः=पर्वण्यस्य आज्ञादि, तस्य ध्यानम्=अनुचिन्तनम्=धर्मध्यानम् । शुक्ल ध्यानम्=शुक्लं शोकं क्लमयति=अपनयतीति शुक्लं=मयस्यकारणम्=शुक्लं च तद्दधानम् =शुक्लध्यानम् । चतस्रो विख्याः प्रहृष्टाः, विरुद्धाधारि^३ प्रति याः कयास्ता विख्या, ता हि-स्त्रीकथा, भक्तकथा, राजकथा, देशकथा चेति चतस्रः । चतस्रः सङ्गा प्रहृष्टा सङ्गा हि-भसातवेदनीय मोहनीय कर्मोदयसंपाद्या आहाराद्यभि लापादिरूपाभसना विशेषा । तास्तु-आहारसङ्गा-मयसङ्गा, मैथुनसङ्गा-परिग्रहस ङ्गाः । चतुर्विधो बन्धः प्रहृष्टः, वन्द्यन बन्धः, स हि-कर्मवर्गाणायोग्यपुद्गलाना- मा मयदेष्टैः सह क्षीरनीरवत्सबन्धो बन्धः । स च 'पगइबंधो' प्रकृतिबन्धः=प्रकृतयः =कर्मणोऽप्राप्तानावरणीयादयः, तासां बन्धः प्रकृतिबन्धः । 'ठिदबंधे' स्थितिबन्धः, जघन्यादिमेदमिमा स्थितिः, प्रकृतिनामवस्थानं स्थितिः तस्या बन्धः=स्थितिबन्धः । अनुभावबन्धः, अनुभावो विपाकस्तीव्रादिमेदो रसस्त्वस्य बन्धोऽनुभावबन्धः । 'अणु

अयं सूत्रकार चतुर्थं समवायाङ्गं को प्रतिपादित करते हैं—'चत्वारि' इत्यादि ।

कपाय चार कही गई गई हैं । वे इस प्रकार हैं—क्रोधकपाय, मान कपाय, मायाकपाय और लोभकपाय । चार ध्यान कहे गये हैं वे ये हैं—आर्तध्यान, रौद्रध्यान धर्मध्यान और शुक्लध्यान । चार विख्याएँ कही गई हैं, वे इस प्रकार हैं—स्त्रीकथा, भक्तकथा, राजकथा और देशकथा । चार संज्ञाएँ कही गई हैं, वे इस प्रकार हैं—आहारसंज्ञा, मयसंज्ञा, मैथुनसंज्ञा और परिग्रह संज्ञा । चार प्रकार का बंध प्रकृत लुपा है वह इस प्रकार है—प्रकृतिबंध, स्थितिबंध, अनुभावबंध और प्रदेशबंध । चार कोश का एक

३ वे सूत्रकार बोला समवायाङ्ग अनु प्रतिपादन करे छि—'चत्वारि' इत्यादि ।

टीका—कपाय चार छि—(१) क्रोध कपाय (२) मान कपाय, (३) माया कपाय अने लोभ कपाय. ध्यान चार कहेले छि—(१) आर्तध्यान, रौद्रध्यान, (३) धर्मध्यान अने (४) शुक्ल ध्यान. चार विख्याओं कहेले छि—स्त्रीकथा, भक्तकथा राजकथा अने देश कथा. चार संज्ञाओं का प्रभाव छि—(१) आहार संज्ञा, (२) मयसंज्ञा (३) मैथुन संज्ञा. (४) परिग्रह संज्ञा चार प्रकाशना जग जग्यवेले छि—(१) प्रकृतिबंध, (२) स्थितिबंध, (३) अनुभावबंध अने (४) प्रदेशबंध. चार कोशने के बंधने

भावबंधे' 'पणसबंधे' प्रदेगबन्धः=सकपायजीवेन मनोवागादिद्वारेण क्रियाविशेषस्य कर्त्रा भिन्नभिन्नस्य भावानां कर्मपुद्गलानां स्वभावानुसारं तत्तत्परिमाणभागेन संबन्धः=प्रदेगबन्धः, इति चतुर्विधो बन्धः । 'चउगाउए' चतुर्गव्यूतं योजनं प्रज्ञप्तम् क्रोशचतुष्टयस्य योजनं भवति । अनुराधानक्षत्रं चतुस्तारं प्रज्ञप्तम् । पूर्वपाढानक्षत्रं चतुस्तारं प्रज्ञप्तम् । उत्तरापाढानक्षत्रं चतुस्तारं प्रज्ञप्तम् ॥१५॥

योजन कहा गया है । अनुराधानक्षत्र चार ताराओं वाला, पूर्वापाढा नक्षत्र चार ताराओं वाला, और उत्तरापाढानक्षत्र चार ताराओं वाला कहा गया है ।

भावार्थ—चारित्र्यरूप आत्मपणिमो में अनिर्मलता का नाम ही कपाय है । कपायमोह के उदय से क्रोध, मान, माया और लोभ, ये चार कपायें उत्पन्न होती हैं । मिथ्यात्व गुणस्थान से लेकर यह कपाय-न्यूनाधिक्य में इसमें गुणस्थान तक पाई जाती है । आगे के गुणस्थानों में या तो चारित्र्यमोहनीय का उदय नहीं रहता या चारित्र्यमोहनीय कर्म ही नहीं रहता इसलिये आगे यह नहीं पाई जाती । ध्यान शब्द का अर्थ है अन्तर्मुहूर्त तक चित्त की एकाग्रता । उत्तमसहनन वालों के यह चित्त की एकाग्रता प्रशस्तरूप में रहती है और इनके अनिरिक्त जीवों में अप्रशस्तरूप में रहती हैं । प्रशस्तरूप ध्यान में ही संन और निर्जरा का हेतु होता है, अप्रशस्त ध्यान नहीं इसीलिये ध्यान के ये चार भेद किये हैं—आर्त्तध्यान, रौद्रध्यान, और शुक्लध्यान । ऋत नाम दुःख का है, जिसके होने में दुःख का उग अथवा तीव्रता निमित्त हो या

जताये छे अनुराधा नक्षत्र चार ताराओं वाला पूर्वाषाढा नक्षत्र चार ताराओं वाला, अने उत्तरापाढा नक्षत्र चार ताराओं वाला जताये छे

भावार्थ—चारित्र्य आत्मपणिमोमा अनिर्मलता नु नाम न कपाय छे । कपायमेहना उदयथी क्रोध, मान माया अने लोभ, ये चार कपाये उत्पन्न थिये छे मिथ्यात्व गुणस्थानधी लभने इसमा गुणस्थान सुधी कपाय वधु ओछा प्रमाणमा रहेल होय छे पछीना गुणस्थानोमा का तो चारित्र्य मोहनीयने उदय रहेनो नथी अथवा तो चारित्र्य मोहनीय कर्म न नथी रहेता, तेथी पछीना गुणस्थानोमा कपाय होतो नथी ध्यान ओटवे अन्तर्मुहूर्त सुधी चित्तनी ओकाग्रता उत्तम सहनन वाजा ओने चित्तनी ते ओकाग्रता प्रशस्तरूपमा रहे छे अने ते सिवायना ज्योना प्रशस्तरूपे रहे छे प्रशस्तरूप ध्यान न सवर अने निर्जानो हेतु होय छे, अप्रशस्तरूप ध्यान नही, तेथी ध्यानना आ चार लेह कहेल छे—आर्त्तध्यान, रौद्रध्यान, धर्मध्यान, अने शुक्लध्यान 'ऋत' ओटवे दुःख ने थवाने माटे दुःखने उदय

जो दुःख में होनेवाला हो उसका नाम आर्त्तध्यान है। अथवा दुःखित व्यक्ति का जो ध्यान है वह आर्त्तध्यान है। यह आर्त्तध्यान चार प्रकार का होता है अग्रिय वस्तुके प्राप्त होने पर उसके वियोग के लिये चिन्तासातस्य का होना यह प्रथम आर्त्तध्यान है १। प्रियवस्तु के वियोग होने पर उसकी प्राप्ति के लिये सतत चिन्ता करना दूसरा आर्त्तध्यान है २। वेदना होने पर उसके दूर करने के लिये निरन्तर चिन्ता करना तीसरा आर्त्तध्यान ३ है। आगामी विषयकी प्राप्ति के लिये निरन्तर चिन्ता करना चौथा आर्त्तध्यान है ४ यह आर्त्तध्यान चौथे, पाँचवें और छठवें गुणस्थान में अर्थात् मारम से लेकर छठवें गुणस्थानतक होता है, परन्तु इसमें का चौथा मंद छठवें गुणस्थान में नहीं होता १। दुःख की उत्पत्ति के मूल में चार कारण हैं—अनिष्ट वस्तु का संयोग १, इष्टवस्तु का वियोग २, प्रतिकूल वेदना ३ और भोगलालसा ४। इन कारणों को लेकर ही आर्त्तध्यान के ये चार भेद किये गये हैं। जो दूसरे प्राणियों को रुलावे—कष्ट देवे, ऐसे क्रूर दुष्ट—जीव के, प्राणियों की उपमर्दन आदि करने वाले मितने भी कार्य हैं वे सब रौद्र हैं। इस रौद्ररूप जो ध्यान होता है वह रौद्रध्यान कहलाता है। तात्पर्य कहने का यह है कि जिसका चित्त अतिकठोर और क्रूर है ऐसे जीव का जो ध्यान है वही रौद्रध्यान

अथवा तीव्रता निमित्त होय अथवा जो ध्यान दुःखमां व उत्पन्न बनार होय होय तेषु नाम आर्त्तध्यान छ अथवा दुःखित व्यक्तिनु के ध्यान होय ते आर्त्तध्यान कहेवाय छ ते आर्त्तध्यान चार प्रकारनु छ (१) अग्रिय वस्तु प्राप्त बत्ता तेना वियोगने भाटे चिन्तित रह्येनु ते प्रथम आर्त्तध्यान छ (२) प्रिय वस्तुने वियोग बत्ता तेनी प्राप्तिने भाटे सतत चिन्ता करवी ते द्वितीय आर्त्तध्यान छ (३) वेदना बत्ता तेने दूर करवाने भाटे निरन्तर चिन्ता करवी ते तृतीय आर्त्तध्यान छ (४) आगामी विषयनी प्राप्तिने भाटे निरन्तर चिन्ता करवी ते चतुर्थ आर्त्तध्यान छ ते आर्त्तध्यान चौथे पाँचवां अने छठे गुणस्थानमां जोटवे के शब्दवत्तवी लभने छठे गुणस्थान सुधी बाय छ पक्ष तेमाना चौथो केद छठे गुणस्थानमां बत्ता नधी. दुःखनी उत्पत्तिना भूषमां चार कारण छ—(१) अनिष्ट वस्तुने संयोग, (२) इष्ट वस्तुने वियोग, (३) प्रतिकूल वेदना अने (४) लोभलालसा ने कारणेने लीये व आर्त्तध्यानना के चार भेद पड़ेछ छ ने जीव लोभने रह्ये—कष्ट दे, जेवां दूर—दुष्ट लोभनां प्राप्तिजोतु उपमर्दन करनाय के होय काथी होय ते सप्तमां रौद्र कहेवाय छ जे शत्रुरूप के ध्यान होय छ तेने रौद्रध्यान कहे छ कहेवाय तात्पर्य के छ के नेछ चित्त अति कठोर अने क्रूर होय छ जेवां छवतु के ध्यान होय छ तेने

है। चित्त में कठोरता का जागरण हिंसा, झूठ, चोरी प्राप्तविषयों का संरक्षण इन बानों से ही होता है, अतः इसके भी हिंसालुबन्धी, मृषालुबन्धी, स्तेयानुबन्धी और संरक्षणालुबन्धी, ऐसे चार भेद हैं। यह ध्यान पहिले से लेकर पाँचवें गुणस्थान तक के जीवों को होता है। २। सर्वज्ञ भगवान् की आज्ञा आदि का नाम धर्म है। इस धर्म का बार २ चिन्तन करना सो धर्मध्यान है। इसके आज्ञाविचय १, अपायविचय २, विपाकविचय ३ और संस्थानविचय ४, ऐसे चार भेद हैं। ३। जो शोक को दूर करे उसका नाम शुक्ल है ऐसा शुक्ल का यह व्युत्पत्तिलभ्य अर्थ होता है। भवके क्षय का कारण यही ध्यान है। धर्मध्यान सातवें गुणस्थान से लेकर बारहवें गुणस्थान तक और शुक्लध्यान ग्यारहवें गुणस्थान से चौदहवें गुणस्थान तक के जीवों के होता है। पृथक्त्व वितर्क सविचार १, एकत्ववितर्काविचार २, सूक्ष्मक्रिया अनिवृत्ति ३, और समुच्छिन्न क्रिया अप्रतिपाती ४ ये चारभेद शुक्लध्यान के हैं। इनका विशेष वर्णन आगमों से जाना जा सकता है। चारित्र के प्रति जो कथाएँ विरुद्ध पड़ती हों वे विकथा हैं—स्त्री संबंधी कथा का नाम स्त्रीकथा १, भोजन से संबंध रखनेवाली कथा का नाम भक्तकथा २, राजा से संबंधित कथा—चातकीत का नाम राजकथा ३ और देश से

रौद्रध्यान कहे छे चित्तमा कठोरतानी उत्पत्ति हिंसा, असत्य, चोरी अने प्रसन्न विषयाना संरक्षण, अथवा कारणे जाय छे, तेथी तेना पक्ष आ प्रमाणे चर लेह छे—(१) हिंसालुबन्धी (२) मृषालुबन्धी, (३) स्तेयानुबन्धी, अने संरक्षणानुबन्धी आ ध्यान पड़ेवेथी लघने पायमा गुणस्थान सुधीना लघोने जाय छे ॥२॥ सर्वज्ञ भगवान् की आज्ञा आदिने धर्म कहे छे। ते धर्मनुं बारबार चित्तन कर्तुं ते धर्मध्यान छे तेना चार लेह आ प्रमाणे छे—(१) आज्ञाविचय, (२) अपायविचय, (३) विपाकविचय, अने (४) संस्थान विचय ॥३॥

जे शोकने दूर करे तेनुं नाम शुक्ल छे, जेवो शुक्लनो व्युत्पत्तिवक्ष्य अर्थ जाय छे आ ध्यान जा लावना लयनुं कारणे छे। धर्मध्यान सातमां गुणस्थानथी लघने बारमा गुणस्थान सुधीना अने शुक्लध्यान अगियारमां गुणस्थानथी लघने चौदमां गुणस्थान सुधीना लघोने जाय छे। शुक्लध्यानना आ प्रमाणे चार लेह छे—[१] पृथक्त्व वितर्क सविचार, [२] एकत्ववितर्काविचार, [३] सूक्ष्मक्रिया अनिवृत्ति अने ४ समुच्छिन्न क्रिया अप्रतिपाती तेमनुं विशेष पक्षन आगमोमांथी जाली शकय छे। जे कथाओ चारित्रथी विरुद्धनी होय छे तेमने विकथा कहे छे [१] स्त्री विषयी कथाने स्त्रीकथा कहे छे। [२] भोजन विषयी कथाने भक्तकथा कहे छे। [३] राजा सम्बन्धी कथाने राजकथा कहे छे अने [४] देश विषयी कथाने देश कथा कहे

मूष्म—जे देवा किं सुकिं किं कियवत्त किं पिप्पम किं जिजुत्त किं विण्ण किं छिल्लस किं जिञ्जय किं सिंसिं किं सिंसिं किं कूड किं उत्तर वहंसिं विमाण देवत्ताण उववण्णा, तेसिण देवाण उक्कोसेण चत्तारि सागरोवमाइ ठिई पण्णत्ता । ते ण देवा चउण्ह अढमासाण आणमति वा पाणमति वा ऊससति वा नीससति वा, तेसिं देवाण चउहिं वाससहस्सेहिं आहारहे समुप्पज्जइ । अत्थेगइया भवसिद्धिया जीवा जे चउहिं भवग्गहणेहिं सिज्झिस्सति बुज्झिस्सति मुच्चिस्सति परिनिब्बाइस्सति, सव्वदुक्खणं अत्त करिस्सति ॥१७॥

टीका—‘जे देवा’ इत्यादि । य देवाः कृष्टिं सुकृष्टिं कृष्ट्यावत्तं कृष्टिप्रम कृष्टियुक्तं कृष्टिवर्णं कृष्टिछेदय कृष्टिपञ्चमं कृष्टिभृग कृष्टिसृष्ट कृष्टिकूट कृष्ट्युत्तरा वत्तक विमानं एतन्नामकेषु द्वादशविधविमानेषु देवत्वन उत्पन्ना, तेषां तल्ल देवानामुत्कर्षेण चत्तारि सागरापमानि स्थितिः पश्यन्ता । ते तल्ल देवा षट् भौमर्दमासानाम्=मासद्वयानन्तरमित्यय आनन्ति=आन्तरं आसं गृह्णन्ति, प्राणन्ति=मान्तरं निश्वासं गृह्णन्ति, उच्छ्वासन्ति=वायुश्चासं गृह्णन्ति, निश्वासन्ति=वायु निःश्वासं गृह्णीत्यर्थः । तेषां देवानां चतुर्विधपमद्वयः आहारसंज्ञा समुत्पद्यते ।

‘जे देवा’ इत्यादि ।

टीकार्थ—नो देव, कृष्टि, सुकृष्टि कृष्ट्यावत्त, कृष्टिप्रम, कृष्टियुक्त, कृष्टिवर्ण, कृष्टिछेदय, कृष्टिपञ्चम, कृष्टिभृग, कृष्टिसृष्ट कृष्टिकूट और कृष्ट्युत्तरावत्तक, इन बारह प्रकार के विमानों में देव की पर्याय में उत्पन्न होते हैं, उन देवों की उत्कृष्ट स्थिति चार सागरोपम की होती है। जे देव चारपक्ष में अर्थात् दो माह के बाद में आन्तर आस लेते हैं, आन्तर निःश्वास लेते हैं वायु उत्कर्ष लेते हैं, और वायु निःश्वास लेते हैं । उन देवों को चार हजार वर्ष के

‘जे देवा’ इत्यादि ।

टीका—जे देवा, कृष्टि सुकृष्टि, कृष्ट्यावत्त कृष्टिप्रम कृष्टियुक्त, कृष्टिवर्ण, कृष्टिछेदय, कृष्टिपञ्चम, कृष्टिभृग, कृष्टिसृष्ट, कृष्टिकूट, अने कृष्ट्युत्तरावत्तक जे चार प्रभेदां विमानेभां देवनी जयोवभां उत्पन्न आवे छे ते देवानी उत्कृष्टस्थिति चार सागरोपमनी आवे छे ते देवा चार पञ्चवादिनां जेवने के मन्दिने चार आस ले छे चार निश्वास ले छे मन्दिने उच्छ्वास ले छे ते देवाने चार उच्छ्वास ले छे पछी

सन्ति एके भवसिद्धिका जीवाः ये चतुर्भिर्भेदग्रहणैः सेत्स्यन्ति, भोत्स्यन्ते, मोक्ष्यन्ति, परिनिर्वास्यन्ति. सर्वदुःखानामन्तं करिष्यन्ति ॥१७॥

पञ्चमं समवायाङ्गमाह—

तज्ज

मूलम्—पंच क्रिया पणत्ता, तच्चथा—काइया, अहिगरणिया, पाउसिया, पारितावणिया पाणाइवाय किरिया। पंचमहव्वयापणत्ता—
तं जहा—सव्वाओ पाणाइवायाओ वेरमणं, सव्वाओ मुसावायाओ वेरमणं, सव्वाओ अदिण्णादाणाओ वेरमणं सव्वाओ मेहुणाओ वेरमणं, सव्वाओ परिग्गहाओ वेरमणं । पंचकामगुणा पणत्ता, तं जहा सद्वा रूवारसा गंधा फासा । पंचआसवदारा पणत्ता, तं जहा मिच्छत्तं, अविरई, पसाया, कसाया, जोगा । पंच संवरदारा पणत्ता, तं जहा—सम्मत्तं, विरई, अप्पमत्तया, अकसाया, अजोगया । पंच निज्जरट्ठाणा पणत्ता, तं जहा—पाणाइवायाओ वेरमणं, मुसावायाओ वेरमणं, अदिन्नादाणाओ वेरमणं, मेहुणाओ वेरमणं, परिग्गहाओ वेरमणं । पंच समिईओ पणत्ता, तं जहा—ईरियासमिई, भासासमिई, एसणासमिई, आयाणमंडमत्तनिक्खेवणासमिई, उच्चारपासवण खेल-जल्लसिंघाणपरिट्ठावणिया समिई । पंच अत्थिकाया पणत्ता, तं जहा—धम्मत्थिकाए, अधम्मत्थिकाए, आगासत्थिकाए, जीवत्थिकाए, पोग्गलत्थिकाए । रोहिणीनक्खत्ते पंचतारे पणत्ते । पुणव्वल्लु नवक्खत्ते पंचतारे पणत्ते । हत्थनक्खत्ते पंचतारे पणत्ते विसाहानक्खत्ते पंचतारे पणत्ते । धणिट्ठानक्खत्ते पंचतारे पणत्ते ॥१८॥

अनन्तर आहारसज्ञा उत्पन्न होती है—इन देवों में कितनेक देव भवसिद्धिक होते हैं जो चार भव ग्रहण करने के बाद सिद्ध हो जावेंगे, बुद्ध हो जावेंगे, कर्मों से छूट जावेंगे, परिनिवृत हो जावेंगे और समस्त दुःखों का अंत कर देंगे ॥सू० १७॥

आहार सज्ञा थाय छे ते देवोभा डेट्ठाक देवो भवसिद्धिक होय छे, जेओ थार भव करीने सिद्ध भनथे, पुद्ध थथे, कर्मोथी मुक्त थथे, परिनिवृत थथे अने समस्त दुःखोने अंत करथे ॥सू. १७॥

સંયતિત કયા કા નામ દેશકયા છે. इन कयाओं का सम्पर्क चारित्र्य की आरापना के साथ कोई प्रयोजन नहीं है, प्रत्युत ये उस चारित्र्य को मलिन वाली होती हैं इसलिये विकयाएँ हैं। असातवेदनीय और मोहनीय कर्म के उदय से जो जीवों को आहार आदि की अभिलाषा रूप परिणति है इसका नाम सज्ञा है। ये आहारसज्ञा आदि के भेद से चार प्रकार की हैं। एकेन्द्रिय से लेकर पञ्चेन्द्रियतक के जीवों में ये सब पाई जाती हैं। बंध चार प्रकार का है—प्रकृतिबंध, स्थितिवंध, अनुभावबंध और प्रदेशबंध। कर्मवर्गणा योग्य पुद्गलों का आत्मप्रदेशों के साथ क्षीरनीर की तरह जो संबंध हो जाता है इसका नाम बंध है। गृहीत कर्मों के जो ज्ञानावरणीय आदिरूप अंश है उन अंशों का बंध, जघन्य आदि के भेद से युक्त प्रकृतियों का आत्मा में ठहरने की मर्यादा रूप से बंधना इसका नाम स्थिति, बंध की गई प्रकृतियों का अपनी कालमर्यादा के अनुसार उदय में आना और मन्दतीव्रारूप से रस-फल-देना इस प्रकार का बंध होता है उसका नाम अनुभावबंध है। कपाययुक्त बने हुए जीव के द्वारा मनो, वायु आदि योग प्रणाली से गृहीत भिन्न-स्वभाव में परिणत होनेवाली कर्मपुद्गल राशि का जो अमुक अमुक विभाग रूप में पेट जाना होता है इसका नाम प्रदेशबंध है ॥ सू० १५॥

ઉ તે કયાઓ સમ્બંધ આરિત્રની આરાધનામાં કેઇ પણ રીતે ઉપયોગી નથી, પણ તે કયાઓ આરિત્રને મલિન કરનારી હોય છે, તેથી જ તેમને વિકયાઓ કહે છે જ્ઞાતવેદનીય અને મોહનીય કર્મના ઉદયથી જીવોને આહાર આદિથી અભિલાષા રૂપ ને પરિણતિ થાય છે તેને સજ્ઞા કહે છે આહાર સજ્ઞા આદિ તેના ચાર ભેદ છે એકેન્દ્રિયથી પંચેન્દ્રિય સુધીના સઘળા જીવોમાં આહારસજ્ઞા હોય છે જ બનાવનાર પ્રકાર છે—પ્રકૃતિબંધ, સ્થિતિબંધ, અનુભાવબંધ, અને પ્રદેશબંધ કમવજલુ મોન્ય પુદ્ગલોને। આત્મપ્રદેશોની સાથે ક્ષીરનીર [રૂપ અને પાણી] ની જેમ જે સબંધ થઈ જાય છે તેને બંધ કહે છે ગૃહીત કર્મના જ્ઞાનાવરણીય આદિરૂપ ને જણાવે છે તે જણાવે બંધ પ્રકૃતિબંધ છે જઘન્ય આદિના ભેદથી મુક્ત પ્રકૃતિયોગુ આત્મામાં મોલચાની મર્યાદા રૂપથી જખાવુ તેનું નામ સ્થિતિબંધ કારણેજ પ્રકૃતિયોગુ પાતાની કાળ મર્યાદા અનુસાર ઉદયમાં આવવુ અને મન્દતીવ્રારૂપે રસ-ફલ-દેવુ જે પ્રકાસને। ને બંધ હોય છે તેનું નામ અનુભાવબંધ છે કપાય મુક્ત બનેલ જીવોના દ્વારા મન વચન આદિ યોગ પ્રણાલીથી ગૃહીત ભિન્ન ભિન્ન સ્વભાવમાં પરિણમતી કર્મ પુદ્ગલ રાશિનું ને અમુક અમુક વિભાગરૂપે વહેવાઈ જવાનું થાય છે તેનું નામ પ્રદેશબંધ છે ॥ સૂ. ૧૫॥

મૂલમ્--इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरयि-
याणं चत्तारि पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता । तच्चाए णं पुढवाए
अत्थेगइयाणं नेरयियाणं चत्तारि सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता । असु-
रकुमाराणं देवाणं अत्थेगइयाणं चत्तारि पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता ।
सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु अत्थेगइयाणं देवाणं चत्तारि पलिओवमाइं
ठिई पण्णत्ता । सणंकुमारमाहिंदेसु कप्पेसु अत्थेगइयाणं देवाणं
चत्तारि सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता ॥१६॥

ટીકા—‘इमीसे णं’ इत्यादि । अस्यां खलु रत्नप्रभाया पृथिव्यामस्ति
एकेषां नैरयिकाणां चत्वारि पल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । तृतीयस्या खलु
पृथिव्याम् अस्त्येकेषा नैरयिकाणा चत्वारि सागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता ।
असुरकुमाराणा देवानामस्त्येकेषां चत्वारि पल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । सौधर्म-
शानेषु कल्पेषु अस्त्येकेषा देवानां चत्वारि पल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । सनत्कुमार-
माहेन्द्रेषु कल्पेषु अस्त्येकेषां देवानां चत्वारि सागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता ॥१६॥

‘इमीसेण’ इत्यादि ।

ટીકાર્થ—इस रत्नप्रभापृथिवी में कितनेक नाकियों की स्थिति चार पल्योपम
की है । तृतीय पृथिवी में कितनेक नारकियों की स्थिति चार सागरोपम
की है । असुरकुमार देवों में कीननेक देवों की स्थिति चार पल्योपम
की है । सौधर्म और ईशान इन दो कल्पों में कितनेक देवों की स्थिति
चार पल्योपम की है । सनत्कुमार और माहेन्द्र इन दो कल्पों में कितनेक
देवों की स्थिति चार-पल्योपम की है । इस सूत्र द्वारा यह मध्यस्थिति
ही कही गई है ॥१६॥

‘इमीसे णं’ इत्यादि ।

ટીકાર્થ—આ રતનપ્રભા પૃથ્વીમા કેટલાક નારકીઓની સ્થિતિ ચાર પલ્યોપમની છે
ત્રીજી પૃથ્વીમા કેટલાક નારકીઓની સ્થિતિ ચાર સાગરોપમની છે અસુરકુમાર દેવોમા
કેટલાક દેવોની સ્થિતિ ચાર પાલ્યોપમની છે. સૌધર્મ અને ઈશાન, એ બે કલ્પોમા
કેટલાક દેવોની સ્થિતિ ચાર પલ્યોપમની છે સનત્કુમાર અને માહેન્દ્ર, એ બે કલ્પોમા
કેટલાક દેવોની સ્થિતિ ચાર પલ્યોપમની છે. આ સૂત્ર દ્વારા આ મધ્યમસ્થિતિ
જ બતાવવામા આવી છે ॥૧૬॥

મૂમ્—જે દેવા કિંઈ સુકિંઈ કિંઈયાવત્ત કિંઈપ્પમ કિંઈજુત્ત
 કિંઈવણ્ણ કિંઈલેસ કિંઈજ્ઞય કિંઈસિંગ કિંઈસિઠ કિંઈકૂઠ કિંઈત્તર
 વહિંસગ વિમાણ વેવત્તાણ ઉવવણ્ણા, તેસિણ દેવાણ ઉક્કોસેણં ચત્તારિ
 સાગરોવમાઈ ઠિઈ પળ્ણત્તા । તે ન દેવા ચ્ચઉણ્ણ અહ્મમાસાણં
 આણમતિ વા પાણમતિ વા ઝસસતિ વા નીસસતિ વા, તેસિં દેવાણં
 ચ્ચઉહિં વાસસહસ્સેહિં આહારઢે સમુપ્પજ્ઞહ । અત્યેગદ્વયા ભવસિદ્ધિયા
 જીવા જે ચ્ચઉહિં ભવગ્ગહ્ણેહિં સિજ્ઞિસ્સતિ વુજ્ઞિસ્સતિ મુશ્ચિસ્સતિ
 પરિનિવ્વાહસ્સતિ, સન્નવદુક્કલ્લણં અત્ત કરિસ્સતિ ॥૧૭॥

ટીકા—‘જે દેવા’ इत्यादि । ये देवा कृष्टिं सुकृष्टिं कृष्ट्यावत्तं कृष्टिप्रमं
 कृष्टियुक्तं कृष्टिबर्णं कृष्टिलेइय कृष्टिप्वज कृष्टिमृग कृष्टिसृष्ट कृष्टिकूट कृष्ट्युत्तरां
 वतंसक विमानं एतन्नामकेषु डादशविधविमानेषु देवत्वेन उत्पन्नाः, तेषां लल्ल
 देवानामुत्कर्षेण चत्तारि सागरोपमानानि स्थितिः प्रकृता । ते लल्ल देवाः पद
 णांमर्द्धमासानाम्=मासद्वयानन्तरमित्यर्थः आनन्ति=मान्तरं आस गृह्णन्ति, प्राणन्ति
 =मान्तरं निश्वास गृह्णन्ति, उच्छ्वसन्ति=वाद्यमुच्छ्वास गृह्णन्ति, निश्वासन्ति=वाद्य
 निःश्वास गृह्णन्तीत्यर्थः । तेषां देवानां चतुर्विधपमइस आहारसज्ञा समुत्पद्यते ।

‘જે દેવા’ इत्यादि ।

ટીકાર્થ—જો દેવ, કૃષ્ટિ, સુકૃષ્ટિ કૃષ્ટ્યાવત્, કૃષ્ટિપ્રમ, કૃષ્ટિયુક્ત, કૃષ્ટિબર્ણ,
 કૃષ્ટિલેઇય, કૃષ્ટિપ્વજ, કૃષ્ટિમૃગ, કૃષ્ટિસૃષ્ટ કૃષ્ટિકૂટ ઓર કૃષ્ટ્યુત્તરાવતસક,
 इन पारह प्रकार के विमानों में दश की पर्याय में उत्पन्न होते हैं, उन देवों की
 उत्कृष्ट स्थिति आर सागरोपम की होती है । ये दश आरपस में अर्थात् दो माह
 के पक्ष में आन्तर आस छेते हैं, आन्तर नि आस छेते हैं वाद्य उच्छ्वास
 छेते हैं, और वाद्य निश्वास छेते हैं । उन देवों को चार इमार वर्ष के

‘જે દેવા’ इत्यादि ।

ટીકાર્થ—જે દેવો, કૃષ્ટિ સુકૃષ્ટિ, કૃષ્ટ્યાવત્ત કૃષ્ટિપ્રમ, કૃષ્ટિયુક્ત, કૃષ્ટિબર્ણ, કૃષ્ટિલેઇય,
 કૃષ્ટિપ્વજ, કૃષ્ટિમૃગ કૃષ્ટિસૃષ્ટ. કૃષ્ટિકૂટ, અને કૃષ્ટ્યુત્તરાવતસક એ બાર પ્રકારનાં
 વિમાનોમાં દેવની જાણમાં ઉત્પન્ન થાય છે, તે દેવોની ઉત્કૃષ્ટસ્થિતિ આર સાગરો
 પમની ટોચ છે તે દેવો આર પંચવાદિવામાં જોયે છે મહિને બાર આસ લે છે
 બાર નિઃશ્વાસ લે છે બહાર ઉચ્છ્વાસ લે છે તે દેવોને આર દ્વ્યાર વર્ષ પછી

सन्ति एके भवसिद्धिका जीवाः ये चतुर्भिर्भवग्रहणैः सेत्स्यन्ति, मोत्स्यन्ते, मोक्षयन्ति, परिनिर्वास्यन्ति, सर्वदुःखानामन्तं करिष्यन्ति ॥१७॥

पञ्चमं समवायाद्गमाह—

तंजह

मूलम्—पंच किरिया पणत्ता, तद्यथा—काइया, अहिगरणिया, पाउसिया, पारितावणिया पाणाइवाय किरिया । पंचमहव्वयापणत्ता—
तं जहा—सव्वाओ पाणाइवायाओ वेरमणं, सव्वाओ सुसावायाओ वेरमणं, सव्वाओ अदिण्णादाणाओ वेरमणं सव्वाओ मेहुणाओ वेरमणं, सव्वाओ परिग्गहाओ वेरमणं । पंचकामयुणा पणत्ता, तं जहा सद्दा रूवा रसा गंधा फासा । पंचआसवदारा पणत्ता, तं जहा मिच्छत्तं, अविरई, पमाया, कसाया, जोगा । पंचसंवरदारा पणत्ता, तं जहा—सम्मत्तं, विरई, अप्पमत्तया, अकसाया, अजोगया । पंच निज्जरट्टाणा पणत्ता, तं जहा—पाणाइवायाओ वेरमणं, सुसावायाओ वेरमणं, अदिन्नादाणाओ वेरमणं, मेहुणाओ वेरमणं, परिग्गहाओ वेरमणं । पंच समिईओ पणत्ता, तं जहा—ईरियासमिई, भासासमिई, एसणासमिई, आयाणभंडमत्तनिकखेवणासमिई, उच्चारणासवण खेल-जल्लसिंघाणपरिट्ठावणिया समिई । पंच अत्थिकाया पणत्ता, तं जहा—धम्मत्थिकाए, अधम्मत्थिकाए, आगासत्थिकाए, जीवत्थिकाए, पोग्गलत्थिकाए । रोहिणीनक्खत्ते पंचतारे पणत्ते । पुणव्वल्लु नवक्खत्ते पंचतारे पणत्ते । हत्थनक्खत्ते पंचतारे पणत्ते त्रिसाहानक्खत्ते पंचतारे पणत्ते । धणिट्ठानक्खत्ते पंचतारे पणत्ते ॥१८॥

अनन्तर आहारसंज्ञा उत्पन्न होती है—इन देवों में कितनेक ठेक भवसिद्धिक होते हैं जो चार भव ग्रहण करने के बाद सिद्ध हो जावेंगे, बुद्ध हो जावेंगे, कर्मों से छूट जावेंगे, परिनिवृत हो जावेंगे और समस्त दुःखों का अंत कर देंगे ॥मु० १७॥

आहार सज्ञा थाय छे ते देवोभा इट्ठाक देवो भवसिद्धिक होय छे, जेयो थार भव करीने सिद्ध भनथे, बुद्ध थथे, कर्मोथी मुक्त थथे, परिनिवृत थथे अने समस्त दु जेनो अत करथे ॥सु. १७॥

टीका--‘पञ्च क्रिरियाभा’ इत्यादि । पञ्च ‘क्रिरियाभा’ क्रियाः=व्यापा रविशेषरूपा प्रकृता, तद्यथा-‘काश्या’ कायिकी, कायन निवृत्ता काय मया वा क्रिया, कायकी-कायवैष्टारूपेत्यर्थः । ‘अहिराणिष्या’ अधिकरणिकी, भाषि क्रियते नारकादियोनि विशेषेषु स्याप्पते आत्माऽनेति अधिकरणम् अनुष्ठान विशेषो वाच्यस्तु स्वङ्गवक्रादि च, तत्र भया, तेन निवृत्ता वा अधिकरणिकी=स्वङ्गादिनिर्वर्तनादिविशेषणेत्यर्थः ‘पाठसिया’ प्राद्वेपिकी, प्रद्वेपा=मत्सरः कर्मवन्व हेतुरकुञ्जलो कारपरिणामविशेष, तत्र भया, तेन निवृत्ता वा प्राद्वेपिकी, मत्सरादि ज-पाक्रियेत्यर्थः । ‘पारियात्रणिष्या’ पारितापनिकी, पारितापन=ताडनादिदुःख विशेषफलक्षणम् पीडाकरणमित्यर्थः, तेन निवृत्ता, पारितापनिकी । ‘पाणाइषायक्रिरिया’ प्राणातिपातक्रिया=प्राणा प्राणिनः तेषामतिपातो विनाशः, तद्विषया, एव वा क्रिया=प्राणातिपातक्रिया । पञ्च महाव्या’ महाव्रतानि=महान्ति व्रतानि नियमा महाव्रतानि प्रकृतानि, तानि च प्राणातिपाताद् ‘विरमण’ विरमण=निवृत्तिः सर्वतः श्रुपावादात्=असत्यप्राणत्वात् विरमणम् । सर्वतः अदृष्टानात्, विरमणम् । सर्वतः मैथुनाद् विरमणम् । सर्वतः परिग्रहात् धर्मोपकरणातिरिक्तानद् विरमणम् । पञ्च कामगुणाः=काम्यन्ते अभिषेक्यन्ते य ते कामाः=प्रमिलापद्विषयाः ते च ते गुणाः =पुद्गलधर्माः शब्दादयः इति कामगुणा इन्द्रियभुक्त्वाः सद्बलस्य मिष्टान् पुण्यचन्दननाटकीतलावेणुरीणाकलीतकाकलीगीतादिपदार्थाः इत्यर्थः अथवा कामस्य=मदनोदीपकस्य गुणाः वर्द्धका कामगुणा शब्दादयः प्रज्ञा कथिता-

अथ सूत्रकार पञ्चम समवायांग को कहते हैं-‘पञ्चक्रिरिया’ इत्यादि ।

टीकार्थ-पाँच क्रियाएँ कही गई हैं । वे इस प्रकार हैं-कायिकी क्रिया, अधिकरणिकी क्रिया, पारितापनिकी क्रिया और प्राणातिपातक्रिया । पाँच महाव्रत होते हैं वे ये हैं-सर्व प्रकार के प्राणातिपात से विरमण होना १, सर्व प्रकार के श्रुपावादा से विरमण होना २, सर्व प्रकार के अदृष्टान से विरमण होना ३, सर्वप्रकार के मैथुन से विरमण होना ४, और सर्वप्रकार के परिग्रह से विरमण होना ५ । पाँच कामगुण होते हैं वे इस प्रकार से

द्वे सूत्रकार पाचम समवायांगनु कथन करे छे-

“पञ्च क्रिरिया” इत्यादि ।

टीकार्थ-क्रियाभाः पाच छे-कायिक क्रिया, अधिकरणिकी क्रिया, प्राद्वेपिकी क्रिया, पारितापनिकी क्रिया, जने श्रुपातिपात क्रिया, महाव्रत पाँच छे-(१) सर्व प्रकारना प्राणा तिपातसे विरमण (२) सर्व प्रकारना श्रुपावादानु विरमण, (३) सर्व प्रकारना अदृष्टानानु विरमण, (४) सर्व प्रकारना मैथुनानु विरमण (५) जने सर्व प्रकारना परिग्रहानु विरमण करणु पाँच कामगुण कथन छे ते भा प्रमाणे छे- २०८, ३५

तद्यथा-शब्दाः, रूपाणि, रसा, गन्धाः, स्पर्शाः। पञ्च 'आमवदारा' आस्रवद्वाराणि=कर्माणानोपायभूतानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा मिथ्यात्वम् अविरतिः, प्रमादाः कषायाः, योगाः। पञ्च 'संवरदारा' संवरद्वाराणि=संवरस्य=कर्मानुपादानस्य द्वाराणि=उपायाः-संवरद्वाराणि प्रज्ञप्तानि= तानि च सम्यक्त-विरत्य-प्रमत्तताऽकषायाऽयोगकनामानि। पञ्च 'पञ्च 'जिज्जराट्टाणा' निर्जरास्थानानि निर्जरा-निर्जरा=परिपक्वानां कर्मावयवानामात्मप्रदेगात्पृथग्भवनम्। तस्याः स्थानानि-निर्जरास्थानानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा-प्राणातिपाताद् विरमणम्, यावत् परिग्रहाद् विरमणम्। पञ्च 'समिईओ' समितयः=सम् सगता इतयः प्रवृत्तयः=समितयः प्रज्ञप्ताः तद्यथा-ईर्या समितिः=ईर्यायां गमने सम्यक्तया जीवरक्षणपूर्वकं प्रवृत्तिः, भाषासमितिः=भाषायां भाषणे सम्=सम्यक्तया अद्यपरिहारपूर्वकमिति यावत्

हैं-शब्द, रूप, रस, गंध और स्पर्श। पांच आस्रवद्वार होते हैं-वे इस प्रकार से हैं-मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद कषाय और योग। पांच संवरद्वार होते हैं, वे इस प्रकार से हैं-सम्यक्तव, विरति, अप्रमत्तता, अकषाय, और अयोग। पांच निर्जरास्थान होते हैं-वे ये हैं-प्राणानिपात से विरक्त होना मृषावाद से विरक्त होना, अदत्तादान से विरक्त होना, मैथुन से विरक्त होना और परिग्रह से विरक्त होना। पांच समितियां होती हैं-वे इस प्रकार हैं-ईर्यासमिति, भाषासमिति, पण्णासमिति, आदान भाण्डमात्रनिक्षेपणासमिति और उच्चारप्रसवणखेलजल्लुगिघ्राणपरिण्डापनिकासमिति। गमन-करते समय किसी भी जीव को क्लेश न हो इस प्रकार की सावधानी रखते हुए चलना इसका नाम ईर्यासमिति है। भाषा बोलने में सत्य, हित, परिमित और संदेह रहित निरवद्य चंचन बोलना इसका नाम भाषा समिति है। संयम जीवनयात्रा में उपयोगी

रश्मि, अने गंध अने स्पर्श पाय आस्रव द्वार होय छे ते अ प्रमाद्ये छे मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय अने योग। पाय संवरद्वार होय छे ते आ प्रमाद्ये छे-सम्यक्तव विरति, अप्रमत्तता, अकषाय, अने अयोग पांच निर्जरास्थान होय छे ते आ प्रमाद्ये छे प्राणातिपातथी विरक्त थवुं, मृषावादथी विरक्त थवुं, अदत्तादानथी विरक्त थवुं मैथुनथी विरक्त थवु अने परिग्रहथी विरक्त थवुं पांच समितियो छे ते आ प्रमाद्ये छे-ईर्यासमिति भाषा समिति, पण्णासमिति आदान भांड मात्र निक्षेपणा समिति अने उच्चार-प्रसवणखेल जल्लुगिघ्राण परिण्डापनिका समिति आदत्ती वण्णते ठोछ पण्ण एवने क्लेश न थाय ते प्रकारनी सावयेती 'राभवी तेनु' नाम धर्मा समिति छे (१) भाषा जोलव-मा सत्य हित, परिमित अने संदेह रहित वचन जोलवा तेनु नाम भाषा समिति छे (२) स य-

પ્રવૃત્તિ, ઇપણાસમિતિ. = મકાદીનામાદ્યાન દ્વિચત્વરિશ્વદ્વોપવર્ગનપુરસ્તર પ્રવૃત્તિ, આદાનમાણ્ડમાત્રનિક્ષેપણાસમિતિ = આદાને-પ્રણે=પ્રણય ધ માણ્ડમાત્રાણામેવ, માણ્ડમાત્રાણાં=ઉપકરણાનાં-નિશ્ચયણે મયપ્યાપન સમિતિ યુમ્પત્યુપેક્ષિતાદિરૂપણ પ્રવૃત્તિ । ‘ઉચ્ચારપાસવળચેલ્લસિધાણજલ્લપારિઘ્ઠાવણિયાભિર્ઈ’ ઉચ્ચારપસવળ ચેલ્લજલ્લસિદ્ધાગપરિઘ્ઠાપનાસમિતિ-ઉચ્ચાર-પુરીય, પસવળ=મૂખ, ચેલ્લ= નિષ્ઠીચન જલ્લ=દેહમલ, સિદ્ધાણ=નાસિકામલ, તેષાં પરિઘ્ઠાપનાયા=પરિઘ્ઠાપના સમિતિઃ=અસ્થિકાદિ દોષપરિહાર પૂર્વક પ્રગતિ । પચ્ચ ‘અસ્થિકાયા’ અસ્થિકાયા = પ્રદેશરાશય તથા-પર્માસ્થિકાય, અપર્માસ્થિકાય, આકાશાસ્થિકાય, જીવાસ્થિકાય, પુદ્ગલાસ્થિકાય । રોહિણીનક્ષત્ર પચ્ચતાર મક્ષત્રમ્ । પુનર્વસુ નક્ષત્રં પચ્ચતાર મક્ષત્રમ્ । હસ્તનક્ષત્ર પચ્ચતાર મક્ષત્રમ્ । ધનિષ્ઠાનક્ષત્ર પચ્ચતારં મક્ષત્રમ્ ॥૧૮॥

પેસે આદાર આદિ કો યયાલીમ ૪^મ દોષ ટાલકર છેને મેં પ્રવૃત્તિ કરના
 ફસકા નામ ઇપણાસમિતિ હે ૩ । સયમોપકારી માંડમાત્રો-ઉપકરણો
 કે રચ્વને મેં ઔર ઉઠાને મેં યતનાપૂર્વક પઢિછેદ્યાદિરૂપ સે પ્રવૃત્તિ કરના
 અર્થાત્ વસ્તુમાત્ર કો ખલીમાંતિ દેખ્વર પર્વ પ્રમાર્જિત કરકે યતનાસે છેના
 યા રચ્વના ફસકા નામ આદાનમાણ્ડમાત્રનિક્ષેપણાસમિતિ હે ૪ ઉચ્ચાર-
 ઘડી નીત, પ્રસવળ-રુદ્ધુનીન, ચેલ-યુક, જલ્લ-દેહમલ ઔર ઠિંઘાણ-
 નાક કા મલ, ફનકો પ્રાસુક ભૂમિ મેં દેખ્વ માલકર યતના સ પરિઘ્ઠવના,
 ફસકા નામ ઉચ્ચાર પાસવળચેલ જલ્લ ઠિંઘાણ પરિઘ્ઠાપનિકાસમિતિ હે ૫ ।
 પાંચ અસ્થિકાય હૈ-ચે ય હૈ-પર્માસ્થિકાય, અપર્માસ્થિકાય, આકાશાસ્થિ-
 કાય, જીવાસ્થિકાય ઔર પુદ્ગલાસ્થિકાય । રોહિણીનક્ષત્ર, પુનર્વસુનક્ષત્ર
 હસ્તનક્ષત્ર વિશાખાનક્ષત્ર ઔર ધનિષ્ઠાનક્ષત્ર પે પાંચ નક્ષત્ર પાંચ પાંચ
 તારાઓ થાલે હૈ ।

મહુત્તર જીવનવાત્રામાં ઉપયોગી જોવા આદાર આદિને ૪૨ દોષથી બચીને મેળવવાની
 પ્રવૃત્તિ કસ્વી તેનું નામ ઇપણા સમિતિ છે (૩) સયમોપકારી માંડમાત્રો-ઉપકરણોને
 મૂકવા તથા લેવામાં યતનાપૂર્વક પઢિછેદણા આદિ પ્રવૃત્તિ કસ્વી જોટલે કે પ્રત્યેક
 વસ્તુને સારી રીતે જોધને અને પ્રમાર્જિત કરીને મૂકવી કે લેવી તેનું નામ આદાન
 માંડમાત્ર-નિક્ષેપણા સમિતિ છે (૪) ઉચ્ચાર આદે પ્રસવળ-મૂત્ર જેટ ૧૩, ૪૬૬-
 દેહમળ અને શિષ્ણુ નાકનો મળ તેમને પ્રાસુક (હાવરકિત) ભૂમિમાં જોધ તથા
 ધીને ચતના પૂર્વક પાઠવવો તેનું નામ ઉચ્ચારપાસવળ જેટ ૪૬૬ શિષ્ણુ પરિ-
 ઘાપનિકા સમિતિ છે (૫) અસ્થિકાય પાંચ છે તે આ પ્રમાણે છે પર્માસ્થિકાય,
 અપર્માસ્થિકાય આકાશાસ્થિકાય જીવાસ્થિકાય અને પુદ્ગલાસ્થિકાય શઢિજી નક્ષત્ર
 પુનર્વસુનક્ષત્ર, હસ્તનક્ષત્ર, વિશાખા નક્ષત્ર અને ધનિષ્ઠા નક્ષત્ર એ પાંચ નક્ષત્રો પાંચ
 પાંચ તારાઓવાળાં છે

ભાવાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્રદ્વારા પંચમ સમવાયાંગનો પ્રકટ કર્યો છે, જેમાં ક્રિયા, મહાવ્રત કામગુણ, આસ્રવદ્વાર, સંવરદ્વાર, નિર્જરાસ્થાન, સમિતિ, અસ્તિકાય અને રોહિણી નક્ષત્રના તારા આદિ પાંચ કહેવાયા છે. શારીરિક ચેષ્ટામાત્રના નામ કાધિકી ક્રિયા છે ૧। જેના કારણે આત્મા નરક આદિ કુચોનિયોમાં જાણે છે યોગ્ય બનાવવામાં આવે છે એવો અનુષ્ઠાનવિશેષના નામ આધિકરણિકી ક્રિયા છે ૨। તલવાર આદિ હિંસાના સાધનોના આધિકારે આ ક્રિયાના અન્તર્ગત જાણવામાં આવે છે। કર્મવંધના હેતુભૂત જીવના જો અકુશલપરિણામ આવે છે આના નામ પ્રદેષ છે। આ પ્રદેષમાં જો ક્રિયા ઉત્પન્ન થાય છે તે પ્રદેષિકી ક્રિયા છે ૩। તાડનાદિના દુઃખમાં જો ક્રિયા આવે છે તે પરિતાપનિકી ક્રિયા છે ૪। આ ક્રિયામાં જીવોના પ્રાણોના વિનાશ થાય તેવી ક્રિયાના નામ પ્રાણાતિપાતક્રિયા છે ૫। ગૃહસ્થવ્રતોના અપેક્ષામાં જો વ્રત મહાન થાય છે તેને મહાવ્રત કહેવાય છે। આ મહાવ્રત અહિંસા મહાવ્રત આદિના ભેદમાં પાંચ કહેવાય છે—મન, વચન અને કાય દ્વારા દરેક રીતે હિંસાના ત્યાગ કરવા અહિંસા મહાવ્રત ૧, મન વચન અને કાય દ્વારા દરેક રીતે શૂંઠના ત્યાગ કરવા સત્યમહાવ્રત ૨, આ રીતે અદત્તના આદાનના ત્યાગ કરવા અર્ચ્યમહાવ્રત ૩, કુશીલના ત્યાગ

ભાવાર્થ—સૂત્રકારે આ સૂત્રદ્વારા પાંચમા સમવાયાંગનું વર્ણન કર્યું છે. તેમાં ક્રિયા, મહાવ્રત કામગુણ, આસ્રવદ્વાર, સંવરદ્વાર, નિર્જરાસ્થાન, સમિતિ, અસ્તિકાય, અને રોહિણી આદિ નક્ષત્રના તારા આદિ પાંચ પાત્ર હોય છે. તેમ જાતાવ્યું છે દરેક શારીરિક ચેષ્ટાને કાયિક ક્રિયા કહે છે. (૧) જેને કારણે આત્મા નરક આદિ કુચોનિયોમાં જાણે છે તેવા અનુષ્ઠાન વિશેષોને આધિકરણિકી ક્રિયા કહે છે (૨) તલવાર આદિ હિંસાના સાધનોના સમાવેશમાં ક્રિયાની અદર થાય છે કર્મવંધના હેતુરૂપ જીવનું જે અકુશલ પરિણામ આવે છે તેને પ્રદેષ કહે છે તે પ્રદેષથી ઉત્પન્ન થતી ક્રિયાને પ્રદેષિકી ક્રિયા કહે છે (૩) મારપીટ આદિ દુર્ગતિ જે ક્રિયા થાય છે તેનું નામ પરિતાપનિકી ક્રિયા છે (૪) જે ક્રિયામાં જીવોના પ્રાણોના વિનાશ થાય તેવી ક્રિયાને પ્રાણાતિપાત ક્રિયા કહે છે (૫) ગૃહસ્થના વ્રતો કરતાં જે વ્રતો મહાન હોય છે તેમને મહાવ્રત કહે છે તે મહાવ્રતો અહિંસા આદિ બેઠેથી પાત્ર જાતાવ્યા છે મન, વચન અને કાય દ્વારા દરેક પ્રકારે હિંસાના ત્યાગ કરવો તેનું નામ અહિંસા મહાવ્રત (૧) મન, વચન, અને કાય દ્વારા હિંસાના ત્યાગ કરવો તે અહિંસા મહાવ્રત છે મન વચન અને કાય દ્વારા દરેક રીતે અસત્યનો ત્યાગ કરવો તેનું નામ સત્ય મહાવ્રત છે (૨) તે જ પ્રમાણે ન દીધેલું શ્રદ્ધા ન કરવું તેનું નામ અર્ચ્ય મહાવ્રત છે. (૩) કુશીલના ત્યાગ કરવો તે પ્રજ્ઞાપન

મૂમ્મ--દ્વમીસે ણ રયણપ્પમાણ પુઢવીણ અત્થેગહયાણ નેરયિ
યાણ પચ પલિઓવમાહ ઠિઈ પળ્લન્તા । સચ્ચાણ ણ પુઢવીણ અત્થે
ગહયાણ નેરહયાણ પચ સાગરોવમાહ ઠિઈ પળ્લન્તા । અસુરકુમારાણ
દેવાણ અત્થેગહયાણ પચ પલિઓવમાહ ઠિઈ પળ્લન્તા । સોહમ્મીસા-
ણેસુ કપ્પેસુ અત્થેગહયાણ દેવાણ પચ પલિઓવમાહ ઠિઈ પળ્લન્તા ।
સણકુળારમાહિંદેસુ કપ્પેસુ અત્થેગહયાણ દેવાણ પચ સાગરોવમાહ
ઠિઈ પળ્લન્તા ॥સૂ ૧૧॥

કર દેના વ્રત્તવર્ષમહાવ્રતઃ, ઔર ધર્મોપકરણ કે સિવાય અન્યવસ્તુ
કા સ્વાગ દેના પરિગ્રહ મહાવ્રત હૈ ૫ । અમિલાપા કે ચિપયમૂત બને
હુપ પુદ્ગલ કે ધર્મ શબ્દાદિક કામગુણ કહણાતે હૈ ।

યે સઘક્ક, મિટ્ઠાક્ક, પુપ્પ, ચન્દન, આદિ સમસ્ત પદાર્થ કિ જો
મિન્નર રૂપ મેં હિન્દિયોં કો સુમ્મપ્રદાન કરતે હૈ । મિથ્યાત્થ, અવિરતિ પ્રમાદ,
કપાય ઔર યોગ યે પાંચ આસ્રવઘાર હૈ । સમ્પક્કથ, ચિરતિ અમમત્તા
અકપાય, અયોગ યે પાંચ સઘરઘાર હૈ, ક્યોં કિ આચરણ સે નબીન
કમોં કો આગમન રુક જાતા હૈ । પ્રાણાતિપાત આદિ સે ચિરમણ હોને
સે સંચિત કમોં કી નિર્જરા હોતી હૈ, હસલિયે પ્રાણાતિપાતચિરમણ આદિ
પાંચ નિર્જરા સ્થાન હૈ હંવોસમિતિ આદિ પાંચ સમિતિયા હૈ । સમિતિયોં
કા સ્વરૂપ સૂત્ર કે અર્થ મેં સ્પષ્ટ કર દિયા ગયા હૈ । મદેશોં કે સમુદાય
સે યુક્ત પદાર્થોં કો અસ્તિકાય કહા ગયા હૈ । ધર્માદિક પાંચ અસ્તિકાય હૈ ॥વ ૧૮॥

મહાવ્રત ઇ (૪) અને ધર્મોપકરણ ત્રિપાલની અન્ય વસ્તુને ત્યાજ કરવો તેનું નામ
પરિગ્રહ મહાવ્રત ॥ (૫) અમિલાપાના ૪ મૂત બનેલ પુદ્ગલના ધર્મ શબ્દાદિકને
કામગુણ કહે છે પણ મિથ્યાન્ન, પુષ્પ, ચન્દન આદિ પદાર્થો લુપ્તી લુપ્તી સીતે હિન્દિ
યોને સુખ આપે છે મિથ્યાત્થ, અવિરતિ, પ્રમાદ, કપાય અને યોગ, એ પાંચ આસ્રવ
દાર છે સઘકલ્પ, ચિરતિ, અમમત્તા, અકપાય અને અયોગ એ પાંચ સઘર ઘાર
છે, કારણ કે તેના આચરણથી નવાં કમોંનું આગમન બરહો જાય છે પ્રાણાતિપાત
આદિનું ચિરમણ ના સંચિત કમોંની નિર્જરા ૧૪ તેથી પ્રાણાતિપાત
ચિરમણ આદિ પાંચ નિર્જરાસ્થાન છે હંવોસમિતિ આદિ પાંચ સમિતિયોનું સ્વરૂપ
સૂત્રના અર્થમાં સ્પષ્ટ કરવામા આવ્યું છે પ્રદેશોના સમુદાયથી યુક્ત પદાર્થોને
અસ્તિકાય કહેવાય છે ધર્માદિક પાંચ રૂપને અસ્તિકાય કહે છે ॥સૂ ૧૮॥

ટીકા—‘इमीसे णं’ इत्यादि । अस्या खलुरत्नप्रभायां पृथिव्याम् अस्त्ये-
केषां नैरयिकाणां पञ्च पल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । तृतीयस्यां खलु पृथि-
व्याम् अस्त्येकेषां नैरयिकाणां पञ्चसागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । असुरकु-
माराणां देवानाम् अस्त्येकेषां पञ्चपल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । सौधर्मेशानेषु
कल्पेषु अस्त्येकेषां देवानां पञ्चपल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । सनत्कुमार
माहेन्द्रेषु कल्पेषु अस्त्येकेषां देवानां पञ्चसागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता ॥१९॥

मूलम्—जे देवा वायं सुवायं वायावत्तं वायप्पभं वायकंतं वाय-
वणं वायलेसं वायज्झयं वायसिं गं वायसिहं वायकूडं वाउत्तरवडिसगं
सूरं सुसूरं सूरवत्तं सूरप्पभं सूरकंतं सूरवणं सूरलेसं सूरज्झयं
सूरसिं गं सूरसिहं सूरकूडं सूरुत्तरवडिसगं विमाणं देवत्ताए उववण्णा,
तेसिं णं देवाणां उक्कोसेणं पंच सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता । ते णं
देवा पंचण्हं अद्धमासाणं आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा
नीससंति वा । तेसिं णं देवाणं पंचहिं वाससहस्सेहिं आहारहे
समुप्पज्झइ, सन्तेगइया भवसिद्धिया जीवा जे पंचहिं भवग्गहणेहिं
सिज्झिस्संति जाव अंतं करिस्संति ॥२०॥

‘इमीसे णं’ इत्यादि ।

टीकार्थ—इसरत्नप्रभापृथिवी में कितनेक नारकियों की स्थिति पांच
पल्योपम की है । तृतीयपृथिवी में कितनेक नारकियों की स्थिति पांच साग-
रोपम काल की है । असुरकुमार देवों में कितनेक असुरकुमारों की पांच
पल्य की स्थिति है । सौधर्मईशान कल्पों में कितनेक देवों की पांच पल्योपम
की स्थिति है । सनत्कुमार माहेन्द्र कल्पों में कितनेक देवों की पांच सागरोपम की
स्थिति है । इस सूत्र द्वारा यह मध्यम स्थिति प्रदर्शित की गई है ॥सू० १९॥

“इमीसे णं” इत्यादि ।

टीकार्थ—આ રત્નપ્રભા પૃથ્વીમાં કેટલાક નારકીઓની સ્થિતિ પાંચ પલ્યોપમની છે
ત્રીજી પૃથ્વીમાં કેટલાક નારકીઓની સ્થિતિ પાંચ સાગરોપમ કાળની છે અસુરકુમાર
દેવોમાં કેટલાક અસુરકુમારોની પાંચ પલ્યોપમની સ્થિતિ છે સૌધર્મ અને ઇશાન કલ્પોમાં
કેટલાક દેવોની પાંચ પલ્યોપમની સ્થિતિ છે સનતકુમાર અને માહેન્દ્ર કલ્પોમાં કેટલાક
દેવોની પાંચ સાગરોપમની સ્થિતિ છે. આ સૂત્ર દ્વારા આ મધ્યમ સ્થિતિ
ખતાવવામાં આવી છે. ॥સૂ. ૧૯॥

टीका—‘जे देवा’ इत्यादि । य देवा वात सुवात वातावर्त वातमम वातकात वातवर्ण वातछेद्य वातध्वज वातभृग वातसृष्ट वातकूट वातोत्तरावर्तसक सूर सुसूर सुरावर्त सूरमम सुरकान्त सुरवर्ण सुरछेद्य सुरध्वज सुरभृग सुरसृष्ट सुरकूट सुरोत्तरावर्तसक च विमानम्=पयु चतुर्विंशतिविमानेषु देवत्वेन उत्पन्नाः, तेषां स्वच्छ देवानां सोत्कृष्टा पञ्चसागरोपमा स्थितिः प्रकृष्टा । ते स्वच्छ देवा पञ्चानामादेमासानामन्ते आनन्ति=आन्तरं स्वासमाददति, पाणन्ति=आन्तरिकमुच्छ्वासं गृह्णन्ति, उच्छ्वसन्ति=वाह स्वासं गृह्णन्ति, नि श्वसन्ति=वह नि स्वासं गृह्णन्ति । तेषां स्वच्छ देवानां पञ्चभिर्वर्षसहस्रैराहारसंज्ञा समुत्पन्ना भवति । सन्त्येके भवसिद्धिं नीचा ये पञ्चभिर्मवग्रहणैः संस्पृशन्ति ‘जाव’ यावत्-यावच्छब्दात्, -मोत्स्पृशे, मोह्यन्ति, परिनिर्वात्यन्ति, सर्वदुःखानामन्तं करिष्यन्ति । २०॥

‘जे देवा’ इत्यादि ।

टीकार्थ—जो देव, वात१, सुवात२, वातावर्त३, वातमम४, वातकान्त५, वातवर्ण६, वातछेद्य७, वातध्वज८, वातभृग९, वातसृष्ट१०, वातकूट११, वातोत्तरावर्तसक१२, सूर१३, सुसूर१४, सुरावर्त१५, सूरमम१६, सुरकान्त१७, सुरवर्ण१८, सुरछेद्य१९, सुरध्वज२०, सुरभृग२१, सुरसृष्ट२२, सुरकूट२३, और सुरोत्तरावर्तसक २४ इन बीस विमानों में देव की पर्याय से उत्पन्न होते हैं, उन देवों की उत्कृष्ट स्थिति पाँच सागरोपम की होती है । वे देव आई २॥ माह के बाद पाँच आभ्यन्तर आत्मोच्छ्वास ग्रहण करते हैं, उन देवों को पाँचहजार वर्ष के बाद आहारसंज्ञा उत्पन्न होती है । उन देवों में कितनेक देव भवसिद्धि करते हैं जो पाँच भव ग्रहण करने के बाद सिद्ध अवस्था प्राप्त करने वाले होंगे यावत् समस्त दुःखों का अन्त करेंगे ॥सू० २०॥

“जे देवा” इत्यादि ।

टीका—जे देवा (१) वात, (२) सुवात, (३) वातावर्त, (४) वातमम (५) वातकान्त, (६) वातवर्ण (७) वातछेद्य (८) वातध्वज, (९) वातभृग (१०) वातसृष्ट (११) वातकूट (१२) वातोत्तरावर्तसक, (१३) सूर (१४) सुसूर (१५) सुरावर्त (१६) सूरमम, (१७) सुरकान्त (१८) सुरवर्ण (१९) सुरछेद्य (२०) सुरध्वज (२१) सुरभृग, (२२) सुरसृष्ट (२३) सुरकूट (२४) सुरोत्तरावर्तसक जो बीस विमानों में देवों की पर्याय से उत्पन्न पाँच, ते देवों की उत्कृष्ट स्थिति पाँच सागरोपम की होय छे ते देवों की भाँति साँसे लक्ष्मी लने लक्ष्मी आत्मोच्छ्वास से छे ते देवों ने पाँच हजार वर्षों आहारसंज्ञा उत्पन्न पाय छे ते देवों में उत्कृष्ट देवों भवसिद्धि होय छे जे पाँच भव क्षीने सिद्ध अवस्था प्राप्त करे त्यों की शरीरों समस्त दुःखों को अन्त करे त्यों सुधीनु लक्षण आगम सुखलक्षण ॥सू० २॥

अथ पृष्ठ समवायाङ्गमाह—

मूलम्—छ लेसाओ पणत्ता, तं जहा—कण्हलेसा नीललेसा काउलेसा तेउलेसा पम्हलेसा सुकलेसा । छ जीवनिकाया पणत्ता, तं जहा—पुढवीकाए, आऊकाए, तेउकाए, वाउकाए, वणस्सइकाए, तसकाए । छव्विहे वाहिरे तवोकम्मे पणत्ते, तं जहा—अणसणे ऊणोयरिया, वत्तीसंखेवो, रसपरिच्चाओ, कायफिलेसो, संलीणथा । छव्विहे अविंभतरे तवोकम्मे पणत्ते, तं जहा—पायच्छित्तं विणओ वेयावच्चं सज्झाओ ज्ञाणं उस्सग्गो । छ छाउमत्थिया समुग्घाया पणत्ता, तं जहा—वेयणासमुग्घाए कसायसमुग्घाए, मारणंतिअ समुग्घाए, वेउव्वियसमुग्घाए, ते य समुग्घाए, आहारसमुग्घाए । छव्विहे अत्थुग्गहे पणत्ते, तं जहा—सोइंदिय अत्थुग्गहे, चक्खुइंदिय अत्थुग्गहे, घाणेंदियअत्थुग्गहे, जिब्भंदिय अत्थुग्गहे, फासिंदिय अत्थुग्गहे, नोइंदियअत्थुग्गहे । कत्तियानक्खत्ते छतारे पणत्ते । असिलेसानक्खत्ते छतारे पणत्ते ॥२१॥

टीका—‘छ लेसाओ’ इत्यादि । षड्=षड्विधाः ‘लेसाओ’ लेश्याः=प्रज्ञप्ताः, तत्र लिङ्यते श्लिष्यते कर्मणा सह आत्माऽनेनेति लेश्या कृष्णादिद्रव्यसाचिव्यात् आत्मपरिणामविशेषः, तदुक्तम्—‘कृष्णादि-द्रव्यसाचिव्यात् परिणामो य आत्मनः । स्फटिकस्येव तत्राय लेश्या शब्दः प्रवर्तते’ इति । प्रज्ञप्ता=कथिताः, तद्यथा—कृष्णलेश्या, नीललेश्या, कापोतलेश्या, तेजोलेश्या, पद्मलेश्या, शुक्ल-

अत्र छठवां समवायांग कहते हैं—‘छ लेसाओ’ इत्यादि ।

छह लेश्याए कही गई हैं । वे इस प्रकार है—कृष्णलेश्या, नीललेश्या, कापोतलेश्या, तेजोलेश्या पद्मलेश्या, और शुक्ललेश्या । छह जीवनिकाय

छठे छठुं समवायांग छडे—‘छ लेसाओ’ इत्यादि ।

टीका—लेश्याओ छ बतावी छ ते आ प्रमाणे छ—

(१) कृष्णलेश्या (२) नीललेश्या, (३) कापोत लेश्या (४) तेजो लेश्या, (५) पद्म लेश्या अने (६) शुक्ल लेश्या जीवनिकाय छ छ ते आ प्रमाणे छ—(१) पृथ्वीकाय । १-१

छेद्या । पट्ट=पट्टविधा जीवनिष्काया =जीवानां निष्काया =समूहाः प्रज्ञप्ता =
 कथिता , तद्यथा-पृथिवीकाय अपकायः, तेजस्कायः, वायुकाय , वनस्पतिकाय ,
 प्रसकाय । पक्षिषु चाद्य तपः प्रज्ञप्तम् तपति दहति अष्टविभक्तमणि इति तपः,
 अष्टविभक्तमस्मकारकमित्यर्थ , तद्यथा-‘अणसणे’ अनशनम्=अशनम्=चतुर्विध
 आहार , तत्परित्यागोऽनशनम् , ‘ऊनोदरिया’ ऊनोदर्यम्=ऊन न्यूनमुदरं यस्य
 सः, तस्य भावः, स्वल्पाहारतेत्यर्थः, अवमोदर्यमित्यपि पाठः, ‘विचीससेवा’
 वृत्तिसंक्षेप =वृत्तिः-मह्यं तस्या सक्षेपः वृत्तिसंक्षेप , स च उत्तिससनिमित्ताद्यने
 कविष , ‘रसपरिचाओ’ रसपरित्यागः=रस्यते समास्त्राद्यते सादरमिति रसः-
 सधुरादिसंज्ञः, तस्य परित्याग =प्रत्याख्यान रस परित्यागः । ‘कायक्लेषा’
 कायक्लेषः=कायस्य-शरीरस्य क्लेशो बाधनम्, स तु बीरासनात्कटुकासनके
 श्लक्ष्णनादिरनेकविष । ‘संलीजया’ संलीनता=कूर्मवदिन्द्रियगोपनता । अनत्र
 नादिवास्तपसा वाक्शरीरपरिक्षोपणेन सङ्गत्याग-शरीरलाघवन्द्रियविजय-
 संयमरक्षण-कर्मनिर्जरादिकं भवति । छम्बिहे’ इत्यादि-पक्षिधमाम्यन्तरं तपः
 कर्म प्रज्ञप्तम्, आभ्यन्तरत्वं हि-चित्तनिरोध प्रापान्येन कर्मसंपन्नकारणत्वात्,
 तद्यथा-‘पापच्छिन्न’ पापश्चित्त, पापोच्छेदकारित्वात्पापश्चित्तम्, तच्च आलोचना
 दानेकविषम् । विणायो’ विनयः-विनीयतेऽष्टविध कर्म येनासौ विनयः ज्ञाना ने
 नेऽविष । ‘वैयावृत्त्य’ वैयावृत्त्य=भुतोपदशन व्यावृत्तः-सेवार्थं प्रवृत्त , तस्य भावः,
 वैयावृत्त्यम् बालस्नानादीनां सेवाकरणम् । ‘सञ्जाम्रो’ स्वाध्याय =मुष्टु=मर्या
 दयाऽकालवेलापरिहारेण पौरुष्यपेक्षया वाऽऽध्याय स्वाध्यायः, मूलमुन्नत्यावर्त
 नमित्यर्थ । ज्ञाणे’ ध्यान बाह्यावचित्तानामागमविधानेन निरोधो ध्यानम्, तच्च
 धर्मध्यानाद्यनेकविषम् । ‘वितस्सर्गा’ व्युत्सर्ग =विश्लेषेण वितर्गः=व्युत्सर्गः,
 भस्तीधारादि निवारणार्थं कायोत्सर्गो धर्मधुक्लध्यायिन कायोत्सर्गो वा । ‘छ

कहे गये हैं, वे इस प्रकार हैं-पृथिवीकाय, अपकाय, तेजस्काय, वायुकाय,
 वनस्पतिकाय और प्रसकाय । छह प्रकार के पादा तप कहे गये हैं
 वे इस प्रकार हैं-अनशन, ऊनोदरिका, वृत्तिसंक्षेप रसपरित्याग, कायक्लेषा
 और संलीनता । छह प्रकार के आभ्यन्तर तप कहे गये हैं, वे इस प्रकार
 से हैं प्रायश्चित्त, विनय, वैयावृत्त्य, स्वाध्याय, ध्यान, और व्युत्सर्ग । छह

(२) अपकाय (३) तेजस्काय, (४) वायुकाय, (५) वनस्पतिकाय, अने (६) प्रसकाय छ
 प्रकारना पादा तप जताव्या छ ते आ प्रमाणे छे-(१) अनशन (२) उच्छेदिका
 (३) वृत्तिसंक्षेप, (४) रसपरित्याग (५) काय क्लेश अने (६) संलीनता छ प्रकारना
 आभ्यन्तर तप कहे छ ते आ प्रमाणे छे-(१) प्रायश्चित्त, (२) विनय (३) वेवा
 वृत्त्य, (४) स्वाध्याय, (५) ध्यान अने (६) व्युत्सर्ग छ अष्टविध संयमपात छ, ते

षट्=षड्विधाः 'छाउमत्थिया' छात्रस्थिकाः—छात्रस्थोऽकेवली, तत्र भवाः छात्र-
स्थिकाः=छात्रस्थसमुद्भवाः 'समुग्वाया' समुद्घाताः प्रज्ञप्ताः, समुद्घातो हि यथा-
स्वभावस्थितानामात्मप्रदेशानां वेदनादिभिः कारणैरन्यथा परिणमनम् । समुद्घातानां
षड्विधत्वं दर्शयति—वेदनासमुद्घातः, कषायसमुद्घातः, मारणान्तिसमुद्घातः,
वैकुर्विकसमुद्घातः, आहारकसमुद्घातः तैजससमुद्घातः, । षड्विधोऽर्थावग्रहः प्रज्ञप्तः-
अवग्रहणमवग्रहः—अर्थस्य=स्पर्शरसगन्धवर्णशब्दाद्यात्मकस्य वस्तुनः अवग्रहः=अर्था-
वग्रहः=सकलरूपादिविशेषनिरपेक्षानिर्देश्य सामान्यमात्ररूपार्थग्रहणम्=षड्विधत्व-
मस्य दर्शयति—'सोइंदिय' इत्यादिना—श्रोत्रेन्द्रिया यावत् नो इन्द्रियार्थावग्रहः,
चक्षुरिन्द्रियार्थावग्रहः, घ्राणेन्द्रियार्थावग्रहः, जिह्वेन्द्रियार्थावग्रहः, स्पर्शेन्द्रियार्था-
वग्रहः, नो इन्द्रिय=इन्द्रियसदृशं मनइत्यर्थः, नो शब्दः सदृशार्थकः मनस इन्द्रि-
यवर्थपरिच्छेदकत्वात्तस्य नो इन्द्रियत्वम् । तस्य अर्थो विषयः, नो इन्द्रियार्थः,
तदवग्रहः, नो इन्द्रियार्थावग्रहः । कृत्तिकानक्षत्रं षट्त्तरं प्रज्ञप्तम् । अश्लेषानक्षत्रं
षट्त्तरं प्रज्ञप्तम् ॥ सू. १९ ॥

छात्रस्थिक समुद्घात हैं, वे इस प्रकार हैं—वेदनासमुद्घात, कषायसमुद्घात,
मारणांतिकसमुद्घात, वैक्रियसमुद्घात, तैजससमुद्घात, और अहारक-
समुद्घात । छह प्रकार का अर्थावग्रह कहा गया है, वह इस प्रकार है—
श्रोत्रेन्द्रिय अर्थावग्रह, चक्षुरिन्द्रिय अर्थावग्रह, घ्राणेन्द्रिय अर्थावग्रह, जिह्वे-
न्द्रिय अर्थावग्रह, स्पर्शनेन्द्रिय अर्थावग्रह और नोइन्द्रिय अर्थावग्रह ।
कृत्तिका नक्षत्र और अश्लेषानक्षत्र ये दोनों नक्षत्र छह छह ताराओं
वाले कहे गये हैं ।

भावार्थ—कषाय के उदय से अनुरंजित योग की प्रवृत्ति का नाम
लेश्या है । इसके प्रभाव से आत्मा कर्मों के साथ संबंधित हो जाती है ।
लेश्या दो प्रकार की होती है—एक द्रव्यलेश्या और दूसरी भाव लेश्या ।

आ प्रमाणे छे—(१) वेदना समुद्घात, (२) कषय समुद्घात, (३) मारणांतिक समुद्घात
(४) वक्रिय समुद्घात, (५) तैजस समुद्घात, अने (६) आहारसमुद्घात, छ प्रकारने
अर्थावग्रह जातावेळ छे, ते आ प्रमाणे छे—(१) श्रोत्रेन्द्रिय अर्थावग्रह (२) चक्षुरि-
न्द्रिय अर्थावग्रह, (३) घ्राणेन्द्रिय अर्थावग्रह, (४) जिह्वेन्द्रिय अर्थावग्रह, (५) स्प-
र्शेन्द्रिय अर्थावग्रह अने (६) नोइन्द्रिय अर्थावग्रह, कृत्तिका नक्षत्र अने अश्लेषा
नक्षत्र छे अने नक्षत्रा छे, छ ताराओ वाणा छे.

भावार्थ—कषायना उदयशी अनुरंजित योगशी प्रवृत्तिनुं नाम लेश्या छे तेना
प्रभावशी आत्मा कर्मोनी साथे संबंधित थछंनय छे लेश्या जे प्रकारनी छाय छे—
[१] द्रव्यलेश्या अने (२) भावलेश्या. द्रव्य लेश्या आद्य शरीरने रज छे. भाव-

દ્રવ્યલેહ્યા યામ્ દારીરકા રગ હૈ । માંચલેહ્યા આત્મા ક શુમ અશુમ પરિણામ હૈ । जिस प्रकार स्फटिकमणि में जपापुष्पादि द्रव्यकी सहायता से विशेष प्रकार का परिणमन हो जाता है उसी प्रकार बाह्य कृष्ण आदि द्रव्यकी सहायता से आत्मा में जो परिणमन होता है वह लेह्या है । कृष्ण, नील, कापोत, ये तीन अशुमलेह्याएँ हैं और तेज, पद्म पद्म शुक्ल, ये तीन शुमलेह्याएँ हैं । जीवनिर्माण का तात्पर्य है छद्म-प्रकार के जीवों का समुदाय । ऐसे तो दो प्रकार का ही जीव है । अस और स्थावर, परन्तु यहाँ पर जीव में पटप्रकारता धोचन करने के लिए स्थावर निर्माण के पृथिवीकाय आदि ये पाँच भेद किये हैं । “तेजोवायुमिन्द्रियाद्यश्च प्रसा” इस सूत्र के अनुसार यद्यपि तेज और वायुकाय को भी प्रस कहा गया है, परन्तु यहाँ पर जो इन्हें प्रसकाय में परिगणित नहीं किया गया है उसका कारण यह है कि इन में प्रस नामकर्म का उदय नहीं है । स्थावर नाम कर्म का ही उदय है । शास्त्र में जो इन्हें प्रस कहा गया है वह गति प्रस की अपेक्षा लेकर कहा है । स्थावर नामकर्म का उदय होने पर भी प्रस जैसी गति होने के कारण जो प्रस कहलाते हैं वे गतिप्रस हैं । लब्धिप्रस नहीं । लब्धिप्रस तो प्रस नाम कर्म के उदयवाले जीव ही होते हैं । वासनाओं को क्षीण करने के लिये

લેહ્યા આત્માના શુભ અશુભ પરિણામ છે જે પ્રમાણે સ્ફટિક મણિમાં જપાપુષ્પ આદિ દ્રવ્યની મદદથી વિશેષ પ્રકારનું પરિણમન થઈ જાય છે તે જ પ્રમાણે બાહ્ય કૃષ્ણ બાદિ દ્રવ્યની મદદથી આત્માના જે પરિણામ થાય છે તે લેહ્યા છે, કૃષ્ણ, નીલ કપોત, જે ત્રણ અશુભ લેહ્યાઓ છે અને તે જ પદ્મ અને શુભ એ ત્રણ શુભ લેહ્યાઓ છે જીવનિકાવ્ય એટલે છ પ્રકારના જીવોનો સમુદાય જામ તો તે પ્રકારના જ જીવો છે-ત્રણ અને સ્થાવર, પદ્મ બહી જીવોના છ પ્રકાર સમજાવવા માટે સ્થાવર નિર્માણના પૃથ્વીકાય આદિ પાંચ ભેદ ક્યા છે તેજોવાયુમિન્દ્રિયાદિ ચત્ર પ્રસાઃ” જે સૂત્ર પ્રમણે એ કે તેજ અને વાયુકાયને પદ્મ ત્રણ કહેવામાં આવેલ છે, પદ્મ બહી ત્રણ કાયમાં તેમની ગણતરી કરવામાં આવી નથી તેનું કારણ એ છે કે તેમનામાં ત્રણ નામક્રમનો ઉદય નથી સ્થાવર નામક્રમનો જ ઉદય છે શાસ્ત્રમાં એમને જે ત્રણ કહેલ છે તે ગતિપ્રસની અપેક્ષાએ કહેલ છે સ્થાવર નામ ક્રમોને ઉદય થતા પદ્મ ત્રણના જેવી ગતિ હોવાને કારણે જેમને ત્રણ કહેવામાં આવે છે ગતિપ્રસ છે, લબ્ધિપ્રસ નહી ત્રબ્ધિપ્રસ તો ત્રણ નામકર્મના ઉદય થાળા જીવો હોય છે વાસનાઓને શીલ કરવાને માટે તથા સમુચિત આધ્યાત્મિક

तथा समुचित आध्यात्मिक बल की साधना के लिये इन्द्रिय और मन को जिन उपायों से तपाया जाता है वे सभी तप है। तप के बाह्य-और आभ्यन्तर, ऐसे दो भेद हैं बाह्य जीवों को दो देखने में आवे तथा जिनमें शारीरिक क्रिया की प्रधानता रहे और जो बाह्य द्रव्यों की अपेक्षा से युक्त हों वे बाह्यतप है, और जिनमें बाह्य द्रव्यों की अपेक्षा न हो और इसी कारण जो बाह्यजनों की दृष्टि के अविषय हों वे आभ्यन्तर तप हैं। बाह्यतप आभ्यन्तरतप की पुष्टि का कारण होता है। बाह्यतप के छह भेद इस प्रकार हैं—नियमरूप से चतुर्विध आहार का परित्याग करना इसका नाम अनशन है^१। भूख से कम आहार लेना इसका नाम ऊर्णोदय है^२। भिक्षा का संक्षेप करना इसका नाम वृत्तिसंक्षेप है, यह उत्क्षिप्त आदि के भेद से अनेक प्रकार का है।^३ घी दूध आदि का परित्याग कर देना इसका नाम रसपरित्याग है^४। ठंडी गरमी या विविध आसनादि द्वारा शरीर को कष्ट देना इसका नाम कायक्लेश है। यह वीरासन, उत्कुटकासन और केशलुचन आदि के भेद से अनेक प्रकार का है।^५ बाधारहित एकान्तस्थान में रहना अथवा कूर्म की तरह इन्द्रियों का गोपन करना इसका नाम संलीनता है^६। आभ्यन्तर तप के छह भेद

भजनी साधनाने भाटे ध्न्द्रियो तथा मनने जे उपायो वडे तपाववामा आवे छे ते उपायाने तप कहे छे तपना भाह्य अने आभ्यन्तर जेवा जे भेद छे जे भाह्य जेवना जेवामा आवे तथा जेमा शारीरिक क्रियानी प्रधानता रहे तथा जे भाह्य द्रव्योनी अपेक्षाथी युक्त होय ते भाह्यतप छे, अने जेमा भाह्य द्रव्योनी अपेक्षा न होय अने जेमा कारणे जे भाह्यजनोंनी दृष्टिने विषय अनि न शके ते तपने आभ्यन्तर तप कहे छे भाह्यतप आभ्यन्तर तपनी पुष्टिनुं कारण अने छे, छे भाह्य तपना छ भेद आ प्रमाणे छे—(१) नियमथी चार प्रकारना आहारनो त्याग करवो तेनु नाम अनशन छे (२) भूख होय तेना करता पणु ओओ आहार लेवो तेनु नाम उर्णोदय छे [३] भिक्षानो संक्षेप करवो तेनु नाम वृत्ति संक्षेप छे, ते उत्क्षिप्त निक्षिप्त आदिना भेदथी अनेक प्रकारनु छे, (४) घी, दूध वगैरेना परित्याग करवो तेनु नाम रसपरित्याग छे (५) शीत, गरमी के विविध आसनादि द्वारा शरीरने कष्ट आपवु तेनु नाम कायक्लेश छे तेना बी सन, उत्कुटकासन, अने केशलुचन आदि अनेक भेद छे (६) बाधारहित एकान्तस्थानमा रहेवु अथवा कायजानी जेम ध्न्द्रियोनु गोपन (आकुचन) करवु तेनु नाम संलीनता छे, आभ्यन्तर तपना छ भेद आ प्रमाणे छे—

યે હૈ-પારણ ક્રિયે ક્રુપ વ્રત મેં પ્રમાદ્ જનિત દોષોં કા જિસસે ઘોષન ક્રિયા જા સકે ઉમ્મકા નામ પ્રાયશ્ચિષ્ઠ હૈ, યહ બાલોચના આદિ કે મેદ સે અનેક પ્રકાર કા હૈ। જ્ઞાન આદિ સદ્ગુણોં મેં યદુમાન રમ્બના હસકા નામ વિનય હૈ ૨। યામ્ય સાધનોં કો જુટાકર અથવા અપને આપકો કામ મં લગાકર શુરુ આદિ પૂજ્યજનોં કી સેવા શુભૂપા કરના ચૈયાદૃત્ય હૈ। વિનય ઔર ચૈયાદૃત્ય મં કેવલ इतना ही अन्तर है कि विनय तो मान सिक् धर्म है और चैयादृत्य शारीरिक धर्म है ३। જ્ઞાન પ્રાપ્તિ કે લિયે વિવિધ પ્રકાર કા અમ્યાસ કરના તથા મૂલસૂત્રોં કો પઢના હસકા નામ સ્વાધ્યાય હૈ ૪। ચિત્ત કે વિક્ષેપોં કા ત્યાગ કરના અથવા સૂપાર્ય કા ચિન્તન કરના બી ધ્યાન હૈ ૫। ઔર અતીચારાદિ નિવારણ કરને કે લિયે કાપો ત્સર્ગ કરના બ્યુત્સર્ગ હૈ। અથવા ધર્મધ્યાની શુક્લધ્યાની કે કાપોત્સર્ગ કો બ્યુત્સર્ગ કહતે હૈં। ૬। મૂલ શરીર કો ન છોડકર આત્મા કે પ્રદર્શોં કા બાહર નિકાલના હસકા નામ સમુદ્ધાન હૈ। યહ સમુદ્ધાત સાત પ્રકાર કા હોતા હૈ, इनमें जो केवलिसमुद्धान होता है उसकी यहाँ विवक्षा नहीं है, क्योंकि वह केवली के सिवाय छप्रस्थों में नहीं पाया जाता है। યહાં તો જો છપ્રસ્થ જીવોં મેં પાપે જાતે હૈં ઉનકા ઘર્ગીકરણ ક્રિયા ગયા હૈ। હમલિયે યહ છહ પ્રકાર કા હૈ, यह इस प्रकार-तीव्र वेदना के निमित्त

(૧) ખાશ્વકા કરેલ વ્રતમાં પ્રમાદ્ જનિત દોષોત્તુ બેનાથી યોષન કરવામાં આવે તેનું નામ પ્રયશ્ચિષ્ઠ છે તે બલોચના અઢિના લેકથી અનેક પ્રકારનું છે (૨) જ્ઞાન આદિ સૂત્રોલોમાં બદુમાન રાખવું તેનું નામ વિનય છે (૩) યોગ્ય સાધનાને એકત્ર કરીને અથવા પોતાની બાવથી શુરુ આદિ પૂજ્ય જનોની સેવા શુભૂપા કરવી તેને ચૈયાદૃત્ય કહે છે વિનય અને ચૈયાદૃત્યમાં એટલી જ તફાવત છે કે વિનય તો માનસિક ધર્મ છે અને ચૈયાદૃત્ય શારીરિક ધર્મ છે (૪) જ્ઞાનપ્રાપ્તિને માટે વિવિધ પ્રકારનો અમ્યાસ કરવો તથા મૂળ સૂત્રોનું અધ્યયન કરવું તેનું નામ સ્વાધ્યાય છે (૫) ચિત્તના વિક્ષેપોને ત્યાગ કરવો તેનું અથવા સૂત્રાઈનું ચિંતન કરવું તે પણ ધ્યાન છે (૬) અતીચાર આદિના નિવારણ માટે કાપોત્સર્ગ કરવો તેને બ્યુત્સર્ગ કહે છે મૂળ શરીરને છોડવા વિના આત્માના પ્રદેશોનું બહાર કાઢવું તેનું નામ સમુદ્ધાત છે તે સમુદ્ધાત સાત પ્રકારના હોય છે, તેમાંનો જે કેવલી સમુદ્ધાત છે તેનું વર્ણન અહિં કર્યું નથી, કારણકે તે કેવલી સિવાયના છપ્રસ્થોમાં ભેગા મળતો નથી અહીં તો જે છપ્રસ્થ જીવોમાં હોય છે તેનું વર્ગીકરણ કરવામાં આવ્યું છે તેથી તે છ પ્રકારનો છે તે છ પ્રકારો આ પ્રમાણે છે-(૧) તીવ્ર વેદનાને કારણે જે આત્માના પ્રદેશોનું બહાર

को लेकर जो आत्मा के प्रदेशों का शरीर से बाहर निकालना होता है उसका नाम वेदना समुद्घात है १। क्रोधादिकपाय के तीव्र उदयरूप निमित्त को लेकर जो आत्मा के प्रदेशों का पर का घात करने के लिये बाहर निकलना होता है उसका नाम कषायसमुद्घात है २। मरण होने के कुछ समय पहिले जो समुद्घात होता है वह सारणांतिक समुद्घात है ३। अणिमा, महिमा आदि नाना प्रकार की शारीरिक विक्रियाओं को करने के लिये आत्मा के प्रदेश बाहर निकलते हैं उसका नाम वैक्रिय समुद्घात है ४। तैजस समुद्घात दो प्रकार का होता है—एक शुभ तैजस दूसरा अशुभतैजस। जगत् को मारी रोग आदि से पीडित देख कर संयमी महातेजस्वी साधु के हृदय में प्राणियों की रक्षार्थ दया उत्पन्न होने पर उनको बचाने के लिये शुभतैज का निकालना शुभ तैजस समुद्घात है। और जो क्रोधादि कपाय के निमित्त को लेकर भस्म करने के लिये तेज का निकालना अशुभ तैजस समुद्घात है ५। छठवें गुणस्थानवर्ती किसी परम तपस्वी मुनीजन के लिये शंका आदि के होने पर जो उनके शरीर से एक हाथ का पुतला निकलता है कि जो पुरुषाकार होता है और शंका की निवृत्ति ही अपने उद्गम स्थान में प्रविष्ट हो जाता है उसका नाम आहारक समुद्घात है ३। अर्थावग्रह के छह भेद ये हैं—नाम जाति आदि की विशेष कल्पना से रहित सामान्य मात्र रूप अर्थ का जो अवग्रह-ग्रहण होता

કાઢવાનું બને છે તેનું નામ ‘વેદના સમુદ્ઘાત’ છે (૨) ક્રોધાદિ કષાયના તીવ્ર ઉદયરૂપ નિમિત્તને લીધે જે આત્માના પ્રદેશોનું અન્યના ઘાતને માટે બહાર કાઢવાનું થાય છે તે ‘કષાય સમુદ્ઘાત’ કહે છે (૩) મૃત્યુ પહેલા થોડા સમયે જે સમુદ્ધાન થાય છે તેને ‘મારણાતિક સમુદ્ઘાત’ કહે છે અણિમા, મહિમા આદિ વિવિધ પ્રકારની શારીરિક વિક્રિયાઓ કરવને માટે આત્માના પ્રદેશો બહાર નીકળે છે, ‘વૈક્રિય સમુદ્ઘાત’ કહે છે (૪) તૈજસ સમુદ્ઘાતના બે પ્રકાર છે—(૧) શુભ તૈજસ અને બીજો અશુભ તૈજસ જગતને મહામાર્ગ આદિથી પીડીત બેઠેને સવમી મહાતેજસ્વી સાધુના હૃદયમાં પ્રાણ-ઓની રક્ષાર્થે દયા ઉત્પન્ન થવાથી તેમને બચાવવાને માટે શુભ તૈજને છોડવું તેને “શુભ તૈજસ સમુદ્ઘાત” કહે છે અને ક્રોધાદિ કષાયને કારણે ભસ્મ કરવાને માટે તેજને છોડવું તેનું નામ ‘અશુભ તૈજસ સમુદ્ઘાત’ છે (૬) છઠ્ઠા ગુણસ્થાનવર્તી કોઈ કોઈ પરમ તપસ્વી મુનિજનને શંકા આદિ ઉત્પન્ન થતા શરીરમાંથી એક હાથનું પુતળું નીકળે છે તેનો આકાર પુરુષ જેવો હોય છે શંકાનું નિરાકરણ થતા જ તે પોતાના ઉડા સ્થાનમાં પ્રવેશ કરે છે તેનું નામ “આહારક સમુદ્ઘાત” છે અર્થાવગ્રહના આ પ્રમાણે છ ભેદ છે—નામ, જાતિ આદિની વિશેષ કલ્પનાથી રહિત સામાન્ય માત્ર અર્થનો જ જે અવગ્રહ થાય છે—જ્ઞાન થાય છે તે અવગ્રહને ‘અર્થા-

જ્ઞાન છે-તેના નામ અર્થાવગ્રહ છે. અવગ્રહ અર્થાવગ્રહ ઓર વ્યવજ્ઞનાવગ્રહ
 કે મેદ સદોમકાર કા હોતા છે. અર્થ-પદાર્થ-બહુ, વહુવિષ ક્ષિપ, અનિ
 શ્રિત, અસંદિગ્ધ ઓર ધ્રુવ, હસ તરહ છ-મકાર કે છે. દો યા દો સે
 અધિક પદાર્થો કા જો અવગ્રહ રૂપ જ્ઞાન હોતા છે વહ વહુગ્રાહી અવગ્રહ
 જ્ઞાન છે. વહુત પ્રકાર કે પદાર્થો કા જો અવગ્રહ રૂપ જ્ઞાન હોતા છે વહ
 વહુવિષગ્રાહી અવગ્રહજ્ઞાન છે. શીઘ્રતા સે પદાર્થ કા જો જ્ઞાન હોતા છે
 વહ ક્ષિપગ્રાહી અવગ્રહ છે. સ્વોપશમ આદિ કી મંદતા સે જો પદાર્થ
 કા શીઘ્ર જ્ઞાન નહીં હોતા છે તમકા નામ અક્ષિપગ્રાહી અવગ્રહ છે. અનિ
 શ્રિતપદાર્થ કા જો અવગ્રહરૂપ જ્ઞાન હોતા છે વહ અનિશ્રિતગ્રાહી અવગ્રહ
 છે. અસંદિગ્ધ પદાર્થ કા જો અવગ્રહરૂપ જ્ઞાન હોતા છે વહ અસંદિગ્ધગ્રાહી
 અવગ્રહજ્ઞાન છે તથા ધ્રુવપદાર્થ કા જો જ્ઞાન હોતા છે વહ ધ્રુવગ્રાહી અવ
 ગ્રહજ્ઞાન છે. હસ પ્રકાર કે હન પદાર્થો કા જો વહ અવગ્રહરૂપ જ્ઞાન હોતા
 છે વહ પાંચ ઇન્દ્રિય ઓર છટે મન સે હોતા છે. હમલિયે અર્થાવગ્રહ
 છહ પ્રકાર કા હો જાતા છે. શાસ્ત્ર મેં વહુ આદિક કે મેદ સે અર્થ પારહ
 પ્રકાર કે કહે ગયે છે. પૂર્વોક્ત યે છ ઓર હનકે ઠરેદે ઇક, ઇક
 વિષ આદિ ઓર છહ મંદ છે. હનકા મી જો અવગ્રહરૂપ જ્ઞાન હોતા
 છે વહ મી હસી પ્રકાર પાંચ ઇન્દ્રિય ઓર ઇક મન સે હોતા છે, હસલિય

વગ્રહ કહે છે અવગ્રહના બે પ્રકાર છે-અર્થાવગ્રહ અને વ્યવજ્ઞનાવગ્રહ અર્થ-પદાર્થ-
 બહુ, બહુવિષ, ક્ષિપ, અનિશ્રિત, અસંદિગ્ધ અને ધ્રુવ, એમ છ પ્રકારનો છે. બે કે
 બેથી વધારે પદાર્થોનું જે અવગ્રહ રૂપ જ્ઞાન થાય છે તે બહુગ્રાહી અવગ્રહ જ્ઞાન છે. ઘણા
 પ્રકારના પદાર્થોનું જે અવગ્રહરૂપ જ્ઞાન થાય છે તે બહુવિષગ્રાહી અવગ્રહજ્ઞાન છે.
 શીઘ્રતાથી પદાર્થનું જે જ્ઞાન થાય છે તે ક્ષિપગ્રાહી અવગ્રહ છે. સ્વોપશમ આદિની મંદ
 તાથી પદાર્થનું જે શીઘ્ર જ્ઞાન થતું નથી તેનું નામ અક્ષિપગ્રાહી અવગ્રહ છે. અનિશ્રિત
 પદાર્થનું જે અવગ્રહરૂપ જ્ઞાન થાય છે તે અનિશ્રિતગ્રાહી અવગ્રહ છે. અસંદિગ્ધ
 પદાર્થનું જે અવગ્રહરૂપ જ્ઞાન થાય છે તે અસંદિગ્ધગ્રાહી અવગ્રહ જ્ઞાન છે. તથા ધ્રુવ
 પદાર્થનું જે જ્ઞાન હોય છે તે ધ્રુવગ્રાહી અવગ્રહ જ્ઞાન છે. આ પ્રકારના તે પદાર્થોનું
 જે અવગ્રહરૂપ જ્ઞાન થાય છે તે પાંચ ઇન્દ્રિયો અને છઠું મનથી થાય છે. તેથી અર્થો
 વગ્રહ છ પ્રકારનો થાય છે. શાસ્ત્રમાં બહુ આદિના લેખથી અર્થ બાર પ્રકારના બતા
 વ્યા છે. પૂર્વકથિત તે છ લેખ અને તે દરેકનો ઉલ્લેખ એક એક લેખ એમ બીજા
 છ લેખ પડે છે. તેમનું પણ જે અવગ્રહરૂપ જ્ઞાન હોય છે તે પણ પાંચ ઇન્દ્રિયો
 અને એક મનથી થાય છે, તેથી અર્થોવગ્રહ છ પ્રકારનો બતા થો છે. વ્યવજ્ઞનાવગ્રહ

मूलम्—इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरयि-
य णं छ पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता । तच्चाए णं पुढवीए अत्थेग-
इयाणं नेरइयाणं छ सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता । असुरकुमाराणं
देवाणं अत्थेगइयाणं छ पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता । सोहम्मीसा-
णेसु कप्पेसु अत्थेगइयाणं देवाणं छपलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता ।
रुणंकुमारमाहिंदेसु अत्थेगइयाणं देवाणं छ सागरोवमाइं ठिई
पण्णत्ता ॥ २० ॥

टीका—‘इमीसे’ इत्यादि । अस्या खलु रत्नप्रभायां पृथिव्यामस्त्येकेषां
नैरयिकाणां पट्पल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । तृतीयस्या खलु पृथिव्यामस्त्येकेषां
नैरयिकाणां पट् सागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । असुरकुमाराणां देवानामस्त्ये-
केषां पट् पल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । सौधर्मेगानेषु कल्पेषु अस्त्येकेषां
देवानां पट्पल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । सनत्कुमारमाहेन्द्रेषु अस्त्येकेषां देवानां
पट्सागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता ॥२०॥

अर्थावग्रह छह प्रकार का कहा गया है । व्यजनावग्रह मन और
चक्षु इन्द्रिय से नहीं होता है इसलिये उसके चार ही भेद होते हैं ।
इन सब का विशेष खुलाशा शास्त्र से जानना चाहिये ॥१९॥

टीकार्थ—‘इमीसे णं’ इत्यादि ।

इस रत्नप्रभा पृथिवी में कितनेक नारकियों की स्थिति छह पल्यो-
पम की कही गई है । तृतीय पृथिवी में भी कितनेक नारकियों की छह
सागरोपम की स्थिति कही गई है । असुर कुमार देवों में भी कितनेक
देवों की स्थिति छह पल्योपम की कही गई है । सौधर्म, ईशान कल्प
में भी कितनेक देवों की स्थिति छह पल्योपम की कही गई है । इसी तरह

मन અને ચક્ષુ ઇન્દ્રિય વડે થતો નથી, તેથી તેના ચાર જ ભેદ છે તે જાણવો વધુ
ખુલાસો શાસ્ત્રોમાથી જાણી લેવો ॥૧૯॥

‘इमीसेणं’ इत्यादि ।

टीकार्थ—आ रत्नप्रभा पृथ्वीमा डेटलाक ना-कीओना स्थिति छ पल्योपमनी दशोवी
छ त्राल पृथ्वीमा पणु डेटलाक नारकीओनी स्थिति छ सागरोपमनी जनाववामा आवी
छ असुरकुमार देवोमा पणु डेटलाक देवोनी स्थिति छ पल्योपमनी डहेल छ नौधर्म
अने ईशान कल्पोमा पणु डेटलाक देवोनी स्थिति छ पल्योपमनी डहेल छ—એ જ

મૂઝ- જે દેવા સયમુ સયમૂરમણ ઘોસ સુઘોસ મહાઘોસ કિઠિઘોસ વીર સુવીર વીરગત વીરસેણિય વીરાવત્ત વીરપ્પમ વીરકત્ત વીરવણ્ણ વીરલેસ વીરજ્ઞય વીરસિંગ વીરસિદ્ધ વીરકૂટ વીરુત્તરવહિસંગ વિમાણ દેવત્તાપ્પ ઉવવણ્ણા, તેસિં ન દવાણ ઉક્કોસેણ છ સાગરોવમાહ ઠિઈ પળ્ણત્તા । તે નં દેવા છળ્ણ અદ્ધમાસાણ આણમતિ વા । પાણ મતિ વા ડસસતિ વા નીસસતિ વા । તેસિં ન દેવાણ છહિં વાસસ હસ્સેહિં આહારદે સમુપ્પજ્ઞહ । સતેગદયા ભવસિદ્ધિયા જીવા જે છહિં ભવગ્ગહણેહિં સિજ્ઞિસસતિ જાવ સવ્વદુક્ખાનામન્ત કરિસસતિ ॥સૂ ૨૧॥

ટીકા—‘જે દેવા’ इत्यादि । य द्वाः स्वयंभुव स्वयभूरमण घोप सुयापं कृष्टियोपं वीरं सुवीरं वीरगतं वीरसैनिकं वीरावर्त्तं वीरप्रमं वीरकान्तं वीरवर्णं वीरलेश्य वीरज्जं वीरभृज् वीरसृष्टं वीरकूटं वीरावरावतंसक विमान= एतेषु विंशतिविमानेषु देवत्वेनोत्पन्ना, तेषां स्वच्छ देवानामुत्कर्षेण पद्माग रोपमानि स्थितिः पद्मता । ते स्वच्छ देवाः पद्मामर्धमासानामन्ते आनन्ति वा सनत्कुमार माहेन्द्र करणों में भी कितनेक देवा की छ सागरोपम की स्थिति कही गई है ॥सू० २०॥

‘જો દેવા’ इत्यादि ।

ટીકાર્થ—જો દેવ સ્વયમૂ, ૧ સ્વયંમૂરમણ, ૨ ઘોપ, ૩ સુઘોપ, ૪ મહાઘોપ, ૫ કૃષ્ણિઘોપ, ૬ વીર, ૭ સુવીર, ૮ વીરગત, ૯ વીરસૈનિક, ૧૦ વીરાવર્ત, ૧૧ વીર પ્રમ, ૧૨ વીરકાન્ત, ૧૩ વીરવર્ણ, ૧૪ વીરલેશ્ય, ૧૫ વીરજ્જ, ૧૬ વીરભ્રજ, ૧૭ વીરસૃષ્ટ, ૧૮ વીરકૂટ, ૧૯ વીર વીરોચનાવતસક ૨૦, इन २० बीस विमानों में देव की पर्याय से उत्पन्न होते हैं, उन देवों की प्रभाज्जे सनत्कुमार अने माहेन्द्र करणोभा पद्म कटलाक देवोनी छ सागरोपमनी स्थिति कहेव भां आवी छ ॥सू २०॥

‘જો દેવા’ इत्यादि ।

ટીકાર્થ—જે દેવો સ્વયમૂ, સ્વયમૂરમણ, ઘોપ, સુઘોપ, મહાઘોપ કૃષ્ણિઘોપ, વીર સુવીર, વીરગત, વીરસૈનિક, વીરાવર્ત, વીરપ્રમ, વીરકાન્ત, વીરવર્ણ, વીરલેશ્ય વીરજ્જ, વીરભ્રજ, વીરસૃષ્ટ, વીરકૂટ અને વીરોચનાવતસક, એ બીસ વિમાનોમાં દેવની પદ્મોપે ઉત્પન્ન થાય છે તે દેવોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ છ સાગરોપમની હોય છે તે દેવો છ મહિને

प्राणन्ति वा, उच्छ्वसन्ति वा निःश्वसन्ति वा । तेषां खलु देवाना पटुभिर्भयमहस्रैरा-
हारसंज्ञा समुत्पद्यते । सन्त्येके भवसिद्धिका जीवाः, ये पटुभिर्भयग्रहणैः सेत्स्यन्ति,
'जाव' यावत्-यावत्पदेन मोत्स्यन्ते, मोक्ष्यन्ति, परिनिर्वास्यन्ति, मर्त्यदुःखा
नामन्तं करिष्यन्ति ॥२१॥

अथ सप्तमं समवायमाह—

मूलम्—सत्तमभयट्टाणा पणत्ता, तं जहा—इहलोगभए, परलो-
गभए । आदाणभए, अकम्हाभए, आजीवभए, मरणभए, असि-
लोगभए । सत्तसमुग्घाया पणत्ता, तं जहा—वेयणासमुग्घाए,
कसायसमुग्घाए, मारणंतियसमुग्घाए, वेउव्वियसमुग्घाए, तेयसस-
मुग्घाए, आहारकसमुग्घाए, केवलिसमुग्घाए । समणे भगवं महावीरे
सत्तरयणीओ उड्ढं उच्चत्तेणं होत्था । इहेव जंबूदीवे दीवे सत्तवासहर-
पव्वया पणत्ता, तं जहा—चुल्लहिमवंते, महाहिमवंते, निसढे, नील-
वंते, रुप्पी, सिहरी, मंदरे । इहेव जंबूदीवे दीवे सत्तवासा पणत्ता,
तं जहा—भरहे, हेमवते, हरिवासे, महाविदेहे, रम्मए, एरणवए,
एरवए । खीणमोहेणं भगवया मोहणिज्जवज्जाओ सत्तकम्मपयडीओ
वेएइ । महानक्खत्ते सत्ततारे पणत्ते । कतिआइआ सत्तनक्खत्ता

उत्कृष्ट स्थिति छह सागरोपम की होती है । वे देव छह अर्धमासों के
अन्त में बाह्य आभ्यन्तरिक उच्छ्वास निःश्वास ग्रहण करते हैं । उन देवों
को छह हजार वर्ष व्यतीत होने पर आहार की संज्ञा उत्पन्न होती है
इनमें कितनेक देव ऐसे भी होते हैं जो भवसिद्धिक होते हैं । वे छह
भवों को ग्रहण करने के बाद सिद्ध अवस्था को प्राप्त करने वाले होंगे
यावत् समस्त दुःखों का अन्त करेगे ॥सू० २१॥

बाह्य आभ्यन्तरिक उच्छ्वास निःश्वास वे छे ते देवाने छ छन्दर वर्षे आहार स ज्ञा
उत्पन्न थाय छ—तेभा डेटवाक देवा लवसिद्धिक पशु होय छ तेभा छ लवो कराने
सिद्ध अवस्था प्राप्त करशे त्याधी लखने समस्त दु जोने अ न करशे त्या सु योने
अर्थ आणणना सूत्रोभाधी आशी देवे ॥सू २१॥

पुण्वदारिआ पण्णत्ता महाइया सत्तनक्खत्ता दाहिण दारिआ पण्णत्ता।
अणुराहाइआ सत्तनक्खत्ता अवरदारिआ पण्णत्ता धणिहाइया सत्त
नक्खत्ता उत्तरदारिआ पण्णत्ता ॥२२॥

टीका—‘सत्तमयद्वाणा’ इत्यादि। सत्त ‘मयद्वाणा’ मयस्थानानि, मयस्य=
माहनीयप्रकृतिसमुत्पत्त्यात्मपरिणामानि-नेयस्य स्थानानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—इहमा
कमयम्=मनुष्याणां यन्मयस्माद् मनुष्यादभयम्, तत् इहमाकमयम्, परमाकमयम्=
परस्मात् स्वाकात् दवतिर्यञ्चार्पद् मय, तत् परमाकमयम्। आदानमयम्—आ दीयते
गृह्यते यत्तदादान धनम्, तन्निमित्तं चौरादिर्द्वृष्टादपहरणाद् यद् मयं तदादा
नमयम्। अयम्हाकमयम्’ क्वचमाद् इयम्, क्वच मादव दारिआ’ मि चमनपेक्ष्यैव
राश्यादी यद्मय तद्क्वस्माद्मयम्। आजीवमयम्—आजीवस्य जीविषयाया मयम्
आजीवमयम्। मरणमयम् ‘अमिक्कागमय’ अम्माकमयम्, अम्लोकोऽप्ययम्,

अथ सूत्रकार सातवें समवाय को कहते हैं—‘सत्तमयद्वाणा’ इत्यादि।

टीकार्थ—सात मयस्थान बड़े गये हैं। यह भय नोकपाय मोहनीय
के उदय से होता है। भय आत्मा को ही एक परिणाम विशेष है। इस
मय के सात स्थान हैं वे हम प्रकार से हैं—इहलोकमय, परलोकमय,
आदानमय, अक्स्मात्मय, आजीवमय, मरणमय और अम्लोकमय। मनुष्यों
को जो दूसरे मनुष्यों से भय होता है वह इहलोकमय है १। देव तिर्यञ्च
आदिरूप परलोक से जो भय होता है वह परलोकमय है २। आदान
शब्द का अर्थ धन आदि है। इस निमित्त को लेकर जो चौरादिर्द्वृष्टक अपहरण
से भय होता है वह आदानमय है ३। चौरादिनिमित्त की अपेक्षा क्रिये
बिना ही राशि आदि के समय जो भय होता है वह अक्स्मात्मय है ४।

इसे सूत्रकार सातवें समवाय में बड़े छ—‘सत्तमयद्वाणा’ इत्यादि।

टीकार्थ—सात मयस्थानों के नाम हैं। ते भय ने ७वां मोहनीयना उदयभी भाव
छे भय आत्मन् न जेठ परिणाम विशेष छे ते भयनां सात स्थान छे—

(१) इहलोक भय (२) परलोक भय (३) आदानमय, (४) अक्स्मात् भय,
(५) अजीव भय, (६) मरणमय अने (७) अम्लोक भय भाष्यसेने ने नीज मनु
ष्योना भय होय छे ते इहलोकभय’ बड़ेवाय छे देव तिर्यञ्च आदिइय परलोकने
ने भय होय छे तेने परलोकभय बड़े छे आदान जेदखे धनना निमित्तने लपने
थार आदि वो अपहरणु यवाने ने भय बड़े छे तेने ‘आदानमय’ बड़े छे थार
आदि निमित्तनी अपेक्षा कवी बिना न राशि आदि समये ने भय वाय छे ते

तस्य भयम् अश्लोकभयम्-निन्दाभयमित्यर्थः । सप्त समुद्घाताः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-
वेदनासमुद्घातः, कषायमसुद्घातः मारणान्तिरुमसुद्घातः, वैकुर्विकसमुद्घातः,
तैजससमुद्घातः, आहाररुसमुद्घातः, केवलिसमुद्घातः । वेदनादिसमुद्घातपरि-
णतो शात्मा वह्न वेदनीयादिकर्मप्रदेशान् कालान्तरगन्तुं भवयोग्यान् उदीरणाक-
रणेनाकृष्य उदयावलिक्काया च निक्षिप्य अनुभूय निर्जरयति । तत्र वेदना समुद्-
घातस्तु असातवेद्यरुमाश्रयः, वेदना पीडितो जीवः अनन्तानन्तरकर्मस्कन्धवेष्टितान्
स्वात्मप्रदेशान् शरीराद् वह्निर्निक्षिपति, तैः प्रदेशैः स वदनजठरादिरन्ध्राणि
कर्णस्कन्धाद्यन्तरालानि च आपूर्य आयामविस्तारतः शरीरमात्रं क्षेत्रमभिव्याप्य

जीविका का जो भय है वह आजीवभय है ५। मरण से जो भय होता
है वह मरणभय है ६। अकीर्ति-अपयज का जो भय होना है वह अश्लो-
कभय है । इसका दूसरा नाम निन्दाभय है । ७। समुद्घात सात होते हैं, वे
इस प्रकार से हैं-वेदनासमुद्घात १, कषायमसुद्घात २, मारणांतिकसमुद्घात ३,
वैकुर्विकसमुद्घात ४, तैजससमुद्घात ५, आहारकसमुद्घात ६, और केव-
लिसमुद्घात ७। इन वेदनादिसमुद्घात से युक्त हुआ आत्मा कालान्तर में
अनुभव करने योग्य अनेक वेदनीयादिकर्मसमुद्घातों को उदीरणाकरण से
ग्वेचकर और उदयावलि में निक्षिप्तकर उन्हें अनुभव करके निर्जीर्ण कर-
देता है। इन सात समुद्घातों का स्वरूप इस प्रकार से है-तीव्र वेदना से
पीडित हुआ जीव अनन्तानन्तर कर्मस्कन्ध से वेष्टित अपने आत्मप्रदेशों
को शरीर से बाहिर निकालता है। वह उन प्रदेशों से वदन
जठर आदि के छिद्रों को, और कर्ण, स्कन्ध आदि अंतरालों को
पूरण कर आयाम विस्तार को अपेक्षा शरीरमात्र क्षेत्र को व्याप्त कर

‘अकस्मात्सुखं’ छे एवमनिर्वाहने जे सुख होय छे तेने असुखसुख कहे छे अने
भरषुने जे सुख छे तेने ‘भरषुसुख’ कहे छे अकीर्तिने जे सुख छे तेने ‘अश्लो-
कसुख’ कहे छे तेनु जीणु नाम निन्दालय’ छे सात समुद्घात होय छे ते आ-
प्रमाणे छे-[१] वेदना समुद्घात, [२] कषायमसुद्घात, [३] मरणांतिक समुद्घात, [४]
वैकुर्विकसमुद्घात, (५) तैजससमुद्घात, (६) आहारकसमुद्घात अने (७) केवलिसमुद्घात
छे वेदना हे समुद्घातरी युक्त थयेल आत्मा कालान्तरे अनुभव करवा योग्य अनेक
वेदनीयादि कर्मपुद्गलोंने उदीरणा करणथी जेथीने अथवा उदयावलिमा निक्षिप्त
करीने तेमने अनुभवने निर्जु करी नाथे छे ते सात समुद्घातानु स्वश्य आ-
प्रमाणे छे-तीव्र वेदना वडे पीडातो एव अनन्तानन्तर कर्मस्कन्धथी वीटणायेल पोताना
आत्मप्रदेशोने शरीरमाथी पहार कहे छे ते एव ते प्रदेशोमाथी वदन, जठर आदिना
छिद्रोंने अने कर्ण, स्कन्ध आदि अंतरालोंने पूरी दधने लंभाय पहोणाधनी अपेक्षाये

तस्मिन्मान्तर्मुहूर्ते प्रभूतामातवन्नोयकर्मपुद्गलपरिशाटन करोति । कपायसमुद्घात कपायाख्यचारिप्रमादनीयकर्मोद्यय, तीव्रकपायोदयाकुलो जीवः स्वात्मप्रदेशान् वदिरिंक्षिषति, तै मदसैर्ध्वनादरादिराघ्राणि कर्णस्कन्धाघन्तरालानि चाऽपूर्य आयामविस्ताराभ्या देहमाप्रक्षेपमभिध्याप्य वर्तते, तथाभूताश्च प्रभूतान् कपायकर्मपुद्गलान् परिशाटयति । मारणान्तिकसमुद्घात = अन्तर्मुहूर्ते शेषायुः कर्मोद्यय, मरणमेव प्राणिनामन्तर्काटिगदन्त, मरणात्तः, तत्र भवो मारणान्तिक, स चासौ समुद्घातश्च मारणान्तिकसमुद्घातः । मरणसमुद्घातगतो त्रिंक्षिप्तस्वात्मप्रदेशो वदनादरादिराघ्राणि स्कन्धाघन्तरालानि चापूर्य विष्कम्भवाऽभ्याभ्यां

के अन्तर्मुहूर्तकाल में प्रभूत असात वेदनीय कर्मपुद्गलों को परिशदित कर देता है । इस तरह यह येवना समुद्घात असातवेदनीय कर्म के आश्रय से होता है । कपायसमुद्घात कपायनामक चारिप्रमादनीय कर्म के संवध को छेद कर होता है, वह इस प्रकार से है । तीव्र कपाय के उदय से आकुल यना हुआ जीव अपने आत्मप्रदेशों को बाहर निकालता है । उन प्रदेशों से वह घदन उदर आदि के रन्ध्रों को और कर्ण स्कन्ध आदि के अन्तरालों को पूरित करके दहप्रमाण लवे चौड़े क्षेत्र में ठहर कर तथाभूत प्रभूत कपायपुद्गलों को परिशान्ति कर देता है । मारणान्तिक समुद्घात अन्तर्मुहूर्त की शेष आयु मय रह जाती है तब होता है । मारणान्तिक समुद्घात का तात्पर्य है—मरण के अन्त समय में होने वाला समुद्घात । इस समुद्घात को करने वाला जीव अपने कुञ्जेक आत्मप्रदेशों को शरीर से बाहर फैलाता है और उनसे घदन उदर आदि के रन्ध्रों को मया म्कच आदि के अन्तरालों को पूरित करके

शरीर प्रमाण क्षेत्रने अन्तमुद्घात ४ जमा प्रभूत (अनेक) असातवेदनीयकर्म पुद्गलोंने परिशान्ति करीनाजे छे जोड़ी दे छे आ शीते ते येवना समुद्घात असातवेदनीय कर्मने आश्रये बाध छे (१) कपाय समुद्घात कपाय नामना चारित्र भिन्ननाय कर्मना योजनी बाध छे ते आ प्रमाणे छे—तीव्रकपायना इवभी आकुलव्याकुल जनेस एव पोताना आत्मप्रदेशोंने अकारणते छे ते प्रदेशी बडे त वदन, उदर आदिनां छिद्रोंने अने कर्मेश्वर आदिना अ वशदोंने पूरी इधने देहप्रमाण स आ पक्षेणा क्षेत्रमा योजीने ते प्रमाणे उद्वेग प्रभूत कपायपुद्गलोंने परिशदित करी नाज छे—जोड़ी दे छे (२) आरि अन्तमुद्घात अमुध्व ज की होय छे त्पारे मारणान्तिक समुद्घात बाध छे मारणान्तिक समुद्घात जोड़े मरणा अन्त समये वनाये समुद्घात आ समुद्घात करनार एव पोताना देहका आत्मप्रदेशोंने शरीरमांभी अकारण होय के, अने तेमनाथी वदन, उदर आदिनां छिद्रोंने तब २४५ आदिना अन्तवशदोंने पूरी इधने पक्षेणाध अने अबाधनी अपेक्षाजे

स्वशरीरप्रमाणमायामतः स्वशरीरातिरेकातो जघन्यतोऽङ्गुलासंख्येयभागम्, उत्कर्षतोऽसंख्येयानि योजनान्येकदिशि क्षेत्रमभिव्याप्य आयुष्कर्मपुद्गलान् परिशाटयति । वैकुर्विकर्ममुद्घातः—वैक्रियशरीरकर्माश्रयः । वैक्रियसमुद्घातगतः पुनर्जीवः स्वात्मप्रदेशान् शरीराद् वह्निर्निग्राह्य शरीरविष्कम्भबाहल्यमानमायामतः संख्येययोजनप्रमाणं दण्डं निसृजति, निसृज्य च यथा स्थूलान् वैक्रियशरीरनामककर्मपुद्गलान् प्राग्वच्छातयति । तैजसमुद्घातः तैजसशरीरकर्माश्रयः । तेजो निर्गलब्धिमान् क्रुद्धःसाध्वादिः सप्ताष्टपदानि गत्वा विष्क-

विष्कम्भ चौडाई और बाहल्य—ऊँचाई की अपेक्षा अपने शरीर प्रमाण तथा आयाम की अपेक्षा अपने शरीर से अधिक—जघन्य की अपेक्षा अंगुल के असंख्यातवें भाग प्रमाण और उत्कृष्ट की अपेक्षा असंख्यात योजन प्रमाण, ऐसे एकदिशा संवधी क्षेत्र को व्याप्त कर लेता है । फिर वह अपने आयुर्कर्म के पुद्गलों को परिशदित कर देता है ३। वैक्रिय समुद्घात वैक्रिय शरीरकर्म के आश्रय होता है, इस समुद्घात को करने वाला जीव अपने आत्मप्रदेशों को शरीर से बाहर निकाल कर शारीरिक विष्कम्भ और बाहल्य के अनुसार उन्हें आयाम की अपेक्षा संख्यात योजन प्रमाण वाले दण्डाकाररूप में बनाना है । बनाकर फिर वह यथास्थूल वैक्रिय शरीर नामकर्म के पुद्गलों की पहिले की तरह परिशदित कर देता है ४। तैजससमुद्घात तैजस शरीर नामकर्म के आश्रय से होता है, जो विशिष्ट तपस्वी तपस्या जन्य खास तेजोलब्धि प्राप्त कर लेता है वह जब कुपित होता है तो सात आठ पद अपने स्थान से आगे जाकर

पोतना शरीर प्रमाण तथा लबाधनी अपेक्षाये पोताना शरीर कन्ता अधिक-जघन्यनी अपेक्षाये अंगुलना असंख्यातमा भाग प्रमाण अने उत्कृष्टनी अपेक्षाये असंख्यात योजन प्रमाण, जेवा जेक निशा संवधी क्षेत्रने व्याप्त करी दे छे. पछी ते पोताना आयुर्कर्मना पुद्गलने परिशदित करी दे छे—जेडी दे छे. (३) वैक्रिय समुद्घात वैक्रिय शरीरकर्मने आश्रये थाय छे ते समुद्घात करनार एव पोताना आत्मप्रदेशने शरीरमांथी पहार काढीने शारीरिक विष्कम्भ—पहोणाध अने बाहल्य—लबाध प्रमाणे तेमने आयाम-लबाधनी अपेक्षाये संख्यात योजन प्रमाणवाला दण्डाकार रूपमा बनावे छे बनाव्या पछी ते यथास्थूल वैक्रिय शरीर नामकर्मना पुद्गलनेपहोलांनी जेम परिशदित करी नाथे छे (४) तैजस समुद्घात तैजस शरीरनाम कर्मने आश्रये थाय छे जे विशिष्ट तपस्वी तपस्याजन्य भास लब्धि प्राप्त करी दे छे ते ज्यारे कधी बराय छे त्यारे पोताना स्थानधी सात आठ उगला आगज

वेदनीयकर्मदलिकर्ममीकरणार्थं प्रथमसमये बाह्यतः स्वशरीरप्रमाणमूर्ध्वमधश्च लोकान्तपर्यन्तात्मप्रदेशानां दण्डमारचयति । द्वितीयसमये पूर्वापरयोर्दिगयोर्विस्तृतात्मप्रदेशानां कपाटाकारत्वं कुरुते । तृतीयसमये दक्षिणोत्तरदिगयोः प्रसृतात्मप्रदेशानां मन्थानाकारत्वं कुरुते । चतुर्थे समयेऽन्तरालपूरणेन चतुर्दशरज्ज्वात्मकसकललोकपूरणं कुरुते । एवं समुद्घातं कुर्वन् केवली चतुर्भिः समयैः सकललोकव्यापी भवति । एवं कर्मणोऽंशान् समीकृत्य पञ्चमे समयेऽन्तरालपूरकान् आत्मप्रदेशान् संकोचयति पष्ठे समये मन्थानं, सप्तमे समये कपाटं च संकोचयति । अष्टमे समये दण्डमुपसहरन् स्वशरीरस्थो भवति । केवलि समुद्घातवर्जाः शेषाः पट्समुद्घाताः

हे तब केवली भगवान् आयु और वेदनीय कर्म के दलिकों को समीकरण-समान करने के लिये प्रथम समय में बाह्य की अपेक्षा स्वशरीरप्रमाण तथा उर्ध्व और अधः लोकान्त पर्यन्त आत्मप्रदेशों को दण्डरूप में बाहर निकालते हैं । द्वितीय समय में पूर्व और पश्चिम दिशा में विस्तृत आत्मप्रदेशों को कपाटरूप में, तृतीय समय में दक्षिण और उत्तर दिशा में प्रसृत आत्मप्रदेशों को मन्थान दंडरूप में और चतुर्थ-समय में अन्तरालों को पूरण करने से चौदह राजूपमाण सकललोक को भर देते हैं । इस प्रकार समुद्घात करते हुए केवली भगवान् चार समय में समस्त लोकव्यापी बन जाते हैं । इस तरह कर्मों के अंशों को समान करके पंचम समय में वे अन्तरालपूरक आत्मप्रदेशों को, छठवें समय में मन्थान-दंड को और सातवें समय में कपाट को संकुचित करते हैं । तथा आठवें समय में दण्डाकाररूप आत्मप्रदेशों को सहित करके केवली स्वशरीरस्थ हो जाते हैं । केवलिसमुद्घात को छोड़कर छह समुद्घातों का समय एक

आयु અને वेદનીય કર્મના દલિકોને સમાન કરવાને માટે પ્રથમ સમયે બાહ્ય જીવાર્ધની અપેક્ષાએ સ્વશરીર પ્રમાણ તથા ઉર્ધ્વ અને અધ લોકાન્ત સુધી આત્મ-પ્રદેશોને દડરૂપે બહાર કાઢે છે દ્વિતીય સમયે પૂર્વ અને પશ્ચિમ દિશામાં વિસ્તૃત આત્મપ્રદેશોને કપાટરૂપે, ત્રીજા સમયે દક્ષિણ અને ઉત્તર દિશામાં પ્રસૃત આત્મ-પ્રદેશોને મન્થાન દડરૂપે અને ચોથે સમયે અન્તરાલોને પૂરીને ચૌદ રાજૂપ્રમાણ સમસ્ત લોકોને ભરી દે છે આ પ્રમાણે સમુદ્ધાન કરતા કરતા કેવલી ભગવાન ચાર સમયમાં સમસ્ત લોકવ્યાપી બની જાય છે આ રીતે કર્મોના અંશોને સરખા કરીને પાંચમાં સમયમાં તેઓ અન્તરાલ પૂરક આત્મપ્રદેશોને, છઠ્ઠા સમયમાં મન્થાન દડને, અને સાતમાં સમયમાં કપાટને સંકુચિત કરે છે તથા આઠમાં સમયમાં દડાક રૂપ આત્મપ્રદેશોને સહિત (વિસ્તૃત) કરીને તે કેવલી સ્વશરીરસ્થ થઈ જાય છે કેવલી

भान्तर्मौहर्तिकाः, केवलिसमुद्घातस्तु अष्टसामयिक पण्मासायुष्कास्ततो न्यूनायुष्काश्च केवलिनो नियमतः समुद्घातं कुर्वन्ति । पण्मासाधिकाः पूर्णा केवलिनो तु समुद्घातस्य मनना । उक्तं च—

छम्मासाऊसेसे, उत्पन्नं जम्स केवल नाण ।

तं नियमा समुग्घाया ससा समुग्घायमइयन्ता ।

छाया—पण्मासायुषि शये उत्पन्नं यस्य केवलं ज्ञानम् ।

ये नियमात्समुद्घाता शया समुद्घातमक्तव्याः ॥ इति । समुद्घाता = समुद्घातवन्तः । समुद्घातमक्तव्याः = समुद्घाते मक्तव्याः समुद्घातमक्तव्याः, समुद्घातवन्तो भवन्ति नवा भवन्ति इत्यर्थः । भ्रमणो भगवान् महावीर सप्त 'रयणीमो' रत्नय, रत्नि = विमृता इति ईस्त, 'उद्धम्वसेम' ऊर्ध्वोच्चत्वेन न तु तिर्यगुच्चत्वेन 'होत्था' अभूत् । ईहं जम्पूद्वीपे द्वीपे 'सत्त' सप्तसत्त्व्याका 'वासइरपव्वया' वर्षपरपर्यन्ता मज्झा, वय्या—'सुल्लहिमवते' सुल्लहिमवान्, महा भन्तर्मुहूर्त ई और केवलिसमुद्घात का आठ समय ई । जो कवभी छहमास की लवशेष आयुवाले होते हैं अथवा इससे भी कम जिनकी आयु होती है व नियम से समुद्घात करते हैं । परन्तु जिन केवलियों की आयु छह मास से अधिक की है उनमें समुद्घात कि भजना मागी गई है । कहा भी है—

“जिन केवलियों की आयु छह मास की घासी रह जाती है और तब जिन्हें केवलज्ञान उत्पन्न होता है वे नियम से समुद्घात करते हैं । परन्तु जिनकी आयु छह मास से अधिक है ऐसे केवली समुद्घात करते भी हैं और नहीं भी करते हैं ॥१॥”

भ्रमण भगवान् महावीर सात रत्नि प्रमाण कहे थे । इस जन्तूद्वीप नामक द्वीप में सात वर्षपर पवन है व ये हैं—सुल्ल हिमवान्, महाहिमवान्,

समुद्घात सिधायना छ समुद्घातोना भवव कोउ भन्तमुद्धतं छि, अने केवलि समुद्घातना आठ समय छि जे केवलीनु आयुष्य छ मासनु आसी छे व छि अथवा तेना करना पण कोउ जनु आयुष्य होय छि तेको समुद्घात करे ज छि कोवो नियम छि पण जे केवलीजेनु आयुष्य छ मासयो बधारे आसी छेय, तेभनाभा समुद्घातनी भजना (बाप के नयाव कोनी दासन) भनवाभा आवेल छि पण पण छि—

‘जे केवलीकोने छ मासनु आयुष्य आसी रहेल छेय त्तारे केवलज्ञान उत्पन्न होय छि तेको नियमको ज समुद्घात करे जे पण जेभनु छ मासयो बधारे आयुष्य आसी होय छि कोवा केवलीको समुद्घात करे पण छि अने नशी पण करत ॥१॥’

भ्रमण भगवान् महावीर सात रत्नि प्रमाण कहे दाता । आ जन्तूद्वीप नामका द्वीपमें सात वर्षपर पवनो छि—सुल्ल हिमवान् महा हिमवान्, निषध,

हिमवान् 'निसदे' निषधः, नीलवान् 'रूपो' रुक्मी 'साहरी' शिखरी मन्दरः ।
इहैव जम्बूद्वीपे द्वीपे 'सत्तवासा' सप्तवर्षाणि क्षेत्राणि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—भरतम्,
हैमवतम्, हरिवर्षम्, महाविदेहम्, रम्यकम्, ऐरण्यवतम्, ऐरवतम् । क्षीणमोहेन
भगवता मोहनीयवर्जाः सप्तकर्मप्रकृतयः 'वेएई' वेद्यन्ते अनुभूयन्ते, 'वेएई'
इत्येकवचनमार्पत्वात् । मघानक्षत्र सप्ततार प्रज्ञप्तम् । कृत्तिकादिकानि सप्तनक्षत्राणि
पूर्वद्वारकाणि प्रज्ञप्तानि । (अभिजिदादिकानि सप्तनक्षत्राणि पूर्वद्वारकाणि
प्रज्ञप्तानि इति केचित्) मघादिकानि सप्तनक्षत्राणि दक्षिणद्वाराणि प्रज्ञप्तानि ।
अनुराधादिकानि सप्तनक्षत्राणि अपरद्वारकाणि पश्चिमद्वारकाणीत्यर्थः प्रज्ञ-
प्तानि । धनिष्ठादिकानि सप्तनक्षत्राणि उत्तरद्वारकाणि प्रज्ञप्तानि ॥२२॥

मूलम्—इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरइ-
याणं सत्तपलिओवसाइं ठिई पण्णत्ता । तच्चाए णं पुढवीए नेरइयाणं
उक्कोसेणं सत्त सागरोवसाइं ठिई पण्णत्ता । चउत्थीए णं पुढवाए
नेरइयाणं जहण्णेणं सत्तसागरोवसाइं ठिई पण्णत्ता । असुरकुमाराणं
देवाणं अत्थेगइयाणं सत्तपलिओवसाइं ठिई पण्णत्ता । सोहम्मी-

निषध, नील, रुक्मी, शिखरी और मन्दर । इस जम्बूद्वीप नामके द्वीप
में सात क्षेत्र हैं, वे इस प्रकार हैं—भरत, हैमवत, हरिवर्ष, महाविदेह,
रम्यक, ऐरण्यवत् और ऐरवत् । वारहवें गुणस्थानवर्ती वीतराग भगवान्
मोहनीय कर्म को छोड़कर शेष सात कर्म प्रकृतियों का अनुभव करते
हैं । मघानक्षत्र सात ताराओं वाला कहा गया है । कृत्तिका आदि
सात नक्षत्र पूर्व द्वार वाले कहे गये हैं (अभिजित् आदि सात पूर्वद्वार
वाले हैं ऐसा कोई २ कहते हैं) मघा आदि सात नक्षत्र दक्षिण द्वारवाले
अनुराधा आदि सात नक्षत्र अपर द्वार वाले,—पश्चिम द्वार वाले, और
धनिष्ठा आदि सात नक्षत्र उत्तर द्वारवाले कहे गये हैं ॥सू०२२॥

नील, रुक्मी, शिखरी અને મન્દર આ જંબૂદ્વીપમાં સાત ક્ષેત્ર છે—ભરત,
હૈમવત, હરિવર્ષ, મહાવિદેહ, રમ્યક અને ઐરવત. બારમા ગુણસ્થાનવર્તી
વીતરાગ ભગવાન મોહનીયકર્મોને છોડીને બાકીની સાત કર્મ પ્રકૃતિઓનો અનુભવ
કરે છે મઘા નક્ષત્ર સાત તારાઓ વાળું છે કૃતિકા આદિ સાત નક્ષત્ર પૂર્વદ્વાર વાળા
કહેવાય છે (કોઈ કોઈ લોકોનું એવું માનવું છે કે અભિજિત આદિ સાત નક્ષત્રો
પૂર્વદ્વાર વાળા છે) મઘા આદિ સાત નક્ષત્ર દક્ષિણદ્વાર વાળાં, અનુરાધા આદિ સાત
નક્ષત્ર પશ્ચિમદ્વાર વાળા અને ધનિષ્ઠા આદિ સાત નક્ષત્ર ઉત્તર દ્વારવાળા છે ॥સૂ. ૨૨॥

સાળેસુ કપ્પેસુ અત્યેગહયાણ દેવાણ સત્તપલિઓવમાઈ ઠિઈ પળ્ણત્તા ।
 સળકુમારે કપ્પે અત્યેગહયાણ દેવાણ ઉક્કોસેણ સત્તસાગરોવમાઈ
 ઠિઈ પળ્ણત્તા । માહિંદે કપ્પે દેવાણ ઉક્કોસેણ સાહરેગાહ સત્તસાગ
 રોવમાઈ ઠિઈ પળ્ણત્તા । વમલોષ કપ્પે અત્યેગહયાણ દેવાણ સત્ત
 સાહિયા સાગરોવમાઈ ઠિઈ પળ્ણત્તા । જે દેવા સમ સમપ્પમ મહાપમ
 પમાસ માસુર વિમલ કચ્ચણકૂઢ સળકુમારવહિંસગ વિમાણ દેવત્તાણ
 ઉવવળ્ણા, તેસિં ણ દેવાણ ઉક્કોસેણ સત્તસાગરોવમાઈ ઠિઈ પળ્ણત્તા ।
 તે ણ દેવા સત્તળ્હ અદ્ધમાસાણ આળમતિ વા પાળમતિ વા ઝસ
 સતિ વા નીસસતિ વા । તેસિં ણં દેવાણં સત્તહિં વાસસહસ્સેહિં
 આહારદ્દે સમુપ્પજ્જહ । સન્તેગહયા ભવસિદ્ધિયા જીવા જે ણ સત્તહિં
 ભવચ્છાહ્ણેહિં સિજ્ઞિસ્સંતિ બુજ્ઞિસ્સતિ જાવ સઠ્ઠવુક્કલાણમત
 કરિસ્સતિ ॥ સૂ. ૨૩ ॥

ટીકા—‘ઇમોસં ણ’ इत्यादि अस्यां खलु रत्नप्रभायां पृथिव्यामस्त्येकेषां नैरपि
 काज सप्तपन्थोपमानि स्थितिः प्रपृष्टा । तृतीयस्यां खलु पृथिव्यां नैरपिकाज
 सोत्कृष्टा सप्तसागरोपमा स्थितिः प्रपृष्टा चतुर्थ्यां खलु पृथिव्यां नैरपिकाज
 सप्तपन्था सप्तसागरावमा स्थितिः प्रपृष्टा । अक्षुरकुमाराणां देवानामस्त्य

‘इमीसेण’ इत्यादि ।

ટીકાર્થ—इस रत्न प्रभा पृथिवी में कितनेक नारकियों की स्थिति सात पर्यो
 पम की है । तीसरे नरक में नारकियों की उत्कृष्ट स्थिति सात सागरोपम की
 है । चौथी पृथिवी में नारकियों की स्थिति जघन्य सात सागरोपम की है ।
 असुरकुमार दलों में कितनेक दलों की स्थिति सात पर्योपम की है ।

“इमीसं ણ” इत्यादि ।

ટીકા—આ રત્નપ્રભા પૃથ્વીમાં કેટલાક નારકીઓની સ્થિતિ સાત પર્યોપમની છે ત્રીજી
 નરકમાં નારકીઓની ઉત્કૃષ્ઠ સ્થિતિ સાત સાગરોપમની છે ચોથી પૃથ્વીમાં નારકા
 ઓની સ્થિતિ જઘન્ય સાત સાગરોપમની છે અસુરકુમાર દેવોમાં કેટલાક દેવોની

केषां सप्तपत्न्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । सौधर्मेशानेषु कल्पेषु अस्त्येकेषां देवानां सप्तपत्न्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । सनत्कुमारे कल्पेऽस्त्येकेषां देवानामुत्कर्षेण सप्तसागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । माहेन्द्रे कल्पे देवानामुत्कर्षेण सातिरेकाणि=साधिकानि सप्तसागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । ब्रह्मलोके कल्पे अस्त्येकेषां देवानां सप्त 'साहिया' साधिकानि किञ्चिदधिकानीत्यर्थः, सागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता ।

ये देवाः समं १ समप्रभं २ महाप्रभं ३ प्रभासं ४ भास्वरं ५ विमलं ६ काञ्चनकूटं ७ सनत्कुमारावतसकं ८ विमानं=एषु अष्टसु विमानेष्वित्यर्थः, देवत्वेनोत्पन्नाः, तेषां खलु देवानाम् उत्कर्षेण सप्तसागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । ते खलु देवाः सप्तानामर्धमासानामन्ते आनन्ति वा प्राणन्ति वा=आभ्यन्तरिको श्वासनिश्वासौ गृह्णन्ति, उच्छ्वसन्ति वा=निःश्वसन्ति वा बाह्यं श्वासं निःश्वासं च गृह्णन्ति । तेषां खलु देवानां सप्तभिर्वर्षसहस्रैराहारसंज्ञा संजायते । सन्त्येके भवसिद्धिका

सौधर्म ईशानकल्प में कितनेक देवों की स्थिति सात पत्न्योपम की है । सनत्कुमार में कितनेक देवों की उत्कृष्ट स्थिति सात सागरोपम की है । माहेन्द्रकल्प में देवों की उत्कृष्टस्थिति कुछ अधिक सात-सागरोपम की है । ब्रह्मलोक कल्प में कितनेक देवों की सातसागर से कुछ अधिक स्थिति है । जो देव सम १, समप्रभ २, महाप्रभ ३, प्रभास ४, भास्वर ५, विमल ६, काञ्चनकूट ७ और सनत्कुमारावतसक ८, इन आठ विमानों में देव की पर्याय से उत्पन्न होते हैं । उन देवों की उत्कृष्टस्थिति सात सागरोपम की होती है । वे देव सात अर्धमासों के बाद बाह्य आभ्यन्तरिक श्वासोच्छ्वास ग्रहण करते हैं । उन देवों को सात हजार वर्ष के बाद आहार की अभिलाषा होती है । इन देवों में कितनेक देव ऐसे होते हैं जो

स्थिति सात पत्न्योपमनी छ सौधर्म, ईशान कल्पमा डेटलाक देवानी स्थिति सात पत्न्योपमनी छ सनत्कुमारकल्पमा डेटलाक देवानी उत्कृष्टस्थिति सात सागरोपमनी कहेल छ माहेन्द्र कल्पमा देवानी उत्कृष्ट स्थिति सात-सागरोपमथी थोडी वधाये छ ब्रह्मलोक कल्पमा डेटलाक देवानी स्थिति सातसागरोपम इरता थोडी वधाये छ जे देव (१) सम, (२) समप्रभ, (३) महाप्रभ, (४) प्रभास, (५) भास्वर, (६) विमल, (७) काञ्चनकूट अने (८) सनत्कुमारावत सक, जे आठ विमानोमा देवानी पर्याये उत्पन्न थाय छ, ते देवानी उत्कृष्ट स्थिति सात सागरोपमनी छाय छ ते देवो सात अर्ध महिने गहार तथा अ हर श्वासोच्छ्वास छ ते देवाने सात हजार वर्ष आहारनी अभिलाषा थाय छ ते देवोमाथी

साणेसु कप्पेसु अत्थेगइयाण देवाण सत्त पलिओवमाइ ठिई पण्णत्ता ।
 सणकुमारे कप्पे अत्थेगइयाण देवाण उक्कोसेण सत्तसागरोवमाइ
 ठिई पण्णत्ता । माहिंदे कप्पे देवाण उक्कोसेण साइरेगाइ सत्तसाग
 रोवमाइ ठिई पण्णत्ता । धमलोए कप्पे अत्थेगइयाण दवाण सत्त
 साहिया सागरोवमाइ ठिई पण्णत्ता । जे देवा सम समप्पभ महापभ
 पमास भासुर विमल कच्चणकूढ सणकुमारवडिसग विमाण देवत्ताए
 उववण्णा, तेसिं ण देवाण उक्कोसेण सत्तसागरोवमाइ ठिइ पण्णत्ता ।
 ते ण देवा सत्तण्ह अद्धमासाणं आणमति वा पाणमति वा ऊस
 सति वा नीससति वा । तेसिं णं देवाणं सत्तहिं वाससहस्सेहिं
 आहारद्वे समुप्पज्जइ । सन्तेगइया भवसिद्धिया जीवा जे ण सत्तहिं
 भवग्गहणेहिं सिज्झिस्सति बुज्झिस्सति जाव सव्वदुक्खाणमत
 करिस्सति ॥ सू० २३ ॥

टीका—‘इमांस ण’ इत्यादि अस्या म्बलु रत्नप्रभायां पृथिव्यामस्त्येकपां नैरयि
 काण सप्तपन्न्योपमानि स्थिति इप्ता । तृतीयस्यां खलु पृथिव्यां नैरयिकाणां
 सौत्कृष्टा सप्तसागरोपमा स्थितिः प्रप्लुता चतुर्थ्यां खलु पृथिव्यां नैरयिकाणां
 सप्तपन्न्या सप्तसागरोपमा स्थितिः प्रप्लुता । अक्षुरकुमाराणां देवानामस्त्य

‘इमीसेण’ इत्यादि ।

टीकार्थ—इस रत्न प्रभा पृथिवी में कितनेक नारकियों की स्थिति सात परयो
 पम की है । तीसरे नरक में नारकियों की उत्कृष्ट स्थिति सात सागरोपम की
 है । चौथी पृथिवी में नारकियों की स्थिति जघन सात सागरोपम की है ।
 असुरकुमार देवों में कितनेक देवों की स्थिति सात परयोपम की है ।

“इमीसे ण” इत्यादि ।

टीका—आ रत्नप्रभा पृथ्वीमां देवता नारकीज्जोनी स्थिति सात परयोपमनी छे । तीस
 नरकमा नारकीज्जोनी उत्कृष्ट स्थिति सात सागरोपमनी छे । चौथी पृथ्वीमा नारका
 ज्जोनी स्थिति जघन सात सागरोपमनी छे । असुरकुमार देवोमां देवता देवोनी

केषां सप्तपल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । सौधर्मेशानेषु कल्पेषु अस्त्येकेषां देवानां सप्तपल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । सनत्कुमारे कल्पेऽस्त्येकेषां देवानामुत्कर्षेण सप्तसागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । माहेन्द्रे कल्पे देवानामुत्कर्षेण सातिरेकाणि=साधिकानि सप्तसागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । ब्रह्मलोके कल्पे अस्त्येकेषां देवानां सप्त 'साहिया' साधिकानि किञ्चिदधिकानीत्यर्थः, सागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता ।

ये देवाः सम१ समप्रभ२ महाप्रभ३ प्रभास४ भास्वर५ विमल६ काञ्चनकूट७ सनत्कुमारावतसक८ विमानं=एषु अष्टसु विमानेष्वित्यर्थः, देवत्वेनोत्पन्नाः, तेषां खलु देवानाम् उत्कर्षेण सप्तसागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । ते खलु देवाः सप्तानामर्धमासानामन्ते आनन्ति वा प्राणन्ति वा=आभ्यन्तरिकौ श्वासनिश्वासौ गृह्णन्ति, उच्छ्वसन्ति वा=निःश्वसन्ति वा बाह्यं श्वासं निःश्वासं च गृह्णन्ति । तेषां खलु देवानां सप्तभिर्वर्षसहस्रैराहारसंज्ञा संजायते । सन्त्येके भवसिद्धिका

सौधर्म ईशानकल्प में कितनेक देवों की स्थिति सात पल्योपम की है । सनत्कुमार में कितनेक देवों की उत्कृष्ट स्थिति सात सागरोपम की है । माहेन्द्रकल्प में देवों की उत्कृष्टस्थिति कुछ अधिक सात-सागरोपम की है । ब्रह्मलोक कल्प में कितनेक देवों की सातसागर से कुछ अधिक स्थिति है । जो देव सम१, समप्रभ२, महाप्रभ३, प्रभास४, भास्वर५, विमल६, काञ्चनकूट७ और सनत्कुमारावतसक८, इन आठ विमानों में देव की पर्याय से उत्पन्न होते हैं । उन देवों की उत्कृष्टस्थिति सात सागरोपम की होती है । वे देव सात अर्धमासों के बाद बाह्य आभ्यन्तरिक श्वासोच्छ्वास ग्रहण करते हैं । उन देवों को सात हजार वर्ष के बाद आहार की अभिलाषा होती है । इन देवों में कितनेक देव ऐसे होते हैं जो

स्थिति सात पल्योपमनी छ सौधर्म, ईशान कल्पमा डेटलाक देवानी स्थिति सात पल्योपमनी छ सनत्कुमारकल्पमा डेटलाक देवानी उत्कृष्टस्थिति सात सागरोपमनी छेव छ माहेन्द्र कल्पमा देवानी उत्कृष्ट स्थिति सात-सागरोपमथी थोडी वधावे छे ब्रह्मलोक कल्पमा डेटलाक देवानी स्थिति सातसागरोपम इस्ता थोडी वधावे छे ते देवो (१) सम, (२) समप्रभ, (३) महाप्रभ, (४) प्रभास, (५) भास्वर, (६) विमल, (७) काञ्चनकूट अने (८) सनत्कुमारावत सक, अने आठ विमानोमां देवानी पर्याये उत्पन्न थाय छे, ते देवानी उत्कृष्ट स्थिति सात सागरोपमनी छेव छे ते देवो सात अर्ध महिने गहार तथा अहर श्वासोच्छ्वास छे ते देवाने सात हजार वर्ष आहारनी अभिलाषा थाय छे ते देवोमाथी

जीवा, य मल्ल सप्तमिर्भवद्भूयैः सत्स्थन्ति मोक्ष्यन्ते यावत् मोक्ष्यन्ति, परि निर्वाप्यन्ति सर्वदुःखानामन्त च करिष्यन्ति । सु २३॥

भवसिद्धि होते हैं। वे सात मय करने के बाद सिद्ध हो जावेंगे, युद्ध हो जावेंगे, यावत् समस्त दुःखों का अन्त कर देंगे।

भाषार्थ—यह पहिले कहा जा चुका है कि नरकों में वद्यमान नारकियों की उत्कृष्टस्थिति क्रमशः एक१, तीन३, सात७, दश१०, सत्रह१७, पचास२२ और सैसीस सागरोपम प्रमाण है। तथा जघन्य स्थिति क्रमशः दसहजार वर्ष, एकसागर, तीनसागर, सातसागर, दशसागर, सत्रहसागर और पचास सागर की है। इस तरह इस सूत्र द्वारा जो रत्नप्रभा नामकी प्रथमपृथिवी के कितनेक जीवों की सात पयोपम की स्थिति कही हुई है, वह मध्यम स्थिति जाननी चाहिये। इसी तरह जहाँ “कितनेक देवों की या कितनेक नारकियों की स्थिति अमुक २ प्रमाण में है” ऐसा कथन आवे वहाँ यह कथन प्रायः मध्यम स्थिति की अपेक्षा ही कहा गया जानना चाहिये। इसी तरह सौधर्म आदि कल्पों में भी जानना चाहिये। वहाँ जघन्य स्थिति इस प्रकार से है—पहिले देवलोक में एक पयोपम को, दूसरे में परयोपम से कुछ अधिक की, तीसरे में दो सागरोपम की, चौथे में दो सागरोपम से कुछ अधिक की, पाँचवें में सातसागरो

केटकाके देवों के वा केटके के नारकियों के वा के देवों सात अव कराने सिद्ध अवस्था पाभये त्वांही लभने समस्त दुःखों को अन्त करके सुधीनु वपाय आनन्द सूत्रे प्रमाणे समस्त देव

भावार्थ—जो बात पहिले अवववाभां जावी भूछ के नरकों में वद्यमान नारकियों की उत्कृष्ट स्थिति अनुक्रमेण के एक त्रय, सात, दश, सत्रह, पचास, अने तेतीस सागरोपम प्रमाणे है तथा जघन्य स्थिति अनुक्रमेण इस दसहजार वर्ष, के एक सागर त्रय सागर, सात सागर सत्रह सागर अने पचास सागरी की है आरीते का सूत्र दश, रत्नप्रभा नामकी प्रदेवी पृथ्वीमां केटकाके लोकां स्थिति के सात पयोपमनी इशावी है ते मध्यम स्थितिनी अपेक्षाके समन्वये के प्रमाणे कथां “केटकाके देवों के केटकाके नारकियों की स्थिति अमुक अमुक प्रमाणमां है” केपु कथन आवे त्वां ते कथन सामान्य रीते मध्यम स्थितिनी अपेक्षाके केटके समन्वये के प्रमाणे सौधर्म आदि देवलोकांमा पद्यु व्ययु त्वां जघन्य स्थिति का प्रमाणे है—पहिले देवलोकमा के पयोपमनी जीवमां पयोपमयो घोड़ी वधारे, त्रीणां के सागरोपमनी घोषां के सागरोपमयो घोड़ी वधारे,

पम की छठवें में दस सागरोपम की, सातवें में चौदह सागरोपम की, आठवें में सत्रह १७ सागरोपम की, नववें में अठारह १८ सागरोपम की, ग्यारह और बारहवें में बीस सागरोपम की, प्रथम ग्रैवेयक में बाईस २२ सागरोपम की है। इसी तरह नीचे २ के ग्रैवेयक की उत्कृष्टस्थिति को ऊपर ऊपर के ग्रैवेयक की जघन्यस्थिति समझना चाहिये। इस क्रम से नववें ग्रैवेयक की जघन्यस्थिति तीस ३० सागरोपम की होती है। चार अनुत्तरविमान की जघन्यस्थिति इकतीस ३१ सागरोपम की है। सर्वार्थमिद्धि में उत्कृष्ट और जघन्य स्थिति में अन्तर नहीं है। इस कथन से यह बात कही गई है कि पूर्व २ के देवलोकों की उत्कृष्ट स्थिति आगे २ के देवलोकों में जघन्य होती जाती है। तीसरे नरक में नारकियों की उत्कृष्टस्थिति सात सागरोपम की कही हुई है सो यही स्थिति चौथे नरक में जघन्य हो गई है। सौधर्म ईशान में सात पल्योपम की स्थिति मध्यमस्थिति की अपेक्षा कथित हुई है क्योंकि यहां पर उत्कृष्ट स्थिति दो सागरोपम की और इजान की एक सागरोपम से कुछ अधिक कही हुई है और जघन्यस्थिति एक पल्योपम की और एक पल्योपम से कुछ अधिक की कही हुई है। ब्रह्मलोक नामक पांचवें कल्प में कितनेक देवों की जो सात सागरोपम से कुछ अधिक स्थिति प्रकट की गई है यह जघन्य-

पात्रभासा सात सागरोपमनी, छहभासा दस सागरोपमनी, सातभासा चौदह सागरोपमनी, आठभासा सत्तर सागरोपमनी, नवभासा अने दसभासा अठार, अठार सागरोपमनी, अगियार तथा बारभासा बीस सागरोपमनी, प्रथम ग्रैवेयकभा प्वावीस सागरोपमनी छे अ नीते नीचेना प्रत्येक ग्रैवेयकनी उत्कृष्टस्थितिने उपरना प्रत्येक ग्रैवेयकनी जघन्य स्थिति समजवी. आ क्रम प्रमाणे नवभासा ग्रैवेयकनी जघन्य स्थिति तीस सागरोपमनी थाय छे आर अनुत्तर विमाननी जघन्य स्थिति ओकतीस सागरोपमनी छे सर्वार्थ मिद्धिमा उत्कृष्ट अने जघन्य स्थितिमा तक्षावत नथी आ कथनथी ओ बात स्पष्ट थाय छे छे आगणना देवलोकनी उत्कृष्ट स्थिति पछीना देवलोकनी जघन्य स्थिति थती जाय छे. तीण नरकभा नारकीओनी उत्कृष्ट स्थिति सात सागरोपमनी कहेल छे, तो ते स्थिति ओथी नरकभा जघन्य थाय छे. सौधर्म ईशान देवलोकभा मध्यम स्थितिनी अपेक्षाओ सात पल्योपमनी स्थिति कहेवामा आवेल छारण छे त्या उत्कृष्ट स्थिति ओ सागरोपमनी अने ओक सागरोपमथी थोडी वधारे अने जघन्य स्थिति ओक पल्योपमनी अने ओक पल्योपमथी थोडा वधारे काणनी कहेल छे ब्रह्मलोक नामना पात्रभा देवलोकभा केटलाक देवानी स्थिति ओ सात सागरोपमथी थोडी वधारे दर्शावी छे ते जघन्य स्थितिनी अपेक्षाओ

अथाग्रम् समवायाङ्गमाह

मूढम्—अहं मयङ्काणा पण्णत्ता, त जहा—जाइमए, कुलमए, वलमए, रुवमए, तवमए, सुयमए, लाभमए, इस्सरियमए । अहं पवयणमायाओ पण्णत्ता, त जहा—ईरियासमिई, भासासमिई, एसणासमिई, आयाणमढमत्तनिक्खेवणासमिई, उच्चारपासवणखे लज्ज सिंघाणपरिद्धावणियासमिई, मणगुत्ती, वयगुत्ती, कायगुत्ती । वाणभतराण देवाण चेइयरुक्खा अहजोयणाइ उड्ढ उच्चत्तणेण पण्णत्ते । कूडत्तामलीण गरुत्तावासे अह जोयणाइ उड्ढ उच्चत्तणे ण पण्णत्ते । जब्बुहीवस्स ण जगई अहजोयणाइ उड्ढ उच्चत्तेण पण्णत्ता । अहसा मइए केवलिसमुग्घाए पण्णत्ते, त जहा—पढमे समए दड करेइ, वीए समए कवाड करेइ, तइए समए मथ करेइ, चउरथे समए मथ तराइ पूरेइ, पचमे समए मथतराइ पडिसाहरइ, छठे समए मथ पडिसाहरइ, सप्तमे समए कवाड पडिसाहरइ, अढमे समए दड पडिसाहरइ, तओ पच्छा समए मथ भवइ । पासस्स ण अरहओ पुरिसादाणियस्स अह गणा अह गणहरा होरथा, त जहा—सुभे य

स्थिति की अपेक्षा जानना चाहिये, क्यों कि यहा पर उत्कृष्टस्थिति दस सालरोपमकी और जघन्यस्थिति कुछ अधिक साल सागरोपम की होती है। जो देव सप्त सप्तप्रम आदि ८ विमानों में उत्पन्न होते हैं वे साठे तीन ३॥ मास के बाद आसो-छवास छेते हैं और सात हजार वर्ष के बाद माहार। इनमें कितनेक जीय भवसिद्धि कहते हैं जो सातभय ग्रहण करने के बाद मिट्ट हो जाते हैं ॥सू० २३॥

अमरकानी ३, काश्य ३ तथा उत्कृष्ट स्थिति दस सात्रशेषमानी होने लपन्य स्थिति सात सात्रशेषमानी से ही बंधाये होय ३ ने देवे सप्त सप्तप्रम आदि आठ विमानों में उत्पन्न भव ३ तेजो ३॥ (साक्षात्त) भक्ति आसो-छवास से ३ होने सात हजार वर्ष आठार भव ३ है ३ तेजोना ३ दशाक देवे जगमिद्धि होय ३ नेजो सात भव ३ यो पछी सिद्ध भवस्थाने प्राप्त करे ३ ॥सू० २३॥

મુખધોસે ય વસિષ્ઠે વંભયારિ ય । સોમે સિરિધરે ચેવ વીરભદ્રે જસે ઇય
 ૧૧॥ અઢ નક્ષત્રા ચંદ્રેણં સદ્ધિં પમદં જોગં જોણંતિ, તં જહા—કત્તિ-
 આ ૧ રોહિણી ૨ પુણવ્વસૂ ૩ મહા ૪ ચિત્તા ૫ વિસાહા ૬ અણુરાહા ૭ જેઠા ૮
 ॥ સૂ. ૨૪ ॥

ટીકા—‘અઢ મયટ્ટાણા’ इत्यादि । अष्ट ‘मयट्टाणा’ मदस्थानानि=मदस्य
 अभिमानस्य स्थानानि मदस्थानानि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—जातिमदः, कुलमदः,
 रूपमदः, तपोमदः, श्रुतमदः, लाभमदः, ऐश्वर्यमदः । अष्टसंख्यकाः ‘पव-
 यणमायाओ’ प्रवचनमातरः=प्रवचनस्य द्वादशाङ्गस्य तदाधारस्य संघरय वा जनन-
 हेतुत्वात् मातर इव जनक्य इव प्रवचनमातरः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—ईर्यासमिति,
 भाषासमिति, एषणासमिति, आदानभाण्डमात्रनिक्षेपणासमिति, उच्चारप्र-
 स्रवणखेलजल्लशिङ्घाणपरिष्ठापनासमितिः, मनोगुप्तिः, वचोगुप्तिः, कायगुप्ति-
 श्चेति । प्रवचनरूपं द्वादशाङ्गं हि साक्षात्परंपरया वा एता आश्रित्यैव प्रवर्तते,
 अतएतासां तन्मातृत्वोपमा । यथा शिशुः मातरममुञ्चन् न जातुकदाचिदात्मलभं-
 लभते, एवं संघोऽपि ऋते एताभ्यो न कदाचित् सघत्वं लभते, अतः संघ-
 मातृत्वमप्यासाम् । ‘वाणमंतराणं’ वानमन्तराणां व्यन्तराणामित्यर्थः, देवानां
 ‘चैश्यरूखा’ चैत्यवृक्षाः अष्ट योजनानि ऊर्ध्वमुच्चत्वेन प्रज्ञप्ताः । देवानां तत्त-

અવ સૂત્રકાર આઠવે સમવાય કો કહતે હૈ—‘અઢ મયટ્ટાણા’ इत्यादि ।
 ટીકાર્થ—આઠ મદસ્થાન હોતે હૈ, વે ડસ પ્રકાર હૈ—જાતિમદ, કુલમદ,
 વલમદ, રૂપમદ, તપમદ, શ્રુતમદ, લાભમદ, ઓર ऐश्वर्यमद । આઠ પ્રવચન
 માતાઈ કહી ગઈ હૈ વે ડસ પ્રકાર હૈ—ईर्यासमिति ૧, भाषासमिति ૨, एषणास-
 मिति ૩, आदानभांडमात्रनिक्षेपणासमिति ૪, उच्चारप्रस्रवण-खेलजल्ल शिङ्घाणप-
 रिष्ठापनासमिति ૫, मनोगुप्ति ૬, वचनगुप्ति ૭ ઓર कायगुप्ति ૮ । વ્યન્તર દેવો
 કે ચૈત્યવૃક્ષ આઠ યોજન કે ઊંચે કહે ગયે હૈ । દેવો કે उन उन नगरों

હવે સૂત્રકાર આઠમું સમવાયાગ કહે છે—‘અઢમયટ્ટાણા’ इत्यादि
 - ટીકાર્થ—આઠ મદસ્થાન હોય છે, તે આ પ્રમાણે છે—(૧) જાતિમદ, (૨) કુળમદ
 (૩) બળમદ, (૪) રૂપમદ, (૫) તપમદ, (૬) શ્રુતમદ (૭) લાભમદ, અને (૮)
 ऐश्वर्यमद આઠ પ્રવચનમાતાઓ આ પ્રમાણે છે—
 (૧) ઇર્યાસમિતિ, (૨) ભાષાસમિતિ, (૩) એષણા સમિતિ, (૪) આદાન
 ભાંડમાત્રનિક્ષેપણા સમિતિ, (૫) ઉચ્ચાર પ્રસ્રવણ ખેલ જલ્લ શિંઘાણ પરિષ્ઠાપના
 સમિતિ (૬) મનોગુપ્તિ (૭) વચનગુપ્તિ અને (૮) કાયગુપ્તિ વ્યન્તર દેવોનાં ચૈત્ય-
 વૃક્ષ આઠ યોજન ઉચ્ચ કહેલ છે દેવોનાં તે તે નગરોમા સુધર્મા આદિ સભાઓ
 ૧૪

નગરપુ સુધર્માદિમમાનામગ્રતઃ મણિપીઠિકાપરિચિતા સધરત્નમયા રાઊષ
 ધામરધ્વજાદ્યમૃત્તા ઇસામૈત્યદ્વક્ત્વન ક્ષયશ્રિયતે । યદ્વૈષ્ણવાતીયસ્ય યદ્વૈષ્ણ
 વક્ત્વ સ ગાથાદ્યન પ્રોચ્યતે—‘કલ્પ્યા પિસાયાણ ઘટા જથ્થાન્નવેદ્ય । તુલ્સી
 મૂયાણ મવે રવસ્વસાણ તુ ઘડશ્ચો ॥ ૧ ॥ અસોગો કિંચરણ વ કિંપુરિસાણ ય
 વપશ્ચો । નાગમ્બવી મુયગાણ મધધ્વાણ ય તૃષ્ણ ॥ ૨ ॥’ इति, कदम्बः (कदम्ब
 वृक्षः) पिशाचानां घ्नो यस्याणां वैम्यन् । तुलसी भूतानां भवत् राक्षसाणां व
 काण्डकः ॥ १ ॥ अशोकः विनराणां च किं पुरुषाणां च चम्पकः । नागवृक्षा
 मुजगानां गन्धर्वाणाम् तुम्बर ॥ २ ॥ षट्क्षेत्रं=षट्क्षेत्र इत्यर्थः । मुजगानां=
 महारगदेवानामित्यर्थः । ‘जपूज सुमणा’ जम्पूः खलु सुदर्शना उत्तरकुरुक्षेत्र
 स्थितः पृथिवीरायपरिणत सुदर्शनाभिषेया मम्पूवृक्ष इत्यर्थः । अष्टयोजनानि
 उर्ध्वैर्मुखत्वेन प्रसृता । ‘कृढ सामीण गरुडावासे’ कृन्दात्मनी खलु गरुडा-
 वासा = देवकुक्षे प्रस्थित गरुडजाता यस्य षण्णदेवस्यावास इत्यर्थः, अप्रया

મેં સુધર્મા આદિ સમાગ્ર આગે મણિપીઠિકા કે ऊपर स्थित तथा छत्र,
 चामर एवं ध्वजा आदि से सुशोभित जो मधरत्नमय वृक्ष होते हैं उन्हीं
 का नाम वैत्यवृक्ष है । जिस वृक्ष जाति का जो वैत्यवृक्ष होता है वह इन
 दो गाथाओं द्वारा कहा जाता है—‘कल्यो’ ‘असोगो’ इत्यादि ।
 ‘पिशाचों का वैत्यवृक्ष होता है उसका नाम कदम्बवृक्ष है १। यन्नों का
 वैत्यवृक्ष घटवृक्ष है २। भूतों का वैत्यवृक्ष तुलसी है ३। राक्षसों का वैत्य
 वृक्ष काण्डक है ४ ॥ १ ॥ किसरों का वैत्यवृक्ष अशोकवृक्ष है ५। किं पुरुषों
 का वैत्यवृक्ष चम्पकवृक्ष है । मुजंगों का वैत्यवृक्ष नागवृक्ष है ७। और
 गंधर्वों का वैत्यवृक्ष तुम्बर है ८ ॥ २ ॥ जंजलीप की जगनी आठ योजन
 की ऊँची कही गई है । देवकुक्षे प्रस्थित गरुड जातीय षण्णदेव के

આગળ મણિપીઠિકાની ઉપર રહેલ તથા છત્ર ચામર અને ધ્વજા આદિથી સુશોભિત
 જે સર્વરત્નમય વૃક્ષો હોય છે તેમને વૈત્યવૃક્ષ કહે છે કબી દેવનાવિનુ કમુ વૈત્ય
 વૃક્ષ હોય છે તે આ બે ગાથાઓ દ્વારા બતાવ્યું છે—‘કલ્પ્યો’ ‘અસોગો’ ‘અસોગો’

‘પિશાચોના વૈત્યવૃક્ષના નામ કદમ્બવૃક્ષ છે ૧) યક્ષોના વૈત્યવૃક્ષના નામ
 ઘટવૃક્ષ છે (૨) જાનો વૈત્યવૃક્ષ તુલસી છે (૩) રાક્ષસોના વૈત્ય વૃક્ષ વ કાંડક
 છે (૪) ॥ ૧ ॥ કિસરોના વૈત્યવૃક્ષ અશોકવૃક્ષ છે (૫) કિંપુરુષોના વૈત્યવૃક્ષ ચમ્પકવૃક્ષ છે
 ૬, મુજંગોના વૈત્યવૃક્ષ નાગવૃક્ષ છે (૭) અને ગંધર્વોના વૈત્યવૃક્ષ તુલસી છે (૮)

જંજલીપની જગતી-(કોટ) આઠ યોજન ઉંચી બતાવી છે દેવકુક્ષેત્રમાં
 આવેલ ગરુડ વાતિના વેણુદેવના આવાસ આઠ યોજન ઉંચા કહેલ છે આ સંપન્ને

तनानि उर्ध्वमुच्चत्वेन प्रज्ञप्तः । जम्बूद्वीपस्य खलु 'जगई' जगती प्राकार-
रूपापालीत्यर्थः, अष्ट योजनानि ऊर्ध्वमुच्चत्वेन प्रज्ञप्ता । अष्ट सामयिकः केवलि
समुद्घातः प्रज्ञप्तः, तद्यथा—प्रथमे समये दण्डं करोति, द्वितीयसमये कपाटं करोति,
तृतीये समये मन्थं करोति, चतुर्थे समये मन्थान्तराणि पूरयति, पञ्चमे समये
मन्थान्तराणि प्रतिसंहरति, षष्ठे समये मन्थं प्रतिसंहरति सप्तमे समये कपाटं प्रति-
संहरति, अष्टमे समये दण्डं प्रतिसंहरति । ततः पश्चात् शरीरस्थो भवति । पार्श्वस्य
खलु अर्हतः 'पुरिसादाणिअस्स' पुरुपादानीयस्य=पुरुपाणां मध्ये आदानोयः
=आदेयः श्रद्धेय इत्यर्थः, तस्य अष्टौ गणा गणधराश्चाभूवन्, तद्यथा—शुभश्च
शुभघोषश्च वशिष्ठो ब्रह्मचारिकः । सोमः श्रीधरश्चैव वीरभद्रो यशस्वीति । ननु क्व-
चित्पार्श्वस्यार्हतो दशगणधराः निर्दिष्टाः अत्राष्टौ, इति विरोधः इति चेत्, शृणु,

आवास आठ योजन के ऊँचे कहे गये हैं । आठ समय का केवलि समु-
द्घात कहा है, वह इस प्रकार से है—प्रथम समय में वे दण्ड करते हैं^१,
द्वितीय समय में कपाट करते हैं^२, तीसरे समय में मन्थान करते हैं^३,
चौथे समय में मन्थान के छिद्रों को पूरते हैं^४, पंचमसमय में मन्थान के
छिद्रों को संकुचित करते हैं^५, छठवें समय में मन्थान को प्रतिसंहरित
करते हैं^६, सातवें समय में कपाट को, और आठवें समय में दण्ड को
संकोचते हैं^७ । इसके बाद वे फिर स्वशरीरस्थ हो जाते हैं । समस्त पुरुषों
में श्रद्धेय ऐसे अर्हत पार्श्वप्रभु के आठ गण और गणधर हुए हैं । वे
इस प्रकार हैं—शुभ^१, शुभघोष^२, वशिष्ठ^३, ब्रह्मचारिक^४, सोम^५, श्रीधर^६,
वीरभद्र^७, और यशस्वी^८ ।

शका—पार्श्वनाथ प्रभु के कहीं २ पर दस गणधर कहे गये हैं
यहां आठ ही गणधर क्यों कहे गये हैं ?

केवलि समुद्घात छे, ते आ प्रभाणु छे —(१) पडेला समयमा तेओ ह ड करे ड
(२) पीला समयमा कपाट करे छे (३) त्रीला समयमा मन्थान करे छे (४) चौथा समयमा
मन्थानना छिद्रो पूरे छे. (५) पाचमे समयमे मन्थानना छिद्रोने संकुचित करे छे, (६)
छठ्ठा समयमे मन्थानने प्रतिसंहरित (अकत्र) करे छे (७) सातमा समयमा कपाटने
(८) अने आठमा समयमा हंडने संकोचि छे त्यार पाद तेओ करीथी स्वशरीरस्थ
थय जय छे समस्त पुरुषोमा श्रष्ठ ओवा अर्हत पार्श्वप्रभुना आठ गणु अने
आठ गणधर थया छे. तेमना नाम आ प्रभाणु छे —(१) शुभ, (२) शुभघे ष, (३)
(४) वशिष्ठ, (५) ब्रह्मचारिक, (६) सोम, (७) श्रीधर, (८) वीरभद्र अने (८) यशस्वी
शका—कैछ कैछ स्थाने पार्श्वनाथ प्रभुना दस गणधर बताव्या छे, तो
अह्नी आठ गणधर शा करेणु कहेल छे ?

पार्श्वस्याईतो द्वौ गणधरो मत्स्यायुक्कौ, तयारगणनयाऽष्टत्वापच । अष्ट नक्षत्राणि चन्द्रेण सह प्रमर्दरूपं योगं योजयन्ति=कुर्वन्ति । एतैरष्टमिर्नक्षत्रैः सह यदा चन्द्रा मपति, तदा प्रमर्दयोगो जायते । तद्यथा—कृत्तिका १ रोहिणी २ पुनर्वसु ३ मघा ४ चित्रा ५ विशाखा ६ अनुराधा ७ ज्येष्ठाच्चेति ॥२४॥

समाधान—पार्श्वनाथ प्रभु के दो गणधर मत्स्यायुक्क थे, इसलिये उनकी यहाँ गणना नहीं की है। इस हिसाब से गणधर उनके आठ कहे गये हैं।

आठ नक्षत्र चंद्र के साथ प्रमर्दरूप योग को करने हैं, अर्थात् जब चन्द्रमा इन आठ नक्षत्रों के साथ होता है तब प्रमर्द नामका योग होता है। ये आठ नक्षत्र इस प्रकार हैं—कृत्तिका १, रोहिणी २, पुनर्वसु ३, मघा ४, चित्रा ५, विशाखा ६, अनुराधा ७ और ज्येष्ठा ८।

भावार्थ—इस सूत्र द्वारा सूत्रकार ने आठ समवाय प्रकट किये हैं। मद्स्थान, प्रवचनमाता आदि ये सब अष्ट स्वरूपोपेत समवायांग हैं। उन ह्योसमिति आदि पाँच समितियों का, तथा मनोशुप्ति आदि तीन शुप्तियों जो प्रवचन की माता कही गई है उसका तत्पर्य इस प्रकार है—जिस प्रकार बिना माता के शिशु का पालन-पोषण नहीं हो सकता है। वही प्रकार पाँच समिति और तीन शुप्ति के बिना ब्राह्मणांग की प्रवृत्ति नहीं हो सकती है। इनके साक्षात् अभवा परपरारूप सहारे से ही ब्राह्मणांगरूप प्रव

प्रमाण—पार्श्वनाथ प्रभुना हैं जगधरो दुःख अमुष्म वासा इत्या तेषां तेभ्यो जगधरो अहो कही नवा अजगधरो प्रभावे तेभ्यो अह जगधरो कथा ये आठ नक्षत्रो चन्द्रनी साथे प्रमर्दयोग करे के, ओटवे के अपारे चन्द्रमा के आठ नक्षत्रोनी साथे होव छ त्वारे प्रमर्दनामने योग कर छ ते आठ नक्षत्रे ना नाम नीके प्रभावे छ—

(१) कृत्तिका (२) रोहिणी (३) पुनर्वसु, (४) मघा, (५) चित्रा, विशाखा, (७) अनुराधा जने (८) ज्येष्ठा.

भावार्थ—आ सूत्रद्वारा सूत्रकार ने आठ प्रकारका समवाय प्रकट किया है मद्स्थान, प्रवचन माता आदि सप्तमा आठ अह जगधराणां समवायांग छ जेभ ह्योसमिति आदि पाँच समितियोंने तथा मनोशुप्ति आदि त्रय शुप्तिजोने प्रवचननी माता कहेवाया अपेक्ष छ तेनु तात्पर्य अ प्रभावे छ—जेभ माता बिना आठकेनु आवन-पोषण बहुत नहीं तेम प्रवचन रूप जार अ जतु तेभना बिना प्रवचन बर्ध शक्य नहीं तेभना साक्षात् अववा परपरारूप सहाराथी

मूलम्--इमीसे णं स्यणप्पभाए पुढवीए अत्थेगइयाणं नेर-
इयाण अट्ठ पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता । चउत्थीए पुढवीए अत्थे-
गइयाणं नेरइयाणं अट्ठ सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता । असुरकुमाराणं
देवाणं अत्थेगइयाणं अट्ठ पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता । सोहम्मी-
साणेसु कप्पेसु अत्थेगइयाणं देवाणं अट्ठ पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता ।
बंभलोए कप्पे अत्थेगइयाणं देवाणं अट्ठसागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता ।
जे देवा अच्चिं१ अच्चिमालिं२ वइरोयणं३ पभंकरं४ चंदाभं५ सूराभं६
सुपइद्धाभं७ अग्निच्चाभं८ रिद्धाभं९ अरुणाभं१० अरुणुत्तरवडिंसगं११
विमाणं देवत्ताए उववण्णा, तेसि णं देवाणं उक्कोसेणं अट्ठसागरो-

चनप्रवर्तित होता । इन्हें संघ की माता भी कही गई है और वह इसी
अभिप्राय से कि बिना इनके संघ कभी भी संघत्त्व को प्राप्त नहीं कर सकता है ।
ऊँचाई की अपेक्षा से चैत्यवृक्षों की उर्ध्वता आठ योजन की की गई है ।
ये चैत्यवृक्ष सर्वरत्नों के बने हुए होते हैं। छत्र, चामर और ध्वजा
आदि से अलंकृत होते हैं। देवों के उन २ नगरों में ये सुधर्मा आदि
सभाओं के आगे मणिपीठिका के उपर स्थित रहते हैं। जंबूद्वीप के भीतर
जो जंबू नामका वृक्ष है उसका दूसरा नाम सुदर्शना है। यह वृक्ष
उत्तरकुरु क्षेत्र में स्थित है। पृथिवीकाय है। वनस्पतिकाय नहीं। इसकी ऊँचाई
आठ योजन की है। जगती, प्राकार-कोट के जैसी होती है। बाकी के पदों
का भावार्थ स्पष्ट है ॥मू० २४॥

द्वादशांशप्र प्रत्यय प्रवर्तित थाय छ तेमने सधनी माना पणु कडेल छे, काण्णु छे तेमना
बिना सध कही पणु सधत्व प्राप्न करी शकतो नथी चैत्यवृक्षोनी उचाई आठ
योजननी अतावी छे ते चैत्यवृक्षो सर्वरत्नोना अनेल डोय छे, अने छत्र चामर
अने ध्वज वगेरथी शणुगोरेल डोय छे देवोना नगरे मा ते चैत्यवृक्षो सुधर्मा आदि
सभाओ आगण मणिपीठिकानी उपर उला रहे छे जंबूद्वीपनी अदर जे जंबू
नामनु वृक्ष छे तेनुं जीणु नाम सुदर्शना छि, ते वृक्ष उत्तरकुरु क्षेत्रमा आनेल
छे ते पृथ्वीकाय छे वनस्पतिकाय नथी ते आठ योजन उचु छे. जगती प्राकार
-कोटना जेवी डोय छे बाकीना पदोना भावार्थ स्पष्ट छे ॥मू० २४॥

वमाड ठिई पण,ण,स्ता । ते ण दंवा अट्ठण्ह अट्ठमासाण आणमति
वा पाणमति वा ऊससति वा नीससति वा । तेसि - देवाण
अट्ठिं वाससहस्सेहिं आहारहे समुप्पज्झइ, सतेगइया भवसिद्धिया
जीवा जे अट्ठिं भवग्गहणेहिं सिज्झिस्सति वुज्झिस्सति जाव अ
करिस्सति ॥ २५ ॥

टीका—इमोस ण' इत्यादि । अस्यां रत्नप्रभायां पृथिव्यामस्त्य
कपां नैरयिकाणामष्टपल्योपमानि स्थिति प्रज्ञप्ता । चतुर्थ्यां पृथिव्यामस्त्य
कपां नैरयिकाणामष्टसागरोपमानि स्थिति प्रज्ञप्ता । असुरकुमाराणां देवानाम
स्तरकपामष्टपल्यापमानि स्थिति प्रज्ञप्ता । सौधर्मेशानेषु रूपेषु अस्त्यकपां
पञ्चानामष्टपल्योपमानि स्थिति प्रज्ञप्ता । ब्रह्मलोकक रूपे अस्त्यकपां दवा
नामष्टसागरापमानि स्थिति प्रज्ञप्ता । य दवा अर्षिपम्, अर्षिर्मांलिपम्,
वैराचन, प्रमकरं, चन्द्रार्भ, सरार्भ, सुप्रतिष्ठामम्, आग्नेयामम्, ऋणाम्,
मम्, अरुणात्तरावतमक विमानम्=अर्षिरादिषु विमानमित्यर्थ, देवत्वे

टीकाय—'इमीसे ण' इत्यादि ।

इम रत्नप्रभा पृथिवी में किनने नारकिया की स्थिति आठपल्यो
पम की कही गई है । चौथी पृथिवी में किनने नारकियों की स्थिति आठ
सागरोपम की कही गई है । असुरकुमार देवों में किनने असुरकुमार देवों की
आठ पल्योपम की स्थिति कही गई है । सौधर्म और ईशानरूप में किनने
देवों की आठ पल्योपम की स्थिति कही गई है । ब्रह्मलोकक रूप में किनने
देवों की स्थिति आठ सागरोपम की कही गई है । जो दश अर्षि१, अर्षि
र्मांलि२, वैरोचन३, प्रमकर४, चन्द्रार्भ५, सरार्भ६, सुप्रतिष्ठाम७, आग्ने
याम८, ऋणाम९, अरुणाम१०, और अरुणोत्तरावतसक११ इन ग्यारह११

टीकाय—'इमीसे ण' इत्यादि ।

आ रत्नप्रभा पृथ्वीमां केदलाक नारकीओनी स्थिति आठ पल्योपमनी केदल
७ चौथी पृथ्वीमां केदलाक नारकीओनी स्थिति आठ सागरोपमनी केदल ७ असुर-
कुमार देवोमा केदलाक असुरकुमार देवोनी स्थिति आठ पल्योपमनी केदल ७ सौधर्म
अने धर्मन कपमां केदलाक इनोनी आठ पल्योपमनी स्थिति केदल ७ ब्रह्मलोक
कपमां केदलाक इनोनी स्थिति आठ सागरोपमनी केदल ७ ये दशो (१) अर्षिप,
(२) अर्षिर्मांलि (३) वैराचन (४) प्रमकर (५) चन्द्रार्भ (६) सरार्भ (७) सुप्रतिष्ठाम,
(८) अग्नेयाम, (९) ऋणाम, (१०) अरुणाम (११) अरुणोत्तरावतसक, ये अत्रि

નોત્પન્નાઃ, તેપાં સ્વલુ દેવાનામુત્કર્ષેણ અષ્ટસાગરોપમાનિ સ્થિતિઃ પ્રજ્ઞાતા । તે સ્વલુ દેવાઃ અષ્ટાનામર્ધમાસાનામન્તે આનન્તિ વા પ્રાણન્તિ વા ઉચ્છ્વસન્તિ વા નિઃશ્વસન્તિ વા । તેપાં સ્વલુ દેવાનામર્ધમર્ધસહસ્રૈરાહારસંજ્ઞા સમુપધતે । સન્ત્યેકે ભવસિદ્ધિકા જીવાઃ યેઽષ્ટભિર્ભવગ્રહણેઃ સેત્સ્યાન્તિ મોત્સ્યન્તે, યાવતા મોક્ષ્યન્તિ પરિનિર્વામ્યન્તિ, સર્વે દુઃસ્થાનામન્ત કારિષ્યન્તિ ॥૨૫॥મ્ ॥

વિમાનોં મેં દેવ કી પર્યાય સે ઉત્પન્ન હોતે હૈ, વે ઉત્કૃષ્ટરૂપ સે આઠ સાગરોપમ કાલ કી સ્થિતિ ચાલે કહે ગયે હૈં । વે દેવ ચાર માસ કે વાદ વાહ્ય ઔર આચ્યન્તરિક શ્વાસોચ્છ્વાસ ગ્રહણ કરતે હૈં । ઊન દેવોં કો આઠ હજાર વર્ષ કે વાદ આહારસંજ્ઞા ઉત્પન્ન હોતી હૈ । ઊનમેં કિતનેક દેવ પેસે હોતે હૈં જો આઠ મવોં કો ગ્રહણ કરને કે વાદ સિદ્ધગતિ કો પ્રાપ્ત કરેંગે, બુદ્ધ હો જાવેંગે, મુક્ત હો જાવેંગે, પરિનિર્વૃત્ત હો જાવેંગે ઔર સમસ્ત દુઃસ્થોં કા અન્ત કર દેંગે ।

ભાવાર્થ—ઈસ સૂત્ર દ્વારા સૂત્રકાર ને જો રત્નપ્રભા પૃથિવી કે નારકિયોં કી સ્થિતિ આઠ પલ્યોપમ કી કહોં હૈ, વહ મધ્યમસ્થિતિ કી અપેક્ષા સે જાનના ચાહિયે, વયોં કિ યહાં પર ઉત્કૃષ્ટસ્થિતિ એક સાગરોપમ કી ઔર જગન્ય દસ હજાર વર્ષ કી સ્થિતિ હૈ । ઈસી તરહ ચોથી પૃથિવી મેં જો યહ આઠ સાગરોપમ કી સ્થિતિ પ્રકટ કી ગઈ હૈ વહ બી મધ્યમસ્થિતિ કો લક્ષ્ય મેં રાખ કર પ્રકટ કી હૈ, વયોં કિ યહાં પર ઉત્કૃષ્ટસ્થિતિ-દસ સાગરોપમ કી હૈ ઔર જગન્યસ્થિતિ સાત સાગરોપમ કી હૈ । ઈસી પ્રકાર અસુરકુમાર દેવોં કી બી સ્થિતિ જો આઠ પલ્યોપમ કી કહી ગઈ

ચાર વિમાનોમા દેવની પદાયે ઉત્પન્ન થાય છે, તેમને ઉત્કૃષ્ટ રીતે આઠ સાગરોપમ કાળની સ્થિતિવાળા કહેલ જે તે દેવો ચાર મહિને બાહ્ય અને આચ્યાન્તરિક શ્વાસોચ્છ્વાસ ગ્રહણ કરે છે તેમને આઠ હજાર વર્ષે આહારની અભિલાષા થાય છે તેઓમા કેટલાક દેવો એના હોય છે કે જે આઠ ભવ કર્યા બાદ સિદ્ધગતિ પ્રાપ્ત કરશે, બુદ્ધ થશે મુક્ત થશે, પરિનિર્વૃત્ત થશે અને સમસ્ત દુઃખોના અંત કરી નાખશે

ભાવાર્થ—આ સૂત્ર દ્વારા સૂત્રકાર રત્નપ્રભા પૃથ્વીના નારકીઓની સ્થિતિ આઠ પલ્યોપમની કહી છે તે મધ્યમ સ્થિતિની અપેક્ષાએ સમજવી, કારણ કે ત્યા ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ એક સાગરોપમની અને જગન્ય સ્થિતિ દસ હજાર વર્ષની છે. એ જ પ્રમાણે ચોથી પૃથ્વીમા આઠ સાગરોપમની જે સ્થિતિ બતાવી છે તે પણ મધ્યમ સ્થિતિને ધ્યાનમા લઇને પ્રગટ કરેલ છે, કારણ કે ત્યા ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ દસ સાગરોપમની છે, અને જગન્ય સ્થિતિ સાત સાગરોપમની કે. એ જ પ્રમાણે અસુરકુમાર દેવોની પણ સ્થિતિ જે આઠ પલ્યોપમની કહેવામા આવેલ છે તે પણ મધ્યમ

મૂલ્ય—નવ દમ્ભચેરગુત્તીઓ પળ્લન્તાઓ, ત જહા—નો ઇત્થીપ સુપઢગસસત્તાણિ સિજ્ઞાસણાણિ સેવિત્તા ભવહૃ? નો ઇત્થીળ કહ કહિત્તા ભવહૃ? નો ઇત્થી ઠાણાહ સેવિત્તા ભવહૃ? નો ઇત્થીળં હદિ યાહ મળોહરાહ મળોરમાહ આલોહત્તા નિઝ્ઞાહત્તા ભવહૃ? નો સઘાણુવાઈ, નો રુવાણુવાઈ? નો ગધાણુવાઈ, નો રસાણુવાઈ, નો ફાસાણુવાઈ, નો સિલોગાણુવાઈ? નો ઇત્થીળં પુઠ્ઠરયાહ પુઠ્ઠકીલિયાહ સમરહૃત્તા ભવહૃ? નો પળીયરસમોઈ? નો પાળમોયળસ્સ અહમાયાપ આહારહૃત્તા? નો સાયાસોક્કપઢિચ્છે યાવિ ભવહૃ? નવ ધમ્ભચેર અગુત્તીઓ પળ્લન્તા, ત જહા—ઇત્થીપસુપઢગસસત્તાણ સિજ્ઞાસણાણ સેવળયા જાવ સાયાસુક્કપઢિચ્છે યાવિ ભવહૃ? નવ ધમ્ભચેરાપળ્લન્તા, ત જહા—સત્થપરિણ્ણા લોગવિજઓ સીઓસણિજ્ઞ સમ્મત્ત । આવતિ ધુયવિમોહા ઉવયાળ સુહ મહપરિણ્ણા ॥૧॥ પાસે ણં અરહા પુરિસા

હે વહ સી મધ્યમ સ્થિતિ જાનની યાહિયે, ક્યોં કિ યસુરકુમાર દેવોં મેં સાગરોપમ કી ઓર સાગરોપમ સે કુછ અધિક કી ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ કહી ગઈ છે. તયા જયન્તિસ્થિતિ દસ હમાર વર્ષ કી કહી ગઈ છે. સૌધર્મ ઓર જ્ઞાન કલ્પ મેં ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિક્રમવાઃ હા સાગરોપમ કો ઓર કુછ અધિક દો સાગરોપમ કી છે, ઓર જયન્તિસ્થિતિ અનુક્રમ સે એક પર્યોપમ સે કુછ અધિક કી છે, અતઃ યહાં જો હન કલ્પોં મેં આઠ પર્યોપમ કી સ્થિતિ કહી ગઈ છે વહ મધ્યમસ્થિતિ કી અપેક્ષા જાનના યાહિયે. યાકી કે પદોં કા માધર્મ સ્પષ્ટ છે ॥૪૦ ૨૫॥

સ્થિતિ સમજવી કાણુ છે અસુરકુમાર દેવોંમાં સાગરોપમની અને સાગરોપમથી યોદ્ધી વધારે ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ કહેલ છે તથા જયન્તિ સ્થિતિ દસ હમાર વર્ષની કહેલ છે સૌધર્મ અને જ્ઞાન કલ્પમાં ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ અનુક્રમે બે સાગરોપમની અને બે સાગરોપમથી યોદ્ધી વધારે છે, અને જયન્તિ સ્થિતિ અનુક્રમે એક પર્યોપમની અને પર્યોપમથી યોદ્ધા વધારે કાળની છે, તેથી જાદી તે કલ્પોંમાં બે આઠ પર્યોપમની સ્થિતિ કહેવામાં આવી છે તે મધ્યમ સ્થિતિની અપેક્ષાએ સમ જવી. જાકીના પદોંના જાવાઈ સ્પષ્ટ છે ॥૪૦ ૨૫॥

દાળીનવ રચનીઓ ઉદ્ધં ઉચ્ચત્તેર્ણ હોત્યા, અભિજીનવલક્ષ્મી સાદરેગે
નવમુહુત્તે ચંદ્રેણ સુદ્ધિં જોગં જોણ્ઠ, અભિજિયાઈયા નવ નવલક્ષ્મી
ચંદ્રસ સુત્તરેણ જોગં જોયતિ, તં જહા—અભિજીસવળો જાવ
ભરણી ॥ સૂ. ૨૬ ॥

ટીકા—‘નવ વમચેર ગુત્તીઓ’ ઇત્યાદિ નવ નવસંસ્કૃતકાવંમચેર ગુત્તીઓ’
વ્રહ્મચર્યગુણતયઃ પ્રજ્ઞતાઃ, તદ્યથા—‘નો’ ઇત્યા પમુપંડગમંસત્તાણિ સિજ્ઞાસનાણિ
સેવિત્તા મવડ’નો સ્ત્રીપશુપંડકસમક્તાનિ શય્યાસનાનિ સેવિતા મવતિ, સ્ત્રીભિઃ
પશુભિર્નપુસકૈશ્વ સયુક્તાનાં શય્યામનાનામનિષેણં પ્રથમા વ્રહ્મચર્યગુણિઃ । ‘નો’
ઇત્યીણ વહ કવિત્તા મવડ’નો સ્ત્રીણા કથા કર્યાયતા મવતિ=સ્ત્રી સદ્વચ્ચિકથા
કથનાભાવરૂપા દ્વિતીયા । ‘નો’ ઇત્યીઠાણાઠ સેવિત્તા મવડ’નો સ્ત્રીસ્થાનાનિ
સેવિતા મવતિ=તિષ્ઠન્તિ યેષુ તાનિ સ્થાનાનિ નિષદ્યાદયઃ, સ્ત્રીણા સ્થાનાનિ=
સ્ત્રીસ્થાનાનિ. યત્ર નિષદ્યાદિપુ સ્ત્રિય ઉપદિષ્ટાઃ, તતઃ ઉત્થિતાસ્વાપિ તાસુ મુહૂર્ત
નોપવિજેદિતિ તૃતીયા । નો ઇત્યીણં ઇન્દ્રિયાઈ મળોહરાઈ મળોરમાઈ આલો-
ડત્તા નિજ્ઞાઈતા મવડ’ સ્ત્રીણા મનોહરાણિ=ચિત્તાકર્પકત્વાત્, મનોરમાણિ=સુન્દરા-
કૃતિત્વાત્ ઇન્દ્રિયાણિ=મુખનયનનાસિકાદીનિ આલોકયિતા=સામાન્યતયાડવલો-

ટીકાર્થ—‘નવ વમચેર ગુત્તીઓ’ ઇત્યાદિ ।

વ્રહ્મચર્યની નવ ગુણિયાં કહી ગઈ છે । વે સ્ત્રી, પશુ
પશુ ઓર પંડક-નપુસક, હન સે સયુક્ત શય્યા આસન કા સેવન નહીં
કરના,યહ પ્રથમ વ્રહ્મચર્યની ગુણિ છે ૧। સ્ત્રિયોં કી કથા નહીં કરના યહ
દ્વિતીય ગુણિ છે ૨। જિસ નિષદ્યા આદિકોં કે ઉપર સ્ત્રિયાં વૈઠી હોં ઓર
ફિર વે ઊન પર સે ઊઠ ગઈ હોં તો ઊન નિષદ્યાદિકોં પર એક મુહૂર્ત તક
નહીં વૈઠના, યહ વ્રહ્મચર્યની ત્રીસરી ગુણિ છે ૩। ચિત્તાર્પક હોને સે મનો-
હર, તથા સુન્દરાકૃતિસપન્ન હોને સે મનોરમ ૪સે સ્ત્રિયોં કે મુખ, નયન
એવં નાસિકા આદિ ઇન્દ્રિયોં કે રાગભાવ સે પ્રેરિત હોકર સામાન્ય રૂપ સે

સૂત્રકાર નવમું સમવાયાગ કહે છે—‘નવ વમચેરગુત્તીઓ’ ઇત્યાદિ !

ટીકાર્થ—બ્રહ્મચર્યની નવ ગુણિઓ છે તે આ પ્રમાણે છે—સ્ત્રી, પશુ, અને પંડક-
નપુસક, તેમની સાથે શય્યાનુ સેવન ન કરવું તે બ્રહ્મચર્યની પહેલી ગુણિ છે
સ્ત્રીઓની કથા ન કરવી તે બીજી ગુણિ છે બે નિષદ્યા (સ્થાન) આદિની ઉપર
સ્ત્રીઓ બેઠી હોય અને પછી તેના પરથી ઉઠી ગઈ હોય તે નિષદ્યા અદિ ઉપર
એક મુહૂર્ત સુધી ન બેસવું તે બ્રહ્મચર્યની ત્રીજી ગુણિ છે ચિત્તાકર્પક હોવાને
બીધે મનોહર, તથા સુંદર આકારના હોવાને બીધે મનોરમ એવા સ્ત્રીઓના મુખ,
નયન, નાસિકા આદિ અંગોને રાગ ભાવથી પ્રેરાઈને સામાન્ય રીતે તથા વિશેષ

મૂલ્ય—નવ ધમ્મચેરગુત્તીઓ પળ્લત્તાઓ, ત જહા—નો હત્થીપ સુપ્પઢગસસત્તાણિ સિજ્ઞાસણાણિ સેવિત્તા ભવહૃ ૧ નો હત્થીળ કહ કહિત્તા ભવહૃ ૨ નો હત્થી ઠાણાઢ સેવિત્તા ભવહૃ ૩ નો હત્થીળ હિદિ યાહ મળોહરાહ મળોરમાહ આલોહિત્તા નિજ્ઞાહિત્તા ભવહૃ ૪ નો સહાણુવાઈ, નો રુવાણુવાઈ ૫, નો ગધાણુવાઈ, નો રસાણુવાઈ, નો ફાસાણુવાઈ, નો સિલોગાણુવાઈ ૫, નો હત્થીળ પુઠ્ઠવરયાહ પુઠ્ઠવીલિયાહ સમરહિત્તા ભવહૃ ૬, નો પળીયરસમોઈ ૭, નો પાળમોયણસ્ત અહમાયાય આહારહિત્તા ૮, નો સાયાસોક્કવપઢિચ્છે યાવિ ભવહૃ ૯ ॥ નવ ધમ્મચેર અગુત્તીઓ પળ્લત્તા, ત જહા—હત્થીપસુપ્પઢગસસત્તાણ સિજ્ઞાસણાણ સેવળયા જાવ સાયાસુવવપઢિચ્છે યાવિ ભવહૃ ૧ નવ ધમ્મચેરાપળ્લત્તા, ત જહા—સત્થપરિણ્ણા લોગવિજઓ સીઓસણિજ્ઞ સમ્મત્ત ૧ આવતિ ધુયવિમોહા ઉવયાળ સુહ મહપરિણ્ણા ॥૧૧॥ પાસે ણં અરહા પુરિસા

હે વહ મી મધ્યમ સ્થિતિ જાનની વાહિયે, ક્યોં કિ અસુરકુમાર દેવોં મેં સાગરોપમ કી ઓર સાગરોપમ સે કુછ અધિક કી ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ કહી ગઈ હૈ। તથા મધ્યમસ્થિતિ દસ હજાર વર્ષ કી કહી ગઈ હૈ। સૌધર્મ ઓર જ્ઞાન કલ્પ મેં ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ ક્રમશઃ દો સાગરોપમ કો ઓર કુછ અધિક દો સાગરોપમ કી હૈ, ઓર જપન્યસ્થિતિ અનુક્રમ સે એક પર્યોપમ સે કુછ અધિક કી હૈ, અતઃ યહાં જો ઇન કલ્પોં મેં આઠ પર્યોપમ કી સ્થિતિ કહી ગઈ હૈ વહ મધ્યમસ્થિતિ કી અપેક્ષા જાનના વાહિયે। યાકી કે પદોં કા આવાર્થ સ્પષ્ટ હૈ ॥૫૦ ૨૫॥

સ્થિતિ સમજવી કારણ કે અસુરકુમાર દેવોમા સાગરોપમની અને સાગરોપમથી થોડી વધારે ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ કહેલ છે તથા મધ્યમ સ્થિતિ દસ હજાર વર્ષની કહેલ છે સૌધર્મ અને જ્ઞાન કલ્પમા ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ અનુક્રમે બે સાગરોપમની અને બે સાગરોપમથી થોડી વધારે છે, અને મધ્યમ સ્થિતિ અનુક્રમે બેકે પચ્ચોપમની અને પચ્ચોપમથી થોડા વધારે કાળની છે, તેથી બન્ની તે કલ્પોમા બે આઠ પચ્ચોપમની સ્થિતિ કહેવામાં આવી છે તે મધ્યમ સ્થિતિની અપેક્ષાએ સમજવી. આકોના પદોનો આવાર્થ સ્પષ્ટ છે ॥૫૦ ૨૫॥

દાળીએ નવ રચણીઓ ઉદ્ધં ઉદ્ધલેણં હોત્યા, અભિજીનવલ્લભે સાદરેગે
નવસુદૃષ્ટે ચંદ્રેણં સદ્ધિં જોગં જોણે, અભિજિયાદયા નવ નવલ્લભા
ચંદ્રસ્ય ઉત્તરેણં જોગં જોયતિ, તં જહા—અભિજીસવળો જાવ
ભરણી ॥ સૂ. ૨૬ ॥

ટીકા—‘નવ વ્રમચેર ગુત્તીઓ’ ઇત્યાદિ નવ નવસંખ્યકાવંભચેર ગુત્તીઓ’
વ્રહ્મચર્યગુપ્તયઃ પ્રજ્ઞતાઃ, તથા—‘નો’ ઇત્યાં પસુપંડગસંસત્તાણિ સિજ્ઞાસણાણિ
સેવિત્તા ભવડ’નો સ્ત્રીપશુપંડકસમક્તાનિ શય્યાસનાનિ સેવિતા ભવતિ, સ્ત્રીભિઃ
પશુભિર્નિપુલકૈશ્વ સયુક્તાના શય્યાસનાનામનિષેણં પ્રથમા વ્રહ્મચર્યગુપ્તિઃ । ‘નો
ઇત્યોળ વહ કહિત્તા ભવડ’નો સ્ત્રીળા કથા કર્યાયતા ભવતિ=સ્ત્રી સદ્વન્ધિકથા
કથનાભાવરૂપા દ્વિતીયા । ‘નો’ ઇત્યાં ઠાળાડ સેવિત્તા ભવડ’નો સ્ત્રીસ્થાનાનિ
સેવિતા ભવતિ=તિષ્ઠન્તિ યેષુ તાનિ સ્થાનાનિ નિષદ્યાદયઃ, સ્ત્રીળાં સ્થાનાનિ=
સ્ત્રીસ્થાનાનિ. યત્ર નિષદ્યાદિષુ સ્ત્રિય ઉપદિષ્ટાઃ, તતઃ ઉત્થિતાસ્વાપે તાસુ મુહૂર્ત
નોપવિશેદિતિ તૃતીયા । નો ઇત્યોળં ઇન્દ્રિયાઈ મળોહરાઈ મળોરમાઈ આલો-
ડત્તા નિજ્ઞાડત્તા ભવડ’ સ્ત્રીળા મનોહરાણિ=ચિત્તાર્પકત્વાત્, મનોરમાણિ=સુન્દરા-
કૃતિત્વાત્ ઇન્દ્રિયાણિ=મુખનયનનાસિકાદીનિ આલોકયિતા=સામાન્યતયાડવલો-

ટીકાર્થ—‘નવ વ્રમચેર ગુત્તીઓ’ ઇત્યાદિ ।

વ્રહ્મચર્યની નો ગુપ્તિયાં કહી ગઈ છે । વે ઇસ પ્રકાર છે—સ્ત્રી,
પશુ ઓર પંડક—નપુસક, ઇન સે સયુક્ત શય્યા આસન કા સેવન નહી
કરના, યહ પ્રથમ વ્રહ્મચર્યની ગુપ્તિ છે ૧ । સ્ત્રિયોં કી કથા નહીં કરના યહ
દ્વિતીય ગુપ્તિ છે ૨ । જિસ નિષદ્યા આદિકોં કે ઉપર સ્ત્રિયાં વેઠી હોં ઓર
ફિર વે ઊન પર સે ઉઠ ગઈ હોં તો ઊન નિષદ્યાદિકોં પર એક મુહૂર્ત તક
નહીં વેઠના, યહ વ્રહ્મચર્યની ત્રીસરી ગુપ્તિ છે ૩ । ચિત્તાર્પક હોને સે મનો-
હર, તથા સુન્દરાકૃતિસંપન્ન હોને સે મનોરમ ંસે સ્ત્રિયોં કે મુખ, નયન
એવં નાસિકા આદિ ઇન્દ્રિયોં કે રાગભાવ સે પ્રેરિત હોકર સામાન્ય રૂપ સે

સૂત્રકાર નવમું સમવાયાંગ કહે છે—‘નવ વ્રમચેરગુત્તીઓ’ ઇત્યાદિ !

ટીકાર્થ—વ્રહ્મચર્યની નવ ગુપ્તિઓ છે તે આ પ્રમાણે છે—સ્ત્રી, પશુ, અને પંડક—
નપુસક, તેમની સાથે શય્યાનુ સેવન ન કરવું તે વ્રહ્મચર્યની પહેલી ગુપ્તિ છે
સ્ત્રીઓની કથા ન કરવી તે બીજી ગુપ્તિ છે જે નિષદ્યા (સ્થાન) આદિની ઉપર
સ્ત્રીઓ બેઠી હોય અને પછી તેના પરથી ઉઠી ગઈ હોય તે નિષદ્યા અદિ ઉપર
એક મુહૂર્ત સધી ન બેસવું તે વ્રહ્મચર્યની ત્રીજી ગુપ્તિ છે ચિત્તાર્પક હોવાને
બીધે મનોહર, તથા સુન્દર આકારના હોવાને બીધે મનોરમ એવા સ્ત્રીઓના મુખ,
નયન, નાસિકા આદિ અંગોને રાગ ભાવથી પ્રેરાઈને સામાન્ય રીતે તથા વિશેષ

કનકર્તા 'નિઙ્મદ્વાદ્વા'—નિઙ્મ્યાતા=એકાગ્રચિત્તવ્યાપ્તિબોધકનકર્તા ચ ન મવતિ, સ્ત્રી
 દ્વિયાણાં સાદરાનવલાકનરૂપા ચતુર્થી । 'નો સદાણુવાઈ, નો રુષાણુવાઈ, નો
 ગયાણુવાઈ, નો કાસાણુવાઈ, નો સિલ્લોગાણુવાઈ' નો અન્દાનુપાતી, નો રૂપાનુપાતી,
 નો ગન્ધનુપાતી, નો રસાનુપાતી, નો સ્પર્શાનુપાતી, નો શ્લોકાનુપાતી, શબ્દ=
 મન્મથકારકં કૃજિતાદિ શબ્દમનુપતિતું=મોતુ શીલમસ્યતિ શબ્દાનુપાતી=વિષય
 કારકશબ્દભવનામિલાપો, રૂપ=સ્ત્રીણાં સૌન્દર્યમ્, તવનુપતિતું=દ્રષ્ટું શીલમસ્ય
 રૂપાનુપાતી=શ્રીરૂપદર્શનોત્સુક, एवं ગન્ધાનુપાતીત્યાદિષ્વપિ વિજ્ઞેયમ્ । શ્લોકા
 નુપાતી=શ્લોકા=શ્રીણાં સૌન્દર્યાદિ ગુણવર્ણનમ્, સમનુપતિતું=મોતુ શીલમસ્યેતિ
 શ્લોકાનુપાતી=સ્ત્રી સૌન્દર્યાદિગુણભવનાપમિલાપી ન મવતીત્યર્થ । इति पञ्चमा
 गुप्ति । 'નો હત્યોળ પુન્નરયાઈ પુન્નકીલિઆઈ સમરદ્વા મવઈ' નો સ્ત્રીણાં પૂવરતાનિ
 પૂર્વકીલિતાનિ સ્મર્યાં મવતિ=સ્ત્રીમિ સદયા રતિ કૃતા યા ચ ક્રીડા વિહિતા,
 તત્સ્મૃતેરકરણં પઠી । 'નો પથીય રસમોઈ'નો મળીતરસમોઝી=મળીતરસં=ધૃતાદિ
 સ્નેહપદાર્થાપ્નુત મોજન મોજુ શીલમસ્યતિ મળીતરસમોઝી=મરિગમ્સ્નેહ
 રસવિદુકસ્ય મોજનસ્ય પ્રતિદિનમનાદરણમિતિ સમ્પ્રી । 'નો પાળમાયસ્સ
 દેવ્વને કા તથા વિશેપરૂપ સે દેવ્વને કા પરિત્યાગ કરના, યહ સૌયી યુત્તિ
 ૬ । સ્ત્રિયોં કે વિષયકારક-કામોદીપક કામ્યોં કે સુનને કા અમિલાપી
 નહીં હોના, સ્ત્રિયોં કે સૌંદર્ય કો દેવ્વને કા અમિલાપી નહીં હોના, ઇત્તી તરહ
 ગધ આદિકો ધૂપન કા, સ્પર્શ કો છૂને કા, અમિલાપી નહીં હોના શ્લોકા
 નુપાતી નહીં હાના,—સ્ત્રિયોં કે સૌંદર્ય આદિ ગુણોં કે સુનને કા અમિલાપી નહીં
 હાના, યહ પાંચવી યુત્તિ । ઇત્તી તરહ યુનિ અવસ્થા ધારણ કરને કેપરિછે માં સ્ત્રિયોં
 કે સાંય રતિ કી હો, જો ક્રીડા કી હો, ઉસકા સ્મરણ નહીં કરના યહ છઠવીં
 યુત્તિ ૬ । પ્રતિદિન સરસ આમન નહીં કરના ક્યોંકિ એસા મોમન કામાદાંપર

રીતે દેખવાને પરિત્યાગ કરવો તે ધારી શ્રુતિ છે સ્ત્રીઓના કામોદીપક શબ્દોને
 સાંભળવાની અભિલાષા ન કરવી સ્ત્રીઓનું સૌંદર્ય જોવાની અભિલાષા ન રાખવી એ
 જ પ્રમાણે મધે આદિ સુખવાની રસ આપવાની, સ્પર્શ કરવાની અભિલાષા વા ।
 ન જુ, શ્લોકાનુપાતી ન યુ—સ્ત્રીઓનાં સૌંદર્ય આદિ ગુણોની વાત સાંભળવાની
 અભિલાષા ન રાખવી તે પાલખી શ્રુતિ છે એ જ પ્રમાણે યુનિ અવસ્થા ધારણ
 કરી પહેલાં સ્ત્રીઓ સાથે જે રતિ મુજ મોજમ્યાં હોય જે કાંદા કરી હોય તેવું
 રમણુ ન કરવું તે છઠી શ્રુતિ છે જી આદિ રસથી તવજોળ વેળાન રસદોષ ન
 લેવું કારણ કે જોવું ભોજન કામોદીપક હોય છે તે સાતમી શ્રુતિ ૭ અધિક

अइमायाए आहारइत्ता'नो पानभोजनस्य अतिमात्रेण आहारयिता अधिकमात्रायां पानभोजनाकरणम् अष्टमी । 'नो सायासोक्खपाडवडे याविभवड' नो सात भौख्यप्रतिवद्धश्चापि भवति=सातात्-सातवेदनीयादुदयप्राप्ताद्यत्सौख्यं तत्प्रतिवद्धश्चापि नो भवति-सुखानभिलाषिता नवमी गुप्तः । नव संख्यका ब्रह्मचर्यागुप्तयःप्रज्ञप्ताः, तद्यथा - स्त्री पशुपण्डकसंमत्तानां शय्यासनानां 'सेवणया' सेवनेन यावत् सातभौख्यप्रतिवद्धश्चापि भवति । ब्रह्मचर्यगुप्तौ अकरणीयतया यदुक्तं तत्करणं ब्रह्मचर्याभ्यागुप्तिः । नवसंख्यकानि ब्रह्मचर्याणि प्रज्ञप्तानि-ब्रह्मचर्यम्, ब्रह्म=तपः सयमानुष्ठानम् तस्य चर्यमासेवनम्=ब्रह्मचर्यम्, तत्प्रतिपादकानि=आचाराङ्गप्रथमश्रुतस्कंधप्रतिवद्धानि अध्ययनानि=ब्रह्मचर्याणि, तद्यथा-'सत्थपरिणा' शस्त्रपग्निज्ञा=जीवोपमर्दनहेतोर्द्रव्यभाव-

होता है। यह सातवीं गुप्ति है ७। अधिक मात्रा में पान भोजन नहीं करना, यह आठवीं गुप्ति है ८। तथा सातवेदनीय कर्म के उदय से जो सुख प्राप्त होता है उसमें प्रतिवद्ध नहीं होना, यह नौवीं गुप्ति है ९। नौ ब्रह्मचर्य की अगुप्तियां कही हैं। वे इस प्रकार से हैं-स्त्री, पशु, पंडक से संसक्त-युक्त शय्या और आसन का सेवन करना, यावत् सातवेदनीयकर्म के उदय से प्राप्त सुख में प्रतिवद्ध होना। तात्पर्य यह है कि ब्रह्मचर्य-गुप्ति में जो २ अकरणीय रूप से कहा गया है उसका करना यही ब्रह्मचर्य की अगुप्ती है। नौ प्रकार के ब्रह्मचर्य कहे गये हैं वे इस प्रकार हैं-तप और सयम रूप अनुष्ठान का नाम ब्रह्म में। इस ब्रह्म का चर्य-आसेवन करना इसका नाम ब्रह्मचर्य है। इस ब्रह्मचर्य के प्रतिपादक जो आचारांग के प्रथमश्रुतस्कंध में प्रतिवद्ध अध्ययन हैं वे ब्रह्मचर्य हैं। जैसे शस्त्रपरिज्ञा नामक अध्ययन-द्रव्यभाव के भेद से अनेकविध ऐसा जो

प्रमाणुमां लोअन न लेवु, ते आठमी गुप्ति छे, तथा सातवेदनीय कर्म्मना उदयथी जे सुअ प्राप्त थाय छे तेना जकडवु नही, ते नवमी गुप्ति छे अइत्यर्थनी नव अशुप्तिथे अतावी छे, ते आ प्रमाणे छे—

स्त्री, पशु, पंडक-नपुंसकनी साथे शय्यानुं सेवन करवु," त्यागी शङ्करीने "सातावेदनीय कर्म्मना उदयथी प्राप्त सुओने। प्रतिवद्ध थवुं जकडवु" सुधी आगण प्रमाणे ममजवु ओटले के अइत्यर्थ-शुप्तिमा जे करवा लायक नथी जेम गइअथुं छे, ते कार्य करवु जेअ अइत्यर्थनी अशुप्ति छे।

अइत्यर्थ नव प्रकारना कहेल छे, ते आ प्रमाणे छे—तप अने सयम इप अनुष्ठाननुं नाम अइअ छे। अइअनु अर्थ-सेवन करवु, अइत्यर्थ छे आ अइत्यर्थनु प्रतिपादन करनार आचारागना पहेला श्रुतस्कंधमा जे प्रतिवद्ध अध्ययने। जे ते अइत्यर्थ छे। जेम के शस्त्रपरिज्ञा नामनुं अध्ययन-द्रव्यभावना लेदथी

मंदादनेकविषयस्य शस्त्रस्य परिज्ञा=ज्ञेयपरिज्ञया ज्ञात्वा प्रत्याख्यानपरिज्ञया परिहरण
प्रत्याख्यान पद्दजीवनिकायपरिरक्षणरूपं शस्त्रपरिज्ञेतिनामकं प्रथमाध्ययनम् । 'लोक
विजयो' लोकविजयः=रागद्वेषलक्षणस्य भावलोकस्य विजयस्त्याग =लोकविजय ,
तत्प्रतिपादक द्वितीयमध्ययनम् । 'शीतोष्णीयम्' शीतोष्णीयम्=शीता अनुकूलः
परीपहाः, उष्णाः प्रतिकूलाः परीपहा , तानधिकृत्य कृतमध्ययन शीतोष्णीयं
तृतीयम् । 'सम्यक्स' सम्यक्त्वम्=तत्त्वप्रदानलक्षणम्, तन्निश्चयरूपेणासेव्यम्
न तु परतीर्थिनामादम्बर वीक्ष्य दृष्टिविपर्ययो विधेय इति प्रतिपादक चतुर्थम् ।
'आवृत्ति' आवृत्ति=लोकसारस्यापरं नाम, लोकसारो रत्नप्रयम्, अज्ञानमोहादि

जीवोपमर्दन हेतुरूप शस्त्र है उसका ज्ञ परिज्ञा से जानकर प्रत्याख्यान
परिज्ञा से त्याग करना इसका नाम 'शस्त्रपरिज्ञा' है अर्थात् यह अध्ययन
पद्दजीवनिकाय के परिरक्षण रूप है । और यह वर्णों का प्रथम अध्ययन
है । 'लोकविजय' यह दूसरा अध्ययन है, इसका अर्थ रागद्वेषरूप
भावलोक का त्याग करना है । इस राग द्वेष रूप भावलोक के परित्याग
करने का प्रतिपादन करने वाला यह द्वितीय अध्ययन कहा गया है २ ।
'शीतोष्णीय' नामका यह तृतीय अध्ययन है । इस अध्ययन द्वारा यह
प्रतिपादित किया गया है कि शीत-अनुकूल और उष्ण-प्रतिकूल रूप परीपह
कौन २ हैं । इन्हीं शीत और उष्ण परीपहों को लेकर इस अध्ययन
का निर्माण किया गया है । ३। 'सम्यक्स'—सत्त्वप्रदान रूप चतुर्थ अद्य
यन है । इस में यह कहा गया है कि सम्यक्त्व को दृढरूप से सेवन
करना चाहिये—परतीर्थियों के आदंबर कों देखकर दृष्टि विपर्यय नहीं
करना चाहिये ४। 'आवृत्ति' यह लोकसार का दूसरा नाम है । रत्नप्रय

अनेक विध जेवु जे जीवोपमर्दन हेतुरूप शस्त्र छ तेना स-परिज्ञाधी ध्वजाने प्रत्या
ख्यान परिज्ञाधी त्याग करवो तेनु नाम "शस्त्रपरिज्ञा" छ औरवे छे ते अध्ययन
छ जीवनिधनना परिरक्षण रूप छ अने ते तर्मानु पड़ेछ अध्ययन छ (१)
"लोक विजय" जे जीवु अध्ययन छ तेना जेवु राग द्वेषरूप भावदोहने
त्याग करवो याव छ आ सजद्वेष रूप भावदोहने परित्याग करवानु प्रतिपादन
करना छ आ जीवु अध्ययन छ (२) "शीतोष्णीय" जे नामद्वु त्रीनु अध्ययन छ आ
अध्ययनद्वारा ते पातनु प्रतिपादन करवामा आओ छ छे शीत-अनुकूल अने उष्ण
प्रतिशूल परीपह कया कया छ जे ज शीत अने उष्ण परीपहोने अनुबोझने आ
अध्ययन रूप छ (३) "सम्यक्स"—वस्तुप्रदानरूप जेवु अध्ययन छ तेमा जेवु
हठेबाभां आओ छ छे सम्यक्त्वनु दृढताधी सेवन करवु जेछजे -परतीर्थी-जोना
आदंबरने जेछने दृष्टि विपर्यय करवो जेछजे नहीं (४) 'आवृत्ति' ते दोसाक

પા. ૧૨પૂર્વકં લોકસારભૂત રત્નત્રયમાસેવ્યમિતિ પ્રતિપાદકમધ્યયનં પશ્ચમમ્ ।
 ‘ધુત’ ધુત=પૂર્વ પશ્ચાત્સંગાના પરિત્યાગઃ, તત્પ્રતિપાદક પૃષ્ઠમ્ । ‘વિમોહ’ વિમોહઃ=
 મા. વશસમુત્પન્નપુ પરાપદાદિપુ વિમોહો ભવેત્, તાન્ સમ્યક્ સહેનેતિ યત્રાભિ-
 ધોયતે તદ્ વિમોહનામકં સપ્તમમધ્યયનમ્ । ‘ઉવહાણસુયં’ ઉપધાનશ્રુતમ્=ભગવતા
 મહ. િરેણ યદુપધાનં=યદુગ્રતપઃ સમાચરિતમ્ તત્પ્રતિપાદક શ્રુતમ્ ઉપધાનશ્રુત નામા-
 દમમ્ । ‘મહપરિજ્ઞા’ મહાપરિજ્ઞા=મહતી પરિજ્ઞા=મહાપરિજ્ઞા અન્તક્રિયા લક્ષણા
 રમ્યગ્નિધેયેતિ પ્રતિપાદક મહાપરિજ્ઞેતિનામક નવમમ્ । પાર્શ્વઃ સ્વલુ અર્હેન
 કા નામ લોકસાર છે । અજ્ઞાન, મોહ આદિ કે પરિહારપૂર્વક લોક મેં સાર
 ભૂત રત્નત્રય કા અછ્છી તરહ સે સેવન કરના ચાહિયે, ઇસ વિષય કો
 પ્રતિપાદન કાને ચાલા યહ આવન્તી’ નામકા પાંચવાં અધ્યયન છે ૬ ।
 પૂર્વસંગ ઓર પશ્ચાત્ સંગ કા પરિત્યાગ કરના ઇસકા નામ ‘ધુત’ છે । ઇસ
 વાત કા પ્રતિપાદન કરને ચાલા યહ ‘ધુત’ નામ કા છઠવા અધ્યયન
 છે ૬ । મોહ કે વશ સમુત્પન્ન હુણ પરીષદ્ આદિકોં કો અછ્છી તરહ
 સદન કરના ચાહિયે યહ વિષય ‘વિમોહ’ નામક સપ્તમ અધ્યયન મેં
 પ્રતિપાદિત ક્રિયા ગયા છે । અતઃ ઇસ વિષય કા-પ્રતિપાદન કરને ચાલા
 હોને સે ઇસ અધ્યયન કા નામ ‘વિમોહ’ હુઆ છે । યહ સાતવા છે ૭ ।
 ભગવાન શ્રી મહાવીર સ્વામીને જિસ ઉપધાન (ઉગ્ર) તપ કો સમાચરિત ક્રિયા
 છે ઇસ તપ કા પ્રતિપાદક શ્રુત ઉપધાનશ્રુત છે । યહ આઠમા અધ્યયન
 છે ૮ । અન્તક્રિયારૂપ મહતી પરિજ્ઞા અછ્છી તરહ સે ધારણ કરના ચાહિયે,
 ઇસ વિષય કો પ્રતિપાદન કરને ચાલે અધ્યયન કા નામ મહાપરિજ્ઞા ૯ ।
 ઓર યહ નૌવાં અધ્યયન છે । ઇસ પ્રકાર યે સમસ્ત અધ્યયન બ્રહ્મચર્ય કે નાન

રત્ન બીજુ નામ છે. રત્નત્રયને લે કમાર કહે છે અજ્ઞાન મેં હ અદિના પરિત્યાગ
 કરીને હોકના સારભૂત રત્નત્રયનુ નારી રીતે સેવન કરવું જોઈએ, એ વિષયનુ પ્રતિ-
 પાદન કરનાર તે “આવન્તી” નામનુ પાંચમુ અધ્યયન છે (૫) પૂર્વસંગ અને
 પશ્ચાત્ સંગનો પરિત્યાગ કરવો તેનુ નામ ‘ધુત’ છે તે વ તનુ પ્રતિપાદન કરનાર
 ‘ધુત’ નામનુ છઠુ અધ્યયન છે (૫) મોહને કારણે ઉત્પન્ન થયેલ પરીષદોને સારી
 રીતે સહન કરવા જોઈએ, તે વિષયનુ “વિમોહ” નામના સાતમા અધ્યયનમા પ્રતિ-
 પાદન કરેલ છે, તેથી એ વિષયનુ પ્રતિપાદન કરનાર હોવાથી તે અધ્યયનનું નામ
 “વિમોહ” છે (૭) ભગવાન મહાવીર સ્વામીએ જે ઉપધાન (ઉગ્ર) તપ કર્યું હતું
 તે તપનુ પ્રતિપાદન કરનાર સૂત્ર ‘ઉપધાનશ્રુત’ છે, અને તે આઠમુ અધ્યયન છે
 (૮) અન્તક્રિયારૂપ મહતી પરિજ્ઞા સારી રીતે ધારણ કરવી જોઈએ, તે વિષયનુ પ્રતિ-
 પાદન કરનાર અધ્યયનનુ નામ “મહાપરિજ્ઞા” છે અને તે નવમુ અધ્યયન છે આ

पुरुषाणामाय नव रस्नय उर्ध्वमुख बनासीत् । अभिजित् न च मातिरक्तान् = माधिरक्तान्
 नव मूर्त्तान् च द्रेम । १५ योग = सवर्धे याजयति = रग्नि । मातिरक्तत्वे ॥
 नवाम्-द्विद्विगाति ॥ १६ ॥ मुहूर्त्तस्य चतुर्गतिगात्राम्, तत्र मुहूर्त्तस्य
 द्विपटितमभागस्य सप्तपटितमभागेषु रत्नप्रमाणरूपम् । अभिजिगादीनि नक्षत्र
 प्राणि चन्द्राय उत्तरण योग योजयति उत्तरस्यां दिशि स्थितानि अभिजिगादीनि
 नव नक्षत्राणि दक्षिणावर्त्यतन चन्द्रेण सार्धं सवर्ध करान्तां यय । अभिजिगाद
 यस्त-अभिजिष्ठाण्यनिष्ठाश्रतमिस्वापूर्वमाद्रोत्तरमाद्रेवर्धनीभरणी स० २६॥

मूलम्—इमीसे ण रयणप्पभाए पुढवीए बहुसमरमणिज्जाओ
 मूमिभागाओ नव जोयणसए उद्ध आवाहाए उवरिह्ले तारारूवे चार
 चरइ । जवूदीवे ण दीवे नव जोयणिया मच्छा पविसिंसु वा पावेसति
 वा पविसिस्सति वा, विजयस्स ण दाराए एगमेगाए वाहाए नव नव
 भोमा पणत्ता । वाणमत्तराण देवाण सभाओ सुहम्माओ नव जोय
 णाइ उद्ध उच्चत्तेण पणत्ता । दसणावरणिज्जस्स ण कम्मस्स नव
 उत्तरपगढीओ पणत्ता, त जहा-निहा१ पयलार निहा-निहा३ पयला

से प्रसिद्ध हैं अतः ये ब्रह्मचर्य के प्रकार हैं । पुरुषमेष्ट श्री पार्श्वनाथ प्रभु
 नव रस्नि (हाय) प्रमाण लखे थे । अभिजित् नक्षत्र कुछ अधिक नौ मुहूर्त्त तक
 चन्द्र के साथ संबंध करता है । अभिजित् आदि नौ नक्षत्र चन्द्र का उत्तर
 के साथ संबंध करते हैं-अर्थात्-उत्तरदिशा में स्थित अभिजित् आदि नौ
 नक्षत्र दक्षिणदिशा में स्थित चन्द्र के साथ संबंध करते हैं । अभिजित्,
 अवण, घनिष्ठा, शतमिस्वा, पूर्वमाद्रपदा, रेवती, अश्विनी और भरणी, ये
 सप्त नक्षत्र अभिजित् के आवे पद से गृहीत हुए हैं ॥ सू० २६॥

रीते ते जथा कथयन्ते ब्रह्मचर्यानां नामि प्रसिद्ध कोषाणी तेभने ब्रह्मचर्यानां प्रकार
 ज्ञेयः ॥ पुरुषमेष्ट श्री पार्श्वनाथ प्रभु नवरस्नि प्रमाण लखा कता अभिजित्
 नक्षत्रेण नव मुहूर्त्तभी मोडो पधारे समय चन्द्रनी साथे योग बाध छे अभिजित्
 अदि नव नक्षत्रे चन्द्रने उत्तरी साथे सजध (योग) करे छे, जेहवे छे उत्तर
 दिशाभां रहैल अभिजित् आदि नव नक्षत्र दक्षिण दिशाभां रहैल चन्द्र साथे सजध
 करे छे अभिजित् अवण, घनिष्ठा, शतमिस्वा, पूर्वमाद्रपदा, उत्तरमाद्रपदा, रेवती,
 अश्विनी जने भरणी के जथा नक्षत्रे अभिजित् अदि पदभी अहण करवाभां
 जाव्या छे ॥ सू० २६॥

पयला४ थीणद्धी,५ चक्रदुंदंसणावरणे६ अचक्रदुंदंसणावरणे७ ओहि-
दंसणावरणे,८ केवलदंसणावरणे९ । इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए
अत्थेगइयाणं नेरइयाणं नव पलिओवमाइं ठिई पणत्ता । चउत्थीए
पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरइयाणं नव सागरोवमाइं ठिई पणत्ता ।
असुरकुमाराणं देवाणं अत्थेगइयाणं नव पलिओवमाइं ठिई पणत्ता ।
सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु अत्थेगइयाणं नव पलिओवमाइं ठिई पणत्ता ।
वंभलोए कप्पे अत्थेगइयाणं देवाणं नव सागरोवमाइं ठिई पणत्ता ।
जे देवा पम्हं सुपम्हं पम्हावत्तं पम्हप्पभं पम्हकंतं पम्हवणं पम्हलेसं
पम्हज्झयं पम्हसिंगं पम्हसिट्ठं पम्हकूडं पम्हुत्तरवडिसंगं सुज्जं सुसुज्जं
सुज्जवित्तं सुज्जकंतं सुज्जवणं सुज्जलेसं सुज्जज्झयं सुज्जसिंगं सुज्जसिट्ठं
सुज्जकूडं सुज्जत्तरवडिसंगं रुइल्लं रुइल्लावत्तं रुइल्लप्पभं रुइल्लकंतं रुइल्ले-
वणं रुइल्लेसं रुइल्लज्झयं रुइल्लसिंगं रुइल्लसिट्ठं रुइल्लकूडं रुइल्लुत्तरव-
डिसंगं विमाणं देवत्ताए उववण्णा, तेसि णं देवाणं नव सागरोवमाइं
ठिई पणत्ता । ते णं देवा नवण्हं अज्झसासाणं आणमंति वा प णं
मंति वा ऊससंति वा नीससंति वा । तेसिं णं देवाणं नवहिं
वाससहस्सेहिं आहारट्ठे समुप्पज्जइ । संतेगइया भवतिधिया जोवा
जे नवहिं भवग्गहणेहिं सिज्झिस्सति जाव सव्वदुक्खागमंतं
करिस्संति ॥ सू० २७ ॥

टीका—‘इमीसे णं’ इत्यादि । अस्याः खलु रत्नप्रभायाः पृथिव्याः
‘बहुसमरमणिज्जाओ भूमिभागाओ’ बहुसमरमणीयाद् भूमिभागात्-बहुसमोऽत्य-

टीकार्थ—‘इमीसे णं’ इत्यादि ।

इस रत्नप्रभा पृथिवी के अत्यंतसमरमणीय भूमिभाग से रुचक

‘इमीसे णं’ इत्यादि ।

टीकार्थ—आ रत्नप्रभा पृथ्वीना अत्यंत समतल रमणीय भूमिभागात् अथ इत्यादि

प्रवेशं कर्तुमर्हन्ति । विजयस्य खलु द्वारस्य=जम्बूद्वीपमवन्धिनः पूर्वदिग्व्यवस्थितस्य विजयद्वारस्य 'एगमेगाए' एकैकस्मिन् 'वाहाए' वाहो पार्श्वभागे इत्यर्थः, नवनव संख्यकानि 'भोमा' भौमानि=भूमिसंबन्धीनि विशिष्टस्थानानि सन्ति । व्यन्तराणां देवानां सुधर्मासभा नव योजनानि उर्ध्वमुच्चत्वेन प्रज्ञप्ताः । दर्शनावरणीयस्य खलु कर्मणो नव उत्तरप्रकृतयः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा-निद्रा, प्रचला, निद्रानिद्रा, प्रचलाप्रचला, 'थीणद्धी' स्त्यानर्द्धिः, चक्षुर्दर्शनावरणम्, अचक्षुर्दर्शनावरणम्, अवधिदर्शनावरणम्, केवलदर्शनावरणम् । अस्या खलु रत्नप्रभायां पृथिव्याम् अस्त्येकेषां नैरयिकाणां नव पल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । चतुर्थ्यां पृथिव्यामस्त्येकेषां नैरयिकाणां नव सागरोगमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । असुरकुमाराणां देवानाम् अस्त्येकेषां नव पल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । सौधर्म-

जगती में जो रन्ध्र-छिद्र है सो उस के औचित्य से उनमें से नव योजन प्रमाण अवगाहना वाले ही मत्स्य जंबूद्वीप में प्रवेश कर सकते हैं इससे अधिक अवगाहना वाले नहीं। पूर्वदिशा में व्यवस्थित विजयद्वार के जंबूद्वीप संबंधी विजयद्वार के पार्श्वभाग में नव नव भौम हैं-भूमि संबंधी-विशिष्टस्थान अथवा नगर हैं। व्यन्तर देवों की अपेक्षा नव योजन की ऊँची है। दर्शनावरणीय कर्म की उत्तर प्रकृतियां नव हैं, वे इस प्रकार हैं-निद्रा१, प्रचला२, निद्रा-निद्रा३, प्रचला-प्रचला४, स्त्यानर्द्धि५, चक्षुर्दर्शनावरण६, अचक्षुर्दर्शनावरण७, अवधिदर्शनावरण८, और केवलदर्शनावरण९। इस रत्नप्रभा पृथिवी में कितनेक नारकियों की नव पल्योपम की स्थिति कही गई है। चौथी पृथिवी में कितनेक नारकियों की स्थिति नव सागरोपम की कही गई है। असुरकुमार देवों में कितनेक देवों की

तीमां (कोटमा) ७ छिद्रो छे ते ओवा छे ६ तेमाथी नव योजन प्रमाण अवगाहना वाणा ७ मत्स्यो ७ जंबूद्वीपमां प्रवेश करी शके छे, तेथी वधारे अवगाहनावाणा प्रवेशी शक्ता नथी।

पूर्वदिशाभा आवेल ७ जंबूद्वीपना विजयद्वारना पार्श्व लागमा नव, नव लौम छे-भूमिनुं विशिष्ट स्थान अथवा नगर छे व्यन्तर देवोनी सुधर्मासभा ७ व्याधनी अपेक्षाओ नव योजननी छे दर्शनावरणीय कर्मनी उत्तर प्रकृतियो नव छे, ते आ प्रमाणे छे-(१) निद्रा, (२) प्रचला, (३) निद्रा-निद्रा (४) प्रचला-प्रचला, (५) स्त्यानर्द्धि (६) चक्षुर्दर्शनावरण (७) अचक्षुर्दर्शनावरण, (८) अवधिदर्शनावरण (९) केवलदर्शनावरण। आ रत्नप्रभा पृथ्वीमा डेटलाक नारकीओनी स्थिति नव पल्योपमनी कही छे ओथी पृथ्वीमा डेटलाक नारकीओनी स्थिति नव सागरोपमनी कहेल छे असुरकुमार देवोमा डेटलाक देवोनी स्थिति नव पल्योपमनी कही छे सौधर्म, स्थान १६

शानेषु कल्पेषु अस्त्यकेषां देवानां नव पर्योपमानि स्थितिः महत्ता । ब्रह्म
लोके कल्पे अस्त्यकेषां देवानां नव सागरोपमानि स्थितिः महत्ता । ये देवा
पक्ष्म १ सुपक्ष्म २ पक्ष्मावर्त ३ पक्ष्मप्रम ४ पक्ष्मकान्त ५ पक्ष्मवर्ण ६ पक्ष्मछेद्य ७
पक्ष्मध्वज ८ पक्ष्मभृग ९ पक्ष्मसृष्ट १० पक्ष्मकूट ११ पक्ष्मोत्तरावतसक १२ सूर्य १३
सुसूर्य १४ सूर्यावर्त १५ सूर्यप्रम १६ सूर्यकान्त १७ सूर्यवर्ण १८ सूर्यछेद्य १९ सूर्यध्वज २०
सूर्यभृग २१ सूर्यसृष्ट २२ सूर्यकूट २३ सूर्योत्तरावतसक २४ 'रुद्र' रुचिर २५ रुचि
रावर्त २६ रुचिरप्रम २७ रुचिरकान्त २८ रुचिरवर्ण २९ रुचिरछेद्य ३० रुचिरध्वज ३१
रुचिरभृग ३२ रुचिरसृष्ट ३३ रुचिरकूट ३४ रुचिरोत्तरावतसक ३५ च विमान=
पतेषु पञ्चभिः विमानेषु देवत्वेनोत्पन्ना, तेषां खलु देवानां नव सागरोप
नव पर्योपम की स्थिति कही गई है । सौधर्म ईशानकल्प में कितनेक
देवों की नव पर्योपम की स्थिति कही गई है । ब्रह्मलोक कल्प में कितनेक
देवों की नव सागरोपम की स्थिति कही गई है । जो देव, पक्ष्म १,
सुपक्ष्म २, पक्ष्मावर्त ३, पक्ष्मप्रम ४, पक्ष्मकान्त ५, पक्ष्मवर्ण ६, पक्ष्म
छेद्य ७, पक्ष्मध्वज ८, पक्ष्मभृग ९, पक्ष्मसृष्ट १०, पक्ष्मकूट ११, पक्ष्मो
त्तरावतसक १२, सूर्य १३, सुसूर्य १४, सूर्यावर्त १५, सूर्यप्रम १६, सूर्य
कान्त १७, सूर्यवर्ण १८, सूर्यछेद्य १९, सूर्यध्वज २०, सूर्यभृग २१, सूर्य
सृष्ट २२, सूर्यकूट २३, सूर्योत्तरावतसक २४, रुचिर २५, रुचिरावर्त २६,
रुचिरप्रम २७, रुचिरकान्त २८, रुचिरवर्ण २९, रुचिरछेद्य ३०, रुचिर
ध्वज ३१, रुचिरभृग, ३२, रुचिरसृष्ट ३३, रुचिरकूट ३४, और रुचिरो
त्तरावतसक ३५, इन ३०, विमानों में देवकी पर्याय से उत्पन्न होते हैं

कल्पमा षट्शतं देवानां स्थिति नव पर्योपमानी कहेल छि । अथतस्तु कल्पमां षट्शतं
देवानां नव सागरोपमानी स्थिति कहेल छि ।

ये देवा (१) पक्ष्म (२) सुपक्ष्म, (३) पक्ष्मावर्त, (४) पक्ष्मप्रम (५)
पक्ष्मकान्त, (६) पक्ष्मवर्ण (७) पक्ष्मछेद्य, (८) पक्ष्मध्वज, (९) पक्ष्मभृग, (१०)
पक्ष्मसृष्ट (११) पक्ष्मकूट, (१२) पक्ष्मोत्तरावतसक (१३) सूर्य (१४) सुसूर्य, (१५)
सूर्यावर्त, (१६) सूर्यप्रम, (१७) सूर्यकान्त (१८) सूर्यवर्ण, (१९) सूर्यछेद्य,
[२०] सूर्यध्वज, (२१) सूर्यभृग (२२) सूर्यसृष्ट (२३) सूर्यकूट (२४) सूर्योत्तरावतसक,
(२५) रुचिर, (२६) रुचिरावर्त, (२७) रुचिरप्रम, (२८) रुचिरकान्त, (२९) रुचिरवर्ण
(३०) रुचिरछेद्य (३१) रुचिरध्वज (३२) रुचिरभृग, (३३) रुचिरसृष्ट, (३४) रुचिरकूट
अने (३५) रुचिरोत्तरावतसक, ये पञ्चविंश विमानोभां देवानी पद्याये उत्पन्न भव्य छि,

માનિ સ્થિતિઃ પ્રજ્ઞસા । તે खलु देवा नवानामर्द्धमासानामन्ते आनन्ति वा प्राणान्त वा उच्छ्वसन्ति वा निःश्वसन्ति वा । तेषां खलु देवानां नवभिर्वर्षसहस्रैराहारसंज्ञा समुत्पद्यते । सन्त्येके भवसिद्धिका जीवा ये नवभिर्भवग्रहणैः सेत्स्यन्ति भोत्स्यन्ते मोक्ष्यन्ति परिनिर्वास्यन्ति सर्वदुःखानामन्तं करिष्यन्ति ॥सू २७॥

उन देवों की स्थिति नव सागरोपम की कही गई है । वे देव साढ़े चार ४॥ मास के बाद बाह्य आभ्यन्तरिक श्वासोच्छ्वास ग्रहण करते हैं । जिन देवों को नौ हजार वर्षों के बाद आहार सज्ञा उत्पन्न होती है । इनमें कितनेक देव ऐसे होते हैं जो भवसिद्धिक होते हैं । वे नौ भव ग्रहण करने के बाद सिद्धपद प्राप्त करेंगे । यावत् ममस्त दुःखों का अंत करेंगे ॥

भावार्थ—सूत्रकार इस सूत्र द्वारा नव संख्योपेत वस्तुओं को गिनाते हुए कह रहे हैं कि रत्नप्रभापृथिवी के अत्यंत सम रमणीय भूमिभाग से नौ सौ योजन की उंचाई पर तारा मंडल है । लवणसमुद्र से जंबूद्वीप में जो कि उस द्वीप को घेरे हुए हैं और जिसका विस्तार उसकी अपेक्षा द्विगुणित है उसकी जगती के छेद से जो कि नौ योजन की अवगाहना वाले मत्स्य जिसमें से निकल सकें इनना ही बड़ा है इतनी ही अवगाहना वाले मत्स्य आते हैं, आये हैं और आवेंगे । जंबूद्वीप संबंधी विजय द्वार के पार्श्वभाग में नौ-नौ भोम हैं । व्यंतरदेवों की सुधर्मासभा की उंचाई नव योजन की है । दर्शनावरणीय कर्म की उत्तर

તે દેવોની નવ સાગરોપમની સ્થિતિ કહી છે તે દેવો સાઠાચાર મહિને અદર તથા બહાર શ્વાસોચ્છ્વાસ લે છે, અને તે દેવોને નવ હજાર વર્ષે આહારની અભિલાષ થાય છે તેમા કેટલાક દેવો ભવસિદ્ધિક હોય છે. તેઓ નવ ભવ કરીને સિદ્ધગતિ પામશે તથાથી સમસ્ત દુઃખોનો અંત કરશે સુધીનો અર્થ ગ્રહણ કરાયો છે

ભાવાર્થ—સૂત્રકાર આ સૂત્રદ્વારા નવ સંખ્યાવાળી વસ્તુઓ ગણાવતાં કહે છે કે રત્નપ્રભા પૃથ્વીના અત્યંત સમરમણીય ભૂમિ ભાગથી નવ સો યોજનની ઉંચાઈએ તારામંડળ છે લવણસમુદ્રમાંથી જંબુદ્વીપમા, કે જે તે દ્વીપને ઘેરીને રહેલો છે અને જેનો વિસ્તાર તેના કરતા બમણો છે, તેની જગતી (કોટ) ના છિદ્રમાંથી નવ યોજનની લંબાઈવાળાં મત્સ્ય આવે છે, આવતા હતા અને આવશે. તે છિદ્ર એવડું છે કે તેમાંથી નવ યોજનની અવગાહનવાળા મત્સ્યો જ પ્રવેશી શકે છે, તેના કબ્બાં મોટા નહીં. જંબુદ્વીપના વિજયદ્વારમાં નવ નવ ભોમ છે. વ્યંતર દેવોની સુધર્માસભાની ઉંચાઈ નવ યોજનની છે દર્શનાવરણીય કર્મની ઉત્તર પ્રકૃતિયો નવ છે જે (કર્મના ઉદ-

પ્રકૃતિયાં નો હૈં । जिस कर्म के उदय से सुखपूर्वक जाग सके ऐसी निद्रा को निद्रा कहते हैं १। जिसके उदय से निद्रा से जागना अत्यंत दुष्कर हो वह निद्रा-निद्रा है २। जिस कर्म के उदय के बैठे २ या पड़े २ ही नींद आ जाये वह प्रचला है । ३। जिस कर्म के उदय से चलते २ ही नींद आजाये वह प्रचलाप्रचला है । ४। जिस कर्म के उदय से जागरित अवस्था में सोचे हुए कार्य को निद्रावस्था में करने का सामर्थ्य प्रकट हो जाय वह स्स्यानगुद्धि है । इस निद्रा में सहज चल से कहीं अनेकगुण अधिक चल प्रकट होता है ५। रत्नमया पृथिवी में जो कितनेक नारकियों की स्थिति यहां नव पश्योपम की कही गई है वह मध्यमस्थिति की अपेक्षा कही गई है, क्योंकि इस पृथिवी में उत्कृष्टस्थिति एक सागरोपम की और जघन्यस्थिति दस हजार वर्ष की है इसी तरह चौथी पृथिवी में जो नौ सागरोपम की स्थिति यहां प्रकट की गई है वह भी मध्यम स्थिति की अपेक्षा जाननी चाहिये, क्योंकि यहां उत्कृष्टस्थिति दस सागरोपम की और जघन्यस्थिति सात सागरोपम की है । असुर कुमार देवों की भी नौ पश्योपमकी जो यहां स्थिति कही गई है वह भी मध्यमस्थिति की यहां अपेक्षा जाननी चाहिये, ब्रह्मलोक में जो नवसागरोपमकी स्थिति ही कही गई है वह भी मध्यस्थिति की अपेक्षा लेकर ही कही

યધા મુખપૂર્વક બત્રી શકાય એવી નિદ્રાને ‘નિદ્રા’ કહે છે (૨) જે કર્મના ઉદયથી નિદ્રાભાથો બાજુ અતિશય દુઃખર હોય છે તે નિદ્રાને ‘નિદ્રા-નિદ્રા’ કહે છે (૩) જે કર્મના ઉદયથી બેઠા બેઠા કે ઉભા ઉભા હોય બાવી આવે તે કર્મને ‘પ્રચલા’ કહે છે (૪) જે કર્મના ઉદયથી ચાલતાં ચાલતાં ઊપજાવી આવે તે કર્મ પ્રકૃતિને ‘પ્રચલા-પ્રચલા’ કહે છે (૫) જે કર્મના ઉદયથી બાજુત અવસ્થામાં વિચરેલ કામ નિદ્રાવસ્થામાં કરવાનું સામર્થ્ય પ્રકટ થઈ નવે તે “સ્થ્યાનગુદ્ધિ” છે તે નિદ્રામાં સ્વાભવિક બળ કરતાં અનેક ગણુ બળ પ્રગટ થાય છે રત્નમયા પૃથ્વીમાં કેટલેક નારકીઓની સ્થિતિ જે નવ પશ્ચોપમની કહી છે તે મધ્યમ સ્થિતિની અપેક્ષાએ કહેવે યેલ છે હાલુ કે આ પૃથ્વીમાં ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ એક સાગરોપમની અને જઘન્ય સ્થિતિ હસ હાલક વર્ષની છે એ જ પ્રમાણે ચોથી પૃથ્વીમાં જે નવ સાગરોપમની સ્થિતિ પ્રગટ કરવામાં આવી છે તે પણ મધ્યમ સ્થિતિ ૧ અપેક્ષાએ કહેલ છે એમ સમજવું, હાલુ કે ત્યાં ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ હસ સાગરોપમની અને જઘન્ય સ્થિતિ માત્ર સાગરોપમની છે અસુરકુમાર દેવોની પણ બહી જે નવ પશ્ચોપમની સ્થિતિ કહેવામાં આવી છે તે પણ મધ્યમ સ્થિતિની અપેક્ષાએ સમઁ વી-બ્રહ્મલોકમાં જે નવ સાગરોપમની સ્થિતિ બહી કહેવામાં આવી છે તે પણ મધ્યમ સ્થિતિની અપેક્ષાએ

अथ दशमं समवायमाह—

मूलम्—दसविहे समणधम्मो पणत्ते, तं जहा—खंती१ मुत्ती२
अज्जवे३ मद्दवे४ लाघवे५ सच्चे६ संजमे७ तवे८ चियाए९ वंभचेर
वासे१० । दस चित्तसमाहिटाणा पणत्ता, तं जहा—धम्मचिंता वा
से असमुप्पण्णपुव्वा समुप्पज्जिज्जा सव्व धम्मं जाणित्तए१ सुमिणे
वा से असमुप्पण्णपुव्वे समुप्पज्जिज्जा अहातच्चं सुमिणं पासित्तए२
सण्णि नाणे वा से असमुप्पण्णपुव्वे समुप्पज्जिज्जा पुव्वभवे सुमरि-
त्तए३ देवदंसणे वा से असमुप्पण्णपुव्वे समुप्पज्जिज्जा दिव्वं देवद्धिं
दिव्वं देवजुइं दिव्वं देवाणुभावं पासित्तए४ ओहिनाणे वा से अस-
मुप्पण्णपुव्वे समुप्पज्जिज्जा ओहिणा लोगं जाणित्तए५ ओहिदंसणं वा
से असमुप्पण्णपुव्वे समुप्पज्जिज्जा ओहिणा लोगं पासित्तए६ मणपज्जव
नाणे वा से असमुप्पण्णपुव्वे समुप्पज्जिज्जा जाव मणोगये भावे जाणि-
त्तए७ केवलनाणे वा से असमुप्पण्णपुव्वे समुप्पज्जिज्जा केवलं लोगं
जाणित्तए८ केवलं दंसणे वा से असमुप्पण्णपुव्वे समुप्पज्जिज्जा केवलं
लोकं पासित्तए९ केवलमरणं वा मरिज्जा सव्वदुक्खपहीणाए१०
मंदरे णं पव्वए मूले दसजोयणसहस्साइं विक्खंभेणं पणत्ते । अरिहा
णं अरिद्धनेमि दस धणुइं उड्डुं उच्चत्तेणं होत्था । कण्हे णं वासुदेव
दस धणूइं उड्डुं उच्चत्तेणं होत्था । रामे णं बलदेवे दसधणूइं उड्डुं
उच्चत्तेणं होत्था । दस नक्खत्ता नाण बुद्धिकरा पणत्ता, तं जहा—

गई जानना चाहिये, क्यों कि इस पांचमे ब्रह्मलोक कल्प में उत्कृष्टस्थिति
दस सागरोपम की और जघन्यस्थिति सात सागरोपम की है ॥सू० २७॥

४६६ समज्जी, ४२७ ६ आ पायमा प्रह्वयोऽ ४६५मा उत्कृष्ट स्थिति दस सागरो-
पमनी अने जघन्य स्थिति सात सागरोपमनी छे ॥सू २७॥

मिगसिर अद्वा पुस्तो तिणिण य पुब्बा य मूलमस्सेसा । हत्थो चित्तो
य तद्वा दस बुद्धिकराह नाणस्स । अकम्मभूमियाण मणुयाण दस
विहा स्सखा उवभोगस्थाप उवत्थिया पण्णत्ता, त जहा-मत्तगया य
मिगा तुद्धिअगा दीव जोड चित्तगा चित्तरसा मणिअगा गेहागारा
अनिगिणा य ॥ सू० २८ ॥

टीका—‘दमोश्चे समणधम्म’ इत्यादि । दशविध भ्रमणधर्म प्रकृतः,
तद्यथा—‘न्यती’ सान्ति = निन्दादिप्रवणेऽपि क्रोधत्याग, ‘मुक्ती’ मुक्ति = बाधाय
न्तरवस्तुषु लोमपरित्यागः, ‘अज्जवे’ आर्जवम् = मायात्याग । ‘मार्दव’ मार्दवम् =
मानपरित्यागः । ‘लाघवे’ लाघवम् = द्रव्यतोऽव्यापायिता, भावतो गौरवत्यागः ।
‘सत्ते’ सत्यम् = सत्यवादित्वम् । ‘सज्जे’ सयमम् = प्राणातिपातादि विरमणम् । ‘तप्पे’
तपः तपति इति अष्टप्रकारं कर्मेति तप = उपस्या । ‘विषाए’ त्यागः, समो
गिमुनिभ्यो मक्तादीनां दानम् । ‘वमवेरवास’ ब्रह्मचर्यवास = ब्रह्मचर्येणावस्थानम् ।

अथ सूत्रकार दशवै समवाय को करते हैं—‘दसविहे’ इत्यादि ।

टीकार्थ—दस प्रकार का भ्रमणधर्म कहा गया है । यह दश प्रकारता
इस प्रकार से है क्षान्ति—अपनी निन्दा आदि के सुनने पर भी क्रोध का
त्याग करना १, मुक्ति पाछा और आभ्यन्तर वस्तुओं पर से लोम का परित्याग
करना २, आर्जव—माया का त्याग करना ३, मार्दव—मान का त्याग करना
४, लाघव अल्प उपधि का रम्बना द्रव्य लाघव और गौरव का त्याग करना
भावलाघव है ५, सत्य सत्यवचन बोलना ६, संयम—प्राणातिपाद आदि
से विरत होना ७, तप—अष्ट प्रकार के कर्मों को जलाने वाली तपस्या
करना ८, समोगिमुनियों को मक्तपान आदि देना ९, ब्रह्म

६वै सूत्रकार दशवै समवायानु क्रमेण क्रमेण है—‘दसविहे’ इत्यादि ।

टीका—दश प्रकारका भ्रमणधर्म बताया गया है । ते आ प्रमाणे है—

(१) सान्ति पोटानी निन्दा आदि सांख्यवा कर्ता क्रोधने त्याग करवे (२) मुक्ति—
अहंकारनी अने अतिरिक्त वस्तुओं पर अहंकारना त्याग करवे (३) आर्जव—मायाने
त्याग करवे (४) मार्दव—मानने त्याग करवे (५) लाघव—मौली उपधि राखवी,
ते द्रव्य लाघव है अने गौरवने त्याग करवे । ते भाषाभाष्य है (६) सत्य—
सत्य बोलवु (७) संयम—प्राणातिपात आदिभी विरत रहवु (८) तप—आठ
प्रकारका कर्मोंने कष्ट करनेवाली तपस्या करवी (९) त्याग—संयोगी मुनिने मक्तपान
(आहारखाद्य) देवा (१०) ब्रह्मचर्यवास—ब्रह्मचर्य धारण करवु चित्तसमाधिस्थान

दशविधानि 'चित्तसमाहिट्टाणा' चित्तसमाधिस्थानानि=चित्तस्य=मनसः समाधिः
=प्रशान्तता, तस्य स्थानानि प्रज्ञाणानि, तद्यथा-‘धम्मचिंता वा से असमुत्पण्ण-
पुन्वा समुपज्जिज्जा सव्वं धम्मं विजाणित्तए’ ‘से’ तस्य कल्याणभागिनः साधोः
‘सव्वं’ सर्वं=निरवशेषं धम्मं=जीवादिद्रव्यस्वभावमुपयोगोत्पादादिकं श्रुतादिरूपं वा
‘जाणित्तए’ ज्ञ परिज्ञया ज्ञातुं ज्ञात्वा च प्रत्याख्यानपरिज्ञया परिहरणीयकर्म-
परिहर्तुम् ‘असमुत्पण्णपुन्वा’ अमुत्पन्नपूर्वा=पूर्वं समुत्पन्ना=समुत्पन्नपूर्वा, न समु-
त्पन्नपूर्वा असमुत्पन्नपूर्वा=पूर्वस्मिन् अनादौ अतीते कालेऽनुपजाता, तदुत्पत्तौ
हि अपाद्धपुद्गलपरावर्तान्ते कल्याणस्यावश्यंभावात्। ‘धम्मचिंता’ धर्मचिन्ता=
धर्माः=जीवाजीवादि द्रव्याणामुत्पादादि स्वभावाः, तेषां चिन्ता अनुपेक्षा, अथवा

चर्यवास-ब्रह्मचर्य-धारण करना १०। चित्तसमाधिस्थान दस कहे गये हैं।
वे इस प्रकार से हैं-कल्याण को प्राप्त हुए साधु को जो समस्त धर्म को
जानने के लिये असमुत्पन्नपूर्व-(पहेले कभी नहीं उत्पन्न हुई वैसी) धर्म-
चिन्ता उत्पन्न होती है यह प्रथम चित्तसमाधिस्थान है। इसका तात्पर्य यह
है कि आत्मकल्याणाभिलाषी साधु जीवादि द्रव्यों के स्वभाव को, अथवा
आत्मस्वभावरूप उपयोग को, वा उत्पाद आदि रूप सत् को, अथवा
सर्वज्ञ भाषित श्रुतादिरूप धर्म को ज्ञ परिज्ञा से जानकर और प्रत्याख्यान
परिज्ञा से परिहरणीय कर्म को छोड़कर जो अनादिकाल से इस संसार
में परिभ्रमण करते हुए अभीतक प्राप्ति नहीं हुई ऐसी धर्म चिंता को
जो कि धर्मध्यान की कारणभूत होती है प्राप्त कर लेता है। इससे
उसे अपाद्धपुद्गल-परावर्तन काल के अन्त में अवश्य ही मोक्ष की प्राप्ति
हो जाती है। इस धर्मचिन्ता में मुनि इस प्रकार का भी विचार करता

दस कहा छे, ते आ प्रमाणे छे—इत्याखुने पाभेल साधुने समस्त धर्मेने जणुवानी जे
असमुत्पन्नपूर्व-पडेलां कही पणु थछ न होय ओवी धर्मचिन्ता उत्पन्न थाय छे, ते
पडेलु चित्त समाधिस्थान छे. ओटले के आत्मकल्याणाभिलाषी साधु जेवाही द्रव्येना
स्वभावने, अथवा आत्म स्वभावइय उपयोगने, के उत्पाद आदि रूप सत्ने, अथवा
सर्वज्ञ भाषित श्रुतादि रूप धर्मेने ज्ञ परिज्ञाथी जणुनीने अने प्रत्याख्यान परिज्ञाथी
त्याग करवा लायके कर्मेना त्याग करीने. अनादिकाणथी आ ससारमा परिभ्रमणु करता
इछ सुधीमां कही पणु पेक्षा न थछ होय ओवी धर्मचिन्ता प्राप्त करी ले छे, जे धर्म-
चिन्ता धर्मध्यानना कारणइय होय छे तेथी तेने अपाद्धपुद्गल-परावर्तन कालने अन्ते
मोक्षनी प्राप्ति अवश्य थाय छे. आ धर्मचिन्तामां मुनि ओवे पणु विचार करे छे के

मिगसिर अदा पुस्तो तिणिण य पुट्वा य मूलमस्सेसा । हत्थो चित्तो
य तहा दस धुद्धिकराइ नाणस्स । अकम्मभूमियाण मणुयाण दस
विहा रुक्खा उवभोगत्थाए उवत्थिया पणत्ता, त जहा—मत्तगयो य
मिगा तुडिअगो दीवें जोडें चित्तगा चित्तरसा मणिअगा गेहागोरा
अनिगिणा य ॥ सू० २८ ॥

टीका—‘दसोवहे समणपम्म’ इत्यादि । दसविधः भ्रमणपर्मः प्रवृत्तः,
तथा—‘म्वत्ती’ सान्ति = निन्दादिभ्रवणेऽपि क्रोधत्यागः, ‘मुत्ती’ मुक्तिः = वाद्याभ्य-
न्तरवस्तुषु लोभपरित्यागः, ‘अज्जवे’ भार्जवम् = मायात्यागः । ‘मर्दवे’ मार्दवम् =
मानपरित्यागः । ‘लाघवे’ लाघवम् = द्रव्यतोऽवस्थापाषिता, भावतो गौरवत्यागः ।
‘सवे’ सत्यम् = सत्यवादित्वम् । ‘सजम’ सयमम् = प्राणातिपातादि विरमणम् । ‘तवे’
तपः तपति इति अष्टप्रकारकं कर्मेति तपः = उपस्था । ‘विपाए’ त्यागः, संमो-
गिमुनिभ्यो भक्तादीनां दानम् । ‘बमवेरवास’ ब्रह्मचर्यवास = ब्रह्मचर्येणावस्थानम् ।

अथ सूत्रकार दशर्वे समवाय को करते हैं—‘दसविहे’ इत्यादि ।

टीकार्थ—दस प्रकार का भ्रमणपर्म कहा गया है । वह दश प्रकारता
इस प्रकार से है क्षान्ति—अपनी निन्दा आदि के सुनने पर भी क्रोध का
त्याग करना १, मुक्ति वाद्या और आभ्यन्तर वस्तुओं पर से लोभ का परित्याग
करना २, आर्ज—माया का त्याग करना ३, मार्दव—मान का त्याग करना
४, लाघव अल्प उपधि का रखना द्रव्य लाघव और गौरव का त्याग करना
भावलाघव है ५। सत्य सत्यवचन बोलना ६, सयम—प्राणातिपाद आदि
से विरत होना ७, तप—अष्ट प्रकार के कर्मों को चलाने वाली उपस्था
करना ८, समोगिमुनियों को भक्तपान आदि देना ९, ब्रह्म

८वे सूत्रकार दशर्वे समवायांगु कहेन कहे छे—‘दसविहे’ इत्यादि ।

टीकार्थ—दस प्रकारका भ्रमणपर्म बताया छे ते आ प्रमाणे छे—

(१) सान्ति पातानी निन्दा आदि सांभजवा छतां क्रोधनो त्याज करवे (२) मुक्ति—
अहंकारी अने अतिरिक्त वस्तुओं प्रत्येना मोक्षनो त्याज करवे (३) भार्जव—मायानो
त्याज करवे (४) मार्दव—माननो त्याज करवे (५) लाघव—बोली उपधि राजवी,
ते द्रव्य लाघव छे अने गौरवनो त्याज करवे ते भावलाघव छे (६) सत्य—
सत्य वाक्य (७) सयम—प्राणातिपात आदिभी विरत रहवे (८) तप—आठ
प्रकारका कर्मनो क्षय करवाही उपस्था करवी (९) त्याग—संमोगी मुनिधेने भक्तपान
(आहारपाखी) देवां (१०) ब्रह्मचर्यवास—ब्रह्मचर्य धारण करवु विरतसमाधिस्थान

दशविधानि 'चित्तसमाहिद्वाना' चित्तसमाधिस्थानानि=चित्तस्य=मनसः समाधिः
=प्रशान्तता, तस्य स्थानानि प्रज्ञातानि, तद्यथा-‘धम्मचिंता वा से असमुत्पण्ण-
पुञ्चा समुपज्जिजा सव्वं धम्मं विजाणित्तए’ ‘से’ तस्य कल्याणभागिनः साधोः
‘सव्वं’ सर्वं=निरवशेषं धर्म=जीवादिद्रव्यस्वभावमुपयोगोत्पादादिकं श्रुतादिरूपं वा
‘जाणित्तए’ ज्ञ परिज्ञया ज्ञातुं ज्ञात्वा च प्रत्याख्यानपरिज्ञया परिहरणीयकर्म-
परिहर्तुम् ‘असमुत्पण्णपुञ्चा’ अमुत्पन्नपूर्वा=पूर्वं समुत्पन्ना=समुत्पन्नपूर्वा, न समु-
त्पन्नपूर्वा असमुत्पन्नपूर्वा=पूर्वस्मिन् अनादौ अतीते कालेऽनुपजाता, तदुत्पत्तौ
हि अपाद्धपुद्गलपरावर्तन्ते कल्याणस्यावश्यंभावात्। ‘धम्मचिंता’ धर्मचिन्ता=
धर्माः=जीवाजीवादि द्रव्याणामुत्पादादि स्वभावाः, तेषां चिन्ता अनुपेक्षा, अथवा

चर्यवास-ब्रह्मचर्य-धारण करना १०। चित्तसमाधिस्थान दस कहे गये हैं।
वे इस प्रकार से हैं-कल्याण को प्राप्त हुए साधु को जो समस्त धर्म को
जानने के लिये असमुत्पन्नपूर्व-(पहेले कभी नहीं उत्पन्न हुई वैसी) धर्म-
चिन्ता उत्पन्न होती है यह प्रथम चित्तसमाधिस्थान है। इसका तात्पर्य यह
है कि आत्मकल्याणाभिलाषी साधु जीवादि द्रव्यों के स्वभाव को, अथवा
आत्मस्वभावरूप उपयोग को, वा उत्पाद आदि रूप सत् को, अथवा
सर्वज्ञ भाषित श्रुतादिरूप धर्म को ज्ञ परिज्ञा से जानकर और प्रत्याख्यान
परिज्ञा से परिहरणीय कर्म को छोड़कर जो अनादिकाल से इस संसार
में परिभ्रमण करते हुए अभीतक प्राप्ति नहीं हुई ऐसी धर्म चिंता को
जो कि धर्मध्यान की कारणभूत होती है प्राप्त कर लेता है। इससे
उसे अपाद्धपुद्गल-परावर्तन काल के अन्त में अवश्य ही मोक्ष की प्राप्ति
हो जाती है। इस धर्मचिन्ता में मुनि इस प्रकार का भी विचार करता

दस कहा छे, ते आ प्रमाणे छे—कल्याणने पावेले साधुने समस्त धर्मने ज्ञानवानी ले
असमुत्पन्नपूर्व-पडेलां कही पणु यध न होय ओवी धर्मचिन्ता उत्पन्न थाय छे, ते
पडेले चित्त समाधिस्थान छे. ओटले के आत्मकल्याणाभिलाषी साधु एवाही द्रव्योना
स्वभावने, अथवा आत्म स्वभावइय उपयोगने, के उत्पाद आदि इय सत्ने, अथवा
सर्वज्ञ भाषित श्रुतादि इय धर्मने ज्ञ परिज्ञाथी ज्ञानीने अने प्रत्याख्यान परिज्ञाथी
त्याग करवा लायक कर्मने त्याग करीने, अनादिकाणथी आ संसारमा परिभ्रमणु करतां
हए सुधीमां कही पणु चेदा न यध होय ओवी धर्मचिन्ता प्राप्त करी ले छे, ले धर्म-
चिन्ता धर्मध्यानना कारणइय होय छे. तेथी तेने अपाद्धपुद्गल-परावर्तन कालने अने
मोक्षनी प्राप्ति अवश्य थाय छे. आ धर्मचिन्तामां मुनि ओवा पणु विचार करे छे के

ધમસ્પ=શ્રુતધારિત્રાત્મકસ્ય સર્વેશ્વમાપિતસ્ય ધર્મેસ્ય હરિહરાદિકથિતધર્મેભ્ય પ્રાપ્ત
 ન્યમિત્યવ ચિન્તા, 'સમુપ્પજ્જિજ્ઞા' સમુત્પપ્પેત=ધર્મધ્યાનકરણમૂળા ધર્મચિન્તા
 સમુત્પપ્પેતે इति समुदिताय' । इति प्रथम चित्तसमाधिस्थानम् । 'सुमिणंदसणेवा
 से असमुपपणापुठ्वे समुपज्जिज्ઞા અઘાતથ મુમિષં 'પાસિત્ત' 'મઘાતથ' યથા
 તથ્ય તથ્યમનતિક્રમ્ય યથાતથ્ય સર્વયાઽબ્યનિચરિત 'મુમિષં' સ્વપ્ન સ્વપ્નફલે
 'પાસિત્ત' દ્રષ્ટું જ્ઞાતુમિત્યર્થઃ, 'મે' તસ્ય અસમુત્પન્નપૂર્વે 'સુમિણંદસણ' સ્વપ્નદર્શન
 સ્વપ્નસ્ય=નિદ્રાવધિક્ષ્પજ્ઞાનસ્ય વશન=સવેદન, યથા મગવતો મહાવીરસ્ય સમુ
 ત્પન્ન તથા, સમુત્પપ્પેત । અવદ્યમાવિ મુક્તિફળ પ્રાપ્તુ સાધુઃ તાદૃશં સ્વપ્નદર્શન
 વ્યમતે इत्यर्थः । इति द्वितीयम् । 'संणिनाणे वा सं असमुपपणापुठ्वे समुपज्जिज्ઞા
 પુવ્વમવે મુમરિત્ત' 'પુવ્વમવે' પૂર્વમવાન=પૂર્વનન્માનિ 'મુમરિત્ત' સ્મર્તુમ્ તસ્ય
 અસમુત્પન્નપૂર્વે 'સન્નિનાણે' સંશ્ચિજ્ઞાનમ્=સજ્ઞાનં સદ્ઞા=જ્ઞાનમ્-સાવ દેહુત્વાદ્ દષ્ટિવાદ-

है कि श्रुतधारित्रातमक धर्म जो सर्वेश्व प्रभु द्वारा भाषित हुआ है अन्य
 द्वारा कथित धर्म से विशिष्ट है । इस प्रकार विचार करते रहने से चित्त की
 समाधी होती है, अतः यह प्रथम चित्त समाधिस्थान है १। इस प्रकार
 करते २ जब चित्त इन धर्मस्थान के कारणमूल विचारों से संस्कारित
 हो जाता है तब उसे यथातथ्यमर्थया अभ्यनिचरित—इसी प्रकार के अस
 मुत्पन्नपूर्व स्वप्न भी आने लग जाते हैं और उस आत्मा को इन स्वप्नों
 के फल का भगवाद् महावीर की तरह दर्शन सवेदन उत्पन्न होते लगता
 है तात्पर्य इसका यह है कि ऐसे मुनि को मुक्तिरूप फल की प्राप्ति
 अवश्य होती है जो उसे स्वप्न में भी ज्ञात होने लगती है । यह
 चित्तसमाधि का द्वितीयस्थान है २। इसी तरह उस चित्तसमाधि संपन्न
 साधु को अपने पूर्वमर्षों का भी ज्ञान जो इसे पहिले कभी नहीं हुआ

જે શ્રુતધારિત્રધર્મ સર્વેશ પ્રભુ દ્વારા ભાષિત છે તે બીજા કોઈ દ્વારા કથિત ધર્મ કરતાં
 વિશિષ્ટ છે આ પ્રમાણે વિચાર કરી કરવાથી ચિત્તની સમાધિ થાય છે, તેથી તે પહેલું
 'ચિત્તસમાધિસ્થાન' છે (૧) આમ કરતાં કરતાં જ્યારે તે ધર્મધ્યાનના કારણજ્ઞા વિચારોથી
 સંસ્કારિત થઈ જાય છે ત્યારે તેને અયાતથ્ય-અથવા અભ્યનિચરિત-પૂર્વે કદી પણ
 એવાં ન હોય એવાં સ્વપ્નો આવવા લાગે છે અને તે આત્માને ભગવાન મહાવીરની
 જેમ તે સ્વપ્નોના દર્શન સવેદન ઉત્પન્ન થવા માટે છે તેનું તાત્પર્ય એ
 છે કે એવા મુનિને શાસ્ત્રજ્ઞ જાણી પ્રાપ્તિ અવશ્ય થાય છે ૨ તેને સ્વપ્નોમાં પણ
 ભગવાન મળે છે આ ચિત્તસમાધિનું દ્વિતીય સ્થાન છે એ જ પ્રમાણે તે ચિત્ત
 સમાધિ મુખ્ય મુનિને પોતાના પૂર્વજીવોનું જ્ઞાન, કે જે એ પહેલાં કદી થયું હોતું

दीर्घकालिकोपदेशभेदात्त्रिधा । तत्र विकलेन्द्रियस्य हेतुवादसंज्ञा । सम्यग्दृष्टेः दृष्टिवादसंज्ञा, समनस्कसंज्ञिनः दीर्घकालिकोपदेशसंज्ञा भवति । इह संज्ञाशब्देन दीर्घकालिकोपदेशसंज्ञा गृह्यते, मा यस्यास्ति स संज्ञी समनस्कः, तस्य ज्ञानं संज्ञिज्ञानं=जातिस्मरणं समुत्पद्येत । जातिस्मरणेन स्वस्य उत्तमस्थानं संयमलक्षणं मोक्षलक्षणं च जानाति इति भावः । इति तृतीय । चित्तसमाधिस्थानम् । ‘देव दंसणे वा से असमुप्पण्णपुण्वे समुपज्जिजा दिव्वं देविद्धि दिव्वं देवजुइ दिव्वं देवाणुभावं पामित्तए’ ‘दिव्वं देविद्धि’ प्रधानपरिवाररूपः दिव्या देवर्द्धिम्, ‘दिव्वं देवजुइ’ विशिष्टशरीराभरणादिदीप्तिरूपा दिव्यां देवद्युतिं ‘दिव्वं देवाणुभावं’ उत्तमवैक्रियकरणादिप्रभावरूपं दिव्यं देवानुभावं द्रष्टुं तस्य कल्याणभाजः

होता है जो जाता है । पूर्वभवों के ज्ञान का दूसरा नाम जातिस्मरण ज्ञान है । संज्ञी पंचेन्द्रिय जीवों को ही यह ज्ञान होता है । यहाँ संज्ञी शब्द का अर्थ दीर्घकालिक उपदेश संज्ञा जिसके दो उभय नाम संज्ञी है, ऐसा विवक्षित हुआ है, क्यों कि संज्ञा तीन प्रकार की होती है १, हेतुवाद संज्ञा २, दृष्टिवाद संज्ञा, और दीर्घकालिकोपदेश संज्ञा । इन में विकलेन्द्रियजीवों में जो संज्ञा होती है उसका नाम हेतुवादसंज्ञा है । सम्यग्दृष्टि के जो संज्ञा होती है उसका नाम दृष्टिवादसंज्ञा है । तथा समनस्क संज्ञीजीव के जो संज्ञा होती है उसका नाम दीर्घकालिकोपदेशसंज्ञा है । जातिस्मरणज्ञान इसी संज्ञावाले संज्ञीपंचेन्द्रिय जीव के होता है । दीर्घकालिकोपदेश संज्ञावाले पंचेन्द्रिय समनस्कजीव जातिस्मरणज्ञान से अपना संयमरूप तथा मोक्षरूप उत्तमस्थान जानलेते हैं । यह तीसरा चित्तसमाधिस्थान है ३। प्रधान परिवाररूप दिव्य देवर्द्धि को तथा विशिष्ट शरीराभरणादि दीप्तिरूप दिव्य देवद्युति और उत्तम वैक्रिय

नशी, ते तथा लागे છે પૂર્વભવોના જ્ઞાનનું બીજું નામ જાતિસ્મરણ જ્ઞાન છે. મંજી પંચેન્દ્રિય જીવોને જ આ જ્ઞાન થાય છે. દીર્ઘકાલિક ઉપદેશ સંજ્ઞા જેને હોય તેને અહીં સંજ્ઞી ગણવામાં આવેલ છે, કારણ કે સંજ્ઞા ત્રણ પ્રકારની હોય છે. (૧) હેતુવાદ સંજ્ઞા, (૨) દૃષ્ટિવાદ સંજ્ઞા, અને (૩) દીર્ઘકાલિકોપદેશ સંજ્ઞા વિકલેન્દ્રિય જીવોને જે સંજ્ઞા થાય છે તેને હેતુવાદ સંજ્ઞા કહે છે સમ્યગ્દૃષ્ટિ જીવને જે સંજ્ઞા થાય છે તેને દૃષ્ટિવાદ સંજ્ઞા કહે છે તથા સમનસ્ક સંજ્ઞી જીવને જે સંજ્ઞા થાય છે તેને દીર્ઘકાલિકોપદેશ સંજ્ઞા કહે છે જાતિસ્મરણ જ્ઞાન એ જ સંજ્ઞાવાળા મંજી પંચેન્દ્રિય જીવને થાય છે દીર્ઘકાલિકોપદેશ સંજ્ઞાવાળા પંચેન્દ્રિય સમનસ્ક જીવો જાતિસ્મરણ જ્ઞાનથી પોતાનું સંયમરૂપ તથા મોક્ષરૂપ ઉત્તમસ્થાન જાણી લે છે. તે “ત્રીણુ ચિત્ત-સમાધિસ્થાન ગણાય છે પ્રધાન પરિવારરૂપ દિવ્ય દેવર્દ્ધિને તથા વિશિષ્ટ શરીરાભર-

માધોઃ અસમુત્પન્નપૂર્વં દેવદર્શનં સમુત્પદ્યેત । દેવા હિ આત્માન દર્શયન્તિ, દેવ
 દર્શનાદ્ આગમાયે બ્રહ્માદાદર્થે ધર્મેઽતિશયો માનસ સજાયતે તત્તચિત્તસમાધિરિતિ
 દેવદર્શનં ચતુર્થં ચિત્તસમાધિસ્થાનમ્ । ‘અ’દિનાળે વા સે અસમુપ્પણ્ણપુઠ્ઠં સમુપ
 જ્ઞિજ્ઞા આદિના ળોગ ગાણિષપ્’ ‘આદિના’ અવધિના નિયત દ્રવ્યક્ષેત્રકાલમાત્રરૂપયા
 મર્યાદયા ‘ળોગ ગાણિષપ્’ લોકં જ્ઞાતુ લોકજ્ઞાનાયત્પર્ય, તસ્ય અસમુત્પન્નપૂર્વમ્
 ‘ઓદિનાળ’ અવધિજ્ઞાનં સમુત્પદ્યેત । વિશિષ્ટજ્ઞાનાદિ ચિત્તસમાધિરૂત્પદ્યેત । इति
 પચ્ચમ સમાધિસ્થાનમ્ । ‘આદિપ’ પળે વા સ અસમુપ્પણ્ણપુઠ્ઠં સમુપજ્ઞિજ્ઞા ઓદિનાળોગ
 પાસિષપ્’ અવધિના ળોક ‘પાસિષપ્’ દ્રવ્દુમ્ અસમુત્પન્નપૂર્વમવધિદર્શનં તસ્ય સમુત્પ
 દ્યેત । વિશિષ્ટદર્શનાદપિ ચિત્તસમાધિર્ભવતિ । इति षष्ठं, ચિત્તસમાધિસ્થાનમ્ ।

કરણાદિ પ્રમાણરૂપ દિવ્ય દેવાનુભાવ કો દર્શને કે લિયે ડસ કલ્યાણ
 પ્રાપ્ત સાધુ કો અસમુત્પન્ન દેવદર્શન હો જાતા હૈ । દેસે વ્યક્તિયોં કો
 દેવ સુદ આકર દર્શન દેસે હૈ । દેવદર્શન સ દેસે મહાનુભાવોં કી
 દદબ્રહ્મા આગમોક્ત અર્થોં મેં હો જાતી હૈ । ધર્મ મેં અતિશય તથા અત્યત
 યહુમાન હો જાતા હૈ । ઇમસે ચિત્તસમાધિ હોતી હૈ । ઇસ તરહ દેવદર્શ
 નરૂપ યહ ચતુર્થ ચિત્તસમાધિસ્થાન હૈ ઃ નિવતદ્રવ્ય ક્ષેત્ર, કાલ ઓર
 માત્રરૂપ અવધિ-મર્યાદા-કો સંદર લોક કો જાનને કે લિયે ડસ કલ્યાણ
 પ્રાપ્ત સાધુ કો પઠિલે ઉત્પન્ન નહીં જુઆ દેસા અવધિજ્ઞાન ઉત્પન્ન હો જાતા હૈ ।
 વિશિષ્ટજ્ઞાન સે ચિત્તસમાધિ ઉત્પન્ન હોતી હૈ । યહ પાંચવાં ચિત્તસમાધિસ્થાન
 હૈ । વિશિષ્ટદર્શન સે ચી ચિત્તસમાધિ હોતી હૈ યહ વાત સૂત્રકાર અવ
 ઇસ સૂત્ર દ્વારા પ્રકટ કરતે હૈ-દ્રવ્ય ક્ષેત્રાદિકી મર્યાદા લેકર યહ કલ્યાણ
 પ્રાપ્ત સાધુ લોક કો દેખને કે લિયે અસમુત્પન્નપૂર્વ અવધિદર્શન કો

ધારિ શીખિતરૂપ હિ ય દેવદર્શન જન ઉત્તમ વૈદિક ક્ષણાદિ પ્રભાવરૂપ દિવ્ય દેવાનુ-
 ભાવને જ્ઞેવાને મ? તે કલ્યાણ પ્રાપ્ત સાધુને અસમુત્પન્ન પૂર્વ (પૂર્વે) યધુ ન હોય જોયુ)
 દેવદર્શન યાવ છે જોવી વ્યક્તિજ્ઞાન દેવ જાતે જ આપાને દર્શન આપે છે
 દેવદર્શનને લીધે આગમોક્ત અર્થોનાં તે બ્રહ્માવભાવોની બ્રહ્મા દદ જાને છે ધર્મ
 પ્રત્યે અતિશય તથા અત્યત માન યાવ છે તેથી ચિત્તસમાધિ યાવ છે આ રીતે
 દેવદર્શન રૂપ આ યોગ સમાધિસ્થાન છે નિયત દ્રવ્ય ક્ષેત્ર કાલ જાને આવ રૂપ
 અવધિ-મર્યાદા ની અપેક્ષાએ લોહોને અણવાતુ તે કલ્યાણ પ્રાપ્ત સાધુને અપૂર્વ
 (પહેલાં ઉત્પન્ન ન યધુ હોય જોયુ) અવધિજ્ઞાન ઉત્પન્ન યાવ છે વિશિષ્ટ જ્ઞાનથી
 ચિત્તસમાધિ ઉત્પન્ન યાવ છે આ પાંચધુ ચિત્તસમાધિસ્થાન છે વિશિષ્ટ દર્શ
 નથી પણ ચિત્તસમાધિ યાવ છે જો વાત સૂત્રકાર આ સૂત્ર દ્વારા બતાવે છે દ્રવ્ય
 ક્ષેત્ર અદિની મર્યાદાની અપેક્ષાએ તે કલ્યાણ પ્રાપ્ત સાધુ લોહોને જ્ઞેવાને માટે

‘मणपज्जवनाणे वा से असमुत्पण्णपुव्वे समुपज्जिज्जा जाव मणोगए भावे जाणि-
त्तए’ ‘जावमणोगए भावे’ यावन्मनोगतान् भावान् ज्ञातुम्=अर्धतृतीयद्वीपसमु-
द्रेषु संज्ञिनां पञ्चेन्द्रियाणां पर्याप्तकानां यावन्मनोगतान् भावान् ज्ञातुम् तस्य
असमुत्पन्नपूर्वं मनःपर्यवज्ञानं समुत्पद्येत । इति सप्तम् । ‘केवलनाणे वा से
असमुत्पण्णपुव्वे समुपज्जिज्जा केवलं लोमं जाणित्तए’ केवलं=परिपूर्णं लोकं=
लोक्यते दृश्यते केवललोकंनेति लोकः=लोकालोकस्वरूपस्तम्, ज्ञातुं तस्य=साधो
रसमुत्पन्नपूर्वं केवलं ज्ञानं समुत्पद्येत । केवलज्ञानस्य चित्तसमाधिभेदत्वाच्चित्त-
समाधिस्थानता । इह च अमनस्कतया केवलनिश्चितं चैतन्यमवसेयम् । इति
अष्टमम् । ‘केवलदंसणे वा से असमुत्पण्णपुव्वे समुपज्जिज्जा केवल लोमं पासित्तए’
केवलं लोकं द्रष्टुं तस्य पूर्वसमुत्पन्नं केवलदर्शनं समुत्पद्येत । केवलदर्शनं नवमं
चित्तसमाधिस्थानम् । ‘केवलिमरणं वा मरि सव्वदुक्खपट्ठाणाय’ सर्वदुःख

प्राप्त कर लेता है । यह छठवां चित्तसमाधिस्थान है ६। ढाईद्वीप
समुद्रवर्ती पंचेन्द्रिय पर्याप्तक संज्ञी जीवों के यावत् मनोगत भावों को
जाननेके लिये उस कल्याण प्राप्त साधु को असमुत्पन्नपूर्वं मनःपर्यव-
ज्ञान उत्पन्न हो जाता है । यह सातवां चित्तसमाधिस्थान है ७। परि-
पूर्णलोक को जानने के लिये साधु के असमुत्पन्नपूर्वं केवलज्ञान उत्पन्न
हो जाता है । केवलज्ञान चित्तसमाधिका एक भेदरूप है—इसलिये इसे
चित्तसमाधि का स्थान कहा गया है केवलि भगवान् यद्यपि अमनस्क
होते हैं परन्तु फिर भी उनका चैतन्य ही चित्तरूप है । इसलिये चित्त
समाधिता उनमें घटित हो जाती है । यह आठवां चित्तसमाधिस्थान
है ८। परिपूर्ण लोक को देखने के लिये केवलि-भगवान् के केवलदर्शन
जो असमुत्पन्नपूर्वं था वह उत्पन्न हो जाता है । यह नवमा चित्तसमाधि-

असमुत्पन्न पूर्व अवधि दर्शन प्राप्त करी दे छे. आ छद्दु चित्तसमाधि स्थान छे
अही द्वीप समुद्रवर्ती पाञ्चेन्द्रिय पर्याप्त संज्ञी जीवाना मनोगत भावोने भाटे ते
कल्याण प्राप्त साधुने अपूर्व मन पर्यवज्ञान उत्पन्न थर्ध ज्ञाय छे आ सातसु चित्तसमा-
धिस्थान, छे परिपूर्ण लोकोने ज्ञानवाने भाटे साधुने अपूर्व केवलज्ञान उत्पन्न थर्ध ज्ञाय छे
केवलज्ञान चित्तसमाधिना ओके भेद रूप छे, तेथी तेने चित्तसमाधितुं स्थान दर्शायुं छे
जे के केवलि भगवान् अमनस्क होय छे, छातां पणु तेमनु चैतन्य न चित्त रूप छे
तेथी तेमनामां चित्तसमाधिता घटावी शक्य छे आ आठसु चित्तसमाधिस्थान छे
परिपूर्ण लोकोने ज्ञानवाने भाटे केवलि भगवान्मा अपूर्व केवल दर्शन उत्पन्न थर्ध
ज्ञाय छे. आ नवसु चित्तसमाधिस्थान छे. समस्त द्दु जोना नाश करवा भाटे केव-

મહાણાય=સકલદુઃસ્વનિનાશય કેષલિમરણ 'મરિજ્ઞા' ત્રિયત્ત, યત્કલિમરણેન
 શરીરત્યાગં કુર્યાદિત્યર્થ । इदं केवलमरण सर्वोत्कृष्ट चित्तसमाधिस्थानम् ।
 इति दशमं विद्यतसमाधिस्थानम् । वा अन्तः सर्वत्र प्रकारान्तरबोधकः । मन्दरः
 स्वच्छ पर्वतः मूल दशयोजनसदृशाणि 'चित्रत्वेभण' विष्कम्भण=विस्तारेण प्रसृतः ।
 मन्दरपर्वतस्य मूलप्रदेशा दशमहस्रयोजनविस्तारवानित्यर्थः । अर्धन् अरिष्टनेमि
 दर्शयन्नेपि ऊर्ध्वमुखत्वेनासीत् । कृष्णः सच्छ वासुदेवो दस धनुषि ऊर्ध्वमुखत्वे
 नासीत् । राम स्वच्छ बलवयो दशधनुषि ऊर्ध्वमुखत्वेनासीत् । वक्षनक्षत्राणि 'नाभ
 शुद्धिकरा' ज्ञानवृद्धिकराणि प्रसृतानि, तद्यथा-'मिगશિર મુગશિર, 'મદ્રા'
 આદ્રાં 'પુસ્તો' પુષ્પમ્ 'તિણિ ય પુષ્પા' શ્રીણિ ચ પૂર્વાણિ=પૂર્વ પૂર્વગણિ ધ્રોણિ
 પૂર્વપન્થુનો પૂર્વાપાદા પૂર્વામાદ્રપદા નામયેયાનિ નક્ષત્રાણિ, મૂલમ્, અશ્લેષા, હસ્તઃ,
 તથા ચિત્રા ચ વક્ષનક્ષત્રાણિ 'નાભસ સુદૃઢકારણિ' જ્ઞાનમ્ય વૃદ્ધિકરાણિ પ્રસૂતાનિ ।
 'અકર્મભૂમિયાણ' અકર્મભૂમિજાનાં ભાગભૂમિસમુત્પન્નાનામિત્યર્થઃ, મનુષ્યામાં દસ
 વિધા 'રુક્લા' વૃક્ષા 'ઉપમોગધાણ' ઉપમોગસ્થાય ઉપમોગસાધનસપાદનાય
 'ઉવસ્થિયા' ઉપસ્થિતા ઉન્નતા ભવન્તિ इत्यर्थ । चे के ? इत्याह-'मत्तगया'

स्यान ૬૦। સમસ્ત વૃક્ષો કો નાશ કરને કે લિયે કેષલિમરણ સે
 શરીર કા ત્યાગ કરના યદ્ સર્વોત્કૃષ્ટ ચિત્તસમાધિકા દશઘાં સ્યાન
 હૈ ૧૦। સુમેરુ પર્વત મૂલ મેં દશ હજાર યોજન કા વિસ્તારવાલા કહા
 ગયા હૈ । અરિષ્ટનેમિ અર્ધતપશ્ચ ઉંચાઈ મેં દસ ધનુષ ઉંચે યે । હસી તરહ
 કૃષ્ણવાસુદેવ સી ઉંચાઈ મેં દસ ધનુષ ઉંચે યે । પલમદ્ર-રામ સી ઉંચાઈ
 મેં દસ ધનુષ ઉંચે યે । વસ નક્ષત્ર જ્ઞાન કી વૃદ્ધિ કરનેવાલે કહે ગયે હૈ, યે
 યે હૈ-મુગશિર, આદ્રાં, પુષ્પ, પૂર્વાફલ્ગુની, પૂર્વાપાદા, પૂર્વામાદ્રપદા, મૂલ,
 અશ્લેષા હસ્ત તથા ચિત્રા । અકર્મ ભૂમિજ મનુષ્યોં કે ઉપમોગ સાધન
 સપાદન કે લિયે યે દસ પ્રકાર કે વૃત્પવૃક્ષ ઉપસ્થિત હોતે હૈ, યે સ્મ

લિમરણથી શરીરનો ત્યાગ કરવો તે સર્વોત્કૃષ્ટ ચિત્તસમાધિનુ દશમુ સ્થાન છે”
 સુમેરુ પર્વત મૂળમાં હસ હજાર યોજનના વિસ્તાર નાખે છે એવું
 નેમિ જાહેરત પ્રશ્ન હસ ધનુષ પ્રમાણે કીવા કતા એ જ પ્રમાણે કૃષ્ણ વાસુદેવ
 પણ હસ ધનુષ પ્રમાણે કીવા કતા જલમદ્ર-જલશમનો કીવાઈ પણ હસ ધનુષ પ્રમાણ
 હતા હસ નક્ષત્રોને જ્ઞાનની વૃદ્ધિ કરનાર કહેલ છે, તે નક્ષત્રોનાં નામ આ પ્રમાણે
 છે-મુગશિર, આદ્રાં પુષ્પ, પૂર્વાફલ્ગુની પૂર્વાપાદા, પૂર્વામાદ્રપદા, મૂલ, અશ્લેષા,
 હસ્ત અને ચિત્રા અકર્મભૂમિ જ મનુષ્યોના ઉપમોગનાં સાધનો પણ પાઠવા માટે
 દસ પ્રકારના વૃત્પવૃક્ષો આવેલા હોય છે તે આ પ્રમાણે છે-(૧) મત્તાગ્યા તે મળે

मत्ताङ्गका-मुखपेय परमस्वादुरसदायकाः, 'भिगा' भृङ्गा=रत्नकटोरक-सुवर्णस्थाल
प्रभृति भाजनदायिनः, 'तुडिअगा' त्रुटिताङ्गाः=मृदङ्गादिवाद्यदायिनः, 'दीव'
दीपाः=प्रदीपवत्प्रकाशकारकाः, 'जोड' ज्योतिषः=अग्निकार्यकारिणः, 'चित्तंगा'
चित्राङ्गाः=विविधभुगन्धिपुष्पदायिनः, 'चित्ररसा' चित्ररसाः=मनोमिलपित मनो-
ज्जर्भोजनदायिनः, 'मणिअंगा' मण्यङ्गाः=हारार्धहाराद्याभरणदायिनः 'गेहागारा'
गेहाकाराः=गेहस्यैवाकारा येषां ते गेहाकाराः, द्विचत्वारिणद् भूमभवनकारपरि-
णता इत्यर्थः, 'अणिगिणा' अनग्नकाः अनग्नत्वसंपादका वस्त्रदायिन इत्यर्थः ५८॥

मूलम्--इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरइयाणं जह-
न्नेणं दसवाससहस्साइं ठिई पणत्ता । इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए
अत्थेगइयाणं नेरइयाणं दस पलिओवमाइं ठिई पणत्ता । चउत्थाए
पुढवीए दस निरयावाससयसहस्साइं पणत्ता । चउणत्थीए पुढवीए
अत्थेगइयाणं उक्कोसेणं दस सागरोवमाइं ठिई पणत्ता । पंचमीए
पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरइयाणं जहण्णेणं दस सागरोवमाइं ठिई

प्रकार-मत्ताङ्गक-ये सुग्वपेय परम स्वादुरस के देनेवाले होते हैं १, भृङ्ग
ये रत्नकी कटोरियों को और सुवर्ण के थाल आदि भाजनों को देते
हैं २, त्रुटितांग-ये मृदङ्ग आदि वाद्यों को देते हैं ३, दीप ये उज्ज्वल प्रदीप
का प्रकाश प्रदाता होते हैं ४, ज्योतिष-ये अग्नि के कार्य को करते
हैं ५, चित्राङ्ग-ये विविध सुगंध से भरे हुए पुष्पों को देते हैं ६, चित्ररस
ये मनोनुकूल मनोज्ञ भोजन प्रदान करते हैं ७। मण्यङ्ग-ये हार, अर्ध-
हार आदि आभरणों को देते हैं ८, गेहाकार-ये बग्यालीस ४५ खंड के
मकानों को देते हैं ९, और अनग्नक जाति के कल्पवृक्ष सुन्दर कीमती
वस्त्रों को देते हैं १०॥मू० २८॥

हार, परम स्वाद्विष्ट रस देनारा डोय छे (२)भृङ्ग ते रत्नानी कटोरीओ तथा सुव
र्णना थाण आदि पात्रो दे छे (३)त्रुटितांग ते मृदंग आदि वाद्यो दे छे दीप
ते तेजस्वी हीवाने प्रकाश देनारां छे. (५) ज्योतिष ते अग्निना जेवु कार्य करे
छे (६) चित्राङ्ग ते विविध सुगंधाथी भरपूर पुष्पो छे (७) चित्ररस ते मनने
अनुकूल मनोज्ञ भोजन आये छे (८) मण्यङ्ग ते हार अर्धहार, आदि आभूषणो
आये छे. (९)गेहाकार ते गेतालीस भडवाणा मकानो आये छे. अने (१०)
अनग्नक जतिना कल्पवृक्ष सुहरमां सुंदर कीमती वस्त्रो आये छे ॥सू. २८॥

पण्णत्ता । असुरकुमाराण देवाण अत्थेगइयाण जहण्णेण दसवास-
सहस्साइ ठिई पण्णत्ता । असुरिंदवज्जाण भोमिज्जाण देवाण अत्थे
गइयाण जहण्णेण दसवाससस्साइ ठिई पण्णत्ता । असुरकुमाराण
देवाण अत्थेगइयाण दस पलिओवमाइ ठिई पण्णत्ता । वायरवण
स्सइकाइयाण उक्कोसेण दस वाससहस्साइ ठिई पण्णत्ता । वाणम
न्तराण देवाण अत्थेगइयाण जहण्णेण दस वाससहस्साइ ठिई
पण्णत्ता । सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु अत्थेगइयाण देवाण दस पलि
ओवमाइ ठिई पण्णत्ता । वभलोए कप्पे देवाण उक्कोसेण दस
सागरोवमाइ ठिई पण्णत्ता । लातए कप्पे देवाण अत्थेगइयाण
जहण्णेण दस सागरोवमाइ ठिई पण्णत्ता । जे देवा घोस सुघोस
महाघोस नदिघोस सुसर मणोरम रम्म रम्मग रमणिज्ज मगलावत्त
वभलोगवडिंसग विमाण देवत्ताए उववण्णा, तेसि ण देवाण उक्को
सेण दस सागरोवमाइ ठिइ पण्णत्ता । ते ण देवा दसण्ह अद्धमासाण
आणमंति वा पाणमंति वा ऊससति वा नीससति वा, तेसि णं
देवाणं दसहि वाससहस्सेहि आहारहे समुप्पज्जइ, सतेगइया भवसि
द्धिया जीवा जे दसहि भवग्गहणेहि सिज्झिस्संति, बुज्झिस्सति,
मुच्चिस्सति, परिनिव्वाइस्सति, ँववुक्खाणमत करिस्संति ॥सू २९॥

टीका—‘इमांसे ज’ इत्यादि । अस्यां सत्त्व रत्नप्रमायां पृथिव्याम् अस्त्ये
केषां नैरयिकाणां जघन्येन दशसहस्रवर्षाणि स्थितिः प्रज्ञप्ता । अस्यां सत्त्व
रत्नप्रमायां पृथिव्यामस्त्येकेषां नैरयिकाणां दश पञ्चापमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता ।

टीकार्थ—‘इमीसे’ इत्यादि । इस रत्नप्रमा पृथिवी में कितनेक नारकियों की
दस हजार वर्ष की जघन्य स्थिति कही गई है । इस रत्नप्रमा पृथिवी में कितनेक

टीका—‘इमीसे’ इत्यादि । आ रत्नप्रमा पृथ्वीमां हेतुलाक नारकीजोनी इस
दशर वर्षीनी जघन्य स्थितिहेतु ॐ आ रत्नप्रमा पृथ्वीमां हेतुलाक नारकीजोनी

चतुर्थ्यां पृथिव्या दश नरकावासशतसहस्राणि प्रज्ञप्तानि । चतुर्थ्यां खलु पृथिव्या-
मस्त्येकेषाम् उत्कर्षेण दश सागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । पञ्चम्यां पृथिव्याम्
अस्त्येकेषां नैरयिकाणां जघन्येन दश सागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । असुर-
कुमाराणां देवानामस्त्येकेषां जघन्येन दशवर्ष सहस्राणि स्थितिः प्रज्ञप्ता । असु-
रेन्द्रवर्जाणां भौमेयानां=भवनपतीनां देवानामस्त्येकेषां जघन्येन दशसहस्रवर्षाणि
स्थितिः प्रज्ञप्ता । असुरकुमाराणां देवानामस्त्येकेषां दश पल्योपमानि स्थितिः
प्रज्ञप्ता । 'वायरवणस्सइकाइएण' वादरवनस्पतिकायानाम् वादरकर्मोदय-
वशाश्चक्षुर्ग्राह्यतां गतानां वनस्पतिकायानामित्यर्थः, उत्कर्षेण दशसहस्रवर्षाणि स्थितिः
प्रज्ञप्ता । 'वाणमन्तराणां' व्यन्तराणां देवानां मस्त्येकेषां देवानां जघन्येन दश
सहस्रवर्षाणि स्थितिः प्रज्ञप्ता । सौधर्मेशानेषु कल्पेषु अस्त्येकेषां देवानां दश
पल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । ब्रह्मलोके कल्पे देवानामुत्कर्षेण दश सागरोप-

नारकियों की स्थिति दस पल्योपम की कही गई है । चौथी पृथिवी में
दस लाख नरकावास हैं । चौथी पृथिवी में कितनेक नारकियों की उत्कृ-
ष्टस्थिति दस सागरोपम की कही गई है । पांचमी पृथिवी में कितनेक
नारकियों की जघन्य स्थिति दस सागरोपम की है । असुरकुमार देवों
में कितनेक देवों की जघन्य स्थिति दस हजार वर्ष की कही गई है ।
असुरेन्द्रो को छोड़कर भवनपति कितनेक देवों की जघन्य स्थिति
दस हजार वर्ष की होती है । असुरकुमार देवों में कितनेक देवों की दस
पल्योपम की स्थिति होती है । वादरवनस्पति कायिक जीवों की उत्कृष्ट
स्थिति दस हजार वर्ष की होती है । वाणव्यन्तर देवों में कितनेक देवों
की जघन्यस्थिति दस हजार वर्ष की होती है । सौधर्म ईशान कल्पों
में कितनेक देवों की स्थिति दस पल्योपम की होती है । ब्रह्मलोक कल्प
में देवों की उत्कृष्ट स्थिति दस सागरोपम की कही गई है । लान्तक

स्थिति दस पल्योपमनी कही छे चौथी पृथ्वीमा दस लाख नारकावास छे चौथी
पृथ्वीमा डेटलाक नारकीओनी उत्कृष्ट स्थिति दस सागरोपमनी कही छे पांचमी पृथ्वीमा
डेटलाक नारकीओनी जघन्य स्थिति दस सागरोपमनी छे असुरकुमार देवोमा डेटलाक
देवोनी जघन्य स्थिति दस हजार वर्षनी कही छे असुरेन्द्रो सिवायना डेटलाक भवन-
पति देवोनी जघन्य स्थिति दस हजार वर्षनी होय छे, असुरकुमार देवोमा डेटलाक
देवोनी स्थिति दस पल्योपमनी होय छे वादर वनस्पति कायिक देवोनी उत्कृष्ट
स्थिति दस हजार वर्षनी होय छे वाण व्यन्तर देवोमा डेटलाक देवोनी जघन्य
स्थिति दस हजार वर्षनी होय छे सौधर्म ईशान कल्पोमा डेटलाक देवोनी दस
पल्योपमनी स्थिति होय छे ब्रह्मलोक कल्पमा देवोनी उत्कृष्ट स्थिति दस सागरो-

માનિ સ્થિતિ પ્રજ્ઞા । લાન્તક વરુપે દેવાનામસ્પેકેપાં બધન્યેન દશ સાગ
 રોપમાનિ સ્થિતિ પ્રજ્ઞા । યે યેરા ધોષ ૧ સુધોષ ૨ મહાધોષ ૩ નન્દિધોષ
 ૪ સુસ્વર ૫ મનોરમ ૬ રમ્ય ૭ રમ્યક ૮ રમણીય ૯ મજ્જસાર્થ ૧૦ વ્રજા
 ભોજાવતસક વિમાનમ્=એતેષુ પદ્મદશવિમાનેષુ દેવત્વેનોત્પન્ના, તપાં સ્વલુ
 લેવાનામુત્કર્ષેણ દશ સાગરાપમાનિ સ્થિતિ પ્રજ્ઞા । તે સ્વલુ દેવાઃ તથાના
 મદમાસાનામ્=તે અનન્તિ યા પ્રાપ્નન્તિ યા ઉત્કૃષ્ટસન્તિ યા નિશ્ચન્તિ યા । તેષાં
 સ્વલુ દેવાનાં દશમિર્વર્ષસદૃશ આહારસજ્ઞા સમુત્પદ્યતે । સન્ત્યકે મલમિદિકા
 બીજા યે દશમિર્વર્ષસદૃશૈઃ સસ્પન્તિ, મોક્ષ્યન્તે મોક્ષ્યન્તિ, પરિનિર્વાસ્યન્તિ
 સર્વદુઃખાનામન્ત કરિષ્યન્તિ ॥૨૧॥

કશર્મે કિત્તનેક દેવો હી જય યથિયિ દસ સાગરોપમઙ્ગી રહી ગઈ છે । જો દેવ
 ધોષ ૧, સુધોષ ૨, મહાધોષ, ૩, નન્દિધોષ ૪, સુસ્વર ૫, મનોરમ ૬,
 ૬, રમ્ય ૭, રમ્યક ૮, રમણીય ૯ મજ્જસાર્થ ૧૦, ઓર વ્રજાભોજા
 વતમક ૧૧, इन ग्यारह विमानों में दश की पर्याय से उत्पन्न होते हैं,
 उन देवों की उत्कृष्ट स्थिति दस सागरोपम की कही गई है, व दश वाद्य
 आभ्यन्तरिक स्वामोच्छ्वास क्रिया पांच महिनों के अनन्तर करते हैं । इन
 देवों को दस हजार वर्ष व्यतीत होने पर आहार सज्ञा उपन्न होती
 है । इन देवों में कितनेसे ऐसे भी देव होते हैं जो मलमिदिक होते
 हैं । ये दसमव करने के बाद सिद्धि गति की प्राप्ति करेंगे, शक्तिमक
 अनंतज्ञानादिक गुणों का भोग कान बाले होंगे, समस्त कर्मों से छूटने
 वाले होंगे, सब प्रकार से कृतकृत्य हो जाएंगे, और सब प्रकार के
 दुःखों का अन्त कर देंगे ।

પમની હોય છે લાન્તક ક્રમમાં કેટલાક દેવાની જગત્ સ્થિતિ દસ સાગરોપમની
 હોય છે જે દેવો (૧) ધોષ (૨) સુધોષ, (૩) મહાધોષ, (૪) નન્દિધોષ, (૫) સુસ્વર
 (૬) મનોરમ (૭) રમ્ય (૮) રમણીય (૧૦) મજ્જાવત અને (૧૧) વ્રજાભોજાવત
 સહ એ અનિવાર્ય વિમાનોમાં દેવની પદ્મોપે ઉત્પન્ન થાય છે, તે દેવાની ઉત્કૃષ્ટ
 સ્થિતિ દસ સાગરોપમની કહી છે તે દેવો આદર તથા બહાર આમોચ્છવાસ દેવાની
 ક્રિયા પાંચ મહિને કરે છે, અને તે દેવાને દસ હજાર વર્ષે આહાર લેવાની અભિ
 હાષા થાય છે તે દેવોમાં કેટલાક એવા દેવો પણ હોય છે કે જે મલમિદિકા હોય
 છે તેઓ દસ ભવ કાંઈ પછી સિદ્ધિ ગતિ પ્રાપ્તે, આત્મિક અનંત શુદ્ધોને ઉપભોગ
 કરનાર થશે સમસ્ત કામોથી મુક્ત થશે, બધી રીતે કૃતકૃત્ય થશે, અને બધા પ્રાપ્તનાં
 દુઃખોને અન્ત કરશે.

भावार्थ यह पाहेले के सूत्रों में भावार्थ द्वारा स्पष्ट किया जा चुका है कि जहां पर शास्त्र में जो स्थिति जीवों की जघन्य और उत्कृष्ट—कही गई है यदि वह यहां नहीं कही जाती है तथा जो भी और स्थिति कही जाती है “वह मध्यमस्थिति की अपेक्षा कथित की गई है” ऐसा जानना चाहिये। प्रथम पृथिवी में जघन्य स्थिति दस हजार वर्ष की है यह पहिले कई भावार्थों में सूचित किया जा चुका है—वही बात यहां सूत्रकार ने सूत्रद्वारा प्रदर्शित की है। अब यहां जो दस पल्योपम की स्थिति कितनेक नारकियों की प्रगट की गई है—वह मध्यम स्थिति की अपेक्षा कथन है। क्यों कि यहां उत्कृष्ट स्थिति एक सागरोपम की है। चौथी भूमि में नारकियों के नरकावास दस लाख हैं। ये पहिली पृथिवी में तीस लाख है, दूसरी में पच्चीस लाख है, तीसरी में पंद्रह लाख हैं, चौथी में दस लाख हैं, पांचवी में तीन लाख, छठी में पांच कम एक लाख और सातवी भूमि में सिर्फ पांच ही नरकावास है। ये नरकावास सानों भूमियों की जिनकी २ मोटाई करी गई है उसके ऊपर तथा नीचे का एक एक हजार योजन छोड़कर बाकी के मध्यभाग में होते हैं। इनका विशेष वर्णन अन्य शास्त्रों से जाना जा सकता है। चौथी पृथिवी में उत्कृष्टस्थिति दस सागरोपम की कही

भावार्थ—आगला सूत्रोमा भावार्थ द्वारा स्पष्ट करवाना आभ्युं छे के न्या न्या शस्त्रमा लोवानी के जघन्य अने उत्कृष्ट स्थिति बतावी छे—ते ने अही बताववामा न आवे तथा के कोछ नीछे स्थिति बताववामा आवे छे “ते मध्यम स्थितिनी अपेक्षाके कहेल छे” ऐम समजवु पड़ेली पथ्वीमा जघन्य स्थिति दस हजार वर्षानी छे, के बात आगण केटलाक भावार्थोमा सूचित करवामा आवी गछ छे—के न बात अही सूत्रकारे सूत्रद्वारा दर्शावी छे “हवे अही केटलाक नारकीओनी के दस पल्योपमनी स्थिति दर्शावी छे ते मध्यम स्थितिनी अपेक्षाके कहेवामा आवी छे कारण के त्या उत्कृष्ट स्थिति एक सागरोपमनी छे चौथी भूमिमा नारकीओना दस लाख नरकावास छे ते पड़ेली पथ्वीमा तीस लाख छे, नीछे पथ्वीमा पचीस लाख छे, त्रीशमा पहर लाख छे, चौथीमा दस लाख छे, पांचवीमा त्रय लाख छे, छठीमा एक लाखमा पांच ओछा छे, अने सातवीमा इकत पांच न नरकावास छे ते नरकावास साते भूमियोनी जेटली जेटली नडाछ कहेवामा आवी छे, तेना ऊपर तथा नीचेना एक एक हजार योजन छोडीने बाकीना मध्य भागमा होय छे तेनुं अधिक वर्णन अन्य शास्त्रोमाथी लखी शकय छे चौथी पथ्वीमा उत्कृष्ट स्थिति दस सागरोपमनी कही छे, के स्थिति पांचवी नरकमा

अथ एकादश समवायमाह—

पृथ्म्- एकारस उवासगपदिमाओ पणत्ताओ, त जहा—दस
णसावण१ कयव्ययकम्मे२ सामाइयकडे३ पोसहोववासनिरण४ दिया
वभयारी रत्ति परिमाणकडे५ दिया वि राओवि वभयारी असिणाई
वियडभोई मउलिकडे६ सचित्तपरिण्णाप७ आरभपरिण्णाप८ पेसप
रिण्णाप९ उडिहमत्तपरिण्णाप१० समणभूण११ यावि भवइ समणा
उसो। लोगताओ इकारसएहिं एकारेहिं जोयणेहिं आवाहाण जोइ

गई है, सो यही स्थिति पांचवे नरक में जघन्य स्थिति हो सकती है।
असुरकुमार देवों की जघन्य स्थिति इसनी ही कही गई है। असुरेद्रों
को छोड़कर बाकी के नागकुमार आदि नौ प्रकार के देवों की जघन्य
स्थिति दस हजार वर्ष की है। असुरकुमारों में कितनेक देवों की जो
यहां दसपश्योपम की स्थिति कही गई है वह मध्यमस्थिति है।
वनस्पतिकाय की यहाँ दस हजार वर्ष की उत्कृष्ट स्थिति कही है वह
अवस्थिति की अपेक्षा जाननी चाहिये, क्योंकि कायस्थिति अनन्त उत्स
र्पिणी और अवसर्पिणी प्रमाण है। व्यन्तरदेवों की भी स्थिति जघन्य दस
हजार वर्ष की है। मौषम ईशान कल्प में जो दस पश्योपम की स्थिति
यहां कही गई है वह मध्यम स्थिति की अपेक्षा जानना चाहिये। ब्रह्मलोक
कल्पमें देवों की उत्कृष्ट स्थिति दस सागरापम की है। यही स्थिति
लान्तककल्प में जघन्य हो जाती है ॥सू० २९॥

जघन्य स्थिति कछ अथ ३ असुरकुमार देवों की जघन्य स्थिति इस दुन्दर देवों की
कही है, इससे है अवस्थिति निपायनी जघन्य स्थिति ओटली न कही है असुरेद्रों
जिवापना बाकीना नागकुमार आदि नव प्रकारना देवों की जघन्य स्थिति इस दुन्दर
वपनी है असुरकुमारों में कितनेक देवों की इस पश्योपमनी के स्थिति आदी कही है ते
अध्यम स्थिति के वनस्पतिकायना आदी के इस दुन्दर वर्षों की उत्कृष्ट स्थिति कही
है ते अवस्थितिनी अपेक्षाके कहेवाग आवेत है जेभ समकपु कल्प है काय स्थिति
अनन्त उत्सर्पिणी अने अवसर्पिणी प्रमाण है व्यन्तर देवों की स्थिति पक्ष इस
दुन्दर वर्षों की है—मौषम ईशान कल्पमें आदी के इस पश्योपमनी स्थिति कही
है ते अध्यम स्थितिनी अपेक्षाके समकपु ब्रह्मलोक कल्पमें देवों की उत्कृष्ट स्थिति
इस सागरापमनी है—जेव स्थिति लान्तक कल्पमें जघन्य अथ अथ है ॥सू० २९॥

संते पण्णत्ते । जंबूदीवे दीवे मंदरस्स पव्वयस्स एक्कारसेहिं एक्कवी-
सेहिं जोयणेहिं जोइसे चारं चरइ । समणस्स णं भगवओ महावीरस्स
एक्कारस गणहरा होत्था, तं जहो—इंदभूई, अग्निभूई, वायुभूई, विअत्ते,
सोहम्मे, मंडिए, मोरियपुत्ते, अकंपिए, अयलभाए, मेअज्जे पभासे ।
मूले नक्खत्तं एक्कारसतारे पण्णत्ते । हेट्ठिम गेविज्जयाणं वाणं एक्का-
रसमुत्तरं गेविज्ज विमानसतं भवइत्तिमक्खायं । मंदरेणं पव्वए
धरणितलाओ सिहरतले एक्कारसभागपरिहीणे उच्चत्तेणं पण्णत्ते ॥सू.३०॥

टीका—‘एक्कारस’ इत्यादि । एकादश ‘उपासक प्रतिमाओ’ उपासन्ते=
सेवन्ते श्रमणान्=साधुन् इति उपासकाः=श्रावकाः, तेषां प्रतिमाः=अभि-
ग्रहरूपा उपासकप्रतिमाः प्रज्ञप्ताः, तद्यथा—‘दंमणसावए’ दर्शनश्रावकः, तत्र—
दर्शनं=सम्यक्तत्वं तत्प्रतिपन्नः श्रावको दर्शनश्रावकः । यद्यपि हैकादशविधत्वं
प्रतिमानमुक्तम्, तथापि प्रतिमा प्रतिमावतोरभेदोपचारात्प्रतिमावत एव निर्दे-

अथ सूत्रकार ग्यारवें समवाय का कथन करते हैं—‘एगारस इत्यादि ।

टीकार्थ—उपासकों की ग्यारह प्रतिमा होती हैं । साधुओंकी जो सेवा
करते हैं उनका नाम उपासक है । प्रतिमा नाम अभिग्रहविशेष का है ।
इनमें अनेकविध अभिग्रह होते हैं, अतः प्रतिमाएँ अभिग्रहरूप ही जाननी
चाहिये । वे इस प्रकार से हैं—दर्शनश्रावक—सम्यक्तत्व को स्वीकार करने
वाला श्रावक दर्शनश्रावक कहा गया है । यद्यपि यहां पर प्रतिमाओं में ग्यारह
प्रकारता कथित हुई है फिर भी प्रतिमा और प्रतिमावालों में अभेदोपचार
से प्रतिमावान् का निर्देश किया गया है । इस प्रतिमा का काल एक

डवे सूत्रकार अगियारमुं समवाय कहे छे—‘एगारस इत्यादि ।

टीकार्थ—उपासकानी अगियार प्रतिमा होय छे. साधुओंनी ने दोके सेवा करे छे
तेमने उपासक कहे छे प्रतिमा ओटवे प्रतिज्ञा तेमां अनेक प्रकारना अभिग्रह
होय छे, तेथी ते प्रतिमाओने अभिग्रहइय ज समजवी. ते प्रतिमाओ आ प्रमाणे
छे—दर्शन श्रावक—सम्यक्तत्व अंगीकार करनार श्रावकने दर्शन श्रावक कहेवाभा आवेल छे.
ने के अही प्रतिमाना अगियार सेह जताव्या छे, तो यखु प्रतिमा अने प्रतिमावाणामा
अ दोपचारनी दृष्टिओ प्रतिमावाणानो निर्देश करायो छे. आ प्रतिमानो काण ओक

સઃકૃતઃ । ષઙ્કાકારોદિશ્વરહિતસ્પાણુવ્રતાદિનિકસસ્ય સમ્યગ્દર્શનસ્ય યત્
 માયાવધિ સ્વીકરણ સા પ્રતિમા પ્રથમા । ‘કયશ્ચયકમ્પ’ કૃતવ્રતકર્મા=કૃતં
 વિહિત પ્રમાનાય=અનુવ્રતાત્નીનાં કર્મ=ધવણ? જ્ઞાન૨ ગ્રહણ૩ પ્રતિસેવન૪ ન્દર્શનં
 ચતુર્થિય કર્મ યન મ કૃતવ્રતકર્મા, પ્રતિપન્નાણુવ્રતાદિરિત્યર્થ । તત્ર ધણમ્-
 આકર્ષનમ્, જ્ઞાનમ્=મુતસ્પાવશોષઃ, ગ્રહણમ્=અવબુદ્ધસ્ય સ્વીકરણમ્, પ્રતિસેવન=
 સ્વીકૃતસ્ય પરિપાનભય, इति द्विमासावधિद्वિतीया उपासक प्रतिमा । સામાયિકપ’
 સામાયિકકૃત =કૃત=વિહિતં સામાયિક=સાવધયોગપરિષ્વનન નિરવધયોગસેવનસ્વ
 રૂપ યન મ સામાયિકકૃત, આદિમાગ્ન્યાદિત્વાત નિષ્ણાન્નમ્ય પરિપાત । અપ્રતિપ
 ન્નપૌષ્પમ્ય દર્શનત્વતોપેતસ્ય પ્રતિદિનમુમયકાલ મામત્રય યાવત્ સામાયિકકરમરૂપા
 માસ કા છે । હસ પ્રતિમા મેં સમ્યક્ દર્શન કો ગંકા કાંસા આદિ શર્ય
 સે રહિત યનાયા જાના છે । હસ પ્રતિમાધારી કે અણુવ્રત નહીં હોતે
 ? છે । યત્ પહિલી પ્રતિમા છે? । દુસરી પ્રતિમા કા નામ કૃતવ્રતકર્મા છે-
 ‘સ પ્રતિમા કા કાલ લો માસ કા છે, હસ પ્રતિમા કો ધારણ કરને લાલ
 ઉપાસક (આવક) અપને સ્વોકૃત અણુવ્રતાદિકોં કે અવજ, જ્ઞાન, ગ્રહણ ઓર
 પ્રતિમલન, હન આર મકાર કી ક્રિયા કો કરતા છે । અર્ધાંદ-હસ પ્રતિમા
 મેં અણુવ્રતાદિકોં કા અવજ કરના૧, સુને હુણ કા લોધ કરના૨, જાને
 હુણ કા ગ્રહણ કરના૩, ગ્રહણ કિયે હુણ કા પાલન કરના૪ હોતા હૈ૨ ।
 ત્રીસરો પ્રતિમા કા નામ સામાયિક કૃત છે, હસ પ્રતિમાલાલ આવક જો
 કિ સમ્યગ્દર્શન૨ ઓર અણુ વ્રતાદિ સે યુક્ત હોતા-૩, તયા પૌષ્પ ધારણ
 કરને રૂપ નિયમ સે રહિત હોતા છે, લોનોં કાલ પ્રતિદિન, ત્રીનમાસતક
 સાવધયોગ પરિષ્વજેન રૂપ સામાયિક કરતા છે । સાવધયોગ, કા પરિત્યાગ

માસના છે આ પ્રતિમામા સમ્યગ્દર્શનને યજ્ઞ કાશ્ચ આદિ શસ્ત્રોથી રહિત જન
 વન મા આવે છે ત પ્રતિમાધારીના અણુમત હોત નથી આ પહેલી પ્રતિમા છે (૧)
 બીજી પ્રતિમાનુ નામ કૃતવ્રતકર્મા છે-તે પ્રતિમાને સમજ બે માસને હોય છે
 તે પ્રતિમા ધારણ કરનાર ઉપાસક પોને અર્ચીકાર કરેલ અણુમતાદિનુ અવજ જન,
 અદ્ય અને પ્રતિસેવન બે યાવ પ્રકારની ક્રિયાઓ કરે છે બેટલે કે આ પ્રતિમા
 ધરનુ કરનારે અણુમતાદિનુ અવજ હવુ સાવધેશનો ભોધ કરવો જાણેલું અદ્ય
 કરવુ અને અદ્ય કરેલ પાણવુ, તે આર ક્ષિયો કરવની હોય છે (૨) ત્રીજી
 પ્રતિમાનુ નામ સામાયિકકૃત છે આ પ્રતિમા ધારણ આવક કે ને સમ્યગ્દર્શન
 અને અણુમતાદિથી મુક્ત હોય છે તયા પૌષ્પ ધારણ કરવા રૂપ નિયમથી રહિત હોય
 છે તલ માસ સુધી દરદેશ બે વખત સાવધયોગ પરિષ્વજનરૂપ સામાયિક કરે

तृतीया प्रतिमा । 'पोषधोपवासनिरत' पोषधोपवासनिरतः पोषं=पुष्टि श्रुतचारि-
त्रिलक्षणधर्मस्य धत्ते पोषधम् आहारत्यागादिकानुष्ठानम्, तेनोपवासः=अहोरात्र
यावदवस्थानं पोषधोपवासः । अथवा-पोषधं-पर्वदिनमष्टम्यादि, तत्र उपवासः=
आहारशरीरसत्काराब्रह्मचर्यसावद्यव्यापारपरिवर्जनपूर्वकं वसन पोषधोपवासः,
तत्र-निरतः=आसक्तः पोषधोपवासनिरतः । इति चतुर्थी प्रतिमा । पूर्वोक्त
प्रतिमात्रयद्युक्तेनाष्टमीचतुर्दश्यमात्रास्यापौर्णमासीपञ्चाहारपोषधादिचतुर्विधं पोषधं
प्रतिपद्यमानेन चतुर्भिर्मासैश्चतुर्थी प्रतिमा समाराधनीया भवतीतिभावः । पञ्च-
भिर्मासैः समाराधनीयायां पञ्चमीप्रतिमायां 'दियावभयारी रत्ति परिमाणे कडे'

करना और निरवद्ययोग का सेवन करना इसी का नाम सामायिक है३ ।
पोषधोपवास निरत यह चौथी प्रतिमा है । श्रुतचारित्र्यरूपधर्म की पुष्टि
जिससे हो उसका नाम पोषध है । अर्थात्-आहार आदि का त्याग रूप
जो अनुष्ठान है वही पोषध है । इसे त्यागपूर्वक जो उपवास-एक दिन
रात तक रहना होता है उसका नाम पोषधोपवास है । अथवा-अष्टमी
आदि जो पर्व के दिनस है उनका नाम पोषध है, इन दिनों में-उपवास
में-आहार, शरीरसंस्कार, अब्रह्म और सावद्यव्यापार, इनका त्याग पूर्वक
रहना पोषधोपवास है । इस प्रतिमा के पालने की अवधि चार मास
की है । इस प्रतिमा के पालन करने में निरत उपासक को पूर्वोक्त प्रति-
मात्रय के आचारों का आराधन करना आवश्यक है । अष्टमी, चतुर्दशी,
अमावस्या और पौर्णमासी ये पर्वदिन हैं४ । पांचवीं प्रतिमा के पालन करने
की अवधि पांच मास की है-इस प्रतिमा का पालक दिन में ब्रह्मचारी

सावद्ययोगनो परित्याग करवे अने निरवद्ययोगनु सेवन करवु तेनु नाम सामायिक
छे. (३) पोषधोपवासनिरत अे चौथी प्रतिमा छे श्रुतचारित्र्यधर्मनी जेनाथी पुष्टि
थाय तेनु नाम पोषध छे अेटवे के आहार आदिना त्यागइय जे अनुष्ठान छे अेतु
नाम ज पोषध छे आ त्याग पूर्वक अेक दिवस अने अेक रात जे उपवास करवे
पडे छे तेने पोषधोपवास कडे छे अथवा आठम आदि जे पर्वना दिवसो छे तेमनु
नाम पोषध छे. ते दिवसोभा-उपवासभा-आहार, शरीर संस्कार, अब्रह्म, अने साव-
द्यव्यापार, अे आभतोना त्यागपूर्वक रहवुं ते पोषधोपवास कडेवाय छे. आ प्रतिमा
पाणवानो समय आर मासने छे. आ प्रतिमानी उपासना करनार उपासके पूर्वोक्त
त्रले प्रतिमानुं आराधन करवु आवश्यक गणाय छे आठम, यादश, अमावास्या अने
पूर्णिमा, अे पर्वदिनो छे (४) पाचमी प्रतिमानु पालन करवानो समय पांच मासने
छे आ प्रतिमानु पालन करनार दिवसे ब्रह्मचारी रहे छे अने रात्रे मैथुन सेवननी

दिवा ब्रह्मचारी रात्रौ परिमाणकृत । पृष्ठी प्रतिमायां 'दिष्वावि रात्रौ च भमयारी' दिवापि रात्रावपि ब्रह्मचारी 'असिणार्ह' अस्नायी स्नानपरिवर्जित, 'वियङ्मोर्ह' विकटमोजी=विकटप्रकाशे मोक्तुं क्षीयमस्येति विकटमोजी=रात्रौ तु सर्वथा न भुङ्क्ते किन्तु दिवापि प्रकाशयुक्त एव भवेशे मोक्ता, 'मठडिके' मुकुसीकृत=एक कक्ष ब्रह्मचारी च भवेत् । इय पृष्ठी प्रतिमा पञ्चासैः समाराधनीया 'सच्चित्त =परिष्ठाण' सच्चित्त परिष्ठात =सच्चित्तद्रव्यज्ञानपूर्वककृततद्रस्तुपरित्यागः । पूर्वाक्त पट् प्रतिमाराधकस्य मासुकाहारयुक्तस्य सप्तमासान् यावत् सप्तमी प्रतिमा भवति । 'आरम्भपरिष्ठाण' आरम्भपरिष्ठातः=स्वयं पट्कापारम्भपरित्यागी । पूर्वोक्त सप्तप्रतिमाकारिणोऽष्टौ मासान् यावत् स्वकृतारम्भपरिचर्जनक्याऽष्टमी प्रतिमा

और रात्रि में मैथुन सेवन की मर्यादा करने वाला होता है^५ । छठवीं प्रतिमा में दिन में और रात्रि में दोनों समय में ब्रह्मचर्यव्रत का पालन किया जाता है । स्नान करने का परिष्ठाण हो जाता है । विकट अर्थात् प्रकाशयुक्त स्थान में भोजन करना होता है । रात्रि में तो भोजन करने का सर्वथा परिष्ठाण हो ही जाता है । इस प्रतिमा धारक एककक्ष ब्रह्मचारी (घोसी की एक लांग खुली रखने वाला) होता है^६ । सातवीं प्रतिमा का नाम सच्चित्तपरिष्ठात है । इस प्रतिमा के धारण करने में सच्चित्त द्रव्य का ज्ञानपूर्वक सच्चित्त वस्तु का परिष्ठाण हो जाता है । तात्पर्य यह है कि सातवीं प्रतिमा का आराधक—उपासक पहिछे की छः प्रतिमाओं के आचार का पालन करता है और मासुक आहारका सेवन करता है । अमासुक आहार का नहीं^७ । आठवीं प्रतिमा का नाम आरम्भपरिष्ठात है । इसके आराधन करने का काल भाठ मास तक का है । इसके पालक को स्वयं

भर्ता^८ ३२५१ कोष छ (५) छठी प्रतिमा धारण करनेवाले रात्रे तथा दिवसे लम्बे समय ब्रह्मचर्य मन्त्र पालन करे छ स्नान करनेवाले परिष्ठाण करे छ विकट प्रकाश युक्त स्थानमें भोजन करे छ, रात्रे तो भोजन करनेवाले सर्वथा परिष्ठाण करे छ आ प्रतिमा पालनवाले कोकक्ष ब्रह्मचारी कोष छ (कोक अर्थात् घर वस्त्र २ अनाइ) कोष छ (६) सातमी प्रतिमानु नाम "सच्चित्तपरिष्ठात" छ आ मत धारण करनेवाली सच्चित्त द्रव्यज्ञान पूर्वक सच्चित्त वस्तुने परिष्ठाण कराय छ ओटके के सातमी प्रतिमाने आराधक उपासक आराधनी छ प्रतिमानेना आराधन पालन करे छ, लम्बे प्रमुख आहारन (कोष इदित आहारन) सेवन करे छ आमासुक आहारन नहीं (७) आठमी प्रतिमानु नाम आरम्भपरिष्ठात छ तेनी आराधनाने काण आठ मासने छ तेने आराधक अने आरंभने त्याग करे छ ते आरंभत्यागी पूर्वोक्त

विज्ञेया । 'प्रेष्यपरिज्ञात' प्रेष्यपरिज्ञातः=अन्यद्वाराऽरम्भ परित्यागीत्यर्थः । पूर्वोक्तसकलप्रतिमानुष्ठानशालस्य श्रावकस्य षट्कायारम्भं परैरन्यकारयतो नव मासावधि नवमी प्रतिमा भवति । 'उद्दिष्टभक्तपरिज्ञात' उद्दिष्टभक्तपरिज्ञातः, उद्दिष्टस्त्रोद्देशेन कृतं भक्तं परिज्ञातं प्रत्याख्यातं येन स उद्दिष्टभक्तपरिज्ञातः स्वनिमित्तसंगतिताहारपरित्यागी । पूर्वोक्त नव प्रतिमायुक्तस्याऽऽधाकर्माद्याहारपरिहारिणः क्षुरमुण्डितगिरसः सशिवंभ्य वा 'गृहे सम्बन्धेक्रेनापि पृष्ठस्य परि-

आरंभ करने का त्याग हो जाता है । यह आरंभत्यागी पूर्वोक्त सात प्रतिमाओं के आहार का पालन करता हुआ ऐसा कोई स्वयं आरंभ नहीं करता है कि जिस में षट्काय के जीवों की विराधना हो । नवमी प्रतिमा का नाम प्रेष्यपरिज्ञात है, इसके पालन का समय नव मास तक का है । इसमें दूसरों से भी षट्काय के आरम्भ कराने का सर्वथा त्याग कर दिया जाता है । इस प्रतिमा का आराधक प्राणी पूर्वोक्त आठ प्रतिमाओं के आचार का पालन करता हुआ इस प्रतिमा का पालन करने वाला होता है । दशवीं प्रतिमा का नाम उद्दिष्टभक्तपरिज्ञात है । इसमें अपने उद्देश्य से बनाये आहार का परिज्ञान होने पर परित्याग हो जाता है । इस प्रतिमा का आराधक जीव अपने लिये किसी से भी आहार नहीं बनवाता है । तथा यदि कोई अपने लिये आहार बना लेता है और उसे यह ज्ञात हो जाता है कि इसने मेरे निमित्त को लेकर आहार बनाया है तो वह इस प्रकार के आहार को अपने उपयोग में नहीं लेता है । उसका परित्याग कर देता है, क्योंकि कि इस प्रकार का आहार आधा-

सात प्रतिमाओंना आयाजनुं पालन करेव छे. अने ओवो कोष्ठ पक्षु आरंभ करतो नथी हे जेभा छ कायना एवेनी विराधना थाय (८) नवमी प्रतिमानुं नाम प्रेष्यपरिज्ञात छे. तेना पालनने काण नव मासने छे ते प्रतिमाना आराधके भील्ल बोडो पासे पक्षु छ कायना एवेनी विराधना थाय ओवो आरंभ करववानो परित्याग करेवो पडे छे. आ प्रतिमानुं आराधन करनार एव पूर्वोक्त आठ प्रतिमाओंना आयाजनुं पालन करतो करतो आ प्रतिमानुं पालन करनार थाय छे (९) इसमी प्रतिमानुं नाम 'उद्दिष्टभक्तपरिज्ञात' छे ते पाणनार पोताने निमित्त ओहार जन्थो छे ओषुं जण्णवा भण्णथी तेने परित्याग करे छे-आ प्रतिमानो आराधक एव पोताने माटे कोष्ठनी पक्षु पासे आहार जनावरावतो नथी तथा कोष्ठ तेना माटे आहार जनावे अने ते वातनी तेने जणर पडे हे लेणुं मारा निमित्त ओहार जनाव्यो छे, तो ते ओवा आहारने पोताना उपयोगमा देतो नथी-तेना परित्याग करे छे, कारणु हे ते प्रकारने आहार आधाकर्म आदि दोषोधी हूषित गण्णाय छे ते

दिवा घण्टाचारी रात्रौ परिमाणकृत । पट्टी प्रतिमायां 'दिग्भावि रात्रौ वि बंमपारी'
 दिवापि रात्रावपि घण्टाचारी 'असिणार्द्ध' अस्नायी स्नानपरिष्कृत, 'त्रियङ्मोर्द्ध'
 विकटमोजी=विकटप्रकाशे भोक्तु शीममम्पति विकटमोजी=रात्रौ तु सर्वथा न
 युक्तं किन्तु दिवापि प्रकाशयुक्त एव प्रदेष्टुं भोक्ता, 'मठडिकडे' मुकुमीकृत=एक
 कक्ष बद्धपारी च मन्त्रः । इय पट्टी प्रतिमा पण्मासैः समाराधनीया 'सचिप्त
 =परिष्ठाप' सचिप्त परिष्ठात =सचिप्तद्रव्यज्ञानपूर्वककृततद्वस्तुपरित्याग ।
 पूर्वाक्त पट्ट प्रतिमाराधकस्य मासुकाहारयुक्तस्य सप्तमासान् यावत् सप्तमी प्रतिमा
 भवति । 'भारमपरिष्ठाप' भारम्भपरिष्ठात =स्वयं पट्टकापारम्भपरित्यागी । पूर्वाक्त
 मत्स्यप्रतिमाकारिणाऽष्टौ मासान् यावत् स्वकृतारम्भपरिर्जनरूपाऽष्टमी प्रतिमा

और रात्रि में मैथुन सवन की मर्यादा करने वाला होता है ५ । छठवीं
 प्रतिमा में दिन में और रात्रि में दोनों समय में ब्रह्मचर्यव्रत का पालन
 किया जाना है । स्नान करने का परित्याग हो जाता है । विकट अर्थात्
 प्रकाशयुक्त स्थान में भोजन करना होता है । रात्रि में तो भोजन करने
 का सर्वथा परित्याग हो ही जाता है । इस प्रतिमा धारक एककक्ष बद्ध
 घाती (घोड़ी की एक लग खुली रखने वाला) होता है ६ । सातवीं प्रतिमा
 का नाम सचिप्तपरिष्ठात है । इस प्रतिमा क धारण करने में सचिप्त द्रव्य
 का ज्ञानपूर्वक सचिप्त यस्तु का परित्याग हो जाता है । सातवर्ष यह है कि
 सातवीं प्रतिमा का आराधक-उपासक पहिले की छह प्रतिमाओं के आचार
 का पालन करता है और मासुक आहारका सवन करता है । अमासुक
 आहार का नहीं ७ । आठवीं प्रतिमा का नाम आरम्भपरिष्ठात है । इसके
 आराधन करने का काल आठ मास तक का है । इसके पालक को स्वयं

मार्ग १२१२ दोष ७ (५) छठी प्रतिमा धारण करनेवाले रात्रे तथा दिवसे, जन्मे
 अनव ब्रह्मचर्य मन्त्र पालन करे ७ स्नान करनेवाले परित्याग करे ७ विकट प्रकाश
 युक्त स्थानमा भोजन करे ७, रात्रे तो भोजन सेवानो सर्वथा परित्याग करे ७ आ
 प्रतिमा पञ्चमास अष्टमस्य वज्रधारी दोष ७ (ज्येष्ठ पक्षा पर वज्र २ पञ्चमास) दोष
 ७ (६) सातवीं प्रतिमानु नाम "सचिप्तपरिष्ठात" ७ आ मन धारण करनेवाले
 सचिप्त द्रव्यज्ञान पूर्वक सचिप्त यस्तुने परित्याग कराय ७ ज्येष्ठ के सातवीं प्रति
 मानो आराधक उपासक आराधनी छ प्रतिमानोना आराधने पालन करे ७, जन्मे
 प्रसुक्त आहारानु (दिव रक्षित आहारानु) सवन करे ७ अप्रासुक आहारानु नहीं
 (७) अष्टमी प्रतिमानु नाम आरम्भपरिष्ठात ७ तेनी आराधनानो आठ मास
 आराधने छ तेनी आराधक जन्मे आराधनो त्याग करे ७ ते आराधनवासी पूर्वोक्त

લપ્થેશે સતિ 'શ્રમણોપાસકાય પ્રતિમાપ્રતિપન્નાય ભિક્ષાં દેહિ' इति ब्रुवाणस्य 'केस्त्वमिति पृष्ठस्य 'श्रमणोपासकोऽह' मितिब्रुवाणस्य एकादशमासान् यावदे-
 कादशी प्रतिमा भवति । 'लोकान्ताओ' लोकान्तात्=तिर्यग्लोकान्तात् 'एकारसएहि
 एकारेहि जोयणेहि' एकादशगतैः एकादशभिर्योजनैः एकादशधिकैकादशतयोजनैः
 कृत्वा 'अवाहाए' अवाधया अन्तरेण 'जोइसंते' ज्योतिपान्तः=ज्योतिश्च-
 क्रान्तभागः प्रज्ञप्तः, अर्थात्--लोकान्तादेकादशधिकैकादशशतयोजनदूरे ज्योतिश्चक्रं
 प्रारभ्यते । जम्बूद्वीपे द्वीपे मन्दरस्य पर्वतस्य 'एकारससएहि एकवीसेहि जोय-
 णेहि' एकादशशतैरेकविंशत्यायोजनैः एकविंशत्यधिकैकादशशतयोजनैः कृत्वा दूरेण
 'जोइसं' ज्योतिपं ज्योतिश्चक्रं 'चारं' भ्रमणं 'चरइ' चरति=करोति । श्रमणस्य खलु
 भगवतो महावीरस्य एकादश गणधरा आसन्, तद्यथा—'इंद्रभूइ' इन्द्रभूतिः १.

तियों का यह पालन करता हुआ भिक्षा के निमित्त जब अपने कुलके
 घरोंमें जाता है तब वहां—“प्रतिमाप्रतिपन्न श्रमणोपासक के लिये भिक्षा
 दो” इस प्रकार कहता है । जब उससे कोई पूछता है कि तुम कौन
 हो तब उत्तर में यह कहता है कि मैं श्रमणोपासक हूं । जब कोई वन्दना
 करने लगता है तो वह कहता है मैं श्रमणोपासक—आवक हू । इस
 प्रतिमा को आराधन करने का काल ग्यारहमास हैं । ग्यारह महीने तक
 इस प्रतिमा का पालन किया जाता है । लोकान्त से अर्थात् तिर्छालोक
 के अन्तसे ग्यारह सो ग्यारह (११११) योजन दूर पर ज्योतिश्चक्र
 प्रारंभ होता है । जम्बूद्वीप नामके द्वीप में ग्यारहसौ इक्कीस (११२१)
 योजन सुमेरु को छोड़कर ज्योतिश्चक्र भ्रमण करता है । श्रमण भगवान्
 महावीर के ग्यारह गणधर थे । वे इस प्रकार से हैं—इंद्रभूति १, अग्निभूति २,

निमित્ते પોતાના કુટુંબીઓનાં ઘરે જાય છે ત્યારે તે આ પ્રમાણે બોલે છે “પ્રતિમા
 યુક્ત શ્રમણોપાસકને માટે ભિક્ષા આપો” જ્યારે તેને કોઈ પૂછે છે કે “તમે કોણ
 છો ?” ત્યારે તે જવાબ આપે છે કે “હું શ્રમણોપાસક છું.” જો તેમને કોઈ વંદણા
 કરવા લાગે છે તો તે કહે છે કે “હું શ્રમણોપાસક આવક છું” અગિયાર માસ
 સુધી આ પ્રતિમાનું પાલન કરવામા આવે છે (૧૧)

લોકાન્તથી એટલે કે તિર્યક્ લોકના અન્તથી એક હજાર એક સો અગિયાર
 (૧૧૧૧) યોજનને અંતરે જ્યોતિશ્ચક્રનો પ્રારંભ થાય છે જમ્બૂદ્વીપ નામના દ્વીપમાં
 અગિયાર સો એકવીસ (૧૧૨૧) યોજન પ્રમાણ સુમેરુને છોડીને જ્યોતિશ્ચક્ર ભ્રમણ
 કરેછે. શ્રમણ ભગવાન મહાવીરના અગિયાર ગણધર હતા, તેમના નામ નીચે પ્રમાણે છે—
 ૧૯

જ્ઞાતવિષય જ્ઞાનામિ અપરિજ્ઞાતવિષય ન જ્ઞાનામો'તિ ધ્રુવાણસ્ય દશમાસાન્
યાવદ્દશમી પ્રતિમા મન્વતિ । 'સમણધૂણ યાવિ મન્વદ્ સમણાડસા' ધ્રમણમૂતમાપિ
મન્વતિ ધ્રમણાયુષ્મન્ । દે ધ્રમણ ! દે આયુષ્મન્જમ્પૂઃ । પૂર્વોક્ત દશવિધમતિ
મામતિપદ્મ શ્વાકઃ ધ્રમણમૂતઃ ધ્રમણસદશમાપિ મન્વતિ । મૂતપદ્મઃ સદશાર્થક ।
અથ માત્ર -ઉપરિસમુદિસ સકલપ્રતિમાસમુપેતસ્ય છુરમુષ્ટિતશ્ચિરસો લુચ્ચિતશ્ચિરમો
વા પરિમુદીતસાધુવેપસ્ય ર્દિપાસમિત્વાદિક ધ્રમણધર્મમનુપાલયતો મિસાર્થ મ્વકુ

કર્મ આદિ દોર્યો સે દૂપિત માના ગયા હૈ । यह अपने पापों को छुड़ा
स बनवाता है और शक्ति हो तो केशलंघन भी करवाता है । यदि
शिक्षा रखना चाहे तो शिक्षा रख सकता है । घर के संबंध में यदि कोई
इससे पूछता है तो यह जिस विषय को जानता है उस विषय में 'हाँ' कर
देता है और जिस विषय को नहीं जानता है उस विषय में 'ना' कर
देता है । इस प्रतिमा के पालन करने का काल दस महिने तक का है १० ।
ग्यारहवीं प्रतिमा का नाम ध्रमणमूत है जब स्वामी को समझाते हुए सुधर्मा
स्वामी कहते हैं कि हे ध्रमण आयुष्मन् ! जंबू ! इन पूर्वोक्त दश विध
प्रतिमाओं का पालन करता हुआ आश्विन ग्यारहवीं प्रतिमाक स्वीकार
करनेपर ध्रमण ऐसा हो जाता है । यहाँ मूतशब्द सदश अर्थ का वाचक
है । मका भाव इस प्रकार है-अथ यह पूर्वोक्त इन ममस्त प्रतिमाओं के
पालन करने में निष्णात हो जाता है तब यह चाहे अपने केशों को
छुड़ा से उतरवाव ; या, इनका स्पर्श लुब्धन करे साधु ऐसा हो जाता
है । इसकी वेषमूवा, मातु ऐसी होती है । र्दिपसमिति आदि पांच, समि

અસાધો પેતાના વાળ કપાવે છે એ તેની ઇચ્છા થાય તે શિખા રૂપી કહે છે
તેને કોઈ વરના વિધવામાં પૂછે તો એ વિધવાની તેને ખબર હોય તે વિધવાને જવાબ
હા મા આપે છે અને એ બાબતની તેને ખબર ન હોય તેને જવાબ ના મા
જ પેછે આ પ્રતિમાની આશાધનાનો કાળ દસ માસનો છે (૧૦) અગિયારમી પ્રતિ-
માનું નામ 'ધ્રમણમૂત' છે જગન્નાથની સમભવતા સુધર્મા સ્વ મી કહે છે કે
હે ધ્રમણ આયુષ્મન ! જંબૂ ! આ પૂર્વોક્ત પ્રકારની પ્રતિમાઓનું પાલન કરનાર
આશ્વિન મહાસુ જેવો "યથા ભય છે" અહીં મૂત શબ્દનો અર્થ સમાન થાય છે
તેનો બાવાય આ પ્રમાણે છે-જ્યારે તે પૂર્વોક્ત સધળી પ્રતિમાઓનું પાલન કરવામાં
નિષ્ણાત થઈ ભય છે ત્યારે સાધુ જેવો જ બની ભય છે-પછી સહે તે વાળને અસા-
વરે મુદાવતો હોય કે પાતે જ તેનો હોળ કરતો હોય પહેરવેશ સાધુ જેવો હોય
છે ર્દિપસમિતિ આદિ પાંચ સમિતિઓનું પાલન કરતો એવો તે જ્યારે બિદ્યાને

योजनसहस्रे एकादशभिरपहृते नवयोजन सहस्रं लभ्यते । तस्मिन् मन्दरस्य पृथ्वीसमतलस्य दशसहस्रयोजनप्रमाणविष्कम्भतो निष्कासितेऽवशिष्यते एकयो-
जनसहस्रम् । एतत् एकयोजनसहस्रं मन्दरशिखरस्य विष्कम्भो भवतीति ॥सू.३०॥

मूलम्—इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरइ-
याणं इक्कारस पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता । पंचमीए पुढवीए अत्थे-
गइयाणं नेरइयाणं एक्कारस सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता । असुरकु-
माराणं देवाणं अत्थेगइयाणं एक्कारस पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता ।
सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु अत्थेगइयाणं देवाणं एक्कारस पलिओवमाइं
ठिई पण्णत्ता । लंतए कप्पे अत्थेगइयाणं देवाणं एक्कारस सागरो-
वमाइं ठिई पण्णत्ता । जे देवा वंभं सुवभं वंभावत्तं वंभप्पभं वंभ-
कंतं वंभवणं वंभलेसं वंभज्झयं वंभसिं वंभसिट्ठं वंभकूडं वंभुत्तर
वडिसगं विमाणं देवत्ताए उववण्णा, तेसि णं देवाणं एक्कारस साग-
रोवमाइं ठिई पण्णत्ता । ते णं देवा एक्कारसण्हं अद्धमासाणं आण-
मंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा । तेसि णं देवाणं
एक्कारसण्हं वाससहस्साणं आहारट्ठे समुप्पज्जइ । संतेगइया भवसि-
द्धिया जीवा जे एक्कारसहिं भवग्गहणेहिं सिज्झिस्संति, बुज्झिस्संति,
मुच्चिस्संति, परिनिव्वाइस्संति, सब्बदुक्खाणमंतं करिस्संति ॥सू.३१॥

भाग देने पर नव हजार लब्ध रहता है । उस नौ हजार लब्ध को,
मन्दर पर्वत के पृथ्वी समतलस्थित दस हजार योजन विष्कम्भ में से
घटाने पर एक हजार योजन अवशिष्ट रहता है । यह एक हजार योजन
मन्दर पर्वत के शिखर का विष्कम्भ समझना चाहिये ॥सू. ३०॥

नने, मन्दर पर्वतना पृथ्वीसमतल विस्तार दस हजार योजनमाथी आद करता ओठ
हजार योजन आधी रहे छे तो मन्दर पर्वतना शिखरने विष्कंभ-विस्तार ओठ
हजार योजन समञ्ज ॥ सू. ३०॥

‘अग्निभूति’ २, ‘वायुभूति’ ३, ‘विभक्ते’ ४, ‘सोऽहमे’ ५, ‘महिष’ ६, ‘मारिषपुत्रे’ ७, ‘अकपित’ ८, ‘अचलमाए’ ९, ‘मभजे’ १०, ‘पमास’ ११। मूलनक्षत्र मेकादशतारक प्रज्ञप्तम् । हेहिम गेविज्जयाणं देवाणं’ अचस्तनग्रैवेयकाणां देवानाम् एकादशोत्तर ग्रैवेयकविमानक्षतम्=एकादशविभक्तक्षतग्रैवेयकविमानानि सन्ति ‘चित्तमवस्थाप्य’ इत्याम्यातम् । मन्दरः मूल पर्वत परगितलमाभा मिश्रतले’ पर गितलमात् शिखरतले=परगितलमापेक्षया मिश्रप्रदेशे ‘एकारमभागपरिहीणे’ एका दशभागपरिहीणः एकादशभागन्यून उच्चत्वेन प्रज्ञप्तः । अत्रेद् बोध्यम्—मन्दरस्य पृथ्वीसमतले यावान् विष्कम्भस्ततो मन्दरोच्चताया एकादश भागमपकृष्य शिखरे तद्विष्कम्भो बोध्यः । अयं माव—मन्दरपर्वतस्य पृथ्वीसमतले दशसहस्रयोजनपरिमिता विष्कम्भः, उच्चता च मन्दरस्य नवनवतिसहस्रयोजनपरिमिता । नवनवति वायुभूति ३, न्यस्तस्वामि ४, सुधर्मांस्वामि ५, महित ६, मौर्यपुत्र ७, अकपित ८, अचलमाए ९, मेतार्य १० और प्रमास ११। मूलनक्षत्र ग्यारह ताराओं वाला है। अचस्तन ग्रैवेयक निवासी देवों के एक सौ ग्यारह (१११) ग्रैवेयक विमान हैं। इस प्रकार प्रसूने कहा है। सुमेरु पर्वत के परगितल की अपेक्षा शिखरप्रदेश में एकादशभाग न्यून है। यहाँ यह समझना चाहिये कि—मन्दर पर्वत का पृथ्वी के समतल भाग में जितना विष्कम्भ (स्पृलता) है, उसमें से मन्दर पर्वत की उच्चता का ग्यारहवाँ भाग निकाल लेने पर जो अवशिष्ट रहता है वह मन्दर पर्वत के शिखर का विष्कम्भ होता है। इसका सुलता इस प्रकार है—पृथ्वी के समतल में मन्दर (मेरु)पर्वत का विष्कम्भ दस हजार योजन का है और मन्दर पर्वत की ऊँचाई निम्नानवे हजार योजन है। निम्नानवे हजार को ग्यारह का

(१) उद्भूति, (२) अग्निभूति, (३) वायुभूति, (४) अचल, (५) सुधर्मा, (६) महित, (७) मौर्यपुत्र (८) अकपित (९) अचलमाए, (१०) मेतार्य अने (११) प्रमास भूज नक्षत्र अजिमाए ताशानेवाद्यु छे अचस्तन ग्रैवेयक निवासी देवानां के सो अजिमाए (१११) ग्रैवेयक विमान छे जेमे अचवाने कहु छे सुमेरु पर्वत विस्तारमां परगितलनी अपेक्षासे शिखर प्रदेशमां अजिमाए काज न्यून (जोछा) छे जेटले छे म०१ पर्वतनी तलेटीना काजमां जेटली पकोणाछे छे, तेभायी म०२ पर्वतनी जियाधने अजिमाएमा काज जाड करता जे आकी रहे ते मन्दरपर्वतना शिखरना विष्कम्भ छे तेनु स्पष्टीकरणका प्रभाजे छे—पृथ्वीना समतल पर मन्दर पर्वतना विष्कम्भ—विस्तार—इस ऊँचाई योजनना छे मन्दर पर्वतनी जियाध नचाहु ऊँचाई योजन ॥ तेना अजिमाएमा काज नव ऊँचाई योजन थाव छे ते नव ऊँचाई योजन

योजनसहस्रे एकादशभिरपहृते नवयोजन सहस्रं लभ्यते । तस्मिन् मन्दरस्य पृथ्वीसमतलस्य दशसहस्रयोजनप्रमाणविष्कम्भतो निष्कासितेऽवशिष्यते एकयो-
जनसहस्रम् । एतत् एकयोजनसहस्रं मन्दरशिखरस्य विष्कम्भो भवतीति ॥सू. ३०॥

मूलम्—इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरइ-
याणं इक्कारस पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता । पंचमीए पुढवीए अत्थे-
गइयाणं नेरइयाणं एक्कारस सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता । असुरकु-
माराणं देवाणं अत्थेगइयाणं एक्कारस पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता ।
सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु अत्थेगइयाणं देवाणं एक्कारस पलिओवमाइं
ठिई पण्णत्ता । लंतए कप्पे अत्थेगइयाणं देवाणं एक्कारस सागरो-
वमाइं ठिई पण्णत्ता । जे देवा वंभं सुवंभं वंभावत्तं वंभप्पभं वंभ-
कंतं वंभवणं वंभलेसं वंभज्झयं वंभसिं वंभसिट्ठं वंभकूडं वंभुत्तर
वडिसगं विमाणं देवत्ताए उववण्णा, तेसि णं देवाणं एक्कारस साग-
रोवमाइं ठिई पण्णत्ता । ते णं देवा एक्कारसण्हं अद्धमासाणं आण-
मंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा । तेसि णं देवाणं
एक्कारसण्हं वाससहस्साणं आहारट्ठे समुप्पज्जइ । संतेगइया भवसि-
द्धिया जीवा जे एक्कारसहिं भवग्गहणेहिं सिज्झिस्संति, बुज्झिस्संति,
मुच्चिस्संति, परिनिव्वाइस्संति, सब्बदुक्खाणमतं करिस्संति ॥सू. ३१॥

भाग देने पर नव हजार लब्ध रहता है । उस नौ हजार लब्ध को,
मन्दर पर्वत के पृथ्वी समतलस्थित दस हजार योजन विष्कम्भ में से
घटाने पर एक हजार योजन अवशिष्ट रहता है । यह एक हजार योजन
मन्दर पर्वत के शिखर का विष्कम्भ समझना चाहिये ॥सू. ३०॥

नने, मन्दर पर्वतना पृथ्वीसमतल विस्तार दस हजार योजनमाथी आद करतां ओक
हजार योजन आधी रहै छै तो मन्दर पर्वतना शिखरना विष्कम्भ-विस्तार ओक
हजार योजन समझ ॥ सू. ३०॥

ટીકા—‘इमीसे ण’ इत्यादि । अस्यां गच्छ रत्नप्रमायां पृथिव्यामस्त्येकेषां
 नैरपिष्ठाणामेकादश पर्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । पञ्चम्यां पृथिव्यामस्त्येकेषां
 नैरपिष्ठाणामेकादश सागरोपमाणि स्थितिः प्रज्ञप्ता । असुरकुमारानां दधानाम्
 स्त्येकेषामेकादशपर्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । सौधमैशानेषु कल्पेषु अस्मै
 केषां देवानामेकादशपर्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । लान्तके कल्पे अस्त्येकेषां
 दधानामेकादश सागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । ये देवा ब्रह्मसुब्रह्मब्रह्मावर्च
 ब्रह्ममर्मे ब्रह्मछान्ते ब्रह्मवर्णे ब्रह्मछेदये ब्रह्मवज्र ब्रह्मधृग् ब्रह्मसृष्टे ब्रह्मकूट
 ब्रह्मोत्तरावर्तसक विमानम्=एषु द्वादशविमानेषु देवदेन उत्पन्ना, तेषां स्रष्ट
 देवानाम् एकादश सागरोपमाणि स्थितिः प्रज्ञप्ता । ते स्रष्ट देवाः एकादश
 नामर्द्धमासानामानन्ति वा प्राणन्ति वा उर्ध्वैरसन्ति वा निःश्वसन्ति वा । तेषां

ટીકાર્થ—‘इमीसे ण’ इत्यादि । इत् रत्नप्रमा पृथिवी में कितनेक नारकियों
 ग्यारह की पर्यापमकी स्थितिकही गई है । पंचमी भूमि में कितनेक नारकियों
 की ग्यारह सागरोपम की स्थिति कही गई है । असुरकुमार देवों में
 कितनेक देवों की स्थिति ग्यारह पर्योपम की कही गई है । सौधर्म
 और इशान, इन दो कल्पों में कितनेक देवों की स्थिति ग्यारह पर्यो
 पम की होती है । लान्तककल्प में कितनेक देवों की स्थिति ग्यारह
 सागरोपम की कही गई है । जो देव, ब्रह्म१, सुब्रह्म२, ब्रह्मावर्च३, ब्रह्म
 मर्म४, ब्रह्मछान्त५, ब्रह्मवर्ण६, ब्रह्मछेदय७, ब्रह्मवज्र८, ब्रह्मधृग्९, ब्रह्म-
 सृष्ट१०, ब्रह्मकूट११, और ब्रह्मोत्तरावर्तसक१२, इन बारह विमानों में
 देवकी पर्याय से उत्पन्न होते हैं उन देवों की स्थिति ग्यारह सागरोपम
 की होती है । वे देव ग्यारह अर्धमासों के अनन्तर बाह्य आन्तरिक

ટીકાર્થ—‘इमीसे ण’ इत्यादि । आ रत्नप्रमा पृथ्वीમાં કેટલાક નારકીઓની અગિયાર
 પર્યાપમની સ્થિતિ કહી છે । પંચમી ભૂમિમાં કેટલાક નારકીઓની અગિયાર સાગરોપમની
 સ્થિતિ કહી છે । અસુરકુમાર દેવોમાં કેટલાક દેવોની સ્થિતિ અગિયાર પર્યાપમની કહી
 છે । સૌધર્મ અને ઇશાન કલ્પોમાં કેટલાક દેવોની સ્થિતિ અગિયાર પર્યાપમની કોય છે
 લાન્તક કલ્પમાં કેટલક દેવોની સ્થિતિ અગિયાર સાગરોપમની કહી છે । એ દેવો (૧) બ્રહ્મ,
 (૨) સુબ્રહ્મ, (૩) બ્રહ્માવર્ત (૪) બ્રહ્મમર્મ, (૫) બ્રહ્મછાન્ત, (૬) બ્રહ્મવર્ણ (૭) બ્રહ્મ
 છેદય, (૮) બ્રહ્મવજ્ર (૯) બ્રહ્મધૃગ્, (૧૦) બ્રહ્મસૃષ્ટ (૧૧) બ્રહ્મકૂટ અને (૧૨) બ્રહ્મો
 ત્તરાવર્તસક, એ આર વિમાનોમાં દેવોની પદ્ધતિ ઉત્પન્ન થાય છે, તે દેવોની સ્થિતિ
 અગિયાર સાગરોપમની કોય છે । તે દેવો સાઠપાંચ મહિને બાહ્ય તથા આન્તરિક

સ્વલુ દેવાનામેકાદશસહસ્રવર્ષાન્તે આહારસંજ્ઞા સમુત્પદ્યતે । સન્ત્યેકે ભવસિદ્ધિકા
જીવાં યે એકાદશભિર્ભવગ્રહણૈઃ સેત્સ્યન્તિ, મોત્સ્યન્તે, મોક્ષ્યન્તિ, પરિનિર્વા-
સ્યન્તિ, સર્વદુઃસ્વાનામન્તં કરિષ્યન્તિ ॥મ્ર. ૩૧॥

અથ દ્વાદશ સમવાયમાહ—

મૂલમ્—વારસ મિક્ષુપડિમાઓ પળ્લન્તાઓ, તં જહા—માસિઆ
મિક્ષુપડિમા, દોમાસિઆ મિક્ષુપડિમા, તિમાસિઆ મિક્ષુપડિમા,
ચઠમાસિયા મિક્ષુપડિમા, પંચમાસિયા મિક્ષુપડિમા, છમાસિયા
મિક્ષુપડિમા, સત્તમાસિયા મિક્ષુપડિમા, પઢમા સત્તરાઈંદિયા મિક્ષુ-
પડિમા, દોઢા સત્તરાઈંદિયા મિક્ષુપડિમા, અહોરાઈયા મિક્ષુપડિમા,
એગરાઈયા મિક્ષુપડિમા । દુવાલસવિહે સંભોગે પળ્લન્તે, તં જહા—
ઊવહીસુયમત્તપાળે અંજલીપગ્ગહેત્તિ ય । દાયળે ય નિકાયે ય અબ્બુ-
દ્દાળેઈ યાવરે ॥૧॥ કિઙ્કમ્મસ્સ ય કરળે, વેયાવચ્ચકરળેઈ ય । સમો-
સરળં સંનિસિજ્ઞા ય કહાણ ય પવંધળે ॥૨॥ દુવાલસાવત્તે કિઙ્કમ્મે
પળ્લન્તે, તં જહા—દુઓળંય જહાજોયં કિઙ્કમ્મં વારસાવયં । ચઠસિરં
તિગુત્તં ચ દુપવેસં એગનિક્કમ ॥૩॥ વિજયા ણં રાયહાણી દુવાલસ
જોયળસયસહસ્સાઈં આયામવિક્કલંભેળં પળ્લન્તા । રામે ણં વલલ્લદેવે

શ્વાસોચ્છ્વાસ ગ્રહણ ક હૈં । ડન દેવોં કો ગ્યારહ હજાર વર્ષ નિકલને
કે અનન્તર હી આહારસંજ્ઞા ઉત્પન્ન હોતી હૈ । ડનમેં કિતનેક ભવસિદ્ધિક
જીવ ગ્યારહ ભવ કરને કે ચાદ સિદ્ધિગતિ કો પાને વાલે હોંગે, આત્મિક
અનંત જ્ઞાનાદિક ગુણોં કે મોક્તા બનેંગે, સમસ્ત કર્મોં સે છૂટ જાવેંગે, સવ
પ્રકાર સે કૃતકૃત્ય હો જાવેંગે, ઓર સવ દુઃખોં કા અંત કરદેંગે॥મૂ. ૩૧॥

ન્ટરિક શ્વાસોચ્છ્વાસ ગ્રહણ કરે છે તે દેવોને અગિયાર હજાર વર્ષ બાદ આહાર
સંજ્ઞા ઉત્પન્ન થાય છે તેમા કેટલાક ભવસિદ્ધિક હોય છે, જે અગિયાર ભવ કર્યા
પછી સિદ્ધિ ગતિ પ્રાપ્ત કરશે, આત્મિક અનંત જ્ઞાનાદિક શુભોના લોકતા થશે, સમસ્ત
કર્મોથી છૂટી જશે, દરેક રીતે કૃતકૃત્ય થશે, અને સમસ્ત દુખોનો અન્ત
કરી નાખશે ॥મૂ. ૩૧॥

દુવાલસવવાસસયાદ્ સવ્વાઉય પાલિત્તા દેવત્ત ગય । મંદરસ્સ ણં
 પવ્વયસ્સ ચૂલિયા મૂલે દુવાલસ જોયણાદ્ વિક્ષસ્સમેણ પળ્લન્તા ।
 જન્નુ દીવસ્સ ણ દીવસ્સ વેદ્યા મૂલે દુવાલસ જોયણાદ્ વિક્ષસ્સમેણ
 પળ્લન્તા । સવ્વજહણિયા રાઈ દુવાલસ મુદ્ધુત્તિયા પળ્લન્તા । યવ
 દિવસો ધિ નાયવ્વો । સવ્વદ્ધ સિદ્ધસ્સ ણ મહાવિમાણસ્સ ઉવરિહ્ણાઓ
 ધુમિયગ્ગાઓ દુવાલસ જોયણાદ્ ઉદ્ધુ ઉપ્પદ્યા ઈસિપવ્ભાર નામ પુદ્ધવી
 પળ્લન્તા । ઈસિપવ્ભારાણ ણ પુદ્ધવીણ દુવાલસનામધેજ્ઞા પળ્લન્તા,
 ત જહા-ઈસિત્તિ વા ઈસિપવ્ભારાદ્ વા તણ્ણદ્ધવા તણ્ણયતરિત્તિ વા
 સિદ્ધિત્તિ વા સિદ્ધાલપ્પત્તિ વા મુત્તીતિ વા મુત્તાલેપ્પતિ વા ધમેત્તિ
 વા વમ્ભવદ્ધિસપ્પત્તિ વા લોગપરિપૂરણેતિ વા લોગમ્માચૂલિયાદ્ વા।સુ ૩.૨।

ટીકા—‘વાસ’ इत्यादि । शब्दश्च ‘मिक्षुपठिकाभो’ मिक्षुप्रतिमाः=
 मिक्षुणां साधूनां प्रतिमा अभिप्रायविशेषरूपा, मिक्षुप्रतिमा प्रज्ञाः, तद्यथा—मासिकी
 मिक्षुप्रतिमा=मासावधि मिक्षुप्रतिमा । तत्र प्रथमे मासे प्रतिदिनमन्नपानयोरे
 कैश्च दत्तिमिक्षुणा प्राणा । द्वितीया द्विमासिकी मिक्षुप्रतिमा । द्वितयस्मिन्

અવ શ્વકાર વારહ્યે સમવાય કો પ્રકટ કરતે છે—‘વાસ’ इत्यादि ।

ટીકાથ—વારહ મિષ્ટુપ્રતિમાઈં હોતી છે—જો કસ પ્રકાર છે—એક માસ
 કી પ્રથમ મિષ્ટુપ્રતિમા, દો માસની દ્વિતીય મિષ્ટુપ્રતિમા, ત્રીન માસ
 કી તોસરી મિષ્ટુપ્રતિમા, ચારમાસ કી ચૌથી મિષ્ટુપ્રતિમા હોતી છે ।
 એકમાસ તક કી જો પહિલી મિષ્ટુપ્રતિમા છે એસમેં પ્રથમ માસ મેં પ્રતિદિન
 મિષ્ટુ કો અન્નપાન કી એક એક વસ્તિ પ્રજ્ઞા કરની હોતી છે । દ્વિતીય

કે સુત્રકાર બારણુ સમવાય પ્રકટ કરે છે—‘વાસ’ इत्यादि ।

ટીકાથ—બાર મિષ્ટુ પ્રતિમાઓ હોય છે જે આ પ્રમાણે છે—પ્રથમ મિષ્ટુપ્રતિમા
 એક માસની, બીજી મિષ્ટુપ્રતિમા બે માસની ત્રીજી મિષ્ટુપ્રતિમા ત્રણ માસની
 અને ચોથી મિષ્ટુપ્રતિમા ચાર માસની હોય છે એક માસની જે મિષ્ટુપ્રતિમા છે
 છે તેનું સેવન કરનાર મિષ્ટુ કો એક મહત્ત્વ સુધી હરદોષ અન્નપાનની એક એક રીતિ
 (પાસા એક વાર અર્ધિત માથ ત્યારે એક રીતિ અર્ધ અણુમ છે) લેવાની હોય છે બીજી

मासे भिक्षु द्वे दत्ती अन्नस्य द्वे पानस्य च गृह्णीयात् । तृतीयस्मिन् मासे त्रिमासिकी भिक्षुप्रतिमा तृतीया । चतुर्थे मासे चतुर्मासिकी भिक्षुप्रतिमा चतुर्थी । पञ्चमे मासे पञ्चमासिकी भिक्षुप्रतिमा पञ्चमी । षष्ठे मासे षण्मासिकी भिक्षुप्रतिमा षष्ठी । सप्तमे मासे सप्तमासिकी भिक्षुप्रतिमा सप्तमी । आसु क्रमशः अन्नपानयोरेकैक दत्ति वृद्ध्या सप्तमे मासे सप्तदत्ती आहारस्य सप्तपानस्य च भिक्षु गृह्णीयादिति भावः । अनन्तरम् अष्टमे मासे प्रथम सप्तके प्रथमा—‘सत्तराङ्गिदिया’ सप्तरात्रिन्दिवा—सप्तरात्रिन्दिवानि=अहोरात्राणि यस्यां सा सप्तरात्रिन्दिवा भिक्षु

भिक्षु प्रतिमा में कि जो दो मास तक आराधित की जाती है अन्न की दो दत्ति और पान की दो दत्ति ली जाती हैं । तृतीयभिक्षुप्रतिमा में कि जिसकी आराधना का काल तीन मासका है अन्नपान की तीन-तीन दत्ति ली जाती है । इस तरह से पाँचमास की भिक्षुप्रतिमा में, छह मासकी भिक्षुप्रतिमा में और सातमास की भिक्षुप्रतिमा में क्रमशः अन्न और पान की ५, ६, और सातमास तक ५, दत्तियां, ६ छह दत्तियां और सात दत्तियां ग्रहण की जाती हैं । इस तरह इन सात भिक्षु प्रतिमाओं में क्रमशः अन्नपान की एक-एक से लेकर दत्तियां वर्धित होती हुई सात मास तक की अवधिवाली सातवीं भिक्षुप्रतिमा में सात सात अन्नपान की दत्तियां ग्रहण की जाती है । इस के बाद आठवें महिने में प्रथम सप्तक (सप्ताह) में प्रथम भिक्षु प्रतिमा—अर्थात् आठवीं प्रतिमा—पाली जाती है । इसके आराधन करने का समय सात दिन रात का है । इस प्रतिमा का आराधक चतुर्थभक्त (चोविहार) की तपस्या करता है । गाँव से

भिक्षुप्रतिमा के जेनुं आराधन जे मास सुधी करवानु होय छे, तेमां अन्ननी जे दत्ति अने पान (पेय पदार्थ) नी जे दत्ति हररोज अछु कराय छे त्रीण भिक्षुप्रतिमानो आराधन क्षण त्रय मासने छे तेमां हररोज अन्नपाननी त्रय त्रय दत्ति देवामा आवे छे जे ज प्रमाणे यर मासनी भिक्षुप्रतिमाभा, पाय मासनी भिक्षुप्रतिमाभा, छ मासनी भिक्षुप्रतिमाभा अने सात मासनी भिक्षुप्रतिमाभा अन्न पाननी अनुक्रमे यर, प य, छ अने सात मास सुधी, याग, पाय छ अने सात दत्तियो अछु करवामा आवे छे आ रीते जे सात भिक्षुप्रतिमाओमां अनुक्रमे अन्नपाननी ओकथी लघने दत्तियो वधती वधती सात मासनी अवधिवाणी सातमी भिक्षुप्रतिमाभा अन्नपाननी सात सात दत्तियो अछु कराय छे तयार बाद आठमा मासना पड़ेला अठवाडियामां प्रथम भिक्षुप्रतिमा ओटवे के आठमी प्रतिमानु आराधन कराय छे तेनी आराधनाने समय सात दिन-रातने छे ते प्रतिमानो आराधक चतुर्थभक्तनी (चोविहार) तपस्या करे छे, गाँवनी पड़ार रहे छे, उत्तान

प्रतिमा अष्टमी । अस्यां चतुर्थमर्कं तप, ग्रामाद् बहिरपस्याम्, उद्यानादिनाऽऽ-
सनेन च समुपवेशनम् । द्वितीया सप्तरात्रिन्दिवा, मिश्रप्रतिमा जयमी, अस्या
मुत्कृष्टकाषासनेनानस्नानमेवावदेव विज्ञेय । तृतीया सप्तरात्रिन्दिवा मिश्रप्रतिमा
दशमी, अस्यां वीरासनादिनाऽवस्नानम् । अहोरात्रिकी-एकाहोरात्रप्रमाणा
मिश्रप्रतिमा एकादशी एषा षष्ठमर्केन संपद्यते । 'एगरात्रा' एकरात्रिकी-रात्रि-
प्रमाणा मिश्रप्रतिमा द्वादशी । अस्यां चाष्टममर्कपर्यन्तरात्रौ मलम्बमुनेन सह

बाहिर रहता है । उद्यान आदि आसन से बैठता है । दूसरी प्रतिमा-अर्घ्योर्ध्व
नवमी मिश्र प्रतिमा के आराधन करने का समय द्वितीय सप्ताह है ।
इसमें आराधक उत्कृष्टक आदि आसन से बैठता है । पाकी सब विधि
आठवीं प्रतिमा जैसी ही है । तीसरी मिश्रप्रतिमा अर्घ्योर्ध्व दसवीं प्रतिमा
के आराधन करने का काल आठवें महीने का तृतीय सप्ताह है । इस
प्रतिमा की आराधना सात दिन रात तक आठवें महीने के तीसरे
सप्ताह में की जाती है । इसका आराधक वीरासन आदि आसन से बैठता
है । इस तरह इकीस दिन रात में आठवीं नौवीं और दशवीं प्रतिमाओं
का आराधन समाप्त हो जाता है । धार्गसर्वे दिन में ग्यारहवीं मिश्रप्रतिमा
आराधित होती है । इसका काल एक दिन रात का है । उसकी आराधना
में षष्ठमर्क की उपस्था की जाती है । बारहवीं प्रतिमा का काल एक दिन
रात का है । इसमें अष्टममर्क की अतिम रात्रि में (स्नानान्तरं जाकर
एक पुद्गलपर द्रष्टि रखता हुआ) दोनों हाथ लटका कर

आदि आसने भिसे ७ नील प्रतिमा-ज्येष्ठ ६ नवमी मिश्र प्रतिमानि
आराधनोऽत्राण आठमा आसना नील सप्ताहना ७ तेनी आराधना भाटे आश
षष्ठ उत्कृष्टक (इका पत्रे भिषु ते) आदि आसने भिसे ७ अने जासीनी जभी विधि
आठमी प्रतिमा जेवी ७-७ दशमी-मिश्रप्रतिमानो आराधन ७ण आठमा आसना
नील सप्ताह ७ आठमा आसना नील सप्ताहभा आ प्रतिमानो आराधना सात
दिनरात कषा ७ तेना आराधक वीरासन आदि आसने भिसे ७ आरीते ज्येष्ठस
दिनरातभा आठमी, नवमी अने दशमी प्रतिमाज्येष्ठ आराधन समाप्त याव ७
आसीसमे विर्वसे अजिभारभी मिश्रप्रतिमानु आराधन याव ७ तेना आराधन ७ण
ज्येष्ठ दिनरातना ७ तेनी आराधनामा षष्ठमर्कनी (जि उत्पवास) उपस्था करमा
आवे ७ नवमी प्रतिमानो आराधन ७ण ज्येष्ठ रातना ७ तेना अष्टमर्कनी-वज्र
उपस्था (आधमर्क) ज्येष्ठ राते अने ज्येष्ठ लटका राशीने ज्येष्ठ राते पडे ७)

પાટેનેપદવનતકાયેનાડનિમેષનયનેન ચ મિશ્રુણા સ્થીયતે । એતદ્વિપચે વિશેષ-
જિજ્ઞાસુભિર્દેશાશ્રુતસ્કન્ધસ્ય સપ્તમેડધ્યયને મત્કૃતમુનિર્હર્ષિણી ટીકાયા દ્રષ્ટવ્યમ્ ।
'દુશ્ચાલસનિદે' દ્વાદશવિધઃ સંભોગઃ, ભોજનં ભોગઃ, સમ્યક્ એકીભૂય ભોગઃ=
સંભોગઃ સમાનસામાચારિકસાધુનામેકમણ્ડલ્યાં ભોજનાદિવ્યવહાર ઇત્યર્થઃ,
પ્રણમઃ, તદ્વયા—'ઉચ્ચહીમુયમ્ભક્તપાણે' ઉપધિશ્રુતમ્ભક્તપાનમ્=ઉપધિશ્ચ શ્રુતં ચ મ્ભક્તપાન
ચ ઉપધિશ્રુતમ્ભક્તપાનમ્ સંભોગત્રયમ્ । તત્ર ઉપધિઃ પ્રથમઃ સંભોગઃ । સ ચ ઉપ-
ધિર્વસ્ત્રપાત્રાદિઃ, તમુત્પાદનૈષણાદોષરહિતં વિશુદ્ધં સાંભોગિકેન સહ ગૃહ્ણન્ સાંભો-
ગિકઃ સાધુઃ શુદ્ધઃ, ઉત્પાદનૈષણાદોષસહિતં ગૃહ્ણન્ સાધુરશુદ્ધઃ । એતાદ્દશદોષ-
યુક્તમુપધિં વારત્રયં ગૃહીત્વા વિહિતપ્રાયશ્ચિત્તઃ સંભોગાર્હઃ । ચતુર્થે વારે સદોષમુપધિ

ગ્રહા રહના પડતા છે। દોનોં પૈર આપસ મેં જુડે હુપ રહતે હૈં। શરીર
કુછર બુકા સ્વા રહતા છે। નેત્ર અપલક રહતે હૈં। ઇસ વિષય મેં વિશેષ
જિજ્ઞાસુઓં કે લિયે દશાશ્રુતસ્કંધ કે સપ્તમ અધ્યયન મેં હમારે દ્વારા રચિત
મુનિર્હર્ષિણી નામક ટીકા ટેગ્વની ચાહિયે। વારહ પ્રકાર કા સંભોગ હોતા
છે। સમાન સમાચારી વાલે સાધુઓં કા ણક મંડલી મેં જો આહારાદિવ્ય-
વહાર હોતા છે ઉસકા નામ સંભોગ છે। સંભોગ કે ચારહ પ્રકાર યે હૈં—
ઉપધિ-વસ્ત્ર, પાત્ર આદિ ૧, શ્રુત ૨, મ્ભક્તપાન ૩, અંજલિપ્રગ્રહ ૪, દાન ૫, નિકાચ ૬,
અભ્યુત્થાન ૭, કૃતિકર્મકરણ ૮, વૈયાટૃત્યકરણ ૯, સમવસરણ ૧૦, સંનિષધા ૧૧,
ઔર કથાપ્રબન્ધન ૧૨ । ૧ ઉપધિસંભોગ—ઉત્પાદન એષણા દોષ સે રહિત વસ્ત્ર
પાત્ર આદિ વિશુદ્ધ ઉપધિ કો સાંભોગિક સાધુ કે સાથ ગ્રહણ કરતા હુઆ સાંભો-
ગિક સાધુ શુદ્ધ હોતા છે ઔર ઉત્પાદન એષણા દોષ સેસહિત ઉપધિકો ગ્રહણ કરતા
હુઆ સાધુ અશુદ્ધ હોતા છે। ઇસ પ્રકાર દોષ યુક્ત ઉપધિ કો ત્રીન વાર

ગાનને પગ એક બીજા સાથે જોડાયેલા રહે છે, શરીર થોડું ઝુકતું રહે અને નેત્ર
અપલક રહે છે આ વિષયમા વધુ જાણવાની ઇચ્છા વાળા જિજ્ઞાસુઓએ દશાશ્રુત
સ્કંધની દસમા અધ્યયનની અંતે લખેલી મુનિર્હર્ષિણી નામની ટીકા જોઈ જવી.

બાર પ્રકારના સંભોગ હોય છે સમાન સમાચારી સાધુઓને એક મંડળીમા
જે આહારાદિ વ્યવહાર થાય છે તેનું નામ સંભોગ છે સંભોગના બાર પ્રકાર છે તે
આ પ્રમાણે છે—(૧) ઉપધિ-વસ્ત્ર, પાત્ર આદિ (૨) શ્રુત, (૩) ભક્તપાન, (૪)
અંજલિપ્રગ્રહ, (૫) દાન, (૬) નિકાચ, (૭) અભ્યુત્થાન, (૮) કૃતિકર્મકરણ, (૯)
વૈયાટૃત્યકરણ, (૧૦) સમવસરણ, (૧૧) સંનિષધા અને (૧૨) કથા પ્રબન્ધન.

ઉપધિસંભોગ—ઉત્પાદન એષણા દોષથી રહિત વસ્ત્ર પાત્ર આદિ વિશુદ્ધ
ઉપધિને સંભોગિક સાધુની સાથે ગ્રહણ કરતો સંભોગિક સાધુ શુદ્ધ હોય છે, અને
ઉત્પાદન એષણા દોષથી યુક્ત ઉપધિને ગ્રહણ કરતો અશુદ્ધ હોય છે આ પ્રમાણે

ग्रहण विहितप्रायश्चित्ताऽपि विसमोग्य । तथा यदि सामोगिक साधु विस
मागिकन पार्श्वस्थादिना सह म्यित्वा शुद्धमशुद्ध सापत्तिं गृहीयात्, अनन्तरम
न्यप्रेरणया प्रायश्चित्तं कुर्यात्, स साधु वारभयमयं कृष्यन् समोगार्हः । शतुर्थवारं
तु असमोग्य एव । एवमुपधेः परिक्रमं पारमोगं च कुर्वन् साधु समोग्याऽसं
भाग्यमवभवति । इति प्रथमं समाग १ । 'सुय' श्रुतम्—श्रुतसमोगो द्वितीय ।
अध्ययनार्थमागतं समागिकमन्यसमागिकं वा साधु सविधिं वाचनां पृच्छनां
कृत्वा शुद्धः । यदि अविधिना समागच्छेत्, पार्श्वस्थादिका वा भवेत्, तं वाचना
ग्रहणं परकं प्रायश्चित्तं करने वाला साधु समोग के योग्य माना जाता
है । परन्तु वही साधु यदि इस प्रकार की उपधि को चौथी बार ग्रहण कर
लेता है और प्रायश्चित्त भी ले लेता है तो भी वह समोग के योग्य नहीं होता
है । म.ग.—परि सामोगिक साधु विसामोगिक पार्श्वस्थ आदि साधु के
साथ रहकर शुद्ध अथवा अशुद्ध उपधि को ले लेता है और इसके बाद
किसी अन्य की प्रेरणा से वह प्रायश्चित्त लेता है इस तरह वह साधु
तीन बार ऐसा करता है और तीन बार प्रायश्चित्त लेकर शुद्ध हो जाता
है तो वह समोगार्ह है । परन्तु यदि वह चौथी बार ऐसा करता है फिर
प्रायश्चित्त भी ले लेता है तो भी वह असमोग्य ही है । इस प्रकार उपधि
के परिक्रम और परिमोग को करता हुआ साधु समोग्य और असमोग्य
होता है । श्रुतसमोग—अध्ययन के लिये आये हुए समोगिक अथवा
अन्य समोगिक साधु से सविधि वाचना प्रच्छना करने वाला साधु शुद्ध
है । अथिपि से आये हुए साधु सअथवा पार्श्वस्थ साधु से वाचना प्रच्छना

होय युक्त उपधिने त्रय बार अक्षय करीने प्रयश्चित्त करना सधु समोगने ये अ
ज्याय छे पञ्च को अ ज साधु ते प्रथमनी उपधि ले बोधी बार अक्षय करे अन
प्रायश्चित्त पञ्च करी ले तो पञ्च ते समोगने योग्य माने । तथा ले स से
जिह माधु विसांभोजित पार्श्वस्थ—(शिशिलायरी)—अ हि सधुनी अ ये करीने शुद्ध
अथवा अशुद्ध उपधि अक्षय करे अने त्यर जाह डाल जीवनी प्रेक्षाही ले ते
प्रयश्चित्त छत्र छे—आ प्रभावे त्रय बार ते साधु जेनु करे अने प्रायश्चित्त छत्रने
गुह बाय त ते साधु समोगने पात्र जयाय छे पञ्च ले ते बोधी बार पञ्च जेनु
करे अने पछा तेनु प्रायश्चित्त पञ्च ले तो ते असले अ ज जयाय छे आ प्रभावे
उपधिना परिक्रम अने परिमोग करतो साधु असंभोज्य होय ७ (१)

२) श्रुतसमाग—अध्ययनने आये जावेत संभोजित अथवा अ व संभोजी
साधु आये विधि पूर्वक वाचना प्रच्छना करना साधु शुद्ध है । अविधिही जावेत

प्रच्छनादिकं कुर्वन् साधुरशुद्धः । एवं वारत्रयमविधिना वाचनां पृच्छनां कुर्वन्
साधुः प्रायश्चित्तविधिना संभोग्यः । चतुर्यवेलाया तथा कुर्वन् विहितप्रायश्चित्तोऽपि
असंभोग्य एव । इति द्वितीयः संभोगः २। 'भक्तपाणे' भक्तपानम् भक्तपानसंभोगः
तृतीयः । एतद् विषये सर्वमुपधिवद्विज्ञेयम् । केवलं परिकर्मस्थाने दानं परिभो-
गस्थाने च आदानमिति वाच्यम् । इति तृतीयः संभोगः ३। 'अंजलिप्रणमहे
ति य' अञ्जलिप्रणमम् इति च, इति शब्दः स्वरूप प्रदर्शनार्थः, च ग्रहणं समु-
च्चयार्थः । अञ्जलिप्रणममिति चतुर्थः संभोगः । अञ्जलिग्रहणशब्देन वन्दनारूपो-
ऽर्थोऽवसेयः । तथाहि—संभोगिकमन्यसंभोगिकं वा साधुं वन्देत्, साञ्जलिप्रणमेत्,
आलोचनासूत्रार्थनिमित्तं निषद्या कुर्वीत, एवं कुर्वन् साधुः संभोग्यः । परन्तु म

करने वाला साधु अशुद्ध है । इस तरह तीन बार अविधि पूर्वक वाचना
प्रच्छना करने से अशुद्ध बना हुआ प्रायश्चित्त विधि से संभोग्य हो जाता
है । परन्तु यदि वही साधु चौथी बार भी ऐसा करता है तो प्रायश्चित्त
लेने पर भी वह अशुद्ध माना जाता है और इस तरह वह असंभोग्य ही
रहता है २। भक्तपान संभोग ३—इसके विषय में उपधि की तरह ही सब
विधि जाननी चाहिये । परन्तु यहां परिकर्म के स्थान में दान, और परि-
भोग के स्थान में आदान शब्द का प्रयोग करना चाहिये ३। अंजलिप्रणम ४—
यह संभोग का चतुर्थ भेद है, यहां अंजलि शब्द वन्दनारूप अर्थ को प्रकट
करता है, साधु सांभोगिक अथवा अन्यसांभोगिक साधु मिलने पर उन्हें
वन्दना करता है, साञ्जलि नमस्कार करता है और आलोचना तथा सूत्रार्थ
निमित्त निषद्या करता है, अर्थात् बैठता है, इस प्रकार करने वाला साधु
संभोग्य माना जाता है, परन्तु यदि वह साधु पासत्थ आदि साधुओं

साधु साथे अथवा पार्श्वस्थ साधु साथे वाचना प्रच्छना करना साधु अशुद्ध छ
आ रीते त्रय वपत्त अविधि पूर्वक वाचना प्रच्छना करवाथी अशुद्ध थयेल साधु
प्रायश्चित्त विधिथी संभोग्य थध जय छ पणु ये ज साधु थोथी वार पणु थोपु'
करे तो प्रायश्चित्त देवा छता पणु तेने अशुद्ध मानवामां आवे छ, अने आ रीते
ते असंभोग्य ज न्हे छ (२)

(३) भक्तपानसंभोग—तेमा उपधि प्रमाणे ज पधी विधि छ, पणु अही
परिकर्मनी जग्याये दान अने परिभोगने स्थाने, आदान शब्दने प्रयोग करवे
जेधये (३)

(४) अंजलिप्रणम—आ संभोगने थोथो भेद छ अही अजलि शब्दने
अर्थ वन्दना थाय छ साधु सांभोगिक अथवा अन्य सांभोगिक साधु साथे मुलाकात
थता तेमने वन्दना करे छ, अजलिप्रणम नमस्कार करे छ, अने आलोचना तथा सूत्रार्थ
निमित्त निषद्या करे छ ओटवे के जेसे छ आ प्रमाणे करना साधुने संभोग्य मान-

ગ્રહન ત્રિગ્વિપાયધિક્તાઽપિ ત્રિસંમોગ્ય । તથા यदि सांमोगिकः साधु । यस
भागिकेन पार्श्वम्यादिना सह स्थित्वा शुद्धमशुद्ध उपधिं गृहीयात्, अनन्तरम
न्यपेक्षणा प्रायश्चित्तं कुर्यात्, स साधुः । वारप्रत्ययमत्र कुर्वन् संमोगार्हः । चतुर्थवार
तु असंमोग्य एव । एवमुपश्रुते परिक्रमं पारमोगं च कुर्वन् साधुः संमोग्याऽसं
भाग्यमवमति । इति प्रथमं संमोगः १ । 'सुय' भुतम-भुतसंमोगो द्वितीय ।
अध्ययनार्थमागतं संमोगिकमन्यसंमोगिकं वा साधुः सविधिं वाचनां पृच्छन्
कुर्वन् शुद्धः । यदि अविधिना समागच्छेत्, पार्श्वस्थादिका वा भवन्, तं वाचना

ग्रहणं કરકં પ્રાયશ્ચિત્ત કરને ઘાલા સાધુ સમોગ કે યોગ્ય માંના જાતા
હે । પરન્તુ વઢી સાધુ યદિ હસ પ્રકાર જી ઉપધિ કો જોધી વાર ગ્રહણ કર
લેના હે ઓર પ્રાયશ્ચિત્ત મી લે છેતા હે તો મી વહ સમોગ કે યોગ્ય નહીં હોતા
હ । ત્રણ-પદિ સાંમોગિક સાધુ ચિસાંમોગિક પાર્શ્વસ્થ આદિ સાધુ કે
સાથ રહકર શુદ્ધ અથવા અશુદ્ધ ઉપધિ કો લે છેતા હે ઓર હમકે વાદ
કિસી અન્ય કી પ્રેરણા સે વહ પ્રાયશ્ચિત્ત લેના હે હમ તરહ વહ સાધુ
ત્રીન વાર પ્રેમા કરતા હે ઓર ત્રીન વાર પ્રાયશ્ચિત્ત લેકર શુદ્ધ હો જાતા
હે તો વહ સમોગાર્હ હે । પરન્તુ યદિ વહ જોધી વાર પ્રેમા કરતા હે ફિર
પ્રાયશ્ચિત્ત મી લે લેના હે તા મી વહ અસંમોગ્ય હી હે । હસ પ્રકાર ઉપધિ
કે પરિક્રમ ઓર પરિમોગ કા કરતા હુઆ સાધુ સંમોગ્ય ઓર અસંમોગ્ય
હોતા હે । ભુતસંમોગ-અધ્યયન કે લિયે આયે હુગ સંમોગિક અથવા
અન્ય સંમોગિક સાધુ સે સવિધિ વાચના પ્રચ્છના કરને ઘાલા સાધુ શુદ્ધ
હ । અવિધિ સે આયે હુગ સાધુ સ અથવા પાર્શ્વસ્થ સાધુ સે વાચના પ્રચ્છનાં

દોષ મુકત હરધિને ત્રણ વાર ત્રકલ કરીને પ્રાયશ્ચિત્ત કરનાર સાધુ સંમોગ્યને મે અ
ગણાય ૩ । પણ ને મે જ સાધુ તે પ્રધરની ઉપધિ મે જોધી વાર ત્રકલ કરે અને
પ્રાયશ્ચિત્ત પણ કરી લે તો પણ તે સંમોગ્યને યોગ્ય માંના નથી તથા ને સંમો
ગિક સાધુ વિસાંમોગિક પાર્શ્વસ્થ-(શિથિલાસરી)-અદિ સાધુની સથે શકીને શુદ્ધ
અથવા અશુદ્ધ ઉપધિ ત્રકલ કરે અને ત્યાર બાદ કાંઈ બીજી નથી પ્રેમજોધી મે તે
પ્રાયશ્ચિત્ત લઇ લે-અ પ્રમાણે ત્રણ વાર તે સાધુ જોગુ કરે અને પ્રાયશ્ચિત્ત લઇને
શુદ્ધ થાય તે તે સાધુ સંમોગ્યને પાત્ર ગણાય છે પણ જો તે જોધી વાર પણ જોગુ
કરે અને પછી તેજ પ્રાયશ્ચિત્ત પણ લે તો તે અસંમોગ્ય જ ગણાય છે અ પ્રમાણે
ઉપધિના પરિક્રમ અને પરિમોગ કરતા સાધુ અસંમોગ્ય હોય જ (૧)

૨) ભૂતસંમોગ-અધ્યયનને માટે આવેલ સંમોગિક અથવા અન્ય સંમોગી
સાધુ માથે વિધિ પૂર્વક વાચના પ્રચ્છના કરનાર સાધુ શુદ્ધ છે અવધિથી આવેલ

प्रच्छनादिकं कुर्वन् साधुरशुद्धः । एवं वारत्रयमविधिना वाचना पृच्छना कुर्वन् साधुः प्रायश्चित्तविधिना संभोग्यः । चतुर्थवेत्याया तथा कुर्वन् विहितप्रायश्चित्तोऽपि असंभोग्य एव । इति द्वितीयः संभोगः २। 'भक्तपाणे' भक्तपानम् भक्तपानसंभोगः तृतीयः । एतद् विषये सर्वमुपधिवद्विज्ञेयम् । केवलं परिकर्मस्थाने दानं परिभोगस्थाने च आदानमिति वाच्यम् । इति तृतीयः संभोगः ३। 'अंजलिप्रणमहेति य' अञ्जलिप्रग्रहणम् इति च, इति शब्दः स्वरूप प्रदर्शनार्थः, च ग्रहणं समुच्चयार्थः । अञ्जलिप्रग्रहणमिति चतुर्थः संभोगः । अञ्जलिग्रहणशब्देन वन्दनारूपोऽर्थोऽवसेयः । तथाहि—संभोगिकमन्यसंभोगिकं वा साधुं वन्देत्, साञ्जलिप्रणमेत्, आलोचनासूत्रार्थनिमित्तं निषद्या कुर्वीत, एवं कुर्वन् साधुः संभोग्यः । परन्तु स

करने वाला साधु अशुद्ध है । इस तरह तीन बार अविधि पूर्वक वाचना प्रच्छना करने से अशुद्ध बना हुआ प्रायश्चित्त विधि से संभोग्य हो जाता है । परन्तु यदि वही साधु चौथी बार भी ऐसा करता है तो प्रायश्चित्त लेने पर भी वह अशुद्ध माना जाता है और इस तरह वह असंभोग्य ही रहता है २। भक्तपान संभोग ३—इसके विषय में उपधि की तरह ही सब विधि जाननी चाहिये । परन्तु यहां परिकर्म के स्थान में दान, और परिभोग के स्थान में आदान शब्द का प्रयोग करना चाहिये ३। अंजलिप्रग्रह ४—यह संभोग का चतुर्थ भेद है, यहां अंजलि शब्द वन्दनारूप अर्थ को प्रकट करता है, साधु सांभोगिक अथवा अन्यसांभोगिक साधु मिलने पर उन्हें वन्दना करता है, साञ्जलि नमस्कार करना है और आलोचना तथा सूत्रार्थ निमित्त निषद्या करता है, अर्थात् बैठता है, इस प्रकार करने वाला साधु संभोग्य माना जाता है, परन्तु यदि वह साधु पासत्य आदि साधुओं

साधु साथे अथवा पार्श्वस्थ साधु साथे वाचना प्रच्छना करना साधु अशुद्ध छे आ रीते त्रय वभत अविधि पूर्वक वाचना प्रच्छना करवाधी अशुद्ध थयेत साधु प्रायश्चित्त विधिथी संभोग्य थध नय छे पणु ये न साधु योधी वार पणु येवुं करे ते प्रायश्चित्त देवा छता पणु तेने अशुद्ध मानवामा आवे छे, अने आ रीते ते असंभोग्य न छे छे (२)

(३) भक्तपानसंभोग—तेमा उपधि प्रमाणे न नधी विधि छे, पणु अही परिकर्मनी नय्याये दान अने परिभोगने स्थाने, आदान शब्दने प्रयोग करवा जेधये (३)

(४) अंजलिप्रग्रह—आ सलोगने योथो भेद छे अही अंजलि शब्दने अर्थ वन्दना थाय छे साधु सांभोगिक अथवा अन्य सांभोगिक साधु साथे मुलाकात थता तेमने वन्दना करे छे, अंजलिप्रणम नमस्कार करे छे, अने आलोचना तथा सूत्रार्थ निमित्त निषद्या करे छे जेठवे के जेठे छे आ प्रमाणे करना साधुने संभोग्य मान-

સાધુર્યદિ પાર્શ્વસ્થાશીના કૃતે એવાચરેત્, તદા પૂર્વક્ષેષ સમાગ્યાડસમોગ્યમ્મિતિ માત્ર । इति चतुर्थसंभोगः । 'दायणे य' दानं च दानसंभोगः पञ्चमः । दानं स्वशिष्यस्य अन्यस्मै समर्पणम् । सम्भोगिकं सम्भागिकायाऽन्यसंभोगिकाय वा शिष्यगणं प्रयच्छन् शुद्ध । परन्तु निष्कारणेन संभागिकाया वा विसंभोगिकाया वा पાર્શ્વસ્થાયા વા यदि शिष्यगणं प्रयच्छत् तदा पूर्ववत् प्रायश्चित्तेन चारभय संभोग्य , चतुर्थवारमसमोગ્ય । इति पञ्चमः संभोगः । 'निकाप य' निकाचश्च, निकाचो निमन्त्रणम् । તથ શર્યોપધ્યાહારે શિષ્યગણપ્રદાનેન સ્વાધ્યાયન ચ

ક સાથ તેના ક્યવહાર કરતા હૈ તો વહ અશુદ્ધ હો જાતા હૈ ઓર પ્રાયશ્ચિત્ત લેકર શુદ્ધ હો જાતા હૈ । इस तरह तीन बार करने पर प्रायश्चित्त विधि से उसकी शुद्धि हो जाती है । परन्तु चौथी बार इस प्रकार के व्यवहार से वह प्रायश्चित्त लेने पर भी शुद्ध नहीं हो सकता है । अतः वह असंभोग्य १४ । दानसंभोग यह संभोग का पाववा भेद है, दान का तात्पर्य यहा शिष्य का प्रदान करना है । समोगिक साधु समोगिक के लिये, अथवा अन्यसंभोगिक के लिये अपने शिष्य का वता है, स्थिति में वह शुद्ध है, परन्तु यदि वह निष्कारण समोगिक अथवा विसंभोगिक के लिये या किसी पार्ष्वस्थ आदि के लिये अपने शिष्य को प्रदान करवा है तो वह अशुद्ध है, इस प्रकार तीन बार करता हुआ भी वह प्रायश्चित्त से शुद्ध हो जाता है । परन्तु चौथी बार जब वह इस प्रकार करता है तब प्रायश्चित्त लेने पर भी वह शुद्ध नहीं हो सकता है । इसलिये वह असंभोग्य माना जाता है । निकाचसंभोग—शय्या, उपवि, आहार, शिष्य प्रदान

વાર્મા અવે છે પણ જો તે સાધુ પાવવા શિષ્યાશ્રમી આદિ સાધુઓના આશ્રે જો પ્રાર્થના વ્યવહાર કરે તો તે અશુદ્ધ થઈ જાય છે અને પ્રાયશ્ચિત્ત લેવાથી તે શુદ્ધ થાય ॥ આ પ્રમાણે ત્રણ વારે ત્યા કૃષી પ્રાયશ્ચિત્ત વિધિથી તેનું શુદ્ધિ થઈ શકે છે પણ એથી વાર જ પ્રાર્થના વ્યવહાર કરે તો પ્રાયશ્ચિત્ત લેવા છતાં પણ તેની શુદ્ધિ થઈ શકતી નથી તેથી એવો સાધુ અસંભોગ્ય છે (૫) દાનસંભોગ, તે પાવવા ભેદ છે જ્યાં દાન એટલે શિષ્યનું પ્રદાન એવો અથ સમજવાનો છે સંભોગિક સાધુ સંભોગિકને માટે અથવા અન્ય સંભોગિકને માટે પોતાનો શિષ્ય અર્પણ કરે છે, આ રિતિનિર્મા તે શુદ્ધ છે પણ જો તે નિઃકારણ સંભોગિક અથવા વિસંભોગિકને માટે કે કોઈ પાર્શ્વસ્થ આદિ ને માટે પોતાના શિષ્યો આપે છે તો તે અશુદ્ધ નવાય છે આ પ્રમાણે ત્રણ વખત કરે ત્યા સુધી તે પ્રાયશ્ચિત્તથી શુદ્ધ થઈ શકે છે પણ જો તે, ચોથી વાર એવું કરે તો પ્રાયશ્ચિત્ત લેવા છતાં પણ તે શુદ્ધ થઈ શકતો નથી તેથી તે અસંભોગ્ય છે (૬) નિકાચ સંભોગ—શય્યા, ઉપવિ આહાર શિષ્ય પ્રદાન અને

संभोगिकः संभोगिक निमन्त्रयन् शुद्धः । शेष पूर्ववदेव । निकाचसंभोगः पष्ठः ६ ।
तथा 'अव्युत्थानेय यावरे' अभ्युत्थानमितिचापरः, अभ्युत्थानमामनत्यागरूपमि-
त्यपरः पष्ठादन्यः संभोगः । तत्र-पार्श्वस्थादीना कृतेऽभ्युत्थानादिकं कुर्वन् पूर्व-
वदेवासंभोग्यः । अभ्युत्थानपद किंकरता न्यासकरणा विभक्तीनामुपलक्षणम् ।
तत्र किंकरता-प्राधूर्णकग्लानादीन प्रति 'भवतो विश्रामाय कीदृशं प्रयत्नमहं

एवं स्वाध्याय इन से संभोगिक को आमंत्रण करता हुआ संभोगिक साधु
शुद्ध कहा गया है । बाकी का इस संवय में कथन पहिले के जैसा लगा
लेना चाहिये । अर्थात् जब वह साधु पार्श्वस्थ आदि के लिये शय्या
आदि से आमंत्रित करता है तब वह अशुद्ध माना जाता है । इस तीन
बार को गई अशुद्धि का जब वह प्रयश्चित्त विधान से सशोधन कर शुद्ध
हो जाता है तब वह संभोग्य बन जाता है । परन्तु तीन बार करने पर
भी जब चतुर्थ बार भी वह ऐसी अशुद्धि कर लेता है तब वह प्रयश्चित्त
से भी शुद्ध नहीं होता है । इस स्थिति में वह असंभोग्य ही होता है ६ ।
अभ्युत्थानसंभोग-यह संभोग का सातवां भेद है, अभ्युत्थान का तात्पर्य
आसन के त्याग करने से है, अर्थात्-पार्श्वस्थ आदि के आने पर अपना
त्याग कर खड़े हो जाना उनकी विनय करना आदिये सब क्रियाएँ अभ्युत्था पद से
ग्रहण की गई हैं । यहां अभ्युत्थान पद किंकरता, न्यासकरण और अवि-
भक्ति, इनका उपलक्षक है । प्राधूर्णक ग्लान आदि अवस्थासंपन्न साधुओं
के प्रति ऐसी प्रश्नात्मक उक्ति मन में करना कि "मैं आप के विश्राम

स्व ध्यय, वडे स भोगिरकने आम त्रणु करतो स भोगिक स धु शुद्ध कडेवाय छे आ
विषयमां भाकीनुं कथन आगणना कथनो प्रमाणे समण देवु — ओटवे के न्यारे ते
साधु पार्श्वस्थ आदिने शय्या आदि वडे आम त्रित करे छे त्यारे ते अशुद्ध गणाय
आ प्रमाणे त्रणु वधत थयेली अशुद्धिनु प्रायश्चित्त करवाथी ते शुद्ध थर्ध नय छे
अने संभोग्य बने छे । पणु जे थोथी वर पणु ते जे न प्रकारनी अशुद्धि करे तो
प्रायश्चित्त करवा छता पणु ते शुद्ध थर्ध शकतो नथी आ स्थितिना ते असंभोग्य
न गणाय छे (७) अभ्युत्थानसंभोग—ते संभोगने सातभो लेद छे अत्युत्थान
ओटवे आसनने त्याग करवो ओटवे के पार्श्वस्थ आदिनु आगमन थता पोतानुं
आसन छोडीने उला थर्ध नपु, तेभने मान आपवु, आदि क्रियाओ 'अत्युत्थान'
पदथी ग्रहणु करवामा आवी छे अही अत्युत्थान' पद किंकरता, न्यासकरण अने
अविलक्षित, जे त्रणुने उपलक्षक छे प्राधूर्णक ग्लान (मडेमान, भिमार) आदि अव-
स्था संपन्न साधुओ प्रत्ये मनया जेवी प्रश्नात्मक उक्ति करवी के 'हु आपना

कुर्यात्' इत्येवं प्रभ्रात्मिकाति । 'यासकरणम् पार्श्वस्थादिधर्माच्छुद्धस्य पुन साधुधर्मे सम्पादनम् ।

अविभक्तिः—अपृथग्भावः भदभावराहित्यम्, पार्श्वस्थादीनां किंकरतादिक कुर्वन् साधुरशुद्धोऽसमोग्यश्च भवति । यथागम कुर्वन्तु शुद्धः समोग्यश्चेति । इति सप्तमः संभागः ७। तथा—'किङ्कर्मस्त य करणे' कृतिर्कर्मणश्च करणम्, कृतिर्कर्म=नन्दन, तस्य करण । विधिना वन्दनो कुर्वन् शुद्ध संमोग्यश्च । अविधिना कुर्वन्तु पूर्ववत्वासमोग्यः । यस्तु साधुर्धातवशान् स्वस्वगात्र उत्थानादिर्मर्कतुमसमर्थः, स मृगमेव अस्वल्लितादिगुणसमुपेतमुच्चारयति, एवमावर्तेन शिरोनमनादियच्छाति के लिये कैसा प्रयत्न करूँ" इसका नाम किंकरता है । पार्श्वस्थ आदि क धर्म से च्युत हुए साधु को पुन साधुधर्म में संस्थापित करना, इसका नाम न्यास करण है, और भेदभाव रहित होना इसका नाम अविभक्ति है । साधु पार्श्वस्थ आदियों की किंकरता आदि जय करन लगता है—तब वह अशुद्ध होने के कारण असमोग्य हो जाता है । और आगम के अनुसार इन किंकरतादिकों को करता है तब वह शुद्ध होने से समोग्य होता है ७। कृतिर्कर्ममोग—यह समोग का आठवां भेद है—विधिपूर्वक वन्दना करने वाला साधु शुद्ध और संमोग्य माना गया है, और अविधि पूर्वक कृतिर्कर्म करने वाला साधु पूर्व की तरह अशुद्ध और असमोग्य कहा गया है । जो साधु बात व्यापि से पीड़ित होता हुआ स्वस्व शरीर हो जाता है तब वह उत्थान आदि मिया करने में असमर्थ बन जाता है । इस स्थिति में वह मृग को ही अस्वल्लित आदि गुण से समुपेत होकर उच्चारण करता है, तथा आवर्तन—शिरोनमन आदि आवश्यक क्रियाओं

विश्राभने माटे केवो प्रयत्न करूँ" तब नाम किंकरता के पार्श्वस्थ आदि धर्मों की अहित भोगे साधुने इसी साधुधर्म में संस्थापित करवा, तब नाम न्यासकरण है । अने भदभाव रहित भव, तब नाम अविभक्ति है । अथार सधु पार्श्वस्थ आदि करवा माटे के तब ते अशुद्ध बवाने करखे असमोग्य थाप है । पक्ष को आगमन अनुसार ते किंकरता अदि करे है तो ते शुद्ध होवाधी सलोक अक्षय ७ (८) कृतिर्कर्म संमोग—ते सलोकना आठमो लोक के विधिपूर्वक वन्दना करवा साधु शुद्ध अने संमोग्य अक्षय है । पक्ष अविधिपूर्वक कृतिर्कर्म करवा मुधी आगमन हस्तु तेम अशुद्ध अने असलोक्य भनाप है । अथार साधु पाना शत्रु पीठावाने करखे शारीरिक वलनवलन करवाने असमर्थ थाप है, तब ते उत्थान आदि क्रिया करवाने शक्तिमान होतो नही । आ प्रकाशनी स्थितिमां के सूरतु ७ अस्वल्लित आदि गुण पूर्वक उच्चारण करे है तथा शिरोनमन आदि आवश्यक

તત્ કરોતિ, તસ્ય સાધોરેવં વિધો વન્દનાદિવિધિરશ્વઠપ્રવૃત્તિરિતિ સ સંભોગ્ય
 એવં । ઇત્યષ્ટમઃ સંભોગઃ ૮ । ‘વૈયાવચ્ચકરણે ડ ય’ વૈયાવૃત્યકરણમિતિ, વૈયાવૃ-
 ત્યમ્—આહારોપધિદાનાદિના પ્રસવળાદિમાત્રકાર્ષણાદિનાઽધિકરણોપશમનેન સાઢા-
 વ્યદાનેન વા ઉપઘમ્મકરણમ્ । વૈયાવૃત્યવિષયેઽપિ પૂર્વવદેવ સંભોગાસંભોગૌ
 ભવતઃ । ઇતિ નવમઃ ૯ । ‘સમોસરણં’ સમવસરણમ્=વહના સાધૂનામેકત્રાવસ્થાનમ્ ।
 તદ્ દ્વિવિધમ્—નિરવગ્રહમ્ સાવગ્રહં ચ । ક્ષેત્રમાશ્રિત્ય નિરવગ્રહમ્ સાધૂનામપ્રતિ-
 વન્ધવિહારિત્વાત્ । વસતિમાશ્રિત્ય સાવગ્રહમ્, વસતિસ્થિતસાધૂનામવગ્રહમાદાયૈવ
 કો જિતના વનતા હૈ ઉતના કરતા હૈ, ઇસ તરહ ઉસ સાધુ
 કી ઇસ પ્રકાર કી જો વંદનાદિવિધિ હૈ વહ અશ્વઠ—રૂપટરહિત પ્રવૃત્તિ
 હૈ, ઇસલિયે વહ સાધુ સંભોગ્ય હી હૈ ૮ । વૈયાવૃત્યકરણ—વહ સંભોગ કા
 નવવાં ભેદ હૈ—વૈયાવૃત્ય કા તાત્પર્ય હૈ યોગ્ય સાધનો કો જુટાકર, અથવા
 અપને આપ કો કામ મેં લગાકર સેવાશુશ્રૂષા કરના । ઇસી વાત કો ટીકા-
 કાર યોં વતાતે હૈં કિ—આહાર, ઉપધિ આદિ કે દેને સે, પ્રસવળ આદિ
 કે પરિષ્ઠાપન કે લિયે માત્રકાદિ કે દેને સે અધિકરણ કે ઉપશમન સે
 અથવા ઔર ભી વિષય મેં સહાયતા કરને સે ગુર્વાદિજનોં કો સહાયક
 હોના ઇસકા નામ વૈયાવૃત્ય હૈ । ઇસ વૈયાવૃત્ય કે વિષય મેં ભી પૂર્વ કી
 તરહ સંભોગ ઔર અસંભોગ હોતે હૈ ૯ । સમવસરણ—અનેક સાધુઓં કા
 ઇક જગહ રહના । યહ દો પ્રકાર કા હૈ—ઇક નિરવગ્રહ ઔર દૂસરા
 સાવગ્રહ । ક્ષેત્ર કો આશ્રિત કરકે નિરવગ્રહ સમવસરણ હોતા હૈ, ક્યોં
 કિ સાધુ જનોં કા વિહાર પ્રતિવંધ સે રહિત હોતા હૈ । વસતિ કો આશ્રિત

ક્રિયાઓ બની શકે એટલા પ્રમાણમાં કરે છે તે સાધુની આ પ્રકારની જે વહનાવિધિ
 છે તે કપટ રહિત હોવાને કારણે તે સાધુ સંભોગ્ય જ ગણાય છે (૯) વૈયાવૃત્ય
 કરણ—આ સંભોગનો નવમો ભેદ છે વૈયાવૃત્ય એટલે યોગ્ય સાધનો એકત્ર કરીને
 અથવા પોતાની બંધને જ કામમાં લગાડીને શુશ્રૂષા કરવી એ જ વાતને ટીકાકાર
 આ પ્રમાણે સમજાવે છે—આહાર, ઉપધિ, આદિ દેવાથી, પ્રસવણ મૂત્ર આદિનું પરિ-
 ષ્ઠાપન કરવાને માટે દેવાથી અધિકરણના ઉપશમનથી અથવા બીજી બાબતોમાં
 મદદ કરીને ગુરૂ આદિને સહાય કરવી તેનું નામ વૈયાવૃત્ય છે, વૈયાવૃત્યની બાબતમાં
 પણ આગળ પ્રમાણે જ સંભોગ અને અસંભોગ થાય છે (૧૦) સમવસરણ—
 અનેક સાધુઓનું એક જગ્યાએ રહેવું તેને સમવસરણ કહે છે તે બે પ્રકારનું છે.
 (૧) નિરવગ્રહ (૨) સાવગ્રહ નિરવગ્રહ સમવસરણ ક્ષેત્રને આધારે થાય છે, કારણ કે
 સાધુઓનો વિહાર પ્રતિબંધ રહિત હોય છે સાવગ્રહ સમવસરણ વસતિને (વસવાટ)

कुप्योम्' नस्य प्रश्नास्मिन्निति । न्यासकरणम् पार्श्वस्थादिधर्माच्चुदस्य पुन साधुधर्मं सम्भाषणम् ।

अविमक्तिः—अपृथग्भावः भेदभावराहित्यम्, पार्श्वस्थादीनां किंकरादिकं कुर्वन् साधुरशुद्धोऽसंमोग्यश्च भवति । यथागमं कुर्वन् शुद्ध संमोग्यश्चेति । इति सप्तमः संमोगः ७। तथा—'विधिपूर्वकं यः करणे' कृतिर्धर्मणश्च करणम्, कृतिर्धर्मः= वन्दन, तस्य करणं । त्रिभिन्ना वन्दनां कुर्वन् शुद्ध संमोग्यश्च । अत्रिभिन्ना कुर्वन्तु पूर्ववदनासंमोग्यः । यस्तु साधुर्धातवशेन स्तम्भगात्र उत्थानादिवर्मेकवर्तुमसमर्थः, स मृगमेव अस्त्वज्जितादिगुणसमुपेतमुच्चारयति, एवमावर्तनं शिरोनमनादियच्छास्त्राति के लिये कैसा प्रयत्न करूँ" इसका नाम किंकरता है । पार्श्वस्थ आदि के धर्म से व्युत्पन्न हुए साधु को पुन साधुधर्म में संस्थापित करना, इसका नाम न्यास करण है, और मेड़भाव रहित होना इसका नाम अविमक्ति है । साधु पार्श्वस्थ आदिकों की किंकरता आदि जय करने लगता है—तब वह अशुद्ध होन का कारण असंमोग्य हो जाता है । और आगम के अनुसार इन किंकरतादिकों को करता है तब वह शुद्ध होने से संमोग्य होता है ७। कृतिर्धर्मसंमोगः—यह संमोग का आठवाँ मेड़ है—विधिपूर्वक वन्दना करने वाला साधु शुद्ध और संमोग्य माना गया है, और अविधि पूर्वक कृतिर्धर्म करने वाला साधु पूर्व की तरह अशुद्ध और असंमोग्य कहा गया है । जो साधु बात क्यापि से पीड़ित होता हुआ स्तम्भ शरीर हो जाता है तब वह उत्थान आदि किया करने में असमर्थ बन जाता है । इस स्थिति में वह मृग को ही अस्त्वज्जिता आदि गुण से समुपेत होकर उच्चारण करता है, तथा आवर्तन—शिरोनमन आदि आवश्यक क्रियाओं

विश्राभने भा? केवो प्रयत्न करे? तन्तु नाम किंकरता के पार्श्वस्थ आदि धर्मों अहित वयेक साधुने इसी साधुधर्म में संस्थापित करवे, तन्तु नाम न्यासकरण अने मेड़भाव रहित भवु तन्तु नाम अविमक्ति छे । अथारे साधु पार्श्वस्थ आदि करवा भाउ छे तब ते अशुद्ध भवाने करवे असंमोग्य थाव छे पणु जे आगमन अनुसार ते किंकरता आदि करे छे तो ते शुद्ध होवाधी संमोग्य जणु ७ (८) कृतिर्धर्म संमोगः—ते संमोग्यना आठवाँ मेड़ के विधिपूर्वक वन्दना करवा साधु शुद्ध अने संमोग्य जणु ७ छे पणु अविधिपूर्वक कृतिर्धर्म करवा साधु असंमोग्य अणु तेम अशुद्ध अने असंमोग्य भनाय के अथारे साधु वाना शरीर पीडावाने करवे शारीरिक छलनचलन करवाने असमर्थ थाव छे, तबारे ते उत्थान आदि किया करवाने शक्तिमान होतो नथी आ प्रकाशनी स्थितिभा जे सत्य ७ अस्त्वज्जिता आदि गुण पूर्वक उच्चारण करे के तथा शिरोनमन आदि आवश्यक

‘दुओणए’ द्व्यवनतम्, अवनतम्=शिरोनमनम् द्वे अवनते यस्मिंस्तद् द्व्यवनतम्, तत्रैकं यदा पूर्वमेव ‘इच्छामि खमासमणो ! वंदि उं जावणिज्जाए निसोहियाए’ इति अभिधायावग्रहानुज्ञापनायाऽवनमनम् १। द्वितीयं—पुनर्यदा पूर्ववदवग्रहानुज्ञापनायैवावनमनं इति आवर्तद्वयम् । ‘जहाजायं’ यथाजातं यथा श्रमणो जातस्तथा वन्दते, अर्थात् दीक्षाग्रहणसमये यथा—परिधृतचोलपट्टकमावरणसदोरकमुखवस्त्रिका रजोहरणप्रमार्जिको वद्धाञ्जलिपुटश्चासीत् । तामवस्थामाश्रित्य वन्दनम्-इति भावः, इति तृतीयः आवर्तः । ‘किङ्कम्मंवारसावयं’ कृतिकर्मद्वादशावर्तम्, द्वादशा आवर्ताः सूत्रोच्चारणमिश्राः कायव्यापारा यस्मिंस्तद् द्वादशावर्तं वन्दनकम् । तथाहि—‘अहो कायं कायसंफासं’ इत्यत्र ‘अ’ इत्युच्चार्याऽञ्जलिपुटं दक्षिणभागक्रमेण परि-

दो शिरोनमन वाला कृतिकर्म, इसमें एक शिरोनति तब की जाती है कि जब पहिले ही “इच्छामि खमासमणो ! वंदि उं जावणिज्जाए निसोहियाए” ऐसा पाठ बोलकर अवग्रह की अनुज्ञा ली जाती है १। दूसरा तब किया जाता है जब पहिले की तरह पुनः अवग्रह की आज्ञा ली जाती है । इस प्रकार ये दो आवर्त हो जाते हैं २। तीसरा आवर्त यथाजात है यह उस समय किया जाता है जब दीक्षाग्रहण के समय में वह चोलपट्टक को धारण करता है सदोरकमुखवस्त्रिका को अपने मुह पर बाँधता है रजोहरण और प्रमार्जिका को लेता है, अपने गुरुदेव को दोनों हाथ जोड़कर नमस्कार करता है । इसी का नाम यथाजात है यह तृतीय आवर्त है ३। द्वादश आवर्तवाला—कृतिकर्म चौथा आवर्त है । सूत्रोच्चारण से मिलित कायव्यापार का नाम आवर्त है । ये वंदन क्रिया में बारह इस प्रकार से होते हैं—“अहो कायं कायसंफासं” इस पाठ को बोलकर

शिरोनमन वाला कृतिकर्म छे तेमा पड़ेवा न्यारे “इच्छामि खमासमणो ! वंदि उं जावणिज्जाए निसोहियाए” जेवा पाठ जेहीने न्यारे अवग्रहनी अनुज्ञा देवाभां आवे छे त्यारे पड़ेवा वणत शिरोनति (भस्त नभाववानी क्रिया) थाय छे न्यारे पड़ेवानी जेम क्षीवी अवग्रहनी आज्ञा देवाय छे त्यारे भीछ वणत शिरोनति कराय छे. आ प्रमाणे ते जे आवर्त थाय छे (२) त्रीजु आवर्त यथाजात छे. ते जे समये करवाभां आवे छे के न्यारे दीक्षा देनी वणते ते चोलपट्टक धारण करे छे, सदोरकमुखपत्ति पोताना मोठे बांधे छे; रजोहरण अने प्रमार्जिका दे छे, पोताना गुरुदेवने अन्ने हाथ जेहीने नमस्कार करे छे. तेनुं नाम ‘यथाजात’ छे. आर आवर्तवाणुं कृतिकर्म जेथु आवर्त छे. सूत्रोच्चारणथो मिश्रित काय व्यापारने आवर्त कहे छे. वंदन क्रियाभां ते आर आवर्त आ प्रमाणे थाय छे—‘अहो कायं काय संफासं’

સમાગતસાધુ નિવસનાત્ । સમોગ્યા સમાગ્યવ્યવસ્થા પૂર્વથા વિજ્ઞયા । इति दशम
 સંમોગ ૧૦ । મનિપદ્યા=પ્રકાસનાપવશનમ્, સા ણિ સમોગાસંમોગહેતુ મેષતિ ।
 આસનાપવિષ્ઠાચાર્યસ્તદામનોર્પાપ્રસંમાગિકાચાર્યેણ સહ શ્રુતપરિવર્તનાદિક
 કુર્વન શુદ્ધ । અમનોજ્ઞ-પાર્શ્વમ્યાદિમિઃ સહ તથા કુર્વન્નશુદ્ધ પૂર્વવત્પ્રમાયમિત્તેન
 શુદ્ધયતિ । इत्येकादश संमोग ११ । તથા 'કઠાણ ય પવષર્ણ' કથાપામ પ્રવન્ધ
 નમ્=વ્યાખ્યાનાત્રિકરણમ્ । સમોગ્યાસમોગ્યવ્યવસ્થાપૂર્વવદ્વિજ્ઞેયા । इति द्वादश
 સંમોગ ૧૨ । 'દુરાલભાવત્તે' દ્વાદશાવર્ષ કૃતિકર્મ=ચન્દન 'પણ્ણસે' મહત્તમ્, દ્વે તથા

કરક સાધમ્નહ મમયમરણ હોતા હૈ, કયોં કિ ઉપાશ્રયરૂપ વસતિ મેં પટિલ
 સે ઠહરે હુણ સાધુઓં જા મયમ્નહ લેકર હી પીન્ને સે આયે હુણ માધુ
 વહાં ઠહરતે ૧ । હમમેં સમોગ્ય ઔર અસમોગ્ય વ્યવસ્થા પઠીછે કી તરહ
 યત્નિ કર છના ચાહિયે ૧૦ । સનિપદ્યા-પદ્ સમોગ કા ગ્યારહવાં મેદ હૈ-
 હમમેં એક આસન સે સાધુ બેઠા રહતા હૈ । યહ તનિપદ્યા સમોગ ઔર
 અસમાગ કી હેતુ હોતી હૈ । આસન પર બેઠે હુણ આચાર્ય અપને આસન
 પર બેઠ હુણ અન્ય સમોગિક આચાર્ય કે સાથ શ્રુતપરિવર્તન આદિ કરતે
 હુણ શુદ્ધ માને ગયે હૈ । તથા અમનોજ્ઞ પાર્શ્વસ્થ આદિ કે સાથ એક
 આસન પર બેઠકર શ્રુતપરિવર્તન આદિ કરતે હુણ અશુદ્ધ માને ગય હૈ ।
 હનમેં સમોગ્ય કી વ્યવસ્થા પઠિછે કહે ગયે પ્રકાર કી તરહ યત્નિ કર
 છની ચાહિય ૧૧ । હસી તરહ સ કથાપ્રવચ નામના નો ચારહવાં મેદ
 સંમોગ કા હૈ હસમેં સી સંમોગ્યાસમોગ્ય કી વ્યવસ્થા સમજ લેની ચાહિયે ।
 કૃતિકર્મ-ચન્દન-દ્વાદશ આવર્તવાલા હોતા હૈ, વહ હસ પ્રકાર હૈ-પટલા

આધાર થાય છે, કારણ કે ઉપાશ્રય રૂપ વસતિમા પહેલેથી આવી રહેલા સાધુઓના
 અવસ્થા (૨૫) લીધા પછી જ પછાતી આવશ્ય માધુ ત્યાં રહે છે તેમાં સંમોગ્ય
 તથા અસમોગ્ય વ્યવસ્થા આગળ પ્રમાણે જ સમજાવેલી સનિપદ્યા—આ મહો
 જનો અગિયાર મો બેઠ છે તેમાં સાધુ જેક આસને બેસી રહે છે તે સનિપદ્યા
 સંમોગ્ય અને અસંમોગ્યનું કારણ બને તે આસન ઉપર બેઠેલા આચાર્ય પે તાના
 આસને બેઠા બેઠાં અન્ય સમોગિક આચાર્ય ની સાથે શ્રુતપરિવર્તન આદિ કરે તો તે
 શુદ્ધ ગણાય છે પણ અમનોજ્ઞ પાર્શ્વસ્થ આદિ સાથે જેક આસને બેસીને શ્રુતપરિ
 વર્તન આદિ કરે તો તે અશુદ્ધ ગણાય ॥ તેમાં પણ સંમોગ્ય અને અસંમોગ્યની
 વ્યવસ્થા આગળ કહ્યા પ્રમાણે ઘટાવી દેવી (૧૨) જે જ પ્રમાણે કથાપ્રવચ
 ન મનો ને બારમો કોદ છે, તેમાં પણ સંમોગ્ય, અસંમોગ્યની વ્યવસ્થા આગળ
 કહ્યા પ્રમાણે સમજાવી.

કૃતિકર્મ—વૈદન—૧૧ આવર્ત વાળું થાય છે તે આ પ્રમાણે છે—પહેલા બે

‘दुओणए’ द्वयवनतम्. अवनतम्=शिरोनमनम् द्वे अवनते यस्मिन्तद् द्वयवनतम्, तत्रैकं यदा पूर्वमेव ‘इच्छामि खमासमणो ! वंदि उं जावणिज्जाए निसीहियाए’ इति अभिधायावग्रहानुज्ञापनायाऽनमनम् १। द्वितीयं—पुन यदा पूर्ववदवग्रहानुज्ञापनायैवावनमनं इति आवर्त्तद्वयम् । ‘जहानायं’ यथाजातं यथा धमणो जातस्तथा वन्दते, अर्थात् दीक्षाग्रहणसमये यथा—परिधृतचोलपट्टकमावरणसदोरकमुखवस्त्रिका रजोहरणप्रमार्जिको वज्राञ्जलिपुटश्चासीत्. तामवस्थामाश्रित्य वन्दनम्. इति भावः, इति तृतीयः आवर्त्तः । ‘किङ्कम्मंवारमावय’ कृतिकर्मद्वादशावर्त्तम्, द्वादशा आवर्त्ताः सूत्रोच्चारणमित्राः कायव्यापारा यस्मिन्तद् द्वादशावर्त्तं वन्दनम् । तथाहि—‘अहो कायं कायसंफासं’ इत्यत्र ‘अ’ इत्युच्चार्याऽञ्जलिपुट दक्षिणभागक्रमेण परि-

दो शिरोनमन वाला कृतिकर्म, उसमें एक शिरोनति तब की जाती है कि जब पहिले ही “इच्छामि खमासमणो ! वंदि उं जावणिज्जाए निसीहियाए” ऐसा पाठ बोलकर अवग्रह की अनुज्ञा ली जाती है १। दूसरा तब किया जाता है जब पहिले की तरह पुनः अवग्रह की आज्ञा ली जाती है। इस प्रकार ये दो आवर्त्त हो जाते हैं २। तीसरा आवर्त्त यथाजात है यह उस समय किया जाता है जब दीक्षाग्रहण के समय में वह चोलपट्टक को धारण करता है सदोरकमुखवस्त्रिका को अपने मुह पर बाँधता है रजोहरण और प्रमार्जिका को लेता है, अपने गुरुदेव को दोनों हाथ जोड़कर नमस्कार करता है। इसी का नाम यथाजात है यह तृतीय आवर्त्त है ३। द्वादश आवर्त्तवाला—कृतिकर्म चौथा आवर्त्त है। सूत्रोच्चारण से मिश्रित कायव्यापार का नाम आवर्त्त है। ये वंदन क्रिया में चारह इस प्रकार से होते हैं—“अहो कायं कायसंफासं” इस पाठ को बोलकर

शिरोनमन वाला कृतिकर्म छ. तेमा पड़ेला न्यारे “इच्छामि खमासमणो ! वंदिउं जावणिज्जाए निसीहियाए” એવો પાઠ બોલીને ન્યારે અવગ્રહની અનુજ્ઞા લેવામાં આવે છે ત્યારે પહેલો વખત શિરોનતિ (મસ્ત નમાવવાની ક્રિયા) થાય છે ન્યારે પહેલાની જમ ફરીથી અવગ્રહની આજ્ઞા લેવાય છે ત્યારે બીજી વખત શિરોનતિ કરાય છે. આ પ્રમાણે તે બે આવર્ત થાય છે. (૨) ત્રીજી આવર્ત યથાજાત છે તે એ સમયે કરવામાં આવે છે કે ન્યારે દીક્ષા લેની વખતે તે ચોલપટ્ટક ધારણ કરે છે, સદોરકમુહપત્તિ પોતાના મોઢે બાંધે છે; રજોહરણ અને પ્રમાર્જિકા લે છે, પોતાના ગુરુદેવને બન્ને હાથ બેડીને નમસ્કાર કરે છે તેનું નામ ‘યથાજાત’ છે. બાર આવર્તવાળું કૃતિકર્મ ચોથું આવર્ત છે. સૂત્રોચ્ચારણથી મિશ્રિત કાય વ્યાપારને આવર્ત કહે છે. વંદન ક્રિયામાં તે બાર આવર્ત આ પ્રમાણે થાય છે—‘અહો કાયં કાય સંફાસં’

भवन्ति, एति चतुर्थ आवर्तः। तथा 'चउसिरं' चतुः शिरः, प्रथमप्रविष्टस्य शिष्यस्य क्षमापणकाले शिष्याचार्ययोः शिराद्वयम्,

पुनरपि निष्क्रम्य प्रविष्टस्य द्वयम्, इति चतुःशिरः। इति-आवर्तद्वयम्, इति पञ्चमः पण्ड आवर्तः। तथा 'तिगुत्त' त्रिगुप्तं-तिस्रभिर्गुप्तं त्रिगुप्तम् अत्र आवर्तत्रयमिति नवावर्ताः। 'दुपवेसं' द्विप्रवेशम्-द्वो प्रवेशौ यस्मिंस्तत् द्विप्रवेशम्। तत्र अवग्रहमनुज्ञाप्य प्रविशतः प्रथमः प्रवेशः, निर्गत्य पुनः प्रविशतो द्वितीयः प्रवेशः इति प्रवेशरूपमावर्तद्वयम् संकलनया एकादशावर्ताः। 'एगनि-कवमणं' अवग्रहादावश्यकया निर्गच्छत एक निष्क्रमणम्। द्वितीयवेलाया तु अवग्रहान्त निर्गच्छति, पादपतित एव मूत्रं समापयतीति। द्वादश आवर्ताः। अत्र द्वादशविशेषावर्तेषु अवश्यकरणीयतया पञ्चविंशतिविधयो भवन्ति, ते यथा-

दो जाते हैं १२। इस प्रकार कृतिकर्म चारह आवर्त्तवाला होता है। ये चार आवर्त्तहुण्ड। तथा चारशिर ये पांचवां और छठवां आवर्त्त है-प्रथम प्रविष्ट हुए शिष्य के क्षमापणकाल में शिष्य और आचार्य के दो शिर, बाद में पुनः निकल कर प्रविष्ट हुए शिष्य के क्षमापण काल में शिष्य और आचार्य के दो शिर, इस प्रकार ये चार शिर हैं। इनके दो आवर्त्त, ऐसे पांचवां और छठा आवर्त्त होता है २। तथा तीनगुप्तियों के तीन आवर्त्त, इस तरह ये नव आवर्त्त हो जाते हैं ९। दो प्रवेश के दो आवर्त्त-अवग्रह को लेकर प्रवेश करना यह प्रथम प्रवेश, तथा निकलकर पुनः प्रवेश करना यह द्वितीय प्रवेश-ये प्रवेशरूप दो आवर्त्त हैं ११। तथा-अवग्रह से आवश्यककी करके निकलने वाले का एक यह बारहवां निष्क्रमणरूप आवर्त्त होता है १२। दूसरी बार अवग्रह से नहीं निकलता है किन्तु वहीं गुरुचरण में रहा हुआ ही क्षमाश्रमण का पूरा पाठ पढ़ना है, इस प्रकार से कृतिकर्म-वन्दन-द्वादश आवर्त्तवाला कहा है। इन

पण्ड छ आवर्त्त थाय छ आ रीते कृतिकर्म बार आवर्त्त वाणु छाय छ आ रीते बार आवर्त्त थाय तथा बार शिर ओ पायसु अने छहु आवर्त्त छे, पड़ेलां दाण्ड थयेव शिष्यना क्षमापण्ड-काणमा शिष्य अने आचार्यना ओ शिर, त्याग जाह पुन नीकणीने प्रविष्ट थयेव शिष्यना क्षमापण्डकाणमा शिष्य अने आचार्यना ओ शिर छे ओ प्रमाणे बार शिर छे तेमना ओ आवर्त्त ओ रीते पायसु अने छहु आवर्त्त थाय छे तथा त्रणु गुप्तियोना त्रणु आवर्त्त ओ रीते ते नव आवर्त्त थय जय छे ओ प्रवेशना ओ आवर्त्त-अवग्रह लधने प्रवेशकरवे। ते प्रथम प्रवेश, तथा नीकणीने पुन प्रवेश करवे। ते द्वितीय प्रवेश, ओ प्रवेशरूप ओ आवर्त्त छे तथा अवग्रहथी आवश्यकी करीने नीकणनारने ओक, ते बारमा निष्क्रमण आवर्त्त थाय छे, भीछ बार अवग्रहथी नीकणते। नथी पण्ड त्या गुरु चरणमा रहीने न क्षमा श्रमणने पुरा पाठ पोवे छे आ रीते कृतिकर्म-वन्दन-बार

દે અવનતીર, એકં યથાજાતમૃદ્, આદક્ષિણપ્રદક્ષિણરૂપ દ્વાદશવિધં કૃતિકર્મ ૧૫
 ચત્વારિ શિરાંસિ ૧૯, તિસ્તો ગુપ્તયઃ ૨૨, દ્વૌ પ્રવેશૌ ૨૪, એકં નિષ્ક્રમણ ૨૫, इति
 पञ्चविंशतिरिषयः। વિજયા સ્વલ્લ રામધાની દ્વદશયોજનમદ્વાજિ 'આયામવિ
 પર્વણ' આયામવિષ્કમ્માખ્યામ આયામો દૈર્ઘ્યમ્, વિષ્કમ્મો વિસ્તારઃ તામ્યામ્,
 પ્રશ્નતા। રામ સ્વલ્લ ચમ્પેત્રો દ્વાદશર્પસદ્વાજિ મર્વાયુપ 'પામ્લિતા' પાળપિત્ત્વા
 સમાપ્ય પશ્ચમ દ્વલ્લોક વેપસ્થં ગતઃ। મન્દરસ્થ સ્વલ્લ પર્વતસ્ય 'વૃમ્ભિયા' 'શૂલિકા'=
 શૂદ્ધા મૂલે દ્વાદશ યાનનાનિ વિષ્કમ્મજ પ્રશ્નતા। જમ્પૂડીપમ્ય સ્વલ્લ દ્વીપસ્ય ષદિકા
 મૂલ દ્વાદશયામનાનિ વિષ્કમ્મજ પ્રશ્નતા। સર્વેષુ વર્ષેષુ 'સમ્વજઙ્ગિણિયા' સર્વ-
 જઘન્યા ન્યુનાતિન્યુનેસ્પર્યાઃ, 'રાઈ' રાષ્ટ્રિ 'દુવામ્સમુદ્ગુણિયા' દ્વદશમુદ્ગુણિકા
 દ્વાત્તમુદ્ગુણી યસ્યા સા, પ્રશ્નતા। एवं त्रिवसोऽपि सर्वजघन्यो द्वादशमुदूर्तकी
 प्रातस्तप। સર્વાર્થસિદ્ધ્ય સ્વલ્લ મહાવિમાનમ્ય ઉપરિતનાત સ્તૂપિકાપ્રાત્ સ્થિત્વ

પારદ આવર્તો મે અષ્ટમ્ય કરમ યોગ્ય પશ્ચીમ ચિધિયાં હોતી હૈં, વે વે
 હૈં-દો શિરો નમન ૨, એક યથાજાતમૃદ, આદક્ષિણપ્રદક્ષિણરૂપ પારદ પ્રકાર
 કા કૃતિકર્મ ૧૫, ચાર શિર ૧૯, ત્રીનગુણિયાં ૨૨, દો પ્રવેશ ૨૪, ઔર એક
 નિષ્ક્રમણ ૨૫। આયામ ઔર વિષ્કમ્મ કી અપેક્ષા વિજયા નામકી રામધાની
 પારદ જ્ઞાર યોજન કી કહી ગઈ હૈ। રામ નામ કે ચલમદ્ પારદ હમાર
 ચર્વ કી આયુ કો પાલકર-સમાપ્તકર-પાંચર્વ વેલ્લોક મેં દેવ હુગ હૈં।
 મંદર પર્વત કી શૂલિકા મૂલ મેં વિષ્કમ્મ કી અપેક્ષા પારદ યોજન પ્રમાણ
 કહી ગઈ હૈ। જમ્પૂડીપ નામક પ્રથમ દ્વીપ કી વેદિકા મૂલ મેં વિષ્કમ્મ
 કી અપેક્ષા પારદ યોજન કી કહી ગઈ હૈ। સમસ્ત વર્ષ મેં સબ સે અતિક્રમ
 (મય સે છોટી) રાષ્ટ્રિ પારદ મુદ્ગુર્ણવાલી હોતી હૈ। ઈસી પ્રકાર દ્વાદશ
 મુદ્ગુણ કા દિન મય સે ઊંચા કહા ગયા હૈ। સર્વાર્થસિદ્ધ મહાવિમાન

આવન વાગુ કહેલ છે એ બાર આવર્તોમાં આવજી કરવા થોડા પચીસ વિધિયો
 દેખ છે તે આ પ્રમાણે છે—

મે શિરોનમન ૨, એક યથાજાત ૩ આદક્ષિણ પ્રદક્ષિણ રૂપ બાર પ્રકરના
 કૃતિકર્મ ૧૫ ચાર શિર ૧૯ ત્રણ ગુણિયો, ૨૨ એ પ્રવેશ ૨૪ જા। એક નિષ્ક્રમણ ૨૫.

આયામ (જાણી) અને વિષ્કમ્મ (પહોળાઈ) ની અપેક્ષાએ વિજયા નામની
 રામધાની બાર હબાર યોજનની કહી છે રામ નામના જલભદ્ર બાર હબાર વધતું
 આયુષ્ય લોખણને પાંચમાં વેલ્લોકમાં વેલ મલા છે. મંદર પર્વતની વેદિકા મૂળમાં
 વિષ્કમ્મની અપેક્ષાએ બાર યોજનની કહેલ છે આખા વધમાં સૌથી દૂરો રાષ્ટ્રિ બાર
 મુદ્ગુણની કહેલ છે એ જ પ્રમાણે સૌથી દૂરો ત્રિવસ પણ બાર મુદ્ગુણનો દોષ છે
 સર્વાર્થ સિદ્ધ મહાવિમાનતા ઉપરિતન શિખરના અગ્રભાગથી બાર યોજન ઉપર

र ग्रभागात् द्वादशयोजनानि ऊर्ध्वमुपरितनी ईषत्प्राग्भारनामधेया सिद्धशिलेति नाम्ना प्रसिद्धा पृथ्वी प्रपत्ता । ईषत्प्राग्भारायाः खलु पृथिव्या द्वादशनामधेयानि प्रपत्तानि । तद्यथा—‘ईमिति वा’ ईषदिति वा, वा जवो विकल्पार्थः, इति शब्दः स्वरूपनिर्देशार्थः, ईषदिति प्रथमं नाम । ‘ईषत्प्राग्भारात्वा’ ईषत्प्राग्भारेति द्वितीयं नाम । ‘तणूइ वा’ तनुरिति तृतीयम् । ‘तणुवतरिति वा’ तनुकतरेति चतुर्थम् । ‘सिद्धिति वा’ सिद्धिरिति नामधेयं पञ्चमम् । ‘सिद्धालएत्ति वा’ सिद्धालयेति षष्ठम् । ‘मुत्तिति वा’ मुक्तिरिति सप्तम् । ‘मुक्तालएत्ति वा’ मुक्तालयेति नामधेयमष्टमम् । ‘बंभेत्ति वा’ ब्रह्मेति नवमम्, ‘बंभवडिसएत्ति वा’ ब्रह्मावतंसिकेति दशमम् । ‘लोगपडिपुरणेत्ति वा’ लोकप्रतिपूरणेति एकादशम् । ‘लोगगचुलियाइ वा’ लोकाग्रचूलिकेति द्वादशं नाम ॥३२॥

मूलम्—इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरइयाणं बारस पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता । पंचमीए पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरइयाणं बारस सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता । असुरकुमाराणं देवाणं अत्थेगइयाणं बारस पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता । सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु अत्थेगइयाणं देवाणं बारसपलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता । लंतए कप्पे अत्थेगइयाणं देवाणं बारस सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता । जे देवा माहिंदं महिंदज्झयं कंबु कंबुगीवं पुंखं सुपुंखं महापुंखं पुंडं सुपुंडं महापुंडं नरिंदं नरिंदकंतं नरिंदुत्तरवडिसंगं विमाणं

के—उपरितन शिखर के अग्रभाग से बारह योजन ऊपर ईषत्प्राग्भार नामक सिद्ध शिला है । इस ईषत्प्राग्भार पृथिवी के बारह नाम हैं । वे इस प्रकार हैं—ईषत्१, ईषत्प्राग्भार२, तनू३, तनुकतरा४, सिद्धि५, सिद्धालय६, मुक्ति७, मुक्तालय८, ब्रह्म९, ब्रह्मावतंसिका१०, लोकप्रतिपूरणा११, और लोकाग्रचूलिका १२॥ मृ० ३२॥

ईषत्प्राग्भार नामकी सिद्धशिला छ. आ. ईषत्प्राग्भार पृथ्वीना बार नाम छ, ते आ. प्रमाणे छ—(१) ईषत् (२) ईषत्प्राग्भार, (३) तनू (४) तनुकतरा, (५) सिद्धि (६) सिद्धालय, (७) मुक्ति, (८) मुक्तालय, (९) ब्रह्म, (१०) ब्रह्मावतंसिका, (११) लोकप्रतिपूरण, अने (१२) लोकाग्रचूलिका, ॥ सू. ३२॥

देवताए उववण्णा, तेसि ण देवाण उक्कोसेण वारससागरोवमाइ
ठिई पण्णत्ता । ते णं देवा वारसण्ह अच्चमासाण आणमति वा
पाणमति वा उस्ससति वा नीससति वा । तेसि ण देवाण वारसहिं
वाससहस्सेहिं आहारट्टे समुप्पज्झइ । सतेगइया भवसिद्धिया जीवा
जे वारसहिं भवग्गहणेहिं सिज्झिस्सति, बुज्झिस्सति, मुच्चिस्सति
परिनिव्वाइस्सति, सव्वदुष्खाण अत करिस्सति ॥सू ३३॥

टीका— इमीस ण' इत्यादि । अस्यां खलु रत्नप्रमाया पृथिव्यामस्य
कपां नैरयिकाणां द्वादशपल्योपमानि स्थितिः प्रकृता । पञ्चम्यां पृथिव्याम
स्य कपां नैरयिकाणां द्वादश सागरोपमानि स्थितिः प्रकृता । असुरकुमाराणां
दवानामस्य कपां द्वादशपल्योपमानि स्थितिः प्रकृता । सौधर्मैशानेषु कल्पेषु
अस्य कपां दवानां द्वादशपल्योपमानि स्थितिः प्रकृता । सान्तके कल्पे अस्य केषा
दवानां द्वादश सागरोपमानि स्थितिः प्रकृता । य देवा महेन्द्र, महेन्द्रज
कम्बु३, कम्बुग्रीव४, पुष्प५, सुपुष्प६, महापुष्प७, पुष्प८ सुपुष्प९, महापुष्प१०,

टीकाप— 'इमीसे ण' इत्यादि ।

इम रत्नप्रमा पृथिवी म किननेक नारकियो की वारह पल्योपम
की स्थिति कही गई है । पांचवी में किननेक नारकियों की वारह साग
रोपम की स्थिति कही गई है । असुरकुमार देवा में किननेक देवों की
स्थिति वारह पल्योपम की कही गई है । सौधर्म ईशान कल्पों में किननेक
देवों की स्थिति वारह पल्योपम की कही गई है । सान्तक कल्प में किन
नेक देवों की स्थिति वारह सागरोपम की कही गई है । जो देव महेन्द्र,
महेन्द्रज, कम्बु३, कम्बुग्रीव४ पुष्प५, सुपुष्प६, महापुष्प७, पुष्प८

टीका— 'इमीसे ण' इत्यादि ।

अथ रत्नप्रमा पृथिवीमां डेटलाठ नारकीओनी आर पथ्योपमनी स्थिति छे
पथमी पृथिवीमा डेटलाठ नारकीओनी आर साजशेपमनी स्थिति कही छे अथुर
कुमार देवामा डेटलाठ देवानी स्थिति आर पथ्योपमनी कही छे सौधर्म तथा ईशान
कल्पमा डेटलाठ देवानी स्थिति आर पथ्योपमनी कही छे सान्तक कल्पमा डेटलाठ
देवानी स्थिति आर साजशेपमनी कही छे ये देवा (१) महेन्द्र (२) महेन्द्रज
(३) कम्बु (४) कम्बुग्रीव, (५) पुष्प (६) सुपुष्प (७) महापुष्प, (८) पुष्प (९)

नरेन्द्रं नरेन्द्रकान्त नरेन्द्रोत्तरावतंसकं च विमानम्=एतेषु त्रयोदशविमानेषु देव-
त्वेनोत्पन्नाः, तेषां खलु देवानां स्रोतरूपां द्वादशसागरोपमा स्थितिः प्रज्ञाता ।
ते खलु देवा द्वादशानामर्द्धमासानां=पण्णां मासानामन्ते आनन्ति वा प्राणन्ति
वा उच्छ्वसन्ति वा निःश्वसन्ति वा । तेषां खलु देवानां द्वादशभिर्वर्षमहस्रैरा-
हारसंज्ञा ममुत्पद्यते । सन्त्येके भयनिद्रिका जीवा ये द्वादशभिर्भवप्रज्ञैः सेत्स्यन्ति,
भोत्स्यन्ते, मोक्षयन्ति, परिनिर्वास्यन्ति, सर्वदुःखानामन्तं च करिष्यन्ति ॥सू. ३३॥

त्रयोदश समवायामाह -

मूलम्--तेरस किरिया ठाणा पणत्ता, तं जहा-अट्टादंडे, अण-
ट्टादंडे, हिंसादंडे, अकम्हादंडे, दिट्ठिविपरियासिदंडे, मुसावायवत्तिए,
अदिन्नादाणवत्तिए, अज्झत्थिए मानवत्तिए, मित्तदोसवत्तिए, माया-
वत्तिए, लोभवत्तिवए, इरियावहिए नामं तेरसमे । सोहम्मीसाणेसु
कप्पेसु तेरस विमाणपत्थडा पणत्ता । सोहम्मवडिंसगे णं विमाणे
णं अद्धतेरसजोयणसयसहस्साइं आयामविकखंभेणं पणत्ते ।

सुपुं१, महापुं१०, नरेन्द्र११, नरेन्द्रकान्त१२, और नरेन्द्रोत्तरावतंसक
१३, इन तेरह विमानों में देव की पर्याय से उत्पन्न होते हैं, उन देवों
की उत्कृष्ट स्थिति बारह सागरोपम की कही गई है। वे देव बारह
अर्द्धमासों के अर्थात् छ महीनों के बाद बाह्य आभ्यन्तरिक श्वासोच्छ्वास
लेते हैं। उन देवों को बारह हजार वर्ष के अनन्तर आहारसज्ञा उत्पन्न होती
है। इन में कितनेक जीव ऐसे होते हैं जो भवसिद्धि कहते हैं, और ये जीव
बारह भव लेने के बाद सिद्धपद प्राप्त करने वाले होंगे, बुद्ध होंगे, सर्वथा
कर्ममल से छूट जाने वाले होंगे, परिनिवृत्त हो जावेंगे और समस्त
दुःखों का नाश कर देंगे ॥सू० ३३॥

सुपुं१ (१०) महापुं१ (११) नरेन्द्र (१२) नरेन्द्रकान्त अने (१३) नरेन्द्रोत्तरावतंसक
ये तेर विमानोमा देवानी पर्याये उत्पन्न थाय छे, ने देवानी उत्कृष्ट स्थिति बार
सागरोपमनी कडेल छे ते देवो, छ भडिने भाह्य आभ्यन्तरिक श्वासोच्छ्वास ले छे
ते देवाने बार हजार वर्षे आहार देवानी अखिलाया उत्पन्न थाय छे तेमाना
कटलाक देवो भवसिद्धि छे ते देवो बार भव करीने सिद्धपद प्राप्त करे थुद्ध
थये, सर्वथा कर्ममलधी भुक्त थये, परिनिवृत्त थये जये अने समस्त दुःखोना
नाश करे ॥सू ३३॥

एष ईसाणवडिसगे वि । जलयरपचिदिय तिरिक्खजोणियाण अउ
 तेरस जाइकुलकोडीजोणीपमुहसयसहस्साइ पण्णत्ताइ । पाणाउस्स
 ण पुव्वस्स तेरस वत्थु पण्णत्तानि । गब्भयकतिय पचिदिय तिरिक्ख
 जोणियाण तेरस विहे पओगे पण्णत्ते । त जहा—सच्चमणपओगे,
 मोसमणपओगे, सच्चामोसमणपओगे, असच्चामोसमणपओगे, सच्च
 वइपओगे, मोसवइपओगे, सच्चामोसवइपओगे, असच्चामोसवइप
 ओगे, ओरालिअसरीरकायपओगे ओरालियमोससरीरकायपओगे,
 वउव्वियसरीरकायपओगे, वेउव्वियमीससरीरकायपयोगे कम्मसरीर
 कायपओगे । सूरमडलजोयणेण तेरसेहि एगसहि भागेहि जोयणस्स
 ऊण पण्णत्त ॥ सू० ३४ ॥

टीકા—‘તેરસ’ इत्यादि । ‘तरस’ प्रयोदश ‘किरियाठणा’ क्रियास्थानानि
 प्रज्ञापानि । तत्र करणं क्रिया कर्मचरनहेतुरूपा प्रवृत्तिः, तस्या स्थानानि भद्राः ।
 तद्यथा—‘अद्वाइडे’ अर्थदण्ड=दण्डपते=रसस्यावरादिहिंसते येन स दण्डः, दण्डः
 =अर्थदण्ड=स्वन्नरोरम्भजनादि प्रयोजनाय हिंसाकरणम् । इदं प्रथमं क्रियास्थानम् ।
 तद्विषय ‘अण्णत्ताइ’ अनर्थदण्ड=प्रयोजनमयपेक्षैव प्रसस्यावरादिनीवानां यत्प्राम

अथ सूत्रकार तेरસવે સમવાય કો પ્રકટ કરતે હૈ—‘તેરસ’ इत्यादि ।

टीकार्थं कर्मचरन में हेतुमूत प्रवृत्ति का नाम क्रिया है । इसक स्थान-
 भद्र-तेरस हें ये इस प्रकार हें—अर्थदंड१, अनर्थदंड, हिंसादंड३, अकस्मात्
 दंड४, दृष्टिविषयासि दंड५, श्रुतावाद्य प्रत्यय६, अदस्तादानप्रत्यय७, आध्या
 मिकट, मानप्रत्यय८, मिश्रमेघप्रत्यय९, मायाप्रत्यय११, लोभप्रत्यय१२, ऐर्ष्या
 परिग्रह१३ स्वशरीर एवं म्भजनादि क निमित्त को लेकर सो हिंसाकृत्य क्रिया

કવે સુત્રકાર તેરસવે સમવાય બતાવે યે—‘તેરસ’ इत्यादि ।

टीका—अमल चरना कारण इय प्रवृत्तिने कहे छ तेना आ प्रभावे तेर को छ—
 (१) अर्थदंड (२) अनर्थदंड, (३) हिंसादंड (४) अकस्मात्तदंड (५) दृष्टि विषयोसिद्धा
 दंड (६) श्रुतावाद्य प्रत्यय, (७) आदत्तदान प्रत्यय, (८) आध्यादिमिक (९) मान प्रत्यय
 (१०) मिश्रमेघ प्रत्यय (११) माया प्रत्यय, (१२) लोभ प्रत्यय जने (१३) ऐर्ष्यापिण्ड
 (१४) भोगाना शरीर निमित्त जने स्वजनादिने निमित्त जे हिंसाकृत्य करवाभा

વિચારન લાગુનથદણ્ડો દ્વિતાય ક્રિયાસ્થાનમ્ । તથા 'હિંસાદંડે' હિંસાદણ્ડઃ= હિંસામાત્રિત્ય યો દણ્ડો=હિંસન, અર્થાત્ 'અયં મામહિંસાત્, હિનસ્તિ, હિંસિષ્યતિ' વેતિ મનનિ ત્રિધાય પ્રતિપક્ષિણો યો વધઃ સ હિંસાદણ્ડસ્તૃતીયં ક્રિયાસ્થાનમ્ । તથા 'અકસ્માદંડે' અકસ્માદ્દણ્ડઃ=અન્યવધાય પ્રવૃત્તસ્ય અન્યસ્ય હનનમ્ । ઇતિ-ચતુર્થ ક્રિયાસ્થાનમ્ । તથા 'દદ્ધિવિપર્યાસિયાદંડે' દદ્ધિ વિપર્યાસિકાદણ્ડઃ= વિપર્યાસો વિપર્યાસિકા, દદ્ધેવિપર્યાસિકા મતિભ્રાન્તતા, તથા નિમિત્તભૂતયા યો દણ્ડઃ=પ્રાણિવધઃ સ દદ્ધિ વિપર્યાસિકાદણ્ડઃ, મિત્રાદીનામમિત્રાદિબુદ્ધ્યા હનનમિત્યર્થઃ । ઇતિ પશ્ચમમ્ । તથા-‘મૃષાવાદપ્રત્યયમ્, મૃષાવાદઃ=આત્મપરોભયાર્થમસત્યવચનમ્, સ એવ પ્રત્યયઃ=કારણં યસ્ય તત્ મૃષાવાદપ્રત્યયમ્ । પષ્ટં ક્રિયાસ્થાનમ્ । તથા ‘અદત્તાદાનપ્રત્યયમ્, અદત્તાદાનં ચૌર્થ પ્રત્યયઃ કારણં યસ્ય તત્ । સપ્તમં ક્રિયાસ્થાનમ્ । તથા ‘અઙ્ગત્યે’ આધ્યાત્મિકમ્=અધ્યાત્મ=મનઃ, તત્ર મત્રમ્ આધ્યાત્મિકમ્, વાહ્યનિમિત્તમનપેક્ષ્યૈવ

જાતા હૈ વહ અર્થદંડ હૈ ૧ । પ્રયોજન કી અપેક્ષા વિના હી જો ત્રસ સ્થાવર આદિ જીવોં કી હિંસા કર દી જાતી હૈ વહ અનર્થદંડ ૨ । ‘હસને મેરી હિંસા કી થી, યહ મેરી હિંસા કરતા હૈ અથવા યહ મેરી હિંસા કરેગા’ હસ પ્રકાર કા વિચાર કર પ્રતિપક્ષી કા જો વધ કર દિયા જાના હૈ વહ હિંસાદંડ હૈ ૩ । અન્યજીવ કી હિંસા કરને કે લિયે પ્રવૃત્ત હુઆ પુરુષ અન્ય પ્રાણી કી હિંસા કર દે યહ અકસ્માત્ દંડ હૈ ૪ । મતિ કી વિપર્યાસિતા કા નિમિત્ત લેકર જો હિંસા હો જાતી હૈ વહ દદ્ધિવિપર્યાસિકા દંડ હૈ ૫ । જૈસે મિત્ર કો અમિત્ર કી બુદ્ધિ સે માર દેના ૫ । જિસ કા કારણ મૃષાવાદ હો વહ મૃષાવાદપ્રત્યય હૈ ૬ । જિસ કા કારણ અદત્તાદાન હો વહ અદત્તાદાન પ્રત્યય હૈ ૭ । વાહ્યનિમિત્ત કી અપેક્ષા ક્રિયે વિના હી જો શોક ક્રિયા જાતા હૈ વહ

આવે છે, તેને ‘અર્થદંડ’ કહે છે, (૧) કોઈ પણ જાતના પ્રયોજન વિના ત્રસ, સ્થાવર આદિ જીવોની જે હિંસા કરાય છે તેને ‘અનર્થદંડ’ કહે છે (૩) “ આ વ્યક્તિએ મારી હિંસા કરી હતી, આ મને હિંસા કરે છે, અથવા આ મારી હિંસા કરશે ” એવો વિચાર કરીને પ્રતિપક્ષી (વીગધી) નો જે વધ કરાય છે તે “હિંસાદંડ” છે. (૪) એક જીવની હિંસા કરવાને તૈયાર થયેલ પુરુષ અન્ય જીવની હિંસા કરી નાખે છે. તેને ‘અકસ્માત્ દંડ’ કહે છે (૫) મતિની વિપર્યાસિતાને કારણે જે હિંસા થઈ જાય છે તેને ‘દદ્ધિવિપર્યાસિકા દંડ’ કહે છે જેમ કે મિત્રને અમિત્ર ગણીને મારવો (૬) હિંસાનું કારણ મૃષાવાદ હોય તે હિંસાને “મૃષાવાદપ્રત્યય” કહે છે (૭) જે હિંસાનું કારણ અદત્તાદાન હોય છે તે હિંસાને “અદત્તાદાનપ્રત્યય” કહે છે [૮] બાહ્ય નિમિત્તની અપેક્ષા કર્યા વિના જ જે શોક આદિ કરાય છે તેને ‘આધ્યાત્મિક’

શ્રાદ્ધાદિકરણમદ્દમં ક્રિયામ્પાનમ્ । તથા-‘માનવસિપ’ માનવસ્ય માત્યાદિમદ્
 નિમિત્ત નવમ ક્રિયામ્પાનમ્ । તથા મિત્રદાસવસિપ’ મિત્રદુષપ્રત્યયમ્=મિત્રેષુ દુષેષ
 પ્રત્યયો યમ્ તન્ દિતચિન્તકાનાં માતાપિત્રાદીનામરુપડ્યપરાધે મહાવંદકરણ
 દમ્મમં ક્રિયામ્પાનમ્ । માયાપ્રત્યયમ્-માયાનિબંધનમકાદ્રમ્ । એવ સામપ્રત્ય-
 યમ્=સોમનિમિત્તક ડાદશ ક્રિયામ્પાનમ્ । તથા ‘દરિયાવસિપ’ ડેર્યાવસિકમ્=
 દયાવય મયમ્ ડેર્યાવસિકં, કેવલયોગનિમિત્ત કર્મવન્ધ, અર્થાદુપસ્રાન્તમોહાદીનાં
 સાતવદનીયવન્ધો નામ ‘તેરસમ’ પ્રયોદશ ક્રિયામ્પાન મહત્તમ । સૌધર્મજ્ઞાનેષુ
 કરુણેષુ પ્રયોદશ ‘વિમાણપત્થદા’ વિમાનપ્રસ્તગ મહત્તાઃ ।

‘માહન્મવદિસગે ણ વિમાણે ણે’ સૌધમાવર્તસક સ્વલ્લુ વિમાન સ્વલ્લુ ‘ણ’
 દ્વય વાચ્યામહ્કાર, સૌધમવન્ધોકોડર્ધચન્દ્રાકૃતિક પૂર્વપશ્ચિમત આયામયુક્ત
 ઉત્તરદક્ષિણતા વિસ્તૃત । તસ્ય મધ્યમાગે પ્રયોદશે પ્રસ્તટ પ્રકસ્ય નિવાસમૂત
 વિમાનમસ્તિ, તદ્ વિમાનં સૌધમદેવલોકસ્ય અવતસકઃ=શિરામૂષણમિત્ર વતતે

આચ્યામિક ફેટા જાયાદિ મદ્ કો નિમિત્ત કરકે જો ક્રિયા જાતા ફે
 યદ્દ માનવસ્ય ફે ૦ । દિતકારી માતા પિતા પ્રાદિ કો અવ્વ મી અપરાધ
 રાને પર પરા દ્વદ્વના યદ્દ મિત્ર દુષપ્રત્યય ફે ૧૦ । ફેલી તરદ માયા કો
 નિમિત્ત કરકે જો ક્રિયા જાતા-ફે-ચદ માયાપ્રત્યય ફે ૧૧ । ત્વ લોમ ક
 નિમિત્ત સે ક્રિયા જાને થાલા લોમપ્રત્યય ફે ૧૨ । કેવલ યોગ નિમિત્તક
 જા કર્મવંધ હોતા ફે અર્થાત્ ઉપસ્રાન્તમોહ પ્રાદિ ગુણમ્પાનવર્તી જીવાં કે જા
 એક સાતાવેદનીય કર્મ કા વંધ હોતા ફે વદ ડેર્યાવસિક ક્રિયા મ્પાન ફે ૧૩ ।

સૌધર્મ તથા ઈશ્વાન, કન કો કર્વર્ણ મે તેરદ્દ વિમાન પ્રસ્તગ કદ
 ગયે ફે । સૌધર્મ જ્વલોક અર્ધચન્દ્ર કે આશર જૈમા ફે । પૂર્વપશ્ચિમ મ
 લંબા ઓર ઉત્તરદક્ષિણ મે જોડા ફે । કસ કે મધ્યમાગ મે તેરદ્દે પ્રસ્તગ
 મ ઇન્દ્ર કા નિવાસમૂત વિમાન ફે । યદ્દ વિમાન સૌધર્મ જ્વલાક કા શિતો

(૬) અતિ આશિન્તા મદને કાણ્હે ને દિ-ના કા-વ ઉ ત માનવસ્યય’ કહેવાય
 ૨ (૧૦) દિતકારી માતા પિતા આશિને થોડો પજુ અપરાધ થતા થોડી શિક્ષા
 ફેલી ત મિત્રદુષપ્રત્યય’ કહેવાય ફે (૧૧) જ્યેષ્ઠ પ્રમાણે માથાને કાણ્હે ને
 કરવામા આવે ઉ તેને માયાપ્રત્યય’ કહે ઉ (૧૨) થોમને કાણ્હે ને કરવામા
 આવ ઉ તેન ‘લોમપ્રત્યય’ કહે ઉ (૧૩) કેવલ ચેત્ર નિમિત્ત ૭ કર્મવંધ
 થાય ઉ જ્યેષ્ઠે ઉપસ્રાન્તમોહ પ્રાદિ ગુણ પાનવર્તી છવેને ને જ્યેષ્ઠ સાતાવેદનીય
 કર્મનો બધ થાય ઉ તને ડેર્યાવસિક ‘ક્રિયામ્પાન’ કહે ઉ

સૌધર્મ તથા ઈશ્વાન જે મન્ને કર્મોર્થા તેર વિમાન પ્રસ્તગ કહેલ ઉ
 પૂર પશ્ચિમમાં થાય અને ઉત્તર દક્ષિણમાં પડોણુ ઉ તેના મધ્ય ભાગમાં તેરમાં
 પ્રસ્તગમા (મરમા) ઈન્દ્રના નિવાસમૂત વિમાન ઉ તે વિમાન સૌધર્મ દેવદેવના

उतस्तद् विमानं सौधर्मावतंसकविमानमित्युच्यते, तद् विमानम् 'अद्धतेरस जोयण मयमहस्साइ' अर्धत्रयोदशयोजनशतसहस्राणि सार्धद्वादशलक्षयोजनानि आयाम- विष्कम्भाभ्यां प्रज्ञप्तम् । एवं सौधर्मावतंसक विमानवत् ईशानावतंसकविमानमपि विज्ञेयम् । जलचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकानाम् 'जाडकुलकोडीजोणीपमुहसयसह- स्साइ' जातिकुलकोटियोनिसमुखशतसहस्राणि=जातौ कुलकोटीना योनिसमुखानि उत्पत्तिस्थानप्रभवानि यानि शतसहस्राणि तानि 'अद्धतेरस' अर्धत्रयोदशसार्ध- द्वादशलक्षानि प्रज्ञप्तानि, 'पाणाउस्स णं पुव्वस्स तेरस वत्थू पणत्ता' 'पाणाउस्स णं' प्राणायुषः खलु. यत्र प्राणिनामायुर्विधानं समेदमभिधायते, तत्प्राणायुर्द्वादशं पूर्वम् तस्य खलु पूर्वस्य त्रयोदश 'वत्थू' वस्तूनि=अध्ययनवद्विभागविशेषाः प्रज्ञ- स्तानि । 'गम्भवक्कंतियपंचिदियतिरिक्खजोणियाणं' गर्भव्युत्क्रान्तिरूपत्तिर्येषां ते, ते च पञ्चेन्द्रियतिर्यग्यो- निकश्चेति, तेषाम्, 'तेरसविहे' त्रयोदशविधः 'पओगे' प्रयोगः=प्रयोजनं प्रयोगः - मनोवाक्याव्यापार इत्यर्थः, प्रज्ञप्तः, तद्यथा—'सच्चासणपओगे' सत्यमनः प्रयोगः १, 'मोसमणपओगे' मृषामनः प्रयोगः २, मच्चा मोसमणपओगे' सत्यमृषामनः प्रयोगः ३, 'असच्चा मोसमणपओगे' असत्यामृषामनः प्रयोगः ४, इति चत्वारो मनसः प्रयोगाः।

भूषण जैसा है, इसलिये इसका नाम सौधर्मावतंसकविमान है । यह विमान लंबाई और चौड़ाई में अर्धत्रयोदश अर्थात् साढा बारह १२॥ लाग्व योजन का है । इसी तरह ईशानावतंसक विमान भी हैं । जलचर पञ्चेन्द्रिय- तिर्यच योनिवाले जीवों की जाति में कुल कोटियों की योनियां अर्धत्र- योदश-सार्धद्वादश लक्ष अर्थात् साढा बारह १२॥ लाग्व कही गई हैं । प्राणायु नामक बारहवें पूर्व के, अध्ययन की तरह विभाग विशेष तेग्ह कहे गये हैं । गर्भज पञ्चेन्द्रिय तिर्यचों के प्रयोग-मन, वचन और काय के व्यापार तेरह प्रकार के कहे गये हैं । वे इस प्रकार हैं—सत्यमनः प्रयोग १, मृषामनः प्रयोग २, सत्यमृषामनः प्रयोग ३, असत्यामृषामनः प्रयोग ४,

शिशोभूषण जेवुं छे, तेनु नाम सौधर्मावतंसक विमान छे ते विमान लण्णाम्हा साडा ञार- (१२॥) लाण योजननु छे ओ ञ प्रमाणे ईशानावतंसक विमान पण्णु छे. ञणयर पञ्चेन्द्रिय तिर्यच योनिवाणा एवेणी नतिमा कुल कोटियोनी योनियो साडा ञार लाण कडेवामा आवेल छे प्रणायुं नामना ञारमा पूर्वना, अध्ययनना जेवा निहाण तेर कडेल छे गर्भे ञ पञ्चेन्द्रिय तिर्यचोना प्रयोग मन, वचन, अने कायनी प्रवृत्ति तेर प्रकारनी कडेल छे ते आ प्रमाणे छे—(१) सत्य मन. प्रयोग (२) मृषा मन. प्रयोग, (३) सत्य मृषा मन. प्रयोग, (४) असत्यामृषामन. प्रयोग

तथा 'सञ्चरूपभोगे' सत्यवच प्रयोगः ५, 'मोसञ्चरूपभोगे' मृषावच प्रयोग ६, 'मोसाञ्चरूपभोगे' सत्यमृषावच प्रयोग ७, 'असत्यामोसाञ्चरूपभोगे' असत्यामृषावच प्रयोग ८, इति चत्वारो वचन प्रयोगाः । 'ओदाभियसरीरकायप्रभोगे' औदारिकमिश्रशरीरकायप्रयोग, 'नेउच्छियसरीरकायप्रभोगे' वैकुर्विकशरीरकायप्रयोग, 'वेउगिर्यमीसरीरकायप्रभोगे' वैकुर्विकमिश्रशरीरकायप्रयोग, 'कम्पसरीरकायप्रभोगे' कम्पकायप्रयोग इति पञ्च कायिका प्रयोगाः । यद्यपि प्रयोगाः पञ्चदशति परन्तु आहारकाहारकमिधौ प्रयोगौ सयमिनामव मरत, न तु तिरस्कारप्रयोदशैव प्रज्ञाः । 'मरमहम्भोपणे' मूरमण्डलप्रयोजनम् = मूरमण्डलस्य = भाविमानवृत्तस्य प्रयोजनम् 'यं' इति वाक्यान्वङ्कारे, 'तरसेहि एगसद्धिममायणस्स' 'एगसद्धिमागेहि' एकरूपिमागैः = एकरूपिमागविभक्तस्य यथा अर्थावेकरूपिमागविभक्ते प्रयोजने 'तरसेहि' अर्थाद्विभक्तिसंज्ञकम् = अर्थाद्विभक्तमागान् प्रयोजननस्याष्टचत्वारिंशद्विभागप्रमाणमित्यर्थः, प्रथमम् ।म् ३५॥

मन क इस् प्रकार ये चार प्रयोग ४। सत्यवच प्रयोग ५, मृषावच प्रयोग ६, सत्यमृषावच प्रयोग ७, असत्यामृषावच प्रयोग ८, वचन के इस् प्रकार ये प्रयोग ८। औदारिक उरार कायप्रयोग ९। औदारिकमिश्रशरीरकायप्रयोग १०, वैकुर्विकशरीरकायप्रयोग ११, वैकुर्विकमिश्रशरीरकायप्रयोग १२, और का शरीरकायप्रयोग हैं १३। इस् प्रकार ये पाँच शरीरके प्रयोग हैं यद्यपि पन्द्रह कार क कह गये हैं परन्तु आहारक प्रयोग और आहारकमिधौ प्रयोग, ये दो प्रयोग केवल सयमीजनों के ही होते हैं, तिरस्कार के इस्लिय उनको अपेक्षा ये यहाँ तेरह ही कहे गये हैं। भाविस्त्वयि के वृत्त का प्रयोजन इगसठ (६१) विभागों में विभक्त करने पर

आ शीते मनना चार प्रयोग हैं (५) सत्यवच प्रयोग, (६) मृषावच प्रयोग (७) सत्य मृषा वच प्रयोग (८) असत्या मृषा वच प्रयोग, आ शीते पयनना प्रयोग ६ (९) औदारिक काय प्रयोग, (१०) औदारिक मिश्र शरीर काय प्रयोग (११) वैकुर्विक शरीर काय प्रयोग (१२) वैकुर्विक मिश्र शरीर काय प्रयोग, अने उभाँज शरीर काय प्रयोग आ प्रकारना पाँच शरीरना प्रयोग हैं जे के प्रकारना प्रयोग कहेलें हैं पञ्च आहारक प्रयोग अने आहारक मिश्र प्रयोग प्रयोग कहल सयमी जनोने क बाबु हैं तिरस्कारो नही, अही तेर प्रयोग जताम्

अ गित्य विमानना वृत्तनु योजन ओकस आयेमौ विभक्त करवाभा

मूलम्—इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरइ-
याणं तेरस पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता । पंचमीए पुढवीए अत्थेग-
इयाणं नेरइयाणं तेरस सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता । असुरकुमाराणं
देवाणं अत्थेगइयाणं तेरस पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता । सोहम्मी-
साणेसु कप्पेसु अत्थेगइयाणं देवाणं तेरस पलिओवमाइं ठिई पण्णत्ता ।
लंतए कप्पे अत्थेगइयाणं देवाणं तेरस सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता ।
जे देवा वज्जं सुवज्जं वज्जावत्तं वज्जकंतं वज्जवण्णं वज्जलेसं वज्जरूवं
वज्जसिंगं वज्जसिट्ठं वज्जकूडं वज्जुत्तरवडिसंगं वडरं वडरावत्तं वडरप्पभं
वडरकंतं वडरवण्णं वडरलेसं वडररूवं वडरसिंगं वडरसिट्ठं वडरकूडं
वडरुत्तरवडिसंगं लोगं लोगावत्तं लोगप्पभं लोगकंतं लोगवण्णं लोग-
लेसं लोगरूवं लोगसिंगं लोगसिट्ठं लोगकूडं लोगुत्तरवडिसंगं विमाणं
देवत्ताए उववण्णा, तेसि णं देवाणं उक्कोसेणं तेरस सागरोवमाइं
ठिई पण्णत्ता । ते णं देवा तेरसहिं अद्धमासेहिं आणमंति वा
पाणमंति वा ऊससति वा नीससंति वा । तेसि णं देवाणं तेरसहिं
वाससहस्सेहिं आहारट्ठे सम्प्पज्जइ । संतेगइया भवसिद्धिया जीवा
जे तेरसहिं भवग्गहणेहिं सिज्झिस्संति बुज्झिस्संति मुच्चिस्संति परि-
निव्वाइस्संति, सव्वदुक्खाणमंतं करिस्संति ॥सू. ३५॥

टीका—‘इमीसे णं’ इत्यादि । अस्यां खलु रत्नप्रभायां पृथिव्यामस्त्ये-
केषा नैरयिकाणां त्रयोदश पल्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । पञ्चम्यां पृथिव्याम-

तेरइ भागों से न्यून है । अर्थात् एकयोजन के इगसठ भागों में से
अडतालीस (४८) भागप्रमाण है सू० ३४॥

तेना तेर भाग जेट्ठुं न्यून छे जेट्ठे द्वे जेट्ठे योजनना जेट्ठसठ भागोभाधा
अडतालीस (४८) भाग प्रमाण छे (सू ३४)

अस्त्येकेषां नैरयिकाणां प्रयोदश सागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । असुरकुमाराणां
 दवानामस्त्येकेषां प्रयोदश पल्यापमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । सौधर्मेशानपु कल्पपु
 अस्त्येकेषां देवानाम् प्रयोदश पल्यापमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । लान्तके कल्प
 अस्त्येकेषां देवानां अयाञ्च सागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । य देवा वज्रं
 सुवज्रं यथावर्षं वज्रकान्तं वज्रवर्णं वज्रलेख्यं वज्ररूपं वज्रभृङ्गं वज्रसृष्टं वज्रकूटं
 वज्रोत्तरावतसकं वज्रं वज्रावतं वज्रममं वज्रकान्तं वज्रवर्णं वज्रलेख्यं वज्ररूपं
 वज्रभृङ्गं वज्रसृष्टं वज्रकूटं वज्रोत्तरावतसकं लोकं लोकवर्णं लोकममं लोककान्तं
 लोकवर्णं लोकलेख्यं लोकरूपं लोकभृङ्गं लोकसृष्टं लोककूटं लोकोत्तरावतसकं च

‘इमीसे णं’ इत्यादि ।

टीकार्थ—इस रत्नप्रभा पृथिवी में कितनेक नारकियों की स्थिति तेरह
 पल्यापम की कही गई है । पाँचवीं पृथिवी में कितनेक नारकियों की स्थिति
 तरह सागरोपम की कही गई है । असुरकुमार देवों में कितनेक
 देवों की स्थिति तेरह पल्यापम की कही गई है । सौधर्म ईशान कल्पों
 में कितनेक देवों की स्थिति तेरह पल्यापम की कही गई है । लान्तककल्प
 में कितनेक देवों का तेरह सागरोपम की स्थिति कही गई है । जो देव
 वज्र१ सुवज्र२, वज्रावर्ण३, वज्रकान्त४, वज्रवर्ण५, वज्रलेख्य६, वज्ररूप७,
 वज्रभृङ्ग८, वज्रसृष्ट९, वज्रकूट१०, वज्रोत्तरावतसक११, वज्र१२, वज्रा-
 वर्ण१३ वज्रमम१४, वज्रकान्त१५, वज्रवर्ण१६, वज्रलेख्य१७, वज्ररूप१८,
 वज्रभृङ्ग१९, वज्रसृष्ट२०, वज्रकूट२१, वज्रोत्तरावतसक२२, लोक२३, लोक-
 वर्ण २४, लोकमम२५, लोककान्त२६, लोकवर्ण२७, लोकलेख्य२८, लोक
 रूप२९, लोकभृङ्ग३०, लोकसृष्ट३१, लोककूट३२, और लोकोत्तरावतसक३३,

टीकार्थ—इमिसेणं इत्यादि ।

आ रत्नप्रभा पृथ्वीमा कटलाक नारकीजोनी स्थिति तेर प प्यापमनी
 ठकी छ पाँचवीं पृथ्वीमा कटलाक नारकीजोनी स्थिति तेर सागरोपमनी ठकी छ
 असुरकुमार देवोमा कटलाक देवोनी तेर पल्यापमनी स्थिति ठकी छ सौधर्म तथ
 पशान्त कल्पोमा कटलाक देवोनी स्थिति तेर पल्यापमनी ठकी छ लान्तक कल्पमा
 कटलाक देवोनी स्थिति तेर सागरोपमनी ठकी छ ये देवो (१) वज्र, (२) सुवज्र (३)
 वज्रावर्ण (४) वज्रकान्त (५) वज्रवर्ण (६) वज्रलेख्य (७) वज्ररूप (८) वज्रभृङ्ग
 (९) वज्रसृष्ट (१०) वज्रकूट, (११) वज्रोत्तरावतसक (१२) वज्र, (१३) वज्रावर्ण
 (१४) वज्रमम (१५) वज्रकान्त, (१६) वज्रवर्ण, (१७) वज्रलेख्य, (१८) वज्ररूप
 (१९) वज्रभृङ्ग, (२०) वज्रसृष्ट (२१) वज्रकूट (२२) वज्रोत्तरावतसक (२३)
 लोक, (२४) लोकवर्ण (२५) लोकमम (२६) लोककान्त, (२७) लोकवर्ण (२८)
 लोकलेख्य (२९) लोकरूप (३०) लोकभृङ्ग (३१) लोकसृष्ट (३२) लोककूट अने (३३)

विमानम्=एतेषु त्रयस्त्रिंशद् विमानेषु देवत्वेनोत्पन्नाः, तेषां खलु देवानामु-
त्कर्षेण त्रयोदशसागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । ते खलु देवास्त्रयोदशभिरद्भ-
मासैरानन्ति वा प्राणन्ति वा उच्छ्वसन्ति वा निःश्वसन्ति वा । तेषां खलु
देवानां त्रयोदशभिर्वर्षसहस्रराहारसंज्ञा समुत्पद्यते । सन्त्येके भवसिद्धिं जीवा
ये त्रयोदशभिर्भवग्रहणैः सेत्स्यन्ति भोत्स्यन्ते परिनिर्वास्यन्ति सर्वदुःखानामन्तं
करिष्यन्ति ॥ मृ. ३५ ॥

चतुर्दश समवायमाह—

मूलम्—चउद्दस भूयग्गामा पणत्ता, तं जहा—सुहुमा अपज्जत्तया
सुहुमा पज्जत्तया बादरा अपज्जत्तया बादरा पज्जत्तया वेइंदिया अप-
ज्जत्तया वेइंदिया पज्जत्तया तेंदिया अपज्जत्तया तेंदिया पज्जत्तया चउ-
रिंदिया अपज्जत्तया चउरिंदिया पज्जत्तया पंचिंदिया आसन्नि अपज्ज-
त्तया पंचिंदिया आसन्निपज्जत्तया पंचिंदिया सन्नि अपज्जत्तया पंचिंदिया
सन्नि पज्जत्तया । चउद्दस पुव्वा पणत्ता, तं जहा—उप्पायपुव्वमग्गे-
णियं च तइयं च वीरियं पुव्वं । अत्थीनत्थिपवायं तत्तो नाणप्पवायं
च ॥१॥ सच्चप्पवायपुव्व तत्तो आयप्पवाय पुव्वं च । कम्मप्पवायपुव्वं

इन तेनिस विमानों में देव की पर्याय से उत्पन्न होते हैं उन देवों की
उत्कृष्ट स्थिति तेरह सागरोपम की कही गई है वे देव तेरह अर्द्धमासों
के बाद बाह्य आभ्यन्तरिक श्वासोच्छ्वास लेते हैं । उन देवों को तेरह
हजार वर्षों के अनन्तर आहारसंज्ञा उत्पन्न होती है । इनमें कितनेक
देव ऐसे होते हैं जो तेरह भव के बाद सिद्धपद को भोगने वाले होंगे,
बुद्ध होंगे, कर्ममल से सर्वथा रहित हो जावेंगे, परिनिवृत्त होजावेंगे और
समस्त दुःखों को अन्त कर देंगे ॥मृ० ३५॥

લોકોત્તરાવતંસક, એ તેત્રીસ વિમાનોમા દેવની પર્યાયે ઉત્પન્ન થાય છે તે દેવોની
ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ તેર સાગરોપમની કહી છે તે દેવો સાડા છ મહિને બાહ્ય અભ્ય-
ન્તરિક શ્વાસોચ્છવાસ ગ્રહણ કરે છે. તે દેવોને તેર હજાર વર્ષ પછી આહાર સંજ્ઞા
ઉત્પન્ન થાય છે તે દેવોમા કેટલાક દેવો એવા હોય છે કે જે તેર ભવ કયાં પછી
સિદ્ધપદ પ્રાપ્ત કરશે, બુદ્ધ થશે, કર્મભળથી સર્વથા રહિત થઈ જશે, પરિનિવૃત્ત
થશે અને સમસ્ત દુઃખોનો અન્ત કરી નાખશે ॥સૂ. ૩૫॥

पञ्चक्खाण भवे नवम ॥२॥ विज्जाअणुप्पवाय अवक्षपाणाउ वारस पुव्व । तत्तो किरियविसाल पुव्व तह विंदुसार च ॥३॥ अग्गणीअस्स ण पुव्वस्स चउदसवस्थूइ पणत्ता इ । समणस्स ण भगवओ महावीरस्स समणसाहस्सीओ उक्कोसिआ समणसपया होत्था । कम्म विसोहिमग्गण पट्टच्च चउदस जीवहाणा पणत्ता । त जहा—मिच्छदिक्का सासायणसम्मदिक्का सम्मामिच्छदिक्की अविरयसम्मदिक्की विरया विरय पमत्तसजय अप्पमत्तसजय नियहि वायरे अनियट्ठिवायरे सुद्धमसपराय उवसामय वा खवय वा उवसतमोहे खीणमोहे सजोगी केवली अजोगी केवली । भरहेर वयाओ ण जीवाओ चउदस चउदस जोयणसहस्साइ चत्ताहि य पगुत्तरे जोजणसय छच्च पगूणवीसे भागे जोयणस्स आयामेण पणत्ता । पगमेगस्स ण रण्णो चाउरतच्चक्क वट्ठिस्स चउदस्स रयणा पणत्ता , तंजहा—इत्थीरयणे सेणावइरयणे गाहावइरयणे पुरोहियरयणे वड्डरयणे आसरयणे हत्थिरयणे असिरयण दड्डरयणे चक्करयणे छत्तरयणे चम्मरयणे मणिरयणे कगिणीरयणे । जल्लूदीवे ण दीवे चउदस महानईओ पुव्वावरेण लवणस्समुइ समुप्पत्ति त जहा—गगा सिंचूरोहिया रोहिअसा हरी हरिकता सीया सीओदा नरकंता नारिकाता सुवण्णकूला रुप्पकुला रत्ता रत्तवई ॥३६॥

टीका— 'चउदस' इत्यादि । चउदस 'भूयमाणा' भूतग्रामा = जीव समूहाः प्रवृत्ताः । तथया—'सुद्धमा अराज्जतया' = सुद्धमाः = सुद्धमनामकमोक्षदयवर्णि

अथ चौदहमख्या विशिष्ट समवाय को मुख्यकार प्रकट करते हैं— 'चउदस' इत्यादि ।

टीकार्थ—चौदह जीवसमूह कहा है, व इस प्रकार हैं—मुख्य एकेन्द्रिय

७वे सूत्रान्न चौदनी च पञ्चवाजा समवायानि प्रकट करे छे—

'चउदस' इत्यादि ।

टीकार्थ—नीचे प्रभावे कोट लक्षणमूह कथा छे (१) सूत्रम कोटिन्द्रिय अपथोप

त्वात् एकेन्द्रियाः पृथिव्यादयः, अपर्याप्तका=सूक्ष्मनामकर्मोदयवशादपरिपूर्ण-
स्वकीय पर्याप्तयः इति प्रथमो भूतग्रामः । 'सुहृमा पञ्जत्तया' सूक्ष्माः पर्याप्तयः=
एकेन्द्रियाः पृथिव्यादय एव कर्मपरिसर्माप्तवशात्परिपूर्णस्वकीयपर्याप्तय इति
द्वितीयो भूतग्रामः । तथा वादरा अपर्याप्तकाः वादरा पर्याप्तकाः । वादरनामकं
कर्मोदयवशात्पृथिव्यादयः अपर्याप्तकपर्याप्तकभेदाद्विविधाः इति तृतीयचतुर्थौ
भूतग्रामौ । तथा द्विन्द्रियाः अपर्याप्तकाः, द्विन्द्रियाः पर्याप्तकाः । इति पञ्चमषष्ठ-
भूतग्रामौ । त्रीन्द्रियाः अपर्याप्तका त्रीन्द्रियाः—पर्याप्तकाः । इति सप्तमाष्टमौ भूत-
ग्रामौ । चतुरिन्द्रिया अपर्याप्तकाः चतुरिन्द्रिया पर्याप्तकाः इति नवमदशमौ भूतग्रामौ ।
पञ्चेन्द्रिया असंज्ञपर्याप्तकाः, पञ्चेन्द्रियाः असंज्ञा पर्याप्तकाः=मनःपर्याप्तपर्याप्ति
रहितत्वेन द्विविधाः पञ्चेन्द्रियाः इति एकादशद्वादशौ भूतग्रामौ । पञ्चेन्द्रियाः मज्ज-
पर्याप्तकाः, पञ्चेन्द्रियाः संज्ञा पर्याप्तकाः=मनःपर्याप्तपर्याप्तिभेदेन पञ्चेन्द्रिया
द्विविधा इति त्रयोदशचतुर्दशौ भूतग्रामौ ।

चतुर्दशपूर्वाणि प्रज्ञप्तानि, तद्यथा—तान्येवाह—'उपायपुत्रवे' त्यादिभिस्त्रिभि-
र्गाथाभिः—तच्छायाश्चेत्यम्—

उत्पादपूर्वमग्रायणीय च तृतीय च त्रैर्यं पूर्वम् ।

अस्ति नास्ति प्रवादं ततो ज्ञानप्रवाद च ॥१॥

सत्यप्रवादपूर्वं तत आत्मप्रवादं च ।

कर्मप्रवादपूर्वं प्रत्याख्यानं भवेन्नवमम् ॥२॥

विद्यानुप्रवादमवन्ध्यं प्राणायुर्द्वादशं पूर्वम्

ततः क्रियाविशालं पूर्वं तथा बिन्दुसारं च ॥३॥

अपर्याप्त१, सूक्ष्म एकेन्द्रिय पर्याप्त२, वादर एकेन्द्रिय अपर्याप्त३, वादर-
एकेन्द्रिय पर्याप्त४, दो, इंद्रिय अपर्याप्त५, दो इंद्रिय पर्याप्त६, तेन्द्रिय अप-
र्याप्त७, तेन्द्रिय पर्याप्त८, चौ इन्द्रिय अपर्याप्त९, चौ इन्द्रिय पर्याप्त१०,
पंचेन्द्रिय असंज्ञा अपर्याप्त११, पंचेन्द्रिय असंज्ञा पर्याप्त१२, पंचेन्द्रियसंज्ञा
अपर्याप्त१३, पंचेन्द्रियसंज्ञा पर्याप्त१४ ।

चौदह पूर्व कहे गये हैं—वे इस प्रकार हैं—सो तीन गाथाओं से कहे

(२) सूक्ष्म एकेन्द्रिय पर्याप्त, (३) वादर एकेन्द्रिय अपर्याप्त (४) वादर एकेन्द्रिय
पर्याप्त, (५) द्वीन्द्रिय अपर्याप्त, (६) द्वीन्द्रिय पर्याप्त (७) तेन्द्रिय अपर्याप्त, (८)
तेन्द्रिय पर्याप्त, (९) चौन्द्रिय अपर्याप्त, (१०) चौन्द्रिय पर्याप्त, (११)
पंचेन्द्रिय असंज्ञा अपर्याप्त, (१२) पंचेन्द्रिय असंज्ञा पर्याप्त, (१३) पंचेन्द्रिय संज्ञा
अपर्याप्त (१४) पंचेन्द्रिय संज्ञा पर्याप्त.

और पूर्व दशाव्या छे ते त्रय गाथाओं द्वारा आ प्रमाणे अताव्या छे

‘उत्पायपुण्य’ उत्पादपूर्वम्=उत्पादमधिकृत्य यत्र द्रव्यवर्णाया प्ररूपितास्तत्
 उत्पादपूर्व नाम प्रथम पूर्वम् । ‘अग्रायणीय च=अग्रायणीय च अग्र परिमाण तस्य भयन
 गमनम्, अग्रायण, तस्मै हितम् अग्रायणीय पूर्वम्=सर्वद्रव्यादिपरिमाणपरिच्छेदकारी
 त्वार्थ, तत्र हि—सर्वद्रव्याणां सर्ववर्णायाणां सर्वजीविशेषाणां च परिमाणमुपवर्ण्यते ।
 इति द्वितीयपूरुषम् । ‘तस्य च वीर्यं पुण्यं’ तृतीय च वीर्यं पूर्वम्, विशयश्च ईरयति
 प्रेरयति आत्मानं तासु तासु क्रियास्त्विति वीर्यम् यत्र जीवादीनां वीर्यं प्राप्यते
 तद्वीर्यमवादे नाम तृतीयं पूर्वम् । तथा ‘अस्तिनास्तिप्रवादम्’ अस्तिनास्तिप्रवादम्,
 लोके यद् वस्तु यथा-अस्ति, यद् वस्तु यथा नास्ति, तस्य प्रवादं कथनं यस्मिन्
 तद् अस्तिनास्तिप्रवादं नाम चतुर्थं पूर्वम् । ‘तच्चो’ तत् ‘नान्द्रव्यादे च’ ज्ञान
 प्रवादं च, ज्ञानस्य मत्प्राप्तेः प्रवादो यत्र तत् ज्ञानप्रवादं नाम पञ्चमम् ॥१॥
 तथा ‘सत्त्वप्रवायपुण्य’ सत्त्वप्रवादपूर्वम्=सत्त्वो जीवेष्वो हितं सत्त्व संयमः
 सत्त्ववर्णनं वा, स यत्र समेदं समतिपसर्गं प्राप्यतेऽभिधीयते तत्सत्त्वप्रवादम्,
 नास्ति हि ‘उत्पायपुण्य’ इत्यादि ।

टोकार्थ-उत्पादपूर्व-इस पूर्व, में उत्पाद धर्म को लेकर द्रव्य और पर्यायों
 की प्ररूपणा को गढ़ दे । अग्रायणीयपूर्व-इस पूर्व में समस्त द्रव्यों का
 समस्त पर्यायों का और समस्त जीवों की विशेषताओं का वर्णन किया
 गया है । वीर्यमवादपूर्व उन क्रियाओं में जो आत्मा को विशेष रूप से
 प्रेरित करे उसका नाम वीर्य है इस प्युत्पत्ति के अनुसार इस पूर्व में जीवादिकों
 की शक्ति का वर्णन किया गया है । अस्तिनास्ति प्रवादपूर्व-इस पूर्व में
 जो वस्तु जिस रूप में है और जो वस्तु जिस रूप में नहीं है उसका
 वर्णन किया गया है । ज्ञानप्रवादपूर्व-मति आदि ज्ञानों का इसमें वर्णन
 किया गया है । सत्त्वप्रवादपूर्व इसमें जीवों के हितकारक सत्त्वसंयम का

‘उत्पायपुण्य’ इत्यादि ।

१। १५-उत्पादपूर्व-आ पूर मा उत्पाद धर्म ने अनुवर्तनी द्रव्य अने पर्याये नी
 द्रव्या करवाभा आवो छि (२)-‘अग्रायणीय पूर्व’-आ पूर मा समस्त द्रव्योतु
 समस्त पर्यायोतु अन समस्त ज्ञेयोनी विशेषताओतु वर्णन करायु छि (३)
 वीर्यमवात् पूर्व-प्रत्येक क्रियाभा ने आत्माने विशेष रूप प्रेरित करे तेनु नाम
 वीर्य छि आ ंशु भक्ति प्रभावे आ पूर मा ज्ञाद्विनी शक्तितु वर्णन करायु छि
 अस्तिनास्ति प्रवाद पूर्व-आ पूर मा कपी वस्तु कथा स्वदृष्टे छि अने कथा स्वदृष्ट्या
 नपी तनु वर्णन करायु छि (५) ज्ञान प्रवाद पूर्व मतिज्ञान आदि ज्ञानोतु आ पूर मा
 वर्णन करायु छि (६) सत्त्वप्रवाद पूर्व-आ पूर मा ज्ञेयोनी हितकारी सत्त्व संय

तच्च पूर्वं च सत्यप्रवादपूर्वं नाम पष्ठ । ततः 'आयुष्यवायुपुष्वं च' आत्मप्रवाद-
पूर्वं च=आत्मनो जीवस्य अनेकविधैर्नयैर्यत्र प्रवादोऽभिधानं तत्पूर्वम् आत्म-
प्रवादपूर्वं नाम सप्तमम् । तथा 'कर्मप्रवादपूर्वं' ज्ञानावरणीया-
दिकर्मणो यत्र प्ररूपणं तत्कर्मप्रवादपूर्वं नामाष्टमम् । तथा—'पञ्चकलाणं भवे नवमं'
प्रत्याख्यानस्य प्रकारो यत्र निरूप्यते तत्पूर्वं प्रत्याख्याननामकं नवमं भवेत् ॥२॥

'विज्ञा अणुप्पन्नायं' विद्यानुप्रवादम्, यत्रानेकविधानां विद्यानामनुप्रवादो
वर्णनं तद्वशमं पूर्वम् । 'अवञ्ज' अवन्ध्यम्, अवन्ध्याना सफलानां सम्यग्ज्ञानादीनां
वर्णनं यत्र तदवन्ध्यं नामैकादश पूर्वम् । तथा 'पाणाउ वारसं पुष्वं' प्राणायु-
द्वादशं पूर्वम्=यत्र प्राणा जीवास्तदायुपश्च विविधप्रकारेण वर्ण्यन्ते तत् प्राणायु-
र्नाम द्वादशं पूर्वम् ततः 'फिरियविमालं' क्रियाविशालम्, क्रियाः कायिक्यादयो
विशालाः सविस्तृता यत्र निरूप्यन्ते तत्क्रियाविशाल नाम पूर्वं त्रयोदशम् ।
'तह' तथा 'विन्दुसार च' विन्दुसारपदं लोफविन्दुसारपदम्, तेनायं निर्गलि

अथवा सत्यवचन का भेदों को और प्रतिपक्ष को लेकर वर्णन किया गया
है६, आत्मप्रवादपूर्व—इसमें विविध नयों के अनुसार जीवद्रव्य का कथन किया
गया है७। कर्मप्रवादपूर्व—इसमें ज्ञानावरणीय आदि कर्मों के स्वरूप आदि
का वर्णन किया गया है८। प्रत्याख्यानपूर्व—इसमें प्रत्याख्यान का प्रकार
वर्णित किया गया है९। विद्यानुप्रवादपूर्व—इसमें अनेकविध विद्याओं का
वर्णन किया गया है१०। अवन्ध्यपूर्व—इसमें सफल सम्यग्ज्ञान आदिकों का
वर्णन किया गया है११। प्राणायुपूर्व—इसमें जीवों का और उनकी आयु
का विविध प्रकार से वर्णन किया गया है। यह बारहवां पूर्व है १२।
क्रियाविशाल—इस पूर्व में कायिकी आदि क्रियाओं का विस्तृत वर्णन
किया गया है १३। विन्दुसार—इस पूर्व में यह कहा गया है कि जिस

भनु अथवा सत्य वचननु तेना लेहो तथा तेनी विशेषी भावतेने अनुवक्षीने
वर्णन करायु छे आत्मप्रवाद पूर्व—तेमा विविध नये। अनुसार एव द्रव्यनु कथन
करायु छे (८) कर्मप्रवाद पूर्व—तेमा ज्ञानावरणीय आदि कर्मोना स्वरूपनु वर्णन
करेव छे प्रत्याख्यानपूर्व—तेमा प्रत्याख्यानना प्रकारोनु वर्णन करयु छे (१०)
विद्यानुप्रवाद पूर्व—तेमा अनेक प्रकारनी विद्याओनु वर्णन करायु छे (११)
अवन्ध्यपूर्व—तेमा सफल सम्यग् ज्ञान आदिनु वर्णन करयु छे (१२) प्राणायुपूर्व—
तेमा एवो अने तेमनां आयुष्यनु विविध प्रकारे वर्णन करायु छे (१३) क्रियावि-
शाल—आ पूर्वमां कायिकी आदि क्रियाओनु विस्तृत वर्णन करवामा आयु छे
(१४) विन्दुसार—आ पूर्वमां ओ भताववामां आयु छे के नेम अक्षरोनी उप-

तोऽयं यथा विद्वत्साराणां शिरः स्थित्वेन मारु, तथैव श्रोत्रेषु मर्चोत्कृष्टत्वेन मारुभूतो यः स लोकविन्दुसारः, तस्याभिधाने यत्र तद् विद्वत्सारनामकं चतुर्वर्धं पूर्वम् ॥३॥

अग्रायणीयस्य मरुत्तु पूर्वस्य चतुर्वर्धस्तूनि प्रश्नानि । भ्रमणस्य मरुत्तु मगवतो महावीरस्य चतुर्वर्धं भ्रमणमाह्वय = चतुर्वर्धमह्वयमरूपका भ्रमणा 'उक्तो-सिया' उत्कृष्टया मान्दर्पया भ्रमणमपवा 'होत्या' आसन् । 'कर्मविमोहिमगणं' कर्मविमोहिमगणायाम=ज्ञानावरणात्कर्मविशुद्धिगवयणां 'पञ्च' प्रतीत्य समधिगम्य चतुर्वर्धजीवम्यानानि जीवमवा प्रप्लानि, तद्यथा- 'मिच्छाद्विद्वो' मिथ्यादृष्टि = मिथ्यादृष्टि = मिथ्याविपरीता दृष्टिरस्यासौ मिथ्यादृष्टि कथितमिथ्यात्वमाहनीयविशेष कृदेव कुगुरु कुघर्मेषु सुगुरु सुघर्मेषु दिशितमात्र । इति प्रथमम् । 'सासायज सम्मदिद्वी' सासादनसम्पद् दृष्टि, आयम् औपशमिकसम्पत्त्वामन्त्रणं

प्रकार अमरा के ऊपर रहने से चिन्दु सारभूत मानी जाती है उसी प्रकार लोकों में सर्वोत्कृष्ट होने में जो मान्यता हो वही लोकविन्दुसार है । इस लोकविन्दुसार का वर्णन इस पूर्व में करने में आया है । यह बौद्धवा पूर्व है १४। अग्रायणीयपूर्व का बौद्धवस्तुएं कही गई हैं । भ्रमण मगवान् महावीर की उत्कृष्ट भ्रमणमपवा बौद्ध जनार की थी । ज्ञानावरणीय आदि कर्मों की विशुद्धि की गवेषणा को अपेक्षा को लेकर के बौद्ध जीव म्यान कहे गए हैं । वे इस प्रकार हैं-मिथ्यादृष्टि-इस गुणम्यान में जीव की विपरीत दृष्टि-मान्यता होती है । इसलिये इसकी सहा मिथ्यादृष्टि का जानी है । मिथ्यात्वमाहनीय क उदय से गेमा जीव कुगुरु, कृदेव और कुघर्म में सुगुरु, सुदेव और सुधर्म का अन्तर्वाला बन जाना है सामादन सम्पद् दृष्टि- 'आय मादयजि इति आमादनम्' औपशमिक सम्पत्त्वामन्त्रणं

बौद्धवादी विन्दु सारभूत मनास में तेम लोकमा सर्वोत्कृष्ट होवाने कहते थे। मारुभूत है य तं न लोक विन्दुमारु तं लोक विन्दुसारं चतुर्वर्धं आ बौद्धमा पूर्वम् । यथाभा आनुष्ठु छ आग्रयणीय पूर्वनी बौद्ध चतुर्वर्धो कहते छ अ म् भ्रमणमगवान् महावीरनी उत्कृष्ट भ्रमणमपवा बौद्ध जनारनी दृष्टी ज्ञानावरणीय आदि कर्मोंनी विशुद्धिनी गवेषणा नी अपेक्षाको बौद्ध उपस्थान कहते छ ते आ प्रभावे छ मिथ्यादृष्टि-आ गुणस्थानमा लुपनी विपरीत दृष्टि-मान्यताहोय छ तेनी तेने । मिथ्यादृष्टि कह छ मिथ्यात्व मोहनीयना उदयनी जेवे । एष कुगुरु कृदेव आने कुघर्म भा सुगुरु सुदेव आने सुधर्मनी अन्तर्वालो नी अव छ सामादन सम्पद् गरीदृ- 'आय मादयजि इति आमादनम्' औपशमिक सम्पत्त्वामन्त्रणं

માદયતિ અપનયતીતિ આસાદનમ્ અનંતાનુબન્ધિકષાયવેદનમ્, સતિ હાંસ્મન્
પરમાનંદરૂપાનન્તસુખફલદોડપવર્ગરૂપતરૂવીજભૂતઔપશમિકસમ્યક્ત્વલાભો જઘ-
ન્યતઃ સમયમાત્રેણ ઉત્કર્ષત- પદ્ધિરાવલિકાભિરપગચ્છતિ, તેનાસાદનેન સહ-
વર્તને સામાદનઃ, સમ્યક્ અવિપરીતા દૃષ્ટિર્જિનપ્રણીતવસ્તુપ્રતિપત્તિર્યસ્યાસૌ સમ્ય-
ગ્દૃષ્ટિઃ, સાસાદનશ્ચાસૌ સમ્યગ્દૃષ્ટિશ્ચ=સાસાદનસમ્યગ્દૃષ્ટિઃ । અથવા સાસ્વાદનસ-
મ્યગ્દૃષ્ટિઃ=આસ્વાદનેન સમ્યક્ત્વલક્ષણરસાસ્વાદનેન સહ વર્તને સાસ્વાદનઃ યથા
ક્ષીરાન્ને ભુક્તે તત્રારુચિવશાદુદ્વમન્ પુરુષો વમનકાલે તદ્રસમાસ્વાદયતિ તથા
મિથ્યાત્વાભિમુગ્ધતથા સમ્યક્ત્વાદ્ વિગલિતચિત્તઃ સમ્યક્ત્વમુદ્ગમન્નાપિ અનાસાદિ-

લાભરૂપ આય કો જો દૂર કરદે, તેસી અનંતાનુબંધીકષાય કે વેદન કા
નામ આમાદન હૈ । ઇસ આસાદન કે હોને પર પરમાનંદરૂપ અનંતસુખ-
ફલદાતા ઔર અપવર્ગરૂપ વૃક્ષ કા બોજ જો ઔપશમિક સમ્યક્ત્વ હૈ ઉસકા
લાભ જઘન્ય સે ઇક સમય ઔર ઉત્કૃષ્ટ સે છહ આવલિકા પ્રમાણ કાલ-
નક રહતા હૈ, વાદ મેં નહીં રહતા । ઇસ આસાદન કે સાથ જો રહતા હૈ
ઉસકા નામ સાસાદન હૈ । તથા જિન પ્રણીત વસ્તુતત્ત્વ કી પ્રતિપત્તિ જિસ
જીવ કે અવિપરીત-સમ્યક્ હો ઉસકા નામ સમ્યગ્દૃષ્ટિ હૈ । ઇસ આસાદન
સહિત જો સમ્યગ્દૃષ્ટિ હૈ ઉસકા નામ સાસાદન સમ્યગ્દૃષ્ટિ હૈ । અથવા-
“સાસાયણસમ્મદિટ્ઠી” કી છાયા “સાસ્વાદન સમ્યગ્દૃષ્ટિ” એસી મી હતી
હૈ, ઇસકા અર્થ-સમ્યક્ત્વ રૂપ રસ કે આસ્વાદ સે જો યુક્ત હોતા હૈ ઉસકા
નામ સાસ્વાદન હૈ । જિસ પ્રકાર સ્ત્રીર કે સ્ત્રા લેને પર અરુચિ કે વશ સે
ઉસે વમન કરતા હુઆ વ્યક્તિ વમનકાલ મેં ઉસકે રસ કા આસ્વાદન
કરતા હૈ, ઉસી તરહ મિથ્યાત્વ કે સન્મુગ્ધ હુઆ મી મિથ્યાત્વભૂમિ પર

(આવક) ને જે દૂર કરી નાખે, એવી અનંતાનુબંધી કષાય વેદનને આસાદન કહે
છે આ આસાદન થતા પરમાનંદરૂપ અનંત સુખ-ફલદાતા અને અપવર્ગરૂપ વૃક્ષના
બીજ જેવું જે ઔપશમિકસમ્યક્ત્વ છે તેના લાભ જઘન્યની અપેક્ષાએ એક સમય
અને ઉત્કૃષ્ટની અપેક્ષાએ છ આવલિકા પ્રમાણ કાળ સુધી રહે છે, પછી ગહેતો નથી
આ આસાદનની સાથે જે રહે છે તેનું નામ સાસાદન છે તથા જિન પ્રરૂપિત વસ્તુ
તત્ત્વની સિદ્ધિ જે જીવને અવિપરીત-સમ્યક્ હોય તેનું નામ સમ્યક્દૃષ્ટિ છે તે
આસાદન સહિત જે સમ્યગ્દૃષ્ટિ હોય તેને સાસાદન સમ્યગ્દૃષ્ટિ કહે છે અથવા-
“સાસાયણ સમ્મદિટ્ઠી” ની છાયા “સાસ્વાદન સમ્યગ્દૃષ્ટિ” એવી પણ થાય
છે તેનું તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે-જેમ ખીર ખાધા પછી અરુચિને કારણે તેનું વમન
કરતો માણસ વમનકાળમાં તેના રસનું આસ્વાદન કરે છે, એ જ પ્રમાણે મિથ્યાત્વની

तोऽयं यथा विदुरक्षराणां शिरः स्यत्वेन मारः, तथैव श्लोकेषु सर्वोत्कृष्टत्वेन मारभूतो यः स साकचिन्दुसारः, तस्याभिधानं यत्र तद् विदुसारनामकं चतुर्थं पूर्वम् ॥३॥

अग्रापणीयस्य श्वल्लु पूर्वस्य चतुर्थस्य स्तूनि प्रज्ञप्तानि । भ्रमणस्य श्वल्लु भगवतो महावीरस्य चतुर्थं भ्रमणसादृश्यं = चतुर्थं भ्रमणसादृश्यका भ्रमणा 'उत्को-
सिया' उत्कृष्टया सान्दर्भ्या भ्रमणसपदा 'होत्या' आसन् । 'कर्मविशालिमागण'
कर्मविशालिमागणम् = ज्ञानावरणादिस्मविशुद्धिगवेषणां 'पञ्च' प्रताप्य समपि
गम्य चतुर्थं जीवस्यानानि जीवमेव प्रज्ञप्तानि, तथा- 'मिच्छादिही' मिथ्या
दृष्टिः = मिथ्यादृष्टि = मिथ्याचिपरीता दृष्टिः स्यात्सौ मिथ्यादृष्टि रदितमिथ्यात्वमो
हनीयविशेषं कुदेव कुगुरु कुधर्मेषु सुदृढं सुगुरु सुधर्मेषु द्दिरितमात्रं । इति प्रथमम् ।
'सासायण सम्मदिही' सासादनसम्पद् दृष्टिः, आयम् औपशमिकसम्पत्त्वमामल्लभं

प्रकार अक्षरों के ऊपर रहने से चिन्दु सारभूत मानी जाती है उसी प्रकार
लोकों में सर्वोत्कृष्ट होने से जो मारभूत हो वही श्लोकचिन्दुसार है । इस
श्लोकचिन्दुसार का वर्णन इस पूर्व में करने में आया है । यह चौदहवां
पूर्व है १४। अग्रापणीयपूर्व की चौदहवस्तुएं कही गई हैं । भ्रमण भगवान्
महावीर की उत्कृष्ट भ्रमणसपदा चौदह हजार की थी । ज्ञानावरणीय आदि
कर्मों की विशुद्धि की गवेषणा को अपेक्षा को लेकर के चौदह जीव स्थान
कहे गये हैं । वे इस प्रकार हैं- मिथ्यादृष्टि-इस शुण्डस्थान में जीव की
विपरीत दृष्टि-मान्यता होती है । इसलिये इसकी सहा मिथ्यादृष्टि का
जाता है । मिथ्यात्वमाहनीय क उदय से गेमा जीव कुगुरु, कुदेव और
कुधर्म में सुगुरु, सुदेव और सुधर्म का अद्वावाला बन जाता है सासा
दन सम्पद् दृष्टि- 'आय सादयति इति-आसादनम्' औपशमिक सम्पत्त्व

इहेवाथो भि दु मारभूत मनास ५ तेम होहोना सर्वोत्कृष्ट होवाने क्षण्ये नेज्जे
मारभूत उदय ते न होउ भि दुमार छ ते होउ भि दुसारणु पवर्णन आ चौहमा
पूर्वम १५वाभा आणु छि आग्रयणीय पूर्वनी चौह पस्तुज्जे उदय छे अ
अग्रयन महावीरनी उत्कृष्ट भ्रमण सपदा चौह उदयसनी उदी खानापरणीय आदि
उदीनी विशुद्धिनी गवेषणीनी अपेक्षाओ चौह उपस्थान होउछ छि ते आ प्रभावे
छ-मिथ्यादृष्टि-आ शुण्डस्थानमा उपनी विपरीत दृष्टि-मान्यताहोय छि तेथी तेने
मिथ्यादृष्टि होउ ५ मिथ्यात्व माहनीयता उपथी ओवे। उप दुदृष्ट कुदेव जने
दुधर्ममां सुगुरु सुदेव जने सुधर्मनी अद्वा वाजे जनी जय छे सामादन सम्प
ददृष्टि- 'आय सादयति इति आसादनम्' औपशमिक सम्पत्त्व साज १५ आय

માદયતિ અપનયતીતિ આસાદનમ્ અનંતાનુવંધિકપાયવેદનમ્, સતિ હ્યાસ્મન્
 પરમાનંદરૂપાનંતસુખફલદોઽપવર્ગરૂપતરૂઝીજમૂતઔપશમિકસમ્યક્ત્વલાભો જઘ-
 ન્યતઃ સમયમાત્રેણ ઉત્કર્ષતઃ પદ્ધિરાવલિકાભિરપગચ્છતિ, તેનામાદનેન સહ-
 વર્તેતે સામાદનઃ, સમ્યક્ અવિપરીતા દૃષ્ટિર્જિનપ્રણીતવસ્તુપ્રતિપત્તિર્યસ્યાસૌ સમ્ય-
 ગ્દૃષ્ટિઃ, સાસાદનશ્વાસૌ સમ્યગ્દૃષ્ટિશ્ચ=સાસાદનસમ્યગ્દૃષ્ટિઃ । અથવા સાસ્વાદનસ-
 મ્યગ્દૃષ્ટિઃ=આસ્વાદનેન સમ્યક્ત્વલક્ષણરસાસ્વાદનેન સહ વર્તેતે સાસ્વાદનઃ યથા
 કીરાન્ને યુક્તે તત્રારુચિવશાદુદ્વમન્ પુરુષો વમનકાલે તદ્રસમામ્વાદયતિ તથા
 મિથ્યાત્વાભિમુગ્ધતયા સમ્યક્ત્વાદ વિગલિતચિત્તઃ સમ્યક્ત્વમુદ્વમન્નપિ અનામાદિ-
 લાભરૂપ આય કો જો દૂર કરદે, એસી અનંતાનુવંધીકપાય કે વેદન કા
 નામ આમાદન છે । ઇસ આસાદન કે હોને પર પરમાનંદરૂપ અનંતસુગ્ધ-
 ફલદાતા ઔર અપવર્ગરૂપ વૃક્ષ કા વોજ જો ઔપશમિક સમ્યક્ત્વ છે ઉસકા
 લાભ જઘન્ય સે ઇક સમય ઔર ઉત્કૃષ્ટ સે છદ્દ આવલિકા પ્રમાણ કાલ-
 તક રહતા હૈ, વાદ મેં નહીં રહતા । ઇમ્ આસાદન કે સાથ જો રહતા હૈ
 ઉસકા નામ સાસાદન છે । તથા જિન પ્રણીત વસ્તુતત્ત્વ કી પ્રતિપત્તિ જિસ
 જીવ કે અવિપરીત-સમ્યક્ હો ઉસકા નામ સમ્યગ્દૃષ્ટિ છે । ઇસ આસાદન
 સહિત જો સમ્યગ્દૃષ્ટિ છે ઉસકા નામ સાસાદન સમ્યગ્દૃષ્ટિ છે । અથવા-
 “સાસાગ્નસમ્મદિટ્ઠી” કી છાયા “સાસ્વાદન સમ્યગ્દૃષ્ટિ” એસી મી હોતી
 હૈ, ઉમકા અર્થ-સમ્યક્ત્વ રૂપ રસ કે આસ્વાદ સે જો યુક્ત હોતા હૈ ઉમકા
 નામ સાસ્વાદન હૈ । જિસ પ્રકાર ગ્વીર કે રવા લેને પર અરુચિ કે વજા સે
 ઉસે વમન કરતા હુઆ વ્યક્તિ વમનકાલ મેં ઉસકે રસ કા આસ્વાદન
 કરતા હૈ, ઉસી તરહ મિથ્યાત્વ કે સન્મુગ્ધ હુઆ મી મિથ્યાત્વભૂમિ પર
 (આવક) ને જે દૂર કરી નાખે, એવી અનંતાનુબંધી કપાય વેદનને આસાદન કહે
 છે. આ આસાદન થતા પરમાનંદ રૂપ અનંત સુખ-ફલદાતા અને અપવર્ગરૂપ વૃક્ષના
 ખીજ જેવું જે ઔપશમિકસમ્યક્ત્વ છે તેના લાભ જઘન્યની અપેક્ષાએ એક સમય
 અને ઉત્કૃષ્ટની અપેક્ષાએ છ આવલિકા પ્રમાણ કાળ સુધી રહે છે, પછી ગહેતો નથી.
 આ આસાદનની સાથે જે રહે છે તેનું નામ સાસાદન છે તથા જિન પ્રરૂપિત વસ્તુ
 તત્વની સિદ્ધિ જે છવને અવિપરીત-સમ્યક્ હોય તેનું નામ સમ્યગ્દૃષ્ટિ છે તે
 આસાદન સહિત જે સમ્યગ્દૃષ્ટિ હોય તેને સાસાદન સમ્યગ્દૃષ્ટિ કહે છે અથવા—
 “સાસાગ્ન સમ્મદિટ્ઠી” ની છાયા “સાસ્વાદન સમ્યગ્દૃષ્ટિ” એવી પણ થાય
 છે તેનું તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે—જેમ ખીર ખાધા પછી અરુચિને કારણે તેનું વમન
 કરતો માણસ વમનકાળમાં તેના રસનું આસ્વાદન કરે છે, એ જ પ્રમાણે મિથ્યાત્વની

तमिध्यात्वभूमि पडावलिपर्यन्तं तद्रममास्वादयति । तदुक्तम्—एकस्मिन्नुदितं मध्यास्वादनन्तानुवचिनाम् । आशीपश्चिमिकसम्यक्तवशैलमौलं परिच्युतः ॥ समयादायलीपङ्क्तं यावन्मिध्यात्वभूतम् । नासादयति जीवोऽयं तावत्साम्वादनमवेत् ॥ इति, स चासौ सम्यग्दृष्टिः सास्वादनसम्यग्दृष्टिरिति द्वितीयम् । तथा 'सम्प्राप्तिच्छादिद्वी' सम्पङ्क्तिमध्याह्नि-समीची च मिथ्या ए दृष्टिर्यस्यासौ सम्पङ्क्तिमध्याह्नि, मिध्यात्वपुद्गला एव ईषद विशुद्धा सम्पङ्क्तिमध्यात्वव्यपदञ्चमाजो भवन्ति । यदुदयवशात् जिनप्रणीतं तच्च न सम्पङ्क्त भद्रे नपि निन्दति, मतिदीर्घस्यवशात्सम्यगसम्यग्वेत्येकान्तता निश्चयं न करानि, तद्विशिष्टा दृष्टिः सम्पङ्क्तिमध्याह्नि । इति तृतीयम् । 'अविरतसम्पदिद्वी' अविरतसम्य

जयतक नहीं पहुँचा हैं तबतक वह छह आवलिपर्यन्त उमक रसका आस्वादन करता है । करा भी है—

“अनंतानुवचो कोपादिक के बीच में से किसी एक क उदय होने पर औपशमिक सम्पत्तरूपी पशत से च्युत हुआ और मिध्यात्वभूमि की तरफ सन्मुख हुआ जीव जबतक मिध्यात्व भूमि में नहीं पहुँचता है तबतक वह कम से कम एक समय तक और अधिक से अधिक छ आवली तक सम्पत्तर और मिध्यात्व का स्वाद लेता है । सम्पङ्क्तिमध्याह्नि-मिसकी दृष्टि सम्पत्तर और मिध्यात्व दोनों से मिश्रित हो वह सम्पङ्क्तिमध्याह्नि है । ईषद्विशुद्धमिध्यात्व के पुद्गल की ही सम्पङ्क्तिमध्यात्व कहलाते हैं । इसके उदय से जीव जिन प्रणीततत्त्व का सम्पङ्क्तरूप से भद्रा ही करता है और न उसकी निंदा हो करता है । मतिदीर्घरूप के वह सम्पङ्क्त का एकान्तता

समीपने। एव सम्भक्तवशी विरहित चित्तवाणे। यधने तेनु वभन करतां पञ्च ल्या। सुधी मिध्यात्व भूमि पर पहुँचतो नहीं त्वां सुधी छ आवलिबाण सुधी ते तेनु अस्वादन करे छ कहु पय छ के “अनंतानुवचो कोपादिकभाषो केछ केकना उदय पदा औपशमिक सम्भक्तव इषी पयतशी कलित अयेल अने मिध्यात्वभूमिनी तरह वयेल एव ल्या सुधी मिध्यात्वभूमिभां पहुँचतो नहीं त्वां सुधी ते ज्ञेछामा ज्ञेछा ज्ञेक सम्भ सुधी अने वभाएभां वभाए छ आवलिबाण सुधी सम्भक्तवने। स्वाद ले छ (२) सम्भङ् मिध्याह्नि—जेनी दृष्टि सम्भक्तव अने मिध्यात्व जे जनेनी मिश्रित होय तेने सम्भङ् मिध्याह्नि केले छ ईषद्विशुद्ध मिध्यात्वना (मि। मिध्यात्व अने ईषदु सम्भक्तव मिश्रित मिध्यात्व) पुद्गल व सम्भङ् मिध्यात्व केबाण छ तेना उदयशी एव जिन प्रणीत तत्त्वभां सम्भङ् रीते भद्रा पञ्च राजतो नहीं अने तेनी निन्दा पञ्च करता नहीं मतिदीर्घवने अधीन यधने ते सम्भङ् अने

અવિરતઃ=ન વિરત. સાવધવ્યાપારેભ્યો યઃ સોઽવિરતઃ, સ ચાસૌ સમ્યગ્દૃષ્ટિશ્ચ
અવિરતસમ્યગ્દૃષ્ટિઃ, યઃ પરમમુનિપ્રણીતાં માવધયોગવિરતિં મિદ્ધિપ્રાસાદપર્યારો
હણમોપાનભૂતામ્ જાનન્નપિ અપ્રત્યાખ્યાનકપાયોદયવિવ્રવશાત્ તા નાધિગન્છતિ,
નાપિ તત્પાલનાય પ્રયત્નતે इत्यસાવવિરતસમ્યગ્દૃષ્ટિરુચ્યતે । यथा कश्चित्पुरुषः
न्यायोपार्जितधनवान्यः प्रचुरभोगविलाससुखसौन्दर्यसमुपपन्नः सुकुलसमुत्पन्नोऽपि
दरन्तद्वૃનાદિવ્યસનજનિતાપરાધલબ્ધરાજદંડઃ સંઘડિતાભિમાનશ્ચંદડપાશિકૈ-

નિશ્ચય નહીં કર સકતા હૈ । इस तरह की जिसकी दृष्टि होती है उसका नाम
सम्यग्मिथ्यादृष्टि है ३। अविरतसम्यग्दृष्टि जो सावध व्यापारों से विरत
नहीं है परन्तु दृष्टि जिसकी सम्यग् है, ऐसा जीव चतुर्थगुणस्थानवर्ती
कहा जाता है । यह जीव इस बात को जानता है कि परममुनि तोर्थकर
प्रभु द्वारा प्रणीत सावधयोगविरति, सिद्धिप्रासाद पर आरोहण करने के लिये
सोपानपत्ति जैसी है तो भी वह अप्रत्याख्यानकपाय के उदय से उसे प्राप्त
नहीं कर पाता है, और न उसके पालन करने का प्रयत्न ही करता है,
इसी लिये वह अविरत सम्यग्दृष्टि कहा गया है । जिस प्रकार न्यायो-
पार्जित धनधान्यादिसंपत्ति वाला कोई कुलिन सदृग्स्थ प्रचुरभोगविलासों
को भोगता हुआ भी जब धूतादिव्यसनों में फँस कर राज्य का अपराधी
बन जाता है तब वह राजदंड को भोगता है और इस स्थिति अपने
गौरव की रक्षा करने में असमर्थ हो जाता है । दुष्टदंडपाशिकों द्वारा
अपमानित और विडम्बित होता हुआ वह कुत्सित कृत्य को अपने कुल की

અસમ્યક્ નો પૂરો નિશ્ચય કરી શકતો નથી આ પ્રકારની જેની દૃષ્ટિ હોય તે જીવને
“સમ્યન્ મિથ્યાદૃષ્ટિ” કહે છે (૩)

અવિરતસમ્યગ્દૃષ્ટિ-જે જીવો સાવધ વ્યાપારોથી વિરત થયા નથી પણ જેમની દૃષ્ટિ
સમ્યગ્ છે એવા જીવોને ‘ચતુર્થ’ ગુણસ્થાનવર્તી’ કહેવાય છે. તે જીવ એ વાતને બાજુ છે કે પરમ
મુનિ તીર્થ કર પ્રભુ દ્વારા પ્રણીત સાવધયોગવિરતિ, સિદ્ધિ પ્રાસાદ પર આરોહણ કરવાને
માટે નીસરણીના પગથિયાં સમાન છે, છતાં પણ તે અપ્રત્યાખ્યાન કષાયના ઉદયથી તેને
પ્રાપ્ત કરી શકતો નથી, અને તેનું પાલન કરવાનો પ્રયત્ન પણ કરતો નથી, તેથી તેને
અવિરત સમ્યગ્દૃષ્ટિ કહેલ છે. જે રીતે ન્યાયોપાર્જિત ધન ધાન્ય આદિ સંપત્તિ-
વાળો કોઈ કુલીન સદૃગ્દૃસ્થ અતિશય ભોગ વિલાસો ભોગવતા ભોગવતા ન્યારે જીગાર
આદિ લતોમાં ફસાઈને રાજ્યનો અપરાધી બને છે ત્યારે તે રાજદંડ ભોગવે છે. અને એવી
પરિસ્થિતિમાં તે પોતાના ગૌરવનું રક્ષણ કરવાને અસમર્થ બની બાંધ છે. દુષ્ટ દંડ-
પાશિકો દ્વારા અપમાનિત અને વિડમ્બિત થતો એ કુત્સિત કૃત્યને પોતાના કુળની

વિદમ્પમાન સ્વકં કૃત્સિત કર્મ મ્યપ્રાપ્તિષ્ઠાપતિકૃત્ય માનન મ્પકૃત્સુસ્વર્ગોન્દર્ય
સપદમભિલપન્નપિ દૃષ્ટપાશ્વિસકાશ્ચાત્ કિમપિ ષર્તું ન શક્નોતિ, તથૈવાડ્ય
જોવાડપિરતિ કૃત્સિતકર્મકલ્પા માનન સુબ્રાપમવિરતિસુસ્વર્ગોન્દર્યમભિલપન્નપિ
દૃષ્ટપાશ્વિકૃત્યદ્વિતીયરૂપાયાનાં સકાશ્ચાદ્ મતોરસાદમપિ કર્તું ન શક્નોતિત્ય
વિરતસમ્પરદૃષ્ટિત્વમનુમવશિ इत्यर्थ । इति चतुर्थम् । 'विरयाविरए' विरता विरत =
देशविरतः भाषक इत्यर्थ । इति पञ्चमम् । 'पमत्तसंनए' पमत्तसपत रिचि

પ્રતિષ્ઠા કે પતિકૃત્ જાનતા છે તો भी उनसे वह कुछ भी नहीं कर सकता
के प्रतिकूल जानता है तो भी कहते वह कुछ भी नहीं कर सकता है।
वह यह अवश्य चाहता हुआ कुलश गौरव नष्ट न होने पावे, मेरे
मुख्य लोभ में कोई बाधा नहीं आवे, मेरी संपत्ति सुरक्षित रहे। इसी
तरह अविरतसम्परादि जीवकृत्स्नकार्म क जैसी अविरति को जानता है
और सुधा (अमृत)के महदा विरति जय सुख मोन्दर्य का अभिलाषी होता
हूँ। दृष्टपाश्विक समान द्वितीयरूपाय-अप्रत्याग्यानावरण-के यश से
मम धारण करने का उत्साह भी नहीं कर सकता है। इस प्रकार हम
चतुर्थ गुणस्थान में रहने वाला जीव सम्परादि तो होता है पर विरति
धारण नहीं करता है। इस लिये इसका नाम अविरत सम्परादि कहा।
पञ्चमगुणस्थानका नाम विरताविरत-देशविरत है। इस गुणस्थान में रहा
हूँ। जीव आश्रय के पार ममों का पालन करता है अर्थात् मन, वचन
और काय सधर्मिन्सा का तथा स्थूल सूक्ष्म आदि का अर्थात् एक देश
से सावधयोग का त्याग कर देता है। छठवें गुणस्थान का नाम प्रमत्त

પ્રતિષ્ઠા પર બા કરનાર મને છે છતાં પણ તેમને તે કંઈ પણ કહી શકતો નથી.
તે જ્યેમ જરૂર હોય છે કે આશા ફૂળના ઝીરવનો નાશ ન થાય, આશા સુખમમમમાં
કાંઈ વાંધો ન આવે અને આશા પત્તિ સુરક્ષિત રહે એ જ પ્રમાણે તે અવિરત
સમ્પદમ દૃષ્ટિ છુપ કૃત્સિત ક્રોધોના જેવી અવિરતિને મળે છે અને અમૃત જેવી
વિસ્તિત્ત-સુખસૌંદર્યનો અભિલાષી હોય છે છતાં પણ દૃષ્ટપાશ્વિક સમાન દ્વિતી
વક્રપાશ અપ્રત્યાગ્યાનાવરણને આશીન થઈને મત મારણ કરવાનો ઉત્સાહ પણ કરી
શકતો નથી આ રીતે તે ચતુર્થ શુભ સ્થાનમાં રહેનાર છુપ સમ્પદદૃષ્ટિ તો હોય છે
પણ વિરતિ મારણ કરતો નથી તેથી તેને અવિરતસમ્પરાદિ કહેલ છે (૪)
પાશ્વમા શુભસ્થાનનું નામ વિરતાવિરત-દેશવિરત છે આ શુભસ્થાનમાં રહેલ છુપ
પ્રાવકર્તા બાર મતોનું પાલન કરે છે એટલે કે મન, વચન અને કાશ્વધી ત્રણ
દિશ્ચનો તથા સ્થૂલ સૂક્ષ્મ આદિનો-એટલે કે એકદેશની અપેક્ષાએ સાવધયોગનો

प्रमादयुक्तः सर्वविरत इति पष्ठम् । 'अप्रमत्तसंयत' अप्रमत्तसंयतः=सर्वप्रमा-
दरहितः सर्वसंयत इत्यर्थ इति सप्तमम् । 'निवृत्तिवादरः' निवृत्तिवादरः=निवृत्तिः
समानकालं गुणस्थानप्रतिपन्नानां जीवानामध्यवसायभेदस्तत्प्रधानो वादरः वादर
संपरायो निवृत्तिवादरः प्रमादरहितो मुनिः क्षपकश्रेणीमुपशमश्रेणीं वा प्रतिपन्नः
क्षीणदर्शनसप्तकः उपशान्तदर्शनसप्तको वा अपूर्वकरणापरनामकनिवृत्तिवादरजीव-

संयत है । इसमें रहा हुआ जीव किंचित प्रमाद से युक्त रहता है ।
सातवें गुणस्थान का नाम अप्रमत्त संयत है, इसमें रहा हुआ जीव
समस्त प्रमाद से रहित हो जाता है । ७। निवृत्ति वादर आठवां गुण-
स्थान है, इस गुणस्थान में समानकाल में इस गुणस्थान को धारण करने-
वाले नाना जीवों के अध्यवसायों में भेद रहता है । इसलिये यह गुण-
स्थान भेद प्रधान जो वादर-वादरसंपराय है उस स्वरूप है । इसी का
नाम निवृत्तिवादर है । इसका भाव यह है-प्रमाद रहित मुनि जब उप-
शम श्रेणी अथवा क्षपकश्रेणी पर आरुढ़ होने लगता है तब वह यदि अनं-
तानुबंधी कषाय संबंधी क्रोधादि चार प्रकृतियों का और दर्शन
मोहनीय संबंधी तीन प्रकृतियों का क्षय अथवा उपशम कर देता है
तो वह क्षय करने से क्षपकश्रेणी और उपशम करने से उपशमश्रेणी
मांडता है । इस का नाम निवृत्तिवादर गुणस्थान है । इसका दूसरा नाम
अपूर्वकरण भी है । अपूर्व नाम नवीन का है, स्थितिघात, रसघात गुण-
श्रेणी, गुणसंक्रम, स्थितिविंध, ये पांच बातें जहां होती हैं इसी का नाम

त्याग करे छे (५) छूटा गुणस्थानतु नाम प्रमत्त संयत छे तेभा रडेल छव थोडा
प्रमाद्युमा प्रमाद पाणो रडे छे. (६) सातभा गुणस्थानतु नाम अप्रमत्तसंयत
छे, तेभा रडेल छव समस्त प्रमादही रहित जनी जय छे (७) 'निवृत्ति वादर'
ते आठमुं गुणस्थान छे, आ गुणस्थानभा समान काणे आ गुणस्थानने धारण करनार
विविध छवेना अध्यवसायोभा भेद रडे छे तेथी आ गुणस्थान भेद प्रधान जे वादर-
वादरसंपराय छे ते स्वप्नतु छे तेतु नाम निवृत्ति वादर छे तेभा भावार्थ आ
प्रमाद्ये छे-प्रमाद रहित मुनि न्यारे उपशमश्रेणी अथवा क्षपकश्रेणी पर चडवा
लागे छे. तयारे जे ते अनंतानुबंधी कषाय संबंधी क्रोधादि चार प्रकृतियोना अने दर्शन
मोहनीय संबंधी त्रय प्रकृतियोना क्षय अथवा उपशम करी नाजे तो ते क्षय कर-
वाथी क्षपकश्रेणी अने उपशम करवाथी उपशम श्रेणी भाडे छे. ओतुं ज नाम
निवृत्ति वादर गुणस्थान छे. तेतु भीजु नाम अपूर्व करण छे अपूर्व ओटवे
नवीन. स्थितिघात, रसघात, गुणश्रेणी, गुणसंक्रम, अने स्थितिविंध, ये पांच भागते।

स्थानमुच्यते । इति अष्टमं जीवस्थानम् । आणयद्विवापर' अनिट्टिवापरः न विद्यते अन्योऽन्यमव्यवसायस्थानस्य निट्टिचयूनाधिकता यस्य युगपन्नवमगुण स्थानसमाप्तस्य नीवसमृद्धयः सोऽनिट्टिचि स चासौ वादरश्च अनिट्टिवापरः, एष च अमस्यास्थानादि द्वादशकपायाणां नवानां च नोकपायाणां समनाय सपमाय च तत्परो भवतीत्यतोऽनिट्टिवापर उच्यते । इति नवमं जीवस्थानम् ।

अपूर्वकरण है । जिनकर्मों की स्थिति अधिर होती है उनकी उस स्थिति को अपवर्तन करण द्वारा अल्पस्थिति वाला करना इसका नाम स्थिति घात है । तीव्र रस को अपवर्तन द्वारा मृद्वित करना इसका नाम रसघात है । काल की अपेक्षा इस्तर, और दलितरचना की अपेक्षा दृढतर करना इसका नाम गुणश्रेणि है । वक्ष्यमान शुभ प्रकृति में अवध्यमान अशुभ प्रकृतियों के दलितों को प्रतिस्तरमय असख्यात गुणी विशुद्धि लिये हुए निक्षिप्त करना इसका नाम गुणसकम है । कर्म की स्थिति का जघन्यरूप में वध करना इसका नाम स्थितिबंध है । इस गुणस्थान में मोहनीय कर्म का न उपशम होता है और न क्षय, इसी दृष्टि को लेकर इसका नाम अपूर्व करण पड़ा है । अनिट्टिवापर—यह चौथा गुण स्थान है—युगपत् इस गुणस्थान प्रतिपन्न नाना उभयो के परिणामों में परस्पर कोई विन्नता नहीं होती है । यह गुणस्थान अप्रत्यास्थान आदि पारद कपायों को और नव नो कपायों को शमन और सपण करने में तत्पर हुए जीव को होता है । दशवें गुणस्थान का नाम मृक्षम सपराय

१ वा दाव ४ तेने अपूर्व करण कहें छे से कभीना स्थिति अधिक होय ते । ते स्थितिनु अपवर्तन करण द्वारा अल्पस्थिति प्रकृत करणु तेनु नाम स्थितिघात छे नीम इसने अपवर्तन द्वारा मृद्वित करण तेनु नाम रसघात छे कागनी अपेक्षान वन दे कहें । अने दलित रचनानी अपेक्षा को प्रकृत करण तेनु नाम गुणश्रेणी छे मध्यमान शुभ प्रकृतियों में अवध्यमान अशुभ प्रकृतियोंना दलितने प्रतिस्तरमय अक्ष भ्यात मत्तु विशुद्धि लक्ष्मि निक्षिप्त करण तेनु नाम गुणसकम छे । कर्मनी स्थितिने जघन्य अपेक्षा करण तेनु नाम स्थितिबंध छे । आशुस्थान में मोहनीय कर्म नो उपशम भतो नधी, के क्षय भतो नधी । ते कारणे तेनु नाम अपूर्वकरण पड़्यु छे । (८) 'अनिट्टिवापर' ते नवम गुणस्थान छे—युगपत् आशुस्थान प्रकृत विविध उपा । परिवर्तन में परस्पर के दृष्टि नता देवी नधी । आशुस्थान अप्रत्यास्थान अदि पारद कपायों अने नव नो कपायों अने शमन अने सपण करणने तत्पर भवेन भवने भाव छे । (९) दशवें गुणस्थाननु नाम 'मृक्षमसपराय' छे । ते में

‘सुहृम सपराए उवसामए वा खवए वा’ सूक्ष्मसंपरायः=सूक्ष्मः संज्वलनलो-
भामख्येयावण्डरूपः संपरायः कृपायो यस्य सः, लोभानुवेदकइत्यर्थः, स च
द्विविधः ‘उवसामए’ उपशमक उपशमश्रेणी संप्राप्तः, ‘खवए’ क्षपकः=क्षपकश्रेणी
संप्राप्त इति दशमं जीवस्थानम् । तथा ‘उवसंतमोहे’ उपशान्तमोहः, उपशान्तः
सर्वथाऽनुदयावस्थो मोहो मोहनीयं कर्म यस्यासौ, उपशमवीतराग इत्यर्थः, अय
च उपशमश्रेणिसमाप्तादन्तर्मुहत्त भवति, पुनस्ततः प्रच्यवत्येव । इत्येकादशम् ।
‘क्षीणमोहे’ क्षीणमोहः, क्षीणो विनष्टो मोहो यस्य सः, क्षयवीतराग इत्यर्थः,

है—यहां संज्वलन संबंधी लोभकृपाय सूक्ष्मरूप में उद्भित रहती है। इसके
दो भेद है—१ उपशमक और दूसरा क्षपक, उपशमश्रेणी पर आरोहण
करने वाला जीव उपशमक और क्षपकश्रेणी पर आरोहण करने वाला
जीव क्षपक कहा गया है १०। अगरहवें गुणस्थान का नाम उपशान्तमोह
है, जिस जीव का मोहनीय कर्म सर्वथा उपशान्त हो जाता है उस जीव
के यह गुणस्थान होता है। इसको उपशम वीतराग भी कहते हैं। यह
उपशमश्रेणी का स्थान है। यहां पर आने पर जीव नियमतः नीचे के
गुणस्थानों में पतित हो जाता है, क्योंकि यहां पर मोहनीय कर्म की
अठाईस प्रकृतियां उपशमित ही रहती हैं, बाद में स्थिति समाप्त होने
पर जब उनका उदय हो जाता है तब जीव वहां से नीचे गिर जाता
है। इसके साथ जो वीतराग विशेषण लगा है उसका तात्पर्य यही है
कि कृपायों के उपशमित हो जाने से यह जीव उतने समय के लिये
वीतराग बन जाता है। इस गुणस्थान का उत्कृष्ट समय एक अन्तर्मु-
हूर्त का है ११। बारहवें गुणस्थान का नाम क्षीणमोह है। यहां पर मोह-

संज्वलन संज्वली लोभकृपाय सूक्ष्म होते उद्भित रहेंगे तेना जे भेद छे (१) उपशमक
अने (२) क्षपक, उपशमश्रेणी पर आरोहण करनेपर एव क्षपक कहेवाय छे (१०)
अगिथारमा गुणस्थाननु नाम ‘उपशान्तमोह’ छे जे एवना मोहनीय कर्म
तदन उपशान्त थछ जाय छे ते एवने आ गुणस्थान डोय छे तेने ‘उपशम वीत-
राग’ पद्य कहे छे आ उपशमश्रेणीनु स्थान छे अडी आवता एव नियमयी
ज नीचेना गुणस्थानोमा पडी जाय छे, कारण के आ स्थाने मोहनीय कर्मना
अक्षणीस प्रकृतियो उपशमित ज रहें छे, तयार जाद स्थिति समाप्त थता जायत
तेना उदय थाय छे तयारे एव त्याही नीचे पडी जाय छे तेनी साथे जे ‘वीतराग’
विशेषण लगाइथुं छे तेनुं तात्पर्य जे छे के कृपायो उपशमित थछ जवाथी ते
एव ओठला समयने भाटे वीतराग जनी जाय छे आ गुणस्थानने उत्कृष्ट काण
ओके अन्तर्मुहूर्तने छे (११) आरनां गुणस्थाननु नाम क्षीणमोह छे. आ गुण

અયમપ્યન્તર્મુદ્દર્શમેવ । इति द्वादशम् । तथा 'सम्योगी केषली' सयागी केषली
 कायादिरूपापारवान् कर्तव्यज्ञानीत्यर्थः । इति प्रयोदशं जीवस्थानम् । तथा अयो
 गीकेवली=निरुद्धमन प्रभृतिभाग द्वैधेषीगतः सूत्रपञ्चाक्षरोच्चारणमाप्रकाश
 यावत्स्थायीत्यर्थः । इति चतुर्दशं जीवस्थानम् । 'मरुतैरवतया
 म्लुक्त जीवा मत्स्यश्वा चतुर्दश चतुर्दश योजनसहस्राणि चत्वारि च एकाचराणि
 योजनशतानि योजनस्य एकोनविंशतिभागेषु पञ्चमागाश्च आयायनं प्रवृत्ता ।
 अयात् मरुतैरवतया मत्स्यकं जीवा १४४०१ योजनानि, एकोनविंशतिभागवि
 म्लुक्तस्य योजनस्य पञ्चमागाश्च विस्तारणं प्रवृत्ताः । मरुतैरवते हि भारापित मत्स्य
 नीय कर्म सर्वया क्षीय हो जाता है । इसका दूसरा नाम श्रवणीतरांग भी है ।
 इस गुणस्थान की मांस क्षपક को હી होती है । इसका भी उत्कृष्ट काल
 एक मन्तर्मुદ્દર્શ का है १२। तेरहवें गुणस्थान का नाम सयोगि केषली है ।
 मन, बचन और काय इन तीनों योगों से युक्त जीव यहां पर रहता है
 और घातक कर्मों के सर्वथा क्षय होने से केवलज्ञान को प्राप्त कर लेता
 है १३। चौदहवें गुणस्थान का नाम अयोगिकेवली है, इस गुणस्थान में
 आत्मा तब ही पहुँचता है कि जब वह तीनों योगों का निरोध कर देता
 है इसमें जीव की जैलछी अवस्था हो जाती है । पाँच द्भ्व अक्षरों के
 उच्चारण करने में निमग्न समय लगता है उतने समय तक भोव इस
 गुणस्थान में ठहर कर बाद में मोक्ष में चला जाता है १४। भरत और ऐरवत
 इन क्षेत्रों की मत्स्यक की जीवा-प्रत्यक्षा-(चतुष्पदी दोरी) विस्तार की अपेक्षा
 चौदह हजार बारम्बार एक (१४४०१) योजन और एक योजन के बलीम
 (१०) भागों में स छह भाग ६/१० प्रमाण अर्थात्-भरत और ऐरवत
 क्षेत्रों में भोक्तृत्वकर्म तदन क्षीय नहीं जाय છે તેનુ બીજુ નામ શ્રવણીતરાંગ પણ
 છે આ ગુણસ્થાનની પ્રાપ્તિ ક્ષણકને જ થાય છે તેને ઉત્કૃષ્ટ કાળ પણ એક જન્મ
 મુદ્દર્શનો છે (૧૨) તેરમા ગુણસ્થાનનુ નામ સયોગિકેવલી છે આ ગુણસ્થાને
 જીવ મન વચન, અને કાચ આ ત્રણેયે મે મોથી મુક્ત રહે છે અને જ તિથા ઈશ્વરો
 સર્વથા ક્ષય અવાધી દેવજ્ઞાન પ્રાપ્ત કરી લે છે (૧૩) ચોથમા ગુણસ્થાનનુ નામ
 'અયોગિકેવલી' છે આ ગુણસ્થાને આત્મા ત્યારે જ પહોંચે છે કે જ્યારે ત
 ત્રણે મોક્ષોનો નિરોધ કરી નાખે છે તેમા જીવની શહેરી અવસ્થા (અવલમ્બમાન
 અવસ્થા) અંત જાય છે પાંચ દ્ભવ અક્ષરોનુ ઉચ્ચારણ કરવામાં જેટલો સમય લાગે
 છે એટલા સમય મુધા જીવ આ ગુણસ્થાનમાં રહીને મોક્ષમાં આવ્યો જાય છે (૧૪)
 ભરત અને એરવત, એ ક્ષેત્રે જોવાની જીવા-પ્રત્યક્ષા- (પદ્મપદી દોરી)
 વિસ્તારની અપેક્ષાએ ચોદ હજાર ચારસો એક (૧૪૪૦૧) યોજન અને એક યોજનની

અસ્ય ધનુષઃ સમાનાકૃતિકે । તતસ્તયો ગ્રીવે ભવતઃ । તત્ર ભરતસ્ય જીવા હિમવતઃ પર્વતસ્ય દક્ષિણપાર્શ્વસ્થાઽનન્તરપ્રદેશશ્રેણિરુચ્યતે । ઐરવતસ્ય જીવા તુ શિખરિણઃ પર્વતસ્ય પરપાર્શ્વસ્થાઽનન્તરશ્રેણિરુચ્યતે । 'એગમેગસ' એકૈકમ્ય સ્વલુ રાજ્ઞઃ 'ચાઉરંતચક્રવર્તિસ્ય' ચાતુરન્તચક્રવર્તિનઃ ચત્વારોઽન્તાઃ સમુદ્રત્રયહિમવ-
લ્લક્ષણા યસ્યાઃ સા ચાતુરન્તાભૂમિઃ, તસ્યાઃ સ્વામી ચાતુરન્તઃ સ ચાસૌ ચક્ર-
વર્તી ચ તસ્ય, ચતુર્દશરત્નાનિ પ્રજ્ઞપ્તાનિ તથા—સ્ત્રીરત્નમ્?, સેનાપતિરત્નમ્?,
ગાથાપતિરત્નમ્, ગાથાપતિઃ=કોષ્ઠાગારિકઃ, પુરોહિતરત્નમ્?, પુરોહિતઃ=શાન્તિ-

યે દો ક્ષેત્ર આરોપિત પ્રત્યંચા—હોરી વાલે ધનુષ કે જૈસે આકાર કે
હે । ફસલિયે ફનકી પ્રત્યેક કી જીવા હોતી હૈ । ભરતક્ષેત્ર કી જીવા હિમ-
વત પર્વત કે દક્ષિણ પાર્શ્વભાગ મેં સ્થિત હૈ । જો અનન્તર પ્રદેશશ્રેણિ કહી
જાની હૈ । ફસી તરહ ઐરવત ક્ષેત્ર કી જીવા હૈ અન્તિમ શિખરી પર્વત કે
દૂસરે પાર્શ્વભાગ મેં સ્થિત હૈ ઓર યહ બી અનન્ત પ્રદેશશ્રેણિ કે નામ
સેપ્રખ્યાત હૈ । એક એક ચક્રવર્તી કે યહાં જો ચાતુરન્તભૂમિ અર્થાત્ ત્રીનસમુદ્ર
ઓર ચૌથા હિમવાન્ ફસ પ્રકાર ચાર અન્તવાલી ભૂમિ કે અધિપતિ હોતે
હેં ડનકે ચૌદહ ચૌદહ રત્ન હોતે હેં, વે ફસ પ્રકારહેં—સ્ત્રીરત્ન૧, સેના-
પતિરત્ન૨, ગાથાપતિ રત્ન૩, પુરોહિતરત્ન૪, વર્દ્ધકિ રત્ન૫, અશ્વરત્ન૬,
હસ્તિરત્ન૭, અસિ રત્ન૮, દંડરત્ન૯, ચક્રરત્ન૧૦, છત્રરત્ન૧૧, ચર્મરત્ન-
૧૨, મણિરત્ન૧૩, ઓર કાકિણીરત્ન૧૪ ।

કોષ્ઠાગાર (કોઠાર) કી રક્ષા કરને વાલે કા નામ ગાથાપતિ
હૈ । શાંતિકર્મ આદિ કે કરને વાલે કા નામ પુરોહિત હૈ । વર્દ્ધકિ રત્ન

એગણીસ ભાગોમાંથી છ ભાગ (૬/૧૬) પ્રમાણ છે. એટલે કે ભરત અને ઐરવત એ
બન્ને ક્ષેત્રો આરોપિત પ્રત્યંચા—હોરી ચડાવેલા ધનુષના આકારના છે તેથી તે પ્રત્યેકને
છવા ડોય છે ભરતક્ષેત્રના છવા હિમપર્વતના દક્ષિણ પાર્શ્વભાગમાં રહેલ છે જે અન-
ન્તર પ્રદેશશ્રેણી કહેવાય છે, એજ પ્રમાણે ઐરવત ક્ષેત્રની પણ છવા છે, જે અન્તિમ શિખરી
પર્વતના બીજા પાર્શ્વભાગમાં સ્થિત છે અને તે પણ અનન્તર પ્રદેશ-શ્રેણીના નામથી
વિખ્યાત છે 'દરેક ચક્રવર્તી' કે જે ચાતુરન્તભૂમી એટલે કે ત્રણ સમુદ્ર અને ચોથા હિમ-
વાન એ ચાર અન્તવાળી ભૂમિના અધિપતિ હોય છે, તેમના ચૌદ રત્નો નીચે પ્રમાણે
હોય છે—(૧) સ્ત્રીરત્ન, (૨) સેનાપતિરત્ન, (૩) ગાથાપતિરત્ન, (૪) પુરોહિતરત્ન, (૫)
વર્દ્ધકિરત્ન (૬) અશ્વરત્ન, (૭) હસ્તિરત્ન, (૮) અસિરત્ન, (૯) દંડરત્ન, (૧૦)
ચર્મરત્ન, (૧૧) છત્રરત્ન, (૧૨) ચર્મરત્ન (૧૩) મણિરત્ન અને (૧૪) કાકિણીરત્ન
કોષ્ઠાગાર (કોઠારનું) રક્ષણ કરનારને ગાથાપતિ કહે છે. શાંતિકર્મ આદિ કરનારને
પુરોહિત કહે છે, જે રથાદિકનું નિર્માણ કરે છે તેને વર્દ્ધકિરત્ન કહે છે. ૫

कर्माधिकारक, चर्माश्रितम् ५, घट्टकि-रथादिनिर्माणयता, अश्वरत्नम् ६
 शिररत्नम् ७, असिरत्नम् ८, दण्डरत्नम् ९, चक्ररत्नम् १०, छत्ररत्नम् ११,
 चर्मरत्नम् १२, इदं चर्मरत्नं हि चक्रवर्ति-इस्तस्पर्शमात्रेण द्वादशयोजननायामविस्तार
 वद्भवति, तथा प्रातःकृष्णाल्यादीनपराह्णकाले समुपभोगयोग्यान् सपादयति ।
 नद्यादौ वरणे सेनापति-इस्तस्पर्शमात्रेण नौकासर्पं च भवति । मणिरत्नम् १३, इदं
 हि चतुर्मुखनायाम् उपरिष्ठपृष्ठं पट्टकोणकं च भवति । शिरसि घृतस्मिन्
 रागशान्तिः देवादिकृतोपसगरादिस्पृशमक्षयव्ययता च भवति । काकिणीरत्नम् १४
 =प्रसूतवर्णपरिमाणं तिमिरनाशकमयोधनसंस्थानं रत्नम् । जम्बूद्वीपे खलु
 द्वीपे चतुर्दश महानद्यः 'पुष्पावरेण' पूर्वापराभ्यां-पूर्वपश्चिमाभ्यां दिग्भ्यां स्रव-
 यन्तः सन्ति । यथा हि का निर्माणं करता है। चर्मरत्न का यह कार्य है कि
 चक्रवर्ती जब इसे अपने हाथ में स्पर्श करते हैं तब वह द्वादशयोजन
 तक छाया चौड़ा हो जाता है। तथा वह प्रातः काल घोड़े हुए शस्यादि
 घान्य को अपराह्णकाल में उपभोग योग्य कर देता है। एवं नद्यादिकों
 को पार करने के लिये सेनापति के हाथ से जब स्पर्शित होता है ना
 वह नौकारूप बन जाता है। मणिरत्न चार अंगुल लंबा और दो अंगुल
 व्यास होता है। इसके छह कोने होते हैं। इस मस्तक पर धारण
 करने पर रोगों की शान्ति हो जाती है। देवादिकृत उपसर्गों का अभाव
 हो जाता है। शस्त्रों द्वारा घात नहीं हो सकता है। १३। काकिणीरत्न-
 आठमुहरों का जितना परिमाण होता है उतना ही परिमाण इस काकि-
 णी रत्न का होता है। यह अधिकार को नष्ट करता है। लोहे के घण
 जैसा इसका, आकार होता है। जम्बूद्वीप नाम के द्वीप में चौदह महानदी
 हैं। जो पूर्व और पश्चिमदिशा के लक्षणसमुद्र में मिली हैं। नदियाँ य
 अश्वरत्नम् नाम के हैं। यथा अश्वरत्नीं तेने पितान्ता द्वायेना स्पर्शं करे छ त्वाये
 ते आर येननं सानु पडोणु अथं लय छ तथा ते सवारे वायेनं योअ दि घान्यने
 जयारे पडोना समये जावा येअ करी दे छ अने नही आदिने पार करी होय
 त्वाये सेनापतिना द्वायेनी तेना स्पर्श कराय छ त्वाये ते नौकापुपनी लय छ १२
 मणिरत्न चार आंगुल सानु अने ने आंगुल लडु होय छ तेने छ पूजा होय
 छ तेने माया पर धारण करवाओ राजादिउ उपसभन अथं लय छ देवादि हुन
 उपसभेनि आवाय अथं लय छ अने शस्त्रो द्वारा घात अथं शयते नही १३
 काकिणीरत्न-ते आठ भडोरे केअर करु होय छ ते अधिकारने नाश करे प
 दोहाना अथं नेवे तेना आकार होय छ
 जम्बूद्वीप नामना द्वीपमा योह भडा नही छ, के पूर्व अने पश्चिम

णसमुद्रं आत्मान 'समर्पेति' समर्पयन्ति. तद्यथा—गङ्गा,—सिन्धुः, रोहिता, रोहि-
ताशा, हरिः, हरिकान्ता, सीता, सीतोदा, नरकान्ता, नारिकान्ता सुवर्णकूला,
रूप्यकूला, रक्ता. रक्तवती । इति चतुर्दश महानद्यः ॥मृ. ३४॥

मूलम्—इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए अत्थेगइयाणं नेरइयाणं
चउदस पलिओवमाइं ठिई पणत्ता । पंचमीए णं पुढवीइ अत्थेग-
इयाणं नेरइयाणं चउदस सागरोवमाइं ठिई पणत्ता । असुरकुमा-
राणं देवाणं अत्थेगइयाणं चउदस पलिओवमाइं ठिई पणत्ता ।
सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु अत्थेगइयाणं देवाणं चउदस पलिओवमाइं
ठिई पणत्ता । लंतए कप्पे देवाणं अत्थेगइयाणं चउदस सागरो-
वमाइं ठिई पणत्ता । महासुक्के कप्पे देवाणं अत्थेगइयाणं जहण्णेणं
चउदस सागरोवमाइं ठिई पणत्ता । जे देवा सिरिकंतं सिरिमहियं
सिरिसोमनसं लंतयं काविट्ठं महिंदकंतं महिंदुत्तरवडिंसगं विमाणं
देवत्ताए उववण्णा, तेसि णं देवाणं उक्कोसेणं चउदस सागरोवमाइं
ठिई पणत्ता । ते ण देवा चउदसहिं अद्धमासेहिं आणमंति वा
पाणमंति वा उहससंति वा निस्ससंति वा । तेसि णं देवाणं चउद-
सहिं वाससहस्सेहिं आहारट्ठे समुप्पज्जइ । संतेगइया भवसिद्धिया
जीवा जे चउदसहिं भवग्गहणेहिं सिज्झिस्संति बुज्झिस्संति, मुच्चि-
स्संति परिनिव्वाइस्संति सब्बदुक्खाणमंतं करिस्संति ॥सू. ३५॥

हैं—गंगा१, सिन्धु२, रोहिता३, रोहितांशा४, हरि५, हरिकान्ता६, सीता७,
सीतोदा८, नरकान्ता९, नारिकांता१०, सुवर्णकूला११, रूप्यकूला१२. रक्ता-
१३ और रक्तवती १४। ॥मृ० ३४॥

दिशामा लवणसमुद्रने मणे छे ते नदीओ नीचे प्रमाणे छे—

(१) गंगा, (२) सिन्धु, (३) रोहिता, (४) रोहिताशा. (५) हरि, (६)
हरिकान्ता, (७) सीता, (८) सीतोदा (९) नरकान्ता, [१०] नारिकान्ता, (११) सुवर्ण-
कूला, (१२) रूप्यकूला, (१३) रक्ता, अने (१४) रक्तवती ॥सू ३४॥

गीका—इमीसे जे' इत्यादि । अस्यां खलु रत्नप्रभायां पृथिव्याम्
अस्त्येकपां नैरयिकाणां चतुर्दशपत्न्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । पञ्चम्यां पृथि-
व्याम् अस्त्येकपां नैरयिकाणां चतुर्दशसागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । असुर-
कुमाराणां देवानामस्त्येकपां चतुर्दशपत्न्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । सोषर्मे
ज्ञानयोः कल्पयोः अस्त्येकपां देवानां चतुर्दशपत्न्योपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता ।
लान्तके कल्पे देवानामस्त्येकपां चतुर्दशसागरोपमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता । महा-
शुके कल्पे देवानामस्त्येकपां जघन्यप्रमाणेन चतुर्दशसागरापमानि स्थितिः
प्रज्ञप्ता । य देवाः श्रीकान्त^१, श्रीमहित^२, श्रीसौमनस^३, लान्तक^४, कापिष्ठ^५,
महेन्द्र^६, महेन्द्रकान्त^७, महेन्द्रोत्तरायतसक^८, च विमानम्=एतेष्वष्टसु विमानेषु
उत्पन्नोत्पन्नाः, तेषां खलु देवानामुत्कर्षेण चतुर्दश सागरापमानि स्थितिः प्रज्ञप्ता ।
ने खलु देवाश्चतुर्दशभिरदमासैः आनन्ति वा प्राणन्ति वा उर्वर्ष्यन्ति वा

गीकार्य—'इमीसे जे' इत्यादि । इस रत्नप्रभा पृथिवी में किम्बनेक नारकियों
की स्थिति चौदह पत्न्योपम की कही गई है । पंचमो पृथिवी में किम्बनेक नारकियों
की चौदह सागरोपम की स्थिति कही गई है । असुरकुमार देवों में किम्बनेक
देवों की चौदह पत्न्योपम की स्थिति कही गई है । सोषर्म ईशान इन दो कल्पों
में किम्बनेक देवों की स्थिति चौदह पत्न्योपम की कही गई है । लान्तक
कल्प में किम्बनेक देवों की स्थिति चौदह सागरोपम की कही गई है ।
महाशुक कल्प में किम्बनेक देवों की जघन्य स्थिति चौदह सागरोपम की
कही गई है । जो देव श्रीकान्त^१, श्रीमहित^२, श्रीसौमनस^३, लान्तक^४,
कापिष्ठ^५, महेन्द्र^६, महेन्द्रकान्त^७, और महेन्द्रोत्तरायतसक^८, इन आठ
विमानों में देव की पर्याय से उत्पन्न होते हैं उन देवों की स्थिति चौदह सागरा-
पम की कही गई है । ये देव चौदह अर्धमासों के अर्थात् सात महीनों के
बाद बाह्य आन्त्यन्तरिक श्वासोच्छ्वास ग्रहण करते हैं । इन देवों को चौदह

टीका—इमीसे जे' इत्यादि । आ रत्नप्रभा पृथ्वीमां डेटलाक नारकीजोनी स्थिति
पञ्चोपमनी कही छे पाचमी पृथ्वीमां डेटलाक नारकीजोनी चौद साजशेपमनी
स्थिति कही छे असुरकुमार देवोमां डेटलाक देवोनी चौद पञ्चोपमनी स्थिति
कही छे सोषर्म अने ईशान कल्पोमां डेटलाक देवोनी स्थिति चौद पञ्चोपमनी कही
छे लान्तक कल्पमां डेटलाक देवोनी स्थिति चौद साजशेपमनी कही छे महाशुक कल्पमा
डेटलाक देवोनी जघन्य स्थिति चौद साजशेपमनी कही छे जे देव (१) श्रीकान्त
(२) श्रीमहित, (३) श्रीसौमनस, (४) लान्तक (५) कापिष्ठ (६) महेन्द्र (७) महेन्द्रकान्त
अने (८) महेन्द्रोत्तरायतसक, जे आठ विमानोमां देवनी पर्याये उत्पन्न बाध छे, ते
देवोनी स्थिति चौद साजशेपमनी कही छे ते देव सात महीने जाय आन्त्यन्तरिक

निःश्वसन्ति वा । तेषां खलु देवानां चतुर्दशभिः सहस्रैराहारसंज्ञा समुत्पद्यते । सन्त्येके भवसिद्धिका जीवा ये चतुर्दशभिर्भवग्रहणैः सेत्स्यन्ति, भोत्स्यन्ते, मोक्षयन्ति, परिनिर्वासयन्ति सर्वदुःखानामन्तं च करिष्यन्ति ॥मृ. ३५॥

पञ्चदशं समवायाद्गमाह—

मृ०—पन्नरस परमोहम्मिया पणत्ता, तं जहा—अंबे अंवरिसे
चेव सामे सबलेत्ति आवरे । सद्दोवसुद्धकाले य महाकालेत्ति आवरे ॥१॥
असिपत्ते धणु कुंभे बालुए वेयरणीति य खरस्सरे महाघोसे एए प-
न्नरसाहिया ॥२॥ णमी णं अरहा पन्नरस धणूइं उड्डुं उच्चत्तेगं होत्था,
धुवराहूणं बहुलपक्खस्स पडिवए पन्नरसभागं पन्नरसभागेणं चंद-
स्सलेसं आवरेत्ताण चिड्डइ, तं जहा—पढमाए पढमं भागं बीयाए
दुभागं तइयाए तिभागं चउत्थीए चउभागं पंचमीए पंचभागं छडीए
छभागं सत्तमीए सत्तभागं अट्ठमीए अट्ठभागं नवमीए नवभागं दस-
मीए दसभागं एक्कारसीए एक्कारसभागं बारसीए बारसभागं तेरसीए
तेरसभागं चउदसीए चउदसभागं पन्नरसेसु पन्नरसभागं तं चेव सुक्क-
पक्खस्सय उवदंसेमाणे उवदंसेमाणे चिड्डइ, तं जहा—पढमाए पढमं भागं
जाव पन्नरसेसु पन्नरसभागं । छ णक्खत्ता पन्नरसमुहुत्तसंजुत्ता
पणत्ता, तं जहा—सतभिसय भरणि अद्दा असलेसा सार्इ तहा जेडा ।
एते छण्णक्खत्ता पन्नरसमुहुत्तसंजुत्ता ॥१॥ चेत्ता सोएसु णं मासेसु

हजार वर्ष के बाद आहार संज्ञा उत्पन्न होती है । इनमें कितनेक देव ऐसे होते हैं जो भवसिद्धिक होते हैं । ये चौदह भवग्रहण करने के अनन्तर सिद्धपद को भोगने वाले होंगे । बुद्ध होंगे । कर्मफल से सर्वथा मुक्त हो जावेंगे तथा समस्त दुःखों का नाश कर देंगे ॥ मृ० ३५॥

श्रवसोऽथ स ग्रहण करे छ ते देवेने थौह डुअर वधं पछी आहार सस उत्पन्न थाय छे. ते देवेमाना केटवाक देवे भवसिद्धिक होय छे. तेओ थौह भव ग्रहण कया पछी सिद्धपद पाभसे पुद्ध थसे, कर्मभणथी सर्वथा मुक्त थसे, तथा समस्त दुःखोतो सर्वथा नाश करसे ॥सू ३५॥

पन्नरस मुद्दुत्तो दिवसो भवइ, एव चेत्ता सोपसु मासेसु पणरस
वस्थु पणत्ता । मणूसाण पणरसविहे पओगे पणत्ते, त जहा—सच्च-
मणपओगे मोसमणपओगे सच्चमोसमणपओगे असच्चामोसमणपओगे
सच्चवडपओगे मोसवडपओगे सच्चमोसवडपओगे असच्चामोसवडपओगे
ओरालियसरीरकायपओगे ओरालियमीससरीरकायपओगे वेउव्विय-
सरीरकायपओगे वेउव्वियमीससरीरकायपओगे आहारयससरीरकाय
पओगे ओहारयमीससरीरकायपओगे कम्मयसरीरकायपओगे ॥सू ३६॥

टीका—‘पन्नरस’ इत्यादि । ‘परमाधम्मिया’ परमाधार्मिका = परमाध त्तेऽ
धार्मिकाश्च परमाधार्मिका संविण्णपरिमाणयन्तोऽभुरविशेषाः प्रथमामारभ्य विष्णु
पृथिवीषु नारकद्वयेनशीला पञ्चदशसम्यक्का मज्झमा तथया = अम्भोऽम्बरिणी
त्रैव श्याम श्याम इति चापर । रुद्रापकद्रास्त्राश्च महाकाल इति चापरः ॥१॥
असिपत्रा धनु कुम्भो बाहु चैतरिणी च । रघुस्वरो महाघोष एते पञ्चद-
शाख्याता ॥२॥ तत्र-अम्भ = अम्भनामा परमाधार्मिका, यो हि नारकान् गग-
न

अथ सूत्रकार पन्द्रहवो संख्याविधिः समवाय को कहते हैं—

‘पन्नरस’ इत्यादि ।

टीकार्थ—पन्द्रह परमाधार्मिक देव होते हैं । ये परमाधार्मिक देव सदा
संक्लिष्टपरिणामों से युक्त रहते हैं । तथा प्रथम नरक से लेकर तीसरे
नरक तक के नारदियों को ये वासर में लडाते रहते हैं । ये पन्द्रह य हैं—
अम्भ^१ अम्बरीष^२, श्याम^३, श्याम^४, रुद्र^५ उपरुद्र^६, काल^७, महाकाल^८,
असिपत्र^९, धनु^{१०} कुम्भ^{११} बाहु^{१२}, चैतरिणी^{१३}, रघुस्वर^{१४}, और
महाघोष^{१५} इनमें जो प्रथम अम्भ नाम का असुर है वह नारदियों का

६वे सूत्रकार पन्द्रह संख्याविधिः समवाय को कहते हैं—पन्नरस इत्यादि ।

टीकार्थ—पञ्च परमाधार्मिक देवों को तत्ते परमाधार्मिक
इति नऽ संक्लिष्ट परिणामो वाया होय ते तेनो पदेती नरकणी लधने
त्रां नरक सुधीना नाशनीजोने परस्पर लडाव्या करे ते पदना नाम
नीधे प्रमाये छे—(१) अम्भ (२) अम्बरीष (३) श्याम, (४) श्याम, (५) रुद्र
(६) उपरुद्र (७) काल (८) महाकाल (९) असिपत्र, (१०) धनु (११) कुम्भ, (१२)
बाहु (१३) चैतरिणी, (१४) रघुस्वर अने (१५) महाघोष तेषां नाम पदेती ते
अम्भ नामना असुर छे ते नरकणीने आशयमा लध लधने त्रां नीधे पछडे

नतलं नीत्वाऽधस्ताद्विमुञ्चति, दत्त्वा च गलद्वस्तु गर्ते पातयति, अयोधुक्-
मम्बरतले समुत्क्षिप्य पुनः पुनः पतन्त शूलादिना विध्यति पापसंस्मार्गं चाने-
कधा भूयः कर्दर्थयति ॥१॥ 'अम्बरीषी' नारकान् मुद्गरादिना कुट्टयित्वा क्रक-
चादिभिः खण्डशः कृत्वा भ्राष्ट्रादौ पचति, इताऽऽहततया मूर्च्छितांश्च तान्
रम्भास्तम्भवर्चमणामेकैकं पुटमुत्पाट्योत्पाट्य कर्दर्थयति ॥२॥ 'श्यामः', कशा-
घातादिना शातयति, हस्तपादादीन् दुर्दर्शतया छिनत्ति, शूलमृन्त्यादिना विध्यति,
उपरितोवज्रशिलोपरि पोथ (पात) यति, तथा रज्वादिना दृढं बध्वा लतादि-

गगनतल में ले जाकर वहां से नीचे पटकता है और गला पकड़ कर
फिर उन्हें खंडों में डाल देता है। नारकी जीव ऊपर से नीचे मुख करके
गिरने लगता है—तब वह उसे बीच ही में बेल कर शूलादि द्वारा छेद
डालता है और पूर्वकृतपाप को याद दिलाकर उसे विविध प्रकार के
कष्ट देता है १। दूसरा जो अम्बरीष नामका असुर है वह नारकियों को
मुद्गर आदि से कूट कर एव करोंत आदि से खंड खंड कर उन्हें भाड़में
पकाता है। इस तरह इतादृत हो जाने के कारण मूर्च्छित हुआ उन नारकियों
के चमड़े के एकएक पुट को केले के स्तंभ समान फाड़ २ कर—उखाड़
२ कर वह उन्हें बहुत कष्ट देता है २। तीसरा जो श्याम नाम का पर-
माधार्मिक असुर कशाओं के आघात आदि से नारकियों को खूब पीटता
है। उनके हस्त पाद आदि अवयवों को बुरी तरह से काट डालता है।
शूली के अग्रभाग से उन्हें छेद देता है। ऊपर से उन्हें वज्रशिला के
ऊपर पटक देता है तथा रस्सी आदि से उन्हें खूब मजबूत बांधकर लतादि

છે અને ગણુ પકડીને તેમને ખાડામા નાખી દે છે નારકી જીવ બ્યારે ઉપરથી
જી ધે માથે નીચે પડવા માટે છે ત્યારે તે તેને વચ્ચેથી જ પકડીને શૂલાદિ દ્વારા
છેદી નાખે છે અને પૂર્વકૃત પાપોને યાદ કરાવીને તેને અનેક પ્રકારે કષ્ટ આપે છે.
૧૧। બીજો જે 'અમ્બરીષ' નામનો અસુર છે તે નારકીઓને મગદળ આદિ વડે મારે
છે અને કરવત આદિથી તેમના ટુકડે ટુકડા કરીને તેને ભઠ્ઠીમા પકાવે છે. આવી રીતે
ટુકડે ટુકડા થવાને કારણ મૂર્ચ્છિત થયેલ નારકીઓની આમડીના એક એક પુટને
કેળના સ્તંભની જેમ ફાડી ફાડીને તથા ઉપાડી ઉપાડીને તે તેમને ધણુ જ કષ્ટ
આપે છે (૨) ત્રીજો 'શ્યામ' નામનો પરમાધાર્મિક અસુર છે તે આળુક વડે નાર-
કીઓને ખૂબ મારે છે તેમના હાથ, પગ આદિ અંગોને ખરાબ રીતે કાપી નાખે
છે શૂળની અભિધી તેને વીધી નાખે છે તેને ઉપરથી વજ્ર શિલા ઉપર પટકે છે
તથા તેમને દોરડા આદિથી બાંધીને લાત આદિના પ્રહારથી વધારેમા વધારે

પરાપ્રાપ્તમરં પ્રીયણયાતનાં નવતિ, મસ્ય ઇયામાહૃત્વાન્ઞયામો નામ ॥૩॥ શુભલઃ =
 ધર્મેન કર્તુઃ અયમપરં પરમાધાર્મિકઃ, અયં દિ મુદ્ધરાદિના નારદિધ્યામસ્ય
 સર્પિર્જ્ઞયતિ, અન્નમવાપીન્નિષ્કાસયતિ ॥૪॥ રૌદ્રા રુદ્રકર્મકરત્વાદતોડ્ય નાર
 કાન આમયિત્વા આમયિત્વા ગગને મુદૂરમુતિસપ્ય નિપતતસ્તાઠઠકત્પસિતોમરા
 ત્પિ પ્રોતયતિ ॥ ઉપરીદ્ર = રૌદ્રકત્પઃ, એવં ચ કરચરણાગ્રોપાગ્નિનિ મનન્તિ ॥૬॥
 કાલ મ યો નારકાન નાનાવિષાસુ કુમ્મીપુ પવતિ । અયં ચ ધર્મતોડપિ કાલ
 એવ ॥૭॥ મહાકાલઃ इति चापरः परमाधार्मिक अयं पूर्वस्मिन् जन्मनि मांसा

કે પ્રદારોં સે અધિક સે અધિક અયંકર કલ્પ પહુંચાતા હૈ । હસ અસુર
 કા શરીર કાલા હોતા હૈ । સલિય હસકા નામ ઇયામ ૬ ૩ । ચૌધા શાયલ
 નામકા પરમાધાર્મિક અસુર ધર્મ સે કરુર હોતા હૈ । યદ મુદ્ગર આદિ
 મે નારદિયોં કી અસ્થિ(હદિ)સંધિયોં કો ચૂર = કર ટેના હૈ । ડનકી આતે
 ઔર બના-વર્ષોં આદિ કા નિકાલ હેતા હૈ ૪ । પાંચવાં રુદ્ર નામકા પરમાધાર્મિક
 અસુર જૈતા ડમકા નામ હૈ ચૈતા હી ડમ કા કાલ હૈ । યહ નારકિયોં
 કા ઘુમા ૨ કર આકાશ મં વહુત દૂરતક ડનું ફેલતા હૈ । જય ચે મીચે
 ગિરન લગત હૈ તા ડનું શક્તિ, અસિ ઔર ટોમર આદિ પર પીંચ હી મેં
 ફલ હેતા હૈ । હસ તરહ ચે ડનમેં મિલ જાતે હૈ ૫ । છદ્ધો ઉપરીદ્ર નામકા
 જા પરમાધાર્મિક અસુર હૈ અહ નારકિયોં કં કર, ચરણ આદિ ડંગ
 ઉપાંગોં કો ફાલ દેતા હૈ-ચીર દેતા હૈ ૬ । સાતવાં કાલ નામ કા પરમા
 ધાર્મિક અસુર નારકિયોં કો નાના પ્રકાર કી કુમિયોં કુખ્તોં મેં પકાતા
 હૈ । યહ અસુર રુપ રંગ મેં કાલા હોતા હૈ ૭ । માઠવાં મહાકાલ નામકા

પહેલાઠે છે તે અસુરનું શરીર કાળું હોય છે, તેની તેને 'શ્વામ' કહે છે (૪)
 ચોથો 'શાયલ' નામનો પરમાધાર્મિક અસુર ૫જે કાળશ હોય છે તે અસુર
 આદિથી નારકાઓનાં હાથકાનાં ચૂરે ચૂરા કરી નાખે છે તેમનાં આવરકાં તથા ઘરની
 આદિ બહાર કાઢી દે છે. (૫) પાંચમો રુદ્ર નામનો પરમાધાર્મિક અસુર છે જેણે
 તેણે નામ બચકર છે તેણે જ બચકર તેણે કામ છે. તે નારકાઓને ચકકર ચકકર
 ધુમાળીને આકાશમાં ધણે જ દૂર દૂર ફેંકે છે અને અધારે તેઓ નીચે પડતાં હોય
 છે ત્યારે તે તેમને શક્તિ તલવાર, તોમર આદિ અગ્નિદાર શસ્ત્રોર બીજી દે છે,
 આ રીતે પડવાથી તેઓ તેમાં બીંધાય નય છે (૫) છઠ્ઠો જે ઉપરીદ્ર નામનો
 પરમાધાર્મિક અસુર છે તે નારકાઓના હાથ યમ, આદિ બળોને ફાડી નાખે છે,
 (૬) સાતમો જે 'કાલ' નામનો પરમાધાર્મિક અસુર છે તે નારકાઓને વિવિધ
 પ્રકારની કુખિયો તથા કુદેમાં પકાવે છે તે અસુર ૭જે તથા ૬જે કાળો હોય છે

हारिणो नारकास्तदीयोत्कर्तितं पृष्ठादिस्थं मांसं कदर्थनया भक्षयति, वर्णेन च महाश्यामत्वान्महाकाल उच्यते ॥८॥ असिपत्रः स देवो योऽग्नि (तरवारि)-
तुल्यपत्राणां ननं विरचय्य तच्छायाभिलाषेण समागतान्नारकिणो विकृतवाता
न्दोलनपूर्वकमसिपत्रपातनेन खण्डश-श्छिनत्ति 'असिपत्र' इत्यत्र अर्श आदित्वादच्
॥९॥ धनुः स यो धनुरो विनिर्मुक्तैर्द्धचन्द्राकारैर्वाणैः कर्णौष्ठनासादीन् अवयवान्
नारकिणा छिनत्ति ॥१०॥ कुम्भः विविधासु उष्ट्राकाराद्यासु कुम्भीषु नारकिणो
भृशं पचति हन्ति च ११ बालु भ्राष्ट्रस्थ तप्तवज्रबालुकासु नारकान् सतडत्कारं
चणकादीनि च भर्जयति। चैतरणी=नरकस्थनदी, तदधिष्ठातृत्वेन तद् देवोऽपि गृहादारः

परमाधार्मिक असुर, पूर्वजन्म में जीवों ने मांस का भक्षण किया है उन
नारकियों को उन्हीं के पृष्ठादि के मांस को काट २ कर खिलाता है।
वर्ण में यह अत्यंत काला होता है इसलिये इसका नाम महाकाल है।
नववां असिपत्र नामक परमाधार्मिक असुर वे देव हैं जो असि के जैसे
पत्रों का वन अपनी विक्रिया से रच कर उसकी छाया सेवन की अभिलाषा
से आये हुये नारकियों के शरीर के विकृत वातान्दोलन (हवाचलाकर)पूर्वक
असिपत्र के पात से खंड २ कर देता है ९। दसवां धनुजाति का परमाधार्मिक
वह असुर हैं जो धनुष से विनिर्मुक्त अर्धचंद्राकार वाणों से नारकियों
के कान ओष्ठ आदि अवयवों को छेदता है १०। ग्यारहवां कुम्भ जाति
का परमाधार्मिक असुर वह है जो उष्ट्राकारवाली कुम्भियों में नारकियों
को घुरी तरह पकाता है और मारता भी है ११। बारहवां बालु नामका
परमाधार्मिक असुर भाड की संतप्त वज्र बालु का में नारकियों को भुंजते
समय फड २ करते हुए चनों की तरह भुजता है १२। तेरहवां चैतरिणी

(७) आठमे 'महाकाळ' नामने जे परमाधार्मिक असुर छ ते पूर्वजन्ममां जे
जिवेमां मांस आदिनु भक्षण कयुं होय ते नारकीओने तेमना ज पृष्ठादि भागेनु मांस
कापी कापीने अवरावे छ ते रगे अतिशय काणो होवाथी तेनु नाम 'महाकाळ' छ (८)
नवमे 'असिपत्र' नामने परमाधार्मिक असुर छ ते जेवो छ के जे पोतानी वैद्वि
शक्तिथी तलवार जेवा गान वाणा वन बनावे छ, अने तेनी छायानु सेवन करवाना
छछाथी तेनी नीचे आवेल नारकीओना शरीरना विकृत वातान्दोलन पूर्वक [पवननु
तोक्षण उत्पन्न करीने] असिपत्रेने नीचे पाडीने टुकडे टुकडा करी नाथे छ (९). दसमे
'धनु' नामने परमाधार्मिक असुर धनुष्यमांथी छोडला अर्धचंद्राकार बाणोथी नारकी
ओना छोड, कान आदि अवयवोनु छेदन करे छ (१०) अगियारमे 'कुम्भ' जातिने
परमाधार्मिक असुर उष्ट्राकारनी कुंभियोमा नारकीओने भरण रीते पकावे छ तथा
भारे छ (११) बारमे 'बालु' नामने परमाधार्मिक असुर लडीमा गरम करे
वज्रनी रीतीमा नारकीओने, शक्ति वज्रते डंड डंड करता अणानी भाङ्क सेके छ

भीणि क्षतानि उच्छरत्वेन चमरराजस्य नगर्याः प्राकारप्रमाणं तद्वपेक्षयाऽधिकमेवेति
 सार्धैश्चतस्रम्-तथा सौपर्यमैमानिकानाम्-मूलप्रासादः-पञ्च योजनानां क्षतानि तद्वन्मे
 चत्वारस्तत्परिवारभूताः सार्धैश्चतस्रे प्रत्येकं च तेषां चतुर्णामपि अन्ये परिवारभूता-
 इचत्वारः सप्तार्धं क्षतम् एवमन्ये तत्परिवारभूताः सार्धार्द्धिपट्टिः। एवमन्ये सप्तार्धे
 मिश्रतु, इह तु चमरचञ्चाराजधान्यां मूलप्रासादः सार्धे द्वे योजनक्षते। एवमेवाऽर्धा
 ऽर्धहीनास्तद्वपरे सर्वमवति याषदन्तिमाः पञ्चदशयोजनानि पञ्च च भागा योज-

तथा सौघर्म देवों का मूल महल पाँचसौ योजन का ऊँचा है तथा इस
 प्रासादके परिवार रूप चार और महल हैं सो इनकी ऊँचाई दो सौ पचास
 २५० योजन की है। तथा इन चार महलों में से प्रत्येक महल के आस
 पास दूसरे और चार चार इनके परिवाररूप महल हैं, उनकी ऊँचाई
 एकसौ पचीस १२५ योजन की है। इसी तरह इन चार २ महलों के
 परिवार भूत और भी चार २ महल हैं इनकी ऊँचाई साठे घामठ साठे
 घासठ ६२॥-६२॥ योजन की है। इसी तरह इन महलों के भी और
 चार चार परिवार महल हैं इनकी ऊँचाई प्रत्येक की सवा इगत्तीस सवा
 इगत्तीस ३१-३१ योजन की है। परन्तु यहाँ चमरचञ्चा राजधानी में
 मूलमहल की ऊँचाई दो सौ पचास २५० योजन की है। और इस मू
 लप्रासाद के आस पास के और जितने महल-प्रासाद हैं उसकी ऊँचाई
 मूल महल की अपेक्षा आधी २ होती गई है। इस तरह अन्तिम महल
 की ऊँचाई पन्द्रह १५ योजन और एक योजन के अठिया पाँच भाग
 अर्थात् आठ भागों में से पाँच भाग है। इसी तरह घात को बाघना

योजन क्षति छे ते भडेहना परिवार रूप जील के आर भडेह छे तेभनी
 छिआर्ध २५०-२५० अडिसे अडिसे योजननी छे ते चार भडेहभांन प्रत्येक
 भडेहनी आसपास तेभना परिवार रूप आर आर भडेह छे ते इरेहनी
 छिआर्ध १२५-१२५ सवासे सवासे योजननी छे वनी ते चार भडेहभांन
 प्रत्येकना परिवार रूप आर आर भडेह छे ते इरेहनी छिआर्ध ६२-६२
 सादीवासठ सादीवासठ योजननी छे वनी ते चार भडेहभांन प्रत्येकना परि
 वाररूप जील आरआर भडेह छे ते इरेहनी छिआर्ध ३१-३१ सवा जेभनीस सवा
 जेभनीस योजननी छे अमरख आ राजधानीमा भडेहोनुं माप उपर इसविहा सो-
 धर्म देवले कना भडेहो कस्ता अधुं छे जेहले के अमरख आ राजधानीमा मुख्य
 भडेहनी छिआर्ध २५ अडिसे योजन छे जेने ते मुख्य भडेहनी आसपासना जील
 नेटवा प्रासाद (भडेहो) छे ते इरेहनी छिआर्ध मुख्य प्रासाद कस्ता अधुं
 अधुं घटी जय छे आ रीते छेहवा आर प्रसादनी छिआर्ध १५-१५ योजननी
 छे जेह घात सूत्रकार नीधेना सूत्र द्वारा आठ करी छे- (चत्वारि परिवारजी

નસ્યાઽષ્ટસુ ભાગેષુ, ઉક્તઞ્ચ—‘ ચત્તારિપરિવાહીઓ, પાસાયવહિંસગાળં અદ્વદ્વહી-
ળાઓ ’ ચતસ્રઃ પરિપાટયઃ પ્રાસાદાવતસકાનામર્ધાર્દ્ધહીના इतिच्छाया । एतेषां च
પ્રાસાદાદીનાં ચતસ્રોઽપિ પરિપાટયઃ ત્રીણિ શતાનિ એક ચત્વારિંશદધિકાનિ ભવન્તિ।
एतेभ्यः प्रासादादिभ्य उत्तरपूर्वस्यामीशानकोणे सुधर्मा सभा भवतीति तदेव दर्श-
યતિ ‘સમાસુહમ્મા ’ इति ईशानकोणे सुधर्मानाम्नी सभा भवति असुरेन्द्रस्य चम-
रराजस्येति इतिभगवत उत्तरम् ॥ सू-१ ॥

इति श्री-जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्य श्री घासीलाल व्रतिविरचितायां प्रमे-
यचन्द्रिकाख्यायां द्वितीय शतकस्य अष्टमोद्देशकः समाप्तः ॥ २-८ ॥

નત્ર મેં (ચત્તારિ પરિવાહિઓ પાસાયવહિંસગાળં અદ્વદ્વહીળાઓ સ્તિ)
इस पाठ द्वारा कहा गया है, अर्थात्—प्रासादावतंसकों की अर्धार्धहीन
चार परिपाटी-पंक्तियां हैं । इन प्रासादावतंसकों की चारों भी परिपाटि
यों में कुल तीनसौ इगतालीस प्रासाद हैं । इन प्रासादों के ईशानकोने
में असुरेन्द्र चमरराजकी (सभा सुहम्मा) सुधर्मा सभा है । इस प्रकार
भगवान् ने गौतम को उत्तर दिया ॥ सू० १ ॥

जैनाचार्य श्री घासीलालजी महाराजा कृत “भगवतीसूत्र” की प्रिय-
दर्शिनी व्याख्याके द्वितीय शतकके आठवां उद्देशा समाप्त ॥ २-८ ॥

પાસાયવહિંસગાળ અદ્વદ્વહીળા ઓત્તિ) પ્રાસાદાવતંસકોની—ઉત્તમ પ્રાસાદોની અર્ધા
ર્ધ હીન ચાર પરિપાટી-પંક્તિયો છે એટલે કે સુખ્ય પ્રાસાદની આસપાસ પહે-
લી ચાર પ્રાસાદની પંક્તિ છે જેના દરેક પ્રાસાદની ઊંચાઈ ૧૨૫સવાસો ચોજનની
છે. તે ચાર પ્રાસાદની આસપાસ ૬૨૧-૬૨૧ સાડીબાસઠ સાડીબાસઠ ચોજનની
ઊંચાઈના ચાર ચાર પ્રાસાદોની બીજી પંક્તિ છે, વળી આ બીજી પંક્તિના
પ્રત્યેક પ્રાસાદની આસપાસ ૩૧૧-૩૧૧ સવા એકત્રીસ સવા એકત્રીસ ચોજનની
ઊંચાઈ વાળા ચાર ચાર પ્રાસાદોની ત્રીજી પંક્તિ આવે છે. પછી આ ત્રીજી
પંક્તિના પ્રત્યેક પ્રાસાદની આસપાસ ૧૫૫-૧૫૫ ચોજનની ઊંચાઈ વાળા ચાર
ચાર પ્રાસાદોની ચોથી પંક્તિ આવે છે તે પ્રાસાદાવતંસકોની ચારે પંક્તિયોમાં
એકંદરે ૩૪૧ ત્રણસો એકતાલીસ પ્રાસાદો છે (સુખ્ય ૧ × ૪ + ૧૬ + ૬૪
× ૨૫૬) એ પ્રાસાદોના ધિશાનકોણમાં અસુરેન્દ્ર ચમરરાજની (સમા સુહમ્મા)
સુધર્મા સભા આવેલી છે. ભગવાને ગૌતમસ્વામીને ઉપર મુજબ જવાબ દીધો. ॥સૂ ૧॥

જૈનાચાર્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ કૃત “ ભગવતીસૂત્ર ” ની પ્રિયદર્શિની

વ્યાખ્યાના બીજા શતકનો આઠમો ઉદ્દેશક સમાપ્ત ॥ ૨-૮ ॥

॥ अथ नवमोद्देशकः प्रारभ्यते ॥

नवमोद्देशकस्य राशिगणितगणितारः ॥ करय समयक्षेत्रमिति नाम भवतीति प्रश्नः सार्धद्वीपद्वयम् द्वौ समुद्री न समयक्षेत्रमित्यनेन ज्ञायते इति उत्तरपक्षः जीवाभिगमगुप्तसंगोद्धरणं चेति ॥

अष्टमोद्देशके नवमोद्देशकनामकं क्षेत्रम् शुभगांतामादिवयुक्तम् अथ क्षेत्राभि कारात् त्वमे उद्देशके समयक्षेत्रम् गण्यते ' किमिदं भते । ' इत्यादि ।

मूलम्—किमिदं भते । समय खेत्तेति पयुच्यद् गोयमा ।
अद्वया इज्जादीया दीयसमुदा णसणं पयद्गण समयखेत्तेति पयुच्यद् तत्थ णं अय जवूदीये दीये सव्यदीवसमुदाण सव्य ष्मंतरं पय जीवाभिगमपत्तव्यया नेयव्वा जाय अर्द्धिभतर पु फत्तरुद्ध जोद्धिम यिहूण ॥ सू-१ ॥

उत्तरा—किमिदं भदन्त । समयक्षेत्रमिति मोक्षय ? भौतत । अर्पव्दीगदीया

मितीयक्षेत्राक का नवम उद्देशा प्रारंभ-

इस नवम उद्देशक का संक्षेप से विषय विवरण इस प्रकार से है- समयक्षेत्र यह किसका नाम है ऐसा प्रश्न, अर्थात् द्वीप और दो समुद्र यह समयक्षेत्र है ऐसा उत्तर, जीवाभिगमगुप्त का उद्धरण ।

अष्टम उद्देशक में नवमोद्देशक नामक राजधानी और शुभगांता मा आदि विषय कहा गया है सो क्षेत्र के अधिकार को लेकर इस नवम उद्देशक में समय क्षेत्र का वर्णन कहा जाता है (किमिदं भते) इत्यादि सूत्रार्थ— (किमिदं भते । समयखेत्तेति पयुच्यद्) हे भदन्त । स-

जीव शतकना नवमा उद्देशकना प्रारंभ—

जीव शतकना नवमा उद्देशकः संक्षेप वर्णन ॥ प्रश्नः समयक्षेत्र काने कटे ॥ उत्तरः अदी द्वीप अदी द्वे समुद्रीने समयक्षेत्र कटे ॥ अथ विषयमा जीवाभिगम सूत्रेण उत्तीय

आहमा उद्देशकमा अग्रव्यया नाम ॥ राजधानी ॥ तथा अग्रव्यया शुभगांता राजा आदि निगोत्र निहयत्त करवागा आन्यु ॥ अदी द्वीपना अपि द्वीपना अपि अग्रव्यया अथ नवमा उद्देशकमा समयक्षेत्रानु वर्णन करवागा आने ॥ (किमिदं भते ।)

सूत्रार्थ—(किमिदं भते । समयखेत्तेति पयुच्यद् ?) हे भदन्त । अथ

નસ્યાઽષ્ટસુ ભાગેષુ, ઉક્તઞ્ચ-‘ ચત્તારિપરિવાહીઓ, પાસાયવહિંસગાળં અદ્વદ્વહી-
ળાઓ ’ ચતસ્રઃ પરિપાટયઃ પ્રાસાદાવતસકાનામર્ધાર્ધહીના इतिच्छाया । एतेषां च
પ્રાસાદાદીનાં ચતસ્રોઽપિ પરિપાટયઃ ત્રીણિ શતાનિ એક ચત્વારિંશદધિકાનિ ભવન્તિ।
एतेभ्यः प्रासादादिभ्य उत्तरपूर्वस्यामीशानकोणे सुधर्मो सभा भवतीति तदेव दर्श-
यति ‘सभासुहम्मा ’ इति ईशानकोणे सुधर्मानाम्नी सभा भवति असुरेन्द्रस्य चम-
रराजस्येति इतिभगवत उत्तरम् ॥ सू-१ ॥

इति श्री-जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्य श्री घासीलाल त्रतिविरचितायां प्रमे-
यचन्द्रिकाख्यायां द्वितीय शतकस्य अष्टमोद्देशकः समाप्तः ॥ २-८ ॥

નત્તર મેં (ચત્તારિ પરિવાહિઓ પાસાયવહિંસગાળં અદ્વદ્વહીળાઓ સ્તિ)
इस पाठ द्वारा कहा गया है, अर्थात्-प्रासादावतंसकों की अर्धार्धहीन
चार परिपाटी-पंक्तियां हैं । इन प्रासादावतंसकों की चारों ओर परिपाटि
यों में कुल तीनसौ इगतालीस प्रासाद हैं । इन प्रासादों के ईशानकोने
में असुरेन्द्र चमरराजकी (सभा सुहम्मा) सुधर्मा सभा है । इस प्रकार
भगवान् ने गौतम को उत्तर दिया ॥ सू० १ ॥

जैनाचार्य श्री घासीलालजी महाराजा कृत “भगवतीसूत्र” की प्रिय-
दर्शिनी व्याख्याके द्वितीय शतकके आठवां उद्देशा समाप्त ॥ २-८ ॥

પાસાયવહિંસગાળ અદ્વદ્વહીળા ઓત્તિ) પ્રાસાદાવતંસકોની—ઉત્તમ પ્રાસાદોની અર્ધો
ર્ધ હીન ચાર પરિપાટી-પંક્તિયો છે એટલે કે મુખ્ય પ્રાસાદની આસપાસ પહે-
લી ચાર પ્રાસાદની પંક્તિ છે જેના દરેક પ્રાસાદની ઊંચાઈ ૧૨૫ સવાસો ચોજનની
છે. તે ચાર પ્રાસાદની આસપાસ ૬૨૧-૬૨૧ સાડીબાસઠ સાડીબાસઠ ચોજનની
ઊંચાઈના ચાર ચાર પ્રાસાદોની બીજી પંક્તિ છે, વળી આ બીજી પંક્તિના
પ્રત્યેક પ્રાસાદની આસપાસ ૩૧૧-૩૧૧ સવા એકત્રીસ સવા એકત્રીસ ચોજનની
ઊંચાઈ વાળા ચાર ચાર પ્રાસાદોની ત્રીજી પંક્તિ આવે છે. પછી આ ત્રીજી
પંક્તિના પ્રત્યેક પ્રાસાદની આસપાસ ૧૫૫-૧૫૫ ચોજનની ઊંચાઈ વાળા ચાર
ચાર પ્રાસાદોની ચોથી પંક્તિ આવે છે તે પ્રાસાદાવતંસકોની ચારે પંક્તિયોમાં
એકંદરે ૩૪૧ ત્રણસો એકતાલીસ પ્રાસાદો છે (મુખ્ય ૧ × ૪ + ૧૬ + ૬૪
× ૨૫૬) એ પ્રાસાદોના ઈશાનકોણમાં અસુરેન્દ્ર ચમરરાજની (સભા સુહમ્મા)
સુધર્મા સભા આવેલી છે. લગવાને ગૌતમસ્વામીને ઉપર મુજબ જવાબ દીધો. ॥ સૂ ૧ ॥
જૈનાચાર્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ કૃત “ ભગવતીસૂત્ર ” ની પ્રિયદર્શિની

વ્યાખ્યાના બીજા શતકનો આઠમો ઉદ્દેશક સમાપ્ત ॥ ૨-૮ ॥

કુહાવનાદીવા ' અર્ધવૃત્તોયો દ્વીપો અર્ધમધિક ત્રિપત યમ સારશ્ચૌ યદ્વા સૃતીય-
 સ્યાર્ધમાગેન યુક્તો દ્વી દ્વીપો' इति तथा अर्धसृतीयो द्वीपो इति कथ्यते ' दो य
 समुद्रा ' द्वो च समुद्रौ ' एसण एवहण समयखेत्तेसि पवुण्ह ' एतत् सत्तु पવાत्
 समयક્ષેપ્રમિતિ મોચ્યતે ' તત્થ ણ ' તથ સલ્લ તપ્પ સાર્દદ્ધોપદ્રવસમુદ્રસ્ય મખ્ખે
 ' અયં ઝંબૂ દીવેદીવે ' અય ઝંબૂદ્વીપનામકો દ્વીપ ' સન્નદ્વીવસમુદ્દાણ સન્નન્મ-
 તરે ' સન્નદ્વીપસર્વસમુદ્દાણામમ્યન્તરે ઠિણ્ણતીતિ શ્લેષઃ, ' સમયક્ષેત્તેસિ ' સમયક્ષે-
 પ્રમિતિ તપ્પ સમયઃ કાલઃ' કાલેનાતીવાડ્ઞાગતવર્ષમાનસપ્તનેનોપલક્ષિતં યત્ સમ

પ્રમુ તનસે કહતે હું કિ (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (અકુહાવનાદીવા)
 અઘાઈ દ્વીપ ઓર (દો ય સમુદ્રા) દો સમુદ્ર (પસ ણ એવહણ સમય-
 ક્ષેત્તેસિ પવુણ્ણહ) इतना यह समय क्षेत्र कहा गया है । इस प्रकार के
 कथन से जंबूद्वीप घातकीर्ष्वह और आधा पुष्कर वर द्वीप इतना क्षेत्र
 समयक्षेत्र है तथा इसमें जो लवणसमुद्र और कालोदधि समुद्र ये जो
 दो समुद्र हैं यह सब समयक्षेत्र कहा गया है । समय शब्द का अर्थ
 काल है और इस काल से उपलक्षित जो क्षेत्र है वह समयक्षेत्र है ।
 इसे टीकाकार स्वयं आगे स्पष्ट कर रहे हैं (तत्थ णं) वहां ढाईद्वीप
 और दो समुद्र के बीच में (अयं जंबूदीवो दीवो) जो जंबूद्वीप नामकी
 पहिला द्वीप है वह (सन्नद्वीवसमुद्दाण सन्नन्मन्तरे) समस्त द्वीप
 और समुद्रों के ठीक बीचों बीच है । समयक्षेत्र का तात्पर्य क्या
 है ? सो इसे टीकाकार स्पष्ट करते हैं—समय नाम काल का
 है इसके अतीत, अनागत, और वर्तमान ऐसे तीन भेद हैं इन

મહાવીર સ્વામી તે પ્રશ્નનો આ પ્રમાણે જવાબ આપે છે—(ગોક્મા !)
 હે ગૌતમ ! (અકુહાવનાદીવા) અદી દ્વીપ અને (દો ય સમુદ્રા) એ સમુદ્રોને
 (પસણ એવહણ સમયક્ષેત્તેસિ પવુણ્ણહ) સમયક્ષેત્ર કહે છે એટલે કે જંબુદ્વીપ,
 ઘાતકીર્ષ્વહ અને અધી પુષ્કરદ્વીપ, એ અદી દ્વીપને તથા લવણસમુદ્ર અને
 કાલોદધિ સમુદ્ર એ બે સમુદ્રોને સમયક્ષેત્ર કહે છે સમય એટલે કાળ તે
 કાળથી ઉપલક્ષિત એ ક્ષેત્ર તેનું નામ સમયક્ષેત્ર છે સૂત્રકાર પાતે જ
 આખા તેનું સ્પષ્ટીકરણ કરે છે—(તત્થણ) ત્યાં અદી દ્વીપ અને બે સમુદ્રોની
 વચ્ચે (અયં જંબુદીવો દીવો) એ જંબુદ્વીપ નામનો પહેલો દ્વીપ છે તે (સન્નદ-
 દ્વીવસમુદ્દાણ સન્નન્મન્તરે) સમસ્ત દ્વીપો અને સમુદ્રની બરાબર વચ્ચે છે
 સમયક્ષેત્ર એટલે શું ટીકાકાર તેનું સ્પષ્ટીકરણ નીચે પ્રમાણે કરે છે—અમય
 એટલે કાળ. તેના ત્રણ ભેદ છે—પૂર્વકાળ, બાલિયકાળ અને વર્તમાનકાળ તે

દ્વૌ ચ સમુદ્રૌ એતત્ કલુ એતાવત્ સમયક્ષેત્રમિતિ પ્રોચ્યતે તત્રાયં જંબૂદ્વીપો દ્વીપઃ
સર્વદ્વીપસમુદ્રાણાં સર્વાભ્યન્તરે એવ જીવાભિગમવત્કવ્યતા જ્ઞાતવ્યા યાવદભ્યન્તરં
પુષ્કરાર્દમ્ જ્યોતિષિકવિહીનમ્ ॥ સુ-૧ ॥

ટીકા—‘કિમિદં મંતે ! સમયલેખેત્તેત્તિ પવુચ્ચહ’ કિમિદં મદન્ત ! સમય-
ક્ષેત્રમિતિ પ્રોચ્યતે ? હે મગવન્ ! કસ્ય ક્ષેત્રસ્ય સમયક્ષેત્રમિતિ નામ ભવતીતિ
ગૌતમસ્ય પ્રશ્નઃ । મગવાનાહ—‘ગોયમા’ ઇત્યાદિ ‘ગોયમા’ હે ગૌતમ ! ‘અ-

મયક્ષેત્ર કૌનસા ક્ષેત્ર કહલાતા હૈ ? । (ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (અહ્હા-
હજ્જા દીવા દો ય સમુદ્દા એસણં એવહ્ણ સમયલેખેત્તેત્તિ પવુચ્ચહ) અઢાર્દ
દ્વીપ ઔર દો સમુદ્ર હસે સમયક્ષેત્ર કહા ગયા હૈ । (તત્થ ણં અયં જં-
બૂદીવે દીવે, સન્વદીવસમુદ્દાણં સન્વબ્મંતરે એવં જીવાભિગમવત્કવ્યયા
નેયન્વા જાવ અઢ્ઘિતરં પુક્કરાર્દ જોહસવિહૂણં) હસમેં જો જંબૂદ્વીપ
નામકા દ્વીપ હૈ વહ સમસ્ત દ્વીપ ઔર સમુદ્રોં કે ઠીક વીચ મેં હૈ । હસ
તરહ યહાં સમસ્ત કથન જીવાભિગમસૂત્ર કે કથન કી તરહ જાનના
ચાહિયે । વહાં કા યહ કથન યહાં કહાં તક લેના ચાહિયે ? તો હસકે
લિયે કહા ગયા હૈ કિ આભ્યન્તર પુષ્કરાર્ધતક કા લેના ચાહિયે ડસમેં
મી જ્યોતિષિક સંબંધી કથન છોડ દેના ચાહિયે ડસકો યહાં નહીં
લેના ચાહિયે ।

ટીકાર્થ—(કિમિદં મંતે ! સમયલેખેત્તેત્તિ પવુચ્ચહ) હે મદન્ત !
(સમયક્ષેત્ર) યહ કિસકો કહા ગયા હૈ ? અર્થાન્ સમયક્ષેત્ર યહ કિસ
ક્ષેત્ર કા નામ હૈ એસા યહ પ્રશ્ન ગૌતમ કા હૈ, હસકા ડત્તર દેતે હુણ

ક્ષેત્રને સમયક્ષેત્ર કહે છે ! (ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (અહ્હાહજ્જાદીવા દો ય સમુદ્દા
એસ ણ એવહ્ણ સમયલેખેત્તિ પવુચ્ચહ) અઢી દ્વીપ અને બે સમુદ્રોને સમયક્ષેત્ર
કહે છે (તત્થ ણં અયં જંબુદીવે, દીવે સન્વદીવસમુદ્દાણ સન્વબ્મંતરે એવં
જીવાભિગમવત્કવ્યયા નેયન્વા જાવ અઢ્ઘિતરપુક્કરાર્દજોહસવિહૂણં) તેમાં જંબૂ-
દ્વીપ નામનો દ્વીપ છે તે સમસ્ત દ્વીપ અને સમુદ્રોની બરાબર વચ્ચે
વચ્ચ છે આ પ્રમાણે સમસ્ત કથન જીવાભિગમ સૂત્રના કથન પ્રમાણેજ અહીં
અહણ કરવાનું છે કયા સુધી તે કથન અહણ કરવું ! તો સૂત્રકાર કહે છે કે
“અભ્યન્તર પુષ્કરાર્ધ” પર્યન્ત તે કથન અહણ કરવું નેહએ. પરંતુ તેમાં
જ્યોતિષિકના વિષયમાં બે કથન આવે છે તે છોડી દેવું નેહએ—તે સિવાયનું
સમસ્ત કથન અહણ કરવું નેહએ

ટીકાર્થ—ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને પૂછે છે—(કિમિદં મંતે ! સમયલેખે-
તિ પવુચ્ચહ) હે મદન્ત ! કયા ક્ષેત્રને સમયક્ષેત્ર કહે છે ! એટલે કે કયા ક્ષેત્રનું
નામ સમયક્ષેત્ર છે !

હાઈજાડીયા ' અર્ધતૃતીયાં દ્વીપો અર્ધમધિક ચિયત યત્ર તારુઘૌ યદા તૃતીય-
 સ્યાર્ધમાગેન યુક્તો દ્વો દ્વીપો' इति तथा अर्धतृतीयां द्वीपौ इति कथ्यते ' दो य
 समुद्रा ' द्वौ च समुद्रौ ' एसण एवम्प समयखेचेचि पशुण्ड ' एतत् खलु एतास्
 समयक्षेत्रमिति प्रोच्यते ' तस्य णं ' तत्र खलु तत्र सार्द्धद्वीपद्वयसमुद्रस्य मध्ये
 ' अयं जंबू दीवेदीवे ' अयं जंबूद्वीपनामको द्वीप ' सन्वदीपसमुद्राण सन्वग्मं-
 तरे ' सन्वद्वीपसर्वसमुद्राणामभ्यन्तर तिष्ठतीति शेष , ' समयखेचेचि ' समयक्षेत्र
 मिति तत्र समयः काल कालनातीताऽनागतवर्तमानकक्षणेनोपलक्षितं यत् सम

પ્રમુ વનસે કહતે હેં ફિ (ગોયમા) હે ગૌમ ! (અઢાઈજા ડીયા)
 અઢાઈ દ્વીપ ઓર (દો ય સમુદ્રા) દો સમુદ્ર (एस ण एवम्प समय-
 खेचेचि पशुण्ड) इतना यह समय क्षेत्र कहा गया है । इस प्रकार के
 कथन से जंबूद्वीप धामकीर्ण्ड और आधा पुष्कर वर द्वीप इतना क्षेत्र
 समयक्षेत्र है तथा इसमें जो लवणसमुद्र और कालोदधि समुद्र ये जो
 दो समुद्र हैं यह सब समयक्षेत्र कहा गया है । समय शब्द का अर्थ
 काल है और इस काल से उपलब्धित जो क्षेत्र है यह समयक्षेत्र है ।
 इसे टीकाकार स्पष्ट आगे स्पष्ट कर रहे हैं (तस्य णं) वहां दार्द्वीप
 और दो समुद्र के बीच में (अयं जंबूदीवे दीवे) जो जंबूद्वीप नामका
 पहिला द्वीप है यह (सन्वदीपसमुद्राण सन्वग्मंतरे) समस्त द्वीप
 और समुद्रों के ठीक बीचों बीच है । समयक्षेत्र का तात्पर्य क्या
 है ? सो इसे टीकाकार स्पष्ट करते हैं—समय नाम काल का
 है इसके अतीत, अनागत, और वर्तमान ऐसे तीन भेद हैं इन

મહાવીર સ્વામી તે પ્રશ્નને આ પ્રમાણે જવાબ આપે છે—(ગોક્મા !)
 હે ગૌતમ ! (અઢાઈજાડીયા) બધી દ્વીપ અને (દો ય સમુદ્રા) બે સમુદ્રોને
 (एस ण एवम्प समयखेचेचि पशुण्ड) અમયક્ષેત્ર કહે છે એટલે કે જંબૂદ્વીપ,
 પાતદ્વીપ અને અખી પુષ્કરદ્વીપ, એ બધી દ્વીપને તથા લવણસમુદ્ર અને
 કાલોદધિ સમુદ્ર એ બે સમુદ્રોને અમયક્ષેત્ર કહે છે સમય એટલે કાળ તે
 કાળથી ઉપલક્ષિત એ મેત્ર તેનું નામ અમયક્ષેત્ર છે સૂત્રકાર પોતે જ
 આગળ તેનું સ્પષ્ટીકરણ કરે છે—(तस्य णं) ત્યાં બધી દ્વીપ અને બે સમુદ્રોની
 વચ્ચે (अयं जंबूदीवे दीवे) એ જંબૂદ્વીપ નામનો પહેલો દ્વીપ છે તે (सन्व
 दीपसमुद्राण सन्वग्मतरे) સમસ્ત દ્વીપો અને સમુદ્રની જણનાર વચ્ચે છે.
 અમયક્ષેત્ર એટલે શુ ટીકાકાર તેનું સ્પષ્ટીકરણ નીચે પ્રમાણે કરે છે—સમય
 એટલે કાળ. તેના ત્રણ ભેદ છે—પૂર્વાકાળ, બર્તમાનકાળ અને વર્તમાનકાળ તે

યક્ષેત્રમ્ કાલઞ્ચ સમયક્ષણાહોરાત્ર-માસપક્ષ-ઋતુઅયન સંવત્સરાદિરૂપો દિનકરગત્ય-
ભિવ્યંગ્યો મનુષ્યક્ષેત્રે એવ ભવતિ નાન્યત્ર-મનુષ્યક્ષેત્રાદન્યત્ર ન સૂર્યસ્ય સત્ત્વારો
ભવતીતિ અતો યાવત્પર્યન્તં સૂર્યસ્ય ગતિસ્તાવદેવ કાલવ્યવહારો જાયતે કાલોપ-
લક્ષિતત્વાત્ ક્ષેત્રં સમયક્ષેત્રમિતિ । ‘ એવં જીવાભિગમ વક્તવ્યયા નેયન્વા ’ એવં
જીવાભિગમવક્તવ્યતા નેતવ્યા (જ્ઞાતવ્યા) સર્વમત્ર જીવાભિગમસૂત્રપ્રતિપાદિત
દિશૈવ જ્ઞાતવ્યમિતિ જીવાભિગમવક્તવ્યતા ચૈવમ્ ‘ એગં જોયણ સયસહસ્સં આ-
યામવિક્કલંભેણ ’ ઇત્યાદિ એકં યોજનશતસહસ્રમાયામવિક્કલંભેણ ઇત્યાદિકં સર્વમત્ર
વિજ્ઞેયમ્ । કિયત્પર્યન્તં જીવાભિગમવક્તવ્યતા જ્ઞેયા ? તત્રાહ-“ જાવ અન્નિભતરં

તીન ભેદો સે યુક્ત જો ક્ષેત્ર હૈં—વે સમયક્ષેત્ર શબ્દ સે વ્યવહૃત
હુએ હૈં । સમય, ક્ષણ, અહોરાત્ર, માસ, પક્ષ, ઋતુ, અયન, સંવત્સર
આદિ રૂપ જો કાલ હૈ કિ જો સૂર્યકી ગતિ સે જાનો જાતા હૈ વહ
મનુષ્યક્ષેત્ર મેં હી હૈ દૂસરે ક્ષેત્રોં મેં નહીં હૈ, ક્યોં કિ મનુષ્ય ક્ષેત્ર સે
અન્યત્ર ક્ષેત્રોં મેં સૂર્ય ગતિ નહીં કરતે હૈં । ઇસલિયે જહાંતક સૂર્ય કી
ગતિ હૈ વહીં તક કાલ કા વ્યવહાર હોતા હૈ । ઇસલિયે ઇસ કાલ સે
ઉપલક્ષિત ક્ષેત્ર સમય ક્ષેત્ર હૈ, એસા જાનના ચાહિયે । (એવં જીવાભિગ-
મવક્તવ્યયા નેયન્વા) ઇસ તરહ જીવાભિગમ કી વક્તવ્યતા કહની ચાહિ-
યે, અર્થાત્—જીવાભિગમ સૂત્ર મેં જિસ પ્રકાર સે યહ વિષય પ્રતિપાદન
કિયા ગયા હૈ ઉસી પ્રકાર સે યહાં પર યહ વિષય પ્રતિપાદિત કર લેના
ચાહિયે, જીવાભિગમ કિ વક્તવ્યતા ઇસ પ્રકાર સે હૈ—(એગં જોયણસય
સહસ્સં આયામવિક્કલંભેણ) એકલાઘ યોજન કા આયામ ઓર વિક્કલંભ
હૈ ઇત્યાદિ સવ યહાં જાનના ચાહિયે, જીવાભિગમસૂત્ર કી વક્તવ્યતા

ત્રણ ભેદોથી યુક્ત જે ક્ષેત્ર છે તે ક્ષેત્રને સમય ક્ષેત્ર કહે છે સમય, ક્ષણ,
દિવસ—રાત્રિ, માસ, પક્ષ, ઋતુ, અયન, સવત્સર આદિ રૂપ જે કાળ છે; તે
સૂર્યની ગતિથી બાણી શકાય છે અને તેનું અસ્તિત્વ મનુષ્યક્ષેત્રોમાં જ છે—
અન્યક્ષેત્રોમાં નથી, કારણ કે મનુષ્યક્ષેત્ર સિવાયના ક્ષેત્રોમાં સૂર્ય ગતિ કરતો
નથી. તેથી જ્યાં સુધી સૂર્યની ગતિ છે ત્યાં સુધી કાળનો વ્યવહાર થાય છે.
તેથી જ તે કાળથી ઉપલક્ષિત ક્ષેત્રને સમયક્ષેત્ર કહે છે

(એવં જીવાભિગમવક્તવ્યયા નેયન્વા) જીવાભિગમસૂત્રમાં આ વિષયનું જે
વર્ણન કરવાયું છે તે અહીં ગ્રહણ કરવું જોઈએ જીવાભિગમ સૂત્રમાં
આ પ્રમાણે વર્ણન કર્યું છે—(એગ જોયણસયસહસ્સં આયામવિક્કલંભેણ) એક લાઘ
યોજનની તેની લાંબાઈ અને પહોળાઈ છે “ ઇત્યાદિ સમસ્ત કથન અહીં લેવું
જોઈએ. આ વિષયનું પ્રતિપાદન કરવા માટે જીવાભિગમ સૂત્રમાંથી કયા સુધી વર્ણન

લોકાન્તયોઃ પૂર્વાપરમાયો વિષયતે ન વેતિ પ્રશ્નાશ્ચય । મગધાનાહ-‘રોહા
 લોયંતે ય અલોયતે જાવ અણાણુપુચ્ચી ઇસા રોહા’ રોહ ! લોકાન્તઅલોકાન્તમ
 યાવદનાનુપૂર્વી ઇપા રોહા, લોકાન્તાલોકાન્તયોર્નાસ્તિ પૂર્વાપરમાયોઽપિ સુ પૂર્વાપર
 ક્રમરહિતાવધેતી અલોકાન્ત પૂર્વ લોકાન્તો વા પૂર્વમ્ ? લોકાન્ત પૂર્વમલોકાન્તો
 વા પૂર્વમિતિ ક્રમો નાઽસ્તીતિ માત્ર । પુન પૃચ્છતિ રોહ -‘પુચ્ચિ મંતે મોયતે પચ્છા
 સત્તમે ડવાસતરે પુચ્છા’ પૂર્વ મદન્તા લોકાન્ત પચ્ચાત્ સત્તમમવકાશાન્તરમ્ પૃચ્છા,
 હે મદન્તા ! કિમ્ પૂર્વ લોકાન્ત પચ્ચાત્સપ્તમમવકાશાન્તરમસ્તિ, અથવા પૂર્વમવકા
 શાન્તરં પચ્ચાલ્લોકાન્તોઽસ્તીતિ પ્રશ્નાશ્ચય । મગધાનાહ-‘રોહે ’-શ્યાદિ । ‘રોહા’
 હે રોહ ! ‘લોયંતે ય સત્તમેડવાસતરે ય’ લોકાન્તમ સપ્તમમવકાશાન્તરં
 વ ‘પુચ્ચિપેતે પચ્છાપેતે’ પૂર્વમપ્યેતે દે પચ્ચાકપ્યેતે દે ‘કોચિ ઇ’ દ્વાવપ્યેતી

બાદ મેં અલોકાન્ત હૈ, કિ પહિલે અલોકાન્ત હૈ બાદ મેં લોકાન્ત હૈ ?
 અર્થાત્ લોકાન્ત ઔર અલોકાન્ત મેં પૂર્વાપરમાય મૌજૂદ હૈ યા નહીં ?
 હસકા ઉત્તર દેતે હુપ મગધાન્ કહતે હૈ કિ (રોહ ! લોયંતે ય અલોયતે ય
 જાવ અણાણુપુચ્ચી ઇસા રોહા) હે રોહ ! લોકાન્ત ઔર અલોકાન્ત યે
 દોનો હૈ યાવત્ इनमें આનુપૂર્વી નહીં હૈ । લોકાન્ત ઔર અલોકાન્ત મેં
 પૂર્વાપરમાય નહીં હૈ । પૂર્વાપરક્રમ સે યે દોનો રહિત હી હૈ । ઇસા નહીં
 કિ પહિલે લોકાન્ત હૈ ઔર બાદ મેં અલોકાન્ત હૈ, પહિલે અલોકાન્ત હૈ
 ઔર બાદ મેં લોકાન્ત હૈ । રોહ પુનઃ પૃચ્છતે હૈ કિ-(પુચ્ચિ મંતે ! લોયંતે
 પચ્છા સત્તમે ડવાસતરે ? પુચ્છા) હે મદન્તા ! પહિલે લોકાન્ત હૈ ઔર
 બાદ મેં સાતવાં અવકાશાન્તર હૈ, કિ પહિલે સાતવાં અવકાશાન્તર હૈ
 ઔર બાદ મેં લોકાન્ત હૈ ? મગધાન્ હસકા ઉત્તર દેતે હુપ કહતે હૈ કિ-
 (રોહા ! લોયંતે ય, સત્તમે ડવાસતરે ય, પુચ્ચિ પેતે પચ્છા પેતે) હે રોહ !

અલોયંતે, પુચ્ચિ મલોયતે પચ્છા લોયંતે ?) હે મગધન્ ! પહેલા લોકાન્ત છે અને
 પછી અલોકાન્ત છે કે પહેલા અલોકાન્ત છે અને પછી લોકાન્ત છે ? એટલે
 કે લોકાન્ત અને અલોકાન્તમા પૂર્વાપર ભાવ મોઝૂદ છે કે નહીં ? ઉત્તર—
 (રોહ ! લોયંતે ય અલોયતે ય જાવ અણાણુપુચ્ચી ઇસા રોહા !) હે રોહ ! લોકાન્ત
 અને અલોકાન્ત બન્ને છે ત્યાંથી લઈને તેમનામા આનુપૂર્વી નથી ત્યાં
 સુધીનું તમામ કથન જાહી બદલુ કરવું લોકાન્ત અને અલોકાન્તમા પૂર્વાપર
 ભાવ નથી. તે બન્ને પૂર્વાપરના કમથી રહિત જ છે રોહ વળી નીચેનો પ્રશ્ન
 પૂછે છે-(પુચ્ચિ મંતે ! લોયંતે પચ્છા સત્તમે ડવાસતરે ? પુચ્છા) હે મગધન્ !
 પહેલુ લોકાન્ત અને ત્યાર બાદ સાતમુ અવકાશાન્તર છે ? કે પહેલુ સાતમુ
 અવકાશાન્તર અને ત્યાર બાદ લોકાન્ત છે ?

ઉત્તર (રોહા ! લોયંતે ય સત્તમે ડવાસતરે ય પુચ્ચિ પેતે પચ્છા પેતે) હે રોહ !

॥ अथ दशमोद्देशकः प्रारभ्यते ॥

दशमोद्देशकस्थ विषया इमे-कतिपयाः अस्तिकायाः ? धर्मास्तिकाये कतिपयाः वर्णाः, इत्यादि. ते च वर्णादिरहिताः अवस्थिताश्च इत्यादि प्रश्नोत्तरम् । धर्मास्तिकायस्य पञ्चभेदाः-द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, गुणभेदात् । जीवास्तिकाये वर्णादिरस्ति किमिति प्रश्नः ? तस्मिन् वर्णादिर्नास्ति इत्युत्तरम् । गतिगुणो धर्मास्तिकायः स्थितिगुणश्च अधर्मास्तिकायः, अवगाहनगुणः आकाशास्तिकायः, उपयोगगुणः जीवास्तिकायः, पूरणगलनस्वभावः-पुद्गलास्तिकायः, तस्मिन् कियन्ति वर्णादीनि इति प्रश्नः पञ्चवर्ण-पञ्चरस-द्विगन्धाष्टस्पर्शयुक्तः पुद्गलास्तिकायः इत्युत्तरम् । धर्मा-

दूसरे शतकके दशवां उद्देशक प्रारंभ-

(दसवें उद्देशक का विषय विवरण)

इस दशवें उद्देशक में विषय इस प्रकार से हैं-अस्तिकाय कितने हैं ? धर्मास्तिकायमें कितने वर्ण हैं ? इत्यादि । वे वर्णादि से रहित हैं और अवस्थित हैं इत्यादिरूप से प्रश्नोत्तर । धर्मास्तिकाय के द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव और गुण के भेद से पांच भेद हैं । जीवास्तिकाय में वर्णादिक हैं क्या ? ऐसा प्रश्न । उसमें वर्णादिक नहीं हैं ऐसा उत्तर । गतिगुणवाला धर्मास्तिकाय है, स्थितिगुणवाला अधर्मास्तिकाय है, अवगाहनगुणवाला आकाशास्तिकाय है, उपयोगगुणवाला जीवास्तिकाय है, पूरण गलन स्वभाव वाला पुद्गलास्तिकाय है पुद्गलास्तिकाय में कितने वर्णादिक होते हैं ? ऐसा प्रश्न । उसमें पांच वर्ण, पांच रस, दो गंध

બીજા શતકના દશમો ઉદ્દેશકનો પ્રારંભ

આ દસમાં ઉદ્દેશકનું સંક્ષિપ્ત વિષય વિવરણ નીચે પ્રમાણે છે-

પ્રશ્ન અસ્તિકાય કેટલાં છે ? ધર્માસ્તિકાયના કેટલા વર્ણ છે ?

ઉત્તર-તેઓ વર્ણાદિથી રહિત છે અને અવસ્થિત છે. દ્રવ્ય,

ક્ષેત્ર, કાળ, ભાવ અને ગુણની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાયના પાચ ભેદ છે

પ્રશ્ન-જીવાસ્તિકાયમાં વર્ણાદિક હોય છે કે નહીં ? ઉત્તર-તેમાં વર્ણાદિક હોતા નથી. ધર્માસ્તિકાય ગતિગુણવાળું છે, અધર્માસ્તિકાય સ્થિતિગુણવાળું છે આકા-

શાસ્તિકાય અવગાહન ગુણવાળું છે, જીવાસ્તિકાય ઉપયોગ ગુણવાળું છે અને

પુદ્ગલાસ્તિકાય પૂરણ ગલન સ્વભાવવાળું છે. પ્રશ્ન-પુદ્ગલાસ્તિકાયમાં કેટલા વર્ણા-

દિક હોય છે ? ઉત્તર- તેમાં પાંચ વર્ણ, પાંચ રસ, બે ગંધ અને આઠ સ્પર્શ

पुष्करवद् जोइस चिह्नम्” यावत् अभ्यन्तर पुष्करार्धद्वीपपर्यन्तम् ज्योतिष्क
 विहीनम् तत्र जंबूद्वीपमनुष्यक्षेत्रवक्तव्यतायाम् जीवामिगमसूत्रप्रवेदितायाम्
 ज्योतिष्कवक्तव्यताऽपि विद्यते किन्तु प्रकृते ज्योतिष्कविहीनं यथा भवेत् तथा—
 जीवामिगमवक्तव्यता ग्राह्या ज्योतिष्काधिकार परित्यज्याऽन्यत् सर्वमत्र ग्राह्यम्,
 अत्र परिमाणमात्रस्यैवाधिकारादिति ॥ सू० १ ॥

इति श्री-भैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्य श्री घासीलाल प्रतिविरचितायां मने
 यचन्द्रिकाख्यायां द्वितीय शतकस्य नवमोद्देशकः समाप्तः ॥ २-९ ॥

इस विषय को प्रतिपादन करने के लिये कहाँ तक की छेनी चाहिये तो
 इसके लिये कहा गया है कि (आद्य अभ्यन्तरं पुष्करवद् जोइसचिह्नम्)
 तात्पर्य इसका यह है कि-जीवामिगम सूत्र में जंबूद्वीप मनुष्यक्षेत्र की
 वक्तव्यता में ज्योतिष्कदेवों की भी वक्तव्यता कहने में आई है सो वह
 वक्तव्यता यहां नहीं कहनी चाहिये, उसको छोड़कर ही यहां प्रकृत में
 जीवामिगमसूत्र प्रतिपादित वक्तव्यता ग्रहण करनी चाहिये। अर्थात्
 देव संबंधी अधिकार को छोड़कर बाकी सब वहाँ का विषय यहां
 ग्रहण कर लेना चाहिये ॥ सू० १ ॥

जैनाचार्य श्री घासीलालजी महाराज कृत “भगवतीसूत्र” की प्रिय
 दर्शिनी व्याख्याके द्वितीय शतकके नवमोद्देशकः समाप्त ॥ २-९ ॥

अस्य लेखके । ते। सूत्रकार कहे छे छे (आद्य अभ्यन्तरं पुष्करवद् जोइसचिह्नम्)
 कहेवानु तात्पर्य के छे छे जीवामिगमसूत्रमा जंबूद्वीप मनुष्यक्षेत्रमा वक्ष्यं
 साधे ज्योतिष्क देवानु यच्च वक्ष्यं अस्माभ्यां आवेत्तु छे ज्योतिष्क देवानु
 वक्ष्यं अर्थात् अस्य लेखके नहीं के सिवायानु जीवामिगमसूत्रमा आवेत्तु समस्त
 वक्ष्यं अर्थात् अस्य लेखके जेटले छे ज्योतिष्क देवाना विषयमात्रे अधिकार आवे
 छे ते अर्थात् छे ने पाछीने। समस्त विषय अर्थात् अक्षय अस्य लेखके ॥ सू. १ ॥

जैनाचार्य श्री घासीलालजी महाराज कृत भगवती सूत्र की प्रियदर्शिनी
 व्याख्याना जीव शतकने नवमोद्देशकः समाप्त यथे.

॥ अथ दशमोद्देशकः प्रारम्भ्यते ॥

दशमोद्देशकस्थ विषया इमे-कतिपयाः अस्तिकायाः ? धर्मास्तिकाये कतिपयाः वर्णाः, इत्यादि. ते च वर्णादिरहिताः अवस्थिताश्च इत्यादि प्रश्नोत्तरम् । धर्मास्तिकायस्य पञ्चभेदाः-द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, गुणभेदात् । जीवास्तिकाये वर्णादिरस्ति किमिति प्रश्नः ? तस्मिन् वर्णादिर्नास्ति इत्युत्तरम् । गतिगुणो धर्मास्तिकायः स्थितिगुणश्च अधर्मास्तिकायः, अवगाहनगुणः आकाशास्तिकायः, उपयोगगुणः जीवास्तिकायः, पूरणगलनस्वभावः-पुद्गलास्तिकायः, तस्मिन् कियन्ति वर्णादीनि इति प्रश्नः पञ्चवर्ण-पञ्चरस-द्विगन्धाष्टस्पर्शयुक्तः पुद्गलास्तिकायः इत्युत्तरम् । धर्मा-

दूसरे शतकके दशवां उद्देशक प्रारंभ-

(दसवें उद्देशक का विषय विवरण)

इस दशवें उद्देशक में विषय इस प्रकार से हैं-अस्तिकाय कितने हैं ? धर्मास्तिकायमें कितने वर्ण हैं ? इत्यादि । वे वर्णादि से रहित हैं और अवस्थित हैं इत्यादिरूप से प्रश्नोत्तर । धर्मास्तिकाय के द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव और गुण के भेद से पांच भेद हैं । जीवास्तिकाय में वर्णादिक हैं क्या ? ऐसा प्रश्न । उसमें वर्णादिक नहीं हैं ऐसा उत्तर । गति-गुणवाला धर्मास्तिकाय है, स्थितिगुणवाला अधर्मास्तिकाय है, अवगाहनगुणवाला आकाशास्तिकाय है, उपयोगगुणवाला जीवास्तिकाय है, पूरण गलन स्वभाव वाला पुद्गलास्तिकाय है पुद्गलास्तिकाय में कितने वर्णादिक होते हैं ? ऐसा प्रश्न । उसमें पांच वर्ण, पांच रस, दो गंध

भील शतकना दशमो उद्देशको प्रारंभ

आ दसमां उद्देशकतुं सक्षिप्त विषय विवरण नीचे प्रमाणे छे-

प्रश्न अस्तिकाय केटलां छे ? धर्मास्तिकायना केटला वर्णां छे ?

उत्तर-तेआ वर्णाद्विधी रहित छे अने अवस्थित छे द्रव्य,

क्षेत्र, काल, भाव अने गुणनी अपेक्षाअ धर्मास्तिकायना पांच भेद छे.

प्रश्न-जीवास्तिकायमां वर्णादिक डोय छे के नहीं ? उत्तर-तेमां वर्णादिक डोय

नथी. धर्मास्तिकाय गतिगुणवाण छे, अधर्मास्तिकाय स्थितिगुणवाण छे आका-

शास्तिकाय अवगाहन गुणवाण छे, जीवास्तिकाय उपयोग गुणवाण छे अने

पुद्गलास्तिकाय पूरण गलन स्वभाववाण छे प्रश्न-पुद्गलास्तिकायमां केटला वर्णा-

दिक डोय छे ? उत्तर- तेमा पांच वर्ण, पांच रस, दो गंध अने आठ रस-

સ્તિકાપસ્ય એકઃ પ્રવેશોઽનેકમદશાઃ ચા ધર્માસ્તિકાય ઇત્યુચ્યતે इति પ્રશ્નઃ યાવદ્
 एकोऽपि प्रवेशोऽन्यूनो भवेत् तावत् नास्ति तावत् धर्मास्तिकाय इत्युच्यते, यथा
 अखण्डो मोदक एव मोदक इति व्यवह्रियते किन्तु अर्धો मोदको मोदकखण्ड
 इत्युच्यते। तथैवात्राऽपि धर्मास्तिकायादी विशेषम्। आकाशस्य कविमेदा इति प्रश्नः।
 लोकाकाशाऽलोकाकाशमदेन द्वौ मेदौ इत्युच्यते। लोकाकाशो जीवरूप-जीव
 देशरूपः-जीवप्रदेशरूप अजीवरूप अजीवदेशरूपः अजीवप्रदेशरूप, रूप्यजीवस्य
 चतुर्मेदाः स्कन्ध-स्कन्धप्रदेश-स्कन्धमदेश-परमाणुपुटल-लक्षणा, अरूप्यजीवस्य
 पञ्चमेदा-धर्मास्तिकाय १, धर्मास्तिकायस्य प्रवेशा २, अधर्मास्तिकाय ३,
 अधर्मास्तिकायस्य प्रवेशा ४, अद्यासमय ५, अलोकाकाश स अजीवद्रव्यप्रदेशः

और आठस्पर्श होते हैं ऐसा उत्तर। धर्मास्तिकाय का एक प्रदेश अनेक
 प्रदेश धर्मास्तिकाय कहे जाते हैं क्या? ऐसा प्रश्न। जयतक एक भी
 प्रदेश कम है तयतक वह धर्मास्तिकाय नहीं है। जैसे अर्धमोदक ही
 मोदक कहलाता है और मोदक का आधा खंड मोदक खण्ड कहलाता
 है। उसीप्रकार यहाँ धर्मास्तिकाय आदि में भी जानना चाहिये। आका-
 श के कितने मेद होते हैं ऐसा प्रश्न। लोकाकाश और अलोकाकाश इस
 प्रकारसे आकाशके दो मेद होते हैं ऐसा उत्तर। लोकाकाश जीवरूप है,
 जीवदेशरूप है, जीवप्रदेशरूप हैं, अजीवरूप है अजीवदेशरूप है, अजीव
 प्रदेशरूप है, रूपी अजीवके स्कन्ध, स्कन्धप्रदेश स्कन्धप्रदेश, परमाणु ये चार
 मेद होते हैं, अरूपी अजीवके पाँच मेद होते हैं। जैसे-धर्मास्तिकाय १,
 धर्मास्तिकाय के प्रदेश २, अधर्मास्तिकाय ३, अधर्मास्तिका के प्रदेश ४,
 अद्यासमय ५। अलोकाकाश अजीवद्रव्यप्रदेशरूप, अशुक्लधुरूप है, लोका-

શ' હોય છે પ્રશ્ન-ધર્માસ્તિકાયાના એક પ્રદેશને ધર્માસ્તિકાય કહે છે કે અનેક
 પ્રદેશને ધર્માસ્તિકાય કહે છે? જવાબ-અર્ધા સુધિ એક પણ પ્રદેશ એછા
 હોય ત્યાં સુધી તેને ધર્માસ્તિકાય કહેવાય નહીં. જેમ કે બાબા લાડુને જ
 લાડુ કહેવાય છે અર્ધા લાડુને તો લાડુનો અર્ધો કહેય કહેવાય છે' એજ
 પ્રમાણે ધર્માસ્તિકાય આદિની બાબતમાં પણ સમજવું પ્રશ્ન-આકાશના કેટલા
 ભેદ છે? ઉત્તર-આકાશના બે ભેદ છે- લોકાકાશ અને અલોકાકાશ. જીવરૂપ
 છે, જીવપ્રદેશરૂપ છે જીવપ્રદેશરૂપ છે જીવપ્રદેશરૂપ છે, અજીવ પ્રદેશરૂપ છે
 રૂપી અજીવના ચાર ભેદ છે (૧) સ્કન્ધ (૨) સ્કન્ધપ્રદેશ,
 (૩) સ્કન્ધ પ્રદેશ અને (૪) પરમાણુ બ્રહ્માં અજીવના ત્રીણે પ્રમાણે પાંચ ભેદ
 છે-(૧) ધર્માસ્તિકાય, (૨) ધર્માસ્તિકાયાના પ્રદેશ (૩) અધર્માસ્તિકાય (૪) અધ-
 મર્માસ્તિકાયાના પ્રદેશ અને (૫) આદ્યાસમય અલોકાકાશ અજીવ દ્રવ્ય

અગ્રુલઘુઃ । લોકાકાશે કિયન્તિ વર્ણાદીનિ ઇતિ પ્રશ્નઃ તસ્મિન્ નાસ્તિ વર્ણાદિક-
મિત્યુત્તરમ્ । ધર્માસ્તિકાયાદીનાં પ્રમાણં સ્પર્શના ચ તથા ધર્માસ્તિકાયઃ કિયાન્
વિશાલઃ ઇતિ પ્રશ્નઃ લોકપરિમિતઃ, ઇત્યુત્તરમ્ ' એવં લોકાકાશાસ્તિકાયેષુ પ્રશ્નો-
ત્તરમ્ ' અધોલોકઃ ધર્માસ્તિકાયસ્ય કિયન્તં ભાગં સ્પૃશતિ ? કિચ્ચિદધિકમેક-
ભાગમ્ ઇત્યુત્તરમ્ । તિર્યગ્લોકઃ ધર્માસ્તિકાયસ્ય કિયન્તં ભાગં સ્પૃશતિ ? અસંખ્યેય-
ભાગમિત્યુત્તરમ્ । ઊર્ધ્વલોકઃ કિયન્તં ભાગં સ્પૃશતિ ? કિચ્ચિન્ન્યૂનમધં ભાગં સ્પૃ-
શતિ । ધર્માસ્તિકાયેન સાદ્રં રત્નપ્રમાયાઃ ઘનોદયેઃ અવકાશાન્તરસ્ય ચ સ્પર્શના ।
અનેન પ્રકારેણ સપ્તપૃથિવીનામપિ સ્પર્શના જમ્બુદ્વીપાદયોદ્વીપાઃ લવણસમુદ્રાદયઃ

કાશ મેં કિતને વર્ણાદિક હોતે હેં એસા પ્રશ્ન । ઉસમેં વર્ણાદિક નહીં હેં
એસા ઉત્તર । ધર્માસ્તિકાય આદિકોં કા પ્રમાણ ઔર સ્પર્શનાં તથા
ધર્માસ્તિકાય કિતના વિશાલ હેં એસા પ્રશ્ન, લોકપરિમિત હેં એસા ઉત્તર
એવં લોકાકાશ ઔર અસ્તિકાયાદિકોં મેં ભી પ્રશ્નોત્તર સમજના । અધો-
લોક ધર્માસ્તિકાય કે કિતને ભાગ કો સ્પર્શ કરતા હેં ? । યહ પ્રશ્ન ।
કુછ અધિક આધે ભાગ કો સ્પર્શ કરતા હેં એસા ઉત્તર । તિર્યગ્ લોક
ધર્માસ્તિકાય કે કિતને ભાગ કા સ્પર્શ કરતા હેં ? એસા પ્રશ્ન । અસંખ્યા-
ત ભાગ કા સ્પર્શ કરતા હેં એસા ઉત્તર । ઊર્ધ્વલોક કિતને ભાગ કા
સ્પર્શ કરતા હેં ? એસા પ્રશ્ન—કુછકન આધે ભાગકા સ્પર્શ કરતા હેં, એસા
ઉત્તર । ધર્માસ્તિકાય કે સાથ રત્નપ્રમાં કી, ઘનોદધિ કી, અવકાશા-
ન્તર કી સ્પર્શનાં હસ પ્રકાર સે સાતોં પૃથિવિયોં કી સ્પર્શનાં કહના,

દેશરૂપ, અગુરુ લઘુરૂપ છે પ્રશ્ન—લોકાકાશમા કેટલા વર્ણાદિક હોય છે ? ઉત્તર
તેમાં વર્ણાદિક હોતા નથી

પ્રશ્ન—ધર્માસ્તિકાય આદિકોનું પ્રમાણ કેટલું હોય છે ? સ્પર્શના તથા વિશા-
ળતા કેટલી હોય છે ? ઉત્તર—ધર્માસ્તિકાય લોકપરિમિત છે.

એજ પ્રમાણે લોકાકાશ અને અસ્તિકાયાદિકોના પણ પ્રશ્નોત્તરો સમજી લેવા

પ્રશ્ન—અધોલોક ધર્માસ્તિકાયના કેટલા ભાગને સ્પર્શે છે ?

ઉત્તર—અર્ધા કરતા થોડા વધારે ભાગને સ્પર્શે છે

પ્રશ્ન—તિર્યગ્લોક ધર્માસ્તિકાયના કેટલા ભાગને સ્પર્શે છે ?

ઉત્તર—અસંખ્યાત ભાગને સ્પર્શે છે

પ્રશ્ન—ઊર્ધ્વલોક ધર્માસ્તિકાયના કેટલા ભાગને સ્પર્શે છે ?

ઉત્તર—અર્ધાકરતા થોડા ઓછા ભાગને સ્પર્શે છે

ધર્માસ્તિકાયની સાથે રત્નપ્રમાની, ઘનોદધિની, અવકાશાન્તરની સ્પર્શના

એજ પ્રમાણે સાતે પૃથિવીઓની સ્પર્શનાનું કથન, જમ્બુદ્વીપાદિક દ્વીપોનું,

સ્તિકાયસ્ય એકઃ પ્રવેશોઽનેકપ્રવેશઃ યા ધર્માસ્તિકાય ઇત્યુચ્યતે ઇતિ પ્રશ્નઃ યાક્ત
 એકોઽપિ પ્રવેશોન્યૂનો મથેત્ તાવત્ નાસ્તિ તાવત્ ધર્માસ્તિકાય ઇત્યુત્તરમ્, યથા
 અલ્પશ્વો મોદક એવ મોદક ઇતિ વ્યવહરિયતે કિન્તુ અર્થો મોદકો મોદકસ્વપ્ન
 ઇત્યુચ્યતે। તથૈવાપ્રાઽપિ ધર્માસ્તિકાયાદૌ વિશેયમ્। આકાશસ્ય કતિમેદાઃ ઇતિ પ્રશ્નઃ
 લોકાકાશાઽલોકાકાશમદેન દ્વૌ મેદૌ ઇત્યુત્તરમ્। લોકાકાશો જીવરૂપઃ-જીવ
 વેશ્વરૂપઃ-જીવપ્રવેશરૂપઃ અજીવરૂપઃ અજીવવેશ્વરૂપ અજીવપ્રવેશરૂપઃ, રૂપ્યજીવસ્ય
 ધતુર્મેદા સ્કન્ધ-સ્કન્ધવેશ્વ-સ્કન્ધપ્રવેશ-પરમાણુપુદ્ગલ-લક્ષણાઃ, અરૂપ્યજીવસ્ય
 પદ્મમેદા-ધર્માસ્તિકાય ૧, ધર્માસ્તિકાયસ્ય પ્રવેશ ૨, અધર્માસ્તિકાયઃ ૩,
 અધર્માસ્તિકાયસ્ય પ્રવેશઃ ૪, અદ્વાસમય ૫, અલોકાકાશઃ ૬ અજીવવેશ્વરૂપઃ

और आठस्पर्शा होते हैं ऐसा उत्तर। धर्मास्तिकाय का एक प्रवेश अनेक
 प्रवेश धर्मास्तिकाय कहे जाते हैं क्या? ऐसा प्रश्न। जयतक एक भी
 प्रवेश कम है तयतक वह धर्मास्तिकाय नहीं है। जैसे अल्वह मोदक ही
 मोदक कहलाता है और मोदक का आधा खह मोदक खण्ड कहलाता
 है। ठसीप्रकार यहाँ धर्मास्तिकाय आदि में भी जानना चाहिये। आका-
 श के कितने मेद होते हैं ऐसा प्रश्न। लोकाकाश और अलोकाकाश इस
 प्रकारसे आकाशके दो मेद होते हैं ऐसा उत्तर। लोकाकाश जीवरूप है,
 जीववैश्वरूप है, जीवप्रवेशरूप है, अजीवरूप है अजीव वैश्वरूप है, अजीव
 प्रवेशरूप है, रूपी अजीवके स्कन्ध, स्कन्धवैश्व स्कन्धप्रवेश, परमाणु ये चार
 मेद होते हैं, अरूपी अजीवके पाँच मेद होते हैं। जैसे-धर्मास्तिकाय १
 धर्मास्तिकाय के प्रवेश २, अधर्मास्तिकाय ३, अधर्मास्तिका के प्रवेश ४,
 अद्वैतसमय ५। अलोकाकाश अजीववैश्वरूपवैश्वरूप, अशुक्लधूरूप है, लोका-

શ' હોય છે પ્રશ્ન-ધર્માસ્તિકાયાના એક પ્રવેશને ધર્માસ્તિકાય કહે છે કે અનેક
 પ્રવેશને ધર્માસ્તિકાય કહે છે? જવાબ-ત્યાં સુધિ એક પણ પ્રવેશ જોયો
 હોય ત્યાં સુધી તેને ધર્માસ્તિકાય કહેવાય નહીં. જેમ કે જાખા લાડુને જ
 લાડુ કહેવાય છે અર્થા લાડુને તે લાડુનો અર્થો કડકો કહેવાય છે' જેમ
 પ્રમાણે ધર્માસ્તિકાય જાહિની જાબતમા પણ સમજવું પ્રશ્ન-આકાશના કેટલા
 વેદ છે? ઉત્તર-આકાશના બે વેદ છે- લોકાકાશ અને અલોકાકાશ અવશ્ય
 છે, અવશ્યરૂપ છે, અવપ્રવેશરૂપ છે, અવરૂપ છે, અવવેશરૂપ છે,
 અવવ પ્રવેશરૂપ છે, રૂપી અવવના ચાર વેદ છે (૧) રૂપ (૨) રૂપ-પ્રવેશ,
 (૩) રૂપ-વેશ અને (૪) પરમાણુ અરૂપી અવવના નીચે પ્રમાણે પાંચ વેદ
 છે-(૧) ધર્માસ્તિકાય, (૨) ધર્માસ્તિકાયાના પ્રવેશ, (૩) અધર્માસ્તિકાય (૪) અધ
 માસ્તિકાયાના પ્રવેશ અને (૫) આદ્વાસમય અલોકાકાશ અવવ રૂપ

અગુરુલઘુઃ । લોકાકાશે કિયન્તિ વર્ણાદીનિ ઇતિ પ્રશ્નઃ તસ્મિન્ નાસ્તિ વર્ણાદિક-
મિત્યુત્તરમ્ । ધર્માસ્તિકાયાદીનાં પ્રમાણં સ્પર્શના ચ તથા ધર્માસ્તિકાયઃ કિયાન્
વિશાલઃ ઇતિ પ્રશ્નઃ લોકપરિમિતઃ, મિત્યુત્તરમ્ ' એવં લોકાકાશાસ્તિકાયેષુ પ્રશ્નો-
ત્તરમ્ ' અધોલોકઃ ધર્માસ્તિકાયસ્ય કિયન્તં ભાગં સ્પૃશતિ ? કિચ્ચિદધિકમેક-
ભાગમ્ મિત્યુત્તરમ્ । તિર્યગ્લોકઃ ધર્માસ્તિકાયસ્ય કિયન્તં ભાગં સ્પૃશતિ ? અસંખ્યેય-
ભાગમિત્યુત્તરમ્ । ઊર્ધ્વલોકઃ કિયન્તં ભાગં સ્પૃશતિ ? કિચ્ચિન્ન્યૂનમર્ધં ભાગં સ્પૃ-
શતિ । ધર્માસ્તિકાયેન સાદૃશં રત્નપ્રભાયાઃ ઘનોદયેઃ અવકાશાન્તરસ્ય ચ સ્પર્શના ।
અનેન પ્રકારેણ સપ્તપૃથિવીનામપિ સ્પર્શના જમ્બૂદ્વીપાદયો દ્વીપાઃ લવણસમુદ્રાદયઃ

કાશ મેં કિતને વર્ણાદિક હોતે હેં એસા પ્રશ્ન । ઉસમેં વર્ણાદિક નહીં હેં
એસા ઉત્તર । ધર્માસ્તિકાય આદિકોં કા પ્રમાણ ઓર સ્પર્શનાં તથા
ધર્માસ્તિકાય કિતના વિશાલ હૈ એસા પ્રશ્ન, લોકપરિમિત હૈ એસા ઉત્તર
એવં લોકાકાશ ઓર અસ્તિકાયાદિકોં મેં ભી પ્રશ્નોત્તર સમજના । અધો-
લોક ધર્માસ્તિકાય કે કિતને ભાગ કો સ્પર્શ કરતા હૈ ? । યહ પ્રશ્ન ।
કુછ અધિક આઘે ભાગ કો સ્પર્શ કરતા હૈ એસા ઉત્તર । તિર્યગ્ લોક
ધર્માસ્તિકાય કે કિતને ભાગ કા સ્પર્શ કરતા હૈ ? એસા પ્રશ્ન । અસંખ્યા-
ત ભાગ કા સ્પર્શ કરતા હૈ એસા ઉત્તર । ઊર્ધ્વલોક કિતને ભાગ કા
સ્પર્શ કરતા હૈ ? એસા પ્રશ્ન—કુછકમ આઘે ભાગકા સ્પર્શ કરતા હૈ, એસા
ઉત્તર । ધર્માસ્તિકાય કે સાથ રત્નપ્રભાં કી, ઘનોદધિ કી, અવકાશા-
ન્તર કી સ્પર્શના હમ પ્રકાર સે સાતોં પૃથિવિયોં કી સ્પર્શના કહના,

દેશરૂપ, અશુરુ લઘુરૂપ છે પ્રશ્ન—લોકાકાશમાં કેટલા વર્ણાદિક હોય છે ? ઉત્તર
તેમાં વર્ણાદિક હોતા નથી

પ્રશ્ન—ધર્માસ્તિકાય આદિકોનું પ્રમાણ કેટલું હોય છે ? સ્પર્શના તથા વિશા-
ળના કેટલી હોય છે ? ઉત્તર—ધર્માસ્તિકાય લોકપરિમિત છે

એજ પ્રમાણે લોકાકાશ અને અસ્તિકાઆદિકોના પણ પ્રશ્નોત્તરો સમજ લેવા
પ્રશ્ન . અધોલોક ધર્માસ્તિકાયના કેટલા ભાગને સ્પર્શે છે ।

ઉત્તર—અર્ધા કરતા થોડા વધારે ભાગને સ્પર્શે છે.

પ્રશ્ન—તિર્યગ્લોક ધર્માસ્તિકાયના કેટલા ભાગને સ્પર્શે છે ।

ઉત્તર—અસંખ્યાત ભાગને સ્પર્શે છે

પ્રશ્ન—ઉર્ધ્વલોક ધર્માસ્તિકાયના કેટલા ભાગને સ્પર્શે છે ।

ઉત્તર—અર્ધાકરતા થોડા ઓછા ભાગને સ્પર્શે છે.

ધર્માસ્તિકાયની સાથે રત્નપ્રભાની, ઘનોદધિની, અવકાશાન્તરની સ્પર્શના
એજ પ્રમાણે સાતે પૃથિવીઓની સ્પર્શનાનું કથન, જમ્બૂદ્વીપાદિક દ્વીપોનું,

समुद्राः सौधर्मकल्पः यावत् ईपत् प्राग्भारा पृथिवी तथैव अधर्मास्तिकायः, एवं लोकाकाशोऽपि विद्येयः ॥

नवमोऽश्वके क्षेत्रनिरूपणं कृतम्, तत् क्षेत्रम् अस्तिकायरूपम् । अतोऽस्तिकाय-
निरूपणाय तथा द्वारगायोक्ताऽस्तिकाय निरूपणाय च दशमोऽश्वकः प्राह, तस्येदं
मादियं सूत्रम् 'कइ ण भते' इत्यादि ।

मूलम्—कइ ण भते अस्तिकाया पण्णसा गोयमा ! पञ्च
अस्तिकाया पण्णसा, त जहा धम्मस्थिकाय, अधम्मस्थिकाय,
आगासस्थिकाय, जीवस्थिकाय, पोग्गलस्थिकाय, धम्मस्थिका
एण भते ! कइवण्णे, कइगधे, कइरसे, कइफासे गोयमा ! अवण्णे
अगधे, अरसे अफासे, अरूपो, अजीवे, सासए अवट्ठिए लोग
दव्वे, से समासए पच्चविहे पण्णत्ते, त जहा दव्वओ, खेत्तओ
कालओ, भावओ, गुणओ, दव्वओण धम्मस्थिकाय एके दव्वे
खेत्तओण लोगपमाणमेत्ते कालओ न कया वि न आसि, न
कया वि नस्थि जावणिच्चे, भावओ, अवण्णे, अगधे, अरसे,
अफासे गुणओ गमणगुणे, अहमस्थिकाय, वि एव च्चेव नवर
गुणओ ठाण गुणे, आगासस्थिकाय वि एव च्चेव नवर खेत्तओ

जम्बूदिपादिक द्वीप, लवणसमुद्रादि समुद्र, सौधर्मकल्प यावत् ईपत्प्राग्भारा
पृथिवी, इसी प्रकार अधर्मास्तिकाय एवं लोकाकाश के विषय में भी
जानना चाहिये ।

नववें अश्वक में क्षेत्र का निरूपण किया वह क्षेत्र अस्तिकायरूप है,
इसलिये अस्तिकाय के निरूपण के लिये तथा द्वारगायोक्त अस्तिकाय के

लवणसमुद्रादि समुद्रानुं, सौधर्मकल्पधी उपत्प्राग्भारा पृथ्वी पर्यन्तानुं, अने
अने प्रमाणे अधर्मास्तिकाय अने लोकाकाशानुं वस्तुन समञ्जसु

नवमां उदशाब्भां समयक्षेत्रानुं निरूपयन्तुं ते क्षेत्र अस्तिकाय इय
ते, तेषां अस्तिकायानुं निरूपयन्तुं कथं तथा द्वारगायामां उदशा अस्ति

ળં આગાસત્થિકાણ લોચાલોચપ્પમાણમેત્તે, અણંતે ચેવ જાવ. ગુણઓ અવગાહનાગુણે જીવત્થિકાણં ભંતે! કઙ્કવણે, કઙ્કગંધે, કઙ્કરસે, કઙ્કફાસે ગોચમા ! જાવ અરૂચી, જીવે સાસણ અવટ્ટિણ લોગદવ્વે સે સમાસણ પંચવિહે પણ્ણત્તે, તં જહા દવ્વઓ જાવગુણઓ, દવ્વઓ ણં જીવત્થિકાણ અણંતાઈં જીવદવ્વાઈં, સેત્તઓ લોગપ્પમાણમેત્તે કાલઓ ન કયા વિ ન આસી જાવ ણિચ્ચે, ભાવઓપુણ અવણે, અગંધે, અરસે, અફાસે, ગુણઓ ઉવઓગગુણો. પોગ્ગલત્થિકાણ ણં ભંતે! કઙ્કવણે, કઙ્કગંધે, કઙ્કરસે, કઙ્કફાસે? ગોચમા ! પંચવણે પંચરસે, દુગંધે, અટ્ટફાસે, રૂપી, અજીવે, સાસણ, અવટ્ટિણ, લોગદવ્વે, સે સમાસઓ પંચવિહે પણ્ણત્તે, તં જહા-દવ્વઓ, સેત્તઓ કાલઓ, ભાવઓ, ગુણઓ, દવ્વઓ ણં પોગ્ગલત્થિકાણ અણંતાઈં, દવ્વાઈં, સેત્તઓ લોગપ્પમાણમેત્તે, કાલઓ ન કયાઈ ન આસી જાવ ણિચ્ચે ભાવઓ વણ્ણમંતે ગંધમંતે ફાસમંતે ગુણઓ ગહણગુણે ॥ સૂ૦ ૧ ॥

છાયા—કતિ સ્વભદન્ત ! અસ્તિકાયાઃ પ્રજ્ઞતાઃ, ગૌતમ ! પચ્ચ અસ્તિકાયા પ્રજ્ઞતાઃ તથથા ધર્માસ્તિકાયોઽધર્માસ્તિકાયઃ આકાશાસ્તિલાયો જીવાસ્તિકાયઃ

નિરૂપણ કે લિયે હસ દશવે ઉદેશક કા પ્રારંભ કિયા ગયા હૈ હસકા આદિમ સૂત્ર યહ હૈ—(કઙ્ક ણ ભંતે !) હત્યાદિ ।

સૂત્રાર્થ—(ભંતે !) હે ભદન્ત ! (કઙ્ક ણં અત્થિકાયા પણ્ણત્તા) અસ્તિકાય કિતને કહે ગયે હૈં ? (ગોચમા !) હે ગૌતમ ! (પંચ અત્થિકાયા પણ્ણત્તા) પાંચ અસ્તિકાય કહે ગયે હૈં । (તંજહા) જૈસે—(ધમ્મત્થિકાણ, અધમ્મત્થિકાણ, આગાસત્થિકાણ, જીવત્થિકાણ, પોગ્ગલત્થિકાણ—

કાયનું નિરૂપણ કરવા માટે આ દસમા ઉદ્દેશકનો પ્રારંભ કરાયો છે. તેનું પહેલું સૂત્ર આ પ્રમાણે છે—(કઙ્ક ણ ભંતે !) ઇત્યાદિ—

સૂત્રાર્થ—(ભંતે,) હે ભદન્ત ! (કઙ્ક ણ અત્થિકાયા પણ્ણત્તા ?) અસ્તિકાય કેટલા કહ્યા છે. (ગોચમા) હે ગૌતમ ! (પચ્ચ અત્થિકાયા પણ્ણત્તા) અસ્તિકાય પાંચ કહ્યા છે (તંજહા) તે પાંચના નામ આ પ્રમાણે છે—(ધમ્મત્થિકાણ, અધમ્મત્થિકાણ, આગાસત્થિકાણ, જીવત્થિકાણ, પોગ્ગલત્થિકાણ) ધર્માસ્તિકાય

समुद्राः सौधर्मकल्पः यावत् ईषत् प्राग्गारा पृथिवी तथैव अधर्मास्तिकायः, एव
लोकाकाशोऽपि विद्येयः ॥

नवमोद्देशके क्षेत्रनिरूपणं कृतम्, तत् क्षेत्रम् अस्तिकायरूपम् । अतोऽस्तिकाय-
निरूपणाय तथा द्वारगायोक्ताऽस्तिकाय निरूपणाय च दशमोद्देशकं प्राह, तस्येदं
मादिमं सूत्रम् 'कहं न भते' इत्यादि ।

मूलम्—कहं न भते अस्तिकाया पणन्ता गोयमा । पञ्च
अस्तिकाया पणन्ता, त जहा धम्मस्तिकाय, अधम्मस्तिकाय,
आगासस्तिकाय, जीवस्तिकाय, पोग्गलस्तिकाय, धम्मस्तिका
एण भते । कहवण्णे, कहगधे, कहरसे, कहफासे गोयमा । अवण्णे
अगधे, अरसे अफासे, अरूपो, अजीवे, सासए अवट्ठिए लोग
दव्वे, से समासए पञ्चविहे पणन्ते, त जहा दव्वओ, खेत्तओ
कालओ, भावओ, गुणओ, दव्वओण धम्मस्तिकाय एके दव्वे
खेत्तओण लोगपमाणमेत्ते कालओ न कया वि न आसि, न
कया वि नस्थि जावणिच्चे, भावओ, अवण्णे, अगधे, अरसे,
अफासे गुणओ गमणगुणे, अहमस्तिकाय, वि एव चेव नवर
गुणओ ठाण गुणे, आगासस्तिकाय वि एव चेव नवर खेत्तओ

अम्बुविपादिक द्वीप, लवणसमुद्रादि समुद्र, सौधर्मकल्प यावत् ईषत्प्राग्गारा
पृथिवी, इसी प्रकार अधर्मास्तिकाय एवं लोकाकाश के विषय में भी
जानना चाहिये ।

नववें उद्देशक में क्षेत्र का निरूपण किया यह क्षेत्र अस्तिकायरूप है,
इसलिये अस्तिकाय के निरूपण के लिये तथा द्वारगायोक्त अस्तिकाय के

अवयवसमुद्रादि समुद्रानुं, सौधर्मकल्पश्च धर्मप्राग्गारा पृथ्वी पर्यन्तानुं, जने
ज्जेन प्रभात्ते अधर्मास्तिकाय ज्जेन लोकाकाशानुं चत्थं न समञ्जसु

नवर्मा उद्देशकानां समयक्षेत्रानुं निरूपणं कर्तुं ते क्षेत्र अस्तिकाय इयं
ये, तेही अस्तिकायानुं निरूपणं करवा भाटे तथा द्वारगायानां उद्देशा अस्ति

‘સાસયા ભાવા’ શાશ્વતો ભાવો ‘અણાણુપુન્વી એસા રોહા’ અનાણુપુર્વેષા રોહા! હે રોહા ! લોકાન્તશ્ચ સપ્તમમવકાશાન્તરં ચ, પૂર્વમપિ પશ્ચાદપિ । એતયોર્નિયતાઽઽનુપૂર્વી નાસ્તિ કિન્તુ આનુપૂર્વીરહિતે એતે દ્વે, પૂર્વપશ્ચાદ્રૂપઃ ક્રમો ન ભવતીતિ । સપ્તમ-મવકાશાન્તરમિતિ સપ્તમપૃથિવ્યા અધોવર્તિ આકાશમિતિ । ‘એવં લોચંતે ય સત્તમે ય તણુવાએ’ એવં લોકાન્તશ્ચ સપ્તમશ્ચ તનુવાતઃ । ‘એવં ઘણવાએ’ એવં ઘન-વાતઃ, ‘ઘણોદહી’ ઘનોદધિઃ ‘સત્તમા પુઢવી’ સપ્તમી પૃથિવી ‘એવં લોચંતે એકકે-કકેણં સંજોએયવ્વે ઇમેહિ ઠાણેહિ’ એવં લોકાન્ત એકેકેન સંયોજયિતવ્ય એભિઃ વક્ષ્યમાણગાથોક્તૈશ્ચતુર્વિંશતિસંખ્યકૈઃ સ્થાનૈઃ ‘તં જઠા’ તદ્યથા-તદેવ ગાથાદ્વયેન દર્શયતિ-‘ઉવાસ’ ઇત્યાદિ । ‘ઉવાસ’ ઇતિ અવકાશઃ, અત્ર પદૈકદેશે પદસમુદાયગ્ર-

લોકાન્ત ઓર સાતવાં અવકાશાન્તર એ દોનોં હૈં । ઇનમેં પહિલે અમુક હૈ ઓર વાદ મેં અમુક હૈ એસા પૂર્વ પશ્ચાત્ ક્રમ નહીં હૈ । (દો વિ એ સાસયા ભાવા) એ દોનોં હી શાશ્વતભાવ હૈં । (અણાણુપુન્વી એસા રોહા ! હે રોહા ! લોકાન્ત, ઓર સાતવાં અવકાશાન્તર એ દોનોં પહિલે ભી હૈ ઓર વાદ મેં ભી હૈ । ઇનમેં નિયત આનુપૂર્વી નહીં હૈ । કિન્તુ એ દોનોં આનુપૂર્વી સે રહિત હૈં અતઃ ઇનમેં પૂર્વપશ્ચત્ રૂપ ક્રમ નહીં હૈ । સપ્તમ પૃથ્વી કે નીચે રહા હુઆ જો આકાશ હૈં ઉસકા નામ સપ્તમ અવકાશાન્તર હૈ । (એવં લોચંતે ય સત્તમે ય તણુવાએ, એવં ઘણવાએ, ઘણોદહી, સત્તમા પુઢવી, એવં લોચંતે એકકેકકેણં સંજોએયવ્વે ઇમેહિ ઠાણેહિ) ઇસી તરહસે લોકાન્ત ઓર સાતવાં તનુવાત, તથા ઇસી તરહસે ઘનવાત ઘનોદધિ ઓર સાતવીં પૃથિવી, ‘ઇસ તરહ ઇન “ઉવાસવાચ૦” ઇત્યાદિ દો ગાથાઓં મેં કહે હુએ ચોઈસ ૨૪ સ્થાનોં મેં સે પ્રત્યેક સ્થાન કે લોકાન્ત કો જોડનાં ચાહિયે । ગાથામેં કહે હુએ ૨૪ સ્થાન એ હૈં- (ઉવાસ)

લોકાન્ત અને સાતમુ અવકાશાન્તર બન્ને છે. તેમાં પહેલું અમુક અને પછી અમુક છે એવો પૂર્વાપરનો ક્રમ હોતો નથી “દો વિ એ સાસયા ભાવે” એ બન્ને શાશ્વત ભાવ છે “અણાણુપુન્વી એસા રોહા !” હે રોહા ! લોકાન્ત અને સાતમુ અવકાશાન્તર એ બન્ને પહેલાં પણ છે અને પછી પણ છે. તે બન્ને આનુપૂર્વીથી રહિત છે તેથી તેમાં પૂર્વાપરના ક્રમનો અભાવ છે સાતમી પૃથ્વીની નીચે રહેલા આકાશને સાતમું અવકાશાન્તર કહે છે “એવં લોચંતે ય સત્તમે ય તણુવાએ, એવં ઘણવાએ, ઘણોદહી, સત્તમા પુઢવી, એવં લોચંતે એકકેકકેણં સંજોએયવ્વે ઇમેહિ ઠાણેહિ” એજ પ્રમાણે લોકાન્ત અને સાતમુ તનુવાત, તથા એજ રીતે ઘનવાત ઘનોદધિ અને સાતમી પૃથ્વી, તથા એવી જ રીતે આ ગાથામાં કહેલાં ૨૪ સ્થાનોમાંના પ્રત્યેક સ્થાનની સાથે લોકાન્તને યોજીને આલા-પકે બનાવવા બોધ એ ગાથામાં દર્શાવેલાં ૨૪ સ્થાનો આ પ્રમાણે છે-“ઉવાસ”

પુદ્ગલાસ્તિકાયાઃ, ધર્માસ્તિકાયાઃ સ્વલ્પ મદન્ત । કતિવર્ણઃ કતિગંધઃ કતિરસઃ
 કતિસ્પર્શઃ ગૌતમ ! અવર્ણ અગંધ અરસ અસ્પર્શઃ અરૂપી અજીવ શાશ્વતઃ અવ-
 સ્થિતો લોકદ્રવ્યમ્ સ સમાસતઃ પંચવિધ મહત્તઃ, તથા દ્રવ્યતઃ ક્ષેપતઃ કાલતો
 માવતો ગુણતઃ, દ્રવ્યતો ધર્માસ્તિકાયાઃ એક દ્રવ્યમ્ । ક્ષેપતો લોકમમાણમાત્ર-
 કાલતો ન કદાચિન્નાસીત્ ન કદાચિન્નાસ્તિ, યાવત્ નિત્યઃ માવતોઽવર્ણઃ અગ-

કાપ) ધર્માસ્તિકાયા ૧, અધર્માસ્તિકાયા ૨, આકાશાસ્તિકાયા ૩, જીવા-
 સ્તિકાયા ૪, પુદ્ગલાસ્તિકાયા ૫ । (ધર્મસ્તિકાયા ણં મતે ! કહ્યણ્ણે, કહ્
 ગંધે, કહ્ રસે, કહ્ ફાસે ?) હે મદન્ત ! ધર્માસ્તિકાયા મેં કિત્તને વર્ણ
 હેં, કિત્તને ગંધ હેં, કિત્તને રસ હેં, ઓર કિત્તને સ્પર્શ હેં ? (ગોયમા !
 અવર્ણે, અગંધે, અરસે અફાસે) હે ગૌતમ ! ધર્માસ્તિકાયા મેં વર્ણ નહીં
 હે, ગંધ નહીં હે, રસ નહીં હે ઓર સ્પર્શ નહીં હે (અરૂપી અજીવે સા-
 સણ અવઠ્ઠિપ્પ લોગદ્વયે) યહ દ્રવ્ય અરૂપી હે અજીવ હે, શાશ્વત હે,
 અવસ્થિત હે લોક દ્રવ્ય હે (સે સમાસઓ પંચવિદ્ધે (તંજહા) જૈસે-
 (વસ્થઓ, સ્વેસઓ, કાલઓ માવઓ ગુણઓ) દ્રવ્ય કી અપેક્ષા ધર્મા-
 સ્તિકાયા, ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા ધર્માસ્તિકાયા, કાલ કી અપેક્ષા ધર્માસ્તિકાયા,
 માવ કી અપેક્ષા ધર્માસ્તિકાયા ઓર ગુણકી અપેક્ષા ધર્માસ્તિકાયા (વ-
 વ્થઓ ણં ધર્મસ્તિકાયા ણ્ણે દ્વયે) દ્રવ્ય કી અપેક્ષા ધર્માસ્તિકાયા એક
 દ્રવ્ય હે । (સ્વેસઓ ણ લોગપ્પમાણમેત્તે) ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા ધર્માસ્તિકાયા

(૧) અધર્માસ્તિકાયા, (૨) આકાશાસ્તિકાયા (૪) જીવાસ્તિકાયા અને (૫) પુદ્ગલા-
 સ્તિકાયા (ધર્મસ્તિકાયા ણ મતે ! કહ્યણ્ણે કહ્યણ્ણે, કહ્યણ્ણે, કહ્યણ્ણે !) હે
 હે મદન્ત ! ધર્માસ્તિકાયાના કેટલા પ્રકારના વસ્તુ હોય છે, કેટલા પ્રકારના અધ-
 હોય છે, કેટલા પ્રકારના રસ હોય છે અને કેટલાક પ્રકારના સ્પર્શ હોય છે
 (ગોયમા ! અવર્ણે, અગંધે અરસે અફાસે) હે ગૌતમ ! ધર્માસ્તિકાયાનાં વસ્તુ
 નથી, અધ નથી, રસ નથી, સ્પર્શ નથી. (અરૂપી અજીવે સાસણ અવઠ્ઠિપ્પ
 લોગદ્વયે) તે દ્રવ્ય અરૂપી છે અજીવ છે શાશ્વત છે અવસ્થિત છે, લોક
 દ્રવ્ય છે (સે સમાસઓ પંચવિદ્ધે વર્ણણે) તે ધર્માસ્તિકાયાના સંક્ષિપ્તમાં પાંચ
 પ્રકાર છે (તંજહા) તે પ્રકારો આ પ્રમાણે છે—(વસ્થઓ, સ્વેસઓ, કાલઓ માવઓ
 ગુણઓ (૧) દ્રવ્યની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાયા, (૨) ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકા-
 યા, (૩) કાળની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાયા, (૪) ભાવની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકા-
 યા અને (૫) શુદ્ધની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાયા (વસ્થઓ ણ ધર્મસ્તિકાયા કો
 દ્વયે) દ્રવ્યની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાયા એક દ્રવ્ય છે (ક્ષેત્રઓ ણ લોગપ્પમાણમેત્તે)

ગ્ધોરસોડસ્પર્શઃ ગુણતો ગમનગુણઃ, અધર્માસ્તિકાયોડપિ એવમેવ. નવર, ગુણતઃ સ્થાનગુણઃ આકાશાસ્તિકાયોડપિ એવમેવ, નવરમ્ - ક્ષેત્રતઃ સ્વલ્પ આકાશાસ્તિકાયો લોકાલોકપ્રમાણમાત્રઃ અનન્તથૈવ યાવત્ ગુણતોડવગાહનાગુણઃ । જીવાસ્તિકાયઃ સ્વલ્પ ભદન્ત કતિવર્ણઃ કતિગન્ધઃ કતિરસઃ કતિસ્પર્શઃ? ગૌતમ ! અવર્ણો

લોકપ્રમાણ હૈ । (કાલઓ ન કયાહ નાસી, ન કયાહ નતિય, જાવ ગિચ્ચે) કાલકી અપેક્ષા ધર્માસ્તિકાય પૂર્વકાલ મેં કિસી મી સમય મેં નહીં થા એસા મી નહીં હૈ, વર્તમાન કાલ મેં કિસી મી સમય નહીં હૈ એસા મી નહીં હૈ ઓર અવિષ્યત્ કાલ મેં કિસી મી સમય મેં નહીં હોગા, એસા મી નહીં હૈ, કયોં કિ યાવત્ વહ નિત્ય હૈ (ભાવઓ અવર્ણે અગંધે, અરસે, અફાસે) ભાવકી અપેક્ષા ધર્માસ્તિકાયવર્ણ રહિત, ગંધરહિત, રસરહિત ઓર સ્પર્શરહિત હૈ । (ગુણઓ ગમનગુણે) ગુણ કી અપેક્ષા ધર્માસ્તિકાય ગમનમેં સહાયક ગુણવાલા હૈ । (અહમ્મત્થિકાએ વિ એવં ચેવ) અધર્માસ્તિકાય મી એસા હી હૈ (નવરં ગુણઓ ઠાણગુણે) પરન્તુ અધર્માસ્તિકાય ગુણ કી અપેક્ષા સ્થિતિ ગુણ વાલા હૈ । (આગાસત્થિકાએ વિ એવં ચેવ) આકાશાસ્તિકાય મી એસા હી હૈ । (નવરં સ્વેત્તઓ ણં આગાસ=ત્થિકાએ લોયા લોચપ્પમાણમેત્તે) પરન્તુ આકાશાસ્તિકાય ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા લોકાલોકપ્રમાણ હૈ । (અણંતે ચેવ) અનન્ત હૈ । (જાવ ગુણઓ અવગાહનાગુણે) યાવત્ આકાશાસ્તિકાય ગુણ કી અપેક્ષા અવગાહન

ગમેત્તે) ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાય લોક પ્રમાણ છે (કાલઓ ન કયાહ નતિય, જાવ ગિચ્ચે) કાળની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાય ભૂતકાળમાં કોઈ પણ સમયે ન હતુ એવુ પણ નથી, વર્તમાન કાળમાં કોઈ સમયે નથી એવુ પણ શક્ય નથી, અને ભવિષ્યકાળમાં પણ કોઈ પણ સમયે તેનું અસ્તિત્વ નહીં હોય એવુ પણ નથી, કારણ કે તે નિત્ય છે, (ભાવઓ અવર્ણે અગંધે, અરસે, અફાસે) ભાવની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાય વર્ણુ રહિત, ગંધરહિત, રસ રહિત અને સ્પર્શ રહિત છે (ગુણઓ ગમનગુણે) ગુણની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાય ગમન ગુણ વાળુ છે (અહમ્મત્થિકાએ વિ એવં ચેવ) અધર્માસ્તિકાય પણ એવુ જ છે (નવર ગુણઓ ઠાણગુણે) પરન્તુ અધર્માસ્તિકાય ગુણની અપેક્ષાએ સ્થિતિ ગુણ વાળુ છે (આગાસત્થિકાએ વિ એવં ચેવ) આકાશાસ્તિકાય પણ એવું જ છે (નવરં સ્વેત્તઓ ણં આગાસત્થિકાએ લોયા-લોચપ્પમાણમેત્તે) ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ આકાશાસ્તિકાય લોકાલોકપ્રમાણ છે, (અણંતે ચેવ) અનન્ત છે, (જાવ ગુણઓ અવગાહના ગુણે) અને ગુણની અપેક્ષાએ અવગાહન ગુણવાળુ છે.

પુદ્ગલાસ્તિકાયઃ, ધર્માસ્તિકાયઃ સ્વલ્પ મદન્ત્ય । કતિવર્ણઃ કતિગંધઃ કતિરસઃ
 કતિસ્પર્શઃ ગૌતમ ! અર્ણવઃ ગંગા ધરસ અસ્પર્શઃ અરૂપી અજીવઃ શાશ્વતઃ અવ-
 સ્થિતો સોષદ્રવ્યમ્ સ સમાસત પચવિધ મદન્ત્ય, તથા દ્રવ્યત ક્ષેત્રતઃ કાલતો
 માવતો ગુણતઃ, દ્રવ્યતો ધર્માસ્તિકાય એક દ્રવ્યમ્ । ક્ષેત્રતો લોકમમાનમાત્રઃ
 કાલતો ન કદાચિન્નાસીત્ ન કદાચિન્નાસ્તિ, યાવત્ નિત્યઃ માવતોઽવર્ણઃ અગ-

કાપ) ધર્માસ્તિકાય ૧, અધર્માસ્તિકાય ૨, આકાશાસ્તિકાય ૧, બીજા-
 સ્તિકાય ૪, પુદ્ગલાસ્તિકાય ૫ । (ધર્મસ્થિકાપ ણં મતે ! કહ્યણે, કહ
 ગંધે, કહ રસે, કહ પાસે) હે મદન્ત ! ધર્માસ્તિકાય મેં કિનને વર્ણ
 હું, કિતને ગંધ હું, કિતને રસ હું, ઓર કિતને સ્પર્શ હું ? (ગોયમા !
 અવણે, અગંધે, અરસે અપાસે) હે ગૌતમ ! ધર્માસ્તિકાય મેં વર્ણ નહીં
 હું, ગંધ નહીં હું, રસ નહીં હું ઓર સ્પર્શ નહીં હું (અરૂપી અજીવે સા-
 સપ અવદિપ્તિ લોગદ્વ્યે) યહ દ્રવ્ય અરૂપી હું અજીવ હું, શાશ્વત હું,
 અવસ્થિત હું લોક દ્રવ્ય હું (સ સમાસઓ પચવિદે (તંજહા) જેસે-
 (વ્યવઓ, ક્ષેત્રઓ, કાલઓ માવઓ ગુણઓ) દ્રવ્ય કી અપેક્ષા ધર્મા-
 સ્તિકાય, ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા ધર્માસ્તિકાય, કાલ કી અપેક્ષા ધર્માસ્તિકાય,
 માવ કી અપેક્ષા ધર્માસ્તિકાય ઓર ગુણકી અપેક્ષા ધર્માસ્તિકાય (દ-
 વ્યઓ ણં ધર્મસ્થિકાપ ણો દ્વ્યે) દ્રવ્ય કી અપેક્ષા ધર્માસ્તિકાય એક
 દ્રવ્ય હું । (ક્ષેત્રઓ ણ લોગવ્યમાનમેતે) ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા ધર્માસ્તિકાય

(૨) અધર્માસ્તિકાય, (૩) આકાશાસ્તિકાય (૪) જીવાસ્તિકાય અને (૫) પુદ્ગલ-
 સ્તિકાય (ધર્મસ્થિકાપ ણ મતે ! કહ્યણે કહગંધે, કહરસે, કહપાસે) હે
 હે મદન્ત ! ધર્માસ્તિકાયના કેટલા પ્રકારના વસ્તુ હોય છે, કેટલા પ્રકારના અધ
 હોય છે, કેટલા પ્રકારના રસ હોય છે અને કેટલાક પ્રકારના સ્પર્શ હોય છે
 (ગોયમા ! અવણે, અગંધે, અરસે અપાસે) હે ગૌતમ ! ધર્માસ્તિકાયમાં વર્ણ
 નથી, અધ નથી, રસ નથી, સ્પર્શ નથી (અરૂપી અજીવે સાસપ અવદિપ્તિ
 લોગદ્વ્યે) તે દ્રવ્ય અરૂપી છે અજીવ છે, શાશ્વત છે અવસ્થિત છે, એક
 દ્રવ્ય છે (સે સમાસઓ પચવિદે વણ્ણસે) તે ધર્માસ્તિકાયના સંક્ષિપ્તમાં પાંચ
 પ્રકાર છે. (તંજહા) તે પ્રકારો આ પ્રમાણે છે—(દ્રવ્યઓ, ક્ષેત્રઓ, કાલઓ માવઓ
 ગુણઓ (૧) દ્રવ્યની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાય, (૨) ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિ-
 કાય, (૩) કાલની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાય, (૪) માવની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિ-
 કાય અને (૫) ગુણની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાય (દ્રવ્યઓ ન ધર્મસ્થિકાપ ણો
 દ્વ્યે) દ્રવ્યની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાય એક દ્રવ્ય છે (ક્ષેત્રઓ ન લોગવ્યમાનમેતે)

ગ્નોઽરસોઽસ્પર્શઃ ગુણતો ગમનગુણઃ, અધર્માસ્તિકાયોઽપિ એવમેવ. નવરં, ગુણતઃ સ્થાનગુણઃ આકાશાસ્તિકાયોઽપિ એવમેવ, નવરમ્ - ક્ષેત્રતઃ સ્વલ્લ આકાશાસ્તિકાયો લોકાલોકપ્રમાણમાત્રઃ અનન્તથૈવ યાવત્ ગુણતોઽવગાહનાગુણઃ । જીવાસ્તિકાયઃ સ્વલ્લ ભદન્ત કતિવર્ણઃ કતિગન્ધઃ કતિરસઃ કતિસ્પર્શઃ? ગૌતમ ! અવર્ણો

લોકપ્રમાણ છે । (કાલઓ ન કયાઈ નાસી, ન કયાઈ નથિ, જાવ ગિચ્ચે) કાલકી અપેક્ષા ધર્માસ્તિકાય પૂર્વકાલ મેં કિસી મી સમય મેં નહીં થા એસા મી નહીં છે, વર્તમાન કાલ મેં કિસી મી સમય નહીં છે એસા મી નહીં છે ઓર ભવિષ્યત્ કાલ મેં કિસી મી સમય મેં નહીં હોગા, એસા મી નહીં છે, ક્યોં કિ યાવત્ વહ નિત્ય છે (ભાવઓ અવર્ણે અગંધે, અરસે, અફાસે) ભાવકી અપેક્ષા ધર્માસ્તિકાયવર્ણ રહિત, ગંધરહિત, રસરહિત ઓર સ્પર્શરહિત છે । (ગુણઓ ગમનગુણે) ગુણ કી અપેક્ષા ધર્માસ્તિકાય ગમનમેં સહાયક ગુણવાલા છે । (અહમ્મત્થિકાએ વિ એવં ચેવ) અધર્માસ્તિકાય મી એસા હી છે (નવરં ગુણઓ ઠાણગુણે) પરન્તુ અધર્માસ્તિકાય ગુણ કી અપેક્ષા સ્થિતિ ગુણ વાલા છે । (આગાસત્થિકાએ વિ એવં ચેવ) આકાશાસ્તિકાય મી એસા હી છે । (નવરં ચેત્તઓ ણ આગાસ=ત્થિકાએ લોયા લોચ્છમાણમેત્તે) પરન્તુ આકાશાસ્તિકાય ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા લોકાલોકપ્રમાણ છે । (અણંતે ચેવ) અનન્ત છે । (જાવ ગુણઓ અવગાહનાગુણે) યાવત્ આકાશાસ્તિકાય ગુણ કી અપેક્ષા અવગાહન

ગમેત્તે) ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાય લોક પ્રમાણ છે (કાલઓ ન કયાઈ નથિ, જાવ ગિચ્ચે) કાળની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાય ભૂતકાળમાં કોઈ પણ સમયે ન હતું એવું પણ નથી, વર્તમાન કાળમાં કોઈ સમયે નથી એવું પણ શક્ય નથી, અને ભવિષ્યકાળમાં પણ કોઈ પણ સમયે તેનું અસ્તિત્વ નહીં હોય એવું પણ નથી, કારણ કે તે નિત્ય છે, (ભાવઓ અવર્ણે અગંધે, અરસે, અફાસે) ભાવની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાય પણ રહિત, ગંધરહિત, રસ રહિત અને સ્પર્શ રહિત છે. (ગુણઓ ગમનગુણે) ગુણની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાય ગમન ગુણ વાળું છે (અહમ્મત્થિકાએ વિ એવં ચેવ) અધર્માસ્તિકાય પણ એવું જ છે (નવરં ગુણઓ ઠાણગુણે) પરન્તુ અધર્માસ્તિકાય ગુણની અપેક્ષાએ સ્થિતિ ગુણ વાળું છે (આગાસત્થિકાએ વિ એવં ચેવ) આકાશાસ્તિકાય પણ એવું જ છે (નવરં ચેત્તઓ ણં આગાસત્થિકાએ લોયા-લોચ્છમાણમેત્તે) ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ આકાશાસ્તિકાય લોકાલોકપ્રમાણ છે, (અણંતે ચેવ) અનન્ત છે, (જાવ ગુણઓ અવગાહના ગુણે) અને ગુણની અપેક્ષાએ અણ-ગાહન ગુણવાળું છે.

યાવદ્રૂપી જીવ* સાન્વતઃ અવસ્થિતો લોકદ્રવ્યમ્ । ત સમાસત પચ્ચવિધઃ પ્રજ્ઞતઃ
તદ્ યથા દ્રવ્યતો યાવત્-ગુણત , દ્રવ્યતઃ સ્વલ્લ જીવાસ્તિકાયોઽનન્તાનિ જીવ
દ્રવ્યાણિ ક્ષેત્રતો લોકપ્રમાણમાત્રઃ કાલતો ન કદાપિભાસીત્ યાવન્મિત્યઃ માવતા
પુનરર્થઃ અગન્ધઃ અરસઃ અસ્પર્શઃ ગુણતરપયોગગુણ , પુદ્ગલાસ્તિકાયઃ સ્વલ્લમદન્ત!

ગુણવાદ છે । (જીવસ્તિકાય ણં મતે ! કહ્યું યણે, કહ્યું ગંધે, કહ્યું રસે,
કહ્યું પાસે ?) હે મદન્ત ! જવાસ્તિકાય કિતને ઘર્ણવાદ છે, કિતને ગંધ
વાદ છે, કિતને રસવાદ છે ઓર કિતને સ્પર્શ વાદ છે ? (ગોયમા !)
હે ગૌતમ ! (અવળે જાવ અરુચી) જીવાસ્તિકાય ઘર્ણરહિત છે યાવત્
વહ અરૂપીદ્રવ્ય છે (જીવે સાસર અવદિપ્ત લોગદબ્ધે) જીવ છે સાન્વત
છે, અવસ્થિત છે, લોકદ્રવ્ય છે । (સે સમાસઓ પચ્ચવિદે પણ્ણવે) વહ
સંક્ષેપ સે પાંચ પ્રકાર કા કહ્યા ગયા છે । (તંજહા) જૈસે (દ્રવ્યઓ જાવ
ગુણઓ) દ્રવ્ય કી અપેક્ષા જીવાસ્તિકાય યાવત્ ગુણ કી અપેક્ષા જીવા-
સ્તિકાય (દ્રવ્યઓ ણ જીવસ્તિકાય અર્ણતાઈ જીવદ્રવ્યવાહ) દ્રવ્ય કી
અપેક્ષા જીવાસ્તિકાય અનત જીવદ્રવ્યરૂપ છે । (સ્વેસઓ લોગપ્યમાણ-
મેવે) ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા જીવાસ્તિકાય લોકપ્રમાણમાત્ર છે । (કાલઓ ણ
કયાહ ન આસી, જાવ નિચ્ચે) કાલકી અપેક્ષા જીવાસ્તિકાય મૂતકાલ
મેં કિસી મી સમય મેં નહીં યા દેસા નહીં છે યાવત્ વહ નિત્ય છે ।
(માવઓ પુણઅવળે, અગંધે, અરસે, અપાસે) માવ કી અપેક્ષા જી-

(જીવસ્તિકાય ણ મતે ! કહ્યું યણે, કહ્યું રસે, કહ્યું પાસે) હે મદન્ત ! જીવા-
સ્તિકાકને ઠેટલા વધુ, ઠેટલા ગંધ, ઠેટલા રસ અને ઠેટલાસ્પર્શ હોય છે ?
(ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (અવળે જાવ અરુચી) જીવાસ્તિકાય વધુરહિતથી
હમને અરૂપી પચન્તાના ગુણોવળ હોય છે (જીવે, સાસર, અવદિપ્ત લોગદબ્ધે)
જીવાસ્તિકાય ચેતનાવાળું, સાન્વત, અવસ્થિત, લોકદ્રવ્ય છે (સે સમાસઓ પચ-
વિદે પણ્ણવે) તે સંક્ષિપ્તમાં પાંચ પ્રકારનું છે (તંજહા) તે પ્રકારે જા પ્રમાણે
છે-“ દ્રવ્યઓ જાવ ગુણઓ ” દ્રવ્યની અપેક્ષાએથી હમને ગુણનીઅપેક્ષા પચ-
ન્તાના તેના પાંચ પ્રકાર છે “ દ્રવ્યઓ ણ જીવસ્તિકાય અર્ણતાઈ જીવદ્રવ્યવાહ ”
દ્રવ્યની અપેક્ષાએ જીવાસ્તિકાય અનત જીવદ્રવ્યરૂપ છે ક્ષેત્રઓ લોગપ્યમાણ
મેવે ” ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ જીવાસ્તિકાય લોક પરિમિત છે, “ કાલઓ ણ કયાહ
ન આસી, જાવ નિચ્ચે ” કાળની અપેક્ષાએ જીવાસ્તિકાયનું અસ્તિત્વ મૂતકાળમાં
કાઈ વધુ સમય ન હતું એવું જન્મું નથી, ત્યાંથી હમને તે નિત્ય છે તથા મુખી-
નું ક્ષયન ધર્માસ્તિકાય પ્રમાણે સમજવું “ માવઓ પુણ અવળે, અગંધે, અરસે,
અપાસે ” માવની અપેક્ષાએ જીવાસ્તિકાય વધુ, ગંધ, રસ અને સ્પર્શરહિત

કતિવર્ણઃ કતિગન્ધઃ કતિરસઃ કતિસ્પર્શઃ? ગૌતમ ! પञ्चवर्णः पञ्चरसः द्विगन्धः अष्ट
स्पर्शः रूपी अजीवः शाश्वतोऽवस्थितो लोकद्रव्यम् स समासतः पञ्चविधः प्रज्ञप्तः
तद् यथा द्रव्यतः क्षेत्रतः कालतो भावतो गुणतः, द्रव्यतः पुद्गलास्तिकायोऽनन्तानि
द्रव्याणि क्षेत्रतो लोकप्रमाणमात्रः कालतो न कदाचिन्नासीत् यावन्नित्य भावतो
वर्णवान् गन्धरसस्पर्शवान् गुणतोऽग्रहणगुणः ॥ सू० १ ॥

વાસ્તિકાય વર્ણ, ગંધ, રસ ઓર સ્પર્શ સે રહિત હૈ । (ગુણઓ ઉવઓ-
ગગુણે) ગુણ કી અપેક્ષા જીવાસ્તિકાય ઉપયોગ ગુણવાલા હૈ । (પોગ્ગ-
લ્થિકાઈ ણં મંતે ! કહવણ્ણે, કહગંધે, કહરસે, કહફાસે) હે મદન્ત !
પુદ્ગલાસ્તિકાય કિતને વર્ણવાલા હૈ ? કિતને ગંધવાલા હૈ ? કિતને રસ-
વાલા હૈ ? કિતને સ્પર્શવાલા હૈ ? (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (પંચવણ્ણે
પંચરસે દુગધે અટ્ટફાસે રૂવી અજીવે, સાસણ અવદ્વિઈ લોગદવ્વે) પુદ્ગ-
લાસ્તિકાય પાંચ વર્ણવાલા હૈ, પાંચ રસવાલા હૈ, દો ગંધવાલા હૈ આઠ
સ્પર્શવાલા હૈ રૂપી હૈ અજીવ હૈ શાશ્વત હૈ અવસ્થિત હૈ ઓર લોકદ્રવ્ય
હૈ । (સે સમાસઓ પંચવિહે પળ્ણત્તે) વહ પુદ્ગલાસ્તિકાય સંક્ષેપસે પાંચ
પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ । (તં જહા) જૈસે (દવ્વઓ, લેત્તઓ, કાલઓ,
માવઓ, ગુણઓ) દ્રવ્ય કી અપેક્ષા પુદ્ગલાસ્તિકાય, ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા
પુદ્ગલાસ્તિકાય, કાલ કી અપેક્ષા પુદ્ગલાસ્તિકાય, માવ કી અપેક્ષા પુદ્ગ-
લાસ્તિકાય, ગુણ કી અપેક્ષા પુદ્ગલાસ્તિકાય (દવ્વઓ ણં પોગ્ગલ્થિ-
કાઈ અણંતાઈં દવ્વાઈં) દ્રવ્ય કી અપેક્ષા પુદ્ગલાસ્તિકાય અનંત દ્રવ્યરૂપ

છે “ ગુણઓ સ્વઓગુણે ” ગુણની અપેક્ષાએ જીવાસ્તિકાય ઉપયોગ ગુણવાળુ, છે.

“ પોગ્ગલ્થિકાઈ ણં મંતે ! કહ વણ્ણે, કહ ગંધે, કહ રસે કહ ફાસે ! ”
હે મદન્ત ! પુદ્ગલાસ્તિકાય કેટલા વર્ણુ વાળુ છે, કેટલા ગંધવાળુ છે ? કેટલા
રસ વાળુ છે ? અને કેટલા સ્પર્શવાળુ છે ? (ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (પંચ-
વણ્ણે, પંચ રસે, દુગધે, અટ્ટફાસે, રૂવે અજીવે સાસણ અવદ્વિઈ લોગદવ્વે) પુદ્ગ-
લાસ્તિકાય પાંચ વર્ણુવાળુ પાંચ રસવાળુ, બે ગંધવાળુ, આઠ સ્પર્શવાળુ, રૂપી,
અજીવ, શાશ્વત, અવસ્થિત, અને લોકદ્રવ્ય છે (સે સમાસઓ પંચવિહે પળ્ણ-
ત્તે) તે પુદ્ગલાસ્તિકાયના સક્ષિપ્તમાં પાંચ પ્રકાર છે (તંજહા) તે પ્રકારો આ
પ્રમાણે છે- (દવ્વઓ લેત્તઓ, કાલઓ, માવઓ, ગુણઓ) (૧) દ્રવ્યની અપે-
ક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય, (૨) ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય, (૩) કાળની અપે-
ક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય, (૪) ભાવની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય, અને (૫) ગુણની
અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય. (દવ્વઓ ણ પોગ્ગલ્થિકાઈ અણંતાઈં દવ્વાઈં) દ્રવ્યની

યાવદ્વરૂપી જીવઃ શ્વાશ્વતઃ અવસ્થિતો લોકદ્રવ્યમ્ । સ સમાસતઃ પચ્ચત્રિપઃ મહાપ્તઃ
 સદ્ યથા દ્રવ્યતો યાવત્-ગુણત, દ્રવ્યતાઃ સ્વછ જીવાસ્તિકાયોઽનન્તાનિ જીવ
 દ્રવ્યાણિ ક્ષેપ્રતો લોકપ્રમાણમાત્રઃ કાલતો ન કદાચિન્નાસીત્ યાવન્નિત્યઃ માઘતા
 પુનરર્થઃ અગ્ન્યઃ અરસઃ અસ્પર્શઃ ગુણસઠપયોગગુણઃ, પુત્રલાસ્તિકાય સહુભદન્તા

ગુણવાલા છે । (જીવત્થિકાપ ણ મંતે ! કહ વળ્ણે, કહ ગંધે, કહ રસે, કહ
 ફાસે ?) છે મદન્ત ! જવાસ્તિકાય કિતને વર્ણવાલા છે, કિતને ગધ
 શાલા છે, કિતને રસવાલા છે ઓર કિતને સ્પર્શ વાલા છે ? (ગોયમા !)
 છે ગૌતમ ! (અવળ્ણે જાવ અરુઘી) જીવાસ્તિકાય વર્ણરહિત છે યાવત્
 વહ અરૂપીદ્રવ્ય છે (જીવે સાસપ અવદ્દિપ્તિ લોગદબ્બે) જીવ છે શ્વાશ્વત
 છે, અવસ્થિત છે, લોકદ્રવ્ય છે । (સે સમાસઓ પચ્ચત્રિ પળ્ણતે) વહ
 સંક્ષેપ સે પાંચ પ્રકાર કા કહા ગયા છે । (તજહા) જૈસે (દબ્બઓ જાવ
 ગુણઓ) દ્રવ્ય કી અપેક્ષા જીવાસ્તિકાય યાવત્ ગુણ કી અપેક્ષા જીવા-
 સ્તિકાય (દબ્બઓ ણ જીવત્થિકાપ અળતાઈ જીવદબ્બાઈ) દ્રવ્ય કી
 અપેક્ષા જીવાસ્તિકાય અનત જીવદ્રવ્યરૂપ છે । (સેસઓ લોગવ્વમાણ-
 મેત્તે) ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા જીવાસ્તિકાય લોકપ્રમાણમાત્ર છે । (કાલઓ જ
 કયાઈ ન આસી, જાઘ નિરુપ્પે) કાલકી અપેક્ષા જીવાસ્તિકાય મૂતકાલ
 મેં કિસી મી સમય મેં નહીં થા એસા નહીં છે યાવત્ વહ નિત્ય છે ।
 (માઘઓ પુણઅવળ્ણે, અગંધે, અરસે, અપાસે) માઘ કી અપેક્ષા જી-

(જીવત્થિકાપ ણ મંતે ! કહ વળ્ણે, કહ રસે, કહ ફાસે) છે મદન્ત ! જીવા-
 સ્તિકાવને કેટલા વર્ણ, કેટલા ગંધ, કેટલા રસ અને કેટલાસ્પર્શ હોય છે ?
 (ગોયમા !) છે ગૌતમ ! (અવળ્ણા જાવ અરુઘી) જીવાસ્તિકાય વર્ણરહિતથી
 હઇને અરૂપી પદ્યન્તના શુદ્ધાવગુ હોય છે (જીવે, સાસપ, અવદ્દિપ્તિ લોગદબ્બે)
 જીવાસ્તિકાય ક્ષેત્રનાવાળુ, શ્વાશ્વત, અવસ્થિત, લોકદ્રવ્ય છે (સે સમાસઓ પચ્ચ-
 ત્રિ પળ્ણતે) તે સંક્ષિપ્તમાં પાંચ પ્રકારનું છે (તજહા) તે પ્રકારના પ્રમાણે
 છે-“દબ્બઓ જાવ ગુણઓ” દ્રવ્યની અપેક્ષાઓથી હઇને શુદ્ધની અપેક્ષા પદ્ય-
 ન્તના તેના પાંચ પ્રકાર છે “લોકઓ જ જીવત્થિકાપ વર્ણતાઈ જીવદબ્બાઈ”
 દ્રવ્યની અપેક્ષાએ જીવાસ્તિકાય અનત જીવદ્રવ્યરૂપ છે ક્ષેત્રઓ લોગવ્વમાણ
 મેત્તે ” ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ જીવાસ્તિકાય લોક પરિમિત છે, “કાલઓ જ કયાઈ
 ન આસી, જાઘ નિરુપ્પે” કાલની અપેક્ષાએ જીવાસ્તિકાયનું અસ્તિત્વ મૂતકાલમાં
 કોઈ પણ સમય ન હવું બેવું જનું નથી, ત્યાંથી હઇને તે નિર્ણ છે ત્યાં મુખી-
 તું ક્યેન ધર્માસ્તિકાય પ્રમાણે સમજવું “માઘઓ પુણ અવળ્ણે, અગંધે, અરસે,
 અપાસે” માઘની અપેક્ષાએ જીવાસ્તિકાય વર્ણ, ગંધ, રસ અને સ્પર્શરહિત

કતિવર્ણઃ કતિગન્ધઃ કતિરસઃ કતિસ્પર્શઃ? ગૌતમ ! પશ્ચવર્ણઃ પશ્ચરસઃ દ્વિગન્ધઃ અષ્ટસ્પર્શઃ રૂપી અજીવઃ શાશ્વતોઽવસ્થિતો લોકદ્રવ્યમ્ સ સમાસતઃ પશ્ચવિધઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ તદ્ યથા દ્રવ્યતઃ ક્ષેત્રતઃ કાલતો ભાવતો ગુણતઃ, દ્રવ્યતઃ પુદ્ગલાસ્તિકાયોઽનન્તાનિ દ્રવ્યાણિ ક્ષેત્રતો લોકપ્રમાણમાત્રઃ કાલતો ન કદાચિન્નાસીત્ યાવન્નિત્ય ભાવતો વર્ણવાન્ ગન્ધરસસ્પર્શવાન્ ગુણતોગ્રહણગુણઃ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

વાસ્તિકાય વર્ણ, ગંધ, રસ ઓર સ્પર્શ સે રહિત હૈ । (ગુણઓ ઉવઓ-ગુણે) ગુણ કી અપેક્ષા જીવાસ્તિકાય ઉપયોગ ગુણવાલા હૈ । (પોગ્ગલ્થિકાણં મંતે ! કહવણે, કહગંધે, કહરસે, કહફાસે) હે મદન્ત ! પુદ્ગલાસ્તિકાય કિતને વર્ણવાલા હૈ ? કિતને ગંધવાલા હૈ ? કિતને રસવાલા હૈ ? કિતને સ્પર્શવાલા હૈ ? (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (પંચવણે પંચરસે દુગંધે અટ્કાસે રૂવી અજીવે, સાસણ અવઢિણ લોગદવ્વે) પુદ્ગલાસ્તિકાય પાંચ વર્ણવાલા હૈ, પાંચ રસવાલા હૈ, દો ગંધવાલા હૈ આઠ સ્પર્શવાલા હૈ રૂપી હૈ અજીવ હૈ શાશ્વત હૈ અવસ્થિત હૈ ઓર લોકદ્રવ્ય હૈ । (સે સમાસઓ પંચવિહે પળ્ણત્તે) વહ પુદ્ગલાસ્તિકાય સંક્ષેપસે પાંચ પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ । (ત જહા) જૈસે (દવ્વઓ, ચેત્તઓ, કાલઓ, માવઓ, ગુણઓ) દ્રવ્ય કી અપેક્ષા પુદ્ગલાસ્તિકાય, ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા પુદ્ગલાસ્તિકાય, કાલ કી અપેક્ષા પુદ્ગલાસ્તિકાય, માવ કી અપેક્ષા પુદ્ગલાસ્તિકાય, ગુણ કી અપેક્ષા પુદ્ગલાસ્તિકાય (દવ્વઓ ણં પોગ્ગલ્થિકાણં અણંતાઈં દવ્વાઈં) દ્રવ્ય કી અપેક્ષા પુદ્ગલાસ્તિકાય અનંત દ્રવ્યરૂપ

છે “ ગુણેઓ સ્વઓગુણે ” ગુણુની અપેક્ષાએ જીવાસ્તિકાય ઉપયોગ ગુણુવાળુ, છે.

“ પોગ્ગલ્થિકાણં મંતે ! કહ વણે, કહ ગંધે, કહ રસે કહ ફાસે ! ”

હે મદન્ત ! પુદ્ગલાસ્તિકાય કેટલા વર્ણુ વાળું છે, કેટલા ગંધવાળું છે ? કેટલા રસ વાળું છે ? અને કેટલા સ્પર્શવાળું છે ? (ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (પંચવણે, પંચ રસે, દુગંધે, અટ્કાસે, રૂવે અજીવે સાસણ અવઢિણ લોગદવ્વે) પુદ્ગલાસ્તિકાય પાંચ વર્ણુવાળું પાંચ રસવાળું, બે ગંધવાળું, આઠ સ્પર્શવાળું, રૂપી, અજીવ, શાશ્વત, અવસ્થિત, અને લોકદ્રવ્ય છે (સે સમાસઓ પંચવિહે પળ્ણત્તે) તે પુદ્ગલાસ્તિકાયના સક્ષિપ્તમાં પાંચ પ્રકાર છે. (તંજહા) તે પ્રકારો આ પ્રમાણે છે—(દવ્વઓ ચેત્તઓ, કાલઓ, માવઓ, ગુણઓ) (૧) દ્રવ્યની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય, (૨) ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય, (૩) કાળની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય, (૪) ભાવની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય, અને (૫) ગુણની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય. (દવ્વઓ ણં પોગ્ગલ્થિકાણં અણંતાઈં દવ્વાઈં) દ્રવ્યની

ટીકા—“કહ ણ મતે અસ્તિકાયા પખ્ખા ” કતિ સ્વહ્મ હે મદન્ત ! અસ્તિ
કાયા પ્રવ્વપ્તાઃ ? કથિતાઃ અસ્તિકાયાનાં કિં સ્વરૂપમ્ કીયતી ચ સંસ્પેતિ મમઃ
મગધાનાહ—‘ ગોયમા ’ इत्यादि । “ ગોયમા ” હે ગૌતમ ! ‘ પંચ અસ્તિકાયા
પખ્ખા ” ॥ ૫ ॥ અસ્તિકાયાઃ પ્રવ્વપ્તાઃ અસ્તિકાયશ્ચન્દાસ્યાઽર્થસ્ત્વયમ્ । અસ્તિ
કાય इत्यत्र अस्तिशब्दस्य प्रदेशोऽर्थं कायशब्दस्य च राशिः=समुदायः तथा च
है । (खेत्तओ लोचणमाणमेसे) क्षेत्र की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय
लोक प्रमाण मात्र है (कालओ ण कयाह न आसी जाव णिप्पे)
काल की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय सूतकाल में कभी नहीं था ऐसा नहीं
है यावत् यह नित्य है । (भावओ घणमंते गघरसफासमंते) भाव
की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय वर्णवाला है, गंधवाला है, रसवाला है, स्पर्श
वाला है, (गुणओ गहणगुणे) गुण की अपेक्षा पुद्गलास्तिकाय ग्रहणगु
ण वाला है ॥ सू० १ ॥

ટીકાર્પ—(કહ ણ મતે ! અસ્તિકાયા પખ્ખા) હે મદન્ત ! અસ્તિ
કાય કિતને કહે ગયે હો ? અર્થાત્-અસ્તિકાયાં કા કયા સ્વરૂપ હે ઓર
ઠનકી સંખ્યા કિતની હે એસા હસ પ્રમ્ન કા ભાવ હે । મગધાન્ હસકા
ઉત્તર દેતે હુપ કહતે હો (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (પંચ અસ્તિકાયા પખ્ખ
સા) પાંચ અસ્તિકાય કહે ગયે હે । અસ્તિકાય શબ્દ કા અર્થ હસ પ્રકાર
સે હે—(અસ્તિકાય) મેં દો શબ્દ હો—૧૬ (અસ્તિ) ઓર ૨૬ (કાય)
અસ્તિ શબ્દકા અર્થ પ્રદેશ હે ઓર કાય શબ્દ કા અર્થ રાશિ હે, હસ

અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય અનત દ્રવ્યપ છે, (લેક્ષઓ લોચણમાણમેસ) ક્ષેત્રની
અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય લોકપરિમિત (લોકપ્રમાણ) છે (કાલઓ ન કયાહ
આસી જાવ ણિપ્પે) કાળની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાયનું અસ્તિત્વ શૂનકાળમાં ન
હતું એવું બન્યું નથી, ત્યાંથી લઈને તે નિત્ય છે ત્યાં સુધીનું સમસ્ત ક્ષેત્ર
ધર્માસ્તિકાય મુચ્છ સમજવું (માવઓ ઘણમંતે ગંધરસફાસમંતે) ભાવની
અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય વર્ણ ગંધ, રસ અને સ્પર્શથી મુક્ત છે (ગુણઓ
ગહણગુણે) શુણની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય અહણગુણવાળું છે ॥ સૂ. ૧ ॥

ટીકા—“ કહ ણ મતે ! અસ્તિકાયા પખ્ખા ” હે મદન્ત ! અસ્તિકા
કેટલા છે ? પ્રમ્નેના ભાવાર્થ એ છે કે અસ્તિકાયાનું કેવું સ્વરૂપ ॥ અને તેમની
સંખ્યા કેટલી છે ?

ગૌતમ સ્વામીના પ્રમ્નેના જવાબ આપતાં મહાવીર પ્રશ્ન કહે છે કે “ગો-
યમા” હે ગૌતમ ! “પંચ અસ્તિકાયા પખ્ખા” અસ્તિકાયા પાંચ કયાં છે “અ-
સ્તિકાયા ” શબ્દને અર્થ આ પ્રમાણે છે—અસ્તિ x કાય = અસ્તિકાયા અસ્તિ
એટલે પ્રદેશ અને કાય એટલે રાશિ. પ્રદેશોની બે રાશિ (સમુદાય) હોય

કતિવર્ણઃ કતિગન્ધઃ કતિરસઃ કતિસ્પર્શઃ? ગૌતમ ! પञ्चवर्णः पञ्चरसः द्विगन्धः अष्ट
स्पर्शः रूपी अजीवः शाश्वतोऽवस्थितो लोकद्रव्यम् स समासतः पञ्चविधः प्रज्ञप्तः
तद् यथा द्रव्यतः क्षेत्रतः कालतो भावतो गुणतः, द्रव्यतः पुद्गलास्तिकायोऽनन्तानि
द्रव्याणि क्षेत्रतो लोकप्रमाणमात्रः कालतो न कदाचिन्नासीत् यावन्नित्य भावतो
वर्णवान् गन्धरसस्पर्शवान् गुणतोऽग्रहणगुणः ॥ सू० १ ॥

વાસ્તિકાય વર્ણ, ગંધ, રસ ઓર સ્પર્શ સે રહિત હૈ । (ગુણઓ ઉચ્ચઓ-
ગુણે) ગુણ કી અપેક્ષા જીવાસ્તિકાય ઉપયોગ ગુણવાલા હૈ । (પોગ્ગ-
લ્થિકાણં ણં મંતે ! કહવળ્ણે, કહગંધે, કહરસે, કહફાસે) હે મદન્ત !
પુદ્ગલાસ્તિકાય કિતને વર્ણવાલા હૈ ? કિતને ગંધવાલા હૈ ? કિતને રસ-
વાલા હૈ ? કિતને સ્પર્શવાલા હૈ ? (ગોચમા) હે ગૌતમ ! (પંચવળ્ણે
પંચરસે દુગધે અઢ્ઢાસે રૂચી અજીવે, સાસણ અવઢ્ઢિણ લોગદવ્વે) પુદ્ગ-
લાસ્તિકાય પાંચ વર્ણવાલા હૈ, પાંચ રસવાલા હૈ, દો ગંધવાલા હૈ આઠ
સ્પર્શવાલા હૈ રૂપી હૈ અજીવ હૈ શાશ્વત હૈ અવસ્થિત હૈ ઓર લોકદ્રવ્ય
હૈ । (સે સમાસઓ પંચવિહે પળ્ણત્તે) વહ પુદ્ગલાસ્તિકાય સંક્ષેપસે પાંચ
પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ । (તં જહા) જૈસે (દવ્વઓ, ચેત્તઓ, કાલઓ,
માયઓ, ગુણઓ) દ્રવ્ય કી અપેક્ષા પુદ્ગલાસ્તિકાય, ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા
પુદ્ગલાસ્તિકાય, કાલ કી અપેક્ષા પુદ્ગલાસ્તિકાય, માય કી અપેક્ષા પુદ્ગ-
લાસ્તિકાય, ગુણ કી અપેક્ષા પુદ્ગલાસ્તિકાય (દવ્વઓ ણં પોગ્ગલ્થિ-
કાણં અણંતાઈં દવ્વાઈં) દ્રવ્ય કી અપેક્ષા પુદ્ગલાસ્તિકાય અનંત દ્રવ્યરૂપ

છે “ ગુણેઓ સ્વઓગુણે ” ગુણની અપેક્ષાએ જીવાસ્તિકાય ઉપયોગ ગુણવાળું છે.

“ પોગ્ગલ્થિકાણં ણં મંતે ! કહ વળ્ણે, કહ ગંધે, કહ રસે કહ ફાસે ! ”

હે મદન્ત ! પુદ્ગલાસ્તિકાય કેટલા વર્ણુ વાળું છે, કેટલા ગંધવાળું છે ? કેટલા
રસ વાળું છે ? અને કેટલા સ્પર્શવાળું છે ? (ગોચમા !) હે ગૌતમ ! (પંચ-
વળ્ણે, પંચ રસે, દુગધે, અઢ્ઢાસે, રૂચે અજીવે સાસણ અવઢ્ઢિણ લોગદવ્વે) પુદ્ગ-
લાસ્તિકાય પાંચ વર્ણુવાળું પાંચ રસવાળું, બે ગંધવાળું, આઠ સ્પર્શવાળું, રૂપી,
અજીવ, શાશ્વત, અવસ્થિત, અને લોકદ્રવ્ય છે (સે સમાસઓ પંચવિહે પળ્ણ-
ત્તે) તે પુદ્ગલાસ્તિકાયના સક્ષિપ્તમા પાંચ પ્રકાર છે (તંજહા) તે પ્રકારે આ
પ્રમાણે છે- (દવ્વઓ ચેત્તઓ, કાલઓ, માયઓ, ગુણઓ) (૧) દ્રવ્યની અપે-
ક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય, (૨) ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય, (૩) કાળની અપે-
ક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય, (૪) લાવની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય, અને (૫) ગુણની
અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય. (દવ્વઓ ણં પોગ્ગલ્થિકાણં અણંતાઈં દવ્વાઈં) દ્રવ્યની

જ્ઞાત-અવકાશાન્તરાણીતિ । એમગ્રેડપિ વિજ્ઞેયમ્ । અવકાશાન્તરાણિ-પૃથિવ્યા
 અપોવર્ષ્યાકાશાનિ સપ્ત ૧ । ‘વાય’ इति-વાતા-‘તનુવાતા’ સપ્ત ૨ । ‘घण’ इति
 घना-घनवाताः सप्त ૩ । ‘उदधि’ इति उदधय-घनोदधयः सप्त ૪ । અવકા
 શાન્તરાણીનાં સપ્તમ્ પૃથિવીપુ પ્રત્યેકસ્મિન્નેકૈકમગ્નાવાતે સપ્ત મયન્તિ ।
 ‘पुद्गी’ इति पृथिव्याः=नारकपृथिव्य सप्त ૫ । ‘दीवा य’ इति द्वीपाश्च जम्बूद्वी
 पादयोऽसंख्येया ૬ । ‘सागरा’ इति सागराः=समुद्राः लक्षणसमुद्रादयोऽसंख्येयाः ૭ ।
 ‘वासा’ इति वर्षाणि=भरतादिक्षेत्राणि सप्त ૮ । ‘नैरय्या’ नैरयिकादयश्च
 सुविंशतिदण्डका ૯ । ‘अस्थिय’ इति अस्तिकाया-धर्मास्तिकायादिकाः पञ्च ૧૦ ।
 ‘समया’ इति समयः=कालविभागाः ૧૧ । ‘कम्मा’ इति कर्माणि ज्ञाना
 वरणीयादीन्यष्ट ૧૨ । ‘छेस्साओ’ छेस्सायाः कृष्णादय पद ૧૩ । शा ॥ ૧॥ ‘द्विही’
 इति दृष्टयः-मिथ्यादृष्ट्यादिकास्त्रिंशः ૧૪ । ‘दर्शन’ इति दर्शनानि चक्षुरादीनि
 चत्वारि ૧૫ । ‘जाणा’ ज्ञानानि-भतिश्रुतादीनि पञ्च ૧६ । ‘सज्जा’ इति सज्जाः=

અવકાશ પદ સે યહાં પૈકવેગ મેં પદસમુદાય કે ગ્રહણ કરને કે નિયમ
 સે અવકાશાન્તર કહના યાદિયે । આગે મી હસી તરહ સે જાનના યાદિયે ।
 યે અવકાશાન્તર સાતો પૃથિવિયોમિસે એકર પૃથિવીકે નીચે રહને કે કારણ
 સાત હોતે હૈં, ક્યોં કે સાતો પૃથિવિયોમિં જો પરસ્પરમેં અન્તરાલ હૈ વહી
 અવકાશાન્તર હૈ । વાત-તનુવાત ૭, ઘન-ઘનવાત ૭, ઉદધિ-ઘનોદધિ ૭,
 નારકપૃથિવીયાં ૭, જંબૂદ્વીપ આદિ અસંખ્યાનદ્વીપ, લક્ષણસમુદ્ર આદિ
 અસંખ્યાત સમુદ્ર, ભરત આદિ માત ક્ષેત્ર, નૈરયિક આદિ ચોઈસ દણ્ડક,
 ધર્મોસ્તિકાયાદિક પાંચ, અસ્તિકાય, સમય-કાલવિભાગ, જ્ઞાનાવરણીય
 આદિ આઠ કર્મ, કૃષ્ણાદિક ૭ છેદ્યાર્ષ, મિથ્યાદૃષ્ટિ આદિક ત્રીન દૃષ્ટિયાં,
 ચક્ષુર્દર્શનાદિક ચાર દર્શન, મતિજ્ઞાન આદિ પાંચ જ્ઞાન, આહારસંજ્ઞા આદિ

અવકાશ પદ દ્વારા અહીં અવકાશાન્તર સમજવું બોધ્યું છે. તે અવકાશાન્તર સાત
 છે કારણ કે સાતે પૃથ્વીમાની દરેક પૃથ્વીની નીચે અવકાશાન્તર હોય છે
 સાતે પૃથ્વીઓમાં પરસ્પરની (એકબીજાની) વચ્ચે જે અન્તરાલ છે તેને જ
 અવકાશાન્તર કહે છે. વાત-તનુવાત ૭ ઘન-ઘનવાત, ઉદધિ-ઘનોદધિ ૭
 નારક પૃથ્વીઓ ૭, જંબૂદ્વીપ વગેરે અસંખ્યાત દ્વીપ લવણ સમુદ્ર વગેરે
 અસંખ્યાત સમુદ્ર ભરત વગેરે ૭, ક્ષેત્ર નૈરયિક વગેરે ૨૪ હડક ધર્મોસ્તિ
 કાય વગેરે ૫ અસ્તિકાય સમય-કાલવિભાગ, જ્ઞાનાવરણીય વગેરે ૮ કર્મ, કૃષ્ણા
 દિક ૬ છેદ્યાઓ, મિથ્યાદૃષ્ટિ વગેરે ત્રણ દૃષ્ટિયાં ચક્ષુર્દર્શન વગેરે ૪ દર્શન,
 મતિજ્ઞાન વગેરે પાંચ જ્ઞાન, આહારમજ્ઞા વગેરે ૪ સજ્જાઓ બોધ્યાર્થે વગેરે

અસ્તીનામ્ પ્રદેશાનામ્ કાયાઃ રાશયઃ ઇતિ અસ્તિકાયાઃ અથવા અસ્તીતિ તિઙ્ઠન્ત પ્રતિરૂપકો નિપાતઃ ભૂતભવિષ્યવર્તમાનેતિ કાલત્રયવાચકઃ તતઃ અસ્તીતિ સન્તિ આસન્ ભવિષ્યન્તિ ચ એ કાયાઃ પ્રદેશરાશયઃ તે અસ્તિકાયાઃ । એતદ્રૂપા ઇમે અસ્તિકાયાઃ પંચ પ્રજ્ઞપ્તાઃ, પચ્ચાસ્તિકાયાનેવ દર્શયતિ ‘ તં જહા ’ ઇત્યાદિ । “ તં જહા ” તદ્ યથા “ ધમ્મત્થિકાએ ” ધર્માસ્તિકાયઃ “ અધમ્મત્થિકાએ ” અધર્માસ્તિકાયઃ “ આગાસત્થિકાએ ” આકાશાસ્તિકાયઃ “ જીવત્થિકાએ ” જીવાસ્તિકાયઃ “ પોગ્ગલાત્થિકાએ ” પુદ્ગલાસ્તિકાયઃ-ઇતિ, વહુષુ અસ્તિકાયેષુ પ્રથમંતઃ

તરહ સે પ્રદેશોં કી જો રાશિ-સમુદાય હૈ વહ અસ્તિકાય હૈ । અથવા-અસ્તિ યહ તિઙ્ઠન્ત પ્રતિરૂપકનિપાત અવ્યય હૈ ઓર યહ ભૂત, ભવિષ્યત્ ઓર વર્તમાન એસે તીનોં કાલોં કા વાચક હૈ । ઇસસે યહ અર્થ નિકલતા હૈ કિ જો કાય વર્તમાન કાલ મેં હૈ, ભૂતકાલ મેં થે, ઓર ભવિષ્યત્કાલ મેં ભી રહેંગે વે અસ્તિકાય હૈ । ઇસ તરહ કે અસ્તિકાય પાંચ કહે ગયે હૈ-તાત્પર્ય કહ્ને કા યહી હૈ કિ કાય-શરીર કે સમાન જો દ્રવ્ય વહુત પ્રદેશ વાલે હૈ વે અસ્તિકાય હૈ । અવિભાગી પુદ્ગલકા પરમાણુ જિતને આકાશરૂપ સ્થાન કો રોકતા હૈ ઉસકા નામ પ્રદેશ હૈ । એસે પ્રદેશ જીવ, પુદ્ગલ, ધર્મ, અધર્મ ઓર આકાશ દ્રવ્ય મેં હી હોતે હૈ અતઃ એ અસ્તિકાયકહે ગયે હૈ । (તંજહા) ઇસ વિષયકા સ્પષ્ટીકરણ સ્વયં ટીકાકાર આગે કર રહે હૈ-(ધમ્મત્થિકાએ, અધમ્મત્થિકાએ, આગાસત્થિકાએ, જીવત્થિકાએ, પોગ્ગલત્થિકાએ) ધર્માસ્તિકાય, અધર્માસ્તિકાય, આકાશાસ્તિકાય, જીવાસ્તિકાય, પુદ્ગલાસ્તિકાય । ઇસ પ્રકાર ઇન પાંચ અસ્તિ

છે તેનુ નામ અસ્તિકાય છે અથવા “ અસ્તિ ” એ તિઙ્ઠન્ત પ્રતિરૂપક નિપાત અવ્યય છે અને તે ભૂત, ભવિષ્ય અને વર્તમાન, એ ત્રણે કાળનું વાચક છે. તેનો ભાવાર્થ એ થાય છે કે જે કાય રાશિ ભૂતકાળમાં હતાં, વર્તમાનકાળમાં છે અને ભવિષ્યમાં પણ હશે તેમને અસ્તિકાય કહે છે આ પ્રકારના પાંચ અસ્તિકાય કહ્યાં છે કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે કાય-શરીરની જેમ જે દ્રવ્યો બહુ પ્રદેશોવાળા છે તેમને અસ્તિકાય કહે છે. અવિભાગી પુદ્ગલનું પરમાણુ જેટલા આકાશરૂપ સ્થાનને પ્રદેશ કહે છે એવા પ્રદેશો જીવ, પુદ્ગલ, ધર્મ, અધર્મ અને આકાશ દ્રવ્યમાં જ હોય છે, તેથી તે પાંચે ને અસ્તિકાય કહેવામાં આવે છે હવે ટીકાકાર તે અસ્તિકાયો બતાવે છે “ તંજહા ” તે પાંચ અસ્તિકાયો નીચે પ્રમાણે છે-“ ધમ્મત્થિકાએ, અધમ્મત્થિકાએ, આગાસત્થિકાએ, જીવત્થિકાએ, પોગ્ગલત્થિકાએ ” (૧) ધર્માસ્તિકાય, (૨) અધર્માસ્તિકાય, (૩) આકાશાસ્તિકાય, (૪) જીવાસ્તિકાય અને (૫) પુદ્ગલાસ્તિકાય

ટીકા—“કહ ણ મંતે અસ્તિકાયા પળ્ણસા ” કતિ સ્વહુ હે મદન્ત ! અસ્તિકાયાઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ ? કથિતાઃ અસ્તિકાયાનાં કિં સ્વરૂપમ્ કીયતી ચ સમ્યેતિ પ્રજ્ઞામગધાનાહ—‘ગોયમા’ રસ્યાદિ । “ગોયમા” હે ગૌતમ । ‘પંચ અસ્તિકાયા પળ્ણસા ” પચ્ચ અસ્તિકાયાઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ અસ્તિકાયશ્ચન્દાસ્યાડર્યસ્ત્વયમ્ । અસ્તિકાય इत्यत्र अस्तिश्चन्द्रस्य प्रदेशोऽर्यः कायश्चन्द्रस्य च राशिः=समुदायः तवा च है । (खेसओ लोयप्पमाणમેસે) ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા પુદ્ગલાસ્તિકાય સોક પ્રમાણ માત્ર હૈ (કાલઓ ન કયાહ ન આમી જાવ ણિચ્ચે) કાલ કી અપેક્ષા પુદ્ગલાસ્તિકાય મૂતકાલ મેં કમી નહીં યા ંસા નહીં હૈ યાવત્ યહ નિત્ય હૈ । (ભાવઓ વળ્ણમતે ગધરસપ્પસમતે) ભાવ કી અપેક્ષા પુદ્ગલાસ્તિકાયાય વર્ણવાલા હૈ, ગધવાલા હૈ, રસવાલા હૈ, સ્પર્શવાલા હૈ, (ગુણઓ ગહણગુણે) ગુણ કી અપેક્ષા પુદ્ગલાસ્તિકાય વ્રહ્મણ્યુ ન વાલા હૈ ॥ સૂ. ૧ ॥

ટીકાર્થ—(કહ ણં મંતે ! અસ્તિકાયા પળ્ણસા) હે મદન્ત ! અસ્તિકાય કિતને કહે ગયે હૈ ? અર્થાત્—અસ્તિકાયાં કા કયા સ્વરૂપ હૈ ઔર ડનકી સંખ્યા કિતની હૈ ંસા હસ પ્રજ્ઞા કા ભાવ હૈ । મગધાન્ હસકા હસર દેતે કુપ કહતે હૈ (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (પંચ અસ્તિકાયા પળ્ણસા) પાંચ અસ્તિકાય કહે ગયે હૈ । અસ્તિકાય શબ્દ કા અર્થ હસ પ્રકાર સે હૈ—(અસ્તિકાય) મેં દો શબ્દ હૈ—એક (અસ્તિ) ઔર દુસરા (કાય) અસ્તિ શબ્દકા અર્થ પ્રદેશ હૈ ઔર કાય શબ્દ કા અર્થ રાશિ હૈ, હસ

અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય અનંત દ્રવ્યરૂપ છે, (ક્ષેત્રઓ લોયપ્પમાણમેસ) ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય લોકપરિમિત (લોકપ્રમાણ) છે (કાલઓ ન કયાહ આસી જાવ ણિચ્ચે) કાળની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાયનુ અસ્તિત્વ શૂન્યકાળમાં ન હોતું હોવું બન્યું નથી, ત્યારથી લઈને તે નિત્ય છે, ત્યાં મુખીનું અમસ્ત ક્ષવન ધર્માસ્તિકાય મુજબ સમજવું (ભાવઓ વળ્ણમતે ગધરસપ્પસમતે) ભાવની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય વર્ણુ બધ, રસ અને સ્પર્શથી મુક્ત છે (ગુણઓ ગહણગુણે) ગુણની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય બ્રહ્મણ્યુનુવાળું છે ॥ સૂ. ૧ ॥

ટીકાર્થ—“ કહ ણં મંતે ! અસ્તિકાયા પળ્ણસા ” હે મદન્ત ! અસ્તિકાય કેટલા છે ? પ્રશ્નને આવાર્થ કો ૩ કે અસ્તિકાઓનુ કેવુ સ્વરૂપ છે અને તેમની સંખ્યા કેટલી છે ?

ગૌતમ સ્વામીના પ્રશ્નને જવાબ આપતાં મહાવીર પ્રશ્ન કહે છે કે ‘ગોયમા’ હે ગૌતમ । “પંચ અસ્તિકાયા પળ્ણસા ” અસ્તિકાય પાંચ કલાં છે “અસ્તિકાય ” શબ્દનો અર્થ આ પ્રમાણે છે—અસ્તિ x કાય = અસ્તિકાય. અસ્તિ એટલે પ્રદેશ અને કાય એટલે રાશિ. પ્રદેશોની જે રાશિ (સમુદાય) હોય

અસ્તીનામ્ પ્રદેશાનામ્ કાયાઃ રાગયઃ ઇતિ અસ્તિકાયાઃ અથવા અસ્તીતિ તિઙ્ઠન્ત પ્રતિરૂપકો નિપાતઃ ભૂતભવિષ્યવર્તમાનેતિ કાલત્રયવાચકઃ તતઃ અસ્તીતિ સન્તિ આસન્ ભવિષ્યન્તિ ચ યે કાયાઃ પ્રદેશરાગયઃ તે અસ્તિકાયાઃ । एतद्रूपा इमे अस्तिकायाः पञ्च प्रज्ञप्ताः, पञ्चास्तिकायानेव दर्शयति ' तं जहा ' इत्यादि । “ તં જહા ” તદ્ યથા “ ધમ્મત્થિકાए ” ધર્માસ્તિકાયઃ “ અધમ્મત્થિકાए ” અધર્માસ્તિકાયઃ “ આગાસત્થિકાए ” આકાશાસ્તિકાયઃ “ જીવત્થિકાए ” જીવાસ્તિકાયઃ “ પોગ્ગલત્થિકાए ” પુદ્ગલાસ્તિકાયઃ-ઇતિ, વહુપુ અસ્તિકાયેપુ પ્રથમતઃ

तरह से प्रदेशों की जो राशि-समुदाय है वह अस्तिकाय है । अथवा-अस्ति यह तिङन्त प्रतिरूपकनिपात अव्यय है और यह भूत, भविष्यत् और वर्तमान ऐसे तीनों कालों का वाचक है । इससे यह अर्थ निकलता है कि जो काय वर्तमान काल में है, भूतकाल में थे, और भविष्यत्काल में भी रहेंगे वे अस्तिकाय है । इस तरह के अस्तिकाय पांच कहे गये हैं-तात्पर्य कहने का यही है कि काय-शरीर के समान जो द्रव्य बहुत प्रदेश वाले हैं वे अस्तिकाय हैं । अविभागी पुद्गलका परमाणु जितने आकाशरूप स्थान को रोकता है उसका नाम प्रदेश है । ऐसे प्रदेश जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म और आकाश द्रव्य में ही होते हैं अतः वे अस्तिकाय कहे गये हैं । (तंजहा) इस विषयका स्पष्टीकरण स्वयं टीकाकार आगे कर रहे हैं-(धम्मत्थिकाए, अधम्मत्थिकाए, आगासत्थिकाए, जीवत्थिकाए, पोग्गलत्थिकाए) धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, जीवास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय । इस प्रकार इन पांच अस्ति-

છે તેનુ નામ અસ્તિકાય છે અથવા “ અસ્તિ ” એ તિઙ્ઠન્ત પ્રતિરૂપક નિપાત અવ્યય છે અને તે ભૂત, ભવિષ્ય અને વર્તમાન, એ ત્રણે કાળનું વાચક છે. તેનો ભાવાર્થ એ થાય છે કે જે કાય રાશિ ભૂતકાળમાં હતાં, વર્તમાનકાળમાં છે અને ભવિષ્યમાં પણ હશે તેમને અસ્તિકાય કહે છે આ પ્રકારના પાચ અસ્તિકાય દેહા છે કહેવાનુ તાત્પર્ય એ છે કે કાય-શરીરની જેમ જે દ્રવ્યો બહુ પ્રદેશોવાળા છે તેમને અસ્તિકાય કહે છે અવિભાગી પુદ્ગલનું પરમાણુ જેટલા આકાશરૂપ સ્થાનને પ્રદેશ કહે છે એવા પ્રદેશો જીવ, પુદ્ગલ, ધર્મ, અધર્મ અને આકાશ દ્રવ્યમાં જ હોય છે, તેથી તે પાચે ને અસ્તિકાય કહેવામાં આવે છે હવે ટીકાકાર તે અસ્તિકાયો બતાવે છે “ તંજહા ” તે પાચ અસ્તિકાયો નીચે પ્રમાણે છે-“ ધમ્મત્થિકાए, અધમ્મત્થિકાए, આગાસત્થિકાए, જીવત્થિકાए, પોગ્ગલત્થિકાए ” (૧) ધર્માસ્તિકાય, (૨) અધર્માસ્તિકાય, (૩) આકાશાસ્તિકાય, (૪) જીવાસ્તિકાય અને (૫) પુદ્ગલાસ્તિકાય.

ટીકા—“કદ્દ ણ મંતે અસ્તિકાયા પળ્લણ્ણા ” કતિ સ્વલ્લ હે મદન્ત ! અસ્તિ
કાયાઃ પ્રજ્ઞતાઃ ? વયિતા, અસ્તિકાયાનાં કિં સ્વરૂપમ્ કીયતી ચ સસ્યેવિ મમઃ
મગનાનાહ—‘ગોયમા’ ઇત્યાદિ । “ગોયમા” હે ગૌતમ ! ‘પંચ અસ્તિકાયા
પળ્લણ્ણા ” પશ્ચ અસ્તિકાયાઃ પ્રજ્ઞતાઃ અસ્તિકાયશ્ચ્ચાસ્યાર્થસ્ત્વયમ્ । અસ્તિ
કાય ઇત્યપ્ર અસ્તિશ્ચ્ચ્ચસ્ય પ્રવેશોર્થ કાયશ્ચ્ચ્ચસ્ય ચ રાશિઃ સ્તપ્રુણાયઃ તથા ચ
હે । (લેક્ષઓ લોચપ્પમાણમેષે) ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા પુર્રલાસ્તિકાય
લોક પ્રમાણ માત્ર હે (કાલઓ ણ કયાહ ન આસી જાવ ણિચ્ચે)
કાલ કી અપેક્ષા પુર્રલાસ્તિકાય શ્રૂતકાલ મેં કમી નહીં યા એસા નહીં
હે યાવત્ યહ નિત્ય હે । (ભાવઓ ઘળ્લમંતે ગંધરસપ્પાસમંતે) ભાવ
કી અપેક્ષા પુર્રલાસ્તિકાય ઘર્ણલાલા હે, ગંધલાલા હે, રસલાલા હે, સ્પર્શ-
લાલા હે, (ગુણઓ ગહ્ણણુને) ગુણ કી અપેક્ષા પુર્રલાસ્તિકાય પ્રહ્ણણ-
ણ લાલા હે ॥ સૂ. ૧ ॥

ટીકાર્થ—(કદ્દ ણ મંતે ! અસ્તિકાયા પળ્લણ્ણા) હે ‘મદન્ત ! અસ્તિ
કાય કિત્તને કહે ગયે હે ? અર્થાત્—અસ્તિકાયોં કા કયા સ્વરૂપ હે ઓર
ઉનકી સહયા કિત્તની હે એસા હસ મમ્મ કા ભાવ હે । મગનાહ હસકા
ઉત્તર દેતે હુપ કહતે હે (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (પંચ અસ્તિકાયા પળ્લ
ણા) પાંચ અસ્તિકાય કહે ગયે હે । અસ્તિકાય શબ્દ કા અર્થ હસ પ્રકાર
સે હે—(અસ્તિકાય) મેં દો શ્વદ્દ હે—પ્રક (અસ્તિ) ઓર દુસરા (કાય)
અસ્તિ શબ્દકા અર્થ પ્રદેશ હે ઓર કાય શબ્દ કા અર્થ રાશિ હે, હસ

અપેક્ષાએ પુર્રલાસ્તિકાય અનંત દ્રવ્યરૂપ છે, (લેક્ષઓ લોચપ્પમાણમેષે) ક્ષેત્રની
અપેક્ષાએ પુર્રલાસ્તિકાય લોકપરિમિત (લોકપ્રમાણ) છે (કાલઓ ણ કયાહ
આસી જાવ ણિચ્ચે) કાળની અપેક્ષાએ પુર્રલાસ્તિકાયનું અસ્તિત્વ શ્રૂતકાળમાં ન
હતું એવું બન્ધુ નથી, ત્યાંથી લઇને તે નિત્ય છે ત્યાં સુધીનું સમસ્ત કથન
ધર્માસ્તિકાય મુજબ સમજવું (મમ્મઓ ઘળ્લમંતે ગંધરસપ્પાસમંતે) ભાવની
અપેક્ષાએ પુર્રલાસ્તિકાય વર્ણ અંધ, રસ અને સ્પર્શથી મુક્ત છે (ગુણઓ
ગહ્ણણુને) શુદ્ધની અપેક્ષાએ પુર્રલાસ્તિકાય પ્રહ્ણણુપણુ છે ॥ સૂ. ૧ ॥

ટીકાર્થ—“કદ્દ ણ મંતે ! અસ્તિકાયા પળ્લણ્ણા ” હે મદન્ત ! અસ્તિકા
કેટલા છે ? પ્રશ્નનો આવાજ છે છે કે અસ્તિકાઓનું કેવું સ્વરૂપ છે અને તેમની
અંચા કેટલી છે ?

ગૌતમ સ્વામીના પ્રશ્નનો જવાબ આપતાં મહાવીર પ્રશ્ન કહે છે કે ‘ગો
યમા’ હે ગૌતમ ! “પંચ અસ્તિકાયા પળ્લણ્ણા” અસ્તિકાયા પાંચ કલાં છે. “અ
સ્તિકાય ” શબ્દનો અર્થ આ પ્રમાણે છે—અસ્તિ + કાય = અસ્તિકાય અસ્તિ
એટલે પ્રદેશ અને કાય એટલે રાશિ. પ્રદેશોની એ પાંચ (અનુદાય) લાગ

અસ્તીનામ્ પ્રદેશાનામ્ કાયા રાશયઃ ઇતિ અસ્તિકાયાઃ અથવા અસ્તીતિ તિઙ્ઠન્ત પ્રતિરૂપકો નિપાતઃ ભૂતભવિષ્યવર્તમાનેતિ કાન્ત્રયયવાચકઃ તતઃ અસ્તીતિ સન્તિ આસન્ ભવિષ્યન્તિ ચ યે કાયા. પ્રદેશરાશયઃ તે અસ્તિકાયાઃ । એતદ્રૂપા ઇમે અસ્તિકાયાઃ પંચ પ્રજ્ઞપ્તાઃ, પચ્ચાસ્તિકાયાનેવ દર્શયતિ ‘ તં જહા ’ ઇત્યાદિ । “ તં જહા ” તદ્ યથા “ ધમ્મત્થિકા ” ધર્માસ્તિકાયાઃ “ અધમ્મત્થિકા ” અધર્માસ્તિકાયાઃ “ આગામત્થિકા ” આકાશાસ્તિકાયાઃ “ જીવત્થિકા ” જીવાસ્તિકાયાઃ “ પોગ્ગલત્થિકા ” પુદ્ગલાસ્તિકાયાઃ-ઇતિ, વહુપુ અસ્તિકાયેષુ પ્રથમતઃ

તરહ સે પ્રદેશોં કી જો રાશિ-સમુદાય હૈ વહ અસ્તિકાય હૈ । અથવા-અસ્તિ યહ તિઙ્ઠન્ત પ્રતિરૂપકનિપાત અવ્યય હૈ ઓર યહ ભૂત, ભવિષ્યત્ ઓર વર્તમાન એસે તીનોં કાલોં કા વાચક હૈ । ઇસસે યહ અર્થ નિકલ-તા હૈ કિ જો કાય વર્તમાન કાલ મેં હૈ, ભૂતકાલ મેં થે, ઓર ભવિષ્ય-ત્કાલ મેં બી રહેંગે વે અસ્તિકાય હૈ । ઇસ તરહ કે અસ્તિકાય પાંચ કહે ગયે હૈ-તાત્પર્ય કહ્ને કા યહી હૈ કિ કાય-શરીર કે સમાન જો દ્રવ્ય વહુત પ્રદેશ વાલે હૈ વે અસ્તિકાય હૈ । અવિભાગી પુદ્ગલકા પરમાણુ જિતને આકાશરૂપ સ્થાન કો રોકતા હૈ ઉસકા નામ પ્રદેશ હૈ । એસે પ્ર-દેશ જીવ, પુદ્ગલ, ધર્મ, અધર્મ ઓર આકાશ દ્રવ્ય મેં હી હોતે હૈ અતઃયે અસ્તિકાયકહે ગયે હૈ । (તંજહા) ઇસ વિષયકા સ્પષ્ટીકરણ સ્વયં ટીકાકાર આગે કર રહે હૈ-(ધમ્મત્થિકા, અધમ્મત્થિકા, આગામત્થિકા, જીવત્થિકા, પોગ્ગલત્થિકા) ધર્માસ્તિકાય, અધર્માસ્તિકાય, આકાશ-સ્તિકાય, જીવાસ્તિકાય, પુદ્ગલાસ્તિકાય । ઇસ પ્રકાર ઇન પાંચ અસ્તિ

છે તેનું નામ અસ્તિકાય છે. અથવા “ અસ્તિ ” એ તિઙ્ઠન્ત પ્રતિરૂપક નિપાત અવ્યય છે અને તે ભૂત, ભવિષ્ય અને વર્તમાન, એ ત્રણે કાળનું વાચક છે. તેનો ભાવાર્થ એ થાય છે કે જે કાય રાશિ ભૂતકાળમાં હતાં, વર્ત-વર્તમાનકાળમાં છે અને ભવિષ્યમાં પણ હશે તેમને અસ્તિકાય કહે છે આ પ્રકારના પાંચ અસ્તિકાય દહ્યાં છે કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે કાય-શરી-રની જેમ જે દ્રવ્યો બહુ પ્રદેશોવાળા છે તેમને અસ્તિકાય કહે છે. અવિ-ભાગી પુદ્ગલનું પરમાણુ જેટલા આકાશરૂપ સ્થાનને પ્રદેશ કહે છે એવા પ્રદેશો જીવ, પુદ્ગલ, ધર્મ, અધર્મ અને આકાશ દ્રવ્યમાં જ હોય છે, તેથી તે પાંચે ને અસ્તિકાય કહેવામાં આવે છે હવે ટીકાકાર તે અસ્તિકાયો બતાવે છે “ તંજહા ” તે પાંચ અસ્તિકાયો નીચે પ્રમાણે છે-“ ધમ્મત્થિકા, અધમ્મત્થિકા, આગામત્થિકા, જીવત્થિકા, પોગ્ગલત્થિકા ” (૧) ધર્માસ્તિકાય, (૨) અધ-ર્માસ્તિકાય, (૩) આકાશાસ્તિકાય, (૪) જીવાસ્તિકાય અને (૫) પુદ્ગલાસ્તિકાય.

ધર્માસ્તિકાયસ્યેવ નિર્વચન કૃતમ્ તથાપ્ય હેતુઃ ધર્મશબ્દ સુખાદિમદ્ગુણસ્વાર્થ
પ્રયોજનકરત્વેન મદ્ગુણરૂપોઽસ્તઃ ધર્માસ્તિકાયસ્ય પ્રથમ નિર્વેણઃ તદનન્તરમ્ ધર્માસ્તિ
કાયવિરોધિત્વાત્ અધર્માસ્તિકાયસ્ય કથનં કૃતમ્ । તદનન્તરમ્ ધર્માસ્તિકાયાઽધ
ર્માસ્તિકાયયોરાપારમૃતતાત્ આકાશાસ્તિકાયસ્ય કથનં કૃતમ્ તત્તથામૂર્ધત્વાઽન
ન્તસ્વસાધર્મ્યાત્ જીવાન્તિકાયસ્ય કથનમ્ તતો જીવોપદંભકત્વાત્ પુરુષાસ્તિકા
યસ્ય કથનમિતિ “ધર્મત્યિકાણં મંતે” ધર્માસ્તિકાયઃ સ્વહ મદન્તા “કતિ
વળ્ણે” કતિર્વળ્ણવાન્ ‘કતિ ગચે’ કતિ ગચવાન્ “કતિ રસે” કતિરસ

કાર્યો મેં સે સૂત્રકાર ને જો સર્વપ્રથમ ધર્માસ્તિકાય ના નિરૂપણ કિયા
હે ત્સકા કારણ યહ હે-ધર્મશબ્દ સુખાદિમદ્ગુણ અર્થ કા પ્રયોજક
હોને સે મગલરૂપ માના જાતા હે અતઃ સૂત્રકાર ને પ્રથમ ધર્માસ્તિકાય
કા નિર્દેશ કિયા હે । ધર્માસ્તિકાય સે વિપરીત સ્વભાવ ઘાલા હોને કે
કારણ ધર્માસ્તિકાય કે યાદ અધર્માસ્તિકામ કા પાઠ રહ્યા હે । ધર્મા
સ્તિકાય ઔર અધર્માસ્તિકાય કા આપાર મૂલ ક્ષેત્ર આકાશ હે-અતઃ
આકાશાસ્તિકાય કા કથન હન દોનો કે યાદ કિયા ગયા હે । અમૂર્તત્વ
ઔર અનન્તત્વ કે સાધર્મ્ય કો લેકર આકાશાસ્તિકાય કે યાદ જીવા
સ્તિકાય કા કથન કિયા હે । જીવ કા ઉપદંભક (ઉપકારક) હોને સે
જીવાસ્તિકાય કે યાદ પુરુષાસ્તિકાય કા કથન કિયા ગયા હે । (ધર્મ
ત્યિકાણં મંતે ।) હે મદન્ત ! ધર્માસ્તિકાય (કહ્વળ્ણે) કિતને વળોં ઘાલા
હે ? (કહ્ ગચે) કિતને ગચ ઘાલા હે ? (કહ્ રસે) કિતને રસોંઘાલા હે ?
(કહ્ રસે) કિતને સ્પર્શોં ઘાલા હે ? તાત્પર્ય યહ કિ હે મદન્ત । કહિયે

આ પાંચે અસ્તિકાયોમાંથી સૂત્રકારે ચોથી પહેલા ધર્માસ્તિકાયનું નિરૂપણ
કયું છે, તેનું કારણ એ છે કે-ધર્મ શબ્દ મુખ્યત્વે મનજનક અર્થને પ્રયો
ગે કોવાથી મનજનક માના છે ધર્માસ્તિકાય કરતાં વિપરીત સ્વભાવવાળું
અધર્માસ્તિકાય છે તેથી ધર્માસ્તિકાયનું નિરૂપણ ઠીક પછી સૂત્રકારે અધર્માસ્તિ
કાયનું નિરૂપણ કયું છે ધર્માસ્તિકાય અને અધર્માસ્તિકાયનું આપારરૂપ ક્ષેત્ર
આકાશ છે તેથી સૂત્રકારે તે બન્નેનું નિરૂપણ ઠીક પછી આકાશાસ્તિકાયનું
નિરૂપણ કયું છે અમૂર્તત્વના અને અનન્તત્વનાસમાન ગુણને લીધે આકા
શાસ્તિકાય પછી જીવાસ્તિકાયનું નિરૂપણકયું છે પુરુષાસ્તિકાયજનક ઉપકારક
કોવાથી જીવાસ્તિકાયનું નિરૂપણ ઠીક પછી સૂત્રકારે પુરુષાસ્તિકાયનું નિરૂપણ કયું છે
પ્રશ્ન- ધર્મત્યિકાણં મંતે । ” કે મદન્ત ! ધર્માસ્તિકાયને “ કહ્વળ્ણે ” કેટલા
વળોં ડોલ છે ? ‘ કહ્ ગચે ’ કેટલી ગચ છે ? ‘ કહ્ રસે ” કેટલા રસ ડોલ
છે, ‘ કહ્ સ્પર્શે ” અને કેટલા સ્પર્શ ડોલ છે ?

वान् “ कतिफासे ” कतिस्पर्शवान् । हे भगवन् । धर्मास्तिकाये कति वर्णगन्ध
रसस्पर्शाः भवन्तीति कथयेति भावः । भगवानाह—‘ गोयमा ’ इत्यादि. ‘ गोयमा ’
हे गौतम ! ‘अवण्णे अगंधे अरसे अफासे अरूवी अजीवे सासए अवट्टिए लोगदव्वे’
अवणोऽगन्धोऽरसोऽस्पर्शः—अरूपी अजीवः शाश्वतोऽवस्थितो लोकद्रव्यम् । तत्र
अवर्णः नीलपीतादिपञ्चवर्णरहितः, तथा अगन्धः = सुरभिदुरभिगन्धरहितः,
अरसः—तिक्तादिरसरहितः, अस्पर्शः—कर्कशाद्यष्टविधस्पर्शरहितश्च धर्मास्तिकायः,
“ अरूवे ” अरूपी—आकाररहितः “ अजीवे ” अजीवः—जीवरहितः “ सासए ”
शाश्वतः—द्रव्यतो नित्यः “ अवट्टिए ” अवस्थितः प्रदेशैः “ लोगदव्वे ” लोक
द्रव्यम् । लोकस्य पञ्चास्तिकायरूपस्यांशभूतं द्रव्यमिति लोकद्रव्यम् “ से समा-
सओ पंचविहे पणत्ते ” स धर्मास्तिकायः समासतः संक्षेपतः, पञ्चविधः—पञ्चप्रका-

धर्मास्तिकाय मे कितने वर्ण, कितने गंध, कितने रस, और कितने स्पर्श
होते हैं । प्रभु ने इस पर यों कहा—(गोयमा!) हे गौतम । (अवण्णे,
अगंधे, अरसे, अफासे, अरूवी, अजीवे, सासए, अवट्टिए, लोगदव्वे)
धर्मास्तिकाय नील पीत आदि पांचों वर्णों से रहित है सुरभिदुरभिगंध
से रहित है, तिक्तादि पांच प्रकार के रसों से रहित है कर्कश आदि
आठ प्रकार के स्पर्श से रहित है । इसका कोई रूप नहीं है । यह अ-
जीव—चैतन्य गुण से रहित है । द्रव्य की अपेक्षा यह (सासए) शाश्वत
है । अर्थात् द्रव्य नित्य है । (अवट्टिए) अपने प्रदेशों से यह सदा एकसा
रहता है—अर्थात् धर्मास्तिकाय के असंख्यात प्रदेश हैं—सों ये प्रदेश
इसके कमसी बढ़ती नहीं होते हैं । (लोगदव्वे) पञ्चास्तिकायरूप लोक का
यह द्रव्य अंशभूत है इसलिये इसे लोक द्रव्य कहा गया है । (से समा-
सओ पंचविहे पणत्ते) यह धर्मास्तिकाय संक्षेपसे पांच प्रकार का कहा

उत्तर—(अवण्णे, अगंधे, अरसे, अफासे, अरूवी, अजीवे, सासए, अवट्टिए,
लोगदव्वे) हे गौतम ! धर्मास्तिकाय लाल, पीला, वादणी आदि पांच रंगों
रहित होय छे, ते सुगंध अने दुर्गंधयुक्त छे ते आठो, आठो, कडवो
आदि पांच रसयुक्त छे, ते कठोर आदि आठ प्रकारना स्पर्शयुक्त छे.
ते अक्षय छे, ते अक्षय (चैतन्य रहित) छे द्रव्यनी अपेक्षाअ ते शाश्वत
(नित्य) छे. (अवट्टिए) धर्मास्तिकायना अनेक प्रदेशो होय छे तेना ते प्रदे-
शोभा वधारो घटाओ थतो नथी, भाटे तेने अवस्थित कछो छे (लोगदव्वे)
पञ्चास्तिकाय रूप होअतु ते अशभूत द्रव्य छे तेथी तेने लोकद्रव्य कहेल छे.
(से समासओ पंचविहे पणत्ते) ते धर्मास्तिकायना संक्षिप्तभा पांच प्रकार छे.

ધર્માસ્તિકાયસ્યૈવ નિર્વચનં કૃતમ્ સપ્રાયં હેતુઃ ધર્મશબ્દઃ સુત્રાદિમદ્વલરૂપાર્થ
પ્રયોજનકરણેન મદ્વલરૂપોઽયઃ ધર્માસ્તિકાયસ્ય પ્રથમં નિર્દેશઃ સદનન્તરમ્ ધર્માસ્તિ-
કાયધિરોપિત્વાત્ અધર્માસ્તિકાયસ્ય કથનં કૃતમ્ । સદનન્તરમ્ ધર્માસ્તિકાયાઽધ-
ર્માસ્તિકાયયોરાધારભૂતતાત્ આકાશાસ્તિકાયસ્ય કથનં કૃતમ્ તત્કામૂર્ધત્વાઽન-
ન્તત્વસાધર્મ્યાત્ ઝીવામ્ષિકાયસ્ય કથનમ્ સતો જીવાપદમકત્વાત્ પુદ્ગલાસ્તિકા-
યસ્ય કથનમિતિ “ધર્મત્થિકાણં મંતે” ધર્માસ્તિકાયઃ સ્વલુ મદન્તાં “કતિ
વળ્લે” કતિવર્ણવાન્ “કતિ ગંધે” કતિ ગાંધવાન્ “કતિ રસે” કતિરસ-

કાર્યો મેં સે સૂત્રકાર ને જો સર્વપ્રથમ ધર્માસ્તિકાય કા નિરૂપણ ક્રિયા
હૈ હસકા કારણ યહ હૈ-ધર્મશબ્દ સુત્રાદિમદ્વલરૂપ અર્થ કા પ્રયોજક
હોને સે મગલરૂપ માના જાતા હૈ અતઃસૂત્રકાર ને પ્રથમ ધર્માસ્તિકાય
કા નિર્દેશ ક્રિયા હૈ । ધર્માસ્તિકાય સે વિપરીત સ્વભાવ ધાલા હોને કે
કારણ ધર્માસ્તિકાય કે યાદ અધર્માસ્તિકામ કા પાઠ રહ્યા હૈ । ધર્મા
સ્તિકાય ઓર અધર્માસ્તિકાય કા આધાર ભૂત ક્ષેત્ર આકાશ હૈ-અતઃ
આકાશાસ્તિકાય કા કથન હન દોનોં કે યાદ ક્રિયા ગયા હૈ । અમૂર્તત્વ
ઓર અનન્તસ્ય કે સાધર્મ્ય કો હેકર આકાશાસ્તિકાય કે યાદ જીવા-
સ્તિકાય કા કથન ક્રિયા હૈ । જીવ કા વપદંત્રક (વપકારક) હોને સે
જીવાસ્તિકાય કે યાદ પુદ્ગલાસ્તિકાય કા કથન ક્રિયા ગયા હૈ । (ધર્મ
ત્થિકાણં મંતે ।) હૈ મદન્તાં ધર્માસ્તિકાય (કહવળ્લે) કિતને વળોં ઘાલા
હૈ ? (કહ ગંધે) કિતને ગંધ ધાલા હૈ ? (કહ રસે) કિતને રસોંઘાલા હૈ ?
(કહફાસે) કિતને સ્પર્શો ઘાલા હૈ ? તાત્પર્ય યહ કિ હૈ મદન્તાં । કહિયે

આ પાઠે અસ્તિકાઓમાંથી સૂત્રકારે ચોથી પહેલાં ધર્માસ્તિકામનું નિરૂપણ
કર્યું છે, તેનું કારણ એ છે કે-ધર્મ શબ્દ સુત્રાદિ મગધરૂપ અર્થના પ્રથમ
લઠ દેવાથી મગધરૂપ મનાય છે ધર્માસ્તિકામ કરતાં વિપરીત સ્વભાવવાળું
અધર્માસ્તિકામ છે તેથી ધર્માસ્તિકામનું નિરૂપણ કર્યા પછી સૂત્રકારે અધર્માસ્તિ-
કામનું નિરૂપણ કર્યું છે ધર્માસ્તિકામ અને અધર્માસ્તિકામનું આધારરૂપ ક્ષેત્ર
આકાશ છે તેથી સૂત્રકારે તે બન્નેનું નિરૂપણ કર્યા પછી આકાશાસ્તિકામનું
નિરૂપણ કર્યું છે અમૂર્તત્વના અને અનન્તત્વના સમાન ગુણને લીધે આકા-
શાસ્તિકામ પછી જીવાસ્તિકામનું નિરૂપણ કર્યું છે પુદ્ગલાસ્તિકામનું ઉપધારક
દેવાથી જીવાસ્તિકામનું નિરૂપણ કર્યા પછી સૂત્રકારે પુદ્ગલાસ્તિકામનું નિરૂપણ કર્યું છે
મમ- ધર્મત્થિકાણં મંતે ! ” હૈ મદન્તાં । ધર્માસ્તિકામને “ કહવળ્લે ” કેટલા
વર્ણ દેાય છે ? “ કહગંધે ” કેટલી બધે છે ! “ કહરસે ” કેટલા રસ દેાય
છે, “ કહફાસે ” અને કેટલા સ્પર્શ દેાય છે ?

વાન્ “કતિફાસે” કતિસ્પર્શવાન્ । હે ભગવન્ । ધર્માઽસ્તિકાયે કતિ વર્ણગન્ધ
રસસ્પર્શાઃ ભવન્તીતિ કથયેતિ ભાવઃ । ભગવાનાહ—‘ગોયમા’ ઇત્યાદિ. ‘ગોયમા’
હે ગૌતમ ! (અવળે અંગે અરસે અફાસે અરુવી અજીવે સાસણ અવટ્ટિણ લોગદન્વે)
અવળોઽગન્ધોઽરસોઽસ્પર્શઃ—અરુપી અજીવ. શાશ્વતોઽવસ્થિતો લોકદ્રવ્યમ્ । તત્ર
અવર્ણઃ નીલપીતાદિપञ्चવર્ણરહિતઃ, તથા અગન્ધઃ = સુરભિદુરભિગન્ધરહિતઃ,
અરસઃ—તિક્તાદિરસરહિતઃ, અસ્પર્શઃ—કર્કશાદિપૃથિગ્સ્પર્શરહિતઃ ધર્માસ્તિકાય,
“અરુવે” અરુપી—આકારરહિતઃ “અજીવે” અજીવઃ—જીવરહિતઃ “સાસણ”
શાશ્વતઃ—દ્રવ્યતો નિત્યઃ “અવટ્ટિણ” અવસ્થિતઃ પ્રદેશઃ “લોગદન્વે” લોક
દ્રવ્યમ્ । લોકસ્ય પञ्ચાઽસ્તિકાયરૂપસ્યાંશભૂતં દ્રવ્યમિતિ લોકદ્રવ્યમ્ “સે સમા-
સઓ પંચવિદે પણ્ણત્તે” સ ધર્માસ્તિકાયઃ સમાસતઃ સંક્ષેપતઃ, પञ્ચવિધઃ—પञ્ચપ્રકા-

ધર્માસ્તિકાય મે કિનને વર્ણ, કિનને ગંધ, કિતને રસ, ઓર કિતને સ્પર્શ
હોતે હૈં । પ્રમુ ને હસ પર ચોં કહા—(ગોયમા ।) હે ગૌતમ । (અવળે,
અંગે, અરસે, અફાસે, અરુવી, અજીવે, સાસણ, અવટ્ટિણ, લોગદન્વે)
ધર્માસ્તિકાય નીલ પીત આદિ પાંચોં વર્ણોં સે રહિત હૈં સુરભિદુરભિગંધ
સે રહિત હૈં, તિક્તાદિ પાંચ પ્રકાર કે રસોં સે રહિત હૈં કર્કશ આદિ
આઠ પ્રકાર કે સ્પર્શ સે રહિત હૈં । હસકા કોઈ રૂપ નહોં હૈં । યહ અ-
જીવ—ચૈતન્ય ગુણ સે રહિત હૈં । દ્રવ્ય કી અપેક્ષા યહ (સામણ) શાશ્વત
હૈં । અર્થાત્ દ્રવ્ય નિત્ય હૈં । (અવટ્ટિણ) અપને પ્રદેશોં સે યહ સદા એકસા
રહતા હૈં—અર્થાત્ ધર્માસ્તિકાય કે અસંખ્યાત પ્રદેશ હૈં—તોં યે પ્રદેશ
હસકે કમતી વઢતી નહોં હોતે હૈં । (લોગદન્વે) પંચાસ્તિકાયરૂપ લોક કા
યહ દ્રવ્ય અંશભૂત હૈં હસલિયે હસે લોક દ્રવ્ય કહા ગયા હૈં । (સે સમા-
સઓ પંચવિદે પણ્ણત્તે) યહ ધર્માસ્તિકાય સંક્ષેપસે પાંચ પ્રકાર કા કહા

ઉત્તર—(અવળે, અંગે, અરસે, અફાસે, અરુવી, અજીવે, સાસણ, અવટ્ટિણ,
લોગદન્વે) હે ગૌતમ ! ધર્માસ્તિકાય લાલ, પીળો, વાદળી આદિ પાંચ રંગોથી
રહિત હોય છે, તે સુગંધ અને દુર્ગંધથી રહિત છે તે ખાટો, ખારો, કડવો
આદિ પાંચ રસથી રહિત છે, તે કઠોર આદિ આઠ પ્રકારના સ્પર્શથી રહિત છે.
તે અરૂપી છે, તે અજીવ (ચૈતન્ય રહિત) છે દ્રવ્યની અપેક્ષાએ તે શાશ્વત
(નિત્ય) છે (અવટ્ટિણ) ધર્માસ્તિકાયના અનેક પ્રદેશો હોય છે તેના તે પ્રદે-
શોમા વધારો ઘટાડો થતો નથી, માટે તેને અવસ્થિત કહ્યો છે (લોગદન્વે)
પંચાસ્તિકાય રૂપ લોકનું તે અશભૂત દ્રવ્ય છે. તેથી તેને લોકદ્રવ્ય કહેલ છે.
(સે સમાસઓ પંચવિદે પણ્ણત્તે) તે ધર્માસ્તિકાયના સંક્ષિપ્તમાં પાંચ પ્રકાર છે.

रक्तः प्रपुष्पः कथित "सं जहा" तत्र यथा "दृश्यो खेत्तओ कालओ माधओ गुणओ" द्रव्यतः क्षेत्रतः कालओ माधओ गुणतः "दृश्यो न धम्म त्थिकाए एगे दृश्ये" द्रव्यतः खलु धर्मास्तिकाय एव द्रव्यम् । अथ धर्मास्तिकायो द्रव्यरूपेण एकद्रव्यरूपा भवति तत्त्वतः 'खेत्तओ णं लोक्कपमाणमेवे' 'क्षेत्रतः खलु लोक्कपमाणमात्रम् लोक्कपमाण माधो यस्य स तथा लोक्कपरिमितक्षेत्र विस्तृत इत्यर्थे 'कयाइ न आसी' कालतो न कदाचिदपि नासीद् "न कयाइ नत्थि" न कदाचिन् नास्ति, "जाव निच्छे" यावन्नित्यं, यावत्पदेन "न कयाइ न भविस्सइ भविमु मवइ भविस्सइ घुष गियए सासए अत्तए

गया है (तंजहा) वे पांच प्रकार इस के इस प्रकार से हैं—(दृश्यओ, खेत्तओ, कालओ, माधओ, गुणओ) द्रव्य से धर्मास्तिकाय १, क्षेत्र से धर्मास्तिकाय २, काल से धर्मास्तिकाय ३ माध से धर्मास्तिकाय ४ और गुण से धर्मास्तिकाय ५ (दृश्यओ णं धम्मत्थिकाए एगे दृश्ये) द्रव्य की अपेक्षा से जब धर्मास्तिकाय का विचार किया जाता है—तो यह धर्मास्तिकाय एक द्रव्य रूप होता है अनेकद्रव्यरूप नहीं। (खेत्तओ णं लोक्कपमाणमेवे) क्षेत्र की अपेक्षा यह धर्मास्तिकाय लोक्कपमाणमात्र है अर्थात् जितना पड़ा लोकहै उतना ही पड़ा यह है, इसका कारण यह है कि लोकाकाश में यह सर्वत्र व्याप्त है लोकाकाश ऐसा कोई भी प्रदेश नहीं है कि जहां पर इस द्रव्य की अवस्थान (स्थिति) न हो। (कालओ न कयाइ न आसी, न कयाइ नत्थि, जाव निच्छे) काल की अपेक्षा ऐसा कोई भी काल नहीं है कि जिस समय यह नहीं था और न वर्तमान काल ही ऐसा है कि जिसमें यह नहीं है न भविष्यत् काल ही

(तंजहा) ते पांच भूतानि नीचे प्रमाणे छे—(दृश्यओ, खेत्तओ, कालओ माधओ, गुणओ) (१) द्रव्यकी अपेक्षासे धर्मास्तिकाय, (२) क्षेत्रकी अपेक्षासे धर्मास्तिकाय, (३) कालकी अपेक्षासे धर्मास्तिकाय (४) माधकी अपेक्षासे धर्मास्तिकाय (५) गुणकी अपेक्षासे धर्मास्तिकाय एगे दृश्ये) द्रव्यने अनुसंधाने से धर्मास्तिकायने विचार करवाया जावे तो ते धर्मास्तिकाय जो एक द्रव्य रूप छे अनेक द्रव्यरूप नहीं। (खेत्तओ णं लोक्कपमाणमेवे) क्षेत्रकी अपेक्षासे विचार करवाया जावे तो ते धर्मास्तिकाय जो एक प्रमाण है क्षेत्र के ते लोकना खेत्तुं न भोदु छे तेनु करवु छे छे ते लोकनायमां सब न व्याप्त छे—लोकाकाशने के छे पव प्रवेश जेवा नहीं है व्याप्ता द्रव्यनु अस्तित्व न होय। (कालओ न कयाइ न आसी, न कयाइ नत्थि जाव निच्छे) कालकी अपेक्षासे अनुसंधान के छे पव समये ते (धर्मास्तिकाय) न दंतु जेवु न भवति तत्त्वतः कालमां के छे पव समये ते नहीं जेवु न भवति अने भविष्यत्कालमां के छे पव समये तेनु

પ્રમેયચક્રાટીકા-શા૦-૨-૪૦૬-સૂ૦-૪-લોકાલોકાદિપૂર્વપશ્ચાત્યે-રોહાનગારપ્ર-૫૭

આહારાદિકાશ્વતસ્રઃ ૧૭ । 'શરીરા ય' શરીરાણિ સ્ત્ર-ઔદારિકાદોનિ પશ્વ-૧૮ ।
'યોગ' ઇતિ યોગાઃ-મનોવાક્યાયરૂપાસ્રયઃ ૧૯ । 'ઉવઓમે' ઇતિ-ઉપયોગો-દ્વૈ
સાકારાનાકારરૂપી ૨૦ । 'દન્વ' ઇતિ દ્રવ્યાણિ-ધર્મસ્તિકાયાદીનિ પદ-૨૧ ।
'પણ્ણ' પ્રદેશા અનન્તાઃ ૨૨ । 'પજ્જવ' ઇતિ પર્યવાઃ-અનન્તાઃ ૨૩ । 'અદ્દા'
ઇતિ-અદ્દા-અતીતાનાગતસર્વાદ્વાબેદાદિત્રિવિધિઃ ૨૪ । પ્રતાનિ સત્તુર્વિંશતિસ્થા-
નાનિ 'કિં પુવ્વિં લોચંતે' કિં પૂર્વં લોકાન્તઃ, ઇત્યેવંરૂપેણ પદેન સંયોજિતવ્યાપ્તિતિ
સૂત્રાભિલાપપ્રકારથેત્યમ-તત્ર-અવકાશાન્તરાલાપકઃ સૂત્ર એવ કથિતઃ । તનુવાતા-
લાપકો યથા-“ પુવ્વિં અંતે લોચંતે પચ્છા સત્તમે તણુવાણ પુવ્વિં સત્તમે તણુવાણ
પચ્છા લોચંતે? રોહા! લોચંતે ય તણુવાણ ય પુવ્વિં પેતે પચ્છા પેતે દુવેણ સાસયા

ચારુ સંજ્ઞાપ્, ઔદારિક આદિ પાંચ શરીર, મનોયોગ, વચ્ચનયોગ, કાયયોગ
યેત્તીત્ર યોગ, સાકાર ઉપયોગ અનાકાર-ઉપયોગયે દો ઉપયોગ ધર્મદ્રવ્ય
અધર્મદ્રવ્ય આદિક છ દ્રવ્ય, અનન્તપ્રદેશ અનંત પર્યાયે, ઔર અતીત,
અનાગત, સર્વાદ્વાકાલ । ઇન ચોઈસ સ્થાનકોકા “કિં પુવ્વિં લોચંતે” ઇસ
પદકે સાથ સંયોજિત કરના ચાહિયો યહાં સૂત્રાભિલાપ ઇસ પ્રકાર હોગા
ઇસમેં અવકાશાન્તરાલાપક તો સૂત્રમેં હી કહ દિયા ગયા હૈ । તનુવાતકા
અલાપક જૈસે-“ પુવ્વિં અંતે ! લોચંતે પચ્છા સત્તમે તણુવાતે, પુવ્વિં
સત્તમે તણુવાતે પચ્છા લોચંતે? રોહા! લોચંતે ય તણુવાણ ય પુવ્વિં પેતે
પચ્છા પેતે દુવે સાસયા માવા અણાણુપુવ્વીં ઇસા રોહા! ” હે ભદન્તે !
પહિલે લોકાન્ત હૈ ઔર બાદમે સાતવાં તનુવાતં હૈ કિં પહિલે સાતવાં તનુ-
વાત હૈ ઔર પશ્ચાન્ લોકાન્ત હૈ ! ઉત્તર-હે રોહા! દોનોં હૈ લોકાન્ત હૈ ઔર
સાતવાં તનુવાત હૈ । યે દોનોં પહલે ભી હૈ ઔર પીછે ભી હૈ, ક્યોં કિ

પાંચ શરીર, મનોયોગ, વચ્ચનયોગ, અને કાયયોગ એ ત્રણ યોગ સાકારઉપયોગ
અને અનાકાર ઉપયોગ, એ બે ઉપયોગ, ધર્મદ્રવ્ય, અધર્મદ્રવ્ય વગેરે છ દ્રવ્ય,
અનન્ત પ્રદેશ, અનન્ત પર્યાયો અને અતીત અનાગત, સર્વાદ્વાકાળ ઉપરોક્ત
૨૪ સ્થાનોતુ “કિં પુવ્વિં લોચંતે” લોકાન્તની સાથે સંયોજન કરવું બીજાં,
અહીં આ પ્રકારનો સૂત્રાભિલાપ થશે-અવકાશાન્તરનો આલાપક તો સૂત્રમા જ
કહી નીધેલ છે તનુવાતનો આલાપક આ પ્રમાણે બંનશે-“ પુવ્વિં અંતે ! લોચંતે
પચ્છા સત્તમે તણુવાણ પુવ્વિં સત્તમે તણુવાણ પચ્છા લોચંતે? ” રોહા! લોચંતે ય
તણુવાણ ય પુવ્વિં પેતે પચ્છા પેતે દુવે સાસયા માવા અણાણુપુવ્વીં ઇસા રોહા!
હે ભગવન ! પહેલા લોકાન્ત અને પછી સાતમે તનુવાત છે, કે પહેલાં સાતમે
તનુવાત અને પછી લોકાન્ત છે । ઉત્તર હે રોહા, લોકાન્ત અને સાતમે
તનુવાત બન્ને છે તે બન્ને પહેલા પશુ છે અને પછી પશુ છે કારણ કે તે

रकः प्रपञ्चः कथित "त जहा" तद् यथा "द्व्यओ खेचओ कालओ भावओ गुणओ" द्रव्यतः क्षेत्रतः कालओ भावतो गुणतः "द्व्यओ ण चम्म त्थिकाए एगे दब्बे" द्रव्यतः खलु धर्मास्तिकाय एक द्रव्यम् । अयञ्च धर्मास्तिकायो द्रव्यरूपेण एकद्रव्यरूपो भवति नत्वनम् "खेचओ णं लोक्कपमाणमेवे" 'क्षेत्रतः खलु लोक्कपमाणमात्रम् लोक्कप्रमाण मात्रा यस्य स तथा लोक्कपरिमितक्षेत्र विस्तृत इत्यर्थः 'कालओ न कयाइ न आसी' कालतो न कदाचिदपि नासीत् "न कयाइ नत्थि" न कदाचित् नास्ति, "जाव निच्चे" यावन्नित्य, यावत्पदेन "न कयाइ न भविस्सइ भविस्सु भवइ भविस्सइ पुव गियए सासए अन्तए

गया है (तंजहा) वे पाँच प्रकार इस के इस प्रकार से हैं—(द्व्यओ, खेचओ, कालओ, भावओ, गुणओ) द्रव्य से धर्मास्तिकाय १, क्षेत्र से धर्मास्तिकाय २, काल से धर्मास्तिकाय ३ भाव से धर्मास्तिकाय ४ और गुण से धर्मास्तिकाय ५ (द्व्यओ णं चम्मत्थिकाए एगे दब्बे) द्रव्य की अपेक्षा से जय धर्मास्तिकाय का विचार किया जाता है—तो यह धर्मास्तिकाय एक द्रव्य रूप होता है अनेकद्रव्यरूप नहीं। (खेचओ णं लोक्कपमाणमेवे) क्षेत्र की अपेक्षा यह धर्मास्तिकाय लोक्कप्रमाणमात्र है अर्थात् जितना पहा लोक है उतना ही पहा यह है, इसका कारण यह है कि लोक्ककाश में यह सर्वत्र व्याप्त है लोक्काकाश ऐसा कोई भी प्रदेश नहीं है कि जहाँ पर इस द्रव्य की अवस्थान (स्थिति) न हो। (कालओ न कयाइ न आसी, न कयाइ नत्थि, जाव निच्चे) काल की अपेक्षा ऐसा कोई भी काल नहीं है कि जिस समय यह नहीं था और न वर्तमान काल ही ऐसा है कि जिसमें यह नहीं है न भविष्यत् काल ही

(तंजहा) वे पाँच प्रकार नीचे प्रमाणों से—(द्व्यओ, खेचओ, कालओ भावओ, गुणओ) (१) द्रव्यकी अपेक्षासे धर्मास्तिकाय, (२) क्षेत्रकी अपेक्षासे धर्मास्तिकाय, (३) कालकी अपेक्षासे धर्मास्तिकाय (४) भावकी अपेक्षासे धर्मास्तिकाय (द्व्यओ णं चम्मत्थिकाए एगे दब्बे) द्रव्यके अनुवक्षणी के धर्मास्तिकायके विचार करवाया जावे तो ते धर्मास्तिकाय को एक द्रव्य रूप से अनेक द्रव्यरूप नहीं। (खेचओ णं लोक्कपमाणमेवे) क्षेत्रकी अपेक्षासे विचार करवाया जावे तो ते धर्मास्तिकाय को एक प्रमाण से जोटके के ते लोकना नेटहु व भोदु से तेनु करव को से के ते लोककाशमा अत्र व्याप्त है—लोककाशना को पक्ष प्रदेश कोवे नहीं के व्याप्ता द्रव्यनु अस्तित्व न होय। (कालओ न कयाइ न आसी, न कयाइ नत्थि जाव निच्चे) कालकी अपेक्षासे भूतकालमा को पक्ष समये ते (धर्मास्तिकाय) न केतु कोतु न भु नहीं, वर्तमान कालमा को पक्ष समये ते नहीं कोतु न भु नहीं अने भविष्यकालमा को पक्ष समये तेनु

અવ્વે અવઢિણે" ન કદાચિત્ત ન ભવિષ્યતિ અભવત્ ભવતિ ભવિષ્યતિ તત
 એ ધ્રુવઃ નિયતઃ શાશ્વતોઽક્ષયોઽવ્યયોઽવસ્થિતઃ इत्येषां पदानां ग्रहणं भव-
 तीति । तथा नित्योऽस्ति ततश्च कालतः धर्मास्तिकायस्त्रिकालेऽपि तिष्ठतीति
 'भावओ अवण्णे अगंधे अरसे अफासे' भावतोऽवर्णोऽगन्धोऽरसोऽस्पर्शः तत्र भावतः
 अत एव ध्रुवः नियतः शाश्वतोऽक्षयोऽव्ययव्यवस्थितः इत्येषां पदानां ग्रहणं भवतीति
 तथा नित्योऽस्ति ततश्च कालतः धर्मास्तिकायस्त्रિકालेऽपि तिष्ठतीति । 'भावओ
 अवण्णे अगंधे अरसे अफासे' भावतोऽवर्णोऽगन्धोऽरसोऽस्पर्शः तत्र भावतः
 धर्मास्तिकायः वर्णगन्धरसस्पर्शरहितो भवतीति । " गुणओ गमणगुणे " गुणतः

ऐसा होगा जिस में धर्मास्तिकाय नहीं रहेगा, तीनों कालों में इस द्रव्य
 का सद्भाव माना गया है । क्योंकि यह द्रव्य यावत् नित्य है यहां या-
 वत्पद से (न कयाइ न भविस्सइ, भविसु, भवइ, भविस्सइ, ध्रुवे णिइए
 सासए अक्खए अधुए अवडिण) इस पाठ को ग्रहण किया गया है ।
 यह ध्रुव है नियत है शाश्वत है अक्षय है अव्यय अवस्थित है । और
 नित्य है । त्रिकालवर्ती यह अस्तिकाय है । (भावओ अवण्णे, अगंधे,
 अरसे, अफासे) भाव की अपेक्षा यह धर्मास्तिकायरूप द्रव्य
 वर्ण, गंध, रस और स्पर्श से रहित है । रूपादिक गुण
 पुद्गल में ही पाये जाते हैं । पुद्गल के सिवाय अन्य द्रव्यों में नहीं ।
 अतः धर्मास्तिकाय में इन गुणों का निषेध किया गया है क्योंकि यह
 द्रव्य अरूपी माना गया है । (गुणओ गमणगुणे) गुण की अपेक्षा यह
 द्रव्य गमनगुणवाला माना गया है । जिस प्रकार जल मत्स्यादिक

અસ્તિત્વ નહીં હોય એવું બનવાનું નથી એટલે કે ત્રણે કાળમાં તેનું અસ્તિત્વ
 હોય છે જ કારણ કે તે દ્રવ્ય નિત્ય પર્યન્તના વિશેષણોવાળું છે અહીં
 (યાવત્) પદથી નીચેના સૂત્રપાઠ ગ્રહણ કરાયો છે—(ન ભવિસ્સइ, ભવિસુ,
 ભવइ, ભવિસ્સइ, ધ્રુવે ણિइए सासए, अक्खर अव्वए) તે ધ્રુવ છે, નિયત છે,
 શાશ્વત છે, અક્ષય છે, અવસ્થિત છે અને નિત્ય છે ધર્માસ્તિકાયનો ત્રણે કાળમાં
 સદ્ભાવ (અસ્તિત્વ) હોય છે (ભાવओ अवण्णे, अगंधे, अरसे, अफासे)
 ભાવની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાયે રૂપ દ્રવ્ય વર્ણ ગંધ, રસ અને સ્પર્શથી રહિત
 હોય છે. રૂપાદિક પુદ્ગલમાં જ જોવામાં આવે છે—પુદ્ગલ સિવાયના અન્ય દ્રવ્યમાં
 રૂપાદિક ગુણો હોતા નથી તેથી ધર્માસ્તિકાયમાં તે ગુણોનો અભાવ બતાવવામાં
 આવ્યો છે. એટલે જ ધર્માસ્તિકાયને અરૂપી માનવામાં આવ્યું છે,

(ગુણओ गमणगुणे) ગુણની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાયને ગમન ગુણવાળું

रक्तः मङ्गल्य कथित "तं जहा" तद् यथा "दन्वओ खेत्तओ कालओ माधओ गुणओ" द्रव्यत क्षप्रत कालओ भावओ गुणतः "दन्वओ ण चम्म त्थिकाए एगे दब्बे" द्रव्यत खल्ल धर्मास्तिकाय एक द्रव्यम् । अयञ्च धर्मास्तिकायो द्रव्यरूपेण एकद्रव्यरूपो भवति नत्तनेः "खेत्तओ ण लोक्कपमाणमेत्ते" 'क्षेप्रत खल्ल लोक्कपमाणमात्रम् लोक्कप्रमाण माभा यस्य स तथा लोक्कपरिमितक्षेप्र विस्तृत इत्यर्थः "कालओ न कयाइ न आसी" कालतो न कदाचिदपि नासीत् "न कयाइ नत्थि" न कदाचित् नास्ति, "भाव णिच्चे" यावन्नित्य, यावत्पदेन "न कयाइ न मन्निस्सइ भविस्सु भवइ भविस्सइ धुव णियए सासए अवस्सए

गया है (तंजहा) वे पांच प्रकार इस के इस प्रकार से है—(दन्वओ, खेत्तओ, कालओ, भावओ, गुणओ) द्रव्य से धर्मास्तिकाय १, क्षेत्र से धर्मास्तिकाय २, काल से धर्मास्तिकाय ३ भाव से धर्मास्तिकाय ४ और गुण से धर्मास्तिकाय ५ (दन्वओ ण चम्मत्थिकाए एगे दब्बे) द्रव्य की अपेक्षा से जब धर्मास्तिकाय का विचार किया जाता है—तो यह धर्मास्तिकाय एक द्रव्य रूप होता है अनेकद्रव्यरूप नहीं। (खेत्तओ ण लोक्कपमाणमेत्ते) क्षेत्र की अपेक्षा यह धर्मास्तिकाय लोक्कप्रमाणमात्र है अर्थात् जितना बड़ा लोकाई उतना ही बड़ा यह है, इसका कारण यह है कि लोकाकाश में यह सर्वत्र व्याप्त है लोकाकाश ऐसा कोई भी प्रदेश नहीं है कि जहाँ पर इस द्रव्य की अवस्थान (स्थिति) न हो। (कालओ न कयाइ न आसी, न कयाइ नत्थि, जाव णिच्चे) काल की अपेक्षा ऐसा कोई भी काल नहीं है कि जिस समय यह नहीं था और न वर्तमान काल ही ऐसा है कि जिसमें यह नहीं है न भविष्यत् काल ही

(तंजहा) ते पांच प्रकार नीचे प्रमाणों से—(दन्वओ, खेत्तओ, कालओ भावओ, गुणओ) (१) द्रव्य की अपेक्षा से धर्मास्तिकाय, (२) क्षेत्र की अपेक्षा से धर्मास्तिकाय, (३) काल की अपेक्षा से धर्मास्तिकाय (४) भाव की अपेक्षा से धर्मास्तिकाय (दन्वओ ण चम्मत्थिकाए एगे दब्बे) द्रव्य से अनुवक्षणी ने धर्मास्तिकाय को विचार करवाया आवे तो ते धर्मास्तिकाय को एक द्रव्य रूप से अनेक द्रव्यरूप नहीं। (खेत्तओ ण लोक्कपमाणमेत्ते) क्षेत्र की अपेक्षा से विचार करवाया आवे तो ते धर्मास्तिकाय को एक प्रमाण से जोते के ते लोकना केटुं न भिदुं से तेनुं कश्ये के से ते लोकनायमां सबत्र व्याप्त से—लोकनायमां केधं पण प्रवेश जेवो नहीं के व्याप्ता द्रव्यनुं अस्तित्व न कोय। (कालओ न कयाइ न आसी, न कयाइ नत्थि जाव णिच्चे) काल की अपेक्षा से अनुवक्षणी केधं पण समये ते (धर्मास्तिकाय) न केटुं जेवुं अन्तु नहीं, वर्तमान कालमां केधं पण समये ते नहीं केटुं अनन्तु नहीं अने भविष्यकालमां केधं पण समये तेव

અવ્વે અવટ્ટિયે” ન કદાચિત્ ન ભવિષ્યતિ અભવત્ ભવતિ ભવિષ્યતિ તત્
 એવ ધ્રુવઃ નિયતઃ શાશ્વતોઽક્ષયોઽવ્યયોઽવ્યવસ્થિતઃ इत्येषां पदानां ग्रहणं भव-
 तीति । तथा नित्योऽस्ति ततश्च कालतः धर्मास्तिकायस्त्रिकालेऽपि तिष्ठतीति
 ‘भावओ अवण्णे अगंघे अरसे अफासे’ भावतोऽवर्णोऽगन्धोऽरसोऽस्पर्शः तत्र भावतः
 अत एव ध्रुवः नियतः शाश्वतोऽक्षयोऽव्ययव्यवस्थितः इत्येषां पदानां ग्रहणं भवतीति
 तथा नित्योऽस्ति ततश्च कालतः धर्मास्तिकायस्त्रિકालेऽपि तिष्ठतीति । ‘भावओ
 अवण्णे अगंघे अरसे अफासे” भावतोऽवर्णोऽगन्धोऽरसोऽસ્पर्शः तत्र भावतः
 धर्मास्तिकायः वर्णगन्धरसस्पर्शरहितो भवतीति । “ गुणओ गमणगुणे ” गुणतः

ऐसा होगा जिस में धर्मास्तिकाय नहीं रहेगा, तीनों कालों में इस द्रव्य
 का सद्भाव माना गया है । क्यों कि यह द्रव्य यावत् नित्य है यहां या-
 वत्पद से (न कयाइ न भविस्सइ, भविंसु, भवइ, भविस्सइ, ध्रुवे णिइए
 सासए अक्खए अधुए अवट्टिए) इस पाठ को ग्रहण किया गया है ।
 यह ध्रुव है नियत है शाश्वत है अक्षय है अव्यय अवस्थित है । और
 नित्य है । त्रिकालवर्ती यह अस्तिकाय है । (भावओ अवण्णे, अगंघे,
 अरसे, अफासे) भाव की अपेक्षा यह धर्मास्तिकायरूप द्रव्य
 वर्ण, गंध, रस और स्पर्श से रहित है । रूपादिक गुण
 पुद्गल में ही पाये जाते हैं । पुद्गल के सिवाय अन्य द्रव्यों में नहीं ।
 अतः धर्मास्तिकाय में इन गुणों का निषेध किया गया है क्यों कि यह
 द्रव्य अरूपी माना गया है । (गुणओ गमणगुणे) गुण की अपेक्षा यह
 द्रव्य गमनगुणवाला माना गया है । जिस प्रकार जल मत्स्यादिक

અસ્તિત્વ નહીં હોય એવું બનવાનું નથી એટલે કે ત્રણે કાળમાં તેનું અસ્તિત્વ
 હોય છે જ કારણ કે તે દ્રવ્ય નિત્ય પર્યન્તના વિશેષણોવાળું છે અહીં
 (યાવત્) પદથી નીચેના સૂત્રપાઠ ગ્રહણ કરાયો છે—(ન ભવિસ્સઈ, ભવિંસુ,
 ભવઈ, ભવિસ્સઈ, ધ્રુવે ણિઈએ સાસએ, અક્ખર અવ્વએ) તે ધ્રુવ છે, નિયત છે,
 શાશ્વત છે, અક્ષય છે, અવસ્થિત છે અને નિત્ય છે ધર્માસ્તિકાયનો ત્રણે કાળમાં
 સદ્ભાવ (અસ્તિત્વ) હોય છે (ભાવઓ અવણ્ણે, અગંઘે, અરસે, અફાસે)
 ભાવની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાય રૂપ દ્રવ્ય વર્ણ ગંધ, રસ અને સ્પર્શથી રહિત
 હોય છે રૂપાદિક પુદ્ગલમાં જ ભાવમાં આવે છે—પુદ્ગલ સિવાયના અન્ય દ્રવ્યમાં
 રૂપાદિક ગુણો હોતા નથી તેથી ધર્માસ્તિકાયમાં તે ગુણોનો અભાવ બતાવવામાં
 આવ્યો છે. એટલે જ ધર્માસ્તિકાયને અરૂપી માનવામાં આવ્યું છે,
 (ગુણઓ ગમણગુણે) ગુણની અપેક્ષાએ ધર્માસ્તિકાયને ગમન ગુણવાળું

ગમનગુણો મયતિ । ગતિ પરિણતાનાં જીવપુદ્ગલાના ગત્યુપદંમકત્વાત્ । મત્સ્પાદિ
જલચરજીવાનાં જલમિષ યથા બલાદિ દ્રવ્ય મત્સ્પાદીનાં ગતી ઉપકારક પ્રયો
જકતયા મયતિ સદ્ગત્ ધર્માસ્તિકાપોડપિ જીવપુદ્ગલાનાં ગતિપરિણતાનાં ગતી
ઉપદ્મકતયા સાધાર્ય સમ્પાદયન્ પ્રયોજકો મયતીતિ અતएव—અલોકે ધર્મા
સ્તિકાયાભાવાત્ અલોકે જીવાદીનાં ગમનં ન મયતિ કિન્તુ લોકાકાશપર્યન્તમેવ
एतेषાં ગતિર્મયતીતિ । “ અહમત્યિકાए वि एवं चेव ” અધર્માસ્તિકાપોડપિ एव
મેવ યન રૂપેણ ધર્માસ્તિકાયસ્ય દ્રવ્યક્ષેપ્રાદિમદન સ્વરૂપસ્ય કથન કૃતમ્ તેનૈવ
રૂપેણ અધર્માસ્તિકાયસ્યાડપિ સર્વે જ્ઞાતવ્યમ્ તથાહિ દ્રવ્યત एषદ્રવ્યમ્ ક્ષેપ્રતો
લોકપ્રમાણં કાલતલ્લિકાલચર્તી, જ્ઞાતવતો નિત્યઃ પ્રાપ્તોઽવર્ણ અગ્રાઃ, અસઃ,
અસ્પર્શઃ, તત્ કિમ્ ધર્માસ્તિકાયાઽધર્માસ્તિકાપી સર્વથા સમાનો, તત્તુ ન સમ

જલચર જીવો કો ચલને મેં ઉડાસીને કારણ હોતા હે વસી પ્રકાર
ગતિપરિણત જીવપુદ્ગલોં કો ચલને મેં યહ દ્રવ્ય સહાયક હોતા
હે । હસી કારણ અલોકાકાશ મેં જીવાદિકોં કી ગતિ નહીં હોતી હે ।
કયોં કિ યહાં પર હન દ્રવ્ય કા અમીચ હે । લોકાકાશ કે અન્તતક હી
હસ દ્રવ્ય કા સમ્પાદ હે અતઃ વહીં તફ જીવાદિક દ્રવ્યોં કા ગમન હોતા
હે । (અહમ્માત્યિકાएयि एवं चेव) અધર્માસ્તિકાય ખી એસા હી હે ।
દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાલ આદિ કે મેદ દ્વારા જિસ તરફ સે ધર્માસ્તિકાય કા
સ્વરૂપ કથન કિયા ગયા હે વસી તરફ સે અધર્માસ્તિકાય કે વિષય મેં
ખી સમસ્ત કથન જાનના ચાહિયે દ્રવ્ય કી અપેક્ષા અધર્માસ્તિકાય એક
દ્રવ્ય હે, ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા યહ લોક પ્રમાણ હે, કાલ કી અપેક્ષા યહ ત્રિ-
કાલચર્તી હે, જ્ઞાતવત હે, નિત્ય હે, નાચકી અપેક્ષા યહ વર્ગ, ગત, રસ,
સ્પર્શ હન ચાર ગુણોં સે રહિત હે ।

કહું છે, જેવી રીતે મત્સ્પાદિક જલચર જીવોને ચાલવામાં જળ ઉપાસીનરૂપે
કાશ્વરૂપ બને છે, જોજ પ્રમાણે ગતિપરિણત જીવાદિગીની ગતિ થતી નથી, કાશ્વ
કે ત્યાં આ દ્રવ્ય (ધર્માસ્તિકાય) નો અભાવ છે, લોકાકાશના અન્ત સુધી જ આ
દ્રવ્યનો સદ્ભાવ (અસ્તિત્વ) છે તેથી ત્યાં સુધી જ જીવાદિક દ્રવ્યોનું ગમન
થઈ શકે છે (અહમ્માત્યિકાए वि एवं चेव) અધર્માસ્તિકાય પણ જેવું જ છે,
દ્રવ્ય, કાલ, ક્ષેત્ર આદિની દૃષ્ટિએ ધર્માસ્તિકાયનું જેવું સ્વરૂપ બતાવ્યું છે, જેવું
જ સ્વરૂપ અધર્માસ્તિકાયનું પણ સમજવું દ્રવ્યની અપેક્ષાએ અધર્માસ્તિકાય એક
દ્રવ્ય છે, ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ તે લોકપ્રમાણ છે, કાળની અપેક્ષાએ ત્રણ કાળમાં તેનું
સદ્ભાવ (અસ્તિત્વ) હોય છે તે જ્ઞાતવત બને નિત્ય છે બાવની અપેક્ષાએ તે
વર્ગ, ગત, રસ અને સ્પર્શથી રહિત હોય છે

વતિ વિરુદ્ધયોર્દ્વયોઃ સર્વથા સાજાત્યસ્યાઽન્યત્રાઽદૃષ્ટત્વાત્ સર્વથા સાજાત્યે દ્વયોર્વિ-
રોધ એવ કઃ સ્યાદિત્યત આહ—‘ નવરં ગુણઓ ઠાણગુણે ’ ઇતિ “ નવરં ગુણઓ
ઠાણગુણે ” નવરં ગુણતઃ સ્થાનગુણઃ, અધર્માસ્તિકાયઃ સ્થિતિગુણઃ યથા ધર્માસ્તિ-
કાયો ગુણતઃ કાર્યતો ગત્યુપગ્રાહકસ્તથા અધર્માસ્તિકાયોઽપિ કાર્યતઃ સ્થિતો
પ્રયોજકઃ સ્થિતિપરિણતાનાં જીવપુદ્ગલાનાં સ્થિત્યુપદંભેતુઃ મત્સ્યાદિ જીવાનાં
શુષ્કસ્થલમિવ યદ્વા શ્રાન્તપથિકાનામ્ વૃક્ષાદિચ્છાએવ, અયમેવ ધર્માસ્તિકાયાઽધર્મા-
સ્તિકાયયોર્ભેદઃ યદેકઃ ગતૌ કારણમ્ પરશ્ચ સ્થિતૌ કારણમ્ । “ આગાસત્થિકાપ

શંકા—તો ફિર હસ કથન સે તો યહી બાત આઈ કિ યે
દોનો દ્રવ્ય આપસ મેં સર્વથા રૂપ સે હી સમાન હૈં પરંતુ યહ બાત
તો સંભવિત નહીં હોતી હૈ ક્યોં કિ ધર્મદ્રવ્ય સે અધર્મદ્રવ્ય વિરુદ્ધ
હૈં ઓર અધર્મદ્રવ્ય સે ધર્મદ્રવ્ય વિરુદ્ધ હૈં અતઃ જબ યે દોનોં દ્રવ્ય
આપસ મેં વિરુદ્ધ હૈં તથ હનમેં સર્વથા રૂપ સે સમાનતા કેસે
આસકતી હૈ ક્યોં કિ વિરુદ્ધ દો દ્રવ્યોં મેં સર્વથા સાજાત્ય અન્યત્ર
દેખને મેં નહીં આતા હૈ । યદી સર્વથા સાજાત્ય પરસ્પર વિરુદ્ધ દો દ્રવ્યોં
મેં હો તો ફિર ડનમેં વિરોધ હી ક્યોં માના જાવે ? તો એસી શંકા કો
દૂર કરતે હુએ સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ (નવરં ગુણઓ ઠાણગુણે) હન
દોનોં દ્રવ્યોં મેં સર્વથા સમાનતા નહીં હૈ ક્યોં કિ યહ અધર્માસ્તિકાય
સ્થાનગુણ વાલા હૈ જિસ પ્રકાર ધર્માસ્તિકાય ગતિપરિણત જીવોં ઓર
પુદ્ગલોં કો ગમન મેં સહાયક હોતા હૈં ડસી પ્રકાર યહ દ્રવ્ય બી સ્થિતિ
પરિણત જીવ ઓર પુદ્ગલોં કો ઠહરને મેં પથિકોં કી છાયા કી તરહ સ-
હાયક હોતા હૈં અતઃજિસ પ્રકાર ધર્મદ્રવ્ય કા કાર્ય ચલને મેં સહાયતા

શંકા—ઉપરના કથકથી તો એવું લાગે છે કે ધર્માસ્તિકાય અને અધર્મા-
સ્તિકાય એ બન્ને દ્રવ્યો તદન સમાન છે, પરંતુ એ વાત તો સંભવિત નથી,
કારણ કે ધર્મ દ્રવ્યથી અધર્મ દ્રવ્ય વિરુદ્ધ છે અને અધર્મ દ્રવ્યથી ધર્મદ્રવ્ય
વિરુદ્ધ છે, આ રીતે બન્ને વચ્ચે અસમાનતા રહેલી હોય તો તેમની વચ્ચે
બધી રીતે સમાનતા કેવી રીતે સંભવી શકે ? કારણ કે એ વિરુદ્ધ દ્રવ્યોમાં
સંપૂર્ણ સમાનતા અન્યત્ર જોવામાં આવતી નથી, જો પરસ્પર વિરુદ્ધ દ્રવ્યોમાં
સંપૂર્ણ સમાનતા હોય તો તેમનામાં વિરોધકેવી રીતે માની શકાય ? આ
શંકાનું નિવારણ કરવા માટે સૂત્રકાર કહે છે કે—

(નવર ગુણઓ ઠાણગુણે) ધર્માસ્તિકાય ગમન શુષુવાળું છે પણ અધ-
ર્માસ્તિકાય સ્થાન શુષુવાળું છે જેવી રીતે ધર્માસ્તિકાય ગમન કરતા જીવો અને
પુદ્ગલોને ગમન કરવામાં સહાયક બને છે, એજ પ્રમાણે અધર્માસ્તિકાય દ્રવ્ય
સ્થિતિપરિણત જીવો અને પુદ્ગલોને સ્થિતિની બાબતમાં (જોભવામાં) સહા-

વતિ વિરુદ્ધયોર્દ્વયોઃ સર્વથા સાજાત્યસ્યાઽન્યત્રાઽદ્વૃત્તવાત્ સર્વથા સાજાત્યે દ્વયોર્વિ-
રોધ એવ કઃ સ્યાદિત્યત આહ—‘ નવરં ગુણઓ ઠાણગુણે ’ ઇતિ “ નવરં ગુણઓ
ઠાણગુણે ” નવરં ગુણતઃ સ્થાનગુણઃ, અધર્માસ્તિકાયઃ સ્થિતિગુણઃ યથા ધર્માસ્તિ-
કાયો ગુણતઃ કાર્યતો ગત્યુપગ્રાહકસ્તથા અધર્માસ્તિકાયોઽપિ કાર્યતઃ સ્થિતો
પ્રયોજકઃ સ્થિતિપરિણતાનાં જીવપુદ્ગલાનાં સ્થિત્યુપપદંભેતુઃ મત્સ્યાદિ જીવાનાં
શુષ્કસ્થલમિવ યદ્વા શ્રાન્તપથિકાનામ્ વૃક્ષાદિચ્છાએવ, અયમેવ ધર્માસ્તિકાયાઽધર્મા-
સ્તિકાયયોર્ભેદઃ યદેકઃ ગતૌ કારણમ્ પરશ્ચસ્થિતૌ કારણમ્ । “ આગાસત્થિકાએ

શંકા—તો ફિર હિસ કથન સે તો ચહી ઘાત આઈ કિ યે
દોનોં દ્રવ્ય આપસ મેં સર્વથા રૂપ સે હી સમાન હૈં પરન્તુ યહ ઘાત
તો સંભવિત નહીં હોતી હૈ ક્યોં કિ ધર્મદ્રવ્ય સે અધર્મદ્રવ્ય વિરુદ્ધ
હૈં ઓર અધર્મદ્રવ્ય સે ધર્મદ્રવ્ય વિરુદ્ધ હૈં અતઃ જબ યે દોનોં દ્રવ્ય
આપસ મેં વિરુદ્ધ હૈં તથ હનમેં સર્વથા રૂપ સે સમાનતા કૈસે
આસકતી હૈ ક્યોં કિ વિરુદ્ધ દો દ્રવ્યોં મેં સર્વથા સાજાત્ય અન્યત્ર
દેખને મેં નહીં આતા હૈં । યદી સર્વથા સાજાત્ય પરસ્પર વિરુદ્ધ દો દ્રવ્યોં
મેં હો તો ફિર હનમેં વિરોધ હી ક્યોં માના જાવે ? તો એસી શંકા કો
દૂર કરતે હુએ સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ (નવરં ગુણઓ ઠાણગુણે) હન
દોનોં દ્રવ્યોં મેં સર્વથા સમાનતા નહીં હૈ ક્યોં કિ યહ અધર્માસ્તિકાય
સ્થાનગુણ ચાલા હૈં જિસ પ્રકાર ધર્માસ્તિકાય ગતિપરિણત જીવોં ઓર
પુદ્ગલોં કો ગમન મેં સહાયક હોતા હૈં ઉસી પ્રકાર યહ દ્રવ્ય ભી સ્થિતિ
પરિણત જીવ ઓર પુદ્ગલોં કો ઠહરને મેં પથિકોં કી છાયા કી તરહ સ-
હાયક હોતા હૈં અતઃજિસ પ્રકાર ધર્મદ્રવ્ય કા કાર્ય ચલને મેં સહાયતા

શંકા—ઉપરના કથકથી તો એવું લાગે છે કે ધર્માસ્તિકાય અને અધર્મા-
સ્તિકાય એ બન્ને દ્રવ્યો તદ્દન સમાન છે, પરન્તુ એ વાત તો સંભવિત નથી,
કારણ કે ધર્મ દ્રવ્યથી અધર્મ દ્રવ્ય વિરુદ્ધ છે અને અધર્મ દ્રવ્યથી ધર્મદ્રવ્ય
વિરુદ્ધ છે, આ રીતે બન્ને વચ્ચે અસમાનતા રહેલી હોય તો તેમની વચ્ચે
બધી રીતે સમાનતા કેવી રીતે સંભવી શકે ? કારણ કે એ વિરુદ્ધ દ્રવ્યોમાં
સંપૂર્ણ સમાનતા અન્યત્ર જોવામાં આવતી નથી, જો પરસ્પર વિરુદ્ધ દ્રવ્યોમાં
સંપૂર્ણ સમાનતા હોય તો તેમનામાં વિરોધકેવી રીતે માની શકાય ? આ
શંકાનું નિવારણ કરવા માટે સૂત્રકાર કહે છે કે—

(નવર ગુણઓ ઠાણગુણે) ધર્માસ્તિકાય ગમન ગુણવાળું છે. પણ અધ-
ર્માસ્તિકાય સ્થાન ગુણવાળું છે જેવી રીતે ધર્માસ્તિકાય ગમન કરતા હોવા અને
પુદ્ગલોને ગમન કરવામાં સહાયક બને છે, એજ પ્રમાણે અધર્માસ્તિકાય દ્રવ્ય
સ્થિતિપરિણત હોવા અને પુદ્ગલોને સ્થિતિપરિણતમાં (જોવામાં) સહા-

ગમનગુણો મરવતિ । ગતિ પરિણતાનાં જીવપુદ્ગલાનાં ગત્યુપદમકત્વાત્ । મત્સ્પાદિ
જલચરજીવાનાં જલમિથ યથા જલાદિ દ્રવ્ય મત્સ્પાદીનાં ગતૌ ઉપકારક પ્રયો-
જકત્વયા મરવતિ સદ્ગત્ ધર્માસ્તિકાયોઽપિ જીવપુદ્ગલાનાં ગતિપરિણતાનાં ગતૌ
ઉપદંટમકત્વયા સાદાય્ય સમ્પાદયન્ પ્રયોજકો મરવતીતિ અતएष-અલોકે ધર્મા
સ્તિકાયાભાવાત્ અલોકે જીવાદીનાં ગમન ન મરવતિ કિન્તુ લોકાકાશપર્યન્તમેવ
एतेષાં ગતિર્મરવતીતિ । " અહમત્પિકાए ધિ एવં એવ " અધર્માસ્તિકાયોઽપિ एવ
મેવ એન રૂપેણ ધર્માસ્તિકાયસ્ય દ્રવ્યક્ષેપ્રાદિમદન સ્વરૂપસ્ય કથન કૃતમ્ તેનૈવ
રૂપેણ અધર્માસ્તિકાયસ્યાઽપિ સર્વે જ્ઞાતવ્યમ્ તથાહિ દ્રવ્યત્વ ઇકદ્રવ્યમ્ ક્ષેપ્રતો
લોકપ્રમાણં કાલતલ્લિકાલવર્તી, શાશ્વતો નિત્યઃ ભાવસોઽવર્ણઃ અગ્ન્યઃ, અસ્તઃ,
અસ્પર્શઃ, તત્ કિમ્ ધર્માસ્તિકાયાઽધર્માસ્તિકાયૌ સર્વથા સમાનાં, તથુ ન સંમ-

જલચર જીવોં કો જલને મેં ઉડાસીન કારણ હોતા હૈ ઇસી પ્રકાર
ગતિપરિણત જીવપુદ્ગલોં કો જલને મેં યહ દ્રવ્ય સહાયક હોતા
હૈ । ઇસી કારણ અલોકાકાશ મેં જીવાદિકોં કી ગતિ નહીં હોતી હૈ ।
કયોં કિ યહાં પર ઇમ દ્રવ્ય કા અમોષ હૈ । લોકાકાશ કે અન્તતક હી
ઇસ દ્રવ્ય કા સજ્ઞાવ હૈ અતઃ ઘઠીં તક જીવાદિક દ્રવ્યોં કા ગમન હોતા
હૈ । (અહમ્માત્પિકાए ધિ एવં એવ) અધર્માસ્તિકાય મી એસા હી હૈ ।
દ્રવ્ય, ક્ષેપ્ર, કાલ આદિ કે મેદ દ્વારા ઝિસ તરહ સે ધર્માસ્તિકાય કા
સ્વરૂપ કથન કિયા ગયા હૈ ઇસી તરહ સે અધર્માસ્તિકાય કે વિષય મેં
મી સમસ્ત કથન જાનના ણાહિયે દ્રવ્ય કી અપેક્ષા અધર્માસ્તિકાય ઇક
દ્રવ્ય હૈ, ક્ષેપ્ર કી અપેક્ષા યહ લોક પ્રમાણ હૈ, કાલ કી અપેક્ષા યહ ત્રિ-
કાલવર્તી હૈ, શાશ્વત હૈ, નિત્ય હૈ, ભાવકી અપેક્ષા યહ ઘર્ગ, ગદ્ય, રસ,
સ્પર્શ ઇન ચાર ગુણોં સે રહિત હૈ ।

કહુ છે, જેવી રીતે મત્સ્પાદિક જલચર હોવાને શાશ્વતામાં જળ ઉડાસીનરૂપે
કારણરૂપ બને છે, એજ પ્રમાણે ગતિપરિણત હોવાદિગતી ગતિ થતી નથી, કારણ
કે ત્યાં આ દ્રવ્ય (ધર્માસ્તિકા) નો અભાવ છે, લોકાકાશના અન્ત ગુધી જ આ
દ્રવ્યનો સદ્ભાવ (અગ્નિત્વ) છે તેથી ત્યાં ગુધી જ હોવાદિક દ્રવ્યોનું ગમન
થઈ શકે છે (અહમ્માત્પિકાए ધિ एवં એવ) અધર્માસ્તિકાય પણ એવું જ છે
દ્રવ્ય, કાલ ક્ષેત્ર આદિની દૃષ્ટિએ ધર્માસ્તિકાવતુ જેવું સ્વરૂપ બતાવ્યું છે, એવું
જ સ્વરૂપ અધર્માસ્તિકાવતુ પણ સમજવું દ્રવ્યની અપેક્ષાએ અધર્માસ્તિકાય એ
દ્રવ્ય છે, ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ તે લોકપ્રમાણ છે, કાળની અપેક્ષાએ ત્રણ કાળમાં તેનો
સદ્ભાવ (અસ્તિત્વ) હોય છે તે શાશ્વત બને નિત્ય છે ભાવની અપેક્ષાએ તે
વર્ગ, ગદ્ય, રસ અને સ્પર્શથી રહિત હોય છે

વતિ વિરુદ્ધયોર્દ્વયોઃ સર્વથા સાજાત્યસ્યાઽન્યત્રાઽદૃષ્ટવાત્ સર્વથા સાજાત્યે દ્વયોર્વિ-
રોધ એવ કઃ સ્યાદિત્યત આહ—‘ નવરં ગુણઓ ઠાણગુણે ’ ઇતિ “ નવરં ગુણઓ
ઠાણગુણે ” નવરં ગુણતઃ સ્થાનગુણઃ, અધર્માસ્તિકાયઃ સ્થિતિગુણઃ યથા ધર્માસ્તિ-
કાયો ગુણતઃ કાર્યતો ગત્યુપગ્રાહકસ્તથા અધર્માસ્તિકાયોઽપિ કાર્યતઃ સ્થિતૌ
પ્રયોજકઃ સ્થિતિપરિણતાનાં જીવપુદ્ગલાનાં સ્થિત્યુપદ્ધંભેતુઃ મત્સ્યાદિ જીવાનાં
શુષ્કસ્થલમિવ યદ્વા શ્રાન્તપથિકાનામ્ વૃક્ષાદિચ્છાએવ, અયમેવ ધર્માસ્તિકાયાઽધર્મા-
સ્તિકાયયોર્ભેદઃ યદેકઃ ગતૌ કારણમ્ પરશ્ચ સ્થિતૌ કારણમ્ । “ આગાસત્થિકાણ

શંકા—તો ફિર હસ કથન સે તો યહી વાત આઈ કિ યે
દોનો દ્રવ્ય આપસ મેં સર્વથા રૂપ સે હી સમાન હૈં પરન્તુ યહ વાત
તો સંભવિત નહીં હોતી હૈ ક્યોં કિ ધર્મદ્રવ્ય સે અધર્મદ્રવ્ય વિરુદ્ધ
હૈં ઓર અધર્મદ્રવ્ય સે ધર્મદ્રવ્ય વિરુદ્ધ હૈં અતઃ જવ યે દોનો દ્રવ્ય
આપસ મેં વિરુદ્ધ હૈં તવ હનમેં સર્વથા રૂપ સે સમાનતા કૈસે
આસકતી હૈ ક્યોં કિ વિરુદ્ધ દો દ્રવ્યોં મેં સર્વથા સાજાત્ય અન્યત્ર
દેખને મેં નહીં આતા હૈ । યદી સર્વથા સાજાત્ય પરસ્પર વિરુદ્ધ દો દ્રવ્યોં
મેં હો તો ફિર હનમેં વિરોધ હી ક્યોં માના જાવે ? તો એસી શંકા કો
દૂર કરતે હુણ સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ (નવરં ગુણઓ ઠાણગુણે) હન
દોનો દ્રવ્યોં મેં સર્વથા સમાનતા નહીં હૈ ક્યોં કિ યહ અધર્માસ્તિકાય
સ્થાનગુણ વાલા હૈ જિસ પ્રકાર ધર્માસ્તિકાય ગતિપરિણત જીવોં ઓર
પુદ્ગલોં કો ગમન મેં સહાયક હોતા હૈં ઉસી પ્રકાર યહ દ્રવ્ય ભી સ્થિતિ
પરિણત જીવ ઓર પુદ્ગલોં કો ઠહરને મેં પથિકોં કી છાયા કી તરહ સ-
હાયક હોતા હૈં અતઃજિસ પ્રકાર ધર્મદ્રવ્ય કા કાર્ય ચલને મેં સહાયતા

શંકા—ઉપરના કથકથી તો એવું લાગે છે કે ધર્માસ્તિકાય અને અધર્મા-
સ્તિકાય એ બંને દ્રવ્યો તદ્દન સમાન છે, પરંતુ એ વાત તો સંભવિત નથી,
કારણ કે ધર્મ દ્રવ્યથી અધર્મ દ્રવ્ય વિરુદ્ધ છે અને અધર્મ દ્રવ્યથી ધર્મ દ્રવ્ય
વિરુદ્ધ છે, આ રીતે બંને વચ્ચે અસમાનતા રહેલી હોય તો તેમની વચ્ચે
બધી રીતે સમાનતા કેવી રીતે સંભવી શકે ? કારણ કે એ વિરુદ્ધ દ્રવ્યોમાં
સંપૂર્ણ સમાનતા અન્યત્ર જોવામાં આવતી નથી, જો પરસ્પર વિરુદ્ધ દ્રવ્યોમાં
સંપૂર્ણ સમાનતા હોય તો તેમનામાં વિરોધકેવી રીતે માની શકાય ? આ
શંકાનું નિવારણ કરવા માટે સૂત્રકાર કહે છે કે—

(નવર ગુણઓ ઠાણગુણે) ધર્માસ્તિકાય ગમન શુષ્ણવાણુ છે પણ અધ-
ર્માસ્તિકાય સ્થાન શુષ્ણવાણુ છે જેવી રીતે ધર્માસ્તિકાય ગમન કરતા જીવો અને
પુદ્ગલોને ગમન કરવામાં સહાયક બને છે, એજ પ્રમાણે અધર્માસ્તિકાય દ્રવ્ય
સ્થિતિપરિણત જીવો અને પુદ્ગલોને સ્થિતિની આબતમાં (થોભવામાં) સહા-

માયા અણાણુપુચ્છી પસા રોહા !” એવં ધનવાતમારમ્ય પર્યનપર્યન્તા એકરિન્નતિ
રાહાપકા સ્વપુદ્ધ્યા સયોજનીયા इति । અદ્વાવિષયે તુ અતીતાનાગતાદ્વાવિષયો
દ્વારાહાપકો વિશેયો । તથાહિ-“પુચ્છિ મંતે ! લોચતે પચ્છા અતીતાદ્વા, પુચ્છિ
અતીતાદ્વા પચ્છા લોચતે?, રોહા! લોચતે ય અતીતાદ્વા ય પુચ્છિપેતે પચ્છાપેતે-દોષિ
એ સાસયા માયા અણાણુપુચ્છી પસા રોહા ! । અયાનાગતાદ્વા વિષયે પ્રાહ-“પુચ્છિ
મંતે લોચતે પચ્છા અણાગયદ્વા, પુચ્છિ અણાગયદ્વા પચ્છા લોચતે? રોહા લોચતે ય

યે દોનો દ્વાશ્વત માય હૈ । હસ છિપ હે રોહ ! હન દોનો મેં પૂર્વપચ્ચાત્
માવરૂપક્રમ નહીં ધનતા હૈ । હસી પ્રકાર સે ધનવાત સે છેકર પર્યવ
પર્યન્ત ૨? આહાપક અપની બુદ્ધિ સે સંયોજિત કર લેના ચાહિયે ।
અદ્વાવિષય મેં અતીત અનાગત અદ્વા વિષયક દો આહાપક
જાનના ચાહિયે । યે હસ પ્રકાર સે હૈ-“પુચ્છિ મંતે ! લોચતે પચ્છા
અતીતાદ્વા, પુચ્છિ અતીતાદ્વા પચ્છા લોચતે ? રોહા ! લોચતે ય અતીતાદ્વા
ય પુચ્છિપેતે પચ્છાપેતે બુચે સાસયા માયા અણાણુપુચ્છી પસા રોહા !
હૈ મદન્ત ! પહિલે લોકાન્ત હૈ, ઓર યાદ મેં અતીતાદ્વા હૈ કિ પહિલે
અતીતાદ્વા હૈ ઓર યાદ મેં લોકાન્ત હૈ ? હૈ રોહ ! લોકાન્ત ઓર અતી
તાદ્વા યે દોનો હૈ ઓર યે દોનો પહિલે મી હૈ ઓર પચ્ચાત્ મી હૈ, ક્યોંકિ
યે દોનો દ્વાશ્વત માય હૈ । હનમેં પૂર્વ પચ્ચાત્ક્રમ નહીં હૈ । “પુચ્છિ મંતે !
લોચતે પચ્છા અણાગયદ્વા ? પુચ્છિ અણાગયદ્વા પચ્છા લોચતે ? રોહા !
લોચતે ય અણાગયદ્વા ય પુચ્છિપેતે પચ્છાપેતે બુચે સાસયા માયા,
અણાણુપુચ્છી પસા રોહા ।” હૈ મદન્ત ! પહિલે લોકાન્ત હૈ ઓર પીછે
અનાગતાદ્વા હૈ કિ પહિલે અનાગતાદ્વા હૈ ઓર પીછે લોકાન્ત હૈ ? હૈ રોહ !

બન્ને શાશ્વતભાવ છે તેથી કે રોહ ! તેમનામાં પૂર્વ અને પછીના ભાવરૂપ
આનુપૂર્વીના અભાવ છે એજ પ્રમાણે ધનવાતથી લઇને પર્વાય મુખીના ૨?
આહાપક બનાવી હેવા. અતીત, અનાગત અને અદ્વા વિષયક બે આહાપકો
આ પ્રમાણે બનશે. “પુચ્છિ મંતે ! લોચતે પચ્છા અતીતાદ્વા પુચ્છિ અતીતાદ્વા
પચ્છા લોચતે ? રોહા લોચતે ય અતીતાદ્વા ય પુચ્છિ પેતે પચ્છા પેતે બુચે સાસયા
માયા અણાણુપુચ્છી પસા રોહા !” કે અજવન ! પહેલા લોકાન્ત અને પછી અતી
તાદ્વા છે, કે પહેલા અતીતાદ્વા અને ત્યારબાદ લોકાન્ત છે ? કે રોહ ! લોકાન્ત અને
અતીતાદ્વા બન્ને પહેલાં પછી છે અને પછી પછી છે કારણ કે તે બન્ને શાશ્વતભાવ
છે તેથી તેમનામાં પૂર્વાપર ભાવ રૂપ (આનુપૂર્વી) કમ નથી. “પુચ્છિ મંતે ! લોચતે
પચ્છા અણાગમ્યદ્વા ? પુચ્છિ અણાગમ્યદ્વા પચ્છા લોચતે ?” ‘રોહા ! લોચતે
અણાગમ્યદ્વા ય પુચ્છિ પેતે પચ્છા પેતે બુચે સાસયા માયા, અણાણુપુચ્છી પસા રોહા !”
કે અજવન ! પહેલા લોકાન્ત અને પછી અનાગતાદ્વા છે, કે પહેલા અનાગતાદ્વા

વતિ વિરુદ્ધયોર્દ્વયોઃ સર્વથા સાજાત્યસ્યાઽન્યત્રાઽદ્વૈત્વાત્ સર્વથા સાજાત્યે દ્વયોર્વિ-
રોધ એવ કઃ સ્યાદિત્યત આહ—‘ નવરં ગુણઓ ઠાણગુણે ’ ઇતિ “ નવરં ગુણઓ
ઠાણગુણે ” નવરં ગુણતઃ સ્થાનગુણઃ, અધર્માસ્તિકાયઃ સ્થિતિગુણઃ યથા ધર્માસ્તિ-
કાયો ગુણતઃ કાર્યતો ગત્યુપગ્રાહકસ્તથા અધર્માસ્તિકાયોઽપિ કાર્યતઃ સ્થિતૌ
પ્રયોજકઃ સ્થિતિપરિણતાનાં જીવપુદ્ગલાનાં સ્થિત્યુપદંભેતુઃ મત્સ્યાદિ જીવાનાં
શુષ્કસ્થલમિવ યદ્વા શ્રાન્તપથિકાનામ્ વૃક્ષાદિચ્છાયેવ, અયમેવ ધર્માસ્તિકાયાઽધર્મા-
સ્તિકાયયોર્ભેદઃ યદેકઃ ગતૌ કારણમ્ પરશ્ચ સ્થિતૌ કારણમ્ । “ આગાસત્થિકા

શંકા—તો ફિર હસ કથન સે તો યહી બાત આઈ કિ યે
દોનોં દ્રવ્ય આપસ મેં સર્વથા રૂપ સે હી સમાન હૈં પરન્તુ યહ બાત
તો સંભવિત નહીં હોતી હૈ ક્યોં કિ ધર્મદ્રવ્ય સે અધર્મદ્રવ્ય વિરુદ્ધ
હૈં ઓર અધર્મદ્રવ્ય સે ધર્મદ્રવ્ય વિરુદ્ધ હૈં અતઃ જવ યે દોનોં દ્રવ્ય
આપસ મેં વિરુદ્ધ હૈં તવ હનમેં સર્વથા રૂપ સે સમાનતા કૈસે
આસકતી હૈ ક્યોં કિ વિરુદ્ધ દો દ્રવ્યોં મેં સર્વથા સાજાત્ય અન્યત્ર
દેખને મેં નહીં આતા હૈ । યદી સર્વથા સાજાત્ય પરસ્પર વિરુદ્ધ દો દ્રવ્યોં
મેં હો તો ફિર હનમેં વિરોધ હી ક્યોં માના જાવે ? તો એસી શંકા કો
દૂર કરતે હુણ સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ (નવરં ગુણઓ ઠાણગુણે) હન
દોનોં દ્રવ્યોં મેં સર્વથા સમાનતા નહીં હૈ ક્યોં કિ યહ અધર્માસ્તિકાય
સ્થાનગુણ વાલા હૈ જિસ પ્રકાર ધર્માસ્તિકાય ગતિપરિણત જીવોં ઓર
પુદ્ગલોં કો ગમન મેં સહાયક હોતા હૈં ડસી પ્રકાર યહ દ્રવ્ય ભી સ્થિતિ
પરિણત જીવ ઓર પુદ્ગલોં કો ઠહરને મેં પથિકોં કી છાયા કી તરહ સ-
હાયક હોતા હૈં અતઃ જિસ પ્રકાર ધર્મદ્રવ્ય કા કાર્ય ચલને મેં સહાયતા

શંકા—ઉપરના કથકથી તો એવું લાગે છે કે ધર્માસ્તિકાય અને અધર્મા-
સ્તિકાય એ બન્ને દ્રવ્યો તદ્દન સમાન છે, પરંતુ એ વાત તો સંભવિત નથી,
કારણ કે ધર્મ દ્રવ્યથી અધર્મ દ્રવ્ય વિરુદ્ધ છે અને અધર્મ દ્રવ્યથી ધર્મદ્રવ્ય
વિરુદ્ધ છે, આ રીતે બન્ને વચ્ચે અસમાનતા રહેલી હોય તો તેમની વચ્ચે
બધી રીતે સમાનતા કેવી રીતે સંભવી શકે ? કારણ કે બે વિરુદ્ધ દ્રવ્યોમાં
સંપૂર્ણ સમાનતા અન્યત્ર જોવામાં આવતી નથી, જો પરસ્પર વિરુદ્ધ દ્રવ્યોમાં
સંપૂર્ણ સમાનતા હોય તો તેમનામાં વિરોધકેવી રીતે માની શકાય ? આ
શંકાનું નિવારણ કરવા માટે સૂત્રકાર કહે છે કે—

(નવર ગુણઓ ઠાણગુણે) ધર્માસ્તિકાય ગમન શુણવાળું છે. પણ અધ-
ર્માસ્તિકાય સ્થાન શુણવાળું છે જેવી રીતે ધર્માસ્તિકાય ગમન કરતાં જોવા અને
પુદ્ગલોને ગમન કરવામાં સહાયક બને છે, એજ પ્રમાણે અધર્માસ્તિકાય દ્રવ્ય
સ્થિતિપરિણત જોવા અને પુદ્ગલોને સ્થિતિ બાળતમાં (જોવામાં) સહા-

‘‘વિર્ણ ચેવ’’ આકાશસ્તિકાયોઽપિ એવમેવ । યથેવ ધર્માસ્તિકાયાઽ-ધર્મા
સ્તિકાયયોઃ સ્વરૂપ તથા આકાશસ્તિકાયોઽપિ જ્ઞાતવ્યઃ પૂર્વાપેક્ષયાઽઽકાશસ્તિ
કાયસ્ય વૈનત્તવ્યં ઘોતયિતુમાદ-‘નર સેવત્રોળ ’ ઇત્યાદિ ‘‘નર સેવત્રોળ ય
આગાસત્વિકાણ લોચાલોચપ્પમાગમેતે’’ નર સેવત્ર સ્વલ્પ આકાશસ્તિકાય
લોકાલોકપ્રમાણમાત્ર, પૂર્વાપેક્ષયા આકાશસ્તિકાયસ્વાડ્યં મેદઃ યત્ ધર્મા
સ્તિકાયઽધર્માસ્તિકાયો લોકપ્રમાણી એવ મરત સેવત્ર, આકાશસ્તિકાયસ્ય
સેવત્રો લોકાલોકપ્રમાણઃ લોકમલોકમુમયમપિ વ્યાપ્નોતિ આકાશસ્તિકાય
ઈતિ । ‘અણતે ચેવ જાવ’ અનન્તમેવ યાવત્ । અથ યાવત્પદેન જ્ઞાતવ્યોઽસ્થિત

પરંતુના હૈ ઇતી પ્રકાર હસ્કા ખી કાર્ય ઠહરને મેં સહાયતા પ્રદાન કર
ના હૈ । યહી ધર્માસ્તિકાય ઔર અધર્માસ્તિકાયમેં મેદ હૈ । એક ગતિમેં કારણ
હોતા હૈ ઔર દસરા સ્થિતિમેં કારણ હોતા હૈ । (આગાસત્વિકાણ વિર્ણ ચેવ)
આકાશસ્તિકાય ખી એસા હી હૈ-અર્થાત્ ધર્માસ્તિકાય ઔર અધર્મા
સ્તિકાયકા જેસાં સ્વરૂપ હૈ, ઇતી પ્રકારસે આકાશસ્તિકાયકા ખી જાનનાં
ચાહિયે । પરંતુ હસ્મેં જો વિશેષતા હૈ-ચહ હસ્ પ્રકારસે હૈ-(નર સેવત્રોળ ય
આગાસત્વિકાણ લોચાલોચપ્પમાગમેતે) ક્ષેત્રકી અપેક્ષા આકાશસ્તિકાય
લોક ઔર અલોકપ્રમાગ હૈ । ધર્માસ્તિકાય ઔર અધર્માસ્તિકાય યે દોનોં
દ્રવ્ય ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા લોકપ્રમાણ હી કહે ગયે હૈ તથા કિ આકાશસ્તિ
કાય ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા લોકાલોકપ્રમાણ હોતા હૈ એમા કહા ગયા હૈ ।
યહ આકાશસ્તિકાય લોક ઔર અલોક દોનોં મેં વ્યાપ્ત હૈ । ધર્માસ્તિ-

ચક બને છે પથિકોને જેમ છામટા ચોલવામા સહાયન થાય છે તેમ આ દ્રવ્ય
પણુ છવા બને પુદ્ગલોને ચોલવામા સહાયરૂપ થાય છે જેવી રીતે ધર્મદ્રવ્ય
આલવામાં સહાયક બને છે જ્યેષ્ઠ ગીતે અધર્મ દ્રવ્ય ચોલવામા સહાયક બને છે
જ્યેષ્ઠ ગતિમા સહાયક બને છે નીચુ સ્થિતિમાં સહાયક બને છે ધર્માસ્તિકાય
બને અધર્માસ્તિકાય વચ્ચે કપરેલા લોક હોય છે

(આગાસત્વિકાણ વિર્ણ ચેવ) આકાશસ્તિકાયનુ સ્વરૂપ પણ ધર્માસ્તિ
કાય અને અધર્માસ્તિકાય જેવુ જ છે (નર સેવત્રોળ ય આગાસત્વિકાણ
લોચાલોચપ્પમાગમેતે) ધર્માસ્તિકાય અને અધર્માસ્તિકાય કશ્તાં આકાશસ્તિકાયમાં
થી વિશેષતા છે તે આ સૂત્રમાં સૂત્રકારે પ્રગટ કરી છે

ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ આકાશસ્તિકાય લોક અને અલોક પ્રમાણુ છે પરંતુ ધર્મા
સ્તિકાય અને અધર્માસ્તિકાય ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ લોક પ્રમાણુ છે એટલે કે

ત્રિકાલવર્તી નિત્ય ઇત્યાદીનાં ગ્રહણં ભવતીતિ । ‘ગુણો અવગાહનગુણે’ ગુણ-
તોઽવગાહનગુણ આકાશાસ્તિકાયઃ જીવપુદ્ગલાદીનામવકાશદાને કારણમ્ । આકા-
શાસ્તિકાયઃ વદરાદીનાં વંશપાત્રવત્ યથા-ધર્માસ્તિકાયસ્ય કાર્યં ગતિઃ અધર્મા-
સ્તિકાયસ્ય કાર્યં સ્થિતિસ્તથા આકાશાસ્તિકાયસ્ય કાર્યમ્ અવકાશદાયકત્વમેવેતિ
ભાવઃ । “જીવત્થિકાણં ભંતે” જીવાસ્તિકાયઃ સ્વલુ ભદન્ત ! “કતિ વ્ણો
કતિ ગંધે કતિ રસે કતિ ફાસે” કતિવર્ણઃ કતિગન્ધઃ કતિરસઃ કતિસ્પર્શઃ હે
ભગવન્ ! જીવાસ્તિકાયે કતિ વર્ણગન્ધરસસ્પર્શાઃ સન્તીતિ ગૌતમસ્ય પ્રશ્નઃ

કાય ઔર અધર્માસ્તિકાય ऐसे नहीं हैं । वे तो सिर्फ लोक को ही व्याप्त
किये हुए हैं । (अणंते चेव जाव) यह आकाशास्तिकाय यावत् अनन्त
है यहां यावत् शब्द से (शाश्वत, अवस्थित, त्रिकालवर्ती नित्य) इत्यादि
पदों को ग्रहण किया गया है । (गुणो अवगाहणागुणे) गुण की अपेक्षा
आकाशास्तिकाय अवगाहणागुणवाला है जैसे टोकरी बदर आदि फलों
को अपने में स्थान देती है उसी प्रकार से आकाश, जीव और पुद्गल
आदि द्रव्यों को अपने में ठहरने में मदद होता है । जिस प्रकार धर्मा-
स्तिकाय का कार्य गति में मदद करना है और अधर्मास्तिकाय का कार्य
स्थिति में मदद करना है उसी प्रकार से आकाशास्तिकाय का कार्य
अवकाशदान देना है । अथ जीव का स्वरूप कहते हैं—(जीवत्थिकाए णं
भंते ! कइवण्णे, कइगंधे, कइरसे, कइफासे) गौतम प्रभु से पूछ रहे हैं
कि हे भदन्त ! जीवास्तिकाय में कितने वर्ण हैं, कितने गंध हैं, कितने

આકાશાસ્તિકાય લોક અને અલોક બન્નેમા વ્યાપેલુ છે, પણ ધર્માસ્તિકાય અને
અધર્માસ્તિકાય તો ફક્ત લોકોમા જ વ્યાપેલુ છે (અણંતે ચેવ જાવ) આકાશા-
સ્તિકાય શાશ્વત, અવસ્થિત, ત્રિકાલવર્તી, નિત્ય અને અનંત છે,

(ગુણો અવગાહના ગુણે) ગુણની અપેક્ષાએ આકાશાસ્તિકાય અવગાહના
ગુણ વાળું છે. જેવી રીતે ટોપડી બેર આદિ ફળોને પોતાની અંદર રહેવાને
માટે આધાર આપે છે, એજ પ્રમાણે આકાશ જીવ, પુદ્ગલ આદિ દ્રવ્યોને
પોતાની અંદર રહેવાને સ્થાન આપવામા મદદ રૂપ થાય છે જેવી રીતે ધર્મા-
સ્તિકાય ગતિમા મદદ કરે છે અને અધર્માસ્તિકાય સ્થિતિમા મદદ કરે છે.
જેવી રીતે આકાશાસ્તિકાયનું કાર્ય અવકાશદાન દેવાનું છે,

હવે સૂત્રકાર જીવસ્તિકાયનું સ્વરૂપ બતાવે છે—

પ્રશ્ન—(જીવત્થિકાણં ભંતે ! કહિ વણે, કહિ ગંધે કહિ રસે, કહિ ફાસે !)
ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને પૂછે છે— ભદન્ત ! જીવાસ્તિકાયમા કેટલા વર્ણ,
કેટલા ગંધ, કેટલા રસ અને કેટલા સ્પર્શ હોય છે !

વિ एवं चेव " આકાશાસ્તિકાયોऽपि एवमेव । यद्यैव धर्मास्तिकायाऽ-धर्मा
 स्तिकाययोः स्वरूपं तथा आकाशास्तिकायोऽपि द्वातन्त्र्यः पूर्वापेक्षयाऽऽकाशास्ति
 कायस्य वैलक्षण्यं द्योतयितुमाह—'नवर क्षेत्रयोष' इत्यादि "नवरं क्षेत्रयोष
 आगासस्तिकाए लोयालोयप्पमाणमेसे " नवर क्षेत्रतઃ સ્વલ્લ આકાશાસ્તિકાઃ
 સોકાલોકપ્રમાણમાદઃ, પૂર્વાપેક્ષયા આકાશાસ્તિકાયસ્યાઽયં મેદઃ યત્ ધર્મા
 સ્તિકાયઽધર્માસ્તિકાયો લોકપ્રમાણી એવ મયતઃ ક્ષેત્રતઃ, આકાશાસ્તિકાયસ્ય
 ક્ષેત્રતો સોકાલોકપ્રમાણકઃ લોકમલોકમુમયમપિ વ્યાપ્નોતિ આકાશાસ્તિકાય
 ઇતિ । 'અર્થતે ચેવ જાવ' અનન્તરેવ યાવત્ । અથ યાવત્પદેન દ્વામતોઽવસ્થિત-

પદ્ધતિના હૈ ઇસી પ્રકાર ઇસ્કા મી કાર્ય ઠહરને મેં સહાયતા પ્રદાન કર
 ના હૈ । યહી ધર્માસ્તિકાય ઔર અધર્માસ્તિકાયમેં મેદ્ હૈ । એક ગતિમેં કારણ
 હોતા હૈ ઔર ઇસરા સ્થિતિમેં કારણ હોતા હૈ । (આગાસસ્તિકાઽવિ એવ
 ચેવ) આકાશાસ્તિકાય મી પેસા હી હૈ—અર્થાત્ ધર્માસ્તિકાય ઔર અધર્મા
 સ્તિકાયકા જેસાં સ્વરૂપ હૈ, ડસી પ્રકારસે આકાશાસ્તિકાયકા મી જાનનાં
 વાહિયે । પરંતુ ઇમમેં જો બિશેષતા હૈ—યહ ઇસ પ્રકારસે હૈ—(નવર ક્ષેત્રમોષ
 આગાસસ્તિકાઽવિ લોયાલોયપ્પમાણમેસે) ક્ષેત્રકી અપેક્ષા આકાશાસ્તિકાય
 લોક ઔર અલોકપ્રમાણ હૈ । ધર્માસ્તિકાય ઔર અધર્માસ્તિકાય યે દોનોં
 દ્રવ્ય ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા લોકપ્રમાણ હી કહે ગયે હૈ તથા કિ આકાશાસ્તિ
 કાય ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા લોકાલોકપ્રમાણ હોતા હૈ એસા કહા ગયા હૈ ।
 યહ આકાશાસ્તિકાય લોક ઔર અલોક દોનોં મેં વ્યાપ્ત હૈ । ધર્માસ્તિ

યક અને છે પધિકેને જેમ જાયડાં યોજવામાં સહાયન થાય છે તેમ જા દ્રવ્ય
 પદ્ધતિ અને પુદ્ગલોને યોજવામાં સહાયરૂપ થાય છે જેવી રીતે ધર્માસ્તિકા
 વ્યાજવામાં સહાયક અને છે જોઈ રીતે અધર્મ દ્રવ્ય યોજવામાં સહાયક અને છે
 જોઈ અતિમાં સહાયક અને છે બીજી સ્થિતિમાં સહાયક અને છે ધર્માસ્તિકા
 અને અધર્માસ્તિકા વચ્ચે કોપરોક્ત લેહ લેવા છે

(આગાસસ્તિકાઽવિ એવ ચેવ) આકાશાસ્તિકાયનું સ્વરૂપ પણ ધર્માસ્તિ-
 કાય અને અધર્માસ્તિકાય જેવું જ છે (નવર ક્ષેત્રમોષ આગાસસ્તિકાઽવિ
 લોયાલોયપ્પમાણમેસે) ધર્માસ્તિકાય અને અધર્માસ્તિકાય કર્તા આકાશાસ્તિકાવમાં
 થી વિશેષતા છે તે જા સૂત્રમાં સૂત્રકારે પ્રગટ કરી છે

ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ આકાશાસ્તિકાય લોક અને અલોક પ્રમાણ છે પરંતુ ધર્મા-
 સ્તિકાય અને અધર્માસ્તિકાય ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ લોક પ્રમાણ છે જોઈ છે

ત્રિકાલવર્તી નિત્ય ઇત્યાદીનાં ગ્રહણં મયતીતિ । ‘ ગુણઓ અવગાહનગુણે ’ ગુણ-
તોજ્વગાહનગુણ આકાશાસ્તિકાયઃ જીવપુદ્ગલાદીનામવકાશદાને કારણમ્ । આકા-
શાસ્તિકાયઃ વદરાદીનાં વંશપાત્રવત્ યથા-ધર્માસ્તિકાયસ્ય કાર્યં ગતિઃ અધર્મા-
સ્તિકાયસ્ય કાર્યં સ્થિતિસ્તથા આકાશાસ્તિકાયસ્ય કાર્યમ્ અવકાશદાયકત્વમેવેતિ
ભાવઃ । “ જીવત્થિકાણં મંતે ” જીવાસ્તિકાયઃ સ્વલુ મદન્ત ! “ કતિ વળ્ણે
કતિ ગંધે કતિ રસે કતિ ફાસે ” કતિવર્ણઃ કતિગન્ધઃ કતિરસઃ કતિસ્પર્શઃ હે
મગવન્ ! જીવાસ્તિકાયે કતિ વર્ણગન્ધરસસ્પર્શાઃ સન્તીતિ ગૌતમસ્ય પ્રશ્નઃ

કાય ઔર અધર્માસ્તિકાય ऐसे नहीं हैं । वे तो सिर्फ लोक को ही व्याप्त
किये हुए हैं । (अणंते चेव जाव) यह आकाशास्तिकाय यावत् अनन्त
है यहां यावत् शब्द से (शाश्वत, अवस्थित, त्रिकालवर्ती नित्य) इत्यादि
पदों को ग्रहण किया गया है । (गुणओ अवगाहणागुणे) गुण की अपेक्षा
आकाशास्तिकाय अवगाहणागुणवाला है जैसे टोकरी बदर आदि फलों
को अपने में स्थान देती है उसी प्रकार से आकाश, जीव और पुद्गल
आदि द्रव्यों को अपने में ठहरने में मदद होता है । जिस प्रकार धर्मा-
स्तिकाय का कार्य गति में मदद करना है और अधर्मास्तिकाय का कार्य
स्थिति में मदद करना है उसी प्रकार से आकाशास्तिकाय का कार्य
अवकाशदान देना है । अब जीव का स्वरूप कहते हैं—(जीवत्थिकाए णं
मंते । कहवण्णे, कहगंधे, कहरसे, कहफासे) गौतम प्रभु से पूछ रहे हैं
कि हे भदन्त ! जीवास्तिकाय में कितने वर्ण हैं, कितने गंध हैं, कितने

આકાશાસ્તિકાય લોક અને અલોક બન્નેમા વ્યાપેલું છે, પણ ધર્માસ્તિકાય અને
અધર્માસ્તિકાય તો ફક્ત લોકોમા જ વ્યાપેલું છે (અણતે ચેવ જાવ) આકાશા-
સ્તિકાય શાશ્વત, અવસ્થિત, ત્રિકાલવર્તી, નિત્ય અને અનંત છે,

(ગુણઓ અવગાહના ગુણે) ગુણની અપેક્ષાએ આકાશાસ્તિકાય અવગાહના
ગુણ વાળું છે. જેવી રીતે ટોપડી બોર આદિ ફળોને પોતાની અંદર રહેવાને
માટે આધાર આપે છે, એજ પ્રમાણે આકાશ જીવ, પુદ્ગલ આદિ દ્રવ્યોને
પોતાની અંદર રહેવાને સ્થાન આપવામાં મદદ રૂપ થાય છે જેવી રીતે ધર્મા-
સ્તિકાય ગતિમાં મદદ કરે છે અને અધર્માસ્તિકાય સ્થિતિમાં મદદ કરે છે.
એવી રીતે આકાશાસ્તિકાયનું કાર્ય અવકાશદાન દેવાનું છે,

હવે સૂત્રકાર જીવસ્તિકાયનું સ્વરૂપ બતાવે છે—

પ્રશ્ન—(જીવત્થિકાણં મંતે ! કહ વળ્ણે, કહ ગંધે કહ રસે, કહ ફાસે !)
ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને પૂછે છે— ભદન્ત ! જીવાસ્તિકાયમા કેટલા વર્ણ,
કેટલા ગંધ, કેટલા રસ અને કેટલા સ્પર્શ હોય છે !

મગધનાદ—‘ગોપમા’ इत्यादिना “गोयमा” हे गौतम । “अवण्णे—आव
अरुवी जीवे सासए अवट्टिए लोमदब्बे” अवणो यावत् अरुपी जीवः शाश्वतोऽ
अस्थितो लोकाद्रप्यम् । इह यावत्पदेन भगवोऽस्सोऽरूपं इत्येषां ग्रहणम् “जीवे
सासए” द्रव्यतो जीव—चेतनावान्—आश्वत “अवट्टिए” अवस्थितः पर्यायतः
लोकास्य पञ्चास्तिकायात्मकस्यांशभूत द्रव्यमिति लोकाद्रप्यम् । “से समासो
पंचविहे पण्णसे” स समासतः संक्षेपेण स इति जीवास्तिकायः पञ्चविधः पञ्च
प्रकारक ग्रहणः कथितो जीव इति, पञ्चविधत्वमेव दर्शयति ‘तं महा’ इत्यादि
“तं महा” तद् यथा “दम्बओ जाव गुणओ” द्रव्यतो यावत् गुणतः अथ
यावत्पदेन क्षेत्रकालमायानां ग्रहणं भवति, तत्र स्वच्छ “दम्बओ णं जीवस्तिकाय
अणताइं जीवदम्बाइं” द्रव्यतः स्वच्छ जीवास्तिकायोऽनन्तानि जीवदम्बावि द्रव्या-
इह हैं और कितने स्थान हैं ? तत्र भगवान् गौतम से कहते हैं कि हे
गौतम ! (अवण्णे जाव अरुवी जीवे सासए, लोमदब्बे) जीवास्तिकाय
इह रूप रस आदि पौद्गलिक गुणों से सर्वथा रहित है । वह अरुपी है,
शाश्वत है, अवस्थित है, लोकाद्रप्यरूप है । यहाँ यावत् पद से (अगध,
अरस और अस्पय) इनका ग्रहण किया गया है । द्रव्य की अपेक्षा
जीव चेतनावाला है, शाश्वत है और अवस्थित है । पर्याय की अपेक्षा
पञ्चास्तिकायरूप लोक का अशून्य द्रव्य है । (से समासओ पंचविहे
पण्णसे) यह जीवास्तिकाय संक्षेप से पांच प्रकार का कहा गया है—(द
दम्बओ) द्रव्य की अपेक्षा जीवास्तिकाय यावत् गुण की अपेक्षा जीवा-
स्तिकाय यहाँ यावत् पदसे (क्षेत्र, काल और भाव) इन तीन का ग्रहण
किया गया है । (तत्थ दम्बओण जीवस्तिकाय अणताइं जीवदम्बाइं)

મહાવીર પ્રભુ જનાણ આપે છે—(ગોપમા । અવણ્ણે જાવ અરુવી જીવે
સાસપ અવટ્ટિય લોમદબ્બે) જીવાસ્તિકાય રૂપ, રસ, સ્પર્શ વગેરે પૌદ્ગલિક
શુદ્ધેશી નિઃશકલ રહિત હોય છે તે અરૂપી છે શાશ્વત છે અવસ્થિત છે
અને લોકાદ્રવ્ય રૂપ છે અર્હા (જાવ) (પર્યાય) અગધ, અરસ અને અસ્પય
એ નિરેખણે સેવામાં આવ્યા છે દ્રવ્યની અપેક્ષાએ જીવ ચેતનાવાળો, શાશ્વત
અને અવસ્થિત છે પર્યાયની અપેક્ષાએ પચાસ્તિકાયરૂપ લોકના અશૂન્ય
દ્રવ્ય છે (સે સમાસો પંચવિહે પણ્ણસે) તે જીવાસ્તિકાયના સંક્ષિપ્તમાં નીચે
પ્રમાણે પાંચ લોક છે—(દમ્બજા જાવ ગુણજો) (૧) દ્રવ્યની અપેક્ષાએ જીવા-
સ્તિકાય, (૨) ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ જીવાસ્તિકાય, (૩) કાળની અપેક્ષાએ જીવા-
સ્તિકાય, (૪) ભાવની અપેક્ષાએ જીવાસ્તિકાય અને (૫) ગુણની અપેક્ષાએ
જીવાસ્તિકાય (તથા દમ્બજો ય જીવસ્તિકાય અણતાઈ જીવદમ્બજા)

પેક્ષયા જીવા અનન્તાઃ સન્તીત્યર્થઃ “ચેત્તઓ લોગપ્પમાણમેત્તે” ક્ષેત્રતો લોકપ્રમાણ માત્રઃ યાવદેવ લોકસ્ય પ્રમાણં તાવદેવ જીવાસ્તિકાયસ્યાપીત્યર્થઃ । “ કાલઓ ન કયાઈ નાસી જાવ નિચ્ચે ” કાલતો ન કદાચિત્-નાસીત્ યાવત્ નિત્યઃ અંત્ર યાવત્પદેન ન કદાચિત્ નાસ્તિ ન કદાચિત્ ન ભવિષ્યતિ અપિ તુ આસીત્ અસ્તિ ભવિષ્યતિ ધ્રુવઃ નિયતઃ, શાશ્વતોઽક્ષયોઽવ્યયોઽવસ્થિતઃ ઇત્યેતેપાં ગ્રહણં ભવતિ, કાલીપેક્ષયા નિત્યઃ સ્વલુ જીવઃ ત્રિકાલે વિદ્યમાનત્વાત્ પર્યાયતોઽનિત્યત્વેઽપિ દ્રવ્યતઃ સદૈવાવસ્થાનાત્ । “ ભાવઓ પુણ અવણે અગંધે અરસે અફાસે ” ભાવતઃ

દ્રવ્ય કી અપેક્ષા જીવાસ્તિકાય અનન્ત હૈં । (ચેત્તઓ લોગપ્પમાણમેત્તે) ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા જીવાસ્તિકાય લોકપ્રમાણમાત્ર હૈં—અર્થાત્ જિતના લોક કા પ્રમાણ હૈ—ઉતના હી પ્રમાણ જીવસ્તિકાય કા હૈ । “ કાલઓ ન કયાવિ નાસી જાવ નિચ્ચે ” કાલકી અપેક્ષા યહ જીવાસ્તિકાય કિસી સમય નહીં થા એસા નહીં હૈ યાવત્ યહ નિત્ય હૈ યહાં યાવત્ પદ ‘ ન કદાપિ નાસ્તિ, ન કદાપિ ન ભવિષ્યતિ, અપિ તુ અસીત્ અસ્તિ, ભવિષ્યતિ, ધ્રુવઃ, નિયતઃ, શાશ્વતોઽક્ષયોઽવ્યયોઽવસ્થિતઃ, ઇન પદોં કા સંગ્રાહક હૈ । અર્થાત્—પહિલે કમી જીવ નહીં થા યે વાત નહીં અપિતુ થા હી, વર્તમાન મેં નહીં હૈ યે વાત નહીં અપિ તુ હૈ, ભવિષ્યત્કાલ મેં જીવ નહીં હોગા યે વાત નહીં કિન્તુ હોગાહી । ત્રિકાલ મેં જીવ કી સત્તા રહતી હૈ અતઃ વહ કાલ કી અપેક્ષા નિત્ય હૈ । યદ્યપિ પર્યાયદૃષ્ટિ સે જીવ કો અનિત્ય મી માના ગયા હૈ—ફિર મી દ્રવ્ય કી અપેક્ષા સે ઉસ કા અવ-

અપેક્ષાએ અનંત છે. (ચેત્તઓ લોગપ્પમાણમેત્તે) ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ જીવાસ્તિકાય લોકપરિમિત છે એટલે કે જેટલું લોકનું પ્રમાણ છે એટલું જ પ્રમાણ જીવાસ્તિકાયનું છે (કાલઓ ન કયાઈ નાસી જાવ નિચ્ચે) કાળની અપેક્ષાએ જીવાસ્તિકાય કોઈ પણ સમયે ન હોતું એવું નથી, તે તો નિત્ય છે. અહીં (જાવ) (પર્યાય) પદથી નીચેનો સૂત્રપાઠ ગ્રહણ કરાયો છે—(ન કદાપિ નાસ્તિ, ન કદાપિ ન ભવિષ્યતિ, અપિતુ આસીત્, અસ્તિ, ભવિષ્યતિ, ધ્રુવ નિયત શાશ્વતોઽક્ષયોઽવ્યયોઽવસ્થિતિઃ) પહેલાં જીવાસ્તિકાયનું અસ્તિત્વ ન હોય એવું બન્યું નથી—એટલે કે ભૂતકાળમાં તે હોતું વર્તમાનમાં તેનું અસ્તિત્વ ન હોય એવું પણ બનતું નથી, એટલે કે વર્તમાનકાળમાં પણ તેનું અસ્તિત્વ છે જ ભવિષ્યમાં તેનું અસ્તિત્વ ન હોય એવું પણ બનવાનું નથી—ભવિષ્યમાં પણ તે હશે જ ત્રણે કાળમાં જીવાસ્તિકાયનું અસ્તિત્વ રહે છે, માટે જ કાળની અપેક્ષાએ તે નિત્ય છે. જો કે પર્યાયની અપેક્ષાએ જીવને અનિત્ય માનવામાં આવેલ છે, પણ દ્રવ્યની અપેક્ષાએ તેનો સદૈવાવ શાશ્વત રહેતો હોવાથી તેને નિત્ય માન-

બીજોઽર્ષઃ શુક્તનીલાદિ ઘણરહિતઃ અગ્નિ-મુરમિદુરમિગન્ધરહિતઃ અરસો મધુરાદિરસવર્જિતઃ અસ્પર્શઃ કર્કશાઘાદિષિષસ્પર્શરહિતઃકેવિતિ । " ગુણો ઉચ્છોગગુણે " ગુણતઃ-ઉપયોગગુણઃ ઉપયોગઞ્ચૈતન્યમ્ સત્ સાધારણાકારમેદેન દ્વિવિધમ્ સદેવ ચૈતન્ય ગુણ કાર્યમ્ यस્ય સ ઉપયોગગુણઃ જીવઃ યથા ધર્માસ્તિ કાયાદીનાં ગત્યાદિકં કાર્યમ્ તથા જીવસ્પાઽપિ ચૈતન્ય વાર્ય જીવસ્ય ચૈતન્યમ્ તિ કારણત્વમ્ મશ્તીતિ માત્ર । પચાસ્તિકાયાન્તર્ગતજીવાસ્તિકાયાન્ત ચિત્તિસ્ય

સ્થાન શાશ્વત રહને કે કારણ થઈ નિસ્ય મી માના ગયા છે । " માત્રમો પુન અવળે, અગળે, અરસે, અજાસે " માત્રની અપેક્ષા જીવાસ્તિકાયા મેં કોઈ મી ઘળ નહીં છે, કિસી મી પ્રકાર કા ગળ નહીં છે, પાંચ પ્રકાર કે રસોં સે થઈ સર્વથા રહિત છે । ઝાઝ પ્રકાર કે સ્પર્શ મેં સે કોઈ મી સ્પર્શ થઈ પાયા નહીં જાતા છે । " ગુણો ઉચ્છોગગુણે " ગુણની અપેક્ષા થઈ ઉપયોગ ગુણવાળા છે । ઉપયોગ નામ ચૈતન્ય કા છે । શાસ્ત્રોં મેં એસા હી કહા છે—(આત્મચૈતન્યાનુવિધાયીપરિણામ ઉપયોગ) આત્મા કા ચૈતન્યાનુવિધાયી જો પરિણામ છે થઈ ઉપયોગ છે । થઈ ઉપયોગ સાકાર ઝાઝ અનાકાર કે મેદ સે ઘો પ્રકાર કા હોતા છે । થઈ ચૈતન્યરૂપ ઉપયોગ જિસકા ગુણ-કાર્ય છે થઈ ઉપયોગ ગુણ છે । થઈ ઉપયોગ ગુણ જીવ કા છે । જિમ પ્રકાર સે ધર્માસ્તિકાયાદિ કોં કે કાર્ય ગત્યાદિક હૈં ઁસી પ્રકાર સે જીવ કા કાર્ય ચૈતન્ય છે । કવોં કિ જીવ મેં હી ચૈતન્યકે પ્રતિ કારણતા છે । હસ પ્રકાર સે પંચાસ્તિકાયા કે અન્તર્ગત જીવાસ્તિકાયાન્ત તક ધિવેચન કરકે અપ સૂત્રકાર પુરુષાસ્તિકાયા

વામાં આવે છે (માત્રમો પુન અવળે, અગળે, અરસે, અજાસે) જાતની અપેક્ષાએ જીવાસ્તિકાયામાં કોઈ વસ્તુ નથી, જે પ્રકારની અંધમાંની કોઈ અંધ નથી, પાંચ પ્રકારના રસમાંના કોઈ રસ નથી અને આઠ પ્રકારના સ્પર્શમાંથી કોઈ ધ્વજ સ્પર્શ નથી તે વસ્તુ, અંધ, રસ અને સ્પર્શથી તબીબ રહિત છે (ગુણો ઉચ્છોગગુણે) ગુણની અપેક્ષાએ જીવાસ્તિકાયા ઉપયોગ ગુણવાળું છે. ઉપયોગ કોટલે ચૈતન્ય. શાસ્ત્રોમાં એવું કહ્યું છે કે (આત્મચૈતન્યાનુવિધાયી પરિણામ ઉપયોગ) આત્માનુ ચૈતન્યાનુવિધાયી જે પરિણામ કોષ છે તેનું નામ જ ઉપયોગ છે તે ઉપયોગના સાકાર અને અનાકારએવા જે પ્રકાર પડે છે તે ચૈતન્ય રૂપ ઉપયોગ એનો શુદ્ધ (કાર્ય) છે, તે ઉપયોગશુદ્ધ કહેવાય છે જ્યાંમાં આ ઉપયોગશુદ્ધ કોષ છે એમ ધર્માસ્તિકાયાનુ કાયાનુ કાર્ય (શુદ્ધ) અતિ છે, તેમ જ્યાંના શુદ્ધ-જનનું કાર્ય-ચૈતન્ય છે કારણ કે જ્યાંમાં જ ચૈતન્યનો શુદ્ધ કોષ છે

પુદ્ગલાસ્તિકાયં નિરૂપયિતુમાહ—‘ પોગ્ગલત્થિ ’ ઇત્યાદિ, ‘ પોગ્ગલત્થિકાણં મંતે ’ પુદ્ગલાસ્તિકાયઃ સ્વલુ ભદન્ત ! “ કઙ્ગણે, કઙ્ગંધે, કઙ્ગરસે, કઙ્ગાસે ” કતિવર્ણઃ કતિગન્ધઃ કતિરસઃ કતિસ્પર્શઃ અત્ર વર્ણાદિપદં વર્ણાશ્રયપરકં તેન પુદ્ગલાસ્તિકાયઃ કતિવર્ણવાન્ કતિગન્ધરસસ્પર્શવાંશ્વેત્યર્થઃ ભગવાનાહ—‘ ગોયમા ’ ઇત્યાદિ, “ ગોયમા ” હે ગૌતમ ! “ પંચ વર્ણે ” પંચવર્ણઃ પંચવર્ણવાન્ ‘દુગંધે’ દ્વિગન્ધઃ દ્વિગન્ધવાન્ “ પંચરસે ” પંચરસઃ પંચપ્રકારકરસવાન્ “ અટ્ઠાસે ” અષ્ટસ્પર્શવાન્ “ રૂવી ” રૂપી રૂપવાન્ “ અજીવે ” અજીવઃ ચેતનાદિ ગુણરહિતઃ

કા નિરૂપણ કરને કે લિયે (પોગ્ગલત્થિકાણં મંતે ! કઙ્ગ વર્ણે, કઙ્ગ ગંધે, કઙ્ગ રસે, કઙ્ગાસે) હસ પાઠ સે કથનપ્રારંભ કરતે હૈં-હે ભદન્ત ! પુદ્ગલાસ્તિકાયા મેં કિતને વર્ણ, કિતને ગંધ, કિતને રસ, ઓર કિતને સ્પર્શ પાચે જાતે હૈં ? યહાં પર વર્ણાદિપદવર્ણાશ્રયપરક હૈં-હસસે પુદ્ગલ કિતને વર્ણવાલા હૈ કિતને ગંધ, રસ ઓર સ્પર્શવાલા હૈં એસા હસ પાઠ કા અર્થ કરના ચાહિયે । ઉત્તર દેતે હુઅ ભગવાન્ ગૌતમ સે કહતે હૈં કિ-હે ગૌતમ ! (પંચવર્ણે, દુગંધે, પંચરસે, અટ્ઠાસે) પુદ્ગલાસ્તિકાયા-પાંચ-વર્ણવાલા, દોગંધવાલા, પાંચ રસ વાલા ઓર આઠ સ્પર્શવાલા હૈં । ‘ રૂવી ’ હસી કારણ વહ રૂપી કહા ગયા હૈં । (અજીવે) જિસમેં રૂપ રસાદિક ગુણ પાચે જાતે હૈં વહ અજીવ ચેતના રહિત હોતા હૈં-હસલિયે યહ અજીવ હૈં । હસકા તાત્પર્ય યહ નહીં હૈં કિ જો અજીવ હોગા વહ નિયમતઃ રૂપ રસાદિ વાલા હોગા ક્યોં કિ હસ પ્રકાર કી માન્યતા સે ધર્માસ્તિકાયાદિકોં મેં રૂપ રસાદિ-

આ રીતે પંચાસ્તિકાયોમાના જીવાસ્તિકાય સુધીના ચાર અસ્તિકાયોનું નિરૂપણ કરીને હવે સૂત્રકાર પુદ્ગલાસ્તિકાયનું નિરૂપણ કરે છે

પ્રશ્ન—(પોગ્ગલત્થિકાણ મંતે ! કઙ્ગ વર્ણે, કઙ્ગ ગંધે, કઙ્ગ રસે, કઙ્ગાસે ?) હે ભદન્ત ! પુદ્ગલાસ્તિકાયમા કેટલા વર્ણુ, કેટલા પ્રકારના ગંધ કેટલા રસ, અને કેટલા પ્રકારના સ્પર્શ હોય છે ?

ગૌતમ સ્વામીના આ પ્રશ્નનો મહાવીર પ્રભુ આ પ્રમાણે જવાબ આપે છે—(ગોયમા) હે ગૌતમ ! (પંચ વર્ણે, દુગંધે, પંચ રસે, અટ્ઠાસે) પુદ્ગલાસ્તિકાયા પાચ વર્ણુવાળુ, બે ગંધવાળુ, પાચ રસવાળુ અને આઠ સ્પર્શવાળુ હોય છે. (રૂવી) તે કારણે તેને “ રૂપી ” કહેલુ છે. “ અજીવે ” જેમાં રૂપ, રસ આદિ ગુણ રહેલા હોય છે તે અજીવચેતના રહિત હોય છે. આનું તાત્પર્ય એવું નથી કે જે અજીવ હશે તેનું રૂપ, રસાદિથી યુક્ત હશે કરેણુ

બીષોડર્બઃ શુલ્કનીલાદિ ચર્બરહિતઃ અગન્ધઃ—સુરમિદુરમિગન્ધરહિતઃ કતો મધુરાદિરસવર્નિતઃ અસ્પર્શઃ કર્કશાયદ્રવિષસ્પર્શરહિતસ્વેતિ । “ ગુણો ઉપ-
બોગગુણે ” ગુણતા—ઉપયોગગુણઃ ઉપયોગસ્વૈતન્યમ્ તત્ સાકારાનાકારમેવેન
દ્વિવિધમ્ તદેવ ચૈતન્ય ગુણઃ કાર્યમ્ यस્ય સ્ત ઉપયોગગુણઃ જીવઃ યથા ધર્માસ્તિ
કાયાદીનાં ગત્યાદિકં કાર્યમ્ તથા જીવસ્યાપિ ચૈતન્ય કાર્યં જીવસ્ય ચૈતન્યમ્
તિ કારણત્વમ્ ભવતીતિ ભાવ । પંચાસ્તિકાયાન્તર્ગતજીવાસ્તિકાયાન્તં રિચિષ્વ

સ્થાન શાશ્વત રહને કે કારણ બહ નિસ્વ મી માના ગયા છે । “ માથમો
પુણ અવળ્લો, અગંધે, અરસે, અફાસે ” માથની અપેક્ષા જીવાસ્તિકાયા
મેં કોઈ મી વર્ણ નહીં છે, કિસી મી પ્રકાર કા ગંધ નહીં છે, પાંચ પ્રકાર
કે રસોં સે વહ સર્વથા રહિત છે । ઝાંઠ પ્રકાર કે સ્પર્શ મેં સે કોઈ મી
સ્પર્શ વહાં પાયા મહીં જાતા છે । “ ગુણો ઉપબોગગુણે ” ગુણની
અપેક્ષા વહ ઉપયોગ ગુણધાલા છે । ઉપયોગ નામ ચૈતન્ય કા છે । શાસ્ત્રોં
મેં એસા હી કહા છે—(આત્મચૈતન્યાનુવિધાયીપરિણામ ઉપયોગ)
આત્મા કા ચૈતન્યાનુવિધાયી જો પરિણામ છે વહ ઉપયોગ છે । વહ ઉપ-
યોગ સાકાર ઓર અનાકાર કે મેદ સે દો પ્રકાર કા હોતા છે । વહ
ચૈતન્યરૂપ ઉપયોગ જિસકા ગુણ—કાર્ય છે વહ ઉપયોગ ગુણ છે । વહ
ઉપયોગ ગુણ જીવ કા છે । જિસ પ્રકાર સે ધર્માસ્તિકાયાદિ કોં કે કાર્ય
ગત્યાદિક હૈં વસી પ્રકાર સે જીવ કા કાર્ય ચૈતન્ય છે । ધર્મોં કિ જીવ
મેં હી ચૈતન્યકે પ્રતિ કારણતા છે । હસ પ્રકાર સે પંચાસ્તિકાયા કે અન્ત
ર્ગત જીવાસ્તિકાયાન્ત તક વિવેચન કરકે અપ મૂલ્યકાર પુત્રતાસ્તિકાયા

વામાં આવે છે (માથમો પુણ અવળ્લો અગંધે, અરસે, અફાસે) શાસ્ત્રની અપેક્ષાએ
જીવાસ્તિકાયામાં કોઈ વસ્તુ નથી, બે પ્રકારની ગંધમાંની કોઈ ગંધ નથી, પાંચ
પ્રકારના રસમાંના કોઈ રસ નથી અને આઠ પ્રકારના સ્પર્શમાંથી કોઈ સ્પર્શ
સ્પર્શ નથી તે વસ્તુ અથ, રસ અને સ્પર્શથી તદ્દન રહિત છે (ગુણો ઉપ-
બોગગુણે) ગુણની અપેક્ષાએ જીવાસ્તિકાયા ઉપયોગ ગુણવાળું છે. ઉપયોગ
એટલે ચૈતન્ય. શાસ્ત્રોમાં એવું કહ્યું છે કે (આત્મચૈતન્યાનુવિધાયી પરિણામ
ઉપયોગ) આત્માનુ ચૈતન્યાનુવિધાયી જે પરિણામ દેખ છે તેનું નામ જ ઉપ-
યોગ છે તે ઉપયોગના સાકાર અને અનાકાર એવા બે પ્રકાર પડે છે તે ચૈતન્ય-
રૂપ ઉપયોગ જેનો શુદ્ધ (કાય) છે, તે ઉપયોગશુદ્ધ કહેવાય છે જ્યાંમાં આ ઉપ-
યોગશુદ્ધ દેખ છે તેમ ધર્માસ્તિકાયાનું કાર્યનું કાર્ય (શુદ્ધ) ગતિ છે, તેમ જ્યાં
શુદ્ધ-અવનુ કાર્ય-ચૈતન્ય છે કારણ કે જ્યાંમાં જ ચૈતન્યનો શુદ્ધ દેખ છે

અણાગયદ્વા ય પુર્વિવપેતે પચ્છાપેતે-દોવિ એ સાસયા ભાવા અણાણુપુર્વી એસા રોહા! સર્વાદ્વાલાપકં તુ સૂત્રકાર એવાહ-‘પુર્વિવ મંતે’ ઇત્યાદિ। ‘પુર્વિવ મંતે લોચંતે પચ્છા સવ્વદ્વા’ ઇતિ પદેન સર્વોઽપિ સૂત્રાલાપકઃ સંગ્રાહસ્તથાદિ-“ પુર્વિવ મંતે લોચંતે પચ્છા સવ્વદ્વા, પુર્વિવ સવ્વદ્વા પચ્છા લોચંતે ? રોહા ! લોચંતે ય સવ્વદ્વા ય પુર્વિવપેતે પચ્છાપેતે દોવિ એ સાસયા ભાવા અણાણુપુર્વી એસા રોહા ” ઇતિ। અથાલોકવિષયે પ્રાહ-‘જહા લોચંતેણં’ ઇત્યાદિ। ‘જહા લોચંતેણં સંજોહયા સવ્વે-ઠાણા એતે અલોચંતેણવિ સંજોએચ્ચવા સવ્વે ” યથા લોકાન્તેન સંયોજિતાનિ સર્વાણિ સ્થાનાનિ એતાનિ એવમલોકાન્તેનાપિ યોજયિતવ્યાનિ સર્વાણિ, યેન પ્રકા-

લોકાન્ત ઓર અનાગતાદ્વા યે દોનોં હેં ઓર યે દોનોં પહિલે ભી હેં ઓર પશ્ચાત્ ભી હેં, ક્યોંકિ યે શાશ્વત ભાવ હેં હસલિયે હનમેં પૂર્વ પશ્ચાત્ ભાવ નહીં હે । સર્વાદ્વાલાપક તો સૂત્રકારને સ્વયં હી (પુર્વિવ મંતે ! લોચંતે પચ્છા સવ્વદ્વા) હસ સૂત્ર દ્વારા કહ દિયા હે । હસી તરહ સે ઓર ભી સમસ્ત સૂત્રાલાપક સંયોજિત કર લેના ચાહિયે । જૈસે-હે ભદન્ત ! પહિલે લોકાન્ત હે ઓર વાદ મેં સર્વાદ્વા હે કિ પહલે સર્વાદ્વા હે ઓર વાદ મેં લોકાન્ત હે ? હે રોહ ! લોકાન્ત ઓર સર્વાદ્વા યે દોનોં પહિલે ભી હેં ઓર વાદ મેં ભી હેં । હનમેં પૂર્વાપર ક્રમ નહીં હે । ક્યોંકિ યે દોનોં શાશ્વત ભાવ હે । (જહા લોચંતેણં સંજોહયા સવ્વે ઠાણા એતે અલોચંતેણવિ સંજોએચ્ચવા સવ્વે) જિસ તરહ લોકાન્ત કે સાથ હન સમસ્ત સ્થાનોં કો સંયોજિત કિયા ગયા હે હસી તરહ સે હન સમસ્ત સ્થાનોં કો અલોકાન્ત કે સાથ ભી સંયોજિત કર લેના ચાહિયે ।

તાત્પર્ય કહને કા યહ હે કિ જિસ પ્રકાર સે લોકાન્ત કે સાથ એક એક સ્થાનકો જોડકર સૂત્રાલાપક કિયા હે હસી તરહ સે અલોકાન્ત કે

અને પછી લોકાન્ત છે ? હે રોહ ! લોકાન્ત અને અનાગતાદ્વા બંને છે. અને તે બંને પહેલા પણુ છે અને પછી પણુ છે કારણુ કે તે બંને શાશ્વતભાવ છે. તે કારણુ તેમાં પૂર્વાપર ભાવ (આનુપૂર્વી) નથી સર્વાદ્વા આલાપક તો સૂત્રકારે પોતે જ સૂત્ર દ્વારા કહ્યો છે-(પુર્વિવમંતે ! લોચંતે પચ્છા સવ્વદ્વા) હે પૂન્ય ! પહેલાં લોકાન્ત છે અને ત્યારબાદ સર્વાદ્વા છે, કે પહેલા સર્વાદ્વા અને ત્યાર પછી લોકાન્ત છે ? હે રોહ ! લોકાન્ત અને સર્વાદ્વા, એ બંને પહેલા પણુ છે અને પછી પણુ છે. તે બંને શાશ્વત ભાવ હોવાથી તેમનામાં પૂર્વાપર ક્રમ નથી.

(જહા લોચંતેણ સંજોહયા સવ્વે ઠાણા એતે અલોચંતેણ વિ સંજોએચ્ચવા સવ્વે) જેવી રીતે લોકાન્તની સાથે ઉપર મુજબના તમામ સ્થાનોનું સંયોજન કરવામાં આવ્યું છે. એવી જ રીતે અલોકાન્તની સાથે પણુ તે બધા સ્થાનોનું સંયોજન

“સાસર” શાશ્વતઃ કાલત્રયવર્તી, “અઘટ્ટિય” અવસ્થિતો દ્રવ્યતઃ ‘લોગદ્વયે’
 લોકદ્વયસ્, ‘સે સમાસમો પચવિદે પચ્ચસે” સ પુરુલાસ્તિકાયઃ સમાસત સન્ને
 પતઃ પચ્ચવિષ મયપ્તઃ “ત જહા” તદ્ યથા” વૃથ્વમો સ્વેષ્તમો કાલમો માષમો
 ગુણમો” દ્રવ્યત સેષ્વતઃ કાલમો માષમો ગુણતઃ દ્રવ્યસેષ્વતકાલમાષપ્તૈ પચ
 વિષઃ પુરુલાસ્તિકાયો મયસીત્યર્થઃ ‘દૃષ્વમો ણ પોગલત્થિકાપ અર્પેતાહ દેન્ના’

કોં કે હોને કા. પ્રસંગ ધાસ હોગા, અંતઃ યહી માનનોં વાહિયે કિં રૂપ
 રસાદિવાલા પદાર્થ નિયમત અજીવ હોતોં હૈ, પરં જો અજીવ હોગોં બૈ
 હન ઘોલા હો મી ઓર ન મી હો. હસ તરહ વહાં રૂપી ઓર અજીવત્વ
 કી વિપમ વ્યાસિ હી યનતી હૈ સમવ્યાસિ નહીં. યહ પુરુલાસ્તિકાય મી
 અન્ય અસ્તિકાયોં કી તરહ (સાસર) શાશ્વત હૈ કાલત્રયવર્તી હૈ.
 (અઘટ્ટિય) અવસ્થિત હૈ. (લોકદ્વયે) લોકદ્વયરૂપ હૈ. પુરુલાસ્તિ-
 કાય મેં જો નિલપના ઇવં અવસ્થિતપના કહા ગયા હૈ વહ દ્રવ્ય કી અ-
 પેક્ષા હી કહાં ગયા હૈ એમા જાનના વાહિયે. (સે સમાસમો પચવિદે
 પચ્ચસે) યહ પુરુલાસ્તિકાય સંક્ષેપ સે પાંચ પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ
 (તંજહા) વે હસકે પાંચ પ્રકાર વે હૈં (વૃથ્વમો સ્વેષ્તમો કાલમો મા-
 ષમો ગુણમો) દ્રવ્ય કી અપેક્ષા સે પુરુલાસ્તિકાય, ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા સે
 પુરુલાસ્તિકાય, કાલ કી અપેક્ષા સે પુરુલાસ્તિકાય, માષ કી અપેક્ષા સે
 પુરુલાસ્તિકાય ઓર ગુણ કી અપેક્ષા સે પુરુલાસ્તિકાય (વૃથ્વમો ણ

કે જે પ્રકારની માન્યતાથી તે અસ્તિકાય અર્થમાં પણ રૂપ, રસાદિક દેવાનું
 માનવું પડે. તે આ કથનનું તાત્પર્ય નીચે પ્રમાણે સમજવું રૂપ, રસાદિવાળા
 પ્રકારથી નિયમથી જ જલદી દેવા છે પણ ને જલદી દેવા તે રૂપ, રસાદિકી
 યુક્ત દેવા પણ ખરું જાને રૂપ, રસાદિકી શક્તિ પણ દેવા આ રીતે અહીં
 રૂપી અને જલદીત્વની વિવેક વ્યાસિજ સહવે છે-સમવ્યાસિ સહતી નથી.

તે પુરુલાસ્તિકાય પણ અન્ય અસ્તિકાયોના જેવું જ (સાસર) શાશ્વત
 છે-ત્રણે કાળમાં તેનું અસ્તિત્વ દેવા છે, (અઘટ્ટિય) તે અવસ્થિત છે અને
 (લોકદ્વયે) લોકદ્વય રૂપ છે પુરુલાસ્તિકાયમાં ને નિત્યતા અને અવસ્થિત
 પદ્ધતિ છે તે દ્રવ્યની અપેક્ષાએ જ કહેવામાં આવ્યું છે તેમ સમજવું

(સે સમાસમો પચવિદે પચ્ચસે) તે પુરુલાસ્તિકાયના સંક્ષિપ્તમાં પચ
 પ્રકાર પડે છે (તંજહા) તે પાંચ પ્રકાર આ પ્રમાણે છે (વૃથ્વમો સ્વેષ્તમો
 કાલમો માષમો ગુણમો) (૧) દ્રવ્યની અપેક્ષાએ પુરુલાસ્તિકાય (૨) ક્ષેત્રની
 અપેક્ષાએ પુરુલાસ્તિકાય, (૩) કાળની અપેક્ષાએ પુરુલાસ્તિકાય, (૪) માષની
 અપેક્ષાએ પુરુલાસ્તિકાય અને (૫) ગુણની અપેક્ષાએ પુરુલાસ્તિકાય.

પુદ્ગલાસ્તિકાયં નિરૂપયિતુમાદ—‘ પોગ્ગલત્થિ ’ ઇત્યાદિ, ‘ પોગ્ગલત્થિકાણં મંતે ’ પુદ્ગલાસ્તિકાયઃ સ્વલુ ભદન્ત ! “ કઙ્કવળ્ણે, કઙ્કગંધે, કઙ્કરસે, કઙ્કફાસે ” કતિવર્ણઃ કતિગન્ધઃ કતિરસઃ કતિસ્પર્શઃ અત્ર વર્ણાદિપદં વર્ણાશ્રયપરકં તેન પુદ્ગલાસ્તિકાયઃ કતિવર્ણવાન્ કતિગન્ધરસસ્પર્શવાંઙ્ચેત્યર્થઃ ભગવાનાદ—‘ ગોયમા ’ ઇત્યાદિ, “ ગોયમા ” હે ગૌતમ ! “ પંચ વળ્ણે ” પચ્ચવર્ણઃ પચ્ચવર્ણવાન્ ‘દુગંધે’ દિગન્ધઃ દિગન્ધવાન્ “ પંચરસે ” પચ્ચરસઃ પચ્ચપ્રકારકરસવાન્ “ અઢ્ઢફાસે ” અષ્ટસ્પર્શવાન્ “ રૂવી ” રૂપી રૂપવાન્ “ અજીવે ” અજીવઃ ચેતનાદિ ગુણરહિતઃ

કા નિરૂપણ કરને કે લિયે (પોગ્ગલત્થિકાણં મંતે ! કઙ્ક વળ્ણે, કઙ્ક ગંધે, કઙ્ક રસે, કઙ્ક ફાસે) હસ પાઠ સે કથનપ્રારંભ કરતે હૈં—હે ભદન્ત ! પુદ્ગલાસ્તિકાય મેં કિતને વર્ણ, કિતને ગંધ, કિતને રસ, ઓર કિતને સ્પર્શ પાયે જાતે હૈં ? યહાં પર વર્ણાદિપદવર્ણાશ્રયપરક હૈં—હસસે પુદ્ગલ કિતને વર્ણવાલા હૈ કિતને ગંધ, રસ ઓર સ્પર્શવાલા હૈ એસા હસ પાઠ કા અર્થ કરના ચાહિયે । ઉત્તર દેતે હુપ્ ભગવાન્ ગૌતમ સે કહતે હૈં કિ—હે ગૌતમ ! (પંચવળ્ણે, દુગંધે, પંચરસે, અઢ્ઢફાસે) પુદ્ગલાસ્તિકાય—પાંચ—વર્ણવાલા, દોગંધવાલા, પાંચ રસ વાલા ઓર આઠ સ્પર્શવાલા હૈ । ‘ રૂવી ’ હસી કારણ વહ રૂપી કહા ગયા હૈ । (અજીવે) જિસમેં રૂપ રસાદિક ગુણ પાયે જાતે હૈં વહ અજીવ ચેતના રહિત હોતા હૈ—હસલિયે યહ અજીવ હૈ । હસકા તાત્પર્ય યહ નહીં હૈ કિ જો અજીવ હોગા વહ નિયમતઃ રૂપ રસાદિ વાલા હોગા ક્યોં કિ હસ પ્રકાર કી માન્યતા સે ધર્માસ્તિકોયાદિકોં મેં રૂપ રસાદિ—

આ રીતે પંચાસ્તિકાયોમાના છવાસ્તિકાય સુધીના ચાર અસ્તિકાયોનું નિરૂપણ કરીને હવે સૂત્રકાર પુદ્ગલાસ્તિકાયનું નિરૂપણ કરે છે

પ્રશ્ન—(પોગ્ગલત્થિકાણ મંતે ! કઙ્ક વળ્ણે, કઙ્ક ગંધે, કઙ્ક રસે, કઙ્ક ફાસે ?) હે ભદન્ત ! પુદ્ગલાસ્તિકાયમા કેટલા વર્ણુ, કેટલા પ્રકારના ગંધ કેટલા રસ, અને કેટલા પ્રકારના સ્પર્શ હોય છે ?

ગૌતમ સ્વામીના આ પ્રશ્નનો મહાવીર પ્રભુ આ પ્રમાણે જવાબ આપે છે—(ગોયમા) હે ગૌતમ ! (પંચ વળ્ણે, દુગંધે, પંચ રસે, અઢ્ઢફાસે) પુદ્ગલાસ્તિકાય પાંચ વર્ણુવાળું, બે ગંધવાળું, પાંચ રસવાળું અને આઠ સ્પર્શવાળું હોય છે. (રૂવી) તે કારણે તેને ‘ રૂપી ’ કહેલું છે “ અજીવે ” જેમા રૂપ, રસ આદિ ગુણ રહેલા હોય છે તે અજીવચેતના રહિત હોય છે. આનું તાત્પર્ય એવું નથી કે જે અજીવ હોય તે નિયમથી જ રૂપ, રસાદિથી યુક્ત હોયે કરેલું

“ સાસપ ” શાશ્વતઃ કાલત્રયવર્તી, “ અવદિપ ” અવસ્થિતો દ્રવ્યતઃ ‘ સોતદમ્બે ’
 સોતદ્રવ્યમ્, ‘ સે સમાસમો પંચવિદે પન્નતે ” સ પુદ્ગલાસ્તિકાયાઃ સમાસતઃ સંતે
 પતઃ પન્નવિધઃ મદ્યપ્તઃ “ સ જહા ” તદ્ યથા ” દ્વચ્ચમો સ્વેચ્ચમો કાલમો માત્રમો
 ગુણમો ” દ્રવ્યત સેષતઃ કાલતો માત્રતો ગુણતઃ દ્રવ્યસેષકાલમાત્રગુણે પન્ન
 વિધઃ પુદ્ગલાસ્તિકાયો મયતોત્યર્થઃ ‘ દમ્બમો ણ પોગ્ગલત્થિકાપ્ અમેઠા દમ્બત’

કોં કે હોને કા પ્રસંગ પ્રાપ્ત હોગા, અતઃ યદી માનનાં યાદિયે કિં રૂપ
 રસાદિવાલા પદાર્થ નિયમત અજીવ હોતા હૈ, પર જો અજીવ હોગાં વૈ
 હન થાલા હો મી ઓર ન મી હો । હસ તરહ ધર્મા રૂપી ઓર અજીવત્વ
 કોં વિષમ વ્યાપ્તિ હી થનતી હૈ સમવ્યાપ્તિ નહીં । યદ્ પુદ્ગલાસ્તિકાપ મી
 અંય અસ્તિકાયોં કી તરહ (સાસપ) શાશ્વત હૈ કાલત્રયવર્તી હૈ ।
 (અવદિપ) અવસ્થિત હૈ । (લોકદમ્બે) લોકદ્રવ્યરૂપ હૈ । પુદ્ગલાસ્તિ-
 કાય મેં જો નિત્યપના ઈવં અવસ્થિતપના કહા ગયા હૈ વદ્ દ્રવ્ય કી અ-
 પેક્ષા હી કહા ગયા હૈ એસા જાનના યાદિયે । (સે સમાસમો પંચવિદે
 પંણતે) યદ્ પુદ્ગલાસ્તિકાપ સંક્ષેપ સે પાંચ પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ
 (તજહા) વે ડસકે પાંચ પ્રકાર યે હૈ (દ્વચ્ચમો સ્વેચ્ચમો કાલમો મા-
 ત્રમો ગુણમો) દ્રવ્ય કી અપેક્ષા સે પુદ્ગલાસ્તિકાપ, સ્વેચ્ચ કી અપેક્ષા સે
 પુદ્ગલાસ્તિકાપ, કાલ કી અપેક્ષા સે પુદ્ગલાસ્તિકાપ, માત્ર કી અપેક્ષા સે
 પુદ્ગલાસ્તિકાપ ઓર ગુણ કી અપેક્ષા સે પુદ્ગલાસ્તિકાપ (દ્વચ્ચમો ણ

કે એ પ્રકારની માન્યતાથી તે પદ્માસ્તિકાપ આદિમાં પણ રૂપ, રસાદિક દેવાનું
 માનવું પડે. તે આ કથનનું વાત્પર્થ નીચે પ્રમાણે સમજવું રૂપ, રસાદિવાલા
 પ્રકારે નિયમથી જ અલગ દેવ છે પણ ને અલગ દેવ તે રૂપ, રસાદિકી
 શુદ્ધ દેવ પણ બનુ અને રૂપ, રસાદિકી રહિત પણ દેવ. આ રીતે અહીં
 રૂપી અને અલગત્વની વિષમ વ્યાપ્તિ સહાય છે-સમવ્યાપ્તિ સંભતી નથી.

તે પુદ્ગલાસ્તિકાપ પણ અન્ય અસ્તિકાયોના જેવું જ (સાસપ) શાશ્વત
 છે-ત્રણે કાળમાં તેનું અસ્તિત્વ દેવ છે, (અવદિપ) તે અવસ્થિત છે અને
 (લોકદમ્બે) લોકદ્રવ્ય રૂપ છે પુદ્ગલાસ્તિકાપમાં ને નિત્યતા અને અવસ્થિત
 પણ કહું છું તે દ્રવ્યની અપેક્ષાએ જ કહેવામાં આવ્યું છે તેમ સમજવું

(સે સમાસમો પંચવિદે પંણતે) તે પુદ્ગલાસ્તિકાપના સંક્ષિપ્તમાં પાંચ
 પ્રકાર પડે છે (તજહા) તે પાંચ પ્રકારે આ પ્રમાણે છે- (દ્વચ્ચમો સ્વેચ્ચમો,
 કાલમો માત્રમો ગુણમો) (૧) દ્રવ્યની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાપ (૨) સ્વેચ્ચની
 અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાપ, (૩) કાળની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાપ, (૪) માત્રની
 અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાપ અને (૫) ગુણની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાપ.

દ્રવ્યતઃ સ્વલુ પુદ્ગલાસ્તિકાયોઽનન્તાનિ દ્રવ્યાણિ દ્રવ્યતોઽનન્તદ્રવ્યરૂપત્વં પુદ્ગલા-
સ્તિકાયસ્યેત્યર્થઃ । “સ્વેત્તઓ લોચપ્પમાણમેત્તે” ક્ષેત્રતો લોકપ્રમાણમાત્રઃ “કાલઓ
ન કયાવિ નાસી જાવ ણિચ્ચે ” કાલતો ન કદાઽપિ નાસીત્-યાવન્નિત્યઃ અત્ર
યાવત્પદેન ન કદાપિ ‘ ન ભવઈ ’ ન કદાપિ ‘ ન ભવિસ્સઈ ’ કિન્તુ પૂર્વમપ્યાસીત્
હદાનીમપિ વર્તેતે અનાગતેઽપિ ભવિષ્યતિ શાશ્વતોઽવ્યયોઽવસ્થિત ઇત્યાદીનાં ગ્રહણં
ભવતિ । “ ભાવઓ વળ્ણમંતે ગંધરસફાસમંતે ” ભાવતો વર્ણવાન્ ગંધરસસ્પર્શવાન્
ભાવતઃ વર્ણવાન્ ગન્ધવાન્ રસવાન્ સ્પર્શવાન્ ઇત્યર્થઃ । “ ગુણઓ ગહણગુણે ”

પોગ્ગત્થિકાએ અણંતાઈ દવ્વાઈ) દ્રવ્ય કી અપેક્ષા પુદ્ગલાસ્તિકાય અ-
નન્તદ્રવ્યરૂપ હૈ । (સ્વેત્તઓ લોચપ્પમાણમેત્તે) ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા સે પુદ્ગ-
લાસ્તિકાય લોકપ્રમાણમાત્ર હૈ । (કાલઓ ન કયાઈ નાસી જાવ ણિચ્ચે)
કાલ કી અપેક્ષા સે પુદ્ગલાસ્તિકાય કબી નહીં થા એસા નહીં હૈ યાવત્
વહ નિત્ય હૈ । યહાં યાવત્ પદ સે (ન કયાઈ ન ભવઈ, ન કયાઈ ન
ભવિસ્સઈ, ભવિંસુ ભવઈ ભવિસ્સઈ ધુવે, ણિઈએ સાસએ અક્કલએ અવ્વએ
અવ્ઠિએ) ઇસ પાઠ કા સંગ્રહ કિયા ગયા હૈ । અર્થાત્ પુદ્ગલાસ્તિકાય
ભૂતકાલ મેં નહીં થા યહ બાત નહીં, થા હી, વર્તમાનકાલ મેં નહીં હૈ
યહ બાત નહીં, હૈ હી ભવિષ્યત્ કાલમેં નહીં હોગા યહ બાત નહીં, હોગા
હી । (કયોં કિ યહ ધ્રુવ હૈ, નિયત હૈ, શાશ્વત હૈ, અક્ષય હૈ, અવ્યય હૈ,
અવસ્થિત હૈ) ઓર નિત્ય હૈ (ભાવઓ વળ્ણમંતે ગંધરસફાસ મંતે)
ભાવ કી અપેક્ષા પુદ્ગલાસ્તિકાય વર્ણવાલા હૈ, ગંધ રસ ઓર સ્પર્શવાલા
હૈ । (ગુણઓ ગહણગુણે) ગુણ કી અપેક્ષા પુદ્ગલાસ્તિકાય ગ્રહણ ગુણ

(દવ્વઓ ણ પોગ્ગત્થિકાએ અણંતાઈ દવ્વાઈ) દ્રવ્યની અપેક્ષાએ પુદ્ગલા
સ્તિકાય અનંત દ્રવ્યરૂપ છે (સ્વેત્તઓ લોચપ્પમાણમેત્તે) ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ પુદ્ગ-
લાસ્તિકાય લોકપ્રમાણ છે (કાલઓ ન કયાઈ નાસી જાવ ણિચ્ચે) કાળની અપેક્ષા
એ પુદ્ગલાસ્તિકાયનું અસ્તિત્વ કોઈ પણ કાળે ન હોય એવું બન્યું નથી, કારણ-
કે તે નિત્ય છે. અહીં જાવ (પર્યન્ત) પદ્ધતી નીચેનો સૂત્રપાઠ ગ્રહણ કરવાનો
છે- (ન કયાઈ ન ભવઈ, ન કયાઈ ન ભવિસ્સઈ, ધ્રુવે, ણિઈએ, સાસએ, અક્કલએ,
અવ્વએ, અવ્ઠિએ) એટલે કે પુદ્ગલાસ્તિકાય ભૂતકાળમાં ન હતું એવું
બન્યું નથી વર્તમાનમાં નથી એવું પણ બનતું નથી અને ભવિષ્યમાં
નહીં હોય એવું પણ બનવાનું નથી ત્રણે કાળમાં તેનું અસ્તિત્વ હોય છે જ,
કારણ કે તે ધ્રુવ, નિયત, શાશ્વત, અક્ષય, અવ્યય, અવસ્થિત અને નિત્ય છે
(ભાવઓ વળ્ણમંતે ગંધ, રસ, ફસમંતે) ભાવની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય
વર્ણ, ગંધ, રસ અને સ્પર્શવાળું છે, (ગુણઓ ગહણગુણે) ગુણની અપેક્ષાએ

ગુણવો પ્રહણગુણ-ગુણત્વ કાર્યત્વ इत्यर्थं तथा च ग्रहण परस्परेण सम्बन्धने
जीवेन वा औदारिकादिभिः क्षरीर प्रकृतिरिति ॥ सू० १ ॥

અવતરણમ્—ધર્માસ્તિકાયાદીનાં સ્વરૂપ નિરૂપ્ય તત્ત્વેકદેષે ધર્માસ્તિકાયાત્મ-
મસ્તિ ન વેત્યાદિ પ્રરૂપયન્નાહ—“એગે મંતે ” ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—એગે મંતે ! ધર્મસ્થિકાપપયસે ધર્મસ્થિકાપ ત્તિ વત્તઽવ
સિયા ? ગોયમા । ણો ઇણદ્દે સમદ્દે એવ દોણિણ વિ, સિણિણ વિ,
ચત્તારિ વિ, પચ્છ છ સત્ત અટ્ટ ણવ દસ સસેજ્ઞા અસસેજ્ઞા મંતે !
ધર્મસ્થિકાપપસા ધર્મસ્થિકાપ ત્તિ વત્તઽવ સિયા । ગોયમા !
ણો ઇણદ્દે સમદ્દે એગપપસૂણે વિ ય ણ મંતે ! ધર્મસ્થિકાપ ત્તિ
વત્તઽવ સિયા, ણો ઇણદ્દે સમદ્દે । સે કેણદ્દેણં મંતે ! એવં વુચ્છહ
એગે ધર્મસ્થિકાપસસ પપસે નો ધર્મસ્થિકાપ ત્તિ વત્તઽવ સિયા
જાવ એગપપસૂણે વિ ય ણ ધર્મસ્થિકાપ નો ધર્મસ્થિકાપ
ત્તિ વત્તઽવ સિયા । સે ણૂણ ગોયમા ! સ્વદે ચક્રે સગલે ચક્રે ?
મગવ સયલે ચક્રે નો સ્વદે ચક્રે, એવ છત્તે, ચમ્મે, દદ્દે, ઇસે,
આડદ્દે મોયપ, સે તેણદ્દેણ ગોયમા ! એવ વુચ્છહ એગે ધર્મ
સ્થિકાપપદેસે ણો ધર્મસ્થિકાપ ત્તિ વત્તઽવ સિયા, જાવ એગપપસૂણે
વિ ય ણ ધર્મસ્થિકાપ ણો ધર્મસ્થિકાપ ત્તિ વત્તઽવ સિયા । સે કિં

ચાહા છે । ગુણ શબ્દ કા અર્થ કાર્ય ઓર પ્રહણ શબ્દ કા અર્થ આપસ
મેં સંબંધ હોના છે । ઇસકા તાત્પર્ય યહ છે કિ ઔદારિક આદિ ગુણો
કે સાથ જીવકા સંબંધ છે, અથવા જીવ ઔદારિક આદિ અનેક પ્રકાર
કે ગુણો નો પ્રહણ કરતા છે યહી ગુણ કા પ્રહણ હોના ગુણ છે ॥સૂ० ૧॥

પુણસ્થિકાપ પ્રહણગુણવાળું છે, ગુણનો અર્થ કાર્ય અને પ્રહણનો અર્થ
આપસમા સંબંધ હોવો એવો થાય છે તેનું તાત્પર્ય એ છે કે ઔદારિક આદિ
ગુણોની સાથે જીવનો સંબંધ છે અથવા જીવ ઔદારિક આદિ અનેક
પ્રકારનાં ગુણોને પ્રહણ કરતો રહે છે એને જ પુણસ્થિકાપનો પ્રહણ થવ
હોય છે ॥ સૂ. ૧ ॥

દ્રવ્યતઃ સ્વલુ પુદ્ગલાસ્તિકાયોઽનન્તાનિ દ્રવ્યાણિ દ્રવ્યતોઽનન્તદ્રવ્યરૂપત્વં પુદ્ગલા-
સ્તિકાયસ્યેત્યર્થઃ । “સ્વેત્તઓ લોચપ્પમાણમેત્તે” ક્ષેત્રતો લોકપ્રમાણમાત્રઃ “કાલઓ
ન કયાવિ નાસી જાવ ણિચ્ચે ” કાલતો ન કદાઽપિ નાસીત્-યાવન્નિત્યઃ અત્ર
યાવત્પદેન ન કદાપિ ‘ ન ભવઈ ’ ન કદાપિ ‘ ન ભવિસ્સઈ ’ કિન્તુ પૂર્વમપ્યાસીત્
ઈદાનીમપિ વર્તેતે અનાગતેઽપિ ભવિષ્યતિ શાશ્વતોઽવ્યયોઽવસ્થિત ઇત્યાદીનાં ગ્રહણં
ભવતિ । “ ભાવઓ વણ્ણમંતે ગંધરસફાસમંતે ” ભાવતો વર્ણવાન્ ગંધરસસ્પર્શવાન્
ભાવતઃ વર્ણવાન્ ગન્ધવાન્ રસવાન્ સ્પર્શવાન્ ઇત્યર્થઃ । “ગુણઓ ગહણગુણે ”

પોગથિકાઽ અણ તાઈં દવ્વાઈં) દ્રવ્ય કી અપેક્ષા પુદ્ગલાસ્તિકાય અ-
નન્તદ્રવ્યરૂપ હૈ । (સ્વેત્તઓ લોચપ્પમાણમેત્તે) ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા સે પુદ્ગ-
લાસ્તિકાય લોકપ્રમાણમાત્ર હૈ । (કાલઓ ન કયાઈ નાસી જાવ ણિચ્ચે)
કાલ કી અપેક્ષા સે પુદ્ગલાસ્તિકાય કબી નહીં થા એસા નહીં હૈ યાવત્
વહ નિત્ય હૈ । યહાં યાવત્ પદ સે (ન કયાઈ ન ભવઈ, ન કયાઈ ન
ભવિસ્સઈ, ભવિંસુ ભવઈ ભવિસ્સઈ ધુવે, ણિઈએ સાસએ અક્કએ અવ્વએ
અવ્વટ્ટિએ) ઇસ પાઠ કા સંગ્રહ કિયા ગયા હૈ । અર્થાત્ પુદ્ગલાસ્તિકાય
ભૂતકાલ મેં નહીં થા યહ બાત નહીં, થા હી, વર્તમાનકાલ મેં નહીં હૈ
યહ બાત નહીં, હૈ હી ભવિષ્યત્ કાલમેં નહીં હોગા યહ બાત નહીં, હોગા
હી । (કયોં કિ યહ ધ્રુવ હૈ, નિયત હૈ, શાશ્વત હૈ, અક્ષય હૈ, અવ્યય હૈ,
અવસ્થિત હૈ) ઓર નિત્ય હૈ (ભાવઓ વણ્ણમંતે ગંધરસફાસ મંતે)
ભાવ કી અપેક્ષા પુદ્ગલાસ્તિકાય વર્ણવાલા હૈ, ગંધ રસ ઓર સ્પર્શવાલા
હૈ । (ગુણઓ ગહણગુણે) ગુણ કી અપેક્ષા પુદ્ગલાસ્તિકાય ગ્રહણ ગુણ

(દવ્વઓ ણં પોગથિકાઽ અણ તાઈ દવ્વાઈં) દ્રવ્યની અપેક્ષાએ પુદ્ગલા-
સ્તિકાય અનન્ત દ્રવ્યરૂપ છે (સ્વેત્તઓ લોચપ્પમાણમેત્તે) ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ પુદ્ગ-
લાસ્તિકાય લોકપ્રમાણ છે (કાલઓ ન કયાઈ નાસી જાવ ણિચ્ચે) કાળની અપેક્ષા
એ પુદ્ગલાસ્તિકાયનું અસ્તિત્વ કોઈ પણ કાળે ન હોય એવું બન્યું નથી, કારણ
કે તે નિત્ય છે. અહીં જાવ (પર્યાન્ત) પદથી નીચેનો સૂત્રપાઠ ગ્રહણ કરવાનો
છે—(ન કયાઈ ન ભવઈ, ન કયાઈ ન ભવિસ્સઈ, ધ્રુવે, ણિઈએ, સાસએ, અક્કએ,
અવ્વએ, અવ્વટ્ટિએ) એટલે કે પુદ્ગલાસ્તિકાય ભૂતકાળમા ન હોતું એવું
બન્યું નથી વર્તમાનમા નથી એવું પણ બનતું નથી અને ભવિષ્યમા
નહીં હોય એવું પણ બનવાનું નથી ત્રણે કાળમા તેનું અસ્તિત્વ હોય છે જ,
કારણ કે તે ધ્રુવ, નિયત, શાશ્વત, અક્ષય, અવ્યય, અવસ્થિત અને નિત્ય છે.
(ભાવઓ વણ્ણમંતે ગંધ, રસ, ફાસમંતે) ભાવની અપેક્ષાએ પુદ્ગલાસ્તિકાય
વર્ણ, ગંધ, રસ અને સ્પર્શવાળું છે, (ગુણઓ ગહણગુણે) ગુણની અપેક્ષાએ

શુણ્ણો ગ્રહણશુણ્ણ - શુણ્ણત કાર્યત્વં इत्यर्थः तथा च ग्रहण परस्परेण सम्भव
जीवेन वा औदारिकादिभिः क्षरीर भ्रकारैरिति ॥ सू० १ ॥

અવતરણમ્—ધર્માસ્તિષ્ઠાયાદીનાં સ્વરૂપં નિરૂપ્ય તદેકદેશે ધર્માસ્તિકાપત્ત-
મસ્તિ ન વેત્યાદિ પ્રરૂપયન્નાહ—“એગે મંતે ” ઇત્યાદિ ।

મૂળમ્—એગે મંતે ! ધમ્મરથિકાપપયસે ધમ્મરથિકાપ ત્તિ વત્તઠ્ઠ
સિયા ? ગોયમા ! ખો ઇણદ્દે સમદ્દે એવ દોણિણ વિ, તિણિણ વિ,
ચત્તારિ વિ, પચ છ સત્ત અટ્ટ ણવ દસ સસેજ્ઞા અસસેજ્ઞા મંતે !
ધમ્મરથિકાપપયસા ધમ્મરથિકાપ ત્તિ વત્તઠ્ઠ સિયા । ગોયમા !
ખો ઇણદ્દે સમદ્દે એગપપસૂણે વિ ય ણ મંતે ! ધમ્મરથિકાપ ત્તિ
વત્તઠ્ઠ સિયા, ખો ઇણદ્દે સમદ્દે । સે કેણદ્દેણં મંતે ! એવં વુચ્છઈ
એગે ધમ્મરથિકાપસસ પપસે નો ધમ્મરથિકાપ ત્તિ વત્તઠ્ઠ સિયા
જાવ એગપપસૂણે વિ ય ણ ધમ્મરથિકાપ નો ધમ્મરથિકાપ
ત્તિ વત્તઠ્ઠ સિયા । સે પૂણ ગોયમા ! સ્વદે ચક્રે સગલે ચક્રે !
મગવ સયલે ચક્રે નો સ્વદે ચક્રે, એવ છત્તે, ચમ્મે, દદ્દે, ઇસે,
આઝહે મોયપ, સે તેણદ્દેણ ગોયમા ! એવ વુચ્છઈ એગે ધમ્મ
રથિકાપપદેસે ખો ધમ્મરથિકાપ ત્તિ વત્તઠ્ઠ સિયા, જાવ એગપપસૂણે
વિ ય ણ ધમ્મરથિકાપ ખો ધમ્મરથિકાપ ત્તિ વત્તઠ્ઠ સિયા । સે કિં

ચાલા હે । શુણ્ણ શબ્દ કા અર્થ ગાર્ય ઓર ગ્રહણ શબ્દ કા અર્થ બાપસ
મેં સંબધ હોના હે । હમકા તાત્પર્ય યહ હે કિ ઓદારિક આદિ પુત્રલો
કે સાથ જીયકા સબધ હે, અથવા જીય ઓદારિક આદિ અનેક પ્રકર
કે પુત્રલો કો ગ્રહણ કરતા હે યદી પુત્રલ કા 'ગ્રહણ હોના શુણ્ણ હે' ॥ સૂ. ૧ ॥

પુત્રતાસ્તિકાય બ્રહ્મણશુણ્ણવાણ છે, શુણ્ણો અર્થ 'મર્થ' અને બ્રહ્મણો અર્થ
આપસમા સબધ હોવો, એવો થાય છે તેનું તાત્પર્ય એ છે કે ઓદારિક આદિ
પુત્રલોની સાથે જીવના સબધ છે, અથવા જીવ ઓદારિક આદિ અને
પ્રાણીનાં પુત્રલોને બ્રહ્મણ કરતો રહે છે એને જ પુત્રતાસ્તિકાયનો બ્રહ્મ કય
રહે છે ॥ સૂ. ૧ ॥

खाइणं भंते ! धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया । गोयमा ! अ-
संखेज्जा धम्मत्थिकाएपएसा, ते सव्वे कसिणा पडिपुण्णा, निर-
वसेसा एगगहणगहिया एसणं गोयमा ! धम्मत्थिकाए त्ति
वत्तव्वं सिया । एवं अधम्मत्थिकाए वि । आगासत्थिकाए वि
जीवत्थिकाए वि, पोगलत्थिकाए वि एवं चेव, नवरं तिण्हं-
पएसा अणंता भाणियव्वा सेसं तं चेव ॥ सू० २ ॥

छाया—एको भदन्त ! धर्मास्तिकायप्रदेशो धर्मास्तिकाय इति वक्तव्यं स्यात् गौतम !
नायमर्थः समर्थः एवं द्वावपि त्रयोऽपि चत्वारोऽपि पञ्चपट् सप्त अष्ट नव दश—संख्या-

धर्मास्तिकाय आदि पांच प्रकार के अस्तिकायों का स्वरूप निरूपण
कारके अब सूत्रकार यह प्रकट करते हैं कि धर्मास्तिकाय के एकदेश में
धर्मास्तिकायता है या नहीं— (एगे भंते ! धम्मत्थिकायपएसे) इत्यादि ।
(एगे भंते ! धम्मत्थिकायपएसे धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया) हे
भदन्त ! धर्मास्तिकायके एकप्रदेशको (यह धर्मास्तिकाय है) ऐसा कहा जा
सकता है क्या ? (गोयमा ! णो इण्हंते समद्वे) हे गौतम ! यह अर्थ समर्थ
नहीं है अर्थात् धर्मास्तिकायका एकप्रदेश धर्मास्तिकाय नहीं कहा जा सकता
है । (एवं दोण्णि वि तिण्णि वि, चत्तारि वि, पंच, छ, सत्त, अट्ठ, नव, दस,
संखेज्जा,) इसी तरह से धर्मास्तिकाय के दो प्रदेश भी, तीन प्रदेश भी,
चार प्रदेश भी, पांच प्रदेश भी, छह प्रदेश भी, सात प्रदेश भी आठ
प्रदेश भी, नौ प्रदेश भी, दश प्रदेश भी धर्मास्तिकाय नहीं कहे जा

धर्मास्तिकाय आदि पांच प्रकारना अस्तिकायेना स्वरूपं निरूपणं करीने
छेवे सूत्रकार ते ज्ञातेवे छे के धर्मास्तिकायना ऐक देशमा-धर्मास्तिकायना
छेय छे के नहीं—(एगे भंते ! धम्मत्थिकायपएसे) इत्यादि

सूत्रार्थ—(एगे भंते ! धम्मत्थिकायपएसे धम्मत्थिए त्ति वत्तव्वं सिया) हे भदन्त !
धर्मास्तिकायना ऐक प्रदेशने अनुलक्षीने, (आ धर्मास्तिकाय छे,) जेवु कही
शक्य भइ ? (गोयमा ! णो इण्हंते समद्वे) हे गौतम ! जे-अर्थ अत्रात्र
नथी—जेटवे के धर्मास्तिकायना ऐक प्रदेशने धर्मास्तिकाय कही शक्य नहीं.
(एवं दोण्णि वि, तिण्णिवि चत्तारि वि, पंच, छ, सत्त, अट्ठ, नव, दस, संखे-
ज्जा) जेअ प्रमाणे धर्मास्तिकायना जे त्रय, चार, पांच, छ सात, आठ,
नव, दस वगेरे प्रदेशने पण धर्मास्तिकाय कही शक्य नहीं. धर्मास्तिकायना

ગુણતો ગ્રહણગુણ*—ગુણત કાર્યત્વ ઇત્યર્થ તથા ધ ગ્રહણ પરસ્પરેષ સમ્પન્ન
જીવેન યા ઔદારિકાદિભિઃ શરીર પ્રકારૈરિતિ ॥ સૂ. ૧ ॥

અવતરણમ્—ધર્માસ્થિકાયાદીનાં સ્વરૂપ નિરૂપ્ય તત્ત્વેકદેશે ધર્માસ્થિકાયાસ-
મસ્તિ ન ચેત્યાદિ પ્રરૂપયન્નાહ—“એગે મતે” ઇત્યાદિ ।

મૂલ્મ્—એગે મતે ! ધમ્મસ્થિકાયાપયસે ધમ્મસ્થિકાયા ત્તિ વત્તઽવ
સિયા ? ગોયમા ! ણો ઇણદ્દે સમદ્દે એવ દોણિણ વિ, તિણિણ વિ,
ચત્તારિ વિ, પચ્છ સત્ત અટ્ટ ણવ દસ સસેજ્ઞા મસસેજ્ઞા મતે !
ધમ્મસ્થિકાયાપયસા ધમ્મસ્થિકાયા ત્તિ વત્તઽવ સિયા । ગોયમા !
ણો ઇણદ્દે સમદ્દે એગપપસૂણે વિ ચ ણ મતે ! ધમ્મસ્થિકાયા ત્તિ
વત્તઽવ સિયા, ણો ઇણદ્દે સમદ્દે । સે કેણદ્દેણં મતે ! એવ વુચ્છઈ
એગે ધમ્મસ્થિકાયાપયસે નો ધમ્મસ્થિકાયા ત્તિ વત્તઽવ સિયા
જાવ એગપપસૂણે વિ ચ ણ ધમ્મસ્થિકાયા નો ધમ્મસ્થિકાયા
ત્તિ વત્તઽવ સિયા । સે ણૂણ ગોયમા ! સ્વદે ચક્રે સગલે ચક્રે !
મગવ સયલે ચક્રે નો સ્વદે ચક્રે, એવ છત્તે, ચમ્મે, દદે, હસે,
આડહે મોચય, સે તેણદ્દેણ ગોયમા ! એવ વુચ્છઈ એગે ધમ્મ
સ્થિકાયાપયસે ણો ધમ્મસ્થિકાયા ત્તિ વત્તઽવ સિયા, જાવ એગપપસૂણે
વિ ચ ણ ધમ્મસ્થિકાયા ણો ધમ્મસ્થિકાયા ત્તિ વત્તઽવ સિયા । સે કિં

વાલા છે । ગુણ શબ્દ કા અર્થ કાર્ય ઓર ગ્રહણ શબ્દ કા અર્થ આપણ
મેં સંપષ્ઠ હોના છે । ઇસ્કા તાત્પર્ય યહ છે કિ ઔદારિક આદિ પુત્રલો
કે સાપ જીવકા સંપષ્ઠ છે, અથવા જીવ ઔદારિક આદિ અનેક પ્રકાર
કે પુત્રલો કો ગ્રહણ કરતા છે યહી પુત્રલ કા ગ્રહણ હોના ગુણ છે ॥ સૂ. ૧ ॥

પુત્રલવાસ્થિકાયા ગ્રહણગુણવાણ છે, ગુણનો અર્થ કાર્ય અને ગ્રહણનો અર્થ
આપણમાં સંપષ્ઠ હોવો એવો માધ્ય છે તેનું તાત્પર્ય એ છે કે ઔદારિક આદિ
પુત્રલોની સાથે જીવનો સંપષ્ઠ છે અથવા જીવ ઔદારિક આદિ અને
પ્રકારનાં પુત્રલોને ગ્રહણ કરતો રહે છે એને જ પુત્રલવાસ્થિકાયાનો ગ્રહણ ગુણ
રહે છે ॥ સૂ. ૧ ॥

खाइणं भंते ! धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया । गोयमा ! अ-
संखेज्जा धम्मत्थिकाएपएसा, ते सव्वे कसिणा पडिपुण्णा, निर-
वसेसा एगगहणगहिया एसणं गोयमा ! धम्मत्थिकाए त्ति
वत्तव्वं सिया । एवं अधम्मत्थिकाए वि । आगासत्थिकाए वि
जीवत्थिकाए वि, पोग्गलत्थिकाए वि एवं चेव, नवरं तिण्हंपि-
पएसा अणंता भाणियव्वा सेसं तं चेव ॥ सू० २ ॥

छाया—एको भदन्त ! धर्मास्तिकायप्रदेशो धर्मास्तिकाय इति वक्तव्यं स्यात् गौतम !
नायमर्थः समर्थः एवं द्वावपि त्रयोऽपि चत्वारोऽपि पञ्चपद सप्त अष्ट नव दश—संख्या-

धर्मास्तिकाय आदि पांच प्रकार के अस्तिकायों का स्वरूप निरूपण
करके अब सूत्रकार यह प्रकट करते हैं कि धर्मास्तिकाय के एकदेश में
धर्मास्तिकायता है या नहीं— (एगे भंते ! धम्मत्थिकाएपएसे) इत्यादि ।
(एगे भंते ! धम्मत्थिकाएपएसे धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया) हे
भदन्त ! धर्मास्तिकायके एकप्रदेशको (यह धर्मास्तिकाय है) ऐसा कहा जा
सकता है क्या ? (गोयमा ! गो इण्हठे समट्ठे) हे गौतम ! यह अर्थ समर्थ
नहीं है अर्थात् धर्मास्तिकायका एकप्रदेश धर्मास्तिकाय नहीं कहा जा सकता
है । (एवं दोण्णि वि तिण्णि वि, चत्तारि वि, पंच, छ, सत्त, अट्ठ, नव, दस,
संखेज्जा,) इसी तरह से धर्मास्तिकाय के दो प्रदेश भी, तीन प्रदेश भी,
चार प्रदेश भी, पांच प्रदेश भी, छह प्रदेश भी, सात प्रदेश भी आठ
प्रदेश भी, नौ प्रदेश भी, दश प्रदेश भी धर्मास्तिकाय नहीं कहे जा

धर्मास्तिकाय आदि पांच प्रकारना अस्तिकायाना स्वइपत्तुं निरूपणु करीने
छवे सूत्रकार ते बतावे छे के धर्मास्तिकायना ओक देशमा धर्मास्तिकायना
डाय छे के नहीं— (एगे भंते ! धम्मत्थिकाएपएसे) इत्यादि

सूत्रार्थ—(एगे भंते ! धम्मत्थिकाएपएसे धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया) हे भदन्त !
धर्मास्तिकायना ओक प्रदेशने अनुलक्षीने, (आ धर्मास्तिकाय छे,) ओपु कही
शक्य भइ ? (गोयमा ! गो इण्हठे समट्ठे) हे गौतम ! ओ अर्थ भराभर
नथी—ओटवे के धर्मास्तिकायना ओक प्रदेशने धर्मास्तिकाय कही शक्य नहीं।
(एवं दोण्णि वि, तिण्णिवि चत्तारि वि, पंच, छ, सत्त, अट्ठ, नव, दस, संखे-
ज्जा) ओअ प्रमाणे धर्मास्तिकायना ओ त्रणु, चारु, पाय, छ सात, आठ,
नव, दस वगेरे प्रदेशाने पणु धर्मास्तिकाय कही शक्य नहीं। धर्मास्तिकायना

ગૌતમ ! ચ્વંડંચક્રં સકલ ચક્રમ્ ? ભગવન્ ! સકલં ચક્રમ્ નો ચ્વંડં ચક્રમ્ એવં છત્રં ચર્મ દણ્ડઃ દૂષ્યમ્-આયુધમ્-મોદકમ્-તત્ તેન અર્થેન ગૌતમ ! એવમુચ્યતે એકો ધર્માસ્તિકાયપ્રદેશોન ધર્માસ્તિકાય ઇતિ વક્તવ્યં સ્યાત્ યાવદેકપ્રદેશોનોઽપિ ચ ચ્વંડુ ધર્માસ્તિકાયો ન ધર્માસ્તિકાય ઇતિ વક્તવ્યં સ્યાત્ તત્ કિં સ્વાઈ-પુનઃ ચ્વંડુ

વક્તવ્ય નહીં હો સકતા હૈ યાવત્ એક પ્રદેશન્યૂન ભી ધર્માસ્તિકાય ધર્માસ્તિકાય એસા નહીં કહા જા સકતા હૈ ? (સે જૂળં ગોયમા ! ચ્વંડે ચક્રે ? સગલે ચક્રે ? ભગવં ! સગલે ચક્રે, નો ચ્વંડે ચક્રે એવં છત્તે, ચમ્મે, દંડે, દૂસ, આઝહે, મોયએ સે તેણદ્દેણં ગોયમા ! એવં વુચ્ચહ્ એગે ધમ્મ-સ્થિતકાયપપસે જો ધમ્મત્થિકાએ ત્તિ વક્તવ્વં સિયા-જાવ એગપપસૂણે વિય જં નો ધમ્મત્થિકાએ ત્તિ વક્તવ્વં સિયા) હે ગૌતમ ! હમ તુમસે પૂછતે હૈ કિ ચક્ર કા ચ્વંડ પૂરા ચક્ર કહલાવેગા યા પૂરા ચક્ર સંપૂર્ણ ચક્ર કહલાવેગા ? તવ ગૌતમ ને કહા-હે ભદન્ત ! પૂરા ચક્ર હી ચક્ર કહલાવેગા, ચક્ર કા ચ્વંડ ચક્ર નહીં કહલાવેગા, હસી તરહ સે છત્ર, ચર્મ, દણ્ડ દૂષ્ય, (વસ્ત્ર,) શસ્ત્ર, મોદક કે વિષય મેં ભી જાનના ચાહિયે । (સે તેણદ્દેણં ગોયમા ! એવં વુચ્ચહ્, એગે ધમ્મત્થિકાયપપસે જો ધમ્મત્થિકાએ ત્તિ વક્તવ્વં સિયા, જાવ એગપપસૂણે વિય જં ધમ્મત્થિકાએ નો ધમ્મત્થિકાએ ત્તિ વક્તવ્વં સિયા) હસ કારણ હે ગૌતમ ! મૈને એસા કહા હૈ કિ ધર્માસ્તિકાય કા એક પ્રદેશ પૂરા ધર્માસ્તિકાય નહીં કહા જા સકતા

એક પ્રદેશને ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય નહીં, જો, ત્રણ આદિથી લઈને અસંખ્યાત પ્રદેશોને પણ ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય નહીં, અને એક પ્રદેશ ન્યૂન હોય તો પણ તેને ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય નહીં ? (સે જૂળ ગોયમા ! ચ્વંડે ચક્રે ? સગલે ચક્રે ? ભગવં સગલે ચક્રે, નો ચ્વંડે ચક્રે) હે ગૌતમ ! ચક્રના ખંડને ચક્ર કહી શકાય, કે આખા ચક્રને જ ચક્ર કહેવાય ! ગૌતમ સ્વામી જવાબ આપે છે, -હે ભદન્ત ! આખા ચક્રને જ ચક્ર કહી શકાય, ચક્રના ખંડને ચક્ર કહી શકાય નહીં ” મહાવીર પ્રભુ કહે છે કે (એવ છત્તે, ચમ્મે, દંડે દૂસે, આઝહે, મોયએ સે તેણદ્દેણ ગોયમા ! એવં વુચ્ચહ્ એગે ધમ્મત્થિકાયપપસે જો ધમ્મત્થિકાએ ત્તિ વક્તવ્વં સિયા જાવ એગપપસૂણે વિય જં ધમ્મત્થિકાએ નો ધમ્મત્થિકાએ ત્તિ વક્તવ્વં સિયા) એજ પ્રમાણે છત્ર, ચર્મ, દંડ વસ્ત્ર, શસ્ત્ર મોદક આદિના વિષયમા પણ સમજવું એટલે કે તેમના આખા ભાગને જ છત્ર, ચર્મ, આદિ કહી શકાય, તેમના ખંડને છત્ર, ચર્મ, દંડ આદિ નામે ઓળખી શકાય નહીં હે ગૌતમ ! તે કારણે જ હું એવું કહું છું કે ધર્માસ્તિકાયના એક પ્રદેશને પૂરો ધર્માસ્તિકાય કહેવાતું નથી. જો, ત્રણ, સંખ્યાત, અસંખ્યાત આદિ પ્રદે-

ताः असंख्याताः । भवन्तः । धर्मास्तिकायप्रवेशा धर्मास्तिकाय इति वक्तव्यं स्यात्
 गौतम । नायमर्थः समर्थः एकप्रदेशो नोऽपि च खलु भवन्तः । धर्मास्तिकायः प-
 र्मास्तिकाय इति वक्तव्यं स्यात् नायमर्थः समर्थः तत्केनार्थेन भवन्तः । एवमुच्यते
 एको धर्मास्तिकायस्य प्रदेशो न धर्मास्तिकाय इति वक्तव्यं स्यात् यावत् एकप्रदे-
 शो नोऽपि च खलु धर्मास्तिकायो न धर्मास्तिकाय इति वक्तव्यं स्यात् तन्न

संकेते हैं । तथा धर्मास्तिकाय के संख्यात प्रदेश भी धर्मास्तिकाय नहीं
 कहा सकते हैं । 'असंख्येया भंते धम्मत्थिकायपएसा धम्मत्थिकाए सि
 वसब्बं सिया' है भवन्तः । धर्मास्तिकाय के असंख्यात प्रदेश धर्मास्तिका-
 य इसरूप से वक्तव्य हो सकते हैं ? 'गोयमा । णो इण्ठे समद्वे' है गौ-
 तम । पद अर्थ समर्थ नहीं है—अर्थात् धर्मास्तिकाय के असंख्यात प्रदेश
 धर्मास्तिकाय इसरूप से वक्तव्य नहीं हो सकते हैं । 'एगपएसूणे वि य
 णं भंते ? धम्मत्थिकाए सि वसब्बं सिया' है भवन्तः । एक प्रदेश न्यून
 भी धर्मास्तिकाय धर्मास्तिकाय इस पद से वक्तव्य हो सकता है ? 'गोय-
 मा । णो इण्ठे समद्वे' है गौतम । यह अर्थ समर्थ नहीं है । अर्थात्—एक
 प्रदेश न्यून भी धर्मास्तिकाय इस पद द्वारा वक्तव्य नहीं हो सकता है ।
 'से केणद्वेयं भंते ! एवं पुच्छंइ एगे धम्मत्थिकायस्स पएसे नो धम्म
 त्थिकाए सि वसब्बं सिया, जाव एगपएसूणे वि य णं धम्मत्थिकाए नो
 धम्मत्थिकाए सि वसब्बं सिया' है भवन्तः । ऐसा आप किस कार-
 ण से कहते हो कि धर्मास्तिकाय का एक प्रदेश धर्मास्तिकाय इसरूप से

संख्यात प्रदेशो न धर्मास्तिकाय कहें वा नही (असंख्येया भंते ! धम्म
 त्थिकायपएसा धम्मत्थिकाए सि वसब्बं सिया ?) के भवन्तः । धर्मास्तिकाय
 असंख्यात प्रदेशो न धर्मास्तिकाय (या धर्मास्तिकाय छे, जेवुं छे छे शक्य भइ ?
 (गोयमा । णो इण्ठे समद्वे) के गौतम । ते अर्थ पक्ष अशक्य नही—
 जेठवे के धर्मास्तिकाय न धर्मास्तिकाय असंख्यात प्रदेशो न धर्मास्तिकाय
 (एगपएसूणे वि य णं भंते ! धम्मत्थिकाए धम्मत्थिकाए सि वसब्बं सिया ?) के
 भवन्तः । जेठ पक्ष प्रदेश न्यून (जेठे) के अर्थ जेवा धर्मास्तिकायने धर्मास्तिकाय
 छे शक्य भइ ? (गोयमा । णो इण्ठे समद्वे) के गौतम । जे अर्थ पक्ष
 अशक्य नही, जेठवे के जेठ प्रदेशो न धर्मास्तिकाय न्यूनता के अर्थ तेने धर्मास्तिकाय
 छे शक्य नही (से केणद्वेयं भंते ! एवं पुच्छंइ एगे धम्मत्थिकायस्स पएसे नो
 धम्मत्थिकाए सि वसब्बं सिया, जाव एगपएसूणे वि य णं धम्मत्थिकाए नो
 धम्मत्थिकाए सि वसब्बं सिया) के भवन्तः । आप आ आने जेवुं छे छे छे के धर्मास्तिकाय

ગૌતમ ! ચ્વંડં ચક્રં સકલ ચક્રમ્ ? ભગવન્ ! સકલં ચક્રમ્ નો ચ્વંડં ચક્રમ્ એવં છત્રં ચર્મં દણ્ડઃ દૃષ્યમ્-આયુધમ્-મોદકમ્-તત્ તેન અર્થેન ગૌતમ ! એવમુચ્યતે એકો ધર્માસ્તિકાયપ્રદેશોન ધર્માસ્તિકાય ઇતિ વક્તવ્યં સ્યાત્ યાવદેકપ્રદેશોનોઽપિ ચ ચ્વંડુ ધર્માસ્તિકાયો ન ધર્માસ્તિકાય ઇતિ વક્તવ્યં સ્યાત્ તત્ કિં ચ્વાઈ-પુનઃ ચ્વંડુ

વક્તવ્ય નહીં હો સકતા હૈ યાવત્ એક પ્રદેશન્યૂન મી ધર્માસ્તિકાય ધર્માસ્તિકાય એસા નહીં કહા જા સકતા હૈ ? (સે જૂળં ગોચમા ! ચ્વંડે ચક્રે ? સગલે ચક્રે ? ભગવં ! સગલે ચક્રે, નો ચ્વંડે ચક્રે એવં છત્રે, ચર્મે, દંડે, દૂસ, આઝહે, મોચે સે તેજદ્રેણં ગોચમા ! એવં બુચ્ચઈ એગે ધર્મસ્થિતકાયપણે જો ધર્મસ્થિકાઈ સ્તિ વક્તવ્યં સિયા-જાવ એગપણે સૂણે વિય જં નો ધર્મસ્થિકાઈ સ્તિ વક્તવ્ય સિયા) હે ગૌતમ ! હમ તુમસે પૂછતે હૈ કિ ચક્ર કા ચ્વંડ પૂરા ચક્ર કહલાવેગા યા પૂરા ચક્ર સંપૂર્ણ ચક્ર કહલાવેગા ? તવ ગૌતમ ને કહા-હે ભદન્ત ! પૂરા ચક્ર હી ચક્ર કહલાવેગા, ચક્ર કા ચ્વંડ ચક્ર નહીં કહલાવેગા, હસી તરહ સે છત્ર, ચર્મ, દણ્ડ દૃષ્ય, (વસ્ત્ર,) શસ્ત્ર, મોદક કે વિષય મેં મી જાનના ચાહિયે. (સે તેજદ્રેણં ગોચમા ! એવં બુચ્ચઈ, એગે ધર્મસ્થિકાયપણે જો ધર્મસ્થિકાઈ સ્તિ વક્તવ્યં સિયા, જાવ એગપણે સૂણે વિય જં ધર્મસ્થિકાઈ નો ધર્મસ્થિકાઈ સ્તિ વક્તવ્યં સિયા) હસ કારણ હે ગૌતમ ! મૈને એસા કહા હૈ કિ ધર્માસ્તિકાય કા એક પ્રદેશ પૂરા ધર્માસ્તિકાય નહીં કહા જા સકતા

એક પ્રદેશને ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય નહીં, જો, ત્રણ આદિથી લઈને અસંખ્યાત પ્રદેશોને પણ ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય નહીં, અને એક પ્રદેશ ન્યૂન હોય તો પણ તેને ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય નહીં ? (સે જૂળ ગોચમા ! ચ્વંડે ચક્રે ? સગલે ચક્રે ? ભગવં સગલે ચક્રે, નો ચ્વંડે ચક્રે) હે ગૌતમ ! ચક્રના ખંડને ચક્ર કહી શકાય, કે આખા ચક્રને જ ચક્ર કહેવાય. ગૌતમ સ્વામી જવાબ આપે છે, -હે ભદન્ત ! આખા ચક્રને જ ચક્ર કહી શકાય, ચક્રના ખંડને ચક્ર કહી શકાય નહીં ” મહાવીર પ્રભુ કહે છે કે (એવ છત્રે, ચર્મે, દંડે, દૂસે, આઝહે, મોચે સે તેજદ્રેણં ગોચમા ! એવં બુચ્ચઈ એગે ધર્મસ્થિકાયપણે જો ધર્મસ્થિકાઈ સ્તિ વક્તવ્યં સિયા જાવ એગપણે સૂણે વિય જં ધર્મસ્થિકાઈ નો ધર્મસ્થિકાઈ સ્તિ વક્તવ્ય સિયા) એજ પ્રમાણે છત્ર, ચર્મ, દંડ વસ્ત્ર, શસ્ત્ર મોદક આદિના વિષયમાં પણ સમજવું એટલે કે તેમના આખા ભાગને જ છત્ર, ચર્મ, આદિ કહી શકાય, તેમના ખંડને છત્ર, ચર્મ, દંડ આદિ નામે ઓળખી શકાય નહીં હે ગૌતમ ! તે કારણે જ હું એવું કહું છું કે ધર્માસ્તિકાયના એક પ્રદેશને પૂરા ધર્માસ્તિકાય કહેવાતું નથી. જો, ત્રણ, અસંખ્યાત, અસંખ્યાત આદિ પ્રદે-

भदन्त ! धर्मास्तिकाय इति वक्तव्यं स्यात् गौतम ! असंख्येया धर्मास्तिकायप्रदे-
 शास्ते सर्वे कृत्स्ना प्रतिपूर्णा निरवशेषा एकग्रहणगृहीता एषः त्वत्तु गौतम ।
 धर्मास्तिकाय इति वक्तव्यं स्यात् एवमधर्मास्तिकायोऽपि । आकाशास्तिकायोऽपि
 जीवास्तिकायोऽपि पुद्गलास्तिकायोऽपि एवमेव नवरं त्रयाणामपि अनन्ता मणित-
 व्या । शेष उदेव ॥ सू० २ ॥

है और इसी तरह से यावत एक प्रवेश न्यून धर्मास्तिकाय
 भी पूरा धर्मास्तिकाय नहीं कहा जा सकता है । (से किं खाइए णं भंते
 धम्मस्तिकाए सि वत्तब्बं सिया) तो हे भदन्त ! कहो धर्मास्तिकाय
 इस शब्द से क्या वक्तव्य होना चाहिये ? (गोयमा । असंख्येया धम्म-
 त्तिकायपपसा) हे गौतम ! धर्मास्तिकाय के असंख्यातप्रवेश हैं (ते
 सव्वे कसिणा पक्खिपुण्णा, निरवसेसा, एग ग्रहणगहिया एस णं गोयमा ।
 धम्मस्तिकाए सि वत्तब्बं सिया) वे सब कृत्स्न, प्रतिपूर्ण, निरवशेष
 और एक ग्रहण-शब्द से गृहीत होजायें ऐसे रूप में हो गये हो तब वे
 असंख्यात प्रवेश (धर्मास्तिकाय) इस शब्दद्वारा वक्तव्य हो सकते हैं ।
 (एवमधम्मस्तिकाए वि, आगासस्तिकाए वि जीवस्तिकाए वि पोग्गळ-
 त्तिकाए वि एवं चेष- नवरं तिण्णं पि पपसा अणता भाणियब्बा-सेसं
 तं चेष) इसी तरह से अधर्मास्तिकाय में भी, आकाशास्तिकाय में भी
 और जीवास्तिकाय में भी जानना चाहिये तथा पुद्गलास्तिकाय में भी

माने पक्ष धर्मास्तिकाय कहेवता नहीं, जोक व प्रवेश न्यून (कोअे) कोव
 कोवा धर्मास्तिकायने पक्ष पूरे धर्मास्तिकाय कही शकतो नहीं-

(से किं खाइए णं भंते । धम्मस्तिकाए सि वत्तब्बं सिया) के भदन्त !
 तो पक्ष धर्मास्तिकाय शब्दभी शु अक्षत थाय छे ? (गोयमा । असंख्येया
 धम्मस्तिकाए पपसा) के गौतम ! धर्मास्तिकायना असंख्यात प्रवेशो कोव छे-

(ते सव्वे कसिणा पक्खिपुण्णा निरवसेसा एगग्रहणगहिया एस णं गोयमा ।
 धम्मस्तिकाए सि वत्तब्बं सिया) के गौतम ! ते सव्वे प्रवेशो कृत्स्न (संपूर्ण)
 प्रतिपूर्ण, निरवशेष अने (धर्मास्तिकाय) कोवा जोक शब्द पठे आइ (अक्ष-
 क्त्वा बोध्य) अनर्था कोव, त्वाए व ते असंख्यात प्रवेशोने 'धर्मास्तिकाय'
 शब्दभी कोअभी शकय छे (एवमधम्मस्तिकाए वि, जीवस्तिकाए वि पोग्गळ-
 काए वि एव चेष-नवरं तिण्णं पि पपसा अणता भाणियब्बा-सेसं उ वेर)
 अधर्मास्तिकाय आकाशास्तिकाय, अने जीवास्तिकायना विषयभां पक्ष के प्रमाण
 व समग्रपु पुद्गलास्तिकायना विषयभां पक्ष कोव व समग्रपु पक्ष तेभां

ટીકા—“એમે મંતે । ધમ્મત્થિકાયપપસે ધમ્મત્થિકાએ ત્તિ વત્તવ્વં સિયા ”
 (કોઽપિ ભદન્ત ! ધર્માસ્તિકાયપ્રદેશે ધર્માસ્તિકાય ઇતિ વક્તવ્યં સ્યાત્ હે ભદ-
 ન્ત ! ધર્માસ્તિકાયસ્ય એકસ્મિન્ પ્રદેશે ધર્માસ્તિકાયત્વં ધર્મો વિદ્યતે ન વા વિદ્યતે
 વેત્તદા એકસ્મિન્નપિ અવયવે ધર્માસ્તિકાયોઽયમિતિ વ્યવહારઃ સ્યાત્ તથા ચ તત્
 વદવયવેનૈવ ધર્માસ્તિકાય ઇતિ વ્યવહારસ્ય સમ્પાદનાત્ પ્રદેશસમુદાયાત્મકધ-
 ર્માસ્તિકાયસ્ય નૈરર્થક્યમેવ પ્રસજ્યેત પ્રત્યેકસ્મિન્નવયવે ધર્માસ્તિકાયત્વં ધર્મો ન
 હસ પ્રકાર સે જાનના ચાહિયે । વિશેષતા કેવલ હતની હી હૈ કિ જીવા-
 સ્તિકાય, આકાશાસ્તિકાય ઓર પુદ્ગલાસ્તિકાય હન કે પ્રદેશ અનન્ત
 કહના ચાહિયે । વાકી કા અવશિષ્ટ કથનસબ પૂર્વજૈસા નહીં હૈ ॥સૂ ૨॥

ટીકાર્થ—(એમે મંતે । ધમ્મત્થિકાયપપસે ધમ્મત્થિકાએ ત્તિ વત્તવ્વં
 સિયા ” હે ભદન્ત ! ધર્માસ્તિકાયકા એકપ્રદેશ ધર્માસ્તિકાય હસ શબ્દ
 દ્વારા વક્તવ્ય હો સકતા હૈ કયા ? પૂછને કા અભિપ્રાય એસા હૈ કિ-
 ધર્માસ્તિકાય કે એક પ્રદેશ મેં ધર્માસ્તિકાયત્વરૂપ ધર્મ મૌજૂદ હૈ યા
 નહીં ? યદિ પ્રથમ પક્ષ અંગીકાર કિયા જાવે તો ફિર હસ સ્થિતી મેં
 પ્રદેશ સમુદાયાત્મક ધર્માસ્તિકાય કે માનને કી આવશ્યકતા હી કયા
 રહતી હૈ કયોં કિ ધર્માસ્તિકાય કે એક મી પ્રદેશ મેં (યહ ધર્માસ્તિકાય
 હૈ) એસા વ્યવહાર હોના તુમ માન રહે હો અતઃ જવ એક પ્રદેશ સે હી
 ધર્માસ્તિકાયરૂપ વ્યવહાર સંપાદિત હોજાતા હૈ—તો વાત સ્વતઃ હી સાબિત
 હો જાતી હૈ કિ પ્રદેશસમુદાયાત્મક ધર્માસ્તિકાય માનના નિરર્થક હી હૈ ?

એટલી જ વિશેષતા છે કે ઇવાસ્તિકાય, આકાશાસ્તિકાય અને પુદ્ગલાસ્તિકાયના
 પ્રદેશ અનેક છે એમ કહેવું બેઘણું. બાકીનું સમસ્ત કથન ધર્માસ્તિકાય બેવું જ
 સમજવું ॥ સૂ ૨ ॥

ટીકાર્થ—“ એમે મંતે । ધમ્મત્થિકાએ ત્તિ વત્તવ્વં સિયા ” છે ભદન્ત ! ધર્મા
 સ્તિકાયના એક પ્રદેશને ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય ખરૂં ? પ્રશ્નનું તાત્પર્ય નીચે
 પ્રમાણે છે ધર્માસ્તિકાયના એક પ્રદેશમા ધર્માસ્તિકાયના બધા ધર્મો (ગુણો)
 મોબુદ હોય છે કે નહીં ।

જો એક પ્રદેશને ધર્માસ્તિકાય કહી શકાતો હોય તો પ્રદેશસમુદાય રૂપ
 ધર્માસ્તિકાયનું અસ્તિત્વ માનવાની આવશ્યકતા જ શી રહે કારણ કે ધર્મા-
 સ્તિકાયના એક પ્રદેશને માટે “આ ધર્માસ્તિકાય છે” એવો ઉલ્લેખ કરવામાં
 આવી શકે તો એ વાત તો આપો આપ સાબિત થઈ જાય છે કે પ્રદેશ
 સમુદાયાત્મક ધર્માસ્તિકાય માનવું નિરર્થક જ છે જો પ્રદેશ સમુદાયાત્મક

મદન્ત ! ધર્માસ્તિકાય इति वक्तव्यं स्यात् गौतम ! असंख्येया धर्मास्तिकायप्रदे-
 शास्ते सर्वे कृत्स्नाः प्रतिपूर्णा निरवशेषा एकग्रहणगृहीताः एषः सत्तु गौतम !
 धर्मास्तिकाय इति वक्तव्यं स्यात् एवमधर्मास्तिकायोऽपि । आकाशास्तिकायोऽपि
 जीवास्तिकायोऽपि पुद्गलास्तिकायोऽपि एवमेव नवर त्रयाणामपि अनन्ता मणित-
 ष्याः । श्रेय तदव ॥ सू० २ ॥

હે ઓર इसी तरह से यावत् एक प्रवेश न्यून धर्मास्तिकाय
 भी पूरा धर्मास्तिकाय नहीं कहा जा सकता है । (से किं खाइए णं अते
 धम्मत्थिकाए सि वत्तव्वं सिया) तो हे मदन्त ! कहो धर्मास्तिकाय
 इस शब्द से क्या वक्तव्य होना चाहिये ? (गोयमा ! असंख्येया धम्म-
 त्थिकामपएसा) हे गौतम ! धर्मास्तिकाय के असंख्यातप्रवेश हैं (ते
 सव्वे कसिणा पडिपुण्णा, निरवशेसा, एग ग्रहणगहिआ एस णं गोयमा !
 धम्मत्थिकाए सि वत्तव्वं सिया) वे सब कृत्स्न, प्रतिपूर्ण, निरवशेष
 और एक ग्रहण-शब्द से गृहीत होजावे ऐसे रूप में हो गये हो तब वे
 असंख्यात प्रवेश (धर्मास्तिकाय) इस शब्दद्वारा वक्तव्य हो सकते हैं ।
 (एवमधम्मत्थिकाए वि, आगासत्थिकाए वि जीवत्थिकाए वि पोग्गल-
 त्थिकाए वि एवं चैव-नवरं तिण्णं पि पएसा अणतां भाणियव्वा-सेसं
 तं चैव) इसी तरह से अधर्मास्तिकाय में भी, आकाशास्तिकाय में भी
 और जीवास्तिकाय में भी जानना चाहिये तथा पुद्गलास्तिकाय में भी

शेने પણ ધર્માસ્તિકાય કહેવતા નથી, એક જ પ્રદેશ ન્યૂન (એછે) હોય
 એવા ધર્માસ્તિકાયને પણ પૂરો ધર્માસ્તિકાય કહી શકાતો નથી.

(સે કિં ડાઈયે ણ મતે ! ધમ્મત્થિકાયે સિ વત્તવ્વં સિવા) કે મદન્ત !
 તે પછી ધર્માસ્તિકાય શબ્દથી શું વ્યક્ત થાય છે ? (ગોયમા ! અસંખ્યેયા
 ધમ્મત્થિકાયે અપસા) કે ગૌતમ ! ધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યાત પ્રદેશો હોય છે.

(તે છઠ્ઠે કસિણા પઢિપુણ્ણા નિરવશેસા એગ ગ્રહણગહિઆ એણં ગોયમા !
 ધમ્મત્થિકાયે સિ વત્તવ્વં સિવા) કે ગૌતમ ! તે સમગ્ર પ્રદેશો દૂરત (સંપૂર્ણ)
 પ્રતિપૂર્ણ, નિરવશેષ અને (ધર્માસ્તિકાય) એવા એક શબ્દ વડે બાહ્ય (બહુ
 કથ્યા થોગ્ય) બનતા હોય ત્યારે જ તે અસંખ્યાત પ્રદેશોને ' ધર્માસ્તિકાય '
 શબ્દથી ઓળખી શકાય છે (એવમધમ્મત્થિકાયે વિ, જીવત્થિકાયે વિ પોગ્ગલત્થિ-
 કાયે વિ એવં ચૈવ-નવરં તિણ્ણં પિ પપસા અણતાં ભાણિયવ્વા-સેસં તં ચૈવ)
 અધર્માસ્તિકાય, આકાશાસ્તિકાય, અને છવાસ્તિકાયના વિષયમાં પણ એ પ્રમાણે
 જ સમજવું પુદ્ગલાસ્તિકાયના વિષયમાં પણ એમ જ સમજવું પણ તેમાં,

ટીકા—“એગે મંતે ! ધમ્મત્થિકાયપપ્પસે ધમ્મત્થિકાએ ત્તિ વત્તવ્વં સિયા ”
 ઇકોઽપિ મદન્ત ! ધર્માસ્તિકાયપ્રદેશે ધર્માસ્તિકાય ઇતિ વત્તવ્વં સ્યાત્ હે મદન્ત !
 ધર્માસ્તિકાયસ્ય એકસ્મિન્ પ્રદેશે ધર્માસ્તિકાયત્વં ધર્મો વિદ્યતે ન વા વિદ્યતે
 ચેત્તદા એકસ્મિન્નપિ અવયવે ધર્માસ્તિકાયોઽયમિતિ વ્યવહારઃ સ્યાત્ તથા ચ તત્
 તદવયવેનૈવ ધર્માસ્તિકાય ઇતિ વ્યવહારસ્ય સમ્પાદનાત્ પ્રદેશસમુદાયાત્મકધર્માસ્તિકાયસ્ય નૈરર્થક્યમેવ પ્રસજ્યેત પ્રત્યેકસ્મિન્નવયવે ધર્માસ્તિકાયત્વં ધર્મો ન

હસ પ્રકાર સે જાનના ચાહિયે । વિશેષતા કેવલ હતની હી હૈ કિ જીવાસ્તિકાય, આકાશાસ્તિકાય ઓર પુદ્ગલાસ્તિકાય ઇન કે પ્રદેશ અનન્ત કહના ચાહિયે । બાકી કા અવશિષ્ટ કથનસબ પૂર્વજૈસા નહીં હૈ ॥સૂ ૨॥

ટીકાર્થ—(એગે મંતે ! ધમ્મત્થિકાયપપ્પસે ધમ્મત્થિકાએ ત્તિ વત્તવ્વં સિયા ” હે મદન્ત ! ધર્માસ્તિકાયકા એકપ્રદેશ ધર્માસ્તિકાય હસ શબ્દ દ્વારા વત્તવ્ય હો સકતા હૈ કયા ? પૂછને કા અભિપ્રાય એસા હૈ કિ—ધર્માસ્તિકાય કે એક પ્રદેશ મેં ધર્માસ્તિકાયત્વરૂપ ધર્મ મૌજૂદ હૈ યા નહીં ? યદિ પ્રથમ પક્ષ અંગીકાર કિયા જાવે તો ફિર હસ સ્થિતી મેં પ્રદેશ સમુદાયાત્મક ધર્માસ્તિકાય કે માનને કી આવશ્યકતા હી કયા રહતી હૈ ક્યોં કિ ધર્માસ્તિકાય કે એક ભી પ્રદેશ મેં (યહ ધર્માસ્તિકાય હૈ) એસા વ્યવહાર હોના તુમ માન રહે હો અતઃ જબ એક પ્રદેશ સે હી ધર્માસ્તિકાયરૂપ વ્યવહાર સંપાદિત હોજાતા હૈ—તો બાત સ્વતઃ હી સાબિત હો જાતી હૈ કિ પ્રદેશસમુદાયાત્મક ધર્માસ્તિકાય માનના નિરર્થક હી હૈ ?

એટલી જ વિશેષતા છે કે જીવાસ્તિકાય, આકાશાસ્તિકાય અને પુદ્ગલાસ્તિકાયના પ્રદેશ અનેક છે એમ કહેવું બેઠએ. આકીતું સમસ્ત કથન ધર્માસ્તિકાય જેવું જ સમજવું ॥ સૂ ૨ ॥

ટીકાર્થ—“ એગે મતે ! ધમ્મત્થિકાએ ત્તિ વત્તવ્વં સિયા ” હે મદન્ત ! ધર્માસ્તિકાયના એક પ્રદેશને ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય ખરૂં ? અશ્વત્થુ તાત્પર્યનીચે પ્રમાણે છે ધર્માસ્તિકાયના એક પ્રદેશમા ધર્માસ્તિકાયના બધા ધર્મો (ગુણો) મોબુદ હોય છે કે નહીં !

જો એક પ્રદેશને ધર્માસ્તિકાય કહી શકાતો હોય તો પ્રદેશસમુદાય રૂપ ધર્માસ્તિકાયનું અસ્તિત્વ માનવાની આવશ્યકતા જ શી રહે કારણ કે ધર્માસ્તિકાયના એક પ્રદેશને માટે “આ ધર્માસ્તિકાય છે” એવો ઉલ્લેખ કરવામાં આવી શકે તો એ વાત તો આપો આપ સાબિત થઈ જાય છે કે પ્રદેશ સમુદાયાત્મક ધર્માસ્તિકાય માનવું નિરર્થક જ છે જો પ્રદેશ સમુદાયાત્મક

निघते चेत्तदा प्रत्येकस्मिन् अविद्यमानस्य समुदायेऽपि अवर्तमानत्वमेव भवतीति नियमेन प्रवेशसमुदायात्मकधर्मास्तिकायेऽपि धर्मास्तिकायत्वधर्मस्य वृत्तिता न स्यात् यथा प्रत्येकसिक्ताकणेषु अनुपलभ्यमान तैल न सिक्ताकणसमुदायेऽपि भवति तद्वत् प्रकृतेऽपीति सेयमुच्यते: 'पाशारज्जुरिति न्यायः समापत्तरीति प्रश-
यितुः प्रश्नाश्रयः । मग्नान् आह—'गोयमा !' इत्यादि 'गोयमा' हे गौतम !
'गो इण्डे समे' नायमर्थः समर्थः धर्मास्तिकायस्य प्रतिप्रदेशं धर्मास्तिकायत्व
धर्मो न भवतीत्यर्थः । यथा एकप्रदेशस्य धर्मास्तिकाय इति व्यवहारो न युक्तस्तेषां
सर्वप्रदेशेऽपि स व्यवहारो न युक्त इत्यतिदेशेन दर्शयति—'एवं दोषिणि चि' एवं त्रौ

यदि प्रवेश समुदायात्मक धर्मास्तिकायकी सिद्धि मानने निमित्ते द्वितीय
पक्ष स्वीकार किया जाये और कहा जाये नि धर्मास्तिकायके प्रत्येक प्रदेश
में धर्मास्तिकायत्वरूप धर्म नहीं है तो फिर इस प्रकार के कथन में पूरे
धर्मास्तिकाय का ही लोप प्राप्त होता है क्यों कि जो धर्म अवयव में नहीं
है—वह अवयव के समुदाय में क्योंकर हो सकता है । इस लिये यह
मानना ही पड़ेगा कि (प्रत्येकस्मिन् अविद्यमानस्य समुदायेऽपि अवर्त-
मानत्वमेव) प्रदेश समुदायात्मक धर्मास्तिकाय में धर्मास्तिकायत्वरूप धर्म
की वृत्ति नहीं है । जैसे प्रत्येक सिक्ताकणों में अनुपलभ्यमान तैल की वृ-
त्ति सिक्ता कणों के समुदाय में नहीं होती है । इस तरह उच्यते ।
पाशारज्जु प्राप्त होनी है । ऐसा आशय प्रकटकर्ता है इसका उत्तर देते
हुए प्रभु कहते हैं कि (गोयमा) हे गौतम ! (गो इण्डे समे) यह

धर्मास्तिकायने शिद्ध कर्तवाने आटे उपर दशावेष्टो वीजो भव स्वीकारत्वाभां
आवे अने कहेवार्भा आवे के धर्मास्तिकायना प्रत्येक प्रदेशभां धर्मास्तिकायत्व
रूप धर्म होता नही, तो जे प्रकारना कथनही तो पूरा धर्मास्तिकायने न
होय ववाने प्रसंग उलो याय छे कश्य के के धर्म अवयवभां अस्तित्व न
धरावतो होय ते अवयवना समुदायभां क्वांभी स भवी शके । तेथो जेवु भानवु न
पश्ये के "प्रत्येकस्मिन् अविद्यमानस्य समुदायेऽपि अवर्तमानत्वमेव" प्रदेशसमु-
दायात्मक धर्मास्तिकायभां धर्मास्तिकायत्वरूप धर्मना सहजाय होता नही जेवी
रीते रीतीना प्रत्येक कणुभावी तेल भगवानो स भव नही होता तेवी न रीते
रीतीना कहेना समुदायभावी पणु तेल भगवानो स भव होता नही जेन प्रभावे
धर्मास्तिकायना जेक प्रदेशभां के धर्म (गुण) नही ते तेना प्रदेशसमुदायभां

१ उच्यते: पाशारज्जुरिति न्याया—अथ—जैसे दोनो तरफ जाक रिछा हो ताके
मध्य में अवस्थित पुरुष अगर इपर जाता है तो भी जाक में पड़ता है इपर
झटके भी जाकमें फसता है अतः मध्य में ही सुरती होता है । यह न्याय
इतोऽप्याप्रवृत्तरी य व्यापके समान है—इपर बाप इपर मही बीचमें मग्न मनु-
ष्य के समान है—अर्थात् दोनो तरफ मध्य अवस्थित है ।

અપિ 'તિણિ વિ ચત્તારિ ત્રિ' ત્રયોઽપિ ચત્તારોઽપિ 'પંચ છ સત્ત અટ્ટ નવ દશ સંખેજ્જા' પશ્ચપદ સપ્તાષ્ટ નવ દશ સંખ્યાતાઃ અપીતિશેષઃ ધર્માસ્તિકાયસ્ય પ્રત્યે-
કસ્મિન્ અવયવે ધર્માસ્તિકાય ઇતિ વ્યવહારો ન યુક્તસ્તથા દ્વિત્રિચતુઃપશ્ચપદ સપ્તાષ્ટ
નવ દશ સંખ્યેયાઽવયવેષ્વપિ ધર્માસ્તિકાય ઇતિ વ્યવહારો નૈવ યુજ્યતે इत्यर्थः ।
'અસંખેજ્જા મંતે ! ધમ્મત્થિકાયપણસા ધમ્મત્થિકાણ ત્તિ વત્તવ્વં સિયા' અસં-
ખ્યાતાઃ ભદન્ત ! ધર્માસ્તિકાયપ્રદેશઃ ધર્માસ્તિકાય ઇતિ વક્તવ્યં સ્યાત્-હે ભદ-
ન્ત ! ધર્માસ્તિકાયસ્ય અસંખ્યાતા પ્રદેશા ધર્માસ્તિકાયશબ્દેન વ્યપદેહું શક્યાઃ
કિમિત્યર્થઃ, ભગવાન આહે- 'ગોયમા ! જો ઇળદ્દે સમદ્દે' હે ગૌતમ ! નાયમર્થઃ
સમર્થઃ-હે ગૌતમ ! એવં વ્યપદેહું નૈવ શક્યતે इत्यर्थः 'एगपएमूणे त्रि य णं मंते !

અર્થ સમર્થ નહીં હૈ અર્થાત્ ધર્માસ્તિકાય કે પ્રતિપ્રદેશ મેં ધર્માસ્તિકા-
યત્વરૂપ વ્યવહાર નહીં હોતા હૈ । હસી તરહ સે (દોણિણ વિ, તિણિ
વિ ચત્તારિ વિ, પંચ, છ, સત્ત, અટ્ટ, નવ, દસ, સંખેજ્જા) ધર્માસ્તિકાય
કે દો પ્રદેશોમેં, ત્રીન પ્રદેશોમેં, ચાર પ્રદેશોમેં, પાંચ પ્રદેશોમેં, છહ પ્ર-
દેશોમેં, સાત પ્રદેશોમેં, આઠ પ્રદેશોમેં નૌ પ્રદેશોમેં દશ પ્રદેશોમેં,
સંખ્યાત પ્રદેશોમેં ભી ધર્માસ્તિકાયરૂપ વ્યવહાર નહીં હોતા હૈ । (અસ
ખેજ્જા ણં મંતે ! ધમ્મત્થિકાયપણસા) હે ભદન્ત ! ધર્માસ્તિકાય કે
અસંખ્યાત પ્રદેશ ધર્માસ્તિકાયરૂપ રો વક્તવ્ય હો સકતા હૈં કયા ? અ-
ર્થાત્ વે ધર્માસ્તિકાય હસ શબ્દ સે વ્યપદેશ કરના શક્ય હો સકતે
હૈં ? હસકા ઉત્તર દેતે હુણ પ્રશ્ન કહતે હૈં (ગોયમા) હે ગૌતમ (જો
ઇળદ્દે સમદ્દે) યહ અર્થ સમર્થ નહીં હૈ અર્થાત્ ધર્માસ્તિકાય કે અસં-
ખ્યાત પ્રદેશ ધર્માસ્તિકાય હસ શબ્દ સે વ્યપદેશ કરના શક્ય નહીં

પણ હોતો નથી. હવે ગૌતમ સ્વામીના પ્રશ્નને મહાવીર સ્વામીએ જે જવાબ
આપ્યો તેનું ટીકાકાર નીચે પ્રમાણે સ્પષ્ટીકરણ કરે છે

(ગોયમા) હે ગૌતમ ! (જો ઇળદ્દે સમદ્દે) તે અર્થ યોગ્ય નથી. અટલે
ધર્માસ્તિકાયના એક પ્રદેશને ધર્માસ્તિકાય કહી શકાતો નથી એજ પ્રમાણે
(દોણિણ વિ, તિણિ વિ, ચત્તારિ વિ, પંચ છ, સત્ત, અટ્ટ, નવ, દસ, સંખેજ્જા)
ધર્માસ્તિકાયના બે પ્રદેશને, ત્રણ પ્રદેશને, ચાર પ્રદેશને, પાંચ પ્રદેશને, છ પ્રદેશને,
સાત પ્રદેશને, આઠ પ્રદેશને, નવ પ્રદેશને દસ પ્રદેશને અને સંખ્યાત પ્રદેશને
(ત્રણ ધર્માસ્તિકાય કહી શકાતાં નથી) (અસંખેજ્જા ણં મંતે ! ધમ્મત્થિકાયપણસા ?
હે ભદન્ત ! ધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યાત પ્રદેશને ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય અર ?
અટલે હે ધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યાત પ્રદેશને માટે (ધર્માસ્તિકાય) શબ્દ
પાપરી શકાય અર ? મહાવીર પ્રશ્ન તેનો આ પ્રમાણે જવાબ આપે છે-
(ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (જો ઇળદ્દે સમદ્દે) આ અર્થ પણ અસમર્થ નથી.

विद्यते चेत्तदा प्रत्येकस्मिन् अभिद्यमानस्य समुदायेऽपि अवर्तमानत्वमेव भवतीति नियमेन प्रवेशसमुदायात्मकधर्मास्तिकायेऽपि धर्मास्तिकायत्वधर्मस्य वृत्तिः न स्यात् यथा प्रत्येकसिक्ताकणेषु अनुपलभ्यमान तैल न सिक्ताकणसमुदायेऽपि भवति तद्वत् प्रकृतेऽपीति सेयमुभयतः 'पाशारज्जुरिति न्यायः समापततीति प्रत्ययितुः प्रश्नाश्रयः । मगवान् भावः—'गोयमा !' इत्यादि 'गोयमा' हे गौतम ! 'जो इण्डे सम' नायमर्थः समर्थः धर्मास्तिकायस्य प्रतिप्रवेशं धर्मास्तिकायत्वधर्मो न भवतीत्यर्थः । यथा एकप्रदेशस्य धर्मास्तिकाय इति व्यवहारो न युक्तस्तथा सर्वप्रदेशेऽपि व्यवहारो न युक्त इत्यतिदेशेन दर्शयति—'एव दोषि वि' एवं ही

यदि प्रदेशा समुदायात्मक धर्मास्तिकायकी सिद्धि मानने निमित्ते द्वितीय पक्ष स्वीकार किया जावे और कहा जावे कि धर्मास्तिकायके प्रत्येक प्रदेश में धर्मास्तिकायस्वरूप धर्म नहीं है तो फिर इस प्रकार के कथन में पूरे धर्मास्तिकाय का ही छोप प्राप्त होना है क्योंकि जो धर्म अवयव में नहीं है—वह अवयव के समुदाय में क्योंकर हो सकता है । इस छिपे हुए मानना ही पड़ेगा कि (प्रत्येकस्मिन् अभिद्यमानस्य समुदायेऽपि भवति मानत्वमेव) प्रदेशा समुदायात्मक धर्मास्तिकाय में धर्मास्तिकायस्वरूप धर्म की वृत्ति नहीं है । जैसे प्रत्येक सिक्ताकणों में अनुपलभ्यमान तैल की वृत्ति सिक्ता कणों के समुदाय में नहीं होती है । इस तरह उभयता पाशारज्जु प्राप्त होनी है । ऐसा आशय प्रसक्तार्ताका है इसका उत्तर देते हुए प्रसु कहते हैं कि (गोयमा) हे गौतम ! (जो इण्डे सम) यह

धर्मास्तिकायने सिद्ध करवाने भाटे उपर द्वावेदो वीजे मत स्वीकार्यतां आवे जने कहेवाभां आवे के धर्मास्तिकायना प्रत्येक प्रदेशभा धर्मास्तिकायत्व रूप धर्म होता नही तो जे प्रकारना कथनही तो पूरा धर्मास्तिकायना व वीज कवाने अस ज ठोरा थाव छे कथ्य के के धर्म अवयवभा अस्तित्व न धरावतो होव ते अवयवना समुदायभा कमाधी स भवी शके ? तेही जेवु भानु व पछे के "प्रत्येकस्मिन् अभिद्यमानस्य समुदायेऽपि अवर्तमानत्वमेव" प्रदेशसमुदायात्मक धर्मास्तिकायभा धर्मास्तिकायत्व रूप धर्मना सहजाव होता नही जेही रीते रीतीना प्रत्येक कणभाधी तेस भजवाने स भव नही होता तेही व रीते रीतीना कहेना समूहभाधी पछे तेस भजवाने स भव होता नही जेव प्रथावे धर्मास्तिकायना जेक प्रदेशभा के धर्म (गुण) नही ते तेना प्रदेशसमुदायभा

१ उभयतः पाशारज्जुरिति न्यायः—अब—जैसे दोनों तरफ बांध बिछा हो उसके मध्य में अवस्थित पुरुष अगर इसर खाना है तो भी बांध में फसता है अगर जानेसे भी बांधमें फसता है अतः मध्य में ही दुःखी होता है । यह न्याय इतोऽप्यप्रवृत्तरी प न्यायके समान है—इसर बांध अगर नहीं बीचमें बांध मध्य के समान है—अर्थात् दोनों तरफ मध्य वनस्थित है ।

નેયવૃત્ત" એવમ્પરિતનમ્ એકૈકં સંયોજ્યતા યો યોઽધસ્તનસ્તં ત છર્દયતા જ્ઞાતિવ્યમ્,
 એવ પૂર્વોક્તક્રમેણોપરિતનમેકૈકં સંયોજ્યન્ અધસ્તનં પૂર્વોક્તમેકૈકં ત પરિ-
 ત્યજન્ પૂર્વવદેવં સત્ત્વ જ્ઞાતિવ્યમ્ ! કિયત્પર્યન્તમિત્યાહ— 'જાવ અતીતઅનાગમ્યદ્વા-
 પચ્છા સવ્વદ્વા' યાવદતીતાનાગતાદ્વા પશ્ચાત્સર્વાદ્વા ઘનોદધિત આરભ્ય અતીત-
 દ્વાઽનાગતાદ્વાપર્યન્તં, પશ્ચાત્ તદનન્તરં સર્વાદેતિ સર્વાદ્વાપર્યન્તં સર્વે પ્રશ્નોત્તરં
 સ્વયમુદ્ગતીયમિતિ, કિયદવધીત્યાહ— 'જાવ અણાણુપુન્ની એસા રોહા !' યાવત્ અન્ના-
 નુપૂર્વો એસા રોહા ! યાવત્પદેન ઉત્તરપક્ષે 'પુન્નિ પેતે પચ્છાપેતે દોવિ એ સાસયા ભાવા'
 इति संयोजनीयम्। रोहा पूर्वमप्येतौ पश्चादप्येतौ द्वात्रप्येतौ शाश्वतौ भावौ एषौऽ-

તેણ નેયવૃત્ત) इस तरह ऊपर के अर्थात् आगे के एक एक पद को
 जोड़कर और जो जो नीचे के पद हैं अर्थात् पीछे के पद हैं उन्हें
 छोड़कर पहिले की तरह से ही सब प्रश्नोत्तर जानना चाहिये। कहाँ
 तक जानना चाहिये इस के लिये सूत्रकार कहते हैं कि (जाव अती-
 ताणागम्यद्वा सव्वद्वा) यावत् अतीत अनागत काल तक और पश्चात्
 सर्वाद्वा तक (जाव अणाणुपुन्नी एसा रोहा) यावत् हे रोह ! यहाँ
 किसी भी प्रकार का क्रम नहीं है। तात्पर्य कहने का यह है कि घनो-
 दधि से लेकर अतीत अनागताद्वा तक, पश्चात् सर्वाद्वा तक सब प्रश्न
 और उत्तर अपने आप ही पहिले की तरह से बना कर समाधानयुक्त
 कर लेना चाहिये। "जाव अणाणुपुन्नी एसा रोहा" में जो यावत् पद रखा
 है उससे सूत्रकार इस बात की सूचना देते हैं कि उत्तरपक्ष में जो
 "पुन्नि पेटे पच्छापेटे, दुवे सासया भावा" पहिले ऐसा कहा गया है सो

આ રીતે જ આગળ આવતાં પ્રત્યેક પદને જોડીને અને પાછળ આવી ગયેલાં પદોને
 છોડીને પહેલા બતાવ્યા પ્રમાણે જ પ્રશ્નોત્તરો બનાવવા જોઈએ, કયાં સુધી આ
 પ્રમાણે પ્રશ્નોત્તર બનાવવા ? તે સૂત્રકાર કહે છે કે (જાવ અતીતાણાગમ્યદ્વા
 સવ્વદ્વા) અતીત અનાગત કાળ સુધી અને છેવટે સર્વાદ્વા સુધી આ પ્રમાણે
 કરવું (જાવ અણાણુપુન્ની એસા રોહા !) હે રોહ ! તે બધામા ફેરવે પણ પ્રકારનો
 ક્રમ નથી, તે અનાનુપૂર્વી છે ત્યાં સુધી પણ ઉપર સુદૃઢ કહેવું. આપણે જો
 છે કે ઘનોદધિથી લઈને, અતીત અનાગત દ્વાદ્વા સુધી અને છેવટે સર્વાદ્વા સુધી
 તમામ પ્રશ્નો અને ઉત્તરો પહેલા પ્રમાણે જ બંને બનાવી લેવા જોઈએ,
 (જાવ અણાણુપુન્ની એસા રોહા !) એ વાક્યના યાવત્ (પર્યન્ત) પદ વડે સૂત્ર-
 કાર એ સૂચન કરે છે કે ઉત્તરપક્ષમા જે "પુન્નિ પેતે પચ્છા પેતે દોવિ એ સાસયા
 ભાવા" કહ્યું છે તે બંને પહેલા પણ છે અને અતીત અનાગત દ્વાદ્વા સુધી

ધમ્મત્થિકાપ ધમ્મત્થિકાપ તિ વત્તસ્વંસિયા ' એકપ્રવેશોનોડપિ ચ સલ્લ મદન્ત !
 ધર્માસ્તિકાયો ધર્માસ્તિકાય इति वक्तव्यं स्यात्-हे मदन्त ! यावत्पर्यन्तम् एकेनापि
 પ્રવેશેન કનઃ=ધર્માસ્તિકાયઃ તાત્ત્વં કિં ધર્માસ્તિકાય इति शब्देन व्यपहृतं वक्तव्यं
 કિમિતિ ? મગધાનાહ- ' જો જણદે સમદે ' નાયમર્થ સમર્થઃ इति प्रतिज्ञामात्रेण क-
 થિતમ્ યુક્તિસ્તુ ન પ્રતિપાદિતા इति तत्र युक्तिं ज्ञातुं गौतमः पुनः भ्रमयति ' સે
 કેણદે જ ' રૂપાદિના ' સે કેણદે જ મતે ! ' તત્ કેન અર્થેન હે મદન્ત ! ' એ-
 વુચ્યતે ' એ ધમ્મત્થિકાપસ્સ પપસે નો ધમ્મત્થિકાપ તિ વત્તસ્વ સિયા ' એકો
 ધર્માસ્તિકાપસ્વ પ્રવેશો ન ધર્માસ્તિકાપ इति वक्तव्यं स्यात्- ' જાવ યગપપસુજે
 વિ ય જ ધમ્મત્થિકાપ નો ધમ્મત્થિકાપ તિ વત્તસ્વ સિયા ' યાવદેકપ્રવેશોનોડપિ
 ચ સલ્લ ધર્માસ્તિકાયો ન ધર્માસ્તિકાય इति वक्तव्यं स्यात्-हे मगधन् ! धर्मास्ति-

हैं । (यगपपसुजे वि य ज मंते ! धम्मत्थिकाए धम्मत्थिकाए ति
 वत्तस्व सिया) हे मदन्त ! एक प्रवेशान्यून धर्मास्तिकाय क्या (धर्मास्तिकाय)
 इस शब्दद्वारा कहा जा सकता है ? इसके उत्तरमें प्रभुने कहा (गोयमा !)
 हे गौतम ! (जो इण्हे समद्वे) यह अर्थ समर्थ नहीं है । इस प्रकार
 प्रभु का कथन सुनकर इस विषय में युक्ति की जिज्ञासा वाले गौतम
 ने पूछा (से केणद्वेण मंते ! एव वुच्यह) हे मदन्त ! आप ऐसा किस
 कारण से कहते हैं कि (एगे धम्मत्थिकापस्स पपसे नो धम्मत्थिकाए
 ति वत्तस्व सिया, जाव यगपपसुजे वि य ज धम्मत्थिकाए नो धम्म-
 त्थिकाए ति वत्तस्व सिया) धर्मास्तिकाय का एक प्रवेश धर्मास्तिकाय
 नहीं कहा जा सकता है, यावत् एक प्रवेशान्यून भी धर्मास्तिकाय धर्मा-
 स्तिकाय नहीं कहा जा सकता है । अर्थात् धर्मास्तिकाय के एक प्रवेश

તેનુ કારણે એ છે કે ધર્માસ્તિકાયાના અસંખ્યાત પ્રવેશને પણ ધર્માસ્તિકાય કહી
 શકાય નહીં (યગપપસુજે વિ ય જ મંતે ! ધમ્મત્થિકાપ ધમ્મત્થિકાપ તિ વત્તસ્વ
 સિયા !) ગૌતમ સ્વામી પૂછે છે કે- કે બદન્ત ! એમાં એક પ્રવેશ એટલો હોય
 એવા ધર્માસ્તિકાયાને માટે " ધર્માસ્તિકાય " એવો પ્રયોગ કરી શકાય અથવા ?
 ભગવાન જવાબ આપે છે- (ગોયમા ! જો જણદે સમદે) હે ગૌતમ ! એ વાત
 બરાબર નથી-એક ન્યૂન પ્રવેશવાળા ધર્માસ્તિકાયાને પણ " ધર્માસ્તિકાય " કહી
 શકાય નહીં ભગવાનનો આ પ્રકારનો જવાબ સાંભળીને તેનુ કારણ બાધવાની
 વિજ્ઞાસાથી ગૌતમ સ્વામી નીચેના પ્રશ્ન પૂછે છે- (સે કેણદેજ મંતે ! એ વુચ્યહ)
 હે બદન્ત ! આપ શા કારણે એવું કહેા-છો કે (એ ધમ્મત્થિકાપસ્સ પપસે નો
 ધમ્મત્થિકાપ તિ વત્તસ્વ સિયા જાવ યગપપસુજે વિ ય જ ધમ્મત્થિકાપ નો ધમ્મત્થિક-
 કાપ તિ વત્તસ્વ સિયા) ધર્માસ્તિકાયાના એક પ્રવેશને ધર્માસ્તિકાય કહી શકાતો
 નથી એક પ્રવેશની ન્યૂનતા હોય તો પણ તેને ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય નહીં

अपि ' तिणि वि चत्तारि वि ' त्रयोऽपि चत्वारोऽपि ' पंच छ सत्त अट्ट नव दस संखेज्जा ' पञ्चपद सप्ताष्ट नव दश संख्याताः अपीतिशेषः धर्मास्तिकायस्य प्रत्ये-
कस्मिन् अवयवे धर्मास्तिकाय इति व्यवहारो न युक्तस्तथा द्वित्रिचतुःपञ्चपद सप्ताष्ट
नव दश संख्येयाऽवयवेष्वपि धर्मास्तिकाय इति व्यवहारो नैव युज्यते इत्यर्थः ।
' असंखेज्जा भंते ! धम्मत्थिकायपएमा धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया ' असं-
ख्याताः भदन्त ! धर्मास्तिकायप्रदेशाः धर्मास्तिकाय इति वक्तव्यं स्यात्—हे भद-
न्त ! धर्मास्तिकायस्य असंख्याताः प्रदेशा धर्मास्तिकायशब्देन व्यपदेष्टुं शक्याः
किमित्यर्थः, भगवान् आह—' गोयमा ! णो इण्ठे समट्ठे ' हे गौतम ! नायमर्थः
समर्थः=हे गौतम ! एवं व्यपदेष्टुं नैव शक्यते इत्यर्थः ' एगपएमूणे त्रि य णं भंते !

अर्थ समर्थ नहीं है अर्थात् धर्मास्तिकाय के प्रतिप्रदेश में धर्मास्तिका-
यत्वरूप व्यवहार नहीं होता है । इसी तरह से (दोणि वि, तिणि
वि चत्तारि वि, पंच, छ, सत्त, अट्ट, नव, दस, संखेज्जा) धर्मास्तिकाय
के दो प्रदेशोंमें, तीन प्रदेशोंमें, चार प्रदेशोंमें, पांच प्रदेशोंमें, छह प्र-
देशोंमें, सात प्रदेशोंमें, आठ प्रदेशोंमें नौ प्रदेशोंमें दश प्रदेशोंमें,
संख्यात प्रदेशोंमें भी धर्मास्तिकायरूप व्यवहार नहीं होता है । (असं
खेज्जा णं भंते ! धम्मत्थिकायपएमा) हे भदन्त ! धर्मास्तिकाय के
असंख्यात प्रदेश धर्मास्तिकायरूप से वक्तव्य हो सकता है क्या ? अ-
र्थात् वे धर्मास्तिकाय इस शब्द से व्यपदेश करना शक्य हो सकते
हैं ? इसका उत्तर देते हुए प्रभु कहते हैं (गोयमा) हे गौतम (णो
इण्ठे समट्ठे) यह अर्थ समर्थ नहीं है अर्थात् धर्मास्तिकाय के असं-
ख्यात प्रदेश धर्मास्तिकाय इत्त शब्द से व्यपदेश करना शक्य नहीं

प्रभु-डोतो मथी. डुवे जीतम स्वाभीना प्रश्नो भडावीर स्वाभीणे ने ज्वाण
आये तेतुं टीकाकार नीचे प्रमाणे स्पष्टीकरण करे छे

(गोयमा) हे गौतम ! (णो इण्ठे समट्ठे) ते अर्थ योग्य नहीं आटवे
हे धर्मास्तिकायना एक प्रदेशने धर्मास्तिकाय कही शकता नथी अथवा प्रमाणे
(दोणि ' वि ' तिणि वि, चत्तारि वि, पंच छ, सत्त, अट्ट, नव, दस, संखेज्जा)
धर्मास्तिकायना छे प्रदेशने, त्रणु प्रदेशने, चार प्रदेशने, पाच प्रदेशने, छ प्रदेशने,
सात प्रदेशने, आठ प्रदेशने, नव प्रदेशने दस प्रदेशने अने संख्यात प्रदेशने
(त्रणु धर्मास्तिकाय कही शकता नथी) असंखेज्जा णं भंते ! धम्मधिकोयपएमा ?
हे भदन्त ! धर्मास्तिकायना असंख्यात प्रदेशने धर्मास्तिकाय कही शकय अइ ?
आटवे हे धर्मास्तिकायना असंख्यात प्रदेशने माटे (धर्मास्तिकाय) शब्द
आपरी शकय अइ ? भडावीर प्रभु तेनो आ प्रमाणे ज्वाण आये छे—
(गोयमा !) हे गौतम ! (णो इण्ठे समट्ठे) आ अर्थ प्रणु अपापर नथी.

ધર્મસ્તિકાય ધર્મસ્તિકાય સિ વત્તન્નંસિયા ' એકપ્રદેશોનોડપિ ચ સઘુ મદન્ત !
 ધર્માસ્તિકાયો ધર્માસ્તિકાય સિ વત્તન્નં સ્યાત્-હે મદન્ત ! યાવત્પર્યન્તમ્ રહેનારો
 પ્રદેશેન ઝનઃ=ધર્માસ્તિકાય તાવત્ કિં ધર્માસ્તિકાય સિ વત્તન્નં ધ્યવાત્તુ કસ્મિં
 કિમિતિ ? મગવાનાર-' જો રૂણદે સમદે ' નાયમર્થ સમર્થ સિ પ્રતિગ્રામીય
 યિતમ્ યુક્તિસ્તુ ન પ્રતિપાદિતા સિ સઘુ યુક્તિં જ્ઞાતું ગૌતમઃ પુનઃ પ્રશ્નપતિ ' છે
 કેણદે જ ' સિયાદિના ' સે કેણદે જ મત ! ' તત્ કેન અર્થેન હે મદન્ત ! ' ર
 મુચ્યસે ' એવે ધર્મસ્તિકાયસ્સ પપસે નો ધર્મસ્તિકાય સિ વત્તન્નં સિયા ' ર
 ધર્માસ્તિકાયસ્ય પ્રદશા ન ધર્માસ્તિકાય સિ વત્તન્નં સ્યાત્-' જાવ યાવત્પર્ય
 વિ ય જ ધર્મસ્તિકાય નો ધર્મસ્તિકાય સિ વત્તન્નં સિયા ' યાવદ્ધર્મપ્રદેશોનોડપિ
 ચ નલ્લ ધર્માસ્તિકાયો ન ધર્માસ્તિકાય સિ વત્તન્નં સ્યાત્-હે મગવત્ ! ધર્માસ્તિકા

હૈ । (યાવત્પર્યન્તે વિ ય જ મતે ! ધર્મસ્તિકાય ધર્મસ્તિકાય સિ
 વત્તન્નં સિયા) હે મદન્ત ! એક પ્રદેશન્યૂન ધર્માસ્તિકાય કયા (ધર્માસ્તિકાય)
 હસ શબ્દદ્વારા કહા જા સકતા હૈ ? હસકે ઉત્તરમે પ્રશ્નને કહા (ગોયમા)
 હે ગૌતમ ! (જો રૂણદે સમદે) યહ અર્થ સમર્થ નહીં હૈ । હસ પ્રશ્ન
 પ્રશ્ન કા કથન સુનકર હસ વિષય મેં યુક્તિ કો જિજ્ઞાસા થાંધે ગૌતમ
 ને પૂછા (સે કેણદે જ મતે ! એવ મુચ્યહ) હે મદન્ત ! આપ પેસા કિસ
 કારણ સે કહતે હૈ કિ (એવે ધર્મસ્તિકાયસ્સ પપસે નો ધર્મસ્તિકાય
 સિ વત્તન્નં સિયા, જાવ યાવત્પર્યન્તે વિ ય જ ધર્મસ્તિકાય નો ધર્મ-
 સ્તિકાય સિ વત્તન્નં સિયા) ધર્માસ્તિકાય કા એક પ્રદેશ ધર્માસ્તિકાય
 નહીં કહા જા સકતા હૈ, યાવત્ એક પ્રદેશન્યૂન મી ધર્માસ્તિકાય ધર્મા-
 સ્તિકાય નહીં કહા જા સકતા હૈ । અર્થાત્ ધર્માસ્તિકાય કે એક પ્રદેશ

તેનુ કારણ જો છે કે ધર્માસ્તિકાયના જાણનાર પ્રદેશને પણ ધર્માસ્તિકાય મી
 શકાય નહીં (યાવત્પર્યન્તે વિ ય જ મતે ! ધર્મસ્તિકાય ધર્મસ્તિકાય સિ વત્તન્નં
 સિયા !) ગૌતમ સ્વામી પૂછે છે કે- ' હે મદન્ત ! જેમાં જોક પ્રદેશ જોધે કો
 જોવા ધર્માસ્તિકાયને માટે " ધર્માસ્તિકાય " જોવો પ્રયોગ કરી શકાય નથી !
 જાણનાર જવાબ આપે છે- (ગોયમા ! જો રૂણદે સમદે) હે ગૌતમ ! જે વા
 જાણનાર નથી-જોક ન્યૂન પ્રદેશવાળા ધર્માસ્તિકાયને પણ " ધર્માસ્તિકાય " કહી
 શકાય નહીં જાણનારને આ પ્રકારનો જવાબ સાંભળીને તેનુ કારણ બાધક
 વિશ્વાસથી ગૌતમ સ્વામી નીચેનો પ્રશ્ન પૂછે છે- (સે કેણદે જ મતે ! એવ મુચ્યહ)
 હે મદન્ત ! આપ શા કારણે જોવું કહેા છે કે (એવે ધર્મસ્તિકાયસ્સ પપસે નો
 ધર્મસ્તિકાય સિ વત્તન્નં સિયા જાવ યાવત્પર્યન્તે વિ ય જ ધર્મસ્તિકાય નો ધર્મ-
 સ્તિકાય સિ વત્તન્નં સિયા) ધર્માસ્તિકાયના જોક પ્રદેશને ધર્માસ્તિકાય મી શકાય
 નથી જોક પ્રદેશની ન્યૂનતા કોમ તો પણ તેને ધર્માસ્તિકાય મી શકાય નહીં

કાયસ્યૈકસિત્ત્વ પ્રદેશે ન્યુનેઽપિ ધર્માસ્તિકાયે ધર્માસ્તિકાયશબ્દેન વ્યવહારઃ
કથમ્ ભવતિ તત્ર કિં વારણમિતિ પ્રશ્નાશયઃ ભગવાનાહ—‘ સે પૂર્ણં ગોયમા’
इत्यादि । ‘ से पूर्णं गोयमा ! ’ तन्मूनं गौतम ! ‘ खंडे चक्के सगळे चक्के ’
खण्डं चक्रम् सकलम् चक्रम्—हे गौतम ! चक्रस्य एको भागश्चक्रं भवति किंवा
सकलं चक्रं चक्रं भवतीति भगवतः गौतमप्रति कथनम् यथा खण्डं चक्रं चक्रं न
भवति खण्डचक्रमित्येव तस्य व्यवहारात् किन्तु सकलमेव चक्रं चक्रं भवति एवं
प्रदेशेनापि ऊनो धर्मास्તિકાયો न धर्मास्તિકाय इति वक्तव्यं स्यात् यथा चक्रे तथे
हापि ज्ञातव्यम् एष निश्चयनयाऽनुसारेण एकप्रदेशेनाप्यून धर्मास्તિકાય

में धर्मास्तिकाय इस शब्द का व्यवहार नहीं हो सकता है और न एक
प्रदेश से हीन धर्मास्तिकाय में धर्मास्तिकाय इस शब्द का व्यवहार हो
सकता है सो हे भदन्त ! इसमें क्या कारण है ? इस विषय में गौतम
की जिज्ञासा के समाधान निमित्त प्रभु उनसे ही पूछते हुए कहते हैं
(से पूर्णं गोयमा !) हे गौतम ! तुम यह तो कहो कि (खंडे चक्के,
सगळेचक्के) चक्र का एक भाग चक्र कहलाता है कि समस्त चक्र चक्र
कहलाता है । भदन्त ! चक्र का खंड चक्र नहीं कहलाता किन्तु समस्त
चक्र चक्र कहलाता है, तो हे गौतम ! सोचो जिस प्रकार चक्र का खण्ड
चक्र नहीं कहा जा सकता वह तो खण्ड चक्र इसरूप से ही व्यवहृत होता है
किन्तु पूरा चक्र ही चक्र कहा जाता है— इसी प्रकार एक प्रदेश से भी
प्यून धर्मास्तिकाय, धर्मास्तिकाय नहीं कहला सकता है । वह तो खण्ड

અહીં યાવત્ (પર્યન્ત) પદ્ધતી નીચેના સૂત્રપાઠ ગ્રહણ કરાયો છે—એ, ત્રણ, ચાર,
પાંચ આદિથી લઈને ધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યાત પ્રદેશોને પણ ધર્માસ્તિકાય
કહી શકાય નહીં આ રીતે ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને તેમણે આપેલા
ઉત્તરનું કારણ પૂછે છે આ પ્રશ્નનો ઉત્તર સમજાવવા માટે પ્રભુ તેમને જ પ્રશ્ન
કરે છે—(સે પૂર્ણં ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (खंडे चक्के, सगळे चक्के !) આખા
ચક્રને ચક્ર કહેવાય કે તેના એક ભાગને ચક્ર કહેવાય ? ગૌતમ સ્વામી જવાબ
આપે છે— હે ભદન્ત ! ચક્રના ભાગને ચક્ર કહેતા નથી પણ આખા ચક્રને
જ ચક્ર કહેવાય છે ” મહાવીર પ્રભુ સમજાવે છે, “ જેમ ચક્રના ભાગને ચક્ર
કહેવાય નહીં પણ ચક્રનો ભાગ જ કહેવાય છે, અને આખા ચક્રને જ ચક્ર
કહેવાય છે, એજ પ્રમાણે એક પ્રદેશ પણ ઓછો હોય એવા ધર્માસ્તિકાયને
ધર્માસ્તિકાય કહેવાતું નથી. તેને તો ધર્માસ્તિકાયનો ભાગ જ કહેવાય છે. આ

ધર્માસ્તિકાયવ્યવહારસ્ય નિવેષઃ કૃતઃ વ્યવહારનયાનુસારેણ તુ પદાદિપ્રદેશા
 નોઽપિ પદાર્થસ્તેનૈવ રૂપેણ વ્યવદિશ્યતે એવ યથા કતિપયાશ્રયવરહિતોઽપિ પટઃ
 પટ એવ મવતિ, યથા વા છિન્નલાઘ્નોઽપિ ક્ષ્વા ક્ષ્વા એવ કલ્પ્યતે, તદુક્તમ્ વૈયાક
 રમૈઃ ' એકદેશવિકૃતમનન્યવત્ ' इति । મગધત કાકુમિભિતમુત્તરં નિશ્ચમ્ય
 કયયતિ ગૌતમઃ ' મગધ સગણે વચકે નો સંઘે વચકે ' હે મગધન્ ! સક્કમ્ વચ્ચ
 નો સંખંઠં વચ્ચમ્ પિકલાવયવસ્ય ન વચ્ચમિતિ સજ્ઞા મવતિ અપિ તુ સક્કલાવયવસ્યૈવ
 વચ્ચમિતિ સજ્ઞા મવતીતિ ગૌતમ ! મુસાદેવોત્તરં નિર્ણાધ્યાતિશ્ચયેનાન્યમાઽપિ ઇત્થ
 મેવોત્તર પ્રદર્શયતિ મગધાન્- ' एवं છત્તે ' इत्यादि, ' एवं છત્તેવમ્મે દ્વેદ્દેવસે આઠ્ઠે

ધર્માસ્તિકાય કહણાથેગા, વચ્ચકી તરહ હી યહાં જાનના આહિયે । એસા
 પહ કપન નિશ્ચયનય કે મતાનુસાર હૈ-નિશ્ચયનય કે મન્તવ્યાનુસાર
 ધર્માસ્તિકાય કે એક પ્રદેશ મેં પૂરે ધર્માસ્તિકાય કા વ્યવહાર હોના નિ
 ચિદ્ધ માના ગયા હૈ । પરન્તુ હાં-વ્યવહાર નયકે મન્તવ્યાનુસાર તો એક
 આદિ પ્રદેશ સે ન્યૂન મી પદાર્થ ઊસી રૂપ સે કહા હી જાતા હૈ-એસે
 કિતનેક અવયવો સે રહિત મી પટ પટ હી વ્યવહાર મેં માના જાતા હૈ
 વહ અપટ નહીં માના જાતા, અથવા એસે છિન્ન પૂછ ઘાલા મી કુસા કુસા
 હી કહા જાતા હૈ ' વહ ' ગણા નહીં કહા જાતા-વૈયાકરમોં ને મી હસી
 સિદ્ધાન્ત કો માના હૈ- વે કહતે હૈં (એકદેશવિકૃતમનન્યવત્) એકદેશ
 મેં વિકાર હોજાને પર મી પદાર્થ હસરા યોઢે હી હો જાતા હૈ । જો, વહ
 પદાર્થ હૈ વહી વહ રહતા હૈ । હસ પ્રકાર પ્રસુકા કાકુમિભિત ઉત્તર સુન
 કર ગૌતમ ને જો કહા ઇસે સૂચકાર (મગધં સગણે વચકે) હસ પાઠ

કથન નિશ્ચયનયના મત પ્રમાણે કથું છે નિશ્ચયનયના અભિપ્રાય અનુસાર તે
 ધર્માસ્તિકાયના એક પ્રદેશને ધર્માસ્તિકાય કહેવાનો નિવેષ છે પરંતુ વ્યવહાર
 નયની માન્યતા પ્રમાણે તો એકાદિ પ્રદેશ ન્યૂન હોય એવા પદાર્થને પણ એ
 પ્રદાર્થ રૂપે જ ઓળખવામાં આવે છે એમ કે કેટલાક અવયવોથી રહિત
 પટને પણ વ્યવહારમાં તો પટ જ માનવામાં આવે છે-અપટ માનવામાં
 આવતો નથી, પૂછડી કપાઈ ગયેલી હોય એવા કુતરાને કુતરા જ કહે છે-
 બીજા કોઈ પણ નામે ઓળખતા નથી. વ્યાકરણકારોએ પણ એ જ સિદ્ધાંત
 માન્ય કર્યો છે તેઓ કહે છે (એકદેશવિકૃતમનન્યવત્) એક પ્રદેશમાં
 (ભાગમાં) વિકાર થઈ જવાથી પદાર્થ બીજો થોડોક જ થઈ જાય છે ? એ પ્રદાર્થ
 જ હોય છે તે જ રહે છે

મગધાનનો મુક્તિપૂર્વકનો પ્રશ્ન સાંભળીને ગૌતમસ્વામીએ એ ઉત્તર
 આપ્યો તે નીચેના સૂત્રપાઠ દ્વારા સૂત્રકારે પ્રકટ કર્યો છે- (મગધ સગણે વચકે

કાયસ્યૈકરિસન્ પ્રદેશે ન્યુનેઽપિ ધર્માસ્તિકાયે ધર્માસ્તિકાયશબ્દેન વ્યવહારઃ
કથન્ન ભવતિ તત્ર કિં વારણમિતિ પ્રશ્નાશયઃ ભગવાનાહ—‘ સે ણૂણં ગોયમા’
इत्यादि । ‘ से णूणं गोयमा ! ’ तन्नूनं गौतम ! ‘ खंडे चक्के सगळे चक्के ’
खण्डं चक्रम् सकलम् चक्रम्—हे गौतम ! चक्रस्य एका भागश्चक्रं भवति किंवा
सकलं चक्रं चक्रं भवतीति भगवतः गौतमम्प्रति कथनम् यथा खण्डं चक्रं चक्रं न
भवति खण्डचक्रमित्येव तस्य व्यवहारात् किन्तु सकलमेव चक्रं चक्रं भवति एवं
प्रदेशेनापि ऊनो धर्मास्તિકાયો न धर्मास्તિકाय इति वक्तव्यं स्यात् यथा चक्रे तथे
हापि ज्ञातव्यम् एष निश्चयनयाऽनुसारेण एकप्रदेशेनाप्युने धर्मास्તિકાય

में धर्मास्तिकाय इस शब्द का व्यवहार नहीं हो सकता है और न एक
प्रदेश से हीन धर्मास्तिकाय में धर्मास्तिकाय इस शब्द का व्यवहार हो
सकता है सो हे भदन्त ! इसमें क्या कारण है ? इस विषय में गौतम
की जिज्ञासा के समाधान निमित्त प्रभु उनसे ही पूछते हुए कहते हैं
(से णूणं गोयमा !) हे गौतम ! तुम यह तो कहो कि (खंडे चक्के,
सगळेचक्के) चक्र का एक भाग चक्र कहलाता है कि समस्त चक्र चक्र
कहलाता है । भदन्त ! चक्र का खंड चक्र नहीं कहलाता किन्तु समस्त
चक्र चक्र कहलाता है, तो हे गौतम ! सोचो जिस प्रकार चक्र का खण्ड
चक्र नहीं कहा जा सकता वह तो खण्ड चक्र इसरूप से ही व्यवहृत होता है
किन्तु पूरा चक्र ही चक्र कहा जाता है— इसी प्रकार एक प्रदेश से भी
न्यून धर्मास्तिकाय, धर्मास्तिकाय नहीं कहला सकता है । वह तो खण्ड

અહીં ચાવત્ (પર્યન્ત) પદ્ધતી નીચેના સૂત્રપાઠ ગ્રહણ કરાયો છે—એ, ત્રણ, ચાર,
પાંચ આદિથી લઈને ધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યાત પ્રદેશોને પણ ધર્માસ્તિકાય
કહી શકાય નહીં આ રીતે ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને તેમણે આપેલા
ઉત્તરનું કારણ પૂછે છે આ પ્રશ્નનો ઉત્તર સમજાવવા માટે પ્રભુ તેમને જ પ્રશ્ન
કરે છે—(સે ણૂણં ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (खंडे चक्के, सगळे चक्के !) આખા
ચક્રને ચક્ર કહેવાય કે તેના એક ભાગને ચક્ર કહેવાય ? ગૌતમ સ્વામી જવાબ
આપે છે— હે ભદન્ત ! ચક્રના ભાગને ચક્ર કહેતા નથી પણ આખા ચક્રને
જ ચક્ર કહેવાય છે ” મહાવીર પ્રભુ સમજાવે છે, “ જેમ ચક્રના ભાગને ચક્ર
કહેવાય નહીં પણ ચક્રનો ભાગ જ કહેવાય છે, અને આખા ચક્રને જ ચક્ર
કહેવાય છે, એજ પ્રમાણે એક પ્રદેશ પણ ઓછો હોય એવા ધર્માસ્તિકાયને
ધર્માસ્તિકાય કહેવાતું નથી. તેને તો ધર્માસ્તિકાયનો ભાગ જ કહેવાય છે. આ
મ ૧૩૧

ધર્માસ્તિકાયવ્યવહારસ્ય નિષેધઃ કૃતઃ વ્યવહારનયાઽનુસારેણ તુ પદ્માદિપ્રદેશાદ્
 નોઽપિ પદાર્થસ્તેનૈવ રૂપેણ વ્યવધિશ્ચયતે એવ યથા કતિપયાવયવરહિતોઽપિ પટઃ
 પટ એવ મવતિ, યથા ષા છિન્નસાક્ષોઽપિ જ્ઞા જ્ઞા એવ કથ્યતે, તદુક્તમ્ વૈયાક્ર
 ર્ણૈઃ ' એકદેશવિકૃતમનન્યવત્ ' इति । મગધત્ કાકુમિમિત્તમુચરં નિશ્ચય
 કયયતિ ગૌતમઃ ' મગધં સગણે વચ્ચકે નો સંઘે વચ્ચકે ' હે મગધન્ ! સકલમ્ ચક્ર
 નો સંઘં ચક્રમ્ વિકલાપયવસ્ય ન ચક્રમિતિ સજ્ઞા મવતિ અપિ તુ સકલાવયવસ્યૈવ
 ચક્રમિતિ સજ્ઞા મવતીતિ ગૌતમ । મુસ્તાદેવોચર નિર્ણય્યાતિશ્ચયેનાન્યપ્રાઽપિ इत्य
 મેવોચર, પ્રદર્શયતિ મગધાન્—'એવ છત્તે' इत्यादि, ' એવ છત્તેવમ્મે દઢે વૃસે આઠઠે

ધર્માસ્તિકાય કહ્યાલેગા, ચક્રની તરફ હી યહાં જાનના આદિયે । એસા
 યહ કથન નિશ્ચયનય કે મતાનુસાર હૈ—નિશ્ચયનય કે મન્તવ્યાનુસાર
 ધર્માસ્તિકાય કે એક પ્રદેશ મેં પૂરે ધર્માસ્તિકાય કા વ્યવહાર હોના નિ
 પિદ્ધ માના ગયા હૈ । પરન્તુ હાં—વ્યવહાર નયકે મન્તવ્યાનુસાર તો એક
 આદિ પ્રદેશ સે ન્યૂન ખી પદાર્થ ઊસી રૂપ સે કહા હી જાતા હૈ—જેસે
 કિતનેક અવયવો સે રહિત ખી પટ પટ હી વ્યવહાર મેં માના જાતા હૈ
 વહ અપટ નહીં માના જાતા, અથવા જેસે છિન્ન પૂછ ચાલા ખી કુસા કુસા
 હી કહા જાતા હૈ વહ ગધા નહીં કહા જાતા—વૈયાકરણો ને ખી હસી
 સિદ્ધાન્ત કો માના હૈ—વે કહતે હૈ (એકદેશવિકૃતમનન્યવત્) એકદેશ
 મેં વિકાર હોજાને પર ખી પદાર્થ દુસરા ઘોડે હી હો જાતા હૈ । જો વહ
 પદાર્થ હૈ વહી વહ રહતા હૈ । હસ પ્રકાર પ્રમુકા કાકુમિમિત્ત ઉચ્ચર સુન
 કર ગૌતમ ને જો કહા છસે સૂચકાર (મગધ સગણે વચ્ચકે) હસ પાઠ

કથન નિશ્ચયનયના મત પ્રમાણે કથુ" છે નિશ્ચયનયના અભિપ્રાય અનુસાર તે
 ધર્માસ્તિકાયના એક પ્રદેશને ધર્માસ્તિકાય કહેવાનો નિષેધ છે પરંતુ વ્યવહાર
 નયની માન્યતા પ્રમાણે તો એકાદિ પ્રદેશ ન્યૂન હોય એવા પદાર્થને પણ એ
 પદાર્થ રૂપે જ જોળખવામાં આવે છે જેમ કે કેટલાક અવયવોથી રહિત
 પટને પણ વ્યવહારમાં તો પટ જ માનવામાં આવે છે—અપટ માનવામાં
 આવતો નથી, પૂછડી કપાઈ ગયેલી હોય એવા કુતરાને કુતરો જ કહે છે—
 બીજા કોઈ પણ નામે જોળખતા નથી. વ્યાકરણકારોએ પણ એ જ સિદ્ધાન્ત
 માન્ય કયો છે તેઓ કહે છે (એકદેશવિકૃતમનન્યવત્) એક પ્રદેશમાં
 (ભાગમાં) વિકાર થઈ જવાથી પદાર્થ બીજો થોડોક જ થઈ જાય છે । એ પ્રદાર્થ
 જ હોય છે તે જ રહે છે

મગધાનનો મુક્તિપૂર્વકનો પ્રશ્ન સાંભળીને ગૌતમસ્વામીએ જે ઉત્તર
 આપ્યો તે નીચેના સૂત્રપાઠ દ્વારા સૂત્રકારે પ્રકટ કર્યો છે—(મગધ સગણે વચ્ચકે

મોયે ' એવં છત્રં ચર્મં દણ્ડો દૃષ્યમ્ (વસ્ત્રમ્) આયુધમ્ મોદકઃ એવં યથા એકા-
વયવરહિતં ચક્રં ચક્રં ન ભવતિ યથા વા છત્ર-ચર્મદણ્ડ વસ્ત્રાસ્ત્રમોદકાદિકમ્
એકાવયવરહિતમ્ છત્રાદિશબ્દેન ન વ્યપદિશ્યતે તથૈવ એકપદેશેનાપિ જનો ધર્મા-
સ્તિકાયો ધર્માસ્તિકાય ઇતિ નૈવ વક્તવ્યમ્ સ્યાત્ ઇતિ ભાવઃ । ' સે તેણદ્દેણં
ગોયમા ! ' તત્ તેનાર્થેન ગૌતમ । ' એવમુચ્ચઈ એગે ધમ્મત્થિકાયપદેસેણો
ધમ્મત્થિકાએ ત્તિ વત્તવ્વં સિયા ' એકો ધર્માસ્તિ ધર્માસ્તિકાયપદેશે ન ધર્મા-
સ્તિકાય ઇતિ વક્તવ્યં સ્યાત્ અનેન કારણેન, હે ગૌતમ ! કથંયામિ એક-

દ્વારા પ્રકટ કિયા હૈ । અતઃ ગૌતમ કે હી મુખ સે (અવયવ રહિત ચક્ર
એસી સંજ્ઞા નહીં હોતી હૈ કિન્તુ સકલ અથર્વો સે યુક્ત ચક્ર મેં હી ચક્ર
એસી સંજ્ઞા હોતી હૈ) હિસ પ્રકારકા નિર્ણય કરા કર અન્યત્ર ખી હસી
તરહ સે હોતા હૈ હિસ વાત કો પ્રમુ ડનસે પ્રકટ કરતે હૈ—(એવં છત્તે,
ચમ્મે, દંડે, દૂસે, આઝહે, મોયે,) હે ગૌતમ । જિસ પ્રકાર એકાવયવ
રહિત ચક્ર પૂરાચક્ર નહીં કહલાતા અથવા જૈસે—છત્ર, ચર્મ, દણ્ડ, વસ્ત્ર,
શસ્ત્ર, મોદક આદિ પદાર્થ એક અપને અવયવ સે રહિત હોને પર છત્રાદિ
શબ્દ દ્વારા વ્યપદિષ્ટ નહીં હોતે—હસી તરહ એકપદેશ સે ખી ડન ધર્મા-
સ્તિકાય ધર્માસ્તિકાય હિસ શબ્દ દ્વારા વ્યપદિષ્ટ નહીં હો સકતા હૈ ।
(સે તેણદ્દેણં ગોયમા ! એવં મુચ્ચઈ, એગે ધમ્માત્થિકાયપએમે જો ધમ્મ-
ત્થિકાએ ત્તિ વત્તવ્વં સિયા) હિસ કારણ હે ગૌતમ । મૈને એસા કહા હૈ
કિ ધર્માસ્તિકાય કા એક પ્રદેશ ધર્માસ્તિકાય રૂપ સે વક્તવ્ય નહીં હો
સકતા હૈ । અર્થાત્— ધર્માસ્તિકાય કે એકપદેશ મેં ધર્માસ્તિકાયતા નહીં
હૈ । (જાવ એગપેસૂણે વિ ય ણં ધમ્મત્થિકાએ નો ધમ્મત્થિકાએ ત્તિવત્ત-

નો સ્વણે ચક્કે) આ રીતે ગૌતમસ્વામીને મુખે જ, “ ચક્રના ભાગને ચક્ર
કહેવાતું નથી પણ આખા ચક્રને જ ચક્ર કહેવાય છે એવો નિર્ણય કરાવીને
ખીન પદાર્થોમા પણ એવું જ બને છે તે દર્શાવવામાટે કહે છે—એવં છત્તે,
ચમ્મે, દંડે, દૂસે, આઝહે, મોયે) હે ગૌતમ જેવી રીતે એક પણ અવયવથી
રહિત ચક્રને આખું ચક્ર કહેવાતું નથી, જેવી રીતે એક પણ અવયવથી
રહિત છત્ર, ચર્મ, દંડ, વસ્ત્ર, શસ્ત્ર, મોદક આદિને છત્ર, ચર્મ આદિ નામે
આજખાતા નથી એજ પ્રમાણે એક પણ પ્રદેશ ન્યૂન હોય એવા ધર્માસ્તિ-
કાયને ધર્માસ્તિકાય કહી શકાતો નથી. (સે તેણદ્દેણં ગોયમા ! એવં મુચ્ચઈ)
ધત્યાદિ હે ગૌતમ ! તે કારણે મેં એવું કહ્યું છે કે ધર્માસ્તિકાયના એક

स्मिन् धर्मास्तिकायप्रदेशे धर्मास्तिकायत्व नास्तीति भावः । ' नात्र एग-
पसूणे च य णं धम्मस्तिकाए नो धम्मस्तिकाए पि वत्तव्वसिया ' यावत्
एक प्रदेशो नोऽपि च खलु धर्मास्तिकायो न धर्मास्तिकाय इति वक्तव्य स्यात् ।
अत्र यावत्पदेन द्वि-त्रि यत्तुः पञ्च पद-सप्त-अष्ट-नव-दश-संख्येया-अंशरूपयानां
धर्मास्तिकायप्रदेशानाम् ग्रहण भवतीति । ' से किं खाइण भते । धम्मस्तिकाए
चि वृत्तव्वं सिया ' अथ कः किं पुनः खलु भवत् । धर्मास्तिकाय इति वक्तव्य स्यात्
पुनरर्थबोधक ' खाइए ' इति वेषीयसन्दः पुनरर्थे, हे भवत् । यदि धर्मास्तिका
यस्य प्रतिपदेशं धर्मास्तिकाय इति व्यवहारो वार्यते तदा पुनः कुत्र धर्मास्तिकायोऽयमिति व्य-
वहारं कियते प्रदेशसमुदायातिरिक्तस्य धर्मास्तिकायस्याभावादिति मन्त्रवर्तु-
राशयः । सगवानाह ' गोयमा ' इत्यादि " गोयमा " हे गौतम ! " असंखेयमा
धम्मस्तिकाए पपसा " असंख्याता धर्मास्तिकायप्रदेशा " ते सखे " ते सर्वे

व्य सिया) यावत् एक प्रदेश से कम भी धर्मास्तिकाय पूरा धर्मास्ति-
काय नहीं माना जा सकता है । यहां (यावत्) पद से (धर्मास्तिकाय
के अनेक प्रदेशों का ग्रहण हुआ है । (से किं खाइएणं भते । धम्म-
स्तिकाए चि वत्तव्व सिया) हे भवन्त ! धर्मास्तिकाय इस शब्द का
व्यवहार कहाँ किया जा सकता है । तात्पर्य इस प्रश्न का यह है कि-जब
आप धर्मास्तिकाय के एक प्रदेश में धर्मास्तिकायरूप व्यवहार होनेका निवे-
द्य कर रहे हैं और एकप्रदेश न्यून भी धर्मास्तिकायमें धर्मास्तिकायके व्यव-
हार होने का निवेद्य कर रहे हैं-तब यह तो कहिये कि धर्मास्तिकाय इस
शब्द का व्यवहार कहाँपर हो सकेगा ? (खाइए) यह देवीय दाद है और
पुन अर्थ का बोधक है । इसका उत्तर देते हुए प्रभु गौतम से कहते हैं-
गोयमा) हे गौतम ! (असंखेयमा धम्मस्तिकाए पपसा) धर्मास्तिकाय में

ज्यादा प्रदेशने पल धर्मास्तिकाय कही शक्य नही, जेक पल प्रदेश न्यून होय
जेना धर्मास्तिकायने पल धर्मास्तिकाय कही शक्य नही. "

(से कि खाइएण भते ! धम्मस्तिकाए चि वत्तव्व सिया) तो ये कहन्ती
होने धर्मास्तिकाय कही शक्य ? कहेवाने काबायं जे छे के जे धर्मास्तिकायना
जेक प्रदेशने धर्मास्तिकाय न कही शक्य जेक पल प्रदेशनी न्यूनता वाजा
धर्मास्तिकायने पल धर्मास्तिकाय न कही शक्य, तो जे तो कहे के ' धर्मास्तिकाय
शब्दने व्यवहार कहाँ कही शक्य ? होने धर्मास्तिकाय कही शक्य ?

आ सूत्रभाष्यभाष्ये ' खाइए शब्द गाभडी छे तेना अर्थ ' पुनः '
भाव छे गौतम स्वामीना प्रश्नने उत्तर आपना प्रभ भते ते- /

मोयए' एवं छत्रं चर्म दण्डो दूष्यम् (वस्त्रम्) आयुधम् मोदकः एवं यथा एका-
वयवरहितं चक्रं चक्रं न भवति यथा वा छत्र-चर्मदण्ड वस्त्रास्त्रमोदकादिकम्
एकावयवरहितम् छत्रादिशब्देन न व्यपदिश्यते तथैव एकप्रदेशेनापि ऊनो धर्मा-
स्तिकायो धर्मास्तिकाय इति नैव वक्तव्यम् स्यात् इति भावः । ' से तेणट्टेणं
गोयमा ! ' तत् तेनार्थेन गौतम । ' एवमुच्चइ एगे धम्मत्थिकायपदेसेणो
धम्मत्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया ' एको धर्मास्ति धर्मास्तिकायप्रदेशो न धर्मा-
स्तिकाय इति वक्तव्यं स्यात् अनेन कारणेन, हे गौतम ! कथयामि एक-

द्वारा प्रकट किया है । अतः गौतम के ही मुख से (अवयव रहित चक्र
ऐसी संज्ञा नहीं होती है किन्तु सकल अवयवों से युक्त चक्र में ही चक्र,
ऐसी संज्ञा होती है) इस प्रकारका निर्णय करा कर अन्यत्र भी इसी
तरह से होता है इस बात को प्रभु उनसे प्रकट करते हैं—(एवं छत्ते,
चम्मे, दंडे, दूसे, आउहे, मोयए,^१) हे गौतम । जिस प्रकार एकावयव
रहित चक्र पूराचक्र नहीं कहलाता अथवा जैसे-छत्र, चर्म, दण्ड, वस्त्र,
शस्त्र, मोदक आदि पदार्थ एक अपने अवयव से रहित होने पर छत्रादि
शब्द द्वारा व्यपदिष्ट नहीं होते-उसी तरह एकप्रदेश से भी उन धर्मा-
स्तिकाय धर्मास्तिकाय इस शब्द द्वारा व्यपदिष्ट नहीं हो सकता है ।
(से तेणट्टेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ, एगे धम्मत्थिकायपएमे णो धम्म-
त्थिकाए त्ति वत्तव्वं सिया) इस कारण हे गौतम ! मैंने ऐसा कहा है
कि धर्मास्तिकाय का एक प्रदेश धर्मास्तिकाय रूप से वक्तव्य नहीं हो
सकता है । अर्थात्- धर्मास्तिकाय के एकप्रदेश में धर्मास्तिकायता नहीं
है । (जाव एगपएसूणे वि य णं धम्मत्थिकाए नो धम्मत्थिकाए त्तिवत्त-

नो खण्डे चक्के) आ रीते गौतमस्वामीने सुणे ४, “ यकना लागने यक
कडेवातुं नथी पणु आभा यकने ४ यक कडेवाय छे ओवे निष्ठुय करीवीने
भील पदार्थोभां पणु ओवु ४ एने छे ते दशाववामाटे कडे छे-एवं छत्ते,
चम्मे, दंडे, दूसे, आउहे, मोयए) हे गौतम जेवी रीते ओक पणु अवयवथी
रहित यकने आणु यक कडेवातुं नथी, जेवी रीते ओक पणु अवयवथी
रहित छत्र, चर्म, दंड, वस्त्र, शस्त्र, मोदक आदिने छत्र, चर्म आदि नामे
आणभाता नथी ओज प्रमाणे ओक पणु प्रदेश न्यून होय ओवा धर्मास्ति-
कायने धर्मास्तिकाय कडी शकतो नथी. (से तेणट्टेणं गोयमा ! एवं वुच्चइ)
धत्तादि हे गौतम ! ते कारणे में ओवु कहु छे के धर्मास्तिकायता ओक

નાનુપૂર્વી નામ પૂર્વાપરમાઓ વિષયે, શ્રિતિ માત્ર । એવાનિ ચ સુત્રાગિ શૂન્યવાદજ્ઞાનવા
 દાદિનિરાસેન વિચિત્રાનેકપાદ્યાર્થસમ્રાપસૂચકાનિ તેન શૂન્યતાવસ્તુરૂપા, અર્થાઘા-
 પારમાર્થિકા, શ્રિતિ શૂન્યવાદિમત્ત નિરસ્તમ્' એવ જ્ઞાનમાત્ર મગત્ અર્થસ્તુ સ્વમોપમ
 શ્રિતિ જ્ઞાનવાદિમત્તમપિ નિરસ્તમ્ । એવ પૃથિવ્યાદય ईश्वराદિચિનિર્મિતા શ્રિતિ જગત્ક
 ર્ત્વવાદિત્તમસ્યાપિ નિરાકરણપરાખ્યેતાનિ સુત્રાણિ, લોકાલોકાદય સર્વેપિ પદાર્થા
 વિચિત્રા અનાધનંતા ન તુ ईश्वरकालप्रकृत्यादिजनिता, તથા સતિ કદાચિન્નવેયુરિમે

વહ સય ઘડાં પર મી ઉત્તરપક્ષ મેં સગત કર લેના વાહિયે । યે સય સૂત્ર
 શૂન્યવાદ કો જિસે કિ માધ્યમિક ધૌદ્ધ માનતે હૈં, એવ જ્ઞાનવાદ કો
 કિ જિસે સૌત્રાન્તિક ધૌદ્ધ માનતે હૈં હત્યાદિ અનેક ઘાદોં કા નિરાકરણ
 કરતે હૈં ઔર વિચિત્ર અનેક વાદ્યાર્થકે સમ્રાવકો સૂચિત કરતે હૈં ।

યે સૂત્ર યહ કહતે હૈં કિ વિચિત્ર પ્રકારકે વાદ્યાર્થ હૈં ઔર યે સ્વતંત્ર હૈં
 શૂન્યતા માનના વાસ્તવિક રૂપસે યુક્તિસંગત નહીં હૈં । વાદ્ય પદાર્થ
 પરમાર્થિક સત્ હૈં । જગત્ જ્ઞાનમાત્રક નહીં હૈં । ઔર ન વાદ્યપદાર્થ
 સ્વપ્નોપમપદાર્થતુલ્ય હૈં । હસી તરહસે યે સૂત્ર હસ વાતકા મી નિરાકરણ
 કરતે હૈં કિ જો ईश्वरवादी ऐसा कहते हैं कि पृथिव्यादिकय जगत्को ईश्वरने
 बनाया है । और इस बातका समर्थन करते हैं कि लोक अलोक आदि
 जितने भी पदार्थ हैं वे सभी विचित्र हैं और अनादि अनन्त हैं ।
 ईश्वर, काल, प्रकृति आदिसे जनित नहीं हैं । यदि इन्हें ऐसा माना

હોવાથી તેમનામાં આનુપૂર્વી નથી.) તેનુ અહીં પણ ઉત્તર પક્ષમાં બધે સયો
 જન કશુ બેઠાં જા બધા સૂત્રોથી બેઠાન્ત શૂન્યવાદ (કે જેને માધ્યમિક
 બોલો માને છે) અને બેઠાન્ત જ્ઞાનવાદ (કે જેને સૌત્રાન્તિક બોલો માને છે)
 બન્નેરે અનેક વાદોનું નિશાકરણ (જંદન) થઈ આવે છે અને અનેક સ્વતંત્ર વાદો
 થેનિ સહભાવ સુચિત થાય છે

સાચા જો છે કે જા સૂત્રો વઢે જો બતાવવામાં આવેલ છે કે વિવિધ
 પ્રકારના વાદોથી છે અને તે સ્વતંત્ર પણ છે શૂન્યતા માનવી તે વાસ્તવિક
 રીતે મુક્તિસંજત નથી. કાશ્યુ કે બાહ્ય પદાર્થો પારમાર્થિક સત્ છે જગત
 ખાલી જ્ઞાનરૂપ જ નથી. અને બાહ્યપદાર્થો સ્વપ્ના જેવા પણ નથી. વળી જા
 સૂત્રો વઢે ઉપસ્થાપીઓ કહે છે કે જા પૃથ્વી વગેરે રૂપ જગત ઉપર બનાવ્યું
 છે જો વાતનું પણ અહીં જંદન થઈ આવે છે અહીં જો વાતનું પ્રતિપાદન કરાયું
 છે કે લોક અલોક વગેરે બેઠા પદાર્થો છે તે બધા પદાર્થો સ્વતંત્ર છે અને
 અનાદિ અનન્ત છે તે પદાર્થો ईश्वर, काल, प्रकृति वगैरेशी उत्पन्न થયેલાં નથી.

અસંખ્યાત પ્રદેશ હૈં (તે સન્વે) વે સવ (કસીણા) પૂરે (પહિપુણ્ણા) પ્રતિ-
પૂર્ણ (નિરવસેસા) નિરવશેષ (એગગહણગહિયા) યહ ધર્માસ્તિકાય હૈ
હસ શબ્દ સે ગ્રહણ કરને કે લાયક હો જાવે-તવ (ધમ્મત્થિકાએ સ્તિ
વત્તવ્વં સિયા) ડન સવ કા વહ સમૂહ (ધર્માસ્તિકાય) હસ શબ્દ દ્વારા
વક્તવ્ય હોતા હૈં। ધર્માસ્તિકાય પ્રદેશોં કે હન વિશેષણોં કી સાર્થકતા
હસ પ્રકાર સે હૈં-સર્વ શબ્દ કા અર્થ (સમસ્ત) એસા હોતા હૈં તથા (ક-
સિણા-કૂત્તના) હસ શબ્દ કા અર્થ ખી સમસ્ત હોતા હૈં તથા ઓર ખી
જો વિશેષણ હૈં-વે ખી હસી અર્થ કે વાચક હૈં-પરન્તુ જવ હન શબ્દોં કે
અર્થ કા વારીક રીતિસે વિચાર કિયા જાતા હૈં તવ હસ મેં હસ પ્રકાર
સે ભિન્નત આતી હૈં-જો ધોડે વહુત ખી પદાર્થ હોતે હૈં ડન્હેં ખી વ્યવહાર
મેં (સર્વ) એસા કહ દિયા જાના હૈં ક્યોં કિ યહ સર્વ શબ્દ એક દેશીય
સર્વતા કા ખી સૂચક હોતા હૈં અતઃ (અસંખ્યાત વે સવ પ્રદેશ ધર્માસ્તિ
કાય હૈં) હસ કથન સે એસા ખી અર્થવોધ હો સકતા હૈં કિ એક, દો
ત્રીન આદિ અનેક સવ અવયવ ધર્માસ્તિકાયકે હૈં, હસમેં અસંખ્યાત પ્રદેશોં
કે સમુદાય રૂપ પદાર્થ મેં ધર્માસ્તિકાયતા કા અર્થ વોધ નહીં હોતા।

હે ગૌતમ! (અસંખેજ્ઞા ધમ્મત્થિકાએ પએસા) ધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યાત
પ્રદેશો હોય છે. “તે સન્વે” તે બધા “કસિણા” પૂરે પૂરા, “પહિપૂણ્ણા”
પ્રતિપૂર્ણ રૂપે, “નિરવસેસા” નિરવશેષરૂપે “એગગહણ ગહિયા” આ ધર્મા-
સ્તિકાય છે” એવા શબ્દ પ્રયોગથી ગ્રહણ કરવાને-થોગ્ય બની નય ત્યારે
‘ધમ્મત્થિકાએ સ્તિવત્તવ્વં સિયા’ તે સૌના તે સમૂહને માટે “ધર્માસ્તિકાય”
શબ્દનો પ્રયોગ કરી શકાય છે ધર્માસ્તિકાય પ્રદેશોના ઉપરોક્ત વિશેષણોની
સાર્થકતા બતાવવા માટે ટીકાકાર કહે છે કે-‘સર્વ’ એટલે સમસ્ત એજ
પ્રમાણે “કસિણા-કૂત્તના” પદનો અર્થ પણ ‘સમસ્ત’ થાય છે, તથા એ
સિવાયના વિશેષણો પણ એજ અર્થના વાચક છે. પણ ત્યારે તે શબ્દોના
અર્થનો ઝીણવટથી વિચાર કરવામા આવે ત્યારે તેમની વચ્ચે નીચે પ્રમાણે તફા-
વત નજરે પડે છે-જે થોડા કે ઓછા પદાર્થો હોય છે તેમને પણ વ્યવહારમા
‘સર્વ’ (સમસ્ત કહેવામા આવે છે, કારણ કે તે ‘સર્વ’ શબ્દ એક દેશીય
સર્વતાનો પણ દર્શક હોય છે તેથી “તે બધા, અસંખ્યાત પ્રદેશો ધર્મા
સ્તિકાય છે” એવું માનવાનો પ્રસંગ ઉપસ્થિત થાય છે વળી એ કથનથી
એવો અર્થ-બોધ થાય છે કે એક, બે, ત્રણ આદિ અનેક અવયવ ધર્મા-

તે વ સર્વે દેશાપેક્ષયાઽપિ મથતિ, પ્રકારકાર્ત્સ્ન્યઽપિ સર્વશબ્દસ્ય પ્રવૃત્તિર્લક્ષના
વિરપત આદિ 'કસિણ' કૃત્સ્નાઃ સમસ્તા ન સુ તદેકદેશાપેક્ષયા સર્વે इत्यर्थः ।
તે વ પ્રદેશઃ સ્વસ્વમાવરહિતામપિકદ્રાચિદ્ મથતિ, તે સ્વસ્વમાવરહિતા કલો-
પધાયકત્વરૂપકારણસ્વામાવવન્તોઽપિ સ્વરૂપયોગ્યત્વેન તથા વ્યવહારુમ્ શ્રવ્યતે
इत्याशयेनाह—"पट्टिपुष्पा" प्रतिपूर्णा स्वस्वरूपेणाऽविकल्पाः कलोपधायकाः।

દેશાપેક્ષ સય પ્રદેશોં મેં ધર્માસ્તિકાયતા કા બોધ હોતા હૈ-મતઃએસી,
માન્યતા આગમકે અનુકૂલ નહીં હૈ-પ્રતિકૂલ હૈ-ઇસલિયે સર્વ શબ્દ કા
યાં એસા અર્થ નહીં હેના ચાહિયે કિન્તુ (કસિણે) કૃત્સ્ન એસા અર્થ હેના
ચહિયે ક્યોં કિ સર્વ શબ્દ કી પ્રકાર મૌર કૃત્સ્ન ઇન અર્થોં મેં પ્રવૃત્તિ
લેખી ગઈ હૈ-કૃત્સ્ન શબ્દ કા અર્થ હૈ પૂરે પૂરે સય એક માગ કી અપેક્ષા
સય નહીં કિન્તુ સર્વ પ્રકાર સે પૂરે પૂરે સય । એસે પ્રદેશ સ્વમાવરહિત મી,
કદાચિત્ હો સકતે હૈં અર્થાત્ સય પૂરે પૂરે પ્રદેશ હો મી ઓર યદિ યે
અપને ૨ સ્વમાવ સે મી રહિત હોં તો ઇનમેં સર્વ કૃત્સ્નતા કા વાપ નહીં
આતા હૈ ઓર યે ધર્માસ્તિકાયત્વ સે માનલિયે જાયેંગે, કારણ ફલોપ-
ધાયકસ્વરૂપ (કાર્ય કો સિદ્ધ કરનેવાલા) કારણ કે અમાવ મેં, સ્વરૂપ
યોગ્યતા હોને પર મી એસા વ્યવહાર થન, સકતા હૈ સો, ઇસ વાત કો
નિયેષ કરને કે લિયે (પટ્ટિપુષ્પા) યહ વિશેષણ રખા હૈ । યહ વિશેષણ
યહ પ્રગટ કરતા હૈ કિ યે સર્વકૃત્સ્ન પ્રદેશ એસે હોં કિ જો અપને સ્વમાવ

સ્તિકાયતાને બાધ થવાને ખરેખરે દેશ પેક્ષ સમગ્ર પ્રદેશમા ધર્માસ્તિકાયતાને
બાધ થાય છે પણ જો પ્રકારની માન્યતા તો આગમની વિરૂદ્ધ થય છે.
તેથી 'સર્વ' શબ્દનો અર્થ એવો બધા હોવો બોધ્યો નહીં પણ "કસિણે"
'કૃત્સ્ન (સર્વુ)' અર્થ હોવો બોધ્યો, 'કૃત્સ્ન' બોધ્યો પૂરે પૂરે-કેટલાક
ભાગોની અપેક્ષાએ પૂરા નહીં પણ, સર્વ પ્રકારે સર્વુ' એવા પ્રદેશો બધા
સ્વભાવ રહિત પણ હોઈ શકે છે-બોધ્યો કે સર્વ પૂરે પૂરા પ્રદેશ હોય પણ
જો તબ્બો પાત પાતાના સ્વભાવથી પણ રહિત હોય તો તેમાં સર્વ 'કૃત્સ્ના'
-સર્વુ'તાનો બાધ (વાધા) આવતો નથી, અને તેમને ધર્માસ્તિકાય રૂપે
માનવા પડે, કારણ કે ફલોપધાયકત્વરૂપ કારણના અભાવે સ્વરૂપ યોગ્યતા
હોવા છતાં પણ એવો અવહાર સભવી શકે છે. તો જો વાતનું નિરાકરણ
કરવાને માટે "પટ્ટિપુષ્પા" (પ્રતિપૂર્ણ) વિશેષણ વાપરું છે આ વિશેષણ
એવું બતાવે છે કે તે સર્વકૃત્સ્ન (સર્વુ) પ્રદેશ એવા હોવા બોધ્યો કે જે

તે ચ પ્રદેશાઃ પ્રદેશાન્તરાપેક્ષયા સ્વસ્વભાવન્યુના અપિ આત્મસ્વરૂપેનાઽવિકલા
 ઉચ્યન્તે તત્રાહ—‘નિરવસેસા’ નિરવશેષાઃ પ્રદેશાન્તરતોઽપિ સ્વસ્વભાવેન ન
 સે યુક્ત હોં, ઉસ સમય મેં વહોં સ્વરૂપ યોગ્યતા કી આવશ્યકતા નહોં
 માની ગઈ હૈ વહ યોગ્યતા ઉનમેં આવિર્ભૂત હો રહી હો એસે હી હોં,
 તમી જાકર ઉનમેં ધર્માસ્તિકાયરૂપ વ્યવહાર હો સકતા હૈ । યહાં એસા
 નહોં માના ગયા હૈ કિ જિસ પ્રકાર ઢંડ અપને કાર્ય કો નહોં કર
 રહા હૈ ઓર વહ એક તરફ રહ્યા હુઆ હૈ ફિર મી વહ ઢંડ કહલાતા
 હૈ—એસા હી વે કૃત્સ્નપ્રદેશ અપને કાર્યકો જબ નહોં કરતે હૈં તચ મી
 ઉનમેં ધર્માસ્તિકાય કા વ્યવહાર હો જાવે । ક્યોં કિ નિશ્ચયનય કી
 માન્યતાનુસાર અપનીક્રિયા મેં પ્રવૃત દ્રવ્ય હી ઉસ ૨ અભિધેય કા વાચ્ય
 હોતા હૈ । કૃત્સ્નપ્રદેશોં કી અપનીક્રિયાકે કરને મેં પ્રવૃત્તિ હોના યહી
 ઉનમેં (પ્રતિપૂર્ણતા) હૈ ।

શંકા—અપની ક્રિયા કે કરને મેં પ્રવૃત્તિ, અપને મેં વૈસી
 યોગ્યતા—સ્વભાવ ન મી હો તો મી અન્ય કી સહાયતા સે હોતી દેખી
 જાતી હૈ હસી તરહ હન ધર્માસ્તિકાય કે પ્રદેશોં મેં અન્યપ્રદેશોં કી સ-
 હાયતા સે, અપની ક્રિયાકે કરને કે સ્વભાવ કી વિકલતા હોને પર મી
 તત્સ્વભાવતા માન લેનેપર (પ્રતિપૂર્ણતા) માન લી જાવે તો ક્યા વાધા હૈ?

પોતાના સ્વભાવથી યુક્ત હોય, તે સમયે ત્યાં સ્વરૂપ યોગ્યતાની આવશ્યકતા
 માનવામાં આવી નથી—તે યોગ્યતાનો તો ત્યાં સદ્ભાવ જ માન્યો છે. ત્યારે
 જો તેમને માટે ‘ધર્માસ્તિકાય’ શબ્દ વાપરી શકાય છે—અહીં અર્થ માનવામાં
 આવ્યું નથી કે “લાકડી પોતાનું કાર્ય ન કરતી હોય—તે એક બાજુએ પડેલી
 હોય તો પણ તેને લાકડી જ કહી શકાય છે”—એજ પ્રમાણે તે કૃત્સ્ન
 (સંપૂર્ણ) પ્રદેશ પોતાનું કાર્ય ન કરતા હોય ત્યારે પણ તેમને ધર્માસ્તિકાય
 કહેવાનો પ્રસંગ ઉપસ્થિત થાય છે. કારણ કે નિશ્ચયનયની માન્યતા પ્રમાણે તો
 પોતાની ક્રિયામાં પ્રવૃત્ત દ્રવ્ય જ તે તે અભિધેયનું વાચ્ય (બોધક) હોય છે.
 કૃત્સ્ન પ્રદેશોની પોતાની ક્રિયાઓ કરવામાં પ્રવૃત્તિ હોવી એજ એમાં રહેલી
 ‘પ્રતિપૂર્ણતા’ છે.

શંકા—પોતાની ક્રિયા કરવાની પ્રવૃત્તિ, પોતાની અંદર એવી યોગ્યતા
 ન હોય તોપણ અન્યની સહાયતાથી જોવામાં આવે છે, એ રીતે તે ધર્મા-
 સ્તિકાયના પ્રદેશોમાં અન્ય પ્રદેશોની સહાયતાથી, પોતાની ક્રિયા કરવાના સ્વ-
 ભાવની વિકલતા હોવા છતાં તે સ્વભાવનું અસ્તિત્વ માની લઈને ‘પ્રતિપૂર્ણતા’
 માની લેવામાં આવે તો શો વાધો છે?

તે ચ સર્વે દેશાપેક્ષયાઽપિ મવન્તિ, પ્રકારકાસ્ત્યેઽપિ સર્વશબ્દસ્ય પ્રવૃત્તિર્વર્જના
 દિત્યત આદિ 'કસિણ' કૃત્સ્નાઃ સમસ્તા ન તુ તદેકદેશાપેક્ષયા સર્વે, इत्यर्थः ।
 તે ચ પ્રદેશાઃ સ્વસ્વમાવરિતાઅપિકદાચિદ્ મર્ષંતિ તે સ્વસ્વમાવરિતા કલો
 પમાયકત્વરૂપકારણત્વામાનવન્તોઽપિ સ્વરૂપયોગ્યત્વેન તથા વ્યવહારુમ્ ક્ષમ્યતે
 इत्याशयेनाह—“पश्चिपुष्पा” प्रतिपूर्णा स्वस्वरूपेणाऽविकल्पाः कलोपमायकाः

દેશાપેક્ષ સય પ્રદેશોં મેં ધર્માસ્તિકાયતા કા બોધ હોતા હૈ—અત એસી
 માન્યતા આગમકે અનુકૂલ નહીં હૈ—પ્રતિકૂલ હૈ—હસલિયે સર્વ શબ્દ કા
 યહાં એસા અર્થ નહીં હેના ચાહિયે કિન્તુ (કસિણે) કૃત્સ્ન એસા અર્થ હેના
 ચહિયે વર્ધોં કિ સર્વ શબ્દ કી પ્રકાર ઔર કૃત્સ્ન इन अर्थों में प्रवृत्ति
 देखी गई है—कृत्स्न शब्द का अर्थ है पूरे पूरे सब एक भाग की अपेक्षा
 सब नहीं किन्तु सर्व प्रकार से पूरे पूरे सब । ऐसे प्रदेश स्वभावरहित भी
 कदाचित् हो सकते हैं अर्थात् सब पूरे पूरे प्रदेश हो भी और यदि ये
 अपने २ स्वभाव से भी रहित हों तो उनमें सर्व कृत्स्नता का बाध नहीं
 आता है और वे धर्मास्तिकारूप से मानलिये जावेंगे, कारण कलोप-
 मायकत्वरूप (कार्य को सिद्ध करनेवाला) कारण के अभाव में, स्वरूप
 योग्यता होने पर भी ऐसा व्यवहार बन सकता है सो इस बात को
 निषेध करने के लिये (पश्चिपुष्पा) यह विशेषण रखा है । यह विशेषण
 यह प्रगट करता है कि वे सर्वकृत्स्न प्रदेश, ऐसे हों कि जो अपने स्वभाव

સ્તિકાયતાનો બાધ થવાને બદલે દેશ પેક્ષ સહજા પ્રદેશોર્મા ધર્માસ્તિકાયતાનો
 બાધ થાય છે પણ જો પ્રકારની માન્યતા તો આગમીની વિરૂદ્ધ બધ છે
 તેથી સબ 'શબ્દનો બદલો' બધ હોવો બેધજો નહીં પણ 'કસિણે'
 'કૃત્સ્ન (સ'પૂર્ણ)' બધ' હોવો, બેધજો, 'કૃત્સ્ન' જો/લે પૂરે પૂરે—કેટલાક
 ભાગોની અપેક્ષાજો પૂરા નહીં પણ સર્વ પ્રકારે સ'પૂર્ણ' જોવા પ્રદેશો બધ
 સ્વભાવ રહિત પણ હોઈ, શકે છે—જો/લે કે સર્વ પૂરે પૂરા પ્રદેશ હોય પણ
 જો તજો પાત પોતાના સ્વભાવથી પણ શકિન હોય તો તેમાં સર્વ 'કૃત્સ્ના'
 —સ'પૂર્ણ'તાનો બાધ (બધિ) આવતો નથી, અને તેમને ધર્માસ્તિકાય રૂપે
 માનવા પડે, કારણ કે ફરીપમાયકત્વરૂપ કારણના અભાવે સ્વરૂપ યોગ્યતા
 હોવા છતાં પણ જોવો અવહાર સહજી શકે છે તો જો બાતનું નિરાકરણ
 કરવાને માટે "પશ્ચિપુષ્પા" (પ્રતિપૂર્ણ) વિશેષણ વાપરું છે આ વિશેષણ
 જોડું બતાવે છે કે તે સર્વકૃત્સ્ન (સ'પૂર્ણ) પ્રદેશ જોવા હોવા બેધજો કે જે

દ્રવ્યાણામપિ “પ્રસા” પ્રદેશા “અણંતા ભાણિયત્વા” અનન્તા ભણિતવ્ય
 એતેષાં ત્રયાણામપિ અનન્તાઃ પ્રદેશાઃ જ્ઞાતવ્યા इत्यर्थः : લોકાઽલોકાપેક્ષયા આકા
 શાસ્તિકાયસ્યાનન્તત્વમ્ । જીવાસ્તિકાયસ્ય સર્વજીવાપેક્ષયાઽનન્તત્વં જ્ઞાતવ્ય
 પુદ્ગલાસ્તિકાયસ્ય તુ સ્વભાવતઃ સ્વાનન્તત્વં જ્ઞાતવ્યમ્ “સેસં તં ચેવ” શેષં તદે
 પૂર્વોક્તમેવ જ્ઞાતવ્યમ્ ધર્માસ્તિકાયાધર્માસ્તિકાયયોરસંખ્યેયાઃ પ્રદેશાઃ કથિત
 આકાશાસ્તિકાયાદીનાં ત્રયાણાં દ્રવ્યાણાં પુનરનન્તાઃ પ્રદેશા વક્તવ્યાઃ અન
 પ્રદેશિકત્વાદેતેષામિતિ ભાવઃ ॥ સૂ. ૨ ॥

ઉપયોગગુણવાન્ જીવાસ્તિકાય इति પૂર્વપ્રકરણે પ્રદર્શિતમ્ હદાર્નીં જીવ
 સ્તિકાયસ્ય દેશભૂત એકો જીવ ઉત્થાનાદિગુણવાનિતિ દર્શયિતુમાહ-“જીવેણ
 इत्यादि ॥

મૂલમ્-જીવે ણં મંતે ? સ ઉટ્ટાણે, સ કમ્મે, સ વલે, સ
 ચીરિણ, સ પુરિસક્કારપરક્કમે, આયમાવે ણં જીવમાવં, ઉવદંસે
 તીતિ વત્તઠ્ઠં સિયા ? હંતા ગોયમા ! જીવેણ સ ઉટ્ટાણે જા
 ઉવદંસેતીતિ વત્તઠ્ઠં સિયા, સે કેણટ્ટેણં જાવ વત્તઠ્ઠં સિયા

ભાણિયત્વા) આકાશાસ્તિકાય, જીવાસ્તિકાય, પુદ્ગલાસ્તિકાય इन ती
 अस्तिकारूप द्रव्यों के प्रदेश अनन्त हैं । लोक और अलोक की अपेक्षा
 से आकाशास्तिकाय के प्रदेशों में अनन्तता है । जीवों में सर्वजी
 की अपेक्षा अनन्तता है तथा पुद्गलास्तिकाय में तो स्वभावतः ही अ
 नन्तता है । (सेसं तं चैव) अवशिष्ट कथन पूर्वोक्त जैसा ही जानना च
 हिये । धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय इन दो द्रव्यों के असंख्यात प्रदे
 कहे गये हैं आकाशास्तिकाय आदि तीन द्रव्यों के प्रदेश अनन्त व
 गये हैं । क्योंकि ये प्रत्येक अनन्तप्रदेशिक हैं ॥ सू. २ ॥

અણંતા ભાણિયત્વા” આકાશાસ્તિકાય, જીવાસ્તિકાય અને પુદ્ગલાસ્તિકાય એ
 ત્રણે અસ્તિકાયરૂપ દ્રવ્યોના પ્રદેશ અનન્ત છે, લોક અને અલોકની અપેક્ષાએ
 આકાશાસ્તિકાયના પ્રદેશમા અનન્તતા છે, જીવોમાં સર્વ જીવોની અપેક્ષાએ અ
 તતા છે તથા પુદ્ગલાસ્તિકાયમા તો સ્વભાવથી જ અનન્તતા છે. ‘સેસં તં ચેવ’
 બાકીનું સમસ્ત કથન આગળ કહ્યા પ્રમાણે જ સમજવું ધર્માસ્તિકાય અને
 અધર્માસ્તિકાય દ્રવ્યોના અસંખ્યાત પ્રદેશ કહ્યા છે. આકાશાસ્તિકાય આદિ ત્રણ
 દ્રવ્યોના અનન્ત પ્રદેશો પ્રમાણે એ પ્રદેશોને એ પ્રદેશો અનન્ત પ્રદેશિકો કહેવા

ન્યૂના इत्यर्थे तथा 'एगगाङ्गगहिया" एकग्रङ्गगृहीता एकग्रङ्गेन एकग्र-
 म्देन 'धर्मास्तिकाय' इत्येकलक्षणेन गृहीता ये ते एकग्रङ्गगृहीताः एकग्र-
 वाच्या इत्यर्थे । "एसणं गोयमा" एष सुद्ध गौतम ! "धम्मत्थिकाए त्ति वत्थं
 सिया" धर्मास्तिकाय इति वक्तव्य स्यात् । 'एष मधम्मत्थिकाए वि' एवम् अप-
 र्मास्तिकायोऽपि यथा धर्मास्तिकायस्य प्रकृत्यं कृतं तथा अपर्मास्तिकायोऽपि
 ज्ञातव्यः । "आगासत्थिकाए वि जीवत्थिकाए वि पोग्गलत्थिकाए वि एव वेव"
 आकाशास्तिकायोऽपि जीवास्तिकायोऽपि पुद्गलास्तिकायोऽपि एवमेव नरा-
 केवलम् 'विणंपि' धयाणाम् आकाशास्तिकाय-जीवास्तिकाय-पुद्गलास्तिकाय

समाधान—ऐसा नहीं है क्यों कि—(निरवसेसा) पद से यह सम-
 ज्ञाया गया है कि उन प्रदेशों में जो धर्मास्तिकायता है वह अन्यप्रदेशों
 की सहायता से नहीं है किन्तु स्वभाव से ही है। इस प्रकार वे सब
 प्रदेश जय धर्मास्तिकायरूप स्वभाव से युक्त हो जाते हैं तभी (एगगाङ्ग-
 गगहिया) धर्मास्तिकाय इस एक शब्द के वाक्य होते हैं। अथवा ये
 सब धूस्स आदि शब्द समान अर्थवाले हैं। (एस णं गोयमा ! धम्मत्थि-
 काए त्ति वत्थं सिया) और तभी वे धर्मास्तिकाय कहे जा सकते हैं।
 (एवमहम्मत्थिकाए वि वत्थं) इसी प्रकारसे अधर्मास्तिकायके विषय
 में भी जानना चाहिये। (आगासत्थिकाए जीवत्थिकाए वि पोग्गलत्थिकाए
 वि एव वेव) इसी तरह से आकाशास्तिकाय, जीवास्तिकाय और पुद्ग-
 लास्तिकाय की वक्तव्यता भी जाननी चाहिये। (नवर) इनके विषय
 में जो विशेषता है वह इस प्रकार से है (विणं पि पप्सा अणता

समाधान—जैवुं नहीं करवुं के "निरवसेसा" पदથી જોવું સમજાવવામાં
 આવ્યું છે કે પ્રદેશોમાં જે ધર્માસ્તિકાયતા છે તે અન્યપ્રદેશોની સહાયતાથી
 નથી, પણ સ્વભાવથી જ છે આ રીતે બધા પ્રદેશો ભ્યારે ધર્માસ્તિકાયરૂપ
 સ્વભાવથી યુક્ત થઈ બાક છે ત્યારે 'એગગાંગગહિયા' (ધર્માસ્તિકાય)
 એના એક શબ્દના વાક્ય-કહેવાને ખાત્ર-બની બાક છે એવવા-તે દૂસ્સ
 અહિ સમજાવી પરી સમાન અર્થના વાક્ય છે એસ ણ ગોયમા ! ધમ્મત્થિકાવત્તિ
 વત્થં સિયા" કે ગૌતમ ! ત્યારે જ તેમને ધર્માસ્તિકાય કહી શકાય છે
 "એવમહમ્મત્થિકાવ વિ વત્થં" એવ પ્રમાણે અધર્માસ્તિકાયના વિષયમાં પણ અમ
 જવુ "આગાસત્થિકાવ વિ જીવત્થિકાવ વિ પોગ્ગલત્થિકાવ વિ એવ વેવ" આકાશ
 સ્તિકાય, જીવાસ્તિકાય અને પુદ્ગલાસ્તિકાયના વિષયમાં પણ એવ પ્રમાણે સમજવુ
 "નવર" પણ તેમનામાં નીચે પ્રમાણે વિશેષતા છે— વિણં વિ પપ્સા

દ્રવ્યાણામપિ “પણ્ણ” પ્રદેશા “અણંતા માણિયવ્વા” અનન્તા માણિતવ્યાઃ
એતેપાં ત્રયાણામપિ અનન્તાઃ પ્રદેશાઃ જ્ઞાતવ્યા इत्यर्थः લોકાડલોકાપેક્ષયા આકા-
શાસ્તિકાયસ્યાનન્તત્વમ્ । જીવાસ્તિકાયસ્ય સર્વજીવાપેક્ષયાડનન્તત્વં જ્ઞાતવ્યમ્
પુદ્ગલાસ્તિકાયસ્ય તુ સ્વભાવતઃ એવાનન્તત્વં જ્ઞાતવ્યમ્ “સેસં તં ચેવ” શેષં તદેવ
પૂર્વોક્તમેવ જ્ઞાતવ્યમ્ ધર્માસ્તિકાયાધર્માસ્તિકાયયોરસંખ્યેયાઃ પ્રદેશાઃ કથિતાઃ
આકાશાસ્તિકાયાદીનાં ત્રયાણાં દ્રવ્યાણાં પુનરનન્તાઃ પ્રદેશા વક્તવ્યાઃ અનન્ત
પ્રદેશિકત્વાદેતેપામિતિ ભાવઃ ॥ સૂ. ૨ ॥

ઉપયોગગુણવાન્ જીવાસ્તિકાય इति पूर्वप्रकरणे प्रदर्शितम् इदानीं जीवा-
स्तिकायस्य देशभूत एको जीव उत्पानादिगुणवानिति दर्शयितुमाह-‘ जीवेण ’
इत्यादि ॥

મૂલમ્—જીવે ણં મંતે ? સ ઉટ્ટાણે, સ કમ્મે, સ વલે, સ
ચોરિણ, સ પુરિસકારપરક્રમે, આયભાવે ણં જીવભાવં, ઉવદંસે-
તીતિ વત્તવં સિયા ? હંતા ગોયમા ! જીવેણં સ ઉટ્ટાણે જાવ
ઉવદંસેતીતિ વત્તવં સિયા, સે કેણટ્ટેણં જાવ વત્તવં સિયા,

માણિયવ્વા) આકાશાસ્તિકાય, જીવાસ્તિકાય, પુદ્ગલાસ્તિકાય इन तीनों
अस्तिकारूप द्रव्यों के प्रदेश अनन्त हैं । लोक और अलोक की अपेक्षा
से आकाशास्तिकाय के प्रदेशों में अनन्तता है । जीवों में सर्वजीवों
की अपेक्षा अनन्तता है तथा पुद्गलास्तिकाय में तो स्वभावतः ही अन-
न्तता है । (सेसं तं चैव) अवशिष्ट कथन पूर्वोक्त जैसा ही जानना चा-
हिये । धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय इन दो द्रव्यों के असंख्यात प्रदेश
कहे गये हैं आकाशास्तिकाय आदि तीन द्रव्यों के प्रदेश अनन्त कहे
गये हैं । क्योंकि ये प्रत्येक अनन्तप्रदेशिक हैं ॥ सू. २ ॥

અણંતા માણિયવ્વા” આકાશાસ્તિકાય, જીવાસ્તિકાય અને પુદ્ગલાસ્તિકાય એ
ત્રણે અસ્તિકાયરૂપ દ્રવ્યોના પ્રદેશ અનન્ત છે, લોક અને અલોકની અપેક્ષાએ
આકાશાસ્તિકાયના પ્રદેશમાં અનન્તતા છે, જીવોમાં સર્વ જીવોની અપેક્ષાએ અન-
ન્તતા છે તથા પુદ્ગલાસ્તિકાયમાં તો સ્વભાવથી જ અનન્તતા છે. ‘સેસં તં ચેવ’
બાકીનું સમસ્ત કથન આગળ કહ્યા પ્રમાણે જ સમજવું. ધર્માસ્તિકાય અને
અધર્માસ્તિકાય દ્રવ્યો ના અસંખ્યાત પ્રદેશ કહ્યા છે. આકાશાસ્તિકાય આદિ ત્રણ
દ્રવ્યોના અનન્ત પ્રદેશો કહ્યા છે, કારણ કે તે દરેક અનન્ત પ્રદેશિક છે ॥સૂ.૨॥

ગોયમા ! જીવેણ અણતાણ અભિણિવોહિયણાણપજ્જવાણ, ઇવ
 સુયણાણપજ્જવાણ, ઓહિણાણ પજ્જવાણ, મણપજ્જવાણાણ પજ્જવાણ
 કેવલણાણ પજ્જવાણ, મહ અણ્ણાણ પજ્જવાણ, સુઅઅણ્ણાણ પજ્જ
 વાણ, ધિમ્મગણાણ પજ્જવાણ, અક્કલુદસણ—પજ્જવાણ, અચક્કલુ
 દંસણપજ્જવાણ, ઓહિદસણપજ્જવાણ, કેવલદસણપજ્જવાણ,
 ઉવક્કોગ ગચ્છહ ઉવયોગલક્કલેણેણજીવેસેણ પદ્ધેણ, ઇવ વુચ્છહ
 ગોયમા ? જીવેણ સ ઉદ્ધાણે જાવ વત્તઁવ સિયા ॥ ૩ ॥

છાયા—જીવ સહ મદન્ત ! સોત્થાના સકમા સવલ સવીરિય સ પુર
 પકારપરાક્રમઃ આત્મભાવેણ જીવમાયમ્પદર્શયતિ, इति वक्तव्यम् स्यात् ? इत्थ
 ગૌતમ ! જીવ સહ સોત્થાનાઃ યાવદુપદર્શયતિ इति वक्तव्यम् स्यात् तत् केनार्थेन

જીવાસ્તિકાંય ઉપયોગ શુણ ચાલા હૈ—પહ પહિલે પ્રકટ કિયા જા
 ચુકા હૈ। અવ પહ પ્રકટ કિયા જાતા હૈ કિ જીવાસ્તિકાંય કા વેશમૂત
 પક જીવ ઉત્થાન આદિ શુણચાલા હોતા હૈ—(જીવે ન મંતે ! સડદ્ધાણે)
 હત્યાદિ ।

સૂત્રાર્થ—(જીવે ન મંતે ! સડદ્ધાણે, સકમ્મે, સવલે, સવીરિય, સપુ
 રિસકારપરાક્રમે) હૈ મદન્ત ! ઉત્થાનચાલા, કર્મચાલા, જસચાલા, ધીયચાલા,
 ઔર પુરુષકારપરાક્રમચાલા જીવ (આયમાવેણ) આત્મભાવદ્વારા (જીવમાય
 અવર્ણસેતિ इति वक्तव्यं सिया) જીવમાયરૂપ ચેતન્ય કો દિશાતા હૈ એસા
 વક્તવ્ય હો સકતા હૈ કયા ? (હંતા ગોયમા ! જીવે ન સડદ્ધાણે જાવ

અવાસ્તિકાંય ઉપયોગ શુણચાલુ દેખ છે એ વાત પહેલાં જાણવામાં
 આવી છે. હવે એ સમજાવવામાં આવે છે કે અવાસ્તિકાંયના દેશરૂપ એક
 એક ઉત્થાન આદિ શુણચાલો દેખ છે—“ જીવેણ મતે ! સડદ્ધાણે ” ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ—“ જીવે ન મંતે ! સડદ્ધાણે, અકમ્મે, અવલે, સવીરિય, સપુરિસ
 કાર પરાક્રમે ” હૈ મદન્ત ! ઉત્થાનચાલો, કર્મચાલો, જાણચાલો વીરવાલો
 અને પુરુષકાર પરાક્રમચાલો એક (આયમાવેણ) આત્મભાવ દ્વારા (જીવમાય
 અવર્ણસેતિ इति वक्तव्यं सिया) એકજાન રૂપ નેતન્ય જાતાવે છે, અર્થ કરી શકાય

યાવદ્ વક્તવ્યં સ્યાત્ ? ગૌતમ ! જીવઃ સ્વલુ અનન્તાનામાભિનિવોધિકજ્ઞાનપર્ય-
વાણામ્ । एवं श्रुतज्ञान पर्यवाणाम् अवधिज्ञान पर्यवाणाम् मनः पर्यवज्ञानपर्यवाणाम्
કેવલજ્ઞાનપર્યવાણામ્ , મત્યજ્ઞાનપર્યવાણામ્ , શ્રુતજ્ઞાનપર્યવાણામ્ , વિભંગજ્ઞાનપર્ય-
વાણામ્ , ચક્ષુર્દર્શનપર્યવાણામ્ , અવચક્ષુર્દર્શનપર્યવાણામ્ , અવધિર્દર્શનપર્યવાણામ્ ,

उवदसेतीति वक्तव्यं सिया) हां गौतम ! उत्थान आदि विशेषणों
वाला जीव यावत् जीवभावरूप चैतन्य को दिखाता है ऐसा वक्तव्य हो
सकता है । (से केणट्टेणं जाव वक्तव्यं सिया) हे भदन्त ! ऐसा आप किस
कारण से कहते हैं कि उत्थान आदि विशेषणों वाला जीव आत्मभाव
द्वारा जीवभावरूप चैतन्य को दिखाता है ऐसा वक्तव्य हो सकता है ।
(गोयमा) हे गौतम ! (जीवे णं अणंताणं आभिणिबोहियणाणपज्जवाणं,
एवं सुयणाणपज्जवाणं, ओहिणाणपज्जवाणं, मणपज्जवणाणपज्जवाणं, केव-
लणाणपज्जवाणं) जीव अभिनिबोधिक ज्ञान की अनन्तपर्यायों के इसी
तरह श्रुतज्ञान की अनन्त पर्यायों के, अवधिज्ञान की अनन्तपर्यायों के,
मनः पर्यवज्ञान की अनन्त पर्यायों के केवल ज्ञान की अनन्त पर्यायों
के (मह अन्नाणपज्जवाणं, सुय अण्णाणपज्जवाणं, विभंग अन्नाणपज्ज-
वाणं,) मत्यज्ञान की अनन्तपर्यायों के, श्रुत अज्ञान की अनन्तपर्यायों
के, विभंग अज्ञान की अनन्त पर्यायों के, (चक्खुदंसणपज्जवाणं,

અર્થ ? (હાંતા ગોયમા ! જીવે ણં સ ઉટ્થાને જાવ ઉવદસેતીતિ વક્તવ્યં સિયા) હે ગૌતમ !
હા, ઉત્થાન આદિ વિશેષણોવાળો જીવ આત્મભાવરૂપ ચૈતન્ય બતાવે છે, એવું કહી
શકાય છે. (સે કેણટ્ટેણ જાવ વક્તવ્યં સિયા) હે ભદન્ત ! આપ શા કારણે એવું કહો
છો કે ઉત્થાન આદિ વિશેષણોવાળો જીવ આત્મભાવદ્વારા જીવભાવરૂપ ચૈતન્ય બતાવે
છે, એવું કહી શકાય છે ? (ગોયમા !) હે ગૌતમ ! ((જીવે ણં અણંતાણં આભિ-
નિવોહિયણાણપજ્જવાણ એવં સુયણાણપજ્જવાણ ઓહિણાણપજ્જવાણં, મણપજ્જવણાણ-
પજ્જવાણં, કેવલણાણપજ્જવાણં) જીવ અભિનિબોધિક જ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના
એજ પ્રમાણે શ્રુતજ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના, અવધિજ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના,
મનઃ પર્યવજ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના, કેવલજ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના, (મહ
અન્નાણપજ્જવાણ, સુય અણ્ણાણપજ્જવાણ, વિભંગઅન્નાણપજ્જવાણં) મતિ અજ્ઞા-
નાની અનંત પર્યાયોના, શ્રુત અજ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના, વિભંગ અજ્ઞાનની
અનંત પર્યાયોના (ચક્કુદંસણપજ્જવાણ, અવચક્કુદંસણપજ્જવાણં, ઓહિર્દંસણપ-
જ્જવાણ) અચ્ચુદર્શનની અનંત પર્યાયોના, અવચ્ચુદર્શનની અનંત પર્યાયોના,
અવધિદર્શનની અનંત પર્યાયોના (કેવલદંસણપજ્જવાણં) અને કેવલદર્શનની
અનંત પર્યાયોના (સ્વઓગ ગચ્છદ્) ઉપયોગને પ્રાપ્ત કરે છે. (સ્વઓગ લક્ષણે

ગોયમા ! જીવેણ અણતાણ અભિણિધોહિયણાણપજ્જવાણ, एव
 સુયણાણપજ્જવાણ, ઓહિણાણ પજ્જવાણ, મણપજ્જવાણાણ પજ્જવાણ
 કેવલણાણ પજ્જવાણ, મહ અન્નાણ પજ્જવાણ, સુઅઅણાણ પજ્જ
 વાણ, વિભંગણાણ પજ્જવાણ, ચક્કસુદસણ—પજ્જવાણ, અચક્કસુ
 દસણપજ્જવાણ, ઓહિદસણપજ્જવાણ, કેવલદસણપજ્જવાણ,
 ઉવઓગ ગચ્છહ ઉવયોગલક્ષણે નજીવેસે ए पट्ठेण, एव वुच्चह
 ગોયમા ? જીવે ન સ ઉદ્ધાણે જાવ વત્તવ્વં સિયા ॥ ૩ ॥

છાયા—જીવ સહુ મદન્ત ! સોત્થાન! સફર્મા સપ્પમઃ સવીરિયં! સ પુરુ
 પકારપરાક્રમા આરમમાથેન જીવમાયસુપર્વયપિ, इति वक्तव्यम् स्यात् ? इत्थ
 ગૌતમ ! જીવ સહુ સોત્થાનઃ યાવદુપર્વયપિ इति वक्तव्यम् स्यात् तत् केनार्थेन

જીવાસ્તિકાય ઉપયોગ શુણ થાતા હૈ—પહ પહિછે પ્રકટ ક્રિયા જા
 ચુકા હૈ। અથ પહ પ્રકટ ક્રિયા જાતા હૈ કિ જીવાસ્તિકાય કા દેશમૂત
 પક જીવ ઉત્થાન આદિ શુણવાલા હોતા હૈ—(જીવે જ મંતે ! સઠદાણે)
 હત્પાદિ ।

સૂત્રાર્થ—(જીવે જ મંતે ! સઠદાણે, સકમ્મે, સપ્પહે, સવીરિયં, સપુ
 રિસપ્પારપરક્કમે) હૈ મદન્ત ! ઉત્થાનવાલા, કર્મવાલા, ચલવાલા, વીર્યવાલા,
 ઓર પુરુષકારપરાક્રમવાલા જીવ (આયમાયેણ) આરમમાથદારા (જીવમાથ
 ઉપર્વસેતિ इति वक्तव्यं सिया) જીવમાયરૂપ નીત-ય કો દિગ્ધાતા હૈ એસા
 વક્તવ્ય હો મક્કા હૈ કયા ? (હંતા ગોયમા ! જીવે જ મંતે ! સઠદાણે જાવ

અવાસ્તિકાય ઉપયોગ શુણવાળું દોષ છે, જે વાત પડેલાં જતાવવામાં
 આવી છે એવે જે સમજાવવામાં આવે છે કે અવાસ્તિકામના દેશરૂપ એક
 એવ ઉત્થાન આદિ શુણવાળો દોષ છે—“જીવેણ મંતે ! સઠદાણ ” ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ—“જીવે જ મંતે ! સઠદાણે, અકમ્પ, સપ્પહે, સવીરિયં, સપુરિષ
 કાર પરક્કમે” હૈ મદન્ત ! ઉત્થાનવાળો, કર્મવાળો, જગવાળો, વીર્યવાળો
 અને પુરુષકાર પરાક્રમવાળો એવ (આયમાથેણ) આરમમાથ દારા (જીવમાથ
 ઉપર્વસેતિ इति वक्तव्यं सिया) અવાસ્તિકા રૂપ નીત-ય જતાવે છે, અત્રુ કંદી શકાય

લોકાઘાઃ કદાચિન્નૈવ વા, નત્ત્વૈવં, નિયમત્ એતેર્પા સદ્ભાવદર્શનાદિતિ । ‘સેવં મંતે સેવં મંતે ત્તિ જાવ વિહરહ’—૩દેવં ભદન્ત તદેવં ભદન્ત્વિતિ યાવત્ વિહરતિ, હે ભગવન્ ! યત્ દેવાનુપ્રિયેણ પ્રતિપાદિતં તદ્ એવમેવ સર્વમેવ તત્ તથૈવ ન તુ વિપરી- તમ્ હત્યુક્ત્વા ભગવન્તં વન્દતે નમસ્કરોતિ વન્દિત્વા નમસ્કૃત્ય સંયમેન તપસાઽઽ- ત્માનં ભાવયન્ વિહરતિ સ્વસ્થાને સમુપવિશતીતિ ॥સૂ૦૪॥

॥ ઇતિ રોહપ્રકરણમ્ ॥

જાણે તો ફિર યે લોકાદિક કમી હોંગે ઓર કમી નહીં હોંગે । પરન્તુ એસા તો નહીં હૈ । ક્યોં કિ નિયમ સે इनका सद्भाव दिखाई देता है । (સેવં મંતે । સેવં મંતે । ત્તિ જાવ વિહરહ) હે ભદન્ત ! જૈસા આપ દેવા નુપ્રિયને પ્રતિપાદન કિયા હૈ વહ સવ એસા હી હૈ, હે ભદન્ત ! વહ સવ એસા હી હૈ વિપરીત નહીં હૈ । એસા કહકર વે રોહ અનગાર યાવત્ અપની આત્મા કો તપ સંયમ સે ભાવિત કર વિચરને લગે । યહાં યાવત્ પદ સે “ ઉન્હોંને ભગવાન કો વંદના કી, ઉન્હેં નમસ્કાર કિયા । વંદના નમસ્કાર કરકે તપ ઓર સંયમ સે આત્મા કો ભાવિત કરતે હુએ ફિર વે” હસ અર્થ કા સંગ્રહ હુઆ હૈ । “અપને સ્થાન પર વૈઠ ગયે” યહ અર્થ “વિહરતિ” પદકા હૈ । તાત્પર્ય કહને કા યહ હૈ કિ વે ભગવદુક્ત પ્રવચન કી મન, વચન, કાયાસે અનુમોદના કરકે અપને સ્થાનપર વૈઠગયે॥સૂ૦૪॥

॥ રોહપ્રકરણ સમાપ્ત ॥

એ આ પદ્ધતિને ઇશ્વર વગેરેથી ઉત્પન્ન થયેલાં માનવામાં આવે તો આ લોક અલોક વગેરેનું અસ્તિત્વ ક્યારેક હશે અને ક્યારેક નહીં હોય, એ વાત પણ માનવી પડશે, પણ એવું બનતું નથી કારણ કે નિયમથી જ તેમનો સદ્ભાવ જણાય છે (સેવં મંતે ! સેવમેતે ત્તિ જાવ વિહરહ) “હે ભગવન્ ! આપે જે પ્રમાણે પ્રતિપાદન કર્યું છે તે પ્રમાણે જ છે હે ભગવન્ ! આપનું કથન સાચું જ છે.” એવું કહીને ભગવાનને વંદણા નમસ્કાર કરીને રોહ અણુગાર તપ અને સંયમથી પોતાના આત્માને ભાવિત કરતા પોતાને સ્થાને બેસી ગયા. “વિહરતિ” એ પદનો અર્થ અહિં “પોતાને સ્થાને બેસી ગયા” એવો થાય છે. તાત્પર્ય એ છે કે મન, વચન અને કાયાથી ભગવાને કહેલ પ્રવચનની અનુમોદના કરીને રોહ અણુગાર પોતાના સ્થાને બેસી ગયા. ॥ સૂ. ૪ ॥

કેવલદર્શનપર્યવાણામ્ ઉપયોગ ગચ્છતિ, ઉપયોગ મ્હુજઃ સ્વમ્ જીવઃ સદેતેનાયેન
 એવમુચ્યતે ગૌતમ ! જીવા મ્હુ સોત્થાનો યાવત્ ક્ષતત્યં સ્પાત્ ॥ ૬૦ ૩ ॥

ટીકા—“જીવ જ મેંતે” જીવ સ્વમ્હ મદન્ત “સ સઢાણે” સોત્થાન
 ઉત્થાનં વેદ્યાવિશેષઃ “સ કમ્મે” સકર્મા - ક્રિયાવિશેષયુક્તઃ “સ વહે”
 સવહે - થલ શારીરસામર્થ્યમ્ “સ વીરિય” સત્ત્વીયઃ વીર્યં જીવમયમ્ “સ પુરિ
 સકાર - પરકમ” સપુરુષકારપરાક્રમઃ - પુરુષશરોઽમિમાનવિશેષઃ પરાક્રમઃ
 પુરુષકાર એવ નિપ્પાદિતવિષયઃ “આપમાવેણ” આત્મમાવેન-આત્મસ્વરૂપેણ
 ત્યયઃ “જીવમાવ” જીવમાત્રં જીવત્ત્વં ચૈતન્યમિત્યથ ‘ઉપદસતીતિ વચન્

અથસ્સુદ્ધાપરજવાણં, ઓહિદંસણપરજવાણં,) અમુર્દ્ધાન કી અનન્તપ
 યાયાં કે, અમુર્દ્ધાન કી અનન્તપયાંયાં કે અથચિદ્ધાન કી અનન્તપ
 યાયાં કે (કેવલ દમણપરજવાણં) ઓર કેવલ દર્શન કી અનન્ત પયાંયાં
 કે (સ્વભોગ ગચ્છહ) ઉપયોગ કો પ્રાપ્ત કરતા હૈ । (સ્વભોગલક્ષણે
 જીવે સે) ઉપયોગલક્ષણવાલા જીવ હૈ । (ઉપદેવં એવં મુચ્છહ ગોયમા ।
 જીવે જં સઢાણે જાવ વસન્થ સિયા) હસ કારણ હૈ ગૌતમ ! મેંને પેલા
 કહા હૈ કિ સ્થાન આદિ વિશેષજો વાલા જીવ યાવત્ જીવમાવ કો
 દિભ્વાતા હૈ પેલા વક્તવ્ય હો સકતા હૈ ॥ ૬૦ ૩ ॥

ટીકાર્થ—(જીવે જ મેંતે ।) હૈ મદન્ત ! જીવ (સઢાણે સકમ્મે)
 વેદ્યા વિશેષરૂપ સ્થાન વાલા હોકર, જ્ઞાનવરણીય આદિ કર્મવાલા હો
 કર (સવહે) શારીરિક સામર્થ્યરૂપ થલ વિશિષ્ટ હોકર (સવીરિય)
 જીવસંબધી થલસે યુક્ત હોકર (સપુરિસકારપરકમ) અમિમાનવિશેષ
 રૂપ પુરુષકાર સે ઓર પરાક્રમ સે યુક્તહોકર (આપમાવેણ) આત્મા-

જીવે સે) એવ સ્વભોગલક્ષણ વાળો છે (એવુણ એવ મુચ્છહ ગોયમા । જીવેજ
 સઢાણે જાવ વસન્થ સિયા) હૈ ગૌતમ ! તે કારણે કે એવ કહ્યું છે કે સ્થાન
 આદિ વિશેષજોથી યુક્ત એવ આત્મભાવરૂપ ચૈતન્ય બતાવે છે, એવ કથન
 કરી શકાય છે ॥ ૬૦ ૩ ॥

ટીકાર્થ—(જીવેજ મેંતે ।) હૈ મદન્ત ! એવ (સઢાણે સકમ્મે) વિશિષ્ટ
 વેદ્યારૂપ સ્થાન વાળો, જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મવાળો (સવહે) શારીરિક
 લક્ષણરૂપ બળ વાળો, (સવીરિય) વીર્ય વાળો “ સપુરિસકારપરકમ ” એ
 સ્થાન વિશેષરૂપ પુરુષકાર અને પરાક્રમવાળો થઈને (આપમાવેણ) આત્મ

યાવદ્ વક્તવ્યં સ્યાત્ ? ગૌતમ ! જીવઃ खलु अनन्तानामाभिनिबोधिकज्ञानपर्य-
 वाणाम् । एवं श्रुतज्ञान पर्यवाणाम् अवधिज्ञान पर्यवाणाम् मनः पर्यवज्ञानपर्यवाणाम्
 केवलज्ञानपर्यवाणाम् , मत्यज्ञानपर्यवाणाम् , श्रुतज्ञानपर्यवाणाम् , विभंगज्ञानपर्य-
 वाणाम् , चक्षुर्दर्शनपर्यवाणाम् , अवक्षुर्दर्शनपर्यवाणाम् , अवधिदर्शनपर्यवाणाम् ,

उचदसेतीति वक्तव्यं सिया) हां गौतम ! उत्थान आदि विशेषणों
 वाला जीव यावत् जीवभावरूप चैतन्य को दिखाता है ऐसा वक्तव्य हो
 सकता है। (से केणट्टेणं जाव वक्तव्यं सिया) हे भदन्त ! ऐसा आप किस
 कारण से कहते हैं कि उत्थान आदि विशेषणों वाला जीव आत्मभाव
 द्वारा जीवभावरूप चैतन्य को दिखाता है ऐसा वक्तव्य हो सकता है।
 (गोयमा) हे गौतम ! (जीवे णं अणंताणं आभिणिबोडियणाणपज्जवाणं,
 एवं सुयणाणपज्जवाणं, ओहिणाणपज्जवाणं, मणपज्जवणाणपज्जवाणं, केव-
 लणाणपज्जवाणं) जीव अभिनिबोधिक ज्ञान की अनन्तपर्यायों के इसी
 तरह श्रुतज्ञान की अनन्त पर्यायों के, अवधिज्ञान की अनन्तपर्यायों के,
 मनः पर्यवज्ञान की अनन्त पर्यायों के केवल ज्ञान की अनन्त पर्यायों
 के (मइ अज्ञाणपज्जवाणं, सुय अण्णाणपज्जवाणं, विभंग अज्ञाणपज्ज-
 वाणं,) मत्यज्ञान की अनन्तपर्यायोंके, श्रुत अज्ञान की अनन्तपर्यायों
 के, विभंग अज्ञान की अनन्त पर्यायों के, (चक्खुदंसणपज्जवाणं,

અર્થ ? (હંતા ગોયમા!જીવે ણં સ ઉઠાણે જાવ ઉચદંસેતીતિ વક્તવ્યં સિયા) હે ગૌતમ !
 હા, ઉત્થાન આદિ વિશેષણોવાળો જીવ આત્મભાવરૂપ ચૈતન્ય બતાવે છે, એવું કહી
 શકાય છે (સે કેણટ્ટેણં જાવ વક્તવ્યં સિયા) હે ભદન્ત ! આપ શા કારણે એવું કહો
 છો કે ઉત્થાન આદિ વિશેષણોવાળો જીવ આત્મભાવદ્વારા જીવભાવરૂપ ચૈતન્ય બતાવે
 છે, એવું કહી શકાય છે ? (ગોયમા !) હે ગૌતમ ! ((જીવે ણં અણંતાણં આભિ-
 નિબોદિયણાણપજ્જવાણ એવં સુયણાણપજ્જવાણં ઓહિણાણપજ્જવાણં, મણપજ્જવણાણ-
 પજ્જવાણં, કેવલણાણપજ્જવાણં) જીવ અભિનિબોધિક જ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના
 એજ પ્રમાણે શ્રુતજ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના, અવધિજ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના,
 મનઃ પર્યાયજ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના, કેવલજ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના, (મહ
 અજ્ઞાણપજ્જવાણ, સુય અણ્ણાણપજ્જવાણ, વિભંગઅજ્ઞાણપજ્જવાણં) મતિ અજ્ઞા-
 નાની અનંત પર્યાયોના, શ્રુત અજ્ઞાનની અનંત પર્યાયોના, વિભંગ અજ્ઞાનની
 અનંત પર્યાયોના (ચક્કહુદંસણપજ્જવાણ, અવચક્કહુદંસણપજ્જવાણં, ઓહિદંસણપ-
 જ્જવાણં) અક્ષુદર્શનની અનંત પર્યાયોના, અવચક્ષુદર્શનની અનંત પર્યાયોના,
 અવધિદર્શનની અનંત પર્યાયોના (કેવલદંસણપજ્જવાણં) અને કેવલદર્શનની
 અનંત પર્યાયોના (વવઓગ ગચ્છહ) ઉપયોગને પ્રાપ્ત કરે છે. (ઉવઓગ લક્કણે

કેતલર્થનપર્યવાણામ્ ઉપયાગ ગચ્છતિ, ઉપયોગ મ્લગ સ્વનૃ જીવઃ સદેસનાર્થેન
 એવમુચ્યતે ગૌતમ ! જીવઃ સ્વલુ સોત્યાના યાવત્ ચતતન્ય સ્પાત્ ॥ મુ. ૩ ॥

ટીકા—“ જીવ ણ મતે ” જીવઃ સ્વલુ મદન્ત “ સ ઉદ્ધાણે ” સોત્યાન
 ઉત્યાનં ઘેષ્ટાચિન્તયઃ “ સ કમ્મ ” મકર્મા — ક્રિયાત્રિગુપયુક્તઃ “ સ ધણે ”
 ધનસ્ર—ધન પ્રાપ્તિસામર્થ્યમ્ “ સ ચીરિણ ” સર્વાય ધીર્ય જીવમચમ્ “ સ પુરિ
 સકાર—પરકમ ” સપુરુષકારપરાકમ — પુરુષદારોઽભિમાનવિશેષઃ પરાકમઃ
 પુરુષકાર એવ નિવ્યાદિતવિષય “ આયમાયેણ ” આત્મમાધન—માત્રમસ્વરૂપેણ
 ત્યયઃ “ જાંબમાવ ” જીવમાવ જીવત્વં ચૈતન્યમિત્યથ ‘ ઉપદસતીતિ વચન્

અચરબુદ્ધણપઞ્જવાણં, ઓહિદમ્મણપઞ્જવાણં,) ચચુર્દર્શન કી અનન્તપ
 યાંયોં કે, અચ્છુર્દર્શન કી અનન્તપયાંયોં કે અચ્છિદર્શન કી અનન્તપ
 યાંયોં કે (કેચ્છલ દમ્મણપઞ્જવાણ) ઓર કેચ્છલ દર્શન કી અનન્ત પયાંયોં
 કે (ઉચ્છાગ ગચ્છહ) ઉપયોગ કો પ્રાપ્ત કરતા હૈ । (ઉચ્છાગલક્ષ્મણે
 જીવે સે) ઉપયોગલક્ષણવાલા જીવ હૈ । (અણ્ઠેણં અણં ધુચ્ચહ ગોયમા ।
 જીવે ણં સુદ્ધાણે જાવ વસન્ત્વં સિયા) હસ કારણ હૈ ગૌતમ ! મેને એસા
 કહા હૈ કિ ઉત્યાન આદિ વિશેષર્થો વાલા જીવ યાવત્ જીવમાવ કો
 દિન્વાતા હૈ એસા વસ્તુવ્ય હો સકતા હૈ ॥ મુ. ૩ ॥

ટીકાર્થ—(જીવે ણં મતે ।) હૈ મદન્ત ! જીવ (સુદ્ધાણે સકમ્મે)
 જેઠા વિશેષરૂપ ઉત્યાન વાળા હોકર, જ્ઞાનચરણીય આદિ કર્મવાલા હો
 કર (સવણે) શારીરિક સામર્થ્યરૂપ ધન વિશિષ્ટ હોકર (સચારિણ)
 જીવસપરી ધનસે યુક્ત હોકર (સપુરિસકારપરકમે) અભિમાનવિશેષ
 રૂપ પુરુષકાર સે ઓર પરાકમ સે યુક્તહોકર (આયમાયેણ) આત્મા-

જીવે સે) એવ ઉચ્છાગલક્ષણ વાળો છે (અણ્ઠેણં અણં ધુચ્ચહ ગાયમા । જીવે
 મદ્દાગ જાવ વસન્ત્વં સિયા) હૈ ગૌતમ ! તે કારણે મેં એવુ કહ્યું કે ઉત્યાન
 આદિ વિશેષવૈધી યુક્ત એવ આ અભ્યાવરૂપ ચૈતન્ય બતાવે છે, એવુ કહ્યું
 કરી શકાય છે ॥ મુ. ૩ ॥

ટીકા—(જીવેજમત્ત !) હૈ મદન્ત ! એવ (સુદ્ધાણ સકમ્મે) વિશિષ્ટ
 વૈશિષ્ટ્ય ઉત્યાન વાળો જ્ઞાનચરણીય આદિ કર્મવાળો, (સવણે) શારીરિક
 વ્યક્તિત્વ બળ વાળો, (સચારિણ) ધીર્ય વાળો “સપુરિસકારપરકમ” અ
 ભિમાન વિશેષરૂપ પુરુષકાર અને પરાકમવાળા ધન (આયમાયત્ર) આત્મ

યા ' ઉપદર્શયતીતિ વક્તવ્યં સ્યાત્ । અત્ર સ્વલુ ' સ ઉદ્ધાને ' इत्यादीनि पञ्च
 शेषणानि सिद्धजीवव्यवच्छेदकानि । सिद्धजीवानामुत्थानादिक्रियाया अभा-
 वत् यावत्संसारमेवोत्थानादिक्रियाया आत्मनि समवेतत्वात् । एतदेव जीवस्य
 सारित्वं यत् क्रियादिमत्त्वं मोक्षेऽपि क्रियादिसत्त्वे मोक्ष इति परिभाषामात्रमेव
 नादिति । ' आय भावेण ' आत्मभावेन उत्थानशयनगमनभोजनादिरूपेणाऽऽ-
 त्मपरिणामविशेषेण ' जीवभावं ' जीवत्वं चैतन्यम् ' उपदंसेति ' उपदर्शयति-

અવધે પરિણામો દ્વારા (જીવભાવં) ચૈતન્યરૂપ જીવભાવ કો (ઉવદંસે-
 તીતિ વક્તવ્યં સિયા) પ્રકટ કરતા હૈ એસા કહા જા સકનો હૈ કયા ? યે
 પો પૂર્વોક્ત પાંચ વિશેષણ જીવ કે કહે ગયે હૈં વે સિદ્ધ જીવ કે વ્યવ-
 છેદક હૈં । કયોં કિ સિદ્ધ જીવોં કે ઉત્થાન આદિ ક્રિયા કા અભાવ
 હતા હૈ । યે ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઈ જીવ મેં જયતક ઉસકે સાથ સંસાર
 ના સંબંધ હૈ તખીતક ઉસમેં પાઈ જાતી હૈં । ઉત્થાન આદિ ક્રિયાવિશિષ્ટ
 યોના યહી જીવ મેં સંસારીપના હૈ । ઉત્થાન આદિ ક્રિયાઓં કા
 તહાં અસદ્ભાવ હૈ વહી મોક્ષ હૈ । મોક્ષ મેં યે ઉત્થાન આદિ ક્રિયાઈ
 તહીં હોતી હૈં । યદિ વહાં પર ખી ઇનકા સદ્ભાવ માનને મેં આ-
 ત્માય તો ફિર મોક્ષ યહ કેવલ એક પારિભાષિક શબ્દ હી માના જાયગા ।
 અતઃયહી માનના ઉચિત હૈ કિ મોક્ષ મેં યે ઉત્થાન આદિ ક્રિયાઈ નહીં
 હૈ । સંસાર મેં હી હૈં । હસી કારણ સંસારી જીવ મેં સંસાર કે સમ્બન્ધ
 સે યે ક્રિયાઈ આદિ પાઈ જાતી હૈં । અતઃએસા યહ સંસારી જીવ (આય-
 ભાવેણ) ઉત્થાન, શયન, ગમન, ભોજન, કરણ આદિરૂપ આત્મપરિણામ

ભાવદ્વારા-પરિણામો દ્વારા (જીવભાવ) ચૈતન્યરૂપ જીવભાવને (ઉવદંસેતીતિ
 વક્તવ્ય સિયા) પ્રકટ કરે છે, એવું કહી શકાય ખરું ? ઉપર જીવના જે
 પાંચ વિશેષણ કહ્યાં છે તે સિદ્ધજીવને લાગૂ પડતા નથી. કારણ કે સિદ્ધજીવોમાં
 ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓનો અભાવ હોય છે જ્યાં સુધી જીવનો સંસાર સાથે સં-
 બંધ હોય ત્યાં સુધી જ એ ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓ જીવમાં ભેવા મળે છે. ઉત્થા-
 નાદિ ક્રિયાઓથી યુક્ત હોવું એજ જીવનું સંસારીપણ છે જ્યાં ઉત્થાનાદિ
 ક્રિયાઓનો અસદ્ભાવ છે, એવું સ્થાન મોક્ષ છે મોક્ષમાં ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓ
 હોતી નથી. જો ત્યાં પણ તેમનો સદ્ભાવ માનવામાં આવે તો મોક્ષ એક
 પારિભાષિક શબ્દ જ મનાય તેથી એવું જ માનવું યોગ્ય છે કે મોક્ષમાં ઉત્થા-
 નાદિ ક્રિયાઓ નથી-સંસારમાં જે તે ક્રિયાઓનું અસ્તિત્વ છે. કારણ કે સંસાર
 સાથેના સંબંધથી સંસારી જીવોમાં તે ક્રિયાઓનો સદ્ભાવ હોય છે તો એ
 ક્રિયાઓથી યુક્ત સંસારી જીવ (આયભાવેણ) ઉત્થાન શયન, ગમન, ભોજન
 આદિરૂપ આત્મપરિણામ દ્વારા (જીવભાવં ઉવદંસેતિ) જીવભાવ રૂપ ચૈતન્યને

કેવલદર્શનપર્યવાણામ્ ઉપયોગ ગચ્છતિ, ઉપયોગ લક્ષણઃ સ્વદ્ જીવઃ ઉદેતેનાર્થેન
 એવમુચ્યતે ગૌતમ ! જીવઃ સ્વદ્ સોત્પાનો યાવત્ વનતત્ત્વં સ્થાત્ ॥ સૂ. ૩ ॥

ટીકા—“ જીવે જં મતે ” જીવ સ્વદ્ મદન્ત “ સ ઉદ્ઘાણે ” સોત્પાન
 ઉત્પાનં ચેષ્ટાવિશેષઃ “ સ કમ્મે ” સકર્મા — ક્રિયાવિશેષયુક્તઃ “ સ વચ્ચે ”
 સપચ્છઃ—વચ્ચં શારીરસામર્થ્યમ્ “ સ વીરિય ” સવીર્યં વીર્યં જીવમવમ્ “ સ પુરિ
 સકાર — પરક્રમે ” સપુરુષકારપરાક્રમ — પુરુષકારોઽભિમાનવિશેષઃ પરાક્રમઃ
 પુરુષકાર એવ નિપ્પાદિતવિષયઃ “ આયમાયેણ ” આરમમાયેન—આત્મસ્વરૂપેણ
 ત્યયઃ “ જીવમાવ ” જીવમાવ જીવત્ત્વં ચૈત્તન્યમિત્યર્થ “ ઉપદસતીતિ વચ્ચન્

અવસ્થુદ્ગણપઞ્જવાણ, બોહિદંસણપઞ્જવાણ,) અસુર્દર્શન કી અનન્તપ
 યાંયોં કે, અચ્છુર્દર્શન કી અનન્તપયાંયોં કે અચ્છિદર્શન કી અનન્તપ
 યાંયોં કે (કેવલ દસણપઞ્જવાણ) ઓર કેવલ દર્શન કી અનન્ત પયાંયોં
 કે (ઉવબોગં ગચ્છહ) ઉપયોગ કો પ્રાપ્ત કરતા હૈ । (ઉવબોગલક્ષણે
 જીવે સે) ઉપયોગલક્ષણવાળા જીવ હૈ । (પરદેર્ણ એવં બુદ્ધિયં ગોચમા !
 જીવે જં સઉદ્ઘાણે જાવ વચ્ચન્ સિયા) હસ કારણ હે ગૌતમ ! મેને એસા
 કહા હૈ કિ ઉત્પાન આદિ વિશેષજોં વાળા જીવ યાવત્ જીવમાવ કો
 વિસ્તાતા હૈ એસા વસ્તુવ્ય હો સકતા હૈ ॥ મૂ. ૩ ॥

ટીકાર્થ—(જીવે જં મતે ।) હે મદન્ત ! જીવ (સઉદ્ઘાણે સકમ્મે)
 ચેષ્ટા વિશેષરૂપ ઉત્પાન વાળા હોકર, જ્ઞાનવરણીય આદિ કર્મવાળા હો
 કર (સવચ્ચે) શારીરિક સામર્થ્યરૂપ વચ્ચ વિશિષ્ટ હોકર (સવીરિય)
 જીવસપવી વલસે યુક્ત હોકર (સપુરિસકારપરક્રમે) અભિમાનવિશેષ
 રૂપ પુરુષકાર સે ઓર પરાક્રમ સે યુક્તહોકર (આયમાયેણ) આત્મા-

જીવે સે) એવ ઉપયોગલક્ષણ વાળો છે (પરદેર્ણ એવં બુદ્ધિયં ગોચમા ! જીવેજ
 સઉદ્ઘાણે જાવ વચ્ચન્ સિયા) હે ગૌતમ ! તે કારણે મેં એવું કહ્યું છે કે ઉત્પાન
 આદિ વિશેષજોંથી યુક્ત એવ આ-અભાવરૂપ ચૈતન્ય જતાવે છે, એવું કથન
 કરી શકાય છે ॥ સૂ. ૩ ॥

ટીકાર્થ—(જીવેજ મતે !) હે મદન્ત ! એવ (સઉદ્ઘાણે સકમ્મે) વિશિષ્ટ
 ચેષ્ટારૂપ ઉત્પાન વાળો, જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મવાળો (સવચ્ચે) શારીરિક
 સામર્થ્યરૂપ વચ્ચ વાળો, (સવીરિય) વીર્ય વાળો “ સપુરિસકારપરક્રમ ” અ
 ભિમાન વિશેષરૂપ પુરુષકાર અને પરાક્રમવાળો થયેને (આયમાયેણ) આત્મ

સિયા ' ઉપદર્શયતીતિ વક્તવ્યં સ્યાત્ । અત્ર ચ્છલુ ' સ ઉદ્ધાણે ' ઇત્યાદીનિ પશ્ચ વિશેષણાનિ સિદ્ધજીવવ્યવચ્છેદકાનિ. સિદ્ધજીવાનામુત્થાનાદિક્રિયાયા અભા-
વાત્ યાવત્સંસારમેવોત્થાનાદિક્રિયાયા આત્મનિ સમવેતત્વાત્ । એતદેવ જીવસ્ય સંસારિત્વં યત્ ક્રિયાદિમત્ત્વમ્ મોક્ષેઽપિ ક્રિયાદિસત્ત્વે મોક્ષ ઇતિ પરિભાષામાત્રમેવ સ્યાદિતિ । ' આય ભાવેણ ' આત્મભાવેન ઉત્થાનશયનગમનભોજનાદિરૂપેણાઽઽ-
ત્મપરિણામવિશેષેણ ' જીવભાવં ' જીવત્ત્વં ચૈતન્યમ્ ' ઉપદંસેતિ ' ઉપદર્શયતિ-

અપને પરિણામોં દ્વારા (જીવભાવં) ચૈતન્યરૂપ જીવભાવ કો (ઉવદંસે-
તીતિ વક્તવ્યં સિયા) પ્રકટ કરતા હૈ એસા કહા જા સકતો હૈ કયા ? યે
જો પૂર્વોક્ત પાંચ વિશેષણ જીવ કે કહે ગયે હૈં વે સિદ્ધ જીવ કે વ્યવ-
ચ્છેદક હૈં । કયોં કિ સિદ્ધ જીવોં કે ઉત્થાન આદિ ક્રિયા કા અભાવ
રહતા હૈ । યે ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઈ જીવ મેં જયતક ઉસકે સાથ સસાર
કા સંબંધ હૈ તમીતક ઉસમેં પાઈ જાતી હૈં । ઉત્થાન આદિ ક્રિયાવિશિષ્ટ
હોના યહી જીવ મેં સંસારીપના હૈ । ઉત્થાન આદિ ક્રિયાઓં કા
જહાં અસદ્ભાવ હૈ વહી મોક્ષ હૈ । મોક્ષ મેં યે ઉત્થાન આદિ ક્રિયાઈ
નહીં હોતી હૈં । યદિ વહાં પર મી इनका सद्भाव मानने में आ-
जाय तो फिर मोक्ष यह केवल एक पारिभाषिक शब्द ही माना जायगा ।
अतः यही मानना उचित है कि मोक्ष में ये उत्थान आदि क्रियाएँ नहीं
हैं । संसार में ही हैं । इसी कारण संसारी जीव में संसार के सम्बन्ध
से ये क्रियाएँ आदि पाई जाती हैं । अतः ऐसा यह संसारी जीव (आय-
भावेण) उत्थान, शयन, गमन, भोजन, करण आदिरूप आत्मपरिणाम

ભાવદ્વારા-પરિણામો દ્વારા (જીવભાવં) ચૈતન્યરૂપ જીવભાવને (ઉવદંસેતીતિ
વક્તવ્યં સિયા) પ્રકટ કરે છે, એવું કહી શકાય ખરું ? ઉપર જીવના જે
પાંચ વિશેષણ કહ્યાં છે તે સિદ્ધજીવને લાગુ પડતાં નથી. કારણ કે સિદ્ધજીવોમાં
ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓનો અભાવ હોય છે જ્યાં સુધી જીવનો સંસાર સાથે સં-
બંધ હોય ત્યાં સુધી જ એ ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓ જીવમાં જોવા મળે છે. ઉત્થા-
નાદિ ક્રિયાઓથી યુક્ત હોવું એજ જીવનું સંસારીપણું છે જ્યાં ઉત્થાનાદિ
ક્રિયાઓનો અસદ્ભાવ છે, એવું સ્થાન મોક્ષ છે મોક્ષમાં ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓ
હોતી નથી. જો ત્યાં પણ તેમનો સદ્ભાવ માનવામાં આવે તો મોક્ષ એક
પારિભાષિક શબ્દ જ મનાય તેથી એવું જ માનવું યોગ્ય છે કે મોક્ષમાં ઉત્થા-
નાદિ ક્રિયાઓ નથી-સંસારમાં જે તે ક્રિયાઓનું અસ્તિત્વ છે. કારણ કે સંસાર
સાથેના સંબંધથી સંસારી જીવોમાં તે ક્રિયાઓનો સદ્ભાવ હોય છે તો એ
ક્રિયાઓથી યુક્ત સંસારી જીવ (આયભાવેણ) ઉત્થાન શયન, ગમન, ભોજન
આદિરૂપ આત્મપરિણામ દ્વારા (જીવભાવં ઉવદંસેતિ) જીવભાવ રૂપ ચૈતન્યને

ઉપદર્શન પ્રકાશસ્તથા ચ પ્રકાશયતિ इति वक्तव्यं स्यात् विशिष्टाया उत्थानादि क्रियाया विशिष्टज्ञानपूर्वकत्वनियमात् । दृश्यते च ज्ञानतारतम्येन क्रियास्तारतम्यमिति गौतमस्य प्रश्न मगवानाह—‘इवा’ इत्यादि । “इवा गोयमा” इन्त गौतम ! “जीवे ण जाय उवदंसेतीति वचस्व सिया” जीवा खलु पाप्सु पदक्षयतीति वक्तव्यं स्यात् अत्र यावत्पदेन उत्थानादारम्य जीवभावमिन्यन्तं प्रभोक्तं सर्वमेव संग्राह्यम् उत्थानादिकं सर्वम् जीव आत्मभावेनोपदर्शयतीति भाव

દ્રારા (જીવભાવં ઉપદંસેતિ) ચૈતન્યરૂપ જીવ ભાવ કો પ્રકાશિત કરતા હૈ—પ્રકટ કરતા હૈ એસા (વચસ્વ સિયા) કહા જા સકતા હૈ કયા ! તા સ્પર્શ—હસ પ્રશ્ન કા યહી હૈ કિ વિશિષ્ટ ઉત્થાન આદિ ક્રિયાઈ વિશિષ્ટ જ્ઞાનપૂર્વક હી હોતી હૈ એસા નિયમ હૈ । યહ બાત પ્રત્યક્ષ દેખને મેં આતી હૈ કિ જહાં પર જ્ઞાન કી તરતમતા હોતી હૈ વહાં પર ક્રિયાઓં મેં મી તરતમતા પાઈ જાતી હૈ । અતઃ હન ક્રિયાઓં આદિકી તરતમતા સે જીવ અપને વિશિષ્ટ ચૈતન્ય કા પ્રકાશન કરતા હૈ—યદિ એસા માના જાવે તો હસમેં કોઈ બાધા તો નહીં હૈ—એસા યહ પ્રશ્ન પ્રશ્ન સે ક્રિયા હૈ । હસકે ઉત્તર મેં પ્રશ્ન કહતે હૈ—(હતા ગોયમા ! જીવેણ જાવ ઉવદંસેતીતિ વચસ્વ સિયા) હાં ગૌતમ ! ઉત્થાનાદિ વિશેષણોં થાલા જીવ અપને પરિણામોં દ્રારા ચૈતન્યરૂપ ભાવ કો પ્રકાશિત કરતા હૈ—એસા માનને મેં કોઈ બાધા નહીં હૈ । યહાં યાવત્પદ સે ઉત્થાન સે છેકર જીવભાવતક કે સબ પદ પ્રહ્ણ કિયે ગયે હૈ । જીવ આત્મભાવ દ્રારા અપને ભાવ કો—ચૈતન્ય કો

પ્રકટ કરે છે, એવું (વચસ્વ સિયા) કહી શકાય ખરું ? કહે શકાય પ્રશ્ન તારતમ્ય સમબંધે છે—વિશિષ્ટ ઉત્થાન આદિ ક્રિયાઓ વિશિષ્ટ જ્ઞાન પૂર્વક જ થાય છે એવો નિયમ છે એવું પ્રત્યક્ષ જોવામાં આવે છે કે જ્યાં જ્ઞાનની અધિકતા હોય છે ત્યાં ક્રિયાઓમાં પણ અધિકતા હોય છે. તેથી તે ક્રિયાઓ આદિની તરતમતાથી (અધિકતાથી) છુટ પોતાના વિશિષ્ટ ચૈતન્યને પ્રકટ કરે છે—એવું જીવાનવામાં આવે તો કોઈ પણ વાંધો નથી આ પ્રશ્નનું મતભેદ મોખ્ય છે કે નહીં, એવો ગૌતમ સ્વામીના પ્રશ્નનો ભાવાર્થ છે તેનો ઉત્તર મહાવીર પ્રશ્ન નીચે પ્રમાણે આપે છે—(હતા ગોયમા ! જીવેણ જાવ ઉવદંસેતીતિ વચસ્વ સિયા) હૈ ગૌતમ ! હા, ઉત્થાનાદિ વિશેષણોં મુક્તછવ પોતાના પરિણામો દ્વારા ચૈતન્યરૂપ ભાવને પ્રકટ કરે છે—અવુ જ્ઞાનવામાં કોઈ પણ હંરકત નથી. આહીં (યાવત્) (યવંત) પદથી ઉત્થાનથી લઈને છવ ભાવ સુધીના પદો પ્રકૃત્ય ફરવામાં આવ્યા છે છવ આત્મભાવ દ્રારા પોતાના

સિયા ' ઉપદર્શયતીતિ વક્તવ્યં સ્યાત્ । અત્ર સ્વલુ ' સ ઉદ્ધાણે ' ઇત્યાદીનિ પશ્ચ
વિશેષણાનિ સિદ્ધજીવવ્યવચ્છેદકાનિ. સિદ્ધજીવાનામુત્થાનાદિક્રિયાયા અભા-
વાત્ યાવત્સંસારમેવોત્થાનાદિક્રિયાયા આત્મનિ સમવેતત્વાત્ । એતદેવ જીવસ્ય
સંસારિત્વં યત્ ક્રિયાદિમત્ત્વમ્ મોક્ષેઽપિ ક્રિયાદિસત્ત્વે મોક્ષ ઇતિ પરિભાષામાત્રમેવ
સ્યાદિતિ । ' આય ભાવેણ ' આત્મભાવેન ઉત્થાનશયનગમનભોજનાદિરૂપેણાઽઽ-
ત્મપરિણામવિશેષેણ ' જીવભાવં ' જીવત્વં ચૈતન્યમ્ ' ઉપદંસેતિ ' ઉપદર્શયતિ-

અપને પરિણામોં દ્વારા (જીવભાવં) ચૈતન્યરૂપ જીવભાવ કો (ઉવદંસે-
તીતિ વક્તવ્યં સિયા) પ્રકટ કરતા હૈ એસા કહા જા સકનો હૈ કયા ? યે
જો પૂર્વોક્ત પાંચ વિશેષણ જીવ કે કહે ગયે હૈં વે સિદ્ધ જીવ કે વ્યવ-
ચ્છેદક હૈં । કયોં કિ સિદ્ધ જીવોં કે ઉત્થાન આદિ ક્રિયા કા અભાવ
રહતા હૈ । યે ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઁ જીવ મેં જયતક ઉસકે સાથ સંસાર
કા સંબંધ હૈ તમીતક ઉસમેં પાઈ જાતી હૈં । ઉત્થાન આદિ ક્રિયાવિશિષ્ટ
હોના યહી જીવ મેં સંસારીપના હૈ । ઉત્થાન આદિ ક્રિયાઓં કા
જહાં અસદ્ભાવ હૈ વહી મોક્ષ હૈ । મોક્ષ મેં યે ઉત્થાન આદિ ક્રિયાઁ
નહીં હોતી હૈં । યદિ વહાં પર મી ઇનકા સદ્ભાવ માનને મેં આ-
જાય તો ફિર મોક્ષ યહ કેવલ એક પારિભાષિક શબ્દ હી માના જાયગા ।
અતઃયહી માનના ઉચિત હૈ કિ મોક્ષ મેં યે ઉત્થાન આદિ ક્રિયાઁ નહીં
હૈ । સંસાર મેં હી હૈં । ઇસી કારણ સંસારી જીવ મેં સંસાર કે સમ્બન્ધ
સે યે ક્રિયાઁ આદિ પાઈ જાતી હૈં । અતઃએસા યહ સંસારી જીવ (આય-
ભાવેણ) ઉત્થાન, શયન, ગમન, ભોજન, કરણ આદિરૂપ આત્મપરિણામ

ભાવદ્વારા-પરિણામો દ્વારા (જીવભાવ) ચૈતન્યરૂપ જીવભાવને (ઉવદંસેતીતિ
વક્તવ્ય સિયા) પ્રકટ કરે છે, એવું કહી શકાય ખરું ? ઉપર જીવના જે
પાંચ વિશેષણ કહ્યાં છે તે સિદ્ધજીવને લાગૂ પડતાં નથી. કારણ કે સિદ્ધજીવોમાં
ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓનો અભાવ હોય છે ત્યાં સુધી જીવનો સંસાર સાથે સ-
બંધ હોય ત્યાં સુધી જ એ ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓ જીવમાં જોવા મળે છે. ઉત્થા-
નાદિ ક્રિયાઓથી યુક્ત હોવું એજ જીવનું સંસારીપણ છે. ત્યાં ઉત્થાનાદિ
ક્રિયાઓનો અસદ્ભાવ છે, એવું સ્થાન મોક્ષ છે. મોક્ષમાં ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓ
હોતી નથી. જે ત્યાં પણ તેમનો સદ્ભાવ માનવામાં આવે તો મોક્ષ એક
પારિભાષિક શબ્દ જ મનાય તેથી એવું જ માનવું યોગ્ય છે કે મોક્ષમાં ઉત્થા-
નાદિ ક્રિયાઓ નથી-સંસારમાં જે તે ક્રિયાઓનું અસ્તિત્વ છે. કારણ કે સંસાર
સાથેના સંબંધથી સંસારી જીવોમાં તે ક્રિયાઓનો સદ્ભાવ હોય છે તો એ
ક્રિયાઓથી યુક્ત સંસારી જીવ (આયભાવેણ) ઉત્થાન શયન, ગમન, ભોજન
આદિરૂપ આત્મપરિણામ દ્વારા (જીવભાવં ઉવદંસેતિ) જીવભાવ રૂપ ચૈતન્યને

के अनुसार उन २ शक्तिके अंशों को जितने रूप में प्राप्त कर सकता है - प्राप्त करता है। मतिज्ञान में भी इसी तरह के शक्ति के अंश अनन्त होते हैं। उद्यत्स्थान जीवों की बुद्धिगम्य ये अंश नहीं हुआ करते हैं-इन्हें तो सर्वज्ञ ही साक्षात् जानता है। हां अनुमानादि द्वारा उद्यत्स्थ भी इन्हें परोक्षरूप से जान सकता है ये मतिज्ञान के अनन्त शस्यांश ही यहाँ पर्यवधान से ग्रहीत हुए हैं। ये सर्वज्ञ प्रज्ञाकृत माने गये हैं। जीव जब उद्यत्स्थान आदि क्रियाओं के करनेमें व्यापारित होता है तब वह उन क्रियाओं द्वारा अपने स्वरूपभूत उपयोग स्वरूप को प्रकट करता है यह उपयोगरूप उसका अनेक धाराओं में बहता रहता है कभी वह मतिज्ञान रूप में तो कभी वह भुतज्ञान रूप में कभी अवधिज्ञानरूप में तो कभी मनःपर्यय ज्ञानरूप में कभी केषलज्ञानरूप में तो कभी मूर्तीभ-ज्ञान आदि आदि अनेक रूप में संसारी जीव जब उद्यत्स्थान, शयन आदि क्रियाओं में लगता है तब वह इन क्रियाओं के करते समय मतिज्ञान आदि की अनन्त पर्यायों में से किसी न किसी एक पर्याय को चारण किये हुए रहता है। इससे यह बात प्रकट होती है कि वह संसारी जीव क्रियाओं के करते समय अपने स्वरूप भूत उपयोग क अं

अनन्त होय छे प्रत्येक छव ते ते व्यापारक कर्मना क्षयेत्यशय आदि अनुसार ते ते शक्तिना अशने जेटवा प्रभाषुमा प्राप्त करी शक्तय तेरवा प्रभाषुमा प्राप्त करे छे मतिज्ञानमां पक्ष ते प्रकारनी शक्तिना अश अनन्त होय छे जे अश उद्यत्स्थलवेने भाटे तो बुद्धिगम्य होवा नथी-तेभने तो सर्वज्ञ व साक्षात् जाये छे होय अनुमान आदि द्वारा उद्यत्स्थ पक्ष तेभने परोक्षरूपे जाये शके छे मतिज्ञाननाजे अनन्त शक्ति अशने व अर्द्धी (पर्यय) परधी अठव करवाभां जाव्या छे जे सर्वज्ञ प्रज्ञाकृत भवावा छे छव व्यापार कृतानादि क्रियाजो करवाभा प्रवृत्त अन्यो होय छे ल्यारे ते क्रियाजो द्वारा ते पोताना स्वरूपभूत उपयोग स्वरूपने प्रकट करे छे तेनु ते उपयोगरूप स्वरूप अनेक धाराजोभां बहेतु रहैछे-अथारै मतिज्ञानरूपे तो अथारै भुतज्ञानरूपे अथारै अवधिज्ञान रूपे तो अथारै मनःपर्यय ज्ञान रूपे, अथारै केषलज्ञान रूपे तो अथारै मति ज्ञान आदि अनेक रूपे ते बहेतु रहै छे संसारी छव व्यापार उद्यत्स्थान शयन आदि क्रियाजोभा प्रवृत्त भाय छे ल्यारे ते क्रियाजो करवी वजते ते मतिज्ञान आदिनी अनन्त पर्यायभांसी कोधने कोछ जेक पर्यायने प्राप्त अते। रहै छे तेभी जे वाव प्रकट भाय छे ते संसारीछव क्रियाजो करवी वजते पोताना स्वरूपभूत पक्ष जेना मतिज्ञान आदिनी अनन्त अशोभांसी

આત્મભાવેન જીવભાવમુપદર્શયતીત્યત્ર કારણજ્ઞાનાય ભવતીતિ પુનઃગૌતમઃ પ્રશ્નયતિ
'સે કેળદ્દેણં' ઇત્યાદિ--'સે કેળદ્દેણં જાવ વત્તવ્વં સિયા' તત્કેનાર્થેન યાવત્
વત્તવ્યં સ્યાત્ ! મગ્ગવાનાહ--'ગોયમા' ઇત્યાદિ. હે ગૌતમ ! "જીવેણં"
જીવઃ સ્વલુ 'અણંતાણં આભિણિવોહિયણાણપજ્જવાણં' અનન્તાનામ્ આભિનિ
બોધિકજ્ઞાનપર્યવાણામ્ - મતિજ્ઞાનપર્યવાણામિત્યર્થઃ પર્યવાઃ સર્વજ્ઞપ્રજ્ઞાકૃતા વિભા-
ગાઃ પરિચ્છેદાસ્તે ચ પરિચ્છેદા અનન્તાઃ સન્તિ-આભિનિવોધિકજ્ઞાનસ્ય તસ્માત્

દિશાતા હૈ એસા યહ કથન કારણજ્ઞાન કે લિયે પ્રકટ કિયા ગયા હૈ ।
તાત્પર્ય યહ-કિ આત્મા અતીન્દ્રિય પદાર્થ હૈ વહ કિસી ખી ઇન્દ્રિય સે
એવં ક્ષાયોપશમિક જ્ઞાન સે ગમ્ય નહીં હો સકતા હૈ । અતઃહન પરિણા-
મોં કા કર્તા જો આત્મા હૈ ઉસકા જ્ઞાન હન પરિણામોં દ્વારા હો જાતા
હૈ । હન પરિણામોં કા જો કર્તા હૈ વહી ડન પરિણામોં કા કારણ હોતા
હૈ । ગૌતમસ્વામી પુનઃ પ્રશ્નસે પૂછતે હૈ (સે કેળદ્દેણં જાવ વત્તવ્વં સિયા)
હે ભદન્ત ! આપ એસા કિસ કારણસે કહતે હૈં કિ જીવ આત્મભાવ દ્વારા
જીવભાવકો પ્રકટ કરતા હૈ એસા કહા જા સકતા હૈ ? હસકા ઉત્તર
દેતે હુણ પ્રશ્ન ગૌતમ સે કહતે હૈં-(ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (જીવેણં) જીવ
(અણંતાણં) અનન્ત (અભિણિવોહિય નાણપજ્જવાણં) આભિનિવોધિકજ્ઞાન-
મતિજ્ઞાન કી પર્યાયોં કે સર્વજ્ઞપ્રતિજ્ઞાદ્વારા કિયે ગયે વિભાગોં કે ઉપયો-
ગ કો પ્રાપ્ત કરતા હૈ । તાત્પર્ય યહ હૈ કિ જ્ઞાન મેં શક્તિ કે અંશ અનન્ત
હુઆ કરતે હૈં । પ્રત્યેક જીવ તત્તત્ આવારક કર્મ કે ક્ષયોપશમ આદિ

ચૈતન્યને બતાવે છે, એવું આ કથન કારણજ્ઞાન ને માટે પ્રકટ કરવામાં આવ્યું
છે. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે-આત્મા અતીન્દ્રિય પદાર્થ છે તેને કોઈ પણ
ઇન્દ્રિયથી કે ક્ષાયોપશમિક જ્ઞાનથી ઓળખી શકાતો નથી તેથી તે પરિણા-
મોનો કર્તા જે આત્મા છે તેનું જ્ઞાન એ પરિણામો દ્વારા જ થાય છે. તે
પરિણામોનો જે કર્તા છે, તે જ તે પરિણામોનું કારણ હોય છે.

ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રશ્ન એ જે ઉત્તર આપ્યો તેનું કારણ બાણવાને
માટે પ્રશ્ન કરે છે- (સે કેળદ્દેણં જાવ વત્તવ્વં સિયા) હે ભદન્ત ! આપ શા
કારણે એવું કહેો છો કે "જીવ આત્મપરિણામો દ્વારા ચૈતન્યભાવ પ્રકટ કરે છે એમ
કહેવામાં કોઈ હરકત નથી? તેનો ઉત્તર મહાવીર પ્રશ્ન આ પ્રમાણે આપે છે (ગોયમા !)
હે ગૌતમ (જીવેણં) જીવ (અણંતાણં) અનન્ત (આભિણિવોહિયનાણપજ્જવાણં)
આભિનિવોધિક જ્ઞાન (મતિજ્ઞાન)ની પર્યાયોના સર્વજ્ઞપણા દ્વારા કરાયેલા વિભાગોના
ઉપયોગને પ્રાપ્ત કરે છે. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે જ્ઞાનમાં શક્તિના અશ

के अनुसार उन २ शक्तिके अशों को जितने रूप में प्राप्त कर सकता है -प्राप्त करता है। मतिज्ञान में भी इसी तरह के शक्ति के अंश अनन्त होते हैं। उद्यस्थान-जीवों की बुद्धिगम्य ये अंश नहीं हुआ करते हैं-इन्हें तो सर्वज्ञ ही साक्षात् जानता है। हाँ अनुमानादि द्वारा उद्यस्थ भी इन्हें परोक्षरूप से जान सकता है ये मतिज्ञान के अनन्त शत्यांश ही यहाँ पर्यवशब्द से गृहीत हुए हैं। ये सर्वज्ञ प्रज्ञाकृत माने गये हैं। जीव जब उत्थान आदि क्रियाओं के करनेमें व्यापारित होता है तब वह उन क्रियाओं द्वारा अपने स्वरूपभूत उपयोग स्वरूप को प्रकट करता है यह उपयोगरूप उसका अनेक धाराओं में बहता रहता है कभी वह मतिज्ञान रूप में तो कभी वह बुद्धिज्ञान रूप में कभी अवधिज्ञानरूप में तो कभी मनःपर्यय ज्ञानरूप में कभी केवलज्ञानरूप में तो कभी मतीभ-ज्ञान आदि आदि अनेक रूप में संसारी जीव जब उत्थान, शयन आदि क्रियाओं में लगता है तब वह इन क्रियाओं के करते समय मतिज्ञान आदि की अनन्त पर्यायों में से किसी न किसी एक पर्याय को धारण किये हुए रहता है। इससे यह बात प्रकट होती है कि वह संसारी जीव क्रियाओं के करते समय अपने स्वरूप भूत उपयोग के अं

अनन्त होय है अत्येक एव ते ते व्यापारक कर्माणां क्षयेपश्चम आदि अनुसार ते ते शक्तिना अशने नेटवा प्रभावभां प्राप्त करी शक्य तेवहा प्रभावभां प्राप्त करे है मतिज्ञानभां पञ्च ते प्रकाशनी शक्तिना अश अनन्त होय है अश उद्यस्थलवेने माटे तो बुद्धिगम्य होता नहीं-तेभने तो सर्वज्ञ साक्षात् जाने है हाँ, अनुमान आदि द्वारा उद्यस्थ पञ्च तेभने परोक्षरूपे जाणी शके है मतिज्ञाननाको अनन्त शक्ति अशने न अर्द्धी (पर्यय) पञ्चयी प्रकट करवाभां जाव्या है अश सर्वज्ञ प्रज्ञाकृत मनाया है एव व्यापार उत्थानादि क्रियाको करवाभां प्रकृत अन्यो होय है, त्पारे ते क्रियाको द्वारा ते पोताना स्वरूपभूत उपयोग स्वरूपने प्रकट करे है तेतु ते उपयोअप स्वरूप अनेक धाराकोभां बदेतुं रहैछे-क्यारेक मतिज्ञानरूपे तो क्यारेक बुद्धिज्ञानरूपे तो क्यारेक अवधिज्ञान रूपे तो क्यारेक मनःपर्यय ज्ञान रूपे, क्यारेक केवलज्ञान रूपे तो क्यारेक मति ज्ञान आदि अनेक रूपे ते, बदेतुं रहै छे संसारी एव व्यापार उत्थान, शयन आदि क्रियाकोभां प्रकृत शक्य है त्पारे ते क्रियाको करती बजते ते मतिज्ञान आदिनी अनन्त पर्यायोंभांभी कोउनि कोउ कोउ पर्यायने धारण करै रहै छे तेथी को वात प्रकट साय छे है ते संसारी एव क्रियाको करती बजते पोताना स्वरूपभूत उपयोगना अशरूप अनिज्ञान आदिना अनन्त अशोभांभी

વિદર્શનપર્યવાણામ્ ' કેવલદક્ષણપરજ્ઞવાણં ' કેવલદર્શનપર્યવાણામ્ ' ઉવગ્મોર્ગ
ગચ્છહ' ઉપયોગ ગચ્છતિ, ઉપયોગદક્ષણજીવમાય ઉત્પાનાદૌ આત્મમાત્રેન વર્ષ
માત્રં ઇતિ વક્તવ્યમ્ । નતુ ચદિ ઉત્પાનાદિ આત્મપરિણામે વર્ષમાનો જીવ
આમિનિવોષિકજ્ઞાનાદિસ્વસ્થ્યં પ્રાપ્નોતિ સત્ ક્રિયેતાવતૈવ જીવમાય વૈતન્ય
દુપદર્શયતીતિ વક્તવ્ય સ્યાદિત્યાજ્ઞાયામાહ- ' ઉપયોગ ' ઇત્યાદિ ' ઉપયોગ

કે (બોદ્ધિદક્ષણપરજ્ઞવાણં) અવધિદર્શનની અનન્તપર્યાયોં કે (કેવલ
દક્ષણપરજ્ઞવાણં) કેવલદર્શનની અનન્તપર્યાયોં કે (ઉવગ્મોર્ગ ગચ્છહ)
ઉપયોગ કો પાતા છે । હવે કથન કા આવે હવે પ્રકાર સે સમજના આ
હિયે કિ સિદ્ધાન્ત મેં ઉપયોગ મૂલતઃ દો પ્રકાર કા કહા ગયા છે ૧ દર્શ
નોપયોગ ઓર દુસરા જ્ઞાનોપયોગ । (ઉપયોગો લક્ષણમ્) કે અનુસાર
જીવ કા સ્વરૂપ ઉપયોગ છે । અણુદર્શન, અણુદર્શન, અવધિદર્શન ઓર
કેવલદર્શન કે મેદસે દર્શનોપયોગ ચાર પ્રકાર કા હોતા છે, ઓર મતિ
જ્ઞાન મુતજ્ઞાન અવધિજ્ઞાન, મન પર્યવજ્ઞાન ઓર કેવલજ્ઞાન કે મેદ સે
તથા મતિ અજ્ઞાન, મુતાજ્ઞાન ઓર વિમંગજ્ઞાન હનતીન અજ્ઞાનોં કે મેદ
સે જ્ઞાનોપયોગ આઠ પ્રકાર કા હોતા છે ઉપયોગ જીવ મેં હી પાયા જાતા
છે, અજીવ મેં નહીં । અતઃ જય જીવ ઉત્પાન આદિ ક્રિયાઓં ચાલા હોતા છે
તય વહ હન ઉપયોગોં મેં સે કોઈ ન કોઈ ઉપયોગ ચાલા રહતા છે ।

દાંકા-કેવલ દર્શન ઓર કેલજ્ઞાન યે ઉપયોગ તો અર્હતકેવલી પદ્મ

(બોદ્ધિદક્ષણ પરજ્ઞવાણં) અવધિ-દર્શનની અનન્ત પર્યાયોં અને (કેવલદક્ષણ-
પરજ્ઞવાણં) કેવલ દર્શનની અનન્ત પર્યાયોં (ઉવગ્મોર્ગ ગચ્છહ) ઉપયોગને પ્રાપ્ત
કરે છે આ કથનનો આવાર્થ આ પ્રમાણે સમજાવી શકાય-સિદ્ધાન્તમાં ઉમેરના
મુખ્ય બે પ્રકાર કહ્યા છે-(૧) દર્શનોપયોગ (૨) જ્ઞાનોપયોગ (ઉપયોગો લક્ષણમ્)
અનુ લક્ષણ ઉપયોગ છે. અણુદર્શન, અણુદર્શન અવધિદર્શન અને કેવલ
દર્શનના લેખી દર્શનોપયોગના ચાર પ્રકાર છે અને જ્ઞાનોપયોગના નીચે
પ્રમાણે આઠ લેખ છે-(૧) મતિજ્ઞાન, (૨) મુતજ્ઞાન, (૩) અવધિજ્ઞાન,
(૪) મન-પર્યવજ્ઞાન (૫) 'કેવલ જ્ઞાન, (૬) મતિ અજ્ઞાન (૭) મુત
અજ્ઞાન, અને (૮) વિમંગજ્ઞાન ઉપયોગનું લક્ષણ અવધિ-વેદ્ય છે-
અવધિ-વેદ્ય નથી તેથી જ્યારે અવ ઉત્પાનાદિ ક્રિયાઓં ચાલે તેવે છે
ત્યારે તે ઉપયોગ ઉપયોગોમાંથી કોઈ ને કોઈ ઉપયોગવાળો રહે છે

શકા-કેવલદર્શન અને કેવલજ્ઞાન, એ બે ઉપયોગ તો અર્હત કેવલી અને

લક્ષણે જીવે સે ' ઉપયોગલક્ષણ: સ્વલુ જીવ: સ: ઉપયોગો જ્ઞાનં તદેવ લક્ષણં
સ્વરૂપં યસ્ય સ ઉપયોગલક્ષણ: ઉપયોગસ્વભાવ એવ - 'જીવ: ઉપયુજ્યતે વસ્તુપરિ-
ચ્છેદમ્પ્રતિ વ્યાપાર્યતે જીવોઽનેનેતિ ઉપયોગ: અત ઉપયોગસ્વરૂપં જીવભાવ

સિદ્ધ પરમાત્મા મેં પાચે જાતે હેં પર વહાં ઉત્થાન આદિ ક્રિયાઈ તો પાઈ
નહીં જાતી, ફિર યહ વાત કૈસે માની જા સકતી હૈ કિ ઉત્થનાદિ ક્રિ-
યાઓં મેં વર્તતા જીવ ઉપયોગ કો પ્રાપ્ત કરતા હૈ।

સમાધાન—અહંત અવસ્થામેં તો ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઈ શરીર કે સદ્ભાવ સે
રહતી હી હેં—હસમેં તો કોઈ વાધા હી નહીં હૈ। અવ રહી સિદ્ધ પરમાત્માકી
વાતકો સિદ્ધોંમેં યે ક્રિયાઈ નહીં પાઈ જાતી હેં—ક્યોં કિ વે અશરીરી હેં।
પરંતુ વહાં હન દો ઉપયોગોં કે હોને મેં વાધા હી કૌનસી હૈ। વાધા તો
કશ કહી જા સકતી કિ જવ એસા કહા ગયા હોતા કિ ઉપયોગકે રહને
'પર ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઈ હોતી હેં। યહાં તો યહ પ્રકટ કિયા ગયા હૈ કિ
ઉત્થાનાદિક્રિયાઓં કે સદ્ભાવ મેં જીવ હન ઉપયોગોં મેં સે કોઈ ન કોઈ
ઉપયોગ કો પ્રાપ્ત કરતા હૈ। શંકા—ઉત્થાન આદિરૂપ આત્મપરિણામ મેં
વર્તમાન જીવ આભિનિયોધિક જ્ઞાનાદિરૂપ ઉપયોગ કો પ્રાપ્ત કરતા હૈ તો
ક્યો વહ હસસે હી અપને ચૈતન્ય કો પ્રકાશિત કરતા હૈ એસા કહા જા
સકતા હૈ તો હસ શંકા કા સમાધાન હસ પ્રકાર સે હૈ (ઉવઓગલક્ષણ-

સિદ્ધ પરમાત્માઓમાંજ હોય છે; પણ તેઓમા ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓનો સદ્ભાવ તો
હોતો નથી. તો પછી એ વાત કેવી રીતે માની શકાય કે ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓ
કરતો એવ ઉપયોગને પ્રાપ્ત કરે છે?

સમાધાન—અહંત અવસ્થામાં તો શરીરનો સદ્ભાવ હોવાથી ઉત્થાનાદિ
ક્રિયાઓ રહે છે જ— તેમાં તો કોઈ હરકત નથી. હવે રહી સિદ્ધ પરમાત્મા-
ઓની વાત. સિદ્ધ પરમાત્માઓ તો તે ક્રિયાઓ કરતા નથી, કારણ કે
તેમને શરીર જ હોતા નથી. પણ તેમનામાં એ બે ઉપયોગોનું અસ્તિત્વ હોવામાં
શી હરકત છે? આ કથનમાં વાંધો તો ત્યારે જ નહ કે જ્યારે એવું કહેવામાં
આવ્યું હોય કે ઉપયોગના સદ્ભાવમાં ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓ થાય છે અહીં તો
એવું કહેવામાં આવ્યું છે કે ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓના સદ્ભાવમા એવ એ ઉપ-
યોગોમાથી કોઈ ઉપયોગને પ્રાપ્ત કરે છે

શંકા—ઉત્થાનાદિ રૂપ આત્મપરિણામમાં પ્રવૃત્ત એવ આભિનિયોધિક જ્ઞાના-
દિરૂપ ઉપયોગને પ્રાપ્ત કરે છે. તો શું તેની મદદથી જ તે પોતાના ચૈતન્યને
પ્રકટ કરે છે?

विदर्शनपर्यवसानम् ' केवलदंसणपञ्जवाणं ' केवलदर्शनपर्यवसानम् ' उबजोमं गच्छइ ' उपयोग गच्छति, उपयोगवत्तणजीवभावः उत्थानादौ आत्मभावेन वर्त्तमान इति वक्तव्यम् । ननु यदि उत्थानादि आत्मपरिणामे वर्त्तमानो जीव आभिनिबोधिक्कज्ञानादिस्वरूपं प्राप्नोति तत् किमेतावतैव जीवभावं चैतन्यमुपदर्शयतीति वक्तव्यं स्यादित्याशङ्क्यामाह—' उपयोग ' इत्यादि ' उपयोग

के (ओहिदंसणपञ्जवाणं) अवधिदर्शन की अनन्तपर्यायों के (केवलदंसणपञ्जवाणं) केवलदर्शन की अनन्तपर्यायों के (उबजोमं गच्छइ) उपयोग को पाता है । इस कथन का भाव इस प्रकार से समझना चाहिये कि सिद्धान्त में उपयोग मूलतः दो प्रकार का कहा गया है १ दर्शनोपयोग और दूसरा ज्ञानोपयोग । (उपयोगो लक्षणम्) के अनुसार जीव का स्वरूप उपयोग है । चक्षुदर्शन, अवक्षुदर्शन, अवधिदर्शन और केवलदर्शन के भेदसे दर्शनोपयोग चार प्रकार का होता है, और मति ज्ञान भुतज्ञान अवधिज्ञान, मनःपर्यवज्ञान और केवलज्ञान के भेद से तथा मति अज्ञान, भुताज्ञान और धर्मगज्ञान इनतीन अज्ञानों के भेद से ज्ञानोपयोग आठ प्रकार का होता है उपयोग जीव में ही पाया जाता है, अजीव में नहीं । अतः जय जीव उत्थान आदि क्रियाओं वाला होता है तब वह इन उपयोगों में से कोई न कोई उपयोग वाला रहता है ।

हांका-केवल दर्शन और केलज्ञान ये उपयोग तो अर्हतकेवली एवं

(ओहिदंसण पञ्जवाणं) अवधि-दर्शननी अनन्त पर्यायिणां जने (केवलदंसण पञ्जवाणं) केवल दर्शननी अनन्त पर्यायिणां (उबजोमं गच्छइ) उपयोगने प्राप्त करे छे जे कथनने भावार्थ आ प्रभावे समझवी शक्य-सिद्धांतमें अभिमान मुच्य छे प्रकार कहा छे—(१) दर्शनोपयोग (२) ज्ञानोपयोग (उपयोगो लक्षणम्) एवमुं लक्षण उपयोग छे चक्षुदर्शन, अवक्षुदर्शन अवधिदर्शन जने केवल दर्शनना लेखी दर्शनोपयोगना चार प्रकार छे जने ज्ञानोपयोगना नीचे प्रभावे आठ लेख छे—(१) मतिज्ञान, (२) भुतज्ञान, (३) अवधिज्ञान, (४) मनःपर्यवज्ञान (५) केवल ज्ञान, (६) मति अज्ञान (७) भुत अज्ञान, जने (८) विभज्यज्ञान उपयोगनुं लक्षण एवमां न दोष छे अलपमा दोष नही. तेथी ज्यारे एव उत्थानादि क्रियाओं वाली होव छे त्याहे ते उपरिष्ठत उपयोगोभांथी कौं न कौं उपयोगवाला रहे छे

शक्य-केवलदर्शन जने केवलज्ञान, जे जे उपयोग तो अर्हत केवली जने

જે જીવપણ્ણ, તે નિયમા ઇગિંદિયપણ્ણ, જાવ અણિંદિયપણ્ણ
 જે અજીવા તે દુવિવહા પણ્ણત્તા । તં જહા રૂવીય અરૂવીય, જે
 રૂવી તે ચઠવિહા પણ્ણત્તા. તં જહા રૂવ્ધા રૂવ્ધદેસા રૂવ્ધપણ્ણ
 પરમાણુપોગલા. જે અરૂવી તે પંચવિહા પણ્ણત્તા. તં જહા—
 ધમ્મત્થિકાણ્ણ. નો ધમ્મત્થિકાયસ્સ દેસે ધમ્મત્થિકાયપણ્ણ,
 અધમ્મત્થિકાણ્ણ નો અધમ્મત્થિકાયસ્સ દેસે અધમ્મત્થિકાયસ્સ-
 પણ્ણ અદ્ધાસમયે । અલોગાગાસેણં મંતે ! કિં જીવા પુચ્છાતહ
 ચેવ । ગોયમા ! નો જીવા જાવ, નો અજીવપ્પણ્ણ, ઇમે અજીવ
 પ્પણ્ણ ઇમે અજીવદવ્વદેસે અગુરુલણ્ણ અણંતેહિં અગુરુલહુય
 ગુણેહિં સંજુત્તે, સઠ્ઠાગાસે અણંતભાગૂણે ॥ સૂ૦ ૪ ॥

છાયા—કતિવિધઃ સ્વલુ ભદન્ત ! આકાશઃ પ્રજ્ઞસઃ ? ગૌતમ ! દ્વિવિધ આકાશઃ
 પ્રજ્ઞસઃ તદ્યથા લોકાકાશસ્વાલોકાકાશશ્ચ । લોકાકાશે સ્વલુ ભદન્ત ! કિં જીવાઃ

આકાશનિરૂપણ—

પૂર્વપ્રકરણ મેં જીવ કા વિચાર કિયા ગયા હૈ । જીવ કા આધાર
 ક્ષેત્ર આકાશ હૈ । અતઃ જીવ કા આધારભૂત ક્ષેત્ર હોને કે કારણ અથ
 સૂત્રકાર આકાશ કા નિરૂપણ કરતે હૈ—(કહિવિહેણં મંતે ! આગાસે
 પણ્ણત્તે) इत्यादि ।

સૂત્રાર્થ—(કહિવિહે નં મંતે । આગાસે પણ્ણત્તે ?) હે ભદન્ત । આકા-
 શ કિતને પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ ? (ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (આગાસે દુ-
 વિહે પણ્ણત્તે) આકાશ દો પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ । (તંજહા) વે દો પ્રકાર

આકાશ નિરૂપણ

પૂર્વ પ્રકરણમા જીવનો વિચાર કર્યો જીવનું આધાર ક્ષેત્ર આકાશ
 છે તેથી જીવનું નિરૂપણ કર્યા પછી તેના આધારરૂપ ક્ષેત્ર હોવાને કારણે સૂત્ર
 કાર હવે આકાશનું નિરૂપણ કરે છે—(કહિવિહેણં મંતે ! આગાસે પણ્ણત્તે) इत्यादि
 સૂત્રાર્થ—(કહિવિહેણં મંતે ! આગાસે પણ્ણત્તે) હે ભદન્ત ! આકાશ કેટલા પ્રકારનું
 કહ્યું છે ? (ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (આગાસે દુવિહે પણ્ણત્તે) આકાશ બે પ્રકારના
 કહ્યાં છે. (તંજહા) તે બે પ્રકારો આ પ્રમાણે છે—(લોયાગાસે ય અલોયાગાસે ય) (૧)

सत्यानादि - आत्मभावेनोपदर्शयति 'स तेणद्वेष्टं - एव बुद्धिः गोयमा' अनेनार्थेन एवमुच्यते गौतम ! जीवेण स उद्वाणे जाय-वत्स्य सिया' जीवः सन्तु सोत्थानो यावत् वक्तव्यं स्यात् अत्र यावत्पदेन 'स कम्मे' इत्यारम्भः जीवमात्रं उच्यतेति' एतत्पर्यन्तस्य ग्रहणं भवतीति भावः ॥ सू० ३ ॥

अथाकाशानिरूपणम्—अनन्तरपूर्वः प्रकरणे जीवस्य विचारः कृतः स च जीव आकाशाचार इति जीवाऽऽकाशानिरूपणायाह—“कइ विहेण” इत्यादि ।

मूलम्—कइविहेण भते ! आगासे पण्णत्ते, गोयमा ! दुविहे, आगासे-पण्णत्ते—त जहा लोयागासे य अलोयागासे य, लोया गासे ण भते ! किं जीवा जीवदेसा, जीवप्पप्सा अजीवा, अजीवदेसा, अजीवप्पप्सा, गोयमा ! जीवावि, जीवदेसावि, जीवप्पप्सावि, अजीवावि, अजीवदेसावि, अजीवप्पप्सावि, जे जीवा ते नियमा एगेदिया, वेइदिया, तेइदिया, चठरिदिया, पचिदिया, अणिदिया, जे जीवदेसाते नियमा एगिदियदेसा,

जे जीवे से एण्णद्वेष्टं) जीव का लक्षण उपयोग है—ज्ञान है क्यों कि इसके द्वारा ही वह वस्तुपरिच्छेद के प्रति व्यापृत किया जाता है—इस कारण वह उपयोग स्वरूप जीव भाव को उत्थान आदि आत्मभाव द्वारा प्रकट करता है । (तेणद्वेष्टं एवं बुद्धि जीवेण स उद्वाणे जाय वत्स्य सिया) इस कारण ऐसा कहा है कि उत्थानक्रिया वाला जीव यावत् जीव भाव को प्रकट करता है ऐसा कहा जा सकता है । यहाँ यावत् पद से (सकम्मे) यहाँ से लेकर (जीवमात्रं उच्यतेति) यहाँ तक का पाठ ग्रहण किया गया है ॥ सू० ३ ॥

समाधान—(उपयोगलक्षणं न जीवे से एण्णद्वेष्टं) एतत्तुं लक्षणं उपधीते—ज्ञानं ते—कारणं ते तेना द्वारा च तेने वस्तु परिच्छेदं तत्र भवति कार्यं ते—ते कारणे ने उपयोगरूपं उपभाषने उत्थानादि आत्मभाव द्वारा प्रकट करे ते (तेणद्वेष्टं एवं बुद्धि जीवेण स उद्वाणे जाय वत्स्य सिया) ते कारणे जेवुं लक्षणं ते के उत्थानादि क्रियावाले एव उत्थाना परिशुभो द्वारा एवमा एतत्तुं तेनैव प्रकट करे ते अर्थात् (यावत्) (यवन्त) यद्यपि (सकम्मे) भी यद्यपि (जीवमात्रं उच्यतेति) यवन्तनो सूत्र पाठ नद्वेष्टं करवाभां आये ॥ सू० ३ ॥

જે જીવપણે, તે નિયમા એર્ગિંદિયપણે, જાવ અર્ગિંદિયપણે
 જે અજીવા તે દુર્વિવહા પળતા. તં જહા રૂઘીય અરૂઘીય, જે
 રૂઘી તે ચડાવિહા પળતા. તં જહા રૂંધા રૂંધદેસા રૂંધપણે
 પરમાણુપોગલા. જે અરૂઘી તે પંચવિહા પળતા. તં જહા—
 ધમ્મત્થિકાણ. નો ધમ્મત્થિકાયસ્સ દેસે ધમ્મત્થિકાયપણે,
 અધમ્મત્થિકાણ નો અધમ્મત્થિકાયસ્સ દેસે અધમ્મત્થિકાયસ્સ-
 પણે અદ્ધાસમયે. અલોગાગાસેણં મંતે ! કિં જીવા પુચ્છાતહ
 ચેવ । ગોયમા ! નો જીવા જાવ, નો અજીવપણે, એગે અજીવ
 પણે એગે અજીવદઘ્વદેસે અગુરુલઘુણ અણંતેહિં અગુરુલહુય
 ગુણેહિં સંજુત્તે, સઘ્વાગાસે અણંતભાગૂણે ॥ સૂ૦ ૪ ॥

છાયા-કતિવિધઃ સ્વભૂત ! આકાશઃ પ્રજ્ઞસઃ ? ગૌતમ ! દ્વિવિધ આકાશઃ
 પ્રજ્ઞસઃ તદ્યથા લોકાકાશચ્ચાલોકાકાશચ્ચ । લોકાકાશે સ્વભૂત ! કિં જીવાઃ

આકાશનિરૂપણ-

પૂર્વપ્રકરણ મેં જીવ કા વિચાર કિયા ગયા હૈ. જીવ કા આધાર
 ક્ષેત્ર આકાશ હૈ. અતઃ જીવ કા આધારભૂત ક્ષેત્ર હોને કે કારણ અય
 સૂત્રકાર આકાશ કા નિરૂપણ કરતે હૈ—(કહિવિહેણં મંતે ! આગાસે
 પળત્તે) इत्यादि ।

સૂત્રાર્થ—(કહિવિહેણં મંતે ! આગાસે પળત્તે ?) હે મદન્ત ! આકા-
 શ કિતને પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ ? (ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (આગાસે દુ-
 વિહે પળત્તે) આકાશ દો પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ. (તંજહા) વે દો પ્રકાર

આકાશ નિરૂપણ

પૂર્વ પ્રકરણમા ઇવને વિચાર કર્યો ઇવનું આધાર ક્ષેત્ર આકાશ
 છે તેથી ઇવનું નિરૂપણ કર્યા પછી તેના આધારરૂપ ક્ષેત્ર હોવાને કારણે સૂત્ર
 કાર હવે આકાશનું નિરૂપણ કરે છે—(કહિવિહેણં મંતે ! આગાસે પળત્તે) इत्यादि
 સૂત્રાર્થ—(કહિવિહેણં મંતે ! આગાસે પળત્તે) હે મદન્ત ! આકાશ કેટલા પ્રકારનું
 કહ્યું છે ? (ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (આગાસે દુવિહે પળત્તે) આકાશ બે પ્રકારના
 કહ્યા છે. (તંજહા) તે બે પ્રકારે આ પ્રમાણે છે—(લોયાગાસે ચ અલોયાગાસે ચ) (૧)

જીવદેશા જીવમદેશાઃ અજીવાઃ અજીવદેશાઃ અજીવમદેશાઃ? ગૌતમ ! જીવાઃ જીવદેશા અપિ જીવમદેશા અપિ અજીવા અપિ અજીવ દેશા અપિ અજીવમદેશા અપિ એ જીવાસ્તે નિયમાત્ એકેન્દ્રિયાઃ દ્વીન્દ્રિયા સ્ત્રીન્દ્રિયપ્તુરિન્દ્રિયાઃ પચ્ચેન્દ્રિયા અનિન્દ્રિયાઃ એ જીવદેશાસ્તેનિયમાત્ એકેન્દ્રિયદેશાઃ યાવદનિન્દ્રિયદેશા એ જીવમ

અકાશ કે એ હૈં—(હોયાગાસે ય અહોયાગાસે ય) એક હોકાકાશ દસર અહોકાકાશ । (હોયાગાસે જ મંતે । કિં જીવા, જીવદેસા, જીવપ્પણસા અજીવા, અજીવદેસા, અજીવપ્પણસા) હે મદન્ત ! હોકાકાશ મેં જીવ હૈં ? યા જીવ કે દેશ હૈં ? અથવા કિં જીવકો પ્રદેશ હૈં ? અજીવ હૈં ? યા અજીવ કે દેશ હૈં ? અથવા કિં અજીવ કે પ્રદેશ હૈં ? (ગોચમા !) હે ગૌતમ ! (જીવા ચિ, જીવદેસા ચિ, જીવપ્પણસા ચિ, અજીવા ચિ, અજીવદેસા ચિ, અજીવપ્પણસા ચિ,) હસ હોકાકાશ મેં જીવ ઝી હૈં, જીવકે દેશ ઝી હૈં ઝી જીવ કે પ્રદેશ ઝી હૈં । અજીવ ઝી હૈં, અજીવકે દેશ ઝી હૈં તથા અજીવ કે પ્રદેશ ઝી હૈં । (જે જીવા તે નિયમા પર્ગિદિયા, ચેઈદિયા, તેઈદિયા, ચઠરિદિયા, પંચિદિયા, અર્ગિદિયા) જાવ એસા માના જાતા હૈં કિં હોકાકાશ મેં જીવ હૈં અર્થાત્ હોકાકાશ મેં જીવ રહતે હૈં—તો જીવ જીવ હસ હોકાકાશ મેં રહતે હૈં—એ જીવ નિયમ સે કોઈતો પચ્ચન્દ્રિય ઘાટે હોતે હૈં કોઈ દો દ્વિન્દ્રિય ઘાટે હોતે હૈં, કોઈ ત્રીસ દ્વિન્દ્રિય ઘાટે હોતે હૈં, કોઈ ચાર દ્વિન્દ્રિય ઘાટે હોતે હૈં, કોઈ પાંચ દ્વિન્દ્રિય ઘાટે હોતે હૈં ઝી કોઈ અનિન્દ્રિય—ચિના દ્વિન્દ્રિયો કે હોતે હૈં । (જે જીવદેસા તે નિયમા પ

હોકાકાશ અને (૨) અવહોકાકાશ (હોયાગાસે મંતે । કિં જીવા, જીવ દેસા, જીવપ્પણસા અજીવા, અજીવદેસા, અજીવપ્પણસા) હે મદન્ત ! હોકાકાશમાં, હો અવો હે ? કે અવના દેશો હે ? કે અવના પ્રદેશો હે ? કે અવ હે ? કે અવના દેશો હે ? કે અવના પ્રદેશો હે ? (ગોચમા !) હે ગૌતમ ! (જીવા ચિ, જીવદેસા ચિ, જીવપ્પણસા ચિ, અજીવા ચિ, અજીવદેસા ચિ, અજીવપ્પણસા ચિ) તે હોકાકાશમાં હવો પવુ હે, અવના દેશ પવુ હે, અને અવના પ્રદેશ પવુ હે, અવ પવુ હે, અવના દેશ પવુ હે અને અવના પ્રદેશ પવુ હે (જે જીવા તે નિયમા પર્ગિદિયા, ચેઈદિયા, તેઈદિયા, ચઠરિદિયા, પંચિદિયા, અર્ગિદિયા) હોકાકાશમાં જ હવો રહે હે તેમાના કોઈ અવ નિયમથી જ એક દ્વિન્દ્રિયાના હો હે, કોઈ બે દ્વિન્દ્રિયાના હોય હે, કોઈ ત્રણ દ્વિન્દ્રિયાના હોય હે, કોઈ ચાર દ્વિન્દ્રિયાના હોય હે કોઈ પાંચ દ્વિન્દ્રિયાના હોય હે અને કોઈ અનિન્દ્રિય દ્વિન્દ્રિયા વિનાના હોય હે (જે જીવદેસા તે નિયમા પર્ગિદિયા) હોકાકાશ

पृथिवीप्रतिष्ठिताः त्रसाः स्थावराः प्राणाः४, अजीवाजीवप्रतिष्ठिताः५, जीवाः कर्मप्रतिष्ठिताः६, अजीवाः जीवसंगृहीताः७, जीवाः कर्मसंगृहीताः८ । तत्केनार्थेन भदंत ! एवमुच्यते । अष्टविधा यावत् जीवाः कर्मसंगृहीताः, गौतम ! तद्यथा नामकः कश्चित् पुरुषो वस्तिमाटोपयति, वस्तिमाटोप्योपरि सितं वध्नाति, वद्ध्वा मध्ये खलु ग्रन्थि वध्नाति, वद्ध्वोपरितनां ग्रन्थि मुञ्चति, मुक्त्वोपरितनं देशं वमयति उपरितनं देशं वमयित्वोपरितनं देशमपकायेन पूरयति, पूरयित्वोपरि सितं वध्नाति, वद्ध्वा मध्यतनां ग्रन्थि मुञ्चति, तन्नून गौतम ! स अपकायो वायुकायस्य उपरिमतले तिष्ठति ? । इन्त तिष्ठति । तत्तेनार्थेन यावत् जीवाः कर्मसंगृहीताः, तद्यथा वा कश्चित्पुरुषो वस्तिमाटोपयति, आटोप्य कट्यां वध्नाति, वद्ध्वाऽस्ताघाऽनारापौरुषेये उदकेऽवगाहेत, तद् नूनं गौतम ! स पुरुषस्तस्यापकायस्योपरिमतले तिष्ठति ? इन्त तिष्ठति, एवं वाऽष्टविधा लोकस्थितिः प्रज्ञप्ता यावत् जीवाः कर्मसंगृहीताः ॥सू०५॥

टीका—‘भंते त्ति’ हे भदन्त इति संबोध्य ‘भगवं गोयमे’ भगवान् गौतमः ‘समणं जाव’ श्रमणं यावत्—अत्र यावच्छब्देन ‘भगवं महावीरं वन्दइ नमंसइ वन्दित्ता नमंसित्ता णच्चासण्णे णाइदूरे सुस्सूसमाणे णमंसमाणे अभिमुहे विणएणं

लोकस्थितिवर्णन—

पहिले लोकान्त आदि लोक के पदार्थों का निरूपण सूत्रकार ने किया । अब वे उन्हींके संबन्धसे लोकस्थिति की प्ररूपणा करनेके निमित्त सूत्र कहते हैं—“ भंते त्ति ” इत्यादि । (भंते ! त्ति) हे भदन्त ! ऐसा संबोधन करके (भगवं गोयमे) भगवान् गौतमने (समणं जाव एवं वयासी) श्रमण भगवान् महावीरसे यावत् ऐसा कहा । यहां सूत्र में जो यह “ जाव ” पद आया है उससे सूत्रकार ने “ भगवं महावीरं वन्दइ, नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता, णच्चासण्णे णाइदूरे सुस्सूसमाणे णमंसमाणे

लोकस्थितिवर्णन

पडेला लोकान्त वगेरे लोकना पदार्थानुं निरूपणु करीने सूत्रकार डवे तेमना सअधथी लोकस्थितिनी प्ररूपणु करवाने भाटे सूत्र कडे छे. “भंते त्ति” धत्थादि

(भंते त्ति) छे लगवन् ! ओखु सअधधन करीने (भगवं गोयमे) लगवान् गौतमे (समणं जाव एवं वयासी) महावीरने आ प्रभाणु कहु त्या सुधीनु कथन अडणु करवुं अही “ यावत् ” (पर्यन्त) पढथी “ भगवं महावीर वन्दइ, नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता, णच्चासण्णे णाइदूरे सुस्सूसमाणे णमंसमाणे

जीवदेसाः जीवमदेसाः अजीवाः अजीवदेसाः अजीवमदेसाः ? गौतम ! जीवा अपि जीवदेसा अपि जीवमदेसा अपि अजीवा अपि अजीव देसा अपि अजीवमदेसा अपि ये जीवास्ते नियमात् एकेन्द्रियाः द्वीन्द्रिया त्रीन्द्रियस्तुरिन्द्रियाः पञ्चेन्द्रिया अनिन्द्रियाः ये जीवदेसास्तेनियमात् एकेन्द्रियदेसाः यावदनिन्द्रियदेसाः ये अजीवम-

अकाश के ये हैं—(लोयागासे य अलोयागासे य) एक लोकाकाश दूसरा अलोकाकाश । (लोयागासे णं मंते ! किं जीवा, जीवदेसा, जीवप्पेसा, अजीवा, अजीवदेसा, अजीवप्पेसा) हे भद्रन्त ! लोकाकाश में जीव हैं ? या जीव के देश है ? अथवा कि जीवको प्रदेश है ? अजीव है ? या अजीव के देश है ? अथवा कि अजीव के प्रदेश है ? (गोयमा ।) हे गौतम ! (जीवा वि, जीवदेसा वि, जीवप्पेसा वि, अजीवा वि, अजीवदेसा वि, अजीवप्पेसा वि,) उस लोकाकाश में जीव भी हैं, जीवके देश भी हैं और जीव के प्रदेश भी हैं । अजीव भी हैं, अजीवके देश भी हैं, तथा अजीव के प्रदेश भी हैं । (जे जीवा ते नियमा एगिंदिया, वेइंदिया, तेइंदिया, चउरिंदिया, पंचिंदिया, अणिंदिया) जब ऐसा माना जाता है कि लोकाकाश में जीव हैं अर्थात् लोकाकाश में जीव रहते हैं—तो जो जीव उस लोकाकाश में रहते हैं—वे जीव नियम से कोईतो एकइन्द्रिय वाले होते हैं, कोई दो इन्द्रिय वाले होते हैं, कोई तीन इन्द्रिय वाले होते हैं, कई बार इन्द्रिय वाले होते हैं, कोई पांच इन्द्रिय वाले होते हैं और कोई अनिन्द्रिय-विना इन्द्रियों के होते हैं । (जे जीवदेसा ते नियमा ए

लोकाकाश मने (२) अवलोकाकाश । (लोयागासेण मंते ! किं जीवा, जीव देसा, जीवप्पेसा, अजीवा, अजीवदेसा, अजीवप्पेसा) हे भद्रन्त ! लोकाकाशमां, एं लोकाकाशे ? हे लोकाकाशे ? हे लोकाकाशप्रदेशे ? हे अलोकाकाशे ? हे अलोकाकाशप्रदेशे ? (गोयमा ।) हे गौतम ! (जीवा वि, जीवदेसा वि, जीवप्पेसा वि, अजीवा वि, अजीवदेसा वि, अजीवप्पेसा वि) ते लोकाकाशमां लोकाकाशे पणुं छे, लोकाकाश देश पणुं छे, मने लोकाकाश प्रदेश पणुं छे, अलोकाकाश पणुं छे, अलोकाकाश देश पणुं छे मने अलोकाकाश प्रदेश पणुं छे (जे जीवा ते नियमा एगिंदिया, वेइंदिया, तेइंदिया, चउरिंदिया, पंचिंदिया, अणिंदिया) लोकाकाशमां न लोकाकाशे एके छे तेमांना केअ लोकाकाश नियमभी अ केअ इन्द्रियवाणा केअ छे, केअ जे इन्द्रियवाणा केअ छे, केअ तणुं इन्द्रियवाणा केअ छे, केअ तणुं इन्द्रियवाणा केअ छे मने केअ अनिन्द्रिय विना केअ छे (जे जीवदेसा ते नियमा पांगविदेसा) लोकाकाश

દેશાસ્તે નિયમાત્ એકેન્દ્રિયપ્રદેશઃ યાવદનિન્દ્રિયપ્રદેશઃ યે અજીવાસ્તે દ્વિવિધાઃ પ્રજ્ઞતાઃ તદ્યથા રૂપિણશ્ચારૂપિણશ્ચ યે રૂપિણસ્તે ચતુર્વિધાઃ પ્રજ્ઞતાસ્તદ્યથા સ્કન્ધાઃ સ્કન્ધપ્રદેશઃ સ્કન્ધપ્રદેશઃ પરમાણુપુદ્ગલાઃ યેઽપિ અરૂપિણસ્તે પञ્ચવિધાઃ પ્રજ્ઞતાઃ તદ્યથા ધર્માસ્તિકાયો નો ધર્માસ્તિકાયસ્ય દેશઃ ધર્માસ્તિકાયસ્ય પ્રદેશઃ અધર્માસ્તિકાયઃ નોઽધર્માસ્તિકાયસ્ય દેશઃ અધર્માસ્તિકાયસ્ય પ્રદેશઃ અદ્વાસમયઃ।

ગિદિયદેસા) લોકાકાશ મેં જો જીવ કે દેશ હેં વે નિયમ સે એકેન્દ્રિય જીવ કે દેશ હેં (જાવ અર્ણિદિય દેસા) યવત્ હિન્દ્રિય વિના કે જીવ કે દેશ હેં। (જે અજીવા તે દુવિહા પળણત્તા) લોકાકાશ મેં જો અજીવ હેં વે દો પ્રકાર કે કહે ગયે હેં-(તંજહા) જૈસે-(રૂવિ ય અરૂવિ ય) એકરૂપી અજીવ ઓર દૂસરા અરૂપી અજીવ। (જે રૂવી તે ચઝવિહા પળણત્તા) જો રૂપી અજીવ હેં વે ચાર પ્રકાર કે કહે ગયે હેં (તંજહા) જૈસે-(લ્વધા, લ્વધદેસા, લ્વધપણસા, પરમાણુપોગ્ગલા) સ્કંધ, સ્કંધદેશ, સ્કન્ધપ્રદેશ ઓર પરમાણુપુદ્ગલ (જે અરૂવી તે પંચવિહા પળણત્તા) તથા-જો અરૂપી અજીવ હેં વે પાંચ પ્રકાર કે કહે ગયે હેં-(તંજહા) જૈસે (ધમ્મત્થિકાણ, નો ધમ્મત્થિકાયસ્સ દેસે, ધમ્મત્થિકાયસ્સ પણસા, અધમ્મત્થિકાણ નો અધમ્મત્થિકાયસ્સ દેસે, અધમ્મત્થિકાયસ્સ પણસા, અદ્વાસમયે) ધર્માસ્તિકાય હૈ, ધર્માસ્તિકાય કા દેશ નહીં હેં, ધર્માસ્તિકાય કે પ્રદેશ હેં, અધર્માસ્તિકાય હૈ, અધર્માસ્તિકાય કા પ્રદેશ નહીં હૈ, અધર્માસ્તિકાય

શમાં જીવના જે દેશ છે તે નિયમથી જ એકેન્દ્રિય જીવના દેશ છે, (જાવ અર્ણિદિય દેસા) અને દ્વિન્દ્રિયથી લઈને અનિન્દ્રિય જીવ પર્યન્તના દેશ છે. (જે અજીવા તે દુવિહા પળણત્તા) લોકાકાશમાં જે અજીવ છે તે બે પ્રકારના કહ્યા છે. (તંજહા) તે બે પ્રકારે આ પ્રમાણે છે-(રૂવી ય અરૂવી ય) (૧) રૂપી અજીવ (૨) અરૂપી અજીવ (જે રૂવી તે ચઝવિહા પળણત્તા) રૂપી અજીવના ચાર પ્રકાર કહ્યા છે. (તંજહા) તે ચાર પ્રકાર આ પ્રમાણે છે (લ્વધા, લ્વધદેસા, લ્વધપણસા, પરમાણુપોગ્ગલા) (૧) સ્કંધ, (૨) સ્કંધદેશ, (૩) સ્કંધપ્રદેશ અને (૪) પરમાણુ પુદ્ગલ. (જે અરૂવી તે પંચવિહા પળણત્તા) અરૂપી અજીવના પાંચ પ્રકાર કહ્યા છે. (તંજહા) તે પ્રકારે આ પ્રમાણે છે (ધમ્મત્થિકાણ, નો ધમ્મત્થિકાયસ્સ દેસે ધમ્મત્થિકાયસ્સ પણસા, અધમ્મત્થિકાણ નો અધમ્મત્થિકાયસ્સ દેસે, અધમ્મત્થિકાયસ્સ પણસા, અદ્વા સમયે) (૧) ધર્માસ્તિકાય છે ધર્માસ્તિકાયનો દેશ નથી, (૨) ધર્માસ્તિકાયના પ્રદેશ છે (૩) અધર્માસ્તિકાય છે- અધર્માસ્તિકાયનો દેશ નથી (૪) અધર્માસ્તિકાયના પ્રદેશ છે અને (૫) અદ્વા સમય છે

દેશાસ્તે નિયમાત્ એકેન્દ્રિયપ્રદેશાઃ યાવદનિન્દ્રિયપ્રદેશાઃ યે અજીવાસ્તે દ્વિવિધ
પ્રજ્ઞાતાઃ તદ્યથા રૂપિણશ્ચારૂપિણશ્ચ યે રૂપિણસ્તે ચતુર્વિધાઃ પ્રજ્ઞાતાસ્તદ્યથા સ્કંધ
પ્રજ્ઞાતાઃ સ્કંધપ્રદેશાઃ સ્કંધપ્રદેશાઃ પરમાણુપુદ્ગલાઃ યેઽપિ અરૂપિણસ્તે પશ્ચવિધ
પ્રજ્ઞાતાઃ તદ્યથા ધર્માસ્તિકાયો નો ધર્માસ્તિકાયસ્ય દેશઃ ધર્માસ્તિકાયસ્ય પ્રદેશ
અધર્માસ્તિકાયઃનોઽધર્માસ્તિકાયસ્ય દેશઃ અધર્માસ્તિકાયસ્ય પ્રદેશાઃ અદ્વાસમય

ગિદિયદેસા) લોકાકાશ મેં જો જીવ કે દેશ હેં વે નિયમ સે એકેન્દ્રિ
જીવ કે દેશ હેં (જાવ અર્ણિદિય દેસા) યવત્ હિન્દ્રિય વિના કે જીવ
દેશ હેં । (જે અજીવા તે દુવિહા પળણત્તા) લોકાકાશ મેં જો અજીવ
વે દો પ્રકાર કે કહે ગયે હેં-(તંજહા) જૈસે-(રૂવિ ય અરૂવિ ય) એકરૂપ
અજીવ ઓર દૂસરા અરૂપી અજીવ । (જે રૂવી તે વચ્ચવિહા પળણત્તા)
જો રૂપી અજીવ હેં વે ચાર પ્રકાર કે કહે ગયે હેં (તંજહા) જૈસે-(સ્થંધ
સ્થંધદેસા, સ્થંધપણસા, પરમાણુપોગ્ગલા) સ્કંધ, સ્કંધદેશ, સ્કંધપ્રદેશ
ઓર પરમાણુપુદ્ગલ (જે અરૂવી તે પંચવિહા પળણત્તા) તથા-જા અરૂપ
અજીવ હેં વે પાંચ પ્રકાર કે કહે ગયે હેં-(તંજહા) જૈસે (ધર્મસ્થિકા
નો ધર્મસ્થિકાયસ્સ દેસે, ધર્મસ્થિકાયસ્સ પણસા, અધર્મસ્થિકા
અધર્મસ્થિકાયસ્સ દેસે, અધર્મસ્થિકાયસ્સ પણસા, અદ્વાસમયે) ધર્મ
સ્થિકાય હેં, ધર્માસ્થિકાય કા દેશ નહીં હેં, ધર્માસ્થિકાય કે પ્રદેશ હેં
અધર્માસ્થિકાય હેં, અધર્માસ્થિકાય કા પ્રદેશ નહીં હેં, અધર્માસ્થિકાય

શમાં જીવના જે દેશ છે તે નિયમથી જ એકેન્દ્રિય જીવના દેશ છે, (જાવ
અર્ણિદિય દેસા) અને દ્વીન્દ્રિયથી લઈને અનિન્દ્રિય જીવ પર્યન્તના દેશ છે.
(જે અજીવા તે દુવિહા પળણત્તા) લોકાકાશમાં જે અજીવ છે તે બે પ્રકારના
કહ્યા છે. (તંજહા) તે બે પ્રકારો આ પ્રમાણે છે-(રૂવી ય અરૂવી ય) (૧)
રૂપી અજીવ (૨) અરૂપી અજીવ (જે રૂવી તે વચ્ચવિહા પળણત્તા) રૂપી અજીવના
ચાર પ્રકાર કહ્યા છે (તંજહા) તે ચાર પ્રકાર આ પ્રમાણે છે (સ્થંધ, સ્થંધદેસા,
સ્થંધપણસા, પરમાણુપોગ્ગલા) (૧) સ્કંધ, (૨) સ્કંધદેશ, (૩) સ્કંધપ્રદેશ અને (૪)
પરમાણુ પુદ્ગલ. (જે અરૂવી તે પંચવિહા પળણત્તા) અરૂપી અજીવના પાંચ પ્રકાર કહ્યા
છે. (તંજહા) તે પ્રકારો આ પ્રમાણે છે (ધર્મસ્થિકા, નો ધર્મસ્થિકાયસ્સ દેસે
ધર્મસ્થિકાયસ્સ પણસા, અધર્મસ્થિકા નો અધર્મસ્થિકાયસ્સ દેસે, અધર્મસ્થિકાય
સ્સ પણસા, અદ્વા સમયે) (૧) ધર્માસ્થિકાય છે ધર્માસ્થિકાયનો દેશ નથી, (૨)
ધર્માસ્થિકાયના પ્રદેશ છે (૩) અધર્માસ્થિકાય છે- અધર્માસ્થિકાયનો દેશ નથી
(૪) અધર્માસ્થિકાયના પ્રદેશ છે અને (૫) અદ્વા સમય છે.

प्रश्नमकरोत् उचरितञ्च भगवता द्विमेदेन अन्यथा लक्षणज्ञानामावे-विभागस्यासम-
पापातात् लक्षणज्ञानानन्तरमेव सर्वत्र विभागस्य प्रश्नस्योत्थानादिति । तत्र लोका-
काशाऽलोकाकाशयोर्द्वयोस्पीदं लक्षणम् धर्मास्तिकायादीनां द्रव्याणां वृत्तिर्यत्र भ-
वति तत्क्षेत्रम् ते क्षेत्रद्रव्यैः सह विद्यमानो लोकः एतद्विपरीतोऽलोकास्य आकाश-
लोकोपलक्षितो लोकाकाशः अलोकोपलक्षितोऽलोकाकाश इति ।

‘लोयागासे णं मंते ।’ लोकाकाशे सखु भवन्त । ‘किं जीवा जीवदेसा
जीवप्रदेसा अनीषा अजीवदेसा अजीवपदेसा’ किम् जीवाः जीवदेशाः जीवप्रदेशाः
अजीवा अजीवदेशाः अजीवप्रदेशाः । हे भवन्त । किं लोकाकाशे जीवादयः सन्ती

आकाश का लक्षण ज्ञात हैं । जहाँ कहीं पर भी विभाग का प्रश्न होता
है वह उसके लक्षण ज्ञान के बाद ही होता है । आकाश लोकाकाश
और अलोकाकाश इस तरह से दो भेद वाला कहा गया है सो जितने
क्षेत्र में धर्मास्तिकायादिक द्रव्यों का अस्तित्व पाया जाता है उतने आ-
काश का नाम लोकाकाश है और उससे विपरीत अलोकाकाश । अलो-
काकाश में केवल आकाश के विभाप और कोई द्रव्यों का सङ्भाव नहीं
पाया जाता है । इसलिये (लोकोपलक्षितो लोकाकाशः अलोकोपलक्षितो
ऽलोकाकाश) इस कथन के अनुसार लोकरूप धर्मादिक द्रव्यों से उप-
लक्षित आकाश लोकाकाश और अलोक रूप धर्मादिक द्रव्यों के अभाव
से उपलक्षित आकाश अलोकाकाश है- ऐसा निमित्त हो जाता है ।

(लोयागासे णं मंते ।) हे भवन्त लोकाकाशमें (किं जीवा, जी-
वदेसा, जीवपपसा) क्या जीव हैं, कि जीवदेश है, कि जीवप्रदेश हैं? यहाँ

त्यां तेन लक्षणं ज्ञानं तदा पदेसां प्राप्तं यथेष्टं क्षेत्रज्ञ आकाशना लोकाकाशं जने
अलोकाकाशं, जीवा ये वेद कथा ये जेटला क्षेत्रमां धर्मास्तिकायादिक द्रव्योर्नु
अस्तित्वं ये जेटला क्षेत्रने-जेटला आकाशने-लोकाकाशं कहे थे, जने तेथी विपरीत
प्रकारं अलोकाकाशं ये अलोकाकाशमां आकाश सिवाय के।पिपु द्रव्योना सङ्भाव
होता नथी, तेथी, ज (लोकोपलक्षितो लोकाकाशः अलोकोपलक्षितोऽलोकाकाशः)
आ कथन अनुसार लोक रूप धर्मादिक द्रव्योथी उपलक्षित आकाशने लोकाकाश
कहे थे जने अलोका रूप धर्मादिक द्रव्योना अभावथी उपलक्षित आकाशने
अलोकाकाश कहे ॥

प्रश्न—(लोयागासे णं मंते) हे भवन्त । लोकाकाशमां (किं जीवा, जीवदेसा,
जीवपपसा) य एवे (एतन् अस्तित्वं) ये हे एवदेशे ये, हे एवप्रदेशेये

ભાવઃ । ભગવાન્ પ્રાહ-‘ ગોયમા ! ’ ઇત્યાદિ ‘ ગોયમા ’ હે ગૌતમ ! ‘ દુવિહે આગાસે પન્નત્તે ’ દ્વિવિધઃ આકાશઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ ‘ તંજઞા ’ તદ્યથા ‘ લોયાગાસેય-અલોયાગાસેય ’ લોકાકાશથાલોકાકાશચ અવગાહનાદાનલક્ષણમ્ આકાશત્વ-મિતિ આકાશસ્ય સામાન્યં લક્ષણમિત્યાકારકં લક્ષણં જ્ઞાનન્ ગૌતમઃ પદ્સંખ્યકં

આકાશ કો સર્વથા એક માના ગયા હૈ અતઃ હસ પ્રકારકી માન્યતા કી નિવૃત્તિ કે નિમિત્ત યહ પ્રશ્ન કિયા ગયા હૈ । અતઃ એસા પ્રશ્ન અનુચિત નહી માના જા સકતા । પ્રભુ ગૌતમ કે હસ પ્રશ્ન કા ઉત્તર દેતે હુએ ઉ-નસે કહતે હૈં કિ (ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (દુવિહે આગાસે પન્નત્તે) આ-કાશ દો ભેદ વાઝા કહા ગયા હૈ । ઉસકે વે દો ભેદ એક લોકાકાશ ઓર દૂસરા અલોકાકાશ એસે હૈં યહી વાત (લોયાગાસે ય અલોયાગાસે ય) હસ વાઝ દ્વારા પ્રકટ કી ગઈ હૈ । અપને મેં જીવાદિક દ્રવ્યોં કો સ્થા-નદાનદેના યહી આકાશ કા સામાન્ય લક્ષણ હૈ-સો હસ સામાન્ય લક્ષ-ણ કો ચિત્ત મેં રાખકર ગૌતમ ને પ્રભુ સે છહ પ્રશ્ન હસ પ્રકાર સે કિયે ઓર પ્રભુને હન ૬ છહ પ્રશ્નોંકા ઉત્તર આકાશકે દો ભેદ સમજા કર ઉન્હેં ઉત્તર દિયા, યદિ ગૌતમ કો આકાશ કા સામાન્ય લક્ષણ જ્ઞાન ન હોતા તો વે પ્રભુ સે આકાશ કિતને પ્રકાર કા હૈ એસા પ્રશ્ન ન કરતે । પરન્તુ જબ ઉન્હેં ને એસા પ્રશ્ન કિયા હૈ તો હસસે યહી જ્ઞાન હોતા હૈ કિ ઉન્હેં

મતાનુસાર આકાશને એક જ ગણવામા આવ્યું છે. તેથી એ માન્યતાનું નિવા-રણ-ખંડન-કરવાના હેતુથી આ પ્રશ્ન કરાયો છે. માટે તે પ્રશ્નને અનુચિત ગણી શકાય નહીં.

મહાવીર પ્રભુ તે પ્રશ્નનો આ પ્રમાણે જવાબ આપે છે, (ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (દુવિહે આગાસે પન્નત્તો) આકાશના નીચે પ્રમાણે બે ભેદ કહ્યા છે- (૧) લોકાકાશ અને (૨) અલોકાકાશ-એજ વાત (લોયાગાસે ય અલોયા-ગાસેય) પદો દ્વારા વ્યક્ત કરવામાં આવી છે

આકાશનું સામાન્ય લક્ષણ એ છે કે તે જીવાદિક દ્રવ્યોને પોતાની અંદર સ્થાન દાન આપે છે એ સામાન્ય લક્ષણને નજર સમક્ષ રાખી ગૌતમ સ્વામીએ આ પ્રકારના છ પ્રશ્નો પૂછ્યા છે, અને મહાવીર પ્રભુએ આકાશના બે ભેદ સમજાવીને તે છ પ્રશ્નોના ઉત્તર આપ્યા છે એ ગૌતમસ્વામીને આકાશના સામાન્ય લક્ષણનું જ્ઞાન ન હોત તો તેઓ પ્રભુને “આકાશ કેટલા પ્રકારનું છે” એ પ્રશ્ન ન કરત પણ તેમણે એવો પ્રશ્ન પૂછ્યો છે તેથી બાણી શકાય છે કે તેમને આકાશના લક્ષણનું જ્ઞાન છે જ ન્યા વિભાગનો પ્રશ્ન ઉભો થતો હોય

સિદ્ધ એવેતિ યતો જીવામીશાદિવેષપ્રવેશાના જીવામીષે સદામશાદિતિ જીવા
 દિપ્રદેશે સતિ તત્ત્વીયમવેશાદીનામુપાદાનં નિર્ધરકમેષામાતિ ઇતિ ચેદપ્રોચ્યતે
 જીવા નિરવયશા ઇતિ યેષાં મતં તન્મતનિરાકરણાયૈવ તથા કયનાદિતિ ગૃહાણ ।
 મગવાન્ પ્રાદ-‘ગોયમા !’ ઇત્યાદિ ‘ગોયમા’ હ ગાતમ ! ‘જીવા પિ જીવદે
 સાધિ ઝીવપ્પણસાપિ’ જીવા અપિ જીવદેશા અપિ જીવપ્રવેશા અપિ લોકાકાશ્વે
 વર્તન્તે ઇતિ માયઃ । ઇષમ્ ‘અજીયા પિ અજીવ દેસાપિ અજીવપણસા પિ’ અ
 જોવા અપિ અજીવદેશા અપિ અજીવપ્રવેશા અપિ । ‘જે જીવા તે નિયમા ઇગિ
 દિયા વેઈદિયા તેઈદિયા ચતરિંદિયા પચિંદિયા અબિંદિયા’ યે જીવાસ્તથ લોકા

સિદ્ધ થો જાતી હે કિ ઘટ્ટા પર જીવદેશ જીવપ્રવેશ અજીવદેશ આદિકો
 કા મી સદ્માવ હે, ક્યોં કિ ઢનકા ઢનકે સાથ અમેંદ હેં-તો ફિર ઘટ્ટા
 પર સૂત્ર મેં સ્વતન્ત્ર રૂપ સે જીવ અજીવ કે સાથ જીવદેશ, જીવપ્રવેશ,
 અજીવદેશ અજીવપ્રવેશ કા ગ્રહણ ક્યોં કિયા ગયા હે ?

સમાધાન-કિત્તનેક ધાવી જન પેસા માનતે હેં કિ જીવ નિરવયય હેં સો ફન
 કયનસે ઢનંદેં ઘટ્ટ સમજાયા ગયા હે કિ જીવ નિરવયય નહીં હે સાધયય હે ।
 ઇસીલિપ સૂત્ર મેં જીવ દેશ આદિ પદોં કા સ્વતન્ત્રરૂપ સે પાઠ કહા ગયા
 હે । ઇસ તરહ (ગોયમા) હે ગોતમ ! (જીવા પિ જીવદેસા પિ જીવપ્પ
 ણસાપિ) લોકાકાશ મેં સમસ્ત જીવ દ્રવ્ય મી, જીવદ્રવ્ય કે દેશ મી,
 ઓર ઢનકે પ્રવેશ મી હેં । ઇસી તરહ (અજીવા પિ અજીવદેસા પિ અ
 જીવપણસા પિ) અજીવદ્રવ્ય મી, અજીવદ્રવ્ય ક દેશ મી ઓર ઢનકે
 પ્રવેશ મી હેં । (જે જીવા-તે નિયમા ઇગિંદિયા, વેઈંદિયા, તેઈંદિયા, ચત

ત્યાં જીવપ્રવેશ, અજીવપ્રવેશ, અને અજીવ પ્રવેશ આદિનાં પણ સ્પષ્ટતા છે, કારણ
 કે તેમને તેમની સાથે અલેક છે તે પછી સૂત્રકારે અહીં જીવ અને અજી
 વની સાથે જીવદેશ, પ્રવેશ, અજીવદેશ અને અજીવપ્રવેશને સ્વતંત્ર રૂપે શા માટે
 પ્રહણ કર્યા છે ?

સુમાધાના-કેટલાક મતવાદીઓ એવું માને છે કે જીવ નિરવયય છે તે
 આ કથન દ્વારા તેમને એ વાત સમજાવવામાં આવી છે કે જીવ નિરવયય નથી
 પણ સાધયય (અવયવસદિત) છે તે માટેજ સૂત્રમાં જીવદેશ આદિ પદોને સ્વતંત્ર
 રીતે પ્રહણ કરવામાં આવ્યા છે જોતમ વ્યાખ્યાના પ્રશ્નોના મહાવીરપ્રભુ આ પ્રમાણે
 જવાબ આપે છે- (ગોયમા !) હે ગોતમ ! (જીવા પિ, જીવદેસા પિ, જીવપણસા
 પિ) લોકાકાશમાં સમસ્ત જીવદ્રવ્ય પણ છે, જીવદ્રવ્યના દેશ પણ છે અને જીવદ્રવ્યના પ્રવેશ
 પણ છે (અજીવા પિ અજીવદેસા પિ અજીવપણસા પિ) એજ પ્રમાણે તેમાં
 અજીવદ્રવ્ય પણ છે, અજીવદ્રવ્યના દેશ પણ છે અજીવદ્રવ્યના પ્રવેશ પણ છે (જે જીવા

તિ પ્રશ્નઃ 'લોયાગાસે' इति सूत्रे पदप्रश्नाः सन्ति गौतमस्य, तत्र लोकाकाशे जीव इति सम्पूर्णानि जीवद्रव्याणि वर्तन्ते किम्? 'जीवदेसा' इति उपयोगलक्षणजीवस्य केवलप्रज्ञाकृता द्वित्रादयो विभागा जीवदेशा इति कथ्यन्ते 'जीवप्पएसा' इति जीवस्यैव प्रकृष्टा देशाः प्रदेशा इति कथ्यन्ते निर्विभागा भागा इत्यर्थः 'अजीवा इति धर्मास्तिकायादयः तेषां च देशाः प्रदेशा एव पूर्वोक्ता एवेति । अथ लोकाकाशे जीवा अजीवाश्च विद्यन्ते इति कथिते सति जीवा जीव देशप्रदेशयोरपि सद्भावः

पर गौतमके ६छह प्रश्न हैं तीन प्रश्न जीव, जीवदेश और जीवप्रदेश संबंध हैं और तीन प्रश्न अजीव, अजीवदेश और अजीवप्रदेश संबंधी हैं जीव से यहां समस्त जीव द्रव्य ग्रहण किये गये हैं । उपयोग लक्षण वाले जीव के केवलप्रज्ञाकृत दो तीन अदि जो विभाग हैं वे जीव देश से ग्रहण किये गये हैं । तथा उसी जीव के प्रकृष्ट देश प्रदेश शब्द से कहे गये हैं । इन प्रदेशों का फिर विभाग नहीं होना है अतः निर्विभाग जो भाग हैं वे प्रदेश होते हैं ऐसा जानना चाहिये । इस प्रश्न का तत्पर्य यह है कि लोकाकाशमें सम्पूर्ण जीव द्रव्य हैं, कि जीवके देश हैं अथवा जीव के प्रदेश हैं? इसी तरह से लोकाकाश में (अजीवा अजीवदेसा अजीवप्पएसा) अजीव जो धर्मास्तिकायादिक द्रव्य हैं वे हैं कि उनके देश हैं या उनके प्रदेश हैं? शंका—जब यह बात निश्चित है कि लोकाकाश में जीव और अजीव वे दोनों द्रव्य हैं, तो इस कथन से यह बात भ

અહીં ગૌતમ સ્વામીએ છ પ્રશ્નો કર્યા છે તેમાંના ત્રણ જીવ, જીવદેશ અને જીવપ્રદેશ વિષે છે અને બીજા ત્રણ પ્રશ્નો અજીવ, અજીવદેશ અને અજીવપ્રદેશ વિષે છે. 'જીવ' પદ દ્વારા અહીં સમસ્ત જીવદ્રવ્ય ગ્રહણ કરવામાં આવ્યું છે. ઉપયોગ લક્ષણવાળા જીવના કેવલિ પ્રજ્ઞાકૃત બે, ત્રણ આદિ જે વિભાગ છે, તેમને "જીવદેશ" કહેવામાં આવેલ છે. તથા એજ જીવના પ્રકૃષ્ટ દેશને માટે (જીવપ્રદેશ) શબ્દનો પ્રયોગ કર્યો છે. તે વિભાગો પાડી શકાતા નથી. તેથી જે અવિભાજ્ય ભાગો છે તેમને જ પ્રદેશ કહેવામાં આવે છે, એમ સમજવું.

ગૌતમ સ્વામીના આ પ્રશ્નનું તાત્પર્ય એ છે કે—લોકાકાશમાં સંપૂર્ણ જીવદ્રવ્ય છે, કે જીવના દેશ છે, કે જીવના પ્રદેશ છે? એજ પ્રમાણે લોકાકાશમાં (અજીવા, અજીવાદેસા, અજીવપ્પસા) અજીવ "ધર્માસ્તિકાયા આદિ દ્રવ્ય છે," કે તેમના પ્રદેશ છે?

શંકા—જો એ વાત ચોક્કસ છે કે લોકાકાશમાં જીવ અને અજીવ, એ બંને દ્રવ્યોનું અસ્તિત્વ છે, તો તે કથનથી એ વાત પણ સિદ્ધ થાય છે કે

સિદ્ધ એવેતિ યતો જીવામીષાદિદેશપ્રદેશાનાં જીવામીષે સદ્ભાવોદિતિ જીવા
 દિપ્રહણે સતિ સ્વીયપ્રદેશાદીનામુપાધાનં નિરધક્ષમેવામાતિ ઇતિ શ્વેદશ્ચોષ્યતે
 જીવા નિરવયશ્ચ ઇતિ યથાં મત તન્મતનિરાકરણાયેષ તથા કયનાદિતિ ઘટામ્ ।
 મગધાન્ પ્રાદ્-‘ગોયમા !’ ઇત્યાદિ ‘ગોયમા’ હે ગૌતમ ! ‘જીવા ચિ જીવદે
 સાચિ જીવપ્પણસાચિ’ જીવા અપિ જીવદેશા અપિ જીવપ્રદેશા અપિ લોકાકાશે
 વર્તન્તે ઇતિ માયઃ । એવમ્ ‘અજીવા ચિ અજીવ દેસાચિ અજીવપણસા ચિ’ અ
 જીવા અપિ અજીવદેશા અપિ અજીવપ્રદેશા અપિ । ‘જે જીવા તે નિયમા ઈર્ણિ
 દિયા શેદિયા તેદિયા ચરિદિયા પર્ણિદિયા અર્ણિદિયા’ એ જીવાસ્તત્ર લોકા

સિદ્ધ હો જાતી છે કે ઘટા પર જીવદેશ જીવપ્રદેશ અજીવદેશ આદિકો
 ની સદ્ભાવ છે, ક્યોં કે ઊનકા ઊનકે સાથ અમેદ હૈં-તો ફિર યહાં
 પર સૂત્ર મેં સ્વતન્ત્ર રૂપ સે જીવ અજીવ કે સાથ જીવદેશ, જીવપ્રદેશ,
 અજીવદેશ અજીવપ્રદેશ કા પ્રહણ ક્યોં કિયા ગયા છે ?

સમાધાન-કિત્તનેક ઘાવી જન એસા માનસે હૈં કે જીવ નિરવયશ્ચ હૈં સો જન
 કયનસે ઊન્હેં યહ સમસાધાયા ગયા છે કે જીવ નિરવયશ્ચ નહીં હૈં સાધયશ્ચ હૈં ।
 ઇતીચ્છિપ્ત સૂત્ર મેં જીવ દેશ આદિ પદોં કા સ્વતન્ત્રરૂપ સે પાઠ કહા ગયા
 હૈં । ઇત્ત તરહ (ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (જીવા ચિ જીવદેસા ચિ જીવપ્પ
 ણસાચિ) લોકાકાશ મેં સમસ્ત જીવ દ્રવ્ય મી, જીવદ્રવ્ય કે દેશ મી,
 ઔર ઊનકે પ્રદેશ મી હૈં । ઇતી તરહ (અજીવા ચિ અજીવદેસા ચિ અ
 જીવપણસા ચિ) અજીવદ્રવ્ય મી, અજીવદ્રવ્ય ક દેશ મી ઔર ઊનકે
 પ્રદેશ મી હૈં । (જે જીવા-તે નિયમા ઈર્ણિદિયા, શેદિયા, તેદિયા, ચરિ
 દિયા, પર્ણિદિયા, અર્ણિદિયા)

ત્વાં છવપ્રદેશ, અછવપ્રદેશ અને અછવ પ્રદેશ આદિને પશુ સજ્જાવ છે કારણ
 કે તેમને તેમની સાથે અલેક છે તે પછી સૂત્રપર અહીં છવ અને અછ
 વની સાથે છવપ્રદેશ, પ્રદેશ, અછવપ્રદેશ અને અછવપ્રદેશને સ્વતન્ત્રરૂપે શા માટે
 શ્રદ્ધા કર્યા છે ?

સમાધાન-કેટલાક મતવાદીઓ એવું માને છે કે છવ નિરવયશ્ચ છે તે
 આ કથન દ્વારા તેમને એ પાઠ સમજાવવામા આવી છે કે છવ નિરવયશ્ચ નથી
 પણ માનવ (અવયવસદ્ધિત) છે તે માટે સૂત્રમા છવપ્રદેશ આદિ પદોને સ્વતન્ત્ર
 રીતે શ્રદ્ધા કરવામા આયા છે ગૌતમ સ્વામીના પ્રશ્નને મહાવીરપ્રભુ આ પ્રમાણે
 જવાબ આપે છે- (ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (જીવા ચિ જીવદેસા ચિ, જીવપણસા
 ચિ) લોકાકાશમા અમસ્ત છવદ્રવ્ય પણ છે, છવદ્રવ્યના દેશપણ છે અને છવદ્રવ્યના પ્રદેશ
 પણ છે (અજીવા ચિ અજીવદેસા ચિ, અજીવપણસા ચિ) એજ પ્રમાણે તેમાં
 અછવદ્રવ્ય પણ છે, અછવદ્રવ્યના દેશ પણ છે અછવદ્રવ્યના પ્રદેશ પણ છે (જે જીવા

કાશે વિધન્તે તે નિયમાત્ એકેન્દ્રિયા દ્વીન્દ્રિયાત્રોન્દ્રિયાઃ ચતુરિન્દ્રિયાઃ પચ્ચેન્દ્રિયાઃ
અનિન્દ્રિયાઃ, અનિન્દ્રિયાઃ-અપર્યાપ્તાઃ કેવલિનઃ સિદ્ધાસ્ત્વેતિ । એતેનાથસ્ય પ્રશ્નત્ર-
યસ્યોત્તરં દત્તમ્ । ‘જે જીવદેસા તે નિયમા એગેંદિય દેસા જાવ અર્ણિદિયદેસા’

રિંદિયા, પંચિંદિયા, અર્ણિદિયા) લોકાકાશ મેં જો જીવ દ્રવ્ય હૈં-વે એકે-
ન્દ્રિય મી હૈં, દો ઇન્દ્રિય મી હૈં, તે ઇન્દ્રિય મી હૈં, ચૌ ઇન્દ્રિય મી હૈં,
પાંચ ઇન્દ્રિય વાલે મી હૈં । તથા-અનિન્દ્રિય-અપર્યાપ્ત કેવલી ઓર સિદ્ધ
મી હૈં । અતિન્દ્રિયસે યહાં જો અપર્યાપ્ત આદિ જીવ ગ્રહણ કિયે ગયે હૈં ઉસ
કા કારણ યહ હૈં કિ ઇન જીવોં કે ઇન્દ્રિયાં નહીં હોતી હૈં । અપર્યાપ્ત
જીવોંકે ઇન્દ્રિય પર્યાપ્તિ કી પૂર્ણતાકે અભાવ સે તથા દૃઢ પર્યાપ્તિયોંમેં સે
કિસી મી પર્યાપ્તિ કે ન હોને સે કોઈ મી ઇન્દ્રિય નહીં હોતી હૈં । યદ્યપિ
કેવલી કે ઇન્દ્રિયાં હોતી હૈં પરન્તુ વે વહાં કાર્યકારી નહીં હોતી હૈં ।
કેવલી કા જ્ઞાન ક્ષાયિક હોતા હૈં અતઃ વહ ઇન્દ્રિયાતીત માના ગયા હૈં ।
સિદ્ધોં કે શરીર ન હોને કે કારણ વે ઇન્દ્રિયોં સે સર્વથા રહિત માને
ગયે હૈં । ઇન સવ જીવોં કા નિવાસ લોકાકાશ મેં હી હૈં । સિદ્ધોં
કા નિવાસ યદ્યપિ લોક કે અગ્રભાગ મેં હૈં, પરન્તુ વહ અગ્રભાગ
આખિર તો લોક મેં હી હૈં । ઇસ કથન સે કિ લોકાકાશ મેં જીવદ્રવ્ય,
જીવ દેશ ઓર જીવપ્રદેશ રહતે હૈં, પ્રભુ ને ગૌતમ કે આદિ કે ત્રીન

તે નિયમા એર્ણિદિયા, વેઈંદિયા, તેઈંદિયા, ચરિંદિયા, પંચિંદિયા, અર્ણિદિયા) લોકાકા-
શમાં રહેલુ જીવદ્રવ્ય નિયમથી જ એકેન્દ્રિય પણ છે, બે ઇન્દ્રિય પણ છે,
ત્રીન્દ્રિય પણ છે, ચતુરિન્દ્રિય પણ છે, પચ્ચેન્દ્રિય પણ છે અને અનિન્દ્રિય-
અપર્યાપ્ત, કેવલી અને સિદ્ધ-પણ હોય છે (અનિન્દ્રિય) પદ દ્વારા અહીં જે
અપર્યાપ્ત આદિ જીવો ગ્રહણ કરવામાં આવ્યા છે. તેનું કારણ એ છે કે તે
જીવોને ઇન્દ્રિયો હોતી નથી. અપર્યાપ્ત જીવોને ઇન્દ્રિય પર્યાપ્તિની પૂર્ણતાને
અભાવે તથા છ પર્યાપ્તિઓમાંથી એક પર્યાપ્તિનો સફળાવ ન હોવાથી કોઈ પણ
ઇન્દ્રિય હોતી નથી જો કે કેવલીને ઇન્દ્રિયો હોય છે, પણ તે કાર્યકારી નથી.
કેવલીનું જ્ઞાન ક્ષાયિક હોય છે તેથી તેને ઇન્દ્રિયાતીત માનવામાં આવ્યું છે.
સિદ્ધ પરમાત્માઓને શરીર જ હોતું નથી તેમને ઇન્દ્રિયોથી તદ્દન રહિત
માનવામાં આવ્યા છે તે બધા જીવોનો નિવાસ લોકાકાશમાં જ છે સિદ્ધોનો
નિવાસ લોકના અગ્ર ભાગમાં છે, પણ તે અગ્રભાગ પણ લોકમાં જ છે એમ
કહેવામાં કોઈ વાધો નડતો નથી. “લોકાકાશમાં જીવદ્રવ્ય, જીવદેશ અને
જીવપ્રદેશ રહે છે,” આ કથનથી લગવાને ગૌતમ સ્વામીના પહેલા ત્રણ પ્રશ્નોના

પંચલિઠઢે પજ્જુવાસમાણે' इति सग्राहम् । एवं वक्ष्यमाणप्रकारेण 'व्यासी' अनादीन्
'कश्चिद्वा णं भंते लोयद्धिं पण्णा' कतिविधा खड्ग मयं । लोहस्थिति मग्गा?
मगवानार—' गोयमे'—त्यादि, 'गोयमा' हे गौतम । ' अट्ठविहा लोयद्धिं पण्णा'

अभिमुहे विणएण पंजलिठढे पज्जुवासमाणे " इस पाठ का समग्र किया
है । इसका अर्थ इसप्रकार से है—गौतमने जब भगवान् को हे भदन्त ।
इस पदसे सयोधित कर पूछा तो एकदम नहीं पूछा किन्तु उन्होंने पूछने
के पछिछे भगवान् महावीर को धन्दना की, नमस्कार किया । वदना
नमस्कार करके फिर वे उनके सन्मुख ऐसे बैठे कि जिससे वे न अधिक
उनके पास प्रतीत होते थे और न अधिक दूर ही दिखलाई देते थे ।
उचित स्थान पर सन्मुख बैठने का कारण यह था कि वे भगवद्वचन को
सुनने के अमिलायी थे । वदना और नमस्कार करके भी जब वे अपने
योग्य स्थानपर बैठने लगे तब पुनः उन्होंने प्रभुको धन्दना नमस्कार किया ।
सन्मुख बैठे हुए भी वे प्रभुको विनयपूर्वक दोनों हाथ जोड़कर पूछनेलगे ।
इस तरहकी क्रियासे वे प्रभुको भक्तिमें लीन रहते आये हैं, यह बात सूत्रकारने
प्रकट की है । गौतम ने प्रभु से क्या पूछा सो इसके लिये सूत्रकार कहते
हैं—(कश्चिद्वा णं भंते ! लोयद्धिं पण्णा) गौतम ने प्रभु से यह पूछा कि
हे भदन्त ! लोक की स्थिति कितने प्रकार की कही गई है ? प्रभु ने गौतम
के इस प्रश्नका उत्तर क्या दिया इसे सूत्रकार बताते हुए कहते हैं कि—
(गोयमा ! अट्ठविहा लोयद्धिं पण्णा) प्रभुने गौतमके द्वारा किए गए प्रश्नका

अभिमुहे विणएण पंजलिठढे पज्जुवासमाणे " આ પાઠને શ્રદ્ધલુ કરવામા આવ્યો
છે તેનો અર્થ આ પ્રમાણે છે—ગૌતમસ્વામીએ જ્યારે ભગવાન મહાવીરને
' હે ભગવન્ ! એ પદ્ધતિ સંગ્રહ્યા પછી એક દમ પ્રશ્ને પૂછ્યા નહીં પણ
તેમણે પહેલાં તેા ભગવાન મહાવીરને વદણા કરી નમ કાર કર્યા વદણા નમ
સ્કાર કરીને તેઓ તેમનાથી ખતિ દૂર પણ નહીં અને ખતિ નિકળ પણ નહીં
જોવા સ્થાને (ઉચિત સ્થાને) બેસીને પ્રશ્ન સા કરતા મક્કા ભગવાનને ફરીથી નમ
સ્કાર કરીને ભગવાનની સામે બન્ને હાથ તેડીને વિનયપૂરક પ્રશ્ન પાસના કરતા
મક્કા પૂછ્યા હાજ્યા. આ સૂત્રો વડે ગૌતમ સ્વામીની ભગવાન પ્રત્યેની ભક્તિ અને
વિનય દર્શાવવામાં આવેલ છે હવે ગૌતમ સ્વામીએ પ્રશ્નને પૂછેલા પ્રશ્ને અને
પ્રશ્ન વડે તે પ્રશ્નોના જે ઉત્તરો આપાયાતે સૂત્રકાર બતાવે છે

પ્રશ્ન—(કશ્ચિદ્વાણં ભંતે ! લોયદ્ધિં પણ્ણા) કે પ્રશ્ને । તેઢની સ્થિતિ
કેટલા પ્રકારની હતી છે ઉત્તર—(ગોયમા ! અટ્ઠવિહા લોયદ્ધિં પણ્ણા) હે ગૌતમ !

નાડભેદસ્ય સ્વાભાવિકત્વાત્, વૃક્ષશિશપયોરિવેતિ ભાવઃ. અત્ર યાવત્પદેન દ્વીન્દ્રિય ત્રીન્દ્રિય-ચતુરિન્દ્રિય-પન્ચેન્દ્રિયપ્રદેશાનાં ગ્રહણં ભવતિ તથા ચ ય એવ જીવપ્રદેશ સ્ત. એવ દ્વીન્દ્રિયાદિપ્રદેશા અપીતિ ભાવઃ. અથાન્ત્યસ્ય પ્રશ્નત્રયસ્ય ઉત્તરમાહ-‘ જે અજીવા ’ ઇત્યાદિ ‘ જે અજીવા તે દુવિહા પળ્ળત્તા ’ એ અજીવાસ્તે, દ્વિવિધાઃ

સ્વાભાવિક છે. જેસે વૃક્ષ ઓર શિશપા-શિશમમેં વ્યાપ્ય વ્યાપક ભાવ હોને સે અભેદસ્વાભાવિક છે. તાત્પર્ય-ઇસ કથન કા યહ છે કે જિસ પ્રકાર વૃક્ષ વ્યાપક ઓર શિશપા વ્યાપ્ય માના જાતા હે કયોં કે શિશપા કે વિના ખી વૃક્ષત્વ કા સદ્ભાવ પાયા જાતા છે પરન્તુ વૃક્ષત્વ કે વિના શિશપા કા સદ્ભાવ ત્રિકાલ મેં ખી નહીં પાયા જાતા છે અતઃ ઇન દોનોં મેં વ્યાપ્ય વ્યાપક ભાવ હોને સે કથંચિત્ અભેદ માના જાતા છે ઉસી પ્રકાર જીવદેશ, જીવપ્રદેશ એ દોનોં વ્યાપક હેં ઓર એકેન્દ્રિયાદિ દેશ પ્રદેશ સબ વ્યાપ્ય હેં. જહાં જીવદેશ, જીવપ્રદેશત્વરૂપ વ્યાપક હોગા વહાં એકેન્દ્રિય કા હી દેશત્વ હોગા યહ નિયમ નહીં બન સકતા અન્ય-જીવ કા ખી દેશત્વ હો સકતા છે. પર જહાં એકેન્દ્રિયાદિ દેશત્વાદિ હોગા-વહાં નિયમ સે જીવ દેશત્વાદિ હોગા. (જે જીવપણસા તે નિયમા ઈન્દ્રિય પણસા જીવ અર્ણિદિયપણસા) યહાં યાવત્ શબ્દ સે, દ્વીન્દ્રિય પ્રદેશ, ત્રીન્દ્રિયપ્રદેશ, ચતુરિન્દ્રિયપ્રદેશ, પંચેન્દ્રિયપ્રદેશ ઓર અનિન્દ્રિય-પ્રદેશોં કા ગ્રહણ ક્રિયા ગયા હેં. અવ પ્રશ્ન અન્ત કે ત્રીન પ્રશ્નોં કા ઉત્તર દેને કે નિમિત્ત ગૌતમસે કહતે હેં-(જે અજીવા તે દુવિહા પળ્ળત્તા) જો

વૃક્ષને વ્યાપક અને સીસમને વ્યાપ્ય માનવામાં આવે છે, કારણ કે સીસમ વિના પણ વૃક્ષનું અસ્તિત્વ સંભવી શકે છે પણ વૃક્ષવિના સીસમનું અસ્તિત્વ કહી પણ સંભવી શકતું નથી. આ રીતે તે બંને વચ્ચે વ્યાપ્ય વ્યાપક ભાવ હોવાથી તેમની વચ્ચે અભેદ માનવામાં આવે છે એજ પ્રમાણે જીવદેશ અને જીવપ્રદેશ, એ બંને વ્યાપક છે અને એકેન્દ્રિયાદિ દેશ અને પ્રદેશ વ્યાપ્ય છે. બંન્માં જીવદેશ અને જીવપ્રદેશત્વ રૂપ વ્યાપક હશે ત્યાં એકેન્દ્રિયનું જ દેશત્વ હોઈ શકે છે, એવો નિયમ થઈ શકતો નથી-અન્ય જીવનું પણ દેશત્વ ત્યાં હોઈ શકે છે, પણ બંન્માં એકેન્દ્રિયાદિ દેશત્વ હશે ત્યાં જીવદેશત્વાદિ પણ હશે, એવો નિયમ છે. (જે જીવપણસા તે નિયમા ઈન્દ્રિયપણસા જાવ અર્ણિદિયપણસા) આ સૂત્રમાં (જાવ) (પર્યન્ત) પદથી દ્વીન્દ્રિયપ્રદેશ, ત્રીન્દ્રિયપ્રદેશ, ચતુરિન્દ્રિયપ્રદેશ પંચેન્દ્રિય પ્રદેશ અને અનિન્દ્રિય પ્રદેશો ગ્રહણ કરાયા છે. હવે પ્રશ્ન ગૌતમ સ્વામીના છેલ્લા ત્રણ પ્રશ્નોનો ઉત્તર આપતા કહે છે-(જે અજીવા તે દુવિહા પળ્ળત્તા)

યે જીવદેશાસ્તે નિયમાત્ એકેન્દ્રિયદશા યાન્ત્ અનિન્દ્રિયદેશાઃ, જીવદેશ
એકેન્દ્રિયદેશયોરમેદાત્ જીવેકેન્દ્રિયયોર્બ્યાપ્યબ્યાપકમાનાદિત્યથ । ' જે જીવ-
પ્રવેશા તે નિયમા ઈર્ગદિયપ્રવેશા જામ્ અર્ગિદિયપ્રવેશા ' યે જીવપ્રવેશાઃ
ત નિયમાત્ એકેન્દ્રિયપ્રવેશાઃ યાન્ત્ અનિન્દ્રિ પ્રવેશા યે જીવાનામ્ પ્રકૃષ્ટા
વેશાઃ ત જીવપ્રવેશા ત નિયમાત્ એકેન્દ્રિયપ્રવેશાઃ યાન્ત્ અનિન્દ્રિયપ્રવેશાઃ
જીવપ્રવેશ - એકેન્દ્રિયાદિપ્રવેશાનામભિષ્ત્વમ્ યદા જીવ-એકેન્દ્રિયયોર્બ્યાપ્ય-
બ્યાપકમાપસ્તદા જીવપ્રવેશ - એકેન્દ્રિયપ્રવેશયોરપિ બ્યાપ્યબ્યાપકમાર્થે

પ્રશ્નો કા ઉત્તર દિયા છે । (જે જીવદેશ તે નિયમા ઈર્ગદિય વેશા જામ્
અર્ગિદિયવેશા) જો જીવદેશ હોતે હૈં એ હી નિયમ સે એકેન્દ્રિયદશ હોતે
હૈં, યાત્ અનિન્દ્રિયજીવોં કે વેશ હોતે હૈં । જીવદેશ ઓર એકેન્દ્રિયવેશ
મેં અમેદ હૈં ક્યોં કિ જીવ ઓર એકેન્દ્રિય મેં બ્યાપ્ય બ્યાપકમામ્ હૈં ।
યહાં યાત્ પદ સે ઈન્દ્રિય, ત્રીન્દ્રિય, ચતુરિન્દ્રિય વેશોં કા ગ્રહણ હુઆ
હૈં । તથાચ-જો હી જીવ વેશ હૈં એ હી દોહન્દ્રિય આદિ જીવોં કે બી વેશ
હૈં । હસી તરહ-(જે જીવપ્રવેશ તે નિયમા ઈર્ગદિયપ્રવેશા જામ્ અર્ગિદિ
યપ્રવેશા) જો જીવ પ્રવેશ હૈં એ હી નિયમ સે એકેન્દ્રિયપ્રવેશ હૈં યાત્
અનિન્દ્રિયપ્રવેશ હૈં । જો જીવોં કે પ્રકૃષ્ટ વેશ હૈં એ જીવપ્રવેશ હૈં એ નિય
મ સે એકેન્દ્રિયપ્રવેશ યાત્ અનિન્દ્રિય પ્રવેશ હૈં । જીવપ્રવેશોં મેં અભિ-
ષ્ત્વમા હૈં । જમ જીવ ઓર એકેન્દ્રિય મેં બ્યાપ્ય બ્યાપક આવ્ હૈં તમ જીવ
પ્રવેશ ઓર એકેન્દ્રિય પ્રવેશ મેં બી બ્યાપ્ય બ્યાપક આવ્ હોને સે અમેદ

જીવમ્ આપ્ત્વા છે (જે જીવેસા તે નિયમા ઈર્ગદિયવેશા જામ્ અર્ગિદિયવેશા)
અવદેશો નિયમથી જ એકેન્દ્રિયથી હાથે અનિન્દ્રિય હોવા પશ્ચાન્તા દેશ
હોય છે અવદેશ અને એકેન્દ્રિયવેશમા અમેદ છે કારણ કે અવ અને એકે
ન્દ્રિયમા બ્યાપ્ય બ્યાપક આવ્ છે અહીં યાત્ (પશ્ચન્ત) પદથી એ ઇન્દ્રિય,
ત્રીન્દ્રિય, ચતુરિન્દ્રિય અને પંચેન્દ્રિય વેશો પ્રકૃષ્ટ કરવ મા આવ્ છે વળી એ
અવદેશો છે તેમ દ્વિન્દ્રિય આદિ હોવાના પણ દેશ છે એમ પ્રમાણે (જે જીવપ્રવેશ
તે નિયમા ઈર્ગદિયપ્રવેશા) જે અવપ્રવેશ છે તેઓ નિયમથી જ એકેન્દ્રિય
પ્રવેશથી હાથે અનિન્દ્રિય પશ્ચાન્તા પ્રવેશ છે જે હોવાના પ્રકૃષ્ટ દેશ છે-
અવિશાલ્ય નિશાગ છે-તેમને અવપ્રવેશ કહે છે તેઓ નિયમથી જ એકેન્દ્રિય
પ્રવેશથી હાથે અનિન્દ્રિય પશ્ચાન્તા પ્રવેશ છે અવપ્રવેશ અને એકેન્દ્રિયાદિ
પ્રવેશોમા અમેદ છે એવી રીતે અવ અને એકેન્દ્રિયમા બ્યાપ્ય બ્યાપક આવ્ છે
એવી જ રીતે અવપ્રવેશ અને એકેન્દ્રિયપ્રવેશમા પણ બ્યાપ્ય બ્યાપક આવ્
હોવાથી તે અમેદ સ્થાનિક્ હોય છે - એવી રીતે વૃક્ષ અને સીતમમાં
બ્યાપ્ય બ્યાપક આવ્ હોવાથી અમેદ સ્થાનિક્ છે- એવે કે એવી રીતે

નાડભેદસ્ય સ્વાભાવિકત્વાત્, વૃક્ષશિશપયોરિવેતિ ભાવ. અત્ર યાવત્પદેન દ્વીન્દ્રિય
ત્રીન્દ્રિય-ચતુરિન્દ્રિય-પંચેન્દ્રિયપ્રદેશાનાં ગ્રહણં ભવતિ તથા ચ ય એવ જીવપ્રદેશા
સ્ત. એવ દ્વીન્દ્રિયાદિપ્રદેશા અપીતિ ભાવઃ. અથાન્ત્યસ્ય પ્રશ્નત્રયસ્ય ઉત્તરમાહ-‘ જે
અજીવા ’ હ્યાદિ ‘ જે અજીવા તે દુવિહા પળણ્તા ’ એ અજીવાસ્તે દ્વિવિધાઃ

સ્વાભાવિક છે. જેસે વૃક્ષ ઓર શિશપા-શિશમમેં વ્યાપ્ય વ્યાપક ભાવ
હોને સે અભેદસ્વાભાવિક છે. તાત્પર્ય-ઇસ કથન કા યહ છે કિ જિસ
પ્રકાર વૃક્ષ વ્યાપક ઓર શિશપા વ્યાપ્ય માના જાતા હે કયોં કિ શિ-
શપા કે વિના મી વૃક્ષત્વ કા સદ્ભાવ પાયા જાતા છે પરન્તુ વૃક્ષત્વ કે
વિના શિશપા કા સદ્ભાવ ત્રિકાલ મેં મી નહીં પાયા જાતા છે અતઃ
ઇન દોનોં મેં વ્યાપ્ય વ્યાપક ભાવ હોને સે કથંચિત્ અભેદ માના જાતા છે
ઉસી પ્રકાર જીવદેશ, જીવપ્રદેશ એ દોનોં વ્યાપક હેં ઓર એકેન્દ્રિયાદિ
દેશ પ્રદેશ સવ વ્યાપ્ય હેં. જહાં જીવદેશ, જીવપ્રદેશત્વરૂપ વ્યાપક હોગા
વહાં એકેન્દ્રિય કા હી દેશત્વ હોગા યહ નિયમ નહીં થન સકતા અન્ય-
જીવ કા મી દેશત્વ હો સકતા છે. પર જહાં એકેન્દ્રિયાદિ દેશત્વાદિ
હોગા-વહાં નિયમ સે જીવ દેશત્વાદિ હોગા. (જે જીવયપસા તે નિયમા
અર્ણિદિય પપસા જાવ અર્ણિદિયપપસા) યહાં યાવત્ શબ્દ સે, દ્વીન્દ્રિય
પ્રદેશ, ત્રીન્દ્રિયપ્રદેશ, ચતુરિન્દ્રિયપ્રદેશ, પંચેન્દ્રિયપ્રદેશ ઓર અનિન્દ્રિય-
પ્રદેશોં કા ગ્રહણ કિયા ગયા હેં. અવ પ્રશ્ન અન્ત કે ત્રીન પ્રશ્નોં કા ઉત્તર
દેને કે નિમિત્ત ગૌતમસે કહતે હેં-(જે અજીવા તે દુવિહા પળણ્તા) જો

વૃક્ષને વ્યાપક અને સીસમને વ્યાપ્ય માનવામાં આવે છે, કારણ કે સીસમ
વિના પણ વૃક્ષનું અસ્તિત્વ સંભવી શકે છે પણ વૃક્ષવિના સીસમનું અસ્તિ-
ત્વ કહી પણ સંભવી શકતું નથી. આ રીતે તે બંને વચ્ચે વ્યાપ્ય વ્યાપક
ભાવ હોવાથી તેમની વચ્ચે અભેદ માનવામાં આવે છે એજ પ્રમાણે જીવદેશઅને
જીવપ્રદેશ, એ બંને વ્યાપક છે અને એકેન્દ્રિયાદિ દેશ અને પ્રદેશ વ્યાપ્ય છે.
બ્યાં જીવદેશ અને જીવપ્રદેશત્વ રૂપ વ્યાપક હશે ત્યાં એકેન્દ્રિયનું જ દેશત્વ
હોઈ શકે છે, એવો નિયમ થઈ શકતો નથી-અન્ય જીવનું પણ દેશત્વ ત્યાં હોઈ
શકે છે. પણ બ્યાં એકેન્દ્રિયાદિ દેશત્વ હશે ત્યાં જીવદેશત્વાદિ પણ હશે, એવો નિયમ
છે (જે જીવપપસા તે નિયમા અર્ણિદિયપપસા જાવ અર્ણિદિયપપસા) આ સૂત્રમાં (જાવ)
(પર્યાન્ત) પઢ્યો દ્વીન્દ્રિયપ્રદેશ, ત્રીન્દ્રિયપ્રદેશ, ચતુરિન્દ્રિયપ્રદેશ પંચેન્દ્રિય
પ્રદેશ અને અનિન્દ્રિય પ્રદેશો ગ્રહણ કરાયા છે. હવે પ્રશ્ન ગૌતમ સ્વામીના
હેલા ત્રણ પ્રશ્નોનો ઉત્તર આપતા કહે છે-(જે અજીવા તે દુવિહા પળણ્તા)

મમ્મતા 'વ જહા' તદ્ યયા 'સ્વીય અસ્વીય' રુપિણશ્ચરુપિણશ્ચ રુપિણો
મૂર્ત્યૌઃ પુત્રલાઃ અરુપિણોઽમૂર્ત્યાઃ ધર્માસ્તિકાયાદયઃ, 'જે સ્વી તે ચતુર્વિદા પ
પ્ણસા' એ રુપિણઃ પુત્રલાસ્તે ચતુર્વિદાઃ મમ્મતાઃ 'વ જહા' તદ્ યયા 'સપા
સ્થંધદેસા-સ્થપપસા પરમાણુ પોગલા' સ્કન્ધાઃ સ્કન્ધદેશાઃ સ્કન્ધપ્રદેશાઃ પર
માણુપુત્રલાઃ તથા સ્કન્ધાઃ પરમાણુસમુદાયાત્મકા અવયવિ ન હૃત્યર્થઃ સ્કન્ધદેશ
આદયો વિભાગાઃ સ્કન્ધપ્રદેશાસ્તસ્યેવ નિરંદ્રા અવયવાઃ પરમાણુપુત્રલા અવયવા

અજીવ હૈં એ દો પ્રકાર કે હૈં-(તજહા) જૈસે-(સ્વી ય અસ્વી ય) એકરુપી
અજીવ ઓર દૂસરા અરુપી અજીવ, રુપી શબ્દ કા અર્થ-જિમમેં બર્ણ, ગંધ,
રસ ઓર સ્પર્શ એ પાવે જાતે હૈં એસા મૂર્તિક પદાર્થ ઓર જિસમેં એ ચાર ગુણ
નહીં પાવે જાવે એસા અમૂર્તિક પદાર્થ અરુપી કહા ગયા હૈ। મૂલ મેં અજીવ
કે ધર્માસ્તિકાય, અધર્માસ્તિકાય, આકાશાસ્તિકાય, પુત્રલાસ્તિકાય ઓર
કાલ એસે પાંચ મેદ હૈં। इनमें पुत्रलास्तिकाय को छोड़कर बाकी चार
अस्तिकाय अरुपी हँ और पुत्रलास्तिकाय रुपी है। (जे स्वी ते चतुर्विद
पणसा) रुपी पुत्रलास्तिकाय चार प्रकार का कहा गया है। (तजहा)
जैसे (स्वंधा, स्वंधदेसा, स्वंधपपसा, परमाणुपोगला) स्कंध, स्कंधदेश,
स्कंधप्रदेश और परमाणुपुत्रल, तथा परमाणु समुदायात्मक जो अवयवी
है वह स्कंध है, स्कंध के दो तीन आदि अष्टपृथग्भूता जो विभाग हँ वे
स्कंधदेश हँ। स्कंधदेश के जो निरंद्रा विभाग हँ वे स्कंधप्रदेश हँ। तथा

ને અહીં છે તે બે પ્રકારના છે (તજહા) જેમ કે (સ્વીય અસ્વી ય)
(૧) રૂપી અહીં અને (૨) અરૂપી અહીં જેમાં રૂપ, રસ, ગંધ સ્પર્શ
હોય છે એવા મૂર્તિક પ્રદાર્થને 'રૂપી' કહે છે, અને જેમાં એ ચાર ગુણ
હોવા નથી એવા અમૂર્તિક પદાર્થ ને "અરૂપી" કહે છે અહીંવના મૂળ
ચાંચ લેઈ છે ૧, ધર્માસ્તિકાય, ૨, અધર્માસ્તિકાય, ૩ આકાશાસ્તિકાય ૪
પુત્રલાસ્તિકાય અને ૫, કાળ તેમાંના પુત્રલાસ્તિકાય સિવાયના ચાર અસ્તિકાય
અરૂપી છે પણ પુત્રલાસ્તિકાય રૂપી છે (જે સ્વી તે ચતુર્વિદા પ્ણસા ?)
રૂપી પુત્રલાસ્તિકાયના ચાર પ્રકાર નીચે પ્રમાણે છે (સપા, સ્થંધદેશ, સ્થપપસા
પરમાણુપોગલા) (૧) સ્કન્ધ (૨) સ્કન્ધદેશ, (૩) સ્કન્ધપ્રદેશ અને (૪) પર-
માણુ પુત્રલપરમાણુના સમુદાયરૂપને અવયવી છે તેને સ્કન્ધ કહે છે સ્કન્ધના
બે ત્રણ આદિ અષ્ટધર્મરૂપ ને વિભાજે છે તેમને સ્કન્ધદેશ કહે છે સ્કન્ધદેશના
ને નિરંદ્રા (અવિભાજ્ય) વિભાગ છે તેમને સ્કન્ધપ્રદેશ કહે છે તથા અવયવ

વયવિભાવવર્જિતાઃ પરમાણવઃ એવેતિ, ' જે અરૂવી તે પંચવિદ્યા પળણ્તા ' અરૂપિણસ્તે પશ્ચવિદ્યાઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ 'તં જહા-ધર્મ્મત્થિકાણ્' इत्यादि. 'તં જહા ધર્મ્મત્થિકાણ્' તદ્ યથા ધર્માસ્તિકાયઃ । ધર્માસ્તિકાયઃ નાસ્તિ ધર્માસ્તિકાયસ્ય દેશરૂપઃ । ધર્માસ્તિકાયસ્ય પ્રદેશઃ ૨ અધર્માસ્તિકાયઃ અધર્માસ્તિકાયોઽપિ નાસ્તિ અધર્માસ્તિકાયસ્ય દેશરૂપઃ ૩ અધર્માસ્તિકાયસ્ય પ્રદેશઃ ૪ અદ્વા-કાલસ્તલ્લક્ષણઃ સમયઃ-સળોઽદ્વાસમયઃ સ ચૈક એવ વર્તમાનક્ષણલક્ષણઃ, અતીતાનાગતયોઃ સત્ત્વાભાવાત્ ।

અવયવ અવયવી ભાવ સે વર્જિત જો પુદ્ગલ હૈં વે પરમાણુપુદ્ગલ હૈં । યહ પરમાણુપુદ્ગલ વે હી લિયે ગયે હૈં જો સ્કંધ અવસ્થા કો પ્રાપ્ત નહીં હુએ હૈં (જે અરૂવી તે પંચવિદ્યા પળણ્તા) તથા જો અરૂપી અજીવે હૈં વહ પાંચ પ્રકાર કા કહા ગયા હૈં- (તંજહા) જૈસે (ધર્મ્મત્થિકાણ્, નો ધર્મ્મત્થિકાણ્સ દેસે, ધર્મ્મત્થિકાણ્સ પપ્પસા અધર્મ્મત્થિકાણ્, નો અધર્મ્મત્થિકાણ્સદેસે, અધર્મ્મત્થિકાણ્સ પપ્પસા, અદ્વાસમય) ધર્માસ્તિકાય ૧ ધર્માસ્તિકાયે કે પ્રદેશ ૨ અધર્માસ્તિકાય ૩ અધર્માસ્તિકાયે કે પ્રદેશ ૪ ઓર અદ્વાસમય ૫ યહાં પર ધર્માસ્તિકાય કા દેશ ઓર અધર્માસ્તિકાય કા દેશ નહીં માના ગયા હૈં । એસે ક્યોં નહીં માના ગયા હૈં સો ઇસ વિષય મેં સ્પષ્ટીકરણ ઇસ પ્રકાર સે હૈં- જીવ ઓર પુદ્ગલ અનેક હૈં, ઇસ લિયે એક જીવ જિતને સ્થાન મેં સમાતા હૈં અથવા એક પુદ્ગલ જિતને સ્થાન કો રોકતા હૈં ઉતને સ્થાન મેં સંકોચ વિસ્તાર ગુણ સે યુક્ત હોને કે કારણ અનેક જીવ ઓર પુદ્ગલ સમા સકતે હૈં । ઇસ કારણે જીવ, જીવ-

અને અવયવી લાવથી રહિત જે પુદ્ગલ છે, તેને પરમાણુ પુદ્ગલ કહે છે અહીં પરમાણુ પુદ્ગલ તેમને જ કહ્યા છે કે જેઓએ સ્કંધ અવસ્થા પ્રાપ્ત કરી નથી.

(જે અરૂવી તે પંચવિદ્યા પળણ્તા) અરૂપી જીવનો નીચે પ્રમાણે પાંચ પ્રકાર કહ્યા છે (ધર્મ્મત્થિકાણ્, નો ધર્મ્મત્થિકાણ્સ દેસે, ધર્મ્મત્થિકાણ્સ પપ્પસા) અધર્મ્મત્થિકાણ્, નો અધર્મ્મત્થિકાણ્સ દેસે, અધર્મ્મત્થિકાણ્સ પપ્પસા અદ્વાસમયે) (૧) ધર્માસ્તિકાય, (૨) ધર્માસ્તિકાયના પ્રદેશ (૩) અધર્માસ્તિકાય (૪) અધર્માસ્તિકાય પ્રદેશ અને (૫) અદ્વાસમય (કાળ) અહીં ધર્માસ્તિકાયનો દેશ અને અધર્માસ્તિકાયનો દેશ અલગ કરવાનો નથી. અહીં ધર્માસ્તિકાયના અને અધર્માસ્તિકાયના દેશને શા માટે અરૂપી અજીવના પ્રકાર ગણવામાં આવ્યા નથી તેનું સ્પષ્ટીકરણ નીચે પ્રમાણે છે- જીવ અને પુદ્ગલ અનેક છે તેથી એક જીવ જેટલા સ્થાનમાં સમાય છે અથવા એક પુદ્ગલ જેટલી જગ્યા રોકે છે, જેટલી જગ્યામાં સંકોચ વિસ્તાર ગુણથી યુક્ત

મદ્રસા 'ત જહા' તદ્ યયા 'સ્વીય અસ્વીય' રુપિણ્યારુપિણ્ય રુપિણ્ય
મૂર્ત્યાઃ પુદ્ગલાઃ અરુપિણોઽમૂર્ત્યાઃ ધર્માસ્તિકાપાદયાઃ, 'જે રૂપી તે ચતુર્વિદા પ
ળગા' એ રુપિણઃ પુદ્ગલાસ્તે ચતુર્વિદાઃ મદ્રસાઃ 'ત જહા' તદ્ યયા 'ત્વા
સ્વંપદેસા-સ્વંપપ્પસા પરમાણુ પોગલા' સ્કંધા સ્કંધવેદ્યાઃ સ્કંધમદ્રસાઃ પર
માણુપુદ્ગલાઃ તથા સ્કંધાઃ પરમાણુસમુદાયાત્મકા અવયવિ ન હૃત્યર્થઃ સ્કંધવેદ્યા
ગ્રાદયો વિભાગા સ્કંધમવેદ્યાસ્તસ્યેષ નિરંદ્યા અવયવાઃ પરમાણુપુદ્ગલા અવયવા

અજીય હૈં એ દો પ્રકાર કે હૈં-(તજહા) જૈસે-(સ્વીય અસ્વીય) એકરૂપી
અજીય ઓર દુસરા અરૂપી અજીય, રૂપી શબ્દ કા અર્થ-જિમમેં વર્ણ, ગંધ,
રસ ઓર સ્પર્શ એ પાપે જાતે હૈં એસા મૂર્તિક પદાર્થ ઓર જિસમેં એ ચાર ગુણ
નહીં પાપે જાપે એસા અમૂર્તિક પદાર્થ અરૂપી કહા ગયા હૈં। મૂલ મેં અજીય
કે ધર્માસ્તિકાય, અધર્માસ્તિકાય, આકાશાસ્તિકાય, પુદ્ગલાસ્તિકાય ઓર
કાલ એસે પાંચ મેદ હૈં। इनमें पुद्गलास्तिकाय को छोड़कर बाकी चार
अस्तिकाय अरूपी हैं और पुद्गलास्तिकाय रूपी है। (જે રૂપી તે ચતુર્વિદા
પળગસા) રૂપી પુદ્ગલાસ્તિકાય ચાર પ્રકાર કા રહ્યા ગયા હૈં (તજહા)
જૈસે (સ્વંધા, સ્વંધવેદ્યા, સ્વંધપ્પસા, પરમાણુપોગલા) સ્કંધ, સ્કંધવેદ્યા,
સ્કંધમવેદ્યા ઓર પરમાણુપુદ્ગલ, તથા પરમાણુ સમુદાયાત્મક જો અવયવી
હૈં એ સ્કંધ હૈં, સ્કંધ કે દો ત્રીન આદિ અષ્ટવૃત્તમૂર્ત્યા જો વિભાગ હૈં એ
સ્કંધવેદ્યા હૈં' સ્કંધવેદ્યા કે જો નિરંદ્યા વિભાગ હૈં એ સ્કંધમવેદ્યા હૈં। तथा

એ અછત છે તે બે પ્રકારના છે (તજહા) જેમ કે (સ્વીય અસ્વીય)
(૧) રૂપી અછત અને (૨) અરૂપી અછત. જેમાં રૂપ રસ, ગંધ સ્પર્શ
હોય છે જેવા મૂર્તિક પ્રાર્થને 'રૂપી' કહે છે, અને જેમાં એ ચાર ગુણ
હોતા નથી જેવા અમૂર્તિક પદાર્થને "અરૂપી" કહે છે અછતના મૂળ
પાંચ હોય છે ૧, ધર્માસ્તિકાય, ૨, અધર્માસ્તિકાય, ૩, આકાશાસ્તિકાય ૪
પુદ્ગલાસ્તિકાય અને ૫, કાળ તેમાંના પુદ્ગલાસ્તિકાય સિવાયના ચાર અસ્તિકાય
અરૂપી છે પણ પુદ્ગલાસ્તિકાય રૂપી છે (જે રૂપી તે ચતુર્વિદા પળગસા ?)
રૂપી પુદ્ગલાસ્તિકાયના ચાર પ્રકાર નીચે પ્રમાણે છે (ત્વા, સ્વંપદેસા, સ્વંપપ્પસા
પરમાણુપોગલા) (૧) સ્કંધ, (૨) સ્કંધવેદ્યા, (૩) સ્કંધમવેદ્યા અને (૪) પર
માણુ પુદ્ગલપરમાણુના સમુદાય રૂપ એ અવયવી છે તેને સ્કંધ કહે છે સ્કંધના
બે ત્રણ આદિ અષ્ટવૃત્તમૂર્ત્યા જે વિભાગો છે તેમને સ્કંધવેદ્યા કહે છે સ્કંધવેદ્યાના
એ નિરંદ્યા (અવિભાજ્ય) વિભાગ છે તેમને સ્કંધમવેદ્યા કહે છે તથા અવયવ

वयविभाववर्जिताः परमाणवः एवेति, 'जे अरूवी ते पंचविहा पणत्ता' से
अरूपिणस्ते पञ्चविधाः प्रज्ञप्ताः 'तं जहा-धम्मत्थिकाए' इत्यादि. 'तं जहा धम्मत्थि-
काए' तद् यथा धर्मास्तिकायः। धर्मास्तिकायः नास्ति धर्मास्तिकायस्य देशरूपः १
धर्मास्तिकायस्य प्रदेशाः २ अधर्मास्तिकायः अधर्मास्तिकायोऽपि नास्ति अधर्मास्ति-
कायस्य देशरूपः ३ अधर्मास्तिकायस्य प्रदेशाः ४ अद्वा-कालस्तलक्षणः समयः-
सणोऽद्वासमयः स चैक एव वर्तमानक्षणलक्षणः, अतीतानागतयोः सत्त्वाभावात्॥

अवयव अवयवी भाव से वर्जित जो पुद्गल हैं वे परमाणुपुद्गल हैं। यहां
परमाणुपुद्गल वे ही लिये गये हैं जो स्कंध अवस्था को प्राप्त नहीं हुए हैं।
(जे अरूवी ते पंचविहा पणत्ता) तथा जो अरूपी अजीव है वह पांच
प्रकार का कहा गया है—(तंजहा) जैसे (धम्मत्थिकाए, नो धम्मत्थि-
कायस्स देसे, धम्मत्थिकायस्स पएसा अधम्मत्थिकाए, नो अधम्मत्थि-
कायस्स देसे, अधम्मत्थिकायस्स पएसा, अद्वासमए) धर्मास्तिकाय १
धर्मास्तिकाय के प्रदेश २ अधर्मास्तिकाय ३ अधर्मास्तिकाय के प्रदेश ४
और अद्वासमय ५ यहां पर धर्मास्तिकाय का देश और अधर्मास्तिका-
य का देश नहीं माना गया है। ऐसे क्यों नहीं माना गया है सो इस
विषय में स्पष्टीकरण इस प्रकार से है—जीव और पुद्गल अनेक हैं, इस-
लिये एक जीव जितने स्थान में समाता है अथवा एक पुद्गल जितने स्था-
न को रोकता है उतने स्थान में संकोच विस्तार गुण से युक्त होने के
कारण अनेक जीव और पुद्गल समा सकते हैं। इस कारण जीव, जीव-

अने अवयवी भावથી रहित જે पुद्गल છે, તેને પરમાણુ પુદ્ગલ કહે છે અહી
પરમાણુ પુદ્ગલ તેમને જ કહ્યા છે કે જેઓએ સ્કંધ અવસ્થા પ્રાપ્ત કરી નથી.

(જે અરૂવી તે પંચવિહા પણત્તા) અરૂપી જીવનાં નીચે પ્રમાણે પાંચ પ્રકાર
કહ્યા છે (ધમ્મત્થિકાએ, નો ધમ્મત્થિકાયસ્સ દેસે, ધમ્મત્થિકાયસ્સ પપસા) અધમ્મત્થિકાએ,
નો અધમ્મત્થિકાયસ્સ દેસે, અધમ્મત્થિકાયસ્સ પપસા અદ્વાસમયે) (૧) ધર્માસ્તિકાય, (૨)
ધર્માસ્તિકાયના પ્રદેશ (૩) અધર્માસ્તિકાય (૪) અધર્માસ્તિકાય પ્રદેશ અને (૫) અ-
દ્વાસમય (કાળ) અહીં ધર્માસ્તિકાયના દેશ અને અધર્માસ્તિકાયના દેશ અહણુ કર-
વાનો નથી. અહીં ધર્માસ્તિકાયના અને અધર્માસ્તિકાયના દેશને શા માટે અરૂપી
અજીવના પ્રકાર ગણવામા આવ્યા નથી તેનું સ્પષ્ટીકરણ નીચે પ્રમાણે છે—જીવ
અને પુદ્ગલ અनेક છે તેથી એક જીવ જેટલા સ્થાનમાં સમાય છે અથવા એક
પુદ્ગલ જેટલી જગ્યા રોકે છે, એટલી જગ્યામા સકોચ વિસ્તાર ગુણથી યુક્ત

અમ્ર જીવાનાં પુદ્ગલાનાશ્વાડનેકસ્વાદેકસ્ય જીવસ્ય ચા એકસ્ય પુદ્ગલસ્ય ચા સ્થાને સંકોચાદિકારણમ્માદનેકે જીવાઃ પુદ્ગલામ્ જીવપદ્ધતાઃ પુદ્ગલદેશાઃ જીવપદેશાઃ પુદ્ગલપદેશામ્ તથા રુપિદ્રવ્યાપેતયા અજીવાદનાઽજીવપદેશાઃ પુદ્ગલપદેશાઃ સ્વેચ્છરૂપેણ મહુવચનં સગતમેવ એકસ્મિન્નપ્યપિકરણે મેદ્યતો વસ્તુમયસ્ય સક્રાવાદ ધર્માસ્તિકાયાદૌ તુ દ્વિતયમેવ યુક્તમ્ યતો યથા સંપૂર્ણમેવ વસ્તુ ચિત્સ્યતે તદા ધર્માસ્તિકાયાદિ દ્રસ્યુપ્યતે તસ્ય વસ્તુનોઽશ્વમાપસ્ય વિવસાર્યા તુ તત્ત્વપદેશા ઇતિ તેષા મવસ્થિતરૂપત્વાત્ તદીયપદેશકરુપના તુ ન યુક્તા તેષામનવસ્થિતરૂપત્વાત્ ઇતિ ।

દેશ, જીવપદેશા ઓર પુદ્ગલ, પુદ્ગલદેશા એવ પુદ્ગલપદેશા એસા કથન થન જાતા હૈ । તાત્પર્ય કહને કા યહ હૈ કિ પુદ્ગલ ઓર જીવ કે પ્રદેશોં મેં સંકોચ ઓર વિસ્તાર હોને કી પ્રદીપચત્ ઝાલ્કિ હૈ સ્વભાવ હૈ । અતઃ એક પુદ્ગલ તથા એક જીવ જિતને સ્થાન મેં રહતા હૈ વતને હી સ્થાન મેં અનેક જીવ ઓર અનેકપુદ્ગલ મી રહ સકતે હૈ । ઇસલિયે અનેક જીવ ઓર અનેક પુદ્ગલ હો સકતે હૈ ઓર ઇસ કારણ એસા મહુવચનવાલા કથન સગત થન જાતા હૈ કિ અનેક જીવ, અનેકપુદ્ગલ, અનેક જીવપદેશ, અનેક પુદ્ગલદેશ, અનેક જીવપદેશા ઓર અનેક પુદ્ગલપદેશા । તથા રુપીદ્રવ્ય કી અપેક્ષા સે મી એસા મહુવચનવાલા કથન સગત થન જાતા હૈ અનેક અજીવ, અનેક અજીવપદેશ, અનેક અજીવપદેશા । કયોં કિ એક હી અધિકરણ (સ્થાન) મેં મેદ્યવાન્ વસ્તુમય કા સક્રાવ રહ સકતા હૈ । ધર્માસ્તિકાયાદિ મેં તો ઇસ પ્રકાર સે ઇતીન મેદ્ય સમધિત ન હોકર

હોવાને કારણે અનેક એવ અને અનેક પુદ્ગલને અભાવેશ થઈ શકે છે તે કારણે એવ, એવપદેશ, એવપ્રદેશ અને પુદ્ગલ, પુદ્ગલદેશ અને પુદ્ગલપ્રદેશના વિવરમાં એવુ કથન થઈ શકે છે કહેવાતુ તાત્પર્ય" જો છે કે પુદ્ગલ અને એવના પ્રદેશમાં સંકોચ અને વિસ્તાર પ્રાપ્તવાની શક્તિ (સ્વભાવ) છે તેથી એક પુદ્ગલ તથા એક એવ એટલા સ્થાનમાં રહી શકે છે એટલા જ સ્થાનમાં અનેક એવ અને અનેક પુદ્ગલ પણ રહી શકે છે તેથી અનેક એવ અને અનેક પુદ્ગલ હોઈ શકે છે અને તે કારણે અનેક એવ, અનેક પુદ્ગલ, અનેક એવપદેશ, અનેક પુદ્ગલપદેશ, અનેક એવપ્રદેશ અને અનેક પુદ્ગલપ્રદેશ એવુ બહુવચનવાળુ કથન જાત બની જાય છે તથા રૂપીદ્રવ્યની અપેક્ષાએ પણ "અનેક અએવ, અનેક અએવપદેશ, અનેક અએવપ્રદેશ" એવુ બહુવચનવાળુ કથન સગત બની જાય છે તેનું કારણ જો છે કે એકજ અધિકરણ (સ્થાન)માં એકવાળી ત્રણે વસ્તુનો સદ્ભાવ રહી શકે છે ધર્માસ્તિકાયાદિમાં તો આ પ્રકારના ત્રણ લોક સંજલિત નથી, ખજ ઉપર

યદ્યપિ અનવસ્થિતરૂપત્વં જીવાદિદેશાનામપિ અસ્તિ તથાપિ તેષાં જીવાદિદેશાનામેક-
સ્મિન્નધિકરણે ભેદેન સંભવઃ પ્રરૂપણાકારણમ્ અત્ર તુ તન્નાસ્તિ ધર્માસ્તિકાયાદેરે-
કત્વાત્ સદ્ભોચાદિધર્મત્વાભાવાચ્ચ અતएव ધર્માસ્તિકાયાદિદેશનિષેધાર્થમાહ-
' નો ધર્મસ્તિકાયાસ્સ દેસે તથા નો અધર્મસ્તિકાયાસ્સ દેસે ઇતિ । ' ધર્માસ્તિકા-

જો પૂર્વોક્તરૂપ સે દો ભેદ હી સંભવિત હોતે હૈં ઉસકા કારણ યહ હૈ
કિ જવ ધર્માસ્તિકાયાદિરૂપ સંપૂર્ણ હી વસ્તુ વિવક્ષિત હોતી હૈ તમી
ધર્માસ્તિકાયા આદિ એસા કહા જાતા હૈ ઓર જવ ધર્માસ્તિકાયાદિ કે
અંશમાત્ર કી વિવક્ષા હોતી હૈ, તવ ધર્માસ્તિકાયાદિ કે પ્રદેશ એસા
કહા જાતા હૈ કારણ કિ વે પ્રદેશ અવસ્થિત રૂપ વાલે હોતે હૈં ।
ધર્માસ્તિકાયાદિકે દેશોં કી કલ્પના ઇસલિયે યુક્તિયુક્ત નહીં હૈ, કિ
વેં ઉનકે દેશ અનવસ્થિત રૂપ વાલે હોતે હૈં । યદ્યપિ જીવાદિદ્રવ્યોં કે
દેશ મી અનવસ્થિતરૂપવાલે હોતે હૈં, તથાપિ ઉન જીવાદિદેશોં કા એક
હી અધિકરણ મેં ભિન્ન ૨ રૂપ સે રહના સંભવ હોતા હૈ ઇસલિયે ઉનકી
ભિન્ન ૨ રૂપ સે પ્રરૂપણા કી ગઈ હૈ । ધર્માસ્તિકાયાદિક મેં તો એસી ઘાત
હૈં નહીં કારણ કિ વે એક દ્રવ્ય હૈ । ભેદ વિના કે હૈં । દૂસરે ઉનમેં
સંકોચ આદિ હોને રૂપ ધર્મ નહીં હૈ । ઇસી કારણ ધર્માસ્તિકાયાદિકોં
કે દેશોં કો નિષેધ કરને કે લિયે (નો ધર્મસ્તિકાયાસ્સ દેસે, નો અધ-
ર્મસ્તિકાયાસ્સ દેસે) એસા કહા હૈ । ધર્માસ્તિકાયા આદિ કે દેશોં કે

કહ્યા મુજબના એ ભેદ જ સંભવિત છે. તેનું કારણ એ છે કે બ્યારે ધર્મા-
સ્તિકાયાદિ રૂપ સંપૂર્ણ વસ્તુની વાત કરવામાં આવતી હોય ત્યારે જ તેને માટે
ધર્માસ્તિકાયા આદિ શબ્દનો પ્રયોગ થાય છે. પણ બ્યારે ધર્માસ્તિકાયા આદિના
અંશ માત્રની જ વાત થતી હોય, ત્યારે તેમને ધર્માસ્તિકાયા આદિના પ્રદેશ
કહેવામાં આવે છે, કારણ કે તે પ્રદેશો અવસ્થિત રૂપવાળા હોય છે. ધર્મા-
સ્તિકાયાદિકોના દેશોની કલ્પના સુસંગત લાગતી નથી, કારણ કે એમના તે
દેશો અનવસ્થિતરૂપવાળા હોય છે જો કે જીવાદિક દ્રવ્યોના દેશો પણ અનવ-
સ્થિતરૂપવાળા હોય છે, તો પણ તે જીવાદિ દેશોનું એક જ સ્થાને લિપ્ત લિપ્ત
રૂપે રહેવાનું સંભવિત હોય છે, તેથી તેમની લિપ્ત લિપ્ત રૂપે પ્રરૂપણા કર-
વામાં આવી છે. ધર્માસ્તિકાયા આદિ દ્રવ્યમાં તો એવી વાત જ શક્ય નથી,
કારણ કે એકદ્રવ્યરૂપ છે-ભેદ વિનાના છે. વળી તેમનામાં સંકુચન આદિ ધર્મ
(સ્વભાવ) હોતા નથી તે કારણે જ ધર્માસ્તિકાયા આદિકોમાં દેશોનો નિષેધ
કરવા માટે નો ધર્મસ્તિકાયાસ્સ અધર્મસ્તિકાયાસ્સ દેસે) એવું કહે

अप्र जीवानां पुद्गलानां आत्मानेकत्वादेवस्य जीवस्य वा एकस्य पुद्गलस्य वा स्थाने संकोचादिकारणव्यादनेके जीवाः पुद्गलाश्च जीवदेशाः पुद्गलदेशा जीवप्रदेशाः पुद्गलप्रदेशाश्च तथा रूपिन्द्रियापेक्षया अजीवाश्चाऽजीवदेशाश्चाऽजीवप्रदेशाश्च तेषां रूपेण बहुवचन संगतमेव एकस्मिन्मध्यधिकरणे भेदवतो वस्तुत्रयस्य सद्भावात् पर्याप्तिकायादौ तु द्वितयमेव युक्तम्यतो यदा सपूर्णमेव वस्तु विवक्ष्यते तदा पर्याप्तिकायादि इत्युच्यते तस्य वस्तुनोऽद्यमात्रस्य विवक्षायां तु सत्प्रदेश इति तेषां भवस्थितरूपत्वात् तदीयदेशकल्पना तु न युक्ता तेषामनवस्थितरूपत्वात् इति ।

देश, जीवप्रदेश और पुद्गल, पुद्गलदेश एवं पुद्गलप्रदेश ऐसा कथन बन जाता है । तात्पर्य कहने का यह है कि पुद्गल और जीव के प्रदेशों में संकोच और विस्तार होने की प्रदीपवत् शक्ति है स्वभाव है । अतः एक पुद्गल तथा एक जीव जितने स्थान में रहता है वतने ही स्थान में अनेक जीव और अनेकपुद्गल भी रह सकते हैं । इसलिये अनेक जीव और अनेक पुद्गल हो सकते हैं और इस कारण ऐसा बहुवचनवाला कथन संगत बन जाता है कि अनेक जीव, अनेकपुद्गल, अनेक जीवदेश, अनेक पुद्गलदेश, अनेक जीवप्रदेश और अनेक पुद्गलप्रदेश । तथा रूपीन्द्रिय की अपेक्षा से भी ऐसा बहुवचनवाला कथन संगत बन जाता है अनेक अजीव, अनेक अजीवदेश, अनेक अजीवप्रदेश । क्योंकि एक ही अधिकरण (स्थान) में भेदवान् वस्तुत्रय का सद्भाव रह सकता है । पर्याप्तिकाय आदि में तो इस प्रकार से इतिन भेद संभवित न होकर

होवाने कारणे अनेक एव अने अनेक पुद्गलानां सभावश्च यत् शक्यं ते कारणे एव, एवदेश, एवप्रदेश अने पुद्गल, पुद्गलदेश अने पुद्गलप्रदेशानां विषयमां ज्ञेय कथन यत् शक्यं ते कहेवानुं तात्पर्यं ज्ञेयं ते पुद्गल अने एवानां प्रदेशमां सभाव अने विस्तार प्राप्तवानी शक्ति (स्वभाव) । तेभी जेक पुद्गल तथा जेक एव जेटला स्थानमां रही शक्यं ते जेटला व स्थानमां अनेक एव अने अनेक पुद्गल पण रही शक्यं ते तेभी अनेक एव अने अनेक पुद्गल देख शक्यं ते अने ते कारणे अनेक एव, अनेक पुद्गल, अनेक एवदेश, अनेक पुद्गलदेश, अनेक एवप्रदेश अने अनेक पुद्गलप्रदेश ज्ञेय बहुवचनवाला कथन संगत नानी नाव ते तथा इपी द्रव्यानी अपेक्षाको पण "अनेक अव्यव, अनेक अव्यवदेश, अनेक अव्यवप्रदेश" ज्ञेय बहुवचनवाला कथन संगत नानी नाव ते तेनुं कारण ज्ञेय ते जेक व अधिकरण (स्थान)मां होइवाणी त्रये वस्तुनो सद्भाव रही शक्यं ते पर्याप्तिकाय आदिमां तो ना भवतना त्रय होइ संभवित नही, पण उपर

પૃથ્વીયા લોકસ્થિતિઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ 'તં જહા' તદ્વથા—' આગાસપદ્મિદિવાદ ' આકાશ-
પ્રતિષ્ઠિતો વાતઃ—આકાશે પ્રતિષ્ઠા સ્થિતિર્વિદ્યતે યસ્યાસૌ આકાશપ્રતિષ્ઠિત આકા-
શાધિકરણકો વાયુસ્તત્તુવાતઘનવાતરૂપઃ, તસ્યાવકાશાન્તરોપરિસ્થિતત્વાત્ । નનુ
યથા વાયુરાકાશે પ્રતિષ્ઠિતરતથા આકાશસ્યાપિ કિંચિદધિષ્ઠાનમસ્તિ ન વા?,
અસ્તિ ચેત્તદા તદધિકરણં મૂલકૃતા કુતો ન દર્શિતમ્, નાસ્તિ ઇતિ ચેત્ તદા

ઉત્તરઇસ પ્રકારસે દિવા કિ હે ગૌતમ ! લોક કી સ્થિતિ આઠ પ્રકારકી કહી
ગઈ હૈ । (તં જહા) વહ આઠ પ્રકાર કી સ્થિતિ ઇસ તરહસે હૈ—(આગાસ-
પદ્મિદિવાદ, વાયુપદ્મિદિવાદ ઉદહી, ઉદહિપદ્મિદિવા પુઢવી, પુઢવિપદ્મિદિવા
તસા થાવરા પાજા, અજીવા જીવપદ્મિદિવા, જીવા કમ્મપદ્મિદિવા, અજીવા
જીવસંગહિવા, જીવા કમ્મસંગહિવા) આકાશપ્રતિષ્ઠિત વાત (૧), વાત-
પ્રતિષ્ઠિત ઉદધિ (૨), ઉદધિપ્રતિષ્ઠિત પૃથિવી (૩), પૃથિવીપ્રતિષ્ઠિત વ્રસ
સ્થાવર પ્રાણ-જીવ (૪), જીવપ્રતિષ્ઠિત અજીવ (૫), કર્મપ્રતિષ્ઠિત જીવ (૬),
જીવસંગૃહીત અજીવ (૭), ઓર કર્મસંગૃહીત જીવ (૮) । આકાશ મેં
જિસકી સ્થિતિ હૈ એસા તત્તુવાતરૂપ ઓર ઘનવાતરૂપ જો વાયુ હૈ વહ આકા-
શપ્રતિષ્ઠિતવાયુ હૈ । યહ વાયુ અવકાશાન્તર કે ડપર સ્થિત રહના હૈ ।

શકા—જિસ પ્રકારસે વાયુ આકાશમેં પ્રતિષ્ઠિત કહા ગયા હૈ ઉસી
પ્રકાર સે આકાશ કો બી કિસી ઓર મેં પ્રતિષ્ઠિત વત્તાના ચાહિયે ।
યદિ ઇસ પર કહા જાય કિ આકાશ કા આધાર ઓર કોઈ નહીં હૈ તો
હમ ઇસ પર યોં કહ સકતે હૈ કિ જિસ પ્રકાર ચિના આધાર કે વાયુકે

લોકની સ્થિતિ આઠ પ્રકારની ઢહી છે (તંજહા) તે આઠ પ્રકાર આ પ્રમાણે છે—
(આગાસપદ્મિદિવાદ, વાયુપદ્મિદિવાદ ઉદહી, ઉદહિવપદ્મિદિવા પુઢવી, પુઢવીપદ્મિદિવા તસા
થાવરા પાણા, અજીવા જીવપદ્મિદિવા, જીવા કમ્મપદ્મિદિવા, અજીવા જીવસંગહિવા, જીવા
કમ્મસંગહિવા) (૧) આકાશપ્રતિષ્ઠિતવાયુ, (૨) વાયુપ્રતિષ્ઠિત ઉદધિ, (૩) ઉદધિ-
પ્રતિષ્ઠિતપૃથ્વી, (૪) પૃથ્વીપ્રતિષ્ઠિત વ્રસ સ્થાવર પ્રાણિઓ, (૫) જીવ પ્રતિષ્ઠિત
અજીવ, (૬) કર્મપ્રતિષ્ઠિત જીવ, (૭) જીવસંગૃહીત અજીવ અને (૮) કર્મ-
સંગૃહીત જીવ

આકાશના આધારે જેની સ્થિતિ છે એવા જે તત્તુવાત અને ઘનવાત તેનું
નામ આકાશપ્રતિષ્ઠિત વાયુ છે. તે વાયુ અવકાશાન્તર ઉપર રહેલ છે.

શંકા—જેવી રીતે વાયુને આકાશના આધારે પ્રતિષ્ઠિત (રહેલો) કહ્યો છે,
એજ પ્રમાણે આકાશને પણ કોઈ બીજા પદાર્થના આધારે પ્રતિષ્ઠિત બતાવવું
જોઈએ. જો તેના બધાબધાં એમ કહેવામાં આવે કે આકાશનો કોઈ આધાર
નથી. તો તેની સામે એ દલીલ કરી શકાય કે જેવી રીતે આધાર વગર

यस्य देशनिषेधे भगवत् मरूपेणैव कारणमिति । 'धम्मस्तिक्कायस्स पएसा' धर्मास्तिक्कायस्य प्रदेशः, सया 'अधम्मस्तिक्काए' अयर्मास्तिक्कायाः 'नो अधम्मस्तिक्कायस्स देसे' नो अधर्मास्तिक्कायस्य देशः, 'अधम्मस्तिक्कायस्स पएसा' अधर्मास्तिक्कायस्य प्रदेशः 'अद्दासमए' अद्दासमय अद्दा कामएतस्वरूपाः समयः सग इति अद्दा समय स च काल एक एव वर्तमानरूपेण अतीतानागतयोरसत्त्वात् एव प्रकारेण

निषेध में भगवान् की प्ररूपणा ही कारण है । इस तरह धर्मास्तिक्काय १, धर्मास्तिक्काय के प्रदेश २, अधर्मास्तिक्काय ३ अधर्मस्तिक्काय के प्रदेश ४ और अद्दासमय ५ अरूपीद्रव्य के ये पांच प्रकार वर्णित किये गये हैं । इनका वर्णन से ही लोकाकाश विषयक ६ छह प्रश्नों का उत्तर हो जाता है । अद्दासमय का तात्पर्य क्षण से है । और यह क्षण वर्तमान समय रूप होता है—और वर्तमान समय एक क्षणरूप होता है । अतीतकाल और अनागतकाल का असम्बन्ध होने से सद्भाव ही नहीं माना गया है । एक क्षण रूप वर्तमानकाल को ही अद्दासमयरूप माना गया है । दूसरी जगह अरूपी द्रव्य प्रकार के कहे हुए हैं—जैसे—आकाशास्तिक्काय, १ आकाशास्तिक्कायदेश २ आकाशास्तिक्कायप्रदेश ३ धर्मास्तिक्काय ४ धर्मास्तिक्कायदेश ५ धर्मास्तिक्कायप्रदेश ६ अधर्मास्तिक्काय ७ अधर्मास्तिक्कायदेश ८ अधर्मास्तिक्कायप्रदेश ९, अद्दासमय १०, ।

धर्मास्तिक्काय उ धर्मास्तिक्काय आदिना देशेना निषेधमा सर्वाननी प्ररूपणा न् कारवृत्तये अ रीते (१) धर्मास्तिक्काय, (२) अधर्मास्तिक्कायना प्रदेश, (३) अधर्मास्तिक्काय, (४) अधर्मास्तिक्कायना प्रदेश (५) अद्दासमय (वर्तमान काल) के प्रमाण अरूपी द्रव्यना पांच प्रकार वर्णित हैं । तेभुं पञ्चन देशाधी लोकाकाश विषयके प्रश्नोना उत्तर भणी जाय छे अद्दासमय अद्दे सेव अने ते क्षण वर्तमान समय रूप कोय छे—अने वर्तमान समय के क्षण रूप कोय छे अद्दासमय अने अधर्मास्तिक्काय अद्दे (अधर्मास्तिक्काय), अद्दासमय, तेभुंने सुद्दासमय न भानवामा आये नथी के क्षण रूप वर्तमान कालके न अद्दासमय रूप आये छे नीए न आये अरूपीने नीये प्रमाणे अद्दा छे—(१) आकाशास्तिक्काय, (२) आकाशास्तिक्काय देश, (३) आकाशास्तिक्काय प्रदेश, (४) धर्मास्तिक्काय, (५) धर्मास्तिक्काय देश, (६) धर्मास्तिक्काय प्रदेश, (७) अधर्मास्तिक्काय, (८) अधर्मास्तिक्काय देश, (९) अधर्मास्तिक्काय प्रदेश, अने (१०) अद्दासमय (वर्तमान काल)

लोकाकाशविषयकप्रश्नषट्कस्याप्युत्तरं कृतमिति । अन्यत्र तु अरूपिणो दश प्रकारा वर्णिताः यथा आकाशास्तिकायः, तद्देशः तत्प्रदेशश्च एवं धर्मास्तिकायाधर्मास्तिकायौ तयोर्देशप्रदेशाः समयश्चेति मिलित्वा दश भवन्ति, इह तु समेदस्याऽऽकाशस्याधिकरणरूप्यरूपितया विवक्षितत्वात् इति आकाशाधेयाः सप्तैव वक्तव्या भवन्ति न च ते सप्तापीह विवक्षिता अविवक्षाकारणस्य अग्रे वक्ष्यमाणत्वात्,

अथ लोकाकाशविषयकप्रश्नषट्कस्यापि उत्तरं कृत्वा अलोकाकाशविषयकं प्रश्नं कुर्वन्नाह—‘अलोगागासे’ इत्यादि. ‘अलोगागासे णं भंते’ अलोकाकाशः खलु

शंका—जब इस प्रकार से अरूपी के दूसरी जगह १० भेद कहे गये हैं तो फिर यहाँ उसके पांच भेद कहने का कारण क्या है ?

उत्तर—यहाँ पर तीन भेद वाले आकाश को आधाररूप से विवक्षित किया गया है इस कारण उसके तीन भेद यहाँ गिने नहीं गये हैं । यहाँ तो जो आधेय हैं उनके ही भेदों का विचार किया गया है । अतः धर्मास्तिकाय अधर्मास्तिकाय और अद्वासमयरूप काल इन आधेय रूप अरूपी तीनों का ही विचार करने में आया है इस विचार में पूर्वोक्त १० दस भेदों में से आकाशास्तिकाय के तीन ३ भेद निकाल देने पर बाकी सात ७ बचे रहते हैं । सो इनमें भी सात भेदों की यहाँ विवक्षा नहीं हुई है इसका कारण आगे प्रकट किया जायगा । जिन भेदों की विवक्षा की गई है उन्हें ही यहाँ प्रकट किया गया है ।

अब अलोकाकाश के विषय में प्रश्न करते हुए गौतम स्वामी प्रभु से पूछते हैं (अलोगागासे णं भंते ! किं जीवा पुच्छा तह चेव) अलोकाकाश में

शंका—जे ज्ञीण ज्ञ्याये अइपीना दस प्रकार कहा छे तो अही शा आटे-तेना पाय लेह कहा छे ? उत्तर—अही त्रणु लेहवाणा आकाशने आधार इप गणुवामा आवेल छे, तेथी तेना त्रणु लेहने गणुतरीमां दीधा नथी. अही तो जे आधेय छे तेमना लेहोना ज विचार करवामा आओ छे. तेथी धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय अने अद्वासमय इप काण ओ आधेय इपअइपी त्रणुओ ज अही विचार करवामा आओ छे. आरीते उपर कहेला १० दस लेहोमाथी आकाशास्तिकायना त्रणु लेहोने काही नाभवथी बाकी सात लेह रहे छे. ते सात लेहने पहले पाय लेहोनु वणुन शा आटे करवामा आओ छे ते आगण भताववामा आओ छे. ओटले के धर्मास्तिकायना देश अने अधर्मास्तिकायना देश अने अधर्मास्तिकायना देशने पणु गणुवामा आओ नथी, बाकीना पांचने ज अइपीना लेह तरीके गणुओ छे

इसे गौतम स्वामी भडावीर प्रभुने अलोकाकाश ने विषे प्रश्न पूछे छे— (अलोगागासे णं भंते ! किं जीवा पुच्छा तह चेव) अलोकाकाशमा एव अने

मवन्त ! ' किं जीवा पुच्छा तह येव तथा चैव यथा लोकाकाशे प्रश्न कुत तथा अलोकाकाशेऽपि प्रश्नो वातव्यस्तथाहि ' अलोगागासे ण भत किं जीवा जीव-
वेसा जीवप्पएसा अजीवा अजीववेसा अजीवप्पएसा " एवं रूपेणालोकाकाशमि-
यक पूर्ववदेव प्रश्नः । एतेषा पण्णाभपि निषेधं कुर्यन्नेव मगधानाह— गोयमा'
इत्यादि ' गोयमा ' हे गौतम ! ' नो जीवा जाव नो अजीवप्पएसा ' नो जीवा
यावत् नो अजीवप्रदेशः हे गौतम ! योऽयमलोकाकाशः स जीवानां तद्वेदानां
तत्प्रदेशानामजीवानां तद्वेदानां तत्प्रदेशानां नास्ति आधार इत्यर्थः अत्र यावत्पदेन
जीवप्रदेशमीवतद्वेदानां सग्रहो भवतीति । यदि अलोकाकाशो न
जीवादीनामाधारभूतस्तदा किं स्वरूपस्तथाह— ' एगे ' इत्यादि । ' एगे अजीव
द्वन्द्वदेस ' एकोऽजीवद्वन्द्वप्रदेशः अलोकाकाशस्य वेद्यत्वं लोकाकाशद्रव्यस्य भाग-

भी जीव और अजीवादि को छेकर पहिले लोकाकाशो की तरह ६ छेद
प्रश्न कर छेना चाहिये—वे इस प्रकार से—(अलोगागासे ण भते ! किं जीवा,
जीववेसा, जीवप्पएसा, अजीवा, अजीववेसा, अजीवप्पएसा, ? हे भव-
न्त ! अलोकाकाश में जीव, जीववेसा, जीवप्रदेश, अजीव, अजीववेसा
और अजीवप्रदेश है क्या ? इसका उत्तर देते हुए प्रश्न गौतम से कह-
ते हैं (गोयमा !) हे गौतम ! (नो जीवा जाव नो अजीवप्पएसा) अ-
लोकाकाश में न जीव के देश है, न जीव के प्रदेश है, न अजीव है,
न अजीव के देश है और न अजीव के प्रदेश भी है । यहाँ (यावत्)
पद से जीववेसा तत् प्रदेश, अजीववेसा और तत् प्रदेश इनका संग्रह
हुया है । प्रश्न—यदि अलोकाकाश जीवादिक द्रव्यों का आधारभूत नहीं
है तो फिर यह किं स्वरूप है—? समाधान—(एगे अजीवद्वन्द्वदेसे) वह
अलोकाकाश एक अजीवद्वन्द्वप्रदेशरूप है । यहाँ जो अलोकाकाश में अ-

अलव आदि ७ के नदी अदी पक्ष लोकाकाशने विरे के ६ ७ प्रश्नो आजम
पूछ्या ७ येव अलोकाकाश विरे पूछ्या वेधजे-ते प्रश्नो आ प्रभावे ७—(अलो-
गागासे ण भते) किं जीवा, जीववेसा, जीवप्पएसा, अजीवा, अजीववेसा, अजीवप्पएसा
हे भवन्त ! अलोकाकाशमां लव, लवदेश, लव प्रदेश, अलव, अलवदेश अलवप्रदेश
हेय ७ के नदी ? (गोयमा) हे गौतम ! (नो जीवा जाव नो अजीव पएसा)
ना अलोकाकाशमां लवप्रदेशो नधी, लवदेश नधी, अलवप्रदेश नधी अलवदेश
नधी अलवप्रदेश नधी अदी (जाव) (पर्यन्त) पाणी लवदेश लवप्रदेश, अलव,
अलवदेश अने अलवप्रदेश प्रदक्षु कश्या ७

प्रश्न.—जे अलोकाकाश लवादिकद्रव्योना आधारभूत न होय तो तेहुं
१०७५ हेतु ७ ।

लोकाकाशविषयकप्रश्नपट्टकस्याप्युत्तरं कृतमिति । अन्यत्र तु अरूपिणो दश प्रकारा वर्णिताः यथा आकाशास्तिकायः, तद्देशः तत्प्रदेशश्च एवं धर्मास्तिकायाधर्मास्तिकायौ तयोर्देशप्रदेशाः समयश्चेति मिलित्वा दश भवन्ति, इह तु समेदस्याऽऽकाशस्याधिकरणरूप्यरूपितया विवक्षितत्वात् इति आकाशाधेयाः सप्तैव वक्तव्या भवन्ति न च ते सप्तापीह विवक्षिता अविवक्षाकारणस्य अग्रे वक्ष्यमाणत्वात्,

अथ लोकाकाशविषयकप्रश्नपट्टकस्यापि उत्तरं कृत्वा अलोकाकाशविषयकं प्रश्नं कुर्वन्नाह—‘अलोगागासे’ इत्यादि. ‘अलोगागासे णं भंते’ अलोकाकाशः खलु

शंका—जब इस प्रकार से अरूपी के दूसरी जगह १० भेद कहे गये हैं तो फिर यहाँ उसके पांच भेद कहने का कारण क्या है ?

उत्तर—यहाँ पर तीन भेद वाले आकाश को आधाररूप से विवक्षित किया गया है इस कारण उसके तीन भेद यहाँ गिने नहीं गये हैं । यहाँ तो जो आधेय हैं उनके ही भेदों का विचार किया गया है । अतः धर्मास्तिकाय अधर्मास्तिकाय और अद्वासमयरूप काल इन आधेय रूप अरूपी तीनों का ही विचार करने में आया है इस विचार में पूर्वोक्त १० दस भेदों में से आकाशास्तिकाय के तीन ३ भेद निकाल देने पर बाकी सात ७ बचे रहते हैं । सो इनमें भी सात भेदों की यहाँ विवक्षा नहीं हुई है इसका कारण आगे प्रकट किया जायगा । जिन भेदों की विवक्षा की गई है उन्हें ही यहाँ प्रकट किया गया है ।

अब अलोकाकाश के विषय में प्रश्न करते हुए गौतम स्वामी प्रभु से पूछते हैं (अलोगागासे णं भंते ! किं जीवा पुच्छा तह चेव) अलोकाकाश में

शंका—जे બીજી જગ્યાએ અરૂપીના દસ પ્રકાર કહ્યા છે તો અહીં-શા માટે-તેના પાંચ ભેદ કહ્યા છે ? ઉત્તર—અહીં ત્રણ ભેદવાળા આકાશને આધાર રૂપ ગણવામાં આવેલ છે, તેથી તેના ત્રણ ભેદને ગણતરીમાં લીધા નથી. અહીં તો જે આધેય છે તેમના ભેદોનો જ વિચાર કરવામાં આવ્યો છે. તેથી ધર્માસ્તિકાય, અધર્માસ્તિકાય અને અદ્વાસમય રૂપ કાળ એ આધેય રૂપઅરૂપી ત્રણેનો જ અહીં વિચાર કરવામાં આવ્યો છે. આ રીતે ઉપર કહેલા ૧૦ દસ ભેદોમાંથી, આકાશાસ્તિકાયના ત્રણ ભેદોને કાઢી નાખવાથી બાકી સાત ભેદ રહે છે. તે સાત ભેદને બદલે પાંચ ભેદોનું વર્ણન શા માટે કરવામાં આવ્યું છે તે આગળ બતાવવામાં આવ્યું છે. એટલે કે ધર્માસ્તિકાયના દેશ અને અધર્માસ્તિકાયના દેશ અને અધર્માસ્તિકાયના દેશને પણ ગણવામાં આવ્યા નથી, બાકીના પાંચને જ અરૂપીના ભેદ તરીકે ગણાવ્યા છે.

હવે ગૌતમ સ્વામી મહાર્જીર પ્રભુને અલોકાકાશ ને વિષે પ્રશ્ન પૂછે છે— (અલોગાગાસે ન મંતે ! કિં જીવા પુચ્છા તહ ચેવ) અલોકાકાશમાં એવ અને

मदन्त ! ' किं जीवा पुच्छा तद् येव तथा चैव यथा लोकाकाशे मदन कुतः तथा
अलोकाकाशेऽपि मन्नो ज्ञातव्यस्तथादि ' अलोकागासे ण भते किं जीवा जीव-
वेसा जीवप्पएसा अजीवा अजीववेसा अजीवप्पएसा " एव रूपेणालोकाकाशवि-
यसं पूर्ववदेव मन्न । एतथां पण्णामपि निषेधं कुर्वन्नेव मगधानाह— गोयमा'
इत्यादि ' गोयमा ' हे गौतम ! ' नो जीवा जाव नो अजीवप्पएसा ' नो जीवा
यावत् नो अजीवप्रदेशा हे गौतम ! योऽयमलोकाकाश स जीवानां तद्देशानां
तत्प्रदेशानामजीवानां तद्देशानां तत्प्रदेशानां नास्ति आधार इत्यर्थः अत्र यावत्प्रदे-
न जीवदेशप्रदेशाजीवतद्देशतत्प्रदेशानां समग्रो भवतीति । यदि अलोकाकाशो न
जीवादीनामाधारभूतस्तदा किं स्वरूपस्तथाह—'एगे' इत्यादि । ' एगे अजीव
दब्बदसे ' एकोऽजीवद्रूपवेसा अलोकाकाशस्य देशत्वं लोकाकाशद्रूपस्य माग-

मी जीव और अजीवादि को लेकर पहिले लोकाकाशो की तरह ६ छह
प्रश्न कर लेना चाहिये—वे इस प्रकार से—(अलोकागासे ण भते ! किं जीवा,
जीववेसा, जीवप्पएसा, अजीवा, अजीववेसा, अजीवप्पएसा, ? हे मद-
न्त ! अलोकाकाश में जीव, जीवदेश, जीवप्रदेश, अजीव, अजीवदेश
और अजीवप्रदेश है क्या ? इसका उत्तर दते हुए प्रश्न गौतम से कह-
ते हैं (गोयमा !) हे गौतम ! (नो जीवा जाव नो अजीवप्पएसा) अ-
लोकाकाश में न जीव के देश है, न जीव के प्रदेश है, न अजीव है,
न अजीव के देश है और न अजीव के प्रदेश भी है । यहाँ (यावत्)
पद से जीवदेश तत् प्रदेश, अजीवदेश और तत् प्रदेश इनका संग्रह
हुया है । प्रश्न—यदि अलोकाकाश जीवादिक द्रव्यों का आधारभूत नहीं
है तो फिर वह किं स्वरूप है—? समा धाम—(एगे अजीवदब्बदसे) वह
अलोकाकाश एक अजीवद्रूपप्रदेशरूप है । यहाँ जो अलोकाकाश में अ-

अलं न आदि ॥ ३ नदी नदी पक्ष दोआकाशने विषे के ६ छ प्रश्नो आनन
पूछ्या छ जेअ अलोकाकाश विषे पूछ्या जेअजे ते प्रश्नो आ प्रमाछे छ—(अलो-
गागासे ण भते ! किं जीवा, जीववेसा, जीवप्पएसा, अजीवा, अजीववेसा, अजीवप्पएसा
हे मदन्त ! अलोकाकाशमा एव, एवदेश, एव प्रदेश, अलं न, अलं नदेश अलं नप्रदेश
हेम छ ३ नदी ? (गोयमा) हे गौतम ! (नो जीवा जाव नो अजीव पएसा)
ना, अलोकाकाशमा एवप्रदेश नथी, एवदेश नथी, अलं नप्रदेश नथी अलं नदेश
नथी अलं नप्रदेश नथी अली (जाव) (पर्यन्त) पक्षी एवदेश एवप्रदेश, अलं न,
अलं नदेश अने अलं नप्रदेश शक्य कथावा छ

प्रश्न.—जे अलोकाकाश एवादिद्रव्येना आपावृत्त न होय तो तेउ
१०३५ हेतु छ ।

રૂપત્વાત્ કથિતમ્ 'અગુરુલહુષ્' અગુરુલઘુકઃ નોગુરુર્નવા લઘુરલોકાકાશ इत्यर्थः
તથા 'અણંતેહિં અગુરુલહુયગુણેહિં સંજુત્તે' અનન્તૈરગુરુલઘુકગુણૈઃ સંયુક્તઃ અનન્તૈઃ
સ્વપર્યાયપરપર્યાયૈર્ગુણૈરગુરુલઘુસ્વભાવૈઃ સંયુક્ત इत्यर्थः 'સન્વાગાસે અણંતભાગૂણે'

જીવદ્રવ્ય કો દેશત્વ કહા ગયા હૈ વહ લોકાલોકરૂપ અકોશદ્રવ્ય કા
ભાગરૂપ હોને સે કહા ગયા હૈ યહ અલોકાકાશ ન ગુરુ હૈ, ન લઘુ હૈ,
અતઃઅગુરુલઘુરૂપ હૈ । (અણંતેહિં અગુરુલહુયગુણેહિં સંજુત્તે) અનન્ત અગુ-
રુલઘુસ્વભાવવાલે ગુણો સે યહ યુક્ત હૈ । અર્થાત્- અગુરુલઘુ સ્વભાવવાલે
સ્વપર્યાયરૂપ એવં પરપર્યાયરૂપ ગુણો સે યહ સહિત હૈ । તાત્પર્ય કહને
કા યહ હૈ કિ પરિણમન સે શૂન્ય કોઈ ભી વસ્તુ નહીં હૈ । આકાશ-
અલોકાકાશ ભી વસ્તુરૂપ હૈ અતઃ ઉસમેં ભી પરિણમન હોતા હૈ । ઓર
યહ પરિણમન ન લઘુ હોતા હૈ ઓર ન ગુરુ હી હોતા હૈ । ઇસ પરિણમન
કા નામ હી સ્વપર્યાય પરપર્યાય હૈ । પરપર્યાય કા તાત્પર્ય પર કે નિમિ-
ત્ત સે જો પરિણમન હોતા હૈ વહ હૈ । યદ્યપિ અલોકાકાશ મેં આકાશ
કે સિવાય ઓર કોઈ દ્રવ્ય નહીં હૈ-પર ફિર ભી વહાં જો પરપર્યાયરૂપ
પરિણમન હોતા રહતા હૈ વહ લોકાકાશ કે સંબંધ કો લેકર હી માના
ગયા હૈ । તાત્પર્ય કહને કા યહ હૈ કિ આકાશ એક અખંડ સમૂચા દ્રવ્ય
હૈ ઉસમેં જિતને ભાગ મેં ધર્માદિક દ્રવ્ય રહતે હૈં ઉતને ભાગ કો લોકા-

ઉત્તર—(एते अजीवद्रव्येदेसे) ते अलोककाश એક અજીવ દ્રવ્યદેશરૂપ છે.
અહીં જે અલોકાકાશમાં અજીવદ્રવ્યનું દેશત્વ કહેલું છે તે લોકાલોકરૂપ આકા-
શદ્રવ્યના ભાગરૂપ હોવાથી કહેલ છે. તે અલોકાકાશ શુરુ નથી, લઘુ નથી, પણ
અગુરુલઘુરૂપ છે. (અણંતે હિં અગુરુલહુયગુણેહિં સંજુત્તે) તે અનન્ત અગુરુલઘુ
સ્વભાવવાળા ગુણોથી યુક્ત છે. એટલે કે અગુરુલઘુ સ્વભાવવાળા સ્વપર્યાયરૂપ
અને પરપર્યાયરૂપ ગુણોથી તે યુક્ત છે કહેવાનો ભાવાર્થ એ છે કે પરિણુમન
વિનાની કોઈપણ વસ્તુ હોતી નથી આકાશ અને અલોકાકાશ પણ વસ્તુરૂપ છે.
તેથી તેમનામાં પણ પરિણુમન હોય છે તે પરિણુમન લઘુ પણ હોતું નથી અને
શુરુ પણ હોતું નથી તે પરિણુમનનું નામ જ સ્વપર્યાય પરપર્યાય છે પરને
નિમિત્તે જે પરિણુમન થાય છે તેને પરપર્યાય કહે છે જે કે અલોકાકાશમાં
આકાશ સિવાય બીજું કોઈ દ્રવ્ય હોતું નથી, તો પણ ત્યાં જે પરપર્યાયરૂપ
પરિણુમન થતું રહે છે તે લોકાકાશના સંબંધને લીધેજ થાય છે એમ માનવામાં
આવ્યું છે. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે આકાશ એક અખંડ દ્રવ્ય છે--તેના
બેટલા ભાગમાં ધર્માદિક દ્રવ્ય રહે છે એટલા ભાગને લોકાકાશ કહે છે

સર્વાકાશોઽનન્તમાગોર્નિ અલોકાકાશ, અલોકાકાશાપેક્ષયા લોકાકાશસ્યાન્તે
માગરૂપત્વાત્ ॥ ૬૦૪ ॥

॥ ધર્માસ્તિકાયાદીનાં પ્રમાણસ્પર્શનયોર્વિષાયઃ ।

અથ અનન્તરમકરણે ઉક્તાન્ ધર્માસ્તિકાયાદીન્ પ્રમાણતો નિરૂપણ
'ધર્મસ્તિકાપણં મતે' इत्यादि ॥

મૂલમ્—ધર્મસ્તિકાપણ મતે? કે મહાલપ્ પણનંતે ગોચમા !
લોપ્ લોયમેત્તે લોયપ્પમાણે લોયફુઢે લોય વૈવ ફુસિસાણ

કાશ કહ દિવા ગયો હૈ મૌર જિતને મેં યે નહીં રહતે ઉતને કો અલોકાકાશ
કહા ગયા હૈ । તો જિસ પ્રકાર પદ અગ્વંહ ઘાંસ કે ઊંઢ કો હિલાને પર
પૂરા ઘાંસ હિલ જાયા કરતા હૈ ઉસી પ્રકાર લોકાકાશ મેં જો પરપદ-
યોં કો હેકર પરિણમન હોતા હૈ—વહ પૂરે આકાશમાત્ર મેં હોતા હૈ ।
નહીં તો ફિર અલોકાકાશ મેં કાલદ્રવ્ય તો હૈ નહીં—વહાં ફિર સ્વપર્યા-
યરૂપ સદૃશ પરિણમન મી જો કિ પ્રત્યેક ક્ષણ ૨ મેં હોતા રહના હૈ કેસે
માના જોયગા । પરિણમનમાત્ર કાલદ્રવ્ય કે નિમિત્ત સે હોતા હૈ સ્વતઃ
નહીં હોના । ઇસ તરહ અલોકાકાશ સ્વપરપર્યાયરૂપ અનન્તગુણોં સે જો
કિ અગુરુલઘુસ્વભાવવાળે હોતે હૈ યુક્ત હૈ । (સમ્બાગાસે અર્જવમાણે)
પદ અલોકાકાશ સર્વાકાશ મેં અનન્ત માગન્યૂન હૈ, કયોં કિ અલોકા-
કાશ કો અપેક્ષા લોકાકાશ અનન્તમાગરૂપ માના ગયા હૈ અતઃ અલો-
કાકાશ ઉતને માગ સે ન્યૂન કહા ગયા હૈ સુ॥ ૪ ॥

॥ આકાશનિરૂપણ સમાપ્તિ ॥

અને બેટલા ભાગમાં તે રહેતું નથી તેટલા ભાગને અલોકાકાશ કહે છે.
તો બેવી રીતે એક અખંડ વાંસના ઊંઢને હલાવવાથી આખો વાંસ હલ્યા
કરે છે, એજ પ્રમાણે પરપદ્યથી કાશ્વે લોકાકાશમાં જે પરિણમન થાય છે
તે અખંડ (પૂરે પૂરા) આકાશમાં થાય છે અલોકાકાશમાં કાલદ્રવ્ય તો છે
જ નહીં—તો ત્યાં પ્રત્યેક ક્ષણે કેવા કરતાં સ્વપર્યાયરૂપ સદૃશ (સમાન) પરિ-
ણમન કેવી રીતે સંભવી શકે ? હરેક પરિણમન કાલદ્રવ્યને કાશ્વે થતું હોય
છે, સ્વતઃ. (સ્વતઃ જ) થતું નથી. આ રીતે અલોકાકાશ અગુરુલઘુ સ્વભાવથીજા ।
સ્વપર્યાય અને પરપર્યાયરૂપ અનંત શુદ્ધોથી યુક્ત છે (સમ્બાગાસે અર્જવમાણે)
તે અલોકાકાશ સર્વાકાશમાં અનંત ભાગ મૂળ છે કશ્વ કે અલોકાકાશ કરતાં
લોકાકાશ અનંત ભાગરૂપ માનવામાં આવતું છે, તેથી અલોકાકાશને બેટલા ભાગ
પ્રમાણ ન્યૂન કહેલ છે

॥ આકાશ નિરૂપણ સમાપ્ત ॥

રૂપત્વાત્ કથિતમ્ 'અગુરુલહુષ્' અગુરુલઘુકઃ નોગુરુર્નવા લઘુરલોકાકાશ इत्यर्थः
તથા 'અણંતેહિં અગુરુલહુયગુણેહિં સંજુતે' અનન્તૈરગુરુલઘુકગુણૈઃ સંયુક્તઃ અનન્તૈઃ
સ્વપર્યાયપરપર્યાયૈર્ગુણૈરગુરુલઘુસ્વભાવૈઃ સંયુક્ત इत्यर्थः 'સવ્વાગાસે અણંતભાગૂણે'

જીવદ્રવ્ય કો દેશત્વ કહા ગયા હૈ વહ લોકાલોકરૂપ અકોશદ્રવ્ય કા
ભાગરૂપ હોને સે કહા ગયા હૈ યહ અલોકાકાશ ન ગુરુ હૈ, ન લઘુ હૈ,
અતઃઅગુરુલઘુરૂપ હૈ । (અણંતેહિં અગુરુલહુયગુણેહિં સંજુતે) અનંત અગુ-
રુલઘુસ્વભાવવાલે ગુણો સે યહ યુક્ત હૈ । અર્થાત્- અગુરુલઘુ સ્વભાવવાલે
સ્વપર્યાયરૂપ એવં પરપર્યાયરૂપ ગુણો સે યહ સહિત હૈ । તાત્પર્ય કહને
કા યહ હૈ કિ પરિણમન સે શૂન્ય કોઈ મી વસ્તુ નહીં હૈ । આકાશ-
અલોકાકાશ મી વસ્તુરૂપ હૈ અતઃ ઉસમેં મી પરિણમન હોતા હૈ । ઓર
યહ પરિણમન ન લઘુ હોતા હૈ ઓર ન ગુરુ હી હોતા હૈ । હસ પરિણમન
કા નામ હી સ્વપર્યાય પરપર્યાય હૈ । પરપર્યાય કા તાત્પર્ય પર કે નિમ્નિ-
સ સે જો પરિણમન હોતા હૈ વહ હૈ । યદ્યપિ અલોકાકાશ મેં આકાશ
કે સિવાય ઓર કોઈ દ્રવ્ય નહીં હૈ-પર ફિર મી વહાં જો પરપર્યાયરૂપ
પરિણમન હોતા રહતા હૈ વહ લોકાકાશ કે સંબંધ કો લેકર હી માના
ગયા હૈ । તાત્પર્ય કહને કા યહ હૈ કિ આકાશ એક અખંડ સમૂચા દ્રવ્ય
હૈ ઉસમેં જિતને ભાગ મેં ધર્માદિક દ્રવ્ય રહતે હૈં ઉતને ભાગ કો લોકા-

ઉત્તર—(એ અજીવદ્રવ્યદેસે) તે અલોકાકાશ એક અણુવ દ્રવ્યદેશરૂપ છે.
અહીં જે અલોકાકાશમાં અણુવદ્રવ્યનું દેશત્વ કહેલું છે તે લોકાલોકરૂપ આકા-
શદ્રવ્યના ભાગરૂપ હોવાથી કહેલ છે. તે અલોકાકાશ ગુરુ નથી, લઘુ નથી, પણ
અગુરુલઘુરૂપ છે. (અણંતે હિં અગુરુલહુયગુણેહિં સંજુતે) તે અનંત અગુરુલઘુ
સ્વભાવવાળા ગુણોથી યુક્ત છે. એટલે કે અગુરુલઘુ સ્વભાવવાળા સ્વપર્યાયરૂપ
અને પરપર્યાયરૂપ ગુણોથી તે યુક્ત છે. કહેવાનો ભાવાર્થ એ છે કે પરિણમન
વિનાની કોઈપણ વસ્તુ હોતી નથી આકાશ અને અલોકાકાશ પણ વસ્તુરૂપ છે.
તેથી તેમનામાં પણ પરિણમન હોય છે તે પરિણમન લઘુ પણ હોતું નથી અને
ગુરુ પણ હોતું નથી તે પરિણમનનું નામ જ સ્વપર્યાય પરપર્યાય છે પરને
નિમિત્તે જે પરિણમન થાય છે તેને પરપર્યાય કહે છે જે કે અલોકાકાશમાં
આકાશ સિવાય બીજું કોઈ દ્રવ્ય હોતું નથી, તે પણ ત્યાં જે પરપર્યાયરૂપ
પરિણમન થતું રહે છે તે લોકાકાશના સંબંધને લીધે જ થાય છે એમ માનવામાં
આવ્યું છે. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે આકાશ એક અખંડ દ્રવ્ય છે--તેના
એટલા ભાગમાં ધર્માદિક દ્રવ્ય રહે છે એટલા ભાગને લોકાકાશ કહે છે

સર્વાકાશિઽનન્તમાર્ગાનં ચઞ્છોકાકાશઃ, અઞ્છોકાકાશાપસયા ચોકાકાશસ્વાનને
માગમ્યન્વાન્ ॥ ૬૦૪ ॥

॥ ધર્માસ્તિકાયાદીનો પ્રમાણસ્પર્શનયોર્વિચાર ।

અથ અનન્તરપદ્ધતિ ઉક્તાન્ ધર્માસ્તિકાયાદીન્ પ્રમાણતો નિરૂપયન્ના
' ધર્મન્યિકાપણં મતે ' ઇત્યાદિ ॥

ચૂલ્ક-ધર્મસ્થિતિકાણેન ભતે? કે મહાલપ્ પળણસે ગોયમા !
લોપ્ લોયમેત્તે લોયપ્પમાણે લોયફુદે લોય ચેવ ફુસિસાણ

કાશ કહ દિવા ગયા હે ઓર જિતને મેં વે નહીં રહતે ઉતને કો અલોકાકાશ
કહા ગયા હે । તો જિસ પ્રકાર યક અર્થક થાસિ કે હોહ કો હિલાને પર
પૂર્ણ થાસિ દિહ જાયા કરતા હે ઉસી પ્રકાર લોકાકાશ મેં જો પરપદ્ધ-
તિ કો ઉકર પરિણમન હોના હે-બહ પૂરે આકાશમાત્ર મેં હોના હે ।
નહીં તો ફિર અલોકાકાશ મેં કાલદ્રવ્ય તો હે નહીં-વહાં ફિર સ્વરૂપા
યસ્થ મહત્ત પરિણમન ચી જો કિ પ્રત્યેક ક્ષણ ૨ મેં હોના રહના હે કેસે
માના જોયગા । પરિણમનમાત્ર કાલદ્રવ્ય કે નિમિત્ત સે હોતા હે સ્વતઃ
નહીં હોના । ઇસ તરહ અલોકાકાશ સ્વપરપચાયરૂપ અનન્તગુણો સે જો
કિ અગુણ્યુમ્પમાચવાકે હોતે હે પુરુષ હે । (મધ્વાગાતે અર્ણવમાર્ગે)
ઘહ અલોકાકાશ સર્વાકાશ મેં અનન્ત માગમ્યુન હે, કયોં કિ અલોકા
કાશ કો અપેક્ષા લોકાકાશ અનન્તમાગરૂપ માના ગયા હે અન્ના અલો
કાકાશ ઉતને માગ સે ન્યૂન કહા ગયા હે ૬૦૪ ॥ ૪ ॥

॥ આકાશનિરૂપણ સમાપ્ત ॥

અને જેટલા આત્મા તે રહેતું નથી તેટલા આત્માને આલોકાકાશ કહે છે.
તેા જેવી રીતે એક અખંડ વાસના ઊભાને દલાવવાથી આત્મા વાસ દલા
કરે છે, એજ પ્રમાણે પરપદ્ધતિને કારણે લોકાકાશમાં જે પરિવ્રમન થાય છે
તે અખંડ (પૂરે પૂર્ણ) આકાશમાં થાય છે અલોકાકાશમાં કાલદ્રવ્ય તેા છે
જ નહીં-તેા ત્યાં પ્રત્યેક ક્ષણે થતા સ્વપર્યાયરૂપ મહત્ત (સમાન) પરિ
વ્રમન જેવી રીતે સતતી થાયે । દરેક પરિવ્રમન કાલદ્રવ્યને કારણે થતું હોય
છે, સ્વતઃ (બહે જ) થતું નથી. આ રીતે અલોકાકાશ અચુલકલ્પ સ્વભાવવામાં ।
સ્વપર્યાય અને પરપર્યાયરૂપ અનન્ત શુદ્ધોથી મુક્ત છે (સમ્વાગાતે અર્ણવમાર્ગે)
તે અલોકાકાશ સર્વાકાશમાં અનન્ત આત્મા ન્યૂન છે, કારણ કે અલોકાકાશ કરતાં
લોકાકાશ અનન્ત આત્મરૂપ માનવામાં આવ્યું છે, તેથી અલોકાકાશને જેટલા આત્મા
પ્રમાણ ન્યૂન કહેલ છે

॥ આકાશ નિરૂપણ સમાપ્ત ॥

चिट्ठइ एवमहमत्थिकाए लोयागासे जीवत्थिकाए पोग्गलत्थि-
 काए पंचविण्णाभिलावा अहो लोएण भंते धम्मत्थिकायस्स
 केवइयं फुसति? गोयमा! सातिरेगं अद्धं फुसइ, तिरियलोएणं
 भंते! पुच्छा? गोयमा! असंखेज्जइ भागं फुसइ उट्ठेलोएणं भंते!
 पुच्छा? गोयमा! देसूणं अद्धं फुसइ, इमाणं भंते! रयणप्पभा
 पुढवी धम्मत्थिकायस्स किं संखेज्जभागं फुसइ, असंखेज्जभागं
 फुसइ, संखेज्जे भागे फुसइ, असंखेज्जे भागे फुसइ,
 सव्वं फुसइ? गोयमा! णो संखेज्जभागं फुसइ. असंखेज्ज-
 भागं फुसइ, णो संखेज्जे भागे णो असंखेज्जे भागे फुसइ, नो
 सव्वं फुसइ। इमीसे णं भंते! रयणप्पभाए पुढवीए घणोदही
 धम्मत्थिकायस्स पुच्छा किं संखेज्जइभागं फुसइ? जहा रयण-
 प्पभा तहा घणोदही घणवाय-तणुवाया वि। इमीसे णं भंते?
 रयणप्पभाए पुढवीए उवासंतरे धम्मत्थिकायस्स किं संखेज्जइ-
 भागं फुसइ. असंखेज्जइ भागं फुसइ जाव सव्वं फुसइ? गोयमा!
 संखेज्जइभागं फुसइ णो असंखेज्जइ भागं फुसइ. णो संखेज्जे
 णो असंखेज्जे णो सव्वं फुसइ उवासंतराईं सव्वाईं. जहा रय-
 णप्पभाए पुढवीए वत्तव्वया भाणिया एवं जाव अहे सत्तमाए
 जंबूदीवाइया दीवा, लवणसमुदाइया समुदा, एवं सोहम्ममे
 कप्पे जाव इसी पब्भारा पुढवी फुसइ ते सव्वे वि असंखेज्जइभागं
 फुसंति सेसा पडिसेहियव्वा. एवं अधम्मत्थिकाए एवं लोया-
 गासे वि, गाहा-पुढवोदहीघणतणू, कप्पा गेवेज्जणुत्तरा सिद्धी
 संखेज्जइ भागं अंतरेसु सेसा असंखेज्जा ॥ सू० ५ ॥

॥ वितियं सयं समत्तं ॥

અનધિકરણસ્ય વાયોર્યયા ન સંમતસ્તથાડનધિકરણસ્યાકાશસ્યાપિ કૃતઃ સમતઃ !
 इति चेदाह—वस्तुस्वभावस्य वैचित्र्येण अधिकरणमन्तरेणापि आकाशस्य प्रतिष्ठितस्व-
 संमवात्, नहि एकस्य पदार्थस्य यादृक् स्वरूप, सर्वस्यापि पदार्थस्य तादृगेव स्वरूप
 स्यादिति नियम । अन्यथा वस्तुवैचित्र्यमेव न स्यात् । यथा भवति किंचिद्वस्तु
 चक्षुषा ग्राह्य किंचिद्वसनया ग्राह्यम्, तत्र न कश्चिदपि भवति प्रश्न, यत् रसो न
 कथं चक्षुर्ग्राह्य, रूपं वा कथं न रसनया गृह्यते, तत्कस्मादेतो ? वस्तुस्वभावस्य

હોને કી સમઘના નહીં ઠસી પ્રકારસે યિના આધારકે આકાશ કા મી
 સઝાવ કૈસે હો સકતા હૈ । યદિ કહા જાય કિ આકાશકા મી અન્ય
 અધિષ્ઠાન આધાર હૈ તો ફિર ડસે યહાં સુઝકાર ને કપોં નહીં દિસલાપા ?
 ડસે અઘદ્ય દિસાના ઝાહિયે યા ।

ઉત્તર—યહ તો વસ્તુકે સ્વભાવ કી વિચિત્રતા હૈ જો આકાશરૂપ
 વસ્તુ યિના દૂસર આધાર કે મી પ્રતિષ્ઠિત રહતી હૈ । યેસા તો કોઈ
 નિયમ નહીં હૈ કિ ઇક પદાર્થકા જેમા સ્વભાવ હો દૂસરે પદાર્થકા મી
 વૈસા હી સ્વભાવ હોના ઝાહિયે । યદિ યેસા હી હોને લગે તો ફિર વસ્તુમો
 મેં જો વૈચિત્ર્ય પાયા જાતા હૈ વહ નહીં પાયા જા સકેગા । યહ વસ્તુ
 સ્વભાવકી હી તો વિચિત્રતા હૈ વૈસે કોઈ વસ્તુ રસના ઇન્દ્રિયસે ગ્રાહ્ય હોતી
 હૈ ઓર કોઈ વસ્તુ ચક્ષુઇન્દ્રિય સે ગ્રહણ કરને મેં આતી હૈ । યદિ યેસા
 ન હોતા તો ફિર રસ ચક્ષુઇન્દ્રિય સે ગ્રાહ્ય હો જાતા ઓર રૂપ રસના
 ઇન્દ્રિય સે ગ્રાહ્ય હો જાતા । જો નહીં હોતા હૈ તો હસકા કારણ વસ્તુ
 સ્વભાવ કી વિચિત્રતા હી તો હૈ । તો જિસ પ્રકારસે યહાં પર વસ્તુસ્વભાવ

વાયુનુ અસ્તિત્વ સબવી શકતુ નથી. તેવી રીતે આધાર વિના આકાશનુ અસ્તિત્વ
 પણ સબવી શકતુ નથી ? તેના જવાબમા જો જોમ કહેા કે આકાશને
 આધાર પણ કોઈ અન્ય પદાર્થ છે, તો સૂચકારે અહી શા માટે તેના ઉલ્લેખ
 કર્યો નથી ? અથવા તો તેના ઉલ્લેખ અવશ્ય થવો જોઈતો હતો

ઉત્તર—આકાશરૂપ વસ્તુ બીજી કોઈ પણ વસ્તુના આધાર વગર પણ રહી
 શકે છે, જોતો વસ્તુના સ્વભાવની વિચિત્રતા દર્શાવે છે જોવો કોઈ નિયમ નથી
 કે જોક પદાર્થનો જોવો સ્વભાવ હોય તેવો જ સ્વભાવ બીજા પદાર્થનો પણ
 હોવો જોઈએ. જો જોવું જ જનતું હોય તો જુદી જુદી વસ્તુઓમાં જે જુદી જુદી
 વિચિત્રતા જોવા મળે છે તે વિચિત્રતા સબવત જ નથી. વસ્તુ સ્વભાવની જ
 જો વિચિત્રતા છે કે કોઈ વસ્તુ જુદા ઇન્દ્રિય વડે ગ્રાહ્ય હોય છે તો કોઈ
 વસ્તુ અનુદ્રિય વડે ગ્રાહ્ય હોય છે જો જોવું જનતું ન હોય તો ખાટામીઠા
 રસને અનુદ્રિય વડે ગ્રહણ કરી શકાત અને રૂપને જુદા ઇન્દ્રિય વડે જાણી
 શકાત પણ જોવું જનતું નથી. તેજ કારણ વસ્તુસ્વભાવની વિચિત્રતા જ છે

चिद्वृद्ध एवमहमत्थिकाए लोयागासे जीवत्थिकाए पोगगलत्थि-
 काए पंचविएक्काभिलावा अहो लोएण भंते धम्मत्थिकायस्स
 केवइयं फुसति? गोयमा! सातिरेगं अद्धं फुसइ, तिरियिलोएणं
 भंते! पुच्छा? गोयमा! असंखेज्जइ भागं फुसइ उड्डेलोएणं भंते!
 पुच्छा? गोयमा! देसूणं अद्धं फुसइ, इमाणं भंते! रयणप्पभा
 पुढवी धम्मत्थिकायस्स किं संखेज्जभागं फुसइ, असंखेज्जभागं
 फुसइ, संखेज्जे भागे फुसइ, असंखेज्जे भागे फुसइ,
 सव्वं फुसइ? गोयमा! णो संखेज्जभागं फुसइ. असंखेज्ज-
 भागं फुसइ, णो संखेज्जे भागे णो असंखेज्जे भागे फुसइ, नो
 सव्वं फुसइ। इमीसे णं भंते! रयणप्पभाए पुढवीए घणोदही
 धम्मत्थिकायस्स पुच्छा किं संखेज्जइभागं फुसइ? जहा रयण-
 प्पभा तहा घणोदही घणवाय-तणुवाया वि। इमीसे णं भंते?
 रयणप्पभाए पुढवीए उवासंतरे धम्मत्थिकायस्स किं संखेज्जइ-
 भागं फुसइ. असंखेज्जइ भागं फुसइ जाव सव्वं फुसइ? गोयमा!
 संखेज्जइभागं फुसइ णो असंखेज्जइ भागं फुसइ. णो संखेज्जे
 णो असंखेज्जे णो सव्वं फुसइ उवासंतराइं सव्वाइं. जहा रय-
 णप्पभाए पुढवीए वत्तवया भाणिया एवं जाव अहे सत्तमाए
 जंबूदीवाइया दीवा, लवणसमुदाइया समुदा, एवं सोहम्ममे
 कप्पे जाव इसी पब्भारा पुढवी फुसइ ते सव्वे वि असंखेज्जइभागं
 फुसंति सेसा पडिसेहियव्वा. एवं अधम्मत्थिकाए एवं लोया-
 गासे वि, गाहा-पुढवोदहीघणतणू, कप्पा गेवेज्जणुत्तरा सिद्धी
 संखेज्जइ भागं अंतरेसु सेसा असंखेज्जा ॥ सू० ५ ॥

॥ वितियं सयं समत्तं ॥

ઝાયા-ધર્માસ્તિકાયાઃ સ્વસ્તુ મદન્ત ! કિયાન્મહાલયઃ પ્રશ્ન ? ગૌતમ ! લોકો
 લોકમાત્રઃ લોકપ્રમાણલોકોસ્પૃષ્ટો લોકં ચૈવ સ્પૃષ્ટ્વા સ્વસ્તુ તિષ્ઠતિ એવમથ
 ધર્માસ્તિકાયો લોકોલોકો લોકોલોકાયાઃ પુણ્ડરાસ્તિકાયા પશ્ચાડપિ પશ્ચામિલાયાઃ
 અપોલોકઃ સ્વસ્તુ મદન્ત ! ધર્માસ્તિકાયાસ્ય કિયતં સ્પૃષ્ઠતિ ? ગૌતમ ! સાતિરેકમર્થ

ધર્માસ્તિકાયાદિક કે પ્રમાણ કા ઓર સ્પર્શના કા વિચાર—

અનન્તર પ્રકરણ મેં કથિત ધર્માદિક દ્રવ્યોં કા કથન પ્રમાણ કી
 અપેક્ષા સે અય સુત્રકાર કહતે હેં—(ધર્મસ્તિકાયા નં મતે !) હત્યાદિ !

સુત્રાર્થ — (ધર્મસ્તિકાયા નં મતે ! કે મહાલય પળ્લસે) હે મદ
 ન્ત ! ધર્માસ્તિકાયા કિતના યદા કહા ગયા હે ? (ગોયમા) હે ગૌતમ !
 (લોપ, લોપમેસે, લોપપમાણે લોપફુલે, લોપ ચેવ કુસિસાણં ચિદુહ)
 ચહ ધર્માસ્તિકાયા લોકરૂપ હે, લોકમાત્ર હે, લોકપ્રમાણ હે, લોક સ્પૃષ્ટ હે
 ઓર લોકલોકો સ્પર્શ કરકે રહા હુઆ હે ! (એવમહમત્તિકાયા લોપાગાસે
 લોકોલોકાયા પોગાલત્તિકાયા પેચ ચિ પશ્ચામિલાયા) હસી તરહ અધર્મા
 સ્તિકાયા, લોકાકાશ, લોકોલોકાયા, પુણ્ડરાસ્તિકાયા કે વિષય મેં જી
 જાનના જાહિયે ! હન પાંચોં કા એક હી જૈસા અભિલાપ હે (અહો લોપ
 નં મતે ! ધર્મસ્તિકાયાસ્સ કેવહય કુસતિ) હે મદન્ત ! અપોલોક
 ધર્માસ્તિકાયા કે કિતને ભાગ કા સ્પર્શ કરતા હે ? (ગોયમા) હે ગૌતમ !
 (સાતિરેગં મદં કુસદ) અપોલોક ધર્માસ્તિકાયા કે કુલ અધિક ભાગે

ધર્માસ્તિકાયા જાહિના પ્રમાણ અને સ્પર્શનાનું નિરૂપણ—

પૂર્વ પ્રકરણમાં જે ધર્માદિક દ્રવ્યોની વાત કરવામાં આવી છે, તેમના
 પ્રમાણનું આ પ્રકરણમાં સુત્રકારે નિરૂપણ કર્યું છે—(ધર્મસ્તિકાયા નં મતે !) હત્યાદિ
 સુત્રાર્થ—(ધર્મસ્તિકાયા નં મતે ! કે મહાલય પળ્લસે ?) હે મદન્ત !

ધર્માસ્તિકાયા કેટલું શાકુ લોક છે ? (ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (લોપ, લોપમેસે,
 લોપપમાણે, લોપફુલે, લોપ ચેવ કુસિસાણં ચિદુહ) તે ધર્માસ્તિકાયા લોકરૂપ છે,
 લોકમાત્ર છે, લોકપ્રમાણ છે, લોકસ્પૃષ્ટ છે, અને લોકને સ્પર્શને રહેતું છે (એ
 મહમત્તિકાયા લોપાગાસે લોકોલોકાયા પોગાલત્તિકાયા પેચ ચિ પશ્ચામિલાયા) એજ
 પ્રમાણે અધર્માસ્તિકાયા, લોકાકાશ, લોકોલોકાયા અને પુણ્ડરાસ્તિકાયાના વિવર્તમાં
 પણ વ્યવસ્થા (કથન) સમજાવું જોતો કે પાંચિનું વધુન સરથુ જ સમજાવું
 (અહોલોપ નં મતે ! ધર્મસ્તિકાયાસ્સ કેવહય કુસતિ !) હે મદન્ત ! અપોલોક
 ધર્માસ્તિકાયાના કેટલા ભાગને સ્પર્શ કરે છે ? (ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (સાતિ
 રેગં મદં કુસદ) અપોલોક ધર્માસ્તિકાયાના અર્થ કરતાં વધારે ભાગને સ્પર્શ

સ્પૃશતિ તિર્યગ્લોકઃ खलु भदन्त ! पृच्छा ? गौतम ! असंख्येयभागं स्पृशति । ऊर्ध्वलोकः खलु भदन्त ! पृच्छा ? गौतम ! देशोनमर्धं स्पृशति इयं खलु भदन्त ! रत्नप्रभा पृथिवी धर्मास्तिकायस्य किं संख्येयभागं स्पृशति असंख्येयभागं स्पृशति संख्येयान् भागान् स्पृशति असंख्येयान् भागान् स्पृशति सर्वं स्पृशति ? गौतम ! नो संख्येयभागं

भाग का स्पर्श करता है । (तिरियलोए णं भंते ! पुच्छा) हे भदन्त ! तिर्यग् लोक धर्मास्तिकाय के कितने भाग का स्पर्श करता है ? (गोयमा ! असंखेज्जइभाग फुसइ) हे गौतम ! तिर्यग् लोक धर्मास्तिकाय के असंख्यातवें भाग का स्पर्श करता है । (उड्डे लोए णं भंते ! पुच्छा) हे भदन्त ! उर्ध्वलो न धर्मास्तिकाय के कितने भाग का स्पर्श करता है ? (गोयमा) हे गौतम ! उर्ध्वलोक धर्मास्तिकाय के (देखूणं अद्धं फुसइ) कुछ कम आधे भाग का स्पर्श करता है । (इमा णं भंते ! रयणप्पभा पुढवी धम्मत्थिकायस्स किं संखेज्जइभागं फुसइ, असंखेज्जइभागं फुसइ, संखेज्जे भागे फुसइ, असंखेज्जे भागे फुसइ, सव्वं फुसइ) हे भदन्त ! यह जो रत्नप्रभा नामकी पृथिवी है वह धर्मास्तिकाय के संख्यातवें भाग का स्पर्श करती है, कि असंख्यातवें भाग का स्पर्श करती है ? अथवा उसके संख्यातभागों का स्पर्श करती है या असंख्यातभागों का स्पर्श करती है ? अथवा कि समस्त पूरे का स्पर्श करती है ? (गोयमा !) हे गौतम ! (णो संखेज्जाइभागं फुसइ

કરે છે. (તિરિયલોએ ણં ભંતે ! પુચ્છા) હે ભદન્ત ! ઊર્ધ્વલોક ધર્માસ્તિકાયના કેટલા ભાગનો સ્પર્શ કરે છે ? (ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (અસંખેજ્જઇભાગં ફુસઇ) તિર્યગ્લોક ધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યાતમાં ભાગને સ્પર્શે છે. (ઉડ્ડેલોએ ણં ભંતે ! પુચ્છા) હે ભદન્ત ! ઉર્ધ્વલોક ધર્માસ્તિકાયના કેટલા ભાગનો સ્પર્શ કરે છે ? (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (દેસૂણં અદ્ધં ફુસઇ) ઉર્ધ્વલોક તેના અર્ધ કરતાં ઓછા ભાગનો સ્પર્શ કરે છે (ઇમાણ ભંતે ! રયણપ્પમાપુઢવી ધમ્મત્થિકાયસ્સ કિં સંખેજ્જઇભાગં ફુસઇ, અસંખેજ્જઇભાગં ફુસઇ, સંખજ્જે ભાગે ફુસઇ, અસંખજ્જે ભાગે ફુસઇ, સવ્વં ફુસઇ ?) હે ભદન્ત ! રત્નપ્રભા પૃથ્વી ધર્માસ્તિકાયના સંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે, કે અસંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે, કે તેના સંખ્યાત ભાગોનો સ્પર્શ કરે છે, તેના અસંખ્યાત ભાગોનો સ્પર્શ કરે છે, કે સમસ્ત ભાગનો સ્પર્શ કરે છે ? (ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (ણો સંખેજ્જઇ ભાગં ફુસઇ,

છાયા-ધર્માસ્તિકાયાઃ સ્વસ્તુ મદન્ત ! વિયાન્મહાલય પ્રશ્નઃ ? ગૌતમ ! લોકઃ
લોકમાત્રઃ લોકપ્રમાણઃ લોકસ્પૃષ્ટો લોકં ચૈવ સ્પૃષ્ટ્વા સ્વસ્તુ તિષ્ઠતિ એવમ
ધર્માસ્તિકાયો લંબાલાલો જીવાસ્તિકાય પુરુષાસ્તિકાયઃ પચ્ચાડપિ એકામિલાપાઃ
અપોલોક સ્વસ્તુ મદન્ત ! ધર્માસ્તિકાયાસ્ય વિચરંતં સ્પૃષ્ઠતિ ? ગૌતમ ! સાતિરેકમપૈ

ધર્માસ્તિકાયાદિક કે પ્રમાણ કા ઔર સ્પર્શના કા વિષય—

અનન્તર પ્રકરણ મેં કથિત ધર્માદિક દ્રવ્યોં કા કથન પ્રમાણ કી
અપેક્ષા સે અષ સૂત્રકાર કહતે હૈં—(ધમ્મત્થિકાપ ણ મંતે !) इत्यादि।

સૂત્રાર્થ — (ધમ્મત્થિકાપ ણ મંતે ! કે મહાસપ્પ પણ્ણસે) હે મદ
ન્ત ! ધર્માસ્તિકાય કિતના પદ્ધા કહા ગયા હૈં ? (ગોયમા) હે ગૌતમ !
(છોણ, છોયમેસે, છોયપ્પમાણે છોયફુદે, છોયં ચેવ પુમિસાણ ચિદ્દહ)
બહુ ધર્માસ્તિકાય લોકરૂપ હૈં, લોકમાત્ર હૈં, લોકપ્રમાણ હૈં, લોક સ્પૃષ્ટ હૈં
ઔર લોકકો સ્પર્શ કરકે રહા કુમા હૈં । (એવમહમત્થિકાપ છોયાગાસે
જીવત્થિકાપ પોગલત્થિકાપ પંચ વિ એકામિલાપા) इसी तरह अधर्मा
સ્તિકાય, લોકાકાશ, જીવાસ્તિકાય, પુરુષાસ્તિકાય કે વિષય મેં ત્રી
જાનના ચાહિયે । इन पाँचों का एक ही जैसा अभिलाष है (अहो छोय
णं मंते ! धम्मत्थिकायस्स केवइय पुसंति) हे मदन्त ! अधोलोक
धर्मास्तिकाय के कितने भाग का स्पर्श करता है ? (गोयमा) हे गौतम !
(सातिरेगं अदं पुसइ) अधोलोक धर्मास्तिकाय के कुछ अधिक आधे

ધર્માસ્તિકાયા આદિના પ્રમાણ અને સ્પર્શનાનું નિરૂપણ—

પૂર્વ પ્રકરણમાં જે ધર્માદિક દ્રવ્યોની વાત કરવામાં આવી છે, તેમના
પ્રમાણનું આ પ્રકરણ સૂત્રકારે નિરૂપણ કર્યું છે—(ધમ્મત્થિકાપ ણ મંતે !) इत्यादि
સૂત્રાર્થ—(ધમ્મત્થિકાપ ણ મંતે ! કે મહાસપ્પ પણ્ણસે ?) હે મદન્ત !
ધર્માસ્તિકાય કેટલું આદ્ય લોક છે ? (ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (છોણ, છોયમેસે,
છોયપ્પમાણે, છોયફુદે, છોયં ચેવ પુમિસાણ ચિદ્દહ) તે ધર્માસ્તિકાય લોકરૂપ છે,
લોકમાત્ર છે, લોકપ્રમાણ છે, લોકસ્પૃષ્ટ છે, અને લોકને સ્પર્શને સ્પૃષ્ઠ છે (એ
મહમ્મત્થિકાપ છોયાગાસે જીવત્થિકાપ પોગલત્થિકાપ પંચ વિ એકામિલાપા) એજ
પ્રમાણે અધર્માસ્તિકાય, લોકાકાશ, જીવાસ્તિકાય અને પુરુષાસ્તિકાયના વિષયમાં
પણ પછાત્ય (કથન) સમજવું જોઈશે કે પાંચેનું વર્ણન સરળ જ સમજવું
(અહો છોય ણ મંતે ! ધમ્મત્થિકાયાસ્સ કેવઇય પુસંતિ !) હે મદન્ત ! અપોલોક
ધર્માસ્તિકાયાના કેટલા ભાગનો સ્પર્શ કરે છે ? (ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (સાતિ
રેગ અદ પુસइ) अधोलोक धर्मास्ति कायना अधं कर्ता अधारे भागने स्पर्श

स्पृशति तिर्यग्लोकः खलु भदन्त ! पृच्छा ? गौतम ! असंख्येयभागं स्पृशति । ऊर्ध्वलोकः खलु भदन्त ! पृच्छा ? गौतम ! देशोनमर्धं स्पृशति इयं खलु भदन्त ! रत्नप्रभा पृथिवी धर्मास्तिकायस्य किं संख्येयभागं स्पृशति असंख्येयभागं स्पृशति संख्येयान् भागान् स्पृशति असंख्येयान् भागान् स्पृशति सर्वं स्पृशति ? गौतम ! नो संख्येयभागं

भाग का स्पर्श करता है । (तिरियलोए णं भंते ! पुच्छा) हे भदन्त ! तिर्यग् लोक धर्मास्तिकाय के कितने भाग का स्पर्श करता है ? (गोयमा ! असंखेज्जइभागं फुसइ) हे गौतम ! तिर्यग् लोक धर्मास्तिकाय के असंख्यातवें भाग का स्पर्श करता है । (उड्ढे लोए णं भंते ! पुच्छा) हे भदन्त ! उर्ध्वलोके धर्मास्तिकाय के कितने भाग का स्पर्श करता है ? (गोयमा !) हे गौतम ! उर्ध्वलोक धर्मास्तिकाय के (देसूणं अद्धं फुसइ) कुछ कम आधे भाग का स्पर्श करता है । (इमा णं भंते ! रयणप्पभा पुढवी धम्मत्थिकायस्स किं संखेज्जइभागं फुसइ, असंखेज्जइभागं फुसइ, संखेज्जे भागे फुसइ, असंखेज्जे भागे फुसइ, सर्व्वं फुसइ) हे भदन्त ! यह जो रत्नप्रभा नामकी पृथिवी है वह धर्मास्तिकाय के संख्यातवें भाग का स्पर्श करती है, कि असंख्यातवें भाग का स्पर्श करती है ? अथवा उसके संख्यातभागों का स्पर्श करती है या असंख्यातभागों का स्पर्श करती है ? अथवा कि समस्त पूरे का स्पर्श करती है ? (गोयमा !) हे गौतम ! (णो संखेज्जाइभागं फुसइ

कदे छे (तिरियलोए णं भंते ! पुच्छा) हे भदन्त ! अधोलोक धर्मास्तिकायना केटवा लागेनो स्पर्शं कदे छे ? (गोयमा !) हे गौतम ! (असंखेज्जइभागं फुसइ) तिर्यग्लोक धर्मास्तिकायना असंख्यातमां लागेनो स्पर्शं छे, (उड्ढेलोए णं भंते ! पुच्छा) हे भदन्त ! उर्ध्वलोक धर्मास्तिकायना केटवा लागेनो स्पर्शं कदे छे ? (गोयमा !) हे गौतम ! (देसूणं अद्धं फुसइ) उर्ध्वलोक तेना अर्धं कस्तां ओछा लागेनो स्पर्शं कदे छे (इमाणं भंते ! रयणप्पभापुढवी धम्मत्थिकायस्स किं संखेज्जइभागं फुसइ, असंखेज्जइभागं फुसइ, संखेज्जे भागे फुसइ, असंखेज्जे भागे फुसइ, सर्व्वं फुसइ ?) हे भदन्त ! रत्नप्रभा पृथ्वी धर्मास्तिकायना संख्यातमां लागेनो स्पर्शं कदे छे, के असंख्यातमां लागेनो स्पर्शं कदे छे, के तेना संख्यात भागोना स्पर्शं कदे छे, तेना असंख्यात भागोना स्पर्शं कदे छे, के समस्त भागोना स्पर्शं कदे छे ? (गोयमा !) हे गौतम ! (णो संखेज्जइ भागं फुसइ,

સ્પૃશ્વતિ અસલ્પેયમાર્ગં સ્પૃશ્વતિ નો સરપેયાન્ માગાન્ નો અસલ્પેયાન્ માગાન્
સ્પૃશ્વતિ નો સર્વં સ્પૃશ્વતિ एतस्या* स्वतु मदन्त ! रत्नप्रभाया पृथिव्याः घनोदधिः
धर्मास्तिकापस्य पृच्छा किं सल्लेख्यमागं स्पृशति ? यथा रत्नप्रभा तथा घनोदधि
घनघात तनुवाता अपि । एतस्या म्वल्ल मदन्त ! रत्नप्रभायाः पृथिव्या अत्र
काशान्तर धर्मास्तिकापस्य किं सल्लेख्यमागं स्पृशति यावत् सर्वं स्पृशति ? गौतम !

અસલ્લેખ્યમાર્ગં ફુલહ, ણો સલ્લેખ, ણો અસલ્લેખજ્ઞે નો સલ્લ ફુલહ) यह
रत्नप्रमानाम की पृथिवी धर्मास्तिकाय के संख्यातर्षे भागका स्पर्श नहीं
करती है किन्तु उसके असल्यानर्षे भाग का ही स्पर्श करती है। वह
उसके सम्पातभागों असल्यातभागों का भी स्पर्श नहीं करती है और
न समस्त पूर रूप में ही उसका वह स्पर्श करती है। (इमीसे ण भंते ।
रघणप्पमाए पुड्डीए घणोदही, धम्मत्थिकापस्स पुच्छा किं संलेख्यमागं
फुमह) हे भदन्त ! इस रत्नप्रभा पृथिवी का जो घनोदधि है वह धर्मा
स्तिकाय के किनारे भाग का स्पर्श करता है—क्या वह उसके सख्यानर्षे
भाग का स्पर्श करता है ? (जहा रघणप्पमा तहा घणोदही—घणवाय
तणुवाया वि) हे गौतम ! जिस प्रकार रत्नप्रभापृथिवी धर्मास्तिकाय के
असल्यानर्षे भाग का स्पर्श करती है वसी प्रकार से घनोदधि भी
उसके असल्यानर्षे भाग का ही स्पर्श करता है इसी तरह से घनघात
और तनुघात भी उसका असल्यानर्षे भाग का स्पर्श करते हैं। (इमीसे
ण भंते । रघणप्पमाए पुड्डीए उवासतरे धम्मत्थिकापस्स किं सल्लेख

અસલ્લેખ્યમાર્ગં ફુલહ, ણો સલ્લેખ ના અસલ્લેખજ્ઞે નો સલ્લ ફુલહ) रत्नप्रभा पृथ्वी
धर्मास्तिकायना सख्यातर्षा भागनो स्पर्श करती नहीं, પણ તેના અસલ્પેયાતર્ષા
ભાગનો જ સ્પર્શ કરે છે તે તેના અસલ્પેયાતર્ષા ભાગનો કે અસલ્પેયાતર્ષા ભાગનો
પણ સ્પર્શ કરતી નથી. તે તેના સમસ્ત ભાગનો પણ સ્પર્શ કરતી નથી (इ
मीसे ण भंते । रघणप्पमाए पुड्डीए घणोदही, धम्मत्थिकापस्सपुच्छा किं संलेख्यमा
गं फुमह) हे भान्त ! ते रत्नप्रभा पृथ्वीनो जे घनोदधि છે તે धર્માસ્તિ
કાયના ઠેરલા ભાગનો સ્પર્શ કરે છે ? શું તે તેના અસલ્પેયાતર્ષા ભાગને સ્પર્શ
કરે છે ? (જહા રઘણપ્પમા તહા ઘણાદહી—ઘણવાયતણુવાયા વિ) હે ગૌતમ !
જે પ્રમાણે રત્નપ્રભા પૃથ્વી ધર્માસ્તિકાયાના અસલ્પેયાતર્ષા ભાગનો સ્પર્શ કરે
છે, એજ પ્રમાણે ઘનોદધિ પણ તેના અસલ્પેયાતર્ષા ભાગનો સ્પર્શ કરે છે
એજ પ્રમાણે ઘનઘાત અને તનુઘાત પણ તેના અસલ્પેયાતર્ષા ભાગનો સ્પર્શ
કરે છે (इमीसे ण भंते । रघणप्पमाए पुड्डीए उवासतरे धम्मत्थिकापस्स किं

સંખ્યેયભાગં સ્પૃશતિ નો અસંખ્યેયભાગં સ્પૃશતિ નો સંખ્યેયાન્ ભાગાન્ નો અસંખ્યેયાન્ ભાગાન્ નો સર્વં સ્પૃશતિ અવકાશાન્તરાણિ સર્વાણિ યથા રત્નપ્રભાયાઃ પૃથિવ્યાઃ વક્તવ્યતા મણિતા એવં યાવદધઃ સપ્તમ્યાઃ જંબૂદ્વીપાદિકા દ્વીપાઃ લવ-

હભાગં ફુસહ, અસંખેજ્જહભાગં ફુસહ જાવ સર્વં ફુસહ) હે ભદન્ત ! હસ રત્નપ્રભા પૃથિવી કા અવકાશાન્તર કયા ધર્માસ્તિકાય કે સંખ્યાતર્વે ભાગ કા સ્પર્શ કરતા હૈ યા અસંખ્યાતર્વે ભાગ કા સ્પર્શ કરતા હૈ-યા યાવત્ત્વહ સર્વ પૂરે ધર્માસ્તિકાય કા સ્પર્શ કરતા હૈ ? (ગોચમા !) હે ગૌતમ ! હસ રત્નપ્રભાપૃથિવી કા અવકાશાન્તર (સંખેજ્જહભાગં ફુસહ, ણો અસંખેજ્જહભાગં ફુસહ, ણો સંખેજ્જે ભાગે ફુસહ, ણો અસંખેજ્જેભાગે ણો સર્વં ફુસહ) ધર્માસ્તિકાય કે સંખ્યાતર્વે ભાગ કા સ્પર્શ કરતા હૈ, કિન્તુ અસંખ્યાતર્વે ભાગ કા નહીં ઔર ન ઉસકે સંખ્યાતભાગોંકા સ્પર્શ કરતા હૈ ઔર ન અસંખ્યાતભાગોં કા સ્પર્શ કરતા હૈ તથા ન વહ પૂરે ધર્માસ્તિકાય કા સ્પર્શ કરતા હૈ । (ઉવાસંતરાહં સંઘાહં) હસી તરહ સે અન્ય અવકાશાન્તરોં કે વિષય મેં જાનના ચાહિયે । (જહા રયણપ્પમાણ પુઢવીણ વત્તવ્વયા મણિયા, એવં જાવ અહે સત્તમાણ) રત્નપ્રભાપૃથિવી કે વિષય મેં જૈસી વક્તવ્યતા કહી હૈ ઉસી તરહ કી વક્તવ્યતા યાવત્ત્વહ સપ્તમપૃથિવીતક સમજ્ઞની ચાહિયે । (જંબૂદીવાહયા દીવા, લવણસમુદાહયા

સંખેજ્જહભાગં ફુસહ, અસંખેજ્જહભાગં ફુસહ જાવ સર્વં ફુસહ ?) હે ભદન્ત ! આ રત્નપ્રભાપૃથ્વીનું અવકાશાન્તર શુ ધર્માસ્તિકાયના સંખ્યાતમા ભાગનો સ્પર્શ કરે છે, કે અસંખ્યાતમા ભાગનો સ્પર્શ કરે છે, સંખ્યાત ભાગનો સ્પર્શ કરે છે, કે અસંખ્યાત ભાગનો સ્પર્શ કરે છે, કે સમસ્ત ધર્માસ્તિકાયનો સ્પર્શ કરે છે ! (ગોચમા !) હે ગૌતમ ! આ રત્નપ્રભાપૃથ્વીનું અવકાશાન્તર (સંખેજ્જહ ભાગં ફુસહ, ણો અસંખેજ્જહ ભાગં ફુસહ, ણો સંખેજ્જે ભાગે ફુસહ, ણો અસંખેજ્જે ભાગે, ણો સર્વ ફુસહ) ધર્માસ્તિકાયના સંખ્યાતમા ભાગનો સ્પર્શ કરે છે, તેના અસંખ્યાતમા ભાગનો સ્પર્શ કરતું નથી, તેના સંખ્યાત ભાગોનો સ્પર્શ કરતું નથી, કે તેના અસંખ્યાત ભાગોનો સ્પર્શ કરતું નથી અથવા તે પૂરા ધર્માસ્તિકાયનો પણ સ્પર્શ કરતું નથી (ઉવાસંતરાહં સંઘાહં) એજ પ્રમાણે બીજા અવકાશાન્તરોના વિષયમા પણ સમજવું (જહા રયણપ્પમાણ પુઢવીણ વત્તવ્વયા મણિયા, એવં જાવ અહે સત્તમાણ) રત્નપ્રભા પૃથ્વીના વિષયમાં આહી જે કથન થયું છે તે સાતમી પૃથ્વી મુધીની બધી પૃથ્વીઓને પણ લાગૂ પડે છે. (જંબૂદીવાહયા દીવા, લવણસમુદાહયા સમગ્ર) જંબૂદીપ આદિ દ્વીપો લવણ સમુદ્ર

स्पृशति असंख्येयमागं स्पृशति नो संख्येयान् भागान् नो असंख्येयान् भागान्
 स्पृशति नो सर्वे स्पृशति एतस्याः स्वच्छं मदन्त ! रत्नप्रभायाः पृथिव्याः घनोदधिः
 धर्मास्तिकायस्य पृच्छा किं संख्येयमागं स्पृशति ? यथा रत्नप्रभा तथा घनोदधि
 घनवातं तनुवाता अपि । एतस्याः स्वच्छं मदन्त ! रत्नप्रभायाः पृथिव्या अब
 काशान्तरं धर्मास्तिकायस्य किं संख्येयमागं स्पृशति यावत् सर्वं स्पृशति ? गौतम !

असंख्येयमागं कुलह, गो सखेज्ज, गो असखेज्जे, नो सम्भ कुसह) यह
 रत्नप्रमानाम की पृथिवी धर्मास्तिकाय के संख्यातवें भागका स्पर्श नहीं
 करती है किन्तु उसके असख्यातवें भाग का ही स्पर्श करती है। वह
 उसके सख्यातभागों असंख्यातभागों का भी स्पर्श नहीं करती है और
 न समस्त पूरे रूप में ही उसका वह स्पर्श करती है। (इमीसे न भंते !
 रयणप्पमाए पुड्वीए घणोदही, धम्मस्थिकायस्स पुच्छा किं संखेज्जमागं
 कुसह) है भदन्त ! इस रत्नप्रभा पृथिवी का जो घनोदधि है वह धर्मा
 स्तिकाय के कितने भाग का स्पर्श करता है—क्या वह उसके सख्यातवें
 भाग का स्पर्श करता है ? (जहा रयणप्पमा तहा घणोदही—घणवाय
 तणुवाया वि) है गौतम ! जिस प्रकार रत्नप्रभापृथिवी धर्मास्तिकाय के
 असंख्यातवें भाग का स्पर्श करती है वसी प्रकार से घनोदधि भी
 उसके असंख्यातवें भाग का ही स्पर्श करता है इसी तरह से घनवात
 और तनुवात भी उसके असंख्यातवें भाग का स्पर्श करते हैं। (इमीसे
 न भंते ! रयणप्पमाए पुड्वीए उवासतरे धम्मस्थिकायस्स किं संखेज्ज

असंखेज्जमागं कुसह, गो संखेज्जे ना असखेज्जे नो सम्भ कुसह) रत्नप्रभा पृथ्वी
 धर्मास्तिकायना संख्यातमां भागनो स्पर्श करती नहीं, पण तेना असंख्यातमां
 भागनो न स्पर्श करे छे ते तेना संख्यातमां भागनो के असंख्यात भागनो
 पण स्पर्श करती नहीं, ते तेना समस्त भागनो पण स्पर्श करती नहीं (इ
 मीसे न भंते ! रयणप्पमाए पुड्वीए घणोदही धम्मस्थिकायस्सपुच्छा किं संखेज्जमागं
 कुसह) है भदन्त ! ते रत्नप्रभा पृथ्वीनो न घनोदधि छे ते धर्मास्ति
 कायना केरहा भागनो स्पर्श करे छे ? शुं ते तेना संख्यातमां भागनो स्पर्श
 करे छे ? (जहा रयणप्पमा तहा घणोदही—घणवायतणुवाया वि) है गौतम !
 न प्रभावे रत्नप्रभा पृथ्वी धर्मास्तिकायना असंख्यातमां भागनो स्पर्श करे
 छे, जेन प्रभावे घनोदधि पण तेना असंख्यातमां भागनो स्पर्श करे छे
 जेन प्रभावे घनवात जने तनुवात पण तेना असंख्यातमां भागनो स्पर्श
 करे छे (इमीसे न भंते ! रयणप्पमाए पुड्वीए उवासतरे धम्मस्थिकायस्स किं

टीका—‘ धम्मत्थिकाएणं भंते ’ धर्मास्तिकायः खलु भदन्त ! “ के महालए पणत्ते ’ कियान् महालयः प्रज्ञप्तः ? कियान् विशालः कथितः धर्मास्तिकायस्य कियद्वि-
शालत्वम् इति प्रश्नः । भगवानाह—‘ गोयमा ’ इत्यादि ‘ गोयमा ’ हे गौतम !
‘ लोए लोय मेत्ते लोयप्पमाणे लोयफुडे लोयं चेव फुसित्ताणं चिट्ठइ ’ लोको लोक-
मात्रः लोकप्रमाणः लोकस्फुटः लोकं चैव स्पृष्ट्वा खलु तिष्ठति । तत्र लोको लोकप्र-

टीकार्थ- (धम्मत्थिकाए णं भंते ।) हे भदन्त ! धर्मास्तिकाय (के
महालए पणत्ते) कितना बड़ा कहा गया है ? अर्थात्- धर्मास्तिकाय
कितना विशाल है ? इस प्रकार के गौतम के इस प्रश्न का उत्तर देते
हुए भगवान् उनको कहते हैं- (गोयमा !) हे गौतम ! (लोए लोय-
मेत्ते लोयप्पमाणे लोयफुडे लोयं चेव फुसित्ता णं चिट्ठइ) यह धर्मास्तिका-
य लोक धर्मास्तिकाय को लोकरूप कहने का कारण यह है कि यह
लोक प्रमित होने के कारण अथवा लोक इस द्वारा कहे जाने के कारण
लोक शब्द से कहा गया है । तात्पर्य कहने का यह है कि धर्मास्तिकाय
जितना बड़ा लोक उतना ही बड़ा है क्यों किया वह उसमें व्यापक ब-
ना हुआ है । जिस प्रकार तिल में तेल व्यापक होकर रहता है उसी
प्रकार से यह संपूर्ण लोकाकाश में रहता है । लोकाकाश का ऐसा कोई
सा भी प्रदेश नहीं है कि जहां पर यह द्रव्य न हो । इस कारण धर्मा-
स्तिकाय को लोकप्रमित कहा गया है तथा जब लोकाकाश का विचार
किया है तब वहां पर धर्मादिक द्रव्यों को (लोक) ऐसे नाम से कहा

टीकार्थ—“ धम्मत्थिकाए णं भंते ! के महालये पणत्ते ” हे भदन्त ! धर्मा-
स्तिकाय केवलु भोटुं डोय छे-अटवे के ते केवलुं विशाण छे ? गौतम स्वा-
मीना आ प्रश्नो उत्तर आपता भडावीर प्रभु कडे छे के “ गोयमा ! ” हे
गौतम ! “ लोए लोयमेत्ते लोयप्पमाणे लोयफुडे लोयचेव फुसित्ताणं चिट्ठइ ” आ
धर्मास्तिकाय दोकइ छे ” धर्मास्तिकायने दोकइय कडेवानुं कारण अे छे के ते
दोकप्रमित (दोकप्रमाण) डोवाथी अथवा “ दोक ” द्वारा ओणणातुं डोवाने
कारण तेने (दोक) शब्द द्वारा ओणणवामां आवे छे-दोक नेटवो भोटो छे
अेटुं न भोटु धर्मास्तिकाय छे कारण के ते समस्त व्यापेणुं छे नेवी रीते
तलमां तेल व्यापक अनीने रडे छे, ओण रीते धर्मास्तिकाय संपूर्ण दोकाका-
शमा रडे छे-दोकाकाशनेो कौध पणु ओवो प्रदेश नथी के न्यां तेनुं अस्तित्व
न डोय तेथीन धर्मास्तिकायने दोकप्रमित (दोक प्रमाण) कहु छे, तथा न्यारे
दोकाकाशनेो विचार कराये छे तयारे त्यां पणु धर्मादिक द्रव्योने “ दोक ”

વિચિત્રત્વાત્, તથેહાપિ વસ્તુસ્વભાવૈવિન્યમાદાય નિરધિષ્ઠાનસ્યાપ્યાકાશસ્યાવ-
સ્થાનસમ્ભવેન આકાશાધિકરણસ્ય શાસ્ત્રે વિચારો ન કૃત્વત્ત્વમ્ । ‘વાયવપૃષ્ઠિ
ઉદહી’ વાતપ્રતિષ્ઠિત ઉદધિઃ, તનુવાતઘનવાતયોરુપરિ ઘનોદધેઃ પ્રતિષ્ઠિતત્વાત્,
અર્થાત્ યથા વાયોરધિકરણં ગગનમ્ તથોદધેરધિકરણં વાયુરેવ । એવમ્ ‘ઉદધિપૃ-
ષ્ઠિયા પુઢ્વી’ ઉદધિપ્રતિષ્ઠિતા પૃથિવી, ઘનોદધેરુપરિ રત્નપ્રભાદિપૃથિવીનાં સ્થિત-
ત્વાત્ । મૂળે યદુક્તં ‘ઉદધિપૃષ્ઠિયા પુઢ્વી’ ઇતિ, તદ્ બાહુલ્યાપેક્ષયા વિજ્ઞેયમ્,
ઈષ્ટપ્રાગ્ભારાયાઃ પૃથિવ્યા આકાશપ્રતિષ્ઠિતત્વાત્ । ‘પુઢ્વી પૃષ્ઠિયા તસા ધાવરા

મેં વિચિત્રતા હૈ उसी प्रकार से आकाशस्वभाव में भी विचित्रता है,
जिसकी वजह से वह बिना अन्य आधार के भी प्रतिष्ठित रहता है ।
अतः जब आकाश बिना किसी अन्य आधार के प्रतिष्ठित है तो फिर
अधिष्ठान से विहीन आकाश के अधिकरण (आधार) का विचार शास्त्र
में करने की आवश्यकता ही क्या है ? इसी कारण शास्त्र में आका-
शाधिकरण का विचार नहीं किया गया है । वातप्रतिष्ठित उदधि कहने
का तात्पर्य ऐसा है कि तनुवात और घनवात के ऊपर घनोदधि प्रतिष्ठित
है । अर्थात् जैसे वायु का अधिकरण (आधार) गगन है उसी प्रकार
उदधि का अधिकरण वायु ही है । “उदधि पृष्ठिયા पुढ्वी” का तात्पर्य
यह है कि घनोदधि के ऊपर रत्नप्रभा आदि पृथिवियां प्रतिष्ठित हैं
अर्थात् स्थित हैं । मूल में जो “उदधिपृष्ठिયા पुढ्वी” ऐसा कहा गया
है सो वह बाहुल्य की अपेक्षा से कहा गया जानना चाहिये । क्योंकि
ईषट्प्राग्भार नाम की जो पृथिवी है वह आकाश में प्रतिष्ठित है ।

તો તેવી જ રીતે અહીં વસ્તુસ્વભાવની વિચિત્રતા બાણી શકાય છે તેવી જ રીતે
આકાશ દ્રવ્ય પણ પોતાના સ્વભાવની વિચિત્રતાને કારણે જ અન્ય દ્રવ્યના
આધાર વગર પણ પ્રતિષ્ઠિત રહે છે આ રીતે આકાશ કોઈ પણ અન્ય પદાર્થના
આધાર વિના જ રહેલું હોવાથી અધિકરણ (આધાર) રહિત હોવાથી
તેના અધિકરણનો વિચાર કરવાની આવશ્યકતા રહેતી નથી. તે કારણે જ શાસ્ત્રમાં
આકાશના અધિકરણનો વિચાર કરવામાં આવ્યો નથી “વાત પ્રતિષ્ઠિત ઉદધિ”નું
તાત્પર્ય એ છે કે તનુવાત અને ઘનવાતના આધારે ઘનોદધિ પ્રતિષ્ઠિત
(રહેલ) છે એટલે કે જેવી રીતે વાયુનું અધિકરણ (આધાર) ગગન છે એવી જ
રીતે ઉદધિના આધાર વાયુ છે “ઉદધિપૃષ્ઠિયા પુઢ્વી” ઉદધિપ્રતિષ્ઠિત પૃથ્વી
નું તાત્પર્ય એ છે કે ઘનોદધિના આધારે રત્નપ્રભા વગેરે પૃથ્વીઓ (નરકો)
પ્રતિષ્ઠિત (રહેલી) છે મૂળમાં જે “ઉદધિપૃષ્ઠિયા પુઢ્વી” કહેલ છે તે
બાહુલ્યની અપેક્ષાએ સમજવું કારણ કે ઈષ્ટપ્રાગ્ભારા નામની જે સિદ્ધશિલા

टीका—‘ धम्मत्थिकाएणं भंते ’ धर्मास्तिकायः खलु भदन्त ! “ के महालए पण्णत्ते’ कियान् महालयः प्रज्ञप्तः? कियान् विशालः कथितः धर्मास्तिकायस्य कियद्वि-
शालत्वम् इति प्रश्नः । भगवानाह—‘ गोयमा ’ इत्यादि ‘ गोयमा ’ हे गौतम !
‘ लोए लोय मेत्ते लोयप्पमाणे लोयफुडे लोयं चेव फुसित्ताणं चिट्ठइ ’ लोको लोक-
मात्रः लोकप्रमाणः लोकरूपः लोकं चैव स्पृष्ट्वा खलु तिष्ठति । तत्र लोको लोकप्र-

टीकार्थ- (धम्मत्थिकाए णं भंते !) हे भदन्त ! धर्मास्तिकाय (के महालए पण्णत्ते) कितना बड़ा कहा गया है ? अर्थात्- धर्मास्तिकाय कितना विशाल है ? इस प्रकार के गौतम के इस प्रश्न का उत्तर देते हुए भगवान् उनको कहते हैं- (गोयमा !) हे गौतम ! (लोए लोय-
मेत्ते लोयप्पमाणे लोयफुडे लोयं चेव फुसित्ता णं चिट्ठइ) यह धर्मास्ति-
काय लोक धर्मास्तिकाय को लोकरूप कहने का कारण यह है कि यह लोक प्रमित होने के कारण अथवा लोक इस द्वारा कहे जाने के कारण लोक शब्द से कहा गया है । तात्पर्य कहने का यह है कि धर्मास्तिकाय जितना बड़ा लोक उतना ही बड़ा है क्यों किया वह उसमें व्यापक ब-
ना हुआ है । जिस प्रकार तिल में तेल व्यापक होकर रहता है उसी प्रकार से यह संपूर्ण लोकाकाश में रहता है । लोकाकाश का ऐसा कोई सा भी प्रदेश नहीं है कि जहां पर यह द्रव्य न हो । इस कारण धर्मा-
स्तिकाय को लोकप्रमित कहा गया है तथा जब लोकाकाश का विचार किया है तब वहां पर धर्मादिक द्रव्यों को (लोक) ऐसे नाम से कहा

टीकार्थ—“ धम्मत्थिकाए णं भंते ! के महालये पण्णत्ते ” हे भदन्त ! धर्मा-
स्तिकाय केवलु मोटुं डोय छे—ओटवे के ते केवलुं विशाल छे ? गौतम स्वा-
मीना आ प्रश्नो उत्तर आपता मडावीर प्रलु कडे छे के “ गोयमा ! ” हे
गौतम ! “ लोए लोयमेत्ते लोयप्पमाणे लोयफुडे लोयचेव फुसित्ताणं चिट्ठइ ” आ
धर्मास्तिकाय लोकप्रमित छे ” धर्मास्तिकायने लोकप्रमित कडेवानुं कारण ओ छे के ते
लोकप्रमित (लोकप्रमाण) डोवाथी अथवा “ लोक ” द्वारा ओणभावुं डोवाने
कारण तेने (लोक) शब्द द्वारा ओणभवामां आवे छे—लोक नेटो मोटो छे
ओटलु न मोटु धर्मास्तिकाय छे कारण के ते समस्त व्यापेखुं छे नेवी रीते
तलमां तेल व्यापक जनीने रडे छे, ओज रीते धर्मास्तिकाय संपूर्ण लोकका-
शमा रडे छे—लोककाशना कोछ पलु ओवो प्रदेश नथी के न्यां तेनु अस्तित्व
न डोय तेथीज धर्मास्तिकायने लोकप्रमित (लोक प्रमाण) कहुं छे, तथा न्याने
लोककाशना विचार कराये छे त्याने त्या पलु धर्मादिक द्रव्योने “ लोक ”

ધર્માસ્તિકાયસ્યાધોલોકઃ સ્પૃશ્ણતીતિ માવઃ, મગનાનાહ—‘ગોયમા’ इत्यादि
 ‘गोयमा’ हे गौतम ! ‘सातिरेगं अर्द्धं कुसह’ सातिरेकमर्धं स्पृशति धर्मास्ति
 कायो हि लोकेव्यापकः अधोलोकस्तु सातिरेकसत्तरञ्जुप्रमाणः अतः सातिरेक
 मर्धमागमेधाधोलोको धर्मास्तिकायस्य स्पृशतीति । ‘तिरियलोएणं मंते पुच्छा’
 तिर्यग्लोकः तस्य मदन्त । पुच्छा ? धर्मास्तिकायस्य कियन्त मागं स्पृशति तिर्यग्म्लोक
 इति प्रश्नः ‘गोयमा असंखेज्जह मागं कुसह’ इत्युत्तरम् हे गौतम ! असंखेयमागं
 धर्मास्तिकायस्य तिर्यग्म्लोकः स्पृशति असंख्यातयोजनप्रमाणं धर्मास्तिकायः

हे મદન્ત ! અધોલોક (ધર્મસ્તિકાયાસ્સ કેવહયં કુસહ) ધર્માસ્તિકાયા
 કે કિત્તને ભાગ કો સ્પર્શ કરતા હે ? હસ ગૌતમ ! કે પ્રશ્ન કા ઉત્તર દેતે
 હુપ પ્રશ્ન ઉત્તર કહતે હિં (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (સાતિરેગં અર્ધં કુસ
 હ) અધોલોક ધર્માસ્તિકાયા કે કુહ અધિક આધેભાગ કો સ્પર્શ કરતા હે
 —હસકા સાત્પર્યં યહ હે કિ—ધર્માસ્તિકાયા તો લોકમર મેં વ્યાપક હે, ઓર
 અધોલોક જો હે વહ કુહ અધિક માતરાજુ પ્રમાણ વાલા હે । હસ તરહ
 ૧૪૫૦૬ રાજુપ્રમાણ લોક મેં વ્યાપક હુપ ધર્માસ્તિકાયા કે કુહ અધિક
 આધે ભાગ કા હી વહ સ્પર્શ કરતા હે યહ હિસાબ ઠીક વેઠતા હે । (તિ
 રિયલોપ ણં મંતે । પુચ્છા) હે મદન્ત ! તિર્યગ્લોક ધર્માસ્તિકાયા કે
 કિત્તને ભાગ કો સ્પર્શ કરતા હે ? હસ ગૌતમ કે પ્રશ્ન કો ઉત્તર દેતે હુપ
 પ્રશ્ન ઉત્તર કહતે હિં—(ગોયમા ! હે ગૌતમ ! (અસંખેજ્જહ માગં કુસહ)
 તિર્યગ્ લોક ધર્માસ્તિકાયા કે અસંખ્યાતયે ભાગ કા સ્પર્શ કરતા હે—હસકા

અધોલોક ધર્માસ્તિકાયાના કેટલાક ભાગનો સ્પર્શ કરે છે

ઉત્તર—‘ગોયમા ।’ હે ગૌતમ ! “સાતિરેગં અર્ધં કુસહ” અધોલોક
 ધર્માસ્તિકાયા અર્ધા કરતાં વધારે ભાગનો સ્પર્શ કરે છે આ કથનનું તાત્પર્ય
 નીચે પ્રમાણે છે—ધર્માસ્તિકાયા તો સમસ્ત લોકમાં વ્યાપક છે અધોલોક તો
 સાત રાજુપ્રમાણથી સહેજ વધારે પ્રમાણવાળો છે તેથી થોડા રાજુપ્રમાણ
 લોકમાં વ્યાપક (વ્યાપક) ધર્માસ્તિકાયા તેના અર્ધા કરતાં થોડા વધારે ભાગનો
 સ્પર્શ કરે છે, જો ગણતરી ચોખ્ખી હોય છે

પ્રશ્ન—“તિરિયલોપ ણં મંતે પુચ્છા” હે મદન્ત ! તિર્યગ્લોક ધર્માસ્તિકા
 યાના કેટલા ભાગનો સ્પર્શ કરે છે ?

ઉત્તર—“ગોયમા ।” હે ગૌતમ ! “અસંખેજ્જહ માગં કુસહ” તિર્યગ્લોક
 ધર્માસ્તિકાયાના અસંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે આ કથનનું તાત્પર્ય નીચે

સ્વપ્રદેશેતિષ્ઠતીતિ । ‘ એવમધર્મત્થિકાણ ’ એવમધર્માસ્તિકાયઃ યથા ધર્માસ્તિકા-
યો લોકઃ લોકમાત્રો લોકપ્રમાણો લોકસ્પૃષ્ટો લોકં સ્પૃષ્ટ્વા તિષ્ઠતિ તથા અધર્મા-
સ્તિકાયોઽપિ લોકોલોકમાત્રો લોકપ્રમાણો લોકસ્પૃષ્ટો લોકં સ્પૃષ્ટ્વા તિષ્ઠતીતિ
જ્ઞાતવ્યઃ । “ લોયાગાસે ” લોકાકાશઃ એવમેવ લોકાકાશોઽપિ ‘ જીવત્થિકાણ ’
જીવાસ્તિકાયઃ ‘ પોગ્ગલત્થિકાણ ’ પુદ્ગલાસ્તિકાયઃ ‘ પંચ વિ એકામિલાવા ’
પચ્ચાપિ એકામિલાવાઃ ધર્માઽધર્માકાશ જીવ પુદ્ગલાસ્તિકાયા એતે પચ્ચાપિ સમાના
મિલાપૈરમિલપ્યાઃ इत्यर्थः । ધર્માસ્તિકાયાદિનાં પચ્ચાનામપિ પ્રમાણસ્પર્શનાદિકં
કથમિતિ સ્પર્શનાધિકારાદેવાધોલોકાદીનાં ધર્માસ્તિકાયાદિગતાં સ્પર્શનાં દર્શય-
ન્નાહ—‘ અહોલોણં મંતે ’ इत्यादि ‘ અહોલોણં મંતે ’ અધોલોકઃ સ્વલુ ભદન્ત !
‘ ધર્મત્થિકાયસ્સ કેવદ્દયં કુસડ ’ ધર્માસ્તિકાયસ્ય ક્રિયન્તં સ્પૃશતિ ? ક્રિયન્તં ભાગં

હુઆ હૈ (એવમધર્મત્થિકાણ) જિમ પ્રકાર ધર્માસ્તિકાય લોકરૂપ, લોક-
માત્ર, લોકપ્રમાણ, લોકસ્પૃષ્ટ હૈ ઓર લોકકો સ્પર્ગકર રહા હુઆ હૈ
વસી પ્રકાર અધર્માસ્તિકાય ભી લોકરૂપ, લોકમાત્ર, લોકપ્રમાણ, લોક-
સ્પૃષ્ટ હૈ ઓર લોક કો સ્પર્ગકર રહા હુઆ હૈ એસા જાનના ચાહિયે ।
(લોયાગાસે) હસી તરહ સે લોકાકાશ (જીવત્થિકાણ) જીવાસ્તિકાય
(પોગ્ગલત્થિકાણ) પુદ્ગલાસ્તિકાય કે વિષય મેં ભી જાનના ચાહિયે । ક્યો
કિ ઇન (પંચ વિ એકામિલાવા) પાંચોં કા પાઠ એક જૈસાહી હૈ । હસ
તરહ ધર્માસ્તિકાય, અધર્માસ્તિકાય, આકાશાસ્તિકાય, જીવાસ્તિકાય
ઓર પુદ્ગલાસ્તિકાય કી વિશાલતા ઓર સ્પર્શના કા કથન કરકે અબ
સૂત્રકાર સ્પર્શના કે અધિકાર કો લેકર હી ધર્માસ્તિકાયાદિગત અધો-
લોકાદિકોં કી સ્પર્શના કે વિષય મેં કથન કરતે હૈ—(અહોલોણં મંતે

‘ એવમધર્મત્થિકાણ ’ એમ ધર્માસ્તિકાય લોકરૂપ, લોકમાત્ર, લોકપ્રમાણ,
લોકસ્પૃષ્ટ છે અને લોકને સ્પર્શીને રહેલું છે, એજ પ્રમાણે અધર્માસ્તિકાય
પણ લોકરૂપ, લોકમાત્ર, લોકપ્રમાણ, લોકસ્પૃષ્ટ છે અને લોકને સ્પર્શીને રહેલું
છે, એમ સમજવું “ લોયાગાસે ” એજ પ્રમાણે લોકાકાશ, “ જીવત્થિકાણ ”
જીવાસ્તિકાય, અને “ પોગ્ગલત્થિકાણ ” પુદ્ગલાસ્તિકાયના વિષયમાં પણ સમજવું કારણ
કે તે પાણેનું “ પંચ વિ એકામિલાવા ” વક્તવ્ય એક સરખું જ છે આ રીતે ધર્મા-
સ્તિકાય, અધર્માસ્તિકાય, આકાશાસ્તિકાય, જીવાસ્તિકાય અને પુદ્ગલાસ્તિકાયની
વિશાળતાનું અને સ્પર્શનાનું વર્ણન કરીને સૂત્રકાર સ્પર્શનાના અધિકારને લઈને
ધર્માસ્તિકાયાદિગત અધોલોક દિગ્ગોની સ્પર્શનાના વિષયનું નિરૂપણ કરે છે—

પ્રશ્ન—“ અહોલોણં મંતે ! ધર્મત્થિકાયસ્સ કેવદ્દયં કુસડ) હે ભદન્ત !

ધર્માસ્તિકાયસ્વાધોલોક સ્પૃશ્ણતીતિ માઘઃ, મગધાનાહ—‘ગોયમા’ इत्यादि
 ‘ગોયમા’ હે ગૌતમ ! ‘સાતિરેર્ગ અર્ધં કુસહ’ સાતિરેકમર્ધ સ્પૃશ્ણતિ ધર્માસ્તિ
 કાયો હિ લોકધ્યાપકઃ અધોલોકસ્તુ સાતિરેકસપ્તરજ્જુપમાણઃ અતઃ સાતિરેક
 મર્ધમાગમેધાધોલોકો ધર્માસ્તિકાયસ્ય સ્પૃશ્ણતીતિ । ‘તિરિયલોપ્’ મંતે પુષ્ણા
 તિર્યગ્લોક રહ્યમદત્ત ! પૃષ્ણા ? ધર્માસ્તિકાયસ્ય કિયન્ત માર્ગ સ્પૃશ્ણતિ તિર્યગ્લોક
 इति मन्तः ‘ગોયમા અસલેઝ્જા માર્ગ કુસહ’ इत्युत्तरम् हे गौतम ! असंख्येयमार्गं
 धर्मास्तिकायस्य तिर्यग्लोकः स्पृशति असंख्यातयोजनप्रमाणं धर्मास्तिकाया

हे अदन्त ! अधोलोक (धर्मास्तिकायस्स केवइयं कुसह) धर्मास्तिकाय
 के कितने भाग को स्पर्श करता है ? इस गौतम ! के प्रश्न का उत्तर देते
 हुए प्रश्न उनको कहते हैं (गोयमा) हे गौतम ! (सातिरेर्ग अर्धं कुस
 ह) अधोलोक धर्मास्तिकाय के कुछ अधिक आधेभाग को स्पर्श करता है
 —इसका तात्पर्य यह है कि—धर्मास्तिकाय तो लोकमर में व्यापक है, और
 अधोलोक जो है वह कुछ अधिक सातराज्जु प्रमाण वाला है । इस तरह
 १४औदह राज्जुप्रमाण लोक में व्यापक हुए धर्मास्तिकाय के कुछ अधिक
 आधे भाग का ही वह स्पर्श करता है यह हिसाब ठीक बैठता है । (ति
 रियलोप णं मंते । पृष्णा) हे अदन्त ! तिर्यग्लोक धर्मास्तिकाय के
 कितने भाग को स्पर्श करता है ? इस गौतम के प्रश्न को उत्तर देते हुए
 प्रश्न उनसे कहते हैं—(गोयमा ! हे गौतम ! (असलેઝ્જાभाग कुसह)
 तिर्यग् लोक धर्मास्तिकाय के असंख्यातये भाग का स्पर्श करता है—इसका

અધોલોક ધર્માસ્તિકાયના કેટલાક ભાગનો સ્પર્શ કરે છે

ઉત્તર—“ ગોયમા ! ” હે ગૌતમ ! “ સાતિરેર્ગ અર્ધં કુસહ ” અધોલોક
 ધર્માસ્તિકાય અર્ધા કરતાં વધારે ભાગનો સ્પર્શ કરે છે આ કથનનું તાત્પર્ય
 નીચે પ્રમાણે છે—ધર્માસ્તિકાય તો સપ્તરજ્જુમાં વ્યાપક છે અધોલોક તો
 સાત રાજ્જુપ્રમાણથી સહેજ વધારે પ્રમાણવાળો છે તેથી ચૌદ રાજ્જુપ્રમાણ
 લોકમા વ્યાપક (વ્યાપેહ) ધર્માસ્તિકાય તેના અર્ધા કરતાં થોડા વધારે ભાગનો
 સ્પર્શ કરે છે, જે ગણતરી યોગ્ય સાગે છે

પ્રશ્ન—“ તિરિયલોપ ણ મંતે પુષ્ણા ” હે અદન્ત ! તિર્યગ્લોક ધર્માસ્તિ
 કાયના કેટલા ભાગનો સ્પર્શ કરે છે ?

ઉત્તર—“ ગોયમા ! ” હે ગૌતમ ! “ અસલેઝ્જામાર્ગ કુસહ ” તિર્યગ્લોક
 ધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે આ કથનનું તાત્પર્ય નીચે

તિર્યગ્લોઃસ્તુ અષ્ટાદશયોજનશતપ્રમાણઃ-અતો ધર્માસ્તિકાયસ્યાસંખ્યાતભાગે વિઘ-
માનત્વાત્તસ્યાસંખ્યેયમેવ ભાગં સ્પૃશતીતિ ભાવઃ । “ઉઢ્ઢુલોણં મંતે પુચ્છા”
ઊર્ધ્વલોકઃ-સ્વલુ ભદન્ત ! પુચ્છા હે ભદન્ત ! ઊર્ધ્વલોકો ધર્માસ્તિકાયસ્ય કિયન્તં
ભાગં સ્પૃશતીતિ પ્રશ્નઃ મગવાનાહ-‘ગોયમા’ ઇત્યાદિ । ‘ગોયમા દેસૂણં અદ્દં ફુસઈ’
ગૌતમ ! દેશોનમર્ધં સ્પૃશતિ, દેશોનસપ્તરજ્જુપ્રમાણત્વાત્ ઊર્ધ્વલોકસ્યેતિ સંમ્પૂર્ણ
લોકશ્ચતુર્દશરજ્જુપ્રમાણકસ્તદર્દ્દમ્ સપ્તરજ્જુપ્રમાણકઃ ઇતિ ભાવઃ ‘ઈમાણં મંતે’ હ્યં
સ્વલુ ભદન્ત ! ‘રયણપ્પમા પુઢ્ઢવી’ રત્નપ્રમા પૃથિવી, “ધમ્મત્થિકાયસ્સ” ધર્મા-

તાત્પર્ય યહ હૈ કિ ધર્માસ્તિકાય અસંખ્યાત સ્વજન પ્રમાણવાલા હૈ ઔર
તિર્યગ્લોક જો હૈ વહ ૧૮અઠારહ સૌ યોજન પ્રમાણ વાલા હૈ । અતઃ વહ
ધર્મ કે અસંખ્યાતવે ભાગ મેં વર્તમાન હોનેકે કારણ ઉસકે અસંખ્યાત વે
ભાગ કા હી સ્પર્શ કરતા હૈ યહ કથન ઠીક હૈ । (ઉઢ્ઢુલોણં મંતે !
પુચ્છા) હે ભદન્ત ! ઊર્ધ્વલોક ધર્માસ્તિકાય કે કિતને ભાગ કા સ્પર્શ ક
રતા હૈ ? ઇસ ગૌતમ કે પ્રશ્ન કા સમાધાન કરનેકે નિમિત્ત પ્રશ્ન ઉનસે
કહતે હૈ (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (દેસૂણં અદ્દં ફુસઈ) ઊર્ધ્વલોક ધર્મા-
સ્તિકાય કે કુછ કમ આધે ભાગ કા સ્પર્શ કરતા હૈ-સો ઇસકા કારણ
યહ હૈ કિ ઊર્ધ્વલોક કા પ્રમાણ કુછ કમ સાત રાજૂ કા હૈ । સંમસ્ત
લોક કા પ્રમાણ ૧૪ ચૌદહ રાજૂ કા હૈ સો ૧૪ ચૌદહ રાજૂ પ્રમાણ વેલે
લોક મેં વ્યાપક રહે હુએ ધર્માસ્તિકાય કે કુછ કમ આધે ભાગ કા ઊર્ધ્વ
લોક સ્પર્શ કરતા હૈ । (ઈમાણં મંતે ! રયણપ્પમા પુઢ્ઢવી) હે ભદન્ત !
જો યહ રત્નપ્રમા નામ કી પહિલી પૃથિવી હૈ સો વહ (ધમ્મત્થિકાયસ્સ

મુજળ છે-ધર્માસ્તિકાય અસંખ્યાત યોજન પ્રમાણ વાળું છે, પણ તિર્યગ્લોક ૧૮૦૦
અઠાર સો યોજન પ્રમાણ છે તેથી તે ધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યાતમાં ભાગ પ્રમાણ
હોવાથી તેના અસંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે, તે કથન બરાબર છે.

પ્રશ્ન--“ઉઢ્ઢુલોણ મંતે ! પુચ્છા” હે ભદન્ત ! ઊર્ધ્વલોક ધર્માસ્તિ-
કાયના કેટલાક ભાગનો સ્પર્શ કરે છે ?

ઉત્તર--“ગોયમા !” હે ગૌતમ ! “દેસૂણં અદ્દં ફુસઈ” ઊર્ધ્વલોક
ધર્માસ્તિકાયના અર્ધ કરતા ઓછા ભાગનો સ્પર્શ કરે છે. આ કથનનું કારણ
નીચે પ્રમાણે છે, સમસ્ત લોક ૧૪ રાજુપ્રમાણ છે ઊર્ધ્વલોકનું પ્રમાણ સાત
રાજુ કરતા ઓછું છે તેથી ૧૪ રાજુપ્રમાણ લોકમાં ધર્માસ્તિકાય ઊર્ધ્વલોકના
અર્ધ કરતા ઓછા ભાગનો સ્પર્શ કરે છે તે કથન બરાબર છે.

પ્રશ્ન--ઈમાણં મંતે ! રયણપ્પમા પુઢ્ઢવી” હે ભદન્ત ! રત્નપ્રમા નામની

તિર્યગ્લોકસ્તુ અષ્ટાદશયોજનશતપ્રમાણઃ—અતો ધર્માસ્તિકાયાસંખ્યાતભાગે વિદ્ય-
માનત્વાત્તસ્યાસંખ્યેયમેવ ભાગં સ્પૃશતીતિ ભાવઃ । “ઉઢ્ઢુલોર્ણં ભંતે પુચ્છા”
ઉર્ધ્વલોકઃ—સ્વલુ ભદન્ત । પૃચ્છા હે ભદન્ત ! ઉર્ધ્વલોકો ધર્માસ્તિકાયાસ્ય કિયન્તં
ભાગં સ્પૃશતીતિ પ્રશ્નઃ ભગવાનાહ—‘ગોયમા’ ઇત્યાદિ । ‘ગોયમા દેસૂણં અદ્દં ફુસહ્’
ગૌતમ ! દેશોનમર્થં સ્પૃશતિ, દેશોનસપ્તરજ્જુપ્રમાણત્વાત્ ઉર્ધ્વલોકસ્યેતિ સમ્પૂર્ણ
લોકશ્ચતુર્દશરજ્જુપ્રમાણકસ્તદર્દ્દમ્ સપ્તરજ્જુપ્રમાણકઃ ઇતિ ભાવઃ ‘ઈમાણં ભંતે’ इयं
સ્વલુ ભદન્ત ! ‘રયણપ્પમા પુઢવી’ રત્નપ્રમા પૃથિવી. “ધમ્મત્થિકાયાસ્સ” ધર્મા-

તાત્પર્ય યહ હૈ કિ ધર્માસ્તિકાય અસંખ્યાત સ્વજન પ્રમાણવાલા હૈ. ઔર
તિર્યગ્લોક જો હૈ વહ ૧૮અટારહ સૌ યોજન પ્રમાણ વાલા હૈ. અતઃ વહ
ધર્મ કે અસંખ્યાતવે ભાગ મેં વર્તમાન હોનેકે કારણ ઉસકે અસંખ્યાત વે
ભાગ કા હી સ્પર્શ કરતા હૈ યહ કથન ઠીક હૈ. (ઉઢ્ઢુલોર્ણં ભંતે !
પુચ્છા) હે ભદન્ત ! ઉર્ધ્વલોક ધર્માસ્તિકાય કે કિતને ભાગ કા સ્પર્શ ક
રતા હૈ ? ઇસ ગૌતમ કે પ્રશ્ન કા સમાધાન કરનેકે નિમિત્ત પ્રશ્ન ઉનસે
કહતે હૈં (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (દેસૂણં અદ્દં ફુસહ્) ઉર્ધ્વલોક ધર્મા-
સ્તિકાય કે કુછ કમ આધે ભાગ કા સ્પર્શ કરતા હૈ—સો ઇસકો કારણ
યહ હૈ કિ ઉર્ધ્વલોક કા પ્રમાણ કુછ કમ સાત રાજૂ કા હૈ. સમસ્ત
લોક કા પ્રમાણ ૧૪ ચૌદહ રાજૂ કા હૈ મો ૧૪ ચૌદહ રાજૂ પ્રમાણ વાલિ
લોક મેં વ્યાપક રહે હુએ ધર્માસ્તિકાય કે કુછ કમ આધે ભાગ કા ઉર્ધ્વ
લોક સ્પર્શ કરતા હૈ. (ઈમાણં ભંતે ! રયણપ્પમા પુઢવી) હે ભદન્ત !
જો યહ રત્નપ્રમા નામ કી પહિલી પૃથિવી હૈ સો વહ (ધમ્મત્થિકાયાસ્સ

સુજ્ઞ છે—ધર્માસ્તિકાય અસંખ્યાત યોજન પ્રમાણ વાળું છે, પણ તિર્યગ્લોક ૧૮૦૦
અઢાર સો યોજન પ્રમાણ છે. તેથી તે ધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યાતમાં લાગ પ્રમાણ
હોવાથી તેના અસંખ્યાતમાં લાગનો સ્પર્શ કરે છે, તે કથન બરાબર છે.

પ્રશ્ન—“ઉઢ્ઢુલોર્ણં ભંતે ! પુચ્છા” હે ભદન્ત ! ઉર્ધ્વલોક ધર્માસ્તિકા-
યાના કેટલાક લાગનો સ્પર્શ કરે છે ?

ઉત્તર—“ગોયમા !” હે ગૌતમ ! “દેસૂણં અદ્દં ફુસહ્” ઉર્ધ્વલોક
ધર્માસ્તિકાયના અર્ધ કરતા ઓછા લાગનો સ્પર્શ કરે છે. આ કથનનું કારણ
નીચે પ્રમાણે છે, સમસ્ત લોક ૧૪ રાજુપ્રમાણ છે ઉર્ધ્વલોકનું પ્રમાણ સાત
રાજુ કરતા ઓછું છે તેથી ૧૪ રાજુપ્રમાણ લોકમાં ધર્માસ્તિકાય ઉર્ધ્વલોકના
અર્ધ કરતાં ઓછા લાગનો સ્પર્શ કરે છે તે કથન બરાબર છે.

પ્રશ્ન—ઈમાણં ભંતે ! રયણ - પુઢવી” હે ભદન્ત ! રત્નપ્રમા નામની

स्तिष्कायस्य ' किं संखेज्जमागं कुसह ' किं संख्ययमाग स्पृशति ? ' असंखेज्जमागं कुसह ' असंख्येयमागं स्पृशति ? ' संखेज्जे मागे कुसह ' संख्येयान् भागान् स्पृशति ? ' असंखेज्जे मागे कुसह ' असंख्येयान् भागान् स्पृशति ? ' सत्त्वं कुसह ' सर्वं स्पृशति ? हे मइन्त ! येय रत्नप्रभा पृथिवी सा किं धर्मास्तिष्कायस्य संख्येयं भागं स्पृशति असंख्येय माग स्पृशति अथवा संख्येयान् वा भागान् असंख्येयान् वा भागान् स्पृशति सच वा स्पृशतीति मइन्त मगवानाह— गोयमा ' इत्यादि ' गोयमा ' हे गौतम ! ' ' गो संखेज्जह माग कुसह ' नो संख्येयमाग स्पृशति— धर्मास्तिष्कायस्य रत्नप्रभा किन्तु ' असंखेज्जह माग कुसह ' असंख्येयमागं स्पृशति धर्मास्तिष्कायस्य लोकव्यापकत्वात् रत्नप्रभायाभाव्यदेशवृत्तित्वादिति तथा ' गो संखेज्जे गो असंखेज्जो नो सर्वं कुसह ' नो संख्येयान् भागान् नो किं संखेज्जह माग कुसह, असंखेज्जह मागं कुसह, संखेज्जे मागे कुसह, असंखेज्जे मागे कुसह, सत्त्वं कुसह) धर्मास्तिष्काय के संख्येय भाग का स्पर्श करती है ? या असंख्येयभाग का स्पर्श करती है ? अथवा—उसके संख्यात भागों का स्पर्श करती है ? या असंख्यात भागों का स्पर्श करती है ? या सम्पूर्ण धर्मास्तिष्काय का वह स्पर्श करती है । इस गौतम के प्रश्न का उत्तर देते हुए प्रभु उनसे कहते हैं (गोयमा) हे गौतम ! (गो संखेज्जह मागं कुसह, असंखेज्जह माग कुसह, गो संखेज्जे, गो असंखेज्जे, गो सत्त्वं कुसह) रत्नप्रभा नाम की पहिली पृथिवी धर्मास्तिष्काय के संख्यातवै भाग का स्पर्श नहीं करती है, किन्तु उसके असंख्यातवै भाग का ही स्पर्श करती है क्योंकि कि धर्मास्तिष्काय सम्पूर्णलोक में प्राप्त है और रत्नप्रभा पृथिवी योड़ीसी जगह में है । तथा यह रत्नप्रभापृथिवी धर्मास्तिष्काय के (गो संखेज्जे गो असंखेज्जे नो सर्वं कुसह) संख्यात

के पड़ेही पृथ्वी (२१४) है "धर्मास्तिष्कायस्य किं संखेज्जह मागं कुसह असंखेज्जह मागं कुसह, संखेज्जे मागे कुसह असंखेज्जे मागे कुसह सर्वं कुसह ? " ते धर्मास्तिष्कायना सञ्जातमां भागेने स्पशं हरे छे ? के असञ्जातमां भागेने स्पशं हरे छे ? के तेना सञ्जात भागेने स्पशं हरे छे के तेना असञ्जात भागेने स्पशं हरे छे ? के ते संपूषु धर्मास्तिष्कायने स्पशं हरे छे

उत्तर— ' गोयमा ! ' ' गो संखेज्जह मागं कुसह असंखेज्जह मागं कुसह, गो संखेज्जे, गो असंखेज्जे गो सर्वं कुसह ' रत्नप्रभा नामकी पड़ेही पृथ्वी धर्मास्तिष्कायना सञ्जातमां भागेने स्पशं हरेती नहीं, तेमअसञ्जात भागेने स्पशं हरेता नहीं, सञ्जात भागेने स्पशं पशु हरेती नहीं, असञ्जात भागेने पशु स्पशं हरेती नहीं, समस्त धर्मास्तिष्कायने

અસંખ્યેયાન્ ભાગાન્ ન વા સર્વં ભાગં સ્પૃશતિ. કિન્તુ અસંખ્યેયમેવ ભાગં સ્પૃશ-
તીતિ । ‘ઇમીસેણં મંતે’ અસ્યાઃ સ્વલુ ભદન્ત । ‘રયણપ્પમાણ પુઢવીણ’ રત્નપ્રભાંયાઃ
પૃથિવ્યાઃ ‘ઘનોદહી’ ઘનોદધિઃ ‘ધમ્મત્થિકાયસ્સ’ ધર્માસ્તિકાયસ્ય “ કિં
સંખેજ્જભાગં ફુસહ ’ ધર્માસ્તિકાયસ્ય કિં સંખ્યેયભાગં સ્પૃશતિ સર્વં વા સ્પૃશ-
તીતિ રત્નપ્રમાપૃથિવ્યાઃ સમ્બન્ધી ઘનોદધિઃ ધર્માસ્તિકાવયવસંખ્યેયભાગં સ્પૃશ-
ત્યાદિ પ્રશ્નઃ । ભગવાનાહ—‘ જહાં ’ ઇત્યાદિ—“ જહા રયણપ્પમા તહા-ઘણો-
દહી ” યથા રત્નપ્રમા તથા ઘનોદધિઃ, યથા રત્નપ્રમા ધર્માસ્તિકાયસ્યા-સંખ્યેય

भागों का और असंख्यात भागों का भी स्पर्श नहीं करती है-और न
वह सम्पूर्णरूप में ही उसका स्पर्श करती है-इस तरह यहाँ असंख्या-
तवें भाग का स्पर्श करना यह द्वितीयपक्ष ही अङ्गीका किया है-शेष
चार पक्ष नहीं । (इमीसेणं मंते ! रयणप्पमाण पुढवीण घनोदही) हे
भदन्त ! अब हम आपसे यह जानना चाहते हैं कि इस रत्नप्रभासंबंधी
जो घनोदधि है वह धर्मास्तिकाय के कितने भाग का स्पर्श करता है ?
(किं संखेज्जइभागं फुसइ, असंखेज्जइभागं फुसइ, संखेज्जेइभागे फुसइ,
असंखेज्जेभागे फुसइ, सव्वं वा फुसइ) क्या संख्यातवें भाग का स्पर्श
करता हैं, या असंख्यातवें भाग का स्पर्श करता है, अथवा धर्मास्तिका-
य के संख्यातभागों का स्पर्श करता है-या असंख्यातभागों का स्पर्श
करता है-किं समस्तरूप से उसका स्पर्श करता है ? इस विषय में
गौतम का समाधान करने निमित्त प्रभु उनसे कहते हैं (गोयमा) हे गौ-
तम । (जहोरयणप्पमा तहा घणोदही) जिस प्रकार रत्नप्रभा पृथिवी

પણ સ્પર્શ કરતી નથી. પણ તે તેના અસંખ્યાતમા ભાગનો સ્પર્શ કરે છે.
આ જવાબનુ કારણ નીચે પ્રમાણે છે ધર્માસ્તિકાય સ પૂર્ણ લોકમા વ્યાપ્ત છે પણ
રત્નપ્રમા પૃથ્વી ઘણી થોડી જગ્યામા આવેલી છે ગૌતમ સ્વામીના ઉપરોક્ત
પાત્ર વિકલ્પોમાના બીજા વિકલ્પનો જ અહીં સ્વીકાર થયો છે.

પ્રશ્ન—“ ઇમીસે ન મંતે ! રયણપ્પમાણ પુઢવીણ ઘનોદહી ” હે ભદન્ત !
આ રત્નપ્રમા સંબંધી જે ઘનોદધિ છે તે ધર્માસ્તિકાયના કેટલા ભાગનો
સ્પર્શ કરે છે ? (કિં સંખેજ્જઇમાગ ફુસહ ?) શુ તે તેના સંખ્યાતમા ભાગનો
સ્પર્શ કરે છે ? (કિં અસંખેજ્જઇ માગ ફુસહ) કે તેના અસંખ્યાતમા ભાગનો
સ્પર્શ કરે છે ? “ સંખેજ્જે માગે ફુસહ ? અસંખેજ્જે માગે ફુસહ ? સવ્વં વા ફુસહ ”
કે તેના સંખ્યાત ભાગોનો સ્પર્શ કરે છે, કે તેના અસંખ્યાત ભાગોનો સ્પર્શ
કરે છે ? કે સમસ્ત ધર્માસ્તિકાયનો સ્પર્શ કરે છે ?

પાળા' પૃથિવીપ્રતિષ્ઠિતા પ્રસાઃ સ્થાવરા પ્રાણા, સર્વેપિ પ્રાણિનઃ પૃથિવ્યધિક
રણકા એવ. જીવા પૃથિવીપ્રતિષ્ઠિતા, इत्यपि कथनम् प्रायिकमेव, आकाशपर्वत
विमान, दाक्षपि जीवनिवासस्य शास्त्रे प्रतिपादनात्. 'अजीवा जीवपइद्विया'
अजीवा शरीरादिपुद्गलरूपाः जीवप्रतिष्ठिताः जीवा प्रतिष्ठा=अधिकरण येन ते
जीवप्रतिष्ठिता शरीरादीनां जीवेषु स्थितत्वात्. 'जीवा कम्मपइद्विया' जीवा
कर्मप्रतिष्ठिताः, अनुदयावस्थकर्मपुद्गलसमुदायरूपेषु कर्मसु संसारिजीवानामा
श्रितत्वात्, जीवा कर्माधीनस्थितिका इत्यर्थः. 'अजीवा जीवसंगहिया' अजीवा
जीवसंगृहीता, मनोमापादियु पुद्गलानां जीवै संगृहीतत्वात्.

“પૃથ્વીપદ્ધિયા તસા ધાવરા પાળા” જો એસા કહા ગયા હૈ સો હસકા
માવાયં યહ હૈ કિ-જિતને મી ત્રમ ઓર સ્થાવર જીવ હૈં એ સવ પૃથિવી
હૈ, અધિકરણ (આધાર) બાલે હૈં. “પૃથિવી પ્રતિષ્ઠિતાસસા સ્થાવરાઃ પ્રાણાઃ”
એસા જો કથન કિયા ગયા હૈ સો યહ મી પ્રાયિક હી હૈ ક્યોંકિ આકાશ,
પર્વત ઓર વિમાન આદિ મેં મી જીવોં કા નિવાસ શાસ્ત્ર મેં પ્રતિપાદિત
કિયા ગયા હૈં. “અજીવા જીવપ્રતિષ્ઠિતા” એસા જો કહા ગયા હૈ સો
હસકા અભિપ્રાય એસા હૈ કિ શરીરાદિ પુદ્ગલરૂપ જો અજીવ હૈં એ જીવ
કે આધારરૂપ હૈ-જિનકા અધિકરણ જીવ હૈં, ક્યોં કિ શરીરાદિક પુદ્ગલ
જીવોં મેં સ્થિત હોતે હૈં. “જીવા કમ્મપદ્ધિયા” જીવ કર્મપ્રતિષ્ઠિત હૈં
એસા જો કહા ગયા હૈ, સો હસકા અભિપ્રાય એસા હૈ કિ અનુદયાવસ્થા પ્રાપ્ત
કર્મ પુદ્ગલ કે સમુદાય ડુવર સંસારી જીવ આશ્રિત રહતે હૈં, અર્થાત્ સસારી

પૃથ્વી છે તે બ્રહ્માના આધારે જ પ્રતિષ્ઠિત છે ‘પૃથ્વીપદ્ધિયા તસા ધાવરા
પાળા’, (પૃથ્વીપ્રતિષ્ઠિત ત્રમ સ્થાવર જીવો)નું વ્યત્પન્ન એ છે કે જેટલાં
ત્રસ અને સ્થાવર જીવો છે તેનો આધાર પૃથ્વી છે ‘પૃથ્વીપદ્ધિયા તસા ધાવરા
પાળા’ એવું ને કથન છે તે ખજી ઘણે બાજે છે એમ સમજવું કારણ કે આકાશ,
પર્વત અને વિમાન વગેરેના આધારે પણ જીવોના રહેઠાણો છે એવું શાસ્ત્રોમાં
પ્રતિપાદન કરાયેલ છે (અજીવા જીવપદ્ધિયા) (અજીવો જીવપ્રતિષ્ઠિત
છે) તેનું વ્યત્પન્ન એ છે કે શરીરાદિ પુદ્ગલ રૂપ ને અજીવો તેમનું અધિ
કરણ (આધાર) જીવ છે તેમનું અધિકરણ (આધાર) જીવ છે તેમને જીવપ્રતિ
ષ્ઠિત કહે છે કારણ કે શરીરાદિ પુદ્ગલો જીવે ને આધારે પ્રતિષ્ઠિત (સ્થિત)
હોય છે “જીવા કમ્મપદ્ધિયા (કર્મપ્રતિષ્ઠિત જીવો) જીવો કર્મપ્રતિષ્ઠિત છે
તેનો આધાર આ પ્રમાણે છે-ઉદયમાર્ગ નહીં આવેલ કર્મપુદ્ગલોને આધારે
સંસારી જીવો રહેલા છે એટલે કે સંસારી જીવોની સ્થિતિ કર્માધીન હોય,

અસંખ્યેયાન્ ભાગાન્ ન વા સર્વં ભાગં સ્પૃશતિ. કિન્તુ અસંખ્યેયમેવ ભાગં સ્પૃશ-
તીતિ । ‘इमीसेणं भंते’ अस्याः खलु भदन्त । ‘रयणप्पभाए पुढ्वीए’ रत्नप्रभायाः
पृथिव्याः ‘घनोदही’ घनोदधिः ‘धम्मत्थिकायस्स’ धर्मास्तिकायस्य “ किं
संखेज्जभागं फुसइ ’ धर्मास्तिकायस्य किं संख्येयभागं स्પૃશતિ સર્વં વા સ્પૃશ-
તીતિ રત્નપ્રભાપૃથિવ્યાઃ સમ્બન્ધી ઘનોદધિઃ ધર્માસ્તિકાવયવસંખ્યેયભાગં સ્પૃશ-
ત્યાદિ પ્રશ્નઃ । ભગવાનાહ—‘ जहां ’ इत्यादि—“ जहा रयणप्पभा तहा-घणो-
दही ” यथा रत्नप्रभा तथा घनोदधिः, यथा रत्नप्रभा धर्मास्तिकायस्या-संख्येय

भागों का और असंख्यात भागों का भी स्पर्श नहीं करती है—और न
वह सम्पूर्णरूप में ही उसका स्पर्श करती है—इस तरह यहाँ असंख्या-
तवें भाग का स्पर्श करना यह द्वितीयपक्ष ही अङ्गीकार किया है—शेष
चार पक्ष नहीं । (इमीसेणं भंते ! रयणप्पभाए पुढ्वीए घनोदही) हे
भदन्त ! अब हम आपसे यह जानना चाहते हैं कि इस रत्नप्रभासंबन्धी
जो घनोदधि है वह धर्मास्तिकाय के कितने भाग का स्पर्श करता है ?
(किं संखेज्जइभागं फुसइ, असंखेज्जइभागं फुसइ, संखेज्जेइभागे फुसइ,
असंखेज्जेभागे फुसइ, सव्वं वा फुसइ) क्या संख्यातवें भाग का स्पर्श
करता है, या असंख्यातवें भाग का स्पर्श करता है, अथवा धर्मास्तिका-
य के संख्यातभागों का स्पर्श करता है—या असंख्यातभागों का स्पर्श
करता है—किं समस्तरूप से उसका स्पर्श करता है ? इस विषय में
गौतम का समाधान करने निमित्त प्रभु उनसे कहते हैं (गोयमा) हे गौ-
तम । (जहोरयणप्पभा तहा घणोदही) जिस प्रकार रत्नप्रभा पृथिवी

પણ સ્પર્શ કરતી નથી. પણ તે તેના અસંખ્યાતમા ભાગને સ્પર્શ કરે છે.
આ જવાબનુ કારણ નીચે પ્રમાણે છે. ધર્માસ્તિકાય સંપૂર્ણ લોકમાં વ્યાપ્ત છે પણ
રત્નપ્રભા પૃથ્વી ઘણી થોડી જગ્યામા આવેલી છે ગૌતમ સ્વામીના ઉપદેશાનુ
પાત્ર વિકલ્પોમાના બીજા વિકલ્પને જ અહીં સ્વીકાર થયો છે.

પ્રશ્ન—“ इमीसे ण भंते ! रयणप्पभाए पुढ्वीए घनोदही ” हे भदन्त ।
आ रत्नप्रभा सङ्गधी जे घनोदधि છે તે ધર્માસ્તિકાયના કેટલા ભાગને
સ્પર્શ કરે છે ? (કિં સંખેજ્જઇમાગ ફુસઇ ?) થું તે તેના સંખ્યાતમાં ભાગને
સ્પર્શ કરે છે ! (કિં અસંખેજ્જઇમાગ ફુસઇ) કે તેના અસંખ્યાતમાં ભાગને
સ્પર્શ કરે છે ? “ સંખેજ્જે ભાગે ફુસઇ ? અસંખેજ્જે ભાગે ફુસઇ ? સવ્વં વા ફુસઇ ”
કે તેના સંખ્યાત ભાગોને સ્પર્શ કરે છે, કે તેના અસંખ્યાત ભાગોને સ્પર્શ
કરે છે ? કે સમસ્ત ધર્માસ્તિકાયને સ્પર્શ કરે છે ?

માગમેવ સ્પૃશતિ તથા રત્નપ્રમાસમ્યગ્ધી ધનોદધિરપિ ધર્માસ્તિકાયસ્પાસંસ્થેષ
 માગમેવ સ્પૃશતીતિ દ્વિતીયપક્ષસ્યાનુમતિર્વદ્વા મગવતા શ્લેષપક્ષતૃણ્યસ્યામ્વીકાર
 एवेति मावः । एनम्—‘घणवाय तणुवाया वि’ घनवातस्तनुवातावपि यथा धनो-
 दधिः रत्नप्रमासम्यग्धौ धर्मास्तिकायस्यासंस्થेयमागमेव स्पृशति एवमेव-
 घनवातस्तनुवातभावि धर्मास्तिकायस्यासंસ્થेयमेव मागं स्पृशतीति । ‘इमीसे
 णं मते’ अस्याः खलु भवन्त ! ‘रयणप्यभाए पुडवीए’ रत्नप्रमाया पृथिव्या !
 ‘उवासंतरे’ अवकाशान्तरम् ‘धम्मत्थिकायस्स’ धर्मास्तिकायस्य ‘किं संखे
 ज्जइमागं फुसइ’ किं संख्ययमागं स्पृशति ‘असंखेज्जइमागं फुसइ’ असं-
 ख्ययमागं स्पृशति । ‘जाव सप्प फुसइ’ यावत्सर्वं स्पृशति इह यावत्सर्वेन
 ‘संखेज्जे मागे असंखेज्जे मागे’ अनयोर्ग्रहणम् । रत्नप्रमासम्यग्वि अवकाशान्त

ધર્માસ્તિકાય કે અસંસ્થાતર્યે ભાગ કા સ્પર્શ કરતી હૈ ડસી પ્રકાર સે
 હસ રત્નપ્રમા સમ્યગ્ધી જો ધનોદધી હૈ વહની ધર્માસ્તિકાયકે અસંસ્થાતર્યે
 ભાગ કા હી સ્પર્શ કરતા હૈ હસ પ્રકાર દિતીય પક્ષ હી યહા સ્વીકાર
 કિયા ગયા હૈ શ્લેષ ચાર પક્ષ નહી । (યથ ઘણવાયતણુવાયા વિ) હસી
 તરહ સે રત્નપ્રમા સમ્યગ્ધી ધનવાત ઓર તનુવાત યે હો ની ધર્માસ્તિકાય
 કે અસંસ્થાતર્યે ભાગકા હી સ્પર્શ કરતા હૈ ।

અવ ગૌતમ પ્રશ્ન સે વહ પૂછતે હૈ કિ (હમીસે ણં મતે ! રયણપ્યભાએ
 પુડવીએ ડવાસતરે ધમ્મત્થિકાયસ્સ કિં સંખેજ્જમાગં ફુસહ, અસંખેજ્જ
 હમાગ ફુસહ, જાવ સપ્પ ફુસહ) હે ભદન્ત ! હસ રત્નપ્રમા પૃથિવી કા
 જો અવકાશાન્તર હૈ વહ ધર્માસ્તિકાય કે કિનતે ભાગ કા સ્પર્શ કરતા
 હૈ યથા સંસ્થાતર્યે ભાગ કા સ્પર્શ કરતા હૈ યા વસ્તુકે અસંસ્થાતર્યે ભા-
 ગ કા સ્પર્શ કરતા હૈ અથવા ધર્માસ્તિકાય કે સંસ્થાતર્યે ભાગો કા સ્પર્શ

ઉત્તર—“ ગોયમા । ” હે ગૌતમ ! “ જાહા રયણપ્યમા વહાધનોદધી ”

જેમ રત્નપ્રમા પૃથ્વી ધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યાતર્માં ભાગનો અંશ કરે છે
 એજ પ્રમાણે રત્નપ્રમાનો ધનોદધિ પણ ધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યાતર્માં ભાગનો
 અંશ કરે છે આ રીતે બહી પણ યાવ વિકલ્પોર્થના બીજા વિકલ્પનો સ્વી-
 કાર કરાયો છે બાકીના વ્યવનો સ્વીકાર મયો નથી. (યથ ઘણવાયતણુવાયા
 વિ ” એજ પ્રમાણે રત્નપ્રમાના ધનવાતી અને તનુવાત પણ ધર્માસ્તિકાયના
 અસંખ્યાતર્માં ભાગનો અંશ કરે છે

પ્રશ્ન—“ હમીસે નં મતે ! રયણપ્યભાએ પુડવીએ ડવાસતરે ધમ્મત્થિકાયસ્સ
 કિં સંખેજ્જમાગં ફુસહ, અસંખેજ્જમાગં ફુસહ જાવ સંપ્પ ફુસહ ” હે ભદન્ત !
 આ રત્નપ્રમા પૃથ્વીનું જે અવકાશાન્તર છે તે ધર્માસ્તિકાયના સંખ્યાતર્માં ભાગનો

સ્મ, ધર્મસ્થિતિકાવસ્તુ કતમં ભાગં સ્પૃશતીતિ પ્રશ્નઃ । મહાવાનાહ—‘ગોયમા’ ઇ-
ત્યાદિ । ‘ગોયમા’ હે ગૌતમ । ‘સંખેજ્જહભાગં ફુસહ’ સંખેયભાગં સ્પૃશતિ
‘ળો અસંખેજ્જહભાગં ફુસહ’ નો અસંખેયભાગં સ્પૃશતિ ‘ળો સંખેજ્જે ભાગે ળો
અસંખેજ્જે ભાગે ળો સવ્વં ફુસહ’ નો સંખેયભાગાન્ નો અસંખેયભાગાન્ નો
વા સર્વં સ્પૃશતિ । ‘ઉવાસંતરાઈં સઘ્વાઈં’ અવકાશાન્તરાણિ, પૂર્વોક્તપ્રકારેણ સર્વા-
પ્યપિ અવકાશાન્તરાણિ જ્ઞાતવ્યાનીતિ । “જહા રયણપ્પમાણ પુઢવીણ વત્તવ્વયા
મણિયા’ યથા રત્નપ્રમાયાઃ પૃથિવ્યાઃ વક્તવ્યતા મણિતા. ‘એવં જાવ અહે
સત્તમાણ’ એવં યાવત્ અધઃ સપ્તમ્યા વક્તવ્યતા મણિતવ્યાઃ ધર્મસ્થિતિકાવસ્તુ

કરતા હૈં યા અસંખ્યાતભાગ સ્પર્શ કરતા હૈં યા કિ સમ્પૂર્ણરૂપ સે ડસ-
કા સ્પર્શ કરતા હૈં ? ઇસકા ઉત્તર દેતે હુણ પ્રભુ ગૌતમ સે કહતે હૈં
(ગોયમા !) હે ગૌતમ । (સંખેજ્જહભાગં ફુસહ) રત્નપ્રભાપૃથિવી કા
અવકાશાન્તર ધર્મસ્થિતિકાવસ્તુ સંખ્યાતવેં ભાગ કા હી સ્પર્શ કરતા હૈં ।
અસંખ્યાતવેં ભાગ કા, સંખ્યાતભાગોં કા અસંખ્યાતભાગોં કા સ્પર્શ
નહીં કરતા હૈં ઔર ન વહ સમ્પૂર્ણ સે હી ડસકા સ્પર્શ કરતા હૈં । (ઉ-
વાસંતરાઈં સઘાઈં) ઇસ તરહ સે ઔર બી જિતને અવકાશાન્તર હૈં વે
સબ ધર્મસ્થિતિકાવસ્તુ સંખ્યાતવેં ભાગ કા હી સ્પર્શ કરતે હૈં એસા જા-
નના ચાહિયે । (જહા રયણપ્પમાણ પુઢવીણ વત્તવ્વયા મણિયા એવં જાવ
અહે સત્તમાણ) જિસ પ્રકાર સે ધર્મસ્થિતિકાવસ્તુ સ્પર્શના કા યદ્ધ પૂર્વોક્ત
રૂપ સે વિચાર રત્નપ્રભા પૃથિવી મેં કિયા ગયા હૈં ડસી પ્રકાર સે શેષ
હિ છહ પૃથિવીકાવસ્તુ મેં બી જાનના ચાહિયે । તાત્પર્ય યહ હૈં કિ રત્નપ્રભા

સ્પર્શ કરે છે ? કે અસંખ્યાતભાગાનો સ્પર્શ કરે છે ? સંખ્યાત ભાગોનો
સ્પર્શ કરે છે ? કે અસંખ્યાત ભાગોનો સ્પર્શ કરે છે ? કે સમસ્ત ધર્મસ્થિ-
તિકાવસ્તુ સ્પર્શ કરે છે ?

ઉત્તર—“ગોયમા !” હે ગૌતમ ! “સંખેજ્જહ ભાગં ફુસહ” રત્નપ્રભા
પૃથ્વીનુ અવકાશાન્તર ધર્મસ્થિતિકાવસ્તુ સંખ્યાતમા ભાગનો સ્પર્શ કરે છે. તે
ધર્મસ્થિતિકાવસ્તુ અસંખ્યમા ભાગનો, કે સંખ્યાત ભાગોનો, કે અસંખ્યાત ભાગો
નો, કે સમસ્ત ધર્મસ્થિતિકાવસ્તુ સ્પર્શ કરતું નથી.

એજ પ્રમાણે “ઉવાસંતરાઈં સઘ્વાઈં” બીજાં પણ બેટલાં અવકાશાન્તરો છે,
તેઓ બધાં ધર્મસ્થિતિકાવસ્તુ સંખ્યાતમા ભાગનો જ સ્પર્શ કરે છે, એવું સમજ લેવું.

“જહા રયણપ્પમાણ પુઢવીણ વત્તવ્વયા મણિયા એવં જાવ અહે સત્તમાણ”
ધર્મસ્થિતિકાવસ્તુ સ્પર્શનાને પૂર્વોક્ત રીતે રત્નપ્રભા પૃથ્વીની બાબતમાં બે રીતે
વિચાર કરવામાં આવ્યા છે એજ રીતે બાકીની છ પૃથ્વીઓ સાથેની સ્પર્શના

स्वर्शनाविषयको विचारगे यथा रत्नप्रमायां कृतः तथैव अपः सप्तमपृथिवीपर्यन्तं तेनैव रूपेण विचारः पच्यते इति यथा रत्नप्रमापृथिवी सत् सम्बन्धि-घनादधि घनघात-तनुघात-अवकाशान्तरमिति मिलिता पञ्च सूत्राणि तथैव शर्करापृथिवी सत्सम्बन्धी घनोदधि घ-घात-तनुघात-अवकाशान्तरमिति मिलिता तत्रापि पञ्च सूत्राणि, एवं नेपारस पञ्चपृथिवीसु पञ्चसूत्राणि लिखेयानि । सर्वसंघसनया पञ्च त्रिंशत् सूत्राणि यदन्ति । ' जम्पूदीवाहया दीपा लवणसमुद्राहयासमुद्रा ' जम्पूदीपादिका द्वीपाः लवणसमुद्रादिकाः समुद्राः पूर्वोक्तपदेव ज्ञातव्या जम्पूदीपा द्वयोर्द्विधौ धर्मास्तिकायस्यासंख्येयभागेषु स्पृष्टन्तीति ' एव सोहमेकप्ये जाव ईसीपमारा पुद्वी पुसइ ' एवं सौधर्मः कल्पो यावत् ईपसमागमारा पृथिवी

संघपी घनोदधि, घनघात, तनुघात, अवकाशान्तर ये सब मिलकर जिन प्रकार पांच सूत्रों द्वारा विचारित हुए हैं, उसी प्रकार से शर्करा पृथिवी संबंध घनोदधि, घनघात, तनुघात और अवकाशान्तर तथा स्वयं शर्करा पृथिवी इनके विषय में भी इसी प्रकार के पांच सूत्र बना कर विचार कर लेना चाहिये । इसी प्रकार से घालुकाप्रभा आदि पांच पृथिवी विषय के भी पांच पांच सूत्र जानना चाहिये । इस प्रकार सब मिलकर ३५ पंजीस सूत्र हो जाते हैं । (जम्पूदीवाहया दीपा लवण समुद्राहया समुद्रा) इसी प्रकार से जम्पूदीप आदि असंख्यान द्वीप और लवण समुद्र आदि असंख्यान समुद्र भी धर्मास्तिकाय के असंख्यानवें भाग का ही स्पर्श करते हैं-अन्य चार का नहीं । (एवं सोहमे कप्ये जाव ईसीप मारा पुद्वी पुसइ) इसी प्रकार से सौधर्म कल्प से लेकर ईपदी-

भाजतर्मा पञ्च श्रमल देवु कडेवानुं तात्पर्यं को छे के रत्नप्रमाणा घनोदधि, घनघात, तनुघात अने अवकाशान्तर, को जधनि जेवां रीते पांच सूत्रो द्वारा विचार करवायां आये। छे को प्रभावे शर्करा, घालुकाप्रभा वगैरे छे पृथ्वी कोना घनोदधि, घनघात, तनुघात अने अवकाशान्तर। तथा ते छे पृथ्वीने विषे पञ्च उपर प्रभावे पांच, पांच सूत्रो श्रमल देवा. आ रीते सातेना भगीने ३५ पंजीस सूत्रो जनये.

"जम्पूदीवाहयादीपा लवणसमुद्राहयासमुद्रा" को प्रभावे जम्पूदीप आदि असंख्यान द्वीपा अने लवण समुद्र आदि असंख्यान समुद्रो पञ्च धर्मो स्तिकायना असंख्यानर्मा भाजने। स्वयं करे छे, असंख्यानर्मा भाजने, के असंख्यान भाजने। के असंख्यान भाजने के समस्त धर्मास्तिकायने स्वयं करवा नथी. " एव सोहमे कप्ये जाव ईसीपमारा पुद्वीपुसइ " को प्रभावे सौधर्म कल्प आदि कल्पधी लक्ष्मिने छे। तथाभावा पृथ्वी पयतना विषे श्रमल देवु कोटहे छे

स्पृशति. 'ते सखे वि असंखेज्जइभागं फुसंति' ते सर्वेऽपि असंखेयभागं
 स्पृशन्ति 'सेसा पडिसेहियव्वा' शेषाः प्रतिषेद्धव्याः जम्बूद्वीपादिकाः द्वीपाः
 सर्वे समुद्राः सौधर्मकल्पादयो यावत् ईषत्प्राग्भारा पृथिवी-पर्यन्ताः—सर्वेऽपि
 धर्मास्तिकायस्यासंखेयमेव भागं स्पृशन्तीति न तु संखेयभागम् संखेयान्
 भागान् असंखेयान् भागान् सर्वं वा स्पृशन्तीति भावः । 'एवं अहमत्थिकाए'
 एवमधर्मास्तिकायः धर्मास्तिकायवदेवाऽधर्मास्तिकायस्यापि स्पर्शनाविषये विचारः
 करणीयः 'एवं लोयागासेवि' एवं लोकाकाशेऽपि ।

आलापश्चेत्थम् 'इमाणं रयणप्पभा पुढवी अहमत्थिकाए सा किं संखेज्जइ
 भागं फुसइ असंखेज्जइ भागं फुसइ. संखेज्जे भागे फुसइ, असंखेज्जे भागे फुसइ'
 गभारा नाम की पृथिवी तक जानना चाहिये—अर्थात् सौधर्म आदि सम-
 स्तकल्प, नव ग्रैवेयक, पांच अनुत्तर और ईषत्प्राग्भारा पृथिवी ये सब
 धर्मास्तिकाय के असंख्यातवें भाग का ही स्पर्श करते हैं (सेसा पडि-
 सेहियव्वा) धर्मास्तिकाय के संख्यातवें भाग का, धर्मास्तिकाय के
 संख्यातभागों का, असंख्यातभागों का स्पर्श नहीं करते हैं और
 न धर्मास्तिकाय को ये सब पूर्णरूप से स्पर्श करते हैं । (एवं अहम्म-
 त्थिकाए) इसी तरह से अधर्मास्तिकाय के स्पर्श के विषय में भी
 विचार जानना चाहिये । (एवं लोयागासे वि) तथा लोकाकाश
 को स्पर्श करने के विषय में ऐसा ही विचार जानना चाहिये ।
 अधर्मास्तिकाय के स्पर्श करने के विषय में रत्नप्रभा पृथिवी को
 लेकर आलाप इस प्रकार से है—(इमाणं रयणप्पभा पुढवी अहम्मत्थि-
 काए सा किं संखेज्जइभागं फुसइ? असंखेज्जइभागं? फुसइ? संखे-

सौधर्म आदितसमस्त कल्पो (देवलोको), नव ग्रैवेयको, पांच अनुत्तर विभा-
 नो, अने धृष्टप्रागलारा पृथ्वी, ये षष्ठा धर्मास्तिकायना असंख्यातभां लागेना
 स्पर्श करे छे "सेसा पडिसेहियव्वा" तेअो संख्यातभां लागेना, के संख्या-
 तलागेना, के असंख्यातलागेना के समस्त धर्मास्तिकायना स्पर्श करता
 नथी. आ रीते भाडीना आर विकल्पो अही पणु लागू पडतां नथी "एव
 अहम्मत्थिकाए" अधर्मास्तिकायनी स्पर्शनाना विषयभां पणु धर्मास्तिकाय प्रभाणे
 न पणुन समज्जे देवु (एवं लोयागासे वि) लोकाकाशनी स्पर्शनाना विष-
 यभां पणु अे प्रभाणे न समज्जुं. अधर्मास्तिकायनी रत्नप्रभा पृथ्वी साथेनी
 स्पर्शना विषेनां सूत्रे नीचे प्रभाणे छे-

"इमाणं रयणप्पभा पुढवी अहम्मत्थिकाए सा किं संखेज्जइभागं फुसइ?
 असंखेज्जइभागं फुसइ? संखेज्जे भागे फुसइ, असंखेज्जे भागे फुसइ, सर्वं फुसइ"

સમ્ય પુસદ્ ગોયમા ! નો સસેજ્જમાગ પુસદ્ અસસેજ્જમાગ પુસદ્ નો સસેજ્જમાગ પુસદ્, નો ડસસેજ્જે માગે પુસદ્ નો સમ્ય પુસદ્ ' इत्यादिरूपेण सर्वथा व्यापका स्वयमवोदनीयाः । इहापि पूर्ववदेव विचार करणीय इति ।

। મગધિ વેદ સંગ્રહગાથા—જુદબોટ્ટી ઘણતણ વપ્પા ગેવેજ્જણુત્તારિટી । સસેજ્જમાગ અંતરમ્ સેસા અસસેજ્જમાગ ' पृथिव्युत्पत्ती घनतनुकल्पा प्रवेयका दुश्चरी सिद्धि रश्मयश्चागम अक्षरं पु देवाः उक्षरयथाः ॥ पृथिव्युद्विघ्नवशात्

જલે માગે પુસદ્ ? અસસેજ્જે માગે પુસદ્ ? સમ્ય પુસદ્ ?—ગોયમા । નો સસેજ્જમાગ પુસદ્, અસસેજ્જમાગ પુસદ્, નો સસેજ્જે માગે પુસદ્ નો અસસેજ્જે માગે પુસદ્, નો સમ્ય પુસદ્) इन सूत्रों का अर्थ स्पष्ट है—निक घर्मास्तिकाय की जगह अधर्मास्तिकाय लगा कर इनका अर्थ करना चाहिये । इसी तरहसे घर्मास्तिकायके सूत्रपाठ की तरह अधर्मास्तिकाय की स्पर्शना के विषय में अग्निलोक उष्णलोक आदि सप्तवि विचार भी करनेना चाहिये और उस विषय में सूत्रपाठ घर्मास्तिकाय की जगह अधर्मास्तिकाय लगाकर कहना चाहिये । यही बात (इहापि पूर्ववदेव विचारः करणीयाः) हम कथन से प्रफट की गई है ।

સંગ્રહ ગાથા— કા અર્થ હમ પ્રકાર સે ટે—રત્નપ્રમા આદિક સાતો પૃથિવિકાય, ઘનોદધિ, ઘનયાત ઓર તનુયાત ય તીનો ૧૦ કલ્પ, ૯ પ્રવેયક, ૫ અનુત્તર ઓર રૂપાપાગમારા નામક સિદ્ધિ સ્થાન યે સય ધર્મા

“ ગોયમા ! નો રસજ્જમાગ પુસદ્, અસસેજ્જમાગ પુસદ્ નો સસેજ્જે માગે ” પુસદ્ ? ” ના અર્થનાજેમાગ પુસદ્ ના સમ્ય પુસદ્ ? ” આ સૂત્રોનો અર્થ સ્પષ્ટ છે આગળ ધર્માસ્તિકાયની રત્નપ્રમા પૃથ્વી સાથેની સ્પર્શના વિષે એ સૂત્રો આપ્યા છે, તે સૂત્રોમાં ધર્માસ્તિકાયને બદલે અધર્માસ્તિકાયના ૫૪ મૂકીને ધર્માસ્તિકાયના સૂત્રો પ્રમાણે જ તેમનો અર્થ કરવો બોધ્યો જોજ પ્રમાણે ધર્માસ્તિકાયના સૂત્રપાઠ પ્રમાણે જ અધર્માસ્તિકાયની અપોલોક, ઉષ્ણલોક વગેરેની સાથેની સ્પર્શનાના વિષયમાં પણ સૂત્રો કહેવા બોધ્યો. પણ તે સૂત્રપાઠમાં ધર્માસ્તિકાયને બદલે ‘ અધર્માસ્તિકાય ’ ૫૪ મૂકવું બોધ્યો. જોજ વાત “ इहापि पूर्ववदेव विचारः करणीयाः ” આ કથન દ્વારા બતાવવામાં આવેલ છે

અંતરગ્રાધાનો અર્થ આ પ્રમાણે છે—રત્નપ્રમા આદિ સાતે પૃથ્વી, ઘનોદધિ, ઘનયાત અને તનુયાત. જો ત્રણે આર કલ્પ, ૯ ગેવેયક, પાંચ અનુ

પ્રમેયચન્દ્રિકા ટી૦શ૨૩૦૧૦સૂ૦૫ ધર્માસ્તિકાયાદિનાં પ્રમાણાદિનિરૂપણમ્ ૧૦૧૧

તન્નુ વાતકલ્પગ્રૈવેયકાનુત્તરસિદ્ધીનામવકાશાન્તરાણિ સર્વાણિ ધર્માસ્તિકાયસ્ય
સંખ્યેયભાગં સ્પૃશન્તિ શેષાઃ સર્વેઽપિ ધર્માસ્તિકાયસ્ય અસંખ્યેયમેવ ભાગં
સ્પૃશન્તીતિ ગાયાર્થઃ ॥ સૂ૦ ૧૨ ॥

इति श्रीविश्वविख्यात-जगद्गुरु-प्रसिद्धवाचकपञ्चदशभाषाकलितललितकला-
पालापक-प्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक-वादिमानमर्दक-श्रीशाहूछत्रप-
तिकोल्हापुरराजप्रदत्त-‘ जैनशास्त्राचार्य ’ पदभूषित-कोल्हापुरराज-
गुरु-बालब्रह्मचारि-जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकरपूज्यश्री-घासीलाट्ट-
व्रतिविरचितायां श्रीभगवतीसूत्रस्य प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां
व्याख्यायां द्वितीयशतके दशमोद्देशकः समाप्तः ॥२-१०॥

સ્તિકાય કે અસંખ્યાતવે ભાગ કો હી સ્પર્શ કરતેં હૈં તથા જો અવકા-
શાન્તર હૈં વે ધર્માસ્તિકાય કે સંખ્યાતવે ભાગકો સ્પર્શ કરતેં હૈં ॥સૂ૦૫॥

જૈનાચાર્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજા કૃત “ભગવતીસૂત્ર” કી પ્રિય-
દર્શિની વ્યાખ્યાકે દ્વિતીય શતકકે દશવાંઉદ્દેશા સમાપ્ત ॥૨-૧૦॥

ત્તર વિમાનો અને ઇષ્ટપ્રાગભારા નામનું સિદ્ધિ સ્થાન, એ સાતે ધર્માસ્તિકાયના
અસંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે પણ એ અવકાશાન્તર છે તે ધર્માસ્તિકા-
યના સંખ્યાતમાં ભાગનો સ્પર્શ કરે છે.

॥ બીજા શતકનો દશમો ઉદ્દેશક સમાપ્ત ॥

જૈનાચાર્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજા કૃત ભગવતી સૂત્રની પ્રિયદર્શિની
વ્યાખ્યાના બીજા શતકનો દશમો ઉદ્દેશો સમાપ્ત થયો. ॥ ૨-૧૦ ॥

સખ્વ પુસદ્ ગોયમા ! નો સસેઝ્જમાગ પુસદ્ અસસેઝ્જમાગ પુસદ્ નો સસેઝ્જે
માગે પુસદ્, નો અસસેઝ્જે માગે પુસદ્ નો સખ્વ પુસદ્ 'શ્રયાદિરુપેણ સર્વમા-
સ્થાપનાઃ સ્વયમેવોદનીયાઃ । ઇદાપિ પૂર્વવદેવ વિચાર યઃ સ્વચ્ચ ઇતિ ।

મથતિ વેદ સમ્રજગાયા—પુરુષોત્ત્ત્વી ઘણતણ કપ્પા ગેવેઝ્જેણુત્તરાસિદ્ધી ।
સસેઝ્જમાગ માર્ગ અંતરેસુ સેસા અસસેઝ્જમાગ 'પૃથિયુદધી ધનસનુકસ્યા પ્રેવેયકા
નુપરો સિદ્ધિ રસદેયમાગમ અંતરેપુ દેવા અસસેઝ્જમાગ ॥ પૃથિયુદધિધનવાત

ઝજે માગે પુસદ્ ? અસસેઝ્જમાગે પુસદ્ ? મખ્વ પુસદ્ ?—ગોયમા ! નો
સસેઝ્જમાગ પુસદ્, અસસેઝ્જમાગ પુસદ્, નો સસેઝ્જે માગે પુસદ્
નો અસસેઝ્જેમાગે પુસદ્, નો સખ્વ પુસદ્) इन सुत्रों का अर्थ स्पष्ट है—
सिफ धर्मास्तिकाय की जगह अधर्मास्तिकाय लगा कर इनका अर्थ करना
चाहिये । इसी तरहसे धर्मास्तिकायके सुत्रपाठ की तरह अधर्मास्तिकाय
की स्पर्शना के विषय में अस्तिलोक उच्छलोक आदि संयवि विचार भी
करलेना चाहिये और उस विषय में सुत्रपाठ धर्मास्तिकाय की जगह
अधर्मास्तिकाय लगाकर कहना चाहिये । यही बात (इहापि पूर्ववदेव
विचारः करणीय) इस कथन से प्रकट की गई है ।

सम्रज गाया— का अर्थ हम प्रकार से है—रत्नप्रभा आदिक सातों
पृथिविकाय, धनोदधि, धनवात और तनुवात ये तीनों १२ कल्प, ९ प्रैवे
यक, ५ अनुत्तर और ईषापागमारा नामक सिद्धि स्थान ये सप्त धर्मा

“ગોયમા ! નો સસેઝ્જમાગ પુસદ્, અસસેઝ્જમાગ પુસદ્, નો સસેઝ્જે
માગે પુસદ્ ? ” નો અર્થ એજેમાગ પુસદ્ નો સખ્વ પુસદ્ ? ” આ સૂત્રોનો અર્થ
સ્પષ્ટ છે આગળ ધર્માસ્તિકાયની રત્નપ્રભા પૃથ્વી સાથેની સ્પર્શના વિષે જે
સૂત્રો આપ્યા છે તે સૂત્રોમાં ધર્માસ્તિકાયને બદલે અધર્માસ્તિકાયના પદ મૂકીને
ધર્માસ્તિકાયના સૂત્રો પ્રમાણે જ તેમનો અર્થ કરવો બોધ્યો જોઈ પ્રમાણે
ધર્માસ્તિકાયના સૂત્રપાઠ પ્રમાણે જ અધર્માસ્તિકાયની અપોલોક, ઉચ્ચલોક વગેરેની
સાથેની સ્પર્શનાના વિષયમાં પણ સૂત્રો કહેવા બોધ્યો. પણ તે સૂત્રપાઠમાં
ધર્માસ્તિકાયને બદલે ‘અધર્માસ્તિકાય’ પદ મૂકવું બોધ્યો. જોઈ વાત “ઇહાપિ
પૂર્વવદેવ વિચાર કરणीय ” આ કથન દ્વારા બતાવવામાં આવેલ છે

સમ્રજગાયાનો અર્થ આ પ્રમાણે છે—રત્નપ્રભા આદિ સાતે પૃથ્વી,
ધનોદધિ, ધનવાત અને તનુવાત. જે ત્રણે, બાર કલ્પ, ૯ પ્રેવેયક, ૫ અનુ

171



નતુ ‘અજીવા જીવપદ્ધિયા અજીવા જીવસંગહિયા’ इत्यनयोर्वाक्ययोरर्थे को भेदः? न कोपि भेदः प्रतिभाति यथा मुनिसंयतयोः, इति चेदत्रोच्यते-अजीवा जीव-प्रतिष्ठिताः, इत्यत्राऽजीवजीवयोराधाराधेयभावः कथितः, तथा अजीवा जीवसंगृहीता इति वाक्ये तु अजीवजीवयोः संग्राह्यसंग्राहकभावः प्रतिपादितः संग्रहकर्ता जीवः संग्राह्याश्चाजीवाः, इत्येतावानेव भेद उभयत्र, सावद्यकर्मणि मौनकरणान्मुनिः, पट-

जीवों की स्थिति कर्माधीन होती है इस कारण वे कर्माधीन स्थितिवाले होने के कारण ‘जीव कर्मप्रतिष्ठित हैं’ ऐसा कहा गया है। “अजीवा जीवसंगहिया” ऐसा जो कहा है सो उसका भाव ऐसा है कि जीव मनो भाषा आदि रूप में पुद्गलों का ग्रहण करते रहते हैं।

शंका—“अजीवा जीवपद्विद्या” इस वाक्य में और “अजीवा जीवसंगहिया” इन दोनों वाक्यों के अर्थ में क्या भेद है? मुझे तो कोई भी भेद मालूम नहीं पड़ता है। जैसे मुनि और संयत में फर्क नहीं है क्यों कि जो मुनि है, वही संयत है, जो संयत है, वही मुनि है।

समाधान—“अजीवा जीवप्रतिष्ठिताः” इस वाक्य में अजीव और जीव इनमें आधार आधेय भाव कहा गया है। और “अजीवा जीव संगृहीता” इस वाक्य में संग्राह्यसंग्राहक भाव कहा गया है। संग्रह-कर्त्ता जीव और संग्राह्य अजीव हैं। इतना ही मात्र इन दोनोंमें भेद है। मुनि और संयत, इनमें भी समभिरूढनय की अपेक्षा भेद है और

છે. આ રીતે તેઓ કર્માધીન સ્થિતિવાળા હોવાથી તેમને કર્મપ્રતિષ્ઠિત કહ્યાં. “અજીવા જીવસંગહિયા” (અજીવો જીવસંગ્રહીત છે) એનું તાત્પર્ય એ છે કે જીવો મનોવર્ગણના પુદ્ગલોને મનરૂપે તથા ભાષા વગેરે વર્ગણના પુદ્ગલોને ભાષા વગેરે રૂપે ગ્રહણ કરતા રહે છે તે કારણે અજીવો જીવ સંગ્રહીત કહેલ છે

શંકા—“અજીવા જીવપદ્ધિયા” અને “અજીવા જીવસંગહિયા” એ બંને વાક્યોમા શો અર્થભેદ છે? જેવી રીતે મુનિ અને સંયત વચ્ચે કોઈ ભેદ નથી કારણ કે જે મુનિ છે તેજ સંયત છે અને જે સંયત છે તેજ મુનિ છે, એજ પ્રમાણે ઉપરના વાક્યોના અર્થમા પણ કોઈ ભેદ લાગતો નથી

સમાધાન—“અજીવા જીવપ્રતિષ્ઠિતાઃ” આ વાક્યમાં અજીવ અને જીવનો આધાર આધેય ભાવ કહ્યો છે અને “અજીવા જીવસંગ્રહીતા” આ વાક્યમાં સંગ્રાહ્ય અને સંગ્રાહક ભાવ કહ્યો છે સંગ્રહકર્તા જીવ છે અને સંગ્રાહ્ય અજીવ છે એટલો તે બંને વચ્ચે તફાવત છે. મુનિ અને સંયતમાં પણ સમભિરૂદ્ધનયની અપેક્ષાએ ભેદ છે. તે ભેદ આ પ્રમાણે છે—પાપદૃષ્ટ.

રમ્ય 'અજીવા જીવસમુદોષાઃ, જીવાઃ કર્મસંપ્રદીતાઃ' इत्यन्त पदसदमो यान्त्यदेन
 ज्ञातव्य, हे भदन्त ! एतत्सर्वं यदुच्यते देवानुमियेण तत्र किं कारणमिति मायः ।
 मगधानाह—'गोयमे'—स्थादि । 'गोयमा' हे गौतम ! 'से जहा णामए केइ
 पुरिसे' स यथा नामका कश्चित् पुरुष, 'वत्थिमाडोवेइ' वत्थिमाटोपयति,
 वत्थि=वत्ति भाटोपयति वायुना मपूरयति 'वत्थिमाडोवेत्ता' वत्थिमाटोपयित्वा
 वत्ति वायुना पूरयित्वा 'उप्पि सितं वषइ' उपरि सितं वज्ज्जाति, उपरि सितं=
 वज्जन वज्ज्जाति 'वंधिस्ता' वद्धत्वा 'मग्गण' मग्ग्ये खलु 'गंठि वषइ' ग्रन्थि वज्ज्जाति,
 'वंधिस्ता' वद्धत्वा 'उपरिख गंठि मुयइ' उपरितनां ग्रन्थि मुञ्चति, 'मुइत्ता' मुक्त्वा,
 ग्रन्थि विमोच्य 'उपरिख देसं वमेइ' उपरितनं दश वमयति—वस्तेरुब्धदिक्षाप्राप्तं

“यावत्” शब्द से “अट्टविहा लोयट्ठि” से लेकर “अजीवा जीव
 संगहिया जीवा कम्मसगगहिया” तक का पाठ ग्रहण किया गया है।
 इसका भाव वही है, जो पहिले कह दिया गया है कि हे भदन्त ! यह
 सब जो आप कहते हैं उसका क्या कारण है ? तब प्रभु इस का उत्तर
 देते हुए कहते हैं कि (गोयमा) हे गौतम ! (से जहा णामए केइ
 पुरिसे) जैसे अनुक नामवाला कोई पुरुष (वत्थिमाडोवेइ) मसक को
 हवा से मर दे (वत्थिमाडोवेत्ता) और मसक को हवा से मर कर
 (उप्पि सितं वषइ) फिर वह उसका मुख बांध दे। (वंधिस्ता मग्गेण
 गंठि वंधइ) बांध कर उस मसक के बीचमें वह फिर गांठ लगा दे।
 (वंधिस्ता) बीच में गांठ लगा कर वह फिर (उपरिख गंठि मुयइ) ऊपर
 की अर्धात् मसक के मुख की गांठ को खोल दे। (मुइत्ता) गांठ खोलकर
 (उपरिख देसं वमेइ) उस मसक के ऊपरी भाग से वायु को वह निकाल

અહીં “જાવ પહ વટે” “મટ્ટવિહા લોયટ્ઠિ” થી લઇને ‘અજીવા જીવસંગહિયા’
 ‘જોવા કમ્મસગહિયા’ સુધીના પાઠ શ્રવણ કર્યો છે તેનો ભાવાર્થ આગળ
 કહ્યો પ્રમાણે છે કે જે પ્રશ્ન ! આપ દોઝસ્થિતિમાં જે આઠ પ્રકાર જનારો છે
 તેનું કારણ શું છે ? ઉત્તર—(ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (સ જહા ણામએ કેઈ પુરિસે)
 જેમકે કોઈ પુરુષ (વત્થિમાડોવેઈ) મસકને હવા વગે બરી દે (વત્થિમાડોવેતા)
 અને મસકને જવામાં બરી દડને (ઉપ્પિ સિત વષઈ) પ ૧ તે માણસ તેના
 મુખને બાંધી દે. (વંધિસ્તા મગ્ગણ ગંઠિ વંધઈ) આ રીતે મસકના મુખને
 બાંધીને તેની વચ્ચે તે ફરીથી આ વાગી દે (વંધિસ્તા) વચ્ચે આ બાંધીને
 (ઉપરિખ ગંઠિ મુયઈ) ઉપરની જોડે તે કે મસકના મુખની ગાંઠને પછી છેડી
 નાખે. (મુઈતા) પછી ઉપરની આંખને છેડીને (ઉપરિખ દેસં વમેઈ) તે

મગધત કથનમ્ ગૌતમઃ પ્રાહ—‘ઈત્થા ચિદ્દુ’ હત્ત તિષ્ઠતિ મદન્ત !, ઇતિ ગૌતમસ્ય સ્વીકરણમ્ । તથા ચ યથા વાયુરાધારા જલસ્ય વસ્તિસ્થલે દૃશ્યત એવમવ તત્તુ વાતમલયોરપ્યાધારાધેયમાવ સમવન્યેવ, તત્ર વાયુરધિકરણમાધેયમ્ જલમિતિ । મગધાનાહ—‘સે તેણદ્દેણ જાવ જીવા કમ્મસંગહિયા’ તથેનાયેન યાવત્ જીવા કર્મસંગૃહીતાઃ, તેન કારણેન દ્વિતિસ્થિતનાયુજલદૃષ્ટા તેન એવમુચ્યતે દે ગૌતમ । ‘જાવ જીવા કમ્મસંગહિયા’ યાવત્-જીવા કર્મસંગૃહીતા, યાવચ્ચન્દેન આકાશ પ્રતિષ્ઠિતો વાયુરિત્યારમ્ય ‘અજીવા જીવસંગહિયા’ અજીવાઃ જીવસંગૃહીતાઃ, ઇત્યન્ત પાઠઃ સપ્રાણઃ, અથ ઘનોદધ્યુપરિ પૃથિવોતિ દૃષ્ટા-તેન સ્પષ્ટયતિ—‘સે જહા વા’ ઇત્યાદિ, ‘સે જહા વા કેઈ પુરિસે વત્થિ આદ્ધોવેઈ’ તથયા-વા કથિત્ પુરુષો વસ્તિમાટોપયતિ, વાયુના પૂરયતિ અત્ર ‘વા’ શબ્દો દૃષ્ટાન્તાન્તરયોગઃ

હે । હસ વાત કો પ્રકટ કરને કે લિપે યહ ‘ઉચરિમત્તલ’ પદ્ કહા ગયા હૈ । તથા -જૈસે વાયુ આધાર જલ કા વસ્તિસ્થલ મેં દિવ્વલાઈ દેના હૈ, હસી પ્રકાર સે તત્તુવાત ઓર જલ હન દોનોં કા મી આધાર આધેયમાવ સમ-વતા હૈ । યહાં વાયુ અધિકરણ હૈ ઓર જલ આધેય હૈ । (સે તેણદ્દેણ જાવ જીવા કમ્મસંગહિયા) હસ કારણ હૈ ગૌતમ । મૈને એસા કહા હૈ કિ યાવત્ જીવ કર્મસંગૃહીત હૈ । યહાં યાવત્ શબ્દ સે આગાસપરિદ્ધિ વાપ ” હસ પાઠ સે લેકર “અજીવા જીવસંગહિયા ” યહાં તત્તુ કા પાઠ પ્રહ્ણ કિયા ગયા હૈ । “ઘનોદધિ કે ઉપર પૃથિવી હૈ ” હસ વાત કો અથ સૂત્રકાર દૃષ્ટાન્ત સે સ્પષ્ટ કરતે હૈ । (સે જહા વા કેઈ પુરિસે વત્થિ આદ્ધોવેઈ) જૈસે કોઈ પુરુષ વમદે કો મસક મેં વાયુ મરકર ફુલાવે । યહાં જો “વા” શબ્દ પ્રયુક્ત હુઆ હૈ વહ દુસરે દૃષ્ટાન્ત કા યોગક હૈ ।

‘ઉચરિમત્તલ’ પદ્ મુદ્ધુ છે જેવી રીતે પાણીને આધાર વાયુ મધ્યમાં રહેવાય છે જેમ પ્રમાણે તત્તુવાત અને પાણી, જે જન્મેલા પલ્લુ આધાર આધેય બાવ સંભવી શકે છે અહીં વાયુ આધાર છે અને પાણી આધેય છે (સે તેણદ્દેણ જાવ જીવા કમ્મસંગહિયા) છે ગૌતમ । તે કારણે મેં જેવું કહ્યું છે કે અહીં ‘અવ કમ સંગૃહીત છે’ ત્યાં મુખીનું કથન મહત્ત્વ કરતું અહીં (જાવ) યાવત્ ” પરથી ‘આગાસપરિદ્ધિ વાપ’ થી શરૂ કરીને ‘અજીવા જીવસંગહિયા’ મુખીને પાઠ મહત્ત્વ કરવો ઘનોદધિની ઉપર પૃથ્વી છે ” એ વાતને સૂત્રકાર દૃષ્ટાન્ત વડે સમજાવે છે—(સે જહા વા કેઈ પુરિસે વત્થિ આદ્ધોવેઈ) જેમ કે કોઈ પુરુષ વ્યામકાની મધ્યકમાં હવા ભરીને તેને ફુલાવે અહીં ને “વા” પદ્ આમુ છે તે પીત્ત દૃષ્ટાન્તનું બોધક છે (આદ્ધોવિવા

નિષ્કાસયતીત્યર્થઃ, 'ઉપરિલ્લં દેસં વામેત્તા' ઉપરિતન દેશં વમયિત્વા, ઊર્ધ્વદેશા-
દ્વાયુમપસાર્ય, 'ઉપરિલ્લં દેસં આઝકાયસ્સ પૂરેઝ' ઉપરિતનં દેશમપ્કાયેન પૂરયતિ,
ઊર્ધ્વ દેશં જલેન પ્રપૂરયતીત્યર્થઃ, 'પૂરિત્તા' પૂરયિત્વા 'ઉપ્પિ સિત્ત વંધઃ' ઉપરિ
સિત્તં=વન્ધનં વન્તાતિ, 'વંધિત્તા' વદ્ધ્વા 'મજ્જિલ્લં ગંઠિં મુયઃ' મધ્યમાં ગ્રન્થિ
મુચ્ચતિ, 'સે નૂણં ગોયમા' તન્નૂન હે ગૌતમ! 'સે આઝકાપ વાઝકાયસ્સ ઉપ્પિ
ઉવરિમતલે ચિટ્ઠઃ' સ અપ્કાયો વાયુકાયસ્યોપરિ ઉપરિમતલે તિષ્ઠતિ કિમ્ ?
અપ્કાયો જલમ્ વાયુકાયસ્ય વાયોરુપરિ યદ્યપ્યુપરિ વ્યવહારતોપિ સંભવેત્તથાપિ
સર્વોપરિત્વબોધનાયાહ 'ઉવરિમતલે' ઉપરિમતલે સર્વોપરીત્યર્થઃ કિં તિષ્ઠતીતિ

દે । इस तरह उस ममक में आधे भागमें तो वायु भरी रहती है और
आधाभाग वायु से रहित होकर खाली हो जाता । (उवरिल्लं देसं
वामेत्ता) इस प्रकार उर्ध्वदेश से वायु को हटाकर (उवरिल्लं देसं आ-
कायस्स पूरेऽ) वह उस उर्ध्वदेश को जलसे भर दे । (पूरित्ता उप्पि सि-
तं वंधः) भर कर फिर वह उसे बांध दे । (वंधित्ता) बांधकर (मज्झिल्लं
गंठिं मुयः) पहिले लगाई हुई बीच की गांठ को फिर वह खोल दे ।
(से नूणं गोयमा ! से आऽकाप वायुकायस्स उप्पि उवरिमतले चिट्ठः)
तो हे गौतम ! वह भरा हुआ पानी उस पवन के ऊपर के भाग
में रहता है क्या ? ऐसा भगवान् ने गौतम से पूछा । तब गौतम ने कहा
(हंता चिट्ठः) हाँ मदन्त ! रहता है । यहां (उवरिमतले) ऐसा जो
कहा गया है उसका कारण यह है कि जल वायु के ऊपर रहता है यह
वात व्यवहार से भी लोक में मानी जाती है तो भी वह जल सर्वोपरि

મશકની ઉપરના ભાગમાથી વાયુને ખહાર કાઢી નાખે આ પ્રમાણે કરવાથી
મશકના અર્ધા ભાગમા તો વાયુ ભરેલો રહેશે અને અર્ધો ભાગ વાયુરહિત
ખાલી થઈ જશે (ઉવરિલ્લં દેસં વામેત્તા) પછી મશકના ઉપરના ભાગમાથી
વાયુને કાઢી નાખીને (ઉવરિલ્લં દેસં આઝકાયસ્સ પૂરેઽ) તે ઉપરના ભાગને
પાણીથી ભરી દે (પૂરિત્તા ઉપ્પિ સિત્ત વંધઃ) પછી પાણી ભરીને ફરીથી તેનું
ઉપરનું મુખ બાંધી દે (વંધિત્તા) મુખને બાંધી દઈને (મજ્જિલ્લં ગંઠિં મુયઃ)
પહેલા બાંધેલી વચલા ભાગની ગાંઠને પછી ખોલી નાખે (સે નૂણં ગોયમા !
સે આઝકાપ વાઝકાયસ્સ ઉપ્પિ ઉવરિમતલે ચિટ્ઠઃ ?) તો હે ગૌતમ ! તે ભરેલું
પાણી વાયુના ઉપરના ભાગમા રહે છે ખરું ? ગૌતમે જવાબ આપ્યો (હંતા
ચિટ્ઠઃ) હા ભગવન્ ! રહે છે. અહીં (ઉવરિમતલે) એવું જે કહ્યું છે તેનું
કારણ એ છે કે પાણી વાયુની ઉપર રહે છે તે વાત વ્યવહારથી પણ લોકમા
માનવામા આવે છે. તો પણ પાણી સર્વોપરી છે એ વાતને બતાવવાને માટે

લોકસ્થિતરેવાપ્રાપ્તિદારેણ તદાશ્ચિત્યૈવદમાહ—‘અતિથિ ણ’—મિત્યાદિ । મયથા
‘અજીવા જીવપશ્ચિદિયા’ રિત્યાદે પદચતુષ્ટયસ્ય માયનાર્થમિદમાહ ‘અતિથિ ણ’ મિત્યાદિ ।

મૂલ્—અતિથિ ણં ભતે જીવા ય પોગ્ગલા ય અન્નમન્નવદ્ધા
અન્નમન્નપુટ્ટા અન્નમન્નમોગાહા અણમણાસિણેહપઢિવદ્ધા અન્નમન્ન
ઘટ્તાપચિદ્ધતિ ? હતા અતિથિ । સે કેણદ્વેણં ભતે જાત ચિદ્ધતિ,
ગોયમા !, સે જહા ણામપ્પ હરપ્પ સિયા પુણ્ણે પુણ્ણપ્પમાણે
ઘોલદ્ધમાણે વાસદ્ધમાણે સમભરઘટ્તાપચિદ્ધહ, અહે ણં કેદ્દુ પુરિસે
તસિહરયસિ ઇગ મહ નાય સયાસવ્વ સયટ્ઠિદ્ધ ઓગાહેજ્ઞા, સે ણૂળ
ગોયમા ! સા ણાવાતેહિં આસવ્વદારેહિં આપૂરેમાણી આપૂરેમાણી
પુત્ત્તા, પુત્ત્તપ્પમાણા ઘોલદ્ધમાણા ઘોસદ્ધમાણા સમભરઘટ્તાપ
ચિદ્ધહ?, હતા ચિદ્ધહ । સે તેણટ્ટુણ, ગોયમા ! અતિથિ ણ જીવા ય
જાવ ચિદ્ધતિ ॥ સૂ. ૬ ॥

છાયા—અસ્તિ સ્વહ મદન્ત ! જીવાથ પુદ્ગલાધ્યાયોન્પવદ્ધા અન્યોપસ્પૃષ્ઠાઃ
અન્યોન્પાવગાહા અયોન્પસ્નેહપતિવદ્ધા અન્યોન્પઘટ્તયા તિષ્ઠન્તિ?, અન્ત અસ્તિ,
તત્કેનાર્થેન મદન્ત યાવત્ તિષ્ઠતિ?, ગૌતમ ! તથપા નામના દ્વદઃ સ્યાત્ પૂર્વ પૂર્ણ
પ્રમાણો વ્યપલોટયન્ વિકસન્ સમમરઘટ્તયા તિષ્ઠતિ અથ કશ્ચિત્પુરસ્તસ્મિન્ દ્રવ્યે
પક્કાં મહત્તી નાથ સ્વતાશ્રયમ્ સ્વતઃસિદ્ધામવગાહયત્, તદ્ નૂન ગૌતમ ! સા નૌસ્તૈ
રાક્ષસગરૈરાપૂર્વમાણી આપૂર્વમાણી પૂર્ણા પૂર્ણપ્રમાણા વ્યપલોટયન્તી વિકસન્તી
સમમરઘટ્તયા તિષ્ઠતિ?, અન્ત તિષ્ઠતિ, તથેનાર્થેન ગૌતમ ! અસ્તિ સ્વહ જીવાથ
યાવત્ તિષ્ઠન્તિ ॥ મૂ. ૬ ॥

હિયા ” યહાં તક કા પાઠ સગૃહીત ક્રિયા મયા હે । “ એ વા ” યહાં
“ વા ” શબ્દ દૂસરે દૃષ્ટાન્ત કા સૂચક હૈ એસા જાનના ચાહિય ॥ સૂ. ૫ ॥

યહાં લોકસ્થિતિકા હી અધિકાર ચલ રહા હૈ । અથ ડસી કો છેકર
સૂત્રકાર પઠતે હ—અથવા ‘ અજીવા જીવ પશ્ચિદિયા ” રિત્યાદિ જો ચાર

‘ માગમપશ્ચિદિય વાપ થા શરૂ કરીને ‘ અજીવા ચારવર્ગરિદિયા ” સુધીનો
પાઠ બ્રહ્મણ કરીએ છે એવ વા ” આ પદમાં ‘ વા ” શબ્દ બીજા દૃષ્ટાન્ત
સૂત્રક છે એમ સમજવું ॥ સૂ. ૫ ॥

અહીં દોઢરિયતિતુ જ વળન આવી શકું છે તેથી તેને અનુસરણને
સૂત્રકાર કહે છે—‘ અતિથિ ણં મતે ’ ઇત્યાદિ અથવા ‘ અજીવા જીવપશ્ચિદિયા ” ઇત્યાદિ

‘આહોવિત્તા કહીએ બંધઈ’ આટોપ્ય કટથાં વદ્ધનાતિ ‘વંધિતા’ વદ્ધ્વા ‘અત્યાહ-
મતારમપોરુસિયંસિ ઉદગંસિ ઓગાહેજ્જા’ અસ્તાઘાડતારાપૌરુષેયે ઉદકે અવગાહેત,
અસ્તાઘશ્ચ અતારં ચાપૌરુષેયં ચેત્યસ્તાઘાડતારાપૌરુષેયં તસ્મિન્, મરુારદ્વયમત્ર પ્રાકૃત-
ત્વાત્ । સ્તાઘં=પ્રમાણં, ન સ્તાઘમ્-અસ્તાઘમ્-અપ્રમાણં પ્રમાણરહિતં-ગમ્મોરમિત્યર્થઃ,
અથવા ‘અત્યાહં’-ઈતિ અસ્તાઘઃ અસ્તમ્ અધઃ=અધસ્તલ યસ્યેતિ તત્ અસ્તાઘઃ, નિરસ્તાઘ-
સ્તલમ્ અગાધમિત્યર્થઃ, યત્ એવાગાધમત્ એવાતારં તરીતુમશક્યમ્, પુરુષઃ પ્રમાણં વિદ્યતે
યસ્ય તત્ પૌરુષેયમ્, ન પૌરુષેયમિત્યપૌરુષેયમ્, પુરુષપ્રમાણાધિકરણમિત્યર્થઃ । એતાદૃશે
જલે કશ્ચિદવગાહનં કુર્યાત્, ‘સે જૂણં ગોયમા’ તદ્ નૂનં ગૌતમ ! ‘સે પુરિસે તસ્સ
આડયસ્સ ઉવરિમતલે ચિટ્ઠઈ’ સ પુરુષસ્તામ્યાપ્કાયસ્યોપરિમતલે કિં તિષ્ઠતિ?,
ગૌતમઃ પ્રાહ-‘હંતા ચિટ્ઠઈ’ હન્ત તિષ્ઠતિ, હં ભદંત સ પુરુષો જલસ્યોર્ધ્વમાગે એવ
તિષ્ઠતીતિ । ભગવાનાહ-‘એવં વા અટ્ટવિહા લોચદ્ઢિર્હિ પન્નત્તા જાવ જીવા કમ્મ-
સંગહિયા’ એવં વાડઠ્ઠવિધા લોકસ્થિતિઃ પ્રજ્ઞપ્તા યાવત્ જીવાઃ કર્મસંગૃહીતાઃ,
યાવત્પદેન-આકાશપ્રતિષ્ઠિતો વાયુરિત્યારમ્ય ‘અજીવા જીવસંગૃહીતાઃ’ इत्यन्तः
पाठोऽत्र संग्राहः । ‘એવં વા’ इत्यत्र ‘वा’ शब्दो दृष्टान्तान्तरमूचक इति बोध्यम् ॥ ૧ ॥

(આહોવિત્તા કહીએ બંધઈ) ફુલાકર ફિર ઉસે અપને કટિપ્રદેશમેં બાંધ લેવે
(વંધિતા અત્યાહ-મતાર-મપોરુસિયંસિ ઉદગંસિ ઓગાહેજ્જા) બાંધ કર
ફિર વહ અગાધ એસે જલ મેં કિ જિસ મેં તૈરા નહીં જા સકે ઓર જો
પુરુષ પ્રમાણસે બી અધિક હો પ્રવેશ કરે તો (સે જૂણં ગોયમા । સે પુરિસે
તસ્સ આડયસ્સ ઉવરિમતલે ચિટ્ઠઈ) હે ગૌતમ ! વહ પુરુષ પાણી કે ઉપર
હી રહેગા ન? (હંતા ચિટ્ઠઈ) હાં, ભદન્ત ! રહેગા । (એવં વા અટ્ટવિહા લોચ-
દ્ઢિર્હિ પન્નત્તા જાવ જીવા કમ્મસંગહિયા) હસી તરહ લોક કી સ્થિતિ આઠ
પ્રકાર કી કહી ગઈ હૈ । યાવત્ જીવ કર્મસંગૃહીત હૈ । યહાં યાવત્ શબ્દ
સે “ આગાસપહિદિએ વાએ ” હસ પાઠ સે લગા કર “ અજીવા જીવ સંગ-

કહીએ બંધઈ) આ રીતે ફુલાવીને તે તેને પોતાની કેડ સાથે બાધી દે.
(વંધિતા અત્યાહ-મતાર-મપોરુસિયંસિ ઉદગંસિ ઓગાહેજ્જા) આ રીતે ફુલાવેલી
મશકને કેડે બાધીને અગાધ, અને જેને તરી શકાય નહી એવા તથા માણસ
રૂપી બધ એવા ઊંડા પાણીમા પ્રવેશ કરે તો (સે જૂણં ગોયમા । સે પુરિસે
તસ્સ આડયસ્સ ઉવરિમતલે ચિટ્ઠઈ ?) હે ગૌતમ ! તે પુરુષ પાણીની ઉપર જ
રહેશે કે નહી ? (હંતા ચિટ્ઠઈ) હે પૂત્ય ! તે માણસ પાણીની ઉપર જ રહેશે.
(એવં વા અટ્ટવિહા લોચદ્ઢિર્હિ પન્નત્તા જાવ જીવા કમ્મસંગહિયા) આ રીતે
હે ગૌતમ । લોકની સ્થિતિ આઠ પ્રકારની કહી છે અહી પણ “અવકર્મસંગૃહીત
છે” ત્યા સુધીને પાઠ થઇણ કરાયો છે. અહીં (જાવ) “ યાવત્ ” ૫૬ વડે

મન્યોન્યસ્નેહપ્રતિબદ્ધા, અ-યોન્ય=પરસ્પર સ્નેહેન રાગાદિરૂપેણ પ્રતિબદ્ધા=પરકી માત્ર ગતા । વક્તવ્ય—

“સ્નેહામ્યક્તશરીરસ્ય રેણુના શ્લિષ્યતે યથા ગાત્રમ્ ।

રાગદ્વેષક્લિષ્ઠસ્ય કર્મપરમાણુ મવત્યેવમ્” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

સ્પર્શનામાત્ર સે પરસ્પર મેં સ્પૃષ્ટ થે इसी कारण ये दोनों पीछे गात्रतर पक्ष से आपस में सघट्ट हो गये हैं क्या? “अमममनोगाढा” का तात्पर्य यह है कि जिस प्रकार लोहे के गोले में अग्नि सघट्ट से प्रविष्ट हो जाती है उसी तरह से कर्मपरमाणु आत्मा के साथ और आत्मा कर्मपरमाणुओं के साथ लोली माय को प्राप्त हो जाता है क्या? लोली माय का तात्पर्य है एकमेक हो जाना । जैसे अयोगोलक (लोहे का गोला) और अयोगोलक (लोहे के गोले) में प्रविष्ट अग्नि परस्पर में एकमेक हो जाते हैं, उसी प्रकार क्या आत्मा और कर्मपरमाणु परस्पर में एकमेक हो जाते हैं क्या? । ये आपसमें स्नेहप्रतिबद्ध हैं क्या? यहाँ स्नेह से तात्पर्य रागादिरूप स्नेह (चिकनाहट)से है। कहा भी है—“स्नेहाम्यक्त” इति।

जिस व्यक्ति का शरीर तैल आदिसे चिकना होता है तो जैसे उसका शरीर चिपना होनेका कारण घूलि आदिसे, बिशेषरूप से आश्लिष्ट हो जाता है, अर्थात् उस पर घूलि आदि के कण आकर चिपक जाते हैं उसी प्रकार जब आत्मा रागद्वेष आदिरूप स्नेह से चिकना बन जाता है तो उसका साथ भी कर्मों का बंध हो जाता है, अर्थात् कर्मपरमाणु

જ પરપરમા ૨૬ ની બતાવેલો પાછળથી આઠતર બંધ વડે આપસમાં (પરપરમા) સબદ્ધ થઈ ગયા છે ખરા? ‘અમમમનોગાઢા’ નું તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે જેમ લોહના ગોળામાં બધી બાબતોએથી અગ્નિ પ્રવેશી શકે છે તેમ કમ પરમાણુઓ આત્માની સાથે અને આત્મા કર્મ પરમાણુઓની સાથે લોલીમૂત્ર (એકમેક થવા પશુ) થાય છે શું? જેવી રીતે અયોગોલક (લોહના ગોળા) અને આયોગોલક (લોહના ગોળા)માં પ્રવેશી અગ્નિ પરપરમા એક એક થઈ બપ છે એજ પ્રમાણે શુ આત્મા અને કમ પરમાણુઓ પરપરમાં એકમેક થઈ બપ છે? શુ તેઓ પરપર સ્નેહ પ્રતિબદ્ધ છે? અહીં ‘સ્નેહ’ નો અર્થ શાશ્વતિરૂપ સ્નેહ (શીકાયા) મમત્વો કાનું પશુ છે ‘સ્નેહામ્યક્ત’ ઉત્પાદિ બ્યારે કોઈ બાબતનુ શરીર તેજ ગોરેથી ચીકણુ થયું હોય ત્યારે તે બાબતનુ શરીર ઉપર પૂરું ગમેના ફરકવા આપને યાદી બપ છે એજ પ્રમાણે બ્યારે આત્મા રાગદ્વેષ રૂપ સ્નેહથી ચીકણુ હોય છે ત્યારે તેની સાથે કર્મોના તીવ્ર બંધ થાય છે એટલે કે અત્મપરોટોની મધ્યે કમ પરમાણુઓ

ટીકા—‘અત્થિ ણ મંતે’ અસ્તિ સ્વલુ ભદન્ત ! “જીવા ય પોગલા ય અન્નમન્ન-
વદ્ધા” જીવાશ્ચ પુદ્ગલાશ્ચ અન્યોન્યવદ્ધાઃ, જીવાઃ પુદ્ગલાશ્ચ-કર્મશરીરાદિપુદ્ગલાઃ
પરસ્પરં સંવદ્ધાઃ, જીવાઃ પુદ્ગલાનાં, પુદ્ગલાશ્ચ જીવાનાં સંવદ્ધા ઇતિ ભાવઃ । કથં-
વદ્ધાઃ? ઇત્યત્ર હેતુગર્ભિતવિશેષણમાહ ‘અન્નમન્નપુદ્ગા’ અન્યોન્યસ્પૃષ્ટાઃ યતઃ પૂર્વ સ્પર્શ-
નામોત્ત્રેણાન્યોન્યં સ્પૃષ્ટા અત એવેત્યર્થઃ, યતઃ પૂર્વ સ્પૃષ્ટાઃ સ્પર્શનવિષયા જાતાઃ,
પશ્ચાત્ અન્યોન્ય વદ્ધાઃ=ગાઢતરસંવદ્ધા ઇતિ ભાવ । ‘અન્નમન્નમોગાઢા’ અન્યોન્યા-
વગાઢાઃ, અયોગોલકવત્ પરસ્પરેણ લોલીભાવં પ્રાપ્તાઃ, ‘અણમણ્ણસિણેહપઢિવદ્ધા’

પદ હૈં उन पदों का द्विचार करने के निमित्त यह सूत्र कहते हैं—‘अत्थि ण मंते । जीवा य पोगला य’ इत्यादि ।

(અત્થિ ણ મંતે ! જીવા ય પોગલા ય અન્નમન્નવદ્ધા, અન્નમન્નપુદ્ગા, અન્નમન્નમોગાઢા, અણમણ્ણસિણેહપઢિવદ્ધા, અન્નમન્નવદ્ધત્તાણ ચિટ્ઠંતિ ?) હે ભદન્ત ! જીવ ઓર પુદ્ગલ કયા પરસ્પર વદ્ધ હૈં ? ચેતના લક્ષણ વાલા જો હોતા હૈં ઉસકા નામ જીવ ઓર રૂપ, રસ, ગંધ ઓર સ્પર્શ ઇન ચાર ગુણો વાલા જો હોતા હૈં વહ પુદ્ગલ હૈં । પુદ્ગલ સે યહાં કર્મશરીરાદિ પુદ્ગલ લિયે ગયે હૈં । પુદ્ગલોં કે સાથ જીવ ઓર જીવોં કે સાથ પુદ્ગલોં કા જો એક ક્ષેત્રાવગાહ સંવધ હૈં વહી યહાં પર પરસ્પર મેં વંધ હૈં ઓર ઇસ સંવધ સે યુક્ત હોના ઇસકા નામ વદ્ધ હૈં । યે આપસ મેં વદ્ધ હૈં એસા પ્રશ્ન જો કિયા ગયા હૈં ઉસકા કારણ યહ હૈં કિ-યે દોનોં “અન્નમન્નપુદ્ગા” હૈં યહ હેતુગર્ભિત વિશેષણ હૈં । ઇમકા તાત્પર્ય યહ હૈં કિ યે દોનોં પહિલે

જે ચાર પદ છે તેમનો વિચાર કરવાને માટે સૂત્રકાર કહે છે “અત્થિ ણ મંતે” ઇત્યાદિ

(અત્થિ ણ મંતે ! જીવા ય પોગલા ય અન્નમન્નવદ્ધા, અન્નમન્નપુદ્ગા, અન્નમન્નમોગાઢા, અણમણ્ણસિણેહપઢિવદ્ધા અન્નમન્નવદ્ધત્તાણ ચિટ્ઠંતિ ?) હે ભગવન્ ! જીવો અને પુદ્ગલો શું પરસ્પર બધાયેલાં છે ?” ચેતના જેનું લક્ષણ છે તેને જીવ કહે છે તથા રૂપ, રસ, ગંધ અને સ્પર્શ એ ચાર ગુણો જેમા હોય છે તેનું નામ પુદ્ગલ છે “પુદ્ગલ” પદ વડે અહીં કર્મશરીરાદિ પુદ્ગલો ગ્રહણ કરાયેલ છે પુદ્ગલોની સાથે જીવનો અને જીવની સાથે પુદ્ગલોનો જે એકક્ષેત્રાવગાહ (એક સ્થળમા રહેવાનો) સબધ છે એજ અહીં પરસ્પરમાં બધરૂપ છે, અને તે સબધથી યુક્ત હોવુ એવી સ્થિતિને “બદ્ધ” કહે છે “જીવ અને પુદ્ગલ પરસ્પર બદ્ધ છે ?” એ પ્રકારનો પ્રશ્ન પૂછવાનુ કારણ એ છે કે તે બન્ને “અન્નમન્નપુદ્ગા” (પરસ્પર બધાયેલા) છે, એ હેતુગર્ભિત વિશેષણ છે તેનું તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે—તેઓ બન્ને પહેલા માત્ર સ્પર્શનાથી

पूर्णप्रमाणः 'बोलदृमाणे, व्यपछोटयन्, अतिक्षयजलवत्वेन छर्द्यमानमल इत्यर्थः। 'बोसदृमाणे' चि विवसन् जलाधिक्यात् विकास प्राप्नुवन् अछेन पर्दमान इत्यर्थः, 'सममरपट्टचाप' चि सममरपट्टतया, समो न विपमो घट्टेक्षमनाधितत्वेन स्रो जससमूहो यस्मिन् स सममर सवथा भृत इति सममरः, समसन्द सर्वार्थकोपि विद्यते, सममरभासौ घट्टेति सममरपट्ट' सममरपट्ट इवेति सममरपट्टस्तस्य भावा सममरपट्टता, सया सममरपट्टतया सर्वथा संभृतघटाकारतया तिष्ठतीत्यर्थः। 'अहे ण केइ पुरिसे वंसि हरयंसि एगं मइ नाव' अय खलु कथित् पुरुषः तस्मिन् इदं एकां महतीं नावं=नीकाम्, कीदृशीमित्याह-'सयासव' क्षताभवाम्, आ=ईपत् स्रवति=सरति जल येभ्यस्ते आस्रवाः=सूक्ष्मरन्ध्राणि ते सन्तो=विद्यमाना यत्र सा सदास्रवा, ताम्। यद्वा-सदा=सर्वकाले आस्रवति नम यस्याः सा सदास्रवा, ताम्, यद्वा-'क्षतास्रगम्' इतिच्छायापक्षे क्षतसंस्पर्का आस्रवा यस्यां सा क्षता स्रवा, ताम्। तथा 'सयछिहं' क्षतच्छिद्राम् छिद्राणि वृश्चररन्ध्राणि क्षतानि=क्षत-संस्पर्कानि छिद्राणि वृश्चररन्ध्राणि यस्यां सा क्षतच्छिद्रा, ताम् वृश्चररन्ध्रवतीं

કુછ કમ ની ખરા હોને પર વ્યવહાર મેં લોગ કહ દિયા કરતે હૈં કિ પહ પૂરા ખરા હૈ-સો એસા ખરા હુઆ યહાં નહીં સમજના ચાહિયે કિન્તુ હસ હદમેં પાની અપને પ્રમાગમેં જિતના ખરા જા સક્તા હોડતના પાની હસમેં ખરા હો, હસી ઘાત કો પ્રકટ કરને કે લિયે યહાં "પુણ્ણપમાણે" પદ દિયા ગયા હૈ, અર્થાત્ વહ એસા હદ-જલાશય હો જો સૂય ઉપર તક લગાલખ ખરા હો ઔર હસી કારણ જિસમેં સે જલ છલક રહા હો અર્થાત્ લગાલખ ખરે હોને કે કારણ જિસમેં સે જલ બાહર ખી નિકલ જાતા હો તયા જલ કો અધિકતા સે જો વિકાસ કો અર્થાત્ વૃદ્ધિ કો પ્રાપ્ત હો રહા હો ઔર લેખને પર એમા માલુમ લેતા હો કિ માનો જલ સે લગાલખ ખરા હુઆ યહ એક વિશાલ ઘઠા હી રક્ષા હૈ। (અહે જ કેહ પુરિસે વંસિ હરયંસિ એગં મહ નાવં સયાસવં મયછિહં એગાહેજ્જા) એસે હસ હદ મેં કોઈ પુરુષ એક બઢી નૌકા કિ જિમયેં છોટે ૨ સૈકઝોં છિદ્ર

અવસાદમાં દોઢો એવું કહે છે કે તે બરેલું છે ખડી એવા સરોવરની વાત નથી. પણ જેટલું પાણી બાષ્પ થકે તેટલું બરેલું છે એમ ખતાવવાને માટે ખડી 'પુણ્ણપમાણે' પદ મૂક્યું છે) એટલે કે પાણીથી છલોછલ બરેલું તે સરોવર કોય અને છલોછલ બરેલું કોવાથી જેમાથી પાણી બહાર પણ આવ્યું હતું કોય તથા પાણીની અધિકતાથી જે વિકાસ પામી શક્યું કોય અને પાણીથી છલોછલ બરેલાં ઘણાં જેવું જે કેળાવું કોય. (અહેજ કેહ પુરિસે વંસિ હરયંસિ એગં મહ નાવં સયાસવં મયછિહં એગાહેજ્જા) એવા સરોવરમા દોઢ માલુમ એક

અતઃ એવં ‘અન્નમન્નઘડત્તાણ ચિદ્વૃત્તિ’ અન્યોન્યઘટતયા તિષ્ઠન્તિ । અન્યોન્યં પરસ્પરં ઘટઃ સમુદાયો યેપાં તે અન્યોન્યઘટસ્તસ્ય સાવોઽન્યોન્યઘટતા, તયા અન્યોન્યઘટ- તયા તિષ્ઠન્તિ ક્ષિમિતિ પ્રશ્નઃ । ભગવાનાહ—‘ હંતે ’—ત્યાદિ । ‘ હંતા અત્થિ ’ હન્ત અસ્તિ, હે ગૌતમ! યથા ત્વયા પ્રોક્તં તત્તથૈવાસ્તીત્યુત્તરમ્ । ગૌતમઃ પ્રાહ— ‘સે કેણદ્દેણં મંતે જાવ ચિદ્વૃત્તિ’ તત્કેનાર્યેન ભદન્ત ! યાવત્ તિષ્ઠન્તિ, યાવચ્છ- વ્દેન—‘ અન્નમન્નઘડ્ઢાઃ ’ इत्यारभ्य ‘अन्नमन्नघडत्ताए’ इत्यन्तः पदसंदर्भः सग्राह्यः । ભગવાનાહ—‘ ગોયમે ’—ત્યાદિ ‘ ગોયમા ’ હે ગૌતમ ! ‘ સે જહા નામણ હરદે સિયા ’ તદ્ યથા નામકો હ્રદઃ સ્યાત્ ‘પુણ્ણે પુણ્ણપ્પમાણે વોલટ્ટમાણે વોસટ્ટમાણે સમમરઘડત્તાણ ચિદ્વૃદ્ધ’ પૂર્ણઃ પૂર્ણપ્રમાણો વ્યપલોટઘન્ વિકસન સમમરઘટતયા તિ- ષ્ઠતિ, યથા હ્રદો જલેન પૂર્ણઃ સ્યાત્ કિશ્ચિન્ન્યુનત્વેપિ વ્યવહારતઃ પૂર્ણતયા વ્યવહ્રિયેત તત્રાહ—‘ પુણ્ણપ્પમાણે ’ પૂર્ણપ્રમાણઃ પૂર્ણ જલેન સ્વકીય માનં यस્ય સ

ચિપક જાતે હૈં । “ અન્નમન્નઘડત્તાણ ” કા તાત્પર્ય હૈ આપસ મૈં એક સમુદાયરૂપ મૈં હોદ્દર રહના । પ્રશ્ન કર્તાકા યહાં એસા અભિપ્રાય હૈ કિ કર્મપુદ્ગલ ઔર જીવ જવ આપસ મૈં વંધદશા કો પ્રાપ્ત હો જાતે હૈં તવ કયા યે દોનોં એક સમુદાયરૂપ મૈં આજાતે હૈં ? હસ પ્રકાર યે પ્રશ્ન હૈં । इन सब का उत्तर देते हुए भगवान् कहते हैं कि (हंता अत्थि) हे । गौतम ! हां ऐसा ही है । (से केणद्वेणं मंते ! जाव चिद्वृत्ति ?) हे भदन्त ! आप ऐसा किस कारण से कहते हैं कि यावत् वे इस प्रकार से रहते हैं ? (गोयमा ! से जहा नामण हरदे सिया पुण्णे पुण्णप्पमाणे वोलट्टमाणे वोसट्टमाणे सममरघडत्ताए चिद्वृद्ध) हे गौतम ! जैसे कोई एक ह्रद हो और वह पानी से पूरा भरा हो । पूरा नहीं भरा होने पर भी अर्थात्

ચોટી બાય છે, “ અન્નમન્નઘડત્તાણ ” એટલે “ પરસ્પર એક સમુદાય રૂપે રહેવું ” પ્રશ્ન કર્તાના આશય એવો છે કે ત્યારે કર્મપુદ્ગલો અને જીવના પ્રદેશો પર- સ્પર બંધાય છે ત્યારે શું તેઓ બન્ને એક સમુદાય રૂપે બની બાય છે ? આ બતના ગૌતમસ્વામીના પ્રશ્નોના ઉત્તર મહાવીર પ્રભુ આ પ્રમાણે આપે છે —(હંતા અત્થિ) હે ગૌતમ ! એવું જ બને છે —

પ્રશ્ન—(સે કેણેણ મંતે ! જાવ ચિદ્વૃત્તિ ? હે ભગવન્ ! આ શા કારણે એવું કહો છો કે “ તેઓ આ રીતે રહે છે ? ” ત્યાં સુધીના સૂત્રપાઠ ગ્રહણ કરવો ઉત્તર—(ગોયમા ! સે જહા નામણ હરદે સિયા પુણ્ણે પુણ્ણપ્પમાણે વોલટ્ટમાણે વોસટ્ટમાણે સમમરઘડત્તાણ ચિદ્વૃદ્ધ) હે ગૌતમ ! જેવી રીતે કોઈ એક સરોવર હોય અને તે પાણીથી પૂરેપૂરે ભરેલું હોય (પૂરેપૂરે ન ભરેલું હોવા છતાં પણ

પૂર્ણમમાણ: 'શોલદ્રમાણે, ધ્યપછોટયન્, અતિશયજ્ઞપચ્ચેન છર્યમાનજલ્લ ઇત્યર્થઃ। 'શોસદ્રમાણે' સિ વિકસન્ જલાધિવયાત વિકાસમાપ્નુવન્ ખછેન ષર્દમાન ઇત્યર્થઃ, 'સમમરઘટ્તાપ'તિ સમમરઘટતયા, સમો ન વિપમો ધર્મકલ્પેશ્વમનાભિતત્વેન મરો ખલ્લસમૂહો યસ્મિન્ સ સમમર સર્વથા મુત્ત ઇતિ સમમરઃ, સમશ્ચન્ સર્વાર્થકોપિ વિધતે, સમમરમાસૌ ષટથેતિ સમમરઘટઃ સમમરઘટ ઇથેતિ સમમરઘટસ્તસ્ય માયઃ સમમરઘટ્તા, તયા સમમરઘટતયા સર્વથા સમૃતઘટાકારતયા તિષ્ઠતીત્યર્થઃ। 'અહે ન કેહ પુરિસે તંસિ હરયંસિ પગં મહ નાથ' અથ સલ્લ કથિત્ પુરુષઃ તસ્મિન્ હ્રદે एकां महतीं नावं=नौकाम्, कीदृशीमित्याह-'सयासव' क्षताश्रयाम्, आ=ईपत् स्रवति=सरति जलं यन्ध्यस्ते आस्रवाः=सूक्ष्मरन्ध्राणि, ते सन्तो=विद्यमाना यत्र सा सदास्रवा, ताम्। यद्वा-सदा=सर्वकाले आस्रवति जलं यस्याः सा सदास्रवा, ताम्, यद्वा-'क्षताश्रयाम्' इतिच्छायापक्षे क्षतसंख्यका आस्रवा यस्यां सा क्षता स्रवा, ताम्। तया 'सयच्छिदं' क्षतच्छिद्राम् छिद्राणि वृश्चररन्ध्राणि क्षतानि=क्षत संख्यकानि छिद्राणि वृश्चररन्ध्राणि यस्यां सा क्षतछिद्रा, ताम् वृश्चररन्ध्रवती

કુછ કમ મી મરા હોને પર બ્યવહાર મેં લોગ કહ દિયા કરતે હેં કિ પહ પૂરા મરા હૈ-સો એસા મરા હુઆ યહાં નહીં સમક્ષના વાહિયે કિન્તુ હસ્ટ હ્રદમેં પાની અપને પ્રમાગમેં જિતના મરા જા સકતા હોવતના પાની હસ્ટમેં મરા હો, હસી પાત કો પ્રકટ કરને કે લિયે યહાં "પુષ્પગણમાણે" પદ દિયા ગયા હૈ, અર્થાત્ વહ એસા હ્રદ-જલાશય હો જો સ્વયં ઉપર તક લલાલખ મરા હો ઓર હસી કારણ જિસમેં સે જલ છલક રહા હો અર્થાત્ લલાલખ મરે હોને કે કારણ જિસમેં સે જલ પાદર મી નિકલ જાતા હો તથા જલ કો અધિકતા સે જો વિકાસ કો અર્થાત્ વૃદ્ધિ કો પ્રાપ્ત હો રહા હો ઓર દેખને પર એમા માલૂમ લેતા હો કિ માનો જલ સે લલાલખ મરા હુઆ યહ એક ચિણાલ ઘણા હી રક્ષવા હૈ। (અહે ન કેહ પુરિસે તંસિ હરયંસિ પગં મહ નાથ સયાસવં સયચ્છિદં ઐગાહેજ્જા) એસે હસ્ટ હ્રદ મેં કોઈ પુરુષ એક બઢી નૌકા કિ જિસમેં છોટે ૨ સૈકડોં છિદ્ર

બ્યવહારમાં લોકો એવું કહે છે કે તે ભરેલું છે અહીં એવા સરોવરની વાત નથી. પણ એટલું પાણી ભરાઈ શકે તેટલું ભરેલું છે એમ ખતાવવાને માટે અહીં 'પુષ્પગણમાણે' પદ મૂક્યું છે) એટલે કે પાણીથી છલોછલ ભરેલું તે સરોવર હોય અને છલોછલ ભરેલું હોવાથી એમાથી પાણી બહાર પડુ શક્યું હતું હોય તથા પાણીની અધિકતાથી જે વિકાસ પામી રહ્યું હોય અને પાણીથી છલોછલ ભરેલા યમ એવું જે દેખાતું હોય. (અહેન કેહ પુરિસે તંસિ હરયંસિ પગં મહ નાથ સયાસવં સયચ્છિદં ઐગાહેજ્જા) એવા સરોવરમાં હોય માણસ એક

નૌકામ્, આસ્રવચ્છિદ્રયોઃ સૂક્ષ્મસ્થૂલરન્ધ્રત્વેન વૈલક્ષણ્યમિતિ ન પુનરુક્તિ । ‘ઓગાહે-
જ્જા’ અવગાહયેત્ પ્રવેશયેત્, ‘સે જૂણં ગોયમા’ અથ નૂનં હે ગૌતમ । ‘સા જાવા’ સા
નૌકા ‘તેહિં આસવદારેહિં’ તૈરાસ્રવદારૈઃ ‘આપૂરેમાણી’ ‘આપૂરેમાણી-આપૂર્યમાણા આ-
પૂર્યમાણા પૌનઃપુન્યેન મ્રિયમાણા સતી ‘પુન્ના’ પૂર્ણા જલેન ‘પુણ્ણપ્પમાણા’ પૂર્ણપ્રમાણા-
સ્વકીયપ્રમાણેન મૃતા ‘વોલટ્ટમાણા’ વ્યપલોટયન્તી-અતિશયજલવચ્ચેન છર્દ્ધમાનજલા,
‘વોસટ્ટમાણા’ વિકસન્તી-જલાધિક્યેન વ માના સતી ‘સમમરઘટ્તાણ’ સમમરઘટ-
તયા, હ્રદક્ષિત્તસર્વથા મૃતઘટવત્ હ્રદતલાવસ્થાનતયા, ‘ચિટ્ટહ’ તિષ્ઠતિ=હ્રદજલે

હોં ઓર વડે ૨ મી સૈકહોં છિદ્ર હોં ઉસકો ઢાલે । “સયાસવ્વ” જિનસે
ધીરે ૨ જલ આવે વે આસ્રવ, અર્થાત્ સૂક્ષ્મચ્છિદ્ર, -યે સૂક્ષ્મચ્છિદ્ર જિસ મેં
વિચમાન હૈં વહ સદાસ્રવા હૈં । અથવા-“સદા આસ્રવતિ જલં યસ્યાઃ સા
સદાસ્રવા”-સવ સમય મેં જિસમેં જલ આતા રહતા હો વહ સદાસ્રવા
હૈં । અથવા શતાસ્રવા-શતસંખ્યક હૈં છેદ જિસ મેં એસી વહ શતાસ્રવા
નૌકા । યહાં પર આસ્રવ ઓર છિદ્ર મેં સૂક્ષ્મ સ્થૂલ છિદ્રોં કી અપેક્ષા
ભેદ હોને કે કારણ પુનરુક્તિ દોષ આને કી સંભાવના નહોં હૈં । (સે-
જૂણં ગોયમા ! સા જાવા તેહિં આસવદારેહિં આપૂરમાણી આપૂરમાણી
પુન્ના પુન્નપ્પમાણા, વોલટ્ટમાણા સમમરઘટ્તાણ ચિટ્ટહ) તો હે ગૌતમ !
વહ નૌકા ઉન આસ્રવદારોં-છેદોં સે આતે હુણ જલ સે ભરતી રહતી હૈં ।
ભરતે ૨ વહ પૂરી ભર જાતી હૈં । પાની સે છલકને લગ જાતી હૈં । યહાં
તક કિ પાની ઉસકે ઉપર સે મી નિકલને લગ જાતા હૈં । હસ સ્થિતિ મેં
વહ નૌકા જલ કી અધિક વૃદ્ધિ હો જાને કે કારણ હ્રદમેં ઢાલે હુણ ભરે

મોટી નાવને ઉતારે કે જેમા નાનાં મોટાં સેકડો છિદ્રો હોય “સયાસવ્વ”
તે છિદ્રો વડે ધીમે ધીમે પાણીનો પ્રવેશ થાય તેવાં આસ્રવો-સૂક્ષ્મ છિદ્રો-
વાળી નૌકાને “સદાસ્રવા” કહી છે અથવા-“સદા આસ્રવતિ જલં યસ્યા
સા સદાસ્રવા” હમેશાં જેમા પાણી આવ્યા કરતું હોય તેને સદાસ્રવા કહે છે,
અથવા-“શતાસ્રવા” એટલે જેમા સેકડો છિદ્રો હોય એવી નૌકા અહીં આસ્રવ
અને છિદ્રમા સૂક્ષ્મ અને સ્થૂળ છિદ્રોની અપેક્ષાએ ભિન્નતા હોવાને કારણે પુન-
રુક્તિ દોષનો સભવ રહેતો નથી (સે જૂણ ગોયમા ! સા જાવા તેહિં આસવદારેહિં
આપૂરેમાણીર પુન્ના પુન્નપ્પમાણા વોલટ્ટમાણા વોસટ્ટમાણા સમમરઘટ્તાણ ચિટ્ટહ ?) તો
હે ગૌતમ ! આવી નાવ તે આસ્રવદારો વડે (છિદ્રોમાથી) પ્રવેશ પામતા
પાણીથી ભરાતી રહેશે આવી રીતે ભરાતા ભરાતા તે પાણીથી પૂરેપૂરી ભરાઇ
જશે અને પાણીથી છલકાવા માડશે વળી તે એટલે સુધી છલકાશે કે પાણી
તેમાથી બહાર પણ નીકળવા માડશે. એવી સ્થિતિમા પાણીની વિશેષ વૃદ્ધિ થવાને

નિમજ્જતિ ? , इति भगवद्वाक्यम् , गौतम प्राह—‘इंवा चिद्दह’ इन्त तिष्ठति, हे मर्दंत
 यथा जलपूर्णा घटा इदं तले जलेन सह तिष्ठति तथा नौरपि जलपूर्णा इदं स्वापोदेह
 तिष्ठतीति। भगवानाह—‘से तेणद्वेण गोयमा’ सत्तेनार्येण इ गौतम ! ‘अत्थि ण जीवा
 य जाव चिट्ठति’ अस्ति मीयास यावत्तिष्ठन्तीति, जीवास अत्र यावत्पदेन—पुद्गलास
 अन्यो-यपद्धा अन्यान्यस्पृष्टा अन्यान्यावगाहा अन्योन्यस्नेहप्रतिषद्धा अन्यान्यघन्तया
 इति समास, तिष्ठन्तीति सम्बन्ध । यथा नौका इदं तले च परस्परवगाहपूर्वक
 तिष्ठति तथैव जीवाः पुद्गलाश्चान्योन्यावगाहपूर्वक तिष्ठन्तीति समास्य ॥सू०६॥

હુણ ઘડે કી તરહ નીચે ઘેઠ જાની હે ન?, અર્થાત્ હૂય જાતી હે ન?, (ઈંવા
 ચિદ્દહ) હા મદન્ત ! જેસી ઘટ નૌકા ઉમ્મ રૂપ મેં હૂય જાતી હે । જેસે તલ
 પૂર્ણ ઘટ હૂદ તલ મેં જલ કં માય ૨ હૂય જાતા હે ઉમ્મો પ્રકાર ઘટ નૌકા
 કિ જિસ મેં સેવડોં છોટે પડે છિટ્ઠોં દ્વારા જલ ઓ આ કર લયાલક
 મર ગયા હે હૂય જાતી હે । (સે તેણદ્વેણ ગોયમા ! અત્થિ ણ જીવા ય
 જાવ ચિટ્ઠતિ) હમી કારણ હે ગૌતમ ! મેં જેસા કહતા હુ જીવ કિ યાવત્
 પહિલે કહે હુપ કી તરહ રહતે હે । યહાં જો “ યાવત્ ” પદ આયા હે
 વસસે “પુદ્ગલાસ, અન્યો-યપદ્ધા અન્યોન્યસ્પૃષ્ટા અ-યોન્યાવગાહા અન્યો
 ન્યસ્નેહપ્રતિષદ્ધા અન્યોન્યઘન્તયા” હસ પૂર્વોક્ત પાઠ કા સમ્મહ કિયા ગયા
 હે । તાત્પર્ય હસ સુત્ર કા જેસા હે કિ જિસ પ્રકાર નૌકા ઓર હૂદ જલ
 યે દોનો પરસ્પર મેં અવગાહપૂર્વક રહતે હે વમી પ્રકાર સે જીવ ઓર
 પુદ્ગલ મી આપમ મેં એક દુસરે મેં અવગાહપૂર્વક રહતે હે ॥સૂ०૬॥

કારણે તે નાવ ભરેલા મધ્યની જેમ સરોવરમાં ડૂબી બાથ છે કે નહીં ? (ઈંવા
 ચિદ્દહ) કે ભગવન્ એવી નાવ સરોવરમાં અવસ્થા ડૂબી બાથ છે એવી રીતે
 પાણીથી ભરેલા મધ્ય સરોવરની અંદર ડૂબી બાથ છે તેવી રીતે સેકડો નાનાં
 માટા છિદ્રોવાળી નૌકા પણ ડૂબી બાથ છે- (સે તેણદ્વેણ ગોયમા ! અત્થિ ણ
 જીવા ય જાવ ચિટ્ઠતિ) કે ગૌતમ ! તેથી જ હું એમ કહું છું કે એવો ‘આગળ
 કહ્યા પ્રમાણે રહે છે ત્યાં સુધીનો પાઠ શ્રદ્ધા કરવો બહી (જાવ) “ યાવત્ ”
 પદ વડે ‘પુદ્ગલાસ અન્નમન્નવચ્ચા, અન્નમન્નપુદ્ગા અન્નમન્નમોગાહા અન્નમન્ન
 સિંહિપિષ્ઠવચ્ચા અન્નમન્નવચ્ચાપ’ આ પૂર્વોક્ત પાઠ શ્રદ્ધા કરવો છે આ સૂત્રનો
 આવ એવો છે કે જેવી રીતે નાવ અને સરોવરનું પાણી એ બન્ને અવગાહ
 પૂર્વક રહે છે, એવી જ રીતે એવ અને પુદ્ગલો પણ પરસ્પર અવગાહ
 પૂર્વક રહે છે ॥ સૂ. ૬-૪

लोकस्थितिविषये एवेदमाह—, अत्थि णं 'इत्यादि ।

मूलम्—अत्थि णं भंते सया समियं सुहुमे सिणेहकाये पव-
डइ, हंता अत्थि । से भंते किं उड्डे पवडइ अहे पवडइ, तिरियं
पवडइ, गोयमा ! उड्डे वि पवडइ, अहे वि पवडइ, तिरिए वि
पवडइ, जहा से वायरे आउकाए अन्नमन्नसमाउत्ते चिरंपि
दीहकालं चिड्डइ तहा णं से वि?, णो इणट्टे समट्टे, से णं
खिप्पामेव विट्ठंसमागच्छइ । सेवं भंते सेवं भंते त्ति ॥ सू०७॥

॥ ऋद्धो उद्देशो समत्तो ॥

छाया—अस्ति खलु भदन्त ! सदा गमितं सूक्ष्मः स्नेहकायः प्रपतति, इन्त
अस्ति । तद् भदन्त ! किम् ऊर्ध्वं प्रपतति, अधः प्रपतति, तिर्यक् प्रपतति, गौतम !
ऊर्ध्वमपि प्रपतति, अधोपि प्रपतति, तिर्यगपि प्रपतति, यथा स वादरोऽपकायोऽ-
न्योन्यसमायुक्तश्चिरमपि दीर्घकालं तिष्ठति, तथा खलु सोऽपि?, नायमर्थः समर्थः
तत् क्षिप्रमेव विट्ठंसमागच्छति । तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति ॥ सू०७॥

॥ षष्ठ उद्देशः समाप्तः ॥

टीका—‘अत्थि णं भंते’ अस्ति खलु भदन्त ! ‘सया’ सदा—सर्वकालम्,
‘समियं’ समित् सपरिमाणं न तु वादरापकायवदपरिमितम्, अथवा सदा सर्वऋतुषु
समितमिति रात्रौ दिवसे च ‘सुहुमे सिणेहकाये पवडइ’ सूक्ष्मः स्नेहकायः
सूक्ष्मोऽपकायविशेषः प्रपतति किमिति प्रश्नः । भगवानाह—‘हंते’—त्यादि ।

फिर लोक की स्थिति के विषय में ही सूत्रकार कहते हैं—
‘अत्थि णं भंते’ ! सया समियं’ इत्यादि ।

(अत्थि णं भंते) हे भदन्त ! (सया) सर्वकाल (समियं) परिमाण-
सहित, वादर अपकायकी तरह अपरिमित नहीं, अथवा—सदा—सर्व
ऋतुओं में, समित—रात्रि और दिवस में, (सुहुमे सिणेहकाये पवडइ)
सूक्ष्म—स्नेहकाय अपकायविशेष—गिरता है क्या ? तात्पर्य पूछने का यह

बोद्धव्यस्थितिना विषयमा न सूत्रकार उडे छे—“ अत्थि णं भंते ! ” इत्यादि
अत्थि णं भंते ! हे प्रभो ! (सया) सदा—सर्वकाले (समियं) परिमाण
(माप) सहित (वादर अपकायनी जेम् अपरिमित नहीं) अथवा—सदा तमात्र
ऋतुओंमा समित—रात्रि अने दिवसे (सुहुमे सिणेहकाये पवडइ ?) सूक्ष्म स्नेह-
काय—अपकायविशेष पडया न उरे छे शु ? तात्पर्य उेशु उमेशा सूक्ष्म अपकाय

‘હન્ત અત્યિ હન્ત મસ્તિ, સર્વસ્મિન્નેવ ઋતૌ દિવસે રાત્રી ચ સૂક્ષ્મોઽપ્કાયઃ સર્વ કાલ પ્રપતત્યવતિ સમુદિતાર્થ ।’ (સે મંતે કિં ઠલે પવહહ, અહે પવહહ, તિરિય પવહહ ?) તે મદન્ત ! કિમ્ ઋર્ધ્વે પતતિ, અથ પતતિ, તિર્યક્ પતતિ ? ઋર્ધ્વે-વર્તુલ ચૈતાહવાદી, અથ -અધોલોકપ્રામેયુ નિર્યક્-તિર્યગ્લોકે । મગવાનાહ-‘ગોયમે’-સ્વાદિ, ‘ગાયમા’ હે ગૌતમ ! ‘૦’ હે પવહહ અહેવિ પવહહ, તિરિયવિ પવહહ ? ઋર્ધ્વમપિ પ્રપતતિ, અધોઽપિ પ્રપતતિ, તિરથપિ પ્રપતતિ, ઋર્ધ્વલોકપિ, અધોલોકેઽપિ, તિર્યગ્લોકેઽપિ સર્વથ સર્વદા સૂક્ષ્માપ્કાયઃ પ્રપતતીતિ માત્ર ।

નનુ યદિ રાત્રી દિવસે સર્વઋતુષુ સર્વદેવાપ્કાયઃ પ્રપતતિ તદા સાધુમિઃ કસ્મિન્નપિ કાલે કુત્રાપિ કયમપિ ન ગન્તમ્ય સર્વકાલેઽપ્કાયવિરાપનામસંગાદિતિ

હે કિ સમ સમય સૂક્ષ્મ જલકાય ગિરતા હે કયા ? હસકા ઉત્તર બેતે કુપ પ્રસુ કહતે હે કિ-(હતા અત્યિ) હાં ગિરતા હે । અર્થાત્ સમી ઋતુઓં મેં રાત્રી ઓર દિનમેં સૂક્ષ્મ અપ્કાય સમ સમય મેં ગિરતા હી રહતા હે । (સે મંતે ! કિં ઠલે પવહહ, અહે પવહહ, તિરિય પવહહ ?) હે મદન્ત ! જહ સૂક્ષ્મ જલકાય કયા ઋર્ધ્વે ગિરતા હે, યા નીચે ગિરતા હે, યા કિ તિરછા ગિરતા હે ? અર્થાત્-ઋર્ધ્વે વર્તુલ ચૈતાહવાદિ મેં, નીચે-અધોલોક પ્રામેયોં મેં ઓર તિરછે-તિર્યગ્લોક મેં પડતા હે કયા ? હસકા ઉત્તર બેતે કુપ પ્રસુ કહતે હે કિ-(ગોયમા-ઠહહે યિ પવહહ, અહે વિ પવહહ, તિરિયે વિ પવહહ) હે ગૌતમ ! જહ સૂક્ષ્મ અપ્કાય ઋર્ધ્વે-વર્તુલ ચૈતાહવાદિ પર્વતોં પર મી, નીચે-અધો લોકપ્રામેયોં મેં મી ઓર તિરછે-તિર્યગ્લોક મેં મી સદા ગિરતા હે ।

શંકા—યદિ સૂક્ષ્મ અપ્કાય રાત્રિ મેં દિન મેં, સર્વ ઋતુઓં મેં સદા હી ગિરતા રહતા હે તો ફિર સાધુજનોંકો કિસી મી સમય મેં કહીં પર મી કિસી મી તરહ નહોં જાના જાહિયે—જ્યોં કિ દેમા કરને સે સર્વથ

પટે છે ? ઉત્તર—(હતા અત્યિ) હા પટે છે એન્દ્રે કે બધાં ઋતુઓંમાં (દરરોજ) સૂક્ષ્મ અપ્કાય હમેશા પડતા જ કરે છે (સે મંતે ! કિં ઠહ પવહહ, અહે પવહહ તિરિય પવહહ ?) હે મગવન ! તે સૂક્ષ્મ અપ્કાય શુ જીયે પટે છે કે નીચે પટે છે કે તિરછુ પટે છે ? એન્દ્રે કે જાહે-વર્તુલ ચૈતાહવાદિ પ્રપતતિ વગેરે મી નીચે અધોલોકપ્રામેય તિરછુ-તિર્યગ્લોકમાં પટે છે ? ઉત્તર—(ગોયમા ! ઠહ પવહહ, અહે વિ પવહહ, તિરિયવિ પવહહ) હે ગૌતમ ! તે સૂક્ષ્મ અપ્કાય હમેશા-વર્તુલ ચૈતાહવાદિ વગેરે પર્વતોંમાં પડુ હમેશા પટે છે નીચે અધોલોકપ્રામેય પડુ હમેશા પટે છે અને તિરછુ-તિર્યગ્લોકમાં પડુ હમેશા પટે છે

શંકા—જો સૂક્ષ્મ અપ્કાય રાત્રિ તમામ ઋતુઓંમાં હમેશા પડુ જ રહેતું હોય તો સાધુઓંએ કેઈ પણ મથને કેઈ પણ રીતે ધ્યાન

મગવાનાદ-‘જો ણ્ણદ્દે’ ક્યાદિ । ‘જો ણ્ણદ્દે સમદ્દે’ નાયમર્યઃ સમર્યઃ, સરિકમિસ્પાદ ‘મે ણ મિણ્ણમેવ વિદ્ધમમાગચ્છદ’ સન્ ત્વલુ મિમમેવ વિષ્વસમાગ ચ્છતિ મ્યલ્પસાસસ્ય ‘મંથ મંતે મેવ મતે સિ’ તદેવ મદન્ત ! તદર્થ મદન્ત ! હ મગવન્ મેવાનુમિયેણ યત્ત કથિતં સમર્થ સત્યમેવતિ ॥૫૦૭॥

इति श्री-जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्य-श्रीधामीलालप्रतिनिधि
चिन्ताया श्रीमगधनीमूर्तस्य प्रमेयचन्द्रिका-व्याख्यायां प्रथम
छातकस्य पण्डोद्देशक समाप्तः ॥१-६॥

ઉત્તર—(જો ણ્ણદ્દે સમદ્દે) હે ગૌતમ ! યદ્ અર્થ-સમર્થ-ટીક-નહીં હૈ, કયોં કિ (સે ણ) ચદ્ધ (મિણ્ણમેવ વિદ્ધમમાગચ્છદ) પદ્ધત્ત હી દ્વીધ નદ્દ હો જાતા હૈ । કારણ યદ્દે હૈ કિ દ્દહ મ્વલ્પ છોતા હૈ । (સેવં મંતે, સેવ મંતે સિ) હે મદન્ત ! જૈમા આપને કદ્દા હૈ ચદ્ધ તેમા હી હૈ । હે મદન્ત ! ચદ્ધ તેમા હી હૈ । હમ પ્રકાર કદ્દ કર વે ગૌતમમ્મામી પ્રસુ કી ઘંદના ઓર ઠન્હેં નમસ્કાર કર અવન સ્થાન પર બેઠ ગયે ॥૫૦૭॥

जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्य श्रीधासीलालजी महाराजकृत मगधनी
मूर्तकी प्रमेयचन्द्रिका व्याख्याके प्रथम छातकका छोटा उद्देशक समाप्त ॥१-६॥

એવુ બનતું નથી કાશ્યુ ૪ (સ જ) તે સુકમ અકાચના છોડે (મિણ્ણમેવ વિદ્ધસમાગચ્છ) એકદમ સ્ત્રીધા નામ પામે છે કાશ્યુ ૪ તંઓ મૂકમ હોય છે (સજ મંત ! સેવ મંત !) હે બગવન ! આપે કદ્દા પ્રમાણે જ બધુષ છે હે પ્રભો ! આનતુ કહેવું નાયુ જ છે આ પ્રમાણે કદ્દાને મદાવીગે વદ્ધા અને નમસ્કાર કરીને જૈનમન્વામી પોતાને સ્થાને ગયા ॥ ૫૦-૭ ॥

इति श्री जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्य श्रीधामीलालजी महाराजकृत मगधनीमूर्तनी

प्रियदर्शिनी व्याख्यायां प्रथम छातकको छोटा उद्देशक समाप्तः ॥१-६॥

ચેન્ન-દિવસે સૂર્યકિરણેન તસ્યાપ્કાયસ્યાકાશપતિતસ્ય વિનાશેન તત્કાલે સાધુગમનસ્યાવિરુદ્ધત્વાત્, યદિ પરિષ્ઠાપનકાઘાવશ્યકકારણમાસાઘ્ય રાત્રિગમન-માપતેત્તદા સંચરણેનૈવ ગન્તવ્યમિતિ શાસ્ત્રમર્યાદા । ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—‘જહા સે વાયરઆઝકાણ’ યથા સ વાદરાડપ્કાયઃ ‘અન્નમન્નસમાઝત્તે’ અન્યોન્યસમાયુક્તઃ—એકો વાદરાપ્કાયોડન્યેન વાદરાપ્કાયેન સહ મિલિતઃ સન્ ‘ચિરંપિ’ ચિરમપિ=અનેકવર્ષે યાવત્ તડાગાદિપૂરણાત્, ‘દીહકાલં’ દીર્ઘકાલમ્=અનેકદિનં યાવત્ ‘ચિદ્દહ’ તિષ્ઠતિ—‘તહા ણં’ તથા સ્વલુ તેન પ્રકારેણ હે ભદન્ત ! ‘સેવિ’ સોડપિ સૂક્ષ્માપ્કાયોડપિ ચિરમપિ દીર્ઘકાલ તિષ્ઠતિ કિમિતિ પ્રશ્ન ।

સબ કાલ મેં અપ્કાય કી ચિરાધના હોને કા પ્રસન્ન પ્રાપ્ત હોના હૈ ।

ઉત્તર—દિન મેં સૂર્યકિરણોં સે આકાશપતિત ઉસ અપ્કાય કા વિનાશ હો જાતા હૈ—અતઃ ઉસ સમય મેં માયુજનોં કા ગમન અવિરુદ્ધ હૈ—વાધાકારી જહીં હૈ । યદિ પરઠવને આદિ આવશ્યક કારણોં કો લેકર રાત્રિ મેં ગમન કરના પડે તો શરોર કો ઢક કર હી ચલના ચાહિયે. સ્વલે શરીર હોકર જહીં ચલના ચાહિયે, એમી શાસ્ત્ર કી મર્યાદા હૈ । અબ ગૌતમ પુનઃ પૂછતે હૈ (જહા સે વાયરે આઝકાણ અન્ન-મન્નસમાઝત્તે ચિરંપિ, દીહં કાલં ચિદ્દહ, તહા ણ સે વિ હે ભદન્ત ! જૈસે એક વાદર અપ્કાય દૂસરે વાદર અપ્કાય કે સાથ મિલા હુઆ હોકર અનેક વર્ષોં તક યાવત્ તડાગ આદિમેં અર જાનેસે અનેક દિનોં અનેક મામ અનેક વર્ષોં તક રહતા હૈ ઉસી તરહસે કયા યહ સૂક્ષ્મ અપ્કાય સી રહના હૈ?

પણ જુવુ જોધએ નહીં કારણ કે તેઓના જવા આવવાથી બધે સ્થળે હુમેશાં અપૂકાયના જીવોની વિરાધના થવાનો પ્રસંગ ઉપસ્થિત થશે

સમાધાન—દિવસે સૂર્યનાં કિરણોની ગરમી વડે આકાશમાંથી પડતાં તે અપૂકાયના જીવોનો સ્વાભાવિક રીતેજ વિનાશ થાય છે તેથી દિવસે સાધુઓના જવા આવવાથી અપૂકાય જીવોની વિરાધનાનો સંભવ રહેતો નથી પરંતુ રાત્રે અપૂકાયના જીવોની હિ સાથી બચવાને માટે ઝાડો, પેશાબ વગેરે અનિવાર્ય કારણોને લઈને રાત્રે સાધુ સાધવી તથા વ્રતધારી શ્રાવક શ્રાવિકાઓને જવા આવવાની જરૂર પડે તો શરીરને ઢાકીને જ જવું આવવું જોઈએ ઉઘાડે શરીરે જઈ આવી શકાય નહીં એવી શાસ્ત્રની આજ્ઞા છે વળી ગૌતમસ્વામી પૂછે છે (જહા સે વાયરે આઝકાણ અન્નમન્નસમાઝત્ત ચિરપિ, દીહં કાલં ચિદ્દહ, તહા ણં સે વિ) હે ભગવન્ ! જેવી રીતે બાહર (સ્થૂળ) અપૂકાય (પાણી) બીજા બાહર અપૂકાયની સાથે મળીને તળાવ વગેરેમાં દિવસોના દિવસો, મહિનાઓ અને વર્ષો સુધી રહે છે, એવી રીતે શું સૂક્ષ્મ અપૂકાય પણ રહે છે ?

ઉત્તર—(જાં ફળદે સમદે) હે ગૌતમ તે અર્થ બરાબર નથી એટલે કે

તાદીનામાહારઃ, इत्युचरम्, गर्भगतस्य क आहारः? इति प्रश्नः, मातृशोणितेन सार्धं मातृमसित्वाहारः, इत्युचरम् । गर्भगतस्य जीवस्य मूत्रपुरीषादिकं भवति न चेति प्रश्नः, नेत्युचरम् । तत्र कारणप्रश्नः, आहारस्यानेक रूपेण परिणामो भवतीत्युचरम् । गर्भस्यो जीव किं मुखेन ग्रह्यन्ते ? नेत्युचरम् । तत्र कारणप्रश्नः, सर्वशरीरेमाहारं करोतीति कारणकथनम् । मातृरसहारिणी-पुत्रजीवरसहारिणी-नाड्योर्विचारः, सन्तानस्य मातृरङ्गानि कियंति भवन्तीति प्रश्नः, ग्रीणीत्युचरम्, मातुः सकाशात्-ज्वाङ्गानि कियत्कालं सिष्ठन्तीति प्रश्नः, आमरणमित्युचरम् । गर्भे विद्यमानो जीवो नरके याति न चेति प्रश्नः, याति न वा यातीत्युचरम् । तत्र कारणकथनम् । गर्भस्य

પ્રશ્નમાં શુક્રશોણિત આદિ કાં થઈ આહાર કરતા હૈ એસાં ઉત્તર । ગર્ભ મેં રહેં છુપે જીવ કા આહાર ક્યાં હોતા હૈ? એસાં પ્રશ્ન-માતા કે શોણિત કે સાથ માતા કે દ્વારા મક્ષિત પદાર્થ હસકા આહાર હોતા હૈ, એસાં ઉત્તર । ગર્ભગત જીવ કે મૂત્ર પુરીષ (વિષ્ટા) આદિ હોતે હૈં યા નહીં? એસાં પ્રશ્ન-નહીં હોતે, એસાં ઉત્તર । હસકા ક્યાં કારણ હૈ એસાં પૂછના-ઔર આહાર કા અનેક રૂપ સે પરિણામ હોતા હૈ ? એસાં ઉત્તર દેના । ગર્ભમેં રહા છુપા જીવ ક્યાં મુઠ્ઠાસે છાતા હૈ એસાં પ્રશ્ન-મુઠ્ઠાસે નહીં છાતા હૈ એસાં ઉત્તર । હસમેં ક્યાં કારણ હૈ ? એસાં પ્રશ્ન, વહ સર્વ શરીર સે આહાર કરતા હૈ એસાં કારણકથનરૂપ ઉત્તર । માતૃજીવરસહારિણી ઔર પુત્રજીવરસહારિણી નાડિયોં કા વિચાર, સંતાન કે માતા કે અંગ કિતને હોતે હૈં ? એસાં પ્રશ્ન, ત્રીન હોતે હૈં, એસાં ઉત્તર, માતાસે પ્રાપ્ત છુપે અંગ કિતને કાલ-તક રહતે હૈં ? એસાં પ્રશ્ન, મરણ પર્યન્ત રહતે હૈં, એસાં ઉત્તર, ગર્ભ મેં વિદ્યમાન જીવ નરકમેં જાતા હૈ યા નહીં ? એસાં પ્રશ્ન, જાતા ની હૈ ઔર

કરે છે એવો ઉત્તર, ગર્ભમાં રહેલો છવ ક્યો આહાર લે છે ? એવો પ્રશ્ન અને માતાના શોણિતની સાથે માતા વડે ખવાયેલ પદાર્થોના આહાર લે છે એવો ઉત્તર ગર્ભમાં રહેલો છવ મળ મૂત્ર કરે છે કે નહીં ? એવો પ્રશ્ન અને તેને નકારમાં ઉત્તર, તેનું શું કારણ છે ? એવો પ્રશ્ન અને આહાર અનેક રીતે પરિણમે છે એવો ઉત્તર, ગર્ભમાં રહેલો છવ શું મુખ વડે ખાય છે ? એવો પ્રશ્ન અને નથી ખાતો એવો ઉત્તર, તેનું કારણ શું ? એવો પ્રશ્ન અને તે સમસ્ત શરીર વડે આહાર કરે છે એવો ઉત્તર માતૃજીવરસહારિણી અને પુત્રજીવરસહારિણી નાડિયોના વિચાર, સંતાનમાં માતાનાં કેટલાં અંગ હોય છે ? એવો પ્રશ્ન, અને ત્રણ હોય છે એવો ઉત્તર માતાથી પ્રાપ્ત થયેલાં અંગો કેટલા કાળ સુધી રહે છે ? એવો પ્રશ્ન-મરણ પર્યન્ત રહે છે એવો ઉત્તર, ગર્ભમાં રહેલો છવ નરકમાં જાય છે કે નહીં ? એવો પ્રશ્ન-

। અથ સસમોદ્દેશકઃ પ્રારંભ્યતે ।

સસમોદ્દેશકે સંક્ષેપતો વિચારણીયા હમે વિષયાસ્તથાદિ-નારકાદિજીવાના-
ઉત્પત્તિવિચારઃ, તત્ર ચતુર્વિંગતિદણ્ડકાઃ, નારકાદીનામાહારવિચારઃ, પુનશ્ચતુર્વિ-
ંગતિદણ્ડકાઃ, નૈરયિકોદ્વર્તનવિચારસ્તત્રોપપન્નોદ્વૃત્તવિગ્રહગતિસમાપન્નાઽવિગ્રહગતિ
સમાપન્નાદિકથને ચતુર્વિંગતિદણ્ડકાઃ દેવાનાં ચ્યવનં ગર્ભવિચારઃ, ગર્ભે સમુત્પદ્યમાના
જીવા ઇન્દ્રિયવન્તો ન વેતિ વિચારઃ, દ્રવ્યેન્દ્રિયભાવેન્દ્રિયયોઃ કથનમ્, ગર્ભાદુત્પદ્ય-
માનસ્ય શરીરં ભવતિ ન વેતિ વિચારઃ, ઔદારિકવૈક્રિયાહારકતૈજસકાર્મણશરીરાણાં
વિચારઃ, ગર્ભે ઉત્પદ્યમાનો જીવઃ પ્રથમતઃ કમાહારં ગૃહ્ણતીતિ પ્રશ્નઃ, શુક્રશોણિ-

સાતવાં ઉદ્દેશક પ્રારંભ—

અથ સાતવાં ઉદ્દેશક પ્રારંભ હોતા હૈ। હસમેં જો વિચારણીય
વિષય હૈં વે સંક્ષેપ સે હસ પ્રકાર હૈં-નારક આદિ જીવોં કી ઉત્પત્તિ
કા વિચાર, હસમેં ચૌવીસ દણ્ડક, નારક આદિ જીવોંકા આહારવિષયક
વિચાર, પુનઃ ચૌવીસ દણ્ડકોં કા વિચાર, નૈરયિક જીવોં કે ઉદ્વર્તન કા
વિચાર ઉપપન્ન (ઉત્પન્ન હોના), ઉદ્વૃત્ત (નિકલના), વિગ્રહગતિસમાપન્ન,
અવિગ્રહગતિસમાપન્ન આદિ કથન મેં ચૌવીસ દણ્ડક, દેવચ્યવન ઓર
ગર્ભવિચાર, ગર્ભ મેં ઉપજતે જીવ ઇન્દ્રિયોં સે યુક્ત હોતે હૈં યા નહીં હોતે
હૈં? એસા વિચાર, દ્રવ્યેન્દ્રિય ઓર ભાવેન્દ્રિય કા કથન, ગર્ભ સે ઉપજતે
હુણ જીવ કે શરીર હોના હૈં યા નહીં હોના હૈં, એસા વિચાર, ઔદારિક,
વૈક્રિય, આહારક, તૈજસ ઓર કાર્મણ, હન શરીરોં કા વિચાર, ગર્ભ
મેં ઉપજતા હુઆ જીવ પહિલે કિસ આહાર કો ગ્રહણ કરતા હૈં? એસા

સાતમા ઉદ્દેશકની શરૂઆત

હવે સાતમો ઉદ્દેશક શરૂ થાય છે તેમા જે વિષયોનું નિરૂપણ
કરાયું છે તે વિષયોને સંક્ષેપમાં બતાવવામા આવે છે-નારકાદિ જીવોની ઉત્પત્તિનો
વિચાર, તેમા ૨૪ દણ્ડક, નારકાદિ જીવોના આહારનો વિચાર, ફરીથી ૨૪
દણ્ડકોનો વિચાર, નારક જીવોના ઉદ્વર્તનનો વિચાર, ઉત્પન્ન (ઉત્પન્ન થવું) ઉદ્વ-
ર્તન (નીકળવું) વિગ્રહગતિ સમાપન્ન, અવિગ્રહગતિ સમાપન્ન, વગેરેના કથનમા
૨૪ દણ્ડક, દેવચ્યવન અને ગર્ભ વિચાર, ગર્ભમા ઉપજતા જીવો ઇન્દ્રિયોથી
યુક્ત હોય છે કે નથી હોતા તેનો વિચાર, દ્રવ્યેન્દ્રિય અને ભાવેન્દ્રિયનું વર્ણન,
ગર્ભથી ઉપજતા જીવોને શરીર હોય છે કે નહીં, તેનો વિચાર, ઔદારિક,
વૈક્રિય, આહારક, તૈજસ, અને કાર્મણ, એ શરીરોનો વિચાર, ઉત્પન્ન થતો જીવ
પહેલા કયો આહાર લે છે? તેવો પ્રશ્ન, અને શુક્ર શોણિત વગેરેનો તે આહાર
મ ૧૧

नाशनिरूपणे कृते नाशनिरोधिन उरपादस्य स्मरणमवसान् प्रमद्वमगत्या नामोत्तर
काल उरपादस्य निरूपणमायातीति उरपादनिरूपणाय मृतमार्देशकस्यारम्भः क्रियते।
मयना क्लोऽभ्यति पष्ठ पणिता, इहापि क्लोकस्थितिनिगम एव कथ्यते इति
पञ्चकार्यकारित्तरूपमंगत्या पष्ठोद्देशकानन्तरसप्तमोद्देशकस्य निरूपणं क्रियते।
अथवा 'नैरङ्ग' इति संप्रदायायां कथितम्, तस्य विवचनमवसरमाप्तमिति
अवसरमंगत्या पष्ठोद्देशकानन्तरं नैरङ्गकथिपस्य मृतमार्देशकस्य निरूपणं क्रियते,
तस्यदमादिमं सूत्रम्—'नरङ्ग णं भन्ते' इत्यादि।

मृन्म-नेरइण ण भत्ते ! नेरइणमु उववज्जमाणे किं देसेण
देस उववज्जइ, देसेण सव्व उववज्जइ, सव्वेणं देस उववज्जइ,

धर्म हैं। इस कारण नाट्य के निरूपण करने से नाट्य के विशेषी उत्पाद का स्मरण हो आना समर्थ होने से प्रसंग से नाट्योत्तरकाल में उत्पाद का निरूपण आता है। इसलिये उत्पाद निरूपणके लिये सातवें उद्देशक का आरंभ किया गया है अथवा लोभकी स्थिति छोटे उद्देशक में करी गई है, यहाँ पर श्री लोभस्थिति के विषय में ही कहा जा रहा है। तो इस निमित्त को लेकर एककार्यकारित्यरूप मंगति के ध्यान से सूत्रकार छोटे उद्देशक के बाद मान्ये उद्देशक का निरूपण कर रहे हैं।
अथवा—“निरहण” इस मन्त्र गाथा में जो नारकपद कहा गया है उसका चिन्त्यन अब अवसरप्राप्त है तो अवसरप्राप्त होने का कारण छठवें उद्देशक के बाद नैरयिक निषण्णाले मान्ये उद्देशक का सूत्रकार निरूपण कर रहे हैं। उसका सर्वप्रथम सूत्र यह है—“निरहण ण भंते” इत्यादि।

ઉપરથી થયું છે અને ખરેખર વિશાળી મર્યાદા છે તેથી વિનાશનું નિરૂપણ કર્યા પછી તેનાથી વિપરીત જોવા ઉપાદાન સ્મરણ થઈ આવે છે તે કારણે વિનાશ પછી ઉત્પાદનનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું છે. હવે ઉપાદાનનું નિરૂપણ કરવાના આશયથી સાતમાં ઉદેશ્યાની શરૂઆત કરવામાં આવી છે. અમવા-છંદા ઉદેશ્યામાં દોષની મિતિનું વર્ણન કર્યું છે તે મુજબ અર્ધી પણ દોષસ્થિતિના વિષયમાં ના કરના આશી રહ્યું છે તે ના નિમિત્તને કારણે જોઈ કાચકારિત્વરૂપ સમતિને પ્માનમાં રાખીને સૂત્રકાર છંદા ઉદેશ્યાની સમાપ્તિ કરીને હવે સાતમો ઉદેશ્યા શરૂ કર્યો છે. અમવા “ નેરુપા ” આ શબ્દ જાણમાં જે “ નારક ” પદ રહ્યું છે, તેનું વિવેચન કરવાનો અવસર હવે આવી ગયો છે. જોમ અમજીને સૂત્ર કાર છંદા ઉદેશ્યાની પછી નરસિક વિષયવાળા સાતમાં ઉદેશ્યાનું નિરૂપણ કરે છે તેનું સૌથી પહેલું સૂત્ર “ નરુપણ મતે ! ” ઉત્પાદિ છે.

જીવસ્ય શત્રુણા સહ સંગ્રામકરણમ્ । ગર્ભસ્થો જીવઃ કિં દેવો ભવેદિતિ પ્રશ્નઃ,
ભવેન્ન વા ભવેદિત્યુત્તરમ્ । ગર્ભસ્થિતસ્ય ધાર્મિકપ્રવચનાદિશ્રવણવિચારઃ, જીવસ્ય
ગર્ભનિવાસપ્રકારવિચારઃ, માતુઃ સુખાત્સુખી દુઃખાઃદુઃખી ભવતિ કિમિતિ પ્રશ્નઃ,
ભવતીત્યુત્તરમ્, ગર્ભાન્નિઃસરણકાલિકશુભાશુભવિચારઃ, ઉદ્દેશકપરિસમાપ્તિશ્ચેતિ ॥

અથ ષષ્ઠમુદ્દેશકં નિરૂપ્ય તદનન્તરં સપ્તમોદ્દેશકં નિરૂપયતિ, ષષ્ઠસપ્તમયોરયં
સંબન્ધસ્તથાહિ-ષષ્ઠોદ્દેશકસ્યાન્તે સ્નેહકાયઃ સિપ્રમેવ ત્રિનિશ્ચયતીતિ કથિતમ્,
હૃદ તુ તાદૃશ્વિનાશવિપર્યય ઉત્પાદઃ પ્રતિપાદ્યતે, તત્ર નાશોત્પાદયોઃ પરસ્પરં વિરોધેન

નહીં મી જાતા હૈ, ઇસા ઉત્તર, ઇસમ્ કારણ કથન, ગર્ભ મ્ રહા હુઆ
જીવકા શત્રુકે સાથ સંગ્રામ કરના, ગર્ભમ્ રહા હુઆ જીવ કયા દેવ હોતા
હૈ? ઇસા પ્રશ્ન, હો મી સકતા નહીં મી હો સકતા હૈ ઇસા ઉત્તર, ગર્ભસ્થ
જીવકે ધાર્મિક પ્રવચન આદિકે સુનનેકા વિચાર, જીવકે ગર્ભ નિવાસકે
પ્રકાર કા વિચાર, માતા કે સુખ સે સુખી ઓર માતા કે દુઃખ સે દુઃખી
હોતા હૈ? કયા ઇસા પ્રશ્ન, -હોતા હૈ, ઇસા ઉત્તર, ગર્ભસે નિકલતે સમય
કા શુભાશુભ વિચાર, ઉદ્દેશક કી સમાપ્તિ ॥

છઠ્ઠે ઉદ્દેશક કા નિરૂપણ કરકે અવ સૂત્રકાર ઇસકે બાદ સાતવે
ઉદ્દેશક કા નિરૂપણ કરતે હૈં । ઇન દોનોં કા સંબંધ ઇસ પ્રકાર સે હૈ-
છઠ્ઠે ઉદ્દેશક કે અન્ત મ્ જો ઇસા કહા ગયા હૈ કિ સ્નેહકાય જો
સૂક્ષ્મ હોતા હૈ વહ શીઘ્ર હી નષ્ટ હો જાતા હૈ સો ઇસ ઉદ્દેશક મ્ ઇસકે
ઇસ વિનાશ સે વિપરીત જો ઉત્પાદ હૈ ઇસકા કથન કિયા ગયા હૈ ।
ક્યોં કિ નાશ ઓર ઉત્પાદ (ઉત્પન્ન હોના) યે દોનોં આપસ મ્ વિરોધી

અથ છે પણ ખરો અને નથી પણ જતો એવો ઉત્તર, અને ગર્ભમાં રહેલા
જીવનો શત્રુની સાથે સંગ્રામ, વગેરે કારણોનું વર્ણન ગર્ભમાં રહેલા જીવ
શુ દેવ થાય છે? એવો પ્રશ્ન થાય પણ ખરો અને ન પણ થાય એવો ઉત્તર
ગર્ભમાં રહેલ જીવનો ધાર્મિક પ્રવચન વગેરે શ્રવણ કરવાનો વિચાર, જીવના
ગર્ભનિવાસના પ્રકારનો વિચાર, ગર્ભમાનો જીવ માતાના સુખથી સુખી અને
માતાના દુઃખથી દુઃખી થાય છે કે નહીં? એવો પ્રશ્ન-થાય છે એવો ઉત્તર,
ગર્ભમાંથી બહાર આવવાના સમયનો શુભાશુભ વિચાર, ઉદ્દેશકની સમાપ્તિ

છઠ્ઠા ઉદ્દેશાનું નિરૂપણ કરીને હવે સૂત્રકાર સાતમાં ઉદ્દેશાનું નિરૂપણ કરે
છે તે બન્ને ઉદ્દેશાઓ વચ્ચે આ પ્રમાણે સંબંધ છે- છઠ્ઠા ઉદ્દેશાને અતિ
એવું કહ્યું છે કે સૂક્ષ્મ સ્નેહકાય શીઘ્ર (જલ્દીથી) નાશ પામે છે બન્યારે આ
ઉદ્દેશામાં વિનાશથી વિપરીત ઉત્પાદ કરવામાં આવ્યું છે. નાશ અને

सुपपद्यत, नादशेन सर्वमुपपद्यत नो सर्वेण देशमुपपद्यते, सर्वेण सर्वमुपपद्यते, यथा
 नैरयिकः एवं यावद्वैमानिकः । नैरयिकः स्वलु मदन्त ! नैरयिकेऽप्युपपद्यमानः किं
 देशेन देशमाहरति, दशेन सर्वमाहरति, सर्वेण देशमाहरति, सर्वेण सर्वमाहरति,
 गौतम ! नो देशेन दशमाहरति, ना देशेन सर्वमाहरति, सर्वेण वा देशमाहरति,
 सर्वेण वा सर्वमाहरति, एव यावद्वैमानिकः । नैरयिकः स्वलु मदन्त ! नैरयिकेभ्य
 उद्धर्तमानः किं देशेन देशमुद्धर्तत, यथोपपद्यमानस्तथेवोद्धर्तमानेऽपि दण्डको मणितव्यः ।
 नैरयिकः स्वलु मदन्त ! नैरयिकेभ्य उद्धर्तमानः किं देशेन देशमाहरति? तथैव यावत्
 सर्वेण वा दशमाहरति, सर्वेण वा सर्वमाहरति, एवं यावद्वैमानिकः, नैरयिकः स्वलु
 मदन्त ! नैरयिकेऽप्युपपन्नः किं देशेन देशमुपपन्नः, एवोपि तथैव, यावत् सर्वेण सर्व
 मुपपन्नः । यथोपपद्यमाने उद्धर्तमाने च चत्वारो दण्डका यथोपपन्नेनोद्धर्ततेनापि
 चत्वारो दण्डका मणितव्याः, सर्वेण सर्वमुपपन्नः, सर्वेण सर्वमुद्धर्ततः, सर्वेण वा
 दशमाहरति, सर्वेण वा सर्वमाहरति, एतन्नामिलापन, उपपन्नेऽपि, उद्धर्तनेऽपि
 शातव्यम्, नैरयिकः स्वलु मदन्त ! नैरयिकेऽप्युपपद्यमानः किम् अर्द्धेन अर्द्धमुपपद्यत,
 अर्द्धेन सर्वमुपपद्यत, सर्वेणार्द्धमुपपद्यते, सर्वेण सर्वमुपपद्यत, यथा प्राथमिकेनाष्ट
 दण्डकान्ताव्यार्द्धेनाप्यष्ट दण्डकाः मणितव्याः, नवरं यत्र देशेन देशमुपपद्यते, तथा
 द्वेनार्द्धमुपपद्यते इति मणितव्यम्, एतन्नामात्मम्, एते सर्वेऽपि पौण्ड्र दण्डका
 मणितव्याः ॥ सु० १ ॥

टीका—ननु 'नैरयिकेभ्य उद्धर्तमाने' इति मूलसूत्रवाक्यं न
 युक्तियुक्तं प्रतिमाति यत्रा यो जीव इदानीं नरकेनात्मसु स कथं नैरयिक इति
 कथयितुं शक्यते, नरके उत्पन्नयन्तरमेव नैरयिक इति कथनं युक्ति युक्तं भवेत् न

टीकार्थ—शङ्का—'नैरयिकेभ्य उद्धर्तमाने' इति मूलसूत्रवाक्यं न
 मूलसूत्र वाक्य हे वह युक्तियुक्त नहीं मालूम पड़ता है। क्योंकि जो
 जीव इस समय में नरक में उत्पन्न नहीं हुआ है। वह कैसे नैरयिक
 कहा जा सकता है। नरक में जन्म होने के बाद ही जीव नारक कहलाता
 है, और यही पाप युक्तियुक्त प्रतीत होती है। इस के पहिले नारक
 कहने की पाप युक्तियुक्त प्रतीत नहीं होती है।

टीकार्थ—शङ्का—'नैरयिकेभ्य उद्धर्तमाने' नारकाभा उत्पन्न
 यन्तरे नारक भवता के भूतसूत्र वाक्य से ते मुक्ति भूत वाक्य न थी कारण के
 के भव वतमान भागे नरकाभा उत्पन्न भवे। न थी तेने नैरयिक (नारक) केवी
 शीते कही शक्य है नरकाभा जन्म बीजा पछी व तेने नारकीने भव कही शक्य
 ते पहेला तेने नारकीने भव कहेवे। ते मुक्तिभूत वाक्य न थी।

सव्वेणं सव्वं उववज्जइ?, गोयमा ! नो देसेणं देसं उववज्जइ,
नो देसेणं सव्वं उववज्जइ, नो सव्वेणं देसं उववज्जइ, सव्वेणं सव्वं
उववज्जइ, जहा नेरइए एवं जाव वेमाणिए । नेरइए णं भंते !
नेरइएसु उववज्जमाणे किं देसेणं देसं आहारेइ, देसेणं सव्वं
आहारेइ, सव्वेणं देसं आहारेइ, सव्वेणं सव्वं आहारेइ,
गोयमा ! नो देसेणं देसं आहारेइ, नो देसेणं सव्वं आहारेइ, सव्वेणं
वा देसं आहारेइ, सव्वेणं वा सव्वं आहारेइ, एवं जाव वेमाणिए ।
नेरइए णं भंते ! नेरइएहिंतो उव्वट्टमाणे किं देसेणं देसं
उव्वट्टइ? जहा उववज्जमाणे तहेव उव्वट्टमाणे वि दंडगो भा-
णियव्वो, नेरइएणं भंते! नेरइएहिंतो उव्वट्टमाणे किं देसेणं देसं
आहारेइ? तहेव जाव सव्वेणं वा देसं आहारेइ, सव्वेणं वा सव्वं
आहारेइ, एवं जाव वेमाणिए, नेरइए णं भंते! नेरइएसु उववज्जे
किं देसेणं देसं उववज्जे, एसो वि तहेव जाव सव्वेणं सव्वं उववण्णे।
जहा उववज्जमाणे, उव्वट्टमाणे य चत्तारि दंडगा तहा उवव-
ज्जेणं उववट्टेण वि चत्तारि दंडगा भाणियव्वा, सव्वेणं सव्वं
उववण्णे, सव्वेणं सव्वं वा देसं आहारेइ, सव्वेणं वा सव्वं
आहारेइ, एएणं अभिलावेणं उववज्जे वि, उव्वट्टेण वि नेयव्वं,
नेरइए णं भंते ! नेरइएसु उववज्जमाणे किं अद्धेणं अद्धं
उववज्जइ, अद्धेणं सव्वं उववज्जइ, सव्वेणं अद्धं उववज्जइ,
सव्वेणं सव्वं उववज्जइ, जहा पढमिल्लेणं अट्टदंडगा तहा
अद्धेण वि अट्टदंडगा भाणियव्वा, नवरं जहिं देसेणं देसं
उववज्जइ तहिं अद्धेणं अद्धं उववज्जइ, इति भाणियव्वं, एयं
णाणत्तं, एए सव्वेवि सोलसदंडगा भाणियव्वा ॥सू०१॥

छाया-नैरयिकः खलु मदन्त ! नैरयिकेषु उपपद्यमानः किं देशेन देशमुपपद्यते,
देशेन सर्वमुपपद्यते, सर्वेण देशमुपपद्यते, १मुपपद्यते, गौतम! नो देशेन देश-

नैरयिको भदन्त नैरयिकेषु उपपद्यमानः ' किं देसेणं दसं उववज्जइ ' किं देशेन
 देशमुपपद्यते जीवः स्वस्यैकदेशेन एकैनावयवेन नारकस्यैकदेशमाधित्य उत्पद्यते,
 किम्? 'देससं सव्वं उववज्जइ' देशेन सर्वावयवपद्यते, देशेन स्वावयवेन सर्वं सर्वं
 माधित्य सर्वात्मना नारकावयवितयस्यर्थ, उत्पद्यते? अथवा किम् 'सव्वेणं देसं
 उववज्जइ' सर्वेण देशमुपपद्यते, सर्वेण सर्वात्मना दसं देशतो नारकावयवतयोत्पद्यते,
 अथवा किम्—'सव्वेणं सव्वं उववज्जइ' सर्वेण सर्वमुपपद्यते, सर्वेण सर्वात्मना
 सर्वं सर्वतो नारकावयवितया समुत्पद्यते? अथमाशयः—नरके उत्पद्यमानो जीवः
 किम् स्वस्यैकदेशेन, नारकस्यैकदेशतयोत्पद्यते १, अथवा स्वस्यैकदेशेन नारकस्य
 सर्वावयवतया—उत्पद्यते २, अथवा सर्वावयवेन नारकस्यैकदेशतया समुत्पद्यते ३,
 अथवा स्वस्य सर्वावयवेन नारकस्य सर्वावयवितया समुत्पद्यते ४ इति चत्वारो

अथ गौतमस्वामी प्रश्नु से पूछते हैं कि (नेरइए णं मंते ।
 नेरइएसु उववज्जमाणे) हे भदन्त! नरकों में उपजनेवाला—अमी
 उत्पन्न नहीं हुआ है। आगे उत्पन्न होनेवाला है, ऐसा नारक जीव (किं
 दसेणं देस उववज्जइ) क्या अपने एक देश से—एक अवयव से—नारक
 के एक देश को आश्रित करके उत्पन्न होता है? (देसेणं सव्वं उवव
 ज्जइ?) या एक देश से सब को आश्रित करके—पूर्ण नारकरूप अवय-
 वीपने से उत्पन्न होता है? अथवा (सव्वेणं देस उववज्जइ) अपने
 समस्त अवयवों से नारक के अवयवरूप से उत्पन्न होता है? अथवा—
 (सव्वेण सव्वं उववज्जइ) समस्त अवयवों से नारक के समस्त अवयव
 रूप से उत्पन्न होता है? इसका यह आशय है कि—नरक में उत्पद्यमान
 जीव क्या अपने एक देश से नारक के एकदेशरूप से उत्पन्न होता है,
 अथवा अपने एकदेश से नारक के सर्वावयवरूप से उत्पन्न होता है,
 अथवा अपने सर्वावयव से नारक के एकदेशरूप से उत्पन्न होता है,
 अथवा कि अपने सर्वावयव से नारक के सर्वावयवरूप से उत्पन्न होता
 है? इस तरह से चार विकल्प गौतमस्वामी के हैं—इसका उत्तर देते

गौतम स्वामी भदन्त प्रश्नुने पूछि छे हे (नेरइए णं मंते । नेरइएसु उव
 वज्जमाणे नारकमा उत्पन्न वनाइ नारक एव (किं देसेणं देसं उववज्जइ)
 शु पीताना ओकदेशधी नारकना ओकदेश इये उत्पन्न थाय छे, (देश ओटवे
 अवयव अथवा अश) (देसेण सव्वं उववज्जइ?) पीताना ओक देशधी नारकना
 सब देश इये उत्पन्न थाय छे? हे (सव्वेणं देसं उववज्जइ?) पीताना सम
 स्त अवयवधी नारकना ओक अवयव इये उत्पन्न थाय छे? हे सव्वेणं सव्वं
 उववज्जइ?) हे पीताना समस्त अवयवधी नारकना समस्त अवयवइये उत्पन्न
 थाय छे? यदि चार विकल्प गौतमस्वामीके पूछ्या.

તુ તત્પૂર્વકાલે ? इत्याशङ्कायामाह-वर्तमानभविष्यत्कालयोरभेदमुपचर्य उत्पद्यमानो जीव उत्पन्न इति कथ्यते, तथा नरके उत्पद्यमानो जीवः नरक इति संज्ञयापि संगतो भवितुमर्हति नरकत्व प्रायोग्यायुप उदयप्राप्तत्वोदिति । अपि च यदा जीवस्यान्यस्यायुष्यकर्मणो नोदयोऽपि तु नारकायुष्कस्यैवोदयस्तथा यदि स नारक इति शब्देन न व्यवह्रियते तदा केन नामविशेषेण तस्य संकेतः करणीयः स्यादिति हेतुनाऽपि नरके उत्पद्यमानो जीवो नैरयिकशब्देन व्यवह्रियते । न तत्र काऽपि क्षतिरिति । गौतमः पृच्छति-‘नेरइए णं भंते नेरइएसु उववज्जमाणे’

उत्तर वर्तमानकाल और भविष्यत्काल इन दोनों कालोंमें यहां अभेद का उपचार किया गया है । सो इन अभेद उपचार को लेकर नरकमें उत्पन्न होने के सन्मुख हुए जीवको नारक कह दिया गया है । तथा नरकमें जो उत्पन्न होने जा रहा है ऐसा जीव नारक इस नामसे भी कहा जाय तो कोई विरोध नहीं आता है क्योंकि उस समय उस जीवके नरकप्रायोग्य आयु का उदय हो जाता है । गति, आनुपूर्वी और आयु, इनका उदय एक साथ होता है । तथा-जब नरक गति में उपजने के लिये सन्मुख हुए जीव के तिर्यञ्चायु मनुष्यायु और देवायु, इनमें से किसी भी आयु का उदय नहीं होता है, एक नरकायुष्क का ही उदय होता है तो ऐसी स्थिति में वह नारक शब्द से नहीं कहा जायगा तो ओर किस शब्द से कहा जायगा, अतः नरक में उत्पद्यमान जीवका नैरयिक शब्द से ही व्यवहार होगा । इसी कारण यहां पर भी उसका नारक शब्दसे व्यवहार किया गया है । इस प्रकार के व्यवहार में सैद्धान्तिक कोई भी आपत्ति नहीं आती है ।

સમાધાન—અહીં વર્તમાનકાળ અને ભવિષ્યકાળ, એ બન્ને કાળમાં અલે-
દનો ઉપચાર (આરોપણ) કરવામાં આવેલ છે તે અલેદ ઉપચારની અપેક્ષાએ
નરકમાં ઉત્પન્ન થવાને સન્મુખ થયેલા જીવને નારક કહેવામાં આવ્યો છે નરકમાં
જે ઉત્પન્ન થવાનો છે એવા જીવને નારક કહેવામાં કોઈ વાંધો જણાતો નથી
કારણ કે તે સમયે જીવના નરક પ્રાયોગ્ય (યોગ્ય) આયુષ્યનો ઉદય થઈ ગયો
હોય છે ગતિ, આનુપૂર્વી અને આયુષ્યનો ઉદય એક સાથે જ થાય છે વળી
નરકગતિમાં ઉપજવાને સન્મુખ થયેલા જીવના તિર્યંચાયુ, મનુષ્યાયુ અને દેવ
આયુ, એ ત્રણેમાંથી એક પણ આયુનો ઉદય હોતો નથી ફક્ત નરકાયુનો જ
ઉદય હોય છે તો એવી સ્થિતિમાં તેને “નારક” ન કહી શકાય તો બીજી શું
કહી શકાય ? તેથી નારકમાં ઉત્પદ્યમાન (ઉત્પન્ન થવાને સન્મુખ થયેલા) જીવને
માટે “ નારક ” શબ્દનો જ પ્રયોગ કરવો જોઈએ. આમ કરવામાં કોઈ પણ
પ્રકારનો સૈદ્ધાન્તિક વાંધો નથી.

માયતે, સમ્પૂર્ણરૂપગૌરવ દુર્ગ્ય સમ્પૂર્ણદધિરૂપતયૈવ પરિણમતે ન તુ દુર્ગ્યસ્યૈકદેષેન દધ્નિ એકદેષો ભવતિ, યથા ષા તન્તુના પટામતિબદ્ધપટમદેશઃ । યથા પટદેશ મૂતેન તન્તુના પટામતિબદ્ધઃ પટદેશો ન નિર્વર્ત્યતે, તથૈવ પૂર્વતિર્યગાદિવપિ

ક્યોં કિ કારણસે અર્થાત્ અપને એક અંશસે અપને કાર્યકે એક અંશરૂપમેં ઉત્પન્ન નહીં હોતા, હસકા અભિપ્રાય એસા છે કે જો પરિણામી કારણ હોતા હૈં ઉસકે એક અવયવ સે કાર્ય કે એક અવયવ કી ઉત્પત્તિ સ્વીકૃત નહીં કી ગઈ હૈં, ક્યોં કિ જો પરિણામી કારણ હોતા હૈં—અર્થાત્ ઉપાદાન કારણ હોતા હૈં—વહ અપને સર્બરૂપ સે હી કાર્ય કે આકાર મેં પરિણમ આતા હૈં । એસા નહીં હૈં કિ ઉસકે એકદેશ સે ઉસકે કાર્ય કા એકદેશ નિષ્પન્ન હોતા હો । જૈસે વહી કા ઉપાદાન કારણ વૃક્ષ હૈં મો વહ ઉપાદાન કારણરૂપ વૃક્ષ અપને સમસ્ત અવયવોં સે હી સંપૂર્ણ દધિરૂપ મેં પરિણમતા હૈં । એસા નહીં હૈં કિ ઉસ વૃક્ષ કે એકદેશ સે વહી કા એક દેશ નિષ્પન્ન હોતા હો । તાત્પર્ય કહને કા યહ હૈં કિ જો ઉપાદાન કારણ હોતા હૈં વહ નિયમ સે અપને સમ્પૂર્ણરૂપ સે અપને કાર્યરૂપ મેં બદલ જાતા હૈં । ઉપાદાન કી ઉપાદાનતા કેવલ યહી તો હૈં કિ જો વહ અપને આપ કો સમસ્તરૂપ મેં કાર્યરૂપ મેં પરિણમા દેતા હૈં । વહી કા ઉપાદાન કારણ વૃક્ષ અપને સમસ્ત નિજરૂપ કો વહીરૂપ મેં યના દેતા હૈં । જૈસે—વક્ત્ર કે એકદેશમૂલ તત્તુસે પટામતિબદ્ધ પટમદેશ ઉત્પન્ન નહીં હોતા હૈં । હસી તરહ પૂર્વતિર્યગાદિ—અવયવી મેં પ્રતિષ્ઠિત રહતે હુણ જીવ કે એકદેશ સે ઉત્તરાવયવીરૂપ નારકકા એકદેશ નિષ્પન્ન નહીં હો સક્તા હૈં । કહનેકા તાત્પર્ય યહ હૈં કિ આતાનચિતાતીમૂલ તંતુઓંસે (તાનાવાના કિયે હુણ) યનતે હુણ વક્ત્રકે ઉપાદાન કારણ બે તંતુ હોતે હૈં, ઓર વહ વક્ત્ર ઉનકા કાર્ય હોતા હૈં । અથ યહાંપર યહ વિચારના ચાહિયે કિ ઉન તંતુઓંસે જો વક્ત્રકા

આવેશ છે જેમ કે હઢીનું ઉપાદાન કારણ રૂપ છે તે ઉપાદાન કારણ રૂપ રૂપ પાતાના તમામ અશીધી તમામ અશી સહિત હઢી રૂપે પરિણમે છે એવું નથી હોતું કે રૂપના એકદેશથી હઢીના એકદેશ બને. ઉપાદાન કારણની મહત્તા એજ છે કે તે પાતાને સમસ્ત રૂપે જ કાર્ય રૂપે પરિણમાવે છે જેમ વક્ત્રના એકદેશરૂપ તત્તુથી (તાંતણાથી) બાપુ વક્ત્ર તૈયાર થતું નથી એવી જ રીતે પૂર્વની તિથિ અવશેષે યોનિના છવોના એકદેશ (અવયવ)થી નારકનો એકદેશ (અવયવ) નિષ્પન્ન થતો નથી. તાત્પર્ય એ છે કે તાણાવાણાઓથી બનતા વક્ત્રના ઉપાદાન કારણરૂપ તત્તુઓ છે અને વક્ત્ર તેમનું કાર્ય છે હવે તત્તુઓના એકદેશથી વક્ત્રનું નિર્માણ થતું નથી, એટલું જ નહીં પણ તત્તુઓના

વિકલ્પાઃ પ્રશ્નકર્તુરિતિ । મગવાનાહ—‘ગોયમે’-ત્યાદિ । ‘ગોયમા’ હે ગૌતમ ! ‘નો દેસેણં દેસં ઉવવજ્જહ’ નો દેસેન દેશમુપપચ્ચતે, યતઃ-પરિણામિ કારણસ્યૈકેનાવયવેન કાર્યાવયવસ્યોત્પત્તેરનશ્યુપગમ એવ ભવતિ, યત્ પરિણામિ કારણં તત્સર્વરૂપતયૈવ કાર્યાકારેણ પરિણમતે ન તુ એકદેશતઃ કાર્યસ્ય એકદેશો

હુએ પ્રશ્ન કહતે હૈં—(ગોયમા ? નો દેસેણં દેસં ઉવવજ્જહ, નો દેસેણં સવ્વં ઉવવજ્જહ, નો સવ્વેણં દેસં ઉવવજ્જહ, સવ્વેણં સવ્વં ઉવવજ્જહ) હે ગૌતમ ! ઉત્પદ્યમાન નારકજીવ અપને એકદેશ સે ન તો નારકજીવ કે એકદેશ રૂપ સે ઉત્પન્ન હોતા હૈ, ન વહ અપને એકદેશ સે નારક જીવકે સર્વાવયવરૂપ સે ઉત્પન્ન હોતા હૈ ઓર ન વહ અપને સમસ્ત અવયવોં સે નારકજીવ કે એકદેશરૂપ સે ઉત્પન્ન હોતા હૈ કિન્તુ વહ અપને સમસ્ત અવયવોં સે નારક જીવ કે સમસ્ત અવયવરૂપ સે હી ઉત્પન્ન હોતા હૈ । ઇન ચાર પ્રશ્નોં કા ભાવાર્થ એસા હૈ કિ કોઈ નયા જીવ જો નરકોં મેં નારકજીવ કી પર્યાય સે ઉત્પન્ન હોને વાલા હોતા હૈ ડસકે વિષય મેં ગૌતમસ્વામી ને પ્રશ્ન સે એસા પૂછા હૈ કિ વહ જીવ અપને કિસી એક અંશ સે ડસ પર્યાય કે એક અંશ મેં ઉત્પન્ન હોતા હૈ, યા ડસકે સમસ્ત અંશ મેં ઉત્પન્ન હોતા હૈ, યા અપને સમસ્ત અંશ સે ડસ પર્યાય કે એક અંશ સે ઉત્પન્ન હોતા હૈ યા સમસ્ત અંશ મેં ઉત્પન્ન હોતા હૈ । ઇનમેં પહિલે કે ત્રીન પ્રશ્નોં કો અસાન્ય વતાકર ચૌથે પ્રશ્ન કો સ્વીકાર કરતે હુએ પ્રશ્ન ને ગૌતમ કો સમજાયા કિ હે ગૌતમ ! જો નયા જીવ નૈરયિક કી પર્યાય સે ઉત્પન્ન હોતા હૈ વહ વહાં અપને સમસ્ત અંશોં સે ડસ વિવક્ષિત પર્યાયકે સમસ્ત અંશોંમેં અર્થાત્ ડસી પૂર્ણ અવયવીરૂપમેં ઉત્પન્ન હોતા હૈ ।

ભગવાન કહે છે—(ગોયમા ! નો દેસેણં દેસં ઉવવજ્જહ, નો દેસેણં સવ્વં ઉવવજ્જહ, નો સવ્વેણં દેસં ઉવવજ્જહ, સવ્વેણં સવ્વં ઉવવજ્જહ) હે ગૌતમ ! નારકોંમાં ઉત્પન્ન થતો એવ પોતાના એકદેશથી નારકના એકદેશ રૂપે ઉત્પન્ન થતો નથી, તથા પોતાના એકદેશથી નારકના સર્વદેશ રૂપે પણ ઉત્પન્ન થતો નથી, તેમજ પોતાના સર્વદેશથી નારકના એકદેશ રૂપે પણ ઉત્પન્ન થતો નથી, પરંતુ તે પોતાના સર્વદેશથી નારકના સર્વદેશ રૂપે જ ઉત્પન્ન થાય છે

ઉપરના ચાર પ્રશ્નોમાંથી ત્રણ પ્રશ્નોના જવાબ નકારમાં અને ચોથા પ્રશ્નનો જવાબ હકારમાં આપતા મહાવીર પ્રભુએ કહ્યું કે હે ગૌતમ ! જે નવો એવ નરકગતિમાં ઉત્પન્ન થાય છે તે પોતાના તમામ અશોથી નરકગતિમાં તેમાં અશો સાથે—પૂર્ણ અવયવી રૂપે ઉત્પન્ન થાય છે, કારણ કે પરિણામી કારણ એક અશથી પોતાના કાર્યના એક અશ રૂપે ઉત્પન્ન થતું નથી તેનું તાત્પર્ય એ છે કે જે પરિણામી કારણ એટલે કે ઉપાદાન કારણ હોય છે તેના એક અવયવથી કાર્યના એક અવયવની ઉત્પત્તિ સ્વીકારવામાં આવી નથી પરંતુ તેના સર્વ અવયવોથી જ કાર્યના સર્વ અવયવોની ઉત્પત્તિ સ્વીકારવામાં

નોપપદ્યતે સમ્પૂર્ણપરિણામિકારણત્વાત્ સમસ્તઘટકારણૈર્ઘટકદેશવત્, યયા મૃત્તિકારૂપપરિણામિકારણ ન વેશતયા ઘટમુત્પાદયતિ, તદ્વત્ પ્રકૃતે સમ્પૂર્ણો બીજાવયવઃ નારકાદિસ્વરૂપૈકવેશ નોત્પાદયિતું સમર્થઃ પરિણામિકારણસ્ય સર્વાત્મનેષ પરિણામસ્ય કાર્યાકારેણ દર્શનાત્ ૩ । કિન્તુ 'સબ્બેણં સબ્બં ઉત્તવગ્ગહ' સર્વેષામસર્વમુપપદ્યતે, સર્વેણ સર્વાવયવેન સર્વમ્ સમ્પૂર્ણોઽવયવી ઉત્પદ્યતે પૂર્ણકારણસમવાયાત્ ઘટાદિવત્, યથા ઘટસમવાયિકારણમૂળા મૃત્તિકા સર્વરૂપેષ સર્વામિના સમ્પૂર્ણઘટરૂપેણ પરિણમતિ તદ્વત્ પ્રકૃતેઽપિ જીવઃ સર્વાવયવેન નારકાદિસર્વાવયવતયા સમુત્પદ્યતે इति, ચતુર્થે एव पञ्चस्तीर्यकरस्यामिमत् इति । 'महा नेरूप

इसका भाव यह है कि वह उत्पद्यमान नारकजीव अपने पूर्ण अंशों से नारक पर्याय के एक अंशरूप में उत्पन्न नहीं होता है। जैसे समस्त पट के कारणों से पट का एकदेश उत्पन्न नहीं होता है, जिस प्रकार मृत्तिकारूप परिणामिकारण घटका उत्पाद एकदेश से नहीं करता है। उसी प्रकार यहां पर भी संपूर्ण जीवावयव नारकादिरूप के एकदेश को उत्पन्न नहीं कर सकते हैं, क्योंकि जो परिणामी कारण होता है वह अपने समस्तरूप से ही अपने कार्य के आकार से देखा जाता है। "सब्वेणं सब्बं उयवज्जह" ऐसा जो कहा गया है—सो उसका तात्पर्य यह है कि उत्पद्यमान नारकजीव अपने समस्त अवयवों द्वारा संपूर्ण अवयवीरूप से उत्पन्न होता है, पूर्णकारणकलाप के मिलजाने से जैसे घट उत्पन्न हो जाता है। तात्पर्य यह है कि जैसे घट की समवायीकरण-उपादानकारण मृत्तिका सर्वरूप से संपूर्ण घटरूप में परिणम जाती है। उसी तरह यहां पर भी उत्पद्यमान नारकजीव अपने समस्त अवयवों द्वारा नारकजीवरूप पूर्ण पर्याय में घटल जाता है। ऐसा यह

આ પ્રમાણે છે—જેમ ઘડનાં સંપૂર્ણ કારણોથી ઘડના એકદેશ તૈયાર થતો નથી. જેમ માટીરૂપ ઉપાદાન કારણ એક ભાગ રૂપે ઘડનું નિર્માણ કરતું નથી. એજ પ્રમાણે ઉપના પાતાના સંપૂર્ણ અવયવો નારકાદિ રૂપના એક દેશને ઉત્પન્ન કરી શકતા નથી; કારણ કે જે પરિણામી કારણ કોય છે તે પોતાના સમસ્ત રૂપથી જ કાર્યના રૂપે પરિણમતું બેવામાં આવે છે 'સબ્બેણં સબ્બં ઉત્તવગ્ગહ' નું તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે—ઉત્પદ્યમાન (ઉત્પન્ન થનાર) નારકજીવ પોતાના સમસ્ત અવયવો વડે જ સંપૂર્ણ અવયવી રૂપે ઉત્પન્ન થાય છે પૂર્ણકારણ કલાપ મળવાથી જ ઘડની ઉત્પત્તિ થાય છે—એટલે કે ઘડનું ઉપાદાન કરણ માટી છે તે માટી સમસ્તરૂપે સંપૂર્ણ ઘડના રૂપે જેમ પરિણમે છે તેમ ઉત્પન્ન થનાર નારક જીવ પોતાના સમસ્ત અવયવો વડે નારક જીવ રૂપ સમસ્ત પર્યાયમાં બદલાય છે આ ચિંથા જેવીકર પ્રભુએ સ્વીકાર કર્યો બાકીના

પ્રતિવદ્દેન જીવસ્યૈકદેશેનોત્તરાવયવિનારકદેશો ન નિર્વર્તયિતું શક્યતે इति १ ।
તથા-‘ નો દેસેણં સવ્વં ઉવવજ્જહ ’ નો દેશેન સર્વમુપપદ્યતે, ન દેશેનાવયવેન
સર્વમ્ સર્વતંયોત્પદ્યતે અપરિપૂર્ણકારણત્વાત્ તન્તુના પટ ઇવેતિ ૨ । તથા-‘ નો સવ્વેણં
દેસં ઉવવજ્જહ ’ નો સર્વેણ દેશમ્ ઉપપદ્યતે, સર્વેણ દેશં દેશતયા અવયવતયાપિ

નિર્માણ હોતા હૈ વહ ઉન તંતુઓં કે એકદેશ સે નહીં હોતા હૈ,
ઘૌર ન વલ્લ કા ખી એકદેશ ઉન કે એકદેશ સે તૈયાર હોતા હૈ ।
કિન્તુ સમસ્ત તંતુઓંસે હી સમસ્ત વલ્લ કા નિર્માણ કિયા જાતા હૈ ।
અવયવી કા એકદેશ પૂર્ણ અવયવી નહીં કહલાતા । પટ કા એસા કોઈ
સા ખી ભાગ તંતુઓં કે એકદેશ સે તૈયાર નહીં હોતા હૈ, જો પટ સે
જુદા હો । ઉપાદાન કારણ અપને કાર્ય કે સાથ જુડા હુઆ હોતા હૈ-
અર્થાત્-અપને આપ કો વહ કાર્યરૂપ મેં પરિણમા દેતા હૈ । તબ ઉસકા
કોઈ સા ખી એસા ભાગ નહીં હોતા હૈ, જો અપને કાર્ય કે એકદેશ કો
ઉત્પન્ન કરે, કિન્તુ પૂર્ણ ઉપાદાન હી અપને પૂર્ણ કાર્ય કો નિષ્પન્ન કરતા
હૈ, અતઃ જબ યહ સિદ્ધાન્ત નિશ્ચિત હૈ તો ફિર યહ કૈસે માના જા
સકતા હૈ કિ ઉત્પદ્યમાન નારકજીવ અપને એકદેશ સે હી નારકજીવ
કી પર્યાય કે એકદેશ મેં ઉત્પન્ન હોતા હૈ । તથા-“ નો દેસેણં સવ્વં
ઉવવજ્જહ ” હસ કા ભાવ યહ હૈ । કિ વહ ઉત્પદ્યમાન નારકજીવ અપને
એકદેશ સે પૂર્ણનારકરૂપ પર્યાય મેં ઉત્પન્ન નહીં હોતા હૈ જૈસે એક તન્તુ
સે પૂરા પટ ઉત્પન્ન નહીં હોતા હૈ । તથા-“ નો સવ્વેણં દેસં ઉવવજ્જહ ”

એકદેશથી વચ્ચના એકદેશનું નિર્માણ થતું નથી માટે કહ્યું છે કે-“ નો દેસેણ
દેસં ઉવવજ્જહ ” પરંતુ બધા તંતુઓ વડે જ સંપૂર્ણ વચ્ચનું નિર્માણ થાય છે.
અવયવીના એકદેશને પૂર્ણ અવયવી કહેવાતો નથી. વચ્ચનો એવો કોઈ પણ ભાગ
તંતુઓના એકદેશથી-એક ભાગથી તૈયાર થતો નથી કે જે વચ્ચથી બુદ્ધો હોય. ઉપાદાન
કારણ પોતાના કાર્ય સાથે જોડાયેલું જ હોય છે-એટલે કે પોતાને જ તે કાર્યરૂપે
પરિણમાવે છે તેથી તેનો કોઈપણ ભાગ એવો હોતો નથી કે જે પોતાના કાર્યના
એકભાગને ઉત્પન્ન કરતો હોય, પણ પૂર્ણ ઉપાદાન જ તેના પૂર્ણ કાર્યનું નિર્માણ કરે છે.
આ પ્રકારનો સિદ્ધાન્ત નિશ્ચિત હોવાથી ઉત્પદ્યમાન નારકજીવ પોતાના એકદેશથી નારક
જીવની પર્યાયના એકદેશરૂપે ઉત્પન્ન થતો નથી તથા “નો દેસેણં સવ્વ ઉવવજ્જહ.”
નો ભાવાર્થ એવો છે કે જેવી રીતે એક તંતુમાંથી પૂરું વચ્ચ તૈયાર થતું નથી
એવી જ રીતે ઉત્પદ્યમાન (ઉત્પન્ન થનાર) નારક જીવ એકદેશથી પૂર્ણ નારક
રૂપે પર્યાયમા ઉત્પન્ન થતો નથી. ત” “ નો સવ્વેણં દેસં ઉવવજ્જહ ’ નો ભાવાર્થ

અર્થ જાણ થમાણિય' યથા નૈરયિક એવ યાચકૈમાનિક, ઉત્પત્તિવિષયે યથા નૈરયિકવિષયે વિચાર કૃતસ્તદ્વદનાસુરકુમારાદારમ્ય વૈમાનિકપર્યન્તપ્રયોચિન્નતિ વળ્લકવિષયેપિ વિચારો વિધેય ઇતિ । ઉત્પત્ત્યનન્તરમાહારસ્પાષ્ટ્યકતા મલ-
ત્યત આહારમૂપમાહ- ' નેરહપ્ત મંતે ! નેરહપ્તુ ઉવચ્ચમાણે ' નૈરયિકઃ સહ
મદન્ત ! નૈરયિકેપૂષ્પચમાના, ' કિં દેસેળં દેસ આહારેહ ' કિં દેસેન દેશમાહરતિ,
દેશનાત્મપ્રદેશેન દેશમ્ અધ્યયહાર્ય દ્રવ્યસ્ય મદેશમેકાવયવયેવાહરતિ આહાર કર્તુ
માહરણીયદ્રવ્યસ્યૈકદેશમેકાવયવયેવ સ્વાવયવેન શક્તાતિ કિમ્ ? ઇતિ પ્રથમો મદ્ ૧ ।
કિંના 'દેસેળં સખ્વ આહારેહ' દેસેન સર્વમાહરતિ, જીવઃ સ્વસ્યૈકાવયવેનાહરણીય
દ્રવ્યસ્ય સર્વાનેવાવયવાન્ આહરતિ ઇતિ ઠિતોયો મદ્ ૨ । કિમ્ 'સખ્વેળં દેસ આહ-
રેહ' સર્વેળં દેશમાહરતિ, જીવઃ સ્વસ્ય સર્વાવયવેનાહરણીયદ્રવ્યસ્યૈકદેશમાહર
તીતિ તૃતીયો મદ્ ૩ । 'સખ્વેળં સખ્વ આહારેહ' સર્વેળં સર્વમાહરતિ, જીવઃ સર્વા
ત્મમદેશેન સર્વાત્મના આહારણીયદ્રવ્યસ્ય સર્વાનેવાવયવાન્ આહરતિ કિમ્,

(જહા નેરહપ, અર્થ જાણ થમાણિય) ઉત્પત્તિ કે વિષય મેં જેસા યહ
વિચાર નૈરયિક વિષયમેં કિયા ગયા હે જેસા હી વિચાર અસુરકુમારસે
છેકર વૈમાનિક તક જો ૨ રહેતેઈસ વળ્લક હેં જનમેં સી કરસના ચાહિયે ।
ઉત્પત્તિ કે વાદ આહારકી આશ્વદ્યકતા હોતી હેં ઇસલિયે સૂત્રકાર
આહાર સર્વથી સૂત્ર કહતે હેં- (નેરહપ્ત ણ મંતે ! નેરહપ્તુ ઉવચ્ચમાણે
કિં દેસેળં દેસ આહારેહ, દેસેળં સખ્વ આહારેહ સખ્વેળં દેસ આહારેહ,
સખ્વેળં સખ્વ આહારેહ) હેં મદન્ત ! નૈરયિક પર્યાય મેં ઉત્પદ્યમાન નૈરયિક
જીવ યથા ઇકદેશ સે ઇકમાગ કો આશ્રય કર આહાર કરતા હેં ? યા
ઇકદેશ સે સર્વદેશ કા આશ્રય કર આહાર કરતા હેં ? યા સર્વદેશ સે
ઇકદેશ કા આશ્રય કર આહાર કરતા હેં ? યા સર્વદેશ સે સર્વદેશ કા

(જહા નેરહપ, અર્થ જાણ થમાણિય) ઉત્પત્તિના વિષયમાં જેનું કથન ના
રેકાના વિષયમાં કરવામાં આવ્યું છે, એવું જ કથન અસુરકુમારશ્રી લખીને
વૈમાનિકો મુખીનાર ૩ રહેના વિષયમાં પણ સમજવું ઉત્પત્તિ યથા પછી આહારની
આવશ્યકતા રહે છે તેથી હવે સૂત્રકાર આહાર સંબંધી સૂત્રોનું કથન કરે છે-

(નેરહપ્ત ણ મંતે ! નેરહપ્તુ ઉવચ્ચમાણે કિં દેસેળં દેસ આહારેહ દેસેળ
સખ્વ આહારેહ, સખ્વેળં દેસ આહારેહ, સખ્વેળં સખ્વ આહારેહ ?) હે પૂજ્ય !
નરકગતિમાં ઉત્પત્તિ થયેલ છવ શુ એકદેશથી આહાર કરવા લાયક દ્રવ્યના
એકદેશનો આહાર કરે છે ? અથવા એકદેશથી આહાર કરવા લાયક દ્રવ્યના
સમસ્ત દેશનો આહાર કરે છે ? અથવા સમસ્ત દેશથી તેના એકદેશનો આહાર
કરે છે ? અથવા સમસ્ત દેશની આહાર કરવાલાયક દ્રવ્યના સમસ્ત દેશનો
આહાર કરે છે ?

ચૌથા પક્ષ હી તીર્થંકર પ્રશ્ન કો માન્ય હૈ, શેષ ૩ તીન નહીં । इस सब कथन का सारांश ऐसा है कि यदि कोई जीव नारकपर्याय में उत्पन्न होनेवाला है तो वह वहां इस रूप से उत्पन्न नहीं होगा कि उसके एक प्रदेश को छोड़कर बाकी के प्रदेश तो पूर्व पर्याय में प्रतिबद्ध रहे और अपने एक प्रदेश से वह नारक पर्याय के एकदेश से अथवा सर्वदेश से नरक में उत्पन्न हो जाय । इसी तरह वह इस रूप से भी वहां उत्पन्न नहीं होगा कि वह अपने समस्त प्रदेशों को यहां लेकर अर्थात् पूर्वपर्याय से मरकर नरक में नारक जीव की पर्याय के एक अंश से जन्म ले, सम्पूर्ण अंश से जन्म न ले, अर्थात् वह सम्पूर्ण अंश में नारक न बने किन्तु एक ही अंशमें नारक बनें । सिद्धान्त क्या है सो यही बात अंतिम चतुर्थ प्रश्न से प्रकट की गई है—कि पूर्वपर्याय को छोड़कर जो जीव नरकादि गतियों में तत्तत्पर्याय में उत्पन्न होता है वह उस पर्याय में अपने समस्त प्रदेशों से ही पूर्णरूप में उत्पन्न होता है, क्यों कि—वह विवक्षित पर्याय उस पूर्वपर्यायगत जीव का कार्य है, इसलिये वह उस पर्याय का उपादान कारण है । और यह बात अभी २ प्रकट ही कर दी गई है कि जो जिस पर्याय का उपादान कारण होता है वह सम्पूर्ण रूप से ही अपने को उस समस्त पर्यायरूप में ही परिणमा देता है, अतः यही सिद्ध हुआ कि उत्पद्यमान नारक नरकमें सम्पूर्ण रूप से ही उस समस्त विवक्षित पर्याय में उत्पन्न होता है ।

ત્રણ પક્ષનો અસ્વીકાર કર્યો છે ઉપરના કથનનો સારાશ એ છે કે નારક પર્યાયમાં ઉત્પન્ન થનારો કોઈ એવો રીતે ઉત્પન્ન નહીં થાય કે તેના એક પ્રદેશ (અવયવ) સિવાયના બાકીના પ્રદેશો તો પૂર્વ પર્યાયરૂપે જ પ્રતિબદ્ધ (બંધાયેલા) રહે અને માત્ર એક પ્રદેશથી જ તે નારક પર્યાયના એક દેશ રૂપે કે સર્વદેશ રૂપે નારકમાં ઉત્પન્ન થઈ બાકી પરંતુ એણે બનતું નથી એટલે કે પૂર્વપર્યાયમાંથી મરીને નરકમાં નારક એવની પર્યાયના એક અંશે ઉત્પન્ન થાય એણે પણ બનતું નથી. ચોથા પ્રશ્નના જવાબમાં ક્યો સિદ્ધાંત છે તે પૂર્વે બતાવ્યું છે કે પૂર્વ પર્યાયને છોડીને જે એવ નરકાદિ ગતિઓમાં ઉત્પન્ન થાય છે તે એવ તે પર્યાયમાં પોતાના સમસ્ત પ્રદેશોથી જ પૂર્ણરૂપે ઉત્પન્ન થાય છે, કારણ કે તે પૂર્વપર્યાયગત એવનું કાર્ય છે તેથી તે એવ તે પર્યાયનું ઉપાદાન કારણ છે અને એ વાતનું અમે આગળ પ્રતિપાદન કરી ગયા છીએ કે જે કાર્યનું જે ઉપાદાન કારણ હોય છે તે ઉપાદાન કારણ સંપૂર્ણ રીતે જ કાર્ય રૂપે પરિણમે છે, આ રીતે ઉત્પદ્યમાન નારક એવ નરકમાં સંપૂર્ણ અવયવોથી જ સંપૂર્ણ અવયવો રૂપે ઉત્પન્ન થાય છે.

પર્વોં કો પ્રહણ કરતા હૈ કયા ? અથવા-યહ જીય અપને સમસ્ત અવયર્વોં
 સે આહરણીય દ્રવ્ય કે વ્યવહાર કો પ્રહણ કરતા હૈ- કયા ? અથવા-યહ
 જીય સમસ્ત અપને પ્રવર્તોં સે આહરણીય દ્રવ્ય કે સમસ્ત પ્રવર્તોં કો
 પ્રહણ કરતા હૈ કયા ? इन प्रश्नों का उत्तर दते हुए प्रभुन जो गौतम
 स्वामी से कहा यह ऐसा है कि हे गौतम ! प्रथम के जो दो प्रश्न हैं, वे
 अमान्य हैं। अर्थात् यह जीय अपन एक वेश से आह्रणीय द्रव्य के एक
 वेश को आहार करने के लिये ग्रहण नहीं करता है और न अपने एक
 ही वेश से आहार करने योग्य द्रव्य के आहार करने के लिये समस्त
 अवयवों को ग्रहण करता है, किन्तु या तो यह अपने समस्त प्रवेष्टों से
 आहार करने योग्य द्रव्य के एकवृत्त को आहार करने के निमित्त ग्रहण
 करता है या अपने समस्त अवयवों द्वारा आहार करने योग्य द्रव्य के
 समस्त अवयवों को आहार करने के लिये ग्रहण करता है। वह जीय
 जो अपने समस्त प्रवेष्टों-अवयवों द्वारा आह्रणीय द्रव्य के एक वेश
 को एकात् एक भाग को आहार करने के निमित्त ग्रहण करता है सो
 इसका आशय हम प्रकार से है कि यह जीय उत्पत्ति के बाद तुरन्त ही
 अपने समस्त प्रवेष्टों द्वारा आह्रणीय द्रव्य के-आहार करने योग्य द्रव्य
 के-पुटलों को ग्रहण करता है। इनमें से यह किन्तनेक पुटलों का तो

अवयवોને અદ્ય હરે છે ? અથવા તે નારક છવ પોતાના સમસ્ત અવયવો
 વડે આધારને યોગ્ય દ્રવ્યના એક ભાગ (દેશ)ને અદ્ય હરે છે ? કે તે છવ
 પોતાના સમસ્ત પ્રવેશો ઠાસ આધારને યોગ્ય દ્રવ્યના સમસ્ત પ્રવેશોને અદ્ય
 હરે છે ? આ બાર પ્રશ્નોના જવાબમાં ભગવાને પદ્ધેશ બે પ્રશ્નોના જવાબ નહીં
 કર્યાં આપ્યાં છે એટલે કે તે નારક છવ પોતાના એકદેશથી આધારને યોગ્ય
 દ્રવ્યના એકદેશને અદ્ય કરતો નથી, અને પોતાના એક જ દેશથી આધારને
 યોગ્ય દ્રવ્યના સમસ્ત પ્રવેશોને પણ ને આધાર માટે અદ્ય કરતો નથી. ત્રીજા
 અને ચોથા પ્રશ્નોના જવાબ હકાતમાં આપ્યો છે એટલે કે તે નારક છવ
 પોતાના સમસ્ત પ્રવેશો વડે આધારને યોગ્ય પદાર્થના એકદેશને પણ અદ્ય
 હરે છે, અને પોતાના સમસ્ત પ્રવેશો વડે આધાર કરવા યોગ્ય દ્રવ્યના સમ
 સ્ત અવયવોને પણ આધાર કરવા માટે અદ્ય હરે છે તે નારક છવ પોતાના
 સમસ્ત પ્રવેશો (અવયવો) વડે આધારને યોગ્ય દ્રવ્યના એકદેશ (ભાગ) ને
 આધાર માટે અદ્ય હરે છે એવું જો કહેવામાં આવ્યું છે તેનું કારણ આ પ્રમાણે
 છે-તે નારક છવ નારકગતિમાં ઉત્પન્ન થયા પછી તરત જ પોતાના તમામ
 અવયવો વડે આધાર કરવા યોગ્ય પદાર્થનાં પુટલોને-અદ્ય હરે છે તેમાંનાં

इति चतुर्थो भङ्गः ४ । भगवानाह—‘गोयमे’-त्यादि, ‘गोयमा’ हे गौतम ।
नो देसेणं देसं आहारेइ’ नो देजेन देशमाहरति, जीवः स्वस्यैकदेशेन अवयवेना-
हरणीयद्रव्यस्य देशमेकावयवं नाहरति १ । ‘नो देसेणं सव्वं आहारेइ’ नो
देशेन सर्वमाहरति २ । एतौ द्वौ भङ्गौ निषिद्धौ । अथ—स्वीकृतभङ्गौ प्रदर्शयति—
‘सव्वेणं वा देसं आहारेइ’ सर्वेण वा देशमाहरति, जीवः स्वकीयसर्वावयवेना-
हरणीयद्रव्यस्यैकदेशमाहरति, अयमाशयः—जीवः स्वकीय सर्वप्रदेशैराहरणीयद्रव्य-
स्यैकभागमाहरति, यतः उत्पत्त्यनन्तरं तत्काले एव जीवः स्वकीयसर्वप्रदेशैरा-

आश्रय कर आहार करता है ? (गोयमा !) हे गौतम ! (नो देसेणं
देसं आहारेइ, नो देसेणं सव्वं आहारेइ, सव्वेणं वा देसं आहारेइ, सव्वे
णं वा सव्वं आहारेइ) वह एकदेश से एकदेश का आश्रय कर आहार
नहीं करता है और न एकदेश से सर्वदेश का आश्रय कर आहार
करता है । किन्तु सर्वदेश से एकदेश का आश्रय कर आहार करता है
तथा सर्वदेश से सर्वदेश का आश्रय कर आहार करता है । “ देसेणं
देसं आहारेइ ” का तात्पर्य पूछने वाले का ऐसा है कि नैरयिकों में उत्प-
न्नमान नैरयिक जो आहार करता है, सो क्या वह अपने एक प्रदेश से
खाने योग्य द्रव्य के एक प्रदेश का—एक अवयव का ही आहार करता
है ? अर्थात् आहार करने के लिये आहार करने योग्य द्रव्य के एक देश
रूप अवयव को ही अपने एक अवयव से ग्रहण करता है क्या ? अथवा
वह जीव अपने ही एक अवयव से आहरणीय द्रव्य के समस्त अव-

लगवान कहे छे—(गोयमा) हे गौतम ! (नो देसेणं देसं आहारेइ, नो देसेणं
सव्वं आहारेइ, सव्वेणं वा देसं आहारेइ, सव्वेणं वा सव्वं आहारेइ) ते अेकदेशथी
आहार करवा योग्य द्रव्यना अेकदेशेना आहार करतो नथी, ते अेकदेशथी
समस्त देशेना आहार करतो नथी, परंतु सर्वदेशथी आहार करवा योग्य
द्रव्यना अेकदेशेना आहार करे छे तथा सर्वदेशथी समस्त देशेना आहार
पणु करे छे, हुवे आ सूत्रोनुं स्पष्टीकरणु करवामां आवे छे—“ देसेणं दे
आहारेइ ” आ प्रश्नो बावार्थ अे छे के नरकगतिमां उत्पन्न थतो नारक
एव ने आहार करे छे ते शुं पोताना अेक प्रदेशथी आहारने योग्य पदार्थना
अेक प्रदेशेना न आहार करे छे ? अेटले के आहार करवा योग्य द्रव्यना अेक
देशइय अवयवने न पोताना अेक अवयव वडे आहार भाटे अेहणु करे छे ?
के ते नारक एव पोताना अेक वडे आहारने योग्य द्रव्यना समस्त

તપકટારે સર્વત પ્રયમં પસિતમ્ યદ્વપ્યં તત્ યથા લેલાદે' સર્વાનેવ માગાન્ સ્-
 ફીયસર્પમાગેન યદ્વાસિ, તથા બીલાંડપિ સ્વફીયસર્પમવેદોરાહરણીયદ્રવ્યપુત્રલસ્ય
 સર્વાનેવાવયધાન્ આહરણિ, અત ઇવોક્તમ્—' સઘ્વેણં સઘ્વ આહારે' ' ઇતાવળા
 આહારનિયે ચતુર્થમગોપિ સ્વીકૃત એવ, તત્ર પ્રયમદ્વિતીયપક્ષો નિરાકૃત્ય
 તૃતીયચતુર્થયો સ્વીકાર કૃતઃ સ્થિતિ । અયોત્પાદવિપક્ષમૂતસ્વાદ્ ધર્તમાનનિર્વેશ
 સાપર્મ્યાબ્જોદ્વર્તનાસૂત્રમાદ—' નેરહ્ણ ણં મંતે ' ઇત્યાદિ । ' નેરહ્ણ ણં મંતે '
 નૈરયિકઃ સ્લુ મદન્ત । ' નેરહ્ણર્દિતો ઉવદ્દમાણે ' નૈરયિકેભ્ય ઉદ્વર્તમાન, કિં
 વેસેણ વેસં ઉવદ્દહ' કિં વેસેણ વેસમુદ્વર્તે, બીલાં નરકાદુદ્વર્તમાનઃ નિસ્સરન્ કિં
 સ્વસ્ત્યકદેસેન એવાવયથેન વેસમ્ ઉત્પત્તિસ્થાનસ્વેકવેસમાશ્રિત્ય, નારકાવયવત્સેનો

કદાર્થે મેં સર્વપ્રથમ ઢાલા ગયા પહેલે પુખા (પુકલા) પુતાલિકા કે સમસ્ત
 ભાગોં કો અપને સમસ્ત ભાગોં સે ગ્રહણ કરતા હૈ । उसी तरह से
 जीव भी अपने समस्त प्रदेशों से आहरणीय द्रव्य पुत्रल के समस्त
 अवयवों को अपने आहार के काम ले लेता है । इसीलिये "सघ्वेणं
 सघ्वमाहारे" ऐसा सूत्र सूत्रकार ने कहा है । उनके इस कथन से
 "आहार के विषय में उन्होंने ने यह चौथा विकल्प भी माप रखा ही
 है " यह बात ज्ञात हो जाती है । इस तरह प्रथम और द्वितीय पक्षों को
 निराकृत करके तृतीय और चतुर्थ पक्ष स्वीकार किये गये हैं । अब
 उत्पाद का विपक्षमूत होने से और वर्तमान निर्देश के मरीखा होने से
 उद्वर्तनासूत्र को सूत्रकार कहते हैं—' नेरह्ण णं मंते !) हें मद
 न्त । नैरयिक जीव (नेरह्णर्दितो उवदद्दमाणे) नैरयिकों में से उद्वर्तित
 होता हुआ अर्थात् उस पर्याय से निकलता हुआ (किं वैसेण वેસં ઉવ્વદ્દહ)
 क्या अपने एक देश से—एक अवयव से—गुदीन नारक पर्याय के एक

ઘોડા બરેલા અત્મત વપેલા વાવધમાં સૌથી પહેલા નાખવામાં આવેલ પુકલો
 થી વગેરેના તમામ ભાગોને પોતાના તમામ ભાગે વડે ગ્રહણ કરે છે એવી રીતે છપ
 પળ પોતાના તમામ પ્રદેશો વડે આહારને યોગ્ય દ્રવ્ય પુત્રલના તમામ અવયવોને
 પોતાના આહાર માટે ગ્રહણ કરે છે તેથીજ કહ્યું છે કે "સઘ્વેણ સઘ્વ આહારે"
 તેમના બા કથન વડે આહારના વિષયમાં સૂત્રકારે ઘોડા ભાગોને પણ સ્વીકાર કર્યો
 છે, એ વાત સ્પષ્ટ રીતે સમજી શકાય છે આ રીતે ચાર ભાંગાભાગ પહેલા
 અને બીજા ભાંગોને અસ્વીકાર કરીને ત્રીજા અને ઘોડા ભાગોને સૂત્રકારે સ્વી-
 કાર કર્યો છે એવે ઉત્પાદથી વિપરીત એવી ઉદ્વર્તનના વિષયનું સૂત્રકાર નિરૂપણ
 કરે છે—' નેરહ્ણ ણં મંતે ? " તે અગવન । નારક છવ નેરહ્ણર્દિતો ઉવદ્દમાણ"
 નારકોભાવી ઉદ્વર્તિત થતી વખતે નીકળતી વખતે " કિં વેસેણ વેસં ઉવ્વદ્દહ ? " શું
 પોતાના એકદેશથી—એક અવયવથી—ઉત્પત્તિસ્થાનના એકદેશને આશ્રિત કરીને

હરણીયદ્રવ્યસ્ય પુદ્ગલાનાહરતિ, તત્ર કિયન્તો ભાગા આહ્રિયમાણા ભવન્તિ, કિયન્તશ્ચાનાહ્રિયમાણા એવ તિષ્ઠન્તિ । યથાઽતિતત્ત્વકટાહે તૈલઘૃતાદિપૂરિતે પતિતમણં, તૈલાદેઃ કિયન્તો ભાગાન્ આદદાતિ અવશિષ્ટાંશ્ચ ભાગાન્ નાદ-
દાતિ, તથૈવ જીવ આહરણીયદ્રવ્યસ્ય કિયન્દ્વાગમાહરતિ કિયન્દ્વાગાંશ્ચ પરિત્ય-
જતિ, અત એવોવતં મૂત્રકૃતા સર્વેણ દેશમાહરતીતિ । એતાવતા તૃતીયમન્નસ્યાહાર-
વિષયે સ્વીકારઃ કૃતઃ ૩ । ‘ સન્વેણં વા સન્વં આહારેઈ ’ સર્વેણ વા સર્વમાહરતિ,
જીવઃ સ્વકીયસર્વભાગૈરાહરણીયદ્રવ્યસ્ય સર્વાનેવ ભાગાનાહરતિ, જીવઃ સ્વોત્પત્તિ
સમયે એવ સર્વાત્મપ્રદેશૈઃ સર્વાનેવાહારપુદ્ગલાન્ આહરતિ, પ્રથમતો ઘૃતાદિ-
પૂરિતાતિતત્ત્વકટાદિપતિતપ્રાથમિકાપૂર્ણવત્, યથા પરિમિતઘૃતપ્રપૂરિતાતિ-

આહાર કરતા હૈં ઓર કિતનેક પુદ્ગલોં કો વૈસે હી છોડ દેતા હૈં । જૈસે-
તૈલ અથવા ઘૃન આદિ સે ભરે હુએ એસે અત્યંત સંતસ કઢાઈ મેં પ્રક્ષિપ્ત
પુઆ (પુડ્ગલ) ઘૃતાદિક કે કિતનેક ભાગોં કો ગ્રહણ કર લેતા હૈં ઓર
બાકી કે ભાગોં કો છોડ દેતા હૈં-ગ્રહણ નહીં કરતા હૈં । ઇસી તરહ વહ
જીવ આહરણીય દ્રવ્ય કે કિતનેક ભાગોં કો આહાર કે કામ મેં લે લેતા
હૈં ઓર કિતનેક ભાગોં કો છોડ દેતા હૈં-આહાર કે કામ મેં નહીં લેતા
હૈં । ઇસીલિયે સૂત્રકાર ને “ સર્વેણ દેશમાહરતિ ” એસા કહા હૈં । ઇસ
કથન સે “ ઉન્હોંને આહાર કે વિષય મેં તૃતીય ભંગ-વિકલ્પ સ્વીકાર
કિયા હૈં ” યહ પ્રમાણિત હોતા હૈં । “ સન્વેણં વા સન્વં આહારેઈ ”
અથવા વહ જીવ સમસ્ત અપને પ્રદેશોં દ્વારા સમસ્ત આહરણીય દ્રવ્ય
કો આહાર કે નિમિત્ત ગ્રહણ કરતા હૈં સો ઇસકા અભિપ્રાય એસા હૈં કિ
જીવ અપની ઉત્પત્તિ કે સમય મેં હી સમસ્ત આત્મપ્રદેશોં સે સમસ્ત
આહાર પુદ્ગલોં કો ગ્રહણ કરતા હૈં । જૈસે- ઘૃતાદિ સે ભરે હુએ અત્યંત તસ

કેટલાક પુદ્ગલોના તે તે આહાર કરે છે પણ કેટલાક પુદ્ગલોને તે એમ ને એમ
છોડી દે છે જેવી રીતે ઉક્ષતા ધી તેલ વગેરેના તાવડામાં નાખેલા માલપૂવા
ધી તેલ વગેરેના અમુક ભાગોને જ ગ્રહણ કરે છે અને અમુક ભાગોને છોડી દે
છે, અર્થાત્ ગ્રહણ કરતા નથી, એજ પ્રમાણે નારક જીવો પણ આહારને યોગ્ય દ્રવ્યના
કેટલાક ભાગોને આહારના કામમાં લે છે અને કેટલાક ભાગોને આહારના
કામમાં લેતો નથી-છોડી દે છે એજ કારણે સૂત્રકારે કહ્યું છે કે “ સન્વેણં વા દેસ
આહારેઈ ” આ કથન વડે તેમણે આહારના વિષયમાં ત્રીજા ભાગોના સ્વીકાર
કર્યો છે તે સિદ્ધ થાય છે સન્વેણં વા સન્વં આહારેઈ ” અથવા તે જીવ પોતાના
સમસ્ત પ્રદેશો વડે આહારને યોગ્ય તમામ દ્રવ્યને આહાર માટે ગ્રહણ કરે છે
એ કથનનું તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે-જીવ પોતાની ઉત્પત્તિને સમયે તમામ
આત્મપ્રદેશો વડે તમામ આહારના પુદ્ગલોને ગ્રહણ કરે છે જેવી રીતે ધી વગેરેથી

ઈતિ । અપ્પ ઉત્પત્તિ સુપ્પન્નચતુષ્કમદ્વય સ્વીકૃત્વ ઈતિ । અયાઽઽહારવિષયં પિન્તુ પિતુમાહ—‘નેરહ્પ ણ મંતે ’ નૈરયિયઃ ગલુ મદન્ત । ‘નેરહ્પહિતો ઉબ્બદ્ધમાણે કિં દેસેણ દસં આહારેહ’ નૈરયિત્તેભ્ય ઉદર્તમાન કિં દેસેન દેશમાહરતિ ? , હરપિ

યા સર્વેણ દેશમુદર્તતે, અપિ તુ સર્વેણ સર્વમુદર્તતે ” અર્થાત્ ઘઠ નારક, નારકરૂપ સે ગૃહીત પિચે ગયે ઉમ નારક કે શરીર મેં કે ઈકદેશ સે અપને ઈકદેશ સે નહીં નિકલતા હૈ ઓર ન અપને ઈકદેશ સે ઘઠાં સે સર્વદેશ મેં ઉદર્તિત હોતા હૈ ઓર ન અપને સર્વદેશ સે ઉસકે ઈકદેશ સે ઉદર્તિત હોતા હૈ કિન્તુ અપને સર્વદેશ સે હી ઘઠા ક સર્વદેશ સે ઉદર્તિત—નારક સે નિકલતા હૈ । હમ તરહ ઘઠાં ઉત્પત્તિસૂત્ર કી તરહ હી ચૌથા વિકલ્પ સ્વીકાર કિયા ગયા । અય સૂત્રકાર આહાર કે વિષય મેં વિચાર કરતે હુવ કહતે હું કિ—(નેરહ્પ ણ મંતે । નેરહ્પહિતો ઉબ્બદ્ધમાણે કિં દેસેણ દસં આહારેહ, દેસેણ સમ્બં આહારેહ, સમ્બેણ દેસં આહારેહ, સમ્બેણ સમ્બ આહારહ) હૈ મદન્ત । નારકોં મેં સે ઉદર્તમાન નારકજીવ કયા અપને ઈકદેશ સે આહાર કરને યોગ્ય દ્રવ્ય કે ઈકદેશ કા આહાર કરતા હૈ ? યા અપને ઈકદેશ સે આહાર કરને યોગ્ય દ્રવ્ય કે સર્વદેશ કા આહાર કરતા હૈ ? યા અપને સર્વદેશ સે આહાર કરને યોગ્ય દ્રવ્ય કે ઈકદેશ કા આહાર કરતા હૈ ? યા અપને સર્વદેશ સે

યા સર્વેણ દેશમુદર્તતે, અપિ તુ સર્વેણ સર્વમુદર્તતે ” એમ્હે કે નારક એવ નારક રૂપે ગૃહીત નારક શરીરના એકદેશથી નીકળીને ઉત્પત્તિસ્થાનના એકદેશને આશ્રય કરીને ઉદર્તિત થતો નથી, વગી તે નારક એવ પોતાના એકદેશથી (અવયવથી) નીકળીને ઉત્પત્તિસ્થાનના સર્વદેશને આશ્રય કરીને નીકળતો નથી, તેમજ પોતાના તમામ દેશથી ત્યાંના એકદેશને આશ્રય કરીને નીકળતો નથી. પણ તે નારક એવ પોતાના તમામ દેશથી ત્યાંના તમામ દેશને આશ્રિત કરીને નીકળે છે આ રીતે ઉત્પત્તિ સૂત્રમા જેમ ઘોઘા બાંગાને સ્વીકાર કર્યો છે તેમ ઉદતનામાં પણ ઘોઘા બાંગાને જ સ્વીકાર કર્યો છે

હવે સૂત્રકાર આહારના વિષયમા વિચાર કરતા કહે છે કે—

“ નેરહ્પ ણ મંતે ! નરહ્પહિતો ઉબ્બદ્ધમાણ કિં દેસેણ દસં આહારેહ, દેસેણ સમ્બં આહારેહ, સમ્બેણ દેસં આહારેહ, સમ્બેણ સમ્બ આહારેહ ? ” હે મતવન્ ! નારકમાંથી નીકળતો નારક એવ પોતાના એકદેશ (અવયવ) થી આહાર કરવા યોગ્ય દ્રવ્યના એકદેશને આહાર કરે છે ? કે પોતાના એકદેશથી આહાર કરવા યોગ્ય દ્રવ્યના સર્વદેશને આહાર કરે છે ? કે પોતાના તમામ દેશથી આહાર

દર્શિત ઉત્પત્તિસ્થાનસ્યેકદેશમાશ્રિત્યોદ્વર્તિતો ભવતિ કિમ્ ? इति प्रथमो भङ्गः । एवं शेषास्तयः प्रश्नाः पूर्ववद्देवाध्येतव्याः, तथाहि किं देशेन सर्वमुद्वर्तते २, सर्वेण देशमुद्वर्तते ३, सर्वेण सर्वमुद्वर्तते ४ इति । भगवानाह—‘ जहे ’—त्यादि । ‘ जहा उव्वज्जमाणे ’ ‘ तहेव उव्वट्टमाणे वि दंडगो भाणियव्वो ’ यथा उत्पद्यमाने तथैवोद्वर्तमानेऽपि दण्डको भणितव्यः, यथोत्पत्तिविषये दण्डकः कथितस्तथैव उद्वर्तनाविषयेऽपि दण्डको वर्णनीयस्तथाहि न देशेन देशमुद्वर्तते १, न वा देशेन सर्वमुद्वर्तते २ । न वा सर्वेण देशमुद्वर्तते ३ । अपि तु सर्वेण सर्वमुद्वर्तते ४

देश से उद्वर्तना करता है—अर्थात् उस गृहीत नारक के शरीर के एक भाग से निकलता है ? चाकी के ३ प्रश्न और यहां पर उस विषय में पहले की तरह से ही लगा लेना चाहिये—जैसे—वह नैरयिक जीव अपने एकदेश से सर्वभाग का आश्रय करके उस गृहीत नारक के समस्त शरीर से उद्वर्तना करता है ? या अपने सर्वदेश से उस गृहीत नारक पर्याय के एकदेश से निकलता है ? या अपने सर्वदेश से उस गृहीत नारक पर्याय के सर्वदेश से निकलता है ? इन प्रश्नों का उत्तर देते हुए प्रभु गौतम से कहते हैं कि हे गौतम ! (जहा उव्वज्जमाणे तहेव उव्वट्टमाणे वि दंडगो भाणियव्वो) जैसा उत्पद्यमान में दण्डक कहा है वैसा ही यहां उद्वर्तमान में भी दण्डक कह लेना चाहिये—अर्थात् जिस प्रकार से उत्पत्तिविषय में दण्डक कहा गया है उसी प्रकार से उद्वर्तना के विषय में भी दण्डक का वर्णन कर लेना चाहिये । वह इस प्रकार से है—“ न देशेन देशं उद्वर्तते न वा देशेन सर्वमुद्वर्तते, न

ઉદ્વર્તના કરે છે ?—એટલે કે તે ગૃહીત નારક શરીરના એક ભાગથી નીકળીને ઉત્પત્તિસ્થાનના એકદેશને આશ્રિત કરીને નીકળે છે ? એવો પ્રશ્ન છે. બાકીના ત્રણ પ્રશ્નો પહેલા બતાવ્યા પ્રમાણે જ સમજી લેવા જેમકે—‘શુ’ તે નારક જીવ પોતાના એકદેશથી નીકળીને ઉત્પત્તિસ્થાનના સમસ્ત દેશને આશ્રિત કરીને ઉદ્વર્તના કરે છે ? કે પોતાના સર્વદેશથી નીકળીને ઉત્પત્તિસ્થાનની એકદેશને આશ્રિત કરીને નીકળે છે ? કે પોતાના સર્વદેશથી નીકળીને ઉત્પત્તિસ્થાનના સર્વદેશને આશ્રિત કરીને નીકળે છે ?

આ પ્રશ્નોનો ઉત્તર મહાવીર પ્રભુ આ પ્રમાણે આપે છે—

હે ગૌતમ ! “જહા ઉવ્વજ્જમાણે તહેવ ઉવ્વટ્ટમાણે વિ દંડગો ભાણિયવ્વો” જે પ્રમાણે ઉત્પત્તિના વિષયમા દંડક કહેલ છે એજ પ્રમાણે ઉદ્વર્તનાના દંડકોનું પણ વર્ણન કરવું. જેમ કે—“ ન ઉદ્વર્તતે, ન વા દેશેન સર્વમુદ્વર્તતે,

કરણીય । અપોત્પન્નવિષય પ્રાહ- નેરહ્ણ ણં મતે નેરહ્ણસુ ઉવચ્છણ ' નેરહ્ણિ
ચલુ મદન્ત ! નેરહ્ણિકેષુ ઉપપન્ન ' કિં દેસણ દેસં ઉવચ્છણે ' કિં દેસેન દેસપ્પ-
પન્ન! , દે મદન્ત ! નેરહ્ણિકેષુ જીવ' દેસેનાવયથેન દેસમવયથત ઉપપન્નો મરતિ!,
દેસેનાવયથેન સર્થ સર્પતયા ઉપપન્નો મરતિ ૨, સર્પેણ દેસમુપપન્નો મરતિ ૩, સર્પેણ
સર્વે વા ઉપપન્નો મરતીતિ ૪ । ચત્તારો વિકલ્પા જ્ઞાતવ્યાઃ! મગવાનાહ- 'એસો વિ'
હસ્પાદિ । 'એસો વિ સહેવ' એસોડપિ ઉપપન્નો-તથેય, યથા ઉપપન્નમાના-રૂપમાન-
સૂત્રે ચતુર્થાં મદ્ સ્વીકૃતસ્તથેદાપિ ચતુર્થો મદ્ સ્વીકરણીયઃ, સદેયાહ- 'વાવ
સમ્બેણં સમ્મ ઉવચ્છણે ' યાવત્ સર્પેણ સર્વ ઉપપન્ન એપથતુર્થાં મદ્ સ્વીકરણીય!

કે નિમિત્ત સૂત્ર કહત છે- (નેરહ્ણણં મતે । નેરહ્ણસુ ઉવચ્છણે કિં દેસેણ
દેસં ઉવચ્છણે ?) હે મદન્ત ! નેરહ્ણિકોં મેં ઉત્પન્ન નારક જીવ કયાં અપને
એક ભાગ સે નારક કે એક ભાગ મેં ઉત્પન્ન હુઆ માના જાતા હૈ ? અથવા
અપને એક ભાગ સે સર્વભાગ મેં ઉત્પન્ન હુઆ માના જાતા હૈ ? અથવા
અપને સર્વભાગ સે નારક કે એક ભાગ મેં ઉત્પન્ન હુઆ માના જાતા હૈ ?
અથવા અપને સર્વભાગોં સે સર્વભાગોં મેં ઉત્પન્ન હુઆ માના જાતા હૈ ?
મગવાન હસ કા ઉત્તરવેતે હુર કહતે હૈ કિ (એસો વિ સહેવ જાવ
સમ્બેણં સમ્મ ઉવચ્છણે) યહ, ઉત્પન્ન પક્ષ ત્રી ઉત્પન્નમાન પક્ષ કી તરહ
હી જાનનાં ચાહિયે-અર્થાત્ જિસ પ્રકાર સે ઉત્પન્નના સૂત્ર મેં ચૌથા મંગ
સ્વીકાર કિયા ગયા હૈ ઊસી પ્રકાર સે યહાં પર ત્રી " આપને સમસ્ત
અવયવોં સે વહ નારક કે સમસ્ત અવયવોં રૂપ સે ઉત્પન્ન હુઆ માના
જાતા હૈ " યહ ચૌથા મંગ હી સ્વીકાર કિયા ગયા હૈ । યહી યાત " જાવ

હવે ઉત્પન્ન વિષયનો પણ વિચાર કરવાને માટે સૂત્રકાર કહે છે-

" નેરહ્ણ ણં મતે । નેરહ્ણસુ ઉવચ્છણે કિં દેસેણ દેસ ઉવચ્છણે ? " હે મગવાન !
નારકીમાં ઉત્પન્ન થયેલ નારક જીવ શુ પોતાના એક ભાગથી નરકના એક
ભાગમાં ઉત્પન્ન થયેલ મનાય છે ? કે પોતાના એક ભાગથી નરકના સર્વ ભાગમાં
ઉત્પન્ન થયેલ મનાય છે ? કે પોતાના સર્વભાગોથી નારકના એક ભાગમાં
ઉત્પન્ન થયેલ મનાય છે ? કે પોતાના સર્વભાગોથી નરકના સર્વભાગોમાં ઉત્પન્ન
થયેલ મનાય છે ? તેનો ઉત્તર મગવાન આ પ્રમાણે આપે છે " એસો વિ સહેવ
જાવ સમ્બેણં સમ્મ ઉવચ્છણે " ઉત્પન્ન પક્ષના વિષયમાં પણ ઉત્પન્નમાન પ્રમાણે જ
સમજવું જોઈ કે જેવી રીતે ઉત્પન્નમાન સૂત્રમાં જોયા ભાગોનો સ્વીકાર કર્યો
છે એવી જ રીતે ઉત્પન્ન સૂત્રમાં પણ " તે પોતાના તમામ અવયવોથી નારકના
તમામ અવયવો, હવે ઉત્પન્ન થયેલ મનાય છે " આ જોયા સ્વીકાર

પ્રશ્નપ્રકરણે ચત્વારો ભંગા જ્ઞાતવ્યાઃ । મગવાનાહ—‘ તદેવે ’-ત્યાદિ । ‘ તદેવ જાવ સર્વેણ વા દેસં આહારેહ સર્વેણ વા સર્વં આહારેહ ’ તથૈવ યાવત્ સર્વેણ વા દેશમાહરતિ સર્વેણ વા સર્વમાહરતિ, અયં ભાવઃ—નૈરયિકેભ્ય ઉદ્વર્તમાનો જીવો ન દેશેન દેશમાહરતિ નવા દેશેન સર્વમાહરતિ કિન્તુ સર્વેણ દેશમાહરતિ સર્વેણ વા સર્વમાહરતિ, ઇતિ તૃતીયચતુર્થમજ્ઞૌ ગ્રાહ્યૌ । ‘ એવં જાવ વૈમાણિય ’ એવં યાવત્ વૈમાનિકઃ, યથા નૈરયિકજીવાનાં નરકેભ્ય ઉદ્વર્તનાસમયે આહારવિષયે વિચારઃ કૃતઃ તથૈવ યાવદિતિ અમુરકુમારાદારભ્ય વૈમાનિકપર્યન્તવિષયેઽપિ વિચારઃ

આહાર કરને યોગ્ય દ્રવ્ય કે સર્વદેશ કા આહાર કરતા હૈ ? એસે યે ચાર પ્રશ્ન હૈ । ઇસકાં ઉત્તર દેતે હુણ પ્રશ્ન ગૌતમ કો સમજાતે હૈ કિ—(તદેવ જાવ સર્વેણ વા દેસં આહારેહ, સર્વેણ વા સર્વં આહારેહ, એવં જાવ વૈમાણિય) હે ગૌતમ ! વહ અપને એકદેશ સે આહાર કરને યોગ્ય દ્રવ્ય કે એકદેશ કા આહાર નહીં કરતા હૈ, ઓર ન અપને એકદેશ સે વહ આહાર કરને યોગ્ય દ્રવ્ય કે સર્વદેશ કા હી આહાર કરતા હૈ, કિન્તુ સર્વદેશ સે આહાર કરને યોગ્ય દ્રવ્ય કે એકદેશ કા આહાર કરતા ઓર અપને સર્વદેશ સે આહાર કરને યોગ્ય દ્રવ્ય કે સર્વદેશ કા હી આહાર કરતા હૈ । ઇસ તરહ યહાં પર તૃતીય ઓર ચતુર્થ વિકલ્પ સ્વીકૃત કિયે ગયે હૈ । યાવત્ વૈમાનિક દેવોં મેં હી ઇસી તરહ સે જાનનાં ચાહિયે । તાત્પર્ય યહ હૈ કિ જિસ પ્રકાર સે નૈરયિક જીવોં કે, નરકોં સે ઉદ્વર્તનાં કે સમય મેં આહાર કે વિષય મેં વિચાર કિયા ગયા હૈ ઇસી તરહ સે અમુરકુમાર સે લગાકર વૈમાનિક તક કે દેવોં કે વિષય મેં હી એસા હી વિચાર કર લેનાં ચાહિયે । અવ સૂત્રકાર ઉત્પન્ન વિષય મેં વિચાર

કરવા લાયક દ્રવ્યના એકદેશનો આહાર કરે છે ? કે પોતાના તમામ અવયવોથી આહારને યોગ્ય દ્રવ્યના સર્વદેશનો આહાર કરે છે ? આ પ્રમાણે ચાર પ્રશ્નો છે.

ઉત્તર—“ તદેવ જાવ સર્વેણ વા દેસં આહારેહ, સર્વેણ વા સર્વં આહારેહ એ જાવ વૈમાણિય ” હે ગૌતમ ! તે છવ પોતાના એકદેશથી આહાર કરવા યોગ્ય દ્રવ્યના એકદેશનો આહાર કરતો નથી, તેમજ એકદેશથી આહાર કરવા યોગ્ય દ્રવ્યના સમસ્ત દેશનો પણ આહાર કરતો નથી, પણ સર્વદેશથી આહાર કરવા યોગ્ય દ્રવ્યના એકદેશનો આહાર કરે છે, અને સર્વદેશથી આહાર કરવા યોગ્ય દ્રવ્યના સર્વદેશનો પણ આહાર કરે છે આ રીતે અહીં પણ ત્રીજા અને ચોથા ભાંગાને સ્વીકારવામા આવેલ છે વૈમાનિક દેવો સુધીના વિષયમા પણ આ પ્રમાણે જ સમજવું તાત્પર્ય એ છે કે જે રીતે નારક છવોના, નરકમા ઉત્પત્તિ સમયમા આહારના વિષયમા વિચાર કરવામા આવ્યો છે, એજ પ્રમાણે અહીં પણ ઉત્તરસૂત્ર સમજ લેવું. એવી જ રીતે અમુરકુમારેથી માડીને વૈમાનિક સુધીના દેવોના વિષયમા પણ વિચાર કરવો જોઈએ.

સર્વમાહરતિ, ક્ષત્યેષ્વરુપેણ આહારવિપયઽપિ પૂર્વોક્તૈવ પરિપાટી જ્ઞાતવ્યા તદ્દેવા-
' ઇષ્ણ અમિલાયણં ઉચચન્ને ચિ ઉચ્ચદૃષ્ટે ચિ નયન્વ ' ઇતનાહારવિપયકેનામિલા
યેનોપપન્નેઽપિ ઉદ્ધર્ત્તેનઽપિ જ્ઞાતવ્યમ્ । યથોપપદમાને ઉદ્ધર્ત્તમાનેઽપિ આહારવિપક
આલાપક કૃતસ્તથોપપન્ને ઉદ્ધર્ત્તેનપિ આહારલાપક કરણીય ઇતિ માષ' ।

ઉપપદ્મસૂત્રે તદાલાપકાધેત્યમ્—

“ નેરહ્ણ નં મંતે નેરહ્ણસુ ઉચચન્ને કિં દેસેણં દેસ ઉચચન્ને, દેસણ સન્ન
ઉચચન્ને સન્નેણં દેસ ઉચચન્ને સન્નેણ સન્ન ઉચચન્ને ? ગોપમા ! નો દેસેણં દેસ
ઉચચન્ને નો દેસણ સન્ન ઉચચન્ને, નો સન્નેણ દેસ ઉચચન્ને, સન્નેણં સન્ન ઉચચન્ને !”

और अपने समस्त अवयवों से आहार करने योग्य द्रव्य का समस्त
रूप में भी आहार करता है । इस रूप से पूर्वोक्त परिपाटी ही जाननी
चाहिये । (१५१) अमिलायणं उचयन्ने चि उचदृष्टे चिनेयन्व, इस आहार
विषयक अमिलाय से उपपन्न में और उद्धर्तन में भी ऐसा ही जानना
चाहिये—अर्थात्—जैसा उपपद्यमान और उद्धर्तमान में भी आहारविषयक
अमिलाय किया गया है वैसा ही उपपन्न और उद्धर्तन में आहारविष-
यक अमिलाय कर लेना चाहिये । आहारसूत्र में आहार विषयक
आलाप इस प्रकार से है—“ नेरह्णं मंते । नेरह्णसु उचयन्ने किं दैसेणं
दस उचयन्ने दैसेण सन्नं उचयन्ने सन्नेणं दैस उचयन्ने, सन्नेणं सन्नं
उचयन्ने ? गोपमा ! नो दैसेण दैस उचयन्ने, नो दैसणं सन्नं उचयन्ने,
नो सन्नेणं दसं उचयन्ने, सन्नेणं सन्नं उचयन्ने ” हे भद्रन् ! नारकों में
उत्पन्न नारक जीव क्या अपने एकदेश से उस पर्याय के एकदेश में

આહાર કરે છે અને પોતાના તમામ પ્રદેશોમાં આહાર કરવા યોગ્ય દ્રવ્યના તમામ
પ્રદેશોને પણ આહાર રૂપે મદન કરે છે આ પ્રમાણે પૂર્વોક્ત પરિપાટી ન અતી
મમળાવી વર્ણવ અમિલાયણં ઉચચન્ને, ચિ ઉચદૃષ્ટે ચિ નયન્વ' આ આહાર
વિષયક અમિલાયી ઉપપન્ન અને ઉદ્ધર્તનના વિષયમાં પણ એ જ પ્રમાણે ગમજદ-
કોત્રે કે નેવો ઉપપદ્યમાન અને ઉદ્ધર્ત્યમાનમાં આહાર વિષયક અત્યો ૩૧
એવો જ ઉપપન્ન અને ઉદ્ધર્તનના વિષયમાં પણ આહાર વિષયક અત્યો ૩૧
અત્યો ઉપપન્ન અત્યો ઉપપન્ન વિષયક અત્યો આ પ્રમાણે છે—

‘ નેરહ્ણ નં મંતે । નેરહ્ણસુ ઉચચન્ને, કિં દૈસેણં દૈસ ઉચચન્ને, દૈસેણં સન્ન
ઉચચન્ને સન્નેણં દૈસ ઉચચન્ને સન્નેણ સન્ન ઉચચન્ને ? ” ગોપમા ! નો દૈસેણં
દૈસ ઉચચન્ને, નો દૈસણં સન્ન ઉચચન્ને, નો સન્નેણં દૈસ ઉચચન્ને, સન્નેણં સન્ન
ઉચચન્ને ? ” મગધન ! ન ગોપમા ઉપપન્ન નારક ૩૧ જી ૫૧૧. આરોગ્યથી તે
પરિપન્ન આરોગ્યમાં પણ અર્થ મદન ? કે પદ્મના આરોગ્યથી તે પરિ-

‘જહા ઉવવજ્જમાણે ઉવ્વટ્ટમાણે ચત્તારિ દંડગા તહા ઉવવન્નેણં ઉવ્વટ્ટેણ વિ ચત્તારિ દંડગા માણિયન્વા ’ યથા ઉપપદ્યમાને ઉદ્વર્તમાને ચ ચત્વારો દણ્ડકાઃ, તથા ઉપવન્નેન ઉદ્વર્તનાપિ ચત્વારો દણ્ડકાઃ મણિતવ્યાઃ, અર્થ ભાવઃ—યથા વર્તમાનકાલિકોત્પત્ત્યુદ્વર્તનવિષયે ચત્વારો દણ્ડકા જાતાઃ તથા ભૂતકાલિકોપ-ત્ત્યુદ્વર્તનવિષયેપિ ચત્વારો દણ્ડકાઃ પઠનીયા એવ, સ્વીકૃતમ્ભમાહ—‘સવ્વેણં સવ્વં ઉવવન્ને સવ્વેણં સવ્વં ઉવ્વટ્ટે’ સર્વેણ સર્વગુપપન્નઃ સર્વેણ સર્વમુદ્વર્ત્તઃ, ‘સવ્વેણં વા દેસં આહારેઈ સવ્વેણં વા સવ્વં આહારેઈ’ સર્વેણ વા દેશમાહરતિ, સર્વેણ વા

સવ્વેણં સવ્વં ઉવવણ્ણે ” હસ સૂત્ર દ્વારા પ્રકટ કરી ગઈ છે । (જહા ઉવ-વજ્જમાણે, ઉવ્વટ્ટમાણે ય ચત્તારિ દંડગા, તહા ઉવવન્નેણં ઉવ્વટ્ટેણ વિ ચત્તારિ દંડગા માણિયન્વા) જિસ પ્રકાર સે વર્તમાનકાલ સંબધી ઉત્પત્તિ ઓર ઉદ્વર્તન કે વિષય મેં ચાર દણ્ડક હુએ હૈં, ઉસા તરહ સે ભૂતકા-લિક ઉત્પત્તિ ઓર ઉદ્વર્તન કે વિષય મેં મી ચાર હી દણ્ડક કહના ચાહિયે । અવ સૂત્રકાર ઇન્હીં સ્વીકૃત મ્ભર્ગોં કી પરિગણના કરતે હૈં કિ-સવ્વેણં સવ્વં ઉવવન્ને, સવ્વેણં સવ્વં ઉવ્વટ્ટે, સવ્વેણં વા દેસં આહારેઈ, સવ્વેણં સવ્વં આહારેઈ) જો નયા નારક જીવ નારકોં મેં ઉત્પન્ન હોતા હૈં વહ વહાં અપને સમસ્ત અવયવોં સે હી ઉસ પર્યાય કે સમસ્ત અવયવોં કે રૂપ મેં ઉત્પન્ન હોતા હૈં । ઇસી તરહ સે વહ જો વહાં સે ઉદ્વર્તિત (નિક-લના) હોતા હૈં સો અપને સમસ્ત અવયવોં સે ઉસ પર્યાય કે સમસ્ત અવયવોં મેં સે ઉદ્વર્તિત હોતા હૈં । તથા જો વહ વહાં આહાર કરતા હૈં સો સર્વદેશ સે આહાર કરને યોગ્ય દ્રવ્ય કે એકદેશરૂપ મેં આહાર કરતા હૈં

કયોં છે એજ વાત “ જાવ સવ્વેણં સવ્વં ઉવવણ્ણે ” સૂત્ર વડે દર્શાવી છે (જહા ઉવવજ્જમાણે, ઉવ્વટ્ટમાણે ય ચત્તારિ દંડગા, તહા ઉવવન્નેણં, ઉવ્વટ્ટેણ વિ ચત્તારિ દંડગા માણિયન્વા ” જે રીતે ઉત્પત્તિ અને ઉદ્વર્તનાના વિષયમા વર્તમાનકાળ સંબધી ચાર દંડકો થયા છે, એવી જ રીતે ભૂતકાલિક ઉત્પત્તિ અને ઉદ્વર્તનાના વિષયમાં પણ ચાર દંડક કહેવા જોઈએ હવે સૂત્રધાર એજ સ્વીકૃત ભાગા-ઓની ગણના કરે છે—“સવ્વેણં સવ્વં ઉવવન્ને, સવ્વેણં સવ્વં ઉવ્વટ્ટે, સવ્વેણં વા દેસં આહારેઈ, સવ્વેણં સવ્વં આહારેઈ) જે નારક જીવ નારકોમા ઉત્પન્ન થાય છે તે ત્યા પોતાના તમામ અવયવોથી તે પર્યાયના તમામ અવયવો રૂપે ઉત્પન્ન થાય છે, એજ પ્રમાણે નારક જીવનું ત્યાથી જે નીકળવાનું થાય છે તે પણ તેના તમામ અવયવોથી નીકળીને ઉત્પત્તિસ્થાનના તમામ દેશને આશ્રિત કરીને થાય છે. તથા તે ત્યા પોતાના તમામ પ્રદેશોવડે આહાર કરવા યોગ્ય દ્રવ્યના એકદેશને

અપોત્પન્નસ્યાદારાલાપકમાહ—

“નેરહણ મંતે ! નેરહણસુ ઉવચન્ને કિં દેસેણં દેસ આહારેહ દેસેણં સર્વ આહારેહ, સર્વેણં દેસ આહારેહ, સર્વેણં સર્વ આહારેહ ? ! ગોપમા ! નો દેસેણં દેસ આહારેહ, નો દેસેણં સર્વ આહારેહ, સર્વેણં દેસ આહારેહ, સર્વેણં સર્વ આહારેહ ” ।

અપોત્પન્નસ્યાદારાલાપકમાહ—

“નેરહણ મંતે ! નેરહણિતો ઉવચ્છે કિં દેસેણં દેસ આહારેહ, દેસેણં સર્વ આહારેહ, સર્વેણં દેસ આહારેહ, સર્વેણં સર્વ આહારેહ ? ગોપમા ! નો દેસેણં દેસ આહારેહ, નો દેસેણં સર્વ આહારેહ, સર્વેણં દેસ આહારેહ, સર્વેણં સર્વ આહારેહ ”

પર્યાય કે એક અંશ સે નિકલતા હૈ એસા માના જાવેગા, યા વહ અપને સમસ્ત અંશોં સે ઉમ પર્યાય કે સમસ્ત અંશોં સે નિકલતા હૈ એસા માના જાવેગા ? પ્રસુ હસકા ઉત્તર વતે કુપ કહતે હૈં કિં હૈ ગૌતમ ! વહ નારક જીવ નરકોં સે જો નિકલતા હૈ સો અપને એક દેશ સે ઉસ પર્યાય કે એકદેશ સે નહીં નિકલતા હૈ, ઓર ન વહ અપને એકદેશ સે ઉસ પર્યાય કે સર્વદેશ સે નિકલતા હૈ, ઓર ન અપને સર્વદેશ સે ઉસ પર્યાય કે એક દેશ સે નિકલતા હૈ, કિન્તુ અપને સમસ્ત દેશ સે હી ઉસ પર્યાય સર્વથી સમસ્ત અંશોં સે નિકલતા હૈ એસા માના જાવેગા ।

ઉત્પન્ન કા આહાર સર્વથી આલાપક હસ પ્રકાર સે હૈ—

“નેરહણ મંતે ! નેરહણસુ ઉવચન્ને કિં દેસેણં દેસ આહારેહ, દેસેણં સર્વ આહારેહ, સર્વેણં દેસ આહારેહ, સર્વેણં સર્વ આહારેહ ? ” હૈ મદન્ત ! નારકોં મેં ઉત્પન્ન હુઆ નારક જીવ કયા અપને એક ભાગ કે દ્વારા

દેશે નીકળેશે મનાશે, કે પોતાના તમામ દેશોથી તે પર્યાયના તમામ દેશરૂપે નીકળેશે મનાશે ? તેનો મહાવીર પ્રભુ આ પ્રમાણે ઉત્તર આપે છે—હૈ જૌતમ ! તે નાશક છવ કે જે નરકમાંથી નીકળે છે તે પોતાના એકદેશથી તે પર્યાયના એકદેશ રૂપે નીકળતો નથી. તેમજ તે પોતાના એકદેશથી તે પર્યાયના સર્વદેશ રૂપે પણ નીકળતો નથી, વળી તે પોતાના સર્વદેશથી તે પર્યાયના એકદેશ રૂપે પણ નીકળતો નથી પણ પોતાના તમામ દેશથી તે પર્યાયના તમામ દેશ રૂપે જ નીકળે છે

ઉત્પન્નનો આહાર વિવિધ વ્યથાનો આ પ્રમાણે ॥

ટીકાર્થ—“નેરહણ મંતે ! નેરહણસુ ઉવચન્ને કિં દેસેણં દેસ આહારેહ દેસેણં સર્વ આહારેહ, સર્વેણં દેસ આહારેહ, સર્વેણં સર્વ આહારેહ ? ” હૈ અમવન્ત ! નરકમાં ઉત્પન્ન થયેલ નાશક છવ જી પોતાના એક આત્મપ્રદેશ બદે આધાર કરવા

अथोद्धर्तनालापकमाह—

“ नेरइए ण भंते ! नेरइएहिं तो उव्वट्टे किं देसेणं देसं उव्वट्टेइ, देसेणं सव्वं उव्वट्टे, सव्वेणं देसं उव्वट्टे, सव्वेणं सव्वं उव्वट्टे ? गोयमा ! नो देसेणं देसं उव्वट्टे, नो देसेणं सव्वं उव्वट्टे, नो सव्वेणं देसं उव्वट्टे, सव्वेणं सव्वं उव्वट्टे । ”

उत्पन्न हुआ माना जावेगा ? या अपने एकदेश से उस पर्याय के समस्त देश में उत्पन्न हुआ माना जावेगा ? या अपने समस्त अंशों से उस पर्याय के एकदेश में उत्पन्न हुआ माना जावेगा ? या अपने समस्त अंशों से उस पर्याय के समस्त अंशों में—भागों में उत्पन्न हुआ माना जावेगा ? प्रभु इस का उत्तर देते हुए कहते हैं कि हे गौतम ! नारक जीवों में उत्पन्न हुआ नारक जीव वहां अपने समस्त अंशों से उस पर्याय के समस्त अंशों में उत्पन्न हुआ ही माना जावेगा ।

उद्धर्तनालापक इस प्रकार से है—

“ नेरइएणं भंते ! नेरइएहिं तो उव्वट्टे किं देसेणं देसं उव्वट्टे, देसेणं, सव्वं उव्वट्टे, सव्वेणं देसं उव्वट्टे, सव्वेणं सव्वं उव्वट्टे ? गोयमा ! नो देसेणं देसं उव्वट्टे, नो देसेणं सव्वं उव्वट्टे नो सव्वेणं देसं उव्वट्टे, सव्वेणं सव्वं उव्वट्टे ” हे भदन्त ! नारकों से उद्धर्त-निकला हुआ जीव क्या वहां से वह अपने एक अंश से उस पर्याय के एक अंश से निकला है ऐसा माना जावेगा या वह अपने एक अंश से उस पर्याय के समस्त अंशों से निकला है ऐसा माना जावेगा, या वह अपने समस्त अंशों से उस

यना तमाम देशमा उत्पन्न थयेल भनाशे ? के पोताना तमाम देशथी ते पर्यायना ओकदेशमा उत्पन्न थयेल भनाशे ? के पोताना तमाम देशोथी ते पर्यायना तमाम देशोमा उत्पन्न थयेल भनाशे ?

उत्तर—हे गौतम ! नारकोमा उत्पन्न थयेल नारक एव पोताना तमाम देशोथी ते पर्यायना तमाम देशोमा न उत्पन्न थयेलो भनाशे उद्धर्तना णाण-तनो यदावे आ प्रमाणे छे—

“ नेरइए ण भंते ! नेरइएहिं तो उव्वट्टे किं देसेणं देसं उव्वट्टेइ, देसेणं सव्वं उव्वट्टे, सव्वेणं देसं, उव्वट्टे, सव्वेणं सव्वं उव्वट्टे ? ” “ गोयमा ! नो देसेणं देसं उव्वट्टे, नो देसेणं सव्वं उव्वट्टे, नो सव्वेणं देसं उव्वट्टे, सव्वेणं सव्वं उव्वट्टे ”
हे भगवन् ! नारकोमाथी उद्धर्त (नीकजेला) एव शुं त्याथी पोताना ओकदेशथी ते पर्यायना ओकदेश इपे नीकजेला भनाशे, के पोताना ओकदेशथी ते पर्यायना तमाम देश इपे नीकजेला भनाशे, के पोताना तमाम देशोथी ते पर्यायना ओक

નકાસમાધિત્ય-ઉદ્વર્ત્યમાનસ્યોદ્વર્તનાધિપયસ્તૃતીયસૂત્રાત્મકસ્તૃતીયો દષ્ટકઃ ૧ ।
 ઉદ્વર્ત્યમાનસ્યાહારવિપયકચતુર્યસૂત્રાત્મકચતુર્થા દષ્ટક ૪ । ઉદ્વર્તનાત્પન્નસ્ય
 સ્યાદિતિ ભૂતકાલમાધિત્યોત્પન્નસ્યોત્પત્તિવિપયકઃ પચ્ચમસૂત્રાત્મક પચ્ચમો દષ્ટક
 ૫ । ઉત્પન્નઃ સન્નાહારં કરોતીતિ ભૂતકાલમાધિત્યોત્પન્નસ્યાહારવિપયક પૃથ્વસૂત્રા-
 ત્મકઃ પઞ્ચો દષ્ટકઃ ૬ । ઉત્પન્નમતિપક્ષત્વાદુદ્વર્ત્યમાનસ્યોદ્વર્તનાધિપયક સત્તમસૂત્રા-
 ત્મકઃ સત્તમો દષ્ટકઃ ૭ । ઉદ્વર્ત્યઃ સન્નાહારં કરોતીત્યુદ્વર્ત્યમાનસ્યાહારવિપયકોઽ-
 ષ્ટમસૂત્રાત્મકોઽષ્ટમો દષ્ટકઃ ૮ ॥

અથ પૂર્વોક્તૈરણમિરેવ દષ્ટકૈરર્ધમર્વાખ્યામૃત્વાદાદિકમેવચિન્તયન્નાહ—
 'નેરણ્ણ ણં મંતે' इत्यादि । 'नेरण्ण णं मंते' नैरयिकः तलु मदन्त । 'नेरण्ण

પ્રાય સે ચર્તમાનકાલ કો આધિત્ય કરકે ઉદ્વર્ત્યમાન નારક જીવ કી ઉદ્વર્તના કો વિપય કરને ચાલા તૃતીય સૂત્રાત્મક તીસરા દષ્ટક ૧, ઉદ્વર્ત્યમાન નારક કે આહાર કો વિપય કરને ચાલા ચતુર્ય સૂત્રાત્મક ચૌથા દષ્ટક ૪, ઉદ્વર્તના ઉત્પન્ન નારક જીવ કી હોતી હૈ હસ ચ્યાલ સે ભૂતકાલ કો આધિત્ય કરકે ઉત્પન્ન નારક જીવ કી ઉત્પત્તિ કો વિપય કરને ચાલા પચ્ચમ સૂત્રાત્મક પાચવાં દષ્ટક ૫, ઉત્પન્ન હુઆ નારક જીવ આહાર કરતા હૈ હસ ચ્યાલ સે ભૂતકાલ કો આધિત્ય કરકે ઉત્પન્ન હુઆ નારક કે આહારકો વિપય કરનેચાલા પૃથ્વસૂત્રાત્મક છઠ્ઠા દષ્ટક ૬, ઉત્પન્નકા પ્રતિપક્ષ ઉદ્વર્ત્ય ઓર ઉદ્વર્તના હૈ હસલિયે ઉદ્વર્ત્ય ઓર ઉદ્વર્તના વિપયક સત્તમ દષ્ટક ૭ હૈ । ૭, ઉદ્વર્ત્ય હોતા હુઆ નારક જીવ આહાર કરતા હૈ હસ ચ્યાલ સે ઉદ્વર્ત્ય કા આહાર વિપયક અષ્ટમસૂત્રાત્મક ૮ વાં દષ્ટક હૈ ।

અથ સૂત્રકાર ઇન્હીં પૂર્વોક્ત આઠ દષ્ટકોં દ્વારા હસ યાગ કા વિચાર

શબ્દ ઉદ્વર્તન છે તેથી વતમાનજાળની અપેક્ષાએ ઉદ્વર્તમાન (નીકળતા) નારક જીવની ઉદ્વર્તના વિષેના ત્રીજા સૂત્ર રૂપે આપેલું ત્રીજું હેઠક, ઉદ્વર્તમાન નારકના આહાર વિષેનું ચોથા સૂત્ર રૂપ ચોથું હેઠક ઉદ્વર્તના ઉત્પન્ન થયેલ નારક જીવની જ થાય છે તેથી ભૂતજાળને અનુલક્ષીને ઉત્પન્ન થનાર નારક થયેલ જીવની ઉત્પત્તિ વિષયક પાચમા સૂત્રમાં આપેલું પાચમું હેઠક ઉત્પન્ન થયેલો નારક જીવ આહાર કરે છે તેથી ભૂતજાળને અનુલક્ષીને ઉત્પન્ન થયેલ નારકના આહાર વિષેના છઠ્ઠા સૂત્રમાં બતાવેલું છઠ્ઠું હેઠક ઉત્પન્ન થી ઉલટો શબ્દ ઉદ્વર્ત્ય અને ઉદ્વર્તના છે તે કારણે ઉદ્વર્ત્ય અને ઉદ્વર્તના વિષયક સાતમું હેઠક કહ્યું છે અને ઉદ્વર્ત્ય થતો નારક જીવ આહાર કરે છે તેને અનુલક્ષીને ઉદ્વર્તનાના આહાર વિષેના આઠમા સૂત્ર રૂપે આપેલું આઠમું હેઠક આ રીતે આઠ હેઠકોનો વિચાર કરવામાં આવ્યો છે. હવે સૂત્રકાર જોજ પૂર્વોક્ત આઠ હેઠકો વડે જો વાતનો વિચાર કરે ॥

અર્થે ભાવઃ—વર્તમાનકાલમાશ્રિત્ય ઉત્પદ્યમાનસ્યોત્પત્તિવિષયક એકમૂત્રાત્મક
કો દણ્ડકઃ ૧, ઉત્પદ્યમાનસ્યાહારાવશ્યકતાંભવેદિતિ ઉત્પદ્યમાનસ્યાહારવિષ-
યકો દ્વિતીયમૂત્રાત્મકો દ્વિતીયો દણ્ડકઃ ૨ । ઉત્પાદપ્રતિપક્ષમુદ્વર્તનમિતિ વર્તમા-

આહાર કરને યોગ્ય દ્રવ્ય કે એક ભાગ કા આહાર કરતા હૈ ? યા અપને
એક ભાગ કે દ્વારા આહાર કરને યોગ્ય દ્રવ્ય કે સર્વભાગ કા આહાર
કરતા હૈ ? યા અપને સર્વભાગ દ્વારા આહાર કરને યોગ્ય દ્રવ્ય કે એક-
ભાગ કા આહાર કરતા હૈ ? યા અપને સર્વભાગો દ્વારા આહાર કરને
યોગ્ય દ્રવ્ય કે સર્વભાગો કા આહાર કરતા હૈ ? હે ગૌતમ ! નારકો મેં
ઉત્પન્ન હુઆ નારક જીવ ન અપને એકદેશરૂપ ભાગ સે આહાર કરને
યોગ્ય દ્રવ્ય કે એક ભાગ કા આહાર કરતા હૈ ઓર ન અપને એકદેશરૂપ
ભાગ સે આહાર કરને યોગ્ય દ્રવ્ય કે સર્વભાગો કા હી આહાર કરતા હૈ
કિન્તુ વહ અપને સર્વદેશરૂપ ભાગો સે, આહાર કરને યોગ્ય દ્રવ્ય કે એક
ભાગ કા ઓર સર્વભાગો કા હી આહાર કરતા હૈ ।

હસ કથન કા યહ ભાવ હૈ—વર્તમાનકાલ કો આશ્રિત કરકે ઉપજને
વાલે નારક જીવ કી ઉત્પત્તિ કો વિષય કરને વાલા એક દણ્ડક, વર્ત-
માન મેં ઉત્પન્ન હુએ નારક જીવ કો આહાર કી આવશ્યકતા હોતી હૈ
હસ ધ્યાલ સે ઉત્પદ્યમાન નારક કે આહાર કો વિષય કરને વાલા દ્વિતીય
મૂત્રાત્મક દૂસરા દણ્ડક, ઉત્પાદકા પ્રતિપક્ષી ઉદ્વર્તન હોતા હૈ હસ અભિ-

યોગ્ય દ્રવ્યના એક દેશનો આહાર કરે છે ? કે પોતાના એક આત્મપ્રદેશ વડે
આહારને યોગ્ય દ્રવ્યના તમામ ભાગનો આહાર કરે છે ? કે પોતાના તમામ
આત્મપ્રદેશો વડે આહારને યોગ્ય દ્રવ્યના એક ભાગનો આહાર કરે છે ? કે પોતાના
તમામ આત્મપ્રદેશો વડે આહારને યોગ્ય દ્રવ્યના તમામ દેશોનો આહાર કરે છે ?

ઉત્તર—હે ગૌતમ ! નારકેમા ઉત્પન્ન થયેલો નારક જીવ પોતાના એક
દેશ રૂપ ભાગથી આહાર કરવા યોગ્ય દ્રવ્યના એક ભાગનો આહાર કરતો નથી.
તેમજ તે પોતાના એકદેશ રૂપ ભાગ વડે આહારને યોગ્ય દ્રવ્યના તમામ ભાગનો
પણુ આહાર કરતો નથી, પણુ તે પોતાના સર્વદેશ રૂપ ભાગો વડે આહાર કરવા
યોગ્ય દ્રવ્યના એક ભાગનો આહાર કરે છે અને સર્વભાગનો પણુ આહાર કરે છે

આ કથનનો સારાશ આ પ્રમાણે છે—વર્તમાન કાળની અપેક્ષાએ ઉત્પ-
દ્યમાન (ઉત્પન્ન થનાર) નારક જીવની ઉત્પત્તિ વિષેનુ એક દડક, વર્તમાન
કાળમા ઉત્પદ્યમાન નારક જીવને આહારની આવશ્યકતા રહે છે. તેથી ઉત્પદ્યમાન
નારકના આહાર વિષેના બીજા સૂત્ર રૂપે આપેલુ બીજુ દડક, ઉત્પાદ્યથી ઉલટો

કયનીયાઃ । નવરં વિશેષસ્ત્વપમ્—‘ જહિં દેસેણ દેસ ઉચ્ચવજ્જહ, તહિં અદ્દેણં મદં ઉચ્ચવજ્જહ’તિ માણિયન્થ્વં ’ યત્ર દેસેન દેસમુપપચત તત્ર અદ્દેણં મદંમુપપચતે’તિ મણિતથ્યમ્ । અયં માવઃ—દેસપટિતાર્થપટિતદ્વયે પ્તદેશ ચૈલક્ષણ્યં યસ્ય યત્ર કિં દેસેન ‘દેશમુપપચતે’ ઇત્યાદિ કથિતમ્ તત્ર સ્પષ્ટે હહ ‘કિમ્ અર્દેનાર્થમુપપચતે’ ઇત્યાદિ ધક્તવ્યમિત્યેસાધાનનયોરુમયોર્મેદ ઇતિ ‘અર્થં ણાણસં’ એતન્નાનાસમ્, એતવ્—એતદેવ અનુપદમુક્તમેવ નાનાત્વમ્=અમયોર્મેદ ઇતિ । દેશસ્થાને અર્થં ષ્ટ પિત્વા મેદો રચનીય ઇતિ માવ । ‘અર્થ સન્થે ચિ’ એતે સર્વેપિ ‘સોલસ વઢના

કિ જિસ પ્રકાર સે પહિછે દેશ કે સાથ ઉત્પાદ આદિકોં કે આઠ વણ્ઠક કહે ગયે હૈં, ઊસી તરહ સે અર્દ કે સાથ ધી ઉત્પાદ આદિકોં કે આઠ વણ્ઠક કહ લેના ચાહિયે । (નવરં) વિશેષના યહ હૈં કિ—(જહિં દેસેણ દસં ઉચ્ચવજ્જહ, તહિં અદ્દેણં મદં ઉચ્ચવજ્જહ, ઇતિ માણિયન્થ્વં) જહાં પર “કયા એકદેશ સે એકદેશ કો આશ્રય કરકે ઉત્પન્ન હોતા હૈં?” એસા પાઠ બ્રાતા હૈં ઘહાં પર “કયા અર્ધભાગ સે અર્ધભાગ કો આશ્રિત કરકે ઉત્પન્ન હોતા હૈં” એસા પાઠ લગા લેના ચાહિયે । તાત્પર્ય કહને કા યહ હૈં કિ દેશ સંબધી ઓર અર્ધ સંબધી યે જો દો પ્રશ્ન હૈં ઊનમેં હતના હી મેદ હૈં કિ જહા પર “કયા દેશ સે દેશ કો આશ્રિત કર કે ઉત્પન્ન હોતા હૈં” એસા કહા ગયા હૈં, ઘહાં પર હસ સ્થલમેં “કયા આધે ભાગ સે આધે ભાગ કો આશ્રિત કરકે ઉત્પન્ન હોતા હૈં” એસા પાઠ કહના ચાહિયે । (અર્થં ણાણસં) યહી હન દોનોં મેં વિશેષતા હૈં । અર્થાત દેશ કે સ્થાન મેં અર્ધ પદ જોડ કર મેદ કર લેના ચાહિયે । (અર્થ સન્થે ચિ સોલસ વઢના

એટલે કે પહેલાં જેવી રીતે દેશની અપેક્ષાએ ઉત્પાદ વજેરનાં આઠ ટંકો કહેવામા આવે છે, એવી જ રીતે અર્ધની અપેક્ષાએ પણ ઉત્પાદ વજેરનાં આઠ ટંકો કહેવાં બાઈએ ‘નવર’ પણ તેમા જે વિશેષતા છે તે આ પ્રમાણે છે “જહિં દેસેણ દેસ ઉચ્ચવજ્જહ, તહિં અદ્દેણં મદં ઉચ્ચવજ્જહ, ઇતિ માણિયન્થ્વં” કયા “એકદેશથી એકદેશનો આશ્રય લઇને ઉત્પન્ન થાય છે?” એવું કમન આવે છે ત્યાં “શુ અર્ધભાગથી અર્ધભાગનો આશ્રય લઇને ઉત્પન્ન થાય છે?” એવું કમન કરવું બોઈએ. તાત્પર્ય એ છે કે દેશ સંબધી અને અર્ધ સંબધી જે બે પ્રશ્નો છે તેમાં એટલો જ ભેદ છે કે જ્યાં દેશથી દેશનો આશ્રય લઇને ઉત્પન્ન થાય છે? એવું કહ્યું છે ત્યાં શુ અર્ધભાગથી અર્ધભાગનો આશ્રય લઇને ઉત્પન્ન થાય છે? એટલે ફરકાર કરવો બોઈએ ‘અર્થ ણાણસં’ એ બન્નેમા એજ વિશેષતા છે એટલે કે ‘દેશ’ ની જગ્યાએ ‘અર્ધ’ પડનો પ્રયોગ કરીને સૂત્ર બનાવવાં બોઈએ “અર્થ સન્થે ચિ સોલસ વઢના

ઉવવજ્જમાણે ' નૈરયિકેપૂપપદ્યમાનઃ ' કિં અદ્વેષં અદ્વં ઉવવજ્જઈ' કિમ્ અર્દ્ધનાર્દ્ધમ્
ઉપપદ્યતે, ' અદ્વેષં સર્વં ઉવવજ્જઈ' અર્દ્વેણ સર્વમુપપદ્યતે ' સર્વેણં અદ્વં ઉવવજ્જઈ'
સર્વેણાર્દ્ધમુપપદ્યતે, ' સર્વેણં સર્વં ઉવવજ્જઈ ' સર્વેણ સર્વમુપપદ્યતે, હે ભગવન્ નરકે
ઉત્પદ્યમાનો નારકઃ કિમર્દ્વેણ ભાગેનાર્ધભાગમાશ્રિત્યોત્પદ્યતે કિં વા અર્દ્ધભાગેન
સર્વમાશ્રિત્યોત્પદ્યતે, અથવા સર્વભાગેનાર્દ્ધભાગમાશ્રિત્યોત્પદ્યતે અથવા સર્વભાગેન
સર્વભાગમાશ્રિત્યોત્પદ્યતે इति પ્રશ્નઃ । ભગવાનાહ-‘જહાપઢમિલ્લેણ’મિત્યાદિ। ‘જહા
પઢમિલ્લેણં અદ્વ દંડગા તહા અદ્વેણ વિ અદ્વ દંડગા ભાવિયન્વા ’ યથા પ્રાથમિકેન
દેશરૂપેણાદૃ દણ્ડકાસ્તથાર્દ્ધેનાપિ અદ્વૌ દણ્ડકા ભણિતવ્યા, યથા પૂર્વ દેશેન
સહોત્પાદાદીનામદૃ દણ્ડકા ઉક્તાસ્તથાર્દ્ધેનાપિ સહોત્પાદાદીનામદૃદણ્ડકાઃ

કરતે હૈં કિ નૈરયિકોં મેં ઉપજતા હુઆ નારક જીવ કયા અપને અર્ધ-
ભાગ સે ઉત્પન્ન હોતા હૈ અથવા અપને સર્વભાગ સે ઉત્પન્ન હોતા હૈ-
(નેરહ્ણ ણં મંતે ।) હે ભદન્ત ! નારક જીવ (નેરહ્ણસુ ઉવવજ્જમાણે)
જો કિ નૈરયિકોં મેં ઉપજનેવાલા હૈ (કિં અદ્વેષં અદ્વં ઉવવજ્જઈ, અદ્વેષં
સર્વં ઉવવજ્જઈ) વહ કયા અપને આધે ભાગ સે આધે ભાગ કો આશ્રિત
કરકે ઉત્પન્ન હોતા હૈ ? યા અપને આધે ભાગ સે સર્વભાગ કો આશ્રિત
કરકે ઉત્પન્ન હોતા હૈ ? (સર્વેણં અદ્વં ઉવવજ્જઈ, સર્વેણં સર્વં ઉવવજ્જઈ) યા
અપને સર્વભાગસે ઉત્પત્તિસ્થાનકે આધે ભાગકો આશ્રિત કરકે ઉત્પન્ન હોતા
હૈ ? યા અપને સર્વભાગ સે સર્વભાગકો આશ્રિત કરકે ઉત્પન્ન હોતા હૈ ?
(જહા પઢમિલ્લેણં અદ્વ દંડગા તહા અદ્વેણ વિ અદ્વ દંડગા ભાણિયન્વા)
જૈસે દેશરૂપ પ્રથમ કે સાથ આઠ દણ્ડક કહે ગયે હૈં ડસી તરહ
સે અર્ધ કે સાથ મી આઠ દણ્ડક કહના ચાહિયે । તાત્પર્ય વહ હૈ

કે નૈરયિકોમા ઉપજતો નારક જીવ શુ પોતાના અર્ધભાગથી ઉત્પન્ન થાય છે,
કે પોતાના સર્વ ભાગથી ઉત્પન્ન થાય છે ?

ટીકાર્થ—“ નેરહ્ણ ણ મંતે ! નેરહ્ણસુ ઉવવજ્જમાણે” હે ભગવન્ ! નારક જીવોમાં
ઉપજનારો નારક જીવ “કિં અદ્વેષં અદ્વં ઉવવજ્જઈ અદ્વેણ સર્વં સર્વંજ્જઈ ? ” શુ
પોતાના અર્ધભાગથી અર્ધભાગને આશ્રિત કરીને ઉત્પન્ન થાય છે ? કે પોતાના
અર્ધભાગથી સર્વભાગને આશ્રિત કરીને ઉત્પન્ન થાય છે ? (સર્વેણં અદ્વં ઉવ-
વજ્જઈ, સર્વેણં સર્વં ઉવવજ્જઈ ? ” કે પોતાના સર્વભાગથી અર્ધભાગને આશ્રિત
કરીને ઉત્પન્ન થાય છે ? કે પોતાના સર્વભાગથી સર્વભાગને આશ્રિત કરીને
ઉત્પન્ન થાય છે ? “ જહા પઢમિલ્લેણં અદ્વ દંડગા તહા અદ્વેણ વિ અદ્વ દંડગા
ભાણિયન્વા ” હે જોતમ ! જેવી રીતે દેશરૂપ પ્રથમની સાથે આઠ દડકો કહે-
વામાં આવ્યા છે એજ પ્રમાણે અર્ધની સાથે પણ આઠ દડકો કહેવા જોઈએ.

किं भक्षेणं अदं आहारेह, भक्षेण सख्य आहारेह, सख्येण अद आहारेह, सख्येणं सख्यं आहारेह ? गोयमा । नो भक्षेणं अदं आहारेह, नो भक्षेणं सख्यं आहारेह, सख्येणं अदं आहारेह, सख्येणं सख्यं आहारेह २ । नेरहणं मंते । नेरहणं मंते ।

भागको आश्रित करके उत्पन्न होता है । नरकमें उत्पन्न हुए नारक जीवको आहारकी आवश्यकता होती है अतः गौतमस्वामी प्रभुसे इस विषयमें प्रश्न करते हुए पूछते हैं कि—(नेरहणं मंते । नेरहणसु उषषज्जमाणे भक्षेणं अदं आहारेह, भक्षेणं सख्यं आहारेह, सख्येण अदं आहारेह, सख्येणं सख्यं आहारेह) हे भदन्त ! नारकियों में उत्पन्न हुआ नारकजीव क्या अपने आधे भागसे आधे भागको आश्रितकर आहार करता है ? या अपने आधे भागसे सर्वभागको आश्रितकर आहार करता है ? या अपने सर्वभाग से सर्वभाग को आश्रित कर आहार करता है ? (गोयमा । नो भक्षेणं अदं आहारेह, नो भक्षेणं सख्यं आहारेह, सख्येणं अदं आहारेह, सख्येणं सख्यं आहारेह) हे गौतम ! वह न अपने आधे भाग से आहरणीय द्रव्य के आधे भाग को आश्रितकर आहार करता है, न अपने आधे भाग से आहरणीय द्रव्य के सर्व भागों को आश्रितकर आहार करता है किन्तु अपने सर्ववैश से आहरणीय द्रव्य के आधे भाग को आश्रित करके आहार करता है और अपने सर्ववैश से आहरणीय द्रव्य के सर्ववैश को भी आश्रित करके आहार करता है । (नेरहणं

७ उत्पन्नं यद्ये नरकभा उत्पन्नं यथेहा नारक एवने आहारणी आवश्यक-
कत्वा रके छे—तेभी गौतमस्वामी भक्षणीर प्रभुने आहार सख्यभी प्रभु पूछे छे—
“नेरहणं मंते । नेरहणसु उषषज्जमाणे भक्षेणं अदं आहारेह, भक्षेणं सख्यं आहारेह, सख्येण अदं आहारेह, सख्येणं सख्यं आहारेह ?” के भगवन् । नारकभा उत्पन्न यथेहा नारक एव शु पोताना अधभागभी आहारने योग्य द्रव्यना अधा भागने आहार करे छे ? के पोताना अधभागभी आहारने योग्य द्रव्यना सर्वभागने आहार करे छे ? के पोताना सर्वभागभी अधभागने आहार करे छे ? के पोताना सर्वभागभी आहारने योग्य द्रव्यना सर्वभागने आहार करे छे ?

उत्तर—‘गोयमा । नो भक्षेण अदं आहारेह, नो भक्षेण सख्यं आहारेह, सख्येण अदं आहारेह, सख्येणं सख्यं आहारेह’ के गौतम । ते नारक एव पोताना अधभागभी आहारने योग्य द्रव्यना अधभागने आहार करतो नही, तेमए ते पोताना अधभागभी आहारने योग्य द्रव्यना सर्वभागने पण आहार करतो नही. पण ते पोताना सर्ववैशभी आहारने योग्य द्रव्यना अधभागने आहार करे छे तथा पोताना सर्ववैशभी आहारने योग्य द्रव्यना सर्वभागने आहार पण करे छे

માણિયન્વા ' ષોડશ દણ્ડકા મણિતવ્યાઃ, દેશઘટિતોત્પાદે ચત્વારો દણ્ડકાસ્તથા દેશઘટિતે આહારે ચત્વારો દણ્ડકાઃ, સંકલનયા અઘૌ દણ્ડકાઃ, એવમર્દ્ધઘટિતોત્પાદે ચત્વારો દણ્ડકાસ્તથાર્દ્ધઘટિતે આહારેઽપિ ચત્વારો દણ્ડકાઃ, ઇતિ અર્દ્ધઘટિતેઽઘૌ દણ્ડકાઃ, સર્વસંકલનયા ષોડશ દણ્ડકાઃ ભવન્તીતિ પરમાર્થઃ। અર્દ્ધસર્વયોરષ્ટ દણ્ડકા-શ્ચેત્યમ્—અત્ર પ્રથમદણ્ડકપ્રશ્નસૂત્રં મૂલે એવ કથિતમ્, ઉત્તરસૂત્રં ત્વેવમ્—

“ નો અદ્વેણં અદ્ધ ઉવવજ્જઈ, નો અદ્વેણં સવ્વં ઉવવજ્જઈ, નો સવ્વેણં અ ઉવવજ્જઈ, સવ્વેણં સવ્વં ઉવવજ્જઈ ૧ । નેરહ્ણ ણં મંતે । નેરહ્ણસુ ઉવવજ્જમાણે

માણિયન્વા) હસ તરહ યે સચ મિલ કર સોલહ દંડક હો જાતે હૈં । તાત્પર્ય યહ કિ—જૈસે દેશ સંવંધી ઉત્પાદ મેં ચાર દણ્ડક ઓર દેશ સંવંધી આહારમેં ચાર દણ્ડક હસ પ્રકાર યે ૮ આઠદણ્ડક હોતે હૈં ઊસી પ્રકારસે અર્દ્ધ સંવંધી ઉત્પાદમેં ચાર દણ્ડક ઓર અર્દ્ધ સંવંધી આહારમેં ચાર દણ્ડક હોતે હૈં । હસ તરહ દેશ સંવંધી ૮ આઠ દણ્ડક ઓર અર્દ્ધ સંવંધી ૮ આઠદણ્ડક મિલકર સોલહ દણ્ડક હો જાતે હૈં । અર્દ્ધ કે ઓર સર્વ કે આઠ દણ્ડક હસ પ્રકાર સે હૈં—હન મેં જો પ્રથમ દણ્ડક પ્રશ્નસૂત્ર હૈ વહ તો મૂલ મેં હી કહ દિયા ગયા હૈ પરન્તુ જો ઉત્તર સૂત્ર હૈ વહ હસ પ્રકાર સે હૈ—“ નો અદ્વેણં અદ્ધ ઉવવજ્જઈ, નો અદ્વેણં સવ્વં ઉવવજ્જઈ, નો સવ્વેણં અદ્ધ ઉવવજ્જઈ, સવ્વેણં સવ્વં ઉવવજ્જઈ ” હૈ ગૌતમ ! નૈરયિકોં મેં ઉત્પન્ન હોને વાલા નારકજીવ અપને આધે ભાગ સે આધે ભાગ કો આશ્રિત કરકે ઉત્પન્ન નહીં હોતા હૈ, ઓર ન વહ અપને સર્વ ભાગ સે આધે ભાગ કો આશ્રિત કરકે હી ઉત્પન્ન હોતા હૈ, કિન્તુ અપને સર્વ ભાગ સે હી સર્વ-

માણિયન્વા ” આ રીતે તે બન્ને મળીને કુલ ૧૬ દંડક થાય છે એટલે કે બેમ ઉત્પાદમા દેશસંબંધી ચાર દંડક અને આહારમાં દેશ સંબંધી ચાર દંડક થાય છે તેમ ઉત્પાદમાં અર્ધસંબંધી ચાર દંડક અને આહારમાં અર્ધસંબંધી ચાર દંડક આ રીતે દેશ સંબંધી ૮ દંડક અને અર્ધસંબંધી ૮ દંડક મળીને કુલ ૧૬ દંડક થાય છે, અર્દ્ધના અને સર્વના આઠ દંડક નીચે પ્રમાણે છે તેમાનું પ્રથમ દંડક પ્રશ્નસૂત્ર તો મૂળસૂત્રમાં જ કહી દીધું છે પણ બે ઉત્તરસૂત્ર છે તે આ પ્રમાણે છે—“ નો અદ્વેણં અદ્ધ ઉવવજ્જઈ, નો અદ્વેણં સવ્વં ઉવવજ્જઈ, નો સવ્વેણં અદ્ધ ઉવવજ્જઈ, સવ્વેણં સવ્વં ઉવવજ્જઈ ” હે ગૌતમ નૈરયિકોમાં ઉત્પન્ન થનારો નારક છવ પોતાના અર્ધલાગથી અર્ધલાગને આશ્રિત કરીને ઉત્પન્ન થતો નથી વળી તે પોતાના અર્ધલાગથી સર્વલાગને આશ્રિત કરીને પણ ઉત્પન્ન થતો નથી, તેમજ તે પોતાના સર્વલાગથી અર્ધલાગને આશ્રિત કરીને ઉત્પન્ન થતો નથી પણ તે પોતાના સર્વલાગથી સર્વલાગને આશ્રિત કરીને

ઉવ્વટ્ટમાણે કિં અદ્દેણં અદ્દ ઉવ્વટ્ટહ, અદ્દેણં સવ્વં ઉવ્વટ્ટહ, સવ્વેણં અદ્દં ઉવ્વટ્ટહ, સવ્વેણં સવ્વં ઉવ્વટ્ટહ ? ગોયમા ! નો અદ્દેણં અદ્દં ઉવ્વટ્ટહ, નો અદ્દેણં સવ્વં ઉવ્વટ્ટહ, નો સવ્વેણં અદ્દં ઉવ્વટ્ટહ, સવ્વેણં વા સવ્વં ઉવ્વટ્ટહ ૩। નેરહણં મંતે ! નેરહણં હિંતો ઉવ્વટ્ટમાણે કિં અદ્દેણં અદ્દં આહારેહ, અદ્દેણં સવ્વં આહારેહ, સવ્વેણં અદ્દં આહારેહ, સવ્વેણં મંતે ! નેરહણં હિંતો ઉવ્વટ્ટમાણે કિં અદ્દેણં અદ્દ ઉવ્વટ્ટહ, અદ્દેણં સવ્વં ઉવ્વટ્ટહ, સવ્વેણં અદ્દં ઉવ્વટ્ટહ, સવ્વેણં સવ્વં ઉવ્વટ્ટહ ?) હે મદન્ત ! નૈરયિકોંસે વર્તમાનકાલમેં ઉદ્વત્ત (નિકલાહુવા)હુઆ નારકજીવ કયાઅપને આધે ભાગસે આધે ભાગકો આશ્રિત કરકે ઉદ્વત્ત હોતા હૈ ? યા અપને આધે ભાગસે સર્વભાગકો આશ્રિત કરકે ઉદ્વત્ત હોતા હૈ ? યા સર્વભાગસે આધે ભાગકો આશ્રિત કરકે ઉદ્વત્ત હોતા હૈ ? યા અપને સર્વભાગસે સર્વભાગકો આશ્રિત કરકે ઉદ્વત્ત હોતા હૈ ? (ગોયમા ! નો અદ્દેણં અદ્દ ઉવ્વટ્ટહ, નો અદ્દેણં સવ્વં ઉવ્વટ્ટહ, નો સવ્વેણં અદ્દં ઉવ્વટ્ટહ, સવ્વેણં સવ્વં ઉવ્વટ્ટહ) હે ગૌતમ ! ન વહ અપને આધે ભાગસે આધે ભાગકો આશ્રિત કર ઉદ્વત્ત હોતા હૈ, ન અપને આધે ભાગસે સર્વભાગકો આશ્રિત કર ઉદ્વત્ત હોતા હૈ, ઓર ન અપને સર્વભાગસે આધે ભાગકો હી આશ્રિત કર ઉદ્વર્તિત હોતા હૈ કિન્તુ અપને સર્વભાગસે હી સર્વભાગ કો આશ્રિત કર ઉદ્વર્તિત હોતા હૈ । (નેરહણં મંતે ! નેરહણં હિંતો ઉવ્વટ્ટમાણે કિં અદ્દેણં અદ્દ આહારેહ, અદ્દેણં સવ્વં આહારેહ, સવ્વેણં અદ્દ આહારેહ, સવ્વેણં સવ્વ આહારેહ ?) હે

પ્રશ્ન—“નેરહણં મંતે ! નેરહણં હિંતો ઉવ્વટ્ટમાણે કિં અદ્દેણં અદ્દં ઉવ્વટ્ટહ, અદ્દેણં સવ્વં ઉવ્વટ્ટહ, સવ્વેણં અદ્દં ઉવ્વટ્ટહ, સવ્વેણં સવ્વં ઉવ્વટ્ટહ ?” હે ભગવાન ! નૈરયિકોંસે વર્તમાનકાળે ઉદ્વત્ત થયેલો નારક જીવ શુ પોતાના અર્ધભાગથી અર્ધભાગને આશ્રિત કરીને ઉદ્વત્ત થાય છે ? કે પોતાના અર્ધભાગથી સર્વભાગને આશ્રિત કરીને ઉદ્વત્ત થાય છે ? કે પોતાના સર્વભાગથી અર્ધભાગને આશ્રિત કરીને ઉદ્વત્ત થાય છે ? કે પોતાના સર્વભાગથી સર્વભાગને આશ્રિત કરીને ઉદ્વત્ત થાય છે ?

ઉત્તર—“ ગોયમા ! નો અદ્દેણં અદ્દં ઉવ્વટ્ટહ, નો અદ્દેણં સવ્વં ઉવ્વટ્ટહ, નો સવ્વેણં અદ્દં ઉવ્વટ્ટહ સવ્વેણં સવ્વં ઉવ્વટ્ટહ ” હે ગૌતમ ! તે પોતાના અર્ધભાગથી અર્ધભાગને આશ્રિત કરીને પણ ઉદ્વત્ત થતો નથી તેમજ અર્ધભાગથી સર્વભાગને આશ્રિત કરીને ઉદ્વત્ત થતો નથી, તથા સર્વભાગથી અર્ધભાગને આશ્રિત કરીને પણ ઉદ્વત્ત થતો નથી પણ સર્વભાગથી સર્વભાગને આશ્રિત કરીને જ ઉદ્વત્ત થાય છે

પ્રશ્ન—“નેરહણં મંતે ! નેરહણં હિંતો ઉવ્વટ્ટમાણે કિં અદ્દેણં અદ્દ આહારેહ, અદ્દેણં સવ્વં આહારેહ, સવ્વેણં અદ્દં આહારેહ, સવ્વેણં સવ્વ આહારેહ ? હે ભગ.

ળાં મતે ! કિં વિગ્ગહગહસમાવગ્ગા અવિગ્ગહગહસમાવગ્ગા,
ગોયમા ! વિગ્ગહગહસમાવગ્ગા વિ અવિગ્ગહગહસમાવગ્ગા વિ,
નેરહયાળ મતે ! કિં વિગ્ગહગહસમાવગ્ગા, અવિગ્ગહગહસમા
વગ્ગા, ગોયમા ! સઘ્ધે વિ તાવ હોજ્ઞા અવિગ્ગહગહસમાવ
ગ્ગા ? અહવા અવિગ્ગહગહસમાવગ્ગા ય, વિગ્ગહગહ
સમાવગ્ગા ય ૨, અહવા અવિગ્ગહગહસમાવગ્ગા ય, વિગ્ગહ
ગહસમાવગ્ગા ય ૩, એવ જીવ ઇર્ગિદિયવજ્ઞો તિયમ્મો ॥ ૨ ॥

છાયા—જીવો મદન્ત ! કિં વિગ્ગહગતિસમાપન્નકા અવિગ્ગહગતિસમાપન્નકા
ગૌતમ ! સ્યાત્ વિગ્ગહગતિસમાપન્નકા સ્યાદવિગ્ગહગતિસમાપન્નકા એવં યાવત્ પેમા-
નિકા : જીવા મદન્ત ! કિં વિગ્ગહગતિસમાપન્નકા અવિગ્ગહગતિસમાપન્નકા
ગૌતમ ! વિગ્ગહગતિસમાપન્નકા અપિ અવિગ્ગહગતિસમાપન્નકા અપિ । નૈરથિકા :
મદન્ત ! કિં વિગ્ગહગતિસમાપન્નકા અવિગ્ગહગતિસમાપન્નકા ? ગૌતમ ! સર્વેપિ
યાવત્ મધેયુરવિગ્ગહગતિસમાપન્નકા ૧, અથવા અવિગ્ગહગતિસમાપન્નકા વિગ્ગહ
ગતિસમાપન્નકા ૨, અથવા અવિગ્ગહગતિસમાપન્નકા ૩ વિગ્ગહગતિસમાપન્નકા ૪
૩ । એવ જીવેકેન્દ્રિયવર્નકસ્મિન્ન ॥ ૨૦૨ ॥

ટીકા—‘ જીવે ન મતે ’ જીવ : સઘ્ધ મદન્ત ! ‘ કિં વિગ્ગહગહ સમાવગ્ગા’
કિં વિગ્ગહગતિસમાપન્નકા, ‘ અવિગ્ગહગહસમાવગ્ગા ’ અવિગ્ગહગતિસમાપન્નકા.

વિગ્ગહગતિ વેચકપચન

પહિલે ઉત્પત્તિ ઓર ઉદ્વર્તના જો કહી ગઈ હૈં, સો વે પ્રાય ગતિ
પૂર્વિકા હોતી (ગતિકો હેકર હો) હૈં અતઃ અવ સૂત્રકાર ગતિસૂત્રોં કો
કહતે હૈં—‘ જીવેળ મતે ! ’ ઇત્યાદિ ।

ટીકાર્થ—(જીવેળ મતે ? કિં વિગ્ગહગહસમાવગ્ગા, અવિગ્ગહગહસમાવ
ગ્ગા) હૈં મદન્ત ! જીવ કયા વિગ્ગહગતિસમાપન્નકા (વિગ્ગહગતિઘાલા) હૈં કિ

વિગ્ગહગતિ અને વેચકપચન

પહેલાં ને ઉત્પત્તિ અને ઉદ્વર્તનનું નિરૂપણ કર્યું તે ઉત્પત્તિ અને ઉદ્વર્તન
સામાન્ય રીતે ગતિપૂષક કહેવા છે તેથી કહે સૂત્રકાર ગતિસૂત્રોં ક્યન
કરે છે—‘ જીવેળ મતે ! ’ ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ—(જીવેળ મતે ! કિં વિગ્ગહગહસમાવગ્ગા, અવિગ્ગહગહ સમાવગ્ગા ?)
હૈં જાગવન ! એવ શુ વિગ્ગહગતિ વાળો કહે છે હૈં અવિગ્ગહગતિ વાળો કહે છે !

ઉદ્વૃત્તોદ્વર્તનવિષયે ૩, ઉદ્વૃત્તાહારવિષયે ૪ ચેતિ ચત્વાર આલાપકાઃ પઠનીયાઃ, વર્તમાનકાલિકવદેવાત્રાપિ—આહારવિષયેऽન્તિમૌ દ્વૌ મદ્ભૌ સ્વીકૃતતયા પઠનીયૌ ।
 इति परमार्थः । ननु देशस्यार्द्धस्य च को विशेषः, नहि देशार्धयोः किञ्चिद्वैलक्षण्य-
 मनुभूयते, य एव देशस्तदेवार्धम् ?, इति चेदाह—देश—एकद्वित्रिभागादिरनेकप्रका-
 रकः, अर्द्धं तु एकप्रकारकमेव, अतो देशार्द्धयोर्वैलक्षण्यान्नात्र पौनरुक्त्यम् ॥ सू० १ ॥

વિગ્રહગતિદેવચ્યવનપ્રકરણમ્—

પૂર્વમુત્પત્તિરુદ્વર્તના ચ કથિતા, સા ચ પ્રાયો ગતિપૂર્વિકા ભવતીતિ ગતિ
 સૂત્રાણિ પ્રાહ—“ જીવેણં મંતે ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—જીવે પાં મંતે! કિં વિગ્રહગહસમાવણ્ણ, અવિ-
 ગ્રહગહસમાવણ્ણ, ગોયમા ! સિય વિગ્રહગહસમાવન્નગે,
 સિય અવિગ્રહગહસમાવન્નગે, એવં જાવ વેમાણિણ । જીવા

આહાર કે વિષયમેં भी लगा लेना चाहिये । वर्तमान कालकी तरह यहां
 पर भी आहारके विषयमें अंतिम दो भंग ही स्वीकृत माने गये हैं ।

શંકા—દેશ ઓર અર્ધ મેં કયા અન્તર હૈ ? હમેં તો ઇન દોનોં મેં
 कोई अन्तर प्रतीत नहीं होता है, क्यों कि जो देश है वही अर्ध है ।

ઉત્તર—એક, દો, ત્રીન ભાગ આદિ રૂપ સે દેશ અનેક પ્રકાર કા
 होता है, और अर्द्ध जो होता है वह एक प्रकार का ही होता है अतः
 देश और अर्द्ध में भिन्नता होने के कारण यहां इन दोनों के कथन में
 पुनरुक्ति दोष नहीं आता है ॥ सू. १ ॥

ઉદ્વૃત્તનું ઉદ્વર્તન અને ઉદ્વૃત્તના આહારના વિષયમાં પણ ચાર ઢાંક કહેવા
 બેઠાએ વર્તમાનકાળની જેમ જ અહીં પણ આહારના વિષયમાં છેલ્લા બે લાંગાને
 જ સ્વીકાર થયેલા છે એ ઉત્તર સૂત્રોમાં બતાવવું બેઠાએ

શંકા—દેશ અને અર્ધમાં શો ભેદ છે ? અમને તો તે બંનેમાં કોઈ
 તફાવત લાગતો નથી કારણ કે જે દેશ છે તેજ અર્ધ છે અને જે અર્ધ છે
 તેજ દેશ છે

ઉત્તર—તમારી વાત બરાબર નથી કારણ કે એક, બે, ત્રણ, વગેરે લાગ
 રૂપે દેશ અનેક પ્રકારનો હોય છે પણ અર્ધલાગ તો એક જ પ્રકારનો હોય
 છે આ રીતે દેશ અને અર્ધમાં ભિન્નતા હોવાથી અહીં તે બંનેના કથન
 બુદ્ધા બુદ્ધા કહેલા છે ॥ સૂ. ૧ ॥

સ્થિત-ઇત્યેવાર્થઃ, અવિગ્રહગતીત્યથા વિગ્રહગતેરમાપમાપ્ત્યાભવનાત્ । યદિ અવિગ્રહગતિસમાપન્નક-ઇત્યથા ઋજુગતિક-ઇત્યેવાર્થ-તચ્ચેત-તદા નારકાદિપદેષુ સર્વ-દેવાવિગ્રહગતિકાનાં યદ્ વહુત્વં કથયિષ્યતિ તત્સર્વથૈવ વાપિતં ભવેદિતિ, એકા-દીનામપિ તેષુ નારકાદિપદેષૂત્પાદભવનાત્ । મગધાનાહ—‘ગોયમે’ત્યાદિ ।

સ્થિત એસા હી હોતા હૈ, ક્યોં કિ “અવિગ્રહગતિ” યહાં પર વિગ્રહગતિ કા અભાવ માત્ર હી લિયા ગયા હૈ । યદિ “અવિગ્રહગતિસમાપન્નક” કા અર્થ ઋજુગતિવાલા એસા હી લિયા જાવે ઓર સ્થિત અર્થ ન લિયા જાવે તો નારક આદિ પદોં મેં જો સર્વદા હી અવિગ્રહગતિ વાલોં કી વહુતા કહી જાને ઘાલી હૈ વહ સર્વથા હી વાપિત હો જાવેગી, ક્યોં કિ તન નરકાદિ પદોં મેં અવિગ્રહગતિસમાપન્નક એક આદિ જીવોં કા મી ઉત્પાદ સુના જાતા હૈ । તાત્પર્ય કહને કા યહ હૈ કિ યદિ અવિગ્રહગતિ સમાપન્નકકા અર્થ કેવલ “ઋજુગતિવાલા જીવ” એસા હી માના જાવેગા તો ઇસકા અર્થ એસા હોગા કિ નારકોં મેં ઋજુગતિવાલે જીવ વહુત હોતે હૈં અર્થાત્ એક દો આદિ જીવ નહીં હોતે, સો ઇમ તરહ સે યહાં એક દો આદિ અવિગ્રહગતિવાલે જીવોંકા ઉત્પન્ન હોના વનેગા નહીં, પરન્તુ એસી યાત તો હૈ નહીં, ક્યોંકિ શાસ્ત્રોંમેં યહાં એક દો આદિ અવિગ્રહગતિવાલે જીવોંકા મી ઉત્પાદ હોના કહા ગયા હૈ । ઇસ લિયે અવિગ્રહગતિસમાપન્નક કા અર્થ સીધી ગતિવાલા તથા સ્થિત-ગતિ વિના કા-એસા અર્થ હોના વાહિયે ।

શાય છે કારણ કે “અવિગ્રહગતિ” માં વિગ્રહગતિનો અભાવ જ દીધો છે એ ‘અવિગ્રહગતિવાળા’ નો અર્થ “ઋજુગતિવાળો” જ લેવામાં આવે અને “સ્થિત” અર્થ લેવામાં ન આવે તો નારક વગેરેમાં હમેશા અવિગ્રહગતિવાળા હોવાની જે બહુલતા કહેવાની છે તેમાં ઓછી મુશ્કેલી ઉભી થશે. કારણ કે તે નારકાદિ પદોમાં અવિગ્રહગતિવાળા એક વગેરે હોવાનો ઉત્પાદ પણ થાય છે એવું સાંભળ્યું છે તાત્પર્ય એ છે કે એ અવિગ્રહગતિવાળાનો અર્થ માત્ર ઋજુગતિવાળા જ લેવામાં આવે તો એવું માનવું પડે કે નારકોમાં ઋજુગતિવાળા હોવા થળા હોય છે-એટલે કે ત્યાં એક, બે વગેરે અવિગ્રહગતિવાળા હોવા હોતા નથી એ રીતે તો ત્યાં એક બે વગેરે અવિગ્રહગતિવાળા હોવાની ઉત્પત્તિ જ સંભવી શકે નહીં પણ શાસ્ત્રોમાં તો ત્યાં એક, બે, વગેરે અવિગ્રહગતિવાળા હોવાનો પણ ઉત્પાદ થવાનું કહ્યું છે તેથી અવિગ્રહ-ગતિવાળાનો અર્થ “સીધીગતિવાળો તથા સ્થિત-ગતિવાળો” થવો એમજ

વિગ્રહગતિસમાપન્નક इत्यत्र विग्रहो वक्रता तत्प्रधाना गति विग्रहगतिः, तां समापन्नः=प्राप्त इति विग्रहगतिसमापन्नः । तद्विघ्नः अविग्रहगतिसमापन्नः, स तु ऋजुगतिकः, अथवा स्थितो वा भवेत् विग्रहगतिनिषेधमात्राश्रयणात् । तथा च यदा विग्रहगत्या गच्छन् जीवो विग्रहगतिसमापन्नक इति । विग्रहगत्यभाववांश्च जीव ३ । अविग्रहगतिसमापन्नकः, अभावस्याधिकरणस्वरूपत्वमिति नये विग्रहगत्य-भाववान् ऋजुगतिको जीव इत्यर्थः । अथवा अविग्रहगतिसमापन्नक इत्यस्य

अविग्रहगतिસમાપન્નક હૈ? વિગ્રહ નામ વક્રતા-તેડે કા હૈ । યહ વક્રતા તેડાપન જિસ ગતિમેં પ્રધાન હોતી હૈ ઉસ ગતિ કા નામ વિગ્રહગતિ હૈ । ઇસ ગતિકો જો જીવ પ્રાપ્ત હોતા હૈ વહ વિગ્રહગતિસમાપન્નક કહલાતા હૈ । જિસ ગતિમેં તેડાપન નહીં હોતા હૈ વહ અવિગ્રહ ગતિ હૈ । એસી ગતિ ઋજુ-ગતિ હોતી હૈ । ઇસ ઋજુગતિકો જો પ્રાપ્ત હોતા હૈ વહ અવિગ્રહગતિસમા-પન્નક કહલાતા હૈ । અથવા ‘અવિગ્રહગતિ’ મેં વિગ્રહગતિ માત્રકે નિષેધ કે આશ્રયણ સે અવિગ્રહગતિ કા અર્થ સ્થિત હૈ । ઇસ તરહ અવિગ્રહગતિ સમાપન્નક કા તાત્પર્ય સ્થિત એસા હોતા હૈ । અતઃ વિગ્રહગતિસે પરભવ મેં જાતા હુઆ જીવ વિગ્રહગતિસમાપન્નક ઔર વિગ્રહગતિ કે અભાવ-વાલા જીવ અવિગ્રહગતિસમાપન્નક હૈ । અભાવ અધિકરણ સ્વરૂપવાલા હોતા હૈ એસા એક નય હૈ સો ઇસ નય કી માન્યતાનુસાર “વિગ્રહગતિ કે અભાવવાલા જીવ અર્થાત્ ઋજુગતિવાલા જીવ” એસા અવિગ્રહગતિસ-માપન્નકકા અર્થ હો જાતા હૈ । અથવા અવિગ્રહગતિસમાપન્નક ઇસકા અર્થ

વિગ્રહ એટલે વળાક તે વળાંકી જે ગતિમા મુખ્ય હોય છે તે ગતિને વિગ્રહ ગતિ કહે છે તે ગતિને પ્રાપ્ત કરનાર જીવને વિગ્રહગતિવાળો કહેવામાં આવે છે જે ગતિમા વળાક હોતા નથી તે ગતિને અવિગ્રહગતિ કહે છે એવી ગતિને ઋજુગતિ કહે છે તે ઋજુગતિ વાળા જીવને અવિગ્રહગતિવાળો જીવ કહે છે અથવા “અવિગ્રહગતિ” મા વિગ્રહગતિમાત્રના નિષેધને કારણે અવિ-ગ્રહગતિનો અર્થ “સ્થિત” પણ થાય છે

આ રીતે અવિગ્રહગતિ વાળા જીવોનો ભાવાર્થ “સ્થિત” પણ થાય છે તેથી વિગ્રહગતિથી પરભવમાં જતા જીવને વિગ્રહગતિવાળો અને જેમનામાં વિગ્રહ ગતિનો અભાવ છે એવા જીવોને અવિગ્રહગતિવાળા કહેવામાં આવે છે તેમજ અભાવ, અધિકરણ સ્વરૂપવાળો હોય છે, એવો એક નય છે તે નયની માન્યતા અનુસાર “વિગ્રહગતિના અભાવવાળો જીવ એટલે કે ઋજુગતિવાળો જીવ” અવિગ્રહગતિવાળો ગણાય છે અથવા અવિગ્રહગતિવાળો એનો અર્થ સ્થિત જ

અથાનેક જીવવિષયે ગ્રાહ—‘જીવા નં મંતે’ ઇત્યાદિ, ‘જીવા નં મંતે’ જીવા સ્વલ્પ મદન્ત ! કિં વિગ્ગહગ્ગહસમાવખગા’ કિં વિગ્ગહગ્ગહસમાપખકાઃ, “ અવિમાહગ્ગહસમાવખગા’ અવિપ્રહગ્ગહસમાપખકાઃ, રૂપે પરિદ્દશ્યમાના અનેકપ્રકારકા જીવાઃ કિં વિગ્ગહગ્ગહસમાપખકા અવિપ્રહગ્ગહસમાપખકા ધા મવન્તીતિ પ્રશ્ન । મગવાનાહ—ગોયમે’—ત્યાદિ । ‘ગોયમા’ હે ગૌતમ ! ‘વિગ્ગહગ્ગહસમાવખગા વિ’ વિગ્ગહગ્ગહસમાપખકા અપિ ‘અવિગ્ગહગ્ગહસમાવખગા વિ’ અવિપ્રહગ્ગહસમાપખકા અપિ સમયવિધા અપિ મવન્તિ, જીવાનામાનન્ત્યાદુભયેપામપિ સહુનાં સદ્ગાત્ । સમ્પતિ નૈરયિકવિષયમાહ—‘નેરહ્યા ન મંતે’ ઇત્યાદિ । ‘નેરહ્યા નં મંતે’ નૈરયિકાઃ સ્વલ્પ મદન્ત ! કિં વિમાહગ્ગહસમાવખગા, અવિમાહગ્ગહસમાવખગા’ કિં વિપ્રહગ્ગહસમાપખકા અવિપ્રહગ્ગહસમાપખકાઃ, નારકજીવાનાં કિં વિપ્રહગ્ગહસમાપખકાઃ

અથ સૂત્રકાર ઇતી વિષય કો નાના જીવોં કી અપેક્ષા છેકર પ્રકટ કરનેક નિમિત્ત પ્રશ્નોત્તરપૂર્વક સૂત્ર કહતે હૈં કિ—(જીવા નં મંતે ! કિં વિગ્ગહગ્ગહસમાવખગા અવિગ્ગહગ્ગહસમાવખગા) હે મદન્ત ! જીવ કયા વિગ્ગહગ્ગહસમાવખગા હૈં કિ અવિગ્ગહગ્ગહસમાવખગા હૈં ? અર્થાત્ યે અનેક પ્રકાર કે દિશ્વલાઈ પડુમે ચાલે જો જીવ હૈં વે વિગ્ગહગ્ગહસમાવખગા હોતે હૈં યા અવિગ્ગહગ્ગહસમાવખગા હોતે હૈં ? (ગોયમા ! વિગ્ગહગ્ગહસમાવખગા વિ, અવિગ્ગહગ્ગહસમાવખગા વિ) હે ગૌતમ ! યે વિગ્ગહગ્ગહસમાવખગા મી હોતે હૈં ઓર અવિગ્ગહગ્ગહસમાવખગા મી હોતે હૈં । કયોં કિ જીવ રાજિ અનન્ત હૈં, અતઃ ઇનમેં દોનો ગતિયાછે અનેક જીવોં કા સદ્ગાત્ રહતા હૈં । (નેરહ્યા ન મંતે ! કિં વિગ્ગહગ્ગહસમાવખગા, અવિમાહગ્ગહસમાવખગા ?) હે મદન્ત ! નારક જીવ કયા વિગ્ગહગ્ગહસમાવખગા

હવે સૂત્રકાર એજ વિષયનુ અનેક એવોની અપેક્ષાએ નિરૂપણ કરવા માટે પ્રશ્નોત્તર પૂર્વક સૂત્રો કહે છે—

(જીવા નં મંતે ! કિં વિગ્ગહગ્ગહસમાવખગા અવિગ્ગહગ્ગહસમાવખગા ?) હે મગવન્ ! એવો શુ વિગ્ગહગ્ગહસમાવખગા હોય છે કે અવિગ્ગહગ્ગહસમાવખગા હોય છે ? એટલે કે અમારમા જે અનેક પ્રકારના એવો નાજર પડે છે તેઓ શુ વિગ્ગહગ્ગહસમાવખગા હોય છે કે અવિગ્ગહગ્ગહસમાવખગા હોય છે ?

ઉત્તર—(ગોયમા ! વિગ્ગહગ્ગહસમાવખગા વિ, અવિગ્ગહગ્ગહસમાવખગા વિ) હે ગૌતમ ! તેઓ વિગ્ગહગ્ગહસમાવખગા પણ હોય છે અને અવિગ્ગહગ્ગહસમાવખગા પણ હોય છે કારણ કે એવશયિ અનત દેવાયો તેમા અને ગતિયાજા એવોને મહુભાવ રહે છે

પ્રશ્ન—નેરહ્યા નં મંતે ! કિં વિગ્ગહગ્ગહસમાવખગા અવિમાહગ્ગહસમાવખગા ? હે મગવન્ ! શુ નારક એવો વિગ્ગહગ્ગહસમાવખગા હોય છે, કે અવિમાહગ્ગહસમાવખગા હોય છે ?

‘ગોયમા’ હે ગૌતમ ! ‘સિય વિગ્રહગહસમાવન્નગે’ સ્યાત્ વિગ્રહગતિસમાપન્નકઃ, ‘સિય અવિગ્રહગહસમાવન્નગે’ સ્યાત્ અવિગ્રહગતિસમાપન્નકઃ યોડયં જીવઃ કદાચિદ્ ઋજુગતિમાન્ સ્થિતો વા ભવતિ, નાયં નિયમો યત્ સર્વથા વિગ્રહગતિમાનેવ અથવા સર્વથા અવિગ્રહગતિમાનેવેતિ કિન્તુ કશ્ચિદ્વિગ્રહગતિમાન્ કશ્ચિદવિગ્રહ— ગતિમાન્, ઇતિ । ‘એવં જાવ વેમાણિ’ એવં યાવદ્વૈમાનિકઃ, એવમ્ યથા જીવ સામાન્યવિષયે કદાચિદ્વિગ્રહગતિમત્ત્વં કદાચિત્ અવિગ્રહગતિમત્ત્વં ભગવતા પ્રદર્શિતં તથૈવ નૈરયિકાદારમ્ય વૈમાનિકપર્યન્તમુભયમપિ બોધ્યમિતિ ભાવઃ ।

“જીવ કયા વિગ્રહગતિસમાપન્નક હૈ યા અવિગ્રહગતિસમાપન્નક” હૈ? ઇસ પ્રશ્નકા ઉત્તર દેતે હુએ ભગવાન કહતે હૈં કિ—(ગોયમા! સિય વિગ્રહગહસમાવન્નગે સિય અવિગ્રહગહસમાવન્નગે, એવં જાવ વેમાણિ) હે ગૌતમ ! કોઈ જીવ વિગ્રહગતિસમાપન્નક ભી હોતા હૈં ઓર કોઈ જીવ અવિગ્રહગતિ સમાપન્નક ભી હોતા હૈં । ઇસ તરહ યાવત્ વૈમાનિક તક જાનના ચાહિયે । તાત્પર્ય યહ—કિ જો યહ જીવ કદાચિત્ વક્રગતિવાલા હોતા હૈં, કદાચિત્ ઋજુગતિવાલા અથવા સ્થિત વિના ગતિકા હોતા હૈં—એસા નિયમ નહીં હૈં કિ જીવ સર્વથા વિગ્રહગતિવાલા હી હો, અથવા—સર્વથા અવિગ્રહગતિ વાલા હી હો, કિન્તુ કોઈ જીવ વિગ્રહગતિવાલા હોતા હૈં ઓર કોઈ અવિગ્રહગતિવાલા હોતા હૈં । ઇસ તરહ સૂત્રકાર ને જૈસે સામાન્ય જીવ કે વિષયમેં કદાચિત્ વિગ્રહગતિમત્ત્વ ઓર કદાચિત્ અવિગ્રહગતિમત્ત્વ દિશ્વાયા હૈં વૈસા હી નૈરયિકસે લેકર વૈમાનિક દેવોં તક્રમેં કદાચિત્ વિગ્રહગતિમત્ત્વ ઓર કદાચિત્ અવિગ્રહગતિમત્ત્વ જાનના ચાહિયે ।

ગૌતમે પૂછેલો પ્રશ્ન—“શું એવ વિગ્રહગતિવાળો છે કે અવિગ્રહગતિવાળો છે?”

ઉત્તર—(ગોયમા ! સિય વિગ્રહગહસમાવન્નગે સિય અવિગ્રહગહસમાવન્નગે એવં જાવ વેમાણિ) હે ગૌતમ ! કોઈ એવ વિગ્રહગતિવાળો પણ હોય છે અને કોઈ એવ અવિગ્રહગતિવાળો પણ હોય છે આ પ્રમાણેનું કથન નારકીથી માહીને વૈમાનિક દેવો સુધી સમજવું તાત્પર્ય એ છે કે સસારી એવ ક્યારેક વક્રગતિવાળો હોય છે, અને ક્યારેક ઋજુગતિવાળો પણ હોય છે અથવા વિના ગતિવાળો (સ્થિત) પણ હોય છે એવો નિયમ નથી કે સસારી એવ હમેશા વિગ્રહગતિવાળો જ હોય અથવા સર્વથા અવિગ્રહગતિવાળો જ હોય પરન્તુ કોઈ એવ વિગ્રહગતિવાળો પણ હોય છે અને કોઈ એવ અવિગ્રહગતિવાળો પણ હોય છે આ રીતે સૂત્રકારે જેમ સામાન્ય એવના વિષયમાં ક્યારેક વિગ્રહગતિ પણ અને ક્યારેક અવિગ્રહગતિપણું પ્રકટ કર્યું છે એજ પ્રમાણે નારકીથી લઇને વૈમાનિકો સુધીના એવોમા પણ ક્યારેક વિગ્રહગતિ, અને ક્યારેક અવિગ્રહગતિપણું સમજવું

દિષ્યપ્યેતદ્વિકલ્પપથ્ય સંયોજનીયમિત્યાશ્ચયેનાહ—‘એવ’ મિત્યાદિ, ‘એવ જીવ પર્ગિદિયવજ્જો તિયમંગો’ એવં ઓષ્ઠેકેન્દ્રિયવર્જિતસ્થિમજ્જ, એવ નારવવત્ જીવે કેન્દ્રિયવર્જે इति સામાન્યજીવધિપયૈકેન્દ્રિયધિપયાલાપકવર્જિત પ્રિમજ્જો વિજ્ઞેય, સામાન્યજીવસૂત્રે એકેન્દ્રિયસૂત્રે ચૈતે પૂર્વાક્તાસૂત્રો મજ્જા ન કર્ષણ્યા, શ્વેપપુ નૈર ચિકમાભિસ્યૈકોનવિંશતિવૃષ્ઠકેષુ મજ્જો મજ્જા વિજ્ઞેયા इति માષ ॥ સુ. ૨ ॥

અથ ગત્યધિકારાત્ વ્યવનસૂત્રમાહ—‘દેવે જં મંતે’ इत्याદિ ।

મૂલ્ય—દેવે જ મંતે! મહિષ્ઠિપ મહજ્જુદ્ધપ મહવ્વલે મહા જસે મહાસોક્ષ્મે મહાણુભાવે અવિઠકતિય ચય ચયમાણે કિંચિકાલ દ્વિસ્થિતિય વુગુહાવત્તિય પરિસહવત્તિય આહાર નો આહારેદ્, અહેણ આહારેદ્ આહારિજ્જમાણે આહારિપ પરિણામિ જ્જમાણે પરિણામિપ, પહીણે ય આડપ્ ભવદ્, જસ્ય ઉવવજ્જદ્ ત આડય પઢિસવેદેદ્, ત જહા તિરિવલ્લ જોણિયાડય વા, મણુસ્સા ડય વા, હતા ગોયમાદેવેણમહિષ્ઠિપ જાવ મણુસ્સાડય વા॥૩॥

જીવ વિગ્રહગતિસમાપન્નક હોતે હૈં । યહ તીસરા મજ્જ હે ૩ । અસુર અધિ કો મેં જી યે તીન વિકલ્પ જોડુ છેના જાદિયે, ઇસ આજાય સે સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ—(એવં જીવ પર્ગિદિયવજ્જો તિયમંગો) ઇતી તરહ સે યે તીન મંગ સર્વથ જાનના જાદિયે, પરન્તુ સામાન્યજીવસૂત્ર મેં ઓર એકેન્દ્રિયજીવ સૂત્ર મેં યે તીન મંગ નહીં કરના જાદિયે । બાકી સેઈસ વળ્લકોં મેં યે તીનોં મંગ નારક જીવોં કી તરહ સે હી જાનના જાદિયે ॥ સુ. ૨ ॥

હોય છે યજ્ઞ નારક જીવો વિગ્રહગતિવાળા હોય છે આ ત્રીજી ભાગે થયે. અસુરક્રમાર વગેરેમા પણ આ ત્રણે ભાગા કરવા જોઈએ. તે દર્શાવવા માટે સૂત્રકાર કહે છે કે (એવં જીવ પર્ગિદિયવજ્જો તિયમંગો) આ રીતે તે ત્રણે ભાગા ભધી જગ્યાએ સમજવા જોઈએ પરંતુ સામાન્યજીવસૂત્રમા અને એકેન્દ્રિય જીવસૂત્રમા આ ત્રણ ભાગા હોવા નહીં બાકીના ૧૬ ૬-કામા નારક જીવો પ્રમાણે જ તે ત્રણ ભાગા સમજવા ॥ સુ. ૨ ॥

તિમત્ત્વં વા ભવતીતિ પ્રશ્નાશયઃ । ભગવાનાહ—‘ગોયમે’ ત્યાદિ । ‘ગોયમા’ હે ગૌતમ ! ‘સર્વે વિ તાવ હોજ્જા અવિગ્ગહગ્ગહસમાવન્નગા’ સર્વેઽપિ તાવદ્ ભવેયુ-
રવિગ્રહગતિસમાપન્નકાઃ, સર્વેઽપિ નારકા અવિગ્રહગતિમન્ત એવ ભવન્તિ, નારક-
જીવાનામલ્પત્વાદ્ વિગ્રહગતિવતાં ચ કદાચિદસંભવાત્, સંભવેઽપિ એકદ્વાદીના-
મેવ સંભવાદ્ વિગ્રહગતિપ્રતિષેધવતાં ચ સદૈવ વહૂનાં સંભવાત્ હિતિ પ્રથમો ભક્તઃ ૧ ।
‘અહ્વા અવિગ્ગહગ્ગહસમાવન્નગા વિગ્ગહગ્ગહસમાવન્નગે ય’ અથવા અવિગ્રહગતિસમા-
પન્નકાઃ વિગ્રહગતિસમાપન્નકથ, અનેકે અવિગ્રહગતિમન્તો ભવન્તિ એકો વિગ્રહગ-
તિમાન્ ભવતીતિ દ્વિતીયો ભક્તઃ ૨ । ‘અહ્વા અવિગ્ગહગ્ગહસમાવન્નગા ય વિગ્ગહગ્ગહ-
સમાવન્નગા ય’ અથવા અવિગ્રહગતિસમાપન્નકાથ વિગ્રહગતિસમાપન્નકાથ, અનેકે
અવિગ્રહગતિમન્ત અનેકે વિગ્રહગતિમન્તથ ભવન્તીતિ તૃતીયો ભક્તઃ ૩ । અસુરા-

હોતે હૈં કિ અવિગ્રહગતિસમાપન્નક હોતે હૈં । (સર્વે વિ તાવ હોજ્જા
અવિગ્ગહગ્ગહસમાવન્નગા) હે ગૌતમ ! જિતને મી નારક જીવ હૈં વે સવ
અવિગ્રહગતિસમાપન્નક હી હોતે હૈં, કયોં કિ નારક જીવ અલ્પ હોતે
હૈં । અતઃ વિગ્રહગતિવાલે જીવોં કી ઉન મેં પ્રાયઃ અસંભવતા હી હોતી
હૈં । યદિ એસે જીવોં કી ઉનમેં સંભવતા ખી હો તો વે એક દો આદિ
હી સંભવતે હૈં । તથા જિનકી વિગ્રહગતિ નહીં હોતી હૈં એસે અનેક જીવોં
કી વહાં સદા હી સંભવતા રહતી હૈં । ઇસ પ્રકાર યહ પ્રથમ ભંગ હૈં ૧ ।
(અહ્વા-અવિગ્ગહગ્ગહસમાવન્નગા વિગ્ગહગ્ગહસમાવન્નગે ય) અથવા વહાં
કિતનેક નારક જીવ અવિગ્રહગતિસમાપન્નક હોતે હૈં ઓર કોઈ એક
નારક જીવ વિગ્રહગતિસમાપન્નક હોતા હૈં । એસા યહ દૂસરા ભંગ હૈં ૨ ।
(અહ્વા-અવિગ્ગહગ્ગહસમાવન્નગા ય વિગ્ગહગ્ગહસમાવન્નગા ય) અથવા-
વહાં અનેક નારક જીવ અવિગ્રહગતિસમાપન્નક હોતે હૈં ઓર અનેક નારક

ઉત્તર—“સર્વે વિ તાવ હોજ્જા અવિગ્ગહગ્ગહસમાવન્નગા” હે ગૌતમ !
જેટલા નારક જીવો છે તેઓ અવિગ્રહગતિ વાળા જ હોય છે કારણ કે નારક
જીવો અલ્પ હોય છે તેથી વિગ્રહગતિવાળા જીવોની તેમનામા સામાન્ય રીતે
અસંભવતા જ હોય છે જો તેમનામા એવા જીવોની સંભાવના હોય તો પણ
તેમનામા એવા જીવો એક, બે વગેરે જ સંભવે છે બન્યારે વિગ્રહગતિ વિનાના
એનેક જીવોની ત્યા હમેશા સંભાવના જ રહે છે આ પ્રકારનો આ પહેલો
ભાગો છે (અહ્વા અવિગ્ગહગ્ગહસમાવન્નગા વિગ્ગહગ્ગહસમાવન્નગે ય) અથવા ત્યા
ધણા નારક જીવો અવિગ્રહગતિવાળા હોય છે અને કેઇ એક નારક જીવ
વિગ્રહગતિ વાળો હોય છે આ બીજો ભાગો છે (અહ્વા-અવિગ્ગહગ્ગહસમાવન્ન-
ગા ય વિગ્ગહગ્ગહસમાવન્નગા ય) અથવા ધણા નારક જીવો અવિગ્રહગતિવાળા

અભિષેખાદધ્યુત્ક્રાન્તિકં તદ્ યથા સ્યાથથા 'ચયમાણે' વ્યવમાનાઃ, જીવન્નેષ મરણ માપયમાન इत्यर्थः, કિમ્ 'કિંચિત્કાલ' કિંચિત્કાલમ્, કિયન્તમપિ કાલમ્ 'આહારં નો આહારેઈ' इत्यગ્રેવત્તેન સમ્ય-ધ- કૃતઃ કિયત્કાલં નાહરતિ તત્રાઈ- 'હિરિવચિયં' હ્રીપ્રત્યયમ્, લજ્જાનિમિત્ત નાહારયતીતિ દેવો હિ વ્યવનસમયે ઉત્પત્તિસ્થાન પશ્યતિ દદ્વા ષ વેષમવવિલક્ષણ પુરુષોપમુજ્યમાનક્ષીર્ગર્માશયરૂપમ્ ' તત્રાઈ સ્વકીયં સર્વસુખદં સ્થાનં પરિત્યજ્ય યાસ્મામી 'તિ કૃત્વા નાહરતિ, તથા 'દુર્ગુણા વચિયં' જુગુપ્સાપ્રત્યયે, કૃત્સાનિમિત્ત શુદ્ધશોણિતાદેસ્ત્વચિકારણસ્ય ગુગુપ્સાકારણત્વાત્, 'પરિસહવચિયં' પરિપદપ્રત્યયમ્, ઇદ પ્રકરણાત્ પરિપદશબ્દેનારતિ

ન્ય પલવાલા હો (અધિઉકિતિયં ચયં વ્યવમાણે) ઓર મરને કે સન્નુલ્લ હો રહા હો-અમી ઘણાં સે વ્યુત નહીં હુઆ હો જોતે જી હી જો મરને કી તૈયારી કર રહા હો- પેસા ઘહ દેવ (કિંચિ કાલ આહારં નો આહારેઈ) કુછ કાલતક આહાર નહીં લેતા હૈ । કુછ કાલતક વસકે આહાર નહીં હેને મેં કારણ યહ હૈ કિ યહ (હિરિવચિયં) લક્ષિત હોતા હૈ-અર્થાત્ દેવ વ્યવનસમય મેં અપને પ્રાપ્ત હોનેવાછે ઉત્પત્તિસ્થાન કો દેવતા હૈ સો દેવમથસે ચિલ્લણ અપને ઉત્પત્તિસ્થાનકો કિ જો પુરુષઢારા ભોગી જાતો ક્ષીકે ગર્માશયરૂપ હોતા હૈ દેવકર વસે યહ ધિચાર આતા હૈ કિ મેં વસ સ્થાન મેં અપને હસ સર્વસુલ્લદ સ્થાન કો છોડકર જાઠેગા, હસ ધિચાર સે યહ લજ્જાવ્યુત્ત વનકર સ્વાતા નહીં હૈ (દુર્ગુણાવચિયં) નહીં સ્થાને મેં હસરા કારણ વસે ઘૂળા આતી હૈ, કયોં કિ ઘહ યહ જાનતા હૈ કિ મેરી ઉત્પત્તિ કા કારણ શુદ્ધશોણિત આદિ હૈ, પેસા જાનકર વસે ઘૂળા-ગ્લાનિ આતી હૈ । (પરિસહવચિયં) યહા પ્રકરણઘશ પરીપદ શબ્દ સે

વાની ક્રિયા વજેરેમા અધિન્ત્ય બજવાળો હોય, "અધિક્કતિયં ચયં વ્યવમાણે" અને જે મૃત્યુની નીચ પહોચી રહ્યો હોય. જે કે હલ ત્યાથી વ્યવન (મરણ) થયુ નથી પણ જે મરવાની તૈયારીમા હોય છે. "કિંચિત્કાલં આહારં નો આહારેઈ" તે દેવ કેટલોક સમય આહાર લેતો નથી. "હિરિવચિયં" તે લક્ષિત થાય છે કારણકે દેવ પોતાના વ્યવન સમયે પોતાનું જાવિ ઉત્પત્તિસ્થાન પોતાના જ્ઞાનથી જુલે છે તે ઉત્પત્તિસ્થાન સીના ગર્માશયરૂપ હોય છે વ્યવનકાળે દેવના મનમા જોવો વિચાર આવે છે કે આ મુખના સ્થાનને છોડીને મારે જોવા દુ ખદ સ્થાનમા જવું પડ્યો? આ વિચાર આવવાથી લલ્લપુછા બનીને તે ખાતો નથી "દુર્ગુણાવચિયં" નહીં ખાવાનું બીજુ કાશજુ તેના મનમાં ઉત્પન્ન થતી ધૂણા પણ છે કારણકે પોતાની ઉત્પત્તિનું કાશજુ શુદ્ધ શોણિત વજેરે છે, જે બાળીને તેને ધૂણા થાય છે 'પરિસહવચિયં' અર્થે "પરીપદ" ૫૬ વડે

छाया—देवो भदन्त ! महर्द्धिको महाद्युतिको महाबलो महायशा मह
सौख्यो महानुभावोऽव्युत्क्रान्तिकम् चयं च्यवमानः किञ्चित्कालं हीप्रत्ययम् जुग
प्साप्रत्ययं परिषहप्रत्ययमाहारं नो आहरति, अथ खलु आहरति आह्रियमाणमाहृत
परिणम्यमानं परिणतं प्रहीणं चायुष्कं भवति, यत्रोपपद्यते तदायुष्कं प्रतिसंवेद
यति, तत् तिर्यग्योन्यायुष्कं वा मनुष्यायुष्कं वा ? इत गौतम ! देवो महर्द्धिको याव
मनुष्यायुष्कं वा ॥ सू० ३ ॥

टीका—‘देवेणं भंते’ देवः खलु भदन्त ‘महिङ्गिण’ महर्द्धिकः विमान
परिवाराद्यपेक्षया देवानां महर्द्धिकत्वं विज्ञेयम् । ‘महज्जुइण’ महाद्युतिकः महती
शरीराभरणाद्यपेक्षयाऽतिशायिनी द्युतिर्विद्यते यस्य स महाद्युतिकः । ‘महावळे
महाबलः शरीरप्राणापेक्षया, ‘महाजसे’ महायशाः, महद्धर्थादिसंपन्नत्वेन अति
शयितख्यातिमान्, ‘महासोक्खे’ महासौख्यः, महदत्यधिकं सौख्यं यस्य
महासौख्यः विशिष्टसुखसंपन्न इत्यर्थः, ‘महानुभावे’ महानुभावः, विशिष्टवैक्रिया
करणाचिन्त्यसामर्थ्यः, ‘अविउक्कंतिथं’ अव्युत्क्रान्तिकम्, व्युत्क्रान्तिः—मरणं

अब सूत्रकार गति के अधिकार होने से च्यवनसूत्र कहते हैं—
‘देवेणं भंते !’ इत्यादि ।

टीकार्थ—(देवेणं भंते !) हे भदन्त ! ऐसा देव (महिङ्गिण) जो महर्द्धिक हो
विमान, परिवार आदिकी अपेक्षा से मोटी ऋद्धिवाला हो, (महज्जुइण
महाद्युतिक हो शरीर आभरण आदि की अपेक्षा से जिसकी द्युति बहुत
अधिक हो, (महावळे) महाबल हो—शारीरिक अपेक्षासे विशिष्ट बलशाली
हो (महाजसे) महायशावाले हो महाऋद्धि आदिसे संपन्न होनेके कारण
विशिष्टख्यातिवाला हो (महासोक्खे) विशिष्ट सुख संपन्न हो (महानुभावे
विशिष्ट रीति से अनेक प्रकार के रूप करने वगैरह की क्रिया में अचि

गतिने अधिकार आलते। डोवाथी डवे सूत्रकार देवताना च्यवनसूत्रे
डडे छे ‘देवेणं भंते ! महिङ्गिण’ इत्यादि ।

टीकार्थ—(देवेणं भंते !) हे भगवन् ! हे देव (महिङ्गिण) महर्द्धिक होय ओटवे
डे (विमान परिवार वगैरेनी अपेक्षाओ महाऋद्धिवाणो होय) (महज्जुइण)
महागतिवाणो होय (शरीर आभूषणो वगैरेनी अपेक्षाओ नेनी गति—द्युति
धणीज वधारे होय) (महावळे) धणो णणवान होय—शारीरिक शक्तिनी अपेक्षाओ
विशिष्ट णणयुक्त होय (महाजसे) धणो यशस्वी होय, महाऋद्धि वगैरेथी
युक्त होवाने डारणे नेनी आति धणीज होय, “महासोक्खे” विशिष्ट सुख-
संपन्न होय, “महानुभावे” महानुभाव होय ओटवे डे अनेक प्रकारना रूप कर-

નિષ્ઠાકાલયોરમદાદાહારકાલસ્થાલપતા કથિતા-સ્વલ્પમાહાર મુદ્ધાતીત્યર્થ । પરિણા
મિજ્જમાણે પરિણામિષ્ ' પરિણમ્યમાન પરિણતમ્, ' પહીણે ય આઝપ્ મવહ્ '
પહીણં ચાયુષ્ક મવસિ, દેવાયુષ્ક ન તદા ધિનદ્ મવસિ, ' જત્ય ઉવચ્છન્નહ ' યત્રો
પપચ્છતે, દેવશરીર પરિત્યજન યાદ્યપ્યોનિવિશેષે સમુત્પત્ત્યમાનત્વમ્, ' તં
આઝય પહિસંવેદેહ ' તદાયુષ્ક-અનિર્દિષ્ટાયુષ્કં પ્રતિસંવેદયતિ તત્ત્વસ્યસ્યાયુષ્ક
કર્મણોઽનુમવ કરોતીત્યર્થ, અથ ગન્તવ્યસ્થાનાયુષ્કસ્ય નિર્દેશં કરોતિ-'તં
જહા ' સઘયા-' સિરિસ્ત્વજોણિયાઝય વા ' તિર્યગ્યોનિકાયુષ્ક વા ' મણુસ્સા
ઝય વા' મનુષ્યાયુષ્ક વા, તિર્યગાધિયોનો દેવાનાં સમુત્પત્તિર્મવસિતિ ન તુ કદાચિદપિ
દેવચ્યુતા દેવલોકે નરકે વા ગચ્ચતીતિ દેવનારકયોઃ પ્રવિષેષઃ કુતો મવતિ ઇતિ

અર્થાત્ પ્રારંભકાલ ઓર નિષ્ઠાકાલ અર્થાત્ સમાપ્તિકાલ इन दोनों में
यहाँ अमेद का उपचार किया गया है । इससे आहार में उत्पत्ता करी
गई है, अतः इससे यह ज्ञात होता है कि यह स्तल्पमात्रा में आहार
लेता है । (पहीणे य आउप मवह) इस तरह उसका आयुष्क-देवा
युष्क समाप्त हो जाता है । (जत्य उवचछन्नह तं आउय पविसंवैदेह) सो
देव शरीर को छोड़कर आगे जिस योनिविशेष में इसे उत्पन्न होना
है वहाँ के आयुष्क का यह अनुमव करता है सो हे भवन्त ! वह किस
का आयुष्य जानना चाहिये-(तिरिस्त्वजोणियाउय वा, मणुस्साउय वा)
तिर्यग्भयोनिक का कि मनुष्य का यहाँ जो ऐसा प्रथम आयुष्य संयंभ को
लेकर किया गया है उसका कारण यह है कि देवों की उत्पत्ति मरने के
बाद या तो मनुष्यगति में होती है या तिर्यग्भयगति में होती है, अन्य
गतियों में नहीं, क्योंकि देव च्युत होकर देवलोक में अथवा नरक में

કાળ જોડે કે સમાપ્તિકાળ જો બન્નેમાં જહી બંધેતને ઉપચાર કરાયો છે.
તેના વડે આહારમાં અસ્પતા કહેવામાં આવી છે તેથી જો વાત બાધી સમય
છે કે તે સ્વરૂપમાત્રામાં-મોજા પ્રમાણમાં જ આહાર શરૂવુ કરે છે

(પહીણે ય આઝપ મવહ) ત્યારબાદ છેવટે તેનુ આયુષ્ય (દેવાયુષ્ય) સમાપ્ત
મવ્ બપ છે (જત્ય ઉવચ્છન્નહ તં આઝય પવિસંવેદેહ) તે પહી દેવનુ શરીર
છેડીને જે યોનિવિશેષમાં તેને ઉત્પન્ન થવાનુ હોય છે તે યોનિવિશેષના આયુ-
ષ્યનો તે અનુભવ કરે છે તો કે જનવન ! તે કોનું આયુષ્ય સમજવુ ?
(તિરિસ્ત્વજોણિયાઝય વા, મણુસ્સાઝય વા) તિર્યગ્યોનિનું કે મનુષ્યયોનિનું તે
આયુષ્ય સમજવુ ? જહી આયુષ્યના વિષયમાં આ પ્રકારનો પ્રશ્ન પૂછવાનુ કાલ્પ
જો છે કે દેવતા મરીને જોડે કે બધીને મનુષ્યગતિમાં અથવા તિર્યગ્યગતિમાં

परिषद्ग्रहो ग्राह्यस्तेनारतिपरिषदनिमित्तमाहारं न गृह्णाति, लोकेपि दृश्यते अरतिप्रत्ययात्
आहारग्रहणमात्र इति, 'आहारं नो आहारेइ' आहारं नो आहरति, मनसा तथाविध-
पुद्गलोपादानरूपं देवसम्बन्धिकं दिव्यमाहारं न करोतीति, अहेणं आहारेइ' अथ खलु
आहरति, लज्जादिक्षणानन्तरमाहारमाहरति क्षुधावेदनीयस्य कर्मणश्चिरकालं सोढु-
मशक्यत्वात् 'आहरिज्जमाणे आहारिण' आह्रियमाणमाहृतम्, अनेन क्रियाकाल

अरतिपरीषद् ग्रहण करना चाहिए इससे यह ध्वनित होता है कि उसे
इन समस्त कारणों को लेकर चित्त में चैन नहीं पड़ती है-वह जैसे लोक
में लोग चैन न होने के कारण कुछ समय आहार ग्रहण नहीं करते हैं
अगर करते हैं तो अल्प करते हैं, वैसे ही चित्त में चैन के अभाव से -
अर्थात् वेचैन होने से आहार ग्रहण नहीं करता है। देवों के मानसिक
आहार होता है कबलाहार तो होता नहीं है अतः वह देव मन से
तथाविध पुद्गलोपादानरूप देवसंबन्धी दिव्य आहार नहीं लेता है। अर्थात्
मानसिक आहार नहीं करता है। (अहेणं आहारेइ) क्षुधावेदनीय कर्म
को चिरकालतक सहने में असमर्थ होने के कारण लज्जा वगैरह हो
चुक्ने के बाद वह आहार करता है-मन से तथाविध पुद्गलों का ग्रहण
करता है-(आहारिज्जमाणे आहारिण परिणामिज्जमाणे परिणामिण) सो
लिया जाता वह आहार लिया जा चुका, तथा परिणाम को प्राप्त हो
रहा वह आहार परिणम गया ऐसा कहा जाता है क्यों कि क्रियाकाल

“अरतिपरीषद्” अर्थ अडणु करवो उपरोक्त कारणोंने लीधे तेने येन पडतु
नथी तेनुं मन उद्विग्न रहे छे आ बोडभां पणु मन उद्विग्न होय छे तयारे
बोडो आहार अडणु करता नथी अने अडणु करे तो धणो न ओओ आहार
अडणु करे छे, ओए प्रमाणे देवो पणु मननी उद्विग्नताने लीधे आहार लेता
नथी देवो मानसिक धण्डा मात्रथी न शैम आहार ले छे, कवलाहार लेता
नथी ओटले अही ओम समजवु के ते देव मनथी तथाविध पुद्गलोपादान रूप
देव सम्बन्धी दिव्य आहार लेतो नथी ओटले के मानसिक आहार पणु अडणु
करतो नथी (अहेण आहारेइ) अथवा क्षुधावेदनीय कर्मने लाणा समय सुधी
सहने करवाने असमर्थ होवाथी ते लज्जा वगैरे उत्पन्न थया पछी पणु
अल्प आहार अडणु करे छे-मनथी तथाविध पुद्गलोंने णहुए थोडा प्रमाणमां
अडणु करे छे. (आहारिज्जमाणे आहारिण परिणामिज्जमाणे परिणामिण) तो लेवातो
ते आहार देवाए चुक्यो तथा परिणमने प्राप्त थतो ते आहार परिणभी
होयो, ओवु कही शक्य छे कारणके क्रियाकाल ओटले के प्रारंभकाल अने निष्ठा

केणट्टेण? गोयमा ! ओरालिय वेउव्विय आहारयाइ पडुच्च
 असरीरी वक्कमेइ, तेया कम्माइ पडुच्च ससरीरी वक्कमइ
 से तेणट्टेण गोयमा० ! जीवे ण भते ! गव्व भक्कममाणे
 तप्पढमयाए किं आहार आहारेइ, गोयमा ! माउओय
 पिउसुक्क तं तदुभय ससिद्ध कल्लस किव्विस तप्पढमयाए
 आहार आहारेइ । जीवे णं भते ! गव्वगए समाणे किं
 आहार आहारेइ, गोयमा ! ज से मायानाणपिहाओ रस
 विगईओ आहार आहारेइ, तदेकवेसेणं ओय आहारेइ ।
 जीवस्स ण भते ! गव्वगयस्स समाणस्स अत्थे उच्चारेइ
 वा, पासवणेइ वा, खेलेइ वा, सिंघाणेइ वा वतेइ वा पित्तेइ
 वा? गोयमा! णो इणट्टे समट्टे से केणट्टेणं भते !० गोयमा!
 जीवे णं गव्वगए समाणे ज आहारेइ त चिणाइ त सोइ
 दियत्ताए जाव फासिंदियत्ताए अट्ठि अट्ठिमिज केस मसुरोम
 नहत्ताए, से तेणट्टेणं० । जीवे णं भते ! गव्वगए समाणे
 पमूमुहेणं कावलिय आहार आहारित्तए, गोयमा ! णो
 इणट्टे समट्टे से केणट्टेणं, गोयमा ! जीवे णं गव्वगए समाणे
 सव्वओ आहारेइ सव्वओ परिणामेइ सव्वओ उस्ससइ सव्वओ
 निस्ससइ अभिक्खणं आहारेइ, अभिक्खणं परिणामेइ, अभिक्खणं
 उस्ससइ, अभिक्खणं निस्ससइ, आहच्च आहारेइ, आहच्च
 परिणामेइ, आहच्च उस्ससइ, आहच्च नीससइ । माउ
 जीवरसहरणी पुत्तजीवरसहरणी, माउजधिपडिबद्धा पुत्त
 जीवफुडा तम्हा आहारेइ, तम्हा परिणामेइ, अवरा वियणं

किं सत्यमिति प्रश्नः । अगवानाह—‘ हंता ’ इत्यादि । ‘ हंता गोयमा ’ हंत हे गौतम ! हंतेति स्वीकारे ‘ देवेण महिद्विष जाव मणुस्साउयं वा ’ देवः खलु महर्द्धिको यावत् सनुष्यायुष्कं वा, अत्र यावत्पदेन प्रश्नोक्तः सर्वोऽपि पाठः संग्राह्यः । महर्द्धिकत्वादिगुणविशिष्टो देवः परिभोगेन देवलोके स्वकीयायुष्कं कर्म परिसमाप्य देवलोकान्निर्गच्छन् प्राप्स्यमानतिर्यग्योनिकाद्यायुषः प्रतिसंवेदनं करोतीति भावः ॥ सू० ३ ॥

गर्भशास्त्रम्—

उत्पत्त्यधिकाराद् गर्भसूत्रमाह—‘ जीवे णं ’ इत्यादि ।

मूलम्—जीवे णं भंते ! गव्भं वक्कममाणे किं सइंदिए वक्कमइ, अणिंदिए वक्कमइ, गोयमा ! सिय सइंदिए वक्कमइ, सिय अणिंदिए वक्कमइ, से केणट्टेणं भंते ! गोयमा ! दव्विंदियाइं पडुच्च अणिंदिए वक्कमइ, भाविंदियाइं पडुच्च सइंदिए वक्कमइ, से तेणट्टेणं० । जीवे णं भंते ! गव्भं वक्कममाणे किं ससरीरी वक्कमइ, असरीरी वक्कमइ, गोयमा ! सिय सरीरी वक्कमइ, सिय असरीरी वक्कमइ, से

जन्म कभी भी नहीं लेता है ऐसा सिद्धान्त है । अतः यहां ऐसा प्रश्न देव नारक संबंधी आयुष्य को निषिद्ध कर किया गया है । (हंता गोयमा ! देवेण महिद्विष जाव मणुस्साउयं वा) , हाँ गौतम ! महर्द्धिकत्वादिगुण विशिष्ट देव अपनी आयु की परिसमाप्ति होने पर वहां से च्यव कर— अर्थात् देवलोक से निकलकर, तिर्यग्योनिक आदि जीवों की आयु का अनुभव करता है । यहां यावत् पद से प्रश्नसूत्रोक्त सब पाठ ग्रहण कर लेना चाहिये ॥ सू० ३ ॥

५ उत्पन्न थाय छे देवलोडभाथी व्यवीने देव देवलोडभां डे नरउगतिमां डडि पणु उत्पन्न थता नथी, ओवो सिद्धांत छे तेथी अही प्रश्नमा देवायु अने नरउयुनो उल्लेख थयो नथी

उत्तर—(हंता गोयमा ! देवेण महिद्विष जाव मणुस्साउयं वा) छे गौतम ! महर्द्धिकपाणु वगेरे गुणस पन्न देव पोतानुं आयुष्य पूर थतां त्याथी व्यवीने— देवलोडभांथी नीकणीने—तिर्यग्योनिक ओवोना अथवा मनुष्यगतिना ओवोना आयुष्यनो अनुभव करे छे अही “जाव” (यावत्) पदथी प्रश्नसूत्रोक्त तमाभ पाठ अडणु करवो जेधओ ॥ सू० ३ ॥

सर्वत आहरति सर्वत परिणमयति सर्वत उच्छ्वसति सर्वतो नि श्वसति भमीक्ष्य माहृत्यमीक्ष्य परिणमयत्यमीक्ष्यमुच्छ्वसत्यमीक्ष्य निःश्वसति, आहृत्याहरति आहृत्य परिणमयति आहृत्योच्छ्वसति आहृत्य नि श्वसति, मातृजीवरसहरणी पुत्र जीवरसहरणी मातृजीवप्रतिषद्धा पुत्रजीवस्पृष्टा तस्मादाहरति तस्मात्परिणमयति, अपरापि च पुत्रजीव प्रतिषद्धामातृजीवस्पृष्टा तस्माच्चिनोति तस्मादुपचिनोति तत्तेनार्येन यावत् नो प्रष्टुमुखेन काषलिकमाहारमाहर्तुम्, कति खलु भदन्त ! मात्र ज्ञानि प्रश्नानि ? गौतम ! त्रिणि मात्रज्ञानि प्रश्नानि तद्यथा—गांस शोभित मस्तुल्लङ्घम् । कति खलु भदन्त ! पित्रज्ञानि प्रश्नानि, गौतम ! त्रीणि पित्रज्ञानि प्रश्नानि तद्यथा—अस्थि, अस्थिमज्जा, केवलमधुरोमनरणा, अम्बापैठक खलु भदन्त ! शरीरं कियत्कालं सतिष्ठते, गौतम ! यावन्त कालं तस्य भवधारणीयं शरीरमव्यापन्नं भवति, एतावन्तं कालं संतिष्ठते, अथ खलु समये समये वपकुप्यमाण व्यपकुप्यमाणं चरमकालसमये व्युच्छिन्नं भवति ॥ सू० ४ ॥

टीका—‘जीवे णं मते’ जीवः खलु भदन्त ! ‘गब्भं वक्कममाणे’ गर्भं व्युत्क्रामन्, गर्भं ससृज्यमान इत्यर्थः, ‘किं सहदिप वक्कमइ अणिदिप वक्कमइ’ किं सेन्द्रियो व्युत्क्रामति अनिन्द्रियो व्युत्क्रामति, सेन्द्रियाः=इन्द्रियविशिष्टाः, अनिन्द्रियाः=इन्द्रियरहितः, गर्भावस्थायां जीवस्येन्द्रियाणि भवन्ति न चेति प्रश्नाश्च ।

गर्भोत्पत्तिः

उत्पत्तिः का अधिकार हाने से ही सूत्रकार अथ गर्भसूत्र को कहते हैं—‘जीवे णं मते !’ इत्यादि ।

टीकार्य—(जीवे णं मते ! गब्भं वक्कममाणे किं सहदिप वक्कमइ, अणिदिप वक्कमइ) हे भदन्त ! गर्भमें उत्पन्न होते समय जीव क्या इन्द्रिय सहित उत्पन्न होता है ? कि बिना इन्द्रिय के उत्पन्न होता है ? तात्पर्य इस प्रश्न का यह है के गर्भावस्था में जीव की इन्द्रियां होती हैं कि नहीं

अर्थशास्त्र—

उत्पत्तिनो अधिकार यावतो कोषाधी कवे सूत्रकार अथ सूत्रनु धेयन ठरे छे—‘जीवे णं मते ! गब्भं वक्कममाणे’ इत्यादि ।

टीकार्य—‘जीवे णं मते ! गब्भं वक्कममाणे किं सहदिप वक्कमइ, अणिदिप वक्कमइ ?’ हे भगवन् ! गर्भमा उत्पन्न यती वणते छे एव धन्त्रियो सहित उत्पन्न थाय छे ? के धन्त्रियो बिना उत्पन्न थाय छे ? या प्रश्नो कोषाधी कोषो छे के गर्भमा उत्पन्न यती वणते एवने धन्त्रियो कोष छे के नथी कोषी ?

पुत्तजीवपडिबद्धा माउजीवफुडा तम्हा चिणाइ, तम्हा
उवचिणाइ, से तेणट्टेणं जाव नो पभूसुहेणं कावलियं आहारं
आहरित्तए । कह णं भंते माइयंगा पन्नत्ता, गोयमा ! तओ
माइयंगा पन्नत्ता, तं जंहा—मंसे, सोणिए, मत्थुलुंगे । कह णं
भंते ! पिइयंगा पन्नत्ता, गोयमा ! तओ पिइयंगा पन्नत्ता, तं
जहा—अट्टी, अट्टिमिंजा, केसमंसुरोमनहे । अस्मापिइए णं
भंते ! सरीरए केवइयं कालं संचिट्ठइ ? गोयमा ! जावइयं
से कालं भवधारणिज्जे सरीरए अव्वावन्ते भवइ एवइयं
कालं संचिट्ठइ, अहे णं समए समए वोक्कसिज्जमाणे वोक्क-
सिज्जमाणे चरमकालसमयांसि वोच्छिन्नने भवइ ॥ सू०४ ॥

छाया—जीवो भदन्त ! गर्भं व्युत्क्रामन् किं सेन्द्रियो व्युत्क्रामति अनि-
न्द्रियो व्युत्क्रामति, गौतम ! स्यात्सेन्द्रियो व्युत्क्रामति स्यात् अनिन्द्रियो व्युत्क्रा-
मति, तत्केनार्थेन ? गौतम ! द्रव्येन्द्रियाणि प्रतीत्यानिन्द्रियो व्युत्क्रामति भावेन्द्रियाणि
प्रतीत्य सेन्द्रियो व्युत्क्रामति, तत्तेनार्थेन० । जीवो भदन्त ! गर्भं व्युत्क्रामन् किं
सशरीरी व्युत्क्रामति, अशरीरी व्युत्क्रामति?, गौतम ! स्यात् सशरीरी व्युत्क्रामति,
स्यादशरीरी व्युत्क्रामति, तत्केनार्थेन भदन्त ! एवमुच्यते, गौतम ! औदारिक
वैक्रियाहारकाणि प्रतीत्याशरीरी व्युत्क्रामति, तैजसकर्मणे प्रतीत्य सशरीरी
व्युत्क्रामति तत्तेनार्थेन गौतम० । जीवो भदन्त ! गर्भं व्युत्क्रामन् तत्प्रथमतया
कमाहारमाहरयति ? गौतम ! मात्रोजः पितृशुक्रम् तद् तदुभयसंश्लिष्टं कलुषं
किल्बिषं तत्प्रथमतयाऽऽहारमाहरति । जीवो भदन्त ! गर्भगतः सन् कमाहारमाह-
रति? गौतम ! यत्तस्य माता नानाविधा रसविकृतीराहारमाहरति, तदेकदेशेन
ओज आहरति, जीवस्य खलु भदन्त ! गर्भगतस्य सतोऽस्ति उच्चार इति वा प्रस्र-
वणमिति वा खेल इति वा शिंघानकमिति वा वान्तमिति वा पित्तमिति वा?, नाय-
मर्थः समर्थः, तत्केनार्थेन० गौतम ! जीवो गर्भगतः सन् यदाहरति तच्चिन्वोति
तत् श्रोत्रेन्द्रियतया यावत् स्पर्शेन्द्रियतया अस्थ्यस्थिमज्जाकेशदन्तश्रुरोमनख-
तया, तत्तेनार्थेन० जीवो भदन्त ! गर्भगतः सन् प्रभृद्युखेन कावलिकमाहारमाह-
र्तुम्?, गौतम ! नायमर्थः समर्थः, तत्केनार्थेन ? गौतम ! जीवो गर्भगतः सन्
भ० १८

સેન્દ્રિયો વ્યુત્ક્રામસિ, ભાવેન્દ્રિયાણિ ઉપયોગાત્મકાનિ, યાનિ તુ જીવસ્ય સર્વાં વ
 સ્વાપામેવ મવન્તિ ઉપયોગસ્ય જીવેન સદ તાદાત્મ્યાદિતિ સદ્મિત્રાપેણ ગર્મેઽપિ
 ઇન્દ્રિયો સહિત ઉત્પન્ન હોતા હૈ । इस कारण मैं ऐसा कहता हूँ कि जीव
 गर्मे मैं किसी अपेक्षा से-इन्द्रिय सहित उत्पन्न होता है और किसी
 अपेक्षा से इन्द्रिय विना भी उत्पन्न होता है । निवृत्ति और उपकरण
 के भेद से द्रव्येन्द्रिया दो प्रकार की होती हैं । द्रव्येन्द्रिय की रचना जीव
 के पर्याप्तावस्था में होती है, अपर्याप्तावस्था में नहीं । अतः गर्म में
 उत्पन्न होने वाला जीव जयतक विग्रह गति में रहता है तयतक उसके
 इन्द्रियपर्याप्ति न होनेके कारण वह अनिन्द्रिय-विना इन्द्रियका-रहता है
 तथा गर्म में उपजते समय भी वह जीव उसी समय इन्द्रियवाला नहीं होता
 है, क्योंकि कि जयतक इन्द्रियों की रचना उसकी पूर्ण नहीं हो जाती तयतक
 उसकी इन्द्रियपर्याप्ति पूर्ण हुई नहीं कहलाती है, अत इन्द्रियपर्याप्ति
 की पूर्णता होने पर ही द्रव्येन्द्रियों की पूर्णता होती है । गर्म में उत्पन्न
 होते समय जीव के इन्द्रियपर्याप्ति पूर्ण नहीं होती है, इस अपेक्षा से
 वह विना इन्द्रिय का उत्पन्न होता है ऐसा कहा गया है, क्योंकि कि उस
 समय उसके द्रव्येन्द्रिय का अभाव है । लघि और उपयोग, ये भाव
 इन्द्रियां हैं, इनकी अपेक्षा से जीव गर्म में इन्द्रियसहित उत्पन्न होता है
 ऐसा कहा है, क्योंकि कि भावेन्द्रियां जीव के सर्वकाल में रहती हैं ।

ગર્ભમાં ઇન્દ્રિયો વિના ઉત્પન્ન થાય છે અને ભાવેન્દ્રિયની અપેક્ષાએ એવ ગર્ભમાં
 ઇન્દ્રિયો સહિત ઉત્પન્ન થાય છે તે કારણે હું એવું કહું છું કે ગર્ભમાં એવ
 કોઈ અપેક્ષાએ ઇન્દ્રિય સહિત ઉત્પન્ન થાય છે અને કોઈ અપેક્ષાએ ઇન્દ્રિય
 સહિત ઉત્પન્ન થાય છે નિવૃત્તિ અને ઉપકરણ ઇન્દ્રિયના એકથી દ્રવ્યેન્દ્રિયો એ
 પ્રકારની હોય છે દ્રવ્યેન્દ્રિયની રચના એવી પર્યાપ્તાવસ્થામાં થાય છે, અપર્યા-
 પ્તાવસ્થામાં થતી નથી તેથી ગર્ભમાં ઉત્પન્ન થનારો એવ જ્ઞાતુધી વાટે વહેતો
 રહે છે ત્યાંસુધી તેને ઇન્દ્રિયપર્યાપ્તિ ન હોવાને કારણે તે અનિન્દ્રિય-ઇન્દ્રિયો
 વિનાનો રહે છે વળી ગર્ભમાં ઉપજતી વખતેજ તે એવ ઇન્દ્રિયોવાળો હોતો નથી.
 કારણકે જ્ઞાતુધી તેની ઇન્દ્રિયોની રચના થતી નથી ત્યાંસુધી તેની ઇન્દ્રિય પર્યાપ્તિ
 હજી થાતી નથી. તેથી ઇન્દ્રિયપર્યાપ્તિની પૂર્ણતા થાય ત્યારે જ દ્રવ્યેન્દ્રિયોની
 પૂર્ણતા થાય છે ગર્ભમાં ઉત્પન્ન થતી વખતે એવને ઇન્દ્રિયપર્યાપ્તિ હોતી નથી,
 એ રીતે વિચાર કરતાં ‘ તે ઇન્દ્રિયો વિના ઉત્પન્ન થાય છે ’ એવું કહું છે,
 કારણકે તે સમયે તેનામાં દ્રવ્યેન્દ્રિયનો અભાવ હોય છે સજ્જિ અને ઉપયોગ
 એ બે ભાવઇન્દ્રિયો છે તેમની અપેક્ષાએ એવું કહેવાયું છે કે એવ ગર્ભમાં
 ઇન્દ્રિયો સહિત ઉત્પન્ન થાય છે કારણકે ભાવેન્દ્રિયો એવામાં સર્વકાળે રહે છે.

મગવાનાહ—‘ગોયમા’ ઇત્યાદિ । ‘ગોયમા’ હે ગૌતમ ! ‘સિય સઙ્દિએ વક્કમઙ્’ સિય અણિંદિએ વક્કમઙ્’ સ્યાત્ સેન્દ્રિયો વ્યુત્ક્રામતિ સ્યાદનિન્દ્રિયો વ્યુત્ક્રામતિ ઉભાવપિ પક્ષો ભવતઃ કદાચિત્ત્વંન્દ્રિયવિશિષ્ટોપિ ગર્ભે સમુત્પન્નો ભવતિ જીવઃ કદાચિદિન્દ્રિયરાહિત્યેનાપ્યુત્પદ્યતે ગર્ભે જીવઃ । ‘સે કેળદ્દેણં’ તત્કેનાર્થેન હે ભદન્ત ! તત્કેન કારણેન એવમુચ્યતે, યદિન્દ્રિયવિશિષ્ટોપ્યુત્પદ્યતે ઇન્દ્રિયરહિતોપ્યુત્પદ્યતે ? ઇતિ ભાવઃ, મગવાનાહ—‘ગોયમા’ ઇત્યાદિ । ‘ગોયમા’ હે ગૌતમ ! ‘દર્વિંદિયાઙ્’ દ્રવ્યેન્દ્રિયાણિ નિર્વૃત્યુપકરણલક્ષણાણિ ‘પહુચ્ચ’ પ્રતીત્ય—દ્રવ્યેન્દ્રિયાપેક્ષયેત્યર્થઃ ‘અણિંદિએ વક્કમઙ્’ અનિન્દ્રિયો વ્યુત્ક્રામતિ સમુત્પદ્યતે, દ્રવ્યેન્દ્રિયાણિ ઇન્દ્રિયપર્યાપ્તો સત્યામેવ ભવિષ્યન્તીત્યતો ગર્ભે સમાગચ્છન્ અનિન્દ્રિય એવ જીવ ઉત્પદ્યતે તદાનીં દ્રવ્યેન્દ્રિયસ્યાભાવાત્ ‘ભાવિંદિયાઙ્’ ભાવેન્દ્રિયાણિ લઘ્યુપયોગલક્ષણાણિ ‘પહુચ્ચ’ પ્રતીત્ય આસાદ્યેત્યર્થઃ, ‘સઙ્દિએ વક્કમઙ્’

હોતી હૈં ? ઇસ કા ઉત્તર દેતે હુએ મગવાન્ કહતે હૈં કિ (ગોયમા ! સિય સઙ્દિએ વક્કમઙ્, સિય અણિંદિએ વક્કમઙ્) હે ગૌતમ ! જીવ ઇન્દ્રિય સહિત ભી ઉત્પન્ન હોતા હૈં ઓર ઇન્દ્રિય વિના કા ભી હોતા હૈં । ઇસ તરહ દોનોં પક્ષ માન્ય હુએ હૈં । કિસી અપેક્ષા સે ઇન્દ્રિયવિશિષ્ટ ભી ઉત્પન્ન હોતા હૈં ઓર કિસી અપેક્ષા સે ઇન્દ્રિય વિના કા ભી ઉત્પન્ન હોતા હૈં । (સે કેળદ્દેણં) હે ભદન્ત ! આપ એસા કિસ કારણ સે કહતે હૈં કિ ઇન્દ્રિય સહિત ભી જીવ ગર્ભ મેં ઉત્પન્ન હોતા હૈં ઓર ઇન્દ્રિય વિના કા ભી જીવ ગર્ભ મેં ઉત્પન્ન હોતા હૈં (ગોયમા ! દર્વિંદિયાઙ્ પહુચ્ચ, અણિંદિએ વક્કમઙ્, ભાવિંદિયાઙ્ પહુચ્ચ સઙ્દિએ વક્કમઙ્ સે તેળદ્દેણં) હે ગૌતમ ! દ્રવ્યેન્દ્રિયોં કે અપેક્ષા કરકે જીવ ગર્ભ મેં વિના ઇન્દ્રિયોં કા ઉત્પન્ન હોતા હૈં ઓર ભાવેન્દ્રિયોં કી અપેક્ષા કરકે જીવ ગર્ભ મેં

ઉત્તર—“ગોયમા ! સિય સઙ્દિએ વક્કમઙ્, સિય અણિંદિએ વક્કમઙ્” હે ગૌતમ ! એવ ગર્ભમા ઇન્દ્રિય સહિત પણુ ઉત્પન્ન થાય છે અને ઇન્દ્રિય વિના પણુ ઉત્પન્ન થાય છે આ રીતે બન્ને પક્ષનો સ્વીકાર કર્યો છે

પ્રશ્ન—“સે કેળદ્દેણં ઇત્યાદિ” હે ભગવન્ ! આપ શા કારણે એવું કહો છો કે એવ ગર્ભમા ઇન્દ્રિયસહિત પણુ ઉત્પન્ન થાય છે અને ઇન્દ્રિય વિના પણુ ઉત્પન્ન થાય છે ?

ઉત્તર—“ગોયમા ! દર્વિંદિયાઙ્ પહુચ્ચ, અણિંદિએ વક્કમઙ્, ભાવિંદિયાઙ્ પહુચ્ચ સઙ્દિએ વક્કમઙ્ સે તેળદ્દેણં” હે ગૌતમ ! દ્રવ્યેન્દ્રિયોની અપેક્ષાએ એવ

या मवति । ननु सशरीरिपक्ष शरीरकारणस्य मातृपितृशोणितादेरभावात् कथं सशरीरत्व संभवति ? अशरीरिपक्ष शरीरभावात् कथमुत्पत्तिः ? नहि अशरीरस्य जीवस्य क्वचिदप्युत्पत्तिर्ह्यस्या संभवति वा, तथा सति मुक्तस्यापि यदाचिदुत्पत्तिः स्यादिति चेदाह—अपेक्षामेदात् शरीराशरीरसमवायित्वाशयेनोत्तरयति भगवान्—‘गोयमा’ इत्यादि । ‘गोयमा’ ह गौतम । ‘सिय समरीरी वक्कमइ’ स्यात् सशरीरी भ्युत्तामति, ‘सिय असरीरी वक्कमइ’ स्यात् अशरीरी भ्युत्तामति, गौतमः पृच्छति—‘से केणट्ठेण’ सत् केनार्येण,—केन कारणेन एवमुत्पत्तेः ? भगवानाह—‘गोयमा ।’ हे गौतम ! ‘ओरात्थि-वेउत्थिय-आहारयाइ पइच्च’

उत्पन्न होता है—तो ऐसा कहना ठीक नहीं है, क्योंकि कि उस समय शरीर के कारणभूत मातापिता संघी छुन्नशोणित आदि का अभाव रहता है । यदि कहा जाये कि अशरीरी उत्पन्न होता है, तो ऐसा कहना भी ठीक नहीं बनता, कारण कि बिना शरीर के मिट्टी की तरह जीव की उत्पत्ति ही नहीं हो सकती है ? सो ऐसी आज्ञा ठीक नहीं, कारण—अपेक्षामेद से शरीरसंस्तितपना और शरीररहितपना माना गया है और इसी आज्ञा से भगवान् ने इसका उत्तर यों दिया है—(गोयमा । सिय समरीरी वक्कमइ, सिय असरीरी वक्कमइ) हे गौतम ! जीव गर्भ में किसी अपेक्षा से सशरीरी भी उत्पन्न होता है और किसी अपेक्षा से बिना शरीर का भी उत्पन्न होता है । (से केणट्ठेण०) हे भदन् ! आप ऐसा किस कारण से कहते हैं कि जीव गर्भ में शरीरसंस्तित भी उत्पन्न होता है और शरीररहित भी उत्पन्न होता है ?

ले जेभ के नामा आवे के शरीरमदिन उपाय आवे छे—तो ते कथन लख जख नही कह्य के ते गमये शरीरना कह्यभूत भानापिताना शुद्ध शोणित वगैरेना अभाव जाय छे जे जेभ के नामा आवे के तेजे अशरीरी उपाय जाय छे—तो तं ज.न प.ग योअ वा ली नही कह्य के शरीर बिना निदोअ आभाओनी जेभ छवनी उत्पत्ति / य. श.नो नही. उपाय श.श. अ.व. ने अयुअ हो उ.ग. के जित जित हजिअ बि.तार करीने शरीरमुज्जना अने शरीरम दिनाय भाननामा आ.पी.उ. अने अ. / आ.ग.धी अयमान तेजे आ.म.म.प. ए.व.न आवे छे—(गोयमा । सिय समरीरी वक्कमइ, सिय असरीरी वक्कमइ) हे गौतम ! के. अ.प.उ.न. ए.व. म.म.मा. शरीरमदिन प.ग. उ.पाय य.प.उ. अने के. अ.प. न. अशरीरी (शरीरमदिन) प.ग. उ.पाय य.प.उ.

જીવઃ સેન્દ્રિય એવ ઉત્પદ્યતે ઇતિ ભાવાર્થઃ । ‘ સે તેણદ્વેણં ’ તત્તેનાર્થેન ગૌતમ ? એવમુચ્યતે કદાચિત્ સેન્દ્રિય ઉત્પદ્યતે કદાચિદનિન્દ્રિય ઉત્પદ્યતે, દ્રવ્યેન્દ્રિયા-પેક્ષયા અનિન્દ્રિયઃ ભાવેન્દ્રિયાપેક્ષયા તુ સેન્દ્રિયઃ ગર્ભગતસ્ય જીવસ્યેન્દ્રિયવૈશિષ્ટ્યા-વૈશિષ્ટ્યં પ્રતિપાદ્ય શરીરવૈશિષ્ટ્યં પ્રતિપાદયિતુમાહ—‘ જીવે ણ મંતે ’ ઇત્યાદિ, ‘ જીવે ણ મંતે ’ જીવ. સ્વલુ મદન્ત ! ‘ ગર્ભ વક્કમમાણે ’ ગર્ભ વ્યુત્ક્રામન્ ગર્ભ ઉત્પદ્યમાનઃ કિં સસરીરી વક્કમહ્ અસરીરીવક્કમહ્ ? કિં સશરીરી વ્યુત્ક્રામતિ, અશરીરી વ્યુત્ક્રામતિ, ગર્ભે સમુત્પદ્યમાનો જીવઃ કિં શરીરવિશિષ્ટો ભવતિ શરીરરહિતો

ઉપયોગ ભાવેન્દ્રિયોં મેં હૈ, અતઃ ઉપયોગાત્મક ભાવેન્દ્રિયોં કે જીવ કી સર્વાવસ્થાઓં મેં હી હોને કે કારણ જીવ કિસી भी समय किसी भी अवस्था में इन्द्रियों से रहित नहीं होता है । जीव का और उपयोग का तादात्म्य संबंध कहा गया है, अतः इस अभिप्राय से गर्भ में भी जीव इन्द्रियसहित भी उत्पन्न होता है । (से तेणद्वेणं) इस कारण हे गौतम ! मैं ऐसा कहता हूँ कि जीव किसी अपेक्षा इन्द्रियसहित उत्पन्न होता है और किसी अपेक्षा इन्द्रियरहित उत्पन्न होता है ।

इस तरह गर्भगत जीव के इन्द्रियसहितपना और इन्द्रियरहितपना प्रतिपादन करके अब सूत्रकार उसके शरीरसहितता और शरीररहितता का प्रतिपादन करने के लिये प्रश्नोत्तरपूर्वक सूत्र कहते हैं (जीवे ण मंते ! गर्भं वक्कममाणे किं ससरीरी वक्कमह, असरीरी वक्कमह ?) हे भदन्त गर्भ में उत्पन्न होते समय जीव शरीरसहित उत्पन्न होता है, कि बिना शरीर के उत्पन्न होता है ? यदि कहा जावे कि शरीरसहित

ઉપયોગ એ ભાવેન્દ્રિય છે તેથી ઉપયોગાત્મક ભાવેન્દ્રિયોતુ અસ્તિત્વ જીવની સર્વ અવસ્થાઓમાં હોવાને કારણે જીવ કોઈપણ સમયે કોઈપણ અવસ્થામાં ભાવ ઇન્દ્રિયોથી રહિત હોતો નથી. જીવનો તથા ઉપયોગનો તાદાત્મ્ય સંબંધ કહ્યો છે, તેથી આ રીતે ગર્ભમાં પણ જીવ ઇન્દ્રિય સહિત જ ઉત્પન્ન થાય છે એમ કહી શકાય. “સે તેણદ્વેણં ઇત્યાદિ” હે ગૌતમ ! તે કારણે હું એવું કહું છું કે કોઈ અપેક્ષાએ ગર્ભમાંનો જીવ ઇન્દ્રિય સહિત ઉત્પન્ન થાય છે અને કોઈ અપેક્ષાએ ઇન્દ્રિય રહિત ઉત્પન્ન થાય છે

આ રીતે ગર્ભગત જીવની ઇન્દ્રિયયુક્તતા અને ઇન્દ્રિયરહિતતાનું પ્રતિ-પાદન કરીને હવે સૂત્રકાર તેના શરીરની યુક્તતા અને શરીરરહિતતાનું પ્રતિ-પાદન કરવા માટે પ્રશ્નોત્તરપૂર્વક સૂત્ર કહે છે—(જીવે ણ મંતે ! ગર્ભ વક્ક-મમાણે કિં સસરીરી વક્કમહ, અસરીરી વક્કમહ ?) હે ભગવન્ ! ગર્ભમાં ઉત્પન્ન થતી વખતે જીવ શરીરસહિત ઉત્પન્ન થાય છે કે શરીરરહિત ઉત્પન્ન થાય છે ?

સર્વદૈવ માવાત્ ગર્ભોત્પત્તિસમયપિ જીવ શરીરગાનેષેતિ તાદૃગ્નરીરદ્રવ્યાપેક્ષયા
સન્નરીરી સમુત્પદ્યતે इति कथ्यते, एवमौदारिकवैक्रियाहारक-शरीरप्रयापेक्षया
अशरीरीति कथ्यते उत्पत्तेः पूर्वमेतादृशशरीरप्रयत्नस्य चस्याभावादिति ।

पूर्व શરીરેન્દ્રિયવિષયક વર્ણન કૃત સામ્પત શરીરેન્દ્રિયયસ્ય આહારસ્યાવશ્યકતા
મવેદિત્યાહારસૂત્રમાહ-‘जीवे ण भते’ इत्यादि । ‘जीवे ण भते’ जीव सल्ल
भवन्त ! ‘गम्भ वक्कममाणे’ गम्भ व्युत्क्रामन् गर्भे समुत्पद्यमान इत्यर्थः, ‘तप्पइमयाए’
उत्पद्यमानतया ‘किं आहार आहारेह’ कमाहारमाहरति ‘तप्पइमयाए’ चि, तस्य
गर्भागमनस्य प्रथमवेति उत्पद्यमानता, तथा प्रथमतया गर्भ उत्पद्यमान एवेत्यर्थः,
कमाहारमाहरति-गर्भे उत्पद्यमानन्तरं कीदृशमाहारं प्रथमत आहरतीति प्रश्नाश्रयः ।
મગધાનાહ-‘गोपमे’त्यादि । ‘गोयमा’ हे गौतम ! ‘माउभोयं’ माभोजः, ओजः=

ઔદારિક, વૈશ્વિક, ઔર આહારક इन तीन शरीरों की अपेक्षा
जय की जाती है-तब गर्भ में उत्पन्न होते समय इन तीन शरीरों में से
जीव के कोई भी शरीर नहीं होता है इस तरह गर्भ में उत्पन्न
होते समय जीव के इनमें से कोई भी शरीर न होने के कारण “बह
अशरीरी गर्भ में उत्पन्न होता है” यह कथन भी बन जाता है ।

પહિલે સૂત્રકાર ને હિન્દ્રિય ઔર શરીર કા વર્ણન સૂત્રો દ્વારા કર હી
દિયા હૈ । અય વે આહાર કા વર્ણન કરને કે નિમિત્ત આહારસૂત્ર કા કથન
કરતે હૈ કપોં કિ હન્દ્રિય ઔર શરીર સે યુક્તતા હોને પર જીવ કો
આહાર કી આવશ્યકતા હોતી હૈ (जीवे ण भते । गम्भ वक्कममाणे
तप्पइमयाए किं आहार आहारेह) હૈ મવન્ત ! જીવ જય ગર્ભ મેં ઉત્પન્ન
હોતા હૈ તવ બહ સર્વપ્રથમ કયા સ્થાતા હૈ ? અર્થાત્ કેસા આહાર
હેતા હૈ ? (गोयमा । माउभोयं पित्तसुख तं तदुभयसंसिद्धं कलुसं,

विश्रुता “एव गर्भां शरीरसहित उत्पन्न भवति” એ કથન અશભર
છે તથા ગર્ભમા ઉત્પન્ન થતી વખતે જીવને ઔદારિક, વૈશ્વિક, અને આહારક
ત્રણ એ શરીરમાનું કોઇ પણ શરીર હોતું નથી. એ હિન્દ્રિયો વિચાર કરતાં
“एव गर्भा अशरीरी उत्पन्न भवति” એ કથન પણ યોગ્ય છે ”

પહેલાં સૂત્રકાર હિન્દ્રિય અને શરીરનું વળુન સૂત્રો વડે ઠરી દીધું જ છે
હેવે આહારનું વળુન કરવાને માટે તેઓ આહાર સૂત્રનું કથન કરે છે કારણ
કે હિન્દ્રિયો અને શરીરથી યુક્ત એવા જીવને આહારની આવશ્યકતા રહે છે-
(जीवे ण भते । गम्भ वक्कममाणे तप्पइमयाए किं आहार आहारेह ?) એ બાજ
વનું ! આરે જીવ ગર્ભમાં ઉત્પન્ન થાય છે, ત્યારે તે સૌથી પહેલાં શું ખાય
છે ? એટલે કે કેવો આહાર હૈ છે ?

ઔદારિકવૈક્રિયાદારકાણિ શરીરત્રિતયાનિ પ્રતીત્ય=સમાશ્રિત્ય 'અસરીરી વક્ક-
મહ' અશરીરી વ્યુત્ક્રામતિ, ઔદારિકાદિશરીરત્રિતયાપેક્ષયા ઔદારિકાદિશરીરત્રયં
વેહાય જીવો ગર્ભે સમુત્પદ્યમાન અશરીરી સમુત્પદ્યતે इति, 'તેયાકમ્માઈ-પડુચ્ચ'
તૈજસકાર્મણે શરીરે પ્રતીત્ય=સમાશ્રિત્ય 'સસરીરી વક્કમહ' । સશરીરી વ્યુત્ક્રમતિ,
તૈજસકાર્મણશરીરદ્વયાપેક્ષયા જીવઃ સશરીરી સમુત્પદ્યતે इति भावः ।
'સે તેણદ્દેણં ગોયમા' તત્તેનાર્થેન ગૌતમ ! એવમુચ્યતે, સ્યાત્ કદાચિત્ અશ-
રીરી કદાચિત્સશરીરી ગર્ભે વ્યુત્ક્રામતિ, અયમાશયઃ તૈજસકાર્મણશરીરદ્વયસંવન્ધસ્ય

(ગોયમા ! ઓરાલિય-વેડન્વિય-આહારયાહ પડુચ્ચ અસરીરી વક્કમહ)
હે ગૌતમ ! જીવ કો જો " અશરીરી ઉત્પન્ન હોતા હૈ " એસા કહા હૈ
ઉસકા કારણ યહ હૈ કિ-ઉસ સમય ઉસ કે ઔદારિક વૈક્રિય ઔર
આહારક ઇન ત્રીન શરીરોંમેં સે એક ભી શરીર નહીં હોતા હૈ । ઇસ અપેક્ષા
વિના શરીરકે હી જીવ ઉત્પન્ન હોતા હૈ । (તેયા-કમ્માઈ પડુચ્ચ સસરીરી
વક્કમહ) તૈજસ ઔર કાર્મણ ઇન દો શરીરોં કી અપેક્ષા જવ કી જાતી
હૈ તય વહ શરીરસહિત હી ગર્ભમેં ઉત્પન્ન હોતા હૈ, એસા કહા જાતા હૈ ।
(સે તેણદ્દેણં) ઇસ કારણ હે ગૌતમ ! મૈં એસા કહતા હૂં કિ જીવ
ગર્ભમેં શરીરરહિત ઔર શરીરસહિત ભી ઉત્પન્ન હોતા હૈ । તાત્પર્ય કહને
કા યહ હૈ કિ-" સર્વસ્ય " સૂત્ર કે અનુસાર તૈજસ ઔર કાર્મણ યે દો
શરીર સમસ્ત સંસારી જીવોં કે હોતે હૈં, ઇસલિયે ગર્ભમેં ઉત્પત્તિ હોને
કે સમયમેં ભી ઇનકા સદ્ભાવ રહતા હૈ અતઃ ઇસ અપેક્ષા સે જીવ ગર્ભ
મેં શરીરસહિત ભી ઉત્પન્ન હોતા હૈ-એસા કથન બન જાતા હૈ । તથા

પ્રશ્ન—સે કેણદ્દેણં ઇત્યાદિ હે લગવન્ ! આપ શા કારણે એવું કહો છો કે જીવ
ગર્ભમાં શરીરસહિત પણ ઉત્પન્ન થાય છે અને શરીર રહિત પણ ઉત્પન્ન થાય છે ?

ઉત્તર—(ગોયમા ! ઓરાલિય, વેડન્વિય, આહારયાહ, પડુચ્ચ અસરીરી
વક્કમહ) હે ગૌતમ ! ' જીવ અશરીરી ઉત્પન્ન થાય છે, ' એવું જે કહ્યું છે
તેનું કારણ એ છે કે, તે સમયે તેને ઔદારિક વૈક્રિય અને આહારક, એ ત્રણ
શરીરમાનુ એક પણ શરીર હોતું નથી એ દૃષ્ટિબિન્દુથી ઉત્પન્ન થતી વખતે
જીવ અશરીરી જ હોય છે, (તેયાકમ્માઈ પડુચ્ચ સસરીરી વક્કમહ) તથા
તૈજસ અને કાર્મણ, એ બે શરીરની અપેક્ષાએ એમ કહી ' શકાય કે જીવ
શરીરસહિત જ ગર્ભમાં ઉત્પન્ન થાય છે ' સે તેણદ્દેણં ઇત્યાદિ હે ગૌતમ !
તે કારણે જુ એવું કહ્યું છું કે જીવ ગર્ભમાં શરીરરહિત પણ ઉત્પન્ન થાય છે અને
શરીરસહિત પણ ઉત્પન્ન થાય છે તાત્પર્ય એ છે કે-" સર્વસ્ય " એ સૂત્રાનુસાર
તૈજસ અને કાર્મણ એ બે શરીરો તમામ સંસારી જીવોને હોય છે તેથી
ગર્ભમાં જીવની ઉત્પત્તિ થતી વખતે પણ તેમનો સદ્ભાવ હોય છે, એ દૃષ્ટિએ

ચિહ્નતીનામેફદેશ્ય इति एकाग्रः तेन निष्पन्न ओजः—सारमाहरति—पृष्ठापीति भावः । 'जीवस्स ण मंते' जीवस्य सल्ल भदन्त ! 'गग्मगयस्स समाणस्स' गर्मगतस्य सत् 'अत्थि—उच्चारं इ वा' अस्ति उच्चार इति वा, उच्चारः—पुरीषम् 'पासवणे इ वा' प्रसन्नवर्णमिति वा, प्रसन्नवर्ण—मूत्रम् 'खेछेइ वा' खेस इति वा, खेलाः—छेप्पा, 'सिंघाणे इ वा' सिंघानक मिति वा, सिंघानक—नासि कामल, 'वत्ते इ वा' धान्तमिति वा, धान्त—वमनम्, 'पित्ते इ वा' पित्तमिति वा, हे भदन्त ! गर्मगतस्य जीवस्य मूत्रपुरीषवमनपित्त—छेप्पादिकं भवति किमिति प्रश्नः मगवानाह—'णो इण्हे समहे' नायमयः समर्थः, यत् गर्मगतस्य उच्चारादिकं भवतीति भावः । गौतमः पृच्छति—'से केण्हेणं' सत् केनार्थेन हे भदन्त ! केन कारणेन एवमुच्यते यत् गर्मगतस्य जीवस्योच्चारादिकं न भवतीति । मगवानाह—'गोयमे'त्यादि, 'गोयमा' हे गौतम ! जीवे यं गग्मगय समाणे' जीवः तल्ल

करता है । (जीवस्स ण मंते ! गग्मगयस्स समाणस्स अत्थि उच्चारं वा पासवणेइ वा, खेछेइ वा, सिंघाणेइ वा, वत्तेइ वा, पित्तेइ वा ?) हे भदन्त ! गर्भ में स्थित जीव के मल होता है क्या ? मूत्र होता है क्या ? कफ होता है क्या ? नाक का मेल होता है क्या ? वमन होता है क्या ? पित्त होता है क्या ? (गोयमा ! णो इण्हे समहे) हे गौतम ! यह अर्थ समर्थ नहीं है । अर्थात् गर्मगत जीव के उच्चार (यही नीत) मल होना, पामवण (लघुनील) मल मूत्र आदि का होना यह सब नहीं होता है (से केण्हेणं) हे भदन्त) आप ऐसा किस कारण से कहते हैं कि गर्मगत जीव के मलमूत्र आदि नहीं होते हैं (गोयमा !

જે આહાર કરે છે તે આહારના એકદેશથી એન્ડ્રે કે ખાવામાં આવેલ તે રસવિદ્યુતિયોના એક અંશ વડે તૈયાર થયેલ જે બ્રાજ (સાર) છે, તેના તે આહાર કરે છે (જીવસ્સ ણ મંતે ! ગગ્મગયસ્સ સામાણસ્સ અત્થિ ઉચ્ચારેઈ વા પાસવણેઈ વા લેછેઈ વા, સિંઘાણેઈ વા, વંતેઈ વા, પિત્તેઈ વા ?) હે ભગવન્ ! અર્થમાં રહેલા છપને શુ ઝાડો થાય છે ? પેશાબ થાય છે ? કદ થાય છે ? નાહના લીંડો થાય છે ? ઉલટી થાય છે ? પિત્ત થાય છે ? (ગોયમા ! ણો ઇણ્હે સમહે) હે ગૌતમ ! તે અર્થ જરાબર નથી—એન્ડ્રે કે અર્થમાં રહેલ છપને ઉચ્ચાર (ઝાડો) પાસવળ (પેશાબ) વગેરે કંઈ પણ થતું નથી. (સે કેણ્હેણં) ઇત્યાદિ હે ભગવન્ ! આપ શા કારણે બોલું કહો છો કે ગમગત છપને ઝાડો પેશાબ વગેરે કંઈ પણ થતું નથી ? (ગોયમા ! જીવે જં ગગ્મગય સમાણે

આર્તવમ્ શોણિતમિત્યર્થઃ, 'પિડસુક્રં' પિતૃશુક્રં, પિતૃવીર્યમાહરતીતિ સમ્બન્ધઃ। 'તં' इति आहारम्, कीदृशमित्याह—'तदुभयसंसिद्धं' 'तदुभयसंश्लिष्टं, तदुभयेन-मात्रोज.पितृशुक्ररूपेण संश्लिष्टं=संमिलितम्, अत एव कलुपम्=अतिघृणितम् आहारम् 'किञ्चिदसं' किल्विपम्=अपवित्रम्, एतादृशम् आहारं 'तप्पढमयाए' तत्प्रमतया सर्वतः प्रथमम् 'आहारेइ' आहरति, गर्भे उत्पद्यमानस्य आहारं निरूप्य सम्प्रति गर्भगतः सन् जीवः कीदृशमाहारमाहरतीति निरूपयति—'जीवे णं भंते' इत्यादि। 'जीवे णं भंते' जीवः खलु भदन्त ! 'गव्भगए समाणे' गर्भगतः सन् 'किं आहारं आहारेइ' कमाहारमाहरति, भगवानाह—'गोयमे'—त्यादि। 'गोयमा' हे गौतम ! 'जं से माया' यास्तस्य माता, या इति यद्रपाः, 'णाणा विहाओ' नानाविधा—अनेकप्रकारकाः, 'रसविगईओ' रसविकृतीः—रसरूपाविकृतीः दुग्धदध्यादिरूपाः 'आहारं आहारेइ' आहारमाहरति, आहारतया गृह्णाति, 'तदेगदेसेण ओयं आहारेइ' तदेकदेशेन ओज आहरति, तदेकदेशेन तासां

किञ्चिदસં તપ્પદમયાએ આહારં આહારેइ) हे गौतम । जीव जब माता के गर्भ में उत्पन्न होता है—तब वह सर्व से प्रथम माता का ओज—आर्तव—अर्थात् शोणित और पिता का शुक्र इन दोनों से मिश्रित जो आहार होता है उसे ग्रहण करत है । यह आहार अतिघृणित होता है । तथा अपवित्र होता है, क्योंकि यह माता के शोणित और पिता के वीर्य से मिश्रितरूप होता है । (जीवे णं भंते । गव्भगए समाणे किं आहारं आहारेइ) हे भदन्त । जीव जब तक माता के गर्भ में रहता है तबतक वह क्या आहार करता है ? (गोयमा ! जं से माया णाणाविहाओ रसविगईओ आहारं आहारेइ, तदेगदेसेण ओयं आहारेइ) हे गौतम ! जो उसकी माता दूध, दही आदिरूप नाना प्रकार की विकृतियों का आहार करती है उस आहार के एकदेश से अर्थात् उपभुक्त उन रस विकृतियों के एकांश से निष्पन्न जो ओज है—सार है—उसका वह आहार ग्रहण

ઉત્તર—(ગોયમા ! માઉઓયં પિડસુક્રં તં તદુભયસસિદ્ધ કલુસં, કિઞ્ચિદસં તપ્પદમયાએ આહાર આહારેइ) હે ગૌતમ ! બ્યારે જીવ માતાના ગર્ભમાં ઉત્પન્ન થાય છે ત્યારે માતાનું ઓજ (આર્તવ, શોણિત) અને પિતાનું શુક્ર, એ બન્નેથી મિશ્રિત જે આહાર હોય છે તે ખાય છે માતાના શોણિત અને પિતાના શુક્રથી મિશ્રિત હોવાને કારણે તે આહાર ઘૃણિત (મેઘો) અને અપવિત્ર હોય છે. (જીવે ણં ભંતે ! ગવ્ભગએ સમાણે કિં આહાર આહારેइ ?) હે ભગવન્ ! જીવ માતાના ગર્ભમાં રહે ત્યાં યુધી કયો કયો આહાર લે છે ? (ગોયમા ! જં સે માયા ણાણાવિહાઓ રસવિગઈઓ આહાર આહારેइ, તદેગદેસેણ ઓય આહારેइ) હે ગૌતમ ! તેની માતા દૂધ, દહીં વગેરે રૂપ વિવિધ પ્રકારની વિકૃતિયો વાળો

હારમાહર્ષુમ્, હે મદન્ત ! ગર્ભસ્થો જીવ મુલ્કેનાહારમાહર્ષુ સમર્થો મવેદિતિ પ્રશ્નઃ । મગધાનાહ—‘ગોયમા’ સ્થાવિ । ‘ગોયમા’ હે ગૌતમ ! ‘જો’ જ્ઞાત્તે સમ્પ્તે’ નાપમર્થ સમર્થ, ગર્ભગતો જીવો મુલ્કેન કાષલિકમાહારં નાહરતીતિ । સત્કારણં પૃચ્છતિ—‘સે કેળદ્દેણં’ સત્કેનાર્યેન, કેન કારણેન હે મદન્ત ! એવમુચ્યતે યત્ ગર્ભગતો જીવો કાલિકમાહારમાહર્ષુ ન સમર્થ સ્તિ । મગધાનાહ—‘ગોયમા’ સ્થાવિ, ‘ગોયમા’ હે ગૌતમ ! ‘જીવેણં ગમ્મગણ સમાણે સન્નમ્મો આહારે’ જીવઃ સ્વલ્લ ગર્ભગત સન્ સર્વતઃ સર્વાત્મના આહરતિ, ‘સન્નમ્મો પરિણામે’ સર્વતઃ સર્વાત્મના પરિણમયતિ ‘સન્નમ્મો ઉસ્સસહ’ સર્વતઃ સર્વાત્મના ઉચ્છ્વસતિ, શ્વાસ શુદ્ધાતિ, ‘સન્નમ્મો નિસ્સસહ’ સર્વતો નિશ્વસતિ, સર્વાત્મના શ્વાસ શુદ્ધાતિ, ‘અમિ-ક્ષણ આહારે’ અમીક્ષણમાહરતિ પુનઃ પુનરાહરતીત્યર્થ, ‘અમિક્ષણ પરિણામે’

આહરિત્તપ) હે મદન્ત ! ગર્ભગત જીવ કયા મુલ્ક સે ફલતરૂપ નિષાલા આહાર કરને મેં સમર્થ હે ? (ગોયમા ! જો જ્ઞાત્તે સમ્પ્તે) હે ગૌતમ ! યહ કર્થ સમર્થ નહીં હે । અર્થાત્ ગર્ભગત જીવ મુલ્ક સે કાલિક આહાર લેને મેં સમર્થ નહીં હે । (સે કેળદ્દેણં) હે મદન્ત ! આપ એસા કિસ કારણ સે કહતે હો કિ ગર્ભગત જીવ કાલિક રૂપ આહાર લેને મેં સમર્થ નહીં હે ? (ગોયમા ! જીવે જ ગમ્મગણ સમાણે સન્નમ્મો આહારે) હે ગૌતમ ! ગર્ભ મેં રહા હુઆ જીવ સર્વાત્મના શ્વાસ હે (સન્નમ્મો પરિણામે) શ્વાસ હુવ કો સર્વાત્મના પરિણમાતા હે । (સન્નમ્મો નિસ્સસહ) સર્વાત્મના બહ શ્વાસ લેતા હે (સન્નમ્મો નિસ્સસહ) સર્વાત્મના બહ નિશ્વાસ લેતા હે, અર્થાત્ સર્વાત્મના બહ શ્વાસ કો છોડતા હે । (અમિ ક્ષણ આહારે) વાર ૨ બહ આહાર લેતા હે । (અમિક્ષણ પરિણામે)

આહાર આહરિત્તપ ?) હે ભગવન્ ! શુ ગભ માં રહેલો છવ ખુખરી કવલાહાર (ઠાળીયા વટે ખાતું તે) અહલુ કરવાને સમર્થ હોય છે ? (ગોયમા ! જો જ્ઞાત્તે સમ્પ્તે) હે ગૌતમ ! તે અથ બરાબર નથી, ક્યેલે કે ગભ માં રહેલ છવ ખુખરી કવલાહાર લેવાને સમર્થ હોતો નથી. (સે કેળદ્દેણ) હે ભગવન્ ! આપ શા કારણે ક્યેલું કહો છો કે ગભ માં રહેલો છવ કવલ આહાર અહલુ કરવાને સમર્થ હોતો નથી ? (ગોયમા ! જીવેણ ગમ્મગણ સમાણે સન્નમ્મો આહારે) હે ગૌતમ ! ગભ માં રહેલો છવ સવ આત્મપ્રદેશો વટે ખાતું છે (સન્નમ્મો પરિણામે) આધિયા બધા આહારને સવ આત્મપ્રદેશો વટે પરિણમાયે છે (સન્નમ્મો ઉસ્સસહ) સવ આત્મપ્રદેશો વટે તે શ્વાસ લે છે (સન્નમ્મો નિસ્સસહ) અને સવ આત્મપ્રદેશો વટે નિશ્વાસ છોડે છે (અમિક્ષણ આહારે) તે વાર વાર આહાર

ગર્ભગતઃ સન્ 'જં આહારેહ તં ચિનાહ' યદાહરતિ તત્ ચિનોતિ, 'તં સોહંદિય-
ત્તા' તત્ શ્રોત્રેન્દ્રિયતયા 'જાવ ફાસિંદિયત્તા' યાવત્ સ્પર્શનેન્દ્રિયતયા, યાવત્
પદેન-ચક્ષુરસનઘ્રાણેન્દ્રિયાણાં-પરિગ્રહો ભવતિ, 'અદ્દિ અદ્દિમિંજકેસમંસુરોમનહ-
ત્તા' અસ્થિસ્થિમજ્જાકેશઞ્મશ્મુરોમનઘ્વતયા, તત્ર-'અદ્દિમિંજ'-ત્તિ અસ્થિમજ્જા
તયા-અસ્થિગતધાતુવિશેષતયા 'કેસ' ત્તિ, કેશતયા 'મંસુ' ત્તિ ઞ્મશ્મુતયા 'રોમ'ત્તિ,
રોમતયા 'નહ'ત્તિ નઘ્વતયા ચ ચિનોતીતિ સમ્બન્ધઃ, ચિનોતિ પરિણમયતીતિ ભાવઃ ।
'સે તેણદ્દેણં' તત્ તેનાર્થેન હે ગૌતમ ! એવમુચ્યતે યદ્ ગર્ભગતસ્ય જીવસ્ય
ઉચ્ચારાદિકં ન ભવતિ, આહ્રિયમાણાહારસ્ય યદિ કોપ્યશોઽવશિષ્ટો ભવેત્તદા
તન્નિઃસરણાત્મકમલાદીનાં સંભાવના ભવેન્નત્તેવમ્ આહ્રિયમાણાહારસ્ય શ્રોત્રેન્દ્રિયાદિ
રૂપેણ પરિણતત્વાત્ । 'જીવે ણં મંતે' જીવઃ સ્વલુ ભદન્ત ! 'ગઘ્મગણ સમાણે'
ગર્ભગતઃ સન્ 'પમ્મુ મુદ્દેણં કાવલિયં આહારં આહરિત્તા' પ્રમુમુક્ષેન કાવલિકમા-

જીવેણં ગઘ્મગણ સમાણે જં આહારેહ, તં ચિનાહ) હે ગૌતમ ! ગર્ભસ્થિત જીવ
જો આહાર કરતા હૈ વહ ઉસકા ચય કરતા હૈ । (તં સોહંદિયત્તા જાવ
ફાસિંદિયત્તા, અદ્દિ, અદ્દિમિંજ, -કેસ, -મંસુ-રોમ, -નહત્તા પરિણામેહ
સે તેણદ્દેણં) ઉસે વહ શ્રોત્રેન્દ્રિય રૂપ સે યાવત્ સ્પર્શન દ્વન્દ્રિયરૂપ સે,
અસ્થિ-હઢીરૂપ સે, અસ્થિમજ્જા-અસ્થિગત ધાતુવિશેષરૂપ :સે કેશરૂપ
સે, ઞ્મશ્મુરૂપ સે, રોમરૂપ સે, નઘ્વરૂપ સે, પરિણમાતા હૈ । હસ કારણ હે
ગૌતમ ! મૈને એસા કહા હૈ કિ ગર્ભગત જીવ ઉચ્ચાર આદિક નહીં કરતા
હૈ । આહ્રિયમાણ આહાર કા યદિ કોઈ અંશ વાકી વચા રહે તો ઉસે નિકા-
લને રૂપ મલાદિકોં કી સંભાવના હો સકતી હૈ, પરન્તુ એસા તો હોતા નહીં
હૈ, કયોં કિ આહ્રિયમાણ આહાર શ્રોત્રેન્દ્રિયાદિરૂપ સે પરિણત હોતા રહતા
હૈ । (જીવે ણં મંતે ! ગઘ્મગણ સમાણે પમ્મુ મુદ્દેણં કાવલિયં આહારં

જં આહારેહ, ત ચિનાહ) હે ગૌતમ ! ગર્ભમા રહેલ જીવ જે આહાર કરે છે,
તેનો તે ચય કરે છે (ત સોહંદિયત્તા જાવ ફાસિંદિયત્તા અદ્દિ, અદ્દિમિંજ,
કેસ, મસુ, રોમ, નહત્તા સે તેણદ્દેણં) તેને તે ગર્ભનો જીવ શ્રોત્રેન્દ્રિયથી લઇને સ્પ
શેન્દ્રિય રૂપે, અસ્થિ (હાડકા) રૂપે, અસ્થિમજ્જા રૂપે, કેશ રૂપે, શ્મશ્મુ (દાઢી) રૂપે,
રોમ રૂપે, અને નખ રૂપે પરિણમાવે છે તે કારણે, હે ગૌતમ ! મે એવું કહ્યું છે કે
ગર્ભમાં રહેલ જીવ મળ, મૂત્રાદિ કરતો નથી આહાર રૂપે ગ્રહણ કરાયેલ આહારનો
કોઇ ભાગ જે ચય પામ્યા વિનાનો બાકી રહે તો તેને આહાર કાઢવા માટે
બાહ્ય, પેશાબ વગેરે જરૂરીયાત રહે છે પણ ગર્ભમાં રહેલ જીવની બાબતમાં
એવું બનતું નથી કારણ કે આહાર રૂપે ગ્રહણ કરાયેલ ખોરાક શ્રોત્રેન્દ્રિય
આદિ રૂપે પરિણમતો રહે છે. (જીવે ણ મંતે ! ગઘ્મગણ સમાણે પમ્મુમુદ્દેણ કાવલિયં

‘પુત્રજીવરસહરણી’ પુત્રજીવરસહરણી, एते द्वे नाड्यौ स्तः, तयोर्मध्ये आधा या मातृजीवरसह्रणी सा, ‘मातृजीवपट्टिषट्पा’ मातृजीवपट्टिषट्पा પુત્રજીવસ્પૃષ્ટા, इयं रसप्रादिका नाडी मातृजीवपट्टिषट्पा-मातृजीवेन सह सप्तदा, तथा सप्त नाडी पुत्रजीवस्पृष्टा इति पुत्रजीव स्पर्शिका भवति, इ प्रतिषट्पत्ता च गाढसंबन्ध, मातृजीवસ્पर्शानुरूपत्वात्तस्या, स्पृષ્ટता च सप्तमन्मासम्, यतो न सा पुत्रजीवસ્पर्शानुरૂपा, मातृजीવપટ્ટિષટ્પા કેવલં પુત્રજીવ સ્પૃષ્ટસ્યેવેતિ ‘તમ્હા આહારેહ’ તસ્માદાહરતિ યસ્માત્ एवं સસ્માત્ પારણાત્ માતૃજીવપટ્ટિષટ્પા રસહરણ્યા નાડયા પુત્રજીવેન સહ સ્પર્શનાત્ ગર્ભગતો જીવ આહરતિ=આહાર

કો હરણ કરને ઘાલી નાહી નાભિનાલ હોતા હૈ । ક્યોંકિ માતા દ્વારા ઉપસુક્ત આહાર કા રસ ગર્ભગત જીવ કો હસી કે દ્વારા મિલતા રહતા હૈ । હસલિયે “રસો ત્રિપતે-ભાડીયતે યવા સા રસહરણી” વેસી રસહરણી શબ્દ કી વ્યુત્પત્તિ ટીકાકાર ને કી હૈ । (પુત્રજીવરસહરણી) પુત્રજીવરસહરણી-યહ બી એક નાડી હોતી હૈ । હસ તરફ વે દો નાડિયાં હૈ । इनके बीचमें जो आदि की नाडी मातृजीवरसह्रणी है वह (मातृजीवपट्टिषट्पा) मातृजीव के साथ सप्तदा रहती है । और पुत्र जीव के साथ स्पृष्ट होती है । प्रतिषट्पत्ता शब्द का तात्पर्य गाढसंबन्ध से है, क्योंकि वह प्रतिषट्पत्ता मातृजीव के अंशरूप होती है । और स्पृષ્ટता का तात्पर्य सामान्य संबन्ध से है, क्योंकि यह स्पृષ્ટता पुत्र जीव के अंशरूप नहीं होती है । मातृजीव प्रतिषट्पा नाडी केवल पुत्र जीवका स्पर्श ही करती है । (तम્हा आहारेह) हसलिये वह आहार करता है । तात्पर्य यह है कि मातृजीवપટ્ટિષટ્પા રસહરણી નાડી પુત્ર જીવ

નાડી-નાભિનાલ-માતા વડે આહાર રૂપે પ્રકરુ કરાયેલ આહારનો રસ બહુ સ્થળે તે નાભિનાલ વડે મેળવતો રહે છે તેથી “રસો ત્રિપતે-ભાડીયતે યવા સા રસહરણી” એવી રસહરણી શબ્દની વ્યુત્પત્તિ ટીકાકારે કરી ॥ (પુત્રજીવરસહરણી) પુત્રજીવરસહરણી-તે પણ એક નાડી હોય છે તેમાની પહેલી માતૃજીવરસહરણી નાડી (માતૃજીવપટ્ટિષટ્પા) માતાના જીવ સાથે બધાયેલી રહે છે અને પુત્રના જીવ સાથે પણ સ્પૃષ્ટ હોય ॥ પ્રતિષટ્પત્તિ એટલે ગાઢ સંબંધ. કારણ કે તે પ્રતિષટ્પત્તિ માતૃજીવના અંશરૂપ હોય છે સ્પૃષ્ટતા એટલે સામાન્ય સંબંધ કારણ કે તે સ્પૃષ્ટતા પુત્રજીવના અંશ રૂપ હોતી નથી. માતાના જીવ સાથે બધાયેલી નાડી માત્ર પુત્રના જીવનો સ્પર્શ જ કરે છે (તમ્હા આહારેહ) તેથી તે આહાર કરે ॥ કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે માતૃજીવપટ્ટિષટ્પા રસહરણી નાડી પુત્ર જીવની સાથે સ્પર્શ કરે છે, તે કારણે

અમીક્ષણં=પૌનઃપુન્યેન પરિણમયતિ, 'અમિક્ષણં ઉસ્સસહ' અમીક્ષણમુચ્છ્વસતિ 'અમિક્ષણં નિસ્સસહ' અમીક્ષણં નિઃશ્વસતિ, કદાચિત્ 'આહચ્ચ આહારેહ' આહત્યા-
હરતિ-વિરમ્ય વિરમ્ય આહરતિ, 'આહચ્ચ પરિણમેહ' આહત્ય પરિણમયતિ, 'આહચ્ચ
ઉસ્સસહ' આહત્યોચ્છ્વસતિ, આહચ્ચ નિસ્સસહ' આહત્ય નિઃશ્વસતિ, કદાચિદા-
હારાદિકં કરોતિ ગર્ભગતો જીવઃ કદાચિદાહારાદિકં ન કરોતિ, એતાદૃશસ્વભાવ-
ત્વાત્તસ્ય, ગર્ભગતો જીવઃ કથં સર્વત આહારં કરોતીત્યાહ-'માઝજીવે'-ત્યાદિ ।
'માઝજીવરસહરણી' માતૃજીવરસહરણી, રસો હ્રિયતે આદીયતે યયા સા રસ-
હરણી નાભિનાલમિત્યર્થઃ, માતૃજીવસ્ય રસહરણીતિ માતૃજીવરસહરણી, તથા

વાર ૨ વહ લિયે હુણ આહાર કો વાર ૨ પરિણમાતા હૈ । (અમિક્ષણં-
ઉસ્સસહ) વાર ૨ વહ શ્વાસ લેતા હૈ । (અમિક્ષણં નિસ્સસહ) વાર ૨ વહ
શ્વાસ છોડતા રહતા હૈ । (આહચ્ચ આહારેહ) કદાચિત્ વહ ઠહર ઠહર
કર આહાર કરતા હૈ । (આહચ્ચ પરિણમેહ) કદાચિત્ વહ ઠહર ૨ કર
ઉસ કૃત આહાર કો પરિણમાતા હૈ । (આહચ્ચ રસસહ) કદાચિત્
ઠહર ૨ કર વહ શ્વાસ લેતા હૈ । (આહચ્ચ નિસ્સસહ) કદાચિત્ વહ
ઠહર ૨ કર નિઃશ્વાસ લેતા હૈ । તાત્પર્ય ઇસ કથન કા યહ હૈ કિ ગર્ભ-
ગત જીવ કદાચિત્ આહાર આદિ કરતા ખી હૈ ઓર, કદાચિત્ આહાર
આદિ નહીં ખી કરતા હૈ, ક્યોં કિ ઉસકા એસા હી સ્વભાવ હોતા હૈ ।
ગર્ભગત જીવ સર્વાત્મના કૈસે આહાર કરતા હૈ ? ઇસકે સમાધાન
નિમિત્ત ભગવાન્ કહતે હૈં કિ (માઝજીવરસહરણી) માતૃજીવ રસ
હરિણી-યહાં માતૃ જીવ રસહરિણી શબ્દ કા અર્થ-માતૃ જીવ કે રસ

લે છે (અમિક્ષણં પરિણમેહ) અને વાર વાર ગ્રહણ કરેલા આહારને વાર વાર
પરિણમાવે છે (અમિક્ષણં ઉસ્સસહ) વાર વાર તે શ્વાસ લે છે, (અમિક્ષણં
નિસ્સસહ) વાર વાર તે શ્વાસ છોડે છે (આહચ્ચ આહારેહ) ક્યારેક તે થોલી
થોલીને પણ આહારને લે છે. (આહચ્ચ પરિણમેહ) ક્યારેક થોલી થોલીને
તે આહારને તે પરિણમાવે છે (આહચ્ચ ઉસ્સસહ) અને ક્યારેક થોલી થોલીને
તે શ્વાસ લે છે (આહચ્ચ નિસ્સસહ) અને ક્યારેક થોલી થોલીને તે નિઃશ્વાસ
છોડે છે-આ કથનનું તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે-ગર્ભમાં રહેલો જીવ ક્યારેક આહાર
વગેરે ગ્રહણ કરે છે અને ક્યારેક આહારાદિ ગ્રહણ નથી પણ કરતો કારણ
કે તેનો એવો સ્વભાવ હોય છે ગર્ભમાં રહેલો જીવ સર્વ આત્મપ્રદેશો વડે કેવી
રીતે આહાર લે છે તે સમજાવવા માટે ભગવાન કહે છે કે-(માઝજીવરસ-
હરણી) માતૃજીવરસહરિણી-એટલે કે માતૃજીવના રસનું હરણ કરનારી

‘સે તેણદ્વેષ’ તથેનાર્યેન, તેન કારણેન ‘જાવ નો પમૂ મુદ્દેષ’ કાવલિય આહારં આહરિષ્ણ’ યાવન્ નો પ્રમુઃ મુલ્કેન કાવલિકમાહારમાદર્તુમ્, મત્ર યાવ ત્વદન—‘હે ગૌતમ ! એમુચ્યસે જીવઃ સ્વલુ ગર્મગત સન્’ ઇતિ સપ્રહઃ । પૂર્વોક્ત કારણેન ગર્મગતો જીવો મુલ્કેન કાવલિકમાહારં કર્ણુ ન સમર્થ ઇતિ ।

ગર્માધિકારાદેવ ગર્મગત જીવસ્યાઙ્ગવિષયે પ્રાહ—‘કઈ ણં મંતે’ ઇત્યાદિ । ‘કઈ ણં મંતે’ કસિ સ્વલુ મદન્ત ! માઈ અંગા પક્ષત્તા’ માપ્રંગાનિ પ્રજ્ઞતાનિ, મગધાનાહ—‘ગોયમા’ ઇત્યાદિ । ‘ગોયમા’ હે ગૌતમ ! ‘તમો માઈ યગા પક્ષત્તા’ ત્રિપિ માપ્રજ્ઞાનિ પ્રજ્ઞતાનિ ‘સં જહા’ તથયા—‘મંસ સોનિય-મરયુલ્લો’ માંસ ઘોણિત મસ્થુલુગમ્—મસ્થુલુગ્ગ=મસ્તિક મસ્તકાન્તઃ સ્થિતસ્તિગ્વપરાય વિશેષઃ ‘મેમા’ ઇતિ પ્રસિદ્ધમ્, ‘કઈ ણં મંતે પિદ્યંગા પક્ષત્તા’ કસિ સ્વલુ મદન્ત ! પિત્રજ્ઞાનિ પ્રજ્ઞતાનિ, મગધાનાહ—‘ગોયમે’ સ્પાદિ, ‘ગોયમા’ હે ગૌતમ ! તઓ પિદ્યંગા પક્ષત્તા’ શ્રીણિ પિત્રજ્ઞાનિ પ્રજ્ઞતાનિ ‘સં જહા’ તથયા—‘અદ્ધિ અદ્ધિ

પુત્ર કી નામિ મેં ઓર માતા કે હૃદય મેં નાહી સંપંચિત હૈ । इसी नाही से गर्मगत जीव कुल्यासे खेतमें पानी पहुंचाने के स्थानरूप नाही से कैदार (क्यारा) की तरह पुष्ट होता रहता है ॥१॥

(સે તેણદ્વેષ) હસ કારણ હે ગૌતમ ! મેં એસા કહતા છુ કિ (જાવ નો પમૂ મુદ્દેષ) કાવલિય આહારં આહરિષ્ણ) ગર્મગત જીવ મુલ્ક સે કબલરૂપ આહારકો લેને કે કિયે સમર્થ નહીં હૈ ।

ગર્મ કા અધિકાર હોને સે હી સૂત્રકાર અવ ગર્મગત જીવ કે અંગ કે વિષય મેં પ્રસોત્તરપૂર્વક સૂત્ર કહતે હૈ—(કઈ ણં મંતે ! માઈઅંગા પક્ષત્તા) હે મદન્ત ! માતા કે અંગ કિતને કહે ગયે હૈ ? (ગોયમા ! તઓ માઈ અંગા પક્ષત્તા, ત જહા મંસે, સોનિય, મસ્થુલુગે) હે ગૌતમ ! માતા કે અંગ

(સે તેણદ્વેષ) હે ગૌતમ ! તે કારણે હું એવું કહું છું કે (જાવ નો પમૂ મુદ્દેષ) કાવલિય આહારં આહરિષ્ણ) ગર્મગત જીવ મુલ્ક સે કબલરૂપ આહારકો લેને કે કિયે સમર્થ નહીં હૈ ।

ગર્મનો અધિકાર બાહ્યતા હોવાથી હવે સૂત્રકાર ગર્મમાં રહેલ એવાં બળિયા વિષયમાં પ્રસોત્તર પૂર્વક સૂત્ર કહે છે (કઈ ણં મંતે ! માઈઅંગા પક્ષત્તા) હે મગધન ! ગર્મમાં રહેલ એવાં માતાના બળો કેટલા હોય છે ? (ગોયમા ! તઓ માઈઅંગા પક્ષત્તા—ત જહા—મંસે સોનિય, મસ્થુલુગે) હે ગૌતમ ! માતાના ત્રણ બળ તેને હોય છે—(૧) માંસ, (૨) શોષિત, (૩) અધિ અને (૪) મગધ (કઈ ણં મંતે ! પિદ્યંગા પક્ષત્તા ?) હે મગધન ! તે એવને પિતાના કેટલાં બળો હોય છે ? (ગોયમા ! તઓ પિદ્યંગા પક્ષત્તા) હે ગૌતમ ! તે એવને

કરોતિ 'તમ્હા પરિણામેઈ' તસ્માત્ પરિણમયતિ, તસ્માદેવ કારણાત્તદ્ આહતમાહારં પરિણમયતિ । 'અવરાવિ ય ણં' અપરાપિ ચ સ્પર્શિકા ચલુ અપરા=અન્યા યા 'પુત્તજીવસહરણી' પુત્રજીવસહરણી સા 'પુત્તજીવપઢિવદ્ધા' પુત્રજીવપ્રતિવદ્ધા, પુત્રજીવેન સહ સંવદ્ધા સૈવ, 'માઝજીવફુડા' માતૃજીવસ્પૃષ્ટા, માતૃજીવસ્ય કેવલં સ્પર્શં કુર્વતી, યસ્માદેવમ્ 'તમ્હા' તસ્માત્ કારણાત્ ગર્ભગતો જીવઃ 'ચિણાઈ' ચિનોતિ, પુષ્ણાતિ સામાન્યેન શરીરાદિકં પુષ્ટં કરોતિ, એવમ્ 'તમ્હા ડવચિણાઈ' તસ્માદુપચિનોતિ, તસ્માદેવકારણાત્ વિશેષતયા પુષ્ણાતિ=પુષ્ટં કરોતિ શરીરાદિકં ગર્ભગતો જીવ ઇતિ । ઉક્ત ચ—

“પુત્રસ્ય નાભૌ માતૃશ્ચ, હૃદિ નાડી નિવધ્યતે ।

યયાસૌ પુષ્ટિમાપ્નોતિ, કેદાર ઇવ કુલ્યયા ” ॥૧૧॥

કે સાથ સ્પર્શ કરતી હૈ, હસ કારણ ગર્ભગત જીવ ડસ માતૃજીવપ્રતિ વદ્ધ નાડી દ્વારા આહાર લેતા હૈ । (તમ્હા પરિણામેઈ) હસી કારણ વહ આહત આહાર કો પરિણમાતા હૈ । (અવરા વિ ય ણ પુત્તજીવપઢિવદ્ધા માઝજીવફુડા તમ્હા ચિણાઈ તમ્હા ડવચિણાઈ) તથા દૂસરી નાડી જો પુત્ર જીવસહરણી હૈ વહ પુત્ર જીવકે સાથ સંવદ્ધ હૈ ઓર માતૃજીવ કો સ્પર્શ કરતી હૈ । હસકારણ ગર્ભગત જીવ સામાન્યરૂપ સે અપને શરીર આદિ કો પુષ્ટ કરતા રહતા હૈ । વિશેષરૂપ સે પુષ્ટ કરતા રહતા હૈ । કહા ખી હૈ—

“પુત્રસ્ય નાભૌ માતૃશ્ચ હૃદિ નાડી નિવધ્યતે ।

યયાસૌ પુષ્ટિમાપ્નોતિ કેદાર ઇવ કુલ્યયા ॥૧૧॥”

ગર્ભમાં રહેલ જીવ માતૃજીવપ્રતિવદ્ધ નાડી વડે આહાર લે છે (તમ્હા પરિણામેઈ) તેથી આહાર કરેલ આહારને પરિણુમાવે છે (અવરા વિ ય ણ પુત્તજીવપઢિવદ્ધા માઝજીવફુડા-તમ્હા ચિણાઈ, તમ્હા ડવચિણાઈ) તથા બીજી પુત્ર જીવસહરણી નામની નાડી પુત્ર જીવની સાથે અંધાયલી છે અને માતાના જીવને માત્ર સ્પર્શ જ કરે છે તે કારણે ગર્ભમાં રહેલ જીવ સામાન્ય રૂપે તથા વિશેષરૂપે માતાના શરીર વગેરેની પુષ્ટિ કરતો રહે છે,

કહ્યું પણ છે કે—

“પુત્રસ્ય નાભૌ માતૃશ્ચ, હૃદિ નાડી નિવધ્યતે ।

યયાસૌ પુષ્ટિમાપ્નોતિ, કેદાર ઇવ કુલ્યયા ॥૧૧॥”

પુત્રની નાભિમાં અને માતાના હૃદયમાં નાડી સંબંધિત છે જેવી રીતે કંથ્યાથી—જેતરમાં પાની પહોચ્યાડવાની નીક વડે જેતરને પોષણ મળ્યા કરે છે, એવી રીતે તે નાડી વડે ગર્ભમાં રહેલ જીવને પોષણ મળ્યા કરે છે ॥૧૧॥

વ-ને ' અઘ્યાપન્નમ્, ધ્યાપન્નમ્ વિનષ્ટમ્ તન્નિષેધાત્ અઘ્યાપન્નમ્ અવિનષ્ટમિત્યર્થઃ,
 મવતિ=તિષ્ઠતિ, ' ઇવતિયં કાલં સચિદ્દહ ' ઇત્યાન્તં કાલ સંવિષ્ટતે ' અદે ણં '
 અય સ્વલુ-શરીરપાપ્ત્યનન્તરમ્ ' સમપ સમપ ' સમયે સમયે-પ્રતિષ્ઠનમિત્યર્થઃ,
 ષોક્કસિજ્જમાણે ષોક્કસિજ્જમાણે ' વ્યપકુપ્પમાણ વ્યપકુપ્પમાણ-પ્રતિસમય દીય-
 માનં સત્ ' ધરમકાલસમયસિ ' ધરમકાલસમયે-મરણસમય ' વોચ્છિન્ને મવહ '
 મ્યુચ્છિન્ન મવતિ-નષ્ટં મવતીતિ ॥ સૂ. ૪ ॥

ગર્મસ્યૈવાધિકારાત્ ગર્મગત્તઝીવસ્ય ગત્યન્તરગમનં પ્રદર્શયન્ પ્રાહ- જીવે ણં મતે' ૧

મૂલ્ક-જીવે ણ મતે ! ગત્તમગપ સમાણે નેરહપસુ ઉવવ
 જ્ઞેજ્ઞા, ગોયમા ! અત્યેગહપ ઉવવજ્જેજ્ઞા, અત્યેગહપ નો
 ઉવવજ્જેજ્ઞા, સે કેણદ્દેણ ગોયમા ! સે ણં સન્નીપર્વિદિપ
 સવ્વાહિં પજ્જત્તિહિ પજ્જત્તપ, વીરિયલદ્ધીપ, વેડવિવયલદ્ધીપ,
 પરાણીય આગય સોજ્ઞાનિસમ્મ પપસે નિચ્છુમહ, નિચ્છુમિત્તા
 વેડવિવયસમુગ્ધાપણ સમોહણહ, સમોહણિત્તા વાડરગિણિં સે

સંચિદ્દહ) હે ગૌતમ ! જિતને કાલતક ઇસકા મધધારણીય શરીર
 વિનષ્ટ નહીં હોતા હૈ ઇતને કાલતક ઠહરતા હૈ । (અદે ણં સમપ સમપ
 ષોક્કસિજ્જમાણે ૨ ધરમકાલસમયસિ વોચ્છિન્ને મવહ) ફિર સમય
 પર છીજતા હુઆ વહ અન્તસમય મેં નષ્ટ હો જાતો હૈ । તાત્પર્ય હસ
 પ્રશ્નોત્તરકા પેસા હૈ કિ ગર્મગત જીવકે શરીરમેં માતા પિતાકે પ્રાસ અંગ તથ
 તક રહતે હૈ કિ જયતક ઇસકા મધધારણીય શરીર-જન્મસે લેકર મરણ
 પર્યન્ત રહનેવાલા શરીર-રહતા હૈ । જૈસે ૨ વહ મધધારણીય શરીર સમય
 ૨ મેં હીન હોતા જાતા હૈ વૈસે ૨ વે અંગ મી હીન હોતે જાતે હૈ, ઔર
 મધધારણીય ઇસ શરીરકે નષ્ટ હોતે હી વે અંગ મી નષ્ટ હો જાતે હૈ ॥ સૂ. ૪ ॥

શ્રીય શરીર નાશ પામતુ નથી ત્યાં સુધી તે શરીર રહે છે (અદે ણં સમપ
 સમપ ષોક્કસિજ્જમાણે ૨ ધરમકાલસમયસિ વોચ્છિન્ને મવહ) ત્યાર બાદ પ્રત્યેક
 સમયે છીજતુ (શ્રીય થતુ) તે શરીર અત સમયે નાશ પામે છે આ પ્રશ્નો
 ત્તરેણ તાત્પર્ય એ છે કે ત્યાં સુધી ભવધારણીય શરીર-જ મધી લઈને મરણ
 પર્વન્ત રહેનાર શરીર-રહે છે ત્યાં સુધી બળમાં રહેલ છવ પ્રાસ કરેલાં
 માતાપિતાનાં અંગો તેને રહે છે જેમ જેમ તે ભવધારણીય શરીર સમયે સમયે
 શ્રીય થતુ બાધ છે તેમ તેમ તે અંગો પણ શ્રીય થતાં બાધ છે અને તે
 ભવધારણીય શરીર નાશ પામતાં જ તે અંગો પણ નષ્ટ થઈ જાય છે ॥ સૂ. ૪ ॥

મિંજા 'કેસમંસરોમનહે' અસ્થિ અસ્થિમજ્જાકેશશ્મશ્રુરોમનસ્વાઃ, ગર્ભસ્થિતજીવસ્ય શરીરે માંસશોણિતમસ્તુલુજ્ઞાનિ માતુઃસકાશાદાગતાનિ તથા અસ્થ્યસ્થિમજ્જાકેશશ્મશ્રુરોમનસ્વાઃ પિતુઃ સકાશાદાગતાનિ ભવન્તીતિ ભાવઃ । ગર્ભગતસ્ય જીવસ્ય માતૃપિત્રવયવપ્રાપ્તશરીરં—કિયત્કાલપર્યન્તં તિષ્ઠતીત્યાવેદયિતુમાહ—‘અમ્માપિહ્ણ’ ઇત્યાદિ । ‘અમ્માપિહ્ણ ણં મંતે સરીરણ’ અમ્વાપૈતૃકં સ્વલુ ભદન્ત ! શરીરકં ‘કેવહ્ણયં—કાલં સંચિદ્દહ’ કિયત્કાલં સંતિષ્ઠતે, હે ભદન્ત !, મગવાનાહ—‘ગોયમે’ ત્યાદિ । ‘ગોયમા’ હે ગૌતમ ! ‘જાવહ્ણયં સે કાલં’ યાવન્તં કાલં તંસ્ય ‘ભવધારણિજ્જે સરીરણ’ ભવધારણીયં શરીરમ્ ‘અવ્વાવન્ને ભવહ્ણ’ અવ્યાપન્નં ભવતિ, ભવધારણીયં=ભવધારણપ્રયોજન મનુષ્યાદિ ભવોપગ્રાહકમિત્યર્થઃ, ‘અવ્વા-

તીન કહે ગયે હૈં—વે इस प्रकार से हैं—१ मांस, २ शोणित (रुधिर) और तीसरा मस्तक के भीतरस्थित स्निग्ध पदार्थविशेष जिसे “भेजा” कहते हैं । (कह णं मंते ! पिह्णं गा पन्नत्ता) हे भदन्त ! पिताके अंग कितने कहे गये हैं ? (गोयमा ! तओ पिह्णं गा पन्नत्ता) हे भदन्त ! पिताके अंग तीन कहे गये हैं । (तं जहा) वे इस प्रकार से हैं (अट्ठिमिज्जा केसमंसु रोमनहे) हाड, अस्थिमज्जा केश-श्मश्रु-रोम और नख । तात्पर्य यह है कि—गर्भस्थित जीव के शरीर में मांस, शोणित और भेजा ये तीन माता से प्राप्त होते हैं और हाड १, अस्थिमज्जा २, केश, श्मश्रु, रोम और नख ३, ये पिता से प्राप्त होते हैं । गर्भगत जीव का माता पिता के अवयवों से प्राप्त शरीर कितने कालतक रहता है ? इस बात को अब सूत्रकार प्रश्नोत्तरपूर्वक कहते हैं—(अम्मापिह्णं णं मंते ! सरीरणं केवह्णयं कालं संचिद्वह ?) हे भदन्त ! माना पिता के अवयवों से प्राप्त गर्भस्थित जीव का शरीर कितने कालतक ठहरता है ? (गोयमा ! जावह्णयं से कालं भवधारणिज्जे सरीरणं अव्वावन्ने भवह्ण एवतियं कालं

પિતાના ત્રણ અંગ હોય છે—(તં જહા) તે આ પ્રમાણે છે—(અટ્ઠિ—અટ્ઠિમિંજા,—કેસમંસરોમનહે) હાડકા, અસ્થિમજ્જા, કેશ—શ્મશ્રુરોમ અને નખ કહેવાનો ભાવાર્થ એ છે કે ગર્ભમાં રહેલ જીવના શરીરમાં માંસ, રુધિર અને મગજ માતા તરફથી પ્રાપ્ત થાય છે અને (૧) હાડકા, (૨) અસ્થિમજ્જા અને (૩) કેશ, શ્મશ્રુ રોમ અને નખ પિતા તરફથી પ્રાપ્ત થાય છે. માતા પિતાના અવયવોથી પ્રાપ્ત એવું ગર્ભમાં રહેલ જીવનું શરીર કયા સુધી રહે છે—એ વાતને સૂત્રકાર પ્રશ્નોત્તર વડે બતાવે છે—(અમ્માપિહ્ણ ણ મંતે ! સરીરણ કેવહ્ણય કાલ સંચિદ્દહ ?) હે ભગવન્ ! માતા પિતાના અવયવોથી પ્રાપ્ત થયેલું ગર્ભમાં રહેલ જીવનું શરીર કેટલા સમય સુધી ટકે છે ? (ગોયમા ! જાવહ્ણય સે કાલં ભવધારણિજ્જે સરીરણ અવ્વાવન્ને ભવહ્ણ એવહ્ણયં કાલં સંચિદ્દહ) હે ગૌતમ ! જ્યા સુધી તેનું ભવધાર-

जागरइ सुहियाए सुहिण भवइ, दुहियाए दुहिण भवइ, हुंता
 गोयमा ! जीवे ण गव्वमणए समाणे जात्रदुहियाएदुहिण भवइ,
 अहे ण पसवणकालसमयसि सीसेण वा पाएहिं वा आगच्छइ,
 सम आगच्छइ तिरिय आगच्छइ विणिहाय आवज्जइ वल्लव
 ज्झाणिय से कम्माइ वद्धाइ पुट्ठाइं निहत्ताइ कडाइ पट्टवियाइ
 आभिनिविट्ठाइ अभिसमझागयाइ उदिझाइ नो उवसताइ
 भवति, तओ भवइ दुरूवे दुवन्ने दुरसे दुफासे अणिट्ठे अकते
 अप्पिए असुभे अमणुस्से अमणामे हीणस्सरे दीणस्सरे अणि
 ट्ठस्सरे अकतस्सरे अप्पियस्सरे असुभस्सरे अमणुस्सरे अम
 णामस्सरे अणाएज्जवयणे पञ्चायाए यावि भवइ वणवज्झाणिय
 से कम्माइ नो वद्धाइ पसत्थ णेयव्व जाव आदिज्जवयणे
 पञ्चायाए यावि भवइ, सेव भते सेव भते त्ति ॥ सू० ५ ॥

॥ पइम सयये सवमो ठवेसो सम्मघो ॥ १-७ ॥

छाया—जीवः खलु भदन्त ! गर्भगतः सन् नैरयिकेपूपपद्येत ? गीतम ! अ
 स्त्येकक उपपद्येत अस्त्येकको नोपपद्येत तत् केनार्थेन, गीतम ! ससङ्गी पवेन्द्रियः
 सर्वाभिः पर्याप्तिभिः पर्याप्तको वीर्यलब्ध्या वैक्रियलब्ध्या परानीकमागत भुत्वा
 निश्चम्य प्रवेशान् निक्षिपति निक्षिप्य वैक्रियसमुद्घातेन समरहन्ति समरस्य
 चतुरंगिणीं सेनां विह्वल्यति चतुरंगिणीं सेनां विह्वल्य चतुरङ्गिण्या सेनया परानीकेन
 सार्धं सप्रार्मसंप्रामयते सजीवोऽर्थकामको राज्यकामको भोगकामकः कामकामकः,
 अर्थकक्षितो राज्यकक्षितो भोगकक्षितः कामकक्षितः, अर्थपिपासितो राज्यपिपा
 सितो भोगपिपासितः कामपिपासितः तन्निवृत्तस्तन्मनास्तल्लभ्यस्तदभ्यनसितस्त
 चीव्राध्यवसानस्तदर्थोपपुक्तस्तदर्पितरुणस्तद्वायनाभावितः एतस्मिन्नन्तरे
 कालं कुर्यात् नैरयिकेपूपपद्यते, तत्तेनार्थेन गीतम ! यावदन्त्यकक उपपद्येत अस्त्ये
 कको नोपपद्यते, जीव खलु भदन्त ! गर्भगतः सन् देवलोकेपूपपद्येत, गीतम !

णं विउव्वइ चाउरंगिणिं सेणं विउवित्ता चाउरंगिणीए स्रेणाए
 पराणीए णं सद्धिं संगामं संगामेइ, से णं जीवे अत्थकामए
 रज्जकामए भोगकामए कामकामए, अत्थकंखिए रज्जकंखिए
 भोगकंखिए, कामकंखिए, अत्थिपिवासिए रज्जपिवासिए भो-
 गपिवासिए कामपिवासिए, तच्चित्ते तम्मणे तल्लेसे तदज्झवसिए
 तत्तिव्वज्झवसाणे तदट्ठोवउत्ते तदप्पियकरणे तव्भावणभाविए,
 एएसिं णं अंतरंसि कालं करेज्ज नेरइएसु उववज्जइ से तेणट्ठेणं
 गोयमा जाव अत्थेगइए उववज्जेज्जा, अत्थेगइए नो उववज्जेज्जा,
 जीवे णं भंते ! गव्वभगए समाणे देवलोगेसु उववज्जेज्जा,
 गोयमा ! अत्थेगइए उववज्जेज्जा अत्थेगइए नो उववज्जेज्जा,
 से केणट्ठेणं, गोयमा ! से णं सन्नी पंचिंदिए सव्वाहिं पज्जत्तिहिं
 पज्जत्तए तहारूवस्स समणस्स वा माहणस्स वा अंतिए एगमवि
 आरियं धम्मियं सुवयणं सोच्चा निसम्म तओ भवइ संवेग-
 जायसट्ठे तिव्वधम्माणुरागरत्ते, से णं जीवे धम्मकामए पुन्न-
 कामए संगकामए मोक्खकामए धम्मकंखिए पुन्नकंखिए
 संगकंखिए मोक्खकंखिए धम्मपिवासिए पुन्नपिवासिए संगपि-
 वासिए मोक्खपिवासिए तच्चित्ते तम्मणे तल्लेसे तदज्झवसित-
 त्तिव्वज्झवसाणे तदट्ठोवउत्ते तदप्पियकरणे तव्भावणाभाविए
 एएसिं णं अंतरंसि कालं करेज्ज देवलोगेसु उववज्जइ से तेणट्ठेणं
 गोयमा ! जीवे णं भंते ! गव्वभगए समाणे उत्ताणे वा
 पासिल्लए वा अक्खुज्जए वा अच्छेज्ज वा चिट्ठेज्ज वा निसी-
 एज्ज वा तुयट्ठेज्ज वा माउए सुवभाणीए सुवइ जागरमाणीए

‘ ઉવચ્ચજ્જેઝ્ઝા ’ ઉપપચેત ‘ અત્થેગહપ્પ નો ઉવચ્ચજ્જેઝ્ઝા ’ અત્થેગહપ્પો નોપપચેત, કમ્મિભરકે ઉત્પચ્ચતે કમ્મિભોત્પચ્ચતે, ગૌતમ!—પ્રોહ—‘ સે કેમ્મદ્દેઝ્ઞં ’ તત્કેનાર્થેન કારણેન હે મદન્ત પચ્ચુચ્ચતે—મગવાનાહ—‘ ગોયમે ’ત્યાદિ, ‘ ગોયમા ’ હે ગૌતમ ! ‘ સે ણં સમ્મી પંચિદ્દિપ્પ ’ સ સલ્લ સંઘી પંચેન્દ્રિયઃ ‘ સમ્માર્હિ પઞ્જઞ્ણીર્હિ ’ સર્વામિઃ પર્યાસિમિઃ ‘ પરજ્ઞપ્પ ’ પર્યાસકઃ, સામિમાનિરાનાદિ જીવઃ કમ્મિદ્દર્મ ગતઃ સન્ નરકગમનયોગ્યં કર્મવધ્નાતીતિ સમવતિ, પત્તદેવ સૂચયિતુ સંક્ષિત્વાદિ નિશ્ચેપજાનિ દ્વાનિ તથા ‘ વીરિયલ્લહીપ્પ ’ વીર્યલ્લહ્યા ‘ વેઠમ્મિયલ્લહીપ્પ ’ વૈક્રિયલ્લહ્યા ચ સપ્રામયતીત્યગ્રેતમેન સહ સંબન્ધઃ, અથવા ‘ વીરયલ્લદિપ્પ વેઠમ્મિયલ્લદિપ્પ ’ इति वीर्यलब्धिको वैक्रियलब्धिकश्च सन् ‘ पराणीय ण ’ परानीक सङ्ग, शत्रु सैन्यम् ‘ आगयं सोच्चा ’ आगतं भुत्वा ‘ निसम्म ’ निश्चम्य हृद्यवषायं ‘ पएसे निच्छुमइ ’ प्रवेशान् निक्षिपति आत्मप्रवेशान् गर्मदेशाभिक्षाश्चयति, निष्कु

અત્થેગહપ્પ ઉવચ્ચજ્જેઝ્ઝા, અત્થેગહપ્પ નો ઉવચ્ચજ્જેઝ્ઝા) હે ગૌતમ ! કોઈ એક ગર્મગત જીવ મરકર નરકોં મેં ઉત્પન્ન હોતા હૈ । ઓર કોઈ એક ગર્મગત જીવ મરકર નરકોં મેં ઉત્પન્ન નહીં મી હોતા હૈ । (સે કેમ્મદ્દેઝ્ઞં) હે મદન્ત ! આપ એસા કિસ કારણ સે કહતે હૈં કિ કોઈ એક ગર્મગત જીવ મરકર નરક મેં ઉત્પન્ન હોતા હૈ ઓર કોઈ એક ગર્મગત જીવ મરકર નરક મેં ઉત્પન્ન નહીં હોતા હૈ ? (ગોયમા ! સે ણં સમ્મી પંચિદ્દિપ્પ સમ્માર્હિ પઞ્જઞ્ણીર્હિ પઞ્જઞ્ણપ્પ) હે ગૌતમ ! વહ સઘી પંચેન્દ્રિય ઓર સર્વ પર્યાસિયોં સે પૂર્ણ—પર્યાસક હુઆ ગર્મગત જીવ (વીરિયલ્લહીપ્પ, વેઠમ્મિયલ્લહીપ્પ) વીર્યલ્લહિદ્વારા, વૈક્રિયલ્લહિદ્વારા, (પરાણીયં આગય સોચ્ચા) શત્રુ કી સેના કો આઈ હુઈં સુનકર (નિસમ્મ) ઘસે હૃદય મેં ધારણ કર (પપ્પસે નિચ્છુમહ) અપને આત્મપ્રદેશોં કો ગર્મદેશ

જ્જેઝ્ઝા, અત્થેગહપ્પ નો ઉવચ્ચજ્જેઝ્ઝા) હે ગૌતમ ! કોઈ એક ગર્મગત જીવ મરકર નરકોં મેં ઉત્પન્ન હોતા હૈ અને કોઈ એક ગર્મગત જીવ મરકર નરકોં મેં ઉત્પન્ન નહીં મી હોતા હૈ । (સે કેમ્મદ્દેઝ્ઞં) હે મદન્ત ! આપ એસા કિસ કારણ સે કહતે હૈં કિ કોઈ એક ગર્મગત જીવ મરકર નરક મેં ઉત્પન્ન હોતા હૈ ઓર કોઈ એક ગર્મગત જીવ મરકર નરક મેં ઉત્પન્ન નહીં હોતા હૈ ? (ગોયમા ! સે ણં સમ્મી પંચિદ્દિપ્પ સમ્માર્હિ પઞ્જઞ્ણીર્હિ પઞ્જઞ્ણપ્પ) હે ગૌતમ ! તે સઘી પંચેન્દ્રિય અને સર્વપર્યાસિયોંથી પૂર્ણ—પર્યાસ અવસ્થામાં રહેતો ગર્મગત જીવ (વીરિયલ્લહીપ્પ વૈક્રિયલ્લહીપ્પ પરાણીય આગય સોચ્ચા નિસમ્મ પપ્પસે નિચ્છુમહ) વીર્યલ્લહિ વટે અને વૈક્રિયલ્લહિ વટે શત્રુની સેનાનું આગ્રમન સામગ્રીને, તેને હૃદયમાં ધારણ કરીને, પોતાના આત્મપ્રદેશોને ગર્મદેશ

अस्त्येकक उपपद्येत अस्त्येकको नोपपद्येत तत्—केनार्थेन, गौतम ! ससंज्ञी पंचेन्द्रियः सर्वाभिः पर्याप्तिभिः पर्याप्तकस्तथारूपस्य श्रमणस्य वा साह्नस्य वाऽन्तिके एकमपि आर्यम् धार्मिकं सुवचनं श्रुत्वा निश्चयं ततो भवति संवेगजातश्रद्धस्तीव्रधर्मानुरागरक्तः सजीवो धर्मकामकः पुण्यकामकः स्वर्गकामको मोक्षकामकः, धर्मकांक्षितः पुण्यकांक्षितः स्वर्गकांक्षितो मोक्षकांक्षितः, धर्मपिपासितः पुण्यपिपासितः स्वर्गपिपासितः मोक्षपिपासितः तच्चित्तस्तल्लेश्यस्तदध्यवसितस्तत्तीव्राध्यवसानस्तदर्थोपयुक्तस्तदर्पितकरणस्तद्भावनाभावित एतस्मिन्नन्तरे कालं कुर्यात्, देवलोकेषूपपद्येत तत्तेनार्थेन गौतम० जीवः खलु भदन्त ! गर्भगतः सन् उत्तानको वा पार्श्वीयो वा आम्रकुञ्जको वा आसीद्वा तिष्ठेद्वा निपीदेद्वा, त्वग्वर्तयेद्वा मातरि स्वपत्यां स्वपिति, जग्रत्यां जागर्ति, सुखितायां सुखितो भवति, दुःखितायां दुःखितो भवति, हंत गौतम ! जीवो गर्भगतः सन् यावत् दुःखितायां दुःखितो भवति, अथ खलु प्रसवन् कालसमये शीर्षेण वा पादाभ्यां वा आगच्छति सम्यगागच्छति तिर्यगागच्छति विनिघातमापद्यते वर्णवध्यानि च तस्य कर्माणि ब्रह्मानि स्पृष्टानि निधत्तानि कृतानि प्रस्थापितानि अभिनिविष्टानि अभिसमन्वागतानि उदीर्णानि नो उपशान्तानि भवन्ति ततो भवति दुरूपो दुर्वर्णः दूरतः दुःस्पर्शः अनिष्टः अक्रान्तः अभियः अशुभः अमनोज्ञः अमनोमः हीनस्वरः दीनस्वरः अनिष्टस्वरः अक्रान्तस्वरः अभियस्वरः अशुभस्वरः अमनोज्ञस्वरः अमनोमस्वरः अनादेयवचनः प्रत्यायातश्चापि भवति, वर्णवध्यानि च तस्य कर्माणि नो ब्रह्मानि० प्रशस्तं ज्ञातव्यम् यावदादेयवचनः प्रत्यायातश्चापि भवति तदेवं भदंत तदेवं भदंत इति ॥ सू० ५ ॥

टीका—‘जीवे णं भंते’ जीवः खलु भदन्त ! ‘गवभगए समाणे’ गर्भगतः सन् ‘नेरइएसु’ नैरयिकेषु ‘उववज्जेज्जा’ उपपद्येत किम् ? हे भदन्त ! गर्भगतो जीवो मृत्वा किं नरकेषु उत्पत्तिं प्राप्नुयादिति प्रश्नाशयः, भगवानाह—‘गोयमे’ त्याति । ‘गोयमा’ हे गौतम ! ‘अत्थेगइए’ अस्त्येककः कश्चिदित्यर्थः

गर्भ का ही अधिकार होने से सूत्रकार अब गर्भगत जीव का गत्यन्तर गमन सूत्र का कथन करते हैं—‘जीवेणं भंते !’ इत्यादि ।

टीकार्थ—(जीवे णं भंते ! गवभगए समाणे नेरइएसु उववज्जेज्जा) हे भदन्त ! गर्भ में जीव क्या सरकर नरकों में उत्पन्न होता है ? (गोयमा !

गर्भना अधिकार आलतो डोवार्थी सूत्रकार डवे गर्भमा रहिले एवना भीउ गतिमा जवा आगत सूत्रनु कथन करे छे—“जीवे ण भंते ! इत्यादि टीकार्थ—(जीवे ण भंते ! गवभगए समाणे नेरइएसु उववज्जेज्जा) हे भदन्त ! गर्भमा रहिले एव शु भरीने नरकोमा उत्पन्न थाय छे ? (गोयमा ! अत्थेगइए उवव-

મિત્તા ' નિશ્ચિપ્ય ' વેડવિવ્યસમુદ્ધાણં સમોહણઙ ' વૈક્રિયસમુદ્ધાતેન સ્વલુ સમવહન્તિ સમવહતો ભવતિ તથાવિધ પુદ્ગલગ્રહણાર્થં વૈક્રિયસમુદ્ધાતં કરોતિ ' સમોહણિત્તા ' સમવહત્ય ' ચાતુરંગિણિ સેણં વિડવ્વઙ ' ચતુરઙ્ગિણીં સેનાં વિકુર્વતિ વૈક્રિયસમુદ્ધાતેન ગજાશ્વરથપદાતિરૂપાં ચતુરઙ્ગિણીં સેનામુત્પાદયતીત્યર્થઃ, ' ચાતુરંગિણિ સે ણં વિડવિત્તા ' ચાતુરઙ્ગિણીં સેનાં વિકુર્વ્ય તાદૃશીં સેનાં વૈક્રિયલઙ્ઘ્યા સમુત્પાદ્ય ' ચતુરંગિણીએ સેણાએ ' તથા ચતુરંગિણ્યા સેનયા ' પરાણીએ ણં ' પરાનીકેન શત્રુસૈન્યેન ' સદ્ધિં ' સાર્દ્ધમ્ ' સંગામં ' સંગ્રામં યુદ્ધમિત્યર્થઃ, ' સંગામે ઙ ' સંગ્રામયતિ સંગ્રામં કરોતીત્યર્થઃ । ' સે ણં જીવે ' સ સ્વલુ જીવઃ ય. સ્વલુ

સે બાહર નિકાલતા હૈ । (નિચ્છુભિત્તા વેડવિવ્યસમુદ્ધાણં સમોહણઙ) બાહર નિકાલકર વૈક્રિય સમુદ્ધાત દ્વારા સમવહત હોતા હૈ અર્થાત્ તથાવિધ પુદ્ગલોં કો ગ્રહણ કરને કે લિયે વૈક્રિયસમુદ્ધાત કરતા હૈ । (સમોહણિત્તા ચાતુરંગિણિ સેણં વિડવ્વઙ) વૈક્રિયસમુદ્ધાત કરકે ફિર વહ ચતુરંગી સેના કો-ગજ, અશ્વ, રથ, ઔર પદાતિરૂપ ચાર અંગવાલી સેના કો ઉત્પન્ન કરતા હૈ । (ચાતુરંગિણિ સેનાં વિડવિત્તા) ચતુરંગી સેના કો ઉત્પન્ન કરકે (ચાતુરંગિણીએ સેણાએ પરાણીએ ણં સદ્ધિં સંગામં સંગામેઙ) ઉસ અપની ચતુરંગી સેના સે શત્રુ કી સેના કે સાથ સંગ્રામ-યુદ્ધ કરતા હૈ । યહાં એસા કહા ગયા હૈ કિ વહ ગર્ભગત જીવ સામિમાની કોઈ રાજા આદિ કા જીવ હો ઔર વહ સંજી હો, પાંચોઈન્દ્રિય વાલા હો । સમસ્ત પર્યાસિયાં જિસેકી પૂર્ણ હો ચુકી હોં એસા હો । વહ જવ શત્રુ કી સેના કો આઈ હુઈ સુનતા હૈ તવ વહ વીર્યલઙ્ઘિ દ્વારા યા વૈક્રિયલઙ્ઘિ-દ્વારા અપને આત્મપ્રદેશોં કો ગર્ભદેશ સે બાહર નિકાલતા હૈ, ઔર

માથી ખહાર કાઢે છે (નિચ્છુભિત્તા વેડવિવ્યસમુદ્ધાણં સમોહણઙ) ખહાર કાઢીને વૈક્રિય સમુદ્ધાત વડે તથાવિધ પુદ્ગલોને ઝડપી કરવાને માટે વૈક્રિય સમુદ્ધાત કરે છે (સમોહણિત્તા ચાતુરંગિણિ સેણં વિડવ્વઙ) વૈક્રિયસમુદ્ધાત કરીને તે ચતુરંગી સેનાને-ગજ, અશ્વ, રથ અને પાયદળ, એ ચાર પ્રકારની સેનાને-ઉત્પન્ન કરે છે (ચાતુરંગિણિ સેણં વિડવિત્તા) ચતુરંગી સેનાને ઉત્પન્ન કરીને (ચાતુરંગિણીએ સેણાએ પરાણીએ સદ્ધિં સંગામ સંગામેઙ) પોતાની તે ચતુરંગી સેનાથી શત્રુની સેના સાથે સંગ્રામ કરે છે અહીં એવું કહ્યું છે કે તે ગર્ભમાં રહેલ જીવ સ્વાભિમાની કોઈ રાજા વગેરેનો જીવ હોય અને તે સંજી હોય, પાંચે ઈન્દ્રિયો વાળો હોય, જેની સમસ્તપર્યાસિઓ પૂર્ણ થઈ ચુકી હોય, આ બાતનાં તેના લક્ષણો બતાવ્યા છે એવો ગર્ભમાં જીવ બ્યારે શત્રુની સેનાનું આગમન થયેલું સાબળે છે ત્યારે વીર્યલઙ્ઘિ વડે અથવા વૈક્રિયલઙ્ઘિ વડે પોતાના આત્મ-

નુમોદિતરૂપાણિ, કરણાણિ યેન સ સદર્પિતકરણમ્મિત્તિ । ‘તન્માવમા માવિપ’ તન્માવના માવિતઃ, અર્થાદિમાત્રનયા માવિતો ય સ તન્માવના માવિતઃ, ‘અયસિ ણં અંતરંસિ’ એવસ્મિન્ સ્વછ અન્તરે, એવસ્મિન્ સગ્રામાદિકરણસમય ‘કાલં કરેજ્જા’ કાલં કુર્યાત્, ત્રિયસ તદ્વા ‘નેરહણ્ણુ’ ઉવચજ્જાઃ । નેરપિકેપૂપપપ્પથે, યદા સ્વછ અર્થાદિકામક સંગ્રામાદિકં ગર્મસ્ય એવ સપાદયનં તસ્મિન્નેવાવસરે મળં પ્રાપ્તુપાન્ તદા સ જીવ નરકેપૂત્તપ્પથ અન્યસ્તુ નોત્તપ્પથેતિ, ‘સ તેજ્ઞદ્દે ંગોપમા’ તપ્પેનાર્યેન હે ગૌતમ ! ‘જાવ અત્થેગહણ્ણુ ઉવચજ્જેજ્જા’ યાવત્ અત્તપ્પક ઉપપપ્પથેત ‘અત્થેગહણ્ણુ નો ઉવચજ્જેજ્જા’ અત્તપ્પેક્કો નોપપપ્પથેત, યાવત્તપ્પથેન—‘એવં ધુરુચ્ચહ જીવે ણ ગન્મગણ સમાણે નેરહણ્ણુ’ એતિ સગ્રાહ્યમ્ । અનેન કારણેન હે ગૌતમ ! ક્યયામિ યત્ કથિત્ત કારણવિશેષમાસાઘ નરકે ઉત્તપ્પથેતિ કથિત્ત નોત્તપ્પથેતિ એવ ।

નિમિત્ત સમસ્ત ઇન્દ્રિયોં કો અથવા કૃત કારિત એવ અનુમોદના કો સમાવેશિત કર (તન્માવનામાવિપ) અર્થાદિક કો માવના સે માવિત બનકર પુદ્ધ કરતા હૈ—યદિ(અયસિ ણ અંતરંસિ) હસી સગ્રામ આદિ કરને કે સમય મેં વહ (કાલં કરેજ્જા) મૃત્યુ કો પ્રાપ્ત હો જાતા હૈ તો (નેરહણ્ણુ ઉવચજ્જા) નારકોં મેં વહ ઉત્પન્ન હોતા હૈ । તાત્પર્ય હમકા પહી હૈ કિ ગર્મસ્ય જીવ અર્થાદિક કો કામનાષાલા બનકર સગ્રામ આદિ કરતા હૈ ઓર ઉસી સ્થિતિ મેં યદિ વહ મર જાતા હૈ તો યહ ગર્મસ્ય જીવ નરકોં મેં ઉત્પન્ન હોતા હૈ । અન્ય ગર્મસ્ય જીવ નહીં । (સે તેજ્ઞદ્દે ંગોપમા) હસ કારણ હે ગૌતમ ! મેં એસા કહતા હ (જાવ અત્થેગહણ્ણુ ઉવચજ્જેજ્જા અત્થેગહણ્ણુ નો ઉવચજ્જેજ્જા) કિ યાવત કોઈ એક ગર્મસ્ય જીવ કારણવિશેષ કો છેકર નરક મેં ઉત્પન્ન હોતા હૈ ઓર કોઈ એક જીવ નરકમેં ઉત્પન્ન નહીં હોતા હૈ ।

સમસ્ત ઇન્દ્રિયોંને અથવા કૃત કારિત અને અનુમોદનાને સમાવેશિત કરીને (તન્માવનામાવિપ) અર્થાદિકની ભાવનાથી ભાવિત બનીને પુદ્ધ કરે છે અને (અયસિ ણં અંતરંસિ) આ રીતે પુદ્ધ વગેરે કરતી વખતે જો તે ગર્ભમાં રહેલ છે (કાલં કરેજ્જા) મૃત્યુ પામે તો (નેરહણ્ણુ ઉવચજ્જા) નારકોમાં જન્મ લેવા છે કહેવાનું તાત્પર્ય જો છે કે ગર્ભમાં રહેલ છે અર્થાદિકની ઇચ્છાવાળો થઇને સગ્રામ વગેરે કરે છે અને જો જો યિતિમાં તે મરણ પામે છે તો તે ગર્ભમાં રહેલ છે નારકોમાં જન્મ લેવા છે અન્ય પ્રકારના ગર્ભમાં રહેલ છે નારકોમાં જન્મ લેવા નથી. (સ તેજ્ઞદ્દે ંગોપમા) હે ગૌતમ ! તે કારણે હું એવું કહું છું કે (જાવ અત્થેગહણ્ણુ ઉવચજ્જેજ્જા અત્થેગહણ્ણુ નો ઉવચજ્જેજ્જા) કાંઈ એક ગર્ભમાં રહેલ છે વપરના કારણે નરકમાં જન્મ લેવા છે અને કે એક છે નરકમાં જન્મ લેવા નથી.

‘ भोगकंखिए ’ भोगकांक्षितः ‘ कामकंखिए ’ कामकांक्षितः ‘ अत्यपिवासिए ’ अर्थपिपासितः पिपासा इव पिपासा प्राप्तेर्प्यर्थेऽतृप्तिरूपा संजाता यस्य स तथा, ‘ रज्जपिवासिए ’ राज्यपिपासितः, प्राप्तेपि राज्ये तृप्त्यभाववानित्यर्थः, ‘ भोगपिवासिए ’ भोगपिपासितः ‘ कामपिवासिए ’ कामपिपासितः, ‘ तच्चित्ते ’ तच्चित्तः, तस्मिन् अर्थादौ चित्तं यस्य स तच्चित्तः, ‘ तम्मणे ’ तन्मनाः, तस्मिन् अर्थादौ मनो विद्यते यस्य स तन्मनः, ‘ तल्लेसे ’ तल्लेश्यः, लेश्यानाम् आत्मपरिणामविशेषः तादृशलेश्यावानित्यर्थः, ‘ तदज्झवसिए ’ तदध्यवसितः, इहाध्यवसाय इति अध्यवसितं, तत्र तच्चित्तादि भावयुक्तस्य सतस्तेष्वर्थराज्यभोगकामेष्वेवाध्यवसितं परिभोगक्रियासपादनविषयकं यस्य स तदध्यवसितः, तद्विषयकोत्साहवानित्यर्थः, ‘ तत्तिव्वज्झवसाणे ’ तत्तीव्राध्यवसानं, तस्मिन्नेवार्थराज्यादौ तीव्रमारंभकालादारभ्य प्रकृष्टमध्यवसानं प्रयत्नविशेषो यस्य स तीव्राध्यवसानः, ‘ तदट्ठेवउत्ते ’ तदर्थोपयुक्तः तदर्थम् अर्थराज्यभोगादिनिमित्तमुपयुक्तोऽवहित इति तदर्थोपयुक्तः, ‘ तदप्पियकरणे ’ तदर्पितकरणः तस्मिन्नेवार्थराज्यादौ अर्पितानि विनिहितानि समावेशितानि करणानि=इन्द्रियाणि, अथवा कृतकारितानि

कंखिए) काम में गृद्धिवाला बनकर (अत्यपिवासिए) अर्थ के होने पर भी अतृप्तिरूप अभिलाषावाला बनकर (रज्जपिवासिए) प्राप्त राज्य में भी अतृप्तिरूप अभिलाषावाला बनकर (भोगपिवासिए) भोगमें पिपासित बनकर (कामपिवासिए) काम में पिपासित बनकर (तच्चित्ते) अर्थादिक में एकचित्तवाला होकर (तम्मणे) अर्थादिक में एक अन्तःकरण वाला होकर (तल्लेसे) उसीरूप आत्म परिणामवाला होकर (तदज्झवसिए) तद्विषयक अध्यवसायवाला होकर (तत्तिव्वज्झवसाणे) आरंभ काल से ही तद्विषयक प्रयत्नविशेषवाला होकर (तदट्ठेवउत्ते) उसी अर्थ राज्य, भोगादि के निमित्त उपयुक्त बन कर (तदप्पियकरणे) उन्हीं की प्राप्ति

(अत्यकंखिये) अर्थनी लालसा वाणो णनीने, (अत्यपिवासिए) अर्थ लेवा छता पणु तेनाथी अतृप्त रहीने तेनी अभिलाषा वाणो णनीने, (रज्जपिवासिए) प्राप्त राज्यथी अतृप्त रहीने राज्य भोगवपानी अभिलाषा वाणो णनीने (भोगपिवासिए) भोगनी धन्धावाणो णनीने, (कामपिवासिए) कामनी धन्धाथी युक्त णनीने (तच्चित्ते) अर्थाद्विभा ओक चित्त थधने (तम्मणे) अर्थाद्विभा ओक अत करणवाणो थधने-तद्धीन थधने (तल्लेसे) ते प्रधारना आत्मपरिणाम वाणो थधने (तदज्झवसिए) ते विषयक प्रवृत्तिवाणो थधने (तत्तिव्वज्झवसाणे) आरंभ प्राणथी न ते विषे विशिष्ट प्रयत्न वाणो थधने (तदट्ठेवउत्ते) अर्थ, राज्य, भोगादिने भाटे उपयुक्त णनीने (तदप्पियकरणे) तेमनी प्राप्तिने भाटे

કસ્ય માવતઃ સમિતિશુપ્ત્યારાધનસ્ય ' સમણસ્સ વા ' શ્રમણસ્ય વા-દ્વાદશવિષત
પોયુક્તસ્ય શ્રમણસ્ય સાધો , ' માહણસ્સ વા ' માહનસ્ય વા, વા-મથવા સ્વયંસ્પૂજ
પ્રાણાતિપાતાદિભ્યો નિટથ સન ' માહન માહન ' એવ રૂપણ પરાનુપદિશતિ વા
સ માહનઃ=દશચિરતસ્તસ્ય ' અતિપ ' અન્તિકે સમીપે ' ઇગમપિ ' ઇકમપિ ' આરિયં
ધમ્મિય ' આર્યમ્=જિનપ્રણીતં ધાર્મિકમ્=શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મસમ્પાદકમ્ અતઃ પર
' સુવચ્ચં ' સુવચનમ્-પ્રાણાતિપાતાદિચિરતિરૂપં નિરચ્ચ ' સોચ્ચા ' શ્રુતા
' નિસમ્મ ' નિશ્ચમ્ય-દ્વિશ્ચિ અરપાર્ય, ' તઓ મચ્છ ' સતો મચ્ચતિ, સવનન્તરમેવ
અવખાજ્જધારધ્યાનન્તરમેવ જાયસે, ' સવેગ જાયસચ્છે ' સવેગજાતઅદ્ધ, સવેગો વૈરાગ્યં
ત્રેન જાતા સમુત્પન્ના અદ્ધા તરપઅદ્ધાનં યસ્ય સ સવેગજાતઅદ્ધ, તિચ્ચધમ્માણુ

સીહિં પજ્જસપ તદ્ધારૂપસ્સ સમણસ્સ વા માહણસ્સ વા અતિપ ઇગમપિ
આરિયં ધમ્મિયં સુવચ્ચં સોચ્ચા નિસમ્મ) કે ગૌતમ ! યજ્ઞ ગર્ભગત જીવ
યદિ કોઈ ધાર્મિક જીવ હે ઓર યહ સંજી, પચ્ચેન્દ્રિય પર્યાસક હૈતો એસી
સ્થિતિ મેં યહ જીવ તયારૂપ-દ્રવ્યતઃ-સદોરકમુખ્વલ્લિકાદિરૂપ સાધુ
કા વેષ ધારણ કિયે હુપ અચત -સમિતિ શુસિ આદિ કે આરાધક, એસે
શ્રમણ, ધારણ પ્રકાર કે તપોં કો તપને યાલે સાધુ કે, અથવા માહણ-
સ્પૂજ પ્રાણાતિપાત આદિ પાપ ક્રિયાઓં સે નિવૃત્ત હોકર જો દૂસરોં કો
એસા હી વપદેશ વેતા હૈ કિ જીવોં કો "મા હન મા હન" "મત મારો મત
મારો " એસે વેશચિરતિ કો ધારણ કિયે હુપ પંચમ શુણસ્થાનધર્મોં આવક
રૂપ માહણ કે પાસ એક બી આર્ય જિનપ્રણીત-ધાર્મિક-શ્રુતચારિત્રરૂપ
ધર્મકે સમ્પાદક-સુવચન કો-પ્રાણાતિપાતાદિચિરતિરૂપ નિરચ્ચ-
વચન કો સ્તુત કરકે ઓર ઉસે હૃદય મેં અવધારણ કરકે (તઓ) ઉસો
સમય (સવેગજાયસચ્છે તિચ્ચધમ્માણુરાગરસે મચ્છ) સવેગ સે-વૈરાગ્ય

તદ્ધારૂપસ્સ સમણસ્સ વા માહણસ્સ વા અતિપ ઇગમપિ આરિય ધમ્મિયં સુવચ્ચં
સોચ્ચા નિસમ્મ) કે ગૌતમ ! તે અર્જુના રહેલો એવ જો ધાર્મિક હોય, સંજી
હોય અને પચ્ચેન્દ્રિય સહિત અને પર્યાસક હોય તો તે દ્રવ્યથી દેશ સહિત
શુણપર સુહૃદપત્નીવ ઉપકરણો સહિત સાધુ વેષ ધારણ કરેલા અને સાવધી સમિતિ,
શુસિ વગેરેના આરાધક તથા ધાર પ્રકારના તપ કરનારા શ્રમણપાસે તેમજ સ્પૂજ
પ્રાણાતિપાત વગેરે પાપ ક્રિયાઓથી નિવૃત્ત થઈને બે બેને પણ ' મા હન મા
હન ' ' હણે નહીં હણે નહીં ' એવો ઉપદેશ દેનારા વેશચિરતિને ધારણ
કરનારા પાપમા શુણસ્થાનવર્તી આવકરૂપ માહણ પાસે જોકે પણ આર્ય જિન
પ્રણીત-ધાર્મિક-શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મના સંપાદક-સુવચનો-પ્રાણાતિપાતાદિ વિર
તિરૂપ નિર્દોષ વચ્ચેના સારાગીને અને તેને ચોતાના હૃદયમા ધારણ કરીને (તઓ)
ત્માર બાદ (સવેગજાયસચ્છે તિચ્ચધમ્માણુરાગરસે મચ્છ) સવેગથી (વેશચરથી)

પૂર્વે ગર્ભગતસ્ય જીવસ્ય નરકગમનકરણં પ્રતિપાઘ્ય સમ્પ્રતિ દેવલોકગમન-
કરણં પ્રદર્શયન્નાહ—‘જીવે ણં મંતે’ ઇત્યાદિ ।

‘જીવે ણં મંતે’ જીવઃ સ્વલુ મદન્ત ! ‘ગઘ્મગણ સમાણે’ ગર્ભગતઃ સન્
દેવલોગેસુ ઉવવજ્જેજ્જા ’ દેવલોકેપૂષપધેત કિમ્ ? । મગવાનાહ—‘ગોયમે’—
ત્યાદિ, ‘ગોયમા’ હે ગૌતમ ! અત્યેગણ ઉવવજ્જેજ્જા ’ અસ્ત્યેકકઃ કથિત્
ઉપપધેત ‘અત્યેગણ નો ઉવવજ્જેજ્જા ’ અસ્ત્યેકકઃ કથિત્ નોપપધેત ‘સે કેણદ્દે
ણં’ તત્કેનાર્યેન હે મદન્ત ! કેન કારણેનૈવમુચ્યતે યત્ કથિદેવલોકં ગચ્છતિ
કથિન્નો ગચ્છતીતિ ભાગ્યઃ । મગવાનાહ—‘ગોયમે’ ત્યાદિ । ‘ગોયમા’ હે
ગૌતમ ! ‘સે ણં સન્ની પંચિદિણ સઘ્વાહિં પજ્જત્તીહિં
પજ્જત્તણં’ સર્વાભિઃ પર્યાપ્તિભિઃ પર્યાપ્તકઃ સર્વ પર્યાપ્તિભિર્યુક્ત સન્નિત્યર્થઃ, ‘તહા-
સ્વસ્સ’ તથારૂપસ્ય, તથાવિધસ્ય દ્રવ્યતઃ સદોરકમુખવલ્લિશ્ચાદિ સાધુવેપધાર-

इस तरह गर्भगत जीव के नरक गमन में कारण प्रतिपादित कर
अब सूत्रकार देवलोक में उसके गमन के कारण का प्रतिपादन करने
निमित्त प्रश्नोत्तररूप सूत्र का कथन करते हैं—(जीवै णं मंते !
गघ्मगण समाणे देवलोगेसु उववज्जेज्जा) हे भदंत ! गर्भस्थ जीव
क्या देवलोकों में उत्पन्न हो जाता है ? (अत्येगण उववज्जेज्जा)
हे गौतम ! गर्भ में रहा हुआ कोई एक जीव मरके देवलोक
में उत्पन्न होता है और कोई एक गर्भगत जीव मरकर देवलोक में
उत्पन्न नहीं भी होता है । (से केणद्वेणं०) हे भदन्त ! आप ऐसा किस
कारण से कहते हैं कि कोई एक गर्भस्थ जीव मरके देवलोक में
उत्पन्न नहीं होता है ? (गोयमा ! से णं सन्नी पंचिदिण सघ्वाहिं पज्ज-

આ રીતે ગર્ભમા રહેલ જીવના નરકગમનનાં કારણોનું પ્રતિપાદન કરીને હવે
સૂત્રકાર તેના દેવલોક ગમનનાં કારણોનું પ્રતિપાદન કરવાને માટે પ્રશ્નોત્તર રૂપ
સૂત્રોનું કથન કરે છે— (જીવે ણ મંતે ! ગઘ્મગણ સમાણે દેવલોગેસુ ઉવવ-
જ્જેજ્જા ?) હે ભગવન્ ! શુ ગર્ભમા રહેલ જીવ દેવલોકમાં ઉત્પન્ન થાય છે ?
(અત્યેગણ ઉવવજ્જેજ્જા, અત્યેગણ નો ઉવવજ્જેજ્જા) હે ગૌતમ ! ગર્ભમા રહેલો
કોઈ એક જીવ મરીને દેવલોકમા ઉત્પન્ન થાય છે, અને કોઈ એક ગર્ભમા
રહેલ જીવ મરીને દેવલોકમાં ઉત્પન્ન નથી પણ થતો (સે કેણદ્વેણં) હે
ભગવન્ ! આપ શા કારણે એવું કહો છો કે કોઈ એક ગર્ભમાં રહેલ જીવ
મરીને દેવલોકમા જાય છે અને કોઈ એક ગર્ભમા રહેલ જીવ મરીને દેવ-
લોકમા જતો નથી

ઉત્તર—(ગોયમા ! સે ણ સન્ની પંચિદિણ સઘ્વાહિં પજ્જત્તીહિં પજ્જત્તણં

‘तस्मिन्ने’ तस्मिन्नाः तस्मिन् धर्मादावेव मनो यस्य स तथा, तद्वत्से’ तद्वत्से’
 लेख्या आत्मपरिणामविशेष—तथा च तस्मिन्नेव धर्मादौ लेख्या आत्मपरिणामवि-
 शेषरूपा विद्यते यस्य स तथा ‘तद्वत्से’ तद्वत्से’ तद्वत्से’ तद्वत्से’
 ध्यवसायवान् ‘तत्त्वज्ञानवसाणे’ तत्त्वज्ञानवसाणे, तस्मिन्नेव तीमाध्यवसाय-
 युक्त, ‘तद्वत्से’ तद्वत्से’ तद्वत्से’ तद्वत्से’ तद्वत्से’ तद्वत्से’ तद्वत्से’ तद्वत्से’
 ‘तद्वत्से’ तद्वत्से’ तद्वत्से’ तद्वत्से’ तद्वत्से’ तद्वत्से’ तद्वत्से’ तद्वत्से’
 अथवा करणानि=कृतकारितानुमोदितरूपाणि वा यस्य स तथा, ‘तस्मिन्ने’
 मावि’ तद् भावना मावि, तस्मिन् धर्मादावेव भावना वासना तथा मावि-
 य’ स, तथा, ‘एयसि णं अंतरंसि एतस्मिन् स्वच्छ अंतरे—एतस्मिन् समये ‘कालं
 करेज्जा’ कालं कुर्यात् चियेत् तदा स जीवः ‘देवलोके’ देवलोकेषु ‘उत्प-
 ज्ज’ उत्पद्येत, देवो भवेदित्यर्थ, ‘से तेण्हणं गोयमा’ तत्तेनार्थेन हे

धर्मादिक में ही एक खिस वाला बनकर (तस्मिन्ने) धर्मादिक में ही
 एक अन्तःकरण वाला बनकर (तद्वत्से) धर्मादिकरूप आत्मपरिणाम
 वाला बनकर (तद्वत्से) धर्मादिविषयक अध्यवसायवाला बनकर
 (तत्त्वज्ञानवसाणे) धर्मादिविषयक तीव्र अध्यवसायवाला बनकर
 (तद्वत्से) धर्मादिक निमित्त ही उपयोगवाला बनकर (तद्वत्से
 करणे) धर्मादिक में ही अपनी इन्द्रिया को, अथवा कृत कारित अनुमो-
 दना को समर्पित करनेवाला बनकर (तस्मिन्ने) धर्मादिक
 की ही भावना से भावित बनकर (एयसि अंतरंसि) उस समय यदि
 (कालं करेज्जा) कालधर्म को प्राप्त होता है—गर्भ में ही मर जाता है—
 तब ऐसा वह जीव (देवलोके) देवलोक में (उत्पज्ज) उत्पन्न
 होता है, अर्थात् देव होता है (से तेण्हणं गोयमा) इस कारण है

खिस धर्मे, (तस्मिन्ने) धर्म वगेरेंमां न पोतानुं अतः कल्प हीन करीने,
 (तद्वत्से) धर्मादिक रूप आत्मपरिणाम वाणी धर्मे (तद्वत्से) धर्मादिक
 प्रवृत्तिमा प्रवृत्त धर्मे, (तत्त्वज्ञानवसाणे) धर्मादिविषय तीव्र अध्यवसाय
 वाणी धर्मे, (तद्वत्से) धर्मादिक निमित्त न उपयोगवाणी बननीने, (तद्वत्से
 करणे) धर्मादिकमा न पोतानी इन्द्रियोने अथवा कृत, कारित अनुमोदनाने
 समर्पित करनेवाले बननीने (तस्मिन्ने) धर्मादिकनी भावनाधीन भावित
 बनाने (एयसि अंतरंसि) ते भवेत्ते ते भवेत्ते एव (कालं करेज्जा)
 कालधर्म धर्मे नभमा न भूत्सु धर्मे—तो ते गन्धमां रदेवो एव (देवलोके)
 उत्पज्ज देवलोकमा उत्पन्न माय छे अतरे क देव माय छे (से तेण्हणं

રાગરક્તે 'તીવ્રધર્માનુરાગરક્તઃ, તીવ્રોઽતિશયિતો યો ધર્મવિષયકો અનુરાગો ધર્મ
વહુમાનરૂપસ્તેન રક્ત ઇવ રક્તો યઃ સ તીવ્રધર્માનુરાગરક્તઃ, 'સે ણં જીવે' સ
ખલુ જીવઃ 'ધમ્મકામણ' ધર્મકામકઃ-શ્રુતચારિત્રરૂપધર્મવાજ્ઞાયુક્ત, 'પુન્ન
કામણ' પુણ્યકામકઃ, પુણ્ય-શુભકર્મ તસ્ય કામો=વાજ્ઞા વિદ્યતે યસ્ય સ પુણ્યકા-
મકઃ, 'સગ્ગકામણ' સ્વર્ગકામકઃ, સ્વર્ગવાજ્ઞાવાન્ 'મોક્ષકામણ' મોક્ષકામકઃ
મોક્ષવાજ્ઞાયુક્તઃ 'ધમ્મકંઘિણ' ધર્મકાંક્ષિતઃ, 'પુન્નકંઘિણ' પુણ્યકાંક્ષિતઃ,
'સગ્ગકંઘિણ' સ્વર્ગકાંક્ષિતઃ 'મોક્ષકંઘિણ' મોક્ષકાંક્ષિતઃ 'ધમ્મપિવાસિણ'
ધર્મપિપાસિતઃ, ધર્મે પિપાસા ઇવ પિપાસા અતૃપ્તિર્વિદ્યતે યસ્ય સ તથા, 'પુન્નપિવા-
સિણ' પુણ્યપિપાસિતઃ, 'સગ્ગપિવાસિણ' સ્વર્ગપિપાસિતઃ 'મોક્ષપિવાસિણ'
મોક્ષપિપાસિતઃ, 'તચ્ચિત્તે' 'તચ્ચિત્તઃ તસ્મિન્ એવ ધર્માદૌ ચિત્તં યસ્ય સ તથા,

સે શ્રુતચારિરૂપ ધર્મમેં શ્રદ્ધાવાલા બન જાતા હૈ, અથવા-વૈરાગ્ય સે જિસે
તત્ત્વશ્રદ્ધારૂપ રુચિ ઉત્પન્ન હો જાતી હૈ, જો તીવ્ર ધર્માનુરાગસે-અતિશય
ધર્મવિષયક વહુમાનરૂપ અનુરાગ સે-રંગ જાતા હૈ (સે ણં જીવે) એસા
વહ પૂર્વોક્ત વિશેષણોવાલા ગર્ભગત જીવ (ધમ્મકામણ, પુન્નકામણ, સગ્ગ-
કામણ) શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મ કી વાંછાસે યુક્ત બનકર, શુભકર્મરૂપ પુણ્ય
કી વાંછાસે યુક્ત બનકર, સ્વર્ગ કી વાંછાસે યુક્ત બનકર, (મોક્ષકામણ)
મોક્ષકી વાંછાસે યુક્ત બનકર (ધમ્મકંઘિણ) ધર્મકી કાંક્ષાસે યુક્ત બન-
કર, (પુણ્ણકંઘિણ) પુણ્ય કી કાંક્ષાયુક્ત બનકર (સગ્ગકંઘિણ) સ્વર્ગ
કી કાંક્ષાસેયુક્ત બનકર (મોક્ષકંઘિણ) મોક્ષકી કાંક્ષાસે યુક્ત બનકર,
(ધમ્મપિવાસિણ) ધર્મ કી પિપાસા વાલા બનકર (પુણ્ણપિવાસિણ)
પુણ્ય કી પિપાસા વાલા બનકર (સગ્ગપિવાસિણ) સ્વર્ગ કી પિપાસા-
વાલા બનકર (મોક્ષપિવાસિણ) મોક્ષ કી પિપાસા વાલા બનકર (તચ્ચિત્તે)

શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મમા શ્રદ્ધાવાળો બની જાય છે અથવા વૈરાગ્યને લીધે જેને
સાચા તત્ત્વમા શ્રદ્ધા ઉત્પન્ન થઈ હોય છે, અને જે તીવ્ર ધર્માનુરાગથી રંગાયો
હોય છે (સે ણં જીવે) એવા પૂર્વોક્ત વિશેષણો વાળો તે ગર્ભમા રહેલ જીવ
(ધમ્મકામણ, પુન્નકામણ, સગ્ગકામણ) શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મની અભિલાષા વાળો
બનીને, શુભકર્મરૂપ પુણ્યની વાછા વાળો બનીને, સ્વર્ગની અભિલાષા વાળો
બનીને, (મોક્ષકામણ) મોક્ષની ઇચ્છાના વાળો બનીને, (ધમ્મકંઘિણ) ધર્મની
ઈચ્છાવાળો બનીને, (પુણ્ણકંઘિણ) પુણ્યની ઈચ્છા વાળો બનીને (સગ્ગકંઘિણ)
સ્વર્ગની ઈચ્છાવાળો બનીને (મોક્ષકંઘિણ) મોક્ષની ઈચ્છાવાળો બનીને (ધમ્મ-
પિવાસિણ) ધર્મની પિપાસાવાળો બનીને, (પુણ્ણપિવાસિણ) પુણ્યની પિપાસા
વાળો બનીને, (સગ્ગપિવાસિણ) સ્વર્ગની પિપાસાવાળો બનીને (મોક્ષ-
પિવાસિણ) મોક્ષની પિપાસાવાળો બનીને, (તચ્ચિત્તે) ધર્મ વગેરેમાં એક

ગત પુત્ર જીવોપિ જાગર્તિ-કિમ્ 'સુદિયાણ સુદિપ મવઃ' સુસ્તિતાયાં સુસ્તિતો મવતિ કિમ્ ? 'દુદિયાણ દુદિપ મવઃ' દુઃસ્તિતાયાં દુ સ્તિતો મવતિ કિમિતિ પ્રશ્નઃ । મગવાનાદ- 'હતે'ત્યાદિ । 'હતા ગોયમા' હત્ત હે ગૌતમ ! 'જીવે ભં ગમ્મગણ સમાણે' જીવં સ્વલ્લ ગર્મગત સન્ 'આવ દુદિયાણ દુદિપ મવઃ' યાવત્ દુઃસ્તિતાયાં દુઃસ્તિતો મવતિ, ગર્મગતમ્પ જીવસ્ય સર્વાઽપિ ક્રિયા માતુરજ્ઞુસારિણેષ્વ મવેદિતિ માવઃ । 'અહે ણ' અથ સલ્લ નવમાસપર્યન્ત ગર્ભે વાસાનન્તરમ્ 'પસવ વજ્રકાલસમયસિ' પ્રસવનકાલસમયે-પ્રસૂતિસમયે 'સીસેણ વા પાપર્હિ વા આમ ચ્છતિ' યદા શોર્પેય વા પાદાર્ધ્યાં વા આગચ્છતિ તદા 'સમ આગચ્છઃ' સમમાગચ્છતિ=સમં=સુત્વેન માગચ્છતિ । યદા- 'તિરિયમાચ્છઃ' તિરિયગાગચ્છતિ, વદ્

કયા વહ મી સો જાતા હૈ ? (જાગરમાળીપ જાગરઃ) તથા માતા કે જગ જાને પર કયા વહ મી જગ જાતા હૈ ? (સુદિયાણ સુદિપ મવઃ દુદિયાણ દુદિપ મવઃ) અથવા જબ માતા સુસ્તી હોતી હૈ તય વહ કયા સુસ્તી હોતા હૈ ? જબ માતા દુઃસ્તી હોતી હૈ તય વહ ગર્મગત જીવ કયા દુઃસ્તી હોતા હૈ ? (હતા ગોયમા ! ગમ્મગણ સમાણે જાવ દુદિયાણ દુદિપ મવઃ) હાં ગૌતમ! ગર્મગત જીવ યાવ માતાકે દુ સ્તિત હોતેપર દુ સ્તીહોતા હૈ । તાત્પર્ય કહને કા યહ હૈ કિ ગર્મગત જીવ કી સમસ્ત ક્રિયાઈ માતા કી ક્રિયા અનુસાર હી હોતી હૈ । (અહે ણ પસવજકાલ સમયસિ) જીવ જય નૌ માહ તક ગર્મ મેં રહ ચુકતા હૈ તય ઉસકે પાદ પ્રસૂતિ સમય મેં (સીસેણ વા પાપર્હિ વા) વહ જીવ યદિ મસ્તક સે અથવા ઢોનોં પેરોં સે (આગચ્છઃ) બાહર નિકલતા હૈ તો (સમ્મ આગચ્છઃ) અચ્છો તરહ સે-વિના કિસી કણ્ઠ કે-બાહર નિકલ આતા હૈ । યદિ વહ (તિરિ

અથ છે ? (જાગરમાળીપ જાગરઃ) શુ માતા બાળે ત્યારે તે પણ બાળી બાળ છે ? (સુદિયાણ સુદિપ મવઃ દુદિયાણ દુદિપ મવઃ) શુ માતા દુ ખી થાય ત્યારે જર્ભમાં રહેલો જીવ દુઃખી થાય છે ? બાળે માતા સુખી થાય ત્યારે શુ તે સુખી થાય છે ?

ઉત્તર—(હતા ગોયમા !) હા, ગૌતમ ! (જીવે ભં ગમ્મગણ સમાણે જાવ દુદિયાણ દુદિપ મવઃ) જર્ભમાં રહેલો જીવ સુખ વાચુ કરીને રહે છે બહારથી લઈને માતાના દુ ખે દુઃખી થવા સુખીની બધી ક્રિયાઓથી મુક્ત રહે છે તાત્પર્ય એ છે કે જર્ભમાં રહેલો જીવની બધી ક્રિયાઓ માતાની ક્રિયા પ્રમાણે જ થાય છે (અહે ણ પસ વજ્રકાલસમયસિ) જીવ સવાનવ માસ સુખી જર્ભમાં રહે છે-ત્યાર પછી પ્રસૂતિના સમયે સીસેણ વા પાપર્હિ વા બે તે જીવ મસ્તકથી અથવા બાળે પગથી (આગચ્છઃ) બહાર નીકળે છે તો (સમ્મ આગચ્છઃ) કોઈ પણ બાળની મુશ્કેલી વિના બહાર નીકળે છે પણ બે (તિરિયમાગચ્છઃ) તિરે છે "બાટા"

ગૌતમ ! અનેન કારણેન એવમુચ્યતે યદેકઃ કથિદ્ ધર્મીં જીવો ગર્ભે મૃત્વા દેવલોકં ગચ્છતિ, એકઃ કથિત્ ધર્માદિરહિતો ગર્ભે મૃત્વા દેવલોકં ન ગચ્છતીતિ ભાવઃ

ગર્ભાધિકારાદેવેદમપરં ગર્ભસ્ત્રમાહ—‘ જીવે ણં મંતે ’ ઇત્યાદિ ।

‘ જીવે ણં મંતે ’ જીવઃ खलु भदन्त ! ‘ ગન્ધગણ સમાણે ’ ગર્ભગતઃ સન્ ‘ ઉત્તાણવ ’ ઉત્તાનકો વા, ગર્ભે વસન્ જીવઃ કિમ્ ઉત્તાનક ઊર્ધ્વમુખઃ, તથા— ‘ પાસિહ્ણવ ’ પાર્શ્વિતો વા—પાર્શ્વભાગેન સ્થિતો વા ‘ અંબલુજ્જવ ’ આમ્રકુન્જકો વા, આમ્રફલવત્ કુન્જો વા ‘ અચ્છેજ્જવ ’ આસીત વા સામાન્યતઃ । ‘ ચિદ્દેજ્જવ ’ તિષ્ઠેદ્વા ઊર્ધ્વસ્થાનેન ‘ નિસીણ્જ્જવ ’ નિપીદેદ્વા પર્યંકાઘાસનેન ‘ તુપદ્દેજ્જવ ’ ત્વગ્વર્તયેદ્વા, પાર્શ્વે પરિવર્તયેદ્વા, ‘ માઉણ સુવમાણીણ સુવહ ’ માતરિ સ્વપત્યાં સ્થપિતિ. યદા માતા નિદ્રાતિ તદા તદ્ગર્ભગતો જીવોપિ નિદ્રાતિ કિમ્ જાગરમાણીણ જાગરહિં જાગત્યાં જાગર્તિ, યદા માતા જાગર્તિ તદા તદીયગર્ભ-

ગૌતમ ! મેં એસા કહતા હું કે ગર્ભમાં રહા હુઆ કોઈ એક જીવ મર કર દેવલોક મેં જાતા હૈ, કોઈ એક ધર્માદિ સે રહિન વના હુઆ ગર્ભસ્થિત જીવ મરકર દેવલોક મેં નહીં જાતા હૈ ।

ગર્ભ કા અધિકાર હોને સે હી સૂત્રકાર અથ યહ દૂસરા ગર્ભસૂત્ર કહેતે હૈં (જીવે ણં મંતે ! ગન્ધગણ સમાણે ઉત્તાણવ વા પાસિહ્ણવ વા) હે ભદન્ત ! ગર્ભ મેં સ્થિત જીવ કયા ચત્તા-ઊંચા મુખ કયા હુઆ સ્થિતહોતા હૈ ? પાર્શ્વભાગસે સ્થિત હોતા હૈ ? (અંબલુજ્જવ વા) કયા વહ આમકે જૈસા કુન્જ હોતા હૈ ? (અચ્છેજ્જવ વા) સામાન્યઆસનસે બેઠતા હૈ (ચિદ્દેજ્જવ વા) યદા હોતા હૈ ? (નિસીણ્જ્જવ વા) અથવા કિ-પર્યંક આદિ આસનસે બેઠતા હૈ ? (તુપદ્દેજ્જવ વા) વા કરવટ બદલતા હૈ ? (માઉણ સુવમાણીણ સુવહ) અથવા-માતાકે સો જાને પર

ગોચમા !) હે ગૌતમ ! તે કારણે હું એવું કહું છું કે ગર્ભમાં રહેલો કોઈ એક જીવ મરીને દેવલોકમાં ઉત્પન્ન થાય છે અને ધર્માદિથી રહિત એવો કોઈ એક જીવ મરીને દેવલોકમાં જતો નથી

ગર્ભના અધિકાર આલતો હોવાથી સૂત્રકાર આ બીજી ગર્ભ સૂત્ર કહે છે—

(જીવે ણં મંતે ! ગન્ધગણ સમાણે ઉત્તાણવ વા પાસિહ્ણવ વા) હે ભગવન્ ! ગર્ભમાં રહેલો જીવ શુ મુખ બીજી કરીને રહે છે ? શુ તે પાર્શ્વભાગથી સ્થિત હોય છે ? (અંબલુજ્જવ વા) શુ તે આમના સમાન કુન્જ (કુખડો) હોય છે ? (અચ્છેજ્જવ વા) શુ તે સામાન્ય આસને બેસે છે ? (ચિદ્દેજ્જવ વા) હોય થાય છે ? (નિસીણ્જ્જવ વા) અથવા પર્યંક વગેરે આસને બેસે છે ? (તુપદ્દેજ્જવ વા) કે પડખુ ફેરવે છે ? (માઉણ સુવમાણીણ સુવહ) અથવા-માતા સૂવે ત્યારે તે પશુસૂઈ

ત્વેન મ્યવસ્પાપિતાનિ, 'અમિનિવિદ્વાઈ' અમિનિવિદ્વાનિ, અમિ=ત્રીવાનુમાપતયા
 નિવિષ્ટાનિ સ્થાપિતાનીત્યર્થઃ, 'અમિસમન્વાગયાઈ' (અમિસમન્વાગતાનિ તદયામિ-
 મુસ્તીમૂતાનિ તતશ્ચ 'ઉચ્ચિસાઈ' ઉચ્ચીર્ણાનિ, કર્મસ્થિતિપરિપાકેન તદયાવચિકાર્યા
 માત્તાનિ, કિન્તુ 'નો ઉવસતાઈ મવતિ' નો ઉપશ્ચાન્તાનિ મવન્તિ 'તમો મવઈ'
 તતો મવતિ, યદિ કર્મણોપશ્ચાન્તમ્ કિન્તુ ફલોદયાય કમ્પદાનાય મ્યવસ્થિતં સ્યાત્
 તદા ગર્મનિર્ગતો બીજ કોદશ્ચો મવતીત્યાઈ- 'દુરુવે' દુરુવ, દુરુપો મવતિ-વિકૃ-
 તાકૃતિમાન્ મવતિ, 'દુચને' દુર્વર્ણઃ, કૃત્તિસર્વર્ણવાન્ મવતિ, 'દુગંધે' દુર્ગંધઃ,
 કૃત્તિસર્વગંધવાનિત્યર્થઃ, 'દુરસે' દૂરસ, કૃત્તિસર્વરસ इत्यર્થઃ, 'દુફાસે' દુ-
 સ્પર્શ, કર્કશ્ચ કઠોરાદ્યશ્ચમસ્પર્શવાનિત્યર્થઃ, 'અણિદ્દે' અનિદ્દ, અવાંછનીયા,
 'અકતે' અકાન્તઃ, અનમિલપનીયઃ, 'અપ્પિય' અપ્રિયઃ, સર્વોપકારકઃ, 'અમુમે'
 અશુભઃ, અકરુણાકરઃ, 'અમણુને' અમનોદ્ધઃ, અદિતકારકઃ, 'અમણામે' અમ-
 નોમઃ, સકલજનપતિકૂલ, 'દીણસ્સરે' દીનસ્વરઃ, 'દીનસ્સરે' દીનસ્વરઃ,
 'અણિદ્દસ્સરે' અનિદ્દસ્વરઃ 'અકંતસ્સરે' અકાન્તસ્વરઃ, 'અપ્પિયસ્સરે' અપ્રિય-
 સ્વરઃ 'અમુમસ્સરે' અશુભસ્વરઃ, 'અમણુજ્જસ્સરે' અમનોદ્ધસ્વરઃ, અમણામસ્સરે'

દુપ હૈં, (તમો મવઈ, દુરુવે, દુચને, દુરસે, દુફાસે, અણિદ્દે, અકતે,
 અપ્પિય, અમુમે, અમણુને, અમણામે, દીણસ્સરે, દીનસ્સરે, અણિદ્દસ્સરે
 અકતસ્સરે, અપ્પિયસ્સરે, અમુમસ્સરે, અમણુજ્જસ્સરે અમણામસ્સરે, અણ-
 પ્પજ્જવયણે પચ્ચાયાપ યાચિ મવઈ) તો વઈ જીવ પેસા મનુષ્ય હોતા હૈં,
 કિ જો કદૂપ હોતા હૈં, સ્કોટે ઘર્ણવાલા હોતા હૈં, સ્કોટે રસ વાલા હોતા હૈં,
 સ્કોટે સ્પર્શવાલા હોતા હૈં, અનિદ્દ હોતા હૈં, અકાન્ત હોતા હૈં, અપ્રિય હોતા
 હૈં, અશુભ હોતા હૈં, અમનોદ્ધ હોતા હૈં, અમનોમ હોતા હૈં, દીનસ્વરવાલા
 હોતા હૈં, દીનસ્વરવાલા હોતા હૈં, અનિદ્દસ્વરવાલા હોતા હૈં, અકાન્ત સ્વર
 વાલા હોતા હૈં, અશુભ સ્વરવાલા હોતા હૈં, અમનોદ્ધ સ્વરવાલા હોતા હૈં,

આવશે." (તમો મવઈ, દુરુવે, દુચને, દુરસે, દુફાસે, અણિદ્દે, અકતે, અપ્પિય,
 અમુમે, અમણુને, અમણામે, દીણસ્સરે, દીનસ્સરે, અણિદ્દસ્સરે, અકતસ્સરે,
 અપ્પિયસ્સરે, અમુમસ્સરે અમણુજ્જસ્સરે અમણામસ્સરે અણાપ્પજ્જવયણે પચ્ચાયાપ
 યા ચિ મવઈ) તે ઠઠ્ઠપો દોષ છે ખરાજ વળ મુદ્ધ દોષ છે, ખરાજ રચવાળો
 દોષ છે ખરાજ સ્પર્શવાળો દોષ છે અનિદ્ધ દોષ છે અકાન્ત દોષ છે,
 અપ્રિય દોષ છે અશુભ દોષ છે અમનોદ્ધ દોષ છે અમનોમ દોષ છે, દીન
 સ્વરવાળો દોષ છે દીનસ્વરવાળો દોષ છે અનિદ્ધ સ્વરવાળો દોષ છે; અકાન્ત
 સ્વરવાળો દોષ છે, અપ્રિયસ્વરવાળો દોષ છે, અશુભસ્વરવાળો દોષ છે, અમનોદ્ધ

તયા નિસ્સરતિ તદા 'વિણિઘાયમાવજ્જઈ' વિનિઘાતમાપદ્યેત, ત્રિયેતેત્યર્થઃ, યદા ગર્ભસ્તિરશ્ચીનો ભૂત્વા માતુરુદરાન્નિર્ગન્તું પ્રવર્તેતે તદા સ તન્માતા ચ પ્રાયોમરણમા-
પદ્યેત, તિર્યગ્રુપેણ નિઃસરણસ્યાસંભવાત્ । ગર્ભનિર્ગતસ્ય જીવસ્ય યત્ સ્યાત્તદાહ-
'વન્નવજ્જાણિ' વર્ણવધ્યાનિ ચ વર્ણ. શ્લઘારૂપઃ. સ વધ્યો દન્તવ્યો યેપાં તાનિ
વર્ણવધ્યાનિ નિન્દનીયાનીત્યર્થઃ, અથવા 'વર્ણવાહ્યાનિ' ઇતિચ્છાયા, તત્ર-વર્ણાદ્
વાહ્યાનિ અશુભાનીત્યર્થઃ । 'સે' તસ્ય ગર્ભવિનિર્ગતસ્ય જન્તોઃ 'કમ્માઈ' કર્માણિ
'વદ્ધાઈ' વદ્ધાનિ સામાન્યતઃ, તાનિ તુ દૂરતોઽપિ ભવન્તીત્યાહ- 'પુટ્ટાઈ' સ્પૃ-
ષ્ટાનિ સંલગ્નતયા ગાઢતરવન્ધનતઃ, અથવા વદ્ધાનિ, કુતઃ? સ્પૃષ્ટાનિ-પૂર્વં સ્વવ્યા-
પારણૈવ સ્પર્શવિપયીકૃતાની અભૂવન્ અતएव વદ્ધાનીતિ ભાવઃ, 'નિહત્તાઈ'
નિધત્તાનિ, ઉદ્વર્તનાઽપર્વતનકરણવર્જિતશેષકરણાયોગ્યત્વેન વ્યવસ્થાપિતાનિ,
'કઢાઈ' કૃતાનિ, નિકાચિતાનિ સર્વકરણાયોગ્યત્વેન વ્યવસ્થાપિતાનિ, 'પટ્ટવિ-
યાઈ' પ્રસ્થાપિતાનિ, મનુષ્યગતિપશ્ચેન્દ્રિયજાતિત્રસાદિનામકર્માદિના સહોદય-

યમાગચ્છઈ) તિરછા હોકર વાહર નિકલતા હૈ તવ તો (વિણિઘાયમા-
વજ્જઈ) મરજાતા હૈ । તાત્પર્ય યહ હૈં કિ જવ ગર્ભ તિરછા હોકર માતા
કે ગર્ભાશય સે વાહર નિકલને લગતા હૈ, તવવહ માતા ઔર ગર્ભ પ્રાયઃ
દોનોં હી મરણ કો પ્રાપ્ત હો જાતે હૈં । ક્યોં કિ ગર્ભ તિરછા હોકર માતા
કે પેટ સે યોનિ ઢારા નિકલ નહીં સકતા હૈ । અવ સૂત્રકાર યહ પ્રકટ
કરતે હૈં કિ ગર્ભ સે નિર્ગત જીવ કૈસા કયા હોતા હૈ—(વન્નવજ્જાણિ
ય સે કમ્માઈ વદ્ધાઈ, પુટ્ટાઈ, નિહત્તાઈ, કઢાઈ, પટ્ટવિયાઈ, અભિનિવિદ્ધાઈ,
અભિસમન્નાગયાઈ, ઉદિન્નાઈ નો ઉવસંતાઈ ભવંતિ) ગર્ભ સે નિર્ગત હુए
ઉસ જીવ કે જો અશુભ કર્મ વદ્ધ હૈં, સ્પૃષ્ટ હૈં, નિધત્ત હૈં, કૃત હૈં, પ્રસ્થા-
પિત હૈં, અભિનિવિષ્ટ હૈં, અભિસમન્નાગત હૈં, ઉદયપ્રાપ્ત હૈં, ઉપશાન્ત નહીં

થધને બહાર આવે તો (વિણિઘાયમાવજ્જઈ) તે મરણ પામે છે તાત્પર્ય એ
છે કે બે ગર્ભ તિરછા “આડો” થધને માતાના ગર્ભાશયમાથી બહાર નીકળે
તો ઘણે ભાગે માતા અને ગર્ભ બન્ને મરણ પામે છે કારણ કે ગર્ભ તિરછા
થધને માતાના ગર્ભાશયમાથી બહાર નીકળી શકતો નથી

હવે સૂત્રકાર એ બતાવે છે કે ગર્ભમાથી બહાર આવેલો શુવ કેવો હોય છે?

(વણ્ણવજ્જાણિ ય સે કમ્માઈ, વદ્ધાઈ, પુટ્ટાઈ, નિધત્તાઈ, કઢાઈ, પટ્ટવિયાઈ,
અભિનિવિદ્ધાઈ, અભિસમન્નાગયાઈ, ઉદિન્નાઈ, નો ઉવસંતાઈ ભવંતિ) ગર્ભમાથી બહાર
નીકળેલો તે શુવ કે જેને અશુભ કર્મ બદ્ધ છે, સ્પૃષ્ટ છે, નિધત્ત છે, કૃત છે,
પ્રસ્થાપિત છે, અભિનિવિષ્ટ છે, અભિસમન્નાગત છે, ઉદય પ્રાપ્ત છે અને જેનાં
કર્મ ઉપશાન્ત થયેલ નથી “આ બધાં પદોનો અર્થ આગળ સમજાવવામાં

આદિજ્ઞવચને પચાયાપ આધિમત્ત ' યાવત્ આદયવચન પ્રત્યાપાતશ્ચાપિ મતિ
 યદિ તસ્યાશ્રુમં કર્મ નો યદ્ મથેતદા રૂપાદારમ્ય સ્વરપર્યન્તં સર્વશ્રુમપ્રસ્થપ
 મથેત્ સમુપતશ્ચ જીવ આદેયવચન સન્ મનુષ્યત્વે સમુત્પન્નો મતીતિ, ' સે
 મતે સેવં મતે ' તિ તદેવ મદન્ત તદેવ મદન્ત इति, हे मदन्त ! गर्भविषय येन
 પ્રકારેણ યદ્વસ્તુ દેવાનુગ્રિયણ । કથિત સત્ એવમંવ મર્વ સત્યમંવ ઇત્યુસ્ત્વા અમર્વ
 મગધન્ત મહાધીરં ચન્દતે નમસ્યસિ યન્દિસા નમસ્યિત્વા ચ સયમેન તપસા આત્માન
 માષયન્ વિહરતીતિ ॥ ૬૦૫ ॥

“ પુઢાઈ ” યહ પદ હેતુપરક પદ હૈ-આત્મા મેં કર્મ યદ્ કયોં હુપ તો
 હસકા ઉત્તર યહ (પુઢાઈ) પદ દેતા હૈ-ચહ યતાતા હૈ કિ આત્માવે
 પહિછે હન્નેં અપને હી યોગાદિરૂપ વ્યાપાર સે સ્પર્શ કા વિષયમૂત બનાયા
 થાસો વે આત્માકે સાથ ચિપક ગયો. ‘ નિષત્ત ’ હસ પદકે વિષયમેં વિશેષ
 વિવરણ મેરે યનાયે હુપ “ મોક્ષપદ ” મેં લિખા જા હુકા હૈ-જિસકા તાત્પર્ય
 યહ હૈ કિ નિષત્ત જો કર્મ હોતે હૈં ઉનમેં ઉદ્ધર્સતા ઔર અપવર્તતા હન
 દો કરણોં કે સિવાય દસરે ઔર કરણ કુછ મી નહીં કર સકતે હૈં ।
 તથા જીવ કે સાથ જો કર્મ યદ્ હૈં ઉનકા કર્તા ઔર કોઈ દૂસરા જીવ
 નહીં હૈ કિન્તુ વહી સ્વયં આત્મા હૈ કિ જિસકે સાથ વે યદ્ હૈં, યહ જાત
 “ કઢાઈ ” પદ પ્રકટ કરતા હૈ । હસસે યહ યાન સિદ્ધાન્ત કી પુષ્ટ
 ઔર સ્પષ્ટ હો જાતી હૈ કિ કર્મોં કો અપને સાથ યદ્ કરને મેં અધિ-
 કારી સ્વયં આત્મા હી હૈ । નિકાષિત વે કર્મ હોતે હૈં કિ જિનમેં કોઈ મી
 કરણ કુછ મી નહીં કર સકતા હૈ । મનુષ્યગતિ, પંચેન્દ્રિયજાતિ, ગ્રસ

હેતુપરક પદ ॥ જોટલે કે આત્માની સાથે કર્મ શા માટે બદલ થયા તેનો
 ઉત્તર આ “ પુઢાઈ ” પદ આપે છે તે જો વાત બતાવે છે કે આત્માએ
 પહેલા પોતાના જ યોગ વગેરે વ્યાપારથી તેમને બદલ્યું કર્યો અને તેથી તે
 કર્મો આત્માની સાથે બંધાયા “ નિષત્ત ” પદના વિષયમાં વિશેષ વચ્ચું ન મોકળ
 પદ ‘મા સખવામા આન્સુ ॥ તેનું તાત્પર્ય’ જો ॥ કે નિષત્ત કર્મમાં, ઉદ્ધર્તાના
 અને અપવર્તના જો બે સિવાયના કરણ કદં પણ કરી શકતાં નથી, તથા
 છપની સાથે જે કર્મ બદલ હોય છે તેનો કર્તા બીજો કદં પણ છવ હોતો
 નથી પણ સ્વયં આત્મા પોતે જ છે જોજ વાત “ કઢાઈ ” પદ પ્રકટ કરે છે
 બાધી સિદ્ધાન્તની જો વાતને સમથન મળે ॥ કે કરોને પોતાની સાથે બદલ
 કરવામાં આત્મા પોતે જ અપરાધી હોય છે જે કર્મ ઉપર કદં પણ કરણની
 કદં પણ પ્રકારની થતી નથી તે કર્મને નિકાષિત ” કર્મ કહે છે.

અમનોમસ્વરઃ, 'અણાણ્જઞયણે' અનાદેયવચનઃ, અગ્રાહ્યવચનઃ, એતાદૃશઃ સન્
'પચ્ચયાણ્યાત્રિ ભવઈ' પ્રત્યાયાતશ્ચાપિ ભવતિ, મનુષ્યભવમાગચ્છતીતિ, યસ્ય
જીવસ્ય 'વણ્ણવજ્ઞાણિયસે કમ્માઈ નો વદ્ધાઈ' વર્ણવદ્ધચાનિ ચ તસ્ય કર્માણિ
નો વદ્ધાનિ 'પસત્થં ણેયવ્વં' પ્રશસ્તં જ્ઞાતવ્યમ્, અત્ર પૂર્વપાઠો વ્યત્યયેન=પ્રશસ્ત-
રૂપેન ગ્રાહ્ય इत्यर्थः, यदि तस्य जीवस्य कर्माणि अशुभरूपेण नो वद्वानि भवेयुस्तदा
सर्वं रूपादिकं प्रशस्तमेव भवतीति ज्ञातव्यानीतिभावः। कियत्पर्यन्तमित्याह-‘जाव

અમનોમસ્વરવાલા હોતા હૈ, અનાદેયવચનવાલા હોતા હૈ। સૂત્રકારને યહાં
યહ કહા હૈ કિ યદિ ગર્ભસ્થ જીવ આગ્યવશાત્ સુરક્ષિત રીતિ સે ગર્ભ સે
બાહર નિકલ ભી આતા હૈ પરન્તુ યદિ ઉસકે પૂર્વોપાર્જિત કર્મ નિંદનીય
યા અશુભ આદિ રૂપ હૈં ઓર અભીતક વે ઉપશાંત દશા મેં નહીં આ પાયે
હૈં-ઉદય દશા મેં હી ચલ રહે હૈં તો વહ ઉનકે ઉદય કે કારણ ઓટ્ટે રૂપ
આદિ વાલા વચન જાયા કરતા હૈ। સૂત્ર મેં જો “વન્નવજ્ઞાણિ” પદ આયા
હૈ ઉસકા અર્થ “નિંદનીય યા અશુભ” એસા હૈ, કારણ કિ-વર્ણ શબ્દકા
અર્થ શ્લાઘારૂપ વર્ણ જિનકા નષ્ટ હો ચુકા હૈ, અર્થાત્ જો નિંદનીય હૈં વે
કર્મ। અથવા જો કર્મ અશુભ હૈં વે “વણ્ણવજ્ઞ” હૈ યહાં હસ પદ કી
સંસ્કૃત છાયા “વર્ણવાહ્ય” એસી હોગી, ક્યોંકિ જો અશુભ કર્મ હોતે હૈં વે
વર્ણ સે-પ્રશંસા સે વાહ્ય.વહિર્ભૂત હુઆ કરતે હૈં। (વદ્ધ) કા તાત્પર્ય યહાં
સામાન્યરૂપ સે બાંધે ગયે એસે કર્મો સે હૈ (પુટ્ટાઈ) પદ સે યહ વાત
સ્પષ્ટ હોતી હૈ કિ જો ગાઢ બંધન સે પુટ્ટ કિયે હૈં એસે વે કર્મ। અથવા

સ્વરવાળો હોય છે, અમનોમસ્વરવાળો હોય છે, અને અનાદેય વચનવાળો હોય
છે. સૂત્રકાર અહીં એ બતાવે છે કે ગર્ભનાં એવ જો ભાગ્યવશાત્ સુરક્ષિત રીતે
ગર્ભમાંથી બહાર નીકળે તો પણ તેના પૂર્વોપાર્જિત કર્મો જો નિંદનીય અથવા
અશુભ હોય અને જ્યાં સુધી તેના તે કર્મો ઉપશાન્ત દશામાં આવ્યા ન હોય
ઉદય દશામાં જ હોય તો તે કર્મોના ઉદયને કારણે તે એવ ખરાબ રૂપ વગેરે
વાળો જન્મે છે. સૂત્રમાં આપેલા “વન્નવજ્ઞાણિ” પદનો અર્થ અહિં
“નિંદનીય કે અશુભ” એવો થાય છે કારણ કે “વણ્ણ” શબ્દનો અર્થ
“શ્લાઘા” પણ થાય છે તે શ્લાઘારૂપ વણ્ણ જેનો નષ્ટ થઈ ગયો છે એટલે
કે જે નિંદનીય છે એવા કર્મ અથવા જે કર્મ અશુભ હોય છે તેમને
“વણ્ણવજ્ઞ” કહે છે અહીં તેની સંસ્કૃત છાયા “વર્ણવાહ્ય” એવી થાય છે.
કારણ કે જે અશુભ કર્મો હોય છે તે વણ્ણથી (પ્રશંસાથી) બાહ્ય (રહિત)
હોય છે. “વદ્ધ” એટલે સામાન્ય રૂપે બાધેલા કર્મો “પુટ્ટાઈ” પદનો અર્થ
ગાઢ બંધનથી પુટ્ટ કરાયેલા કર્મ એવો સમજવો અથવા “પુટ્ટાઈ” એ પદ

યદિ (વળગજ્ઞાણિ સે કમ્માઈ નો પદ્દાઈ પસસ્ય ણેયન્વ જાવ આદિ
 ણગયણે પચ્ચાયાપ યાવિ મવઈ) ઉસ ગર્મગત જીવ કે અશુભ અથવા
 નિંદનીય કર્મ વદ્ધ ન હોં તો સય રૂપાદિક ઉસકે પ્રશસ્ત હી હોતે
 હેં, એસા જાનના ચાહિયે, યહ પ્રશસ્તતા કહાંતક જાનની ચાહિયે
 તો હસકે લિયે સૂત્રકાર ને કહા કિ—“ જાવ આદિજ્ઞવયણે
 પચ્ચાયાપ યાવિ મવઈ ” કિ યદિ જીવ કે અશુભ કર્મ વદ્ધ નહોં
 અપિતુ શુભ કર્મ વદ્ધ હેં તો રૂપ સે લેકર સ્વર પર્યન્ત સય ઉસકે પ્રશસ્ત હી
 હોતે હેં । વહ અપની ઉચ્ચતિ કરતા હુઆ લોક મેં આદેવવચન થાલા બન
 જાતા હે । એસા વહ મનુષ્ય હોતા હે । તાત્પર્ય કહને કા યહ હે કિ અશુભ
 કર્મ વદ્ધ આદિ થાલે પૂર્વજીવ કી અપેક્ષા હસ શુભ કર્મ વદ્ધાદિથાલે
 જીવ કી સય થાલે પ્રશસ્ત હી પ્રશસ્ત હોતી હેં । (સેવ મતેર ! સ્તિ) હે
 મદન્ત ! ગર્મ કે ચિષય મેં જિસ પ્રકાર સે આપ દેવાનુપ્રિય ને કહા હે
 વહ સય એમા હી હે એસા હી હે અર્થાત્ સત્ય હી હે સત્ય હી હે—એસા કહ
 કર ઉન ગૌતમ સ્વામી ને અમળ મગધાન્ મહાવીર કો વન્દના કી, નમ
 સ્કાર કિયા । વન્દના નમસ્કાર કર ફિર બે સંયમ ઓર તપ સે અપની
 આત્મા કો ભાવિત કરતે હુપ અપને સ્થાન પર બેઠ ગયે ॥સૂ.૦૫॥

॥ પ્રથમ ઘાતકમે યહ સપ્તમ શ્લોક સમાપ્ત હુઆ ૧-૭॥

હે તો પચ્ચ ખરાબ રૂપ વજેરે વાળો સાથ છે પચ્ચ બે (વળગજ્ઞાણિ સે
 કમ્માઈ નો વદ્દાઈ પસસ્ય ણેયન્વ જાવ આદિજ્ઞ વયણે પચ્ચાયાપ યાવિ મવઈ)
 તે અભાગથી નિકળેલા એવે અશુભ અથવા નિંદનીય કર્મ બાંધ્યા ન હોય તો
 તેના રૂપ વજેરે પ્રશસ્ત (સારા) જ હોય છે એમ બાલુવુ તે પ્રશસ્ત પચ્ચ
 કયાં સુધી સમજવુ તે બતાવવાને માટે સૂત્રકારે કહ્યું છે કે “જાવ આદિજ્ઞ
 વયણે પચ્ચાયાપ યાવિ મવઈ” એટલે કે બે બે એવને અશુભ કર્મેના બધ
 બાંધેલા ન હોય પચ્ચ શુભકર્મો જ બાંધ્યા હોય તો તેના રૂપથી સ્થિતિ સ્વર
 સુધીના બધા જ સારાં હોય છે તે પોતાની પ્રગતિ સાધતો સાધતો હોય
 આદેવવચન વાળો બની બાધ છે (તેનાં વચનને બધાં હોંકો માન્ય કરે છે,
 તાત્પર્ય એ છે કે અશુભ કર્મ બદ્ધ એવની અપેક્ષાએ શુભ કર્મબદ્ધ એવના
 રૂપ વજેરે બધાં પ્રશસ્ત જ હોય છે (સેવ મતે ! સેવ મતે !) કે અત્રવનાં
 આપે ત્રણના વિષયમાં જે કહ્યું તે યથાથ જ છે કે અત્રવનાં આપની વાત
 તરફ સારી છે આ પ્રમાણે કહીને ગૌતમ સ્વામીએ મહાવીર પ્રભુને વહજા
 કરી, નમસ્કાર કર્યા. વહજા નમસ્કાર કરીને, સંયમ બને તપથી પોતાના
 આત્માને ભાવિત કરતાં તેઓ પોતાને સ્થાને બેસી ગયા. ॥ સૂ-૫ ॥

આદિ વગેરે નામકર્મ કે સાથ ઉદયરૂપ સે વ્યવસ્થાપિત કિયે ગયે એસે જો કર્મ હૈં વે વ્યવસ્થાપિત કર્મ હૈં । જિન કર્મોં કા અનુભવ તીવ્રરૂપ સે સ્થાપિત હુઆ હૈં વે કર્મ અભિનિવિષ્ટ હૈં । “ અભિસમન્નાગયાઈ ” કા તાત્પર્ય હૈં કિ જો કર્મ ઉદય કે સન્મુખ હો રહે હૈં । ઓર હસી કારણ જો “ ઉદિન્નાઈ ” ઉદયાવલિકા મેં પ્રાપ્ત હો રહે હૈં તો જીવ એસે કર્મોં કે પ્રભાવ સે કૈસા હોતા હૈં ? હસકા ઉત્તર સૂત્રકાર ને “ દુરુવે ” ઇત્યાદિ પદોં દ્વારા દિયા હૈં । દુરુપ શબ્દ કા અર્થ વિકૃત (સ્વરાવ) આકારવાલા હોતા હૈં । એસા જીવ વિકૃત આકારવાલા હોતા હૈં । “ દુવન્ને ” કુત્સિત વર્ણવાલા હોતા હૈં । “ દુર્ગંધે ” દુર્ગંધ આદિ વાલા હોતા હૈં । “ અણિદ્દે ” પદ યહ કહતા હૈં કિ ઉસે કોઈ ચાહતા નહીં હૈં । (અકંતે) વહ અન-મિલિષણીય હોતા હૈં “ અપ્પિય ” અપ્રિય-સવ કા અપકાર કરને વાલા હોતા હૈં । “ અસુમે ” અકલ્યાણકર હોતા હૈં । અમનોજ્ઞ-અહિતકારક હોતા હૈં । અમનોમ-સકલજનોં કે પ્રતિકૂલ રહા કરતા હૈં । તથા હીનાદિ સ્વર વાલા હોતા હૈં । ઉસકા વચન કોઈ નહીં માનતા હૈં એસા વહ અના-દેય વચન વાલા હોતા હૈં । ‘ પચ્ચાયાય યાવિ ભવઈ ’ યહ પદ પ્રકટ કરતા હૈં કિ એસા જીવ યદિ મનુષ્ય હોતા હૈં તો વહ એસા હોતા હૈં । તથા

મનુષ્યગતિ, પચ્ચેન્દ્રિય ભતિ, ત્રસ વગેરે નામ કર્મની પ્રકૃતિઓ સાથે ઉદયરૂપે વ્યવસ્થાપિત એવા જે કર્મ છે તેને “ વ્યવસ્થાપિત કર્મ ” કહે છે. જે કર્મોના અનુભવ તીવ્ર રૂપે સ્થાપિત થયો હોય છે તે કર્મોને “ અભિનિવિષ્ટ ” કહે છે “ અભિસમન્નાગયાઈ ” એટલે કે જે કર્મો ઉદયની સન્મુખ આવી રહ્યાં હોય અને તે કારણે જે “ ઉદિન્નાઈ ” ઉદયાવલિકામાં આવી રહ્યાં હોય છે એવાં કર્મ. એવા કર્મોના પ્રભાવથી જીવ કેવા સ્વરૂપે ઉત્પન્ન થાય છે, એ સૂત્રકારે ‘ દુરુવે ’ ઇત્યાદિ પદો વડે બતાવ્યું છે “ દુરુવે ” એટલે વિકૃત (ખરાબ દેખાવ વાળો, “ દુર્ગંધે ” એટલે દુર્ગંધ વાળો, “ અણિદ્દે ” (અનિષ્ટ) એ પદ એ અર્થ બતાવે છે કે તેને કોઈ આહતુ નથી ‘ અકંતે ’ એ પદ એમ સૂચવે છે કે તે અકાન્ત-અનમિલિષણીય-હોય છે “ અપ્પિય ” અપ્રિય સૌનો અપકાર કરનારો હોય છે “ અસુમે ” અકલ્યાણકારી, “ અમનોજ્ઞ ” અહિતકારક, “ અમનોમ ’ બધા લોકોને પ્રતિકૂળ રહેનારો હોય છે વળી તે ગર્ભમાંથી નિકળેલો જીવ હીન વિગેરે સ્વર વાળો હોય છે તેનાં વચનને કોઈ માનતુ નથી, માટે તેને અનાદેય વચન વાળો કહ્યો છે “ પચ્ચાયાય યાવિ ભવઈ ” આ પદો વડે એ બતાવ્યું છે કે એવો જીવ જે મનુષ્ય ગતિમાં જન્મ

સત્તમમુદ્દેશક નિરૂપ્ય, તદનુ અદમ નિરૂપયતિ, તદનયો સત્તમાદમોદ્દેશકયોઃ પરસ્પરમય સપન્થઃ, સત્તમોદ્દેશકે જીવાના ગર્ભવાસ પ્રતિપાદિતઃ, ગર્ભવાસઃ જીવાનાં સત્પ્રાયુષ્કે એવ મવતિ, ક્ષ્યાયુષો નિરૂપણાયમદમોદ્દેશકઃ તથા પ્રથમ શતકમયમોદ્દેશકસ્પાદી સગ્રહગાથાયાં—‘વાલ’તિ યચુક્ત તદિદ્વાલમ્ય નિરૂપણાય ચાપ્તમોદ્દેશક પ્રારમ્ભ્યતે, તસ્ય પ્રારમ્ભ્યમાણસ્યાપ્તમોદ્દેશકસ્યેદમાદિમં સૂત્રમ્— ‘રાયગિદ્દે’ इत्यादि ।

મૂલમ્—રાયગિદ્દે સમોસરણં જાવ એવ ઘયાસી—અગંત ઘાલેણં મતે ! મણુસ્સે કિં ણેરહયાઉય પકરેહ તિરિક્કલાઉય પકરેહ, મણુસ્સાઉય પકરેહ, દેવાઉય પકરેહ ? ણેરહયાઉય કિચ્ચા ણેરહપ્પસુ ઉવવજ્જહ, તિરિક્કલાઉય કિચ્ચા તિરિપ્પસુ ઉવવજ્જહ, મણુસ્સાઉય કિચ્ચા મણુસ્સેસુ ઉવવજ્જહ, દેવા ઉય કિચ્ચા દેવલોગેસુ ઉવવજ્જહ ? ગોયમા ! અગંત ઘાલેણં

કાં કથન, ધીર્યધિચાર લઙ્ઘિધીર્ય તથા કરણધીર્ય કા વિચાર, સ્ત્રીધીસ વળ્લક, ઉદ્દેશક કી પરિસમાપ્તિ—

સત્તમ ઉદ્દેશક કા નિરૂપણ કરકે અય સૂત્રકાર આઠઁ ઉદ્દેશક કા નિરૂપણ કરતે હૈં । ઇન દોનોં માત્રેઁ ઓર આઠઁ ઉદ્દેશકોં કા આપસ મૈં ઇસ પ્રકાર સે મયજ હૈ—સત્તમ ઉદ્દેશક મૈં જીર્ષોં કા ગર્ભવાસ પ્રતિ પાદિત કિયા ગયા હૈ—સો યહ ગર્ભવાસ જીર્ષોં કા આયુકર્મ કે હોને પર હી હોતા હૈ । ઇસ આયુ કર્મકે નિમિત્ત તથા પ્રથમ શતકકે પ્રથમ—ઉદ્દેશક કી આદિ મૈં મમહ ગાથા મૈં “ વાલ ” એમા જો કહા ગયા હૈ સો ઉસ વાલ કે નિરૂપણ કરને કે નિમિત્ત યહ આઠઁ ઉદ્દેશક પ્રારમ્ભ કિયા ગયા હૈ ઉસકા સર્ગ પ્રથમ સૂત્ર (રાયગિદ્દે સમોસરણં જાવ) इत्यादि હૈ ।

આતમા ઉદ્દેશનુ નિરૂપણ કરીને હવે સૂત્રકાર આઠમાં ઉદ્દેશનુ નિરૂપણ કરે છે તે બન્ને ઉદ્દેશજ્ઞો વચ્ચે પરસ્પરનો મત્રાધે આ પ્રમાણે છે—આતમા ઉદ્દેશકમા છવોના ગર્ભવાસનુ પ્રતિપાદન કરાયુ છે—છવોનો ગર્ભવાસ આયુષ્ય કર્મના સંભાવની બાધાય છે તેથી આયુષ્યક્રમનુ નિરૂપણ કરવાના આશયથી તથા પોતા શતકના પહેલા ઉદ્દેશની શરૂઆતમા આવતી સંબદગાથામાં જે “ વાલ ” પદ આવે છે તે બાલનુ નિરૂપણ કરવાને માટે આ આઠમા ઉદ્દેશને પ્રારંભ કર્યો છે તેનુ સ્ત્રી પહેલુ સૂત્ર ‘રાયગિદ્દે સમોસરણં જાવ’ इत्यादि છે

॥ अथ अष्टमोद्देशकः प्रारभ्यते ॥

अस्मिन् उद्देशके संक्षेपतो विचारणीया विषया इमे सन्ति एकान्तबालस्य एकान्त-
पण्डितस्य च स्वरूपादिकथनम्, अंतक्रियायाः कल्पोपपत्तिकाक्रियायाश्च स्वरूप-
विचारः, बालपण्डितस्य स्वरूपादिनिर्णयः, देवगतेः कारणप्रतिपादनम्। मृग-
घातकादिपुरुषाणां स्वरूपादि संकीर्तनम्, क्रिया-कायिकीआधिकरणिकी-प्राद्वे-
षिकी-पारितापनिकी-प्राणातिपातिव्यादीनां स्वरूपादिविचारः, तृणदाहकपुरुषस्य
स्वरूपादिकथनम्, धनुर्धारिपुरुषविचारः, मृगवैरपुरुषवैरादीनां कथनम्, पण्मा-
सानां मध्ये तदुपरि वा मरणे क्रियाविचारः पुरुषघातकपुरुषस्य विचारः, समा-
नयोर्द्वयोः पुरुषयोः स्वरूपकथनपूर्वकं जयपराजययोः कारणकथनम्, वीर्यविचारः,
लब्धिवीर्यस्य तथा करणवीर्यस्य विचारः, चतुर्विंशतिर्दण्डकाः उद्देशकपरिसमाप्तिश्चेति।

प्रथमशतक अष्टम उद्देशक

इस अष्टम उद्देशक में विचारणीय विषयों की सूची संक्षेप से इस
प्रकार से है—एकान्त बालक तथा एकान्तपण्डित का स्वरूप आदि का
कथन अन्तक्रिया का और कल्पोपपत्तिका क्रिया का स्वरूपविचार, बाल-
पण्डित के स्वरूप आदि का निर्णय, देवगति के कारणों का प्रतिपादन,
मृगघातक आदि पुरुषों के स्वरूप आदि का कथन, क्रिया-कायिकी,
अधिकरणिकी, प्राद्वेषिकी, पारितापनिकी, प्राणातिपाति की आदिकों के
स्वरूप आदि का विचार, तृणदाहक पुरुष के स्वरूप आदि का विचार,
धनुर्धारी पुरुष का कथन, मृगवैर, पुरुषवैर आदि का कथन, छहमास
के भीतर व उसके बाद मरने में क्रिया का विचार, पुरुषघातक पुरुष
का विचार समान दो पुरुषों के स्वरूपकथनपूर्वक जय पराजय के कारण

पडेली शतकनो आठमो उद्देशक

पडेलीं तो आ आठमां उद्देशमां क्या क्या विषयनो विचार कर्यो छे ते
संक्षेपमां बताववामां आवे छे—एकान्त तथा बालक एकान्त पंडितना स्वरूपनुं
कथन, अन्तक्रियानो अने कल्पोपपत्तिका क्रियाना स्वरूपनो विचार, बाल पंडितना
स्वरूप वगेरेनो निर्णय, देवगतिना कारणोनो प्रतिपादन, मृगघातक वगेरे पुरु-
षाना स्वरूप वगेरेनुं कथन, क्रिया-कायिकी, आधिकरणिकी, प्राद्वेषिकी, पारिताप-
निकी, प्राणातिपातिका वगेरेना स्वरूप आदिनो विचार, तृणदाहक पुरुषना
स्वरूप वगेरेनो विचार, धनुर्धारी पुरुषनुं कथन, मृगवैर पुरुषवैर वगेरेनुं कथन,
छ मासनी अहर अने छ मास पछी मरवामां क्रियानो विचार, पुरुषघातक
पुरुषनो विचार, समान छे पुरुषाना स्वरूप कथन पूर्वक जय पराजयना कारणोनो
विचार, वीर्य विचार, लब्धिवीर्य तथा करण वीर्यनो विचार, ओवीस दंड,
उद्देशनी समाप्ति

ચન્દિત્વા નમસ્વિત્વા નાત્પાસન્ને નાસિત્તુરે શુશ્રૂપમાણ નમસ્યન્ અભિમુલ્લં વિનયેન પ્રાઞ્જલિપુટઃ ” इति सप्रह, ‘ एष वयासी ’ एवमवादीत्-वक्ष्यमाणपक्षारेणा-
क्यपत्-किमवादीदित्याह—‘ एगतबाले ’ इत्यादि ।

‘ एगतबाले ण मते ’ एकान्तबालः खलु मदन्त !, एकान्तबालः—मिथ्या-
दृष्टिविरतो वा ‘ मणुस्से ’ मनुष्यः ‘ किं णेरइयाउय पकरेइ ’ किं नैरयिकायुष्कं
प्रकरोति, तत्रैकान्तबाल इत्यत्र एकान्तेति पद मिथ्यादृष्टिः शीघ्रं व्यावर्तयति ।
‘ मणुस्साउयं पकरेइ ’ मनुष्यायुष्कं प्रकरोति, ‘ देवाउय पकरेइ ’ देवायुष्कं प्रक-
रोति ? ‘ णेरइयाउयं किञ्चा णेरइएसु उववज्जइ ’ नैरयिकायुष्कं कृत्वा नैरयिकेइ

चाद गौतम ने प्रभु को चन्दना और नमस्कार किया । चाद में वे अपने
उचित स्थान पर धर्म सुनने की अभिलाषा से प्रभु के सन्मुख नमस्कार
कर दोनों हाथ जोड़ कर बैठ गये । और इस प्रकारसे पूछने लगे (एगत
बालेणं मते मणुस्से किं णेरइयाउयं पकरेइ ?) हे मदन्त एकान्तबाल क्या
नरकायुष्क का वध करता है ? (तिरिक्खाउय पकरेइ ?) तिर्यग्वायु
का वध करता है ? (मनुस्साउय पकरेइ) मनुष्यायु का वध करता है ?
(देवाउय पकरेइ) देवायु का वध करता है ? यहाँ एकान्त शब्द का
अर्थ मिथ्या दृष्टि अथवा अविरत-विरति विना का जीव है । बाल
पद के साथ जो एकान्त विशेषण पद का प्रयोग किया है उससे यह
घात सूचित होती है कि जो जीव मिथ्यादृष्टि बाला है वह एकान्त बाल
नहीं है । अतः इस मिथ्या दृष्टि वाले की व्यावृत्ति के निमित्त बाला पद
के साथ एकान्त शब्द विशेषणरूप से प्रयुक्त किया गया है । (णेरइया

નગરમાં પાછા ફર્યા ત્યાર બાદ ગૌતમ સ્વામી પ્રભુને વચ્ચા નમસ્કાર કરીને,
ધમતત્ત્વનુ શ્રવણ કરવાની અભિલાષાથી બન્ને હાથ બોંડીને શિર નમાવીને
પ્રભુની સમુપ ગેભી ગયા અને આ પ્રમાણે પ્રશ્ન પૂછ્યો—(એગત બાલેઽયં મતે
મણુમે કિં ણેરિયાઉય પકરેઈ ?) કે ભગવન ? એકાન્ત બાલ છવ, શુ
નરકાનુબંધનો બંધ બાંધે છે ? કે (તિરિક્ખાઉય પકરેઈ ?) તિર્યગના
આયુનો બંધ બાંધે છે ? (મણુસાઉયં પકરેઈ) કે મનુષ્યના આયુનો બંધ
બાંધે છે ? (દેવાઉયં પકરેઈ) કે દેવતાના આયુષ્યનો બંધ બાંધે છે ? બહી
એકાન્તબાલનો અથ મિથ્યાદૃષ્ટિ અથવા અવિરતિ (વિરતિ વિનાનો) છવ
સમજવો. બાલ શબ્દ સાથે એકાન્ત વિશેષણનો પ્રયોગ કરવાનું કારણ એ છે
કે જે છવ મિથ્યાદૃષ્ટિવાળો હોય છે તેને એકાન્તબાલ કહી શકાતો નથી. તેથી
મિથ્યાદૃષ્ટિવાળોના સમાવેશ ન કરવા માટે એકાન્ત વિશેષણ બાલ પરની માથે
યોગ્યતામાં આપ્યું છે (ણેરિયાઉયં કિચ્ચા, ણેરિયાસુ અવજ્જઈ) તે એકાન્તબાલ

मणुस्से णेरइयाउयंपि पकरेइ, तिरियाउयंपि पकरेइ, मणुस्सा-
उयंपि पकरेइ, देवाउयंपि पकरेइ, णेरइयाउयंपि किच्चा
णेरइएसु उववज्जइ, तिरियाउयंपि किच्चा तिरिएसु उवव-
ज्जइ, मणुस्साउयंपि किच्चा मणुएसु उववज्जइ, देवाउयंपि
किच्चा देवलोगेसु उववज्जइ ॥ सू० १ ॥

छाया—राजगृहे समवसरणम्, यावदेवमवादीत्, एकान्तबालो भदन्त !
मनुष्यः किं नैरयिकायुष्कं प्रकरोति, तिर्यगायुष्कं प्रकरोति मनुष्यायुष्कं प्रकरोति,
देवायुष्कं प्रकरोति ? नैरयिकायुष्कं कृत्वा नैरयिकेपूपपद्यते, तिर्यगायुष्कं कृत्वा
तिर्यक्षूपपद्यते, मनुष्यायुष्कं कृत्वा मनुष्येपूपपद्यते, देवायुष्कं कृत्वा देवलोकेषू-
पपद्यते, गौतम ! एकान्तबालः खलु मनुष्यो नैरयिकायुष्कमपि प्रकरोति तिर्यगायुष्क-
मपि प्रकरोति मनुष्यायुष्कमपि प्रकरोति देवायुष्कमपि प्रकरोति, नैरयिकायुष्कमपि
कृत्वा नैरयिकेपूपपद्यते, तिर्यगायुष्कमपि कृत्वा तिर्यक्षूपपद्यते मनुष्यायुष्कमपि
कृत्वा मनुष्येपूपपद्यते देवायुष्कमपि कृत्वा देवलोकेषूपपद्यते ॥ सू० १ ॥

टीका—‘ रायगिहे समोसरणं ’ राजगृहे समवसरणम्—राजगृहे नगरे भग-
वतः समागमनम् ‘ जाव ’ यावत्पदेन—तच्छ्रुत्वा परिपदो नगराभिर्गमनम्, भग-
वतो धर्मकथा श्रवणानन्तरं परिषदः प्रतिगमनं, तदनु भगवान् गौतमो भगवन्त

“ रायगिहे समोसरणं जाव एवं वयासी ” इत्यादि ।

टीकार्थ—(रायगिहे समोसरणं जाव एवं वयासी) राजगृह नगरमें भग-
वान्का समवसरण—शुभागमन—हुवा यावत् इस प्रकारसे बोले “ यहाँ
यावत् पद से इस प्रकार से प्रकरण की सगति करनी चाहिये—“ भग-
वान् के शुभागमन को सुनकर वहाँ का जनसमूह नगर से निकला,
भगवान्के पास जाकर वदना नमस्कार कर प्रभुके मुखसे उसने धर्मकथा
श्रवण की, धर्मकथा सुनकर वह नगर में पीछे वापस आ गया । इसके

“ रायगिहे समोसरणं जाव एव वयासि ” इत्यादि ।

टीकार्थ—“रायगिहे समोसरणं जाव एवं वयासि” राजगृह नगरमा भगवान्तुं
समवसरण—शुभागमन—थयु. त्याथी शङ्करीने “ आ प्रभाणु ओद्ध्यां ”
सुधीने पाठ अही देवा जेधं अही “ यावत् ” (पर्यन्त) पद वडे आ
प्रभाणु पाठ अडणु करवा—भगवानना शुभागमनना समाचार सांलणीने त्यांनि
मानवसमूह नगरमाथी नीकणीने भगवान् पासे गये भगवाननी पासे जेधने
वंदणु नमस्कार करीने धर्मकथानुं श्रवणु-कथं. धर्मकथा सांलणीने दोडे

छाया—एष खलु चतुर्भिः स्थानैर्मीमा नैरयिकतायै कर्म प्रकुर्वन्ति, नैरयिकतायै कर्म प्रकृत्य नैरयिकेषु उपपद्यते, तद्यथा—महारम्मतया १, महापरिग्रहतया २, पञ्चेन्द्रियवधेन ३, कुणपाहारेण ४ इति ।

‘तिरिक्त्वाऽपि पकरेह’ तिर्यगायुष्कमपि प्रकरोति, मायिकत्वादिभिश्चतुर्भिः कारणैर्जीवस्तिर्यगायुष्कं बभ्नाति, उक्तञ्च—“तिरिक्त्वाऽपि पकरेह माह्वयाए गियहिष्ठयाए १, अल्लियवपणेअ २, उक्कचणयाए ३, वंचणयाए” इति ।

छाया—तिर्यगोनिक्केषु मायाचितया निकुतिमत्तया १, मभीकवचनेन २, उत्तकञ्चनतया ३, वञ्चनतया ४ इति । ‘मणुस्साऽयं पि पकरेह’ मनुष्यायुष्कमपि

(गेरहयाऽपि किञ्चा गेरहएसु उववज्जइ) नरकायुष्क का भी यध कर वह नैरयिकों में उत्पन्न होता है । (तिरियाऽयं पि किञ्चा तिरिएसु उववज्जइ) तिर्यचायुष्क भी यध कर वह तिर्यचों में उत्पन्न होता है । (मणुस्साऽयं पि किञ्चा मणुएसु उववज्जइ देवाऽयं पि किञ्चा देवलोकेसु उववज्जइ) मनुष्यायु का भी यध कर वह मनुष्यों में उत्पन्न होता है । देवायु का भी यध कर वह देवलोक में उत्पन्न होता है । एकान्त यास जो मनुष्य होता है—अर्थात् जो मनुष्य मिथ्यादृष्टि अथवा विरति बिना का होता है—वह महारम्भ आदि रूप चार कारणों को लेकर नरकायुष्क का यध करता है—औपपातिक सूत्र में कहा है कि “एष खलु षडहि ठाणेहिं जीवा गेरहयत्ताए कम्मं पकरेति नेरहयत्ताए कम्म पकरेत्ता गेरहएसु उववज्जति—त जहा—महारम्भयाए १ महारिग्गहायाए २ पंचिन्द्रियवहणं ३, कुणिमाहारेणं ४” जीव इन चार स्थानों द्वारा नैरयिक गति में जाने के लिये कर्मबंध करते हैं—

किंवा तिरिएसु उववज्जइ) तिर्यचायुष्कनो जध जाधीने तिपंअ थेनीमा पव उत्पन्न थाय छे । (मणुस्साऽयं पि किंवा मणुएसु उववज्जइ देवाऽय पि किंवा देवलोकेसु उववज्जइ) मनुष्यना आधुष्यनो जध जाधीने मनुष्योमा पव उत्पन्न थाय छे जने देवना आधुष्यनो जध जाधीने देवलोकेमा पव उत्पन्न थाय छे जेकान्तयास जेव्हे के मिथ्यादृष्टि अथवा विरति विनानो—मनुष्य मदारम पगेरे व्वाए हाएवेने वीपे नरकना आधुष्यनो जध जापि छे औपपातिक सूत्रमा कहु छे के—(एष खलु षडहि ठाणेहिं जीवा गेरहयत्ताए कम्मं पकरेति नेरहयत्ताए कम्म पकरेत्ता गेरहएसु उववज्जति—त जहा—(१) महारम्भयाए (२) परिग्गहायाए (३) पंचिन्द्रियवहणं (४) कुणिमाहारेण) आ व्वाए हाएवेने वीपे एष नरकमनिमा व्वाया थेअइ कमनो जध जापि छे—(१) महारम्भ ३१

ઉપપદ્યતે, 'તિરિયાડયં કિચ્ચા તિરિણ્ણુ ઉવવજ્જહ' તિરિયાડુષ્કં કૃત્વા તિરિયાડુ ઉપપદ્યતે, 'મણુસ્સાડયં કિચ્ચા મણુસ્સેસુ ઉવવજ્જહ' મણુ'યાડુ'ં કૃત્વા મણુબ્બેપ્પ-પપદ્યતે, 'દેવાડયં કિચ્ચા દેવલોગેસુ ઉવવજ્જહ' દેવાડુષ્કં કૃત્વા દેવલોકેપ્પ-પપદ્યતે । કિમિત્તિપ્રશ્નઃ । ભગવાનાહ—'ગોયમા' ઇત્યાદિ । 'ગોયમા' હે ગૌતમ ! 'ઇકાન્તવાલેણં - મણુસ્સે જેરહયાડયંપિ પકરેહ' ઇકાન્તવાલઃ શ્વલુ મણુબ્બો નૈરયિકાડુષ્કમપિ પ્રકરોતિ, હે ગૌતમ ! ઇકાન્તવાલો મિથ્યાદૃષ્ટિરવિરતો વા જીવો મહારંભાદિમિશ્વતુર્ભિઃ કારણૈરુપાર્જયતિ નૈરયિકાડુષ્કમપીતિ ।

ઉક્તં ચૌપપાતિકમુત્રે—'એવં શ્વલુ ચડિં ઠાણેદિં જીવા જેરહયાડયં કમ્મં પકરેતિ, નેરહયાડયં કમ્મં પકરેત્તા જેરહયાડયં ઉવવજ્જંતિ ત જહા-મહારંભયા ૧, મહાપરિગ્ગહયા ૨, પંચિદિયવહેણં ૩, કુણિમાહારેણં ૪ ।' ઇતિ ।

ડયં કિચ્ચા જેરહયાડયં ઉવવજ્જહ) વહ ઇકાન્ત વાલ નરકાડુષ્કાં વંધ કર વ્યા નૈરયિકાં મેં ઉત્પન્ન હોતા હૈ ? (તિરિક્કવાડયં કિચ્ચા તિરિણ્ણુ-ઉવવજ્જહ) તિરિયાડુષ્કાં વંધકર વ્યા તિરિયાડુષ્કાં મેં ઉત્પન્ન હોતા હૈ ? (મ-ણુસ્સાડયં કિચ્ચા મણુસ્સેસુ ઉવવજ્જહ) મણુબ્બાડુષ્કાં વંધકર વ્યા મણુબ્બો મેં ઉત્પન્ન હોતા હૈ ? (દેવાડયં કિચ્ચા દેવલોગેસુ ઉવવજ્જહ) દેવાડુષ્કાં વંધકર વ્યા દેવલોક મેં ઉત્પન્ન હોતા હૈ ? યે સવ પ્રશ્ન હૈ-હનકા ઉત્તર દેતે હુએ ભગવાન્ કહતે હૈ કિ (ગોયમા ! ઇકાન્તવાલેણં મણુસ્સે જેર હયાડયં પિ પકરેહ, તિરિયા ડયં પિ પકરેહ, મણુસ્સા ડયં પિ પકરેહ, દેવાડયં પિ પકરેહ) હે ગૌતમ ! ઇકાન્ત વાલ જો મણુબ્બ હોતા હૈ વહ નરકાડુષ્કાં વંધ કરતા હૈ, તિરિયાડુષ્કાં વંધ કરતા હૈ, મણુબ્બાડુષ્કાં વંધ કરતા હૈ, દેવાડુષ્કાં વંધ કરતા હૈ ।

નરકાડુષ્કાં વંધ બાધીને શુ નરયિકાં ઉત્પન્ન થાય છે ? (તિરિક્કવાડયં કિચ્ચા તિરિણ્ણુ ઉવવજ્જહ) તિરિયાડુષ્કાં વંધ બાધીને શુ તિરિયાડુષ્કાં ઉત્પન્ન થાય છે ? (મણુસ્સાડયં કિચ્ચા મણુસ્સેસુ ઉવવજ્જહ) મણુબ્બાડુષ્કાં વંધ બાધીને શુ મણુબ્બો ઉત્પન્ન થાય છે ? કે (દેવાડયં કિચ્ચા દેવલોગેસુ ઉવવ-જ્જહ) દેવતાના આડુષ્કાં વંધ બાધીને દેવલોકાં ઉત્પન્ન થાય છે ?

ઉત્તર—(ગોયમા ! ઇકાન્તવાલેણં મણુસ્સે જેરહયાડયં પિ પકરેહ, તિરિયાડયં પિ પકરેહ, મણુસ્સાડયં પિ પકરેહ, દેવાડયં પિ પકરેહ) હે ગૌતમ ! ઇકાન્ત વાલ મણુબ્બ નરકાડુષ્કાં વંધ પણ બાધે છે તિરિયાડુષ્કાં વંધ પણ બાધે છે—(જેરહયાડયં પિ કિચ્ચા જેરહયાડયં ઉવવજ્જહ) તે ઇકાન્તવાલ મણુબ્બ નરકાડુષ્કાં વંધ બાધીને નૈરયિકાં પણ ઉત્પન્ન થાય છે, (તિરિયાડયં પિ-

નૈરયિકેષુપપદ્યતે, તાદશાયુષ્કર્મ ષ-પન કૃત્વા સત્કર્મપ્રેરિતો નરકેષુ સમુત્પદ્યતે
 इति भावः । ' तिरियाउर्यंवि किञ्चा तिरियसु उववज्जइ ' तिर्यगायुष्कर्मणि कृत्वा
 तिर्यगु उपपद्यते, ' मणुस्साउर्यंवि किञ्चा मणुणसु उववज्जइ ' मनुष्यायुष्कर्मणि
 कृत्वा मनुष्येषुपपद्यते, ' देवाउर्यंवि किञ्चा देवलोगसु उववज्जइ ' देवायुष्कर्मणि
 कृत्वा देवलોકेषुपपद्यते, आदश्च यादश्च कर्मष-पनं स्वयमेव करोत्वकान्तबाभो
 जीवः स तच्चदनुकूलनारकादारम्य देवलोकपर्यन्त गच्छति, कर्मणामेतादश्च
 माधादिति भावः, एकान्तबालत्वे सर्वेषां समानेऽपि सत्कारणविशेषवशादेव
 नानाविधमायुर्ब्रह्मान्यत एव बालत्वे समानेऽप्यविरतसम्पद्दृष्टिर्मनुष्यो देवायुष्क-
 र्मव ब्रह्माति, न तु शेषाणि नारकाद्यायुष्काणीति ॥ सू० १ ॥

एकान्तबाभप्रतिपक्षत्वेन एकान्तपण्डितसूत्रमाह—' एगंतपडिप ' इत्यादि ।

મૂલ્ય—एगंत पडिप ण भते ! मणुस्से किं णेरइयाउय
 पकरेइ जाव देवाउय किञ्चा देवलोगसु उववज्जइ ? गोपमा ।

यद् यस कर्म से प्रेरित होकर उसी गति में जाकर उत्पन्न हो जाता है ।
 यही बात सूत्रकार ने (णेरइयाउयपि किञ्चा णेरइणसु उववज्जइ)
 इत्यादि सूत्रों द्वारा प्रकट की है । कर्मों का ऐसा ही स्वभाव है कि एक
 जन्माल जीव जैसे २ कर्म को बंधा करता है वह उसके अनुकूल ही
 नारक से लेकर देवलोक पर्यन्त जाता है । यद्यपि जितने भी एकान्तबाल
 जीव हैं उन सब में एकान्त बालपना समान होता है—फिर भी आयु
 पक्षबंध के कारणों की विशेषता को लेकर नाना प्रकार की आयु का पक्ष
 बालजीव करते हैं । इस तरह बालपना समान होन पर भी अविरत
 सम्पद्दृष्टि मनुष्य देवायु का ही बंध करता है । शेष नरकादिक तीन
 आयुओं का नहीं ॥ सू-१ ॥

જે ગતિના આયુષ્યનો બંધ બાંધે છે—તે કમબંધને કારણે—તે ગતિમાં ઉત્પત્તિ
 થાય છે એજ વાત સૂત્રકારે (ણેરइयाउर्यंवि किञ्चा णेरइणसु उववज्जइ) વગેરે
 સૂત્રો વડે બતાવી છે એકાન્ત બાલ એવા એવા કમોનો બંધ બાંધે છે,
 તેવાં તેવાં કમેની અનુકૂળ નારકપ્રતિથી લઈને દેવપ્રતિ સુધી ઉત્પત્તિ થાય છે
 એ કે તમામ એકાન્તબાલ એવામાં એકાન્ત બાલ પણ અરણ્ય જ દેાય છે,
 છતાં પણ આયુષ્ય બંધના કારણેની વિશેષતાને લીધે તે એકાન્તબાલ એવા
 વિવિધ ગતિના આયુષ્યનો બંધ બાંધે છે આ રીતે બાલપણની (અજ્ઞાન
 પણની) સમાનતા દેવા છતાં પણ અવિરત સમ્પદ્દૃષ્ટિ મનુષ્ય દેવાયુષ્યનો
 જ બંધ બાંધે છે—નાશકારી શેષ ત્રણ આયુષ્યોનો બંધ બાંધતો નથી ॥ ૧ ॥

પ્રકરોતિ, પ્રકૃતિભદ્રતાદિભિશ્ચતુર્ભિઃ કારણૈર્જીવોપિ મનુષ્યાયુક્કં પ્રકરોતિ, ઉક્તશ્ચ—

“મણુસ્સેસુ પગદ્ભદ્યા ૧, પગદ્વિણીયયા ૨, સાણુક્રોસયા ૩, અમ-
ચ્છરિયા ૪” ઇતિ ।

છાયા—મનુષ્યેષુ પ્રકૃતિભદ્રતયા ૧, પ્રકૃતિવિનીતતયા, ૨, સાનુક્રોશ-
તયા ૩, અમત્સરિતયા ૪ । ઇતિ । ‘દેવાયુષ્યમપિ પકરેદ’ દેવાયુષ્કમપિ પ્રકરોતિ,
સરાગસંયમાદિભિશ્ચતુર્ભિઃ કારણૈર્જીવો દેવાયુષ્કં પ્રકરોતિ, ઉક્તશ્ચ—

“દેવેસુ—સરાગસંજમેણં ૧, સંજમાસંજમેણં ૨, અકામણિજ્જરા ૩, ચાલ-
તથોકમ્મેણં ૪” ઇતિ ।

છાયા—દેવેષુ—સરાગસંયમેન ૧, સંયમાસંયમેન ૨, અકામનિર્જરયા ૩, ચાલતપઃકર્મણા
૪ । ઇતિ । ‘જેરદ્યાયુષ્યમપિ કિચ્ચા જેરદ્દેસુ ઉવવજ્જદ’ નૈરયિકાયુષ્કમપિ કૃત્વા

કર્મબંધ કર વે નૈરયિકોં મેં ઉત્પન્ન હો જાતે હૈં । વે ચાર સ્થાન હસ પ્રકાર
સે હૈં—મહા આરંભ કરના, મહા પરિગ્રહ રાખના, પંચેન્દ્રિય જીવો કા વધ
કરના, કુણિમાહાર (માંસાહાર) કરના । હસી તરહ જીવ માયાચાર આદિ
ચાર કારણોંકે સેવન કરનેસે તિર્યંચ કી આયુકા બંધ કરતા હૈ—વે ચાર
કારણ હસ પ્રકાર સે હૈ—૧ માયાચાર, નિકૃતિ, ૨ અલીક વચન,
૩ ઉત્કંચન(લાંચ), ૪ વંચન । પ્રકૃતિભદ્રતા આદિ ચાર કારણોં કો ઢેકર
જીવ મનુષ્ય આયુ કા બંધ કરતા હૈ—વે ચાર કારણ યે હૈ—પ્રકૃતિ સે ભદ્ર
હોના ૧, સ્વભાવતઃ વિનીત હોના ૨, દયાલુ હોના ૩, મત્સર ભાવ નહીં
રાખના ૪ સરાગસંયમ આદિ ચાર કારણોં કે સેવન કરને સે જીવ
દેવાયુ કા બંધ કરતા હૈ—વે ચાર કારણ હસ પ્રકાર સે હૈ—સરાગસંયમ
કા પાલન કરના ૧, અકામનિર્જરા કરના ૨, ચાલ તપ કરના ૩ સંયમા-
સંયમ કા પાલન કરના ૪ । હસ તરહ જીવ જિસ આયુકા બંધ કરતા હૈ

વાથી (૨) મહા પરિગ્રહ રાખવાથી, (૩) પંચેન્દ્રિય જીવોનો વધ કરવાથી અને
(૪) કુણિમાહાર (માંસાહાર) કરવાથી જીવ તિર્યંચ આયુષ્યનો બંધ બાંધે છે.
તે ચાર કારણો આ પ્રમાણે છે—(૧) માયાચાર નિકૃતિ, (૨) અલીક વચન,
(૩) ઉત્કંચન અને (૪) વંચન. પ્રકૃતિભદ્રિકતા વગેરે ચાર કારણોના સેવનથી
જીવ મનુષ્યના આયુષ્યનો બંધ બાંધે છે તે ચાર કારણો આ પ્રમાણે છે—
(૧) સરલ પ્રકૃતિવાળા હોવું, (૨) વિનીત સ્વભાવના હોવું, (૩) દયાળુ હોવું
અને (૪) મત્સર ભાવ ન રાખવો સરાગસંયમ વગેરે ચાર કારણોના
સેવનથી જીવ દેવાયુષ્યનો બંધ બાંધે છે તે ચાર કારણો આ પ્રમાણે છે—
(૧) સરાગસંયમનું પાલન કરવું, (૨) અકામ નિર્જરા કરવી, (૩) ચાલ તપ
કરવું અને (૪) સંયમાસંયમનું (શ્રાવકધર્મનું) પાલન કરવું. આ રીતે જીવ

દે ગતી મદ્વાયેતે તથા અન્તક્રિયા ચૈવ કલ્પોપપતિકા ચૈવ, ત્તેનાર્થેન ગૌતમ !
 યાવત્ દેવાયુષ્કં કૃત્વા દેવેષુપપદ્યતે, ધાર્ણઘિત* સ્વલ્લ મદન્ત ! મનુષ્ય* કિં નૈર
 યિકાયુષ્કં પ્રકરોતિ યાવદેવાયુષ્કં કૃત્વા દેવેષુપપદ્યતે ? ગૌતમ ! નો નૈરયિકાયુષ્ક
 પ્રકરોતિ, યાવત્ દેવાયુષ્કં કૃત્વા દેવેષુપપદ્યતે, તત્કેનાર્થેન યાવત્ દેવાયુષ્ક
 કૃત્વા દેવેષુપપદ્યતે ? ગૌતમ ! ધાર્ણઘિતઃ સ્વલ્લ મનુષ્યસ્તયારૂપસ્ય ધમણસ્ય વા
 માહનસ્ય વાઽન્તિકે એકમપિ આયધાર્મિકં સુત્રચર્ચે યુત્વા નિશ્ચમ્ય વેદશુપરમતિ
 વેદાં નોપરમતિ, વેદશ્ચ પ્રત્યાશ્વયાતિ વેદશ્ચ નો પ્રત્યાશ્વયાતિ, ત્તેનાર્થેન વેદોપરમદેશ
 પ્રત્યાશ્વયાનેન નો નૈરયિકાયુષ્કં પ્રકરોતિ યાવદેવાયુષ્કં કૃત્વા દેવેષુપપદ્યતે ત્તે
 નાર્થેન યાવદેવેષુપપદ્યતે ॥ સૂ. ૨ ॥

ટીકા—‘ ઇર્ગંત પઞ્ચિય ણ મતે ’ એકાન્તપણ્ઠિતઃ સ્વલ્લ મદન્ત ! એકાન્ત
 પણ્ઠિત* સાધુ ‘ મણુસ્સે ’ મનુષ્યઃ, ‘ એકાન્તપણ્ઠિતે ’ તિ કથનેનૈવ મનુષ્ય-
 આયાતિ પુન ‘ મણુસ્સે ’ इति કથનં ક્રિમયં કૃતમ્ ? યતો મનુષ્યમન્તરેણ એકાન્ત
 પણ્ઠિતત્વં ન મથિતુમર્હેતિ ? અગ્રોચ્યતે—મનુષ્યસિ ત્રિષ્ણેપણં સ્વરૂપમાપરિચાય

એકાન્ત ધાર્ણને કા પ્રતિપક્ષી જો એકાન્તપણ્ઠિતપના હૈં ડસ સમધી
 સૂત્ર કો અપ સૂત્રકાર કહતે હૈં—‘ ઇર્ગંતપઞ્ચિય ણ મતે । મણુસ્સે ’ इत्यादि ।

ટીકાચ—(ઈર્ગંતપઞ્ચિય ણ મતે । મણુસ્સે કિં ણેરજ્ઞયાડય પકરેઃ ? જાવ
 દેવાડયં કિન્ચ્ચા દેવલોપસુ ઉવવજ્ઞહ) હૈં મદન્ત ! જો મનુષ્ય એકાન્ત
 પણ્ઠિત હૈં—વહ કયા નૈરયિક કી આયુ કા વંધ કરતા હૈં ? તથા—યાવત્
 વહ દેવાયુ કા વધ કરકે દેવલોક મેં ઉત્પન્ન હોના હૈં ? એસા વહ પ્રમ
 હૈં ? યદિ કોઈ યહાં એસી વાત કહે કિ એકાન્તપણ્ઠિતપના તો મનુષ્ય કે
 સિધાય ઓર કહીં સમધિત હૈં નહીં—ફિર સૂત્રકાર ને જો (મણુસ્સે)
 યહ પદ રચ્વા હૈં વહ કયોં રચ્વા । કયોં કિ (ઇર્ગંત પઞ્ચિય) ડસ શાંડસે હી

એકાન્ત બાધનો પ્રતિપક્ષી એકાન્તપણ્ઠિત દોષ છે હવે સૂત્રકાર એકાન્ત
 પતિ વિષે સૂત્રો કહે છે—‘ ઇર્ગંત પઞ્ચિય ણ મતે । મણુસ્સે ’ इत्यादि ।

ટીકાચ—(ઈર્ગંત પઞ્ચિય ણ મતે । મણુસ્સે કિં ણેરજ્ઞયાડય પકરેઃ ? જાવ દેવાડય કિયા
 દેવલોપસુ ઉવવજ્ઞહ ?) “હે ભગવન્ ! શુ એકાન્ત પઠિત મનુષ્ય નરકાધુખના બધ
 બધિ છે ? ત્યાથી શરૂ કરીને પહેલાંના સૂત્રો પ્રમાણેજ ‘ શુ તે દેવાધુખનો બધ
 બાધીને દેવલોકમા ઉત્પન્ન થાય છે ? ’ ત્યાં બુધીનુ કથન શરૂ કરવું કેણું અત્રી
 એવી રીતે કહે કે એકાન્ત પતિપણુ તો મનુષ્ય સિવાયની યોનીમા સમધી
 શકનું જ નથી. તો સૂત્રકારે સૂત્રમાં (મણુસ્સ) (મનુષ્ય) પદ શા માટે મુક્યું છે ?
 કારણ કે (ઈર્ગંતપઞ્ચિય) પદથી જ મનુષ્ય શબ્દ પ્રદ્યુ થાય છે તો તે

एगंतपंडिएणं मणुसे आउयं सिय पकरेइ सिय णो पगरेइ,
जइ पगरेइ णो णेरइयाउयं पकरेइ, णो तिरियाउयं पकरेइ,
णो मणुस्साउयं पकरेइ, देवाउयं पकरेइ, णो णेरइयाउयं
किच्चा णेरइएसु उववज्जइ, णो तिरियाउयं किच्चा तिरिएसु
उववज्जइ, णो मणुस्साउयं किच्चा मणुस्सेसु उववज्जइ, देवा-
उयं किच्चा देवेसु उववज्जइ । से केणट्टेणं जाव देवाउयं किच्चा
देवेसु उववज्जइ ? गोयमा ! एगंतपंडियस्स केवलमेव दोगईओ
पण्णायंति, तं जहा-अंतकिरिया चेव कप्पोववइया चेव, से
तेणट्टेणं गोयमा ! जाव देवाउयं किच्चा देवेसु उववज्जइ,
वालपंडिए णं भंते ! मणुस्से किं णेरइयाउयं पकरेइ, जाव
देवाउयं किच्चा देवेसु उववज्जइ ? गोयमा ! णो णेरइयाउयं
पकरेइ जाव देवाउयं किच्चा देवेसु उववज्जइ । से केणट्टेणं
जाव देवाउयं किच्चा देवेसु उववज्जइ ? गोयमा ! वालपंडिए
णं मणुस्से तहारूवस्स समणस्स वा माहणस्स वा अंतिए
एगमपि आरियं धम्मियं सुवयणं सोच्चा णिसम्म देसं उवर-
मति, देसं णो उवरमइ, देसं पचक्खाइ, देसं णो पचक्खाइ,
से तेणट्टेणं देसोवरमदेसपच्चक्खाणे णं णेरइयाउयं पकरेइ,
जाव देवाउयं किच्चा देवेसु उववज्जइ, से तेणट्टेणं जाव
देवेसु उववज्जइ ॥ सू० २ ॥

छाया—एकान्तपण्डितः खलु भदन्त । मनुष्यः किं नैरयिकायुष्कं प्रकरोति,
यावद्देवायुष्कं कृत्वा देवलोकेषूपपद्यते ? गौतम ! एकान्तपण्डितो मनुष्यः स्यादा-
युष्कं प्रकरोति स्यान्नो प्रकरोति, यदि प्रकरोति नो नैरयिकायुष्कं प्रकरोति नो
तिर्यगायुष्कं प्रकरोति नो मनुष्यायुष्कं प्रकरोति, देवायुष्कं प्रकरोति, नो नैरयिका-
युष्कं कृत्वा नैरयिकेषूपपद्यते, नो तिर्यगायुष्कं कृत्वा तिर्यक्षूपपद्यते नो मनुष्या-
युष्कं कृत्वा मनुष्येषूपपद्यते, देवायुष्कं कृत्वा देवेषूपपद्यते । तत्केनार्थेन यावत्
देवायुष्कं कृत्वा देवेषूपपद्यते ? गौतम ! एकान्तपण्डितस्य मनुष्यस्य केवलमेव

—‘गोयमे’ स्याद्वि, ‘गोयमा’ हे गौतम । ‘एगंत पडिण मणुस्से’ एकान्त पण्डितः खलु मनुष्यः ‘सिय पकरइ सिय गो पकरइ’ स्यात् प्रकरोति स्यात् नो प्रकरोति, एकान्तपण्डितः कदाचिदायुष्यं बध्नाति कदाचिन्नो बध्नाति, सम्यक्सप्तके क्षपिते न बध्नात्यायु अथवा तु बध्नात्येषत्याक्षयन कथितं स्यात् प्रकरोति स्यात् प्रकरोतीति । ‘जइ पकरेइ गो जेरइयाउय पकरेइ’ यदि प्रकरोति तदा न नैरयिकायुष्यं प्रकरोति, ‘गो तिरियाउय पकरइ’ नो तिर्यगायुष्यं प्रकरोति ‘गो मणुस्साउय पकरेइ’ नो मनुष्यायुष्यं प्रकरोति, अपि तु ‘देवाउय पकरेइ’ देवायुष्यं प्रकरोति, एकान्तपण्डितो यदायुष्यं कर्मोपार्जयति तदा ठेवसवन्धिकर्मोपार्जयति नान्यदिति मायः । अथ पुनः प्रकारान्तरेण तदेव दर्शयति—‘गो जेरइयाउय किच्चा जेरइसु उववज्जइ’ नो नैरयिकायुष्यं कृत्वा नैरयिकेषूपपद्यते, ‘गो तिरियाउय किच्चा तिरिइसु उववज्जइ’ नो तिर्यगायुष्यं

मण मणुस्से आउय सिय पकरेइ, सिय गो पकरेइ) गौतम । जो एकान्त पण्डित मनुष्य है वह किसी अपेक्षा आयु का बंध करता भी है और किसी अपेक्षा आयु का बंध नहीं भी करता है । (जइ पकरेइ गो जेरइयाउय पकरेइ, गो तिरियाउय पकरेइ, गो मणुस्साउय पकरेइ, देवाउय पकरेइ) यदि वह आयु का बंध करता है तो नैरयिक आयु का बंध नहीं करता, तिर्यगायु का बंध नहीं करता, मनुष्यायु का बंध नहीं करता, सिर्फ एक देवायु का बंध करता है । (गो जेरइयाउय किच्चा जेरइसु उववज्जइ, गो तिरियाउय किच्चा, तिरिइसु उववज्जइ, गो मणुस्साउय किच्चा मणुस्सेसु उववज्जइ) नैरयिक आयु का बंध कर वह नैरयिकों में उत्पन्न नहीं होता है, तिर्यगायु का बंध कर वह तिर्यकों

(गोयमा ! एगंत पडिण मणुस्से आउय सिय पकरेइ सिय गोपकरेइ) हे गौतम । जो एकान्त पण्डित मनुष्य है वह किसी अपेक्षा आयु का बंध करता भी है और किसी अपेक्षा आयु का बंध नहीं भी करता है । (जइ पकरेइ गो जेरइयाउय पकरेइ, गो तिरियाउय पकरेइ, गो मणुस्साउय पकरेइ, देवाउय पकरेइ) जो एकान्त पण्डित मनुष्य है वह किसी अपेक्षा आयु का बंध करता भी है और किसी अपेक्षा आयु का बंध नहीं भी करता है । (गो जेरइयाउय किच्चा जेरइसु उववज्जइ, गो तिरियाउय किच्चा, तिरिइसु उववज्जइ, गो मणुस्साउय किच्चा मणुस्सेसु उववज्जइ, देवाउय किच्चा देवसु उववज्जइ) नैरयिकों में उत्पन्न नहीं होता है, तिर्यकों में उत्पन्न होता है ।

કમ્, શુક્લં દધિ પ્રમેયો ઘટ ઇત્યાદૌ યથા શુક્લત્વં પ્રમેયત્વં પરિચાયકં તથૈવ મક્રુતેપિ । ‘કિં ધેરહ્યાઁયં પકરેહ’ કિં નૈરયિકાયુષ્કં પ્રકરોતિ - વધ્નાતિ કિમ્ ? ‘જાવ દેવાઁયં કિચ્ચા દેવલોગેસુ ઁવવજ્જહ’ યાવત્ દેવાયુષ્કં કૃત્વા દેવલોકેષૂપપદ્યતે કિમ્ ? અત્ર યાવત્પદેન - “તિરિક્ષાઁયં પકરેહ ? મણુસ્સાઁયં પકરેહ ? દેવાઁયં પકરેહ ? નેરહ્યાઁયં કિચ્ચા નેરહ્ણસુ ઁવવજ્જહ ? તિરિક્ષાઁયં કિચ્ચા તિરિહ્ણસુ ઁવવજ્જહ ? મણુસ્સાઁયં કિચ્ચા મણુસ્સેસુ ઁવવજ્જહ ? ” ઇતિ સંગ્રાહમ્ । અસ્યાર્થસ્તુ ઁકાન્તવાલસૂત્રપ્રશ્નવ્યાખ્યાયાં વિલોકનીયઃ । મગવાનાહ

મનુષ્યકા ગ્રહણ હો જાતા હૈ । સો હસકા સમાધાન ઁસા હૈ કિ (મનુષ્ય) યહ પદ જો વિશેષરૂપ સે રહ્યા ગયા હૈં સો વહ વ્યાવર્તક વિશેષણરૂપ સે નહીં રહ્યા હૈં કિન્તુ સ્વરૂપ વિશેષરૂપ સે રહ્યા ગયા હૈ - જૈસે શુક્લં દધિ, પ્રમેયો ઘટઃ ઇત્યાદિ પ્રયોગોં મેં દેહ્યા જાતા હૈ । અતઃ શુક્લત્વ ઔર પ્રમેયત્વ ઁ સ્વરૂપ કે પરિચાયક જૈસે વિશેષણ હૈં ઁસી પ્રકાર સે યહાં પર ભી (મણુસ્સે) યહ ભી સ્વરૂપ કા પરિચાયક વિશેષણ હૈ । યહાં જો (જાવ) પદ આયા હૈ ઁસસે (તિરિક્ષાઁયં પકરેહ, મણુસ્સાઁયં પકરેહ, દેવાઁયં પકરેહ, ધેરહ્યાઁયં, કિચ્ચા નેરહ્ણસુ ઁવવજ્જહ, તિરિક્ષાઁયં કિચ્ચા તિરિક્ષેસુ ઁવવજ્જહ ? મણુસ્સાઁયં કિચ્ચા મણુસ્સેસુ ઁવવજ્જહ) યહ સવ પૂર્વોક્ત પાઠ સં ગૃહિત હુઁઁ હૈં । હસ પાઠ કા અર્થ ઁકાન્ત-વાલસૂત્ર કો યહાં પહિલે સૂત્ર મેં પ્રશ્નવ્યાખ્યા મેં કર દિયા ગયા હૈ । સો વહાં દેહ લેના ચાહિયે । હસ તરહ સે જો ગૌતમસ્વામી ને પ્રશ્ન કિયા હૈ ઁસકા ઁત્તર દેતે હુઁ પ્રશ્ન ઁનસે કહતે હૈં કિ - (ગોયમા ! ઁગંતપંડિ-

શકાનું સમાધાન આ પ્રમાણે કરી શકાય - “મનુષ્ય” પદને જે વિશેષણરૂપે મૂકવામાં આવ્યું છે તે વ્યાવર્તક વિશેષણરૂપે મૂક્યું નથી પણ સ્વરૂપ વિશે-
ણરૂપે મૂક્યું છે - એવું જ (શુક્લં દધિ) (પ્રમેયો ઘટઃ) વગેરે પ્રયોગોમાં
જેવા મળે છે જેવી રીતે શુક્લત્વ અને પ્રમેયત્વ, એ બંને સ્વરૂપને પરિચય
આપનારા વિશેષણ છે, એવી જ રીતે (મણુસ્સે) મનુષ્યપદ પણ સ્વરૂપને
પરિચય આપનાર વિશેષણ છે અહીં આવેલાં (જાવ) (યાવત્ પર્યન્ત)
પદથી નીચેના પાઠને ગ્રહણ કરવો જોઈએ (તિરિક્ષાઁયં પકરેહ, મણુસ્સાઁયં
પકરેહ, દેવાઁયં પકરેહ, ધેરહ્યાઁયં કિચ્ચા નેરહ્ણસુ ઁવવજ્જહ, તિરિક્ષાઁયં
કિચ્ચા તિરિક્ષેસુ ઁવવજ્જહ ? મણુસ્સાઁયં કિચ્ચા મણુસ્સેસુ ઁવવજ્જહ ?)
આ પાઠનો અર્થ ઁકાન્તવાલ સૂત્રના પહેલા સૂત્રની પ્રશ્નવ્યાખ્યામાં આપવામાં
આવ્યો છે, ત્યાંથી વાંચી લેવો. આ પ્રકારના જે પ્રશ્નો ગૌતમ સ્વામીએ પૂછ્યા
છે તેનો ઁત્તર મહાવીર પ્રભુ આ પ્રમાણે આપે છે -

તીર્થકરૈઃ પ્રજ્ઞાયેતે, एतादृशगतिद्वयस्यैवावश्यं भावित्वादिति । अन्तक्रिया-
निर्वाणम्, कल्पोपपत्तिका=कल्पेषु अनुत्तर विमानान्तदेवलोकेषु उपपत्ति कल्पोप-
पत्तिः, सैव कल्पोपपत्तिका, अत्र कल्पशब्दः सामान्ये नैव वैमानिक देवावासस्य
सूचकः ।

દેવાયુ કા ઘણ કરે એ દેવલોક મેં ઉત્પન્ન હોતા હૈ । યહા પર “ કેવલ-
મેવ દો ગઈઓ પળાયંતિ ” જો એમા કહા હૈ સો તસકા તાત્પર્ય યહ હૈ
કિ જિતને મી એકાન્તપણિહત મનુષ્ય હૈં તન સબ કા હી અન્તક્રિયા ઔર
કલ્પોપપત્તિકા યે દો હી ગતિ હોતી હૈં અન્ય ગતિ નહીં હોતી હૈં । એતા
તીર્થકર પ્રશ્ન કા કહના હૈ । અન્તક્રિયા શબ્દ કા અર્થ નિર્વાણ હૈ ઔર
કલ્પોપપત્તિકા કા અર્થ સૌધર્મ દેવલોક સે હેકર અનુત્તર વિમાનતક
દેવલોક મેં ઉત્પન્ન હોના હૈ તથા એકાન્તપણિહત મનુષ્ય આયુ કા ઘણ
કરતા મી હૈ ઔર નહીં મી કરતા હૈ એસા જો કહા ગયા હૈ તસકા
તાત્પર્ય યહ હૈ કિ અનંતાનુબંધી ક્રોધ, માન, માયા, લોભ યે
અનંતાનુબંધી ચાર એવં મિથ્યાત્વ મોહનીય, મિશ્રમોહનીય, સમ્ય-
ક્ત્વ મોહનીય, યે ત્રીન હસ પ્રકાર સાત પ્રકૃતિયાં જિસકે ક્ષય હો
ગયે હૈ તો યહ કિસી મી આયુ કા ઘણ નહીં કરતા હૈ । ઔર યદિ યે
સમ્યક્ત્વ સસક તસકે નષ્ટ નહીં ક્રુપ તો યહ આયુ કા ઘણ કરતા હૈ ।
કલ્પોપપત્તિકા મેં જો કલ્પ શબ્દ હૈ યહ સામાન્યરૂપ સે હી વૈમાનિક
દેવાવાસ કા સૂચક હૈ ।

હર્ષ હ્ર કે ચાવત તે દેવાયુધ્યનો બધ બાંધીને દેવલોકમાં ઉત્પન્ન થાય છે.
અહીં “ કેવલમેવ દો ગઈઓ પળાયંતિ ” એવું એ હર્ષ છે તેનું તાત્પર્ય એ છે
કે એકાન્ત પંહિત મનુષ્ય એ ગતિમાં જ જાય છે (૧) અન્તક્રિયા અને
(૨) કલ્પોપપત્તિકા અન્ય ગતિમાં જતો નથી, એવું તીર્થકર પ્રશ્નને હર્ષ છે.
અન્તક્રિયા એટલે નિર્વાણ ‘ શાશ્વ ’ અને કલ્પોપપત્તિકા એટલે સૌધર્મ કલ્પથી
લઈને અનુત્તર વિમાન સુધીના દેવલોકમાં ઉત્પન્ન થવું “ એકાન્ત પંહિત
મનુષ્ય આયુધ્યનો બધ બાંધે પણ છે અને નથી પણ બાંધતો એ અનંત
તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે-અનંતાનુબંધી ક્રોધ માન, માયા અને લોભ એ ચાર
અને મિથ્યાત્વ મોહનીય, મિશ્રમોહનીય, અને સમ્યક્ત્વ મોહનીય, એ ત્રણ
મળીને કુલ સાત પ્રકૃતિઓના એણે સંપૂર્ણ ક્ષય કર્યો હોય તે કોઈ પણ
આયુધ્યનો બધ બાંધતો નથી. પણ જો તે સાતે પ્રકૃતિઓના ક્ષય થયો ન
હોય તો તે એકાન્ત પંહિત આયુધ્યનો બધ બાંધે છે કલ્પોપપત્તિકામાંના
કલ્પ શબ્દ સામાન્ય રીતે વૈમાનિક દેવ આવાસનો સૂચક છે

કૃત્વા તિર્યક્ષુ ઉપપદ્યતે ' જો મણુસાઉયં કિચ્ચા મણુસેસુ-ઉવવજ્જહ ' નો મનુ-
બ્યાયુષ્કં કૃત્વા મનુષ્યેષુ ઉપપદ્યતે, કિન્તુ ' દેવાઉયં-કિચ્ચા દેવેસુ ઉવવજ્જહ '
દેવાયુષ્કં કૃત્વા દેવેષુપપદ્યતે, નૈરયિકાઘાયુષ્કં નોપાર્જયતિ, ન વા તાદૃશમાયુષ્ક-
મુપાર્જ્ય નરકાદિષુ કદાચિદપ્યુત્પદ્યતે કિન્તુ દેવાયુષ્કં સમુપાર્જ્ય તદાયુર્ચલાદેવલોકે
એવ સમુત્પદ્યતે ઇતિ સમુંદિતાર્થ ઇતિ । ' સે કેળદ્દેણં ' તત્કેનાર્થેન ' જાવ દેવાઉયં
કિચ્ચા દેવેસુ ઉવવજ્જહ ' યાવત્ દેવાયુષ્કં કૃત્વા દેવેષુપપદ્યતે, કેન કારણેન સ
નારકાદિકર્માયુરનુપાર્જ્ય નરકાદિષુ નોત્પદ્યતે દેવાયુષ્કમુપાર્જ્ય દેવલોકે
એવોત્પદ્યત ઇતિ ? ભગવાનાહ—' ગોયમે 'ત્યાદિ । ' ગોયમા ' હે ગૌતમ ! ' એગં-
તપંડિયસ્સ જં ' એકાન્તપંડિતસ્ય સ્વલુ 'મણુસસ્સ' મનુષ્યસ્ય 'કેવલમેવ કેવલમેવ
' દોર્ગઈઓ ' દ્વે ગતી ' પળ્ણાયતિ ' પ્રજ્ઞાપ્યંતે નાન્યા ઇતિ । તે એવં દર્શયતિ—' તં
જહા ' તદથા ' અંતકિરિયા ચેવ કપ્પોવવત્તિયા ચેવ ' અન્તક્રિયા ચૈવ કલ્પોપપ-
ત્તિકા ચૈવ । કેવલશબ્દઃ સાકલ્યાર્થે અતઃ સર્વેપામેવૈકાન્તપંડિતાનાં દ્વે એવ ગતી

મેં ઉત્પન્ન નહીં હોતા હૈ, મનુષ્ય આયુ કા બંધ કર વહ મનુષ્યોં મેં ઉત્પન્ન
નહીં હોતા હૈ । કિન્તુ દેવાયુ કા હી બંધ કર વહ દેવોં મેં ઉત્પન્ન હોતા હૈ ।
(સે કેળદ્દેણં જાવ દેવાઉય કિચ્ચા દેવેસુ ઉવવજ્જહ) હે ભદન્ત ! આપ
એસા કિસ કારણ સે કહતે હૈં કિ એકાન્તપંડિત મનુષ્ય યાવત્ દેવાયુ
કા બંધ કર દેવોં મેં ઉત્પન્ન હોતા હૈ ? (ગોયમા ! એગતપંડિયસ્સ જં
મણુસસ્સ કેવલમેવ દો ગર્ઈઓ પળ્ણાયંતિ) હે ગૌતમ ! જો એકાન્તપંડિત
મનુષ્ય હોતા હૈં ઉસકી દો ગતિયાં કહી ગર્ઈ હૈં (તં જહા) વેહસ પ્રકાર
સે હૈં । (અંતકિરિયાચેવ કપ્પોવવત્તિયા ચેવ) એક અન્તક્રિયા ઔર
દુસરી કલ્પોપપત્તિકા (સે તેળદ્દેણં ગોયમા ! જાવ દેવાઉયં કિચ્ચા
દેવેસુ ઉવવજ્જહ) હસ કારણ હે ગૌતમ ! મેં એસા કહતા હૂં કિ યાવત્

તિર્યંચ આયુષ્યનો બંધ બાધીને તે તિર્યંચ થોનિમા ઉત્પન્ન થતા નથી,
મનુષ્યાયુષ્યનો બંધ બાધીને તે મનુષ્યગતિમા ઉત્પન્ન થતા નથી, પણ દેવાયુષ્યનો
જ બંધ બાધીને તે દેવોમા જ ઉત્પન્ન થાય છે. (સે કેળદ્દેણં જાવ દેવાઉયં
કિચ્ચા દેવેસુ ઉવવજ્જહ ?) હે ભગવન્ ? આપ શા કારણે એવું કહો છો કે
એકાન્ત બાલપંડિત મનુષ્યોં “ નરકાયુષ્યનો બંધ બાધીને નરકોમા ઉત્પન્ન
થતા નથી ” ત્યાંથી લઈને “ દેવાયુષ્યના બંધ બાધીને દેવગતિમા ઉત્પન્ન
થાય છે ? ” ત્યાં સુધીના સૂત્રપાઠ થકણ કરવો (ગોયમા ! એગંત પંડિયસ્સ જં
મણુસસ્સ કેવલમેવ દો ગર્ઈઓ પળ્ણાયંતિ) હે ગૌતમ ! એકાન્ત પંડિત મનુષ્યોની
બે ગતિઓ જ કહી છે, (તંજહા) તે ગતિઓ આ પ્રમાણે છે—(અંતક્રિયા
ચેવ કપ્પોવવત્તિયા ચેવ) (૧) અંતક્રિયા અને (૨) કલ્પોપપત્તિકા (સે તેળદ્દેણં-
ગોયમા ! જાવ દેવાઉયં કિચ્ચા દેવેસુ ઉવવજ્જહ) હે ગૌતમ ! તે કારણે હું એવું

पूपपद्यते, बालपण्डितः नैरयिकादिसर्गेषु आयुष्यकर्म नोपार्जयति, न वा तादृश कर्मवृत्तेन नैरयिकाधारभ्य मनुष्यपर्यन्तगतीं समुत्पद्यते किन्तु देवायुष्कं सम्पान्त्र्य तादृशकर्मवृत्त्यादेवल्लोके एव समुत्पद्यते इति भावः । पुनः प्रश्नयति—‘स केणद्वेण’ तत्केनार्थेन ‘आव देवाउय-किञ्चा देवसु उववज्जइ’ यावत् देवायुष्कं कृत्वा देवपूपपद्यते ? चाक्षपंडितो न नैरयिकाधायुर्बध्नाति, न च नैरयिकाधायुर्बध्ना नारकादिपूपपद्यते किन्तु देवायुरेव बध्वा देवल्लोकेपूपपद्यते, स्रमं किं कारणमिति प्रश्नाशय । भगवानाह—‘गोयम’ त्यादि । ‘गोयमा’ हे गौतम ! ‘बालपण्डि एणं मणुस्स’ बालपंडित खलु मनुष्य चाक्षपंडितो नाम भावक, ‘उहारुवस्स’

मनुष्य नरकायु का बंध नहीं करता है और यावत् वह देवायु का बंध कर देवल्लोक में उत्पन्न होता है । तात्पर्य कहने का यह है कि जो बालपंडित मनुष्य होता है वह नैरयिक स्रमही आयुष्क कर्मका उपार्जन नहीं करता है, और न वह ऐसे कर्म के बल से नैरयिक से लेकर मनुष्य पर्यन्त गति में उत्पन्न होता है, किन्तु देवायुष्क का उपार्जन कर वह तादृश कर्म के प्रभाव से देवल्लोकों में ही उत्पन्न होता है । (से केणद्वेण आव-देवाउय किञ्चा देवसु उववज्जइ ?) हे भदन्त ! आप ऐसा किस कारण से कहते हैं कि वह बालपण्डित मनुष्य यावत् देवायुष्क का उपार्जन कर देवल्लोकों में उत्पन्न होता है अर्थात्-वह बालपंडित मनुष्य न नैरयिक आदि की आयु बांधता है और न नैरयिक आदि की आयु बांध कर वह नारकादिकों में उत्पन्न होता है किन्तु देवायु ही बांध कर वह देवल्लोकों में उत्पन्न होता है इसमें क्या कारण है ? (गोयमा ! बालपण्डि एणं मणुस्से) हे गौतम ! जो बालपंडित मनुष्य होता है वह

“ हे गौतम ! ते बालपण्डित मनुष्य नारकायुने जंघं बांधतो नही ” त्याची वृत्ति ‘ देवायुने जंघं बांधीने देवल्लोकमा उत्पन्न थाय छे ’ त्या सुधीने पाठ शक्य करवे । तात्पर्य जे छे ते बालपण्डित मनुष्य नारकी स्रमही आयुष्य कर्मनु उपार्जन करतो नही, जेने ते तिर्थायुष्यने जेने मनुष्या-युष्यने जंघं पळु बांधतो नही, जेने जेवां कर्मेनि जंघं न बांधवाने कारणे ते नारक गतिमां, तिर्था गतिमां तेमज मनुष्य गतिमां उत्पन्न थतो नही पळु देवायुष्यने जंघं बांधीने देवल्लोकमा ज उत्पन्न थाय छे

प्रश्न—(से केणद्वेण आव देवाउय किञ्चा देवसु उववज्जइ ?) हे भगवन् ! आप या कारणे जेवुं कहे छे ते बालपण्डित मनुष्य नारक, तिर्था जे जेने मनुष्य आयुष्यने जंघं बांधीने नारकगतिमां, तिर्था गतिमां ते मनुष्यगतिमां उत्पन्न थतो नही पळु देवायुष्यने जंघं बांधीने देवल्लोकमा ज उत्पन्न थाय छे !

તથારૂપસ્ય ' સમગસ્ય વા ' શ્રમણસ્ય વા તપસ્વિનઃ ' માહણસ્ય વા ' માહનસ્ય વા-માહન માહન इत्येवं वदनशीलस्य निवृत्तसर्वसावद्यव्यापारस्य साधोः, यद्वा-माहनस्येति श्रावकस्य वा ' अंतिए ' अन्तिके समीपे ' एगमपि आरियं धम्मियं सुवयणं सोच्चा ' एकमपि आर्यं धार्मिकं सुवचनं श्रुत्वा ' णिसम्म ' निश्चयं हृदि अवधार्य ' देसं उवरमइ ' देशमुपरमति, धार्मिकप्रवचनश्रवणोत्तरकाल देशादुपरतो भवतीत्यर्थः, ' देसं णो उवरमइ ' देशं नोपरमति, देशान्नोपरतो भवति, ' देसं पच्चक्खाइ ' देशं प्रत्याख्याति, देशादुपरमानन्तरं देशम्-एकदेशं स्थूलं प्राणातिपातादिकं प्रत्याख्याति त्यजति ' देसं णो पच्चक्खाइ ' देशं नो प्रत्याख्याति, आंशिकं प्रत्याख्यानं करोति आंशिकं प्रत्याख्यानं न करोति, ' से तेणट्ठेणं ' तत्ते-

(અર્થાત્ શ્રાવક) (તહારૂવસ્ય સમણસ્ય વા માહણસ્ય વા અંતિએ) તથા રૂપ શ્રવણ તથા માહન-મત મારો, મત મારો હસ પ્રકાર કા ઉપદેશ દેને વાલે સર્વસાવધવ્યાપારનિવૃત્તશાલી સાધુ કે અથવા માહન શ્રાવક-કે પાસ સે (એગમપિ આરિયં ધમ્મિયં સુવચણં સોચ્ચા) એક મી આર્ય ધાર્મિક સુવચન સુન કરકે ઓર (ણિસમ્મ) ઉસે હૃદય મેં અવધારણ કરકે (દેસં ઉવરમઇ) કિતનિક પ્રવૃત્તિયોં સે દૂર હો જાતા હૈ, ઓર (દેસં ણો ઉવરમઇ) કિતની પ્રવૃત્તિયોં સે દૂર નહીં હોતા હૈ । (દેસ પચ્ચક્ખાઇ, દેસં ણો પચ્ચાક્ખાઇ) ઉપરમ હોને કે વાદ વહ એકદેશ સે પ્રાણાતિપાત આદિકા-અર્થાત્ સ્થૂલપ્રાણાતિપાત આદિકા ત્યાગ કર દેતા હૈ ઓર એકદેશ સે પ્રાણાતિપાત આદિ કા ત્યાગ નહીં

ઉત્તરઃ—(ગોયમા ! બાલપટ્ટિણં નં મણુસે) હે ગૌતમ ! જે બાલપંડિત (શ્રાવક) મનુષ્ય હોય છે તે (તહારૂવસ્ય સમણસ્ય વા માહણસ્ય વા અંતિએ) તે પ્રકારના શ્રમણ પાસેથી તથા “ મા હન ” “ હણો નહી, હણો નહી ” એવા ઉપદેશ દેનારા સર્વસાવધ વ્યાપારથી રહિત એવા સાધુ પાસેથી અથવા માહન-શ્રાવકની પાસેથી (એગમપિ આરિય ધમ્મિયં સુવચણં સોચ્ચા) એક પણ આર્ય ધાર્મિક સુવચનનું શ્રવણ કરીને અને (ણિસમ્મ) તેને હૃદયમાં ધારણ કરીને (દેસં ઉવરમઇ) કેટલીક પાપકારી પ્રવૃત્તિઓથી દૂર રહે છે અને (દેસં ણો-ઉવરમઇ) કેટલીક પાપકારી પ્રવૃત્તિઓથી દૂર રહેતો નથી (દેસ પચ્ચક્ખાઇ, - દેસ ણો પચ્ચક્ખાઇ) તે એક દેશથી (અમુક અંશે) પ્રાણાતિપાત (હિંસા) વગેરેનો સ્થૂલ પ્રાણાતિપાત વગેરેનો ત્યાગ કરે છે અને અમુક અંશે પ્રાણાતિપાત વગેરેનો ત્યાગ કરતો નથી. એટલે કે પ્રાણાતિપાત વગેરેનો અમુક દૃષ્ટિએ આંશિક ત્યાગ કરે છે અને અમુક પ્રકારે આંશિકરૂપે તેનો ત્યાગ નથી પણ

નાર્યેન 'દેસોવરમ દેસપન્ચક્ષાણે' દેશોપરમદેશપ્રત્યાખ્યાનેન 'જો ઘેરયા
તયં પચ્ચેદ' નો નૈરયિકાણુક પ્રકરોતિ, 'જાવ દેવાડય કિન્ચા દેવેસુ ઉચ્ચજ્ઞ'
યાવત્ દેવાણુકં કૃત્વા દેવેષુપપચ્ચતે, 'સે તેજદ્દેયં જાણ દેવેસુ ઉચ્ચજ્ઞ'
તત્તેનાર્યેન દેવેષુપપચ્ચતે, एतेन દેશોપરમદેશપ્રત્યાખ્યાનેન ચાત્રપઢિતો નારકાધાણુકં
ન ચન્નાતિ કિન્તુ દેવાણુનો વાપનં કૃત્વા દેવલોકેયુ સમુત્પન્નો મથતીતિ ॥૨૦॥

॥ इत्येकान्तपण्डितबालपण्डितयोर्विचारः ॥

अथ मृगपालकपुरुषादिविचारः—

जन्मग्रहणे आयुष्यकर्म कारणम्, आयुषो बन्धे च क्रिया कारवमिति क्रिया-
प्रतिपादिकां पञ्चसूत्रीमाह—' पुरिसे णं मत्ते ' इत्यादि ।

करता है । अर्थात् वह प्राणातिपात आदिका किसीरूप आंशिकरूप में
त्याग कर देता है और किसीरूप से आंशिकरूप में उनका त्याग नहीं
करता है । इस तरह वह देशविरत भावक बन जाता है । (से तेजद्वेय
देसोवरमदेसपन्चक्खजाणे ण जો जेरइयाउय पकरेइ, जाव देवाउय किन्चा
देवेसु उचचज्जइ से तेजद्वेय ज्ञाण देवेसु उचचज्जइ) इसलिये हे गौतम !
देशोपरम और दशप्रत्याख्यान से युक्त होने के कारण वह बाल पण्डित
मनुष्य नैरयिक आयुका बंध नहीं करता है । यावत् वह देवायु का बंध
कर देवों में उत्पन्न होता है । इस कारण हे गौतम ! मैंने ऐसा कहा है
कि वह बालपण्डित मनुष्य यावत् देवलोकमें उत्पन्न होता है ॥ सू० २॥
॥इस प्रकारसे एकान्त पण्डित और बालपंडित का विचार संपूर्ण हुआ॥

अथ मृगपालक पुरुषादिकों का विचार—

जन्म के छेने में आयु कर्म कारण है और आयु कर्म के बांधने में

કરતા આ રીતે તે દેશવિરત-આવક કહેવાય છે (સે તેજદ્વેયં દેસોવરમ-
દેસપન્ચક્ષાણે ણં જો જેરઇયાય પકરેઇ, જાવ દેવાઉય કિન્ચા દેવેસુ ઉચ્ચજ્ઞ)
હે ગૌતમ ! દેશોપરમ અને દેશ પ્રત્યાખ્યાનથી મુક્ત હોવાને કારણે તે બાલ
પંડિત મનુષ્ય નૈરયિક, તિર્થંજ અને મનુષ્યાધુન્યનો બંધ બાંધીને નાશક,
તિર્થંજ અને મનુષ્ય ગતિમાં ઉત્પન્ન થતો નથી પણ દેવાધુન્યનો બંધ બાંધીને
દેવલોકમાં ઉત્પન્ન થાય છે તે કારણે એ એવું કહ્યું છે કે તે બાલપંડિત મનુષ્ય
દેવાધુન્યનો બંધ બાંધીને દેવલોકમાં જ ઉત્પન્ન થાય છે ॥ સૂ. ૨ ॥

॥ એકાન્ત પંડિત અને બાલપંડિતનું વક્તવ્ય સમાપ્ત ॥

મૃગપાલક પુરુષાદિકનું વક્તવ્ય

જન્મ દેવામાં કારણરૂપ આધુન્ય કર્મ છે અને આધુન્ય કર્મ બાંધવામાં

मूलम्—पुरिसे णं भंते ! कच्छंसि वा दहंसि वा उदगंसि
 दवियंसि वा बलयंसि वा नूमंसि वा गहणंसि वा गहणवि-
 दुग्गंसि वा पव्वयंसि वा पव्वयविदुग्गंसि वा वणंसि वा
 वणविदुग्गंसि वा मियवित्तिए मियसंकप्पे मियपाणिहाणे
 मियवहाए गंता, एते मियत्ति काउं अण्णयरस्स मियस्स व-
 हाए कूडपासं उदाइ, तओ णं भंते ! से पुरिसे कइ किरिए
 पन्नत्ते, गोयमा ! जावं च णं से पुरिसे कच्छंसि वा जाव
 कूडपासं उदाइ, तावं च णं से पुरिसे सिय ति किरिए,
 सिय चउ किरिए, सिय पंच किरिए, से केणट्ठेणं भंते ! एवं
 बुच्चइ सिय ति किरिए सिय चउ किरिए सिय पंच किरिए,
 गोयमा ! जे भविए उदवणयाए णो वंधणयाए, णो मार-
 णयाए, तावं च णं से पुरिसे काइयाए अहिगरणियाए पाउ-
 सियाए, तिहिं किरियाहिं पुट्टे, जे भविए उदवणयाए वि
 वंधणयाए वि णो मारणयाए तावं च णं से पुरिसे काइयाए
 अहिगरणियाए पाउसियाए पारितावणियाए चउहिं किरियाहिं
 पुट्टे, जे भविए उदवणयाए वि वंधणयाए वि मारणयाए वि
 तावं च णं से पुरिसे काइयाए—अहिगरणियाए पाउसियाए
 जाव पाणाइवायकिरियाए पंचहिं किरियाहिं पुट्टे, से तेण-
 ट्ठेणं जाव पंचकिरिए ॥ सू० ३ ॥

क्रिया कारण है । इस विचार से अब सूत्रकार क्रिया प्रतिपादिका पंच-
 सूत्री का कथन करते हैं—‘पुरिसे णं भंते !’ इत्यादि।

क्रिया शशुभूत होय छे. तेथी हुवे सूत्रकार क्रिया प्रतिपादक पाच सूत्रोनुं
 कथन करे छे—“पुरिसे णं भंते !” इत्यादि

छाया—पुरुषः खलु भवन्त ! कच्छ वा इदे वा उदके वा द्रवके वा पल्य वा नूमे वा गहने वा गहनविदुर्ग वा पर्यते वा पर्यनविदुर्ग वा वने वा वनविदुर्गे वा मृगवृक्षिको मृगसकल्पो मृगमणिधानो मृगवपाय गन्ता एत मृगा इति कृत्वाऽन्यतरस्य मृगस्य वधाय कृत्वा मृगद्राति, ततो भवन्त ! स पुरुषः कतिक्रियः प्रहसः ? गौतम ! यावच्च खलु स पुरुष कच्छे वा यावत् कृत्वा मृगद्राति, तावच्च खलु स पुरुषः स्यात् त्रिक्रियः स्यात् चतुक्रियः, स्यात् पंचक्रियः ! तत्केनार्थेन भवन्त ! एवमुच्यत स्यात् त्रिक्रियः स्यात् चतुक्रियः स्यात् पंचक्रियः गौतम ! यो मय उद्वजतया, नो वचनतया, नो मारणतया तावच्च खलु स पुरुषः कायिकया आधिकरणिकया प्राडेपिकया तिसृमि क्रियामिः सृष्टः यो मयः उद्वजतयापि, वचनतयापि नो मारणतया तावच्च खलु स पुरुषः कायिकया आधिकरणिकया प्राडेपिकया पारितापनिकया चतसृमि क्रियामिः सृष्टः, यो मय उद्वजतयापि वचनतयापि मारणतयापि तावच्च खलु स पुरुषः कायिकया आधिकरणिकया प्राडेपिकया यावत् प्राणातिपातक्रियया पंचमिः क्रियामिः सृष्टः तत्केनार्थेन यावत् पंचक्रियः ॥ सू० ३ ॥

टीका—‘ पुरिसे न भते ’ पुरुषः खलु भवन्त ! ‘ कच्छंति वा ’ कच्छे वा—कच्छे नदीजलपरिवेष्टितवृक्षादियुक्तमदश्चिन्ने, ‘ दहसि वा ’ इदे वा—अगाधजलप्रदेशे ‘ उदगंसि वा ’ उदके वा, सामान्ये जलाशये ‘ दनिर्यंसि वा ’ द्रवके वा वृक्षादि द्रव्य समुदाये ‘ वनिर्यंसि वा ’ वने वा, वृक्षाकारनद्यादिजलकुटि

टीकार्थ—(भते !) हे भवन्त ! न निश्चयसे (मिय यित्तिण) मृगोंसे अपनी जीविका चलानेवाला (मिय सकप्पे) मृगी को मारने के लिये कुल संकल्पवाला, (मियपणिहाणे) मृगों की शिकार करने में तल्लीन भित्तवाला ऐसा (पुरिसे) कोई पुरुष (मियवहाण) मृगों को मारने के लिये (कच्छंसि वा) कच्छ में—नदी के जल से घिर हुए झाड़ीवाले स्थान में (दहसि वा) अथवा द्रव—अगाध जलवाले स्थान में (उदगंसि वा) या सामान्य जलाशय रूप तालाव आदि स्थान पर (वनिर्यंसि वा)

टीकार्थ—(मति ! न मिययित्तिण) हे भगवन् भूजे वटे जे/ले के पशु जे/नी कृत्वा करीने न चोताने निर्वह करनाये, (मिय सकप्पे) भूजेने भाए वाने जेभले अकथ करी ॥ जेवा (मियपणिहाणे) मृगोने शिकार करवाना न तल्लीन भित्त वाजे (पुरिसे) जेवा कोउ पुरुष (मियवहाण) भूजेनी कृत्वा करवाने भाटे (कच्छंसि वा) कच्छमा नदीसी घेरायेवा आदीवाजा स्थानमा (दहसि वा) अथवा द्रवमा—अगाध जलवाजा स्थानमा, (वनिर्यंसि वा) अथवा सामान्य जलाशय रूप तालाव वजेरे स्थान पर, (वनिर्यंसि वा) अथवा वाध

मूलम्—पुरिसे णं भंते ! कच्छंसि वा दहंसि वा उदगंसि
 दवियंसि वा बलयंसि वा नूमंसि वा गहणंसि वा गहणवि-
 दुग्गंसि वा पव्वयंसि वा पव्वयविदुग्गंसि वा वणंसि वा
 वणविदुग्गंसि वा मियवित्तिए मियसंकप्पे मियपाणिहाणे
 मियवहाए गंता, एते मियत्ति काउं अण्णयरस्स मियस्स व-
 हाए कूडपासं उदाइ, तओ णं भंते ! से पुरिसे कइ किरिए
 पन्नत्ते, गोयमा ! जावं च णं से पुरिसे कच्छंसि वा जाव
 कूडपासं उदाइ, तावं च णं से पुरिसे सिय ति किरिए,
 सिय चउ किरिए, सिय पंच किरिए, से केणट्ठेणं भंते ! एवं
 बुच्चइ सिय ति किरिए सिय चउ किरिए सिय पंच किरिए,
 गोयमा ! जे भविए उदवणयाए णो बंधणयाए, णो मार-
 णयाए, तावं च णं से पुरिसे काइयाए अहिगरणियाए पाउ-
 सियाए, तिहिं किरियाहिं पुट्ठे, जे भविए उदवणयाए वि
 बंधणयाए वि णो मारणयाए तावं च णं से पुरिसे काइयाए
 अहिगरणियाए पाउसियाए पारितावणियाए चउहिं किरियाहिं
 पुट्ठे, जे भविए उदवणयाए वि बंधणयाए वि मारणयाए वि
 तावं च णं से पुरिसे काइयाए—अहिगरणियाए पाउसियाए
 जाव पाणाइवायकिरियाए पंचहिं किरियाहिं पुट्ठे, से तेण-
 ट्ठेणं जाव पंचकिरिए ॥ सू० ३ ॥

क्रिया कारण है । इस विचार से अब सूत्रकार क्रिया प्रतिपादिका पंच-
 सूत्री का कथन करते हैं—‘पुरिसे णं भंते !’ इत्यादि।

क्रिया कारणभूत होय छे तेथी हवे सूत्रकार क्रिया प्रतिपादक पाथ सूत्रोनुं
 कथन करे छे—“पुरिसे णं भंते !” इत्यादि

કૂટપાશ્વમુદાતિ, કુટ=મૃગગ્રહણકારણ ગર્તાદિકમ્, પાશ્વમ્ વાસુરા
 इति कूटपाश्वम्, सददाति मृगवधाय रचयति, 'तत्रो ण मते' ततः खलु मदन्त !
 'से पुरिसे' स पुरुषः 'ककिरिए' कतिक्रिया, कतिसक्यकक्रियानान्
 मयतीति मन्मः । उचरयति मगवान्—'गोयमे' स्यादि । 'गोयमा !' हे गौतम !
 'जाबं च ण से पुरिसे' यावत् च स खलु पुरुषः 'कच्छसि वा' कच्छे वा
 'जाबकूटपासं उदाह' यावत् कूटपाश्वमुद्राति, 'तावं च ण से पुरिसे सिय ति
 किरिए' तावत् च स खलु पुरुष स्यात् भિક्रिय 'सियचउकिरिए' स्यात् चउ
 क्रिया, 'सियपंचकिरिए' स्यात्पंचक्रिया, यावत्काळम् स पुरुषः कूटपाश्वम
 रचयति तावत् स पुरुषः, कदाचित् भિક्रियानान् कदाचित् चतुक्रियावान् कदा-
 चित् पंचक्रियावान् स्यादिति भावः । पुनः प्रश्नयति गौतमः 'से केणहेण'
 मित्यादि, 'से केणहेणं मते' तत् केनार्येण मदन्त ! 'एवं पुच्छइ' एवमुच्यते

करके किसी मृग को मारने के लिये खड़ा बना कर उस पर जाल'ताब
 दिया (तओ ण मते ! से पुरिसे कई किरिए पण्णसे ?) तो हे भवन्त !
 ऐसा वह पुरुष कितनी क्रियावाला कहलावेगा ? मृग को पकड़ने के
 लिये कूट और बांधने के लिये जाल होता है । (गोयमा ! जाबं च ण
 से पुरिसे कच्छसि वा जाब कूटपास उदाह तावं च ण से पुरिसे सिय
 तिकिरिए, सिय चउकिरिए सिय पंचकिरिए) हे गौतम ! जब तक वह
 कच्छ में यावत् कूट-मृगादिकों को पकड़ने के लिये गर्त आदि को
 और जाल आदिको रचता है तबतक वह पुरुष कदाचित् तीन क्रिया-
 वाला, कदाचित् चार क्रियावाला, और कदाचित् पांचक्रियावाला कहला
 वेगा । (से केणहेणं मते ! एवं पुच्छइ, सिय तिकिरिए, सिय चउकिरिए,
 सियपंचकिरिए ?) हे भवन्त ! आप ऐसा किस कारण से कहते हैं कि

નિશ્ચય કરીને એક મૃગને મારવાને માટે ખાટો બનાવીને તેની ઉપર બાજ
 પાથરી દીધી (તઓ ણ મતે ! સે પુરિસે कई કિરિયે પણ્ણસે ?) તો હે ભગવન !
 એવા પુરુષને કેટલી ક્રિયા વાળો કહી શકાય. (મૃગને પકડવાને માટે કૂટ બને
 બાંધવાને માટે બાજ કોય છે) (ગોયમા ! જાબં ચ ણ સે પુરિસે કચ્છસિ વા
 જાબ કૂટપાસ ઉદાહ તાવં ચ ણ સે પુરિસે સિય તિકિરિય સિય ચઠકિરિય,
 સિય પંચકિરિય) હે ગૌતમ ! બધા મુખી તે પુરુષ ક્યામાં (નદીથી ઘેરાયેલા
 બગીચાના સ્થાનમાં) (ત્યાંથી લઇને) ' મૃગાદિકોને પકડવાને માટે ખાટો
 બનાવી તેના પર બાજ વગેરે રચે છે ' (ત્યાં મુખીનો પાઠ પ્રહસ્ય કરવો)
 ત્યાં મુખી તે પુરુષ ક્યારેક ત્રણ ક્રિયાવાળો, ક્યારેક ચાર ક્રિયાવાળો અને
 ક્યારેક પાંચ ક્રિયાવાળો કહેવાય છે (સે કેણહેણં મતે ! एवं पुच्छइ, सिय
 किरिए, सिय चउ किरिए, सिय पंचकिरिए ?) હે ભગવન આપ શા કારણે

लगतियुक्तप्रदेशे इत्यर्थः, 'नूमंति वा' नूमे वा, नूमे-अन्धकारयुक्ते कन्दरादा-
वित्यर्थः । 'गहणंसि वा' गहने वा, तृणगुल्मलतावृक्षादिसमुदाये 'गहणविदुगं-
सि वा' गहनविदुर्गे वा, पर्वतात्रेकदेशावस्थितवृक्षवल्ल्यादिसमुदाये 'पन्वयंसि
वा' पर्वते वा 'पन्वयविदुगंसि वा' पर्वतविदुर्गे वा, पर्वतसमुदाये इत्यर्थः,
'वणंसि वा' वने वा, एकजातीय वृक्षसमुदायो वनम्, तस्मिन् । 'वणविदुगंसि
वा' वनविदुर्गे वा, अनेकप्रकारकवृक्षसमुदाये, 'मियवित्ति' मृगवृत्तिकः, मृगै-
र्वन्यपशुविशेषैर्वृत्तिर्जाविका यस्य स मृगवृत्तिकः, । मृगपालकोपि मृगवृत्तिः
स्यादित्यत आह—'मियसंकल्पे' मृगसंकल्पः, मृगमारणाय कृतः संकल्पो निश्चयो
येन स मृगसंकल्पः, मृगमारणसंकल्पवानित्यर्थः, चलचित्ततयापि मृगवधाध्यव-
सायो भवेदित्यत आह—'मियपणिघाणे' मृगप्रणिधान, मृगवधाय कृतं-
प्रणिधानं चित्तैकाग्र्यं येन स मृगप्रणिधानः, मृगवधैकचित्तः, 'मियवहाए गंता'
मृगवधाय गन्ता=गमनशीलः 'एते मियत्ति काउं' एते मृगाः इति कृत्वा
'अण्णयरस्स' अन्यतरस्य 'मियस्स' मृगस्य 'वहाए' वधाय-मारणाय 'कू-

अथवा-घास आदि समुदाय से व्याप्त प्रदेश में (वल्यंसि वा) गोलाकार
नदी के जल से छुटिल गति वाले स्थान में (नूमंसि वा) अथवा अंध-
कार युक्त कन्दरादिरूप प्रदेश में (गहणंसि वा) अथवा तृणगुल्म, लता,
वृक्ष आदिकों से युक्त स्थान में (गहणविदुगंसि वा) अथवा पर्वतादि
के एक देश में स्थित ऐसे वृक्षलतादि समुदायवाले स्थान में (पन्वयंसि-
वा) अथवा किसी पर्वत के ऊपर (पन्वयविदुगंसि वा) अथवा अनेक
पर्वतों पर (वणंसिवा) अथवा एक जाती के वृक्षों के समुदाय वाले स्थान में
(वणविदुगंसि वा) अथवा अनेक जातियों के वृक्षों के समुदायाकीर्ण स्थान में
(गंता) गया-वहाँ जाकर उसने (एते मियत्ति काउं अण्णयरस्स
मियस्स वहाए कूटफासं उद्दीह) ये ही मृग हैं ऐसा खयाल करके-निश्चय

वगेरेही आश्रित प्रदेशमा, (वल्यंसि) गोलाकार नदीना जलधौ छुटिल
स्थानमा (नूमंसि वा) अथवा अंधकार वाणी शुद्धाश्रित स्थानमा (गहणं सि
वा) अथवा तृण, गुल्म, लता, वृक्ष वगेरेही युक्त स्थानमा, (गहण विदुगंसि
वा) अथवा पर्वतादिना ओठ लागमा आवेल लता अने वृक्षोना समुदाय
वाणी स्थानमा (पन्वयंसि वा) अथवा पर्वत उपर (पन्वयविदुगंसि वा)
अथवा अनेक पर्वतो उपर, (वणंसिवा) अथवा ओठ न लतना वृक्षोना
समुदाय वाणी स्थानमा, (वणविदुगंसि वा) अथवा अनेक लतना वृक्षोना
समुदायही आश्रित स्थानमा (गंता) गयो. न्यां जठने तेले (एते मिय-
त्तिकाव' अण्णयरस्स मियस्स वहाए कूटफासं) आ मृगो न छे अवे।

भ्रामणादिरूपपीडनाय प्रवर्त्तते किन्तु 'गो बंधगयाए' नो बन्धनाय 'गो मार गयाए' नो मारणाय, यावत्पर्यन्त स पुरुषः कूटपाशादिक रचयति मृगपीडनस्य-
दृश्य किन्तु नो बध्नाति मृगं नो वा मारयति मृगमिति भावः । 'तां च य
से पुरिसे' तावत् च खलु स पुरुष 'काइयाए' कायिन्या, गमनादिकायवेष्टा
रूपयाक्रियया, 'अहिगरणियाए' आधिकरणिक्या, अधिकरणेन कूटपाशादिक

है। इस क्रिया से वह युक्त बना हुआ है, अतः वह अधिकरणिकी
क्रिया से स्पष्ट कहा गया है। मृगों के प्रति जो उसके हृदय में बुष्ट
भाव जगा है वह प्रदेष्ट है—इस प्रदेष्ट को लेकर जो क्रिया वह कर रहा
है वह प्रादेष्टिकी क्रिया है। इस क्रिया वाला वह मारणक्रिया में श्रेष्ठ
अवश्य होने के कारण हुआ है अतः वह प्रादेष्टिकी क्रिया से स्पष्ट कहा
गया है। जो पुरुष केवल मृगों को मारने के लिये कूटपाश आदि की
रचना कर रहा है अभी उनको न बांध रहा है और न मार रहा है—
तब तक वह कायिकी आधिकरणिकी और प्रादेष्टिकी इन तीन क्रिया
ओं से युक्त होता है। इसीलिये यहाँ वह कदाचित् तीन क्रियाओं से
युक्त होता है ऐसा कहा गया है। (जे मविण उदबणयाए वि, बंधण
याए वि नो मारणयाए, तां च य णं से पुरिसे काइयाए, अहिगरणियाए,
पावसियाए, परितावणियाए चवहिं किरियाहिं पुट्ठे) तथा जयनक वह
बचक पुरुष जाल को रखे हुए है मृग की खोज में इधर उधर फिर रहा
है, तथा मृग को बांध रहा है मार नहीं रहा है तबतक वह बचक पुरुष

ते क्रियाधी युक्त होवाने कारणे तेने अधिकरविही क्रियाधी स्पृष्ट
होवामां आये। ते मृगो प्रत्ये तेना लुब्धभा ने दुष्टभावे उत्पन्न भया ।।
ते प्रादेष्टिके भावे ।। ते प्रादेष्टने वीधे ते ने क्रिया करी रख्यो । तेने प्रादे
ष्टिकी क्रिया कहे । मारवानी क्रियाभा देख अवश्य देख्यो होय । ते कारणे
तेने प्रादेष्टिकी क्रियाधी स्पृष्ट होवामां आये। ते ने पुरुष भूओने मारवाने
भाटे कूटपाशादिनी रचना करी रख्यो होय । पण न्या भुभी ते भूओने पाधते।
न होय अथवा मारतो न होय तथा भुभी ते कायिकी, अधिकरविही अने
प्रादेष्टिकी जे त्रजु क्रियाओधी न भुज्ज होय । तेथी अही जेभ ठहं । ते
ते पुरुष कपारेक त्रजु क्रियाओधी युक्त होय । (जे मविण उदबणयाए वि,
बंधणयाए वि, नो मारणयाए तां च य णं से पुरिसे काइयाए, अहिगरणियाए,
पावसियाए परितावणियाए चवहिं किरियाहिं पुट्ठे) तथा न्या भुभी ते पुरुष
अग्ने निष्ठापीने भूगनी शोधमां आभ तेभ रेतो होय, तथा भूओने पाधते।
होय पण मारतो न होय तथा भुभी ते शिकारी मार क्रियाओधी युक्त भव्या

‘सिय तिकिरिए सिय चतुकिरिए सिय पंचकिरिए’ स्यात् त्रिक्रियः स्यात् चतुष्क्रियः स्यात् पंचक्रिय इति ? उत्तरयति भगवान्-‘ गोयमे’त्यादि । ‘गोयमा’ हे गौतम ! ‘जे भविए’ यो भव्यः, भवतीति भव्यो वधकः, अत्र भव्यशब्देन वधको जीवो गृह्यते, यावन्तं कालं स मृगवधकः ‘उद्वणाय’ उद्वणतायै=उद्वणाय=इतस्ततो

वह पुरुष कदाचित् तीन क्रियावाला, कदाचित् चारक्रियावाला, कदाचित् पांच क्रियावाला कहलावेगा (गोयमा ! जे भविए उद्वणयाए णो बंधणयाए णो मारणाए, ताव च णं से पुरिसे काइयाए अहिगरणियाए पाउसियाए तिहिं किरियाहिं पुट्टे) हे गौतम ! जब तक वह वधक पुरुष इधर उधर चलने फिरने आदि रूप क्रिया में प्रवृत्त हो रहा है मृग को बांधने और मारने में प्रवृत्त नहीं हो रहा है तथा वह पुरुष मृग को पीडा देने के उद्देश से जबतक कूट पाशादिक की रचना कर रहा है, किन्तु वह अभी उसे पकड़ नहीं रहा है और न मार ही रहा है, तब तक वह पुरुष कायिकी, आधिकरणिकी और प्राद्वेषिकी इन तीन क्रियाओं से स्पृष्ट हो रहा है । तात्पर्य कहने का यह है कि उस वधक पुरुष में मृगको मारनेके निमित्त जो आने जाने आदि रूप शरीरकी चेष्टा हो रही है वह शारीरिक क्रिया है । इस क्रियावाला होनेके कारण वह उस क्रिया से उस समय स्पृष्ट हो रहा है । तथा कूट पाशरूप हिंसा के अधिकरण के निमित्त जो क्रिया हो रही है वह आधिकरणिकी क्रिया

એવુ કહો છે કે તે પુરુષ ક્યારેક ત્રણ ક્રિયાવાળો, ક્યારેક ચાર ક્રિયાવાળો અને પાંચ ક્યારેક ક્રિયાવાળો હોય છે ? (ગોયમા ! જે ભવિયે ઉદ્વણયાએ ણો બંધણયાએ ણો મારણાએ તાવ ચ ણં સે પુરિસે કાઈયાએ અહિગરણિયાએ પાઉસિયાએ તિહિં કિરિયાહિં પુટ્ટે) હે ગૌતમ ! બ્યાં સુધી તે હિંસક પુરુષ આમ તેમ હરવા કરવાની ક્રિયા કરી રહ્યો છે, પણ મૃગને બાધવા તથા મારવાને માટે પ્રવૃત્ત થયો નથી તથા તે પુરુષ મૃગને મારવાને માટે બ્યાં સુધી કૂટ પાશાદિકની રચના કરી રહ્યો છે, પણ તેને બ્યાં સુધી પકડતો નથી કે મારતો નથી, ત્યાં સુધી તે પુરુષ કાયિકી, અધિકરણિકી, અને પ્રાદ્વેષિકી એ ત્રણ ક્રિયાઓથી સ્પૃષ્ટ હોય છે (કરતો હોય છે) કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે તે શિકારી, મૃગને મારવાને માટે જે અવર જવર રૂપ શારીરિક ક્રિયાઓ કરતો હોય છે તેને કાયિકી ક્રિયા કહે છે. આ ક્રિયાવાળો હોવાને કારણે તે વખતે તે આ ક્રિયાથી સ્પૃષ્ટ થતો હોય છે. તથા કૂટ પાશાદિક રૂપ હિંસાના અધિકરણને (સાધનેને) નિમિત્તે જે ક્રિયા થતી હોય છે તે ક્રિયાનું નામ અધિકરણિકી

પ્રાઢેપિક્યા ' જાત્ર પાણાદ્યાય કિરિયાણ ' ચાવત્-ચાવસ્પદેન પારિતાપનિક્યા,
 તથા માળાતિપાતિક્યા, આમિઃ ' પંચર્હિ પિરિયાર્હિ પુટ્ટે ' પશ્ચમિઃ ક્રિયામિઃ
 સ્પૃષ્ટો મનતિ, અપમાન્યઃ-ઉદ્ઘાવણમાત્રે કૃતે કાચિકી આધિકરણિકી પ્રાઢેપિકીતિ
 ક્રિયાત્રયયુક્તો મનસિ, ધન્યને કૃતે પરિતાપો જાયતે इति પૂર્વાક્તક્રિયાત્રય તથા
 ચતુર્થી પરિતાપનક્રિયાપિ જાયતે इति ચતુષ્ક્રિયાયુક્તો મનતિ, મારમે સતિ
 માળાતિપાતો જાયતે इति પૂર્વોક્ત ચતુષ્ક્રિયાસહિતા પંચમી માળાતિપાતક્રિયેતિ
 પંચક્રિયો મનતીતિ । ' સે તળદ્વેષે જાણ પંચકિરિણ ' તથેનાર્થન ચાવત્ પંચક્રિય
 હે ગૌતમ ! ઉત્ક્રારણે રુપરિ પ્રદર્શિત મુક્તિમિ રુદ્ધાવણાદિક કુર્ષન્ પુરુષઃ કદા-
 ચિન્ ક્રિયાત્રયાદિના સ્પૃષ્ટઃ સન્ પ્રિક્રિયમનુવિન્યઃ પચક્રિયો ધા મનતીતિ ॥૧॥

પ્રાઢેપિકી, પારિતાપનિકી ઓર પ્રાણાતિપાન ક્રિયા इन पांच क्रियाओं
 से स्पर्श किया गया है-अर्थात् इन पांच क्रियाओं वाला कहलाता है ।
 आशय यह है-कि उद्घावणमात्र (गड्ढा ग्योड़ना, जाल बिछाना आदि)
 करने पर वह पुरुष काचिकी, अधिकरणिकी, प्राड्पेपिकी इन तीन
 क्रियाओं से युक्त होता है । मृग को बांध लने पर "परिताप उसे होता
 है" इसमिये वह पुरुष चारक्रियाओं से युक्त होता है । मृग के मारने
 पर प्राणातिपान होता है इसलिये वह पुरुष पूर्वोक्त चारक्रियावाला होता
 है । इन कारणों हे गौतम ! उक्त कारणोंको लेकर ऊपर प्रदर्शित मुक्तियों
 के अनुसार उद्घावण (उपव्रज) आदि को करने वाला पुरुष कदाचिन् तीन
 आदि क्रियाओं से स्पृष्ट होकर तीनक्रियावाला चारक्रियावाला पांच-
 क्रियावाला होता है ।

અને પ્રાણાતિપાત, એ પાંચે ક્રિયાઓથી સ્પૃષ્ટ-એટલે કે એ પાંચે ક્રિયાઓથી
 મુક્ત કહેવાય છે ત્યારથી એ છે કે ઉદ્ઘાવણમાત્ર (જાલે ખોદવો, જાલ
 બિછાવવી વગેરે) કરે ત્યાં સુધી તે પુરુષ કાચિકી અધિકરણિકા અને પ્રાઢે
 પિકી એ ત્રણ ક્રિયાઓથી મુક્ત હોય છે ત્યારે તે પુરુષ મૂળને બાપિ
 છે ત્યારે તેને પરિતાપ (દુઃખ) થતું હોય છે તેથી ત્યારે તેને પારિતાપનિકી
 ક્રિયા પણ કરે છે તેથી આર ક્રિયાઓથી મુક્ત થાય છે મૂળને આશ્રયથી
 પ્રાણાતિપાત થાય છે તેથી તે ઉપશાન્ત આર ક્રિયા ઉપશાન્ત પાંચમી પ્રાણાતિ
 પાત ક્રિયાથી મુક્ત થવાથી પાંચ ક્રિયાવાળો થાય ॥ ૯ ગૌતમ ! ઉપશાન્ત
 કારણેને લીધે હું એવું કહું છું કે તે પુરુષ ક્યારેક ત્રણ ક્રિયાવાળો,
 ક્યારેક આર ક્રિયાવાળો અને ક્યારેક પાંચ ક્રિયાવાળો, હોય ॥

पेण निर्वृत्ता या क्रिया सा आधिकरणिकी तथा 'पाउसियाए' प्राद्वेषिक्या, प्रद्वेषेण निर्वृत्ता या क्रिया सा प्राद्वेषिकी तथा मारणक्रियायां द्वेषस्यावश्यंभावात्, 'तिहिं-किरियाहिं पुट्टे' आभिः तिसृभिः क्रियाभिः स्पृष्टः, यो हि पुरुषः केवलम् मृगाणामुद्भवणाय कूटपाशादिकं विरचयति नो बन्धनाय न वा मारणाय स कायिक्याधिकरणिकी-प्राद्वेषिकीति क्रियात्रययुक्तो भवतीति कदाचित् त्रिक्रिय इति कथ्यते, 'जे भविए' यो भव्यः=वधकः 'उद्वयणयाए वि बंधणयाए वि नो मारणयाए' उद्वयणतायै अपि बन्धनतायै अपि क्रियां करोति किन्तु नो मारणतायै 'तावं च णं से पुरिसे' तावत् च खलु स पुरुषः 'काइयाए' कायिक्या, गमनादिरूपया क्रियया, 'अहिगरणियाए' आधिकरणिक्या=कूटपाशाद्यधिकरण संपादितया, 'पाउसियाए' प्राद्वेषिक्या, प्रद्वेषनिष्पादितया 'पारितापणियाए' पारितापनिक्या, दुःखोत्पादनरूपया परितापप्रयोजना या क्रिया सा पारितापनिकी, सा च क्रिया मृगबन्धने कृते सति भवति, तथा क्रियया 'चउहिं किरियाहिं पुट्टे' चतसृभिः क्रियाभिः स्पृष्टः, आभिः क्रियाभिः स्पृष्टो युक्तः सन् चतुष्क्रियः स पुरुषो भवतीति कदाचिच्चतुष्क्रिय इति कथ्यते । 'जे भविए' यो भव्यः=वधकः 'उद्वयणयाए वि' उद्वयणतायै अपि 'बंधणयाए वि' बन्धनतायै अपि 'मारणयाए वि' मारणतायै अपि कूटपाशादिकं रचयति, 'तावं च णं से पुरिसे' तावत् च खलु स पुरुषः, कायिक्या 'अहिगरणियाए' आधिकरणाक्या, 'पाउसियाए'

चार क्रियाओं से युक्त हो रहा है ऐसा मानना चाहिये। वे चार क्रियाएँ इस प्रकार से हैं—पूर्वोक्त तीन और चौथी पारितापनिकी। यह पारितापनिकी क्रिया मृग के बंधन करने पर होती है। सो उसने मृग को बांध ही लिया है। (जे भविए उद्वयणयाए वि बंधणयाए वि मारणयाए वि तावं च णं से पुरिसे काइयाए, अहिगरणियाए, पाउसियाए जाव पाणाइवाय किरियाए पंचहिं किरियाहिं पुट्टे-से तेणट्टेणं जाव पंच-किरिए) तथा वह वधक पुरुष जबतक उस जाल को रखे-हुए है, मृगों को बांधता है, मृगों को मारता है तबतक वह पुरुष कायिकी, आधिकरणिकी,

छे ते-पूर्वोक्त त्रिषु क्रियाया अने चौथी पारितापनिकी क्रिया न्यारे ते पुरुष मृगने कूटपाशादिमां आधे छे त्यारे पारितापनिकी क्रिया थती डाय छे (जे भविए उद्वयणयाए वि बंधणयाए वि मारणयाए वि तावं च णं से पुरिसे काइयाए, अहिगरणियाए, पाउसियाए, जाव पाणाइवाय किरियाए पंचहिं किरियाहिं पुट्टे से तेणट्टेणं जाव पंचकिरिए) तथा ते पुरुष न्यारे जणने पिछावीने मृगोने आधीने न्यारे मृगोने मारे छे त्यारे कायिकी, आधिकरणिक्की, प्राद्वेषिकी, पारितापनिकी

टीका— पुरिसं णं मंते ' पुरुषं खलु भवन्त ! ' कच्छसि वा ' कच्छे वा ' जाव षणविदुग्गसि वा ' यावद्धनविदुग्गे वा ' तणाई ' तणानि ' उवसिय उवसिय ' उरसपर्य—पुन पुनरेकप्रीकृत्येत्यर्थः, कच्छाधारभ्य वनविदुग्गपर्यन्तस्पर्शे सुमानां पुच्छं कृत्वेत्यर्थः, ' अगणिकायं णिसिरइ ' अग्निकायं निवृजति ' ताव च ण मंते से पुरिसे कइकिरिए ' तावच्च खलु भवन्त ! स पुरुष कतिक्रियाः, य खलु वनकपुरुषः कच्छं विचनविदुग्गाद्यन्यतमदेवे तणान्येकप्रीकृत्य तत्र तृणराशौ अग्निं प्रज्वालयति तस्याग्निं प्रज्वलनकर्तुः पुरुषस्य कीदृश्यः क्रियत्यश्च क्रिया भवन्तीति भावः । मगवानाह— ' गोयमे ' स्यादि । ' गोयमा ' हे गौतम ! ' सिय तिकिरिए ' स्यात् प्रिक्रियः, ' सिय चउकिरिए ' स्यात् चतुक्रियाः, ' सिय पंचकिरिए ' स्यात् पंचक्रियाः, कच्छं पचिकरणकत्वराराशौ अग्निप्रज्वलनकर्तापुरुषः कदाचित् क्रियात्रयं कदाचित् क्रियाचतुष्केण कदाचित् क्रियापंचकेन कायिक्याधारभ्य माणातिपातपर्यन्तेन पुक्तो भवन् प्रिक्रियश्चतुक्रियः पंचक्रियो वा भवेदिति भावः, गौतमः पृच्छति

इन्हीं क्रियाओं के विषय में पुनः सूत्रकार कहते हैं—' पुरिसे ण मंते ! कच्छसि वा ' इत्यादि ।

टीकार्थ—(पुरिसे णं मंते) हे भवन्त ! कोई पुरुष (कच्छसि वा जाव षणविदुग्गसि वा) कच्छमें यावत् घन विदुग्गमें अनेक जातिके वृक्षवाले घन में (तणाई उवसिय उवसिय) तृणों को धार ? इकट्ठा करके—अर्थात् तृणों को समेट २ कर एकत्रित करके (अगणिकायं णिसिरइ) आग लगाता है (ताव च ण से मंते ! पुरिसे कति किरिए) तो वह पुरुष किन्तनी क्रियावाला कहलावेगा ? (गोयमा ! सियतिकिरिए, सिय चउकिरिए सिय पंच किरिए) हे गौतम ! वह पुरुष किसी अपेक्षा तीन

के क्रियावाला विषयमा सूत्रकार विशेष ध्यान करे छे— पुरिसे ण मंते ! कच्छसि वा जाव षणविदुग्गसि वा " इत्यादि ।

शब्दार्थ—(पुरिसे णं मंते !) हे भगवन् किछ भावुस (कच्छसि वा जाव षणविदुग्गसि वा) कच्छमा (नदीनी वन्धे आवेला अग्निवाण प्रवेशमां) ' यावत् " अनेके आतिना वृक्षावाणा वनमा (जह्नी यावत् ' यद्वा त्रीज सूत्रमा आवेला तमात्र स्थाने अहंशु करवा) (तणाई उवसिय उवसिय) धातुने बारबार ओहंशु करीने ओहसे के धातुने बारबार लथ आवीने ओहंशु करे अने (अगणिकायं णिसिरइ) अने तेने आज लगवे तो "ताव च ण से मंते ! पुरिसे कतिकिरिए ?) हे भगवन् ! ते पुरुषने केहसी क्रियावाला कहि पाय ? (गोयमा ! सिय तिकिरिए, सिय चउकिरिए, सिय पंचकिरिए) हे गौतम ! आरंभ ते त्रय क्रियावाणा, कथारेक आर क्रियावाला अने कथारेक पांच क्रिया

પુનઃ ક્રિયાવિપયે એવ પ્રાહ—‘ પુરિસે ણં મંતે ’ ઇત્યાદિ—

મૂલમ્—પુરિસે ણં મંતે ! કચ્છાંસિ વા જાવ વળવિદુર્ગંસિ વા તળાઈં ઝસવિય ઝસવિય અગણિકાયં ણિસિરઈ, તાવં ચ ણં સે મંતે પુરિસે કતિકિરિયે ગોયમા ! સિય તિકિરિયે સિય ચતુકિરિયે સિય પંચકિરિયે, સે કેળટ્ટેણં ? ગોયમા ! જે મવિયે ઝસસવળયાયે તિહિં ઝસસવળયાયે ણિસિરળયાયે વિ ણો દહળયાયે ચઠહિં, જે મવિયે ઝસસવળયાયે વિ ણિસિરળયાયે વિ દહળયાયે વિ તાવં ચ ણં સે પુરિસે કાઝયાયે જાવ પંચહિં કિરિયાહિં પુટ્ટે સે તળેટ્ટેણં ગોયમા ! ॥ સૂ. ૪ ॥

છાયા—પુરુષો મદન્ત ! કચ્છે વા યાવત્ વનવિદુર્ગે વા તળન્યુત્સર્પ્યોત્સર્પ્યાગ્નિકાયં નિમ્જતિ તાવચ્ચ સ્વલુ મદન્ત ! સ પુરુષઃ કતિક્રિયઃ, ગૌતમ ! સ્યાત્ ત્રિક્રિયઃ સ્યાત્ ચતુષ્ક્રિયઃ સ્યાત્ પંચક્રિયઃ, તત્કેનાર્થેન ? ગૌતમ ! યો મવ્ય ઉચ્છ્રયણતાયૈ તિમ્ભિઃ ઉચ્છ્રયણતાયૈ અપિ નિસર્જનતાયૈ અપિ નો દહનતાયૈ ચતસ્રભિઃ યો મવ્ય ઉચ્છ્રયણતાયૈ અપિ નિસર્જનતાયૈ અપિ દહનતાયૈ અપિ તાવચ્ચ સ્વલુ સ પુરુષઃ કાયિક્યા યાવત્ પચભિઃ ક્રિયામિઃ સ્પૃષ્ટઃ તત્કેનાર્થેન ગૌતમ ! ॥ સૂ. ૪ ॥

ભાવાર્થઃ—યહાં પર વધક પુરુષ કિતની ૨ ક્રિયાઓં સે યુક્ત કિસ ૨ સ્થિતિ મેં હોતા હૈ ઇસકા વિચાર ક્રિયા ગયા હૈ । ઇસમેં યહ સમજાયા ગયા હૈ કિ જબતક વહ વધક પુરુષ સિર્ફ જાલ કો ધારણ કરતા હૈ—પરન્તુ મૃગકા વંધન ઔર ઝસકા મારણ નહીં કરતા હૈ—તબતક વહ ત્રીન ક્રિયાઓં વાલા માના ગયા હૈ । ઔર જબ વહ મૃગકા વંધન કર લેતા હૈ એસી સ્થિતિ મેં વહ ચારક્રિયાઓં વાલા માના જાતા હૈ । તથા જબ વહ મૃગ કો માર દેતા હૈ—તબ વહ પાંચક્રિયાઓં વાલા હો જાતા હૈ ॥ સૂ. ૩ ॥

ભાવાર્થ—અહીં એ વિચાર કરવામા આવ્યો છે કે શિકારી પુરુષ કેવી કેવી સ્થિતિમા કેટલી કેટલી ક્રિયાઓથી યુક્ત હોય છે ન્યા સુધી તે પુરુષ કેવળ નાળ પાથરતો હોય—પણ મૃગને બાંધતો ન હોય અને મારતો ન હોય—ત્યાં સુધી તેને ત્રણ ક્રિયાઓ વાળો કહેવાય છે. અને ન્યારે તે મૃગને બાંધે છે. ત્યારે તે ચાર ક્રિયાઓ વાળો કહેવાય છે અને ન્યારે તે મૃગને મારી નાખે છે ત્યારે તે પાંચ ક્રિયાવાળો કહેવાય છે ॥ સૂ. ૩ ॥

પ્રસિપતિ ન તુ પ્રજ્વાલયતિ તાવત્પર્યન્તઃ ॥ પુરુષઃ કાચિકયાદિપરિતાપનપર્યન્તામિઃ
 ચતસુમિ ક્રિયામિર્ધુક્તઃ મન્તવીત્યર્થઃ । ‘જે મન્ત્રિ ઉત્સરણયાળ વિ, દ્રશ્યયાળ
 નિ’ યો મન્ત્ર ઉત્સરણતાય અપિ નિસર્જનતાયે અપિ ક્રિયાં કરોતિ, ‘તાવં ચ
 ણ-સ પુરિમે કાશ્યાળ જાઘ ધંચર્દિં ફિરિયાઈ પુદ્રે’ તાવચ મ્હતુ સ પુરુષો
 યાવત્ કાચિકયાદિમિઃ ધંચમિઃ ક્રિયામિઃ સ્પૃષ્ટઃ, યાવત્પર્યન્તામ્ ણાદિક્ષ સંચિ
 નોતિ તપ્ર ધાર્મિનિઃ યજ્ઞતિ પ્રજ્વાલયતિ ચ તાવત્ સ પુરુષઃ કાચિકયાદિમિઃ
 પંચમિ ક્રિયામિઃ યુક્તો મપતીતિ માઘઃ । ‘સુ ત્થળદ્વળ ગોયમા૦’ તત્તેનાયેન દે
 ગૌતમ ! પતન કારણેન ણચમુચ્યતે યત્ ત્થળરાશ્નો અગ્નિ પ્રસિપ્ય પ્રજ્વાલયતિ તદા
 સ પુરુષઃ પંચમિઃ ક્રિયામિર્ધુક્તો મન્તવીતિ માઘઃ ॥ ૬૦ ૪ ॥

ગૌતમઃ પુનઃ પ્રચ્છતિ—‘પુરિમે ણં મંતે’ इत्यादि ।

મૂલ્-પુરિસે ણં મંતે ! કન્છસિ ઘા જાઘ ધળવિદુગ્ગસિ
 ઘા મિયવિત્તિળ મિયસકપ્પે મિયપણિહાણે મિયઘહાણ ગતા
 ણ્તે મિયત્તિ કાઠ ંણચરસ્સ મિયસ્સ ઘહાણ ઉસું નિસિરહ,
 તઓ ણ મંતે ! સે પુરિસે કહકિરિણ? ગોયમા ! સિય તિ

તથ તત્ક ઘટ્ત ચાર ક્રિયાયાલા કલા જાવેગા । તથા જય ઘટ્ત તૃણો
 કો વૃક્ષા કરતા હૈ, ડનમેં આગ ઢાલતા હૈ ઓર ઉન્હે જલાતા હૈ-તથ
 તત્ક ઘટ્ત પાંચ ક્રિયાઓયાલા કહા જાયેગા । મારાશ હમ્મ કપનકા ઘટ્ત
 હૈ કિ ઘટ્ત પુરુષ જય તત્ક તૃણાવિકો કો વૃક્ષગ્રિત કરતા હૈ તથ તત્કતીન
 ક્રિયાઓં સે ઓર ડનમેં અગ્નિકા પ્રક્ષેપ કરતા હૈ તથ તત્ક ચાર ક્રિયાઓં
 સે ઓર ઉન્હ જય જલાને લગ જાતા હૈ તથ ઘટ્ત પાંચ ક્રિયાઓં સે યુક્ત
 માના જાયેગા । હમ્મ લિય હૈ ગૌતમ ! મૈને હમ્મ કારણ સે યેસા કહા હૈ
 કિ ઘટ્ત પુરુષ કિમ્મી અપેક્ષા તીન ક્રિયાઓયાલા, કિમ્મી અપેક્ષા ચાર ક્રિયા
 ઓયાલા ઓર કિમ્મી અપેક્ષા પાંચ ક્રિયાઓયાલા માના જાયેગા ॥ ૬૦ ૪ ॥

ઉ પળ ત્યારે તેમાં આગ મૂકીને તેને સગમાને છે ત્યારે પાંચ ક્રિયાયાળા કહે-
 વાય છે આ કથનને બાવાઈ એ છે કે તે પુરુષ ત્યાં સુધી તૃણાદિકને જોડન
 કરને કોય ત્યાં સુધી ત્થ ક્રિયાયાળા મનાય છે અને તેમાં અગ્નિ મૂકે ત્યારે
 ચાર ક્રિયાયાળા મળાય છે અને ત્યારે આગથી તેને સગમાવવા લાગી આવ
 છે ત્યારે પાંચ ક્રિયા યાળા કહેવાય છે હા તોતમ ! તે કારણે મેં એવું કહ્યું
 છે કે ત પુરુષ કોઈ અપેક્ષાને ત્થ ક્રિયાયાળા, કોઈ અપેક્ષાને ચાર ક્રિયા
 યાળા અને કોઈ અપેક્ષાને પાંચ ક્રિયાયાળા કહેવાયે ॥ ૬૦ ૪ ॥

—‘સે કેળદ્દેણ’ મિત્યાદિ । ‘સે કેળદ્દેણ’ તત્ કેનાર્થેન તત્ કેન કારણે-
નૈવમુચ્યતે સ્યાન્નિક્રિય ઇત્યાદિ । મગધાનાદ્—‘ગોયમે’ત્યાદિ, ‘ગોયમા’ હે ગૌતમ!
‘જે ભવિણ’ યો ભવ્યઃ—વધકઃ ‘ઉસ્સવળયાણ’ ઉત્સર્પણતાયૈ તૃણપુઙ્ગરૂપં વ્યાપારં
કરોતિ તદા ‘તિહિ’ તિસૃભિઃ ક્રિયાભિઃ ઉત્સર્પણ દગ્ધું વ્યાપારવિશેષસ્તથા ચ
યો વધકો દહનાય વ્યાપારમાત્રં કરોતિ સ તિસૃભિઃ કાચિકી આધિકરણિકી
પ્રાદ્વેષિકીતિ ક્રિયા-ત્રયેણ યુક્તો ભવતિ, ‘ઉસ્સવળયાણ વિ’ ઉત્સર્પણતાયૈ અપિ
‘ણિસિરળયાણવિ’ નિસર્જનતાયૈ અપિ યદા તૃણપુઙ્ગં રચયતિ કિન્તુ ‘ળો દહનયાણ’
નો દહનતાયૈ, દહનાય નૈવ તદા ‘ચઝહિં કિરિયાહિં’ ચતસૃભિઃ ક્રિયાભિર્યુક્તો
ભવતીતિ ભાવઃ । તથા ચ યાવત્પર્યન્ત સ પુરુષસ્તૃણાદિકં સંચિનોતિ તત્ર ચાર્ગિન

ક્રિયાવાલા, કિસી અપેક્ષા ચાર ક્રિયાવાલા ઓર કિસી અપેક્ષા પાંચ ક્રિયા
વાલા કહલાવેગા । (સે કેળદ્દેણ) હે ભદન્ત ! આપ એસા કિસ કારણસે કહતે
હૈં કિ વહ પુરુષ ત્રીન ક્રિયાવાલા ઓર કિસી અપેક્ષા ચાર ઓર કિસી અપેક્ષા
સે પાંચ ક્રિયાવાલા કહલાવેગા (ગોયમા ! જે ભવિણ ઉસ્સવળયાણ તિહિ
ઉસ્સવળયાણ ણિસિરળયાણ વિ ણો દહળયાણ ચઝહિં, જે ભવિણ ઉસ્સ-
વળયાણ વિ, ણિસિરળયાણ વિ દહળયાણ વિ તાવં ચ ણં સે પુરિસે કાઢ-
યાણ જાવ પંચહિં કિરિયાહિં પુદ્ધે સે તેળદ્દેણ ગોયમા !) જો વહ પુરુષ
તૃણરાશિકો, જલાને કે લિયે એકત્રિત કરનેકા જબ તક કેવલ વ્યાપાર
કરતા હૈ—અર્થાત્ જલાનેકે લિયે તૃણોંકો ઇધર ઉધરસે વટોર ૨ કર
એકત્રિત કરતા હૈ—તબ તક વહ કાચિકી, આધિકરણિકી પ્રાદ્વેષિકી
ઇન ત્રીન ક્રિયાઓંવાલા કહા જાવેગા । ઓર જબ તક વહ પુરુષ ઇકદ્ધા
કર ૨ ઉસ તૃણરાશિમેં અગ્નિ ઢાલના હૈ—અમી ઉસે જલાયા નહીં હૈ

વાળો કહેવાશે (સે કેળદ્દેણ૦) હે ભગવન્ ! આપ શા કારણે એવું કહે-
છો કે કોઈ અપેક્ષાએ તે ત્રણ ક્રિયાવાળો, કોઈ અપેક્ષાએ ચાર ક્રિયાવાળો
અને કોઈ અપેક્ષાએ પાંચ ક્રિયાવાળો કહેવાય છે ? (ગોયમા ! જે ભવિણ
ઉસ્સવળયાણ તિહિં, ઉસ્સવળયાણ વિ ણો દહળયાણ ચઝહિં, જે ભવિણ ઉસ્સવ-
ળયાણ વિ, ણિસિરળયાણ વિ દહળયાણ વિ તાવં ચ ણં સે પુરિસે કાઢ
જાવ પંચહિં કિરિયાહિં પુદ્ધે સે તેળદ્દેણ ગોયમા !) હે ગૌતમ ! જ્યાં સુધી
તે પુરુષ તૃણરાશિને સળગાવવાને માટે એકત્રિત કરવાની જ પ્રવૃત્તિ કરતો
હોય છે—જ્યાં સુધી તે ઘાસને જુદી જુદી જગ્યાએથી લાવીને સળગાવવા માટે
લેણ કરતો હોય છે. ત્યાં સુધી તે કાચિકી, આધિકરણિકી અને પ્રાદ્વેષિકી, એ
ત્રણ ક્રિયાઓ વાળો કહેવાય છે અને જ્યારે તે પુરુષ તે તૃણરાશિમા અગ્નિ
મૂકે છે—પણ હજી તેને સળગાવતો નથી ત્યારે તે ચાર ક્રિયાવાળો કહેવાય

नमगहनगहनरिदुर्गवर्तनपर्वगत्रिदुर्गरानां ग्रहणम् । एतन्पत्रापि पारस्व्यन्त
 प्रातम्यम् । 'मियमिनिष' मृगष्टुचिह्नः, मृगष्टुचिह्नीषिका पिघत यम्य स मृग
 ऋचिह्नः, 'मियमंक्वप्ते' मृगमंक्वप्ते, मृगपु सफन्त्या वधनिधया विघते यम्य स
 मृगमंक्वप्ते, 'मियमणिदाणे' मृगमणिधानः, मृगनपाय वृत्तचिह्नः, 'मिय बहाप
 गता' मृगबयाय गता=गमननीय 'यने मिय मि काउ' एत मृगा इति कृत्वा,
 मृगयधमुरिदय कच्छाश्रिपद्व्य प्राप्य तत्र च मृगान् दृष्ट्वा एतयामत्र वधायाहम
 प्रागतास्मि पतानेयान्यययामि एत च माग्याम मिन्तिता इति मनसा निमि
 त्यत्यर्थः, 'मणयस्म' अयनस्य, अनेकमृगमपुदाये वधाय यस्य कस्यचिद्
 'मियम्य बहाप' मृगम्य वधाय 'उमु' इपुम्-पाणम् 'णिमिर' निमृजति,
 मृगं ध्याहृत्य प्रतिपति, 'तभा ण भन' । 'ततः ग्राउ भदन्त' । ततः दूगोपरि
 पाणमलपानन्तरम्, 'स पुरिस' स पुरुषः वधक 'कडकिरिण' कतिक्रिया,
 एतादृशपावकमकरणान् तं तादृशः क्रियः स्पृष्टन्तीति भावः । मगबाना
 —'गायम'त्यादि । 'गायमा' इ गीतम् । 'सियमिनिषि' स्यात् विक्रिया

यत्रविदुर्गमि या गता) मृगों को मारन के लिए कच्छ में यावन अनेक
 जानियाछे पृक्षोंके यनमं गया यहाँ जा कर (गते मियमिकाउं) येही मृग
 हैं इहे ही मारन के गिये में यहाँ आया ह-इन्ह ही ब्योज रहा था य
 मुझ 'माग स मिल गया है । ऐसा मन से निश्चय करक-बिचार करके
 (अणयस्मन् मियम्य बहाप) यह मृगों के समूह में वर्तमान किसी एक
 मृग को मारन के लिए (उमु निमिर) अपना पाण छोड़ता है, अर्थात्
 किसी एक मृगको स्पर्श कर उस पर अपना पाण चलाता है । (तओ
 णं भन ! स पुरिस कड किरिण ?) तो हे भदन्त ! ऐसा पुरुष मृग पर
 पाण प्रवेश के बाद किसनी क्रियाओंसे युक्त माना जाता है । (गायमा !

कच्छा (नदीना जगनी वर्य आचला जागीवाता प्रदेशमां) यावन अनेक
 वननां वृक्षावाता वनमां यो (अदी "यावन" पदधी त्रीम भूतमां जना
 वेतां जभां ध्याने भदन्त करवा) त्यां जठने (मियमि काउ) आ भूने
 ॥ ६॥ तमने माग्याम आटे आबो ॥ ७॥ तमनी ॥ शोधमां कने। भने
 भदन्तये तमनी प्राप्ति यत् ॥ ८॥ जेना भनमां विचार करीने । (अणयस्म
 मियम्य बहाप) भूनेना समूहमांता के। जे भूने मारवाने भा? (उमु
 निमिर) पाना आपु ताटे ॥ ९॥ जे भूने वध करीने ताटे ॥
 (तभा णं भन ! स पुरिस कड किरिण ?) ता ६ भनवन् । ते पुरुषने केही
 क्रियावाता केही ध्याय । (गायमा ! सिय विक्रिय, सिय बहकिरि, सिय

किरिए सियचउकिरिए सियपंचकिरिए से केणट्टेणं ?
 गोयमा ! जे भविए णिसिरणयाए नो विद्धंसणयाए वि नो
 मारणयाए वि तिहिं, जे भविए णिसिरणयाए वि, विद्धंसण-
 याए वि णो मारणयाए चउहिं, जे भविए णिसिरणयाए
 वि विद्धंसणयाए वि मारणयाए वि तावं च णं से पुरिसे
 काइयाए जाव पाणाइवायकिरियाए पंचहिं किरियाहिं पुट्टे
 से तेणट्टेणं गोयुमा ! सिय तिकिरिए सियचउकिरिए
 सियपंचकिरिए ॥ सू० ५ ॥

छाया—पुरुषो भदन्त ! कच्छे वा यावद्वनविदुर्गे वा मृगवृत्तिको मृगसंक्रूलपो
 मृगप्रणिधानो मृगवधाय गन्ता “ एते मृगा ” इति कृत्वाऽन्यतरस्य मृगस्य
 वधायेषु निसृजति, ततो भदन्त ! स पुरुषः कतिक्रियः ? गौतम ! स्यात् त्रिक्रियः
 स्यात् चतुष्क्रियः स्यात् पंचक्रियः तत्तेनार्थेन गौतम ! यो भव्यो निसर्जनतायै
 अपि नो मारणतायै अपि तिसृभिः, यो भव्यो निसर्जनतायै अपि विध्वंसनतायै
 अपि नो मारणतायै चतसृभिः, यो भव्यो निसर्जनतायै अपि विध्वंसनतायै अपि
 तावच्च खलु स पुरुषः कायिकया यावत् प्राणातिपातक्रियया पंचभिः क्रियाभिः
 स्पृष्टः, तत्तेनार्थेन गौतम ! स्यात् त्रिक्रियः स्याच्चतुष्क्रियः स्यात्पंचक्रियः ॥५॥

टीका—‘ पुरिसे णं भंते ’ पुरुषः खलु भदन्त ! ‘ कच्छंसि वा ’ कच्छे वा
 ‘ जाव वणविदुर्गांसि वा ’ यावत् वनविदुर्गे वा, यावत् पदेन—हृदौदकद्रवकवल्य-

गौतम पुन प्रश्न करते हुए प्रभु से पूछते हैं—‘ पुरिसे णं भंते ! इत्यादि ।

टीकार्थ—(भंते) हे भदन्त ! (पुरिसे णं) पुरुष खलु (मियवि-
 त्तिए) मृगों से अपनी आजीविका चलानेवाला (मियसंकप्पे) मृगों की
 शिकार करनेवाला (मियवणिहाणे) मृगों की शिकार करने में
 एकचित्तवाला ऐसा (पुरिसे) कोई पुरुष (मियवहाए कच्छंसि वा जाव

गौतम स्वामी क्रियाना विषयमां भडावीर प्रभुने डल्ल पल्ल वधारे प्रश्नो
 पूछे छे—“ पुरिसे णं भंते ! इत्यादि

टीकार्थ—हे लगवन् ! (पुरिसेणं मियवत्तिए) भृगोने भारीने पोताने
 निर्वाडि यत्तावनार (मियसंकप्पे) भृगोने शिकार करवाना संकल्पवाणे (मिय-
 वणिहाणे) भृगोने शिकार करवायेक चित्तवाणे (पुरिसे) केछि अेक पुरुष
 (मियवहाए कच्छंसि वा जाव वणविदुर्गांसि वा गन्ता) भृगोने मारवाने भाटे

મવિળ ગિસિરળયાળ વિ' યો મમ્યઃ યદા નિસર્જનતાયે અપિ 'ચિદ્વંસળયાળ વિ' વિધ્વંસનતાયે અપિ 'નો મારળયાળ' નો મારળતાયે ધાર્ણ ધનુપિ સયોજયતિ તદા 'ચર્ઝિં' યતસ્મૃમિઃ ક્રિયામિઃ સ્પૃષ્ઠો મયતિ । મ પુરુષો મૃગમુદિશ્ય યાચ ત્યર્પ્યન્ત ધાળ નિશ્લેષળાય વિષ્યંસનાય ધનુપિ સધષ્ઠે પરન્તુ ન મૃગમારળાય તાચ ત્યર્પ્યન્તં સ પુરુષઃ કાયિકયાધિકરળિકી માઢેપિકી પારિતાપિનિકીતિ ચતુ ધ્વિચયાયાન્ મયતાતિ માય , 'જે મવિળ ગિસિરળયાળ' યો મમ્યો નિસર્જનતાયે અપિ, 'ચિદ્વંસળયાળ વિ' વિધ્વંસનતાયે અપિ 'મારળયાળ વિ' મારળતાયે અપિ ધાર્ણ પ્રસિપતિ 'તાચ ચ ણં સે પુરિસે' તાચત્-ચ મ્બદ્ધ સ પુરુષઃ 'કાઢયાળ જાચ પાળા ઢવાય કિરિયાળ' કાયિકયા યાચત્ માળાતિપાતક્રિયા 'પર્ઝિં કિરિયાઈ પુઢે' પંચમિ ક્રિયામિઃ સ્પૃષ્ઠઃ, યાચત્યન્તમ્ સ પુરુષો મૃગમુદિશ્ય ધાર્ણ મક્ષપળાય ધનુપિ સધષ્ઠે ષેષનાય તયા મારળાય સંધષ્ઠે તાચત્ મ પુરુષઃ કાયિકી ત્યાધારમ્ય

ફી પ્રઢેપિકી ય તીન ક્રિયાઈ પઢ કી જાતી ઢ । (જે મવિળ ગિસિરળયાળ વિ ચિદ્વંસળયાળ વિ ણો મારળયાળ ચર્ઝિં) તથા જય તક ઘઢ પુરુષ મૃગફો ઉદ્દેશ કરકે અપને ધાળફો ષલાનેકે લિયે ઓર મૃગ ફો ધાપલ કરનેકે લિયે ધાળ ફો ધનુપ પર ચઢાતા ઢે મારનેકે લિયે નહીં તય તક ઘઢ પુરુષ ધાર ક્રિયાઓ સે યુક્ત માળા જાતા ઢે । તાત્પર્ય કઢને ફા યઢ ઢે કિ ઉસને ધાળ ઓટ ઢિયા ઓર ઉસ ધાળને મૃગ ફો લગકર ધાપલ કર ઢિયા જાળ સે નહીં મારા-ઢેસી સ્થિતિ મેં ધઢ પુરુષ ધાર ક્રિયાઓ ફા ધંધકર્ણા માળા મયા ઢે । (જે મવિળ ગિસિરળયાળ વિ, ચિદ્વંસળયાળ વિ, મારળયાળ વિ તાય ચ ણં પુરિસે કાઢયાળ જાચ પાળા ઢવાયકિરિયાળ પંચઈ કિરિયાઈ પુઢે સે તેજઢેળ ગાયમા । સિય તિકિરિય મિયચઢકિરિય મિકપચકિરિય) તથા જય તક ઘઢ પુરુષ મૃગફો લઢ્ય કર ધાળ ફો ઓઢમેકે લિયે, ધનુપ પર ચઢાતા ઢે, મૃગ ફો ષેષને

ક્રિયાઓ ધાળે ઢઢેવાય ઓ (જે મવિળ ગિસિરળયાળ વિ ચિદ્વંસળયાળ વિ ફો મારળયાળ ચર્ઝિં) ષરતુ બ્યારે તે પુરુષ મૃગને લક્ષ કરીને, મૃગને ધાપલ કરવાને માટે તીર ઓટે ઓ ત્યારે તે ચાર ક્રિયાધાળે ઢઢેવાય ઓ (તીર ઓ તી વખતે મૃગને ધાપલ કરવાના જ આશય ઓ મારવાનો આશય નથી) તાત્પર્ય ઓ ઓ ઢે તેજે તીર ઓટમુ બને તે તીર વાજવાથી મૃગ ધાપલ મધુ બાનથી મરી મધુ નઢી-બેવી સ્થિતિમાં તેપુરુગને ચાર ક્રિયાઓનો ઢર્તા માનવામાં આવે ઓ (જે મવિળ ગિસિરળયાળ વિ, ચિદ્વંસળયાળ વિ, મારળયાળ વિ, તાચ ચ ણં પુરિસે કાઢયાળ જાચ પાળાઢવાય કિરિયાળ પંચઈ કિરિયાઈ પુઢે । સે તેજ જગોયમા । સિય તિકિરિય, સિય ચઢકિરિય, સિય પચકિરિય) તથા તે પુરુષ મૃગને લક્ષ

एतादृश पुरुषेण कदाचित् तिस्रः क्रिया वद्धा भवन्ति इत्यर्थः 'सियचउकिरिय' स्यात् चतुष्क्रियः कदाचित् चतस्रः क्रिया संपादिता भवेयुरित्यर्थः, 'सियपचकिरिए' स्यात् पंचक्रियः कदाचित् कायिकयाधारभ्यः प्राणातिपातान्तपंचक्रियावान् भवति 'से केणट्टेणं' तत्केनार्थेन तत्र किं कारणम् येन तिस्रः, चतस्रः पंचापि क्रियास्तादृशपुरुषस्य वद्धा भवन्तीति । भगवानाह—'गोयमे' त्यादि 'गोयमा' हे गौतम ! 'जे भविए निसरणयाए' यो भव्यः—वधकः निसर्जनतायै 'नो विद्धंसणयाएवि' नो विध्वंसनतायै अपि 'नो मारणयाए वि' नो मारणतायै अपि स 'तिहिं' तिसृभिः, यावत्पर्यन्तं बाणं मृगमुद्दिश्य प्रक्षेपणाय धनुषि संयोजयति परन्तु मृगं न वेधयति न वा मारयति, तावत्पर्यन्तं बाणं प्रक्षेप्तुमुद्यतस्य पुरुषस्य कायिकी आधिकारिणी प्राद्वेषिकी, इति तिस्र एव क्रिया वद्धा भवन्तीत्यर्थः, 'जे

सिय ति किरिए, सिय चउकिरिए, सियपंचकिरिए) हे गौतम ! ऐसा वह पुरुष किसी अपेक्षा से तीन क्रियाओंवाला, किसी अपेक्षा से चार क्रियाओंवाला और किसी अपेक्षा से पांच क्रियाओंवाला माना जाता है । (से केणट्टेणं ?) हे भदन्त ! आप ऐसा किस कारण से कहते हैं कि वह किसी अपेक्षासे तीन क्रियाओंवाला, किसी अपेक्षासे चार क्रियाओंवाला और किसी अपेक्षा से पांच क्रियाओंवाला माना जाता है ? (जे भविए णिसिरणयाए नो विद्धंसणयाए वि नो मारणयाए वि तिहिं) हे गौतम ! जो वह पुरुष जब तक सिर्फ बाण को फेंकनेके लिये क्रिया करता है मृग को घायल करनेकी तथा मृगको मारने की क्रिया नहीं करता है तब तक वह तीन क्रियाओं से युक्त होता है—अर्थात्—जब तक वह मृग को लक्ष्य कर छोड़ने के लिये बाण को धनुष के ऊपर चढ़ाता है मृगको उस समय वह वेधता नहीं है और न मारता ही है—ऐसे बाण को चलाने में उद्यत हुए पुरुषद्वारा तब तक कायिकी, आधिकारिणी

पंचकिरिए) हे गौतम ! कोई अपेक्षाओं से तीन प्रभु किया बाणों, कोई अपेक्षाओं से चार किया बाणों, और कोई अपेक्षाओं से पांच किया बाणों कहे छे (से केणट्टेणं) हे भगवन् ! आप शां ऊपर छे उनुं कहे छे के कोई अपेक्षाओं से तीन प्रभु किया बाणों, कोई अपेक्षाओं से चार किया बाणों, और कोई अपेक्षाओं से पांच किया बाणों कहेवाय छे ? (जे भविए णिसिरणयाए नो विद्धंसणयाए वि नो मारणयाए वि तिहिं) हे गौतम ! क्या सुधी ते पुरुष मृगने लक्ष्य करीने बाणने डेकवाने भाटे धनुष पर रखेवे छे—पणु क्या सुधी मृगने वीधतो नथी तेमज मारतो नथी त्या सुधी ते पुरुष कायिकी, अधिकारिणी और प्राद्वेषिकी, ये प्रभु

पुनः प्रभवति गौतम — 'पुरिसे ण' इत्यादि ।

मूलम्—पुरिसे ण भते ! कच्छसि वा जाव अण्णयरस्स-
मियस्स वहाए आयतकण्णायत उसु आयामेत्ता चिट्ठेज्जा
अण्णे य अन्नयरे पुरिसे मग्गओ आगम्म सयपाणिणा,
असिणा सीस छिंदेज्जा, से यउसू ताए चेव पुढ्वायामणया
एत मिय विंधेज्जा, से ण भते पुरिसे किं मियवेरेणं पुढे,
पुरिसेवेरेण पुढे ? गोयमा ! जे मिय मारेइ सिय मियवेरेणं
पुढे जे पुरिस मारेइ से पुरिसवेरेण पुढे, से केणट्ठेण भंते !
एव वुच्चइ जाव से पुरिसवेरेण पुढे ? से णूण गोयमा !
कज्जमाणे कहे, सधिज्जमाणे सधित्ते, णिवत्तिज्जमाणे निव
त्तिप, निसरिज्जमाणे णिमिट्ठेत्ति वत्तव्वसिया हता भगव
कज्जमाणे कहे, जाव णिसिट्ठेत्ति वत्तव्वं सिया, से तेणट्ठेणं
गोयमा ! जे मिय मारेइ, से मियवेरेण पुढे, जे पुरिस
मारेइ से पुरिसवेरेण पुढे, अतो छण्ह मासाण मरइ काइ
याए, जाव पच्चहिं किरियाहिं पुढे, बाहिं छण्ह मासाण
मरइ काइयाए, जाव पारियाणियाए चउहिं किरियाहिं
पुढे ॥ सू० ६ ॥

छाया—पुरुषो मदन्त ! कच्छे वा यावदन्यतरस्य मृगस्य वधाय आप्त
कर्माप्यतम् इषुमाप्यम्य तिष्ठेदन्यतरस्य पुरुषो मार्गतः पश्चादागत्य स्वकपाणिना
भसिना क्षीपं छिन्धात्, स चेपुस्तया चैव पूर्यामनतया तं मृगं विध्यत्, स
मदन्त ! पुरुषः किं मृगवैरेण स्पृष्टः पुरुषवैरेण स्पृष्टः गौतम ! यो मृग मारयति ?
स मृगवैरेण स्पृष्टः, यः पुरुषं मारयति स पुरुषवैरेण स्पृष्टः, तत्केनार्थेन
मदन्त ! एवमुच्यते यावत् स पुरुषवैरेण स्पृष्टः ? तद् भूतं गौतम ! क्रियमाण
कृतम् संशीयमानं सहितम् निर्वर्त्यमानं निर्वर्षितम् निस्त्रुज्यमानं निस्त्रुष्टम् इति
वक्तव्यं स्यात्, इति भगवन् ! क्रियमाणं कृतं यावद्विशुद्धमिति वक्तव्यं स्यात्
तत्केनार्थेन गौतम ! यो मृग मारयति स मृगवैरेण स्पृष्टः य पुरुषं मारयति स

પ્રાણાતિપાતપર્યન્તાભિઃ પંચભિઃ ક્રિયાભિર્યુક્તો ભવતિ, 'સે તેણદ્રેણં ગોયમા !' તત્તેનાર્થેન હે ગૌતમ ! એવમુચ્યતે 'સિયતિ઼કિરિણ' સ્યાત્ ત્રિક્રિયઃ, 'સિયચઉ-કિરિણ' સ્યાત્—ચતુષ્ક્રિયઃ. 'સિયપંચકિરિણ' સ્યાત્ પંચક્રિયો ભવતીતિ ।
અય મ્ભાવઃ—વધકપુરુષો યદા નિક્ષેપણાય વાણં ધનુષિ સંયોજનવ્યાપારં કરોતિ, તદા તસ્ય આદ્યાસ્તિસ્રઃ ક્રિયાઃ ૧। નિક્ષેપણાય, વિધ્વંસનાય વાણ સંયોજયતિ તદા તસ્ય આદ્યાશ્વતસ્રઃ, ૨ નિક્ષેપણાય વિધ્વંસનાય મારણાય ચ વાણં સંયોજયતિ તદા તસ્ય પञ्चाપિ ક્રિયા ભવન્તીતિ ॥ સૂ. ૫ ॥

કે લિયે તથા ઉસે મારને કે લિયે વાણ કો ધનુષ પર આરોપિત કરતા હૈ તચ તક વહ પુરુષ કાયિકી ક્રિયા સે લેકર પ્રાણાતિપાત પર્યન્ત પાંચ ક્રિયાઓં સે યુક્ત માના જાતા હૈ । હસ કારણ હે ગૌતમ ! મૈને એસા કહા હૈ કિ વહ પુરુષ કિસી અપેક્ષા તીન ક્રિયાઓં સે યુક્ત, કિસી અપેક્ષા ચાર ક્રિયાઓં સે યુક્ત ઔર કિસી અપેક્ષા સે પાંચ ક્રિયાઓં સે યુક્ત માના જાતા હૈ । હસકા ભાવ હસ પ્રકાર સે હૈ—વધક પુરુષ જવ છોડને કે લિયે વાણ કો ધનુષ પર આરોપિત કરતા હૈ તવ ઉસકે આદિકી તીન ક્રિયાઈ હોતી હૈ, તથા જવ વહ નિક્ષેપણ કે લિયે ઔર વિધ્વંસન કે લિયે વાણ કો ધનુષ પર આરોપિત કરતા હૈ તવ ઉસકે આદિકી ચાર ક્રિયાઈ હોતી હૈ । તથા જવ વહ નિક્ષેપણ કે લિયે, વિધ્વંસન કે લિયે એવં મારણ કે લિયે વાણ કો ધનુષ પર આરોપિત કરતા હૈ તવ ઉસકે પાંચોં હી ક્રિયાઈ હોતી હૈ ॥ સૂ. ૫ ॥

કરીને તીર ચડાવી ને મૃગને વીધી નાખીને જ્યારે મારી નાખે છે ત્યારે તે કાયિકી ક્રિયાથી લઇને પ્રાણાતિપાત સુધીની પાંચે ક્રિયાઓ વાળો કહેવાય છે તે કારણે, હે ગૌતમ ! મે એવુ કહ્યુ છે કે કોઈ અપેક્ષાએ તે પુરુષ ત્રણ ક્રિયાવાળો કહેવાય છે અને કોઈ અપેક્ષાએ ચાર ક્રિયાવાળો કહેવાય છે અને કોઈ અપેક્ષાએ પાંચ ક્રિયાવાળો કહેવાય છે તાત્પર્ય એ છે કે શિકારી જ્યા સુધી તીરને ધનુષ પર ચડાવે છે ત્યા સુધી ત્રણ ક્રિયાઓથી યુક્ત કહેવાય છે તે ત્રણ ક્રિયાઓ કાયિકી, અધિકરણિકી, અને પ્રાદેષિકી ક્રિયાઓ છે. પણ જ્યારે તે ધનુષ પર તીર ચડાવીને મૃગને લક્ષ્ય કરીને તીર વડે વીધી નાખે છે ત્યારે ઉપરોક્ત ત્રણ ક્રિયાઓ ઉપરાંત પારિતાપનિકી ક્રિયા પણ કરે છે. અને જ્યારે તે તીર ચડાવીને મૃગને લક્ષ્ય કરીને તીર છોડે છે, વીધે છે, અને મૃગને મારી નાખે છે ત્યારે ઉપરોક્ત ચાર ક્રિયાઓ ઉપરાંત પાંચમી પ્રાણાતિપાત ક્રિયા પણ કરે છે. તેથી ત્યારે તે પાંચ ક્રિયાઓવાળો કહેવાય છે સૂ. ૫

न्ताकृष्टबाण पुरुषस्यान्य कश्चित् पुरुष पृष्ठदेशादागत्य स्वकीयस्त्रेण मस्तकं मपहरेदिति भावः, 'सेय उम्' स चेपु मृगवधायानुग्रहीयमानः पूर्वपुरुष-संबन्धी बाणः 'ताए चेष पुब्बायामणयाए' तथा चैष पूर्व्यायामनतया पूर्वाकर्षण-तया 'त मिय विधेज्जा' तं मृगं विध्यन् यदर्थं पूर्वपुरुषेणैतावान् प्रयत्नः कृतस्तं तादृशमेवपुनः यदि स इषुमारियेत् तदा 'से ण मंते' स खलु म्रदन्तः ! मृगवधकः 'पुरिसे' पुरुष 'किं मिय वरेण-पुट्ठे' किं मृगवैरेण स्पृष्ट वा 'पुरिसेवरेण पुट्ठे' पुरुषवैरेण स्पृष्ट, किम् ? बाणेन मृगस्य मरण जातमसिना च मृगवधकपुरुषस्य, तत्र मृगवधजनितपापेन धनुषांगिपुरुषस्य स्वर्गो भवेत् स्वधर्मांगिपुरुषस्य वेति ।

अपने हाथकी तलवार से उसका शिर काट देवे अर्थात्-गड़से उसके शिरको अलग कर देवे । ऐसी स्थिति में (से य उम्) मृगके वधके लिये धनुष पर आरोपित हुआ वह बाण (ताए चेष पुब्बायामणयाए) पहिले से ही आकर्षित होने के कारण उछल कर (तं मिय विधेज्जा) उस मृग को घेब देवे-अर्थात् जिस मृगको मारने के लिय वह पहिला व्यक्ति उस बाण को धनुष पर आरोपित कर और उसे कर्णान्त तक खेच कर खड़ा हुआ था उसी मृग को धनुष से छूट कर वह बाण मार डाले तो (से ण मंते ! पुरिसे किं मियवरेण पुट्ठे पुरिसेवरेण पुट्ठे ?) वह तलवार से उस मृगघातक के शिर का छेदन करने वाला मनुष्य मृग के घेर से-पाप से-स्पृष्ट होगा कि पुरुष के घेर से-पाप से स्पृष्ट होगा ? अर्थात् उस समय बाण से मृग का मरण हुआ और तलवार से पुरुष का मरण हुआ-तो ऐसी स्थिति में उस धनुषारी व्यक्ति को मृग के मरने का पाप लगेगा या उस पुरुषघातक को मृग के

जेन्नीने तीर बडावीने छेबेला ते पुरुषनी पाछणभी ज्ञावीने केछ पुरुष पोतानी तद्वारधी तेनु भासु बडधी जल्लग करी नाजे. पक्ष जे परिस्थितिभं (से य उम्) मृगने मारवाने माटे धनुष पर बडावेहुं ते ज्ञासु (ताए चेष पुब्बाया मणयाए) पहेलेभी न आकर्षित होवाने कारणे छीने (त मिय विधेज्जा) ते मृगने वीधी नाजे तो (से ण मंते ! पुरिसे किं मियवरेण पुट्ठे पुरिसेवरेण पुट्ठे ?) तो के भजवन् ! ते मृगघातकनु भासु तद्वारधी कापी नाजनार भासुसने ते मृग कृत्यानु पाप लागये के तीर बडावीने मृगने वीधवाने माटे तैवार बथेला पुरुषने ते मृगकृत्यानु पाप लागये ? तात्पर्य जे छे के मृगने मारवाने तैवार बथेला पुरुषने तेनु पाप लागये के ते पुरुषने तद्वारधी भारी नाजनारने मृगकृत्यानु पाप लागये ?

पुरुषवैरेण स्पृष्टः अन्तः पण्णां मासानां भ्रियते कायिकया यावत्पञ्चाभिः क्रियाभिः
स्पृष्टः, वहिः पण्णां मासानां भ्रियते कायिकया यावत् पारितापनिकया चतसृभिः
क्रियाभिः स्पृष्टः ॥ सू० ६ ॥

टीका—‘पुरिसे णं भंते’ पुरुषः खलु भदन्त ! ‘कच्छंसि’ कच्छे वा ‘जाव
अण्णयरस्स मियस्स बहाय’ यावत् अन्यतरस्य मृगस्य वधाय ‘आयत कण्णायतं’
आयतकर्णायतम् कर्णं यावत् आयतः कर्णपर्यन्तमाकृष्ट इति कर्णायतः, आयतं—
प्रयत्नयुक्तं यथा भवतीत्यायतकर्णायतं तम् आयतकर्णायतम् प्रयत्नपूर्वककर्ण-
पर्यन्तमाकृष्टं ‘उसुं’ इषुम्-वाणम् ‘आयामेत्ता’ आयम्य=आकृत्य ‘चिट्ठेज्जा’
तिष्ठेत्, मृगवधाय प्रयत्नपूर्वकं वाणं सन्धाय तिष्ठेत् कोऽपि वधकपुरुषः,
तस्मिन् समये ‘अण्णयरे’ अन्यतरश्च कोऽपि ‘पुरिसे’ पुरुषः ‘मग्गओ’ मार्गतः
पृष्ठदेशादित्यर्थः, ‘आगम्म’ आगम्य ‘सयपाणिणा’ स्वकपाणिना—स्वकीयहस्तेन
‘असिना’ असिना—खड्गेन ‘सीसं छिदेज्जा’ शीर्षं छिन्द्याद्, मृगवधाय कर्ण-

गौतमस्वामी भगवान् से पुनः प्रश्न करते हुए पूछते हैं—

‘पुरिसे णं भंते ! कच्छंसि वा जाव अण्णयरस्स मियस्स’ इत्यादि।

टीकार्थ—(भंते) हे भदन्त ! पूर्वोक्त विशेषणों वाला कोई एक
(पुरिसे) पुरुष (कच्छंसि वा जाव अण्णयरस्स मियस्स बहाए) कच्छ
में यावत् किसी एक मृग मारने निमित्त (आयतकण्णायतं) प्रयत्न-
पूर्वक कान तक लंबे किये गये (उसुं) वाण को (आयामेत्ता) खेंच
कर (चिट्ठेज्जा) खड़ा हो जावे। (अण्णे य अन्नयरे पुरिसे मग्गओ
आगम्म सयपाणिणा असिणा सीसं छिदेज्जा) इस तरह मृगको मारने
के लिये प्रयत्नपूर्वक वाण को तान कर खड़े हुए मनुष्य के पीछेसे आकर

गौतम स्वामी भूषावीर प्रबुद्धे वणी पूछे छे के—(पुरिसे णं भंते ! कच्छं
सि वा जाव अण्णयरस्स मियस्स) इत्यादि,

टीकार्थ—(भंते !) हे भगवन् ! पूर्वोक्त विशेषणोंवाला कोई एक
(पुरिसे) पुरुष (कच्छंसि वा जाव अण्णयरस्स मियस्स बहाए) कच्छमां-
नदी वच्चे आवेला आडीवाण स्थानमा (थी लधने “भृगने भारवाने निमित्ते”
सुधीने त्रीज सूत्रमा आवेला पाठ अछी “यावत्” पढथी अडुणु करवे)
लय अने भृगने भारवाने निमित्ते (आयत कण्णायतं) प्रयत्नपूर्वक कान सुधी
जे बेदी धनुषनी पणुछ पर (उसु) णाणुने (आयामेत्ता) जे रीने (चिट्ठेज्जा)
उलो थछ लय, (अण्णे य अन्नयरे पुरिसे मग्गओ आगम्म सयपाणिणा असिणा
सीसं छिदेज्जा) आ रीते भृगने भारवाने माटे प्रयत्नपूर्वक धनुषनी पणुछ

ગૌતમ!—‘સે કેણદ્દેણ’ इत्यादि । ‘स षण्णद्वेण मंते’ तत्केनार्थेन मदन्त । ‘एवमुच्चइ जाव स पुरिमवेरेण पुढे’ एवमुच्यते यावत् स पुरुषवेरेण स्पृष्टः, यो भृगु मारयति स भृगुवधजनितपापेन लिप्यते यच्च पुरुष मारयति स पुरुषवध जनितपापेन लिप्यते तत्र किं कारणमिति गौतमस्य प्रश्न, भगवानाह—‘से ण्ण गोयमे’ स्यादि, ‘से ण्ण गोयमा’ सन्नूनं इ गौतम । ‘कज्जमाणे कडे’ क्रियमाणं कृतम्, ‘सधिज्जमाणे सधिण’ सन्धीयमान सद्धितम् ‘गिबसिज्जमाणे गिबसिण’ निर्वर्त्यमान निर्वर्धितम्, गिसिज्जमाणे गिसिद्धे’ निवृज्यमानं निवृष्टम् ‘वत्तव्वं सिया’ इति वक्तव्यं स्यात् ? इति भगवदुक्तिं स्वीकुर्वन् गौतम कथयति—‘इते’ स्यादि, ‘इता भगव’ इन्त भगवन्, इन्तेस्यामन्न स्वीकारप्राये, ‘कज्जमाणे कडे’ क्रियमाणं कृतम् ‘जाव’ यावत् ‘गिसिद्धि वत्तव्वंसिया’ निवृष्टमिति वक्तव्यं स्यात्, हे भगवन् यत् कार्यं क्रियमाणं तदपि कृतम्, तथा यद् निवृज्यमानं तदपि निवृष्टमिति वक्तुं शक्यते एवेति भावः । अथ

‘वेरेण पुढे’ आप ऐसा किस कारणसे कहते हैं कि जो भृगु को मारता है वह भृगु वधजन्य पाप से लिप्त होता है और जो पुरुष को मारता है वह पुरुष वधजन्य पापसे लिप्त होता है । इस गौतमके कृप प्रश्नका उत्तर देते भगवान् उनसे कहते हैं—(गोयमा ! कज्जमाणे कडे, सधिज्जमाणे संधिणे, गिबसिज्जमाणे निव्वसिते, गिसिज्जमाणे गिसिद्धे सि वत्तव्वं सिया) हे गौतम ! जो किया जा रहा है वह किया जा चुका जो आंका जा रहा है वह शुद्ध हुआ, जो हो रहा है वह हो चुका, जो घनाया जा रहा है वह घन हुआ ऐसा कहा जाता है न ? (इता भगव ! कज्जमाणे कडे जाव गिसिद्धे सि वत्तव्वं सिया) हां भगवन् ! जो किया जा रहा है वह किया जा चुका यावत् जो घनाया जा रहा है वह घन हुआ ऐसा

બંને તેણે પાપ લાગણી બોધી નહીં, તે માટે જ ગૌતમસ્વામીએ મહાવીર પ્રભુને ઉપશીષ્ટ પ્રશ્ન પૂછ્યો છે હવે મહાવીર સ્વામીએ તેના જે જવાબ આપ્યો તે સૂત્રકાર બતાવે છે—

ઉત્તર—(ગોયમા ! કજ્જમાણે કડ સધિજ્જમાણે સંધિણે ગિબસિજ્જમાણે ગિબસિદ્ધે ગિસિદ્ધે સિ વત્તવ્વ સિયા) હે ગૌતમ ! જે કસ્યામાં આવી રહ્યું છે તે કસ્યાને જે બેઠવામાં આવી રહ્યું છે તે બેઠાઈ થકી જે થઈ રહ્યું છે તે થઈ થકી જે બનવામાં આવી રહ્યું છે તે બની થકી જેણે કહી શકાય છે ને ? (હતા ! મગ ! કજ્જમાણે કડ જાવ ગિસિદ્ધે સિ વત્તવ્વં સિયા) હા ભગવાન ! જેણે કહી શકાય છે તે જે કસ્યામાં આવી રહ્યું છે તે કસ્યાને યાવત્ જે બનાવવામાં આવી રહ્યું છે તે બની થકી આ બિધવનું સ્પષ્ટીકરણ

મગવાનાહ—‘ગોયમે’ત્યાદિ, ‘ગોયમા’ હે ગૌતમ ! ‘જે મિય મારેઈ’ યો મૃગ મારયતિ ‘સે મિયવેરેણ પુઢે’ સ મૃગવૈરેણ સ્પૃષ્ટઃ, ઇહ-વૈરમિતિ વૈરહેતુત્વાદ્ વધઃ પાપં વા તેન વધેન વધજનિતપાપેન વેત્યર્થઃ । મૃગઘાતકસ્યૈવ મૃગવધજનિતં પાપ ભવતીતિ ભાવઃ । ‘જે પુરિસં મારેઈ’ યઃ પુરુષં મારયતિ ‘સે’ સઃ ‘પુરિસવેરેણ પુઢે’ પુરુષવૈરેણ પુરુષવધજનિતપાપેન સ્પૃષ્ટઃ લિપ્તો ભવતીતિ । નન્નુ મ્રિયમાણ-પુરુષસ્ય ધનુઃ સક્રાશાદ્ યોડ્યં વાળસ્યોપનિપાતઃ સ ન ધનુર્ધરપુરુષહેતુકઃ, અપિ તુ શિરશ્છેદનકર્તુ. પુરુષસ્ય પ્રયત્નેન જાત ઇતિ સ એવ શિરશ્છેદનકર્તા પુરુષો મૃગવધજનિતપાપેન સ્પૃષ્ટો ભવિતુમર્હતિ ન તુ ધનુર્ધરઃ, તર્હિ કથમત્ર મૃગમારકઃ મૃગવૈરેણ સ્પૃષ્ટઃ, પુરુષમારકઃ પુરુષવૈરેણ સ્પૃષ્ટઃ, ઇતિ કથિતમ્ ? ઇત્યાશયેન પ્રશ્નયતિ

મરને કા પાપ લગેગા ? એસા યહ પ્રશ્ન હૈ—(ગોયમા ! જે મિયં મારેઈ, સિય મિયવેરેણ પુઢે, જે પુરિસં મારેઈ સે પુરિસવેરેણ પુઢે) હે ગૌતમ ! જો પુરુષ મૃગ કો મારતા હૈ વહ મૃગ કે વધજન્ય પાપ સે સ્પૃષ્ટ હૈ ઔર જો, પુરુષ પુરુષ કો મારતા હૈ વહ પુરુષવધજન્ય પાપ સે સ્પૃષ્ટ હૈ । (સે કેળટ્ટેણં મંતે ! એવં વુચ્ચહ જાવ સે પુરિસવેરેણ પુઢે) હે મદન્ત ! આપ એસા કિસ કારણ સે કહતે હૈં કિ યાવત્ વહ પુરુષવૈર સે—અર્થાત્ પુરુષ વધજન્ય પાપ સે સ્પૃષ્ટ હૈ ? શંકાકાર કા યહાં એસા અભિપ્રાય હૈ કિ મ્રિયમાણ પુરુષ કે ધનુષ સે જો વાળ છૂટા વહ સસ ધનુર્ધર પુરુષ હેતુક નહીં હૈ, કિન્તુ શિર છેદન કરને વાલે સસ પુરુષ કે પ્રયત્ન સે વહ છૂટા હૈ ઇસલિયે વહ શિરછેદન કરને વાલા પુરુષ હો મૃગવધજનિતપાપ સે સ્પૃષ્ટ હોના ચાહિયે ધનુર્ધર નહીં । તો ફિર કૈસે આપ યહ કહતે હો કિ મૃગમારક મૃગકે વૈર સે—મૃગવધજન્ય પાપ સે સ્પૃષ્ટ હૈ ઔર પુરુષમારક પુરુષ વૈર સે—પુરુષવધજન્ય પાપ સે—સ્પૃષ્ટ હૈ । ઇસી આશય સે ગૌતમ ને મગવાન સે યહ પૂછા કિ “સે કેળટ્ટેણ મંતે ! એવં વુચ્ચહ જાવ સે પુરિસ

ઉત્તર—(ગોયમા ! જે મિયં મારેઈ, સિય મિયવેરેણ પુઢે, જે પુરિસ મારેઈ, સે પુરિસવેરેણ પુઢે) હે ગૌતમ ! જે પુરુષ મૃગને મારે છે તેને ‘મૃગહત્યાનુ’ પાપ લાગે છે, અને જે પુરુષ પુરુષની હત્યા કરે છે તેને ‘નરહત્યાનુ’ પાપ લાગે છે.

પ્રશ્ન—(સે કેળટ્ટેણ મંતે ! એવં વુચ્ચહ જાવ સે પુરિસવેરેણ પુઢે ?) હે ભગવન્ ! આપ શા કારણે એવું કહો છો કે મૃગને મારનારને મૃગહત્યાનુ પાપ લાગે છે અને પુરુષને મારનારને પુરુષહત્યાનુ પાપ લાગે છે ? અહીં શકાકારની શકા એવા પ્રકારની છે કે મરનાર પુરુષના ધનુષમાથી જે તીર છૂટ્યુ તે મરનારના પ્રયત્નથી છૂટ્યુ નથી પણ તલવારથી તેનું માથું છેદનારના પ્રયત્નથી છૂટ્યુ છે. તો માથું છેદનાર પુરુષને જ મૃગહત્યાનુ પાપ લાગવું જોઈએ, પણ તે ધનુ-

इति मृगवधमनितपापलेपस्तु धनुर्धरपुरुषस्यैव भवति न तु शिरश्छेदनकर्तृ-
 द्वितीयस्य पृच्छतः समागतस्येति । ' से तेणद्वेण गोयमा ' तच्चेनार्धेन गौतम !
 ' जे मियं मारेइ ' योमृगं मारयति ' से मियं बेरेण पुट्टे ' स मृगवैरेण स्पृष्टः
 यो हि मृगस्य मारकः स एव मृगवधमनितपापेन लिप्तो भवतीति भावः, ' जे
 पुरिस मारेइ से पुरिसवरेण पुट्टे ' यः पुरुष मारयति स पुरुषवैरेण स्पृष्टः
 पुरुषस्य व्यापादयिता पुरुषवधमनितपापेन लिप्तो भवतीति । अयं भावः—हिंसाया
 हि आत्मपरिणाम एव कारणं भवतीत्यसौ मृगवधकस्य मृगमारणात्मकात्मपरि-
 णामसद्भावात्, पुरुषवधस्य च पुरुषमारणात्मकात्मपरिणामसद्भावात् तत्तद्व्यत्यं
 पापं तस्य तस्यैव जायते इति ।

मान कर वह पाप उस धनुर्धर ने ही फेंका है ऐसा मानना चाहिये ।
 इस लिये शर के निक्षेप से जो हरण की मृत्यु हुई है उसका पाप उस
 धनुर्धारी को ही लगेगा—शिरछेदन कर्त्ता दूसरे पुरुष के जो कि उसके
 पीछे से आया है नहीं लगेगा । (से तेणद्वेण गोयमा ! जे मियं मारेइ,
 से मियं बेरेण पुट्टे जे पुरिस मारेइ, से पुरिसवरेण पुट्टे) इस कारण
 है गौतम ! मैंने ऐसा कहा है जो मग को मारता है वह मृग के वध
 जय पाप से लिप्त होता है और जो पुरुष को मारता है वह पुरुष वध
 जय पाप से लिप्त होता है । इसका तात्पर्य यह है कि हिंसा में आत्मा
 के परिणाम ही कारण होते हैं । इस लिये जो मृग का वधक है उसके
 मृग को मारनेरूप परिणाम के सम्राय से, और पुरुष का वधकर्त्ता है
 उसके पुरुष के मारनेरूप परिणाम के सम्राय से तत्तत् अन्य पाप उस ?

પ્રથમ ખળ કરી શકાય છે આ પ્રમાણે હકીકત દેવાથી તે ધનુર્ધર જ તે
 તીર ઉપર હનુ બેગ માનવ બેઠે તેથી તીર ફેરવાથી તીર વાત્રવાથી જે
 મૃગનું મરણ થયું છે તે મૃત્તકતાનું પાપ તે ધનુર્ધારીને જ લાગશે, ધનુર્ધારીનું
 તલવારથી શિર છેદનાર પુરુષને તે પાપ લાગશે નહીં (સે તેણદ્વેણ ગોયમા !
 જે મિયં મારેઈ સે મિયંબેરેણ પુટ્ટ, જે પુરિસ મારેઈ, સે પુરિસવેરેણ પુટ્ટ) છે
 ગૌતમ ! તે કારણે હું બેલું કહું કે જે પુરુષ મૃગને મારે છે તે પુરુષને
 મૃત્તકતાનું પાપ લાગે છે અને જે પુરુષની હત્યા કરે છે તેને પુરુષહત્યાનું
 પાપ લાગે છે કહેવાનું તાત્પર્ય બે છે કે હિંસામાં આત્માનાં પરિણામો જ
 કારણરૂપ હોય છે તેથી મૃત્તકતા દ્વિસા કરનારને મૃગને મારવારૂપ પરિણામના
 સદ્ભાવથી મૃત્તકતાનું પાપ લાગે છે અને પુરુષની હત્યા કરનારને પુરુષની
 હત્યા કરવારૂપ પરિણામના સદ્ભાવથી પુરુષ હત્યાનું પાપ લાગે છે બી

માશયઃ યત્ ક્રિયમાણં તત્ કૃતમિતિ વ્યવહ્રિયતે યથા 'ચલમાણે ચલિણ' ઇત્યાદિ પ્રથમશતકે પ્રથમોદ્દેશકે નવમસૂત્રે વિવેચિતમિતિ તત્ એવં સર્વમનુસન્ધેયમ્। તથા સન્ધીયમાણં પ્રત્યંચાયાં સમારોપ્યમાણં વાણમ્, અથવા સમારોપ્યમાણ-પ્રત્યંચં ધનુઃ સંહિતં કૃતસંધાનમિતિ કથ્યતે તથા નિર્વર્ત્યમાનમતિશયેન વર્તુલીક્રિયમાણં પ્રત્યંચાકર્ષણેન નિર્વર્તિતં વૃત્તીકૃતં ગોલાકારં કૃતં ભવતિ, તથા નિસૃજ્યમાનમ્ પ્રક્ષિપ્યમાણં વાણં નિસૃષ્ટં પ્રક્ષિપ્તમિતિ કથ્યતે, યદા ચ નિસૃજ્યમાનમપિ વાણં નિસૃષ્ટમિતિ ભૂતકાલિકતયા પ્રયોગો ભવતિ તદા નિસૃજ્યમાનતાયાઃ ધનુર્ધરેણૈવ કૃતત્વાત્ તેન ધનુર્ધરેણૈવ વધકેન વાણો નિક્ષિપ્તો ભવતિ શરનિક્ષેપાચ્ચ તેનૈવ ગરેણ મૃગો મારિત

કહા જાતા હૈ । ઇસ વિષય કા ચુલાશારૂપ મેં પ્રથમ શતક કે પહેલે ઉદ્દેશ મેં "ચલમાણે ચલિણ" ઇસ નૌવે સૂત્ર મેં વિવેચન કિયા જા ચુકા હૈ ઇસલિયે યહ વહાં સે સમજ લેના ચાહિયે । પ્રકૃત મેં ઇસે યૌં સમજા જા સકતા હૈ-જો વાણ પ્રત્યંચા કે ડપર વર્તમાન મેં વઢા હુઆ હૈ વહ સન્ધીયમાન હૈ અથવા-સમારોપ્યમાણ પ્રત્યંચાવાલા જો ધનુષ હૈ વહ સંધીયમાન હૈ । સો યહ સંધિત હૈ-વઢાયા જા ચુકાહૈ-ઇસ પ્રકારકા કથન ભૂતકાલ કો લેકર પ્રયોગમેં લાયા જાતા હૈ । ઇસી તરહ નિર્વર્ત્યમાન-વર્તમાન મેં પ્રત્યંચા કે ચેંચને સે અતિશય ગોલ ક્રિયા જા રહા જો ધનુષ હૈ વહ ગોલ કિયા જા ચુકા હૈ, તથા નિસૃત્યમાન-ફેંકને કે સન્નુચ્છ હુઆ વાણ ફેંક દિયા ગયા હૈ એસા ભૂતકાલ સંવંધી પ્રયોગ હો જાતા હૈ । અતઃ જવ યહ વાત હૈ તો જિસ સમય વાણ કો ફેંકને કી તૈયારી ડસ ધનુર્ધર ને કી થી-વહ ડસકે ઢારા ડસ સમય ફેંક હી દિયા ગયા એસા

પ્રથમ શતકના પહેલા ઉદ્દેશોમાં "ચલમાણે ચલિણ" નામના નવમા સૂત્રમાં અપાઈ ગયેલ છે તો ત્યાંથી તેને સમજી લેવું અહીં તેને આ પ્રમાણે સમજાવી શકાય-જે બાણને વર્તમાન કાળે પ્રત્યંચાની ઉપર ચડાવવામાં આવ્યું છે તે સન્ધીયમાન છે અથવા સમારોપ્યમાન પ્રત્યંચાવાળું જે ધનુષ છે તે સન્ધીયમાન છે તેનું સંધાન કરવામાં આવ્યું છે-તેને ચડાવવામાં આવ્યું છે-એ પ્રકારનું કથન ભૂતકાળની અપેક્ષાએ કરી શકાય છે. એ જ પ્રમાણે નિર્વર્ત્યમાનવર્તમાન સમયે પ્રત્યંચાને જેચવાથી અતિશય ગોળાકાર કરાયેલું જે ધનુષ છે-તે ગોળ કરાયું એવો ભૂતકાલિક પ્રયોગ કરી શકાય છે તથા નિસૃત્યમાન-ફેંકવામાં આવી રહેલું બાણ ફેંકવામાં આવી ગયું એવો ભૂતકાલિક પ્રયોગ પણ કરી શકાય છે, વસ્તુ સ્થિતિ આ પ્રમાણે હોવાથી તે ધનુર્ધરે બાણને જે સમયે ફેંકવાની તૈયારી કરી હતી તે સમયે જ તે ધનુર્ધર વડે બાણ ફેંકાયું એવો ભૂતકાલિક

‘વાર્હિ છળહ માસાળ મરહ’ શરિ પળાં માસાનાં મ્રિયતે ‘વાહ્યાપ-જાવ
પારિયાવળિયાપ’ કાપિશ્યા યાવત્ પારિતાપનિક્યા ‘ચઠર્હિ-કિરિયાર્હિ’ વઠ
સમિઃ મ્રિયામિઃ ‘પુદ્ધે’ સ્પૃષ્ટો મવતિ । પળ્યાગાનન્તરં મરણ તુ કારમાન્તર-
માયમિતિ કૃત્વા પળ્યાસાદનન્તરં પ્રાણાતિપાતક્રિયા ન મવતીતિ જ્ઞેયમ્, एवञ्च
व्यवहारनयापक्षया प्राणानिपातक्रियान्यपक्षमात्रोपदर्शनार्थमेव कथिवमिति,
निश्चयनयेन तु यदा कदाचित्-याणादिहतक मरण भवति तत्काळे एव प्राणादि
पातक्रिया मवतीति माधः ॥ सू० ६ ॥

પુનરપ્પાદ—‘પુરિસે ણં મતે’ इत्यादि ।

મૂલ્ક-પુરિસે ણં મતે । પુરિસ સત્તીષ તમવિધસેજા સયપા
ળિણા વા, સે અસિણા સીસ છિંદેજ્જા, તઓ ણ મતે ।
સે પુરિસે કહ્ કિરિય? ગોયમા જાવ ચ ણં સે પુરિસે ત પુરિસં

इन पांच क्रियाओं से स्पृष्ट होना है । तथा यदि वह छह महीने के
भीतर २ नहीं मरता है वाद में मरता है—तो वह मरण अन्य कारणक
हुआ है ऐसा होने से छह मास के बाद प्राणातिपात क्रिया नहीं होनी
है ऐसा जानना चाहिये । यह कथन व्यवहारनय की अपेक्षा से प्राणा-
तिपात क्रिया के व्यपदेश मात्र को दिखानेके लिये ही किया गया है ।
नहीं तो निश्चयनय क मन्तव्यानुसार तो जय कभी भी वाणादि इतुक
मरण होता है उस काल में ही प्राणातिपात क्रिया होनी है—वाहे वह
मरण छह माहमें हो वाहे छह माह के बाद भी हो यदि वह वाणइतुक
है तो वहां अवश्य २ ही प्राणातिपात क्रिया है ॥ सू० ६ ॥

પનિકી અને પ્રાણાતિપાત, એ પાંચે ક્રિયાઓથી સ્પૃષ્ટ થાય છે પણ તે ૭
માસની અંદર તે મરણ પામે નહીં પણ ત્યાર બાદ તે મરણ પામે તો તે
મરણ કોઈ બીજા કારણે થયું છે એમ માની શકાય અને તે પ્રમાણે અને
ત્યારે તે પુરુષને પ્રાણાતિપાત ક્રિયામાં થતું પાપ લાગતું નહીં—પણ બાકીની
ચાર ક્રિયાઓથી તે પુરુષ મુક્ત થાય છે આ કથન અવધાર નયની અપેક્ષાએ
પ્રાણાતિપાત ક્રિયાના અપદેશ માત્રને બતાવવા માટે જ કરવામાં આવ્યું છે
નિશ્ચય નયના મતઅનુ પ્રમાણે તો ત્યારે બાણાદિને કારણે કોઈ પણ મૃત્યું
થાય ત્યારે તે કાળે જ પ્રાણાતિપાતની ક્રિયા થતી હોય છે—પછી તે મરણ
બંને ૭ માસની અંદર થાય કે ૭ માસ પછી થાય એ તે મરણ બાણાદિને
કારણે થયું હોય તો ત્યાં અવશ્ય પ્રાણાતિપાત ક્રિયા થઈ ગયાં છે ॥ સૂ. ૬ ॥

અસ્મિન્ પ્રકરણે ક્રિયાયાઃ વિવેચનં કૃતમ્ તાઽથ ક્રિયા અનન્તરકથિતમૃગા-
દિવધે યાવત્યો યત્ર કાલવિભાગે ભવંતિ તાવતીઃ ક્રિયાસ્તત્ર દર્શયન્નાહ-‘અંતો
છળ્હં’ ઇત્યાદિ, અંતો છળ્હં માસાણં મરઙ્ગ ’ અન્તઃ પળ્ળા માસાનાં મ્રિયતે, ‘કાઙ
યાઁ’ કાચિક્યા ‘જાવ પંચહિં કિરિયાહિં પુટ્ટે’ યાવત્ પંચભિઃ ક્રિયાભિઃ
સ્પૃષ્ટઃ, વાળપ્રક્ષેપાનન્તરં યદિ પદ્માસાશ્યન્તરે મૃગસ્ય મરણં ભવેત્તત્ર તાદૃશ
પ્રહારસ્યૈવ કારણતેતિ તાદૃશમરણજનિતપાપેન સ વધકઃ કાચિક્યાધિકરણિક
પ્રાદેષિકી પરિતાપનિકી પ્રાણાતિપાતક્રિયારૂપ પંચક્રિયાભિઃ સ્પૃષ્ટો ભવતીતિ ભાવઃ।

કો હી હોતા હૈ । (અંતો છળ્હં માસાણં મરઙ્ગ કાઙયાઁ જાવ પંચહિ
કિરિયાહિં પુટ્ટે, વાહિં છળ્હં માસાણં મરઙ્ગ, કાઙયાઁ જાવ પારિયાવણિ-
યાઁ કિરિયાહિં પુટ્ટે) વહ મરનેવાલા વ્યક્તિ યદિ છહ માસ કે ખીતર ૨
મર જાતા હૈ તો ઉસે મારનેવાલી વ્યક્તિ કાચિકી આદિ પાંચ ક્રિયાઓ
સે યુક્ત હોતા હૈ ઓર મરનેવાલા વ્યક્તિ યદિ છહ માસ કે વાદ મરતા
હૈ તો ઉસે મારનેવાલા વ્યક્તિ કાચિકી ક્રિયાસે લેકર પારિતાપનિકી
ક્રિયા તરુ કી ચાર ક્રિયાઓ સે યુક્ત હોતા હૈ । તાત્પર્ય કહને કા યહ
હૈ કિ હસ પ્રકરણ મેં ક્રિયા કા વિવેચન ક્રિયા ગયા હૈ । વે ક્રિયાઈ
અનન્તર કથિત મૃગાદિ વધ મેં જિતની જિસ કાલ વિભાગ મેં હોતી હૈ
ઉતની ક્રિયાઓ કો “ અંતો છળ્હં ” ઇત્યાદિ સૂત્રદ્વારા દિશ્વલાયા ગયા
હૈ । હસમેં યહ કહા ગયા હૈ કિ વાળ પ્રક્ષેપ કે વાદ યદિ છહ માસકે
ખીતર ૨ મૃગકા મરણ હો જાતા હૈ તો ઉસકે ઉસ મરણ મેં ઉસ પ્રકાર
કે પ્રહારમેં હી કારણતા હૈ । અતઃ તાદૃશ મરણજનિત પાપ સે વહ વધક
કાચિકી, આધિકરણિકી, પ્રાદેષિકી, પારિતાપનિકી, પ્રાણાતિપાતક્રિયા

શાસ્ત્રમા એમ પણ કહ્યું છે કે (અંતો છળ્હં માસાણં મરઙ્ગ કાઙયાઁ જાવ પંચહિં
કિરિયાહિં પુટ્ટે વાહિં છળ્હં માસાણં મરઙ્ગ કાઙયાઁ જાવ પારિયાવણિયાઁ વહિં
કિરિયાહિં પુટ્ટે) જે માર ખાનાર વ્યક્તિ છ માસની અદર મરી જાય તો
મારનાર વ્યક્તિ કાચિકીથી માડીને પ્રાણાતિપાત સુધીની પાંચે ક્રિયાઓવાળો
કહેવાય છે, પણ જે માર ખાનાર વ્યક્તિ છ માસ વીતી ગયા પછી મરે તો
મારનાર વ્યક્તિ કાચિકી ક્રિયાથી માડીને પરિતાપનિકી પર્યન્તની ચાર ક્રિયા
વાળો કહેવાય છે તાત્પર્ય એ છે કે આ પ્રકરણમા ક્રિયાનુ વિવેચન કર્યું છે.
તે ક્રિયાઓ પૂર્વકથિત મૃગાદિવધના જેટલી જે કાળ વિભાગમા થાય છે તેટલી
ક્રિયાઓને “ અંતો છળ્હં ” ઇત્યાદિ સૂત્રો વડે બતાવવામા આવી છે તેમાં એ
બતાવ્યું છે કે બાણ છોડ્યા પછી છ માસની અદર તે મૃગનુ મરણ થાય તો
તેના મરણનુ કારણ તે પ્રહારને જ ગણી શકાય છે તો તે પ્રકારના મરણના
પાપથી તે હત્યા કરનારો પુરુષ કાચિકી, આધિકરણિકી પ્રાદેષિકી, અને પરિતા-

પુરિસે 'સ પુરુષઃ' 'સં પુરિસ' સં પુરુષમ્ 'સત્તીય' શક્ત્યા સ્વશક્ષિણેષ્વ
 'સમવિધંસે' સમમિશ્વંસતે હ્યદિત્યર્થઃ, 'સપાપિણા યા' સ્વકપાણિના ના
 સ્વહસ્તેન 'સે' તસ્ય 'અસિણા' અસિના 'સીસં છિદ્ધિ' શીર્ષં છિનત્તિ, 'તાં
 ચ ન' તાવત્ ચ સ્કલ 'સે પુરિસે' સ પુરુષ, 'કાઢ્યાણ' કાયિક્યા, શરીર-
 વ્યાપારરૂપયા ક્રિયયા, 'અદિગરણિયાણ' આચિકરણિક્યા, શક્તિસ્વરૂપયા-
 ક્રિયયા 'જાણ પાજાહવાયકિરિયાણ' યાવત્ પ્રાણાતિપાતક્રિયયા, યાવત્ પદેન
 પ્રાદેપિકી પારિતાપનિક્યો સગ્રહ, 'પંચહિં કિરિયાહિં' -પંચમિ ક્રિયામિ,
 'પુદ્ધે' સ્પૃષ્ટો ભવતિ, 'આસન્નવધણ ય' આસન્નવધકેન ચ, આસન્ન સમીપે
 વિધમાનો વધો વિનાશો યસ્માત્ વૈરાત્ સત્ તનાસન્નવધકેન મત્તિ ચ વૈરાત્
 વધકસ્ય વધસ્તમેવ વધ્યમાધિત્ય અન્યસ્માદ્વા સૈવ જન્મનિ જન્માન્તરે યા ।

સે પાણિણા યા સે અસિણા સીસં છિદ્ધિ તાં ચ ન સે પુરિસે કાઢ્યાણ
 અદિગરણિયાણ જાણ પાજાહવાયકિરિયાણ પંચહિં કિરિયાહિં પુદ્ધે) હે
 ગૌતમ ! જ્યતક વહ પુરુષ વસ દુસરે પુરુષ કો શક્તિ સે-હપિયારવિશેષ
 સે મારતા હૈ, અથવા-અપને હાથોં તલયાર સે વસકા મસ્તક કાટતા હૈ
 તત્તક વહ પુરુષ કાયિકી, -શરીરવ્યાપારરૂપ કાયિકી ક્રિયા સે શક્તિ
 વ્યાપારરૂપ અચિકરણિકી ક્રિયા સે યાવત્ પ્રાણાતિપાતક્રિયા સે ફન
 પાંચ ક્રિયાઓં સે સ્પૃષ્ટ હોતા હૈ । યહાં યાવત્ શ-૩ સે પ્રાદેપિકી ક્રિયા
 ઓર પારિતાપનિકી ક્રિયા ફન દોતોં ક્રિયાઓં કા મહન હુઆ હૈ । (આ
 સન્ન વધણ ય અજવકંઠજળવત્તીય નં પુરિસવેરેણં પુદ્ધે) તથા જા
 પુરુષ આસન્ન સમીપ મેં વિધમાન હૈ વધવિનાશ જિસસે એસે આસન્ન
 વધ વાલે તથા દુસરે કે પ્રાણોં કી અથવા અપને અપાય કી જિસમેં ચિલ-
 કુલ અપેક્ષા નહીં હૈ એસે પુરુષવૈર સે સ્પૃષ્ટ હોતા હૈ । તાત્પર્ય કહને કા

જાવં ચ નં સે પુરિસે સં પુરિસ સત્તીય સમમિષસેતિ સે પાપિણા યા સે અસિણા
 સીસં છિદ્ધિ તાં ચ નં સે પુરિસે કાઢ્યાણ અદિગરણિયાણ જાણ પાજાહવાયકિ
 રિયાણ પંચહિં કિરિયાહિં પુદ્ધે) હે ગૌતમ ! આપે તે પુરુષ બીજા પુરુષને
 શક્તિ વડે બેઠે પ્રકારના હથિયારથી-મારે છે અથવા પોતાના હાથમાં તલવાર
 લઈને તેનું મસ્તક કાપી નાખે છે ત્યારે તે કાયિકી શરીરની પ્રવૃત્તિરૂપ કાયિકી
 ક્રિયાથી, શક્તિ તત્ત્વવાર આદિ અધિકરણને ઉપયોગ કરવાથી અચિકરણિકી
 ક્રિયાથી, પ્રાદેપિકી ક્રિયાથી પારિતાપનિકી ક્રિયાથી અને પ્રાણાતિપાત ક્રિયાથી
 સ્પૃષ્ટ થાય છે (આસન્ન વધણ ય અજવકંઠજળવત્તીય નં પુરિસવેરેણં પુદ્ધે)
 તથા તે પુરુષ આસન્ન-જેનો વધ અમીપમાં જ વિધમાન છે-જેવા આસન્ન-
 વધવાળા તથા તે પ્રાણને તે વધતે અન્યના પ્રાણોનું અથવા પોતાના અપ-
 યનું જેમાં નિઠકુલ બાન રહેતું નથી એવા પુરુષ વેરથી સ્પૃષ્ટ થાય છે કે-

सत्तीए समभिधंसेति, से पाणिणा वा, से असिणा सोसं
छिंदति तावं च णं से पुरिसे काइयाए अहिगरणियाए जाव
पाणाइवायकिरियाए पंचहिं किरियाहिं पुढे, आसणवधएण
य अणवकंखण वित्तिए णं पुरिसवेरेणं पुढे ॥ सू०७ ॥

छाया-पुरुषो भदन्त ! पुरुषशक्त्या समभिध्वंसते स्वकपाणिना वा स असिना
शीर्षं छिन्द्यात्, ततो भदन्त ! स पुरुषः कतिक्रियः ? गौतम ! यावत् च खलु
स पुरुषस्तं पुरुषं शक्त्या समभिध्वंसते, स्वकपाणिना वा तस्य असिना शीर्षं
छिनत्ति तावच्च खलु स पुरुषः कायिक्या-आधिकरणिक्या यावत् प्राणाति-
पातक्रियया पंचभिः क्रियाभिः स्पृष्टः आसन्नवधकेन चानवकांसणवृत्तिकेन
पुरुषवैरेण स्पृष्टः ॥ सू० ७ ॥

टीका—‘ पुरिसे णं भंते ’ पुरुष. खलु भदन्त ! ‘ पुरिसं ’ पुरुषं ‘ सत्तीए ’
शक्त्या शास्त्रविशेषेण ‘ समविधंसेज्जा ’ समभिध्वंसते हन्यादित्यर्थः, ‘ सय-
पाणिणा वा ’ स्वकपाणिना वा स्वकीयहस्तेनेत्यर्थः, ‘ असिणा ’ ‘ सोऽसिना ’
खड्गेन ‘ सीसं छिंदेज्जा ’ शीर्षं छिन्द्यात् विनिपातयेत्, ‘ तथो णं भंते ’ ततः
खलु भदन्त ! ततः शीर्षच्छेदानन्तरम् खलु ‘ से पुरिसे कइकिरिए ’ स पुरुषः कति-
क्रियः, स पुरुषः खड्गेन शिरश्छेदनकर्ता पुरुषः कतिक्रियावान् भवति, भगवानाह—
‘ गोयमा ’ इत्यादि । ‘ गोयमा ’ हे गौतम ! ‘ जावं च णं ’ यावत् च खलु ‘ से

‘ पुरिसे णं भंते ! पुरिसं सत्तीए ’ इत्यादि ।

टीकार्थ—(भंते) हैं भदन्त ! (पुरिसे) कोई एक पुरुष (पुरिसं
सत्तीए समभिधंसेज्जा) दूसरे किसी पुरुष को हथियार विशेष से मारे
(वा) अथवा (सयपाणिणा) अपने हाथ से (से) वह (असिणा)
तलवार लेकर (सीसं छिंदेज्जा) उसका शिर काट लेवे (तया णं भंते !
से पुरिसे कइ किरिए) तो हे भदन्त ! वह पुरुष कितनी क्रियाओं वाला
है ? (गोयमा ! जावं च णं से पुरिसे तं पुरिसं सत्तीए समभिधंसेति

“ पुरिसे णं भंते ! पुरिसे सत्तीए ” इत्यादि ।

टीकार्थ—(भंते !) हे लगवन् ! (पुरिसे) कुछ कुछ पुरुष (पुरिसं
सत्तीए समभिधंसेज्जा) कुछ भीन्त पुरुषने हथियार विशेषથી मारे (वा)
अथवा (सयपाणिणा) पोताना हाथमां (से) ते (असिणा) तलवार लधने
(सीसं छिंदेज्जा) तेनुं माथुं क्षपी नाजे, (तया णं भंते !) से पुरिसे कइ
किरिए) तो हे लगवन् ! ते पुरुष डेटवी क्रियावाणो छडेवाय ? (गोयमा !

અનયકાલણરૂચિવેન 'પુરિસચેરણ પુટ્ટે' પુરુષચેરણ સ્પૃષ્ટ', પતાશનેન પુરુષચેરણ
પ્રસૂત્પા શિરઞ્છેનપર્ત્ત પુરુષા સ્પૃષ્ટો મનતીતિ માવ' ॥ સુ. ૭ ॥

ક્રિયાધિકાર એવ ઇદમપ્યાદ—'દો મતે' રૂપાદિ ।

મૃચ્છ—દો મતે ! પુરિસા સરિસયા સરિસવયા સરિસત્તયા
સરિસમહમત્તોવગરણા અણ્ણમણ્ણેણ સદ્ધિ સગામ સગામેહ
તત્થ ણ પગે પુરિસે પરાજિણાહ, પગે પુરિમે પરાહ્જ્ઞહ, સે કહમેય
મતે ! એવ, ગોયમા ! સચીરિણ પરાજિણહ અચીરિણ પરાહ્જ્ઞહ,
સે કેણદ્દેણ જાવ પરાહ્જ્ઞહ, ગોયમા ! જસ્સ ણ વીરિણ
ઘઞ્ઞાહ કમ્માહ ણા વઙ્ગાહ ણો પુટ્ટાહ જાવ ણો અભિસમ
ણ્ણાગયાહ ણો ઠદિણ્ણાહ નો ઉવસત્તાહ ભવતિ, સે ણ પરા
જિણહ, જસ્સ ણ વીરિણ વઞ્ઞાહ કમ્માહ ઘદ્દાહ, જાવ ઉદિ
ણ્ણાહ ણો ઉવસત્તાહ ભવતિ, સે ણ પુરિસે પરાહ્જ્ઞહ, સે
તેણદ્દેણ ગોયમા ! એવ વુચ્ચહ સચીરિણ પરાજિણહ અચીરિણ
પરાહ્જ્ઞહ ॥ સુ. ૮ ॥

છાયા—કો મદન્ત ! પુરુષી સદાગી સદાકર્મથી મદગચસ્તી સદામાંદમાત્રા
પરુણી અન્યોન્યન સાર્દદ સપ્રામં સપ્રામયત સર્વેક પુરુષ પગપ્રયત એક પુરુષ
પરાગ્રીયત, તત્કમમતરૂ મદન્ત ! એમ ? ગૌતમ ! સચીર્યઃ પરાગ્રયતે, અચીર્યઃ
પરાગ્રીયત, તત્કેનાર્યેન યાયત્ પરાગ્રીયત ? ગૌતમ ! યસ્ય વીરજપ્યાનિ કર્માણિ

હે તપ ઉમસે જો ચેર ઘણના હે ઉમસે દુસરેકે પ્રાણોંની જરા સી પરવાહ
નહીં રહના હે અથવા ઉમસે હમરા પયા અનિષ્ટ હોગા રૂસકા સી ગયાલ
પિલકુચ નહીં રહના હે એસે પુન્ય ચેર સ, અહ શક્તિ સે—હયિયારચિશેષ સે
દુસરે પ શિરકા છેવન કમન ચાલા મનુષ્ય સ્પૃષ્ટ હોગા હે ॥ સુ. ૭ ॥

હે અચારે કોઈ બાળિ હવની હત્યા કરે છે અને તેની સાથે જે વેશ નિષે છે
ત્યારે તેને અન્યના નણોની જરા પણ નરવા દેતી નથી, અથવા તેનાથી પોતાનું
શુ અનિષ્ટ થશે તેને પણ અચાર તેને રહને નથી શક્તિથી અથવા તદ
વારથી અન્યનું શિર કાપનાર નાણુએ એવા પ્રકારનું પુરુષવેશ બાપે છે ॥ સુ. ૭ ॥

તદુક્તં—“ વહમરણઅઘ્મક્ષાણ દાણ પરધણવિલોવનાઈણં ।

સવ્વ જહન્નો ઉદયો દસગુણિઓ એકસિકયાણં ॥ ” ઇતિ ॥

છાયા—વધમરણાભ્યાખ્યાનદાનપરધનવિલોપનાદીનામ્, સર્વજઘન્યઉદયો દશ ગુણિત એકશ કૃતાનામિતિ । આસન્નવધકેન ચેત્યત્ર ચ શબ્દઃ સમુચ્ચયાર્થકઃ, ‘અણવકંરણવત્તિણં’ અનવકાંક્ષણવૃત્તિકેન ચલુ અનવકાંક્ષણા પરકીયપ્રાણ નિરપેક્ષા, સ્વગતાપાયપરિહારાપેક્ષા વા, તયા વૃત્તિર્વર્તનં યત્ર વૈરે તત્ તથા તેન

યહ હૈ જો પુરુષ જિસકા ઘાત કરતા હૈ વહ પુરુષ ઉસકે દ્વારા યા કિસી દૂસરે કે દ્વારા ઉસી ભવ મેં યા દૂસરે ભવ મેં મારા જાતા હૈ ક્યોં કિ વૈર સે વધક કા વધ હોતા હૈ । ફસલિયે ઉસી વધ્ય કો લેકર ઉસકા વધ હો યા અન્ય કિસી દૂસરે પ્રાણી કો લેકર ઉસકા વધ હો યાહે વહ વધ ઉસી ભવ મેં યા અન્ય જન્મ મેં હો । કહા ‘બી હૈ—

“ વહ મરણઅઘ્મક્ષાણદાણ-પરધણ વિલોવનાઈણં ।

સવ્વજહન્નો ઉદયો દસ ગુણિઓ એકસિકયાણં.” ઇતિ ॥

વધ કરના મારના, અભ્યાખ્યાન, યુગલી કરના, ચોરી કરના, ફન સવ એકવાર કિયે અપકૃત્યોં કા સર્વજઘન્ય ઉદય દસગુણા હોતા હૈ । “આસન્નવધકેન ચ” યહાં પર જો “ચ” શબ્દ કા પ્રયોગ કિયા ગયા હૈ વહ સમુચ્ચય અર્થ મેં કિયા ગયા હૈ । દૂસરે કે પ્રાણોં કી પરવાહ નહીં કરના અથવા અપને અપાય કી દરકાર નહીં રચના ફમકા નામ અનવકાંક્ષણા હૈ । તાત્પર્ય ફસકા યહ હૈ કિ જવ કોઈ કિસી કા ઘાતકરતા

વાનું તાત્પર્ય એ છે કે જે પુરુષ જેનો ઘાત કરે છે તેના વડે અથવા બીજા કોઈની મારફત એજ ભવમા કે અન્ય ભવમા માર્યો જાય છે, કારણ કે વેર ને લીધે મારનારનો વધ થાય છે. તે કારણે તે વધ્ય (જેનો વધ કર્યો છે તે) વડે તેનો વધ થાય અથવા અન્ય કોઈ જવ વડે તેનો વધ થાય, તે વધ એજ ભવમા પણ થાય અને અન્ય ભવમા પણ થાય. કહ્યું પણ છે....

“ વહ મરણ અઘ્મક્ષાણ દાણ પરધણ વિલોવનાઈણં ।

સવ્વજહન્નો ઉદયો દસ ગુણિઓ એકસિકયાણં ” ઇતિ ।

વધ કરવાનો, મારવાનો, અભ્યાખ્યાનનો. નિંદા કરવાનો અને ચોરી કરવાનો આ બધા અપકૃત્યોનો સર્વજઘન્ય ઉદય દસગણો હોય છે. “આસન્ન વધકેન ચ” એ પદમા જે (ચ) એ શબ્દનો પ્રયોગ કર્યો છે તે સમુચ્ચયાર્થ કરાયો છે બીજા જીવોના પ્રાણોની દરકાર ન કરવી અથવા પોતાના અપા-યની દરકાર ન કરવી તેનું નામ “અનવકાંક્ષણા” છે. તેનો ભાવાર્થ એ છે

સમાનત્વેપિ કયમેકસ્ય જયઃ, અપરસ્ય ચ પરાજયો મયતિ ? મગવાનાહ—
 ‘ગોયમે’ ત્યાદિ, ‘ગોયમા’ હે ગૌતમ ! ‘સવીરિણ પરાજિજાહ’ સવીર્યઃ
 પરાજયતે અપરં પરાજિતં કરોતિ ‘અધીરિણ પરાજ્જહ’ અધીર્યઃ પરામીયતે,
 ધીર્યરહિત પરાજિતો મયતિ । પુન પ્રશ્નયતિ—‘સે કેણદ્દેય જાણ પરાજ્જહ’
 તત્કેનાર્થેન યાત્વ પરાજીયતે ? હે મદન્ત ! તમ કિં કારણં યેનૈકમ્ય જયઃ અપરસ્ય
 ચ પરાજય ઇતિ માયઃ । મગવાનાહ—‘ગોયમે’ ત્યાદિ । ‘ગોયમા’ હે ગૌતમ !
 ‘જસ્સ ણં ધીરિયવજ્જાહં કમ્માહ ણો વદ્ધાહ’ યસ્ય સ્વછ ધીર્યવચ્ચાનિ નીર્યવચ્ચં
 =અશુદ્ધમનીય યમ્ તાનિ=અશુદ્ધમનીયાનિ કર્મણિ નો વદ્ધાનિ ‘ણો પુદ્ધાઈ’ નો
 સ્પૃષ્ઠાનિ જાણ ણો અમિસમન્નાગયાહ’ યાત્વ નો અમિસમન્નાગણાનિ, યાત્વ

કહમેયં મંતે !) તો હે મદન્ત ! હસકા કયા કારણ હૈ : પ્રશ્નકર્તા કા
 અભિપ્રાય પેસા હૈ કિ જય કોનોં एकसी स्थिति आदि बाळे हैं समान
 बल आदि बाळे हैं तो फिर ऐसा क्यों होता है कि एक की जीत होती
 है और दूसरे की हार होनी है ? (गौयमा ! एष सवीरिण पराजिजाह
 अधीरिण पराज्जह) हे गौतम ! यह बात इस प्रकार से है—कि जो
 धीर्यसहित होता है यह दूसरे को परास्त कर देता है और जो धीर्य
 रहित होता है वह परास्त हो जाता है । (से केणद्वेयं जाण पराज्जह)
 हे मदन्त ! ऐसा आप किस कारण से कहते हो कि जो धीर्यवाला होता
 है वह जीतता है और जो धीर्यविनाका होता है वह हारता है ? तात्पर्य
 यह है कि एक की जीत होती है और दूसरे की हार होनी है इसमें
 क्या कारण है ? (गौयमा ! जस्स णं धीरियवज्जाहं, कम्माह णो वद्धाई

મેળવે છે અને બીજો પુરુષ પરાજય પામે છે (સે કદમેયં મંતે !) તો કે
 મગવન્ । એવું શા કારણે બને છે ? પ્રશ્ન કર્તાના પ્રશ્નનો આશય એ છે કે
 બન્ને સમાન બળ વાળા સમાન ઉભર વાળા, સમાન સાધન સામગ્રીવાળા
 હોવા છતાં એવું કેમ બને છે કે એકની જીત અને બીજાની હાર થાય છે ?
 (ગોયમા ! એષ સવીરિણ પરાજિજાહ, અધીરિણ પરાજ્જહ) હે ગૌતમ ! તેવું
 કારણ એ છે કે જે વીર્યશુદ્ધ હોય છે તે બીજાને હરાવી દે છે અને જે
 વીર્યરહિત હોય છે તે પરાજય પામે છે (સે કેણદ્દેય જાણ પરાજ્જહ) હે
 મગવન્ । આપ શા કારણે એવું કહો છો કે વીર્યવાળાનો જય થાય છે અને
 વીર્યરહિત અશક્તિની હાર થાય છે ? તાત્પર્ય એ છે કે એકનો જય અને
 બીજાનો પરાજય થવાનું કારણ શું છે ? એ પ્રશ્ન છે તેનો ઉત્તર નીચે પ્રમાણે છે
 ઉત્તર—(ગોયમા ! જસ્ય ધીરિયવજ્જાહ, કમ્માહ ણો વદ્ધાઈ ણો પુદ્ધાઈ

નો વદ્ધાનિ નો સ્પૃષ્ઠાનિ યાવત્ નો અભિસયન્યાગતાનિ, નો ઉદીર્ણાનિ ઉપશાન્તાનિ
ભવંતિ સ પરાજયતે યસ્ય ચ્વલુ વીરવચ્ચાનિ કર્માણિ વદ્ધાનિ યાવત્ ઉદીર્ણાનિ
નોપશાન્તાનિ ભવંતિ સ પુરુષઃ પરાજીયંતે તત્ તેનાર્થેન ગૌતમ! એવ મુચ્યતે સ
વીર્યઃ પરાજયતે અવીર્યઃ પરાજીયતે ॥ ૮ ॥

ટીકા—‘દો ભંતે પુરિસા’ ટ્વૌ ભદન્ત ! પુરુષૌ ‘સરિસયા’ સદૃશૌ,
કૌશલપ્રમાણાદિના તુલ્યૌ, ‘સરિસત્તયા’ સદૃશત્વચૌ, સદૃશાકૃતી, ‘સરિસવ્વયા’
સદૃશવયસ્કૌ સમાનયૌવનાદ્યવસ્થૌ, ‘સરિસમંડમત્તોવગરણા’ સદૃશભાંડામત્રોપકરણૌ,
તત્ર-ભાણ્ડમ્ હિરણ્યસુવર્ણાદિકમ્, અમત્ર-કાંસ્યભાજનાદિપાત્રમ્ અથવા ભાણ્ડ-
માત્રા ગણિમાદિદ્રવ્યરૂપઃ પરિચ્છેદઃ, ઉપકરણાનિ અનેકવિધવસ્ત્રશસ્ત્રાદીનિ ।
તતઃ સદૃશાનિ=તુલ્યાનિ ભાણ્ડમાત્રોપકરણાનિ યયોસ્તૌ સદૃશભાણ્ડામત્રોપકરણૌ,
એતાવતા દ્વયોઃ પુરુષયોઃ સમાનવિભૂતિકત્વં કથિતમ્, ‘અણ્ણમણ્ણેણ’ અન્યોન્યેન
પરસ્પરેણ ‘સદ્ધિ’ સાર્ધમ્ ‘સંગામં’ સંગ્રામં-યુદ્ધમ્, ‘સંગામેન્તિ’ સંગ્રામયેતે-
પરસ્પરં યુદ્ધં કુરુત ઇત્યર્થઃ, ‘તત્થણં-એગે પુરિસે પરાજિણહ’ તત્ર ચ્વલુ એકઃ
પુરુષઃ પરાજયતે અપરં પરાજિતં કરોતિ, ‘એગે પુરિસે પરાહ્જ્જહ’ એકઃ પુરુષઃ
પરાજીયતે, પરાસ્તો ભવતિ, એકઃ પુરુષો વિજેતા ભવતિ અપરશ્ચ પરાજિતો ભવ-
તીતિ ભાવઃ । ‘સે કઠમેયં ભંતે એવમ્’ તત્ કથમેતદ્ ભદન્ત ! એવમ્, વલાદિના

ક્રિયા કે અધિકાર મેં હી યહ સૂત્ર ધી સૂત્રકાર ને કહા હૈ—

‘દો ભંતે ! પુરિસા સરિસયા’ ઇત્યાદિ ।

ટીકાર્થ—(ભંતે) હે ભદન્ત ! (સરિસયા) એક સરીચે (સરિસ-
વ્વયા) એકસી લટ્ઠર વાલે (સરિસત્તયા) એકમી ચમડી વાલે (સરિસ
મંડમત્તોવગરણા) સમાન ભાંડમત્ર ઉપકરણવાલે અર્થાત્ સમાનસામગ્રી
વાલે એસે (દો પુરિસા) કોઈ દો પુરુષ (અણ્ણમણ્ણેણ સદ્ધિ) આપસ
મેં એક દૂસરે કે સાથ (સંગામં સંગામેહ) લડાઈ કરને મેં રત હોતે હૈ
તો (તત્થ) ડનમેં (એગે પુરિસે) એક પુરુષ (પરાજિણહ) જીતના હૈ
(એગે પુરિસે પરાહ્જ્જહ) ઓર એક દૂસરા પુરુષ હાર જાતા હૈ (સે

ક્રિયાના અધિકારને અનુલક્ષીને સૂત્રકાર નીચેના સૂત્રનું પણ કથન કરે છે—
“ સે ભંતે ! પુરિસા સરિસયા ” ઇત્યાદિ.

ટીકાર્થ—(ભંતે) હે ભગવન ! (સરિસયા) એક સરખા (સરિસવ્વયા)
એક સરખી ઉમરના, (સરિસત્તયા) એક સરખી ચામડીવાળા (સરિસમં-
ડમત્તોવગરણા) એક સરખા ભાંડમત્ર ઉપકરણવાળા એટલે કે સમાન સાધન
સામગ્રી વાળા (દો પુરિસા) બે પુરુષો (અણ્ણમણ્ણેણ સદ્ધિ) આપસ આપ-
સમા-એક બીજાની સાથે (સંગામ સંગામેહ) સંગ્રામ એકે છે (તત્થ એગે પુરિસે
પરાજિણહ એગે પુરિસે પરાહ્જ્જહ) ત્યારબાદ તે બેમાનો એક પુરુષ વિજય

મયં માધ'—યસ્ય પુરુષસ્ય મયમં તુ ચીર્યવધ્યાનિ કર્માણિ પૂર્વઘટા'યેષ ન મવેયુઃ
 યદિ ઘટાનિ મવેયુઃ—તથાપિ સ્પૃષ્ઠાનિ ન મવેયુઃ યદિ સ્પૃષ્ઠાનિ મવેયુઃ તથાપિ
 નિષ્પત્તાનિ ન મવેયુઃ, યદિ નિષ્પત્તાનિ મવેયુસ્તથાપિ નિકાચિતાનિ ન મવેયુઃ,
 યદિ નિકાચિતાનિ મવેયુસ્તથાપિ અમિસમન્યાગતાનિ ન મવેયુઃ યદિ અમિસમ
 ન્યાગતાનિ મવેયુસ્તથાપિ ઉદોર્ણાનિ ન મવેયુઃ, સર્થિ—કિમ્, ઉપશાન્તાનિ મવેયુ
 સ્તસ્ય પુરુષસ્ય વિજયો ભવતિ, સમ્રાજસ્ય પરાજયો ભવતીતિ । 'સે તેજઃદ્વેજં
 ગોયમા' ત્વેનાર્ષેન ગૌતમ ! 'પથ-યુચ્ચહ' પથયુચ્યતે—'સધીરિણ પરાવિજિજ્ઞ
 અધીરિણ પરાજિજ્ઞહ' સધીર્યઃ પરાજયતે, અધીર્ય પરાજીયતે, इति ॥ મૂ० ૮ ॥
 ॥ इति मृगधानकादिपुरुषप्रकरणम् ॥

—ધીર્યરહિત होने के कारण दूसरेके द्वारा पराजित होता है । तात्पर्य यह है
 कि जिस पुरुष के पहिले तो धीर्यवध्य कर्म पूर्वं बद्ध हीन हों, यदि हों भी तो
 वे उससे स्पृष्ट न हों यदि स्पृष्ट भी हों तो वे निषत्स न हों, यदि निषत्स
 भी हों तो वे निकाचित न हों, यदि निकाचित हों तो वे उसके अमि-
 सन्यागत न हों, यदि अमिसमन्यागत (नहीं प्राप्त किया है) हों तो
 भी वे उसके उदीर्ण न हों किन्तु उपशान्त हो ऐसी दशा में उस पुरुष
 की विजय होती है और ऐसी स्थितिसे भिन्न स्थितिवाले की हार होती
 है । (से तेजःद्वेजं गोयमा । पथं युच्यह) इस कारण से है गौतम । मैं
 ऐसा कहता हूँ कि (सधीरिण पराजिणह, अधीरिण पराजिह) जो धीर्य
 सहित होता है वह अपने समान धयवाले, समान धमड़ीवाले, समान
 सामग्रीवाले और उपकरणवाले दूसरे व्यक्ति को जीत लेता है और दूसरा
 धीर्यरहित व्यक्ति उससे हार जाता है । "सरिसमं ह्यमस्तोषगरणा"

શાન્ત નથી. (સે પુરિષે પરાજિજ્ઞહ) તે પુરુષ વીર્યરહિત હોવાને કારણે પરા
 જય પામે છે કહેવાનું તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે—જો પુરુષે વીર્યવધ્ય (વીર્યરહિત)
 કર્મો પહેલાં તે બધા જ ન હોય, કદાચ બાધ્યા હોય તો તેના બંદે સ્પૃષ્ટ
 થયો ન હોય, જો સ્પૃષ્ટ હોય તો નિષત્ત ન હોય કદાચ નિષત્ત પણ હોય
 અને નિકાચિત ન હોય કદાચ નિકાચિત હોય પણ અમિસમન્યાગત ન હોય
 કદાચ અમિસમન્યાગત (પ્રાપ્ત નહીં કરેલા) હોય તો ઉદીર્ણ ન હોય કિન્તુ
 ઉપશાન્ત હોય એવી દશામાં તે પુરુષનો વિજય થાય છે અને તેથી વિપરીત
 સ્થિતિવાળાનો પરાજય થાય છે (સે તેજઃદ્વેજં ગોયમા । પથં યુચ્યહ) કે ગૌતમ ।
 તે કારણે હું એવું કહું છે કે સધીરિણ પરાવિજિજ્ઞ અધીરિણ પરાજિજ્ઞહ "
 વીર્યમુક્ત પુરુષ, સમાન ધયના સમાન આમ ત્રાણા સમાન સામગ્રી અને ઉપ
 કરણવાળા વીર્યરહિત પુરુષને જીતી લાય છે, અને વીર્યરહિત વ્યક્તિ તેની

દેન-‘નો નિધત્તાનિ, નો નિકાચિત્તાનિ’ અનયોઃ સંગ્રહઃ, ‘ળો ઉદિણ્ણાઈ’ નો ઉદોર્ણાનિ, કિન્તુ ‘ઁવસંતાઈ ભવંતિ’ ઉપશાન્તાનિ કાર્યકરણાસમર્થાનિ ભવંતિ, ‘સે ણ’ સ યલુ વીર્યવાન્ પુરુષઃ ‘પરાજિણઙ’ પરાજયતે અપરં પરાજિતં કરોતિ, ઇતાદ્દશઃ પુરુષો યુદ્ધ જેતા ભવતીત્યર્થઃ, ‘જસસ ણ વીરિયવજ્ઞાઈ કમ્માઈ વદ્ધાઈ જાવ ઉદિણ્ણાઈ ણો ઁવસંતાઈ ભવતિ’ યસ્ય પુરુષવિશેષસ્ય યલુ વીર્યવધ્યાનિ કર્માણિ વદ્ધાનિ સ્પૃષ્ટાનિ નિધત્તાનિ નિકાચિત્તાનિ અભિસમન્વાગતાનિ ઉદોર્ણાનિ ઉદયાવલિકાયાં પ્રવિષ્ટાનિ કિન્તુ ઉપશાન્તાનિ નો ભવંતિ, ‘સે ણ પુરિસે પરાઙ્ગજ્ઞઙ’ સ યલુ વીર્યમદિતઃ પુરુષઃ પરાજીયતે અપરેણ પરાજિતો ભવતિ ।

ળો પુદ્ધાઈ જાવ ણો અભિસમણ્ણાગયાઈ ણો ઉદિણ્ણાઈ ણો ઁવસંતાઈ ભવંતિ, સે ણ પરાજિણઙ) જિસ જીવને વીર્યવધ્ય-વીર્યરહિત અર્થાત્ શત્રુદમનીય કર્મોં કો તદ્રૂપ મેં નહીં બાંધા હૈ, નહીં સ્પર્શ કિયા હૈ, યાવત્ નહીં પ્રાપ્ત કિયા હૈ, ઁસકે વે કર્મ ઉદોર્ણ નહીં હૈ, કિન્તુ ઉપશાંત હૈ કાર્ય કરને મેં અસમર્થ હૈં ઇસા પુરુષ યુદ્ધમેં દુસરે કો જીતતા હૈ યહાં યાવત્ શબ્દ સે નિધત્ત ઔર નિકાચિત્ત ઇન દોં પદોં કા સંગ્રહ હુઆ હૈ । ઇસ સે વીર્યવધ્ય કર્મ ઁસકે ન નિધત્ત હૈં ઔર ન નિકાચિત્ત હૈં ઇસા અર્થબોધ હોના હૈ । (જસસ ણ વીરિયવજ્ઞાઈ કમ્માઈ વદ્ધાઈ જાવ ઉદિણ્ણાઈ ણો ઁવસંતાઈ ભવતિ) તથા જિસ પુરુષકે વીર્યવધ્ય કર્મવદ્ધ હોતે હૈં-અર્થાત્ જિસ પુરુષ ને વીર્યરહિત કર્મોં કો બાંધા હૈ, ઁન્હે સ્પર્શ કિયા હૈ, વે ઁસકે નિધત્ત હૈ, નિકાચિત્ત હૈં, અભિસમન્વાગત હૈં, ઉદયાવલિકા મેં પ્રવિષ્ટ હૈં કિન્તુ ઉપશાન્ત નહીં હૈં (સે પુરિસે પરાઙ્ગજ્ઞઙ) ઇસા વહ પુરુષ

જાવ ણો અભિસમણ્ણાગયાઈ ણો ઉદિણ્ણાઈ ણો ઁવસંતાઈ ભવતિ સે ણ પરાજિણઙ) હે ગૌતમ । જે જીવે વીર્યવધ્ય-વીર્યરહિત ઁટલે કે શત્રુથી નાશ થનારા કર્મોં બાધ્યા નથી, સ્પર્શ્યા નથી, યાવત્ પ્રાપ્ત કર્યા નથી તેના તે કર્મ ઉદોર્ણ નથી, પણ ઉપશાન્ત છે-કાર્ય કરવાને અસમર્થ છે-ઁવેવો પુરુષ યુદ્ધમાં બીજા પુરુષને જીતે છે અહીં “યાવત્” પદ વડે નિધત્ત અને નિકાચિત્ત, ઁ ઁ પદોને પણ સમાવેશ થયો છે તેમ ચમજ્જુ તેથી ઁવેવો અર્થબોધ થાય છે કે તેના વીર્યવધ્ય કર્મ નિધત્ત પણ નથી અને નિકાચિત્ત પણ નથી (જસસ ણ વીરિયવજ્ઞાઙ કમ્માઈ વદ્ધાઈ જાવ ઉદિણ્ણાઈ ણો ઁવસંતાઈ ભવંતિ) તથા જે પુરુષે વીર્યવધ્ય કર્મોં બાધ્યા હોય છે-ઁટલેકે જે પુરુષે વીર્યરહિત કર્મોં બાધ્યા છે, સ્પર્શ્યા છે, નિધત્ત અને નિકાચિત્ત પણ કર્યા છે, અને જેના તે કર્મોં અભિસમન્વાગત છે અને ઉદયાવલિકામાં પ્રવેશી ચુક્યા છે પણ હા-

णेरइयाण भते ! किं सवीरिया अवीरिया, गोयमा ! णेरइया
 लद्धिवीरएण सवीरिया, करणवीरिएण सवीरियावि अवीरि
 यावि । से केणट्टेण ? गोयमा ! जेसिं ण णेरइयाण अस्थि
 उट्ठाणे कम्मे घले वीरिए पुरिसक्कारपराक्कमे, तेण णेरइया
 लद्धिवीरिएण वि सवीरिया करणवीरिएण वि सवीरिया ।
 जे सि ण णेरइयाण णस्थि उट्ठाणे जाव परक्कमे तेण णेरइया
 लद्धिवीरिएण सवीरिया, करणवीरिएण अवीरिया से तेण
 ट्टेणं० । जहा णेरइया, एव जाव पचिदिय तिरिक्खजोणिया
 मणूसा जहा ओहिया जीवा, णवर सिद्धवज्जा भाणियवा ।
 वाणमतरजोइसवेमाणिया जहा णेरइया । सेव भते सेव
 भते, ति जाव विहरइ ॥ सू० ९ ॥

॥ पढमसए अट्ठमो उद्देशो ॥ १-८॥

छाया—जीवाः खलु मदन्त ! किं सवीर्यां अवीर्यां ? गौतम ! सवीर्यां अपि
 अवीर्यां अपि । तत्केनार्येन ? । गौतम ! जीवा द्विविधा मज्झमा तथया—संसार-
 समापन्नकायासंसारसमापन्नकाय । तत्र ये तेऽसंसारसमापन्नकास्ते सिद्धाः, सिद्धा
 अवीर्याः । तत्र खलु ये ते संसारसमापन्नकास्ते द्विविधाः मज्झमाः तथया शैलेशी
 प्रतिपन्नकाय, अशैलेशीप्रतिपन्नकाय । तत्र ये ते शैलेशीप्रतिपन्नकास्ते सम्मि
 वीर्येण सवीर्याः करणवीर्येणावीर्या । तत्र य तेऽशैलेशी प्रतिपन्नकास्ते सम्मि
 वीर्येण सवीर्या करणवीर्येण सवीर्या अपि अवीर्या अपि, तत्केनार्येन गौतम !
 एवमुच्यते—जीवाः सवीर्या अपि अवीर्या अपि । नैरयिका खलु मदन्त ! किं
 सवीर्यां अवीर्यां ? गौतम ! नैरयिका सम्मिषीर्येण सवीर्या करणवीर्येण सवीर्या
 अपि अवीर्या अपि । तत्केनार्येन मदन्त ? । गौतम ! ययां खलु नैरयिकानाम्
 अस्ति उत्थानम् कर्म बलम् वीर्यम् पुरुषकारपराक्रम, त नैरयिका सम्मिषीर्येणापि
 सवीर्याः, करण वीर्येणापि सवीर्या येयां खलु नैरयिकानां नास्ति उत्थानम्
 पावत्पराक्रमः । ते खलु नैरयिका सम्मिषीर्येण सवीर्याः करणवीर्येणावीर्या तत्केना-

અથ વીર્યવિચાર:—

પૂર્વે ‘સવીરિણ અવીરિણ’ ઇત્યાદિ વર્ણિતમ્, તત્પ્રસ્તાવાદેવ વીર્યમૂત્રમાંહ—
‘જીવા ણં મંતે’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—જીવા ણં મંતે! કિં સવીરિયા અવીરિયા? ગોયમા!
સવીરિયાવિ અવીરિયાવિ, સે કેણદ્દેણં ગોયમા! જીવા દુવિહા
પન્નત્તા, તં જહા—સંસારસમાવણ્ણગા ય અસંસારસમાવણ્ણગા
ય, તત્થણં જે તે અસંસારસમાવણ્ણગા તેણં સિદ્ધા, સિદ્ધા ણં
અવીરિયા, તત્થણં જે તે સંસારસમાવણ્ણગા તે દુવિહા પન્નત્તા
તં જહા—સેલેસિ પડિવણ્ણગા ય, અસેલેસિ પડિવણ્ણગા ય તત્થ ણં
જે તે સેલેસિ પડિવણ્ણગા તે ણં લક્ઠિવીરિણ ણં સવીરિયા, કરણ-
વીરિણ ણં અવિરિયા, તત્થ ણં જે તે અસેલેસી પડિવણ્ણયા તેણં
લક્ઠિવીરિણ ણં સવીરિયા કરણવીરિણં સવીરિયા વિ, અવિરિયાવિ
સે તેણદ્દેણં ગોયમા! એવં વુચ્ચઈ જીવા સવીરિયાવિ અવીરિયાવિ ।

મેં ભાંડમત્ર ઉપકરણ યે જો દો શબ્દ આયે હૈં ઉનમેં હિરણ્ય સુવર્ણ
આદિ કો ભાંડસે ઓર કાંસે આદિ કે વર્તનોં કો અમત્ર શબ્દ સે કહા
ગયા હૈં । અથવા—ભાંડમાત્રા ગણિમાદિ દ્રવ્યરૂપ જો પરિચ્છેદ હૈં વેહં
ભાંડમાત્રા હૈં । તથા અનેકવિધ જો વસ્ત્ર શસ્ત્ર આદિ હૈં વે ઉપકરણ હૈં ।
હસસે ઉન દોનોં કો સમાન સામગ્રીવાંલા કહા હૈં ॥ સૂ૦ ૮ ॥

॥ હસ પ્રકાર યહ મૃગધાતક આદિ પુરુષ પ્રકરણ સમાપ્ત હુઆ ॥

ભારત પરાંન્ય પામે છે “સરિસમંડમત્તોવગરણા” એ પદમા જે “લાડા-
મત્ર ઉપકરણ” પદમા લાડ અને અમત્ર, એ જે શબ્દોનો પ્રયોગ થયો છે.
તેમા હિરણ્ય, સુવર્ણ વગેરેના ઉપકરણોને ‘લાડ’ કહે છે અને કાસા વગેરેના
વાસણો અથવા ઉપકરણોને “અમત્ર” કહે છે અથવા—“લાડમાત્રા”—ગણિ-
માદિ દ્રવ્યરૂપ જે પરિશિદ્ધ છે તેને લાડમાત્રા કહે છે, તથા વિવિધ પ્રકારના જે
વસ્ત્ર, શસ્ત્ર વગેરે હોય છે તેને ઉપકરણ કહે છે તેથી તે ણંનેને સમાન
સામગ્રીવાળા કહેવામા આવ્યા છે ॥ સૂ-૮ ॥

॥ મૃગધાતક આદિ પુરુષ પ્રકરણ સમાપ્ત ॥

અસંસારસમાપન્નકાશ્ચ, 'તત્થ ણ જે અસંસારસમાવજ્જગા' તથા સ્વલુ પે અસંસારસમાપન્નકા, 'તેયં સિદ્ધા' તે સ્વલુ સિદ્ધા, 'સિદ્ધાણં અધીરિયા' સિદ્ધા સ્વલુ અધીર્યા, કરણવીર્યસ્યામાયેન સિદ્ધા અધીર્યાં' એવિ કથ્યંતે, 'તત્થ ણ જે તે સંસારસમાવજ્જયા' તથા સ્વલુ પે તે સંસારસમાપન્નકાઃ સંસારિણઃ 'તે દુવિહા પન્નસા' તે દ્વિવિધા પ્રાપ્તા, 'તં જહા' તથા—'સેલેસીપઙ્કિવજ્જગા ય' શૈલેશીપ્રતિપન્નકાશ્ચ અશૈલેશીપ્રતિપન્નકાશ્ચ, શીલેશ્ચ સર્વસંવરણરૂપ ચારિત્રવાન્ તસ્યેયમવસ્થા શૈલેશી અથવા શૈલાનાં પર્વતાનામીશ્ચ' એવિ શૈલેશીમેરુ-સ્તસ્યેષ યાડવસ્યા સા શૈલેશી સ્થિરતાસાધર્મ્યાન્, સ્થિરતા ચ સર્વથા યોગનિરોધેષ મ્મ-ઇ-ઉ-અ-લુ-ઇતિ પંચહસ્વાસરોચાર કાલપ્રમાણા, તાં પ્રતિપન્ના પે તે શૈલેશીપ્રતિ

કહે ગયે છે. જે હસ પ્રકાર સે છે—એક સંસારસમાપન્નકાશ્ચ અને દુસરે અસંસારસમાપન્નકા (તત્થ ણ જે અસંસાર સમાવજ્જગા સે ણં સિદ્ધા) હનમેં જો અસંસારસમાપન્નકા છે તે સિદ્ધા છે. (સિદ્ધાણં અધીરિયા) પે સિદ્ધા કરણવીર્યકે અમાય સે વીર્ય ચિનાકે છે એસે કહે ગયે છે. (તત્થ ણ જે તે સંસારસમાવજ્જયા તે દુવિહા પન્નસા) તથા જો સંસારસમાપન્નકા જીવ છે તે દો પ્રકારકે કહે ગયે છે. (તં જહા) જે દો પ્રકાર ય છે—(સેલેસી પઙ્કિવજ્જગા ય અસેલેસી પઙ્કિવજ્જગા ય) એક શૈલેશીપ્રતિપન્નકાશ્ચ અને દુસરે અશૈલેશી પ્રતિપન્નકાશ્ચ. જો શીલકે રૂપા હોતે છે તથા શીલેશ કહે ગયે છે—અર્થાત્ સર્વસંવરણરૂપ ચારિત્રવાલે હી શૈલેશ હોતે છે. જન શૈલેશીની જો અવસ્થા હૈ તથા શૈલેશી હૈ. અથવા પર્વતોં કા રૂપા જો સુમેરુ પર્વત હૈ તથા પર્વત કે જૈસી અવસ્થા કા નામ શૈલેશી હૈ. તસ્ય સ્થિરતા કે સામર્થ્ય સે તથા શૈલેશી અવસ્થા કહી ગઈ હૈ. તથા સ્થિરતા

અવ બે પ્રકારના હોય છે—(૧) સંસાર સમાપન્નકા અને (૨) અસંસાર સમાપન્નકા (તત્થ ણ જે અસંસારસમાવજ્જગા સે ણં સિદ્ધા) તેમાં જે અસંસાર સમાપન્નકા હોય છે તેમને સિદ્ધ કહે છે (સિદ્ધાણં અધીરિયા) તે સિદ્ધોને કરણવીર્યને અમાયે વીર્યશક્તિ કહ્યા છે (તત્થ ણ જે તે સંસારસમાવજ્જયા તે દુવિહા પન્નસા) તથા જે સંસાર સમાપન્નકા હોય છે તે બે પ્રકારના કહ્યા છે, (તં જહા) તે બે પ્રકાર છે—(સેલેસી પઙ્કિવજ્જગા ય) (શૈલેશી-પ્રતિપન્નકા અને (૨) અશૈલેશી પ્રતિપન્નકા સર્વ સંવરણ ચારિત્રવાળા હોયને જ શીલેશ કહે છે તે શીલેશીની જે અવસ્થા તેનું નામ શૈલેશી છે

અથવા... પર્વતોના ઈશ જે સુમેરુ પર્વત છે, તે સુમેરુના જેવી અવસ્થાને શૈલેશી અવસ્થા કહે છે સ્થિરતાની અપેક્ષાએ સમાનતા હોવાથી એવી અવસ્થાને

યેન૦ યથા નૈરયિકાઃ એવં યાવત્ પંચેન્દ્રિયતિર્યગ્યોનિકાઃ । મનુષ્યા યથા ઔષિકા
જીવાઃ, નવરં સિદ્ધવર્જા ભણિતવ્યાઃ વાનવ્યંતરજ્યોતિષ્કવૈમાનિકા યથા નૈરયિકાઃ,
તદેવં ભદંત ! તદેવં ભદંત ! ઇતિ યાવદ્વિહરતિ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

॥ પ્રથમશતકેઽષ્ટમોદેશઃ ॥ ૧-૮ ॥

ટીકા—‘જીવા ણં મંતે’ જીવાઃ સ્વલુ ભદન્ત ! ‘કિં સવીરિયા અવીરિયા’
કિં સવીર્યાઃ અવીર્યાઃ ? જીવા. કિં વીર્યવન્તો ભવન્તિ નવેતિ પ્રશ્નઃ, ભગવાનાહ—
‘ગોયમે’ત્યાદિ, ‘ગોયમા’ હે ગૌતમ ! ‘સવીરિયાવિ-અવિરિયાવિ’ સવીર્યા
અપિ અવીર્યા અપિ । ‘સે કેણદ્દેણં’ તત્કેનાર્થેન, હે ભદન્ત ! કેન કારણેનૈવ
મુચ્યતે જીવાઃ સવીર્યા અપિ અવીર્યા અપીતિ । ભગવાનાહ—‘ગોયમે’ત્યાદિ ।
‘ગોયમા’ હે ગૌતમ ! ‘જીવા દુવિદ્ધાપ્પન્ના’ જીવાઃ દ્વિવિદ્ધાઃ પ્રજ્ઞતાઃ, ‘તં
જહા’-તદ્યથા-‘સંસારસમાવણ્ણગા ય અસંસારસમાવણ્ણગા ય’ સસારસમાવણ્ણકાશ્ચ,

વીર્યવિચાર-

પહિલે “સવીરિય અવીરિય” ઇત્યાદિ રૂપવર્ણન કિયા જા ચુકા હૈ
સો ડસી પ્રસ્તાવ કો લેકર અથ સૂત્રકાર વીર્યસૂત્ર કા કથન કરતે હૈ—
‘જીવા ણં મંતે ! કિં સવીરિયા અવીરિયા’ ઇત્યાદિ ।

ટીકાર્થ(મંતે) હે ભદન્ત ! (જીવા ણં) જીવ (કિં સવીરિયા અવીરિયા)
કયા વીર્ય સહિત હોતે હૈ કિ વિના વીર્ય કે હોતે હૈ ? (ગોયમા !
સવીરિયા વિ અવીરિયા વિ) હે ગૌતમ ! જીવ વીર્યવાલે ભી હોતે હૈ
ઔર વિના વીર્ય કે ભી હોતે હૈ । (સે કેણદ્દેણં) હે ભદન્ત ! આપ એસા
કિસ કારણ સે કહતે હૈ કિ જીવ વીર્યવાલે ભી હોતે હૈ ઔર વિના
વીર્યકે ભી હોતે હૈ (ગોયમા ! જીવા દુવિદ્ધા પ્પણ્ણત્તા-તં જહા-સંસાર
સમાવણ્ણગા ય અસંસારસમાવણ્ણગા ય) હે ગૌતમ ! જીવ દો પ્રકારકે

વીર્ય વિચાર-

પહેલા “સવીરિય અવીરિય” ઇત્યાદિરૂપ વર્ણન કરવામા આવ્યું છે તો
એ જ પ્રસ્તાવને અનુલક્ષીને સૂત્રકાર હવે વીર્યસૂત્રનું કથન કરે છે—

“જીવાણં મંતે ! કિં સવીરિયા” ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ—(મંતે !) હે ભગવન્ ! (જીવાણ કિં સવીરિયા અવીરિયા) શુ’
શુવો વીર્યસહિત હોય છે, કે વીર્યરહિત હોય છે ? (ગોયમા ! સવીરિયા વિ
અવીરિયા વિ) હે ગૌતમ ! શુવો વીર્યસહિત પણ હોય છે, અને વીર્યરહિત
પણ હોય છે (સે કેણદ્દેણં) હે ભગવન્ ! આપ શા કારણે એવું કહો છો કે શુવ
વીર્યસહિત પણ હોય છે અને વીર્યરહિત પણ હોય છે (ગોયમા ! જીવા દુવિદ્ધા
પ્પણ્ણત્તા તં જહા સંસારસમાવણ્ણગા ય અસંસાર સમાવણ્ણગા ય) હે ગૌતમ !

કથ્યન્તે । ‘તત્ત્વ ણં જે સ અસેલસી પઠિવળ્ણયા’ સપ્પ ચલુ ય તે અગ્ગેલેશી પ્રતિપક્કાઃ, ‘તેણ સદ્ધિચીરિણ સચીરિયા’ તે ચલુ સમ્મિચીર્યેણ સચીર્યા, ‘કરણ ચીરિયેણ સચીરિયા વિ અચીરિયા વિ’ કરણચીર્યેણ સચીર્યા અપિ અચીર્યા અપિ । તપ્પ સચીર્યા ઉત્થાનાદિક્રિયાવન્ત અચીર્યાસ્સુ ઉત્થાનાદિક્રિયારહિતા । તે પર્યાપ્તાદિ કાલે અવગન્તુયા ઇતિ । ‘સે તેણદ્દેણં ગોયમા’ સસેનાર્યેન ગૌતમ ! ‘एवं पुच्छह’ एवमुच्यते—‘સચીરિયા વિ-અચીરિયા વિ’ સચીર્યા અપિ અચીર્યા અપિ, ધીર્ય — જીવપ્રમથં ચલ્લમ્, તત્ સમ્મિચીયકરણચીયમદાન્ન દ્વિવિધમ્, સ્વ સમ્મિચીર્યમ્ આત્મચલ્લસ્ય સત્તાવિદ્ધેપરુપમેચ, કરણચીર્યં તુ કાર્યકરણમમઘોસ્સવ

કહે ગયે હૈ । (તત્ત્વ ણં જે સે અસેલેસી પઠિવળ્ણયા તે ણં સદ્ધિચીરિણ સચીરિયા વિ કરગચીરિણ, ણં સચીરિયા વિ અચીરિયા વિ) તથા જો અગ્ગેલેશીપ્રતિપક્ક જીવ હૈં વે સમ્મિચીર્યં ની અપેક્ષા સે સચીર્યં હોતે હૈં । ઓર કરણચીર્યં ની અપેક્ષા સે ચીર્યસહિત મી હોતે હૈં ઓર વિના ચીર્યકે મી હોતે હૈં । ઉત્થાન આદિ ક્રિયાકાલે જો હૈં વે સચીર્યં હૈં ઓર ઉત્થાન આદિ ક્રિયાઓ સે જો રહિત હોતા હૈ-વે વિના ચીર્યં કે જીવ-અપર્યાપ્ત આદિ સમય મેં હોતે હૈં । (સે તેણદ્દેણં ગોયમા ! एवं पुच्छह, सचीरिया वि अचीरिया वि) इसी कारण से है गौतम ! मैंने ऐसा कहा है कि जो अग्गेलेशी प्रतिपक्क जीव हँ वे चीर्य सहित मी होते हैं और विना चीर्य के मी होते हैं । जीव से जो बल उत्पन्न होता है उसका नाम चीर्य है । यह चीर्य सच्चिचौर्य और करण-चीर्य के भेद से दो प्रकार का होता है । इनमें जो सच्चिचौर्य होता है वह तो आत्मचल की विशेष मस्तकूप ही होता है । तथा जो करणचीर्य

નથી, તેથી તે અપેક્ષાએ તેમને અચીર્ય-વીચરહિત-કહ્યા છે (તત્ત્વ ણં જે સે અસેલેસી-પઠિવળ્ણયા તે ણં સદ્ધિચીરિણ સચીરિયા કરણચીરિણ સચીરિયા વિ અચીરિયા વિ) તથા જે અગ્ગેલેશી પ્રતિપક્ક હોવો છે તેઓ સમ્મિચીર્યની અપેક્ષાએ સચીર્ય છે પણ કરણચીર્યની અપેક્ષાએ વીચરહિત પણ હોય છે અને વીચરહિત પણ હોય છે ઉત્થાન વગેરે ક્રિયાવાળા જેઓ હોય છે તેઓ સચીર્ય હોય છે અને જેઓ ઉત્થાનાદિ ક્રિયારહિત હોય છે તેઓ અચીર્ય હોય છે અપર્યાપ્ત વગેરે સમયમા હવ અચીર્ય હોય છે (સે તેણદ્દેણ ગોયમા ! एवं पुच्छह, सचीरिया वि अचीरिया वि) के गौतम ! वे कहते थे जेवु अहं છે કે અગ્ગેલેશી પ્રતિપક્ક હવ વીચરહિત પણ હોય છે અને વીચરહિત પણ હોય છે હવમા જે બળ ઉત્પન્ન થાય છે તેને વીચર કહે છે તે વીચરના બે પ્રકાર તે—(૧) સમ્મિચીય અને (૨) કરણચીય તેમા જે સમ્મિચીય છે તે તે

પન્નકાઃ, તદ્વિન્ના અશૈલેશીપ્રતિપન્નકાઃ, 'તત્થળં જે તે સેલેસીપડિવન્નયા' તત્ર
 સ્વલુ યે તે શૈલેશી પ્રતિપન્નકાઃ 'તેળં લઢ્ધિવીરિયેળં સવીરિયા' તે સ્વલુ લઢ્ધિવીર્યેળ
 સવીર્યા, વીર્યાન્તરાયક્ષયક્ષયોપશમતો યા વીર્યસ્ય લઢ્ધિઃ સા એવ તદ્દેતુત્વાત્
 વીર્ય-લઢ્ધિવીર્યં તેન લઢ્ધિવીર્યેળ સવીર્યાઃ । એતેપાં ક્ષાયિકમેવ લઢ્ધિવીર્યમ્ ।
 'કરણ-વીરિણ અવીરિયા' કરણવીર્યેળાવીર્યાઃ લઢ્ધિવીર્યકાર્યભૂતા ક્રિયા
 કરણમ્ તદ્દૂપં વીર્યમિતિ કરણવીર્યમ્ । શૈલેશીપ્રતિપન્નકાસ્તદભાવાદવીર્યાઃ

શૈલેશ મેં સર્વથા યોગોં કે નિરોધ હો જાને પર આતી હૈં ઓર હસકા કાલ
 -અ-હ-ઉ-ઋ-લૃ-૯-પાંચ હ્રસ્વાક્ષરોં કે ઉચ્ચારણકાલ કે વરાવર હૈં ।
 હસ શૈલેશી અવસ્થા કો જો પ્રાપ્ત હો ચુકે હૈં વે શૈલેશીપ્રતિપન્નક હૈં ।
 ઓર હનસે ભિન્ન જો જીવ હૈં વે અશૈલેશીપ્રતિપન્નક હૈં । (તત્થ ણં જે
 તે સેલેસીપડિવન્નયા) હનમેં જો શૈલેશીપ્રતિપન્નક હૈં (તે ણં લઢ્ધિવીરિયેળં
 સવીરિયા) વે લઢ્ધિવીર્યં સે સવીર્યં હૈં । વીર્યાન્તરાય કર્મ કે ક્ષય, ક્ષયોપ-
 શમ સે જો વીર્ય કી લઢ્ધિ હોતી હૈં વહ લઢ્ધિ હી તદ્દેતુ હોને કે કારણ
 અર્થાત્ વીર્ય કી પ્રાપ્તિ મેં કારણ હોને સે વીર્યરૂપ હૈં-અર્થાત્ લઢ્ધિવીર્યરૂપ
 હૈં । હસ લઢ્ધિવીર્યં સે વે સવીર્યં હોતે હૈં । હનમેં ક્ષાયિક ભાવરૂપ હી
 લઢ્ધિવીર્ય કારણ હૈં (કરણવીરિણં અવીરિયા) કરણવીર્યં સે વે અવીર્યં
 હૈં । લઢ્ધિવીર્ય કી કાર્યભૂત જો ક્રિયા હૈં હસકા નામ કરણ હૈં । હસ
 કરણરૂપ જો વીર્ય વહ કરણવીર્ય-યહ કરણવીર્ય શૈલેશીપ્રતિપન્નક જીવોં
 મેં હોતા નહીં હૈં હસલિયે હસકી અપેક્ષા સે વે અવીર્ય-વીર્ય વિના કે-

શૈલેશી કહી છે યોગાનો સર્વથા નિરોધ થવાથી તે અવસ્થા શૈલેશને જ પ્રાપ્ત
 થાય છે, અને તેનો કાળ અ-ઇ-ઉ-ઋ-લૃ-એ પાંચ હ્રસ્વ અક્ષરોના ઉચ્ચારણકાળ
 જેટલો જ હોય છે એવી શૈલેશી અવસ્થા જેમણે પ્રાપ્ત કરી હોય છે તેમને શૈલેશી
 પ્રતિપન્નક કહે છે અને તે ચૌદમે ગુણુ સ્થાને જ હોય છે અને તેમનાથી ભિન્ન
 ગુણુનાના છવોને અશૈલેશી પ્રતિપન્નક કહે છે (તત્થળં જે તે સેલેસી-પડિવન્નયા)
 તેમના જે શૈલેશીપ્રતિપન્નક છવો છે તેઓ (તેળં લઢ્ધિવીરિયેળ સવીરિયા)
 લઢ્ધિવીર્યને કારણે સવીર્ય છે વીર્યાન્તરાય કર્મના ક્ષય અને ક્ષયોપશમથી જે
 જે વીર્ય-લઢ્ધિ પ્રાપ્ત થાય છે, તે લઢ્ધિ જ વીર્યપ્રાપ્તિમા કારણભૂત હોવાથી
 વીર્યરૂપ છે-એટલે કે લઢ્ધિ વીર્યરૂપ છે. આ લઢ્ધિવીર્યથી જ તેઓ વીર્ય-
 યુક્ત કહેવાય છે ક્ષાયિકભાવરૂપ લઢ્ધિવીર્ય જ તેમા કારણભૂત છે (કરણ
 વીરિણ અવીરિયા) પરંતુ કરણવીર્યની અપેક્ષાએ તેઓ અવીર્ય-વીર્યરહિત-
 છે લઢ્ધિવીર્યની કાર્યભૂત જે ક્રિયા છે તેનું નામ કરણ છે તે કરણરૂપ જે
 વીર્ય તેનું નામ કરણવીર્ય છે તે કરણવીર્ય શૈલેશી પ્રતિપન્નક છવોમા હોતું

ધીર્યેણ સધીર્યાઃ ધીર્યસહિતાઃ 'કરણધીરિણ' કરણધીર્યેણ 'સધીરિયા વિ' સધીર્યાં
 અપિ 'અધીરિયાવિ' અપિ-અધીર્યાં અપિ। પુનઃ પ્રશ્નયતિ- 'સે કેણદ્વેષં' ઉત્તરેનાર્થેન
 મદન્ત્સ। એવમુચ્યતે ચત્ નારકજીવાઃ સધીર્યાં અપિ અધીર્યાં અપિ, મગધાનાહ 'ગોયમે'
 ત્યાદિ। 'ગોયમા' હે ગૌતમ! 'જેસિં ણં જેરહયાણં અત્થિ' યેપાં સહુ નેર
 યિકાણામ્ અસ્થિ 'ઉદ્ધાએ કમ્મે વલે ધીરિણ પુરિસકારપરકમે' ઉત્થાનં કર્મ વર્સ
 ધીર્યં પુરુષકાર પરાક્રમઃ, સત્ત્વ ઉત્થાનમ્-વૈષ્ટાવિશેષઃ, કર્મ = ધ્રમણાદિક્રિયા,
 વલ્લમ્=અરીરસામર્થ્યમ્, ધીર્યમ્=આત્મપ્રમથ વલ્લમ્, પુરુષકાર-અમિમાનવિશેષઃ,
 પરાક્રમ-નિરુપાદિતસ્વવિપયઃ પુરુષકાર એવ। 'સેણં નેરહયા' તે સહુ નૈરયિકાઃ

હે ગૌતમ! નારકજીવ લગ્નિધધીર્યંની અપેક્ષા છેકર તો ધીર્યં સહિત કે
 હોતે હૈ ઓર કરણધીર્યંની અપેક્ષા છેકર ધીર્યંસહિત ધીર્યં હોતે હૈ ઓર
 ધીર્યંસહિત ધીર્યં હોતે હૈ (સે કેણદ્વેષં) હે મદન્ત્સ! આપ એસા કિસ
 કારણ સે કહતે હૈ કિ નારક જીવ લગ્નિધધીર્યંની અપેક્ષા સે તો ધીર્યં-
 સહિત હોતે હૈ ઓર કરણધીર્યંની અપેક્ષા સે કે ધીર્યંસહિત ધીર્યં હોતે હૈ
 ઓર ધીર્યંસહિત ધીર્યં હોતે હૈ (ગોયમા! જેસિં ણં નેરહયાણં અત્થિ ઉદ્ધાને
 કમ્મે વલે ધીરિણ પુરિસકારપરકમે તે ણ નેરહયા લગ્નિધીરિણ વિ સધી
 રિયા, કરણધીરિણ વિ સધીરિયા) હે ગૌતમ! જિન નારકોં કે ઉત્થાન
 કર્મ, વલ, ધીર્યં, પુરુષકારપરાક્રમ હૈ કે નારકલગ્નિધધીર્યંની અપેક્ષા સે
 ધીર્યંવાલે હૈ ઓર કરણધીર્યંની અપેક્ષા સે ધીર્યંવાલે હૈ। વૈષ્ટા-
 વિશેષ કા નામ ઉત્થાન હૈ। ધ્રમણાદિ ક્રિયા કા નામ કર્મ હૈ। શારી-
 રિકસામર્થ્ય કા નામ વલ હૈ। આત્મોદયવલ કા નામ ધીર્યં હૈ। અમિમાન

નારક જીવો લગ્નિધધીર્યંની અપેક્ષાએ વીર્યંસહિત હોય છે, અને કરણધીર્યંની
 અપેક્ષાએ વીર્યંસહિત પણ હોય છે અને વીર્યંસહિત પણ હોય છે (સે કેણ-
 દ્વેષં) હે મદન્ત્સ! આપ શા કારણે એવું કહે છે કે નારક જીવો લગ્નિ-
 ધીર્યંની અપેક્ષાએ વીર્યંસહિત હોય છે, અને કરણધીર્યંની અપેક્ષાએ વીર્યંસહિત
 પણ હોય છે અને વીર્યંસહિત પણ હોય છે? (ગોયમા! જેસિં ણ નેરહયાણ
 અત્થિ ઉદ્ધાને કમ્મે વલે ધીરિણ પુરિસકારપરકમે તે ણ નેરહયા લગ્નિધીરિણ
 વિ સધીરિયા કરણધીરિણ વિ સધીરિયા) હે ગૌતમ! જે નારકોને ઉત્થાન
 કર્મ, વલ, વીર્યં અને પુરુષકાર પરાક્રમ છે, તે નારકો લગ્નિધીર્યંની અપેક્ષાએ
 પણ વીર્યંવાળા છે અને કરણધીર્યંની અપેક્ષાએ પણ વીર્યંવાળા છે વૈષ્ટાવિ-
 શેષને ઉત્થાન કહે છે ધ્રમણાદિ ક્રિયાને કર્મ કહે છે શારીરિક સામર્થ્યને
 વલ કહે છે આત્મબળને વીર્ય કહે છે અમિમાન વિશેષને પુરુષકાર કહે છે

એવે, લલ્લિધવીર્યં તુ પ્રાયઃ સર્વેષામેવ સંસારિજીવાનાં ભવતિ, કરણવીર્યં સર્વેષાં જીવાનાં ભવેદેવેતિ ન નિયમઃ કિન્તુ ભવેન્નત્રો ભવેદિતિ ।

જીવસામાન્યસ્ય વીર્યં ભવતિ નવેતિ વિચાર્ય જીવવિશેષે તદ્વિચારણાયાહ—
'નેરહ્યાણં મંતે ' ઇત્યાદિ । ' નેરહ્યાણં મંતે ' નૈરયિકાઃ સ્વલુ જીવાઃ હે ભદન્ત !
' કિં સવીરિયા અવીરિયા ' કિં સવીર્યા અવીર્યા, નારકાઃ સ્વલુ જીવાઃ હે
ભદન્ત ! વીર્યવન્તો ભવન્તિ અવીર્યવન્તો વા ભવન્તિ । મગવાનાહ—'ગોયમે 'ત્યાદિ,
' ગોયમા ' હે ગૌતમ ! ' નેરહ્યા લલ્લિધવીરિણં સવીરિયા ' નૈરયિકાઃ લલ્લિધ-

હોતા હૈ વહ કાર્ય કરને મેં સમર્થ આત્મચલરૂપ હોતા હૈં । લલ્લિધવીર્યં
સમસ્ત હી સંસારી જીવોં કે હોતા હૈ । પરન્તુ જો કરણવીર્યં હૈ વહ સર્વ
જીવોં કે હોતા હી હૈ એસા નિયમ નહીં હૈ । ક્યોં કિ અપર્યાસકાલમેં વહ
સર્વ જીવોં કે નહીં હોતા—અતઃ વહ હોતા ખી ઓર નહીં ખી હોતા હૈ ।
વીર્યં એક પ્રકારકા આત્મચલ હૈ । લલ્લિધવીર્યં એક જાન કે આત્મચલકી
સત્તારૂપ હોતા હૈ । કરણવીર્યં કોઈ ખી પ્રકારકી ક્રિયા કરતે હુએ આત્મ-
ચલરૂપ હોના હૈ । વીર્યં જીવ સામાન્ય કે હોતા ખી હૈ ઓર નહીં ખી
હોતા હૈ એસા વિચાર કરકે અવ સૂત્રકાર ડસ વીર્યં કા જીવ વિશેષકે
સાથ વિચાર કરને કે નિમિત્ત પ્રશ્નોત્તરરૂપ સૂત્રોં કા કથન કરતે હૈં—
(નેરહ્યાણં મંતે ! કિં સવીરિયા ? અવીરિયા ?) હે ભદન્ત ! નારક જીવ
ક્યા વીર્યસહિત હોતે હૈં કિ વિના વીર્યં કે હોતે હૈ ? (ગોયમા ! નેરહ્યા
લલ્લિધવીરિણં સવીરિયા કરણવીરિણં સવીરિયા વિ અવીરિયા વિ)

આત્મબળની સત્તા વિશેષરૂપ હોય છે તથા જે કરણવીર્યં છે તે કાર્ય કરવાને સમર્થ
એવા આત્મબળરૂપ હોય છે તમામ સંસારી જીવોમાં લલ્લિધવીર્યં હોય છે.
પણ કરણવીર્યં તમામ સંસારી જીવોમાં હોય છે જ એવો નિયમ નથી કારણ
કે અપર્યાપ્ત અવસ્થામાં તે સર્વ જીવોમાં હોતું નથી—તેથી તે હોય પણ છે
અને નથી પણ હોતું એવું કહ્યું છે વીર્યં એક પ્રકારનું આત્મબળ છે લલ્લિધ-
વીર્યં એક જાતના આત્મબળની સત્તારૂપ હોય છે. કરણવીર્યં કોઈ પ્રકારની
ક્રિયા કરતા આત્મબળરૂપ હોય છે સામાન્ય જીવો વીર્યયુક્ત પણ હોય છે
અને વીર્યરહિત પણ હોય છે, એ બાબતનું નિરૂપણ કરીને હવે સૂત્રકાર તે
વીર્યનો વિચાર જીવ વિશેષને અનુલક્ષીને કરવા માટે પ્રશ્નોત્તરરૂપ સૂત્રોનું કથન
કરે છે (નેરહ્યાણ મંતે ! કિં સવીરિયા ? અવીરિયા ?) હે ભગવન્ શુ નારક
જીવો વીર્યયુક્ત હોય છે કે વીર્ય વિનાના હોય છે ? (ગોયમા ! નેરહ્યા લલ્લિ-
ધવીરિણં સવીરિયા, કરણવીરિણં સવીરિયા વિ અવીરિયા વિ) હે ગૌતમ !

માવન્ત એ મવન્તીતિ માવઃ । ' સે તેજદ્વેષ૦ ' સ્વેનાર્થેન , અનેન કારણેન દે
ગૌતમ ! નારકજીવાઃ લઙ્ઘિવીર્યેણ સર્વીર્યા કરણવીર્યેણ તુ સત્તીર્યા અપિ સર્વીર્યા
અપીતિ માવઃ । નારકજીવાનામ્ વીર્યવત્ પ્રતિપાદ્ય શ્લેષપ્રયોગિષ્વતિદ્વંશકજીવાનાં
સત્પ્રતિપાદયિતુમાઃ—' જહે ' સ્પાદિ, ' જહા યેરહ્યા એષ જ્ઞાવ પંચિદિયતિરિ
ક્સજોગિયા ' યથા યેરહ્યા એષ યાવત્ પચેન્દ્રિયતિર્યગ્મોનિકાઃ, યેન રૂપેણ
નારકવિપયે વીર્યસ્ય સમ્પ્રાપ્તિરિદમ્ ચિન્તિતમ્ એષ તંનૈવ પ્રકારેણ યાવત્ પચેન્દ્રિય
વીર્ય સે સર્વીર્ય હૈ, પરન્તુ કરણવીર્ય સે રહિત હોને કે કારણ વીર્યવાલે
નહીં હૈ । યદ્ કથન અપર્યાપ્ત અવસ્થા કી અપેક્ષા સે ક્રિયા ગયા જાનના
આહિયે । ક્યોં કિ અપર્યાપ્તાવસ્થા મેં કિસી મી જીવ કે ઉત્થાનાદિ
ક્રિયાઈ નહીં હોતી હૈ । અતઃ અપર્યાપ્તાવસ્થા મેં ઉત્થાનાદિ ક્રિયા રહિત
નારકજીવ લઙ્ઘિવીર્યવાલે હોતે હુપ મી કરણવીર્ય કી અપેક્ષા સર્વીર્ય-
માવધિશિષ્ટ હી હોતે હૈ । (સે તેજદ્વેષ૦) હસ કારણ હે ગૌતમ ! નારક
જીવ લઙ્ઘિવીર્ય કી અપેક્ષા સે સર્વીર્ય હોને પર મી કરણવીર્ય કી અ-
પેક્ષા સે તો કે સર્વીર્ય મી હોતે હૈ ઓર વીર્ય સે રહિત મી હોતે હૈ-
એસા મૈને કહા હૈ । હસ તરહ નારક જીવોં મેં વીર્યવત્તા કા પ્રતિપાદન
કરકે અથ સૂત્રકાર શ્લેષ ૨૩ વૃણકોં મેં હસ પામ કો પ્રતિપાદન કરને
કે નિમિત્ત કહતે હૈ કિ—(જહા યેરહ્યા એવં જ્ઞાવ પંચિદિયતિરિક્સજો
ગોગિયા મળૂયા જહા ઓહિયા જીવા ણવર સિદ્ધચન્દ્રા માગિયન્ના,
વાળમંતર-જોતિસ-ધેમાગિયા જહા યેરહ્યા) જિસ રૂપ સે નારકવિપય
મેં વીર્ય કે સમ્પ્રાપ્ત અસમ્પ્રાપ્ત કા વિચાર ક્રિયા ગયા હૈ, ડસી પ્રકાર સે

૭૫૦ લઙ્ઘિવીર્યની અપેક્ષાએ સર્વીર્ય છે, પરન્તુ કરણવીર્યની અપેક્ષાએ સર્વીર્ય
છે આ કથન અપર્યાપ્ત અવસ્થાની અપેક્ષાએ કરવામાં આવ્યું છે તેમ સમ
જનું કારણ કે કોઈ પણ જીવને અપર્યાપ્ત અવસ્થામાં ઉત્થાન આદિ ક્રિયાઓ
હોતી નથી. તેથી અપર્યાપ્તાવસ્થામાં ઉત્થાનાદિ ક્રિયાશક્તિ નારક જીવ લઙ્ઘિ
વીર્યવાળા હોવા છતાં કરણવીર્યની અપેક્ષાએ સર્વીર્ય હોવા છે (સે તેજ
દ્વેષ૦) તે ગૌતમ ! તે કારણે જ એવું કહ્યું છે કે નારક જીવ લઙ્ઘિવીર્યની
અપેક્ષાએ સર્વીર્ય હોવા છતાં પણ કરણવીર્યની અપેક્ષાએ સર્વીર્ય પણ હોવા
છે અને સર્વીર્ય પણ હોવા છે આ રીતે નારક જીવોમાં સર્વીર્યવાળું પ્રતિપાદન
કરીને હવે સૂત્રકાર બાહીનાં ૨૩ વૃણકોમાં તેનું પ્રતિપાદન કરવાને માટે કહે છે કે
(જહા યેરહ્યા એવં જ્ઞાવ પંચિદિયતિરિક્સજોગિયા મળૂયા જહા ઓહિયા જીવા
ણવર સિદ્ધચન્દ્રા માગિયન્ના વાળમંતર-જોતિસ-ધેમાગિયા જહા યેરહ્યા) એવી
રીતે નારકજીવોના અવસ્થામાં સર્વીર્યના સમ્પ્રાપ્ત અને અસમ્પ્રાપ્તના વિચાર કરવામાં

‘લઢિવીરિણ વિ સવીરિયા કરણવીરિણ વિ સવીરિયા’ લઢિવીર્યેણાપિ-
સવીર્યાઃ કરણવીર્યેણાપિ સવીર્યાઃ ‘જેસિ ણં નેરહ્યા ણં’ યેષાં સ્વલુ નૈરયિકાણામ્
‘ળત્થિ ઉદ્ધાણે જાવ પરક્કમે’ નાસ્તિ ઉત્થાનં યાવત્ પરાક્રમઃ, ઉત્થાનબલવીર્ય-
પુરુષકારપરાક્રમાઃ યેષાં ન સંતીત્યર્થઃ, ‘તેણં નેરહ્યા’ તે સ્વલુ નૈરયિકાઃ
‘લઢિવીરિણં સવીરિયા’ લઢિવીર્યેણ સવીર્યાઃ ‘કરણવીરિણં અવીરિયા’
કરણવીર્યેણ અવીર્યાઃ, અપર્યાપ્તાવસ્થાપેક્ષયા, ઉત્થાનાદિરહિતા નારકજીવાસ્તુ
લઢિવીર્યેણ વીર્યવન્તો ભવન્તોઽપિ-કરણવીર્યેણ તુ અપર્યાપ્તાવસ્થામાશ્રિત્ય વીર્યા-

વિશેષ કા નામ પુરુષકાર । નિષ્પાદિત સ્વવિષયવાલે કા નામ હી પરા-
ક્રમ હૈ । તાત્પર્ય ઇસકા યહ હૈ કિ લઢિવીર્ય આત્મબલ કી સત્તારૂપ
હોતા હૈ । સો નારક જીવોં મેં આત્મબલકી સત્તા હૈ હી અતઃ ઇસ આત્મ-
બલ કી સત્તારૂપ લઢિવીર્ય ઉનમેં હોને સે વે ઇસલઢિવીર્ય કી અપેક્ષા
ભી સવીર્ય કહલાતે હૈં । તથા કરણવીર્ય કોઈ ભી પ્રકાર કી ક્રિયા
કરનેવાલે આત્મબલરૂપ હોતા હૈ સો જિન નારક જીવોં કા ઉત્થાનાદિ
ક્રિયા કરને મેં લગા હુઆ વહ આત્મબલ હૈ વે ઉસ કરણ વીર્ય સે ભી
યુક્ત હૈં । ઔર જિનકા આત્મબલ ઉત્થાનાદિ ક્રિયા રહિત હૈ વે ઉસ
વીર્ય સે રહિત હૈં । અતઃ વે ઉસ વીર્ય કી અપેક્ષા અવીર્ય વાલે હૈં । યહી
ચાત સૂત્રકાર ને (જેસિ ણં નેરહ્યાણં ળત્થિ ઉદ્ધાણે જાવ પરક્કમે, તે ણં
નેરહ્યા લઢિવીરિણં સવીરિયા, કરણવીરિણં અવીરિયા) ઇસ સૂત્ર-
દ્વારા પ્રદર્શિત કી હૈ । ઇસમેં ઉન્હોંને યહ દર્શાયા હૈ કિ જિન નારક
જીવોં કા બલ ઉત્થાન યાવત્ પરાક્રમ કરનેરૂપ ક્રિયા મેં નહીં લગા હુઆ
હૈં-અર્થાત્ જિનકે ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઈ નહીં હૈં વે નારક જીવ યદ્યપિ લઢિ-

અને નિષ્પાદિત સ્વવિષયવાળા પુરુષકારનું નામ જ પરાક્રમ છે તેનું તાત્પર્ય
એ છે કે લઢિવીર્ય આત્મબળની સત્તારૂપ હોય છે નારકજીવોમાં આત્મ-
બળની સત્તા છે જ તે આત્મબળની સત્તારૂપ લઢિવીર્યનો તેમનામાં સદ્-
ભાવ હોવાથી લઢિવીર્યની અપેક્ષાએ તેઓ સવીર્ય કહેવાય છે-તથા કરણ-
વીર્ય કોઈ પણ પ્રકારની ક્રિયા કરનાર આત્મબળ રૂપ હોય છે, તો જે નારકો
ઉત્થાન વગેરે ક્રિયા કરવામાં લાગેલા આત્મબળવાળા હોય છે તેઓ તે કરણ-
વીર્યથી સહિત હોય છે અને જેમનું આત્મબળ ઉત્થાનાદિ ક્રિયા રહિત હોય
છે તે નારકો કરણવીર્યથી રહિત હોય છે તેથી તે વીર્યની અપેક્ષાએ તેઓ
અવીર્ય કહેવાય છે એજ વાત સૂત્રકારે (જેસિણ નેરહ્યાણ ળત્થિ ઉદ્ધાણે જાવ
પરક્કમે, તેણ નેરહ્યા લઢિવીરિણ સવીરિયા, કરણવીરિણ અવીરિયા) આ સૂત્ર
મારફત બતાવી છે જે નારક જીવોને ઉત્થાનાદિ ક્રિયાઓ હોતી નથી તે નારક

યાવદ્વિહરતિ, હે મદન્ત ! જીવાનાં સામાન્યરૂપણ વિશેષરૂપેણ ચ વીર્યવિષય યત્
મણિત સદ્ દવમેષ-સર્વથેય સત્યમિતિ-કથયિત્વા મગવન્ત નમસ્કૃત્ય પન્દિત્વા
સયમેન તપસ્યા આત્માનં ભાષયમાનો વિહરતિ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

इति श्री-जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्य-श्रीघासीलालप्रतिभिर
षितायां श्रीमगवतीसूत्रस्य प्रमेयचन्द्रिका-व्याख्यायां प्रथम
शतकस्य अष्टमोद्देशकः समाप्तः॥१-८॥

વીર્યવચ્ચા આદિકા વિચાર કર છેના આહિયે । (સેવ મતે સેવ મતે ! તિ
જાય વિહરત) હે મદન્ત ! આપ શેવાનુપ્રિય ને જીવોં કે વીર્ય કે વિષય
મેં જૈસા સામાન્યરૂપ સે ઓર વિશેષરૂપ સે વિચાર કિયા હૈ પ્રત્પણા કી
હૈ-બહ સય એસા હી હૈ-એસા હી હૈ અર્થાત્-સર્વથા હી સત્ય હૈ-એસા
કહ કર ઘે ગૌતમ સ્વામી મગવાન્ કો નમસ્કાર કરકે ઊંકો સંદના
કરકે સયમ ઓર તપ સે આત્મા કો ભાષિત કરતે હુણ વહાં સે અપને
સ્થાન પર આકર પૈઠ ગયે ।

जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्य श्रीघासीलालजी
महाराजकृत मगवतीसूत्रकी प्रमेयचन्द्रिका व्याख्या
के प्रथमशतकका आठवा उद्देशक समाप्त ॥१-८॥

(સેવ મતે ! સેવ મતે ! તિ જાય વિહરત) હે મગવન્ત ! આપે છવેના
વીર્યના વિષયમાં સામાન્યરૂપે અને વિશેષ રૂપે જેવી પ્રત્પણા કરી છે, એ
પ્રમાણે જ તે તમામ હકીકત છે એ વાત તદ્દન સત્ય છે એ પ્રમાણે કહીને
ગૌતમ સ્વામીએ મહાવીર પ્રભુને વહન નમસ્કાર કર્યા. અને વહન નમસ્કાર
કરીને સયમ અને તપથી પોતાના આત્માને ભાષિત કરતાં પોતાને સ્થાને ગયા.
પ્રતિભી જૈનાચાર્ય જૈનધર્મદિવાકર પૂજ્યશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજકૃત મગવતીસૂત્રની
પ્રિવદશિનીવ્યાખ્યાના પહેલા શતકનો આઠમો ઉદ્દેશક સમાપ્ત ॥૧-૮॥

તિર્યગ્યોનિકવિષયેऽપિ ચિન્તનીયમ્ । યાવત્પદેન-દ્વીન્દ્રિયત્રીન્દ્રિયચતુરિન્દ્રિયાણાં
ગ્રહણમ્ । ‘મણૂસા જહા ઓહિયા જીવા’ મનુષ્યા યથા ઓધિકા જીવાઃ,
સમુચ્ચયજીવાઃ, યથા જીવ સામાન્યે વીર્યવત્ત્વાદિ વિચારસ્તથા મનુષ્યદણ્ડકેऽપિ
વીર્યવત્ત્વાદિવિચારઃ કરણીય ઇતિ । ‘ળવરં સિદ્ધવજ્જા માણિયત્ત્વા’ નવરં સિદ્ધ
વર્જાઃ મણિતવ્યા, ઔગ્રિકજીવેષુ સિદ્ધાનામન્તર્ભાવો ભવતિ કિન્તુ મનુષ્યેષુ તે
સિદ્ધા ન સન્તિ, અતો મનુષ્યદણ્ડકે વીર્યવિષયકવિચારે સિદ્ધાલાપકો ન મણિ-
તવ્ય ઇતિ । ‘વાળમંતરજોઃસવેમાણિયા જહા ણેરહ્યા’ વાનવ્યન્તરજ્યોતિષિક
વૈમાનિકા યથા-નૈરયિકાઃ, યથા નૈરયિકદણ્ડકે વીર્યવિચારઃ કૃતસ્તથૈવ વાન-
વ્યન્તરાદારમ્ય વૈમાનિકપર્યન્તજીવદણ્ડકેऽપિ વીર્યવત્ત્વાદિવિચારઃ કરણીય
એવેતિ । ‘સેવં મંતે સેવં મંતે તિ જાવ વિહરહ’ તદેવં મદન્ત । તદેવં મદન્ત । ઇતિ-

યાવત્ પંચેન્દ્રિયતિર્યચ જીવોં કે વિષય મેં ભી વિચાર કર લેના ચાહિયે ।
યહાં “ યાવત્ ” ઉસ પદ સે દ્વિન્દ્રિય, તેઢન્દ્રિય ઓર ચતુરિન્દ્રિય જીવોં
કા ગ્રહણ કિયા ગયા હૈ । મનુષ્યદણ્ડક મેં ભી વીર્યવત્તા આદિ કા
વિચાર જૈસા જીવ સામાન્ય મેં કિયા ગયા હૈ વૈસા હી કર લેના ચાહિયે ।
પરન્તુ યહાં પર વિશેષતા ઇતની હી હૈ કિ યહાં પર સિદ્ધોં કો છોડ દેના
ચાહિયે । તાત્પર્ય યહ હૈ કિ સામાન્ય જીવોં મેં સિદ્ધોં કા અન્તર્ભાવ હો
જાતા હૈ, કિન્તુ મનુષ્યોં મેં વે સિદ્ધ નહીં આતે હૈં । ઇસલિયે મનુષ્યદણ્ડક
મેં વીર્ય વિષયક વિચાર કરને પર સિદ્ધાલાપક નહીં કહના ચાહિયે ।
તથા જિસ પ્રકાર સે નૈરયિક જીવોં મેં વીર્ય કા વિચાર કિયા ગયા હૈ
ઉસી તરહ સે વાનવ્યન્તર સે લેકર વૈમાનિક પર્યન્ત જીવદણ્ડક મેં ભી

આવ્યો છે, એજ પ્રમાણે પચેન્દ્રિય તિર્યચ સુધીના જીવોના વિચાર કરવો
જોઈએ. અહીં “ યાવત્ ” પદ વડે દ્વિન્દ્રિય, ત્રીન્દ્રિય અને ચતુરિન્દ્રિય જીવોને
થડેણુ કરવા જોઈએ મનુષ્યનાદેહકમા પણ વીર્યવત્તા વિગેરેનો વિચાર જીવ
સામાન્યમા કહ્યા પ્રમાણે જ સમજવો. પણ એટલી વિશેષતા છે કે અહીં સિદ્ધ
ભગવતોનો સમાવેશ કરવો નહીં. કહેવાતું તાત્પર્ય એ છે કે સામાન્ય જીવોમા
સિદ્ધભગવતોનો સમાવેશ થઈ જાય છે, પરન્તુ મનુષ્યોમા સિદ્ધભગવતોનો
સમાવેશ કરવો નહીં, ને કારણે મનુષ્ય દેહકમા વીર્યવિષયક વિચાર કરતી
વખતે સિદ્ધભગવતોની સાથે આલાપકો કહેવા નહીં જેવી રીતે નારક જીવોના
વિષયમા વીર્યનો વિચાર કરવામાં આવ્યો છે એવી જ રીતે વાણવ્ય તર દેવોથી
લઈને વૈમાનિકદેવો સુધીના જીવદેહકમા પણ વીર્યવત્તા વિગેરેનો વિચાર કરવો જોઈએ

પ્રાણાતિપાતાદિકરણેન । એવ પ્રાણાતિપાતાદયમાથેન સંસાર વ્યતિવ્રજન્તિ । એવં ગુરુત્વ-લઘુત્વ-આકુલીકરણપરીતત્વ-દીર્ઘત્વ-હ્રસ્વત્વપર્યટનવ્યતિવ્રજન્યેષુ ગુરુત્વા કુલીકરણદીર્ઘત્વપર્યટનરૂપાણિ ચત્વારિ અપ્રશસ્તાનિ સંસારકારણત્વાત્ લઘુત્વપરીતત્વ હ્રસ્વત્વવ્યતિવ્રજનાનિ ચત્વારિ પ્રશસ્તાનિ મોક્ષકારણત્વાદિત્યેવંરૂપેણ પ્રશસ્તાપ્ર-
શસ્તયોર્વિચાર । એવં સપ્તમમચકાશાન્તર ગુરુ, લઘુ, ગુરુલઘુ, અગુરુલઘુકં વેતિ મજ્જવત્તુણ્યેન પ્રશ્નઃ । નો ગુરુકં ન વા લઘુકં નો ગુરુલઘુકં કિન્તુ ચતુર્યંભંગેન 'અગુરુલઘુક' મિત્યાકારકેણ । કિં સપ્તમસ્તનુવાતો ગુરુકો વા લઘુકો વા ગુરુ લઘુકો વા અગુરુલઘુકો વેતિ મજ્જવત્તુણ્યેન સનુવાતવિષયે પ્રશ્નઃ । સપ્તમસ્તનુવાતો

સીમિત (કમ) કર લેતા હૈ, હસી તરહ સે હન પ્રાણાતિપાત આદિકોં કે સેવન સે વહ અપને સંસાર કો દીર્ઘ કર લેના હૈ ઓર હનકે ત્યાગ સે વહ સંસાર અલ્પ બના લેતા હૈ । પ્રાણાતિપાત આદિ કે કરને સે જીવ સંસાર મેં બારબાર પરિવ્રમણ કરતા હૈ । તથા પ્રાણાતિપાત આદિ કે અમાથ સે જીવ સંસાર સે પાર હો જાતા હૈ । હસ પ્રકાર ગુરુત્વ, લઘુત્વ, આકુલી કરણ (સંસાર કો બઢાના) પરિતત્વ (સંસાર કો અલ્પ કરના) દીર્ઘત્વ, હ્રસ્વત્વ, પર્યટન ઓર વ્યતિવ્રજન હનમેં ગુરુત્વ, આકુલીકરણ, (સંસાર કો વઢના) દીર્ઘત્વ પર્યટન યે ચાર સંસાર કે કારણ હોને સે અપ્રશસ્ત હૈં । તથા લઘુત્વ, પરીતત્વ, હ્રસ્વત્વ, ઓર વ્ય તિવ્રજન યે ચાર મોક્ષકારણ હોને સે પ્રશસ્ત હૈં । હસ રૂપ સે પ્રશસ્ત ઓર અપ્રશસ્ત હન દોનોં કા વિચાર કિયા ગયા હૈ । સાતવાં અવકા-
શાન્તર ગુરુ હૈ, કિ લઘુ હૈ કિ ગુરુ લઘુ હૈ અથવા અગુરુલઘુક હૈ હસ પ્રકાર ચાર મજ્જોં કો લકર પ્રશ્ન, કિયા ગયા હૈ । તથા ન વહ ગુરુ હૈ, ન

તિપાત વગેરે પાપોના સેવનથી સંસારમાં રહેવાનો કાળ વધારે છે અને તેમના ત્યાગથી સંસારમાં રહેવાનો કાળ ઘટાડે છે પ્રાણાતિપાત વગેરેના સેવનથી જીવને વારંવાર સંસારમાં પરિવ્રમણ કરવું પડે છે પણ તેમના ત્યાગથી જીવ સંસાર સાગર તરી બચે છે આ રીતે ગુરુત્વ, લઘુત્વ આપ્તલીકરણ (સંસાર વધારવો) પરીતત્વ (સંસાર ઘટાડવો) દીર્ઘત્વ, હ્રસ્વત્વ, પર્યટન અને વ્ય તિવ્રજન, તેમના ગુરુત્વ, આપ્તલીકરણ (સંસાર વધારવો) દીર્ઘત્વ અને પર્યટન, જે ચાર સંસારના કારણરૂપ હોવાથી અપ્રશસ્ત છે તથા લઘુત્વ, પરી-
તત્વ, હ્રસ્વત્વ અને વ્યતિવ્રજન, જે ચાર મોક્ષના કારણરૂપ હોવાથી પ્રશસ્ત છે આ રીતે પ્રશસ્ત અને અપ્રશસ્ત, જે બન્નેનો વિચાર કર્યો છે પ્રશ્ન-સાતમાં અવકાશાન્તર ગુરુ છે લઘુ છે ગુરુલઘુ છે કે અગુરુલઘુ છે ? આ પ્રકારનો ચાર સામ્યોને અનુલક્ષીને-પ્રશ્ન પૂછ્યો તો તે લઘુ નથી, ગુરુ નથી, ગુરુ-

અથ નવમોદ્દેશકः--

તદિહ નવમોદ્દેશકે સંક્ષેપતો વિચારણીયા ઇમે વિષયાઃ, તથાહિ-જીવાનાં ગુરુત્વં કેન કારણેન ભવતીતિ ગુરુત્વવિષયે પ્રશ્નઃ । પ્રાણાતિપાત-મૃષાવાદાદત્તાદાન-મૈથુનપરિગ્રહક્રોધમાનમાયાલોભ-રાગદ્વેષકલહાભ્યાખ્યાન-પૈશુન્યપરપરિવાદરતિઅરતિ-માયામૃષામિથ્યાદર્શનશલ્યકારણૈર્જીવાનાં ગુરુત્વં કર્મભારેણ ભવતીત્યુત્તરમ્ । एवं जीवानां लघुत्वं केन कारणेन भवतीति प्रश्नः । प्राणातिपाताधारभ्य मिथ्यादर्शनशल्यविरमणेन पापभारापगमात् लघुत्वं जीवानां भवतीत्युत्तरम् । प्राणातिपातादिकरणेन जीवाः संसारं वर्द्धयन्ति तथा प्राणातिपातादिविरमणेन जीवाः संसारं परीतीकुर्वन्ति एवं दीर्घीकुर्वन्ति ह्रस्वीकुर्वन्ति । संसारमनुपरिवर्तन्ते

નવમ પ્રદેશક પ્રારંભ—

इस नौवें उद्देशक में जो विषय विचार ने में आये हैं वे इस प्रकार हैं-जीवों में गुरुता किस कारण से होती है इस प्रकार से गुरुत्व के विषय में प्रश्न हुआ है और इस का उत्तर-प्राणातिपात, मृषावाद अदत्तादान, मैथुन, परिग्रह, क्रोध, मान, माया, लोभ, राग द्वेष, कलह, अभ्याख्यान, पैशुन्य, परपरिवादअरति, रति, माया, मृषा, मिथ्यादर्शन शल्य, इन कारणोंको लेकर बंधते हुए कर्मके भारसे जीवोंमें गुरुता होती है ऐसा कहा गया है । जीवों में लघुता किस कारण से होती है ? ऐसा प्रश्न-उत्तर-प्राणातिपात आदि से लेकर मिथ्यादर्शन शल्य तक अठारह प्रकार के पाप स्थानों का विरमण (त्याग) करने से उनमें लघुता आ जाती है । प्राणातिपात आदि के करने से जीव संसार को बढ़ाता है, तथा प्राणानिपात आदि के विरमण से-त्याग से जीव संसार को

નવમા ઉદ્દેશકનો પ્રારંભ

આ ઉદ્દેશકમાં જે વિષયોનું નિરૂપણ કર્યું છે તેનો અર્થ સંક્ષેપમાં વિચાર કરવામાં આવે છે-જીવોમાં કયા કારણોને લીધે ગુરુતા હોય છે ? એ પ્રશ્ન અને તેનો આ પ્રમાણે ઉત્તર-પ્રાણાતિપાત, મૃષાવાદ, અદત્તાદાન મૈથુન, પરિગ્રહ, ક્રોધ, માન, માયા, લોભ, રાગ, દ્વેષ, કલહ, અભ્યાખ્યાન, પૈશુન્ય, પરપરિવાદ, અરતિ, રતિ, માયા, મૃષા અને મિથ્યાદર્શનશલ્ય એ કારણોને લીધે બધાતા કર્મના ભારથી જીવોમાં ગુરુતા હોય છે. જીવોમાં કયા કારણોને લીધે લઘુતા હોય છે ? એવો પ્રશ્ન-ઉત્તર-પ્રાણાતિપાતથી લઈને મિથ્યાદર્શન સુધીના ૧૮ પ્રકારના પાપસ્થાનોનો ત્યાગ કરવાથી જીવોમાં લઘુતા આવે છે પ્રાણાતિપાત વગેરેના સેવનથી જીવ સંસાર વધારે છે, અને પ્રાણાતિપાત વગેરે ના વિરમણથી જીવ સંસારને સીમિત કરે છે-ઘટાડે છે. આ રીતે જીવ પ્રાણા

લઘુત્વં અગુરુલઘુત્વમિતિ પ્રશ્ન । વૈક્રિયતૈમસશરીરાપેક્ષયા નો ગુરુત્વં ન ચ
 લઘુત્વમ્ કિન્તુ ગુરુલઘુત્વમ્-ન યા અગુરુલઘુત્વમ્ । ઝીર્વં કાર્મણશરીરં વામિત્વ
 નો ગુરુકા નો લઘુકા નો ગુરુલઘુકાઃ કિન્તુ અગુરુલઘુકા ઇત્યુત્તરમ્ । પુદ્ગલાસ્તિ
 કાયઃ કિં ગુરુકઃ કિં યા લઘુકઃ કિં યા ગુરુલઘુકઃ અગુરુલઘુકો યેતિ પુદ્ગલાસ્તિ
 કાયાર્નાં ગુરુત્વલઘુત્વવિપયકઃ પ્રશ્નઃ । નો ગુરુકો ન યા લઘુકઃ કિન્તુ ગુરુ
 લઘુકોપિ પુદ્ગલાસ્તિકાયઃ । અગુરુલઘુકોઽપિ પુદ્ગલાસ્તિકાય ઇત્યુત્તરમ્ । કેન
 કારણેન ન ગુરુત્વં ન લઘુત્વં કિન્તુ ગુરુલઘુત્વમપિ અગુરુલઘુત્વમપીતિ પ્રશ્નઃ । ગુરુ

મી હોતે હૈં ઓર અગુરુલઘુ મી હોતે હૈં એસા ઉત્તર દિયા ગયા હૈ । કિસ
 કારણ સે નારક્ત્તીર્થો મૈં નં ગુરુતા હોતી હૈ અથવા ન લઘુતા હોતી હૈ
 કિન્તુ ગુરુલઘુતા ઓર અગુરુલઘુતા હોતી હૈ એસા પ્રશ્ન કિયા ગયા હૈ ।
 ઓર હસકા ઉત્તર-વૈક્રિય શરીર, તૈજસશરીર કી, અપેક્ષા સે સનમૈં ન
 ગુરુતા હોતી હૈ, ન લઘુતા હોતી હૈ ઓર ન અગુરુલઘુતા હોતી હૈ કિન્તુ
 ગુરુલઘુતા હોતી હૈ । તથા ઝીર્વ ઓર કાર્મણ શરીર કો વામિત્વ કરકે
 વે ન ગુરુ હોતે હૈં, ન લઘુ હોતે હૈં, ન ગુરુલઘુ હોતે હૈં કિન્તુ અગુરુલઘુ
 હોતે હૈં એસા ઉત્તર દિયા ગયા હૈ । પુદ્ગલાસ્તિકાય ગુરુ હોતા હૈ, અથવા
 કયા લઘુ હોતા હૈ ? અથવા કયા ગુરુલઘુ દોનો પ્રકાર કા હોતા હૈ યા
 અગુરુલઘુ દોનો પ્રકાર કા નહીં-હોતા હૈ ? એસા પ્રશ્ન કિયા ગયા હૈ ।
 હસકા ઉત્તર-ન વહ ગુરુ હોતા હૈ, ન વહ લઘુ હોતા હૈ કિન્તુ વહ ગુરુ
 લઘુ મી હોતા હૈ ઓર અગુરુલઘુ મી હોતા હૈ । કિસ કારણ સે વહ ગુરુ
 મહીં હોતા હૈ, લઘુ નહીં હોતા હૈ કિન્તુ ગુરુલઘુ મી હોતા હૈ ઓર અગુ

લઘુ હોય છે પ્રશ્ન-નાશકોમા શા કારણે ગુરુતા અથવા લઘુતા હોતી નથી, પણ
 ગુરુલઘુતા અને અગુરુલઘુતા હોય છે ?

ઉત્તર-વૈક્રિય શરીર અને તૈજસ શરીરની અપેક્ષાએ તેમનામા ગુરુતા
 હોતી નથી, લઘુતા હોતી નથી અને અગુરુલઘુતા પણ હોતી નથી પરંતુ
 ગુરુલઘુતા જ હોય છે તથા ઝીર્વ અને કાર્મણ શરીરની અપેક્ષાએ તેઓ ગુરુ
 હોતા નથી, લઘુ હોતા નથી, ગુરુલઘુ પણ હોતા નથી, પરંતુ અગુરુલઘુ જ
 હોય છે પુદ્ગલાસ્તિકાય શું ગુરુ હોય છે લઘુ હોય છે, ગુરુલઘુ હોય છે ?
 અગુરુલઘુ હોય છે ? આ પ્રકારનો પ્રશ્ન પૂછવો છે

ઉત્તર-પુદ્ગલાસ્તિકાય ગુરુ હોતું નથી, લઘુ હોતું નથી, પરંતુ ગુરુલઘુ
 હોય છે અને અગુરુલઘુ હોય છે

પ્રશ્ન-શા કારણે પુદ્ગલાસ્તિકાય ગુરુ હોતું નથી, લઘુ હોતું નથી, પણ
 ગુરુલઘુ હોય છે અને અગુરુલઘુ હોય છે ?

ન ગુરુકો ન વા લઘુકઃ કિન્તુ ગુરુલઘુકો ન વા અગુરુલઘુક इत्येवं रूपेण तृतीय भंगेनोत्तरम् एवं सप्तमात्रकाशान्तरवत् घनवातसप्तमघनोदधिसप्तमपृथिवीद्वीप-सागरवर्षाण्यपि विज्ञेयानि इत्यतिदेशेन घनवातादिषु गुरुत्वलघुत्वादिविचारः ।
 નૈરયિકાઃ કિં ગુરુવો વા લઘવો વા ગુરુલઘવો વેતિ નારકે ગુરુત્વલઘુત્વાદિ વિષયઃ પ્રશ્નઃ । નૈરયિકાઃ ન ગુરુઃ ન વા લઘુઃ કિન્તુ ગુરુલઘુકા અપિ અગુરુ-લઘુકા અપીત્યુત્તરમ્ । કેન કારણેન નારકાણાં ન ગુરુત્વં ન લઘુત્વં કિન્તુ ગુરુ-

વહ લઘુ હૈ ન વહ ગુરુલઘુ હૈ કિન્તુ અગુરુલઘુક હૈ इस तरह से चौथे भंग को लेकर उत्तर दिया गया हैं । क्या सातवां तनुवात गुरुक है ? अथवा लघुक है ? अथवा गुरुलघुक है ? इस प्रकार भङ्गचतुष्टय को लेकर तनुवात के विषय में प्रश्न किया गया हैं तथा सप्तम तनुवात न गुरुक हैं, न लघुक है, न अगुरुलघुक है किन्तु गुरुलघुक है इस तरह तीसरे भंग को लेकर उत्तर दिया गया है । सप्तम अवकाशान्तर की तरह घनवात, सप्तम घनोदधि, सप्तम पृथिवी, द्वीप, सागर वर्ष क्षेत्र ये भी जानना चाहिये इस तरह अतिदेश से घनवात आदिकों में गुरुत्व लघुत्व आदि का विचार किया गया है । नैरयिक जीव क्या गुरु होते हैं ? अथवा लघु होते हैं अथवा गुरुलघु दोनों प्रकार के होते हैं अथवा अगुरुलघु होते हैं ? इस तरह से नारक के विषय में गुरुलघुत्व आदि विषयक प्रश्न हुआ है । नैरयिक जीव न गुरु होते हैं, न लघु होते हैं, किन्तु गुरुलघु

લઘુ નથી, પણ અગુરુલઘુ છે, એ પ્રકારનો ચોથા ભાંગાનો સ્વીકાર કરતો ઉત્તર આપ્યો છે પ્રશ્ન-શુ સાતમું તનુવાત ગુરુ છે ? કે લઘુ છે ? અથવા ગુરુલઘુ છે ? અથવા અગુરુલઘુ છે ? આ પ્રમાણે ચાર ભાંગાની અપેક્ષાએ તનુ વાતના વિષયમાં પણ પ્રશ્ન પૂછ્યા છે

ઉત્તર—સાતમું તનુવાત ગુરુ પણ નથી લઘુ પણ નથી, અગુરુલઘુ પણ નથી, પરંતુ ગુરુલઘુ છે આ રીતે ત્રીજા ભાંગાનો સ્વીકાર કર્યો છે. સાતમા અવ-કાશાન્તર પ્રમાણે જ ઘનવાત, સાતમું ઘનોદધિ, સાતમી પૃથ્વી, દ્વીપ, સાગર અને વર્ષક્ષેત્રના વિષયમાં પણ સમજવું, આ રીતે અતિદેશથી ઘનવાત વગેરે માં ગુરુત્વ, લઘુત્વ વગેરેનો વિચાર કરવામાં આવ્યો છે નૈરયિક જીવ શું ગુરુ હોય છે ? અથવા લઘુ હોય છે ? અથવા ગુરુલઘુ હોય છે ? અથવા અગુરુ લઘુ હોય છે ? આ રીતે નારકાના વિષયમાં પણ ગુરુત્વ લઘુત્વ વગેરે, વિષ-યક પ્રશ્નો પૂછ્યા છે અને તેને આ પ્રમાણે ઉત્તર આપ્યો છે—નારક જીવો ગુરુ હોતા નથી, લઘુ પણ હોતા નથી, પરંતુ ગુરુલઘુ હોય છે અને અગુરુ-

ન વા લઘુકા ન વા અગુરુલઘુકા કિન્તુ ગુરુલઘુકેતિ તૃતીયમંગેનોષ્ઠરમ્ । ત્વા
માવહેશ્યાં પ્રતીત્ય ચતુર્થપદેનાગુરુલઘુકરૂપેણ સમાધાનમ્, એવમતિદેશેન નીલ-
કાપોતતેજઃપદ્મશુક્લલેશ્યાસ્વપિ ગુરુલઘુત્વાદિકથનમ્ । દૃષ્ટિદર્શનજ્ઞાનાજ્ઞાન-
સંજ્ઞાસુ ચતુર્થપદેન ગુરુલઘુત્વાદીનાં સ્વીકાર । દૃષ્ટ્યાદયો ન ગુરુકા ન વા
ગુરુલઘુકા અપિ વા અગુરુલઘુકા इति । અથસ્તનાનિ ચત્વારિ શરીરાણિ ઔદારિક
વૈક્રિયાહારકતૈમસાનિ તૃતીયપદેન ગુરુલઘુકરૂપેણ નેતૃભ્યાનીતિ શરીરગુરુલઘુત્વ
યોર્વિચારઃ । કાર્મણશરીરે ચતુર્થપદેન અગુરુલઘુકેન સ્વીકાર, મનોયોગ વાગયોગૌ

ગયા છે કે દ્રવ્યલેહ્યા કી અપેક્ષા સે વહ ન ગુરુક હોતી હૈ, ન લઘુક
હોતી હૈ, ઓર ન અગુરુલઘુક હોતી હૈ કિન્તુ વહ ગુરુલઘુક હોતી હૈ ।
તથા માવહેશ્યા કી અપેક્ષા સે વહ અગુરુલઘુક હોતી હૈ । હસી પ્રકાર
અતિદેશ સે નીલ, કાપોત, તેજઃ, પદ્મ ઓર શુક્લ હન લેહ્યાઓ મેં શ્રી
ગુરુત્વ લઘુત્વ આદિ કા કથન કર હેના ચાહિયે । દૃષ્ટિ, વર્ણન, જ્ઞાન,
અજ્ઞાન ઓર સંજ્ઞા હનમેં ચતુર્થ મંગ કો હેકર અગુરુલઘુત્વ કો સ્વીકૃત
કિયા ગયા હૈ । દૃષ્ટ્યાદિક ન ગુરુક હૈ, ન લઘુક હૈ, ઓર ન ગુરુલઘુક
મી હૈ કિન્તુ અગુરુલઘુક હૈ । ઔદારિક, વૈક્રિય, આહારક ઓર તૈજસ
યે ચાર શરીર ન ગુરુક હૈ, ન લઘુક હૈ ઓર ન અગુરુલઘુક હૈ કિન્તુ
તૃતીયમંગ જો ગુરુલઘુક હૈ હસ સ્વરૂપ હૈ । હસ તરહ ચાર શરીર સંબંધી
ગુરુલઘુત્વ કા વિચાર હુઆ હૈ । કાર્મણ શરીર જો કિ પાંચમાં શરીર
હૈ હસમેં અગુરુલઘુત્વ માના ગયા હૈ । મનોયોગ ઓર વચનયોગ હન

ઉત્તર- દ્રવ્ય લેશ્યાની અપેક્ષાએ તે ગુરુ હોતી નથી, લઘુ પણ હોતી
નથી, અગુરુલઘુ પણ હોતી નથી પરન્તુ તે ગુરુલઘુ જ હોય છે તથા ભવ્ય
લેશ્યાની અપેક્ષાએ તે અગુરુલઘુ જ હોય છે એવ પ્રમાણે અતિદેશથી નીલ,
કાપોત, તેજુ પદ્મ, અને શુક્લ લેશ્યાઓમા પણ ગુરુત્વ લઘુત્વ વગેરેનુ વચુની
કરવું જોઈએ. દૃષ્ટિ દર્શન, જ્ઞાન અજ્ઞાન, અને સંજ્ઞામાં થોડા ભાંગાની
અપેક્ષાએ અગુરુલઘુત્વનો સ્વીકાર કરાયો છે દૃષ્ટિ વગેરે ગુરુ પણ નથી, લઘુ
પણ નથી, ગુરુલઘુ પણ નથી પરન્તુ અગુરુલઘુ જ છે એમ બતાવવામાં
આવ્યું છે ઔદારિક વૈક્રિય આહારક અને તૈજસ, એ ચાર શરીર ગુરુ પણ
નથી, લઘુ પણ નથી, અગુરુલઘુ પણ નથી પરન્તુ ગુરુલઘુ જ છે આ રીતે
ત્યા ત્રીજા ભાંગાનો જ સ્વીકાર કર્યો છે પાચમાં પ્રકારના કાર્મણ શરીરમાં
અગુરુલઘુત્વ છે આ રીતે કાર્મણ શરીરના વિષયમાં થોડા ભાંગાનો સ્વીકાર
કર્યો છે મનયોગ તથા વચનયોગને અગુરુલઘુ માનવામા આવેલ છે કારણે-

લઘુકદ્રવ્યાપેક્ષયા નો ગુરુત્વં નો લઘુત્વં ન વા અગુરુલઘુત્વં કિન્તુ ગુરુલઘુકત્વ-
મિતિ તૃતીયભંગેન સમાધાનમ્ । અગુરુલઘુકદ્રવ્યાણિ પ્રતીત્ય નો ગુરુકો ન વા
ગુરુલઘુકઃ કિન્તુ અગુરુલઘુક ઇતિ ચતુર્થભંગેનોત્તરમ્ । એવં સમયેષુ કર્મસુ ચ
ગુરુત્વાદિવિષયપ્રશ્નઃ । અગુરુલઘુકમિતિ ચતુર્થભંગેન સમાધાનમ્ । એવં કૃષ્ણ-
લેશ્યા ગુરુકા લઘુકા અગુરુલઘુકા વેતિ કૃષ્ણલેશ્યા વિષયકઃ પ્રશ્નઃ નો ગુરુકા
નો લઘુકા કિન્તુ ગુરુલઘુકા અપિ અગુરુલઘુકા અપિ ઇતિ સમાધાનમ્ । કથમેકૈવ
કૃષ્ણલેશ્યા ગુરુલઘુકાપિ અગુરુલઘુકાપીતિ પ્રશ્નઃ । દ્રવ્યલેશ્યા પેક્ષયા નો ગુરુકા

રુલઘુ ભી હોતા હૈ એસા પ્રશ્ન કિયા ગયા હૈ-ઑર હસકા ઉત્તર-ગુરુલઘુ
દ્રવ્યોં કી અપેક્ષા સે ડસમેં ગુરુતા નહીં હૈ, ન લઘુતા હૈ, ઑર ન અગુરુ
લઘુતા હૈ કિન્તુ ગુરુલઘુતા હૈ હસ તૃતીય ભંગ સે દિયા ગયા મેં । અગુરુ-
લઘુક દ્રવ્યોં કી અપેક્ષા લેકર કે વહ પુદ્ગલાસ્તિકાય ન ગુરુ હૈ, ન લઘુ
હૈ, ઑર ન ગુરુલઘુ ડોનોં પ્રકાર કા હૈ કિન્તુ વહ અગુરુલઘુ હૈ હસ પ્રકાર
સે ચૌથે ભંગ કો લેકર ઉત્તર દિયા ગયા હૈ । હસ પ્રકાર સે સમયોં મેં
ઑર કર્મોં મેં ગુરુત્વાદિવિષયક પ્રશ્ન હુઑા હૈ । ઑર ડસકા સમાધાન
ચતુર્થભંગ કો લેકર કિયા ગયા હૈ । હસી તરહ સે કૃષ્ણલેશ્યા ક્યાગુરુ
હૈ અથવા લઘુ હૈ અથવા ગુરુલઘુ હૈ અથવા અગુરુલઘુ હૈ એસા પ્રશ્ન કૃષ્ણ-
લેશ્યા કે વિષય મેં કિયા ગયા હૈ । વહ ન ગુરુ હૈ, ન લઘુ હૈ, કિન્તુ વહ
ગુરુલઘુ ભી હૈ ઑર અગુરુ લઘુ ભી હૈ એસા હસ પ્રશ્ન કા સમા-
ધાન દિયા ગયા હૈ । ફિર પ્રશ્ન કિયા ગયા કિ ઁક હી કૃષ્ણલેશ્યા ગુરુ-
લઘુ ભી ઑર અગુરુલઘુ ભી કૈસે હોતી હૈ-તો હસકા સમાધાન યોં કિયા

ઉત્તર—ગુરુલઘુ દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ તેમાં ગુરુતા પણ નથી, લઘુતા પણ
નથી, અગુરુલઘુતા પણ નથી, પરન્તુ ગુરુલઘુતા જ છે. આ રીતે ત્રીજા લાગાને
સ્વીકાર કર્યો છે અગુરુલઘુ દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ તે પુદ્ગલાસ્તિકાયમાં ગુરુતા નથી,
લઘુતા પણ નથી, ગુરુલઘુતા પણ નથી, પરન્તુ અગુરુલઘુતા જ છે. આ રીતે
અહીં ચોથા લાગાને સ્વીકાર કર્યો છે. એજ પ્રમાણે સમયોમાં અને કર્મોમાં
ગુરુત્વાદિ વિષયક પ્રશ્નો પૂછ્યાછે અને ચોથા લાગાની અપેક્ષાએ તે પ્રશ્નોનું સમાધાન
થયું છે. એ જ પ્રમાણે કૃષ્ણલેશ્યાના વિષયમાં પણ પ્રશ્નો પૂછ્યા છે કે-“શુ”
કૃષ્ણલેશ્યા ગુરુ છે, અથવા લઘુ છે, અથવા ગુરુ લઘુ ને અથવા અગુરુલઘુ છે ?

ઉત્તર—તે ગુરુ પણ નથી, લઘુ પણ નથી, પરન્તુ ગુરુલઘુ છે અને
અગુરુલઘુ છે.

પ્રશ્ન—કૃષ્ણલેશ્યા કેવી રીતે ગુરુલઘુ છે અને અગુરુલઘુ છે ?

પદ્માત્સંહત કાલ કુર્વન્ સિદ્ધયતિ બુદ્ધયતે મુચ્યતે પરિનિર્વાતિ સર્વદુઃસ્થાનામન્તં
કરોતીતિ સિદ્ધાન્તમરૂપણેન નિર્મન્યવિષયે વિચારઃ । એકો જીવ એકસ્મિન્
સમયે આયુષ્કલ્પ્ય કરોતીતિ પરતીર્થિકાઃ કથયન્તિ સત્ સત્યમસત્યં
વેતિઃ પ્રશ્નઃ । પરતીર્થિકાનાં મતમસત્યમ્ સત્ નૈકો જીવ એકસમયે આયુષ્ક
લ્પ્ય કરોતિ, કિન્તુ એકો જીવ એકદા એકમેવાયુષ્કં કરોતીતિ સર્વજ્ઞમત-
મતિપાદનમ્ । કાલાસ્પવેપિકપુત્રાનગારસ્થવિરયોઃ પ્રશ્નોચરમ્ । સામાયિકાદેઃ

ગયા છે । તથા પહિલે પશુત મોહ ચાલા ખી પદ્માત્ ઉસ મોહ કા છાગ
કર સહૃત હુઆ અમણ મરકર યયા સિદ્ધ હોતા હૈ ? બુદ્ધ હોતા હૈ ?
સમસ્ત દુ સ્થો સે છૂટ જાતા હૈ ? વિલકુલ શાંત હો જાતા હૈ, સર્વદુઃસ્થો
કા યહ અન્ત કર દેતા હૈ ? એસે પ્રશ્નકા ખી ઉત્તર હાં કે હી રૂપમેં વિચા
ગયા હૈ । હસ તરહ સિદ્ધાન્તકી મરૂપણા કરતે કુપ સૂત્રકારને નિર્મન્યકે
વિષયમેં વિચાર પ્રસ્તુત કિયા હૈ । એક જીવ એક સમયમેં દો આયુકા બંધ
કરતા હૈ એસા અન્ય મત ચાલે કહતે હૈ—સો વનકા યહ મત સત્ય હૈ કિ
અસત્ય હૈ એસા પ્રશ્ન કિયા ગયા હૈ ઓર હસકે સમાધાન મેં એસા
કહા ગયા હૈ કિ પરતીર્થિકોં કા યહ મન્તવ્ય અસત્ય હૈ । ક્યોં કિ એક
જીવ એક સમય મેં એક હી આયુકર્મ કા બંધ કરતા હૈ દો કા નહીં ।
એસા હી સર્વજ્ઞ કા શાસન હૈ । હસ તરહ કે હસ કથન સે સર્વજ્ઞ પ્રશ્ન
કા હસ વિષય મેં યયા મત હૈ યહ પ્રતિપાદિત કિયા ગયા હૈ । કાલા-
સ્પવેપિક પુત્ર અનગાર ઓર સ્થવિર હન દોનોં કે પ્રશ્નોત્તર કાં કથન

પ્રશ્ન—પહેલાં પ્રશ્ન જ મોહવાળો કોય પાછળથી મોહનો ત્યાગ કરીને
સવૃત થયેલો મગધ શુ મરીને સિદ્ધપદ પ્રાપ્ત કરે છે ? બુદ્ધ થાય છે ? બધા
દુઃખોથી મુક્ત થાય છે ? બિલકુલ ઉપશાન્ત થઈ આવે છે ? અને શુ તે તમામ
દુઃખોનો અન્ત લાવી દે છે ? આ પ્રશ્નનો ઉત્તર પણ હકારમાં જ આપ્યો છે

આ રીતે સિદ્ધાંતની પ્રશ્નપૂજા કરતાં સૂત્રકારે નિર્મન્યના વિષયમાં પણ
વિચારની શરૂઆત કરી છે અન્ય મતવાળા બોલે કહે છે કે બેક છવ બેક
સમયે બે આયુષ્યનો બંધ બાંધે છે, તો તેમનું તે કથન સત્ય છે કે અસત્ય છે ?

ઉત્તર—પરતીર્થિકોં તે કથન અસત્ય છે, કારણ કે બેક છવ બેક
સમયે બેક જ આયુષ્યકર્મનો બંધ બાંધે છે એનો નહીં. એવો સર્વજ્ઞ પ્રભુનો
સિદ્ધાંત છે આ પ્રકારના કથનથી સર્વજ્ઞ પ્રભુનો આ વિષયમાં જે મત છે તેનું
પ્રતિપાદન કરવામાં આ શુ છે કાલાસ્પવેપિક પુત્ર—અણગાર અને સ્થવિર મુનિવરો
જે બન્નેના પ્રશ્નોત્તરોનું કથન થયું છે સામાયિક વગેરેનું કેવું સ્વરૂપ છે ? અને તેનું

ચતુર્થપદેન નેતવ્યૌ । કાયયોગસ્તૃતીયપદેન વિજ્ઞેયઃ । સાકારાનાકારોપયોગૌ
ચતુર્થપદેન જ્ઞાતવ્યૌ । સર્વદ્રવ્ય સર્વપ્રદેશ સર્વપર્યવાઃ પુદ્ગલાસ્તિકાયવત્ તૃતીયપદેન
સ્વીકરણીયાઃ । અતીતાનાગતસર્વાદ્વા ચતુર્થપદેન વિજ્ઞાતવ્યા । લઘુત્વાલ્પેચ્છત્વાઽ-
મૂર્છત્વાઽનાસક્તત્વાઽપ્રતિબદ્ધત્વં શ્રમણાનાં કિં પ્રશસ્તમિતિ પ્રશ્નઃ । લઘુત્વાદિકં
સર્વં શ્રમણાનાં પ્રશસ્તમિત્યુત્તરમ્ । અક્રોધત્વમમાનત્વમમાયત્વમલોભત્વં શ્રમણાનાં
પ્રશસ્તં કિમિતિ પ્રશ્નઃ । અક્રોધત્વાદિકં સર્વમેવ પ્રશસ્તમિત્યુત્તરમ્ । કાંક્ષા-
દોષરહિતઃ શ્રમણોઽન્તકરો ભવતિ નવેતિ પ્રશ્નઃ । બહુમોહોઽપિ પૂર્વં વિહત્ય અથ

દોનોં કો અગુરુલઘુક માના ગયા હૈ । કાયયોગ કો ગુરુલઘુક માના ગયા
હૈ । સાકાર ઉપયોગ અનાકાર ઉપયોગ इन दोनों को अगुललघुक माना
गया है । सर्व द्रव्य, सर्वप्रदेश, समस्त पर्याये पुद्गलास्तिकाय की तरह
गुललघुकपद से युक्त माने गये हैं । अतीतकाल, अनागतकाल, और
सर्वाद्वा ये सब चतुर्थपद से अर्थात्-अगुललघुक से युक्त स्वीकार किये
गये हैं । लघुत्व, अल्पेच्छत्व, अमूर्च्छत्व, अनासक्तत्व, अप्रतिबद्धत्व ये
सब श्रमणजनों को क्या प्रशस्त हैं ऐसा प्रश्न हुआ है । और इसका
उत्तर-ये सब लघुत्वादिक श्रमणजनों को प्रशस्त हैं ऐसा दिया गया
है । अक्रोधत्व, अमानत्व, अमायत्व, अलोभत्व, ये सब श्रमणजनों को
प्रशस्त हैं क्या ? ऐसा प्रश्न इसका उत्तर-ये सब अक्रोधत्वादिक श्रमण
जनों को प्रशस्त है ऐसा उत्तर इस प्रश्न का दिया गया है । कान्क्षा दोष-
रहित श्रमण क्या अन्तकर (दुःख के अंत करने वाले) होता है या
नहीं होता है ? ऐसा प्रश्न किया गया है और इसका उत्तर हां में दिया

ગને ગુરુલઘુ માનેલ છે સાકાર ઉપયોગ અને નિરાકાર ઉપયોગને અગુરુલઘુ
માનવામાં આવેલ છે સર્વદ્રવ્ય, સર્વપ્રદેશ અને સર્વપર્યાયોને પુદ્ગલાસ્તિકાય
પ્રમાણે જ ગુરુલઘુ માનવામાં આવેલ છે અતીતકાળ (ભૂતકાળ) અનાગતકાળ
(ભવિષ્યકાળ) અને સર્વાદ્વા (વર્તમાનકાળ) એ ત્રણે ને અગુરુલઘુ જ કહ્યા છે

પ્રશ્ન--શું લઘુત્વ, અલ્પેચ્છત્વ, અમૂર્છત્વ, અનાસક્તત્વ અને અપ્રતિ-
બદ્ધત્વ શ્રમણોને (સાધુઓને) માટે પ્રશસ્ત ગણાય છે ?

ઉત્તર--હા, લઘુત્વ વગેરે તમામ ગુણો શ્રમણોને માટે પ્રશસ્ત છે.

પ્રશ્ન--અક્રોધત્વ, અમાનત્વ, અલોભત્વ, એ સઘળા ગુણો શું શ્રમણો
માટે પ્રશસ્ત ગણાય છે ?

ઉત્તર--હા, અક્રોધત્વ વગેરે તમામ ગુણો શ્રમણો માટે પ્રશસ્ત છે.

પ્રશ્ન--કાંક્ષા દોષરહિત શ્રમણ શું અન્તકર, (દુઃખને અન્ત કરનાર)
હોય છે કે નથી હોતો ? તે પ્રશ્નનો ઉત્તર હકારમાં આપ્યો છે.

તુલ્યા વિષમા चेति પ્રશ્ન , સમૈય સર્વેષામપ્રત્યાક્ષ્યાનક્રિયેત્યુત્તરમ્ । તત્ર કિં કારણ મિતિ પ્રશ્ન , इच्छानिष्ठस्यभावरूपाया अविरतिः सर्वेषु समानत्वात् तुल्येषा सा अप्रत्याक्ष्यानक्रियेत्युत्तरम् , આધાકર્મિકાહારં મુજ્જાનસ્ય ઇમણસ્ય કર્મવન્ધો મતિ નવેતિ પ્રશ્નઃ । મવતીત્યુત્તરમ્ । તત્કારણપ્રવર્ણનં ચ । પ્રાસુકાહાર મુજ્જાનઃ ઇમણ કર્મવન્ધનં કરોતિ નવેતિ પ્રશ્નઃ । નૈવેત્યુત્તરમ્ । તત્ર કારણપ્રવર્ણનમ્ । અસ્થિરાદિ પ્રમોચરમ્ । ઉદ્દેશકપરિસમાપ્તિઃ । इति नवमोद्देशकस्य निर्देश ॥

અષ્ટમોદ્દેશક નિરૂપ્ય નવમોદ્દેશકં નિરૂપયતિ, તદનયોરય સંબન્ધ , અષ્ટમો દેશકત્વાન્તે વીર્યસ્ય વિચારઃ કૃત , વીર્યેણ સ્વલ્પ જીવા ઘટસ્વાદિકમાસાવયતીતિ

हे कि विषय होती है ? प्रश्न-उत्तर-इन सब की अप्रत्याक्ष्यान क्रिया पकसी ही होती है । इसमें क्या कारण है ? प्रश्न, उत्तर-सब में इच्छा नियुक्ति की अभावरूप अविरति समान ही है इस कारण वह अप्रत्याक्ष्यानक्रिया भी सब की समान ही है । आधाकर्मिक आहार को अपने उपयोग में लाने वाले अमण के कर्मवच होता है कि नहीं होता है ? प्रश्न, उत्तर-हां होता है । इस कारण का दिखाना । प्रासुक आहार को करने वाला अमण कर्मवच करता है ? कि नहीं करता ? प्रश्न, उत्तर -नहीं करता है । इसमें क्या कारण है-यह समझाना । अस्थिर आदि के विषय में प्रश्न और उत्तर । उद्देशक की संक्षिप्तविषय समाप्ति ।

अथ सूत्रकार अष्टम उद्देशक का निरूपण करके नवमें उद्देशक का निरूपण करते हैं । इन दोनों का आपस में इस प्रकार से संबंध है-

પ્રશ્ન—એથી હરિદ્ર, દૂપણ અને શાભ, એ સૌની અપ્રત્યાક્ષ્યાન ક્રિયા એકસરખી હોય છે કે જુદી જુદી હોય છે ?

ઉત્તર—એ સૌની અપ્રત્યાક્ષ્યાન ક્રિયા એકસરખી જ હોય છે

પ્રશ્ન—તેનું કારણ શું છે ? ઉત્તર—તે સૌમાં ઇચ્છાનિયુક્તિના અભાવરૂપ અવિરતિ સમાન જ હોય છે । તેથી તે સૌની અપ્રત્યાક્ષ્યાન ક્રિયા પણ સમાન જ હોય છે । પ્રશ્ન—આધાકર્મિક આહારને પોતાના ઉપયોગમાં લેનારા અમણ કમવચ બાધે છે કે નથી બાધતો ?

ઉત્તર—હા કમવચ બાધે છે તેના કારણનું પ્રદર્શન

પ્રશ્ન—પ્રાસુક આહાર લેનારા અમણ કમવચ બાધે છે કે નથી બાધતો ?

ઉત્તર—તે કમવચ બાધતો નથી. તેના કારણનું પ્રદર્શન અસ્થિર વજેર બાળનોમાં પ્રશ્ન અને ઉત્તર ઉદ્દેશકના સમિપ્ત વિષય નિરૂપણની સમાપ્તિ

આમાં ઉદ્દેશકનું નિરૂપણ કરીને હવે સૂત્રકાર નવમા ઉદ્દેશકનું નિરૂપણ કરે છે । આમાં અને નવમા ઉદ્દેશકનો પરસ્પર સંબંધ આ પ્રમાણે છે-

કિં સ્વરૂપં કિં ચ પ્રયોજનમિતિ પ્રશ્નઃ । આત્મસ્વરૂપમેવ સામાયિકમાત્મૈવ-
સામાયિકસ્યાર્થં ઇત્યુત્તરમ્ । યદિ ભવન્મતે આત્મૈવ સામાયિકાદેરર્થસ્તદા કિમર્થ
ક્રોધાદીનાં ગર્હણમિતિ પ્રશ્નઃ, સંયમાર્થં ક્રોધાદીનાં ગર્હણમિત્યુત્તરમ્ । ગર્હાસંયમો
ઽગર્હા વેતિ પ્રશ્નઃ । ગર્હા સંયમો નો અગર્હાસંયમ ઇત્યુત્તરમ્ । એવં રૂપેણ ભગવ-
ન્મુખાત્સામાયિકાદીનાં સ્વરૂપાદિકં જ્ઞાત્વા સંબુદ્ધઃ, કાલાસ્યવેષિકપુત્રશ્ચતુર્મહા-
વ્રતિકં ધર્મં પરિત્યજ્ય સપતિક્રમણં પંચમહાવ્રતિકં ધર્મં સ્વીકૃત્ય વિહરન્ કાલેન
સિદ્ધઃ સર્વદુઃસ્વપ્રહીણો જાત ઇતિ । શ્રેષ્ઠિદરિદ્રકૃપણરાજામપ્રત્યાખ્યાનક્રિયા

ક્રિયા છે । સામાયિક આદિ કા કયા સ્વરૂપ છે ઓર ઉસકા કયા પ્રયો-
જન છે-એસા પ્રશ્ન ક્રિયા ગયા છે ઓર ઇસકા ઉત્તર “ સામાયિક છે
ઓર આત્માહી સામાયિક કા અર્થ છે ” ઇસ રૂપ સે દિયા ગયા છે । યદિ
આપ કે મત મેં સામાયિક આદિ કા અર્થ આત્મા છે તો ફિર ક્રોધાદિકોં
કી ગર્હા કિસ લિયે કી ગર્હા છે ? એસા પ્રશ્ન ક્રિયા ગયા છે ઓર ઇસકા
ઉત્તર “ સંયમ કે નિર્વાહ કે લિયે ક્રોધાદિકોં કી ગર્હા કી ગર્હા છે ”
એસા દિયા ગયા છે । ગર્હા સંયમ છે કિ અગર્હા સંયમ ? પ્રશ્ન,
ઉત્તર--ગર્હા સંયમ છે, અગર્હા સંયમ નહીં છે । ઇસ તરહ સે
ભગવાન કે મુખ સે સામાયિક આદિકોં કા સ્વરૂપાદિક જાનકર સંબુદ્ધ
હુણ કાલસ્ય વેષિક પુત્રને ચાર મહાવ્રતરૂપ ધર્મ કો છોડકર પ્રતિક્રમણ
સહિત પાંચ મહાવ્રતસંપન્ન ધર્મ કો સ્વીકાર કર વિચરને લગે । અન્ત મેં
સર્વદુઃખોં રહિત હો ગયે-અર્થાત્ મોક્ષ મેં જાકર વિરાજમાન હો ગયે ।
શ્રેષ્ઠી, દરિદ્ર, કૃપણ ઓર રાજા ઇન સબકી અપ્રત્યાખ્યાન ક્રિયા એકસી હોતી

શું પ્રયોજન છે ? એવો પ્રશ્ન. ઉત્તર--“આત્મા જ સામાયિક છે અને આત્માજ
સામાયિકનો અર્થ છે ” જો અપના મતાનુસાર સામાયિક વગેરેનો અર્થ
આત્મા છે, તો ક્રોધાદિકોની ગર્હા (નિંદા) શા માટે કરવામાં આવી છે ?
એવો પ્રશ્ન ક્યો છે અને તેનો એવો ઉત્તર આપ્યો છે કે “ સયમના નિર્વા
હને માટે ક્રોધાદિકોની ગર્હા કરવામાં આવી છે. ” પ્રશ્ન-ગર્હા સંયમ છે કે
અગર્હા સંયમ છે ?

ઉત્તર--ગર્હા સંયમ છે, અગર્હા સંયમ નથી આ પ્રમાણે ભગવાનને
મુખેથી સામાયિક વગેરેનું સ્વરૂપ સમજીને યોધ પામેલ કાલસ્યવેષિકપુત્ર
અણુગાર ચાર મહાવ્રતરૂપ ધર્મને છોડીને પ્રતિક્રમણ સહિત પાંચ મહાવ્રતયુક્ત
ધર્મનો સ્વીકાર કરીને વિચરવા લાગ્યા, અને અન્તે તેઓ સર્વ હુ ખોથી રહિત
થઈ ગયા, એટલે કે મોક્ષે સિધાવ્યા.

છાયા-કથં સ્વલ્પ મદન્ત । જીવા શુરુકત્વ ધીમ્નમાગચ્છન્તિ, પ્રાણાતિપાતેન મૃપાવાદેન અદત્તાદાનેન મૈથુનેન પરિગ્રહેણ ક્રોધમાનમાયાલામપ્રેમદ્રેષકલદામ્યા ક્યાનપેશુન્ય પરપરિવાદારતિરિતિ માયામૃપામિધ્યાદર્શનશ્ચરયેન, एवं સ્વલ્પ ગૌતમ ! જીવા હૃષ્વમાગચ્છન્તિ । કથં સ્વલ્પ મદન્ત ! જીવા લઘુકરથં હૃષ્વમાગચ્છન્તિ, ગૌતમ ! પ્રાણાતિપાતવિરમણેન યાષન્મિધ્યાદર્શનશ્ચરયવિરમણેન, एवं સ્વલ્પ ગૌતમ ! જીવા લઘુકત્વ હૃષ્વમાગચ્છન્તિ । एवं સસારમાકુલીકુર્ષન્તિ, एवं પરીતીકુર્ષન્તિ, एवं દીર્ઘીકુર્ષન્તિ । એવ હસ્તીકુર્ષન્તિ । એવમનુપર્પટન્તિ । एवं વ્યતિમ્નન્તિ । પ્રશ્નસ્તાનિ ચત્વારિ, અપ્રશ્નસ્તાનિ ચત્વારિ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

ટીકા-‘કહણં મતે’ કથં સ્વલ્પ મદન્ત ! ‘જીવા શુરુકત્વં હૃષ્વમાગચ્છન્તિ’ જીવા શુરુત્વં હૃષ્વમાગચ્છન્તિ, હે મદન્ત ! હમે જીવાઃ કેન પ્રકારેણ શુરુકત્વં માપ્નુવન્તીત્યર્થ । ‘હૃષ્વ’ ઇતિ દેશીય છન્દો વાક્યાલંકારે શૌઘ્યે વા । एवं સર્વથા વિજ્ઞેયમ્ । શુરુત્વમ્ જ્ઞાનાવરણીયાદિવિષકર્મોપચયસ્વરૂપમ્ તદ્ શુરુકમિવ શુરુકમ્ અભોગતિ શમનકારણત્વાત્ । જીવસ્ય શુરુત્વવચ્ચે કિં કારણમિતિ પ્રશ્નઃ । ઉત્તરયતિ મગધાન્ - ‘ગોયમે’ ત્યાદિ । ‘ગોયમા !’ હે ગૌતમ ! ‘પાણાદિવાણં’ પ્રાણાતિપાતેન, પ્રાણિનાં=મીઠાનામતિપાતો વધતીતિ પ્રાણાતિપાતસ્તેન શુરુક્લમાસાવ્યન્તીતિ ? । તથા ‘મુસાવાણં’ મૃપાવાદેન, સતોઽપલાપોઽસતમ પ્રકૃપણં મૃપાવાદસ્તેન ૨ । ‘અદિષ્ણાદાણેજં’ અદત્તાદાનેન, અદત્ત=દેવદુર્વાચનનુદ્ધાત, તસ્ય આદાનં=પ્રદાનમ્ -અદત્તાદાન, તેન ૩ । ‘મેદુણેજં’ મૈથુનેન, મિથુનસ્થ=સ્ત્રીપુત્રરૂપસ્ય કર્મ મૈથુનં =કુહીલસેવન, તેન ૪ । ‘પરિગ્રહેણ’ પરિગ્રહેણ-પરિગ્રહઃ=સ્વસ્થામિમાવેન મૂર્ધા તેન ધર્મોપકરણવ્યવિરિક્તવસ્તુગ્રહણરૂપેણ ૫ । ‘કોહમાણમાયાલોમપેઝ્જદોસ’

ટીકાર્થ-‘મતે !’ હે મદન્ત ! (જીવા) જીવ (શુરુકત્વ) શુરુત્વે (કહણં) કો (કહણ) કિસ તરહ સે (હૃષ્વ આગચ્છન્તિ) પાતે હૈ ? “હૃષ્વ” યહ દેશીશન્દ હૈ ઓર વાક્યાલંકાર મૈ પ્રયુક્ત બુધા હૈ । હસી તરહ સે સર્વથા જાનના ચોહિયે । (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (પાણાદિવાણં) મુસાવાણં અદિષ્ણાદાણેજં, મેદુણેજં, પરિગ્રહેણ) ચે જીવ પ્રાણાતિપાત સે, અદત્તાદાન સે, મૈથુન સે પરિગ્રહ સે, (કોહમાણમાયાલોમપેઝ્જ દોસ

ટીકા-મતે ! હે મગધન્ ! (જીવા) જીવો (શુરુકત્વ) શુરુત્વે (કહણં) કોની રીતે (હૃષ્વ આગચ્છન્તિ) પાતે કરે છે ? “હૃષ્વ” દેશી શબ્દ છે અને તે વાક્યાલંકારમાં વપરાયો છે. આ પ્રમાણે જ સર્વથા સમજવું (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (પાણાદિવાણં) મુસાવાણ અદિષ્ણાદાણેજં મેદુણેજં પરિગ્રહેણ) તે જીવ પ્રાણાતિપાત, મૃપાવાદ, અદત્તાદાન, મૈથુન પરિગ્રહ, (કોહમાણમાયાલોમ

વીર્યકાર્યસ્ય ગુરુત્વાદેઃ પ્રસજ્ઞેન ગુરુત્વાદીનાં નિરૂપણાર્થે નવમોદ્દેશકઃ પ્રારભ્યતે ।
તથા પ્રથમશતકસ્ય પ્રથમોદ્દેશકસ્યાદૌ સંગ્રહગાથાયાં ‘ગુરુ’ ઇત્યુક્તમિતિ
ગુરુત્વાદેઃ પ્રતિપાદનાય નવમોદ્દેશકઃ પ્રારભ્યતે, તત્રેદમાદિમમુત્રમ્-‘કહણં’ ઇત્યાદિ’

મૂલમ્-કહણં ભંતે ! જીવા ગુરુયત્તં હૃવમાગચ્છંતિ ગોયમા !
પાણાઙ્વાણં મુસાવાણં અદિષ્ણાદાણેણં મેહુણેણં પરિગ્ગ-
હેણં, કોહમાણમાયાલોભપેજ્ઞદોસકલહઅભક્ષાણપેસુન્ન-
પરપરિવાય-અરઙ્ગરઙ્ગ-માયામોસ-મિચ્છાદંસણસલ્હેણં, એવં યલુ
ગોયમા ! જીવા ગુરુયત્તં હૃવમાગચ્છંતિ, કહણં ભંતે ! જીવા
લહુયત્તં હૃવમાગચ્છંતિ, ગોયમા ! પાણાઙ્વાયવૈરમણેણં જાવ
મિચ્છાદંસણસલ્હવિરમણેણં, એવં યલુ ગોયમા ! જીવાલહુયત્તં
હૃવમાગચ્છંતિ, એવં સંસારં આઝલી કરેતિ, એવં પરિત્તીક-
રેતિ, એવં દીહી કરેતિ, એવં હસ્સી કરેતિ, એવં અણુપરિયટ્ટંતિ,
એવં વીઙ્ગ વયંતિ, પસત્થા ચત્તારિ, અપ્પસત્થા ચત્તારિ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

અષ્ટમ ઉદ્દેશક કે અંત મેં વીર્ય કા વિચાર કિયા ગયા હૈ, સો ઉસ વીર્ય
સે જીવ ગુરુત્વ આદિ કો પ્રાપ્ત કરતે હૈં । ઇસ લિયે વીર્ય કે કાર્યભૂત
ગુરુત્વ આદિ કે પ્રસજ્ઞ સે ગુરુત્વાદિ કે નિરૂપણ કે નિમિત્ત સૂત્રકાર ને
ઇસ નવમેં ઉદ્દેશક કા પ્રારંભ કિયા હૈ । તથા પ્રથમ શતક કે પ્રથમ
ઉદ્દેશક કી આદિ મેં સંગ્રહ ગાથા મેં “ ગુરુ ” એસા કહા ગયા હૈ સો
ઉસ ગુરુત્વાદિક કે પ્રતિપાદન કે નિમિત્ત નવમેં ઉદ્દેશક કા ઉન્હોં ને
પ્રારંભ કિયા હૈ । ઇસ ઉદ્દેશક કા સર્વપ્રથમ સૂત્ર “ કહણં ” ઇત્યાદિ હૈ
‘ કહ ણં ભંતે ! જીવા ગુરુયત્તં હૃવમાગચ્છંતિ ’ ઇત્યાદિ ।

આઠમા ઉદ્દેશકને અન્તે વીર્યના વિચાર કરવામાં આવ્યો છે તે વીર્યથી છવ
ગુરુત્વ વગેરે પ્રાપ્તિ કરે છે. તેથી વીર્યના કાર્યભૂત ગુરુત્વ વગેરેનું નિરૂપણ
કરવાનો અવસર પ્રાપ્ત થવાથી સૂત્રકાર આ નવમાં ઉદ્દેશકનો પ્રારંભ કરે છે
તથા પ્રથમ શતકના પ્રથમ ઉદ્દેશકની શરૂઆતમાં સંગ્રહગાથામાં “ ગુરુ ”
પદ આવે છે. તેથી ગુરુત્વાદિકનું પ્રતિપાદન કરવા માટે સૂત્રકારે નવમા ઉદ્દેશ-
કની શરૂઆત કરી છે આ ઉદ્દેશકનું સૌથી પહેલું સૂત્ર “ કહણ ” ઇત્યાદિ છે.

“ કહણં ભંતે ! જીવા ગુરુયત્તં હૃવમાગચ્છંતિ ” ઇત્યાદિ ।

सत्येन, तत्र क्रोधः=कृत्याकृत्यविवेको मूलकोऽसमाख्य आत्मपरिणामः ६। मानो
 गर्भः ७। माया=साठचम् ८। लोभः=घृणुता ९। प्रेम=प्रीतिरासक्तिर्वा काम-
 भोगादिषु १०। द्वेषः=अप्रीतिः ११। कलहः=विरोधः १२। अभ्याख्यानम्=
 असदोपारोपणम् १३। पैशुन्यं=परोक्षे कर्षान्तिकादौ विद्यमानस्याविद्यमानस्य वा
 दोषस्योद्घाटनम् १४। परपरिवादः = प्रभूतजनसमर्थ परदोषप्रकाशनम् १५।

प्ररूपण रूप असत्यभाषण से-द्वेष, गुरु, राजा, गाथापति, साधर्मी द्वारा
 अननुज्ञात के आदानरूप अदसादान से, मैथुन से-स्त्रीपुरुष के समोग
 कर्मरूप कुशील सेवन से, परिग्रह से-धर्मोपकरण व्यनिरिक्त वस्तुओं
 के ग्रहण करने से अर्थात् धर्मोपकरण के सिवाय परपदार्थों में स्व स्वा-
 मिभाव मानकर उनमें मूर्च्छा रखने से, जीव गुरुत्व भाव को प्राप्त कर
 लेता है इसी तरह क्रोधादिक जो आत्मा के विकारी भाव हैं उनसे भी
 जी गुरुत्व को पा लेते हैं। आत्मा में कृत्याकृत्य के विवेक जो जड़मूल
 से उत्साह देने वाला जो अक्षमारूप परिणाम होता है उसका नाम क्रोध
 है। गर्भ का नाम मान है। माया नाम कपटका है। घृणुता का नाम
 लोभ है इसे भाषा में लालच कहते हैं। कामभोग आदिमें आसक्तिक
 होना इसका नाम प्रेम है अथवा प्रीतिक नाम प्रेम है। अप्रीतिका होना
 इसका नाम द्वेष है। विरोध का नाम कलह है। असदोषोंका आरोपण
 करना इसका नाम अभ्याख्यान है। परोक्षमें, किसीके विद्यमान अथवा
 नहीं विद्यमान दोषोंका एकान्तमें प्रकट करना इसका नाम पैशुन्य है। अनेक
 जनोके समक्ष दूसरोंके दोषोंको प्रकाशित करना इसका नाम परपरिवाद

(१) प्राप्तातिपातधी-लवोनी विशधना करवाधी (२) भूपावाधी-असत्य
 (३) अदसादानधी देव, गुरु, राजा, गाथापति, तेमव साधर्मी वगैरे भासव
 न अपायेही वस्तु अदख करवाधी, थोरी करवाधी (४) मैथुन-अग्रसखर्भ-
 कुशील सेवनधी (५) परिग्रहधी-धर्मोपकरण सिवायनी वस्तुअने अदख करवाधी
 तेमव तेमा भासीक्षिपलु राणीने आसक्ति राखवाधी (६) क्रोधधी आत्माभां
 आश नरसाना विवेकने नजभूगधी उजेरी नाणनार उअताइय ने परितुम
 वरपत थाय छ तेनाधी (७) मानधी-जवरी (८) मायाधी-कपटधी, (९) लोभधी
 -लालचधी, आशा-तृष्णाधी (१०) रागधी-प्रीत्यक्तिक वस्तुअभां आसक्ति
 राखवाधी. (११) द्वेषधी-अप्रीति-वेरअरे (१२) कलहधी-विशध राखवाधी, कलह
 कलसधी, (१३) अभ्याख्यानधी-उाधना उपर आण अडाववाधी (१४) पैशु-
 न्यधी-या १ नुअधी (१५) परपरिवादधी अके जीअनी निदा करवाधी,

અન્નમત્ત્રાણપેસુન્ન પરપરિવાયઅરહરહમાયામોસમિચ્છાદંસણસલ્લેણં ' ક્રોધમાનમા-
યાલોભપ્રેમદ્વેષકલહામ્યાખ્યાનપૈશુન્યપરપરિવાદારતિરતિમાયામૃષામિથ્યાદર્શન -

કલહઅમત્ત્રાણપેસુન્નપરપરિવાયઅરહરહમાયામોસમિચ્છાદંસણસલ્લેણં)
ક્રોધ, માન, માયા, લોભ, (રાગ) પ્રેમ, દ્વેષ, કલહ, અભ્યાખ્યાન, પૈશુન્ય,
પરપરિવાદ, અરતિ, રતિ, માયામૃષા ઓર મિથ્યાદર્શનશલ્પસે ગુરુત્વકો
પાછેતે હૈં । તાત્પર્ય કહને કા યહ હૈં-જિસ પ્રકાર કોઈ બનાદી ગઈ ભારી
વસ્તુ સ્વભાવતઃ નીચે કી ઓર જાતી હૈં ઉસી પ્રકાર ઉર્ધ્વગમન સ્વભા-
વવાલી યહ આત્મારૂઢ વસ્તુ ભી જવ પૌદ્ગલિક જ્ઞાનાવરણીય આદિ અષ્ટ-
વિધ-કર્મોં કે બંધ સે ભારી બના દી જાતી હૈં-તવ વહ ભી ઉર્ધ્વગમન
સ્વભાવ સે વિપરીત અધોગમન કરને વાલી બન જાતી હૈં । આત્મા કા
સંસારદશા મેં ભ્રમણ કરતે રહના યહી ઉસમેં ગુરુત્વ હૈં । ઓર યહ ગુરુ-
ત્વ ઉસમેં જ્ઞાનાવરણીય આદિ અષ્ટવિધ કર્મોં કે ઉપચય સ્વરૂપ હૈં । ક્યોં
કિ ઇનકે બંધ સે હી આત્મા મેં યહ ગુરુત્વ આયા હૈં । આત્મા પૌદ્ગલિક
જ્ઞાનાવરણીય આદિ અષ્ટવિધ કર્મોં કા બંધ યા ઉપચય કિન ૨ કારણોં
સે કિયા કરતા હૈં યહી બાત સૂત્રકાર ને યહાં પ્રકટ કી હૈં । ઇસમેં ઉન્હોં
ને યહ કહા હૈં કિ યહ આત્મા પ્રાણાતિપાન સે-જીવોં કી વિરાધના
સે, જ્ઞાનાવરણીય આદિ અષ્ટવિધ કર્મોં કા ઉપચય રૂપ જો ગુરુત્વ હૈં
ઉસે પ્રાપ્ત કરતા હૈં । તથા મૃષાવાદ સે-સત્ કે અપલાપ ઓર અસત્ કે

પેજ્જશેસકલહ, અમત્ત્રાણ, પેસુન્નપરપરિવાયઅરહરહમાયામોસમિચ્છાદંસણસલ્લેણં)
ક્રોધ, માન, માયા, લોભ, રાગ, દ્વેષ, કલહ, અભ્યાખ્યાન, પૈશુન્ય,
પરપરિવાદ, અરતિ, રતિ માયામૃષા અને મિથ્યાદર્શનશલ્પના સેવનથી ગુરુત્વ
પ્રાપ્ત કરે છે (એટલે કે ભારે કર્મોં અને છે) તાત્પર્ય એ છે કે-જેવી રીતે
ભારે વસ્તુ સ્વાભાવિક રીતે જ નીચે જાય છે, એ જ પ્રમાણે ઉર્ધ્વગમનના
સ્વભાવવાળા આ આત્મા પણ બ્યારે પૌદ્ગલિક જ્ઞાનાવરણીય વગેરે આઠે કર્મોંના
ભારથી ભારે બને છે ત્યારે તે ઉર્ધ્વગમન કરવાને બદલે અધોગમન કરે છે.
આત્માને સંસારમા જે ભ્રમણ કરવું છે તે તેના ગુરુત્વને કારણે જ છે તે
ગુરુત્વ જ્ઞાનાવરણીય વગેરે આઠ કર્મોંના ઉપચય સ્વરૂપ છે, કારણ કે તેમને
બંધ બાધવાને કારણે જ આત્મામા ગુરુત્વ આવે છે. આત્મા પૌદ્ગલિક જ્ઞાના-
વરણીય વગેરે આઠે કર્મોંના બધ અથવા ઉપચયકયા કયા કારણે કરે છે, એજ
બાત સૂત્રકારે આડી પ્રકટ કરી છે તે એ છે કે આ આત્મા પ્રાણાતિપાત વગેરે
અઠાર પાપસ્થાનોનું સેવન કરવાથી જ્ઞાનાવરણીય વગેરે આઠ કર્મોંના ઉપચય
રૂપ ગુરુત્વને પ્રાપ્ત કરે છે.

ण भते ' कथ खलु मन्त्र ! ' जीवा लघुत्वं इच्छमागच्छति ' जीवा लघुत्वं
इच्छमागच्छन्ति, लघुत्वं-केन कारणेन जीवानां लघुत्वं भवतीति प्रश्नः,
उत्तरयति भगवान्-'गोयम' त्यादि । ' गायमा ' हे गौतम ! ' प्राणाश्वाय वेर
मणेण ' प्राणातिपातविरमणेन, ' जाय मिच्छादमणसत्त्वविरमणेण ' यावत् मिथ्या
दर्शनजन्यविरमणेन यावत्सदन-मृगागादादारभ्य मायामृपापर्यन्तस्य ग्रहण भवति,
तथा च प्राणातिपातादारभ्य यावन्मिथ्यादर्शनजन्यत्वात्तदोपायां विरमणे सति
जीवा लघुत्वंमागच्छन्ति । ' एष खलु गोयमा ' एष खलु ह गौतम ! ' जीवा
लघुत्वं इच्छ आगच्छति ' जीवा लघुत्वं इच्छमागच्छति, ' एष सत्तारं आउसी
करति ' एवं संसारमाकुलीकुर्वन्ति, एषम्=अनेन पूर्वोक्ताभिधायप्रकरण संसा
रम् आकुलीकुरन्ति कर्मणा मधुरीकुरन्ति, एष आउसी करतीत्यत्र एवं शब्दः
जीव कैसे 'आरीपन के अभाव रूप लघुत्वं का-हृत्करण को पाते
हैं ? (गोयमा ! प्राणाश्वायवेरमणेण जाय मिच्छादमणसत्त्वविरमणेण)
हे गौतम ! प्राणातिपात से दूर होने से-अर्थात्-प्राणातिपात के विरमण
-त्याग से यावत् मिथ्यादर्शन शरण के विरमण-त्याग से जीव
लघुत्वं पाता है । यहाँ "यावत्" पद से मृगागाद से लेकर मायामृपा
तक का पूर्याप्त पाठ ग्रहण किया गया है । तथा प्राणातिपात से
छगाकर मिथ्यादर्शन शरण तक के पार्श्व के त्याग होने पर जीव लघुता
को प्राप्त कर लिया करते हैं ऐसा अर्थ बोध होता है । यही बात प्रभु ने
(एवं मन्त्र गोयमा ! जीवा लघुत्वं इच्छ आगच्छति) इस सूत्र पाठ
द्वारा गौतम ! के प्रति व्यक्त की है । (एवं संसार आउसी करेंति) इस
पूर्वोक्त अभिधाय प्रकार से प्राणातिपात आदिकों के सेवन करने से
जीव संसार को पकड़ते हैं-प्रभु करते हैं ३ । यहाँ जो " एवं " यह शब्द

लघुत्वं अभाव रूप लघुत्वं दृष्टापात्त एव केवी रीते प्राप्त है ?

उत्तर—(गोयमा ! प्राणाश्वायवेरमणेण जाय मिच्छादमणसत्त्वविरमणेण)
हे गौतम ! प्राणातिपातभी लघुनि मिथ्यादर्शनशरण मुनीना अद्वैत पाप-भा
नेना त्यागभी एव लघुत्वं प्राप्त है । अर्थात् " यावत् " पद वदे मृगागादभी
लघुनि मायामृपा पर्यन्तना पाठ ग्रहण किये हैं तात्पर्यं के हैं प्राणातिपातभी
लघुनि मिथ्यादर्शनशरण मुनीना पापेना त्याग करवाभी एव लघुता दृष्टापात्त प्राप्त
है । के व बात प्रभु के पद खलु गोयमा ! जीवा लघुत्वं इच्छ आगच्छति"
सूत्रपाठ वदे गौतमने अभिलषी है (एष सत्तारं आउसी करेंति) पूर्वोक्त अभिधाय
व्यावृत्ति प्राणातिपात वदेना अनन्यता एव अनन्तर वधार है अर्थात् " एवं " पद
प्रभु के हैं ते पूर्वोक्त अभिधायन सूत्र के हैं ते अभिधाय आ अभिधाय

રત્યરતિઃ, તત્ર રતિઃ=વિષયેષ્વનુરાગઃ, અરતિઃ=ધર્મેઽનભિરુચિઃ, રતિસહિતા અરતિઃ
-રત્યરતિઃ ૧૬ । માયામૃષા=માયાસહિતો મૃષાવાદઃ ૧૭ । મિથ્યાદર્શનશલ્યમ્=
મિથ્યાદર્શન=મિથ્યાત્વમ્, તદેવ શલ્યમિવ વિવિધવ્યથાજનકત્વાત્ મિથ્યાદર્શન-
શલ્યમ્=કુદેવકુગુરુકુધર્મેષુ :સુદેવાદિબુદ્ધિઃ ૧૮ । ઇત્યષ્ટાદશપાપાનિ તૈઃ । ' એવં
સ્વલુ ગોયમા ' એવં પૂર્વેક્તપ્રાણાતિપાતાદારભ્ય મિથ્યાદર્શનશલ્યપર્યન્તૈરષ્ટા-
દશભિઃ પાપૈઃ સ્વલુ ઇતિ નિશ્ચયેન હે ગૌતમ ! ' જીવા ' જીવાઃ ' ગુરુયત્તં ' ગુરુ-
કત્વમ્, આગચ્છંતિ=પ્રાપ્નુવન્તીતિ । પુનઃ પ્રશ્નયતિ-' કહણં મંતે ' ઇત્યાદિ । ' કહ

હૈ । વિષયોં મેં અનુરાગ રચના ઇસકાં નામ રતિ, ધર્મ મેં અભિરુચિ કા
નહીં હોના ઇસકા નામ અરતિ હૈ । માયાસહિત ઝૂઠ ઘોલને કા નામ
માયામૃષા હૈ । મિથ્યાત્વકા નામ મિથ્યાદર્શન હૈ । ઇસે જો શલ્ય કહા
ગયા હૈ સો ઇસકા કારણ યહં હૈ કિ જિસ પ્રકાર શલ્ય અનેક પ્રકારંકી
વ્યથાઓં (દુઃખોં) કો શરીર મેં લગ જાને પર ઉત્પન્ન કરતા હૈ ડસી
પ્રકાર સે મિથ્યાદર્શન મી જીવ કો સાથ મેં લગ જાને પર વિવિધ પ્રકાર
કી યાતનાઓ કો ચારોં ગતિયોં મેં દેતા રહતા હૈ । ઇસકે પ્રભાવસે જીવ
કુદેવ, કુગુરુ ઓર કુધર્મ મેં સુદેવ, સુગુરુ ઓર સુધર્મ કી માન્યતા વાલા
બન જાયા કરતા હૈ । યે સવ પૂર્વોક્ત ૧૮ પાપ હૈં । ઇનકે દ્વારા હી જીવ
જ્ઞાનાવરણીય આદિ આઠ પ્રકાર કે કર્મોં કા સંચય કરને પર ગુરુત્વ આતા
હૈ ૧ । યહી વાત (એવં સ્વલુ ગોયમા ! જીવા ગુરુયત્તં હવ્વં આગચ્છંતિ)
હસ સૂત્ર પાઠ ને ગૌતમ કો સમજાઈ હૈ ।

(કહ ણં મંતે ! જીવા લહુત્તં હવ્વં આગચ્છંતિ) હે મદન્ત !

(૧૬) રતિથી વિષયોમા અનુરાગ રાખવાથી, અરતિથી-ધર્મમાં અભિરુચિ ન
રાખવાથી, (૧૭) માયા મૃષાથી માયાસહિત જૂઠું ઘોલવાથી અને (૧૮)
મિથ્યાદર્શનશલ્યથી-મિથ્યાત્વને મિથ્યાદર્શન કહે છે. મિથ્યાદર્શનને શલ્ય
કહેવાનું કારણ એ છે કે જેમ કાટો (શલ્ય) વાગવાથી શરીરમા અનેક પ્રકાર-
ની પીડા થાય છે એ જ પ્રમાણે મિથ્યાદર્શન શલ્ય જીવને ચારે ગતિઓમાં
બ્રમણ કરાવીને અનેક પ્રકારની પીડા પહોંચાડે છે. તેના પ્રભાવથી જીવ કુદેવ,
કુગુરુ અને કુધર્મને સુદેવ, સુગુરુ અને સુધર્મ માનતો થાય છે ઉપરોક્ત
૧૮ પાપોના સેવનથી જીવ જ્ઞાનાવરણીય આદિ આઠ કર્મોના સંચય કરીને
ગુરુત્વ પ્રાપ્ત કરે છે એ જ વાત (એવં સ્વલુ ગોયમા ! જીવા ગુરુયત્તં હવ્વં
આગચ્છંતિ) આ સૂત્ર પાઠથી ગૌતમને સમજાવવામા આવી છે

પ્રશ્ન—(કહણ મંતે ! જીવા લહુત્તં હવ્વં આગચ્છંતિ ?) હે ભગવન્ !

પ મધુરકાલાવસ્થિતિક મેસારં કુર્વન્તિ, 'એવ હસ્સી કરેતિ' એવં હસ્સીકુર્વન્તિ, સંસારસ્પાત્યકાલાવસ્થાયિત્વ કુર્વન્તિ, 'એવ અણુપરિચક્ષતિ' એવમનુપર્યટન્તિ, પૌ-પઃ પુ-પેન ધ્રમન્તિ સસારે । 'એવં ઘીહ વર્યતિ' એવ ઘ્યતિવ્રજન્તિ, ગ્યતિ ક્રામન્તિ સસારં સમુલ્લખ્યન્તીતિ । અયોપસંહરઆઠ- 'પસત્યાચચારિ' મશ્વસ્તાનિ ચત્વારિ, શુદ્ધલગ્નુત્ત્રાદિપુ અષ્ટસુ મધ્યે ચત્વારિ-ચતુઃ સંખ્યકાનિ લગ્નુત્તરી તત્ત્વ-હસ્ત્ત્વ-ઘ્યતિવ્રજનનાનિ પ્રશ્વસ્તાનિ-પ્રશ્વસનીયાનિ મોક્ષકારણત્વાત્ 'અપ્પસ ત્થચચારિ' અમશ્વસ્તાનિ ચત્વારિ, શુદ્ધાકુલ્લત્ત્વ-દીર્ઘત્ત્વપર્યટનનાનિ અપ્રશ્વસ્તાનિ, તેષાં સમારકારણત્વાત્ । યદ્યપ્યેતાનિ સર્વાણિ સંસારસવદ્ધાન્યેષ તથાપિ ચત્વારિ

સસાર કો હતનો વઢી ખારી લંથી સ્થિતિવાલા વે હન્હી પ્રાણાતિપાત આદિ ૧૮ અઠારહ પાપોં કે સેવન કરને સે હી યનાતે હૈ । (પથ હસ્સી કરેતિ) તથા પ્રાણાતિપાત આદિ ૧૮ અઠારહ પાપ સ્થાનોં સે નિવૃત્ત હોને સે વે સંસાર કો અસ્પકાલાવસ્થાયી યના છેસે હૈ । (એવં અણુપરિચક્ષતિ) હસી કારણસે- અર્થાત્ ડ-હોં ને અપને સસાર કો યહુત અધિક લંથી સ્થિતિવાલા યના લિયા હૈ-હમી નિમિત્ત સે-વે સસાર મેં ચાર ૨ ધ્રમણ કરતે હૈ । (એવં ઘીહવર્યતિ) પ્રાણાતિપાત આદિ ૧૮ અઠારહ પાપસ્થાનોંસે નિવૃત્ત હોને સે જીવ સંસાર કો ડલ્લંઘ જાતે હૈ-અર્થાત્ સસાર સે પાર હો જાતે હૈ । (પસત્યા ચચારિ, અપ્પસત્થા ચચારિ અપ પૂર્વોક્ત વિષય કા ઉપસહાર કરતે હુપ સૂત્રકાર કહતે હૈ કિ હે ગૌતમ । શુદ્ધલગ્નુત્ત્વ આદિ આઠ મેં સે સપ્ત ત્ત્વ, પરીતત્ત્વ, શુદ્ધત્ત્વ ઓર ગ્યતિવ્રજન યે ચાર મોક્ષ કે કારણ હોને સે પ્રધાસનીય હૈ । તથા શુદ્ધલ, આકુલીત્ત્વ દીર્ઘત્ત્વ ઓર પર્યટન યે ચાર સસાર

છે કે પ્રાણાતિપાત વગેરે અઠારે પાપોનું સેવન કરવાથી જ જીવને સંસાર જૂલ જ દીર્ઘ સ્થિતિવાળો બને છે । (એવં હસ્સી કરેતિ) તથા પ્રાણાતિપાત વગેરે અઠારે પાપોથી નિવૃત્ત થવાથી જીવ પોતાના સંસારને અસ્પક્ષાલવાળો-દ્રઃ ૩૩ કાળને બનાવે છે । (એવ અણુપરિચક્ષતિ) જો જ કારણે જોડેલે કે સંસારને ઘણી જ લાંબી સ્થિતિ વાળો બનાવી લીધો હોવાને કારણે જોવા છોડે વારંવાર સંસારમાં પરિવ્રમણ કર્યા કરે છે । (એવ ઘીહવર્યતિ) પ્રાણાતિપાત વગેરે અઠાર પાપસ્થાનોથી નિવૃત્ત થવાથી જીવે સંસારને જોગળી બધ છે, જોડેલે કે સંસારસામરને તરી બધ છે । (પસત્યા ચચારિ અપસત્થા ચચારિ) કહે પૂર્વોક્ત વિષયને ઉપસહાર કરતાં સૂત્રકાર કહે છે કે-હે ગૌતમ । શુદ્ધત્ત્વ, લગ્નુત્ત્વ વગેરે આઠમાંથી લગ્નુત્ત્વ પરી તત્ત્વ, હસ્ત્ત્વ અને ગ્યતિવ્રજન, જો ચાર મોક્ષના કારણરૂપ હોવાથી પ્રશસ્ત છે તથા શુદ્ધલ આકુલીત્ત્વ (સંસાર વધારવો) દીર્ઘત્ત્વ અને પર્યટન, જો

પૂર્વોક્તાભિલાપસંસૂચકઃ સચાભિલાપ એવં ભવતિ—‘કહ્ણં ભંતે ! જીવા સંસાર-
આડલી કરેતિ, ગોયમા ! પાળાઢવાણં જાવમિચ્છાદંસણસલ્લેણં ’ કથં સ્વલ્હ
ભદન્ત ? જીવાઃ સંસારમ્ આકુલીકુર્વન્તિ, ગૌતમ ! પ્રાણાતિપાતેન યાવન્મિધ્યા-
દર્શનશલ્યેન ક્ત્યાદિ । એવમુત્તરત્રાપિ પરીતીકરણાદિપદેધ્વપિ અભિલાપપ્રકારો
જ્ઞાતવ્યઃ । ‘ એવં પરિત્તી કરેતિ ’ એવં પરીતીકુર્વન્તિ=સંસારમલ્પીકુર્વન્તિ, ‘ એવં
દીહી કરેતિ ’ એવં દીર્ઘીકુર્વન્તિ, સંસારસ્ય દૈર્ઘ્યં પ્રચુરતરકાલાવસ્થાયિત્વં તથા

હૈ વહ પૂર્વોક્ત અભિલાપ કા સંસૂચક હૈ । તહ અભિલાપ ઇસ પ્રકાર સે
હોતા હૈ—“ કહ્ણં ભંતે ! જીવા સંસારં આડલી કરેતિ ” હૈ ભદન્ત ! જીવ
સંસાર કો કિસ કારણ સે વઢાતે હૈં ? “ ગોયમા ! પાળાઢવાણં જાવ
મિચ્છાદંસણસલ્લેણં ” હૈ ગૌતમ ! જીવ સસાર કો પ્રાણાતિપાત આદિ
કારણોં કૈ સેવન સે લગાકર મિધ્યાદર્શન શલ્યતક કૈ કારણોં કૈ સેવન
સે વઢાને હૈં । ઇસી તરઢ સે પરીતીકરણાદિક જો આગે કૈ પદ હૈં ઉનમૈં
ભી અભિલાપ પ્રકાર જાનના ઑહિયે । (એવં પરિત્તી કરૈંતિ) તથા—
પ્રણાતિપાત આદિ સંસાર વર્ધક કારણોં સે નિવૃત્ત હોને સે જીવ સંસાર
કો અલ્પ કર દેતે હૈં । (એવં દીહી કરૈંતિ) ઔર પ્રાણાતિપાત આદિકોં કૈ
સેવન કરને સે જીવ સંસાર કો દીર્ઘ-લંબા કર દેતે હૈં । યહાં દીર્ઘ કરને
કા અભિપ્રાય યહ હૈ કિ પ્રાણાતિપાત આદિકોં કૈ સેવનકર્તા સંસાર
મૈં પ્રચુરકાલતક ભ્રમણ કરતે રહતે હૈં । અતઃ ંસે જીવોં કી અપેક્ષા
ઉનકા સંસાર ઉનકે સાથ બહુત વઢે લંબે સમય તક રહતા હૈ । અર્થાત્
વહ સંસાર ઉનકા બહુત વઢી ભારી સ્થિતિવાલા બન જાતા હૈ । અપને

બને છે—“ કહ્ણં ભંતે ! જીવા સંસારં આડલી કરેતિ ” હૈ ભગવન્ ! શા કારણે
અવ સંસાર વધારે છે ? ‘ ગોયમા ! પાળાઢવાણં જાવ મિચ્છાદંસણસલ્લેણં ’
હૈ ગૌતમ ! પ્રાણાતિપાતથી લઘને મિધ્યાદર્શનશલ્ય સુધીનાં પાપોનું સેવન
કરવાથી અવ સંસારને વધારે કરે છે એજ પ્રમાણે પરીતીકરણ (સીમિત-
કરણ) વગેરે ને પદો આગળ આવે છે તેમના વિષયમા પણ અભિલાપ
કરવો (એવં પરિત્તી કરેતિ) પ્રાણાતિપાત વગેરે સંસારવર્ધક કારણોથી નિવૃત્ત
થવાથી અવ સંસારને અલ્પ (સીમિત) કરી નાખે છે. (એવ દીહી કરેતિ)
અને પ્રાણાતિપાત વગેરેનું સેવન કરવાથી અવ સંસારને વધારે છે સંસારને
વધારવો એટલે સંસારમા લાખા કાળ સુધી ભ્રમણ કરવું તે. પ્રાણાતિપાત વગેરે
૧૮ પાપોનું સેવન કરનાર અવ બહુજ દીર્ઘ કાળસુધી સંસારમા રહે છે.
એટલે કે તેના સંસાર ખૂબજ લાખી સ્થિતિવાળો બની બાય છે. સારાશ એ

एण भते ! किं गुरुए लहुए गुरुयलहुए अगुरुयलहुए ? गो
यमा ! णो गुरुए णो लहुए गुरुयलहुए वि, अगुरुयलहुए
वि । से केणट्ठेणं ? गोयमा ! गुरुयलहुयदव्वाइ पडुच्च णो
गुरुए णो लहुए गुरुयलहुए णो अगुरुयलहुए । अगुरुयलहु
यदव्वाइ पडुच्च णो गुरुए णो लहुए णो गुरुयलहुए अगुरु-
यलहुए । समयाकम्माणि य चउत्थपपणं । कण्हे लेस्सा णं
भते ! किं गुरुया जाव अगुरुयलहुया ? गोयमा ! णो गुरुया णो
लहुया गुरुयलहुया वि अगुरुयलहुया वि । से केणट्ठेणं ? ।
गोयमा ! दव्वलेस पडुच्च तइयपपणं । भावलेस्स पडुच्च
चउत्थपपणं । एव जाव सुक्कलेस्सा । दिट्ठी दसणणाणऽण्णाण
सत्ताओ चउत्थपपणं णेयव्वाओ । हेठिह्हा चत्तारि सरीरा
णायव्वा तइपणं पपणं । कम्मया चउत्थपपणं पपणं । मण
जोगो षड्जोगो चउत्थपपणं पपणं । कायजोगो तइपणं
पपण । सागारोवओगो अणागारोवओगो चउत्थपपणं ।
सव्वदव्वा सव्वपपसा सव्वपज्जवा जहा पोगलत्थिकाओ ।
तीयद्धा अणागयद्धा सव्वद्धा चउत्थपपण पपण ॥सू०२॥

छाया—सप्तम खलु मदन्त ! अवकाशान्तरं किं गुरुकं किं लघुकं गुरुल-
घुकम् अगुरुलघुकम् ? गौतम ! नो गुरुक नो लघुकं नो गुरुलघुकम् अगुरुल-
घुकम् । सप्तमः खलु मदन्त ! तनुवात किं गुरुको लघुको गुरुलघुका अगुरु-
लघुका ? गौतम ! नो गुरुको नो लघुको गुरुलघुको नो अगुरुलघुका । एवं
सप्तमो वनवात । सप्तमो वनोदधिः । सप्तमी पृथिवी । अरकाशान्तराणि स
र्वाणि यथा सप्तममवकाशान्तरं । शेषा यथा तनुवात, एवं गुरुलघुकाः “अ-
काशपातवनोदधिः पृथिवीदीपाश्च सागराः सर्वाणि” नरयिना खलु मदन्त !
किं गुरुका यावदगुरुलघुका ? । गौतम ! नो गुरुका नो लघुकाः गुरुलघुका

આધાનિ સંસારપોષકતયા અપ્રસ્તાનીતિ, અનાદેયાનિ । इतराणि तु मोक्षकारण-
त्वेन प्रशस्तानीति समुपादेयानीति ॥ सू० १ ॥

ગુરુત્વલઘુત્વયોરધિકારાદેવેદમપિ સૂત્રમાહ—‘ સત્તમે ણં ’ इत्यादि ।

મૂલમ્—સત્તમેણં મંતે ! ઉવાસંતરે કિં ગુરુણ લહુણ ગુરુય-
લહુણ અગુરુ ય લહુણ ? ગોયમા ! ણો ગુરુણ ણો લહુણ ણો
ગુરુયલહુણ અગુરુયલહુણ, સત્તમેણં મંતે ! તણુવાણ કિં ગુરુણ
લહુણ ગુરુયલહુણ અગુરુયલહુણ ગોયમા ! ણો ગુરુણ ણો
લહુણ ગુરુયલહુણ ણો અગુરુયલહુણ, एवं सत्तमे घणवाए
सत्तमे घणोदही सत्तमापुढवी, उवासंतराइं सव्वाइं जहा सत्तमे
उवासंतरे, सैसा जहा तणुवाए, ‘ एवं गुरुलहुए, ओवाय-
घणउदहि-पुढवी-दीवा य सायरा वासा ’ । णेरइयाणं
મંતે ! કિં ગુરુયા જાવ અગુરુયલહુયા ? ગોયમા ! ણો ગુરુયા ણો
લહુયા ગુરુલહુયા વિ, અગુરુયલહુયા વિ, સે કેણદ્દેણં ? ગો-
યમા ! વિઉવ્વિયતેયાઈં પહુચ્ચ ણો ગુરુયા ણો લહુયા ગુરુય-
લહુયા ણો અગુરુયલહુયા । जीवं च कम्मणं च पडुच्च णो
गुरुया णो लहुया णो गुरुयलहुया अगुरुयलहुया से तेणद्वेणं ।
एवं जाव वेमाणिया, णाणत्तं जाणियव्वं सरीरेहिं । धम्म-
त्थिकाए जाव जीवत्थिकाए चउत्थपएणं । पोग्गलत्थिका-

के कारण होने से अप्रशस्त हैं । यद्यपि ये सब संसारसंबद्ध ही हैं, तो
भी आदि के चार संसार के पोषक होने के कारण अप्रशस्त-अनादेय
हैं । बाकी के चार मोक्ष के कारण होनेसे प्रशस्त-उपादेय हैं ॥ सू० १ ॥

ચાર સંસારનાં કારણરૂપ હોવાથી અપ્રશસ્ત છે જો કે એ બધા કારણો સંસાર-
સબદ્ધ છે, તો પણ શરૂઆતના ચાર સંસારના પોષક હોવાથી અપ્રશસ્ત હોય
છે અને બાકીના ચાર મોક્ષ અપાવનાર હોવાથી પ્રશસ્ત ઉપાદેય છે સૂ૦ ૧

“ નિચ્છયગ્રો સન્નગુરુ સન્નમ્મુ ધા ન ત્રિજ્ઞપ દન્વ ।

વ્યવહારગ્રો ડગુન્નમ્મ, વાયરસ્વપેસુ નડ્ડોસુ ॥ ૧ ॥

અગુરુલહુ ષડકાસા અરુપિ દન્વા ય હોતિ નાયન્ના ।

સેસામ્મો અદ્ધકાસા, ગુરુલહુયાનિચ્છયણપસ્સ ” ॥ ૨ ॥

છાયા—નિશ્ચયતઃ સર્વ ગુરુ સર્વ લઘુ વા નિશ્ચયે દ્રવ્યમ્ ।

વ્યવહારતસ્મુ યુન્મતે વાદરસ્કન્ધેષુ નાન્યપુ ॥ ૧ ॥

અગુરુલપય ચતુ સ્પર્શાઃ અરુપિ દ્રવ્યાણિ ચ મવતિ જ્ઞાતવ્યાનિ ।

કેપાસ્તુ અદ્ધસ્પર્શા ગુરુલહુકા નિશ્ચયનયસ્ય ” ॥ ૨ ॥ इति ।

નિશ્ચયતઃ=નિશ્ચયનયાનુસારેણ કિમપિ દ્રવ્યમ્ સર્વતઃ ગુરુ સર્વતો લઘુ વા ન મવતિ, પરન્તુ વ્યવહારતઃ વ્યવહારનયાનુસારેણ વાદરસ્કન્ધેષુ વાદરસ્કન્ધવિષય સર્વતઃ ગુરુત્વ સર્વતો હ્યુત્વં વા યુગ્યતે=મવતિ, નાયપુ, અન્યપુ વાદરસ્કન્ધ ન્યમિન્નેષુ સૂક્ષ્મેષુ સર્વતો ગુરુત્વં સર્વાપેક્ષયા હ્યુત્વ વા ન મવતિ । इति પ્રથમ ગાયાર્થ । ચતુઃસ્પર્શા સૂક્ષ્મપરિણામવન્તિ યાનિ દ્રવ્યાણિ ચતુઃમહારકસ્પર્ક્યુ ક્તાનિ, રૂપીણિ તથાડરુપિદ્રવ્યાણિ ચ તાનિ સર્વાણ્યપિ અગુરુલહુનિ મવતિ इति જ્ઞાતવ્યાનિ કેપાસ્તુ યતદ્મિથાનિ યાનિ દ્રવ્યાણિ અદ્ધસ્પર્શવન્તિ, વાદરાણિ તાનિ સર્વાણ્યપિ ગુરુલહુકાનિ મવન્તિ, નિશ્ચયનયસ્ય=નિશ્ચયનયસ્ય મતં ક્ષેપમ્ ।

કરની ચારિયે—નિશ્ચય નય કી અપેક્ષા લેકર જય ગુરુ લઘુ કા વિચાર કિયા જાતા હૈ તૌ કોઈ બી દ્રવ્ય પેસા નહીં હૈ જો સય સે ખારી હો ખીર સયસે હલકા હો । પરન્તુ જય વ્યવહારનય કી અપેક્ષા લેકર ગુરુ લઘુ કા વિચાર કિયા જાતા હૈ તય—જો વાદર સ્કન્ધ હૈં ઉનમૈં સય સે ખારીપના ખીર સય સે હલકાપના રહતા હૈં । અન્યોં મૈં નહીં । જો દ્રવ્ય ચાર સ્પર્શાવાલે હોતે હૈં તથા અરૂપી—રૂપ—રસ ગંધ ઓર સ્પર્શ જનસે રહિત હોતે હૈં યે સય અગુરુ લઘુ હોતે હૈં । તથા વાકી કે આઠ સ્પર્શ-વાલે દ્રવ્ય ગુરુલહુ હૈં, પેસા નિશ્ચય નય કા મન્તવ્ય હૈં । તાત્પર્ય જન

પ્રમાણે કસેલો ભેઈએ બે નિશ્ચયનયની અપેક્ષાએ શુરુત્વ અને લઘુત્વનો વિચાર કરવામાં આવે તો ઠાઠ પણ દ્રવ્ય એવું નથી કે જે સીધી બારે હોય કે સીધી હલકું હોય પણ વ્યવહારનયની અપેક્ષાએ શુરુ લઘુનો વિચાર કરવામાં આવે તો જે બાહર (સ્પર્શ) સ્કન્ધ છે તેમાં સીધી વધારે શુરુત્વ (બારેપણ) અને સીધી ઓછું લઘુત્વ (હલકાપણ) રહે છે બીજામાં રહેતું નથી જે દ્રવ્યો બાર સ્પર્શવાળા હોય છે તથા અરૂપી (રૂપ, રસ, ગંધ અને સ્પર્શથી રહિત) હોય છે તે બધા દ્રવ્યો અગુરુલહુ હોય છે અને બાકીના આઠ સ્પર્શવાળા દ્રવ્યો ગુરુલહુ છે, એવું નિશ્ચયનયનું મતવ્ય છે, આ બંને

अपि अगुरुकलघुका अपि । तत्केनार्थेन ? । गौतम ! वैक्रियतैजसे प्रतीत्य नो गुरुका नो लघुकाः गुरुकलघुका नो अगुरुकलघुका । जीवं च कर्मणं च प्रतीत्य नो गुरुका नो लघुका नो गुरुकलघुकाः अगुरुकलघुकाः, तत् तेनार्थेन ? एवं यावद्वैमानिकाः, नानात्वं ज्ञातव्यं शरीरैः । धर्मास्तिकायो यावत् जीवास्तिकायश्चतुर्थपदेन । पुद्गलास्तिकायः खलु भदन्त ! किं गुरुको लघुको गुरुकलघुकः अगुरुकलघुकः ? । गौतम ! नो गुरुको नो लघुको गुरुकलघुकोऽपि अगुरुलघुकोऽपि । तत् केनार्थेन ? गौतम ! गुरुकलघुकद्रव्याणि प्रतीत्य नो गुरुको नो लघुको गुरुकलघुको नो अगुरुकलघुकः । अगुरुकलघुकद्रव्याणि प्रतीत्य नो गुरुको नो लघुको नो गुरुकलघुकः अगुरुलघुकः । समयाः कर्माणि च चतुर्थपदेन । कृष्णलेश्या खलु भदन्त ! किं गुरुका यावदगुरुलघुका ? गौतम ! नो गुरुका नो लघुका गुरुलघुका अपि अगुरुलघुका अपि । तत्केनार्थेन ? गौतम ! द्रव्यलेश्यां प्रतीत्य तृतीयपदेन । भावलेश्यां प्रतीत्य चतुर्थपदेन एवं यावत् शुक्ललेश्या दृष्टिदर्शनं ज्ञानाज्ञानसंज्ञाश्चतुर्थपदेन नेतव्याः । अधस्तनानि चत्वारि शरीराणि ज्ञातव्यानि तृतीयपदेन । कर्मणं चतुर्थकेन पदेन । मनोयोगो वचोयोगश्चतुर्थेन पदेन । काययोगस्तृतीयपदेन । साकारोपयोगोऽनाकारोपयोगश्चतुर्थकेन पदेन । सर्वद्रव्याणिसर्वप्रदेशाः सर्वपर्यवाः यथा पुद्गलास्तिकाया । अतीताद्धा, अनागताद्धा सर्वाद्धा चतुर्थकेन पदेन ॥ सू० २ ॥

टीका—‘सत्तमे णं भंते’ सप्तमं खलु भदन्त ! ‘उवासंतरे’ अवकाशान्तरं ‘किं गुरुए लहुए गुरुयलहुए अगुरुयलहुए’ किं गुरुकं लघुकं गुरुलघुकम्-अगुरुलघुकम्, अत्र च गुरुलघुव्यवस्था एवं करणीया—

गुरुत्व लघुत्व के अधिकार से ही सूत्रकार अब इस “सत्तमे णं भंते !” सूत्र का भी कथन करते हैं—‘सत्तमे णं भंते ! उवासंतरे किं गुरुए’ इत्यादि ० ।

टीकार्थ—(भंते !) हे भदन्त ! (सत्तमे णं उवासंतरे किं गुरुए, लहुए, गुरुयलहुए, अगुरुयलहुए) सातवां जो अवकाशान्तर है वह क्या भारी है, अथवा हलका है ? या भारी हलका दोनों रूप है ? या न भारी है, न हलका है इसरूप है ? यहां गुरु लघु की व्यवस्था इस प्रकार से

गुरुत्व અને લઘુત્વની અપેક્ષાએ જ હવે સૂત્રકાર “સત્તમેણં ભંતે !” ઇત્યાદિ સૂત્રોતુ કથન કરે છે—“સત્તમે ણં ભંતે ! ઉવાસંતરે કિં ગુરુ” ઇત્યાદિ

ટીકાર્થ—(ભંતે !) હે ભગવન ! (સત્તમેણં ઉવાસંતરે કિં ગુરુ, લહુ, ગુરુયલહુ, અગુરુયલહુ ?) સાતમું અવકાશાન્તર શું ભારે છે ? અથવા શું હલકું છે ? અથવા ભારે તથા હલકું એ બન્નેરૂપ છે ? અગુરુલઘુ છે (ભારે પણ નહીં અને હલકું પણ નહીં એવું) છે ? અહીં ગુરુલઘુનો વિચાર આ

ઉત્તરયતિ મગવાન્—‘ગોયમ’ ત્યાદિ, ‘ગાયમા’ હે ગૌતમ ! ‘બો ગુરુ’ નો ગુરુક સત્તમમયકાશાન્તરમ્ ‘જો લહુપ’ નો લહુકમ્ ‘જો ગુરુપ્પહુપ’ ના ગુરુક્લ્લહુકમ્ ‘અગુરુપ્પહુપ’ અગુરુક્લ્લહુકમ્, ‘સત્તમ જં મંતે’ સત્તમ સ્તુ મદન્ત ! ‘તણુવાપ’ તનુવાતઃ ‘કિં ગુરુપ લહુપ ગુરુપ્પહુપ-અગુરુપ્પહુપ’ કિં ગુરુકઃ હ્યહુક ગુરુક્લ્લહુકોઽગુરુક્લ્લહુક ? સત્તમે તનુવાત ગુરુત્વં લ્હુત્વં ગુરુક લ્હુત્વમગુરુક્લ્લહુત્વ ષતિ પ્રશ્ન । ઉત્તરયતિ મગવાન્—‘ગોયમે’ ત્યાદિ । ‘ગાયમા’ હે ગૌતમ ! જો ગુરુપ’ નો ગુરુક ‘જો લહુપ’ નો લહુકઃ, કિન્તુ ‘ગુરુપ્પહુપ’ ગુરુક્લ્લહુક ‘જો અગુરુપ્પહુપ’ નો અગુરુક્લ્લહુકઃ, હે ગૌતમ ! યાઽસી સત્તમસ્ત તુવાતઃ સ નો ગુરુ નો લ્હુ કિન્તુ ગુરુક્લ્લહુકો ન વા અગુરુક્લ્લહુક ઇત્યેવં જ્ઞાતમ્ ઇતિ । એવમવ સત્તમા ધનવાતાદયોપિ જ્ઞાતવ્યા ઇત્યાશયેનાહ—‘એષ સત્તમ ધન વાપ’ ઇત્યાદિ । ‘એષ સત્તમે ધનવાપ’ એવં સત્તમો ધનવાત, યયા સત્તમસ્ત તુવાતઃ ન ગુરુર્ન વા લ્હુ કિન્તુ ગુરુક્લ્લહુકો ન અગુરુક્લ્લહુસ્તયા સત્તમો ધનવાતો ઽપિ ન ગુરુ નં વા લ્હુનાપિ તુ ગુરુક્લ્લહુકો ન અગુરુક્લ્લહુક ઇતિ માત્ર ।

ગૌતમસ્વામીકૃત પૂર્વપ્રશ્ન કા ઉત્તર દત્તે હુપ પ્રશ્ન કહતે હેં કિ- (ગોયમા ! જો ગુરુપ, જો લહુપ, જો ગુરુપ્પહુપ, અગુરુપ્પહુપ) હે ગૌતમ ! સામર્થો જો અધકાશાન્તર હેં વહ ન ગુરુક હેં, ન લહુક હેં, ન ગુરુક્લ્લહુક હેં । (સત્તમે જં મંતે ! તણુવાપ કિં ગુરુપ, લહુપ, ગુરુપ્પહુપ, અગુરુપ્પહુપ) હેં મદન્ત ! સામર્થો જો તનુવાત હેં વહ કયા ગુરુ હેં, લ્હુ હેં, ગુરુક્લ્લહુ હેં યા અગુરુક્લ્લહુ હેં । (ગોયમા ! જો ગુરુપ, જો લહુપ, ગુરુપ્પહુપ, જો અગુરુપ્પહુપ) હેં ગૌતમ ! સામર્થો જો તનુવાત હેં વહ ન ગુરુ હેં, ન લ્હુ હેં ઓર ન અગુરુક્લ્લહુ હેં કિન્તુ ગુરુક્લ્લહુ હેં । (એ સત્તમે ધન વાપ, સત્તમે ધનવાતી, સત્તમા પુઠ્ઠી, ડયામંતરાઈ સમ્માઈ અહા સત્તમે ડયામંતર) જૈસે માનમા તનુવાત ન ગુરુ હેં ન લ્હુ હેં ઓર ન અગુરુક્લ્લહુ

હવે ગૌતમસ્વામીએ પૂછેલા પ્રશ્નો મહાવીર પ્રશ્ન જે જવાબ આપે છે તે સૂત્રકાર ૪૩૮ ૪૨ છે—(ગોયમા ! જો ગુરુપ જો લહુપ જો ગુરુક્લ્લહુપ, અગુરુક્લ્લહુપ) હે ગૌતમ ! સામર્થ અધકાશાન્તર ગુરુ નથી, લ્હુ નથી, ગુરુક્લ્લહુ નથી પણ અગુરુક્લ્લહુ છે (સત્તમજન મત ! તણુવાપ કિં ગુરુપ, લહુપ, ગુરુપ્પહુપ, અગુરુપ્પહુપ) હેં મદન્ત ! સામર્થ તનુવાત લ્હુ છે ગુરુ છે ? ગુરુક્લ્લહુ છે કે અગુરુક્લ્લહુ છે ? (ગોયમા ! જો ગુરુપ જો લહુપ, ગુરુપ્પહુપ, જો અગુરુપ્પહુપ) હેં ગૌતમ ! સામર્થ તનુવાત ગુરુ પણ નથી, લ્હુ પણ નથી, અગુરુક્લ્લહુ પણ નથી, પરંતુ ગુરુક્લ્લહુ છે (એ સત્તમે ધનવાપ સત્તમે ધનવાતી, સત્તમા પુઠ્ઠી ડયામંતરાઈ સમ્માઈ અહા સત્તમે ડયામંતર) જેવી રીતે સામર્થ તનુવાત ગુરુ નથી, લ્હુ નથી, અગુરુક્લ્લહુ નથી પણ ગુરુક્લ્લહુ છે એજ પ્રશ્ન

યાનિ દ્રવ્યાણિ ગુરુલઘુકાનિ તાનિ રૂપીણિ ભવંતિ, યાનિ અગુરુલઘુકાનિ તાનિ રૂપીણિ અપિ ભવેયુઃ રૂપરહિતાન્યપિ ભવેયુઃ । વ્યવહારનયમતાનુસારેણ તુ દ્રવ્યાણિ લઘૂનિ ગુરુણિ ગુરુલઘૂનિ અગુરુલઘૂનિ વા ભવંતિ, યથા લોષ્ટો ગુરુરધો ગમનાત્ ધૂમો લઘુરુધ્વગમનાત્ ગુરુલઘુર્વાયુસ્તિર્યગ્ગમનાત્, આકાશોઽગુરુલઘુ-સ્તથાસ્વભાવાદિતિ ॥ ૨ ॥

દોનોં ગાથાઓં કા હસ પ્રકાર સે હૈ કિ નિશ્ચયનય કૈ અનુસાર કોઈં મી દ્રવ્ય ન સર્વતઃ ગુરુ હૈ ઔર ન સર્વતઃ લઘુ હૈ । પરન્તુ વ્યવહાર નય કૈ અનુસાર બાદર સ્કન્ધોં મેં હી યહ સર્વતઃ ગુરુત્વ ઔર લઘુત્વ રહતા હૈ । અન્ય જો બાદરસ્કન્ધોં સે ભિન્ન સૂક્ષ્મ સ્કંધ હૈં ઉનમેં સર્વાપેક્ષયા ન ગુરુ-ત્વ હોતા હૈં ઔર ન સર્વાપેક્ષયા લઘુત્વ હોતા હૈં । સૂક્ષ્મપરિણમનવાલે જિતને દ્રવ્ય ચાર પ્રકાર કૈ સ્પર્શ સે યુક્ત હૈં તથા જો રૂપી ઔર અરૂપી દ્રવ્ય હૈં વે સબ મી ગુરુલઘુ હોતે હૈં । ઇનસે ભિન્ન જો આઠ સ્પર્શવાલે બાદર દ્રવ્ય હૈં વે સબ મી ગુરુલઘુ હોતે હૈં । જિતને દ્રવ્ય ગુરુલઘુક હોતે હૈં વે સબ રૂપી હોતે હૈં । જો અગુરુલઘુક હૈં વે રૂપી મી હોતે હૈં ઔર અરૂપી મી હોતે હૈં । યહ નિશ્ચય નય કા મત હૈં । વ્યવહારનય કૈ મત અનુસાર સે તો દ્રવ્ય લઘુ હોતે હૈં, ગુરુ હોતે હૈં ગુરુલઘુ હોતે હૈં ઔર અગુરુલઘુ હોતે હૈં । નીચે ગમન કરને સે લોષ્ટ ગુરુ હોતા હૈં, ઉધ્વગમન કરને સે ધૂમ લઘુ હોતા હૈં તીરછીગમન કરને સે વાયુ ગુરુલઘુ હોતી હૈં તથા આકાશ કા તથા સ્વભાવ હોને સે વહ અગુરુલઘુ હોતા હૈં ।

ગાથાઓનો ભાવાર્થ આ પ્રમાણે છે-નિશ્ચયનયાનુસાર કોઈં પણ દ્રવ્ય સર્વથા ગુરુ પણ નથી અને સર્વથા લઘુ પણ નથી પરન્તુ વ્યવહારનયાનુસાર બાદર-સ્કંધોમા જે સર્વથા ગુરુત્વ અને લઘુત્વ રહે છે બાદર (ન્યૂલ) સ્કંધોથી જૂદા એવા જે સૂક્ષ્મ સ્કંધો છે તેમા સર્વથા ગુરુત્વપણુ પણ નવા અને સર્વથા લઘુત્વપણુ પણ નથી સૂક્ષ્મ પરિણમનવાળા જેટલા દ્રવ્યો આ પ્રકારના સ્પર્શથી યુક્ત છે અને જે રૂપી અને અરૂપી દ્રવ્યો છે તે બધા પણ અગુરુલઘુ હોય છે, તે દ્રવ્યોથી ભિન્ન આઠ પ્રકારના સ્પર્શવાળા જે બાદર દ્રવ્યો છે તે બધાં પણ ગુરુલઘુ હોય છે જેટલા દ્રવ્યો ગુરુલઘુ હોય છે, તે બધાં રૂપી હોય છે અને જે દ્રવ્યો અગુરુલઘુ હોય છે, તે રૂપી પણ હોય છે અને અરૂપી પણ હોય છે, આ નિશ્ચયનયનો મત છે, વ્યવહારનયની માન્યતા પ્રમાણે તો દ્રવ્ય, લઘુ હોય છે, ગુરુ હોય છે, ગુરુલઘુ હોય છે અને અગુરુલઘુ પણ હોય છે. જેમકે અધોગમન કરવાથી પથર ગુરુ હોય છે, ઉધ્વગમન કરવાથી ધુમાડો લઘુ હોય છે, તિરછુ ગમન કરવાથી વાયુ ગુરુલઘુ હોય છે, અને આકાશનો તે પ્રકારનો સ્વભાવ હોવાથી અગુરુલઘુ હોય છે.

वर्षाधिपये गुरुलघुतया ज्ञातव्यमिति, एतानि-चावकाशान्तराणि सूत्राणि सार
गाथानुसारेणावगन्तव्यानि तथाहि—

‘ ओषास-घाय-घण-उदही पुढवी दीषा य सागरावासा ।
नेरइयाई अस्थि य समया कम्माई लेस्साओ ॥ १ ॥
दिद्वीदसण नाणे सप्पा सरीस य जोग उवओगे ।
दब्ब पपसा पज्जव तीया आगामि सम्बद्धा ’ इति ॥२॥

छाया—अवकाशो वात घनोदधिः पृथिवी द्वीपाश्च सागरा वर्षाणि ।
नैरयिकादयोजस्तिकाय समया कर्माणि लेख्याः ॥ १ ॥
दृष्टिर्द्वेन ज्ञान सप्ता शरीराणि च योगोपयोगी ।
द्रव्यप्रदेष्टा पर्ययाः अतीता आगामिनी सर्वाद्या ॥२॥

‘ गेरइयाण भंते ’ नैरयिकाः सल्ल भवन्त ! ‘ किं गुरुया जाव अगुरुलघुया ’
किं गुरुया यावद् अगुरुलघुकाः ? हे भवन्त ! नैरयिका गुरुका वा सल्लुका वा
घनोदधिवात, पृथिवी, द्वीप, सागर और घण-क्षेत्र इनके विषय में भी
जानना चाहिये अर्थात् ये सब गुरुलघुरूप तृतीय पद वाले कहे गये हैं ।
जितने भी ये अवकाशान्तर सूत्र हैं वे इन संग्रह गाथाओं के अनुसार
हैं—वे संग्रह गाथाएँ इस प्रकार से हैं—

“ ओषास घाय-घण-उदही पुढवी, दीषा य सागरा वासा ।
नेरइयाई अस्थि य समया कम्माई लेस्साओ ॥ १ ॥
दिद्वी दसण नाणे सप्पा सरीरा य जोग उवओगे ।
दब्बपपसा पज्जव तीया आगामि सम्बद्धा ॥ ”

(गेरइया ण भंते ! किं गुरुया जाव अगुरु य लघुया ?) हे भवन्त !
नैरयिक जीव क्या गुरु हैं ? यावद् अगुरुलघुक हैं ? यहाँ यावद् पद से

अवकाश घनोदधिवात, पृथिवी द्वीप सागर अने वर्षाक्षेत्रों के विषय में सब
शब्द लघु उरु लोको, लोको के अर्थ में गुरुलघु कहे जाते हैं अने सम्बद्ध
लघुता अवकाशान्तर सूत्रों में ते आ गाथाओं अनुसार ॥ ते संग्रह गाथाओं
नीचे मुख्य हैं—

‘ ओषास घाय-घण उदही पुढवी, दीषा य सागरावासा ।
नेरइयाई अस्थि य समया कम्माई लेस्साओ ॥ १ ॥
दिद्वी दसण नाणे सप्पा सरीरा य जोग उवओगे ।
दब्बपपसा पज्जव तीया आगामि सम्बद्धा ॥ २ ॥ ”

(गेरइया ण भंते ! किं गुरुया जाव अगुरुलघुया ?) हे भवन्त ! नैरयिक
लघु गुरु लोको हैं ? लघु लोको हैं ? अथवा गुरुलघु लोको हैं ? अगुरुलघु

एवमेव 'सत्तमे घनोदही' सप्तमो घनोदधिः, सप्तमो घनोदधिरपि घनवातवद्-
व्याख्येयः, 'सत्तमा पुढवी' सप्तमी पृथिवीः, सप्तमी पृथिव्यपि घनवातवद्देव
व्याख्येया । 'उववासंतराहं सव्वाहं जहा सत्तमे उवासंतरे' अवकाशान्तराणि
सर्वाणि यथा सप्तममवकाशान्तरम्, सर्वेषामवकाशान्तराणां वक्तव्यता सप्तमाव-
काशान्तरवद् अगुरुलघुरूपा विज्ञेया । 'सेसा जहा तणुवाए' शेषाः द्वीपादयो
यथा तनुवातः, कथम् ? 'एवं गुरुलहुए' एवं गुरुलघुकः, यथा तनुवातः
गुरुलघुरूपेण तृतीयपदेन कथितस्तथा द्वीपाः, सागराः, वर्षाण्यपि गुरुलघुक
रूपेण तृतीयपदेन व्याख्येयानि । संग्रहगाथाद्धमाह—

‘ओवास वाय-घण-उदही-पुढवी-दीवा य सागरा-वासा’ ।

છાયા—અવકાશઃ વાતો ઘનોદધિઃ પૃથિવી દ્વીપાશ્ચ સાગરા વર્ષાણિ ।

તનુવાતવિષયે યથા કથિતં તથૈવ અવકાશવાતઘનોદધિપૃથિવીદ્વીપસાગર

है किन्तु गुरुलघु है उसी प्रकार से सातमा घनवात भी न गुरु है, न
लघु है, और न अगुरुलघु है, किन्तु गुरुलघु है । इसी तरह से सातमा
घनोदधि भी घनवात की तरह है । सातमी पृथिवी भी घनवात की
तरह ही है । तथा समस्त अवकाशान्तर संबंधी वक्तव्यता सप्तम अव
काशान्तर की तरह ही जाननी चाहिये । (सेसा जहा तणुवाए) शेष
द्वीपादिक तनुवात की तरह गुरुलघु तृतीय पद से कहे गये हैं । यही
वात (एवं गुरुलहुए) इस पाठ द्वारा कही गई है । अर्थात् जितने
भी द्वीप हैं । सागर हैं, और वर्ष हैं वे सब गुरुलघुरूप तृतीयपद से
व्याख्यात हुए हैं । इस विषय में गाथाद्ध इस प्रकार से है—“ ओवास-
वाय-घण उदही-पुढवी-दीवा य सागरा वासा ” तनुवात के विषय में
जैसा कहा गया है—उसी प्रकार से अवकाश वात घनोदधि—अर्थात्

સાતમુ ઘનવાત પણુ ગુરુ નથી, લઘુ નથી, અગુરુલઘુ નથી પણુ ગુરુલઘુ છે.
એ જ પ્રમાણે સાતમા ઘનોદધિ અને સાતમી પૃથ્વી વિષેતુ વક્તવ્ય પણુ ઘનવાત
પ્રમાણે જ સમજવું તથા તમામ અવકાશાન્તર સંબંધી વક્તવ્ય સાતમા અવકાશા-
ન્તર પ્રમાણે જ સમજવું (સેસા જહા તણુવાએ) બાકીના દ્વીપાદિકતુ વક્તવ્ય તનુવાત
પ્રમાણે સમજવું, એટલે કે તેમને ગુરુલઘુ કહ્યા છે એમ સમજવું, એ જ વાત
(એવ ગુરુલહુએ) સૂત્રપાઠ વડે બતાવવામાં આવી છે એટલે કે બધા દ્વીપોને
સાગરોને અને વર્ષોને ગુરુલઘુરૂપ ત્રીજા પદથી વર્ણવ્યા છે—એટલે કે તેઓ
ગુરુલઘુ છે આ વિષયમાં આ પ્રમાણે ગાથાદર્ છે—“ ઓવાસ, વાય, ઘણઉદહી-
પુઢવી, દીવાય સાગરાવાસા ” તનુવાતની બાબતમાં જે કથન થયું છે તે કથન

તૈજમયર્ગનામ શુક્લધુકા તથા મયન્તિ, તથસ્તાદ્દ્યો કારણે શુક્લમયપુત્વાત્કાર્યેઽપિ શુક્લલઘુત્વં એવ મયત્ત इति । तदुक्तम्—

‘ओरालिय येउच्चिय आहारग तेय शुक्ल दृष्या’ । इति ।

छाया—औदारिय पैक्रियकाहारगतैमसानि शुक्लधुકાનિ દ્રવ્યાણિ ॥ ” इति ।

औदारिकं वैक्रियकम् आहारक तथा तेजसमित्यतत्परं शुक्लधुद्रव्यमेवेति । ‘जीवं च कम्मण च पटुच्च जो गुरुया जो लहुया जो गुरुयलहुया अगुरुयलहुया’ जीवं च कर्मणं च प्रतीत्य नो गुरुका नो लघुका नो गुरुकलघुकाः अगुरुयलहुया नारका जीवापेक्षा । कर्मणशीरापेक्षया च अगुरुयलहुया एव जीवस्वरूपिद्रव्यत्वेनाशुक्लधुस्वभावत्वात्, कर्मणशीरस्य च कर्मवर्गणारूपत्वान्, कर्मवर्गणानां चाशुक्लधुत्वादिति । तथोक्तम्—

वैक्रिय वर्गणां शुक्लधुक ही होती हैं । इसलिये जब कारण शुक्लधुक हैं तो इनके कार्य भी शुक्लधुक ही होंगे । इसी अभिप्राय से नारक जीव “ शुक्लधुक भी हैं ” ऐसा कहा है । तदुक्तम्—

“ ओरालिय येउच्चिय आहारग तेय शुक्ल दृष्या ”

औदारिक, वैक्रियक, आहारक, तेजસ ये શુક્લધુક દ્રવ્ય છે । (જીવ તથા કર્મનં ચ પટુચ્ચ જો ગુરુયા, જો લહુયા, જો ગુરુયલહુયા, અગુરુયલહુયા) કાર્મણ શરીર કી અપેક્ષા નારક જીવ ન શુદ્ધ છે, ન લઘુ છે ઓર ન શુક્લધુ છે ને કિન્તુ અગુરુલઘુ હી છે । કયોં કિ જીવ અરૂપી દ્રવ્ય છે કમલિયે વસકા સ્વભાવ અગુરુલઘુરૂપ છે । તથા જો કાર્મણ શરીર છે તથા કર્મવર્ગનારૂપ છે । ઓર જો કર્મવર્ગનારૂપ છે તે અશુક્લધુરૂપ હોતી હિં । તથા ચોક્તમ—

અને વૈક્રિય વર્ગનાઓ શુક્લધુજ દેખાય છે તેથી એ કારણ શુક્લધુ છે તેમજ કાર્ય પણ શુક્લધુ જ દેખાય છે એટલા માટે નારક જો “ શુક્લધુ પણ દેખાય છે ” એમ કહેલ છે કહ્યું પણ છે કે—

“ ओरालिय येउच्चिय आहारग तेय शुक्ल दृष्या ”

औदारिक वैક્રिय, आहारक અને तेजસ को आर शुकलधुक द्रव्यो છે । (જીવ તથા કર્મ તથા પટુચ્ચ જો ગુરુયા, જો લહુયા, જો ગુરુયલહુયા, અગુરુયલહુયા) કાર્મણ શરીરની અપેક્ષાએ નારક એવ શુદ્ધ પણ નથી લઘુ પણ નથી શુદ્ધ લઘુ પણ નથી પરન્તુ અગુરુલઘુ જ કારણ કે એ અરૂપી દ્રવ્ય છે, તેથી તેનો સ્વભાવ અગુરુલઘુરૂપ છે તથા જે કાર્મણ શરીર છે તે કર્મવર્ગનારૂપ છે અને કર્મવર્ગનાઓ અગુરુલઘુરૂપ દેખાય છે કહ્યું પણ છે કે—

ગુરુલ્લઘુના વા અગુરુલ્લઘુના વેતિ પ્રશ્નઃ । ઉત્તરતિ ભગવાન્—‘ગોયમે’ ત્યાદિ । ‘ગોયમા’ હે ગૌતમ ! ‘નો ગુરુયા’ નો ગુરુકાઃ ‘નો લહુયા’ નો લઘુકાઃ કિન્તુ ‘ગુરુલ્લહુયા વિ’ ગુરુલ્લઘુકા અપિ ‘અગુરુલ્લહુયા વિ’ અગુરુલ્લઘુકા અપિ, હે ગૌતમ ! નારકા નો ગુરુકા ન વા લઘુકાઃ અપિ તુ ગુરુલ્લઘુકાસ્તંથા અગુરુલ્લઘુ-કાથ-ભવન્તીતિ ‘સે કેળદ્દેણં’ તત્કેનાથેન ? ઉત્તરયતિ ભગવાન્—‘ગોયમા’ इत्यादि । ‘ગોયમા’ હે ગૌતમ । ‘વેડન્વિય તેયાઈં પહુચ્ચ’ વૈક્રિયતૈજસે શરીરે પ્રતીત્ય=અધિકૃત્ય ‘ળો ગુરુયા ળો લહુયા ગુરુય લહુયા’ નો ગુરુકા નો લઘુકા ગુરુલ્લઘુકા નો અગુરુલ્લઘુકાઃ, નારકા વૈક્રિયતૈજસશરીરે પ્રતીત્ય ગુરુલ્લ-ઘુકા એવં યતો વૈક્રિયતૈજસશરીરે વૈક્રિયતૈજસવર્ગણાનિષ્પાદિતે, વૈક્રિય

“લઘુ ઓર ગુરુલ્લઘુ” इन पदों का ग्रहण किया गया है । इस तरह से हे भदन्त । नैरयिक जीव क्या गुरु हैं ? लघु हैं ? या गुरु लघु रूप हैं अथवा अगुरुलघुरूप हैं ? यह प्रश्न वेन जाता है । (गोयमा !) हे गौतम ! नारक जीव (नो गुरुया, नो लहुया) न गुरु हैं, न लघु हैं किन्तु (गुरु यलहुया वि अगुरुलहुया वि) गुरुलघु भी हैं और अगुरुलघु भी हैं । (से केणद्वेणं ?) हे भदन्त । आप ऐसा किस कारण से कहते हैं कि नारक जीव न लघु हैं न गुरु हैं किन्तु गुरुलघु भी हैं और अगुरुलघु भी हैं ? (गोयमा ! वेडन्विय-तेयाईं पडुच्च णो गुरुया, णो लहुया, गुरुय-लहुया) हे गौतम ! वैक्रियशरीर तैजस शरीर इन दो शरीरों की अपेक्षा करके नारक जीव न गुरु हैं, न लघु हैं किन्तु गुरुलघु हैं । अगुरुलघु नहीं है । तात्पर्य यह है कि नारक जीवों के तैजसशरीर कर्मणशरीर तथा वैक्रियशरीर ये ३ तीन शरीर होते हैं । सो तैजस एवं वैक्रिय शरीर तैजस और वैक्रिय वर्गणाओं से निष्पादित होते हैं । और ये तैजस

હોય છે ? (ગોયમા !) હે ગૌતમ ! નારક જીવો (નો ગુરુયા, નો લહુયા) ગુરુ પણ નથી લઘુ પણ નથી, પરન્તુ (ગુરુયલહુયા વિ અગુરુયલહુયા વિ) ગુરુલઘુ પણ હોય છે અને અગુરુલઘુ પણ હોય છે ? (સે કેળદ્દેણં) હે ભગવન્ ! આપ શા માટે એવું કહેો છો કે નારકજીવો ગુરુ પણ નથી, લઘુ પણ નથી પરન્તુ ગુરુલઘુ છે અને અગુરુલઘુ પણ છે ? (ગોયમા ! વેડન્વિય-તેયાઈં પહુચ્ચ ળો ગુરુયા, ળો લહુયા, ગુરુયલહુયા) હે ગૌતમ ! વૈક્રિય અને તૈજસ શરીરની અપેક્ષાએ નારક જીવો ગુરુ પણ નથી, લઘુ પણ નથી, અગુરુ-લઘુ પણ નથી પરન્તુ ગુરુલઘુ છે તાત્પર્ય એ છે કે નારક જીવોને તૈજસ કર્મણ શરીર અને વૈક્રિય શરીર એ ત્રણ શરીર હોય છે. તૈજસ અને વૈક્રિય શરીરનું નિર્માણ તૈજસ અને વૈક્રિય વર્ગણાઓથી થાય છે અને તે તૈજસ

પરિતેપિ છે ગુરુત્વાદયા ન ભવન્તીતિ માત્રઃ । 'સે તેણદ્વેષ' વત્ તેનાર્થેન ગૌતમ ! એવ કથ્યતે યત્ નારકા ન ગુરુકા ન ષા લઘુકાઃ કિન્તુ ગુરુલઘુકા નો અગુરુલઘુકા इति, 'એવ જાવ વેમાણિયા' એવ યાવઝેમાણિકા, અમુરકુમાર દારમ્ય વૈમાનિકદેવપયન્ત નારકવૃણ્ઢકવદેવ પ્રકારા યોગનીય इति, 'જાણસં જાણિયમ્ સરીરેહિ' નાનાત્વ જ્ઞાતવ્ય શરીરેઃ, વૈમાનિકાદિષુ ગુરુત્વલઘુત્વાદિ વિચારે ન સર્વથા સાદૃશ્યમેવ કિન્તુ વૈરક્તપ્રણયપિ વિષયતે તદ્વૈલપ્ય શરીરદારેષ જ્ઞાતવ્યમ્, યસ્ય યાનિ શરીરાણિ સમ્ય તાનિ શરીરાણિ જ્ઞાત્વા અમુરકુમારાદિ સુખાણિ પઠિતવ્યાનીતિ, માત્રઃ । તથાદિ અમુરાદિદેવાસ્તુ નારકવદં નારકતુભ્યાઃ

હૈ । ઓર યદિ ડપાદિ મેં ગુરુત્વ ક્વાદિ નહીં હોં તો તાદૃશ ડપાણિ સે ડપહિતદ્રવ્ય મેં મી ગુરુત્વ લઘુત્વ નહીં હોતે હૈં । (સે તેણદ્વેષ) હસ કારણ સે હે ગૌતમ ! મેંને એસા કહા હૈ કિ નારક ન ગુરુ હૈં ઓર ન લઘુ હૈં કિન્તુ ગુરુલઘુક મી હૈં ઓર અગુરુલઘુક મી હૈં । (એવ જાવ વે માણિયા) હસી પ્રકાર સે અમુરકુમાર સે હેકર વૈમાનિક વેવપયન્ત નારકવૃણ્ઢક કી તરહ હી સમજના ચાહિયે । (જાણસં જાણિયમ્ સરી રેહિ) પરન્તુ જો વિશેષતા હૈ વહ શરીરોં કો હેકર હૈ । તાત્પર્ય યહ હૈ કિ વૈમાનિક વેપ્રાદિકોં મેં જય ગુરુત્વ લઘુત્વ ક્વાદિકા વિચાર કિયા જાત્તા હૈ તપ ડત્તમેં સર્વથા સમાનતા હી નહીં આતી હૈ કિન્તુ ભિન્નતા મી આતી હૈ ઓર યહ ભિન્નતા ડનમેં શરીર દાર સે આતી હૈ એસા જાનના ચાહિયે અતઃ જિસ કે જો ૧ શરીર હૈ ડસકે ડન ૨ શરીરોં કો, સમજ કર અમુરકુમાર ક્વાદિ સૂત્ર પઢના ચાહિયે । જેસે-અમુર

ન કોય તો તે પ્રકારની ડપાણિથી ડપહિત દ્રવ્યમા પણ ગુરુત્વ લઘુત્વ કોય નથી, (સે તેણદ્વેષ) હે ગૌતમ ! તે કારણે મેં એવું કહ્યું છે કે નારક લઘુ, શરૂ પણ નથી, લઘુ પણ નથી, પરંતુ ગુરુલઘુ છે અને અગુરુલઘુ પણ છે, (એવ જાવ વેમાણિયા) નારકલઘુની જેમ જ અમુરકુમારથી લઈને વૈમાનિકા અત્યાર સુધીની ગુરુતા, લઘુતા વગેરેના વિષયમાં સમજવું, (જાણસં જાણિયમ્ સરીરેહિ) પણ જે વિશેષતા છે તે શરીરની અપેક્ષાએ છે, તાત્પર્ય જે છે કે વૈમાનિક દેવ વગેરેમા અત્યાર ગુરુત્વ લઘુત્વ વગેરેના વિચાર કરવામાં આવે ત્યારે તેમનામા બધી રીતે સરખાઈ કોતી નથી, ભિન્નતા પણ કોય છે, તે ભિન્નતા શરીરની અપેક્ષાએ રહેલી કોય છે તેથી જેના જેવાં જેવા શરીરો કોય છે તેના તેવા તેવા શરીરોને સમજીને અમુરકુમાર વગેરે સૂત્રોડ કથન કરું નોંધજે, જેમકે-અમુરકુમાર વગેરે કોય તો નારકો જેવાં જ છે, તેથી વૈરક્ત

“કમ્મણ મણ માસાઈં ઇયાઈ અગુરુલહુયાઈં” કાર્મણ-મનો-માપાઃ इमा सर्वा अपि वर्गणा अगुरुलघुका एव भवन्तीति । वैक्रियतૈજસશરીરાપેક્ષયા નારકા ગુરુલઘુકા ભવંતિ, પ્રયોજકયોઃ શરીરયોઃ વૈક્રિયતૈજસયોર્ગુરુલઘુત્વેન તદવચ્છિન્ને નારકેપિ તયોર્ગુરુત્વલઘુત્વયોઃ સંભવાત્, જીવકાર્મણાપેક્ષયા ચ નારકા અગુરુ-લઘુકા એવ યતો જીવસ્યારૂપિત્વં વિદ્યતે કાર્મણશરીરસ્યાપિ અરૂપિત્વમ્, અતઃ અગુરુલઘુત્વમેવ । એતદુક્ત મવતિ સ્વસ્વભાવતસ્તુ જીવો ન ગુરુ ન વા લઘુઃ કિન્તુ કર્મોપાધિવશાત્ તથા તથા-પ્રતિભાસતે, યદિ ઉપાધૌ ગુરુત્વં લઘુત્વં મવેત્તદા તદુપહિતે તસ્મિન્નપિ તદ્ મવતિ, યદ્યુપાધૌ ગુરુત્વાદિક ન મવેત્તદા તાદૃશોપાધ્ય-

“કમ્મણ મણમાસાઈં ઇયાઈં અગુરુલહુયાઈં ।”

કાર્માણવર્ગણા મનોવર્ગણા ઔર માપાવર્ગણા ये सब वर्गणाँ अगुरुलघुक ही होती हैं अतः वैक्रिय और तैजस इन दो शरीरों की अपेक्षा से नारकजीव गुरुलघुक होते हैं । क्योंकि प्रयोजक वैक्रिय तैजस शरीर में गुरुता और लघुता होने से, तदवच्छिन्न-इन दो शरीरों से युक्त-नारकजीव में भी गुरुत्व और लघुत्व संभवता है । तथा-जीव और कार्माणशरीर की अपेक्षा से नारकजीव अगुरुलघुक ही होते हैं, क्योंकि जीव अरूपी होता है और कार्माणशरीर भी अरूपी होता है । इस-लिये नारकजीव में अगुरुलघुत्व आता है । कहने का तात्पर्य यह है कि जीव स्वभाव से न गुरु है और न लघु है किन्तु कर्मोपाधि के वश से वह उस उस रूपसे प्रतिभासित होता है । यदि उपाधिमें गुरुता है तो इस उपाधिसे उपहित द्रव्यमें भी गुरुता आ जाती है और यदि उपाधि में लघुता है तो उपाधि से उपहित (युक्त) द्रव्य में भी लघुता आ जाती

“કમ્મણ મણમાસાઈં ઇયાઈં અગુરુલહુયાઈં”

કાર્મણવર્ગણા મનોવર્ગણા અને માપાવર્ગણા, એ બધી વર્ગણાઓ અગુરુલઘુ ન હોય છે તેથી વૈક્રિય અને તૈજસ, એ બે શરીરની અપેક્ષાએ નારક જીવો ગુરુલઘુ હોય છે, કારણ કે પ્રયોજક વૈક્રિય અને તૈજસ શરીરમાં ગુરુતા અને લઘુતા હોવાથી, તે બે શરીરોથી યુક્ત નારક જીવોમાં પણ ગુરુત્વ અને લઘુત્વ સહી શકે છે તથા જીવ અને કાર્મણ શરીરની અપેક્ષાએ નારક અગુરુલઘુ ન હોય છે, કારણ કે જીવ અરૂપી હોય છે, તે કારણે નારક જીવોમાં અગુરુત્વ લઘુત્વ પણ હોય છે તાત્પર્ય એ છે કે જીવ સ્વભાવથી ગુરુ પણ નથી અને લઘુ પણ નથી, કર્મોપાધિને કારણે તે ગુરુ અથવા લઘુરૂપે પ્રતિ-ભાસિત થાય છે જો ઉપાધિમાં ગુરુતા હોય તો તે ઉપાધિથી ઉપહિત દ્રવ્યમાં પણ ગુરુતા આવી જાય છે, જો ઉપાધિમાં લઘુતા હોય તો તે ઉપાધિથી ઉપહિત દ્રવ્યમાં પણ લઘુતા આવી જાય છે, અને જો ઉપાધિમાં ગુરુત્વ વગેરે

કાર્મણાપસ્યા ચાગુરુલ્લુપ્તા* । મનુષ્યાસ્તુ ઔદારિક-વૈક્રિય-તૈનસાશરકશરી-
રાણિ પ્રતીત્ય ગુરુલ્લુપ્તા, જીવકાર્મણપસ્યા ચાગુરુલ્લુપ્તો મર્ચંતીતિ । ‘ ધર્મ-
સ્થિકાપ જાવજીવસ્થિકાપ ’ ધર્માસ્થિકાય યાવત્ જીવાસ્થિકાયઃ, હ્ર વાવત્પદેન
અધર્માસ્થિકાપાકાશાસ્થિકાપયોગ્રહણં કર્તવ્યમ્, ‘ ચતુર્યપવર્ણ ’, ચતુર્યપદેન,
ધર્માસ્થિકાપાદારભ્ય જીવાસ્થિકાપર્પન્તા ચતુર્યપદેન ‘ અગુરુલ્લુપ્ત ’ ઇત્યનેન
વક્ત્ર્ય્યા શેષાણાં નિયેવ એવ કર્તવ્ય, ધર્માસ્થિકાપાઽધર્માસ્થિકાપાકાશાસ્થિ-
કાપજીવાસ્થિકાપા આપમન્ન પ્રયાણામમાલો વક્ત્ર્ય્ય ઇતિ, નામરૂપિત્વેનાગુરુ-
લ્લુપ્તસ્યેવ સમવાત્ ઇતિ । ‘ પોમ્મસ્થિકાપણ મત્તે ’ પુરુલાસ્થિકાય સલ્લ મદન્ત ।

આહારક શરીર નહીં હોતા । અતઃ ઔદારિક, વૈક્રિય ઓર તૈજસ ઇન
ત્રીન શરીરોં કી અપેક્ષા સે ઇનમેં ગુરુલ્લુપ્તા ઓર જીવ તથા કાર્મણ
શરીર કી અપેક્ષા સે ઇનમેં અગુરુલ્લુપ્તા આતી હે એસા જાનના ચાહિયે ।
મનુષ્ય મેં પાંચોં હી શરીર હો સકતે હેં—અતઃ ઇનમેં ઔદારિક, વૈક્રિય,
આહારક ઓર તૈજસશરીર કી અપેક્ષા સે ગુરુલ્લુપ્તા ઓર જીવ એવં
કાર્મણશરીરકી અપેક્ષામે અગુરુલ્લુપ્તા આતી હે એસા જાનના ચાહિય । ઇસ
તરહ અસુરકુમાર સે લેકર યાવત્ વૈમાનિક દેવપર્પન્ત શરીરોં કો લેકર
ગુરુલ્લુપ્તા તથા અગુરુલ્લુપ્તા પ્રકટ કી ગઈ હે । (ધર્મસ્થિકાપ જાવ જી-
વસ્થિકાપ ચતુર્યપવર્ણ) ધર્માસ્થિકાય યાવત્ જીવાસ્થિકાય ચોંયે પદ સે
વપલક્ષિત જાનના ચાહિયે । તાત્પર્ય ઇમકા યહ હે કિ ધર્માસ્થિકાપ,
અધર્માસ્થિકાપ, આકાશાસ્થિકાપ, કાલ ઓર જીવાસ્થિકાપ ઇનમેં આદિ
કે ગુરુ, લ્લુપ્ત ઓર ગુરુલ્લુપ્ત યે ત્રીન મંગ નહીં હે કેવલ અગુરુલ્લુપ્ત જો

આહારક શરીર હોતુ નથી. તેથી ઔદારિક, વૈજસ અને વક્રિય એ ત્રણ શરી-
રની અપેક્ષાએ તેમનામાં ગુરુલ્લુપ્તા હોય છે અને એવ તથા કાર્મણ શરીરની
અપેક્ષાએ તેમનામાં અગુરુલ્લુપ્તા હોય છે, એમ સમજવું મનુષ્યોમાં પણ
શરીરે હોઈ શકે છે તેથી ઔદારિક વૈજસ, વૈક્રિય અને આહારક શરીરની
અપેક્ષાએ તેમનામાં ગુરુલ્લુપ્તા હોય છે અને એવ તથા કાર્મણ શરીરની અપે-
ક્ષાએ મનુષ્યોમાં અગુરુલ્લુપ્તા હોય છે એમ સમજવું આ રીતે અસુરકુમારોથી
લઈને વૈમાનિક દેવો સુધીના શરીરોની અપેક્ષાએ ગુરુલ્લુપ્તા અને અગુરુલ્લુપ્તા
પ્રકાર કરવામાં આવી છે (ધર્મસ્થિકાપ જાવ જીવસ્થિકાપ ચતુર્યપવર્ણ) ધર્મા-
સ્થિકાપથી અધર્માસ્થિકાપ સુધીનુ કોણુ પણ પ્રકટ કરવું એટલે કે ધર્માસ્થિકાપ,
અધર્માસ્થિકાપ આકાશાસ્થિકાપ કાળ અને અવસ્થિકાપમાં શરૂઆતના ત્રણ
માંના નથી પણ એમાં માંગો છે. એટલે કે તેઓ ગુરુ નથી લ્લુપ્ત નથી,
ગુરુલ્લુપ્ત નથી, પણ અગુરુલ્લુપ્ત છે કારણ કે તે બધા ત્રેયે અર્પી છે.

વૈક્રિયતૈજસશરીરાપેક્ષયા ગુરુલઘુકાઃ, જીવકાર્મણાપેક્ષયા ચાગુરુલઘુકા જ્ઞાત-
વ્યા. । પૃથિવ્યાદિજીવાસ્તુ પૃથિવ્યપ્તેજોવનસ્પતિજીવાસ્તુ ઔદારિકતૈજસ-
શરીરે પ્રતીત્ય ગુરુલઘવો જ્ઞાતવ્યાસ્તાદ્દશશરીરયોર્ગુરુલઘુત્વેન તદ્વિશિષ્ટજીવસ્યાપિ
તથાત્વસંભવાત્, જીવં કાર્મણં ચ શરીરં પ્રતીત્યાગુરુલઘવઃ, એતયોરરૂપિત્વેનાગુ-
રુલઘુત્વાત્, વાયુકાયાસ્તુ ઔદારિક-વૈક્રિયતૈજસશરીરાણિ પ્રતીત્ય ગુરુલઘવઃ
જીવકાર્મણાપેક્ષયા અગુરુલઘવઃ; एवं पञ्चेन्द्रियतिर्य्यचोपि पञ्चेन्द्रियतिर्य्यग्योनयो
वायुकायवद् ઔદારિક-વૈક્રિય-તૈજસશરીરાણ્યાશ્રિત્ય ગુરુલઘુકાઃ. । एवं जीव

આદિ દેવ તો નારક કી तरह હી હૈ-અતઃ વૈક્રિય તૈજસ શરીર કી
અપેક્ષા સે યે ગુરુલઘુક હોતે હૈં તથા જીવ ઔર કાર્મણ શરીર કી અપેક્ષા
સે યે અગુરુલઘુક હોતે હૈં એસા જાનના ચાહિયે. તથા-પૃથિવીજીવ, અપ્-
જીવ, તેજોજીવ, વનસ્પતિજીવ યે સવ ઔદારિક તૈજસ શરીર કી અ-
પેક્ષા ગુરુલઘુ હોતે હૈં ક્યોં કિ યે દોનોં શરીર ગુરુલઘુ હૈં, ઇસલિયે ઇન
દોનોં શરીરોં સે યુક્ત હોને કે કારણ ઇન જીવોં મેં મી તથા રૂપતા કા
સંભવ હોતા હૈ. તથા-જીવ ઔર કાર્મણ શરીર કો લેકર ઇનમેં અગુરુ-
લઘુતા આતી હૈ. ક્યોં કિ યે દોનોં અરૂપી હૈં. વાયુકાયિક જો જીવ હૈં
ઇનમેં ઔદારિક શરીર, વૈક્રિયશરીર ઔર તૈજસ કી અપેક્ષા ગુરુલઘુતા
આતી હૈ ઔર જીવ તથા કાર્મણશરીર કી અપેક્ષા ઇનમેં અગુરુલઘુતા
આતી હૈ. ઇસી तरह સે પંચેન્દ્રિય જો તિર્યચ જીવ હૈં ડનમેં મી વાયુ-
કાય કી तरह ગુરુલઘુતા ઔર અગુરુલઘુતા આતી હૈ. ક્યોં કિ પંચેન્દ્રિય
તિર્યચોં મેં ઔદારિક, વૈક્રિય, તૈજસ ઔર કાર્મણ યે ચાર હોતા હૈ.

અને તૈજસ શરીરની અપેક્ષાએ તેઓ ગુરુલઘુ હોય છે, તથા જીવ અને
કાર્મણ શરીરની અપેક્ષાએ તેઓ અગુરુલઘુ હોય છે, એમ સમજવું. તથા-
પૃથિવીકાયના જીવો, અપ્કાયના જીવો, તેજસ્કાયના જીવો અને વનસ્પતિકાયના
જીવો, એ બધા જીવો ઔદારિક અને તૈજસ શરીરની અપેક્ષાએ ગુરુલઘુ હોય
છે, કારણ કે તે બન્ને શરીર ગુરુલઘુ છે તેથી તે એ શરીરથી યુક્ત હોવાને
કારણે તે જીવોમા પણ ગુરુલઘુપણ સંભવી શકે છે તથા જીવ અને કાર્મણ
શરીરની અપેક્ષાએ તેમનામા અગુરુલઘુપણ હોય છે, કારણ કે તે બન્ને અરૂપી છે
વાયુકાયિક જીવોમા ઔદારિક શરીર, વૈક્રિય શરીર અને તૈજસશરીરની અપેક્ષા
ગુરુલઘુતા હોય છે, પણ જીવ અને કાર્મણ શરીરની અપેક્ષાએ તેમનામા અ-
ગુરુલઘુતા હોય છે એ જ પ્રમાણે જે પંચેન્દ્રિય તિર્યચ જીવો છે તેમનામા
પણ વાયુકાયની જેમ જ ગુરુલઘુતા અને અગુરુલઘુતા હોય છે, કારણ કે પંચે-
ન્દ્રિય તિર્યચોને ઔદારિક, વૈક્રિય અને તૈજસ અને કાર્મણ શરીર હોય છે.

વન્નાઈ પદ્મચ્ચ ' ગુરુચ્ચુક્રદ્રવ્યાણિ ઔદારિકાદીનિ ચત્વારિ ધરીરાણિ પ્રતીત્ય
 = પ્રાપ્તિય ' જો ગુરુષ ' નો ગુરુકઃ, ' જો લઘુષ ' નો લઘુક, પુત્રલાસ્તિકાય
 ઔદારિકાદિનરીરાપેક્ષયા ન ગુરુ ને વા લઘુરિતિ માયઃ, કિન્તુ ' ગુરુચ્ચુક્ર
 ગુરુચ્ચુક્ર ' ' જો અગુરુચ્ચુક્ર ' નો અગુરુચ્ચુક્ર, ' અગુરુચ્ચુક્રદ્રવ્યાણિ પદ્મચ્ચ
 અગુરુચ્ચુક્રદ્રવ્યાણિ પ્રતીત્ય, અગુરુચ્ચુ દ્રવ્યાણિ-કાર્મણદ્રવ્યાણિ, તાનિ પ્રાપ્તિય
 ' જો ગુરુષ જો લઘુષ જો ગુરુચ્ચુક્ર ' નો ગુરુકઃ નો મધુકો નો ગુરુચ્ચુક્ર
 કોડપિતુ ' અગુરુચ્ચુક્ર ' અગુરુચ્ચુક્ર પુત્રલાસ્તિકાય ઇતિ । ' સમયા કમ્માણિ
 ય ચત્તરપણ ' સમયા કર્મણિ ચ ચતુર્થપરેન, સમયા=કાલવિભાગા અમૂઘાં,
 કર્મણિ=કાર્મણર્ગણાણાણિ પપામગુરુલઘુત્વમ્, ' કણ્ણલેસા ય મતે ' કુલ્લ-

વન્નાઈ પદ્મચ્ચ જો ગુરુષ, જો લઘુષ, ગુરુચ્ચુક્ર, જો અગુરુચ્ચુક્ર)
 ગુરુલઘુ દ્રવ્યોંની અપેક્ષા સે પુત્રલાસ્તિકાય ન ગુરુ હૈ ન લઘુ હૈ ન અગુ
 રુચ્ચુ હૈ કિન્તુ ગુરુલઘુ હૈ । યહા ગુરુલઘુક દ્રવ્ય સે ઔદારિક આદિ
 ચાર ધારીર લિયે ગયે હૈ । જન ધાર ધારીરની અપેક્ષા સે પુત્રલાસ્તિકાય
 ન ગુરુ હૈ, ન લઘુ હૈ, ન અગુરુચ્ચુક્ર હૈ કિન્તુ યહા ગુરુલઘુક હૈ । (અગુ
 રુચ્ચુક્રદ્રવ્યાણિ પદ્મચ્ચ જો ગુરુષ, જો લઘુષ જો ગુરુચ્ચુક્ર અગુરુચ્ચુક્ર)
 અગુરુચ્ચુક્ર દ્રવ્યની અપેક્ષા સે પુત્રલાસ્તિકાય ન ગુરુ હૈ ન લઘુ હૈ, ઔર
 ન ગુરુલઘુ હૈ કિન્તુ અગુરુચ્ચુક્ર હૈ । યહાં અગુરુચ્ચુક્ર દ્રવ્ય સે કાર્મણદ્રવ્ય
 લિયે ગયે હૈ । ક્યોંકિ કાર્મણદ્રવ્ય અગુરુચ્ચુક્ર હોતા હૈ યહાં બાત અમી
 ૨ પ્રકટ કી જા ચુકી હૈ । અત કાર્મણ દ્રવ્યની અપેક્ષા સે પુત્રલા
 સ્તિકાય અગુરુચ્ચુક્ર પ્રકટ કિયા હૈ । (સમયા કમ્માણિ ય ચત્તરપ-
 ણ) સમય-કાલવિભાગ, ઔર કાર્મણ વર્ગનારૂપ કર્મ યે સબ અગુરુ

ઉત્તર—(ગુરુચ્ચુક્રદ્રવ્યાણિ પદ્મચ્ચ જો ગુરુષ જો લઘુષ, ગુરુચ્ચુક્ર,
 જો અગુરુચ્ચુક્ર) ગુરુ લઘુ દ્રવ્યોંની અપેક્ષા સે પુત્રલાસ્તિકાય ગુરુ પલ્લ નથી
 લઘુ પલ્લ નથી, અગુરુચ્ચુક્ર પલ્લ નથી, પરંતુ ગુરુલઘુ છે, અહીં ગુરુલઘુ દ્રવ્યોંની
 ઔદારિક વચેર આર ધારીર લેવામા આવ્યાં છે તે આર ધારીરની અપેક્ષા સે
 પુત્રલાસ્તિકાય ગુરુ પલ્લ નથી, લઘુ પલ્લ નથી, અગુરુચ્ચુક્ર પલ્લ નથી, પરંતુ
 ગુરુલઘુ હૈ છે (અગુરુચ્ચુક્રદ્રવ્યાણિ પદ્મચ્ચ જો ગુરુષ જો લઘુષ જો અ
 ગુરુચ્ચુક્ર) અગુરુચ્ચુક્ર દ્રવ્યોંની અપેક્ષા સે પુત્રલાસ્તિકાય ગુરુ પલ્લ નથી, લઘુ
 પલ્લ નથી, ગુરુલઘુ પલ્લ નથી પરંતુ અગુરુચ્ચુક્ર છે અહીં અગુરુચ્ચુક્ર દ્રવ્યોંની
 કાર્મણદ્રવ્ય લેવામા આવેલ છે કારણ તે કાર્મણદ્રવ્ય અગુરુચ્ચુક્ર હોય છે,
 જે બાત હેતુ હમણાં જ પ્રકટ કરેલા આવી છે તેથી કાર્મણ દ્રવ્યોંની અપે
 ક્ષા સે પુત્રલાસ્તિકાયને અગુરુચ્ચુક્ર બતાવ્યું છે (સમયા કમ્માણિ ય ચત્તરપ-
 ણ) સમય-કાલવિભાગ, અને કાર્મણવર્ગનારૂપ અગુરુચ્ચુક્ર કર્મ છે

‘ किं गुरुए ’ किं गुरुकः, ‘ लहुए ’ लघुकः ‘ गुरुयलहुए ’ गुरुकलघुकः ‘ अगुरु-
लहुए ’ अगुरुलघुकः ? उत्तरयति भगवान्—‘ गोयमे ’ त्यादि । ‘ गोयमा ’ हे
गौतम ! ‘ णो गुरुए ’ नो गुरुकः ‘ णो लहुए ’ नो लघुकः, ‘ गुरुलहुए वि ’
गुरुलघुकोपि । ‘ अगुरुलहुए वि ’ अगुरुलघुकोऽपि हे गौतम ! पुद्गलास्तिकायो
न गुरु न वा लघुः किन्तु गुरुलघुरपि अगुरुलघुरपि भवति, तथा च प्रथमद्वितीय
भंगौ न ग्रहीतव्यौ किन्तु तृतीयचतुर्थयोरेव ग्रहणं कर्तव्यम् । पुद्गलास्तिकायविषये
उत्तरं निश्चयनयानुसारेण ज्ञातव्यम्, एतन्मते कोपि पदार्थः एकान्ततो न गुरु न
वा लघु भवतीति । ‘ से केणट्ठेणं भंते ’ तत्केनार्थेन हे भदन्त ! केन कारणेन
एवमुच्यते, पुद्गलास्तिकायो न गुरु न वा लघुः किन्तु गुरुलघुकोऽगुरुलघुकश्चेति,
उत्तरयति भगवान्—‘ गोयमे ’—त्यादि । ‘ गोयमा ’ हे गौतम ! ‘ गुरुयलहुय-
चौथा भंग है वही है । क्यों कि ये सब अरूपी द्रव्य हैं । (पोग्गत्थि-
काए णं भंते ! किं गुरुए, लहुए, गुरुयलहुए, अगुरुयलहुए) हे भदन्त !
पुद्गलास्तिकाय क्या गुरु है, अथवा लघु है ? या गुरुलघु हैं ? कि अगु-
रुलघु है ? (गोयमा ! णो गुरुए, णो लहुए, गुरुयलहुए वि, अगुरुलहुए
वि) हे गौतम ! पुद्गलास्तिकाय न गुरु है, न लघु है किन्तु गुरुलघु भी
है और अगुरुलघु भी है । इस तरह यहां प्रथम भंग और द्वितीय भंग
ग्रहण नहीं करना चाहिये, किन्तु तृतीय और चतुर्थ भंग ही यहां ग्रहण
करना चाहिये । पुद्गलास्तिकाय में उत्तर निश्चयनय के अनुसार ही जानना
चाहिये—निश्चयनय की मान्यतानुसार कोई भी पदार्थ एकान्ततः न गुरु
है और न एकान्ततः लघु ही है । (से केणट्ठेणं भंते !) हे भदन्त !
आप ऐसा किस कारण से कहते हैं कि पुद्गलास्तिकाय न गुरु है और
न लघु है किन्तु गुरुलघु भी है और अगुरुलघु भी है । (गुरुयलहुय-

(पोग्गत्थिकाए णं भंते ! किं गुरुए, लहुए, गुरुयलहुए अगुरुयलहुए ?) हे भग-
वन् ! पौद्गलास्तिकाय गुरु છે ? લઘુ છે ? અથવા ગુરુલઘુ છે ? કે અગુરુલઘુ
છે ? (ગોયમા ણો ગુરુએ, ણો લહુએ, ગુરુયલહુએ વિ, અગુરુલહુએ વિ) હે ગૌતમ !
પૌદ્ગલાસ્તિકાય ગુરુ પણ નથી, લઘુ પણ નથી પણ ગુરુલઘુ છે અને અગુ-
રુલઘુ છે આ રીતે અહીં પડેલા અને બીજા ભાગાનો સ્વીકાર કર્યો નથી
પણ ત્રીજા અને ચોથા ભાગાનો સ્વીકાર કર્યો છે પુદ્ગલાસ્તિકાયના વિષયમાં
જે ઉત્તર આપ્યો છે તે નિશ્ચયનયના મતાનુસાર સમજવો. નિશ્ચયનયની માન્ય
તાનુસાર કોઈ પણ પદાર્થ એકાન્તપણે ગુરુ પણ નથી અને એકાન્તપણે લઘુ
પણ નથી (સે કેણટ્ઠેણં મંતે ! ૦) હે ભગવન્ ! આપ શા માટે એવું કહે છે કે
પુદ્ગલાસ્તિકાય ગુરુ નથી, લઘુ નથી પરંતુ ગુરુલઘુ છે અને અગુરુલઘુ પણ છે.

વર્ણા ઔદારિક ચ ગુરુષ્વુ ઇતિ કૃત્વા કૃષ્ણલેશ્યા ગુરુલ્લપ્સા વાચ્યા । 'માવ
 છેલ્લે પદ્મ' માવલેશ્યા પ્રતીત્ય 'ચતુષ્પણ' ચતુર્થપદેન, કૃષ્ણલેશ્યા જ્ઞાતવ્યા,
 માવલેશ્યા જીવપરિણતિરૂપા, જીવપરિણતિઆમૃત્તા, હત્યતો માપાપેક્ષ્યા કૃષ્ણલેશ્યા
 અગુરુલ્લપ્સા મવતીતિ માવ । 'એવ જાણ ગુરુલેસ્તા' ણ્ચ યાવત્ ગુરુલેશ્યા
 જ્ઞાતવ્યા, 'દિદ્ધી' દિદ્ધિ 'દસણ' વર્ણનમ્ 'નાળ' જ્ઞાનમ્ 'અજ્ઞાણ' અજ્ઞાનમ્
 સજ્ઞાઓ 'સજ્ઞાઃ' 'ચતુષ્ પણ જેયજ્ઞાઓ' ચતુષ્પદેન અગુરુલ્લપ્સા પદેન નેતવ્યા
 જ્ઞાતવ્યા, 'દેદ્ધિજ્ઞા ચચારિ સરીરા જેયજ્ઞા તર્ણણ પણ' અધસ્તનાનિ ચત્તારિ
 સરીરાણિ જ્ઞાતવ્યાનિ તૃતીયન પદન, અધસ્તાનિ ઔદારિક-બૈક્રિયકાર્મણ-તૈજસ
 શરીરાણિ, તૃતીયપદન ગુરુલ્લપ્સા જ્ઞાતવ્યાનિ, ઔદારિકાદિચતુ શરીરાણામ્
 ગુરુલ્લપ્સાવર્ગણાસ્વરૂપસ્વાન્, કમ્મણં ય ચતુર્યેણં પણં 'કાર્મણં ચ ચતુર્યેણં પદેન

આદિ શરીરોં કા જો કાલા રગ હૈ વહ દ્રવ્યતઃ કૃષ્ણલેશ્યા હૈ । ઔદા
 રિક આદિ શરીર ગુરુલ્લપ્સા હોતે હૈ, અતઃ કૃષ્ણલેશ્યા ગુરુલ્લપ્સા હોતી
 હૈ । જીવોં કી પરિણતિરૂપ માવલેશ્યા હોતી હૈ । અતઃ માવલેશ્યા કી
 અપેક્ષા સે યિચાર કરને પર વહ કૃષ્ણલેશ્યા અગુરુલ્લપ્સા હોતી હૈ । ક્યોં
 કિ જીવ કી પરિણતિ અમૃત્ત હૈ । (એવ જાણ ગુરુલેસ્તા) હસ તરહ સે
 યાવત્ ગુરુલ્લપ્સા તક જાનના ચાહિયે । (દિદ્ધાવંસણ-જાણજ્ઞાણ
 સજ્ઞાઓ ચતુષ્પણ જેયજ્ઞાઓ) તથા-દિદ્ધિ, વર્ણન, જ્ઞાન, અજ્ઞાન ઔદ
 મજ્ઞા યે સય ચતુર્થપદ સે અગુરુલ્લપ્સા જાનના ચાહિયે । (દેદ્ધિજ્ઞા ચત્તારિ
 સરીરા જેયજ્ઞા તર્ણણં પણં) નીચે કે ચાર શરીર ઔદારિક, બૈક્રિય,
 કાર્મણ ઔદ તૈજસ-તૃતીયપદ સે ગુરુલ્લપ્સા જાનના ચાહિયે । ક્યોં કિ
 યે ચાર શરીર ગુરુલ્લપ્સા વર્ગણારૂપ હોતે હૈ । (કમ્મણં ય ચતુર્યેણં પણં)

કાળે ૨૫ દેવ છે તે દ્રવ્યથી કૃષ્ણલેશ્યા છે ઔદારિક અને શરીર ગુરુલ્લપ્સા
 દેવ છે, તેથી કૃષ્ણલેશ્યા પણ ગુરુલ્લપ્સા દેવ છે એવી પરિણતિ આ
 લેશ્યા દેવ છે તેથી અવલેશ્યાની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો તે
 કૃષ્ણલેશ્યા અગુરુલ્લપ્સા રૂપ દેવ છે કારણ કે એવી પરિણતિ અમૃત્ત છે
 (એવ જાણ ગુરુલેસ્તા) એ જ પ્રમાણે ગુરુલ્લપ્સા સુધીની લેશ્યાઓ વિષે પણ
 સમજવું (દિદ્ધી-વંસણ-જાણજ્ઞાણસજ્ઞાઓ ચતુષ્પણ જેયજ્ઞાઓ) તથા—
 દિદ્ધિ, વર્ણન, જ્ઞાન, અજ્ઞાન અને સજ્ઞા, એ અપ્રમાણ શીથા પદને અર્થ
 કરવું જોઈ કે તેમને અગુરુલ્લપ્સા બાબતે । (દેદ્ધિજ્ઞા ચચારિ સરીરા જેયજ્ઞા
 તર્ણણં પણં) નીચેના આર શરીરોને ઔદારિક બૈક્રિય, આદારક તૈજસ શરી-
 રોને ત્રીજા પદથી ગુરુલ્લપ્સા બાબતે કારણ કે તે ચારે શરીર ગુરુલ્લપ્સા
 રૂપ દેવ છે (કમ્મણ ય ચતુર્યેણં પણં) કારણે શરીરોને અગુરુલ્લપ્સા

લેશ્યા. સ્વલુ ભદન્ત ! ' કિં ગુરુયા ' કિં ગુરુકાઃ ' જાવ અગુરુચલહુયા ' યાવત્ અગુરુલઘુકાઃ, યાવત્પદેન લઘુકાઃ ગુરુલઘુકા વેત્યસ્ય ભંગદ્વયસ્ય ગ્રહણં કર્તવ્યમ્
ઇતિ પ્રશ્નઃ । ઉત્તરયતિ ભગવાન્—' ગોયમે '—ત્યાદિ । ' ગોયમા ' હે ગૌતમ !
' જો ગુરુયા ' નો ગુરુકાઃ ' જો લહુયા ' નો લઘુકાઃ કિન્તુ ' ગુરુચલહુયા વિ ' ગુરુલઘુકા અપિ તથા ' અગુરુલહુયા વિ ' અગુરુલઘુકા અપિ । ' સે કેળદ્વેષે ' તત્કેનાર્થેન ઇવમુચ્યતે ? ઉત્તરયતિ ભગવાન્—' ગોયમે '—ત્યાદિ । ' ગોયમા ' હે ગૌતમ ! ' દ્વલેસ્સં—પહુચ્ચ ' દ્રવ્યલેશ્યાં પ્રતીત્ય ' તદ્વિપણં ' તૃતીયપદેન દ્રવ્યલેશ્યા—માશ્રિત્ય કૃષ્ણલેશ્યા તૃતીયપદેન ગુરુલઘુરૂપેણ વાચ્યા । દ્રવ્યલેશ્યા પેક્ષ્યા કૃષ્ણલેશ્યા ગુરુલઘુકા ભવતિ । દ્રવ્યતઃ કૃષ્ણલેશ્યા ઔદારિકાદિશરીર-

લઘુરૂપ હૈ । (કળલેસ્સાણં મંતે ! કિં ગુરુયા, જાવ અગુરુચલહુયા ?) હે ભદન્ત ! કૃષ્ણલેશ્યા કયા ગુરુ હૈ, અથવા લઘુ હૈ, યા ગુરુલઘુ હૈ કિ અગુરુલઘુ હૈ ? (ગોયમા ! જો ગુરુયા, જો લહુયા, ગુરુચલહુયા વિ અગુરુચલહુયા વિ) હે ગૌતમ ! કૃષ્ણલેશ્યા ન ગુરુ હૈ, ન લઘુ હૈ, કિન્તુ ગુરુલઘુ મી હૈ ઔર અગુરુલઘુ મી હૈ । (સે કેળદ્વેષં) હે ભદન્ત આપ ઇસા કિસ કારણ સે કહતે હૈ કિ કૃષ્ણલેશ્યા ન ગુરુ હૈ, ન લઘુ હૈ કિન્તુ ગુરુલઘુ મી હૈ ઔર અગુરુલઘુ મી હૈ । (ગોયમા ! દ્વલેસ્સ પહુચ્ચ તત્તિ-યપણં, ભાવલેસ્સં પહુચ્ચ ચત્તિયપણં) હે ગૌતમ ! દ્રવ્યલેશ્યા કી અપેક્ષા સે કૃષ્ણલેશ્યા ગુરુલઘુક હૈ ઔર ભાવલેશ્યા કી અપેક્ષા સે વહ ચતુર્યપદરૂપ જો ૪ ગુરુલઘુક હૈ ડસ સ્વરૂપ હૈ । કૃષ્ણલેશ્યાઈ દ્રવ્ય ઔર ભાવ કી અપેક્ષા સે દો પ્રકાર કી હોતી હૈ । ઇનમેં દ્રવ્ય કી અપેક્ષા કૃષ્ણલેશ્યા ઔદારિક આદિ શરીરોં કે વર્ણરૂપ હોતી હૈ । અર્થાત્—ઔદારિક

(કળલેસ્સાણ મંતે ! કિં ગુરુયા, જાવ અગુરુચલહુયા ?) હે ભગવન્ ! કૃષ્ણલેશ્યા ગુરુ છે, લઘુ છે, ગુરુલઘુ છે, કે અગુરુલઘુ છે ? (ગોયમા ! જો ગુરુયા, જો લહુયા, ગુરુચલહુયા વિ અગુરુચલહુયા વિ) હે ગૌતમ ! કૃષ્ણલેશ્યા ગુરુ નથી, લઘુ નથી પરંતુ ગુરુલઘુ છે અને અગુરુલઘુ છે (સે કેળદ્વેષં) હે ભગવન્ ? આપ શા કારણે એવું કહો છો કે કૃષ્ણલેશ્યા ગુરુ પણ નથી, લઘુ પણ નથી પરંતુ ગુરુલઘુ છે અને અગુરુલઘુ છે ? (ગોયમા ! દ્વલેસ્સં પહુચ્ચ તત્તિયપણં, ભાવલેસ્સં પહુચ્ચ ચત્તિયપણ) હે ગૌતમ ! દ્રવ્યલેશ્યાની અપેક્ષાએ કૃષ્ણલેશ્યા ગુરુલઘુ છે અને ભાવલેશ્યાની અપેક્ષાએ તે અગુરુલઘુ છે અહીં ત્રીજા પદથી ગુરુલઘુ અને ચોથા પદથી અગુરુલઘુ ગ્રહણ કર્યું છે કૃષ્ણ વગેરે લેશ્યાઓ દ્રવ્ય અને ભાવની અપેક્ષાએ બે પ્રકારની હોય છે દ્રવ્યની અપેક્ષાએ કૃષ્ણલેશ્યા ઔદારિક વગેરે શરીરોના વર્ણરૂપ હોય છે, એટલે કે ઔદારિક વગેરે શરીરોના બે

પામેવ નિર્વિમાળા અન્ના, સર્વપર્યયા ઘર્ણોપયોગાદયો દ્રવ્યધર્મા એતે સર્વે પુરુષા
લાસ્તિકાય વદ્ વ્યપવેશ્યાઃ ગુરુસ્વલ્લપ્ત્યેનાગુરુલ્લપ્ત્યેન ચેતર્યથ યત સૂક્ષ્માણિ
અમૂર્તાનિ ચ દ્રવ્યાણિ અગુરુલ્લપ્ત્યે, હૃતરાણિ શાદરાણિ મૂર્ત્તાનિ ચ ગુરુલ્લપ્ત્યે
પ્રવેશ્યાઃ પર્યયાસ્તુ તત્તદ્રવ્ય સંબન્ધિત્વેન સત્તત્સ્વમાવા इति । 'તોયદા' અતીતકાલ
અતીતકાલ इत्यર્થ, 'અનાગયદા' અનાગતાદા, અનાગતકાલ इत्यર્થ, 'સમ્બદા'
સર્વાદા સર્વકાલ इति યાવત્, 'ચતુર્યેણ પર્ણ' ચતુર્યેણ પર્ણેન પર્ણેન અગુરુલ્લપ્ત્યે
અતીતાનાગતસર્વકાલામર્થ્ય પર્ણેન જ્ઞાતવ્યા અગુરુલ્લપ્ત્યે જ્ઞાતવ્યા સ્વમાવત એવ
કાલરૂપ ગુરુસ્વલ્લપ્ત્યગુરુલ્લપ્ત્યેનામમાવાદિત્યથઃ ॥ સૂ. ૨ ॥

અથ નિર્મલ્ય પ્રકરણમ્ ।

इतः पूर्वप्रकरणे गुरुस्वलप्लुत्ययो विचारः कृत इति गुरुस्वलप्लुत्ययो मन्त्रा-
न्तरवाचशिपये एव इदं सूत्रमाह—' से पूर्ण भते ' इत्यादि ।

પૂર્ણ—સે જૂળ ભતે લાઘવિય અપિચ્છા અમુચ્છા અગેહી
અપદિષદ્વયા સમણાણ ણિમ્મંધાણં પસરથ । હતા ગોયમા !

દ્રવ્ય હૈં । इनके जो निर्विभाग अंश हॆं वे प्रवेश है, घर्ण उपयोग आवि
जो हॆं वे द्रव्य के धर्म हॆं । जो सूक्ष्म और अमूर्तद्रव्य हॆं वे अगुल्लपु हॆं
और जो वादर एवं मूर्तद्रव्य हॆं वे गुल्लपु हॆं । प्रवेश और पर्याय ये दोनों
मिम् २ द्रव्यों के साथ रहने के कारण—तत्तद्रव्य संबन्धी होने से तत्त-
स्वभावरूप जानना चाहिये । (तीयदा अनागयदा, सम्बदा चतुर्येण
पर्ण) अतीतकाल, अनागतकाल और सर्वादा ये सय—चतुर्य पद से
कहना चाहिये । क्यों कि काल में स्वभावतः ही गुरुत्व, लघुत्व और
गुल्लपुत्व इनका अभाय रहता है ॥ सू-२ ॥

પુરુષાસ્તિકાય એવા જ સમજવા દ્રવ્ય શબ્દથી ધર્માસ્તિકાય વગેરેને બ્રહ્મ
ક્યા છે, તેમના જે અવિભાજ્ય અંશ છે પ્રદેશ છે અને વદ્, ઉપયોગ
વગેરે દ્રવ્યના ધર્મો છે જે સૂક્ષ્મ અને અમૂર્ત દ્ર વ છે તે અગુરુલ્લપ્ત્યે
છે, અને જે બાહર (સ્વલ) અને મૂર્તદ્રવ્ય છે તે ગુરુલ્લપ્ત્યે છે । પ્રદેશ
અને પર્યાય એ બંને શુદ્ધ શુદ્ધ દ્રવ્યોની સાથે રહેવાને કારણે—તે તે દ્રવ્ય
ધર્મથી હોવાને કારણે તે તે સ્વભાવરૂપ બહુવા (તીયદા અનાગયદા, સમ્બદા
ચતુર્યેણ પર્ણ) અતીતકાળ (મૂર્તકાળ) અનાગતકાળ (અવિધ્યકાળ) અને
સર્વાદા (વર્તમાનકાળ) એ બધાને ગુરુલ્લપ્ત્યે કહેવા બેઠાં, કારણ કે કાળમાં
સ્વભાવથી જ ગુરુત્વ, લઘુત્વ અને ગુરુલ્લપ્ત્યેના અભાય રહે છે ॥ સૂ-૨ ॥

કાર્મણશરીરસ્યાગુરુલઘુદ્રવ્યાત્મકત્વાત્ ચતુર્થપદેનાગુરુલઘુકેનૈવ સંગ્રહસંભવાત્,
'મળજોગો વચજોગો ચઉત્થપણં પણં' મનોયોગો વચોયોગશ્ચતુર્થકેન પદેન, મનો-
યોગવચોયોગો ચતુર્થપદેન વક્તવ્યૌ તદ્રવ્યાણામગુરુલઘુત્વાદિતિ, 'કાયજોગો તદ્દપણં
પણં' કાયયોગસ્તૃતીયેન પદેન, કાયયોગઃ કાર્મણંવર્જિતસ્તૃતીયપદેન ગુરુલઘુકેન
જ્ઞાતવ્યસ્તદ્રવ્યાણાં ગુરુલઘુત્વાદિતિ 'સાગારોવ ઓગો અણાગારોવઓગો ચઉત્થપણં'
સાકારોપયોગઃ અનાકારોપયોગશ્ચતુર્થપદેન ઇમૌ દ્વાવપિ ઉપયોગૌ ચતુર્થપદેનાગુરુ-
લઘુકેન જ્ઞાતવ્યૌ, ઉપયોગા અરૂપિત્વેન અગુરુલઘવો ભવંતિ इति भावः। 'સવ્વદંવા
સવ્વપણસા સવ્વપજ્જવા જહા પોગ્ગલાત્થિકાઓ' સર્વદ્રવ્યાણિ સર્વપ્રદેશાઃ સર્વ-
પર્યાવાઃ યથા પુદ્ગલાસ્તિકાયઃ, તત્ર સર્વદ્રવ્યાણિ ધર્માસ્તિકાયાદીનિ સર્વપ્રદેશાસ્તે-

કાર્મણશરીર ચતુર્થપદ સે અગુરુલઘુરૂપ જાનના ચાહિયે । ક્યોં કિ વહ
અગુરુલઘુદ્રવ્યાત્મક હોતા હૈ । (મળજોગો વહજોગો ચઉત્થપણં પણં)
મનયોગ, વચનયોગ યે દોનોં ચતુર્થપદ જો અગુરુલઘુપદ હૈ ઉસસે
કહના ચાહિયે । ક્યોં કિ इनके द्रव्य अगुरुलघु होते हैं । काय जोगो
तदपणं पणं) કાયયોગ તૃતીયપદ જો ગુરુલઘુ પદ હૈ ઉસસે કહના
ચાહિયે । યહાં કાર્મણ કાયયોગ છોડ દેના અર્થાત્ વહ ગુરુલઘુક પદ સે
નહીં કહના ચાહિયે । વાકી કે ૬ કાયયોગ તૃતીય પદ સે કહના ચાહિયે ।
ક્યોં કિ इनके द्रव्य गुरुलघु होते हैं । (सागारोवओगो अणागारोवओगो
चउत्थपणं) સાકારોપયોગ-જ્ઞાન, અનાકારોપયોગ-દર્શન યે દોનોં
ચતુર્થપદ સે — અગુરુલઘુપદ સે કહના ચાહિયે । ક્યોં કિ उपयोग
अमूर्त्त होते हैं । इस कारण वे अगुरुलघु होते हैं । (सव्वदंवा, सव्व-
पणसा, सव्वपज्जवा, जहा पोग्गलात्थिकायो) સર્વદ્રવ્ય, સર્વપ્રદેશ, સર્વ-
પર્યાયે, પુદ્ગલાસ્તિકાય કી તરહ જાનના ચાહિયે । ધર્માસ્તિકાયાદિક

સમજવુ, અહીં ચોથા પદથી "અગુરુલઘુ" ગ્રહણ કરાયુ છે, કારણ કે કાર્મણ
શરીર અગુરુલઘુ દ્રવ્યાત્મક હોય છે (મળજોગો વહજોગો ચ ચઉત્થપણં પણં)
મનોયોગ અને વચનયોગ, એ બન્નેને અગુરુલઘુ હોય છે. (કાયજોગો તદ્દપણ
પણં) કાયજોગને ગુરુલઘુ કહેવો જોઈએ, અહીં કાર્મણ કાયયોગને ગ્રહણ
કરવાનો નથી એટલે કે કાર્મણ કાયયોગને ગુરુલઘુ કહેવો જોઈએ નહીં
બાકીના છ કાયયોગને ગુરુલઘુ કહેવા જોઈએ, કારણ કે તેમના દ્રવ્ય ગુરુલઘુ
હોય છે (સાગરોવઓગો અણાગારોવઓગો ચઉત્થપણં) સાકારોપયોગ-જ્ઞાન,
અનાકારોપયોગ-દર્શન, એ બન્નેને અગુરુલઘુ કહેવા જોઈએ, કારણ કે ઉપયોગ
અમૂર્ત હોય છે, તેથી તેઓ અગુરુલઘુ હોય છે (સવ્વદંવા, સવ્વપણસા,
સવ્વપજ્જવા, જહા પોગ્ગલાત્થિકાઓ) સર્વદ્રવ્ય, સર્વપ્રદેશ, અને સર્વપર્યાયોને

માંવો લાઘવ લાઘવમેષ લાઘવિકમ્ અલ્પોપધિત્વ 'અપિચ્છા' અલ્પેચ્છા, ક્ત્યા
 ઇચ્છા અમિલાપા આહારાદિષુ ઇત્યલ્પેચ્છા, 'અમુચ્છા' અમૂર્છા, ઉપધ્યાદિરક્ષણાદિ
 વિપયકમૂર્છારિતિત્વમ્, 'અગેહી' અગૃહિઃ, આહારાદિષુ પરિમોગકાલે આસક્તિ-
 રહિતત્વમ્ । 'અપદિવદયા' અપ્રતિવદતા=સાસારિક વધુવાંધવાદિષુ સ્નેહમાધા,
 एतत् लाघविकाल्पेच्छाऽमूर्च्छाऽगृह्यप्रतिवदतेति पञ्चकम् 'समणां' अमणा-
 नाम् 'निर्ग्रन्थानाम्' 'पसत्य' प्रशस्तम्, सुन्दरम् कल्याणकरं भवति
 किम् ? इति प्रश्न । मगवानाह—'हंता गोयमे' त्यादि । 'हंता गोयमा'
 इन्त हे गौतम ! 'लाघविय जाव पसत्य' लाघविक यावत् प्रशस्तम्, यावत्पदेन
 —'अल्पेच्छाऽमूर्च्छाऽगृह्यप्रतिवदता अमणानां निर्ग्रन्थानाम्' इति सत्राहम् ।
 हे गौतम ! अमणानां निर्ग्रन्थानां लाघविकादिक सर्वं प्रशस्तमेव, एतदेव अमणानां

અગિદિ અપદિવદયા, સમણાણ નિર્ગંધાણં પસત્યં) લાઘવિક-અલ્પ
 ઉપધિ રક્ષને રૂપ લઘુતા, તથા અપિચ્છા-આહાર આદિકોં મેં અલ્પેચ્છા,
 અમુચ્છા-ઉપધિ આદિ કે રક્ષણ કરને રૂપ મૂર્છાંસે રહિતપના, અગેહી
 આહાર આદિકે ઉપમોગ કાલમેં અગૃહિપન, ઔર અપ્રતિવદતા-વાંધવ
 આદિકોં કે કપર સ્નેહ કા અમાધ હોના સો યે લાઘવિક, અપેચ્છા,
 અમૂર્છા, અગૃહિ ઔર અપ્રતિવદતા પાંચ ધાતેં અમણ નિર્ગ્રન્થોં કા
 કલ્યાણ કરનેવાલી હોતી હેં કયા ? (હંતા ગોયમા લાઘવિય જાવ પસ-
 ત્ય) હાં ગૌતમ ! યે લાઘવ આદિ પાંચ ધાતેં અમણ નિર્ગ્રન્થોં કા કલ્યાણ
 કરનેવાલી હોતી હેં । યહાં યાવત્ શબ્દ સે "અલ્પેચ્છા, અમૂર્છા, અગૃહિ
 ઔર અપ્રતિવદતા" इनका ग्रहण हुआ है । हे गौतम ! अमण निर्ग्रन्थों
 का कल्याण करनेवाली ये लाघविकादिक पांच धातें हैं । यही अमणों की

અગેહી અપદિવદયા સમણાણ નિર્ગંધાણં પસત્યં ?) લાઘવિક અલ્પેચ્છા, અમૂ-
 ર્છા અગૃહિ અને અપ્રતિવદતા, જે પાંચે બાબતો શુ અમણનિર્ગંધાને માટે
 પ્રશસ્ત (કલ્યાણકારી) હોય છે ? જે પાંચે પદોના અર્થ નીચે મુજબ છે
 લાઘવિક એટલે અલ્પ ઉપધિ રાખવા રૂપ લઘુતા અપિચ્છા એટલે આહાર
 વગેરેની અલ્પ ઇચ્છા અમૂર્છા એટલે ઉપધિ વગેરેની રક્ષા કરવાની આસક્તિ
 ન હોવી તે અગૃહિ એટલે આહાર વગેરેમા લાલસાના અભાવ, અપ્રતિવદતા
 એટલે સત્રાં સ્નેહીઆ પ્રત્યે સ્નેહ (મિત્ર) નો અભાવ (હંતા ગોયમા । જાવ-
 તીય જાવ પસત્ય) હે ગૌતમ ! લાઘવ વગેરે પાંચ વાતો અમણનિર્ગંધા માટે
 પ્રશસ્ત-કલ્યાણકારી ગણાય છે યાવત્ 'પદ્યો' 'અલ્પેચ્છા અમૂર્છા,
 અગૃહિ અને અપ્રતિવદતા' ગ્રહણ કરાયા છે હે ગૌતમ ! અમણ નિર્ગંધા
 કલ્યાણ કરનારી તે લાઘવિકાદિક પાંચ વાતો છે એમા જ અમણની અમણતા

लाघवियं जाव पसत्थं । से णूणं भंते ! अकोहत्तं
अमायत्तं अलोभत्तं समणाणं णिग्गंथाणं पसत्थं । हंता
गोयमा ! अकोहत्तं अमाणत्तं जाव पसत्थं । से णूणं भंते !
कंखपओसेणं खीणे ससणे णिग्गंथे अंतकरे भवइ, अंतिम-
सरीरिए वा बहुमोहे वि य णं पुठ्वि वि हरित्ता अहपच्छा
संबुडे कालं करेइ, तओ पच्छा सिज्झइ बुज्झइ मुच्चइ सर्व
दुक्खाणं अंतंकरेइ, हंता गोयमा ! कंखपओसे खीणे
जाव अंतं करेइ ॥ सू० ३ ॥

छाया-तद् नूनं भदन्त ! लाघविकम् अल्पेच्छा अमूर्च्छा अगृद्धिरप्रतिबद्धता
श्रमणानां निर्ग्रन्थानाम् प्रशस्तम् ? हन्त गौतम ! लाघविकं यावत् प्रशस्तम् । तद् नूनं
भदन्त ! अक्रोधत्वममानत्वममायत्वमलोभत्वं श्रमणानां निर्ग्रन्थानां प्रशस्तम् ?
हन्त गौतम ! अक्रोधत्वममानत्वं यावत् प्रशस्तम् । तद् नूनं भदन्त ! काँक्षाप्रदोषे
क्षीणे श्रमणो निर्ग्रन्थोऽन्तकारो भवति, अंतिमशरीरको वा भवति, बहुमोहश्चापि पूर्वं
विहृत्य, अथ पश्चात् संवृतः कालं करोति ततः पश्चात् सिद्ध्यति बुद्ध्यते मुच्यते
परिनिर्वाति सर्वदुःखानामन्तं करोति?, हन्त गौतम ! काँक्षाप्रदोषे क्षीणे यावदन्तं
करोतीति ॥ सू० ३ ॥

टीका—‘ से णूणं भंते ! ’ तद् नूनं भदन्त ! ‘लाघवियं’ लाघविकम् लघो-

निर्ग्रन्थप्रकरण-

इससे पूर्वप्रकरण में गुस्त्व और लघुत्व इनका विचार किया गया
है । अतः उन्हीं का प्रकरण चलता है इस कारण उसी विषय में
सूत्रकार “ से णूणं भंते ! ” इत्यादि सूत्र कह रहे हैं—

टीकार्थ—(भंते) हे भदन्त ! (से णूणं लाघवियं अपिच्छा, अमुच्छा

निर्ग्रन्थ प्रकरण

आ पडेलांना प्रकरणभा गुरुत्व आने लघुत्वनो विचार करवाभां आये।
छे ओमनुं न प्रकरण आलतुं डोवाथी ओन विषयभा सूत्रकार “ से णूणं
भंते ! ” इत्यादि सूत्रो कडे छे—

‘ से णूणं भंते ! लाघवियं अपिच्छा ” इत्यादि

टीकार्थ—(भंते !) हे भगवन् ! (से णूणं लाघवियं अपिच्छा, अमुच्छा,

મધસ્તમ્, સાધૂનામેવસત્યર્થમાપ્નોધરશદિકં મધસ્તં સત્ત્વોપાદગમેષ । 'સે પૂર્ણ મતે' યથૂ નૂનં મદન્ત । 'કંમ્વપઓસે નં' વ્યાંસામદોષ સ્વસુ 'સીખે' સીખે, વિનટ્ટે સર્વિ, 'સમખે નિર્ગમ્થ' શ્રમખો નિર્ગમ્થ, 'અંતકર મધ્દ' અન્તકરો મધવિ-
નિય્ ? વ્યાંસાપ્રોષઃ વ્યાંસા = પરવર્ધનપાઠછા, પરવર્ધનવિપવાસદિર્વા, સેવ મકુટ્તો વાપ સ્વિ વ્યાંસામદોષઃ । 'અતિમગરીરિય વા' અતિમગરીરકો વા મવતિ વિમ્ ? અથવા 'વદુમોદ વિ ય નં' વદુમોદશપિ ય સ્વસુ મુરવા 'વુધિય વિ હરિતા' પૂર્વે વિહત્ય 'અદ્યપ્ચા' અથ વખાત્ 'સંપુટેકાર્ત વરે' સપુટઃ કાર્ત્ત
ફહન વા મદ્દ ને કિ શ્રમખોં મેં શ્રમખતા તથ હી આતી હે કિ જખ ડામ્ કોખાદિકપાયોં વા અમાય જો । અતઃ જિત્ત પ્રકાર સે લાઘવા-
દિકરૂપ પ્રવૃત્તિયાં શ્રમખજનોં કે લિયે દિતાયદ્દ મેં ડમ્મી પ્રકાર સે જન લાઘવાદિકોં વરિ દોષા નિવિસ પ્રોખાદિકોં કી અમાયરૂપ પ્રવૃત્તિયાં મી ડનક લિય દિત્તકારક હે । અતઃ યે મવ ડગાદેય હે ।

(સે પૂર્ણ મતે ।) તે મદન્ત । (કંમ્વપઓસે) વ્યાંસામદોષ (સીખ) નષ્ટ હો જાતે વર (સમખે નિર્ગમ્થે) શ્રમખ નિર્ગમ્થ (અંતકર મધ્દ) કયા અંતકર હોતા ને ? વર વર્ધન વિવચક આમદ્ધરૂપ વાછા વા નામ વ્યાંસા હે । અથવા-પરવર્ધન વિવચક આસત્તિરૂપ વુદ્ધિ વા નામ વ્યાંસા હે । મદ્દ વાક વજા નારી દોષ હે । અતઃ જિત્ત વાછા કો મકુટ્ત દોષરૂપ, જાન વર ડસે "વ્યાંસામદોષ" જસ સમાસાન્ત વદ વારા પ્રકર કિયા ગયા હે । અતિમગરીરિય વા) તથા વયા મદ્દ અતિમગરીર વાલા હોતા હે ? (વદુમોદ વિ ય નં વુધિય વિહરિતા, અદ્યપ્ચા સંપુટે કાર્ત્ત કરે, તમો વજા સિજ્જદ, મુજ્જદ, મુલ્લદ, જાય મલ્લવુલ્લમાણે અંત કરે ।)

બુધ્ધિ યાગી યગજ્ઞત્વ ત્વારે જ આ । ડ કે બ્ધારે તેમનામાં કોખાદિ કયા યોના અતઃ । અથ ડ તમી વાગવાદિ ક્ષ પ્રત્તિયો બેવી હોતે મમબોને માટે દિત્તકર ડ, એ જ પ્રમાણ કોખાદિકો ॥ અભાવક પ્રત્તિયો ખજ તેમને માટે દિત્તકારક ડ આ । તમી તે ખખી પ્રત્તિયો ડપાદેય ડ

(સે પૂર્ણ મતે ।) ૪, જગ । ૧ । (કંમ્વપઓસે સીખ વાગે જિત્તવે મવકરે મધ્દ ? વ્યાંસામદોષ નાથ વાગે ત્વારે શુ યગજ્ઞ નિર્જમા સચારને અતઃ નાર ખો ડ ? ખીજા પ્રકર । વિવચ આશ્રમ ક્ષ વાછા (અભિવાપ) ડ નામ વ્યાંસા ડ અથવા ખીજા દશન વિવચક આશ્રમ ડ નામ વ્યાંસા ડ, તે ખજા માટે દોષ ગણાય ડ તે વ્યાંસાને મકુટ દોષક્રૂપ ગા હી તેને માટે 'વ્યાંસામદોષ' શબ્દનો પ્રયોગ કર્યો ડ (અતિમ ગરીર વા) શુ તે મમખ અતિમ ગરીરી હાલ શકે ? (વદુમોદ વિ ય નં વુધિય વિહરિતા, અદ્ય વજા

શ્રમણત્વમ્, તત્ત્વ ક્રોધાદ્યભાવમન્તરેણ ન સંભવતિ અતઃ ક્રોધાદ્યભાવસ્ય પ્રાશસ્ત્ય સૂચનાર્થમાહ—‘ સે ણૂણં મંતે ’ ઇત્યાદિ । ‘ સે ણૂણં મંતે ’ તદ્ નૂનં મદન્ત ! ‘ અકોહત્તં ’ અક્રોધત્વમ્ ક્રોધરાહિત્યમ્ ‘ અમાણત્તં ’ અમાનત્વ માનરહિતત્વં, ‘ અમાયત્તં ’ અમાયત્વં, માયાવિવર્જિતત્વમ્, ‘ અલોમ્મત્તં ’ અલોમત્વમ્, લોભરહિતત્વમ્ । એતત્સર્વં ‘ સમણાણં ’ શ્રમણાનામ્ ‘ ણિગ્ગથાણં ’ નિર્ગ્રન્થાનામ્ ‘ પસત્થં ’ પ્રશસ્તં કિમ્ ? મગવાનાહ—‘ હંતા ગોયમે ’ ત્યાદિ । ‘ હંતા ગોયમા ’ મન્ત હે ગૌતમ ! ‘ અકોહત્તં-અમાણત્તં જાવ પસત્થં ’ અક્રોધત્વમમાનત્વં યાવત્

શ્રમણતા હૈ । તાત્પર્ય કહને કા યહ હૈ કિ નિર્ગ્રન્થશ્રમણજનોં મેં હી યે પૂર્વોક્ત વાતેં દેખને મેં આતી હૈં અન્યત્ર નહીં । ડનમેં યે સવ વાતેં હસ લિયે કહને મેં આતી હૈ કિ વે હનકા મન, વચન, કાયા સે પાલન કરતે હૈં, હનકે પાલન કરને કા ડનકા ઉદેશ્ય યહી હૈ કિ યે સવ વાતેં ડનકે લિયે હિતકર હૈં । અતઃ પ્રભુ ગૌતમ કો સમજાતે હૈ કિ હે ગૌતમ ! શ્રમણ નિર્ગ્રન્થોં કી યે લાઘવાદિક સવ હી પ્રવૃત્તિયાં પ્રશસ્ત હી હોતી હૈ । શ્રમણોં કી શ્રમણતા હસી મેં સમાઈ હુઈ હૈ । સાથ ૨ મેં યહ શ્રમણતા ઓર કિન ૨ વાતોં સે સમ્બન્ધ રખતી હૈ-સો ખી પ્રભુ ગૌતમ કો સમજાને કે લિયે ડનકે પ્રશ્ન કરને પર પ્રકટ કરતે હૈં-(સે ણૂણં મંતે ! અકોહત્તં, અમાણત્તં અમાયત્તં અલોમ્મત્તં સમણાણં ણિગ્ગથાણં પસત્થં) હે મદન્ત ! ક્રોધ કરને સે રહિત હોના, માન કરને સે રહિત હોના માયા કરને સે રહિત હોના, લોભ કરને સે રહિત હોના સો યે સવ પ્રવૃત્તિયાં નિર્ગ્રન્થ શ્રમણ જનોં કે લિયે હિતકર હોતી હૈં । તાત્પર્ય

છે. ફલિતાર્થ એ છે કે નિર્ગ્રન્થ શ્રમણોમા જ એ પૂર્વોક્ત પાત્ર બાબતો બેવામાં આવે છે બીજે બેવામાં આવતી નથી. શ્રમણ નિર્ગ્રન્થોમા જ એ પાત્રે વાતોના દર્શન થાય છે કારણ કે તેઓ મન, વચન, અને કાયાથી તેમનું પાલન કરે છે. તેઓનો તેમનું પાલન કરવા પાછળનો ઉદ્દેશ એ છે કે એ પાંચે વાત તેમને માટે હિતકારી છે. તેથી જ મહાવીર પ્રભુ ગૌતમ સ્વામીને કહે છે કે તેમની લાઘવાદિક સઘળી પ્રવૃત્તિયો પ્રશસ્ત જ હોય છે શ્રમણોની શ્રમણતા એમાં જ રહેલી છે એ શ્રમણપણું બીજી કંઈ કંઈ વાતો સાથે મળધ રાખે છે, તે વાત ગૌતમને સમજાવવા માટે, તેમના પ્રશ્નના ઉત્તર રૂપે સમજાવે છે— (સે ણૂણ મંતે ! અકોહત્તં, અમાણત્તં, અમાયત્તં, અલોમ્મત્તં, સમણાણ ણિગ્ગથાણ પસત્થં ?) હે ભગવન્ ! અક્રોધ (ક્રોધનો અભાવ) અમાન (માનનો અભાવ) અમાયા (માયાથી રહિત હોવું) અને અલોભ (લોભનો અભાવ) એ બધા શુભો શુ શ્રમણ નિર્ગ્રન્થોને માટે હિતકર હોય છે ? તાત્પર્ય એ છે કે શ્રમ-

अथान्यमतविषये प्रश्नोत्तरम्—

इतः पूर्वं कांक्षामदोषः कथितः, स च कांक्षामदोषो महान् दोषः । तस्य कांक्षामदोषस्य दोषत्वं दर्शनान्तरस्य विपरीततया सम्यगीति दर्शनान्तरस्य विपरीतरूपतां दर्शयन्नाह—‘अण्ण उत्थिया’ इत्यादि ।

मूलम्—अण्णउत्थिया णं भते ! एव आइक्खंति एव भासति एव पण्णवेति एव परुवेति, एव खल्ल एगे जीव एगेणं समयणं दो आउयाइ पकरेइ, त जहा—इहभविआउय च परभविआउय च । ज समय इहभविआउय पकरेइ, त समय परभविआउय पकरेइ, ज समय परभविआउय पकरेइ, त समय इहभविआउय पकरेइ, इहभविआउयस्स पकरणयाए परभविआउय पकरेइ, परभविआउयस्स पकरणयाए इहभविआउय पकरेइ, एव खल्ल एगे जीवे एगेण समयणं दो आउयाइ पकरेइ, त जहा—इहभविआउय च परभविआउय च से कहमेय भते ! एव ? गोयमा । ज णं त अण्ण उत्थिया एव आइक्खंति जाव परभविआउय च, जे ते एव आहसु मिच्छा ते एव आहसु अह पुण गोयमा । एव आइक्खामि जाव परुवेमि, एव खल्ल एगे जीवे एगेणं समयणं एगं आउय पकरेइ, त जहा इहभविआउय वा परभविआउय वा ज समय इहभविआउय पकरेइ, णो त समय परभविआउय पकरेइ, ज समय परभविआउय पकरेइ णो त समय इहभविआउय पकरेइ इह भविआउयस्स पकरणयाए णो परभविआउय पकरेइ, परभविआउयस्स पकरणयाए णो इहभविआउय पकरेइ एव खल्ल एगे जीव एगेणं समयणं एग आउय

કરોતિ, સંવૃતઃ=સંવરં પ્રાપ્તઃ સન્ કાલં કરોતિ મ્રિયતે, 'તઓ પચ્છા' તતઃ પથાત્ 'સિજ્ઞઇ' સિદ્ધયતિ, સિદ્ધિપ્રાપ્નોતિ? 'બુજ્ઞઇ' બુદ્ધયતે, વોધં ક્રેવલજ્ઞાનમાપ્નોતિ, 'મુચ્ચઇ' મુચ્ચતે, જ્ઞાનાવરણીયાદિ કર્મકાત્ નિવૃત્તો ભવતિ, 'જાવ અંતંકરેઇ' યાવદન્તે કરોતિ યાવત્પદેન પરિનિવ્વાહ સવ્વદુક્ખાણ 'ઇતિ સંગ્રહઃ । પરિનિર્વાતિ=કર્મ સંતાપરાહિત્યેન શીતલી ભવતિ, સર્વદુઃખાનાં=શારીર-માનસિકદુઃખાનામ્ અન્તં કરોતિ કિમ્? ભગવાનાહ—' હંતે ' ત્યાદિ । 'હતા ગોયમા' હન્તે હે ગૌતમ ! 'કંઘપઓસે સ્વીણે' કાંક્ષાપ્રદોષે ક્ષીણે સતિ 'જાવ અંતં કરેઇ' યાવદન્તં કરોતિ, યસ્ય કાંક્ષા પ્રદોષો વિનષ્ટો જાત સ સિદ્ધો બુદ્ધઃ મુક્તઃ પરિનિર્વાન્તઃ સર્વદુઃખાન્તકરશ્ચ ભવતીતિ ભાવઃ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

॥ ઇતિ નિર્ગ્ન્યપ્રકરણમ્ ॥

અથવા-પહિલે વહ બહુત મોહવાલા હોકર વિહાર કરે ઓર વાદ મેં સંવર સે યુક્ત હોકર સર જાવે, તો ક્યા વહ સિદ્ધ હોતા હૈ, બુદ્ધ હોતા હૈ ? મુક્ત હોતા હૈ ? યાવત્ સમસ્ત દુઃખોં કા અંત કરતા હૈ ? સિદ્ધિ-પદ કો પ્રાપ્ત હોના હસકા નામ સિદ્ધ હોના હૈ । કેવલ જ્ઞાન કો પ્રાપ્ત કરના હસકા નામ બુદ્ધ હોના હૈ । સંસાર સાગર સે નિવૃત્ત હોના હસકા નામ મુક્ત હોના હૈ । શારીરિક, માનસિક દુઃખોં કા અન્ત કરના હસકા નામ સર્વ દુઃખાન્તકર હૈ । યહાં યાવત્ પદસે “ પરિનિવ્વાહ ” હસ પદ કા સંગ્રહ હુઆ હૈ । કર્મ સંતાપ સે રહિત હોકર શીતલી ભૂત હોના હસકા અર્થ હૈ । (હંતા ગોયમા ! કંઘપઓસે સ્વીણે જાવ અંતં કરેઇ) હાં ગૌતમ ! કાંક્ષા પ્રદોષ નષ્ટ હોને પર-શ્રમણ નિર્ગ્ન્ય સિદ્ધ હોતા હૈ, બુદ્ધ હોતા હૈ મુક્ત હોતા હૈ, પરિનિર્વાત હોતા હૈ ઓર સર્વ દુઃખોં કા અન્ત કરનેવાલા હોતા હૈ ॥ સૂ-૩ ॥

સંવુદે કાલં કરેઇ, તઓ પચ્છા સિજ્ઞઇ, બુજ્ઞઇ, મુચ્ચઇ, જાવ સવ્વદુક્ખાણ અંતં કરેઇ ?) અથવા-પહેલા તે શ્રમણ ધણા જ મોહયુક્ત થઈને વિચરતા હોય, પણ ત્યાર બાદ સવૃત થઈને (સવર યુક્ત થઈને) મરણ પામે તો શુ તે સિદ્ધ થાય છે, બુદ્ધ થાય છે, મુક્ત થાય છે ? પરિનિર્વૃત્ત થાય છે ? અને તમામ દુઃખોનો અંત કરે છે ? સિદ્ધિપદ (મોક્ષ) પ્રાપ્ત કરવું એટલે સિદ્ધ થવું. કેવળજ્ઞાન પ્રાપ્ત કરવું એટલે બુદ્ધ થવું. સંસાર સાગરને તરી જવો એટલે મુક્ત થવું. કર્મસંતાપથી રહિત થઈને શીતલીભૂત થવું એટલે પરિનિર્વૃત્ત થવું. અને શારીરિક તથા માનસિક દુઃખોનો નાશ કરવો એટલે સર્વ દુઃખાન્તકર થવું

(હતા ગોયમા ! કંઘપઓસે સ્વીણે જાવ અંતં કરેઇ) હા ગૌતમ ! કાંક્ષાપ્રદો-ષનો નાશ થતાથી શ્રમણ નિર્ગ્ન્ય સિદ્ધપદ પામે છે, બુદ્ધ બને છે, મુક્ત થાય છે, પરિનિર્વૃત્ત થાય છે અને તમામ દુઃખોનો અંત કરનાર બને છે. ॥સૂ૦ ૩॥

अथान्यमतविषये प्रश्नोत्तरम्—

इत् पूर्व कांक्षामदोषः कथितः, स च कांक्षामदोषो महान् दोषः । तस्य कांक्षामदोषस्य दोषत्वं दर्शनान्तरस्य विपरीततया समवतीति दर्शनान्तरस्य विपरीतरूपता दर्शयन्नाह—‘अण्ण उत्थिया’ इत्यादि ।

मूलम्—अण्णउत्थिया णं भत्ते । एव आइक्खति एव भासति एव पण्णवेत्ति एव परुवेत्ति, एव खल्ल एगे जीवे एगेणं समयणं दो आउयाइ पकरेइ, त जहा—इहभविया उय च परभवियाउय च । ज समय इहभवियाउय पकरेइ, त समय परभवियाउय पकरेइ, ज समय परभवियाउय पकरेइ, त समय इहभवियाउय पकरेइ, इहभवियाउयस्स पकरणयाए परभवियाउय पकरेइ, परभवियाउयस्स पकरणयाए इहभवियाउय पकरेइ, एव खल्ल एगे जीवे एगेण समयणं दो आउयाइ पकरेइ, त जहा—इहभवियाउय च परभवि याउय च से कहमेय भत्ते । एव ? गोयमा । ज णं त अन्न उत्थिया एव आइक्खति जाव परभवियाउय च, जे ते एव आहसु मिच्छा ते एव आहसु अह पुण गोयमा । एव आइक्खामि जाव परुवेमि, एव खल्ल एगे जीवे एगेणं समयणं एगं आउय पकरेइ, त जहा इहभवियाउय वा परभवियाउय वा ज समय इहभवियाउय पकरेइ, णो त समय परभवियाउय पकरेइ, ज समय परभवियाउय पकरेइ णो त समय इहभवि या उय पकरेइ इह भवियाउयस्स पकरणयाए णो परभवियाउय पकरेइ, परभवि याउयस्स पकरणयाए णो इहभवि याउय पकरेइ एव खल्ल एगे जीव एगेणं समयणं एग आउय

पकरेइ, तं जहा—इहभविद्याउयं वा परभविद्याउयं वा, सेवं भंते त्ति भगवं गोयमे जाव विहरइ ॥ सू० ४ ॥

छाया—अन्ययूथिकाः खलु भदन्त ! एवमाख्यान्ति, एवं भापंते, एवं प्रज्ञापयन्ति, एवं प्ररूपयन्ति, एवं खलु एको जीव एकेन समयेन द्वे आयुषी प्रकरोति, तद्यथा -- इहभविद्यायुष्कं च परभविद्यायुष्कं च य समयं इहभविद्यायुष्कं प्रकरोति, तं समयं परभविद्यायुष्कं प्रकरोति, यं समयं परभविद्यायुष्कं प्रकरोति त समयम् इहभविद्यायुष्कं प्रकरोति, इहभविद्यायुष्कस्य प्रकरणतया परभविद्यायुष्कं प्रकरोति परभविद्यायुष्कस्य प्रकरणतयेहभविद्यायुष्कं प्रकरोति, एवं खलु एको जीवः एकेन समयेन द्वे आयुषी प्रकरोति तद्यथा—इहभविद्यायुष्कं च परभविद्यायुष्कं च, तत् कथमेतद् भदन्त ! एवम् ? । गौतम ! यत् ते अन्ययूथिका एवमाख्याति यावत् परभविद्यायुष्कं च, ये ते एवमाहुः, मिथ्या ते एवमाहुः, अहं पुन गौतम ! एवमाख्यामि यावत् प्ररूपयामि एवं खलु एको जीव एकेन समयेन एकमायुष्कं प्रकरोति तद्यथा—इहभविद्यायुष्कं वा परभविद्यायुष्कं वा । य समयमिहभविद्यायुष्कं प्रकरोति नो तं समयं परभविद्यायुष्कं प्रकरोति, यं समयं परभविद्यायुष्कं प्रकरोति, नो तं समयमिहभविद्यायुष्कं प्रकरोति, इहभविद्यायुष्कस्य प्रकरणतया नो परभविद्यायुष्कं प्रकरोति, परभविद्यायुष्कस्य प्रकरणतया नो इह भविद्यायुष्कं प्रकरोति, एवं खलु एको जीव एकेन समयेनैकमायुष्कं प्रकरोति, तद्यथा—इहभविद्यायुष्कं वा परभविद्यायुष्कं वा, तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति भगवान् गौतमो यावद्विहरति ॥ सू० ४ ॥

टीका—‘अण्णउत्थिया णं भंते !’ अन्य यूथिकाः खलु भदन्त ! ‘एवं आइखंति’ एवं—वक्ष्यमाणप्रकारेण आख्यान्ति सामान्यरूपेण कथयन्ति, ‘एवं भासंति’ एव भापन्ते विशेषरूपेण कथयन्ति, ‘एवं पण्णवेत्ति’ एवं प्रज्ञा-

अन्यमतविषय में प्रश्नोत्तर—

इससे पहिले कांक्षाप्रदोष कहा जा चुका है और यह कहा गया है कि यह एक महान् दोष है । इस कांक्षा प्रदोष (पर दर्शन की वांछा) में दोषरूपता दर्शनान्तर की विपरीतता से ही संभवनी है—अतः दर्श-

अन्यमत विषयमां प्रश्नोत्तर

आ पडेला कांक्षाप्रदोषनु निरूपण करवामा आओयु अने तेने महान दोषइय अताववामा आओये आ कांक्षाप्रदोष (परदर्शननी वाछा) मा भील दर्शननी विपरीतताने लीधे अ दोषपणु सलवे छे. तेथी भील दर्शनामां

પવન્તિ, ઉપપત્તિદ્વારેણ 'એવં પરુવેતિ' એવં પ્રરૂપયન્તિ, પ્રરૂપણં કુર્ષન્તિ ભેદ
 કયનત્, કિમિત્યાહ-એવ સ્વલુ એગે જીવે 'એવ સ્વલુ એકો જીવઃ' 'એગે સમ
 એગં' એકેન સમયન 'દો આઝયાહ' દે આયુષી, આયુર્દ્રય 'પકરેહ' પ્રકરોતિ
 =વચ્નાતિ, જીવો નામ સ્વપર્યાય સમૂહરૂપઃ સ ચ પર્યાયસમુદાયાત્મકો જીવો
 યદા એકમાયુઃપર્યાય કરોતિ તદાઽન્યપિ પર્યાય કરોત્યેવ સ્વપર્યાયત્વાવિશેષત્
 જ્ઞાનસમ્યક્ત્વાદિપર્યાયત્વ સ્વપર્યાયસ્ય કર્તા જીવ એવેતિ સ્મીકર્તૃત્વમેવ અન્યથા

નાન્તર મેં ઘિપરીતરૂપતા દિહ્યાને કે નિમિત્ત સૂત્રકાર કહતે હૈ—
 'અળ્ળ ડલ્લિયા ણં મંતે !' ઇત્યાદિ ।

ટીકાર્થ—(અળ્ળડલ્લિયા ણં મંતે !) હે ભવન્ત ! અન્યયુધિકજન-વૃસરે
 સીર્થિકજન (એવ આહવક્ષન્તિ) હસ પ્રકાર સે સામાન્યરૂપ સે કહતે હૈ
 (એવ માસતિ) હસ પ્રકાર સે વિશેષરૂપ સે કહતે હૈ । (એવ પળ્લવેતિ)
 (યુક્તિયો દ્વારા હસ પ્રકાર સે સમજાતે હૈ (મેવોં કે કથનપૂર્વક હે હસ
 પ્રકાર સે પ્રરૂપણા કરતે હૈ—(એવ સ્વલુ) કિ—(એગે જીવે એગે સમપર્ણ)
 એક જીવ એક સમય મેં (દો આઝયાહ) દો આયુષોં કા (પકરેહ)
 વંધ કરતા હૈ । હસ ઘિષય મેં ડનકા એસા કહના હૈ કિ—જીવ જો હૈ
 વહ અપમી પર્યાયોં કા એક સમૂહરૂપ હૈ । અત વહ પર્યાયસમૂહરૂપ જીવ
 જિસ સમય એક આયુરૂપ પર્યાય કો કરતા હૈ, ડસી સમય વહ વૃસરી
 મી આયુરૂપ પર્યાય કો કરતા હી હૈ । ક્યોં કિ સ્વપર્યાયત્વ કી ડસમેં
 અવિશેષતા હૈ । જ્ઞાન સમ્યક્ત્વ આદિ સ્વપર્યાય કો તરહ । તાત્પર્યે કહમે

વિપરીતતા બતાવવાને માટે સૂત્રકાર સૂત્ર કહે છે

ટીકાર્થ— અળ્ળ ડલ્લિયા ણં મંતે !' ઇત્યાદિ

(અળ્ળ ડલ્લિયા ણં મંતે !) હે ભવન્ત ! અન્ય યુધિકજન-અન્ય સીર્થિક
 અન્ય મતને માનનારા લોકો (એવ આહવક્ષન્તિ) આ પ્રમાણે સામાન્ય રીતે
 કહે છે, (એવ માસતિ) આ પ્રમાણે વિશેષરૂપે કહે છે, (એવ પળ્લવેતિ)
 યુક્તિયો વડે આ પ્રમાણે સમજાવે છે (એવ પરુવેતિ) બોલના કથન પૂર્વક
 આ પ્રમાણે પ્રરૂપણા કરે છે કે—(એવ સ્વલુ એગે જીવે એગે સમપર્ણ દો આઝ
 યાહ પકરેહ) એક જીવ એક સમયે એ આયુષ્યનો વંધ બાંધે છે આ
 વિષયમા પરધર્મીઓની માન્યતા બોલી છે કે—જીવ પોતાની પર્યાયોના એક
 સમૂહરૂપ છે તેથી પર્યાયસમૂહરૂપ જીવ ને સમયે એક આયુષ્યરૂપ પર્યાય કરે
 છે એ જ સમયે તે બીજા આયુષ્યરૂપ પર્યાય પણ કરે છે કારણ કે જ્ઞાન
 સમ્યક્ત્વ વગેરે સ્વપર્યાયની જેમ તેનામા સ્વપર્યાયપણાની અવિશેષતા છે.

पकरेइ, तं जहा—इहभविद्याउयं वा परभविद्याउयं वा, सेवं भंते त्ति भगवं गोयमे जाव विहरइ ॥ सू० ४ ॥

छाया—अन्ययूथिकाः खलु भदन्त ! एवमाख्यान्ति, एवं भाषन्ते, एवं प्रज्ञापयन्ति, एवं प्ररूपयन्ति, एवं खलु एको जीव एकेन समयेन द्वे आयुषी प्रकरोति, तद्यथा — इहभविद्यायुष्कं च परभविद्यायुष्कं च य समयं इहभविद्यायुष्कं प्रकरोति, तं समयं परभविद्यायुष्कं प्रकरोति, यं समयं परभविद्यायुष्कं प्रकरोति त समयम् इहभविद्यायुष्कं प्रकरोति, इहभविद्यायुष्कस्य प्रकरणतया परभविद्यायुष्कं प्रकरोति परभविद्यायुष्कस्य प्रकरणतयेहभविद्यायुष्कं प्रकरोति, एवं खलु एको जीवः एकेन समयेन द्वे आयुषी प्रकरोति तद्यथा—इहभविद्यायुष्कं च परभविद्यायुष्कं च, तत् कथमेतद् भदन्त ! एवम् ? । गौतम ! यत् ते अन्ययूथिका एवमाख्याति यावत् परभविद्यायुष्कं च, ये ते एवमाहुः, मिथ्या ते एवमाहुः, अहं पुन गौतम ! एवमाख्यामि यावत् प्ररूपयामि एवं खलु एको जीव एकेन समयेन एकमायुष्कं प्रकरोति तद्यथा—इहभविद्यायुष्कं वा परभविद्यायुष्कं वा । य समयमिहभविद्यायुष्कं प्रकरोति नो तं समयं परभविद्यायुष्कं प्रकरोति, यं समयं परभविद्यायुष्कं प्रकरोति, नो तं समयमिहभविद्यायुष्कं प्रकरोति, इहभविद्यायुष्कस्य प्रकरणतया नो परभविद्यायुष्कं प्रकरोति, परभविद्यायुष्कस्य प्रकरणतया नो इह भविद्यायुष्कं प्रकरोति, एवं खलु एको जीव एकेन समयेनैकमायुष्कं प्रकरोति, तद्यथा—इहभविद्यायुष्कं वा परभविद्यायुष्कं वा, तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! इति भगवान् गौतमो यावद्विहरति ॥ सू० ४ ॥

टीका—‘ अण्णउत्थिया णं भंते ! ’ अन्य यूथिकाः खलु भदन्त ! ‘ एवं आइक्खन्ति ’ एवं—वक्ष्यमाणप्रकारेण आख्यान्ति सामान्यरूपेण कथयन्ति, ‘ एवं भासन्ति ’ एव भाषन्ते विशेषरूपेण कथयन्ति, ‘ एवं पण्णवे ति ’ एवं प्रज्ञा-

अन्यमतविषय में प्रश्नोत्तर—

इससे पहिले कांक्षाप्रदोष कहा जा चुका है और यह कहा गया है कि यह एक महान् दोष है । इस कांक्षा प्रदोष (पर दर्शन की वांछा) में दोषरूपता दर्शनान्तर की विपरीतता से ही संभवनी है—अतः दर्श-

अन्यमत विषयमा प्रश्नोत्तर

आ पडेला काक्षाप्रदोषनु निरूपणु करवामा आओयु अने तेने भडान दोषरूप भताववामा आओये. आ काक्षाप्रदोष (परदर्शननी वाछा) मा भीन् दर्शननी विपरीतताने वीधे न दोषपणु स भवे छे. तेथी भीन् दर्शनोमां

પયન્તિ, ઉપપત્તિદ્વારેણ 'એવં પરુવેતિ' એવ પ્રરૂપયન્તિ, પ્રરૂપણાં કુર્ષન્તિ મેદ કયન્તઃ, કિમિત્યાહ—એવ સ્વલ્લ એગે જીવે 'એવ સ્વલ્લ એગો જીવઃ' એગેણ સમ એગ 'એકેન સમયેન' 'દો આઠયાહ' દ્વે આયુષી, આયુર્દય 'પકરેહ' પ્રકરોતિ = ઘષ્ઠનાતિ, જીવો નામ સ્વપર્યાય સમૂહરૂપ સ ધ પર્યાયસમુદાયાત્મકો બીજો યદા એકમાયુઃપર્યાય કરોતિ તદાઽન્યમપિ પર્યાયં કરોત્યેવ સ્વપર્યાયત્વાભિશેષાત્ જ્ઞાનસમ્યક્ત્વાદિપર્યાયશ્ચ સ્વપર્યાયસ્ય કર્તા બીજ એવેતિ સ્વીકર્તવ્યમેવ અન્યથા

નાન્તર મેં વિપરીતરૂપતા દિશ્જાને કે નિમિત્ત સૂત્રકાર કહતે હૈ—
'અળ્લ ઇત્થિયા ણં મંતે!' ઇત્યાદિ।

ટીકાર્થ—(અળ્લ ઇત્થિયા ણં મંતે!) હે મહન્ત! અન્યયુધિકજન—તૂસરે તીર્થિકજન (એવં આહ્વસંતિ) હસ પ્રકાર સે સામાન્યરૂપ સે કહતે હૈ (એવં માસંતિ) હસ પ્રકાર સે વિશેષરૂપ સે કહતે હૈ। (એવં પળ્લબેતિ) (યુક્તિયો દ્વારા હસ પ્રકાર સે સમજાતે હૈ) (મેઢોં કે કથનપૂર્વક લે હસ પ્રકાર સે પ્રરૂપણા કરતે હૈ—(એવં સ્વલ્લ) કિ—(એગે જીવે એગેણ સમયે) એક જીવ એક સમય મેં (દો આઠયાહ) દો આયુષોં કા (પકરેહ) બંધ કરતા હૈ। હસ વિષય મેં ડનકા એસા કહમા હૈ કિ—જીવ જો હૈ લહ અપની પર્યાયોં કા એક સમૂહરૂપ હૈ। અત લહ પર્યાયસમૂહરૂપ જીવ જિસ સમય એક આયુરૂપ પર્યાય કો કરતા હૈ, ઇસી સમય લહ ટૂસરી બી આયુરૂપ પર્યાય કો કરતા હી હૈ। કયોં કિ સ્વપર્યાયત્વ કી ઇસમેં અવિશેષતા હૈ। જ્ઞાન સમ્યક્ત્વ આદિ સ્વપર્યાય કો તરહ। તાત્પર્યે કહને

વિપરીતતા બતાવવાને માટે સૂત્રકાર સૂત્ર કહે છે

ટીકાર્થ—'અળ્લ ઇત્થિયા ણં મંતે।' ઇત્યાદિ

(અળ્લ ઇત્થિયા ણં મંતે!) હે મહન્ત! અન્ય યુધિકજન—અન્ય તીર્થિકે અન્ય મતને માનનારા લોકો (એવં આહ્વસંતિ) આ પ્રમાણે સામાન્ય રીતે કહે છે (એવં માસંતિ) આ પ્રમાણે વિશેષરૂપે કહે છે (એવં પળ્લબેતિ) મુક્તિયો વડે આ પ્રમાણે સમજાવે છે (એવં પરુવેતિ) બોદોના કથન પૂવક આ પ્રમાણે પ્રરૂપણા કરે છે કે—(એવં સ્વલ્લ એગે જીવે એગેણ સમયે) દો આઠ યાહ પકરેહ) એક જીવ એક જ સમયે બે આયુષ્યનો બંધ બાંધે છે આ વિષયમા પરધર્મીઓની માન્યતા એવી છે કે—જીવ પોતાની પદચિના એક સમૂહરૂપ છે તેથી પર્યાયસમૂહરૂપ જીવ ને સમયે એક આયુષ્યરૂપ પર્યાય કરે છે એ જ સમયે તે બીજી આયુષ્યરૂપ પર્યાય પણ કરે છે કારણ કે જ્ઞાન સમ્યક્ત્વ વગેરે સવપર્યાયની જેમ તેનામા સ્વપર્યાયપણાની અવિશેષતા છે

સિદ્ધત્વાદિપર્યાયાણામુત્પાદાભાવ એવ સ્યાદિતિ ભાવઃ । 'ત જહા' તથા—'ઇહ ભવિયાઉયં ચ પરમવિયાઉયં ચ' ઇહમવિકાયુષ્કં ચ પરમવિકાયુષ્કં ચ, તદેવ સ્પષ્ટયતિ—'જં સમયં' ઇત્યાદિ । 'જં સમયં ઇહમવિયાઉયં પરરેહ' યં સમયમા-

કા યહ હૈ કિ જિસ તરહ જીવ આયુરૂપ પર્યાય કો કરતે સમય જ્ઞાન સમ્યક્ત્વ આદિ અપની પર્યાયોં કરતા હૈ ઉસ એક હી સમય મેં ઉનકે કરને મેં કોઈ વાધા નહીં આતી હૈ વયોં કિ વે ઉસકી પર્યાયોં હૈં હસી પ્રકાર સે એક હી જીવ એક હી સમય મેં દો આયુકર્મોં કા બંધ કરતા હૈ । હસમેં ભી કોઈ વાધા નહીં આતી હૈ । કારણ—જેસે એક આયુકર્મકા કરના ઉસકી પર્યાય હૈ ઉસી પ્રકારસે ઉસી સમયમેં દૂસરી આયુકર્મકા કરના ઉસકી પર્યાય હૈ । હસ કથનસે યહ વાત સમજમેં આ જાતી હૈ કિ જીવ હી અપની પર્યાયોં કા કર્તા હૈ । યદિ જીવ અપની પર્યાયોં કા કર્તા ન માના જાવે તો ફિર સિદ્ધત્વ આદિ પર્યાયોં કા કમી ઉત્પાદ હી નહીં હો સકને કે કારણ ઉનકા અભાવ હી હો જાવેગા । હસ દો આયુઓં કો એક સમય મેં કરને કી વાત કો અવ ઔર વિશેષરૂપ સે સ્ફુટ કરને કે લિયે ઉન્હીં કી તરફ સે સૂત્રકાર કહતે હૈ કિ—(તં જહા) ઉનકે મન્તવ્યાનુસાર એક હી સમયમેં એક હી જીવ હન દો આયુઓંકો હસ પ્રકાર સે કરતા હૈ (ઇહ મવિયાઉયં ચ પરમવિયાઉયં ચ) એક હસમવ સમ્બન્ધી આયુકો ઔર દૂસરી પરમવ સમ્બન્ધી આયુકો । (જં સમયં ઇહમવિયાઉયં

તાત્પર્ય એ છે કે જેવી રીતે જે સમયે જીવ; આયુષ્યરૂપ પર્યાયને કરતી વખતે જ્ઞાન સમ્યક્ત્વ વગેરે પોતાની પર્યાયોને પણ કરે છે—તો એ એક જ સમયે તે બધી પર્યાયો કરવામા જેમ વાધો નડતો નથી, કારણ કે તે તેની પર્યાયો છે, એજ પ્રમાણે એક જ જીવ એક જ સમયે બે આયુષ્યનો પણ બંધ કરે છે જેમ કરવામા કોઈ મુશ્કેલી નડતી નથી કારણ કે એક આયુષ્ય કર્મ કરવું એ જેમ તેની પર્યાય છે, એજ પ્રમાણે એજ સમયે બીજુ આયુષ્યકર્મ કરવું એ પણ તેની પર્યાય જ છે આ કથનથી એ વાત સ્પષ્ટ સમજાય છે કે જીવ પોતે જ પોતાની પર્યાયોનો કર્તા છે, બે જીવને પોતાની પર્યાયોનો કર્તા માનવામા ન આવે તો સિદ્ધત્વ વગેરે પર્યાયોની કચારેય પણ ઉત્પત્તિ ન થઈ શકવાને કારણે તેનો અભાવ જ માનવો પડે હવે બે આયુષ્યો એક જ સમયે કરવાના વિષયનું વિશેષ સ્પષ્ટીકરણ કરવા માટે સૂત્રકાર કહે છે કે (તં જહા) અન્ય ધર્મોંઓના કથનાનુસાર એક જ સમયે એક જ જીવ બે આયુષ્યનો બંધ આ રીતે કરે છે—(ઇહમવિયાઉયં ચ પરમવિયાઉયં ચ) એક આ જીવ સંબંધી આયુષ્યનો અને બીજો પરલવ સંબંધી આયુષ્યનો બંધ (જં સમયં ઇહમવિયા યં

પયન્તિ, તપપતિદ્વારેણ 'એવ પરુવેસિ' એવ પ્રરૂપયન્તિ, પ્રરૂપણા કુર્ષન્તિ મેદ
 કથનતઃ, કિમિત્યાહ-એવ સ્વલ્લુ એગે જીવે 'એવ સ્વલ્લુ એકો જીવઃ' 'એગેણ સમ
 પર્ણ' એકેન સમયન 'દો આઝયાઈ' દો આયુષી, આયુર્દય 'પકરેઈ' પ્રકરોતિ
 =વળ્નાતિ, જીવો નામ સ્વપર્યાય સમૂહરૂપઃ સ ચ પર્યાયસમુદાયાત્મકો જીવો
 યદા એકમાયુઃપર્યાયં કરોતિ તદાઽન્યમપિ પર્યાય કરોત્યેવ સ્વપર્યાયત્વાવિશેષાત્
 જ્ઞાનસમ્યક્ત્વાદિપર્યાયવત્ સ્વપર્યાયસ્ય કર્તા જીવ એવેતિ સ્વીકર્તૃભ્યમેવ અન્યથા

નાન્તર મેં વિપરીતરૂપતા દિશ્વામે કે નિમિત્ત સૂત્રકાર કહતે હૈં—

‘અળ્લ ઇત્થિયા ણં મંતે !’ ઇત્યાદિ ।

ટીકાર્થ—(અળ્લ ઇત્થિયા ણં મંતે!) હે મદન્ત! અન્યપૂર્થિકજન-દૂસરે
 તીર્થિકજન (એવ આહ્વસંતિ) હસ પ્રકાર સે સામાન્યરૂપ સે કહતે હૈં
 (એવ આસતિ) હસ પ્રકાર સે વિશેષરૂપ સે કહતે હૈં । (એવ પળ્લવેતિ)
 (યુક્તિયો દ્વારા હસ પ્રકાર સે સમજાતે હૈં) (મેદોં કે કથનપૂર્વક વે હસ
 પ્રકાર સે પ્રરૂપણા કરતે હૈં—(એવ સ્વલ્લુ) કિ—(એગે જીવે એગેણ સમપર્ણ)
 એક જીવ એક સમય મેં (દો આઝયાઈ) દો આયુષોં કા (પકરેઈ)
 પંથ કરતા હૈં । હસ વિષય મેં ઠનકા એસા કહના હૈં કિ—જીવ જો હૈં
 વહ અપની પર્યાયોં કા એક સમૂહરૂપ હૈં । અત વહ પર્યાયસમૂહરૂપ જીવ
 જિસ સમય એક આયુરૂપ પર્યાય કો કરતા હૈં, ઠસી સમય વહ દૂસરી
 બી આયુરૂપ પર્યાય કો કરતા હી હૈં । કયોં કિ સ્વપર્યાયત્વ કી ઠસમેં
 અવિશેષતા હૈં । જ્ઞાન સમ્યક્ત્વ આદિ સ્વપર્યાય કો તરહ । તાત્પર્ય કહને

વિપરીતતા બતાવવાને માટે સૂત્રકાર સૂત્ર કહે છે

ટીકાર્થ— અળ્લ ઇત્થિયા ણં મંતે !’ ઇત્યાદિ

(અળ્લ ઇત્થિયા ણં મંતે!) હે મદન્ત! અન્ય પૂર્થિકજન-અન્ય તીર્થિક
 અન્ય મતને માનનારા લોકો (એવ આહ્વસંતિ) આ પ્રમાણે સામાન્ય રીતે
 કહે છે (એવ આસતિ) આ પ્રમાણે વિશેષરૂપે કહે છે, (એવ પળ્લવેતિ)
 યુક્તિયો વડે આ પ્રમાણે સમજાવે છે (એવ પરુવેસિ) લોકોના કથન પૂર્વક
 આ પ્રમાણે પ્રરૂપણા કરે છે કે—(એવ સ્વલ્લુ એગે જીવે એગેણ સમપર્ણ દો આઝ
 યાઈ પકરેઈ) એક જીવ એક જ સમયે બે આયુષ્યનો પંથ બાંધે છે આ
 વિષયમા પરધર્મીઓની માન્યતા એવી છે કે—જીવ પોતાની પર્થિયાના એક
 સમૂહરૂપ છે તેથી પર્થિયાસમૂહરૂપ જીવ જે સમયે એક આયુષ્યરૂપ પર્થિયા કરે
 છે એ જ સમયે તે બીજી આયુષ્યરૂપ પર્થિયા પણ કરે છે કારણ કે જ્ઞાન
 સમ્યક્ત્વ વગેરે સવ પર્થિયાની જેમ તેનામા સ્વપર્થિયાપણાની અવિશેષતા છે

सिद्धत्वादिपर्यायाणामुत्पादाभाव एव स्यादिति भावः । 'त जहा' तद्यथा—'इह भवियाउयं च परभवियाउयं च' इहभवियाउयं च परभवियाउयं च, तदेव स्पष्टयति—'जं समयं' इत्यादि । 'जं समयं इहभवियाउयं पकरेइ' यं समयमा-

का यह है कि जिस तरह जीव आयुरूप पर्याय को करते समय ज्ञान सम्यक्त्व आदि अपनी पर्यायों करता है उस एक ही समय में उनके करने में कोई बाधा नहीं आती है वर्यों कि वे उसकी पर्यायें हैं इसी प्रकार से एक ही जीव एक ही समय में दो आयुक्रमों का बंध करता है । इसमें भी कोई बाधा नहीं आती है । कारण—जैसे एक आयुक्रमका करना उसकी पर्याय है उसी प्रकारसे उसी समयमें दूसरी आयुक्रमका करना उसकी पर्याय है । इस कथनसे यह बात समझमें आ जाती है कि जीव ही अपनी पर्यायों का कर्त्ता है । यदि जीव अपनी पर्यायों का कर्त्ता न माना जावे तो फिर सिद्धत्व आदि पर्यायों का कभी उत्पाद ही नहीं हो सकने के कारण उनका अभाव ही हो जावेगा । इस दो आयुओं को एक समय में करने की बात को अब और विशेषरूप से स्फुट करने के लिये उन्हीं की तरफ से सूत्रकार कहते हैं कि—(तं जहा) उनके मन्तव्यानुसार एक ही समयमें एक ही जीव इन दो आयुओंको इस प्रकार से करता है (इह भवियाउयं च परभवियाउयं च) एक इसभव सम्बन्धी आयुको और दूसरी परभव सम्बन्धी आयुको । (जं समयं इहभवियाउयं

तात्पर्यं એ છે કે જેવી રીતે જે સમયે જીવ, આયુષ્યરૂપ પર્યાયને કરતી વખતે જ્ઞાન સમ્યક્ત્વ વગેરે પોતાની પર્યાયોને પણ કરે છે—તો એ એક જ સમયે તે બંધી પર્યાયો કરવામા જેમ વાધો નહી, કારણ કે તે તેની પર્યાયો છે, એજ પ્રમાણે એક જ જીવ એક જ સમયે બે આયુષ્યનો પણ બંધ કરે છે એમ કરવામાં કોઈ મુશ્કેલી નહી. કારણ કે એક આયુષ્ય કર્મ કરવું એ જેમ તેની પર્યાય છે, એજ પ્રમાણે એજ સમયે બીજુ આયુષ્યકર્મ કરવું એ પણ તેની પર્યાય જ છે. આ કથનથી એ વાત સ્પષ્ટ સમજાય છે કે જીવ પોતે જ પોતાની પર્યાયોનો કર્તા છે. બે જીવને પોતાની પર્યાયોનો કર્તા માનવામા ન આવે તો સિદ્ધત્વ વગેરે પર્યાયોની કચારેય પણ ઉત્પત્તિ ન થઈ શકવાને કારણે તેનો અભાવ જ માનવો પડે હવે બે આયુષ્યો એક જ સમયે કરવાના વિષયનું વિશેષ સ્પષ્ટીકરણ કરવા માટે સૂત્રકાર કહે છે કે (તં જહા) અન્ય ધર્મોઓના કથનાનુસાર એક જ સમયે એક જ જીવ બે આયુષ્યનો બંધ આ રીતે કરે છે—(इहभवियाउयं च परभवियाउयं च) એક આ ભવ સંબંધી આયુષ્યનો અને બીજો પરભવ સંબંધી આયુષ્યનો બંધ (જં સમયં इहभविया यं

મિત્ય યસ્મિન્ સમયં હત્યર્થે હ્રમવિકાયુષ્ક પ્રકરોતિ-વધ્નાતિ, 'તં સમય પર મવિયાઠયં પકરેહ' ત સમયમામિત્ય તસ્મિન્ સમયે હત્યર્થઃ પરમવિકાયુષ્ક પ્રકરોતિ, તથા 'અ સમયં પરમવિયાઠયં પકરેહ' ય સમયમામિત્ય પરમવિકાયુષ્ક પ્રકરોતિ 'ત સમય હ્રમ મવિયાઠયં પકરેહ' ત સમયમ્ હ્રમવિકાયુષ્ક પ્રકરોતિ, હ્રમ મવો વર્તમાનમવો યસ્મિન્ આયુષિ વર્ષતે ફલરૂપણ તત્ હ્રમવિકાયુષ્ક, એવ પરમવઃ આગામિમવો યસ્મિન્ આયુષિ ફલતથા વર્ષતે તત્ પરમવાયુષ્કમ્ । આમ્યા સુધ્રામ્યામ્ હ્રમવાયુષ્કરણસમયે પરમવાયુઃકરણં નિયમિતમ્, એવં વર મવાયુ કરણસમયે હ્રમવાયુઃકરણ ચ નિયમિતમ્ એવં સૂમદ્રયેન એકસમપદ્ય

પગરેહ, તં સમયં પરમવિયાઠયં પકરેહ અ સમય પરમવિયાઠય પકરેહ, તં સમયં હ્રમવિયાઠયં પકરેહ) જિસ સમય જીવ હસ મવ સમ્યન્ધી આયુ કા વધ કરતા હૈ ઉસી સમય મૈં વહ પરમવ સમ્યન્ધી આયુ કા વંધ કરતા હૈ । ઔર જિસ સમય મૈં વહ હસ મવ સમ્યન્ધી આયુ કા વંધ કરતા હૈ । ઉસી સમય મૈં વહ પરમવ સમ્યન્ધી આયુકા વંધ કરતા હૈ । જિસ આયુ કે ફલ સ્વરૂપ યહ ચાલુ મવ હૈ વહ આયુ હ્રમવિક આયુ હૈ ઔર આગામી મવ જિસ આયુ કે હોને પર ફલરૂપ સે વર્તતા હૈ વહ પરમવાયુ હૈ । इन दो सूत्रों द्वारा यह नियमित किया गया कि ह्रम मव आयु के करने के समय में परमव की आयु का करना नियमित है और परमवीय आयु के करने के समय ह्रमवीय आयु का करना नियमित है । इस तरह इन दो सूत्रों द्वारा दो आयु एक ही समय में किया जाता है इस प्रकार से कहकर अब यह प्रकट किया जाता है

પગરેહ, તં સમય પરમાવિયાઠય પગરેહ અ સમય પરમવિયાઠય પગરેહ, ત સમય હ્રમવિયાઠય પગરેહ) જે સમયે છવ આ ભવ સબંધી આયુષ્યનો બધ બાપિ છે તે જ સમયે પરભવ સબંધી આયુષ્યનો બધ પશુ બાપિ છે જે સમયે તે પરભવ સબંધી આયુષ્યનો બધ બાપિ છે એજ સમયે આ ભવ સબંધી આયુષ્યનો બધ પશુ બાપિ છે જે આયુષ્યના ફળસ્વરૂપ આ ચાલુ ભવ છે, તે ઉદ્ભવિક આયુષ્ય કહેવાય છે અને આગામી (હવે પછીનો) ભવ, જે આયુષ્યના ફળસ્વરૂપે ઉદ્ભવે છે તે પરભવાયુ છે આ બન્ને સૂત્રો વડે જે નિવમ બતાવવામા આવ્યો છે તે આ ભવના આયુષ્યને કરવાના સમયમા પરભવાયુષ્ય કરવાનું નિયમિત છે, અને પરભવના આયુષ્ય ને કરવાને સમયમા ઉદ્ભવીય આયુષ્ય કરવાનું નિયમિત છે આ રીતે આ બન્ને સૂત્રો વડે જ આયુષ્ય એજ સમયે કરવામા આવે છે એવુ કહન કરીને હવે જે વાત પ્રકટ કરવામા

યતાં દ્વયોરાયુપોઃ કથયિત્વા દ્વયોરાયુપોરેકક્રિયાકાર્યતામાહ—‘ઈહભવિયા-
 ડયસ્સે’ ત્યાદિ, ‘ઈહ ભવિયાડયરસ પકરણયા’ ‘ઈહભવાયુપઃ પ્રકરણતયા
 કરણેન ‘પરમવિયાડયં પકરેઈ’ પરમવાયુષ્કં પ્રકરોતિ, ‘પરમવિયાડયસ્સ પકર-
 ણયા’ પરમવાયુષ્કસ્ય પ્રકરણતયા કરણેન ‘ઈહભવિયાડયં પકરેઈ’ ઇહભવિ-
 કાયુષ્કં પ્રકરોતિ, પરમવસંવન્ધ્યાયુપઃ કરણસમયે એવ એતદ્ભવસંવન્ધ્યાયુપો વન્ધનં
 કરોતિ । પ્રકરણાર્થં નિગમયન્નાહ—‘એવં સ્વલ્લુ એગે જીવે’ એવં સ્વલ્લુ એકો જીવઃ
 ‘એગેણં સમણં’ એકેન સમયેન ‘દો આડયાઈ પકરેઈ’ દ્વે આયુપી પ્રકરોતિ,
 ‘તં જહા’ તદ્યથા—‘ઈહભવિયાડયં ચ પરમવિયાડયં ચ’ ઇહભવિકાયુષ્કં ચ
 પરમવિકાયુષ્કં ચ, ‘સે કહમેયં મંતે એવં’ તત્કથમેતત્ કિમેતત્ ભદન્ત ! એવમ્=
 એવં રૂપેનાસ્તિ તત્કથનં કિં સત્યમિતિ પ્રશ્ન । હે ભદન્ત ! એકસમયે આયુપો-
 દ્વયસ્ય કરણં કિં સંભવતીતિ ગૌતમસ્ય પ્રશ્નઃ । ભગવાનાહ—‘ગોયમે’ ત્યાદિ ।

કિં ચે દોનોં આયુ એક હી ક્રિયા સે કી જાલી હૈં—(ઈહભવિયાડયસ્સ પક-
 રણયા’ પરમવિયાડયં પકરેઈ, પરમવિયાડયસ્સ પકરણયા’ ઇહભવિયાડયં
 પકરેઈ) જીવ ઇહ સમ્બન્ધી આયુ કો કર કે પરમવ સમ્બન્ધી આયુ
 કો કરતા હૈ । ઓર પરમવ સંબંધી આયુ કે કરને સે ઇહમવ સંબંધી
 આયુ કો કરતા હૈ । (એવં સ્વલ્લુ એગે જીવે એગેણં સમણં દો આડયાઈ
 પકરેઈ) ઇસ તરહ સે એક જીવ એક હી સમય મેં દો આયુઓં કા વંધ
 કરતા હૈ । (તં જહા—ઈહ ભવિયાડયં ચ પરમવિયાડયં ચ) એક ઇસ મવ
 સમ્બન્ધી આયુ કા દૂસરી પરમવ સમ્બન્ધી આયુ કા । (સે કહમેયં મંતે !
 એવં) સો હે ભદન્ત ! એસા યહ કથન કયા ડન લોગોં કા સત્ય હૈ ?
 અર્થાત્—એક સમય મેં દો આયુ કા વંધ કરના કયા સંભવતા હૈ ? એસા

છે કે એ બન્ને આયુ એક જ ક્રિયાથી કરાય છે—(ઈહભવિયાડયસ્સ પકરણયા’
 પરમવિયાડયં પકરેઈ, પરમવિયાડયસ્સ પકરણયા’ ઇહભવિયાડયં પકરેઈ) એવ
 આ ભવ સંબંધી આયુષ્ય કરવાથી પરભવ સંબંધી આયુષ્ય કરે છે.
 અને પરભવ સંબંધી આયુષ્ય કરવાથી આ ભવ સંબંધી આયુષ્ય કરે છે
 (એવં સ્વલ્લુ એગે જીવે એગેણં સમણં દો આડયાઈ પકરેઈ) આ રીતે એક જ
 એવ એક જ સમયે એ આયુષ્યનો બંધ કરે છે (તં જહા—ઈહભવિયાડયં ચ
 પરમવિયાડયં ચ) તે એ આયુષ્ય આ ડમાણે છે—(૧) આ ભવસંબંધી આયુ
 ય અને (૨) પરભવ સંબંધી આયુષ્ય (સે કહમેયં મંતે ! એવં) તેા હે ભગ-
 વન્ ! શુ એ દોડોની ઉપરની માન્યતા સાચી છે ? એટલે કે એક સમયે એ
 આયુષ્યનો બંધ બાધવાનું સંભવી શકે ? એવો પ્રશ્ન ગૌતમ સ્વામી પૂછે છે.

‘ગોયમા’ હે ગૌતમ ! ‘જ ણ તે અન્નઝરિયા’ યત્ સન્નુ અન્યયુધિકા ‘એવં આરુક્ષંતિ જાવ પરમચિયાડય ચ’ એવાગ્યાન્તિ યાવત્ પરમચિયાપુર્કં ચ, ત્થ યાવત્પદેન માપન્તે પ્રજ્ઞાપયન્તિ પ્રરુપયન્તિ, एको जीव एरुसमये द्वे आयुपी प्रकरोति इह भविकायुष्कं चेत्त्यादीना संग्रह । ‘जे ते एव आहसु मिच्छा त एवं आहंसु’ ये ते एवमुक्तवन्तो मिथ्या ते एवमुक्तवन्त, परमतस्य मिथ्यास्य चैवम्- एकेनाध्यवसायन परस्परविरुद्धयोरायुषोर्बिधासमगात्, यदप्युक्तं परतीर्थिकै- पर्यायान्तरफरणे पर्यायान्तरं करोति स्वपर्यायत्वात्, तच्च सम्पक् सिद्धत्वपर्याय

પહ ગૌતમ કા પ્રશ્ન છે—(ગોયમા ! જ ણ તે અન્નઝરિયા એવં આરુક્ષંતિ જાવ પરમચિયાડય ચ) હે ગૌતમ ! જો એ અન્યયુધિકા જન પેસા કહતે છે કે એક જીવ એક જી સમય મેં દો આયુ કા યંચ કરતા હૈ—એક હસ ભવ સમ્પન્ની આયુ કા ઓર દૂસરી પરમચસમ્પન્ની આયુ કા, સો (જે તે એવં આહસુ મિચ્છા તે એવં આહસુ) જો ઊન્હોં ને પેસા કહા હૈ વહ ઊન્હોં ને મિથ્યા કહા હૈ । “આરુક્ષંતિ જાવ પરમચિયાડય ચ” યહાં જો “યાવત્” પદ આયા હૈ વહ પૂર્વ મેં કથિત “માપન્તે, પ્રજ્ઞાપયન્તિ, પ્રરુપયન્તિ, એકો જીવ એક સમયે દ્વે આયુપી પ્રકરોતિ, હિહ ભવિકાયુષ્કં ચ” ઇત્યાદિ પાઠ કા સંગ્રહક હૈ ।

“ઊન્હોં ને જો પેસા કહા હૈ સો મિથ્યા કહા હૈ” અથ યહી વાત સ્પષ્ટ થી જાતી હૈ—એક જી અધ્યવસાય સે પરસ્પર વિરુદ્ધ દો આયુ કા હોના અસંભવ હૈ । તથા પેસા જો અની ૨ ઊન્હોં ને કહા હૈ કે અપની પર્યાય હોને કે કારણ જીવ સમ્પક્ત્વ ઓર જ્ઞાન થી તરહ એક પર્યાય કે કરને મેં દૂસરી પર્યાય કો કરતા હૈ સો પેસા કહના થી ઇતિ

(ગોયમા ! જ ણ તે અન્નઝરિયા એવં આરુક્ષંતિ જાવ પરમચિયાડય ચ) હે ગૌતમ ! અન્ય તીર્થિકા જોણુ કે કહે છે કે જોક જ સમયે (૧) આ ભવ સંભળી આયુષ્યને અને (૨) પરભવ સંભળી આયુષ્યને—જોમ ને આયુષ્યને બંધ બાંધે છે (જે તે એવં આહસુ મિચ્છા તે એવં આહસુ) તેમણે જોણુ કે કહેલ છે તે મિથ્યા છે, સત્ય નથી “આરુક્ષંતિ જાવ પરમચિયાડય ચ” જાદી કે “યાવત્” પદ છે તેનાથી પૂવોક્ત માપન્તે, પ્રજ્ઞાપયન્તિ, પ્રરુપયન્તિ, એકો જીવ એક સમયે દ્વે આયુપી પ્રકરોતિ હિહ ભવિકાયુષ્કં ચ” ઇત્યાદિ પાઠનો સંગ્રહ કરાયો છે

‘અન્ય તીર્થિકાજો કે કહ્યું છે તે મિથ્યા છે’ જોક વાતનું પ્રતિપાદન હવે કરવામાં આવે છે—જોક જ અધ્યવસાયથી પરસ્પર વિરુદ્ધ જોવા ને આયુષ્યને બંધ થવો અસંભવિત છે તેથી પોતાની પર્યાય કોવાને કારણે એવા સમ્પક્ત્વ અને જ્ઞાનથી આરુક્ષંતિ પર્યાય કરવામાં બીજા પર્યાય કરે છે” જોણુ

યતાં દ્વયોરાયુષોઃ કથયિત્વા દ્વયોરાયુષોરેકક્રિયાકાર્યતામાહ—‘ઇહમવિયા-
 યસ્સે’ ત્યાદિ, ‘ઇહ મવિયાયસ્સ પકરણયા’ ઇહમવાયુષઃ પ્રકરણતયા
 કરણેન ‘પરમવિયાયયં પકરેહ’ પરમવાયુષ્કં પ્રકરોતિ, ‘પરમવિયાયસ્સ પકર-
 ણયા’ પરમવાયુષ્કસ્ય પ્રકરણતયા કરણેન ‘ઇહમવિયાયયં પકરેહ’ ઇહમવિ-
 કાયુષ્કં પ્રકરોતિ, પરમવસંવન્ધ્યાયુષ કરણસમયે એવ એતદ્ભવસંવન્ધ્યાયુષો વન્ધનં
 કરોતિ । પ્રકરણાર્થે નિગમયન્નાહ—‘એવં સ્વલ્લુ એગે જીવે’ એવં સ્વલ્લુ એકો જીવઃ
 ‘એગેણં સમણં’ એકેન સમયેન ‘દો આડયાઈ પકરેહ’ દ્વે આયુષી પ્રકરોતિ,
 ‘તં જહા’ તથથા—‘ઇહમવિયાયયં ચ પરમવિયાયયં ચ’ ઇહમવિકાયુષ્કં ચ
 પરમવિકાયુષ્કં ચ, ‘સે કહમેયં મંતે એવં’ તત્કથમેતત્ કિમેતત્ ભદન્ત ! એવમ્=
 એવં રૂપેણાસ્તિ તત્કથનં કિં સત્યમિતિ પ્રશ્નઃ । હે ભદન્ત ! એકસમયે આયુષો-
 દ્વયસ્ય કરણં કિં સંભવતીતિ ગૌતમસ્ય પ્રશ્નઃ । મગવાનાહ—‘ગોયમે’ ત્યાદિ ।

કિં યે દોનોં આયુ એક હી ક્રિયા સે કી જાતી હૈં—(ઇહમવિયાયયસ્સ પક-
 રણયા પરમવિયાયયં પકરેહ, પરમવિયાયસ્સ પકરણયા ઇહમવિયાયયં
 પકરેહ) જીવ ઇહ સમ્બન્ધી આયુ કો કર કે પરમવ સમ્બન્ધી આયુ
 કો કરતા હૈ । ઓર પરમવ સંબંધી આયુ કે કરને સે ઇહમવ સંબંધી
 આયુ કો કરતા હૈ । (એવં સ્વલ્લુ એગે જીવે એગેણં સમણં દો આડયાઈ
 પકરેહ) હસ તરહ સે એક જીવ એક હી સમય મેં દો આયુઓં કા વંધ
 કરતા હૈ । (તં જહા—ઇહ મવિયાયયં ચ પરમવિયાયયં ચ) એક હસ મવ
 સમ્બન્ધી આયુ કા દૂસરી પરમવ સમ્બન્ધી આયુ કા । (સે કહમેયં મંતે !
 એવં) સો હે ભદન્ત ! એસા યહ કથન ક્યા ડન લોગોં કા સત્ય હૈ ?
 અર્થાત્—એક સમય મેં દો આયુ કા વંધ કરના ક્યા સંભવતા હૈ ? એસા

છે કે એ બન્ને આયુ એક જ ક્રિયાથી કરાય છે—(ઇહમવિયાયયસ્સ પકરણયા
 પરમવિયાયય પકરેહ, પરમવિયાયસ્સ પકરણયા ઇહમવિયાયયં પકરેહ) એવ
 આ ભવ સંબંધી આયુષ્ય કરવાથી પરમવ સંબંધી આયુષ્ય કરે છે
 અને પરમવ સંબંધી આયુષ્ય કરવાથી આ ભવ સંબંધી આયુષ્ય કરે છે
 (એવં સ્વલ્લુ એગે જીવે એગેણં સમણં દો આડયાઈ પકરેહ) આ રીતે એક જ
 એવ એક જ સમયે બે આયુષ્યનો બંધ કરે છે (તં જહા—ઇહમવિયાયયં ચ
 પરમવિયાયયં ચ) તે બે આયુષ્ય આ પ્રમાણે છે—(૧) આ ભવસંબંધી આયુ
 ષ્ય અને (૨) પરમવ સંબંધી આયુષ્ય. (સે કહમેયં મંતે ! એવ) તે હે ભગ-
 વન્ ! શું એ દોઢોની ઉપરની માન્યતા સાચી છે ? એટલે કે એક સમયે બે
 આયુષ્યનો બંધ બાધવાનું સંભવી શકે ? એવો પ્રશ્ન ગૌતમ સ્વામી પૂછે છે.

મકરોત્યપેતિ માવઃ । અન્યયુથિકમતસ્ય મિથ્યાત્વમુક્ત્વાસ્વકીયમતં દર્શયન્ના-
 ‘અહ પુન’ इत्यादि । ‘अहं पुन गीयमा एव आइस्त्वामि आव परुवेमि’ मई पुन
 गीतम। एवमास्यामि यावत् प्ररूपयामि इह यावत्पदेन—‘एव भासेमि एव पमवेमि’
 इत्यनयो संग्रहः, तत्र—आस्यामि=हययामि सामान्येन, भाप=पश्चिम विशेषरूपेण,
 प्रज्ञापयामि=हेतुदृष्टांतेन प्ररूपयामि=मेदकयनेन । तदवाह—‘एव खलु एमे
 जीवे एगण समएण एग आठयं पफरइ’ एवं खलु एको जीव एकेन समयेनैक
 मायुष्कं मकरोति ‘त जहा’ तद्यथा ‘इहमवियाउयं वा परमवियाउय वा’

હી જીવ પરમવ અન્યની આયુ કા વધ કર છેતા હે તો ફિર હન સત્કૃત્યો
 કે કરને કા ઓર સયમાધિક અનુષ્ઠાનોં કે સેવન કરને કા પ્રયોજન હી
 નિરર્થક હો જાતા હે । સો એસા જો વૂસરોં ને કહા હે સો ડનકા યહ
 “આયુર્બંધ કાલાદયગ્ર જ્ઞાતવ્યમ્” કથન આયુ કે વંધ કાલ કે સિવાય
 કે સમય કા અર્થાત્ અપર્યાપ્ત અવસ્થા કી અપેક્ષા સે જાનના ચાહિયે ।
 નહીં તો ફિર યહ કથન અન્યતીર્થિકજનોં કા અસત્ય નહીં ઠહરાપા જા
 સકતા જો કે એસા કહતે હેં કિ જીવ આયુ કે વધકાલ મેં હમ મ્બ
 સમ્યગ્ની આયુ કા વેદન કરતા હે અર્થાત્ મોગતા હે ઓર પરમવ સમ્ય
 ગ્ની આયુ કા વધ કરતા હે । કારણ કિ જૈનસિદ્ધાન્ત કી મી યહી માન્યતા
 હે । હસી તરહ અન્યતીર્થિકજનોં કે મત્ત કો અસમીચીન કહકર અપના
 હમ વિષય મેં કયા મન્તવ્ય હે સો દિશ્વાને કે મિથે સૂત્રકાર કહતે હે—

(અહ પુન ગોયયા । એવ આહ્વામિ આવ પરુવેમિ) હે ગૌતમ ।
 મેં મી હસ વિષય મેં એસા હી વહતા હેં યાવત્ પ્રરૂપણા કરતા હેં, કિ

બંધ બાંધી દેતો હોય તો તેને પછી ત્રત્કૃત્યો કસ્વાનુ અને સયમાધિની આસ-
 ધના કરવાનુ પ્રયોજન જ રહેતુ નથી યાયુવજ્ઞાવાદન્યગ્ર જ્ઞાતવ્યમ્” આયુ
 ને અન્ય મતવાદીઓનુ કથન ॥ તે આયુષ્યના બધકાળ સિવાયના સમયની
 ઊંટદે કે અપર્યાપ્ત અવસ્થાની અપેક્ષાએ સમજવુ નહીં તો અન્ય તીર્થિકોં
 “એવ આયુષ્યના બધ કાળે આ જાવ સબંધી આયુષ્યનુ વેદન કરે ઉ-સોત્રવે
 છે અને પરભવ સબંધી આયુષ્યનો બધ જાપે છે આ કથન અસત્ય કહી
 શકાયે નહીં કારણ કે જૈનસિદ્ધાન્તની પત્રુ કો જ માન્યતા ॥ આ રીતે
 અન્ય તીર્થિકોના મતને મિથ્યા-અબ્ધીકાર્ય-કટ્ટીને આ વિષયમા પેતાનુ થું
 મન્તવ્ય છે તે બતાવવ ને માટે સૂત્રકાર કહે છે કે—

(અહ પુન ગોયમા । એવ આહ્વામિ આવ પરુવેમિ) હે ગૌતમ । હું
 આ વિષયમા જ્ઞેતુ ૬, ૭ યાવત્ પ્રરૂપણા ૧૩ ૧૩ કે (એગ જીવે એગ

કરણે સંસારિત્વપર્યાયરય તત્રાકરણાત્ ઇતિ, અન્યે તુ એવ કથયન્તિ—“ ઇહમવાયુ-
ર્યદા પ્રકરોતિ વેદયતે તદા પરમવાયુઃ પ્રકરોતિ વધ્નાતિ, ઇહમવાયુપ ઉપભોગેન
પરમવસંવન્ધિ આયુર્વધ્નાતીત્યર્થઃ, તન્મતં મિથ્યા, યતો જાતમાત્રો જીવ ઇહ
મવાયુર્વેદયતે તસ્મિન્નેવ સમયે યદિ પરમવસંવન્ધ્યાયુપો વન્ધનં કૃત તદા દાન-
શીલતપોભાવાનામાચરણં સંયમાદ્યાચરણં ચ નિરર્થકં પ્રસજ્યેત ” એતત્ આયુર્વન્ધ-
કાલાદન્યત્ર જ્ઞાતવ્યમન્યથા — આયુપોવન્ધકાલે ઇહમવાયુર્વેદયતે પરમવાયુસ્તુ

નહીં હૈ—કારણ કિ આત્મા જવ સિદ્ધત્વ પર્યાય કો કરતા હૈ તવ વહ ઉસ
સમય સંસારિત્વ પર્યાય કો નહીં કરતા હૈ । દૂસરે તો એસા કહતે હૈ—
“ ઇસ ભવ સમ્બન્ધી આયુ કો જવ જીવ “ પ્રકરોતિ ” વેદતા હૈ । તવ
વહ પરમવ સમ્બન્ધી આયુ કા વંધ કરતા હૈ—ઇસકા તાત્પર્ય યહ હૈ કિ
ઇસ ભવ સમ્બન્ધી આયુ કે ઉપભોગ સે જીવ પરમવ સમ્બન્ધી કો વાંધતા
હૈ—સો એસા મી અન્યતીર્થિકોં કા કથન ઠીક નહીં હૈ । ક્યોં કિ જાત-
માત્ર (જન્મતે હી) જીવ ઇસ ભવ સમ્બન્ધી આયુ કા વેદન કરને લગતા
હૈ સો યદિ વહ ઉસી સમય મેં પરમવ સમ્બન્ધી આયુ કા ઉસને વંધ
કા લિયા હૈ એસા માન લિયા જાવે તો દાન, શીલ, તપ ઓર ભાવ ઇનકા
આચરણ કરના તથા સયમ આદિ અનુષ્ઠાનોં કા આચરણ કરના યે સવ
નિરર્થક હો જાવેંગે । તાત્પર્ય કહને કા યહ હૈ કિ જો જીવ ઉત્પન્ન હોને
કે બાદ સમર્થ હોને પર દાનાદિક સત્કૃત્યોં કા ઓર સંયમાદિક અનુ-
ષ્ઠાનોં કા આચરણ ઇસલિયે તો કરતા કિ ઉસે આગે ચલકર ઉસી ભવ
મેં પરમવ સમ્બન્ધી હુઆયુ કા વંધ હો જાવે । પરન્તુ યદિ ઉત્પન્ન હોતે

તેમનુ ને કથન છે તે પણ યોગ્ય નથી—કારણ કે આત્મા, જ્યારે સિદ્ધત્વ પર્યાય
પ્રાપ્ત કરે છે ત્યારે તે એજ સમયે સંસારિત્વ પર્યાય ધારણ કરતો નથી વળી
કેટલાક અન્ય તીર્થિકોની માન્યતા એવી છે કે—“ જ્યારે જ્યારે જીવ આ લવ
સંબધી આયુષ્યનુ વેદન કરે છે ત્યારે ત્યારે તે પરલવ સંબધી આયુષ્યનો બંધ
બાંધે છે ” આ માન્યતા પણ ઘરાબર બધેસતી નથી કારણ કે જન્મ થતાજ જીવ,
આ લવના આયુષ્યનુ વેદન કરવા માટે છે, ને આત્મા એજ સમયે પરલવના
આયુષ્યનો બંધ બાંધે છે એવું માનવામા આવે તો દાન, શીલ, તપ અને
ભાવનાનુ આચરણ તથા સયમાદિનુ સેવન કરવુ વગેરે નિરર્થક જ થશે તાત્પર્ય
એ છે કે જીવ ઉત્પન્ન થયા પછી જ્યારે તેમનામાં યોગ્ય સામર્થ્ય આવે છે
ત્યારે તે દાનાદિ સત્કૃત્યો અને સયમ વગેરે અનુષ્ઠાનોનું આચરણ કરે છે અને
તે એટલા માટે જ કરે છે કે આગળ જતા એજ લવમા પરલવ સંબધી
શુભ આયુષ્યનો બંધ બંધાય ને જન્મ થતા જ જીવ, પરલવના આયુષ્યનો

મિકાયુક્તસ્ય પ્રકરણતયા ' જો હ્રમચિયાડયં પકરેહ ' નો હ્રમચિકાયુક્ત પ્રકરોતિ, ' એવ સ્વલુ ઇગે જીવે ઇગેણ સમયેણ ઇગ આડય પકરેહ ' એવ સ્વલુ ઇગે જીવે એકેન સમયેન એકમાયુક્તં પ્રકરોતિ, ' ત જહા ' તથયા—' હ્રમચિયાડયં વા પરમચિયાડયં વા ' હ્રમચિકાયુક્ત વા પરમચિકાયુક્ત વા, એકેન જીવેનેકદા એકમેવાયુર્ધ્વમ્યસે, એતચ્છનસમધિ વા પરમધસંમન્ધિ વા, ન સુ આયુર્ધ્વમેકદા મચ્છીતિ । ' સેવં મંતે સંધ મત ' તદેવ મદંત । તદેવં મદન્ત ! આયુક્તકર્મણઃ સપાદનચિપયે યથેવાનુપ્રિયેણ કથિત નત્ તથૈવ સર્વથૈવ સમ્પ્રગિતિ, ' તિ મગધં ગોયમે

પરમચિયાડય પકરેહ) જીવ હ્રમ મધ સમ્પન્ધી આયુક્ત કો નહીં કર છેતા હૈ । (એવ સ્વલુ ઇગે જીવે ઇગેણ સમયેણ ઇગ આડયં પકરેહ) હ્રમ તરહ એક જીવ એક સમય મેં એક હી આયુક્ત કો કરતા હૈ (તં જહા—હ્રમ મચિયાડયં વા પરમચિયાડયં વા) યા તો વહ હ્રમ મધ કા આયુષ્ય કરતા હૈ અથવા પરમધ કા આયુષ્ય કરતા હૈ । હ્રમ સપ કથન કા સાર યહી હૈ કિ એક જીવ એક સમય મેં એક હી આયુ કો ધાંધતા હૈ—યા તો વહ હ્રમ મધ સમ્પન્ધી આયુ કો ધાંધતા હૈ યા વહ પરમધ સમ્પન્ધી આયુ કો ધાંધતા હૈ । એક સાધ વહવો આયુ કા ધંધ નહીં કરતા । (સેવં મંતે ! સેવં મંતે ! તિ મગધં ગોયમે જાય વિહરહ) હૈ મદન્ત ! આપ દેવાનુપ્રિય ને જો આયુક્ત કા સપાદન કે ધિવધ મેં કહા હૈ વહ ધેમા હી હૈ—અર્થાત્—“ સર્વથા હી સત્ય હૈ સર્વથા હી સત્ય હી હૈ ” એસા કહકર મગધાન્ ગૌતમ પ્રહુ કો વન્દના

આયુષ્યકર્મણઃ બધ બાધતો નથી (પરમચિયાડયસ પકરણયા) અને પરમધ સંબધી આયુષ્યકર્મણઃ બધ બાધી સેવાધી (જો હ્રમચિયાડય પકરેહ) આ બધસંબધી આયુષ્યકર્મણઃ બધ બાધી હેતો નથી (એવ સ્વલુ ઇગે જીવે ઇગેણ સમયેણ ઇગ આડય પકરેહ) આ રીતે એક એવ એક જ સમયે એકજ આયુષ્યકર્મણઃ બધ બાધે છે (ત જહા—હ્રમચિયાડય વા પરમચિયાડય વા) તે એ રીતે કે કા તો આ બધના આયુષ્યનો બધ બાધે છે અને કાંતો તે પર બધના આયુષ્યનો બધ બાધે છે આ તમામ કથનનો સાવાધ એ છે કે એવ એક સમયે એક જ આયુષ્યનો બધ બાધે છે—કાં તો આ બધસંબધી આયુષ્યનો બધ બાધે છે અને કાંતો પરબધ સંબધી આયુષ્યનો બધ બાધે છે. પરંતુ એક સાથે બે આયુષ્યનો બધ બાધતો નથી (સેવં મંતે ! સેવં મંતે ! તિ મગધં ગોયમે જાય વિહરહ) “ ભગવન્ ! આપે આયુષ્યકર્મણઃ વિવધર્માં એ પ્રતિપાદન કર્યું છે તે સવથા સત્ય જ છે—એમાં શકાને સ્થાન જ નથી. આ પ્રમાણે કહીને ગૌતમ સ્વામીએ મહાવીર પ્રહુને વહના નમસ્કાર કર્યા

इहभविष्यायुष्कं वा परभविष्यायुष्कं वा 'जं समयं इहभविष्यायुषं पकरेइ' यं समयमिहभविष्यायुष्कं प्रकरोति 'णो त समयं परभविष्यायुषं पकरेइ' नो त समयं परभविष्यायुष्कं प्रकरोति । 'जं समयं परभविष्यायुषं पकरेइ णो तं समयं इहभविष्यायुषं पकरेइ' यं समयं परभविष्यायुष्कं प्रकरोति न तं समयमिहभविष्यायुष्कं प्रकरोति, यदा जीव एतद्भवसंबन्धि आयुष्कर्म करोति तदा न परभवसंबन्धि आयुष्कं करोति, तथा यदा परभवसंबन्धि आयुष्कं करोति । तदा न एतद्भवसंबन्धि आयुष्कर्म करोतीति भावः । यदि एकस्मिन्नेव समये द्वयोरपि बन्धनं भवेत्तदा संयमाद्याचरण निरर्थकं भवेदिति भावः । 'इह भविष्यायुषस्स पकरणयाए' इहभविष्यायुष्कस्य प्रकरणतया, करणेनेत्यर्थः, 'णो परभविष्यायुषं पकरेइ' नो परभविष्यायुष्कं प्रकरोति, 'परभविष्यायुषस्स पकरणयाए' परभ-

(एगे जीवे एगेणं समणं एगं आउयं पकरेइ, तं जहा—इह भविष्यायुषं वा परभविष्यायुषं वा) एक जीव एक समय में एक आयु को करता है—वह इस प्रकार से—या तो वह इस भवसंबन्धी आयुष्य को करे या परभव सम्बन्धी आयुष्य को करे । एक समय में दो आयुओं को नहीं करता है । (ज समयं इह भविष्यायुषं पकरेइ) जिस समय में इस भव सम्बन्धी आयुको वह करता है (णो तं समयं परभविष्यायुषं पकरेइ) उस समय में वह परभवसम्बन्धी आयु को नहीं करता है । यदि एक समय में दो आयु कर्म का बंध हो तो संयमादिक का आचरण करना निरर्थक हो जावेगा । तथा—(इहभविष्यायुषस्स पकरणयाए णो परभविष्यायुषं पकरेइ) इस भव सम्बन्धी आयु के कर लेने से जीव परभव सम्बन्धी आयु कर्म को नहीं कर लेता है । (परभविष्यायुषस्स पकरणयाए) तथा परभव सम्बन्धी आयुष्क के कर लेने से (णो इह

समण एग आउय पकरेइ, तं जहा—इह भविष्यायुषं वा परभविष्यायुषं वा)
 ओक एव ओक समये ओक ज आयुष्येनो णध णाधे छे—आ लवस णधी
 आयुष्येनो णध णाधे छे अथवा तो परलव स णधी आयुष्येनो णध णाधे
 छे—परतु ओक ज समये जे आयुष्येनो णध णाधतो नथी (ज समय इह
 भविष्यायुषं पकरेइ) जे समये एव आ लव स णधी आयुष्येनो णध णाधतो
 होय छे, (णो त समय परभविष्यायुषं पकरेइ) ते समये ते परलवस णधी
 आयुष्येनो णध णाधतो नथी जे ओक ज समये जे आयुष्येनो णध
 थतो होय तो समय वगेरेनु आचरण करवु नकासु थछ पडथी तेमज (इह
 भविष्यायुषस्स पकरणयाए णो परभविष्यायुषं पकरेइ) आ लव स णधी आयु-
 ष्येनो णध णाधी देवाधी (णो परभविष्यायुषं पकरेइ) एव, परलवस णधी

थेरा सजम न जाणति, थेरा सजमस्त अट्ट न जाणति,
 थेरा सवर न जाणति, थेरा सवरस्त अट्ट न जाणति, थेरा
 विवेग न जाणति, थेरा विवेगस्त अट्ट न जाणति, थेरा
 विउस्सग न जाणति, थेरा विउस्सग्गस्त अट्ट न जाणति ।
 तएण ते थेरा भगवतो कालासवेतिपुत्त अणगार एव
 वयासी-जाणामो ण अज्जा सामाइय, जाणामो णं अज्जो
 सामाइयस्त अट्ट जाव जाणामो णं अज्जो विउस्सग्गस्त
 अट्ट । तएण से कालासवेसिपुत्ते अणगारे ते थेरे भगवते
 एव वयासी, जइण अज्जा तुळ्ळे जाणह सामाइय, जाणह
 सामाइयस्त अट्ट, जाव जाणह विउस्सग्गस्त अट्ट किं मे
 अज्जो सामाइय, किं मे अज्जो सामाइयस्त अट्टे, जाव किं
 मे विउस्सग्गस्त अट्टे ? तएण थेरा भगवतो कालासवेसि
 यपुत्ते अणगार एव वयासी आयाणे अज्जो सामाइय, आयाणे
 अज्जो सामाइयस्त अट्टे, जाव विउस्सग्गस्त अट्टे । तएण
 से कालासवेसियपुत्ते अणगारे थेरे भगवते एव वयासी—
 जइ मे अज्जो आया सामाइय, आया सामाइस्त अट्टे, एव
 जाव आया विउस्सग्गस्त अट्टे, अवहहु कोहमाणमायालोमे
 किं अट्ट अज्जो गरहह । कालासवेसियपुत्त । सजमट्टयाप ।
 से भत्ते । किं गरहा सजमे, अगरहा सजमे ? । कालासवे
 सियपुत्त गरहा सजमे णो अगरहा सजम, गरहा वि य णं
 सव्व दोस पविणेइ, सव्व घालिय परिण्णाप, एव खु णे आया
 सजमे उवहिप भवइ, एव खु णे आया सजमे उवहिप भवइ ।

જાવ વિહરહ' ઇતિ ભગવાન્ ગૌતમો યાવદ્વિહરતિ, ભગવન્તં ચન્દિત્વા સંયમેન તપસા આત્માનં ભાવયમાનો વિહરતિસ્મેતિ ભાવઃ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

॥ ઇત્યન્યયૂથિકમતે પ્રશ્નોત્તરનિરૂપણપ્રકરણમ્ ॥

આર્યકાલાસ્યવેષિપુત્રાનગારપ્રકરણમ્—

અન્યયૂથિકપ્રસ્તાવાદેવેદં સૂત્રમાહ—‘તેણં કાલેણં’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—તેણં કાલેણં તેણં સમણં પાસાવચ્ચિજ્જે કાલા-
સવેસિયપુત્તે ણામં અણગારે જેણેવ થેરા ભગવંતો તેણેવ
ઉવાગચ્છહ ઉવાગચ્છિત્તા થેરે ભગવંતે એવં વયાસી—થેરા
સામાઙ્ગ્યં ન જાણંતિ, થેરા સામાઙ્ગ્યસ્સ અટ્ટં ન જાણંતિ, થેરા
પચ્ચક્ખાણં ન જાણંતિ, થેરા પચ્ચક્ખાણસ્સ અટ્ટં ન જાણંતિ,

નમસ્કાર કર વહાં સે સંયમ ઓર તપ સે અપની આત્મા કો ભાવિત
કરતે હુએ અપને સ્થાન પર આ ગયે । યહાં ઉત્તરસૂત્ર મેં જો “અહં પુણ
ગોયમા । એવં આહ્વક્ખામિ જાવ પરુવેમિ” યાવત્ પદ આયા હૈં ઉસસે
“એવં ભાસેમિ એવં પન્નવેમિ” ઇન દો ક્રિયાપદોં કા સંગ્રહ ક્રિયા ગયા
હૈં । સામાન્યરૂપ સે કથન કરના ઇસ્કા નામ આલ્યા હૈં । વિશેષરૂપ સે
કથન કરના ઇસ્કા નામ ભાષગ હૈં । હેતુ દૃષ્ટાન્ત દેકર અપને અભિમત
વિષય કા સમર્થન કરના ઇસ્કા નામ પ્રજ્ઞાપના હૈં । ભેદોં કે કથન સે
જો વિષય નિરૂપિત ક્રિયો જાતા હૈં ઉસકા નામ પ્રરૂપણા હૈં ॥ સૂ-૪ ॥

હસ પ્રકાર સે અન્યયૂથિકમત મેં પ્રશ્નોત્તરનિરૂપણ

કરને વાલા પ્રકરણ સમાપ્ત હુઆ ॥

વંદણા નમસ્કાર કરીને સયમ અને તપથી પોતાના આત્માને ભાવિત કરતા
પોતાને સ્થાને ગયા અહીં ઉત્તર સૂત્રમા બે “અહં પુણ ગોયમા । એવં આહ્-
વક્ખામિ જાવ પરુવેમિ” ‘જાવ’ (યાવત્) પર આબુ છે તેની મારફત “એવં
ભાસેમિ, એવં પન્નવેમિ” એ બે ક્રિયાપદોનો સમાવેશ કરાયો છે વિશેષરૂપે
કથન કરવું તેનું નામ “ભાષણ” છે હેતુ દૃષ્ટાન્ત વડે પોતાના મતનું પ્રતિ-
પાદન કરવું તેનું નામ “પ્રજ્ઞાપના” છે લેદોના કથન વડે વિષયનું બે નિરૂપણ
કરવામા આવે છે તેને “પ્રરૂપણ” કહે છે ॥ સૂ૦૪ ॥

॥ અન્યતીર્થિક મત વિષયક પ્રશ્નોત્તર સમાપ્ત ॥

भूमिसेजा, फलहसेजा, कट्टसेज्जा, केसलोओ धभचेरवासो
परघरप्पवेसो, लद्धावलद्धी, उच्चावया, गामकटगा, वावीस
परिसहोवसग्गा अहियासिज्जति, त अट्ट आराहेइ आरा
हिता, चरमेहिं उस्सासनीसासेहिं सिद्धे बुद्धे मुत्तेपरिनिव्वुडे
सव्ववुस्सव्वप्पीणे ॥ सू० ५ ॥

छाया—तस्मिन् फाळे तस्मिन् समये पार्श्वोपरीत्य कालास्यवेपिकपुत्रो
नामानगारो यत्रैव स्थिरा भगवंतश्चैवोपागच्छति, उपागत्य स्थविरान् भगवत
एवमादीत्, स्थविरा मामापिक न जानन्ति, स्थविरा! सामापिकस्यार्थं न

आर्यकालास्येपि पुत्र अनगार प्रकरण-

अन्ययुक्तिकों के प्रस्ताव से ही सूत्रकार ने इस “ तेजं कालेण तेजं
समणं इत्यादि ।

सूत्रार्थ—(तेजं कालेण तेजं समणं) उस काल में और उस
समय में (पासायच्चिज्जे) पार्श्वनाथ के वश में उत्पन्न हुए (काला-
स्यवेसियपुत्ते) कालास्य वेपिक पुत्र (गामं अणगारे) नाम के अनगार
(जेणेव घेरा भगवतो) जिस तरफ स्थविर भगवंत य जेणेव उवा-
गच्छइ) उस तरफ गये (उपागच्छिस्ता) वहा जाकर के (घेरे भग-
वते एव वयामी) उन्हीं ने स्थविर भगवंतों से ऐसा कहा—(घेरा!
समाइय न जाणंति, घेरा मामाइस्स अहं न जाणंति) हे स्थविरों ! आप

आर्यकालास्येपिपुत्र अनगार प्रकरण—

अन्ययुक्तिका (अन्यतीर्थिका) ना प्रस्ताव पढे ॥ सूत्रकार “ तेजं कालेण
तेजं समणं ’ इत्यादि सूत्रनु ध्यान किये—

‘ तेजं कालेण तेजं समणं ’ इत्यादि

सूत्रार्थ—(तेजं कालेण तेजं समणं) ते काले अने ते मभये (पोमा
वन्निज्जं) पार्श्वनाथना वशमा उत्पन्न थयेस (कालास्यवेसियपुत्ते) कालास्य
वेपिकपुत्र (गामं अणगारे) नामना अनगार (जेणेव घेरा भगवतो) ने तरहे
स्थविर भगवतान विगच्छता नना (तेजइ उपागच्छइ) ते तरहे गया “ इय
गच्छि । त्या ज्जने (घेरा भगवतो एव वयामी) तेभ्ये स्थविर भगवन्तो
ने आ भमावे किये—(घेरा ! सामाइय न जाणंति, घेरा समाइस्स अहं न

एत्थ णं से कालासवेसियपुत्ते अणगारे संबुद्धे थेरे भगवंते
 वंदइ णमंसइ वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी एएसिणं भंते !
 पयाणं पुत्तिव अन्नाणयाए, असवणयाए, अवोहियाए अणभि
 गमेणं, अदिट्ठाणं अस्सुयाणं अस्सुयाणं अविन्नायाणं अव्वोग-
 डाणं अवोच्छिन्नाणं अणिज्जुढाणं अणुवधारियाणं एयमट्ठं
 नो सदहिए, णो पत्तइए, णो रोइए, इयाणिं भंते ! एतेसिं
 पयाणं जाणणयाए, सवणयाए वोहीए, अभिगमेणं दिट्ठाणं
 सुयाणं सुयाणं विन्नायाणं वोगडाणं वोच्छिन्नानां णिज्जुढाणं
 उवधारियाणं एयमट्ठं सदहामि, पत्तियामि, रोएमि, एवमेयं
 से जहेयं तुब्भे वदह । तएणं ते थेरा भगवंतो कालासवे-
 सियपुत्तं अणगारं एवं वयासी-सदहाहि अज्जो पत्तियाहि
 अज्जो, रोएहि अज्जो से जहेयं अस्हे वदामो । तएणं से
 कालासवेसियपुत्ते अणगारे थेरे भगवंते वंदइ नमंसइ,
 वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी-इच्छामि णं भंते ! तुब्भं
 अंतिए चाउज्जामाओ धम्माओ पंचमहव्वइयं सपडिक्कमणं
 धम्मं उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तिए, अहासुहं देवाणुप्पिया मा
 पडिबंधं करेह । तएणं से कालासवेसियपुत्ते अणगारे थेरे
 भगवंते वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता चाउज्जामाओ
 धम्माओ पंचमहव्वइयं सपडिक्कमणं धम्मं उवसंपज्जित्ताणं
 विहरइ । तएणं से कालासवेसियपुत्ते अणगारे बहूणि वासाणि
 सामन्नपरियं गं पाउणइ, पाउणित्ता जस्सट्ठाए कीरइ नग्गभावे,
 मुंडभावे, अण्हाणयं अदंतधुवणयं, अच्छत्तयं, अणोवाहणयं

આર્ય ! સામાયિકં જાનીમ આર્ય ! સામાયિકસ્યાર્થં યાવત્ જાનોમ આર્ય ! બ્યુત્સર્ગં સ્યાર્થમ્ । તતઃ સ કાલામ્યવેપિપુત્રોઽનગારસ્થાન્ સ્યવિરાન્ મગધતે એવમવાહીત્ યથાર્યાઃ! યૂય જાનીથ સામાયિકં, જાનીથ સામાયિકસ્યાર્થં, યાવત્ જાનીથ બ્યુત્સર્ગ- સ્યાર્થં, કિં મનતામાર્યા! સામાયિકમ્'કો મનતામાર્યા! સામાયિકસ્યાર્થં કો મસ્તા

કાલામ્યવેસિપુત્રં અનગારં ઇથ યયાસી) તપ્પ ડન સ્યવિર મગધન્તો ને કાલામ્યવેપિપુત્ર અનગારસે હસ પ્રકાર કહ્યા (જાણામો ણં અજ્ઞો સામા હ્ય, જાણામો ણં અજ્ઞો સમાહ્યસ્મ અહં) હે આર્ય ! હમ લોગ સામા યિક કો જાનતે હૈ । હે આર્ય હમ લોગ સામાયિક કે અર્થ કો જાનતે હૈ (જાય જાણામો ણ અજ્ઞો વિડસગસસ અહં) યાવત્ હે આર્ય ! હમ લોગ બ્યુત્સર્ગ કે અર્થ કો જાનતે હૈ । (તર્ણ સે કાલામ્યવેસિપુત્રે અન ગારે તે થેરે મગધતે ઇથ યયાસી) તપ્પ ડન કાલામ્યવેપિપુત્ર અનગાર ને ડન સ્યવિર મગધન્તો સે હસ પ્રકાર કહ્યા—(જહણ અજ્ઞો તુલ્લમે જાણહ સામાહ્ય, જાણહ સામાહ્યસ્મ અહં, જાય જાણહ વિડસગસસ અહં) યદિ હે આર્યો ! તુમ લોગ સામાયિક કો જાનતે હો, સામાયિક કે અર્થ કો જાનતે હો, યાવત્ બ્યુત્સર્ગ કે અર્થ કો જાનતે હો, તો (કિં મે અજ્ઞો સામાહ્ય) આપ કે મત્ત મેં આર્યો ! સામાયિક યહ ક્યા વસ્તુ હૈ ? (કિં મે અજ્ઞો સામાહ્યસ્મ અહં) હે આર્યો ! આપ કે મત્ત મેં સામાયિક કા

ત્યારે તે સ્યવિર મગધન્તોને કાલામ્યવેપિપુત્ર અનગારને આ પ્રમાણે કહ્યું—

(જાણામો ણ અજ્ઞો સામાહ્ય, જાણામો ણં અજ્ઞો સામાહ્યસ્મ અહં) હે આર્ય ! અમે સામાયિક બાણીએ છીએ, હે આર્ય ! અમે સામાયિકને અર્થ પણ બાણીએ છીએ (જાય જાણામો ણં અજ્ઞો વિડસગસસ અહં) યાવત્ હે આર્ય ! અમે બ્યુત્સર્ગને અર્થ પણ બાણીએ છીએ. (તર્ણ સે કાલામ્યવેસિપુત્રે અનગારે તે થેરે મગધતે એવ વયાસી) ત્યારે તે કાલામ્યવેપિપુત્ર અન ગારે તે સ્યવિર મગધન્તોને આ પ્રમાણે કહ્યું—(જહણ અજ્ઞો તુલ્લમે જાણહ સામા હ્ય જાણહ સામાહ્યસ્મ અહં જાય જાણહ વિડસગસસ અહં) હે આર્યો ! મે તમે સામાયિકને બાણતા હો અને સામાયિકના અર્થને બાણતા હો, “ યાવત્ ” બ્યુત્સર્ગના અર્થને પણ સમજતા હો (અહીં “ યાવત્ ” પદની પ્રત્યાખ્યાન, સમય વિવેક અને બ્યુત્સર્ગને બાણતા હો અને તેમના અર્થ સમજતા હો બોલેલો પૂર્વોક્ત સૂત્રપાઠ થઈ જાય છે) તો (કિં મે અજ્ઞો સામાહ્ય) હે આર્યો ! આપના મતાનુસાર સામાયિક શું છે ? (કિં મે અજ્ઞો સામાહ્યસ્મ અહં) હે આર્યો ! આપના મત પ્રમાણે સામાયિકનો શો અર્થ છે ? (જાય કિં

जानन्ति, स्थविराः प्रत्याख्यानं न जानन्ति, स्थविराः प्रत्याख्यानस्यार्थं न जानन्ति, स्थविराः संयमं न जानन्ति, स्थविराः संयमस्यार्थं न जानन्ति स्थविराः संवरं न जानन्ति, स्थविराः संवरस्यार्थं न जानन्ति, स्थविराः विवेकं न जानन्ति, स्थविराः विवेकस्यार्थं न जानन्ति, स्थविराः व्युत्सर्गं न जानन्ति, स्थविराः व्युत्सर्गस्यार्थं न जानन्ति, ततस्ते स्थविराः भगवन्तः कालास्यवेपिकपुत्रमनगारमेवमवादिषुः जानीम

लोग सामायिक नहीं जानते हैं, सामायिक के अर्थ को नहीं जानते हैं (थेरा पच्चक्खाणं न जाणन्ति) हे स्थविरो ! आप लोग प्रत्याख्यान को नहीं जानते हैं (थेरा पच्चक्खाणस्स अट्ठं न जाणन्ति) हे स्थविरो ! आप लोग प्रत्याख्यान के अर्थ को नहीं जानते हैं । (थेरा संजमं न जाणन्ति) हे स्थविरो ! आप लोग संयम को नहीं जानते हैं । (थेरा संझमस्स अट्ठं न जाणन्ति) हे स्थविरो ! आप लोग संयम के अर्थ को नहीं जानते हैं । (थेरा संवरं न जानन्ति) हे स्थविरो ! आप लोग संवर को नहीं जानते हैं । (थेरा संवरस्स अट्ठं न जाणन्ति) हे स्थविरो ! आप लोग संवर के अर्थ को नहीं जानते हैं । (थेरा विवेकं न जाणन्ति, थेरा विवेकस्स अट्ठं न जाणन्ति) हे स्थविरो ! आप लोग विवेक को नहीं जानते हैं और हे स्थविरो ! आप लोग विवेक के अर्थ को नहीं जानते हैं । (थेरा विउसगं न जानन्ति, थेरा विउसगस्स अट्ठं न जानन्ति) हे स्थविरो ! आप लोग व्युत्सर्ग को नहीं जानते हैं । हे स्थविरो ! आप लोग व्युत्सर्ग के अर्थ को नहीं जानते हैं । (तएणं ते थेरा भगवन्तो

जाणन्ति) हे स्थविरो ! तमे सामायिकं ज्ञायता नथी अने सामायिकेनो अर्थं पणु ज्ञायता नथी (थेरा पच्चक्खाणं न जाणन्ति) हे स्थविरो ! तमे प्रत्याख्यानने ज्ञायता नथी, (थेरा पच्चक्खाणस्स अट्ठं न जाणन्ति) अने हे स्थविरो ! तमे प्रत्याख्यानने अर्थं पणु ज्ञायता नथी, (थेरा संजमं न जाणन्ति) हे स्थविरो ! तमे संजमने ज्ञायता नथी, (थेरा संजमस्स अट्ठं न जाणन्ति) अने हे स्थविरो ! तमे संजमने अर्थं पणु ज्ञायता नथी, (थेरा संवरं न जाणन्ति) हे स्थविरो ! तमे संवरने ज्ञायता नथी, (थेरा संवरस्स अट्ठं न जाणन्ति) अने हे स्थविरो ! तमे संवरने अर्थं पणु ज्ञायता नथी, (थेरा विवेकं न जाणन्ति, थेरा विवेकस्स अट्ठं न जाणन्ति) हे स्थविरो ! तमे विवेकने ज्ञायता नथी, अने हे स्थविरो ! तमे विवेकने अर्थं पणु ज्ञायता नथी, (थेरा विउसगं न जाणन्ति, थेरा विउसगस्स अट्ठं न जाणन्ति) हे स्थविरो ! तमे व्युत्सर्गने ज्ञायता नथी, अने हे स्थविरो ! तमे व्युत्सर्गने अर्थं पणु ज्ञायता नथी (तएणं ते थेरा भगवन्तो कालास्यवेपिकपुत्रमनगार एव वयासी)

કિં ગર્હાં સંયમ અગર્હાં સયમઃ ? । કાલાસ્યવેપિકપુત્ર ! ગર્હાં સયમો નો અગર્હાં સંયમઃ, ગર્હાંપિ ચ खलु सर्वं दोषं भविन्यति, सर्वा बालता परिहाय, एव खल्वस्माकमात्मा सयमे उपहितो भवति, एष खल्वस्माकमात्मा सयमे उपस्थितो भवति । अत्र खलु स कालास्यवેપિકपुत्रोऽनगार सधुद स्थिरान् भगवतो

इन क्रोधादिकों की निंदा करते हो ? तब वन स्थविर भगवन्तों ने कालास्यवैपिकपुत्र से कहा कि (कालास्यवैपिकपुत्र) हे कालास्यवैपिकपुत्र ! (स जमहाए) हम लोग जो क्रोधादिकों की निंदा करते हैं वह सयम के लिये करते हैं । (से भंते । किं गरहा सजमे अगरहा सजमे ?) तब कालास्यवैपिकपुत्र ने वन स्थविर भगवन्तों से पूछा कि हे भवन्तो ! गर्हा (निंदा) सयम है ? कि अगर्हा सयम है ? (कालास्यवैपिक पुत्र । गरहा सजमे, णो अगरहा सजमे) स्थविर भगवन्तों ने तब कहा कि कालास्यवैपिकपुत्र ! गर्हा सयम है, अगर्हा सयम नहीं है । (गरहा वि य णं सव्व दोस पविणेइ) अपि च गर्हा समस्त दोषों को पिलकुल दूर कर देती है, (सव्वं बालियं परिण्णाए) समस्त बाल्य-अज्ञान को ज्ञ परिज्ञा से जानकर । अर्थात् गर्हा द्वारा आत्मा ज्ञ परिज्ञा से समस्त अज्ञान जानकर प्रत्याख्यान परिज्ञा से दोषों का नाश कर देती है । (एव खु णे आया संजमे उबट्टिए भवइ) इस तरह से हम लोगों की आत्मा सयम में स्थापित हो जाती है । (एव खु णे आया सजमे उबट्टिए भवइ) इस तरह से हम लोगों की आत्मा सयम में उपस्थित हो जानी है । (एवं

ગર્હાં (બૃષ્ણ) કરે છે ? ત્યારે તે સ્થવિર ભગવતોએ કાલાસ્યવેપિક પુત્રને કહ્યું- (કાલાસ્યવેપિકપુત્ર !) હે કાલાસ્યવેપિક પુત્ર ! (સજમહાએ) અને એ ક્રોધ વગેરેની બૃષ્ણ કરીએ છીએ તે સયમને માટે જ કરીએ છીએ (સે મ્હે ! કિં ગરહા સજમે અગરહા સંજમે ?) ત્યારે કાલાસ્યવેપિકપુત્રે તેમને પૂછ્યું- હે પૂજ્યે ! ગર્હાં (શુરુઆક્ષી એ આત્મનિંદા) સયમ છે ? કે અગર્હાં સયમ છે ? (કાલસ્યવેપિકપુત્ર ! ગરહા સજમે ખો અગરહા સજમે) હે કાલસ્યવેપિક પુત્ર ! ગર્હાં સયમ છે અગર્હાં સયમ નથી. (ગરહા વિ ય ણં સવ્વ દોષ પવિણેહ) અને ગર્હાં તમામ દોષો સદતર દૂર કરનારી છે (સવ્વ બાલિય પરિણ્ણાએ) તમામ બાલ્યને (અજ્ઞાનને) ન પરિ-ગતી બાળીને-એટલે કે ગર્હાં એટલે કે શુરુઆક્ષાં એ એ નિંદા કરીને આત્મા જ પરિજ્ઞાથી અજ્ઞાનને બાળીને પ્રત્યાખ્યાન પરિજ્ઞા વડે દોષોનો નાશ કરે છે (એવ શુ ણે આયા સજમે ઉબટ્ટિયે ભવઈ) આ રીતે અમારો આત્મા સયમમાં સ્થાપિત થઈ જાય છે (એવ શુ ણે આયા સજમે ઉબટ્ટિયે ભવઈ) આ રીતે અમારો આત્મા સયમમાં ઉપસ્થિત

માર્યા! વ્યુત્સર્ગ! કો ભવતામાર્યા! વ્યુત્સર્ગસ્યાર્થ! તતસ્તે સ્થવિરા ભગવંતઃ કાલાસ્ય
વેષિકપુત્રમનગારમેવમવાદિપુઃ, આત્મા-અસ્માકમાર્યા! સામાયિકમ્, આત્મા અસ્મા-
કમાર્યા! સામાયિકસ્યાર્થ, યાવદ્ વ્યુત્સર્ગસ્યાર્થ! તતઃ સ કાલાસ્યવેષિકપુત્રો-
નગારઃ સ્થવિરાન્ ભગવત્ એવમવાદીત્, યદિ ભવતામાર્યા! આત્મા સામાયિકમ્,
આત્મા સામાયિકસ્યાર્થ એવં યાવત્ આત્મા વ્યુત્સર્ગસ્યાર્થ, અપહૃત્ય ક્રોધમાનમા-
યાલોભાન્ કિમર્થમાર્યાઃ ગર્હતઃ કાલાસ્યવેષિકપુત્ર! સંયમાર્થતયા! તદ્ ભદંત!

કયા અર્થ હૈ? (જાવ કિં મે વિડસંગસસ્ અટ્ટે) યાવત્ વ્યુત્સર્ગ કા
કયા અર્થ હૈ? (તણ થેરા ભગવન્તો કાલાસવેસિકપુત્ત અણગારં એવં
વયાસી) હસકે વાદે ઉન સ્થવિર ભગવંતો ને કાલાસ્યવેષિકપુત્ર અનગાર
સે હસ પ્રકાર સે કહા. (આયાણે અજ્જો! સમાહણ, આયાણે અજ્જો
સામાહ્યસ્સ અટ્ટે જાવ વિડસંગસસ્સ અટ્ટે) હૈ આર્ય! હમારા આત્મા
સામાયિક હૈ. હૈ આર્ય! હમારા આત્મા સામાયિક કા અર્થ હૈ. (જાવ
વિડસંગસસ્સ અટ્ટે) યાવત્ વ્યુત્સર્ગ કા અર્થ હૈ (તણ સે કાલાસવે-
સિયપુત્તે અણગારે થેરે ભગવન્તે એવં વયાસી) તવ ઉન કાલાસ્યવેષિક
પુત્ર અનગાર ને ઉન સ્થવિર ભગવન્તો સે એસા કહા—(જહ સે અજ્જો
આયા સામાહણ, આયા સામાહ્યસ્સ અટ્ટે) હૈ આર્યો! યદિ આપ લોગો
કી આત્મા સામાયિક હૈ, આત્મા સામાયિક કા અર્થ હૈ (એવં જાવ આયા
વિડસંગસસ્સ અટ્ટે) હસી તરહ સે યાવત્ આત્મા વ્યુત્સર્ગ કા અર્થ હૈ, તો
(કોહમાણમાયાલોભે) ક્રોધ, માન, માયા ઔર લોભ હનકો (અવહટ્ટુ
છોડકર (કિં અટ્ટ) કિસલિયે (અજ્જો) હૈ આર્યો! તુમ લોગ (ગરહહ)

મે વિડસંગસસ્સ અટ્ટે) યાવત્ વ્યુત્સર્ગનો શો અર્થ છે? (અહીં પણ “યાવત્”
પદથી પૂર્વોક્ત સૂત્રપાઠ શ્રવણ કરવો) (તણ થેરા ભગવન્તો કાલાસવેસિયપુત્ત
અણગારં એવં વયાસી) ત્યારે તે સ્થવિર ભગવન્તોએ કાલાસ્યવેષિકપુત્રને આ
પ્રમાણે કહ્યું—(અયાણે અજ્જો! સામાહણ, આયાણે અજ્જો સામાહ્યસ્સ અટ્ટે જાવ
વિડસંગસસ્સ અટ્ટે) હૈ આર્ય! અમારો આત્મા એજ સામાયિક છે, અને હૈ
આર્ય! અમારો આત્મા એજ સામાયિકનો અર્થ છે, “ યાવત્ ” વ્યુત્સર્ગનો
અર્થ છે (તણ સે કાલાસવેસિયપુત્તે અણગારે ભગવન્તે એવં વયાસી) ત્યારે તે
કાલાસ્યવેષિકપુત્ર અણગારે તે સ્થવિર ભગવન્તોને આ પ્રમાણે કહ્યું—(જહ મે
અજ્જો આયા સામાહ્યસ્સ અટ્ટે એવં જાવ આયા વિડસંગસસ્સ અટ્ટે) હૈ આર્યો!
ને આપનો આત્મા સામાયિક હોય અને આપનો આત્મા સામાયિકનો અર્થ
હોય, “ યાવત્ ” આપનો આત્મા વ્યુત્સર્ગનો અર્થ હોય તો (કોહમાણ માયા
લોભે) ક્રોધ, માન, માયા અને લોભનો (અવહટ્ટુ) ત્યાગ કરીને વળી (કિ
અટ્ટ) શા માટે (અજ્જો) હૈ આર્યો! (ગરહહ) તમે તેમની (ક્રોધાદિકાની)

બ્યુન્નિમાનાં નિર્યુદાનામવધારિતાનામતમર્થે થદ્ધામિ, પ્રત્યમિ, રોષે, એવમેષેત્ત
ત્ત્વં યથેત્ત્વં યુયં વદસ્વ । તત્તરતે સ્થવિરા મગવન્ત કાલાસ્યવેપિકપુત્રમનગારમેષ
મધાદિપુત્ર, અદ્દેહિ આર્ય ! રોચસ્વ આર્ય ! તદ્ યથેત્ત્વં વયં વદામઃ । તતઃ કાલા

કો (નો સદ્દહિ) અદ્ધા સે યુક્ત નહીં ગિયા (જો પત્તહપ) પ્રતીતિ
(વિશ્વાસ) સે યુક્ત નહીં કિયા (જો રોહપ) રુષિ સે યુક્ત નહીં કિયા
(હ્યાણિ મંતે) હમ સમય હે મદતો ! (જાણણયાપ) હન પદોં કા
જ્ઞાન હો જાને કે કારણ (સવળયાપ) અવળ હો જાને કે કારણ (બોહીપ
બોધ હો જાને કે કારણ (અમિગમેણ) અમિગમ હો જાને કે કારણ (વિ
દ્ધાણ) દેલ્લે ગયે (સુયાણં) સુને ગયે (સુયાણ) સ્મરણ કિયે ગયે (વિજ્ઞા-
યાણં) વિજ્ઞાત કિયે ગયે (યોગદાણ) બ્યાકૃત કિયે ગયે (ઘોચ્છિન્નાત્થં)
બ્યુચ્છિન્ન કિયે ગયે (ણિજ્ઞુદ્ધાણ) નિર્યુદ કિયે ગયે (વધધારિયાણં)
અવધારિત કિયે ગયે (પત્તેસિં પયાણ) હન પદોં ક (પયમદ્દો) હસ્ત અર્થ
કી (સદ્દહામિ) મેં અદ્ધા કરતા હું (પત્તિયામિ) પ્રતીતિ કરતા હું (રો
પમિ) રુષિ કરતા હું (એવમેયં) યહ એસા હી હૈં જૈસા કિ આપ કહતે
હૈં । (તપણં) હસ્તકે પાદ (સે ઘેરા મગવન્તો) હન સ્થવિર મગવન્તોં ને
(કાલાસવેસિયપુત્રં અણગાર) કાલાસવેપિક પુત્ર અનગાર સે (એવં
વયાસી) એસા કહા (સદ્દહાહિ અજ્ઞો પત્તિયાહિ અજ્ઞો, રોપહિ અજ્ઞો)
હે આર્ય, અદ્ધા કરો, હે આર્ય પ્રતીતિ કરો, હે આર્ય રુષિ કરો (સે જાહેયં

અદ્ધિત કર્યોં ન હોતો, (જો પત્તહપ) આ અર્થમાં પહેલાં અને વિશ્વાસ ન
હોતો, (જો રોહપ) રુષિ ન હોતો (હ્યાણિ મંતે !) હે પૂર્યો ! હવે (જાણ-
યાપ) આ ખોતો જ્ઞાન થવાને કારણે (સવળયાપ) અવળ થવાને કારણે
(બોહીપ) બોધ થવાને કારણે (અમિગમેણ) અમિગમ (અમલજી) થવાને
કારણે, (વિદ્ધાણ, સુયાણ, વિજ્ઞાયાણ, યોગદાણ વાચ્છિન્નાણ, ણિજ્ઞુદ્ધાણ, વધ
ધારિયાણ પત્તેસિં પયાણ પયમદ્દ સદ્દહામિ પત્તિયામિ રોપમિ એવમેય) તે પદો
નાં આ અર્થને જોઈને, સાંભળીને, સ્મરણ કરીને, વિજ્ઞાત કરીને, બ્યાકૃત
(પ્રગટ) થવાથી, બ્યુચ્છિન્ન થવાથી, નિર્યુદ થવાથી અને અવધારિત કરવાથી
તે અર્થમાં હવે અને અદ્ધા ઉત્પન્ન થઈ છે તે અર્થની અને પ્રતીતિ થઈ છે,
તે અર્થ પ્રત્યે અને રુષિ પેલા થઈ છે, આપના કહેવા પ્રમાણે જ એ તમામ
અર્થ બરાબર છે (તપણ) ત્યાર બાદ (સે ઘેરા મગવન્તો) તે સ્થવિર મગ
વતોએ (કાલાસવેસિયપુત્ર અણગાર) કાલાસવેપિક પુત્ર અણગારને (એવં
વયાસી) આ પ્રમાણે કહું—(સદ્દહાહિ અજ્ઞો પત્તિયાહિ અજ્ઞો, રોપહિ અજ્ઞો, સે

वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्यित्वा एवमवादीत्, एतेषां भदन्त पदानां पूर्व-
मज्ञानतया अश्रवणतया अवोधितया अनभिगमेनादृष्टानामश्रुतानामस्मृतानामविज्ञा-
तानामव्याकृतानामव्युच्छिन्नानामनिर्युद्धानामनवधारितानामेषोऽर्थो नो श्रद्धितो नो
प्रतीतः (प्रत्ययितः) नो रुचित इदानीं भदन्त । एतेषां पदानां ज्ञानतया श्रव-
णतया-बोधितयाऽभिगमनेन दृष्टानां श्रुतानां स्मृतानां विज्ञातानां व्याकृतानां

खु णे आया संजमे उवट्टिए भवइ) इस तरह हम लोगों की आत्मा
संयम में उपस्थित हो जाती है । (एत्थ णं से कालासवेसियपुत्ते) ऐसा
सुनकर वे कालस्यवेषिक पुत्र (अणगारे) अनगार (संबुद्धे) संबुद्ध हो
गये । (थेरे भगवन्ते वंदइ, णमसइ) उन्होंने ने स्थविर भगवन्तों को
वन्दना की । उन्हें नमस्कार किया । (वन्दित्ता णमंसित्ता) वन्दना नम-
स्कार करके फिर वे उन से (एवं वयासी) इस प्रकार बोले (भन्ते !)
हे भदन्तो) (पुत्तिं) पहिले मैं ने (अन्नाणयाए) अज्ञानता के कारण
(असवणयाए) अश्रवणता के कारण (अवोहियाए) अवोधिता के
कारण (अनभिगमेण) अनभिगम (नहीं जानने) के कारण (अदिट्ठाणं)
नहीं देखे गये (अस्सुयाणं) नहीं सुने गये (अस्सुयाणं) नहीं स्मृत
किये गये (अविन्नायाणं) नहीं विज्ञात किये गये (अव्वोगडाणं) नहीं
व्याकृत (प्रगट) किये गये (अवोच्छिन्नाणं) नहीं व्युच्छिन्न किये गये
(अणिज्जूढाणं) नहीं निर्युद्ध किये गये (अणुवधारियाणं) नहीं अव-
धारित किये गये (एएसिं णं पयाणं) इन पदों के (एयमट्ठं) इस अर्थ

थं नथ छे (एव खु णे आया संजमे उवट्टिए भवइ) आ रीते अभासे।
आत्मा संयममा उपस्थित थं नथ छे (एत्थ ण से कालासवेसियपुत्ते
अणगारे संबुद्धे) तेमना अ प्रकारना पयने। सासणीने कालास्यवेषिक पुत्र अणु-
गार बोध पाभ्या (थेरे भगवन्ते वंदइ, णमंसइ) त्थार भाद तेमणे स्थविर
भगवन्तेने वदइ करी अने नमस्कार कर्या (वदित्ता णमंसित्ता) वदन नम-
स्कार करीने (एवं वयासी) तेमणे तेमने आ प्रभाणे कछु-भन्ते ! हे भून्थे !
(पुत्तिं) पड़ेला (अन्नाणयाए) अज्ञानताने कारणे, (असवणयाए) अश्रवण-
ताने कारणे, (अवोहियाए) अवोधिताने कारणे, (अनभिगमेण) अणुसमजने
कारणे, (अदिट्ठाणं) नहीं देखेला, (अस्सुयाणं) नहीं सासणेला, (अस्सु-
याणं) नहीं स्मृत करेला, (अविन्नायाणं) नहीं विज्ञात करायेला, (अव्वोगडाणं)
नहीं प्रगट करायेला, (अवोच्छिन्नाणं) नहीं व्युच्छिन्न करायेला (अणिज्जूढाणं)
नहीं निर्युद्ध करायेला, (अणुवधारियाणं) नहीं अवधारित करायेला (एएसिं
ण पयाणं) अथा आ पढ़ेने। (एयमट्ठं) आ अर्थ (नो सदहिं) भे श्रद्धा

धर्मसुपसपद्य खलु विहरति । तत खलु स कालास्यवेपिकपुत्रोऽनमारो बहूनि
वर्षाणि श्रामण्यपर्यायं पालयति, पालयित्वा यस्यार्थं क्रियते 'नम्रमावो मुण्डमा-
वोऽस्नानकर्मदत्तघावनकर्म' छत्रकम्पुनपानक भूमिद्वय्या फलकस्य्या काष्ठस्य्या

चन्दना की, उन्हें नमस्कार किया (चन्दिस्ता नममिस्ता) चन्दना करके,
नमस्कार करके, (चाउउजामाओ घम्माओ) चार महाव्रत वाले धर्म को
छोड़कर (सपष्टिक्कमणं) प्रतिक्रमण सहित (पंच महव्वइयं) पांच महा-
व्रत वाले (घम्मं) धर्म को (उबमम्पज्जित्ताण) प्राप्त कर (विहरइ)
विचारने लगे (तएणं से कालास्यवेमिपुत्ते अणगार) इसके बाद इन कालास्य
वेपिकपुत्र अणगारने (बहूनि वासाणि) बहुत वर्षों तक (सामन्न परियागं पाउ
णइ) श्रामण्यपर्याय का पालन किया । (पाउणिस्ता) पालन करके (ज
स्सट्ठाण) जिस अपने प्रयोजन को सिद्ध करने के निमित्त (नग्गमावे
कीरइ) उन्होंने ने नग्नपना लिया (मुण्डमावे) मुण्डपना लिया (अन्हा
णयं) स्नान नहीं करना ऐसा नियम लिया (अर्द्धधुवणय) दन्तघा-
वन-दांतोंन नहीं की (अञ्जसयं) छत्र नहीं रखा (अणोवाहणयं) पारखे
नहीं पहरे (भूमिसेज्जा) भूमि पर शयन किया (फलइसेज्जा) फलक
पर शयन किया (कट्टसेज्जा) काष्ठ पर शयन किया (केसलोओ) केशों
काजुं घन किया (वनचेर वासो) ब्रह्मचर्य में वास किया (परपरणवेसो)

३४१२ कथा (चदिता, नमसिता) व ३४१३ नमस्कार करीने (चाउउजामाओ घम्माओ)
चार महाव्रतवाणा धर्मने छोडीने (सपष्टिक्कमण) प्रतिक्रमण सहितता (पच
महव्वइयं) पांच महाव्रतवाणा (घम्मं) धर्मने (उबमम्पज्जित्ताण) अर्पण
करीने (विहरइ) विचारना लाया (तएण से कालास्यवेमिपुत्ते अणगारे) तब
आठ ते कालास्यवेपिकपुत्र अणुगारे (बहूनि वासाणि) बहुत वर्षों भुभी (सामन्न
परियाग पाउणइ) अभव्य पर्यायनु पालन क्युं (पाउणिस्ता) अभव्य पर्यायनु
पालन करीने (जस्सट्ठाण) तेमजे पाताना आत्मकल्याणुनी सिद्धि भाटे (नग्ग
मावे कीरइ) नग्नता धारण करी-बन्धोने परित्याग क्यो (मुण्डमावे) मावे
भुडा क्यो-ठेसल्लवन क्युं (अण्हाणय) स्नान नहीं कराने नियम क्यो,
(अर्द्धधुवणयं) दांत धोवानुं नय क्युं (अञ्जसयं) छत्र राजनुं नय क्युं,
(अणोवाहणयं) पगमा नेजा पहरेना नय कथा, (भूमिसेज्जा) भूमि पर
शयन करवा माठयु (फलइसेज्जा) फलक पर शयन करवा माठयु (कट्टसेज्जा)
काष्ठ पर शयन करवा माठयु (केसलोओ) वागने लाय करवा माठयु
(वनचेरवासो) ब्रह्मचर्य पाणवा माठयु, (परपरणवेसो) निक्षार्य परपरभां

स्यवेपिकपुत्रोऽनगारः स्थविरान् भगवतो वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्यित्वा
एवमवादीत्, इच्छामि खलु भदंत ! युष्माकमन्तिके चातुर्यामाद् धर्मात् पंचमहा-
व्रतिकं सप्रतिक्रमणं धर्ममुपसंपद्य विहर्तुम् । यथासुखं देवानुप्रिय ! मा प्रतिवन्द्यं
कुरु । ततः खलु स कालास्यवेपिकपुत्रोऽनगारः स्थविरान् भगवतो वन्दते नम-
स्यति, वन्दित्वा नमस्यित्वा चातुर्यामाद् धर्मात् पञ्चमहाव्रतिकं सप्रतिक्रमणं

अम्हे वदह) उस पर जैसा कि हम कहते हैं । (तएणं से कालासवेसि-
पुत्ते अणगारे) इसके बाद कालास्यवेपिक पुत्र अनगार ने (थेरे भगवंते
वंदइ, नमंसइ) उन स्थविर भगवन्तों की वन्दना की, उन्हें नमस्कार
किया (वंदित्ता नमसित्ता) वन्दना नमस्कार करके (एवं वयासी)
फिर उन्होंने उनसे ऐसा कहा (भन्ते ! तुवमं अंतिए) हे स्थविर
भदन्तों ! आप लोगों के पास मैं (चाउज्जामाओ धम्माओ) चार
महाव्रत वाले धर्म को छोड़कर (सप्पडिक्कमणं पंचमहव्वयं धम्मं)
प्रतिक्रमणसहित पाँचमहाव्रत वाले धर्म को (उवससपज्जित्ता णं
विहरित्तए इच्छामि) प्राप्त कर विचरना चाहता हूँ । तब स्थविर भ-
गवन्तों ने उनसे कहा- (अहासुहं देवानुप्पिया ! मा पडिबंघ करेह)
आप को जैसे सुख हो हे देवानुप्रिय ! आप वैसा करें । विलम्ब न करें।
(तएणं से कालासवेसियपुत्ते अणगारे) इसके बाद उन कालास्यवेपिक
पुत्र अनगार ने (थेरे भगवंते वदइ, नमंसइ) स्थविर भगवन्तों को

जहेयं अम्हे वदह) हे आर्य ! अमे ते विषे ने कहीअे छीअे तेभा श्रद्धा
राअे, हे आर्य ! तेनी प्रतीति करे, हे आर्य ! तेभां रुचि राअे । (तएण
से कालासवेसियपुत्ते अणगारे) त्थार ण ह ते कालास्यवेपिकपुत्र अणुगारे (थेरे
भगवंते वंदइ नमंसइ) ते स्थविर भगवन्तोने वदइअा करी, नमस्कार करी।
(वंदित्ता नमसित्ता) वदइअा नमस्कार करीने (एवं वयासी) तेभए करीथी
तेभने आ प्रभाए कइ- (भन्ते तुवमं अंतिए) हे स्थविर भगवन्तो ! आपनी
समक्ष न हूँ (चाउज्जामाओ धम्माओ) चार महाव्रतवाणा धर्मने छोडीने
(सप्पडिक्कमणं पंचमहव्वयं धम्मं) प्रतिक्रमण सहितना पाय महाव्रतवाणा
धर्मने । (उवससपज्जित्तणं विहरित्तए इच्छामि) स्वीकर करीने विचरवा भागुं
छुं । त्थारे स्थविर भगवन्तोअे कइ- (अहासुहं देवानुप्पिया ! मा पडिबंघ करेह)
हे देवानुप्रिय ! आपने ने रीते सुअ थाय अे प्रभाए करे- परतु विलम्ब
करेओ नही । (तएण से कालासवेसियपुत्ते अणगारे) त्थारे ते कालास्यवेपिकपुत्र
अणुगारे (थेरे भगवंते वदइ, नमंसइ) स्थविर भगवानोने वदइअा करी, नम-

એવ પ્રદેશે સ્થવિરા મગવન્ત આસન્ તેનેવ તમ્મિન્ને પ્રદેશે ઊગગ્ગઠ્ઠિ, 'ઠવાગ-
ચ્છિત્તાથેરે મગવંતે એવં ધયામી' ઇગગમ્પ સ્થવિરાન્ મગવન્ત એવં વક્ષ્યમાણપ્રકારેણ
અવાદીત્ 'થેરા સામાણ્ણ્ય ન જાણતિ' હે સ્થવિરા ! મગવન્ત સામાયિકં ન જાનન્તિ,
તસ્યાત્યન્તપૂરુષમગૂર્વાર્ધતયા દુર્વિજ્ઞેયત્વાત્ 'થેરા સામાણ્ણ્યમ્મ અદ્દ ન જાનન્તિ' હે
સ્થવિરા ! મગવન્ત સામાયિકસ્ય અર્થ પ્રયોજન ન જાનન્તિ, તત્પયોજનજ્ઞાનસ્ય અતિ
દુષ્કરત્વાત્ 'થેરા પચ્ચક્કલાણ ન જાણતિ' હે સ્થવિરા ! મગ્ગઠ પ્રત્યાખ્યાન ન
જાનન્તિ, ત્યાગધર્મસ્ય દુર્વિજ્ઞેયત્વાત્, થેરા પચ્ચક્કલાણસ્સ અદ્દ ન જાણતિ' હે
સ્થવિરા ! મગવન્ત પ્રત્યાખ્યાનસ્ય અર્થ પ્રયોજન ન જાનન્તિ, તસ્ય અર્થઠ ગૂઢ

થેયી પુત્ર અનગાર થ । યે જિસ પ્રદેશ મેં સ્થવિર મગવન્ત ચિરાજમામ થે
વહાં ગયે । મગવાન મહાવીર કે યજ્ઞધુન જો શિષ્ય થે । उनका नाम
स्थविर हैं । उनके समीप जाकर उन्होंने ने उस स्थविर भगवन्तों से ऐसा
-आगे जो विषय कहा जाने वाला है उस रूप से-कहा, वह विषय इस
प्रकार से है-(थेरा सामाण्य न जाणति) हे स्थविरो । आप सामायिक
को नहीं जानते हैं । क्योंकि यह अत्यन्त सूक्ष्म गूढ अर्थ वाला है । इस
कारण यह दुर्विज्ञेय है-उसका समझना-जानना-बहुत कठिनार्थों
से भरपूर है । (थेरा सामाण्यस्म अद્દ न जाणति) हे स्थविरो । आप
लोग सामायिक के अर्थ को नहीं जानते हैं । यहाँ अर्थ का तात्पर्य प्रयो
जन का ज्ञान होना अतिदुष्कर हैं । (थेरा पच्चक्कलाणं न जाणति) हे
स्थविरो ! आप प्रत्याख्यान को नहीं जानते हैं । क्योंकि कि प्रत्याख्यान
त्यागधर्मरूप होता है । और त्यागधर्म का समझना दुर्विज्ञेय है । (थेरा
पच्चक्कलाणस्म अद્द न जाणति) हे स्थविरो ! आप प्रत्याख्यान का क्या

અગત્ય વિશાળમાન હતા ત્યા ગયા । અગવાન મહાવીર । જે શિષ્યો બહુશુદ્ધ હતા
તેમને સ્થવિર કહેતા હતા । સ્થવેષીપુત્ર અણુઆદે તેમની પાસે જઈને તેમને આ પ્રમાણે
કહ્યું— 'થેરા સામાણ્ય ન જાણતિ' હે સ્થવિરો ! આપ સામાયિકને બહુતા
નથી કારણ કે તેનો અર્થ અત્યંત સૂક્ષ્મ અને ગૂઢ છે । દુર્વિજ્ઞેય છે એટલે
કે તેને સમજવાનું કાંઈ અતિશય મુશ્કેલ છે 'થેરા સામાણ્યસ્મ અદ્દ ન જા-
ણતિ' હે સ્થવિરો ! તમે સામાયિકને અર્થ પણ બહુતા નથી જાણી
અર્થ એટલે પ્રયોજન સમજવું કારણ કે સામાયિકનું પ્રયોજન
સમજવું અતિ દુષ્કર છે 'થેરા પચ્ચક્કલાણ ન જાણતિ' હે સ્થવિરો ! તમે
પ્રત્યાખ્યાનને સમજતા નથી કારણ કે પ્રત્યાખ્યાન ત્યાગધર્મરૂપ હોય છે અને
ત્યાગધર્મને સમજવો પણ અતિ મુશ્કેલ ॥ 'થેરા પચ્ચક્કલાણસ્સ અદ્દ ન
જાણતિ' હે સ્થવિરો ! તમે પ્રત્યાખ્યાનનું પ્રયોજન પણ સમજતા નથી ।

केशलोचः ब्रह्मचर्यवासः परगृहप्रवेशः लब्धव्यपलब्धिः, उच्चावचा ग्रामकण्टका
द्राविंशतिः परिसहोपसर्गा अधिसन्नन्ते तत्पर्यमाराधयति आराध्य चरमैरुच्छवास
निःश्वासैः सिद्धो बुद्धो मुक्तः परिनिर्वातः सर्वदुःखप्रहीणः ॥ सू० ५ ॥

टीका—‘तेण कालेण तेण समएण’ तस्मिन् काले तस्मिन् समये खलु ‘पासा-
वच्चिज्जे कालासवेसियपुत्ते णामं अणगारे’ पार्श्वपत्यातः—पार्श्वसन्तानीयः काला-
स्यवेपिपुत्रो नाम अनगारः ‘जेणेव येरा भगवतो तेणे उवागच्छ’ येनैव यस्मिन्

भिक्षा के लिये परघर में प्रवेश किया (लद्धावलद्धी) भिक्षा मिले या न
मिले दोनों अवस्थाओं में समताभाव रखा, (उच्चावचा) अनुकूल प्रति-
कूल ऐसे (गामकटगा) तथा इन्द्रियों के कण्टकरूप (द्वावीस परिसहो-
वसगा) ऐसे २२ परीषदों को और उपसर्गों को (अहियासिज्जंति)
सदा (तं अट्टं आहारेइ) उस अर्थ की उन्होंने ने अच्छी तरह से आरा-
धना की । (आराहिता) और आराधना करके वे (चरमेहिं उस्सास
नीसासेहिं) अन्तिम उच्छ्वासनिःश्वास में (सिद्धे बुद्धे मुत्ते परिनि-
व्वुडे, सव्वदुक्खप्पहीणे) सिद्ध, बुद्ध, मुक्त, परिनिर्वात और समस्त
दुःखों से रहित हो गये ।

टीकार्थ—(तेण काले तेण समएण) उस काल में अर्थात् चतुर्थ-
काल में, उस समय में—अर्थात्—जब कि श्रमण भगवान् महावीर विरा-
जमान थे तब । (पासावच्चिज्जे) पार्श्वपत्तीय-पार्श्वनाथ के शिष्यों
में के एक शिष्य जिनका नाम (कालासवेसियपुत्ते अणगारे) कालास्य-

प्रवेश करवा भाउयो—गोचरी भाटे धरे धरे करवा भाउयु (लद्धावलद्धी)
भिक्षा भणे डे न भणे, ओ जन्ने अवस्थाभा समतासाव राखवा भाउयो,
(उच्चावचा) अनुकूल तथा प्रतिकूल ओवां (गामकटगा) तथा इन्द्रियोंने
भाटे कंटकरूप (द्वावीस परिसहोवसगा) ओवा द्वावीस परीषदो अने उपस-
र्गोने (अहियासिज्जंति) सहन कर्था (त अट्टं आहारेइ) ते अर्थनी (भोक्ष-
मार्गनी) तेमणे सारी रीते आराधना करी (आराहिता) आराधना करीने
तेओ (चरमेइ उस्सासनीसासेहिं) अन्तिम उच्छ्वास निःश्वासभा (सिद्धे, बुद्धे,
मुत्त, परिनिव्वुडे, सव्वदुक्खप्पहीणे) सिद्ध, बुद्ध, मुक्त अने परिनिर्वात थर्धने
तमाम दुःखोथी रहित थर्ध गया अर्थात् भोक्ष पदनी प्राप्ति करी

टीकार्थ—‘ तेण काले तेण समएण ’ ते काले ओटले डे ओथा आराभां,
ते समये—ओटले डे न्यारे श्रमण भगवान् महावीर स्वामी विराजमान इता
त्यारे “ पासावच्चिज्जे ” पार्श्वनाथना शिष्योमाना ओक शिष्य डे जेमनुं नाम
“ कालासवेसियपुत्त अणगारे ” कालास्यवेपिपुत्र आणुगार इतुं, तेओ न्या स्थविर

હે સ્થવિરા ! મગધંતો ધ્યુત્સર્ગ ન જાનન્તિ, તસ્ય દુષ્કરત્વાત્, ' ઘેરા વિહસગ્ગસ્સ અદ્ધં ન જાણતિ ' હે સ્થવિરા ! મગધંતો ધ્યુત્સર્ગસ્ય અર્થ ન જાનન્તિ, તત્સ્વરૂપસ્ય દુષોઽપ્યસ્વાત્, ' તણ્ણ તે ઘેરા મગધંતો-કાલાસયેપિપુત્ર અનગારં ઇધં ઘયાસી ' તતસ્તે સ્થવિરા ! મગધન્ત કાલાસયેપિપુત્ર અનગારમ્ ઇધ-વક્ષ્યમાણપ્રકારેષ અવાદિપુઃ ' જાણામો ણં અજ્ઞો ! સામાય્ય ' હે આર્ય ! ઘય જાનીમઃ સલ્લ સામાયિક્કમ્, ' જાણામો ણં અજ્ઞો ! સામાય્યસ્સ અદ્ધ ' હે આર્ય ! જાનીમ' સલ્લ ઘયં સામાયિક્કસ્ય અર્થ પ્રયોજનમ્, ' જાવ-જાણામો ણં અજ્ઞો વિહસગ્ગસ્સ અદ્ધં ' સ્થવિરો ! આપ વિષેક કે પ્રયોજન કો નહીં જાનતે હૈં ક્યોં કિ વહ પ્રયોજન અત્યન્ત સૂક્ષ્મ હૈં । (ઘેરા વિહસગ્ગ ન જાણતિ) હે સ્થવિરો ! આપ ધ્યુત્સર્ગ કો નહીં જાનતે હૈં ક્યોં કિ ડસકા કરના ઘડા કઠિન હૈં । (ઘેરા વિહસગ્ગસ્સ અદ્ધ ન જાણતિ) હે સ્થવિરો ! આપ ધ્યુત્સર્ગ કે અર્થ કો નહીં જાનતે હૈં ક્યોં કિ ડસકા સ્વરૂપ દુષોઽપ્ય હૈં । કાલાસયેપિપુત્ર અનગાર કી હસ ઘાત કો સુનકર ઇન સ્થવિર મગધન્તો ને કાલાસયેપિપુત્ર અનગાર સે ઇસા કહા-હે આર્ય ! હમ સામાયિક કો જાનતે હૈં સામાયિક કે પ્રયોજન કો જાનતે હૈં । હે આર્ય ! હમ પ્રત્યાક્યાન કો જાનતે હૈં, પ્રત્યાક્યાન કે અર્થ કો જાનતે હૈં । હે આર્ય ! હમ સયમ કો જાનતે હૈં, સયમ કે અર્થ કો અર્થાત્ પ્રયોજન કો જાનતે હૈં । હે આર્ય ! હમ સઘર કો જાનતે હૈં, સઘર કે પ્રયોજન કો જાનતે હૈં । હે આર્ય ! હમ વિષેક કો જાનતે હૈં, વિષેક કે અર્થ કો જાનતે હૈં । હમ ધ્યુત્સર્ગ કો

જાણતા નથી, કારણ કે તે પ્રયોજન અત્યંત સૂક્ષ્મ છે ' ઘેરા વિહસગ્ગ ન જાણતિ ' હે સ્થવિરો ! તમે ધ્યુત્સર્ગને જાણતા નથી કારણ કે તે કશ્વર્ણ કાય પણ કઠિન છે ' ઘેરા વિહસગ્ગસ્સ અદ્ધ ન જાણતિ ' હે સ્થવિરો ! તમે ધ્યુત્સર્ગનું પ્રયોજન પણ જાણતા નથી કારણ કે તંત્ર સ્વરૂપ જાણવાનું કામ પણ દુષ્કર છે કાલાસયેપિપુત્ર અનગારની તં વાત સાંભળીને તે સ્થવિર ભ્રમ પતોએ તેને આ પ્રમાણે કહ્યું— હે આર્ય ! અમે સામાયિકને સમજીએ છીએ અને સામાયિકના પ્રયોજનને પણ જાણીએ છીએ હે આર્ય ! અમે પ્રત્યાક્યાનનું પ્રયોજન પણ સમજીએ છીએ હે આર્ય ! અમે સયમને જાણીએ છીએ અને સયમના પ્રયોજનને પણ જાણીએ છીએ હે આર્ય ! અમે સઘરને જાણીએ છીએ અને સઘરના પ્રયોજનને પણ જાણીએ છીએ, હે આર્ય ! અમે વિષેકને જાણીએ છીએ અને વિષેકના અર્થને પણ જાણીએ છીએ તથા હે આર્ય ! અમે ધ્યુત્સર્ગને જાણીએ છીએ અને ધ્યુત્સર્ગના અર્થને પણ જાણીએ છીએ, સ્થવિર ભ્રમવાનું એ પ્રકારનું કથન સાંભળીને કાલાસયેપિપુત્ર

ત્વાત્, 'થેરા સંજમં ન જાણંતિ' હે સ્થવિરાઃ ભવન્તઃ સંયમં ન જાનન્તિ, તસ્યા-
ત્યન્તદુષ્કરત્વાત્, 'થેરા સંજમસ્સ અટ્ટં ન જાણતિ' હે સ્થવિરાઃ ! ભવન્તઃ સંય-
મસ્ય અર્થં ન જાનન્તિ, તસ્ય દુર્વિજ્ઞેયત્વાત્ 'થેરા સંવરં ન જાણંતિ' હે સ્થવિરાઃ !
ભવન્તઃ સંવરં ન જાનન્તિ, તદારાધનસ્ય દુઃસાધ્યત્વાત્, 'થેરા સંવરસ્સ અટ્ટં ન
જાણંતિ' હે સ્થવિરાઃ ! ભવન્તઃ સંવરસ્ય અર્થં ન જાનન્તિ, તદારાધનવિધેઃ દુર્જ્ઞેય-
ત્વાત્, 'થેરા વિવેગં ન જાણંતિ' હે સ્થવિરાઃ ! ભવન્તો વિવેકં ન જાનન્તિ,
તત્સ્વરૂપસ્ય દુર્વિજ્ઞેયત્વાત્, 'થેરા વિવેગસ્સ અટ્ટં ન જાણંતિ' હે સ્થવિરાઃ ! ભવન્તો
વિવેકસ્ય અર્થં ન જાનન્તિ, તસ્યાત્યન્તમુદ્ધત્વાત્, 'થેરા વિવેકગં ન જાણંતિ'

પ્રયોજન હૈં હિસ વ્રાત કો ધી નહીં જાનતે હૈં । વયોકિ પ્રત્યાખ્યાન કા
પ્રયોજન અત્યંત ગૂઢ હૈં । (થેરા સંજમં ન જાણંતિ) હે સ્થવિરો ! આપ
સંયમ કો ધી નહીં જાનતે હૈં । વયોં કિ વહ સંયમ અત્યન્ત દુષ્કર હૈં ।
(થેરા સંજમસ્સ અટ્ટં ન જાણંતિ) હે સ્થવિરો ! આપ સંયમ કા વ્યા
પ્રયોજન હૈં-હસે ધી નહીં જાનતે હૈં વયોં કિ સંયમ કા પ્રયોજન વડી
મુશ્કિલ સે સમજ સેં આવે ંસા હૈં । (થેરા સંવરં ન જાણંતિ) હે સ્થ-
વિરો ! આપ સંવર કો નહીં જાનતે હૈં વયોં કિ સંયમ કી આરાધના
અત્યન્ત દુઃસાધ્ય હૈં-સવ હસકી આરાધના કર સકે-ંસી નહીં હૈં ।
(થેરા સંવરસ્સ અટ્ટં ન જાણંતિ) હે સ્થવિરો ! આપ સંવર કે અર્થ કો
નહીં જાનતે હૈં વયોં કિ ંસકે આરાધના કી વિધિ દુર્વિજ્ઞેય હૈં । (થેરા
વિવેગં ન જાણંતિ) હે સ્થવિરો ! આપ વિવેક કો નહીં જાનતે હૈં વયો કિ
વિવેક કા સ્વરૂપ દુર્વિજ્ઞેય હૈં । (થેરા વિવેગસ્સ અટ્ટં ન જાણંતિ) હે

કારણુ કે પ્રત્યાખ્યાનનુ પ્રયોજન અત્યંત ગૂઢ-ગહન છે "થેરા સંજમ ન જાણંતિ"
હે સ્થવિરો ! તમે સંયમને પણ સમજતા નથી, કારણુ કે સંયમ પાળવાનું
કાર્ય અતિ દુષ્કર છે "થેરા સંજમસ્સ અટ્ટં ન જાણતિ" હે સ્થવિરો ! સંયમનું
શુ પ્રયોજન છે તે પણ તમે જાણતા નથી, કારણુ કે સંયમનુ પ્રયોજન સમ-
જવાનું કાર્ય અત્યંત મુશ્કેલ છે "થેરા સંવરં ન જાણતિ" હે સ્થવિરો ! તમે
સંવરને જાણતા નથી કારણુ કે સંવરની આરાધના કરવાનું કાર્ય અતિ દુષ્કર
છે બધા લોકો તેની આરાધના કરી શકતા નથી "થેરા સંવરસ્સ અટ્ટં ન
જાણતિ" હે સ્થવિરો ! તમે સંવરનુ શુ પ્રયોજન છે તે પણ જાણતા નથી,
કારણુ કે તેના આરાધનની વિધિ દુર્વિજ્ઞેય છે "થેરા વિવેગં ન જાણતિ"
હે સ્થવિરો ! તમે વિવેકને સમજતા નથી, કારણુ કે તેનું સ્વરૂપ દુર્વિજ્ઞેય છે
"થેરા વિવેગસ્સ અટ્ટં ન જાણતિ" હે સ્થવિરો ! તમે વિવેકનુ પ્રયોજન પણ

મઘતાં મતે સયમ, કથમ્ મઘર્તાં મતે સયમસ્ય અર્થ, યઃ મઘર્તાં મતે સ્વરા ? કથમ્ મઘર્તાં મત સત્ત્વસ્ય અર્થ ? ક મઘર્તાં મતે વિવેક કથમ્ મઘર્તાં મતે વિવેકસ્ય અર્થઃ પ્રયોજનમ્, કો મઘર્તાં મતે વ્યુત્સર્ગઃ ? इति सग्राह्यम्, 'तपमं वेदा मगधतो कासास्यवेपिपुत्र अणगारं एवं वयासी' तत खलु ते स्थविराः मगधन्त कालास्यवेपिपुत्रपुत्रमनगारमेवमयाविपुः 'आया णे अज्जो सामाइय' हे आर्य ! आत्माना अस्माकं मते सामायिक समभावरूप वर्तने, 'आया णे अज्जो सामाइयस्स अट्ठे' हे आर्य ! आत्मा एव नः अस्माक मते सामायिकस्य समभावरूपस्य अर्थः नूतनकर्मानुपादानपूर्वककृतकर्मनिर्जराख्यं प्रयोजनं वर्तते 'बाध-विटस्स

સે યહા પૂર્વોક્ત પાઠ કા સમ્રદ્ધ કિયા ગયા હૈ-જો દસ પ્રકાર સે હૈ-આપ કે મત મેં પ્રત્યાખ્યાન કયા હૈ ? પ્રત્યાખ્યાન કા પ્રયોજન કયા હૈ ? આપકે મત મેં સયમ કયા હૈ ? સંયમ કા પ્રયોજન કયા હૈ ? આપકે મત મેં સંઘર કયા હૈ ? સંઘર કા પ્રયોજન કયા હૈ ? આપ કે મત મેં વિવેક કયા હૈ ? વિવેક કા પ્રયોજન કયા હૈ ? આપકે મત મેં વ્યુત્સર્ગ કયા હૈ ? કાલસ્ય વેપિકપુત્ર અનગાર કી હસ પાત કો સુનકર ઊન સ્થવિર મગધન્તો ને ઊનસે ઈસા કહા કિ 'આયા ણે અજ્જો સામાઈય, આયા ણે અજ્જો સામાઈયસ્સ અટ્ઠે' હૈ આર્ય ! હમ લોગોં કે મત મેં સામાયિક ઘસ્ટુ સમ ભાવરૂપ આત્મા હૈ । ઓર હૈ આર્ય ! આત્મા હી સમભાવરૂપ સામાયિક કા અર્થ હૈ । આત્મા જમ સમભાવરૂપ સામાયિક મેં ઘતતી હૈ-તથ હસકે નવીન કર્મોં કા વધ નહીં હોતા હૈ ઓર પુરાને સન્નિવ કૃત કર્મોં કી નિર્જરા હોતી રહતી । યહી સામાયિકકા અર્થ-પ્રયોજન હૈ । હમી તરહસે

પદ્ધતી પૂર્વોક્ત નીચે પ્રમાણેનો પાઠ બદલ્ય કરાયો છે-આપના મત અનુસાર પ્રત્યાખ્યાન શુ અને પ્રત્યાખ્યાનનું પ્રયોજન શુ છે ? આપની માન્યતા મુજબ સયમ શુ છે ? અને સયમનું પ્રયોજન શુ છે ? આપની માન્યતા મુજબ વિવેક શુ છે અને વિવેકનું પ્રયોજન શુ છે ? આપના મત પ્રમાણે વ્યુત્સર્ગ શુ છે ?) કાસાસ્યવેપીપુત્ર અણગારના આ પ્રશ્નોનો તે સ્થવિર ભગવતોએ એવો ઉત્તર આપ્યો કે 'આયા ણે અજ્જો સામાઈય આયા ણે અજ્જો સામાઈયસ્સ અટ્ઠે' હે આર્ય ! અમારા મત પ્રમાણે સામાયિક વસ્તુ સમભાવરૂપ આત્મા છે, અને હે આર્ય ! આત્મા જ સમભાવરૂપ સામાયિકનો અર્થ છે જ્યારે આત્મા સમભાવરૂપ સામાયિકમાં પ્રવૃત્ત થાય છે ત્યારે તે નવા કર્મોના વધ બાધતો નથી અને પહેલાના મગધ કરેલા કર્મોની નિવૃત્તિ કરે છે એ જ સામાયિકનું પ્રયોજન છે એ જ પ્રમાણે અમારા મત પ્રમાણે આત્માજ પ્રત્યા

यावत् हे आर्य ! जानीमः खलु वयं प्रत्याख्यानम्, जानीमः प्रत्याख्यानस्य अर्थम् प्रयोजनम्, जानीमो वयम् संयमं, जानीमः संयमस्य अर्थम् प्रयोजनम्, जानीमो वयं संवरम्, जानीमः खलु संवरस्य अर्थम् प्रयोजनम्, जानीमो वयं विवेकम्, जानीमः खलु विवेकस्यार्थम् प्रयोजनम्, जानीमः खलु व्युत्सर्गं, जानीमो वयम् व्युत्सर्गस्य अर्थम् प्रयोजनम्, 'तत्त्वं से कालास्यवेपिकपुत्रे अणगारे ते थेरे भगवन्ते एवं वयासी' ततः खलु स कालास्यवेपिकपुत्रोऽनगरः तान् स्थविरान् भगवतः एवं-वक्ष्यमाणप्रकारेण अवादीत्- 'जड्णं अज्जो ! तुम्हे जाणह समाइयं हे आर्या ! यदि खलु यूयं जानीथ सामायिकम् 'जाणह सामाइयस्स अट्ठं' अथ च जानीथ यूयं सामायिकस्य अर्थं प्रयोजनम्, 'जाव जाणह-विउस्सग्गस्म अट्ठं' यावत्-जानीथ यूयं व्युत्सर्गस्य अर्थम् प्रयोजनम्, यावत्कारणात्-उपर्युक्तं प्रत्याख्यानदिव्युत्सर्गान्तं संग्राह्यम्, तदा 'के भे अज्जो ! सामाइए ?' हे आर्या ! किं भवतां मते सामायिकं वस्तु वर्तते ? 'के भे अज्जो ! सामाइयस्स अट्ठे ?' हे आर्या ! कः भवतां मते सामायिकस्य अर्थः प्रयोजनम् ? 'जाव-के भे विउस्सग्गस्स अट्ठे ?' यावत्-को भवतां मते व्युत्सर्गस्य अर्थः प्रयोजनम् ? यावत्करणात्-किं भवतां मते प्रत्याख्यानम् ? को भवतां मते प्रत्याख्यानस्य अर्थः ? कः

जानते हैं, व्युत्सर्ग के अर्थ को जानते हैं। इस प्रकार से स्थविर भगवन्तो के कथनको सुनकर कालास्यवेपिकपुत्र अनगर ने (ते थेरे भगवन्ते एवं वयासी) उन स्थविर भगवन्तो से ऐसा पूछा-हे आर्यो ! यदि आप लोग सामायिक को जानते हैं, सामायिक के प्रयोजन को जानते हैं, (यावत् व्युत्सर्ग के अर्थ-प्रयोजन को जानते हैं, यहां यावत् पद से उपर्युक्त प्रत्याख्यान से लेकर व्युत्सर्ग तक का पाठ ग्रहण किया गया है) तो हे स्थविरो ! मैं आप लोगों से पूछता हूं कि सामायिक आपके मत में क्या वस्तु है। और हे आर्यो ! सामायिक का प्रयोजन आप के मत में क्या है ? यावत् आप के मत में व्युत्सर्ग का अर्थ क्या है ? (यहां यावत् शब्द

अणुगारे "ते थेरे भगवन्ते एव वयासी" ते स्थविर भगवतोने पूछथुं के "हे आर्यो ! जे तमे सामायिकने जणुता हो, सामायिकनु प्रयोजन समजता हो, (यावत्) व्युत्सर्गनु प्रयोजन समजता हो (अर्थात् "यावत्" पहली प्रत्याख्यानथी लछने व्युत्सर्ग सुधीने उपर्युक्त पाठ अणु करायो छे) तो हे आर्यो ! हु आपने पूछ छुं के आपनी मान्यता प्रमाणे सामायिक थुं छे ? अने हे आर्यो ! आपनी मान्यतानुसार सामायिकनु थुं प्रयोजन छे ? "यावत्" आपना मत प्रमाणे व्युत्सर्ग अर्थ छे ? (अर्थात् "यावत्"

મતે સવરઃ इन्द्रिय-नो इन्द्रिय-प्रवृत्त्यवरोधरूपो वर्तते, आत्मा एव अस्माकं मते
 सवरस्य इन्द्रिय-नो इन्द्रिय प्रवृत्त्यवरोधरूपस्य अर्थ, नूतनकर्मबन्धनिरोधरूप
 अनास्रवસ્વરूप या प्रयोजन वर्तते, आत्मा एव अस्माकं मते विवेको विशिष्टबोध-

હુઆ ઓર હમ સ યમ કા પ્રયોજન પૃથિવ્યાવિક જીવોં ફી રક્ષા કરના
 અથવા પાપોં સે ચિરકરહના યહ હુઆ। અતઃ એવા યહ પ્રયોજન આત્મા
 સે છુદા નહીં હૈ કયોં ફિ આત્મા સ્વયં હી તદ્રૂપ હૈ। હમલિયે આત્મા હી
 સ યમ કા પ્રયોજનરૂપ પ્રકટ ફિયા ગયા હૈ। યહ સ યમ કા પ્રયોજન
 ૧૭ પ્રકાર કા વદા ગયા હૈ। આત્મા હી હમારે મત મેં સવર હૈ। સવર
 કા તાત્પર્ય इन्द्रियों और मन की प्रवृत्तियों को रोकना है। આત્મા જબ
 સ યમવાલાં બન જાતા હૈ તવ સ્વતઃ સ્વભાવ હી ઉસકી इन्द्रियों की एव
 मन की शुभाशुभरूप प्रवृत्तियां बंद हो जाती है। અતઃ યહ સંવર રૂપ
 ગુણ આત્મા કા હી હૈ। ઓર કિસી કા નહીં હૈ। હસલિયે ગુણગુણી મેં
 અમેદ્ધ ચિયક્ષા માનકર યહાં આત્મા કો હી સવરરૂપ કહા ગયા હૈ। હસ
 સવર વા પ્રયોજન બી યહી હૈ કિ વદ આત્મા મેં હોને વાલી શુભાશુભ
 પ્રવૃત્તિયોં કા નિરોધ કર વેતા હૈ। અતઃ શુભાશુભ પ્રવૃત્તિયોં કા નિરોધ
 હોનારૂપ પ્રયોજન આત્મા મેં હી રહતા હૈ અતઃ આચારાચેય ભાવ મેં કયે-
 ચિત્ અમેદ્ધ માનકર આત્મા કો હી સવર વા વલરૂપ પ્રકટ ફિયા ગયા
 હૈ। સંવરરૂપ આત્મા નૂતન કર્મ યથ સે રહિત હો જાતા હૈ-અર્થાત્ નબીન

સ યમરૂપ જલ્પી શકાય અને તે સ યમનું પ્રયોજન પૃથ્વીકાય વગેરે છ કાયના
 છવેની રક્ષા કરવી અને પાપોથી નિરક્ષ વધુ છે જલ્પી શકાય તેથી આપા પ્રકારનું
 પ્રયોજન આત્માથી શુદ્ધ નથી કારણ કે આત્મા પોતે સ યમરૂપ છે, તેથી આત્માને
 સ યમના પ્રયોજનરૂપ ઇર્થાઓ છે સ યમનું પ્રયોજન ૧૭ ચત્તર પ્રકારનું કહ્યું છે.
 આત્મા જ જમાથી માન્યતા પ્રમાણે સવર છે ઇન્દ્રિયો અને મનની પ્રવૃત્તિ
 બોને રોકવી તેનું નામ સવર છે બ્યારે આત્મા સ યમથી શુભ અને ઉત્થરે
 આપોઆ : ઇન્દ્રિયો અને મનની ચમળ પ્રવૃત્તિયો બંધ પડે ત્યારે તેથી
 સવર છે આત્માનો જ ગુણ છે બીજા કોઇનો નથી તેથી ગુણ અને શુભીમાં
 અલેહની અપેક્ષાએ બની આત્માને સવરરૂપ કહ્યો છે આત્માની અદર ચાડવી
 આશવની પ્રવૃત્તિઓનો નિરોધ કરવાનું પ્રયોજન તે સવર છે તેથી તેથી
 આત્માની પ્રવૃત્તિઓનો નિરોધ કરવારૂપ પ્રયોજન આત્મામાં જ રહેવું હોય
 તેથી આધાર આપિય બાવગા અલેહપડુ માનીને આત્માને જ સવરના
 રૂપ પ્રક કયા છે સવરરૂપ આત્મા નવા કમબધથી રહિત થઈ જાય છે

ગાસ્સ અદ્વે 'યાવત્ આત્મા એવ અસ્માકં મતે પ્રત્યાખ્યાને પૌરુષ્યાદિનિયમનરૂપં વર્તેતે, આત્મા એવ અસ્માકં મતે પ્રત્યાખ્યાનમ્વ પૌરુષ્યાદિ નિયમનરૂપસ્ય અર્થઃ કર્માગમનમાર્ગાત્મકાઽઽશ્રવદ્વારનિરોધરૂપં પ્રયોજન વર્તેતે, આત્મા એવ અસ્માકં મતે સંયમઃ પૃથિવીકાયપ્રવૃત્તિસંરક્ષણરૂપઃ, પાપોપરમરૂપો વા વર્તેતે આત્મા એવ અસ્માકં મતે સંયમસ્ય પૃથિવ્યાદિ સંરક્ષણરૂપમ્વ, પાપોપરમરૂપસ્ય વા અર્થઃ પૃથિવીકાયાધારમ્ભદિરતિરૂપમ્ તપ્તદશધિમ્ પ્રયોજન વર્તેતે, આત્મા એવ અસ્માકં

હમારે મત મેં આત્મા હી પ્રત્યાખ્યાન-પૌરુષી આદિ કે નિયમન રૂપ હૈ । ઓર આત્મા હી હમારે મત મેં પૌરુષી આદિ કે નિયમનરૂપ પ્રત્યાખ્યાન કા પ્રયોજન હૈ । અર્થાત્ ઇસ પ્રત્યાખ્યાન કા પ્રયોજન યહી હૈ કિ ઇસકે પ્રભાવ સે આત્મા મેં કર્મોં કે ડાગમન કા માર્ગરૂપ જો આશ્રતાર હૈ ઉસકા નિરોધ હો જાતા હૈ । હમારે મતમેં આત્મા હી સંયમ હૈ । પૃથિવી કાય આદિ જીવોં કી રક્ષા કરને રૂપ, અથવા પાપોપરમરૂપ સંયમ હોતા હૈ । જબ સંયમ પૃથિવીકાય આદિ જીવોં કી રક્ષા કરનેરૂપ અથવા પાપોં સે ઉપરમરૂપ માના ગયા હૈ-તો ઇસ ક્રિયા કા કર્તા એક આત્મા હી હોતા હૈ-અતઃ ક્રિયા ઓર ક્રિયાવાન્ અભેદ વિવિક્ષા કે વશ સે આત્મા હી સંયમરૂપ માન લિયા ગયા હૈ । તથા આત્મા હી સંયમ કા પ્રયોજન હૈ । ઇસકા તાત્પર્ય યહ હૈ કિ આત્મા કા નિજ સ્વભાવ પૃથિ-વ્યાદિ જીવોં કી વિરાધના કરનેરૂપ અથવા પાપોં મેં પ્રવૃત્તિ કરનેરૂપ નહી હૈ-અર્થાત્ સંયમરૂપ હૈ । અતઃ જબ આત્મા કા નિજ સ્વભાવ હી એસા હૈ તો ઉસકા તાત્પર્ય હી યહ હુઆ કિ આત્મા સ્વયં હી સંયમ રૂપ

ખ્યાન પોરસી વગેરેના નિયમનરૂપ છે અને અમારા મત અનુસાર આત્મા જ પોરસી વગેરેના નિયમનરૂપ પ્રત્યાખ્યાનનું પ્રયોજન છે એટલે કે તે પ્રત્યાખ્યાનનું પ્રયોજન એ છે કે તેના પ્રભાવથી આત્માની સાથે કર્મોના અગમનરૂપ જે આશ્રવદ્વારો છે તે બંધ થઈ જાય છે. અમારા મત પ્રમાણે આત્મા જ સંયમ છે, પૃથ્વીકાય, અખકાય વગેરે જીવોની રક્ષા કરવારૂપ અથવા પાપથી દૂર રહેવા રૂપ સંયમ હોય છે જે સંયમને પૃથ્વીકાય વગેરે જીવોની રક્ષા કરવારૂપ, અથવા પાપોથી વિરામ પામવારૂપ માનવામાં આવે તો તે ક્રિયાનો કર્તા આત્મા જ ગણાય છે તે કારણે ક્રિયા અને ક્રિયાવાન (કર્તા) માં અલેક્ષની અપેક્ષાએ આત્માને જ સંયમરૂપ માન્યો છે તથા આત્મા જ સંયમનું પ્રયોજન છે એટલે કે આત્માનો સ્વભાવ પૃથ્વીકાય વગેરે છ કાયના જીવોની વિરાધના કરવાનો અથવા પાપોમાં પ્રવૃત્તિ કરવાનો નથી એટલે કે આત્મા સંયમરૂપ છે. આ રીતે આત્માનો પોતાનો સ્વભાવ જ સવરૂપ છે તેથી આત્મા પોતે જ

મતે સવર ઇન્દ્રિય-નો ઇન્દ્રિય-પ્રવૃત્ત્યવરોધરૂપો વર્તે, આત્મા એ અસ્માક મતે સવરસ્ય ઇન્દ્રિય-નો ઇન્દ્રિય પ્રવૃત્ત્યવરોધરૂપસ્ય અર્થ, નૂતનકર્મધન્યનિરાપરૂપ અનાત્મસ્વરૂપ ત્રા પ્રયોજન વર્તે, આત્મા એ અસ્માક મતે વિવેકો વિનિવૃત્તો-

હુઆ ઓર હમ સયમ કા પ્રયોજન પૃથિવ્યાદિક જીવોં કી રક્ષા કરના અથવા પાપો સે ચિરત્તરહના યહ હુઆ। અતઃ યેમા યહ પ્રયોજન આત્મા સે છુદા નહીં હૈં કયોં કિ આત્મા સ્વયં હી તદ્રૂપ હૈં। હમલિયે આત્મા હી સયમ કા પ્રયોજનરૂપ પ્રકટ કિયા ગયા હૈં। યહ સયમ કા પ્રયોજન ૧૭ પ્રકાર કા વર્ણ ગયા હૈં। આત્મા હી હમારે મત મેં સવર હૈં। સવર કા તાત્પર્ય ઇન્દ્રિયોં ઓર મન કી પ્રવૃત્તિયોં કો રોકના હૈં। આત્મા જબ સયમચાલો યન જાના હૈં તય સ્વતઃ સ્વમાય હી ઉમકી ઇન્દ્રિયોં કી એ મન કી શુભાશુભરૂપ પ્રવૃત્તિયોં યદ્દ હો જાતી હૈં। મન યહ સંચર રૂપ ગુણ આત્મા કા હી હૈં। ઓર કિસી કા નહીં હૈં। હસલિયે ગુણગુણી મેં અમેદ્ વિશ્વાસ માનકર યહાં આત્મા કો હી સવરરૂપ કહા ગયા હૈં। હસ સવર કા પ્રયોજન બી યહીં હૈં કિ યહ આત્મા મેં હોને વાલી શુભાશુભ પ્રવૃત્તિયોં કા નિરોધ કર વના હૈં। અતઃ શુભાશુભ પ્રવૃત્તિયોં કા નિરોધ હોનારૂપ પ્રયોજન આત્મા મેં હી રહતા હૈં અતઃ આધારાલેપ માવ મેં કયં-ચિત્ અમેદ્ માનકર આત્મા કો હી સવર કા કન્ઠરૂપ પ્રકટ કિયા ગયા હૈં। સવરરૂપ આત્મા નૂતન કર્મ યદ્દ સે રહિત હો જાતા હૈં-અર્થાત્ નવીન

સયમરૂપ નહીં શકાય અને તે સયમનુ પ્રયોજન પૃથ્વીકાય વગેરે ઉદ્ધવના છવેની રક્ષા કરતી અને ૫ પૃથ્વી વિશ્વાસ યદ્દ કો ગતી શકાય તેથી આવા પ્રકારનુ પ્રયોજન આત્માથી શુદ્ધ નથી કારણ કે આત્મા પોતે સયમરૂપ છે તેથી આત્માને સયમનુ પ્રયોજનરૂપ ધ્યાન્યો છે સયમનુ પ્રયોજન ૧૭ સત્તર પ્રકારનુ કશું છે આત્મા જ આમાની માન્યતા પ્રમાણે સવર છે ઇન્દ્રિયો અને મનની પ્રવૃત્તિ જોને રોકવી તેનુ નામ સવર છે આપે આત્મા સયમથી યુગ્મ અને ઉત્કારે આપોઆપ ઇન્દ્રિયો અને મનની અસંગ પ્રવૃત્તિયો જાણે ૫૧ બલ છે તેથી સવર કો આત્મ નો જ શુદ્ધ છે બીજા કાનો નથી તેથી શુદ્ધ અને શુભીમા જોલેદની અપે ૧૭ અર્ધી આ માને સવરરૂપ કો છે આત્માની અદર ચાકતી આત્મવની પ્રવૃત્તિજોને નિરોધ કરવા નુ પ્રયોજન તે સવર છે તેથી તેથી આત્માની પ્રવૃત્તિજોને નિરોધ કર રૂપ પ્રયોજન આ મામા ૮ રતેનુ દેવ છે તેથી આપણે આપણે આત્મા જોલેદ ૧ માનીને આ માને જ સવરનુ રૂપ પ્રકાર છે સવરરૂપ આત્મા નવા કમલધથી રહિત યદ્દ અપ છે

રૂપો વર્તેતે, તસ્ય જ્ઞાનમયસ્વરૂપત્વાત્, આત્મા એવ અસ્માકં મતે વિવેકસ્ય વિશિષ્ટ
બોધરૂપસ્ય અર્થઃ ત્યાજ્યવસ્તુત્યાગાદિરૂપં પ્રયોજનં વર્તેતે, આત્મા એવ અસ્માકં
મતે વ્યુત્સર્ગઃ કાયમમત્વત્યાગરૂપો વર્તેતે, આત્મા એવ અસ્માકં મતે વ્યુત્સર્ગસ્ય
કાયમમત્વત્યાગરૂપસ્ય અર્થઃ અનભિષ્વજ્ઞતાલક્ષણં પ્રયોજનમ્ વર્તેતે, તથાહિ સમ-
ભાવરૂપં સામાયિકમુચ્યતે, સમભાવશ્ચ સમતા, રાગદ્વેષવિયુક્તો યઃ સર્વભૂત-પ્રાણ

કર્મોં કા આસ્રવ ઉસકે નહીં હોતા હૈ । યહી શુભાશુભ પ્રવૃત્તિયો કા
નિરોધ હૈ । ઓર યહી સંવર કા પ્રયોજન હૈ । વિવેક વિશિષ્ટ જ્ઞાન હોતા
હૈ । સો હમારે મત મેં આત્માહી વિવેકરૂપ હૈ સો હસ કથન કા સારાંશ
ગહ હૈ કિ આત્મા સ્વયં વિશિષ્ટ જ્ઞાનરૂપ હૈ । ક્યોં કિ આત્મા કા સ્વ-
રૂપ હી જ્ઞાનમય હૈ । હસ જ્ઞાન કા પ્રયોજન કેવલ હતના હી હૈ કિ વહ
હેય વસ્તુ કા બોધ કરાકર ઉસે હેય સમજાતા હૈ ઓર ઉપાદેય વસ્તુ કા
બોધ કરાકર ઉસે ઉપાદેય વતાતા હૈ । અતઃ એસા જો યહ વિવેક કા પ્ર-
યોજન હૈ વહ આત્મારૂપ વસ્તુ હી હૈ । ક્યોં કિ જય આત્મા હી વિવેકરૂપ
હૈ તો હસ વિવેક કા પ્રયોજન ભી આત્મા રૂપ હી હોતા હૈ । હસ કથન મેં
ફલરૂપ પ્રયોજન કો વિવેક સે અભિન્ન માનકર ઉસ વિવેકરૂપ આત્માકો
વિવેક કા પ્રયોજનરૂપ માના ગયા હૈ । શરીર સે મમત્વ કા ત્યાગ કરના
હસકા નામ વ્યુત્સર્ગ હૈ । સો આત્મા હી કાયશરીર મમત્વ ત્યાગરૂપ વ્યુ-
ત્સર્ગ કા અર્થ હૈ અર્થાત્ અનભિષ્વજ્ઞતા (વિષયોં મેં આસક્તિ નહીં રલ્લના
રૂપ પ્રયોજનરૂપ હૈ । ટીકાકાર હસી સવ વિષય કો “તથાહિ” કહ

એટલે કે તેમા નવા ક્રમેની આશ્રવ થતો નથી એનું નામ જ શુભાશુભ પ્રવૃ-
ત્તિયોનો નિરોધ છે, અને એ જ સંવરનું પ્રયોજન છે, જ્ઞાન વિવેકયુક્ત હોય
છે. અમારા મત પ્રમાણે આત્મા જ વિવેકરૂપ છે એટલે કે આત્મા પોતે જ
વિશિષ્ટ જ્ઞાનરૂપ છે, કારણ કે આત્માનું સ્વરૂપ જ જ્ઞાનમય છે તે જ્ઞાનનું પ્રયોજન
એટલું જ છે કે તેની મારફત હેય અને ઉપાદેય વસ્તુનો બોધ થાય છે અને
તે જ્ઞાનવડે આત્માને હેય અને ઉપાદેયની સમજણ પડે છે વિવેકનું જે
પ્રયોજન છે તે આત્મારૂપ જ છે, કારણ કે જો આત્મા જ વિવેકરૂપ હોય તો
વિવેકનું પ્રયોજન પણ આત્મારૂપ જ હોય છે આ કથનવડે ક્લરૂપ પ્રયોજનને
વિવેકથી અલિપ્ત માનીને વિવેકરૂપ આત્માને વિવેકના પ્રયોજનરૂપ માન્યો છે.
શરીર ઉપરથી મમત્વનો ત્યાગ કરવો તેનું નામ વ્યુત્સર્ગ છે, આત્મા જ કાયના
મમત્વના ત્યાગરૂપ વ્યુત્સર્ગનો અર્થ છે-એટલે કે વિષયોમા આસક્તિ ન રાખવી
એવો પ્રયોજનરૂપ છે ટીકાકાર આ સમસ્ત વિષયને “તથાહિ” પદ કહીને સ્પષ્ટ

—જીવ-સર્વાન્ આત્મવત્યશ્યયિ સ સમઃ તસ્ય સમભાવો મવતિ, ધર્મધર્મિણોર મેદાત્ ભાવપ્રધાનનિર્દેશાદ્ યા સમસ્ય સમત્વમર્થઃ, તથા ચ રાગદ્વેષરહિતસ્ય સમસ્ય સમતારૂપસ્ય પ્રતિક્ષણચિલ્ક્ષણાપૂર્વાપૂર્વકર્મનિર્જરાદેતુરૂપાયાઃ વિશુદ્ધે માયો લામઃ, સમાય, સ એવ સામાયિકમ્, અથવા સમાનાં જ્ઞાનદર્શનચારિત્રાણામ્-આય સમાય પ્રવદ્માનશ્ચારદશુષ્કપ્પક્ષદ્વિતીયાદિચન્દ્રકલાવત્ પ્રતિક્ષણચિલ્ક્ષણ-

કર સ્પષ્ટ કરતે હૈં । સમ-ભાવરૂપ સામાયિક કહા ગયા હૈ । સમ-ભાવ કા અર્થ હૈ સમતા । રાગદ્વેષ સે રહિત હોકર જો મમસ્ત પ્રાણિયોં કો સમ સ્તમૂર્તોં કો, સમસ્ત જીયોં કો, સમસ્ત મર્ત્યોં કો, અપને સમાન વૈભવતા હૈ-જાનતા હૈ-ઘડ સમ હૈં ઓર હમ સમ કા જો ભાવ હોતા હૈં ઘડ સમ ભાવ હૈં ધર્મ ઓર ધર્મોં કે અમેદ સે અથવા ભાવપ્રધાન નિર્દેશ સે સમ કા અર્થ સમત્વ હૈ । તથા ચ-રાગદ્વેષ સે રહિત એસે સમતારૂપ સમ કો જો પ્રતિક્ષણ ચિલ્ક્ષણ વિશુદ્ધિ કા લામ હોતા હૈં કિ જો વિશુદ્ધિ અપૂર્વ કર્મનિર્જરા કી હેતુમૂલ હોતી હૈં ઉમકા નામ સમાય હૈં । ઘડ સમાય હી સામાયિક હૈં । તાત્પર્ય હમકા ઘડ હૈં કિ સમાય સે સામાયિક પના હૈં ઓર સમ+આય સે સમાય પના હૈં । હસમેં સમ શબ્દ કા અર્થ રાગદ્વેષ સે રહિત જો આત્માપ્રાણી હૈં ઘડ હૈં, ઓર આય કા અર્થ લામ હૈં । હસ પ્રાણી કે લિયે પ્રતિક્ષણ ચિલ્ક્ષણ એસી વિશુદ્ધિ કા લામ હોતા રહતા હૈં કિ જિસ વિશુદ્ધિ કે ઘલ પર ઉસ આત્મા કે અપૂર્વ અપૂર્વ-જો પહિલે કમી નહીં છૂદ્ડે ંમી-કર્મ નિર્જરા કી હેતુમૂલ હોતી રહતી હૈં । અથવા

કરે છે સામાયિકને મમભાવરૂપ કહેલ છે મમભાવ એટલે સમતા રાગદ્વેષથી રહિત બનીને તમામ પ્રાણીઓને, તમામ ભૂતોને, તમામ છોવોને, અને તમામ મર્ત્યોને પોતાની માફક ગણવા તેનું નામ મમભાવ છે । ધર્મ અને ધર્મીના અભેદથી અથવા ભાવપ્રધાન નિર્દેશથી સમને । અર્થ સમત્વ છે તથા—રામ દેવથી રહિત એવા સમતારૂપ (સમભાવયુક્ત વ્યક્તિને) પ્રતિજ્ઞા જે વિલક્ષણ વિશુદ્ધિની પ્રાપ્તિ થાય છે અને જે વિશુદ્ધિ અપૂર્વ કર્મનિર્જરાના દેતુરૂપ બને છે તે વિશુદ્ધિનું નામ જ “સમાય” છે તે સમાય જ સામાયિક છે તાત્પર્ય એ છે કે સમ+આય=સમાય અને સમાયમાંથી જ સામાયિક શબ્દ બન્યો છે રાગદ્વેષથી રહિત જે આત્મા હોય છે તેનું નામ ‘સમ’ છે અને આય એટલે લામ (પ્રાપ્તિ) હોવને પ્રતિજ્ઞા એવી વિલક્ષણ વિશુદ્ધિની પ્રાપ્તિ થતી રહ છે કે જે વિશુદ્ધિના પ્રભાવથી આત્મા અપૂર્વ - પૂર્વ કી ન અનુભવી હોય એવી-કર્મ નિર્જરા કરે છે । અથવા સમ શબ્દનો અર્થ રામ

જ્ઞાનાદિલાભઃ, સં એવ પ્રયોજનમસ્યેતિ સામાયિકમ્, એવમ્ સમતાપ્રતિ-
પન્નો હિ જ્ઞાનાદિસમ્પન્નો હિ આત્મા પ્રતિક્ષણમપૂર્વૈઃ જ્ઞાનદર્શનચારિત્રપર્યાયૈઃ
ભવાટવીભ્રમણજન્યસંકલેશવિનાશકૈઃ અનુપમસુખહેતુભૂતૈઃ તિરસ્કૃતચિન્તામણિ-
કલ્પદ્રુમકામધેનુસદૃશૈઃ સંયુજ્યતે, અથવા સમો રાગાદિરહિતસ્ય આયો ગમનં
પ્રવૃત્તિઃ સમાય. સમાય એવ વા, સમયે ભવં વા, સમાયેન નિર્વૃત્તં વા, સમાયસ્યાં શો
વા, સમાયો વા પ્રયોજનમસ્યેતિ સામાયિકમ્, । ઉક્તમ્—

સમ શબ્દ કા અર્થ જ્ઞાન, દર્શન, ચારિત્ર હૈ ઓર આય કા અર્થ લાભ
હૈ । જૈસે-શરત્કાલ મૈં નિર્મલ ચન્દ્ર કી કલાઈ શુદ્ધપક્ષ કી દ્વિતીયાદિ
તિથિયૌં મૈં વઢતી જાતી હૈ ઉસી પ્રકાર સે પ્રતિક્ષણ મૈં વિલક્ષણ જ્ઞાના-
દિક કા જો આત્મા કો લાભ હોતા રહતા હૈ ઉસકા નામ સમાય હૈ ।
યહ સમાય હી જિસકા પ્રયોજન હૈ વહ સામાયિક હૈ । ઇસ તરહ સમતા
પ્રતિપન્ન ઓર જ્ઞાનાદિક સે સંપન્ન આત્મા, પ્રતિક્ષણ અપૂર્વ જેસે જ્ઞાન,
દર્શન ઓર ચારિત્રરૂપ પર્યાયૌં દ્વારા કિ જો ઇસકે ભવાટવી મૈં ભ્રમણ
કરને કે સંકલેશ કે નાશક હૈં, અનુપમ સુખ કે હેતુભૂત હૈં, ઓર
ચિન્તામણિ, કલ્પવૃક્ષ એવં કામધેનુ સે બી ઈનો વહુત વઢકર હૈં યુક્ત
હોતા રહતા હૈ ઉસકા નામ સામાયિક હૈ । અથવા-રાગાદિ સે રહિત
હોના ઇસકા નામ સમ હૈ ઇસ સમ કી જો આય-પ્રવૃત્તિ હૈ વહ સમાય
હૈ । યહ સમાય હી સામાયિક હૈ, અથવા સમાય મૈં જો હો વહ સામા-
યિક હૈ, અથવા સમાયસે નિર્વૃત્ત-નિષ્પન્ન હો વહ સામાયિક હૈ, અથવા
સમાય કા જો અંશ હૈ વહ સામાયિક હૈ, અથવા સમાય જિસકા

દર્શન અને ચારિત્ર થાય છે અને આયનો અર્થ લાભ થાય છે જેમ શરદ-
ઋતુમાં ચન્દ્રની કળા શુદ્ધ ધીજથી શરૂ થઈને દરરોજ વધતી જાય છે
તેમ પ્રતિક્ષણ આત્માને જે વિલક્ષણ જ્ઞાનાદિકની પ્રાપ્તિ થતી રહે છે તેનું નામ
જ સમાય છે. આ સમાય જ જેનું પ્રયોજન છે તે સામાયિક કહેવાય છે આ
રીતે સમતાયુક્ત અને જ્ઞાનાદિથી યુક્ત આત્મા, પ્રતિક્ષણ સમ્યગ્ જ્ઞાન, દર્શન
અને ચારિત્રરૂપ પર્યાયોથી યુક્ત થતો રહે છે કે જેથી ભવાટવીમાં ભ્રમણ કરવા
રૂપ ઇખનો નાશ થાય છે, જે અનુપમ સુખને અપાવનારી છે, અને જે
ચિન્તામણિ, કલ્પવૃક્ષ અને કામધેનુથી પણ અધિક ગણાય છે. એનું નામ જ
સામાયિક છે અથવા-રાગાદિથી રહિત થવું એનું નામ “સમ” છે. તે
સમની જે આય (પ્રવૃત્તિ) છે તેનું નામ “સમાય” છે તે સમાય જ
સામાયિક છે, અથવા સમાયમાં જે હોય તેને સામાયિક કહે છે, અથવા સમા-
યથી જે નિષ્પન્ન થાય છે તેનું નામ સામાયિક છે, અથવા સમાયનો જે અંશ

“રાગદોષવિરહિઓ, સમો સિ અયણ અઽપિ ગમણ તિ ।

સમગમણતિ સમાઓ, સ એવ સામાઈયં નામ ॥ ૧ ॥

અથવા મઓ સમાપ, નિન્વત્ત તેણ સમ્મય વાવિ ।

અ સપ્પઓયણં વા, તેણ વા સામાઈય નેયં ” સિ ॥ ૨ ॥

છાયા—રાગદોષવિરહિતઃ, સમોઽસ્તિ અયન પ્રવૃત્તિઃ ગમનમિતિ ।

સમાગમનમિતિ સમાય, સ એવ સામાયિક નામ ॥ ૧ ॥

અથવા મવઃ સમાય નિર્વૃત્ત તેન સન્મય વાપિ ।

યત્ તત્પયોજન વા, તેન વા સામાયિકં જ્ઞેયમ્ ॥ ૨ ॥ इति

અથવા સમાનિ જ્ઞાનાદીનિ તેપુ તેવાં અયનમ્-ગમનમ્ અયઃ સમાય, સ એવ સામાયિકમ્ इति ।

અર્થાદિ વ—“અથવા સામાઈ સમ્મય-નાણ વરણાઈ ।

તેસુ તેહિં વા અયનં અઓ સમાઓ સ એવ સામાઈયં નામ ॥૧॥

છાયા—અથવા સમાનિ સમ્યક્ત્વજ્ઞાનાવરણાનિ ।

તેપુ તેવાં અયનમ્ અય સમાયઃ સ એવ સામાયિકં નામ ॥૧॥

અથવા સમસ્ય રાગાદિરહિતસ્ય આયો ગુણાનાં સામા, સમાનાં વા જ્ઞાનાદીનામાય સમાયઃ, સ એવ સામાયિકમ્ ।

પ્રયોજન હૈ વહ સમાયિક હૈ । કહા ની હૈ—

સામાયિક શબ્દ કી જો વ્યુત્પત્તિ કહી ગઈ હૈ । અથવા-સમ-જ્ઞાન આદિકોં મેં, અથવા જ્ઞાન આદિકોં બાર । જો પ્રવૃત્તિ હૈ વહ સમાય હૈ । યહ સમાય હી સામાયિક હૈ । સો હી કહા હૈ—

અથવા-રાગાદિરહિત આત્મા રૂપ સમ કો જો ગુણોં કા હામ હોતા હૈ વહ સમાય હૈ, અથવા-સમ-જ્ઞાનાદિકોં કા જો આય-લામ હૈ વહ સમાય હૈ । યહ સમાય હી સામાયિક હૈ ।

જે તેનુ નામ સામાયિક છે અથવા જેનુ પ્રયોજન સમાય છે તે સામાયિક છે. આ ગાથાઓવડે સામાયિક શબ્દની જે વ્યુત્પત્તિ બતાવવામા આવી છે તે પૂર્વે અથ સહિત પ્રકરણવામાં આવી ગઈ છે. અથવા-સમ-જ્ઞાન વગેરેમાં અથવા જ્ઞાનાદિઓવડે જે પ્રવૃત્તિ બાદે છે તેનુ નામ સમાય છે તે સમાય જ સામાયિક છે.

અથવા—જ્ઞાનાદિથી સહિત આત્મારૂપ સમને જે શુભોનો લાભ (પ્રાપ્તિ) થાય છે તેનુ નામ સમાય છે અથવા જ્ઞાનાદિની જે આય (લાભ) તેને સમાય કહે છે તે સમાય જ સામાયિક છે.

ઉક્તશ્ચ—અહવા સમસ્સ આઓ, ગુણાણલાભોત્તિ જો સમાઓ સો ।

અહવા સમણમાઓ, જેઓ સમાઈયં નામ ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

છાયા—અથવા—સમસ્ય આયો ગુણાનાં લાભઃ ઇતિ યઃ સમાયઃ સઃ ।

અથવા સમાનમાયો નેયઃ સામાયિકં નામ ॥ ૧ ॥ ઇતિ

અથવા—સામ્નિ મૈત્ર્યાં સામ્ના વા અયઃ તસ્ય વા આયઃ સામાયઃ, સ એવ સામાયિકમ્ । ઉક્તશ્ચ—

“ અહવા સામં મેત્તી, તત્થ અઓ તેણેવ ત્તિ સમાઓ ।

અહવા સમસ્સાઓ લાભો, સામાઈય નામ ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

છાયા—અથવા સામં મૈત્રી, તત્ર આયઃ તેન વેતિ સામાયઃ ।

અથવા સામસ્યાયો લાભઃ, સામાયિકં નામ ॥ ૧ ॥

તત્ત્વ સામાયિકં મૂલગુણાનામાધારભૂત સાવધયોગવિરતિરૂપમ્, આત્મનશ્વ જ્ઞાનદર્શનચારિત્રરૂપરત્નત્રયવત્ત્વસ્યૈવ વાસ્તવિકાત્મત્વસ્વરૂપતયા રાગદ્વેષરહિતસ્ય નિરાવણસ્ય તસ્યાત્મનઃ કૃતકર્મનિર્જરાહેતુભૂતવિશુદ્ધિમત્ત્વેન જ્ઞાનદર્શનચારિત્રવત્ત્વેન ચ સ્વરૂપોપપત્તેઃ વસ્તુસ્થિત્યા આત્મૈવ સામાયિકમિતિ સિદ્ધમ્ । ઉક્તશ્ચ—

અથવા—સમ શબ્દ કા અર્થ મૈત્રી હૈ, સો હસ મૈત્રી મેં અથવા હસ મૈત્રી કે દ્વારા જો અય—ગમન પ્રવૃત્તિ હૈ—વહ સમાય હૈ, અથવા—સામ કા જો આય—લાભ હૈ વહ સમાય હૈ યહ સામાયિક હૈ । કહા મી હૈ—

યહ સામાયિક મૂલગુણોં કા આધારભૂત કહા ગયા હૈ । ઓર હસમેં સમસ્ત સાવધયોગકા પરિત્યાગ હોનેસે યહ સાવધયોગવિરતિરૂપ હોતા હૈ । જ્ઞાન, દર્શન, ચારિત્રરૂપ રત્નત્રયસે યુક્ત જો આત્મા હેં વહી વાસ્તવિકરૂપ મેં આત્મત્વસ્વરૂપ વાલી હૈ । અતઃ રાગદ્વેષ સે રહિત એવં નિરાવરણ ઉસ આત્મા કો, અપને દ્વારા કૃતકર્મોં કી નિર્જરા કી હેતુભૂત જો વિશુદ્ધિ હૈ ઉસ વિશુદ્ધિ કે યુક્ત હો જાને કે કારણ ઓર જ્ઞાન, દર્શન

અથવા—સમ શબ્દનો અર્થ મૈત્રી છે, તેથી તે મૈત્રીમા અથવા તે મૈત્રી પડે જે અય—ગમન—પ્રવૃત્તિ થાય છે, તેનું નામ સમાય છે અથવા સમનો જે લાભ થાય છે તેને જ સમાય કહે છે. એ સમાય જ સામાયિક છે.

તે સામાયિકને મૂળ ગુણોના આધારરૂપ કહેલ છે, અને તેમા તમામ સાવધયોગોનો પરિત્યાગ થતો હોવાથી તેને સાવધયોગ વિરતિરૂપ પણ કહેલ છે. જ્ઞાન, દર્શન અને ચારિત્રરૂપ રત્નત્રયથી યુક્ત જે આત્મા છે, એ જ આત્મા વાસ્તવિક રીતે આત્મત્વ સ્વરૂપવાળો હોય છે તેથી રાગદ્વેષથી રહિત અને આવરણોથી રહિત એવા તે આત્માને, ચોતાની મારફત થતી કૃતકર્મોની નિર્જરા કરવાના હેતુરૂપ જે વિશુદ્ધિ છે તે વિશુદ્ધિથી યુક્ત થઈ જવાને કારણે જ્ઞાન, દર્શન ચારિત્રથી યુક્ત થઈ જવાને કારણે, ચોતાના સ્વરૂપની પ્રા

‘જીવો ગુણપટ્ટિવશો, નયસ્સ દ્વન્ધ્વદ્વિયસ્સ સામાય્યં’ इति ।

છાયા — જીવો ગુણ પ્રતિપક્ષો નયસ્ય દ્રવ્યાર્થિકસ્ય સામાયિકમ્ ॥

एतावता द्रव्यार्थिकनयानुसारेण तथाविधविशुद्धज्ञानदर्शनचारित्र्यस्त्वारि
रूपनिजगुणप्रतिपक्ष आत्मैव सामायिकमिति फलितम्, तथा नूतनकर्मानुपा
दानकृतकमनिर्जरणरूप सामायिकस्य प्रयोजनमपि आत्मैव, नवकर्मनुपादानकृत
कर्मनिर्जरादीनाम् आत्मगुणतया गुणगुणिनोरमेदात् सद्गुणानामात्माऽनतिरिक्त
त्वात् ‘नोलो घट’ इत्यादौ नीलगुणस्य घटेन गुणिना सह अमेददर्शनात्, एवं
तथा चारित्र्यसे युक्त हो जानेके कारण अपने स्वरूप की प्राप्ति हो जाती
है । इससे वस्तुगत्या आत्मा ही सामायिक है यह बात सिद्ध हो जाती
है । सो ही कहा है—

“जीवो गुणपट्टिबध्नो, नयस्स द्ध्वद्विपस्स समाय्यं”

गुणप्रतिपक्ष आत्मा ही द्रव्यार्थिक नय के अनुसार सामायिक है
अर्थात्-द्रव्यार्थिक नय के मन्तव्यानुसार आत्मा जब तथाविध विशुद्ध
जो ज्ञान, दर्शन और चारित्र्यरूप निज गुणों को प्राप्त कर लेता है तब
वह ऐसा आत्मा ही सामायिक है यह फलित हो जाता है । तथा-नवीन
कर्मों का ग्रहण नहीं करना और पूर्वकृत संचित कर्मों की निर्जरा होना
यह जो सामायिक का प्रयोजन है यह भी आत्मा ही है । क्योंकि
नवीन कर्मों का ग्रहण नहीं होना और पूर्वकृत संचित कर्मों की निजरा
होते रहना आदि जो बातें हैं वे सब आत्माके गुण हैं-अतः गुण और
गुणी में अमेद विषश्चावदा सामायिक के प्रयोजन को आत्मारूप कह
दिया गया है । गुणगुणी में अमेद विवक्षा इसलिये कथ्येयित् काली

જવાને કારણે, પોતાના સ્વરૂપની પ્રાપ્તિ થઈ બધાં છે તેથી એ વાત સિદ્ધ
થાય છે કે આત્મા જ સામાયિક છે કહ્યું પણ છે કે—

‘जीवो गुणपट्टिबध्नो, नयस्स द्ध्वद्विपस्स समाय्यं’

द्रव्यार्થિક નયની અપેક્ષાએ શુદ્ધવિશિષ્ટ આત્મા જ સામાયિક છે એટલે
દ્રવ્યાર્થિક નયની માન્યતાનુસાર એ આત્મા વિશુદ્ધ જ્ઞાન, દર્શન અને ચારિત્ર
રૂપ નિજગુણોને પ્રાપ્ત કરે છે એ આત્મા જ સામાયિક છે એ વાત સિદ્ધ
થાય છે તથા નવાં કર્મોને પ્રવણ ન કરવા અને પૂર્વકૃત મચિત કર્મોની નિજરા
કરવી, એવું એ સામાયિકનું પ્રયોજન છે તે પણ આ માં જ છે કારણ કે
નવાં કર્મો પ્રવણ ન કરવા અને મચિત પૂર્વકૃત કર્મોની નિજરા કરવી એ
આત્મા જ ગુણ છે તેથી ગુણ અને શુદ્ધિમા અસેતની અપેક્ષાએ સામાયિકના
પ્રયોજનને જ. માત્ર કહેવું છે ગુણ અને શુદ્ધિમા ક્યારેક અમેદ માની
દેવાનું કારણ એ છે કે આત્માના નિજ ગુણો આત્માથી નિત દેવા નથી એમ

પૌરુષીપ્રમૃત્તિનિયમરૂપસ્ય સાવધયોગનિવૃત્તિરૂપસ્ય શ્રાવકનવમવ્રતરૂપસ્ય પાપ-
ત્યાગપ્રતિજ્ઞારૂપસ્ય વા પ્રત્યાખ્યાનસ્ય આત્મધર્મતયા ધર્મધર્મિણોરભેદાત્ આત્મૈવ
પ્રત્યાખ્યાનં તથા કર્માગમનમાર્ગાઽઽશ્રવનિરોધરૂપસ્ય પ્રત્યાખ્યાનપ્રયોજનસ્યાપિ
આત્મધર્મતયા આત્મૈવ પ્રત્યાખ્યાનપ્રયોજનમ્પિ, एवं सप्तदशविधस्य पृथिवीकायिक-
प्रभृतिसंरक्षणरूपस्य पापोपरमरूपस्य संयमस्य आत्मधर्मतया आत्मैव संयमः,
तथा प्राणातिपात- -मृषावाद- -अदत्तादानमैथुनादिविरतिरूपस्य पञ्चास्रवसंवरण-
मूलगुणादिकरणलक्षणानास्रवत्वरूपस्य च संयमप्रयोजनस्यापि आत्मधर्मतया
आत्मैव संयमप्रयोजनम् , तथा संव्रियते कर्मकारणं प्राणातिपातादि निरुध्यते येन

जाती है कि आत्मा के निज गुण आत्मा से भिन्न नहीं होते हैं । जैसे
“ नीलो घटः ” यहां पर नीलगुण का घटरूप गुणीके साथ अभेद किसी
अपेक्षा माना जाता है । इसी तरह से पौरुषी आदि नियमरूप, अथवा
सावध योगनिवृत्तिरूप, अथवा-श्रावक के नवमव्रतरूप, अथवा-पाप
त्याग रूप जो प्रत्याख्यान है वह आत्मा का धर्म है । अतः आत्मा के
धर्मरूप होने के कारण धर्म और धर्मों में यहां पर भी अभेद मानकर
आत्मा को ही प्रत्याख्यानरूप कह दिया गया है । तथा नवीन कर्मों का
आगमन होना इसका नाम आस्रव है-इस आस्रव के निरोध होने रूप
जो प्रयोजन प्रत्याख्यान का है वह भी आत्मा का धर्म है । अतः आत्मा
ही प्रत्याख्यान का प्रयोजन भी है । इसी तरह से १७ (मतरह) प्रकार
का जो संयम है कि जो पृथिवीकायिक बगैरह जीवों के संरक्षणरूप और
पापों के उपरम निवृत्तिरूप होता है वह भी आत्मा का ही धर्म है । अतः
आत्मा ही संयम है । तथा-प्राणातिपात, मृषावाद, अदत्तादान, मैथुन

કે “ નીલો ઘટ ” મા નીલ ગુણની સાથે ઘટ (ઘડા) રૂપ ગુણી સાથે કોઈ
અપેક્ષાએ અભેદ ભાવ માની લેવામાં આવે છે. એ જ પ્રમાણે પોરુષી વગેરે
નિયમરૂપ, અથવા સાવધયોગ-નિવૃત્તિરૂપ, અથવા શ્રાવકના નવમા વ્રતરૂપ,
અથવા પાપત્યાગરૂપ જે પ્રત્યાખ્યાન છે, તે આત્માના ધર્મરૂપ છે. તેથી પ્રત્યાખ્યા-
નને પણ આત્માના ધર્મરૂપ ગણીને ધર્મ અને ધર્મોમાં અહીં પણ અભેદ
માનીને આત્માને પ્રત્યાખ્યાનરૂપ કહેવામાં આવ્યો છે-તથા નવા કર્મોના આગ-
મન (આસ્રવ) નો નિરોધ કરવાનું પ્રયેજનરૂપ જે પ્રત્યાખ્યાન છે તે પણ
આત્માના ધર્મરૂપ છે તે કારણે આત્મા પ્રત્યાખ્યાનનું પ્રયેજન પણ છે એજ
પ્રમાણે પૃથ્વીકાયિક વગેરે જીવોની રક્ષા કરવારૂપ અને પાપથી નિવૃત્ત થવારૂપ
જે ૧૭ પ્રકારના સંયમ છે તે પણ આત્માના જ ધર્મરૂપ છે તેથી આત્મા
જ સંયમ છે, તથા પ્રાણાતિપાત, મૃષાવાદ, અદત્તાદાન, મૈથુન વગેરેની વિરતિ

પરિણામેન સ સંચરઃ, ઇત્ય ચ નીવદ્રોશ્યામાશ્વત્કર્મજ્ઞાનામિન્દ્રિયાદિચ્છિદ્રાનાં સમિત્યાદિના નિરોધનરૂપસ્ય ત્રિસંધિવિષયસ્યાપિ આસ્રવનિરોધસ્ય આત્મધર્મતયા આત્મૈવ સંચરઃ, એવ નૂતનકર્મયથનિરોધરૂપસ્ય ચ સચરકમસ્યાપિ આત્મધર્મતયા ધર્મધર્મિણોરમેદાત્ આત્મૈવ સચરખ્યમ્, એવ વિશિષ્ટરોધરૂપસ્ય ચ વિવેકસ્ય જ્ઞાન

સેધન આદિ કી ચિરનિરુદ્ધ, પાંચ આસ્રવોં કા સચરણરૂપ તથા મૂલગુણ આદિ કે ધારણ કરને રૂપ જો પ્રયોજન સંયમ કા હૈ, સો યહ પ્રયોજન મી આત્મા કા હી ધર્મ હૈ । હસ કારણ આત્મા હી સંયમ કા પ્રયોજન રૂપ કહા ગયા હૈ । કર્મ કે કારણ જો પ્રાણાતિપાત આદિ હિં વે આત્મા કે જિસ પરિણામ સે રોક દિયે જાતે હિં-તેના યહ આત્મા કા પરિણામ સચર હિં । યહ સચર “આસ્રવનિરોધ સચર” હસકે અનુસાર આસ્રવ કા નિરોધ હોને રૂપ હોતા હૈ । જિસ પ્રકાર નૌકા મેં છિદ્રોં દ્વારા જલ આતા હૈ વસી પ્રકાર આત્મોરૂપીનૌકા મેં મી પ્રાણાતિપાત આદિ ક્રિયાઓં દ્વારા એવં ઇન્દ્રિય આદિ છિદ્રોં દ્વારા કર્મરૂપી જલ આના હૈ । ચતુર નાવકો ચલોનેવાલા જિસ પ્રકાર જલ આને મેં કારણરૂપ છિદ્રોં કો ચદ કર દેતા હૈ ઓર જલ કા આના રોક દેતા હૈ વસી પ્રકાર આત્મા મી કર્મરૂપી જલ કે આને કે કારણોં કો સમિતિ શુષિ આદિ દ્વારા ચદ કર દેતા હૈ અત કર્મરૂપી જલ કા આના રુક જાતા હૈ । યહી સંચર હૈ । યહ આસ્રવ નિરોધરૂપ સંચર ૨૦ (વીસ) પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ । યહ સંચર આત્મા કા નિજ ધર્મ હૈ । અત આત્મા હી સચર હૈ । હસી તરદ્ સે નૂતન કર્મ યથ કા નિરોધ

રૂપ, તથા પાંચ આસ્રવોના સચરણરૂપ, તથા મૂળ શુદ્ધોને ધારણ કરવારૂપ જે સચમનુ પ્રયોજન છે એ પ્રયોજન પણ આત્માના ધર્મરૂપ છે તે કારણે આત્માને જ સચમના પ્રયોજનરૂપ કહ્યો છે કમનાં કારણરૂપ પ્રાણાતિપાત વગેરે પાપસ્થાનો છે તેમને આત્માના જે પરિણામવડે રોકવામા આવે છે તે પરિણામને પણ સચર કહે છે, તે સચર આસ્રવોના નિરોધરૂપ દેખ છે ‘આસ્રવ નિરોધા સચર’ જેવી રીતે નાવમા છિદ્રોવડે જળ પ્રવેશ કરે છે એવી જ રીતે આત્મારૂપી નાવમા પ્રાણાતિપાત વગેરે પાપ ક્રિયાઓવડે જાને ઇન્દ્રિયો વગેરે છિદ્રોવડે કમરૂપી જળ પ્રવેશ કરે છે, પરંતુ જેવી રીતે ચતુર નાવિકો નાવના છિદ્રીને જાંધે કરીને તેમાં ચતા જળના પ્રવેશને અટકાવે છે એ જ પ્રમાણ આત્મા પણ કમરૂપી જળના આગમનનાં કારણોને આસ્રવોને પાંચ સમિતિ, ત્રણ શુષિ વગેરે મારફત જાંધે કરી દે છે તે કારણે કમરૂપી જળનું આગમન અટકી જાય છે, એનું નામ જ સચર છે તે આસ્રવ નિરોધરૂપ સચર ૨૦વીમ પ્રકારનો તથા પગસત્તાપન પ્રકારનો કહ્યો છે તે સચર આત્માનો નિજધર્મ છે. તેથી આત્મા જ સચર છે આ પ્રમાણે નવા કથોનો નિરોધકરવારૂપ જે

પૌરુષીપ્રભૃતિનિયમરૂપસ્ય સાવધયોગનિવૃત્તિરૂપસ્ય શ્રાવકનવમવ્રતરૂપસ્ય પાપ-
ત્યાગપ્રતિજ્ઞારૂપસ્ય વા પ્રત્યાખ્યાનસ્ય આત્મધર્મતયા ધર્મધર્મિણોરભેદાત્ આત્મૈવ
પ્રત્યાખ્યાનં તથા કર્માગમનમાર્ગાઽઽશ્રવનિરોધરૂપસ્ય પ્રત્યાખ્યાનપ્રયોજનસ્યાપિ
આત્મધર્મતયા આત્મૈવ પ્રત્યાખ્યાનપ્રયોજનમપિ, एवं सप्तदशविधस्य पृथिवीकायिक-
પ્રભૃતિસંરક્ષણરૂપસ્ય પાપોપરમરૂપસ્ય સંયમસ્ય આત્મધર્મતયા આત્મૈવ સંયમઃ,
તથા પ્રાણાતિપાત- -મૃષાવાદ—અદત્તાદાનમૈથુનાદિવિરતિરૂપસ્ય પશ્ચાસ્રવસંવરણ-
મૂલગુણાદિકરણલક્ષણાનાસ્રવત્વરૂપસ્ય ચ સયમપ્રયોજનસ્યાપિ આત્મધર્મતયા
આત્મૈવ સંયમપ્રયોજનમ્ , તથા સંન્નિયતે કર્મકારણં પ્રાણાતિપાતાદિ નિરુદ્ધયતે વેન

જાતી છે કે આત્મા કે નિજ ગુણ આત્મા સે ભિન્ન નહીં હોતે હૈં । જૈસે
“ નીલો ઘટ:” યહાં પર નીલગુણ કા ઘટરૂપ ગુણીકે સાથ અભેદ કિસી
અપેક્ષા માના જાતા હૈ । હસી તરહ સે પૌરુષી આદિ નિયમરૂપ, અથવા
સાવધ યોગનિવૃત્તિરૂપ, અથવા-શ્રાવક કે નવમવ્રતરૂપ, અથવા-પાપ
ત્યાગ રૂપ જો પ્રત્યાખ્યાન હૈ વહ આત્મા કા ધર્મ હૈ । અતઃ આત્મા કે
ધર્મરૂપ હોને કે કારણ ધર્મ ઓર ધર્મીં મેં યહાં પર ભી અભેદ માનકર
આત્મા કો હી પ્રત્યાખ્યાનરૂપ કહ દિયા ગયા હૈ । તથા નવીન કર્મોં કા
આગમન હોના હસકા નામ આસ્રવ હૈ-હસ આસ્રવ કે નિરોધ હોને રૂપ
જો પ્રયોજન પ્રત્યાખ્યાન કા હૈ વહ ભી આત્મા કા ધર્મ હૈ । અતઃ આત્મા
હી પ્રત્યાખ્યાન કા પ્રયોજન ભી હૈ । હસી તરહ સે ૧૭ (મતરહ) પ્રકાર
કા જો સંયમ હૈ કિ જો પૃથિવીકાયિક વગેરહ જીવોં કે સંરક્ષણરૂપ ઓર
પાપોં કે ઉપરમ નિવૃત્તિરૂપ હોતા હૈ વહ ભી આત્મા કા હી ધર્મ હૈ । અતઃ
આત્મા હી સંયમ હૈ । તથા-પ્રાણાતિપાત, મૃષાવાદ, અદત્તાદાન, મૈથુન

કે “ નીલો ઘટ ” મા નીલ ગુણની સાથે ઘટ (ઘડા) રૂપ ગુણી સાથે કોઈ
અપેક્ષાએ અલેદ ભાવ માની લેવામા આવે છે. એ જ પ્રમાણે પોરુષી વગેરે
નિયમરૂપ, અથવા સાવધયોગ-નિવૃત્તિરૂપ, અથવા શ્રાવકના નવમા વ્રતરૂપ,
અથવા પાપત્યાગરૂપ જે પ્રત્યાખ્યાન છે, તે આત્માના ધર્મરૂપ છે તેથી પ્રત્યાખ્યા-
નને પણ આત્માના ધર્મરૂપ ગણીને ધર્મ અને ધર્મીમા અહીં પણ અલેદ
માનીને આત્માને પ્રત્યાખ્યાનરૂપ કહેવામા આવ્યો છે-તથા નવા કર્મોના આગ-
મન (આસ્રવ) નો નિરોધ કરવાનું પ્રયેજનરૂપ જે પ્રત્યાખ્યાન છે તે પણ
આત્માના ધર્મરૂપ છે તે કારણે આત્મા પ્રત્યાખ્યાનનું પ્રયેજન પણ છે એજ
પ્રમાણે પૃથ્વીકાયિક વગેરે જીવોની રક્ષા કરવારૂપ અને પાપથી નિવૃત્ત થવારૂપ
જે ૧૭ પ્રકારના સંયમ છે તે પણ આત્માના જ ધર્મરૂપ છે તેથી આત્મા
જ સંયમ છે, તથા પ્રાણાતિપાત, મૃષાવાદ, અદત્તાદાન, મૈથુન વગેરેની વિરતિ

भाषणमावात् भगवद्भिः स्थविरैः तथा प्रतिपादितं, ततः कामात्म्यवेपिकपुत्रो जगत् पुनः स्थविरान् पृच्छति—‘तर्णं से कालासवेसियपुते अनगारे घेरे मगरते एव वयासी—जइ मे अज्जो आया सामादण आया सामाइयस्त अहे एयं जास आया विउस्समास्त अहे’ ततः खलु स पालास्यवेपिकपुत्रः अनगारः स्थविरान् भगवतः एवं वक्ष्यमाणप्रकारेण अवादीत्—हे आर्याः ! यदि मातां मते आत्मा एव सामायिक वस्तु, आत्मा एव च सामायिकस्य अर्थ प्रयोजनं कथं वर्तते, एवं तथैव यावत्—प्रत्यात्म्यानां व्युत्सर्गान्तः वर्तते, आत्मैव व्युत्सर्गस्य अर्थ प्रयोजनं वर्तते, ‘अनहदु कोइ—माण—माया—लोभ किं अहुं मज्जो ! गरह !’ हे आर्याः ! तर्हि क्वाथ—मान—माया—लोभान् अपहृत्य—परित्यज्य रागद्वेषकामक्रोधादिरहितो भूत्वापि किमर्थं कथं तावत् ‘णिदामि, गरिहामि, अप्पाणं वोसिरामि’

इत्यादिरूप से व्ययहार होने के कारण आत्मा ही सामायिक है, आत्मा ही सामायिक का प्रयोजन है। इस तरह से व्युत्सर्ग प्रयोजन तक आत्मा को तराशूप मानने में कोई बाधक नहीं है। इस कारण भगवत् ने ऐसा प्रतिपादित किया है। स्थविर भगवत् द्वारा इस प्रकार का प्रतिपादन सुनकर “से कालासवेसियपुते अनगारे घेरे भगवते एव वयासी” उन कालास्यवेपिकपुत्र अनगार ने उन स्थविर भगवत् से इस प्रकार से पूछा—“जइ मे अज्जो ! आया सामादण, आया सामाइयस्त अहे एयं जाव आया विउस्समास्त अहे” कि हे आर्यो ! यदि आप के मत में आत्मा ही सामायिक है और आत्मा ही सामायिक का प्रयोजन है—तथा इसी तरह से आत्मा ही यावत् व्युत्सर्ग का प्रयोजन है तो फिर आप लोग क्रोध, मान, माया, लोभ इनका परित्याग कर अपाद राग द्वेष, काम द्वेष आदि से रहित होकर भी “किमर्थं कथं तावत्” ‘णिदामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि’ क्यों इन वचनों द्वारा अवस्थापित

★ सामायिक है, आत्मा ★ सामायिक प्रयोजन है आर्यो ने व्युत्सर्ग प्रयोजन सुधींनी आनतोभा आत्माने ते ते इपे भानवाभां ठाठ पण वतने वांषि आवतो नधी ते ठाठे ★ स्थविर अत्रवतोणे तेभन प्रतिपादन कहुं छ स्थविर अत्रवतोवडे सामायिक पजेणुं ते प्रअणुं प्रतिपादन संभवने “से कालासवेसियपुते अनगारे घेरे भगवते एव वयासी” ते कालास्यवेपिकपुत्र अज्जो ते स्थविर अत्रवतोने आ प्रभावे पृच्छु—‘जइ मे अज्जो ! जाव सामादण, आया सामाइयस्त अहे एयं जाव आया विउस्समास्त अहे” छ आर्यो ! मे आपना भव प्रभावे आत्मा ★ सामायिक होय, आत्मा ★ सामायिक प्रयोजन होय (यावत्) आत्मा ★ व्युत्सर्ग प्रयोजन होय तो आप स्व ठाठे क्रोध, मान, माया अने लोभने परित्याग करीने कोठे छे राग, द्वेष काम, द्वेष वगेरे रहित रहने पण “किमर्थं कथं तावत्” णिदामि, गरिहामि,

મયાત્મગુણતયા ગુણગુણિનોરભેદાત્ આત્મૈવ વિવેક, ત્યાગ્યવસ્તુત્યાગાદિરૂપસ્ય ચ વિવેક પ્રયોજનસ્ય ત્યાગિરૂપાત્મધર્મતયા ધર્મધર્મિણોરભેદાત્ આત્મૈવ વિવેકપ્રયોજનમ્, તથા કાયાદિમત્ત્વરાદિન્યસ્ય વ્યુત્સર્ગસ્ય આત્મધર્મતયા ધર્મધર્મિણોરભેદાત્ આત્મૈવ વ્યુત્સર્ગઃ । અનમિષ્વજ્ઞતાલક્ષણસ્ય ચ વ્યુત્સર્ગપ્રયોજનસ્ય આત્મધર્મતયા આત્મૈવ વ્યુત્સર્ગપ્રયોજનમ્, તથા ચ આત્મા ત્યાગી, વિવેકી, નિર્મમઃ, इत्यादि व्यवहारात् आत्मन एव सामायिकादिव्युत्सर्गप्रयोजनान्तस्वरूपस्वीकारे

હોને રૂપ જો ફલ હસ સંવર કા હૈ વહ ખી આત્મા કા ધર્મ ઔર ધર્મીં કે અભેદ હોને સે આત્મા કો હી સંવર કા ફલરૂપ માન લિયા ગયા હૈ । હસી તરહ સે વિશિષ્ટ બોધરૂપ જો વિવેક હૈ વહ ખી જ્ઞાનમય આત્મા કા ગુણ હૈ । હસી કારણ ગુણગુણી મેં અભેદ વિવક્ષાવશ આત્મા હી વિવેક હૈ એસા માન લિયા ગયા હૈ । ત્યાગકરને યોગ્ય વસ્તુ કા ત્યાગ કરના, તથા ગ્રહણ કરને યોગ્ય વસ્તુ કો ગ્રહણ કરના इत्यादि रूप जो प्रयोजन विवेक का है वह त्यागिरूप आत्मा का धर्म है । इस कारण धर्म और धर्मी की अभेद विवक्षा से आत्मा ही विवेक का प्रयोजन है ऐसा कहा है । शरीरादिक से समत्व भाव का परित्याग करना इसका नाम व्युत्सर्ग है । यह व्युत्सर्ग भी आत्मा का ही धर्म हैं । अतः यहां पर भी धर्म और धर्मी में अभेद मानकर आत्मा ही व्युत्सर्ग है ऐसा कहा गया है । विषयादिकों में त्यागनारूप जो प्रयोजन व्युत्सर्ग का है वह भी आत्मा का ही एक धर्म है । इस कारण उसका व्युत्सर्ग का प्रयोजन रूप कहा गया है । तथा च—आत्मा त्यागी है, विवेकी निर्मम है

સંવરનુ પ્રયોજન છે તે પણ આત્માનો જ ધર્મ છે ધર્મ અને ધર્મીમાં અભેદની અપેક્ષાએ આત્માને જ સવરના ફળરૂપ માનવામા આવ્યો છે એ જ પ્રમાણે વિશિષ્ટ બોધરૂપ જે વિવેક છે તે પણ જ્ઞાનમય આત્માનો ગુણ છે તે કારણે ગુણ અને ગુણીમાં અભેદની અપેક્ષાએ આત્માને જ વિવેક માનવામા આવ્યો છે છોડવાલાયક વસ્તુને ત્યાગ કરવાનું અને ગ્રહણ કરવા લાયક વસ્તુને ગ્રહણ કરવાનું જે વિવેકનું પ્રયોજન છે તે ત્યાગીરૂપ આત્માનો ધર્મ છે. તે કારણે ધર્મ અને ધર્મીમાં અભેદની અપેક્ષાએ આત્માને જ વિવેકના પ્રયોજનરૂપ માનવામા આવ્યો છે શરીર વગેરેના મમત્વનો પરિત્યાગ કરવો તેનું નામ વ્યુત્સર્ગ છે તે વ્યુત્સર્ગ પણ આત્માનો જ ધર્મ છે, તેથી અહીં પણ ધર્મ અને ધર્મીમાં અભેદની અપેક્ષાએ આત્મા જ વ્યુત્સર્ગ છે એમ કહેવામા આવ્યું છે વિષય વગેરેમાં અનાસક્તિરૂપ જે વ્યુત્સર્ગનું પ્રયોજન છે તે પણ આત્માનો જ એક ધર્મ છે. તેથી આત્માને જ વ્યુત્સર્ગના પ્રયોજનરૂપ કહ્યો છે તથા—આત્મા ત્યાગી છે, વિવેકી છે, નિર્મમત્વી છે, ઇત્યાદિરૂપે વ્યવહાર થવાને કારણે આત્મા

યાંનુમોદનસ્ય નિરસનસમવાત્, કાલાસ્યવેપિકપુત્ર પૃચ્છતિ—‘સ મતે! કિં ગરહા સજમે? અગરહા સજમે?’ હ મદત! સત્ કિં ગર્હાં નિન્દા સંયમઃ મગર્હાં અનિન્દા યા સયમઃ?, સ્યથિરા ઉપચરયન્તિ—‘કાલાસવેસિયપુત્ર! ગરહા સજમે જો અગરહા સજમે’ હે કાલાસ્યવેપિકપુત્ર! ગર્હાં સયમ, ના અગર્હાં સયમ- ગર્હાયા સયમમનવત્ત્વેઽપિ કારણે કાર્યોપચારાત્ લક્ષણયા ‘ગર્હાં સયમઃ’ ઇત્યુક્તમ્, અથ ન કેવલં ગર્હાં અવધાનુમતેર્જ્યવચ્છેદનદ્વારા કર્માનુપાદાનરેતુત્વાત્,

ચિચ્છેદ્ હો જાતાહે. તાત્પર્ય યહ હૈ કિં જયતક અવધ્ય ગર્હિત નહીં હોતા હૈ તયતક અવધ્ય સમ્યગ્ની અનુમતિકા ચિચ્છેદ્ નહીં હોતા હૈ, ઓર જહ વસકા ગર્હગ હો જાતાહે તથ ગર્હગદ્વારા ગર્હિત કાર્યકો અનુમોદના કરને કા નિરસન હો જાતા હૈ. તથ કાલાસ્યવેપિકપુત્ર ને સ્યથિર મગલતીસુરોં સે પૂછા કિં મદન્ત! (કિં ગરિહા સંજમે, અગરિહા સજમે) યહ તો કહીયે કિં ગર્હાં નિન્દા સયમ હૈ કિં અગર્હાં અનિન્દા સયમ હૈ! તથ સ્યથિર મગલતીસુરોં ને ઉન્હેં સમજાયા કિં (કાલાસવેસિયપુત્ર! ગરિહા સજમે જો અગરિહા સજમે) હે કાલાસ્યવેપિકપુત્ર! ગર્હાં સંયમ હૈ ઓર અગર્હાં અસયમ હૈ. ગર્હાં કો જો સંયમરૂપ સે કહા ગયા હૈ વસકા કારણ મેં કાર્ય કા ઉપચાર હૈ. તાત્પર્ય કહને કા યહ હૈ કિં ગર્હાં સે સયમ હોતા હૈ અતઃ ગર્હાં સંયમ કા જનક હોને સે સંયમ કા કારણ હૈ. સો જો યહાં ગર્હારૂપ કારણ કો સયમરૂપ કહા ગયા હૈ વહ કારણ મેં કાર્ય કા ઉપચાર કરકે લક્ષણાદૃષ્ટિ સે કહા ગયા હૈ. (ગર્હાં

સયમની સુધી ધવાય છે તાત્પર્ય કો છે કે જ્યાં સુધી અવધની ખડી થવી નથી ત્યાં સુધી અવધની અનુમતિનો વિચ્છેદ થતો નથી, અને જ્યારે તેની ખડી થઈ જાય ત્યારે મૂળાવઠે ગર્હિત કાર્યની અનુમોદના કરવાનું નિરસન (નિષકરણ) થઈ જાય છે ત્યારે કાલાસ્યવેપિકપુત્ર અજ્ઞાતે સ્યથિર ભગવતોને પૂછ્યું—હે ભગવન્તે! કિં ગરિહા સજમે, અગરિહા સજમે’ શું ખડી (નિશ્ચ) સયમ છે કે અગહી (અનિશ્ચ) સયમ છે!’ ત્યારે તે સ્યથિર ભગવતોએ તેમને સમજાવ્યું કે કાલાસવેસિયપુત્ર! ગરહા સજમે જો અગરહા સજમે” હે કાલાસ્યવેપિકપુત્ર! ખડી સયમ છે અને અગહી અસયમ છે. ખડીને સયમરૂપ ને ખડી છે તેનું કારણ કારણમાં કાર્યનો ઉપચાર છે તાત્પર્ય કો છે કે ખડી સયમની ઉત્પાદક કોવાધી ખડીને સયમના કારણરૂપ માની છે, ખડી ને ખડીરૂપ કારણને સયમરૂપ કહેવામાં આવેલ છે તે કારણમાં કાર્યનો ઉપચાર કરીને લક્ષણાદૃષ્ટિથી કહેલ છે “ગર્હાં સયમઃ” ખડી સયમ છે, તે

નિન્દામિ, ગર્હે, આત્માન વ્યુત્સજામિ, इत्यादि वचनद्वारा यूयम् अवद्यं गर्हध्वे यो हि जीवो भव्यस्तथाविधसामायिकवान् त्यक्तरागद्वेषक्रोधादिश्च स्यात् स न कथमपि किमपि निन्दितमुद्यतो भवेत्, निन्दायाः रागद्वेषादिजन्यत्वात्, सामायिकादिमतो जीवस्य द्वेषादिविरहात्, स्थविराः उत्तरयन्ति-‘ कालासवेसियपुत्त ! संजमट्टयाए ’ हे कालास्यवेषिकपुत्र ! समयार्थतया अवद्यं वयं गर्हामहे, अवद्ये गर्हिते सति संयमो भवति, अवद्यानुमतेर्व्युच्छेदनसंभवात्, गर्हणद्वारा गर्हितका-

की निंदा गर्हा आदि करते हो । क्यों कि जो जीव भव्य होता है और तथाविध सामायिक वाला होता है वह राग, द्वेष, क्रोधादि से पहिले से ही रहित हो जाता है । अतः वह जीव किसी भी तरह से किसी की भी निंदा करने के लिये उद्यत नहीं होता है । क्यों कि निंदा जो होती है वह रागद्वेष आदि से जन्य होती है । तथा सामायिक आदि से जन्य होती है । तथा सामायिक आदि से युक्त जीव के द्वेष आदि का विरह रहा करता है । इस प्रकार से कालास्यवेषिक पुत्र अनगार के प्रश्न को सुनकर उन स्थविर भगवन्तों ने उन्हें समझाया कि हे काला-वेषिकपुत्र अनगार जो रागद्वेष आदि से रहित बने हुए भी हम लोग जो “ निंदामि गरिहामि अप्पाणं वोसिरामि ” इन वचनों का प्रयोग करते हैं-उसका करण संयम का निमित्त है अतः “ संजमट्टाए ” हम लोग संयम के निमित्त “ अवद्यं गर्हामहे ” अवद्य (पाप) की गर्हा करते हैं । क्यों कि अवद्यके गर्हित (गुरुसमक्ष प्रकाशित) हो जाने पर संयम होनेका कारण यह है कि अवद्य सम्बन्धी अनुमतिका होता है। संयम

અપ્પાણં વોસિરામિ ” શા માટે આ વચનોવડે પાપની નિંદા, ગર્હા વગેરે કરે છે ! કારણ કે જીવો ભવ્ય હોય છે અને સામાયિકવાળા હોય છે તેઓ તો પહેલેથી જ રાગ, દ્વેષ અને ક્રોધાદિથી રહિત બની બીજા છે તેથી એવા જીવો કોઈ પણ રીતે કોઈની પણ નિંદા કરતા નથી કારણ કે નિંદા કરવાનું કારણ રાગદ્વેષ વગેરે હોય છે સામાયિક વગેરેથી યુક્ત જીવમા તો રાગદ્વેષ વગેરેનો અભાવ હોવો જોઈએ કાલાસ્યવેષીપુત્ર અણુગારનો આ પ્રકારનો પ્રશ્ન સાંભળીને સ્થવિર ભગવતોએ સમજાવ્યું કે હે કાલાસ્યવેષીપુત્ર અણુગાર ! રાગદ્વેષ વગેરેથી રહિત હોવા છતાં પણ અમે “ નિંદામિ, ગરિહામિ અપ્પાણ વોસિરામિ ” વગેરે વચનોનો જે પ્રયોગ કરીએ છીએ તે સંયમના રક્ષણ માટે જ કરીએ છીએ, “ સંજમટ્ટાએ ” અમે સંયમના લાભને માટે જ “ અવચં ગર્હામહે ” અવધ (પાપ) ની ગર્હા કરીએ છીએ, કારણ કે અવધ (પાપ) ની ધૂણા થાય ત્યારે જ સંયમની પ્રાપ્તિ થાય છે, અવધ (પાપ) સંબંધી અનુમતિનો વિચ્છેદ થાય ત્યારે જ

इति पूर्वेषां अन्वयः, 'एवं स्रु जे आया सजमे उबहिसे भवइ' एव स्रु तथा सति गहान्तरम् नः अस्माकम् आत्मा संयम उपहितो भवति, संयमोपपादान् भवति संयमरूपफलोत्पादने सन्निहितो भवतीत्यर्थः, आत्मरूप संयमो वा उपहितः प्राप्तो भवति, 'एव स्रु जे आया सजमे उबचिए भवइ' एव स्रु अवधवस्रु गहान्तरं नः अस्माकम् आत्मा संयमे उपचितः परिपुष्टो भवति, आत्मरूपो वा संयमः उपचितो भवति, 'एव स्रु जे आया सजमे उबट्टिए भवइ' एव स्रु नः अस्माकम् आत्मा संयमे उपस्थितो भवति, अत्यन्तस्विरतयाऽवस्थापी भवति इदो भवति इत्याद्यय, 'एत्य णं से कालासवसियपुत्ते अणगारे सवुद्धे बेरे मा वंतं वदइ णमसइ, वदिचा नमसिचा एवं वयासी' अत्र स्रु स कालास्यवेधिक पुत्रोऽनगारः सवुद्ध सम्पक् प्रबोधवान्, भगवत् स्वविरान् वन्दते, नमस्परि, वेत्ती है। (एव स्रु जे आया सजमे उबहिसे भवइ) इस प्रकार होनेपर गहान्तर के बाद हमारा आत्मा संयम में उपचावाला हो जाता है—अर्थात् संयमरूप फल के उत्पादन में सन्निहित हो जाता है। अथवा—आत्मरूप संयम उपहित—प्राप्त हो जाता है। (एव स्रु जे आया संजमे उबचिए भवइ) अवध (पाप) वस्तु की गहान्तर के बाद नः—अस्माकं—हमारा, आया—आत्मा, संयम में उपस्थित हो जाता है—अर्थात् अत्यन्तस्विरूप से उसमें स्थायी—रूढ़ हो जाता है। इस प्रकार इस विषय में "से कालासवेसियपुत्त अणगारे" से कालास्यवेधिकपुत्र अनगार (सवुद्धे) बोधपाये अज्ञान से रहित बने गये अर्थात् सवुद्ध हो गये—तत्संविषयक ज्ञान से संपन्न हो गये। (बेरे भगवन्ते वदइ णमसइ, वदिचा, णमसिचा एवं वयासी) सवुद्ध होने के बाद फिर उन्होंने उन स्वविर भगवन्तों को वन्दना की, उन्हें नमस्कार किया। वन्दना और नमस्कार कर फिर वे

सजमे उबहिसे भवइ" आभ जनवाथी जहाँ कर्मा पछी जभारे आत्मा संयमभा स्थितावाणे जनी अथ छे—जेटहे के संयमरूप इणना उत्पादनमां सन्निहित यधं अथ छे अथवा आत्मारूप संयम उपहित (प्राप्त) यधं अथ छे "एव स्रु जे आया सजमे उबचिए भवइ" अवध (पाप) नी जहाँ कर्मा पछी जभारे आत्मा संयमभा उपस्थित यधं अथ छे जेटहे के अतिशय दृढ़ते तेमां स्थिर यधं अथ छे आ प्रकारमां स्थविर भगवन्तानां वयने। साभन्तीने 'से कालासवेसियपुत्ते अणगारे' ते कालास्यवेधिकपुत्र अणगार "सवुद्धे" सवुद्ध यधं गया—अज्ञानधी रहित जनी गया—ते ते विषयाना ज्ञानधी मुक्ता जनी अथ 'बेरे भगवन्ते वदइ णमसइ वदिचा णमसिचा एवं वयासी' सवुद्ध यथा पछी तेभजे स्थविर भगवन्ते वदछा करी, नमस्कार कर्मा वदछा नम

સંયમજનિકૈવ ભવતિ, અપિ તુ રાગદ્વેષાદિકમપિ ક્ષપયતીત્યાહ—‘ગરહા વિ ય ણં સઘ્વં દોસં પવિણેહ’ ગર્હૈવ ચ સઘ્વં દોષં રાગદ્વેષાદિકં પૂર્વોપાર્જિતં પાપં વા પ્રવિણયતિ વિનાશયતિ, રાગદ્વેષાદિવિનાશનપ્રકારમાહ—‘સઘ્વં વાલિયં પરિણાપ’ સા હિ અવઘવસ્તુનો ગર્હા સર્વા વાલતાં વાલ્યં મિથ્યાત્વં પરિજ્ઞાય, જ પરિજ્ઞયા જ્ઞાત્વા, પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞયા ચ પ્રત્યાખ્યાય રાગદ્વેષાદિકં પ્રવિણયતિ

સંયમઃ) ગર્હા સંયમ હૈં હસ પ્રકાર સે કહને કા તાત્પર્ય યહ હૈં કિ ગર્હા અવઘકી અનુમતિ કા વ્યવચ્છેદ કરા દેતી હૈં—અતઃ પહિલે જો અવઘાનુમતિકે અવ્યવચ્છેદનદ્વારા કર્મોં કા આત્મામેં ઉપાદાન (અગ્રહણ) હોતા થા અવઘ ગર્હા કરનેસે ઉસકે વ્યવચ્છેદન હો જાનેસે ઉસદ્વારા હોતા નહીં હૈં, હસલિયે ઉસદ્વારા હોનેવાલે કર્મકે અનુપાદાન (અગ્રહણ)મેં હેતુભૂત હોને સે વહ ગર્હા સંયમ હૈં યહ વાત સ્પષ્ટ હો જાતી હૈં । યહ ગર્હા કેવલ સંયમ કી હી જનક હૈં સો વાત નહીં હૈં, કિન્તુ યહ રાગ દ્વેષ આદિ કો ભી આત્મા સે દૂર કરતી હૈં—યહી વાત સૂત્રકાર ને (ગરિહા વિ ય ણં સઘ્વં દોસં પવિણેહ) હસ સૂત્ર દ્વારા પ્રકટ કી હૈં । ઉન્હોં ને હસમેં કહા હૈં કિ ગર્હા સમસ્ત દોષોં કો—રાગદ્વેષાદિકોં કો અથવા પૂર્વોપાર્જિત પાપ કો—નષ્ટ કર દેતી હૈં । યહ ગર્હા રાગદ્વેષાદિકોં કો કિસ પ્રકારસે નષ્ટ કરતી હૈં—હસી વાતકો અવ સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ (સઘ્વં વાલિયં પરિણાપ)વહ અવઘ (પાપ) વસ્તુકી ગર્હા સમસ્ત મિથ્યાત્વકો જ્ઞપરિજ્ઞાસે જાનકર ઔર પ્રત્યાખ્યાન પરિજ્ઞાસે ઉસકા પ્રત્યાખ્યાનકર રાગદ્વેષ આદિકોં કો નષ્ટ કર

પ્રકારના કથનનુ તાત્પર્ય એ છે કે ગર્હા અવઘની અનુમતિનો વિનાશ કરાવી નાખે છે તેથી પહેલા જે પાપમા અનુમતિના અવિનાશવડે આત્મામા કર્મોંનું ઉપાદાન થતુ હતુ, તે ઉપાદાન હવે ગર્હાવડે પાપની અનુમતિનો વિનાશ થવાથી થતું નથી તેથી તેની મારફત કર્મના અનુપાદાન થવાના હેતુભૂત હોવાથી તે ગર્હા સંયમરૂપ છે એ વાત સ્પષ્ટ થઈ જાય છે, તે ગર્હા માત્ર સંયમની જ જનક છે એટલુ જ નહીં પણ તે રાગદ્વેષ વગેરેને પણ આત્માથી દૂર કરે છે, એ જ વાત સૂત્રકારે—“ ગરહા વિયણ સઘ્વં દોષ પવિણેહ ” આ સૂત્રપાઠવડે સૂત્રકારે કહ્યું છે કે ગર્હા તમામ દોષોને — રાગદ્વેષ વગેરેને તથા પૂર્વોપાર્જિત પાપોને નષ્ટ કરી નાખે છે તે ગર્હાવડે રાગદ્વેષ વગેરેનો દેવી રીતે નાશ થાય છે તે હવે સૂત્રકાર બતાવે છે—‘સઘ્વં વાલિયં પરિણાપ’ તે અવઘ (પાપ) ગર્હા, સમસ્ત મિથ્યાત્વને જ પરિજ્ઞાથી જાણીને અને પ્રત્યાખ્યાન પરિજ્ઞાથી તેનો પરિત્યાગ કરીને રાગદ્વેષ વગેરેનો નાશ કરી નાખે છે. “ એવં ચુ ને આર્યા

पाणं' अष्टाणाम् साक्षात् स्वयमनुपलब्धानाम्, अष्टुतानाम् अन्यद्वाराज्ञाकर्तृता
नाम् भवणागोचरीकृतानाम् इत्यर्थः, अमृतानाम् दर्शनाऽऽकृषणनामाद्यन मनु
मवज्ज-यसस्काराभावात् अननुष्णातानाम् विशिष्टोपाऽविषयीकृतानाम् अष्पाक
तानाम् विगोचरूपेण गुरुमिरनास्थातानाम् प्रभोचरूपेण अस्पर्शीकृतानाम् अन्य
स्थितानाम्-विपक्षाद् अव्यावर्तितानाम्, अनियुक्तानाम् सुगन्धवापाय माता
प्रयात् नृपया अत्यन्तसंज्ञेण गुरुमि अनुद्भूतानाम्, अत एव भस्माभि' मनु
पधारितानाम् न निश्चयविषयीकृतानामित्यर्थः, 'एयमदृ णो सदृष्टिः, णो पणप,
णा रोष्ट' एयार्थं मवज्जि' घतिपादितार्थं नो भद्वित न श्रद्धामावन गृहीत',
नो ग्रीत, नैव मीतिविषयीकृत, अथवा मीतित, इतुमि न प्रत्ययित' निष्-

पणाण) विरक्ष से मैंने इन्हें व्यावर्तित किया नहीं अर्थात् इनका कभी
निश्चय किया नहीं, (अणिउज्जुताण) यहे ० शास्त्रों से हमारे प्रमादवश
गुरुजनों न इन्हें (गिण्यजन अच्छी तरह से समझ सकें) इस अभि-
प्राय से दिया हर के सक्षेपरूप में उद्धृत किया नहीं, अतः (अणुवधारि
याणं) मैं अभीतर इन्हें अपने निश्चयज्ञान का विषयभूत नहीं बना
सका । (एयमदृ णो सदृष्टिः) अतः इन पदों का जो अर्थ आपने प्रति
पादित किया है इनका यह अर्थ मैंने इसके पहिले कभी भी अपनी
श्रद्धा का विषयभूत नहीं बनाया । क्यों कि सुद्धे (इन पदों का यही
अर्थ है) पहिले ऐसी धारणाएँ अट्टा ही नहीं कीं । श्रद्धा नहीं होने के
कारण इन पदों का यह अर्थ मेरी प्रीति का भी विषयभूत नहीं हो
सका-अथवा हेतुओं द्वारा निर्णीत कर मैंने उसे अपने विश्वास में नहीं

'अणोविपणाणं मे इती पण ते परोने निक्षय क्यो न दतो, ' जणि
इज्जदणं " अमारा प्रमादने कारणे शुचनेनेने ते परोने अथ ' सिध्दो साही
रीने नमज्ज यहे त आधायो मोटा मोटा अयोमयी सरोपश्ये जमने
समजन्थो न दतो तथी अणुवधारिणा " दु दण्ठ मुधी ते परोने
अथने मारा निक्षय जमना विषयभूत जनारी उथो न दतो एयमदृ लो
सदृष्टि " आपे आ परोना ए अथनु आगे मारी अमक्ष प्रतिपादन इति
ते अथने आ पण्डा इती पणु मारी याना विषय प जनारी उथो
न दतो इत्यु के आ परोने आ प्रमये अ अथ य पठि' जेरी पाण्डा
इय यज्ज मे परोना इती पणु इती न दतो यज्ज न पावने कारणे आ
परोने आ अथ मारा न निना विषयभूत पणु जनी उथो न दतो अथय

वन्दित्वा एवं वक्ष्यमाण-प्रकारेण अवादीत्-‘एएसि णं भंते ! पयाणं पुंवि
अन्नाणयाए, असवणयाए, अवोहियाए अणभिगमेणं’ हे भगवन् ! एतेषां खलु
पदानां शब्दानाम् पूर्वं प्रथमम् अज्ञानतया अज्ञानो निर्ज्ञानस्तस्य भावः अज्ञानता
तया स्वरूपतोऽनुपलभ्यमानात् ज्ञानाभावेन, अश्रवणतया श्रवणाभावेन, अवोधितया
अवोधिः महावीरजिनधर्मान्वाप्तिः तथा औत्पत्तिकयादिबुद्धयभावेन वा प्रवो-
धाभावेन, अनभिगमाभावेन विस्तरबोधाभावेन हेतुना ‘अदिट्ठाणं, अमुयाणं,
अस्सुयाणं, अविन्नायाणं, अव्वोगडाणं, अव्वोच्छिण्णाणं, अणिज्जूढाणं उवधारि-

उनसे इस प्रकार कहने लगे-“ भंते !” हे भगवन् ! (एएसि णं पयाणं)
इन पदों की मैंने (पुंवि) पहिले कभी (अन्नाणयाए) अज्ञानता होने
के कारण इन पदों के स्वरूप को नहीं जान सकने के कारण, (असव-
णयाए) नहीं सुनने के कारण (अवोहियाए) महावीर जिन के धर्म
की अनवासिरूप अवोधि होने के कारण अथवा औत्पत्ति की आदि
बुद्धि के अभाव से प्रवोधाभाव होने के कारण, (अणभिगमेणं) तथा
विस्तृत बोधाभाव होने के कारण (अदिट्ठाणं) साक्षात् स्वयं देखा नहीं,
(अमुयाणं) दूसरों के मुख से मैंने कभी सुना नहीं, (अस्सुयाणं)
दर्शन और नहीं सुनने के कारण अनुभव जन्य संस्कार के अभाव से
मैंने इन्हें कभी स्मरण किया नहीं, (अविन्नायाणं) विशिष्ट बोध का
इन्हें विषय बनाया (अव्वोगडाणं) गुरुजनों को नहीं पूछने से प्रश्नो-
त्तर पूर्वक इनका विशेषरूप से स्पष्टीकरण किया नहीं, (अव्वोच्छि-

स्कार करीने तेमणे-स्थविर लगव तोने कहे-“ भंते ! हे लगव तो ! “ ए एसि
णि पायाण ” आ पढोने आ प्रका-ने आर्थ “ पुंवि ” पढेलां कदि पणु
“ अन्नाणयाए ” अज्ञानने कारणे (आ पढोनु स्वप्न नहीं समज शकवाथी)
“ असवणयाए ” नहीं सावणवाथी (आ प्रका-ने आर्थ पढेलां कोधनी पासे
नहीं सावणवाथी) “ अवोहियाए ” महावीर प्रभुना धर्मनी अप्राप्तिइ अपोधि
होवाने कारणे अथवा औत्पत्तिकी आदि बुद्धिने अभाव होवाथी, प्रबोधने
अभाव होवाने कारणे, “ अणभिगमेणं ” तथा विस्तृत बोधना अभावने कारणे
“ अदिट्ठाणं ” प्रत्यक्षइ नेये न हुतो, “ अस्सुयाणं ” अन्यने मुजे कही
सावणये न हुतो, “ अस्सुयाणं ” दर्शन अने श्रवणना अभावे अनुभवजन्य
संस्कार न होवाथी मे तेनुं कही पणु स्मरण क्युं न हुतु, “ अविन्नायाणं ”
विशिष्ट बोधने विषय तेमने जनाव्यां न हुता, “ अव्वोगडाणं ” सदगुरुओने
पूछीने प्रश्नोत्तरपूर्वक कही पणु तेमनुं विशिष्ट स्पष्टीकरण क्युं न हुतु,

નામુ વિશિષ્ટબોધવિપયીકૃતાનામ્, સમ કારણમાદ—ન્યાકૃતાનાં વિશેષતયા શ્રુત સદૃશીઃ મયદ્મિઃ ધ્યાનરૂપાતાનામ્, બ્યુષ્ણિજ્ઞાનાં વિપસાદ્ આત્મમિજ્ઞાત્ શરીરાદેઃ બ્યવચ્છેદિતાનામ્, નિર્યુદાનાં મુક્તાવશોભાય અતિસંક્ષેપેષ સારરૂપતયા કરુણત્વ ણાલયૈઃ મયદ્મિઃ શ્રુતસદૃશીઃ મહત્ અર્હત્યવચનાત્ ઉદ્વૃષ્ટ્ય પ્રતિપાદિતાનામ્, અથ મયા અસ્મામિ ધૌ ઉપધારિતાનામ્ સમ્યક્તયા અવધારિતાનામ્ નિમ્બિતરૂપેષ પૃહીતાનામિત્યર્થઃ, સામાયિકાદિપદાનામ્ ‘પ્રયમદ્ સદ્દહામિ, પચિયામિ રોપમિ’ પતમર્થ મયદ્મિઃ આત્મસ્વરૂપતયા પ્રતિપાદિતમર્થમ્ મદ્દહામિ મદ્દયા પૃદ્દહામિ

જાજહુ સે મૈને इन्हें अपने स्मरणज्ञान का द्वार २ विषय बनाया है, अत एव मेरे विशिष्ट बोध के विषयभूत यन्त्र बुके हैं । कारण कि-श्रुतसदृश आप भगवतों ने विशेषरूप से इनका स्पष्टीकरण जो किया है । आत्मा से भिन्न जो शरीरादिक पदार्थ हैं उन से उनका किसी भी प्रकार का संबंध नहीं है, किन्तु आत्मा से ही इनका यथार्थरूप से संबंध है ऐसा आपने इनके विषय में कहा जो है, इनका बोध शिष्यजनों को अनायास ही हो जावे, इस अभिप्राय से, करुणाकरुणालय व्यासागर-आप श्रुतुरय भगवतों ने साररूप में विशाल अहर्प्रवचन से इनको उद्घुष्ट कर समझाया जो है इसी कारण से मैंने इन्हें बहुत ही अच्छी तरह से अपने अंतःकरण में इन्हें निमित्तरूप से धारण कर लिया है अर्थात् स्थायीरूप से स्थान दिया है । ऐसे इन सामायिक आदि पदों के (प्रयमदं इस अर्थ को कि जो अभी आपने आत्मरूप से प्रतिपादित किया है मैं (सद्दहामि) अपनी भद्रा का विषय बनाता हूं-अर्थात्-आपके द्वारा प्रति

તેમને અર્થ સારી રીતે અવજુ કર્યો છે, આપની પાસે તેનું અવજુ કર્યા ખરી જનુઅવજન્ય સજ્ઞાને કારણે મેં વારંવાર તેમને મારાં સ્મરણજ્ઞાનને વિષય બનાવેલ છે, તેથી તેમનું વિશિષ્ટ જ્ઞાન (બોધ) મને મળી ગયું છે, કારણ કે શ્રુત સમજાન આપ ભગવતોએ વિશિષ્ટરૂપે તેનું સ્પષ્ટીકરણ કર્યું છે કે આત્માથી ભિન્ન એવા જે શરીરાદિક પદાર્થો છે તેમની સાથે તેમને કોઈ પણ પ્રકારનો સબંધ નથી, પણ આત્માની સાથે જ તેમને યથાર્થરૂપે સબંધ છે એનું આપે તેમના વિષયમાં જે પ્રતિપાદન કયું છે તે કારણે તથા શિષ્યોને તેને અનાયાસે બોધ માથે તે હેતુથી વ્યાસાગર આપ શ્રુતુરય ભગવતોએ વિશાલ અર્હત્યવચનને સાર અરજુ કરીને અમારા જેવા શિષ્યોને સમજાવ્યો છે તે કારણે મેં તેને મારા અંતઃકરણમાં ઘડી જ સારી રીતે નિમ્બિતરૂપે ધારણ કરેલ છે એટલે કે આવીરૂપે સ્થાન દીધું છે એવા આ સામાયિક વગેરે પદોને “ પ્રયમદ ” આ અર્થ કે જેને આપે હમણા જ આત્મારૂપે પ્રતિપાદિત કર્યો છે, તેને દુ. ‘ સદ્દહામિ ’ મારી ભદ્રાને વિષય બનાવું છું એટલે કે આપની

સિતઃ, ન વા રુચિતઃ રુચિવિષયીકૃતઃ કિન્તુ ‘एयाणि भंते ! एतेसिं पयाणं जाणयाए, सवणयाए, बोहिए अभिगमेणं ’ हे भगवन् ! इदानीम् अनुना भवद्भिः सामायिकादिपदार्थानां वास्तविकतया प्रतिपादनकाले एतेषां सामायिकादि-व्युत्सरणार्थान्तानां पदानां वास्तविकार्थस्य ज्ञानतया निश्चिततया स्वरूपत उपल-म्भात्, श्रवणतया श्रावणप्रत्यक्षेण, बोधितया जिनधर्मावाप्तिरतया, अभिगमेन विशिष्टबोधेन, ‘ दिट्ठाणं, सुयाणं-सुयाणं, विज्जायाणं, वोग्गडाणं, वोच्छिन्नाणं, णिज्जूहाणं, उवधारियाणं ’ दृष्टानां साक्षात् स्वयमुपलब्धानाम्, श्रुतानां भव-द्भ्यः सम्यगाकर्णितानां सम्यक्तया श्रवणविषयीकृतानामित्यर्थः, स्मृतानां भवद्भ्यः आकर्णितत्वेन तनुभवजन्यसंस्कारादनुध्यातानाम्, अतएव विज्ञाता-

लिया, (જો રોહિ) ઔર ન उसे मैंने अपनी रुचि का विषय ही बनाया । किन्तु (एयाणि भंते) अब हे भदन्त ! (एतेसिं पयाणं जाणयाए, सव-णयाए, बोहिए, अभिगमेणं) आपने जो इन सामायिक आदि पदों के अर्थ का वास्तविक रूप से प्रतिपादन किया है सो इस अवसर में मुझे इन पदों के सामायिक से लेकर व्युत्सर्ग के अर्थ तक के पदों के -अर्थ का अच्छी तरह से ज्ञान हो गया है-निश्चितरूप से इनके स्वरूप की उपलब्धि हो गई है इस कारण से, तथा इन्हें मैंने अपने श्रवण करनेके विषयभूत बनाया है, इस कारण से, जिनधर्म महा-वीर के शासन में पञ्चमहाव्रतरूपधर्म की अवासिरूप बोधि की मुझे प्राप्ति हो चुकी है इस कारण से, तथा सुद्ध में अब विशिष्ट बोध जग गया है इस कारण से, (दिट्ठाणं) इन पदों को मैंने साक्षात् स्वयं उपलब्ध कर लिया है, इन्हें आप भगवंतों के मुखारविन्द से अच्छी तरह मैंने सुन लिया है, आप से सुन चुकने के बाद अनुभवजन्य संस्कार की

હેતુઓ વડે નિર્ણીત કરીને એ તેમાં વિશ્વાસ મૂક્યો નહીં, “ જો રોહિ ” અને એ તેને મારી રૂચિના વિષયરૂપ પણ ળનાવ્યો નહીં પરંતુ “ एयाणि भंते ! हे भगवन्तो ! “ एतेसिं पयाणं जाणयाए, सवणयाए, बोहिए, अभिग-मेणं ” आपने जे सामायिक वगेरे पढोना अर्थानुं वास्तविकरूपे प्रतिपादन कयुं छे, तेने लीधे हुवे मने आ पढोना - सामायिकथी लधने व्युत्सर्गना अर्थ पर्यन्तना पढोना अर्थानु सारी रीते ज्ञान थयु छे-निश्चित रीते तेना स्वइपनी मने समज्जु पडी छे ते कारखे, तथा मे ते विषयनुं प्रत्यक्ष श्रवण कयुं होवाने कारखे, महावीरना शासनमां जैनधर्मना पांच महाव्रतरूप धर्मनी अवासिरूप बोधिनी प्राप्ति मने थछ जवाने कारखे, तथा हुवे विशिष्ट बोधनी मारामां जगृति थछ जवाने कारखे, “ दिट्ठाणं ” आ पढोने मे प्रत्यक्ष ज्ञेयां छे (तेमना वास्तविक अर्थानां दर्शन कयिं छे) અને आपनां सुणेથી મે

मस्येहि विश्वसिद्धि विश्वासं कुरु हे आर्य ! रोचस्व रुचिं कुरु, यथा एतत् सामा
यिकादि वस्तु वयं वदामः आत्मपरतया प्रतिपादयामः, तत् तथैव वर्तते इति स्वया
प्रतिपक्षन्यम्, 'तर्पणं से कालासवेसियपुत्रे अणगारे येरे भगवन्ते वंदइ, नमसा,
वदिचा नमसिणा एवं वयासी' एत - खलु स कालास्यवपिकपुत्रोऽनगारः स्व
विरात् भगवतो वन्दत नमस्यसि, वन्दित्वा नमस्यित्वा एवं वक्ष्यमाणमकारेण
अवादीत् - 'इच्छामि ण भते ! तुभं अतिप चाउज्जामाओ घम्माओ पंचमहम्ब-
इय सपडिक्कम्मणं घम्मं उवसंपज्जिचाणं बिहरिष' इच्छामि खलु भगवन् !
महतामन्तिक समीपे चतुर्थीमात् पर्मात् चतुः प्रकारकमहाव्रतपर्मात् पञ्चमहाव्र-
तिकं समतिक्रमणं धर्मद्वयसपथ स्वीकृत्य चिह्नं स्यात् इच्छामि इति पूर्वेष्वन्यथा
ततः स्पष्टिरा मोक्ष - 'अहा सुहं देवाणुप्पिया ! मा पडिबंधं' हे देवानुप्पि !

अन्यथा नहीं है इस प्रकार से तुम समझो और उस पर अद्धा, प्रतीति
और रुचि रखो। इसके बाद (से कालासवेसिय पुत्रे अणगार) उन
कालास्यवपिकपुत्र अनगार ने (येरे भगवन्ते वंदइ नमसाह) स्पष्टिर
भगवन्तों को वन्दना की नमस्कार किया, वन्दना नमस्कार करके फिर
उन्होंने उनसे अपना हार्दिक जो अभिप्राय था उसे प्रकट किया - इसमें
उन्होंने कहा कि - (इच्छामि णं भते ! तुभं अतिम चाउज्जामाओ
घम्माओ पंचमहम्बइयंसपडिक्कम्मण घम्म उवसंपज्जिस्ता णं बिहरिष)
हे भगवन् ! मैं आपके पास दीक्षा लेकर रहना चाहता हूँ। मैं अभी तक
जो चातुर्थीमरूप महाव्रत धर्म का पालन करता आया हूँ, अतः मैं आपके
पास प्रतिक्रमण सहित पंचमहाव्रतरूप धर्म को स्वीकार करना चाहता
हूँ। उनका इस प्रकार हार्दिक अभिप्राय सुनकर स्पष्टिर भगवन्तों ने
उनसे कहा - (अहासुहं देवाणुप्पिया ! मा पडिबंधं करेइ) हे देवानुप्पि !

तेभने। जीने के। १४ पक्ष अर्थ नहीं - जेही तमे अद्धा, प्रतीति जने रुचि रखे।
तथा १४ 'से कालासवेसियपुत्रे अणगारे' ते कालास्यवपिकपुत्र जणुआरे
"येरे भगवन्ते वंदइ नमसाह" स्थितिर भगवतोने वदय्वा नमस्कार कथो वदय्वा
नमस्कार करीने तेभजे पोतानी के दार्ढिक धम्मा कती ते तेभनी आगण भेट
करी - 'इच्छामि ण भते ! तुभं अतिप चाउज्जामाओ घम्माओ पंचमहम्बइय
सपडिक्कम्मण घम्म उवसंपज्जिचाण बिहरिष' हे भगवन्तो ! हे आपनी
अभक्ष दीक्षा आगीकार करीने रहेवा भाउ छु अत्यार सुधी हुं बार
महामतइय धर्मानुं पालन करतो कतो, कवे हुं आपनी समक्ष प्रतिक्रमसहित
पंच महामतइय धर्माना स्वीकार करवा छिछु छु तेभनी आ प्रकारनी दार्ढिक
धम्मा आगणीने स्थितिर भगवतोने तेभने अहुं के "अहासुहं देवाणुप्पिया !

પ્રત્યેયમિ વિશ્વસિમિ, રોચે, રુચિવિષયતયા અમિલષામિ, 'એવમેયં સે જહેયં તુબ્હે વદહ' એવમેતત્, અથ યથા એતદ્વસ્તુ યૂયં વદથ, યૂયં ભવન્તઃ યથા આત્મપરતયા એતદ્ વસ્તુ સામાયિકાદિ પદાર્થાન વદથ પ્રતિપાદયન્તિ એવમેવ તથેવ એતત્ સામાયિકાદિ વસ્તુ વિદ્યતે હત્યાશયઃ । 'તણં તે થેરા ભગવંતો કાલાસવેસિયપુત્ત અણગારં એવં વયાસી' તતઃ તદનન્તરં તે સ્થવિરાઃ ભગવન્તઃ કાલાસ્યવેષિકપુત્રમ્ અનગારં એવં વક્ષ્યમાણપ્રકારેણ અવાદિષુઃ પ્રોચુઃ 'સદ્દહાહિ અજ્જો ! પત્તયાહિ અજ્જો ! રોણહિ અજ્જો ! સે જહેયં અમ્હે વદામો' હે આર્ય ! શ્રદ્ધેહિ, આત્મપરતયા પ્રતિપાદિતેષુ સામાયિકાદિપદાર્થેષુ શ્રદ્ધાં કુરુ હે આર્ય !

પાદિત સામાયિકાદિ પદોં કે આત્મરૂપ અર્થ પર પૂર્ણવિશ્વાસ કરતા હું (પત્તિયામિ) હસે અપની પ્રીતિ યા પ્રતીતિ કા સ્થાન વનાતા હું (રોણમિ) ઓર અપની રુચિ કા હસે નિવાસસ્થાન વનાતા હું । (એવમેયં સે જહેયં તુબ્હે વદહ) હે ભગવન્ ! આપ જિસ પ્રકાર સે આત્માર્યપરકસામાયિક આદિ પદોં કા કથન કિયા હૈ વાસ્તવ મેં હનકા વહી અર્થ હૈ । હસપ્રકાર સે કાલાસ્યવેષિકપુત્ર અનગાર કે હાર્દિક વચનોં કો સુનકર હન સ્થવિર ભગવંતોં ને હનસે કહા કિ આર્ય ! જૈસા હમ કહતે હૈં (સદ્દહાહિ) હસ પર તુમ પૂર્ણરૂપ સે વિશ્વાસ કરો (પત્તયાહિ અજ્જો) હસે અચ્છી તરહ સે હે આર્ય ! તુમ અપની પ્રતીતિકોટિ મેં હતારો (રોણહિ અજ્જો) હસ પર બહુત હી ગહરાઈ કે સાથ સોચ વિચાર કર અપની રુચિ જમાઓ તાત્પર્ય કહને કા યહ હૈ કિ જિસ પ્રકાર સે હન સામાયિક આદિ પદોં કા અર્થ હમને આત્મરૂપ અર્થ મેં પ્રતિપાદિત કિયા હૈ વહ વૈસા હી હૈ-

ભારત પ્રતિપાદિત સામાયિક વગેરે પદોના આત્મરૂપ અર્થ પર હું ભારી સંપૂર્ણ શ્રદ્ધા વ્યક્ત કરું છું ' પત્તિયામિ' હું એની પ્રતીતિ કરું છું, 'રોણમિ' અને તેમા ભારી રુચિ બાહેર કરું છું. " એવમેયં સે જહેયં તુબ્હે વદહ " હે ભગવન્તો ! આપે જે રીતે આત્માર્થસૂચક આ સામાયિક વગેરે પદોનું પ્રતિપાદન કર્યું છે એ પ્રતિપાદન જ એ પદોના વાસ્તવિક અર્થ બતાવનાર છે. આપ્રકારના કાલાસ્યવેષિકપુત્ર અણુગારના હોદ્દિક વચનેા સાંભળીને તે સ્થવિર ભગવતોએ તેમને કહ્યું કે હે આર્થ ! અમે જે કહ્યું તેમાં "સદ્દહાહિ" આપ સંપૂર્ણ રીતે શ્રદ્ધા રાખો " પત્તયાહિ અજ્જો " હે આર્થ ! આપ તેની સારી રીતે પ્રતીતિ કરો " રોણહિ અજ્જો " તે વિષે જાણે વિચાર કરીને તેમાં રુચિ જમાવો. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે અમે જે પ્રકારે સામાયિક વગેરે પદોના અર્થનું આત્મરૂપ અર્થમા પ્રતિપાદન કર્યું છે, તે અર્થ જ સાચો છે.

मस्येहि विश्वसिहि विश्वासं कुरु हे आर्य ! रोचस्व रुचिं कुरु, यथा एतत् सामा
यिकादि वस्तु वयं वदाम आत्मपरतया प्रतिपादयाम, तत् तदेव वर्तते इति त्वया
प्रतिपचय्यम्, 'तएण से कालासवेसियपुत्ते अणगारे येर मगवन्ते वंदइ, नमसा,
वदिचा नमसिन्ता एवं वयासी' तत् - खलु स कालास्यवपिकपुत्रोऽनगार' स्व-
चिरान् मगवतो वन्दत नमस्पति, वन्दित्वा नमस्पित्वा एवं वक्ष्यमाणप्रकारेण
अवादीत् - 'इच्छामि ण मंते ! तुम्मं अतिए चाउज्जामाभो घम्माभो पंचमहम्म
इय सपट्टिकम्मणं घम्म उवमंपज्जित्ताणं विहरितए' इच्छामि खलु मगवन् !
मवतामन्तिक समीपं चतुर्यामात् धर्मात् चतु' मकारकमहाव्रतधर्मात् पञ्चमहाव्र-
तिर्क सप्रतिक्रमणं धर्मसुपसपय स्वीकृत्य चिरं स्थातुम् इच्छामि इति पूर्वेणान्वयः।
तत् स्थिरा मोक्ष - 'अहा मुह देवाणुप्पिया ! मा पडिपंघ' हे देवानुप्पि !

अन्यथा नहीं है इस प्रकार से तुम समझो और उस पर अट्टा, प्रतीति
और रुचि रखो। इसके बाद (से कालासवेसिय पुत्ते अणगार) उन
कालास्यवपिकपुत्र अनगार ने (येरे मगवन्ते वंदइ नमंसइ) स्थिर
मगवन्तो को वन्दना की नमस्कार किया, वन्दना नमस्कार करके फिर
उन्होंने उनसे अपना हार्दिक जो अभिप्राय था उसे प्रकट किया - इसमें
उन्होंने कहा कि - (इच्छामि ण मंते ! तुम्मं अंतिम चाउज्जामाभो
घम्माभो पंचमहम्मइयंसपट्टिकम्मणं घम्म उवमंपज्जित्ता णं विहरितए)
हे मगवन् ! मैं आपके पास दीक्षा छकर रहना चाहता हूँ। मैं अभी तक
जो चातुर्यामरूप महाव्रत धर्म का पालन करता आया हूँ, अतः मैं आपके
पास प्रतिप्रमण सन्नि पञ्चमहाव्रतरूप धर्म को स्वीकार करना चाहता
हूँ। उनका इस प्रकार हार्दिक अभिप्राय सुनकर स्थिर मगवन्तो ने
उनसे कहा - (अहामुहं देवाणुप्पिया ! मा पडिपंघ करइ) हे देवानुप्पि

तेभने। धीने केअं पणु अर्थ नहीं - जेवी तमे अहं प्रतीति जने रुचि सधे
त्थाइ बाद से कालासवेसियपुत्ते अणगारे " ते कालास्यवपिकपुत्र अनुभर
" घर मगवन् पंदइ नमंसइ " स्थिर मगवतोने वदए नमस्कार एवं वदए
नमस्कार करीने तेभने पीतानी ने हार्दिक उच्छा करी ते तेभनी आगत अइ
करी - 'इच्छामि ण मंते ! तुम्म अतिए चाउज्जामाभो घम्माभो पंचमहम्मइय
सपट्टिकम्मणं घम्म उवमंपज्जित्ता णं विहरितए' हे मगवन्तो ! तु आपनी
समझ दीइ। अनुभर करीने वदए आगु छ आपने मुधा तु आ
मदामगइय धर्मनु पावन करेने इतो करे तु आपनी समझ प्रतिप्रमणसन्नि
पाय मदामगइय धर्मने स्वीकृ करेना छिउ छ तेभनी आ अइनी हार्दिक
इच्छा सामग्रीने स्थिर मगवतोने तेभने अणु हे " अहा मुह देवाणुप्पि !

यथा सुखं यथेच्छं समाचर, मा प्रतिवन्धं, विलम्बं मा कुरु इत्याशयः, 'तएणं से कालासवेसियपुत्ते अणगारे थेरे भगवन्ते वंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता चाउज्जामाओ धम्माओ पंचमहव्वइयं सपडिक्कणं धम्मं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ' ततः खलु स कालास्यवेषिकपुत्रोऽनगारः स्थविरान् भगवतः वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्यित्वा चतुर्यामाद् धर्मात् पञ्चमहाव्रतिकं सप्रतिक्रमणं धर्ममुपसंपद्य स्वीकृत्य खलु विहरति तिष्ठति 'तएणं से कालासवेसियपुत्ते अणगारे वहूणि वासाणि सामन्नपरियागं पाउणइ' ततः खलु स कालास्यवेषिकपुत्रोऽनगारः वहूनि वर्षाणि श्रामण्यपर्यायं साधुपर्यायं प्राप्नोति पालयति 'पाउणित्ता जस्सट्ठाए कीरइ नग्गमावे, मुंडभावे, अण्हाणयं, अदंतधुवणयं, अच्छत्तयं, अणोवाहणयं' प्राप्य पालयित्वा यस्य प्रयोजनस्य मुक्तिरूपस्य अर्थं प्राप्त्यर्थं सिद्धयर्थमित्याशयः क्रियते विधीयते नग्नभावः नग्नत्वम्, मुण्डभावः मुण्डत्वं क्रियते इत्यस्य सर्वत्रैवाग्रे सम्बन्धो बोध्यः, अस्नानकम् स्नानवर्जनम्, अदन्तधूपनकम् दन्तधावनवर्जनम्, अच्छत्रकम् छत्रधारणवर्जनम्, अनुपानत्कत्वम् पादयोरुपानद्वर्जनम्, 'भूमिसेज्जा फलहसेज्जा, कट्टसेज्जा, केसलोओ, वंभचेरवासो, परघरप्पवेसो, लद्धावलद्धी,

जैसी तुम्हारी इच्छा हो वैसा करो। परन्तु आत्मकल्याण में विलम्ब हो ऐसा मत करो। स्थविर भगवतों से इस प्रकार जानकर उन कालास्यवेषिकपुत्र अनगारने उन स्थविर भगवतों को वन्दना की, नमस्कार किया, वन्दना नमस्कार कर के चातुर्याम धर्म का परित्याग कर प्रतिक्रमण सहित पंच महाव्रतवाले धर्म स्वीकार कर लिया। इसके बाद उन कालास्यवेषिकपुत्र अनगार ने अनेक वर्षों तक श्रामण्यपर्याय का पालन किया। उन्होंने जिस मुक्तिरूप प्रयोजन की सिद्धि के लिये अर्थात् मुक्तिरूप प्रयोजन की प्राप्ति लिये-नग्नभाव, मुंडभाव, स्नानवर्जन, दन्तधावनवर्जन, छत्रधारणवर्जन, पग में मौजा, जूता आदि पहिरने का

मा पडिवधं करेह " छे देवानुप्रिय ! आपने जेनाथी सुअ छपजे ते करे. पणु आत्मकल्याणुमा विदंअ करवे जेअजे नही " स्थविर लगवतोना जे वयने सांलणीने ते कालास्यवेषिकपुत्र अणुगारे तेमने वदणु करी, नमस्कार करी. वदणु नमस्कार करीने चातुर्याम धर्मेना पत्तियाग करीने प्रतिक्रमण सहित पाय महाव्रतवाजा धर्मेना स्वीकार करी. त्यारणह ते कालास्यवेषिकपुत्र अणुगारे अनेक वर्षो सुधी श्रमणुपर्यायनु पालन करुं तेमणे मुक्तिरूप प्रयोजननी सिद्धिने माटे जेट्ठे के भोक्ष प्राप्त करवाने माटे नग्नभाव, मुंडभाव, स्नान त्याग, दंतधावनने त्याग, छत्र धारणुने त्याग, पगमां मौजा, जूतां पहिरने

उच्चावया, गामकृशा, पाषीस परिसहोपसगा अधियासिर्नति' भूमिश्चम्या, पृथिवीश्चयनम्, फलकशस्या, पीठश्चयनम्, काष्ठश्या, दारुश्चयनम्, केशलोच, केशलुश्चयनम्, ब्रह्मचर्यवासः, ब्रह्मचर्यव्रतपालनपूर्वकनिवासः, परमहंसवेषः मित्रा टनार्थे आषकगृहद्वारगमनम्, लब्धपलब्धिः वचचित् स्वयोग्यमितोपलब्धिः वच चित् स्वयोग्यमितानुपलब्धिश्च, उच्चावचा निम्नोच्चताः ग्रामकण्टका अनुकूलाः प्रतिकूला वा इन्द्रियाणां कण्टकसदृशा द्वाविंशतिः परिपहोपसगा अधिसङ्गते सहनत्रिपयोक्रियन्ते, 'तं अह आराहेइ, आराहिता चरमेहि उस्तास-नीसासेहि-सिदे, बुदे, घुचे, परिनिम्बुदे, सङ्गदुखलप्यहीणे' त मोक्षरूपं मयम् आराधयति, साधयति, आराध्य सताप्य चरमे उच्छ्वासनिःश्वासे सिद्ध, बुद्ध, मुक्ता, परि निर्मुक्तः सर्वदुःखमहीणः सीणसर्वदुःखः सम्पन्नः इत्याश्रयाः ॥ सू० ५ ॥

॥ इति आर्यकालास्यवेपिपुत्रानगारप्रकरणम् ॥

अप्रत्याख्यानादिप्रकरणम्—

कालास्यवेपिकपुत्रोऽनगारः प्रत्याख्यानक्रियया सिद्ध इति प्रत्याख्यानक्रिया-विपर्ययभूता अप्रत्याख्यानक्रियेति तां निरूपयितुमिदं सुप्रमाह—'मते' इत्यादि ।

मूम्—भते चि भगव गोयमे समर्ण भगव महावीरं
वदइ नमसइ वदिता नमसित्ता एव धयासी—से पूर्ण भते।
सेट्टियस्स य सणुयस्स य किवणस्स य खत्तियस्स य समं
चेव अपच्चक्खाण किरिया कज्जइ, हता गोयमा ! सेट्टिय

वर्जन, भूमि आदि पर सोना, केशों कालुचन करना, ब्रह्मचर्य का पालन करना, विशुद्ध भिक्षा खेना, लामालाम में संतोष करना परिषद और वपसर्गों को जीतना—उस अर्थ को उन्होंने ने अच्छी तरह से सिद्ध कर लिया और वे चरम उच्छ्वास नि श्वासों द्वारा सिद्ध हो गये, बुद्ध हो गये, मुक्त हो गये, परिनिर्मुक्त हो गये और सर्व दुःखोंसे महीण हो गये ॥ सू० ५ ॥

॥ इस प्रकार यह कालास्यवेसिकपुत्र अनगार प्रकरण समाप्त हुआ ॥

पानो त्याग, भूमिपर शयन, केशवृचन, ब्रह्मचर्य पालन, विशुद्ध भिक्षानी व प्राप्ति, लामालाममें संतोष, परीषदों अने वपसर्गों पर विजय वजेरे सहन कर्तुं अने तेमझे ते अर्थनी सिद्धि करी जेटसे के अतिम उच्छ्वास निवास से सेव्या सिद्ध भइ गया बुद्ध भया, मुक्त भया परिनिर्मुक्त भया अने तमाम हुआजोने अत कहनाइ जनी भया ॥ सू० ५ ॥

॥ कालास्यवेपिकपुत्र अजुआर प्रकरण समाप्त ॥

સ્સ ય જાવ અપચ્ચક્ષાણ કિરિયા કજ્જઈ, સે કેણટ્ટેણં
મંતે! ગોયમા ! અવિરઈ પહુચ્ચસે તેણટ્ટેણં ગોયમા ! એવં
વુચ્ચઈ, સેટ્ઠિયસ્સ ય. તણુયસ્સ ય. જાવ કજ્જઈ ॥ સૂ. ૬ ॥

છાયા—મદંતંતિતિ ભગવાન્ ગૌતમઃ શ્રમણં ભગવન્તં મહાવીરં વન્દતે નમ
સ્યતિ વંદિત્વા નમસ્યિત્વા એવમવાદીત્, તદ્ નૂનં મદન્ત ! શ્રેષ્ઠિકસ્ય ચ તનુકસ્ય
ચ કૃપણસ્ય ચ ક્ષત્રિયસ્ય ચ સમમેવાપ્રત્યાખ્યાનક્રિયા ક્રિયતે ? હંત ગૌતમ !

અપ્રત્યાખ્યાન આદિ પ્રકરણ—

કાલાસ્યવેષિકપુત્ર અનગાર પ્રત્યાખ્યામ ક્રિયા સે સિદ્ધ હુએયહ વાત
અમી પ્રકટ કી ગઈ હૈ સો ઇસ પ્રત્યાખ્યાન ક્રિયા સે વિપરીત અપ્રત્યા-
ખ્યાન ક્રિયા હૈ । ઇસ અપ્રત્યાખ્યાન ક્રિયા કો નિરૂપણ કરને કે લિખે
અબ સૂત્રકાર સૂત્ર કહતે હૈ—“ મંતે ત્તિ ભગવં ગોયમે ” ઇત્યાદિ ।

સૂત્રાર્થ—(મંતે તિ ભગવં ગોયમે !) હે મદન્ત ! એસા કહ કર
મહાવાન ગૌતમ ને (સમણં મહાવં) શ્રમણ મહાવાન (મહાવીરં) મહા-
વીર કો (વન્દહ) વન્દના કી (નમંસહ) નમસ્કાર કિયા (વન્દિત્તા
નમંસિત્તા) વન્દના નમસ્કાર કરકે (એવં વયાસી) ફિર ઊંઠોં ને ડનસે
ઇસ પ્રકાર પૂછા—(સે ણૂણં મંતે ! સેટ્ઠિઅસ્સ ય તણુયસ્સ ય સ્વત્તિયસ્સ
તં સમંચેવ અપ્પચ્ચક્ષાણ કિરિયા કજ્જઈ) હે મદન્ત ! શ્રેષ્ઠી, કીદરિદ્રી
કી, કૃપણ કી ઓર ક્ષત્રિય રાજા કી અપ્રત્યાખ્યાન ક્રિયા કયા એકસી

અપ્રત્યાખ્યાન આદિ પ્રકરણ

કાલાસ્યવેષિકપુત્ર અણુગાર પ્રત્યાખ્યાન ક્રિયાથી સિદ્ધપદ પામ્યાં એ વાત
તો હમણાં જ પ્રકટ કરવામાં આવી છે. ને પ્રત્યાખ્યાનની વિપરીત અપ્રત્યા-
ખ્યાન ક્રિયા છે, તે અપ્રત્યાખ્યાન ક્રિયાનું નિરૂપણ કરવાને માટે હવે સૂત્રકાર
સૂત્ર કહે છે—“ મંતે ! ત્તિ ભગવં ગોયમે ! ” ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ—(મંતે ત્તિ ભગવં ગોયમે !) હે ભગવન્ ! એવુ કહીને ભગવાન
ગૌતમે (સમણ મહાવં) શ્રમણ ભગવાન (મહાવીરં) મહાવીરને (વન્દહ) વદણા
કરી (નમંસહ) નમસ્કાર કર્યા (વંદિત્તા નમંસિત્તા) વંદણા નમસ્કાર કરીને
(એવ વયાસી) તેમણે ભગવાન મહાવીરને આ પ્રમાણે પૂછ્યું (સે ણૂણં મંતે !
સેટ્ઠિયસ્સ ય તણુયસ્સ ય કિવણસ્સ ય સ્વત્તિયસ્સ ય સમ ચેવ અપ્પચ્ચક્ષાણ કિરિયા
કજ્જઈ) હે ભગવન્ ! શ્રેષ્ઠિની, દરિદ્રીની, કૃપણની અને ક્ષત્રિય-રાજાની અપ્ર-

ભેષ્ઠિકસ્ય ચ યાવત્ અપ્રત્યાઘ્યાનક્રિયા ક્રિયતે, તત્કેનાર્થેન મદન્ત ! ગૌતમ ! અવિરતિ પ્રતીત્ય, તત્કેનાર્થેન ગૌતમ ! એવમુચ્યતે ભેષ્ઠિકસ્ય ચ તનુકસ્ય ચ યાવત્ ક્રિયતે इति ॥ સૂ. ૬ ॥

ટીકા—‘ મંતેષિ ’ મદન્ત इति હે મદન્ત ! इत्यેષ રૂપેણ મગલ્લમમમ્મેતિ ભાવ, ‘ મગલ્લ ગોયમે ’ મગલ્લાન્ ગૌતમ ! ‘ સમણ મગલ્લ મહાવીરં ’ ધમણ મગલ્લ મહાવીર ‘ વદ્દહ નમસહ ’ ઘન્દવે નમસ્યસિ ‘ વંદિષા નમસિષા ’ વંદિત્વા નમસ્યિત્વા ‘ एवं ઘયાસી ’ એવ ઘસ્યમાણમકારેણાવાદીત્ ઉક્તગત્ । સ્મિત્ક-ધાનિત્યાહ—‘ સે પૂણ મંતે ’ તદ્ નૂન મદન્ત ! સેટ્ઠિયસ્સ ય ’ ભેષ્ઠિકસ્ય

હોતી હે ? (હતા ગોયમા સેટ્ઠિયસ્સ જાણ અપરચક્ષણ કિરિયા કઝજહ) હાં ગૌતમ ! ભેષ્ઠી સે છેકર રાજા તક કી અપ્રત્યાઘ્યાન ક્રિયા એકસી હોતી હે । (સે કેળદ્દેણં મતે !) હે મદન્ત ! એસા આપ કિસ કારણ સે કહતે હું કિ એઠી સે છેકર રાજા તક કી અપ્રત્યાઘ્યાન ક્રિયા એકસી હોતી હે ! (ગોયમા ! અવિરત્ પડુચ) હે ગૌતમ ! મેં જો એસા કહતા હું ઘહ અવિરતિ ભાવ કો છેકર કહતા હું (સે સેળદ્દેણં ગોયમા ! एवं ઘુચ્ચહ, સેટ્ઠિયસ્સ ય તણુયસ્સ ય જાણ કઝજહ) કિ એક સેઠ કી યાવત્ રાજા કી અપ્રત્યાઘ્યાન ક્રિયા એકસી હોતી ।

ટીકાથ—(મતે સિ) હે મદન્ત ! હસ રૂપ સે મગલ્લાન આમંત્રણ કરકે (મગલ્લ ગોયમે) મગલ્લાન ગૌતમને (સમણ મગલ્લ મહાવીરં) ધમણ મગલ્લાન મહાવીર કો (વદ્દહ નમસહ) ઘંદના કી ઓર નમસ્કાર કિયા । (વંદિત્વા નમસિષા) ઘંદના નમસ્કાર કરકે (एवं ઘયાસી) ફિર ઉન્હોં ને હન સે એસા પ્રશ્ન પૂછા (સે પૂણં મતે !) હે મદન્ત ! (સેટ્ઠિયસ્સ) જિમકા મત્તક

ત્યાજ્યાન કિયા શુ એકસરખી હોય છે । (હતા ગોયમા ! સેટ્ઠિયસ્સ જાણ અપરચક્ષણ કિરિયા કઝજહ) હા ગૌતમ ! એઠીથી લઈને શાલ મુખીની અપ્રત્યાજ્યાન કિયા એકસરખી હોય છે (સે કેળદ્દેણં મતે !) હે જાતવન્ ! આપ શા કારણે એવું કહે છે કે મઠીથી લઈને શાલ મુખીની અપ્રત્યાજ્યાન કિયા એક સરખી હોય છે ? (ગોયમા ! અવિરત્ પડુચ) હે ગૌતમ ! હું અવિરતિ ભાવની અપેક્ષાએ એવું કહું છું (સે સેળદ્દેણ ગોયમા ! એવ ઘુચ્ચહ, સેટ્ઠિયસ્સ તણુયસ્સ ય કઝજહ) મઠી (ચેક) થી લઈને શાલ મુખીની અપ્રત્યાજ્યાન કિયા એકસરખી હોય છે

ટીકાથ— મતે સિ ” હે જાતવન્ । આ રીતે અબોધીને, “ મગલ્લ ગોયમે ” મગલ્લાન ગૌતમે “ સમણ મગલ્લ મહાવીર ” ધમણ મગલ્લાન મહાવીરને “ વદ્દહ નમસહ ” વદ્દહા કરી અને નમસ્કાર કર્યા “ વંદિષા નમસિષા ” વંદિત્વા નમસ્કાર કરીને “ એવ ઘયાસી ” આ પ્રમાણે પ્રશ્ન પૂછ્યો—“ સે પૂણ મંતે ! ”

ચ, શ્રીદેવતાકૃપાકટાક્ષપ્રત્યક્ષલક્ષ્યમાણદ્રવિણલક્ષણવિલક્ષણહિરણ્યપટ્ટસમલંકૃત-
મૂર્ધનગરપ્રધાનવ્યવહર્તુઃ, 'તણુયસ્સ ય' તનુકસ્ય ચ, દરિદ્રપૂર્વોપાર્જિતપાપકર્મકસ્ય
પ્રાપ્તદારિદ્ર્યસંપન્નસ્ય 'કિવણસ્સ ય' કૃપણસ્ય ચ સતિ વિભવેપિ સત્કર્માદૌ
દાનાદિરહિતસ્ય 'સ્વત્તિયસ્સ ય' ક્ષત્રિયસ્ય રાજાશ્ચ 'સમં' ચેવ અપચ્ચક્ષ્ણાણકિ-
રિયા કજ્જહ' સમમેવાપ્રત્યાખ્યાનક્રિયા ક્રિયતે ભવતીત્યર્થઃ કિં સમૈવ સદૃશ્યે-
વાઽપ્રત્યાખ્યાનક્રિયા સર્વેષાં ભવતીતિ પ્રશ્નઃ । ભગવાનાહ—'હંતા'—ત્યાદિ ।
'હંતા ગોયમા' હંતા ગૌતમ ! 'સેટ્ઠિયસ્સ ય જાવ અપચ્ચક્ષ્ણાણકિરિયા કજ્જહ'
શ્રેષ્ઠિકસ્ય ચ યાવદ્ અપ્રત્યાખ્યાનક્રિયા ક્રિયતે, અત્ર યાવત્પદેન તનુકકૃપણક્ષત્રિય-
પદાનાં સંગ્રહઃ, શ્રેષ્ઠિકદરિદ્રકૃપણરાજાં સર્વેષાં તુલ્યૈવાપ્રત્યાખ્યાનક્રિયા ભવતીતિ

લક્ષ્મીદેવીકે કૃપાકટાક્ષસે પ્રત્યક્ષલક્ષ્યમાણ લક્ષદ્રવિણરાશી (ધન કા ઢેર)
સે નિર્મિત સુવર્ણ કે સુકુટ સે અલંકૃત હો રહા હૈ એસા જો નગર કા પ્રધાન
વ્યવહારી-નગર સેઠ, ડનકી તથા (તણુયસ્સ) તનુક-પૂર્વોપાર્જિત પાપકર્મ
કે કારણ લક્ષ્મી રહિત જો દરિદ્ર વ્યક્તિ હૈ ડસકી, (કિવણસ્સ) વિભવ
કે હોને પર જો અપની લક્ષ્મી કા સદુપયોગ દાન ધર્માદિ મેં નહીં કરતા
હૈ એસા જો કૃપણ વ્યક્તિ હૈ ડસકી તથા (સ્વત્તિયસ્સ) ક્ષત્રિય-રાજા
જો હૈ ડસકી (સમં ચેવ અપચ્ચક્ષ્ણાણ કિરિયા કજ્જહ) અપ્રત્યાખ્યાન
ક્રિયા ઇકસી હી હોતી હૈ ક્યા ? સમાન હી હોતી હૈ ક્યા ? ઇસ પ્રશ્ન કા
ઉત્તર દેતે હુઐ ભગવાન કહતે હૈ કિ-(હંતા) હાં (ગોયમા) ગૌતમ !
(સેટ્ઠિયસ્સ ય જાવ અપચ્ચક્ષ્ણાણ કિરિયા કજ્જહ) શ્રેષ્ઠી કી યાવત્
અપ્રત્યાખ્યાન ક્રિયા સમાન હી હોતી હૈ । યહાં યાવત્ પદ કે (તનુક,
કૃપણ, ક્ષત્રિય) ઇન પદોં કા સંગ્રહ કિયા ગયા હૈ । તાત્પર્ય કહને કા
યહ હૈ કિ શ્રેષ્ઠી દરિદ્ર કૃપણ, ઓર રાજા ઇન સબ કી અપ્રત્યાખ્યાન
ક્રિયા ઇકસી હી હોતી હૈ । સબકી ક્રિયા સમાન હી હોતી હૈ ઇસ ઘાત

હે ભગવન્ ! "સેટ્ઠિયસ્સ" જેનુ મસ્તક લક્ષ્મીદેવીની કૃપાદષ્ટિથી પ્રત્યક્ષ લક્ષ્ય-
માન-લક્ષદ્રવિણુરાશીથી રચિત ગુણુ મુગટથી શોભી રહુ છે એવા નગરના
મુખ્ય વ્યાપારી-નગરશેઠની તથા "તણુયસ્સ" તનુકની-પૂર્વના પાપકર્મને કારણે
જે લક્ષ્મીથી રહિત દરિદ્ર સ્થિતિમા મૂકાયેલ છે તેની "કિવણસ્સ" કંબુસની
(ધન હેવા છતાં પણ જે વ્યક્તિ તેનો દાનધર્માદિમાં સદુપયોગ કરતો નથી
તેની) તથા "સ્વત્તિયસ્સ" ક્ષત્રિયની (રાજાની) "સમં" ચેવ અપચ્ચક્ષ્ણાણ
કિરિયા કજ્જહ" અપ્રત્યાખ્યાન ક્રિયા શુ એકસરખી હોય છે । ભગવાન મહા-
વીર સ્વામી તેનો આ પ્રમાણે જવાબ આપે છે—"હંતા ગોયમા ! " હા, ગૌતમ !
"સેટ્ઠિયસ્સ ય જાવ અપચ્ચક્ષ્ણાણકિરિયા કજ્જહ" શ્રેષ્ઠીની, દરિદ્રની, કંબુસની

માત્ર । સર્વેષાં સમૈવ દ્વિયા મવતીતિ શ્રુત્વા પૃચ્છતિ ગૌતમ ‘સે કેણદ્દેણં મંતે’
 તત્કેનાર્યેન મદન્ત । એવમુચ્યતે, સર્વેષાં સમૈવતિ, મગધાનાહ—‘ગોયમા’ ર્યાદિ ।
 ‘ગોયમા’ હ ગૌતમ । ‘અચિરદ્ પદુચ્ચ’ અચિરતિ મસીત્થ અચિરતિમાશ્વિત્ય,
 ‘સે તેણદ્દેણં ગોયમા’ એવ મુચ્ચદ્ ‘તત્કેનાર્યેન’ હે ગૌતમ । એવમુચ્યતે—‘સેટ્ઠિયસ્સ
 ય તણુપસ્સ ય જાવ કઞ્જદ્’ ભેટ્ટિકાસ્ય ચ તનુકસ્ય ચ યાવત્ ક્રિયતે હે ગૌતમ ।
 અચિરત્યપસ્યા એવ કથ્યતે યત્ સર્વેષામેવ ભેટ્ટિકાદીનાં કુલ્યા અમત્યામ્યાન-
 ક્રિયા મવતીતિ ॥ ૬૦ ૬ ॥

અચિરતિશ્ચ સર્વેષાં સમૈવાત સર્વેષાં ભેટ્ટિકાદીનામપ્રત્યામ્યાનક્રિયા કુલ્ય-
 વેત્યાદિના અમત્યામ્યાનક્રિયા મરુપિતેત્થમપ્રત્યામ્યાનક્રિયામસ્તાવાદિદ સૂત્રમાર-
 ‘આહાકમ્મ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલ્ક—આહાકમ્મ ણં મુંજમાણે સમણે ણિગંગથે કિં વધદ્
 કિં પકરેદ્ કિં ધિણાદ્ કિં ઉવચિણાદ્ ? ગોયમા ! આહાકમ્મ

કો સુનકર ગૌતમ ને મગધાન સે પૂછા કિ (સે કેણદ્દેણ મંતે) હે
 મદન્ત । આપ એસા કિસ કારણ સે કહતે હૈં કિ સબ કી અપ્રત્યામ્યાન
 ક્રિયા એકસી હી હોતી હૈ ? હમ્મકા ઉત્તર ઘેતે બુદ્ધ પ્રસુ ડનસે કહતે હૈં
 કિ (ગોયમા અચિરદ્ પદુચ્ચ) હે ગૌતમ । અચિરતિ કો આશ્રિત કરકે
 (સે તેણદ્દેણં ગોયમા) ગય મુચ્ચદ્) મૈ તેમ્મા કહતા જ કિ (સેટ્ઠિયસ્સ
 ય તણુપસ્સ ય જાવ કઞ્જદ્) ભેટ્ટી કી, તનુક કી યાવત અપ્રત્યામ્યાન
 ક્રિયા એકસી હી હોતી હૈ । તાત્પર્ય વાદે ભેટ્ટી હો વાદે દરિદ્રી હો વાદે
 કૃપણ હો વાદે ગજા હો કોઈ બી હો યદિ ડનકે અચિરતિ વાદા હૈ તો ડન
 સવકી અપ્રત્યામ્યાન ક્રિયા સમાન હી હૈ । હસમેં કોઈ એદ હી નહીં હૈ ॥

અને દ્વિત્રિયની અપ્રત્યામ્યાન ક્રિયા એકસરખી જ દેાય છે ત્યારે ગૌતમસ્વામી
 મદાવીરમ્મણને પૂછે છે કે “સે કેણદ્દેણ મંતે !” હે ભગવન ! આપ આ
 કારણે એવું કહેા છે કે તે બધાની અપ્રત્યામ્યાન ક્રિયા એકસરખી દેાય છે ।

ઉત્તર—“ગોયમા ! અચિરદ્ પદુચ્ચ” હે ગૌતમ ! અચિરતિની અપેક્ષાએ
 “સે તેણદ્દેણ ગોયમા ! એવ મુચ્ચદ્” હું એવું કહું ॥ કે “સેટ્ઠિયસ્સ ય તણુપસ
 ય જાવ કઞ્જદ્” ભેટ્ટીની, દરિદ્રીની, કૃપણની અને દ્વિત્રિયની અપ્રત્યામ્યાન
 ક્રિયા એકસરખી દેાય છે તાત્પર્ય એ છે કે ભલે શેઠ દેાય કે ભલે ગરીબ
 દેાય, ભલે કૃપણ દેાય કે ભલે શબ્દ દેાય પણ ને તેઓ અચિરતિ દેાય તે
 તે બધાની અપ્રત્યામ્યાન ક્રિયા એકસરખી જ દેાય છે તેમની તે ક્રિયામાં કંઈ
 પણ ભેદનો ભેદ દેાનો નથી ॥ ૬૦ ૬ ॥

णं भुंजमाणे समणे निगंथे आउयवज्जाओ सत्तकम्मपगडीओ
 सिढिलबंधणवद्धाओ धणियबंधणवद्धाओ पकरेइ, जाव
 अणुपरियट्टइ, से केणट्टेणं जाव अणुपरियट्टइ, गोयमा !
 आहाकम्मं णं भुंजमाणे समणे निगंथे आयाए धम्मं अइ-
 क्कमइ, आयाए धम्मं अइक्कममाणे पुढविकाइयं णावकंखइ,
 जाव तसकायं णावकंखइ, जेसिं पि य णं जीवाणं सरीराइं
 आहारं आहारेइ, तेवि जीवे णावकंखइ, से तेणट्टेणं गोयमा !
 एवं वुच्चइ आहाकम्मं णं भुंजमाणे समणे निगंथे आउय-
 वज्जाओ सत्तकम्मपगडीओ जाव अणुपरियट्टइ, फासुएसणिज्जं
 णं भंते भुंजमाणे समणे निगंथे किं बंधइ जाव उवचिणाइ,
 गोयमा ! फासुएसणिज्जं णं भंते भुंजमाणे समणे निगंथे
 किं बंधइ जाव उवचिणाइ ? गोयमा ! फासुएसणिज्जं
 णं भुंजमाणे समणे निगंथे आउयवज्जाओ सत्तकम्मपग-
 डीओ धणियबंधणवद्धाओ सिढिलबंधणवद्धाओ पकरेइ,
 जहा संवुडेणं, नवरं—आउयं च णं कम्मं सियबंधइ
 सिय नो बंधइ, सेसं तहेव जाव वीइवयइ, से केणट्टेणं
 जाव वीइवयइ, गोयमा ! फासुएसणिज्जं णं भुंजमाणे समणे
 निगंथे आयाए धम्मं नो अइक्कमइ, आयाए धम्मं अणइ-
 क्कममाणे पुढविकाइयं अवकंखइ जाव तसकायं अवकंखइ,
 जेसिं पि य णं जीवाणं सरीराइं आहारेइ ते वि जीवे अव-
 कंखइ, से तेणट्टेणं जाव वीइवयइ ॥ सू० ७ ॥

છાયા—આધાકર્મ સહ્ય સુજ્ઞાનાઃ શ્રમણો નિર્ગ્રંથઃ કિં ષઙ્ઘાતિ કિં પ્રકરોતિ કિં ચિનોતિ કિમ્ ઉપચિનોતિ? ગૌતમ! આધાકર્મ સહ્ય સુજ્ઞાનાઃ શ્રમણો નિર્ગ્રંથઃ આયુષ્કલ્પમાં સપ્ત કર્મપ્રકૃતીઃ શિથિલવંધનવદ્દાઃ દુરવન્ધનવદ્દાઃ પ્રકરોતિ, યાવ દનુપર્યટતિ, તત્કેનાર્થેન પાવદનુપર્યગતિ? ગૌતમ! આધાકર્મ સહ્ય સુજ્ઞાનાઃ

અચિરતિ સયકી સમાન હી હોતી હૈ અતઃ સમસ્ત શ્રેષ્ઠી આદિકોં કી અપ્રત્યાશ્વાન ક્રિયા મી તુલ્ય હી હોતી હૈ ક્ત્યાદિ કલ્પન ઠારા અપ્ર ત્યાશ્વાન ક્રિયા કા નિરૂપણ ક્રિયા । સો અથ હસી અપ્રત્યાશ્વાન ક્રિયા કે પ્રસ્તાવ કો લેકર સૂત્રકાર (આહાકર્મ્મ ણી) હસ સૂત્ર કા કલ્પન કરતે હૈ—‘આહાકર્મ્મ ણં સુજમાણે સમણે’ ક્ત્યાદિ ।

સૂત્રાર્થ—(આહાકર્મ્મ ણં સુજમાણે) હૈ અશ્નત । આધાકર્મ્મ દોષ સે દૂષિત આહાર કો ભોગને લાલા (સમણે ણિગ્ગયે) ધમ્મણ નિર્ગ્રંથ (કિં યથહ) કયા યાંઘતા હૈ ? (કિં યકરેહ) કયા કરતા હૈ ? (કિં ષિણાહ) કિસ કા અવ્ય કરતા હૈ ? (કિં ઉપચિણાહ) કિસકા ઉપચય કરતા હૈ ? મગધાન કહતે હૈ—(ગોયમા ! આહાકર્મ્મ ણં સુજમાણે સમણે નિર્ગંથે આહયવજ્ઞામો સસકર્મ્મપગ્ગહીમો ; સિદ્ધિલવંધનવદ્દામો ધણિયવંધન વદ્દામો યકરેહ) હૈ ગૌતમ । આધાકર્મ્મ દોષ સે દૂષિત આહાર કો ભોગને લાલા શ્રમણ નિર્ગ્રંથ આયુર્કર્મ્મ કો છોડકર દોષ સાત કર્મપ્રકૃતિઓં કો કિં જિન્હેં પહિલે ડસને શિથિલવંધન સે યાંધી યોં, ડહીં સામ કર્મપ્ર કૃતિયોં કો મજબૂત વંધન સે યધી હુઈ યના લેતા હૈ । (યાવ અનુપરિ

સીની અચિરતિ (અમત) સમાન લેાય છે તે કારણે શ્રેષ્ઠી વગેરે સી લેયોની અપ્રત્યાશ્વાન ક્રિયા સમાન જ લેાય છે, ક્ત્યાદિ કલ્પનવડે સૂત્રાર્થે અપ્રત્યાશ્વાન ક્રિયાનું નિરૂપણ કર્યું છે એ જ અપ્રત્યાશ્વાન ક્રિયાના પ્રત્યાબંધે આધાર લઈને સૂત્રગર સૂત્રનું કથન કરે છે—‘આહાકર્મ્મ સુજમાણે સમણે’

પ્રશ્ન—(આહાકર્મ્મ ણં સુજમાણે નિર્ગંથે) હૈ અશ્નત ! આધાકર્મ્મ આહારને પ્રદણ કરનાર શ્રમણ નિર્ગંથ (કિં યથહ) શુ ખાંધે છે ? (કિં યથ રેહ) શુ કરે છે ? (કિં ષિણાહ) શેને અવ્ય કરે છે ? (કિં ઉપચિણાહ) અને શેને ઉપચય કરે છે ?

ઉત્તર—(ગોયમા ! આહાકર્મ્મ ણં સુજમાણે સમણે નિર્ગંથે આહયવજ્ઞામો સસકર્મ્મપગ્ગહીમો સિદ્ધિલવંધનવદ્દામો ધણિયવંધનવદ્દામો યકરેહ) હૈ ગૌતમ । આધાકર્મ્મ આહારને પ્રદણ કરનાર શ્રમણ નિર્ગંથ આયુષ્કલ્પ સિદ્ધાન્તની સવ કર્મ પ્રકૃતિયોં કે જે પદોશ શિથિલ વંધવાળી હતી તે મજબૂત વંધનવાળી કરે. (યાવ અનુપરિપદહ) (યાવત્) તે સમુદાય પરિશ્રમણ કરે છે.

णं भुञ्जमाणे समणे निग्गंथे आउयवज्जाओ सत्तकम्मपगडीओ
 सिढिलबंधणवद्धाओ धणियबंधणवद्धाओ पकरेइ, जाव
 अणुपरियट्ठइ, से केणट्ठेणं जाव अणुपरियट्ठइ, गोयमा !
 आहाकम्मं णं भुञ्जमाणे समणे निग्गंथे आयाए धम्मं अइ-
 क्कमइ, आयाए धम्मं अइक्कममाणे पुढविकाइयं णावकंखइ,
 जाव तसकायं णावकंखइ, जेसिं पि य णं जीवाणं सरीराइं
 आहारं आहारेइ, तेवि जीवे णावकंखइ, से तेणट्ठेणं गोयमा !
 एवं वुच्चइ आहाकम्मं णं भुञ्जमाणे समणे निग्गंथे आउय-
 वज्जाओ सत्तकम्मपगडीओ जाव अणुपरियट्ठइ, फासुएसणिज्जं
 णं भंते भुञ्जमाणे समणे निग्गंथे किं बंधइ जाव उवचिणाइ,
 गोयमा ! फासुएसणिज्जं णं भंते भुञ्जमाणे समणे निग्गंथे
 किं बंधइ जाव उवचिणाइ ? गोयमा ! फासुएसणिज्जं
 णं भुञ्जमाणे समणे निग्गंथे आउयवज्जाओ सत्तकम्मपग-
 डीओ धणियबंधणवद्धाओ सिढिलबंधणवद्धाओ पकरेइ,
 जहा संवुडेणं, नवरं—आउयं च णं कम्मं सियबंधइ
 सिय नो बंधइ, सेसं तहेव जाव वीइवयइ, से केणट्ठेणं
 जाव वीइवयइ, गोयमा ! फासुएसणिज्जं णं भुञ्जमाणे समणे
 निग्गंथे आयाए धम्मं नो अइक्कमइ, आयाए धम्मं अणइ-
 क्कममाणे पुढविकाइयं अवकंखइ जाव तसकायं अवकंखइ,
 जेसिं पि य णं जीवाणं सरीराइं आहारेइ ते वि जीवे अव-
 कंखइ, से तेणट्ठेणं जाव वीइवयइ ॥ सू० ७ ॥

શ્રમણો નિર્ગ્રન્થ કિં વધ્નાતિ યાવદુપચિનોતિ, ગૌતમ ! પ્રાસુકૈવળીય મુદ્ધત્ત
શ્રમણો નિર્ગ્રન્થ આયુક્કવર્જોઃ સપ્ત કર્મપ્રકૃતીઃ દુદમન્થનવદ્દા શિથિલવંધનવદ્દા
પ્રકરોતિ, યથા સંવૃતઃ સ્વલુનવરમ્ આયુર્લ્લ્પં ચ પરમસ્યાત્ વધ્નાતિ સ્યામો વધ્નાતિ
શેષં તથૈય યાવદ્ વ્યતિગ્રજતિ, સત્કેનાર્યેન યાવત્ વ્યતિગ્રજતિ, ગૌતમ ! પ્રાસુ

દૂષિત આહાર કો ષોગને થાલા શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ આયુર્કર્મ કો છોડકર
શેષ સાત કર્મપ્રકૃતિયો કો ગાઢવંધન સે યાંધતા હૈ ઓર યાવત્ સંસાર
મેં પારંપાર ધૂમતા રહતા હૈ । (પ્રાસુપ્પસગિજ્જ ણં મંતે । મુજમાણે સમણે
નિર્ગ્રન્થે કિં વંધહ, જાવ ઉવચિણહ) હૈ મર્દન ! પ્રાસુક એપણિય આહાર
કો અપને ઉપયોગ મેં લાતા હુઆ શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ કયા વાંધતા હૈ યાવત્
યહ કિસકા ઉપચય કરતા હૈ ? (ગોપમા ! પ્રાસુપ્પસગિજ્જ ણં મુજમાણે
સમણે નિર્ગ્રન્થે આઝવયજ્જાઓ સસકમ્મપગહીઓ ઘણિયવંધનવદ્દાઓ
સિથિલવંધનવદ્દાઓ પકરેહ) હૈ ગૌતમ : પ્રાસુક એપણિય આહાર કો
અપને ઉપયોગ મેં લાતા હુઆ શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ આયુ કો છોડકર શેષ સાત
કર્મપ્રકૃતિયો કો જિ-હેં ઉસને પહિલે ગાઢ વંધન સે યદ્ધ કિયા થા અથ
શિથિલવંધન વાલી કર લેતા હૈ (જહા સવુદેણ) યહ સંવૃત્ત અનગત
કી તરહ હોતા હૈ । (નવર) વિશેષતા યહ હૈ કિ યહ (આઝયં વ ન
કર્મ સિય વંધહ સિય નો વંધહ) આયુર્કર્મ કા કમી વંધ કરતા હૈ ઓર
કમી વંધ નહીં બી કરતા હૈ । (સેસં તહેવ જાવ લીહવયહ) અવશિષ્ઠ

પ્રકૃતિયોને ગાઢવર બધ બાપે છે અને (યાવત્) તે સંસારમા વારવાર
પરિભ્રમણ કરે છે । (પ્રાસુપ્પસગિજ્જ ણં મંતે । મુજમાણે સમણે નિર્મલે કિં વંધહ,
જાવ ઉવચિણહ) હૈ મગવન ! પ્રાસુક કોપણીય (સૂચતા) આહારને ઉપયોગ
કરનાર શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ શુ બાપે છે ? (યાવત્) શેનો ઉપચય કરે છે ?
(યાવત્ પહમી બહી “ શુ કરે છે અને શેનો બધ કરે છે ? ” આ બે પ્રશ્નો
શ્રેષ્ઠ કરાયા છે)

(ગોપમા પ્રાસુપ્પસગિજ્જ ણં મુજમાણે સમણે નિર્ગ્રન્થે આઝવયજ્જાઓ
સસકમ્મપગહીઓ ઘણિયવંધનવદ્દાઓ સિથિલવંધનવદ્દાઓ પકરેહ) હૈ ગૌતમ !
પ્રાસુક કોપણીય આહારને ઉપયોગ કરનાર શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ, આયુષ્ય કર્મ
સિવાયની સાત કર્મપ્રકૃતિયોને પહેલાં તેણે ગાઢ વંધનથી બાંધી હતી તેમને
શિથિલ બંધનવાળી કરી નાખે છે (જહા સવુદેણ) તે સંવૃત્ત અનગતના
જેવો હોય છે (નવર) પણ તેનામાં કો વિશેષતા હોય છે કે (આઝયં વ
નં કર્મ સિય વંધહ, સિય નો વંધહ) તે આયુષ્યક્રમને બધ કરારેક બાંધે છે
અને કરારેક નથી બાંધતો । (સેસં તહેવ જાવ લીહવયહ) “ તે સંસારને ખર

શ્રમણો નિર્ગ્રન્થ આત્મનો ધર્મમતિક્રામતિ, આત્મનો ધર્મમતિક્રામન્ પૃથિવીકાયિકં નાવકાંક્ષતિ, યેષામપિ ચ જીવાનાં શરીરાણિ આહારમાહરતિ, તાનપિ જીવાન્ નાવકાંક્ષતિ, તત્તેનાર્થેન ગૌતમ! એવમુચ્યતે આધાકર્મં ચલુ મુજ્ઞાનઃ શ્રમણો નિર્ગ્રન્થઃ આયુષ્કવર્જાઃ સપ્ત કર્મપ્રકૃતીર્યાવત્ અનુપર્યટતિ। પ્રાસુકૈપણીયં ચલુ મદન્ત! મુજ્ઞાનઃ

ચટ્ટહ) યાવત્ વહ સંસાર મેં વારંવાર ધૂમતા રહતા હૈ । (સે કેળદ્દેણં જાવ અણુપરિચટ્ટહ) હે મદન્ત ! હસકા કયા કારણ હૈ-જો વહ યાવત્ સંસારમેં વારંવાર શ્રમણ કરતારહતા હૈ ? (ગોયમા! આહાકર્મ્મં ણં મુજમાણે સમણે નિર્ગંથે આયાએ ધમ્મં અહ્કમમહ) હે ગૌતમ ! આધાકર્મ્મદોષ સે દૂષિત આહાર કો ભોગને ચાલા શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ અપની આત્મા કે ધર્મ કા ઉલ્લંઘન કરતા હૈ (આયાએ ધમ્મં) અપની આત્મા કે ધર્મ કો (અહ્કમમાણે) ઉલ્લંઘન કરતા હુઆ વહ શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ (પુઢવીકાહયં ણાવકંચહ) પૃથિવીકાયિક જીવોં કી દયા નહીં પાલતા હૈ । (જાવ તસકાયં ણાવકંચહ) યાવત્ વહ ત્રસકાય કી દયા નહીં પાલતે હૈ । (જે સિં પિ ય ણં જીવાણં સરીરાહં આહારં આહારેહ) તથા જિન જીવોં કે શરીરોં કો વહ ચાતા હૈ (તે વિ જીવે નાવકંચહ) ઉન જીવોંકી મી વહ દરકાર (દયા) નહીં કરતા હૈ । (સે તેળદ્દેણં ગોયમા ! એવં વુચ્ચહ) હસ કારણ હે ગૌતમ ! મૈને એસા કહા હૈ કિ (આહાકર્મ્મં ણં મુજમાણે સમણે નિર્ગંથે આયવજ્ઞાઓ સત્તકર્મ્મપગડીઓ જાવ અણુપરિચટ્ટહ) આધાકર્મ્મ દોષ સે

પ્રશ્ન--(સે કેળદ્દેણં જાવઅણુપરિચટ્ટહ) હે ભગવન્ ! શા કારણે તે સંસારમા પરિભ્રમણ કર્યા કરે છે ?

ઉત્તર--(ગોયમા ! આહાકર્મ્મં ણં મુજમાણે સમણે નિર્ગંથે આયાએ ધમ્મં અહ્કમમહ) હે ગૌતમ ! આધાકર્મ્મ આહારને અહણુ કરનાર શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ પોતાના આત્મધર્મનું ઉલ્લંઘન કરે છે. (આયાએ ધમ્મં) પોતાના આત્મધર્મનું (અહ્કમમાણે) ઉલ્લંઘન કરતો તે શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ (પુઢવીકાહયં ણાવકંચહ) પૃથ્વીકાયિક જીવોની દયા પાળતો નથી (જાવ તસકાય ણાવકંચહ) યાવત્ તે ત્રસકાય પર્યંતના જીવોની દયા પણ પાળતો નથી (જે સિં પિ ય ણં જીવાણ સરીરાહં આહારં આહારેહ) તથા તે જે જીવોના શરીરને ખાય છે (તે વિ જીવે નાવકંચહ) તે જીવોની પણ તે દરકાર કરતો નથી (સે તેળદ્દેણ ગોયમા ! એવં વુચ્ચહ) હે ગૌતમ ! તે કારણે હું એવું કહું છું કે (આહાકર્મ્મં ણં મુજમાણે સમણે નિર્ગંથે આયવજ્ઞાઓ સત્તકર્મ્મપગડીઓ જાવ અણુપરિચટ્ટહ) આધાકર્મ્મ આહાર લેનાર શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ આયુષ્યકર્મ સિવાયની સાત કર્મ

ટીકા—‘આહાકર્મ્મ ણ મુંજમાણે’ આપાકર્મ્મ સ્વલ્લ મુજ્ઞાન, આપાય સાધુ મનસિ નિષાય કર્મ = પદ્ધત્કાયોપમર્દડપૂર્વકમાહારાદિનિષ્પાદનમ્ તત્ આપાકર્મ્મ, આપયા=સાધુપ્રણિપાનેન યત્ ક્રિયતે-સચેતનં વસ્તુ અચેતનં, ક્રિયતે અચેતનં વા વસ્તુ પચ્યતે, ધીયતે વા ઉપાધયાદિકં, જ્યુયતે વા વચ્ચાદિકં તત્ આપાકર્મ્મ, સાદૃશમાહારાદિકં ‘મુંજમાણે’ મુજ્ઞાન=સાદૃશમાહારાદેરુપમોગ કુર્વાણ ‘સમજે નિર્ગંગે’ ભ્રમણો નિર્ગન્થ ‘કિં વંચઈ’ કિં વચ્નાતિ કીદશં કર્મ વચ્નાતિ પ્રકૃતિ વપાપેક્ષયા સ્પૃષ્ટાવસ્થાપેક્ષયા વા, ‘કિં પકરેઈ’ કિં પ્રકરોતિ સ્થિતિવચ્ચાપેક્ષયા વૃદ્ધાવસ્થાપેક્ષયા વા, ‘કિં વિણાઈ’ કિં વિનોતિ અનુમાગવચ્ચાપેક્ષયા, નિષયા

ટીકાર્થ—(આહાકર્મ્મ ણ મુંજમાણે) સાધુ કો અપને મન મેં રલ્લ કર પદ્ધત્કાય કે ઝીર્ણો કે ઉપમર્દનપૂર્વક જો આહાર આદિ કા નિષ્પાદન હોતા હૈ વહ આપાકર્મ્મ હૈ । (આપાય કર્મ્મ હિતિ આપાકર્મ્મ) હિસ પ્રકાર કી હિસકી જ્યુત્પત્તિ હૈ, સાધુઓ કો મન મેં રલ્લકર ડનકે આહાર કે લિયે પદ્ધત્કાયિક ઝીર્ણો કા ઉપમર્દન કરના અથવા-આપયા કર્મ્મ હિતિ આપાકર્મ્મ સાધુ કો નિમિત્ત કરકે સચેતન વસ્તુ કો અચેતન કરના, અચેતન વસ્તુ કો પકાના, ઉપાધયાદિક પનવાના, વચ્ચ યગેરઈ ધુનવાના વહ સચ આપાકર્મ્મ આહાર આદિ કા ઉપમોગ કરને ચાલા (સમજે નિર્ગંગે) ભ્રમણ નિર્ગન્થ (કિં વંચઈ) પ્રકૃતિ વચ્ચ કી અપેક્ષા સે અથવા સ્પૃષ્ટાવસ્થા કી અપેક્ષા સે કૈસે કર્મ્મ કા વચ્ચ કરતા હૈ ? (કિં પકરેઈ) સ્થિતિવચ્ચ કી અપેક્ષા સે અથવા વૃદ્ધાવસ્થા કી અપેક્ષા સે કયા કરતા હૈ ? (કિં વિણાઈ) અનુમાગવચ્ચ કી અપેક્ષા સે અથવા નિષયસકરણ કી

ટીકાર્થ—“આહાકર્મ્મ ણ મુંજમાણે” સાધુને નિમિત્તે છે કાવના છવેતન વિનાશવાળે જે આહાર વગેરે તૈયાર કરાય છે તે આહારને આપા કરમ દોષથી દૂષિત ગણવામાં આવે છે “આપાય કર્મ્મ હિતિ આપાકર્મ્મ” આ પ્રમાણે તેની જ્યુત્પત્તિ થાય છે—સાધુઓને નિમિત્તે છે કાવના છવેતની વિશધના કરીને તૈયાર કરેલા આહારને ખાટે આ રાજ પ્રયોગ થાય છે, અથવા—“આપયા કર્મ્મ હિતિ આપાકર્મ્મ” સાધુને નિમિત્તે સચેત વસ્તુને અચેત કરવી, અચેત વસ્તુને સાંધવી, ઉપાધયાદિક, બનાવરાવવા, વચ્ચાદિ વણાવવા, એ બધાને “આપા કરમ” કહે છે આવા આપાકરમ દોષથી દૂષિત આહારનો ઉપયોગ કરનાર “સમજે નિર્ગંગે” ભ્રમણ નિર્ગન્થ “કિં વંચઈ” પ્રકૃતિ બધની અપેક્ષાએ અથવા સ્પૃષ્ટાવસ્થાની અપેક્ષાએ ઠેવા કર્મનો બધ બાંધે છે ? “કિં પકરેઈ” સ્થિતિબધની અપેક્ષાએ અથવા વૃદ્ધાવસ્થાની અપેક્ષાએ શુ કરે છે ? “કિં વિણાઈ” અનુભાગબધની

કૈષ્ણીયં મુજ્જાનઃ શ્રમણો નિર્ગ્રન્થ આત્મનો ધર્મ નાતિક્રામતિ, આત્મનો ધર્મમનતિ-
ક્રામન્ પૃથિવીકાયિકમવકાંક્ષતિ યાવત્ ત્રસકાયમવકાંક્ષતિ, યેવામપિ ચ જીવાનાં
શરીરાણ્યાહરતિ તાનપિ જીવાનવકાંક્ષતિ, તત્તેનાર્થેન યાવદ્ વ્યતિવ્રજતિ ॥ ૭ ॥

ઉસી પ્રકાર જાનના ચાહિયે, યાવત્ વહ સંસાર કો ઉલ્લંઘન કર દેતા
હૈ । (સે કેળદ્રેણં જાવ વીહવયહ) હે ભદન્ત ! હસકા કયા કારણ હૈ જો
વહ યાવત્ સંસાર કો ઉલ્લંઘન કર દેતા હૈ । (ગોયમા ! ફાસુઅસણિ-
જ્જં ણં મુજમાણે સમણે નિર્ગંથે આયાઅ ધમ્મં નો અહક્કમહ) હે ગૌતમ !
પ્રાસુક અષણીય આહાર કો અપને ઉપયોગ મેં લાંતા હુઆ શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ
અપની આત્મા કે ધર્મ કા ઉલ્લંઘન નહીં કરતા હૈ । (આયાઅ ધમ્મં
અળહક્કમમાણે પુઢવિક્કાઇયં અવકંઘહ જાવ તસકાયં અવકંઘહ) આત્મા
કે ધર્મ કા ઉલ્લંઘન નહીં કરતા હુઆ વહ શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ પૃથિવીકાયિક
જીવોં પર દયા કરતા હૈ યાવત્ વહ ત્રસકાયિક જીવોં પર દયા રખતા
હૈ । (જેસિં પિ ય ણં જીવાણં સરીરાહં આહારેહ, તે વિ જીવે અવકંઘહ
સે તેળદ્રેણં જાવ વીહવયહ) તથા જિન જીવોં કે શરીર કા વહ આહાર
કરતા હૈ ડન જીવોં કી ભી વહ દયા રખતા-પાલતા હૈ । (સે તેળદ્રેણં
જાવ વીહવયહ) હસ કારણ હે ગૌતમ ! વહ શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ સંસાર કો
ઉલ્લંઘન કર દેતા હૈ ।

કરે છે ” ત્યા સુધીતુ બાકીતું વર્ણુન એ પ્રમાણે જ (સવૃત આશુગારની
જેમ જ સમજવુ

(સે કેળદ્રેણં જાવ વીહવયહ) હે ભગવન્ ! તેતુ શું કારણ છે કે (યાવત્)
તે સંસારને પાર કરે છે ? (ગોયમા ! ફાસુઅસણિજ્જં ણં મુજમાણે સમણે
નિર્ગંથે આયાઅ ધમ્મં નો અહક્કમહ) હે ગૌતમ ! પ્રાસુક અષણીય આહારનો
ઉપયોગ કરનાર શ્રમણ નિર્ગંથ પોતાના આત્માના ધર્મતું ઉલ્લંઘન કરતો નથી
(આયાઅ ધમ્મ અળહક્કમમાણે પુઢવિક્કાઇયં અવકંઘહ જાવ તસકાયં અવકંઘહ)
આત્માના ધર્મતું ઉલ્લંઘન ન કરતો તે શ્રમણ નિર્ગંથ પૃથ્વીકાયથી લઈને
ત્રસકાય સુધીના જીવોની દયા પાળે છે (જે સિં પિ ય ણ જીવાણં સરીરાહં
આહારેહ, તે વિ જીવે અવકંઘહ-સે તેળદ્રેણં જાવ વીહવયહ) તથા જે જીવોના
શરીરનો તે આહાર કરે છે, તે જીવોની પણ તે દયા પાળે છે હે ગૌતમ !
તે કારણે તે શ્રમણ નિર્ગંથ સંસારને તરી બંધ છે.

દીર્ઘકાલઠિયાઓ પકરેઈ મંદાણુમાવાઓ તિન્વાણુમાવાઓ પકરેઈ અપ્પપ્પસ
માઓ વહુપ્પસગાઓ પકરેઈ, આઠય ચ ણં કમ્મ સિય વંધઈ સિય નો વંધ
અસાયાધેયખિજ્જં ચ ણં કમ્મ મુજ્જો મુજ્જો ઉવચિનાઈ અણાઈયં ચ ણં
અણવયમ્મ દીહમદ્દં વાઠરત્તસસારકંતારં ' ઇત્થસ્ય ગ્રહણમ્ । ઠાયા —
હસ્વકાલસ્થિતિકાઃ દીર્ઘકાલસ્થિતિકાઃ પ્રકરોતિ મન્દાણુમાવાસ્તીમાણુમાવા
પ્રકરોતિ અત્થપ્પદેશાગ્રા વહુપ્પદેશાગ્રાઃ પ્રકરોતિ આયુક્ક ચ કર્મ સ્યાદ્
વઘ્નાતિ સ્યાત્ નો વઘ્નાતિ અસાતાવેદનીયં ચ કર્મ ભૂયો ભૂય ઉપચિનોતિ
અનાદિક્ક વાનવતાગ્ગ દીર્ઘાધ્વ વાતુરત્તસસારકાન્તારમ્ । એતસ્ય વ્યાખ્યાનમ્

કરતા હૈ । યહાં યાવત્ પદ્ સે (હસ્વકાલઠિયાઓ દીર્ઘકાલઠિયાઓ
પકરેઈ, મંદાણુમાવાઓ તિન્વાણુમાવાઓ પકરેઈ, અપ્પપ્પસગાઓ વહુ
પ્પસગાઓ પકરેઈ, આઠય ચ ણં કમ્મં સિય વંધઈ સિય નો વંધઈ અસા
યાવેયખિજ્જં ચ ણં કમ્મ મુજ્જો મુજ્જો ઉવચિનાઈ, અણાઈયં ચ ણં અણ
વયમ્મ દીહમદ્દં વાઠરત્તસસારકંતારં) હસ પાઠ કા સમ્રહ કિયા ગયા
હૈ । હસકા તાત્પર્ય યહૈ હૈ કિ હસ્વકાલ કી સ્થિતિવાલી કર્મ પ્રકૃતિયો
કો વહૈ દીર્ઘકાલ કી સ્થિતિવાલી બના વેતા હૈ । મન્દ અણુમાવાવાલી કર્મ
પ્રકૃતિયો કો વહૈ તીવ્ર અણુમાવાવાલી કર વેતા હૈ । અત્થપ્પદેશાગ્રવાલી
કર્મપ્રકૃતિયો કો વહૈ વહુપ્પદેશાગ્રવાલી બના વેતા હૈ । યહૈ આયુક્ક
કા પચ કરતા હૈ ઓર નહીં બો કરતા હૈ । અસાતાવેદનીય કર્મ
કા યહૈ ચાર ૨ ઉપચય કરતા હૈ । તથા અનાદિ અનન્ત તથા
દીર્ઘમાર્ગવાળે ચતુર્ગતિ રૂપ સસાર કાન્તાર મેં ચાર ૨ વ્રમજ
કરતા રહતા હૈ । હન સય પદોં કી વ્યાખ્યા (સવૃત્તાન પ્રકરણ મેં પ્રથમ

પદવડે નીચેનો સૂત્રપાઠ શ્રદ્ધા હરાયો છે— " હસકાલઠિયાઓ દીર્ઘકાલઠિયાઓ
પકરેઈ મંદાણુમાવાઓ તિન્વાણુમાવાઓ પકરેઈ અપ્પપ્પસમાઓ વહુપ્પસમાઓ
પકરેઈ આઠય ચ ણં કમ્મ સિય વંધઈ, સિય નો વંધઈ અસાયાધેયખિજ્જં ચ
ણં કમ્મ મુજ્જો મુજ્જો ઉવચિનાઈ અણાઈયં ચ ણં અણવયમ્મ દીહમદ્દં વાઠરત્ત
સંસારકંતારં " આ પાઠનુ તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે—હસ્વકાલની સ્થિતિવાળી કર્મ—
પ્રકૃતિયોને તે દીર્ઘકાલની સ્થિતિવાળી બનાવે છે મદ્દ અણુમાવાવાળી કર્મ—
પ્રકૃતિયોને તે તીવ્ર અણુમાવાવાળી બનાવે છે અત્થપ્પદેશવાળી કર્મ પ્રકૃતિયોને
તે વહુ પદેશવાળી બનાવે છે—તે આયુષ્યકર્મનો બંધ બાંધે પચ છે અને નથી
પચ બાધતો તે વારવાર અસાતાવેદનીય કર્મનો ઉપચય કરે છે, તથા અનાદિ
અનન્ત અને દીર્ઘ માર્ગવાળા, ચાર ગતિરૂપ સસારરૂપી બનમાં પરિવ્રજાતુ કર્મ
કરે છે આ બધાં પદોની વ્યાખ્યા " સવૃત્તાનપ્રકરણમાં " (પ્રથમ શ્લોકના

વસ્થાપેક્ષયા વા 'કિં ઉવચિણાહ' કિમ્ ઉપચિનોતિ પ્રદેશવન્ધાપેક્ષયા નિકાચનાપેક્ષયા વેતિ પ્રશ્નઃ । ભગવાનાહ—'ગોયમા' ઇત્યાદિ । 'ગોયમા' હે ગૌતમ ! 'આહાકર્મ્મં ણં સુંજમાણે' આધાકર્મ્મં સ્વલ્લુ મુજ્ઞાનઃ 'સમણે નિગ્ગંથે' શ્રમણો નિર્ગ્રન્થઃ 'આડયવજ્જાઓ સત્તકમ્મપગડીઓ' આયુષ્કવર્જાઃ સપ્ત કર્મપ્રકૃતીઃ 'સિઢિલવંધણવદ્ધાઓ' શિથિલવંધનવદ્ધાઃ, 'ધણિયવંધણવદ્ધાઓ પકરેહ' દૃઢવંધનવદ્ધાઃ પ્રકરોતિ, આધાકર્મિકાદિપરિસેવનેનાયુષ્કવર્જિતાઃ સપ્ત કર્મપ્રકૃતયો યાઃ શિથિલવંધનવદ્ધા આસન્ તા દૃઢવંધનવદ્ધાઃ પ્રકરોતીતિ, 'જાવ અણુપરિયદ્દહ' યાવત્ અનુપર્યટતિ - પરિભ્રમતિ, યાવત્પદેન-હસ્તકાલઠિડ્યાઓ અપેક્ષા સે કિસકા ચચ કરતા હૈ । (કિં ઉવચિણાહ) પ્રદેશવંધની અપેક્ષા અથવા નિકાચના અપેક્ષા સે કિસકા ઉપચય કરતા ? એ પ્રશ્ન હૈ । इनका उत्तर देते हुए भगवान कहते हैं कि (गोयमा !) हे गौतम ! (आहाकर्मं णं सुंजमाणे) आधाकर्म दोष से दूषित आहार आदि उपभोग करता हुआ (समणे निगंथे) श्रमण निर्ग्रन्थ (आड-कम्मवज्जाओ सत्तकम्मपगडीओ) आयुर्कर्म को छोड़कर शेष सात कर्म प्रकृतिओं को कि जो इसके पहिले (सिडिल वंधणवद्धाओ) शिथिलवंधन से बद्ध हुई थीं (धणियवंधणवद्धाओ) दृढबंधन से बद्ध बना लेता है । तात्पर्य कहने का यह है कि आधाकर्मिक आहार आदि के परिसेवन करने से सेवनकर्त्ता श्रमण निर्ग्रन्थ आयुर्कर्म के सिवाय सातकर्म प्रकृतियों को जो शिथिलबंधनवाली थीं दृढबंधन से बद्ध करता है । (जाव अणुपरियदह) यावत् वह संसार में जन्ममरण द्वारा परिभ्रमण

અપેક્ષાએ અથવા નિધત્તકરણની અપેક્ષાએ શેનો અચ કરે છે ? "કિં ઉવચિણાહ" પ્રદેશબંધની અપેક્ષાએ અથવા નિકાયની અપેક્ષાએ શેનો ઉપચય કરે છે ? આ પ્રશ્નો પૂછ્યા છે એ પ્રશ્નોના ભગવાન મહાવીર આ પ્રમાણે ઉત્તર આપે છે.

"ગોયમા ! હે ગૌતમ ! "આહાકર્મ્મ ણં સુંજમાણે" આધાકર્મ્મ દોષથી દૂષિત આહારાદિનો ઉપભોગ કરનાર "સમણે નિગ્ગંથે" શ્રમણ નિર્ગ્રંથ "આડ-કમ્મવજ્જાઓ સત્તકમ્મપગડીઓ" આયુષ્યકર્મ સિવાયની સાત કર્મપ્રકૃતિયો કે જેમને તેણે પહેલાં "સિઢિલવંધણવદ્ધાઓ" શિથિલ બંધનથી બાંધી હતી "ધણિયવંધણવદ્ધાઓ" તેમને તે દૃઢ બંધનથી બાંધેલી કરે છે તાત્પર્ય એ છે કે આધાકર્મિક આહાર વગેરેનો ઉપયોગ કરનાર શ્રમણ નિર્ગ્રંથ આયુષ્ય-કર્મ સિવાયની જે સાત કર્મપ્રકૃતિયો પહેલાં શિથિલ બંધવાળી હતી તેમને દૃઢ બંધનવાળી કરે છે "જાવ અણુપરિયદ્દહ" (યાવત્) તે સંસારમા જન્મ-મરણ સહિત વારંવાર પરિભ્રમણ કર્યા કરે છે અહીં "જાવ" (યાવત્=પર્યંત)

दीर्घकालटिप्पणा पक्करो मन्थानुमात्राभा तिष्ठानुमात्राभा पक्करो अप्यपपस
गाभो बहुपपसगाभो पक्करो, आठयं च नं कम्मं सिय र्थइ सिय ना पक्क
अमायायेयणिज्जं च नं कम्मं भुज्जो भुज्जो उपचिणाइ अमाइयं च नं
अणययगं दीदपदं चाउरतसंसाररुत्तार 'इत्यस्य ग्रहणम् । छाया —
ग्रन्थकालस्थितिकाः दीर्घकालस्थितिकाः प्रकरोति मन्दानुभावास्तीव्रानुभावा
प्रकरोति अल्पमदक्षागा बहुमदक्षागाः प्रकरोति आयुष्यं च कर्म स्याद्
पञ्चाति स्यात् नो पञ्चाति अतावायेदनीयं च कर्म भूयो भूय उपचिनोति
अनादिक चानवताग्र दीर्घार्थं चातुरतससारकान्तारम् । एतस्य व्याख्यानम्

करता है। यहाँ पायत्त पद से (हस्मकालटिहयाओ दीर्घकालटिहयाओ पकरेह, मंदाणुभायाओ तिन्याणुभायाओ पकरेह, अप्यपएसगाओ बहु पएसगाओ पकरेह, आउय ष णं कम्मं सिय पघइ मिय नो पंपइ असा यायेयणिज्ज ष णं कम्म भुज्जो सुज्जो उयधिणाइ, अणाइयं च णं अण ययग्गं दीहमद्ध चाउरतमंमारफतारं) इस पाठ का समर्थ किया गया है। इसका तात्पर्य यह है कि हस्मकाल की स्थितिवाली कर्म प्रकृतियों को यह दीर्घकाल की स्थितिवाली बना देता है। मन्द अनुभायवाली कर्म प्रकृतियों को यह तीव्र अनुभायवाली कर देता है। अल्पप्रदशाप्रवाली कर्मप्रकृतियों को यह बहुप्रदशाप्रवाली बना देता है। यह आयुर्कर्म का प्रय करता है और नहीं भी करता है। अमानायेदनीय कर्म का यह चार - उपन्य करता है। तथा अनादि अनन्त तथा दीर्घमार्गवाले चतुर्गति रूप संसार कान्तार में चार २ प्रपन्न करता रहता है। इन सब पदों की व्याख्या (संस्कृतान प्रकरण में प्रपन्न

પદ્મવટે નીચેનો સૂત્રપાઠ શ્રવણ કરાયો છે—“ દ્વારકાઘટિદ્વારો રીદ્ધાસઠિદ્વારો
વક્રેદ્ ગંધાણુમાધારો વિદ્વાણુમાધારા વક્રેદ્ અવ્યવસ્થામાર્ગો વદુષ્વસ્થામાર્ગો
વક્રેદ્ આર્યઃ જ જ કર્મ ગિય વપદ્, રિય મો વપદ્, જસાવાપવર્ગિત્રે જ
જ કર્મ મુજ્જો મુજ્જા ઉવર્ષિણાદ્ અજાદ્ય જ જ અજવયર્ગ રીદ્મયં વાર્ધવ
ગૌતારકતાર ” આ પાઠનું તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે—દ્વરકાજની સ્થિતિવાળી કર્મ-
પ્રતિયોગે તે રીદ્ધાસની સ્થિતિવાળી જનાયે છે મદ્ અનુભાગવાળી કર્મ-
પ્રતિયોગે તે તીવ્ર અનુભાગવાળી જનાયે છે અર્યપ્રદેશવાળી કર્મપ્રતિયોગે
તે બદુ પ્રદેશવાળી જનાયે છે તે આયુષ્યકર્મનો બંધ બાંધે પણ છે અને નસી
પણ બાંધેનો તે વારંવાર અમાતાવેદનીય કર્મનો ઉપચય કરે છે, તથા અત્યાદિ
અનત અને દીપ્ત માર્ગવાળા, ઘણે અનિશ્ચય માર્ગરૂપી જનમાં પરિજ્ઞાન પણ
કરે છે આ બધા પદોની બ્યાખ્યા “ ચતુર્તાનમકરજ્ઞાના ” (પ્રથમ ચતુર્તાન

संवृतानगारप्रकरणे अष्टाविंशतितमे सूत्रे कृतं तत एव द्रष्टव्यम् । 'से केणट्टेणं जाव अणुपरियट्ठइ' तत्केनार्थेन यावदनुपर्यटति ? भगवानाह—'गोयमे' त्यादि । 'गोयमा' हे गौतम ! 'आहाकम्मं णं भुजमाणे' आधाकर्म खलु भुजानः 'समणे निग्गंथे' श्रमणो निर्ग्रन्थः 'आयाए धम्मं अइक्कमइ' आत्मनो धर्मप्रतिक्रामति, आत्मनः धर्म=चारित्रधर्मं श्रुतधर्मम् अतिक्रामति उलंघयति परित्यजतीति भावः, 'आयाए धम्मं अइक्कममाणे' आत्मनो धर्मप्रतिक्रामन् स्वकीयचारित्रात्मकधर्मं परित्यजन् 'पुढविकाइयं' पृथिवीकायिक 'णावकंखइ' नावकांक्षति नानुकम्पते, 'जाव तसकायं णावकंखइ' यावत् त्रसकायं नावकांक्षति, यावत्पदेन—अप्तेजोवायुवनस्पतिकायानां ग्रहणम् । आधाकर्मिकमाहारादिकं भुजानः

शतक प्रथम उद्देशक के २८ वें सूत्र में की जा चुका है सो वहां से जान लेना चाहिये । (से केणट्टेणं जाव अणुपरियट्ठइ) हे भदन्त ! यह किस कारण से पूर्वोक्त विशेषण वाले संसार काल्पार में बार २ घूमता रहता है, तो इसका उत्तर देते हुए प्रभु कहते हैं कि—(आहाकम्मं णं भुजमाणे आधाकर्मिक आहार आदि का सेवन करता हुआ वह (समणे निग्गंथे) श्रमण निर्ग्रन्थ (आयाए धम्मं अइक्कमइ) अपने धर्म का उलंघन करता है । अर्थात् श्रुत चारित्ररूप जो आत्मा का धर्म है उसका वह परित्याग कर देता है । (आयाए धम्मं अइक्कममाणे) अपने चारित्रात्मक धर्म का उलंघन करने वाला—परित्याग कर देने वाला श्रमण निर्ग्रन्थ (पुढविकाइयं) पृथिवीकायिक जीव की (णावकंखइ) अनुकंपा नहीं करता है । (जाव तसकायं णावकंखइ) यावत् वह त्रसकाय की रक्षा नहीं करता है । यहाँ यावत् पद से (अप्काय, तेजःकाय, वायुकाय और

प्रथम उद्देशकना २८भा सूत्रभा) करी छे ते त्यांधी वाची लेवी. " से केणट्टेणं जाव अणुपरियट्ठइ " छे लगवन् । ते श्रमणु निर्ग्रन्थ शा करणु पूर्वोक्त विशेषणवाणा संसार वनभां परिभ्रमणु कर्या करे छे ?

उत्तर—आहाकम्मं णं भुजमाणे " आधाकर्मिक आहारादिषु सेवन करना " समणे निग्गंथे " श्रमणु निर्ग्रन्थ " आयाए धम्मं अइक्कमइ " आत्माना धर्मनु उल्लंघन करे छे, ओटवे के श्रुतचारित्ररूप ले आत्मानो धर्म छे तेनुं आवी स्थितिभा ते पालन करी शकतो नथी " आयाए धम्मं अइक्कममाणे " तथा पोताना चारित्रात्मक धर्मनु उल्लंघन (परित्याग) करना ते श्रमणु निर्ग्रन्थ " पुढविकाइयं " पृथ्वीकायिक एवानी " णावकंखइ " अनुकंपा करतो नथी—इथा पाणतो नथी. " जाव तसकायं णावकंखइ " तथा त्रसकाय सुधीना एवानी पणु ते रक्षा करतो नथी. ओडी " यावत् " पदशी अप्काय, तेजःकाय,

અમળો નિર્ગ્રન્થઃ સમસ્તપૃથિવીકાયાદારમ્ય સમસ્તપ્રસકાવપર્યન્તં પટ્કાયં નાવકાં
 સતિ=નાપેક્ષતે નાનુકમ્પતે ચ હન્તુમિચ્છતીત્યર્થઃ । ' જેસિં પિ ય ણં જીવાણં '
 એવામપિ ચ સ્વલ્લ જીવાનામ્ ' સરીરાઈ ' શરીરાણિ, યાનિ આહારતયા નિપ્પાદિ
 તાનિ યાનિ 'આહારં આહારેહ' આહારમાહરતિ, આહારતયા યદ્ધાતિ ' તેવિ જીવે
 નાવકંસહ ' તાનપિ જીવાન નાવકાંસતિ, અવકાંસણમ્ અપેક્ષા અનુકમ્પા ચા તાન
 જીવાન્ નાપેક્ષતે નાનુકંપતે ચ આધાકર્મિકાહારમોજી ' અહહ ! ઇમિયુદ્ધસ્યેમૈવદ્યં
 પૃથિવ્યાદિપટ્કાયજીવા ઉપમર્દિતાઃ ' રૂપેવ દયાં ન કુરુતે, ' સે તેજદ્દેઞ-
 ગોયમા એવ ધુચ્છહ ' ત્વેનાર્યેન હે ગૌતમ ! યયસુચ્યતે- ' આહારકમ્મં ણં મુંજમાણે '
 આધાકર્મ સ્વલ્લ મુજ્જાનઃ ' સમણે નિર્ગંથે ' અમળો નિર્ગ્રન્થઃ ' બાઉપવજ્જાણો

ધનસ્પતિકાય કા ગ્રહ્ય હુઆ હૈ । આધાકર્મિક આહાર આદિ કા ઉપ-
 યોગ કરને ઘાલા અમળ નિર્ગ્રન્થ સમસ્ત પૃથિવીકાય સે છેકર સમસ્ત
 પ્રસકાય તક જો પટ્કાય કે જીવ હૈ ધન જીવોં ફો અનુકંપા નહીં કરતા
 હૈ, અર્થાત્ ઉન્હોં મારના ઘાહતા હૈ । (જેસિં પિ ય ણં જીવાણં) જિન જીવોં
 કે (સરીરાઈ) શરીર આહાર રૂપ સં નિપ્પાદિત રૂપ હૈ ઉન્હોં યહ આધા
 કર્મિક આહારાદિ કરને ઘાલા અમળ નિર્ગ્રન્થ (આહારં આહારેહ) આહા
 રરૂપ સે ગ્રહણ કર છેતા હૈ । (તેવિ જીવે નાવકસહ) ધન પર ખી યહ
 દયા નહીં કરતા હૈ । અર્થાત્ ધનકે મન મેં એસા દયા આવ નહીં જગતા
 હૈ કિ અહહ ! ઇન ગૃહસ્થોં ને મેરે લિયે પૃથિવ્યાદિક પટ્કાય જીવ બિરાધે
 હૈ-ઉપમર્દિત કિયે હૈ । (સે તેજદ્દેઞ ગોયમા ! યયં ધુચ્છહ) ઇસલિયે હે
 ગૌતમ ! મૈને એસા કહા હૈ કિ (આહારકમ્મં ણં મુંજમાણે) આધાકર્મ
 આહારાદિ કા ઉપયોગ કરને ઘાલા (સમણે નિર્ગંથે , અમળ નિર્ગ્રન્થ

વાયુકાય અને વનસ્પતિકાયને શ્રદ્ધા કરવામા આવ્યા છે આધાકર્મિક આહાર
 વગેરેનો ઉપયોગ કરનાર અમળ નિર્ગ્રન્થ પૃથ્વીકાયથી શરૂને ત્રસકાય સુધીના
 બે કા કાયનાં છવે છે તેમની અનુકંપા કરતો નથી, જોયે કે તેમનું રક્ષણ
 કરતો નથી પણ વિશાધના કરે છે " જે સિં પિ ય ણં જીવણ " ને છવેનાં
 " સરીરાહ " શરીરનું આહારરૂપે નિર્માણ થયું છે તેનું તે આધાકર્મિક આહાર
 કરનાર અમળ નિર્ગ્રન્થ પોતાના આહારરૂપે શ્રદ્ધા કરે છે ' તે વિ જીવે નાવ
 કંસહ ' એ છવે પર પણ તે દયા કરતો નથી જોયે કે તેના મનમા જોયે
 આશાવ ઉત્પત્ત થતો નથી કે અરેરે ! આ ગૃહસ્થોએ મારે નિમિત્તે આ પૃથ્વી-
 કાય છ કાયનાં છવાંની વિશાધના કરી છે " સે તેજદ્દેઞ ગોયમા ! યયં ધુચ્છહ "
 હે ગૌતમ ! તે કારણે મેં એવું કહ્યું છે કે " આહારકમ્મ ણં મુંજમાણે " આધાકર્મ
 કોપથી રૂપિત આહારનો ઉપયોગ કરનાર "સમણે નિર્ગંથે" અમળ નિર્ગ્રન્થ "આમળ

संस्तानगारप्रकरणे अष्टाविंशतितमे सूत्रे कृतं तत एव द्रष्टव्यम् । ‘से केणट्ठेणं जाव अणुपरियट्ठइ’ तत्केनार्थेन यावदनुपर्यटति ? भगवानाह—‘गोयमे’ त्यादि । ‘गोयमा’ हे गौतम ! ‘आहाकम्मं णं भुजमाणे’ आधाकर्म खलु भुजानः ‘समणे निग्गंथे’ श्रमणो निर्ग्रन्थः ‘आयाए धम्मं अइक्कमइ’ आत्मनो धर्ममतिक्रामति, आत्मनः धर्म=चारित्रधर्म श्रुतधर्मम् अतिक्रामति उल्लंघयति परित्यजतीति भावः, ‘आयाए धम्मं अइक्कममाणे’ आत्मनो धर्ममतिक्रामन् स्वकीयचारित्रात्मकधर्मं परित्यजन् ‘पुढविकाइयं’ पृथिवीकायिक ‘णावकंखइ’ नावकांक्षति नानुरूपते, ‘जाव तसकायं णावकंखइ’ यावत् तसकायं नावकांक्षति, यावत्पदेन—अप्तेजोवायुवनस्पतिकायानां ग्रहणम् । आधाकर्मिकमाहारादिकं भुजानः

शतक प्रथम उद्देशक के २८ वें सूत्र में की जा चुका है सो वहाँ से जान लेना चाहिये । (से केणट्ठेणं जाव अणुपरियट्ठइ) हे भदन्त ! यह किस कारण से पूर्वोक्त विशेषण वाले संसार कान्तार में बार २ घूमता रहता है, तो इसका उत्तर देते हुए प्रभु कहते हैं कि—(आहाकम्मं णं भुजमाणे आधाकर्मिक आहार आदि का सेवन करता हुआ वह (समणे निग्गंथे) श्रमण निर्ग्रन्थ (आयाए धम्मं अइक्कमइ) अपने धर्म का उल्लंघन करता है । अर्थात् श्रुत चारित्ररूप जो आत्मा का धर्म है उसका वह परित्याग कर देता है । (आयाए धम्मं अइक्कममाणे) अपने चारित्रात्मक धर्म का उल्लंघन करने वाला—परित्याग कर देने वाला श्रमण निर्ग्रन्थ (पुढविकाइयं) पृथिवीकायिक जीव की (णावकंखइ) अनुकंपा नहीं करता है । (जाव तसकायं णावकंखइ) यावत् वह तसकाय की रक्षा नहीं करता है । यहाँ यावत् पद से (अप्काय, तेजःकाय, वायुकाय और

प्रथम उद्देशकना २८वां सूत्रमां) करी छे ते त्याही वांची लेवी “से केणट्ठेणं जाव अणुपरियट्ठइ” छे लगवन् । ते श्रमणु निर्ग्रन्थ शां करणु पूर्वोक्त विशेषणवाणा संसार वनमां परिभ्रमणु कर्या करे छे ?

उत्तर—आहाकम्मं णं भुजमाणे ” आधाकर्मिक आहारादिनुं सेवन करनार “समणे निग्गंथे” श्रमणु निर्ग्रन्थ “आयाए धम्मं अइक्कमइ” आत्माना धर्मनुं उल्लंघन करे छे, अट्ठे के श्रुतचारित्ररूप के आत्मानो धर्म छे तेनुं आवी स्थितिमा ते पालन करी शकतो नथी “आयाए धम्मं अइक्कममाणे” तथा पोताना चारित्रात्मक धर्मनुं उल्लंघन (परित्याग) करनार ते श्रमणु निर्ग्रन्थ “पुढविकाइयं” पृथ्वीकायिक एवोनी “णावकंखइ” अनुकंपा करतो नथी—इथा पाणतो नथी. “जाव तसकायं णावकंखइ” तथा तसकाय सुधीना एवोनी पणु ते रक्षा करतो नथी. अर्थात् “यावत्” पदथी अप्काय, तेजःकाय,

સ્વલ્લ મદન્ત । તત્ર પ્રાસુકમ્=અવિષ્મ, પ્પણીય=આધાકર્મદિસકન્દોપરહિતમ્
 'મુજમાણે' સુજ્ઞાન 'સમણે નિમ્મણે' અમણો નિર્મણ્ય: 'કિં વેષ્ઠ' કિં વધ્નાતિ
 'વાર ઉવચિણા' યાવત્તુવચિનોતિ? યાવત્પદેન—'કિં પ્રકરોતિ કિં ચિનોતિ'
 इत्यस्य संग्रह । प्रासुकैपणीयमाहारादिकं सुज्ञानः अमणो निर्ग्रन्थं किं क्व
 वध्नाति किं प्रकरोति किं चिनोति किम् उपचिनोति चेति प्रश्न, भगवानाह—
 'गोयमा' इत्यादि । 'गोयमा' हे गौतम । 'फासुपसणिज्जं णं मुज्जमाणे'
 प्रासुकैपणीयं स्वल्ल सुज्ञानः दोपरहिताहारादिकं सुज्ञानः 'समणे निमग्गे'
 अमणो निर्ग्रन्थं 'आउयवज्जाभो सत्तकम्मपगहीभो' आयुष्कवर्माः सत्त कमपकूठीः

और एषणीय शब्द का अर्थ आधाकर्म आदि समस्त दोषों से रहित-
 निर्दोष—ऐसे आहार आदि को (सुजमाणे) अपने उपभोग में
 लाने वाला (समणे निग्गणे) अमण निर्ग्रन्थ (किं वेष्ह जाव उवचि-
 णाह) कैसी-कितनी कर्मप्रकृतियों का बंध करता है यावत् वह कैसी
 कर्मप्रकृतियों का उपबन्ध करता है । यहाँ यावत् पद से (किं प्रकरोति,
 किं चिनोति) इन दो का संग्रह किया गया है । गौतमस्वामी का प्रश्न
 ऐसा है कि प्रासुक एषणीय आहारादि का उपभोग करने वाला अमण
 निर्ग्रन्थ कितनी कर्मप्रकृतियों को बांधता है, उन्हें कैसी करता है किसका
 बन्धनमें बंध करता है, किसका बन्धनमें उपबन्ध करता है ? इसका उत्तर
 देते हुए भगवान कहते हैं कि (गोयमा) हे गौतम ! (फासुपसणिज्जं
 मुजमाणे) प्रासुक एषणीय आहार आदि का उपभोग करने वाला
 (समणे निग्गणे) अमण निर्ग्रन्थ (आउयवज्जाभो सत्तकम्मपगहीभो)

એટલે અવિષ્મ અને એપણીય એટલે આધાકર્મ વગેરે તમામ દોષોથી રહિત
 નિર્દોષ—એવા આહારનો ' મુજમાણે ' ઉપભોગ કરનાર " સમણે નિમ્મણે "
 અમણ નિર્ગ્રન્થ " કિં વેષ્ઠ જાવ ઉવચિણાહ " કેવી (કેટલી) કમ પ્રકૃતિઓનો
 બંધ બાંધે છે ? યાવત્ તે કમ પ્રકૃતિઓનો ઉપબંધ કરે છે ? અહીં " યાવત્ "
 મદ્યથી " કિં પ્રકરોતિ, કિં ચિનોતિ " એ બે પ્રશ્નો ગ્રહણ કરાયા છે ગૌતમ
 સ્વામીના ઉપર પ્રશ્ન તાત્પર્ય એ છે કે પ્રાસુક એપણીય આહારોનો ઉપ
 ભોગ કરનાર અમણ નિર્ગ્રન્થ કેટલી કમ પ્રકૃતિઓનો બંધ કરે છે ? તેમને
 કેવી રીતે કરે છે ? તેમથી કેનો બંધ કરે છે ? અને કેનો ઉપબંધ કરે છે ?
 તેનો ભગવાન મહાવીરસ્વામી આ પ્રમાણે ઉત્તર આપે છે—

' ગોયમા । ' હે ગૌતમ । ' ફાસુપસણિજ્જ મુજમાણ " પ્રાસુક એ
 પણીય આહાર વગેરેનો ઉપભોગ કરનાર " સમણે નિમ્મણે " અમણ નિર્ગ્રન્થ,
 ' આઉયવજ્જામો સત્તકમ્મપગહીમો " આયુષ્કર્મ સિંચાવની સાત કમ પ્રકૃ-

સત્તકમ્મપગડીઓ જાવ અણુપરિયટ્ટહિં આયુષ્કર્મજર્જાઃ સપ્ત કર્મપ્રકૃતીર્યાવદનુપર્યટતિ
અત્ર યાવત્પદેન-‘ હસ્વકાલસ્થિતીઃ દીર્ઘકાલસ્થિતીઃ પ્રકરોતિ, મન્દાનુભાવાસ્તી-
ત્રાનુભાવાઃ પ્રકરોતિ, અલ્પપ્રદેશાગ્રા વહુપ્રદેશાગ્રાઃ પ્રકરોતિ, આયુષ્કં ચ खलु
કર્મ સ્યાત્ વધ્નાતિ સ્યાત્ નો વધ્નાતિ અશાતાવેદનીયં ચ खलु કર્મ ભૂયો ભૂય
ઉપચિનોતિ, અનાદિકં ચ खलુ અનવનતાગ્રં દીર્ઘાધ્વં ચાતુરન્તસંસારકાન્તારમ્ ’
ઇત્યસ્ય સંગ્રહઃ ? અનુપર્યટતિ=પરિભ્રમતિ ।

આધાકર્મવિપક્ષશ્ચ પ્રાસુકૈષ્ણીયમિત્યાધાકર્મસૂત્રાનન્તરં પ્રાસુકૈષ્ણીયસૂત્રમાહ-
‘ ફાસુપ્સણિજ્જં ણં મંતે ’ ઇત્યાદિ । ફાસુપ્સણિજ્જં ણં મંતે ’ પ્રાસુકૈષ્ણીયં
(આઝયવજ્જાઓ સત્તકમ્મપગડીઓ જાવ અણુપરિયટ્ટહિં) આયુકર્મ કો
છોદ્ધકર શેષ સાત કર્મપ્રકૃતિયોં કો દૃઢતર વંધવાલી કરકે વાંધતા હૈ ।
યાવત્ વહ સંસારકાન્તાર-(અટવી) મેં વાર ૨ જન્મ મરણ દ્વારા પરિ-
ભ્રમણ કરતા રહતા હૈ । યહાં પર “ યાવત્ ” પદ સે (હસ્વકાલસ્થિતીઃ
દીર્ઘકાલસ્થિતીઃ પ્રકરોતિ, મન્દાનુભાવાસ્તીત્રાનુભાવાઃ પ્રકરોતિ, અલ્પપ્ર-
દેશાગ્રા વહુપ્રદેશાગ્રાઃ પ્રકરોતિ, આયુષ્કં ચ खलુ કર્મ સ્યાત્ વધ્નાતિ,
સ્યાત્ નો વધ્નાતિ, અશાતા વેદનીયં ચ खलુ કર્મ ભૂયો ભૂય ઉપચિનો-
તિ, અનાદિકં ચ खलુ અનવનતાગ્રં, દીર્ઘાધ્વં, ચાતુરન્ત સંસારકાન્તારમ્
હસ પ્રાઠ કા સંગ્રહ કિયા ગયા હૈ । (અણુપરિયટ્ટહિં) કા અર્થ “ વાર ૨
પરિભ્રમણ કરતા હૈ ” ઇસા હૈ । આધાકર્મ કા વિપક્ષ પ્રાસુક ઇષ્ણીય
હોતા હૈ હસલિયે સૂત્રકાર ને આધાકર્મસૂત્ર કે વાદ યહ પ્રાસુક ઇષ્ણીય
સૂત્ર કહા હૈ- (ફાસુ પ્સણિજ્જં ણં મંતે) પ્રાસુક શબ્દ કા અર્થ અચિન્ત

વજ્જાઓ સત્તકમ્મપગડીઓ જાવ અણુપરિયટ્ટહિં ” આયુષ્યકર્મ સિવાયની સાત કર્મ
પ્રકૃતિયોને દૃઢતર બધવાળી બનાવે છે, (યાવત્) તે સંસારકાતાર (અટવી)
મા વારવાર જન્મ-મરણવડે પરિભ્રમણ કરે છે અહીં “ યાવત્ ” પદથી
નીચેનો સૂત્રપાઠ ગ્રહણ કરાયો છે-“ તે હસ્વકાળની સ્થિતિવાળી પ્રકૃતિયોને
દીર્ઘકાળની સ્થિતિવાળી બનાવે છે, મદ અનુભાગવાળી કર્મપ્રકૃતિયોને તીવ્ર
અનુભાગવાળી કરે છે, અલ્પ પ્રદેશવાળી કર્મપ્રકૃતિયોને બહુ પ્રદેશવાળી બનાવે
છે, તે આયુષ્યકર્મનો બધ વાંધે છે પણ ખરો અને નથી પણ બાધતો, તે
અશાતા વેદનીયનો વારવાર ઉપયય કરે છે અને અનાદિ, અનન્ત, દીર્ઘ માર્ગ
વાળી, ચાર ગતિરૂપ સંસાર અટવીમા વારવાર ભટકયા કરે છે. “ અણુપરિયટ્ટહિં ”
છોટલે વારવાર પરિભ્રમણ કરે છે. આધા કર્મથી વિપરીત અર્થવાળો શબ્દ
પ્રાસુક ઇષ્ણીય છે તેથી “ આધાકર્મ ” સૂત્રનું નિરૂપણ કરીને હવે સૂત્રકાર
“ પ્રાસુક ઇષ્ણીય ” સૂત્રનું નિરૂપણ કરે છે-“ ફાસુ-પ્સણિજ્જં ણં મંતે । પ્રાસુક

एककर्मबन्धनव्यतिरिक्तं सर्वम् संहतानगारवदम् बोद्धव्ये ससारव्यतिव्रजनपर्यन्त
मिति सावः । ' से केणहेण जाव वीइवयइ ' सत्केनार्येन यावद् व्यसिन्नजति ?
ससारकान्तार समुद्धयति ? भगवानाह—' गोयमा ' इत्यादि । ' गोयमा ' हे
गौतम ! ' फासुएसजिज्जं ' मासुकैपणीयम् अचिन्तं निर्दोषमाहारादिकम् ' सुजमाणे'
सुआन तादसमाहारादिकमाहरन् ' समणे निग्गंये ' भ्रमणो निर्ग्रन्थ ' आयाए धम्मं'
आत्मानं धर्मम्=चारिषधर्मम् ' भुतधर्मं च नो अइकमइ ' नो अतिक्रामति
नोद्धयति ' आयाए धम्मं अणइकममाणे ' आत्मनो धर्ममनतिक्रामन् ' पुढवि-
काइय अवकस्वति ' पृथिवीकायिकमवकांसति अवकांशुणमपसथमनुकपन च तथा
वापेसत्तेज्जुकपते वेत्यर्थः, ' जाव एसकाय अवकस्वइ ' यावत् प्रसक्तमवकांसति

सय कथन, आयुष्क कर्मबंध के सिवाय संपूर्ण अनगार की तरह से ही
जानना चाहिये । यह कथन कहाँ तक उसकी तरह जानना चाहिये तो
इसके लिये सूत्रकारने (वीइवयइ) ऐसा कहा है—जिसका तात्पर्य है कि
इसके संबन्ध का और अवशिष्ट कथन (ससार को पार कर
देना है) इस निर्दिष्ट पद तक ही जानना चाहिये । (से केणहेण जाव
वीइवयइ) हे भर्तृ आप ऐसा कथन किस भाषा से करते हैं कि वह
संसाररूप कान्तार को उल्लंघन कर देता है । तो इसका उत्तर—वेते हुए
प्रसु गौतम से कहते हैं कि—(गोयमा) हे गौतम ! (फासुएसजिज्जं)
अचिन्त निर्दोष आहार आदि को (सुजमाणे) अपने उपयोग में खाने
वाला (समणे निग्गंये) भ्रमण निर्ग्रन्थ (आयाए धम्मं) आत्मा के धर्म
का—भुतचारिषरूप धर्म का—(नो अइकमइ) उल्लंघन नहीं करता है ।
आयाए धम्मं अणइकममाणे) आत्मा के भुतचारिषरूप धर्म का उल्लंघन
नहीं करने वाला भ्रमण निर्ग्रन्थ (पुढविकाइयं अवकस्वति) पृथिवीकायिक

' ससारने पार करी जाय छे ' त्वां सुधीनु तमाभ कथन संपूर्ण अनुभूतना
कथन प्रभावे व समस्त ' वीइवयइ ' ओटसे ससारने पार करी जाय छे

' से केणहेण जाव वीइवयइ ? ' के मत त ! आप या मरहे ओउ
कहे छे के ते ससारही कान्तारने ओपणी जाय छे ? तेना ज्ञान आपदा
महानीरप्रसु कहे छे के ' गोयमा ! हे गौतम ! ' फासुएसजिज्जं ' अचिन्त
निर्दोष आहार नोहेने ' सुजमाणे ' उपयोग करना ' समणे निग्गंये '
भ्रमण निर्ग्रन्थ ' आयाए धम्मं ' आत्माना धर्मनु—भुत चारिषरूप धर्म—
' नो अइकमइ ' उल्लंघन करतो नही, ' आयाए धम्मं अणइकममाणे ' आत्माना
धर्मनु—भुतचारिषरूप धर्मनु—उल्लंघन न करना भ्रमण निर्ग्रन्थ ' पुढविकाइयं
अवकस्वति ' पृथिवीकायिक अनुकपा (इया) राजे छे ' जाव एसकाय अव

અર્થો હિ કર્મપ્રકૃતયસ્તાસુ આયુઃપ્રયોજકકર્મપ્રકૃતિં વિહાય ઇતરાઃ સપ્ત કર્મપ્રકૃતીઃ
યાઃ ‘ ધણિયંબંધનવદ્ધાઓ’ દૃઢવંધનવદ્ધાઃ પૂર્વમાસન્ તાઃ સિદ્ધિણ વંધનવદ્ધાઓ પક્-
રેઝ’ શિથિલવંધનવદ્ધાઃ પ્રકરોતિ, પૂર્વં યાઃ કર્મપ્રકૃતયો દૃઢતર વંધનવદ્ધાઆસન્
તાઃ શિથિલવંધનવદ્ધાઃ પ્રકરોતિ, ‘જહા સંવુદેણ’ યથા સંવૃતઃ સ્વલુ, યથા સંવૃતોઽ
નગારઃ અત્રૈવ શતકે પ્રથમોદેશકે એકવિંશતિતમે સૂત્રે સંવૃતાનગાર વક્તવ્યતા પ્રોક્તા
તથાઽસ્યાપિ વક્તવ્યતા વિજ્ઞેયા । ‘નવરં’ નવરં વૈલક્ષણ્યં તસ્માદ્ આયુષ્કવિષયેઽસ્તિઃ
—તત્ર આયુષ્કં કર્મ કદાચિદ્ નો વધ્નાતીત્યસ્તિ ‘આઝયં ચ ણં કમ્મં સિય વંધઈ સિય
નો વંધઈ’ આયુષ્કં ચ સ્વલુ કર્મ સ્યાત્ વધ્નાતિ સ્યાત્ નો વધ્નાતિ કદાચિદાયુષ્કં
કર્મ વધ્નાતિ કદાચિન્નો વધ્નાતિ, યદિ વધ્નાતિ તદા શુભં દેવાદ્યાયુષ્કં વધ્નાતીતિ
ભાવ, ‘ સેસં તહેવ જાવ વીઠ્ઠવયઈ ’ શેષં તથૈવ યાત્ વ્યતિવ્રજતિ, શેષમ્ આયુ-

આયુર્કર્મ કો છોડીકર સાતકર્મપ્રકૃતિયોં કો કિ જો ઉસકે પહિલે ગાઠ-
બંધન સે બંધી થીં અવ શિથિલબંધન વાલી બના દેતા હૈ । ઇસ વિષય
મેં સંવૃત અનગાર કો જૈસી વક્તવ્યતા જો પ્રથમ શતક કે પ્રથમ ઉદેશક
કે ૨૮ વેં સૂત્ર મેં કહી ગઈ હૈ વહીં સે જાનના ચાહિયે । યહી યાત સૂત્ર-
કાર ને (જહા સવુદેણ) ઇસ સૂત્ર દ્વારા સમજાઈ હૈ (નવરં) પરન્તુ
આયુષ્ક કે વંધ કે વિષય મેં ઉસકી અપેક્ષા જો વિલક્ષણતા હૈ યહાં વહ
(આઝયં ચ ણં કમ્મં સિય વંધઈ, સિય નો વંધઈ) ઇસ સૂત્ર પાઠ દ્વારા
પ્રકટ કી ગઈ હૈ । ઇસમેં યહ સમજાયા ગયા હૈ કિ વહ કમી આયુ કા
વંધ કરતા મી હૈ ઓર કમી નહીં મી કરતા હૈ । યદિ વહ આયુ કા
વંધ કરતા હૈ તો શુભ દેવાદિ આયુષ્ક કા હી વંધ કરતા હૈ । અન્ય
અશુભ આયુ કા નહીં । (સેસં તહેવ જાવ વીઠ્ઠવયઈ) વાકી કા ઓર

તિયો કે જેમને પહેલા તેણે ગાઠ બંધનોથી બાધી હતી તેમને હવે શિથિલ
બંધનવાળી બનાવે છે આ વિષયમા પહેલા શતકના પહેલા ઉદેશકના ૨૮
માં સૂત્રમા સંવૃત અણુગાર વિષે જે વર્ણુન કર્યું છે તે પ્રાસુક એષણીય આહા-
રાદિનો ઉપયોગ કરનાર શ્રમણ નિર્ઝંથને લાગુ પડે છે, એ જ વાત સૂત્રકારે
“ જહા સવુદેણ ” સૂત્રપડે સમજાવી છે. “ નવર ” પરન્તુ આયુષ્યબંધની
અપેક્ષાએ તેનામા જે વિશિષ્ટતા છે તે “ આઝયં ચ ણં કમ્મં સિય વંધઈ, સિય
નો વંધઈ ” આ સૂત્રપાઠ વડે પ્રકટ કરી છે, તેમાં બતાવ્યું છે કે આયુષ્ય-
કર્મને બંધ તે ક્યારેક બાધે છે અને ક્યારેક નથી પણ બાધતો, જે તે
આયુષ્યનો બંધ બાધે તો દેવાદિ શુભ આયુષ્યનો જ બંધ બાધે છે. અન્ય
અશુભ આયુષ્યનો બંધ બાધનો નથી. “ સેસં તહેવ જાવ વીઠ્ઠવયઈ ” બાકીનું

મિષઃ આહારાદિ કરનેવાલા અમણ નિર્મન્ય આયુ કર્મ કો છોડકર સાત કર્મપ્રકૃતિયો કા યંચ કરતા હૈ ઓર પ્રાસુક નિર્દોષ આહાર કરને વાલા અમણ નિર્મન્ય આયુકર્મ કો છોડકર શોષ સાત કર્મ પ્રકૃતિયો કા યંચ નહીં કરતા હૈ । આધાકર્મિક આહાર કરતાં અમણ નિર્મન્ય જિન કર્મપ્રકૃતિયો કા યંચ કરતા હૈ વહુ ડનકે પ્રકૃતિ યંચ મેં, સ્થિતિયંચ મેં, અનુભાગયંચ મેં ઓર પ્રદેશયંચ મેં વિશેષ મહત્તા, રહતા ઓર મજમૂતાઈ આદિ વહુને લગતે હૈ । ઓર શુદ્ધ નિર્દોષ આહારાદિ કા ઉપયોગ કરને વાલે અમણ નિર્મન્ય કે આગે કે લિયે આયુકર્મ કો છોડકર શોષ ૭ કર્મ પ્રકૃતિયો કા યંચ નહીં હોતા હૈ । તથા જો કર્મપ્રકૃતિયાં પૂર્વ વદ્ધ હૈં ડનકે પ્રકૃતિયંચ મેં અનુભાગયંચ મેં ઓર પ્રદેશયંચ મેં હીનતા, અલ્પતા અદ્વિતા આદિ આવે છગતી હૈ । હસ તરહ સે ડન ડોનોં અમણ નિર્મન્યોં કે વિષય મેં જો ચાર પ્રશ્ન કિયે ગયે હૈં ડનકા ઉત્તર પ્રથમ પ્રશ્ન આધાકર્મિક આહાર કો મોગને વાલે કો અપેક્ષા તો હસ સૂત્ર દ્વારા હસ પ્રકાર દિયા ગયા જાનના ચાહિયે । (કિં વચઃ) હસ પ્રશ્ન કા ઉત્તર યહ હૈ કિં વહુ આયુકર્મ કો છોડકર ૭ કર્મ પ્રકૃતિયો કા યંચ કરતા હૈ । (કિં વકરેઃ) પ્રશ્ન કા ઉત્તર યહ હૈ કિં વહુ અલ્પકાલસ્થિતિવાળા

સૂત્રનું વાતપદ એ છે કે આધાકર્મિક આહાર વગેરેનો ઉપયોગ કરનાર અમણ નિર્મન્ય આયુષ્યક સિવાયની સાત કર્મપ્રકૃતિઓ બધી બાંધે છે પરંતુ પ્રાસુક નિર્દોષ આહાર વગેરેનો ઉપયોગ કરનાર અમણ નિર્મન્ય આયુષ્યક સિવાયની સાત કર્મપ્રકૃતિઓનો બધો બાંધતો નથી. આધાકર્મિક આહારાદિ કરનાર અમણનિર્મન્ય જે કર્મપ્રકૃતિઓનો બધો બાંધે છે એ તે કર્મપ્રકૃતિઓને તે રીતે સ્થિતિવાળી તીવ્રતર અનુભાગવાળી અને બહુતર પ્રદેશવાળી બનાવે છે, પરંતુ પ્રાસુક નિર્દોષ આહાર આદિનો ઉપયોગ કરનાર અમણ નિર્મન્ય પહેલાં જે કર્મપ્રકૃતિઓનો બધો બાંધે છે એ તેમને તે અલ્પકાળની સ્થિતિવાળી મહત્તર અનુભાગવાળી અને અલ્પતર પ્રદેશવાળી બનાવે છે

આ રીતે બંને પ્રકારના અમણ નિર્મન્યોના વિષયમાં જે ચાર પ્રશ્નો કર્યા છે તેના ઉત્તરો આપ્યા છે સૂત્રની શરૂઆતમાં આધાકર્મિક આહારાદિ બ્રહ્મ કરનાર અમણ નિર્મન્ય અને અનુલક્ષીને ચાર પ્રશ્નો પૂછ્યા છે, અને તેમના ઉત્તરો આપ્યા છે—“ કિં વચઃ ” આ પ્રશ્નનો ઉત્તર આ પ્રમાણે મળ્યો છે આયુષ્યક સિવાયની સાત કર્મપ્રકૃતિઓનો બધો બાંધે છે “ કિં વકરેઃ ” આ પ્રશ્નનો ઉત્તર આ પ્રમાણે મળ્યો છે— અલ્પકાળની સ્થિતિવાળી કર્મપ્રકૃતિઓને

અનુક્રમ્પતે યાવત્પદેન-અપ્તેજોવાયુવનસ્પતીનાં ગ્રહણં કર્તવ્યમ્ । ‘જેસિપિ ય
ળં જીવાણં સરીરાઈં આહારાઈં’ એપામપિ ચ સ્વલ્લ જીવાનાં શરીરાણિ આહરતિ
‘તેવિ જીવે અવકંઘઈં’ તાનપિ જીવાનવકાંક્ષતિ, તેષુ જીવેષ્વપિ દયાબુદ્ધિં કરો-
તીત્યર્થઃ । ‘સે તેણદ્દેણં જાવ વીઢવયઈં’ તત્તેનાર્થેન યાવત્ વ્યતિવ્રજતિ, एतेन
કારણેનોચ્યતે હે ગૌતમ ! પ્રાસુકૈષ્ણીયમાહારાદિકં ધુઆનઃ શ્રમણો નિર્ગ્રન્થઃ
આયુષ્કર્મવર્જિતાઃ સપ્ત કર્મપ્રકૃતી નોવધ્નાતિ ન પ્રકરોતિ ન ચિનોતિ ન વોપચિનોતિ,
દૃઢતરવદ્ધા અપિ કર્મપ્રકૃતીઃ શિથિલયતિ યાવત્ સંસારકાન્તારં વ્યતિક્રામતિ ઉલ્લં-
ઘયતિ ચેતિભાવઃ ॥ સુ. ૭ ॥

કી અપેક્ષા કરતા હૈ-ડનપર અનુકંપા રખતા હૈ । (જાવ તસકાયં અવકં-
ઘઈ) યાવત્ વહ ત્રસકાય કી અનુકંપા રખતા હૈ । યહાં યાવત્ પદ સે
(અપ્કાય, તેજઃકાય, વાયુકાય ઓર વનસ્પતિકાય કા ગ્રહણ કિયા ગયા
હૈ । (જેસિ પિ ય ળં જીવાણં સરીરાઈં આહારાઈં) અપિ ચ-વહ શ્રમણ
નિર્ગ્રન્થ જિન જીવોં કે શરીરોં કા આહાર કરતા હૈ (તે વિ જીવે અવ-
કંઘઈ) ડન જીવોં પર ભી વહ દયા બુદ્ધિ કરતા હૈ । ઇસલિયે હે ગૌતમ ।
(સે તેણદ્દેણં જાવ વીઢવયઈ) ઇસ આશય સે મૈને એમા કહા હૈ કિ
પ્રાસુક નિર્દોષ આહારાદિ કો અપને ઉપયોગ મેં લાતા હુઆ શ્રમણ નિર્ગ્ર-
ન્થ આયુષ્કર્મ કો છોડકર આને કે લિયે સાતકર્મપ્રકૃતિયોં કો નહીં
બાંધતા હૈ, તથા જો પહિલે વંધ ચુકી હૈં જિનકી લંબેકાલ કી સ્થિતિ પઢી
હૈ ઓર તીવ્ર અનુભાગ જિનમેં પડા હૈ, ડનેં અલ્પકાલસ્થિતિવાલી બનાતા
હૈ ઓર સન્દ અનુભાગવાલી બનાતા હૈ । તથા વહુપ્રદેશાગ્રવાલી પ્રકૃતિયોં
કો વહ અલ્પપ્રદેશાગ્રવાલી બનાતા હૈ । ઇસ તરહ વહ યાવત્ સંસાર
અટવી સે પાર હો જાતા હૈ । તાત્પર્ય ઇસ સૂત્ર કા યહ હૈ કિ આધાક-

કંઘઈ ” યાવત્ છે ત્રસકાય સુધીનાં જીવોની અનુકંપા રાખે છે. અહીં “યાવન્”
પદથી અપ્કાય, તેજસ્કાય વાયુકાય અને વનસ્પતિકાયને ગ્રહણ કરવામા આવેલ છે.
“જેસિ પિ ચ ળં જીવાણં સરીરાઈં આહારાઈં” તથા-તે શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ જે જીવોનાં
શરીરોનો આહાર કરે છે “તે વિ જીવે અવકંઘઈ” તે જીવો પણ દયાભાવ
રાખે છે હે ગૌતમ ! “સે તેણદ્દેણં જાવ વીઢવયઈ” તે કારણે મેં એવું કહ્યું
છે કે પ્રાસુક નિર્દોષ આહારાદિનો ઉપયોગ કરનાર શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ આયુષ્કર્મ
સિવાયની સાત કર્મપ્રકૃતિયોનો બંધ બાંધતો નથી અને જે કર્મપ્રકૃતિયોનો
બંધ પહેલા બાંધેલા હોય છે, જેમની લંબકાલની સ્થિતિ હોય છે, જેમનો
તીવ્ર અનુભાગ હોય છે, એવી કર્મપ્રકૃતિયોને તે અલ્પકાલની સ્થિતિવાળી અને
મંદ અનુભાગવાળી બનાવે છે અને બહુપ્રદેશવાળી કર્મપ્રકૃતિયોને તે અલ્પ-
પ્રદેશવાળી બનાવે છે આ રીતે તે સંસારકાન્તારને આજંગી બ્રૂય છે. આ

અસાસય સાસય પઢિય પઢિયત્ત અસાસય, હતા ગોયમા !
અધિરે પલોદ્દહ જાણ પઢિયત્ત અસાસય, સેવ મતે! સેવ મતે!
ત્તિ જાવ વિહરહ ॥ સૂ. ૮ ॥

છાયા—તદ્ નૂનં મદન્ત ! અસ્થિર પ્રમોટયતિ નો સ્થિરઃ પ્રમોટયતિ,
અસ્થિરો મજ્જયતે નો સ્થિરો મન્યતે, શાશ્વતો ચાલકઃ શાશ્વતત્વમ્ અશાશ્વતમ્ શ્વા
શ્વતઃ પઞ્ચિતઃ પઞ્ચિતત્વમશ્વાશ્વતમ્ ! इत गौतम ! अस्थिरं प्रमोदयति, यावत्प
ञ्चितत्त्वमशाश्वतम् तदेव मदन्त ! तदेव मदन्त ! इति यात्राद्विहरति ॥ सू. ८ ॥

સે પાર હોના પ્રકટ ક્રિયા ગયા છે । સો “ ઉનકા યહ સંસાર સે પાર
હાના કર્મ કે અસ્થિર હોને કે કારણ ઉસકે નાશ-પરિવર્તન હોને પર હી
સમઘતા છે ” ઇસ ત્યાલ સે સૂત્રકાર અસ્થિર કે વિષય મેં સૂત્ર કહતે
હે—‘ સે ણૂળં મંતે ! અધિરે પલોદ્દહ ’ ઇત્યાદિ ।

સૂત્રાર્થ—(મંતે) હે મદન્ત ! (અધિરે પલોદ્દહ) જો અસ્થિર પદાર્થ
હોતા હે, વહ પલટતા રહતા હે (નો ધિરે પલોદ્દહ) સ્થિર પદાર્થ નહીં પલ
ટતા હે । (અધિરે મજ્જહ) જો અસ્થિર હોતા હે વહ દૂટ જાતા હે (નો
ધિરે મજ્જહ) સ્થિર પદાર્થ નહીં દૂટતા હે (સાસય ચાલય ચાલિયત્ત—
અસાસય) ચાલક શાશ્વત હે ચાલકપના અશાશ્વત હે । (સામય પઢિય
પઢિયત્ત અસાસય) પઢિત શાશ્વત હે, પઞ્ચિતપના અશાશ્વત હે । (હતા
ગોયમા ! અધિરે પલોદ્દહ, જાણ પઢિયત્ત અસાસય) હાં ગૌતમ ! અસ્થિર
પદાર્થ પલટતા રહતા હે યાવત્ પઞ્ચિતપના અશાશ્વત હે । (સેવં મતે !

અથ છે, એ વાત પ્રકટ કરવામાં આવી છે તેમનું સચારને તરી જવાનું કાર્થ
કર્મોના અસ્થિર થવાના કારણે એટલે કે-કર્મોના નાશ-પરિવર્તન થવાથી જ
સંભવી શકે છે તેનો ખ્યાલ રાખીને સૂત્રકાર અસ્થિરના વિષયમાં સૂત્ર કહે છે

“ સે ણૂળં મંતે ! અધિરે પલોદ્દહ ” ઇત્યાદિ.

સૂત્રાર્થ—(મતે !) હે ભગવન્ ! (અધિરે પલોદ્દહ) એ પદાર્થ અસ્થિર
હોય છે તે શુ પશ્યતો (પરિવર્તન પામતો) રહે છે ? (નો ધિરે પલોદ્દહ) શુ
સ્થિર પદાર્થ પશ્યતો નથી ? (અધિરે મજ્જહ) એ પદાર્થ અસ્થિર હોય છે
તે શુ બાગી બાય છે ? (નો ધિરે મજ્જહ) શુ સ્થિર પદાર્થ બાગતો નથી ?
(સામય ચાલય ચાલિયત્ત અસાસય) શુ બાલક શાશ્વત છે અને બાલકપણુ
અશાશ્વત છે ? (સાસય પઢિય પંઢિયત્ત અસાસય) શુ પંડિત શાશ્વત છે ?
અને પંડિતપણુ અશાશ્વત છે ? (હતા ગોયમા ! અધિરે પલોદ્દહ, જાણ પંઢિયત્ત
અસાસય) હા, ગૌતમ ! અસ્થિર પદાર્થ પશ્યતો રહે છે, (યાવત્) પંડિત

ઈદાનન્તરમુત્રે સંસારવ્યતિવ્રજનં પ્રાણાનુકમ્પાવતાં શ્રમણાનામુક્તમ્ તત્ત્વ
વ્યતિવ્રજનં કર્મણોઽસ્થિરતયા પ્રલોટને (પરિવર્તને) સત્યેવ સંભવતિ. इत्यतोऽस्थिरे
સૂત્રમાહ—‘ સે ણૂણં મંતે ’ इत्यादि ।

મૂલમ્—સે ણૂણં મંતે ! અથિરે પલોટ્ટઙ્ગ નો થિરે પલોટ્ટઙ્ગ,
અથિરે મજ્જઙ્ગ નો થિરે મજ્જઙ્ગ, સાસણ વાલણ વાલિયત્તં

પ્રકૃતિયોં કો દીર્ઘકાલસ્થિતિવાલી બના દેતા હૈ, મન્દાનુભાવવાલી પ્રકૃ-
તિયોં કો તીવ્રાનુભાવવાલી બના દેતા હૈ ઓર અલ્પપ્રદેશાગ્રવાલી પ્રકૃ-
તિયોં કો બહુપ્રદેશાગ્રહવાલી બના દેતા હૈ। તથા જો શુદ્ધ નિર્દોશ આહાર
કરને વાલા શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ હૈ વહ આયુ કર્મ કા બન્ધ કરતા મી હૈ ઓર
નહીં મી કરતા હૈ। તથા વાંધી હુઈ સાત કર્મ કી પ્રકૃતિયોં કો કિ
જિન્હેં પહિલે ઉસને ગાઢબન્ધન સે ચોંધા હૈ શિથિલબન્ધવવાલી કરને
લગતા હૈ। દીર્ઘ-લંબે કાલ કી સ્થિતિવાલી પ્રકૃતિયોં કો વહ હ્રસ્વકાલ
કી સ્થિતિવાલી બનાના પ્રારંભ કર દેતા હૈ। તથા તીવ્ર અનુભાગવાલી
પ્રકૃતિયોં કો મંદ અનુભાગવાલી ઓર બહુપ્રદેશાગ્રવાલી પ્રકૃતિયોં કી
અલ્પપ્રદેશાગ્રવાલી બનાના શુરુ કર દેતા હૈ। ઇસકે સિવાય કા ઓર
અવશિષ્ટ કથન સંવૃત અનગાર કે પ્રકરણ મેં જૈસા કહા ગયા હૈ વૈસા
હી જાનના ચાહિયે। તથા આધાકર્મિક આહારાદિ કરને વાલે કા કથન
અસંવૃત અનગાર કી તરહ જાનના ચાહિયે ॥ સૂ૦ ૭ ॥

યહાં અનન્તરસૂત્ર મેં જીવોં કી અનુકંપા વાલે શ્રમણજનોં કા સંસાર

દીર્ઘકાળની સ્થિતિવાળી બનાવે છે, મદ અનુભાગવાળી કર્મપ્રકૃતિયોને તીવ્ર
અનુભાગવાળી બનાવે છે, અલ્પ પ્રદેશવાળી કર્મપ્રકૃતિયો બહુ પ્રદેશવાળી બનાવે
છે તથા પ્રાસુક નિર્દોષ આહારાદિ ગ્રહણ કરનાર શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ આયુષ્યકર્મનો
બધ બાધે પણ છે અને નથી પણ બાધતો, તથા પહેલાં તેણે જે કર્મપ્રકૃ-
તિયોનો ગાઢ બધ બાધ્યો હતો તે કર્મપ્રકૃતિયોને શિથિલ બંધવાળી બનાવે
છે, દીર્ઘ કાળસ્થિતિવાળી કર્મપ્રકૃતિયોને તે હ્રસ્વની સ્થિતિવાળી બનાવે છે,
તીવ્ર અનુભાગવાળી કર્મપ્રકૃતિયોને તે મદ અનુભાગવાળી બનાવે છે, અને
બહુ પ્રદેશવાળી કર્મપ્રકૃતિયોને તે અલ્પ પ્રદેશવાળી બનાવે છે આ સિવાયનું
તમામ વક્તવ્ય સંવૃત અણુગારના પ્રકરણમા બતાવ્યા પ્રમાણે જ સમજવું,
આધાકર્મિક આહાર વગેરે કરનાર શ્રમણ નિર્ગ્રન્થનું વક્તવ્ય અસંવૃત અણુગાર
પ્રમાણે સમજવું ॥ સૂ૦ ૭ ॥

આગળના સૂત્રમા જીવોની અનુકંપાવાળા શ્રમણ નિર્ગ્રન્થો સંસારને તરી

વર્તન ન મળતી યથા શિલાદિકમ્, હાહ્યાત્મવિચારે સ્થિરો જીવઃ કર્મસયે જાતેપિ સ્વરૂપવસ્તુસ્ય જીવસ્થાવસ્થિતત્ત્વાદેય નાસૌ જીવઃ કદાચિદપિ પ્રહોટયતિ અજીવતયા ન પરિવર્તતે ચેતનાલક્ષમો હિ જીવઃ સ કદાચિદપિ ન પરિવર્તતે મોક્ષાવસ્થાયામપિ ચેતનાત્મકસ્વભાવસ્થાનપાયાત્, તથા 'અસ્થિર મજ્જઈ' અસ્થિર મજ્જયતે=પ્રુચ્યતિ, યથા-ત્ષ્ણાદિકમસ્થિરસ્વભાવક સત્ મજ્જયતે, હાહ્યાત્મપ્રકરણે અસ્થિર કર્મ તદ્ મજ્જયતે=ઠપ્પેતિ વિનાશપ્રપગ્છતીતિ 'નો ધિરે મજ્જઈ' નો સ્થિરો મજ્જયતે સ્થિરમમગુરસ્વભાવક લોહશાલાકાદિક ન મજ્જયતે । હાહ્યાત્મવિચારમસ્થાવ સ્થિરો

આદિ પદાર્થ અપને નિજ સ્વરૂપ સે કમી નહીં બદલતે હૈં । યહા આત્મા કો લેકર વિચાર ચલ રહા હૈ । ડસમેં સ્થિર પદાર્થ જીવ હૈ । કર્યો કિ કર્મો કા ક્ષય હો જાને પર ખી જીવ અપને નિજસ્વરૂપ સે અવસ્થિત હી રહતા હૈ । એસા તો હોતા નહીં હૈ કિ જીવ અજીવરૂપ સે પરિવર્તિત હો જાવે । મોક્ષાવસ્થા મેં ખી ડસકે ચેતનાત્મક સ્વભાવ કા અપાય (નાશ) નહીં હોતા હૈ । તથા (અત્થિરે મજ્જઈ) એસા જો કહા હૈ સો ડસકા તાત્પર્ય યહ હૈ કિ જિસ પ્રકાર તૃણાદિક અસ્થિર સ્થભાવ ઘાલે હોતે હૈ હસી કારણ વે ટૂટ જાતે હૈ । હસી તરફ યહાં આત્મપ્રકરણ મેં અસ્થિર સ્થભાવઘાલે જીવાત્મા કે' સાય લગે છુટ કર્મ હૈં અતઃ વે ખી ટૂટ જાતે હૈં અર્થાત્ જીવાત્મા સે છૂટ જાતે હૈં-ચિન્ટ હો જાતે હૈં-ડસસે વૂર હો જાતે હૈં । (નો ધિરે મજ્જઈ) એસા જો કહા હૈ સો ડસકા અભિપ્રાય યહ હૈ કિ જો સ્થિર સ્વભાવઘાલી વસ્તુ હોતી હૈ વહ કમી મજ્જ નહીં હોતી હૈ-તર્થયા નષ્ટ નહોં હોતી હૈ-જૈસે લોહ શાલાકા આદિ । યહાં આત્મા

વર્તન થતુ નથી, જેમકે શિલા વગેરે પદાર્થો પોતાના સ્વરૂપને કદી પણ બદલતા નથી, બહી આત્માની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામા આવ્યો છે તેમાં સ્થિર પદાર્થ એવો છે કારણ કે કર્મોના ક્ષય થવા છતાં પણ એવો પોતાના નિર્વશ્વરૂપમા જ સ્થિર રહે છે, એવું કથારે વ પણ બનતુ નથી કે એવો અણુરૂપે પરિવર્તન પામતો હોય મોક્ષાવસ્થામા પણ તેના ચેતનરૂપ સ્વભાવનો અપાય (નાશ) થતો નથી તથા 'અત્થિરે મજ્જઈ' એવું જે કર્મું તેના જ્ઞાપાર્થ એ છે કે અસ્થિર સ્વભાવવાળા તુણાદિક પદાર્થો જેવી રીતે તૃણી બન્ય છે, જેવી રીતે આત્માની સાથે સાથેલાં અસ્થિર સ્વભાવવાળાં કર્મો પણ તૃણી બન્ય છે-એવે કે આત્માથી અલગ થઈ બન્ય છે-નાશ પામી બન્ય છે " નો ધિરે મજ્જઈ" એટલે કે સ્થિર સ્વભાવવાળી વસ્તુએ કદી પણ લાંબતી નથી-ક્ષય થા નાશ પામતી નથી, જેમકે તોલશાલાકા વગેરે સ્થિર સ્વભાવવાળાં પદાર્થોના કદી પણ ક્ષય થા નાશ થતો નથી. બહી આત્માની અપેક્ષાએ વિચાર

ટીકા—‘સે ણૂણં મંતે’ તદ્ નૂનં ભદન્ત ! ‘અથિરે પલોદ્દહ’ અસ્થિરઃ પ્રલોટયતિ, અસ્થિરઃ સ્થિરત્તારહિતઃ યઃ સર્વદા ન તિષ્ઠતિ સ અસ્થિર ઇતિ કથ્યતે, અસ્થિરઃ લોષ્ટાદિપદાર્થઃ પ્રલોટયતિ પરિવર્તતે પૂર્વાવસ્થાં પરિત્યજ્યાવસ્થાન્તરં પ્રાપ્નોતીત્યર્થઃ, હ્રદ્યાધ્યાત્મવિચારે અસ્થિરં કર્મ, તસ્ય કર્મણઃ જીવપ્રદેશેભ્યઃ પ્રતિસમયં ચલનેનાસ્થિરત્વાત્ પ્રલોટયતિ = વધોદયનિર્જરણાદિપરિણામૈઃ પરિવર્તને । ‘નો થિરે પલોદ્દહ’ નો સ્થિરઃ પ્રલોટયતિ, સ્થિર પદાર્થસ્ય સ્વરૂપ પરિ-

સેવં મંતે । ત્તિ જાવ વિહરહ) જૈસા આપ કહતે હૈં વહ્ હસી તરહ સે હૈં હે ભદન્ત । હસી તરહ સે હૈં । એસા કહકર યાવત્ વે ગૌતમ અપને ઉચિત સ્થાન પર આકર બૈઠ ગયે ।

ટીકાર્થ—(સે ણૂણં મંતે । હે ભદન્ત । જો (અથિરે) સ્થિરતા સે રહિત હોતા હૈં—અર્થાત્ જો સર્વદા એકસી સ્થિતિ મેં નહીં રહતા હૈં વહ્ અસ્થિર કહલાતા હૈં એસા અસ્થિર લોષ્ટ (મિટ્ટી કા ઢેલા) આદિ પદાર્થ (પલોદ્દહ) બદલતા હૈં—પૂર્વાવસ્થા કા ત્યાગ કર અવસ્થાન્તર કો પ્રાપ્ત કરતા હૈં કયા ? યહાં આત્મા કે વિચાર મેં અસ્થિર પદાર્થ કર્મ હૈં । ઉસ કર્મ કા જીવપ્રદેશોં સે પ્રતિસમય જો ચલના—વિહુડના હોતા હૈં વહી ઉસકી અસ્થિરતા હૈં । હસી કારણ વહ્ બદલતા રહતા હૈં એસા કહા હૈં તાત્પર્ય યહ્ હૈં કિ વહ્ બંધ, ઉદય નિર્જરણ આદિ પરિણામોં સે અક્રાન્ત હોતા રહતા હૈં યહી ઉસકા બદલના હૈં । (નો થિરે પલોદ્દહ) જો પદાર્થ સ્થિર હોતા હૈં ઉસકે સ્વરૂપ કા પરિવર્તન નહીં હોતા હૈં । જૈસે શિલા

પણું અશાશ્વત છે. (સેવં મંતે । સેવ મંતે । ત્તિ જાવ વિહરહ) હે લગવન ! આપના કહેવા પ્રમાણે જ બધુંય છે. હે લગવન ! એ પ્રમાણે જ છે. એવું કહીને (યાવત્) ગૌતમસ્વામી પોતાને સ્થાને ગયા

ટીકાર્થ—“સે ણૂણં મંતે” હે લગવન ! જે “અથિરે” અસ્થિર હોય છે એટલે કે જે પદાર્થ, હમેશા એકસરખી સ્થિતિમાં રહેતો નથી તે પદાર્થને અસ્થિર કહે છે એવા લોષ્ટ (માટીનું ઢેકું) વગેરે પદાર્થો “પલોદ્દહ” શું બદલાતા પરિવર્તન પામતા રહે છે ? પહેલાની અવસ્થાને છોડીને બીજી અવસ્થાને પામતાં રહે છે ? અહીં આત્માની અપેક્ષાએ અસ્થિર પદાર્થ કર્મ છે. તે કર્મો પ્રત્યેક ક્ષમયે જીવ પ્રદેશોમાંથી જૂદા પડતાં રહે છે એને જ કર્મની અસ્થિરતા કહે છે. એટલા માટે જ કર્મ બદલતું રહે છે એવું કહ્યું છે. તાત્પર્ય એ છે કે કર્મો, બંધ, ઉદય, નિર્જરા વગેરે પરિણામોથી અક્રાન્ત થતું રહે છે, તેને જ કર્મનું પરિવર્તન કહે છે. “નો થિરે પલોદ્દહ” સ્થિર પદાર્થના સ્વરૂપમાં પરિ-

વર્તન ન મળતી યથા ધિરાવિકમ્, હાથ્યાત્મવિચારે સ્થિરા જીવઃ કર્મસયે જાતેપિ સ્વરૂપતસ્તસ્ય જીવરૂપાવસ્થિતત્વાદેય નામો જીવઃ કદાચિદપિ પ્રહોટયતિ અજીવતયા ન પરિવર્તયતે ચેતનાલ્પગો વિજીવઃ સ કદાચિદપિ ન પરિવર્તયતે મોક્ષાવસ્થાયામપિ ચેતનાત્મકસ્વભાવસ્થાનપાયાત્, તથા 'અસ્થિર મજ્જહ' અસ્થિર મજ્જયતે=મુચ્યતિ, યથા-તુળાદિકમસ્થિરસ્વભાવક સત્ મજ્જયતે, હા આત્મપ્રકરણ અસ્થિર કર્મ સત્ મજ્જયતે=ન્યપેતિ વિનાશમુપગચ્છતીતિ 'નો ધિરે મજ્જહ' નો સ્થિરો મજ્જયતે સ્થિરમમહુરસ્વભાવક સોદશ્યાકાદિક ન મજ્જયતે । હા આત્મવિચારપ્રસ્થાવે સ્થિરો

આદિ પદાર્થ અપને નિજ સ્વરૂપ સે કમી નહીં ધડલતે હૈં । યહાં આત્મા કો લેકર વિચાર ચલ રહા હૈ । ડસમેં સ્થિર પદાર્થ જીવ હૈ । કયોં કિ કર્મો કા ક્ષય હો જાને પર મી જીવ અપને નિજસ્વરૂપ સે અવસ્થિત હી રહતા હૈ । એસા તો હોતા નહીં હૈ કિ જીવ અજીવરૂપ સે પરિવર્તિત હો જાવે । મોક્ષાવસ્થા મેં મી કસકે ચેતનાત્મક સ્વભાવ કા અપાય (નાશ) નહીં હોતા હૈ । તથા (અતિરે મજ્જહ) એસા જો કહા હૈ સો ડસકા તાત્પર્ય યહ હૈ કિ જિસ પ્રકાર તુળાદિક અસ્થિર સ્વભાવ ઘાલે હોતે હૈ હસી કારણ વે ટૂટ જાતે હૈ । હસી તરહ યહાં આત્મપ્રકરણ મેં અસ્થિર સ્વભાવઘાલે જીવાત્મા કે' સાથ છગે છુપ કમ હૈ અતઃ વે મી ટૂટ જાતે હૈ અપાત્ જીવાત્મા સે છૂટ જાતે હૈ-ચિન્ટ હો જાતે હૈ-ડસસે વૂર હો જાતે હૈ । (નો ધિરે મજ્જહ) એસા જો કહા હૈ સો ડસકા અભિપ્રાય યહ હૈ કિ જો સ્થિર સ્વભાવવાળી વસ્તુ હોતી હૈ વહ કમી મગન નહીં હોતી હૈ-સર્વથા નષ્ટ નહીં હોતી હૈ-જેસે સોદ ઘાલાકા આદિ । યહાં આત્મા

વર્તન થતુ નથી, જેમકે શિલા વગેરે પદાર્થો પોતાના સ્વરૂપને કદી પણ બદલવા નથી, બહી આત્માની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામા આવ્યો છે તેમાં સ્થિર પદાર્થ એવો છે કાશ્વ કે કમોના કમ થવા છતાં પણ એવો પોતાના નિજ સ્વરૂપમા જ સ્થિર રહે છે એવું ક્યારેય પણ બનતુ નથી કે એવો અણવરૂપે પરિવર્તન પામતો કોય મોક્ષાવસ્થામાં પણ તેના ચેતનરૂપ સ્વભાવનો અપાય (નાશ) થતો નથી. તથા 'અસ્થિરે મજ્જહ' એવું જે કહ્યું તેનો ભાવાર્થ એ છે કે અસ્થિર સ્વભાવવાળા તુણાદિક પદાર્થો જેવી રીતે તુટી જાય છે, જેવી રીતે અણાત્માની સાથે લાગેલાં અસ્થિર સ્વભાવવાળાં કમો પણ તુટી જાય છે-એટલે કે અણાત્માથી અલગ થઈ જાય છે-નાશ પામી જાય છે 'નો ધિરે મજ્જહ' એટલે કે સ્થિર સ્વભાવવાળી વસ્તુઓ કદી પણ ભ્રાંમતી નથી-અથવા નાશ પામતી નથી. જેમકે લોટઘાલાકા વગેરે સ્થિર સ્વભાવવાળાં પદાર્થો કદી પણ અથવા નાશ થતો નથી. બહી આત્માની અપેક્ષાએ વિચાર

જીવઃ સ ચ ન મૃજ્યતે શાશ્વતત્વાત્ ચેતનાલક્ષણો જીવઃ કદાપિ ન નશ્યતીતિ ભાવઃ।
નરામરત્વાદિપર્યાયત એવ વિનાશસ્ય કથં ચિત્તસ્યાદ્વાદિભિઃ સ્વીકૃતેઽપિ દ્રવ્યરૂપેણ
જીવસ્ય સર્વથા નિત્યત્વમેવ, અન્યથા મોક્ષાર્થં કોઽપિ ન યતેતેતિ । અથ
શાશ્વતાશાશ્વતવિષયે સૂત્રમાહ—‘સાસણ’ ઇત્યાદિ । ‘સાસણ વાલણ’ શાશ્વતો
વાલકઃ, વાલકઃ વ્યવહારનયેન શિશુનિશ્ચયનયતોઽસંયતો જીવ સ દ્રવ્યરૂપેણ

કે વિચાર કે પ્રસ્તાવ મેં સ્થિર જીવ હૈ ઓર વહ શાશ્વત હોને સે કમ્બી
મ્બી દ્રવ્ય સે નષ્ટ નહીં હોતા હૈ । જીવ કા લક્ષણ ચેતના હૈ । એસા ત્રિકાલ
મેં કોઈ સા મ્બી સમય ન આયા હૈ, ન આવેગા, ઓર ન આતા હૈ જવ
કિ જીવ ઇસ અપને લક્ષણ સે રહિત હુઆ હો—હોગા યા હૈ । હાં
જો કુછ મ્બી ઇસ મેં પરિવર્તન હોના રહતા હૈ વહ પર્યાય દૃષ્ટિ સે
હોતા રહતા હૈ । સ્યાદ્વાદસિદ્ધાન્ત કા યહ એક અટલ નિયમ હૈ
કિ દ્રવ્યાર્થિકનય સે કિસી મ્બી વસ્તુ મેં કોઈ મ્બી જાત કા પરિવર્તન
નહીં હોતા હૈ જો કુછ પરિવર્તન હોતા હૈ—વહ સવ પર્યાય કી અપેક્ષા
સે હી હોતા હૈ । ઇસી કારણ યહાં પ્રત્યેક પદાર્થ કો પરિણામિ
માના ગયા હૈ । અપરિણામી નિત્ય નહીં । ઇસલિયે જીવ નર, અમર(દેવ)
આદિ પર્યાયકી અપેક્ષા સે વિનાશી હોને પર મ્બી દ્રવ્યકી અપેક્ષાસે વહ
શાશ્વત હી હૈ । જો યહ સિદ્ધાન્ત ન માના જાવે તો ફિર મોક્ષકે લિયે
કૌન પ્રયત્ન કરેગા । અર્થાત્ કોઈ મ્બી નહીં કરેગા । અચ સૂત્રકાર શાશ્વત
અશાશ્વત કે વિષય મેં સૂત્ર કહતે હૈ—(સાસણ વાલણ) વાલક શાશ્વત
હૈ—વ્યવહાર નય સે વાલક શબ્દ કા અર્થ શિશુ ઓર નિશ્ચયનય સે

કરવામાં આવે તો તે (જીવ) શાશ્વત હોવાથી કદી પણ નાશ પામતો નથી જીવનું
લક્ષણ ચેતના છે, ત્રણે કાળમાં એવો સમય આવ્યો નથી, આવતો નથી અને આવશે
પણ નહીં કે બ્યારે જીવ ચેતના લક્ષણથી રહિત હોય. તેમાં જે કાઈ પરિવર્તન
થતું રહે છે. તે પર્યાયની દૃષ્ટિએ થતું રહે છે સ્યાદ્વાદ સિદ્ધાન્તનો એક અટલ નિયમ
છે કે દ્રવ્યાર્થિક નયની અપેક્ષાએ કોઈ પણ વસ્તુમાં કોઈ પણ પ્રકારનું પરિ-
વર્તન થતું નથી, જે કાઈ પરિવર્તન થાય છે તે પર્યાયની અપેક્ષાએ જ થાય
છે. તે જ કારણે અહીં પ્રત્યેક પદાર્થને પરિણામી નિત્ય માનવામાં આવેલ છે
અપરિણામી નિત્ય માનવામાં આવેલ નથી, તેથી નર, દેવ વગેરે પર્યાયોની
અપેક્ષાએ જીવ વિનાશી હોવા છતાં દ્રવ્યની અપેક્ષાએ તો તે શાશ્વત જ છે
જો આ સિદ્ધાન્તને માનવામાં ન આવે તો મોક્ષને માટે પ્રયત્ન કોણ કરે ?
કોઈપણ મોક્ષને માટે પ્રયત્ન જ ન કરે, હવે સૂત્રકાર શાશ્વત અને અશાશ્વતના
વિષયમાં સૂત્રોનું કથન કરે છે—“સાસણ વાલણ” બાલક શાશ્વત છે, વ્યવહારનયની
અપેક્ષાએ બાલક શબ્દનો અર્થ શિશુ થાય છે અને નિશ્ચયનયની અપેક્ષાએ

શાશ્વતો નિત્ય एव, 'वाक्यिष्य असासय' बालकत्वमशाश्वतम् तत्र बालकत्वम्
व्यवहारनयतः सिगुत्वम्, निश्चयनयतस्तु असयतत्वम्, तदशाश्वत पर्यायरूपतया ।
'सासय पठिए' शाश्वत पण्डितः 'पंडियसं असासय' पण्डितत्वमशाश्वतम्,
पण्डितो व्यवहारेण शास्त्रज्ञो जीव निश्चयनयेन तु सयतो जीवः, पण्डितत्वं
व्यवहारतः शास्त्रज्ञत्वम्, निश्चयतः सयतत्वं तदशाश्वत पर्यायरूपत्वात् । भगवा
नाह—'इता' इत्यादि । 'इता गोयमा' इन्त गौतम ! 'अधिरे पलोदह' अस्थिरा
प्रलोडयति 'जाव पंडियष्य असासयं' यावत् पण्डितत्वमशाश्वतम्, यावत्पदेन—
नो स्थिरः प्रलोडयति, अस्थिरो भज्यते नो स्थिरो भज्यते, शाश्वतो बालकः,

બાલક શબ્દ કા અર્થ યહાં અસંયત જીવ હોતા હૈ । યહ અસયતરૂપ
બાલક જીવ દ્રવ્યરૂપ સે શાશ્વત-નિત્ય હી હૈ ઓર તદ્વત બાલકત્વ-અસં
યતત્વ નિશ્ચયનય સે ઓર વ્યવહારનય સે બાલકત્વ શિશુત્વ પર્યાયરૂપ
હોને કે કારણ અશાશ્વત હૈ । (સાસય પઢિય પંડિયસ અસાસય)
પણ્ડિત શાશ્વત હૈ ઓર પણ્ડિતત્વ અશાશ્વત હૈ । વ્યવહારનય સે પણ્ડિ
તશબ્દ કા અર્થ શાસ્ત્ર કા જ્ઞાતા જા જીવ હૈ યહ હૈ ઓર નિશ્ચયનય કી
અપેક્ષા સે જો જીવ સંયત હૈ યહ હૈ । વ્યવહાર નય કી અપેક્ષા સે પંડિ
તત્વ કા અર્થ શાસ્ત્રજ્ઞત્વ હોતા હૈ ઓર નિશ્ચયનય કી અપેક્ષા સે સય-
તત્વ પર્યાયરૂપ હોને કે કારણ અશાશ્વત હૈ । इन सय का उत्तर देते
हुए भगवान कहते हैं कि—(इता गोयमा ! अधिरे पलोदह, जाव पंडि
यस्य असासय) हा गौतम ! अस्थिर पदाथ पलटता है, यावत् पण्डित
त्व अशाश्वत है । यहां यावत्पद से (नो स्थिरा पलोडयति, अस्थिरो

બાલક શબ્દનો અર્થ અસંયત જીવ થાય છે તે અસંયતરૂપ બાલક જીવ દ્રવ્ય
રૂપે શાશ્વત (નિત્ય) જ અને તેમાં રહેલું બાલકપણુ-અસંયતપણુ નિશ્ચય
નયથી અને વ્યવહારનયથી પર્યાયરૂપ હોવાને કારણે અશાશ્વત ॥ “ સાસય
પંડિય પંડિયસ અસાસય ” પંડિત શાશ્વત છે અને પંડિતપણુ અશાશ્વત છે
વ્યવહારનયથી પંડિત શબ્દનો અર્થ શાસ્ત્રવેત્તા થાય છે, અને નિશ્ચયનયની
અપેક્ષાએ સંયત જીવને પંડિત કહે છે વ્યવહારનયની અપેક્ષાએ પંડિતત્વનો
અર્થ શાસ્ત્રજ્ઞપણુ થાય છે અને નિશ્ચયનયની અપેક્ષાએ તેનો અર્થ સંયતપણુ થાય છે

તે સંયતપણુ પર્યાયરૂપ હોવાને કારણે અશાશ્વત છે તે બધા પ્રશ્નોનો
ઉત્તર આપતા મહાવીરમુનિ કહે છે કે—“ હતા ગોયમા ! અધિરે પલોદહ ! જાવ
પંડિયસં અસાસય ” હા, ગૌતમ ! અસ્થિર પદાથી પરિવર્તન પામતા રહે છે,
(યાવત્) પંડિતપણુ અશાશ્વત છે યાવત્ ” પદથી નીચેનો સૂત્રપાઠ થઈ જ

જીવઃ સ ચ ન મૃજ્યતે શાશ્વતત્વાત્ ચેતનાલક્ષણો જીવઃ કદાપિ ન નશ્યતીતિ ભાવઃ ।
નરામરત્વાદિપર્યાયત એવ વિનાશસ્ય કથં ચિત્તસ્યાદ્વાદિભિઃ સ્વીકૃતેઽપિ દ્રવ્યરૂપેણ
જીવસ્ય સર્વથા નિત્યત્વમેવ, અન્યથા મોક્ષાર્થં કોઽપિ ન યતેતેતિ । અથ
શાશ્વતાશાશ્વતવિષયે સૂત્રમાહ—‘સાસણ’ ઇત્યાદિ । ‘સાસણ ચાલણ’ શાશ્વતો
ચાલકઃ, ચાલકઃ વ્યવહારનયેન શિશુનિશ્ચયનયતોઽસંયતો જીવ સ દ્રવ્યરૂપેણ

કે વિચાર કે પ્રસ્તાવ મેં સ્થિર જીવ હૈં ઓર વહ શાશ્વત હોને સે કમી
મી દ્રવ્ય સે નષ્ટ નહીં હોતા હૈં । જીવ કા લક્ષણ ચેતના હૈં । એસા ત્રિકાલ
મેં કોઈ સા મી સમય ન આયા હૈં, ન આવેગા, ઓર ન આતા હૈં જવ
કિ જીવ હસ અપને લક્ષણ સે રહિત હુઆ હો—હોગા યા હૈં । હાં
જો કુછ મી હસ મેં પરિવર્તન હોના રહતા હૈં વહ પર્યાય દૃષ્ટિ સે
હોતા રહતા હૈં । સ્યાદ્વાદસિદ્ધાન્ત કા યહ એક અટલ નિયમ હૈં
કિ દ્રવ્યાર્થિકનય સે કિસી મી વસ્તુ મેં કોઈ મી જાત કા પરિવર્તન
નહીં હોતા હૈં જોં કુછ પરિવર્તન હોતા હૈં—વહ સવ પર્યાય કી અપેક્ષા
સે હી હોતા હૈં । હસી કારણ યહાં પ્રત્યેક પદાર્થ કો પરિણામિ
માના ગયા હૈં । અપરિણામી નિલ્લ નહીં । હસલિયે જીવ નર, અમર(દેવ)
આદિ પર્યાયકી અપેક્ષા સે વિનાશી હોને પર મી દ્રવ્યકી અપેક્ષાસે વહ
શાશ્વત હી હૈં । જો યહ સિદ્ધાન્ત ન માના જાવે તો ફિર મોક્ષકે લિયે
કૌન પ્રયત્ન કરેગા । અર્થાત્ કોઈ મી નહીં કરેગા । એવ સૂત્રકાર શાશ્વત
અશાશ્વત કે વિષય મેં સૂત્ર કહતે હૈં—(સાસણ ચાલણ) ચાલક શાશ્વત
હૈં—વ્યવહાર નય સે ચાલક શબ્દ કા અર્થ શિશુ ઓર નિશ્ચયનય સે

કરવામાં આવે તો તે (જીવ) શાશ્વત હોવાથી કદી પણ નાશ પામતો નથી જીવનું
લક્ષણ ચેતના છે, ત્રણે કાળમાં એવો સમય આવ્યો નથી, આવતો નથી અને આવશે
પણ નહીં કે બ્યારે જીવ ચેતના લક્ષણથી રહિત હોય. તેમાં જે કાંઈ પરિવર્તન
થતું રહે છે. તે પર્યાયની દૃષ્ટિએ થતું રહે છે સ્યાદ્વાદ સિદ્ધાન્તને એક અટલ નિયમ
છે કે દ્રવ્યાર્થિક નયની અપેક્ષાએ કોઈ પણ વસ્તુમાં કોઈ પણ પ્રકારનું પરિ-
વર્તન થતું નથી, જે કાંઈ પરિવર્તન થાય છે તે પર્યાયની અપેક્ષાએ જ થાય
છે. તે જ કારણે અહીં પ્રત્યેક પદાર્થને પરિણામી નિત્ય માનવામાં આવેલ છે
અપરિણામી નિત્ય માનવામાં આવેલ નથી, તેથી નર, દેવ વગેરે પર્યાયની
અપેક્ષાએ જીવ વિનાશી હોવા છતાં દ્રવ્યની અપેક્ષાએ તો તે શાશ્વત જ છે.
જો આ સિદ્ધાન્તને માનવામાં ન આવે તો મોક્ષને માટે પ્રયત્ન કોણ કરે ?
કોઈપણ મોક્ષને માટે પ્રયત્ન જ ન કરે, હવે સૂત્રકાર શાશ્વત અને અશાશ્વતના
વિષયમાં સૂત્રોનું કથન કરે છે—“સાસણ ચાલણ” બાલક શાશ્વત છે, વ્યવહારનયની
અપેક્ષાએ બાલક શબ્દનો અર્થ શિશુ થાય છે અને નિશ્ચયનયની અપેક્ષાએ

શાશ્વતો નિત્ય એવ, 'વાચિયત્વ અસાસય' શાલકત્વમશાશ્વતમ્ તત્ર શાલકત્વમ્
 વ્યવહારનયતઃ શિશુત્વમ્, નિશ્ચયમયતસ્તુ અસયતત્ત્વમ્, તદશાશ્વત પર્યાયરૂપતયા ।
 'સાસય પઠિપ' શાશ્વત પઠિતઃ 'પંઠિયત્વ અસાસય' પઠિતત્વમશાશ્વતમ્,
 પઠિતો વ્યવહારેણ શાસ્ત્રજીવ નિશ્ચયનયેન તુ સયતો જીવઃ, પઠિતત્વં
 વ્યવહારતઃ શાસ્ત્રજ્ઞત્વમ્, નિશ્ચયતઃ સયતત્વં તદશાશ્વત પર્યાયરૂપત્વાત્ । મગવા
 નાદ—'હંતા' इत्यादि । 'हंता गोयमा' इन्त गौतम । 'अधिरे पलोदृह' अस्थिरः
 प्रलोदयति 'जाव पठियत्त असासय' यावत् पठितत्वमशश्वतम्, यावत्पदेन-
 नो स्थिरः प्रलोदयति, अस्थिरो मज्यते नो स्थिरो मज्यते, शाश्वतो बालकः,

બાલક શબ્દ का अर्थ यहाँ असंयत जीव होता है । यह असंयतरूप
 बालक जीव द्रव्यरूप से शाश्वत-नित्य ही है और तद्वत् बालकत्व-असं-
 यतत्व निश्चयनय से और व्यवहारनय से बालकत्व शिशुत्व पर्यायरूप
 होने के कारण अशाश्वत है । (सासय पठिप पठियत्त असासय)
 पठित शाश्वत है और पठितत्व अशाश्वत है । व्यवहारनय से पठि-
 तशब्द का अर्थ शास्त्र का ज्ञाता जो जीव है वह है और निश्चयनय की
 अपेक्षा से जो जीव सयत है वह है । व्यवहार नय की अपेक्षा से पठि-
 तत्व का अर्थ शास्त्रज्ञत्व होता है और निश्चयनय की अपेक्षा से सय-
 तत्व पर्यायरूप होने के कारण अशाश्वत है । इन सय का उत्तर देते
 हुए भगवान कहते हैं कि—(हंता गोयमा । अधिरे पलोदृह, जाव पठि-
 यत्त असासय) हाँ गौतम ! अस्थिर पदार्थ पलटता है, यावत् पठित-
 त्व अशाश्वत है । यहाँ यावत्पद से (नो स्थिरः पलोदयति, अस्थिरो

બાલક શબ્દનો અર્થ અસંયત જીવ થાય છે તે અસંયતરૂપ બાલક જીવ દ્રવ્ય
 રૂપે શાશ્વત (નિત્ય) જ અને તેમાં રહેલું બાલકપણુ-અસંયતપણુ નિશ્ચય-
 નયથી અને વ્યવહારનયથી પર્યાયરૂપ હોવાને કારણે અશાશ્વત છે ' સાસય
 પઠિપ પઠિયત્ત અસાસય ' પઠિત શાશ્વત છે અને પઠિતપણુ અશાશ્વત છે
 વ્યવહારનયથી પઠિત શબ્દનો અર્થ શાસ્ત્રવેદના થાય છે, અને નિશ્ચયનયની
 અપેક્ષાએ સંયત જીવને પઠિત કહે છે વ્યવહારનયની અપેક્ષાએ પઠિતવને
 અથ શાસ્ત્રજ્ઞપણુ થાય છે અને નિશ્ચયનયની અપેક્ષાએ તેનો અથ સયતપણુ થાય છે
 તે સયતપણુ પર્યાયરૂપ હોવાને કારણે અશાશ્વત છે તે બધા પ્રશ્નોનો
 ઉત્તર આપતાં મહાવીરપ્રભુ કહે છે કે—'હંતા ગોયમા ! અધિરે પલોદૃહ જાવ
 પઠિયત્ત અસાસય" હા, ગૌતમ ! અસ્થિર પદાર્થો પરિવર્તન પામતા રહે છે,
 (યાવત્) પઠિતપણુ અશાશ્વત છે " યાવત્ " પદથી નીચેનો સૂત્રમાં મહંજ

બાલકત્વમશાશ્વતમ્ । શાશ્વતઃ પण्डितः, इत्यस्य ग्रहणम् । व्याख्यानं तु प्रश्नसूत्र-
वदेव भवता करणीयम्, सेवं भंते सेवं भंते' तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त ! हे भदन्त !
यत् देवानुप्रियेण कथितं तत् एवमेव सर्वथा सत्यमेव, आप्तवाक्यस्य सर्वथाऽबाधि-
तत्वात्, 'त्ति जाव विहरइ' इति यावद् विहरति, इत्येवंरूपेण कथयित्वा
गौतमः श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्यित्वा संयमेन
तपसा आत्मानं भावयन् विहरतीति ॥ सू० ८ ॥

इति श्री-जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्य-श्रीघासीलालव्रतिविर-
चितायां श्रीभगवतीसूत्रस्य प्रमेयचन्द्रिका-व्याख्यायां प्रथम
शतकस्य नवमोद्देशकः समाप्तः ॥१-९॥

भज्यते, शाश्वतो बालकः, बालकत्वं अशाश्वतम्, शाश्वतः पण्डितः)
इस पाठका संग्रह हुआ है । इन पदों का व्याख्यान तो प्रश्नसूत्रकी तरह
ही जानना चाहिये । (सेवं भंते ! सेवं भंते ! त्ति जाव विहरइ) हे भदन्त !
आप देवानुप्रिय ने जो कहा है वह ऐसा ही है, हे भदन्त ! वह ऐसा
ही है अर्थात् सर्वथा सत्य ही है-क्यों कि आप वाक्य जो होते हैं, वे
सर्वथा अबाधित ही होते हैं । ऐसा कह कर गौतमस्वामी ने श्रमण
भगवान महावीर प्रभु को वन्दना की, नमस्कार किया । वन्दना नमस्कार
करके फिर वे समय और तप से आत्मा को भावित करते हुए अपने
स्थान पर बैठ गये ॥ सू० ८ ॥

श्री जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्य श्रीघासीलालजी
महाराजकृत भगवतीसूत्रकी प्रमेयचन्द्रिका व्याख्या
के प्रथम शतकका नौवां उद्देशक समाप्त ॥१-९॥
॥ प्रथम शतक में नौवां उद्देशक समाप्त ॥

કરાયો છે-“ સ્થિર પદાર્થો પલટાતા નથી, અસ્થિર પદાર્થો ભાંગી જાય છે,
સ્થિર પદાર્થો ભાગતા નથી, ખાલક શાશ્વત છે, ખાલકપણું અશાશ્વત છે, પંડિત
શાશ્વત છે ” આ પદોનો અર્થ પ્રશ્નસૂત્રના અર્થ પ્રમાણે જ સમજવો.

“ સેવં ભંતે ! સેવં ભંતે ! ત્તિ જાવ વિહરइ ” હે ભગવન્ ! આપ દેવાનુ-
પ્રિયે જે કહ્યું તે સત્ય જ છે, હે ભગવન્ ! તે વાત તદ્દન સાચી જ છે, કારણ
કે આપ વાક્યમાં શકાને સ્થાન જ હોતું નથી. એવું કહીને ગૌતમસ્વામીએ
શ્રમણ ભગવાન મહાવીરસ્વામીને વંદણા કરી, નમસ્કાર કર્યા વંદણા નમસ્કાર
કરીને સયમ અને તપથી પોતાના આત્માને ભાવિત કરતા તેઓ પોતાને
સ્થાને ગયા ॥ સૂ૦ ૮ ॥

॥ઇતિશ્રી જૈનાચાર્ય જૈનધર્મદિવાકર પૂજ્યશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજકૃત ભગવતીસૂત્રની
પ્રિયદર્શિનીવ્યાખ્યાના પહેલા શતકનો નવમો ઉદ્દેશક સમાપ્ત ॥૧-૯॥

અથ દશમોદ્દેશક -

દશમોદ્દેશકસ્ય સંક્ષેપતો વિચારણીયા इमे विषयाः—अन्यतीर्थिकानां पक्षं स्पष्टं, तत्र यत् चक्षमानं न तत् चलितमित्यादिकथनम् । तथा द्वयोः परमाण्वोः परस्परं संमेलनं न भवति, परमाण्वोरतिसूक्ष्मतया द्वयोः परमाण्वोः स्नेहकायस्या भावात्, किन्तु त्रयः परमाणवः चत्वारः पञ्च वा समिलिता भवन्ति, व्याधिषु मिश्रितेषु स्नेहकायस्य समुद्भवात् । ते त्रयः परमाणवो मिश्रमानाः सार्द्धैकरूपेण सार्धैकरूपेणावतिष्ठन्ते, त्रिषा विभागकरणे एकैकस्यावस्थानं भवति । एव चत्वारो द्विषा चतुर्षा वा मिश्रन्ते । द्विषा विभजने द्वौ द्वौ, चतुर्षा विभागकरणे एकैको

દશમ ઉદ્દેશક પ્રારંભ—

इस दशम उद्देश में जो विषय वर्णित हुए हैं उनका वर्णन संक्षेप में इस प्रकार से है—

अन्यतीर्थिकजनों का वक्तव्य । इसमें जो चक्षमान है वह चलित नहीं होता है इत्यादि कथन दो परमाणुओं का परस्पर में संमेलन नहीं होता है । क्यों कि परमाणु को अतिसूक्ष्म होने के कारण दो परमाणुओं में स्नेहकाय का अभाव रहता है । किन्तु तीन परमाणु, चार परमाणु अथवा पांच परमाणु इनका परस्पर में संमेलन होता है । क्यों कि व्याधि परमाणुओं में संमिलित होने पर स्नेहकाय उद्भूय हो जाता है । ये तीन परमाणु मिश्रमान होते हुए १॥-१॥ भाग में हो जाते हैं । तीन रूप में विभाग करने पर एक एक का अवस्थान रहता है इसी तरह चार पर

દશમો ઉદ્દેશકનો પ્રારંભ

દશમ ઉદ્દેશમાં જે વિષયનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું છે તેનું દ્રઢાણમાં વર્ણન કરવામાં આવે છે—

અન્ય તીર્થિકોનું વક્તવ્ય તેમાં ચક્ષમાન છે તે ચલિત થતું નથી એનું કથન જે પરમાણુઓનો પરસ્પરમાં સંયોગ થતો નથી, કારણ કે પરમાણુઓ અતિ સૂક્ષ્મ હોવાથી જે પરમાણુઓમાં સ્નેહકાયનો અભાવ રહે છે પણ ત્રણ ચાર પાંચ વગેરે પરમાણુઓનો પરસ્પરમાં સંયોગ થાય છે કારણ કે ત્રણ ચાર વગેરે પરમાણુઓનો વ્યારે સંયોગ થાય છે ત્યારે તેમનામાં સ્નેહકાયનો ઉદ્ભવ થાય છે તે ત્રણ પરમાણુઓ સેદાતાં ૧૥-૧૥ ભાગમાં પડે આઈ બંધ છે ત્રણ પરમાણુઓના ત્રણ ભાગ કરવાથી એક એક પરમાણુ રહે છે એ બ

બાલકત્વમશાશ્વતમ્ । શાશ્વતઃ પण्डितः, इत्यस्य ग्रहणम् । व्याख्यानं तु प्रश्नसूत्र-
वदेव भवता करणीयम्, सेवं भंते सेवं भंते' तदेवं भदन्त ! तदेवं भदन्त । हे भदन्त !
यत् देवानुप्रियेण कथितं तत् एवमेव सर्वथा सत्यमेव, आप्तवाक्यस्य सर्वथाऽवाधि-
तत्वात्, 'त्ति जाव विहरइ' इति यावद् विहरति, इत्येवंरूपेण कथयित्वा
गौतमः श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्यित्वा संयमेन
तपसा आत्मानं भावयन् विहरतीति ॥ सू० ८ ॥

इति श्री-जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्य-श्रीघासीलालव्रतिविर-
चितायां श्रीभगवतीसूत्रस्य प्रमेयचन्द्रिका-व्याख्यायां प्रथम
शतकस्य नवमोद्देशकः समाप्तः ॥१-९॥

भज्यते, शाश्वतो बालकः, बालकत्वं अशाश्वतम्, शाश्वतः पण्डितः)
इस पाठका संग्रह हुआ है । इन पदों का व्याख्यान तो प्रश्नसूत्रकी तरह
ही जानना चाहिये । (सेवं भंते । सेवं भंते ! त्ति जाव विहरइ) हे भदन्त !
आप देवानुप्रिय ने जो कहा है वह ऐसा ही है, हे भदन्त ! वह ऐसा
ही है अर्थात् सर्वथा सत्य ही है-क्यों कि आप वाक्य जो होते हैं, वे
सर्वथा अवाधित ही होते हैं । ऐसा कह कर गौतमस्वामी ने श्रमण
भगवान महावीर प्रभु को वन्दना की, नमस्कार किया । वंदना नमस्कार
करके फिर वे संयम और तप से आत्मा को भावित करते हुए अपने
स्थान पर बैठ गये ॥ सू० ८ ॥

श्री जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्य श्रीघासीलालजी
महाराजकृत भगवतीसूत्रकी प्रमेयचन्द्रिका व्याख्या
के प्रथम शतकका नौवां उद्देशक समाप्त ॥१-९॥
॥ प्रथम शतक में नौवां उद्देशक समाप्त ॥

કરાયો છે-“ સ્થિર પદાર્થો પલટાતા નથી, અસ્થિર પદાર્થો ભાંગી બચ છે,
સ્થિર પદાર્થો ભાગતા નથી, બાલક શાશ્વત છે, બાલકપણું અશાશ્વત છે, પંડિત
શાશ્વત છે ” આ પદોનો અર્થ પ્રશ્નસૂત્રના અર્થ પ્રમાણે જ સમજવો.

“ સેવં ભંતે ! સેવં ભંતે ! ત્તિ જાવ વિહરइ ” હે ભગવન્ ! આપ દેવાનુ-
પ્રિયે જે કહ્યું તે સત્ય જ છે, હે ભગવન્ ! તે વાત તદ્દન સાચી જ છે, કારણ
કે આપ વાક્યમાં શંકાને સ્થાન જ હોતું નથી. એવું કહીને ગૌતમસ્વામીએ
શ્રમણ ભગવાન મહાવીરસ્વામીને વંદણા કરી, નમસ્કાર કર્યા વંદણા નમસ્કાર
કરીને સંયમ અને તપથી પોતાના આત્માને ભાવિત કરતા તેઓ પોતાને
સ્થાને ગયા ॥ સૂ૦ ૮ ॥

॥ ઇતિશ્રી જૈનાચાર્ય જૈનધર્મદિવાકર પૂજ્યશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજકૃત ભગવતીસૂત્રની
પ્રિયદર્શિનીવ્યાખ્યાના પહેલા શતકનો નવમો ઉદ્દેશક સમાપ્ત ॥૧-૯॥

તયાદિ-ચલત્ ચલિતમિત્યાદિ કથનમ્ । દ્વયો પરમાખ્યોરપિ પરસ્પરં સંઘાતો મયતિ ।
 એકૈકસ્મિન્નપિ સ્નેહસદ્ભાવાત્, ગ્ર્યાદીનાં સંઘાતસ્ય તૈરપિ સ્વીકૃતત્વાત્ । દ્વયો-
 દ્વિધાકરણે એક એકોમયતિ । પ્રયાણા પરમાણૂનાં સંઘાતો મયતિ, દ્વિધાકરણે
 એકત્ એકઃ, એકતો દ્વિપ્રદેશિકઃ સ્કન્ધઃ, ન તુ સાર્થકઃ સાર્થકો મયતિ, પ્રિયા
 કૃતે પ્રયો મયન્તિ । एवं चतुर्णां द्विधाकरणे एकत एकः, एकतश्च त्रिप्रदेशिकः
 સ્કન્ધો મયતિ ન તુ ઢો ઢો । પચ્ચપરમાણૂનાં સ્કન્ધો ન દુઃસ્વ (કર્મ) તથા પરિ
 જમતે । કર્મ ચ અશાશ્વત, ન તુ શાશ્વતમ્ ।

મત્ત હૈ । મહાવીર પ્રભુ કા ચક્તવ્ય । અન્યમત્ત મેં અસત્યતા કા પ્રતિપા
 વન । ચલમાણ ચલ્ ચલિત્ત્વ ઇત્યાદિ કથન । દો પરમાણુઓં કા મી પર
 સ્પર મેં સંઘાત્ હોતા હૈ ક્યોં કિ એક પરમાણુ મેં મી 'સ્નેહ' કા સદ્ભાવ
 રહતા હૈ । ડવણુક આદિ કે સંઘાત્ કો ડન્હોં ને મી સ્વીકાર કિયા હૈ ।
 દો કે દો ડુકડે કરન પર એક એક હોતા હૈ । ત્રીન પરમાણુઓં કા સંઘાત
 હોતા હૈ । ઇસકે દો ભાગ કરને પર ૧૧૧-૧૧૨ એસે દો ભાગ નહીં હાતે
 હૈ, કિન્તુ એક તરફ એક કા એક ઓર દૂસરા દ્વિપ્રદેશિક સ્કન્ધ । ત્રીન
 ડુકડે કરને પર ત્રીન હોતે હૈ । ઇસી તરફ ચાર કે દો ડુકડે પર એક કા
 એક ઓર દૂસરા ત્રીન પ્રદેશ ચાલા સ્કન્ધ એક દો દો એસે દો ડુકડે ચાર
 કે નહીં હોતે હૈ । પાંચ પરમાણુઓં કા સ્કન્ધ દુ સ્વકર્મ રૂપ સે નહીં પરિ
 જમતા હૈ । કર્મ અશાશ્વત્ હોતા હૈ, શાશ્વત નહીં હોતા હૈ ।

વિષયમા મહાવીર પ્રભુનુ વક્તવ્ય. અન્ય મતમા સ્નેહ અસત્યપણાનુ પ્રતિપાદન
 ને અલમાન છે તે અલિત થઈ ચૂકનુ એવું કથન ને પરમાણુઓના પણ પર
 સ્પરમા સંઘોત થઈ શકે છે કારણ કે એક એક પરમાણુમા પણ સ્નેહભાવનો
 સદ્ભાવ રહે છે ત્રણ વગેરે અણુઓના સંઘોતનો તેમણે પણ સ્વીકાર કર્યો છે
 સંઘોત પામેલા ને અણુઓના ને ડુકડા કરવાથી એક એક અણુ મૂંઢ પડે
 છે સંઘોત પામેલા ત્રણ પરમાણુઓના ને વિભાગ કરવાથી ૧૧૧-૧૧૨ ના ને
 ભાગ થતા નથી પણ એક વિભાગ એક પરમાણુવાળો બને છે પણ તેના
 ત્રણ ડુકડા કરવાથી એક એક પરમાણુવાળા ત્રણ વિભાગ થાય છે એ જ
 પ્રમાણે સંઘોત પામેલા ચાર પરમાણુના ને ડુકડા કરવાથી બે બે પ્રદેશવાળા
 સ્કન્ધો થતા નથી પણ એક સ્કન્ધ એક પ્રદેશવાળો બને બીજો સ્કન્ધ ત્રણ
 પ્રદેશવાળો થાય છે પાંચ પરમાણુઓ સ્કન્ધ દુઃખ-કર્મરૂપે પરિણમતા નથી.
 કર્મ અશાશ્વત હોય છે, શાશ્વત હોતું નથી.

ભૂત્વા ચત્વારો ભવન્તિ । પરમાણ્વો મિલિતાઃ સન્તો દુઃસ્વતયા પરિણતા ભવન્તિ, દુઃસ્વં કર્મ તત્ શાશ્વતમુપચીયતે ડપચીયતે ચ । ઉચ્ચારણાત્ પ્રાગેવ ભાષા ભાષા ન તુ ભાષ્યમાણા ભાષા, ભાષણાત્ પરતો વા ભાષા ભાષા, સા ભાષા અભાષમાણ-સ્ય ભાષા ભવતિ ન તુ ભાષમાણસ્ય । ઉત્પત્તેઃ પૂર્વ ક્રિયા દુઃસ્વા ન તુ ક્રિયમાણા ક્રિયા દુઃસ્વા ક્રિયાસમયવ્યતિક્રમે કૃતા ક્રિયા દુઃસ્વરૂપા, સા ક્રિયા અકુર્વતો દુઃસ્વા ન તુ કુર્વતો દુઃસ્વા । અકૃત્યં દુઃસ્વમસ્પૃશ્યં દુઃસ્વમ્ અક્રિયમાણકૃત દુઃસ્વમ્, અકૃત્વા અકૃત્વા પ્રાણભૂતજીવસત્ત્વાઃ વેદનાં વેદયન્તિ ન તુ કૃત્વા કૃત્વા વેદયન્તીતિ પરતીર્થિકાનાં મતમ્ । સમ્પ્રતિ મહાવીરવ્રતકવ્યમ્ । અન્યમતસ્યાસત્યત્વપ્રતિપાદનં,

માણુઓં કા વિભાગ કરને પર યા નો ડનકે દો દોં કે દોં ભાગ હોતે હેં યા એક એક કા વિભાગ કરને પર ચાર ભાગ હોતે હેં । પરમાણુ મિલિત અવસ્થા મેં દુઃસ્વરૂપ સે પરિણત હોતે હેં । દુઃસ્વ જો હેં વહં કર્મ હેં । વહ શાશ્વત હેં । ડસમેં ચય ઔર અપચય હોતે હેં । ઉચ્ચારણ કે પહિલે હી ભાષા ભાષા હેં । બોલી જાતી ભાષા ભાષા નહીં હેં । અથવા-ભાષણ કરને કે શાદ ભાષા ભાષા હેં । વહ ભાષા અભાષમાણ કી ભાષા હોતી હેં, બોલતે હુએ કી ભાષા ભાષા નહીં હોતી હેં । ઉત્પત્તિ કે પહિલે ક્રિયા દુઃસ્વરૂપ હેં, કી જાતી ક્રિયા દુઃસ્વરૂપ નહીં હેં । ક્રિયાસમય કે વ્યતિક્રમ હોને પર કી ગઈ ક્રિયા દુઃસ્વરૂપ હેં । વહ ક્રિયા નહીં કરને વાલે કો દુઃસ્વરૂપ હેં- કરને વાલે કો દુઃસ્વરૂપ નહીં હેં । અકૃત્ય દુઃસ્વ હેં । અસ્પૃશ્ય દુઃસ્વ હેં । અક્રિયમાણ, કૃત દુઃસ્વ હેં । નહીં કરકે નહીં કરકે પ્રાણ, ભૂત, જીવ ઔર સત્ત્વ વેદના ભોગતે હેં । કર કરકે વેદના નહીં ભોગતે હેં એસા પરતીર્થિક જનોં કા

પ્રમાણુ ચાર પરમાણુઓનો વિભાગ કરવામા આવે તો તેમના બે બેના વિભાગ થાય છે અથવા તો એક એકના ચાર ભાગ થાય છે. પરમાણુ મિલિત અવસ્થામા હુ બંરૂપે પરિણમે છે. દુઃખ જે છે તે કર્મ છે. તે શાશ્વત છે, તેમાં ચય અને અપચય થાય છે

ઉચ્ચારણના પહેલાંની ભાષા જ ભાષા છે બોલાતી ભાષા, ભાષા નથી. અથવા ભાષણ કર્યા પછીની ભાષા, ભાષા છે તે ભાષા અભાષકની ભાષા હોય છે, બોલનારની ભાષા, ભાષા હોતી નથી. ઉત્પત્તિના પહેલા ક્રિયા હુ બંરૂપ છે, કરાતી ક્રિયા દુઃખંરૂપ હોતી નથી ક્રિયાસમયનો વ્યતિક્રમ થતાં કરાયેલી ક્રિયા હુ બંરૂપ છે તે ક્રિયા કરનારને હુ બંરૂપ છે, નહીં કરનારને હુ બંરૂપ નથી અકૃત્ય દુઃખ છે અસ્પૃશ્ય દુ ય છે. અક્રિયમાણ, કૃત દુઃખ છે કર્મ નહીં કરવાથી પ્રાણ, ભૂત, જીવ અને સત્ત્વ વેદના ભોગવે છે. કર્મ કરીને વેદના ભોગવતા નથી એવી પરતીર્થિકોની માન્યતા છે. તે

અકપાયોદયમમવા, સામ્પરાયિકી ચ કપાયોદયમમવા, અતો જીવ એકમયં દે
ત્રિક્રિયે કર્તુ ન શક્નોતીતિ મગધન્મતમ્ । નરકે ક્રિયાનુ-વિરહકાલ ? इति पृच्छा ।
દ્વાદશ મુહૂર્ત્તાં પ્રત્યુત્તરમ્ । અથ પ્રજ્ઞાપનાયાઃ પૃથ્ઠં ધ્યુસ્ક્રાન્તિપદ-બોધ્યમ્ । 'સેવ
મતે' इत्यादि गौतमस्यानुमोदनम् । उद्देशकसमाप्तिः, शतकसमाप्तिश्चेति ॥ १

નવમોદ્દેશકં નિરૂપ્ય તદનુ ષષ્ઠમોદ્દેશકો નિરૂપ્યતે, તથા નવમોદ્દેશકસ્યા તે
અસ્થિર ચ કર્મ इति वर्णितम्, કર્માદિવિષયે ચ પરતીર્થિકા, વિરુદ્ધં પ્રતિપાદયતિ
અતસ્તેવાં નિરાકરણાત્-તથા પ્રથમશતકસ્યાદૌ (દ્વાર) જ્ઞાપાયાં 'ચલણામ્'
इति दशमद्वारतया यदुक्तं तत्प्रतिपादनाय च षष्ठमोद्देशकः प्रारभ्यते, तस्येदमा-
दिम सूत्रम्—'अथ उत्थियार्ण' इत्यादि ।

સમય મેં દો ક્રિયા કરને કે-લિયે સમર્થ નહીં હો સકતા. એસા જ્ઞાપાન
કા મત હે । નરક મેં વિરહકાલ કિતના હે એસા પ્રશ્ન-૧૨ ચારહ મુહૂર્ત
કા-હે એસા ઉત્તર । યહાં પ્રજ્ઞાપના-કા છઠર્થા ધ્યુસ્ક્રાન્તિ પદ જાનના
ચાહિયે । (સેવ મતે । इत्यादिरूप से गौतम ! का अनुमोदन, उद्देशक
की समाप्ति और प्रथम शतक की भी समाप्ति

નવવે ઉદ્દેશક કા નિરૂપણ કરકે હમકે બાદ સૂત્રકાર અથ દશમ
ઉદ્દેશક કા નિરૂપણ કરતે હૈં-નવવે ઉદ્દેશક કે અંત મેં "કર્મ અસ્થિર
હોતા હે" એસા વર્ણન ક્રિયા ગયા હે । કર્માદિ-કે વિષય મેં પરતીર્થિક
જન વિરુદ્ધ હી પ્રરૂપણા-કરતે હૈં, અતઃ ડનકે મન્તવ્ય કા નિરાકરણ
કરને કે લિયે તથા-પ્રથમ-શતક કી આદિ મેં દ્વાર-જ્ઞાપા મેં "ચલણામ્"
એસા જો દશમ દ્વારરૂપ સે-કહા ગયા હે-અસ્કે પ્રતિપાદન કે લિયે-હસ
દશમ ઉદ્દેશક કા પ્રારંભ જુઝા હે । 'અથ ઉત્થિયાર્ણ' इत्यादि

ઉપર હોય ત્યારે જ થાય છે તેથી એક જ સમયે એવ બે ક્રિયા કરવાને
અમર્થ હોતો નથી એવો જાગવાનનો અવ છે નરકમાં વિરહકાળ કેટલો છે ?
એ પ્રશ્ન ઉત્તર-૧૨ મુહૂર્તનો છે અહીં પ્રજ્ઞાપનાનું છઠું ધ્યુસ્ક્રાન્તિપદ બાણુ
એક એ. "સેવ મતે" इत्यादि કથતવડે ગૌતમનું અનુમોદન. ઉદ્દેશકની સમાપ્તિ
અને પહેલા શતકની પણ સમાપ્તિ.

નવમા ઉદ્દેશકનું નિરૂપણ કરીને હવે સૂત્રકાર જ્ઞાપા ઉદ્દેશકનું નિરૂપણ
કરે છે નવમા ઉદ્દેશકને અતે "કર્મ અસ્થિર જોય છે" એવું વર્ણન કરવામા
આવ્યું છે કર્માદિના વિષયમાં પરતીર્થિકો એથી વિરુદ્ધ પ્રરૂપણા કરે છે, તેથી
તેમના મતનુ અહન કરવાને માટે તથા પહેલા શતકની શરૂઆતની દ્વાર
જ્ઞાપામાં "ચલણામ્" એવું જો જ્ઞાપા દ્વારરૂપે કહેલું છે તેનુ પ્રતિપાદન
કરવાના આશયથી આ જ્ઞાપા ઉદ્દેશકની શરૂઆત કરવામાં આવી છે

ભાષણાત્ પૂર્વં ન ભાષા, ભાષ્યમાણા ભાષા ભવતિ, ભાષણાત્ પરતોઽપિ
 ન ભાષા ભવતિ । ભાષમાણસ્ય ભાષા ભવતિ ન તુ અભાષમાણસ્ય । ભાષાવત્
 ક્રિયાપિ વોધ્યા । કૃત્યં દુઃખં, સ્પૃશ્યં દુઃખં, ક્રિયમાણકૃતં દુઃખં, કર્મ
 કૃત્વા કૃત્વા પ્રાણભૂતજીવસત્ત્વાઃ વેદનાં વેદયન્તિ, ન તુ અકૃત્યમ્, અસ્પૃશ્યમ્
 અક્રિયમાણકૃતં દુઃખમ્, અકૃત્વા અકૃત્વા પ્રાણભૂતજીવસત્ત્વા વેદનાં વેદયન્તી
 ત્યતોઽસત્યમન્યતીર્થિકાનાં મતમિતિ । પુનરન્યતીર્થિકમતમ્--તથાહિ--एको
 जीव एकस्मिन् समये द्वे क्रिये--ऐर्यापथिकी साम्परायिकी च युगपत्
 करोति तदसत्यम्, तयोः परस्परविरुद्धस्वभावत्वात् । यत ऐर्यापथिकी

ભાષણ સે પહિલે ભાષા ભાષા નહીં હોતી હૈ । જો બોલી જો રહી હૈ વહી
 ભાષા હોતી હૈ । ભાષણ કે વાદ ખી ભાષા ભાષા નહીં હોતી હૈ । બોલતે હુએ
 કી ભાષા ભાષા હોતી હૈ । નહીં બોલતે હુએ કી ભાષા ભાષા નહીં હોતી
 હૈ । ભાષાં કી તરહે ક્રિયાં ખી જાનની ચાહિયે । કૃત્ય દુઃખ હૈ । સ્પૃશ્ય
 દુઃખ હૈ । ક્રિયમાણ કૃત દુઃખ હૈ । કર્મ કર કર કે પ્રાણ, ભૂત, જીવ,
 સત્ત્વ વેદના ભોગતે હૈ । અકૃત્ય, અસ્પૃશ્ય, અક્રિયમાણકૃત દુઃખ નહીં
 હૈ । કર્મ નહીં કરકે પ્રાણ, ભૂત, જીવ, સત્ત્વ વેદના ભોગતે હૈ । ઇસલિયે
 અન્યતીર્થિકોં કા મત અસત્ય હૈ । તથા-અન્યતીર્થિકોં કા એસા ઓર ખી
 મત હૈ કિ એક જીવ એક સમય મેં ઈર્યાપથિકી ઓર સામ્પરાયિકી એસી
 દો ક્રિયાએ એક સાથે કરના હૈ । સો યહ ખી અસત્ય હૈ-ક્યોં કિ યે દોનોં
 ક્રિયાએ પરસ્પર મેં વિરુદ્ધ સ્વભાવ વાલી હૈ-કારણ કિ ઈર્યાપથિકી જો
 ક્રિયા હોની હૈ વહ કષાય કે ઉદય કે અભાવ મેં હોની હૈ ઓર જો સા-
 મ્પરાયિકી ક્રિયા હૈ વહ કષાય કે ઉદય મેં હોતી હૈ । ઇસલિયે જીવ એક

ભાષણની પહેલાની ભાષા ભાષા હોતી નથી જે બોલવામા આવે છે એજ ભાષા
 હોય છે ભાષણ પછીની ભાષા પણ ભાષા નથી. બોલનારની ભાષાજ ભાષા કહેવાય
 છે નહીં બોલનારની ભાષા, ભાષા કહેવાતી નથી ભાષાની જેમ જ ક્રિયા વિષે પણ
 સમજવું, કૃત્ય દુઃખ છે સ્પૃશ્ય દુઃખ છે. ક્રિયમાણ કૃત દુઃખ છે કર્મ કરીને પ્રાણ,
 ભૂત, જીવ, સત્ત્વ વેદના ભોગવે છે. અકૃત્ય, અસ્પૃશ્ય, અક્રિયમાણ કૃત દુઃખ
 નથી, કર્મ નહીં કરી કરીને પ્રાણ, ભૂત, જીવ, સત્ત્વ વેદના ભોગવતા નથી.
 આ કારણે અન્ય તીર્થિકોનો મત અસત્ય છે, તથા-અન્ય તીર્થિકોની બીજી
 એક એવી માન્યતા છે કે એક જીવ એક જ સમયે ઈર્યાપથિકી સામ્પરાયિકી
 એ બે ક્રિયાએ એક સાથે કરે છે તેમની તે માન્યતા પણ અસત્ય છે, કારણ
 કે તે બે ક્રિયાઓ પરસ્પર વિરોધી સ્વભાવવાળી છે. ઈર્યાપથિકી ક્રિયા કષાયના
 ઉદયનો અભાવ હોય ત્યારે જ થાય છે. પરંતુ સામ્પરાયિકી ક્રિયા તો કષાયનો

समय वीक्ष्यत च ण कडा किरिया दुक्खा, सा-किं करणओ
 दुक्खा अकरणओ दुक्खा, अकरणओ ण सा दुक्खा, नोखलु
 सा करणओ दुक्खा, सेव वत्तव्व सिया ।- अकिच्च दुक्ख
 अफुस दुक्ख, अकज्जमाणकड दुक्ख, अकहु अकहु पाणमूय
 जीवसत्तावेयण वेदोति, इति वत्तव्व सिया, से कहमेय
 भते एव० ॥ सू० १ ॥

छाया-अन्ययुक्तिकाः सल्ल भवन्ति । एवमाख्यान्ति यावदेव प्ररूपयन्ति, एवं
 सल्ल वल्लमानमचलितम् यावत् निर्जीर्णमागमतिर्जीर्णम्, द्वौ परमाणुपुद्गलौ एकौ
 न साह्येते, कस्माद् द्वौ परमाणुपुद्गलौ एकौ न साह्येते, द्वयो परमाणुपुद्ग
 लयोनास्ति स्नेहकायः तस्मात् द्वौ परमाणुपुद्गलौ एकौ न साह्येते, त्रयो
 परमाणुपुद्गला एकौ साह्यन्ते, कस्माद् त्रयो परमाणुपुद्गला एकौ साह्यन्ते,

सुप्रार्थ—(भंते) हे भद्वन् ! (अत्र उच्यते ण)- अन्यतीर्थिकजन
 (एव आह्वयन्ति) इस प्रकार से कहते हैं (जाव एव पक्खेति) यावत्
 इस प्रकार से प्रत्यक्ष करते हैं कि (चलमाणे अचलित) जो चल रहा
 है वह चलित नहीं कहा जाता है (जाव निजरिउजमाणे अगिउज्जन्ने)
 यावत् जिसकी निर्जरा हो रही है वह निर्जीर्ण नहीं कहा जाता । (दो पर
 माणु पोग्गला एगयओ न साहणति) दो परमाणु पुद्गल एक स्कंध रूप
 में नहीं परिणमते हैं । (दोण्ह परमाणुपोग्गलार्ण नत्थि सिगेहकाए) (दो
 परमाणु पुद्गलों के स्नेहकाय नहीं होता है) (तग्हा दो परमाणुपोग्गला
 एगयओ न साहणति) इसलिये दो परमाणुपुद्गल एक स्कंधरूप में नहीं
 परिणमते हैं । (तिण्णि परमाणुपोग्गला एगयओ साहणति) तीन पर

अत्र उच्यते णं भंते । एव आह्वयन्ति " भद्वन्ति

सुप्रार्थ—(भंते !) हे भगवन् ! (अत्र उच्यते णं) अन्य तीर्थिको (एव
 आह्वयन्ति) आ आभावे छे छे (जाव एव पक्खेति) (यावत्) आ आभावे
 भउपवा छे छे (चलमाणे अचलित) ने यात्री रहू छे तेने चलित (यात्री
 रहू) छे यथाय नदी (जाव निजरिउजमाणे अगिउज्जन्ने) (यावत्) नेनी निर्जरा
 रहू छे तेने निर्जरा छे यथाय नदी (दो परमाणुपोग्गला एगयो न
 साहणति) ने परमाणु पुद्गल अत्र उच्यते परिणमन्त नथी, (दोण्ह परमाणु
 पोग्गलार्ण नत्थि सिगेहकाए) ने परमाणु पुद्गलोभा स्नेहकायने अभाव देव
 छे (तग्हा दो परमाणुपोग्गला एगयो न साहणति) तेथी ने परमाणु पुद्गलो
 अत्र उच्यते परिणमन्त नथी (तिण्णि परमाणुपोग्गला एगयो साहणति)

मूलम्—अन्न उत्थिया णं भंते ! एवं आइक्खंति जाव
 एवं परूवेति, एवं खलु चलमाणे अचलिए जाव निज्जरी-
 ज्जमाणे अणिज्जिन्ने दो परमाणु पोग्गला एगयओ न
 साहणंति, दोण्हं परमाणुपोग्गलाणं नत्थि सिणेहकाए,
 तम्हा दो परमाणुपोग्गला एगयओ न साहणंति, तिणिण
 परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति, कम्हा तिणिण परमाणु-
 पोग्गला एगयओ साहणंति, तिण्हं परमाणुपोग्गलाणं
 अत्थि सिणेहकाए, तम्हा तिणिण परमाणुपोग्गला एगयओ
 साहणंति ते भिज्जमाणा दुहा वि, तिहा वि कज्जंति, दुहा
 कज्जमाणा एगयओ दिवड्ढे परमाणु पोग्गले भवइ, एगयओ
 वि दिवड्ढे परमाणुपोग्गले भवइ, तिहा कज्जमाणा तिणिण
 परमाणुपोग्गला भवंति, एवं जाव चत्तारि० पंच परमाणु
 पोग्गला एगयओ साहणंति, एगयओ साहणित्ता दुक्खत्ताए
 कज्जंति, दुक्खे वि य णं से सासए सया समियं उवचिज्जइ
 य अवचिज्जइ य । पुर्व्वि भासा भासा, भासिज्जमाणी
 भासा अभासा, भासासमय विइकंतं च णं भासिया भासा,
 जा सा पुवं भासा भासा, भासिज्जमाणी भासा अभासा,
 भासा समय विइकंतं च णं भासिया भासा, सा किं भासओ
 भासा, अभासओ भासा, अभासओ णं सा भासा, नो खलु
 सा भासओ भासा । पुर्व्वि किरिया दुक्खा, कज्जमाणी किरिया
 अदुक्खा, किरिया समयविइकंतं च णं कड़ा किरिया दुक्खा,
 पुर्व्वि किरिया दुक्खा, कज्जमाणा अदुक्खा, किरिया

સંન્યતે સંન્યતે દુઃસ્વતયા ક્રિયતે, દુઃસ્વતયાપિ ચ સ્વલ્લ સત્ શાશ્વત સદા સમિતદ્
 પચીયતે વાઙ્મચીયતે વ । પૂર્વે માપા માપા, માપ્યમાપા માપા અમાપા, માપા
 સમયચ્યતિક્રાન્તા ચ સ્વલ્લ માપિતા માપા, યા સા પૂર્વે માપા માપા, માપ્યમાપા
 માપા અમાપા, માપાસમયચ્યતિક્રાન્તા ચ સ્વલ્લ માપિતા માપા, સા કિ માપમા-
 નસ્ય માપા, અમાપમાણસ્ય ? અમાપમાણસ્ય સ્વલ્લ સા માપા નો સ્વલ્લ સા માપ

હસી તરદ્દ સે યાશ્વત્ ચાર પરમાણુ પુદ્ગલોં કે વિષય મેં જાનના ચાહિયે ।
 (પચ પરમાણુપોગ્ગલા યગમો સાહર્ણતિ) પાંચ પરમાણુ પુદ્ગલ સ્કન્ધ
 રૂપ સે પરિણમ જાતે હેં । (સાહર્ણિજ્જા દુક્કસસાપ કઝ્જતિ) ઔર
 સ્કન્ધરૂપ મેં પરિણમ કરકે વે દુઃસ્વરૂપ-કર્મરૂપ હો જાતે હેં । (દુક્કસે ચિ
 ણં સે સાસ ? સયા સમિય ઉવચ્ચિજ્જહ ય અવચ્ચિજ્જહ ય) દુઃસ્વરૂપ વહ
 કર્મ સર્વદા વાશ્વત રહતા હે । ઔર અઠ્ઠી તરદ્દ સે વહ ઉપચય ઔર
 અપચય કો પ્રાપ્ત કરતા રહતા હે । (પુરિંચ માસા માસા, માસિજ્જમાણી
 માસા અમાસા) બોલને કે પહિલે માપા માપા હે । બોલતે સમય માપા
 અમાપા હે । (માસાસમયચિહ્નંત ચ ણં માસિયા માસા) માપા કે સમય
 કો ઉલ્લંઘન કરને ઘાલી બોલી ગઈ પેસી માપા માપા હે । (જા મા પુરિંચ
 માસા માસા, માસિજ્જમાણી માસા અમાસા, માસાસમયચિહ્નંત ચ
 ણં માસિયા માસા, સા કિ માસમો માસા અમાસમો માસા) યદિ વહ
 બોલને કે પહિલે કી માપા માપા હે, બોલતે સમય કી માપા અમાપા
 હે, ઔર બોલને કે સમય કો ઉલ્લંઘન કરને ઘાલી પેસી બોલી ગઈ માપા

(માપત્) ચાર પરમાણુ પુદ્ગલોના વિષયમાં પચ સ્કન્ધવત્ (પચ પરમાણુપોગ્ગલા
 યગમો સાહર્ણતિ) પાંચ પરમાણુ પુદ્ગલો બેઠે સ્કન્ધરૂપે પરિણમે છે (સાહર્ણિજ્જા
 દુક્કસસાપ કઝ્જતિ) અને સ્કન્ધરૂપે પરિણમીને તેઓ દુઃસ્વરૂપ-કર્મરૂપ સર્વ
 બાધ છે (દુક્કસે ચિ ણં સે સાસ ? સયા સમિય ઉવચ્ચિજ્જહ ય અવચ્ચિજ્જહ ય)
 દુઃસ્વરૂપ તે કર્મ સર્વદા વાશ્વત રહે છે, અને તે સારી રીતે ઉપચય અને
 અપચય પામ્યા કરે છે (પુરિંચ માસા માસા માસિજ્જમાણી માસા અમાસા)
 બોલ્યા પહેલાં માપા; બાપા છે બોલતી વખતે બાપા અમાપા છે (માસા
 સમયચિહ્નંત ચ ણં માસિયા માસા) બાપાના સમયનું ઉલ્લંઘન કરનારી
 બોલવામાં આવેલી બાપા; બાપા છે (જા મા પુરિંચ માસા માસા, માસિજ્જ
 માણી માસા અમાસા, માસાસમયચિહ્નંત ચ ણં માસિયા માસા, સા કિ માસમો
 માસા અમાસમો માસા) બે બોલ્યા પહેલાં બાપા; બાપા હોય, બોલતી વખ
 તની બાપા અમાપા હોય અને બોલવાના સમયનું ઉલ્લંઘન કરનારી બેરી

ત્રયાણાં પરમાણુપુદ્ગલાનામસ્તિ સ્નેહકાયઃ તરમાત્ ત્રયઃ પરમાણુપુદ્ગલાઃ એકતઃ સંહન્યન્તે, તે મિથમાના દ્વિધા અપિ ત્રિધા અપિ ક્રિયતે, દ્વિધા ક્રિયમાણા એકતો દ્વયર્થઃ પરમાણુપુદ્ગલો ભવતિ, એકતોપિ દ્વયર્થઃ પરમાણુપુદ્ગલો ભવતિ, ત્રિધા ક્રિયમાણાઃ ત્રયઃ પરમાણુપુદ્ગલા ભવંતિ, એવં ચત્વારઃ, પચ્ચ પરમાણુપુદ્ગલાઃ એકતઃ

માણુ પુદ્ગલ એક સ્કન્ધરૂપ મેં પરિણમતે હેં । (કમ્હા) કિસ કારણ સે (તિણિણપરમાણુપોગ્ગલા એગયઓ સાહર્ણંતિ) ત્રીન પરમાણુ પુદ્ગલ એક સ્કન્ધ મેં પરિણમતે હેં (તિણ્હં પરમાણુપોગ્ગલાણં અત્થિ સિણેહકાપ) તો ઇસકો ઉત્તર યહ હૈ કિ ઉન ત્રીન પરમાણુ પુદ્ગલોં મેં સ્નેહકાય હોતા હૈ । (તમ્હા તિણિણ પરમાણુપોગ્ગલા એગયઓ સાહર્ણંતિ) ઇસલિયે ત્રીન પરમાણુ પુદ્ગલ સ્કન્ધ રૂપ મેં પરિણમ જાતે હેં । (તે મિજ્જમાણા ટુહા વિ, તિહા વિ કજ્જંતિ) યદિ ઇન ત્રીન પરમાણુઓં કે ભાગ કિયે જાવે તો ઉનકે દો ભાગ મી હો સકતે હેં ઓર ત્રીન ભાગ મી હો સકતે હેં । (ટુહા કજ્જમાણા એગયઓ દિવહુે પરમાણુપોગ્ગલે ભવહ, એગયઓ વિ દિવહુે પરમાણુપોગ્ગલે ભવહ) જબ ઇનકે દો ભાગ કિયે જાવે તો વેદેઢ ૧૧-૧૧ દેઢ કે દો હોતે હેં-અર્થાત્ ૧૧ પરમાણુ કા એક ભાગ ઓર ૧૧ પરમાણુ કા દૂસરા ભાગ । (તિહા કજ્જમાણા તિણિણ પરમાણુપોગ્ગલા ભવંતિ) યદિ ઉન પરમાણુ પુદ્ગલોં કે જો ત્રીન ભાગ કિયે જાવે તો ત્રીન પરમાણુ પુદ્ગલ અલગ ૨ હોકર ત્રીન ભાગ બન જાવેંગે । (એવં જાવ ચત્તારિં)

ત્રણ પરમાણુ પુદ્ગલો એક સ્કન્ધરૂપે પરિણમે છે (કમ્હા) કયા કારણથી (તિણિણ પરમાણુપોગ્ગલા એગયઓ સાહર્ણંતિ) ત્રણ પરમાણુ પુદ્ગલો એક સ્કન્ધ રૂપે પરિણમે છે ? (તિણ્હં પરમાણુપોગ્ગલાણં અત્થિ સિણેહકાપ) તે ત્રણ પરમાણુ પુદ્ગલોમા સ્નેહકાયનો સદ્ભાવ હોવાથી (તમ્હા તિણિણ પરમાણુપોગ્ગલા એગયઓ સાહર્ણંતિ) તે ત્રણ પરમાણુ પુદ્ગલો સ્કન્ધરૂપે પરિણમે છે. (તે મિજ્જમાણા ટુહા વિ, તિહા વિ કજ્જંતિ) જો તે સ્કન્ધના વિભાગ કરવામાં આવે તો તેના બે વિભાગ પણ થઈ શકે છે અને ત્રણ વિભાગ પણ થઈ શકે છે (ટુહા કજ્જમાણા એગયઓ દિવહુે પરમાણુપોગ્ગલે ભવહ, એગયઓ વિ દિવહુે પરમાણુ પોગ્ગલે ભવહ) ન્યારે તેના બે ભાગ કરવામાં આવે છે ત્યારે ત્યારે ૧૧-૧૧ ના બે ભાગ થાય છે. એટલે કે ૧૧ પરમાણુનો એક ભાગ અને ૧૧ પરમાણુનો બીજો ભાગ થાય છે. (તિહા કજ્જમાણા તિણિણ પરમાણુ પોગ્ગલા ભવંતિ) જો તેના ત્રણ ભાગ કરવામાં આવે તો ત્રણે પરમાણુ પુદ્ગલો જુદા પડીને એક એક પરમાણુનો પ્રત્યેક ભાગ બને છે, (એવં જાવ ચત્તારિં) એજ પ્રમાણે

तदव वक्तव्य स्यात् । अकृत्य दुःखम्, अस्पृश्य दुःखम्, अक्रियमाणकृत दुःखम्, अकृत्वा अकृत्वा प्राणिभूतमीवसत्त्वा वदनां वेदयन्ति इति वक्तव्य स्यात्, तत्क यमतद् मदन्त ! एवम् ? ॥ सू० १ ॥

टीका—‘अत्र उत्पिया ण भंते’ अन्ययुषिषा खलु मदन्त । ‘एवमाइखंति’ एवमाग्नयान्ति—एव वक्ष्यमाणमकारेण कथयन्ति, ‘जाय एव पश्येति’ यायत् एव प्ररूपयन्ति यावत्पदन—‘भासेति पश्यंति’ इत्यस्य ग्रहणम्, किं कथयन्ति तत्राह—‘एव खलु चलमाणे अवलिपि’ एव खलु चन्द्र अवलिप्तम्, ‘जाव निज्जरि ज्जमाणे अणिज्जिन्ने’ यावत्—निर्जीयमाणमनिर्जीयम्, ‘चणमाणे अवलिपि

रण से दुःख—दुःख बहुत है । (अकिञ्चन दुःखम् अप्सं दुःखम्, अकज्जमा गच्छं दुःखम्, अकहदु अकहदु पाणभूयजीय मत्ता येयण येदेनि) अकृत्य दुःख है । अस्पृश्य दुःख है । अक्रियमाण कृत्य दुःख है । उससे नहीं करके, नहीं करके प्राण, मूल, जीव और सत्त्व येदना को भोगते हैं, ऐसा यत्तव्य है । (सं कष्टमेयं भंते) सो है मदन्त । यह किस तरह से है ?

नीति—(अत्र उत्पिया) अन्य युषिषा आपमम पीछे (भंते) है मदन्त । (एवमाइखंति) इस प्रकार से कहते हैं । यहाँ जो यावत् जाद आया है उससे (भामति पश्यंति) इन दो या ग्रहण हुआ है । क्या कहते हैं सो मूल्यवार कहते हैं—(एव खलु चलमाणे अवलिपि) जो चल रहा है वह अवलिप्त है (जाव निज्जरिज्जमाणे अणिज्जिन्ने) यावत् जा निर्जीयमाण हो रहा है वह अनिर्जीय है ।

अत्रापी इ जटेन नपी । अत्रापी इ जटेन उ (अकिञ्चन दुःखम्, अप्सं दुःखम्, अकज्जमा गच्छं दुःखम्, अकहदु अकहदु पाणभूयजीय मत्ता येयण येदेनि) अकृत्य दुःख । उ अस्पृश्य दुःख उ अक्रियमाण कृत्य दुःख उ, तेषां अत्र नपी इति । अत्र मूल जीव अने सत्त्व येदना को भोगते उ यिन अत्र न पि । अत्र उ (सं कष्टमेयं भंते) ता दे भगवन् । ये देपी इति मूलपी मी म । तमन्त ते भगवन् मत्त उ ।

टीका— अत्र उत्पिया अन्य तेषां अन्य भगवतीये “ भंते ” दे भगवन् । एवमाइखंति आ भगवन् इति उ अदी । एवम् । एवम् । नपी म । इति भगवन् वक्ष्यंति । अत्र ये देपी भगवन् । एवम् । उ । अत्र म । इति उ । “ मूल्यार मत्त उ—एव म—चलमाण अवलिपि । जाव निज्जरिज्जमाणे अणिज्जिन्ने । (एवम्) इति उ । अत्र म । इति उ । अत्र म । इति उ ।

માણસ્ય ભાષા । પૂર્વે ક્રિયા દુઃખા, ક્રિયામાણા ક્રિયા અદુઃખા, ક્રિયાસમયવ્યતિક્રાન્તા ચ ચલુ કૃતા ક્રિયા દુઃખા । યા સા પૂર્વે ક્રિયા દુઃખા, ક્રિયામાણા ક્રિયા અદુઃખા, ક્રિયાસમયવ્યતિક્રાન્તા ચ ચલુ કૃતા ક્રિયા દુઃખા, સા કિં કરણતો દુઃખા અકરણતો દુઃખા, અકરણતઃ ચલુ સા દુઃખા, નો ચલુ સા કરણતો દુઃખા,

ભાષાહૈ તો વહ ભાષા કિસ કી હૈ કયા ઘોલતે હુએ કી વહ ભાષા હૈ? યા નહીં ઘોલતે હુએ કી વહ ભાષાહૈ? (અભાસઓ ણં સા ભાસા, નો ચલુ સા ભાસઓભાસા) અભાષમાન નહીં ઘોલતે હુએકી વહ ભાષા હૈ ઘોલતે હુએકી વહ ભાષા નહીં હૈ । (પુર્વિવ કિરિયા દુઃખા, કજ્જમાણી કિરિયા અદુઃખા) પહિલે ક્રિયા દુઃખ હૈ-દુઃખ હેતુ હૈ । કી જાતી ક્રિયા દુઃખ-દુઃખ હેતુ-નહીં હૈ । (કિરિયા સમયવદ્ધકંત ણં કઢા કિરિયા દુઃખા) તથા પહિલે કી ગર્હ ક્રિયા દુઃખ-દુઃખહેતુ હૈ । (પુર્વિવ કિરિયા દુઃખા, કજ્જમાણી કિરિયા અદુઃખા કિરિયાસમયવીદ્ધકંત ચ ણં કઢા કિરિયા દુઃખા સા કિં કરણઓ દુઃખા, અકરણઓ દુઃખા) પહિલે ક્રિયા દુઃખ હૈ, કી જાતી ક્રિયા દુઃખ નહીં હૈ । ઓર કી ગર્હ ક્રિયા દુઃખ હૈ તો વહ ક્રિયા કરણ સે દુઃખ હૈ કિ નહીં કરણ સે દુઃખ હૈ (નો ચલુ સા કરણઓ દુઃખા, સેવં વત્તવ્વં સિયા) વહ કરણ સે દુઃખ નહીં હૈ એસા કહના ચાહિયે । અર્થાત્-અક-

ખોલાયેલી ભાષા; ભાષા હોય તો તે ભાષા કોની છે-શું ખોલતાની તે ભાષા છે કે નહીં ખોલતાની તે ભાષા છે? (અભાસઓ ણં સા ભાસા, નો ચલુ સા ભાસઓ ભાસા) અભાષમાનની-નહીં ખોલનારની-તે ભાષા છે, પરંતુ ભાષમાનની-ખોલતાની તે ભાષા નથી (પુર્વિવ કિરિયા દુઃખા, કજ્જમાણી કિરિયા અદુઃખા) કયાં પહેલાં ક્રિયા દુઃખ-દુઃખહેતુ છે, જે ક્રિયા કરવામા આવી રહી હોય છે તે દુઃખ-દુઃખહેતુ નથી. (કિરિયા સમયવદ્ધકંત ણ કઢા કિરિયા દુઃખા) તથા પહેલાં કરાયેલી ક્રિયા દુઃખ-દુઃખહેતુ છે (પુર્વિવ કિરિયા દુઃખા, કજ્જમાણી કિરિયા અદુઃખા, કિરિયા સમયવીદ્ધકંત ચ ણં કઢા કિરિયા દુઃખા સા કિં કરણઓ દુઃખા, અકરણઓ દુઃખા) કયાં પહેલાંની ક્રિયા દુઃખહેતુ હોય, કરાતી ક્રિયા દુઃખહેતુ ન હોય અને કરાયેલી ક્રિયા દુઃખહેતુ હોય, તો તે ક્રિયા કરણકાલમાં કરનાર વ્યક્તિના દુઃખની હેતુભૂત હોય છે કે નહીં કરનારના દુઃખની હેતુભૂત હોય છે? (નો ચલુ સા કરણઓ દુઃખા, સેવં વત્તવ્વં સિયા) તે કરનારને દુઃખની હેતુભૂત થતી નથી-પણ અક્રિયામાણ હોય ત્યારે કરવાને સમયે ન કરાતી ક્રિયા નહીં કરનારને દુઃખની હેતુભૂત થાય છે. (તે

४, द्विज्जमाने अष्टिष्ठणे ५, मिज्जमाने अभिष्ठणे ६, इज्जमाने अद्वे ७, मेज्जमाने अमडे ८, छाया-उदीर्यमाणमनुदीरितम् ९, वेद्यमानमवेदितम् १, प्रदीपमाणप्रदीपम् ४, छिद्यमानमच्छिद्यम् ५, मिद्यमानमभिद्यम् ६, दह्यमानमदग्धम् ७, म्रियमाणममृतम् ८" इति । एषु सर्वेषु अपतीर्थिकाः वर्तमानसमये भूतकालिककार्यस्यासंभवात् वर्तमानभूतत्वयोरेकसमयतया निर्देशं न मन्यन्ते, एवं निर्जीर्यमाणं कर्म अनिर्जीर्यमिति ते मन्यन्ते, वर्तमानसमये भूतकालिककार्यस्याकरणात्, वर्तमानभूतत्वयोरेकतया व्यपदेशस्याप्रपत्त्यादिति, निर्जीर्यमाणमनिर्जीर्यमिति कथयन्ति । पुनश्च कथयन्ति—'दो परमाणु पोग्गला' इति पर-

पद्विज्जमाने अपहीणे ४, छिज्जमाने अष्टिष्ठणे ५, मिज्जमाने अभिष्ठणे ६, इज्जमाने अद्वे ७, मेज्जमाने अमडे ८,) इस पाठ का संग्रह किया गया है । इसका तात्पर्य यह है कि अन्यतीर्थिक जन जैसा चलत कर्म को चलित नहीं मानते हैं, उसी प्रकार स वे उदीर्यमाण कर्म को उदीर्य वेद्यमान कर्म को वेदित, प्रदीपमाण कर्म को प्रदीप, छिद्यमान कर्म को छिद्य, मिद्यमान कर्म को मिद्य दह्यमान कर्म को दग्ध और म्रियमाण को मृत, निर्जीर्यमाण कर्म को निर्जीर्य नहीं मानते हैं । क्यों कि इन सब में वर्तमान काल और भूतकाल का निर्देश हुआ है । सो वर्तमान समय में भूतकालिक कार्य की असंभवा के कारण वर्तमान काल और भूतकाल इन दोनों का एक समयावच्छेदेन निर्देश होता असंगत है । अतः वे ऐसा निर्देश नहीं मानते हैं । वे तो (चलमाणे अपचलिण जाव निज्जरिज्जमाने अनिज्जिष्ठणे) ऐसा ही मानते हैं ।

द्विज्जमाण अपहीणे ४ छिज्जमाने अष्टिष्ठणे ५ मिज्जमाने अभिष्ठणे ६ इज्जमाण अद्वे ७ मेज्जमाण अमडे ८" आ आहने सञ्चदं कथये छे. तेतुं तात्परं छे ॥ छे अन्यतीर्थिको जेथी दने चलित कर्मने चलित मानता नथी, जे ५ प्रमाणे उदीपमाण कर्मने उदीपुं मानता नथी, वेद्यमान कर्मने वेदित मानता नथी प्रदीपमाण कर्मने प्रदीपुं मानता नथी, छिद्यमान कर्मने छित मानता नथी मिद्यमान कर्मने मिद्य मानता नथी, दह्यमान कर्मने दग्ध मानता नथी म्रियमाण कर्मने मृत मानता नथी अने निज्जमाण कर्मने निज्जमाण मानता नथी, कारण छे जे अभाग्य वर्तमान अने भूतकालने निर्देश यथे छे वर्तमान समयमां भूतकालिक कार्यनी असंभवात् अने वर्तमानकाल अने भूतकाल जे अनेने जेक समयावच्छेदेन निर्देश यथे न सञ्जन लाग छे, तेथी तेज्जे जेवा निर्देशने मानता नथी. तेज्जे तो "वर्तमान अपचिरजाव निज्जरिज्जमाण अनिज्जिष्ठण" जेपु न माने छे तथा

ત્તિ ' ચલત્ અંચલિતમ્ , ચલત્ કર્મ ચલિતમિતિ ન સંભવતિ, ચલતા કર્મણા ચલિતકાર્યસ્યાનિષ્પાદનાત્, તથા ચલદિતિ વર્તમાનનિર્દેશઃ ચલિતમિતિ ભૂતનિર્દેશઃ, શત્રુપ્રત્યયક્તપ્રત્યયયોર્વર્તમાનભૂતકાલબોધકત્વાત્, તથા ચ વર્તમાનસ્ય ભૂત- તયા વ્યવહારો ન સંભવતિ, અતથ્ચલત્કર્મ ચલિતમિતિ ન મન્યન્તે પરતીર્થિકાઃ ૧ 'જાવ નિજ્જરિજ્જમાણે અનિજ્જિજ્જણે' યાવત્ નિર્જીર્યમાણમનિર્જીર્ણમ્ અત્ર યાવત્પદેન "ઉદીરિજ્જમાણે અણુદીરિણ ૨, વેહજ્જમાણે અવેહણ ૩, પહિજ્જમાણે અપહીણે

તાત્પર્ય હસ કથન કા હસ પ્રકાર સે હૈ-કિ જો ક અમી આત્મા સે ચલ રહા હૈ ચલ ચુકા નહીં હૈ ઉસકો ચલ ચુકા માનના યહવાત સંભ- વિત નહીં હોતી હૈ । ક્યોં કિ વર્તમાન મેં ચલતા હુઆ કર્મ ચલ ચુકે કર્મ કે કાર્ય કો નિષ્પાદન કરને મેં અસમર્થ માના ગયા હૈ । તથા (કર્મ આત્મા સે) (ચલત્) ચલ રહા હૈ યહ નિર્દેશ વર્તમાન કાલ સંબંધી હૈ । ઓર (ચલિતમ્) કર્મ આત્મા સે ચલ ચુકા યહ નિર્દેશ ભૂતકાલ સંબંધી હૈ । (ચલત્) મેં ચલ્ ધાતુ સે વર્તમાન કાલ કો લેકર (શત્રુ) પ્રત્યય હુઆ હૈ । ઓર (ચલિતમ્) મેં ભૂતકાલ કો લેકર (ક્ત) પ્રત્યય હુઆ હૈ । ઓર હસ તરહ (શત્રુ) ઓર (ક્ત) યે દો પ્રત્યય ક્રમશઃ વર્તમાન ઓર ભૂતકાલ કે જવ નિર્દેશક હૈ-બોધક હૈ તવ વર્તમાન કા ભૂતકાલ રૂપ સે વ્યવહાર કેસે સંભવિત હો સકતા હૈ । અર્થાત્ નહીં હો સકતા । હસલિયે અન્યતીર્થિકજન (ચલત્ કર્મ ચલિતમ્) એસા નહીં જ્ઞાનતે હૈ । (જાવ નિજ્જરિજ્જમાણે અનિજ્જિજ્જણે) યાવત્ નિર્જીર્યમાણં અનિર્જીર્ણમ્) યહાં યાવત્ પદ સે (ઉદીરિજ્જમાણે અણુદીરિણ ૨, વેહજ્જમાણે અવેહણ ૩,

જે કર્મ વર્તમાનકાળે આત્મામાથી ચાલી રહ્યું છે તેને ચાલી ચૂક્યું કહી શકાય નહીં, કારણ કે વર્તમાનમા ચાલી રહેલા કર્મને ચાલી ચૂકેલા કર્મના કાર્યનું નિષ્પાદન કરવાને અસમર્થ માનવામાં આવે છે, તથા "ચલત્" ચાલી રહ્યું છે" વર્તમાનકાળને નિર્દેશ કરે છે. અને "ચલિતમ્" "ચાલી ચૂક્યું છે" તેની ભારફત ભૂતકાળને નિર્દેશ થાય છે "ચલત્" માં "ચલ" ધાતુને વર્તમાનકાળને "શત્રુ" પ્રત્યય લાગ્યો છે. અને "ચલિતમ્" મા ભૂતકાળને "ક્ત" પ્રત્યય લાગ્યો છે. આ રીતે "શત્રુ" અને "ક્ત" પ્રત્યયો અનુક્રમે વર્તમાન અને ભૂતકાળના નિર્દેશક હોવાથી વર્તમાનને ભૂતકાળરૂપે વ્યવહાર સંભવી શકે જ નહીં તેથી અન્ય તીર્થિકો "ચલત્ કર્મ ચલિતમ્" એવું માનતા નથી "જાવ નિજ્જરિજ્જમાણે અનિજ્જિજ્જણે" (યાવત્) જેની નિર્જર થઈ રહી છે તે અનિર્જીર્ણ છે-તેની નિર્જરા થઈ ચૂકી એવું કહી શકાય નહીં અહીં "યાવત્" પદથી "ઉદીરિજ્જમાણે અણુદીરિણ ૨, વેહજ્જમાણે અવેહણ ૩,

સાદ્ગતિ' તસ્માદ્ દ્વો પરમાણુપુદ્ગલો એકત્રો ન સદ્ન્યેતે, યસ્માદ્ દ્વયોઃ પરમાણ્વોઃ સ્નેહકાયો નાસ્તિ તસ્માદ્ કારણાત્ દ્વયો પરમાણ્વોઃ પરસ્પરં સમેલન ન મદતિ, તથા—'તિષ્ઠિ પરમાણુપોગ્ગલા ' અથ પરમાણુપુદ્ગલા ' એગયત્રો સાદ્ગતિ ' એકત્રઃ સદ્ન્યેતે ' કન્ઘા તિષ્ઠિ પરમાણુ પોમલા એગયત્રો સાદ્ગતિ ' તસ્માદ્ અથ પરમાણુપુદ્ગલા એકત્ર સદ્ન્યેતે? ' તિષ્ઠિ પરમાણુ પોમલાણ ' અથાનાં પરમાણુપુદ્ગલાનામ્ ' અસ્થિ સિણેહકાપ' અસ્થિ સ્નેહકાયઃ—સ્નેહપર્યાપરાશ્ચિ, 'તન્મા

પરમાણુપોગ્ગલા એગયત્રો ન સાદ્ગતિ) દો પરમાણુ પુદ્ગલ આપસ મેં મિલકર એક સ્કંધરૂપપર્યાય કો ઉત્પન્ન નહીં કર સકતે હૈં । (સ્નિગ્ધ-રુક્ષત્વાદ્ ઘઃ) એસા સિદ્ધાન્ત કા વચન હૈ । સ્નિગ્ધ સ્નિ-ઘ કા, સ્નિગ્ધ રુક્ષ કા ઝૌર રુક્ષ રુક્ષ કા આપસ મેં ઘષ હો જાતા હૈ । અતઃ ઘષ હોને કે લિપે સ્નિગ્ધ રુક્ષ ગુણ સાપેક્ષ હોતા હૈ । યહ-દો પરમાણુ સૂક્ષ્મ હૈં—અતઃ યનમેં સ્નેહ-ચિકાશ નહીં રહતા હૈ । હસ કારણ યન કા પરસ્પર સમેલન નહીં હોતા હૈ । તથા—(તિષ્ઠિ પરમાણુપોગ્ગલા -એગયત્રો સાદ્ગતિ) ત્રીન પરમાણુ પુદ્ગલ આપસ મેં મિલકર એક ઇયણુક રૂપ સ્કંધ પર્યાય કો ઉત્પન્ન કરતે હૈં । અર્થોં કિ જય યે આપસ મેં મિલતે હૈં તથા ઇનમેં સ્પૃહતા આ જાતી હૈ । હસકા કારણ યનમેં સ્નેહકાય આ જાને સે યનકા પરસ્પર મેં સંમેલન હો જાતા હૈ । યહી ઘણ સૂત્રકાર ને (કન્ઘા તિષ્ઠિ પરમાણુ પોગ્ગલા એગયત્રો સાદ્ગતિ) હસ સૂત્રપાઠ યારા હાંકા રૂપ સે ઉત્પાપિત કર (અસ્થિ સિણેહકાપ સન્ઘા તિષ્ઠિ પરમાણુ પોગ્ગલા

પર્યાય રશિ હોતી નથી તે કારણે દો પરમાણુ પોમલા એગયત્રો ન સાદ્ગતિ" એ પરમાણુ પુદ્ગલો પરસ્પર મળી જઈને એક સ્કંધરૂપ પર્યાયને ઉત્પન્ન કરી શકતાં નથી. સ્નિગ્ધરુક્ષત્વાદ્ ઘઃ " એવું સિદ્ધાન્તનું વચન છે. સ્નિગ્ધ સાથે સ્નિગ્ધનો, સ્નિ-ધરુક્ષનો અને રુક્ષરુક્ષનો પરસ્પરનાં બંધ થઈ બંધ છે તેથી બંધ થવાને માટે સ્નિગ્ધ રુક્ષ ગુણ સાપેક્ષ હોય છે. બાકી એ પરમાણુ સૂક્ષ્મ હોય છે, તેથી તેમનામાં સ્નેહ-ચિકાશ રહેતી નથી. તે કારણે તેમનો પરસ્પરમાં સંયોગ થતો નથી. તથા " તિષ્ઠિ પરમાણુપોમલા એગયત્રો સાદ્ગતિ " ત્રણ પરમાણુપુદ્ગલો અરસપરસમા મળીને એક આણુકરૂપ સ્કંધપર્યાયને ઉત્પન્ન કરે છે, કારણ કે બધારે તેઓનો પરસ્પરમાં સંયોગ થાય છે ત્યારે તેમનામાં સ્પૃહતા બાકી બંધ છે, તે કારણે તેમનામાં સ્નેહકાય બાકી બધાથી તેમનો પરસ્પરમાં સંયોગ થઈ બંધ છે એ જ વાત સૂત્રકારે " કન્ઘા તિષ્ઠિ પરમાણુ પોમલા એગયત્રો સાદ્ગતિ " આ સૂત્રપાઠ વડે સ્પષ્ટ કરીને " અસ્થિ

માણુપુદ્ગલૌ 'એગયઓ ન સાહણંતિ' એકતો ન સંહન્યેતે, એકત એકસ્વેનૈકસ્કંધ-
સ્વરૂપેણ ન સંહન્યેતે ન સંહતૌ સંમિલિતૌ સ્યાતામ્, દ્વયોઃ પરમાણ્વોઃ પરસ્પરં
સંમેલનં કુતો ન ભવતીતિ કથયતિ—'કમ્હા દો પરમાણુ પોગ્ગલા એગયઓ ન
સાહણંતિ' કસ્માત્ દ્વૌ પરમાણુપુદ્ગલૌ એકતો ન સંહન્યેતે, એકસ્કંધતયા ન પરિ-
ણમેતે । પરસ્પરાસંમેલને કારણમાહ—'દોણં પરમાણુપોગ્ગલાણં' દ્વયોઃ પરમાણુ
પુદ્ગલયોઃ 'નત્થિ સિણેહકાયે' નાસ્તિ સ્નેહકાયઃ' દ્વયોઃ પરમાણ્વોઃ સૂક્ષ્મત્વાત્તત્ર
સ્નેહકાય—સ્નેહપર્યાયરાશિર્નાસ્તિ, 'તમ્હા દો પરમાણુપોગ્ગલા એગયઓ ન

તથા—और भी इनकी क्या२ मान्यताएँ हैं सो सूत्रकार इन्हें (दो परमाणु पोग्गला) इत्यादि सूत्र द्वारा प्रकट कर रहे हैं—(दो परमाणुपोग्गला एगयओ न साहणंति) दो परमाणु पुद्गल एकस्कन्धरूप में नहीं परिणमते हैं । इस विषय में उनका ऐसा कहना है कि दो परमाणु मिलकर द्व्य-
णुक स्कंध को नहीं बना सकते हैं । क्यों कि वह अत्यन्त सूक्ष्म होते
हे । इसलिये उनमें स्नेह गुण जो बंध होने में अर्थात् स्कन्ध रूप होने
में कारण होता है नहीं होता है । यही बात सूत्रकार ने (कम्हा दो पर-
माणुपोग्गला एगयओ न साहणंति) इस सूत्र द्वारा शंका रूप में उत्था-
पित कर (दोणं परमाणु पोग्गलाणं नत्थि सिणेहकाए) इस उत्तर सूत्र
द्वारा स्पष्ट की है । दो परमाणुपुद्गल एक स्कन्ध को बनाने के लिये
संहत—संमिलित किस कारण से नहीं होते हैं ? तो इसका उत्तर उनकी
ओर से ऐसा दिया गया है कि वे दो परमाणु सूक्ष्म होते हैं—अतः सूक्ष्म
होने के कारण स्नेहपर्याय राशि उनमें नहीं होती है । इस कारण (दो

તેમની બીજી માન્યતાઓ કથી કથી છે તે સૂત્રકાર “દો પરમાણુ પોગ્ગલા”
ઇત્યાદિ સૂત્રો વડે પ્રકટ કરે છે—“દો પરમાણુ પોગ્ગલા એગયઓ ન સાહણંતિ”
એ પરમાણુ પુદ્ગલો એક સ્કંધરૂપે પરિણમતા નથી. તે બાબતમાં તેમની માન્યતા
એવી છે કે એ પરમાણુ મળીને એ આણુવાળો (દ્વ્યણુક) સ્કંધ બનાવી શકતા
નથી કારણ કે તેઓ અત્યંત સૂક્ષ્મ હોય છે. તેથી સ્કંધરૂપે પરિણમવા માટે
કારણરૂપ સ્નેહગુણનો તેમનામાં સદ્ભાવ હોતો નથી. એ જ વાત સૂત્રકારે
“કમ્હા દો પરમાણુપોગ્ગલા એગયઓ ન સાહણંતિ” આ સૂત્રવડે શંકારૂપે ઉપ-
સ્થિત કરીને “દોણં પરમાણુપોગ્ગલાણં નત્થિ સિણેહકાય” આ સૂત્રવડે પ્રતિ-
પક્ષીઓ તરફથી તેનો ઉત્તર આપ્યો છે. એ પરમાણુ પુદ્ગલો શાં કારણે સંયોગ
પામીને એક સ્કંધરૂપ બનતાં નથી ? તેનો આ પ્રમાણે પ્રતિપક્ષીઓએ ઉત્તર
આપ્યો છે—એ પરમાણુ સૂક્ષ્મ હોય છે સૂક્ષ્મ હોવાને લીધે તેમનામાં સ્નેહ-

માણુ પોમાલા મઘતિ' ત્રિષાક્રિયમાણા અય પરમાણુપુદ્ગલા મઘન્તિ યદિ તપો પરમાણુપુદ્ગલાનાં માગઅયં કુર્યાત્ તદા એકૈક' પરમાણુપુદ્ગલો મઘતીતિ માત્રઃ । 'અથ જાવ ચત્તારિ' એવ યાવત્ ચત્તાર ૦, એવમ્=અનેન પ્રકારેણ યાવત્ ચત્તાર' પરમાણુપુદ્ગલા મઘન્તિ । અથ યાવત્પદેન-યથા પ્રયાણાં પુદ્ગલાનામાલાપકસ્તથા ચતુ'સઘ્યકપુદ્ગલાનામપ્પાલાપક' કાર્ય, તથાદિ—'ચત્તારિ પરમાણુપોગ્ગલાં એગયઓ સાહણતિ । કમ્હા ચત્તારિ પરમાણુપોગ્ગલા એગયઓ સાહણંતિ ? ચઠ્ઠં પરમાણુપોગ્ગલાણં અત્થિ સિણેહકાપ તમ્હા ચત્તારિ પરમાણુપોગ્ગલા એગયઓ સાહણંતિ । તે મિજ્જમાણા દુદ્ધાવિ ચઠ્ઠાવિ કજ્જંતિ । દુદ્ધા કજ્જમાણા એગયઓ

તિણ્ણિ પરમાણુપોગ્ગલા મઘન્તિ) યદિ ઠન સંહત હુપ તીન પરમાણુ પુદ્ગલો કે તીન વિભાગ ક્રિયે જાવે તો એક એક પરમાણુ પુદ્ગલ કે રૂપ મેં ઠનકે ૧ વિભાગ હો જાતે હેં । (જાવ ચત્તારિ) હસી પ્રકાર સે યાવત્ ચાર પરમાણુ પુદ્ગલ હોતે હેં । યહાં યાવત્ પદ સે (યથા પ્રયાણા પરમાણુપુદ્ગલાનાં આલાપકસ્તથા ચતુ સઘ્યક પુદ્ગલાનામ્ આલાપક' કાર્ય) યહ સમજાયા ગેયા હેં કિ કિસ તરહ સે તીન પુદ્ગલ પરમાણુઓં કા યહ આલાપક કહા ગયા હેં ઠસી પ્રકાર સે ચાર પુદ્ગલ પરમાણુઓં કા મી આલાપક કર હેના 'ચાહિયે-યહ હસ પ્રકાર સે-(ચત્તારિ પરમાણુ પોગ્ગલા એગયઓ સાહણંતિ ? કમ્હા ચત્તારિ પરમાણુપોગ્ગલા એગયઓ સાહણંતિ ? ચઠ્ઠં પરમાણુપોગ્ગલાણં અત્થિ સિણેહકાપ તમ્હા ચત્તારિ પરમાણુપોગ્ગલા એગયઓ સાહણંતિ-તે મિજ્જમાણા દુદ્ધાવિ ચઠ્ઠાવિ કજ્જંતિ, દુદ્ધા કજ્જ

પ્રશ્ન છે ' તિહા વિ કજ્જમાણા તિણ્ણિ પરમાણુપોગ્ગલા મઘન્તિ " એ તે સહવ (૨૩૫૩ પે પરિકુમેલા) તથા પરમાણુ પુદ્ગલોના તથા વિભાગ કરવામાં આવે તે એક એક પરમાણુ પુદ્ગલવાળા તેમના તથા વિભાગ થાય છે " એવ ચત્તારિ " એજ પ્રમાણે (યાવત્) આર પરમાણુ પુદ્ગલોના વિષયમાં પણ બધું જ અહીં ' યાવત્ " પદથી ' યથા પ્રયાણાં પરમાણુપુદ્ગલાનાં આલાપકસ્તથા ચતુ' સઘ્યક પુદ્ગલાનામ્ આલાપક' કાર્યઃ " એવું સમજાવવામાં આવ્યું છે કે જેવી રીતે તથા પરમાણુ પુદ્ગલોના આલાપકો કહેવામાં આવ્યા છે જેવી જ રીતે ચાર પરમાણુ પુદ્ગલોના આલાપકો પણ બનાવી લેવા એવુંજે, તે આલાપક આ પ્રમાણે બનશે—' ચત્તારિ પરમાણુપોગ્ગલા એગયઓ સાહણંતિ । કમ્હા ચત્તારિ પરમાણુપોગ્ગલા એગયઓ સાહણંતિ ? ચઠ્ઠં પરમાણુ પોગ્ગલાણં અત્થિ સિણેહકાપ તમ્હા ચત્તારિ પરમાણુપોગ્ગલા એગયઓ સાહણંતિ । તે મિજ્જમાણા દુદ્ધાવિ ચઠ્ઠાવિ કજ્જંતિ દુદ્ધા કજ્જમાણા એગયઓ

તિણિ પરમાણુપોગલા એગયઓ સાહળંતિ ' તસ્માત્ ત્રયઃ પરમાણુપુદ્ગલા એકતઃ સંહન્યન્તે, ય્યાદિપરમાણૂનાં સ્થૂલત્વાત્ સ્નેહકાયો ભવતિ તતશ્ચ સ્નેહકાયસાહાય્યાત્ ય્યાદિપરમાણવો મિલિત્વા સ્કન્ધાકારેણ પરિણતા ભવન્તીતિ ભાવઃ। 'તે મિજ્જમાણા દુહાવિ તિહાવિ કજ્જંતિ' તે મિઘમાનાઃ દ્વિધાઽપિ ત્રિધાઽપિ ક્રિયંતે, યદિ તે સંહતાસ્ત્રયઃ પરમાણુપુદ્ગલા મિઘમાનાઃ સન્તઃ દ્વિત્રિવિભાગેન વિભક્તાઃ ક્રિયન્તે તદા 'દુહા કજ્જમાણા' દ્વિધા ક્રિયમાણાઃ, 'એગયઓ દિવદ્દે પરમાણુપોગલે મવદ્ એગયઓ વિ દિવ પરમાણુ પોગલે મવદ્' એકતો દ્વયર્થઃ પરમાણુપુદ્ગલો ભવતિ એકતોઽપિ દ્વયર્થઃ પરમાણુપુદ્ગલો ભવતિ, યદિ ત્રિપરમાણુપુદ્ગલાનાં સંયુક્તાનાં દ્વૌ ભાગૌ ક્રિયેતે તદા દ્વિધા કૃતયો દ્વયોરપિ ભાગયોદ્વયર્થઃ દ્વયર્થઃ અર્ધાધિકૈકત્વસંખ્યાવાન્ પરમાણુપુદ્ગલો ભવતીત્યર્થઃ, 'તિહાકજ્જમાણા તિણિ પર-

એગયઓ સાહળંતિ) इस सूत्रपाठ से स्पष्ट की है । तीन परमाणु पुद्गल आपस में मिलकर जो स्कन्धरूपपर्याय में परिणत हो जाते हैं उसका कारण उनमें स्नेहकाय है । तात्पर्य कहने का यह है कि तीन आदि परमाणुओं में स्थूलता होने के कारण उनमें स्नेहकाय होता है, इसलिये स्नेहकाय की सहायता से वे व्यादिक परमाणु मिलकर स्कन्धाकार में परिणत हो जाते हैं । (ते मिज्जमाणा दुहा वि तिहा वि कज्जंति) संहत स्कन्धरूप में परिणत हुए-वे तीन परमाणु पुद्गल जब विभक्त किये जाते हैं तो उनके दो टुकड़े भी हो सकते हैं, और तीन टुकड़े भी हो सकते हैं । (दुहा कज्जमाणा एगयओ दिवद्वे परमाणु पोगगमें भवद्, एगयओ वि दिवद्वे परमाणुपोगगले भवद्) जब संयुक्त इनके दो टुकड़े-विभाग करते हैं तो एक तरफ १॥ और दूसरी तरफ भी १॥ पुद्गल परमाणु हो जाता है । (तिहा कज्जमाण

સિણેહકાય તમ્હા તિણિ પરમાણુ પોગલા એગયઓ સાહળંતિ ” આ સૂત્રપાઠ વડે તેનો ઉત્તર આપ્યો છે ત્રણ પરમાણુપુદ્ગલો પરસ્પરમાં મળી જઈને જે સ્કંધ પર્યાયમાં પરિણમે છે તેનું કારણ એ છે કે તેમનામાં સ્નેહકાયનો સદ્ભાવ છે. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે ત્રણ પરમાણુઓમાં સ્થૂલતા હોવાને લીધે તેમનામાં સ્નેહકાય હોય છે, તે સ્નેહકાયની સહાયતાથી તે ત્રણ ચાર વગેરે પરમાણુઓ મળી જઈને સ્કંધરૂપે પરિણમે છે, “ તે મિજ્જમાણા દુહા વિ તિહા વિ કજ્જંતિ ” સ્કંધરૂપે પરિણમેલાં તે ત્રણ પરમાણુપુદ્ગલોને ન્યારે બૂદ્ધ કરવામાં આવે છે ત્યારે તેમના બે ભાગ પશુ અર્ધ શકે છે અને ત્રણ ભાગ પશુ થઈ શકે છે, “ દુહા કજ્જમાણા એગયઓ દિવદ્દે પરમાણુપોગલે મવદ્, એગયઓ વિ દિવદ્દે પરમાણુ પોગલે મવદ્ ” ન્યારે તે સંયુક્ત પરમાણુઓના બે વિભાગ કરવામાં આવે છે ત્યારે ૧૥-૧૥ પરમાણુ પુદ્ગલના બે વિભાગ

સન્તીતિ માર , અથ દુઃસ્વભાવકારણાદ્ દુઃસ્વ કર્મ કાર્યે કારણોપચારાત્ 'દુઃસ્વે ચિ
ય ય ને' દુઃસ્વમપિ ચ સાદ્ય વદ્ , 'સાસપ્' સાસતય્ 'સયા સમિય' સદા સમિત્ ,
અપ્યક્ સપરિમાણ વા , 'અવચિજ્ઞા ય ' અવચીયતે ચ ' અવચિજ્ઞા ય ' અવ-
ચીયતે ચ , અવચીયતે હૃદિશ્ચ માપ્નોતિ , અવચીયતે , શાસં પ્રાપ્નોતિ , પંચ પરમાણ્વો
મિલિત્વા કર્મરૂપેણ પરિણમંતિ , તત્કર્મ પ્રવાહરૂપેણ નિત્યં સત્ સર્વદૈવ વયાપચયૌ
પ્રાપ્નોતીત્યર્થઃ ।

તાપ ક્વજંતિ) એસા કહા હૈ સો હસકા તાત્પર્ય એસા હૈ કિ વે પાંચ
પુલ્લપરમાણુ ઇકદ્દે હોકર કર્મરૂપ મેં પરિણત હો જાતે હૈં । યહાં જો
દુઃસ્વ કો કર્મરૂપ કહા ગયા હૈ સો કાર્ય મેં કારણ કે ઉપચાર સે કહા
ગયા હૈ । ક્યોં કિ કર્મ દુઃસ્વ કા વાતા હોને સે દુઃસ્વ કા કારણ હોતા
હૈ । ઓર દુઃસ્વ ઉસકા કાર્ય હોતા હૈ । અતઃ કાર્ય રૂપ દુઃસ્વ મેં કર્મરૂપ
કારણ કા ઉપચાર કરકે ઉસે યહાં સ્વયં કર્મરૂપ કહ દિયા હૈ । (દુઃસ્વે
ચિ ય નં સે સાસપ્) વહ દુઃસ્વરૂપ કર્મ શાન્વત હૈ । (સયા સમિય)
સદા સમિત પરિમાણુસહિત હૈ । (અવચિજ્ઞા અવચિજ્ઞા) અવચય ઓર
અપચય ઉસમેં સર્વદા હોતા રહતા હૈ । તાત્પર્ય કહને કા વહ હૈ કિ પાંચ
પરમાણુ મિલકર કર્મરૂપ સે પરિણમ જાતે હૈં । વહ કર્મ પ્રવાહરૂપ સે
નિત્ય હોતા હુમા 'મી સર્વદા હી વય ઓર અપચય કો પ્રાપ્ત હોતા રહતા
હૈ । વય કા અર્થ વૃદ્ધિ ઓર અપચય કા અર્થ દ્રાસ હૈ । (સયા સમિય)
પદ યહ પ્રકટ કરતા હૈ કિ કર્મ મેં જો વય ઓર અપચય હોતા હૈ વહ પ્રમાણ
માપ સહિત હોતા હૈ । હસકે લિયે શુણહાની કા પ્રકરણ વેલના વાહિયે ।

અહીં ને ' દુઃસ્વભાવ કર્મજંતિ ' એવું કહેવામાં આવ્યું તેનું તાત્પર્ય એ છે
કે તે પાંચ પરમાણુ પુલ્લ એકત્ર થઈને કર્મરૂપે પરિણમે છે અહીં ને દુઃખને
કર્મરૂપ કહેવામાં આવ્યું છે તે કાર્યમાં કારણના ઉપચારની અપેક્ષાએ કહેલ
છે, કારણ કે કર્મ; દુઃખ દેનાર કોવાથી દુઃખનું કારણ ગણાય છે અને દુઃખ
તેનું કાર્ય ગણાય છે તેથી કાર્યરૂપ દુઃખમાં કર્મરૂપ કારણના ઉપચારની અપે-
ક્ષાએ તેને અહીં સ્વયં કર્મરૂપ કહેલ છે "દુઃસ્વે ચિ ય નં સે સાસપ્"
તે દુઃખરૂપ કર્મ શાન્વત છે "સયા સમિય" સદા સમિત (પરિમાણુ સહિત)
છે 'અવચિજ્ઞા અવચિજ્ઞા' તેમાં સર્વદા ઉપચય અને અપચય થયા કરે છે
કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે પાંચ પરમાણુ મળી જઈને કર્મરૂપે પરિણમે છે
તે કર્મ પ્રવાહરૂપે નિત્ય કોવા છતાં પણ સર્વદા વય અને અપચય પ્રાપ્ત
કરે છે વય એટલે વૃદ્ધિ અને અપચય એટલે દ્રાસ. (હાનિ) "સયા સમિય"
પદ એ જતાવે છે કે કર્મમાં ને વય અને અપચય માપ છે તે પ્રમાણુસહિત
(માપ) થાય છે તેના વિરથમાં શુણહાનીનું પ્રકરણ એક લેવું

दो परमाणु पोगगला भवन्ति, एगयओ वि दो परमाणुपोगगला भवन्ति । चउहा कज्जमाणा चत्तारि परमाणु पोगगला भवन्ति ' इति । तथा ' पंच परमाणु पोगगला ' पञ्च परमाणुपुद्गलाः, ' एगयओ साहणित्ता ' एकतः ' संहत्य-मिलित्वा ' दुक्खत्ताए कज्जति ' दुःखतया क्रियन्ते, पञ्च पुद्गलसंहत्यदुःखतया कर्मतया क्रियन्ते

माणा एगयओ दो परमाणु पोगगला भवन्ति एगयओ वि दो परमाणु-पोगगला भवन्ति । चउहा कज्जमाणा चत्तारि परमाणु पोगगला भवन्ति) इस आलापक का भाव यह है-कि चार पुद्गल परमाणु आपस में मिलकर एक स्कन्ध रूप पर्याय में परिणत हो जाते हैं । इनके स्कन्धरूप पर्याय से परिणत होने में कारण स्नेहकाय है । क्योंकि जब ये आपस में संमिलित होते हैं तब इनमें स्थूलता आ जाती है । संहतावस्थापन्न हुए इनके यदि विभाग किये जावें तो इनके दो तथा चार भाग होते हैं एक भाग दो दो पुद्गल परमाणुओं का होता है और जब चार भाग इनके किये जाते हैं तो इसमें एक परमाणु का एक २ भाग होता है इस तरह चार भाग हो जाते हैं । तथा-पंच परमाणुपोगगला) पांच परमाणु पुद्गल जब आपस में मिलकर एक स्कन्ध रूप पर्याय से परिणत होते हैं तब उनकी वह स्कन्धरूप पर्याय दुःखरूप में परिणत हो जाती है । यही बात सूत्रकार ने (एगयओ साहणित्ता दुक्खत्ताए कज्जति) इस सूत्र पाठ द्वारा समझाई है । यहां जो (दुक्ख-

दो परमाणुपोगगला भवन्ति, एगयओ वि दो परमाणु पोगगला भवन्ति । चउहा कज्जमाणा चत्तारि परमाणुपोगगला भवन्ति " आ आलापकेने लावार्थ आ प्रमाणे छे आर परमाणुपुद्गले परस्परमा सयोग पाणीने ओक स्कंधरूप पर्यायमा परिणमे छे तेम जनवानुं धारणु ओ छे के तेमनामा स्नेहकायने सहलाव छे, धारणु के न्यारे तेओ परस्परमां सयोग पांमे छे त्यारे तेमनामा स्थूलता आवी नय छे, आ रीते सयोग पांमेलां ते परमाणुपुद्गलाना ने विलाग करवामा आवे तो ने विलाग करवामा आवे तो ने विलाग पणु थर्ध शके छे अने आर विलाग पणु थर्ध शके छे.

ने तेना ने विलाग करवामा आवे तो प्रत्येक विलाग ने ने परमाणु पुद्गलेने अने छे, अने ने आर विलाग करवामा आवे तो प्रत्येक लाग ओक ओक परमाणु पुद्गलने अने छे तथा " पंच परमाणुपोगगला " न्यारे पांच परमाणु पुद्गले परस्पर साथे मणीने ओक स्कंधरूप पर्यायमा परिणमे छे त्यारे तेनी ते स्कंधरूप पर्याय दुःखरूपे परिणमे छे, ओज बात सूत्रकारे " एगयओ साहणित्ता दुक्खत्ताए कज्जति " आ सूत्रपाठ वडे समझवी छे.

ત્યારે, ' માસિયા ' માપિયા ' માસો ' સા માપો ' મરતિ । ' સા ' કિ ' માસઓ માસા અમાસઓ માસા ' સા કિ માપમાણસ્ય માપા અમાપમાણસ્ય માપા, ઉર્ચ રયતિ—' અમાસઓ નં સા માસા ' અમાપમાણસ્ય રલુ સા માપા ' મરતિ, માપાત્પૂર્વે પમાણ તમાવધોષાત્, કિન્તુ ' નો રલુ સા માસઓ માસા ' નો રલુ ' સા માપમાણસ્ય માપા, માપ્યમાણાયાસ્તસ્પા વર્તમાનસ્વાતિસુધ્ધમેસ્ત્વેન માપાત્વાસંઘાવાત્

પદાર્થ વિષયક જ્ઞાન હોતા હૈ—અતઃ વહ માપા, જો કિ ઘોલી જા શુકી હૈ માપા હૈ । (જા સા પુર્વિ માસા માસા, માસિજ્જમાણી માસા અમામા, માસાસમયવીરક્ત ચ નં માસિયા માસા માસા) યદિ ઘોલને કે પહિલે માપા માપા હૈ, વર્તમાન મેં ઘોલો જાતી માપા માપા નહીં હૈ—ઝોર ઘોલને મેં આ શુકી માપા માપા હૈ તો યહાં એસા પ્રશ્ન હોતા હૈ કિ (સા કિ માસઓ માસા અમાસઓ માસા)—વહ માપા ઘોલતે હુપ વ્યક્તિકી હૈ કિ નહીં ઘોલતે હુપ વ્યક્તિકી હૈ । ઉત્તર—(અમાસઓ નં સા મામા વહ નહીં ઘોલતે હુપ કી માપા હૈ । તાત્પર્ય યહ હૈ કિ માપણ સે પહિલે ઝોર માપણ કે પાદ અર્થ કા યોધ હોને કે કારણ વહ નહીં ઘોલતે કી માપા હૈ । (નો રલુ સા માસઓ માસા) ઘોલતે હુપ વ્યક્તિકી વહ માપા નહીં હૈ । કયોં કિ જો માપા ઘોલી જા રહી હૈ—ઉત્તરમેં માપાત્વ સ્વીકાર નહીં કિયા ગયા હૈ । હસકા કારણ યહ હૈ કિ ઉત્તરમેં ઓતાકો અર્થ યોધ નહીં હોતા હૈ । મુલ્ક સે પૂર્ણરૂપ સે માપા કે નિકલ શુકને પર

જા સમજનારને પદાર્થ સબધી જ્ઞાન થાય છે—તે કારણે જે માપા બોલાર્થ શુદ્ધિ છે તેને માપા કહેવાય છે જા સા પુર્વિ માસા માસા, માસિજ્જમાણી માસા અમામા, માસા સમયવીરક્ત ચ નં માસિયા માસા માસા " જે બોલ્યા પડેલાની ભાષાને માપા કહેવાતી હોય, તત્કાલિન માસાતી ભાષાને માપા કહેવાતી ન હોય, અને બોલવામા આવી શુદ્ધિ ભાષાને માપા કહેવામાં આવતી હોય તો જેવો પ્રશ્ન ઉદ્ભવે છે કે " સા કિ માસઓ માસા અમા સઓ માસા " તે બોલનાર બ્યક્તિની ભાષા છે કે નહીં બોલનાર બ્યક્તિની ભાષા છે ? ઉત્તર—(અમાસઓ નં સા માસા) તે નહીં બોલનારની ભાષા છે કહેવાનું તાત્પર્ય જે છે કે ભાષણના પડેલાં અને ભાષણની પછી અથવા બોધ થવાને કારણે તે નહીં બોલનારની ભાષા છે " ન વલુ સા માસઓ માસા " બોલનાર બ્યક્તિની તે ભાષા નથી કારણ કે જે માપા બોલવામાં આવી રહી છે તેમા ભાષાપણાનો સ્વીકાર કરવામા આવ્યો નથી તેનું કારણ જે છે કે તેની મારફત ઓગાને અર્થનો બોધ થતો નથી મુજબથી પૂર્ણરૂપ

અથ ભાષાવિષયં પ્રાહ-‘ પુર્વિ ’ इत्यादि । ‘ પુર્વિ ભાસા ભાસા ’ પૂર્વે ભાષા ભાષા, પૂર્વ-ભાષણાત્ પ્રાકકાલે ભાષા=ભાષા સ્થાત્ વક્ષ્યમામ ભાષાયાઃ કારણાત્ ‘ ભાસિજ્જમાણી ભાસા અભાસા ’ ભાષ્યમાણા ભાષા અભાષા, ઉચ્યમાના ભાષા ભાષા ન ભવતિ, વર્તમાનસમયસ્યાતિસૂક્ષ્મતયા વ્યવહારાનુપયોગિત્વાત્ । ‘ ભાસા સમયવીઢ્કંતં ચ ણં ’ ભાષાસમયવ્યતિક્રાન્તં ચ લુપ્ત, ભાષાસમયે વ્યતિક્રાન્તે સતીત્યર્થઃ, ‘ ભાસિયા ’ ભાષિતા, નિઃસૃતા સર્ત્વી ભાષા ભવતિ, શ્રોતુઃપુરુષસ્ય પદાર્થવિષયકજ્ઞાનોત્પાદકત્વાત્ । પુનઃ પ્રશ્નયતિ-‘ જા સા ’ इत्यादि । ‘ જા સા પુર્વિ ભાસા ’ યા સા પૂર્વે ભાષા, યા પૂર્વે ભાષણાત્ પૂર્વે સા ભાષા ભવતિ, કિન્તુ ‘ ભાસિજ્જમાણી ભાસા અભાસા ’ ભાષ્યમાણા ભાષા અભાષા ભાષ્યમાણા=ભાષિતું પ્રવર્ત્યમાના ભાષા ણ વર્તમાનકાલે યા ભાષા સા અભાષા=ભાષા ન ભવતિ, તથા ‘ ભાસાસમયવીઢ્કંતં ચ ણં ’ ભાષાસમય વ્યતિક્રાન્તે ભાષણસમયાનન્તરમિ-

अथ सूत्रकार भाषा के विषय में सूत्र कहते हैं-(पुर्वि भासा भासा) भाषण करने का जो प्राक्काल है वह पूर्व शब्द का अर्थ है- अर्थात् बोलने से पहिले भाषा भाषा हैं-तात्पर्य इसका यह है कि बोलने से पहिले जो शब्द के अणुओं की थोकड़ी (पुंजरूप) होती है, वह भाषा कहलाती है । क्यों कि वह वक्ष्यमाण भाषा की कारण होती है । (भासिज्जमाणी भासा अभासा) तथा जो भाषा बोलने में आ रही है वह भाषा भाषा नहीं कहलाती है । क्यों कि वर्तमान समय अतिसूक्ष्म होता है इस कारण वह व्यवहार में अनुयोगी होता है । (भासासमय वीइकंतं च णं भासिया भासा) बोलने के समय को व्यतिक्रान्त हो जाने पर-अर्थात् बोल चुकने पर भाषा भाषा है-तात्पर्य कहने का यह है कि जब भाषा मुख से निकल चुकती है तभी सुनने वाले पुरुष को

હવે સૂત્રકાર ભાષાના વિષયમાં સૂત્ર કહે છે-“પુર્વિ ભાસા ભાસા” ભાષણ કર્યા પહેલાંના સમયને માટે અહીં “પૂર્વ” શબ્દ વપરાયો છે એટલે કે બોલ્યા પહેલાંની ભાષાને જ ભાષા કહે છે-તાત્પર્ય એ છે કે બોલ્યા પહેલાં જે શબ્દના અણુ-ઓની થોકડી (પૂંજરૂપે) થાય છે તેને ભાષા કહે છે. કારણ કે તે વક્ષ્ય-માણ ભાષાની કારણરૂપ હોય છે “ ભાસિજ્જમાણી ભાસા અભાસા ” તથા જે ભાષા બોલવામાં આવી રહી હોય છે તે ભાષાને ભાષા કહી શકાય નહીં, કારણ કે વર્તમાન સમય અતિસૂક્ષ્મ હોય છે, તે કારણે તે વ્યવહારમાં અનુ-પયોગી હોય છે “ ભાસા સમયવીઢ્કંતં ચ ણ ભાસિયા ભાસા ” બોલવાનો સમય પસાર થઈ ગયા પછી, એટલે કે બોલી ચૂક્યા પછીની ભાષા, ભાષા છે. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે બોલ્યા પછી ભાષા અભાષા નીકળી ચૂકે છે ત્યારે

દુઃસ્તા 'યા સા પૂર્વે ક્રિયા દુઃસ્તા મનસિ, 'કળ્પમાણી કિરિયા અદુઃસ્તા' ક્રિય માણા ક્રિયા અદુઃસ્તા, ક્રિયમાણા યા ક્રિયા સા ન દુઃસ્તપ્રયોજિકા, 'કિરિયા સમયવીરક્ષકંતે ચ ણં કહ્વા કિરિયા દુઃસ્તા' ક્રિયાસમયવ્યતિક્રાંતે ચ સ્તલુ કૃતા ક્રિયા દુઃસ્તા, ક્રિયમાણસમયવ્યતિક્રમે સતિ કૃતા નિષ્પાદિતા ક્રિયા દુઃસ્તપ્રયોજિકા મનસિ, અથવા પૂર્વકાલે ક્રિયા દુઃસ્તમનિકા અનમ્યાસાત્, ક્રિયમાણા ક્રિયા ન દુઃસ્તપ્રયોજિકા અમ્યાસાત્, કિન્તુ કૃતા ક્રિયા દુઃસ્તા યતઃ ક્રિયાકરણાનન્તરં પચ્ચાપાદિર્મનસિ પરિભ્રમાદિર્વાં આયતેજ્ઞઃ સા ક્રિયા દુઃસ્તેતિ યા દુઃસ્તેતુર્મનસિ- 'સા કિં કરણમો દુઃસ્તા અકરણમો દુઃસ્તા' સા કિં કરણતો દુઃસ્તા અકરણતો દુઃસ્તા? કરણત-અકરણમાભિત્ય કરણકાલે કુર્વત ઇત્યર્થઃ સા ક્રિયા દુઃસ્તા અથવા કિમ્ અકરણમાભિત્યાકુર્વત ઇત્યર્થ, સા ક્રિયા દુઃસ્તેતિ પ્રમા, ઉચ્ચરયતિ-

કિરિયા દુઃસ્તા) યદિ કરને કે પહેલે ક્રિયા દુઃસ્તેતુ હોતી હૈ, (કળ્પ માણી કિરિયા અદુઃસ્તા) તથા વર્તમાન મેં કી જા રહી ક્રિયા દુઃસ્ત હેતુ નહીં હોતી હૈ, (કિરિયાસમયવિરક્ષકંતે ણ કહ્વા કિરિયા દુઃસ્તા) તથા જો ક્રિયા અપને કાલ કો સ્વસંબંધન કર ચુકી હૈ ક્રિયા દુઃસ્તેતુ હોતી હૈ । અથવા-અનમ્યાસ હોને કે કારણ પૂર્વકાલ મેં ક્રિયા દુઃસ્ત જનક હોતી હૈ, ઝોર અમ્યાસ હો જાને સે વર્તમાન કાલ મેં વહી ક્રિયા દુઃસ્ત પ્રયોજક નહીં હોતી હૈ । કિન્તુ કૃત ક્રિયા દુઃસ્તા હોતી હૈ ક્યોં કિ ક્રિયા કરને કે અનન્તર પચ્ચાપાદિ હોતા હૈ અથવા પરિભ્રમ આદિ હોતા હૈ । ઇસલિયે વહ ક્રિયા દુઃસ્ત કી હેતુમૂલ હો જાતી હૈ । સો (સા કિં કરણમો દુઃસ્તા, અકરણમો દુઃસ્તા) વહ ક્રિયા જો દુઃસ્ત કી હેતુ હોતી હૈ સો કરણકાલ મેં કરતે હુવ વ્યક્તિ કો દુઃસ્ત કી હેતુમૂલ હોતી હૈ યા નહીં કરને કાલે કો દુઃસ્ત કી હેતુમૂલ હોતી હૈ । ઇસ પ્રકાર કા

દુઃસ્તા " જો ક્યાં પહેલાંની ક્રિયા દુઃસ્તેતુ હોય, " કળ્પમાણી કિરિયા અદુઃસ્તા " અને વર્તમાનમાં કરાતી ક્રિયા દુઃસ્તેતુ ન હોય, " કિરિયા સમય વિરક્ષકંત ણ કહ્વા દુઃસ્તા " તથા જે ક્રિયાને ઠાળ પચ્ચાપ અર્થ અથા જે ઝોર અમ્યાસ આવેલી ક્રિયા દુઃસ્તેતુ હોય તે (અમ્યાસ ન હોવાને કારણે પૂર્વ ઠાળમાં ક્રિયા દુઃસ્તજનક હોય છે, અને અમ્યાસ અર્થ અથા પછી વર્તમાન ઠાળમાં તેજ ક્રિયા દુઃસ્ત પ્રયોજક થતી નથી પરન્તુ કૃત ક્રિયા દુઃસ્તમાણી હોય છે કારણ કે ક્રિયા ક્યાં જાદ પચ્ચાપાદિ વગેરે થાય છે અથવા પરિભ્રમ વગેરે થાય છે તે કારણે તે ક્રિયા દુઃસ્તના હેતુરૂપ જની બધ છે) " સા કિં કરણમો દુઃસ્તા અકરણમો દુઃસ્તા " કરણઠાળમાં કરનાર વ્યક્તિને દુઃસ્તના હેતુરૂપ હોય છે કે નહીં કરનાર વ્યક્તિને દુઃસ્તની હેતુરૂપ હોય છે ?

અથ ક્રિયાવિષયે નિરૂપયતિ--‘ પુન્નિ ’ ઇત્યાદિ । ‘ પુન્નિ કિરિયા દુક્ખા ’ પૂર્વે ક્રિયા દુઃખા, ક્રિયા કાયિકી સા પૂર્વે કરણાત્પૂર્વ યાવન્ન ક્રિયતે તાવદિ-ત્યર્થઃ, દુઃખા=દુઃખહેતુર્ભવતિ । ‘ કજ્જમાણા કિરિયા અદુક્ખા ક્રિયમાણા ક્રિયા અદુઃખા, ક્રિયમાણા કરણસમયે=વર્તમાનસમયે ક્રિયા અદુઃખા=દુઃખહેતુર્ન ભવતિ । તથા ‘ કિરિયા સમયવીજ્ઞકંતં ચ ણં ’ ક્રિયાસમયવ્યતિક્રાન્તે સતિ ક્રિયાયાઃ કરણસમયાનન્તરમિત્યર્થઃ, ‘ કઢા કિરિયા ’ કૃતા સતી ક્રિયા ‘ દુક્ખા ’ દુઃખા-દુઃખહેતુર્ભવતિ । ક્રિયા હિ કરણાત્પૂર્વે પશ્ચાન્ન દુઃખહેતુર્ભવતિ કિન્તુ વર્તમાનસ-મયે ક્રિયા દુઃખહેતુર્ન ભવતીતિ ભાવઃ । શિષ્ય પૃચ્છતિ--‘ જા સા પુન્નિ કિરિયા હી શ્રોતા કો અર્થ કા ઘોધ હોતા હૈ । હસલિયે વોલી જા રહી ભાષા કો ભાષા નહીં માના ગયા હૈ ।

અવ સૂત્રકાર ક્રિયા કે વિષય મેં નિરૂપણ કરતે હૈં--(પુન્નિ કિરિયા દુક્ખા) યહાં ક્રિયા કાયિકી લી ગઈ હૈ અતઃ કરને સે પહિલે--અર્થાત્ જવ તક વહ ક્રિયા કરને મેં નહીં આ રહી હૈ તવતક વહ ક્રિયા દુઃખ-દુઃખ-હેતુ હોતી હૈ । (કજ્જમાણા કિરિયા અદુક્ખા) જો ક્રિયા કી જા રહી હૈ વહ દુઃખ-દુઃખ કી હેતુરૂપ નહીં હોતી હૈ । તથા (કિરિયા સમયવીજ્ઞ-કંતં ચ ણં કઢા કિરિયા દુક્ખા) ક્રિયા કે કરને કા સમય જવ વ્યતિ-ક્રાન્ત હો જાતા હૈ તથ-અર્થાત્ ક્રિયા કરને કે સમય કે અનન્તર કી જા ચુકી ક્રિયા દુઃખ-દુઃખહેતુ હોતી હૈ । તાત્પર્ય કહને કા યહ હૈ ક્રિયા કરને સે પહિલે ઔર કરને કે પશ્ચાત્ દુઃખહેતુ હોતી હૈ, કિન્તુ વર્તમાન સમય મેં વહ ક્રિયા દુઃખ હેતુ નહીં હોતી હૈ । શિષ્ય પૂછતા હૈ--(જા સા પુન્નિ

ભાષા નીકળી ચૂક્યા પછી જ શ્રોતાને અર્થનો ઘોષ થાય છે. તેથી જ ભાષા ઘોષવામાં આવી રહી છે તેને ભાષા ગણતા નથી.

હવે સૂત્રકાર ક્રિયાના વિષયમા નિરૂપણ કરે છે--

“ પુન્નિ કિરિયા દુક્ખા ” અહી ક્રિયા પદ વડે કાયિકી ક્રિયા લેવામાં આવી છે. બ્યાં સુધી ક્રિયા કરવામાં આવી રહી નથી ત્યાં સુધી તે ક્રિયા દુઃખ-દુઃખહેતુ હોય છે “ કજ્જમાણા કિરિયા અદુક્ખા ” જે ક્રિયા કરવામાં આવી રહી છે તે દુઃખ-દુઃખની હેતુરૂપ હોતી નથી. તથા “ કિરિયા સમય વીજ્ઞકંતં ચ ણં કઢા કિરિયા દુક્ખા ” ક્રિયા કરવાનો સમય બ્યારે પસાર થઈ બ્યાં છે ત્યારે એટલે કે ક્રિયા કરવાના સમય પછી કરવામાં આવેલી ક્રિયા દુઃખ-દુઃખહેતુ હોય છે કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે-કે ક્રિયા કર્યા પહેલાં અને કર્યા પછી દુઃખહેતુરૂપ હોય છે પણ વર્તમાન સમયમાં જે ક્રિયા કરવામાં આવે છે તે દુઃખહેતુ હોતી નથી. શિષ્ય પૂછે છે--“ જા સા પુન્નિ કિરિયા

દુઃસ્વા 'યા સા પૂષ ક્રિયા દુઃસ્વા મવતિ, 'કજ્જમાણી કિરિયા મદુઃસ્વા' ક્રિય માણા ક્રિયા મદુઃસ્વા, ક્રિયમાણા યા ક્રિયા સા ન દુઃસ્વપ્રયોજિકા, 'કિરિયા સમયવીરુદ્ધં વ યં કઢા કિરિયા દુઃસ્વા' ક્રિયાસમયવ્યતિક્રાન્તે ચ સ્તુ કૃતા ક્રિયા દુઃસ્વા, ક્રિયમાણસમયવ્યતિક્રમે સતિ કૃતા નિષ્પાદિતા ક્રિયા દુઃસ્વપ્રયો મિકા મવતિ, અથવા પૂર્વકાલે ક્રિયા દુઃસ્વમનિકા અનભ્યાસાત્, ક્રિયમાણા ક્રિયા ન દુઃસ્વપ્રયોજિકા અભ્યાસાત્, કિન્તુ કૃતા ક્રિયા દુઃસ્વા યતઃ ક્રિયાકરણાનન્તરં પચ્છાપાદિર્મવતિ પરિશ્રમાદિર્વા ખાયતેષ્ઠઃ સા ક્રિયા દુઃ સ્વેતિ યા દુઃસ્વહેતુર્મ- વતિ-' સા કિં કરણમો દુઃસ્વા અકરણમો દુઃસ્વા ' સા કિં કરણતો દુઃસ્વા અક- રણતો દુઃસ્વા? કરણતઃ=કરણમાભિત્ય કરણકાલે કુર્વત ઇત્યર્થઃ સા ક્રિયા દુઃસ્વા અથવા કિન્તુ અકરણમાભિત્યાકુર્વત ઇત્યર્થ, સા ક્રિયા દુઃ સ્વેતિ પ્રશ્નઃ, ઉત્તરયતિ-

કિરિયા દુઃસ્વા) યદિ કરને કે પહિલે ક્રિયા દુઃસ્વહેતુ હોતી હૈ, (કજ્જ માણી કિરિયા મદુઃસ્વા) તથા વર્તમાન મેં કી આ રહી ક્રિયા દુઃસ્વ હેતુ નહીં હોતી હૈ, (કિરિયાસમયવિરુદ્ધં ણ કઢા કિરિયા દુઃસ્વા) તથા જો ક્રિયા અપને કાલ કો સસંબંધન કર ચુકી હૈ ક્રિયા દુઃસ્વહેતુ હોતી હૈ । અથવા-અનભ્યાસ હોને કે કારણ પૂર્વકાલ મેં ક્રિયા દુઃસ્વ અનક હોતી હૈ, ઓર અભ્યાસ હો જાને સે વર્તમાન કાલ મેં વહી ક્રિયા દુઃસ્વ પ્રયોજક નહીં હોતી હૈ । કિન્તુ કૃત ક્રિયા દુઃસ્વા હોતી હૈ ક્યોં કિ ક્રિયા કરને કે અનન્તર પચ્છાપાદિ હોતા હૈ અથવા પરિશ્રમ આદિ હોતા હૈ । ઇમલિયે વહ ક્રિયા દુઃસ્વ કી હેતુમૂલ હો જાતી હૈ । સો (સા કિં કરણમો દુઃસ્વા, અકરણમો દુઃસ્વા) વહ ક્રિયા જો દુઃસ્વ કી હેતુ હોતી હૈ સો કરણકાલ મેં કરસે હુવ વ્યક્તિ કો દુઃસ્વ કી હેતુમૂલ હોતી હૈ યા નહીં કરને વાલે કો દુઃસ્વ કી હેતુમૂલ હોતી હૈ । ઇસ પ્રકાર કા

દુઃસ્વા " એ ક્યાં પહેલાંની ક્રિયા દુઃખહેતુ હોય, " કજ્જમાણી કિરિયા મદુઃ સ્વા " અને વર્તમાનમાં કરાવી ક્રિયા દુઃખહેતુ ન હોય, " કિરિયા સમય વિરુદ્ધં ણ કઢા દુઃસ્વા " તથા એ ક્રિયાને કાળ પસાર થઈ ગયો છે એવી કથામાં આવેલી ક્રિયા દુઃખહેતુ હોય તો (અભ્યાસ ન હોવાને કારણે પૂર્વ કાળમાં ક્રિયા દુઃખજનક હોય છે, અને અભ્યાસ થઈ ગયા પછી વર્તમાન કાળમાં તેજ ક્રિયા દુઃખ પ્રયોજક થતી નથી પરન્તુ કૃત ક્રિયા દુઃખદાયી હોય છે કારણ કે ક્રિયા ક્યાં જાહે પચ્છાપાદિ નજરે થાય છે, અથવા પરિશ્રમ નજરે થાય છે તે કારણે તે ક્રિયા દુઃખના હેતુરૂપ બની ગય છે) " સા કિં કર ણમો દુઃસ્વા, અકરણમો દુઃસ્વા " કથાકાળમાં કરનાર અક્ષિતને દુઃખના હેતુરૂપ હોય છે કે નહીં કરનાર અક્ષિતને દુઃખની હેતુરૂપ હોય છે ?

‘અકરણઓ ણં સા દુઃખા નો ચલુ સા કરણઓ દુઃખા’ અકરણતઃ ચલુ સા દુઃખા નો ચલુ કરણતો દુઃખા, અકરણમાશ્રિત્ય અકુર્વતે इत्यर्थः દુઃખજનિકા ક્રિયા ભવતિ, અક્રિયમાણત્વે દુઃખતયા તસ્યાઃ સ્વીકારાત્ । ન તુ કરણમાશ્રિત્ય કુર્વત इत्यर्थः, દુઃખજનિકા ક્રિયા ભવતિ અભ્યાસાત્ ‘સેવં વત્તવ્વં સિયા’ તદેવં વત્તવ્વં સ્યાત્, તદેવ પૂર્વોક્તં વસ્તુ અક્રિયમાણત્વે દુઃખરૂપત્વં ક્રિયાયા ન તુ કુર્વત इत्येवं रूपं वस्तु वक्तव्यं स्यादिति भावः ।

અથાન્યતીર્થિકાનામેવ મતાન્તરમાહ—‘અકિચ્ચં’ इत्यादि । ‘અકિચ્ચં દુઃખં’ અકૃત્યં દુઃખમ્, અનાગતકાલાપેક્ષયા જીવૈરનિર્વર્તનીયમ્, દુઃખમ્=અસાત-યહ પ્રશ્ન છે । ઇસકા ઉત્તર—(અકરણઓ ણં સા દુઃખા નો ચલુ સા કરણઓ દુઃખા) નહીં કરતે હુણે કો વહ દુઃખ કી હેતુભૂત્ હોતી છે—કરતે હુણે કો વહ દુઃખ કી હેતુભૂત નહીં હોતી છે । ક્યોં કિ જવતક વહ ક્રિયા કી નહીં જા રહી છે તમીતક વહ દુઃખ જનક છે એસા સ્વીકાર કિયા ગયા છે । કરને કે સમય કી જા રહી વહ ક્રિયા કરતે હુણે વ્યક્તિ કો અભ્યાસ હોને કે કારણ દુઃખજનક નહીં હોતી છે । (સેવં વત્તવ્વં સિયા) અક્રિયમાણત્વ હોને પર—અર્થાત્ કરને કે સમય મેં નહીં કી જા રહી ક્રિયા નહીં કરને વાલે કો દુઃખ કી હેતુ હોતી છે, ઓર કરતે હુણે કો વહ દુઃખ રૂપ નહીં હોતી છે એસા કહા જા સકતા છે ।

અન્યતીર્થિકજનોં કી ઓર શ્રી માન્યતાઈ છે—જો ઇમ પ્રકાર સે છે (અકિચ્ચ દુઃખં) દુઃખ અકૃત્ય—ક્રિયા કે વિના—હોતા છે । તાત્પર્ય કહને કા યહ છે કિ દુઃખ—અસાતરૂપ—સુખાભાવરૂપ જો પ્રતિકૂલ વેદ-

ઉત્તર—“અકરણઓ સા દુઃખા નો ચલુ સા કરણઓ ક્ષા” નહીં કરનારને તે દુઃખના હેતુરૂપ થાય છે, કરનારને દુઃખની હેતુરૂપ થતી નથી, કારણ કે બ્યા સુધી તે ક્રિયા કરવામાં આવતી નથી ત્યાં સુધી તે દુઃખજનક છે એ માન્યતા સ્વીકારવામાં આવેલ છે કરવાને સમયે કરવામાં આવતી ક્રિયા કરનાર વ્યક્તિને અભ્યાસ હોવાને કારણે દુઃખજનક થતી નથી “સેવ વત્તવ્વં સિયા” અક્રિયમાણત્વ હોય ત્યારે—એટલે કે કરવાને સમયે નહીં કરાતી ક્રિયા નહીં કરનારને તે દુઃખરૂપ થતી નથી એ પ્રમાણે કહી શકાય છે આ પ્રમાણે અન્યતીર્થિકોની માન્યતા છે. આ ઉપરાંત ખીણ પણ કેટલીક માન્યતાઓ તેમની આ પ્રમાણે છે

“અકિચ્ચં દુઃખં” દુઃખ અકૃત્ય—ક્રિયા વિના—હોય છે તાત્પર્ય એ છે કે દુઃખ, લવિષ્યકાળની અપેક્ષાએ જીવે વડે અનિષ્પાદ હોય છે. અહીં દુઃખ એટલે અસાતારૂપ—સુખાભાવરૂપ—પ્રતિકૂલ વેદનીય દુઃખ ગ્રહણ

સ્વપતિહૃત્વેન્નીયમિત્યર્થ, અક્રિયમાણ દુઃસ્વ મન્વતીતિ ભાવઃ । અથવા દુઃસ્વ
 દુઃસ્વકાળ ધર્મ, 'અફુલ્લ દુઃસ્વમ્' અસ્પૃશ્ય દુઃસ્વમ્, તથા યત્ એવાકૃત્યમત્ એવા
 સ્પૃશ્યમ્ અવધનીયમ્ 'અકરજમાણકર' અક્રિયમાણકૃતમ્, તથા ક્રિયમાણ
 ધર્તમાનકાલે, કૃત ધાતીસકાષ્ટે, સન્નિપપાત્ અક્રિયમાણકૃતમ્, 'દુઃસ્વ' દુઃસ્વ
 મન્વતિ । 'અકદુ અકદુ' અકૃત્યા અકૃત્વા, કાલપ્રયેડપિ કર્મણો ધધનિપેપાત્
 અકૃત્વાડકૃત્વા અકરણાવેવેત્યર્થ, દુઃસ્વમ્=રૂમ 'પાણમૂયજીવસત્તા' પ્રાણમૂત
 જીવસત્તા, 'વેયણ યદેતિ' વેદનાં વેદયતિ, દુઃસ્વમનુમન્વન્તિ, 'इति वचनं

નીય દુઃસ્વ છે' યદ્ અનાગત કાલ કી અપેક્ષા સે જીયોં દ્વારા અનિર્યત્નીય
 અનિપ્પાશ-નહીં ઉપજે જેમા હોતા હૈ । કોઈં ખી જીય જેમા નહીં વાહતા
 હૈ કિ મુદ્દે દુઃસ્વ ઉપજે-પરન્તુ યદ્ તો ઉપજતા હી હૈ-અતઃ યદ્ દુઃસ્વ
 સ્વમાયત્ હૈ ઓર હમી કારણ યદ્ અકૃત્ય હૈ । અથવા દુઃસ્વ સે યહીં
 દુઃસ્વ કા કારણ જો કર્મ હૈ યદ્ દુઃસ્વ હૈ જેમા સમક્ષના જાહિયે । (અફુલ્લ
 દુઃસ્વ) દુઃસ્વ અસ્પૃશ્ય હૈ । અર્થાત્ જપ્ દુઃસ્વ અકૃત્ય હૈ હમીલિયે યદ્
 અસ્પૃશ્ય અવધનીય-નહીં પંધે જેમા હૈ । (અકરજમાણકર) ધર્તમાન
 કાલ મેં જો ક્રિયા જારહા હૈ યદ્ ક્રિયમાણ હૈ તથા મૂતકાલ મેં જો ક્રિયા
 જા ચુકા હૈ યદ્ મૂત હૈ । (દુઃસ્વ ન ક્રિયમાણ હૈ ઓર ન મૂત હૈ અતઃ
 યદ્ અક્રિયમાણમૂત હૈ । તીનકાલ મેં ખી જીય જે કર્મ કા ધધ નહીં
 હોતા હૈ । અતઃ દુઃસ્વ યા-કર્મ કો-નહીં કરયે ખી (પાણમૂયજીવસત્તા)
 પ્રાણ, મૂત, જીવ, મન્વત ય સ્વ (વેયણ યદેતિ) વેદના કો મોગતે
 રહતે હૈ । યદ્ સ્વ ધધન સ્વમાયયાદિયોં કા હૈ-યે જેમા કહતે હૈં કિ જો
 ખી મુદ્દા દુઃસ્વાદિક પ્રાણમૂતાદિકોં દ્વારા મોગને મેં આતે રહતે હૈં જે

કરવું કાઈ પણ હવે એવું જાણના નથી કે અને દુઃખ ઉપજે પરન્તુ તેને
 દુઃખ તો ઉપજે છે જ તથા તે દુઃખ સ્વમાયથી જ ઉપજે છે, અને તે કારણે
 જ તે અકૃત્ય છે અથવા-અહીં "દુઃખ" પર જડે દુઃખના કારણ રૂપ
 "કર" ને જ દુઃખ યમ/ત્વે જોઈએ. "અકૃત્ય દુઃસ્વ" દુઃખ અસ્પૃશ્ય
 છે એટલે કે દુઃખ અકૃત્ય રોવાથી અસ્પૃશ્ય-અમધેય છે । 'અકરજમાણ
 કર' ધર્તમાનકાલમાં જે કરવામાં આવી રહ્યું છે તે ક્રિયામાં છે તથા મૂત-
 કાલમાં જે કરવામાં આવી રહ્યું છે તે મૂત છે । દુઃખ ક્રિયામાં પણ નથી,
 અને મૂત પણ નથી તેથી તે અક્રિયામાં મૂત છે । તથા કાલમાં ઉપજે કર
 નો અથવા અમધેય નો નથી કર નહીં કરવા કાલ પણ 'વાગ મૂત
 કાલ વળા' પ્ર । મૂત હવે અને અન્તે "વેદને વદતિ" વેદના મોગવા
 ૧૮) ૩) આ જાતનું તત્ત્વમ કાલ સ્વમાયથીજાણ છે તેમાં રહ્યું છે તે કે
 જ મુદ્દા દુઃખ ૧૧૩ પ્રજા, જાણેને અમધેય ૫૮ છે ન તત્ત્વમ ક્રિયા

સિયા' ઇતિ વક્તવ્યં સ્યાત્, ઇતિ एतत् पूर्वोक्तम्-वक्तव्यं स्यात्, यदेतत् लोके
सुखदुःखादिकं भवति न तत् केनापि कारणेन भवति, अपि तु स्वाभाविकमेवेदं
सर्वम्, तथाचोक्तम्—

“अतर्कितोपस्थितमेव सर्वं, चित्रं जनानां सुखदुःखजातम् ।

काकस्य तालेन यथाभिधातो न बुद्धिपूर्वोत्र दृथाभिमानः॥૧॥

યથા કણ્ઠકસ્ય તૈક્ષ્ણ્યં શ્રુકાદીનાં દરિતત્વં મયૂરાણાં વિચિત્રતા ન નિયત
કારણજનિતા કિન્તુ સ્વભાવાદેવ । યથા વા પતંગાદીનાં ગગને ઉડ્યનં મત્સ્યાનાં

उनके कर्मों के फलस्वरूप नहीं है क्यों कि किसी भी प्राणी आदि द्वारा
कर्मों का बंध किया ही नहीं जाता है—अतः सब जो कुछ होता रहता
है वह सब स्वभाव से ही होता रहता है। यही बात (इति वक्तव्यं सिया)
इस पाठ द्वारा प्रदर्शित की गई है। लोक में जो कुछ भी सुख दुःखा-
दिक होते रहते हैं वे किसी अन्यकारणक नहीं होते हैं किन्तु स्वभाविक
ही होते हैं इस विषय को प्रकट करने वाला यह (अतर्कितोपस्थित
इत्यादि पद्य है। इसके द्वारा यह समझाया गया है कि नाना प्रकार के
जो सुख दुःख जीवों को बिना विचारे अर्थात् अबुद्धिपूर्वक भोगने में
आते हैं, वे निष्कारणक ही हैं, सकारणक नहीं। जैसे कांटों में तीक्ष्णता
शुक (तोता) आदिकोंमें हरापन, मयूरोमें विचित्रता, यह सब नियत
कारणसे जनित नहीं है—किन्तु स्वभावसे ही है—और जैसे पतंग आदिकों
का आकाश में उडना, मछलियों का जल में संचरण करना किसी
कारण से निष्पादित नहीं होता है किन्तु स्वभाव से ही यह उनमें पाया

ફળરૂપ હોતા નથી કારણ કે કોઈ પણ પ્રાણી, ભૂત વગેરે મારફત કર્મોના
બંધ બધાતો જ નથી તેથી જે કંઈ થાય છે તે સ્વભાવથી જ થયા કરે છે.
એ વાત “ ઇતિ વક્તવ્યં સિયા ” આ સૂત્રપાઠ વડે બતાવવામા આવી છે.
લોકમા જે કોઈ સુખ દુઃખ વગેરે ભોગવવા પડે છે તે બીજા કોઈ કારણોને
લીધે ભોગવવા પડતા નથી પણ સ્વાભાવિક જ હોય છે આ વાતને સમજા-
વવાને માટે “ અતર્કિતોપસ્થિત ” ઇત્યાદિ પદો છે તેમની મારફત એ વાત
સમજાવવામા આવી છે કે જીવોને અનેક પ્રકારના જે સુખ દુઃખ અબુદ્ધિપૂર્વક
(વિના વિચારે) ભોગવવા પડતાં હોય છે તે નિષ્કારણ જ હોય છે, સકારણ હોતા
નથી એટલે કે તેની પાછળ કોઈ કારણ હોતુ નથી પણ તે સ્વભાવિક જ હોય છે
જેવી રીતે કાટામા તીક્ષ્ણતા, પોપટમાં લીલાશ, મોરમા વિચિત્રતા, એ બધાંનું કોઈ
બાહ્ય કારણ નથી—પરન્તુ સ્વભાવથી જ તે હોય છે, એવી જ રીતે સુખ-

ચહે સત્ત્વર ન કેનાપિ કારણેન નિષ્ણાદિત્ત કિન્તુ સ્વમાવાદેન જાપતે, ઇત્યેવ સુસ્વદુઃસ્વાદયોઽપિ ભાષા ન કારણવિશેષમાસાદ્ય મવન્તિ કિન્તુ સ્વમાવત્ત એવ પ્રવર્તન્તે । ઉક્તશ્ચ—

“સ્વમાથેન પ્રવર્તન્તે સુસ્વદુઃસ્વાદયો જ્ઞમી ।

યથા સ્વમાવતો લોકે, હંસાદીનાં હિ શુક્લતા ॥ ૧ ॥

ઇત્યેવ સ્વમાવવાદિમતમિતિ ।

તદેતત્પરતીર્થિકાનાં મતં કિં સમ્યગિત્યાજ્યેન ગૌતમઃ પૃચ્છતિ—‘સે કહમેય’ ઇત્યાદિ । ‘સે કહમેય’ મંતે એવ’ તત્ત્વ કથમેતત્ત્વ મદન્ત એવમ્—તત્ત્વ=મન્યતીર્થિકોક્ત મતં કથં=કિમ્ એતત્ત્વ=પૂર્વોક્તં હે મદન્ત ! એવમ્=એવ પ્રકારેણ તૈરુક્ત તેનૈવ પ્રકારજાસ્તિ કિમ્ તેપાં પૂર્વોક્ત મત કિં સત્યમ્ ? इति પ્રશ્નઃ ॥ સૂ. ૧ ॥

જાતા હૈ ઇતી તરહ સે સુસ્વ દુઃસ્વાદિક ભાષા બી કારણ વિશેષ કો લેકર નહીં હોતે હૈ કિન્તુ સ્વમાથ સે હી હોતે રહતે હૈ । તથા ચોક્તમ્—

“સ્વમાથેન પ્રવર્તન્તે સુસ્વદુઃસ્વાદયો જ્ઞમી ।

યથા સ્વમાવતો લોકે હંસાદીનાં હિ શુક્લતા ॥ ”

ઇસ પ્રકાર સે યદ સ્વમાવ વાદિયોં કા મત હૈ

ઇસ પર ગૌતમ સ્વામી પ્રશ્ન સે પૂછતે હૈ કિ (સે કહમેય મંતે એવ) હૈ મદન્ત ! સ્વમાથ વાદિ વાદિયોં ને જો યહ પૂર્વોક્ત રૂપ સે અપના મન્તવ્ય પ્રકટ કિયા હૈ સો યહ કયા મન્તવ્ય ઠનકા ઠસી પ્રકાર સે હૈ—અર્થાત્ સત્ય હૈ કયા ? યહ ગૌતમ સ્વામી કા પ્રશ્ન હૈ ॥ સૂ-૧ ॥

દુઃખાદિ ભાવ પણ કોઈ કારણને લીધે ઉપજતા નથી પણ સ્વભાવથી જ ઉપજ્યા હશે છે વળી જેવી રીતે ખતગ વગેરેનું આકાશમાં ઉદયન, અને માછલિયોમાં પાછળનું સમય પણ કોઈ ખાસ કારણને લીધે થતું નથી પણ સ્વભાવથી જ થયા હશે છે જોવી જ રીતે મુખ્યદુઃખાદિ ભાવ પણ સ્વભાવથી જ થયા હશે છે કહ્યું પણ છે—

‘સ્વમાથેન પ્રવર્તન્તે સુસ્વદુઃસ્વાદયો જ્ઞમી ।

યથા સ્વમાવતો લોકે હંસાદીનાં હિ શુક્લતા ॥ ”

ઉપર મુજબનો સ્વભાવવાદિયોનો મત છે

તે વિષયમાં ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રશ્નને પૂછે છે કે—‘સે કહમેય મંતે એવ’ હૈ ભગવન્ ! સ્વભાવવાદી વગેરેનું પૂર્વોક્ત જે મન્તવ્ય છે તે શું થાય છે ? ॥ સૂ-૧ ॥

સિયા' ઇતિ વક્તવ્યં સ્યાત્, ઇતિ એતત્ પૂર્વોક્તમ્-વક્તવ્ય સ્યાત્, યદેતત્ લોકે સુખદુઃસ્વાદિકં ભવતિ ન તત્ કેનાપિ કારણેન ભવતિ, અપિ તુ સ્વાભાવિકમેવેદં સર્વમ્, તથાચોક્તમ્—

“અતર્કિતોપસ્થિતમેવ સર્વં, ચિત્રં જનનાં સુખદુઃસ્વજાતમ્।

કાકસ્ય તાલેન યથાભિધાતો ન બુદ્ધિપૂર્વોત્તર વૃથાભિમાનઃ॥૧॥

યથા કણ્ટકસ્ય તૈક્ષ્ણ્યં શુકાદીનાં હસ્તિત્વં મયૂરાણાં વિચિત્રતા ન નિયત કારણજનિતા કિન્તુ સ્વભાવાદેવ । યથા વા પતંગાદીનાં ગગને ઉડ્ડયનં મત્સ્યાનાં

उनके कर्मों के फलस्वरूप नहीं है क्यों कि किसी भी प्राणी आदि द्वारा कर्मों का बंध किया ही नहीं जाता है—अतः सब जो कुछ होता रहता है वह सब स्वभाव से ही होता रहता है। यही बात (इति वक्तव्यं सिया) इस पाठ द्वारा प्रदर्शित की गई है। लोक में जो कुछ भी सुख दुःस्वादिक होते रहते हैं वे किसी अन्यकारणक नहीं होते हैं किन्तु स्वभाविक ही होते हैं इस विषय को प्रकट करने वाला यह (अतर्कितोपस्थित इत्यादि पद्य है। इसके द्वारा यह समझाया गया है कि नाना प्रकार के जो सुख दुःख जीवों को बिना विचारे अर्थात् अबुद्धिपूर्वक भोगने में आते हैं, वे निष्कारणक ही हैं, सकारणक नहीं। जैसे कांटों में तीक्ष्णता शुक (तोता) आदिकोंमें हरापन, मयूरोमें विचित्रता, यह सब नियत कारणसे जनित नहीं है—किन्तु स्वभावसे ही है—और जैसे पतंग आदिकों का आकाश में उड़ना, मछलियों का जल में संचरण करना किसी कारण से निष्पादित नहीं होता है किन्तु स्वभाव से ही यह उनमें पाया

ફળરૂપ હોતા નથી. કારણ કે કોઈ પણ પ્રાણી, ભૂત વગેરે મારફત ક્રમેની બંધ બધાતો જ નથી તેથી જે કંઈ થાય છે તે સ્વભાવથી જ થયા કરે છે. એ વાત “ ઇતિ વક્તવ્ય સિયા ” આ સૂત્રપાઠ વડે બતાવવામા આવી છે. લોકમા જે કોઈ સુખ દુઃખ વગેરે ભોગવવા પડે છે તે બીજા કોઈ કારણોને લીધે ભોગવવા પડતા નથી પણ સ્વાભાવિક જ હોય છે આ વાતને સમજાવવાને માટે “ અતર્કિતોપસ્થિત ” ઇત્યાદિ પદો છે તેમની મારફત એ વાત સમજાવવામા આવી છે કે જીવોને અનેક પ્રકારના જે સુખ દુઃખ અબુદ્ધિપૂર્વક (વિના વિચારે) ભોગવવા પડતાં હોય છે તે નિષ્કારણજ હોય છે, સકારણ હોતા નથી એટલે કે તેની પાછળ કોઈ કારણ હોતુ નથી પણ તે સ્વભાવિકજ હોય છે જેવી રીતે કાટામા તીક્ષ્ણતા, પોપટમા લીલાશ, મોરમા વિચિત્રતા, એ બધાંતુ કોઈ ચોક્કસ કારણ નથી—પરંતુ સ્વભાવથી જ તે હોય છે, એવી જ રીતે સુખ-

જાણે સત્ત્વરે ન કેનાપિ કારણેન નિષ્પાદિત કિન્તુ સ્વમાવાદેવ જાયતે, इत्येव सुखदुःखादयोऽपि भाषा न कारणविशेषमासाद्य भवन्ति किन्तु स्वमावत एव प्रवर्तन्ते । उक्तम्—

“ स्वभावेन प्रवर्तन्ते सुखदुःखादयो धामी ।

यथा स्वमावतो लोके, हंसादीनां हि शुक्लता ॥ ૧ ॥

इत्येव स्वभाववादिमतमिति ।

તથેતત્પરતીર્થિકાનાં મતં કિં સમ્યગિત્યાજ્ઞયેન ગૌતમઃ પૂચ્છતિ—‘સે કહમેયં’ इत्यादि । ‘સે કહમેયં મતે એવ’ તત્ કથમેવત્ મદન્ત એવમ્—તત્=અન્યતીર્થિકોક્ત મતં કથ=કિમ્ એતત્=પૂર્વોક્ત હે મદન્ત ! એવમ્=એવ પ્રકારેષ ટેરુક્ત તેનૈવ પ્રકારેણાસ્તિ કિમ્ તેવાં પૂર્વોક્ત મતં કિં સત્યમ્ ? इति प्रश्नः ॥ सू० ૧ ॥

જાતા હૈ इसी तरह से सुख दुःखादिक भाष भी कारण विशेष को लेकर नहीं होते हैं किन्तु स्वभाव से ही होते रहते हैं । तथा चोक्तम्—

‘ स्वभावेन प्रवर्तन्ते सुखदुःखादयो धामी ।

यथा स्वमावतो लोके हंसादीनां हि शुक्लता ॥ ”

હસ પ્રકાર સે યદ સ્વભાવ વાદિયોં કા મત હૈ

હસ પર ગૌતમ સ્વામી પ્રશ્ન સે પૂછતે હૈ કિ (સે કહમેય મતે એવં) હૈ મદન્ત ! સ્વભાવ વાદિ વાદિયોં ને જો યહ પૂર્વોક્ત રૂપ સે અપના મન્તવ્ય પ્રકટ કિયા હૈ સો યહ કયા મન્તવ્ય ટનકા ઝસી પ્રકાર સે હૈ— અર્થાત્ સત્ય હૈ કયા ? યહ ગૌતમ સ્વામી કા પ્રશ્ન હૈ ॥ સૂ-૧ ॥

હુઃખાદિ ભાવ પણ કોઈ કારણને લીધે ઉપજતા નથી પણ સ્વભાવથી જ ઉપજ્યા કરે છે એવી જેવી રીતે પવન વગેરેનું આકાશમાં ઉદ્ભવ, અને માછલિયોમાં પાણીનું સચરણ કોઈ ખાસ કારણને લીધે થતું નથી પણ સ્વભાવથી જ થયા કરે છે, એવી જ રીતે મુખ્યદુઃખાદિ ભાવ પણ સ્વભાવથી જ થયા કરે છે કહ્યું પણ છે—

“ स्वभावेन प्रवर्तन्ते सुखदुःखादयो धामी ।

यथा स्वमावतो लोके हंसादीनां हि शुक्लता ॥ ”

ઉપર મુખ્યને સ્વભાવવાદિયોના મત છે

તે વિષયમાં ગૌતમ સ્વામી મહાવાર પ્રશ્ન પૂછે છે કે—“ સે કહમેય મતે એવ ’ છે સમજવું ! સ્વભાવવાદી વગેરેનું પૂર્વોક્ત જે મન્તવ્ય છે તે શુ યામું છે ? ॥ સૂ-૧ ॥

अथ भगवान् अन्यतीर्थिकमतं निराकुर्वन् स्वमतं प्ररूपयन्नाह—‘गोयमा’ इत्यादि ।

मूलम्—गोयमा ! जं णं ते अन्नउत्थिया एवं आइक्खंति
 ४ जाव वेयणं वेदेति इति वत्तव्वं सिया, जे ते एवमाहंसु,
 मिच्छा ते एवमाहंसु, अहं पुण गोयमा ! एवं आइक्खामि
 एवं खलु चलमाणेचलिए जाव णिज्जरिज्जमाणे निज्जिण्णे, दो
 परमाणुपोग्गला, एगयओ साहणंति, कम्हा दो परमाणु
 पोग्गला एगयओ साहणंति, दोण्हं परमाणुपोग्गलाणं
 अत्थि सिणेहकाए, तम्हा दो परमाणु पोग्गलाएगयओ
 साहणंति, ते भिज्जमाणा दुहा कज्जंति, दुहा कज्जमाणा
 एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ परमाणुपोग्गले भवइ,
 तिणिणपरमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति, कम्हा तिणिण
 परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति, तिण्हं परमाणुपोग्ग-
 लाणं अत्थि सिणेहकाये, तम्हा तिणिण परमाणुपोग्गला
 एगयओ साहणंति, ते भिज्जमाणा दुहा वि तिहा वि
 कज्जंति, दुहा कज्जमाणा एगयओ परमाणुपोग्गला एग-
 यओ दुपएसिए खंधे भवइ, तिहा कज्जमाणा तिणिण पर-
 माणुपोग्गला भवंति, एवं चत्तारि, पंच परमाणुपोग्गला
 एगयओ साहणंति, एगयओ साहणित्ता खंधत्ताए कज्जंति,
 खंधेवि य णं से असासएसया समियं उवचिज्जइ य अव-
 चिज्जइ य । पुर्विं भासा अभासा, भासिज्जमाणी भासा
 भासा, भासासमयवीड्कंतं च णं भासिया भासा अभासा,
 जा सा पुर्विं भासा अभासा, भासिज्जमाणी भासा भासा,

ભાસાસમયવીદ્વક્ત ચ ણ ભાસિયા ભાસા અભાસા, સા કિં
ભાસઓ ભાસા, અભાસઓ ભાસા ? ભાસઓણં ભાસા, નો
ચ્છલુ સા અભાસઓ ભાસા । પુર્વિ કિરિયા અદુક્ષા, જહા
ભાસા તહા ભાણિયવ્વા, કિરિયા વિ જાવ કરણઓ ણ સા
દુક્ષા, નો ચ્છલુ સા અકરણઓ દુક્ષા સેવ વત્તવ્વસિયા,
કિચ્છદુક્ષવ્વ ફુસ દુક્ષવ્વ, કઙ્ગમાણકઢદુક્ષવ્વ, કટ્ટુ કટ્ટુ પાણમૂય
જીવ સત્તા ઘેયણ ઘેયતિ ઇતિ વત્તવ્વ સિયા ॥ સૂ. ૨ ॥

છાયા-ગૌતમ! યત્ સ્વલ્પત્રેડન્યયુષિકા એવામરૂપાન્તિ ૪ યાવદ્દેવનાં વેદયન્તિ ઇતિ
વક્તવ્ય સ્યાત્, યે તે એવામહુર્મિધ્યા તે એવામહુ, અર્થે પુન ગૌતમ! એવામસ્મામિ,
એવ ચ્છલુ ચત્તમાન ચલિત્થ યાવત્ નિર્જીર્યમાણ નિર્જીર્ણમ્ । ઈં પરમાણુપુદ્ગલો

હસ પ્રશ્ન કા ઉત્તર દેતે હુણ મગધાન્ ગૌતમ! સ્વામી સે કહતે હૈં ।
હસમેં વે અન્યતીર્યિકજનોં કે મતકા નિરસન કરતે હુણ અપને મત્તે કી
પ્રરૂપમા કરતે હૈં—(ગોયમા ! જ ણં તે અમ્મગ્ગસ્થિયા) , ઇત્યાદિ ।

સૂત્રાર્ય—(ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (જ ણં તે અમ્મ ગ્ગસ્થિયા) જો વે
અન્યયુષિક (એવં આહક્સતિ ૪) એસા કહતે હૈં (જાવ ઘેયણં વેદેતિ
ઇતિ યશ્ચ સિયા) યાવત્ જીવ વેદના કો ભોગતે હૈં યહ સ્વાભાવિક
હે । સો (જે તે એવામહસુ) જો ઈ-હોં ને એસા કહા હૈં । (મિચ્છા તે
એવામહસુ) વહ તો ઈ-હોં ને મિધ્યા કહા હૈં । (અર્થે પુન ગોયમા ! એવં
આહક્સમામિ) પર હે ગૌતમ ! મૈં તો એમા કહતા હૈં (એવં સ્વલ્પ

આ પ્રશ્નનો જવાબ આપતા મહાવીર પ્રભુ ગૌતમ સ્વામીને શું કહે છે
તે આ સૂત્રમા બતાવ્યુ છે આ સૂત્ર વડે મહાવીર પ્રભુ બ્ધન્ય મતવાદીઓના
મતનુ ખડન કરીને પોતાના મતની પ્રરૂપણા કરે છે—' ગોયમા ! જ ણં તે
અમ્મગ્ગસ્થિયા " ૪ ॥

સૂત્રાર્ય—(ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (જ ણં તે અમ્મગ્ગસ્થિયા) તે બ વતી
ધિકા (એવ આહક્સતિ) ને એવુ કહે છે કે (જાવ ઘેયણં વેદેતિ ઇતિ યશ્ચ
સિયા) (યાવત્) " જીવ વેદનાને ભોગવે ને તે સ્વાભાવિક છે " ત્યાં
સુખીનુ તેમનુ (જ તે એવામહસુ) ને બધુ કથન છે—ને માન્યતા છે (મિચ્છા તે
એવામહસુ) તે મિધ્યા છે—તેઓ ને કહે છે તે સત્ય નથી. (અર્થે પુન ગોયમા !
એવ આહક્સમામિ) હે ગૌતમ ! હું તો એવુ કહું છું કે (એવ રાત્રુ ચત્તમાણ

अथ भगवान् अन्यतीर्थिकमतं निराकुर्वन् स्वमतं प्ररूपयन्नाह—‘गोयमा’ इत्यादि ।

मूलम्—गोयमा ! जं णं ते अन्नउत्थिया एवं आइक्खंति
 ४ जाव वेयणं वेदेति इति वत्तव्वं सिया, जे ते एवमाहंसु,
 मिच्छा ते एवमाहंसु, अहं पुण गोयमा ! एवं आइक्खामि
 एवं खलु चलमाणेचलिए जाव णिज्जरिज्जमाणे निज्जिण्णे, दो
 परमाणुपोग्गला, एगयओ साहणंति, कम्हा दो परमाणु
 पोग्गला एगयओ साहणंति, दोण्हं परमाणुपोग्गलाणं
 अत्थि सिणेहकाए, तम्हा दो परमाणु पोग्गलाएगयओ
 साहणंति, ते भिज्जमाणा दुहा कज्जंति, दुहा कज्जमाणा
 एगयओ परमाणुपोग्गले एगयओ परमाणुपोग्गले भवइ,
 तिणिणपरमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति, कम्हा तिणिण
 परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति, तिण्हं परमाणुपोग्ग-
 लाणं अत्थि सिणेहकाये, तम्हा तिणिण परमाणुपोग्गला
 एगयओ साहणंति, ते भिज्जमाणा दुहा वि तिहा वि
 कज्जंति, दुहा कज्जमाणा एगयओ परमाणुपोग्गला एग-
 यओ दुपएसिए खंधे भवइ, तिहा कज्जमाणा तिणिण पर-
 माणुपोग्गला भवंति, एवं चत्तारि, पंच परमाणुपोग्गला
 एगयओ साहणंति, एगयओ साहणित्ता खंधत्ताए कज्जंति,
 खंधेवि य णं से असासएसया समियं उवचिज्जइ य अव-
 चिज्जइ य । पुर्व्वि भासा अभासा, भासिज्जमाणी भासा
 भासा, भासासमयवीइकंतं च णं भासिया भासा अभासा,
 जा सा पुर्व्वि भासा अभासा, भासिज्जमाणी भासा भासा,

પરમાણુપુટલાનામસ્તિ સ્નેહકાયઃ તસ્માત્ત્રયઃ પરમાણુપુટલા એકતઃ સહન્યન્તે, તે મિથમાના ત્રિધા અપિ ત્રિધા અપિ ક્રિયન્તે, ત્રિધા ક્રિયમાણા એકતઃ પરમાણુ પુટલઃ એકતો દ્વિપદેશિક સ્કન્ધો મરતિ, ત્રિધા ક્રિયમાણા ત્રય પરમાણુપુટલા મરન્તિ, एवं यावत् पत्वार ०, पच परमाणुपुटला एकतः सहन्यन्त, एकतः

પરમાણુ પોગલા પગયઓ સાદ્ગતિ) કિસ કારણ સે ત્રીન પરમાણુપુટલ એક સ્કન્ધપર્યાય કો ઉત્પન્ન કરતે હૈ ? (તિષ્ઠ પરમાણુપોગલાનં અર્થિ સિળેહકાણ) ત્રીન પરમાણુ પુટલોં મેં સ્નેહકાય રે । (તમ્હા તિણિ પરમાણુપોગલા પગયઓ સાદ્ગતિ) હસલિયે ચે ત્રીન પરમાણુપુટલ મિલ કર એક સ્કન્ધપર્યાય કો ઉત્પન્ન કરતે હૈ । (તે મિજ્જમાણા કુહાધિ તિહા ચિ કજ્જતિ) જય હન ત્રીન પુટલ પરમાણુ કે વિભાગ કિયે જાતે હૈ તો ઉનકે દો બી ભાગ હો જાતે હૈ ઓર ત્રીન બી ભાગ હો જાતે હૈ (કુહા કજ્જમાણા પગયઓ પરમાણુપોગલે, પગયઓ કુપપસિપ ત્થચે મવહ) હનકે દો ભાગ હસ પ્રકાર સે હોતે હૈ—એક ભાગ ૧ પરમાણુપુટલ કા હો જાતા હૈ ઓર દુનરાભાગ હો પ્રવેશી સ્કન્ધરૂપ રહતા હૈ । (તિહા કજ્જમાણા તિણિ પરમાણુપોગલા મરતિ) જય હનકે ત્રીન ટુકડે કિયે જાતે હૈ તો ચે પરમાણુ પુટલ ૧-૧-૧ હસ તરહ સે ત્રીન ભાગ મેં વિભક્ત હો જાતે હૈ । (ત્થ ચત્તારિ) હસી તરહ સે ચાર પુટલપરમાણુઓં કે વિષય મેં બી જાનના ચાહિયે । (પચ પરમાણુપોગલા પગયઓ સાદ્

(કમ્હા તિણિ પરમાણુપોગલા પગયઓ સાદ્ગતિ ?) આ કારણે ત્રણ પરમાણુ પુટલોએ સ્કન્ધપર્યાય રૂપે પરિવર્તિત છે । (તિષ્ઠ પરમાણુપોગલાનં અર્થિ સિળેહકાણ) ત્રણ પરમાણુ પુટલોમાં સ્નેહકાયનો સદ્ભાવ હોય છે । (તમ્હા તિણિ પરમાણુ પોગલા પગયઓ સાદ્ગતિ) તે કારણે ત્રણ પરમાણુ પુટલો પરસ્પર સાથે મળીને એક સ્કન્ધપર્યાયરૂપે પરિવર્તિત છે । (તે મિજ્જમાણા કુહા ચિ તિહા ચિ કજ્જતિ) જ્યારે તે ત્રણ પરમાણુ પુટલોના વિભાગ કરવામાં આવે છે ત્યારે તેમના બે વિભાગ પણ પડે છે અને ત્રણ વિભાગ પણ પડે છે । (કુહા કજ્જમાણા પગયઓ પરમાણુપોગલે પગયઓ કુપપસિપ ત્થચે મવહ) તેમના બે ભાગ આ પ્રમાણે બને છે એક ભાગ પરમાણુ પુટલનો બને છે બેને બીજો ભાગ બે પ્રવેશી સ્કન્ધરૂપ બને છે । (તિહા કજ્જમાણા તિણિ પરમાણુપોગલા મરતિ) જ્યારે તેમના ત્રણ વિભાગ કરવામાં આવે છે ત્યારે પ્રત્યેક વિભાગ ૧, ૧ પરમાણુ પુટલનો બને છે । (પચ ચત્તારિ) આ ૨ પરમાણુ પુટલોના વિષયમાં પણ એમ જ સમજવું । (પચ પરમાણુપોગલા પગયઓ સાદ્ગતિ) પાંચ

થલિય જાવ ણિજ્જરિજ્જમાણે નિજ્જિણે) જે ચાલી રહ્યું છે તે ચાલી ચૂક્યું છે
 (ચાવતું) જેની નિર્જરા થઈ રહી છે તે કર્મ નિર્જાર્યું થઈ ચૂક્યું છે (દો
 પરમાણુપોગલા એગયઓ સાહંતિ) જે પરમાણુ પુદ્ગલો પરસ્પર સાથે સ'યોગ
 પામીને એક સ્કંધપર્યાય રૂપે પરિણમે છે (કમ્હા દો પરમાણુપોગલા એગ-
 યઓ સાહંતિ?) શ્રી કારણે જે પરમાણુપુદ્ગલ મળીને એક સ્કંધપર્યાયરૂપે
 પરિણમે છે? ઉત્તર—(દોઢં પરમાણુપોગલાણં અત્થિં સિણેહંકાએ) તે જે
 પરમાણુ પુદ્ગલોમાં પણ સ્નેહકાયનો સદ્ભાવ હોય છે તમ્હા દો પરમાણુપોગલો
 એગયઓ સાહંતિ) તે કારણે તે જે પરમાણુપુદ્ગલો પણ સ્કંધપર્યાયરૂપે
 પરિણમે છે (તે મિજ્જનાણાં દુહા કેજ્જંતિ) જે તેમના વિભાગ કરવામાં
 આવે તો બે વિભાગ થાય છે (દુહા કેજ્જમાણા એગયઓ પરમાણુપોગલો
 એગયઓ પરમાણુપોગલો ભવહં) તેમાંનો એક ભાગ પરમાણુનો એને ખીલે ભાગ
 પણ એક પરમાણુનો થાય છે (તિણિં પરમાણુપોગલા એગયઓ સાહંતિ)
 ત્રણ પરમાણુ પુદ્ગલો પરસ્પર સાથે સ'યોગ પામીને સ્કંધપર્યાય રૂપે પરિણમે છે

અમાપમાણસ્ય માપા । પૂર્વ ક્રિયા અદુઃસ્વા યયા માયા તથા માણિત્વ્યા, ક્રિયા
અપિ યાવત્-કુર્વતઃ સ્વલ્પ સા દુઃસ્વા, નો સ્વલ્પ સા અકુર્વતો દુઃસ્વા, તદેનં ચત્કર્ય
સ્યાત્ । કૃત્ય દુઃસ્વ સ્પૃશ્ય દુઃસ્વં ક્રિયમાણકૃત દુઃસ્વ, કૃતા કૃત્વા માણમૃતજીવ
સત્ત્વા વેદનાં વેદ્યન્તીતિ ધત્કર્ય સ્યાત્ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

માપા નહીં હૈ, ઔર પોલને મેં આરહી જો માપા હૈ વહીં માપા હૈ । તથા
પોલી જા ચુકી જો માપા હૈ વહ બીં માપા નહીં હૈ અમાપા હૈ તો વહ
પોલતે હુપ કી માપા હૈ કિ નહીં પોલતે હુપ કી માપા હૈ ? (માસઓ
ળં સા માસા) વહ પોલતે હુપ કી માપા હૈ । (નો સ્વલ્પ સા અમાસઓ
માસા) નહીં પોલતે હુપ કી માપા નહીં હૈ । (પુર્વિં કિરિયા અદુઃસ્વા,
જહા માસા, તહા માણિયવ્વા) કરને સે પહિસે કી ક્રિયા દુઃસ્વ હેતુ
નહીં હોતી હૈ । જૈસે માપા વૈસે હીં હસે સમજના ચાહિયે । (કિરિયા વિ
જાવ કરણઓ ળં સા દુઃસ્વા, નો સ્વલ્પ સા અકરણો દુઃસ્વા સેવ ધત્કર્ય
સિયા) ક્રિયા બીં યાવત્ કરતે હુપ કો દુઃસ્વ કી હેતુમૃત હોતી હૈ । નહીં
કરતે હુપ કો વહ દુઃસ્વ કી હેતુમૃત નહીં હોતી હૈ । ઁસા કહા જા સકતા
હૈ । (કિલ્ચ દુઃસ્વં ફુસં દુઃસ્વં, કજ્જમાણકૃત દુઃસ્વં, કદ્દુ કદ્દુ પાળ
મૃય જીવસત્તા વેયળં વેપતિ હિતિ ધત્કર્ય સિયા૦) દુઃસ્વ ક્રિયાજન્ય હોતા
હૈ । દુઃસ્વ સ્પૃશ્ય હોતા હૈ । દુઃસ્વ ક્રિયમાણ કૃત હોતા હૈ । પ્રાણી, મૃત, જીવ
ઔર સર્વ ડસે કરકે વેદના મોગતે રહતે હૈ । ઁસા કહા જાતા હૈ । સૂ ૨

મણુવામા આવતી હોય, તથા બોલવામાં આવી શકેલી બાધાને અભાષા કહેવામાં
આવતી હોય તો તે બોલનારની બાધા છે કે નહીં બોલનારની બાધા છે। માસઓળં
સા માસા) તે બોલનારની બાધા છે (નો સ્વલ્પ સા અમાસઓ માસા) નહીં
બોલનારની બાધા નથી. (પુર્વિં કિરિયા અદુઃસ્વા, જહા માસા, તહા માણિયવ્વા)
માં પહેલાની ક્રિયા દુઃખના હેતુરૂપ હોતી નથી બાધાની ભેગ જ ક્રિયાના
વિષયમાં પણ સમજવું (કિરિયા વિ જાવ કરણઓ ળં સા દુઃસ્વા, નો સ્વલ્પ સા
અકરણો દુઃસ્વા સેવ ધત્કર્ય સિયા) ક્રિયા પણ (યાવત્,) કરનારનેજ દુઃખ
ની હેતુમૃત હોય છે નહીં કરનારને તે દુઃખની હેતુમૃત થતી નથી, ભેગજ
કહેવું બેઠબે. (કિલ્ચ દુઃસ્વ,) ફુસ દુઃસ્વ, કજ્જમાણકૃત દુઃસ્વ, ક ક
પાળમૃયજીવસત્તા વેયળં વેપતિ હિતિ ધત્કર્ય સિયા૦) દુઃખ ક્રિયાજન્ય હોય છે
દુઃખ સ્પૃશ્ય હોય છે દુઃખ ક્રિયામાણકૃત હોય છે પ્રાણી, મૃત જીવ અને
સર્વ; ક્રિયા કરીનેજ વેદના મોગમાં કરે છે ભેગજ કહેવું બેઠબે ॥ સૂ-૨ ॥

સંઘત્ય સ્કન્ધતયા ક્રિયન્તે, સ્કન્ધોપિ ચ સ અશાશ્વતઃ સદા સમિતમુપચીયતે ચ અપચીયતે ચ । પૂર્વ ભાષા અભાષા, ભાષ્યમાણા ભાષા ભાષા, ભાષાસમયવ્યતિક્રાન્તં ચ खलु ભાષિતા ભાષા અભાષા, યા સા પૂર્વ ભાષા અભાષા ભાષ્યમાણા ભાષા ભાષા, ભાષાસમયવ્યતિક્રાન્તં ચ खलુ ભાષિતા ભાષા અભાષા, સા કિં ભાષમાણસ્ય ભાષા, અભાષમાણસ્ય ભાષા, ભાષમાણસ્ય खलુ ભાષા નો खलુ સા

ળંતિ) પાંચ પરમાણુપુદ્ગલ આપસ મેં મિલકર સ્કન્ધરૂપ પર્યાય કો ઉત્પન્ન કરતેં હેં । (ઇગચઓ સાહણિત્તા સ્કન્ધત્તાએ કજ્જંતિ) અર્થાત્ પાંચ પરમાણુ પુદ્ગલ આપસ મેં ચિપક જાતે હેં ઓર ઇસ તરહ સે વે એક સ્કન્ધપર્યાય કો ઉત્પન્ન કરતે હેં । (સ્કન્ધે વિ ચ ણ સે અસાસએ) યહ સ્કન્ધપર્યાય શાશ્વત નહીં હૈ-અશાશ્વત હૈ । (સયા સમિયં ઉવચ્ચિજ્જહ ય) સર્વદા યહ પર્યાય પ્રમાણ રૂપ મેં ઉપચય ઓર અપચય કો પ્રાપ્ત કરતી રહતી હૈ । (પુર્વિ ભાસા અભાસા) વોલને કે પહિલે કી ભાષા ભાષા નહીં હૈ અભાષા હૈ । (ભાસિજ્જમાણી ભાસા ભાસા) વોલને મેં આ રહી ભાષા ભાષા હૈ । (ભાસાસમયવીઢકંતં ચ ણં ભાસિયા ભાસા અભાસા) ભાષા કે સમય કો ઉત્તલંબન કરને વાલી ભાષા-અર્થાત્ વોલી જા ચુકી ભાષા ભાષા નહીં હૈ-અભાષા હૈ । ચે પૂર્વોક્ત મન્તવ્ય અન્ય મત વાલોં કા હૈ ઊનસે પૂછા જાતા હૈ કિ-(સા કિં ભાસઓ ભાસા, અભાસઓ ભાસા) યદિ વહ વોલને સે પહિલે કી ભાષા અભાષા હૈ-

પરમાણુ પુદ્ગલોપણુ પરસ્પર સાથે મળીને એક સ્કન્ધરૂપ પર્યાયરૂપે પરિભ્રમે છે. (ઇગચઓ સાહણિત્તા સ્કન્ધત્તાએ કજ્જંતિ) એટલે કે પાંચ પરમાણુ પુદ્ગલો પણુ પરસ્પરની સાથે લેગા મળી જાય છે અને એ રીતે તેઓ એક સ્કન્ધપર્યાયને ઉત્પન્ન કરે છે (સ્કન્ધે વિ ચ ણ સે અસાસએ) આ સ્કન્ધ પર્યાય શાશ્વત નથી પણ અશાશ્વત છે (સયા સમિયં ઉવચ્ચિજ્જહ ય અવચ્ચિજ્જહ ય) તે પર્યાય સદા પરિમાણુ રૂપે છે અને ઉપચય તથા અપચય રૂપે બન્યા કરે છે

(પુર્વિ ભાસા અભાસા) બોલ્યા પહેલાની ભાષા, ભાષા નથી પણ અભાષા છે. (ભાસિજ્જમાણી ભાસા ભાસા ભાસા સમય વીઢકંતં ચ ણં ભાસિયા ભાસા અભાસા) ભાષાનો સમય બોળાંગી ગયેલી ભાષા એટલે કે બોલવામાં આવી ચૂકેલી ભાષા, ભાષા નથી, ભાષા છે ઉપર્યુકત મહાવીર પ્રભુનો અભિપ્રાય જાણીને તેમને પૂછવામાં આવ્યું છે કે (સા કિં ભાસઓ ભાસા, અભાસઓ ભાસા) જો બોલ્યા પહેલાની ભાષા અભાષા હોય, અને જે ભાષા બોલવામાં આવી રહી છે તેનેજ ભાષા

एवम्=वक्ष्यमाणप्रकारेण हे गौतम ! आख्यामि, एव भाषे, एवं प्रहापयामि एव प्ररूपयामि । विमाखयामि ? इत्याह—‘ एवं खलु ’ इत्यादि । ‘ एवं खलु चलमाणे चलिण जाव निज्जरिज्जमाणे निज्जिमे ’ एव खलु चलत् चलितम् यावत् निर्मीर्यमाणं-निर्जीर्णमिति, अत्र यावत्पदेन—“ उदीर्यमाणमुदीरितम्, वेद्यमान वेदितम्, ग्रहीयमाणं ग्रहीणम्, छिद्यमानं छिन्नम्, भिद्यमानं भिन्नम्, दक्षमान दग्धम्, म्रियमाणं मृतम् ” इति संग्राहम् । मिथ्यात्वं च परतीर्थिकमतस्य यदि चलत् वस्तु प्रथमतमये एव चक्षितमिति न भवेच्चदा द्वितीयादिसमयपि तद्वस्तु अवलम्बेव इति कदापि तत् न चलेत्, अन्तिमसमये च चलितमिति व्यवहारो दृश्यतेऽतः प्रथमसमयादारभ्यैव चलितं उच्यते इति मन्तव्यमेव, “ तावत्कालं स्थिरं चैनं कं पश्चाद् नावशिष्यतीति ” न्यायात्म्यमसमयादारभ्यैव भासेमि, पश्येमि, परुषेमि) परन्तु हे गौतम ! मैं तो ऐसा कहता हूँ यावत् प्ररूपित करता हूँ कि—जो चल रहा है वह चल चुका—यावत् जिसकी निर्जरा हो रही है वह निर्जीर्ण हो चुका । यहाँ यावत् पद से (उदीर्यमाणमुदीरितम्—वेद्यमान वेदितम्, ग्रहीयमाणं ग्रहीणं छिद्यमानं छिन्न, भिद्यमानं भिन्न दक्षमान, दग्धं, म्रियमाणं मृतम्) इस पाठ का समग्र किया गया है । परतीर्थिकों का मत मिथ्या किस प्रकार से है—सो स्पष्ट किया जाता है—यदि चलती हुई वस्तु प्रथम समय में चल चुकी न मानी जाये तो उसे द्वितीय आदि समयों में भी अवल ही मानना होगा । इस तरह वह कभी भी नहीं चल सकेगी । अन्तिम समय में जो (चल चुकी) ऐसा व्यवहार देखा जाता है उससे यही बात प्रतीति में आती है कि यह वस्तु प्रथम समय से लेकर ही अन्तिम समय तक चलित हुई है ।

एव आख्यामि, भाषेमि, पश्येमि, परुषेमि ” हे गौतम ! હું તો એવું કહું છું (યાવત) પ્રરૂપણ કરું છું કે જે આશી રહ્યું છે તે આવી પૂર્યું (યાવત) જેની નિર્જરા થઈ રહી છે તે નિર્જીર્ણ થઈ પૂર્યું, અહીં ‘ યાવત ’ પદથી ‘ ઉદીર્યમાણમુદીરિતમ્ ’ પશ્યમાન વેદિતમ્ પ્રહિયમાણં પ્રહીણં છિદ્યમાન છિન્નમ્, ભિદ્યમાન ભિન્ન, દક્ષમાન દગ્ધ મ્રિયમાણ મૃતમ્ ” આ પાઠનો સમગ્ર કરાયો છે પરતીર્થિકાનો મત કેવી રીતે મિથ્યા છે તે હવે સ્પષ્ટ કરવામાં આવે છે જે આશી વસ્તુને પ્રથમ સમયે આશી મૂકેલી માનવામાં ન આવે તો તેને બીજા સમયોમાં પણ અવલ જ માનવી પડશે. આ રીતે તો તે કદી પણ ચલિત થશે જ નહીં પરન્તુ અન્તિમ સમયે “ ચલિત થઈ ચૂકી ” એવો જે અવલાર થતો એવામાં આવે છે તેથી જો જાત સિદ્ધ થાય છે કે તે વસ્તુ પ્રથમ સમયથી ચાલુ કરીને અન્તિમ સમય સુધી ચલિત થતી રહે છે “ તાવ

ટીકા—‘ગોયમા’ હે ગૌતમ ! ‘જં ણં અન્ન ઉત્થિયા એવં આહક્વંતિ’ યત્ અન્યયુથિકા એવમાહ્યાન્તિ એવં ભાષન્તે એવં પ્રજ્ઞાપયન્તિ એવં પ્રરૂપયન્તિ, ‘જાવ’ યાવત્, અત્ર યાવત્પદેન-તન્મતપ્રતિપાદકઃ પૂર્વોક્તઃ સર્વોઽપિ પાઠઃ સંગ્રાહ્યઃ । કિયત્પર્યન્તમિત્યાહ—‘વેયણં વેદેતીતિ વત્તવ્વં સિયા’ વેદનાં વેદયન્તીતિ વત્ત-વ્યમ્ સ્યાત્, પ્રાણભૂતજીવસત્ત્વાઃ સ્વભાવેનૈવ વેદનાં વેદયન્તીતિ । ‘જે તે એવ માહંસુ મિચ્છા તે એવમાહંસુ’ યે તે એવમાહુર્મિથ્યા તે એવમાહુઃ ‘અહં પુણ ગોયમા એવં આહક્વામિ ભાસેમિ પન્નવેમિ પરુવેમિ’ અહં પુન ગૌતમ ! એવમાહ્યામિ

ટીકાર્થ—(ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (જં ણં અન્ન ઉત્થિયા) જો અન્ય-તીર્થિકજન (એવં આહક્વંતિ) એસા સામાન્યરૂપ સે કથન કરતે હૈં (એવં ભાસંતે) એસા વિશેષરૂપ સે કથન કરતે હૈં (એવં પ્રજ્ઞાપયન્તિ) ઇસ તરહ પ્રજ્ઞાપના કરતે હૈં (એવં પ્રરૂપયન્તિ) એસી પ્રરૂપણા કરતે હૈં । યહાં (યાવત્) શબ્દ સે સ્વભાવવાદિયોં કે મત કો પ્રતિપાદન કરનેવાલા પૂર્વોક્ત સમસ્ત ઓ પાઠ ગૃહિત કિયા ગયા હૈ । વહ યહાં કહાં તક ગૃહિત કિયા ગયા હૈ ઇસકો પ્રકટ કરને કે લિયે (વેયણં વેદેતિ) યહ પદ દિયા ગયા હૈ । અર્થાત્ સ્વભાવ વાદિયોં ને જો પ્રથમ સૂત્ર મેં અપના પૂર્ણ મત પ્રકટ કર દિયા હૈ । (વેયણં વેદેતિ) તક-વહ સવ પાઠ યહાં યાવત્ શબ્દ સે પકડા ગયા હૈ ઇસકે દ્વારા જો ઊન્હોં ને યહ કહા હૈ કિ પ્રાણ, ભૂત, જીવ, ઔર સત્ત્વ યે સવ સ્વભાવ સે હી વેદના કો ભોગતે રહતે હૈં (જે તે એવં આહંસુ) જો ઊન્હોં ને એસા કહા હૈ (મિચ્છા તે એવમાહંસુ) વહ મિથ્યા કહા હૈ । (અહં પુણ ગોયમા ! એવં આહક્વામિ

ટીકાર્થ—“ગોયમા ! ” હે ગૌતમ ! “જં ણં અન્નઉત્થિયા” અન્યતીર્થિકો અન્ય મતવાદીઓ “એવં આહક્વંતિ” એવું જે સામાન્ય રૂપે કથન કરે છે “એવં ભાસંતે” એવું જે વિશેષરૂપે કથન કરે છે, “એવં પ્રજ્ઞાપયન્તિ” એવી જે પ્રજ્ઞાપના કરે છે, (એવં પ્રરૂપયન્તિ) એવી જે પ્રરૂપણા કરે છે, (અહીં યાવત્ પદથી સ્વભાવવાદીઓના મતનુપ્રતિપાદન કરનાર પૂર્વોક્ત તમામ પાઠ ગ્રહણ કરાયો છે) તે પાઠ કયા સુધીના ગ્રહણ કરવાનો છે તે બતાવવાને “વેયણં વેદેતિ” સુધી તે પાઠ ગ્રહણ કરવો એમ સૂત્રકારે કહ્યું છે, એટલે કે પહેલા સૂત્રમાં સ્વભાવવાદીઓ એ પોતાનો પૂર્ણ મત પ્રકટ કર્યો છે અહીં “યાવત્” પદ વડે એમ કહ્યું છે. (વેયણ વેદેતિ) સુધીના તે પૂર્વોક્ત પાઠ ગ્રહણ કરવો તેમાં તેમણે બતાવ્યું છે કે પ્રાણ, ભૂત, જીવ, અને સત્ત્વ, એ સૌ સ્વભાવથી જ વેદના ભોગ-પતા રહે છે “જે તે એવં આહંસુ” તેમણે એવું જે કહ્યું છે તે “મિચ્છા વે એવમાહંસુ” મિથ્યા કહ્યું છે. તેમણે તે કથન સાચું નથી. “અહં પુણ ગોયમા !

અથ યદિ એકસ્મિન્ પરમાણૌ સ્નેહો ન મહેષદા પરમાણુસમુદાયેપિ સ્નેહઃ કથમપિ ન સમધેત્, એકસ્મિન્ સિકતાકણે તૈલમનુપમમ્યમાનાં તત્સમુદાયે કદાચિદપિ નોપલભ્યતે? કિન્તુ યદા એકસ્મિન્-તિલ્લે સ્નેહ ઉપલભ્યતે તદૈવ તિલસમુદાયેર્ઽપિ તૈલ સમુપલભ્યતે, તથૈવ યદિ એકસ્મિન્ પરમાણૌ સંઘાતકારણસ્નેહો ન મહેષદા પરમાણુસમુદાયદપિ સંઘાતાત્મકસ્કન્ધસ્પોત્પત્તિ કદાચિદપિ ન મહેદિત્યાશ્ચયે નોચરયતિ મગધાન્-’ દો પરમાણુ પોમામા એગયઓ સાદ્ગતિ’ ટ્વી પરમાણુપુદ્ગલૌ

કારણ ડનમેં સ્નેહ કા અભાવ રહતા હૈ સો હસકા ઉપ્પર સૂત્રકાર ને (દો પરમાણુરોગલા) હસ્યાદિ સૂત્ર દ્વારા વિધા હૈ-હસમેં યહ કહા ગયા હૈ- કિ યદિ એક પરમાણુ મેં સ્નેહ ગુણ ન હો તો ફિર યહ સ્નેહગુણ પરમાણુ સમૂહ મેં કેસે હો સકના હૈ । અર્થાત્ નહીં હો સકતા હૈ । એક સિકતા (રેતી) કે કણ મેં હમ દેખ્વતે હૈ કિ તૈલ કા અંશ જય ઉપલબ્ધ હી નહીં હૈ-તો વહ ઉસકે સમુદાય મેં બી કમી ઉપલબ્ધ નહીં હો સકતા હૈ । એક તિલ મેં સ્નેહગુણ કી ઉપલબ્ધિ હોતી હૈ-હસી કારણ તિલસમુદાય મેં બી સ્નેહગુણ કી ઉપલબ્ધિ હો જાતી હૈ । તો જય હસ પ્રકાર કા સિદ્ધાન્ત હૈ તો હસી પ્રકાર સે એક પરમાણુ મેં યદિ સંઘાત કા કરણ સ્નેહગુણ ન હો તો ચિંચારો વહ પરમાણુ સમુદાય મેં બી કેસે ઉપલબ્ધ હો સકેગા । નહીં હો સકેગા । અતઃ જો પરમાણુ સમુદાય સે સંઘાતા-ત્મક સ્કન્ધ કી ઉત્પત્તિ હોતી હૈ વહ કદાચિત્ બી નહીં હો સકેગી । હસ આશય કો લેકર મગધાન ગૌતમ સે કહતે હૈ કિ (દો પરમાણુ

એક સ્કન્ધ નર્વાય હપે પરિણમતા નથી કારણ કે તેઓ બ્ધિ સુક્ષ્મ હોય છે તે કારણે તેમનામાં સ્નેહ (પ્રીતિ) નો અભાવ હોય છે) તેમની તે માન્યતાનું ખૂબ કરવાને માટે સૂત્રકારે “ દો પરમાણુવાંગ્મજા ” ઈત્યાદિ સૂત્રનું કથન કર્યું છે તેમાં આ પ્રમાણે કહ્યું છે-જો એક પરમાણુમાં સ્નેહશુણ્ય (પ્રીતિ ન હોય તો તે સ્નેહશુણ્ય પરમાણુ સમૂહમાં કેવી રીતે સંભવી શકે ? જેવી રીતે એક રેતીના કણમાંથી જો તેલનો અંશ નીકળી શકે તો તેમના સમુદાયમાંથી પણ તેની પ્રાપ્તિ થતી નથી, જ્યારે એક તલના કણમાં સ્નેહશુણ્ય રહેલ હોય ॥ તો તેના સમુદાયમાં પણ સ્નેહશુણ્ય રહેલો હોય છે આ પ્રકારનો સિદ્ધાન્ત છે હવે તો એક પરમાણુમાં સ્નેહશુણ્યનો અભાવ હોય તો સંયોગ પામેલા પરમાણુ સમુદાયમાં પણ સ્નેહશુણ્ય કેવી રીતે સંભવી શકે ? જો પણ સંભવી શકે નહીં જો એમ થતું હોય તો પરમાણુ સમુદાયની મર્યાદાથી રક્ષણની જે ઉત્પત્તિ થાય છે તે જો પણ થઈ શકે નહીં આ કારણે અમવાન મહાવીર આત્મી જીવન સ્વામીને કહે છે કે “ જો પરમાણુવાંગ્મજા

ચલિતત્વવ્યપદેશઃ, અન્યથા અન્ત્યસમયપિ ચલિતત્વં ન ભવેદિતિ સર્વાપિ ક્રિયા નિરર્થિકૈવ ભવેદિતિ, અતएव वर्तमानस्यापि विवक्षाबलादतीतत्वं न विरुद्धम् । एतत् सर्वं पूर्वमेव 'चलमाणे चलिए' इति सूत्रे प्रतिपादितमिति विस्तरभयान्नेह पुनः प्रतन्यते ।

यत्पूर्वं परतीर्थिकैः कथितं द्वौ परमाणुपुद्गलौ न संहन्येते अतिसूक्ष्मतया तत्र स्नेहाभावादित्यादि तस्येदमुत्तरम्—'दो परमाणुपोगला' इत्यादि, अयमा-
(तावत्કાલં સ્થિરં ચૈનં કઃ પશ્ચાત્ નાશયિષ્યતિ) હસ ન્યાય કે અનુસાર એસા હી માનના ચાહિયે । કિ પ્રથમ સમય સે લગાકર હી વસ્તુ મેં (ચલિત) એસા વ્યપદેશ હોને લગ જાતા હૈ । યદિ તબ સે વસ્તુ મેં જો એસા વ્યપદેશ ન હો તો ફિર અન્તિમ સમય મેં મી (ચલિત) એસા વ્યપદેશ ડસ વસ્તુ મેં નહીં હો સકતા હૈ । હસ વ્યપદેશ કે અભાવ મેં જિતની મી ક્રિયાઈ હૈં વે સબ નિરર્થક હી હો જાવેગી । હસલિયે વર્તમાન કી મી વિવક્ષા કે વશસે વસ્તુ મેં અતીતતા વિરુદ્ધ નહીં પડતી હૈ । વસ્તુ જિસ વર્તમાન ક્ષણ મેં ચલન ક્રિયા વિશિષ્ટ હૈ ડસકી અપેક્ષા વહ વસ્તુ ચલમાણ હૈ ઓર વહી વસ્તુ અપને વ્યતીત પૂર્વક્ષણોં કી અપેક્ષા (ચલિત) હૈ । એસા વ્યપદેશ હોને મેં મલા વાધા કૌનસી આ સકતી હૈ । યહ સબ વિષય વિશેષરૂપ સે (ચલમાણે ચલિએ) હસ સૂત્ર મેં પ્રતિપાદિત હી ક્રિયા જા ચુકા હૈ । અવ ઓર અધિક વિસ્તાર ભય સે હસે પુનઃ નહિં પ્રતિપાદિત કરતે હૈં । જો પરતીર્થિકોં ને એસા કહા હૈ કિ દો પરમાણુ (પરસ્પર મેં મિલતે નહીં હૈં) વ્યો કિ વે અતિ સૂક્ષ્મ હોતે હૈં—હસ

ત્કાલ સ્થિરં ચૈન ક પશ્ચાત્ નાશયિષ્યતિ ” આ ન્યાયાનુસાર એમ જ માનવું જોઈએ કે પ્રથમ સમયથી લઈને જ વસ્તુમાં (ચલિત) એવો વ્યવહાર થવા માટે છે જો પ્રથમથી જ એવો વ્યવહાર થઈ શકતો ન હોય તો અન્તિમ સમયે પણ પ્રદેશ (વ્યવહાર) ને માનવામાં ન આવે તો જેટલી ક્રિયાઓ છે તે બધી નિર્અર્થક જ બની જશે. માટે વર્તમાનની વિવક્ષાની અપેક્ષાએ પણ વસ્તુમાં અતીતતા (ભૂતકાલીનતા) વિરુદ્ધ પડતી નથી. જે વર્તમાન ક્ષણે વસ્તુ ચલન ક્રિયાવાળી છે, તે ક્ષણની અપેક્ષાએ તે વસ્તુ ચલમાણ છે અને વ્યતીત થઈ ગયેલી પૂર્વક્ષણોની અપેક્ષાએ એજ વસ્તુ ચલિત છે તે પ્રકારનો વ્યવહાર કરવામાં કોઈ જાતની મુશ્કેલી છે જ નહીં આ આખાય વિષયનું “ ચલમાણે ચલિએ ” સૂત્રમાં વિસ્તાર પૂર્વક પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે. તેથી અધિક વિસ્તાર થવાના ભયથી તેનું ફરીથી અહીં પ્રતિપાદન કર્યું નથી. પરતીર્થિકોની જે એવી માન્યતા છે કે (જે પરમાણુ પુદ્ગલો પરસ્પર સાથે મળીને

સ્નેહકાયો વિષયે એવ, યત સાર્થપુદ્ગલસ્ય સહતત્ત્વેન પૂર્વપક્ષિમિરેવ સ્વીકારાત્, યતસ્તૈરેવોક્ત 'તિષ્ઠિ પરમાણુપોગલા ઇગયમો સાદર્શંતિ તે મિજ્જમાણા દુશ્શવિ વિશવિ કજ્જતિ, દુશ્શ કજ્જમાણા ઇગયમો દિવદ્ધુ ઇગયમો દિવદ્ધુ" इति एवा-
 यता सार्धपुद्गलस्य सहातत्त्वाम्युपगमेन एकैकस्यापि स्नेहोभ्युपगत एवेति कथं
 स्નેહમાબન પરમાણુવિષયોઃ સઘાતામાવ' સ્યાત્ અપિ તુ દ્વયોરપિ પરમાણ્વો
 સઘાત સ્પાદેવેતિ માયમ્। યચ્ચોક્તમ્ એકત્ સાર્થસ્તદ્વપ્યુક્ત એકસ્ય પરમાણોર્મ્પી
 कारण आपस में बिपक आते हैं। तीन परमाणुओं का ही, चार परमा-
 णुओं का ही संघात होता है सो यह बात नहीं है। दो परमाणुओं में
 स्नेहकाय मौजूद है यह बात पूर्वपक्षी के इस कथन से भी ज्ञात होती है
 जो उसने ऐसा कहा है कि (तीन पुद्गल परमाणु आपस में बिपक जाते
 हैं और जब उनका बिभाग किया जाता है तो उनके १॥ देह १॥ देह
 परमाणुओं के दो बिभाग और १-१ परमाणु के १ बिभाग बन जाते हैं।
 तात्पर्य कहने का यह है कि यदि दो परमाणुओं में स्नेहगुण-विकाश
 न होता तो तीन पुद्गल परमाणुओं के जब १॥-१॥ के दो टुकड़े जा
 उन्हें ने बनाने की बात कही है वह कैसे बन सकती है। अतः उनकी
 इस मायता से यह पता अच्छी तरह पड़ जाता है-प्रमाणित-हो जाता
 है कि उन्होंने स्वयं दो पुद्गल परमाणुओं में स्नेहगुण माना है। नहीं तो
 १॥-१॥ के तीन पुद्गल परमाणुजन्य संघात के दो हिस्से नहीं बन सकते हैं।
 इसी कथन से यह कथन भी सापित हो जाता है कि जब १॥
 पुद्गल परमाणुओं का आपस में बिपक जाना तुमने स्वीकार किया है तो

બીજા સાથે ઘેટી બાંધ છે ત્રણ પરમાણુના કે ચાર પરમાણુના જ સંયોજ
 થાય છે એવુ નથી. બે પરમાણુ સ્નેહકાય માજૂદ હોય છે એ વાતનુ તો
 અન્ય વીરિકેના આ કથન વડે પણ સમર્થન થાય છે-કે ત્રણ પુદ્ગલ પર
 માણુ એક બીજા સાથે ઘેટી બાંધ છે અને આમ તેમના વિભાગ કરવામાં
 આવે છે ત્યારે ૧૧-૧૧ પરમાણુના બે વિભાગ અથવા ૧-૧ પરમાણુના ત્રણ
 વિભાગ થાય છે ' કહેવાનુ તાત્પર્ય' એ છે કે એ બે પરમાણુઓમાં સ્નેહગુણ
 (સ્વીકાશ) ન હોય તો ત્રણ પુદ્ગલ પરમાણુઓ વાળા સ્કન્ધના ૧૧-૧૧ પર
 માણુના બે વિભાગ અને ૧-૧ પરમાણુના ત્રણ વિભાગ કેવી રીતે બની શકે ?
 તેથી તેમની એ માન્યતા વરે પણ આ વાત સિદ્ધ થાય છે કે બે પરમાણુમાં
 સ્નેહગુણ હોય છે, નહીં તો ત્રણ પરમાણુના સંયોજથી ઉત્પન્ન થયેલ સ્કન્ધ-
 માંથી ૧૧-૧૧ ના બે વિભાગ બની શકત નહીં એજ કથન વડે એ વાત
 પણ સાબિત થઈ બાંધ છે કે બે ૧૧-૧૧ પુદ્ગલ પરમાણુઓનુ એક બીજા સાથે

અકતઃ સંહન્યેતે, અકતઃ અકસ્વરૂપતયા પરમાણુદ્વયસ્ય સહનનં (સંમીલનં) ભવત્યેવ સંહનનકારણસ્નેહસ્ય તત્રાપિ સદ્ભાવાદિતિ, અત્ર કારણં પૃચ્છતિ—‘કમ્હા દો પરમાણુ પોગ્ગલા અગયઓ સાહણંતિ’ કસ્માત્ કારણાત્ દ્વૌ પરમાણુપુદ્ગલૌ અકતઃ સંહન્યેતે? ઉત્તરમાહ—‘દોણં પરમાણુપોગ્ગલાણં અત્થિ સિણેહકાણ’ દ્વયોઃ પરમાણુપુદ્ગલયોરસ્તિ સ્નેહકાયઃ, ‘તમ્હા-દો પરમાણુ પોગ્ગલા અગયઓ સાહણંતિ’ તસ્માત્ કારણાત્ દ્વૌ પરમાણુપુદ્ગલૌ અકત સંહન્યેતે, યસ્માત્ કારણાત્ અકસ્મિન્નપિ પરમાણૌ સંઘાતકારણં સ્નેહકાયો વિઘટે તસ્માત્ કારણાત્ દ્વયોરપિ પરમાણુપુદ્ગલયોઃ સંહનનં ભવત્યેવ ન તુ ત્રયાણામેવ ચતુર્ણામેવ સંઘાત ઇતિ ભાવઃ, દ્વયોઃ પરમાણ્વોઃ

પોગ્ગલા અગયઓ સાહણંતિ) દો પરમાણુ પુદ્ગલ અકરૂપ સે મિલ જાતે હૈં । અક રૂપ સે મિલના હી સ્કન્ધ કી ઉત્પત્તિ હૈ । યહ ઉન દોનોં કા સંમેલન વિના સંઘાત કે કારણભૂત સ્નેહગુણ કે નહીં હો સકતા હૈ । ઇસલિયે યહ માનના ચાહિયે કિ ઉન દો પુદ્ગલ પરમાણુઓં મેં સ્નેહગુણ અવશ્ય ૨ હૈ ઓર યહ સ્નેહગુણ ઉન પરમાણુઓં કે સમેલન સે વહાં પર પ્રકટ હો ગયા સો ઘાત નહીં હૈ । યહ તો વહાં અક ૨ પરમાણુ મેં સ્વતંત્ર રૂપ સે પહિલે સે હી મૌજૂદ હૈ । યહાં શિષ્ય કારણ કો પૂછતા હુઆ પ્રભુ સે પ્રશ્ન કરતા હૈ કિ (કમ્હા દો પરમાણુપોગ્ગલા અગયઓ સાહણંતિ) હે ભદન્ત ! ઇસમેં કયા કારણ હૈ જો દો પુદ્ગલ પરમાણુ આપસ મેં મિલકર સ્કન્દ પર્યાય કો ઉત્પન્ન કરતે હૈં । પ્રભુ ઇસકા ઉત્તર દેતે હુઅ શિષ્ય સે કહતે હૈં કિ—(દોણં પરમાણુપોગ્ગલાણં અત્થિ સિણેહકાણ) ઉન દો પુદ્ગલ પરમાણુઓં મેં સ્નેહકાય હૈ (તમ્હા) ઇસલિયે (દો પરમાણુપોગ્ગલા અગયઓ સાહણંતિ) દો પરમાણુ પુદ્ગલ ચિકાશ હોને કે

અગયઓ સાહણંતિ ” એ પરમાણુ પુદ્ગલો એકરૂપે મળી બન્ય છે એક રૂપે મળવું તેનું નામ જ સ્કન્ધની ઉત્પત્તિ છે તે બંનેનો સંઘાત, (સંયોગ) સંઘાતના કારણરૂપ સ્નેહગુણના સદ્ભાવ વિના સંભવી શકતો નથી તેથી એમ માનવું બોધ્યું કે તે બે પુદ્ગલ પરમાણુઓમાં સ્નેહગુણ અવશ્ય હોય છે અને તે સ્નેહગુણ તે પરમાણુઓના સંયોગથી ત્યાં પ્રકટ થઈ ગયો એવું પણ નથી. તે ગુણ પ્રત્યેક પરમાણુમાં પહેલેથી જ મોજૂદ હોતો “ કમ્હા દો પરમાણુ પોગ્ગલા અગયઓ સાહણંતિ ” શા કારણે બે પરમાણુ પુદ્ગલો પરસ્પર સાથે સંયોગ પામીને સ્કન્ધપર્યાયને ઉત્પન્ન કરે છે ? આ પ્રકારના ગૌતમના પ્રશ્નનો જવાબ આપના પ્રભુ કહે છે “ દોણં પરમાણુપોગ્ગલાણં અત્થિ સિણેહકાણ ” તે બે પરમાણુમાં સ્નેહકાયનો સદ્ભાવ હોય છે “ તમ્હા ” તેથી “ દો પરમાણુ પોગ્ગલા અગયઓ સાહણંતિ ” એ પરમાણુ પુદ્ગલો ચીકાશ હોવાને કારણે એક

સ્નેહકાયો વિષયે एव, यतः सार्धपुत्रलस्य सहितत्वेन पूर्वपश्चिमिरेव स्वीकारात्, यतस्तैरेवोक्त ' तिष्ठि परमाणुपोगन्ता एगयओ साहणंति ते मिज्जमाणा दुहावि विहावि कज्जति, दुहा कज्जमाणा एगयओ दिक्खे एगयओ दिक्खु ' इति एता यता सार्धपुत्रलस्य सहितत्वाभ्युपगमेन एकैकस्यापि स्नेहोभ्युपगत एवेति कथं स्नेहामावन परमाणुद्विकयोः संघातामात्र स्यात् अपि तु द्वयोरपि परमाण्वोः संघातः स्यादवेति भावः॥ यच्चोक्तम् एकतः सार्धस्तदव्यययुक्त एकस्य परमाणोरर्षो

कारण आपस में चिपक जाते हैं। तीन परमाणुओं का ही, चार परमाणुओं का ही संघात होता है सो यह बात नहीं है। दो परमाणुओं में स्नेहकाय मौजूद है यह बात पूर्वपक्षी के इस कथन से भी ज्ञात होती है जो उसने ऐसा कहा है कि (तीन पुत्रल परमाणु आपस में चिपक जाते हैं और जब उनका विभाग किया जाता है तो उनके १॥ देह १॥ देह परमाणुओं के दो विभाग और १-१ परमाणु के ३ विभाग बन जाते हैं। तात्पर्य कहने का यह है कि यदि दो परमाणुओं में स्नेहगुण-विकाश न होता तो तीन पुत्रल परमाणुओं के जब १॥-१॥ के दो टुकड़े जो उन्होंने ने बनाने की धाम कही है यह कैसे बन सकती है। अतः उनकी इस मायता से यह पता अच्छी तरह पड़ जाता है-प्रमाणित-हो जाता है कि उन्होंने स्वयं दो पुत्रल परमाणुओं में स्नेहगुण माना है। नहीं तो १॥-१॥ के तीन पुत्रल परमाणुजन्य संघात के दो हिस्से नहीं बन सकते हैं। इसी कथन से यह कथन भी साधित हो जाता है कि जब १॥ पुत्रल परमाणुओं का आपस में चिपक जाना तुमने स्वीकार किया है तो

બીજા સાથે થોડી બધ છે ત્રણ પરમાણુનો કે ચાર પરમાણુનો જ સંયોજ થાય છે એવું નથી. બે પરમાણુ સ્નેહકાય મોજૂદ હોય છે એ વાતનું તો અન્ય તીર્થિકોના આ કથન વડે પણ સમર્થન થાય છે-કે ત્રણ પુત્રલ પરમાણુ એક બીજા સાથે થોડી બધ છે અને બન્નારે તેમના વિભાગ કરવામાં આવે છે ત્યારે ૧૧-૧૧ પરમાણુના બે વિભાગ અથવા ૧-૧ પરમાણુના ત્રણ વિભાગ થાય છે ' કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે બે બે પરમાણુઓમાં સ્નેહગુણ (શીકાશ) ન હોય તો ત્રણ પુત્રલ પરમાણુઓ વાળા સંઘનના ૧૧-૧૧ પરમાણુના બે વિભાગ અને ૧-૧ પરમાણુના ત્રણ વિભાગ કેવી રીતે બની શકે ? તેમાં તેમની એ માન્યતા વરે પણ આ વાત સિદ્ધ થાય છે કે બે પરમાણુમાં સ્નેહગુણ હોય છે નહીં તો ત્રણ પરમાણુના સંયોજથી ઉત્પન્ન થયેલા સંઘ-માથી ૧૧-૧૧ ના બે વિભાગ બની શકતી નથી એજ કથન વડે એ વાત પણ સાબિત થઈ બધ છે કે બે ૧૧ દેહ પુત્રલ પરમાણુઓનું એક બીજા સાથે

करणे परमाणुत्वाभावप्रसङ्गः स्यात् अत एकस्य परमाणोर्न भागौ भागा वा भवन्ति किन्तु परमाणुद्वयस्यैव भागः संभवतीत्याशयेनाह—‘ ते भिज्जमाणा ’ इत्यादि । ‘ ते भिज्जमाणा दुहा कज्जति ’ तौ भिद्यमानौ द्विधा क्रियेते, द्वौ परमाणुपुद्गलौ संहृत्य स्कन्धतया परिणतौ, तयोर्यदि द्वौ भागौ क्रियेते, तदा ‘ दुहा

यह बात अर्थात् आपन्न है कि एक पुद्गल परमाणु में भी स्नेहगुण है । अतः जब यह बात प्रमाण से प्रतीत कोटि में आ रही है कि एक परमाणु में भी स्नेहगुण है, तो फिर ऐसा कथन कैसे युक्ति युक्त माना जा सकता है कि दो परमाणुओं में स्नेहगुण न हो सकने के कारण उनकी आपस में चिपकना नहीं होता है । अर्थात् उनका संघात नहीं बनना है । अतः यह मानना चाहिये कि दो परमाणुओं का भी संघात होता ही है । तथा अभी जो ऐसा कहा है कि तीन परमाणु जन्य संघात के जब हिस्से किये जाते हैं तो उसके १॥-१॥ परमाणु के दो हिस्से भी बन जाते हैं सो ऐसा कहना ठीक नहीं जचता है—कारण जब परमाणु का अर्धीकरण किया जावेगा तो उसमें परमाणुता के अभाव होने का प्रसंग आ जावेगा । परमाणु का तात्पर्य तो यही है कि जिसका फिर हिस्सा-भाग न हो । अतः एक परमाणु में न दो भाग होते हैं और न अनेक भाग ही होते हैं । भाग परमाणुद्वय के ही संभवते हैं । इसी आशय को लेकर सूत्रकार कह रहे हैं कि (ते भिज्जमाणा दुहा कज्जन्ति)

ચોટી જવાનું તમે સ્વીકારતા હો તો એ વાત પણ તમારે સ્વીકારવી જ પડશે કે એક પુદ્ગલ પરમાણુમાં પણ સ્નેહગુણ હોય છે, આ પ્રમાણે જ્યારે એક પરમાણુ પુદ્ગલમાં પણ સ્નેહગુણ હોવાનું પ્રમાણુ મળે છે ત્યારે એ વાત કેવી રીતે સગત માની શકાય કે બે પરમાણુ પુદ્ગલોમાં સ્નેહગુણનો અભાવ હોવાથી તેમનો સંઘાત-સંયોગ થતો નથી ? ઉપરોક્ત પ્રમાણુને આધારે તો એમ જ માનવું પડશે કે બે પરમાણુ પુદ્ગલોનો સંઘાત (સંયોગ) પણ થઈ શકે છે વળી અન્ય તીર્થિકો એવું જે કહે છે કે ત્રણ પરમાણુના સંઘાતથી અનેક સ્કન્ધના ૧૥-૧૥ પરમાણુના બે વિભાગ પડે છે, તે વાત પણ સાચી નથી. કારણ કે બે પરમાણુનું અર્ધીકરણ કરવામાં આવે તો તેમાં પરમાણુ પણુના અભાવનો પ્રસંગ પ્રાપ્ત થશે. કારણ કે પરમાણુનું વિભાજન થઈ શકતું નથી. એટલે કે એક પરમાણુના બે ભાગ પણ થતા નથી અને અનેક ભાગ પણ થતા નથી પરમાણુ દ્વયના જ ભાગ સંભવી શકે છે તે કારણે જ સૂત્રકાર કહે છે કે “તે ભિજ્જમાણા દુહા કજ્જન્તિ” સંયોગ પામેલા બે પરમાણુ

कज्जमाणा एगयओ परमाणुपोगळे एगयओ परमाणुपोगळे भवइ' द्विषा क्रियमाणौ एकतः परमाणुपुद्गल एकत परमाणुपुद्गलो भवति । यत्र द्वयोः परमाण्वोः सघात स्नेहकायवन्मादभूत्तत्र पुनर्द्विषामाग एकैक परमाणुर्भवति, न तु सार्धता कदाचिदपि सम्भवति, तथासति परमाणुत्वंमेव न स्यादिति । द्वयोः

जय वे दो परमाणु विभक्त हो जाते हैं तो एक ? परमाणु के दो भाग हो जाते हैं—सात्पर्य यह है कि जय दो परमाणु संघातरूप में परिणत हो जाते हैं और जय वह संघात विभक्त होता है । तो उस संघात के १-१ परमाणुरूप में दो हिस्से हो जाते हैं यही बात (दुहा कज्जमाणा एग यओ परमाणुपोगळे भवइ) इस सूत्र पाठ द्वारा प्रकट की गई है । इस कथन से सूत्रकार ने यह बात स्पष्ट की है कि जब दो परमाणु स्नेहकाय के कारण आपस में मिलकर एक संघातरूप स्क्व को बनाते हैं और उसे विभक्त किया जाता है तो उसके १-१ परमाणु रूप में दो भाग हो जाते हैं तो इस अवस्था में पहिले प्रतिपक्षी ने जो ऐसा कहा है कि तीन पुद्गल परमाणु से जय जय स्क्व तैयार होता है और जय उसके हिस्से किये जाते हैं तो १॥-१॥ परमाणु के दो भी विभाग हो जाते हैं तो उनका इस कथन के अनुसार ऐसा कथन अयुक्त है । क्योंकि परमाणु में आघातन बनती नहीं है । यह सार्धता तो जय बनती कि एक परमाणु के दो भाग होते । परन्तु एक परमाणु का भाग ही नहीं होते । कारण—भाग मानने पर परमाणु में परमाणुत्व का ही विधान होता है ।

अथारे अथा थाय छे त्थारे ओक, ओक परमाणु वाणा के विभाग थाय छे ओक बात सूत्रकारे 'दुहा कज्जमाणा एगयओ परमाणुपोगळे भवइ' आ सूत्रपाठ पठे भट्ट करी छे आ कथन पठे सूत्रकारे के बात स्पष्ट करी छे के स्नेहकायने करके ओक जीवा साथे संयोग पाभीने ओक स्क्व रूपे परिणमेक के परमाणुपुद्गलीन अथारे विभाजन करवाभा आवे छे त्थारे तेभाना ओक ओक परमाणुना के भाग पड़ी अथ छे आ आगतमा विपक्षीओनुं के मत अथ आगत नताओ छे के त्रय परमाणु पुद्गलीथी अनेक स्क्वधनु अथारे वि भाजन करवाभा आवे छे त्थारे १॥-१॥ परमाणुना के विभाग पड़ी अथ छे तेभनु आ कथन विचारवाभा आवे तो अमुक्त लागे छे कारण के परमाणुभा अधापितु संभवतु नथी के ओक परमाणुना के भाग यथ शक्य होत तो न अधापितु संभवी शक्य परतु ओक परमाणुना के भाग यथ न नथी के परमाणुना के अथवा अनेक भाग मानवाभा आवे तो परमाणुभा पर-

પરમાણ્વોઃ સ્નેહકાયસદ્ભાવાત્ સંઘાતં તદ્વિભાગં ચ પ્રદર્શ્ય ત્રયાણાં પરમાણૂનાં સંઘાતં તદ્વિભાગં ચ વક્તુકામ આહ—‘તિણિ’ इत्यादि । ‘तિणि परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति’ त्रयः परमाणुपुद्गलाः एकतः संहन्यन्ते, त्रयाणां परमाणूनामेकैकश परस्परं विलक्षणः संयोगो जायते येन स्कन्धस्य समुत्पत्तिर्भवतीति भावः । कथं त्रयो मिलिता भवन्ति तत्राह—‘कम्हा तिणि परमाणुपोग्गला एगयओ साहणंति’ कस्मात् त्रयः परमाणुपुद्गला एकतः संहन्यन्ते, केन कारणेन त्रयाणां संमेलनं भवतीति—प्रश्नः । उत्तरयति—‘तिण्हं परमाणुपोग्गलाण अत्थि सिणेहकाए’ त्रयाणां—परमाणुपुद्गलानामस्ति स्नेहकायः, ‘तम्हा तिणि परमाणु पोग्गला एगयओ—साहणंति’ तस्मात् त्रयः परमाणुपुद्गला एकतः संहन्यन्ते, यस्मात् त्रिषु परमाणुषु विद्यते स्नेहकायः संघातकारणम् तस्मात् कारणात् त्रयाणां परमाणूनां परस्पर संमेलनं भवत्येवेति भावः । ‘ते भिज्जमाणा दुहावि तिहावि

इस तरह दो परमाणुओं के स्नेहकाय के सद्भावसे हुए संघात को और उसके विभाग को दिखाकर अब सूत्रकार तीन परमाणुओं के संघात को और उसके विभाग को दिखाने के लिये सूत्र कहते हैं कि—(तिणि परमाणु पोग्गला एगयओ साहणंति,) तीन परमाणुओं में के हरएक परमाणु का आपस में विलक्षण संयोग होता है कि जिससे स्कन्ध की उत्पत्ति होती है । ये तीन परमाणु पुद्गल किस कारण से आपस में मिलते हैं—तो इसका उत्तर (तिण्हं परमाणुपोग्गलाण अत्थिसिणेहकाए) तीन परमाणुपुद्गलोंमें संघात का कारण स्नेहकाय होता है (तम्हा तिणि परमाणु पोग्गला एगयओ साहणंति) इस कारण वे तीन परमाणुपुद्गल एक स्कन्धरूप में मिल जाते हैं । (ते भिज्जमाणा दुहावि तिहावि कज्जंति

માણુત્વપણુના ૪ નાશ થાય છે આ રીતે સ્નેહકાયના સદ્ભાવે બે પરમાણુ એના સંયોગનુ અને તેમના વિભાગોનુ પ્રતિપાદન કરીને હવે સૂત્રકાર ત્રણ પરમાણુએના સંઘાતનુ અને તેમના વિભાગનુ નિરૂપણ કરવા માટે કહે છે કે “તિણિ પરમાણુપોગ્ગલા એગયઓ સાહણંતિ” ત્રણ પરમાણુએમાંના પ્રત્યેક પરમાણુના પરસ્પરમા વિલક્ષણ સંયોગ થવાથી તેઓ એક સ્કન્ધરૂપે પરિણમે છે. તે ત્રણ પરમાણુ પુદ્ગલોનુ શા કારણે સંયોજન થાય છે તે બતાવવાને માટે સૂત્રકાર કહે છે—“તિણ્ણ પરમાણુપોગ્ગલાણ અત્થિ સિણેહકાએ” ત્રણ પરમાણુ પુદ્ગલોના સંયોગનુ કારણુ સ્નેહકાય છે. “તમ્હા -તિણિ પરમાણુ-પોગ્ગલા એગયઓ સાહણંતિ,” તે કારણે તે ત્રણ પરમાણુ પુદ્ગલો એક સ્કન્ધરૂપે પરિણમે છે “તે ભિજ્જમાણા દુહા વિ તિહા વિ કજ્જતિ” બે તે ત્રણ પર-

કલ્પજાતિ' તે મિથમાના દ્વિધાડપિ ત્રિધાડપિ ક્રિય'તે, સહત્વ સ્કન્ધતયા યદા પરિ
 ગતાઃ પરમાણ્વ ચિશ્લિપ્ય'તે તદા સે માગદ્વયે માગત્રયે ચાડ્યતિપ્થ'તે इत्यर्थ,
 દુહા, કલ્પજમાણા ઇગયમ્નો પરમાણુપોમાઢે ઇગયમ્નો દુપણિણ સંધે મઘદ્ 'દ્વિધા
 ક્રિયમાણા ઇકત્વ' પરમાણુપુદ્ગલઃ ઇકતો, દ્વિપદેશિકઃ સ્કન્ધો મઘતિ, યદા ત્રયમ્નો
 પરમાણૂનાં સ્કન્ધતયાડ્યસ્થિતાનાં વિમાગો મઘતિ, તદા ઇકસ્મિન્ પ્રવેશે ઇક
 પરમાણુરવસ્થિતો મઘતિ પરસ્મિન્ પ્રવેશે ચ દ્વિપદેશિકઃ સ્કન્ધસ્થિતિ ન હુ સાર્ધ-
 સાર્ધતયા પરમાણ્વોડ્યસ્થિતા મઘંતીતિ માઘ । 'તિહા કલ્પમાણા તિણિ પરમાણુ
 પોમાલા મઘતિ ' ત્રિધા-ક્રિયમાણાસ્રયઃ પરમાણુ પુદ્ગલા મઘન્તિ, યદિ તેપો
 ત્રિમાગો મઘેત્ તદા ત્રય પરમાણ્વ ઇકૈરુપિમિધા ઇવાચતિપ્ઠેરમિત્યર્થઃ । ' ઇવં
 જ્ઞાઘ ચચારિ ' ઇવ યાઘત્ ચચાર, ચતુઃ સરુપકપરમાણુપુદ્ગલવક્તવ્યતા ઘાન્ય
 તિ) જય ઘહ ત્રીન પરમાણુ જન્ય સ્કન્ધ ઘિમક્ત અઘસ્પાઘાલા હો જાતા
 હૈ તો ડસકે માગ ડો તરહ સે ઓ હોતે હૈ ઓર ત્રીન તરહ સે ઓ હોતે
 હૈ-તાત્પર્ય યહ હૈ કિ સ્કન્ધરૂપસે પરિગત હુપ્થે પરમાણુ આપસમેં વિમાગ
 કો પ્રાપ્ત હોતે હૈ તથ ઘે માગદ્વયમેં યા માગત્રયમેં અઘસ્થિત રહતે હૈ (દુહા
 કલ્પજમાણા ઇગયમ્નો પરમાણુ પોગઢે, ઇગયમ્નો દુપણિણ પરમાણુ પોગઢે)
 માગદ્વય મેં અઘસ્થિત રહને પર ઇક માગ મેં ઇક પરમાણુ રહતા હૈ
 ઓર ઘસરે માગ મેં દ્વિપદેશી સ્કન્ધ રહતા હૈ ૧૧૧-૧૧૧ પરમાણુ કે ડો
 માગ નહીં હોતે । ઓર જઘ માગત્રય મેં ઘે પરમાણુસ્થિત રહતે હૈ તથ
 ઇક ૨ માગ મેં ઇક ૨ પરમાણુ સ્થિત રહતા હૈ । તાત્પર્ય ઘહ હૈ કિ યદિ
 ઘસ સ્કન્ધ કે ત્રીન માગ કિયે જાયે તો ઇક ૨ માગ મેં ઇક ૨
 પરમાણુ મિલ્લ ૨ રૂપ મેં રહતા હૈ । (ઇવં જ્ઞાઘ ચચારિ) હસી પ્રકાર સે
 ચતુ સંકુપક પરમાણુપુદ્ગલોં કી વક્તવ્યતા જાનની ઘાહિયે । યહ વક્તવ્યતા

માણુ જન્ય સ્કન્ધનુ વિભાજન કરવામા આવે તો તેમના ભાગ બે રીતે પણ
 પડે છે અને ત્રણ રીતે પણ પડે છે એટલે કે તેમના બે વિભાગ પણ પડે
 છે અને ત્રણ વિભાગ પણ પડે છે "દુહા કલ્પમાણા ઇગયમ્નો પરમાણુપોમાઢે,
 ઇગયમ્નો દુપણિણ પરમાણુપોમાઢે" અર્થે તેમના બે વિભાગ કરવામા આવે
 છે ત્યારે એક વિભાગ એક પરમાણુ ઘાળો અને છે અને બીજો વિભાગ દ્વિપ-
 દેશી સ્કન્ધરૂપ અને છે પરંતુ ૧૧૧-૧૧૧ પરમાણુના બે ભાગ બનતા નથી
 અને અર્થે તેનુ ત્રણ ભાગમાં વિભાજન કરવામા આવે છે ત્યારે પ્રત્યેક ભાગ
 એક પરમાણુનો અને છે તાત્પર્ય એ છે કે એ તે સ્કન્ધના ત્રણ ભાગ કર-
 વામાં આવે તો દરેક ભાગમા એક એક પરમાણુ મિલ્લ રૂપે રહે છે ' ઇવ
 જ્ઞાઘ ચચારિ " એજ પ્રમાણે આર પરમાણુ પુદ્ગલોની જાબતામા પણ સમજવુ

યૂથિકાલાપકવ્યાખ્યાયાં દ્રઘ્વ્યા । ચતુર્ણાં પરમાણૂનામ્ સ્નેહકાયવલાત્ સંયોગે સ્કન્ધાકારો ભવતિ, દ્વિધા વિભાગે કૃતે સતિ એકત્રૈકઃ પરમાણુરવસ્થિતો ભવતિ, અપરભાગે ત્રિપ્રદેશિકઃ સ્કન્ધસ્તિષ્ઠતિ । ‘પંચપરમાણુપોગલા એગયઓ સાહર્ણંતિ’ પંચ પરમાણુપુદ્ગલા એકતઃ સંઘન્યન્તે ‘એગયઓ સાહર્ણિત્તા સ્વંધત્તાએ કજ્જંતિ’ એકતઃ સંઘત્ય સ્કંધતયા ક્રિયન્તે ભવન્તીત્યર્થઃ, પચ્ચ પરમાણુપુદ્ગલા એકૈકશઃ—પરસ્પરં સંમિલિતા ભવન્તિ મિલિત્વા ચ સ્કન્ધાકારેણ—પરિણતા ભવન્તીત્યર્થઃ । સ્કન્ધવિષયે ઉત્તરયતિ—‘સ્વંધે વિ ય ણં સે અસાસે’ સ્કન્ધોઽપિ ચ સ્વલુ સઃ અશશ્વતઃ સ ચ સ્કન્ધો નૈકાન્તતો નિત્ય અપિ તુ અનિત્યઃ, ઉત્પત્તિ વિનાશસ્ય

અન્યયૂથિકાલાપ કી લિખી જા ચુકી વ્યાખ્યા મેં લિખી જા ચુકી હૈ । અતઃ વહાં સે ઇસે દેખ લેના ચાહિયે । ચાર પરમાણુઓં કા સ્નેહકાય કે બલ સે સંયોગ હોને પર સ્કન્ધાકાર હોતા હૈ । ઇસકા જબ વિભાગ કરતે હૈં તો વે દો પ્રકાર સે હોતે હૈં એક પ્રકાર કે વિભાગ મેં કેવલ એક પરમાણુ અવસ્થિત રહતા હૈ—ઔર દૂસરે પ્રકાર કે વિભાગ મેં ત્રિપ્રદેશી સ્કન્ધ રહતા હૈ । (પંચ પરમાણુપોગલા એગયઓ સાહર્ણંતિ) પાંચ પરમાણુ પુદ્ગલોં કા સ્નેહકાય કે બલ સે સંયોગ હોને પર સ્કન્ધાકાર હોતા હૈ । (એગયઓ સાહર્ણિત્તા સ્વંધત્તાએ કજ્જંતિ) યહી વાત ઇસ પાઠ દ્વારા પ્રકટ કી ગઈ હૈ । તાત્પર્ય કહને કા યહ હૈ કિ પાંચ પરમાણુ પુદ્ગલ એક ૨ કર આપસ મેં મિલ જાતે હૈં ઔર મિલકર વે સ્કન્ધાકાર સે પરિણત હો જાતે હૈં । (સ્વંધે વિ ય ણં સે અસાસે) પરમાણુઓં કે આપસ મેં મિલને સે જો સ્કન્ધ ઉત્પન્ન હોતા હૈ વહ પરમાણુઓં કી તરહ એકાન્ત નિત્ય

તેનુ વર્ણન અન્યયૂથિકાલાપની વ્યાખ્યામાં આપવામાં આવ્યું છે તો ત્યાથી સમજી લેવું, ચાર પરમાણુઓના સ્નેહકાયને કારણે સઘાત થવાથી તેઓ એક સ્કંધ રૂપે પરિણમે છે બ્યારે તેમના વિભાગ કરવામાં આવે છે ત્યારે એ રીતે વિભાગ થાય છે, એક પ્રકારના વિભાગમાં ફક્ત એક જ પરમાણુ હોય છે અને બીજા પ્રકારના વિભાગમાં ત્રિપ્રદેશી સ્કન્ધ હોય છે. “ પચ પરમાણુ પોગલા એગયઓ સાહર્ણંતિ ” પાંચ પરમાણુ પુદ્ગલોના સ્નેહકાયને કારણે સંયોગ થઈને તેઓ એક સ્કન્ધરૂપે પરિણમે છે. એજ વાત “ એગયઓ સાહર્ણિત્તા સ્વંધત્તાએ કજ્જંતિ ” આ સૂત્રપાઠ વડે દર્શાવવામાં આવેલ છે તાત્પર્ય એ છે કે પાંચ પરમાણુ પુદ્ગલો એક બીજા સાથે મળી જઈને સ્કન્ધરૂપે પરિણમે છે. “ સ્વંધે વિ ય ણં સે અસાસે ” પરમાણુઓ એક બીજા સાથે મળી જઈને જે સ્કન્ધ બને છે તે સ્કન્ધ પરમાણુઓની જેમ નિત્ય હો તો નથી પણ અનિ-

મત્સ્યપત્ત પશાનુમૂયમાનત્વાત્ । ' સયા સમિયં ઉવચિજ્ઞઃ ય અવચિજ્ઞઃ ય ' સદા સમિતમુપચીયતે ચાપચીયતે ચ, સદા=સર્વસ્મિન્ કાલે, સમિત=નિયમિતં-સત્ મનિત્યત્વાદય સ સ્કન્ધપ્રવાપચયો પ્રાપ્નોતીત્યર્થ ।

યથાન્યતીર્થિકૈસ્કન્ધ—પદ પરમાણુપુટલા સહતાઃ કર્મતયા મવન્તિ, તદપિ ન યુક્તમ્, કર્મણોઽનન્તપરમાણુસ્વરૂપતયાઽનન્તસ્કન્ધરૂપત્વાત્, પંચાણુકસ્ય

નહીં હોતા હૈ, ફિલ્તુ અશાશ્વન-અનિત્ય હોતા હૈ—સદા રહને ચાલા નહીં હોતા હૈ । કયોં કિ ઉમમેં ઉત્પત્તિ ઓર વિનાશ હોના યે દો ઘાતે પ્રત્યક્ષ સે હી અનુમૂયમાન હોતી હૈ । (મયા સમિયં ઉવચિજ્ઞઃ ય અવચિજ્ઞઃ ય) ઘટ્ટ સ્કન્ધરૂપ પર્યાય સર્વદા હી—સય સમય મેં હી—નિયમ સે મનિત્ય હોન કે કારણ ચય ઓર અપચય કો પ્રાપ્ત કરતી રહતી હૈ ।

જો અન્યતીર્થિકજનોં ને એસા કહા હૈ કિ (પંચ પરમાણુપુટલા સંહતા કર્મતયા મવન્તિ) પાંચ પરમાણુપુટલ સંહત હોકર—પરસ્પર મેં મિલકર—કર્મરૂપ સે પરિણત હો જાતે હૈ સો સનકા એસા કહના બી યુક્ત નહીં હૈ । કયોં કિ કર્મરૂપ જો પર્યાય હૈ ઘટ્ટ અનંત પુટલ પરમાણુઓ કે સમેલન સે નિવ્વલ્લ હોતી હૈ । અમ ઘટ્ટ અનંત સ્કન્ધ રૂપ હોતી હૈ । પાંચ પરમાણુઓં ક સમેલન સે જો પર્યાયરૂપ સ્કન્ધ ઉત્પન્ન હોતા હૈ ઘટ્ટ સો કેવલ સ્કન્ધ રૂપ હી હોના હૈ । તયા જીવ કે સ્વભાવ કો આચરણ કરને ચાલા કર્મ હોના હૈ—અર્થાત્ કર્મ કા ઘટ્ટ સ્વભાવ હૈ કિ ઘટ્ટ આત્મા કે દ્વાનાદિક ગુણોં કા આચરણ કરે । જ્ઞાનાદિક ગુણોં કા આચરણ કરના યહી જીવ કા આચરણ કરના હૈ । કયોં કિ ગુણી

ત્વ (અશાશ્વત) હોમ છે કારણ કે તેની ઉત્પત્તિ અને વિનાશ પ્રત્યક્ષ અનુભવી શકાય છે, " સયા સમિયં ઉવચિજ્ઞઃ ય અવચિજ્ઞઃ ય " તે સ્કન્ધ પર્યાય સર્વદા—અથા સમયે—નિયમથી જ અનિત્ય હોવાને કારણે ઘટ્ટ અને અપચય પામ્યા કરે છે

અન્ય તીર્થિકાણુ પદ પરમાણુ પુટલા સહતાઃ કર્મતયા મવન્તિ" થાય પરમાણુ પુટલાણુ સયોજન થઈને તેઓ કર્મકરે પરિવૃત્તિ છે" આ કથન ખરું ચોખ્ખું નથી. કારણ કે કમરૂપ પર્યાયની ઉત્પત્તિ અને ત પરમાણુ પુટલાના સ યોગ થીજ થાય છે તેથી તે અને ત કમરૂપ હોય છે પાંચ પરમાણુના સયોજથી જે પર્યાયરૂપ કમ ઉત્પન્ન થાય છે તે તો કેવળ કમરૂપ જ હોય છે કમ' છતાં સ્વભાવને ઢાંકે છે એટલેકે કમનો જોવા સ્વભાવ હોય છે કે તે આત્માના જ્ઞાનાદિક ગુણોને ઢાંકી દે છે છતાં જ્ઞાનાદિક ગુણો આનંદ

ચં સ્કન્ધમાત્રરૂપત્વાત્, તથા કર્મ જીવસ્યાવરણસ્વભાવમિષ્યતે તત્ કથં પञ्च-
પરમાણુસ્કન્ધમાત્રરૂપ સત્ અસંખ્યાતપ્રદેશાત્મકં જીવમાવૃણુયાદિતિ । તથા કર્મણો
યંત્ શાશ્વતત્વમુક્તં તદપિ ન સંગતમ્, તથાસતિ કર્મણઃ શાશ્વતત્વે ક્ષયોપશમાદીના
મભાવાત્ જ્ઞાનાદીનામુત્પત્તિરેવ ન સ્યાત્ જ્ઞાનાદીનાં સર્વાનુભવસિદ્ધહાનિવૃદ્ધચોર-
ભાવપસંગાત્, દૃશ્યેતે ચ જ્ઞાનાદીનાં હાનિર્વૃદ્ધિશ્ચ । તથા યચ્ચોક્તમ્-કર્મ સદા
ચીયતેઽપચીયતે ચેતિ તદપ્યેકાન્તનિત્યત્વે ન સંભવતિ એકાન્તનિત્યસ્ય ચયો-

और गुण में अभेद विवक्षावश भेद नहीं होता है । यही बात दिखाने
के लिये टीकाकार ने (कर्म जीवस्यावरणस्वभावमिष्यते) यह कहा है
है । अतः जब कर्म का स्वभाव जीव को (आवरण करने का ही है-तब
यह विचार ने जैसी बात है कि असंख्यान प्रदेशवाले जीव का पांच
प्रदेश वाला कर्म कैसे आवरण कर सकता है। तथा कर्म की जो शाश्वत
कहा गया है वह भी संगत नहीं है । क्यों कि कर्म यदि शाश्वत मान
लिया जावे तो उसकी जो क्षयोपशम आदि अवस्थाएँ होती हैं वे नहीं
हो सकेंगी उनका अभाव मानना पड़ेगा । इनके अभाव में ज्ञानादिकों
की उत्पत्ति होने का अभाव आवेगा। क्यों कि कर्म के क्षयोपशम आदि
से ही तो ज्ञानादिकों की उत्पत्ति होती है। तथा ज्ञानादिकों में जो हानि
और वृद्धि कर्म के क्षयोपशम से जन्य होती है वह भी नहीं हो सकेगी
इनके भी अभाव होने का प्रसंग प्राप्त होगा । परन्तु ऐसा तो है नहीं
क्यों कि ज्ञानादिकों को हानि और वृद्धि लोक में स्पष्टरूप से देखने में

કરવું એટલે જીવનું આવરણ કરવું કારણ કે ગુણી અને ગુણમાં અલેહની
અપેક્ષાએ લેહ મનાતો નથી. એજ વાત બતાવવાને માટે સૂત્રકારે કહ્યું છે
કે “ કર્મ જીવસ્યાવરણસ્વભાવમિષ્યતે ” આ રીતે બ્યારે કર્મને સ્વભાવ જ
જીવને આવરણ કરવાનો છે ત્યારે અસંખ્યાત પ્રદેશવાળા જીવનું પાંચ પ્રદેશ
વાળું કર્મ કેવી રીતે આવરણ બની શકે । તથા કર્મને જે શાશ્વત કહે છે,
તે પણ સંગત નથી- જો કર્મને શાશ્વત માનવામાં આવે તો તેની જે ક્ષયોપ
શમ વગેરે અવસ્થાઓ હોય છે તે હોઈ શકે નહીં તેમનો અભાવજ માનવો
પડે અને તેનો જો અભાવ હોય તો જ્ઞાનાદિકની ઉત્પત્તિનો પણ અભાવ જ
માનવો પડશે, કારણ કે કર્મના ક્ષયોપશમ વગેરેથીજ જ્ઞાનાદિ પ્રકટ થય છે.
તથા જ્ઞાનાદિમાં જે હાનિ અને વૃદ્ધિ કર્મના ક્ષયોપશમથી થયા કરે છે
તે પણ થઈ શકે નહીં તેમનો પણ અભાવ માનવો પડે પરંતુ એવું તો
બનતું નથી જ્ઞાનાદિકની હાનિ અને વૃદ્ધિ લોકમાં સ્પષ્ટરૂપે જોવામાં આવે છે,

પચપામાત્રાત્ નહિ જગનસ્યેકાન્તનિત્યસ્ય કદાચિદપિ ચયાપચયૌ ભવત્ इति न
 कर्मण एकान्तसाधतस्त्वम्, अपि तु अज्ञानवतस्त्वमेव, तथा सत्येव चयापचयादीनां
 संभव इति । पूर्वं कथितमन्यसीर्विकैः 'पुंस्त्रि मासा मासा मासिज्जमाणी मासा
 अमासा' इत्यादि, शतत्वष्टयितुमुपक्रमते—'पुंस्त्रि मासा अमासा' इत्यादि,
 'पुंस्त्रि मासा अमासा' पूर्वं भाषा अमाषा, पूर्व—भाषणात् प्राक्काले या भाषा
 सा न भाषा, अमापेत्यत्र नञ् सम्बोऽमावार्थका, तथा मापणात् प्राक्काले भाषा
 त्व तत्र नास्ति, मापणात्पूर्वं भाषोत्पत्तेरप्यभावात् । एतावता मापणात् प्राक्का

આતી છે । તથા—પેસા જો કહા છે કિ કર્મ સદા ચય ઓર અપચય કો
 પ્રાપ્ત હોતા રહતા હૈ—સો યહ બાત કર્મ કી એકાન્ત શાશ્વતતા મેં થનતી
 હી નહીં છે । ક્યોં કિ જો પદાર્થ એકાન્તત નિત્ય હોતા છે ડસમેં ચય
 ઓર અપચય નહીં હોતે હૈ । જેસે આકાશ એકાન્તતઃ નિત્ય છે—સો ડસમેં
 ચય ઓર અપચય કમી મી નહીં હોતા હૈ । હસ તરહ વિચાર કરને પર
 કર્મ મેં એકાન્તતઃ શાશ્વતતા નહીં થનતી છે । કિન્તુ ડસમેં અશાશ્વતતા
 હી આતી છે । ક્યોં કિ કર્મ કો હસ પ્રકાર સે માનને પર હી ડસમેં ચય
 ઓર અપચય હોના સંભવતે હૈ । તથા જો અન્યસીર્વિકોં ને પેસા કહા છે
 કિ (પુંસ્ત્રિ માસા માસા, માસિજ્જમાણી અમામા) ઇત્યાદિ—માપણ
 સે પહિલે જો માપા છે વહ માપા છે થોલતે સમય કી વહ માપા માપા
 નહીં છે હસ બાત કો અય નિરાકરણ ક્રિયા જાતા છે—। પુંસ્ત્રિ માસા
 અમામા) ઇત્યાદિ, માપણ સે પહિલે માપા મેં માપાપન નહીં હોતા છે

તથા એવુ બે કહુ છે કે "કર્મ શદ્ધ વચ અને અપચય પામ્યા કરે છે,"
 એ વાત તો કર્મની એકાન્તતા શાશ્વત દશ્યમાં બની શકતી જ નથી, કારણ
 કે જે પદાર્થ એકાન્તતા નિત્ય હોય છે તેમાં વચ અપચય થતાં નથી એમ
 કે જ કાશ એકાન્તતા નિત્ય છે તો તેમાં વચ અને અપચય કરી પણ થતાં
 નથી જા રીતે વિચાર કરવામાં આવે તો કર્મમાં એકાન્ત શાશ્વતતા સંભવતી
 નથી, પણ તેમાં અશાશ્વતતા જ સંભવે છે જા રીતે કર્મમાં આશાશ્વતતા
 માનવામાં આવે તો જ તેમાં વચ અને અપચય થવાનું સંભવી શકે છે
 હવે અન્યસીર્વિકોંનું ભાષાના અજ્ઞાનમાં જે મતભેદ છે તેનું ખડન કરવામાં
 આવે છે 'પુંસ્ત્રિ માસા માસા માસિજ્જમાણીઅમામા' તેજો કહે છે કે
 ભાષણના પદોનાની જે ભાષા છે તેને જ ભાષા કહેવાય છે બોલવામાં આવતી
 ભાષા, ભાષા નથી. તો તેમના મતનું 'પુંસ્ત્રિ માસા અમામા' ઇત્યાદિ સૂત્રો
 વડે ખડન કરવામાં આવ્યું છે કે ભાષણથી પદોના ભાષામાં ભાષણનું હોતું

લિખ્યામેવ ભાષાયાં યત્ ભાષાત્વં વ્યવસ્થાપિતે પરૈસ્તન્નિરાકૃતમ્, । નનુ યદિ ઉચ્ચારણાત્ પ્રાક્ ભાષા ન ભવતિ તદા કદા ભાષા ભવતિ તત્રાહ-‘ ભાસિજ્જમા-
ળી ’ ઇત્યાદિ, ‘ ભાસિજ્જમાળી ભાસા ભાસા ’ ભાષ્યમાળા ભાષા ભાષા, ઉચ્ચા-
રણસમયે યા વર્તમાનકાલિકી ભાષા સૈવ ભાષેતિ ભાવઃ । ભાસા સમયવીજ્ઞકંતં ચ
ળં ભાસિયા ભાસા અભાસા ’ ભાષાસમયવ્યતિક્રાન્તે ચ સ્વલુ ભાષિતા ભાષા
અભાષા, ઉચ્ચારણાનન્તરકાલે ભાષિતાપિ ન ભાષા ભવતિ । યત્તૈઃ કથિતં વર્તમાન

કયોં કિ ભાષણ સે પહિલે ભાષોત્પત્તિ કા ભાષામેં અભાવ રહતા હૈ ।
અતઃ વહ અભાષા હૈ । અભાષા મેં જો નજૂ શબ્દ હૈ વહ અભાવર્થક હૈ ।
હસસે યહ વાત પ્રકટ કી ગઈ કિ બોલને સે પહિલે ભાષા મેં ભાષાપન
નહીં હોતા હૈ । એતાવતા ભાષણ સે પહિલે સમય મેં જો અન્યતીર્થિક
જનોં ને ભાષા મેં ભાષાપન વ્યવસ્થાપિત કિયા હૈ વહ નિરાકૃત હો જાતા
હૈ । યદિ યહાં પર કોઈ એસી આશંકા કરે કિ ઉચ્ચારણ સે પહિલે યદિ
‘ ભાષા ભાષા નહીં હોતી હૈ તો ભાષા કવ હોતી હૈ ? હસકે સમાધાન
નિમિત્ત સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ (ભાસિજ્જમાળી ભાસા ભાસા) ઉચ્ચા-
રણ સમય મેં જો વર્તમાન કાલિકી ભાષા હૈ વહી ભાષા હૈ । હસી ત્રહ
સે (ભાસા સમયવીજ્ઞકંતં ચ ળં ભાસિયા ભાસા અભાસા) ભાષા કા
સમય વ્યતિક્રાન્ત હો જાને પર ભાષિતા-બોલીગઈ-ભાષા અભાષા હૈ-
ભાષા નહીં હૈ । તાત્પર્ય હસકા યહ હૈ કિ ઉચ્ચારણ કરને કે અનન્તર
કાલ મેં બોલી ગઈ ભી ભાષા ભાષા નહીં હોતી હૈ । તથા જો અન્યતીર્થિયોં

નથી- કારણ કે ભાષણ પહેલાં ભાષામા ભાષોત્પત્તિનોજ અભાવ રહે છે તેથી
તે અભાષા છે- અભાષામાં જે નજૂ શબ્દ છે તે અભાવર્થક છે. તેની મારફત
એ વાત દર્શાવવામા આવી છે કે બોલ્યા પહેલાંની ભાષામા ભાષા પાણુડોતુ નથી.
તેથી ભાષણથી પહેલાના સમયની ભાષામાં અન્ય તીર્થિકોએ જે ભાષાપણુ બતાવ્યું
છે તેનું નિરાકરણ થઈ જાય છે કહાય અહીં કોઈને એવી શકા થાય કે ઉચ્ચારણ
‘ પહેલાની ભાષાને બે ભાષા ન કહેવાય ’ તો ભાષા કેને કહેવાય ? તે ‘ શકાના
સમાધાન માટે સૂત્રકાર કહે છે કે “ ભાસિજ્જમાળી ભાસા; ભાસા ” ઉચ્ચારણ
સમયે જે વર્તમાન કાળની ઉચ્ચારાતી ભાષા છે તેને જ ભાષા કહે છે એજ
પ્રમાણે “ ભાસાસમયવીજ્ઞકં તં ચ ળં ભાસિયા ભાસા અભાસા ” ભાષાને
સમય વ્યતીત થઈ ગયા પછી બોલવામા આવેલી ભાષા પણ અભાષા છે.
ભાષા નથી તેનું તાત્પર્ય એ છે કે ઉચ્ચારણ કર્યા પછીના કાળે બોલાયેલી
‘ ભાષા પણ ભાષા કહેવાતી નથી. પ્રતિક્ષી એવું જે કથન કરે છે કે વર્તમાન

સમયસ્યાતિસૂક્ષ્મતયા વ્યવહારાનુપયોગિત્વેન વર્તમાનકાલિકી ન માપેતિ, તદ્
 સાતમ્, વર્તમાનસમયસ્યૈવ વિષ્યમાનતયા વ્યવહારમયોમકતાત્, અતીતાનાગતસમ
 યયોસ્તુ અસત્ત્વેન વ્યવહારાનુપયોગિતાદિતિ । યત્ કથિતમ્ 'અમાસમો માસા'
 ઇત્યાદિ, તત્સ્યોષ્ઠર વદાતિ—'સા કિ માસમો માસા અમાસમો માસા' સા કિ
 માપમાણસ્ય માપા અમાપમાણસ્ય માપા, —માપમાણસ્ય વર્તમાનકાલિકોચ્ચારણ-
 કર્તુરેવ માપા માપા મપતિ અનુચ્ચારયિતુર્વા માપેતિ મમ્, તદુચ્ચરમ્—'માસમો
 ણ માસા નો સ્વલ્લ સા અમાસમો માસા' માપમાણસ્ય વર્તમાનકાલિકમાપણ
 કર્તુરેવ માપા, નો સ્વલ્લ સા અમાપમાણસ્ય માપા, ઉચ્ચારણાત્ માહ ન માપા,
 ઉચ્ચારમાનન્તરે ચ સા ન માપા કિન્તુ ઉચ્ચારણસમયે ઉચ્ચારયિતુરેવ યા માપા
 સૈવ માપા મપતિ, અતીતાનાગતકાલિકી અનુચ્ચારયિતુરુપસંબન્ધિની માપા ન માપા

ને એસા કહા, કે કિ વર્તમાન કાલ અતિસૂક્ષ્મ હોને સે વ્યવહાર મેં અનુ
 પયોગી હોતા કે અર્થાત્ વ્યવહાર કા અંગ નહીં હોતા કે સ્વ કારણ વર્ત
 માનકાલ સંબંધી માપા માપા નહીં હોતો કે—સો એસા કહના મી ઠીક
 નહીં કે—કયોં કિ વર્તમાન જો સમય હોતા કે વહી વિષ્યમાન હોને કે
 કારણ વ્યવહાર કા પ્રયોજક હોતા કે । અતીત અનાગત જો સમય હોંવે
 તો અસત્ત્વ હોતે કે—સ્વ કારણ વે વ્યવહાર મેં અનુપયોગી હુઆ કરતે
 હે । તથા અન્યતીર્પિયોને જો પહિલે એસા કહા કે કિ (અમાસમો માસા)
 નહીં બોલતે હુપ કી માપા માપા કે—સો સ્વકા ઉત્તર દેતે હુપ સૂચકાર
 કહતે કે કિ—(માસમો ણ માસા, નો સ્વલ્લ સા અમાસમો માસા)
 વર્તમાનકાલ મેં જો પુરુષ ઉચ્ચારણ કર રહા કે હસી પુરુષ કી માપા
 માપા હોતી કે, ઉચ્ચારણ કે પહિલે કોર ઉચ્ચારણ કે પાદ મેં માપા

કાળ અતિ સૂક્ષ્મ હોવાથી વ્યવહારમાં અનુપયોગી હોય છે એટલે કે વ્યવહાર
 અંગ બનતો નથી, તે કારણે વર્તમાન કાળની, માપા; માપા નથી તેમજ તે
 કથન પણ યોગ્ય નથી. કારણ કે વર્તમાન સમય જ વિષ્યમાન હોવાથી વ્યવ
 હારનો પ્રયોજક હોય છે ત્યારે ભૂતકાળ અને અવિશ્યકાળનો સમય તો અસત
 રૂપ હોય છે તે કારણે તેઓ વ્યવહારમાં અનુપયોગી રહ્યા કરે છે તથા
 પ્રતિપક્ષીએ પહેલાં એવું બે કથન છે કે "અમાસમો માસા" નહીં બોલનારની
 માપા; માપા કહેવાય છે તો તેમની તે માન્યતાનું ખરું કરવા માટે સૂચકાર
 કહે છે કે 'મામામો જ માસા ન યલ્લ સા અમાસમો માસા' વર્તમાનકાલે
 જે પુરુષ ઉચ્ચારણ કરી રહ્યો હોય છે એજ પુરુષની માપાને માપા કહેવાય છે,
 ઉચ્ચારણ પહેલાંની કે ઉચ્ચારણ પછીની માપાને માપા કહેવાતી નથી. ભૂતકાળ

भवतीति सूत्राशयः । यदप्युक्तं 'भाषासमयव्यतिक्रान्ते' इत्यादि, तदपि न युक्तं भाष्यमाणभाषाया अभावे 'भाषा समय वीङ्कतं च णं' इत्यस्याभिलापस्याभावप्रसंगात् यश्च प्रतिपाद्यस्याभिधेये प्रत्ययोत्पादकत्वादिति हेतुः सोऽप्यहेतुरनैकान्तिक एव, प्रतिपाद्यपुरुषनिष्ठविषयज्ञानोत्पादकत्वस्य करादिवेष्टानां विद्यमानत्वेपि करादिवेष्टायां भाषात्वस्यासिद्धेरिति । यदपि कथितम्—'अभाषकस्य भाषा भाषा' तदपि न संगतम्, एवं सति सिद्धजीवस्याचेतनस्य वा भाषाप्राप्तिप्रसंगादिति ।

भाषा नहीं है । अतीत और अनागत काल में अनुच्चारयिता पुरुष संबंधी भाषा भाषा नहीं होती है । तथा जो उसने ऐसा कहा है कि भाषा समय के व्यतीत हो जाने पर बोली गई भी भाषा भाषा नहीं होती है—सो ऐसा कहना भी अयुक्त है—क्यों कि जब अन्यतीर्थियों ने भाष्यमाण भाषा को भाषारूप से ही अंगीकार नहीं किया है तो (भाषासमयवीङ्कतं च णं) इस अभिलाप के ही अभाव का प्रसंग आता है । अर्थात् ऐसा अभिलाप नहीं बोला जा सकता है । क्यों कि वर्तमानकालिकी भाषा भाषारूप से जब स्वीकार ही नहीं की गई है तो भूतकाल संबंधी भाषा भाषारूप से कैसे मानी जा सकती है । अतः इस सूत्र का अभिलाप ही नहीं हो सकता है । तथा जो भूतकाल की भाषा-पूर्णरूप से बोली गई भाषा-प्रतिपाद्य-सुनने वाले के लिये अभिधेय-वाच्यपदार्थ में—प्रत्ययोत्पादक होती है—अर्थात् पूर्णरूप बोली गई भाषा के सुनने से सुनने वाले व्यक्ति को तद्वाच्यार्थ का बोध हो जाता है—

अने लविष्यकाणमा पुरुषे नही उच्यारेदी लाषाने लाषा कडेता नथी वणी प्रतिपक्षीअ ओवु जे कछु छे के लाषाने समय व्यतीत थया पछी ओलायेदी लाषाने लाषा कडेवाय ते कथन पणु णराणर नथी कारण के प्रतिक्षीअ न्यारे लाष्यभाषु (ओदती) लाषाने लाषाउपे स्वीकारी न नथी त्यारे "भाषा समयवीङ्कतं च णं" तो आ अलिलापना अलापनो न प्रसंग आवे छे. ओटवे के आ प्रकारनो अलिलापन ओदी शकय नही. कारणके वर्तमान काणनी लाषाने ओ लाषाउपे स्वीकारी नथी तो भूतकाणनी लाषाउपे केवी रीते स्वीकारी शकय । तेथी आ सूत्रनो अलिलाप न थई शके नही. तथा भूतकाणनी लाषा पूरुणुपे ओलायेदीलाषा प्रतिपाद्य-श्रोताने माटे-अभिधेय-वाच्यपदार्थ मां प्रत्ययोत्पादक थाय छे, ओटवे के पूरुणुपे ओलायेदी लाषा सांलणवाथी सांलणनार व्यक्तिते तेनो वाच्यार्थ समजय छे-तेथी ओध करावनार होवाथी भूतकाणनी लाषाने लाषा कडेवी ते पणु योग्य नथी. कारण के तेमां जेप्रत्य-

— એ ત્રિયાપિ વર્તમાનકાલે એ ચુષ્કેત્યાશ્ચયેના—‘પુર્વિ કિરિયા’ ઇત્યાદિ,
‘પુર્વિ કિરિયા અદુસ્તા’ પૂર્વ ક્રિયા અદુસ્તા, પૂર્વકાલિકી યા ક્રિયા સા ન
દુઃસ્વકારણમિતિ ‘ઘટા માસા તદા માણિયન્વા’ યથા માપા તથા મણિયન્વા,

અતઃ ઘોષ કરાને ચાલે હોને સે ઘટ મૂતકાલ સંબંધી માપા માપા હૈ સો
પેસા કહના મી ટીક નહીં હૈ—કર્પો કિ હસમેં જો પ્રત્યયોત્પાદકત્વ હેતુ
દિયા ગયા હૈ ઘટ અપને સાધ્ય કે અભાવ મેં મી રહતા હૈ અતઃ અને
કાન્તિક હૈ । સાધ્ય કે અભાવ મેં મી રહને ચાલા હેતુ અનેકાન્તિક
માના જાતા હૈ ઘટ હસ પ્રકાર સે—કર્પો કિ સુનને ચાલે કો-
પ્રતિપાદ—જો વિષય સંબંધી જ્ઞાન કરાયા જાતા હૈ ડસકે પ્રતિ હેતુતા તો
કરાદિ ચેષ્ટાઓં મેં મી આતી હૈ । કર્પો કિ પ્રતિપાદ પુરુષ ડનકી
ચેષ્ટાઓં દ્વારા ઘાઘ્યાર્થ કા ઘોષ કર લિયા કરતા હૈ । અતઃ (સમય
વ્યતિક્રાન્તે સતિ માપિતા માપા માપા પ્રત્યયોત્પાદકત્વાત્) ઘટ હેતુ
કરાદિ ચેષ્ટાઓં મેં મી ચલા ગયા હોને સે ઘટ માપાત્વ કે અભાવ મેં
અનેકાન્તિક હો જાતા હૈ । તથા જો પેસા કહા-ગયા હૈ કિ અમાપ
કી માપા માપા હૈ સો ઘટ કહના મી સગત નહીં હૈ । કારણ કિ હસ
પ્રકાર કી માપતા મેં સિદ્ધ જીવ ઓર અચેતન પદાર્થ મેં માપા કી પ્રાપ્તિ
હોને કા પ્રસંગ આતા હૈ । હસી તરફ ક્રિયા મી વર્તમાન કાલ મેં હી
યુક્ત હૈ—હસી આશય સે સૂત્રકાર ને (પુર્વિ કિરિયા અદુસ્તા) પેસા કહા
હૈ કિ પૂર્વકાલ મેં કી ગઈ ક્રિયા કુત્વ કી હેતુ નહીં હોતી હૈ । (જહા

ચેત્યાદિકત્વ હેતુ આપવામા આવેલ છે તે તેના સાધ્યના અભાવમા પણ રહે
છે અનેકાન્તિક છે સાધ્યના અભાવમાં પણ રહેનાર હેતુને અનેકાન્તિક હેતુ
માનવામા આવે છે તે આ પ્રમાણે—સાલજનારને—પ્રતિપાદને—વિષય (વસ્તુ)
સબંધી જે જ્ઞાન અપાય છે તેના પ્રત્યેની હેતુતા તો કર વગેરેની ચેષ્ટાઓમાં
પણ આવે છે કારણ કે પ્રતિપાદ પુરુષ (સાલનાર) તેમની ચેષ્ટાઓ વડે
પણ વાઘ્યાયને સમજી શકે છે તેથી “સમયવ્યતિક્રાન્તે સતિ માપિતા માપા
માપા પ્રત્યયોત્પાદકત્વાત્” તે હેતુ વગેરેની ચેષ્ટાઓમાં પણ આવેલો ગયો
હોવાથી ત્યાં માપાપણના અભાવે અનેકાન્તિક હેતુ થઈ જાય છે તથા અમા
પકની બાંધને બાંધ કહેવી તે પણ સંજત નથી કારણ કે જો આ જાતની
માન્યતાને સ્વીકારવામા આવે તો સિદ્ધ છવો અને અચેતન પદાર્થમા પણ
માપાની પ્રાપ્તિ થવાનો પ્રસંગ ઉદ્ભવે છે એજ રીતે ક્રિયા પણ વતમાનકા
લમા જ યુક્ત છે એ આશયથી સૂત્રકારે કહ્યું છે કે—“પુર્વિ કિરિયા અદુ
સ્તા” પૂર્વકાલે કરવામા આવેલા ક્રિયા કુત્વના હેતુરૂપ થવી નથી, “ઘટા

યથા ભાષાયા વર્તમાનકાલે એવ ભાષાત્વં તથા વર્તમાનકાલિક્રિયાયા એવ સુખ
દુઃખાદિજનકત્વં ન તુ પૂર્વકાલિકીપરકાલિકયોઃ દુઃખાદિજનકત્વમિતિ ભાવઃ।
“કિરિયાવિ જાવ કરણઓ દુઃખા નો સ્વલુ સા અકરણઓ દુઃખા” ક્રિયાપિ
યાવત્ કરણતઃ સા દુઃખા નો સ્વલુ અકરણતો દુઃખા, કરણતઃ કુર્વત એવ ક્રિયા
દુઃખસ્ય કારણં ભવતિ, તથૈવ દર્શનાત્, ન તુ અકરણાત્ ક્રિયા દુઃખકારણં
ભવતિ, પ્રતીતિવાધિતત્વાત્, દૃશ્યતે હિ લોકે કરણસમયે એવ ક્રિયાયા દુઃખો-
ત્પાદકત્વં સુખોત્પાદકત્વં વા, પૂર્વકાલે પરકાલે ચ ક્રિયાયા એવાભાવાત્, અભાવ-
સ્ય ચ કાર્યાજનકત્વાત્, અન્યથા અભાવસ્ય સદા સર્વત્ર વિદ્યમાનત્વેન સર્વકાર્યસ્ય
સર્વત્ર સદ્ભાવમસદ્ભાવ, યદિ અભાવસ્યાપિ ઉત્પાદકત્વં ભવેત્તદા ઘટાર્થી પુરુષો

ભાષા તથા ભાણિયઞ્વા) જૈસે વર્તમાન કાલ સંબંધી હી ભાષા ભાષારૂપ
હોતી હૈ ઉસી પ્રકાર સે વર્તમાનકાલ સંબંધી હી ક્રિયાસુખ દુઃખાદિ કા
કારણ હોતી હૈ । પૂર્વકાલ સમ્બન્ધી યા પરકાલ સમ્બન્ધી ક્રિયા સુખ
દુઃખ આદિ કા કારણ નહીં હોતી હૈ । (કિરિયા વિ જાવ કરણઓ
દુઃખા નો સ્વલુ સા અકરણઓ દુઃખા) ક્રિયા અપને કરને વાલે કો
હી દુઃખ દેને વાલી હોતી હૈ-નહીં કરને વાલે કો નહીં । ક્યોં કિ લોક
મેં એસા હી દેખા જાતા હૈ । નહીં કરને વાલે કો ક્રિયા દુઃખ કી જનક
નહીં હોતી હૈ । યદિ એસી વાત માની જાવે કિ નહીં કરને વાલે કો
ક્રિયા દુઃખ કી જનક હોતી હૈ તો યહ વાત પ્રતીતિ સે વાધિત હૈ । લોક
મેં એસા હી દેખા જાતા હૈ કિ ક્રિયા કરને કે સમય મેં હી સુખ દુઃખ કી
જનિકા હોતી હૈ । જવ પૂર્વકાલ મેં અથવા પરકાલ મેં ક્રિયા કા હી અભાવ
હો ચુકા હૈ તો વહ સુખ દુઃખાદિ કી જનક કૈસે હો સકતી હૈ । અભાવ

ભાષા તથા ભાણિયઞ્વા ” જેવી રીતે વર્તમાન કાળની ભાષા ભાષારૂપ હોય છે
એજ રીતે વર્તમાનકાળની ક્રિયા જ સુખ દુઃખ વગેરેના કારણરૂપ હોય છે.
પૂર્વકાળની કે પરકાળની ક્રિયા સુખદુઃખાદિના કારણરૂપ હોતી નથી “ કિરિયા
વિ જાવ કરણઓ દુઃખા નો સ્વલુ સા અકરણઓ દુઃખા ” ક્રિયા કરનારને જ
દુઃખદેનારી હોય છે, નહીં કરનારને દુઃખદાયક હોતી નથી કારણ કે લોકમાં
એવું પ્રત્યક્ષ જોવામા આવે છે જો એ વાત માની લેવામાં આવે કે નહીં
કરનારને માટે ક્રિયા દુઃખની જનક છે, તો તે વાતની પ્રતીતિ થઈ શકતી
નથી લોકમાં એવું સ્પષ્ટ જોવામા આવે છે કે ક્રિયા, કરવાને સમયે જ સુખ
દુઃખની જનક હોય છે જો પૂર્વકાળે અથવા પરકાળે ક્રિયાનો જ અભાવ થઈ
થક્યો-હોય તો તે સુખદુઃખાદિની જનક કેવી રીતે બની શકે ? અભાવ કોઈ

વળગીનીનામુપાદાને 'ન કુર્યાત્, ન ચા મોક્ષાર્થી' તેવાસંયમોથી પ્રયત્ન કર્યાતે, મતઃ! પૂર્વકાલિકી પચાત્કાલિકી 'ચ ન ક્રિયા ન મુલ્યદુઃસ્વાદિજનનિકા, 'અપિ તુ વર્તમાનકાલિકી તથા 'ક્રિયમાણેન' ક્રિયાં 'દુઃસ્વાદિકારણમિતિ । ' સેવં વચનં સિયા ' તદેવં વક્તવ્યં સ્યાત્, તદેવ કરણેત એવ ક્રિયા 'દુઃસ્વજનનિકા ન તુ અકરણતઃ ક્રિયા દુઃસ્વજનનિકા इत्येष रूपेण' વક્તવ્યં સ્યાત્ વચનં અનુયોદિતિ માતૃ ।

અથ 'દુઃસ્વવિષયે માહ—' કિંત્વં ' इत्यादि ।

' કિંત્વં દુઃસ્વં ' કૃત્યે દુઃસ્વમ્, વર્તમાનકાલાપેક્ષયા ' ક્રિયાદ્વારેણ સપાપમાનમેવ દુઃસ્વં મૂલતિ ન તુ અકૃત્યે ક્રિયામન્તરેણ દુઃસ્વં સ્વમાવત એવ મૂલતિ, 'કુસં દુઃસ્વં'

કિસી મી કાર્ય-કા-જનક નહીં-હોના-હૈ ।-યદિ-અમાર-મેં-કાર્ય-જનકતા-માની-ઢાવે-તો-અમલ-તો-સદા-સર્વથા-વિષયમાન-રહતો-હી-હૈ-ફિર-કયા-સબ-જગદ-સય-કાર્ય-કી-ઉત્પત્તિ-હોતી-રહની-ચાહિયે ।-ફિર-કયા-જે-રત-હૈ-કિ-ઘનાદિપદાર્થો-કી-ઉત્પત્તિ-કરને-કે-નિમિત્ત-વળગાદિ-કારણો-કો-ગ્રહણ-કરને-કી ।-ઔર-કયા-આવશ્યકતા-હૈ-મોક્ષાર્થી-કે-લિયે-સંયમાદિ-કે-પ્રયત્ન-કરને-કો ।-इसलिये-यही-मानना-चाहिये-कि-पूर्व-कालिको-तथा-परकालिकी-क्रिया-मुख-दुःस्व-आदि-की-जननिका-नहीं-होती-है, 'केवल-वर्तमानकाल-सम्बन्धी-क्रियमाण-क्रिया-ही-मुख-दुःस्वादिक-की-जनक-होती-है । (સેવં વચનમ્ સિયા) इस तरह-ऐसा-कहा-जा-सकता-है-कि-मिया-अपने-करने-वाले-को-ही-दुःस्व-जमक-होती-है-नहीं-करने-वाले-को-नहीं ।

यहां-क्रिया-के-सम्बन्ध-को-लेकर-जो-ऐसा-कहा-गया-है-कि-क्रिया-वर्तमान-कालिकी-ही-करने-वाले-को-मुखदुःस्वादिक-की-जनक-होती-है

પણ કાપત્તિ જનક બની શકતો નથી, બે-અભાવમાં કાચ જનકતા માની લેવામાં આવે તો અભાવ તો સર્વથા સદા મોજૂદ હોય છે તો પછી સમગ્રી જગ્યાએ સમગ્ર કાર્યની ઉત્પત્તિ યથા કરવી જોઈએ ! પછી તો યા વજેરેના નિર્માણને માટે, કેડ વજેરે કારણોને ઉપયોગ કરવાની આવશ્યકતા શી છે ? મોક્ષને માટે સંયમ વજેરેની પણ શી આવશ્યકતા, રહે ? તેથી જો પાત માનવી જ પછો કે પૂર્વકાળની તથા પરકાળની ક્રિયા સુખદુઃખ વજેરેની જનક હોતી નથી, કેવલ વર્તમાન કાળે કરાતી ક્રિયા જ સુખદુઃખ વજેરેની જનક બને છે ' સેવં વચનમ્ સિયા ' આ રીતે જોવું કહી શકાય કે ક્રિયા કરનારને જ ક્રિયા દુઃખ જનક થાય છે નહીં કરનારને દુઃખજનક થતી નથી,

અહીં ક્રિયાના વિષયમાં જોવું જે કહેવામાં આવ્યું છે કે વર્તમાનકાળની જ ક્રિયા કરનાર-અંશિતને સુખદુઃખ વજેરેની જનક થાય છે-જૂલ

યથા ભાષાયા વર્તમાનકાલે એવ ભાષાત્વં તથા વર્તમાનકાલિક્રિયાયા એવ સુખ
દુઃખાદિજનકત્વં ન તુ પૂર્વકાલિકીપરકાલિક્યોઃ દુઃખાદિજનકત્વમિતિ ભાવઃ।
'કિરિયાવિ જાવ કરણઓ દુઃખા નો સ્વલ્પ સા અકરણઓ દુઃખા' ક્રિયાપિ
યાવત્ કરણતઃ સા દુઃખા નો સ્વલ્પ અકરણતો દુઃખા, કરણતઃ કુર્વત એવ ક્રિયા
દુઃખસ્ય કારણં ભવતિ, તથૈવ દર્શનાત્, ન તુ અકરણાત્ ક્રિયા દુઃખકારણં
ભવતિ, પ્રતીતિવાધિતત્વાત્, દૃશ્યતે હિ લોકે કરણસમયે એવ ક્રિયાયા દુઃખો-
ત્પાદકત્વં સુખોત્પાદકત્વં વા, પૂર્વકાલે પરકાલે ચ ક્રિયાયા એવાભાવાત્, અભાવ-
સ્ય ચ કાર્યાજનકત્વાત્, અન્યથા અભાવસ્ય સદા સર્વત્ર વિદ્યમાનત્વેન સર્વકાર્યસ્ય
સર્વત્ર સદ્ભાવપ્રસદ્ભાત્, યદિ અભાવસ્યાપિ ઉત્પાદકત્વં ભવેત્તદા ઘટાર્થો પુરુષો

ભાસા તથા ભાણિયઞ્વા) જૈસે વર્તમાન કાલ સંબંધી હી ભાષા ભાષારૂપ
હોતી હૈ ઉસી પ્રકાર સે વર્તમાનકાલ સંબંધી હી ક્રિયાસુખ દુઃખાદિ કા
કારણ હોતી હૈ । પૂર્વકાલ સમ્બન્ધી યા પરકાલ સમ્બન્ધી ક્રિયા સુખ
દુઃખ આદિ કા કારણ નહીં હોતી હૈ । (કિરિયા વિ જાવ કરણઓ
દુઃખા નો સ્વલ્પ સા અકરણઓ દુઃખા) ક્રિયા અપને કરને વાલે કો
હી દુઃખ દેને વાલી હોતી હૈ-નહીં કરને વાલે કો નહીં । ક્યોં કિ લોક
મેં એસા હી દેખા જાતા હૈ । નહીં કરને વાલે કો ક્રિયા દુઃખ કો જનક
નહીં હોતી હૈ । યદિ એસી વાત માની જાવે કિ નહીં કરને વાલે કો
ક્રિયા દુઃખ કી જનક હોતી હૈ તો યહ વાત પ્રતીતિ સે વાધિત હૈ । લોક
મેં એસા હી દેખા જાતા હૈ કિ ક્રિયા કરને કે સમય મેં હી સુખ દુઃખ કી
જનિકા હોતી હૈ । જવ પૂર્વકાલ મેં અથવા પરકાલ મેં ક્રિયા કા હી અભાવ
હો ચુકા હૈ તો વહ સુખ દુઃખાદિ કી જનક કૈસે હો સકતી હૈ । અભાવ

ભાસા તથા ભાણિયઞ્વા ” જેવી રીતે વર્તમાન કાળની ભાષા ભાષારૂપ હોય છે
એજ રીતે વર્તમાનકાળની ક્રિયા જ સુખ દુઃખ વગેરેના કારણરૂપ હોય છે.
પૂર્વકાળની કે પરકાળની ક્રિયા સુખદુઃખાદિના કારણરૂપ હોતી નથી “ કિરિયા
વિ જાવ કરણઓ દુઃખા નો સ્વલ્પ સા અકરણઓ દુઃખા ” ક્રિયા કરનારને જ
દુઃખદેનારી હોય છે, નહીં કરનારને દુઃખદાયક હોતી નથી કારણ કે લોકમાં
એવું પ્રત્યક્ષ જોવામા આવે છે જો એ વાત માની લેવામાં આવે કે નહીં
કરનારને માટે ક્રિયા દુઃખની જનક છે, તો તે વાતની પ્રતીતિ થઈ શકતી
નથી લોકમાં, એવું સ્પષ્ટ જોવામા આવે છે કે ક્રિયા, કરવાને સમયે જ સુખ
દુઃખની જનક હોય છે જો પૂર્વકાળે અથવા પરકાળે ક્રિયાનો જ અભાવ થઈ
ચૂકયો હોય તો તે સુખદુઃખાદિની જનક કેવી રીતે બની શકે ? અભાવ કોઈ

દુઃસ્વાદિક મોગને પહોંચે હો—સો ઘાત મી નહીં હૈ । ક્રિયા ફલ તો હસે
 પાદ મેં હી પ્રાય મિલતા હૈ । અતઃ યહ ઘાત કેસે માની જા સકતી હૈ
 'કિ ઘર્તમાનકાલિકી ક્રિયા હી અપના સુખદુઃસ્વાદિરૂપ ફલ દેતી હૈ' શ્રુત
 મધિષ્યત્ કાલીન ક્રિયા નહોં । સમાધાન—સિદ્ધાન્ત કી યહ માન્યતા હૈ
 'કિ કર્મ અપની અવાધાસ્થિતિ કે પાદ હી ફલ દેતા હૈ । શ્રુમાશ્રુમ કર્મ
 કા બંધ મન, ઘષ્ટન ઓર કાય ફનકી શ્રુમ ઓર અશ્રુમ પ્રવૃત્તિ પર અવ
 લમ્બિત હોતા હૈ । કાય સમ્યગ્ કી ક્રિયા જીવોં કે દ્વારા જૈસી કી જાંબેગી
 વસી કે અનુસાર કર્મ કા બંધ હોગા । બંધ કે પાદ હસ કર્મ કા ઉદય
 વસી સમય આ જાવે યહ નિયમ નહીં હૈ । અવાધાકાલ વ્યતીત હોને
 પર કર્મ કા ઉદય મેં આવેગા હી, અતઃ જિસ જીવ ને મૃતકાલ મેં હિંસા
 આદિ ક્રિયા કી હૈ—હસ જીવ કા હસ ક્રિયા કે કરતે સમય જૈસા આ
 ત્મ પરિણામ રહા હસીકે અનુસાર હસે કર્મ કા બંધ દુઃખા ઓર હસને
 અપને ઉદય મેં આવે પર સુખદુઃસ્વાદિરૂપ ફલ દિયા । સો યહ કર્મ કી
 ઉદય મેં આવે રૂપ જો ક્રિયા હૈ । હસે હી જીવ કા સુખદુઃસ્વાદિરૂપ
 ફલ મિલા હૈ । કર્મ કા ઉદય મેં આવે યહી ઘર્તમાનકાલિકી ક્રિયા હૈ ।
 હસ કપન સે યહ સ્પષ્ટ હો જાતા હૈ 'કિ જીવને પહિલે મૃતકાલ મેં હિંસા
 ક્રિયા કી હૈ—સો જીવ કે જપ હસ હિંસા જપ કર્મ કા ઉદય આવેગા

મનુષ્યને વતમાન સમયે જ તેનું ફળ લોગવુ પડે છે એવું પણ એવામાં
 આવતું નથી. સામાન્ય રીતે ક્રિયાનું ફળ તેને અવિધ્યમાં જ મળે છે તેથી એ
 વાત કેવી રીતે માની શકાય કે વર્તમાનકાળની ક્રિયા જ મુખદુઃખાદિ ફળ
 ફળ દે છે, મૃત અને અવિધ્યકાળની ક્રિયા નહીં.

સમાધાન—સિદ્ધાન્તની એ માન્યતા છે કે પ્રત્યેક ક્રમ પોતાની અવસ્થા
 સ્થિતિ પછી જ ફળ આપે છે શ્રુમાશ્રુમ કર્મનો બંધ મન, ઘષ્ટન અને
 કાયાની શુભ અને અશુભ પ્રવૃત્તિ પર આધાર રાખે છે કાય સબથી ક્રિયા
 હવે મારફત જેવી કરારો તે પ્રમાણે કર્મનો બંધ બધારો, બંધ બંધાયા
 પછી તે કર્મ એજ સમયે ઉદયમાં આવે છે એવો નિયમ નથી. અવાધાકાળ
 વ્યતીત થયા પછી ક્રમ ઉદયમાં આવશે જ તેથી ને જીવે મૃતકાળમાં હિંસા
 વગેરે ક્રિયા કરી છે તે હવેનું તે ક્રિયા કરતી વખતે જેવું આત્મ પરિણામ
 રહ્યું તે પ્રમાણે તેને કર્મનો બંધ પડ્યો અને તેણે ઉદયમાં આવતા મુખ
 દુઃખાદિ ફળ ફળ રીધું આ રીતે ક્રમની ઉદયમાં આવવા ફળ ને ક્રિયા છે
 તેનાથી જ હવેનું મુખદુઃખાદિ ફળ ફળ મળે છે કર્મનું ઉદયમાં આવવું એજ
 વતમાનકાળની ક્રિયા છે આ કથન વડે એ વાત સ્પષ્ટ બધાય છે કે હવે

મૃત, ભવિષ્યત્કાલની ક્રિયા સુખદુઃખાદિકની જનક નહીં-હોતી-હૈ
 ઓર ન વહ અપને કરને વાલે કો હી સુખદુઃખાદિકની જનક હોતી હૈ
 સો ઇસ પર કોઈ તદસ્થ શિષ્ય એસી શંકા કર-સકતા હૈ કિ ૬ દિન
 પહિલે અથવા ઇસકે-ભી પહિલે અનર્થ કરને વાલે વ્યક્તિ કો અનર્થરૂપ
 કી ગઈ-વહ ક્રિયા દુઃખ જનક નહીં હોની ચાહિયે, પરન્તુ વ્યવહાર-મેં
 હમ દેખતે હૈં કિ-પૂર્વ મેં કી ગઈ વહ ક્રિયા વર્તમાન મેં દુઃખ જનક હોતી
 હૈ । જવ કિસી મનુષ્ય પર હત્યારૂપ ક્રિયા કરને કા અભિયોગ પ્રમાણિત
 હો જાતા હૈ તો વહ વર્ષોં પહિલે કી હત્યારૂપ ક્રિયા વર્તમાનકાલ મેં ઉસે
 ફાંસી આદિ-કે રૂપ મેં-દુઃખજનક-પ્રકટ દેખને મેં આતી હૈ । ઇસી તરહ
 આવેશ મેં આકર કિસી કી-હત્યા કરને પર ઉતારુ હુએ પુરુષ કો તલવાર
 લેકર મારને કે લિયે જાતે સમય જવ-સરકારી આદમી પકડ લેતા હૈ તો
 ઉસે ઉસી સજા કા પાત્ર-હોના પડતા-હૈ જિસકા પાત્ર હત્યા કરને વાલે
 કો હોના પડતા હૈ । ઇસસે યહ સાબિત હોતા હૈ કિ વર્તમાન મેં હત્યા-
 રૂપ ક્રિયા નહીં કરને પર ભી આગે હોને વાલી ઉસ ક્રિયા ને ઉસ-કરને
 કે ભાવ વાલે વ્યક્તિ કો અભી હી અપના ફલ દે દિયા । તથા-જિસ
 પુરુષ ને વર્તમાન મેં કિસી કી હત્યા કી-હૈ ઉસે ઉસી સમય ઉસે ફલ

ભવિષ્યતકાળની ક્રિયા સુખદુઃખ વગેરેની જનક થતી નથી અને તે કરનારને
 જ સુખદુઃખ વગેરેની જનક થતી નથી-તો તે વિષે કોઈ તદસ્થ શિષ્ય એવી
 શંકા કરી શકે કે છ દિવસ પહેલાં અથવા તેના કરતા પણ આગળ અનર્થ
 કરનાર મનુષ્યને અનર્થરૂપે કરાયેલી તે ક્રિયા દુઃખ જનક થવી જોઈએ નહીં.
 પરંતુ વ્યવહારમાં તો એવું જોવા મળે છે કે પૂર્વે કરવામાં આવેલી તે
 ક્રિયા વર્તમાન સમયે દુઃખ જનક થાય છે ત્યારે કોઈ માણસ પર હત્યારૂપ
 ક્રિયા કરવાનો આરોપ-સાબિત થાય છે ત્યારે વર્ષો પહેલાં તેણે કરેલી હત્યાના
 ફળરૂપે તેને ફાંસી વગેરે દુઃખજનક ફળ ભોગવવા પડે છે, એજ પ્રમાણે
 આવેશમાં આવી જઈને કોઈની હત્યા કરવા માટે હાથમાં તલવાર લઈને ધસી
 જતા માણસને કોઈ પોલિસ પકડી લે તો તેને એજ સજા ભોગવવી પડે છે
 કે જે હત્યા કરનાર ભોગવે છે આ દંડાંતો વડે એ સિદ્ધ થાય છે કે વર્ત-
 માન સમયે હત્યારૂપ ક્રિયા નહીં કરવા છતાં પણ ભવિષ્યમાં થનારી તે
 ક્રિયાએ તે ક્રિયા કરવાની ઇચ્છાવાળી વ્યક્તિને વર્તમાન સમયે જ તેનું ફળ
 ઇધ દીધું, તથા જે મનુષ્યે વર્તમાન સમયે કોઈની હત્યા કરી હોય છે તે

‘વેયણ વેદેતિ’ વેદનાં વેદ્યન્તિ જીવા ક્રિયમાણકૃત દુઃખ કૃત્વા પુનઃ પુનઃ દુઃસ્વમનુભવન્તીતિ, ‘इति वक्तव्यं सिया’ इति एव पूर्वोक्तरूपेण वक्तव्यं स्यात् वक्तुं शक्नुयादिति । अभायं सूत्राशयः—पूर्वपक्षानसरे यदन्यतीर्थिकैः कथितं तत् सर्वं मिथ्यैव, तथाहि यदि चलदेव प्रथमसमये चलितं न भवेत् तथा द्वितीयादि समयेषु संचलितमेवेति न कदापि चलेदिति, अत एव वर्तमानस्यापि त्रिवसयाऽतीतत्वं न विरुद्धमिति एतच्च चलमाणे चलिष्य इति प्रथमश्रवकस्य प्रथमादेशकस्य दशमश्रवणे एव प्रतिपादितमिति “नात्र पुनः प्रतन्यते, यदुक्तं चलितकार्याकरणादचलितमेवेति तदयुक्तम्, यतः प्रति

णकૃત નહીં હૈ । (કદ્દુ કદ્દુ) હસ ક્રિયમાણ કૃત દુઃખ કો કર કરકે પ્રાણ, મૃત, જીવ ઓર સર્વ વેદના કો મોગતે હૈ । તાત્પર્ય યહ હૈ કિ જીવ ક્રિયમાણકૃત દુઃખ કો પાર ૨ કરકે પુનઃ પુનઃ દુઃખ કા અનુભવ કાતે રહસે હૈ । (इति वक्तव्यं सिया) ऐसा वक्तुं शक्य है । यहाँ इस प्रकार से इन सूत्रों का आशय छे कि पूर्वपक्ष के भवसर पर जो अन्य तीर्थिकों ने कहा है, वह सब मिथ्या ही है—जैसे—वर्तमान में चलायमान कर्म यदि प्रथम समय में चलित न माना जावे तो द्वितीयादि समयों में भी वह अचलित ही रहेगा । अतः फिर वह कभी चलेगा ही नहीं । इसलिये वर्तमान में भी विवक्षा से अतीतता विरुद्ध नहीं होती है । यह विषय—(चलमाणे चलिष्य) इस सूत्र में ही पहिले कह दिया गया है अथ यहां बुझारा उसे कहना पिष्ट पेयण हो जाने के कारण ठीक नहीं है । तथा जो पहिले ऐसा कहा गया है कि चलायमान कर्म चलित

આ ક્રિયમાણ કૃત દુઃખને કરીને પ્રાણ, મૃત, જીવ અને સર્વ વેદના ભોગવે છે તાત્પર્ય એ છે કે જીવ ક્રિયમાણ કૃત દુઃખને વારવાર કરીને, કરી કરીને દુઃખનો અનુભવ કર્યા કરે છે । इति वक्तव्यं सिया” એ પ્રમાણે કહી શકાય । આ સૂત્રનો ભાવાધ આ પ્રમાણે છે—પૂર્વપક્ષે અન્યતીર્થિકાએ જે કહ્યું છે તે બધું મિથ્યા જ છે જેમ કે—વર્તમાનકાળે ચલાયમાન કર્મને એ પ્રથમ સમયે ચલિત માનવામાં ન આવે તો બીજા વગેરે સમયે પણ તેને અચલિત જ માનવું પડે. તેથી તે કહી પણ ચલિત થાય જ નહીં. તેથી વર્તમાનમાં પણ વિવક્ષાથી અતીતતા વિરુદ્ધ દોષી નથી. આ વિષયનું ‘चलमाणे चलिष्य’ સૂત્રમાં વિસ્તારથી સ્પષ્ટીકરણ કયું છે તેથી અહીં તેનું ફરીથી પિષ્ટપેયણ કરવું મેાજ્ય નથી. તથા પહેલાં એવું જે કહેવામાં આવ્યું છે કે ચલાયમાન કર્મ ચલિતનું કાર્ય સંપાદન કરવાને અસમર્થ હોય છે, તેથી ચલાયમાનને ચલિત

સ્પૃશ્યં દુઃસ્વમ્, સ્પર્શનાત વેદના દેવ દુઃસ્વમ્ ન તુ અવેદનાત્ ' કલ્પમાણકલ્પ-
દુઃસ્વમ્ ' ક્રિયમાણ કૃતં દુઃસ્વમ્ ન તુ અક્રિયમાણકૃતમ્, ' વદુઃ વદુઃ ' કૃત્વા કૃત્વા,
ક્રિયમાણ કૃતં દુઃસ્વમ્ કૃત્વા કૃત્વા, ' પાણભૂયજીયસત્તા ' પ્રાણભૂતજીવસત્તા;

કમી ઉસકો ઉસકા ફલ મિલેગા । જવ મી ઉસકા ઉસે ફલ મિલતા
હૈ તમી વહ ઉસકા વર્તમાનકાલ હૈ । હસકે પહિલે કા કાલ ભૂતકાલ હૈ ।
હસી તરહ સે ભવિષ્ય મેં જીવ કે દ્વારા હોને વાલી ક્રિયા કે વિષય મેં
મી જાનના ચાહિયે । અતઃ હમ અપેક્ષા ભૂતકાલ કી ઔર ભવિષ્યત્કાલ કી
ક્રિયાકો નિર્ણયક જાગયા હૈ ઔર વર્તમાન કાલકી ક્રિયાકો માર્થક ।

અવ ત્વચ્ચકાર દુઃસ્વ કે વિષય મેં કહતે હૈ—(કિચ્ચં દુઃસ્વ) વર્તમા-
કાલ કી અપેક્ષા સે ક્રિયા દ્વારા સંપાદ્યમાન હી દુઃસ્વ હોના હૈ । ક્રિયા કે
વિના સ્વભાવતઃ દુઃસ્વ નહીં હોના હૈ । અર્થાત્ વર્તમાનકાલ મેં જો ક્રિયા
કી જાતી હૈ ઉસ ક્રિયા સે હી દુઃસ્વ હોતા હૈ । અતઃ દુઃસ્વ ક્રિયા જન્ય
હોતા હૈ । યહ વાત સિદ્ધ હોતી હૈ ! ફિર સ્વભાવવાદી ને જો (દુઃસ્વ સ્વ-
ભાવિક હી હોના હૈ) એસા કહા હૈ—સો સગત નહીં હૈ । યહ સુસ્વરૂપ હૈ
કિ દુઃસ્વરૂપ હૈ—યહ નિર્ણય અન્તરાત્મા મેં વિના વેદન કે નહીં હોતા હૈ
અતઃ (કુલં દુઃસ્વમ્) દુઃસ્વ વેદન સે હી જ્ઞાત હોતા હૈ । વિના વેદન
કિયે નહીં । (કલ્પમાણકલ્પ દુઃસ્વ) દુઃસ્વ ક્રિયમાણ કૃત હૈ—અક્રિયમા-

પહેલા-ભૂતકાળમા-હિમા ક્રિયા કરી હોય તો બ્યારે તે હિમા જન્ય
કર્મ ઉદયમા આવશે ત્યારે જ છવને તેનું ક્ષણ ભોગવવું પડશે, બ્યારે તેનું
ક્ષણ તેને મળે છે તે સમયને તેનો વર્તમાનકાળ કહે છે તેના પહેલાનો
સમય ભૂતકાળ ગણાય છે એજ પ્રમાણે ભવિષ્યમાં છવની મારફત થનારી
ક્રિયાના વિષયમા સમજવું, તેથી આ દૃષ્ટિબિદુથી વિચાર કરીને ભૂતકાળ અને
ભવિષ્યકાળની ક્રિયાને નિર્ણયક બતાવી છે અને વર્તમાનકાળની ક્રિયાને સાર્થક કહી છે

હવે સૂત્રકાર દુઃખના વિષયમાં કહે છે—“ કિચ્ચં દુઃસ્વ ” વર્તમાનકાળની
અપેક્ષાએ ક્રિયા વડે સંપાદ્યમાન જ દુઃખ હોય છે ક્રિયા વિના સ્વભાવથી
દુઃખ હોતું નથી એટલે કે વર્તમાનકાળમા જે ક્રિયા કરવામા આવે છે તે
ક્રિયાથી જ દુઃખ ઉદ્ભવે છે તેથી દુઃખ ક્રિયાજન્ય ગણાય છે, તે વાત સિદ્ધ
થાય છે સ્વભાવવાદીઓનું એવું કથન છે કે “ દુઃખ સ્વાભાવિક જ હોય છે ”
તેમનું તે કથન સગત નથી કોઈ વસ્તુ સુખરૂપ છે કે દુઃખરૂપ છે તેનો
નિર્ણય અન્તરાત્મામા વેદન કર્યા વિના થતો નથી તેથી “ કુલં દુઃસ્વમ્ ”
દુઃખ વેદનથી જ બાહ્યી શકાય છે, વેદન, વગર બાહ્યી શકાતું નથી “ કલ્પ-
માણકલ્પ દુઃસ્વ ” દુઃખ ક્રિયામાણ કૃત છે, અક્રિયામાણ કૃત નથી “ વદુઃ વદુઃ ”

‘વેપયં વેદેતિ’ વેદનાં વેદયન્તિ જીવાઃ ક્રિયમાણકૃત્ત્વ દુઃખં કૃત્વા પુનઃ પુનઃ દુઃસ્વપ્નમવન્તીતિ, ‘इति वक्तव्यं सिया’ इति एवं पूर्वोक्तरूपेण वक्तव्यं स्यात् वक्तुं शक्नुयादिति । अभायं सुभाषया-पूर्वपक्षावसरे यदन्यतीर्थिकैः कथितं तत् सर्वं मिथ्यैव, तथाहि यदि चलयेव प्रथमसमये चलितं न भवेत् तथा द्वितीयादि समयेपि तदचलितमेवेति न कदापि चलेदिति, अत एव वर्तमानस्यापि विवक्षयाऽतीतत्वं न विरुद्धमिति एतच्च चलमाणे चलिम् इति प्रथमसूत्रकस्य प्रथमादेशकस्य दशमसूत्रे एव प्रतिपादितमिति “नात्र पुनः” प्रतन्यते, यदुक्तं चलिक्कार्याकरणादचलितमेवेति तदुक्तम्, यतः प्रति

પાકૃત નહીં છે । (કદ્દ કદ્દ) હસ ક્રિયમાણ કૃત્ત્વ દુઃખ કો કર કરકે પ્રાણ, મૃત, જીવ ઓર સર્વ વેદના કો મોગતે હૈં । તાત્પર્ય યહ છે કિ જીવ ક્રિયમાણકૃત્ત્વ દુઃખ કો યાર ૨ કરકે પુનઃ પુનઃ દુઃખ કા અનુભવ કારતે રહતે હૈં । (इति वक्तव्यं सिया) ऐसा वक्तुं शक्य है । यहाँ इस प्रकार से इन सूत्रों का आशय છે કિ પૂર્વપક્ષ કે અવસર પર જો અન્ય તીર્થિકોં ને કહા છે, વહ સમ મિથ્યા હી છે-જેસે-વર્તમાન મેં ચલાયમાન કર્મ યદિ પ્રથમ સમય મેં ચલિત ન માના જાવે તો દ્વિતીયાદિ સમયોં મેં મી વહ અચલિત હી રહેગા । અતઃ ફિર વહ કમી ચલેગા હી નહીં । હસલિયે વર્તમાન મેં મી વિવક્ષા સે અસીતતા વિરુદ્ધ નહીં હોતી છે । યહ વિષય-(चलमाणे चलिए) इस सूत्र में ही पहिले कह दिया गया है अब यहाँ दुबारा उसे कहना विष्ट पेषण हो जाने के कारण ठीक नहीं है । तथा जो पहिले ऐसा कहा गया है कि चलायमान कर्म चलित

આ ક્રિયમાણ કૃત્ત્વ દુઃખને કરીને પ્રાણ, મૃત, જીવ અને સર્વ વેદના ભોગવે છે તાત્પર્ય એ છે કે જીવ ક્રિયમાણ કૃત્ત્વ દુઃખને વારંવાર કરીને, કરી કરીને દુઃખનો અનુભવ કર્યાં કરે છે “इति वक्तव्यं सिया” को प्रमाणे कही शक्य છે આ સૂત્રનો ભાવાથ આ પ્રમાણે છે-પૂર્વપક્ષ કૃત્ત્વ અન્યતીર્થિકોંને જે કહ્યું છે તે બધું મિથ્યા જ છે જેમ કે-વર્તમાનકાળે ચલાયમાન કર્મને જે પ્રથમ સમયે ચલિત માનવામાં ન આવે તો બીજા વજેરે સમયે પણ તેને અચલિત જ માનવું પડે. તેથી તે કહી પણ ચલિત માય જ નહીં. તેથી વર્તમાનમાં પણ વિવક્ષાથી અતીતતા વિરુદ્ધ હોતી નથી. આ વિષયનું “चलमाणे चलिए” સૂત્રમાં વિસ્તારથી સ્પષ્ટીકરણ કર્યું છે તેથી અહીં તેનું ફરીથી પિષ્ટપેષણ કરવું મોખ્ય નથી તથા પહેલાં કોણે જે કહેવામાં આયું છે કે ચલાયમાન કર્મ ચલિતનું કાયં સંપાદન કરવાને અસમર્થ હોય છે, તેથી ચલાયમાનને ચલિત

ક્ષણમુત્પદ્યમાનેષુ સ્થાસકોશાદિવસ્તુષુ અન્યક્ષણભાવિ વસ્તુ આદ્યક્ષણે સ્વકાર્ય ન કરોત્યેવ, અસત્ત્વાત્, અતો યત્ અન્યસમયચલિતં કાર્યં વિવક્ષિતં પરતીર્થિકૈઃ તદ્ આદ્યસમયચલિતં યદિ ન કરોતિ તદા અત્ર કો દોષઃ કારણાનાં સસ્વકાર્યકર-
ણસ્વભાવત્વાદિતિ । યદપ્યુક્તં-દ્વૌ પરમાણૂ ન સંઘન્યેતે સૂક્ષ્મતયા સ્નેહાભાવાત્

કે કાર્ય સંપાદન કરને મેં અસમર્થ હોતા હૈં ફસલિયે ચલાયમાન કો ચલિત નહીં માના જા સકતા સો ઇસા કહના ખી યુક્તિ યુક્ત નહીં હૈં, કારણ કિ પ્રતિક્ષણ મેં ઉત્પદ્યમાન જો સ્થાસકોશકુશલ આદિ ઘટ કી પૂર્વ અનસ્થાઈ હૈં ઉન અવસ્થાઓં કે પૂર્ણરૂપ સે સમાસ હો જાને પર ઘટ પર્યાય કી પૂર્ણ પ્રાદુર્ભૂતિ અપને અન્તક્ષણ મેં હોતી હૈં, યહ ઇક નિશ્ચિત વાત હૈં । અવ ઉન અવસ્થાઓં કે ઉત્પન્ન હો જાને પર અન્તક્ષણ મેં ઉત્પન્ન હોને વાલા વહ ઘટ યદિ અપને કાર્ય કો નહીં કરતા હૈં । તો યહ કોઈ આક્ષેપાર્હ જૈસી વાત હી નહીં હૈં । ક્યોં કિ વહ ઉસ સમય અસત્ હૈં- પૂર્ણરૂપ સે અપ્રાદુર્ભૂત હૈં । કાર્ય તો વહ તવ કરેમા કિ જવ વહ પૂર્ણરૂપ સે પ્રાદુર્ભૂત હો જાવેમા । ઇસી તરહ સે પ્રથમ સમય કા ચલિત કર્મ અ-
પને અન્ત સમય કે ચલિત કાર્ય કો નહીં કરતા હૈં તો ઇસમેં ક્યા દોષ હૈં । યહ તો કારણોં કા સ્વભાવ હૈં કિ વે અપને ૨ કાર્ય કો કરેં । નાત્પર્ય કહને કા યહ હૈં કિ જિસ પ્રકાર સમયવર્તી ઘટ અપને અન્તક્ષણવર્તી કાર્ય કો નહીં કરતા હૈં ફિર ખી વહ ઘટ હી કહલાતા હૈં-અઘટ નહીં ઉસી પ્રકાર પ્રથમ ક્ષણવર્તી ચલિત કર્મ અપને અન્તક્ષણવર્તી ચલિત કાર્ય કો નહીં કરને પર અચલિત નહીં કહા જા સકતા હૈં ચલિત

માની શકાય નહીં, તો તે કથન પણ યુક્તિયુક્ત લાગતું નથી, કા રણુકે પ્રતિક્ષણે ઉત્પાદ્યમાન સ્થાસકોશકુશલ વગેરે ઘટની જે પૂર્વ અવસ્થાઓ છે તે અવસ્થાની પૂર્ણ રૂપે સમાપ્તિ થાય ત્યારેજ ઘટપર્યાયની પૂર્ણ પ્રાદુર્ભૂતિ (નિર્માણ) તેની અન્તક્ષણે થાય છે એ એક નિશ્ચિત વાત છે તે અવસ્થાઓ ઉત્પન્ન થાય ત્યારે અન્તક્ષણે ઉત્પન્ન થનારો ઘટ જે પ્રારંભકાળે પોતાનું કાર્ય ન કરે તો તે કોઈ આક્ષેપને પાત્ર વાત નથી. કારણ કે તે સમયે તે અસત્ છે-પૂર્ણરૂપે તેનું નિર્માણ થયું નથી કાર્ય તો તે ત્યારે જ કરશે કે બ્યારે પૂર્ણરૂપે તેનું નિર્માણ થશે, એજ પ્રમાણે પ્રથમ સમયનું ચલિત કર્મ પોતાના અન્ત સમયનું ચલિત કાર્ય ન કરે તો તેમાં શો દોષ છે ? એ તો કારણુનો સ્વભાવ છે કે તેઓ પોત પોતાનું કાર્ય કર્યા કરે તાત્પર્ય એ છે કે જેવી રીતે પ્રથમ સમયવર્તી ઘટ પોતાનું અન્ત સમયવર્તી કાર્ય કરતો નથી છતાં પણ તેને ઘટ જ કહેવાય છે અઘટ કહેવાતો નથી, એજ પ્રમાણે પ્રથમ ક્ષણવર્તી ચલિત કર્મ પોતાનું

તદ્યુક્ત, એકસ્યાપિ પરમાણો સ્નેહસમવાત્ સાર્પપુદ્ગલસ્ય સદૃતત્વેનેવ તૈરેવ સ્વીકૃતસ્વાચ્ચ, યતઃ કથિત “તિથિિ પરમાણુપોગલા પગયમો સાદૃશતિ તે

હી કહા જાવેગા । અતઃ ચલાયમાન કર્મ કો પ્રથમ ક્ષણ કી અપેક્ષા ચલિતમાન કર યદિ ઉસમેં અન્તક્ષણવર્તી ચલિત કે કાર્ય સપાદન કી ક્ષમતા પ્રથમ સમય મેં નહીં હૈ, તો કોઈ આક્ષેપ ઝેંસી ઘાત નહીં હૈ । યહ તો ઠીક હી હૈ કિ પ્રથમક્ષણવર્તી વહ ચલાયમાનરૂપ ચલિત પૂર્ણરૂપ સે ચલિત હોને કે કારણ ઉસ સમય ચલિત કે અન્ત્યક્ષણવર્તી કાર્ય કો નહીં હી કરેગા । વયોં કિ મિત્ત ૨ કાર્યોં કા હોના કારણોં કી મિત્ત ૨ અવસ્થાઓં પર અવલમ્બિત હૈ ।

તથા—જો એસા કહા હૈ કિ દો પરમાણુ સૂક્ષ્મ હોને કે કારણ સ્નેહકાય કે અભાવ મેં પરસ્પર મિલતે નહીં હૈં સો યહ કથન ઇસલિયે ઠીક નહીં હૈ કિ એક પરમાણુ મેં ઓ સ્નેહ ગુણ કા સન્નાચ માના હી ગયા હૈ । યહ ઘાત જૈનસિદ્ધાન્ત હી માનતા હૈ સો ઘાત નહીં હૈં, વયોં કિ પરતી થિકોં ને ઓ જહાં ૩ પરમાણુઓં કે મિલને પર ફિર ઉનકે વિભાગ હોને કી ઘાત કહી હૈ ઘહાં ઉન્હોં ને એસા ઓ કહા હૈ કિ ૧૧૧-૧૧૧ પરમાણુ કે, ૨ ત્રીન પરમાણુ જન્ય સ્કચ કે દો વિભાગ હી હોતે હૈં । અતઃ જવ ૧

અન્ત્યક્ષણવર્તી અલિપ્ત કાર્ય ન કરવા છતાં અઅલિપ્ત કહેવાતુ નથી, અલિપ્ત જ કહેવાય છે તેથી અલ્પાધમાન ક્રમ ને પ્રથમ ક્ષણની અપેક્ષાએ અલિપ્ત માનીને એ તેમા અન્ત્ય ક્ષણવર્તી અલિપ્તતા સપાદનની ક્ષમતા પ્રથમ સમયે ન હોય તેમાં કોઈ આક્ષેપ જેવુ નથી, એ તો બરાબર જ છે કે પ્રથમ ક્ષણવર્તી તે અલ્પાધમાનરૂપ અલિપ્ત પૂણ્ણરૂપે અલિપ્ત ન હોવાથી તે સમયે અલિપ્તત્વ અન્ત્ય ક્ષણવર્તી કાર્ય નહીં કરે કારણ કે ગુર્ધા ગુર્ધા કાર્યોંનું ઘણુ તે કારણોંની કિત્ત કિત્ત અવસ્થાઓ પર આધાર રાખે છે

તથા—જેવુ એ અન્વયમતિજ્ઞોનું કહેવુ ‘ એ પરમાણુ સૂક્ષ્મ હોવાથી તેમનામાં સ્નેહકાય નો અભાવ હોય છે તેથી તેઓ એક બીજા સાથે સંયોજન પામતા નથી ’ આ કથન પણ બરાબર નથી એક પરમાણુમા પણ સ્નેહગુણનો સહભાવ માનવામાં આ યો છે આ ઘાત જૈનસિદ્ધાન્ત જ માને છે અર્થુ નથી કારણ કે પરતીથિકા પણ કહે છે કે સંયોજન પામેલ ત્રણ પરમાણુઓના સ્પર્શનું વિશ્વજન કરવાથી ૧૧૧-૧૧૧ પરમાણુના કો વિભાગ થાય છે. આ રીતે

ક્ષણમુત્પદ્યમાનેષુ સ્થાસકોશાદિવસ્તુષુ અન્યક્ષણભાવિ વસ્તુ આદ્યક્ષણે સ્વકાર્યં ન કરોત્યેવ, અસત્ત્વાત્, અતો યત્ અન્યસમયચલિતં કાર્યં વિવક્ષિતં પરતીર્થિકૈઃ તદ્ આદ્યસમયચલિતં યદિ ન કરોતિ તદા અત્ર કો દોષઃ કારણાનાં સ્વસ્વકાર્યકર-
ણસ્વભાવત્વાદિતિ । યદપ્યુક્તં-દ્વૌ પરમાણૂ ન સંહન્યેતે સૂક્ષ્મતયા સ્નેહાભાવાત્

કે કાર્ય સંપાદન કરને મેં અસમર્થ હોતા હૈ ફસલિયે ચલાયમાન કો ચલિત નહીં માના જા સકતા સો ઁસા કહના મી યુક્તિ યુક્ત નહીં હૈ, કારણ કિ પ્રતિક્ષણ મેં ઉત્પદ્યમાન જો સ્થાસકોશકુશલ આદિ ઘટ કી પૂર્વ અનસ્થાઈ હૈ ઁન અવસ્થાઑં કે પૂર્ણરૂપ સે સમાપ્ત હો જાને પર ઘટ પર્યાય કી પૂર્ણ પ્રાદુર્ભૂતિ અપને અન્તક્ષણ મેં હોતી હૈ, યહ ઁક નિશ્ચિત વાત હૈ । અવ ઁન અવસ્થાઑં કે ઉત્પન્ન હો જાને પર અન્તક્ષણ મેં ઉત્પન્ન હોને વાલા વહ ઘટ યદિ અપને કાર્ય કો નહીં કરતા હૈ । તો યહ કોઈ આક્ષેપાર્હ જૈસી વાત હી નહીં હૈ । ક્યોં કિ વહ ઁસ સમય અસત્ હૈ- પૂર્ણરૂપ સે અપ્રાદુર્ભૂત હૈ । કાર્ય તો વહ તવ કરેમા કિ જવ વહ પૂર્ણરૂપ સે પ્રાદુર્ભૂત હો જાવેગા । ફસી તરહ સે પ્રથમ સમય કા ચલિત કર્મ અપને અન્ત સમય કે ચલિત કાર્ય કો નહીં કરતા હૈ તો ફસમેં ક્યા દોષ હૈ । યહ તો કારણોં કા સ્વભાવ હૈ કિ વે અપને ૨ કાર્ય કો કરે । તાત્પર્ય કહને કા યહ હેં કિ જિસ પ્રકાર સમયવર્તી ઘટ અપને અન્તક્ષણવર્તી કાર્ય કો નહીં કરતા હૈ ફિર મી વહ ઘટ હી કહલાતા હૈ-અઘટ નહીં ઁસી પ્રકાર પ્રથમ ક્ષણવર્તી ચલિત કર્મ અપને અન્તક્ષણવર્તી ચલિત કાર્ય કો નહી કરને પર અચલિત નહીં કહા જા સકતા હૈ ચલિત

માની શકાય નહીં, તો તે કથન પણ યુક્તિયુક્ત લાગતું નથી, કારણકે પ્રતિક્ષણે ઉત્પાદ્યમાન સ્થાસકોશકુશલ વગેરે ઘટની જે પૂર્વ અવસ્થાઓ છે તે અવસ્થાની પૂર્ણ રૂપે સમાપ્તિ થાય ત્યારે જ ઘટપર્યાયની પૂર્ણ પ્રાદુર્ભૂતિ (નિર્માણ) તેની અન્તક્ષણે થાય છે એ એક નિશ્ચિત વાત છે તે અવસ્થાઓ ઉત્પન્ન થાય ત્યારે અન્તક્ષણે ઉત્પન્ન થનારો ઘટ જે પ્રારંભકાળે પોતાનું કાર્ય ન કરે તો તે કોઈ આક્ષેપને પાત્ર વાત નથી કારણ કે તે સમયે તે અસત્ છે-પૂર્ણરૂપે તેનું નિર્માણ થયું નથી કાર્ય તો તે ત્યારે જ કરશે કે બ્યારે પૂર્ણરૂપે તેનું નિર્માણ થશે, એજ પ્રમાણે પ્રથમ સમયનું ચલિત કર્મ પોતાના અન્ત સમયનું ચલિત કાર્ય ન કરે તો તેમાં શો દોષ છે ? એ તો કારણોના સ્વભાવ છે કે તેઓ પોત પોતાનું કાર્ય કર્યા કરે. તાત્પર્ય એ છે કે જેવી રીતે પ્રથમ સમયવર્તી ઘટ પોતાનું અન્ત સમયવર્તી કાર્ય કરતો નથી છતાં પણ તેને ઘટ જ કહેવાય છે અઘટ કહેવાતો નથી, એજ પ્રમાણે પ્રથમ ક્ષણવર્તી ચલિત કર્મ પોતાનું

‘પંચ પરમાણુ પુદ્ગલા સંહતા’ કર્મતયા મયતિ’ તદપિ ન સમ્પક્, કર્મભોજનં પરમાણુસ્વરૂપતયાડનન્તસ્કન્ધરૂપત્વાત્, પચાણુકસ્ય ચ સ્કન્ધમાત્રત્વાત્, તય કર્મ બીજાનામાધરણસ્વમાધમિપ્યષ્ટે તત્કર્ત્ય પંચપરમાણુ સ્કન્ધમાત્રસ્ય સત્ અસત્ય પ્રવેશાત્મકં બીજમાદ્રણુયાદિતિ । તથા યદુક્તં કર્મશાશ્વતં તદપ્યયુક્તમેન કર્મમ

અર્થોક્ષરણ હોતા હી નહીં હૈ । કયોં કિ પરમાણુ નામ ઉસી કા હૈ ચિ ફિર જિસકા દૂસરા વિભાગ ન હો યદિ પરમાણુ કા બી વિભાગ હોત હૈ તો ઘહ પરમાણુ નહીં કહાવેગા-કિન્તુ ઘહ તો સ્કન્ધ હી કહા જાવેગા

તથા-જો પેસા કહા હૈ કિ-(પંચ પરમાણુ પુદ્ગલા સંહતા કર્મતયા મયતિ) સો યહ કહના હસલિયે સંગત નહીં હૈ કિ પાંચ પરમાણુઓં કે સમેલન સે જો કર્મરૂપ સ્કન્ધ હોગા-ઘહ કેવલ પાંચ હી પ્રવેશાવાલા હોગા અનતપ્રવેશાવાલા તો હોગા નહીં । ફિર ઘહ અસંસ્યાત પ્રવેશીજીવ કા દો આધરણ કેસે કર સકેગા ? તાત્પર્ય કહને કા, યહ હૈ કિ જીવ કા આધરણ કરના યહ સ્વમાધ કર્મોં કા હોતા હૈ । ઓર યે કર્મ અનંત પરમાણુઓં દ્વાગા નિપ્પજા હુગા હોતે હૈ । અત યે એક સ્કન્ધ રૂપ ન હોકર અનત સ્કન્ધરૂપ હોતે હૈ । તમી જાકર યે અસંસ્યાત પ્રવેશાવાલે જીવ કો આધરણ કરતે હૈ । હસલિયે પેસા કહના કિ પાંચ પરમાણુ પુદ્ગલ આવસ મેં મિલકર કર્મરૂપ સે પરિણમ હોતે હૈ સંગત નહીં માના જા સકતા હૈ । તથા-(કર્મશાશ્વત હી હૈ) યહ કથન હસલિયે સંગત નહીં

શકતા નથી. કારણ કે પરમાણુ એવી નાનામાનાની વસ્તુ છે કે તેના વિભાજનથી શકે જ નહીં. એ પરમાણુના પદ્ધતિ વિભાગ થતા હોય તો વિભાજ્ય વસ્તુને પરમાણુ કહેવાને બદલે સ્કન્ધ જ કહેવાશે.

તથા- , પંચ પરમાણુપુદ્ગલાઃ સંહતાઃ કર્મતયા મયતિ ” પરત્વીધિકેનુ આ કથન પણ સચવ લાગતુ નથી. કારણ કે પાંચ પરમાણુઓના સંયોજનથી કર્મરૂપ સ્કન્ધ બનશે તે તો પાંચ જ પ્રવેશવાળો બનશે- અનત પ્રવેશવાળો નહીં બને તો તે અસંસ્યાતપ્રવેશી છવનુ આવશ્યક કેવી રીતે કરી શકે ? તાત્પર્ય એ છે કે છવનુ આવશ્યક કર નો સ્વભાવ કર્મોમાં હોય છે અને તે કર્મનુ અનત પરમાણુઓ વડે નિર્માણ થયુ હોય છે. તેથી તેઓ એક સ્કન્ધરૂપ હોતા નથી પણ અનત સ્કન્ધરૂપ હોય છે, ત્યારે જ તેઓ અસંસ્યાત પ્રવેશવાળા છવનુ આવશ્યક કરી શકે છે તેથી ” પાંચ પરમાણુ પુદ્ગલ એક બીજા સાથે સંયોજન પામીને કર્મરૂપે પરિણમે છે ” એ કથન સુસંગત નથી. તથા-” કર્મ શાશ્વત જ છે” એ કથન પણ ચોખ્ખુ નથી. કારણ કે એકાન્ત

ભિજ્જમાણા દુહાવિ તિહાવિ કજ્જતિ દુહા કજ્જમાણા એગયઓ દિવહુત્તિ ” અનેન હિ સાર્ધપુદ્ગલસ્ય સહતત્વાભ્યુપગમેન તસ્ય સ્નેહઃ સ્વીકૃત એવ, ઇતિ કથં દ્વયોઃ પરમાણ્વોઃ સ્નેહાભાવેન સંવાતાભાવ ઇતિ । યદપ્યુક્તમ્-એકતઃ સાર્ધઃ એકત સાર્ધ ઇતિ તદપિ ન યુક્તમ્ પરમાણોરર્ધોકરણે પરમાણુત્વાભાવપ્રસન્નાત્ । તથા યદુક્તં

और और आधा परमाणु उनकी मान्यतानुसार आपस में मिल जाते हैं तो यह बात उनकी ही मान्यता से सिद्ध हो जाती है कि १ परमाणु में स्नेहगुण है । नहीं तो बिना स्नेहगुण के उनका मिलना किसी तरह भी नहीं हो सकता । अतः जब (तिग्णि परमाणु पोग्गका एगयओ साह-णंति ते भिज्जमाणा दुहा वि तिहवि कज्जंति, दुहा कज्जमाणा एगयओ दिवहूत्ति) इस कथन से सार्ध पुद्गल परमाणु का आपस में चिपकना स्वी-कार किया गया है तो फिर दो परमाणु पुद्गलों का आपस में स्नेह के अभाव से संघातरूप से अवस्थान नहीं होता है ऐसा कथन कैसे समीचीन हो सकता है । यह तो कहना ऐसा हुआ कि जैसे कोई अपनी माता को कहे कि मेरी माता बंध्या है ।

तथा-जो १।।देह१।।देह परमाणु पुद्गल की प्रतिपक्षी ने यह बात कही है-सो जैनसिद्धान्त उसकी उस बात को नहीं मानता है । यह तो हमने उसकी बात को लेकर परमाणु स्नेह गुण की सिद्धि के लिये इसकी मान्यता प्रकट की है । जैन सिद्धान्त की मान्यतानुसार तो परमाणु का

તેમની માન્યતા પ્રમાણે એક અને અર્ધો પરમાણુ એક બીજા સાથે મળી જાય છે, તો તેમની માન્યતા વડે જ એ વાત સિદ્ધ થાય છે કે એક પર-માણુમાં પણ સ્નેહગુણ હોય છે. જો સ્નેહગુણ ન હોત તો તેમનો સંયોગ કોઈ પણ રીતે થાત નહીં “ તિગ્ણિ પરમાણુપોગ્ગલા એગયઓ સાહણંતિ તે ભિજ્જમાણા દુહા વિ કજ્જતિ, દુહા કજ્જમાણા એગયઓ દિવહૂત્તિ ” આ કથન પ્રમાણે સાર્ધ પરમાણુઓનું એક બીજા સાથે સંયોજન પામવાનું સ્વીકારવામાં આવ્યું છે. તો પછી જો પરમાણુ પુદ્ગલોનું સ્નેહકાયને અભાવે સંયોજન થતું નથી એ કથન કેવી રીતે સાચું ગણી શકાય? આ તો પોતાની માતાને વંધ્યા કહેવા જેવું લાગે છે ।

વિપક્ષીએ ૧।।-૧।। પરમાણુપુદ્ગલની જે વાત કહી છે તેનો જૈનસિદ્ધાંત સ્વીકાર કરતો નથી. અહીં તો તેમની માન્યતાનો આધાર લઈને પરમાણુમાં રહેલ સ્નેહ ગુણ (ચીકાશ) સિદ્ધ કરવા માટે તેમની માન્યતા પ્રગટ કરવામાં આવેલ છે. જૈન સિદ્ધાંતની માન્યતા તો એવી છે કે પરમાણુના વિભાગ પડી

કર્મ સદા ચીયતેऽપીયતે ચ इति तदप्येकान्तशास्त्रसत्ये नोपपद्यते इति ।

વિવેક પદાર્થ હું ઓર મચાદિક પદાર્થ અમાપ્તિક હું । અતઃ હ્યોપાદેય
કા કથન જિસ આત્મા મેં જિતને અંશ મેં પ્રકટ હૈ યહ આત્મા ઊતને હી
અંશ મેં જ્ઞાનાવરણીય આદિ કે ક્ષયોપશમ સે વિશિષ્ટ હૈ ઓર જિતને
અંશ મેં હ્યોપાદેય કા વિવેક નહીં હૈ યહ ઊતને હી અંશ મેં જ્ઞાનાવરણીય
કર્મ કે ઉદય સે યુક્ત હૈ । હસ કથન સે યહી નિષ્કર્ષ નિકલતા હૈ કિ
જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મ કા જિસ આત્મા મેં જિતના ૨ ક્ષયોપશમ આદિ
હૈ યહ આત્મા ઊતને ૨ જ્ઞાન કે ઉત્કર્ષ સે યુક્ત હૈ ઓર જિસ આત્મા મેં
જિતના ૨ જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા ઉદય ઘર્ત રહા હૈ યહ આત્મા ઊતને ૨
જ્ઞાન કી મદતા સે યુક્ત હૈ । અતઃ યદિ કર્મ કો શાશ્વત હી માના જાવે
તો ફિર જ્ઞાન કી હીનતા ઓર જ્ઞાન કી ઉત્કર્ષતા જો જ્ઞાનાવરણીય કર્મ
ક્ષયોપશમાધીન દેખને મેં આ રહી હૈ યહ નહીં જાનો જાદિયે । પરંતુ
યહ આતી તો હૈ-અતઃ હસસે યહી જાત હોતા હૈ કિ કર્મ ઇકાન્તતઃ
શાશ્વત નહીં હૈ । તથા-(કર્મ સદા ઉપચિત અપચિત હોતા રહતા હૈ)
પેમા કથન સગત હમલિયે નહીં માના જા સકતા કિ કર્મ કો પ્રતિપક્ષી
મે ઇકાન્તતઃ શાશ્વત સ્વીકાર કિયા હૈ । ઇકાન્ત શાશ્વત પદાર્થ મેં ઉપ
ચય ઓર અપચય હોના ધનતા નહીં હૈ । યદિ યહ ઉપચય અપચય ઘોલા

હોય અને ઉપાદેયનો વિવેક ને/લા પ્રમાણમાં રહેલો હોય છે તે/લા પ્રમાણમાં
તે આત્મા જ્ઞાનાવરણીય વગેરે કર્મના ક્ષયોપશમથી યુક્ત હોય છે અને
ને/લા પ્રમાણમાં તે હ્યોપાદેયના વિવેકથી રહિત હોય છે ને/લા જ પ્રમાણમાં
તે જ્ઞાનાવરણીય વગેરે કર્મોના ઉપચયથી યુક્ત હોય છે આ કથનનો સા થિ
જો છે કે જે આત્મામાં જ્ઞાનાવરણીય વગેરે કર્મોને ને/લા પ્રમાણમાં અયોગ્ય
વગેરે થયેલ હોય છે તે આત્મા ને/લા જ્ઞાનના ઉત્કર્ષ (વૃદ્ધિ) વાળો હોય છે
અને જ આત્મામાં જ્ઞાનાવરણીય વગેરે કર્મોને ને/લા ઉદય થયેલ હોય છે
તે/લા તે આત્મા જ્ઞાનની મદતા વાળો હોય છે તેથી જો કર્મને શાશ્વત
(નિત્ય) માનવામાં આવે તો જ્ઞાનાવરણીય કર્મના ક્ષયોપશમને કારણે જ નહીં
જો હીનતા અને વૃદ્ધિ થાય છે તે થકી શકે જ નહીં પણ જ્ઞાનમાં હીનતા
અને વૃદ્ધિ થયા કારે છે તેથી જો વાત સમજી શકાય છે કે કર્મ એકાન્ત
થી શાશ્વત નથી તથા ” કર્મોના સદા ઉપચય અને અપચય થતો રહે છે ”
કથનને પણ સાચુ માની શકાય નહીં કારણ કે અન્ય તીર્થિકાએ કર્મને
એકાન્તતઃ શાશ્વત માનેછે છે શાશ્વત પદાર્થોમાં ઉપચય અને અપચય
સંભવી શકતા નથી. જો તેને ઉપચય અને અપચયથી યુક્ત માનવામાં આવે

शाश्वतत्वे क्षयोपशमाद्यभावेन ज्ञानादीनां हानिप्रसङ्गात्, ज्ञानोत्कर्षस्य चाभावप्रसङ्गात् दृश्येते च ज्ञानादीनां मद्यघृतादिभक्षणेन हानिवृद्धी इति । तथा यदुक्तं

वैठना है कि एकान्त नित्यता में चिक्रिया का अभाव होने से किसी भी प्रकार का परिवर्तन नहीं होता है। कर्म यदि एकान्तरूप से शाश्वत माना जावेगा-तो फिर उसकी जो क्षयोपशम आदि रूप नाना अवस्थाएँ होती हैं वे कैसे हो सकेगी? इनके नहीं होने पर ज्ञानादिक गुणों में हानि और उत्कर्ष के अभाव का प्रसंग प्राप्त होगा। ज्ञानादिक गुणों में हानि और उत्कर्ष ये लोक में देखा ही जाता है। जब कोई व्यक्ति मद्यादिक का सेवन करता है तो उसके ज्ञानादिगुण में हानि होती हुई देखी जाती है और घृतादिक के सेवन करने वाले व्यक्ति में ज्ञानादिगुणों का उत्कर्ष होता हुआ प्रतीत होता है। यहां ऐसी आशंका नहीं करना चाहिये कि मद्यादिक के सेवन से ज्ञान की हीनता और घृतादिक के सेवन से ज्ञान प्रकर्षता जब देखी जाती है तो फिर इसमें ज्ञानावर्णीय आदि कर्मा के क्षयोपशमादिक की क्या आवश्यकता है? क्यों कि मद्यादिक जैसे अभक्ष अपवित्र पदार्थों का सेवन वही व्यक्ति करेगा कि जिसके हेयोपादेय का विवेक नहीं होगा-वह इनका भक्षण न करता हुआ भक्ष्य पवित्र पदार्थों का ही सेवन करेगा। घृतादिक पदार्थ सा-

नित्यतामां क्रियानो अभावना होवाथी कोर्ध पणु प्रकारनुं परिवर्तनं यतुं नथी।
 कर्मने नो ऐकान्त- शाश्वत मानवाभा आवे तो तेनी क्षयोपशम आदिश्य
 ने विविध अवस्थाओ होय छे ते केवी रीते संभवी शके? अने तेना अभावे
 तो ज्ञानादिक गुणोमां हानि अने वृद्धिने पणु अभाव मानवानो प्रसंग उत्पन्न
 थये ज्ञानादिक गुणोमां हानि अने वृद्धि थती तो प्रत्यक्ष जणाय छे भदिरानुं
 सेवन करनार व्यक्तिना ज्ञानादिक गुणोनी हानि थती नोवाभा आवे छे अने
 धी वगेरे सेवन करनारना ज्ञानादिक गुणोनी वृद्धि थती देखाय छे अडी
 ऐची शक्य अस्थाने छे के भदिराना वगेरे सेवनथी ज्ञाननी हानि अने
 धी वगेरेना सेवनथी ज्ञाननी वृद्धि थती जणाय छे तो पछी ज्ञाना-
 वर्णीय वगेरे कर्मोना क्षयोपशमनी शी आवश्यकता छे? कारण के भदिरा
 वगेरे अलक्ष्य पदार्थोनु सेवन ओज व्यक्ति करशे के नेने छेय अने उपादेयने
 विवेक नथी। नेने छेय अने उपादेयनु लान हथे ते तो तेमनु सेवन नही
 करे परतु लक्ष्य, पवित्र पदार्थोनु ज सेवन करशे। घृतादिक पदार्थो सात्त्विक
 जणाय छे अने भद्यादिक पदार्थो भूम्य जणाय छे। तेथी ने आत्मानी अ-

માનસમયસ્પષ્ટારિત્ત્વેન વ્યવહારોપયોગિત્વાત્, અસીતાનાગતયોષ્ઠ ધિનષ્ટાનુસ્પન્ન તથાઽસપ્તેન વ્યવહારાનગત્વાત્, યદયુક્તં માપાસમયવ્યતિક્રાંતેત્યાદિ તદપિ ન સમ્યક્ માપ્યમાણમાપાયા અમાયે માપાસમયે વ્યતિક્રાંતે રૂપસ્યામિલાપસ્પામાર પ્રસન્નાત્, યદપિ પ્રતિપાદસ્યામિધેયે પ્રત્યયોત્પાદકત્યાદિષિ હેતુરુક્તઃ સોઽપ્ય નૈપાતિષ્ઠઃ, કરાદિચેષ્ટાનામમિધેયપ્રતિપાદકત્વેપિ માપાત્પર્યાસિદ્ધેઃ, તથા યદુક્તમ્-અમાપકસ્ય માપા ઇતિ તદપિ ન યુક્તં, યત્ત ણ્યં સતિ સિદ્ધસ્યાચેતનસ્ય

જાન સમય ધિનષ્ટ ણ્યં અનુત્પન્ન કે કારણ મૌજુદા હાલત મેં નહીં હોતે હૈં ઇસલિયે યે વ્યવહાર કે અંગ મી નહીં હોતે હૈં । તથા (માપા સમય વ્યતિક્રાન્ત હોને પર માપા માપા હૈ અમાપા નહીં હૈ) એમાજો કહા હૈ સો મી ઠીક નહીં હૈ કારણ કિ જય માપ્યમાણ માપા કો માપારૂપ સે હી સ્વીકાર નહીં કિયા ગયા હૈ અર્થાત્ માપ્યમાણ માપા કા હી જય અમાય કહા ગયા હૈ તો ફિર (માપાસમયવ્યતિક્રાંતે) એસા અમિ લાપ હી નહીં ધન સકતા હૈ । ધરો કિ માપા હો તો ઉસકા સમય વ્ય તિક્રાંત હો-યહ તો હૈ નહીં-ફિર સમય વ્યતિક્રાન્ત ફિસકા ? અતા એસા અમિલાપ નહીં ધન સકતા હૈ । તથા જો સમય વ્યતિક્રાન્ત માપારૂપ સે પ્રતિપાદિત કરને કે લિયે (પ્રતિપાદસ્ય અમિધેયે પ્રત્યયો ત્પાદકત્યાત્) એસા હેતુ કહા હૈ યહ અનૈકાન્તિક હૈ । ધરો કિ કરાદિ ચેષ્ટાઓં મેં મી અમિધેય પ્રતિપાદકતા પર ઉસસે માપાત્પ નહીં હૈ । તથા જો એસા કહા હૈ કિ અમાપક કી માપા હૈ-સો યહ મી ઠીક નહીં હૈ

દેવાને કારણે મૌજુદ હોતા નથી, તેથી તે બંને કાળ અવહારના અગરૂપ પણ હોતા નથી. તથા ' ભાષાને સમય વ્યતીત થયા પછીની ભાષા, ભાષા છે અભાષા નથી ' આ કથન પણ ચોખ્ખું નથી કારણ કે બે ભાષામાળ (ભાષાતી) ભાષાને જ ભાષા રૂપે સ્વીકારવામાં ન આવતી હોય તો " માપા સમયવ્યતિક્રાન્તે " ઇત્યાદિ અભિલાપ બની શકે જ નહીં બે ભાષા હોય તો તેના સમય વ્યતીત થવાનો પ્રસંગ આવે-પણ ભાષાનો જ અભાવ હોય તો તેના સમય વ્યતીત થવાની વાત જ ક્યાંથી ઉઠાવે ? તેથી આ પ્રકારનો અભિલાપ જ બની શકે નહીં તથા સમય વ્યતીત થઈ ગયા પછીની ભાષાને પ્રતિપાદિત કરવા માટે " પ્રતિપાદસ્ય અમિધેયે પ્રત્યયોત્પાદકત્વત્ " આવે. જે ઉત્તુ બતાવ્યો છે તે પણ અનૈકાન્તિક છે કારણ કે જવનેરના હાવ ભાવોમાં પણ અભિધેય પ્રતિપાદનતા છે પણ તેમાં ભાષાત્પ નથી તથા " અભાષકની ભાષા ભાષા છે " આ કથન પણ ચોખ્ખું નથી, કારણ કે

યદ્યુક્તં ભાષણાત્ પૂર્વ ભાષા ભાષણહેતુત્વાત્ તદ્યુક્તમેવ, યતો ભાષણાત્પૂર્વ ભાષોત્પત્તેરભાવાદ્ ભાષાત્વેન ન વ્યવહારઃ સ્યાત્ લોકવિરુદ્ધત્વાત્ । યદ્યુક્તં ભાષ્યમાણા અભાષા, વર્તમાનસમયસ્યાવ્યાવહારિકત્વાત્ તદપિ ન સમ્યક્, વર્ત-

માના જાવે તો ફિર ઉસમેં એકાન્તતઃ શાશ્વતતા નહીં માનનીં ચાહિયે । ક્યોં કિ હસ માન્યતા કે અનુસાર વહ પરિણામી નિત્ય માનના પડેગા । પરન્તુ એસા ઉસે પ્રતિપક્ષી ને માના નહીં હૈ । અતઃ એકાન્ત શાશ્વત કર્મ મેં ઉપચય અપચય નહીં ઘટ સકને કે કારણ વહ કથન બી ઉનકા ઠીક નહીં બૈઠતા હૈ ।

તથા જો એસા કહા હૈ કિ ભાષા કી હેતુ હોને સે ભાષણ કે પહિલે કી ભાષા ભાષારૂપ હૈ સો વહ કથન બી સંગત નહીં હૈ, કારણ કિ ભાષા કી ઉત્પત્તિ તો ભાષણ કરને સે હી હોતી હૈ । ભાષણ કે પહિલે તો ભાષા હૈ હી નહીં । ઓર ન ભાષણ કે પહિલે કોઈ (વહ ભાષા હૈ) એસા વ્યવહાર હી કરતા હૈ । તથા-એસા કથન લોક વિરુદ્ધ બી હૈ । તથા-જો એસા કહા ગયા હૈ કિ (ભાષ્યમાણ ભાષા નહીં હૈ અભાષા હૈ કારણ કિ વર્તમાન સમય વ્યવહાર કા અગ નહીં હોતા હૈ-વહ વ્યવહારિક હૈ) સો વહ કથન બી ઠીક નહીં હૈ । કારણ કિ વર્તમાન સમય હી અસ્તિત્વ વિશિષ્ટ હોને સે વ્યવહારોપયોગી હોતા હૈ । અતીતસમય ઓર અના-

તો તેમનામા નિશ્ચે શાશ્વતતા માનવી બેઈએ નહી, કારણ કે આ માન્યતા પ્રમાણે તેને પરિણામી નિત્ય માનવુ પડશે પરન્તુ વિપક્ષીએ તેને એવુ માનેલ નથી. તેથી નક્કીરૂપે શાશ્વત કર્મમા ઉપચય અને અપચયની સંભવિતતા ન હોવાને લીધે તેમનુ તે કથન પણ બરાબર નથી

તથા—વિપક્ષીઓનું “ ભાષાના હેતુરૂપ હોવાથી જોલ્યા પહેલાંની ભાષા ભાષારૂપ છે ” એ કથન પણ સંગત લાગતું નથી, કારણ ભાષાની ઉત્પત્તિ-તો ઉચ્ચારણ કરવાથી જ થાય છે ઉચ્ચારણ કર્યા પહેલાં તો ભાષાનુ અસ્તિત્વ જ નથી, અને ભાષણ (ઉચ્ચારણ) કર્યા પહેલાં “ આ ભાષા છે ” એમ કહેવાતુ પણ નથી તેમજ આ પ્રકારનું કથન લોકવિરુદ્ધ પણ છે. તથા— “ ભાષ્યમાણ ભાષા, (વર્તમાન સમયે ઉચ્ચારવામા આવતી) ભાષા નથી; અભાષા છે કારણ કે વર્તમાન સમય વ્યવહારનુ અગ હોતો નથી ” આ કથન પણ સાચુ નથી, કારણ કે વર્તમાન સમય જ અસ્તિત્વ વાળો હોવાથી વ્યવહારમાં ઉપયોગી છે ભૂતકાળ અને ભવિષ્યકાળ તો વિનાશી અને અનુત્પન્ન

નુષ્ઠાનમ્, તથા યદુક્તમ્-અકિન્ચ દુઃસ્વભિત્યાદિ સ્વભાવવાદિમતમાધિસ્ય તદપિ નાસમ્યક્, યતો યદિ કષ્ટકૌતેષ્યાદિયત્ સર્વે વસ્તુ અકારણાદેષ સ્યાત્ તદાઽનેક પ્રકારકૈદિકપારલૌકિકકર્મણામમાત્રપસંગઃ સ્વીકૃતં ધ્યાન્યતીર્થિકૈરપિ ક્ષિપિત્ પારલૌકિકકર્માનુષ્ઠાનમ્, યત્તત્સર્વં કથનં પરતીર્થિકાનામજ્ઞાનવિસસિતમિતિ । અન્યયુધિકાતાં વિમદ્ગજાને ચસારો મજ્ઞા મવન્તિ, તે છેમે-સદ્ભૂતે અસદ્ભૂતમ્, યથા-સદ્ભૂતે-પરમાણૌ, અસદ્ભૂતમ્-અર્બાદિકમ્ ૧ । અસદ્ભૂતે સદ્ભૂતમ્, યથા અસદ્ભૂતે-ઔપાપકાત્મનિ-સદ્ભૂત ચૈતન્યમ્ ૨ । સદ્ભૂત સદ્ભૂતમ્, યથા-સદ્ભૂતે પરમાણૌ, સદ્ભૂત-નિષ્પદેશત્વમ્ ૩ । અસદ્ભૂતે અમદ્ભૂતમ્, યથા-અસદ્ભૂતે-

સુસ્વ દુઃસ્વરૂપ હોને લગે તો અનેક પ્રકાર કે જો પેદિક ઓર પારલૌકિક અનુષ્ઠાન ઘરેરહ કિયે જાતે હૈં છે સય હી બ્યર્થ હો જાવેંગે । સો પેસા તો હૈં નહીં જ્યોં કિ યદૃષ્ટાવાદિયોં ને બી કર્માનુષ્ઠાન આદિ માને હૈં । તથા સ્વભાવવાદી કે મત કો આશ્રિત કર જો (અકૃત્ય દુઃસ્વ) ઇત્યાદિ કહા ગયા હૈં ઘહ બી ઠીક નહીં હૈં । જ્યોં કિ યદિ કષ્ટક આદિકોં કી તી-ક્ષણતા કી તરહ સમસ્ત વસ્તુરેં વિના કરને સે હી હો જાવે તો ફિર અનેક પ્રકાર કે પેદિક પારલૌકિક કર્મોં કા અમાવ માનના પહેગા । પરંતુ પેસા તો હૈં નહીં-જ્યોં કિ અન્યતીર્થિક જનોં ને બી કુછ પારલૌકિક કર્માદિકોં કા અનુષ્ઠાન કરના સ્વીકાર હી કિયા હૈં । ઇસલિયે સમજના ચાહિયે કિ અન્યતીર્થિક જનોં ને જો યહ સય કહા હૈં ઘહ ડનકે અજ્ઞાન કા હી કથન હૈં । અન્યયુધિકોં કે વિમદ્ગજાન મેં ચાર ભંગ હોતે હૈં-એ ઇસ પ્રકાર સે સદ્ભૂત મેં અસદ્ભૂત (૧) અસદ્-ભૂત મેં સદ્ભૂત (૨) સદ્ભૂત મેં સદ્ભૂત (૩) અસદ્ભૂત મેં અસદ્ભૂત

કરવામા આવે છે તે બ્યર્થ જ બાધ ? એવું તો બનતું નથી. નિયતિગદીઓ પણ અનુષ્ઠાનેગા માને છે “ અકૃત્યમ્ દુઃસ્વ ” આ પ્રકારની સ્વભાવવાદીઓની માન્યતા પણ સાચી નથી. કાણુ કે કાગ વગેરેમા રહેલી તીક્ષ્ણતાની જેમ તમામ વસ્તુઓ વિના કયેં બનીજતી હોય તો અનેક પ્રકારના ઐદિક અને પારશી કિક કર્મનો અભાવ જ માનવો પડશે પરંતુ એનું બનતું નથી અન્ય મતવાદી ઓએ ૫ । કેટલાક પારશીક કર્માદિકોના અનુષ્ઠાન કરવાનું સ્વીકાર્યું છે તેથી એમ જ માનવું પડશે કે અન્ય મતવાદીઓએ જે કહ્યું છે તે તેમના અજ્ઞાનને કારણે કહ્યું છે અન્ય યુધિકા (અન્ય તીર્થિકો)ના વિભગજ્ઞાનમાં ચાર ભાગ (વિભાગ) થાય છે, તે ચાર ભાગ આ પ્રમાણે થાય છે - (૧) સદ્ભૂતમાં અસદ્ભૂત, (૨) અસદ્ભૂતમાં મદ્ભૂત (૩) મદ્ભૂતમાં સદ્ભૂત

વા ભાષાપ્રાપ્તિપસદ્ગ્ન ઇતિ, એવં ક્રિયાપિ વર્તમાનકાલે એવ યુક્તા તસ્યા એવ વર્તમાનત્વાત્, યચ્ચાભ્યાસાનભ્યાસાદિકં કારણં કથિતં તદપિ ન યુક્તમ્ । અનભ્યાસાદાવપિ યતઃ કાચિત્ સુખાદિરૂપૈવ, તથા ।

યદુક્તમ્—અકરણતઃ ક્રિયા દુઃખા ઇતિ તદપિ ન ભવતિ । પ્રતીતિ વાધિતમેવ યતઃ કાલે એવ ક્રિયા દુઃખા સુખા વા દૃશ્યતે ન પુનઃ પૂર્વ પશ્ચાદ્વા પૂર્વપશ્ચાત્કાલે ક્રિયાયા એવાસદ્ભાવાદિતિ ।

‘અકિચ્ચં દુઃખં’ ઇત્યાદિ । યદદ્ધ્યાવાદિમતાશ્રયણેન યત્ કથિતં તત્સર્વમસત્યમેવ, યતો યદિ અકરણાદેવ કર્મ દુઃખં સુખં વા ભવેત્તદાસનેકપ્રકારકૈહિકપારલૌકિકાનુષ્ઠાનાદીનાં વૈયર્થ્યમેવ પ્રમજ્જેત, સ્વીકૃતં ચ યદદ્ધ્યાવાદિભિરપિ કર્માદ્ય-

કર્મો કિ એસા માનને પર સિદ્ધ ઓર અચેતન કે ભી ભષા કી પ્રાપ્તિ હોને કા પ્રસંગ પ્રાપ્ત હોગા । હસી તરહ સે ક્રિયા ભી વર્તમાન કાલ મેં હી યુક્ત હૈ—કર્મો કિ વર્તમાન કાલ સદ્રૂપ હૈ । તથા—જો અભ્યાસ અનભ્યાસ આદિ કો કારણ કહા ગયા હૈ સો ભી ઠીક નહીં હૈ કર્મો કિ અભ્યાસ આદિ કે નહીં હોને પર ભી કોઈ ક્રિયા સુખરૂપ હી લગતી હૈ । તથા જો એસા કહા હૈ કિ નહીં કરને સે ક્રિયા દુઃખરૂપ લગતી હૈ સો એસા કથન ભી પ્રતીતિ સે વાધિત હી હૈ કારણ કિ કરતે સમય હી ક્રિયા સુખરૂપ અથવા દુઃખરૂપ પ્રતીતિ હોતી હૈ । પહિલે વાદ મેં નહીં । કર્મો કિ, ક્રિયા પૂર્વ પશ્ચાત્ કાલ મેં અભાવ યુક્ત રહતી હૈ । અર્થાત્ પૂર્વ પશ્ચાત્ કાલ મેં ઉસ ક્રિયા કા અભાવ હો જાતા હૈ ।

તથા—યદદ્ધ્યાવાદિમત કો લેકર જો એસા કહા ગયા હૈ કિ (અકિચ્ચં દુઃખં) ઇત્યાદિ—સો સબ વહ અસત્ય હી હૈ । કર્મો કિ વિના કિયે હી કર્મ

એવું માનવામા આવે તો સિદ્ધ અને અચેતનમા પણ ભાષાની પ્રાપ્તિ થવાનો પ્રસંગ ઉદ્ભવશે. એજ પ્રમાણે ક્રિયા પણ વર્તમાન કાળમાં જ યુક્ત છે—કારણ કે વર્તમાન કાળ જ સદ્રૂપ છે—અસ્તિત્વવાળો છે. તથા અભ્યાસ અનભ્યાસ વગેરે કારણ કહેવામા આવેલ છે તે પણ યોગ્ય નથી, કારણ કે અભ્યાસ વગેરે નહીં હોવા છતાં પણ કોઈ ક્રિયા સુખરૂપ જ લાગે છે. તથા એવું જ કહ્યું છે કે નહીં કરવાથી ક્રિયા હુ ખરૂંપ લાગે છે, તે કથનની પણ પ્રતીતિ થતી નથી. કારણ કે કરતી વખતે જ ક્રિયા સુખરૂપ કે હુ.ખરૂંપ લાગે છે—પહેલા કે પછી નહીં—કારણ કે તે ક્રિયાનો પૂર્વકાળે અને પછીના કાળે અભાવ જ રહે છે તથા યદદ્ધ્યાવાદીઓ (નિયતિવાદીઓ)નું “અકિચ્ચં દુઃખં” ઇત્યાદિ કથન પણ અસત્ય જ છે, કારણ કે કર્યા વિના જ જો કર્મ સુખ હુખરૂંપ થવા માંડે તો અનેક પ્રકારનાં જ ઐહિક અને પારલૌકિક અનુષ્ઠાનો

॥ परतीर्थिकानां क्रियाविषये प्रश्नोत्तराणि ॥

पुनरपि अन्ययूषिकान्तरमत प्रदर्शयन्नाह—‘अन्न उत्थियाणं भते’ इत्यादि ।

मूलम्—अन्न उत्थिया ण भते ! एव आइक्खति, जाव एव खल्ल एगे जीवे एगेण समएण दो किरियाओ पकरेंति, त जहा—इरियावहिय च, सपराइय च । ज समय इरियावहिय पकरेइ, त समय सपराइय पकरेइ, ज समय सपराइय पकरेइ, त समय इरियावहिय पकरेइ, इरियावहियाए पकरणयाए सपराइय पकरेइ सपराइयाए पकरणयाए इरियावहिय पकरेइ, एव खल्ल एगे जीवे एगेण समयेण दो किरियाओ पकरेंति, त जहा इरियावहिय च सपराइय च । ते कहमेय भते एव ? गोयमा ! ज ण त अन्न उत्थिया एव आइक्खति, त चेव जाव जे ते एव आहसु, मिच्छा ते एव आहसु, अह पुण गोयमा ! एव आइक्खामि, एव खल्ल एगे जीवे एग समए एक किरिय पकरेइ, ससमयवत्तवयाए णेवव जाव इरियावहिय वा सपराइय वा ॥ सू० ३ ॥

छाया—अन्ययूषिका खल्ल भवन्त । एवमाकर्षाति, यापत् एव खल्ल एको जीव एकेन समयेन द्वे क्रिय पकराति, तथया ऐर्ष्यापक्षिणी च सांपरायिकी च ।

परतीर्थिको के क्रियाविषय में प्रश्नोत्तर—

‘अन्न उत्थियाणं भते ! एवं आइक्खति’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—(भते) हे भवन्त ! (अन्न उत्थिया ण एव आइक्खति) अन्यतीर्थिक ऐसा कहते हैं कि (जाव एवं खल्ल एगे जीवे एगेण समएण

परतीर्थिकानां क्रिया विषये प्रश्नोत्तर—

“अन्न उत्थियाणं भते ! एव आइक्खति” इत्यादि

सूत्रार्थ—(भते) हे भवन्त ! (अन्न उत्थियाणं एव आइक्खति)

अन्य तीर्थिकों के लिये ऐसे हैं कि (जाव एवं खल्ल एगे जीवे एगेण समएण दो

વ્યાપકાત્મનિ, અસદ્ભૂતં કર્તૃત્વમ્ ૪ । એવમન્યયૃથિક્રમતમજ્ઞાનવિલસિતં જ્ઞાત્વા
ભગવદ્વચને શ્રદ્ધા કાર્યેતિ ॥ સુ-૨ ॥

(૪) इन्हें इस प्रकार से समझना चाहिये-सद्भूत परमाणु में असद्भूत
आधे परमाणु का चिपकना-मानना यह प्रथम भंग है । व्यापक आत्मा
में सद्भूत चैतन्य है ऐसा मानना द्वितीय भंग है । आत्मा को व्यापक
मानना यह असद्भूत है । क्यों कि आत्मा अपने २ प्राप्त शरीरके बरा-
बर माना गया है-व्यापक नहीं । सद्भूत परमाणु में निष्प्रदेशत्व मानना
यह सद्भूत सद्भूत नाम का तीसरा भंग है । व्यापक आत्मा में अस-
द्भूत कर्तृत्व मानना यह चौथा भंग है । इसी तरह से अन्यतीर्थिक
जनों का मत अज्ञानविलसित है ऐसा जानकर भगवान के वचन में
श्रद्धा करनी चाहिये ।

यहां जो प्राण, भूत, जीव, सत्त्व ऐसा पाठ आया है-सो दो इन्द्रि-
यवाले, तीन इन्द्रियवाले, चार इन्द्रियवाले, जीव प्राण शब्द से, वृक्ष
एकेन्द्रिय जीव भूत शब्द से, पांच इन्द्रिय वाले जीव जीव शब्द से
और बाकी के पृथिवीकाय अप् तेजो कायिक जीव सत्त्व शब्द से
लिये गये हैं ऐसा जानना चाहिये ॥ सू-२ ॥

અને (૪) અસદ્ભૂતમાં અસદ્ભૂત તેનું સ્વપ્રીકરણ આ 'પ્રમાણુ છે- સદ્ભૂત
પરમાણુમાં અસદ્ભૂત—અર્ધા પરમાણુનું ચોટી જવું-એ માન્યતા ધરાવવી
આ પહેલો ભાગો છે વ્યાપક આત્મામાં સદ્ભૂત ચૈતન્ય છે એમ માનવું
તે બીજો ભાગો છે આત્માને વ્યાપક માનવો તે અસદ્ભૂત છે કારણ કે આત્મા
પોત પોતાના પ્રાપ્ત શરીરની બરાબર મનાય છે- વ્યાપક મનાતો નથી-
સદ્ભૂત પરમાણુમાં નિષ્પ્રદેશત્વ માનવું તે સદ્ભૂતમાં સદ્ભૂત નામનો ત્રીજો
ભાગો છે વ્યાપક આત્મામાં અસદ્ભૂત કર્તૃત્વ માનવું તે ચોથા ભાગો છે.
આ રીતે અન્યતીર્થિકોનો મત અજ્ઞાનમૂલક છે, એમ બહુણે ભગવાનનાં
વચનોમાં શ્રદ્ધા રાખવી.

અહીં જે પ્રાણ, ભૂત, જીવ અને સત્ત્વ શબ્દોનો પ્રયોગ કરાયો છે તેનો
અર્થ આ પ્રમાણે સમજવો. જે ઇન્દ્રિયવાળા, ત્રણ ઇન્દ્રિયવાળા અને ચાર
ઇન્દ્રિયવાળા જીવો, પ્રાણ શબ્દથી ગ્રહણ કરાયા છે. વનસ્પતિન જીવો; ભૂત
શબ્દથી, પચેન્દ્રિય જીવો; જીવ શબ્દથી અને બાકીના પૃથ્વીકાય અખંડાય તેજકાય
અને વાયુકાયના જીવો સત્ત્વ શબ્દથી ગ્રહણ કરાયા છે એમ સમજવું. ॥સૂ. ૨॥

એવાગ્ન્યાતિ તદ્વં યાવત્ ય તે અથમાહુ મિથ્યા તે એવાહુ અહં પુન ગૌતમ !
 એવાગ્ન્યામિ એ સ્વલ્પ એકો જીવ એકસમયે એકા ક્રિયા પ્રકરોતિ, સ્વસમય
 ક્ષમ્યતયા નેતર્યમ્ યાવત્ એવાપયિકીં ચા સાંપરાયિકીં ચા ॥ સૂ. ॥ ૧ ॥

ટીકા—‘અમ ટત્તિયાણ મતે’ અન્યયુગિકા સ્વલ્પ મદન્ત ! ‘એ આગ્નસતિ’
 એવાગ્ન્યાન્તિ ‘જાત’ યાવત્પદન—‘એ માપ’તે એ પ્રજાપયન્તિ, એ પ્રમ્ય

અં) તો કયા હ મદન્ત ! યહ કથન કમી પ્રકાર સે હે ? (ગોયમા)
 હે ગૌતમ ! (જ પં તે અમઠત્તિયા) જો એ અન્યનીર્થિક (અથ આહ્વાસ્યતિ)
 એમા કહતે હે (ત એક જાત જે તે એ આહ્વાસુ) યાવત્ જો ઉન્હોં ને
 એમા કહા હે (મિથ્યા તે એ આહ્વાસુ) યહ ઉન્હોં ને મિથ્યા કહા હે !
 (અહં પુન ગોયમા ! અથ આહ્વાસ્યામિ) મેં નો હે ગૌતમ ! એમા કહના
 હુ કિ (અથ સ્વલ્પ-અગે જીવે અગસમય એક કિરિય વકરેહ) અગ જીવ અગ
 સમય મેં એક ક્રિયા કરના હે ! (સમસમય સ્વલ્પવાળા પોયલ જાવ ટગિયા
 ઘટિય ચા સાંપરાય ચા) યહ વાન સ્વસમય સ્વલ્પમા સે જાનની યાવત્
 એક જીવ એક સમયમેં ભેર્યાપયિકી અથવા સાંપરાયિકી ક્રિયા કરના હે !

ટીકાર્થ—(અમ ટત્તિયા પં મતે) હે મદન્ત ! અન્યયુગિક એમા
 કહતે હે ! યહાં જો (જાત) વદ આયા હે ઉમસે (અથ માપાન્તે, અથ
 પ્રજાપયન્તિ, અથ પરુષયન્તિ) કન ક્રિયાપદોં કા સંગ્રહ કિયા ગયા હે !

એ) તો હે જાતનું ! તેમણે ન કથન આણુ છે ? (ગોયમા !) હે ગૌતમ !
 (જ પં તે અમઠત્તિયા એ આહ્વાસ્યતિ) તે અન્ય તાથિકો એણે એ કહે છે,
 (ત એક જાત જે તે એ આહ્વાસુ) (યાવત્) તેમણે એણે એ કહ્યું છે (મિથ્યા
 તે એ આહ્વાસુ , તે તેમણે મિથ્યા કહ્યું છે તે આણુ નથી (અહ પુન ગોયમા !
 એ આહ્વાસ્યામિ) હે ગૌતમ ! હુ એણે કહું છું કે (અથ સ્વલ્પ-અગ કથ અગ
 સમય એક કિરિય વકરેહ) એક એક એક સમયે એક જ ક્રિયા કરે છે
 (સમસમય સ્વલ્પવાળા પોયલ જાવ ટગિયાઘટિય ચા સાંપરાય ચા) તે વાન એ
 સમય વખતવાથી (એ ત્રિદાતથી) જાણવી એણે કે એક એક સમયે
 ભેર્યાપયિકી અથવા સાંપરાયિકી એ એ આથી એક જ ક્રિયા કરે છે

ટીકા—‘અમ ટત્તિયાણ મતે !’ હે જાતનું અન્ય મનવાદીઓ આ
 પ્રમાણે કહે છે (અહીં જાત (યાવત્પદન) ૫૬ વડે એ પ્રમ્યન્ત, એ
 પ્રજાપયન્તિ એ પરુષયન્તિ) આ ક્રિયાપદોને સ્વલ્પ કથવામા આના છે) તેઓ

યસ્મિન્ સમયે ઐર્યાપથિકીં પ્રકરોતિ તસ્મિન્ સમયે સાંપરાયિકીં પ્રકરોતિ, યસ્મિન્ સમયે સાંપરાયિકીં પ્રકરોતિ તસ્મિન્ સમયે ઐર્યાપથિકીં પ્રકરોતિ, ઐર્યાપથિક્યાઃ પ્રકરણતયા સામ્પરાયિકીં પ્રકરોતિ. સામ્પરાયિક્યાઃ પ્રકરણતયા ઐર્યાપથિકીં પ્રકરોતિ, એવં ચલુ એકો જીવ એકસ્મિન્ સમયે દ્વે ક્રિયે પ્રકરોતિ, તદ્વથા-ઐર્યાપથિકીં ચ સાંપરાયિકીં ચ, તત્ કથમેતત્ ભદન્ત ! એવમ્ ? ગૌતમ ! ચત્ચલુ અન્યતીર્થિકા

દો કિરિયાઓ પકરેતિ) યાવત્ એક જીવ એક સમય મેં દો ક્રિયાઓં કો કરતા હૈ । (તં જહા) વે દો ક્રિયાએં ઢસ પ્રકાર સે હેં (ઈરિયાવહિયં ચ સંપરાઈયં ચ) એક ઈર્યાપથિકી દૂસરી સાંપરાયિકી સો જીવ જન દો ક્રિયાઓ કો કરતા હૈ । (જં સમયં ઈરિયાવહિયં પકરેહ) જિસ સમય મેં ઈર્યાપથિકી ક્રિયા કરતા હૈ । (તં સમયં સંપરાઈયં પકરેહ) ડસ સમય મેં સાંપરાયિકી ક્રિયા કરતા હેં (જં સમયં સાંપરાઈયં પકરેહ) જિસ સમય મેં સાંપરાયિકી ક્રિયા કરતા હૈ (તં સમયં ઈરિયાવહિયં પકરેહ) ડસ સમય મેં ઈર્યાપથિકી ક્રિયા કરતા હૈ (ઈરિયાવહિયાએ પકરણયાએ સંપરાઈયં પકરેહ, સંપરાઈયાએ પકરણયાએ ઈરિયાવહિયં પકરેહ) ઈર્યાપથિકી ક્રિયા કરને સે સાંપરાયિકી ક્રિયા કરતા હૈ, સાંપરાયિકી ક્રિયા કરને સે ઈર્યાપથિકી ક્રિયા કરતા હૈ । (એવં ચલુ એકો જીવે એકેણં સમયે દો કિરિયાઓ પકરેહ) ઇસ તરહ એક જીવ એક સમય મેં દો ક્રિયાઓં કો કરતા હૈ । (તં જહા ઈરિયાવહિયં ચ સંપરાઈયં ચ) એક ઈર્યાપથિકી ક્રિયા ઓર દૂસરી સાંપરાયિકી ક્રિયા કો । (સે કહમેય મંતે !

કિરિયાઓ પકરેતિ) એક એવ એક સમયે બે ક્રિયાઓ કરે છે. (તં જહા) તે બે ક્રિયાઓ આ પ્રમ ભુ છે- ઈરિયાવહિયં ચ સંપરાઈયં ચ) (૧) ઈર્યાપથિકી અને (૨) સાંપરાયિકી, એવ આ બને ક્રિયાઓ કરે છે, (જ સમય ઈરિયાવહિયં પકરેહ) બ્યારે એવ ઈર્યાપથિકી ક્રિયા કરતો હોય છે ત્યારે ત સમય સંપરાઈયં પકરેહ) સાંપરાયિકી ક્રિયા પણ કરતો હોય છે. (જ સમય સંપરાઈયં પકરેહ ત સમય ઈરિયાવહિયં પકરેહ) બે સમયે એવ સાંપરાયિકી ક્રિયા કરતો હોય છે તે સમયે ઈર્યાપથિકી ક્રિયા પણ કરતો હોય છે, (ઈરિયાવહિયાએ પકરણયાએ સંપરાઈયં પકરેહ, સંપરાઈયાએ પકરણયાએ ઈરિયાવહિયં પકરેહ) ઈર્યાપથિકી ક્રિયા કરવાથી સાંપરાયિકી ક્રિયા કરે છે સાંપરાયિકી ક્રિયા કરવાથી ઈર્યાપથિકી ક્રિયા કરે છે (એવ ચલુ એકો જીવે એકેણં સમયે દો કિરિયાઓ પકરેહ) આ રીતે એક એવ એક સમયે બે ક્રિયાઓ કરે છે- (ત જહા ઈરિયાવહિયં ચ સંપરાઈયં ચ) એક ઈર્યાપથિકી ક્રિયા અને બીજી સાંપરાયિકી ક્રિયા. (સે કહમેય મંતે !

યન્તિ, કિમાહ્યાન્તીત્યાહ-‘ એવં સ્વલુ ’ ઇત્યાદિ । ‘ એવં સ્વલુ એગે જીવે ’ એવં સ્વલુ એકો જીવઃ, ‘ એગેણં સમણં ’ એકસ્મિન્ સમયે ‘ દો કિરિયાઓ પકરેતિ ’ દ્વે ક્રિયે પ્રકરોતિ । કે તે દ્વે ક્રિયે ? તત્રાહ-‘ તં જહે ’ ત્યાદિ । ‘ ત જહા ’ તથથા-‘ ઈરિયાવહિયં ચ સંપરાહ્યં ચ ’ એર્યાપથિકીં ચ સામ્પરાયિકીં ચ । તત્ર ઈર્યાં નામ ગમનમ્ તદ્વિષયઃ પન્થાઃ માર્ગ ઇતિ ઈર્યાપથઃ તત્ર મથા એર્યાપથિકી, કેવલકાયયોગકારણકઃ કર્મવન્ધ ઇત્યર્થઃ, તામ્ । સંપરેતિ=પ્રમતિ જીવો મથે=સંસારે ચૈસ્તે સંપરાયાઃ કષાયાન્તત્કારણિકા યા ક્રિયા સા સાંપરાયિકી ક્રિયા, કષાયકારણકઃ કર્મવન્ધ ઇત્યર્થઃ તામ્ । ‘ જં સમયં ઈરિયાવહિયં પકરેહ ’ યસ્મિન્

વે કયા કહતે હૈં-ઇસ્કો મુત્રકાર ને (એવં સ્વલુ એગે જીવે) ઇત્યાદિ સૂત્ર પાઠ દ્વારા પ્રકટ કિયા હૈં એક જીવ (એગેણં સમણં) એક સમય મેં (દો કિરિયાઓ પકરેતિ) દો ક્રિયાઈ કરતા હૈં ! વે દો ક્રિયાઈ કૌન સી હૈં-ઇસે (તંજહા) દ્વારા પ્રકટ કરને કે નિમિત્ત કહતે હૈં કિ વે ઇસ પ્રકાર સે હૈં-(ઈરિયાવહિયં ચ સંપરાહ્યં ચ) એક એર્યાપથિક અને દૂસરી સાંપરાયિક, ઈર્યાં નામ ગમન કા હૈં । ઇસ ગમન કા વિષયભૂત જો માર્ગ હૈં વહ ઈર્યાપથ હૈં । ઇસમેં જો ક્રિયા હો વહ એર્યાપથિકી ક્રિયા હૈં । અર્થાત્ ગમનાગમન કરતે સમય કેવલ કાયયોગ કારણક જો કર્મવન્ધ હોતા હૈં વહ એર્યાપથિકી ક્રિયા હૈં । જિનકે કારણ જીવ સંસાર મેં પરિભ્રમણ કરતા રહના હૈં વહ સંપરાય હૈં- સંપરાય નામ કષાય કા હૈં । ઇસ કષાય કો લેકર જો ક્રિયા હોતી હૈં, વહ સાંપરાયિક ક્રિયા હૈં । અર્થાત્ કષાયકારણક જો કર્મવન્ધ હોતા હૈં વહ સાંપરાયિકી ક્રિયા હૈં । જીવ (જં સમયં) જિસ

શુ' કહે છે તે સૂત્રકારે “ એવં સ્વલુ એગે જીવે ” ઇત્યાદિ સૂત્રપાઠ વડે બતાવ્યું છે એક જીવ (એગેણં સમણં) એક સમયે ‘ દો કિરિયાઓ પકરેતિ ’ બે ક્રિયાઓ કરે છે. તે બે ક્રિયાઓ (ત જહા) આ પ્રમાણે છે-“ ઈરિયાવહિયં ચ સંપરાહ્યં ચ ” એક ઈર્યાપથિકી ક્રિયા અને બીજી સાંપરાયિકી ક્રિયા ઈર્યાં એટલે ગમન. તે ગમનને માટેના બે માર્ગ હોય છે તેને ઈર્યાપથ કહે છે. તેમાં બે ક્રિયા થાય છે તે ક્રિયાને ઈર્યાપથિકી ક્રિયા કહે છે, એટલે કે ગમનાગમન કરતી વખતે કાયયોગને કારણે બે કર્મબંધ થાય છે તેને ઈર્યાપથિકી ક્રિયા કહે છે, સંપરાય એટલે કષાય. જેના કારણે જીવ સંસારમાં પરિભ્રમણ કર્યા કરે છે તેનું નામ સંપરાય (કષાય) છે તે કષાયને લીધે બે ક્રિયા થાય છે તે ક્રિયાને સાંપરાયિકી ક્રિયા કહે છે, એટલે કે કષાયને કારણે બે કર્મબંધ થાય છે તેને સાંપરાયિકી ક્રિયા કહે છે “ જ સમયં ” બે સમયે જીવ “ ઈરિયા

સ્વસમયવક્તવ્યતા નેતૃત્વમ્, સ્વસમયવક્તવ્યતા-વેત્થમ્—“શ્રિયાવહિયં વા સંપરાહ્યં વા । જ સમયં શ્રિયાવહિયં પકરેદ્ સં સમયં સંપરાહ્યં ન પકરેદ્, જ સમય સંપરાહ્યં પકરેદ્ સ સમય શ્રિયાવહિયં ન પકરેદ્ । શ્રિયાવહિયાં પકરણયાં સંપરાહ્યં ન પકરેદ્, સંપરાહ્યાં પકરણયાં શ્રિયાવહિયં ન પકરેદ્ । એ સ્વતંત્ર એ બીજા એને સમર્પણ એ કિરિયં પકરેદ્, સં જાણ ”-હિ, ‘શ્રિયાવહિયં વા સંપરાહ્યં વા’-ઇત્યનેન સદ્ સંયોજનીયમ્ । મિધ્યાત્વં જ્ઞાસ્ય પૂર્વોક્તમતસ્પેધં પ્રતિ-
પાદનીયમ્ યેર્વાપધિકી ક્રિયા તુ અકૃપાયોદયમશા, યેર્વાપધિકી ક્રિયા કેવલક્રા-
યયોગકારણેન જ્ઞાયતે કાયયોગશ્ચ ન કપાયરૂપોડયિ તુ કપાયમિશ્નોડત્ । યેર્વાપધિકી

સમય મેં (એક) એક (કિરિયં) ક્રિયા કો (પકરેદ્) કરતા હૈ । (સસમય વક્તવ્યતાએ જેવળ્ય) યહ યાત સ્વસમયવક્તવ્યતા સે જાનનો જ્ઞાહિયે । યહ સ્વસમયવક્તવ્યતા હસ પ્રકાર સે હૈ (શ્રિયાવહિયં વા સંપરાહ્યં વા જ સમય શ્રિયાવહિયં પકરેદ્, સં સમય સંપરાહ્યં ન પકરેદ્), શ્રિયાવહિ-
જીવ એક સમય મેં એક જી ક્રિયા કરતા હૈ । યા તો યહ યેર્વાપધિકી ક્રિયા કરતા હૈ, યા સંપરાધિકી ક્રિયા કરતા હૈ । જિસ સમય મેં યહ યેર્વાપ-
ધિકી ક્રિયા કરતા હૈ ઓસ સમય મેં યહ સંપરાધિકી ક્રિયા નહીં કરતા હૈ । જિસ સમય મેં સંપરાધિકી ક્રિયા કરતા હૈ ઓસ સમય મેં યહ યેર્વા-
પધિકી ક્રિયા નહીં કરતા હૈ । યેર્વાપધિકી ક્રિયા કર છેને સે સંપરાધિકી ક્રિયા યહ નહીં કરતા હૈ ઓર સંપરાધિકી ક્રિયા કર છેને સે યહ યેર્વા-
પધિકી ક્રિયા નહીં કરતા હૈ । હસ તરફ એક જીવ એક સમય મેં એક ક્રિયા કરતા હૈ । યા તો યા યેર્વાપધિકી ક્રિયા કરતા હૈ અથવા સંપરા-
ધિકી ક્રિયા કરતા હૈ ।

અથ “જગણં સમર્પણ” એક સમયે ‘એક કિરિય પકરેદ્’ એક ક્રિયા જ
કરે છે સસમયવક્તવ્યતાએ જગ-જ ” તે જાત સ્વસમય (સ્વ સિદ્ધાંત) ના
વજા થને આધારે સમજાવી એક એક તે સ્વસમયની વજાવતતા આ પ્રમાણે છે
“શ્રિયાવહિયં વા સંપરાહ્યં વા જ સમય શ્રિયાવહિયં પકરેદ્, સ સમય
સંપરાહ્યં ન પકરેદ્”-ઇત્યાદિ અથ એક સમયે એક જ ક્રિયા કરે છે જા તો
તે યેર્વાપધિકી ક્રિયા કરે જ અથવા તો સંપરાધિકી ક્રિયા કરે છે જે સમયે
તે યેર્વાપધિકી ક્રિયા કરતો હોય છે તે સમયે તે સંપરાધિકી ક્રિયા કરતો નથી
જે સમયે તે સંપરાધિકી ક્રિયા કરતો હોય છે તે સમયે તે યેર્વાપધિકી ક્રિયા
કરતો નથી યેર્વાપધિકી ક્રિયા કરી લેવાથી તે સંપરાધિકી ક્રિયા કરતો નથી અને
સંપરાધિકી ક્રિયા કરી લેવાથી અથવા યેર્વાપધિકી ક્રિયા કરતો નથી આ રીતે
એક અથવા એક સમયે એક જ ક્રિયા કરે છે-

વાસ્તિ કિમ્ ? । ભગવાનાહ—‘ ગોયમા ’ ઇત્યાદિ । ‘ ગોયમા ’ હે ગૌતમ ! ‘ જં ણં તે અન્નઉત્થિયા એવં આહ્વક્ષંતિ ’ ૪ યત્ સ્વલુ તે અન્યયૂથિકા એવમારુયાન્તિ, એવં ભાષન્તે, એવં પ્રજ્ઞાપયન્તિ એવં પ્રરૂપયન્તિ । ‘ તં ચેવ જાવ ’ તદેવ પૂર્વોક્તમેવ યાત્, અત્ર યાવચ્છવ્વદેન—“ એવં સ્વલુ એગે જીવે એગેણં સમણં દો કિરિયાઓ પકરેતિ, તં જહા—ઈરિયાવહિયં ચ સંપરાઈયં ચ ’ ઇત્યાદિ—પૂર્વોક્તમન્યતીર્થિકમતં સર્વં સંગ્રાહ્યમ્ । ‘ જે તે એવમાહંસુ મિચ્છા તે એવમાહંસુ ’ યે તે એવમાહુઃ, મિથ્યા તે એવમાહુઃ, ‘ અહં પુણ ગોયમા ’ અહં પુનર્ગૌતમ, ‘ એવં આહ્વક્ષામિ ’ ૪ એવમારુયામિ, એવ પ્રજ્ઞાપયામિ । એવં સ્વલુ એકો જીવઃ ‘ એગં સમણં ’ એકસ્મિન્ સમયે ‘ એકકં કિરિયં પકરેહ ’ ‘ એકાં ક્રિયાં પ્રકરોતિ, ‘ સ સમયવત્તવ્વયાણે પેયવ્વં ’ (સે કહમેયં ભંતે ! એવં વુચ્ચહ) તો હે ભદન્ત ! જૈસા વે કહતે હૈં કયા વહ વૈસા હી હૈં ?

इसका उत्तर भगवान् देते हुए कहते हैं—(गोयमा) हे गौतम ! (जं णं ते अन्नउत्थिયા एवं आह्वक्खंति ४) जो वे अन्ययूथिक ऐमा कहते हैं, ऐसा भाषण करते हैं, ऐसा प्रज्ञापना करते हैं (तं चेव जाव) यहां यावत् शब्द से अन्यतीर्थिक समत पूर्वोक्त (एवं स्वलु एगे जीवे एगेणं समणं) इत्यादि यह पाठ ग्रहण किया गया है—कि एक जीव एक समय में दो क्रियाएँ करता है इत्यादि, (जे ते एवमाहंसु) सो जो उन्होंने ने ऐसा कहा है (मिच्छा ते एवमाहंसु) वह उन्हां ने झूठा कहा है । (अहं पुण गोयमा) हे गौतम ! मैं तो (एवं आह्वक्खामि) ऐमा कहता हूं, ऐसा भाषण करता हूं, ऐसी प्रज्ञापना करता हूं, ऐसी प्ररूपणा करता हूँ, कि (एवं स्वलु एगे जीवे) एक जीव (एगेणं समणं) एक

એક ઈર્થાપિથિકી અને બીજી સાપરાયિકી “ સે કહમેયં ભંતે ! એવં વુચ્ચહ ? ”

તો હે ભગવન્ ! તેઓ એમ કેવી રીતે કહે છે ?—શુ તેમની માન્યતા સાચી છે ?

તેનો જવાબ આપતા ભગવાન કહે છે કે “ ગોયમા ! ” હે ગૌતમ ! “ જં ણં તે અન્નઉત્થિયા એવં આહ્વક્ષંતિ ૪ ” તે અન્ય તીર્થિકો એવુ જે કહે છે, એવુ જે ભાષણ કરે છે, એવી જે પ્રજ્ઞાપના કરે છે, એવી જે પ્રરૂપણા કરે છે, ‘ તં ચેવ જાવ ’ અહીં “ યાવત્ ” પદથી અન્ય મતવાદીઓનો “ એક જ એક સમયે બે ક્રિયાઓ કરે છે ” ઇત્યાદિ તમામ પૂર્વોક્ત પાઠ ગ્રહણ કરવામાં આવ્યો છે, “ જે તે એવમાહંસુ ” અને એવુ જે તેમણે કહ્યું છે “ મિચ્છા તે એવમાહંસુ ” તે તેમણે જૂઠું કહ્યું છે—તેમની તે માન્યતા ભૂલ ભરેલી છે. “ અહં પુણ ગોયમા ! ” હે ગૌતમ ! હું તો “ એવં આહ્વક્ષામિ ” એવું કહું છું. એવુ ભાષણ કરું છું, એવી પ્રજ્ઞાપના કરું છું અને એવી પ્રરૂપણા કરું છું કે “ એવં સ્વલુ એગે જીવે ” એક

પરતીર્થિકમતસ્ય મિથ્યાત્વ મયતીતિ શોભ્યમ્ । ચિરદ્વયો પદાર્થયોરેકપુરુષગૈકદા
સપાદયિતુમશ્ક્યત્વાત્ । નહિ ગચ્છન્ નિનદત્તઃ સ્થિતો મવતિ, તદ્વદિદાપિ કપાય
નનિતકપાપાનનિતક્રિયયોઃ પરસ્પર ચિરદ્વત્વાદકપુરુષેણ એકસમયે ક્રિયાદ્વય
સ્યાન્નુષ્ઠાતુમશ્ક્યત્વેન મિથ્યા તન્મતમિતિ સદ્ગેષઃ ॥ સૂ. ૩ ॥

સપાતવિરહવિધારા:—

અનન્તરપ્રકરણે ક્રિયાયા નિરૂપણં કૃતમ્, ક્રિયાવતાં ચોત્પાદો મવતિ इति
ક્રિયાનિરૂપણે સતિ ક્રિયામૂલકસ્પોત્પાદઃ સ્મૃતો મવતિ, ઉત્પાદસ્મરણે સતિ
તદ્વિરહોત્પાદવિરહસ્ય સ્મરણં જાતમિતિ તવેવાહ—‘નિરયગર્હ’ ઇત્યાદિ ।

મૂષમ્—નિરયગર્હ ણં મતે । કેવદ્વય કાલ વિરહિયા ઉવ
વાણ પળતા ? ગોયમા ! જહણ્ણેણં એક સમય ઉક્કાસેણ
વારસમુદ્ધુત્તા, એવ વક્કતીપય માણિયવ્થ નિરવસેસ, સેવ
મતે સેવ મતે તિ જાવ વિહરહ ॥ સૂ. ૪ ॥

॥ પઢમસમયે દસમો ઉદેસો સમ્મત્તો ॥ ૧-૧૦ ॥

કારણ ક્રિમી તરહ સંમથિત નહીં હોતા હૈ । અતઃ ઇમ પ્રકાર કી માય
તાવાલા પરતીર્થિકોં કા મત મિથ્યા હૈ । એસા જાનના ચાહિયે । ક્યોં
કિ એક હી કાલ મેં પરસ્પર ચિરદ્વ દો પદાર્થોં કા એક પુરુષ દ્વારા સંપા
દન હોના અશક્ય હૈ । (જાતા હુઆ દેવદત્ત ભગ્ગા હૈ) જૈસે કિસી કે
ઇસ કથન કો કોઈ સત્ય નહીં માન સકના હૈ વૈસા હી યહ કથન હૈ ।
ઇસે સત્ય કૈસે માના જા સકના હૈ અન જૈસે જાનારૂપ ક્રિયા ઔર
સ્થિત હોને રૂપ ક્રિયા એક હી કાલ મેં એક પુરુષ મેં પરસ્પર મેં ચિરદ્વ
હોને કે કારણ સંમથની નહીં હૈ, ઝસી પ્રકાર સે કપાય જનિત ઔર
અકાપાય જનિત ઇન દો ક્રિયાઓ કો પરસ્પર ચિરદ્વ હોને કે કારણ યે
દો ક્રિયાર્થોં એક હી કાલ મેં એક હી પુરુષ દ્વારા અનુષ્ઠાતું-કર્તું-(કરને
યોગ્ય) નહીં હો સકની હૈ । અતઃ ઇમ પ્રકાર કી ક્રિયા દ્વય કી એકમાથ
કરને કી માન્યતાવાલા નિદાન્ત મિથ્યા હૈ એસા જાનના ચાહિયે ॥ સૂ. ૧ ॥

મિથ્યા છે કારણ કે બેઉજ સમયે પરસ્પરથી ચિરદ્વ બેવી બે ક્રિયાઓનું એક
પુરુષ વડે સંપાદન થયું અશક્ય છે જેમ કે જઈ રહેતો દેવદત્ત ઉભો છે ”
એ કથન કોઈને પણ સત્ય નહીં લાગે, કારણ કે બન્નાની ક્રિયા અને ઉભા
રહેવાની ક્રિયા પરસ્પર ચિરદ્વ ક્રિયાઓ ॥ તે તે બને ક્રિયા એક જ પુરુષ
વડે એક જ સમયે સંભવી શકતી નથી એજ પ્રમાણે કપાયજનિત અને કપાય
રહિત એ બે ક્રિયાઓ (સાપરાધિકી અને ધર્વાધિકી) પરસ્પર ચિરદ્વ દોવાને
કારણે એક જ વડે એક જ સમયે સંભવી શકતી નથી. તેથી તે બે ક્રિયાઓ
એક જ સાથે થાય છે, બેવી માન્યતા મિથ્યા સમજવી. ॥ સૂ-૩ ॥

ક્રિયાઽકષાયદોષપ્રભવા ભવતિ, સાંપરાયિકી ક્રિયા તુ કષાયદોષોદ્ભવા સંસારે પરિભ્રમણકારણં કષાયાઃ તે એવ સંપરાયપદવાચ્યાસ્તૈઃ સંપરાયૈઃ કષાયાપરનામકૈર્જાયામાના ક્રિયા સાંપરાયિકીતિ કથ્યતે इति એકસ્યાઃ કષાયપ્રભવત્વમેકસ્યાસ્તુ અકષાયપ્રભવત્વમિતિદ્વયોઃ ક્રિયયોઃ પરસ્પરં વિરોધાત્ કથમેકપુરુષેણ એકકાલે તયોર્દ્વયોઃ ક્રિયયોઃ કરણં સંભવતીતિ વિરોધાન્નૈકદાદ્વયોઃ સંપાદનં સ્યાદિત્યેવં રૂપેણ-

इस मत में मिथ्यात्व का प्रतिपादन इस प्रकार से करना चाहिये-ऐर्यापथिकी जो क्रिया होती है वह अकषायोद्भाव (विना कषय) होती है, तथा यह क्रिया केवल काययोगरूप कारण से उत्पन्न होती है। काययोगरूप जो कारण है वह कषायरूप होता नहीं है, किन्तु वह तो कषाय से भिन्न होता है। इसलिये ऐर्यापथिकी जो क्रिया है वह अकषायोद्भव (उत्पन्न) होती है। परन्तु जो सांपरायिक क्रिया है वह कषायरूप दोष से उद्भव (उत्पन्न) होती है। कषायें संसार में परिभ्रमण का कारण है। कषायों का नाम भी संपराय है। इन संपरायरूप कषायों से जो क्रिया उत्पन्न होती है, उस क्रिया का नाम सांपरायिक क्रिया है। इस तरह से जब यह यात है कि एक क्रिया कषाय से उत्पन्न होती है और एक क्रिया कषाय से उत्पन्न नहीं होती है, तो परस्पर में विरुद्ध हुई इन दो क्रियाओं का करना एक ही काल में एक पुरुष के लिये कैसे संभव हो सकता है। नहीं हो सकता है। अतः एक काल में इन दो क्रियाओं का एक पुरुष द्वारा संपादन होना मानना परस्पर में विरोध होने के

અન્ય તીર્થિકોના આ મિથ્યા મતનુ નિરસન આ રીતે કરી શકાય. ઈર્યાપથિકી ક્રિયા માત્ર કાયયોગ ને કારણે જ ઉત્પન્ન થાય છે, તે કષાયને કારણે ઉત્પન્ન થતી નથી, કાયયોગ રૂપ જે કારણ છે તે કષાયરૂપ હેતુ નથી, પણ તે તો કષાયથી ભિન્નજ હોય છે તેથી ઈર્યાપથિકી ક્રિયા અકષાયોદ્ભવ (વિના કષાયે ઉત્પન્ન થનાર) હોય છે પણ સાપરાયિકી ક્રિયા કષાયરૂપ દોષથી ઉદ્ભવતી હોય છે કષાયો સ સારમા પરિભ્રમણના કારણરૂપ છે કષાયોનું નામજ સાપરાય છે, એ સાપરાયરૂપ કષાયોથી જે ક્રિયા ઉત્પન્ન થાય છે, તે ક્રિયાને સાપરાયિકી ક્રિયા કહે છે, આ રીતે એક ક્રિયા કષાયથી ઉત્પન્ન થાય છે અને બીજી ક્રિયા કષાયથી ઉત્પન્ન થતી નથી, આ પ્રકારની એક બીજાથી વિરુદ્ધ ક્રિયાઓ એકજ સમયે એક પુરુષ મારફત કેવી રીતે કરી શકાય ? કહેવાનો હેતુ એ છે કે એકજ સમયે એક જીવવડે તે બંને ક્રિયાઓનું સંપાદન થવું કોઈપણ રીતે સંભવિત નથી, તેથી તે બંને ક્રિયાઓ એક જીવ એકજ સમયે કરે છે” એવી પરતીર્થિકોની માન્યતા

ટીકા—‘નિરયગર્હણ મેતે’ નિરયગતિઃ સ્વલુ મદન્ત ! ‘કેવદ્ય કાલે નિરહિયા ઉવચાણ’ કિયત્ કાલ વિરહિતા ઉપપાત્તેન ‘પણ્ણત્તા’ મદ્દત્તા ! મગધાનાદ—‘ગોયમા’ इत्यादि । ‘ગોયમા’ હે ગોસમ ! ‘જહગ્ગેર્ણ એકક સમયે’ જપન્યેન એક સમયમ્ ‘ઉકોસણ ચારમમુહુતા’ ઉત્ક્રાન્તિ દ્વાદશ મુહુર્તાન્, હે ગોતમ ! જપન્યેનૈકસમયપર્યન્તસમુત્ક્રાન્તો દ્વાદશ મુહુર્તાન્ ઉપપાતરહિતતયા નરક ગતિ કથિતેતિ માત્ર । ‘એષ સ્વક્રતીપર્ય માણિયણ્ણ નિરસસેસ’ એષ વ્યુત્ક્રાન્તિ પર્ય મણિતલ્પ્યમ્ નિરસશેપમ્ વ્યુત્ક્રાન્તિર્જોશનામુત્પાદ્ તદર્થપદમિતિ વ્યુત્ક્રાન્તિ પદમ્ તત્ પ્રજ્ઞાપનામૂપસ્ય પઠ્યમ્ । તત્સર્વ મજ્ઞાપનાસૂત્રે ત્રિલોકનીયમ્ । ‘સેત્ર મેતે સેત્ર મત્’ તદનદ્ મદત્ । તદેતદ્ મદન્ત ! હે મદન્ત ! યદ્વાનુમિતૈસ્કત્ તત્સર્વ સત્યમેવતિ ॥ સુ૦ ૪ ॥

પ્રથમશ્લોકસ્ય દશમ ઉદ્દેશઃ સમાપ્તઃ ॥ ૧-૧૦ ॥

इति श्रीविश्वविद्यास-मगधग्ल-प्रसिद्धवाचकपञ्चदशमापाकलितकलितक-
पाण्य-प्रविशुद्धगणपतैकप्र-यनिर्माण-शक्तिमानमर्द्ध-श्रीशाहछप्र
तिजोलापुराप्रदत्त-‘ जैनशास्त्राचार्य ’ पदभूषित-‘कोलापुराज
गुरु-शामग्रसचारि-जैनाचार्य-जैनधर्मविवाकरपूज्यधी-यासीलाह-
व्रतिविरचितायां श्रीमगधतीसूत्रस्य प्रमेयचन्द्रिकास्यायां
व्याख्यायां प्रथम प्रतक समाप्त ॥ १ ॥

મદન્ત ! હમી પ્રકાર સે હે હે મદન્ત ! હમ પ્રકાર કહકર યાવન ગોતમ
શામી તપ સંયમ સે અપની આત્મા કો આશિમ કરસે છુગ્ વિચારને છગે ।

ટીકાર્થ—ટીકા કા અર્થ સૂત્રાર્થ કે અનુમાર હો હે । નરકગતિ યદિ
ઉપપાત્ત સે વિરહિત રહે તો કમ સે કમ ? સમય તક રહે ઓર અધિક
સે અધિક ? ૧૦ વાર મુહુર્ત તક રહે । હસસે આગે વહ ઉપપાત્ત સે વિરહિત
નહી રહ સક્તી । જીર્ણ કે ઉત્પાદ્ કા નામ વ્યુત્ક્રાન્તિ હે । હમ મન્થ
ન્યી જો પ્રકરણ હે વહ વ્યુત્ક્રાન્તિપદ હે । યહ વ્યુત્ક્રાન્તિકપદ પ્રજ્ઞાપના-
સૂત્ર કા છઠ્ઠા પદ હે । યહ મપ પ્રજ્ઞાપના સૂત્ર મે દેશ્વ લેના ચાહિયે ૪

શ્રી જૈનાશાય જૈનધર્મવિવાકર પૂજ્ય શ્રીચાસીલાલજી
મહારાજજીના મગધતીસૂત્રકી પ્રમેયચન્દ્રિકા વ્યાખ્યા
કે પ્રથમ શ્લોકકા દશર્થ ઉદ્દેશક સમાપ્ત ॥ ૧-૧૦ ॥

टीकाने अर्थ सूत्रार्थ प्रभाषे ४ छे नरकगति ज्ञातायां ज्ञात ज्ञे
समय जने वधारैमा वधारै १२ मुहूर्त सुधी उपपातधी विरहित रहे छे
तेधी वधारै समय ते उपपातधी विरहित रहेती नथी. लघेना उपपात
व्युत्क्रान्ति रहे छे आ विष व्युत्क्रान्तिपा नामनु प्रकरण छे ते व्युत्क्रान्तिप
प्रज्ञापना सूत्रनु छे ५ छे तेनी विशेष भादिते प्रज्ञापना सूत्रभाषा भगवी
लेवी ॥ सु. ४॥

પ્રાપ્તિશ્રી જૈનાશાય જૈનધર્મવિવાકર પૂજ્યશ્રી ચાસીલાલ મહારાજજીના મગધતીસૂત્રની
પ્રિયાર્થિની વ્યાખ્યાના પદેશા શ્લોકોના નવમે ઉદ્દેશક સમાપ્ત ૧-૧૦

છાયા—નિરયગતિઃ સ્વલ્પ ભદન્ત ! કિયન્તં કાલં વિરહિતા ઉપપાતેન પ્રજ્ઞા ? ગૌતમ ! જઘન્યેન એકં સમયમ્ ઉત્કૃષ્ટેન દ્વાદશમુહૂર્ત્તાન્ એવં વ્યુત્ક્રાંતિપદં મણિતઙ્ગ્યં નિરવશેષં, તદેવં ભદન્ત ! તદેવ ભદન્ત ! ઇતિ યાવદ્વિહતિ ॥ સૂ. ૪ ॥

॥ પ્રથમશતકે દશમ ઉદ્દેશઃ સમાપ્તઃ ॥ ૧-૧૦ ॥

ઉપપાતવિરહ—

અનન્તર પ્રકરણ મેં ક્રિયા કા નિરૂપણ ક્રિયા હૈ । જો ક્રિયા વાલે હોતે હૈં ડનકા ઉત્પાદ હોતા હૈ । હસ તરહ ક્રિયા કે નિરૂપણ હોને પર ક્રિયા સૂત્રક ઉત્પાદ કા સ્મરણ હો આતા હૈ ઓર ઉત્પાદ કે સ્મરણ હોને પર હસકા વિપક્ષ ભૂન જો ઉત્પાદ વિરહ હૈ ડસકા સ્મરણ હો જાતા હૈ સો અવ સૂત્રકાર હસી ઉત્પાદ વિરહ કા કથન કરતે હૈં—‘નિરયગર્હણં મંતે ! કેવહ્યં કાલં’ ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ—(મંતે) હે ભદન્ત ! (નિરયગર્હણ) નિરયગતિ-કિતને કાલતક (ઉવવાણં) ઉપપાત સે (વિરહિયા પળ્લતા) વિરહિન કહી ગર્હ હૈ ? (ગોયમા ! જહળ્લણેણં એકકં સમયં) હે ગૌતમ ! જઘન્ય સે એક સમયતક ઓર (ઉક્કોસેણં) ઉત્કૃષ્ટ સે (વારસ મુહૂત્તા) વારહ મુહૂત્ત તક નિરયગતિ ઉપપાત સે વિરાહિત કહી ગર્હ હૈ । (એવં વક્ક-તીપયં મ્ણિયવ્વં નિરવસેસં) હમી તરહ સમસ્ત વ્યુત્ક્રાન્તિક પદ કહના ચાહિયે (સેવં મંતે ! સેવં મંતે ! ત્તિ જાવ વિહરહ) હસી યહ પ્રકાર સે હૈ હે

ઉપપાત વિરહ

આગળના પ્રકરણમાં ક્રિયાનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું છે. જેઓ ક્રિયાવાળા હોય છે તેમના ઉપપાત (જન્મ) હોય છે આ રીતે ક્રિયાનું નિરૂપણ કરતી વખતે ક્રિયામૂલક ઉપપાતનું સ્મરણ થઈ આવે છે અને ઉપપાતનું સ્મરણ થતા તેના પ્રતિપક્ષી ઉપપાત, વિરહનું સ્મરણ થઈ આવે છે. તેથી હવે સૂત્રગાર ઉપપાત વિરહનું નિરૂપણ કરે છે

“નિરયગર્હણં મંતે ! કેવહ્યં કાલં” ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ—(મંતે !) હે ભગવન્ ! (નિરયગર્હણ કેવહ્યં કાલં) નરકગતિ કેટલા કાળ સુધી (ઉવવાણ વિરહિયા પળ્લતા ?) ઉપપાત વિરહિત કહી છે ! (ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (જહળ્લણેણ એક સમય) ઓછામાં ઓછી એક સમય અને (ઉક્કોસેણ વારસમુહૂત્તા) વધારેમાં વધારે બાર સુહૃત સુધી નરકગતિને ઉપપાતની વિરહિત કહેલ છે (એવં વક્કતીપયં મ્ણિયવ્વં નિરવસેસં) આ રીતે આવું વ્યુત્ક્રિન્તક પદ કહેવું (સેવં મંતે ! સેવં મંતે ! ત્તિ જાવ વિહરહ) હે ભગવાન્ આપનું કહેવું સાચું છે હે ભગવાન્ આપના કહેવા પ્રમાણે જ બધું બરાબર છે આ પ્રમાણે કહીને ભગવાનને વંદણા નમસ્કાર કરીને ગૌતમ સ્વામી સ યમ અને તપથી પોતાના આત્માને ભવિત કરતા પોતાને સ્થાને બેસી ગયા.

एषोत्पद्यते इति विचारः । वायुजीवानां मरण कथं भवतीति प्रश्नः । आघाता
 दिव्युत्तरम् । वायुजीवानां शरीराक्षरोरयो प्रतिपादनम्, वायुजीवानां चत्वारि
 शरीराणि भवन्तीति कथनम् । सकर्मकमृताद्यनगारस्य स्वरूपविचारः । प्राणभूत
 जीवसत्त्वविज्ञपेक्षानां स्वरूपकथनम् । अकर्मकमृताद्यनगारस्य विचारः । सिद्ध
 बुद्धमुक्तपारगत परपरागततादीनां स्वरूपपरिकीर्षनम् । आर्यश्रीस्कन्दस्य चरित्रम् ।
 पिङ्गलकनिर्ग्रयवैशालिकभावकस्य स्कन्दस्य प्रति प्रश्नः । तत्र लोकः सान्तोऽनन्तो
 जीव सान्तोऽनन्तो वा, सिद्धि सान्तोऽनन्ता वा, सिद्धः सान्तोऽनन्तो वा
 केन मरणेन म्रियमाणस्य जीवस्य ससारवृद्धिहानी चेति । स्कन्दकस्य सप्तयो
 त्पत्त्या मौनावलम्बनम् । श्रीमहावीरस्यागमनं श्रुत्वा तत्पार्श्वे स्कन्दकस्य गमनं प्रश्न
 करणं, मगधत उत्तरकथनं चेति । स्कन्दकस्याऽच्युतकल्पे उत्पत्तिः, महाविदेहे

कायिक में ही उत्पन्न होते हैं ऐसा विचार । वायुकायिकजीवों का मरण
 कैसे होता है ? यह प्रश्न, आघात से होता है ऐसा उत्तर । वायुकायिक जीवों
 के शरीर और अशरीर का प्रतिपादन वायु जीवों के चार शरीर होते
 हैं ऐसा कथन, सकर्मक मृतादि अनगार के स्वरूप का विचार, प्राण,
 भूत, जीव, सत्त्व, विज्ञ, येसा इनके स्वरूप का कथन आकर्षक मृतादि
 अनगार का विचार, सिद्ध, बुद्ध, मुक्त, पारगत, परपरागत आदि के
 स्वरूप का कथन, आर्य श्री स्कंद का चरित्र पिङ्गलक निर्ग्रय और
 वैशालिक भावक इनका स्कंद के प्रति प्रश्न, इसमें-लोक सान्त है कि
 अनन्त है ? किस मरण से मरते हुए जीव के ससार की हानि और
 वृद्धि होती है । स्कंद का संशय की उत्पत्ति से मौनावलम्बन, श्री
 महावीर स्वामी का आगमन सुनकर उनके पास स्कंद का जाना और
 उनसे प्रश्न करना, मगधान का उत्तर देना, स्कंद की अच्युत कल्प में

એ વિષેના વિચાર વાયુકાય લીધેનું મરણ કેવી રીતે થાય છે? આઘાતથી
 તેમનું મરણ થાય છે વાયુકાયિક લીધેનાં શરીર અને અશરીરનું પ્રતિપાદન.
 વાયુકાય લીધેને આર શરીર હોય છે એવું કથન સકર્મક મૃતાદી અણનાના
 સ્વરૂપનું કથન. પ્રાણ ભૂત, એવ સત્ત્વ, વિજ્ઞ અને વેત્તાના સ્વરૂપનું કથન.
 સિદ્ધ, બુદ્ધ, મુક્ત, પારગત પરપરાગત વર્ગેરેના સ્વરૂપનું કથન. આર્ય શ્રી
 સ્કંદનું ચરિત્ર વૈશાલિક ભાવક પિંગલક નિર્ગ્રયના સ્કંદને પ્રશ્નો હોય સાન્ત
 (અન્ત સહિત) છે કે અનન્ત છે? કયા મરણથી મરતો એવ સસાર વધારે છે
 અને કયા મરણથી મરતો એવ સસાર ઘટાડે છે? સ્કંદના મનમાં સંશય
 થવાથી તે મૌન રહે છે શ્રી મહાવીરસ્વામીના આગમનના ખબર સાંભળીને સ્કંદ
 હજી તેમની પાસે જમન સ્કંદના મહાવીર પ્રશ્નોને પ્રશ્નો અને પ્રશ્નના ઉત્તરો, સ્કંદ

॥ अथ द्वितीयं शतकं प्रारभ्यते—

द्वितीयशतके सक्षेपतो त्रिचारणीयाः विषयाः “ उसास खंदएवि ” इत्यादि गाथोक्ता दशोद्देशकाः संति, तत्र प्रथमोद्देशके इमे विषयास्तथाहि—

पृथिव्यान्नेकेन्द्रियजीवानां श्वासादयो भवंति नवेति प्रश्नः । भवन्तीति— उत्तरम् । ते पृथिव्यादयः श्वासादौ किं गृह्णन्तीति प्रश्नः, वायुसम्बन्धि परमाणुं गृह्णन्तीत्युत्तरम्, तत्र परमाणौ रूपरसगंधस्पर्शा भवन्तीति प्रतिपादनम् । प्रज्ञापना सूत्रस्योद्धरणम् । संक्षेपेण नैरयिकाणां विवरणम् । पट्स्वपि दिक्षु श्वासोच्छ्वास वर्गणाया आकर्षण भवतीति निरूपणम् । वायवीयजीवानां श्वासादयो भवंति नवेति प्रश्नः । भवन्तीत्युत्तरम् । वायवीयजीवा वायुकायान्निर्गत्य पुनर्वायुकायिके

द्वितीयशतक का प्रथम उद्देशक प्रारंभ—

इस द्वितीयशतक में “ उसास खंदए वि ” इत्यादि गाथा द्वारा कहे हुए दश उद्देशक हैं । इनमें से प्रथमशतक में ये विषय हैं—जैसे—पृथिवी आदिक एकेन्द्रिय जीवों के श्वास आदि होते हैं कि नहीं होते हैं ? हां होते हैं । वे पृथिव्यादिक जीव श्वास आदि में क्या लेते हैं ? ऐसा प्रश्न—वे वायुसंबन्धी परमाणु को ग्रहण करते हैं ऐसा उत्तर । परमाणु में रूप, रस, गंध और स्पर्श होते हैं—ऐसा प्रतिपादन । प्रज्ञापन सूत्र का उद्धरण । संक्षेप से नैरयिकों का विवरण । छहों भी दिशाओं में से श्वासोच्छ्वास वर्गणा का आकर्षण होता है ऐसा निरूपण । वायुकायिक जीवों के श्वास आदि होते हैं कि नहीं होते हैं ? ऐसा प्रश्न, हां होते हैं ऐसा उत्तर । वायुकायिक जीव वायुकाय से निकलकर पुनः वायु

પહેલા શતકનો પહેલો ઉદ્દેશકનો પ્રારંભ

આ બીજા શતકમાં “ ઉસાસ ક્ષંદવ વિ ” ઇત્યાદિ ગાથા વડે કહેલા દસ ઉદ્દેશક છે તેમાંના પહેલા ઉદ્દેશકમાં—નીચેના વિષયોનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું છે પૃથિવીકાય વગેરે એકેન્દ્રિય જીવો શ્વાસ વગેરે લે છે કે નહીં ? હા, લે છે તેઓ શ્વાસ વગેરેમાં શું લે છે ? તેઓ વાયુના પરમાણુઓને ગ્રહણ કરે છે તે પરમાણુઓમાં રૂપ, રસ, ગંધ અને સ્પર્શ હોય છે એવું પ્રતિપાદન, અને પ્રજ્ઞાપના સૂત્રમાંથી તેનું પ્રમાણ સંક્ષિપ્તમાં નારકેનું વર્ણન છએ દિશાઓમાં શ્વાસોચ્છ્વાસ વર્ગણાનું આકર્ષણ થાય છે એવું નિરૂપણ વાયુકાયિક જીવો શ્વાસ વગેરે લે છે કે નથી લેતા ? હા, લે છે. વાયુકાયિક જીવો વાયુકાયમાંથી નીકળીને વાયુકાયિકોમાં જ ઉત્પન્ન થાય છે

स्कन्दकोपि च१ 'समुद्रघात' समुद्रघाता २ 'पृथिवीन्द्रियाणि, ३ पृथिवी
 इन्द्रियाणि च४ 'अथ उत्थिया' अन्ययुधिका ५ 'भाषा य' भाषा च६ 'देवा य'
 देवाश्च७ 'चमरचचा' चमरचचा ८ 'समयक्षेत्रकाए' समय क्षेत्रम् ९ अस्तिकायाः,
 १० एते अस्मिन् द्वितीयस्तके दशोद्देशकाः सति तेषु चोद्देशकेषु निम्ननिर्दिष्ट
 विषयाजामधिकारा सन्ति, सप्त प्रथमोद्देशके आसोच्छ्वासविषयक स्कन्दनामका
 नगारविषयक विचारः१। द्वितीयोद्देशके समुद्रघातविषयक विवेचनम् २, तृतीयो
 द्देशके पृथिवीसंबन्धे विचारः३, चतुर्थोद्देशके इन्द्रियविषयको विचारः४, पचमो
 द्देशके अन्यतीर्थिकानामाधिकार ५, षष्ठोद्देशके भाषाविषये विचारः६, सप्तमे देवाधि
 कारः७, अष्टमोद्देशके चमरचचारानधानीविषयको विचारः८, नवमोद्देशके समय
 क्षेत्रयोः स्वरूपविषये विचारः९, दशमोद्देशके अस्तिकायविषयको विचारः॥ इति १०।

शतक में ये दश उद्देशक हैं—उच्छ्वास, स्कन्द१, समुद्रघात२ पृथिवी३
 इन्द्रियां ४, अन्ययुधिका ५, भाषा ६, देव७, चमरचचा८, समयक्षेत्र ९
 अस्तिकाय१० इन उद्देशकों में निम्न लिखित विषयों के अधिकार हैं—
 प्रथम उद्देशकमें आसोच्छ्वास संबंधी और स्कन्द अनगार संबंधी विचार
 हैं। द्वितीय उद्देशक में समुद्रघातविषयक विवेचन है। तृतीय उद्देशक
 में पृथिवी के संबंध में विचार किया गया है। चतुर्थ उद्देशक में इन्द्रिय
 विषयक विचार हुआ है। पचम उद्देशकमें अन्यतीर्थिकों का अधिकार है।
 छठवें उद्देशक में भाषाविषयक विचार हुआ है। सप्तम उद्देशक में देवों
 का अधिकार है। आठवें उद्देशक में चमरचचा नाम की राजधानी का
 विचार किया गया है। नवम उद्देशक में समयक्षेत्र के स्वरूप का विचार
 किया गया है। दशवें उद्देशक में अस्तिकाय का विचार किया गया है।

प्रमाणे इस उद्देशक से (१) उच्छ्वास, स्कन्द, (२) समुद्रघात (३) पृथिवी,
 (४) इन्द्रियां, (५) अन्ययुधिका, (६) भाषा, (७) देव, (८) चमरचचा,
 (९) समयक्षेत्र और (१०) अस्तिकाय. ते उद्देशकमा नीचे प्रमाणेना विष
 यानुं प्रतिपादन करवामा आभ्यु छे—पहिला उद्देशकमा आसोच्छ्वास विष
 यने स्कन्दनगार विषे, नीला उद्देशकमा समुद्रघात विषे, त्रीजामा पृथ्वीना
 विषयमा, चौथा उद्देशकमा इन्द्रियां विषयमा, पांचवा उद्देशकमा अन्य तीर्थिकों
 ना विषयमा छुआ उद्देशकमा भाषाना विषयमा सातवा उद्देशकमा देवों विषे आठवां
 उद्देशकमा चमरचचा नामनी राजधानीना विषे नववां उद्देशकमा समय क्षेत्रना
 स्वरूप विषे और दसवां उद्देशकमा अस्तिकायना विषयनुं विवेचन करवामा आभ्यु छे

મોક્ષગમનં ચેતિ પ્રતિપાદનમિતિ ॥

પ્રથમં શતકં પ્રોચ્ય પञ્ચમાઙ્ગસ્ય યત્નતઃ ।

દ્વિતીયં શતકં તસ્ય વિવૃણોમિ યથામતિ ॥૧॥

અથ દ્વિતીયશતકસ્યોદ્દેશકસંગ્રહાય ગાથામાહ—‘ઝસાસ’ ઇત્યાદિ ।

ગાથા—ઝસાસ સ્વંદણ વિય સમુગ્ધાય પુઢવિંદિય અન્નઉત્થિ ભાસા ય ।

દેવા ય ચમરચંચા, સમય સ્વિત્તઽત્થિકાય વીયસણ ॥ ૧ ॥

છાયા—ઉચ્છ્વાસઃ સ્કન્દકોપિ ચ સમુદ્ઘાતાઃ પૃથિવી—

ઇન્દ્રિયાણિ અન્યયૂથિકા ભાષા ચ ।

દેવાશ્ચ ચમરચન્દ્રા સમયક્ષેત્રં અસ્તિકાયા દ્વિતીયશતે ॥૧॥

ટીકા—‘વીયસણ’ દ્વિતીયશતકે ‘ઝસાસ’ ઉચ્છ્વાસઃ ‘સ્વંદણ વિ’

ઉત્પત્તિ હોના ઓર મહાવિદેહ સે મોક્ષગમન, ઇસકા પ્રતિપાદન ।

પ્રથમં શતકં પ્રોચ્ય પञ્ચમાઙ્ગસ્ય યત્નતઃ ।

દ્વિતીયશતકં તસ્ય વિવૃણોમિ યથામતિ ॥ ૧ ॥

ઇસ પંચમ અઙ્ગ કે પ્રથમ શતક કા પ્રયત્ન પૂર્વક પ્રતિપાદન કરકે અથ મેં ડસકે દ્વિતીય શતક કા અપની બુદ્ધિ કે અનુસાર વિવરણ કરતા હું ।

દ્વિતીયશતક કે ઉદ્દેશકોંકે સંગ્રહકે લિયે સૂત્રકાર ને યહ (ઝસાસ) ઇત્યાદિ ગાથા કહી હૈ ।

ઝસાસ સ્વંદણ વિ ય સમુગ્ધાય પુઢવિંદિય અન્નઉત્થિ ભાસા ય ।

દેવા ય ચમર ચંચા સમયસ્વિત્તઽત્થિકાય વીયસણ ॥ ૧ ॥

ઇસ ગાથા કા અર્થ ઇસ પ્રકાર સે હૈ—“વીયસણ” ઇસ દ્વિતીય

કની અચ્યુત દેવલોકમાં ઉત્પત્તિ અને મહાવિદેહમાંથી મોક્ષગમન, તેનું પ્રતિપાદન.

પ્રથમં શતકં પ્રોચ્ય પञ્ચમાઙ્ગસ્ય યત્નતઃ ।

દ્વિતીયશતક તસ્ય વિવૃણોમિ યથામતિ ॥ ૧ ॥

પાંચમા અંગના પ્રથમ શતકનું શાન્તિપૂર્વક વિવેચન કરી ને હવે હું તેના બીજા શતકનું મારી બુદ્ધિ પ્રમાણે વિવરણ કરૂ છું.

બીજા શતકના ઉદ્દેશકોના સંગ્રહને માટે સૂત્રકારે “ઝસાસ” વગેરે ગાથાઓ કહી છે.

ઝસાસસ્વંદણ વિ ય સમુગ્ધાય પુઢવિંદિય અન્નઉત્થિ ભાસા ય ।

દેવા ય ચમરચંચા સમયસ્વિત્તઽત્થિકાય વીયસણ ॥ ૧ ॥

આ ગાથાનો અર્થ આ પ્રમાણે છે “વીયસણ” આ બીજા શતકમાં આ

છાયા—તસ્મિન્ કાલે તસ્મિન્ સમયે રાજચુદ્ધં નામ નગરમાસીત્, ષર્ણકઃ સ્વામી સમવસ્યતઃ પર્યભિર્ગતા, ધર્મઃ કથિત, પરિપત્ત પ્રતિગતા, તસ્મિન્ કાલે તસ્મિન્ સમયે શ્રમણસ્ય મગધતો મહાવીરસ્ય જ્યેષ્ઠોઽન્તેવાસી યાવત્ પર્યુપાસીત એમમવાદીત્, યે ઇમે મદત ! શ્રોત્રિયા, શ્રોત્રિયાઃ, ચતુરિન્દ્રિયા, પંચેન્દ્રિયા સ્ત્રી જીર્ણો કે સ્વચ્છવાસ આદિ કા પ્રતિપાદન કિયા ગયા છે—અતઃ હસ સમ્પન્ન કો લેકર યહ દ્વિતીય શાસક કા યહ પ્રથમ ઉદ્દેશક કહા ગયા છે । વસકા યહ (તેણં કાલેણ હત્યાદિ પ્રયમ સૂત્ર છે—‘ તેણં કાલેણ તેણ સમણં ’ હત્યાદિ ।

સૂત્રાર્થ—(તેણં કાલેણ તેણ સમણં) ઉસ કાલ મેં ઔર ઉસ સમય મેં (રાયગિરે નામ નયરે હોત્થા) રાજચુદ્ધ નામ કા નગર યા (ષર્ણકો) ષર્ણકઃ (સામી સમોસઢે) સ્વામી-શ્રી મહાવીર પ્રસુ-વહાં પધારે (પરિસા ણિમયા) ઉસકી દેશના સુનને કે લિયે સમા નિકલી (ધમ્મો કહિઓ) પ્રસુને ધર્મોપદેશ દિયા (પરિસા પઢિગયા) હસે સુન કર સમા પીઢે ગઈ । (તેણં કાલેણ તેણં સમણ) ઉસ કાલ મેં ઔર ઉસ સમય મેં (સમણસ્સ મગધતો મહાવીરસ્સ) શ્રમણ મગધાન્ મહાવીર કે (જેઠે અન્તેવાસી) જ્યેષ્ઠ અન્તેવાસી-શિષ્ય (જાહ પઞ્જુવાસમાણે) યાવત્ પર્યુપાસના કરતે હુપ (એવં વયાસી) હમ પ્રકાર યોલે—(જે હમે મંતે ! જેઠદિયા, તેઠદિયા, ચતુરિન્દિયા જીવા) હે મદન્ત ! જો યે એકેન્દ્રિય, દો ઇન્દ્રિય, તે ઇન્દ્રિય, ચૌ ઇન્દ્રિય ઔર પંચેન્દ્રિય

આ ઉદ્દેશકમાં એવાનાં ઉચ્છવાસ વગેરેનું પ્રતિપાદન કરાયું છે આ બીજા શતકના ઉદ્દેશકને આ પ્રકારનો સબંધ આગળના ઉદ્દેશકો સાથે છે તેનું પ્રથમ સૂત્ર “તેણ કાલેણ” હત્યાદિ છે

સૂત્રાર્થ—(તેણં કાલેણ તેણં સમણ) તે કાલે અને તે સમયે (રાયગિરે નામ નયરે હોત્થા) રાજચુદ્ધ નામનું નગર હતું (ષર્ણકો) તેનું વર્ણન ઔપપતિક સૂત્રમાં વર્ણવેલી બે પાનગરીની માફક છે (સામી સમોસઢે) તે નમરમાં ભગવાન મહાવીર સ્વામી પધાર્યા. (પરિસા ણિમયા) તેમની દેશના સાંભળવાને માટે પરિવહ નીકળી (ધમ્મો કહિઓ) પ્રસુએ ધર્મોપદેશ આપ્યો (પરિસા પઢિગયા) તે સાંભળીને પરિવહ પાછી ગઈ (તેણ કાલેણ તેણ સમણ) તે કાલે અને તે સમયે (સમણસ્સ મગધતો મહાવીરસ્સ) શ્રમણ ભગવાન મહાવીરના (જેઠે અન્તેવાસી) મોટા અન્તેવાસી શિષ્ય (જાહ પઞ્જુવાસમાણે) (યાવત્) પર્યુપાસના કરીને (એવં વયાસી) આમઆવે બોલ્યા.

(જે હમે મંતે ! જેઠદિયા તેઠદિયા, ચતુરિન્દિયા જીવા વગેરે જાં જાણમેં જા

પ્રથમશતકસ્ય વર્ણનં જાતમ્, તદનન્તરં દ્વિતીયશતકસ્ય પ્રારંભો ભવતિ, તત્રાપિ પ્રારિપ્સિતદ્વિતીયશતકે પ્રથમોદ્દેશકસ્ય વર્ણનં ક્રિયતે, તસ્ય ચાયમભિ-
સંબંધઃ—પ્રથમશતકસ્યાન્તિમોદ્દેશકસ્યાન્તે જીવાનામુત્પાદવિરહઃ, પ્રતિપાદિતઃ, इह तु
तेषामेव जीवानामुच्छ्वासादिवर्णनमस्तीत्येवं संबन्धकस्यास्य द्वितीयशतकप्रथ-
मोद्देशकस्येदमादिमुत्रम्—‘ तेणं कालेणं ’ इत्यादि ।

મૂળમ્—તેણં કાલેણં તેણં સમણં રાયગિહે ણામં નયરે
હોત્થા વણ્ણઓ, સામી સમોસઢે, પરિસા ણિગ્ગયા, ધમ્મો
કહિઓ, પરિસા પઢિગયા । તેણં કાલેણં તેણં સમણં સમ-
ણસ્સ ભગવઓ મહાવીરસ્સ જેઢે અંતેવાસો જાવ પજ્જુવાસ-
માણે એવં વયાસી—જે ઇમે ભંતે ! વેઈંદિયા, તેઈંદિયા, ચડ-
રિંદિયા, પંચિંદિયા જીવા, એણં ણં આણામં વા પાણામં વા
ઉસ્સાસં વા નિસ્સાસં વા જાણામો પાસામો, જે ઇમે પુઢવીકાઈયા,
જાવ વણ્ણફઙ્ક કાઈયા એઈંદિયા જીવા, એણં ણં આણામં
વા પાણામં વા ઉસાસં વા નીસાસં વા ન જાણામો, ન પાસામો,
એણં ભંતે ! જીવા આણમંતિ વા પાણમંતિ વા, ઉસ્સસંતિ
વા, નીસસંતિ વા, હંતા ગોયમા ! એણં જીવા, આણ-
મંતિ વા, પાણમંતિ વા ઉસ્સસંતિ વા ણીસસંતિ વા ॥સૂ૦૧॥

પ્રથમશતક કા વર્ણન હો જુકા—અવ દ્વિતીય શતક પ્રારંભ હોતા
હૈ । इसमें द्वितीयशतक से प्रथम उद्देशक का वर्णन किया जाता
है—इसका संबंध इस प्रकार से है—प्रथम शतक के अन्तिम उद्देशक के
अन्त में जीवों का उत्पाद विरह प्रतिपादित हुआ है और इस जगह

પહેલા શતકનું વિવરણ પૂરું થયું હવે બીજા શતકનું વિવેચન શરૂ
થાય છે. તેમાં બીજા શતકના પહેલા ઉદ્દેશકનું વર્ણન કરવામાં આવે છે તેના
આગળના ઉદ્દેશક સાથે આ પ્રકારનો સંબંધ છે પહેલા શતકના છેલ્લા
ઉદ્દેશકના અન્તિમ ભાગમાં જીવોના ઉત્પાદ વિરહનું પ્રતિપાદન થયું છે

ઢાયા—તસ્મિન્ કાલે તસ્મિન્ સમયે રાજગૃહ નામ નગરમાસીત્, ધર્મકઃ સ્વામી સમવસ્ટતઃ પર્પશિર્ગાથા, ધર્મઃ કથિત, પરિપત્ત્વ પ્રતિગતા, તસ્મિન્ કાલે તસ્મિન્ સમયે ધમ્મણસ્ય મગધમ્મો મહાવીરસ્ય જ્યેષ્ઠોઽન્તેવાસી યાવત્ પર્યુપાસીતિ એવમવાદીત્, એ હમે મદંત ! દ્વોન્દ્રિયાઃ, ત્રીન્દ્રિય, ચતુરિન્દ્રિયાઃ, પંચેન્દ્રિયા ઇત્દી જીવોં કે ઉચ્છ્વાસ આદિ કા પ્રતિપાદન કિયા ગયા છે—અતઃ હસ સમ્બન્ધ કો લેકર યહ દ્વિતીય શતક કા યહ પ્રથમ ઉદ્દેશક કહા ગયા છે । ડસકા યહ (તેજં કાલેણ હત્યાદિ પ્રથમ સૂત્ર છે—‘ તેજં કાલેણં તેજ સમણં ’ હત્યાદિ ।

સૂત્રાર્થ—(તેજં કાલેણં તેજ સમણં) ડસ કાલ મેં ઓર ડસ સમય મેં (રાયગિહે જામં નયરે હોત્યા) રાજગૃહ નામ કા નગર થા (ઘણ્ણમ્મો) ઘર્મકઃ (સામી સમોસઢે) સ્વામી-ઝી મહાવીર પ્રમુ-બર્હા પઘારે (પરિસા ણિગયા) ડસકી દેશના સુનને કે સિયે સમા નિકલ્લી (ઘમ્મો કહિઓ) પ્રમુને ખમ્મોપદેશ દિયા (પરિસા પઢિગયા) ડસે સુન કર સમા પીછે ગઈ । (તેજં કાલેણં તેજં સમણં) ડસ કાલ મેં ઓર ડસ સમય મેં (સમણસ્સ મગધમ્મો મહાવીરસ્સ) ઝમ્મણ મગ ધાન્ મહાવીર કે (જેઢે અંતેવાસી) જ્યેષ્ઠ અન્તેવાસી-શિષ્ય (જાવ પજ્જુવાસમાણે) યાવત્ પર્યુપાસના કરતે હુણ (એવ યયાસી) હસ પ્રકાર બોલે—(જે હમે મંતે ! બેહંદિયા, તેહંદિયા, ચત્તરિંદિયા જીવા) હે મદંત ! જો યે એકેન્દ્રિય, ડો ઇન્દ્રિય, તે ઇન્દ્રિય, ચૌ ઇન્દ્રિય ઓર પંચેન્દ્રિય

આ ઉદ્દેશકમાં છુટોના ઉચ્છ્વાસ વગેરેનું પ્રતિપાદન કરાયું છે આ બીજા શતકના ઉદ્દેશકને આ પ્રકારને સબંધ આગળના ઉદ્દેશકો સાથે છે તેનું પ્રથમ સૂત્ર “તેજં કાલેણ” હત્યાદિ છે

સૂત્રાર્થ—(તેજં કાલેણં તેજં સમણં) તે કાળે અને તે સમયે (રાયગિહે જામં નયરે હોત્યા) રાજગૃહ નામનું નગર હતું (ઘણ્ણમ્મો) તેનું વર્ણન ઔપપાતિક સૂત્રમાં વર્ણવેલી અપાનગરીની માફક છે (સામી સમોસઢે) તે નગરમાં ભગવાન મહાવીર સ્વામી પધાર્યા. (પરિસા ણિગયા) તેમની દેશના સાબળવાને માટે પરિસા નીકળી (ઘમ્મો કહિઓ) પ્રમુલ્લે ખમ્મોપદેશ આપ્યો (પરિસા પઢિગયા) તે સાબળીને પરિસા પાછી ગઈ (તેજ કાલેણં તેજ સમણં) તે કાળે અને તે સમયે (સમણસ્સ મગધમ્મો મહાવીરસ્સ) ઝમ્મણ ભગવાન મહાવીરના (જેઢે અંતેવાસી) મોટા અન્તેવાસી શિષ્ય (જાવ પજ્જુવાસમાણે) (યાવત્) પર્યુપાસના કરીને (એવ યયાસી) આપમાલે બોલ્યા.

(જે હમે મંતે ! બેહંદિયા તેહંદિયા, ચત્તરિંદિયા જીવા એપસિ જં આણમં વા

જીવાઃ, એતેષાં સ્વલુ આનામં વા પ્રાણામં વા, ઉચ્છ્વાસં વા નિશ્વાસં વા જાનીમઃ
પશ્યામઃ । યે ઇમે પૃથિવીકાયિકાઃ યાવદ્ વનસ્પતિકાયિકા એકેન્દ્રિયજીવાઃ,
એતેષાં સ્વલુ આનામં વા પ્રાણામં વા ઉચ્છ્વાસં વા નિશ્વાસં વા ન જાનીમઃ ન
ન પશ્યામઃ, એતેઽપિ સ્વલુ ભદંત ! જીવા આનંતિ વા પ્રાણંતિ વા ઉચ્છ્વસંતિ
વા નિશ્વસંતિ વા, હંત ગૌતમ ! એતે સ્વલુ જીવાઃ, આનંતિ વા પ્રાણંતિ વા,
ઉચ્છ્વસંતિ વા નિશ્વસંતિ વા ॥ સૂ ૧ ॥

જીવ હૈં સો (એણસિ ણં આણામં વા પાણામં વા ઉસ્સાસં વા નીસાસં
વા જાણામો, પાસામો) इनके भीतरी बहिरी उच्छ्वास निःश्वामको तो
हम जानते हैं और देखते हैं (जे इमे पुढवीकाइया जाव वणप्फइकाइया
एगिंदिया जीवा) परन्तु जो ये पृथिवीकायिकसे छे कर वनस्पतिकायिक
तकके एकेन्द्रिय जीव हँ सों (एणसि णं आणामं वા પાણામં વા ઉસ્સાસં
વા નીસાસં વા ન જાણામો ન પાસામો) इनके भीतरी बाहिरी श्वास और
उच्छ्वास को न हम जानते हैं और न हम देखते हैं । (एणं
भंते ! जीवा आणमति वा पाणमंति वा उस्ससंति वा, नीससंति वा)
तो हे भदन्त ! ये जीव क्या भीतर बाहर के श्वाव और उच वास को
लेते हैं ? (हंता गोयमा !) हां गौतम ! (एएवि णं जीवा आणमंते वा

પાણામં વા ઉસ્સાસં વા નીસાસં વા જાણામો, પાસામો) હે ભગવન્ । ઈન્દ્રિય,
ત્રીન્દ્રિય, ચતુરિન્દ્રિક અને પચ્ચેન્દ્રિય જીવો જે શ્વાસ અદર ગ્રહણ કરે છે. અને
જે ઉચ્છ્વાસ બહાર કાઢે છે તે તો અમે બાણીયે છીએ અને નેધીયે છીએ
પણ (જે ઇમે પુઢવીકાઈયા જાવ વણપ્ફઈકાઈયા એગિંદિયા જીવા) પૃથ્વીકાયથી
લઈને વનસ્પતિકાય સુધીના જે એકેન્દ્રિય જીવો તેમના (એણસિ ણ આણામં
વા પાણામં વા ઉસ્સાસં વા નીસાસં ન જાણામો ન પાસામો) બાહ્યસ્થાનતર
શ્વાસ અને ઉચ્છ્વાસ વિષે અમે કંઈ પણ બાણતા નથી કે તેને નેતા પણ નથી
(એણ ભંતે જીવા આણમંતિ વા પાણમંતિ વા ઉસ્સસંતિ વા નીસસંતિ વા ?) તો હે
ભગવન્ ! તે જીવો શુ શ્વાસ ગ્રહણ કરે છે અને ઉચ્છ્વાસ બહાર કાઢે છે !
(હંતા ગોયમા !) હા, ગૌતમ ! (એણ વિ ણં જીવા આણમંતિ વા પાણમંતિ વા,

ટીકા—‘તેણ કાલેણ’ તસ્મિન્ કાલે—અવસર્પિણીચતુર્થારકે ‘તેણ સમ
 ણ’ તસ્મિન્ સમયે—થેણિકશાસનકાલે ‘રાયગિહે જામ નયરે હોત્યા’ રાજ
 ગૃહ નામ નગરમાસીહ, ‘બળજો’ ધર્મ ‘સામી સમોસદ’ સ્વામી સમવસુદ,
 મગધાન સમાગતઃ । ‘પરિસા નિમ્મયા’ પર્યભિર્ગતા ‘ધમ્મો કહિઓ’ ધર્મઃ કથિતઃ,
 ‘પરિસા પઢિગયા’ પરિપત્ પ્રતિગતા, ‘તેણ કાલેણ’ તસ્મિન્ કાલે, સમા
 વિસર્જનાન્તકાલે ‘તેણ સમણ’ તસ્મિન્ સમયે ઉચ્છ્રાસનિઃશ્વાસાદિમશ્નોન્નપત્તમવે

પાળમંતિ યા, ડસ્સસતિ યા નીસસંતિ યા) એ ‘બી જીઘ બીતર’ મેં શ્વાસ
 ગ્રહણ કરતે હું ‘બીતર’ મેં શ્વાસ છોડતે હું બહિર મેં શ્વાસ ગ્રહણ કરતે
 ઓર બહિર મેં નિ શ્વાસ છોડતે હું ।

ટીકાર્થ—(તેણ કાલેણ તેણ સમણ) કાલ સે યહાં અવસર્પિણી
 ચૌથા કાલ લિયા ગયા હૈ ઓર સમય સે થેણિક રાજા કે શાસન સમય
 લિયા ગયા હૈ । અત અવસર્પિણી કે ચૌથે આરે મેં ઓર થેણિક રાજા
 કે શાસન સમય મેં (રાયગિહે જામ નયરે હોત્યા) રાજગૃહ નામ કા
 નગર યા (બળજો સામી સમોસદે) હસ નગર કા ધર્મન ઔપપાતિક
 સૂત્ર મેં ઘણિત યંપા નગરી કે સમાન હૈ યહ બાત યહાં (બળજો) પદ
 સે સૂત્રકાર ને પ્રગટ થી હૈ । ડસ નગર મેં સ્વામી—અમળ મગધાન મહા-
 વીર પ્રસુ—પધારે । (પરિસા નિમ્મયા) સમા પ્રસુ કા ધર્મોપદેશ સુનને
 કે લિયે નગર સે નિકલી (ધમ્મો કહિઓ) પ્રસુને ધર્મ કા ઉપદેશ
 વિયા । (પરિસા પઢિગયા) ધર્મોપદેશ સુનકર સમા વિસર્જિત હો ગઈ ।
 (તેણ કાલેણ તેણ સમણ) પદ સે યહાં સમા વિસર્જન કે અનન્તર

સસસતિ યા નીસસતિ યા) તે હોવો પશુ અહર શ્વાસ હો છે અહર શ્વાસ
 છોડે છે બહારથી શ્વાસ અહણુ હરે છે અને નિઃશ્વાસને બહાર ઠાડે છે

ટીકાર્થ—“તેણ કાલેણ તેણ સમણ” ઠાઠ પદવડે બહી અવસર્પિણીને।
 ચોથો આરો લેવામાં આવ્યો છે અને ‘સમણ’ પદથી મલ્લિક શાલનો શાસન
 સમય લેવામાં આવ્યો છે એ લે કે અવસર્પિણીના ચોથા આશામાં શ્રેણિક
 શાલના શાસન સમયે ‘રાયગિહે જામ નયરે હોત્યા’ રાજગૃહ નામનું નગર
 હતું “બળજો સામી સમોસદ” તે નગરનું વર્ણન ઔપપાતિક સૂત્રમાં વડુ
 વેદી બધા નગરી ની માફક સમજવું એ વાત “બળજો” પદથી સૂત્રકારે
 બતાવી છે તે નગરમાં અમળ મગધાન મહાવીર પ્રસુ પધાર્યા. ‘પરિસા નિમ્મયા’
 નગરમાંથી લોકોની પરિવહ પ્રસુને ઉપદેશ સાંભળ્યાં માટે પ્રસુ પાસે જ્યા
 ઉપગી. ‘ધમ્મો કહિઓ’ પ્રસુએ તેમને ધર્મોપદેશ દીધો. ‘પરિસા પઢિગયા’
 ધર્મોપદેશ સાંભળીને પરિવહ ત્યાંથી પાછી ફરી. “તેણ કાલેણ તેણ સમણ”

‘સમણસ્સ ભગવઓ મહાવીરસ્સ’ શ્રમણસ્વ ભગવતો મહાવીરસ્ય ‘જેઢ્ઢે અંતેવાસી’
 જ્યેષ્ઠોઽન્તેવાસી અગ્નિભૂતિઃ ગૌતમઃ ‘જાવ પજ્જુવાસમાણે’ યાવત્ પર્યુપાસીનઃ
 યાવત્પદેન—પ્રથમશતકપ્રથમોદ્દેશકીયસપ્તમાષ્ટમસૂત્રસ્થ ‘જાયસહ્ઢે’ હિત્યારમ્બ
 ‘પંજલિહ્ઢે’ હિત્યન્ત સર્વ સંગ્રાહમ્, વન્દનનમસ્કારાદિક કૃત્વા ભગવન્તં સેવ-
 માનઃ ‘એવં વયાસી’ એવમવાદીત્ ‘એવ’ વક્ષ્યમાણપ્રકારેણ અવાદીત્ પૃષ્ઠવાન્
 ‘જે હમે મંતે’ યે હમે મદન્ત ! ‘વેહંદિયા’ દ્વીન્દ્રિયાઃ ‘તેહંદિયા’ ત્રીન્દ્રિયાઃ
 ‘ચરિંદિયા’ ચતુરિન્દ્રિયાઃ ‘પંચિંદિયા’ પચ્ચેન્દ્રિયાઃ ‘જીવા’ જીવાઃ પ્રાણિનઃ
 સન્તિં ‘એસિ ણં’ એતેષાં સ્વહ્ ‘આણામં વા પાણામં વા’ અનામં વા આસ્મ-
 ન્તરિકમ્, પ્રાણામં વા વાહમ્ ‘ઉસ્સાસ વા નિસ્સાસં વા’ ઉચ્છ્વાસં વા નિશ્વાસં

કાલ મેં ઓર ઉચ્છ્વાસ નિઃશ્વાસ આદિ કે પ્રશ્નોદ્ઢાવ કે સમય મેં એસા
 અર્થ લિયા ગયા હૈ । (સમણસ્સ ભગવઓ મહાવીરસ્સ જેઢ્ઢે અંતેવાસી)
 હન પદોં કા અર્થ સ્પષ્ટ હૈ । (જેઢ્ઢે અન્તેવાસી) પદ સે જ્યેષ્ઠ—પ્રધાન—શિષ્ય
 ગૌતમ સ્વામી લિયે ગયે હૈં । (જાવ પજ્જુવાસમાણે) મેં જો યહ (યાવત્)
 શવ્દ આયા હૈ । ડસસે (પ્રથમશતક કે પ્રથમ ઉદ્દેશક મેં જો સાતવાં
 ઓઠવાં સૂત્ર હૈ, ડનમેં જો (જાયસહ્ઢે) યહાં સે લગાકર (પંજલિહ્ઢે)
 તક કા પાઠ હૈ વહ પાઠ યહાં ગ્રહણ કિયા ગયા હૈ એસા જાનના ચાહિયે ।
 વન્દના નમસ્કાર આદિ કરકે ગૌતમ ને પ્રશ્ન કી સેવા કરતે હુએ (એવં
 વયાસી) હસ પ્રકાર સે પૂછા—(જે હમે મંતે ! હે મદન્ત ! જો યે (વેહં-
 દિયા) ડો હન્દ્રિયવાલે જીવ (તેહંદિયા) ત્રીન હન્દ્રિયવાલે જીવ (ચર-
 રિંદિયા) ચાર હન્દ્રિયવાલે જીવ (પંચિંદિયા) પાંચ હન્દ્રિય વાલે (જીવા)
 જીવ—પ્રાણી હૈં (એસિ ણં) સો હનકા (આણામં) મીતર કા (વા)

આ પદો વડે અહીં ” સહા વિસર્જન થયા પછીનો કાળ અને ઉચ્છ્વાસ
 નિશ્વાસ વગેરેના પ્રશ્નો પૂછવા નો સમય” લેવામા આવ્યો છે “ સમણસ્સ
 ભગવઓ મહાવીરસ્સ જેઢ્ઢે અંતેવાસી ” ઓટલે કે શ્રમણ ભગવાન મહાવીર સ્વામીના
 જ્યેષ્ઠ શિષ્ય ગૌતમ સ્વામી. “ જાવ પજ્જુવાસમાણે ” મા ને “ જાવ ”
 (યાવત્) પદ છે તેના વડે પહેલા શતકના પહેલા ઉદ્દેશકના સાતમા અને
 આઠમા સૂત્રમાનો ” “ જાયસહ્ઢે ” પદથી શરૂ કરીને “ પજલિ હ્ઢે ” સુધીનો
 પાઠ ગ્રહણ કરાયો છે તેમ સમજવુ. વધુ નમસ્કાર વગેરે કરીને પ્રશ્નને
 ગૌતમ સ્વામીએ વિનયપૂર્વક ‘ એવ વયાસી ’ આ પ્રમાણે પૂછ્યુ ” “ જે હમે
 મંતે । હે ભગવન્ ! આ ને “ વેહંદિયા ” બે ઇન્દ્રિયોવાળા “ તેહંદિયા ” ત્રણ
 ઇન્દ્રિયોવાળા, “ ચરિંદિયા ” ચાર ઇન્દ્રિયોવાળા અને “ પંચિંદિયા ” પચ્ચ
 ઇન્દ્રિયોવાળા ‘ જીવા ’ છવો છે. “ એ એસિ ણ ” તેમનો “ આણામં ” અહ

વા 'જાણામો પાસામો' જાનીમ' પડ્યામ પરન્તુ 'જે હમે પુઠ્ઠીકાઈયા' જે હમે પૃથ્વીકાઈયા 'આવ ઘણપ્પકાઈયા પર્ગિદિયા જીના' યાવત્ ઘનસ્પતિકાઈયા એકેન્દ્રિયજીવા, અમ્ર યાવત્પદેન અપ્તેજોનાયુકાઈયાના પ્રહણમ્ । 'પર્ણસિ ણં આણામ વા પાણામ વા' એતેપાં ચ્છત્તુ ખીયાનામ્ આનામ વા માણામ વા 'ઉસ્સાસ વા નીસાસ વા' ઉચ્છવાસ વા નિશ્વાસ વા, ન આણામો ન પાસામો ' ન જાનીમો ન પડ્યામ, ટ્રીન્દ્રિયાદીનાં જીવાનાં સઘાઘામ્પન્તરચ્છવાસ નિશ્વાસાદિક જાનીમ' પડ્યામ સ્થાનુમવાત્ । પરન્તુ પૃથ્વીયાદિઘનસ્પતિપયન્તે કેન્દ્રિયજીવાનાં સઘાઘામ્પન્તર ચાસનિશ્વાસાદિક ન જાનામિ ન પડ્યામીતિ

ઔર (પાણામ વા) બાહર કા જો (ઉસ્સાસ વા) ઉચ્છવાસ, ઔર (નીસાસ વા) નિશ્વાસ હૈ (જાણામો પાસામો) ઉસે તો હમ જાનતે હૈ ઔર દેખતે હૈ । પરન્તુ (જે હમે પુઠ્ઠીકાઈયા) જો પે પૃથ્વીકાઈયા (આવ ઘણપ્પકાઈયા પર્ગિદિયા જીવા) યાવત્ ઘનસ્પતિ કાઈયા એકેન્દ્રિય જીવ હૈ—યહાં યાવત્ શબ્દ સે (અપ્કાઈયા જીવ, તેજ કાઈયા, વાયુકાઈયા) હન એકેન્દ્રિય જીવોં કા પ્રહણ હુઆ હૈ—(પર્ણસિ ણં આણામ વા પાણામ વા) સો હનકે ખીતર કે ઔર બાહર કે (ઉસ્સાસ નીસાસ વા ન આણામો ન પાસામો) ઉચ્છવાસ કો, નિશ્વાસ કો ન હમ જાનતે હૈ ઔર ન હમ દેખતે હૈ । તાત્પર્ય કહને કા યહ હૈ કિ મેં અપને અનુમલ સે ટ્રીન્દ્રિયાદિક જીવોં કે યાઘ આમ્પન્તર ચ્છવાસ નિશ્વાસ આદિ કો જાનતા હુ ઔર દેખતા હુ । પરન્તુ જો પૃથ્વીકાઈયા એકેન્દ્રિય સે સેકર ઘનસ્પતિકાઈયા એકેન્દ્રિય પર્યન્ત જીવ હૈ, ઉનકે યાઘ આમ્પન્તર ચાસ નિશ્વાસ આદિકોં કી મેં ન જાનતા હુ ઔર ન દેખતા હી હુ ।

રનેઽ વા' અને 'વાણામ વા' બહારનો એ 'ઉસ્સાસ વા નીસાસ વા' ઉચ્છવાસ અને નિશ્વાસ છે 'જાણામો પાસામો' તેને તે। સમણમે ધીએ અને એઈ શક્તિમે ધીએ. પણ 'જો હમે પુઠ્ઠીકાઈયા આવ ઘણપ્પકાઈયા પર્ગિદિયા જીવા' પૃથ્વીકાઈયા સઈને ઘનસ્પતિ કાઈયા સુખીના એ એકેન્દ્રિય છવે। છે (અહીં" યાવત્" પછીથી અપૂકાઈયા તેજકાઈયા અને વાયુકાઈયાના છવે। પ્રહણ કરવા એઈએ 'પર્ણસિ ણં આણામ વા પાણામ વા' તેમના બાહ્ય આશ્વતર 'ઉસ્સાસ વા નીસાસ વા ન આણામો ન પાસામો' ઉચ્છવાસ નિશ્વાસન અમે બાણતા નથી અને અમે જોતા નથી. તાત્પર્ય' એ છે કે ટ્રીન્દ્રિય સુખીના છવે।ના બાહ્યઆમ્પન્તર શ્વાસોચ્છવાસને અનુભવથી બાણી શક્તિ છે અને ટેખી શક્તિ છે પણ પૃથ્વીકાઈયા એકેન્દ્રિય છવે।થી શરૂ કરીને ઘનસ્પતિ કાઈયા સુખીના એકેન્દ્રિય છવે।ના બાહ્યઆમ્પન્તર શ્વસોચ્છવાસ અનુભવથી બાણી શક્તિ નથી અને ટેખી

ભાવ, 'एणं भंते जीवा' एते खलु भदन्त ! जीवाः पृथिव्यादिवनस्पतिपर्यन्ताः किम् 'आणमंति वा पाणमंति वा' आनमंति वा प्राणमंति वा 'उस्ससंति वा नीससंति वा' उच्छ्वसंति वा निःश्वसंति वा, एकेन्द्रियजीवानाम् श्वासोच्छ्वासादिकं भवति नवेति प्रश्नः, संशयकारणं तु अदृश्यमानत्वम्, एकेन्द्रियजीवानां प्रत्यक्षत उच्छ्वासादिकं न दृश्यते, जीवत्वं च तेष्वप्यस्ति, अतो गौतमस्य प्रश्नः, उत्तरयति भगवान्—' हंता गोयमा ' इत्यादि, ' हंता गोयमा ' हन्त गौतम ! ' ए ए वि णं जीवा ' एतेपि खलु जीवाः, पृथिव्यादिवनस्पतिपर्यन्ता जीवा अपि ' आनमंति वा पाणमंति वा ' आनन्ति वा प्राणन्ति वा ' उस्ससंति वा नीससंति

(एणं भંતે ! તો હે ભદન્ત ! યે જીવ પૃથિવીકાયિક સે લેકર વનસ્પતિ કાયિકતક કે એકેન્દ્રિય જીવ (કિં આણમંતિ વા પાણમંતિ વા) કયા ખીતર મેં શ્વાસ ગ્રહણ કરતે હેં ? બાહર મેં શ્વાસ છોડતે હે ? (ઉસ્સસંતિ વા નીસસંતિ વા) બાહર મેં નિઃશ્વાસ કો ગ્રહણ કરતે હેં ? બાહર મેં નિઃશ્વાસ કો છોડતે હેં ? તાત્પર્ય પ્રશ્ન કા યહ હે કિ એકેન્દ્રિય જીવોં કે શ્વાસ નિઃશ્વાસ આદિ હોતે હેં કિ નહીં હોતે હેં ? સંશય કા કારણ યહ હે—કિ એકેન્દ્રિય જીવોં કા ઉચ્છ્વાસ આદિ પ્રત્યક્ષ સે દિશ્વતા નહીં હે ? પરન્તુ ઉનમેં ખી ચૈતન્ય તો હે । હસ લિયે ગૌતમને એસા પ્રશ્ન કિયા । હસકા ઉત્તર દેતે હુએ ભગવાન ઉનસે કહતે હેં કિ હંતા, ગોયમા ! હાં ગૌતમ ! (એ એ વિ ણં જીવા) યે પૃથિવી કાયિક સે લેકર વનસ્પતિ કાયિક તક કે સમસ્ત એકેન્દ્રિય જીવ ખી (આનમંતિ વા પાણમંતિવા) ખીતર બાહર મેં શ્વાસ લે તે હેં (ઉસ્સસંતિ વા નીસસંતિવા)

પણ શકાતો નથી “ એ એ ણં ભંતે ! જીવા ” તો હે લગવન્ તે પૃથ્વીકાયથી લઈને વનસ્પતિકાય સુધીના એકેન્દ્રિય જીવો “ કિં આણમંતિ વા પાણમંતિ વા ? ” શું શ્વાસ બહાર લે છે અને બહાર છોડે છે ? “ ઉસ્સસંતિ વા નીસસંતિ વા ? ” શું બહારથી શ્વાસમા હવા લઈ તેને નિઃશ્વાસ રૂપે બહાર કાઢે છે ? પ્રશ્નોના ભાવાર્થ આ પ્રમાણે છે એકેન્દ્રિય જીવો શ્વસોચ્છ્વાસ લે છે કે નહીં ? આ જાતની શંકાતુ કારણ એ છે કે એકેન્દ્રિય જીવોના શ્વાસોચ્છ્વાસ પ્રત્યક્ષ જોઈ શકાતો નથી, યજ્ઞ તેમનામા ચૈતન્ય તો હોય છે અને તેથી આ જાતની શંકા શ્વાભાવિક રીતે ઉત્પન્ન થાય છે. લગવાન તેનો આ પ્રમાણે જવાબ આપે છે “ હંતા ગોયમા ! હા, ગૌતમ ! “ એ એ વિ ણ જીવા ” તે બધા એકેન્દ્રિય જીવો પણ “ આનમંતિ વા પ્રાણમંતિ વા ” બાહ્યાભ્યંતર શ્વાસ લે છે અને “ ઉસ્સસંતિ વા નીસસંતિ વા ” બાહ્યાભ્યંતર નિઃશ્વાસ છોડે છે જેવી રીતે ચૈતન્યયુક્ત

વા ' ઉચ્છ્વાસતિ યા નિશ્વાસન્તિ યા, હે ગૌતમ ! एतेपि पृथिव्याधारम्य घनस्य
 तिकायान्ता एकेन्द्रिय जीवा अपि आभ्यन्तर घात या उच्छ्वास निश्वास
 कुर्वन्ति, यया यय जीवा श्वास-निश्वासां गृहीमस्तथैव जीवास्त्वाविशेषात् इमेऽपि
 एकेन्द्रिया जीवा उच्छ्वासनिश्वासां गृह्णन्त्येवेति भावः ॥ सू० १ ॥

भीतर યાહર મેં નિઃશ્વાસ છોડતે હું। जैसे जीवस्व की अधिशेषता से
 युक्त हुए हम लोग श्वास निःश्वास लेते हैं और छोड़ते हैं वसी तरह
 से जीवस्व की अधिशेषता से युक्त ये एकेन्द्रिय जीव भी श्वासोच्छ्वास
 છેતે હું ઓર છોડતે હું। ये पृथिवीकायिक आदि एकेन्द्रिय जीव हैं ऐसा
 आगम का वचन है। परन्तु इनके श्वास निश्वास आदि होते हैं कि
 नहीं ऐसीजो शंका हुई है उसका कारण यह है कि जिस प्रकार मनुष्य आदि
 में श्वास निःश्वास प्रत्यक्ष से देखने में आते हैं उस प्रकार से ये एके
 न्द्रिय जीवों में देखने में नहीं आते हैं। अतः इस प्रकार की शंका होना
 स्वाभाविक है। यदि इस पर यों कहा जावे कि जब यह आगमप्रमाण
 से निश्चित है कि पृथिवी आदि जीव हैं तो यह बात तो माननी ही
 चाहिये कि इनमें श्वासोच्छ्वास है ही फिर शंका करने की क्या जरू
 रत है? सो इसका समाधान यह है कि जीव होने पर भी कितनेक
 जीवों का शरीर मेढक आदि जीवों का शरीर बहुत समय तक बिना
 श्वासादि के भी देखा जाता है। अतः पृथ्वी आदिजीव क्या उस तरह
 के हैं या मनुष्य आदि की तरह श्वासोच्छ्वास से युक्त हैं? ऐसी शंका है

મનુષ્યો શ્વાસોચ્છ્વાસની ક્રિયા કરે છે તેવી જ રીતે ચેતન્યયુક્ત એકેન્દ્રિય
 હવે। પણ શ્વાસ લેવાની અને નિઃશ્વાસ કાઢવાની ક્રિયા કરે છે આગમોમાં
 શાઓમાં પૃથિવીકાયિક વગેરે એકેન્દ્રિય હવે કહેવામાં આવેલ છે તેઓ
 શ્વાસોચ્છ્વાસ લે છે કે નહીં, એવી જે શંકા ઉદ્ભવી છે તેનું કારણ એ છે
 કે મનુષ્ય વગેરે હવેમાં જેવી રીતે શ્વાસોચ્છ્વાસની ક્રિયા પ્રત્યક્ષ એક
 શકાય છે તેવી રીતે એકેન્દ્રિય હવેમાં તે ક્રિયા પ્રત્યક્ષ એક શકાતી નથી
 તેથી તે પ્રકારની શકા અસ્થાને નથી એ આ બાબતમાં એવી દલીલ કરવામાં
 આવે કે આગમોમાં તેમને એવ પ્રતિપાદિત થયો છે તો તે વાત માનવી જ
 એકેન્દ્રિય કે તેઓ શ્વાસોચ્છ્વાસ લે છે તેમાંથી શકાને માટે અવકાશ જ નથી
 તો તેનું સમાધાન આ પ્રમાણે કરી શકાય કેટલાક હવે (દેહમાં વગેરે) પણ
 સમજ સુધી શ્વાસ લેતા નથી. તો શું પૃથિવીકાય વગેરે હવે તે પ્રકારના છે?
 કે મનુષ્ય વગેરેની જેમ શ્વાસોચ્છ્વાસથી યુક્ત છે? એ પ્રકારની શકા થાય છે

ભાવ, 'एएणं भंते जीवा' एते खलु भदन्त ! जीवाः पृथिव्यादिवनस्पतिपर्यन्ताः किम् 'आणमंति वा पाणमंति वा' आनमंति वा प्राणमति वा 'उस्ससति वा नीससंति वा' उच्छ्वसंति वा निःश्वसंति वा, एकेन्द्रियजीवानाम् श्वासोच्छ्वासादिकं भवति नवेति प्रश्नः, संशयकारणं तु अदृश्यमानत्वम्, एकेन्द्रियजीवानां प्रत्यक्षत उच्छ्वासादिकं न दृश्यते, जीवत्वं च तेष्वप्यस्ति, अतो गौतमस्य प्रश्नः, उत्तरयति भगवान्—' हंता गोयमा ' इत्यादि, ' हंता गोयमा ' हन्त गौतम ! ' एए वि णं जीवा ' एतेपि खलु जीवाः, पृथिव्यादिवनस्पतिपर्यन्ता जीवा अपि ' आनमंति वा पाणमंति वा ' आनन्ति वा प्राणन्ति वा ' उस्ससंति वा नीससंति

(एएणं भંતે ! તો હેં ભદન્ત ! યે જીવ પૃથિવીકાયિક સે લેકર વનસ્પતિ કાયિકતક કે એકેન્દ્રિય જીવ (કિં આણમંતિ વા પાણમંતિ વા) કયા ખીતર મેં શ્વાસ ગ્રહણ કરતે હેં ? વાહર મેં શ્વાસ છોડતે હેં ? (ઉસ્સસંતિ વા નીસસંતિ વા) વાહર મેં નિઃશ્વાસ કો ગ્રહણ કરતે હેં ? વાહર મેં નિઃશ્વાસ કો છોડતે હેં ? તાત્પર્ય પ્રશ્ન કા યહ હેં કિ એકેન્દ્રિય જીવોં કે શ્વાસ નિઃશ્વાસ આદિ હોતે હેં કિ નહીં હોતે હેં ? સંશય કા કારણ યહ હેં—કિ એકેન્દ્રિય જીવોં કા ઉચ્છ્વાસ આદિ પ્રત્યક્ષ સે દિશ્વતા નહીં હેં ? પરન્તુ ઉનમેં ખી ચૈતન્ય તો હેં । હસ લિયે ગૌતમને એસા પ્રશ્ન કિયા । હસકા ઉત્તર દેતે હુએ ભગવાન ઉનસે કહતે હેં કિ હંતા, ગોયમા ! હાં ગૌતમ ! (એ એ વિ ણં જીવા ” યે પૃથિવી કાયિક સે લેકર વનસ્પતિ કાયિક તક કે સમસ્ત એકેન્દ્રિય જીવ ખી (આનમંતિ વા પાણમંતિવા) ખીતર વાહર મેં શ્વાસ લે તે હેં (ઉસ્સસંતિ વા નીસસંતિવા)

પણ શકાતો નથી “ એ એ ણ મંતે ! જીવા ” તો હે ભગવન્ તે પૃથ્વીકાયથી લઈને વનસ્પતિકાય સુધીના એકેન્દ્રિય જીવો “ કિં આણમંતિ વા પાણમંતિ વા ? ” શું શ્વાસ અદર લે છે અને બહાર છોડે છે ? “ ઉસ્સસંતિ વા નીસસંતિ વા ? ” શું બહારથી શ્વાસમા હવા લઈ તેને નિઃશ્વાસ રૂપે બહાર છોડે છે ? પ્રશ્નનો ભાવાર્થ આ પ્રમાણે છે એકેન્દ્રિય જીવો શ્વસોચ્છ્વાસ લે છે કે નહીં ? આ બાતની શકાતુ કારણ એ છે કે એકેન્દ્રિય જીવોના શ્વાસોચ્છ્વાસ પ્રત્યક્ષ જોઈ શકાતો નથી, પણ તેમનામા ચૈતન્ય તો હોય છે અને તેથી આ બાતની શકા સ્વાભાવિક રીતે ઉત્પન્ન થાય છે ભગવાન તેનો આ પ્રમાણે જવાબ આપે છે “ હંતા ગોયમા ! હા, ગૌતમ ! “ એ એ વિ ણ જીવા ” તે બધા એકેન્દ્રિય જીવો પણ “ આનમંતિ વા પાણમંતિ વા ” આદ્યાશ્ચ તર શ્વાસ લે છે અને “ ઉસ્સસંતિ વા નીસસંતિ વા ” આદ્યાશ્ચ તર નિઃશ્વાસ છોડે છે જેવી રીતે ચૈતન્યયુક્ત

છાયા—કિં સ્વસ્તુ મદન્ત । એતે જીવા આનન્તિ વા પ્રાણન્તિ વા ઉચ્છ્વસતિ વા, નિશ્વસતિ વા, ગૌતમ । દ્રવ્યતોડનન્તમદેશિકાણિ દ્રવ્યાણિ, ક્ષેત્રતોડસસ્તેય મદેશાવગાદાણિ કાલતોડન્યતરસ્થિતિકાણિ, માયતો વર્ણવન્તિ, ગંધવતિ, સ્પર્શવન્તિ આનન્તિ વા પ્રાણન્તિ વા ઉચ્છ્વસતિ વા, નિશ્વસતિ વા, યાનિ માયતો વર્ણવતિ

ઉચ્છ્વાસ નિશ્વાસ કા અધિકાર હોને સે હી જીવાદિક સમુચ્ચય વળક ઓર જીવીસ વળકરુપ ૨૫ પદોં મેં ઉચ્છ્વાસ નિશ્વાસ કે સ્વરુપ કો નિર્ણય કરને કે લિયે ગૌતમ સ્વામી પ્રશ્ન કરતે હુપ કહતે હૈં કિં 'કિં જં મંતે ! એ જીવા આણમતિ વા પાણમતિ વા' ઇત્યાદિ ।

(કિં જં મંતે ! એ જીવા) હે મદન્ત । યે જીવ કિસ પ્રકાર કે દ્રવ્યોં કો (આણમતિ વા પાણમતિ વા ઉચ્ચસંતિ વા નિચ્ચસંતિ વા) મીતર કે બાહર કે સ્વાસ્ત્રુપ મેં હેતે હૈં ઓર કિમ પ્રકાર કે દ્રવ્યોં કો મીતર બાહર કે નિશ્વાસ્ત્રુપ મેં હોહતે હૈં ? (ગૌતમ !) હે ગૌતમ ! (દ્રવ્યઓ જ અણતપપસિયાઈં વચ્ચાઈં) દ્રવ્ય કી અપેક્ષા સે અનંતમદેશી દ્રવ્યોં કો, (સ્થેતઓ અસથેત્રપપસોગાદાઈ) ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા અસખ્યાત પ્રદેશોં મેં અવગાદ હુપ દ્રવ્યોં કો (કાલઓ અત્તપરઠિઈયાઈ) કાલ કી અપેક્ષા કિસી મી પ્રકાર કી સ્થિતિ થાલે દ્રવ્યોં કો (માયઓ વર્ણમ તાઈ, ગંધમંતાઈ, રસમંતાઈ, સ્પર્શમંતાઈ) માય કી અપેક્ષા વર્ણવાલે, ગંધવાલે, રસવાલે, સ્પર્શવાલે દ્રવ્યોં કો (આણમતિ વા પાણમતિ વા)

ઉચ્છ્વાસ નિશ્વાસને અધિકાર થાયતો હેવાથી જીવાદિક સમુચ્ચય ૬૩૪ અને જીવીસ ૬૩૪૫ પછીય પદોમા ઉચ્છ્વાસ નિશ્વાસને નિશ્ચય થવાને માટે ગૌતમ સ્વામી પ્રશ્ન પૂછે છે કે—

“કિં જં મંતે ! એ જીવા આણમતિ વા પાણમતિ વા” ઇત્યાદિ.

સુત્રાર્થ—કિં જં મંતે ! એ જીવા) હે અચરન્ ! તે જીવે કઈજાતના દ્રવ્યોને (આણમતિ વા પાણમતિ વા અચ્ચસતિ વા નિચ્ચસતિ વા) આશ્વાસનન્તર સ્વાસ રૂપે પ્રકણ કરે છે અને કઈજાતના દ્રવ્યોને આશ્વાસનન્તર નિશ્વાસ રૂપે ઊઠે છે ! (ગૌતમ !) હે ગૌતમ ! (દ્રવ્યઓં અણતપપસિયાઈં વચ્ચાઈં) દ્રવ્યની અપેક્ષાએ અનંત પ્રદેશી દ્રવ્યોને (સ્થેતઓ અસથેત્રપપસોગાદાઈ) ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ અસખ્યાત પ્રદેશોમા અવગાદ થયેલા દ્રવ્યોને (કાલઓ અત્તપરઠિઈયાઈ) કાળની અપેક્ષાએ કોઈ પણ જાતની સ્થિતિવાળાં દ્રવ્યોને (માયઓ વર્ણમતાઈ ગંધમંતાઈ રસમંતાઈ સ્પર્શમંતાઈ) માયની અપેક્ષાએ વર્ણ ગંધ રસ અને સ્પર્શ વાળા દ્રવ્યોને (આણમતિ વા પાણમતિ વા) તેઓ આશ્વાસનન્તર સ્વાસરૂપે

ઉચ્છ્વાસનિઃશ્વાસયોરધિકારોદેવ જીવાદિષુ પંચવિંશતિપદેષુ ઉચ્છ્વાસનિઃ-
શ્વાસયોઃ સ્વરૂપં નિર્ણેતુ પ્રશ્નયન્નાહ-‘ કિં ણ મંતે ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્-કિં ણં મંતે ! એએ જીવા આણમંતિ વા પાણમંતિ
વા ઉસ્સસંતિ વા નીસસંતિ વા, ગોયમા ! દઢ્વઓ ણં
અણંતપણસિયાઈં દઢ્વાઈં, ચેત્તઓ અસંચેજ્જપણસોગાઢાઈં,
કાલઓ અન્નચરિઠિયાઈં, ભાવઓ વણમંતાઈં, ગંધમંતાઈં,
રસમંતાઈં, ફાસમંતાઈં, આણમંતિ વા પાણમંતિ વા, ઉસ્સ-
સંતિ વા, જાઈં ભાવઓવણમંતાઈં આણમંતિ વા પાણમંતિ
વા ઉસ્સસંતિ વા નીસસંતિ વા, તાઈં કિં એગવણ્ણાઈં આણ-
મંતિ વા પાણમંતિ વા ઉસ્સસંતિ વા નીસસંતિ વા । આહા-
રગમો ણેયઢ્વો જાવ તિ ચઉપંચદિસિં । કિં ણં મંતે ! નેર-
યા આણમંતિ વા પાણમંતિ વા ઉસ્સસંતિ વા નીસસંતિ
વા, તં ચેવ જાવ નિયમા છદિસિં આણમંતિ વા પાણમંતિ
વા ઉસ્સસંતિ વા નીસસંતિ વા । જીવા એગિંદિયા વાઘાયા
ય ણિઢ્વાઘાયા ય માણિયઢ્વા, સેસા નિયમા છદિસિં ॥ સૂ૦૨॥

તથા વહુત સમય તક ખી શ્વાસોચ્છ્વાસ નહીં લેને વાલે જીવ કિસી ન
કિસી સમય તો શ્વાસોચ્છ્વાસ લેતે હી હૈ યહ નજર સે દિખતા હૈ પરન્તુ
ઇનકા શ્વાસોચ્છ્વાસ તો કમી દેખને મેં આતા હી નહીં હૈ । અતઃ ડન
જીવોં મેં શ્વાસોચ્છ્વાસ હૈ કિ નહીં એસા શંકા કા સમાધાન હસ સૂત્ર દ્વારા
કિયા ગયા હૈ ઓર કહા ગયા હૈ કિ ઇનમેં શ્વાસોચ્છ્વાસ આદિ હૈ ॥ સૂ૦૧॥

તથા ઘણા લાખા સમય સુધી શ્વાસોચ્છ્વાસ નહીં લેનારા જીવો પશુ કોઈક
સમયે તો શ્વાસોચ્છ્વાસ લેતા જોવામા આવે છે પશુ એકોન્દ્રિય જીવો તો
શ્વાસોચ્છ્વાસ લેતા કદી પશુ જોવામા આવતા નથી તેથી તેજીવો શ્વાસોચ્છ્વાસ
ગ્રહણ કરે છે કે નથી કરતા ? એવી શંકા અનુચિત નથી તે શંકાના સમાધાનમાં
આ સૂત્ર વડે તેઓ શ્વાસોચ્છ્વાસ વગેરે લે છે એમ કહેવામા આવ્યું છે. ॥ સૂ-૧॥

उच्छ्वसति वा निःश्वसति वा जीवा एकेन्द्रिया व्याघाता निर्व्याघाताश्च भवि
सध्याः शेषा नियमात् पश्चिदिशम् ॥ सू० २ ॥

टीका—‘किं ण मंते’ किं सल्ल मदन्त’ अत्र पि शब्दस्य सामान्यनिर्देश
त्वात् फानि=किं विषानी द्रव्याणीत्यर्थ, ‘एष जीवा’ एते जीवा, एकेन्द्रियाः
हे गौतम ! इस विषय में पहिले की तरह से ही जानना चाहिये यावत्
वे छह दिशाओं में से अंदर बाहर के श्वास निःश्वास के अणुओं को
ग्रहण करते हैं । (जीवा एगिंदिया बाघाय निष्वाघाया य भाणियवा
सेसा नियमा छदिसि) जीव और एकेन्द्रिय के संबंध में ऐसा कहना
कि यदि कोई व्याघात प्रतिषेधक नहीं है तो वे समस्त दिशाओं में से
श्वास निःश्वास के अणुओं को ग्रहण करते हैं और यदि प्रतिषेधक है
तो वे छह दिशाओं में से श्वास निःश्वास के अणुओं को ग्रहण करते
हैं और यदि प्रतिषेधक है तो वे छह दिशाओं के श्वास निःश्वास के
अणुओं ग्रहण नहीं कर सकने के कारण कोई समय तीन दिशाओं में
से’ कोई समय चार दिशाओं में से, कोई समय पांच दिशाओं में से
श्वास निःश्वास के अणुओं को ग्रहण करते हैं । बाकी समस्त जीव जहाँ
दिशाओं में से श्वास निःश्वास के अणुओं को ग्रहण करते हैं ।

टीकार्थ—(किं ण मंते) यहाँ (किं) यह शब्द सामान्य का निर्दे
शक है । इसलिये इसका अर्थ यहाँ (किस प्रकार के द्रव्यों को) ऐसा
होता है । (एष जीवा) पृथिवी से लेकर वनस्पति तक के एकेन्द्रिय

वा पाणमसि वा, वस्ससति वा, मीससति वा) के जीवम । आ विषयमां पञ्च
आगण भुज्ज ७ सभज्ज ॥ दिशाज्जोभाधी तेज्जो आकाशमन्तर श्वास
निःश्वासना पुद्गलाने भद्वज्ज करे छे” त्या सुधीनु कथन आगण भुज्ज ७ सभज्ज
(जीवा एगिंदिया बाघाय निष्वाघाया य भाणियवा सेसा नियमा छदिसि) सामान्य
एवे। अने एकेन्द्रिय एवे। विरे एवे। कहेवु नेछव्णि के ने केछ व्याघात
नउने। नडेय तो तेज्जो जधी दिशाज्जोभाधी श्वाभ निःश्वासना पुद्गलाने भद्वज्ज
करे छे पञ्च ने व्याघात नउने। डेय तो छजे दिशाज्जोभाधी श्वास निःश्वा
सना पुद्गलाने भद्वज्ज करी शकत्ता नधी पञ्च केछ वणत्त त्रज्ज दिशाज्जोभाधी,
तो केछ वणत्त आर दिशाज्जोभाधी अने केछ वणत्त पांच दिशाज्जोभाधी
श्वास निःश्वासना पुद्गलाने भद्वज्ज करेछे वासीना तमाभ एवे। छजे
दिशाभाधी श्वास निःश्वासना पुद्गलाने भद्वज्ज करे छे

टीकाय— किं न मंते अही किं” यह सामान्य निर्देशक छे तेधी
अही तेने अर्थ” कथ्यतना द्रव्योने जेवे। याय छे “ एष जीवा ” पृथि

આનન્તિ વા પ્રાણન્તિ વા ઉચ્છ્વસંતિ વા નિઃશ્વસંતિ વા, તાનિ કિમ્ એકવર્ણાન્યા-
નન્તિ વા પ્રાણન્તિ વા ઉચ્છ્વસંતિ વા નિઃશ્વસંતિ વા, આહારગમો જ્ઞાતવ્યઃ યાવત્
ત્રિચતુઃ પંચદિશમ્ । કિં સ્વલુ મદંત ! નૈરયિકા આનન્તિ વા પ્રાણન્તિ વા ઉચ્છ્વ-
સંતિ વા નિઃશ્વસંતિ વા, તદેવ યાવત્ નિયમાત્ પદ્ધિશં આનન્તિ વા પ્રાણન્તિ વા

भीतर बाहर के श्वासरूप में लेते हैं (उस्ससंति वा नीससंति वा) तथा
इसी प्रकार के द्रव्यों को भीतर बाहर के निःश्वासरूप में छोड़ते हैं ।
(जाइं भावओ वण्णमंताइं आणमंति वा पाणमंति वा उस्ससंति वा नीस-
संति वा) हे भदन्त ! वे जीव भाव की अपेक्षा जिन वर्णवाले द्रव्यों
को भीतर बाहर के श्वासरूप में लेते हैं तथा भीतर बाहर के निःश्वास-
रूप में छोड़ते हैं (ताइं किं एगवण्णाइं आणमंति वा पाणमंति वा,
ऊससंति वा नीससंति वा) वे द्रव्य क्या एक वर्णवाले होते हैं ? (आ-
हारगमो पेयव्वो जाव ति चउपंचदिसिं) हे गौतम ! यहां आहार गम
लेना चाहिये-और वह यावत् तीन चार पांच दिशा तरफ के श्वास और
निःश्वास के अणुओं को ग्रहण करते हैं इस तरह से लगाना चाहिये ।
(किं णं भंते ! नेरइया आणमंति वा पाणमंति वा उस्ससंति वा नीस-
संति वा) हे भदन्त नैरयिक जीव किस प्रकार के द्रव्यों को अन्दर
बाहर के श्वासरूप में लेते हैं अर्थात् ग्रहण करते हैं ? और किस प्रकार
के द्रव्यों को अन्दर बाहर के निःश्वास में छोड़ते हैं । (तं चेव जाव
नियमा छदिसिं आणमंति वा पाणमंति वा, उस्ससंति वा नीससंति वा)

લે છે (ઉસ્સસંતિ વા નીસસંતિ વા) અને એવાજ દ્રવ્યોને બાહ્યાભ્યન્તર નિશ્વાસ
રૂપે છોડે છે (જાઈં ભાવઓ વણ્ણમંતાઈં આણમંતિ વા પાણમંતિ વા ઉસ્સસંતિ વા
નીસસંતિ વા) હે ભગવન્ ! તે જીવો ભાવની અપેક્ષાએ જે વર્ણવાળા દ્રવ્યોને
બાહ્યાભ્યન્તર શ્વાસ રૂપે લે છે તથા બાહ્યાભ્યન્તર નિશ્વાસ રૂપે છોડે છે,
(તાઈં કિં એગવણ્ણાઈં આણમંતિ વા પાણમંતિ વા, ઉસસંતિ વા નીસસંતિ વા
તે દ્રવ્યો શુ એક વર્ણવાળા હોય છે । (આહારગમો પેયવ્વો જાવ તિ ચઉ
પંચદિસિં) હે ગૌતમ ! અહીં આહારગમ અહણ કરવો જોઈએ અને જીવો
ત્રણુ' ચાર અને પાંચ દિશાઓમાંથી શ્વાસ અને નિશ્વાસના પુદ્ગલોને અહણ
કરે છે ત્યાં સુધીના પાઠ અહણ કરવો જોઈએ, (કિં ણં મંતે ! નેરહયા આણમંતિ
વા પાણમંતિ વા ઉસ્સસંતિ વા નીસસંતિ વા) હે ભગવન્ ! નારક જીવો કુદ
જાના દ્રવ્યોને બાહ્યાભ્યન્તર શ્વાસ રૂપે લે છે અને કયા પ્રકારના દ્રવ્યોને
બાહ્યાભ્યન્તર નિશ્વાસ રૂપે છોડે છે । (તં ચેવ જાવ નિયમા છદિસિં આણમંતિ

‘ગંધમતાઈ’ ગંધવન્તિ, સુરમ્યાદિગંધયુક્તાનિ, ‘રસમતાઈ’ રસવન્તિ, તિક્ત્વાદિ રસયુક્તાનિ ‘ફાસમતાઈ’ સ્પર્શવન્તિ, કર્કશકઠોરાદિસ્પર્શયુક્તાનિ દ્રવ્યાણિ, ‘આનમતિ ધા પાણમતિ વા ઇસ્સસતિ વા નીસસતિ’ આનન્તિ વા પ્રાણન્તિ વા ઉચ્છ્વસન્તિ વા નિઃશ્વસન્તિ વા, પ્રશ્નયતિ ‘જાઈ’ इत्यादि । ‘જાઈ માવઝો વળ્ણમંતાઈ’ યાનિ દ્રવ્યાણિ માવઝો વર્ણવન્તિ=વર્ણયુક્તાનિ ‘આણમંતિ વા પાણ મંતિ વા ઇસ્સસતિ નીસસતિ વા’ આનન્તિ વા પ્રાણન્તિ વા ઉચ્છ્વસન્તિ વા નિઃશ્વસન્તિ વા, ‘તાઈ કિં ઇગવળ્ણાઈ’ તાનિ કિમ્ એકવર્ણાનિ-એકવર્ણયુક્તાનિ ‘આણમતિ ધા પાણમંતિ વા ઇસ્સસતિ વા નીસસતિ વા’ આનન્તિ વા પ્રાણન્તિ વા ઉચ્છ્વસન્તિ વા નિઃશ્વસન્તિ વા, યાનિ માવઝો વર્ણયુક્તાનિ દ્રવ્યાણિ પૃથિવ્યા

આદિ વર્ણ યુક્ત, (ગંધમંતાઈ) સુરમિ આદિ ગંધયુક્ત, (રસમંતાઈ) તિક્ત આદિ રસ યુક્ત, (ફાસમતાઈ) કર્કશ કઠોર આદિ સ્પર્શ યુક્ત દ્રવ્યોં કો (આણમતિ ધા, પાણમંતિ વા, ઇસ્સસતિ વા, નિસ્સસંતિ વા) આશ્વન્તર મેં શ્વાસરૂપ સે ગ્રહણ કરતે હૈં, યાહર મેં શ્વાસરૂપ સે ગ્રહણ કરતે હૈં. મીતર મેં નિઃશ્વાસરૂપ છોડતે હૈં, યાહર મેં નિઃશ્વાસરૂપ સે છોડતે હૈં । (જાઈ માવઝો વળ્ણમંતાઈ) માવઝો અપેક્ષા વર્ણવાલે જિન દ્રવ્યોં કો યે જીવ (આણમતિ ધા, પાણમંતિ ધા, ઇસ્સસતિ વા નીસસતિ વા) મીતર યાહર કે શ્વાસરૂપ મેં ગ્રહણ કરતે હૈં ઓર મીતર યાહર મેં નિઃશ્વાસરૂપ મેં છોડતે હૈં (તાઈ કિં ઇગવળ્ણાઈ આણમતિ ધા પાણમંતિ ધા ઇસ્સસતિ ધા નીસસતિ ધા) તો યે દ્રવ્ય એક વર્ણવાલે મીતર યાહર કે શ્વાસરૂપ મેં ગ્રહણ કિયે જાતે હૈં, મીતર યાહર કે નિઃશ્વાસરૂપ મેં છોડે જાતે હૈં કયો ? યહ પ્રશ્ન હૈં ઓર હસ કા આશય યહ હૈં કિં યે પૃથિવ્યાદિક એકેન્દ્રિય જીવ માવઝો અપેક્ષા વર્ણયુક્ત જિન

“વળ્ણમંતાઈ” કૃષ્ણાદિ વળ્ણવાળા, “ગંધમતાઈ” સુરમિ વગેરે ગંધવાળા, “રસમતાઈ” તિક્ત (તીખા) વગેરે રસવાળા, “ફાસમતાઈ” કઠોર વગેરે સ્પર્શવાળા દ્રવ્યોને ‘આણમતિ ધા પાણમતિ ધા ઇસ્સસતિ વા, નીસસતિ વા’ આશ્વન્તર શ્વાસરૂપે સે છે બહાર શ્વાસરૂપે સે છે અને નિઃશ્વાસરૂપે છોડે છે, બહાર નિઃશ્વાસરૂપે છોડે છે, તે બમવન ‘જાઈ માવઝો વળ્ણમતાઈ’ આવની અપેક્ષાએ વળ્ણવાળાં એ દ્રવ્યોને તે છોડે. ‘આણમંતિ ધા પાણમંતિ ધા ઇસ્સસતિ વા’ નીશ્વસતિ વા બહારાશ્વન્તર શ્વાસરૂપે ગ્રહણ કરે છે અને આશ્વન્તર નિઃશ્વાસરૂપે છોડે છે. ‘તાઈ કિં ઇગવળ્ણાઈ આણમતિ ધા, પાણમતિ ધા ઇસ્સસતિ વા નીસસતિ વા’ તે દ્રવ્યો હા. એક વળ્ણવાળા દ્રવ્ય છે ? તાત્પર્ય એ છે કે પૃથ્વીગ્રાહ વગેરે એકેન્દ્રિય છોડે. આવની અપે

પૃથિવ્યાદ્યારભ્ય વનસ્પતિપર્યન્તાઃ, 'આણમંતિ વા પાણમંતિ વા ઉસ્સસંતિ વા નિસ્સ-
સંતિ વા' આનન્તિ વા પ્રાણન્તિ વા ઉચ્છ્વસંતિ વા નિઃશ્વસંતિ વા, એ તે એકેન્દ્રિય-
જીવા આનપ્રાણાદિતયા કાનિ દ્રવ્યાણિ ગૃહ્ણન્તીતિ ભાવઃ । મગવાનાહ—
'ગોયમા' ઇત્યાદિ । 'ગોયમા' હે ગૌતમ ! 'દઘ્વઓ ણં અણંતપણસિયાઈં
દઘ્વાઈં' દ્રવ્યતઃ સ્વલુ અનંતપ્રદેશિકાનિ દ્રવ્યાણિ આનન્તિ વા પ્રાણન્તિ વા ઇત્ય-
પ્રેતનેન સમ્બન્ધઃ । 'સ્વેત્તઓ અસસ્વેજ્જપણસોગાઢાઈં' ક્ષેત્રતોઽસંખ્યાતપ્રદેશાવ-
ગાઢાનિ દ્રવ્યાણીતિ ભાવઃ । અત્ર પ્રદેશશબ્દેન આકાશપ્રદેશા ગૃહ્ણન્તે । 'કાલઓ
અન્નચરઠિઙ્ગાઈં' કાલતોઽન્યતરસ્થિતિકાનિ, એકદ્રવ્યાદિસમયસ્થિતિકેષ્વન્યતર-
સ્થિતિકાનિ, 'ભાવઓ વણ્ણમંતાઈં' ભાવતો વર્ણવન્તિ, કૃષ્ણાદિવર્ણયુક્તાનિ,

જીવ (આણમંતિ વા, પાણમંતિ વા, ઉસ્સસંતિ, વા નિસ્સસંતિ વા) મીતર
યાહર કે શ્વાસ મેં ઓર નિઃશ્વાસ મેં ગ્રહણ કરતે હેં । તાત્પર્ય હસ પ્રશ્ન
કા યહ હૈ કિ યે એકેન્દ્રિય જીવ આન પ્રાણ આદિ-શ્વાસોચ્છ્વાસ આદિ
રૂપ સે કિસ પ્રકાર કે દ્રવ્યોં કો ગ્રહણ કરતે હેં ? હસકા ઉત્તર દેતે હુણ
પ્રમુ ગૌતમ સે કહતે હેં કિ-(ગોયમા) હે ગૌતમ ! (દઘ્વાઓ ણં અણંત-
પણસિયાઈં દઘ્વાઈં) વે એકેન્દ્રિય જીવ દ્રવ્ય કી અપેક્ષા સે અનંત પ્રદે-
શવાળે દ્રવ્યોં કો શ્વાસોચ્છ્વાસરૂપ સે ગ્રહણ કરતે હેં, (સ્વેત્તઓ)
ક્ષેત્ર કા અપેક્ષા સે (અસસ્વેજ્જપણસોગાઢાઈં) આકાશ કે અસંખ્યેય પ્રદેશ
મેં રહે હુણ દ્રવ્યોં કો ગ્રહણ કરતે હેં । યહાં પ્રદેશ શબ્દ સે આકાશ કે
પ્રદેશ લિયે ગયે હેં । (કાલઓ) કાલ કી અપેક્ષા સે (અન્નચરઠિઙ્ગાઈં)
એક દો ઓદિ સમય રૂપ સ્થિતિ મેં સે કિસી એક સ્થિતિ વાળે દ્રવ્યોં કો
ગ્રહણ કરતે હેં । (ભાવઓ) ભાવ કી અપેક્ષા સે (વણ્ણમંતાઈં) કૃષ્ણ

વીકાયથી લઈને વનસ્પતિ સુધીના એકેન્દ્રિય જીવો “આણમંતિ વા પાણમંતિ
વા, ઉસ્સસંતિ વા, નિસ્સસંતિ વા” બાહ્યાભ્યન્તર શ્વાસમા ગ્રહણ કરે છે અને
છોડે છે । પ્રશ્નનો ભાવાર્થ એ છે કે એકેન્દ્રિય જીવો શ્વાસોચ્છ્વાસમા કઈ
જાતના દ્રવ્યોને ગ્રહણ કરે છે ! ભગવાન મહાવીર સ્વામી તેનો આ પ્રમાણે
ઉત્તર આપે છે “ગોયમા ।” હે ગૌતમ ! “દઘ્વઓણં અણંતપણસિયાઈં દઘ્વાઈં”
એકેન્દ્રિય જીવો દ્રવ્યની અપેક્ષાએ અનંત પ્રદેશવાળા દ્રવ્યોને શ્વાસોચ્છ્વાસ
રૂપે ગ્રહણ કરે છે, “સ્વેત્તઓ” ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ “અસસ્વેજ્જપણસોગાઢાઈં”
આકાશના અસંખ્યાત પ્રદેશોમા રહેલા દ્રવ્યને ગ્રહણ કરે છે આહીં ‘પ્રદેશ’
શબ્દ વડે આકાશના પ્રદેશો ગ્રહણ કરાયા છે “કાલઓ” કાળની અપેક્ષાએ
'અન્નચરઠિઙ્ગાઈં’ એક, બે વગેરે સમયરૂપ સ્થિતિવાળા દ્રવ્યોમાંથી કેાઈ
પણ એક સ્થિતિવાળા દ્રવ્યોને ગ્રહણ કરે છે “ભાવઓ” ભાવની અપેક્ષાએ

વશ્મમો કાલાઈ તાહ કિં એકગુણકાલાઈ જાવ અનંતગુણકાલાઈપિ ' ઇત્યાદિ, એક-
 વર્ણાનિ દ્વિવર્ણાનિ ત્રિવર્ણાનિ યાવત્પચ્ચવર્ણાન્યપિ, યાનિ વર્ણતઃ કાલાનિ તાનિ
 કિમેકગુણકાલાનિ યાવદનંતગુણકાલાન્યપિ, એકવર્ણાનિ દ્વિવર્ણાનિ ત્રિવર્ણાનિ
 યાવત્ પંચવર્ણાન્યપિ દ્રવ્યાણિ આનમાણતયા મૃદ્ધન્તીત્યર્થઃ, યાનિ દ્રવ્યાણિ વર્ણતઃ
 કાલાનિ તાનિ કિમેકગુણકાલાનિ યાવદનંતગુણકાલાન્યપિ, એકગુણકાલાનીત્યા
 રમ્યાનન્તગુણકાલાનિ દ્રવ્યાણિ આનમાણતયા મૃદ્ધન્તીત્યર્થઃ એવ ગન્ધરસાદિષ્વપિ
 જ્ઞાતવ્યમ્ । દૃષ્ટિષ્યાદિજીવાનામાનપ્રાણાદિ મયતીત્યવગમ્ય નારકવિષયે મમ
 પતિ- તે ' ઇત્યાદિ, ' કિં ણં મંતે ' કાનિ સત્તુ દ્રવ્યાણિ મદન્ત । ' ણેર
 ઇયા આણમતિ વા, પાણમતિ વા ઉસ્સસતિ વા નીસસંતિ વા ' આનન્તિ વા પ્રાજ

દુવશ્માઈ, તિવશ્માઈ જાવ પચ્ચવશ્માઈ પિ, જાઈ વશ્મમો કાલાઈ તાહ કિં એક
 ગુણકાલાઈ જાવ અનંતગુણકાલાઈ પિ) ઇત્યાદિ, અર્થાત્ ભાવ કી
 અપેક્ષા સે જિસ દ્રવ્યોં કો પે જીવ સ્વાસોષ્ણવાસરૂપ સે ગ્રહણ કરતે
 હૈં વે એક હી વર્ણવાલે નહીં હોતે હૈં, કિન્તુ એક વર્ણ વાલે મી હોતે હૈં,
 દો વર્ણ વાલે મી હોતે હૈં, ત્રીન વર્ણ વાલે મી હોતે હૈં, ચાર વર્ણ વાલે
 મી હોતે હૈં ઓર પાંચ વર્ણ વાલે મી હોતે હૈં । તથા જો દ્રવ્ય વર્ણ સે
 કાલે ઉન જીવોં દ્વારા સ્વાસોષ્ણવાસ કે રૂપ મેં ગ્રહણ કિયે જાતે હૈં વે
 દ્રવ્ય એક ગુણ કાલે મી હોતે હૈં, દો ગુણ કાલે મી હોતે હૈં, ત્રીન ગુણ
 કાલે મી હોતે હૈં યાવત્ અનંતગુણ કાલે મી હોતે હૈં । ઇસી તરહ સે ગંધ
 રસ આદિ મેં મી જાનના ચાહિયે । ઇમ તરહ કે કથન સે દૃષ્ટિષ્યાદિ
 જીવોં મેં આન પ્રાણાદિ હોતે હૈં એસા જાનકર અથ નારક કે ત્રિવિધ મેં
 જોતમ સ્વામી પ્રમુ સે પ્રશ્ન કરતે હૈં કિ (કિં ણ મંતે ! ણેર ઇયા આણ-

વશ્મમો કાલાઈ તાહ કિં એકગુણકાલાઈ જાવ અનંતગુણકાલાઈ પિ "

આવળી અપેક્ષાએ તે એવો જે દ્રવ્યોને આસોષ્ણવાસ રૂપે ગ્રહણ કરે છે
 તે દ્રવ્યો એક જે વસ્તુવાળાં કોટાં નથી, પણ એક વસ્તુવાળા પણ હોય છે,
 બે વસ્તુવાળા પણ હોય છે ત્રણ વસ્તુવાળાં પણ હોય છે, ચાર વસ્તુવાળાં પણ
 હોય છે અને પાંચ વસ્તુવાળાં પણ હોય છે તથા જે કાળા વસ્તુના દ્રવ્યો તે
 એવો વડે આસોષ્ણવાસ રૂપે ગ્રહણ કરાય છે તે દ્રવ્યો એક ગણા, બે ગણા
 ત્રણ ગણા અને અનંતગણા (પર્યાંત) કાળાં પણ હોય છે એજ પ્રમાણે
 બધે, રસ વગેરેના વિષયમાં પણ સમજવું આ રીતે પુશ્ચીકાય વગેરે એવામાં
 આસોષ્ણવાસના વિષયમાં બધી લઈને હવે નારક એવાના આસોષ્ણવાસના
 વિષયમાં જોતમ સ્વામી મહાવીર પ્રમુને પૂછે છે- ' કિં ણં મંતે ! ણેર ઇયા
 આણમતિ વા પાણમતિ વા, ઉસ્સસતિ વા નીસસતિ વા ' હે અજવન

દિભિરાનપ્રાણાદિતયા ઉપાદીયન્તે તાનિ દ્રવ્યાણિ કિમ્ એકવર્ણયુક્તાનિ દ્વયાદિ-
પચ્ચવર્ણયુક્તાનિ વેતિ પ્રશ્નાશયઃ । મગવાનાહ--‘ આહારગમો ’ इत्यादि,
‘ આહારગમો ણેયવ્વો જાવ તિચ્ચ પંચદિસિ ’ આહારગમો જ્ઞાતવ્યો યાવત્ ત્રિચત્તુઃ
પંચદિશમિતિ, ષટ્સુ દિષ્ઠુ ત્રિચત્તુઃપંચદિગવસ્થિતદ્રવ્યાણિ આનપ્રાણતયા ગૃહ-
ન્તીતિ, આહારગમ इति પ્રજ્ઞાપનાસૂત્રસ્યાષ્ટવિંશતિતમાહારપદોક્તો ગમઃ=આલાપક
इहाध्येतव्यः । વિશેષશ્રાત્રાયમ્-તત્રાહારવિષયકો ગમઃ, અત્ર તુ આનપ્રાણાદિગમો
વાચ્યઃ, સ ચેત્થમ્-‘ એગવન્નાઈ, દુવન્નાઈ, તિવન્નાઈ-જાવ પંચવન્નાઈ પિ જાઈ

દ્રવ્યોં કો શ્વાસોચ્છ્વાસરૂપ સે ગ્રહણ કરતે હેં ઓર છોડતે હેં તો કયા
યે દ્રવ્ય એક હી વર્ણયુક્ત હોતે હેં ? અથવા દો ત્રીન આદિ પાંચ વર્ણયુક્ત
હોતે હેં ? પ્રશ્નુ હસકા ઉત્તર દેતે હુએ ગૌતમ સે કહતે હેં કિ (આહાર
ગમો ણેયવ્વો જાવ તિ ચ્ચ પંચદિસિ) હે ગૌતમ ! યહાં આહારગમ
જાનના ચાહિયે ઓર વહ ત્રીન, ચાર, પાંચ દિશાતક કે દ્રવ્યોં કે ગ્રહણ
કરને કા જાનના ચાહિયે, અર્થાત્ છહ દિશાઓં મેં સે ત્રીન, ચાર,, પાંચ
દિશાઓં મેં અવસ્થિત દ્રવ્યોં કો યે જીવ શ્વાસોચ્છ્વાસરૂપ સે ગ્રહણ
કરતે હેં । ઓર છોડતે હેં હસ ઉત્તર સૂત્ર કા તાત્પર્ય યહ હેં કિ આહાર
પ્રજ્ઞાપના સૂત્ર કે ૨૮ અઢાઈસવેં આહાર પદ મેં કહા હુઆ આલાપક હે
વહ યહાં કહના ચાહિયે । પરન્તુ ઉસમેં ઓર હસમેં ભેદ હતના હી હે
કિ વર્હા આહાર કે સંબંધ કો લેકર સૂત્ર કહે ગયે હેં ઓર યહાં વે હી
સૂત્ર શ્વાસોચ્છ્વાસ કે સંબંધ કો લેકર કહે જાવેંગે જૈસે-(એગવન્નાઈ,

શ્વાસે વર્ણયુક્ત ને દ્રવ્યોને શ્વાસોચ્છ્વાસમાં ગ્રહણ કરે છે અને છોડે છે તે
દ્રવ્યો શુ એક જ વર્ણવાળા હોય છે અથવા બે, ત્રણ, પાચ વગેરે વર્ણવાળા
હોય છે ? તે પ્રશ્નનો મહાવીર પ્રશ્ન આ પ્રમાણે જવાબ આપે છે “ આહારગમો
ણેયવ્વો જાવ તિ ચ્ચ પંચદિસિં હે ગૌતમ ! અહીં આહારગમના વિષયમાં કહેલો
આલાપક ગ્રહણ કરવો નેધએ અને ત્રણ, ચાર, અને પાંચ દિશાના દ્રવ્યોને
તેઓ ગ્રહણ કરે છે એમ સમજવું એટલે કે છ દિશાઓમાંની ત્રણ, ચાર
કે પાચ દિશાઓમાં રહેલા દ્રવ્યોને તે છવે શ્વાસોચ્છ્વાસ રૂપે ગ્રહણ કરે છે,
અને છોડે છે. આ ઉત્તરસૂત્રનું એવું તાત્પર્ય છે કે પ્રજ્ઞાપના સૂત્રના ૨૮મો
આહાર પદમાં કહેલો આહારગમ નામનો ને આલાપક છે તે અહીં કહેવો
નેધએ. પણ તે આલાપક અને આ આલાપકમાં એટલો જ તફાવત છે કે
ત્યાં આહાર વિષે ને સૂત્રો કહેલા છે એજ સૂત્રો અહીં શ્વાસોચ્છ્વાસ વિષે
કહેવા નેધએ નેમ કે “ એગવન્નાઈ, દુવન્નાઈ તિવન્નાઈ, જાવ પંચવન્નાઈ પિ, જાઈ

નારકાદિપ્રસન્નીયાઃ પદ્ધિષ્માનન્તિ, સેષાં હિ પ્રસનારૂપન્તર્મૂલત્વાત્ પદ્ધિષ્મા-
નમાણાદિપુદ્ગલગ્રહો મથત્યેવેતિ માથઃ ॥ સૂ. ૨ ॥

વાયુજીવમકરણમ્—

પૂર્વમેકેન્દ્રિયાદિજીરાનામાનમાણાદિકં ધર્મિતમ્, સેષાં વાયુરૂપત્વાત્ કિં
વાયુકાયિકજીવાનામપિ વાયુરેવાનમાણાદિત્વેન મન્તિતમ્? અથવા પૃથિવીકા
યાદીનામિદં સદ્વિષ્નોઽન્યઃ કથિત્ પદાર્થ ? इति प्रभयमाह—‘वाउकाए’ इत्यादि ।

મૂલમ્—વાઉકાણ ણં મતે ! વાઉકાણ ચેવ આણમહ વા પાણમહ
વા ઠસસહ વા નીસસહ વા । હતા ગોયમા ! વાઉકાણ ણં જાવ
નીસસહ વા, વાઉકાણ ણં મતે ! વાઉકાણ ચેવ અણે
ગસયસહસ્સણુત્તો ઉદાહત્તા, ઉદાહત્તા તરયેવ મુજ્જો મુજ્જો
પચાયાહ, સે મતે કિં પુદ્દે ઉદાહ અપુદ્દે ઉદાહ, ગોયમા પુદ્દે
ઉદાહ નો અપુદ્દે ઉદાહ । સે મતે કિં સસરીરી નિક્કલમહ
અસરીરી નિક્કલમહ, ગાયમા ! સિય સસરીરી નિક્કલમહ,
સિય અસરીરી નિક્કલમહ । સે ષેણદ્દેણ મતે ! ઇવ બુદ્ધહ,
સિય સસરીરી નિક્કલમહ, સિય અસરીરી નિક્કલમહ, ગોયમા !
વાઉકાયસ્સ ણં ચત્તારિ સરીરયા પણ્ણત્તા, ત જહા—ઓરા
લિણ વેડ઼઼િવણ તેયણ કમ્મણ । ઓરાલિય ષેડ઼઼િવયાહ

પરમાણુઓં કો ગ્રહણ કરને મેં અલોક દ્વારા બન્હે અવધન પડતી હૈ ।
“ સેસા નિયમા છિરિસિં ” એકેન્દ્રિય જીવોં કો છોડકર નારક આદિ
પ્રસ જીવ છહોં વિશાઓં મેં સે નિયમ સે આસોચ્છવાસ કે યોગ્ય પુદ્ગ
લપરમાણુઓં કો ગ્રહણ કરતે હૈં ક્યોં કિં યે પ્રસ માઢી કે ખીતર રહતે
હૈં હમ કારણ હૈં છહોં વિશાઓં મેં સે આસોચ્છવાસ કે યોગ્ય પુદ્ગલ
પરમાણુ મિલ જાતે હૈં ॥ સૂ. ૨ ॥

‘ સેસા નિયમા છિરિસિં ’ એકેન્દ્રિયજીવો વિશયના નારકી વગેરે પ્રસ લવો
છએ વિશાભાષી આસોચ્છવાસને યોગ્ય પુદ્ગલ પરમાણુઓને શબ્દથી કહે છે
એવો નિયમ છે, કારણ કે પ્રસ લવો. પ્રસ નારીની અદર્શ જ રહે છે તેથી
છએ વિશાઓમાંથી આસોચ્છવાસ યોગ્ય પુદ્ગલ પરમાણુઓ એવવી શકે છેપાશુર્ય

પદિ વ્યાધાતો ન ભવેત્તદા નિયમતઃ પૃથ્વીગવસ્થિતપુદ્ગલાન્ આનપ્રાણાદિતયા ગૃહ્ણન્તિ । વ્યાધાતં પ્રતીત્ય તુ કદાચિત્ ત્રિદશમ્, દિક્ત્રયેષુ વ્યાધાતે સતિ અવશિષ્ટદિક્ત્રયે સ્થિતાન્ પુદ્ગલાન્ આનપ્રાણાદિતયા ગૃહ્ણન્તિ । એવં યત્ર યત્ર વ્યાધાતો ભવેત્તં તં પરિત્યજ્યાવશિષ્ટસ્થાને સ્થિતાન્ પુદ્ગલાન્ આનપ્રાણાદિતયા ગૃહ્ણન્તિ । એવમધ્યાધિકાદિવનસ્પતિપર્યન્તેષુ વૉધ્યમ્, તત્ર નિર્વ્યાધાતેન પૃથ્વી-
દિશમ્, વ્યાધાતં પ્રતીત્ય સ્યાત્ ત્રિદિશમ્ સ્યાચ્ચતુર્દિશમ્ સ્યાત્ પંચદિશમાનન્તિ ४
તેષાં લોકાન્તવૃત્તૌ અલોકેન વ્યાદિદિશ્વ ઉચ્છ્વાસાદિપુદ્ગલાનાં વ્યાધાતસંભવા-
દિતિ । 'સેસા નિયમા છદિર્સિ' શેષા નિયમાત્ પૃથ્વીદિશમ્, શેષાઃ એકેન્દ્રિયવર્જાઃ

સે છહ દિશાઓં મેં સે શ્વાસોચ્છ્વાસ કે યોગ્ય પુદ્ગલપરમાણુઓં કો ગ્રહણ કરતે હેં ઓર યદિ વ્યાધાત હો તો ત્રીન દિશાઓં મેં વ્યાધાત હોતે, પર વે કદાચિત્ અવશિષ્ટ ત્રીન દિશાઓં મેં સે, શ્વાસોચ્છ્વાસ કે યોગ્ય પુદ્ગલપરમાણુઓં કો ગ્રહણ કરતે હેં । છહ દિશાઓં મેં સે નહીં ।
ઇસ્ તરહ જિસ ૨ દિશા રૂપ સ્થાન મેં વ્યાધાત હોગો ડસ ડસ દિશા રૂપ સ્થાન કો છોડકર અવશિષ્ટ સ્થાન મેં સ્થિત પુદ્ગલોં કો શ્વાસોચ્છ્વાસરૂપ સે ગ્રહણ કરતે હેં । ઇસી પ્રકાર સે અપ્રકાય સે લેકર વનસ્પતિકાય તક કે એકેન્દ્રિય જીવોં મેં ભી જાનના ચાહિયે । યદિ ઇનમેં વ્યાધાત નહીં હૈ તો વે છહ દિશાઓં મેં સે ઓર જો વ્યાધાત હૈ તો કદાચિત્ ત્રીન દિશાઓં મેં સે, કદાચિત્ ચાર દિશાઓં મેં સે, કદાચિત્ પાંચ દિશાઓં મેં સે વે શ્વાસોચ્છ્વાસ કે યોગ્ય પુદ્ગલ પરમાણુઓં કો ગ્રહણ કરતે હેં । ક્યોં કિ વે પૃથિવીકાયિક આદિ જીવ લોક કે અન્ત મેં ભી રહતે હેં, ઇસલિયે ત્રીન આદિ દિશાઓં મેં સે શ્વાસોચ્છ્વાસ કે પુદ્ગલ-

ન હોય તો નિયતથી જ છએ દિશાઓમાંથી તેઓ શ્વાસો ઉછ્વાસને યોગ્ય પુદ્ગલોને ગ્રહણ કરે છે, પણ જો અકોઈક વ્યાધાત નડતો હોય તો જે જે દિશાઓમાં વ્યાધાત નડતો હોય તો તે દિશાઓ સિવાયની બાકીની દિશાઓમાંથી શ્વાસોચ્છ્વાસને યોગ્ય પુદ્ગલો ગ્રહણ કરે છે આ રીતે ક્યારેક ત્રણ દિશામાંથી, ક્યારેક ચાર દિશામાંથી અને ક્યારેક પાંચ દિશામાંથી શ્વાસોચ્છ્વાસને યોગ્ય પુદ્ગલો ગ્રહણ કરે છે, આ પ્રમાણે જ અપ્રકાયથી સઘ વનસ્પતિ કાય સુધીના એકેન્દ્રિય જીવોના વિષયમાં પણ સમજવું જોઈએ વ્યાધાત નડતો ન હોય તો છએ દિશાઓમાંથી અને જો વ્યાધાત નડતો હોયતો ક્યારેક ત્રણ દિશામાંથી, ક્યારેક ચાર દિશામાંથી અને ક્યારેક પાંચ દિશામાંથી તેઓ શ્વાસોચ્છ્વાસને યોગ્ય પુદ્ગલ પરમાણુઓને ગ્રહણ કરે છે તે પૃથિકાય વગેરેના જીવો લોકના અન્તમાં પણ રહે છે, તેથી ત્રણ વગેરે દિશાઓમાંથી શ્વાસોચ્છ્વાસને યોગ્ય પુદ્ગલ પરમાણુઓને ગ્રહણ કરવામાં તેમને અડચણ પડે છે.

મત્યાયાતિ ? । હંત ગૌતમ ! યાવત્ પ્રત્યાયાતિ, સ મદન્ત ! કિં સ્પૃષ્ટઃ અપદ્રવતિ
 અસ્પૃષ્ટઃ અપદ્રવતિ, ગૌતમ ! સ્પૃષ્ટ અપદ્રવતિ નો અસ્પૃષ્ઠ અપદ્રવતિ । સ મદન્ત !
 કિં સશરીરી નિષ્ક્રામતિ અશરીરી નિષ્ક્રામતિ, ગૌતમ ! સ્યાત્ સશરીરી નિષ્ક્રા-
 મતિ સ્યાત્ અશરીરી નિષ્ક્રામતિ । તત્કેનાર્થેન મદન્ત ! एषमुच्यते स्यात्सशरीरी

इस्ता) मर मर कर के पीछे क्या (सत्येव) यहीं पर (भुज्जो भुज्जो)
 बार २ (पञ्चापाह) उत्पन्न होता है ? (ईना गोयमा) हाँ, गौतम ! (जब
 पञ्चापाह) वायुकायिक जीव अनेक लाखों बार मर मर कर फिर वहीं
 पर उत्पन्न होता है । (से भन्ते ! किं पुट्टे उद्दाह) हे भदन्त ! क्या वह
 वायुकायिक जीव स्वकायशस्त्र परकायशस्त्र और उमकाय शस्त्र का
 आघात पहुँचने पर मरता है कि (अपुट्टे उद्दाह) बिना आघात के मरता
 है ? (गोयमा) हे गौतम ! (पुट्टे उद्दाह नो अपुट्टे उद्दाह) वह स्वकायादि
 शस्त्र का आघात पहुँचने पर मरता है, बिना आघात के नहीं मरता
 है । (से भन्ते ! किं ससरीरी निक्खमइ असरीरी निक्खमइ) हे भद-
 न्त ! वह वायुकायिक जीव जब मर मर कर दूसरी गति में जाता है तो
 क्या शरीर सहित जाता है कि शरीर रहित होकर जाता है ? (गोयमा)
 हे गौतम ! (सिय ससरीरी निक्खमइ सिय असरीरी निक्खमइ) वह
 शरीर सहित भी जाता है और शरीर रहित होकर भी जाता है । (से
 केणट्ठेणं भन्ते ! एवं सुवइ सिय ससरीरी निक्खमइ सिय असरीरी निक्ख-

એવે હજારે વખત વાયુકાયિકામાંથી મરીને વાયુકાયેની પર્યાવમાં જ શુ-
 દ્ધીથી વાર વાર ઉત્પન્ન થાય છે । (હતા ! ગોયમા !) હા, ગૌતમ ! (જાબ
 પચ્ચાપાહ) વાયુકાયિક એવે હજારેવખત મરીને શરીથી વાયુકાયેની પર્યાવમાં
 જ ઉત્પન્ન થાય છે (સે મતે ! કિં પુટ્ટે ઉદ્દાહ અપુટ્ટે ઉદ્દાહ ?) હે ભગવન્ ! તે
 વાયુકાયિક એવે સ્વકાય શસ્ત્ર, પરકાય શસ્ત્ર અને ઉભયકાય શસ્ત્રને આઘાત
 પહોંચવાથી મરે છે કે વિના આઘાતે મરે છે (ગોયમા ! પુટ્ટે ઉદ્દાહ નો અપુટ્ટે
 ઉદ્દાહ) તે સ્વકાય વગેરે શસ્ત્રોને આઘાત પહોંચવાથી મરે છે, આઘાત પહોંચ્યા
 વિના મરતા નથી (સે મતે ! કિં સસરીરી નિક્કમમ્મ અસસરીરી નિક્કમમ્મ) હે
 ભગવન્ ! વાયુકાયિક એવે બધાં મરીને અન્ય ગતિમાં જાય છે ત્યારે શરીર સહિત
 જાય છે કે શરીર રહિત જાય છે । (ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (સિય સસરીરી નિ-
 ક્કમમ્મ સિય અસરીરી નિક્કમમ્મ) તે શરીર સહિત પણ જાય છે અને શરીર
 રહિત પણ જાય છે (સ કેણટ્ઠેણં મતે ! એવં સુવવ્વ સિય સસરીરી નિક્કમમ્મ

વિપ્પજહાય તેય કરમણ્હિં નિવ્વમહ, સે તેણટ્ટેણં ગોયમા !
 एवं વુચ્ચહ, સિય સસરીરી નિવ્વમહ સિય અસરીરી
 નિવ્વમહ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

છાયા—વાયુકાયો ભદન્ત ! વાયુકાયાનેવ આનતિ વા પ્રાણતિ વા ઉચ્છ્વ-
 સતિ વા નિશ્વસતિ વા, હન્ત ગૌતમ ! વાયુકાયો યોવન્ નિશ્વસતિ વા । વાયુકાયઃ
 ચલુ ભદન્ત ! વાયુકાયે એવાનેકગતસહસ્રકૃત્વોપદ્રુત્યાપદ્રુત્ય તૈવ ભૂયો ભૂયઃ

વાયુ જીવ પ્રકરણ—

પહિલે એકેન્દ્રિય જીવોં કે આનપ્રાણ આદિ કા વર્ણન ક્રિયા ગયા
 હૈ । એકેન્દ્રિય જીવોં કે વાયુકાયિક જીવ ભો હૈં તો કયા ઇન જીવો કા
 વાયુ હી આનપ્રાણાદિરૂપ હૈ યા પૃથિવીકાયિક આદિ જીવોં કી તરહ
 કોઈ દૂસરા હી પદાર્થ ઇનકા આનપ્રાણાદિરૂપ હૈ ? ઇસ પ્રકાર કા પ્રશ્ન
 કરતે હુએ ગૌતમસ્વામી પ્રશ્ન સે પૂછતે હૈં કિ—‘વાડકાણ ણં મંતે ! ૩૦

સૂત્રાર્થ—(વાડકાણ ણં મંતે !) હૈ ભદન્ત ! વાયુકાયિક જીવ
 (વાયુકાણ ચેવ) વાયુકાયોં કો હી (આણમહ વા પાણમહ વા ઝસસહ
 વા નીસસહ વા) કયા શ્વાસોચ્છ્વાસરૂપ મેં ગ્રહણ કરતે હૈં ? (હંતા
 ગોયમા !) હાં ગૌતમ ! (વાડકાણં જાવ નીસસહ વા) વાયુકાયિક
 જીવ વાયુકાયોં કો હી શ્વાસોચ્છ્વાસરૂપ મેં ગ્રહણ કરતે હૈં । (વાડકા-
 ણં મંતે !) હૈ ભદન્ત ! વાયુકાયિક જીવ (વાડકાણ ચેવ) વાયુકા-
 યિક મેં (અણેગસયસહસ્સ ચુત્તો) અનેક લાચાર (ઉદાહત્તા ઉદા-

આગળના પ્રકરણમા એકેન્દ્રિય જીવોના શ્વાસોચ્છ્વાસનુ વર્ણન કરવામાં
 આગળ વાયુકાય જીવોની ગણતરી પણ એકેન્દ્રિય જીવોમા જ થાય છે તો તે
 જીવોના વાયુ જ શું શ્વાસ નિશ્વાસ રૂપ હોય છે કે પૃથિવીકાય વગેરે
 જીવોની જેમ કોઈ અન્ય પદાર્થ તેમના શ્વાસ નિશ્વાસમા ગ્રહણ થાય છે ?
 તે જાણવા માટે ગૌતમસ્વામી મહાવીર પ્રશ્નને પૂછે છે કે

‘વાડકાણ ણ મંતે !’ ઇત્યાદિ ।

સૂત્રાર્થ—(વાડકાણ ણ મંતે ! વાયુકાણ ચેવ આણમહ વા પાણમહ વા,
 ઝસસહ વા નીસસહ વા ?) હે ભગવન્ વાયુકાયના જીવો શું વાયુકાયોને
 જ શ્વાસોચ્છ્વાસ રૂપે ગ્રહણ કરે છે ? (હંતા ગોયમા !) હા, ગૌતમ ?
 (વાડકાણ જાવ નીસસહ વા) વાયુકાયિક જીવો વાયુકાયોને જ શ્વાસો-
 ચ્છ્વાસ રૂપે ગ્રહણ કરે છે (વાડકાણ ણ મંતે ! વાડકાણ ચેવ અણેગસયસહસ્સ
 ચુત્તો ઉદાહત્તા ઉદાહત્તા મુજો મુજો પચ્ચાયાહ) હે ભગવન્ ? શું વાયુકાયિક

વા ઉચ્છ્વસતિ વા નિશ્વસતિ વા, વાયુકાયિક જીવઃ કિં વાયુકાયિકાનેવ સજાતીયાનેવ શ્વાસાદિક્ષયા ગૃહ્ણન્તિ કિમિત્યર્થ, મગવા 'હત' રૂપાદિ । 'હતા ગોયમા' રૂપ ગૌતમ ! 'વાઉકાપ ણ જાવ નીસસહ વા' વાયુકાયઃ સ્વલ્લ પાવત્ નિશ્વસતિ વા વાયુકાયિકો જીવો વાયુકાયિકાનેવ આન-પ્રાણાદિક્ષયા ગૃહ્ણતીત્યર્થઃ । નનુ આનપ્રાણાદેરપિ વાયુરૂપત્વાત્તસ્યાપ્યન્યેનાનપ્રાણાદિના મવિતુમર્હતિ, તસ્યાન્યેન, પુનરન્યસ્યાપ્યન્યનેત્યેવમનવસ્પાદોપ આપતેત્ ?

વાયુકાયિકોં કો હી કયા શ્વાસાદિરૂપસે ગ્રહણ કરતે હૈં ? यह प्रश्न है । इसका उत्तर देते हुए भगवान् गौतमस्वामी से कहते हैं (हंता गौयमा ।) हां गौतम ! (वाउकाए ण जाव नीससह वा) वાયुकायिक जीव वायु कायों को श्वासोच्छ्वासादि रूप से ग्रहण करते हैं ।

શંકા-જય આનપ્રાણાદિ વાયુરૂપ હોતા હૈ તો હસ વાયુ કો મી અન્યવાયુ કી આવશ્યકતા પહેગી હસ અન્યવાયુ કો મી તોસરે વાયુ કી આવશ્યકતા પહેગી, હસ તરફ સે અનવસ્થા ઘોપ કી પ્રમક્તિ યહાં હોગી । શંકાકર કા અભિપ્રાય એસા હૈ કિ-પૃથિવી આદિક જીવ સ્વયં પૃથિવી આદિરૂપ હોતે હૈં ઓર ઉનકા જો શ્વાસોચ્છ્વાસ હોતા હૈં વહ વાયુરૂપ હોતા હૈં । પરન્તુ વાયુ મેં એસા નહીં હૈં ક્યોં કિ વાયુ સ્વયં વાયુ રૂપ હૈં ઓર હસકા શ્વાસોચ્છ્વાસ મી વાયુરૂપ હી હૈં અતઃ જય વાયુ કાયિક જીવ કો જીને કે લિપે અન્ય વાયુકાય કી આવશ્યકતા હોતી હૈં, તો હસ અન્ય વાયુ કો મી અન્યવાયુકાય કી આવશ્યકતા હોગી । હસ તરફ માનમે પર શ્વાસોચ્છ્વાસરૂપ વાયુકા કહીં પર મી અન્ત નહીં

પોતાના સજાતીય વાયુકાયિકોને જ શ્વાસાદિ રૂપે ગ્રહણ કરે છે । આ પ્રકારના ગૌતમ સ્વામીના પ્રશ્નને મહાવીર પ્રભુ આ પ્રમાણે જવાબ આપે છે “હતા ગોયમા” હા ગૌતમ ! “વાઉકાપ ણ જાવ નીસસહ વા” વાયુકાયિક જીવો સજાતીય વાયુકાયોને જ શ્વાસાદિ રૂપે ગ્રહણ કરે છે

શંકા-જે શ્વાસોચ્છ્વાસ વગેરે વાયુરૂપ હોય છે તે વાયુને પણ બીજા વાયુની આવશ્યકતા પડે, અને બીજા વાયુને પણ કોઈ ત્રીજા વાયુની જરૂર પડે, આ રીતે તો અહીં અનવસ્થા ઘોપનો પ્રસંગ હશે યથે શંકાકારની શંકા એવા પ્રકારની છે કે પૃથિવી વગેરે જીવો પોતા પૃથિવી વગેરે રૂપ હોય છે, અને તેમને જ શ્વાસોચ્છ્વાસ હોય છે તે વાયુ રૂપ હોય છે પણ વાયુકાયિકોમાં એવું નથી વાયુકાયિકો સ્વયં વાયુ રૂપ હોય છે અને તેમને શ્વાસોચ્છ્વાસ પણ વાયુ રૂપ જ હોય છે આ રીતે જે વાયુકાયિક જીવોને જીવવા માટે અન્ય વાયુની જરૂર પડે તો બીજા વાયુકાયોને પણ વાયુની આવશ્યકતા રહેતી દશે.

નિષ્ક્રામતિ સ્યાદશરીરીનિષ્ક્રામતિ ? ગૌતમ ! ! વાયુકાયસ્ય ચત્વારિ શરી-
રાણિ પ્રજ્ઞપ્તાનિ, તથા ઔદારિકં વૈક્રિયં તૈજસં કાર્મણમ્ । ઔદારિકવૈક્રિયેવિપ્ર-
શાય તૈજસકાર્મણાભ્યાં નિષ્ક્રામતિ, તત્ તેનાર્થેન ગૌતમ ! એવમુચ્યતે સ્યાત્ સશ-
રીરી નિષ્ક્રામતિ, સ્યાદશરીરી નિષ્ક્રામતિ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

ટીકા—‘ વાયુકાય ણં મંતે ’ વાયુકાયઃ સ્વલુ ભદન્ત ’ ‘ વાઝકા એવ આણ-
મહ વા પાણમહ વા ઉસ્સસહ વા નીસસહ વા ’ વાયુકાયાનેવ આનતિ વા પ્રાણતિ-

મહ ?) હે ભદન્ત ! યહ કિસ કારણ સે કહા જાતા હૈ કિ વાયુકાયિક
જીવ શરીરસહિત મી જાતા હૈ શરીર રહિત મી જાતા હૈ ? (ગોયમા !)
હે ગૌતમ ! (વાઝકાયસ્સ ણં ચત્તારિ સરીરા પણ્ણત્તા) વાયુકાયિક
જીવ કે ચાર શરીર કહે ગયે હૈ (તં જહા) વે હસ પ્રકાર સે (ઓરા-
લિય, વેઝવિય, તેયય, કમ્મય) ઔદારિક, વૈક્રિય, તૈજસ ઓર કાર્મણ
(ઓરાલિય વેઝવિયાહં વિપ્પજહા ય તેયકમ્મયહિં નિક્કલમહ) ઔદા-
રિક વૈક્રિય હન દો શરીરોં કો છોહકર તથા તૈજસ ઓર કાર્મણ હન
દો શરીરોં કો સાથ લેકર વહ દૂસરી ગતિ મેં જાતા હૈ । (સે તેણદ્દેણં
ગોયમા ! એવં વુચ્ચહ સિય સસરીરી નિક્કલમહ સિય અસરીરી નિક્કલ-
મહ) હસ કારણ હે ગૌતમ ! એસા કહા હૈ કિ શરીર સહિત મી જાતા
હૈ ઓર શરીર રહિત મી જાતા હૈ ।

ટીકાર્થ—(વાયુકાય ણં મંતે !) હે ભદન્ત! વાયુકાયિક જીવ (વાયુકાય
એવ આણમહ વા પાણમહ વા ઉસ્સસહ વા નીસસહ વા) અપને સજાતીય

સિય અસરીરી નિક્કલમહ) હે ભગવન્ ! શા કારણે આપ એવુ કહો છો કે તેઓ
શરીર સહિત પણ જાય છે અને શરીર રહિત થઈને પણ જાય છે । (ગોયમા !)
હે ગૌતમ ! (વાઝકાયસ્સ ણં ચત્તારિ સરીરા પણ્ણત્તા) વાયુકાયિક જીવોનાં ચાર
શરીર કહ્યા છે (તં જહા) તે આ પ્રકારે છે (ઓરાલિય, વેઝવિય, તેયય,
કમ્મય) ઔદારિક, અને વૈક્રિય, તૈજસ અને કાર્મણ, ઓરાલિયવેઝવિ
યાહ વિપ્પજહાય તેયકમ્મયહિં નિક્કલમહ) ઔદારિક વૈક્રિય, એ બે શરીરોને
છોડી તથા તૈજસ અને કાર્મણએ બે શરીરોને સાથે લઈને તે બીજી ગતિમા
જાય છે (સે તેણદ્દે ણ ગોયમા ! એવ વુચ્ચહ સિય સસરીરી નિક્કલમહ સિય અસ-
રીરી નિક્કલમહ) હે ગૌતમ ! તે કારણે એવુ કહેવામા આવ્યું છે કે તેઓ શરીર
સહિત પણ અન્ય ગતિમા જાય છે અને શરીર રહિત પણ જાય છે.

ટીકાર્થ—“ વાયુકાય ણ મંતે ! ” હે ભગવન્ ? વાયુકાયિક જીવો
“ વાયુકાય એવ આણમહ વા પાણમહ વા ઉસ્સસહ વા નીસસહ વા ”

સંસારી નહીં હો, મુક્ત જીવ હો અતઃ યહાં શ્વાસોચ્છ્વાસ કી આવશ્યકતા નહીં હો । સિદ્ધ અવસ્થા કર્મો કે બિલકુલ અમાય હોને સ હી પ્રાપ્ત હોતી હો । નામ કર્મ કા એક મેદ પર્યાસિ નામકર્મ હો । હસકે વદય મેં જીવ પર્યાસક હોતા હો । સિદ્ધોં કે નામ કર્મ કા અમાય હો જાને સે હસ કર્મ કા મી અમાય હો જાતા હો । અતઃ યે પર્યાસિ ઓર અપર્યાસિ દોનો અવસ્થાઓ સે રહિત હો જાતે હો । સિર્ફ હનમેં તો એક શુદ્ધ ચેતના હી રહતી હો । શકા-યદિ સસારી જીવોં કો હી શ્વાસોચ્છ્વાસ કી આવશ્યકતા હોતી હો તો ફિર જો વિગ્રહ ગતિ મેં જીવ રહતે હો હાં હોં તો હસકી આવશ્યકતા નહીં કહી ગઈ હો । યે મી તો સસારી હી જીવ હો । વિગ્રહગતિ મેં રહને ઘાહે જીવોં કે અર્પાત્ અપર્યાસક જીવોં કે વસ પ્રાણોં મેં સે માત પ્રાણ કહે ગયે હો । મનબલ, વચનબલ ઓર શ્વાસોચ્છ્વાસ યે ત્રીન પ્રાણ અપર્યાસાવસ્થા મેં જીવોં કે નહીં હોતે હોં એસા કહા હો તો જિસ પ્રકાર વિગ્રહગતિ સમાપન્ન જીવ શ્વાસોચ્છ્વાસ કે અમાય મેં અજીવ નહીં હોતે ઘસી પ્રકાર વાયુકાયિકાદિ જીવ મી જિનકી શ્વાસોચ્છ્વાસ ક્રિયા દેખને જાનને મેં નહીં આતી હો શ્વાસોચ્છ્વાસ કે અમાય મેં મી જીવ રહેગે હનમેં (વાયુકાય મેં) શ્વાસોચ્છ્વાસ માનને કી બ્યા

સમયે છે સિદ્ધ હોવા સસારી નથી પણ મુક્ત છે વળી શરીરથી રહિત છે તેથી તેમને શ્વાસોચ્છ્વાસની આવશ્યકતા રહેતી નથી. કહેના બિલકુલ અમાય હોય ત્યારે જ સિદ્ધ અવસ્થાની પ્રાપ્તિ થાય છે નામ કર્મનો એક ભેદ પર્્યાસિ નામકર્મ છે તેનો ઉદય થાય ત્યારે જ એ પર્્યાસક કહેવાય છે ક્રિદોને નામ કર્મનો જ અભાવ હોવાથી પર્્યાસિ નામ કર્મનો પણ અભાવ જ હોય છે તેથી તેઓ પર્્યાસિ અને અપર્્યાસિ અવસ્થાઓથી રહિત થઇ જાય છે, તેમનામાં તો એકલી શુદ્ધ ચેતના જ રહે છે યકા-એ સસારી હોવાને જ શ્વાસોચ્છ્વાસની આવશ્યકતા રહેતી હોય તો વિગ્રહગતિમાં રહેલા હોવાને આવશ્યકતા કહી નથી. તેઓ પણ સસારી હોવા જ છે વિગ્રહગતિમાં રહેલા હોવાને એકલે કે અપર્્યાસક હોવામાં હસ પ્રાણોમાંથી સાત પ્રાણોનું અસ્તિત્વ કમ્બુ છે મનબલ, વચનબલ અને શ્વાસોચ્છ્વાસ એ ત્રણે જાણે અપર્્યાસાવસ્થામાં હોવાને હોતા નથી એવું કહેલ છે તો જે રીતે વિગ્રહગતિ સમાપ્ત એવ શ્વાસોચ્છ્વાસને અભાવે અગ્રવ કહેજાતો નથી એજ પ્રમાણે જેમની શ્વાસોચ્છ્વાસની ક્રિયા એવામાં આવતી નથી એવા વાયુકાયિકાદિ હોવાને શ્વાસોચ્છ્વાસના અભાવે પણ હોવા જ કહેવાય છે છતાં પણ તેમનામાં (વાયુકાયોમાં) શ્વાસોચ્છ્વાસનો સૂક્ષ્મ અભાવ માનવાની આવશ્યકતા શી છે?

નૈવં વાચ્યમ્ ! અચેતનત્વાત્તસ્યેતિ । આનપ્રાણાદિગ્રહણં ચ સચેતનાનામેવ ભવતિ નત્ત્વચેતનાનામ્ , આનપ્રાણાદિવાયુસ્ત્વચેતન ઇતિ નાનાવસ્થાદોષઃ । યદ્વા-યોડય-

આવેગા । યદિ કહીં પર હસકા માન મી લિયા જાવેગા તો ફિર એસા હી ક્યોં ન માન લિયા જાવે કિ પ્રથમ વાયુકાયિક જીવોં કો શ્વાસો-ચ્છ્વાસ કો આવશ્યકતા નહીં હોતી હૈ ।

સમાધાન—એસા કહના ઉચિત નહીં હૈ કારણ કિ જો જીવ હોતા હૈ ઉસે હી જીને કે લિયે શ્વાસોચ્છ્વાસ કી આવશ્યકતા હોતી હૈ । અચિત્ત કો નહીં । વાયુકાયિક જીવ હૈ, અતઃ ઉસે હી શ્વાસ નિઃશ્વાસ કી આવશ્યકતા હૈ । શ્વાસોચ્છ્વાસરૂપ વાયુ કો નહીં, ક્યોં કિ વહ અચિત્ત હૈ । ઇસલિયે યહાં અનવસ્થા દોષ કા સંભવ હી નહીં હૈ ।

યહાં પ્રસંગ વશ ફિર કહતે હૈ—જાંકા-જીવ કો હી યદિ શ્વાસો-ચ્છ્વાસકી આવશ્યકતા હોની હૈ તો જો સિદ્ધ જીવ હૈં ઉન્હેં મી ઇસકી આવશ્યકતા હોની ચાહિયે—નહીં તો શ્વાસોચ્છ્વાસ વાયુ કી તરહ ઉન્હેં નિર્જીવ હી માનના પડેગા ? સો એસી આજાંકા મી ઠીક નહીં હૈ—ક્યોં કિ યહાં જો કથન ચલ રહા હૈ વહ સંસારી જીવોં કી અપેક્ષા લેકર ચલ રહા હૈ । પૃથિવી આદિક જીવ સંસારી જીવ હૈ । જિતને મી સંસારી હોતે હૈં ઉનકે યથા સંભવ છહ પર્યાસિયાં તક હોતી હૈં । સિદ્ધ જીવ

આ પ્રમાણે માનવામા આવે તો શ્વાસોચ્છ્વાસ રૂપ વાયુને કયાંયે પણ અન્તજ નહીં આવે ને તેને કોઇપણ સ્થાને અન્ત માની લેવામા આવે તો એમ શા માટે માનવુ કે પ્રથમ વાયુકાયિક જીવોને શ્વાસોચ્છ્વાસની આવશ્યકતાજ હોતી નથી.

સમાધાન—આ પ્રમાણેનું કથન યોગ્ય નથી, કારણ કે કોઇ પણ જીવને જીવવા માટે શ્વાસોચ્છ્વાસની જરૂર પડે જ છે નિર્જીવને પડતી નથી. વાયુકાયિકો પણ જીવ જ હોય છે તેથી તેમને શ્વાસ અને નિઃશ્વાસની આવશ્યકતા પડે છે પરંતુ શ્વાસોચ્છ્વાસ રૂપ વાયુને તેની આવશ્યકતા રહેતી નથી કારણ કે તે તો અચિત્ત જીવ રહિત હોય છે તેથી અહીં અનવસ્થા દોષની સંભાવના રહેતી નથી.

શંકા—જો જીવને જ શ્વાસોચ્છ્વાસની જરૂર પડતી હોય તો જે સિદ્ધ પદ ને પામેલા જીવો છે તેમને પણ તેની આવશ્યકતા હોવી જ જોઈએ નહીં તો શ્વાસોચ્છ્વાસના વાયુની જેમ તેમને પણ નિર્જીવાજ માનવા પડશે ?

સમાધાન—આ જાતની શંકા અસ્થાને છે, કારણ કે અહીં જે વાત ચાલી રહી છે તે સંસારી જીવોની અપેક્ષાએ ચાલી રહી છે પૃથિવી, પાણી વગેરે જીવો સંસારી ગણાય છે. જે સંસારી જીવો હોય છે તેમને ૪ થી ૬ પર્યાસિયાં

‘વાયુકાણ મંતે’ વાયુકાયાઃ સ્વલુ મદન્ત ! ‘વાયુકાણ ચેવ અણેગસયસસ્ત સુતો ઉદાહતા ઉદાહતા તત્ત્વેય મુજ્જો મુજ્જો પચ્ચાયાઈ ?’ વાયુકાય સ્વલુ મદન્ત ! વાયુકાય એવ અનેકશતસહસ્રહત્ત્વોડપમુત્યાપમુત્ય તત્ત્વેય મૂયો મૂયા મત્યાયાતિ । હે મદન્ત ! વાયુકાય વાયુકાયે એવ અનેકશતસહસ્રહત્ત્વ = અનેક હસત્રારાન અપમુત્યાપમુત્ય = મૃત્વા મૃત્વા તત્ત્વેય = યત્ર કાયે મૃતસત્તત્ત્વેયકાયે મૂયોમૂયા = ચારં વાર પુનઃ પુનરિત્થર્થ મત્યાયાતિ = આગચ્છતિ જ મગદ્ધાતિ કિમિતિ પ્રમ્ । પ્રય ચ પ્રમ્નો વાયુકાયાધિકારાત્ વાયુકાયપધિકૃત્ય કૃત્ । પરંતુ પૃથિવ્યપ્તેજોવન સ્પતિદાયિસામપિ મૃત્વા મૃત્યા પૃથિવીકાયિકાદાબુત્પત્તિર્મત્ત્યેષ, સર્વેષામેષાં પૃથિવીકાયિકાદીનાં કાયસ્થિતેરસરૂપાત્તત્યા, વનસ્પતિમાધિસ્થાનન્તત્યા ચ શાસ્ત્રે પ્રતિગદ્ધનાત્, ઉક્તશ્ચ—

“અસત્ત્વોષ્પિણી ઉસ્સપ્પણીમો પ્પિગિદિયાણ ઉ વત્થઈ ।

ઠા વેય ઋ અળતા વળસ્સઈય ઉ વોદ્ધવા ॥ ૧ ॥

છાયા—અસત્ત્વયાયપ્પિણ્ણુત્ત્પિણ્ણ્ય એકેદિયાગાં વત્થનામ્ ।

તાશ્ચેવ ત્વ અનંતા વનસ્પતેસ્તુ વોદ્ધવા ઇતિ ॥

નિ શામ કી આયડ્યકતા નહીં હૈ । અતઃ અનવસ્વા લોપ નહીં આતા હૈ । (વાયુકાણ મંતે ।) હે મદન્ત ! વાયુકાય (વાયુકાણ ચેવ અણેગસય સહસ્ર સુતો ઉદાહતા ઉદાહતા તત્ત્વેય મુજ્જો ૨ પચ્ચાયાઈ ?) વાયુકાય મેં હી અનેક લાખ પાર મર મર કર કે કયા થઈં પર પાર ૨ જન્મ પ્રહ્ણ કરતા હૈ ? એમા યહ પ્રમ્ હૈ । યહ પ્રમ્ વાયુકાય કા અધિકાર હોને સે વાયુકાય કો છેકર કિયા ગયા હૈ । નહીં તો યહ પ્રમ્ પૃથિવીકાયિક આદિર્ષોમેં બી લાગ પડતા હૈ । કયોં કિ પૃથિવીકાયિક આદિકોંકો મર મર કરકે પૃથિવીકાયિક આદિકોંમેં ઉત્પત્તિ હોતી હી હૈ । इन मय पृथि वीकायिक आदि कौ की कायस्थिति असरूपातकाल से तथा वनस्पति की अपेक्षा अनंतकाल की कही है । कहा भी है—

નથી અહીં અનવસ્થા હોવનો સમય શહેતો નથી.

“વાયુકાણ મંતે ।” હે મગધન ! વાયુકાયિકો । ‘વાયુકાણ ચેવ અણે ગસયસહસ્ર સુણેશ્શા ઉદાહતા તત્ત્વેય મુજ્જો ૨ પચ્ચાયાઈ ?’ વાયુકાયમા જ શાસ્ત્રે વખત મરીને ત્યાં જ મુ વાર વાર જ મ હો છે ? વાયુકાયનુ વકતબ્ધ થાતુ હોવાથી વાયુકાયિકોના વિષયમાં જ આ પ્રશ્ન પૂછવામાં આવ્યો છે નહિતઃ તો આ પ્રશ્ન પૃથિવીકાયિક વગેરે ને પણ લાગુ પાડી શકાય છે કારણ કે પૃથિવીકાયિક વગેરે છોડોની પણ મરી મરીને પૃથિવીકાયિક વગેરેમાં જ ઉત્પત્તિ પામ છે તે તમામ પૃથિવીકાયિકની કાયસ્થિતિ અચ્ચત્તાત રૂપે તથા વનસ્પતિની અપેક્ષાએ અનંત રૂપે પ્રતિપાદિત કરવામાં આવી છે કમ્બુ પણ છે

માનપ્રાણાદિવાયુઃ સ વાયુત્વેઽપિ વાયુસંભાવ્યૌદારિકવૈક્રિયશરીરરૂપો ન, આન-પ્રાણસન્નિતાનાં તદીયપુદ્ગલાનામૌદારિકવૈક્રિયશરીરપુદ્ગલેભ્યોઽનન્તગુણપ્રદેશવ-ચ્ચેન સૂક્ષ્મતયા વાયુશરીરવ્યપદેશ્યસ્યાસદ્ભાવાત્, તથા સતિ નોક્તદોષ ઇતિ ।

આવશ્યકતા છે ? સો એસા કહના મી ટીક નહીં-કારણ કિ અપર્યાપ્તા-વસ્થા જીવ કી ત્રીન સમયતક હી રહની છે વાદ મેં વહ પર્યાપ્તક હો જાતા છે । સમય કાલ કા સવ સે છોટા મેં છોટા-સૂક્ષ્મ સે સૂક્ષ્મ અંશ છે । વ્યવહાર મેં મી સાધારણ સે સાધારણ પ્રાણી અપની શ્વાસોચ્છવાસ ક્રિયા કો કુછ સમયતક સાધ લેતે હૈં-પતાવતા વે નિર્જીવ તો હો નહીં જાતે । યહાં તો યહ કહા જા રહો છે કિ શ્વાસોચ્છવાસ ક્રિયા યદિ પર્યાપ્તક જીવ છે તો ઉસકે અવશ્ય ૨ છે । ઇસકે બિના વહ પર્યાપ્તક જીવ નહીં માના જા સકતા ।

અથવા-જો યહ શ્વાસોચ્છવાસરૂપ વાયુ છે । વહ વાયુરૂપ હોને પર મી વાયુ કાયિક જીવ કે સંભાવ્ય જો ઔદારિક વૈક્રિય શરીર હૈં ઉન રૂપ નહીં છે । ક્યોં કિ આનપ્રાણ નામ કે જો વાયુ કે પુદ્ગલ હૈં વે ઔદારિક વૈક્રિય શરીર કે પુદ્ગલો કી અપેક્ષા અનન્તગુણપ્રદેશવાલે હોને કે કારણ સૂક્ષ્મ હૈં ઇસલિયે ઉનમેં ચૈતન્ય વાલે વાયુ કે શરીર કા વ્યપદેશ નહીં હો સકતા છે । ઇસ તરહ અનવસ્થા દોષ યહાં નહીં આતા છે । તાત્પર્ય કહનેકા યહ છે કિ શ્વાસ નિઃશ્વાસરૂપ વાયુ અચેતન છે-ઇસલિયે ઉસે શ્વાસ

સમાધાન-આવી શકા પણ ઉચિત નથી કારણ કે જીવની અપર્યાપ્તાવસ્થા પણ ત્રણ સમય પર્યાપ્ત જ રહે છે ત્યાર બાદ તે પર્યાપ્તક અવસ્થા જ બની જાય છે કાળના સૂક્ષ્મમાં સૂક્ષ્મ અંશને સમય કહે છે વ્યવહારમાં પણ એવું જોવામાં આવે છે કે સામાન્યમાં સામાન્ય પ્રાણી પણ પોતાની શ્વાસોચ્છવાસની ક્રિયાને કેટલાક સમય સુધી રૂંધી શકે છે-તેથી કરીને તેઓ નિર્જીવ બની જતા નથી અહીં તો એમ કહેવામાં આવ્યું છે કે પર્યાપ્તક અવસ્થાવાળા શ્વાસોચ્છવાસની ક્રિયાને અવશ્ય સદ્ભાવ હોય છે તેનો અભાવ હોય તો તે જીવને પર્યાપ્તક જ માની શકાય નહીં

અથવા- આ જે શ્વાસોચ્છવાસ રૂપ વાયુ છે તે વાયુરૂપ હોવા છતાં પણ વાયુકાયિક જીવના જે ઔદારિક, વૈક્રિય શરીરો હોય છે તે રૂપે તો હોતો નથી કારણ કે આન પ્રાણ નામના વાયુના જે પુદ્ગલો છે તેઓ ઔદારિક વૈક્રિય શરીરના પુદ્ગલો કરતા અનેક ગણા પ્રદેશવાળા હોવાને કારણે સૂક્ષ્મ હોય છે તેથી તેમાં ચૈતન્યવાળા વાયુના શરીરને સમાવેશ થઈ શકતો નથી આ રીતે અહીં અનવસ્થા દોષ લાગતો નથી કહેવાનો આશય એ છે કે શ્વાસ નિઃશ્વાસ રૂપ વાયુ અચેતન હોય છે તેથી તેને શ્વાસ નિઃશ્વાસની જરૂર પડતી

એંધ કિમપદ્મવતિ—અચિત્તે ? મગવાનાહ—‘ગોપમા’ इत्यादि । ‘गोपमा !’ हे गौतम ! ‘पुट्टे उवाह’ स्पृष्ट—अपद्मवति, ‘नो पुट्टे उवाह’ नो अस्पृष्ट अपद्मवति । समातीयविजातीय शस्त्रसंपर्कादेय अचिंत इति कथनं सोपक्रमामिप्रायेण, निरुपक्रमामिप्राये तु अन्यथापि मरणसम्भवात् ‘सं भवे किं ससरीरी निक्खमइ असरीरीनिक्खमइ ?’ स भदन्त ! किं ससरीरी निष्कामति असरीरी निष्कामति ? हे भदन्त ! यदा स वायुकायिको जीवो मृत्वा गत्यन्तरं गच्छति तदा किं शरीरं सहितं याति अथवा शरीररहितं यातीति प्रश्नाज्ज्ञः । मगवानाह—‘गोपमा’ इत्यादि, ‘गोपमा’ हे गौतम ! ‘सिय ससरीरी निक्खमइ, सिय असरीरी निक्खमइ’ स्यात् ससरीरी निष्कामति स्यादसरीरी निष्कामति, हे गौतम ! स वायुकायो मृत्वा कदाचित् शरीरविशिष्टो गत्यन्तरं गच्छति कदाचित् शरीररहितो गच्छति । ‘से केण्हेणं भंते एवं धुच्चइ’ इत् केनार्येण हे भदन्त !

इस प्रश्न का उत्तर देते हुए गौतम से कहते हैं कि—(गोपमा ! पुट्टे उवाह, नो अपुट्टे उवाह) हे गौतम ! वायुकायिक जीव स्वकायादि शस्त्र से आहत होने पर ही मरता है किन्तु अनाहत नहीं । वायुकायिक जीव स्वकाय परकाय तदुभय कायरूप शस्त्र के संपर्क से आघातित होकर ही मरता है । यह जो कथन है वह सोपक्रम की अपेक्षा से है । निरुपक्रम की अपेक्षा से तो अन्य प्रकार से भी उसका मरण संभवता है । (से भंते ! किं ससरीरी निक्खमइ असरीरी निक्खमइ) हे भदन्त ! जब वह वायुकायिक जीव मर कर दूसरी गति में जाता है तो क्या वह शरीर सहित जाता है कि शरीररहित ? मगवान कहते हैं—(सिय ससरीरी निक्खमइ सिय असरीरी निक्खमइ) किसी अपेक्षा

ઉત્તર—ગોપમા ! પુટ્ટે ઉવાહ નો અપુટ્ટે ઉવાહ” હે ગૌતમ ! વાયુકાયિક જીવો સ્વકાય વગેરે શસ્ત્રોના આઘાત પામવાથી જ મરે છે આઘાત પામ્યા વિના મરતા નથી. ” વાયુકાયિક જીવો સ્વકાય પરકાય અથવા બન્ને કાયરૂપ શસ્ત્રના સંપર્કથી આઘાત પામીને જ મરે છે. ” આ કથન સોપક્રમઆધુન્યની અપેક્ષાએ કરાયું છે પરંતુ નિરુપક્રમ આધુન્યની અપેક્ષાએ તો અન્ય પ્રકારે પણ તેનું મરણ સંભવે છે

પ્રશ્ન— ‘ સે મંતે ! કિં સસરીરી નિક્કમમઇ અસરીરી નિક્કમમઇ ? ’ હે ભગવન તે વાયુકાયિક જીવ બ્યારે મરીને બીજી જાતિમાં જાય છે ત્યારે શું તે શરીર સહિત જાય છે કે શરીર રહિત જાય છે ?

ઉત્તર—સિય સસરીરી નિક્કમમઇ ” સિય અસરીરી નિક્કમમઇ ” હે ગૌતમ કોઈ અપેક્ષાએ તે શરીરને સાથે પણ લઈ જાય છે, અને કોઈ અપેક્ષાએ તે

ભગવાનાહ—‘હંત’ ઇત્યાદિ, ‘હતા ગોયમા’ હન્ત ગૌતમ ! ‘જાવ-પચ્ચાયાહ’ યાવત્ પ્રત્યાયાતિ, અત્ર યાવત્યદેન—“વાઝકાણ વાઝકાણ ચેવ-અણેગસયસહસ્સસુત્તો ઉદાહત્તા ઉદાહત્તા તત્થેવ મુઝ્જો મુઝ્જો” ઇતિ સંગ્રહઃ । પુનઃ પ્રશ્નયતિ ગૌતમઃ—‘સે મંતે કિં પુદ્ધે ઉદાહ’ સ મદન્ત કિં સ્પૃષ્ઠ અપદ્રવતિ, સ્પૃષ્ઠઃ=સ્વકાયશસ્ત્રેણ, પરકાયશસ્ત્રેણ તદુભયશસ્ત્રેણ વા હતોઽપદ્રવતિ-મ્રિયતે, અથવા ‘અપુદ્ધે ઉદાહ’ અસ્પૃષ્ઠઃ અપદ્રવતિ સ્વકાય શસ્ત્રાદિના અસ્પૃષ્ઠઃ અહત

“અસંખોસપ્પિણીઓ ઇર્ગિદિયાણ ઉ ચઝળં ।

તા ચૈવ અણંતા વણસ્સઈણ ઉ વોદ્ધવા ॥”

અર્થાન્-ચાર એકેન્દ્રિય જીવોં કી કાયસ્થિતિ અસંખ્યાત અવસર્પિણી ઉત્સર્પિણીકાલ પ્રમાણ હોતી હૈ । તથા વનસ્પતિ કાયિક જીવોં કી કાય-સ્થિતિ અનંત અવસર્પિણી ઉત્સર્પિણીકાલરૂપ હોતી હૈ । હસ પ્રશ્ન કા ઉત્તર દેતે હુણ ભગવાન્ ગૌતમ સે કહતે હૈં કિ (હંતા ગોયમા ! જાવ પચ્ચાયાહ) હાં ગૌતમ ! યાવત્ વહ જન્મ લેતા હૈ । યહાં (યાવત્) પદ સે (વાઝકાણ વાઝકાણ ચેવ અણેગસયસહસ્સ સુત્તો ઉદાહત્તા ઉદાહત્તા તત્થેવ મુઝ્જો ૨ હસ પાઠ કા સંગ્રહ કિયા ગયા હૈ ।

(‘સે મંતે ! કિં પુદ્ધે ઉદાહ’) હે મદન્ત ! વહ કાયિક જીવ કયા સ્પૃષ્ઠ અપને શરીરરૂપશસ્ત્ર સે, પરકાયરૂપ શસ્ત્ર સે અથવા તદુભયકાય-રૂપ શસ્ત્ર સે હત હોકર મરતા હૈ ? કિ (અપુદ્ધે ઉદાહ) સ્વકા-યાદિ શસ્ત્ર સે આહત હુઆ (લગકર) હી મરતા હૈ ? ભગવાન

ભાવાર્થ-પૃથ્વી, પાણી અગ્નિ અને વાયુકાયના જીવોની કાયસ્થિતિ અસંખ્યાત અવસર્પિણી ઉત્સર્પિણી કાળ પ્રમાણ હોય છે તથા વનસ્પતિકાયના જીવોની કાયસ્થિતિ અનંત અવસર્પિણી કાળ પ્રમાણ હોય છે

ગૌતમ સ્વામીના તે પ્રશ્નનો મહાવીર પ્રભુ આ પ્રમાણે ઉત્તર આપે છે. “હતા ગોયમા ! જાવ પચ્ચાયાહ” હા, ગૌતમ ! વાયુકાયના જીવો લાખો વખત મરીને વાયુકાયમાં જ ફરી ફરીને જન્મ લે છે અહીં (યાવત્) પદથી “વાઝકાણ વાઝકાણ ચેવ અણેગસયમહસ્સ સુત્તો ઉદાહત્તા ઉદાહત્તા તત્થેવ મુઝ્જો ૨” પાઠ શ્રવણ કરાયો છે

પ્રશ્ન-“સે મંતે ! કિં પુદ્ધે ઉદાહ” હે ભગવન્ તે વાયુકાયિક જીવો શું પોતાના શરીર રૂપ શસ્ત્રથી, પરકાય રૂપ શસ્ત્રથી અથવા બંને કાય રૂપ શસ્ત્રથી હણાઈને મરે છે ! કે ‘અપુદ્ધે ઉદાહ’ સ્વકાય વગેરે શસ્ત્રથી આઘાત પામીને મરે છે ?

તીતિ કથ્યતે । ‘સે તેજદ્વેષં ગોયમા’ સત્ તેનાર્થેન ગૌતમ ! ‘એવ યુચ્ચન્ન
એવમુચ્યતે ‘સિય સસરીરી’ સ્યાત્ સસરીરી ‘સિય અસરીરી’ સ્યાત્ અસરીરી
‘નિક્કલમહ’ નિક્કામતિ ॥ સૂ. ૨ ॥

અય મૃતાધનગારમકરણમ્—

વાયુકાયિકજીવસ્ય મૂયો મૂયોઽપિ વાયુકાયે એવોત્પત્તિર્મરતોતિ પૂર્વ
વર્ણિતમ્ । અય કસ્યચિન્મૃતાદેરપિ સસારચક્રાપેક્ષયા પુનઃ પુનસ્તથૈવોત્પત્તિઃ
સ્પાદિતિ દર્શયન્નાહ—‘મહાર્હં નં મંતે’ इत्यादि ।

મૂલમ્—મહાર્હં ન મંતે । નિયટે નો નિરુદ્ધમથે નો નિરુદ્ધ
મવપથથે ણો પહીણસસારવેયણિજ્ઞે, ણો વોચ્છિન્નસસારે
ણો વોચ્છિન્નસસારવેયણિજ્ઞે, નો નિટ્ઠિપટ્ટે, નો નિટ્ઠિયટ્ટ
કરણિજ્ઞે, પુનરવિ ઇત્થત્થ હઠ્ઠ આગચ્છહ? હતા ગોયમા !
મહાર્હં ન નિયટે જાવ પુણરવિ ઇત્થત્થ હઠ્ઠ આગચ્છહ ॥ સૂ. ૦૪ ॥

(સે તેજદ્વેષં ગોયમા એવં યુચ્ચન્ન સિય સસરીરી નિક્કલમહ સિય અસ
રીરી નિક્કલમહ) હસ કારણ હે ગૌતમ ! એસા કહા જાતા હૈ કિ વાયુ
કાયિક જીવ કિસી અપેક્ષા તૈજસ ઓર કાર્મણ હન દો શરીરોં કી અ
પેક્ષા શરીર સહિત ઓર કિસી અપેક્ષા-ઓદારિક વેક્રિય હન દો કી
અપેક્ષા શરીર રહિત જાતા હૈ ॥ સૂ. ૨ ॥

મૃતાધનગાર પ્રકરણ—

વાયુકાયિક જીવ કી પુન પુનઃ મી વાયુકાય મેં હી ઉત્પત્તિ હોતી
હૈ એસા પહિલે વર્ણન કિયા જા ચુકા હૈ । અય યહ કહા જાતા હૈ કિ
કિસી કિસી મુનિ કો મી સસારગ્રમણ કી અપેક્ષા સે ફિર ફિર વહોં

મહ સિય અસરીરી નિક્કલમહ” હે ગૌતમ । આરીતે વાયુકાયિક છવે તેજસ અને
કામણ શરીરની અપેક્ષાએ શરીર સહિત અન્ય ગતિમાં જાય છે અને ઔદારિક
અને વેક્રિય શરીરની અપેક્ષાએ શરીર રહિત થઈને અન્ય ગતિમાં જાય છે ॥ સૂ. ૪ ॥

મૃતાદી વાયુગાસ્તુ પ્રકરણ

વાયુકાયિક છવે ડી ફરી ફરીને વાયુકાયિકોમાં જ ઉત્પત્તિ થાય છે એવું
આગળના પ્રકરણમાં કહેવામાં આવ્યું છે હવે આ પ્રકરણમાં એ જતાવવામાં
આવે છે કે કોઈ કોઈ મુનિ પણ સસારગ્રમણની અપેક્ષાએ ફરી ફરીને ત્યાં

एवमुच्यते-‘सिय ससरीरी निक्खमइ सिय असरीरी निक्खमइ’ स्यात् सशरीरी निष्क्रामति स्यात् अशरीरी निष्क्रामति । भगवानाह—‘गोयमा’ इत्यादि । ‘गोयमा’ हे गौतम ! ‘वाउकायस्स णं चत्तारि सरीरा पन्नत्ता’ वायुकायस्य खलु चत्वारि शरीराणि प्रज्ञप्तानि, ‘तं जहा’ तद्यथा ‘ओरालिए’ औदारिकम् ‘वेउच्चिए’ वैक्रियम् ‘तेयए’ तैजसम् । ‘कम्मए’ कर्मणम् । ‘ओरालिय वेउच्चियाइं विप्पजहा य’ औदारिकवैक्रिये शरीरे विप्रहाय च, औदारिकवैक्रिय-शरीरद्वयं परित्यज्येत्यर्थः, ‘तेययकम्मएहिं निक्खमइ’ तैजसकर्मणाभ्यां निष्क्रामति, औदारिकवैक्रियशरीरद्वयं परित्यज्य गच्छति अतः शरीररहितो निष्क्रामतीति कथ्यते, तैजसकर्मणरूपशरीरद्वयेन सहितो यातीत्यतः सशरीरी निष्क्राम-

वह शरीर को साथ भी ले जाता है । (से केणट्टेणं भंते । एवं वुच्चइ) हे भदन्त ! आप ऐसा किस कारण से कहते हैं कि वह वायुकायिक जीव शरीर सहित भी परगति में जाता है और शरीररहित होकर भी जाता है ? इसका उत्तर देते हुए प्रभु गौतम स्वामी से कहते हैं—(गोयमा ! वाउकायस्स णं चत्तारि सरीरा पन्नत्ता) हे गौतम ! वायुकायिक जीव के चार शरीर कहे गये हैं जो इस प्रकार से हैं—(ओरालिए) औदारिक, (वेउच्चिए) वैक्रिय, (तेयए) तैजस (कम्मए) और कर्मण सो वह जीव (ओरालिय वेउच्चियाइं विप्पजहाय) औदारिक वैक्रिय शरीर को छोड़कर ही अन्यगति में जाता है । साथ में उस समय उसके (तेयय कम्मएहिं निक्खमइ) तैजस और कर्मण शरीर रहते हैं । क्यों कि ये दोनों ही शरीर (अप्रतिघाते) के अनुसार प्रतिघात से रहित होते हैं ।

शરીરને સાથે નથી પણ લઈ જતા

પ્રશ્ન-“ સે કેણટ્ટેણ ભંતે ! એવ વુચ્ચઈ ” હે ભગવન્ ! આપ શા કારણે એવું કહો છો કે વાયુકાયિક જીવો શરીર સહિત પણ પરગતિમાં જાય છે અને શરીર રહિત પણ પરગતિમાં જાય છે ?

ઉત્તર-“ ગોયમા ! વાઉકાયસ્સ ણં ચત્તારિસરીરા પન્નત્તા ” હે ગૌતમ ! વાયુકાયિક જીવોમાં ચાર શરીર કહ્યા છે જે આ પ્રમાણે છે

‘ ઓરોલિય ’ ઔદારિક, “ વેઉચ્ચિય ” વૈક્રિય, “ તેયય ” તૈજસ, અને “ કમ્મય ” કાર્મણ વાયુકાયિક જીવો “ ઓરોલિયવેઉચ્ચિયાઈ વિપ્પજહાય ” ઔદારિક અને વૈક્રિય શરીરને છોડીને જ અન્યગતિમાં જાય છે પરંતુ “ તેયય કમ્મયઈ નિક્કમઈ ” તૈજસ અને કાર્મણ શરીર, અન્યગતિમાં છે. કારણ કે તે બંને શરીર પ્રત્યાઘાતથી રહિત હોય છે. “ સે તેણટ્ટેણ ગોયમા ! એવ વુચ્ચઈ સિય સસરીરી નિક્કમ-

ટીકા—‘ મહાર્જ ણ મંતે ’ મૃતાદી સહ મવન્ત ! મૃતમ્-અધિષ્ઠાનં વસ્તુ
અધીવિ મૃતાદી, પ્રાસુકમોજીત્યર્થે, ઉપલક્ષણત્વાત્ ઇષણીયાદીત્યપિ જ્ઞાતમ્, ‘ નિયંટે ’ નિર્ગ્રન્થઃ, ‘ નો નિરુદ્ધમવે ’ નો નિરુદ્ધમવઃ, નૈવ નિરુદ્ધઃ મવ અગ્રેતન
અન્મ યન સ તથા અનિરુદ્ધમવ ચરમમમપ્રાપ્ત ઇત્યર્થઃ । एतादृशम भवइव

ટીકાર્થ—(મહાર્જ ણ મંતે) અધિષ્ઠા વસ્તુ કા નામ મૃત હૈ । इस
मृतरूप अधिष्ठ वस्तु को जो अपने आहार के उपयोग में लाता है—वह
(मृतादी) कहलाता है । इसका अर्थ जो प्रासुक भोजी है ऐसा वह
मृतादी तथा उपलक्षण से इषणीय वस्तु का जो आहार करता है ऐसा
वह (इषणीयादी) भी (नियंटे) निर्ग्रन्थ अनगार तिर्यश्च मनुष्यादि-
गतिरूप संसार को फिर भी प्राप्त करता है । सो यह किस स्थिति में
रहकर संसार को पुनः प्राप्त करता है तो इसको स्पष्ट करने के लिये सूत्रकार
कहते हैं (नो निरुद्धमवे) इत्यादि यहां ये जितने भी मृतादी अथवा
निर्ग्रन्थ के विशेषण हैं—उन विशेषणों से विशिष्ट यदि वह भ्रमण नि-
र्ग्रन्थ है तो उसके संसार का अंत नहीं होता है अर्थात् वह संसार में
ही परिभ्रमण करता रहता है । अथ उन्हीं विशेषणों को कहते हैं—(नो
निरुद्धमवे) वह मृतादी भ्रमण निर्ग्रन्थ यदि अनिरुद्धमवबाला है—चर
ममवबाला नहीं है अर्थात् अग्रेतन जन्म जिसने अपना निरुद्ध नहीं
किया है तो यह नियमतः पुन मरकर संसार में ही जन्म धारण करेगा ।

સૂત્રાર્થ—“ મહાર્જ ણ મંતે ! અધિષ્ઠ વસ્તુનેમૃત કહે છે તે મૃતરૂપ
અધિષ્ઠ વસ્તુને આહાર લેનારને મૃતાદી કહે છે એટલે કે પ્રાસુક લોહ
તથા ઉપલક્ષણથી ઇષણીય વસ્તુને આહાર કરનાર તે ‘ ઇષણીયાદી નિયંટે ’
નિર્ગ્રન્થ અભ્રમણ પણ જીવિતિર્થશ્ચ મનુષ્યાદિ વગેરે ગતિરૂપ સંસારને ફરી
ફરીને પ્રાપ્ત કરે છે ? એટલે કે કઈ પરિસ્થિતિમાં તે નિર્ગ્રન્થ સંસારને ફરી
ફરીને પ્રાપ્ત કરે છે તે સૂત્રકાર નીચેના સૂત્રો વડે સ્પષ્ટ કરે છે “ નો નિરુદ્ધ
મવે ” ઇત્યાદિ જે જે મૃતાદી અથવા નિર્ગ્રન્થના વિશેષણો આ સૂત્રમાં લખાયાં છે,
તે વિશેષણોથી મુક્ત અથવા નિર્ગ્રન્થના સંસારને અત અગ્રેતો નથી કહેવાતું
તાત્પર્ય એ છે કે તે વિશેષણો વાળો અથવા નિર્ગ્રન્થ પ્રાસુક આહારને ઉપભોજ
કરવા છતાં પણ સંસારમાં પરિભ્રમણ કરે છે એવે તે વિશેષણોનું સ્પષ્ટી કરણ
કથામાં આવે છે ‘ નો નિરુદ્ધમવે ’ તે મૃતાદી અથવા નિર્ગ્રન્થ નો અનિ-
રુદ્ધ અથવા વાળો હોય અથવા વાળો ન હોય એટલે કે જેણે પોતાનો
આગ્રમી બંધનો અત કર્યો નહોતો તે અવશ્ય મરણ પામીને આ સંસારમાં

છાયા—મૃતાદી સ્વલુ ભદત ! નિર્ગ્રન્થો નો નિરુદ્ધભવો નો નિરુદ્ધભવપ્રપંચો નો પરીણસંસારો નો પ્રક્ષીણસંસારવેદનીયો નો વ્યવચ્છિન્નસંસારો નો વ્યવચ્છિન્નસંસારવેદનીયો નો નિષ્ઠિતાર્થઃ નો નિષ્ઠિતાર્થકરણીયઃ પુનરપિ અત્રસ્થં હવ્વં આગચ્છતિ ? દન્ત ગૌતમ ! મૃતાદી નિર્ગ્રન્થો યાવત્ પુનરપિ અત્રસ્થં હવ્વં આગચ્છતિ ॥

પર ઉત્પત્તિ હો સકતી હૈ સો દિશ્વલાતે હૈ—‘મઢાઈ ણં મંતે ! નિયંટે’ હ૦

સૂત્રાર્થ—(મઢાઈ ણં મંતે) હૈ ભદન્ત ! પ્રાસુક ભોજી (નિયંટે) નિર્ગ્રન્થ, કિ જિસને (નો નિરુદ્ધભવે) અપને ભવ કા નિરોધ નહીં કિયા હૈ, (ણો પરીણસંસારે) જિસકા સંસાર ક્ષીણ નહીં હુઆ હૈ (ણો પરીણસંસારવેયણિજ્જે) જિસકા સંસાર વેદનીય નષ્ટ નહીં હુઆ હૈ (નો વોચ્છિન્ન સંસારે) જિસકા સંસાર વ્યુચ્છિન્ન નહીં હુઆ હૈ (ણો વોચ્છિન્નસંસારવેયણિજ્જે) જિસકા સંસાર વેદનીય વ્યુચ્છિન્ન નહીં હુઆ હૈ (ણો નિઠ્ઠિયદ્દે) જો કુનાર્થ નહીં હુઆ હૈ (ણો નિઠ્ઠિયદ્ધકરણિજ્જે) જિસકા કામ સમાપ્ત હુઅ કાર્ય કી તરહ પૂર્ણ નહીં હુઆ હૈ વહ કયા (પુનરવિ) ફિર સે મી (ઇત્થત્થં હવ્વં આગચ્છહ) ઇસ તિર્યચ્ચ મનુષ્યાદિ ગતિરૂપ સંસાર કો પ્રાપ્ત કરતા હૈ ? (હંતા ગોયમા) હૈ ગૌતમ ! (મઢાઈ ણં નિયંટે જાવ પુનરવિ ઇત્થત્થં હવ્વં આગચ્છહ) પૂર્વોક્ત વિશેષણોં વાલા મૃતાદી નિર્ગ્રન્થ અનગાર તિર્યચ્ચ મનુષ્યાદિ ગતિરૂપ સંસાર કો વારંવાર પ્રાપ્ત કરતા હૈ ।

ત્યાજ ઉત્પન્ન થાય છે “ મઢાઈ ણં મંતે ! નિયંટે ” ઇત્યાદિ ”

સૂત્રાર્થ—(મઢાઈ ણ મંતે ! હૈ ભગવન્ ! પ્રાસુક આહાર લેનાર (નિયંટે) નિર્ગ્રન્થ, કે જેણે (નો નિરુદ્ધભવે) પોતાના ભવનો નિરોધ કર્યો નથી. (નો-નિરુદ્ધભવપ્રપંચે) સંસારના પ્રપંચનો નિરોધ કર્યો નથી, (ણો પરીણસંસારે) જેનો સંસાર ક્ષીણ થયો નથી, (ણો પરીણસંસારવેયણિજ્જે) જેના સંસાર વેદનીયનો નાશ થયો નથી, (ણો વોચ્છિન્નસંસારવેયણિજ્જે) જેના સંસારનું છેદન થયું નથી (ણો નિઠ્ઠિયદ્દે) જે કૃતાર્થ થયા નથી, ણો નિઠ્ઠિયદ્ધ કરણિજ્જે જેનું કાર્ય સમાપ્ત થયેલા કાર્યની જેમ પૂરૂ થયેલ નથી, એટલે કે જે કૃતકલ્પ થયા નથી શુ (પુનરવિ) ફરીથી પણ (ઇત્થત્થં હવ્વં આગચ્છહ) આ તિર્યચ્ચ, મનુષ્ય વગેરે ગતિરૂપ સંસારને પ્રાપ્ત કરે છે ? (હંતા ગોયમા !) હા, ગૌતમ ! (મઢાઈ ણ નિયંટે જાવ પુનરવિ ઇત્થત્થં હવ્વં આગચ્છહ) પૂર્વોક્ત વિશેષણો વાળો પ્રાસુક આહાર લેનાર નિર્ગ્રન્થ અણુગાર તિર્યચ્ચ, મનુષ્ય ગતિરૂપ સંસારને વારંવાર પ્રાપ્ત કરે છે.

અપદ્વીજસંસારવેદકર્મા સ્વર્થ, અય ચ સકૃત્ ચતુર્ગતિગમનતોપિ સ્યાદિત્યત
આહ—‘નો ઘોચ્છિન્નસંસારે’ નો વ્યવચ્છિન્નસંસાર, અનુદિષ્ટચતુર્ગતિગમના
નુબન્ધ સ્વર્થ, અત एष ‘નો નોચ્છિન્નસંસારવેદયણિજ્ઞે’ નો વ્યુચ્છિન્નસંસાર
વેદનીય વ્યવચ્છિન્ન=વ્યવગતમ્ અનુવ-વ્યવચ્છેદેન ચતુર્ગતિગમનવેદકર્મ સ્વ
સ તથા, યો ન તથા સ નો વ્યુચ્છિન્નસંસારવેદનીય, અતएष ‘નો નિદિયદ્વે’
નો નિષ્ઠિતાર્થ નિષ્ઠિત નિષ્પાદિતઃ અર્થ=મોક્ષરૂપ પ્રયોજન યેન સ નિષ્ઠિતાર્થ
યો ન તથા સ અનિષ્ઠિતપ્રયોજનક સ્વર્થઃ, અતएન—‘નો નિદ્રિયદ્વકરણિજ્ઞે’ નો
નિષ્ઠિતાર્થકરણીય નો નૈવ નિષ્ઠિતાર્થનાં સંપાદિતપ્રયોજનનામિવ કરણીયાનિ
કૃત્વાનિ यस્ય સ નો નિષ્ઠિતાર્થકરણીય યસ્માદ્વયમેવંવિધોઽત एવ ‘પુનરપિ’
પુનરપિ, ‘સ્વત્ય’ અપ્રસ્થમ્—અપ્ર=સંસારે તિષ્ઠાતિ અપ્રસ્થં મયં તિર્યક્નરામરના

દ્રવ્યલિંગી હી હૈ માયલિંગી નહીં હૈ । હસી કારણ (નો પદ્વીજસંસારવે
યણિજ્ઞે) જિસકા સંસાર વેદનીય કર્મ પ્રદ્વીજ નહીં હુમા હૈ ।
પેસા સંસાર વેદકર્મા સાધુ એક ૨ ધાર ચારોં ગતિ મેં જાને સે
મી હો સકતા હૈ અત્ત હસકી નિષ્ઠિતિ કે લિયે (નો ઘોચ્છિ
નસંસારે) પેસા પદ્વિ હૈ હસસે યહ પ્રકટ કિયા ગયા હૈ કિ ચારોં ગ
તિયોં મેં અનેક ધાર પરિભ્રમણ જિસે કરના અમી અવશિષ્ટ હૈ—અવ નહીં
હુમા હૈ । હસી કારણ (નો ઘોચ્છિન્નસંસારવેયણિજ્ઞે) જિસકા ચારોં
ગતિયોં મેં અનેક ધાર ભ્રમણ કરાને મેં કારણમૂલ કમ અમી હુટા નહીં
હૈ હસી કારણ (નો નિદ્રિયદ્વે) મોક્ષરૂપ પ્રયોજન જિસકા અમીતક પૂરા
નહીં હો પાયા હૈ, ઓર હસી લિયે (નો નિદ્રિયદ્વકરણિજ્ઞે) જો (નો
નિષ્ઠિતાર્થ કરણીય) બના હુમા હૈ અર્થાત્—જિસકે કાર્ય પૂર્ણ હુપ કાર્યો
કી તરહ પૂરે નહીં હુપ હૈ પેસા ઘટ્ મૃતાદી નિર્ગન્થ અનગાર હસ તરહ
કી પરિસ્થિતિ બાલા બના હુમા હૈ તો કયા (પુનરપિ) ફિર સે ઘટ્
હસ અનાદિ સંસાર મેં (સ્વત્ય) નારકાદિ ગતિરૂપ અવ કો પ્રાપ્ત કરતા

લિંગી નથી બને આ કથન લાગુ પડે છે એજ કારણે નો પદ્વીજસંસાર
વેયણિજ્ઞે ” જેના સંસાર વેદનીય કર્મ લીધું થયા નથી એ અમલુ નિર્ભયને
ઉપરનું કથન લાગુ પડે છે સંસાર વેદમ્યં વાળો સાધુ ગતિમાં એક એક
વાર પણ બંધ શકતો હોય છે તો તેનું નિરાકરણ કરવા માટે ‘નો ઘોચ્છિન્ન
સંસારે’ વિશેષણ મૂક્યું છે એટલે કે જેને ચારે ગતિમાં અનેક વાર પરિભ્ર
મણ કરવાનું હજી બાકી છે અને તે કારણે નો ઘોચ્છિન્નસંસારવેયણિજ્ઞે”
જેના ચારે ગતિયોમાં અમલુ કરાવનાર કથેના હજી ક્ષય થયો નથી, અને
એજ કારણે નો નિદ્રિયદ્વ જેનું મોક્ષરૂપ પ્રયોજન હજી સુધી પૂરું થયું
શક્યું નથી, અને તેથી જ ‘નો નિદ્રિયદ્વકરણિજ્ઞે’ ઇષ્ટિત અર્થની મોક્ષની પ્રાપ્તિ
કરી શક્યો નથી એટલે કે જે કૃતાર્થ થયો નથી એવા મૃતાદી નિર્ભય અલ
બાર શું ‘પુનરપિ’ ફરી ફરીને આ બનાઈ સંસારમાં ‘સ્વત્ય’ નરકાદિ

પ્રાપ્તવ્યમોક્ષોપિ સંભવેદિત્યત આહ-‘ નો નિરુદ્ધભવપવંચે ’ નો નિરુદ્ધભવપ્રપન્નઃ
અનિરુદ્ધભવવિસ્તાર इत्यर्थः । एतादृशश्च देवमनुष्यभवाप्रपंचापेक्षयापि संभवेत्तत्राह-
‘ णो पहीणसंसारे ’ नो प्रक्षीणसंसारः, अक्षीणचतुर्गतिगमन इत्यर्थः, यतश्चाप्र-
क्षीणचतुर्गतिगमनोऽतएव ‘ नो पहीणसंसारवेयणिज्जे ’ नो प्रक्षीणसंसारवेदनीयः

સંસાર સે છૂટેગા નહીં । યદિ યહાં પર એસી આર્શાંકા કી જાવે કિ જિસ
મૃતાદી શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ ને અપને અગ્રેતન જન્મ કા નિરોધ નહીં કિયા હૈ
વહ દો ભવ કે વાદ મી મુક્તિ પ્રાપ્ત કરને વાલા હો સકતા હૈ-તો ફિર
ઉસે સંસાર મેં જન્મ લેને વાલા કેસે માના જા સકતા હૈ ? તો ઇસ આર્શાંકા
કે વ્યવચ્છેદ કે લિયે સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ (નો નિરુદ્ધભવપવંચે) યહાં
દો ભવ સે મોક્ષ જાને વાલા વિવક્ષિત નહીં હૈ । યહાં તો વહી મૃતાદી
શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ વિવક્ષિત હૈ કિ જિસે દો ભવ કે વાદ મી ઓર અનેક
ભવ કરના વાકી હૈ । કયોં કિ અમીતક ઉસને અપના ભવપ્રપન્ન ભવ-
વિસ્તાર-નિરુદ્ધ નહીં કિયા હૈ । મૃતાદી શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ અનગાર અનિ-
રુદ્ધ ભવપ્રપંચ વાલા દેવમનુષ્ય ભવોં કી અપેક્ષા સે મી હો સકતા હૈ-
સો એસા વહ યહાં વિવક્ષિત નહીં હુઆ હૈ કિન્તુ (નો પહીણસંસારે)
જિસકા ચતુર્ગતિરૂપ સંસાર મેં પરિભ્રમણ કરના પ્રહીણ નહીં હુઆ હૈ,
એસા હી મૃતાદી શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ સંસાર મેં પુનઃ ૨ જન્મ મરણ કરતા
હૈ । ઇસકે કહને કા તાત્પર્ય યહ હૈ કિ જો શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ હોકર મી

કરી જન્મ ધારણ કરે છે, તે સંસારને તરશે નહિ અહીં નો એવી શકા
સેવવામાં આવે કે જે મૃતાદી શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ પોતાના આગામી ભવનો નિરોધ
કર્યો નથી. તે બે ભવ કરીને પણ મુક્તિ પ્રાપ્ત કરી શકે છે, તો તેને કેવી
રીતે સંસારમાં જન્મ લેનારો માની શકાય? તે શકાનું નિવારણ કરવા માટે
સૂત્રકાર કહે છે કે “ નો નિરુદ્ધભવપવંચે ” જેણે ભવપ્રપન્નના ભવવિસ્તારનો
નિરોધ કર્યો નથી એવો શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ વારંવાર સંસારમાં જન્મ ધારણ કરે છે
અહીં બે ભવ કરીને મોક્ષ જનારનું વર્ણન કર્યું નથી અહીં તો એવા મૃતાદી
શ્રમણ નિર્ગ્રન્થનો ઉલ્લેખ કર્યો છે કે જેને બે ભવ કર્યા પછી પણ અનેક
ભવ કરવાના બાકી છે મૃતાદી અણુગાર દેવ અને મનુષ્યભવની અપેક્ષાએ પણ
અનિરુદ્ધ ભવ વિસ્તાર વાળા હોઈ શકે છે પણ અહીં એવા શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ
ની વાત કરવામાં આવી નથી પણ અહીં તો “ નો પહીણસંસારે ” જેનું ચતુ-
ર્ગતિરૂપ સંસારમાં પરિભ્રમણ કરવાનું પ્રહીણ (ક્ષીણ) થયું નથી એવો મૃતાદી
શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ સંસારમાં વારંવાર ભ્રમણ કરે છે એમ કહેવામાં આવ્યું છે
તેનું તાત્પર્ય એ છે કે જે શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ હોવા છતાં દ્રવ્યલિંગી છે ભાવ-

संसारचक्रमध्यगतो मुनिमीव प्राणभूतादिनामपदकेन कालवेदत, पुन-
रपि च वक्तव्य स्यात् इति विवक्षु प्रभवन्नाह — 'से ण भंते' इत्यादि ।

मूलम्—से णं भते । किंति वत्तव्व सिया गोयमा । पाणेत्ति
वत्तव्व सिया, मूएत्ति वत्तव्व सिया, जीवेत्ति वत्तव्व सिया, स
त्तेत्ति वत्तव्व सिया, विण्णुत्ति वत्तव्व सिया, वेदेत्ति वत्तव्व
सिया, पाणे, मूए, जीवे, सत्ते, विण्णू, वेदेत्ति वत्तव्व सिया,
से केणट्ठेण भते ! एव बुच्चइ से णं पाणेहि वत्तव्व सिया
जाव वेदेत्ति वत्तव्व सिया, गोयमा । जम्हा आणमइ
वा पाणमइ उस्सत्तइ वा णोसत्तइ वा तम्हा पाणेत्ति
वत्तव्व सिया जम्हा मूए भवइ भविस्सइ य तम्हा
मूएत्ति वत्तव्व सिया जम्हा जीवइ जीवत्त आउय
च कम्म उवजीवइ तम्हा जीवेत्ति वत्तव्व सिया, जम्हा सत्ते
सुहासुहेहि कम्मेहि तम्हा सत्तेत्ति वत्तव्व सिया, जम्हा
तित्तकड्डकसाय अणिलमट्टरे रसे जाणइ तम्हा विण्णुत्ति
वत्तव्व सिया जम्हा वेदोमि व सुहवुक्ख तम्हा वेदेत्ति
वत्तव्व सिया, से तेणट्ठेण गोयमा । पाणेत्ति वत्तव्व सिया
जाव वेदेत्ति वत्तव्व सिया ॥ सू० ५ ॥

है । तात्पर्य यह है कि अनिरुद्ध भवादि विशेषण वाला निर्मल पुन २
चतुर्गतिरूप में जन्म मरण करता रहता है ॥ सू-४ ॥

संसारपाप के मध्य में रहा हुआ मुनि का जीव प्राण मृतादि पर
नाम से भिन्न २ समय में कि एक ही समय में वक्तव्य हो सकता है

प्राप्त करे छे करेवाण तात्पर्य छे छे के अनिरुद्ध भवादि विशेषणो मुनि
निर्मल बारबार चतुर्गतिरूप संसारमा जन्म मरण पाव ॥ करे छे ॥ सू० ५ ॥

संसार बन्धी भयभा परेता मुनिना छवने प्रण मृत परेरे छे
नाम गुण गुण भयमे के ओर जन्म मरण मुनिनी श्राव छे ॥ आ

રકગતિરૂપમ્, 'હવ્વં' इति चाक्यालङ्कारे शीघ्रं वा 'आगच्छइ' आगच्छति प्राप्नोति किमिति प्रश्नः । भगवानाह—'हंत' इत्यादि । 'हंता गोयमा' इन्त हे गौतम ! 'इन्त' इति स्वीकारे । 'मडाई णं नियंठे' मृतादी खलु निर्ग्रन्थः 'जाव पुणरवि' यावत् पुनरपि, इह यावत्पदेन—'नो निरुद्धभवः—नो निरुद्धभवप्रपञ्चः नो प्रक्षीणसंसारः नो प्रक्षीणसंसारवेदनीयः नो व्यवच्छिन्नसंसारः नो व्यवच्छिन्न संसारवेदनीय नो निष्ठितार्थः नो निष्ठितार्थकरणीयः' एतेषां सर्वेषां संग्रहः कर्तव्यः, 'इत्थत्थं' अत्रस्थम् नरामरनारकतिर्यग्गतिगमनलक्षणम्, 'पुणरवि' पुनरपि भूयोऽपि हव्वम् 'आगच्छइ' आगच्छति प्राप्नोतीत्यर्थः, अनिरुद्धभवादि-विशेषणयुक्तो निर्ग्रन्थः पुनः पुनरपि चतुर्गतिसंसारमागच्छतीति भावः ॥सू०४॥

है । इस प्रकार से वह प्रश्न गौतम ने प्रभु से किया । इस प्रश्न का निष्कर्षार्थ यही है कि अचित्त अथवा एषणीय आहार को अपने उपयोग में लाने वाला भी श्रमण निर्ग्रन्थ यदि वह पूर्वोक्त विशेषणों वाला है तो क्या संसार में ही जन्म मरण के दुःखों को भोगने वाला बनेगा या उनसे उसका छुटकारा हो जावेगा ? इसका उत्तर देते हुए भगवान गौतम से कहते हैं कि (हंता गोयमा) हां गौतम ! (हंत) पद यहाँ स्वीकार अर्थ में प्रयुक्त हुआ है । (मडाई णं नियंठे) मृतादी निर्ग्रन्थ (जाव) यावत् जो निरुद्धभव नहीं है, निरुद्धभवप्रपंच वाला नहीं है, प्रक्षीण संसार नहीं है, प्रक्षीण संसार वेदनीय नहीं है, व्यवच्छिन्न संसार नहीं है, व्यवच्छिन्न संसार वेदनीय नहीं है, निष्ठितार्थ नहीं है, निष्ठितार्थ करणीय नहीं है इसलिये वह (पुणरवि) फिर भी बारंबार (इत्थत्थं) नरकादि गतिरूप संसार को (हव्व आगच्छइ) प्राप्त करता

गतिरूप बनने प्राप्त કરે છે ? ગૌતમસ્વામીના આ પ્રશ્નનો ભાવાર્થ એવો છે કે અચિત્ત અથવા એષણીય આહારનો ઉપભોગ કરનાર શ્રમણુ નિર્ગ્રન્થ નો પૂર્વોક્ત વિશેષણોથી યુક્ત હોય તો તે સંસારમાં વારં વાર જન્મ લઈને જન્મમરણના દુઃખો ભોગવશે કે તેનો સંસારમાંથી છુટકારો થઈ જશે ? ગૌતમ સ્વામીના એ પ્રશ્નનો જવાબ આપતા મહાવીર પ્રભુ કહે છે કે “હંતા ગોયમા !” હા, ગૌતમ ! અહીં “હંતા” પદ સ્વીકારના અર્થમાં વપરાયું છે “મડાઈ ણ નિયંઠે” મૃતાદી નિર્ગ્રન્થ કે જે નિરુદ્ધભવ વાળો નથી, નિરુદ્ધભવ પ્રપંચ વાળો નથી, પ્રક્ષીણ સંસાર નથી, પ્રક્ષીણ સંસાર વેદનીય કર્મ વાળો નથી, સંસાર ના અંત વાળો નથી, અંત કરેલા સંસાર વેદનીય કર્મ વાળો નથી, જે કૃતાર્થ થયેલ નથી, જે કૃત કત્ય થયેલ નથી જેનું કાર્ય સમાપ્ત થયેલા કાર્યની જેમ પૂરું થયેલ નથી તે “પુણરવિ” ફરીથી પણ વારં વાર “इत्थत्थं” નરકાદિ ગતિરૂપ સંસારને ‘હવ્વ આગच्छइ’

માણિતિ યા ઉચ્ચવરાતિ યા નિઃશ્વસતિ યા તસ્માત્ પ્રાણ इति वक्तव्यं स्यात् ।
 यस्माद् भूतो भवति भविष्यति च तस्मात् भूत इति वक्तव्यं स्यात्, यस्माद् ज
 नीषत जीयति जीयस्व आयुष्क च कर्म उपजीवति तस्मात् जीव इति वक्तव्यं
 स्यात् यस्मात् सक्तः शुभाशुभैः कर्मभिः तस्मात् सत्य इति वक्तव्यं स्यात्, यस्मात्
 विक्लकुक्कुपायाम्लमधुरान् रसान् जानाति तस्मात् विप्र इति वक्तव्यं स्यात्,

સે કહા જા સકતા હૈ ? (ગોયમા ! જમ્હા આણમહ્ વા પાણમહ્ વા
 ઉસ્સમહ્ વા પીસસહ્ વા તમ્હા પાણેસિ વક્તવ્યં સિયા) હે ગૌતમ !
 जिस कारण से वह सुनि जीव आभ्यन्तर श्वास को छोटा है, आभ्य-
 न्तर श्वास को छोड़ता है, पाछा श्वास को ग्रहण करता है और बाह्य
 श्वास को छोड़ता है इस कारण वह (प्राण) इस शब्द से कहा जा
 सकता है । (जम्हा भूय, भवह, भविस्सह य तम्हा भूय सि वक्तव्यं
 सिया) जिस कारण वह पुत्रा है, छोटा है, दोगा, इस कारण वह (भूत)
 इस शब्द से कहा जा सकता है । (जम्हा जीवे जीवह जीवत आउयं
 च कर्म उपजीवह तम्हा जीवेसि वक्तव्यं सिया) जिस कारण से वह
 भूतकाल में जीव के धर्म को प्राप्त हुआ वर्तमान में जीता है, जीवत्व
 और आयुष्क कर्म का वह अनुभव करता है और भविष्यत् में भी
 जीवेगा इस कारण वह (जीव) इस शब्द से कहा जा सकता है । (जम्हा
 सचे सुमासुमेहिं कम्मेहिं तम्हा सचेसि वक्तव्यं सिया) जिस कारण
 वह शुभ और अशुभ कर्मों के द्वारा बद्ध हुआ है इस कारण वह (सत्य)
 इस शब्द से कहा जा सकता है । (जम्हा तित्तकट्ट कसाय अविममदुरे

(ગોયમા ! જમ્હા આણમહ્ વા પાણમહ્ વા ઉચ્ચસહ્ વા પીચસહ્ વા તમ્હા પાણેસિ
 વક્તવ્યં સિયા) જે કારણે તે સુનિને ૯૪ આશ્વાખ્યન્તર શ્વાસ અને નિશ્વાસને
 બદલ્યું કરે છે અને ઊઠે છે તે ૧૨ણે તેને “પ્રાણ” શબ્દથી ઓળખી
 શકાય છે (જમ્હા ભૂય, ભવહ, ભવિસ્સહ ચ તમ્હા ભૂય સિ વક્તવ્યં સિયા) જે
 કારણે તેની ઉત્પત્તિ થઈ હતી, થાય છે અને થશે તે કારણે તેને “ભૂત”
 શબ્દથી ઓળખી શકાય છે (જમ્હા જીવે જીવહ જીવત આઉયં ચ કર્મ ઉપ
 જીવહ તમ્હા જીવેસિ વક્તવ્યં સિયા) જે કારણે તેણે ભૂતકાળમાં ૯૪વર્ત
 ધર્મને પ્રાપ્ત કર્યા હતા વર્તમાનમાં ૯૪વે છે ૯૪વત્વ આયુષ્ય કર્મોના તે અનુ
 ભવ કરે છે, અને ભવિષ્યમાં પણ ૯૪વશે, તે કારણે તેને માટે “જીવ”
 શબ્દ વાપરી શકાય છે (જમ્હા સચે સુમાસુમેહિં કમ્મેહિં તમ્હા સચે સિ
 વક્તવ્યં સિયા) જે કારણે તે શુભ અને અશુભ કર્મો વડે બદલે છે તે કારણે
 “સત્ય” શબ્દથી ઓળખી શકાય છે (જમ્હા તિત્તકટ્ટ કસાય અવિમમદુરે રસે

છાયા—તત્ સ્વલ્પ ભદન્ત ! કિમિતિ વક્તવ્યં સ્યાત્, ગૌતમ ! પ્રાણ इति વક્તવ્યં સ્યાત્, ભૂત इति વક્તવ્યં સ્યાત્, જીવ इति વક્તવ્યં સ્યાત્, સત્ત્વ इति વક્તવ્યં સ્યાત્, વિજ્ઞ इति વક્તવ્યં સ્યાત્, વેદ इति વક્તવ્યં સ્યાત્, પ્રાણો ભૂતો જીવઃ સત્ત્વો વિજ્ઞો વેદ इति વક્તવ્યં સ્યાત્, તત્કેનાર્થેન ભદન્ત ! સ સ્વલ્પ પ્રાણ इति વક્તવ્યં સ્યાત્, યાવત્ વેદ इति વક્તવ્યં સ્યાત્ ગૌતમ ! યસ્માત્ આનિતિ

કયા ? હસં પ્રશ્ન કો પૂછને કી ઇચ્છાં સે ગૌતમસ્વામી પ્રભુસે પ્રશ્ન કરતે હૈ— 'સે ણં ભંતે' ઇત્યાદિ ।

સૂત્રાર્થ—(સે ણં ભંતે ! કિં તિ વક્તવ્યં સિયા) હે ભદન્ત ! વહ નિર્ગ્રન્થ મુનિ જીવ કિસ શબ્દ સે વક્તવ્ય હો સકતા હૈ ? (ગોયમા ! પાણેત્તિ વક્તવ્યં સિયા) વહ નિર્ગ્રન્થ મુનિ જીવ “પ્રાણ” હિસ શબ્દ સે કહા જા સકતા હૈ । (ભૂતેત્તિ વક્તવ્યં સિયા) “ભૂત” હિસ શબ્દ સે કહા જા સકતા હૈ । (સત્તેત્તિ વક્તવ્યં સિયા) “સત્ત્વ” હિસ શબ્દ સે કહા જા સકતા હૈ । (વિણ્ણુત્તિ વક્તવ્યં) “વિજ્ઞ” હિસ શબ્દ સે કહા જા સકતા હૈ વેયોત્તિ વક્તવ્યં સિયા) “વેદ” હિસ શબ્દ સે કહા જા સકતા હૈ (પાણે, ભૂતે જીવે, સત્તે વિણ્ણૂ વેદેત્તિ વક્તવ્યં સિયા) પ્રાણ, ભૂત, જીવ, સત્ત્વ વિજ્ઞ, ઔર વેદ હિન સઘ શબ્દોં સે વહ કહા જા સકતા હૈ । (સે કેળદ્દેણ ભંતે ! એવં વુચ્ચહ) હે ભદન્ત ! આપ એસા કિસ કારણ સે કહતે હૈ કિં (સે ણં પાણેત્તિ-વક્તવ્યં સિયા જાવ વેયોત્તિ વક્તવ્યં સિયા) વહ મુનિ જીવ (પ્રાણ) હિસ શબ્દ સે કહા જા સકતા હૈ યાવત્ (વેદ) હિસ શબ્દ

પ્રશ્નનો ઉત્તર જાણવાને માટે ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને “સે ણં ભંતે” ઇત્યાદિ પદ્ધતી પૂછે છે

સૂત્રાર્થ—(સે ણં ભંતે કિં તિ વક્તવ્યં સિયા) હે ભગવન્ તે નિર્ગ્રન્થ મુનિના જીવને કયા શબ્દથી વર્ણવી શકાય છે ! (ગોયમા ! પાણેત્તિ વક્તવ્યં સિયા) તે નિર્ગ્રન્થ મુનિ જીવને ‘પ્રાણ’ સજ્ઞાથી વર્ણવી શકાય છે, (ભૂતેત્તિ વક્તવ્યં સિયા) “ભૂત” શબ્દથી પણ ઓળખી શકાય છે, (સત્તેત્તિ વક્તવ્યં સિયા) “સત્ત્વ” શબ્દથી પણ ઓળખી શકાય છે (વિણ્ણુત્તિ વક્તવ્યં સિયા) “વિજ્ઞ” શબ્દથી પણ ઓળખી શકાય છે, (વેયોત્તિ વક્તવ્યં સિયા) “વેદ” શબ્દથી પણ ઓળખી શકાય છે (પાણે ભૂત, જીવે, સત્તે, વિણ્ણૂ વેદેત્તિ વક્તવ્યં સિયા) તેને પ્રાણ, ભૂત જીવ, સત્ત્વ, વિજ્ઞ અને વેદ, એ બધા શબ્દોથી ઓળખી શકાય છે (સે કેળદ્દેણ ભંતે ! એવં વુચ્ચહ) હે ભગવન્ ! આપ શા કારણે એવું કહો છો કે (સે ણં પાણેત્તિ વક્તવ્યં સિયા જાવ વેયોત્તિ વક્તવ્યં સિયા) તે મુનિને ‘પ્રાણ’ ભૂત, જીવ, સત્ત્વ વગેરેથી ઓળખી શકાય છે,

સ્યાત્, યદા તુ મનનાદિ ધર્મવસ્તુસ્ય વિવક્ષા ક્રિયતે તદા ભૂત इत्यन्વર્થનામ સંમ
 વેન ભૂત इति વ્યવહારસ્ય સંમત્તાત્ । ‘ જીવેતિ વસ્તુવ્યં સિયા ’ જીવ इति વસ્તુવ્ય
 સ્યાત્, યદા તુ ઉપયોગાદિમત્ત્વધર્મસ્ય વિવક્ષા ક્રિયતે તદા જીવ इति વ્યવહારસ્યા
 પ્યદુષ્ટત્વાત્, ‘ સત્તેતિ વસ્તુવ્યં સિયા ’ સત્ત્વ इति વસ્તુવ્ય સ્યાત્, યદા તુ શુભો
 શુભયુક્ત્વરૂપધર્મસ્ય વિવક્ષા ક્રિયતે તદા સત્ત્વ इति નામતોપિ વ્યવહારમ્ય કર્તુ
 શ્ચયત્વાદિતિ, ‘ વિણ્ણુતિ વસ્તુવ્યં સિયા ’ વિણ્ણ इति વસ્તુવ્ય સ્યાત્, કટુકાયાદિ
 રસાસ્વાદનકર્તૃત્વરૂપધર્મવિવક્ષાયાં વિણ્ણ इति વ્યવહારસ્ય સમત્તાદિતિ । ‘ વેદતિ
 વસ્તુવ્યં સિયા ’ વેદ इति વસ્તુવ્ય સ્યાત્, સુખદુઃસ્વાદિમત્ત્વાનુભવકર્તૃત્વાત્મકધર્મવિ
 વક્ષાયાં વેદ इति વ્યવહારસ્ય સપાદનસમત્તાદિતિ । ‘ પાણે ભૂય જીવે સત્તે વિણ્ણ
 સમય મયન (હોના) આદિ ધર્મસે યુક્તતાકી વિવક્ષા કરનેમે આતી હૈ ઉંસ
 સમય ઉસમે (ભૂત) હસ અન્વર્થ સાર્થક નામ કી સમત્તા સે (ભૂત)
 વેસા વ્યવહાર હો સકતા હૈ । (જીવેતિ વસ્તુવ્ય સિયા) જિસ સમય
 ઉપયોગ આદિ ધર્મ સે યુક્તતા કી વિવક્ષા કી જાતી હૈ ઉસ સમય ઉસમે
 (જીવ) વેસા વ્યવહાર મી હો સકતા હૈ । હસમે કોઈ વેપ કી પાત નહી
 હૈ । (સત્તેતિ વસ્તુવ્ય સિયા) જિસ સમય શુભ અશુભ કર્મ સે યુક્તતા
 કી વિવક્ષા કી જાતી હૈ ઉસ સમય (સત્ત્વ) હસ નામ સે ઉંસકો
 વ્યવહાર ક્રિયા જા સકતા હૈ । (વિણ્ણુતિ વસ્તુવ્ય સિયા) જિસ સમય
 કટુક, (કઢવા) કપાપ આદિ રસોંકે આસ્વાદનકર્તૃત્વરૂપ ધર્મ કી વિવક્ષા
 કી જાતી હૈ ઉસ સમય (વિણ્ણ) હસ શબ્દ સે મી વહ કહા જા સકતા હૈ ।
 (વેપોતિ વસ્તુવ્ય સિયા) જિસ સમય સુખ દુઃખ આદિકો અનુભવ કરને
 રૂપ ધર્મ કી વિવક્ષા કી જાતી હૈ ઉસ સમય ઉસમે (વેદ) હસ શબ્દ

ન્યારે યવુ વગેરે ધર્મથી મુક્ત પજાની વિવક્ષા કરવામાં આવતી હોય ત્યારે
 “ભૂત” નામ અધમુક્ત (સાર્થક) હોએ છે માટે તે સમયે “ભૂત” શબ્દનો
 ઉપયોગ કરી શકાય છે ‘ જીવેતિ વસ્તુવ્ય સિયા ’ તેને ‘ જીવ ’ પણ કહી
 શકાય છે ન્યારે ઉપયોગ આદિ ધર્મથી મુક્ત વિવક્ષા કરવામાં આવતી હોય
 ત્યારે તેને માટે ‘ જીવ ’ શબ્દનો પણ ઉપયોગ કરી શકાય છે “સત્તેતિ
 વસ્તુવ્ય સિયા ’ તેને ‘ સત્ત્વ ’ પણ કહેવાય છે ન્યારે શુભ અશુભ કર્મથી
 મુક્ત પજાની વિવક્ષા કરાતી હોય ત્યારે “સત્ત્વ” નામથી પણ તેને જોળખી
 શકાય છે “ વિણ્ણુતિ વસ્તુવ્ય સિયા ’ ન્યારે કટુક, કપાપ મધુર વગેરે
 રસોના આસ્વાદન કરવારૂપ ધર્મની વિવક્ષા કરવામાં આવતી હોય ત્યારે તેને
 માટે ‘ વિણ્ણ ’ શબ્દનો ઉપયોગ પણ કરી શકાય છે “ વેપોતિ વસ્તુવ્ય સિયા ”
 ન્યારે સુખદુઃખ વગેરેના અનુભવ કરવારૂપ ધર્મની વિવક્ષા કરવામાં આવતી

યસ્માત્ વેદયતિ ચ સુસદુઃસ્વં તસ્માત્ વેદયિતા इति વક્તવ્યં સ્યાત્ તત્તેનાર્થેન પ્રાણ
इति વક્તવ્યં સ્યાત્, યાવત્ વેદયિતા इति વક્તવ્યં સ્યાદિતિ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

ટીકા—‘સે ણં મંતે’ તત્ સ્વલ્પ મદન્ત ! ‘કિંતિ વક્તવ્યં સિયા’ કિમિતિ
વક્તવ્યં સ્યાત્, તત્ર સ નિર્ગ્રન્થો જીવઃ કિમિતિ વક્તવ્યં સ્યાત્? ભગવાનાહ
—‘ગોયમા’ इत्यादि । ‘ગોયમા’ હે ગૌતમ ! ‘પાણેતિ વક્તવ્યં સિયા’
પ્રાણ इति વક્તવ્ય સ્યાત્, તત્ર યદા ઉચ્છ્વાસાદિમત્ત્વસ્ય વિવક્ષા ક્રિયતે તદા
નિર્ગ્રન્થજીવં પ્રતિ પ્રાણ इत्यેવરૂપો વ્યપદેશઃ કર્તું શક્યતે એવ, પ્રાણનક્રિયાદિ-
મત્ત્વેન પ્રાણેત્યન્વર્થનામસંભવાત્ । ‘ભૂણ્તિ વક્તવ્યં સિયા’ ભૂત इति વક્તવ્યં

રસે જાણહ, તમ્હા વિણ્ણુત્તિ વક્તવ્યં સિયા) જિસ કારણ યહ તિત્ત,
કદુક્ક, કષાય, આમ્લ, મધુર રસોં કો જાનતા હૈ ઇસ કારણ (વિજ્ઞ)
ઇસ શબ્દ દ્વોરા યહ કહા જા સકતા હૈ । (જમ્હા વેદનીય સુહદુક્કલ્લ
તમ્હા વેદેત્તિ વક્તવ્યં સિયા) જિસ કારણ સુખ દુઃખ કા વેદન કરતા
હૈ ઇસ કારણ યહ (વેદ) ઇસ શબ્દ સે કહા જા સકતા હૈ ।

ટીકાર્થ—(સે ણં મંતે !) હે મદન્ત ! વહ મુનિ જીવ (કિં ત્તિ
વક્તવ્યં સિયા) (કિમિતિ) કિસ શબ્દ સે કહા જા સકતા હૈ ? ભગ-
વાન ઇસકા ઉત્તર દેતે હુએ કહતે હૈં કિ—(ગોયમા) હે ગૌતમ ! વહ
(પાણેત્તિ વક્તવ્યં સિયા) પ્રાણ ઇસ રૂપ સે કહા જા સકતા હૈ । જિસ
સમય ઉચ્છ્વાસ આદિ સે યુક્તતા કી વિવક્ષા કી જાતી હૈ તવ ઉસ
સમય—નિર્ગ્રન્થ જીવ કે પ્રતિ (પ્રાણ) ઇસ રૂપ સે વ્યપદેશ કિયા જા
સકતા હૈ । ક્યો કિ પ્રાણન ક્રિયા આદિ વાલા વહ હૈ—ઇસસે (પ્રાણ)
એસા અન્વર્થ નામ ઉસકા હો જાતા હૈ । (ભૂણ્તિ વક્તવ્યં સિયા) જિસ

જાણહ, તમ્હા વિણ્ણૂ ત્તિ વક્તવ્ય સિયા) જે કારણે તે તીખો, કડવો, તુરો
ખાટો, અને મીઠો રસ બાણે છે તે કારણે તેને ‘વિજ્ઞ’ કહેવામા આવે છે
(જમ્હા વેદનીય સુહદુક્કલ્લ તમ્હા વેદે ત્તિ વક્તવ્ય સિયા) જે કારણે સુખ દુઃખ
વેદન કરે છે. તે કારણે તેને ‘વેદ’ કહેવામા આવે છે

ટીકાર્થ—‘સે ણ મંતે !’ હે ભગવન્ ! તે મુનિશ્રવને (કિં ત્તિ વક્તવ્યં સિયા)
કયા શબ્દથી ઓળખાવી શકાય છે

“ ગોયમા ! ” હે ગૌતમ ! “ પાણેત્તિ વક્તવ્ય સિયા ” તેને “પ્રાણુ”
કહી શકાય છે જ્યારે શ્વાસોચ્છ્વાસ વગેરે યુક્ત પાણુની વાત કહેવામાં આવતી
હોય ત્યારે નિર્ગ્રન્થશ્રવને માટે “પ્રાણુ” શબ્દનો પ્રયોગ કરી શકાય છે કારણ
કે તે પ્રાણુનક્રિયા વગેરે યુક્ત હોવાને કારણે “પ્રાણુ” નામ તેને માટે અર્થ-
યુક્ત બધાય છે. “ ભૂણ્તિ વક્તવ્ય સિયા ” તેને “ભૂત” પણ કહી શકાય છે

વેદેતિ વત્તવ્વંસિયા ' પ્રાણો ભૂતો જીવઃ સત્ત્વો વિજ્ઞો વેદ ઇતિ વત્તવ્વં સ્યાત્, યદ્વા તુ ઉચ્છ્વાસાદિ ધર્મૈર્યુગપદેવ વિવક્ષા ક્રિયતે તદાસૌ નિર્ગ્રન્થો જીવઃ પ્રાણ ઇતિ જીવ ઇતિ સત્ત્વ ઇતિ વિજ્ઞ ઇતિ વેદ ઇતિ રાવૈરેવ પદૈર્વ્યવહર્તુ શક્યતે એવેતિ ભાવઃ, નિગમનવાક્યમિદમ્ । નિર્ગ્રન્થો જીવઃ પ્રાણાદિપદેન વ્યવહ્રિયતે તત્ર કિં કારણમિત્યાશયેન પૃચ્છતિ—' સે કેળદ્દેણં ' રૂપ્યાદિ, ' સે કેળદ્દેણં મંતે ! એવં વુચ્ચહ સે ણં ' તત્ કેનાર્થેન હે ભદન્ત ! એવમુચ્યતે સ સ્વલુ=નિર્ગ્રન્થો જીવઃ ' પાણેતિ વત્તવ્વં સિયા ' પ્રાણ ઇતિ વત્તવ્વં સ્યાત્ ' જાવ વેદેતિ વત્તવ્વં સિયા ' યાવત્ વેદ ઇતિ વત્તવ્વં સ્યાત્, નિર્ગ્રન્થજીવસ્ય પ્રાણાદિ શબ્દવ્યવહારે કિં કારણમિતિ પ્રશ્નઃ । મગવાનાહ—' ગોયમા ' રૂપ્યાદિ । ' ગોયમા ' હે ગૌતમ ! ' જમ્હા આણમહ વા ' યસ્માત્ કારણાત્ નિર્ગ્રન્થજીવ આનિતિ—આનનક્રિયાં કરોતિ

દ્વારા મી વ્યવહાર હો સકતા હૈ । (પાણે, મૂળ, જીવે, સત્તે, વિજ્ઞૂ, વેદેતિ વત્તવ્વં સિયા) ઓર જિસ સમય ઉચ્છ્વાસ આદિ ધર્મોં સે યુક્તતા કી યુગપત (એકસાથ) વિવક્ષા કી જાતી હૈ ડસ સમય વહ નિર્ગ્રન્થ જીવ પ્રાણ, મૂત, જીવ, સત્ત્વ, વિજ્ઞ, ઓર વેદ, ઇન સ્વ હી શબ્દોં દ્વારા કહા જા સકતા હૈ । યહ નિર્ગમન (સમાસિ) વાક્ય હૈ । ઇસમેં કયા કારણ હૈ—ઈસી આશય સે પ્રેરિત હોકર ગૌતમ સ્વામી પ્રમુ સે પૂછતે હૈ—(સે કેળદ્દેણં મંતે ! એવં વુચ્ચહ સે ણ પાણેતિ વત્તવ્વં સિયા, જાવ વેયોત્તિ વત્તવ્વં સિયા) હે ભદન્ત ! યહ આપ કિસ કારણ સે કહતે હૈ કિ વહ મુનિ જીવ પ્રાણ ઇસ શબ્દ સે કહા જા સકતા હૈ યાવત્ વહ (વેદ) ઇસ શબ્દ સે કહા જા સકતા હૈ ? તાત્પર્ય યહ કિ નિર્ગ્રન્થ જીવ પ્રાણાદિ શબ્દોં દ્વારા કહને મેં કયા કારણ હૈ ? ઇસકા ઉત્તર દેતે હુએ પ્રમુ કહતે હૈ (ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (જમ્હા) જિસ કારણ (આણમહ) નિર્ગ્રન્થ

હોય ત્યારે તેને માટે “વેદ” શબ્દનો પ્રયોગ પણ કરી શકાય છે “ પાણે, મૂળ, જીવે, સત્તે, વિજ્ઞૂ વેદેતિ વત્તવ્વં સિયા ” અને ત્યારે આસોરૂપવાસ વગેરે ધર્મોથી યુક્ત પણની એક સાથે વિવક્ષા કરાતી હોય છે ત્યારે તે શ્રમણુ નિર્ગ્રન્થ બને માટે પ્રાણ, ભૂત, જીવ, સત્ત્વ, વિજ્ઞ અને વેદ એ છએ શબ્દોનો પ્રયોગ થઈ શકે છે આ નિર્ગમન (સમાસિ) વાક્ય છે તેનું કારણ બાણુવાના આશયથી ગૌતમ સ્વામી મહાવીર પ્રભુને પૂછે છે કે “ સે કેળદ્દેણં મંતે ! એવં વુચ્ચહ સે ણ પાણેતિ વત્તવ્વં સિયા, જાવ વેયોત્તિ વત્તવ્વં સિયા ? ” હે ભગવન્ ! આપ શા કારણે એવું કહો છો કે તે શ્રમણુ નિર્ગ્રન્થને પ્રાણ, ભૂત, જીવ, સત્ત્વ, વિજ્ઞ, અને વેદ કહી શકાય છે ? તેનો ઉત્તર મહાવીર પ્રભુ આ પ્રમાણે આપે છે ‘ ગોયમા ! ’ હે ગૌતમ ! “જમ્હા” ને કારણે “ આણમહ વા પાણ

આમ્યન્તરશ્વાસ ગૃહ્ણતિ, 'પાણમહા' પ્રાગિતિ વા, પ્રાગનક્રિયાં કરોતિ, આમ્યન્તરશ્વાસ મુચ્ચતિ 'ઉસ્મમહા' ઉચ્ચસ્વસિતિ વા, વાહ્ય શ્વાસ ગૃહ્ણતિ, 'મીસસહ' નિઃશ્વસિતિ વા, વાહ્ય શ્વાસ ત્યજતિ, 'તમ્હા પાણેતિ વસત્ત્વં સિયા' તસ્માત્ પ્રાણિતિ વક્તવ્યં સ્યાત્, યસ્માત્ કારણાત્ આનનપ્રાણનો છૂટાસ-નિશ્વાસક્રિયાં સંપાદયતિ તસ્માત્ કારણાત્ અમો નિર્ગ્રંથ જીવઃ પ્રાણિત્યાગ્યયા આલ્યાયતે સત્થાન્વર્થમાદાયૈષ તથા વ્યવહાર ઇતિ માર" । 'જમ્હા મૂપ મમ્હ મવિસ્સહ' યસ્માત્ મૂતો મવતિ મરિપ્યતિ ચ 'તમ્હા મૂપિ વસન્ત્વં સિયા' તસ્માત્ મૂત્વિતિ વક્તવ્યં મ્યાત્, પૂર્વકાળેઽમૂત્ વર્તમાનકાળે પૃથક્પ્રાણપરિવર્તિતિ શરીરસન્ધ્યાત્, અનાગતકાલપ્રુપ્તમા મરિપ્યતિ તસ્માદુત્પતિમત્ત્વર્તમાનકાલે મૂત્વિતિ વ્યવહાર સમત ઇતિ માયા । 'જમ્હા જીવે' યસ્માત્ કારણાત્ અજીવત્-અતીતકાલે જીવર્થ પ્રાપ્તોઽમૂત્ જીવસ્થાનાદિકાલિન્નત્યાત્, 'જીવહ' જીવતિ પ્રાપ્તમાધારયતિ વર્તમાનકાળે જીવત્ત્વ ધર્મજ્ઞાનસ્તિ 'જીવત્ આણય વ વમ્મ ઉવજીવહ'

જીવ અમ્યન્તર શ્વાસ કો ગ્રહણ કરતા હૈ (પાણમહ) આમ્યન્તર શ્વાસ કો છોડતા હૈ (ઉસ્મમહ) વાહ્યશ્વાસ કો ગ્રહણ કરતા હૈ, (નીસસહ) વાહ્યશ્વાસ કો છોડતા હૈ (તમ્હા પાણેતિ વસત્ત્વં સિયા) હસ કારણ વહ (પ્રાગ) શબ્દ સે કહા જા સક્તા હૈ । (જમ્હા મૂપ મમ્હ મવિસ્સહ ય તમ્હા મૂપિ વસન્ત્વં સિયા) જિસ કારણ સે મૂતકાલ મેં, શરીર કે સંપર્ક સે ઉત્પન્ન પ્રુપ્ત વર્તમાન કાલ મેં વહ ઉત્પન્ન હોતા હૈ । ઓર અનાગત મરિપ્યત્ કાલ મેં મી વહ ઉત્પન્ન હોગા હસ કારણ સે ઉત્પત્તિમત્ત્વ ધર્મ કો લેકર (મૂત) હસ શબ્દ સે કહા જા સક્તા હૈ । (જમ્હા જીવે) અનાદી કાલિક હોને કે કારણ અતીત કાલમેં જિસ કારણ સે ઇસને જીવ કે ધર્મ કો પ્રાપ્ત ક્રિયા હૈ, તથા વર્તમાનકાલ મેં મી (જીવહ) વહ પ્રાણો કો ધારણ કર રહા હૈ-જીવત્સ્વરૂપ ધર્મવાલા બના પ્રુપ્ત હૈ-(જીવત્ આણય વ વમ્મ ઉવજી

મહા વા" અમણ નિર્ગ્રંથ એવ આમ્યન્તર શ્વાસને ગ્રહણ કરે છે અને છોડે છે 'ઉસ્મમહા વા નીસસહ વા' વાહ્ય શ્વાસને ગ્રહણ કરે છે અને છોડે છે, "તમ્હા પાણેતિ વસત્ત્વં સિયા" તે કારણે તેને મારે "પ્રાણુ" શબ્દ કહેવામા આવે છે "જમ્હા મૂપ મમ્હ મવિસ્સહ ય તમ્હા મૂપિ વસન્ત્વં સિયા" એ કારણે મૂતકાળમાં તેનું શરીર ઉત્પન્ન થયું વર્તમાન કાળે ઉત્પન્ન થાય છે અને મરિપ્ય કાળે પણ તે ઉત્પન્ન થયે તે કારણે ઉત્પત્તિરૂપ ધર્મની અપેક્ષાએ તેને "મૂત" પણ કહી શકાય છે 'જમ્હા જીવે' અનાદિ કાલાને કારણે મૂતકાળમાં તેણે એ કારણે જીવતા ધર્મને પ્રાપ્ત કર્યા હતા, વર્તમાન કાળે પણ તે "જીવહ" જીવતા ધર્મ રાખે છે- જીવત્ આણય વ વમ્મ ઉવજીવહ" તથા ઉપયોગ

જીવત્વમાયુષ્કં ચ કર્મ ઉપજીવતિ, જીવત્વમ્=ઉપયોગલક્ષણમ્ પૂર્વવદ્ધમ્ આયુષ્કં
 વ દેહાવસ્થાનકારણમ્ કર્મ ઉપજીવતિ-અનુભવતિ, ‘તમ્હા જીવેત્તિ વત્તવ્વં સિયા’
 તસ્માત્ જીવ ઇતિ વત્તવ્વં સ્યાત્, અતएव कारणात् स निर्ग्रन्थः जीवशब्देन
 व्यपदेश्यः स्यादिति भावः । ‘जम्हा सत्ते-सुहासुहेहिं कम्मेहिं’ यस्मात् सत्तः=
 आसक्तः शुभाशुभेषु कर्मसु, यस्मात् कारणात् शुभाशुभेषु कर्मसु व्यापृतः ‘तम્हा
 सत्तेति वत्तव્વં सिया’ तस्मात् सत्त्व इति वत्तव્વં स्यात् ‘जम्हा तित्तकडुकसायंऽविल
 म्हुरे रसे जाणइ’ यस्मात् तित्त कटु कषायाम्लमधुरान् रसान् जानाति, एतेषां
 रसानामास्वादं करोति, ‘तम્हा विण्णुत्ति वत्तव્वंसिया’ तस्माद्विज्ञ इति वत्तव્વં
 स्यात्, तित्तादि पंचविधरसास्वादकर्तृत्वेन निर्ग्रन्थजीवस्य विज्ञत्वमपि भवतीति
 भावः । ‘जम्हा वेदेत्ति य सुहदुक्खं’ यस्मात् वेदयति च सुखदुःखम्, यस्मात्
 कारणात् सुखदुःखमनुभवति ‘तम્हा वेदोत्ति वत्तव્वं सिया’ तस्मात् वेद इति

વહે) તથા ઉપયોગ લક્ષણરૂપ જીવત્વ કા ઓર જો વર્તમાન દેહ મેં હસકે
 અવસ્થાન કા કારણ બના હુઆ હૈં ઉસ પૂર્વવદ્ધ આયુષ્ક કર્મ કા અનુભવ
 કર રહા હૈં (તમ્હા જીવે ત્તિ વત્તવ્વં સિયા) હસ કારણ યહ (જીવ)
 હસ શબ્દ સે કહા જા સકતા હૈં । (જમ્હા સત્તે સુહાસુહકમ્મેહિં) જિસ
 કારણસે યહ શુભ ઓર અશુભ કર્મોં મેં આસક્ત હોતા રહતા હૈં (તમ્હા
 સત્તેતિ વત્તવ્વં સિયા) હસ કારણ યહ સત્ત્વ શબ્દ સે કહા જા સકતા
 હૈં । (જમ્હા તિત્તકડુકસાયઽવિલમ્હુરે રસે જાણइ) જિસ કારણ યહ
 તિત્ત, કટુ, કષાય, આમ્લ, મધુર રસોં કો જાનતા હૈં-અર્થાત્ યહ ઇન
 રસોંકા આસ્વાદન કરતા હૈં (તમ્હા વિણ્ણુ ત્તિ વત્તવ્વં સિયા) હસ કારણ
 યહ (વિજ્ઞ) હસ શબ્દ સે કહા જા સકતા હૈં । (જમ્હા વેદેત્તિ સુહ-
 દુક્ખં) જિસ કારણ સે યહ સુખ દુઃખ કા વેદન કરતા હૈં-અનુભવ કરતા
 હૈં (તમ્હા વેદોત્તિ વત્તવ્વં સિયા) હસ કારણ યહ વેદ હસ શબ્દ સે કહા

લક્ષણ રૂપ જીવત્વનો તથા જે વર્તમાન દેહમાં જીવને રહેવાનું કારણ બનેલ છે
 તે પૂર્વવદ્ધ આયુષ્ક કર્મનો અનુભવ કરી રહ્યો છે “તમ્હા જીવેત્તિ વત્તવ્વં સિયા”
 તે કારણે તેને “જીવ” પણ કહી શકાય છે “જમ્હા સત્તે સુહાસુહકમ્મેહિં”
 જે કારણે તે શુભાશુભ કર્મોંમાં આસક્ત રહે છે. “તમ્હા સત્તે ત્તિ વત્તવ્વ
 સિયા” તે કારણે તેને “સત્ત્વ” પણ કહેવામાં આવે છે “જમ્હા તિ કટુ
 કસાયંઽવિલમ્હુરે રસે જાણइ” જે કારણે તે તીખો, કડવો, તુરો, ખાટો અને
 મીઠો રસ બધે છે એટલે કે તેનું આસ્વાદન કરે છે “તમ્હા વિણ્ણુ ત્તિ વત્તવ્વ-
 સિયા” તે કારણે તેને “વિજ્ઞ” કહી શકાય છે “જમ્હા વેદેત્તિ સુહદુક્ખં”
 જે કારણે તે સુખ અને દુઃખનું વેદન કરે છે તમ્હા વેદોત્તિ વત્તવ્વ સિયા” તે

વક્તવ્ય સ્યાત્, સુલ્લુઃસ્વયોરજ્ઞમવર્તત્વેન નિર્ગ્રન્થગ્રીવસ્ય વેદસ્વમપિ મવતીતિ માવ । 'સે તેજદ્વેષં' તત્ તેનાર્યેન, એમિ' કારણે હે ગૌતમ ! 'પાણેષિ વક્તવ્ય- સિયા' પ્રાણેષિ વક્તવ્યં સ્યાત્, 'જાવ વેદોષિવક્તવ્ય સિયા' યાવત્ વેદેષિ વક્તવ્ય સ્યાત્, અર્થાત્ હે ગૌતમ ! પ્રાણધારણોપયોગસ્વસ્વોત્પત્ત્યાદિમત્સ્વશુભાર્થે કર્માનુમત્તનકર્મસંસક્રત્ત્યાદિધર્મૈરુપેતત્ત્વાત્ નિર્ગ્રન્થગ્રીવઃ પ્રાણાદિવેદપર્યન્તપદૈર્મ્યવર્ત- સ્તવ્યતે એવેતિ માવ ! અથ યાવત્પદેન ધૂતગ્રીવસસ્ત્વવિજ્ઞાના ગ્રહણં મવતીતિ ॥ સૂ. ૧ ॥

પૂર્વે પ્રાસુકાદારમોજિનોઽનિરુદ્ધમવપપ્ત્ત્યાદિવિશેષણયુક્તસ્ય સાધોરપિ સસ- રવક્રે પુનઃ પુનરપિ આગમનં મવતીતિ પ્રતિપાદિતમ્, અધુના પ્રાસુકાદારમોજિનો નિરુદ્ધમવપપ્ત્ત્યાદિવિશેષણવિશિષ્ટસ્ય સાધોઃ પુનઃ કા ગતિર્મવતીતિ પ્રતિપાદના- યાહ—' મહાર્ઘં ણં મતે ' इत्यादि ।

મૂલ્ય—મહાર્ઘં ણં મતે ! નિયતે નિરુદ્ધમવે, નિરુદ્ધમવ પવષે, જાવ નિદ્વિયટ્કરણિજ્જે, ણો પુનરવિ હત્યત્ય હવ્વં આગચ્છહ ? હતા ગોયમા ! મહાર્ઘં ણ નિયતે જાવ પુનરવિ હત્યત્યં હવ્વં આગચ્છહ, સે ણ મતે કિં વત્તવ્વ સિયા ? ગોયમા ! સિદ્ધેત્તિ વત્તવ્વ સિયા બુદ્ધેત્તિ વત્તવ્વ સિયા, મુત્તેત્તિ વત્તવ્વ સિયા, પારગપ્તિ વત્તવ્વ સિયા, પરપરગપ્તિ વત્તવ્વ સિયા, સિદ્ધે બુદ્ધે મુત્તે પરિનિવ્વુદે અતકઢે સવ્વદુક્કલપહીણેત્તિ વત્તવ્વ સિયા, સેવ મતે સેવ મતેત્તિ મગવ ગોયમે સમણ મગવ મહાવીર વદહ નમસહ, વદિત્તા નમસિત્તા, સજમેણં તવસા અપ્પાણ ભાવેમાણે વિહરહ ॥ સૂ. ૬ ॥

જા સક્રાતા હૈ । (તેજદ્વેષં પાણે સ્તિ વક્તવ્યં સિયા) इसलिये हे गौतम ! इन कारणोंको लेकर (पाणें स्तિ वक्तव्यं सिया जाव वेदोस्ति वक्तव्यं सिया) निर्ग्रन्थ ग्रीव प्राणसे लेकर वेदवक्त्रके शब्दोंद्वारा कहा जा सकता है ॥ सू. ५ ॥

કારણે તેને “વેદ પણુ કહી શકાય છે ” સે તેજદ્વેષં પાણેષિ વક્તવ્યં સિયા- જાવ વેદોષિ વક્તવ્યં સિયા” હે ગૌતમ ! તે કારણે નિર્ગ્રન્થ ગ્રીવને પ્રાણથી હવ્વં વેદ મુખીના શબ્દો વડે જોળખાવી શકાય છે ॥ સૂ. ૫ ॥

છાયા—મૃતાદી સ્વલ્પ ભદન્ત ! નિર્ગ્રન્થો નિરુદ્ધભવો નિરુદ્ધભવપ્રપન્ચો યાવત્ નિષ્ઠિતાર્થકરણીયો નો પુનરપિ અત્રસ્થં હવ્વં આગચ્છતિ, હન્ત ગૌતમ ! મૃતાદી નિર્ગ્રન્થો યાવત્ નો પુનરપિ અત્રસ્થં હવ્વં આગચ્છતિ । સ સ્વલ્પ ભદન્ત ! કિં વક્તવ્યં

અभी पहिले ऐसा प्रतिपादन किया जा चुका है कि जो श्रमण निर्ग्रन्थ प्राप्त भोजी तो है, परन्तु यदि वह अनिरुद्धभवप्रपंच आदि विशेषणवाले है तो उसका भी चतुर्गतिरूप संसार सागर में ही बार २ श्रमण होता रहता है । अब सूत्रकार यह कहते हैं कि जो श्रमण निर्ग्रन्थ प्राप्त आहार भोजी है और साथ में निरुद्धभवप्रपंच आदि विशेषणवाला भी है तो उसकी क्या गति होती है सो कहते हैं 'मडाई णं भंते' इ.

सूत्रार्थ—(भंते ! निरुद्धभवे निरुद्धभवपंचं जाव निद्वियद्वकरणिज्जे मडाई णं नियंटे) हे भदन्त ! जिसने अपना अग्रेतन जन्म निरुद्ध कर दिया है, अपने भवप्रपंच को रोक दिया है यावत् जिसका कार्य पूर्ण हुए कार्य की तरह पूर्ण समाप्त हो चुका है ऐसा वह मृतादी श्रमण निर्ग्रन्थ क्या (पुनरवि इत्थत्थं हव्वं णो आगच्छइ) फिर से भी मनुष्य आदि गतिरूप संसार को प्राप्त नहीं करता है ? (हंता गोयमा) हां गौतम ! (मडाई णं नियंटे जाव पुनरवि इत्थत्थं हव्वं नो आगच्छइ) निरुद्धभव आदि विशेषण वाला मृतादी श्रमण निर्ग्रन्थ यावत् फिर से भी मनुष्य

આગળ એવું પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે કે જે શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ પ્રાપ્તક આહાર ગ્રહણ કરનાર છે, પણ અનિરુદ્ધ ભવપ્રપંચ આદિ વિશેષણો વાળો હોય છે તેને પણ ચતુર્ગતિરૂપ સંસારમાં વારંવાર જન્મણ કરવું પડે છે. હવે એ બતાવામાં આવે છે કે જે શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ પ્રાપ્તક આહારને ઉપયોગ કરતો હોય અને નિરુદ્ધ ભવપ્રપંચ વગેરે વિશેષણો વાળો હોય તેની કેવી ગતિ થાય છે !

“મઢાઈ ણ મંતે ! ”

સૂત્રાર્થ— (મંતે ! નિરુદ્ધભવે નિરુદ્ધભવપંચં જાવ નિદ્વિયદ્વકરણિજ્જે મઢાઈણં નિયંટે) હે ભગવન ! જેણે પોતાના આગામી ભવનો નિરોધ કરી નાખ્યો છે, પોતાના ભવવિસ્તારનો નિરોધ કર્યો છે, યાવત્ જેનું કાર્ય સંપૂર્ણ થયેલા કાર્યની જેમ પૂર્ણ થઈ ગયેલું છે (એટલે એવો કે જે કૃતકૃત્ય થઈ ગયેલ છે) એવો મૃતાદી શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ શુ (પુનરવિ ઇત્થત્થં હવ્વં ણો આગચ્છઈ ?) ફરીથી મનુષ્ય વગેરે ચાર ગતિ વાળા સંસારને પ્રાપ્ત કરતો નથી ? (હંતા ગોયમા !) હા ગૌતમ ! (મઢાઈ ણ નિયંટે જાવ પુનરવિ ઇત્થત્થં હવ્વ નો આગચ્છઈ) નિરુદ્ધ ભવ વગેરે વિશેષણો વાળો મૃતાદી શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ મનુષ્ય વગેરે ચતુર્ગતિરૂપ

સ્યાત્, ગૌતમ સિદ્ધ ઇતિ વક્તવ્ય સ્યાત્, બુદ્ધ ઇતિ વક્તવ્ય સ્યાત્, મુક્ત ઇતિ વક્તવ્ય સ્યાત્, પારગત ઇતિ વક્તવ્ય સ્યાત્, પરંપરાગત ઇતિ વક્તવ્ય સ્યાત્, સિદ્ધા બુદ્ધઃ મુક્ત પરિનિર્વૃત્ત અન્તઃકૃત્ સર્વદુઃસ્વપ્રહીણ ઇતિ વક્તવ્ય સ્યાત્, તદેવં મદન્ત ! તદેવં મદન્ત ! ઇતિ મગવાન્ ગૌતમ ધ્રમણં મગયન્ત મહાવીર વન્દતે નમસ્પતિ વન્દિત્વા નમસ્યિત્વા સયમેન તપસા આત્માર્ન માવયન્ વિહરતિ ॥૬૦૬॥

આદિ ગતિરૂપ સસાર કો પ્રાપ્ત નહીં કરતા હૈ । (સે જ મંતે ! કિં વક્તવ્ય સિયા ? હે મદન્ત ! આત્મકલ્યાણ કરને ઘાલા વહ ધ્રમણનિર્મલ્લ અનગાર કિસ નામ સે કહા જા સકતા હૈ ? (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (સિદ્ધેત્તિ વક્તવ્ય સિયા) પૂર્વોક્ત વિશેષણ ઘાલા વહ ધ્રમણ નિર્મલ્લ અનગાર (સિદ્ધ) હસ નામ સે કહા જા સકતા હૈ । (બુદ્ધેત્તિ વક્તવ્ય સિયા) બુદ્ધ હસ નામ સે કહા જા સકતા હૈ । (મુક્તેત્તિ વક્તવ્ય સિયા) (મુક્ત) હસ નામ સે કહા જા સકતા હૈ । (પારગત્તિ વક્તવ્ય સિયા) (પારગત) હસ નામ સે કહા જા સકતા હૈ । (પરપરાગત્તિ વક્તવ્ય સિયા) (પરંપરાગત) હસ નામ સે કહા જા સકતા હૈ । (સિદ્ધે બુદ્ધે મુક્તે, પરિનિવ્યુદ્ધે અંતઃકરે, સન્વદુષ્કલપ્રહીણે સ્તિ વક્તવ્ય સિયા) સિદ્ધ, બુદ્ધ, મુક્ત, પરિનિર્વૃત્ત, અન્તઃકૃત, સર્વદુષ્કલપ્રહીણ હસ તરહ જન શબ્દો દ્યારા વહ કહા જા સકતા હૈ । (સેધ મંતે ! સેધ મંતે ! મગય ગોયમે સમણં મગય મહાવીરં વદહ નમંસહ વંદિત્તા નમંમિસા સજમેણં તપસા અપ્પાણં માધેમાણે વિહરહ) હે મદન્ત ! આપને જો કહો હૈ વહ પેમા

સસારમા ફરી જ મ લેતો નથી. (સ મંતે ! કિં વક્તવ્ય સિયા ?) હે મદવન, આત્મકલ્યાણ કરનાર તે ધ્રમણ નિર્મલ્લ અને કયા કયા નામે ઓળખી શકાય । (ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (સિદ્ધેત્તિ વક્તવ્ય સિયા) પૂર્વોક્ત વિશેષણોવાળા તે ધ્રમણ નિર્મલ્લને ‘સિદ્ધ’ નામથી કહી શકાય છે, (બુદ્ધેત્તિ વક્તવ્ય સિયા) ‘બુદ્ધ’ પણ કહી શકાય છે, (મુક્તેત્તિ વક્તવ્ય સિયા) ‘મુક્ત’ પણ કહી શકાય છે, (પારગત્તિ વક્તવ્ય સિયા) ‘પારગત’ પણ કહી શકાય છે (પરપરાગત્તિ વક્તવ્ય સિયા) ‘પરંપરાગત’ પણ કહી શકાય છે (સિદ્ધે બુદ્ધે, મુક્તે પરિનિવ્યુદ્ધે અનંતરે સન્વદુષ્કલપ્રહીણ સ્તિ વક્તવ્ય સિયા) સિદ્ધ, બુદ્ધ, મુક્ત પરિનિર્વૃત્ત, અન્તઃકૃત અને સર્વ દુષ્કલપ્રહીણ પણ કહી શકાય છે (તેવં મંતે ! મગય ગોયમે સમણં મગય મહાવીરં વદહ નમંસહ વંદિત્તા નમમિસા સજમેણં તપસા અપ્પાણં માધેમાણે વિહરહ) હે મદવન ! આપે જે શબ્દો તે વક્તવ્ય જ છે હે મદવન ! આપની જાત મ થી છે આ પ્રધાત્તે કહીને મદવન

છાયા—મૃતાદી સ્વભૂત ! નિર્ગ્રન્થો નિરુદ્ધભવો નિરુદ્ધભવપ્રપંચો યાવત્ નિષ્ઠિતાર્થકરણીયો નો પુનરપિ અત્રસ્થં હવ્વં આગચ્છતિ, હન્ત ગૌતમ ! મૃતાદી નિર્ગ્રન્થો યાવત્ નો પુનરપિ અત્રસ્થં હવ્વં આગચ્છતિ । સ સ્વભૂત ! કિં વક્તવ્યં

અમી પહિલે એસા પ્રતિપાદન ક્રિયા જા ચુકા હૈ કિ જો શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ પ્રાસુક ભોજી તો હૈ, પરન્તુ યદિ વહ અનિરુદ્ધભવપ્રપંચ આદિ વિશેષણવાલે હૈ તો ઉસકા ભી ચતુર્ગતિરૂપ સંસાર સાગર મેં હી વાર ૨ શ્રમણ હોતા રહતા હૈ । અવ સૂત્રકાર યહ કહતેં હૈં કિ જો શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ પ્રાસુક આહાર ભોજી હૈ ઓર સાથ મેં નિરુદ્ધભવપ્રપંચ આદિ વિશેષણવાલા ભી હૈ તો ઉસકી ક્યા ગતિ હોતી હૈ સો કહતેં હૈં 'મઢાઈ ણં મંતે' હ.

સૂત્રાર્થ—(મંતે ! નિરુદ્ધભવે નિરુદ્ધભવપ્રપંચે જાવ નિદ્વિયદ્વકરણિજ્જે મઢાઈ ણં નિયંટે) હે મદન્ત ! જિસને અપના અગ્રેતન જન્મ નિરુદ્ધ કર દિયા હૈ, અપને ભવપ્રપંચ કો રોક દિયા હૈ યાવત્ જિસકા કાર્ય પૂર્ણ હુએ કાર્ય કી તરહ પૂર્ણ સમાપ્ત હો ચુકા હૈ એસા વહ મૃતાદી શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ ક્યા (પુનરવિ દિત્થત્થં હવ્વં ણો આગચ્છહ) ફિર સે ભી મનુષ્ય આદિ ગતિરૂપ સંસાર કો પ્રાપ્ત નહીં કરતા હૈ ? (હંતા ગોયમા) હાં ગૌતમ ! (મઢાઈ ણં નિયંટે જાવ પુનરવિ દિત્થત્થં હવ્વં નો આગચ્છહ) નિરુદ્ધભવ આદિ વિશેષણ વાલા મૃતાદી શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ યાવત્ ફિર સે ભી મનુષ્ય

આગણ એવું પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે કે જે શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ પ્રાસુક આહાર ગ્રહણ કરનાર છે, પણ અનિરુદ્ધ ભવપ્રપંચ આદિ વિશેષણો વાળો હોય છે તેને પણ ચતુર્ગતિરૂપ સંસારમાં વારંવાર શ્રમણ કરવું પડે છે. હવે એ બતાવવામાં આવે છે કે જે શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ પ્રાસુક આહારને ઉપયોગ કરતો હોય અને નિરુદ્ધ ભવપ્રપંચ વગેરે વિશેષણો વાળો હોય તેની કેવી ગતિ થાય છે !

“ મઢાઈ ણં મંતે ! ”

સૂત્રાર્થ— (મંતે ! નિરુદ્ધભવે નિરુદ્ધભવપ્રપંચે જાવ નિદ્વિયદ્વકરણિજ્જે મઢાઈ ણં નિયંટે) હે ભગવન્ ! જેણે પોતાના આગામી ભવનો નિરોધ કરી નાખ્યો છે, પોતાના ભવવિસ્તારનો નિરોધ કર્યો છે, યાવત્ જેવું કાર્ય સંપૂર્ણ થયેલા કાર્યની જેમ પૂર્ણ થઈ ગયેલું છે (એટલે એવો કે જે કૃતકૃત્ય થઈ ગયેલ છે) એવો મૃતાદી શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ શું (પુનરવિ દિત્થત્થં હવ્વં ણો આગચ્છહ ?) ફરીથી મનુષ્ય વગેરે ચાર ગતિ વાળા સંસારને પ્રાપ્ત કરતો નથી ? (હંતા ગોયમા !) હા ગૌતમ ! (મઢાઈ ણં નિયંટે જાવ પુનરવિ દિત્થત્થં હવ્વં નો આગચ્છહ) નિરુદ્ધ ભવ વગેરે વિશેષણો વાળો મૃતાદી શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ મનુષ્ય વગેરે ચતુર્ગતિરૂપ

સ્પાત્, ગૌતમ સિદ્ધ इति वक्तव्यं स्यात् बुद्ध इति वक्तव्यं स्यात् मुक्त इति वक्तव्यं
 स्यात्, पारगत इति वक्तव्यं स्यात्, परंपरागत इति वक्तव्यं स्यात्, सिद्धः
 बुद्ध मुक्त परिनिर्मुक्तः अन्तकृत सर्वदुःखप्रहीण इति वक्तव्यं स्यात्, तदेवं
 भवन्त । तदेव भवन्त । इति मगवान् गौतम भ्रमणं मगवन्तं महावीरं पन्दते
 नमस्यति वन्दित्वा नमस्यित्वा समयेन तपसा आत्मानं भाषयन् विहरति । ॥५॥

આવિ ગતિરૂપ સંસાર કો પ્રાપ્ત નહીં કરતા હૈ । (સે ણ ભતે ! કિં વત્ત
 વ્થ સિયા ? હે ભવન્ત ! આત્મકથ્થાણ કરને વાલાં વહ્ અમણનિર્જ્ઞ
 અનગાર કિસ નામ સે કહા જા સકતા હૈ ? (ગોયમા) હૈ ગૌતમ !
 (સિદ્ધેસિ વત્તવ્થ સિયા) પૂર્વોક્ત વિશેષણ વાલાં વહ્ અમણ નિર્જ્ઞ
 અનગાર (સિદ્ધ) હસ નામ સે કહા જા સકતા હૈ । (બુદ્ધેસિ વત્તવ્થ
 સિયા) બુદ્ધ હસ નામ સે કહા જા સકતા હૈ । (મુક્તેસિ વત્તવ્થ સિયા)
 (મુક્ત) હસ નામ સે કહા જા સકતા હૈ । (પારગપ્પ સિ વત્તવ્થ સિયા)
 (પારગત) હસ નામ સે કહા જા સકતા હૈ । (પરપરગપ્પ સિ વત્તવ્થ
 સિયા) (પરંપરાગત) હસ નામ સે કહા જા સકતા હૈ । (સિદ્ધે બુદ્ધે
 મુક્તે, પરિનિબ્બુદ્ધે અંતકહે, સબ્બદુક્ખપ્રહીણે સિ વત્તવ્થ સિયા) સિદ્ધ,
 બુદ્ધ, મુક્ત, પરિનિર્વૃત્ત, અન્તકૃત, સર્વદુક્ખપ્રહીણ હસ તરહ્ ઇન શબ્દો
 દ્વારા વહ્ કહા જા સકતા હૈ । (સેવ્ ભતે ! સેવ્ ભતે ! મગધં ગોયમે
 સમણં મગધં મહાવીરં વંદહ્ નમંસહ્ વંદિત્તા નમંસિત્તા સંજમેણં તવસા
 અપ્પાણં ભાવેમાણે વિહરહ્) હે ભવન્ત ! આપને જો કહો હૈ વહ્ પેસા

સંસારમાં ફરી જન્મ લેતો નથી. (સે મતે ! કિં વત્તવ્થ સિયા ?) હે ભગવન્
 આત્મકથ્થાણ કરનાર તે અમણ નિર્જ્ઞને કયાં કયાં નામે બોળખી શકાય !
 (ગોયમા !) હૈ ગૌતમ ! (સિદ્ધેસિ વત્તવ્થ સિયા) પૂર્વોક્ત વિશેષણોના
 તે અમણ નિર્જ્ઞને 'સિદ્ધ' નામથી કહી શકાય છે, (બુદ્ધેસિ વત્તવ્થ સિયા)
 "બુદ્ધ" પણ કહી શકાય છે, (મુક્તેસિ વત્તવ્થ સિયા) " મુક્ત " પણ કહી
 શકાય છે, (પારગપ્પ સિ વત્તવ્થ સિયા) " પારગત " પણ કહી શકાય છે
 (પરપરગપ્પ સિ વત્તવ્થ સિયા) " પરંપરાગત " પણ કહી શકાય છે, (સિદ્ધે, બુદ્ધે,
 મુક્તે, પરિનિબ્બુદ્ધે, અંતકહે, સબ્બદુક્ખપ્રહીણેસિ વત્તવ્થ સિયા) સિદ્ધ, બુદ્ધ,
 મુક્ત, પરિનિર્વૃત્ત, અંતકૃત અને ત્રય દુઃખ પ્રતીજ્ઞ, પણ કહી શકાય છે (સેવ્ ભતે !
 સેવ્ ભતે ! મગધ ગોયમે સમણ મગધ મહાવીરં વંદહ્ નમંસહ્ વંદિત્તા નમમિત્તા
 સંજમેણં તવસા અપ્પાણં ભાવેમાણ વિહરહ્) હે ભગવન્ ! આપે જે કહું તે
 યથાય જ છે હે ભગવન્ ! આપની વાત સાચી છે આ પ્રમાણે કહીને ભગવન્

ટીકા—'મઢાઈ ણં મંતે' મૃતાદી સ્વલ્પ મદન્ત ! 'નિયંટે' નિર્ગ્રન્થઃ 'નિરુદ્ધભવે' નિરુદ્ધભવઃ નિરુદ્ધઃ મવ. અગ્રેતનં જન્મ યેન સ નિરુદ્ધભવઃ ચરમભવપ્રાપ્ત ઇત્યર્થઃ, 'નિરુદ્ધભવપવંચે' નિરુદ્ધભવપ્રપન્નઃ અપ્રાપ્તભવવિસ્તાર ઇત્યર્થઃ, 'જાવ નિદ્વિયટ્ટકરણિજ્જે' યાવત્ નિષ્ઠિતાર્થકરણીયઃ યાવત્પદેન—'પહીણસંસારે, પહીણ-સંસારવેયણિજ્જે, વોચ્છિન્નસંસારવેયણિજ્જે, નિદ્વિયટ્ટે' एतेषां विशेषणानाम् ग्रहणं कर्तव्यम्, तत्र 'पहीणसंसारे' प्रहीणसंसारः दूरीकृतचतुर्गतिगमन इत्यर्थः, 'पहीणसंसारवેયણિજ્જે' પ્રહીણસંસારવેદનીયઃ, પ્રહીણસંસારવેદ્યકર્મા, 'વોચ્છિન્નસંસારે' વ્યવચ્છિન્નસંસારઃ, ત્રુટિતચતુર્ગતિગમનાનુબન્ધઃ, અતएव—'વોચ્છિન્નસંસારવેયણિજ્જે' વ્યવચ્છિન્નસંસારવેદનીયઃ, વ્યવચ્છિન્નમ્ અનુબન્ધ

હી હૈ અર્થાત્ સત્ય હૈ હસ પ્રકાર કહ કર ભગવાન્ ગૌતમ ને શ્રમણ ભગવાન્ મહાવીર કો વંદન કિયા, નમસ્કાર કિયા । વંદન નમસ્કાર કરકે ફિર વે સંયમ ઓર તપ સે અપની આત્મા કો ભાવિત કરતે હુए વિચરને લગે ॥ સૂ-૬ ॥

ટીકાર્થ—(મઢાઈ ણં મંતે નિયંટે) હે મદન્ત ! મૃતાદી નિર્ગ્રન્થ કિ જિસને અપના (નિરુદ્ધભવે) અગ્રેતન જન્મ નિરુદ્ધ કર દિયા હૈ, અર્થાત્ જો ચરમભવ કો પ્રાપ્ત હુઆ હૈ (નિરુદ્ધભવપવંચે) જિસે અવ ભવ કા વિસ્તાર પ્રાપ્ત કરના બાકી નહીં રહા હૈ (જાવ નિદ્વિયટ્ટકરણિજ્જે) યાવત્ નિષ્ઠિતાર્થ કરણીય (પહીણસંસારે) જિસને ચતુર્ગતિ મેં શ્રમણ કરને રૂપ અપને સંસાર કો દૂર કર દિયા હૈ (પહીણસંસાર વેયણિજ્જે) સંસારવેદ્યકર્મ જિસકા નષ્ટ હો ચુકા હૈ (વોચ્છિન્ન સંસારે) જિસકા ચતુર્ગતિ ગમનાનુબંધ ટૂટ ચુકા હૈ અતएव (વોચ્છિન્નસંસારવેયણિજ્જે)

ગૌતમે ભગવાન મહાવીરને વંદણા કરી નમસ્કાર કર્યા વંદણા નમસ્કાર કરીને તેઓ સંયમ અને તપથી પોતાના આત્માને ભવિત કરતા વિચારવા લાગ્યા, એટલે કે પોતાને સ્થાને ગયા. ॥ સૂ. ૬ ॥

ટીકાર્થ—“મઢાઈ ણ મંતે ! નિયંટે” હે ભગવન્ ! મૃતાદી નિર્ગ્રન્થ અશ્વિત્ત વસ્તુનો આહાર કરનાર શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ કે જેણે (નિરુદ્ધભવે) પોતાના આગામી ભવનો નિરોધ કર્યો છે એટલે કે જે ચરમભવને પામેલા છે, (નિરુદ્ધભવપવંચે) જેને ભવનો વિસ્તાર પ્રાપ્ત કરવાનું બાકી રહેલ નથી, (પહીણસંસારે) જેણે ચતુર્ગતિરૂપ સંસારમાં શ્રમણ કરવાનું દૂર કરી નાખ્યું છે (પહીણસંસારવેયણિજ્જે) જેના સંસારવેદ્ય કર્મ નષ્ટ થઈ ચૂક્યા છે, (વોચ્છિન્નસંસારે) ચતુર્ગતિરૂપ સંસારમાં ગમન કરાવનાર કર્મનો બંધ જેને તૂટી ગયો છે, “વોચ્છિન્ન” જે ” જેના સંસાર વેદનીય કર્મનો સર્વથા

વ્યવચ્છેદેન વિનાશિત ચતુર્ગતિગમનવેદ્ય કર્મ યન સ વ્યવચ્છિન્નસંસારવેદનીય
 इति, 'निष्ठियष्टे' निष्ठितार्थ = संपादितमयोजन 'निष्ठियष्टकरणिज्जे' निष्ठि
 तार्थकरणीय, निष्ठितः=सम्पन्न अर्थः=मयोजनं यत्र सः, एतादृशः करणीयः=
 कर्षण्यो यस्य स तथा कृतकृत्य इत्यर्थ, एतादृशः स मृतादी अनगार
 'नो पुनरपि' नो पुनरपि 'इत्यर्थ' अप्रस्थ-मर्ष=तिर्यङ्मरामरनारक रूपचतु
 र्गतिभ्रमणरूपं संसारं 'इव' इति धानयालङ्कारे 'आगच्छ' आगच्छति, न
 संसारे समायातीत्यर्थः, हे भवन्त ! येन संसारस्य निरोधः कृतः संसारप्रपञ्चापि
 दूरीकृतः तथा व्यवच्छिन्नसंसारादिविशेषणयुतः संपादितमयोजनादिः द्विः
 स किं पुनः पुनर्न संसारचक्रमागच्छसीति प्रश्नः । मगधानाह—'गोयमा'
 इत्यादि, 'गोयमा' हे गौतम ! 'महाई णं नियंठ' मृतादी खलु निर्गन्ध, 'जाव
 नो पुनरपि', यावत् नो पुनरपि 'इत्यर्थ' अप्रस्थ=तिर्यङ्मरामरनारकगतिगमन-
 रूपं संसारम् 'इव आगच्छ' इव आगच्छति, न पुनः संसारमागच्छतीत्यर्थः

સંસાર વેદનીયકર્મ जिसका व्यवच्छिन्न हो गया है, अर्थात् अनुबन्ध के
 व्यवच्छेद से जिसने चतुर्गतिगमन वेद्य कर्म नष्ट कर दिया है (निष्ठि
 यष्टे) जिसने अपना कार्य सिद्ध कर लिया है (निष्ठियष्टकरणिज्जे)
 तथा—जिसका कार्य पूर्ण हुए कार्य की तरह पूर्ण समाप्त हो चुका है—
 अर्थात् जो कृतकृत्य हो चुका है ऐसा वह मृतादी अनगार (इत्यर्थ)
 अप्रस्थमर्ष को—अर्थात् चतुर्गतिभ्रमण रूप संसार को क्या (नो पुनरपि
 आगच्छ) फिर से नहीं प्राप्त करता है ? अर्थात् ऐसा अमज अनगार
 फिर से संसारमें जन्ममरण नहीं करता है क्या ? इसका उत्तर देते हुए
 प्रभु गौतम से कहते हैं—(गोयमा) हे गौतम ! (महाई णं नियंठ)
 मृतादी निर्गन्ध (जाव नो पुनरपि इत्यर्थ इव आगच्छ) यावत् फिर
 के वह चतुर्गति भ्रमणरूप संसार में नहीं जाता है । अर्थात् सिद्ध हो

નારા થઈ ગયો છે એટલે કે અનુબંધના છેદનને લીધે એણે આગતિરૂપ સંસારમાં
 જમાં જમણું કરાવનાર વેદ્ય કર્યોના નાશ કરી નાખ્યો છે (નિષ્ઠિયષ્ટે) એણે
 પોતાનું કાર્ય સિદ્ધ કરી લીધું છે, (નિષ્ઠિયષ્ટકરણિજ્જે) તથા જે કૃતકૃત્ય થઈ
 બનેલું છે એવો તે મૃતાદી અનગાર (इत्यर्थ) ચતુર્ગતિ જમણરૂપ સંસારને ॥
 (નો પુનરપિ આગચ્છ) ફરીથી પ્રાપ્ત કરતો નથી ? એટલે કે એવો જમણ
 નિર્બંધ શું સંસારમાં ફરીથી જન્મ મરણ પામતો નથી, તેનો ઉત્તર પ્રભુ આ
 પ્રભાણે આપે છે 'ગોયમા' હે ગૌતમ ! 'મહાઈ ણં નિયંટ' એવો મૃતાદી નિર્બંધ
 (જાવ નો પુનરપિ इत्यर्थ इव आगच्छ) ફરીથી આ આગતિરૂપ સંસાર
 રમાં જન્મ લેતો નથી. એટલે કે તે સિદ્ધપણ પામે છે તે જમણ નિર્બંધને

ટીકા—‘મડાઈ ણં મંતે ’ મૃતાદી સ્વલુ મદન્ત ! ‘ નિયંટે ’ નિર્ગ્રન્થઃ ‘ નિરુદ્ધભવે ’ નિરુદ્ધભવઃ નિરુદ્ધઃ ભવઃ અગ્રેતનં જન્મ યેન સ નિરુદ્ધભવઃ ચરમભવપ્રાપ્ત ઇત્યર્થઃ, ‘ નિરુદ્ધભવપવંચે ’ નિરુદ્ધભવપ્રપન્નઃ અપ્રાપ્તભવવિસ્તાર ઇત્યર્થઃ, ‘ જાવ નિદ્વિયટ્કરણિજ્જે ’ યાવત્ નિષ્ઠિતાર્થકરણીયઃ યાવત્પદેન—‘ પહીણસંસારે, પહીણસંસારવેયણિજ્જે, વોચ્છિન્નસંસારવેયણિજ્જે, નિદ્વિયટ્કે ’ एतेषां विशेषणानाम् પ્રહણં કર્તવ્યમ્, તત્ર ‘ પહીણસંસારે ’ પ્રહીણસંસારઃ દૂરીકૃતચતુર્ગતિગમન ઇત્યર્થઃ, ‘ પહીણસંસારવેયણિજ્જે ’ પ્રહીણસંસારવેદનીયઃ, પ્રહીણસંસારવેદ્યકર્મા, ‘ વોચ્છિન્નસંસારે ’ વ્યવચ્છિન્નસંસારઃ, ત્રુટિતચતુર્ગતિગમનાનુબન્ધઃ, અતएव—‘ વોચ્છિન્નસંસારવેયણિજ્જે ’ વ્યવચ્છિન્નસંસારવેદનીયઃ, વ્યવચ્છિન્નમ્ અનુબન્ધ

હી હૈ અર્થાત્ સત્ય હૈ હસ પ્રકાર કહ કર ભગવાન્ ગૌતમ ને શ્રમણ ભગવાન્ મહાવીર કો વંદન કિયા, નમસ્કાર કિયા । વંદન નમસ્કાર કરકે ફિર વે સંયમ ઔર તપ સે અપની આત્મા કો ભાવિત કરતે હુए વિચરને લગે ॥ સૂ-૬ ॥

ટીકાર્થ—(મડાઈ ણં મંતે નિયંટે) હે મદન્ત ! મૃતાદી નિર્ગ્રન્થ કિ જિસને અપના (નિરુદ્ધભવે) અગ્રેતન જન્મ નિરુદ્ધ કર દિયા હૈ, અર્થાત્ જો ચરમભવ કો પ્રાપ્ત હુઆ હૈ (નિરુદ્ધભવપવંચે) જિસે અવ ભવ કા વિસ્તાર પ્રાપ્ત કરના બાકી નહીં રહા હૈ (જાવ નિદ્વિયટ્કરણિજ્જે) યાવત્ નિષ્ઠિતાર્થ કરણીય (પહીણસંસારે) જિસને ચતુર્ગતિ મેં શ્રમણ કરતે રૂપ અપને સંસાર કો દૂર કર દિયા હૈ (પહીણસંસાર વેયણિજ્જે) સંસારવેદ્યકર્મ જિસકા નષ્ટ હો ચુકા હૈ (વોચ્છિન્ન સંસારે) જિસકા ચતુર્ગતિ ગમનાનુબન્ધ દૂટ ચુકા હૈ અતएव (વોચ્છિન્નસંસારવેયણિજ્જે)

ગૌતમે ભગવાન મહાવીરને વંદણા કરી નમસ્કાર કર્યા વંદણા નમસ્કાર કરીને તેઓ સંયમ અને તપથી પોતાના આત્માને ભવિત કરતા વિચારવા લાગ્યા, એટલે કે પોતાને સ્થાને ગયા ॥ સૂ. ૬ ॥

ટીકાર્થ—“મડાઈ ણ મંતે ! નિયંટે ” હે ભગવન્ ! મૃતાદી નિર્ગ્રન્થ અચિત્ત વસ્તુનો આહાર કરનાર શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ કે જેણે (નિરુદ્ધભવે) પોતાના આગામી ભવનો નિરોધ કર્યો છે એટલે કે જે ચરમભવને પામેલા છે, (નિરુદ્ધભવપવંચે) જેને ભવનો વિસ્તાર પ્રાપ્ત કરવાનું બાકી રહેલ નથી, (પહીણસંસારે) જેણે ચતુર્ગતિરૂપ સંસારમાં શ્રમણ કરવાનું દૂર કરી નાખ્યું છે. (પહીણસંસારવેયણિજ્જે) જેના સંસારવેદ્ય કર્મ નષ્ટ થઈ ચૂક્યાં છે, (વોચ્છિન્નસંસારે) ચતુર્ગતિરૂપ સંસારમાં ગમન કરાવનાર કર્મનો બંધ જેને તૂટી ગયો છે, “વોચ્છિન્નસંસારવેયણિજ્જે ” જેના સંસાર વેદનીય કર્મનો સર્વથા

ગત્તિ ઇતિ વક્તવ્ય સ્યાત્, સસારપારગમિત્વાત્ યદ્યપિ પતાશ્ચો મુનિર્નેદામીં
સસારસાગરસ્ય પારગત્તિ કિન્તુ કાલાન્તરે પાર ગમિષ્યમાણત્વાત્ માદિનિ ધૃત્વ
દુપચારાત્ પારગત્તિ ઇતિ કથ્યતે, 'પરપરાગણ્તિ વક્તવ્ય સિયા' પરંપરાગત્તિ
વક્તવ્ય સ્યાત્, પરંપરયા મિથ્યાત્વાદિગુણસ્થાનકાનાં મનુષ્યાદિગતીનાં ચા પારં
પર્યેણ ગત્તિ=પ્રાપ્ત ઇતિ પરંપરાગત્તિ અથવા પરંપરયા મુક્તપુરુષાણાં ચા પરંપરા તથા
પરંપરયા ગત્તિ: કર્મજાલ વ્યતિક્રાન્ત ઇતિ । પરંપરાગત્તિ ઇતિ અથ નિગમયમા-
'સિદ્ધે' ઇત્યાદિ । 'સિદ્ધે બુદ્ધે મુક્તે પરિનિવૃદ્ધે અંતઃકુદ્ધે સંવૃદ્ધક્લેષપ્રહીજેષિ
વક્તવ્ય સિયા' સિદ્ધો બુદ્ધો મુક્તઃ પરિનિર્વૃત્ત, અંતઃકુદ્ધઃ સર્વદુઃસ્વપ્રતીજ્ઞ ઇતિ વક્તવ્યં

કે કારણ વહ (પારગત) હસ શબ્દ સે કહા જાતા હૈ । યદ્યપિ પેસા
મુનિ અમી સસાર સાગર કે પારગત નહીં જુઆ હૈ આગે વહ ઉસકે પરિ
કો પ્રાપ્ત કરને ઘાલા યનેગા-પરન્તુ અમી જો ઉસે (પારગત) : હસ શબ્દ
સે વ્યવહાર કા વિષયમૂલ કહ દિયા ગયા હૈ સો ઉસકો હોને વાલી
અવસ્થા કો યહાં હો જુકી અવસ્થા માનકર (પારગત) કહા ગયા હૈ ।
(પરંપરાગણ્તિ વક્તવ્ય સિયા) પરંપરાગત્તિ હસ શબ્દ સે જો ઉસે વક્ત
વ્ય કહા ગયા હૈ ઉસકા તાત્પર્ય યહ હૈ કિ ઉસને જો સંસારરૂપ સમુદ્ર
કી પાર કો પ્રાપ્ત કિયા, વહ મિથ્યાત્વ આદિ ગુણસ્થાનોં કી અથવા મનુ
ષ્ય આદિ સુગતિ કી પરંપરા સે પ્રાપ્ત કિયા હૈ । અથવા મુક્ત પુરુષોં કી
જો પરમ્પરા કર્મ જાલ સે વૃત્ત હોને કી હૈ વસી પરંપરા કે અનુસાર યહ
અમી કર્મ જાલ સે વૃત્ત જુઆ હૈ અતઃ યહ (પરંપરાગત) હસ શબ્દ સે અમી
વ્યવહાર કા વિષય બન સકતા હૈ । અથ કથિત અર્થ કો નિગમન કરતે
દુપ સૂત્રકાર કહતે હૈ કિ-(સિદ્ધે, બુદ્ધે, મુક્તે, પરિનિવૃદ્ધે, અંતઃકુદ્ધે,

સરી ગયા હોય છે તેથી તેમને માટે "પારગત" શબ્દનો પ્રયોગ પણ કરી
શકાય છે એ કે તે મુનિ હતા સસાર સાગરને તરીકે જ્યાં નથી, છતાં પણ
તેમને માટે "પારગત" શબ્દનો જે પ્રયોગ કરવામાં આવ્યો છે તે આગળ
પ્રાપ્ત થનારી સિદ્ધ અવસ્થા પ્રાપ્ત થઈ જશે એવું માનીને કરવામાં આવેલ છે
(પરંપરાગણ્તિ વક્તવ્ય સિયા) તેમને "પરંપરાગત" કહેવાનું કારણ એ છે કે
તેમણે જે સસારશ્રી સમુદ્રને પાર કરીને પ્રાપ્ત કરી છે તે મિથ્યાત્વ
વગેરે શુદ્ધિશાનોની અથવા મનુષ્ય વગેરે સુગતિની પરંપરાથી પ્રાપ્ત કરેલ છે
અથવા કમલગથી ફૂલ રહેવાની સુખ પુરુષોની જે પરંપરા છે તે પરંપરાને
અનુસરીને જ તેઓ કમલગથી ફૂલ રહ્યા છે તેથી તેમને "માટે પરંપરાગત"
શબ્દનો પણ પ્રયોગ કરી શકાય છે અને કથિત અર્થની સમાપ્તિ કરવાને માટે
સૂત્રકાર કહે છે કે (સિદ્ધે, બુદ્ધે, મુક્ત, પરિનિવૃદ્ધે, અંતઃકુદ્ધે, સંવૃદ્ધક્લેષ

અત્ર યાવત્પદેન નિરુદ્ધસંસારે નિરુદ્ધસંસારપંચે વોચ્છિન્નસંસારે इत्यादि પ્રશ્ન-
પ્રકરણોક્તસર્વવિશેષણાનાં સંગ્રહઃ કરणीयः, हे गौतम ! पूर्वकथितनिरुद्धसंसारोदि
विशेषणविशिष्टो मृतादी निर्ग्रन्थः न पुनः संसारं प्राप्नोतीति भावः । एतादृशो
निर्ग्रन्थजीवः केन केन शब्देन व्यवहरणीय इत्याशयेनाह—‘ से णं भंते’ इत्यादि ।
‘ से णं भंते ’ स खलु भदन्त ! ‘ किं वत्तव्वं सिया ’ किं वक्तव्यं स्यात् , केन
शब्देन व्यवहरणीय इत्यर्थः । भगवानाह—‘ गोयमा ’ इत्यादि । ‘ गोयमा ’
हे गौतम ! ‘ सिद्धेत्ति वत्तव्वं सिया ’ सिद्ध इति वक्तव्यं स्यात् , सिद्ध इति
शब्देन व्यवहरणीयः कृतसकलकार्यत्वात् । ‘ बुद्धेत्ति वत्तव्वं सिया ’ बुद्ध इति वक्तव्यं
स्यात् , विमलकेवललोकेन सकललोकालोकयोर्दर्शकत्वात् , ‘ मुत्तेत्ति वत्तव्वं सिया ’
मुक्त इति वक्तव्यं स्यात् , नष्टसकलकर्मत्वात् ‘ पारगएत्ति वत्तव्वं सिया ’ पार-

जाता है । ऐसा श्रमण निर्ग्रन्थ जीव किस किस शब्द के द्वारा व्यवहा-
रणीय होता है ? ऐसा पूछने के अभिप्राय से अब गौतम स्वामी प्रभु
महावीर से प्रश्न करते हैं—(से णं भंते । किं वत्तव्वं सिया) हे भदन्त !
वह पूर्वोक्त विशेषण वाला श्रमण निर्ग्रन्थ किन २ नामों से कहा जाता
है ? तब प्रभु कहते हैं—(गोयमा) हे गौतम ! (सिद्धेत्ति वत्तव्वं सिया)
वह (सिद्ध) इस शब्दसे व्यवहार करनेके योग्य बन जाता है—क्यों कि
वह अपने सकल कार्यों को कर चुका है । (बुद्धेत्ति वत्तव्वं सिया)
विमल केवलरूप अलोक से वह सकल लोक और अलोक का साक्षात्
ज्ञाता द्रष्टा हो जाने के कारण (बुद्ध) इस शब्द से व्यवहार करने
योग्य हो जाता है । (मुत्तेत्ति वत्तव्वं सिया) ज्ञानावरण आदि आठों
कर्मनष्ट हो जाने के कारण वह (मुक्त) इस शब्द से कहने योग्य हो
जाता है । (पारगएत्ति वत्तव्वं सिया) संसार से पारगामी बन जाने

કયા કયાં નામે ઓળખવામાં આવે છે તે બાણુવાને માટે ગૌતમ સ્વામી મહા-
વીર પ્રભુને પૂછે છે કે (સે ણં ભંતે ! કિં વત્તવ્વં સિયા) હે ભગવન ! પૂર્વોક્ત
વિશેષણોવાળા તે શ્રમણ નિર્ગ્રન્થને કયાં કયા નામે ઓળખવામાં આવે છે !
ઉત્તર— (ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (સિદ્ધેત્તિ વત્તવ્વં સિયા) તેમને માટે, સિદ્ધ
પદનો પ્રયોગ કરી શકાય છે કારણ કે તેમણે તેમનાં તમામ કાર્યો સિદ્ધ કરી
લીધાં હોય છે (બુદ્ધેત્તિ વત્તવ્વં સિયા) વિમળ કેવળજ્ઞાન વડે તેઓ સમસ્ત
લોક અને અલોકના જ્ઞાતા અને દ્રષ્ટા બની બાથ છે તેથી તેમને “બુદ્ધ” પણ
કહી શકાય છે (મુત્તેત્તિ વત્તવ્વં સિયા) જ્ઞાનાવરણીય વગેરે આઠે કર્મોના
ક્ષય થઈ જવાને કારણે તેમને “મુક્ત” પણ કહી શકાય છે. “પારગણ ત્તિ
વત્તવ્વં સિયા) તેમણે સંસારને પાર કર્યો હોય છે— સંસાર સાગરને તેઓ

अथ श्रीस्कन्दकप्रकरणम्—

पूर्वं संयत्तजीवविषये ससारस्य वृद्धिहानिभवेति द्वयं सिद्धत्वं च कथितम्,
साम्प्रतस्तु तेषां सदितरेषां चार्थानां प्रतिपादनार्थं स्कन्दकथारम्भमाह—
'तेषां कालेभ्यः' इत्यादि ।

मूलम्—तेषां कालेण तेषां समयेण समणे भगव महावीरे
रायगिहाओ नयराओ गुणसीलाओ चङ्गभाओ पडिनिक्खमइ,
पडिनिक्खमिच्चा वहिया जाणवयविहार विहरइ । तेषां
कालेण तेषां समयेण कयगला नाम नगरी होत्था वण्णओ
तीसे ण कयगलाए नगरीए वहिया उत्तरपुरत्थिमे दिसिभाए
छत्तपलासए णाम चेइए हात्था वण्णओ, तएण समणे भगव
महावीरे उपपन्नानादसणधरे जाव समोसरण परिसा नि
ग्गया । तीसे णं कयगलाए नगरीए अदूरसामते सावत्थी नाम
नयरी होत्था वण्णओ, सत्थ णं सावत्थीए नयरीए गइमालस्स
अतेवासी खदए णाम कच्चायणस्स गोत्ते परिव्वायगे
परिवसइ, रिउवेय जज्जुव्वेय सामवेय, अहव्वणवेयाण, इतिहास
पञ्चमाण निघट्टु छट्ठाण, चउण्ह वेयाण संगोवगाण सरइ
स्साणं, सारए वारए, धारए, पारए, सङ्गवी सट्ठितत्तवि
सारए सखाणे सिक्खाकप्पे धागरणे छदे निरुत्ते जोइसामयणे
अप्पेसु य वहुसु यमण्णएसु परिव्वायाएसु नयेसु सुपरिनिट्ठिए
यावि होत्था, तत्थ णं सावत्थीए नयरीए पिङ्गलए णाम नियठे
वेसालिय सावए परिवसइ, तएणं से पिङ्गलए णाम नियठे
वेसालिय सावए अन्नया कयाइ जेणेव खदए कच्चायणस्स

સ્યાત્, નિરુદ્ધસંસારાદિવિશેષણ યુક્તો નિર્ગ્રન્થજીવઃ સિદ્ધઃ બુદ્ધઃ મુક્તઃ પરિનિ-
ર્વૃત્તોઽન્તકૃતસર્વદુઃખપ્રક્ષીણ इत्यादिशब्दैर्व्यवहर्तुं योग्यो भवतीति भावः । इदानीं
‘प्रकरणमुपसंहरन्नाह—‘सेवं भंते’ इत्यादि । ‘सेवं भंते सेवं भंते’ तदेवं
भदन्त ! हे भगवन् यद् देवानुप्रियेण मृतादिनिर्ग्रन्थविषये कथितं तत् एवमेव
सर्वथा सत्यमेव, आप्तवाक्यरय सत्यत्वात्, ‘त्ति’ इति एवरूपेण ‘भगवं
गोयमे’ भगवान् गौतमः ‘समणं भगवं महावीरं’ श्रमणं भगवन्तं महावीरम्
‘वंदइ नमंसइ’ वन्दते नमस्यति वन्दित्वा नमस्यित्वा ‘संजमेण तवसा’ संयमेन
तपसा ‘अप्पाणं’ आत्मानं ‘भावे माणे’ भावयन् ‘विहरइ’ विहरतीति भावः॥६॥

સવ્વદુક્ખપહીણે ત્તિ વત્તવ્વં સિયા) નિરુદ્ધ સંસાર આદિ વિશેષણવાલા
વહ નિર્ગ્રન્થ જીવ સિદ્ધ, બુદ્ધ, મુક્ત, પરિનિર્વૃત, અન્તકૃત, સર્વદુઃખપ્ર-
ક્ષીણ इत्यादि शब्दों द्वारा व्यवहार करने के योग्य हो जाता है । अब
प्रकरण के अर्थ का उपसंहार करते हुए गौतम स्वामी कहते हैं (सेवं
भंते ! सेवं भंते !) हे भदन्त ! आप देवानुप्रिय ने जो भूत-पृथिव्यादिक
एकेन्द्रिय से लेकर निर्ग्रन्थ श्रमण तक के विषय में कहा है वह सब ऐसा
ही है—सर्वथा सत्य ही है । ऐसा कह कर (भगवं गोयमे) भगवान्
गौतम ने (समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ) श्रमण भगवान् महा-
वीर की वंदना की उन्हें नमस्कार किया । वंदना नमस्कार करके फिर वे
(संजमेणं तवसा) संयम और तप से (अप्पाणं भावेमाणे) अपनी
आत्मा को भावित करते हुए (विहरइ) विचरने लगे अर्थात् अपने
आसन पर विराजमान हो गये ॥ सू०६ ॥

પહીણેત્તિ વત્તવ્વં સિયા) નિરુદ્ધ ભવ વગેરે વિશેષણવાળો તે શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ
જીવ, સિદ્ધ, બુદ્ધ, મુક્ત, પરિનિર્વૃત, અન્તકૃત અને સર્વ દુઃખ પહીણ વગેરે
શબ્દો નો પ્રયોગ પણ તેમને માટે કરી શકાય છે હવે પ્રકરણનો ઉપસંહાર
કરવાના આશયથી ગૌતમ સ્વામી કહે છે (સેવ ભંતે સેવં ભંતે !) હે ભગવન્ !
આપ દેવાનુપ્રિયે પૃથિવ્યાદિક એકેન્દ્રિયથી લઈને શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ સુધીના જીવોના
વિષયમાં જે કહ્યું તે યથાર્થ જ છે તે સર્વથા સત્ય જ છે એ પ્રમાણે કહીને
(ભગવં ગોયમે) ભગવન્ ગૌતમે (સમણં ભગવ મહાવીરં વંદइ નમસइ) શ્રમણ
ભગવાન મહાવીરને વદણા કરી, નમસ્કાર કર્યાં વંદણા નમસ્કાર કરીને (સંજમે
ણં તવસા) સંયમ અને તપથી (અપ્પાણં ભાવેમાણે) પોતાના આત્માને ભાવિત
કરતા (વિહરइ) વિચારવા લાગ્યા, એટલે પોતાને આસને જઈને બેસી ગયા. સૂ ૬

छाया—तस्मिन् काले तस्मिन् समये भ्रमणो भगवान् महावीरो रानपूरा भगरात् गुणसिलकात् चैत्यात् प्रतिनिष्क्रामति प्रतिनिष्क्रम्य बहिर्जनपदविहार विहरति, तस्मिन् काले तस्मिन् समय कृतगला नाम नगरी आसीत्, वर्णकः उस्याः खल्ल कृतगलायां नगर्यां बहिरुत्तरपौरस्त्ये दिग्भागे छत्रपलाशकं नाम चैत्यमासीत् वर्णकः ततः भ्रमणो भगवान् महावीर, उत्पन्नानदर्शनघरं यावत्सिद्धत्वं-ससार का सर्वथा क्षय-ये सय कहा है अय वन्हीं विषयों को तथा भिन्न विषयों को प्रतिपादन करने के निमित्त स्कंदक मुनि के चरित्र को सूत्रकार कहते हैं—‘तेण कालेण’ इत्यादि।

सूत्रार्थ—(तेण कालेण तेण समएण) उस काल में और उस समय में (समणे भगवे महावीरे) भ्रमण भगवान् महावीर (रायगिहाओ नयराओ) राजगृह नगर के (गुणसिलाओ चेइयाओ) गुणसिल चैत्य से (पडिनिक्खमइ) निकले। (पडिनिक्खमिस्सा) निकल कर (पहिया) बाहर के (जणवयविहारं विहरइ) देशों में वहाँ ने विहार किया। (तेण कालेण तेण समएण) उस काल में और उस समय में (कयंगला नाम नगरी होत्था) कृतगला नाम की नगरी थी (वण्णओ) यहाँ इसका वर्णन चंपा नगरी के समान जानना चाहिये। (तीसे णं कयंगलाय नयरीय) उस कृतगला नगरी के (पहिया) बाहर (उत्तरपुरत्थिमे दिसिमाय) उत्तरपूर्वदिशा के कोने में—ईशानकोने में (छत्तपलासए नाम चेइय होत्था) छत्रपलाशक नामका चैत्य या (वण्णओ)

सिद्धत्वं-ससारने सर्वथा क्षय-ये विषयेतु क्षयन करवाभां आओ ॥ ७७ ॥
 ओए विषयेतु तथा तेमना करवां जित विषयेतु प्रतिपादन करवा भाटे सूत्रकार स्कंदकमुनिनु चरित्र कहे छे

“तेण कालेण” इत्यादि

सूत्रार्थ—(तेण कालेण तेण समएण) ते काले अने ते समये (समणे भगव महावीरे) भ्रमण भगवान् महावीर (रायगिहाओ नयराओ) राजगृह नगरना (गुणसिलाओ चेइयाओ) गुणसिल चैत्यभांथी (उद्यानभाथी) पडिनिक्खमइ) निकलमा (पडिनिक्खमिस्सा) तथाथी निकलीने (पहिया) पधारना (जणवयविहार विहरइ) प्रदेशोभा तेज्जा विथरवा लाओ (तेण कालेण तेण समएण) ते काले अने ते समये (कयंगला नाम नयरी होत्था) कृतगला नामनी नगरी होती. (वण्णओ) वर्णन चंपानगरी प्रभावे ए समवतु (तीसे णं कयंगलाय नयरीय) ते कृतगला नगरीनी (पहिया) पधार (उत्तर पुरत्थिमे दिसिमाय) ईशान प्रुथुभा (छत्तपलासए नाम चेइय होत्था) छत्र पलाशक नामनु चैत्य उद्यान वतु (वण्णओ) तेनु वर्णन पूज्यभद्रना

गोत्ते तेणैव उवागच्छइ, उवागच्छिता खंदगं कच्चायणस्स-
गोत्ते इणमक्खेवं पुच्छइ मागहा किं स अंते लोए अणंते-
लोए स अंते जीवे, अणंते जीवे, स अंता सिद्धी, अणंता सिद्धी,
स अंते सिद्धे अणंते सिद्धे केण वा मरणेणं मरमाणे जीवे
वड्डइ वा हायइ वा एतावं ताव आयक्खाहि बुच्चमाणे
एवं । तएणं से खंदए कच्चायणस्सगोत्ते पिंगलएणं णियंठेणं
वेसालियसावएणं इणमक्खेवं पुच्छिए समाणे संकिए
कंखिए वितिगिच्छिए भेदसमावन्ने कलुससमावन्ने णो
संचाएइ पिंगलयस्स नियंठस्स वेसालियसावयस्स किंचि
वि पामोक्खं अक्खाइउं तुसिणीए संचिट्ठइ । तएणं से
पिंगलए नियंठे वेसालीसावए खंदयं कच्चायणस्सगोत्तं
दोच्चंपि तच्चंपि इणमक्खेवं पुच्छे मागहा किं स अंते लोए
जाव केण वा मरणेणं मरमाणे जीवे वड्डइ वा हायइ वा
एतावं ताव आइक्खाहि बुच्चमाणे एवं । तएणं से खंदए
कच्चायणस्सगोत्ते पिंगलएणं णियंठेणं वेसालियसावएणं
दोच्चंपि तच्चंपि इणमक्खेवं पुच्छिए समाणे संकिए कंखिए
वितिगिच्छिए भेदसमावन्ने कलुससमावन्ने णो संचाएइ
पिंगलस्स नियंठस्स वेसालिय सावयस्स किंचिवि पामोक्खं
अक्खाइउं तुसिणीए संचिट्ठइ ॥ सू० ७ ॥

आर्य श्री स्कन्दक प्रकरण

पहिले प्रकरण में संयत जीव को लेकर संसार की वृद्धि, हानि तथा

आर्य श्री स्कन्दक प्रकरण

आगेकीना प्रकरणमां संयत जीवनी अपेक्षाये संसारनी वृद्धि, हानि तथा

पारिभाषिकेषु नयषु सुपरिनिष्ठितस्याप्यभवत्, तत्र खलु भावस्त्वां नमर्यां
पिंगलको नाम निर्ग्रन्थो वैशालिकभावकः परिवसति, ततः पिंगलको नाम निर्ग्रन्थो
वैशालिकभावकोऽन्यदा फदायित् यत्रैव स्कन्दक कात्यायनगोमस्तत्रैवोपाग
निरूपे ओइसामयणे अनेसु बहसु यमणपसु परिवायापसु नपेसु
सुपरिनिष्ठिए यावि होत्या) यह ऋग्वेद, यजुर्वेद, समावेद, अथर्वणवेद इन
चार वेदों का जानने वाला था। साथ में इतिहास पुराणों का भी वह
ज्ञाता था। निधंनु को भी वह जानता था। केवल इतिहास निधंनु
सहित ही वह चारों वेदों का ज्ञाता था सो बात नहीं है किन्तु अज्ञो
पात्र सहित एव रहस्य युक्त चारों वेदों का वह विशेषरूप से ज्ञाता था
स्मारक था चारक था चारक था, एतावता ऐसा ज्ञात होता था कि मानों
चारों ही वेद इसे कण्ठस्थ हैं। इस तरह वह वेदसंपन्नी सम्पूर्ण ज्ञान
से परिपूर्ण था। वेदों के छोड़ों अगों का वेत्ता था। पट्टि तंत्र में विशारद
था। गणित शास्त्र में पण्डित था। शिक्षा शास्त्र में, आचार शास्त्र में,
व्योकरण शास्त्र में छंदः शास्त्र में व्युत्पत्ति शास्त्र में, ज्योतिष शास्त्र में
तथा और भी अनेक ब्राह्मण शास्त्रों में एव परिव्राजक संपन्नी नीति में
बहुत अधिक बतुर था। (तत्पण सावर्तीय जयरीए पिंगलए नियंठे बेसा
बियसायए परिवसइ) उसी आबस्ती नगरी में वैशालिक के आबक
एक पिंगलक नामक निर्ग्रन्थ रहते थे। (तपण से पिंगलए नाम नियंठे

बागरणे छै, निदसे ओइसामयणे अनेसु बहसु यमणपसु परिवायापसु नपेसु
सुपरिनिष्ठिए यावि होत्या) ते ऋग्वेद, सभावेद, अने यजुर्वेद अने अथर्ववेद के
आरे वेदोने बखुआर हते। साथे साथे इतिहास पुराणोने पखु ते बखुआर
हते। ते निधनुने पखु बखुआर हते। इतिहास निधनु सहित आरे वेदोने
ते बखुआर हते। ओटुं न नही पखु ते अग उपाग सहित अने रहस्य
सहित आरे वेदोने विशिष्टये गावा हते, स्मारक हने चारक हते, अने चारक
हते। तेही ओवु बागतु के तेवे बखे के आरे वेदोने हस्थ करी लीधा छे आ
रीते वेदोना विषयभां ते संपूर्ण ज्ञान धरावतो हते, वेदोनां छो अने अने
ते वेत्ता (गान) हते। ते पक्षिगतने पखु निष्ठाव हने। अक्षित शास्त्र शिक्षण
शास्त्र, व्यापार शास्त्र व्याकरण शास्त्र, छंद शास्त्र, व्युत्पत्ति शास्त्र ज्योतिष शास्त्र
तथा भील पखु अनेक शास्त्र शास्त्रोने ते विशारद हते। परिव्राजक संपन्नी
नीतिभां ते बखे न बतुर हते। (तप न सावर्तीय जयरीए पिंगलए नियंठे
बेसाबिए साबण) छे ओ अावर्ती नगरीभा वैशालिक आबक, पिंगलक
नामनां ओक निर्ग्रन्थ रहते हते, (तपण से पिंगलए नाम नियंठे बेसाबिए साबण)

समवसरणं पर्षद् निर्गच्छति । तस्याः खलु कृतंगलायाः नगर्याः अदूरसामन्ते
श्रावस्ती नाम नगरी अभवत्, वर्णकः तत्र खलु श्रावस्त्यां नगर्यां गर्दभालस्यांतेवासी
स्कन्दको नाम कात्यायनगोत्रः परिव्राजकः परिवसति, ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवे-
दाथर्वणवेदानामितिहासपंचमानां निघण्टुपष्ठानां चतुर्णां वेदानां सांगोपांगानां
सरहस्यानां स्मारको वारकः धारकः पारकः षडंगवित् पठितंत्रविशारदः
संख्यानः शिक्षाकल्पे व्याकरणे छन्दसि निरुक्ते ज्योतिषायने अन्येषु ब्राह्मण्यकेषु

वर्णक इसका वर्णन औपपातिकसूत्रमें पूर्णभद्र चैत्यके वर्णन समान यहां
समझना चाहिये । (तएणं समणं भगव महावीरे उप्पन्नानादंसणधरे जाव
समोसरणं परिस्ता निग्गया) इसके बाद केवलज्ञान केवलदर्शनके धारी
श्रमण भगवान् महावीर वहां पधारे यावत् समवसरण हुआ, सभा
निकली (तीसे णं कयंगलाए णयरीए अदूरसामंते सावत्थी नामं नयरी
होत्था) उस कृतंगला नगरीके अदूरसामन्त न अति निकट और न
अतिदूर किन्तु पासमें ही श्रावस्ती नामकी नगरी थी (वण्णओ) वर्णक
वर्णन चम्पा नगरी जैसा समझना (तत्थ णं सावत्थीए नयरीए गद्दभाल-
स्स अंतेवासी खंदए णामं कच्चायणस्स गोत्ते परिव्वायगे परिवसइ)
उस श्रावस्ती नगरी में गर्दभाल नाम के परिव्राजक का शिष्य स्कंदक नाम
का एक परिव्राजक कि जिसका गोत्र कात्यायन था रहता था । (रिउ-
व्वेय, जजुव्वेय, साम्वेय, अहव्वणवेयाणं इतिहासपंचमाणं निघट्टु
छट्टणं चउण्हं वेयाणं संगोवंगणं सरहस्साणं सारए, वारए, धारए,
पारए, सडंगवी, संहितंतविसारए संखाणे सिक्खाक्कप्पे, वागरणे छंदे,

चैत्य प्रमाणे ४ समञ्जु (तएणं समणं भगव महावीरे उप्पन्नानादंसणधरे-
जाव समोसरणं परिस्ता निग्गया) विहार करता करता केवलज्ञान अने केवल दर्शन
युक्त श्रमण भगवान् महावीर ते छत्रपलाशक चैत्यमा (उद्यानमां) पधार्या.
(यावत्) समवसरण रथायुं, तेमनो उपदेश सालणवा भाटे परिषद नीकणी
पगेरे सूत्रपाठ ग्रहण करवे । (तीसे ण कयंगलाए णयरीए अदूरसामंते)
ते कृतंगला नगरीथी अहुं दूर पणु नही अने नल्लक पणु नही ओवे स्थाने
(सावत्थी नाम नयरी होत्था) श्रावस्ती नामनी नगरी छती (वण्णओ) तेनुं
वर्णन पणु य पानगरी वेपु ४ समञ्जु । (तत्थ णं सावत्थीए नयरीए गद्द-
भालस्स अंतेवासी खंदए णामं कच्चायणस्स गोत्ते परिव्वायगे परिवसइ) ते
श्रावस्ती नगरीमां गर्दभाल नामना परिव्राजकेन शिष्य स्कंदक नामने परि-
माणक रडेते छते ते कात्यायन गोत्रने छते । (रिउव्वेय, जजुव्वेय, सामवेय,
अहव्वणवेयाण इतिहासपंचमाणं निघट्टु छट्टाणं चउण्हं वेयाणं संगोवंगणं सरहस्सा
णं सारए, वारए, धारए, पारए, सडंगवी, संहितंतविसारए, संखाणे सिक्खाक्कप्पे,

गोत्र पिंगलकेन निर्ग्रन्थेन वैशालिकभाषकेणेममाक्षेपपृष्ठः सन् शक्तिः क्वसितो विचिकित्सितो भेदसमापन्नः कलुषसमापन्नो न शक्नोति पिंगलकाय निर्ग्रन्थाय वैशालिकभाषकाय किञ्चिदपि प्रमोक्षमाख्यातुम् सूचीकः सतिष्ठत । ततः स पिंगलको निर्ग्रन्थः वैशालिकभाषकः स्कन्दकं कात्यायनगोत्र द्विस्त्रिरपि इममाक्षेपमप्राप्सीत्-मागध ! सांतो लोको यावत् केन वा मरणेन म्रियमाणो जीवो वर्द्धते

से खदप कच्छायणस्त गोत्रे) कात्यायन गोत्र वाला घर स्कन्दक वैशालिय सावर्णं) भगवान महावीरके वचन सुननेमें रसिक बने हुए (पिंगलएव नियंटेणं) पिंगलण निर्ग्रन्थ के द्वारा (इणमक्खेव पुच्छिण समणे) जब इम प्रकार के प्रश्नों का विषयभूत पनाया गया तब (सकिए करिण ए विविगिच्छिण, भेदसमापन्ने कलुससमापन्ने) हांकायुक्त हो गया कांक्षा युक्त हो गया, विचिकित्सायुक्त हो गया । और (वैशालिय सावयस्त पिंगलस्म नियंठस्त पमोक्खं किञ्चि वि आक्खाइउं गो सचाएइ) वैशालिक भाषक पिंगलक निर्ग्रन्थ के प्रश्नों का कुछ भी उत्तर देने के लिये समर्थ नहीं हो सका । (तुसिणीए सच्चिट्ठ) केवल चुप ही रहा । (तएण से वैशालियसावए पिंगलए नियंठे कच्छायणस्त गोत्र खदयं दोच्चपि तच्चपि इणमक्खेव पुच्छे) चुपचाप रहा देखकर वैशालिक भाषक पिंगलक निर्ग्रन्थ ने कात्यायन गोत्री उस स्कन्दक से दुपारा भी तिघारा भी इन्ही प्रश्नों को पूछा (मागहा किं स अन्ते लोए जाव केण वा मरणेण मरमाणे जीवे वड्ढइ वा हायइ वा) हे मागध ! लोक अन्त

(तएण से खदप कच्छायणस्तगोत्रे वैशालियसावएण पिंगलएण नियंटेण इणमक्खेव पुच्छिण समणे) अर्थात् भगवान महावीरना वचनेभां श्रद्धा संपन्नान् पिंगलक निर्ग्रन्थवटे कात्यायन गोत्रीय स्कन्दकने आ प्रहारना प्रश्नो पूछवाम् आख्या त्यारे (सकिए करिण विविगिच्छिण, भेदसमापन्ने, कलुससमापन्ने) ते स्कन्दक परित्रावक शहायुक्ता कांक्षायुक्ता, अने विचिकित्सायुक्ता भए गये अने तेओ केह तथा कह्नुआवने पाव्वा । (वैशालियसावयस्त पिंगलस्म नियंठस्त पमोक्खं किं वि वि अक्खाइउं गो सचाएइ) तेओ महावीरना उपासक पिंगलक निर्ग्रन्थना प्रश्नोना उत्तर आपी शक्या नही (तुसिणीए सच्चिट्ठ) तेही तेओ चुप न रह्वा (तएण से वैशालियसावए पिंगलए नियंठे कच्छायणस्त गोत्र खदयं दोच्चपि तच्चपि इणमक्खेव पुच्छे) तेभने चुपचाप रहेवा ओहने वैशालिक भाषक पिंगलक निर्ग्रन्थ कात्यायन गोत्रीय ते स्कन्दक ने भीछ वार पण ओह प्रश्नो पूछवा अने त्रीछ वार पण ओह प्रश्नो पूछवा हे (मागहा ! किं व अन्ते लोए जाव केण वा मरणेण मरमाणे जीवे वड्ढइ वा हायइ वा)

જ્ઞાતિ, ઉપાગત્ય સ્કન્દકં કાત્યાયનગોત્રમિમમાક્ષેપમપ્રાક્ષીત-માગધ ! કિં સાન્તો લોકઃ, અનંતો લોકઃ સાન્તો જીવઃ અનંતો જીવઃ સાન્તા સિદ્ધિઃ અનંતા સિદ્ધિઃ, સાન્તઃ સિદ્ધઃ, અનંતઃ સિદ્ધઃ કેન વા મરણેન મ્રિયમાણો જીવઃ વર્દતે વા હીયતે વા, એતાવત્ તાવદાહ્યાહિ ઉચ્યમાને એવમ્, તતઃ સ સ્કન્દકઃ કાત્યાયન-

વૈશાલિય સાવણ) વૈશાલિક શ્રાવક વિશાલા ભગવાનની માતાના નામ થા, ઉનકા પુત્ર હોને સે ભગવાન મહાવીર વૈશાલિક કહલાયે । વૈશાલિક ભગવાન મહાવીર, ઉનકા શ્રાવક અર્થાત ભગવાન મહાવીર કે વચન સુનને મેં રસિક વે પિંગલક નિર્ગન્થ (અન્નયા કયાઈ) કિસી એક દિન (જેણેવ કચ્ચાયણસ્સગોત્તે ચંદણ તેણેવ ઉવાગચ્છઈ) જહાં કાત્યાયન ગોત્રી સ્કન્દક થા વર્હા ગયે । ઉવાગચ્છિત્તા વહાં જાકર કચ્ચાયણસ્સગોત્તે ચંદંગ) ઉન્હીને ઉસ કાત્યાયન ગોત્રવાલે સ્કન્દક સે (ઇણમક્કલેવં પુચ્છઈ) હિસ પ્રશ્નકો પૂછા (માગહા ! કિં સ અંતે લોણ અણંતે લોણ) હે માગધ ! લોક સાન્ત હૈ કિ અનંત હૈ ? (સ અંતે જીવે અણંતે જીવે) જીવસાન્ત હૈ કિ અનન્ત હૈ ? (સ અન્તા સિદ્ધી અણંતા સિદ્ધી) સિદ્ધિ અન્ત સહિત હૈ કિ અન્ત રહિત હૈ ? (કેણ વા મરણેણં મરમાણે જીવે વહ્હઈ વા હાયઈ વા) અથવા કિસ મરણસે મરા હુઆ જીવ વઢતાં હૈ ઓર ઘટતાં હૈ ? (એવં વુચ્ચમાણે એતાવં તાવ આયક્વા હિ) હિસ પ્રકાર સે મેરે દ્વારા પ્રશ્ન કે વિષયભૂત બનાયે ગયે તુમ હન મેરે પ્રશ્નોંકા ઉત્તર દો (તણં

ભગવાનની માતાનું નામ વિશાલા હતું. વિશાલાના પુત્ર હોવાથી તેમને માટે આહી વૈશાલિક શબ્દનો પ્રયોગ થયો છે “વૈશાલિક શ્રાવક” એટલે ભગવાન મહાવીરનાં વચનોમાં શ્રદ્ધા રાખનાર તે પિંગલક નિર્ગન્થ (અન્નયા કયાઈ) એક દિવસ (જેણેવ કચ્ચાયણસ્સગોત્તે ચંદણ તેણેવ ઉવાગચ્છઈ) ન્યા કાત્યાયન ગોત્રીય સ્કન્દકે પરિવારક વિરાજતા હતા ત્યા ગયા (ઉવાગચ્છિત્તા) ત્યા જઈને (કચ્ચાયણસ્સ ગોત્ત ચંદંગ ઇણમક્કલેવં પુચ્છઈ) તેમણે તે કાત્યાયન ગોત્રીય સ્કન્દકને આ પ્રમાણે પ્રશ્નો પૂછ્યા (માગહા ! કિં સ અંતે લોણ અણંતે લોણ) હે માગધ ! લોક અન્ત સહિત છે કે અન્ત રહિત છે (સ અંતે જીવે અણંતે જીવે) એવ અન્ત યુક્ત છે કે અન્ત સહિત છે (સ અંતા સિદ્ધિ, અણંતા સિદ્ધિ) સિદ્ધિ અંત સહિત છે કે અન્ત રહિત છે. (કેણ વા મરણેણં મરમાણે જીવે વહ્હઈ વા હાયઈ વા) કયા મરણથી મરતા એવનો સ સાર વધે છે, અને કયા કયા મરણથી મરતાં એવનો સ સાર ઘટે છે (એવ વુચ્ચમાણે એતાવં તાવ આયક્વાહિ) મેં આપને જે આ પ્રશ્નો પૂછ્યા છે તેનો તમે જવાબ આપો.

नगरात् 'गुणसिलाभो वेह्याभो' गुणशिलकात् चैत्यात्=उद्यानात् 'पडि निक्कल मइ' प्रतिनिष्क्रामति=निर्गच्छति । 'पडिनिक्कलमिच्चा' प्रतिनिष्क्रम्य 'बहिया जणवयविहारं विहरइ' बहिः जनपदविहारं विहरति ।

'तेणं काळेणं तेणं समएणं' तस्मिन्काळे तस्मिन् समये 'कयगला नामनयरी होत्या' कृतगला नाम नगरी आसीत्, वण्णभो 'वर्णकः वर्णनप्रकारः' औपपातिकसूत्रोक्तचंपानगरीवर्णनवत् विज्ञेयाः । 'तीसे णं कयगलाए' नयरीए बहिया 'तस्याः कृतगलाया नगर्या बहिः ब्राह्म मदेस्से' उत्तरपौरस्त्ये उत्तर पूर्वदिशिषोरन्तकाळे 'दिसिमाण' दिग्भागे-ईशानकोणे 'छत्तपलासए' नाम वेहए होत्या 'छत्तपलासक' नाम चैत्यभासीत् । 'वण्णभो' वर्णकः-वर्णनप्रकारः, इहापि औपपातिकसूत्रोक्तपूर्णमइचैत्यवर्णनवत् विज्ञेयः । 'तएणं समणे मगधं महावीरे उप्पज्जनाणदंसणघरे जाव समोसरणं'

राओ) राजगृह नगर से (गुणसिलाभो वेह्याभो) गुणशिलक चैत्य उद्यान से (पडिनिक्कलमइ) निकले । (पडिनिक्कलमिच्चा) निकल कर (बहिया जणवयविहारं विहरइ) वे बाहरके देशमें विहार करने लगे । (तेणं काळेणं तेणं समएणं) उस काल और उस समय में (कयगला नाम नयरी होत्या) कयगला नाम की एक नगरी थी । (वण्णभो) इसका वर्णन प्रकार औपपातिकसूत्र में वर्णित चपा नगरी के समान जानना चाहिये । (तीसे णं कयगलाए नयरीए बहिया उत्तरपुरित्थमे दिसिमाण छत्तपलासए नाम वेहए होत्या) उस कयगला नगरी के बाहिर उत्तर पौरस्त्यदिग्विभाग में-ईशानकोण में-छत्तपलासक नाम का चैत्य था । (वण्णभो) इस का वर्णन औपपातिक सूत्र में वर्णित पूर्णभद्र चैत्य की तरह जानना चाहिये । (तएणं समणे मगध महावीरे उप्पज्जनाणदंसणघरे जाव समोसरणं) इस विषय का प्रथम शतक में

नगरना (गुणसिलाभो वेह्याभो) गुणशिलक चैत्यभांथी (उद्यानभांथी) (पडि निक्कलमइ) नीकल्या (पडिनिक्कलमिच्चा)भांथी नीकलीने (बहिया जणवयविहारं विहरइ) तेज्जो अट्टाएना प्रदेशभां विहार करवा लाब्बा (तेण काळेण तेण समएण) ते भांजे अने ते समये (कयगला नाम नयरी होत्या) कृतगला नामनी नगरी होती । (वण्णभो) औपपातिक सूत्रभां वल्लुवेस्सी यथा नगरीना वेपु ए तेजुं वल्लुनं समज्जपु (तीसे ण कयगलाए नयरीए बहिया उत्तरपुरित्थमे दिसिमाण छत्तपलासए नाम वेहए होत्या) ते कृतगला नगरीनी अट्टाए उद्यान भांजुभां छत्तपलासक नामनु चैत्य (उद्यान) होती । (वण्णभो) औपपातिक सूत्रभां वल्लु वेस्सी वल्लुभद्र चैत्यना (उद्यान) वेपु ए तेजुं वल्लुनं समज्जपु (तएण समण मगध महावीरे उप्पज्जनाणदंसणघरे जाव समोसरणं) विषयजुं वल्लुन पट्टेडा

વા હીયતે વા, એતાવત્તાવદાઝ્યાહિ ઉચ્યમાને એવમ્ । તતઃ સ્વલુ સ સ્કન્દકઃ
કાત્યાયનગોત્રઃ પિંગલકેન નિર્ગન્થેન વૈશાલિકશ્રાવકેણ દ્વિરપિ ત્રિરપિ ઇમમાક્ષેપં
પૃષ્ઠઃ સન્ શંકિતઃ કાંક્ષિતો વિચિકિત્સિતો ભેદસમાપન્નઃ કલુષસમાપન્નો
ન શક્નોતિ પિંગલકસ્ય નિર્ગન્થસ્ય વૈશાલિકશ્રાવકસ્ય કિંચિદપિ પ્રમોક્ષમ્
આઝ્યાતું તુળ્ણીકઃ સંતિષ્ઠતે ॥ સૂ ૭ ॥

ટીકા—‘ તેણં કાલેણં તેણં સમણં ’ તસ્મિન્ કાલે તસ્મિન્ સમયે ‘ સમણે
ભગવં મહાવીરે ’ શ્રમણો ભગવાન્ મહાવીરઃ, ‘ રાયગિહાઓ નયરાઓ ’ રાજગૃહાત્

સહિત હૈ કિ વિના અન્તકા હૈયાવત્ જીવ કિસ મરણ સે મર કર અપને
કો ઘટાતા હૈ યા ઘટાતા હૈ (એવં વુચ્ચમાણે એતાવં તાવ આયકઝ્યાહિ) ઇસ
પ્રકાર સે મેરે દ્વારા પૂછે ગયે તુમ મેરે ઇન પ્રશ્નોં કા ઉત્તર દો । તણં સે
કચ્ચાયણસ્સ ગોત્તે સ્વદ્દ વેસાલિયસાવણં પિંગલેણં નિયંટેણં દોચ્ચંપિ
તચ્ચંપિ ઇણમક્કલેવં પુચ્છિણ સંકિણ, કંઘિણ વિતિગિચ્છિણ, ભેદસમા
વન્ને કલુસસમાવન્ને, ણો વેસાલિયસાવયસ્સ પિંગલસ્સ ણિયંઠસ્સ
કિંચિવિ પામોક્કલ અક્કાહ્ણ ણો સંચાણ્હ તુસણીણ સંચિદ્દહ) ઇસ
પ્રકાર કાત્યાયન ગોત્રી વહ સ્કન્દક વૈશાલિક પિંગલક નિર્ગન્થ કે
દ્વારા દો બાર મી ત્રીન બાર મી પૂછે જાને પર ઉત્તર દેને કે લિયે સમથં
નહીં હો સકા પરન્તુ શંકિત કાંક્ષિત વિચિકિત્સાયુક્ત હી બના રહા ઓર
ભેદ કો સમાપન્ન હોતા હુઆ કલુષભાવ કો પ્રાપ્ત હો ગયા । તથા
ચુપચાપ હી રહા ।

ટીકાર્થ—(તેણં કાલેણં તેણં સમણં) ઉસ કાલ ઓર ઉસ સમય
મેં (સમણે ભગવં મહાવીરે) શ્રમણ ભગવાન્ મહાવીર (રાયગિહાઓ નય-

હે માગધ ! લોક અન્ત સહિત છે કે અતરહિત છે ત્યાથી શરૂ કરીને કયા
મરણથી મરીને જીવ સંસાર વધારે છે અને કયા મરણથી મરીને સંસાર
ઘટાડે છે, ત્યાં સુધીના પ્રશ્નો પૂછ્યા (એવં વુચ્ચમાણે એતાવ તાવ આયકઝ્યાહિ)
હે સ્કન્દક ! મારા આ પ્રશ્નોના તમે ઉત્તર આપો (તણં સે કચ્ચાયણસ્સ
ગોત્તે સ્વદ્દ વેસાલિયસાવણં પિંગલેણં નિયંટેણં દોચ્ચંપિ તચ્ચંપિ ઇણમક્કલેવં પુચ્છિણ
સમાણે સંકિણ, કંઘિણ વિતિગિચ્છિણ, ભેદસમાવન્ને, ણો વેસાલિયસાવયસ્સ
પિંગલસ્સ ણિયંઠસ્સ કિંચિ વિ પામોક્કલ અક્કાહ્ણ ણો સંચાણ્હ તુસણીણ સંચિદ્દહ)
આ રીતે વૈશાલિક શ્રાવક નિર્ગન્થ વડે બે વાર અને ત્રણ વાર પૂછવા છતાં
પણ કાત્યાયન ગોત્રીય સ્કન્દક તેમના પ્રશ્નોના ઉત્તર આપી શક્યો નહીં પણ
શંકિત, કાંક્ષિત, વિચિકિત્સાયુક્ત બની ગયાં, અને ભેદસમાપન્ન થઈને
કલુષભાવ યુક્ત થયા તથા ચુપચાપ બની રહ્યા

(ટીકાર્થ—તેણં કાલેણં તેણં સમણં) તે કાળે અને તે સમયે સમણે
ભગવં મહાવીરે) શ્રમણ ભગવાન્ મહાવીર (રાયગિહાઓ નયરાઓ) રાજગૃહ

नगरात् 'गुणसिलाओ चेइयाओ' गुणशिलकात् चैत्यात्=उद्यानात् 'पडि निक्खलं मइ' प्रतिनिष्क्रामति=निर्गच्छति। 'पडिनिक्खमिष्ठा' प्रतिनिष्क्रम्य 'बहिया जणवयविहार विहरइ' बहिः जनपदविहारं विहरति।

'तेणं कालेणं तेणं समएणं' तस्मिन्काले तस्मिन् समये 'कयंगला नामंनयरी होत्या' कुतंगला नाम नगरी आसीत्, वण्णओ 'वर्णको वर्णनप्रकारः औपपातिकसूत्रोक्तचंपानगरीवर्णनवत् विज्ञेया। 'तीसे णं कयंगलाए' नयरीए बहिया 'तस्या' कुतंगलाया नगर्या बहिः प्राक् प्रदेशे 'उत्तरपौरस्त्ये उत्तर पूर्वदिशोरन्तर्काले 'दिसिमाण' दिग्भागे-ईशानकोणे 'छत्तपलासए' नामं चेइए होत्या 'छत्तपलासक' नाम चैत्यमासीत्। 'वण्णओ' वर्णक-वर्णनप्रकारः, इहापि औपपातिकसूत्रोक्तपूर्णमद्रचैत्यवर्णनवत् विज्ञेयः। 'तएणं समणे भगवं महावीरे उप्पज्जनाणदसणधरे जाव समोसरणं'

राओ) राजगृह नगर से (गुणसिलाओ चेइयाओ) गुणशिलक चैत्य उद्यान से (पडिनिक्खमइ) निकले। (पडिनिक्खमिष्ठा) निकल कर (बहिया जणवयविहारं विहरइ) वे बाहरके देशमें विहार करने लगे। (तेणं कालेणं तेणं समएणं) उस काल और उस समय में (कयंगला नामं नयरी होत्या) कयंगला नाम की एक नगरी थी। (वण्णओ) इसका वर्णन प्रकार औपपातिकसूत्र में वर्णित चंपा नगरी के समान जानना चाहिये। (तीसे णं कयंगलाए नयरीए बहिया उत्तरपुरित्थमे दिसिमाण छत्तपलासए नामं चेइए होत्या) उस कयंगला नगरी के बाहिर उत्तर पौरस्त्यदिग्बिभाग में-ईशानकोण में-छत्तपलासक नाम का चैत्य था। (वण्णओ) इस का वर्णन औपपातिक सूत्र में वर्णित पूर्णमद्र चैत्य की तरह जानना चाहिये। (तएणं समणे भगव महावीरे उप्पज्जनाणदसणधरे जाव समोसरणं) इस विषय का प्रथम शतक में

नगरना (गुणसिलाओ चेइयाओ) गुणशिलक चैत्यभांशी (उद्यानभांशी) (पडि निक्खलं मइ) निकलना (पडिनिक्खमिष्ठा) चैत्यभांशी निकलने (बहिया जणवयविहारं विहरइ) तेजो अक्षरना प्रदेशभां विहार करना लाया। (तेणं कालेणं तेणं समएणं) ते काले अने ते समये (कयंगला नामं नयरी होत्या) कुतंगला नामनी नगरी હતી। (वण्णओ) औपपातिक सूत्रभां वर्णवैची था ना नगरीना चेवु ६ तेनु वर्णन समज्जु (तीसे णं कयंगलाए नयरीए बहिया उत्तरपुरित्थमे दिसिमाण छत्तपलासए नाम चेइए होत्या) ते कुतंगला नगरीनी अक्षर ईशान दिग्गभां छत्तपलासक नामनु चैत्य (उद्यान) હતુ (वण्णओ) औपपातिक सूत्रभां वर्ण वेला पूर्णमद्र चैत्यना (उद्यान) चेवु ६ तेनु वर्णन समज्जु (तएणं समणे भगव महावीरे उप्पज्जनाणदसणधरे जाव समोसरणं) આ વિષયનું વર્ણન પહેલા

ततः खलु श्रमणो भगवान् महावीर उत्पन्नज्ञानदर्शनधरो यावत् समवसरणम्, एतद्वर्णनं प्रथमशतके प्रथमोद्देशकस्य पञ्चमसूत्रे विलोकनीयम्। 'परिसा निग्गच्छइ' परिपद् निर्गच्छति, 'तीसे णं' तस्याः खलु 'कयंगलाए नयरीए' कृतंगलाया नगर्याः, 'अदूरसामंते सावत्थी नामं नयरी होत्था' अदूरसामन्ते नात्यासन्ने नातिदूरे श्रावस्ती नाम नगरी आसीत् 'वण्णओ' वर्णकः—वर्णनप्रकारः चम्पावद् विज्ञेयः। 'तत्थ णं सावत्थीए नयरीए गद्दभालस्स अन्तेवासी खंदए णामं कच्चायणस्स गोत्ते परिव्वायए परिवसइ' तत्र खलु श्रावस्त्यां नगर्यां गर्दभालस्यान्ते-वासी=शिष्यः स्कन्दकः कात्यायनगोत्रः परिव्राजकः परिवसति, संप्रति तस्य विद्वत्तां वर्णयन्नाह—'रिउव्वेय' इत्यादि। 'रिउव्वेय-जजुव्वेय-सामवेय-अहव्वणवेयाणं' ऋग्वेदयजुर्वेदसामवेदाथर्वणवेदानाम्, तत्र-ऋग्वेदः=ऋचा प्रधानो

प्रथमोद्देशक के पांचवें सूत्र में देखना चाहिये। (परिसा निग्गच्छइ) सभा निकली (तीसे णं कयंगलाए नयरीए) उस कयंगला नगरी के (अदूरसामंते) न अतिदूर पर और न अति निकट में (सावत्थी नामं नयरी होत्था) श्रावस्ती नाम की नगरी थी। (वण्णओ) इस नगरी का वर्णन चंपा नगरी के वर्णन के जैसा जानना चाहिये। (तत्थ णं सावत्थीए नयरीए गद्दभालस्स अन्तेवासी खंदए णामं कच्चायणस्स गोत्ते परिव्वायए परिवसइ) उस श्रावस्ती नगरी में गर्दभाल का शिष्य कात्यायनगोत्र वाला स्कन्दक नाम का एक परिव्राजक रहता था। यह परिव्राजक कैसा क्या विद्वान् था—सूत्रकार अब इसका वर्णन करते हैं—वह परिव्राजक (रिउव्वेय, जजुव्वेय, सामवेय, अहव्वणवेयाणं) ऋचा प्रधानवाले वेद का—ऋग्वेद का, मंत्रप्रधानवाले वेद का—यजुर्वेद

शतकेना पडेला उद्देशकना पांचभा सूत्रभाया वाची लेबु विहार करतां करतां केवणज्ञान अने केवण दर्शनथी युक्त श्रमणु भगवान् महावीर ते चैत्यभां (उद्धानभा) पधयां तेमने। उपदेश सांभणवा परिषद नीकणी छत्यादि वणुन अडीं समणु लेबु (तीसे णं कयंगलाए नयरीए) ते कृतंगला नगरीथी (अदूरसामंते) अतिशय दूर पणु नडीं अने अतिशय नल्लक पणु नडीं ओवा स्थणे, (सावत्थी नामं नयरी होत्था) श्रावस्ती नामनी नगरी छती (वण्णओ) तेनु वणुन पणु अण्णानगरीना वणुन प्रभाणु न समणु (तत्थ णं सावत्थीए नयरीए गद्दभालस्स अन्तेवासी खंदए णामं कच्चायणस्स गोत्ते परिव्वायए परिवसइ) ते श्रावस्ती नगरीभां गर्दभालने शिष्य, कात्यायन गोत्री स्कन्दक नामने परिव्राजक रहते। छते।

छवे सूत्रकार स्कन्दकनी विद्वतानी वात करे छे ते स्कन्दक परिव्राजक (रिउव्वेय, जजुव्वेय, सामवेय, अहव्वणवेयाण) ऋचा प्रधान ऋग्वेदने, मंत्र प्रधान यजु-

वेदः, यजुर्वेदः=गानप्रधानो वेदः, सामवेदः=गानप्रधानो वेदः, अथर्वणवेदः=क्रिया
प्रधानो वेदः, तेषाम्, श्रीदृष्टानामित्याह-‘इतिहासपञ्चमार्ग’ इतिहासपञ्चमा-
नाम्, इतिहासो=महामारतादिः स पञ्चमो येषां ते इतिहासपञ्चमाः, तेषाम्,
‘निघंटु छद्वाण’ निघण्टुपष्ठानाम्, निघण्टुः वैदिकशब्दानां कोशः, स पठो
विद्यते येषां ते निघण्टुपठः, तेषाम्, एसादृशानां ‘चठण् घेयाण’ चतुर्णां
वेदानाम्, कथंभूतानां वेदानाम्? सप्ताह-‘संगोर्धगाण’ साङ्गोपाङ्गानाम्, तत्र-
अंगानि पट् शिक्षास्वरूप-व्याकरण-ज्योतिष-छन्दो-निरुक्तरूपाणि, उपाङ्गानि =
धर्मशास्त्र-यायपुराणमीमांसा शास्त्ररूपाणि, तैः सद्विधानाम्, ‘सरहस्साण’
सरहस्यानाम्, रहस्यन=गूढाभिप्रायण युक्तानाम् चतुर्णामपि वेदानाम् ‘सारण’
स्मारकः-विस्मृतस्य स्मरणकारकत्वात्, ‘वारण’ वारक-अष्टुद्वपाठोच्चारणादि
निराकरणात्, ‘धारण’ धारक-अधीतवेदानां धारणात्, एसावता अपीठाः।
सर्वेऽपि वेदाः स्कन्दकस्य कण्ठस्था एव सन्ति इति ध्वन्यते ‘पारण’ पारगः,

कां, गानप्रधानघाळे वेद का-सामवेद का, क्रियाप्रधानघाळे वेद का-अथ-
र्वण वेद का, इन चार वेदों का ज्ञाता था (इतिहासपञ्चमार्ग) पांचवें
इतिहास का वेदा था (निघंटु छद्वाण) छठवें निघंटु-वैदिक शब्दकोश
का वेदा था। इस प्रकार यह (संगोर्धगाण सरहस्साण) शिक्षा, कल्प,
व्याकरण, ज्योतिष, छन्द, निरुक्तरूप छह अङ्गों के तथा अङ्गों के अर्थ
का विस्तार रूप उपांगों वाले (सरहस्साण) तथा गूढ अभिप्रायवाले
(चठण् घेयाण) इन चारों ही वेदों का (सारण) स्मारक था-अर्थात्
मूखे हुए को स्मरण कराने वाला था। (वारण) अष्टुद्व पाठ आदि के
उच्चारण करने से दूसरों को रोकने वाला होने से वारक था। (धारण)
अधीतवेदों का धारण करने वाला होने से धारक था, एतावता इस पद
से यह ध्वनित होता है कि समस्त ही वेद स्कन्दक परिमोजक के कण्ठ

वेदों, गीत प्रधान सामवेदों के क्रिया प्रधान अथर्ववेदों के सात दत्त
आ शीते ते आरे वेदों के अङ्गुलि होते (इतिहासपञ्चमार्ग) पांचवें इतिहास
के (निघण्टुछद्वाण) निघण्टु-वैदिक शब्दकोश के अङ्गुलि होते आ
शीते ते (संगोर्धगाण सरहस्साण) शिक्षा, कल्प, व्याकरण, छन्द, ज्योतिष,
अने ज्योतिष रूप के अङ्गुलि, तथा अङ्गुलि के अङ्गुलि विस्तार रूप उपाङ्ग
वाण (सरहस्साण) तथा गूढ रहस्यवाण (चठण् घेयाण) के आरे वेदों के
(सारण) स्मारक दत्त के अङ्गुलि के अङ्गुलि गयेवाने तेनु सारण करवनाए दत्त
(वारण) अष्टुद्व पाठ वगेरेनु उच्चारण करता अन्य अङ्गुलि के वारण (शिकार)
दत्त (धारण) अङ्गुलि वेदों के धारण करवना उपाङ्गुलि तेनु धारक दत्त आ
पदों के अङ्गुलि अङ्गुलि शिकार के अङ्गुलि वेदों के स्कन्दक परिमोजक के अङ्गुलि के रहस्य

પારગામી અખિલવેદાર્થ વિષયકજ્ઞાનવાનિત્યર્થઃ, 'સઢંગવી' 'પઢંગવિત્', પળ્ળા-
મપિ વેદાજ્ઞાનાં વક્ષ્યમાણાનાં ત્રિશેષરૂપેણ જ્ઞાનવાનિત્યર્થઃ, 'સઢ્ઠિતંતવિસારણ' 'પઢ્ઠીતંત્રવિશારદઃ', 'પઢ્ઠીતંત્ર-કાપિલં દર્શનમ્ તત્ર વિશારદઃ તદ્વિષયકજ્ઞાનવા-
નિત્યર્થઃ, 'સંત્રાણે' સંખ્યાનઃ સંખ્યાનં સંખ્યાપ્રધાનક ગણિતશાસ્ત્રમ્, તત્ર
પઢિત ઇતિ । અજ્ઞાનામાનિ દર્શયતિ- 'સિક્ષા' ઇત્યાદિ । 'સિક્ષાકલ્પે'
શિક્ષાકલ્પે શિક્ષા ચ કલ્પચેત્યનયો. સમાહારે શિક્ષાકલ્પં, તસ્મિન્, તત્ર શિક્ષા-
શિક્ષ્યતે વેદાર્થોઽનયેતિ શિક્ષા, અક્ષરસ્વરૂપનિરૂપકં શાસ્ત્રમિત્યર્થઃ, કલ્પઃ-વેદવિ-
હિતાચારનિરૂપકં શાસ્ત્રમ્, તસ્મિન્, 'વાગરણે' વ્યાકરણે, શબ્દશાસ્ત્રે 'છંદે' છન્દસિ
પદ્યલક્ષણશાસ્ત્રે, 'નિરુત્તે' નિરુક્તે, શબ્દાનાં વ્યુત્પત્તિનિરૂપણપરકશાસ્ત્રે, 'જોઙ-
સામયણે' જ્યોતિષામયણે, જ્યોતિષશાસ્ત્રે, પુનરપિ 'અન્નેસુ ય વહૂસુ વમ્હણ્ણણસુ'
અન્યેષુ ચ વહુષુ વ્રાહ્મણ્યકેષુ, વ્રાહ્મણસંવન્ધિષુ અન્યેષ્વપિ ચ વહુષુ શાસ્ત્રેષુ મનુસ્મૃ-

સ્થ હી યે । (પારણ) સમસ્ત વેદાર્થ વિષયક જ્ઞાન સે યહ યુક્ત થા ।
(સઢંગવી) વેદ કે જો છહ અજ્ઞ હોતે હૈં ડનકા યહ વિશેષરૂપ સે જ્ઞાતા
થા । (સઢ્ઠિતંતવિસારણ) કાપિલ દર્શન-સાંખ્યદર્શન મેં વહ વિશારદ
થા । સાંખ્યદર્શન કે સિદ્ધાન્ત સે ખી યહ વિશેષરૂપ સે પરિચિત થા ।
(સંત્રાણે) સંખ્યાન શબ્દ કા અર્થ સંખ્યાપ્રધાન ગણિતશાસ્ત્ર હૈ-હસમેં
વહ પઢિત થા । (સિક્ષાકલ્પે) વેદ કા અર્થ જિસકે દ્વારા સીખા
જાતા હૈ વહ શિક્ષા હૈ, તથા વેદવિહિત આચાર કા નિરૂપક જો શાસ્ત્ર
હૈ વહ કલ્પ હૈ । શિક્ષા ઓર કલ્પ ઇન ડોનોં મેં તથા (વાગરણે) વ્યા-
કરણ-શબ્દ શાસ્ત્ર મેં (છંદે) છંદઃ શાસ્ત્ર મેં (નિરુત્તે) શબ્દોં કી વ્યુ-
ત્પત્તિ નિરૂપણ પરક શાસ્ત્ર મેં વ્યુત્પત્તિ શાસ્ત્ર મેં (જોઙસામયણે) જ્યો-
તિષશાસ્ત્ર મેં, તથા (અન્નેસુ વહૂસુ વમ્હણ્ણણસુ) ઓર ખી ડૂસરે અનેક
વ્રાહ્મણસમ્બન્ધી મનુસ્મૃતિ-યાજ્ઞવલ્ક્યાદિ સ્મૃતિ આદિ શાસ્ત્રાં મેં, અથવા

કરી લીધા હતા "પારણ" વેદ વિષયક જ્ઞાનમાં તે પારંગત હતા. (સઢંગવી) વેદના
છએ અંગનો તે વિશેષ રૂપે જ્ઞાતા હતા. (સઢ્ઠિત તવિસારણ) કપિલદર્શન-સાંખ્ય
દર્શનનો તે વિશારદ હતા. (સંત્રાણે) સંખ્યા પ્રધાન ગણિતશાસ્ત્રનો પણ તે નિષ્ણાત
હતા. (સિક્ષાકલ્પે) જેના વડે વેદોનો અર્થ શીખવામાં આવે છે તે "શિક્ષાશાસ્ત્ર"
અને વેદકથિત આચારનું નિરૂપક જે કલ્પ શાસ્ત્ર છે તેમાં પણ તે વિશારદ હતા.
(વાગરણે) વ્યાકરણ શાસ્ત્રમાં, (છંદે) છંદ શાસ્ત્રમાં, (નિરુત્તે) વ્યુત્પત્તિ શાસ્ત્રમાં,
(જોઙસામયણે) જ્યોતિષ શાસ્ત્રમાં તથા (અન્નેસુ વહૂસુ વમ્હણ્ણણસુ) ખીલાં પણ અનેક
બ્રાહ્મણ શાસ્ત્રોમાં (મનુસ્મૃતિ,) યાજ્ઞવલ્ક્યાદિ સ્મૃતિ, આરણ્યક વગેરે બ્રાહ્મણ

त्विषु याज्ञवल्क्यादिस्मृतिषु अथवा ब्राह्मणशास्त्राणि आरण्यादिकानि उपनिषदादीनि
 त्रेषु, पुन - 'परिव्यापयसु नयेसु' पारिव्राजकेषु नयेषु 'सुपरिनिष्ठिषु यावि
 होत्या' सुपरिनिष्ठिषु व्याप्यासीत्, तत्र 'परिव्यापयसु' पारिव्राजकेषु-परिव्रानक
 सप्तन्धिषु 'नयेसु' नयेषु सन्यासप्रतिपादकानेकतमेषु 'सुपरिनिष्ठिषु' सुपरिनि-
 स्थितः = निष्पुणः तद्विषयसमीचीनज्ञानवानासीदिति ।

'तत्प नं सावत्थीए नयरीए पिंगलए णाम नियठे वसाळियसावए परि
 वसइ' तत्र स्वल्ग आवस्स्या नगर्यां पिंगलको नाम निर्ग्रन्थो वैशालिकभ्रातृः
 परिषसति, विशालाया अपत्यमिति वैशालिकः, भगवान् महावीरः वैशालिकस्य
 भ्रातृ इति वैशालिकभ्रातृ शृणोति जिनवाक्यं यः स भ्रातृकः तस्मात् स वैशालि-
 कस्य महावीरस्य वचनं शृणोति कर्णाम्यामिति यः स वैशालिकभ्रातृ महावीर

आरण्यक आदि ब्राह्मण शास्त्रों में, तथा-(परिनिष्ठावयसु नयेसु) परि-
 ब्राजक सम्प्रदायी शास्त्रों में भी (सुपरिनिष्ठिषु यावि होत्या) वह बहुत
 अधिक चतुर था, अर्थात् तद्विषयक ज्ञान से युक्त था ।

(तत्प नं सावत्थीए नयरीए) इसी आवस्ती नगरी में (पिंगलए
 णाम नियठे) पिंगल नाम का एक निर्ग्रन्थ रहता था । वह
 निर्ग्रन्थ (वैसाळियसावए) वैशालिक का भ्रातृ था-अर्थात् वैशालिक
 महावीर प्रभुका-भ्रातृ-उपदेश होता था । विशाला भगवान् महावीर
 प्रभुकी माताका नाम था । विशालाका जो अपत्य वह वैशालिक अर्थात्
 भगवान् महावीर प्रभु इनका भ्रातृ था अर्थात् (शृणोति जिनवाक्यं यः
 सः भ्रातृकः) इस व्युत्पत्ति के अनुसार वह भगवान् महावीर प्रभु के
 उपदेश का पान करने वाला था । तत्पर्य कहने का यह था ।

शास्त्रोभां तथा (परिनिष्ठावयसु नयेसु) पारिव्राजक सप्तन्धि शास्त्रोभां च
 (सुपरिनिष्ठिषु यावि होत्या) ते भवेत् न निष्ठाव इति ।

(तत्प नं सावत्थीए नयरीए) इवे जे आवस्ती नगरीभां (पिंगलए णाम नियठे)
 पिंगलक नामने जेक भणुमार रहेतो इतो ते भणुमार (वैसाळिय सावए) वैश-
 लिकना भ्रातृ इता जेदे के भगवान् महावीरप्रभुना भ्रातृ-उपदेश अवयु करनार
 इता विशाला, महावीर स्वामीनी मातानुं नाम इतु तेथी विशालाना पुत्र कोपाथी
 तेजो वैशालिक कहैवाता पिंगलक निर्ग्रन्थ भगवान् महावीरना उपासक इता तेभने
 महावीर प्रभुने उपदेश सांभजने जमतो इतो तेथी तेभने वैशालिक भ्रातृ कहै
 वामां भवेत् न भ्रातृ शृणोति जिनवाक्यं

पारगाभी अखिलवेदार्थ विषयकज्ञानवानित्यर्थः, 'सङ्गवी' 'पङ्गवित्', पण्णा-
मपि वेदाङ्गानां वक्ष्यमाणानां विशेषरूपेण ज्ञानवानित्यर्थः, 'सद्वित्तविसारए'
पण्ठीतंत्रविशारदः, पण्ठीतंत्र-कापिलं दर्शनम् तत्र विशारदः तद्विषयकज्ञानवा-
नित्यर्थः, 'संखाणे' संख्यानः संख्यानं संख्याप्रधानकं गणितशास्त्रम्, तत्र
पण्डित इति । अङ्गनामानि दर्शयति-'सिक्खा' इत्यादि । 'सिक्खाकप्पे'
शिक्षाकल्पे शिक्षा च कल्पश्चेत्यनयो. समाहारे शिक्षाकल्पं, तस्मिन्, तत्र शिक्षा-
शिक्ष्यते वेदार्थोऽनयेति शिक्षा, अक्षरस्वरूपनिरूपकं शास्त्रमित्यर्थः, कल्पः-वेदवि-
हिताचारनिरूपकं शास्त्रम्, तस्मिन्, 'वागरणे' व्याकरणे, शब्दशास्त्रे 'छंदे' छन्दसि
पद्यलक्षणशास्त्रे, 'निरुत्ते' निरुक्ते, शब्दानां व्युत्पत्तिनिरूपणपरकशास्त्रे, 'जोइ-
सामयणे' ज्योतिषामयने, ज्योतिषशास्त्रे, पुनरपि 'अन्नेसु य बहूसु वम्हणएसु'
अन्येषु च बहुषु ब्राह्मण्यकेषु, ब्राह्मणसम्बन्धिषु अन्येष्वपि च बहुषु शास्त्रेषु मनुस्मृ-

स्थ ही थे । (पारए) समस्त वेदार्थ विषयक ज्ञान से यह युक्त था ।
(सङ्गवी) वेद के जो छह अङ्ग होते हैं उनका यह विशेषरूप से ज्ञाता
था । (सद्वित्तविसारए) कापिल दर्शन-सांख्यदर्शन में वह विशारद
था । सांख्यदर्शन के सिद्धान्त से भी यह विशेषरूप से परिचित था ।
(संखाणे) संख्यान शब्द का अर्थ संख्याप्रधान गणितशास्त्र है-इसमें
वह पण्डित था । (सिक्खाकप्पे) वेद का अर्थ जिसके द्वारा सीखा
जाता है वह शिक्षा है, तथा वेदविहित आचार का निरूपक जो शास्त्र
है वह कल्प है । शिक्षा और कल्प इन दोनों में तथा (वागरणे) व्या-
करण-शब्द शास्त्र में (छंदे) छंदः शास्त्र में (निरुत्ते) शब्दों की व्यु-
त्पत्ति निरूपण परक शास्त्र में व्युत्पत्ति शास्त्र में (जोइसामयणे) ज्यो-
तिषशास्त्र में, तथा (अन्नेसु बहूसु वण्णएसु) और भी दूसरे अनेक
ब्राह्मणसम्बन्धी मनुस्मृति-याज्ञवल्क्यादि स्मृति आदि शास्त्रों में, अथवा

करी लीधा होता "पारए" वेद विषयक ज्ञानभां ते पारंगत होते (सङ्गवी) वेदना
छाने अंगना ते विशेष रूपे ज्ञाता होते (सद्वित्तविसारए) कापिलदर्शन-सांख्य
दर्शनना ते विशारद होते (संखाणे) संख्या प्रधान गणितशास्त्रना पणु ते निष्णात
होते (सिक्खा कप्पे) जेना वडे वेदना अर्थ शीखवामा आवे छे ते "शिक्षाशास्त्र"
अने वेदकथित आचारनुं निरूपक जे कल्प शास्त्र छे तेमा पणु ते विशारद होते ।
(वागरणे) व्याकरण शास्त्रमा, (छंदे) छंद शास्त्रमा, (निरुत्ते) व्युत्पत्ति शास्त्रमा,
(जोइसामयणे) ज्योतिष शास्त्रमा तथा (अन्नेसु बहूसु वम्हणएसु) भीष्म पणु अनेक
ब्राह्मण शास्त्रमा (मनुस्मृति,) याज्ञवल्क्य स्मृति, आरण्यक वगैरे ब्राह्मण

ષિત્ સર્વથા વિનાશો ભવતિ અથવા અનન્તઃ પ્રવાહરૂપેણ સર્વદા સ્થિતિમત્ત્વેન
અનન્ત ? ॥ ૧ ॥ ‘સ અતે જીવે અણતે જીવે’ સન્તઃ કિમ્ અંતસહિતઃ જીવઃ
અથવા અનન્તઃ-અંતરહિતઃ જીવ ? ॥ ૨ ॥ ‘સ અતા સિદ્ધો અમતાસિદ્ધી’ સન્તા
-અન્તસહિતા સિદ્ધિઃ-સિદ્ધિક્ષેત્રમ્, અનતા-અન્તરહિતા સિદ્ધિઃ ? ॥ ૩ ॥ ‘સ અંતે
સિદ્ધે અણતે સિદ્ધે’ સન્તઃ કિમ્ અતસહિત સિદ્ધઃ અથવા અનન્તઃ અંતરહિતઃ
સિદ્ધઃ ? ॥ ૪ ॥ ‘કેણ વા મરણેણ-મરમાણે જીવે વઘુઈ વા હાયઈ વા’ કેન વા મર
ણેન ધ્રિયમાણો જીવો ધર્ષતે વા હીયતે વા, સમારસ્ય વર્દ્ધનાત્ જીવો વર્દ્ધતે
સસારસ્ય હાન્યા વા હોયતે જીવઃ કીદૃશં મરણ પ્રાપ્ય જીવઃ સસારે પરિભ્રમતિ
કીદૃશં ચ મરણં પ્રાપ્ય સસારં સપયતીતિ યદ્વ પ્રશ્નાઃ ॥ ૫ ॥ ‘એવ બુન્ધમાણે’

પ્રવાહરૂપ સે સર્વદા સ્થિતિ ધાન્યા હોને સે પિનાશ રહિત હૈ ? તથા સ
અન્તે જીવે અણતે જીવે” જીવ અન્ત સહિત હૈ અથવા અનન્ત હૈ અન્ત
રહિત હૈ ? સ અન્તા સિદ્ધી અગંતા સિદ્ધી “ સિદ્ધીક્ષેત્ર અન્ત
સહિત હૈ યા અન્ત રહિત હૈ ? “ સ અન્તે સિદ્ધે અણતે સિદ્ધે સિદ્ધ અન્ત
સહિત હૈ કિ અન્ત રહિત હૈ ? કેણ વા મરણેણ મરમાણે જીવે વઘુઈ વા
હાયઈ વા “ જીવ કિસ મરણસે મરતા બુઝા અપને સસાર કે ધવન સે
ઘડતા હૈ ઔર અપને સસાર કી હાનિ સે ઘડતા હૈ તાત્પર્ય કહને કા યહ
હૈ કિ જીવ મેં ન હાસ હોતા હૈ ઔર ન ઘડતી હોતી હૈ, પરન્તુ સમાર
કે ધર્ષન સે જીવ કા ધવન ઔર સસાર ને હાસ સે જીવ કી હાનિ
માનલી જાતી હૈ। હસી આશય સે યહ હાનિ વૃદ્ધિ વિષયક પ્રશ્ન કિયા
ગયા હૈ તાત્પર્ય હસ પ્રશ્ન કા યહી હૈ કિ કેસે મરણ કો પ્રાસકર જીવ
સંસાર મેં ધૂમતા રહતા હૈ ઔર કેસે મરણ કો પ્રાસ કર જીવ અપને
સસાર કો નષ્ટ કર દેતા હૈ ? હસ પ્રકાર સે યે પાંચ પ્રશ્ન હૈ। એવ બુન્ધ

લોકોને કહી નાશ થાય છે કે નથી થતો તથા (સ અતે જીવે અણતે જીવે)
અથ અન્ત સહિત છે કે અન્ત રહિત છે (સ અતા સિદ્ધિ અણતા સિદ્ધિ ?)
સિદ્ધિ-વિદ્ધિ અતસહિત છે કે અત રહિત છે (સ અતે સિદ્ધે અણતે સિદ્ધ)
સિદ્ધ અતસહિત છે ? કે અતરહિત છે ? (કેણ વા મરણેણ મરમાણે જીવે
વઘુઈ વા હાયઈ વા) અથ કયા મરણથી પોતાના સસારના વધારાથી
વધે છે અને કયા મરણથી પોતાના સસારની હાનિથી ઘટે છે કહેવાનું
પ્રયોજન છે કે અથવા તો વૃદ્ધિ પણ થતી નથી અને હાનિ દ્વારા પણ
થતી નથી. ‘તુ સમારના વધનથી અવની વૃદ્ધિ બેને સમારની હાનિથી અવની
હાનિ અહીં માની લેવામા આવી છે તેથી આ પ્રશ્નોના આ પ્રમાણે આશય
પગલી યકાય કેવા પ્રકારના મરણથી અથ સસારમાં વાર વાર પરિભ્રમ કરે છે
અને કેવા પ્રકારના મરણથી અથ પોતાના સસારમાં પરિભ્રમણની સ્થિતિને

વંચનાપ્રતપાનરસિકઃ ઇતિ, યત્ર શ્રાવસ્ત્યામનેકપ્રકારકવેદવેદાંગાદિવિષયક-
સમસ્તજ્ઞાનવાન્ સ્કન્દોઽભૂતત્રૈવ શ્રાવસ્ત્યા તત્સમયે જિનમતાનુયાયી કશ્ચિત્
પિંગલકનામકો નિર્ગ્રન્થ આસીદિતિ સમુદિતાર્થઃ । ‘તણં સે પિંગલણં નામં
નિયંઠે-વેસાલિય સાવણ અન્નયા કયાઈં જેણેવ સંદણ કચ્ચાયણસ્સગોત્તે તેણેવ
ઉવાગચ્છઈ’ તતઃ સ્વલુ સ પિંગલકો નામ નિર્ગ્રન્થો વૈશાલિકશ્રાવકઃ અન્યદા
કદાચિત્=અન્યસ્મિન્ કસ્મિંશ્ચિત્સમયે યત્રૈવ સ્કન્દકઃ કાત્યાયનગોત્રસ્ત્રૈવોપાગ-
ચ્છતિ, ‘ઉવાગચ્છિત્તા સંદગં કાચ્ચાયણસ્સગોત્તં ઇમમક્ખેવં પુચ્છે’ ઉપાગત્ય
સ્કન્દકં કાત્યાયનગોત્રં ઇમમાક્ષેપમ્ પ્રશ્નમ્ અપ્રાક્ષીત્ । કિં પૃષ્ઠવાનિત્યત આહ—
‘માગહા’ ઇત્યાદિ । ‘માગહા’ હે માગધ ? મગધો મગધદેશસ્તત્ર ભવો માગધઃ
તત્સંવોધને હે માગધ !-હે મગધદેશોદ્ભવ સ્કન્દક ! ‘કિં સ અંતે લોણ અણતે લોણ’
કિં સાન્તઃ લોકઃ અનંતઃ લોક, હે સ્કન્દક ! કિમયં લોકઃ સાંતઃ એતસ્ય કદા-

જિસ શ્રાવસ્તી નગરી મેં વેદ, વેદાંગ આદિ કે સમસ્ત વિષયો
કે જ્ઞાન સે પરિશીલિત મતિવાલા એસા વિશેષ નિષ્ણાત સ્કન્દક નામ
કા પરિવ્રાજક રહતા થા ઉસી સમય મેં ઉસ શ્રાવસ્તી નગરી મેં
પિંગલક નામ કા એક નિર્ગ્રન્થ-બાહ્યાભ્યંતર પરિગ્રહ સે વર્જિત જૈન-
ધર્માનુયાયી નિર્ગ્રન્થ ભી રહતા થા । (તણં સે પિંગલણં નામં નિયંઠે
વેસાલિય સાવણ અન્નયા કયાઈં જેણેવ સંદણ કચ્ચાયણસ્સગોત્તે તેણેવ
ઉવાગચ્છઈ) એક દિન કી ઘાત હૈ કિ વૈશાલિય શ્રાવક વહ પિંગલક
અનગાર જહાં કાત્યાયનગોત્રી સ્કન્દક પરિવ્રાજન રહતા થા વહાં ગયા
(ઉવાગચ્છિત્તા) વહાં જાકર ઉસને (ઈમમક્ખેવં) ઉનકો હસ પ્રકાર પૂછા
હે સ્કન્દક ! ‘કિં સ અન્તે લોણ અણતે લોણ’ કહો યહ લોક સાન્ત હૈ-
અન્ત સહિત હૈ-હસકા કમ્મી સર્વથા નાશ હોતા હૈ ? અથવા અનંત હૈ ?

ચે સં શ્રાવક જિનેન્દ્ર ભગવાનનો ઉપદેશ શ્રવણ કરનારને શ્રાવક કહે છે કહેવાનું
તાત્પર્ય એ છે કે જે શ્રાવસ્તી નગરીમા તે સમયે વેદ, વેદાંગ વગેરે વિષયોનું જ્ઞાન
ધરાવનાર સ્કન્દક નામનો એક પરિવ્રાજક રહેતો હતો, એજ નગરમાં તે સમયે
પિંગલક નામનો એક શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ પણ રહેતો હતો બાહ્યાભ્યંતર પરિગ્રહથી
રહિત જૈન ધર્માનુયાયી મુનિને શ્રમણ નિર્ગ્રન્થ કહે છે (તણં સે પિંગલણ-
નામં નિયંઠે વેસાલિયસાવણ અન્નયા કયાઈં જેણેવ સંદણ કચ્ચાયણસ્સ ગોત્તે તેણેવ
ઉવાગચ્છઈ) એક દિવસ તે વૈશાલિક શ્રાવક (મહાવીરના ઉપાસક) પિંગલક
અણુગાર જ્યા કાત્યાયન ગોત્રીય સ્કન્દક પરિવ્રાજક રહેતો હતો ત્યાં ગયા
(ઉવાગચ્છિત્તા) ત્યાં જઈને તેમણે તેને (ઈમમક્ખેવં) આ પ્રમાણે પ્રશ્નો પૂછ્યા
(માગહા) હે માગધ ! મગધ દેશમા જન્મેલા હે સ્કન્દક (કિં સ અંતે લોણ
અણતે લોણ) આ લોક અન્ત સહિત છે કે અન્ત રહિત છે. એટલે કે આ

ચિત્ સર્વથા વિનાશો મવતિ અથવા અનત મયાદરૂપેણ સર્વદા સ્થિતિમત્ત્વેન
અનત ? ॥ ૧ ॥ ‘સ અતે જીવે અણતે જીવે’ સન્ત કિમ્ અતસહિત’ જીવઃ
અથવા અનંતઃ-અતરહિત જીવઃ? ॥ ૨ ॥ ‘સ અતા સિદ્ધી અણતાસિદ્ધી’ સન્તા
-અન્તસહિતા સિદ્ધિ-સિદ્ધિક્ષેત્રમ્, અનતા-અન્તરહિતા સિદ્ધિ? ॥ ૩ ॥ ‘સ અતે
સિદ્ધે અણત સિદ્ધે’ સન્તાઃ કિમ્ અતસહિતઃ સિદ્ધ અથવા અનંતઃ અતરહિતઃ
સિદ્ધ ? ॥ ૪ ॥ ‘કળ વા મરણેણ-મરમાણે જીવે વજુઈ વા હાયઈ વા’ કેન વા મર
ણેન ત્રિયમાણો જીવો યર્ષત વા હીયતે વા, સમારસ્ય વર્ત્તનાત્ જીવો વર્ત્તતે
સસારસ્ય હાન્યા વા હોયને જીવ કીદર્શન મરણ પ્રાપ્ય જીવઃ સસાર પરિભ્રમતિ
કીદર્શન ચ મરણ પ્રાપ્ય સંસારં જ્ઞપયતીતિ પદ્ય પ્રશ્ના ॥ ૫ ॥ ‘એવ બુદ્ધમાણે’

પ્રવાહરૂપ સે સર્વદા સ્થિતિ વાન્તા હોને સે વિનાશ રહિત હૈ ? તથા સ
અન્તે જીવે અણતે જીવે” જીવ અન્ત સહિત હૈ અથવા અનન્ત હૈ અન્ત
રહિત હૈ ? સ અન્તા સિદ્ધી અગતા સિદ્ધી “ સિદ્ધીક્ષેત્ર અન્ત
સહિત હૈ યા અન્ત રહિત હૈ ? “ સ અન્તે સિદ્ધે અણતે સિદ્ધે સિદ્ધ અન્ત
સહિત હૈ કિ અન્ત રહિત હૈ ? કેળ વા મરણેણ મરમાણે જીવે વજુઈ વા
હાયઈ વા “ જીવ કિસ મરણસે મરતા જુઆ અપને સંસાર કે વધન સે
વઢતા હૈ ઓર અપને સંસાર કી હાનિ સે ઘટતા હૈ તાત્પર્ય કહને કા યહ
હૈ કિ જીવ મેં ન હાસ હોતા હૈ ઓર ન વઢતી હોતી હૈ, પરન્તુ સંસાર
કે વધન સે જીવ કા વધન ઓર સંસાર ને હાસ સે જીવ કી હાનિ
માનલી જાતી હૈ। હસી આશય સે યહ હાનિ વૃદ્ધિ વિષયક પ્રશ્ન કિયા
ગયા હૈ તાત્પર્ય હસ પ્રશ્ન કા યહી હૈ કિ કેસે મરણ કો પ્રાપ્તકર જીવ
સંસાર મેં ઘૂમતા રહતા હૈ ઓર કેસે મરણ કો પ્રાપ્ત કર જીવ અપને
સંસાર કો નષ્ટ કર લેતા હૈ ? હસ પ્રકાર સે ચે પાંચ પ્રશ્ન હૈ। એવ બુદ્ધમાણ

લેકનો ઠઠી નાશ થાય છે કે નથી થતા તથા (સ અતે જીવે અણતે જીવે)
એવ અન્ત સહિત છે કે અન્ત રહિત છે (સ અતા સિદ્ધિ અણતા સિદ્ધિ)
સિદ્ધિ-ત્રિદિ અતસહિત છે કે અન્ત રહિત છે (સ અતે સિદ્ધે અણતે સિદ્ધ)
સિદ્ધ અતસહિત છે ? કે અતસહિત છે ? (કેળ વા મરણેણ મરમાણે જીવે
વજુઈ વા હાયઈ વા) એવ કયા મરણથી પોતાના સસારના વધારાથી
વધે છે અને કયા મરણથી પોતાના સસારની હાનિથી વધે છે ? ઠઠેવાતુ
પ્રયોજન એ છે કે એમાં તે વૃદ્ધિ પણ થતી નથી અને હાનિ હાનિ પણ
થતી નથી. પણ સસારના વધનથી એની વૃદ્ધિ અને સસારની હાનિથી એની
હાનિ અહીં માની લેવામાં આવી છે તેથી આ પ્રશ્નોના આ પ્રમાણે સાવાર્ય
થગવી શકાય કેવા પ્રકારના મરણથી એ સસારમાં વાર વાર પરિભ્રમણ કરે છે
અને કેવા પ્રકારના મરણથી એ પોતાના સસારમાં પરિભ્રમણની સ્થિતિને।

एवमुच्यमानः, एवम्=अनेन प्रकारेण उच्यमानः=पृच्छ्यमानः सन् त्वम् 'एतावं ताव आइक्खाहि' एतावत्तावदाख्याहि, ये ये प्रश्नाः मया पृष्ठास्तेषामुत्तरं तावत् प्रथमं देहि ततः पुनरहमन्यं प्रश्न करिष्यामीति हृदयम्।

'तएणं से खंदए कच्चायणस्म गोत्ते' ततः खलु स स्कन्दकः कात्यायन-गोत्रः, ततस्तदनन्तरं पिंगलकस्य प्रश्नश्रवणानन्तरम्, 'पिंगलए णं नियंठेणं' पिङ्गलकेन निर्ग्रन्थेन 'वेसालियसावएणं' वैशालिकश्रावकेण 'इणमक्खेवं' इमम् आक्षेपं प्रश्नमित्यर्थः, 'पुच्छिए समाणे' पृष्टः सन् 'संकिए' शंकितः, शंका संजाताऽस्येति शंकितः, किमेतस्य पिङ्गलकनिर्ग्रन्थप्रश्नस्येदमुत्तरमिदं वा उत्तरमित्याकारया शंकया संजातशंकितः 'कंखिए' कांक्षितः, काङ्क्षा संजाताऽ-स्येति काङ्क्षितः, एतस्य प्रश्नस्येदमुत्तरं न सम्यक्, इदमपि न सम्यक् अतः

माणे "इस प्रकार से जब वैशालिक श्रावक ने पूछा और कहा कि तुम "एतावं ताव अक्खाहि" इन मेरे प्रश्नों का पहिले उत्तर दो तब पीछे मैं और प्रश्न पूछुंगा। "तएणं से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते" इस प्रकार से कात्यायन गोत्री वह स्कन्दक परिव्राजक "पिंगलएणं नियंठेणं वेसालियसावएणं इणमक्खेवं पुच्छिए समाणे" जो कि वैशालिकश्रावक पिंगलक निर्ग्रन्थ द्वारा इन प्रश्नों के पूछे जाने पर वह 'संकिए' शंकित हो गया उसके चित्त में यह विचार धारण उठने लगा कि पिंगलक निर्ग्रन्थ ने जो ये प्रश्न पूछे हैं सो उनका उत्तर यह है कि इस तरह से उसका मन डाढ़ाडोल होने लगा वह यह निश्चय नहीं कर सका कि इन प्रश्नों का उत्तर निश्चय रूप से क्या है? "कंखिए" कांक्षायुक्त हो गया

नाश करी नापे छे? आ प्रकारना पांय प्रश्नो छे (एवं उच्यमाणे) न्यारे वैशालिक श्रावक पिंगलके आ प्रमाणे पूछथु अने कह्यु डे (एतावं तावअक्खाहि) मारा आ प्रश्नोना तमे पडेला नवाण आपो पछी हुं भील प्रश्नो पणु पूछीश (तए ण से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते) न्यारे कात्यायन गोत्रीय ते स्कन्दक परि-व्राजके (पिंगलए ण नियंठेण वेसालियसावएण इणमक्खेवं पुच्छिए समाणे) वैशालिक श्रावक पिंगलक निर्ग्रन्थ वडे आ प्रश्नो पूछवामा आन्या त्थारे (संकिए) तेना मनमां शंका उइलवी डे पिंगलक मुनिये ने प्रश्नो पूछया छे तेना अमुक रीते नवाण आपी शंकाय डे भील केछ रीते नवाण आपी शंकाय ? तेना मननी स्थिति डामाडोण थर गछ आथी ते प्रश्नोना क्यो नवाण आपयो तेने निष्ठय ते करी शक्या नही (कंखिए) तेओ कांक्षायुक्त थर

किमप्रोत्तर मविष्यतीत्याकाङ्क्षावानित्यर्थः । 'वित्तिगिच्छिष्य' विचिकित्सितः, विचिकित्सा सप्तावाऽस्येति विचिकित्सितः, अस्मिन्नुत्तरे वृत्तेऽस्य निर्ग्रन्थस्य भद्रा मविष्यति न वेत्याकारकविचिकित्सायुक्तः, 'मेदसमाबन्ने' मेदसमापन्नः मेदं मतेर्मह किं कर्तव्यता व्याकुलत्वसंज्ञा समापन्नः माप्स इति मेदसमापन्नः 'कलुस समाबन्ने' कलुपसमापन्नः, नाह किमपि भानामीत्यर्थरूपेण स्वविषये काङ्क्ष्य दौर्मनस्यं प्राप्त इति कलुपसमापन्नः सन् 'जो संघाण्ड' न क्ष्वनोति, न समर्थो मनसि उत्तरमाख्यातुमित्यग्रेण सम्बन्धः । कस्मै ? इत्याह—'पिंगलयस्स' इत्यादि । 'पिंगलयस्स नियठस्स-वेसालियसाययस्स' पिङ्गलकाप निर्ग्रन्थाप

इन प्रश्नों का यदि हम प्रकार से उत्तर देना हू तो वह भी ठीक नहीं है और यदि इस प्रकारसे उत्तर देता हूँ तो वह भी ठीक नहीं है अतः इस प्रश्नों का असली उत्तर क्या होना चाहिये इस प्रकार की आकाङ्क्षा उसके विषय में जग गई । "वित्तिगिच्छिष्य विचिकित्सासे युक्त हो गया इस पिंगलक निर्ग्रन्थ को इन प्रश्नों का यदि मैं यह उत्तर देता हूँ तो इस पर उसकी अद्धा होगी कि नहीं होगी इस प्रकार की विचिकित्सा उसको उत्पन्न हो गई । "मेदसमाबन्ने वह मेद समापन्न हो गया अर्थात् अब मैं क्या करूं इस प्रकारसे वह कुछ भी निर्णय नहीं कर सका उसकी बुद्धि किंकर्तव्यता से विमूढ बन गई । "कलुससमाबन्ने मैं अब इस विषय में कुछ नहीं जान रहा हू, इस तरह से जब वह कुछ भी निर्णय नहीं कर सका तब वह अपने आपमें हँसल्ला गया स्मिसिया गया मन में उसके कलुपता आगाई । अत एव वह (वेसालिय साययस्स पिंगल

जया तेमने मनमां जेवुं वधुं के आ रीते ते प्रश्नोना जवाण आपु ते पणुं छिं नहीं दाणे अने ते विवायनी केहं नील रीते पणुं येवण जवाण आपी शक्या तेम नधीं ते प्रश्नोना सावे सावा उत्तर क्या करे ते जणुवानी आकांक्षा तेमना मनमां जग्गी । (वित्तिगिच्छिष्य) तेमनु मन विचिक्त्साभी युक्ता वधगुं हू आ पिजल्ल निर्वर्णने आ प्रकारने उत्तर आपीश ते तेने तेमां भद्रा एहेरे के नहीं रके जेवा प्रकारनी आशका तेमना मनमां उत्पन्न वधं (मेदसमाबन्ने) तेमनी भति भूजाहं जहं ते प्रश्नोना शे जवाण आपवे तेनी समज्जु न पडवाभी तेजो विभासज्जुमां पप्री गया (कलुससमाबन्ने) व्यापरे ते प्रश्नोना निष्कं व तेजो करी शक्या नहीं त्यापरे तेजो पेटाना मनमां शरम अनुसववा लाग्या तेमना मनमां कलुपता आवी जहं तेभी तेजो (वेसालियसाययस्स पिंगलयस्स नियठस्स किंचि वि पमोक्कं अक्खाइ व जो

एवमुच्यमानः, एवम्=अनेन प्रकारेण उच्यमानः=पृच्छ्यमानः सन् त्वम् 'एतावं ताव आइक्खाहि' एतावत्तावदाख्याहि, ये ये प्रश्नाः मया पृष्ठास्तेषामुत्तर तावत् प्रथमं देहि ततः पुनरहमन्यं प्रश्नं करिष्यामीति हृदयम् ।

‘तएणं से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते’ ततः खलु स स्कन्दकः कात्यायन-
गोत्रः, ततस्तदनन्तरं पिंगलकस्य प्रश्नश्रवणानन्तरम्, ‘पिंगलए णं नियंठेणं’
पिङ्गलकेन निर्ग्रन्थेन ‘वेसालियसावएणं’ वैशालिकश्रावकेण ‘इणमक्खेवं’
इमम् आक्षेपं प्रश्नमित्यर्थः, ‘पुच्छिए समाने’ पृष्ठः सन् ‘संकिए’ शङ्कितः,
शङ्का संजाताऽस्येति शङ्कितः, किमेतस्य पिङ्गलकनिर्ग्रन्थप्रश्नस्येदमुत्तरमिदं वा
उत्तरमित्याकारया शङ्कया संजातशङ्कितः ‘कंखिए’ काङ्क्षितः, काङ्क्षा संजाताऽ-
स्येति काङ्क्षितः, एतस्य प्रश्नस्येदमुत्तरं न सम्यक्, इदमपि न सम्यक् अतः

माणे “ इस प्रकार से जब वैशालिक श्रावक ने पूछा और कहा कि तुम
“ एतावं ताव अक्खाहि ” इन मेरे प्रश्नों का पहिले उत्तर दो तब पीछे
मैं और प्रश्न पूछूंगा । “ तएणं से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते ” इस
प्रकार से कात्यायन गोत्री वह स्कन्दक परिव्राजक “ पिंगलएणं नियंठेणं
वेसालियसावएणं इणमक्खेवं पुच्छिए समाने ” जो कि वैशालिकश्रावक
पिंगलक निर्ग्रन्थ द्वारा इन प्रश्नों के पूछे जाने पर वह ‘संकिए’ शङ्कित हो
गया उसके चित्त में यह विचार बार२ उठने लगा कि पिंगलक निर्ग्रन्थ
ने जो ये प्रश्न पूछे हैं सो उनका उत्तर यह है कि इस तरह से
उसका मन डबाडोल होने लगा वह यह निश्चय नहीं कर सका कि इन
प्रश्नों का उत्तर निश्चय रूप से क्या है ? “ कंखिए ” काङ्क्षायुक्त हो गया

નાશ કરી નાખે છે? આ પ્રકારના પાંચ પ્રશ્નો છે (એવં વુચ્ચમાણે) બ્યારે
વૈશાલિક શ્રાવક પિંગલકે આ પ્રમાણે પૂછ્યું અને કહ્યું કે (એતાવં તાવઅક્ખાહિ)
મારા આ પ્રશ્નોના તમે પહેલાં જવાબ આપો પછી હું બીજા પ્રશ્નો પણ પૂછીશ
(તણે જે સે સંદણે કચ્ચાયણસ્સ ગોત્તે) બ્યારે કાત્યાયન ગોત્રીય તે સ્કન્દક પરિ-
વ્રાજકને (પિંગલણે નં નિયંટ્ટેણ વેસાલિયસાવણં ઇણમક્ખેવં પુચ્છિણે સમાણે)
વૈશાલિક શ્રાવક પિંગલક નિર્ગ્રન્થ વડે આ પ્રશ્નો પૂછવામાં આવ્યા ત્યારે
(સંકિણે) તેના મનમાં શંકા ઉદ્ભવી કે પિંગલક મુનિએ જે પ્રશ્નો પૂછ્યા છે
તેનો અમુક રીતે જવાબ આપી શકાય કે બીજી કોઈ રીતે જવાબ આપી
શકાય ? તેના મનની સ્થિતિ ડામાડોળ થઈ ગઈ આથી તે પ્રશ્નોનો કયો જવાબ
આપવો તેને નિર્ણય તે કરી શક્યા નહીં (કંચિણે) તેઓ કાંક્ષાયુક્ત થઈ



मरणेन म्रियमाणो जीव मर्षते वा क्षीयते वा ? इत्येषामुत्तरं देहि मया पूर्वोक्त
प्रकारेण पृच्छयमानस्तत्रमिति भावः । 'तएण से खदए कच्चायणस्स गोचे' सत्तु
स स्कन्दक कात्यायनगोत्र 'पिंगलएणं नियठेण वेसालिय सावएणं' पिंगलकेन
निर्ग्रन्थेन वैशालिकभावेण 'क्षोच्चपि तच्चपि' द्विरपि त्रिरपि-द्वितीयवारमपि
तृतीयवारमपि 'इणमक्खेष पुच्छिण समाणे' इममाक्षेप पृष्ट सन् 'सकिण' संकितः
कंसिण' कांसित 'वित्तिगिच्छिण' 'विचिकित्सितः' 'मेदसमापन्ने' मेद
समापन्न 'कट्ससमापन्ने' कटुपसमापन्न 'णो सचाए' नो क्षन्नोति,
'पिंगलास्स शियठस्स वेसालियसावस्स' पिंगलकाय निर्ग्रन्थाय वैशालिकभावे
काय 'किंचिदि' किंचिदपि 'पमोक्ख' प्रमोक्षम्-उत्तरम्, 'अवत्ताइ' आत्मा
सुम्' पुनः पिंगलकेन पृष्टोपि स्कन्दकः पिंगलकस्य उत्तरं दातुं न समर्थोऽभूदिति
भावः, अतएव-'दुसिणीए सचिद्ध' तूष्णीकः सतिष्ठते उत्तरमज्ञानं न किंचि
दप्युक्तवानित्यर्थः ॥ सू० ७ ॥

ततः किम् ? इत्याह—'तएणं' इत्यादि ।

मूलम्—तएण सावत्थीए नयरीए सिंघाडग जाव पहेसु
महया जणसमवेइ वा जणवूहेइ वा जाव परिता निग्गच्छइ
तएण तस्स खदयस्स कच्चायणस्स गोत्तस्स वहुजणस्स
अतिए पयमद्ध सोच्चा निसम्म इमे पयारूवे अवत्तायिण

किस मरण से मरकर जीव बढ़ता है और घटता है तुम पहिले मेरे
इन प्रश्नों का उत्तर दो ? इस तरह पूर्वोक्त रूप से प्रश्नों का बुझा कर
तिहरा कर निर्ग्रन्थ पिंगलक के द्वारा कृत्न प्रश्नों का उत्तर देने के लिये
पूछा गया वह कात्यायन गोत्री स्कन्दक परित्राजक चांकिन कांसित
आदि अवस्था वाला पनकर प्रश्नों का उत्तर देने में असमर्थ ही रहा
और इसके फल स्वरूप वह केवल श्रुप आप ही रहा ॥ सू० ७ ॥

अन्त सदित छे के अन्त सदित छे त्यांथी शउ करीने केवा प्रकाशना भरखुधी
भरीने छव ससार वभाइ छे अने केवा प्रकाशना भरखुधी भरीने छव
ससार घटाडे छे त्या सुधीना भास प्रभोना तमे उत्तर आपो नील वास तथा
नील वास जे प्रभोना अपाण आपवानुं अन्याए पिअवक निअंय वटे कात्यायन
गोत्री स्कन्दक परित्राजकने कहेवाभां आपु त्याइ ते स्कन्दक परित्राजक शक्ति,
हाक्षित, वगेरे स्थितिवाणा भउ जवाने काखे ते प्रभोना उत्तर आपी शकवाने
असमर्थ अन्या तेने परित्राज प्रभोना उत्तर नही आपतां मौन व रहेवानुं
तेभने थोअ छाप्पु तेथी तेजो श्रुप आप जेसी व रह्या ॥ सू० ७ ॥

वैशालिकश्रावकाय चतुर्थ्यर्थे पट्टी 'किंचि वि पमोक्खं अक्खाइउं' किञ्चिदपि प्रमोक्षम् = उत्तरम् आख्यातुम् = कथयितुम् । अतएव 'तुसिणीए' तूष्णीकः मौनमासादितः सन् 'संचिद्धइ' सतिष्ठते ।

'तएणं से पिंगलए णियंठे वेसालियसावए' ततः खलु स पिंगलको निर्ग्रन्थः वैशालिकश्रावकः, खंदयं कच्चायणस्स गोत्तं 'स्कन्दकं कात्यायनगोत्रम्' 'दोच्चंपि' द्विरपि - द्वितीयवारमपि 'तच्चपि' त्रिरपि = तृतीयवारमपि 'इणमक्खेव' इममापेक्षम् = प्रश्नं 'पुच्छे' अप्राक्षीत् - 'मागहा' हे मागध ! = हे स्कन्दक ! 'किं स अंते लोए' किं सांतो लोकः 'जाव केण वा मरणेणं मरमाणे जीवे वड्डइ वा हायइ वा एतावं ताव आइक्खाहि' यावत् केन मरणेन म्रियमाणो जीवो वर्द्धते वा हीयते वा एतावत्तावदाख्याहि, इह यावत् करणात् जीवसिद्धि-सिद्धानां ग्रहणं भवति । 'बुच्चमाणे एवम्' उच्यमानः कथ्यमानः एवम् - एतद्रूपेण पूर्वोक्तप्रकारेणेति । किं सान्तः लोकः, अनन्तः लोकः? सान्तः जीवः अनन्तो जीवः?, सान्ता सिद्धिः अनन्ता सिद्धिः? सान्तः सिद्धः अनन्तः सिद्धः?, तथा केन

यस्स नियंठस्स किंचिवि पमोक्खं अक्खाइउं णो संचाएइ "वैशालिकश्रावक पिंगलक निर्ग्रन्थ के इन प्रश्नों का थोडा सा भी उत्तर देने के लिये समर्थ नहीं हो सका । केवल वह तुसिणीए संचिद्धइ चुपचाप ही रहा

"तएणं से पिंगलए णियंठे वेसालिय सावए" जब निर्ग्रन्थ वैशालिकश्रावक ने उसे चुपचाप ही बैठा हुआ देखा तब कच्चायणस्स गोत्तं खंदयं "उन्होंने ने उस कात्यायन गोत्री स्कन्दक परिव्राजक से "दोच्चंपि दुवारा भी और तच्चपि तिद्वारा भी इणमक्खेव इन्हीं प्रश्नोंको पुच्छे " पूछा कहा "मागहा" हे मागध हे स्कन्दक किं स अंते लोए जाव केण वा मरणेणं मरमाणे जीवे वड्डइ वा हायइ वा एतावं ताव आइक्खाहि "लोक अन्त सहित" है कि अन्त बिना का है यावत् इसी प्रकार जीव सिद्धि और सिद्ध अन्त सहित है कि अन्त रहित? तथा

संचाएइ) वैशालिक श्रावक (भडावीरना उपासक) पिंगलक निर्ग्रन्थना ओ प्रश्नोने भिलकुल जवाब आपी सक्या नही अने तेथी तेओ (तुसिणीए संचिद्धइ) चुपचाप भेसी ज रहा

(तएणं से पिंगलए णियंठे वेसालिय सावए) न्याये ते भडावीरना उपासक पिंगलक निर्ग्रन्थ तेमने चुपचाप भेठेला जेथा त्यारे तेमणे (कच्चायणस्स गोत्तं खंदयं) कात्यायन गोत्रीय स्कन्दक परिव्राजकने (दोच्चंपि) भीछ अने (तच्चपि) त्रीछ वअत पणु (इणमक्खेव) ओअ प्रश्नो (पूच्छे) पूछयां छे (मागहा !) छे मागध ! (छे स्कन्दक) (किं स अंते लोए जाव केण वा मरणेणं मरमाणे जीवे वड्डइ वा हायइ वा एतावताव आइक्खाहि) दोछ

छाया—तत खलु भावस्त्वां नगर्यां शृंगाटक० यावत् पथेसु महाजनसमर्प
इति वा जनपूइ इति वा यावत् पर्पद् निर्गच्छति । तत खलु तस्य स्कन्दकस्य
कात्यायनगोत्रस्य बहुजनस्यान्तिके एतमर्थं श्रुत्वा निश्चय्य अयमेतद्रूप आध्या-
त्मिकः चिन्तितः कल्पितः प्रार्थितः मनोगतः संकल्पः समुदपपत् । एष खलु
भमणो भगवान् महावीरः कृतंगलाया नगर्याः वह्निः छत्रपलाशके चैत्ये संप्रमेन
तपसा आत्मानं भाषयन् विहरति, तद् गच्छामि खलु भमणं भगवन्तं महावीरं
(सिंघाडग जाव पहेसु) जो शृङ्गाटक-त्रिकोणमार्ग जहाँ तीन मार्ग मिलते
हैं जहाँ चार मार्ग मिलते हैं ऐसे अनेक प्रकार के मार्गों में (महया जण
संमदेइ वा जण वूहेइ वा) लोगों की बहुत बड़ी भीड़ इकट्ठी हो गई और
लोक भगवान् के पधारने की बातें करने लगे (जाव परिसा निगगच्छइ)
यावन् समा निकली (तएण) इसके पश्चात् (कक्कायणस्स गोत्तस्स
तस्स खंदयस्स) कात्यायन गोत्र वाले उस स्कन्दक के मन में (बहु-
जणस्स अन्तिए एयमदु सोच्चा निसम्म) अनेक मनुष्यों के पास से
इस अर्थ को भगवान् महावीर के आगमन रूप समाचार को सुन करके
और उसे अपने हृदय में निश्चित करके (इमे) यह (एयाक्खे) इस रूप
(अज्झस्सिए) आध्यात्मिक (चिन्तिए) चिन्तित (कप्पिए) कल्पित
(पत्थिए) प्रार्थित (मणोगए) मनोगत (संकप्पे) संकल्प (समुप्पसित्था
उत्पन्न हुआ । कि (एवं खलु समणे भगव महावीरे कयंगलाए नयरीए)
अमण भगवान् महावीर कृतंगला नगरी के बहिया (छत्तपलामए)
वेइए) जो छत्रपलाशक नाम का चैत्य है उस में (संजमेण तवसा

(सिंघाडग जाव पहेसु) शृङ्गाटोका- न्यां त्रयु भागों भगवा डेव, चार
भागों भगवा डेव, जेवी रीते अनेक प्रकारना भागोंभा (महया जणसंमदेइ
वा जणवूहेइवा) दोडोने भोटो समुदाय ओकठो बध अथे अने दोडो जम
धानना आजभननी वातो करवा लाय्या (जाव परिसा निगगच्छइ) दोडोनी
परिसा प्रभुने उपदेश सांभलवाने नीकणी छत्याहितभाभ सूत्रपाठ अही प्रकम्प
करवा (तएण) त्वां भाइ (कक्कायणस्स गोत्तस्स तस्स खंदयस्स बहुजणस्स अन्तिए
एयमदु सोचा निसम्म) अनेक भावसे पासेधी भजवान् महावीरना आजभनना
समाचार सांभलीने अने तेने पोताना हृदयभां धारण करीने ते कात्यायन
भ्रात्रीय स्कन्दक परिग्राहकना मनभां (इमे) ज्वा (एयाक्खे) प्रकारने (अज्झस्सिए)
आध्यात्मिक, (चिन्तिए) चिन्तित, (कप्पिए) कल्पित, (पत्थिए) प्रार्थित,
(मणोगए) मनोगत (संकप्पे) संकल्प (समुप्पसित्था) उत्पन्न अथे- डे
(एष खलु समणे भगव महावीरे कयंगलाए नयरीए बहिया छत्तपलासए वेइए

चित्ति ए कप्पि ए पत्थि ए मणोग ए संकप्प समुप्पज्झित्थो एवं
 खलु समणे भगवं महावीरे कयंगला ए नयरी ए वहिया
 छत्तपलास ए चेइ ए संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विह-
 रइ, तं गच्छामि णं समणं भगवं महावीरं वंदामि नमं-
 सामि। सेयं खलु मे समणं भगवं महावीरं वंदित्ता नमंसित्ता
 सक्कारित्ता सम्माणित्ता कल्लाणं मंगलं देवयं चेइयं पज्जुवा-
 सित्ता, इमाइं च णं एयारूवाइं अट्ठाइं हेऊइं पसिणाइं कारणाइं
 वागरणाइं पुच्छित्त ए त्तिकट्टु एवं संपेहेइ संपेहित्ता जेणेव
 परिव्वायगावसहे, तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता तिदंडं
 च कंचणियं च करोडियं च भिसियं च केसरियं च छण्णालयं
 च अंकुसयं च पवित्तयं च गणेत्तियं च छत्तयं च उवाहणओ
 य पाउयाओ य धाउरत्ताओ य गेण्हइ गेण्हित्ता परिव्वायगा-
 वसहाओ पडिनिक्खमइ परिनिक्खमित्ता तिदंडं कुंडिय-
 कंचणिय-करोडिय-भिसिय-केसरिय-छण्णालय-अंकुसय
 पवित्तय-गणेत्तिय-हत्थग ए छत्तोवाणहसंजुत्ते धाउरत्तव-
 त्थपरिहि ए सावत्थी ए नयरी ए मज्झं मज्झेणं निग्गच्छइ, निग्ग-
 च्छित्ता जेणेव छत्तपलास ए चेइ ए, जेणेव समणे भगवं
 महावीरे तेणेव पहारेत्थ गमणा ए ॥ सू० ८ ॥

“ तएणं सावत्थी ए ” इत्यादि ।

सूत्रार्थ—(तएणं) इसके बाद (सावत्थी ए नयरी ए) उस श्रावस्तीनगरी में

“ तए ण सावत्थी ए ” इत्यादि

सूत्रार्थ—(तएण) त्थार णाढ (सावत्थी ए नयरी ए) श्रावस्ती नगरीमें

छाया—ततः खलु भावस्त्यां नगर्यां भृंगगटक० यावत् पपेसु महाजनसंमर्दे
इति वा जनव्यूह इति वा यावत् पर्पद् निर्गच्छति । ततः खलु तस्य स्कन्दकस्य
कात्यायनगोप्रस्य बहुजनस्यान्तिके एतमर्थं भुत्वा निश्चम्य अयमेतद्रूप आध्या-
त्मिकः चिन्तितः कल्पित प्रार्थित मनोगत संकल्पः समुदपद्यत । एव खलु
भ्रमणो भगवान् महावीरः कुतंगलाया नगर्याः वह्निः छत्रपलाशके चैत्ये सपमेन
सपसा आत्मानं भाषयन् विहरति, तद् गच्छामि खलु धर्मणं भगवन्त महावीरं
(सिंघाडग जाव पहेसु) जो शृङ्गाटक-त्रिकोणमार्ग जहाँ तीन मार्ग मिलते
हैं जहाँ चार मार्ग मिलते हैं ऐसे अनेक प्रकार के मार्गों में (महया जण
संमर्दे वा जण वूहे वा) लोगो की बहुत बड़ी मीढ़ इकट्ठी हो गई और
लोक भगवान के पधारने की बातें करने लगे (जाव परिसा निर्गच्छइ)
यावत् सभा निकली (तपण) इसके पश्चात् (कच्चायणस्स गोत्तस्स
तस्स खंद्यस्स) कात्यायन गोत्र बाड़े उस स्कन्दक के मन में (बहु-
जणस्स अन्ति एयमट्ठ सोच्चा निसम्म) अनेक मनुष्यों के पास से
इस अर्थ को भगवान् महावीर के आगमन रूप समाचार को सुन करके
और उसे अपने हृदय में निश्चित करके (इमे) यह (एयारुवे) इस रूप
(अवसत्थिए) आध्यात्मिक (चित्थिए) चिन्तित (कप्पिए) कल्पित
(पत्थिए) प्रार्थित (मणोगए) मनोगत (संकल्पे) संकल्प (समुप्पज्झित्वा)
उत्पन्न हुआ । कि (एवं खलु समणे भगवं महावीरे कयंगलाए नयरीए)
भ्रमण भगवान् महावीर कुतंगला नगरी के वहिया (उत्सपलामए)
वेहए) जो छत्रपलाशक नाम का चैत्य है उस में (संजमेणं तवसा

(सिंघाडग जाव पहेसु) भृंगगटकेभ- न्यां तेषु भार्गो भणतां छेय, भार
भार्गो भणतां छेय, जेवी रीते अनेक प्रकार के भार्गोभा (महया जणसंमर्दे
वा जणवूहेवा) दोऊनो ओटो समुदाय जेऊको बध अथे अने दोऊो जण
वानना आगमननी वातो करवा लाया (जाव परिसा निर्गच्छइ) दोऊोनी
परिषद प्रभुनो उपदेश साधनवाने नीकणी धर्मादितभाभ सुत्रपाठ अही अकल
करवे (तपण) त्वाए ज्वा (कच्चायणस्स गोत्तस्स तस्स खंद्यस्स बहुजणस्स अत्थिए
एयमट्ठ सोचा निसम्म) अनेक भाषुसे पासेणी जगवान भूदापीरना आगमनना
समाचार साधनीने अने तेने पोताना हृदयभा धारण करीने से आत्माभन
मोत्रीय स्कन्दक परिवान्जना भनभा (इमे) आ (एयारुवे) प्रकारनो (अवसत्थिए)
आध्यात्मिक (चित्थिए) चिन्तित (कप्पिए) कल्पित, (पत्थिए) प्रार्थित,
(मणोगए) मनोगत (संकल्पे) संकल्प (समुप्पज्झित्वा) उत्पन्न अथे- के
(एवं खलु समणे भगवं महावीरे कयंगलाए नयरीए वहिया छत्रपलाशक वेहए

वन्दे नमस्यामि श्रेयः खलु मम श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दित्वा नमस्यित्वा
सत्कृत्य संमान्य कल्याणं मंगलं दैवतं चैत्यं पर्युपास्य इमान् च खलु एतद्रूपान्
अर्थान् हेतून् प्रश्नान् करणानि व्याकरणानि प्रष्टुमिति कृत्वा एवं संप्रेक्षते, संप्रेक्ष्य
यत्रैव परिव्राजकावसथः तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य त्रिदण्डं च कुण्डिकां च कांच-

अप्पाणं भावे माणे विहरइ) संयम और तप से अपनी आत्माको भावित
करते हुए विराजते हैं (तं गच्छामि णं भगवं महावीर वंदामि नमसामि
इसलिये मैं उनके पास जाऊँ और उन्हें वंदना करूँ और नमस्कार करूँ
(सेयं खलु मे) इसी में मेरा कल्याण है कि मैं (समणं भगवं महावीरं
वंदित्ता नमसित्ता) श्रमण भगवान् महावीर को वंदना नमस्कार करके
(सकारित्ता) उनका सत्कार करके (सम्माणित्ता) उनका सम्मान करके
तथा (कल्लाणं मंगलं देवयं चेइयं पज्जुवासित्ता) कल्याणस्वरूप मंग
लस्वरूप, धर्मदेव स्वरूप चैत्य ज्ञान स्वरूप उनकी पर्युपासना करके (इमाइं
च णं एयास्वाइं हेऊइं पसिणाइं अट्ठाइं) इन इन रूप अर्थों को हेतुओं को,
प्रश्नोंको (कारणाइं वागरणाइं) कारणोंको व्याकरणोंका (पुच्छित्तए)
पूछें। (त्तिकहु) ऐसा मनमें विचार करके (एवं संपेहेइ) ऐसा उसने
विचार किया (संपेहित्ता) ऐसा विचार करके फिर वह (जेणेव परिव्रा-
जगावसहे) जहाँ परिव्राजकों का मठ था (तेणेव उवागच्छइ) वहाँ पर
गया। (उवागच्छित्ता) वहाँ जाकर के (त्रिदण्डं च कुण्डियं कंचणियं च

सज्जेणं तवसा अप्पाणं भावे माणे विहरइ) श्रमण भगवान् महावीर, इतंगला
नगरीनी णडार छत्रपलाशक नामनु जे चैत्य (उद्यान) छे तेभा संयम अने
तपशी पोताना आत्माने भावित करता बिराजे छे (त गच्छामि ण समण-
भगव महावीर वंदामि, नमसामि) तेभनी पासे हु जे अने तेभने वदन
नमस्कार करे (सेय खलु मे) जेभा जे भारु श्रेय छे (समण भगव-
महावीर वंदित्ता नमसित्ता) श्रमण भगवान् महावीरने वंदन नमस्कार करीने
(सकारित्ता सम्माणित्ता) तेभने सत्कार तथा सम्मान करीने तथा (कल्लाण-
मंगल देवयं चेइयं पज्जुवासित्ता) इत्याणु स्वरूप, भगणस्वरूप, धर्मदेव स्वरूप,
चैत्य (ज्ञान) स्वरूप, महावीर प्रभुनी पर्युपासना करीने (इमाइं च णं एया-
स्वाइं अट्ठाइं हेऊइं पसिणाइं) आ प्रकारना अर्थी, हेतुआ, प्रश्नो (कारणाइं
वागरणाइं) धारणो, अने व्याकरणो, विषे (पुच्छित्तए) तेभने पूछ (त्तिकहु)
आ प्रभाणु मनमा विचार कर्यो, (एवं संपेहेइ) जे प्रभाणु स कल्प कर्यो
(संपेहित्ता) जेवो विचार करीने (जेणेव परिव्राजगावसहे तेणेव उवागच्छइ)
आ परिव्राजको रहता हुता तेभभा तेओ गया. (उवागच्छित्ता) तथा जेहने

निकां च करोटिकां च केशरिकां च पण्णालकां च अकुशं च पवित्रकं च गणेशिकां च छत्रकं च उपानहौ च पादुके च धातुरक्ताश्च शुद्धाति, शुद्धीत्वा परिष्काराच्च सप्तात् प्रतिनिष्क्रामति, प्रतिनिष्क्रम्य त्रिदण्ड-कुण्डिका-कांचनिका-करोटिका वृषिका-केशरिका-पण्णालकांकुशक-पवित्रक-गणेशिका-हस्तगतः छत्रोपानहं संयुक्तो धातुरक्तवस्त्रपरिहितः श्रावस्था नगर्या मध्य मध्येन निर्गच्छति, निर्गत्य

मिसियं च करोटिय च केशरिय च) उसने वहां से त्रिदण्ड कुडी, व्याप्त माला, करोटिका वृषिका आसन, केशरिका (छण्णालयं च) वण मालक त्रिकाण्डिका, (अंकुसयं च) अकुशक-वृक्षों के ऊपरसे पत्तों आदि को एकत्रित कर ने के निमित्त अंकुश के जैसा एक प्रकारका (पवित्रियं च) पवित्रक अंगुलीयक (गणेशियच) गणेशिका (छत्रयं च छत्रक (उवाहणाभोय) पगरखे (पाडयाभोय) काष्टकी खडाऊं (धातुरक्ताभो) और गैरिक आवि धातुओंसे रक्त घाटिकाको लिया (गेण्हइ) गेण्हिका और छेकर (परिष्वायगावसहाओ) परिष्वाजकावसथ मठसे (पडिनिस्समइ) पहार निकला (पडिनिस्समिसा) पाहर निकल कर (त्रिदण्डं वृषिय कचणियकरोटियमिसिय केशरिय-छण्णालय-अंकुसय-पवित्रय गणेशिय इत्यगए) त्रिदण्ड कुण्डिका कांचनिका करोटिका केशरिका, पण्णालका, अकुशक, पवित्रक, गणेशिक, इन सब को हाथ में रखकर (उतोवाहणसजुचे) छत्र को तानकर और उपानह पगरखे पहन

(त्रिदण्डं च कुण्डिय च कचणियं च करोटियं च मिसियं च केशरियं च) तेभ्ये त्यांथी त्रिदण्डं, कचण्यं, रुद्राक्षणी भाणा, केशरिका (भाटीनुं पात्रं विशेषं) वृषिका-आसनं केशरिका (भोदु साहं करवा भाटेने इमाव) (छण्णालयं च) पण्णालका-त्रिकाण्डिका (अंकुसयं च) अकुशक वृक्षो परंथी पांड्याज्जेने ज्जेठ्ठा करवा भाटेनु अकुशना आठारनु साधनं, (पवित्रियं च) पवित्रक अंगुली (गणेशियं च) गणेशिका, (छत्रयं च) छत्र (उवाहणाभो च) पगरखा (पाडयाभो च) पादुकां धातुरक्ताभो) अने गैरिक वज्रे धातुज्जे वडे २ जेसा वज्रो (गेण्हइ) खीधा (गेण्हिका) ते अथी वस्तुज्जे सधंने (परिष्वा यगावसहाओ) परिष्वाजकेना भठ्ठाथी (पडिनिस्समइ) तेज्जे अठ्ठा १ नीकण्णा, (पडिनिस्समिसा) अठ्ठा १ नीकण्णीने (त्रिदण्डं कुण्डिय कचणिय, करोटिय, मिसिय केशरिय छण्णालय अंकुसय पवित्रय, गणेशिय इत्यगए) त्रिदण्डं, कचण्यं, रुद्राक्षणीभाणा केशरिका वृषिका, केशरिका त्रिकाण्डिका, अकुशक अंगुली अने गणेशिकाने कापमा अद्धपु करीने (उतोवाहणसजुच) छत्री उवाहीने अने पग

यत्रैव कृतगला नगरी यत्रैव छत्रपलाशकं चैत्यम् यत्रैव श्रमणो भगवान् महावीर-
स्तत्रैव प्राधारयत् गमनाय ॥ सू० ८ ॥

टीका—‘तएणं सावत्थीए नयरीए’ ततः खलु श्रावस्त्यां नगर्यां ‘सिंघा-
डगजाव पहेसु’ शृङ्गाटक यावत् पथेसु, इह यावत्पदेन—त्रिचतुष्क चत्वरमहापथानां
संग्रहः करणीयः । तथा च—त्रिकोणमार्गे, मार्गत्रयसंमिलनस्थाने, चतुर्मागसंमि-

कर (धाउरत्त परिहिए) तथा गैरिक धातुसे रंगे हुए वस्त्रोको पहिनकर
वह स्कन्दक (सावत्थीए नयरीए) श्रावस्ती नगरी के (मज्झं मज्झेणं)
ठीक बीच के मार्ग से (निगच्छइ) निकला (निगच्छित्ता) निकल कर
(जेणेव कयंगला नयरी) जहाँ कृतंगला नगरी थी (जेणेव छत्तपलासए
चेइए) और जहाँ वह छत्र पलाशक नाम का चैत्य था (जेणेव समणे
भगवं महावीरे) तथा उसमें जहाँ श्रमण भगवान् महावीर विराजमान
थे (तेणेव पहारेत्थ गमणाए) उस तरफ जानेको रवाना हुआ ।

टीकार्थ—(तएणं सावत्थीए नयरीए) जब स्कन्दक परिव्राजक से
वैशालिक श्रावक निर्ग्रन्थ पिंगलक ने पांच प्रश्न पूछे और कई बार दुह-
राने पर भी जब स्कन्दक को उनके उत्तर देने में सर्वथा मौनावलम्बन
करना पड़ा—उस समय स्वयं स्कन्दक की आत्मा में इन प्रश्नों का यथार्थ
उत्तर पानेके लिये जिज्ञासु भाव हुआ । ठीक इसी समय उस श्रावस्ती
नगरी में श्रमण भगवान् महावीर का पदार्पण हुआ । लोगोंके मुख से
स्कन्दक ने प्रभु का आगमन सुनकर अपने अहोभाग्य की सराहना की

रभा पड़ेरीने (धाउर परिहिए) गैरिक धातुथी रंगेलां वस्त्रो पड़ेरीने ते
रुं रुं (सावत्थीए नयरीए मज्झमज्झेण निगच्छइ) श्रावस्ती नगरीना मध्यना
मार्गेथी नीकल्या (निगच्छित्ता) त्याथी नीकणीने (जेणेव कयंगला नयरी, जेणेव
छत्तपलासए चेइए, जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव पहारेत्थ गमणाए) न्या
कृतगला नगरी हुती, अने न्या छत्रपलाशक नामनु चैत्य हुतु तेथै त्यभा (उद्यानभा)
श्रमणु भगवान् महावीर थी-अजता हुता, ते तरइ जवाने भाटे रवाना थया.

टीकार्थ—(तएणं सावत्थीए नयरीए) न्यारे स्कन्दक परिव्राजकने वैशा-
लिक श्रावक महावीरना उपासक पिंगलक निर्ग्रन्थ पाय प्रश्नो पूछया अने ते
प्रश्नो त्रणु दणत पूछया छता पणु तेओ तेना उत्तर आपी शक्या नही
त्यारे ते प्रश्नोना यथार्थ उत्तर जणुवानी जिज्ञासा तेमना स्कन्दकना मनमा
जगी अने ते समये योग पणु ओवो जण्यो के श्रमणु भगवान् महावीरनुं
ओव समये श्रावस्ती नगरीमा शुलागमन थयु दोडोने मुणेशी प्रभुना आग-
मनना समाचार सावणीने स्कन्दके चेतना सौभाग्यनी प्रशंसा करी अने ते

સ્થાને, અનેકમાર્ગસમિલનસ્થાને રાજમાર્ગે સામાન્યમાર્ગે ચ 'મહ્યા જનસંમદેહ
વા' મહાજનસમર્પદેહ' ઇતિ વા-જનાનામત્યન્તસર્પદેહ: 'મીઢ' ઇતિ માપાપસિદ્ધા,
'જળવૃદ્ધે વા' જનમ્યુદ્ધ ઇતિ વા-ત્વન્દરૂપેણ જનસમૃદ્ધિઃ, ઇત્યાદિ 'જાવ પરિણા
નિમાચ્છા' યાવત્ પરિપર્ણિગ્છતિ । વિશેષઘ્યાસ્યાન તુ-ઔપપાતિકમૂલસ્ય
પૂર્વાર્ષેઽષ્ટત્રિંશ્ચપમસૂત્રે મસ્કૃતપીપૂપવર્ણિણી ટીકાયામલોકનીયમ્ ।

'તર્ણ' તતઃ સ્વછ તદનન્તર પરિપદો નિર્ગમનાનન્તરમ્, સ્વછ ઇતિ શાક્યા-
સજ્જારે, 'તસ્સ સ્વદયસ્સ કઠ્ઠાપણસ્સ ગોચસ્સ' તસ્ય સ્કન્દકસ્ય કાટપાપન
ઔર જન પ્રશ્નો કે યથાર્થ ઉત્તર પાને કી અમીલાપા સે વદ્ડે અનેક સમીપ
પઢ્ઢેવા હસી વાત કો સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ પાંચ પ્રશ્નો કો સુનકર જબ
સ્કન્દક શક્તિ કાક્ષિત આદિ વિશેષણ સંપન્ન બનજુકા તબ ઠીક હસી
અવસર પર આવસ્ટી નગરી કે ઝુગાટક આદિ અનેક માર્ગો પર અપાંત
સિંઘાડો કે આકાર કે માર્ગ મેં ત્રિકોણ માર્ગ મેં-ત્રીન રાસ્તો સે સંમિ-
લિત સ્થાનમેં, ચાર માર્ગ બાહે સ્થાન મેં અનેક માર્ગો સે સંમિલિત સ્થાન
મેં, રાજમાર્ગ મેં ઔર સામાન્ય માર્ગ મેં, "મહ્યા જનસંમદેહ" મનુષ્યો
કી વહુત વઢી મારી 'મીઢ' અથવા "જળવૃદ્ધેવા" જનમ્યુદ્ધ-પ્રશ્ન કે
આગમન કી આપસ મેં વાતેં કરને વાહે જનસમૃદ્ધ 'જાવ' યાવત્-પરિ-
પદ-સમા નિકલી । હસ વિષય કા વિશેષ ઘર્ણન ઔપપાતિક સૂત્ર કે
પૂર્વાર્ષ મેં અઢતીસવેં સૂત્ર કો મેરે દ્વારા વિરચિત પીપૂપવર્ણિણી ટીકામેં
લેખ લેના ચાહિયે । (તર્ણ) સમાકે નિકલનેકે વાવ્ "કઠ્ઠાપણસ્સ ગોચ

પ્રશ્નોના યથાર્થ ઉત્તર બાજુવાની ઇચ્છાથી તે સ્કન્દક પરિવાજક બ્રહ્મવાનમહાવીરની
પાસે બધ છે આ પ્રસંગનું આ સૂત્રમાં નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું છે

પિંગલક નિર્મિતના પાંચ પ્રશ્નોથી શક્તિ કાક્ષિત વગેરે મનોભાવથી
બુદ્ધ અનેકા તે સ્કન્દકને મહાવીર પ્રજ્ઞાના આગમનમાં સમાવ્યાર કેવી રીતે મળ્યા
તે સૂત્રકાર બતાવે છે

'સિંગાઢગ જાવ પહેસુ" આવસ્ટી નગરીના ઝુગાટક શિંગોડાના આકારના
વગેરે અનેક માર્ગો પર ત્રણ માર્ગો મળતા હોય તે સ્થાને, ચાર
માર્ગો મળતા હોય તે સ્થાને અનેક માર્ગો મળતા હોય તે સ્થાને, શબ્દ
મોઝાં પર અને સામાન્ય માર્ગ પર 'મહાજન સમ દેહ' મહાજનોની ઢઠ બમી
હતી, અને 'જળવૃદ્ધે વા' તે જન સમૃદ્ધ બ્રહ્મવાન મહાવીરના આગમનની
વાત ફરી રહી હતો 'જાવ પહેસુ' બહી પરિપદ નીતીની બ્રહ્મવાને ધર્મપિટેશ
રીપા હૃત્યાદિ પાઠ બહુ કરવો આ વિષયનું વિશેષ વજન ઔપપાતિક સૂત્રના
પૂર્વાર્ષના ૩૮ માં સૂત્રની ભાષા વઢે લખાયેલી પીપૂપવર્ણિણી ટીકામાંથી વાંચી
લેવું 'તર્ણ' વ " પરિપદ નિસર્જન થયા પછી 'કઠ્ઠાપણસ્સ ગોચ' પરિપદ

યજૈવ કૃતંગલા નગરી યજૈવ છત્રપલાશક ચૈત્યમ્ યજૈવ શ્રમણો ભગવાન્ મહાવીર-
સ્તજૈવ પ્રાધારયત્ ગમનાય ॥ સુ૦ ૮ ॥

ટીકા—‘ તણં સાવત્થીણ નયરીણ ’ તતઃ સ્વલુ શ્રાવસ્ત્યાં નગર્યાં ‘ સિંધા-
હગજાવ પહેસુ’ શ્રુજ્ઞાટક યાવત્ પહેસુ, ઇહ યાવત્પદેન—ત્રિચતુઃક ચત્વરમહાપથાનાં
સંગ્રહઃ કરણીયઃ । તથા ચ—ત્રિકોણમાર્ગે, માર્ગત્રયસંમિલનસ્થાને, ચતુર્માર્ગસંમિ-
લન (ધાડરત્ત પરિહિણ) તથા ગૈરિક ધાતુસે રંગે હુણ વસ્ત્રોકો પહિનકર
વહ સ્કન્દક (સાવત્થીણ નયરીણ) શ્રાવસ્તી નગરી કે (મજ્ઞ મજ્ઞેણ)
ઠીક વીચ કે માર્ગ સે (નિગચ્છહ) નિકલા (નિગચ્છિતા) નિકલ કર
(જેણેવ કયંગલા નયરી) જહાં કૃતંગલા નગરી થી (જેણેવ છત્રપલાસણ
ચેહણ) ઔર જહાં વહ છત્ર પલાશક નામ કા ચૈત્ય થા (જેણેવ સમણે
ભગવં મહાવીરે) તથા ઉસમેં જહાં શ્રમણ ભગવાન્ મહાવીર વિરાજમાન
થે (તેણેવ પહારેત્થ ગમણાણ) ઉસ તરફ જાનેકો રવાના હુઆ ।

ટીકાર્થ—(તણં સાવત્થીણ નયરીણ) જવ સ્કન્દક પરિવ્રાજક સે
વૈશાલિક શ્રાવક નિર્ગન્થ પિંગલક ને પાંચ પ્રશ્ન પૂછે ઔર કેઈ વાર ટુહ-
રાને પર ખી જવ સ્કન્દક કો ઉનકે ઉત્તર દેને મેં સર્વથા મૌનાવલમ્બન
કરના પડા—ઉસ સમય સ્વયં સ્કન્દક કી આત્મા મેં હન પ્રશ્નો કા યથાર્થ
ઉત્તર પાનેકે લિયે જિજ્ઞાસુ ભાવ હુઆ । ઠીક હસી સમય ઉસ શ્રાવસ્તી
નગરી મેં શ્રમણ ભગવાન્ મહાવીર કા પદાર્પણ હુઆ । લોગોંકે સુખ સે
સ્કન્દક ને પ્રભુ કા આગમન સુનકર અપને અહોભાગ્ય કી સરાહના કી

રખાં પહેરીને (ધાડર પરિહિણ) ગૈરિક ધાતુથી રગેલા વસ્ત્રો પહેરીને તે
સ્કન્દક (સાવત્થીણ નયરીણ મજ્ઞમજ્ઞેણ નિગચ્છહ) શ્રાવસ્તી નગરીના મધ્યના
માર્ગેથી નીકળ્યા (નિગચ્છિતા) ત્યાંથી નીકળીને (જેણેવ કયંગલા નયરી, જેણેવ
છત્રપલાસણ ચેહણ, જેણેવ સમણે ભગવં મહાવીરે તેણેવ પહારેત્થ ગમણાણ) બ્યા
કૃતંગલા નગરી હતી, અને બ્યા છત્રપલાશક નામનું ચૈત્ય હતું તેથી ત્યાં (ઉદ્યાનમાં)
શ્રમણ ભગવાન મહાવીર ખી-જતા હતા, તે તરફ જવાને માટે રવાના થયા.

ટીકાર્થ—(તણં સાવત્થીણ નયરીણ) બ્યારે સ્કન્દક પરિવ્રાજકને વૈશા-
લિક શ્રાવક મહાવીરના ઉપાસક પિંગલક નિર્ગન્થે પાંચ પ્રશ્નો પૂછ્યા અને તે
પ્રશ્નો ત્રણ વખત પૂછ્યા છતાં પણ તેઓ તેના ઉત્તર આપી શક્યા નહીં
ત્યારે તે પ્રશ્નોના યથાર્થ ઉત્તર બાળવાની જિજ્ઞાસા તેમના સ્કન્દકના મનમાં
બાળી અને તે સમયે યોગ પણ એવો બન્યો કે શ્રમણ ભગવાન મહાવીરનું
એજ સમયે શ્રાવસ્તી નગરીમાં શુભાગમન થયું લોકોને સુખેથી પ્રભુના આગ-
મનના સમાચાર સાંભળીને સ્કન્દકે પોતાના સૌભાગ્યની પ્રશંસા કરી અને તે

एव विचार इष्टरूपेण मनसि स्वीकृतः पुष्पित इव ४, 'मनोगए सफूप्य' मनो
गतः संकल्प = मनसि इष्टरूपेण निश्चयः ' इत्यमेव मगवान् मया प्रष्टव्यः ' इत्येवं
रूपो विचारः फलित इव ५ ' समुत्पज्जित्या ' समुदपद्यत=समुत्पन्नः । तवेवाह-
' एवं खलु समणे ' इत्यादि, ' एवं खलु समणे भगवं महावीर कयगलाए नय-
रीए वहिया छपपलासअ वेइए सजमेण तवसा अप्पाण भावेमाणे विहर ' एवं
खलु भमणो मगवान् महावीर कृतगळायाः नगर्यां वहि छप्पलाशकं चैत्ये
समयेन तपसा आत्मान् भावयन् विहरति, ' स गच्छामि णं ' तत्-तस्मात्कार

રૂપ સે વહ કલ્પનાસ્થ વિચાર મેં પરિણમ હોને કે કારણ પરલલિત કી
તરહ કલ્પિત થા । (પરિપ્ર) અમિલાપ રૂપ થા ક્યોં કિ હસ વિચાર કો
મન મેં દૃષ્ટરૂપસે સ્વીકૃત કિયા યા હસ લિયે વહ પુષ્પિત વહ સંકલ્પ
કી તરહ પ્રાર્થિત યા । વહ સંકલ્પ મનોગત થા ક્યોં કિ અમીતક વહ
બાહર મેં કિસી સે પ્રકટ કરનેમેં નહીં આયા યા । કેવલ મન મેં હી વહ
હસ રૂપ મેં દ્રવ્યરૂપ સે યા કિ મેં મગવાન કે પાસ જાકર હન
પ્રશ્નોં કા યથાર્થ ઉત્તર પૂછુ એસા ફલિત કી તરહ મનોગત થા ।
“ એવં જલુ સમણે મગવ મહાવીરે કયગલાએ નયરીએ વહિયા છપપલા-
સએ વેહિએ સંજમેણ તવસા અપ્પાણ ભાવે માણે વિહર ” ક્યોં કી હસ
સમય અમણ મગવાન મહાવીર કૃતંગલા નગરી કે બહિર છપ્પલાશક
ઘચાન મેં તપ ઔર સયમ સે અપની આત્માકો ભાવિત કરતે હુએ વિરા-
જમાન હૈ । અતઃ સૌમાન્ય સે યહ વક્ષા સુન્દર અવતર મિલા હૈ । ” તે

શ્રીમા તે સંકલ્પ પરિણત થયેલ હોવાથી પ્રભવિન થયો હોય તેમ કલ્પિત
હતો. “પત્તીએ” અભિલાષા રૂપ હતો. એલેલે તે વિચારને મનમાં ઇષ્ટરૂપે સ્વી-
કાર્યો હતો. તેથી પુખ્તબુદ્ધ હતાની જેમ પ્રાર્થિત હતો. તથા તે સંકલ્પ હજી
સુધી કોઈની પાસે પહોં પ્રકટ કર્યો ન હતો. તે કારણે તે મનોભૂત હતો. પછી
તેમણે મનમાં એવો દૃઢ નિશ્ચય કર્યો કે ભગવાનની પાસે જઈને આ પ્રશ્નોના
યથાર્થ ઉત્તર પૂછીશ જેમ હતાને ક્ષણ આવે છે તેમ તે પ્રશ્નોના ઉત્તર
ભણવારૂપ રૂળની પ્રાપ્તિ માટે તેઓ આતુર થયા હતા.

સ્કન્ધક પરિવાજ્ઞના મનમાં આ પ્રમાણે વિચાર થયો- ‘ એવં જલુ સમણે
મગવ મહાવીરે કયગલાએ નયરીએ વહિયા છપપલાસએ વેહિએ સજમેણ તવસા અપ્પાણ
ભાવેમાણે વિહર ’ અત્યાદિ અમણ મગવાન મહાવીર કૃતંગલા નગરીની બહાર
આવેલા છપ્પલાશક ઉવાનમ્ તપ અને સયમથી પોતાના આત્માને ભાવિત
કરતા બિરાજમાન છે તો ખરે ખર મારા સહભાષ્યે આ સુન્દર અવતર પ્રાપ્ત

ગોત્રસ્ય 'વહુજનસ્સ અંતિ' વહુજનસ્યાન્તિકે 'અયમદ્વં' એતમર્થ=ભગવદાગમન તન્મહિમારૂપં 'સોચ્ચા' શ્રુત્વા 'નિસમ્મ' નિશમ્ય=હૃદયવધાર્ય 'ઈમે' એયારૂવે અજ્ઞતિ'એ ચિંતિ'એ કપ્પિ'એ પત્થિ'એ મળોગ'એસંકલ્પે સમુપજ્જિત્થા' અયમેતદ્વૂપ આધ્યાત્મિકચિન્તિતઃ કલ્પિતઃ પ્રાર્થિતઃ મનોગતઃ સંકલ્પઃ સમુદપધત, તત્ર—'ઈમે-યારૂવે' અયમેતદ્વૂપઃ=વક્ષ્યમાણપ્રકારકઃ 'અજ્ઞતિ'એ આધ્યાત્મિકઃ=આત્મગતો વિચારઃ અહુર ઇવ ૧, તદ્વનુ 'ચિંતિ'એ ચિન્તિતઃ—'કિં સાન્તો લોકઃ, અનન્તો લોકઃ?' ઇત્યાદિ પ્રશ્નોત્તરરૂપો વિચારઃ દ્વિપત્રિત ઇવ ૨, 'કપ્પિ'એ કલ્પિતઃ=સ એવ વ્યવસ્થાયુક્તઃ 'ઈમેવં' લોકાદીનાં સાન્તાનન્તત્વજ્ઞાનરૂપં વિષયં પ્રક્ષ્યામી'—તિ કાર્યાકારેણ પરિણતો વિચારઃ પલ્લવિત ઇવ ૩. 'પત્થિ'એ પ્રાર્થિતઃ=સ

સ્સ તસ્સ ચંદયસ્સ " ઉસ કાત્યાન ગોત્રવાલે સ્કન્દક પરિવ્રાજકકે મનમેં (ઈમે એયારૂવે) યહ ઇસ પ્રકાર કા (સંકલ્પે) સંકલ્પ વિચાર ઉત્પન્ન હુઆ. યહ સંકલ્પ કવ હુઆ તો ઉસકેલિયે સૂત્રકાર કહતે હૈં કિં (વહુજનસ્સ અંતિ'એ અયમદ્વં સોચ્ચા) જવ ઉસને અનેક જનોં કે પાસ સે યહ ભગવાન મહાવીર કે આગમન રૂપ અથવા ઉનકી મહિમારૂપ અર્થકો સમાચાર કો સુના ઓર હૃદયમેં ઉસે ધારણ કર લિયા સુને ઓર હૃદય મેં ધારણ કર ને કે વાદ એસા સંકલ્પ વિચાર (સમુપજ્જિત્થા) ઉત્પન્ન હુઆ. વહ સંકલ્પ કેસા થા ઇસી વાત કો ઇન વક્ષ્યમાણ વિશેષણોં સે વિશેષિત કરતે હુએ સૂત્રકાર કહતે હૈં (અજ્ઞતિ'એ) વહ સંકલ્પ અહુર કી તરહ આત્મગત વિચારરૂપ હોને સે આધ્યાત્મિક થા "ચિંતિ'એ" (કિં સાન્તો લોકઃ અનન્તો લોકઃ) ઇત્યાદિ પ્રશ્નોત્તરરૂપ હોને કે કારણ દ્વિપત્રિત કી તરહ ચિન્તિત થા. (કપ્પિ'એ) કલ્પિત થા મૈ પ્રશુ સે લોક અલોકાદિકોં કે સાન્ત અનન્ત હોને કી વાત કો પૂછંગા ઇસ

સોચ્ચા" ન્યારે તેણે ઘણા લોકોને મુખેથી ભગવાન મહાવીરના આગમનના સમાચાર સાંભળ્યા અને ન્યારે તેને હૃદયમાં ધારણ કર્યા ત્યારે 'કચાયણસ્સ ગોત્તસ્સ તસ્સ ચંદયસ્સ" કાત્યાયન ગોત્રીય તે સ્કન્દકના મનમાં આ પ્રકારનો સંકલ્પ "સમુપજ્જિત્થા" ઉત્પન્ન થયો. તે સંકલ્પ કેવા પ્રકારનો હતો તે સૂત્રકારે નીચેના વિશેષણો દ્વારા બતાવ્યું છે "અજ્ઞતિ'એ" એટલે કે અકુશ ની ભાક્ષ આત્મગત વિચારરૂપ હોવાથી તે સંકલ્પ આધ્યાત્મિક હતો. ચિંતિ'એ" એટલે કે લોક અન્તસહિત છે કે રહિત છે ઇત્યાદિ પ્રશ્નોત્તર રૂપ હોવાને કારણે દ્વિપત્રની જેમ (અકુશમાંથી જે બે કુમળી પાંદડીઓ ફૂટે છે તેને દ્વિપત્ર કહે છે) ચિન્તિત હતો. "કપ્પિ" કલ્પિત હતો. એટલેકે હું ભગવાનને લોક અન્તસહિત છે કે અન્ત રહિત છે એ વાત પૂછીશ ઇત્યાદિ કલ્પના રૂપ વિચાર.

गम्यत्वात् हेतवो लोकस्य सांतत्वानन्तत्वादय एव तान् 'पसिणाइ' प्रभान् प्रभ
विषयत्वात् प्रश्ना एते एव लोकसांतत्वानन्तत्वादयस्तान् 'कारणाइ' कारणानि,
उपपत्तिमात्र कारणाम्, उपपत्ति विषयत्वादेतान्येव लोकसान्तत्वानन्तत्वादीनि
कारणानि 'वागरणाइ' व्याकरणानि-व्याक्रियमाणत्वात्-निर्णयमानत्वात् व्या
करणानि लोकसांतत्वा नन्तत्वादीनि 'पुच्छिस्तए' प्रष्टुम्, प्रष्टुं भेय इति पूर्वं
प्रान्वय, 'चि वड्डु' इति कृत्वा, इति मनसि विचिन्त्य, 'एव सपे
इइ' एव समेससे, एवं-यथोक्तप्रकार भगवद्गुणनादिकरण समेससे=पर्यालोचयति,
'सपेहिता' सप्रत्य पर्यालोच्य 'जेणेव परिव्वायगावसहे' यत्रैव परि

सान्तता अनन्तता रूप हेतुओं को (पसिणाइ) प्रश्नों के विषय नूत
होने के कारण लोषादिकों की इन सान्तता अनन्तता रूप प्रश्नों को
(कारणाइ) उपपत्तिके विषय भूत होनेसे इन लोककी सान्तता अनन्तता
रूप कारणों को, (वागरणाइ) एव व्याक्रियमाण होनेसे लोककी सान्तता
अनन्ततारूप निर्णय करनेयोग्य व्याकरणों को (पुच्छिस्तए) पूछ तो
(सेयं प्वल्लुमें) मेरा कल्याण है। यह पात निश्चित है। (चिक्कु एवं सपेहेइ)
इस कारणको लेकर उसने भगवानको वंदना आदि करनेका विचार किया
'सपेहिता' विचारकरके फिर वह (जेणेव परिव्वायगावसहे) जहाँ परिव्राज
कों का मठ था (जेणेव उवागच्छई) वहाँ गया (उवागच्छिता) वहाँ जाकर के
वहाँसे उसने (तिवड्ड) त्रिदण्डको परिव्राजकों के दण्ड विशेष तो कुंडोयें
कमण्डलु को 'कंचणियं' रुद्राक्ष मालाको (करोदियं च) मिट्टीके भाजन
विशेष को (मिसियं च) आसन विशेष को (केसरियं च) मुन्वादिक को

इप हेतुआ पासिणाइ " प्रश्नों के विषयभूत होवाने कारणे दोह वगेरेनी
सान्तता अथवा अनन्त इप ते प्रश्ने " कारणाइ " उत्पत्तिना विषय इप
होवाधी ते दोह वगेरेनी सान्तता अथवा अनन्तता इप कारणे " वागरणाइ "
अने व्याक्रियमाण होवाधी दोहनी सान्तता इप व्याकरणे " तात्पर्य " के छे छे
ते प्रश्ने प्रश्नों उत्तर भगवान भट्टावीर स्वामी पासेधी च भाइ समज्ज
कोई के जेबो विचार स्कन्दकता भनभा उद्भवो " चि कइ एव सपेहेइ "
आ कारणे तेले भगवान भट्टावीरने वदन वगेरे करवाने सकथ भोई
"सपेहिता" जेबो सकथ करीने तेओ "जेणेव परिव्वायगावसहे जेणेव उवागच्छई"
व्या परिव्राजकोने भड्डतो त्या जथा 'उवागच्छिता' त्या जधने तेमले त्याधी
तिवड्ड " त्रिदण्ड परिव्राजकोने (धारण करवाने) आस भट्टारने छठ " " कुंडिय "
कमण्डलु " कंचणियं " रुद्राक्षनी माला " करोदियं च " भागीनुं पात्र " मिसि
पंच " आसन, " केसरियं च " मालु वगेरेने साइ करवा भाटेने कथाने

ળાત્ ગચ્છામિ સ્વલુ ' સમળં ભગવં વન્દામિ નમસામિ ' શ્રમળં ભગવન્તં મહાવીરં
વન્દે નમસ્યામિ ' સેયં સ્વલુ મે ' શ્રેયઃ સ્વલુ મે, ' સમળં ભગવં મહાવીરં ' શ્રમળં
ભગવન્તં મહાવીરમ્ ' વદિત્તા નમસિત્તા સકારિત્તા સમાણિત્તા ' વન્દિત્વા નમ-
સિત્વા સત્કૃત્ય સમ્માન્ય ' કલ્લાળં મંગલં દેવયં ચેઙ્ગં પજ્જુવાસિત્તા ' કલ્યાણં=
કલ્યાણસ્વરૂપં, મંગલસ્વરૂપમ્, દેવતમ્=ધર્મદેવસ્વરૂપં, ચૈત્યં-જ્ઞાનસ્વરૂપ ભગવ-
ન્તમ્ પર્યુપાસ્ય ' ઇમાઈ ચ ણં ણ્યાસ્વાહ ' ઇમાન સ્વલુ એતદૂપાન્ ઇમાન્ = મમ
મનસિ સ્થિતાન્ એતદૂપાન્=ઓકાદીનાં સાન્તત્વાનન્તત્વરૂપાન્ અર્થાન્ ભાવાન્
લોકાદિસાન્તત્વાનન્તત્વાદીન્ ' હેઝાઈ ' હેતુન્ — અન્વયવ્યતિરેકસ્વરૂપહેતુ

ગચ્છામિ ણં " ઇસલિયે સૈ અય વહીંપર જાઝ્ઞ, વહાં જાકર મૈ પહલે
" સમળં ભગવં મહાવીરં વન્દામિ નમસામિ " શ્રમળ ભગવાન મહાવીર
કો વંદન કરું-ઉન્હૈં નમસ્કાર કરું. "સમળં ભગવં મહાવીરં વંદિત્તા નમ-
સિત્તા " શ્રમળ ભગવાન મહાવીર કો વંદન નમસ્કાર કરકે " સક્રકા-
રિત્તા સમ્માણિત્તા " ઉનકા સત્કાર કરકે સન્માન કરકે તથા "કલ્લાળં
મંગલં દેવયં ચેઙ્ગં પજ્જુવાસિતા" કલ્યાણ સ્વરૂપ, મંગલ સ્વરૂપ, ધર્મદેવ
સ્વરૂપ, ચૈત્ય-જ્ઞાનસ્વરૂપ શ્રી ભગવાન મહાવીર પ્રભુકી પર્યુપાસના કરકે
(ઇમાઈ ચ ણં ણ્યાસ્વાહ) ઉનસે ઇન ઇસ પ્રકાર કે અર્થાત્ મેરે મન મેં
સ્થિત લોક આદિકોંકી સાન્ત અનન્તરૂપ (અઢાઈ) અર્થો કો (હેઝ્યાઈ)
અન્વય વ્યતિરેક રૂપ હેતુ સે ગમ્ય હોને કે કારણા લોકાદિકોંકી ઇન

થયો છે " ત ગચ્છામિ " તો હું તેમની પાસે જઉં ત્યાં જઈને પડેલા તો
હું " સમળ ભગવં મહાવીરં વદામિ નમસામિ " શ્રમળ ભગવાન મહાવીરને
વંદન નમસ્કાર કરૂં " સમળ ભગવં મહાવીર વદિત્તા નમસિત્તા " શ્રમળ
ભગવાન મહાવીરને વંદન નમસ્કાર કરીને, સકારિત્તા સમ્માણિત્તા " તેમનો
સત્કાર કરીને તથા સન્માન કરીને, તથા " કલ્લાળં મંગલં દેવયં ચેઙ્ગં પજ્જુ-
વાસિત્તા " કલ્યાણ સ્વરૂપ મંગળ સ્વરૂપ ધર્મ સ્વરૂપ ચૈત્ય જ્ઞાન સ્વરૂપ શ્રી
મહાવીર પ્રભુની પર્યુપાસના (સેવા) કરીને " ઇમાઈ ચ ણં ણ્યાસ્વાહ " તેમને
આ પ્રકારના એટલે કે લોકની સાન્તતા અનન્તતા વગેરે રૂપ " અઢાઈ " અર્થો,
" હેઝ્યાઈ " હેતુઓ, " પાસિનાઈ " પ્રશ્નો, " કારણાઈ " કારણો " વાગ-
રણાઈ " અને વ્યાકરણો વગેરે " પૃચ્છિત્તણ " પૂછ " સેયં સ્વલુ મે " એમાં
જ માઝુ શ્રેય છે એ વાતમા કોઈ શકાને સ્થાન નથી, હવે " અઢાઈ " વગેરેના અર્થ સમજાવવામા આવે છે " અઢાઈ " લોકની અન્ત સહિતતા કે
અન્ત રહિતતા વગેરે રૂપ સામાન્ય અર્થ " હેઝ્યાઈ " અન્વય, વ્યતિરેક રૂપ
હેતુઓથી સમજ શકાય તેમ હોવાથી એ લોકની સાન્તતા કે અનન્તતા

परिव्राजना वसयात् परिव्रानकाथमात् 'पट्टिनिकस्वमइ' प्रतिनिष्क्रामति निस्सरति, 'पट्टिनिकस्वमिच्छा' प्रतिनिष्क्रम्य निस्सृत्य 'तिशब्-कुडिय-कंचणिय-करोडिय मिसिय-देमरिय-छगालय-अकुमय-पविस्वय-गणेसिय-इत्यगए' प्रिष्ठ-कुण्डिवा-कांचनिका-करोटिका-वृषिका-केशरिका-पन्नालयांकुसक पविप्रक्राणे त्रिकाइस्तगत धिदण्डकाशीनि वस्तुनि हस्ते गतानि स्थितानि यस्य स तथा गृहीत सर्वोपकरण इत्यथ, 'छत्तोभाइणसजुत्ते' छत्रोपानतसयुक्त 'घाउरसवत्सपरिहिए' घातुरक्तवत्सपरिहितः, परिहितघातुरक्तवत्स घातुना गीरिकेण रक्तं वत्स परिधायेत्यर्थः, स्कन्दक 'सावत्पीए नयरीए' आवस्त्या नगर्याः 'मज्झ मज्जेण' मध्य मज्जन 'निगगच्छइ' निर्गच्छति 'निमाच्छिता' निर्गत्य 'जेणेव ककगला नयरी' यत्रै कृतगला नगरी, 'जेणेव छत्तपलासए चेइए' यत्रैव छत्तपलाशकैत्यम्-उद्यानम् 'जेणेव समणे भगव महावीरे' यत्रैव भ्रमणो भगवान् महावीरः बिराजते 'तेणेव' तत्रैव 'पहारेय गमणाय' मधारितवान् गमनाय, भगवत्समीपे गन्तुं प्रस्थित इत्यर्थः ॥ सू० ८ ॥

इत्थं भगवत्समीपे यज्जात तदाह—'शोयमा' इत्यादि ।

छाते को तानकर और पगरखोंको पैरों में पहिन कर (घातुरसवत्सपरिहिए) एव घातुरक्त वस्त्रों को शरीर पर धारण कर वह स्कन्दक परिव्राजक (सावत्पीए) नयरीए आवस्ती नगरीके (मज्झ मज्जेण) बीचों बीचके रास्ते से होकर (निगगच्छइ) निकला और (निगगच्छिता) निकलकर (जेणेव ककगला नयरी) जहां कृतगला नगरी थी (जेणेव छत्तपलासए चेइए) उसमें जिस तरफ छत्त पलाशक कैत्य था उसमें भी (जेणेव समणे भगव महावीरे) जहां भ्रमण भगवान् महावीर बिराजमान थे (तेणेव पहारेय गमणाय) उस और उसने चलनेका निश्चय किया अर्थात् भगवान् के पास जाने के लिये वह प्रस्थित हुआ ॥ सू० ८ ॥

भाष्ये ज्योतीने अने पगमा ज्योती पडे ॥ ते 'घातुरसवत्सपरिहिए' अने घातुरक्तपीर ज्योती पञ्चोने (भजवा पञ्चोने) शरीर पर धारण करीने स्कन्दक परिव्राजक सावत्पीए नयरीए आवस्ती नगरीना 'मज्झ मज्जेण' मध्यमा भागें धरिने "निगगच्छइ" नीकलो. निमाच्छिता = त्यागी नीकणीने जेणेव ककगला नयरी "ज्या हुत गला नयरी कती "जेणेव छत्तपलासए चेइए" ते नयरीनी जडाए छत्र पलाशक नामनु कैत्य (उद्यान) कतु जेणेव समण भगव महावीरे "जेने ते कैत्यमा ज्या भ्रमण भगवान् महावीर बिराजता कता "तेणेव पहारेय गमणाय ते तरह जवानो तेमजे निश्चय कर्यो ज्योती के ते तरह जवानो भाटे एवाना ध्या ॥ सू० ८ ॥

બ્રાજકાવસથઃ, પરિબ્રાજકાનાં મઠ, 'તેણેવ ઉવાગચ્છડ' તત્રૈવોપાગચ્છતિ
'ઉવાગચ્છિત્તા' ઉપાગત્ય 'તિદંડં ચ' ત્રિદંડં ચ, પરિબ્રાજકાનાં દંડવિશેષઃ,
તં 'કુંડિયં ચ' કુંડિકાં ચ, કુંડિકા-કમ્પન્ડલુઃ, તામ્, 'કંચણિયં ચ'
કાંચનિકાં ચ, કાંચનિકા સુદ્રાક્ષમાળા, તામ્, 'કરોડિયં ચ' કરોટિકાં ચ, કરો
ટિકા મૃત્તિકાભાજનવિશેષઃ તામ્, 'મિસિયં ચ' મૃષિકાં ચ, મૃષિકા નામ આસન-
વિશેષઃ, 'કેસરિયં ચ' કેશરિકાં ચ, કેશરિકા નામ મુલાદિપ્રમાર્જનાર્થં વસ્ત્ર-
ખંડમ્, તામ્, 'છળ્ણાલયં ચ' પળ્ણાલક ચ, પળ્ણાલકં ત્રિકાષ્ઠિકા તત્, 'અંકુ-
સયં ચ' અંકુશકં ચ, અંકુશકં તરુપલ્લવગ્રદ્ધનાર્થમંકુશાકૃતિકોપકર્ણવિશેષઃ,
તમ્, 'પવિત્તયં ચ' પવિત્રકં ચ, અંકુલીયકમ્ 'ગણેત્તિયં ચ' ગણેત્રિકાં ચ,
ગણેત્રિકા કલચિકોપકર્ણવિશેષઃ, તામ્, 'છત્તયં ચ' છત્રકં ચ 'ઉવાહ્ણાઓ ય'
ઉપાનહો ચ 'પાડ્યાઓ ય' પાદુકે ચ કાન્ટપાદુકે 'ધાડરત્તાઓ ય' ધાતુર-
ત્તાથ ગાટિકાઃ 'ગેળ્હ' ગૃહ્ણતિ 'ગેળિત્તા' ગૃહીત્વા 'પરિવ્વાયાવસહાઓ'

સાફ કરને કે લિયે વસ્ત્રખંડ કો છળ્ણાલયં ચ ત્રિકાષ્ઠિકા કો, (અંકુ-
સયં ચ) વૃક્ષોંકે પત્તોંકો ગિરાનેકે લિયે અંકુશકી આકૃતિવાલે ઉપકર્ણ
વિશેષ કો, (પવિત્તયં ચ) અંગૂઠી કો (ગણેત્તિયં ચ) એકજાત કે કલાઈ કે
ઉપકર્ણકો, (છત્તયં ચ) છાતેકો (ઉવાહ્ણાઓ) પગરખોંકો (પાડ્યાઓ)
પાદુકાઓં કો, (ધાડરત્તાઓ ય) ગૈરિક આદિ ધાતુ ઓં સે રંગે હુણ
પહિરને કે કપડોંકો (ગેળ્હ) લિયા। (ગેળિત્તા) લેકર ફિર વહ
પરિવ્વાયાવસહાઓ) પરિબ્રાજકોંકે મઠ સે (પઢિનિક્ખમહ) બાહર
નિકલા। (પઢિનિક્ખમિત્તા) બાહર નિકલ કર (તિદંડકુંડિય કંચણિય
કરોડિય મિસિય કેસરિય છળ્ણાલય અંકુસય પવિત્તય ગણેત્તિય હત્થગણ)
ઉસને ત્રિદંડ કો કાંચનિકા કો, કરોટિકાકો મૃષિકા કો કેશરિકા કો,
પળ્ણાલક કો, અંકુશકો, પવિત્રિક કો ગણેત્રિક કો હાથ સે લેકર તથા

કકડો, "છળ્ણાલય ચ" ત્રિકાષ્ઠિકા, "અંકુસયં ચ" વૃક્ષોના પાદડા નીચે
પાડવા માટેનું અંકુશના આકારનું સાધન, "પવિત્તયં ચ" અંગૂઠી, "ગણેત્તિય ચ"
ગણેત્રિકા કાંડે પહેરવાનું ઉપકરણ, "છત્તયં ચ" છત્ર, "ઉવાહ્ણાઓ" પગરખા,
"પાડ્યાઓ" પાદુકાઓ, "ધાડરત્તાઓ ય" ગૈરિક વગેરે ધાતુઓથી રંગેલા
વસ્ત્રો વગેરે વસ્તુઓ "ગેળ્હ" લીધી "ગેળિત્તા" તે વસ્તુઓ લઈને
પરિવ્વાયાવસહાઓ પઢિનિક્ખમહ તેઓ પરિભ્રાજકોના મઠમાંથી બહાર નીકળ્યા
"પઢિનિક્ખમિત્તા" તે મઠમાંથી બહાર નીકળીને તેમણે "તિદંડ કુંડિય
કંચણિય કરોડિય મિસિય કેસરિય છળ્ણાલય, અંકુસય પવિત્તય ગણેત્તિય હત્થગણ"
ત્રિદંડ, કમ્પન્ડલ, સુદ્રાક્ષની માળા, કરોટિકા, મૃષિકા, કેશરીજા પળ્ણાલક ત્રિકાષ્ઠિકા
અંકુશ, પવિત્રિક (અંગૂઠી) અને ગણેત્રિકને હાથમાં ગ્રહણ કર્યા તથા છત્ર

परिव्राजका यसयात् परिव्राजकाश्रमात् 'पडिनिक्खमइ' प्रतिनिष्क्रामति निस्सरति, 'पडिनिक्खमिच्चा' प्रतिनिष्क्रम्य निरस्य 'सिद्ध-कुडिय-क्वप्पिय-करोडिय मिसिय-केमरिय-उग्गाल्लय-अनुसय-पविचय-गणेत्तिय-इत्थगए त्तिण्ठ कुण्डिका-काचनिका-करोटिका-वृषिका-केकरिका-पप्पालकाकुल्लपविक्कगणे भिकाइस्तगत त्रिदण्डकादीनि वस्तूनि हस्त गतानि स्थितानि यस्य स तथा गृहीत मर्वोपकरण इत्ययं, 'उत्तोनाहणसंभुत्ते' छत्रोपानतसयुक्त 'घातुरत्तवत्परिहिए' घातुरक्तवत्परिहितः, परिहितघातुरक्तवत् घातुना गैरिकम् स्वतः वत् परिधायेत्पर्य, स्कन्दक 'सावथीए नयरीए' भावस्त्याः नगर्याः 'मज्झ मज्जेण' मध्य मज्जन 'निगच्छइ' निर्गच्छति 'निमाच्छिप्पा' निर्गत्य 'जेण्व कयंगला नयरी' यत्र कृतंगला नगरी, 'जेण्व छत्तपलासए चेइए' यत्रैव छत्रपलाशकै चैत्यम्-उद्यानम् 'जेण्व समणे भगव महावीरे' यत्रैव भ्रमणो भगवान् महावीर विराजते 'तेण्व' तत्रैव 'पद्दारेत्थ गमणाए' मधारितवान् गमनाय, भगवत्समीपे गन्तुं प्रस्थित इत्यर्थः ॥ सू० ८ ॥

इत्थं भगवत्समीपे यज्जातं तदाह—'गोपमा' इत्यादि ।

छाते को तानकर और पगरखोंको पैरों में पहिन कर (घातुरत्तवत्परिहिए) एवं घातुरक्त वस्त्रों को शरीर पर धारण कर वह स्कन्दक परिव्राजक (सावथीए) नयरीए आवस्ती नगरीके (मज्झ मज्जेण) बीचों बीचके रास्ते से होकर (निगच्छइ) निकला और (निमाच्छिप्पा) निकलकर (जेण्व कयंगला नयरी) जहाँ कृतंगला नगरी थी (जेण्व छत्तपलासए चेइए) उसमें जिस तरफ छत्र पलाशक चैत्य था उसमें भी (जेण्व समणे भगव महावीरे) जहाँ भ्रमण भगवान् महावीर विराजमान थे (तेण्व पद्दारेत्थ गमणाए) उस और उसने चलनेका निश्चय किया अर्थात् भगवान् के पास जाने के लिये वह प्रस्थित हुआ ॥ सू० ८ ॥

भाषे आदीनि अने पत्रभां ओडा पडे ॥ने घातुरत्तवत्परिहिए' अने घातुरक्तवत्
र गेक्षां वस्त्राने (अथवा वस्त्रोने) शरीर पर धारण करीने स्कन्दक परिव्राजक
सावथीए नयरीए' आवस्ती नगरीया मज्झ मज्जेण " मध्यमा भागे" यन्त्रि
'निगच्छइ' निकल्यो निमाच्छिप्पा' त्यागी निकलीने जेण्व कयंगला नयरी"
न्यां कृतंगला नगरी कीती " जेण्व छत्तपलासए चेइए' ते नयरीनी ओडार
छत्र पलाशक नामनुं चैत्य (उद्यान) कीतु जेण्व समणं भगव महावीरे"
अने ते चैत्यभां न्यां भ्रमण भगवान् महावीर विराजता कीतु, तेण्व पद्दारेत्थ
गमणाए ते नरक जवाने तेभण्णे निश्चय कर्यो जेन्हे के ते तरक जवाने
भाटे पवाना थया ॥ सू० ८ ॥

मूलम्—गोयमा ! इइ समणे भगवं महावीरे भगवं गोयमं
 एवं वयासी-दच्छसि णं गोयमा ! पुव्वसंगइयं । कं णं भंते !
 खंदयं नाम । से काहे वा, कहं वा केवच्चिरेण वा । एवं खलु
 गोयमा ! तेणं कालेणं तेणं समएणं सावत्थी नाम नयरी
 होत्था, वण्णओ, तत्थ णं सावत्थीए नयरीए गद्दभालस्स अंते-
 वासी खंदए नामं कच्चायणस्स गोत्ते परिव्वायए परिवसइ;
 तं चेव जेणेव समं अंतिए तेणेव पहारेत्थ गमणाए, से णं
 अदूरागए बहुसंपत्ते अद्धाणपडिवन्ने अंतरापहे वट्टइ अजेव णं
 दच्छसि गोयमा ! भंतेत्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं
 वदइ नमंसइ; वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी-पहूणं भंते !
 खंदए कच्चायणस्स गोत्ते देवाणुप्पियाणं अंतिए मुंडे भवित्ता
 अगाराओ अणगारियं पव्वइत्तए । हंता पभू ! जावं च णं
 समणे भगवं महावीरे भगवओ गोयमस्स एयमट्ठं परिकहेइ, तावं
 च णं से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते तं देसं हव्वं आगए ॥सू० ९॥

छाया-गौतम ! इति श्रमणो भगवान् महावीरो भगवन्तं गौतममेवमवादीत्-
 द्रक्ष्यसि गौतम ! पूर्वं सांगतिकम् । कं खलु भदन्त ! स्कन्दकं नाम । स कुत्र वा

अब इस तरफ भगवान के समीप जो हुआ उसका वर्णन सूत्रकार
 करते हैं— (गोयमा) इत्यादि ।

सूत्रार्थ— (गोयमाइ) हे गौतम इस प्रकार से संबोधित करके (समणे-
 भगवं महावीरे) श्रमण भगवान महावीर ने (भगवं गोयमं) भगवान
 गौतम से (एवं वयासी) इस प्रकार कहा (गोयमा) हे गौतम ! (पुव्व-
 संगइयं णं दच्छसि) तुम अपने पूर्व के संबंधी को आज देखोगे । (भंते
 कं णं) हे भदन्त ! किस पूर्वके सम्बन्धीको ? तब प्रभुने कहा (खंदयं नाम)

इवे आ तरइ भगवान्नी पासे शुं णन्थु तेनुं सूत्रकार वण्णन करे छे.

सूत्रार्थ— (गोयमाइ) हे गौतम ! आ प्रभाणु स णोधन करीने (समणे

भगव महावीरे) श्रमणु भगवान् महावीरे (भगव गोयमं एव वयासी) भग-

वान् गौतमने आ प्रभाणु इधु- (गोयमा !) हे गौतम ! (पुव्वसंगइयं णं दच्छसि)

तु आणे तारा भूतकाणना स णधीने नेधशि (भंते ! कं णं) हे भगवन् !

क्या मारा पूर्व स णधीने हु नेधशि ? प्रभुणे कहु- (खंद नाम) स्कन्दके तुं

કર્મ વા કિયચિરેણ વા ? । एवं खलु गौतम । तस्मिन् काले तस्मिन् समये आव-
स्ती नाम नगरी आसीत् वर्षीकः । तत्र खलु आवस्थ्यां नगर्यां गर्दमासस्यान्ते
वासी स्कन्दको नाम कात्यायनगोत्रः परिव्राजकः परिवसति, तदेव यावत् यत्रैव
ममान्तिकं तत्रैव प्रापारयत् गमनाय स खलु अदूरागतो बहुसप्तात् अध्वपतिपन्नो
ऽन्तरापथि वर्तते अथैव ब्रूयसि गौतम । । मय्यस्य ! इति भगवान् गौतमः । भ्रमणं

स्कन्दको (સે કાહે વા, કહ વા કેચચિરેણ વા) હે પ્રમો ! મેં ઠસે કહાંપર
કિસ તરહ સે ઓર કિતને સમય કે વાદ દેહુ ગા ? (एवं खलु गोयमा)
તય પ્રમુ ને કહા હે ગૌતમ । (તેણં કાલેણં તેણ સમણ
સાવસ્થી નામ નયરી હોત્પા) ઊસ કાલ મેં ઓર ઠસ સમય મેં
આવસ્તી નામ કી નગરી થીં । (वण्णओ) वण्णेक (तस्य णं सावस्थीए
नयरीए) ઠસ આવસ્તી નગરી મેં (गर्दमालस्स अत्ते वासी) गर्दमालका
શિષ્ય (स्वइए नाम) स्कन्द नामકો કિ જિસકા (कच्चायणस्स गोत्रे)
ગોત્ર કાત્યાયન હૈ (परिव्यापए परिवसइ) परिव्राजक रहता है (तत्रैव
जाव जेणेव ममं अतिए तेणेव पहारेएव गमणाए) इस विषय का समस्त
વર્ણન પહિલે કહા જૈસા હી જાનના આહિયે, યાવત્ વહ સ્કન્દક પરિવ્રાજક
જહાં મેં હું ઠસ તરફ આનેકે લિયે પ્રસ્થિત હુમા હૈ । (से णं अदूरागए
बहुसपवे अद्वाणपाइवने अंतरापथे वट्ठइ) अब वह जिस स्थान पर
અપન સય હૈ વહાંસે લગભગ વહ વહુત દૂર નહીં હૈ-વહુત નજીક આ
જુકા હૈ-ચોંચ રાસ્ટે મેં હી હૈ (गोयमा) हे गौतम । (अज्जेव णं दण्ड

નેઘથ (સે કાહે વા કહ વા કેચચિરેણ વા) હે પ્રમો ! હું તેને ક્યાં, કેવી
રીતે અને કેટલા સમય પછી નેઘથિ ? (एवं खलु गोयमा ।) ત્યારે પ્રમુએ
કહ્યું હે ગૌતમ । (તેણં કાલેણં તેણં સમણં સાવસ્થી નામ નયરી હોત્પા) તે
કાળે અને તે સમયે આવસ્તી નામની નગરી હતી. (वण्णओ) તેનું વર્ણન
આપાનગરી પ્રમાણે સમજવું (तस्य णं सावस्थीए नयरीए) તે આવસ્તી નગરીમાં
(गर्दमालस्स अत्ते वासी काचायणसगोत्रे) गर्दमासने शिष्य कात्यायन गोत्री
(स्वइए नाम परिम्मायए परिवसइ) स्कन्द नामने परिव्राजक रहे थे (तत्रैव
जाव जेणेव ममं अतिए तेणेव पहारेएव गमणाए) आ विषयनं समस्त वर्णन
આગળ કહ્યા પ્રમાણે જ સમજવું તે સ્કન્દક પરિવ્રાજક ગાદી પાસે આવવા
માટે રવાના થઈ ચૂક્યો છે (से णं अदूरागए बहुसपवे अद्वाणपरिबन्ने
अतरापथे वट्ठइ) હવે તે આ સ્થાનથી ખટું દૂર નથી થયો જ નહીં જાની
અયો છે-સ્થાની વચ્ચે જ છે (गोयमा) हे गौतम । (अज्जेव णं दण्डसि)

भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्यित्वा एवमवादीत्, प्रभुः खलु भदन्त ! स्कन्दकः कात्यायनगोत्रो देवानुप्रियाणामन्तिके मुंडो भूत्वा खलु अगारा-
दनगारितां प्रव्रजितुम् ? हंत प्रभु. यावच्च श्रमणो भगवान् महावीरो भगवंतं गौतम
मेतमर्थं परिकथयति तावच्च खलु स स्कन्दकः कात्यायनगोत्रस्तं देशं हव्यमागतः ॥

टीका—‘गोयमा इह समणे भगवं महावीरे भगवं गोयमं एवं वयासी’ गौतम !
इति श्रमणो भगवान् महावीरो भगवन्तं गौतमम् एवम्—वक्ष्यमाणप्रकारेण अवा-

सि) तुम उसे अभी ही देखोगे । (भंतेत्ति भगवं गोयमे समणं भगवं
महावीरं वंदह) हे भगवंत इस प्रकार से संवोधित करके भगवान् गौ-
तम ने श्रमण भगवान् महावीर को वंदना की (नमंसइ) उन्हें नमस्कार
किया (वंदित्ता नमंसित्ता) वंदना नमस्कर कर के (एवं वयासी) फिर
उन्होंने ऐसा कहा—(पहूणं भंते । खंदए कच्चायणस्स गोत्ते देवानुप्पियाणं
अंतिए मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइत्तए) हे भदन्त ! क्या
वह कात्यायनगोत्रवाला स्कंदक आप देवानुप्रिय के पास मुंडित होकर
अगारावस्था से अनगारावस्था धारण करने के लिये शक्तिशाली है ?
(हंता पभू) हां गौतम वह समर्थ—शक्तिशाली है (जावं च णं समणे
भगवं महावीरे भगवओ गोयमस्स एयमट्ठं परिकहेह, तावं च णं से खं-
दए कच्चायणस्स गोत्ते तं देसं हव्वं आगए) जब श्रमण भगवान् महावीर
गौतम स्वामी से इस बात को कह रहे थे कि इतने ही में कात्यायनगो-
त्रवाला वह स्कन्दक उस स्थान पर शीघ्र आ पहुँचा ॥

टीकार्थ—“गोयमाइ” हे गौतम ! इस प्रकार संवोधित करके

तुं डभणु ७ तेने नेधश (भंते त्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदह
नमंसइ) डे लगवन् ! ओपुं भ णोधन करीने लगवान् भडावीरने वंदन नम-
स्कार कर्या (व दित्ता नमंसित्ता एव वयासी) वंदन नमस्कार करीने तेमणु
भडावीर प्रभुने आ प्रभाणु डह्यु—(पहूणं भंते । खंदए कच्चायणस्स गोत्ते देवानुप्पि-
याणं अंतिए मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइत्तए ?) डे लगवन् ! शुं
ते कात्यायन गोत्रीय स्कन्दक आप देवानुप्रियनी पास देखा अडणु करीने,
अगारावस्थाने त्याग करी अणुगारावस्था धारणु करवाने समर्थ छे ? (हंता
पभू) हा, गौतम ! ते समर्थ छे. (जावं च णं समणे भगवं महावीरे भग-
वओ गोयमस्स एयमट्ठं परिकहेह, तावं च णं से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते तं देसं
हव्वं आगए) श्रमणु लगवान् भडावीर प्रभु गौतम स्वामीने आ बात करत्ता
डता त्थारे ७ कात्यायन गोत्री स्कन्दक परित्रावज्ज त्थां आवी पडोअ्यो.

दीत्-कथितवान्, यस्मिन् समय स स्कन्दक सर्वमेव सामाग्रीमादाय कृतगला नगरीतः मस्थान कृतवान् तस्मिन्नेव समये भगवान् महावीरो गौतमं हे गौतम इति संबोध्य प्रोवाचेति समुदितार्थः । किमुवाचेत्याह—‘दृच्छसि’ इत्यादि । ‘दृच्छसि णं गोयमा’ द्रक्ष्यसि खलु गौतम । ‘पुण्यसंग्रह्यं’ पूर्वसंगतिदम्-गृहस्थावस्थापरिचितं पूर्वभवमित्रं वा कमपि पुरुषम् । अतर्कितमाकस्मिकं भगवद्वाक्य श्रुत्वा आश्चर्ययुक्तो गौतमो भगवन्तं पृच्छति—‘क ण भंते’ कं स्तु भदन्त !, इ भदन्त ! क पूर्वंपरिचितं द्रक्ष्यामीत्यर्थः, भगवान् कथयति—‘स्वदयं-नाम’ स्कन्दक नाम, स्कन्दकं द्रक्ष्यसीत्यर्थः । पुनर्गौतमः पृच्छति—‘से कावे वा

“समणेभगव महावीरे” अमण भगवान् महावीर ने “भगवं गोयमं” भगवान् गौतम से (एव वयासी) ऐसा कहा जिस समय मैं वह स्कन्दक समस्त सामग्री को साथ में लेकर कृतगला नगरी से प्रस्थित हुआ था उसी समय मैं भगवान् महावीर ने गौतम से हे गौतम । ऐसा संयोजित करके कहा क्या कहा ! इसके लिये सूत्रकार कहते हैं कि (दृच्छसि णं गोयमा) हे गौतम ! तुम देखोगे (पुण्यसंग्रह्यं) गृहस्थावस्था में परिचित हुए अथवा पूर्व-भव के मित्र, किसी पुरुष को अतर्कित एवं आकस्मिक भगवान् के वचन सुनकर आश्चर्य से चकित हुए गौतम ने भगवान् से पूछा ‘क णं भंते ! हे भदन्त ! मैं किस पूर्व परिचित को देखूंगा तब भगवान् ने उनसे कहा (स्वदयं नाम) स्कन्दक को

टीका—“गोयमा” हे गौतम । जेव संबोधन करीने “समणं भगव महावीरे” अथवा भगवान् महावीर “भगवं गोयमं” भगवान् गौतम से “एव वयासी” आ अभावे कह्यु—

(ज्योते ते स्कन्दक परिमाणं पीतानी जभी सामग्रीजोने साथे इति कृतगला नगरीमांही भगवान् महावीर फांने आववा भाटे उपशो त्यारे) भगवान् महावीर गौतमने ‘हे गौतम !’ जेव संबोधन करीने शु कह्यु ते सूत्रकार अभावे छे—‘दृच्छसि णं गोयमा । पुण्यसंग्रह्यं’ हे गौतम ! तु तारा केई पूर्वपरिचित स जभीने जेईश—गृहस्थावस्थामा जेनी साथे परिचय के मित्रता थय होय जेवी व्यक्तिने जेईश आ प्रशरना अनङ्कित जने आकस्मिक वसने भगवान् महावीरने मुजेथी साजगीने आश्चर्यवद्गति थयेका गौतमस्वामीने महावीर भगवान् पूछ्यु—‘क णं भंते’ हे भगवान् ! तु कता पूर्व परिचितने जेईश त्यारे भगवान् कह्यु के ‘स्वदयं नाम’ स्कन्दक जे जेथी जेथी भगवान् गौतमस्वामीने

भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्यित्वा एवमवादीत्, प्रभुः खलु भदन्त ! स्कन्दकः कात्यायनगोत्रो देवानुप्रियाणामन्तिके मुंडो भूत्वा खलु अगारा-
दनगारितां प्रव्रजितुम् ? हंत प्रभु यावच्च श्रमणो भगवान् महावीरो भगवंतं गौतम
मेतमर्थं परिकथयति तावच्च खलु स स्कन्दकः कात्यायनगोत्रस्तं देशं हव्यमागतः ॥

टीका—‘गोयमा इह समणे भगवं महावीरे भगवं गोयमं एवं वयासी’ गौतम !
इति श्रमणो भगवान् महावीरो भगवन्तं गौतमम् एवम्—वक्ष्यमाणप्रकारेण अवा-

सि) तुम उसे अभी ही देखोगे । (भंतेत्ति भगवं गोयमे समणं भगवं
महावीरं वंदह) हे भगवंत इस प्रकार से संबोधित करके भगवान गौ-
तम ने श्रमण भगवान महावीर को वंदना की (नमंसइ) उन्हें नमस्कार
किया (वंदित्ता नमसित्ता) वंदना नमस्कर कर के (एवं वयासी) फिर
उन्होंने ऐसा कहा—(पहूणं भंते ! खंदए कच्चायणस्स गोत्ते देवानुप्पियाणं
भंतिए मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइत्तए) हे भदन्त ! क्या
वह कात्यायनगोत्रवाला स्कंदक आप देवानुप्रिय के पास मुंडित होकर
अगारावस्था से अनगारावस्था धारण करने के लिये शक्तिशाली है ?
(हंता पभू) हां गौतम वह समर्थ—शक्तिशाली है (जावं च णं समणे
भगवं महावीरे भगवओ गोयमस्स एयमट्ठं परिकहेइ, तावं च णं से खं-
दए कच्चायणस्स गोत्ते तं देसं हव्वं आगए) जब श्रमण भगवान महावीर
गौतम स्वामी से इस बात को कह रहे थे कि इतने ही में कात्यायनगो-
त्रवाला वह स्कन्दक उस स्थान पर शीघ्र आ पहुँचा ॥

टीकार्थ—“ गोयमाइ ” हे गौतम ! इस प्रकार संबोधित करके

तुं डभणु ७ तेने नेधश (भंतेत्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदह
नमंसइ) डे लगवन् ! ओतुं भणोधन करीने लगवान भडावीरने वंदन नम-
स्कार कर्या (वंदित्ता नमसित्ता एव वयासी) वंदन नमस्कार करीने तेभणु
भडावीर प्रभुने आ प्रभाणु कहु—(पहूणं भंते ! खंदए कच्चायणस्स गोत्ते देवानुप्पि-
याणं अतिए मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइत्तए ?) डे लगवन् ! शुं
ते कात्यायन गोत्रीय स्कन्दक आप देवानुप्रियनी पास देखा अडणु करीने,
अगारावस्थाने त्याग करी अणुगारावस्था धारणु करवाने समर्थ छे ? (हंता
पभू) हा, गौतम ! ते समर्थ छे (जावं च णं समणे भगवं महावीरे भग-
वओ गोयमस्स एयमट्ठं परिकहेइ, तावं च णं से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते तं देसं
हव्वं आगए) श्रमणु लगवान भडावीर प्रभु गौतम स्वामीने आ बातु करता
डता त्थारे ७ कात्यायन गोत्री स्कन्दक परित्राण्डक त्या आवी पडोअो.

દીત્-વયિતવાન્, યસ્મિન્ સમયે સ સ્કન્દકઃ સર્વામેષ સામાગ્રીમાદાય કુટંગલા
નગરીતઃ પ્રસ્થાનં કૃતવાન્ તસ્મિન્નેવ સમયે મગવાન્ મહાવીરો ગૌતમ હે ગૌતમ
इति संबोध्य प्रोवाचेति समुदितार्थ । किमुवाचेत्याह—“दृच्छसि” इत्यादि ।
‘दृच्छसि णं गोयमा’ द्रक्ष्यसि खलु गौतम । ‘पुष्पसंग्रह्यं’ पूर्वसंगतिकम्-
गृहस्थावस्थापरिचितं पूर्वमवमित्रं वा कमपि पुरुषम् । अतर्कितमाकस्मिकं मगव
द्राक्ष्यं भुत्वा आश्चर्ययुक्तो गौतमो मगवन्तं पृच्छति—‘क णं भंते’ क खलु
भदन्त !, हे भदन्त ! कं पूर्वेपरिचितं द्रक्ष्यामीत्यर्थः, मगवान् कथयति—‘स्वदयं-
नाम’ स्कन्दक नाम, स्कन्दक द्रक्ष्यसीत्यर्थः । पुनर्गौतमः पृच्छति—‘से काहे वा

“સમણેમગવં મહાવીરે” અમણ મગવાન મહાવીર ને “મગવં ગોયમં”
મગવાન ગૌતમ સે (પયં વયાસી) એસા કહા જિસ સમય મેં જહ
સ્કન્દક સમસા સામગ્રી કો સાય મેં લેકર કુટંગલા નગરી
સે પ્રસ્થિત હુઆ યા ડસી સમય મેં મગવાન મહાવીર ને ગૌતમ સે હે
ગૌતમ । એસા સંયોધિત કરકે કહા કયા કહા ! હસકે હિયે સૂત્રકાર
કહતે હૈં કિ (દૃશ્છસિ ણં ગોયમા) હે ગૌતમ ! તુમ વેલોગે (પુષ્પસંગ
હ્યં) ગૃહસ્થાવસ્થા મેં પરિચિત હુપ અથવા પૂર્વમવ કે મિત્ર, કિસી પુરુષ કો
અતર્કિત એવં આકસ્મિક મગવાન કે વચન સુનકર આશ્ચર્ય સે વકિત
હુપ ગૌતમ ને મગવાન સે પૂછા ‘કં ણં ભંતે ! હે ભદન્ત ! મેં કિસ પૂર્વ
પરિચિત કો દેહુંગા તય મગવાન ને ડનસે કહા (સ્વદય નામ) સ્કન્દક કો

ટીકાર્થ—“ગોયમા” હે જીતમ ! જોવુ સંબોધન કરીને “સમણ
મગવ મહાવીરે” અમણ ભગવાન મહાવીરે “મગવ ગોયમં” ભગવાન જીત-
મને “પય વયાસી” આ પ્રમાણે કહ્યું—

(ત્યારે તે સ્કન્દક પરિવ્રાજક પોતાની બધી સામગ્રીઓને સાથે લઈને
કુટંગલા નગરીમાંથી ભગવાન મહાવીર પાસે આવવા માટે ઉપડ્યો ત્યારે) ભગ-
વાન મહાવીરે જીતમને ‘હે જીતમ !’ જોવુ સંબોધન કરીને શુ કહ્યું તે
સૂત્રકાર બતાવે છે—“દૃશ્છસિ ણં ગોયમા ! પુષ્પસંગ્રહ્યં હે જીતમ ! તું તારા કેઈ
પૂર્વપરિચિત સંબંધીને જોઈશ—ગૃહસ્થાવસ્થામાં જેની સાથે પરિવ્રજકે મિત્રતા
થઈ હોય જોવી બચ્છિને જોઈશ. આ પ્રકારના અતર્કિત અને આકસ્મિક વચને
મહાવીરસ્વામીને મુખેથી સાંભળીને આશ્ચર્ય થઈત થયેલા જીતમસ્વામીએ મહાવીર
પ્રશ્નને પૂછ્યું— ‘કં ણં મંતે’ હે ભગવાન ! હું કયા પૂર્વ પરિચિતને જોઈશ ત્યારે
ભગવાને કહ્યું કે “સ્વદય મામ” સહજને જોશે ત્યારે ફરીથી પ્રશ્નને જીતમસ્વામીએ

कहं वा केवच्चिरेण वा ' अथ कुत्र वा कथं वा कियच्चिरेण वा ' से ' अथ तं ' काहे ' इति वा कुत्र स्थाने द्रक्ष्यामि ' कहं वा ' इति कथं वा, केन वा प्रकारेण साक्षाद्दर्शनतः श्रवणतो वा, द्रक्ष्यामि ? ' केवच्चिरेण वा ' इति, कियच्चिरेण वा कियता कालेन द्रक्ष्यामि ? भगवानाह—' एवं खलु गोयमा ' एवं खलु हे गौतम ! ' तेणं कालेणं तेणं समएणं ' तस्मिन् काले तस्मिन् समये, आवयोर्वात्तालापसमये सावत्थीनाम नयरी ' श्रावस्ती नाम नगरी ' होत्था ' अस्ति, अत्र ' होत्था ' इत्यस्य ' अस्ती-त्यर्थो भवति । ' वण्णओ '—वर्णकः, चंपावत् वर्णको विज्ञेयः, चम्पानगरीसदृशी अस्तीत्यर्थः । ' तत्थ णं सावत्थीए नयरीए ' तत्र खलु श्रावस्स्यां नगर्याम् ' गद्दमालस्स ' गर्दभालस्य, गर्दभालनामकपरिव्राजकस्य ' अन्तेवासी ' अन्तेवासी शिष्यः ' खंदए नाम ' स्कन्दको नाम ' कच्चायनस्स गोत्ते ' कात्यायनगोत्रः ' परिव्वायए ' परिव्राजकः ' परिवसइ ' परिवसति ' त चेव '

देखोगे तब प्रभु से गौतमने पुनः पूछा (से काहे वा कहं वा केवच्चिरेण वा हे भदन्त ! मैं उसे काहे कहाँ पर देखूंगा कैसे देखूंगा अपनी आखों से देखूंगा या उसे अपने कानों से सुनूंगा? तथा कितने काल के बाद उसे देखूंगा? तब भगवान ने कहा (एवं खलु गोयमा ।) हे गौतम ! सुनो बात इस प्रकार से है "तेणं कालेणं तेणं समएणं" उस काल में और उस समयमें "सावत्थी नाम नयरी होत्था" श्रावस्ती नामकी प्रसिद्ध नगरी है । यहाँ पर "होत्था" इस क्रिया पद का अर्थ "अस्ति" है—ऐसा होता है । 'वण्णओ' इस नगरी का वर्णक चंपानगरी के वर्णन की तरह जानना चाहिये । तात्पर्य यह की यह नगरी चंपा नगरी के जैसी है । " तत्थ णं सावत्थी ए नयरीए " उस श्रावस्ती नगरी में " गद्दमालस्स " गर्दभाल नाम के परिव्राजक का " अन्तेवासी " शिष्य " खंदए नाम " स्कन्दक नामका

ॐ उं " से काहे वा कहं वा केवच्चिरेण वा " हे भगवान ! हु तेने क्या जेधश ? डेवी रीते जेधश ॥ भारी आणोथी जेधश—अथवा तो भारी डाने सालणीश ? हु तेने डेटला समय पछी जेधश ? तयारे भगवाने ॐ "एव खलु गोयमा ।" हे गौतम ! सालण वात आ प्रमाणे छे—" तेणं कालेण तेण समएणं " ते डाने अने ते समये " सावत्थी नाम नयरी होत्था श्रावस्ती नामे नगरी छती. (अड्डी भूतडाणने प्रयोग थये डोवा छता वर्तमानकाण अड्छु करवाने छे—अटवे डे आ डाने अने आ समये श्रावस्ती नामनी नगरी छे " वण्णओ " तेनु वर्णन चंपानगरीना वर्णन प्रमाणे जे समज्जुं अटवे डे श्रावस्ती नगरी चंपानगरीना जेवी छे, "तत्थ णं सावत्थीए नयरीए " ते श्रावस्ती नगरीमा " गद्दमालस्स " गर्दभाल नामना परिव्राजकेना " अन्तेवासी " शिष्य " खंदए नाम परिव्वायए कच्चायनस्स गोत्ते परिवसइ "

તદેવ=પૂર્વોક્તમેવ સ્કન્દકર્ણનં સર્વમથ વાચ્યમ્ 'જાવ' યાવત્, અથ યાવત્તદેવ-
 'રિઝન્વેય જઝુન્વેય' 'ઈત્યારમ્ય 'જેળેવ છત્તપલાસપ્ત વેદપ' 'ઈત્યન્ત' સર્વોડરિ
 પાઠોડમ સમ્રાજ્ઞ । 'જેળેવ મમ અંતિપ્તે તેળેવ પહારેત્ય ગમણાપ' યત્રેવ મમાન્તિકં
 સત્રેવ પ્રાધારયદ્ ગમનાય, મમ સમીપે-સમાગન્તું તાપસાશ્રમાત્ પ્રસ્થાનં કૃતરાન ।
 'સે ણં અદૂરાગપ્ત વહુસપ્તે અદ્વાણપદિવન્ને અતરાપદે વહૃ' સ સ્વહ અદૂરા
 વાગતો વહુસંપ્રાપ્તોડધ્વપ્રતિપન્નોડન્તરાપયિ વર્તેતે, સ સ્કન્દકઃ સ્વહ 'અદૂરાગપ્ત'
 અદૂરે આગતઃ સમીપં પ્રાપ્ત ઇત્યર્થઃ, અદૂરસ્ત્વં વાવધિસ્થાનાપક્ષયામિ સ્પાત્,
 અથવા દૂરતરમાર્ગાપેક્ષયા ટિક્કોશાદિકમપિ અદૂરં સ્પાત્ ઇત્યસ આહ-'વહુસપ્ત'

"પરિચ્ચાયળ" પરિવ્રાજક જો કિ "કચ્ચાપણસ્સ ગોષે" કાત્યાયન
 ગોષ કા હૈ "પરિચમહ" રહતા હૈ । "ત ચેવ" યહાં પર સ્કન્દક સંબધી
 પૂર્વોક્ત સમસ્ત ઘર્ણન કરહેના વાહિયે । "જાવ" પદ્ યહાં યહ સમ
 જ્ઞાતા હૈ કિ રિઝન્વેય, જઝુન્વેય, યહાં સે હેકર "જેળેવ છત્તપલાસપ્ત
 વેદપ" યહાં તપકા સમસ્ત પાઠ યહાં પ્રહ્ણ કર હેના વાહિયે ।
 "જેળેવ મમ અંતિપ્તે તેળેવ પહારેત્ય ગમણાપ" ઇસ તરહ વહ પરિવ્રાજક
 યહાં સે અર્થાત્ તાપસાશ્રમ સે મેરે પાસ આને કે લિયે પ્રસ્થિત હો
 જુકા હૈ । (સે ણં અદૂરાગપ્ત વહુસપ્તે અદ્વાણપદિવન્ને અતરાપદે વહૃ)
 ઇન પદોંકે વિષય મેં જુલાણા અર્થે ઇમ પ્રકાર સે હૈ કિ વહ સ્કન્દક
 પરિવ્રાજક "અદૂરે આગતઃ" સમીપ મેં આ જુકા હૈ । યહ અદૂરતા અથ
 વિસ્થાન કી અપેક્ષા સે બી હો સકતા હૈ અથવા દૂરતર માર્ગ કી અપેક્ષા
 સે દો કોશ આદિ બી અદૂર હો સકતે હૈ-તો ઇસ કે લિયે કહા હૈ કિ

કાત્યાયન બોત્રનો શ્લોક નામનો પરિવ્રાજક શ્લે છે તે કાત્યાયન બોત્રનો છે
 અને તેનું નામ શ્લોક છે તે શ્લોક પરિવ્રાજક છે "ત ચેવ" અહીં સ્કન્દક
 પરિવ્રાજકનું વર્ણન સૂત્ર છ પ્રમાણે જ કરાયું છે તેમ સમજવું "જાવ" પદ
 એ બતાવે છે કે 'રિઝન્વેય જઝુન્વેય' થી શરૂ કરીને "જેળેવ છત્તપલાસપ્ત
 વેદપ" સુધીના સમસ્ત સૂત્રપાઠ અહીં ગ્રહણ કરવો.

"જેળેવ મમ અંતિપ્તે તેળેવ પહારેત્ય ગમણાપ" આ રીતે તે શ્લોક પરિ
 વ્રાજક તેના મઠમાંથી ખારી પાસે આવવા માટે ઉપડી જાય છે 'સે ણં
 અદૂરાગપ્ત વહુસપ્તે અદ્વાણપદિવન્ને અતરાપદે વહૃ' આ પદોનું સ્પષ્ટીકરણ
 આ પ્રમાણે છે-"અદૂર આગતઃ" તે નજીકમાં જ આવી પહોંચે છે તે
 અદૂરતા અવધિસ્થાનની અપેક્ષાએ પણ સંબધી શકે છે અથવા દૂરતા માર્ગની
 અપેક્ષાએ બિં આડ વહેરેનું અવર પણ સંબધી શકે છે તો તેનું નિરાકરણ

વહુસંપાત્તઃ, અત્યન્તસમીપમાર્ગસમાગતઃ, વહુસંપ્રાપ્તતા ચ વિશ્રામાદિકારણતઃ
આરામાદિગતોપિ સંભવતિ, અતઃ ઉચ્યતે ‘અદ્વાણપહિવન્ને’ અધ્વપ્રતિપન્નઃ,
અધ્વાનં પ્રતિપન્નઃ માર્ગે ચલન્નિત્યર્થઃ ‘અંતરાપહે વદ્દહ’ અંતરાપથિ વર્તતે, અત્યન્ત
સમીપે વર્તતે, અતસ્ત્વં ‘અજ્જેવ ણં દચ્છસિ ગોયમા’ અજ્ઞેવ સ્વલુ દ્રક્ષ્યસિ ગૌતમ !
હેગૌતમ ! યઃ સ્વલુ તવ પૂર્વપરિચિતઃ સ્કન્દકસ્તં ત્વમગ્રૈવ=અધુનૈવ સ્વલપેનૈવ કાલેન
તવ દૃષ્ટિપથે સમાગમિષ્યતીતિ ભાવઃ ‘મંતેત્તિ ભગવં ગોયમે સમણં ભગવં મહાવીરં
વંદહ નમંસહ’ મદંત ! ઇતિ સમ્બોધ્ય ભગવાન ગૌતમઃ શ્રમણં ભગવન્તં મહાવીરં
વંદતે નમસ્યતિ, ‘વંદિત્તા નમંસિત્તા એવં વયામી’ વંદિત્વા નમસ્યિત્વા એવં
વક્ષ્યમાણપ્રકારેણાવાદીત્-પૃષ્ટવાન્-‘પહ્ણં મંતે’ પ્રમુઃ=સમર્થઃ સ્વલુ મદંત !

(વહુ સંપત્તે) કિં વહુ અત્યન્ત સમીપ કે માર્ગ મેં આચુકા હૈ । યહ વહુ
સંપ્રાપ્તતા વિશ્રામ આદિ કારણ કી વજહ સે વગીચા આદિ મેં મી ગયે
હુપ મેં હો સકતી હૈ સો ઇસ્કે લિયે કહા ગયા હૈ કિ (અદ્વાણપહિવન્ને)
વહુ અમી માર્ગ મે હી ચલ રહા હૈ । વિશ્રામાદિ કે નિમિત્ત વગીચા આદિ
મેં નહીં ગયા હૈ । અતઃ વહુ “અંતરાપહે વદ્દહ” વીચ રાસ્તે મેં હી હૈ ।
ચિલ કુલ સમીપ આચુકા હૈ । ઇસલિયે તુમ ઉસે (અજ્જેવ ણં દચ્છસિ)
અમી હી દેખોગે । તાત્પર્ય યહ હૈ કિ હે ગૌતમ ! તુમ અપને પૂર્વપરિચિત
સ્કન્દક કો અમી હી વહુત થોડે હી સમય કે વાદ દૃષ્ટિપથ મેં આયા
હુઆ દેખ લોગે । (મંતે ત્તિ ભગવં ગોયમે સમણં ભગવં મહાવીરં વંદહ
નમંસહ) હે મદન્ત । એસા કહ કર ભગવાન મહાવીર કો વંદના કી
ઔર ઉન્હે નમસ્કાર કિયા (વંદિત્તા નમંસિત્તા એવં વયાસી વદના
નમસ્કાર કરકે ફિર ઉન્હોને ઉનસે એસા પૂછા (મંતે ! સ્વંદા કચવાય-

કરવા માટે કહ્યું છે કે “વહુસંપત્તે” તે અત્યન્ત નજીકને માર્ગે આવી ગયો
છે, અહીં એમ માનવાને કારણ ન રહે કે તે કોઈ નજીકના ઉદ્યાન વગેરેમાં
વિશ્રામ લઈ રહ્યો છે, તે બતાવવા માટેકહ્યું કે “અદ્વાણ પહિવન્ને” તે હજી રસ્તા
પર આવી રહેલ છે-વિશ્રામ વગેરે માટે કોઈ બાગ વગેરેમાં ગયેલ નથી અને તેથી
તે “અંતરાપહે વદ્દહ” રસ્તામાજ છે કહેવાનું પ્રયોજન એ છે કે તે સ્કન્દક નિરતર
પથ કાપીને આ જગ્યાની સમીપે આવી ચૂક્યો છે તેથી હે ગૌતમ ! તું તેને
“અજ્જેવ ણ દચ્છસિ” હમણા જ જોઈ શકીશ એટલે કે હે ગૌતમ ! તું તારા
પૂર્વપરિચિત સ્કન્દકને થોડી જ વારમા પ્રત્યક્ષ નિહાળીશ “મંતે તિ ભગવ
નમંસે સમણં ભગવં મહાવીર વદ્દહ નમંસહ” હે ભગવન્ ! એવું સંબોધન કરીને
ભગવાન્ ગૌતમે શ્રમણ ભગવાન માહાવીરને વદન કરી, નમસ્કાર કર્યા “વંદિત્તા

‘ત્વદ્ કચ્ચાયણસ્સ ગોષ્ઠે દેવાણુપ્પિયાણં અતિપ મુંઢે મવિષા’ સ્કન્દકઃ કાત્યા-
યનગોષ્ઠો દેવાનુપિયાણામતિકે મુંઢો મૂત્પા ‘અગારાઓ અણગારિય પચ્ચદ્વિપ’
આગારાવનગારિતાં મયજિતું, અનગારિતાં સાધુતાં મયનિતું પાપુમ્ અથવા વિભક્તિ
ચારિણામાત્ અનગારિતયા પ્રવ્રજિતુ, પ્રવ્રજ્યાં પ્રતિપણુ ત્તિમ્ સમર્થઃ ? મગધ-
યોડ્ય સ્કન્દકો મગધમીપમાગચ્છતિ તસ્ય કિં તાદ્રશ યોગ્યતા શક્તિશ્ચ વિષયે
યદ્ ગૃહં પરિત્યજ્ય મગધમીપે દીક્ષિતો મવિષ્યતિ ? इति गौतमस्य जिज्ञासा
પ્રાદુરભૂત । મગધનાહ—‘દશ’ ઇત્યાદિ । ‘દંતાપમ્’ રન્ત પ્રશ્નઃ, હે ગૌતમ ।
સ સ્કન્દકો મત્સમીપે ચારિત્રમદ્વે સમર્થોઽસ્તીતિ । ‘જાવં ચ નં સમણે મગધ
મહાધીરે મગધો ગોપમસ્સ વ્યમદ્દં પરિકહેદ્’ યાવન્ચ સ્વલ્લ ભ્રમણો મગધાત્ ।
મહાધીરો મગધતે ગૌતમાય પત્તમર્થે પરિકથયતિ, ‘તાવં ચ નં સે ત્વદ્ કચ્ચા-
યણસ્સ ગોષ્ઠે તે દેસં રક્ષ્ય આગય’ તાવત્ ચ સ્વલ્લ જ્ઞ સ્કન્દકઃ કાત્યાયનગોષ્ઠસ્તે
ણસ્સ ગોષ્ઠે દેવાણુપ્પિયાણં અતિપ મુંઢે મવિષ્સા અગારાઓ અણગારિય
પચ્ચદ્વિપ પહૂણં) હે મગ્ધન । કાત્યાયન ગોષ્ઠવાલા બહુ સ્કન્દક આપ દેવા-
નુપિય કે પાસ મુંઢિત હોકર કયા ગૃહસ્થાવસ્થા સે અનગારાવણ્ય કો
ચારણ કારન કે લિયે કયા સમર્થ હે ? હે મગધન । જો વહુ સ્કન્દક આપ
કે સમીપ આરદ્રા હે તમમેં કયા પેસી યોગ્યતા હે કિં વહુ ઘર કો ઊંઠ
કર આપ કે પાસ મેં દીક્ષિત ને જાવે ? इस प्रकार से गौतम को जान
ને પી રહ્યા પ્રકટ છુદ્—તથ પ્રશ્ન ને રસ્તા ઉન્હે ઉત્તર દિયા (દંતા પમ્
હાં ગૌતમ ! વહુ સ્કન્દક મેરે પાસ ચારિત્ર કે મદ્વે કરને મેં સમર્થ હે ।
(જાવંચ નં સમણે મગધ મહાધીરે મગધો ગોપમસ્સ વ્યમદ્દં પરિકહેદ્)
जय भ्रमण भगवान महाधीर गौतम से इस बात को कह रहे थे कि

સમ સિષ્ટા પદ વચામી વદન નમસ્કાર કરીને તેમણે તેમને આ પ્રમાણે પૂછ્યું
‘મહે ! ત્વદ્ કચ્ચાયણસ્સ ગોષ્ઠે દેવાણુપ્પિયાણં અતિપ મુંઢે મવિષ્સા અગારાઓ
અણગારિય પચ્ચદ્વિપ પહૂણં” હે મગધન । કાત્યાયન ઝોત્રી રક્ષક પરિવાર
જી આપ દેવાનુપિયની પાસે મુદિત થઈને (દીક્ષા અંગીકાર કરીને) ગૃહસ્થ
વસ્થાને ત્યામ કરીને અણગારાવણ્યા પાશળ કરવાને માટે શક્તિમાન છે । હે
ભ્રમણન । આપની ભ્રમણ જે રક્ષક આવી રહ્યો છે તેનામાં ધર છેડીને આપની
પાસે દીક્ષા અંગીકાર કરવાની યોગ્યતા છે ખરી ? ગૌતમની જો પ્રશ્નની વિજ્ઞાસા
જાત્રીને ભ્રમણ મહાધીરે આ પ્રમાણે જવાબ આપ્યો—“દંતા પમ્” હા,
ગૌતમ ! તે રક્ષક માં પાસે દીક્ષા લેવાને મગધ છે “જાવં ચ નં સમણે
મગધ મહાધીરે મગધો ગોપમગ વ્યમદ્દં પરિકહેદ્” અથવા ભ્રમણ ભ્રમણ
મહાધીર ગૌતમ સ્વામીને આ પ્રમાણે કી રક્ષા હતા ‘તાવં ચ નં’ જે

વહુસંપ્રાપ્તઃ, અત્યન્તસમીપમાર્ગસમાગતઃ, વહુસંપ્રાપ્તતા ચ વિશ્રામાદિકારણતઃ
આરામાદિગતોપિ સંભવતિ, અતઃ ઉચ્યતે ‘અદ્વાણપહિવન્ને’ અધ્વપ્રતિપન્નઃ,
અધ્વાનં પ્રતિપન્નઃ માર્ગે ચલન્નિત્યર્થઃ ‘અંતરાપહે વદ્દહ’ અંતરાપથિ વર્તતે, અત્યન્ત
સમીપે વર્તતે, અતસ્ત્વં ‘અજ્જેવ ણં દચ્છસિ ગોયમા’ અજ્ઞૈવ સ્વલુ દ્રક્ષ્યસિ ગૌતમ !
હે ગૌતમ ! યઃ સ્વલુ તવ પૂર્વપરિચિતઃ સ્કન્દકસ્તં ત્વમઞ્ચૈવ=અધુનૈવ સ્વલપેનૈવ કાલેન
તવ દૃષ્ટિપથે સમાગમિષ્યતીતિ ભાવઃ ‘મંતેત્તિ ભગવં ગોયમે સમણં ભગવં મહાવીરં
વંદહ નમંસહ’ મદંત ! इति सम्बोध्य भगवान् गौतमः श्रमणं भगवन्तं महावीरं
वन्दते नमस्यति, ‘વંદિત્તા નમંસિત્તા એવં વયાસી’ વંદિત્વા નમસ્યિત્વા એવં
વક્ષ્યમાણપ્રકારેણાવાદીત્-પૃષ્ઠવાન્-‘પહૂણં મંતે’ પ્રમુઃ=સમર્થઃ સ્વલુ મદંત !

(વહુ સંપત્તે) કિ વહુ અત્યન્ત સમીપ કે માર્ગ મેં આચુકા હૈ । યહ વહુ
સંપ્રાપ્તતા વિશ્રામ આદિ કારણ કી વજહ સે વગીચા આદિ મેં મી ગયે
હુએ મેં હો સકતી હૈ સો ઇસકે લિયે કહા ગયા હૈ કિ (અદ્વાણપહિવન્ને)
વહુ અમી માર્ગ મે હી ચલ રહા હૈ । વિશ્રામાદિ કે નિમિત્ત વગીચા આદિ
મેં નહીં ગયા હૈ । અતઃ વહુ “અંતરાપહે વદ્દહ” બીચ રાસ્તે મેં હી હૈ ।
બિલ કુલ સમીપ આચુકા હૈ । ઇસલિયે તુમ ઉસે (અજ્જેવ ણં દચ્છસિ)
અમી હી દેઘોગે । તાત્પર્ય યહ હૈ કિ હે ગૌતમ ! તુમ અપને પૂર્વપરિચિત
સ્કન્દક કો અમી હી વહુત થોડે હી સમય કે વાદ દૃષ્ટિપથ મેં આયા
હુઆ દેઘ લોગે । (મંતે ત્તિ ભગવં ગોયમે સમણં ભગવં મહાવીરં વંદહ
નમંસહ) હે મદન્ત । એસા કહ કર ભગવાન મહાવીર કો વંદના કી
ઔર ઉન્હે નમસ્કાર કિયા (વંદિત્તા નમંસિત્તા એવં વયાસી વદના
નમસ્કાર કરકે ફિર ઉન્હોને ઉનસે એસા પૂછા (મંતે ! સ્વંદા કચ્ચાય-

કરવા માટે કહ્યું છે કે “વહુસપત્તે” તે અત્યન્ત નજીકને માર્ગે આવી ગયો
છે, અહીં એમ માનવાને કારણ ન રહે કે તે કોઈ નજીકના ઉદ્યાન વગેરેમાં
વિશ્રામ લઈ રહ્યો છે, તે બતાવવા માટે કહ્યું કે “અદ્વાણ પહિવન્ને” તે હજી રસ્તા
પર ચાલી રહેલ છે-વિશ્રામ વગેરે માટે કોઈ બાગ વગેરેમાં ગયેલ નથી અને તેથી
તે “અંતરાપહે વદ્દહ” રસ્તામાજ છે કહેવાનું પ્રયોજન એ છે કે તે સ્કન્દક નિરતર
પથ કાપીને આ જગ્યાની સમીપે આવી ચૂક્યો છે તેથી હે ગૌતમ ! તું તેને
“અજ્જેવ ણ દચ્છસિ” હમણા જ જોઈ શકીશ એટલે કે હે ગૌતમ ! તું તારા
પૂર્વપરિચિત સ્કન્દકને થોડી જ વારમા પ્રત્યક્ષ નિહાળીશ “મંતે તિ ભગવ
ગોયમે સમણ ભગવં મહાવીર વદહ નમંસહ” હે ભગવન્ ! એવું સંબોધન કરીને
ભગવાન્ ગૌતમે શ્રમણ ભગવાન માહાવીરને વદન કરી, નમસ્કાર કર્યા “વંદિત્તા

से खदए कच्चायणस्स गोत्ते भगव गोयमे एव वयासी-
 से के से णं गोयमा। तहारूवे णाणी वा-तवस्सी वा, जे
 ण तव एस अट्ठे मम ताव रहस्सकडे हव्व अक्खाए
 जओण तुम जाणसि । तएण से भगव गोयमे खदय कच्चा
 यणस्स गोत्त एव वयासी-एव खल्लु खदया । मम धम्मा
 यरिय धम्मोवएसए समणे भगव महावीरे उप्पन्ननाणदस
 णधरे अरहा जिणे केवली तीयपट्ठप्पन्नमणागयवियाणए
 सब्बणू सब्बदरिसी जे ण मम एस अट्ठे तव ताव रहस्स
 कडे हव्व अक्खाए जओण अह जाणामि खदया ॥ तएणं
 से खदए कच्चायणस्सगोत्ते भगव गोयम एव वयासी
 गच्छामो णं गोयमाइ तवधम्मायरिय धम्मोवदेसय समण भगव
 महावीरवदामो नमसामो जाव पज्जुवासामो । अहासुह देवा
 णुप्पिया मा पडियध करेह, तएण से भगव गोयमे खदएण
 कच्चायणस्स गोत्तेण सद्धि जेणेव समणे भगव महावीरे
 तेणेव पहोरेत्थ गमणाए ॥ सू०१० ॥

छाया—तव खल्लु भगवान् गौतमः स्कन्दक कात्यायनगोत्रं अदुरागत
 शास्त्रा सिपमेव अभ्युत्तिष्ठति, अभ्युत्थाय सिपमेव प्रत्युपगच्छति, प्रत्युपगत्य

इस के पाद क्या हुआ—सो सूत्रकार कहते हैं—‘तएणं भगवं गोयमे’
 इत्यादि ।

सुमार्थ — (तएणं) तय (भगवं गोयमे) भगवान् गौतम (कच्चा
 यणस्स गोत्तं खदयं) कात्यायन गोत्रवाले उस स्कन्दकको (अदुरागतं
 जागिरा) पास में आया हुआ जानकर (गिण्णामेव असुद्धे) बहुत

त्याग्यह सु भ मु ते सूत्रकार कहे छे ‘तएणं भगव गोयमे’ इत्यादि
 सूत्रार्थ—(तएणं) त्याग्यही (भगवं गोयमे) भगवान् गौतम (कच्चा
 यणस्स गोत्तं खदयं), कात्यायन गोत्रवाला ते स्कन्दकने (अदुरागतं जागिरा)
 बहुतभी आगे पहुँचिवा आणीने (गिण्णामेव असुद्धे) पीताने आश्रयेधी

देशं शीघ्रमागतः, योऽसौ स्कन्दको भगवत्समीपमागच्छति स किमत्र प्रव्रजितो भविष्यतीति गौतमो भगवन्तं पृच्छति-भगवांश्च स स्कन्दको दीक्षां ग्रहीष्यतीत्युत्तरं ददाति तावत्येव काले स स्कन्दक आगच्छन् दृष्ट इति भावः ॥सू० ९ ॥

ततः किमित्याह—' तएणं ' इत्यादि ।

मूलम्—तएणं भगवं गोयमे खंदयं कच्चायणस्स गोत्तं अदूरागयं जाणित्ता खिप्पामेव अब्भुट्टेइ अब्भुट्ठित्ता खिप्पामेव पच्चुवगच्छइ पच्चुवगच्छित्ता जेणेव खंदए कच्चायणस्स गोत्ते तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता खंदयं कच्चायणस्स गोत्तं एवं वयासी खंदया ! सागयं, खंदया ! सुसागयं, खंदया ! अणुरागयं, खंदया ! सागयमणुरागयं, खंदया ! से णूणं तुमं खंदया सावत्थीए नयरीए पिंगलएणं नियंठेणं वेसालिय सावयेणं इणमक्खेवं पुच्छिए—मागहा ! किं स अंते लोगे ? अणंते लोगे ? तं चेव जेणेव इहं तेणेव हव्व मागए से णणं खंदया अट्टे समट्टे ? हंता अत्थि ! तएणं

(तावंच णं) इतने में ही (से खंदए कच्चायणस्सगोत्ते) कात्यायन गोत्र वाला वह स्कन्दक तं देसं हव्वं आगच्छइ) उस स्थान पर शीघ्र आ पहुँचा । तात्पर्य यह है कि जो स्कन्दक आपके पास आरहा है वह क्या यहां प्रव्रजित हो जावेगा इस प्रकार गौतम भगवान से जिस समयमें पूछ रहे थे और भगवान जब ऐसा कह रहे थे कि हां दीक्षित हो जावेगा ठीक उसी समयमें आता हुआ स्कन्दक दीखलाई दिया ॥सू०९॥

समये ७ “से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते” कात्यायन गोत्रवाणे ते स्कन्दक “ तं देसं हव्वं आगच्छइ ” એ સ્થાને શીઘ્ર આવી પહોંચ્યો તાત્પર્ય એ છે કે ન્યારે ગૌતમસ્વામી ભગવાન મહાવીરને સ્કન્દક પરિવ્રાજકમા દીક્ષા લેવાનું સામર્થ્ય છે કે નહીં એવું પૂછી રહ્યા હતા અને ન્યારે મહાવીર પ્રભુ ગૌતમને એવો જવાબ આપી રહ્યા હતા કે ‘ હા, તેનામા દીક્ષા લેવાનું સામર્થ્ય રહેલું છે ’ બરાબર એજ વખત સ્કન્દકે ભગવાન ગિરાજતા હતા તે સ્થાનમાં પ્રવેશ કર્યો ॥ સૂ. ૯ ॥

નતા છોક , તદેવ યથૈવેહ તથૈવ હૃદયમાગત સન્નૂત સ્કન્દક ! અપર્યય સમર્થ !
 હન્ત અસ્તિ । તત સ્વલ્લ સ સ્કન્દકઃ કાત્યાયનગોષ્ઠો મગધન્ત ગૌતમમેવમચારીત્
 તદ્ ઇપ કા સ્વલ્લ ગૌતમ ! તથા રૂપો જ્ઞાની ષા તપસ્વી ષા યેન સ્વલ્લ તત્ત્વ ઇપો-
 ડ્યો મમ તાવત્ રહસ્યકૃતઃ હૃદયમાસ્થાતઃ યતઃ સ્વલ્લ સ્વ માનાસિ ? । તત્ સ
 મગધાન્ ગૌતમઃ સ્કન્દક કાત્યાયનગોષ્ઠમેવમચારીત્-ઇવં સ્વલ્લ સ્કન્દક ! મમ

કા હૈ ? (તત્ત્વેવ જેણેવ હૃદયેણેવ હૃદયમાગત) હત્યાદિ પ્રશ્ન
 પૂછે ગયે, વનકે ઉત્તર ન જાનને કે કારણ તુમ શક્તિ આદિ
 અઘસ્યાઘાલે ધનકર યહાં જલ્દી સે જલ્દી આવે હો । (સે જૂળું ત્વંદ્યા !
 અદ્દે સમદ્દે) કહો સ્વલ્લ ! યહ યાત સત્ય હૈ ન ? (હતા અસ્થિ) હાં ગૌત
 મ ! યહ યાત સત્ય હૈ । (તપ્તેણ સે સ્વંદ્ય કચ્ચાપણસ્તગોષ્ઠે મગધ
 ગોયમં ઇવં ધયાસી) હમ કે યાદ કાત્યાયન ગોષ્ઠ ઘાલે ડસ સ્કન્દક
 પરિગ્રાજક ને ગૌતમ સે જેસા કહા- (સે કે સેણ ગોયમા !) હૈ ગૌતમા
 યહ જેસા કૌન (તત્ત્વરૂપે) તથારૂપ (જાણી) જ્ઞાની અથવા (તપસ્વી)
 તપસ્વી પુરુષ હૈ (જે જ તત્ત્વ ઇમ અદ્દે મમ તાવ રહસ્યકૃતે હૃદય અવરભા
 વ) જિસને મેરે હમ રહસ્યકૃત-ગુપ્ત-અર્થ કો તુમસે ચિલ્કુલ રાગ્નરૂપ
 સે ડસી સમય જાનકર કહદિયા હૈ । (જઓ જ તુમ જાણાસિ) જિમસે
 તુમ હસ યાત કો જાન સકે હો । (તપ્તેણ સે મગધ ગોયમે સ્વંદ્ય કચ્ચા
 પણસ્ત ગોત્ત ઇવં ધયામી) હસ પ્રકાર સે સ્કન્દક કે કદ્દન કે યાદ મમ
 યાન્ ગૌતમ ને કાત્યાયન ગોષ્ઠીય સ્કન્દક સે જેસા કહા- (ઇવં સ્વલ્લ

તેણેવ હૃદયમાગત) હત્યાદિ જે પ્રશ્નો તમને પૂછ્યા હતા તેનો જવાબ તમને
 આપવાને કારણે તમે શક્તિ વગેરે મનોભાવથી મુખ બનીને બંદી બને તેટલી
 કિત્તાવળથી આ પા ઠા (સે જૂળું ત્વંદ્યા ! અદ્દે સમદ્દે !) હે રા રા ! હોતે
 વાત સાચી છેને ? (હતા અસ્થિ) હા, ગૌતમ ! એ વાત ખરેખર સાચી છે (તપ્તે
 સે સ્વંદ્ય કચ્ચાપણસ્તગોષ્ઠો મગધ ગાયમ ઇવં ધયામી) ત્યાર બાદ કાત્યાયન
 ગોષ્ઠવાળા તે રા રા હો મગધાન ગૌતમને આ પ્રમાણે પૂછ્યું (ત ક સ ત
 ગોયમા ! તત્ત્વરૂપ જાણી તપસ્વી) ? ગૌતમ ! આજ બધા જ્ઞાની અથવા
 તપસ્વી પુરુષ કોણ છે કે (જ જ તત્ત્વ ઇમ અદ્દે મમ તાવ રહસ્યકૃતે હૃદય અ
 વરભાવ) જેને માત્ર શુદ્ધ અર્થને (વિચારને) અત્યારે ને અત્યારે જ બોલેને
 તમારી મનમાં એ તો બધી સ્પષ્ટતા પૂર્વક પ્રાપ્ત થયો છે કે (જમા જ તુમ
 જાણાસિ) જેથી તમે તે જાનને આગ મનોગત વિચારને બદલી ગયા છો ।
 (તપ્તેણ સે મગધ ગોયમે સ્વંદ્ય કચ્ચાપણસ્ત ગોત્ત ઇવં ધયામી) ત્યારે મગધાન
 ગૌતમે કાત્યાયન ગોષ્ઠી તે રા રા ને આ પ્રમાણે કહ્યું (ઇવં સ્વલ્લ સ્વલ્લ) હે

યત્રૈવ સ્કન્દકઃ કાત્યાયનગોત્રસ્તત્રૈવોપાગચ્છતિ ઉપાગત્ય સ્કન્દકં કાત્યાયન-
ગોત્રમેવમવાદીત્-હે સ્કન્દક ! સ્વાગતં સ્કન્દક ! સુસ્વાગતં, સ્કન્દક ! અન્વા-
ગતં, સ્કન્દક ! સ્વાગતમન્વાગતં, તદ્ નૂન ત્વં સ્કન્દક ! શ્રાવસ્ત્યાં નગર્યાં પિંગ-
લકેન નિર્ગ્રંથેન વૈશાલિકશ્રાવકેણેદમાક્ષેપં પૃષ્ઠઃ-માગધ ! કિં સાંતો લોકોઽ-

હી શીઘ્ર અપને આસન સે ઝઠે હૈં ઓર (અન્મુઢિત્તા) ઓર ઝઠકર
(લિપ્પામેવ) શીઘ્ર હી (પચ્ચુવગચ્છહ) ઉસકે સામને જાતે હૈં । (પચ્ચુવ-
ગચ્છિત્તા) સામને જાકર ફિર વે (જેણેવ ચંદણ કચ્ચાયણસસગોત્તે
તેણેવ ઉવાગચ્છહ) જહાં કાત્યાયન ગોત્રવાલા વહ સ્કન્દક થા વહાં પર
ગયે । (ઉવાગચ્છિત્તા કચ્ચાયણસસ ગોત્તં ચંદયં એવં વયાસી) વહાં આકર
કે ઉન્હોં ને કાત્યાયન ગોત્ર વાલે ઉસ સ્કન્દક સે એસા કહા (ચંદયા-
સાગયં) હે સ્કન્દક તુમ્હારા સ્વાગત હૈં (ચંદયા સુસાગયં) હે સ્કન્દક
તુમ્હારા સુસ્વાગત હૈં । (ચંદયા અણુરાગયં) હે સ્કન્દક ! તુમ્હારા અન્વા-
ગત હૈં (ચંદયા સાગયમણુરાગયં) હે સ્કન્દક ? તુમ્હારા સ્વાગત અન્વા
ગત હૈં । (ચંદયા) હે સ્કન્દક ! (સે ણૂર્ણ તુમં ચંદયા સાવત્થીએ નયરીએ
પિંગલણં નિયંઠેણં વૈસાલિયસાવણં ઇણમક્કલેવં પુચ્છિએ
તુમ સે શ્રાવસ્તી નગરી મેં વૈશાલિક શ્રાવક પિંગલક નિર્ગ્રંથ ને હન
પ્રશ્નોં કો હસ પ્રકાર પૂછા કિ (માગહા) માગધ ! (કિં સ અંતે
લોએ અણંતે લોએ ?) લોક અન્ત સહિત હૈં અથવા અન્ત વિના

તુરત જ ઉઠ્યા (અન્મુઢિત્તા) ઉઠીને (લિપ્પામેવ) તુરત જ (પચ્ચુવગચ્છહ)
તેની સામે ગયા (પચ્ચુવગચ્છિત્તા જેણેવ ચંદણ કચ્ચાયણસસગોત્તે તેણેવ ઉવા-
ગચ્છહ) ત્યાં કાત્યાયન ગોત્રીય સ્કન્દકે પરિભ્રાજક હોતો ત્યા સુધી તેઓ ગયા
(ઉવાગચ્છિત્તા કચ્ચાયણસસ ગોત્તં ચંદયં એવં વયાસી) ત્યાં જઈને તેમણે કાત્યાયન
ગોત્રી સ્કન્દકને આ પ્રમાણે કહ્યું (ચંદયા સાગયં) હે સ્કન્દક તમારું સ્વાગત
હો (ચંદયા સુસાગય) હે સ્કન્દક તમારું સુસ્વાગત હો (ચંદયા ! અણુરાગયં)
હે સ્કન્દક તમારું આગમન અન્વાગત હો તમારું અહીં આગમન થવાનું
ઉચિત જ થયું છે તેથી જરૂર કલ્યાણ થાઓ (ચંદયા સાગયં અણુરાગય)
હે સ્કન્દક તમારું સ્વાગત અને અન્વાગત હો (ચંદયા !) હે સ્કન્દક (સે ણૂર્ણ
તુમં ચંદયા સાવત્થીએ નયરીએ પિંગલણ નિયંઠેણ વૈસાલિય સાવણં ઇણમક્કલેવં-
પુચ્છિએ) તમને શ્રાવસ્તી નગરીમા વૈશાલિક શ્રાવક પિંગલક નિર્ગ્રંથે આ
પ્રકારના પ્રશ્નો પૂછ્ય હતા કે (માગહા) હે માગધ (કિં સ અંતે લોએ,
અણંતે લોએ ?) લોક અન્ત સહિત છે કે અન્તરહિત છે, (તં ચેવ જેણેવ હૈં

નતો લોકઃ, તદેવ યત્રૈવેહ સત્રૈવ હૃષ્યમાગત' સન્નૂત સ્કન્દક ! અવમર્થઃ સમર્થ !
 હન્ત અસ્તિ । તતઃ સ્વહુ સ સ્કન્દકઃ કાત્યાયનગોષ્ઠો મગધન્તં ગૌતમમેવમવાદીત્
 તવ્ એવ કઃ સ્વહુ ગૌતમ ! તથા રૂપો જ્ઞાની યા તપસ્વી યા યેન સ્વહુ તવ ઇષો-
 ઽર્થો મમ તાવદ્ રહસ્યકૃતઃ હૃષ્યમાસ્થાત યત સ્વહુ સ્વં માનાસિ ? । તતઃ સ
 મગધાન્ ગૌતમઃ સ્કન્દક કાત્યાયનગોષ્ઠમેવમવાદીત્-એવં સ્વહુ સ્કન્દક ! મમ

કા હૈ ? (તત્ત્વેષ જોણેષ હૃદ્ તેનાય હૃષ્યમાગત) હૃષ્યાદિ પ્રમ
 પૂછે ગયે, ઉનકે ઉત્તર ન જાનને કે કારણ તુમ શક્તિ આદિ
 અવસ્થાવાલે ધનકર યહાં જલ્દી સે જલ્દી આવે હો । (સે જૂળં સંધ્યા !
 અદ્દે સમદ્દે) કહો સ્વદક ! યહ યાત સત્ય હૈ ન ? (હતા અસ્તિ) હાં ગૌત
 મ ! યહ યાત સત્ય હૈ । (તત્ત્વે સે સંધ્ય કન્ધાયણસ્મગોષ્ઠે મગધ
 ગોષ્ઠમ્ એવં ઘયાસી) હસ કે યાવ કાત્યાયન ગોષ્ઠ વાલે ઉસ સ્કન્દક
 પરિવ્રાજક ને ગૌતમ સે યેસા કહા- (સે કે સેયં ગોયમા !) હૈ ગૌતમા
 ઘહ યેસા કૌન (તહારુવે) તયારૂપ (જાણી) જ્ઞાની અથવા (તપસ્વી)
 તપસ્વી પુરુષ હૈ (જે જ તપ એસ અદ્દે મમ તાવ રહસ્યકહે હૃદ્ અકરવા
 ય) જિસને મેરે હસ રહસ્યકૃત-ગુપ્ત-અર્થ કો તુમસે ચિલકુલ સ્વરૂપ
 સે વસી સમય જાનકર કહદિયા હૈ । (જહો જ તુમ જાણાસિ) જિસસે
 તુમ હસ યાત કો જાન સકે હો । (તત્ત્વે સે મગધ ગોષ્ઠમે સંધ્ય કન્ધા
 યણસ્ત ગોષ્ઠં એવં ઘયાસી) હસ મકાર સે સ્કન્દક કે કહન કે વાદ મમ
 ઘાન્ ગૌતમ ને કાત્યાયન ગોષ્ઠીય સ્કન્દક સે યેસા કહા- (એવં સ્વહુ

તેજેષ હૃષ્યમાગત) હૃષ્યાદિ જે પ્રશ્નો તમને પૂછ્યા હતા તેનો જવાબ નહીં
 આપવાને કારણે તમે શક્તિ વગેરે મનોભાવથી મુક્ત બનીને અહીં બને તેવી
 ક્રિયાવળથી આવ્યા છો (સે જૂળં સંધ્યા ! અદ્દે સમદ્દે ?) હૈ સ્કન્દક ! કહો તે
 યાત સાચી છેને ? (હતા અસ્તિ) હા, ગૌતમ ! જે વાત અદ્દે અસાચી છે (તત્ત્વે
 સે સંધ્ય કન્ધાયણસ્મગોષ્ઠો મગધ ગોષ્ઠમ્ એવં ઘયાસી) ત્યાર બાદ કાત્યાયન
 યોતવાળા તે સ્કન્દકે અગવાન ગૌતમને આ પ્રમાણે પૂછ્યું (સે કે સ જ
 ગોયમા ! તહારુવે જાણી તપસ્વી) હૈ ગૌતમ ! આટલો બધો જ્ઞાની અથવા
 તપસ્વી પુરુષ કોણ છે કે (જે જ તપ એસ અદ્દે મમ તાવ રહસ્યકહે હૃદ્ અ
 કરવા) જેણે આશા શ્રુત અર્થને (વિચારેને) અત્યારે ને અત્યારે જ આપીને
 તમારી સમક્ષ બેઠી બધી સ્પષ્ટતા પૂર્વક પ્રકટ કર્યો છે કે (જહો જ તુમ
 જાણાસિ) જેથી તમે તે વાતને આશા મનોગત વિચારને બદલી શક્યા છો ।
 (તત્ત્વે સે મગધ ગોષ્ઠમે સંધ્ય કન્ધાયણસ્ત ગોષ્ઠં એવં ઘયાસી) ત્યારે અગવાન
 ગૌતમે કાત્યાયન યોત્રી તે સ્કન્દકને આ પ્રમાણે કહ્યું (એવં સ્વહુ સંધ્યા !) હૈ

ધર્માચાર્યો ધર્મોપદેશકઃ શ્રમણો ભગવાન્ મહાવીર ઉત્પન્ન જ્ઞાનદર્શનધરઃ અર્હન્ જિનઃ કેવલી અતીતપ્રત્યુત્પન્નાનાગત વિજ્ઞાયકઃ સર્વદર્શી યેન મમ ઇવોડ્ઠ્યસ્તવ તાવત્ રહસ્યકૃતઃ હવ્વમાખ્યાતઃ યતોડ્ઠં જાનામિ સ્કન્દક ! તતઃ સ સ્કન્દકઃ કાત્યાયનગોત્રો ભગવન્તં ગૌતમમેવમવાદીત્-ગચ્છામઃ સ્વલુ ગૌતમ ! તવ ધર્માચાર્ય ધર્મોપદેશકં શ્રમણં ભગવન્તં મહાવીરં વંદામહે નમસ્યામો યાવત્ પર્યુપાસ્મહે ।

खंदया) स्कन्दक ! सुनो बात इस प्रकार से है—(मम धम्मायरिए धम्मो वएसए समणे भगवं महावीरे उप्पण्णनाणदंसणधरे अरहा जिणे केवली तीयपडुप्पन्नमणागयवियाणए सव्वण्णू सव्वदरिसी) मेरे धर्माचार्य धर्मोपदेशक श्रमण भगवान् महावीर हैं । वे उत्पन्न ज्ञान दर्शन के धारी हैं अरिहंत हैं । जिन हैं । केवली हैं । अतीत वर्तमान और अनागत इन सब विषयोंको वे हस्तामलकवन् जानते हैं । सर्वदर्शि हैं (जेणं मम एस अट्ठे तव ताव रहस्सकडे हव्वं अक्खाए) उन्होंने ने ही तुम्हारा रहस्यकृत मनोगतरूप अर्थ मुझ से यथावत् कहा है (जयाणं अहं जाणामि खंदया) इसीसे मैं हे स्कन्दक ! इस तुम्हारे रहस्यकृत अर्थ को जानता हूं । (तएणं से खदए कच्चायणस्स गोत्ते भगवं गोयमं एवं वयासी) गौतम के द्वारा इस बात को सुनने के बाद कात्यायन गोत्री स्कन्दक ने उन भगवान् गौतम से ऐसा कहा (गच्छामो णं गोयमा ! तव धम्मायरियं धम्मो वएसयं समणं भगयं महावीरं वदामो नमंस्सामो जाव पज्जुवासामो) हे गौतम ? चलो आपके धर्माचार्य धर्मोपदेशक श्रमण भगवान् महावीर

સ્કંદક ! સાહજો, વાત આ પ્રમાણે છે (મમ ધમ્માયરિયે ધમ્મોવસએ સમણે-ભગવં મહાવીરે ઉપ્પણ્ણનાણ દસણધરે અરહો જિણે કેવલી તીયપડુપ્પન્નમણાગયવિયા-ણએ સવ્વણ્ણૂ સવ્વદરિસી) મારા ધર્માચાર્ય અને ધર્મોપદેશક શ્રમણ ભગવાન મહાવીર છે. તેઓ ઉત્પન્ન કેવલજ્ઞાનદર્શનના ધારક છે, અરિહંત છે, જિન છે, કેવલી છે. તેઓ ભૂત વર્તમાન અને ભવિષ્યકાળના વિષયોને હસ્તામલકની જેમ (હાથમા રહેલા આમળાની જેમ) બાણી શકે છે, અને સર્વદર્શી છે (જેણ-મમ એસ અટ્ઠે તવ તાવ રહસ્સકડે હવ્વં અક્ખાએ) તેમણે જ તમારા આ ગૂઢ, મનોગત અર્થ (વિચારો પ્રશ્નો) મને યથાર્થ રૂપે કહ્યા છે (જયાણ અહં-જાણામિ ખંદયા) હે સ્કંદક ! તેથી જ હું તમારા તે શુભ પ્રશ્નો બાણુ છું. (તએણ સે ખદએ કચ્ચાયણસ્સ ગોત્તે ભગવં ગોયમે એવ વયાસી) ગૌતમની પાસેથી તે વાત બાણીને કાત્યાયન ગોત્રીય સ્કંદકે ભગવાન ગૌતમને આ પ્રમાણે કહ્યું (ગચ્છામો ણ ગોયમા ! તવ ધમ્માયરિય સમણ ભગવં મહાવીરં વંદામો નમંસામો જાવ પજ્જુવાસામો) હે ગૌતમ ! આલો. તમારા ધર્માચાર્ય ધર્મોપદેશક, શ્રમણ ભગવાન

येथा सुख देवानुप्रिय ! मा प्रसिवन्धं कुरु । ततः खलु स भगवान् गौतमः स्कन्दकेन कात्यायनगोत्रेण सार्धं यज्ञीयं ध्रमणो भगवान् महावीरस्तथैव प्राचारयद्भ्रमनाय ॥१॥

टीका—‘ तर्पणं भगव गोयमे स्वर्दयं कञ्चायणस्सगोच अदूरागय नापिषा खिप्पामेव अम्मुट्ठेह ’ ततः खलु भगवान् गौतम स्कन्दक कात्यायनगोत्रमदूरा गत=समीपमागतं ज्ञात्वा क्षिप्रमेवाम्युत्तिष्ठति यद्यपि भगवान् गौतम सयत स्कन्दकआसयतस्तवआसयताय सयतस्याम्युत्थानादिकं न युक्तमिति न वक्तव्यम्, गौतमस्यागमव्यवहारित्वादिति । ‘ अम्मुट्ठिषा खिप्पाममपज्जुषगच्छ ’ अम्मु-

को वदन करें, नमस्कार करें यावत् उनकी पर्युपासना करें । (अहासुहं देवानुप्रिया) तथ गौतम ने कहा हे देवानुप्रिय आप को जैसे सुख हो वैसा करो । (मा पडियंघ करेह) विलम्ब मत करो । (तर्पणं से भगव गोयमे स्वर्दयं कञ्चायणस्सगोत्रेण सद्धिं जेणेय समणे भगवं महावीरे तेणेव पहारेत्थ गमणाए) इस प्रकार कहने के बाद वे भगवान् गौतम कात्यायन गोत्री स्कन्दक के साथ जहाँ ध्रमण भगवान् महावीर विराजमान थे—उसी ओर चल दिये ।

टीकार्थ—“ तर्पणं भगवं गोयमे स्वर्दयं कञ्चायणस्सगोचं अदूराग यं जाणिस्सा खिप्पामेव अम्मुट्ठेह ” इस सूत्र पाठ का अर्थ सूत्रार्थ में ही लिख दिया गया है । विशेष यहाँ पर कोई ऐसी आशंका कर सक्ता है कि भगवान् गौतम तो संयत थे और वह स्कन्दक परिव्राजक असंयत था । अतः असंयत के लिये इस तरह से संयत को अम्युत्थान आदि करना उचित नहीं है । इसमें सम्पददर्शन में अतिथार आना है

महावीरने आपले वदन करीजे नमस्कार करीजे अने यावत् तेमनी पशु पासना करीजे । (अहासुह देवानुप्रिया) त्याहे गौतमे भवान् आप्णे छे देवानुप्रिय ! आपने जेम सुख उपजे तेम करे । (मा पडियंघ करेह) पण तु विवज्ज न करे । (तर्पण से भगवं गोयमे स्वर्दयं कञ्चायणस्स गोत्रेण सद्धिं जेणेय समणे भगवं महावीरे तेणेव पहारेत्थ गमणाए) त्यार जाइ भगवान् गौतमकात्यायन ओत्राणा २३६३ने साथे लउनि ज्या अभज्जु भगवान् महावीर निशब्दा उंता ते तरह ज्या ताप्ता

टीकार्थ— तर्पणं भगवं गोयमे स्वर्दयं कञ्चायणस्स गोचं अदूरागयं जाणिस्सा खिप्पामेव अम्मुट्ठेह आ सूत्रपाठने अर्थ सूत्रार्थभा न जनावी दीया छे अर्थात् कौनसे कस्य जेथी शका थाय छे गौतमस्सामी तो संयत जना अने स्कन्दक परित्रा २३ तो असंयत जतो तो आ नीते असंयतनुं स भान करवाने सयनने उता यधने साथे जपु पडे ते बात उचित जानी नथी जेम करवायी सम्भ्रमनभा अतिथार (भिष्मात्पनो डोप) लागे छे पण अर्थात् ते प्रभारनी

स्थाय क्षिप्रमेव प्रत्युपगच्छति, 'पञ्चुवगच्छिता' प्रत्युपगत्य 'जेणेव खंदए कच्चा-
यणस्स गोत्ते तेणेव उवागच्छइ' यत्रैव स्कन्दकः कात्यायनगोत्रस्त्रैवोपागच्छति
'उवागच्छिता खंदयं कच्चायनस्स गोत्तं एवं वयासी' उपागम्य स्कन्दकं कात्या-
यनगोत्रमेववादीत् 'हे खंदया' हे स्कन्दक ! आगम्यताम्, भगवत्समीपे
समागमनस्य कल्याणहेतुत्वात्, 'सागयं खंदया' स्वागतं स्कन्दक ! हे स्कन्दक !
तवागमनमत्रमुशोभनम्, भगवत्संपर्कस्य कल्याणकारकत्वादिति 'सुसागयं

सो इस प्रकार की आशंका यहां ठीक नहीं है । कारण कि गौतम ने जो
ऐसा किया वह आगम व्यवहारी होने के कारण से किया तात्पर्य कहने
का यह है कि भगवान के मुख से गौतम को यह ज्ञात हो ही चुका था कि
स्कन्दक अगार से अनगार अवस्थावाला बन जावेगा—अतः स्वयं राग-
घाले होने के कारण उसकी उस स्थिति के प्रति पक्षपात हो जाने से,
तथा महावीरप्रभु के ज्ञानानिश्चय को प्रकट करने के निमित्त प्रभु द्वारा
प्रतिपादित बात को स्कन्दक से कह कर उनके प्रति उसका बहुमान हो
इस अभिप्राय से गौतम का स्कन्दक के सामने जाना दोषावह नहीं
है । इसलिये (अवमुट्ठिता) गौतम उठकर (पञ्चुवगच्छइ) स्कन्दक के
समक्ष गये । (पञ्चुवगच्छिता) स्कन्दक के समक्ष जाकर फिर वे (जेणेव
खंदए कच्चायणस्स गोत्ते तेणेव उवागच्छइ) जहां पर कात्यायन गोत्री
स्कन्दक थे वहां गये । (उवागच्छिता) वहां जाकर उन्होंने खंदयं
कच्चायणस्स गोत्तं एवं वयासी) उन कात्यायन गोत्री स्कन्दक से ऐसा
कहा (खंदया) हे स्कन्दक आओ (सागयं) तुम्हारा स्वागत है कारण

आशंका अस्थाने छे कारण के गौतमस्वामीये अबु ने क्युं ते आगमव्यवहारी
होवाने कारणे क्युं छे कहेवाने लवार्थे ये छे के गौतमस्वामीये भगवान
महावीरने भुजे ये बात सासणी हुती के स्कन्दक आगार अवस्थाने त्याग
करीने अणुगार अवस्था अंगीकार करशे तेथी तेमना प्रत्ये प्रेम उत्पन्न थवाथी
अने तेनी ते अवस्था तरङ्ग प्रमोद उद्बलववाथी तथा महावीर प्रभुना ज्ञाना
तिथयने प्रकट करवाना उद्देश्यी, प्रभु वडे स्कन्दकना विषे ने शुभ बात पोतानी
पासे प्रकट करवामा आवी हुती ते बात स्कन्दकने कहीने प्रभु प्रत्ये तेनामां
माननी लागणी जगृत करवा भाटे गौतमस्वामी स्कन्दकनी सामे जय तेमां होष
बेपुं कंठ लागतु नथी तेथी “अवमुट्ठिता” उठीने “पञ्चुवगच्छइ”
गौतमस्वामी स्कन्दकनी पासे गया, “पञ्चुवगच्छिता” स्कन्दकनी पासे जयने
तेमणे “खंदयं कच्चायणस्सगोत्तं एवं वयासी” कात्यायन गोत्रना ते स्कन्दक ने
आ प्रभाणे कहु “खंदया” हे स्कन्दक पधारो “सागयं” तमाइं स्वागत हो

સ્વદયા ' સુસ્વાગતં સ્કન્દક ! હે સ્કન્દક ! અતિશયન શામનમાગમનં તવ પ્રમ
 નિર્ણયદેતુક્તવાત્ । ' અણુરાગય સ્વદયા ' અન્વાગત સ્કન્દક ! હે સ્કન્દક ! અનુ
 રૂપં તે ભાગમનમ્ કલ્પાણસ્ય ધિરધાતુ માયિત્યાત્, સાગયમણુરાગયં સ્વદયા '
 સ્વાગતાન્વાગત સ્કન્દક ! હે સ્કન્દક ! શોમનસ્વાનુરૂપસ્તપુવર્ત તવાગમનં, અથ
 શિવસુસ્વપ્રાપકત્વાત્ । ' સે પૂર્ણં તુમ સ્વદયા સાવસ્થીય નયરીય પિંગલપ્પ જામં
 નિર્યંટેઠં વેસાલિય સાવણ્ણ ણમવસેવં પુચ્છિય ' તન્નૂનં ત્વ સ્કન્દક ભાવસ્તાં

કિ મગધાન કે પાસમેં તુમ્હારા આના તુમ્હારે કલ્પાણના કારણ હુમા હૈ
 હસલિયે તુમ વહુત અચ્છે આયે । (સુસાગયં સ્વદયા) હે સ્કન્દક ! તુમ્હારા
 યહ આગમન વહુત હી અધિક ઘઘાઈ કે યોગ્ય થના હૈ ક્યોં કિ યહાં
 આને સે તુમ્હારે પ્રમોં કા નિર્ણય હો જાયગા અના પ્રમોં કે નિર્ણય કા
 હેતુ હોને સે તુમ્હારા યહ આગમન વહુત અધિક શોમાસ્પદ હુમા હૈ
 (અણુરાગય સ્વદયા) હે સ્કન્દક ! યહ તુમ્હારા આગમન ઓચિન હુમા હૈ
 ક્યોં કિ યહાં આને સે તુમ્હારા કલ્પાણ વહુત જલ્દી હો જાયેગા । (સાગય
 મણુરાગય સ્વદયા) હે સ્કન્દક ! યહ તુમ્હારા આગમન શોમનત્વ ઓર
 અનુરૂપસ્વ इन दोनों સે યુક્ત હૈ । ક્યોં કિ યહ તુમ્હેં શિવસુસ્વ કા
 પ્રાપક હૈ । અથ ગૌતમ (સ્કન્દક કે પ્રતિ જો પિંગલક નિર્ણયક ને પ્રમ
 કિયે હૈં ઓર યહ ઉનકે ઉત્તર દને મેં સર્વથા અસમર્થ રહા હૈ (હસ
 ધિત્વકા ઉત્તર સે ઘર્ણન કરતે હૈં (સે પૂર્ણં સ્વદયા સાવસ્થીય નયરીય પિંગલપ્પ
 જામં નિર્યંટેઠં વેસાલિયસાવણ્ણ ણમવસેવં પુચ્છિય) હે સ્કન્દક !

કાશ્ય કે ભગવાન મહાવીરની પાસેનુ તમારૂં આગમન તમારે માટે કલ્યાણકારી
 જ નીવડશે તમે બહી પધાર્યા તે બધુ ચાહુ કહુ " સુસાગય સ્વદયા "
 હે સ્કન્દક ! તમારૂં બહી જો આગમન થયું છે તે બધુ જ ખુશ થવા બેસુ
 બન્યુ છે કાશ્ય કે તમે બહી આવ્યા તેથી તમારા પ્રશ્નોના ધર્માર્થ જવાબ
 તમને મળશે પ્રશ્નોના નિર્ણય કરવાના હેતુ રૂપ હોવાથી તમારૂં આગમન
 શોભાસ્પદ બ કુ છે " અણુરાગય સ્વદયા " હે સ્કન્દક ! તમે બહી આવ્યા
 તે કીક જ થયુ છે કાશ્ય કે બહી આવવાથી તમારૂં કલ્યાણ થતી જ જડપથી
 થવાતું છે ' સાગયમણુરાગય સ્વદયા । " હે સ્કન્દક ! તમારૂં આગમન શોભા
 રૂપ અને અનુરૂપ (ઓચિન) બ કું છે કાશ્ય કે તે આગમન તમને આશ્વત
 મુખ આપવાના નીવડવાતું છે હવે ગૌતમસ્વામી સ્કન્દકને પિંગલક નિર્ણય
 પૂછેલા પ્રશ્નો અને તેમના જવાબો આપવાની તેમની અસમર્થતા ના નિષ્પત્તિ
 આ પ્રમાણે પૂછે છે સે પૂર્ણં તુમ સ્વદયા ! સાવધોવ નયરીય પિંગલપ્પ જામ
 નિર્યંટેઠં વેસાલિયસાવણ્ણ ણમવસેવં પુચ્છિય ' હે સ્કન્દક ! સાવસ્થી નયરીય

स्थाय क्षिपमेव प्रत्युपगच्छति, 'पञ्चुवगच्छित्ता' प्रत्युपगत्य 'जेणेव खंदए कच्चा-
यणस्स गोत्ते तेणेव उवागच्छइ' यत्रैव स्कन्दकः कात्यायनगोत्रस्त्रैवोपागच्छति
'उवागच्छित्ता खंदयं कच्चायनस्स गोत्तं एवं वयासी' उपागम्य स्कन्दकं कात्या-
यनगोत्रमेववादीत् 'हे खंदया' हे स्कन्दक ! आगम्यताम्, भगवत्समीपे
समागमनस्य कल्याणहेतुत्वात्, 'सागयं खंदया' स्वागतं स्कन्दक ! हे स्कन्दक !
तवागमनमत्रशुभमम्, भगवत्संपर्कस्य कल्याणकारकत्वादिति 'सुसागयं

सो इस प्रकार की आशंका यहां ठीक नहीं है । कारण कि गौतम ने जो
ऐसा किया वह आगम व्यवहारी होने के कारण से किया तात्पर्य कहने
का यह है कि भगवान के मुख से गौतम को यह ज्ञान हो ही चुका था कि
स्कन्दक अगार से अनगार अवस्थावाला बन जावेगा—अतः स्वयं राग-
वाले होने के कारण उसकी उस स्थिति के प्रति पक्षपात हो जाने से,
तथा महावीरप्रभु के ज्ञानानिश्चय को प्रकट करने के निमित्त प्रभु द्वारा
प्रतिपादित बात को स्कन्दक से कह कर उनके प्रति उसका बहुमान हो
इस अभिप्राय से गौतम का स्कन्दक के सामने जाना दोषावह नहीं
है । इसलिये (अञ्जुवुत्तिता) गौतम उठकर (पञ्चुवगच्छइ) स्कन्दक के
समक्ष गये । (पञ्चुवगच्छित्ता) स्कन्दक के समक्ष जाकर फिर वे (जेणेव
खंदए कच्चायणस्स गोत्ते तेणेव उवागच्छइ) जहां पर कात्यायन गोत्री
स्कन्दक थे वहां गये । (उवागच्छित्ता) वहां जाकर उन्होंने ने खंदयं
कच्चायणस्स गोत्तं एवं वयासी) उन कात्यायन गोत्री स्कन्दक से ऐसा
कहा (खंदया) हे स्कन्दक आओ (सागयं) तुम्हारा स्वाग है कारण

आशंका अस्थाने छे कारणु के गौतमस्वामीअे अेबु ने क्युं ते आगमव्यवहारी
होवाने कारणु क्युं छे कडेवाने लवार्थ अे छे के गौतमस्वामीअे लगवान
महावीरने भुअे अे वात सालणी डती के स्कन्दक आगार अवस्थाने त्याग
करीने अणुगार अवस्था अंगीकार करशे. तेथी तेमना प्रत्ये प्रेम उत्पन्न थवाथी
अने तेनी ते अवस्था तरङ्ग प्रभेद उद्भूतलवार्थी तथा महावीर प्रभुना ज्ञाना
तिथयने प्रकट करवाना उद्देश्यथी, प्रभु वडे स्कन्दकना विषे ने शुभ वात पोतानी
पासे प्रकट करवाना आवी डती ते वात स्कन्दकने कहीने प्रभु प्रत्ये तेनामां
माननी लागणी जगृत करवा भाटे गौतमस्वामी स्कन्दकनी सामे जय तेमां होष
अेबुं कंठ लागतु नथी तेथी “ अञ्जुवुत्तिता ” उहीने “ पञ्चुवगच्छइ ”
गौतमस्वामी स्कन्दकनी पासे गया, “ पञ्चुवगच्छित्ता ” स्कन्दकनी पासे जयने
तेमणे “ खंदयं कच्चायणस्सगोत्तं एवं वयासी ” कात्यायन गोत्रना ते स्कन्दक ने
आ प्रभाणे कहु “ खंदया ” छे स्कन्दक पधारो “ सागय ” तमाइं स्वागत हो

અર્થ સમર્થઃ કિં યન્મયા કથ્યતે ન અર્થ સમર્થ યુક્તઃ કિમ્ ? એવ ગૌતમ કથ નાનન્તરં સ્કન્દક કથયતિ—‘હંતા અસ્થિ’ સિ ‘હંતા અસ્થિ’ હંત અસ્તિ હંતેતિ સ્વીકારે, યશ્વયા કથિત તત્સર્વ સત્યમિતિ માવ । ‘તપર્ષં સે ચંદ્રણ કશ્યાયમસ્સ ગોષે મગ્ગં ગોયમ પવં ઘયાસી’—તત સ્વસ્થ મ સ્કન્દક કાત્યાયનગોત્રો મગ ઘન્તં ગૌતમમેવમવાદીત્—અથિતથાન—‘સે કે સે ણં ગોયમા’ હે ગૌતમ ! સ ક ણ્યઃ ‘તહારુવે જાણી ઘા તવસ્સી ઘા’ તથારૂપો જ્ઞાની ઘા તપસ્વી ઘા અસ્તિ ‘જે ણં તવ પસ અદ્દે મમ તાવ રહસ્સકદ્દે હવ્વ અક્કલાય’ યેન તુમ્યમેપોડયો મમ તાવત્ રહસ્ય કૃત શ્રીઘમાગ્ધ્યાતઃ, રહસ્યે પ્કાતે કૃત ઇતિ રહસ્ય કૃતઃ પ્રચ્છન્ન સંપાદિતો હૃદયે પ્વાધધારિતત્વાત્, ‘જઓ ણં તુમં જાનાસિ’ યતઃ સ્વસ્થ ત્વં

કહો સ્કન્દક ! જો મેં કહ રહા હું ઘહ યુક્ત હૈ ન ? હસ પ્રકાર ગૌતમ કે કહને પહ સ્કન્દક ને ડનસે કહા—“હંતા અસ્થિ” હાં યુક્ત હૈ । અર્થાત્ જૈસા આપ કહ રહે હૈ ઘહ સર્વથા સત્ય હૈ—હા એની હી ઘાત હૈ । “હંતા,, ઘહ શબ્દ સ્વીકાર અર્થમેં આયા હૈ । અતઃ જો તુમ કહતે હો ઘહ સમ સત્ય હૈ । ગૌતમ દ્વારા હસ પ્રકારકી પરોક્ષાર્થ કી ઘાત સુનકર સ્કન્દક કે હૃદય મેં ઘઢા આશ્ચર્ય હુઆ ઓર પહ તુરત બોલે કિ (સે કે સે ણં ગોયમા તહારુવે જાણી ઘા) હૈ ગૌતમ । ઘહ કૌન પેસા તથારૂપ જ્ઞાની (ઘા) અથવા (તવસ્સી) તપસ્વી હૈ (જે ણં તવ પસ અદ્દે મમ તાવ રહસ્સકદ્દે હવ્વ અક્કલાય) જિસને તુમસે હસ મેરે શુભ અર્થકો શ્રીઘ કહ દીયા હૈ । (રહસ્ય કૃત રહસ્યે કૃતઃ) ઇતિ રહસ્ય કૃતઃ શુભ પ્રચ્છન્ન સંપાદિત કયોં કિ અમીતક ઘહ અર્થ હૃદય મેં ધારિત હોમા હૈ । ઘાહર પ્રકાશિત નહીં કિયા ગયા હૈ । (જઓ ણં તુમં જાનાસિ) કિ જિસસે

શ્રાવ્યો જી કે નહીં ? ત્યારે સ્કન્દકે તેમને કહ્યું, ‘હંતા અસ્થિ’ હે ગૌતમ । તમારી ઘાત તદન શ્રાવ્યો છે ‘હંતા’ પર જાહે સ્વીકારના અર્થમાં વપરાયું જી તેથી જો ઘાત નહીં ઘાય છે કે ગૌતમની ઘાત શ્રાવ્યો છે તેમ સ્કન્દક સ્વીકારે છે આ રીતે ગૌતમ વડે પોતાની હૃદયમત ઘાત સાબળીને સ્કન્દકના આશ્ચર્યને પાર ન રહ્યો. તેઓ બોલી ઉઠ્યા “સે કે સે ણં ગોયમા । તહારુવે જાણી ઘા તવસ્સી ગૌતમ ! જોબો જ્ઞાની અથવા તપસ્વી કેવું છે કે “જ ણં તવ પસ અદ્દે મમ તાવ રહસ્સકદ્દે હવ્વ અક્કલાય” જેમણે તમારી પાસે ખાશ આ શુભ અર્થ (પ્રશ્નો) ને આટલી બધી બહપથી પ્રકટ કર્યો છે ? રહસ્ય કૃતઃ ઇતિ રહસ્ય કૃતઃ (શુભ એટલે કે છુપા) સ્કન્દકે પોતાના વિચારો કેાંઈની પાસે પ્રકટ કર્યા ન હતા. હજી તે વિચારો ને તેમણે મનમાં જ રાખેલા હતા, સ્કન્દકના પ્રશ્નોનો બાવાજ

નગર્યાં પિંગલકેન નામ નિર્ગ્રંથકેન વૈગાલિકશ્રાવકેણેમમાક્ષેપં પૃષ્ટઃ, કિં પૃષ્ટવા
નિત્યાહ-‘માગહા’ ઇત્યાદિ। ‘માગહા’ હે માગધ ! સ્કન્દક ! ‘કિં સ
અંતે લોણ અણંતે લોણ’ કિં સાન્તઃ લોકઃ, અનંતો વા લોકઃ, ‘તં ચેવ’ તદેવ
=પિંગલકનિર્ગ્રંથસ્કન્દકવિષયકઃ સર્વોઽપિ પાઠઃ સંગ્રાહ્યઃ। તથાહિ-કિમ્-સાન્તઃ
જીવઃ અનન્તઃ જીવઃ ?, સાન્તા સિદ્ધિઃ ?, અનન્તા સિદ્ધિઃ સાન્તઃ સિદ્ધિઃ, અનન્તઃ
સિદ્ધિઃ? કેન વા મરણેન મ્રિયમાણો જીવો વર્ધતે વા હીયતે વા?” ઇત્યાદિ। ‘જેણેવ
ઈહં’ યજ્ઞેવ ઇહ યજ્ઞેદં ભગવતો મહાવીરસ્ય સમવસરણમ્ ‘તેણેવ’ તત્ત્રૈવ ‘હ્રવ્-
માગણ’ શીઘ્રમાગત ઇતિ। ‘સે જૂણં સ્વદયા’ તદ્ નૂનં સ્કન્દક ‘અદ્દે સમદ્દે’

શ્રાવસ્તી નગરી મેં પિંગલ નિર્ગ્રંથ ને જો કિ અગદાન મહાવીર પ્રશ્ન કા
ભક્ત હૈ-उनके वचनोंपर ही जिसके हृदयमें अगाधश्रद्धा है-तुमसे इस
प्रकार के प्रश्न पूछे हैं न, कि “ मागहा ,, हे मागध स्कन्दक। “ किं स
अन्ते लोण अणंते लोण ” लोक सान्त है अथवा लोक अनन्त है ?
“ तं चेव ” यह पद यह प्रकट करता है कि पिंगलक निर्ग्रन्थ और स्क-
न्दक के विषय का समस्त ही पाठ यहां ग्रहण कर लेना चाहिये-जो
इस प्रकार से है- क्या जीव सान्त है अथवा जीव अनन्त है ? सिद्धि
सान्त है अथवा सिद्धि अनन्त है ? सिद्ध सान्त है अथवा सिद्ध अन-
न्त है, किस मरण से मर कर जीव बढ़ता है तथा घटता है ? इत्यादि।
“ जेणेव इहं ” जहां भगवान महावीर का यह समवसरण है “ तेणेव ”
वहीं पर “ ह्रव् आगण ” तुम आये हो। ‘ से जूणं स्वदया ! अददे समददे ’

રહેતા મહાવીરના અનુયાયી પિંગલક નિર્ગ્રંથે તમને આ પ્રમાણે પ્રશ્નો પૂછ્યા હતા
“ માગહા ! ” હે માગધ ! (મગધ દેશ નિવાસી હે સ્કન્દક !) “ કિં સ
અંતે લોણ અણંતે લોણ ? ” લોક સાન્ત (અન્ત સહિત-અન્તવાળો) છે કે અનન્ત
(અતરહિત-અન્ત વગરનો) છે ? “ તં ચેવ ” આ પદવડે એમ બંધ વવામાં આવ્યું
છે કે પિંગલક નિર્ગ્રંથવડે સ્કન્દકને પૂછાયેલા સઘળા પ્રશ્નો અહીં ગ્રહણ કરવા
જોઈએ જે પાઠ આ પ્રમાણે છે શુ જીવ અન્તસહિત છે કે અન્તરહિત છે ? સિદ્ધિ
સાન્ત છે કે સિદ્ધિ અનન્ત છે ? સિદ્ધ સાન્ત છે ? કે સિદ્ધ અનન્ત છે ? કયા
મરણથી મરવાથી જીવ સત્તાર વધારે છે અને કયા મરણથી મરવાથી જીવ
સત્તાર ઘટાડે છે ? આ પ્રશ્નોના ઉત્તર વિષે તમારા મનમાં શંકા, કંખા વગેરે
ઉદ્ભવવાથી તેના યથાર્થ ઉત્તર બાજીવાને માટે “ જેણેવ ઇહ ” જ્યાં ભગવાન
મહાવીર સ્વામીનું સમવસરણ છે “ તેણેવ ” ત્યાં આગળજે ‘ હ્રવ્ આગણ ’ તમે
આવ્યા છો “ સે જૂણં સ્વદયા ! અદદે સમદદે ” હે સ્કન્દક ! કહો મારી વાત

કેવલ જ્ઞાનવાન અતઃ 'ત્રીય પચ્ચુપ્પદમણાગયધિયાણપ' અતીત પ્રત્યુત્પન્ના-
નાગતવિજ્ઞાપક અતીતા નાગતર્થસ્માનપદાર્થવિષયજ્ઞાતેત્યર્થઃ, એવંત' ત્રિકાલ જ્ઞાન
વાનપિ એવાદ્યઃ સમયેત્તપ્રાહ 'સમ્બણ્ણુ' સર્વજ્ઞ ત્રીકાલિકસર્વપદાર્થવિષયક
જ્ઞાનવત્ત્વાત્ 'સમ્બદરિસી' સર્વદર્શી સકલપદાર્થના કરતલગતમુક્તાફલત્વાદ્યા
ર્થકત્ત્વાત્ । 'જે નં મમ एस अट्टे तव ताव रहस्सकडे हव्व अक्खाप' 'येन मम

“ત્રીયપચ્ચુપ્પદમણાગયધિયાણપ” , મૂત, વર્તમાન ઓર અધિષ્ઠાત્ કાલ-
કી સય યાતોં કો જાનતે હ । એકદેશ કી અપેક્ષા સે ત્રિકાલ જ્ઞાનવાન
મી એસા હો સકતા હે અતઃ યે એસે નહીં હૈં કિન્તુ “સમ્બણ્ણુ” સર્વજ્ઞ
હે—ત્રીકાલિક સર્વ પદાર્થોં કો જાનનેવાલે જ્ઞાન સે યુક્ત હૈં । તથા
“સમ્બદરિસી” , સકલપદાર્થોં કે કરતલગત મુક્તાફલ કી તરહ સાક્ષાત્
દર્શક હોને સે યે સર્વદર્શી હૈં । “જેનં મમ एस अट्टे तव रहस्सकडे
हव्वं अक्खाप” , એસે મગવાન ને મુક્ત સે આપકા યહ રહસ્યફૂલ અર્થ
સ્પષ્ટ શીઘ્ર કહા હે, અર્થાત્ જિસ સમય પિંગલક નિમ્નન્યને તુમસે પ્રશ્ન
કિયે ઓર તુમને અપને મન મેં જો એસા ધિચાર કિયા વહ સબ વસી
સમય ઉનકે જ્ઞાન મેં વર્ણન મેં પ્રતિચિન્ન કી તરહ સ્પષ્ટ જાણક ગયા હૈં
યહ યાત (હવ્વ) યહ પદ યતલાતા હે । અતઃ હસીસે હે સ્કન્દક મૈં હસે
જાન સકાહુ । તાત્પર્ય યહ કિ હે સ્કન્દક । મેરે ધર્મોંવાર્ય ધર્મોંપદેશક
અહંન્ જિન કેવલી મગવાન્ મહાવીર હૈં યે સમુત્પન્ન કેવલ જ્ઞાન આદિ સે

ધધિયાણપ” મૂત વર્તમાન અતે અધિષ્ઠાજની બધી વાતો બહુ છે (ત્રિકા
ળજ્ઞાની પણ બેકે હૃદયે તે બેવા જ હોય છે પણ બધી ત્રિકાળજ્ઞાનની
વાત નથી બે બતાવવા માટે “સમ્બણ્ણુ” તથા “સમ્બદરિસી” વિશેષણોને
પ્રયોગ કર્યો છે “સમ્બણ્ણુ” તેજો સર્વજ્ઞ છે ત્રિકાળ સ બધી તમામ રૂપી અને
અરૂપી પદાર્થોનું યથાર્થ જ્ઞાન બતાવે છે તથા “સમ્બદરિસી” સર્વદર્શી છે કાશર્મા
સ્કેલા મુક્તા જ્ઞાની જેમ તમામ પદાર્થોને બેઈ શકતા હોવાથી તેજો સર્વદર્શી છે
“જેનં મમ एस अट्टे तव ताव रहस्सकडे हव्व अक्खाप” બેવા તે બજવાને
આપના તે સ્કન્દકૃત (શ્રુત) વિચારે મારી પાસે તુરંત જ પ્રકટ કર્યા છે
બેટલે કે પિંગલક નિર્જાને તમને બ્યારે પ્રશ્નો કર્યા, અને તમે તમારા મનમાં
જે વિચાર કર્યો તે ત્યારે જ હપણમાં જેમ પ્રતિજિબ દેખાત તેમ તેમના
જ્ઞાનમાં સ્પષ્ટ રીતે દેખાયા બેજ વાત ‘હવ્વ’ પદ બતાવે છે કે સ્કન્દક ।
તેમની પાસેથી હુ તે બાબી શક્યો છુ તાત્પર્ય બે છે કે કે સ્કન્દક । મારા
ધર્માવાય, ધર્મોપદેશક, બહુ ત, જિન, કેવલી બગવાન મહાવીર છે તેજો

જાનાસિ, હે ગૌતમ કાસ્તિ एतादृशो ज्ञानी तपस्वी वा यो हि मम हृदयान्तनि-
हितमप्यर्थं ज्ञात्वा तुभ्यं प्रकाशितवान् येन त्वमपि ममान्तर्विचारितं सम्यगवगत्य
मां कथयसीति भावः । ‘ तएणं से भगवं गोयमे खंदयं कच्चायणस्सगोत्तं एवं
वयासी ’ ततः खलु स भगवान् गौतमः स्कन्दकं कात्यायनगोत्रमेवमवादीत्
‘ एवं खलु खंदया ’ एवं खलु हे स्कन्दक ? ‘ मम धम्मायरिए ’ मम धर्माचार्यः,
‘ समणे भगवं महावीरे ’ श्रमणो भगवान् महावीरः ‘ उत्पन्ननाणदंसणधरे ’
उत्पन्नज्ञानदर्शनधरः ‘ अरहा ’ अर्हन् केवलज्ञानकेवलदर्शनार्हत्वात्, ‘ जिणे ’
जिनः रागादीनां जेवृत्वात् ‘ केवली ’ केवली असहाय ज्ञानवत्त्वात्, यतो यं

તુમ જાનતે હો । તાત્પર્ય કહને કા યહ હૈ કિ ગૌતમ સે સ્કન્દક કહ
રહા હૈ કિ હે ગૌતમ । એસા જ્ઞાની અથવા તપસ્વી કૌન હૈ કિ જિસને
મેરે હૃદયસ્થિત અર્થ કો બી જાન કર તુમ સે પ્રકાશિત કિયા હૈ કિ
જિસસે તુમ બી મેરે અન્તર્વિચારિત અર્થકો અચ્છી તરહ જાનકર મુદ્ધ
સે કહ રહે હો । સ્કન્દક કી હસ પ્રકાર સે વાત કો સુન કર ગૌતમ ને
ઉસ કાત્યાયન ગોત્રી સ્કન્દક સે કહા સુનો સ્કન્દક મૈં તુમ્હે બતાતા હૂં
યહાં (મમ ધમ્માયરિણ) મેરે ધર્માચાર્ય (સમણે ભગવં મહાવીરે) શ્રમણ
ભગવાન મહાવીર વિરાજમાન હૈં વે (ઉત્પન્નનાણદંસણધરે) ઉત્પન્ન હુણ જ્ઞાન
ઔર દર્શન કે ધારી હૈં (અરહા) અર્હન હૈં અર્થાત્ ઉત્તન્ન કેવલ જ્ઞાન ઔર
કેવલ દર્શક કેધારી વે હસ લિયે હૈં કિ વૈં ઉનકે યોગ્ય હૈં (જિણે) ઉનકે
યોગ્ય વે હસ લિયે હૈં કિ ઉન્હોંને અપની આત્મા સે રાગ દ્વેષ આદિકોં જીત
લિયા હૈ । રાગદ્વેષ આદિ ઉન્હોંને જીત લિયે હૈં હસ કારણ વે “ કેવલી,,
અસહાય જ્ઞાનવાલે હોને સે કેવલી હૈ—કેવલજ્ઞાન શાલી હૈં ” હસી લિયે

આ પ્રમાણે છે હે ગૌતમ । એવો જ્ઞાની અથવા તપસ્વી કોણ છે કે જેણે મારા
મનોગત વિચારોને બાહ્યીને તમારી પાસે પ્રકટ કર્યા છે. જેથી તમે પણ
મારા મનોગત વિચારોને બરાબર બાહ્યી ગયા છો ? સ્કન્દકનો આ પ્રકારનો
પ્રશ્ન સાંભળીને ગૌતમસ્વામીએ તેને કહ્યું, હે સ્કન્દક ! “ મમ ધમ્માયરિણ ”
મારા ધર્માચાર્ય, “ સમણે ભગવં મહાવીરે ” શ્રમણ ભગવાન મહાવીર અહીં
બિરાજમાન છે. “ ઉત્પન્નનાણદંસણધરે ” તેઓ ઉત્પન્ન થયેલા કેવલજ્ઞાન
અને દર્શનના ધારક છે (અરહા) તેઓ અર્હંત છે એટલે કે- તેઓ ઉત્પન્ન
કેવલજ્ઞાન અને કેવલદર્શનના ધારક એ માટે છે કે તેઓ તેને માટે યોગ્ય છે
“ જિણે ” તેઓ જિન છે કારણ કે તેમણે રાગદ્વેષ વગેરેને છૂટી લીધા છે.
“ કેવલી ” તેઓ કેવળી છે કેવલજ્ઞાની છે તેથી તેઓ ત્રીય પચ્છુપ્પન્નમણાગ-

मानसिक्या पर्युपासनया इति सप्राणम् । गौतमेन कथितम्—‘अहामुह देवानु-
पिया’ यथासुखं देवानुपिया ! हे स्कन्दक ! यथा मयस्मिन् रोचते । ‘मा पडि
बन्ध करेह’ मा प्रतिपन्धं कुरुत एतदर्थे विलम्बं मा कुरुत, ‘तएण से भगव गोपमे
खदए ण कच्चायणस्स गोचे णं सद्धिं जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव पद्दारेत्थ
गमणाए’ ततः खलु स भगवान् गौतम स्कन्दकेन कात्यायनगोत्रेण सार्द्धं यत्रैव
भ्रमणो भगवान् महावीर तत्रैव प्राधारयत् गमनाय गन्तु प्रवृत्त ॥ सू० १० ॥

मूलम्—तेण कालेण तेण समयण समणे भगव महावीरे
धियद्वभोई याधि होत्था । तएण समणस्स भगवओ महावी
रस्स धियद्वभोइस्स सरीरय ओराल सिंगार कल्लाण सिव
घन्न मगल सस्तिरीय अणलकियविभूसिय, लक्खणवज्जण
गुणोववेय सिरीए अईव अईव उवसोभेमाणे चिद्वइ ।
तएणं से खदए कच्चायणस्सगोत्ते समणस्स भगवओ

का समय हुआ है अर्थात् तीन प्रकार की कायिक वाचिक मानसिक
पर्युपासना से । स्कन्दक का ऐसा हार्दिक अभिप्राय जानकर गौतम ने
उनसे कहा (अहामुह देवानुपिया) जैसा आपको रुचे वैसा करो
(मा पडिबन्धं करेह) परन्तु अच्छे काम में डील करना उचित नहीं है ।
(तएणं से भगवंत गोपमे खदएणं कच्चायणस्स गोचेण सद्धिं जेणेव समणे
भगव महावीरे तेणेव पद्दारेत्थ गमणाए) इस प्रकार जब गौतम कह चुके
तब वे भगवान् गौतम स्वयं कात्यायन गोत्र वाले स्कन्दक के साथ जहाँ
भ्रमणभगवान् महावीर विराजमान थे उस तरफ प्रस्थित हुए ॥ सू० १० ॥

सूत्र पाठ अहम्भु करवाने छे जोरछे के भन, वयन जने कायाधी आपछे सज
वान भट्टावीरनी पर्युपासना (सेवा) करीजे जेवो स्कन्दके आशय प्रकट
थयो छे स्कन्दके जेवी हार्दिक छिन्हा आपछीने गौतमे तेभने कहुं “अहामुह
देवानुपिया के देवानुपिया ! आपने जेभ सुअ उपजे तेभकथि, “मा पडिबन्धं
करेह सारा काममा बिलज करवो नहीं ‘तएणं से भगव गोपमे खदएणं कच्चा
यणस्स गोचेणं सद्धिं जेणेव समणे भगव महावीरे तेणेव पद्दारेत्थ गमणाए’ आ
प्रभावे कहीने भगवान् गौतम पोते के कात्यायन गोत्रीय स्कन्दके साथ
छहने भ्रमणभगवान् महावीर जहाँ विराजता कता त्यां जना उपडया ॥ सू० १० ॥

‘એપોઽર્થસ્તવ તાવત્ રહસ્યકૃતઃ શીઘ્રમાख्याતઃ, ‘જઓ ણં અહં જાણામિ સ્વંદયા’
યતઃ સ્વહુ અહં જાનામિ સ્કન્દક ! હે સ્કન્દક ! અસ્તિમે ધર્માચાર્યો ધર્મોપદેશ-
કોઽર્હન જિનઃ કેવલી ભગવાન્ મહાવીરઃ સમુત્પન્નકેવલજ્ઞાનાદિમાન્ યસ્ત-
યાન્તઃ કરુણચિચારિતમપ્યર્થ જાનાતિ તેન મહામેપોઽર્થ કથિતસ્તસ્માત્કારણાદહં
જાનામીતિ ભાવઃ ।

‘તર્ણં સે સ્વંદણ કચ્ચાયણસ્સ ગોત્તે ભગવં ગોયમં એવં વયાસી’ તતઃ સ્વહુ
સ સ્કન્દકઃ કાત્યાયનગોત્રો ભગવંતં ગૌતમમેવમવાદીત્ । ગચ્છામો ણં ગોયમા’
ગચ્છામઃ સ્વહુ હે ગૌતમ ! ‘તવ ધમ્માચારિયં ધમ્મોવદેસગં’ ધર્માચાર્ય ધર્મોપદે-
શકમ્ ‘સમણં ભગવં મહાવીરં વંદામો નમંસામો જાવ પજ્જુવાસામો શ્રમણં ભગ-
વન્તં મહાવીરં વદામો નમરયામો યાવત્પર્યુપાસ્યામઃ, યાવત્પદેન-તિવિદ્દાણ કાહ-
યાણ વાહ્યાણ માણસિયાણ - પજ્જુવાસણાણ’ ત્રિવિધયા કાયિકયા વાચિકયા
યુક્ત હૈ । વે તુમ્હારે મન મેં ચિચારી હુઈ વાત કો ખી જાનતે હૈં ।
ઉન્હોને મુદ્ધા સે યહ સ્વ કહા હૈં હિસ કારણ મેં હિસ અર્થ કો જાન ગયા
હું । (તર્ણ) ગૌતમ કી હિસ પ્રકાર કી વાત કો સુનને કે વાદ મેં (સે
સ્વંદણ) ઉસ સ્કન્દક ને જો કિ (કચ્ચાયણસ્સ ગોત્તે) કાત્યાયન ગોત્રી
થે (ભગવં ગોયમં એવં વયાસી) ભગવાન ગૌતમ સે હિસ પ્રકાર કહા-
(ગચ્છામો ણં ગોયમા) હે ગૌતમ ? ચલો ચલે (તવ ધમ્માચારિયં ધમ્મોવદે-
સય સમણં ભગવં મહાવીરં વંદામો નમંસામો જાવ પજ્જુવાસામો)
(તુમ્હારે ધર્માચાર્ય ધર્મોપદેશક શ્રમણ ભગવાન મહાવીર કે પાસ
ઉન્હેં વંદના કરે નમસ્કાર કરે યાવત્ ઉનકી પર્યુપાસના કરે । યહાં
(યાવત્) પદસે (તિવિદ્દાણ કાહ્યાણ, માણસિયાણ પજ્જુવાસણાણ) હિસ પાઠ

કેવળ જ્ઞાન અને કેવળેદર્શનથી યુક્ત છે. તેઓ તમારા મનની વાત પણ જાણી
શકે છે, તેમણે મને એ બધી વાત કહી છે તેથી જ હું તમારા મનોગત
પ્રશ્નો જાણી શક્યો છું. “તર્ણ” ગૌતમની તે પ્રકારની વાત સાંભળીને “સે સ્વંદણ
કચ્ચાયણસ્સ ગોત્તે કાત્યાયન ગોત્રી સ્કન્દકે” ભગવ ગોયમં એવં વયાસી” ભગવાન
ગૌતમને આ પ્રમાણે કહ્યું “ગચ્છામો ણ ગોયમા ।” હે ગૌતમ આલો “તવ
ધમ્માચારિય ધમ્મોવદેસય સમણ ભગવ મહાવીરં વદામો નમંસામો જાવ પજ્જુવા-
સામો” તમારા ધર્માચાર્ય ધર્મોપદેશક, શ્રમણ ભગવાન મહાવીર પાસે
આપણે જઈએ અને તેમને વંદન નમસ્કાર કરીએ અને ત્રણ પ્રકારે (કાયિક,
વાચિક અને માનસિક) એ ત્રણ પ્રકારે તેમની પર્યુપાસના કરીએ અહીં જાવ
(યાવત્) પદથી “તિવિદ્દાણ-કાહ્યાણ, વાહ્યાણ, માણસિયાણ પજ્જુવાસણાણ” આ

कात्यायनगोत्र भ्रमणस्य भगवतो महावीरस्य व्यावृत्तमोजिनः शरीरकम् उदार
यावद्वीवातीवोपशोभमानं पश्यति दृष्ट्वा हृष्टवृष्टचित्तानन्दितः प्रीतमनाः परम-
सौमनस्यितः हर्षवशविसर्पद् हृदयो यत्रैव भ्रमणो भगवान् महावीरस्तत्रैवापाग-
च्छति उपागत्य भ्रमण भगवत्तं महावीरं भिः—कृत्वा आश्लिष्य प्रश्लिष्य करोति
पाषत्पर्युपास्ते । स्कन्दक ! इति भ्रमणो भगवान् महावीर स्कन्दक कात्यायन
गोत्रमेवमवादीत् ॥ सू-११ ॥

लक्षणों से, व्यञ्जनों से एवं गुणों से युक्त था । उस समय उनका वह
शरीर अपनी शोभा से बहुत अधिकशोभित हो रहा था । (तब से
खंडए कच्चापातस गोत्रे समणस्स वियद्वमोहस्स सरीरयं ओराल जाव
अईव अईव उयसोमेमाण पासइ) कात्यायन गोत्रीय स्कन्दक ने व्यावृ-
त्तमोजी भ्रमण भगवान् महावीर क उस उदार आदि विशेषणों से युक्त
शरीर को उगों ही देखा । तो “ पासिप्ता ” देखकर हृष्टवृष्टचित्तमाणदिए
वह बहुत हर्षित हुआ, बहुत सतुष्ट हुआ और अत्यन्त आनंदयुक्त मन
वाला हुआ ! (पीइमणे परमसोमणस्सिये, हरिस्स वसविसप्पमाणहियए
जेणेव समणे भगव महावीरे तेणेव उवागच्छइ) तथा उसके मन में
बहुत गहरा उनके प्रति प्रेम जग उठा । उसका मन अत्यन्त सुन्दर बन
गया । हर्ष के वश से उसका हृदय उछलने लगा । इस तरह की स्थिति
वाला बना हुआ वह जहां भ्रमण भगवान् महावीर विराजमान थे वहां
पहुँचा । (उवागच्छिप्ता समण भगवं महावीरं तिकलुत्तो आवाहिण

अन्योन्यं अने भुल्लोधी भुक्ता इतु भगवाननु शरीरं सुन्दरती सौंदर्यं अति
शय शोभायमानं वायतु इतु (वरणं से लक्ष कच्चापातस गोत्रे समणस्स
भगवतो महावीरस्स वियद्वमोहस्स सरीरयं ओराल जाव अईव अईव उयसोमेमाण
पासइ) त्पार जाइ कात्यायन गोत्रना ते स्कन्दके व्यावृत्त मोहो अभय भगवान्
महावीरनु उदार यावत् अतीव शोभायमान शरीरं नेयु (पासिप्ता) ते
शरीरं देखेने (हृष्टवृष्ट चित्तमाणदिए) तेना मनमां देखे देखे देखे, तेने
स तोय देखे अने तेना आनइने पार न देखे (पीइमणे परमसोमणस्सिये)
हरिस्स वसविसप्पमाणहियए जेणेव समणे भगवमहावीरे तेणेव उवागच्छइ) तेना
मनमा तेमना प्रत्ये देखे न उठट प्रेम व्यअये। तेनु मन देखे न सुइर
अनी गयु आनइने तेनु सुइय नाकी उडयु आ शीते अत्यन्त देखे साथे
ते भगवान् महावीर व्या विरजमान इता तथा पछेअया (उवागच्छिप्ता
समण भगव महावीरं तिकलुत्तो आवाहिण पवाहिण करेइ) त्या अने तेमने

महावीरस्स वियट्ठभोइस्स सरीरयं ओरालं जाव अईव अईव
उवसोभेमाणं पासइ पासित्ता हट्टतुट्ट चित्तमाणंदिए पीइमणे
परमसोमणस्सिए हरिसवसविसप्पमाणाहियए जेणेव समणे
भगवं महावीरं तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्तासमणं भगवं
महावीरं तिवखुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेइ जाव पज्जुवा-
सइ । खंदयाइ समणे भगवं महावीरे खंदयं कच्चायणस्स
गोत्तं एवं वयासी ॥ सू० ११ ॥

छाया—तस्मिन् काले तस्मिन् समये श्रमणो भगवान् महावीरो व्यावृत्त-
भोजी चाप्यासीत् । ततः खलु श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य व्यावृत्तभोजिनः
शरीरकमुदारम् शृङ्गारम् त्रिवं धन्यं मागल्यं सश्रीरम् अनलंकृतभूषितं लक्षण
व्यञ्जनगुणोपपेतं श्रियाऽतीवातीवोपशोभमानं तिष्ठति । ततः खलु स स्कन्दकः

सूत्रार्थ—(तेणं कालेणं तेणं समएणं) उस काल में और उस
मय में (समणे भगवं महावीरे वियट्ठभोई यावि होत्था) श्रमण
भगवान् महावीर व्यावृत्तभोजी प्रासुक निर्दोष आहार करनेवाले थे । (तएणं
समणस्स भगवओ महावीरस्स वियट्ठ भोइस्स सरीरयंत ओरालं सिंगारं
कल्लाणं सिव धन्नं मंगलं सरस्सरीयं अणलंकियविभूसियं लक्खणवज्जण-
गुणोववेय सिरीए अईव अईव उवसोभेमाणं चिट्ठह) व्यावृत्तभोजी उन श्रम-
ण भगवंत महावीरका शरीर उदार, शृङ्गार से युक्त किया जैसा, कल्याण
रूप, शिव रूप, धन्य, मंगलरूप, अलंकारोंके बिना भी शोभित, समस्त

“ तेण कालेण ” धियादि

सूत्रार्थ—(तेण कालेण तेण समएण) ते क्षणे अने ते समये (समणे
भगवं महावीरे वियट्ठभोई यावि होत्था) श्रमण भगवान् महावीर, व्यावृत्त भोजी
होता—अपेक्षणीय आहार—विशुद्ध आहार—उत्तम होता । (तएण समणस्स भगवओ
महावीरस्स वियट्ठभोइस्स सरीरयं ओरालं सिंगार कल्लाण सिव धन्नं मंगलं
सस्सरीयं अणलंकियभूसियं लक्खणवज्जणगुणोववेय सिरीए अईव अईव उव-
सोभेमाणे चिट्ठह) व्यावृत्त भोजी ते श्रमण भगवान् महावीरनु शरीर उदार
आभूषण वगेरे शृङ्गारशी रक्षित होता छता पणु शृङ्गारशी युक्त होय तेवु,
इत्याणु स्वयं, शिवय, भगवय, अतिशय सुंदर, समस्त लक्षणोपय,

स्यात् शृंगारमिव शृंगारम् अतिशयितशोभासम्पन्नमित्यर्थं आभरणं शृङ्गारं
 विनैव भगवतः शरीरं स्वामाविकशोभासम्पन्नमेव मनवीति भावः । 'कल्लारं'
 कल्याणम् कल्याणस्वरूपम् 'सिखं' शिवम् शिवमनुपद्रवं निरुपद्रवस्वरूपम्, 'घनं'
 घन्यम् प्रशंसायुक्तम् 'मंगलम्' मंगल्यम् मंगलस्वरूपम् 'सस्तिरीयं' समीकं
 लोकोत्तरशोभायुक्तम् 'अणलंकियविमूषिय' अनलंकृतविमूषितम् मुकुटादिभिः
 अलंक्रियते वस्त्रादिभिर्विमूष्यते प्रकृते चोभयोर्निषेधात् अनलंकृतविमूषितम्,
 यद्वा-अनलंकृते=अलङ्कारवर्जितेऽपि विमूषितं=विमूषासम्पन्नम् अतिशयसुन्दर-

शरीरं ओराल उदार प्रधान था । सिंगारं अलङ्कार आदि से कृत जो
 शोभा उस शोभा के संबंध से शृंगार की तरह वह शरीर शृंगार
 वाला जैसा था । अर्थात् शृंगार से युक्त होने पर जो शोभा होती है
 वैसी शोभा भगवान् के शरीर की थी । तात्पर्य यह कि आभरण आदि
 शृंगार के बिना भगवान् का शरीर स्वामाविक शोभा से संपन्न था ।
 क्योंकि भगवान् का शरीर स्वभावतः प्रारम्भ से ही शोभा संपन्न होता
 है । (कल्लारं) भगवान् का वह शरीर कल्याण स्वरूप था । कारण
 कि भगवान् स्वयं कल्याणस्वरूप होते हैं । 'सिखं' भगवान् का वह शरीर
 संकीर्ण रक्षक होने के कारण निरुपद्रव स्वरूप था । (घनं) प्रशंसा युक्त
 होने के कारण भगवान् का शरीर घन्यरूप था । (मंगलं) शिवसुखदाता
 होने से अथवा पापों का नाशक होने से भगवान् का शरीर मंगलरूप
 था । (सस्तिरीयं) अलौकिक शोभा से संपन्न होने के कारण भगवान्
 का शरीर लोकोत्तर (अपार्षिण) शोभावाला था । (अणलंकियविमूषिय)
 शरीर की शोभा अलङ्कारों से विशेष हो जाती है परन्तु भगवान् के

शरीर 'ओराल (उदार सीधी सुंदर) कृत 'सिंगार' शृंगार की सुंदर
 शरीर के सुंदर होने से वे सुंदर भगवान् शरीर लालत कृत
 ओराल भगवान् शरीर ओराल लक्ष्मी शोभाभंगान कृत के व्यापकता पर
 शृंगार विना पक्ष ते अतिशय सुंदर कृत 'कल्लारं' भगवान् पाते
 के कल्याण स्वरूप को है तेही तेमनु शरीर कल्याण स्वरूप कृत "सिखं"
 भगवान् लक्षणता लोकोत्तर रक्षा करने के लिये तेही तेमनु शरीर इसके लक्षण
 भाटे निरुपद्रव रूप कृत 'घनं' प्रशस्त को जाने ली है ते शरीर घन्यरूप
 कृत "मंगलं" शिवसुखदाता को लक्ष्मी अथवा पापों नाशक को लक्ष्मी
 भगवान् शरीर मंगलरूप कृत "सस्तिरीय" अलौकिक शोभावाला को लक्ष्मी
 भगवान् शरीर लोकोत्तर (अपार्षिण) शोभा वाला कृत 'अणलंकिय विमू
 षिय' शरीर की शोभा अलङ्कारों से विशेष हो जाती है परन्तु भगवान् के

ટીકા—‘ તેણં કાલેણં તેણં સમણં સમણે ભગવં મહાવીરે વિચટ્ઠમોઈ યાવિ હોત્થા ’ તરિમન્ કાલે તસ્મિન્ સમયે શ્રમણો ભગવાન્ મહાવીરો વ્યાવૃત્તમોજી ચાપ્યમ્ભવત્ ‘ વિચટ્ઠમોઈ ’ વ્યાવૃત્તમોજી—વ્યાવૃત્તમ્—અનેષણીયાન્નિવૃત્તમ્ એષણી-યમ્ આહારં મુદ્ધક્તે યઃ સ વ્યાવૃત્તમોજી=વિશુદ્ધાહારકારક इत्यर्थः । ‘ તણં સમણસ્સ ભગવઓ મહાવીરસ્ય વિચટ્ઠમોઈસ્સ ’ તત્ સ્વલ્પ શ્રમણસ્ય ભગવતો મહા-વીરસ્ય વ્યાવૃત્તમોજિન વિશુદ્ધાહારિણઃ ‘ સરીરયં ઓરલં ’ શરીરકમુદારમ્, ઉદારં પ્રધાનમિત્યર્થઃ ‘ સિંગારં ’ શૃંગારમ્ શૃંગારોઽલંકારાદિકૃતા શોભા તત્ સમ્ભવ-

પયાહિણ કરેહ) વહાં જાકર ઉસને શ્રમણ ભગવાન મહાવીર કી તીન વાર પ્રદક્ષિણા પૂર્વક ચન્દન નમસ્કાર ક્રિયા (જાવપજ્જુવાસહ) યાવત્ પર્યુપાસના કી । (સ્વંદયાઈ સમણે ભગવં મહાવીરે સ્વંદયં કચ્ચાયણસ્સ ગોત્તં એવ વયાસી) હે સ્કન્દક ! એસા કહકર શ્રમણ ભગવાન્ મહાવીર ને કાત્યાયન ગોત્રીય ડન સ્કન્દક સે એસા કહા ॥

ટીકાર્થ—‘તેણં કાલેણં’ इत्यादि । ‘તેણં કાલેણં તેણં સમણં’ ઉસ કાલમેં ઓર ઉસ સમયમેં (સમણે ભગવં મહાવીરે) શ્રમણ ભગવાન મહાવીર ‘વિચટ્ઠમોઈ યાવિ હોત્થા’ વ્યાવૃત્ત મોજી થે । વ્યાવૃત્ત મુદ્ધક્તે इति વ્યાવૃત્ત મોજી’ ઇંસ વ્યુત્પત્તિ કે અનુસાર અનેષણીય સે નિવૃત્ત જો મોજન હૈ અર્થાત્ એષણીય નિર્દોષ જો આહાર હૈ વહ વ્યાવૃત્ત મોજન હૈ । ઇસ વ્યાવૃત્ત મોજનકો કરને વાલા વ્યાવૃત્ત મોજી હૈ અર્થાત્ વિશુદ્ધ આહાર લેને વાલા વ્યાવૃત્ત મોજી હૈ । (નણં સમણસ્સ ભગવઓ મહાવીરસ્સે વિચટ્ઠમોઈસ્સ) વિશુદ્ધાહાર કરને વાલે ડન શ્રમણ ભગવાન મહાવીર કા “ સરીરયં ”

ભગવાન મહાવીરને ત્રણ વાર પ્રદક્ષિણા પૂર્વક વદન નમસ્કાર કર્યા, (જાવ-પજ્જુવાસહ) અને યાવત્ પર્યુપાસના કરી (સ્વંદયાઈ સમણે ભગવં મહાવીરે સ્વંદયં-કચ્ચાયણસ્સગોત્તં એવ વયાસી) હે સ્કન્દક ! એવું સ પ્રાધન કરીને શ્રમણ ભગ-વાન મહાવીરે કાત્યાનગોત્રી તે સ્કન્દકને આ પ્રમાણે કહ્યું

ટીકાર્થ—“ તેણં કાલેણ તેણ સમણ ” તે કાળે અને તે સમયે “ સમણે ભગવં મહાવીરે ” શ્રમણ ભગવાન મહાવીર “ વિચટ્ઠમોઈયાવિ હોત્થા ” વ્યાવૃ-ત્તલોહ હતા વ્યવૃત્તલોહની વ્યુત્પત્તિ આ પ્રમાણે થાય છે “ વ્યાવૃત્ત-મુદ્ધક્તે इति વ્યાવૃત્તમોજી ” એષણીય (એષણા સમિતિ યુક્ત) આહારને વ્યાવૃત્ત આહાર કહેવાય છે તે વ્યાવૃત્ત યાને નિર્દોષ આહારનું ગૃહણ કરનારને વ્યાવૃત્તલોહ કહે છે એટલે કે પ્રાસુક (વિશુદ્ધ) આહાર લેનારને વ્યાવૃત્તલોહ કહે છે “ તણ ભગવઓ મહાવીરસ્સ વિચટ્ઠ મોઈસ્સ ” વિશુદ્ધ આહાર કરનાર તે શ્રમણ ભગવાન મહાવીરનું “ સરીરયં ”

न्यात् शृंगारमिव शृंगारम् अतिशयितशोभासम्पन्नमित्यर्थं आभरणं विना शृंगारं विनैव भगवतः शरीरं स्वाभाविकशोभासम्पन्नमेव मङ्गीति भावः । 'कङ्कणं' कल्याणम् कल्याणस्वरूपम् 'सिर्षं' शिषम् शिषमनुपद्रवं निरुपद्रवस्वरूपम्, 'घन्नं' घन्यम् प्रदीप्तायुक्तम् 'मगलम्' मगल्यम् मगलस्वरूपम् 'सस्तिरीयं' सतीक्ष्णं लोकोत्तरशोभायुक्तम् 'अणलंकियविभूतियं' अनसंकुतविभूतितम् मुकुटादिभिः अलंकियते वस्त्रादिभिर्विभूयते प्रकृते बोधयोर्निषेधात् अनसंकुतविभूतित्, यद्वा-अनलङ्किते=अलङ्कारवर्जितेऽपि विभूतित=विभूतासम्पन्नम् अतिशयसुन्दर-

शरीरं ओराल उदार प्रधानं था । सिंगारं अलङ्कार आदि से कृत जो शोभा उस शोभा के संघ से शृंगार की तरह वह शरीर शृंगार वाला जैसा था । अर्थात् शृंगार से युक्त होने पर जो शोभा होती है वैसी शोभा भगवान् के शरीर की थी । तात्पर्य यह कि आभरण आदि शृंगार के बिना भगवान् का शरीर स्वाभाविक शोभा से संपन्न था । क्योंकि भगवान् का शरीर स्वभावतः प्रारम्भ से ही शोभा संपन्न होता है । (कल्याणं) भगवान् का वह शरीर कल्याण स्वरूप था । कारण कि भगवान् स्वयं कल्याणस्वरूप होते हैं । 'सिर्षं' भगवान् का वह शरीर छकाय रक्षक होने के कारण निरुपद्रव स्वरूप था । (घन्नं) प्रदीप्ता युक्त होने के कारण भगवान् का शरीर घन्यरूप था । (मगलं) शिवसुखदाता होने से अथवा पापों का नाशक होने से भगवान् का शरीर मगलरूप था । (सस्तिरीयं) अलौकिक शोभा से संपन्न होने के कारण भगवान् का शरीर लोकोत्तर (अपार्ष्णिक) शोभावाला था । (अणलंकियविभूतियं) शरीर की शोभा अलङ्कारों से विशेष हो जाती है परन्तु भगवान् के

शरीर 'ओराल' (उदार सौधी सुंदर) हेतु 'सिंगार' शृंगारही सुंदर शरीर हेतु सुंदर होने हेतु सुंदर भगवान् शरीर लागतु हेतु ओराल भगवान् शरीर ओराल अधु शोभायमान हेतु के आभूषणों वगैरे शृंगार विना पक्ष ते अतिशय सुंदर हेतु "कङ्कणं" भगवान् चेत के कल्याण स्वरूप केय से तेषी तेमनु शरीर कल्याण स्वरूप हेतु "सिर्षं" भगवान् उभयना एवोनी रक्षा करना हेतु तेषी तेमनु शरीर दरेक एवम माटे निरुपद्रव रूप हेतु 'घन्नं' प्रदीप्त होवाने वीपे ते शरीर घन्यरूप हेतु "मगलं" शिवसुखदाता होवासी अथवा पापानु नाशक होवासी भगवान् शरीर मगलरूप हेतु 'सस्तिरीयं' अलौकिक शोभावाला होवासी भगवान् शरीर लोकोत्तर (अपार्ष्णिक) शोभा वाला हेतु 'अणलंकिय विभूतियं' शरीर की शोभा अलङ्कारों से विशेष हो पक्ष भगवान् शरीर की शोभा

मित्यर्थः । 'लक्ष्णवञ्जनगुणोववेयं' लक्षणव्यञ्जनगुणोपपेतम् तत्र लक्षणानि सामुद्रिकशास्त्रोक्त रक्त हाथ, पादतल आदिरूपाणि, व्यञ्जनानि तिलमषकादीनि, गुणाः—औदार्यगांभीर्यादयः, तैरुपपेतं युक्तं यत् तत् तथा । 'सिरिए अईव-अईव उवसोभेमाणे' श्रिया=शोभया अतीवातीवोपशोभमानं 'चिट्ठइ' तिष्ठति वर्त्तते । 'तण्णं से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते समणस्स भगवओ महावीरस्स वियट्ठभोइस्स' ततः खलु स स्कन्दकः कात्यायनगोत्रः श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य व्यावृत्तभोजिनः, 'सरीरयं ओरालं जाव अईव अईव उवसोभेमाणं पासई' शरीरम् उदारम् यावत् अतीवातीवोपशोभमानं पश्यति, इह यावत् पदेन शृगार-कल्याण—शिवधन्यमंगलय—सश्रीकानलंकृतविभूषितलक्षणव्यञ्जनगुणोपपेतत्वादीनां

शरीर की जो शोभा थी वह बिना अलंकारों से ही अधिक थी अतः वह अनलंकृत विभूषित था, अथवा अनलंकृत होने पर भी विभूषित संपन्न था अर्थात् अतिशय सुन्दर था । (लक्ष्णवञ्जनगुणोववेयं) सामुद्रिक शास्त्रोक्त रक्त हाथ, पादतल आदिरूप लक्षणों से, तिल मषा आदिरूप व्यञ्जनों से, एवं औदार्य गांभीर्य आदि गुणों से युक्त भगवान का शरीर था । (सिरिए अईव अईव उवसोभेमाणे चिट्ठइ) इस कारण भगवान का शरीर शोभासे अतीव-अत्यंत-शोभित हो रहा था । (तण्णं से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते समणस्स भगवओ महावीरस्स वियट्ठभोइस्स) कात्यायन गोत्रीय स्कन्दक ने वियट्ठभोजी श्रमण भगवान महावीर के (सरीरयं) शरीर को (ओरालं जाव अईव अईव उवसोभेमाणं पासई) उदार यावत् अत्यंत शोभासंपन्न देखा । इस तरह स्कन्दक ने उदार, शृगाररूप, कल्याणरूप, शिवरूप,

तो अलंकारों धारण कर्था बिनापण अतिशय सुंदर लागती હતી. “ लक्ष्ण वञ्जनगुणोववेय ” सामુદ્રિક લક્ષણોથી (હાથ પગ આદિનાં શાસ્ત્રોક્ત શુભ લક્ષણોથી) (તલ મષા વગેરે રૂપ શુભ વ્યંજનો તથા ઔદાર્ય અને ગાંભીર્ય વગેરે ગુણોથી) યુક્ત ભગવાનનું શરીર હતું સિરીય અઈવ અઈવ ઉવસોભેમાણે ચિટ્ઠઇ તેકારણે ભગવાનનું શરીર અતિશય શોભાયમાન લાગતું હતું. તણ્ણં સે કંદણ કચ્ચાયણસ્સ ગોત્તે સમણસ્સ ભગવઓ મહાવીરસ્સ વીયટ્ઠ મોહસ્સ) કાત્યાયન ગોત્રના સ્કન્દકે વિશુદ્ધ આહાર લેનાર શ્રમણ ભગવાન મહાવીરના “ ઓરોલં જાવ અઈવ અઈવ ઉવસોભેમાણં પાસઈ ” ઉદાર વગેરે પ્રવૃક્તિ અત્યંત સુંદર શરીરના દર્શન ક્રયા કહેવાનું પ્રયોજન એ છે કે સ્કન્દકે ભગવાન મહાવીરના ઉદાર, શૃગાર રૂપ, કલ્યાણ રૂપ, શિવસ્વરૂપ, ધન્ય રૂપ, મંગલ રૂપ,

સર્વેષાં પ્રરૂપ મવતિ । તથા ચ કુંગાર કલ્યાણ શિર્વ ધન્ય મગલ્ય સધીકમનલકૃત
 વિમૂપિત લઘ્વગ્ન્યમનગુણોપેતં ધિયાઽતીવોપશ્ચોમમાનં મગવત શરીર પશ્ય-
 તીતિ માયઃ । ‘પાસિષા’ દદ્વા ‘દદ્વદ્વચિષ્માણદિષ’ દદ્વદ્વચિષ્માણદિષ્ઠિતઃ,
 દદ્વદ્વદ્વચિષ્માણદિષ્ઠિતઃ અતિશ્ચયેન સુષ્ટમ અથવા દદ્વદ્વચિષ્માણદિષ્ઠિતઃ સુષ્ટમ ચ તોપવત્ ચિષ્મા મનો
 યસ્ય સ તથા, તત્ દદ્વદ્વચિષ્મા યથા મવતિ તથા આનન્દિત-આનન્દયુક્ત । તથા
 ‘નવિષ’ નન્દિત મુલ્લસૌમ્યાદિમાયૈઃ સપદ્વતરતામુપગત, ‘પીશ્મણે’ પ્રીતિમના,
 પ્રીતિ-પ્રેમ મનસિ યસ્ય સ પ્રીતમના इति પ્રીતમનાઃ, પ્રીતમાનન્દાતિશ્ચયેન મનો
 યસ્ય પ્રીતમનાઃ મગવત શરીરસંબન્ધિનં ગુણાદિકં દદ્વાઽતિશ્ચયેન મુદિત । તથા
 ‘પરમસોમણસ્તિષ’ પરમ સૌમનસ્યિતઃ પરમ સૌમનસ્ય સજાતં યસ્ય સ
 પરમસૌમનસ્યિતઃ, અથવા પરમ સૌમનસ્યં સુમનસ્કતાવિદ્યતે યસ્ય સ પરમસૌમ-
 નસ્યિતઃ ઉત્કૃષ્ટસૌમ્યમાયયુક્ત, ‘હરિસવસવિસપ્પમાણદિય’ હરિસવસવિસર્વ

ધન્યરૂપ, મંગલરૂપ, સશ્રીક, અનલકૃતવિમૂપિત, વ્યજ્ઞન એવં ગુણો સે
 યુક્ત મગવાન કે શરીર કો દેશ્વા । (પામિસા) દેશ્વ ફરકે (દદ્વદ્વ
 ચિષ્માણદિષ) પદ્ દદ્વદ્વ-અત્યન્ત સુષ્ટ-સુષ્ટચિષ્માણદિષ, અથવા
 દદ્વ-વિસ્મિત પદ્ સુષ્ટ-સોપ યુક્ત ચિષ્માણદિષ હુઆ । ઓર વિશેષરૂપ
 સે આનન્દ થાલા હુઆ । (નવિષ) મુલ્લ સૌન્દર્ય આદિ માયૈઃ દ્વા
 વદ્ પદ્વત અધિક પ્રસન્ન હુઆ । (પીશ્મણે) ઉત્કૃષ્ટ મન અત્યન્ત આનન્દ
 કે કારણ મગવાન કી ઓર પદ્વત અધિક પ્રીતિયુક્ત થન ગયા । અર્થાત્
 મગવાન કે શરીર સમગ્રી ગુણાદિક કો દેશ્વકર વદ્ અત્યન્ત હર્ષિત હો
 ગયા । (પરમ સોમણસ્તિષ) ઉત્કૃષ્ટ મન અપને આપ મેં પિલકુલ
 નિશ્ચિત્ત હો જાને કે કારણ અપની ચઠ્ઠલતા કા પરિત્યાગ કર મગ
 વાન કી તરફ હી લગ ગયા । હસીસે વદ્ સૌમ્યમાય સે યુક્ત હો ગયા ।

સશ્રીક, અનલકૃતવિમૂપિત (વિના અવકાશ પાત્ર અવકાશથી શોભાયમાન
 હોય તેવું) તથા ગુણ લક્ષણો વ્યજ્ઞને અને જુલોથી યુક્ત શરીરને બેધુ
 ‘પાસિષા’ મગવાનનું સૌન્દર્ય યુક્ત શરીર બેધને સ્પન્દકને ‘દદ્વદ્વ ચિષ્માણદિષ’
 ધણે હર્ષ થયો, અતિશય સતોષ થયો અને તેના આનન્દને પાર ન રહ્યો.
 (અથવા દુષ્ બેટલે વિસ્મિત અને સુષ્ બેટલે સુષ્ટ ચિત્તરૂપો = ‘નવિષ’)
 મગવાનની મુખપ્રકૃતિ, સૌન્દર્ય વગેરે બેધને તે ધણે જ આનન્દિત થયો.
 ‘પીશ્મણે’ તેને મગવાન મહાવીર મત્તે અત્યંત પ્રીતિ લાગી બેટલે કે જ
 મગવાનનું શારીરિક સૌન્દર્ય તથા શુદ્ધ વગેરે બેધને તે ધણે જ ખુશ થયો
 પરમ ધોમણસ્તિષ તેનું મન અત્યંતતાનો પરિત્યાગ કરીને મગવાનની અદર
 જ હોન થઈ અધુ તેથી તે સૌમ્યભાવથી યુક્ત બની જ્યાં તેને તે વખતે

हृदयः, हर्षवशेन प्रमोदातिरेकेण विसर्पद्=विस्तारं गच्छद् हृदयं=मनो यस्य स हर्षवशविसर्पद् हृदयः अपूर्वं हर्षोल्लसितहृदयः सन् ' जेणेव समणे भगवं महावीरे ' यत्रैव श्रमणो भगवान् महावीरः विराजते ' तेणेव उवागच्छद् ' तत्रैव उपागच्छति ' उवागच्छिता ' उपागत्य ' समणं भगवं महावीरं ' श्रमणं भगवन्तं महावीरम् ' तिकखुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ ' त्रिकृतः आदक्षिणप्रदक्षिणां करोति त्रिकृत्यः त्रिवारम् ' आयाहिणं ' आदक्षिणतः दक्षिणक्रमेण प्रदक्षिणां करोति ' जाव पज्जुवासइ ' यावत् पर्युपास्ते अत्र यावत् पदेन वन्दननमस्कारादिकं कृत्वा त्रिविधया मनोपाकायस्वया पर्युपासनया इति संग्राहम् । ' खंदयाइ ' हे स्कन्दक ! इति ' समणे भगवं महावीरे ' श्रमणो भगवान् महावीरः ' खंदय-कच्चायणस्स गोत्तं एव वयासी ' स्कन्दकं कात्यायनगोत्रमेवमवादीत् ॥सू० ११॥

वसे किसी भी प्रकार की चिन्ता नहीं रही । ' हरिसवसविसप्पमाण-हियए) प्रमोद के अतिरेक से वह उस समय इनका अधिक आनन्द मग्न हो गया कि उसका हृदय उछलने लगा । इस तरह वह अपूर्व हर्ष के उत्कर्ष से उल्लसित होता हुआ (जेणेव समणे भगवं महावीरे) जहां श्रमण भगवान् महावीर विराजमान थे (तेणेव उवागच्छइ) वहां पहुँचा (उवागच्छिता) वहां जाकर के उसने (समणं भगव महावीरं) श्रमण भगवान् महावीर की (तिकखुत्तो) तीन बार (आयाहिण पया-हिणं करेइ जाव पज्जुवासइ) प्रदक्षिणा पूर्वक वन्दन नमस्कार करके मन वचन कायस्वय तीन प्रकार की पर्युपासना से पर्युपासना करने लगा । फिर (खंदयाइ) हे स्कन्दक ! ऐसा कह कर (समणे भगवं महावीरे) श्रमण भगवान् महावीर ने (खंदयं कच्चायणस्स गोत्तं एव वयासी) कात्यायन गोत्रीय स्कन्दक से ऐसा कहने लगे ॥सू० ११॥

कै० पणु प्रकारनी चिन्ता रही नहीं ' हरिसवसविसप्पमाणहियए ' तेना हृदय-भा ओट्यो अघो आनंद थयो के आनंदथी तेनुं हृदय नाथी उठ्युं, आ रीते मनमा अतिशय आनंद अने उल्लास साथे (जेणेव समणे भगव महावीरे तेणेव उवागच्छइ) ज्या श्रमणु भगवान् महावीर भीराजता हुता त्यां ते पडेअथी गथो, (उवागच्छिता) त्या जडने तेणु " समणं भगव महावीरं " श्रमणु भगवान् महावीरनी (तिकखुत्तो) त्रणु बार आयाहिण पयाहिण करेइ जाव पज्जुवासइ) प्रदक्षिणापूर्वक वन्दनमस्कार करीने यावत् मन वचन अने कायस्वय त्रणु प्रकारे पर्युपासना (सेवा) करी तयार भाइ (खंदयाइ) हे स्कन्दक ! ओणु सओधन करीने (समणे भगवं महावीरे) श्रमणु भगवान् महावीरे (खंदय कच्चायणस्स गोत्तं एव वयासी " कात्यायन गोत्री स्कन्दक परिभाजने आभमाणु कछु ॥ सू-११ ॥

મૂળ—સે ણૂળ તુમ સ્વદયા ! સાવર્થીય નયરીય પિંચ
 લય ણં નિયટેણ વેસાલિય સાવર્ણં ણં અક્ષેવ પુચ્છિય—
 માગહા ! કિં સ અતે લોપ અણતે લોપ યવ ત સ્વે જાવ
 જેણેવ મમ અતિય તેણેવ હવ્વ આગય, સે ણૂળ સ્વદયા !
 અયમદ્દે સમદ્દે ? । હતા અત્થિ । જે વિ ય તે સ્વદયા અય
 મેયારૂવે અજ્ઞતિય ચિંતિય પરિય કપ્પિય મળોગય સ
 કપ્પે સમુપ્પજિત્થા—કિં સ અતે લોપ અણતે લોપંતસ્સ વિ
 ય ણ અય અદ્દે યવ સ્વલ્લ મય સ્વદયા અડઢિવહે લોપ પદ્ધસે
 ત જહા—દઢ્વઓ સ્વેત્તઓ કાલઓ ભાવઓ । દઢ્વઓ ણ
 યગે લોપ સ અતે ૧, સ્વેત્તઓ ણં લોપ અસસ્વેજ્ઞાઓ જોયણ
 કોઢાકોઢીઓ આયામવિક્કભેણ, અસસ્વેજ્ઞાઓ જોયણ
 કોઢાકોઢીઓ પરિક્કસ્વેણ પળ્લણ્ણાઓ । અરિયપુણ સ અતે ૨,
 કાલઓ ણં લોપ ણ કયાહ ન આસી, ન કયાહ ન ભવહ,
 ન કયાહ ન ભવિસ્સહ ભવિસુય ભવહ ય ભવિસ્સહ ય ધુવે
 ણિયય સાસય અક્કલય અઢ્વય અધઢ્વિય ણિચ્છે નરિય પુણ સે
 અતે ૩ । ભાવઓ ણ લોપ અણંતા વળ્લણ્ણવા, અણંતા ગંધ
 પજ્જવા, અણંતા રસપજ્જવા, અણંતા ફાસપજ્જવા, અણંતા સઠાણ
 પજ્જવા, અણંતા ગરુડલદ્વયપજ્જવા, અણંતા અગુરુડલદ્વયપજ્જવા,
 નરિય પુણ સે અતે ૪, સે સ્વદયા દઢ્વઓ લોપ સ અતે
 સ્વેત્તઓ લોપ સ અતે કાલઓ લોપ અણંતે ભાવઓ લોપ
 અણંતે ? ॥ ૧ ॥ જે વિ ય તે સ્વદયા જાવ સ અંતે જોવે

हृदयः, हर्षवशेन प्रमोदातिरेकेण विसर्पद्=विस्तारं गच्छद् हृदयं=मनो यस्य स हर्षवशविसर्पद् हृदय. अपूर्वं हर्षोल्लसितहृदयः सन् ' जेणेव समणे भगवं महावीरे ' यत्रैव श्रमणो भगवान् महावीरः विराजते ' तेणेव उवागच्छइ ' तत्रैव उपागच्छति ' उवागच्छिता ' उपागत्य ' समणं भगवं महावीरं ' श्रमणं भगवन्तं महावीरम् ' तिकखुत्तो आयाहिणपयाहिणं करेइ ' त्रिकृत्वः आदक्षिणप्रदक्षिणां करोति त्रिकृत्वः त्रिवारम् ' आयाहिणं ' आदक्षिणतः दक्षिणक्रमेण प्रदक्षिणां करोति ' जाव पज्जुवासइ ' यावत् पर्युपास्ते अत्र यावत् पदेन वन्दननमस्कारादिकं कृत्वा त्रिविधया मनोवाक्कायरूपया पर्युपासनया इति संग्राह्यम् । ' खंदयाइ ' हे स्कन्दक ! इति ' समणे भगवं महावीरे ' श्रमणो भगवान् महावीरः ' खंदयं=कच्चायणस्सगोत्त एव वयासी ' स्कन्दकं कात्यायनगोत्रमेवमवादीत् ॥सू०११॥

वैसे किसी भी प्रकार की चिन्ता नहीं रही । ' हरिसवसविसप्पमाण-हियए) प्रमोद के अतिरेक से वह उस समय इतना अधिक आनन्द मग्न हो गया कि उसका हृदय उछलने लगा । इस तरह वह अपूर्व हर्ष के उत्कर्ष से उल्लसित होता हुआ (जेणेव समणे भगवं महावीरे) जहां श्रमण भगवान् महावीर विराजमान थे (तेणेव उवागच्छइ) वहां पहुँचा (उवागच्छिता) वहां जाकर के उसने (समणं भगव महावीरं) श्रमण भगवान् महावीर की (तिकखुत्तो) तीन बार (आयाहिण पया-हिणं करेइ जाव पज्जुवासइ) प्रदक्षिणा पूर्वक वन्दन नमस्कार करके मन वचन कायरूप तीन प्रकार की पर्युपासना से पर्युपासना करने लगा । फिर (खंदयाइ) हे स्कन्दक ! ऐसा कह कर (समणे भगवं महावीरे) श्रमण भगवान् महावीर ने (खंदयं कच्चायणस्स गोत्तं एवं वयासी) कात्यायन गोत्रीय स्कन्दक से ऐसा कहने लगे ॥सू०११॥

કેઈ પણ પ્રકારની ચિન્તા રહી નહીં. ' હરિસવસવિસપ્પમાણહિય' તેના હૃદય-માં એટલો ખરો આનંદ થયો કે આનંદથી તેનું હૃદય નાચી ઉઠ્યું. આ રીતે મનમાં અતિશય આનંદ અને ઉલ્લાસ સાથે (જેણેવ સમણે ભગવં મહાવીરે તેણેવ ઉવાગચ્છઈ) જ્યાં શ્રમણ ભગવાન મહાવીર ધીરાજતા હતા ત્યાં તે પહોંચી ગયો. (ઉવાગચ્છિતા) ત્યાં જઈને તેણે " સમણં ભગવ મહાવીરં " શ્રમણ ભગવાન મહાવીરની (તિક્કલુત્તો) ત્રણ વાર આયાહિણ પયાહિણ કરેઈ જાવ પજ્જુવાસઈ) પ્રદક્ષિણાપૂર્વક વંદનનમસ્કાર કરીને યાવત્ મન વચન અને કાયરૂપ ત્રણે પ્રકારે પર્યુપાસના (સેવા) કરી ત્યાર બાદ (ચંદયાઈ) હે સ્કન્દક ! એવું સંબોધન કરીને (સમણે ભગવં મહાવીરે) શ્રમણ ભગવાન મહા-વીરે (ચંદય કચ્ચાયણસ્સગોત્તં એવં વયાસી " કાત્યાયન ગોત્રી સ્કન્દક પરિભાષકને આપ્રમાણે કહ્યું ॥ સૂ-૧૧ ॥

પપ્પસિપ્પ, અસલ્લેખપપ્પસોગાહે, અસ્થિ પુણ સે અતે । કાલઓ
 ણં સિદ્ધે સાદિપ્પ અપજ્જવિપ્પ નસ્થિ પુણ સે અતે । ભાવઓ
 ણ સિદ્ધે અર્ણંતા ણાણપજ્જવા, અર્ણંતા દસણ પજ્જવા, અર્ણંતા
 અશુરુલહુપપજ્જવા, નસ્થિ પુણ સે અતે । સે ચ દવ્વઓ ણં
 સિદ્ધે સ અતે, સ્વેત્તઓ ણં સિદ્ધે સ અતે કાલઓ ણં સિદ્ધ
 અણતે, ભાવઓ ણં સિદ્ધે અણતે ॥ ૪ ॥ જે વિ ય તે સ્વદયા
 હમેયારૂવે અઙ્ગસ્થિપ્પ ચિંતિપ્પ જાવ સમુપગ્ગિજ્જથા કેણ વા
 મરણેણં મરમાણે જીવે વઘ્ઘુહ વા હાયહ વા તસ્સ વિ ય ણં
 અયમદ્દે પ્પવ સ્વલ્લ સ્વદયા ! મપ્પ દુવિહે મરણે પન્નત્તે, ત જહા
 -વાલમરણે ય પઢિયમરણે ય । સે કિં વાલમરણે વાલમરણે
 દુવાલસવિહે પન્નતે, ત જહા-વલયમરણે ૧, વસટ્ટમરણે ૨,
 અત્તો સહ્ધમરણે ૩, તલ્લભવમરણે ૪, ગિરિપદ્ધને ૫, તરુપદ્ધને ૬,
 જલપ્પવેસે ૭, જલણપ્પવેસે ૮, વિસમ્ભવગ્ગે ૯, સરથોવાહણ ૧૦,
 વેદ્ધાણસે ૧૧, ગિદ્ધપિટ્ઠે ૧૨ । ઇચ્છેતેણ સ્વદયા દુવાલસવિહે ણં
 વાલમરણેણ મરમાણે જીવે અર્ણંતેહિં નેરહયભવગ્ગહણેહિં
 અપ્પાણ સજોપ્પહિહ્ નિરિય્ય મણુય દેવ ભવગ્ગહણેહિં અપ્પાણ
 સજોપ્પહ્ અણાહય ચ ણ અણવદગ્ગં દીહમદ્ધ આઠરત્તસસાર
 કતાર અણુપરિયદ્ધ, સે ચ વાલમરણેણ મરમાણે જીવે વઘ્ઘુહ
 સે ચ વાલમરણ । સે કિં ત પઢિયમરણ પઢિયમરણે દુવિહે
 પન્નત્તે, ત જહા-પાઓશ્વગમણે ય ભત્તપચ્ચમ્મવાણે ય । સે કિં
 ત પાઓશ્વગમણે પાઆવગમણે દુવિહે પણ્ણત્તે ત જહા-નીહા

अणंते जीवे तस्स वि य णं अयं अट्ठे—एवं खलु जाव
 दव्वओ णं एगे जीवे स अंते !, खेत्तओ णं जीवे
 असंखेज्जपएसिए, असंखेज्जपएसोगाढे अत्थि पुण से अंते २,
 कालओ णं जीवे न कयाइ न आसी जीवे निच्चे नत्थि
 पुण से अंते ३, भावओ णं जीवे अणंता णाणपज्जवा, अणंता
 दंसण पज्जवा, अणंता चारित्तपज्जवा, अणंता अगुरुलहुय
 पज्जवा, नत्थि पुण से अंते ४, से तं दव्वओ जीवे स अंते ।
 खेत्तओ जीवे स अंते, कालओ जीवे अणंते ॥२॥ जे वि य
 ते खंदया पुच्छा जाव किं स अंता सिद्धि अणंता सिद्धी
 तस्स वि य णं अयमट्ठे—मए खंदया एवं खलु चउव्विहा
 सिद्धी पण्णत्ता तं जहा—दव्वओ खेत्तओ कालओ भावओ,
 दव्वओ एगासिद्धी स अंता, खेत्तओ णं सिद्धी पणयालीसं
 जोयणसयसहस्साइं आयामविकखंभेणं एगा जोयणकोडी
 चायालीसं च जोयणसयसहस्साइं तीसं च जोयणसहस्साइं
 दोण्णि य अउणा पन्नजोयणसए किंचि विसेसाहिए परि-
 क्खेवेणं पण्णत्ता, अत्थि पुण से अंते कालओ णं सिद्धी न
 कयाइ न आसी जाव णिच्चा भावओ य जहा लोयस्स तहा
 भाणियव्वा, तत्थ दव्वओ सिद्धी स अंता, खेत्तओ सिद्धी
 स अंता, कालओ सिद्धी अणंता, भावओ सिद्धी अणंता ॥३॥
 जे वि य ते खंदया जाव किं अणंते सिद्धे तं चेव जाव
 दव्वओ णं एगे सिद्धे स अंते । खेत्तओ णं सिद्धे असंखेज्ज-

पपसिण, असखेज्जपपसोगाढे, अस्थि पुण से अते । कालओ
 णं सिद्धे सादिण् अपज्जविण् नस्थि पुण से अते । भावओ
 ण सिद्धे अणंता णाणपज्जवा, अणंता दसण पज्जवा, अणंता
 अगुरुल्लहुयपज्जवा, नस्थि पुण से अते । से च दव्वओ णं
 सिद्धे स अते, खेत्तओ णं सिद्धे स अते कालओ णं सिद्ध
 अणते, भावओ णं सिद्धे अणते ॥ ४ ॥ जे वि य ते खदया
 इमेयारूवे अज्झस्थिण् चित्तिण् जाव समुपज्जित्था केण वा
 मरणेणं मरमाणे जीवे वड्ढइ वा हायइ वा तस्म वि य ण
 अयमट्ठे एव खल्लु खदया ! मए दुविहे मरणे पन्नत्ते, त जहा
 -वालमरणे य पडियमरणे य । से किं वालमरणे वालमरणे
 दुवालसविहे पन्नत्ते, त जहा-वल्लमरणे १, वसट्ठमरणे २,
 असो सल्लमरणे ३, तव्वभवमरणे ४, गिरिपइणे ५, तरुपइणे ६,
 जलप्पवेसे ७, जलणप्पवेसे ८, विसमक्कवणे ९, सत्थोवाइणे १०,
 वेहाणसे ११, गिद्धपिट्ठे १२ । इच्चेतेण खदया दुवालसविहे णं
 वालमरणेण मरमाणे जीवे अणंतेहिं नेरइयमवग्गहणेहिं
 अप्पाण सजोएहिइ मिग्गिय मणुय देव भवग्गहणेहिं अप्पाण
 सजोएइ अणाइय च ण अणवदग्गं दीहमञ्जु षाउरतसत्तार
 कत्तार अणुपरियट्ठइ, से च वालमरणेण मरमाणे जीवे वड्ढइ
 से च वालमरण । से किं त पडियमरणे पडियमरणे दुविह
 पन्नत्ते, त जहा-पाओवगमणे य भत्तपच्चमत्ताने य । से किं
 त पाओवगमणे पाआवगमणे दुविहे पणसे त जहा-नीहा

रिमे य अनिहारिमे य, नियमा अप्पडिकम्मे से त्तं पाओव-
गमणसरणे। से किं तं भत्तपच्चक्खाणे ? भत्तपच्चक्खाणे
दुविहे पन्नत्ते तं जहा--नीहारिमे य अनीहारिमे य नियमा
सप्पडिकम्मे से त्तं भत्तपच्चक्खाणे। इच्चेत्तेणं खंदया दुवि-
हेणं पंडियसरणेणं सरमाणे जीवे अणंतेहिं नेरइयभवग्गह-
णेहिंअप्पाणं विसंजोएइ जाव वीइवयइ से त्तं पंडियसरणेण
सरमाणे जीवे हायइ से त्तं पंडियसरणे। इच्चेएणं खंदया
दुविहेणं सरणेणं सरमाणे जीवे वड्डइ वा हायइ वा ॥सू०१२॥

छाया—तद् नूनं त्वं स्कन्दक ! श्रावस्त्यां नगर्यां पिंगलकेन निर्ग्रन्थेन
वैशालिकश्रावकेण अयमाक्षेपः पृष्टः—मागध ! किं सांतो लोकोऽनन्तो कः । एवं

‘ से णूणं तुमं खंदया ! ’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—(से णूणं तुमं खंदया ।) हे स्कन्दक ! तुम (सावत्थीए
नयरीए) श्रावस्ती नगरी में (नियटेणं पिगलएणं) निर्ग्रन्थ पिंगलक ने
(वेसालिय सावएणं) जो कि वैशालिक-भगवान् महावीर का-श्रावक
है अर्थात् भगवान् महावीर के उद्देशगान करने में रक्षित है (इणं
अक्खेव पुच्छिए) इस प्रश्न को पूछा है—(मागहा) हे मागध-भगवद्दे-
देशोद्भव हे स्कन्दक ! (किं स अन्ते लोए अणते लोए) लोक क्या
सान्त है अथवा अनन्त है इत्यादि ? (एवं तं चेव जाव जेणेव ममं
अंतिए तेणेव हव्वंमागए) इस प्रकार पूछे जाने पर उसके प्रश्नो से

“ से णूणं तुमं खंदया ” इत्यादि ।

सूत्रार्थ—(से णूणं तुमं खंदया ।) हे स्कन्दक ! (सावत्थीए नयरीए नियं णं
पिगलएण वेसालियसावएण) श्रावस्ती नगरीमां वैशालिक श्रावकभगवान्
महावीरना उपासक-पिगलक निर्ग्रन्थे तमने (इणं अक्खेव पुच्छिए) आ
प्रभाषे प्रश्नो पूछ्या हे—(मागहा) हे मागध ! “ भगवद्देशनां नन्मेला हे
स्कन्दक ! ” (किं स अन्ते लोए अणते लोए ?) लोक अन्त सङ्घित छे हे
अन्त सङ्घित छे ? इत्यादि प्रश्नो तेमण्णे पूछ्या ६१॥ (एवं तं चेव जाव
जेणेव मम अंतिए तेणेव हव्वंमागए) ते प्रश्नो सालर्णानि तमारा मनमां

તદેવ યાવત્ યત્રૈવ મમાંતિક સર્ગૈવ હૃષ્વમાગતઃ । તદ્ નૂન સ્કન્દક ! અયમર્થઃ
સમર્થઃ । इत अस्ति योपि च ते स्कन्दक ! अयमेतद्रूप आध्यात्मिकचिन्तितः
प्रार्थितो कल्पितो मनोगतः सकल्पः समुत्पद्यत किं सान्तो लोकोऽन्तो लोकः
(इत्यादि) तस्यापि चायमर्थ - एष खलु मया स्कन्दक ! चतुर्भिर्लोकाः प्रज्ञाः ।
तद्यथा-द्रव्यतः क्षेत्रतः कालतो मावतः । द्रव्यत खलु एको लोकः सांतः१,
क्षेत्रतः खलु लोकोऽसंख्याताः योजनकोटिकोट्यध्यायामत्रिप्पमण असंख्येया
योजनकोटिकोट्य परिक्षेपेण प्रज्ञाः, अस्ति पुनस्तस्यात् ॥ २ ॥ काम्तो

શક્તિ આદિ ઘૃષિષાણે બનકર તુમ યહાં મેરે પાસ આપે હો । (સે
જૂળ સ્વરૂપા ! અયમઠ્ઠે સમઠ્ઠે) સો કહો સ્કન્દક યહ સત્ય પાત હૈ ન ?
(હંતા અસ્થિ) તથ સ્કન્દક ને કહા હાં સત્ય પાત હૈ ।

(જે બિ ય તે સ્વરૂપા ! અયમેયારૂઢે અઝ્ઞસ્થિય, ધિત્તિય, પત્તિય,
કપ્તિય, મનોગત સકલ્પે સમુપ્પજિજ્ઞાયા) તથા-હે સ્કન્દક ! જો તુમે
યહ હસરૂપ આધ્યાત્મિક, ચિન્તિત, પ્રાર્થિત, કલ્પિત, મનોગત સકલ્પ
ઉત્પન્ન જુઝા હૈ કિ (કિં સ અન્તે છોપ અળતે છોપ૦ તસ્સ ધિય ણં
અયમઠ્ઠે) લોક અન્તસહિત હૈ કિ અન્ત ચિન્તા કા હૈ રૂપાદિ । સો ફનકા
યહ અર્થ હૈ-(૧) સ્વલુ મપ સ્વરૂપા ! ચડધિહે છોપ પન્નતે) હૈ સ્કન્દક !
મેને લોક ચાર પ્રકાર કા પ્રજ્ઞસ કિયા હૈ, (સંજઞા) ચહ હસ પ્રકાર સે
હૈ-(૧) દ્વ્યઓ સ્વેસઓ કાલઓ માવઓ) દ્રવ્ય કી અપેક્ષા સે, ક્ષેત્ર કી
અપેક્ષા સે, કાલ કી અપેક્ષા ધીર માવ કી અપેક્ષા સે । (૨) દ્વ્યઓ ણં
પગે છોપ સ અંતે સ્વેસઓ ણં છોપ અમસ્વેજ્ઞાઓ જોયણ કોઢાકો

અઠા ઠાંકા વગેરે ઉત્પન્ન થવાથી તમે તેના ઉત્તર જલ્પવા માટે ખાશી પાડે
આવ્યા છે । (સે જૂળ સ્વરૂપા ! અયમઠ્ઠે સમઠ્ઠે) હે સ્કન્દક ! કહેો તે વાત
સાચી છે ? (હતા અસ્થિ) સ્કન્દકે જવાબ આપ્યો ' હા, આ તની વાત સાચી છે
(જે બિ ય તે સ્વરૂપા ! અયમેયારૂઢે અઝ્ઞસ્થિય ધિત્તિય પત્તિય કપ્તિય મનો
ગત, સકલ્પે સમુપ્પજિજ્ઞાયા) તથા હે સ્કન્દક ! તમને આ પ્રકારનો આધ્યાત્મિક
ચિન્તિત પ્રાર્થિત કલ્પિત, મનોગત સકલ્પ ઉત્પન્ન થયો છે (કિં સ અન્તે
છોપ અળતે છોપ૦ તસ્સ ધિય ણં અયમઠ્ઠે) હે લોક અન્તસહિત છે હે અન્ત
રહિત છે ? ઇત્યાદિ તો તે પ્રશ્નોનો આ પ્રમાણે અર્થ થાય છે-(૧) સ્વ
વસ્તુ મપ સ્વરૂપા ! ચડધિહે છોપ પન્નતે) હે સ્કન્દક ! મે ચાર પ્રકારના લોક
વળવ્યા છે-(સંજઞા) તે ચાર પ્રકારના આ પ્રમાણે દ્વ્યઓ નેત્રઓ, કાલઓ,
માવઓ) (૧) દ્રવ્યની અપેક્ષાએ મેત્રની અપેક્ષાએ. (૨) કાળની અપેક્ષાએ
અને (૩) બાવની અપેક્ષાએ (દ્વ્યઓ ણં પગ છોપ સ અંતે તતઓ ણં છોપ
અપેક્ષગ્જ્ઞાઓ જોયણ કોઢાકોનીઓ આધ્યાત્મિકમયમણ, અમયગ્જ્ઞાઓ જોયણ

લોકો ન કદાચિત્ નાસીત્ ન કદાચિન્નમનતિ, કદાચિન્ન મવિષ્યતિ અમૂત ચ
ભવતિ ચ મવિષ્યતિ ચ, ધ્રુવો નિયતઃ શાશ્વતોઽક્ષયોઽવ્યયોઽવસ્થિતો નિત્યઃ, નાસ્તિ
પુનસ્તસ્યાન્તઃ ॥ ૩ ॥ આવતો લોકઃ અનંતા વર્ણપર્યવાઃ, અનતાઃ ગંધપર્યવાઃ,

હીઓ આયામ વિસ્તરેને જાં, અસંખેજ્જાઓ જોયળકો ડાકોડીઓ પરિ-
ક્ષેવેણં પળજ્જાઓ) દ્રવ્ય કી અપેક્ષા સે લોક એક હૈઐર વહ અન્ત
સહિત હૈ । ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા સે લંબાઈ ચૌડાઈ કો લેકર વહ લોક અસં-
ખ્યાત કોડાકોડી યોજન તક લંબા ચૌડા હૈ ઐર પરિક્ષેપ પરિધિ કી
અપેક્ષા સે વહ ક્ષેત્ર લોક અસંખ્યાત કોડા કોડી યોજન કી પરિધિ
વાલા કહા ગયા હૈ । (અત્થિ પુણ સ અતે) ઇસ તરહ સે ઉસકા અંત
હૈ । (કાલ ઓ જા લોએ ન કયાઈ ન આસી, ન કયાઈ ન મવઈ ન મ-
વિસ્સઈ) તથા કાલ કી અપેક્ષા સે વહ મૂતકાલ સેં કમી નહીં થા ઐસા
નહીં વર્તમાન સેં વહ તહીં હૈ ઐસા મી નહીં હૈ ઐર મવિષ્યકાલ સેં
વહ કમી કોઈ દિન નહીં હોગા ઐસા મી નહીં હૈ । (મવિસુ ય મવઈ
ય, મવિસ્સઈ) કિન્તુ વહ લોક મૂતકાલ સેં થા, વર્તમાન સેં વહ હૈ
ઐર મવિષ્યત્ કાલ સેં વહ રહેગા । (ધ્રુવે, જિયદ, સાસદ અક્ષદ,
અવ્વદ અવઢિદ, જિચ્ચે, નત્થિ પુણ સે અંતે) ઇસ તરહ યહ કાલ સેં લોક
ધ્રુવ હૈ, નિયત હૈ, શાશ્વત હૈ । અક્ષય હૈ, અવ્યય હૈ, નિત્ય હૈ, ઇસલિયે
ઇસકા અંત નહીં હૈ । (માવઓ જાં લોએ અણંતા વળ્લપજ્જવા, અણંતા

કોડાકોડીઓ પરિક્ષેવેણ પળજ્જાઓ) દ્રવ્યની અપેક્ષાએ લોક એક છે અને
તે અત સહિત છે. ક્ષેત્રની દૃષ્ટિએ તો લોક લંબાઈ અને પહોળાઈની અપે-
ક્ષાએ અસખ્યાત કોડા કોડી યોજન લાખો પહોળો છે. અને પરિધિની અપે-
ક્ષાએ તે અસખ્યાત યોજન કોડાકોડી પરિધિવાળો છે (અત્થિ પુણ સ અતે)
અને વળી તે અન્ત સહિત છે (કાલઓ જાં લોએ ન કયાઈ ન આસી, ન
કયાઈ ન મવિસ્સઈ) કાળની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામા આવે તો ભૂતકાળમા
કોઈ પણ એવો સમય ન હતો કે જ્યારે તેનું અસ્તિત્વ ન હોય, વર્તમાન-
કાળમાં પણ કોઈ એવો સમય જોવામા આવતો નથી કે જ્યારે તેનું અસ્તિત્વ
ન હોય, અને ભવિષ્યમા પણ તેનું અસ્તિત્વ ન હોય એવો સમય આવશે
નહીં (મવિસુ ય, મવઈ ય, મવિસ્સઈ ય) પરંતુ તે લોકનું અસ્તિત્વ ભૂતકા-
ળમા હતું વર્તમાનકાળે છે અને ભવિષ્યમા પણ રહેવાનું છે. (ધ્રુવે, જિયદ,
સાસદ, અક્ષદ, અવ્વદ, અવઢિદ, જિચ્ચે, નત્થિ પુણ સે અંતે) આ રીતે
કાળની અપેક્ષાએ વિચારવામા આવે તો લોક ધ્રુવ છે, નિયત છે, શાશ્વત છે,
અક્ષય છે, અવ્યય છે અને નિત્ય છે. તેથી તેનો અંત નથી. (માવઓ જાં

અનતા રસપર્યયાઃ અનન્તાઃ સ્પર્શપર્યયાઃ, અનતાઃ સસ્થાનપર્યયા, અનતાગુરુલ્લઘુ
કપર્યયા, અનતા અગુરુલ્લઘુકપર્યયા નાસ્તિ પુનરતસ્યાન્ત ॥ ૪ ॥ તદ્વત્ સ્ક
ન્દક ! દ્રવ્યતો લોકઃ સાંત ક્ષેત્રતો લોચ સાત વાચતા લોકોઽન્ત, માવતો
લોકોઽન્ત ॥ ૧ ॥ યો પિ ચ સ સ્કન્દક ! યાવત્ સાંતો જીવઃ અન્તો જીવ
તસ્યાપિ વાયમર્થ - એવ સ્વલુ યાવત્ દ્રવ્યતઃ સ્વલુ એકો જીવ સાત' । ક્ષેત્રતો

ગંધપદ્મજવા, અણતા રસ પદ્મજવા અણતા કાસપદ્મજવા અણતા સઠાણ -
પદ્મજવા, અણતા ગરુલ્લઘુપદ્મજવા, અણતા, અગુરુલ્લઘુપદ્મજવા નતિ
પુણ સ અતે) માવ કી અપેક્ષા સે લોક અન્ત ઘર્ણ પર્વાયરૂપ હૈ,
અન્ત ગંધ પર્વાય રૂપ, અન્ત રસ પર્વાય રૂપ, અન્ત સ્પર્શ પર્વાય રૂપ,
અન્ત સસ્થાન પર્વાયરૂપ, અન્ત ગુરુ લઘુ પર્વાય રૂપ, તથા અન્ત અગુરુ
લઘુ પર્વાય રૂપ હૈ । માવ સે લોક કા અન્ત નહીં હૈ । ઇસ તરહ સે (સે
સં સ્વંશા । દ્રવ્યઓ લોચ સ અતે, ક્ષેત્રઓ લોચ સ અતે, કાલઓ લોચ
અણતે, માવઓ લોચ અણતે) હૈ સ્કન્દક દ્રવ્ય કી અપેક્ષા લોક અન્ત
સહિત હૈ, ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા લોક સાન્ત-અન્ત સહિત હૈ । પર લોક કી
અપેક્ષા સે લોક અન્ત-અન્ત રહિત હૈ, માવ કી અપેક્ષા સે લોક
અન્ત-અન્ત રહિત હૈ ૧ ।

(જે ચિ વ સે સ્વંશા ! જાવ સઅતે જીવે, અણતે જીવે, તસ ચિ વ ણ
અર્થ અદ્દે) તથા હૈ સ્કન્દક ! જો તુન્હે યાવત જીવ કે ચિવય મેં ચિકલ્પ
વત્પમ હુઆ થા નિ જીવ અન્ત સહિત હૈ નિ અ ન રહિત હૈ' ઉમકા મી
ઇસ તરહ સે સમાધાન હૈ કી (એવ સ્વલુ જાવ દ્રવ્યઓ ણ તમે જીવે સ

લોચ અણતા વળ્લપદ્મજવા અણતા ગંધ પદ્મજવા અણતા રસપદ્મજવા, અણતા કાસ
પદ્મજવા, અણતા ગરુલ્લઘુપદ્મજવા અણતા અગુરુલ્લઘુપદ્મજવા, નતિ પુણ સે
અતે) અને ભાવની અપેક્ષાએ લોક અન્ત વળ્લ પર્વાયરૂપ છે અન્ત ગંધ
પર્વાયરૂપ છે અન્ત રસપર્વાયરૂપ છે અન્ત સ્પર્શપર્વાયરૂપ છે અન્ત
સસ્થાનપર્વાયરૂપ છે અન્ત ગુરુલ્લઘુ પર્વાયરૂપ છે તથા અન્ત અગુરુલ્લઘુ
પર્વાયરૂપ છે તથા અન્તરહિત છે આ રીતે (સે સ ચરણ ! દ્રવ્યઓ લોચ
સ અતે કાલઓ લોચ અણતે માવઓ લોચ અણતે) હૈ સ્કન્દક ! દ્રવ્યની
અપેક્ષાએ લોક સાંત (અન્તમુક્તા) છે ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ લોક સાન્ત (અ
ન્તસહિત) છે પળ કાળની અપેક્ષાએ લોક અન્ત (અન્ત રહિત) છે અને
ભાવની અપેક્ષાએ પળ લોક અન્ત રહિત છે,

(જે ચિ વ સે સ્વંશા ! જાવ સ અતે જીવે અણતે જીવ તસચિ વ ન અર્થ
અદ્દે) હૈ સ્કન્દક ! તમને છવના વિષયમા ' છવ અન્ત રહિત છે કે અન્ત
રહિત છે ! ' એવી બે શાખા ઉદ્ભવી છે તેનુ સમાધાન આ પ્રમાણે છે -

[illegible]

કોઠાકોઠીઓ પરિક્ષેવેળ પળગત્તાઓ) દ્રવ્યની અપેક્ષાએ લોક એક છે અને તે અત સહિત છે એવની દષ્ટિએ તો લોક લભાઈ અને પહોળાઈની અપેક્ષાએ અસખ્યાન કોડા કોડી યોજન લાગો પહોળો છે અને પરિધિની અપેક્ષાએ તે અન્ય ખ્યાત યોજન કોડાકોડી પરિધિવાળો છે (અતિ પુણ સ અતે) અને વળી તે અન્ત સહિત છે (કાલઓ ણ લોપ ન કયાઈ ન ઓસી, ન કયાઈ ન ભવિસ્સઈ) કાળની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામા આવે તો ભૂતકાળમા કોઈ પણ એવો સમય ન હતો કે જ્યારે તેનું અસ્તિત્વ ન હોય, વર્તમાનકાળમા પણ કોઈ એવો સમય જોવામા આવતો નથી કે જ્યારે તેનું અસ્તિત્વ ન હોય, અને ભવિષ્યમા પણ તેનું અસ્તિત્વ ન હોય એવો સમય આવશે નહીં (ભવિંસુ ચ, ભવઈ ચ, ભવિસ્સઈ ચ) પરંતુ તે લોકનું અસ્તિત્વ ભૂતકાળમા હતું વર્તમાનકાળે છે અને ભવિષ્યમા પણ રહેવાતું છે. (ધ્રુવે, ગિયળ, સાસળ, અક્ષળ, અઢ્વળ, અઢ્ઢિળ, ગિચ્ચે, નત્થિ પુણ સે અતે) આ રીતે કાળની અપેક્ષાએ વિચારવામા આવે તો લોક ધ્રુવ છે, નિયત છે, શાશ્વત છે, અક્ષય છે, અબ્યય છે અને નિત્ય છે. તેથી તેનો અંત નથી. (ભાવઓ ણં

અનતા રસપર્યવાઃ અનન્તા સ્પર્શપર્યવાઃ, અનન્તાઃ સસ્થાનપર્યવા, અનતાગુરુલ્લઘુ
કપર્યવા, અનતા અગુરુલ્લઘુકપર્યવા નાસ્તિ પુનસ્તસ્યાન્ત ॥ ૪ ॥ તદત્ સ્ક
ન્દક ! દ્રવ્યતા લોક સાંત ક્ષેત્રતો લોષ સાંત વાચતા મોહોઽન્ત, માવતો
લોકોઽન્ત ॥ ૧ ॥ યો પિ ચ સ સ્કન્દક ! યાત્ સાતો જીવ અનન્તા જીવ
તસ્યાપિ ચાયમર્થઃ-એવં સ્વલ્લ યાત્ દ્રવ્યતઃ સ્વલ્લ એવો જીવ સાંત । ક્ષેત્રતો

ગંધપદ્મજવા, અણતા રસ પદ્મજવા અણતા કાસપદ્મજવા અણતા મઠાળ -
પદ્મજવા, અણતા ગરુપલહુપદ્મજવા, અણતા, અગુરુલ્લઘુપદ્મજવા નતિ
પુન સ અતે) માવ કી અપેક્ષા સે લોક અનન્ત યર્ણ પર્વાયરૂપ હૈ,
અનન્ત ગંધ પર્વાય રૂપ, અનન્ત રસ પર્વાય રૂપ, અનન્ત સ્પર્શ પર્વાય રૂપ,
અનન્ત સસ્થાન પર્વાયરૂપ, અનન્ત ગુરુ લઘુ પર્વાય રૂપ, તથા અનન્ત અગુરુ
લઘુ પર્વાય રૂપ હૈ । માવ સે લોક કા અત નહીં હૈ । ઇસ તરહ સે (સે
ચં સ્વદગ્ધા ! દ્રવ્યમો લોષ સ અતે, ક્ષેત્રમો લોષ સ અતે, કાલમો લોષ
અણતે, માવમો લોષ અણતે) હે સ્કન્દક દ્રવ્ય કી અપેક્ષા લોક અત
સહિત હૈ, ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા લોક સાન્ત-અન્ત સહિત હૈ । પર લોક કી
અપેક્ષા સે લોક અનન્ત-અન્ત રહિત હૈ, માવ કી અપેક્ષા સે લોક
અનન્ત-અન્ત રહિત હૈ ૧ ।

(જે વિ ય તે સ્વદગ્ધા ! જાવ સમંતે જીવે, અણતે જીવે, તસ્સ વિય ણ
અયં અદ્ધે) તથા હે સ્કન્દક ! જો તુમ્હે યાત્ જીવ કે વિષય મેં ચિક્ષ્ય
ઉત્પન્ન હુઆ થા નિ જીવ અન્ત સહિત હૈ કિ અ ન રહિત હૈ ડસકા મી
ઇસ તરહ સે સમાધાન હૈ કી (એવં સ્વલ્લ જાવ દંબમો ણં એવો જીવે સ

લોષ અણતા ગંધપદ્મજવા અણતા ગંધ પદ્મજવા અણતા રસપદ્મજવા, અણતા કાસ
પદ્મજવા, અણતા ગરુપલહુપ પદ્મજવા અણતા અગુરુલ્લઘુ પદ્મજવા, તતિ પુન સે
અતે) અને આવની અપેક્ષાએ લોક અનન્ત પર્વાયરૂપ છે અનન્ત ગંધ
પર્વાયરૂપ છે અનન્ત રસ પર્વાયરૂપ છે અનન્ત સ્પર્શ પર્વાયરૂપ છે અનન્ત
સસ્થાનપર્વાયરૂપ છે અનન્ત ગુરુલ્લઘુ પર્વાયરૂપ છે તથા અનન્ત અગુરુલ્લઘુ
પર્વાયરૂપ છે તથા અન્તરહિત છે આ રીતે (સે ચં સ્વદગ્ધા ! દંબમો લોષ
અ અતે કાલમો લોષ અણતિ માવમો લોષ અણતિ) હે સ્કન્દક ! દ્રવ્યની
અપેક્ષાએ લોક સાંત (અન્તરહિત) છે ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ લોક સાન્ત (અ
ન્તરહિત) છે પણ કાળની અપેક્ષાએ લોક અનન્ત (અન્ત રહિત) છે અને
માવની અપેક્ષાએ પણ લોક અન્ત રહિત છે

(જે વિ ય તે સ્વદગ્ધા ! જાવ સ અતે જીવે અણતિ જીવે તસ્સ વિ ય ણ અયં
અદ્ધે) હે સ્કન્દક ! તમને જીવના વિષયમાં જીવ અન્ત રહિત છે કે અન્ત
રહિત છે । ” એવી જગતી છે તેનું સમાધાન આ પ્રમાણે છે-

જીવોઽસંખ્યેયપ્રદેશિકઃ અસંખ્યેયપ્રદેશાવગાઢઃ, અસ્તિ પુનસ્તસ્યાન્તઃ । કાલતો
જીવો ન કદાચિત્ નાસીત્ નિત્યો નાસ્તિ પુનસ્તસ્યાન્તઃ । ભાવતો જીવોઽનંતા
જ્ઞાનપર્યવા, અનંતા દર્શનપર્યવાઃ, અનંતા ચારિત્રપર્યવા, અનંતા અગુરુલઘુપર્યવા
નાસ્તિ પુનસ્તસ્યાન્તઃ । તદંતદ્ દ્રવ્યતો જીવઃ સાંતઃ ક્ષેત્રતો જીવઃ સાંતઃ કાલતો

અંતે છેત્તઓ ણં જીવે અસંખેજ્જ પપ્પસિણ અસંખેજ્જપપ્પમોગાઢે,
અતિય પુણ સે અંતે) યાવત્ દ્રવ્ય કો અપેક્ષા સે જીવ એક હૈ ઔર વહ
અન્ત સહિત હૈ । ક્ષેત્ર કો અપેક્ષા સે જીવ અસંખ્યાત પ્રદેશી હૈ તથા
અસંખ્યત પ્રદેશો મેં વહ અવગાઢ હૈ । અનઃ વહ અન્ત સહિત હૈ ।
(કાલઓ ણં જીવે ન કયાહ ન આસી જાવ નિચ્ચે નતિય પુણ સે અંતે)
કાલ કો અપેક્ષા જીવ ભૂતકાલ મેં કમીં કોઈ સમય નહીં થા એસા નહીં
હૈ યાવત્ વહ નિત્ય હૈ-વહ અન્ત સહિત નહીં હૈ । (ભાવઓ ણં જીવે
અણંતા ણાણપજ્જવા અણંતા દંસણપજ્જવા, અણતા ચરિત્તપજ્જવા, અણતા
અગુરુલઘુપજ્જવા, નતિય પુણ સે અંતે) ભાવ કો અપેક્ષા જીવ અનત
જ્ઞાનપર્યાયરૂપ હૈ, અનન્ત દર્શનપર્યાય રૂપ હૈ, અનન્ત ચારિત્રપર્યાય રૂપ હૈ,
અનંત અગુરુ લઘુ પર્યાયરૂપ હૈ । હસ અપેક્ષા વહ અન્ત સહિત નહીં હૈ ।
(સે સં દવ્વઓ જીવે સ અંતે, છેત્તઓ જીવે સ અંતે કાલઓ જીવે

(एवं सलु जाव दव्वओ ण एगे जीवे स अते, चेत्तओ ण जीवे असंखेज्ज
पप्पसिण, असंखेज्जपप्पसोगाढे, अतिय पुण से अंते) द्रव्यनी अपेक्षाये एव
એક છે અને તે અન્ત સહિત (સાન્ત) છે, ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ એવ અસ-
ખ્યાત પ્રદેશી છે અને અસખ્યાત પ્રદેશોમા અવગાઢ છે. તેથી તે ક્ષેત્રની
અપેક્ષાએ પણ અન્તસહિત છે (કાલઓ ણં જીવે ન કયાહ ન આસી જાવ
નિચ્ચે નતિય પુણ સે અતે) કાળની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામા આવે તો
ભૂતકાળમા કોઈ એવો સમય ન હતો કે ત્યારે એવનુ અસ્તિત્વ ન હોય
ત્યાથી શરૂ કરીને તે નિત્ય છે તે અતરહિત છે ત્યા સુધીનો સૂત્રપાઠ ગ્રહણ
કરવો. “ આગળ લોકને કાળની અપેક્ષાએ અતરહિત પ્રતિપાદિત કરવા માટે
જે સૂત્રપાઠ આપ્યો છે તે અહી ગ્રહણ કરવો ” ભાવઓ ણં “જીવે અણંતા
ણાણપજ્જવા, અણંતાદસણપજ્જવા, અણતા ચાસ્તિપજ્જવા, અણંતા અગુરુલઘુપજ્જવા,
નતિય પુણ સે અતે) ભાવની અપેક્ષાએ એવ અનત જ્ઞાનપર્યાયરૂપ છે, અનત
દર્શનપર્યાયરૂપ છે, અનત ચારિત્રપર્યાયરૂપ છે, અનત અગુરુલઘુપર્યાયરૂપ છે.
અને તેથી ભાવની અપેક્ષાએ તે અતરહિત નથી પણ અતરહિત જ છે
(સે સં દવ્વઓ જીવે સ અંતે, છેત્તઓ જીવે સ અતે, કાલઓ જીવે અણતે,

જીવોઽનત માવસો જીવોઽનતઃ ॥ ૨ ॥ યા પિ ચ તે સ્કન્દક ! પુછ્યા યાવ્ત્
 કિં સાતા સિદ્ધિરનતા સિદ્ધિ સ્થાપિ ધાયમર્થ -મયા સ્કન્દક ! એવ તલુ શ્વ
 વિંધા સિદ્ધિ મશ્તા, સઘયા-દ્રવ્યત ક્ષેત્રત કાલતો માવસ દ્રવ્યત તલુ એક
 સિદ્ધિ સાન્તા । ક્ષત્રત સિદ્ધિ પચત્ત્વાર્ણિશ્વ યોજનશ્વતસહસ્રાણિ આયામવિ
 ણ્કમણ, એકા યોજનકોટિ દ્વિત્ત્વાર્ણિશ્વ ચ યામનશ્વતસહસ્રાણિ ટેષ એકોન
 પચાશ્વ યોજનશ્વતે ત્રિવિદિશોપાધિકે પરિક્ષેપણ મશ્તા અસ્તિ પુનસ્તસ્મા અન્તા ।

અર્ણત, માવસો જીવે અર્ણતે) હસ તરહ દ્રવ્ય સે જીવ સાન્ત-અન્ત
 સહિત હૈ, ક્ષેત્ર સે જીવ સાન્ત-અન્ત સહિત હૈ । પરન્તુ કાલ સે જીવ
 અનન્ત-અન્તરહિત હૈ, માવ સે જીવ અનન્ત-અન્ત રહિત હૈ ।

(જે વિ ચ તે સ્કન્દયા ! પુછ્યા જાય કિં સ અન્તા સિદ્ધિ, અર્ણતા
 સિદ્ધિ તસ્ત વિ ચ ન અર્ણ અદ્દે) હે સ્કન્દક ! તુમ્હે જો સિદ્ધિ, કે વિષય
 મેં વિકલ્પ ઉઠા હૈ-કિ સિદ્ધિ સાન્ત-અન્ત સહિત હૈ-કિ અનન્ત હૈ
 ઉસશ સમાધાન હસ પ્રકાર સે હૈ-(મય સ્કન્દયા એવ તલુ ચત્ત્વિદા-
 સિદ્ધી પળ્લસા) હે સ્કન્દક ! મૈને સિદ્ધિ ચાર પ્રકાર કી કહી હૈ (તંજહા)
 જૈસે (દ્રવ્યમો લેસમો કાલમો માવમો) દ્રવ્ય સે, ક્ષેત્રસે, કાલ સે
 ઓર માવ સે । (દ્રવ્યમો એકા સિદ્ધી સ અન્તા) દ્રવ્ય સે સિદ્ધિ એક હૈ
 ઓર ચહ અન્ત સહિત હૈ । (લેસમો નં સિદ્ધી પળ્યાલીસ જોયણસ-
 યસહસ્તાઈ આયામવિક્રમણ, એકા જોયણકોટી વાપાલીસ ચ
 જોયણમયસહસ્તાઈ ત્રીસચ જોયણસહસ્તાઈ દોષિણ ચ અઽઞ્જાવજ-

માવમો જી અર્ણતે) આ રીતે દ્રવ્યની અપેક્ષાએ એવ સાન્ત (અન્ત સહિત
 છે, ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ પણ એવ સાન્ત (અન્ત સહિત) છે પણ કાળની
 અપેક્ષાએ એવ અનન્ત છે અને માવની અપેક્ષાએ પણ એવ અનન્ત ' અન્ત
 રહિત " છે (૨) (જે વિ ચ તે સ્કન્દયા ! પુછ્યા જાય કિં સ અન્તા સિદ્ધિ,
 અન્તા સિદ્ધી સઘ વિ ચ નં અદ્દે હે સ્કન્દક ! સિદ્ધિના વિષયમા તમને એવી
 શકા ઉદ્ભવી છે કે સિદ્ધિ સાન્ત છે કે અનન્ત છે તેનુ સમાધાન આ પ્રમાણે છે
 (મય સ્કન્દયા ! એવ તલુ ચત્ત્વિદા સિદ્ધી પળ્લસા) હે સ્કન્દક ! મે સિદ્ધિ
 ચાર પ્રકારની કહી છે "તંજહા" તે પ્રકારે આ પ્રમાણે છે (દ્રવ્યમો, લેસમો,
 કાલમો માવમો) (૧) દ્રવ્યની અપેક્ષાએ (૨) ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ (૩) કાળની
 અપેક્ષાએ અને (૪) માવની અપેક્ષાએ (દ્રવ્યમો એકા સિદ્ધી સ અન્તા) દ્રવ્યની
 અપેક્ષાએ સિદ્ધિ એક છે અને તે અન્ત સહિત છે (લેસમો નં સિદ્ધી પળ
 વાલીસ જોયણસયસહસ્તાઈ આયામવિક્રમણેન એકા જોયણકોટી વાપાલીસ ચ
 જોયણમયસહસ્તાઈ ત્રીસ ચ જોયણસહસ્તાઈ દોષિણ ચ અઽઞ્જાવજજોયણસય કિંચિ

જીવોઽસંખ્યેયપ્રદેશિકઃ અસંખ્યેયપ્રદેશાવગાઢઃ, અસ્તિ પુનસ્તસ્યાન્તઃ । કાલતો જીવો ન કદાચિત્ નાસીત્ નિત્યો નાસ્તિ પુનસ્તસ્યાન્તઃ । ભાવતો જીવોઽનતા જ્ઞાનપર્યવા, અનંતા દર્શનપર્યવાઃ, અનંતા ચારિત્રપર્યવા, અનંતા અગુરુલઘુપર્યવા નાસ્તિ પુનસ્તસ્યાન્તઃ । તદંતદ્ દ્રવ્યતો જીવઃ સાંતઃ ક્ષેત્રતો જીવઃ સાંતઃ કાલતો

અતે છેત્તઓ ણં જીવે અસંખેજ્જ પપસિણ અસંખેજ્જપપસોગાઢે, અત્થિ પુણ સે અંતે) યાવત્ દ્રવ્ય કી અપેક્ષા સે જીવ એક હૈ ઓર વહ અન્ત સહિત હૈ । ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા સે જીવ અસંખ્યાત પ્રદેશી હૈ તથા અસંખ્યત પ્રદેશો મેં વહ અવગાઢ હૈ । અનઃ વહ અન્ત સહિત હૈ । (કાલઓ ણ જીવે ન કયાહ ન આસી જાવ નિચ્ચે નત્થિ પુણ સે અંતે) કાલ કી અપેક્ષા જીવ ભૂતકાલ મેં કમીં કોઈ સમય નહીં થા એસા નહીં હૈ યાવત્ વહ નિત્ય હૈ—વહ અન્ત સહિત નહીં હૈ । (ભાવઓ ણં જીવે અણંતા ણાણપજ્જવા અણંતા દંસગપજ્જવા, અણતા ચરિત્તપજ્જવા, અણતા અગુરુલઘુપજ્જવા, નત્થિ પુણ સે અંતે) ભાવ કી અપેક્ષા જીવ અનત જ્ઞાનપર્યાયરૂપ હૈ, અનન્ત દર્શનપર્યાય રૂપ હૈ, અનન્ત ચારિત્રપર્યાય રૂપ હૈ, અનત અગુરુ લઘુ પર્યાયરૂપ હૈ । હસ અપેક્ષા વહ અન્ત સહિત નહીં હૈ । (સે તં દવ્વઓ જીવે સ અંતે, છેત્તઓ જીવે સ અંતે કાલઓ જીવે

(એવ સ્થલુ જાવ દવ્વઓ ણ એગે જીવે સ અતે, છેત્તઓ ણ જીવે અસંખેજ્જ પપસિણ, અસંખેજ્જપપસોગાઢે, અત્થિ પુણ સે અંતે) દ્રવ્યની અપેક્ષાએ જીવ એક છે અને તે અન્તસહિત (સાન્ત) છે, ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ જીવ અસંખ્યાત પ્રદેશી છે અને અસંખ્યાત પ્રદેશોમા અવગાઢ છે તેથી તે ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ પણ અન્તસહિત છે (કાલઓ ણં જીવે ન કયાહ ન આસી જાવ નિચ્ચે નત્થિ પુણ સે અતે) કાળની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામા આવે તો ભૂતકાળમા કોઈ એવો સમય ન હતો કે ન્યારે જીવનુ અસ્તિત્વ ન હોય ત્યાથી શરૂ કરીને તે નિત્ય છે તે અતરહિત છે ત્યા સુધીનો સૂત્રપાઠ ગ્રહણ કરવો “ આગળ લોકને કાળની અપેક્ષાએ અતરહિત પ્રતિપાદિત કરવા માટે જે સૂત્રપાઠ આપ્યો છે તે અહી ગ્રહણ કરવો ” ભાવઓ ણં જીવે અણતા ણાણપજ્જવા, અણતાદસણપજ્જવા, અણતા ચાસ્તિપજ્જવા, અણતા અગુરુલઘુપજ્જવા, નત્થિ પુણ સે અતે) ભાવની અપેક્ષાએ જીવ અનત જ્ઞાનપર્યાયરૂપ છે, અનત દર્શનપર્યાયરૂપ છે, અનત ચારિત્રપર્યાયરૂપ છે, અનત અગુરુલઘુપર્યાયરૂપ છે. અને તેથી ભાવની અપેક્ષાએ તે અતસહિત નથી પણ અતરહિત જ છે (સે તં દવ્વઓ જીવે સ અંતે, છેત્તઓ જીવે સ અતે, કાલઓ જીવે અણતે,

અસંખ્યેયપ્રદેશાનગાદા, અસ્તિ પુનસ્તસ્યાન્ત, કાલતઃ સિદ્ધઃ સાદિકઃ પર્યય સિદ્ધઃ, નાસ્તિ પુનસ્તસ્યાન્તઃ । માત્રત સિદ્ધઃ અનતા જ્ઞાનપર્યયા, અનંતા દર્શન પર્યયા, અનંતા અગુરુરુપપર્યયા નાસ્તિ પુનસ્તસ્યાન્તઃ તદેતદ્ દ્રવ્યત સત્તુ સિદ્ધા સાન્ત, ક્ષત્રતઃ સત્તુ સિદ્ધા સાન્ત, કાલતઃ સત્તુ સિદ્ધોઽન્ત, માત્રતઃ સત્તુ સિદ્ધોઽન્તઃ । યોઽપિ ચ ત સ્કન્દક ! અયમેતદ્ભૂત આધ્યાત્મિકધિન્તિતો યાત્વ સમુદ્ભવત-કેન વા મરણેન મ્રિયમાણો બીધો વર્ષતે વા હીયતે વા તસ્યાપિ વાયમર્ષ - સોગાદે, અસ્તિ પુણ સે અતે) તથા- હે સ્કન્દક ! જો તુમ્હે પણ ચિદ્ધ સ્વ ષ્ઠા હૈ કિ સિદ્ધ સાન્ત-અન્ત સહિત હૈ કિ અનન્ત હૈ, ઉત્કા સમાધાન હસ પ્રકાર સે હૈ યહાં સધ પહિલે જૈસા કહના વાહિયે-યાત્વ દ્રવ્ય સે સિદ્ધ એક હૈ, વહ અન્ત સહિત હૈ, ક્ષેત્ર સે સિદ્ધ અસત્પાત પ્રદેશ વાલે હૈં ઔર અસત્પાત પ્રદેશોં મેં ઉત્કા અવગાહ હૈં । હસ અપેક્ષા સે બી વે અન્ત સહિત હૈં । (કાલઓ ણં સિદ્ધે માહિય અપ્રત્યક્ષિય નત્થિપુણ સે અતે) કાલસે સિદ્ધ હોતે તો સાદિ હૈં પર વે કિર અવમાન રહિત હો જાતે હૈં । હસ તરહ વે અન્ત રહિત હૈં । (માત્રઓ ણં સિદ્ધે અણંતાણાણપગ્ગવા, અણંતા વંસણપગ્ગવા, અતા અણંતગુરુરુપ પગ્ગવા, નત્થિપુણ સે અતે) માત્ર સે સિદ્ધ અનંત જ્ઞાન પર્યાયરૂપ હૈં । અનન્ત દર્શન પર્યાયરૂપ હૈં । ઉત્કા અન્ત નહીં હૈં ૪ ।

(જે ચિ ય તે સદ્યા ! હમેચારુવે અજ્ઞાતિય, ચિત્તિય જાત સમુણ ડિજત્યા-કેણ વા મરણેણ મરમાણે જીવે ઘડુહ વા હાયહ વા તસ્સ ચિ ય

જગપસાગાદે અસ્તિ પુણ સ અતે) તથા હે સ્કન્દક તમને સિદ્ધ સાન્ત (અન્ત સહિત) હે કે અન્ત (અત રહિત) કોની વે શકા છે તેનું સમાધાન આ પ્રમાણે છે-અહીં જમ્મુ આગળ કહ્યા પ્રમાણે જ સમજવાનું છે દ્રવ્યની અપેક્ષાએ સિદ્ધ કોઈ છે તે અત સહિત છે ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ સિદ્ધ અત્ર અત પ્રદેશવાળા છે અને અસત્પાત પ્રદેશવગાદી છે કો રીતે ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ પણ તેઓ અત સહિત છે (કાલઓ ણ સિદ્ધે માહિય નત્થિ પુણ સે અતે) કાળની અપેક્ષાએ સિદ્ધ સાદિ (આદિ ચુક્ત) કોય છે પણ ત્યાર બાદ તેઓ અવમાન રહિત થઈ જાય છે બા રીતે તેઓ અન્ત રહિત છે તાત્પર્ય છે હે સાદિ અન્ત છે (માત્રવા ણં સિદ્ધ અણંતાણાણપગ્ગવા, અણંતા વંસણપગ્ગવા, અણંતા અગુરુરુપ પગ્ગવા, નત્થિ પુણ સે અતે) અને બાવની અપેક્ષાએ સિદ્ધ અન્ત જ્ઞાન પર્યાય રૂપ છે અન્ત દર્શન પર્યાય રૂપ છે અન્ત અમુરુદ્ધ પર્યાય રૂપ છે તથા તમને અત કોનો નથી

(જે ચિ ય તે સદ્યા ! હમેચારુવે અજ્ઞાતિય ચિત્તિય જાત સમુણ ડિજત્યા વેજ વા મરણેણ મરમાણે જીવે ઘડુહ વા હાયહ વા તસ્સ ચિ ય ણં અયમદ્) હે સ્કન્દક !

કાલતઃ સ્વલ્પ સિદ્ધિર્ન કદાચિન્દાસીન્ યાવત નિત્યા । ભાવતશ્ચ યથા લોકસ્ય
તથા મણિતવ્યા તત્ર દ્રવ્યતઃ સિદ્ધિઃ સાંતા, ક્ષેત્રતઃ સિદ્ધિ સાંતા, કાલતઃ સિદ્ધિ-
રનતા, ભાવતઃ સિદ્ધિરનન્તા ॥૩॥ યોઽપિ ચ તે સ્કન્દક ! યાવત્ કિમનન્તઃ સિદ્ધિઃ
તદેવ યાવત દ્રવ્યતઃ સ્વલ્પ યઃ સિદ્ધઃ સાંત, ક્ષેત્રતઃ સિદ્ધોઽસંખ્યેયમદેશિકો-

જોયણસળ કિંચિ વિસેસાહિણ પરિક્ષેવેણં પળ્ળત્તા) ક્ષેત્ર સે સિદ્ધિ કી
લઘાઈ ઓર ચૌઢાઈ ૪૫ પૈતાલીસ લાખ યોજન કી હૈ । ઓર દૂરુકી
પરિધિ યક કરોઢ ૪૨ દયાલીમ લાખ તીસ હજાર દો સો શુનચાસ ૪૯
યોજન સે ભી કુલ્લ અધિક હૈ (અત્થિ પુળ સે અંતે) હસ અપેક્ષા વહ
સિદ્ધિ અન્ત સહિત હૈ । (કાલઓ ણં સિદ્ધી ન કયાઈ ન આસી જાવ
ણિચ્ચા) કાલ સે સિદ્ધિ ભૂતકાલ મેં કમી નહીં હુઈ એસી ઘાત નહીં હૈ,
યાવત વહ નિત્ય હૈ (ભાવઓ ય જહા લોચસસ તહા ભાણિયવ્વા)
ભાવ સે સિદ્ધિ લોક કી તરહ જાનની ચાહિયે । હસ તરહ (દવ્વઓ
સિદ્ધિ સ અંતા, હેત્તઓ સિદ્ધી સ અંતા કાલઓ સિદ્ધી અળંતા, ભાવઓ
સિદ્ધી અળંતા) દ્રવ્ય સે સિદ્ધિ અન્ત સહિત હૈ, ક્ષેત્ર સે ભી સિદ્ધિ અન્ત
સહિત હૈ । પર કાલ સે સિદ્ધિ અન્ત રહિત હૈ-અનન્ત હૈ ઓર ભાવ સે
ભી સિદ્ધિ અન્ત રહિત હૈ-અનન્ત હૈ ૩ ।

(જે વિ ય તે સંદયા જાવ કિં અળંતે સિદ્ધે-તં ચેવ જાવ દવ્વઓ
ળં યો સિદ્ધે સ અતે, હેત્તઓ ણં સિદ્ધે અસંખેજ્જપણસિણ, અસંખેજ્જપણ-

વિસેસાહિણ પરિક્ષેવેણ પળ્ળત્તા) ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ સિદ્ધિની લઘાઈ અને પડોળાઈ
૪૫ લાખ યોજનની છે, અને તેની પરિધિ (પરિમિતિ) એક કરોડ એતાળીસ
લાખ ત્રીસ હજાર ગસો ઝોગણપચાસ યોજનાથી ઠાઠક વધારે છે (અત્થિ
પુળ સે અંતે) આ દૃષ્ટિએ વિચારવામાં આવે તો સિદ્ધિ અંત સહિત છે
(કાલઓ ણ સિદ્ધી ન કયાઈ ન આસી જાવ ણિચ્ચા) “ કાળની અપેક્ષાએ
ભૂતકાળમાં કદી પણ સિદ્ધિ નુ અસ્તિત્વ ન હોય એવું બન્યું નથી ” ત્યાંથી શરૂ
કરીને તે નિત્ય છે ” ત્યાં સુધીનો પાઠ ગ્રહણ કરવો (ભાવઓ જહા લોચસસ તહા
ભાણિયવ્વા) લાવની અપેક્ષાએ સિદ્ધિના વિષયમાં લોકની જેમ જ સમજવું.
આ રીતે (દવ્વઓ સિદ્ધિ સઅતા, હેત્તઓ સિદ્ધી સઅતા, કાલઓ સિદ્ધી-
અળંતા, ભાવઓ સિદ્ધી અળંતા) દ્રવ્યની અપેક્ષાએ સિદ્ધિ અત સહિત છે
ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ પણ સિદ્ધિ અત સહિત છે અને લાવની અપેક્ષાએ પણ
સિદ્ધિ અત સહિત છે (જે વિ ય તે સંદયા જાવ કિં અળંતે સિદ્ધે તં ચેવ-
જાવ દવ્વઓ ણં યો સિદ્ધે સઅતે, હેત્તઓ ણં સિદ્ધે અસંખેજ્જપણસિણ, અસંખે

जीवोऽनैर्यैरयि मन्त्राणां रात्रिमानं सयोजयति, तिर्यग्मनुष्यद्वयं मन्त्राणां रात्रिमानं सयोजयति अनादिकं च खलु अनवद्वयदीर्घांश्च चातुरतससारकां तारमनुपरियति, तदेतद् वास्त्वमेन म्रियमाणो जीवो वर्धते, तदेतद् वास्त्वमरणम् । अथ किं तत्

शरीर के भीतर शस्त्रादिक के प्रवेश होनेपर मरना, तद्भवमरण ४- जिस भव में है उस भव से पर्यायान्तरित होकर फिर उसी भव में जन्मलेना, गिरिपतन २-पहाड़ से गिरकर मरना, तरुपतन ६- वृक्ष से गिर कर मरना, ७ जलप्रवेश ८-जल में डूब कर मरना, ज्वलनप्रवेश -अग्नि में प्रवेश करके मरना ९ विषभक्षण ९- विष खाकर मरना, शस्त्रोपपात १०-शस्त्र की चोट खाकर मरना, वैहायस ११-वृक्ष आदिकी छाल आदि पर कपड़ा आदि की फाँस बना उसमें अपना गला फँसा कर मरना, गृध्रस्पृष्ट १२-गृध्र आदि जानवरों के द्वारा अपने को खुसा कर मरना (इच्छे तेर्ण म्दया ! दुर्वाहसविदेर्ण पालमरणेण मरमाणे जीवे अर्णतेहि नैरह्यमवगमणेहि अप्पाणं संजोएइ) इस प्रकार इन चार प्रकार के पालमरण से मरता हुआ जीव अपने आपको अनन्त नैरयिक भवों से युक्त करता है । (तिरियमनुप देव भवगमणेहि अप्पाणं संजोएइ (तिर्यश्च, मनुष्य और देवों के भव -ग्रहणों से अपने आपको युक्त करता है । (अणाइयं च णं -अणवद्गम दीहमद्व चातुरंत संसारकान्तारं अणुपरियइ) अनादि, अनन्त, दीर्घरास्तावाले, चारगतिरूप संसारकान्तार में चारचार भटकना

यत्तु भवेषु (४) तरुपतनमरण-के पर्यायभां रहेला होय ते पययने अग्निने क्षरीधी ज्वे पर्यायभां ४ मधारणु करवे। पठे तेतु भवेषु (५) गिरिपतन-पहाड़ परधी पट्टी जवाधी यत्तु भवेषु (६) तरुपतन-वृक्षपरधी पट्टी जवाधी यत्तु भवेषु (७) जलप्रवेश-पाणीभा डूणी जवाधी यत्तु भवेषु (८) ज्वलन मरण-आगधी जगिने यत्तु भवेषु (९) विषभक्षणधी भवेषु-अरे जवाधी यत्तु भवेषु (१०) शस्त्रोपपात-शस्त्रेभा वा वाजवाधी यत्तु भवेषु (११) वैहायसमे क्षामे भाधने यत्तु भवेषु अने (१२) गृध्रस्पृष्ट भवेषु-जीव वजरे पक्षीमे के जानवरोंद्वारा क्षापी जवाधी यत्तु भवेषु (इच्छे तेर्ण म्दया ! दुर्वाहसविदेर्ण पालमरणेण मरमाण जीवे अर्णतेहि नैरह्यमवगमणेहि अप्पाणं संजोएइ) आ रीते चार प्रकारना गाल भवेषुभी भवतो एव पीताने अनन्त नारय भवेषु यत्तु भवेषु (४) तिरिय मनुष्य ईव भवगमणेहि अप्पाणं संजोएइ) तिय य, मनुष्य अने देवना भव भवेषुभी पीताने युक्त करे छे (अणाइयं च णं अणवद्गम दीहमद्व चातुरंत संसारकान्तारं अणुपरियइ) तेमज्ज अनादि, अनन्त रीध भागवाग, चार अतिवृथ मन्त्रां कान्तारभां (संसार क्षी वनभां) चारचार

एवं खलु स्कन्दक ! मया द्विविधं मरणं प्रज्ञप्तम् तद्यथा—बालमरणं च पण्डितमरणं च । अथ किं तद् बालमरणम् ? बालमरणं द्वादशविधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा—बल्यमरणं १, वशार्तमरणम्, अंत शल्यमरणम् २, तद्भवमरणं ४, गिरिपतनम् ५, तरुपतनम् ६, जलप्रवेश ७, जलनप्रवेशः ८, विषभक्षणम् ९, शस्त्रापादनम् १०, वैहायसं ११, गृध्रस्पृष्टम् १२ । इत्येतेन स्कन्दक ! द्वादशविधेन बालमरणेन म्रियमाणो-

ण અયમદ્દે) તથા-હે સ્કન્દક ! જો તુમ્હે યહ હસ પ્રકાર કા આધ્યાત્મિક, ચિન્તિત યાવત્ મનોગત સંકલ્પ ઉત્પન્ન હુઆ હૈ કિ જીવ કિસ મરણ સે મરકર અપને સંસાર કી વૃદ્ધિ સે વઢતા હૈ ઔર કિસ મરણસે મર કર વહ અપને સંસાર કી હાનિ સે ઘટતા હૈ-સો ઉસકા મી યહ સમાધાન હૈ કી-(એવં खलु खंदया) હે સ્કન્દક ! (મણ દુવિહે મરણે પન્નત્તે) મૈને મરણ દો પ્રકાર કા કહા હૈ-(તંજહા) વે ઉસકે દો પ્રકાર યે હૈન-(બાલમરણે ય પંડિયણે ય) ૧ બાલમરણ ઔર દૂસરા પણ્ડિતમરણ । (સે કિ તં બાલમરણે) બાલ મરણકયા હૈ ? ઉત્તર (બાલમરણે દુબાલસવિહે પન્નત્ત) બાલમરણ બારહ પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ । (તજહા) જૈસે-(બલ્યમરણે, વસદ્દમરણે, અંતોસલ્લમરણે, તદ્ભવમરણે, ગિરિપડણે, તરુપડણે, જલપ્પવેસે, જલણપ્પવેસે, વિસમકલ્ણે, સત્થો વાહણે, વેહાણસે, ગિદ્ધપિટ્ટે) બલ્યમરણ ૧-તડફ તડફ કર મરના, વશાર્તમરણ ૨-પરાવીનતા પૂર્વક ઝૂર ૨ કર મરના, અન્તઃશલ્યમરણ ૩

તમારા મનમાં આ પ્રકારનો આધ્યાત્મિક, ચિન્તિત (યાવત્) મનોગત સંકલ્પ ઉત્પન્ન થયો છે કે કયા પ્રકારના મરણથી મરીને જીવ પોતાનો સંસાર વધારે છે. અને કયા પ્રકારના મરણથી મરીને જીવ પોતાનો સંસાર ઘટાડે ?-તેનું પણ આ પ્રમાણે સમાધાન છે-(એવં खलु खंदया) હે સ્કન્દક ! (મણ દુવિહે મરણે પન્નત્તે) મેં જે પ્રકારના મરણ કહ્યાં છે, (તંજહા) તે પ્રકારો આ પ્રમાણે છે-(બાલમરણે ય પંડિયમરણે ય) (૧) બાલમરણ અને (૨) પંડિત મરણ (સે કિં તં બાલમરણે ?) બાલમરણ એટલે શું ? ઉત્તર-(બાલમરણે દુબાલસવિહે પન્નત્ત) બાલમરણ બાર પ્રકારનાં કહ્યાં છે-(તજહા) તે પ્રકારો આ પ્રમાણે છે (બલ્યમરણે, વસદ્દમરણે, અંતોસલ્લમરણે, તદ્ભવમરણે, ગિરિપડણે, તરુપડણે, જલપ્પવેસે, જલણપ્પવેસે, વિસમકલ્ણે, સત્થોવાહણે, વેહાણસે, ગિદ્ધપિટ્ટે) (૧) બલ્યમરણ-તરફડી તરફડીને થતું મરણ (૨) વશાર્તમરણ-પરાધીનતા પૂર્વક થતું મરણ, (૩) અન્તઃશલ્ય મરણ શરીરમાં શસ્ત્રાદિ પેસી જવાથી

जीवोऽनन्तैर्नैरयिषमवग्रहणैरात्मानं सयोजयति, तिर्यग्मनुष्यद्वयं भवग्रहणैरात्मानं
सयोजयति अनादिकं च सल्ल अनवदग्रदीर्घाद्यं चातुरतससारफातारमनुपर्ययति,
तदेतद् बाह्यमणेन म्रियनाणो जीवो वर्धते, तदेतत् बाह्यमरणम् । अथ किं तद्

शरीर के भीतर शस्त्रादिक के प्रवेश होनेपर मरना, तद्भवमरण ४-
जिम भय में है उस भय से पर्यायान्तरित होकर फिर उसी भय में
जन्मलेना, गिरिपतन २-पहाड़ से गिरकर मरना, तम्पतन ६-
पृष्ठ से गिर कर मरना, ७ जलप्रवेश ८-जल में डूब कर मरना,
ज्वलनप्रवेश -अग्नि में प्रवेश करके मरना ९ विषमक्षण ९-
विष स्वाकर मरना, शस्त्रोपपात १०-शस्त्र की चोट स्वाकर मरना,
घेहायस ११-पृष्ठ आदिकी डाल आदि पर कपड़ा आदि की फांस बना
वस्त्रमें अपना गला फँसा कर मरना, घृघ्रस्पृष्ट १२-घृघ्र आदि जानवरों
के द्वारा अपने को खुषा कर मरना (इच्छे तेर्ण म्वक्ष्या ! दुबालसविदेव
पालमरणेण मरमाणे जीवे अणंतेहि नेरइयमवगगहणेहि अप्पाणं सं-
जोएइ) इस प्रकार इन चार प्रकार के बालमरण से मरता हुआ जीव
अपने आपको अनन्त नैरयिष भवों से युक्त करता है । (तिरियमणुय
देव भवगगहणेहि अप्पाणं संजोएइ (तिर्यञ्च, मनुष्य और देवों के भव
-ग्रहणों से अपने आपको युक्त करता है । (अणाइय च णं -
अणवदग्र दीहमद्व चातुरंत संसारकनार अणुपरियइ) अनादि,
अनंत, दीर्घरास्तावाले, चारगतिरूप संसारकान्तर में बारबार भटकता

यत्तु भस्व (४) वृक्षभस्व-के पर्यायार्थ २६वां छेद ते पर्यायने छेदने
इरीधी के ७ पर्यायार्थ ७ भस्व ४२वां पठे तेत्तु भस्व (५) त्रिरिपतन-
पडा ५२वीं पडी ७वां यत्तु भस्व (६) वृक्षपतन-पृष्ठपत्ती पडी ७वां यत्तु
भस्व (७) ज्वलनप्रवेश-पाव्नीमा इणी ७वां यत्तु भस्व (८) ज्वलन
भस्व-आगधी जगीने यत्तु भस्व (९) विषमक्षणधी भस्व-अरे आवाधी यत्तु
भस्व (१०) शस्त्रोपपात-शस्त्रोना वा वानवाधी यत्तु भस्व (११) वेदावसने
क्षेत्रि आधने यत्तु भस्व अने (१२) घृघ्रस्पृष्ट भस्व-जीप वजेरे पत्तीया के
अनपरेक्षारा क्षीरी अवाधी यत्तु भस्व (इच्छे तेग दाया ! दुबालसविदेव
पालमरणेण मरमाणे जीवे अणंतेहि नेरइयमवगगहणेहि अप्पाणं संजोएइ)
आ दीते नार प्रक्षारणा नास भस्वधी मरते एव पीताने अनंत नारक अवेधी
मुक्ता ४२ (तिरिय मनुय देव भवगगहणेहि अप्पाणं संजोएइ) तिथ य, मनुष्य
अने देवना ७व श्रद्धधुधी पीताने मुक्त ४२ छे (अणाइय च णं अप्परम
दीहमद्व चातुरंतससारकनार अणुपरियइ) तेभ्य अनादि अनंत, दीर्घ
भाज नाग्य, आर १ संसार कान्तरार्थ (संसार ३पी वनार्थ) बारबार

પંડિતમરણમ્ ? પંડિતમરણં દ્વિવિધં પ્રજ્ઞપ્તમ્ તથા—પાદપોપગમનં ચ ભક્તપ્રત્યા-
 ख्यानं च । अथ किं तत्पादपोगमनम् ? पादपोगमनं द्विविधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा—
 निर्हारिमं च अनिर्हारिमं च नियमात् अप्रतिकर्मः तदेतत्पादपोगमम् । अथ किं
 तत् भक्तप्रत्याख्यानम् ? भक्तप्रत्याख्यानं द्विविधं प्रज्ञप्तं, तद्यथा—निर्हारिमं च अनि-
 र्हारिमं च नियमात् स प्रतिकर्म, तदेतद् भक्तप्रत्याख्यानम् । इत्येतेन स्कन्दक ।

રહતા હૈ । (સેત્તં વાલમરણેણ મરમાણે જીવે વડ્ઢહ) હસ તરહ વાલમરણ
 સે મરા હુઆ જીવ અપને સંસાર કે વઢ જાને કે કારણ વઢતા હૈ (સે
 ત્તં વાલમરણે) યહ વાલમરણ હૈ—અર્થાત્—યહ વાલમરણ કા સ્વરૂપ હૈ ।
 (સે કિં તં પંડિયમરણે) વહ પણ્ડિત મરણ ક્યા હૈ ? (પંડિયમરણે દુવિ
 હે પળ્ણત્તે) પણ્ડિત મરણ દો પ્રકાર કા કહા હૈ (તંજહા—પાઓવગમણે
 ય ભક્તપચ્ચક્ષાણે ય) વહ હસ તરહ સે પાદપોપગમન ઓર ભક્ત પ્રત્યા-
 ख्यान (સે કિં તં પાઓવગમણે) પાદપોપગમન કિસે કહતે હૈ ? (પાઓવ-
 ગમણે દુવિહે પળ્ણત્તે) પાદપોપગમન દો પ્રકાર કા હોતા હૈ—(તંજહા) જૈસે
 (નીહારિમે ય અનિહારિમે ય) નિર્હારિમ ઓર અનિર્હારિમ) નિયમા
 અપ્પડિક્કમે) નિયમ સે યે દાનોં પાદપોપગમન કે પ્રકાર પ્રતિકર્મ
 (સેવાશ્રૂષા) સે રહિત હોતે હૈ । (સે કિં તં ભક્તપચ્ચક્ષાણે ?) ભક્ત
 પ્રત્યાખ્યાન કા ક્યા સ્વરૂપ હૈ (ભક્તપચ્ચક્ષાણે દુવિહે પળ્ણત્તે) ભક્ત
 પ્રત્યાખ્યાન દો પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ (તજહા) જૈસે—(નીહારિમે ય
 અનીહારિમે ય) નીર્હારિમ ઓર અનિર્હારિમ (નિયમા સપ્પડિક્કમે)
 ભક્ત પ્રત્યાખ્યાન કે યે દોનોં પ્રકાર પ્રતિકર્મ સહિત હોતે હૈ । (સે ત્તં

પરિભ્રમણુ કરે છે. (સે ત્તં વાલમરણેણ મરમાણે જીવે વડ્ઢહ) આ રીતે બાલ
 મરણુથી મરતો જીવ પોતાનો સંસાર વધવાથી વધે છે. એટલે કે બાલમરણુથી
 મરતા જીવને સંસારમા વાર વાર પરિભ્રમણુ કરવું પડે છે. (સેત્તં વાલમરણે)
 બાલમરણુનું ઉપર કહ્યા પ્રમાણેનું સ્વરૂપ છે .

(સે કિં તં પંડિયમરણે) પંડિત મરણુનું કેવું સ્વરૂપ છે । ઉત્તર—(પંડિયમરણે-
 દુવિહે પળ્ણત્તં) પંડિત મરણુના બે પ્રકાર કહ્યા છે. (ત જહા) તે પ્રકારો
 આ પ્રમાણે છે (પાઓવગમણે ય ભક્તપચ્ચક્ષાણે ય) (૧) પાદપોપગમન અને
 (૨) ભક્ત પ્રત્યાખ્યાન (સે કિં તં પાઓવગમણે) પાદપોપગમન એટલે શું ?
 (પાઓવગમણે દુવિહે પળ્ણત્તે) પાદપોપગમન મરણુના બે પ્રકાર છે. (ત જહા)
 તે પ્રકારો આ પ્રમાણે છે (નીહારિમે ય અનિહારિમે ય) (૧) નિર્હારિમ અને
 (૨) અનિર્હારિમ. (નિયમા અપ્પડિક્કમે) નિયમથી જ પાદપોપગમનના આ

દ્વિવિધેન પંથિતમરણેન ધ્રિયમાણો જીવોઽનન્તેર્નૈરયિક મયગ્રહણેરાત્માન વિસયોઽ
યતિ, યાવદ્વચતિગ્રમસિ તદેતદ્ પંથિતમરણેન ધ્રિયમાણો જીવો હીયતે તદેતત્પ
થિતમરણમ્ । इत्येतेन स्कन्दक ! द्विविधेन मरणेन ध्रियमाणो जीवो कर्तव्ये वा
हीयते वा ॥ ५ ॥ सू० १२ ॥

મત્સપચ્ચક્ષ્ણાણે) હસ પ્રકાર યહ મત્સપત્ત્યાસ્થાન કા સ્વરૂપ હૈ ।
(इच्छेतेणं स्वप्ना । दुबिहेणं पण्डियमरणेण मरमाणे जीवे अण्तेहि
नेरइयमवगहणेहिं अप्पाणं विसजोएइ, जाव वीइवयइ) હસ પ્રકાર હૈ
સ્કન્દક ! इन दोनों प्रकार के पण्डित मरण से मरा हुआ जीव अनन्त
नारक आदिजीवों के भय ग्रहणों से अपने आपको युक्त नहीं करता है,
यावत् वह ससाररूप कान्ताह को पार कर देना है । (से च पण्डियम
रणेण मरमाणे जीवे हायइ, से च पण्डियमरणे) हस पण्डितमरण से मरा
हुआ जीव अपने ससार की हानि होने के कारण चटना है । हस प्रकार
से यह पण्डितमरण का स्वरूप है । (इच्छेएणं स्वप्ना दुबिहेणं मरणेण
मरमाणे जीवे वइइ वा हायइ वा) इस तरह है स्कन्दक ! इन दो प्रकार
के मरणों से मरण करता हुआ जीव मरने मरने के पड़ जाने से चटना
है और अपने ससार के चट जाने से चटता है ॥

અન્ને પ્રકરના પ્રતિકર્મથી સહિત હોય છે (સે કિં વ મત્સપચ્ચક્ષ્ણાણે ?) ભક્ત-
પ્રત્યાખ્યાનનું કેવું સ્વરૂપ છે ? ઉત્તર (મત્સપચ્ચક્ષ્ણાણે દુબિહે પણ્ણતે) ભક્ત-
પ્રત્યાખ્યાનના બે પ્રકાર હતા છે (સ જહા) તે આ પ્રમાણે છે (નીહરિમે
ચ બનોહરિમે ય) (૧) નિહોરિમ અને (૨) અનિહોરિમ. (નિયમા સ્વપ્નિ
ક્રમે) ભક્તપ્રત્યાખ્યાનના આ બે પ્રકાર પણ પ્રતિકર્મથી સહિત હોય છે
(સે સ્ત મત્સપચ્ચક્ષ્ણાણ) ભક્ત પ્રત્યાખ્યાનનું આ પ્રકારનું સ્વરૂપ હોય છે,
(इच्छेतेण स्वप्ना । दुबिहेणं पण्डियमरणेण मरमाणे जीवे अण्तेहिं नेरइय
मवगहणेहिं अप्पाणं विसजोएइ, जाव वीइवयइ) હે સ્કન્દક ! બે બન્ને પ્રકારના
પાડિત મરણથી મરતો છવ અનત નારક, મનુષ્ય તિર્યંચ અને દેવ ભવશ્રે-
ણથી પોતાની બાતને મુક્ત કરતો નથી અને અનાદિ અનત દીર્ઘમાર્ગવાળા
આર મતિરૂપ સસારકાતાને તે જોળાવી બાધ છે (સ સ પંથિયમરણેણ મર
માણે જીવે હાયइ સ સ પંથિયમરણે) આ રીતે પાડિતમરણથી મરતો છવ
પોતાનો સસાર ધગે છે પાડિત મરણનું આ બાતનું સ્વરૂપ છે. (इच्छेएणं
स्वप्ना दुबिहेण मरणेण मरमणे जीवे वइइ वा हायइ वा) હે સ્કન્દક ! આ
રીતે બે પ્રકારના મરણથી મરણ પમતો છવ પોતાનો સસાર વધી જવાથી
વધે છે અને પોતાનો સસાર ધગી જવાથી ધટે છે એન્ને કે પાડિત મરણથી
મરનાર છવને સસાર ધગે છે પણ બાહ્ય મરણથી મરનાર છવને સસાર વધે છે

પંડિતમરણમ્ ? પંડિતમરણં દ્વિવિધં પ્રજ્ઞપ્તમ્ તદ્યથા-પાદપોપગમનં ચ ભક્તપ્રત્યા-
 ય્યાનં ચ । અથ કિં તત્પાદપોપગમનમ્ ? પાદપોપગમનં દ્વિવિધં પ્રજ્ઞપ્તમ્, તદ્યથા-
 નિર્હારિમં ચ અનિર્હારિમં ચ નિયમાત્ અપ્રતિકર્મઃ તદેતત્પાદપોપગમમ્ । અથ કિં
 તત્ ભક્તપ્રત્યાય્યાનમ્ ? ભક્તપ્રત્યાય્યાનં દ્વિવિધં પ્રજ્ઞપ્તં, તદ્યથા-નિર્હારિમં ચ અનિ-
 ર્હારિમં ચ નિયમાત્ સ પ્રતિકર્મ, તદેતદ્ ભક્તપ્રત્યાય્યાનમ્ । इत्येतेन स्कन्दक ।

રહતા હૈ । (સેત્તં ચાલમરણેણ મરમાણે જીવે વડ્ઢહ) હસ તરહ ચાલમરણ
 સે મરા હુઆ જીવ અપને સંસાર કે વઢ જાને કે કારણ વઢના હૈ (સે
 ત્તં ચાલમરણે) યહ ચાલમરણ હૈ-અર્થાત્-યહ ચાલમરણ કા સ્વરૂપ હૈ ।
 (સે કિં તં પંડિયમરણે) વહ પણિડત મરણ ક્યા હૈ ? (પંડિયમરણે દુવિ
 હે પળ્ળત્તે) પણિડત મરણ દો પ્રકાર કા કહા હૈ (તંજહા-પાઓવગમણે
 ય ભક્તપચ્ચક્ષાણે ય) વહ હસ તરહ સે પાદપોપગમન ઓર ભક્ત પ્રત્યા-
 ય્યાન (સે કિં તં પાઓવગમણે) પાદપોપગમન કિસે કહતે હૈ ? (પાઓવ-
 ગમણે દુવિહે પળ્ળત્તે) પાદપોપગમન દો પ્રકારકા હોતા હૈ-(તંજહા) જૈસે
 (નીહારિમે ય અનિહારિમે ય) નિર્હારિમ ઓર અનિર્હારિમ) નિયમા
 અપ્પડિક્કમે) નિયમ સે યે દાનોં પાદપોપગમન કે પ્રકાર પ્રતિકર્મ
 (સેવાશ્રૂષા) સે રહિત હોતે હૈ । (સે કિં તં ભક્તપચ્ચક્ષાણે ?) ભક્ત
 પ્રત્યાય્યાન કા ક્યા સ્વરૂપ હૈ (ભક્તપચ્ચક્ષાણે દુવિહે પળ્ળત્તે) ભક્ત
 પ્રત્યાય્યાન દો પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ (તજહા) જૈસે-(નીહારિમે ય
 અનીહારિમે ય) નીર્હારિમ ઓર અનિર્હારિમ (નિયમા સપ્પડિક્કમે)
 ભક્ત પ્રત્યાય્યાન કે યે દોનોં પ્રકાર પ્રતિકર્મ સહિત હોતે હૈ । (સે ત્તં

પરિભ્રમણુ કરે છે. (સે ત્તં ચાલમરણેણ મરમાણે જીવે વડ્ઢહ) આ રીતે બાલ
 મરણુથી મરતો જીવ પોતાનો સંસાર વધવાથી વધે છે. એટલે કે બાલમરણુથી
 મરતા જીવને સંસારમા વાર વાર પરિભ્રમણુ કરવું પડે છે. (સેત્તં ચાલમરણે)
 બાલમરણુનું ઉપર કહ્યા પ્રમાણેનું સ્વરૂપ છે .

(સે કિં તં પંડિયમરણે) પંડિત મરણુનું કેવું સ્વરૂપ છે । ઉત્તર-(પંડિયમરણે-
 દુવિહે પળ્ળત્તે) પંડિત મરણુના બે પ્રકાર કહ્યા છે. (ત જહા) તે પ્રકારો
 આ પ્રમાણે છે (પાઓવગમણે ય ભક્તપચ્ચક્ષાણે ય) (૧) પાદપોપગમન અને
 (૨) ભક્ત પ્રત્યાય્યાન (સે કિં તં પાઓવગમણે) પાદપોપગમન એટલે શું ?
 (પાઓવગમણે દુવિહે પળ્ળત્તે) પાદપોપગમન મરણુના બે પ્રકાર છે (ત જહા)
 તે પ્રકારો આ પ્રમાણે છે (નીહારિમે ય અનિહારિમે ય) (૧) નિર્હારિમ અને
 (૨) અનિર્હારિમ. (નિયમા અપ્પડિક્કમે) નિયમથી જ પાદપોપગમનના આ

વિ ય તે સ્વદયા' યો પિ ચ તે સ્વન્દક ! 'અયમેયારુષ' અયમ્ એતદ્વપ 'મજ્ઞ
ત્થિપ-વિત્થિપ કપ્પિપ પથ્થિપ મનોમપ સકપ્પે સમુપ્પજિત્થા' આધ્યાત્મિક,
ચિન્તિત કસ્થિત પ્રાર્થિતો મનોગત સંકલ્પઃ સમુદપચત- કિં સ અંતે છોપ
અંતે છોપ' કિં સાન્ત લોકઃ અન્તઃ લોકઃ, હે સ્વન્દક ! પિગ્ગલકન પૂરુષ
તવ મનસિ પરંવિધો વિચાર સમુન્યમ્ યદય લોક સાંત અન્તો વેતિ 'તસ્સ
વિ ય ણ અય અદ્દે' તસ્યાપિ ચ સલ્લ અયમયઃ 'એવ સલ્લ મપ સ્વદયા ચડઙ્ગિદ્દે
છોપ પજ્જે' એવ સલ્લ મયા સ્વન્દક ! ચતુર્વિધો લોકઃ પ્રજ્ઞઃ, 'ત જહા' તથા
- 'દુવ્વમ્મો સેત્તમ્મો કાલમ્મો માવમ્મો' દ્રવ્યતઃ ક્ષેત્રતઃ કાલતો માવતમ્મ, તમ

યથાર્થ સમાધાન નિમિત્ત મેં આપકે પામ આયા હુ । સ્વન્દક કી હસ
શાત કો સુનકર પ્રશ્નને કહા કિ "સ્વદયા !" હે સ્વન્દક સુનો "તે"
તુમ્હે "જે વિ" જો મી પિંગલક નિર્ગન્ય કે પૂછને પર અયમેયારુષે પદ
હસ પ્રકાર કા "આજ્ઞસ્થિપ" આધ્યાત્મિક, 'વિત્થિપ' ચિન્તિત,
'પથ્થિપ' પ્રાર્થિત, 'કપ્પિપ' કલ્પિત 'મનોગપ' મનોગત 'સકપ્પ'
સંકલ્પ 'સમુપ્પજિત્થા' ચરણ હુઆ હૈ કિ "કિં સ અંતે છોપ અગતે
છોપ' લોક કયા અન્ત સહિત હૈ કિ અન્તરહિત હૈ ? સો "તસ્સ વિ ય
ણ અયં અદ્દે પજ્જે" હસકા વિચાર સૈદ્ધાન્તિક દષ્ટિ સે હસ પ્રકાર
કિયા ગયા હૈ, સુનો- "સ્વદયા" હૈ સ્વન્દક ! 'મપ ચડઙ્ગિદ્દે છોપ
પજ્જે" મેંને લોક કી ચાર પ્રકાર સે પ્રરૂપ ગા કી હૈ- 'ત જહા" જો
હસ પ્રકાર સે હૈ- "દુવ્વમ્મો સેત્તમ્મો કાલમ્મો માવમ્મો" દ્રવ્ય સે, ક્ષેત્ર

પ્રશ્નો ! અપની વાત સાચી હૈ અને તેનો યથાર્થ ઉત્તર જાણવાને મટેજ હું
આપની પાસે આવ્યો છું સ્વન્દકની તે વાત સાંજીને મહાવીર પ્રશ્નને તેને
હમ્મુ- "સ્વદયા !" હે સ્વન્દક ! 'તે' તમને "જે વિ" પિંગલક નિર્ગન્ય
કે પ્રશ્નો પૂછ્યા છે તેને લીધે 'અયમેયારુષે' આ પ્રકારનો "મજ્ઞસ્થિપ"
આધ્યાત્મિક, 'વિત્થિપ' ચિન્તિત, "પથ્થિપ" પ્રાર્થિત "કપ્પિપ" કલ્પિત
'મનોગપ' મનોગત "સકપ્પે" સંકલ્પ 'સમુપ્પજિત્થા' ઉત્પત્ત થયો છે
કે 'કિં સ અંતે છોપ અગતે છોપ ?' લોક અતસહિત છે કે અન્તરહિત છે ?
તો "તસ્સ વિ ય ણ અયમ્ અદ્દે પજ્જે" તેનો આ રીતે અર્થ કરવામા આવ્યો
છે- "સ્વદયા !" હે સ્વન્દક ! 'મપ ચડઙ્ગિદ્દે છોપ પજ્જે" મેં લોકની
ચાર પ્રકારે પ્રરૂપણા કરી છે (૧) જહા તે આ પ્રમાણે છે 'દુવ્વમ્મો સેત્તમ્મો
કાલમ્મો માવમ્મો" (૧) દ્રવ્યની (૨) ક્ષેત્રની, (૩) કાળની અને (૪) આપની
અપેક્ષાએ મેં આશીતે ચાર પ્રકારે લોકની પ્રરૂપણા કરી છે "દુવ્વમ્મો ણં પગો

ટીકા—‘સે ણૂં તું યંદયા’ તદ્ નૂનં ત્વં સ્કન્દક ! ‘સાવત્થીય-નયરીય’ શ્રાવસ્ત્યાં નગર્યામ્ ‘પિંગલણં નિયંટેણં’ પિંગલકેન નિર્ગ્રન્થેન ‘વેસાલિય સાવયેણં’ વૈશાલિક શ્રાવકેણ ‘ઈણં અક્ખેવં પુચ્છિય’ ઇમમાક્ષેપં પૃષ્ઠઃ—તદેવાહ—‘માગહા’ હે માગધ ! હે સ્કન્દક ! કિં સ અંતે લોણ અણંતે લોણ’ કિં સાન્ત. લોકઃ અનંતઃ લોકઃ ? ‘એવં તં ચેવ જાવ જેણેવ મમં અતિય તેણેવ હવ્વં—આગણ’ એવં તદેવ યાવત્ યત્રૈવ મમાન્તિકં તત્રૈવ ગીઘ્રમાગતઃ ઇહ યાવત્પદેન—પૂર્વોક્તં સર્વં વર્ણન સંગ્રાહ્યમ્ । ‘સે ણૂં યંદયા’ તદ્ નૂનં સ્કન્દક ! ‘અયમદ્દે સમદ્દે’ અયમર્થ. સમર્થઃ ? । ઇદં સર્વં સત્યં કિમ્ ? સ્કન્દકપ્રાહ—‘હંતા અત્થિ’ હન્ત અસ્તિ હે ભદન્ત ! દેવાનુપ્રિયેણ કથિત તત્સર્વં સત્યમેવ । ભગવાનાહ—‘જે

ટીકાર્થ—‘સે ણૂં તું યંદયા’ હે સ્કન્દક ! તુમ ‘સાવત્થીય નય-રીય’ શ્રાવસ્તી નગરી મેં ‘વેસાલિય સાવયેણં’ વૈશાલિક શ્રાવક હૈ અર્થાન્ જિન પ્રવચન કે સુનને મેં રસિક જેસે “પિંગલણં નિયંટેણં” પિંગલક નિર્ગ્રન્થ દ્વારા ‘ઈણ અક્ખેવં પુચ્છિય’ હિસ આક્ષેપ-પ્રશ્નકો પૂછે ગયે હો કિ—“માગહા” હે મગધ દેશોત્પન્ન સ્કન્દક ! ‘કિં સ અંતે લોણ અણંતે લોણ’ લોક સાન્ત-અન્તસહિત હૈ કિ અનન્ત-અન્તરહિન હૈ ? ‘એવં તં ચેવ જાવ જેણેવ મમં અતિય હવ્વમાગણ’ હિસી પ્રકાર જીવ સિદ્ધિ સિદ્ધિ ઓર મરણ કે વિષય મેં પૂછે જાને પર તુમ શક્તિ કાઢ્ઠિત આદિ હો ગયે, ‘સે ણૂં યંદયા ! અયમદ્દે સમદ્દે’ હે સ્કન્દક ! કહો યહ વાત સત્ય હૈ ન ? ‘હંતા અત્થિ’ હાં પ્રશ્નો સત્ય હૈ । ઓર ઉન્હીં કે

ટીકાર્થ—“સે ણૂં તું યંદયા” હે સ્કન્દક ! તમને “સાવત્થીય નયરીય” શ્રાવસ્તી નગરીમા “વેસાલિય સાવયેણં” મારા અનુયાયી (ભગવાન-ની માતાનું નામ વિશાલા હતુ) વિશાલાનો પુત્ર વૈશાલિક કહેવાય. અહીં મહાવીર સ્વામી માટે વૈશાલિ શબ્દ વાપર્યો છે અને પિંગલક તેમનો અનુ-યાયી હોવાથી તેને માટે વૈશાલિક શ્રાવક વિશેષણ વાપર્યું છે) “પિંગલણ નિયંટેણ” પિંગલક નિર્ગ્રન્થે “ઈણં અક્ખેવં પુચ્છિય” આ પ્રમાણે પ્રશ્નો પૂછ્યા છે કે “માગહા” હે માગધ ! (મગધ દેશોત્પન્ન સ્કન્દક !) “કિં સ અંતે લોણ અણંતે લોણ” લોક સાન્ત (અતસહિત) છે કે અનન્ત-અન્ત સહિત છે ? “એવં તં ચેવ જાવ જેણેવ મમં અતિય હવ્વમાગણ” એજ પ્રમાણે જીવ, સિદ્ધિ, સિદ્ધિ, અને મરણના વિષયમા તમને પ્રશ્નો પૂછવામા આવ્યા ત્યારે તમારા મનમા શકા, કાંક્ષા વગેરે ઉત્પન્ન થયા “સે ણૂં યંદયા ! અયમદ્દે સમદ્દે” હે સ્કન્દક ! કહે, મારી વાત સાચી છે ? “હંતા અત્થિ” હા

ન્તર્વામ યમ ક્ષેત્રલોકઃ સ પાસસ્ત્રયેય કોટાકોટી યોજનપર્યન્તો દૈર્ઘ્યવિસ્તારામ્બા-
મિત્યર્થ । અસ્રલેખાઓ જોયળકોટાકોટીઓ પરિસ્ત્રેષેણ પળ્લસા ' અસરુપેયા
યોજનકોટી કોટય પરિસ્ત્રેષેણ મળ્લસા , તથા તસ્ય ક્ષેત્રલોકસ્ય પરિધિસંમ્ય
યયોજનકોટીકોટિ પરિમિતઃ કથિત ' અત્થિ પુણ સે અતે ' અસ્તિ પૂનસ્તસ્યા
ન્તઃ દ્રવ્યમોઽસ્ય યયોક્તલક્ષણકસ્યાન્તો વિધતે । સ ચાન્તવાનિત્યર્થ । ' કાલઑ
ળ ન કયાઈ ન આસી ન કયાઈ ન મઘઈ ન કયાઈ ન મધિસ્સઈ ' કાલઑ સહ
છોલો ન કદાચિત્ નાસીત્ ન કદાચિત્ ન મવતિ ન કદાચિત્ ન મધિપ્પતિ, અપિ

હે । તથા ફસફી જો પરિધિ કહી ગઈ હે વહ અસરુપાત કોટા કોટી
યોજનો કી કહી ગઈ હે । ફસ તરહ પ્ચાર પ્રકાર કે લોકોં મેં સે જો
દ્રવ્ય સે લોક પક હે ઓર સાન્ત હે । ક્ષેત્ર સે લોક અસંલપાન કોટા કોટી
યોજન તક લપાઈ ષોઢાઈ વાલા હે, તથા ફસફી પરિધિ-ધિરામ મી
અસંલપાન કોટાકોટી યોજન કી હે ફસલિયે ' અત્થિ પુણ સે અંત્રે
ફસ પ્રાકાર લોક દ્રવ્ય સે ઓર ક્ષેત્ર સે સાન્ત-અન્ત સહિત હે । ક્ષેત્ર
કી અપેક્ષા લોકકા વહ સ્થાન લિયા ગયા હે જો અસંલપાન કોટાકોટી
યોજન તક લપા ષોઢા હે । કયોં કિ ફસી મેં જીવાદિક દ્રવ્ય રહતે હે
પરિધિ મી ફસ કી ફતની ફી હે । અતઃ-ફતના સપ કુલ હોને પર મી વહ
સમર્પદિતયનજાને કે કારણ સાન્ત-અન્તસહિત કહા ગયા હે । "કાલ
ઓ ણં લોઈ ન કયાઈ ન આસી ન કયાઈ ન મઘઈ ન કયાઈ ન મધિ
સ્સઈ " કાલ સે લોક-મૂતકાલ મેં કમી કિસિ સમય નહીં થા ઈસા
નહીં, યર્તમાન મેં વહ કમી કિસી સમય નહીં હે ઈસા મી નહીં હે
ઓર મધિપ્પત્કાલ મેં વહ કમી કિસી સમય નહીં હોગા ઈસા મી નહીં

અસખ્યાત કોટા, કોટી યોજનની કહી છે આ રીતે વિચાર કરવાં તે વાદ
શિદ્ધ થાય છે કે દ્રવ્યની તથા ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ લોક સાન્ત (અત સહિત) ॥
ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ લોકને અસખ્યાત કોટા, કોટી યોજન લાગે તથા પહેલા
કહ્યો છે અને તેમા જ દવાદિક દ્રવ્ય રહે છે તેનો પરિધિ (ઘેરાવો) પણ
એટલો જ છે આ બધુ દોવા છતાં પણ તે મર્થવા સહિત દોવાથી તેને
સાન્ત (અત મુખ્ય) કહ્યો છે કાલઑ ણં સાઈ ન કયાઈ ન આસી ન કયાઈ
ન મઘઈ ન કયાઈ ન મધિસ્સઈ " કાળની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામા આવે તો
મૂતકાળમા કોટા એવો સમય નહીં કે બ્યારે તેનુ અસ્તિત્વ ન હોય જન
માન કાળે પણ કોઈ એવો સમય દેાતો નથી કે બ્યારે લોકનુ અસ્તિત્વ ન
દોય અપિ જમા પણ કોઈ એવો સમય નહીં દેય કે બ્યારે લોકનુ અસ્તિત્વ

દ્રવ્યતો લોકં દર્શયતિ-‘ દ્રવ્યઓ ણં એગે લોએ સ અંતે ’ દ્રવ્યતઃ સ્વલુ એકો લોકઃ
 સ્વાન્તઃ લોકસ્ય પંચાસ્તિકાયરૂપૈકદ્રવ્યત્વાત્ અસૌ લોકઃ સ્વાન્તઃ લોકાન્તે
 વિરામાત્ ‘ સ્વેત્તઓ ણં લોએ અસંસ્વેજ્જાઓ-જોયણકોઢાકોડીઓ આયામવિ-
 વ્વકંભેણ ’ ક્ષેત્રતઃ સ્વલુ લોકઃ અસંસ્વયાતાયોજનકોટાકોટચ આયામવિવ્વકંભેણ,
 તત્રાયામો દૈર્ઘ્યમ્ વિવ્વકંભો વિસ્તારઃ, ચતુર્વિધલોકેષુ યો દ્રવ્યલોકઃ સ એકોઽ-

સે, કાલ સે ઔર ભાવ સે, ઝનમેં “ દ્રવ્વઓ ણં એગે લોગે સ અંતે ”
 દ્રવ્ય સે લોક એક હૈ ઔર વહ અન્ત સહિત હૈ। હસકા તત્પર્ય યહ હૈ
 કિ જીવ, પુદ્ગલ, ધર્મ, અધર્મ, આકાશ ઔર કાલ કે ભેદ સે દ્રવ્ય છહ
 પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ। ઝનમેં કાલદ્રવ્ય કો છોડકર લા ટી કે પાંચ દ્રવ્ય
 વહુ પ્રદેશી હોને કે કારણ અસ્તિકાય કહે ગયે હૈં। જિતને આકાશ મેં
 હન દ્રવ્યોંકા સદ્ભાવ હૈ વહ લોક હૈ। હસકે લાદ અલોક હૈ। લોક પંચા-
 સ્તિકાયરૂપ એકદ્રવ્ય હૈ। અતઃપંચાસ્તિકાયરૂપ એક દ્રવ્યત્વ કો વિવક્ષા
 સે લોક એક હૈ એસા કહા ગયા હૈ। તથા યહ સ્વાન્ત હૈ-અન્ત સહિત હૈ,
 હસકા તાત્પર્ય યહ હૈ કિ પંચાસ્તિકાયરૂપ એક દ્રવ્યના લોકાન્ત તક હૈ
 આગે નહીં હૈ। ક્યોં કિ આગે આકાશદ્રવ્યકે સિવાય ઔર કાઈદ્રવ્ય નહીં હૈ
 હસ અપેક્ષા લોકાન્તમેં હસ પંચાસ્તિકાયરૂપ લોકકા વિરામ હોનેકે કારણ
 વહ લોક સ્વાન્ત-અન્ત સહિત હૈ ૧। ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા લોક કો આયામ
 -વિવ્વકમ્મ-લંબાઈચોઢાઈ અસંસ્વયાન કોઢા કોડી યોજનોં કી કહી ગઈ

લોએ સ અંતે ” દ્રવ્યની દૃષ્ટિએ વિચાર કરવામાં આવે તો લોક એક છે અને
 તે અતસહિત છે. કહેવાનું પ્રયોજન એવું છે કે જીવ, પુદ્ગલ, ધર્મ, અધર્મ,
 આકાશ, અને કાળ, એ છ ભેદની અપેક્ષાએ દ્રવ્યના છ પ્રકાર કહ્યા છે તેમાં-
 થી કાળદ્રવ્ય સિવાયના પાંચદ્રવ્યો ખહુ પ્રદેશી હોવાને કારણે તેમને અસ્તિકાય
 કહેવામાં આવેલ છે જેટલા આકાશમાં તેદ્રવ્યોના સદ્ભાવ (અસ્તિત્વ) છે
 તેટલા ભાગને લોક કહે છે બીજા માત્ર આકાશદ્રવ્યજ છે તેને અલોક કહેવામાં
 આવેલો છે. લોક પંચાસ્તિકાયરૂપ એક દ્રવ્ય છે તેથી પંચાસ્તિકાયરૂપ એક દ્રવ્ય-
 ત્વની દૃષ્ટિએ લોક એક છે, એમ કહ્યું છે. તથા તે સ્વાન્ત (અન્તસહિત) છે તેનું
 તાત્પર્ય આ પ્રમાણે છે-પંચાસ્તિકાયરૂપ એક દ્રવ્યપણુ લોકાન્ત સુધીજ છે-તેનાથી
 આગળ નથી, કારણ કે આગળ આકાશ દ્રવ્ય સિવાય બીજું કોઈપણ દ્રવ્ય નથી
 આ રીતે લોક ને અન્તે આ પંચાસ્તિકાય રૂપ લોકનો વિરામ હોવાથી તે
 લોક સ્વાન્ત (અન્ત સહિત) છે ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ લોકની લંબાઈ તથા પહોળાઈ
 અસંખ્યાત કોઠા, કોડી, યોજનની કહી છે. તથા તેની પરિધિ (ઘેરાવો) પણ

વહુતરપ્રદેશાપેક્ષયાપિ સ્યાદત આહ—‘ અઘ્વપ ’ અઘ્યયઃ સત્પ્રદેશાનામ્ વ્યપરિ-
ત્ત્વાત્ । સત્પ્રદેશાનામઘ્યયત્વં ચ દ્રવ્યરૂપેણાપિ સમવતીત્યત આહ—‘ અઘ્વટ્ટિપ ’
અઘ્વસ્થિતઃ પર્વાયાણામનન્તતયા અઘ્વસ્થિતત્વાત્ । પચામસા વિમુક્ત મનતિ ? તપ્રા-
—‘ ણિષ્વે ’ નિત્ય આઘન્તરરિત્ત સર્વદૈકરૂપેણ સ્થિતિમાન્ કાલતો લોક इति
‘ નત્થિ પુણ સે એતે ’ નાસ્તિ પુનસ્તત્પ્રાન્ત યતઃ કાલતોય લોકઃ પૂર્વમપ્યાસીલ
इदानीं वर्तते मविष्यति चानागतकालेपि तथा ध्रुवो नियतः शाश्वतोऽस्योऽव्ययोऽ-
पेसा नहीं है किन्तु “अक्षय” अक्षय है—अविनाशी है—किसी भी कालमें
इमका क्षय नहीं है । बहुतर प्रदेशों की अपेक्षा से भी पदार्थ अक्षय
माना जा सकता है—सो ऐसा यह लोक नहीं है, किन्तु अक्षय है
इसके समस्त प्रदेश व्यय से रहित है । इस में घटती पड़ती नहीं होती
है । उसके प्रदेशों में अक्षयता द्रव्यरूप से भी समवती है सो इस रूप
से ही अव्ययता लोक में नहीं है किन्तु लोक की जो अनन्तपर्यायें हैं वे
सदाकाल उसमें अनन्तरूप से अवस्थित रहती हैं अतः इस रूप
से—पर्यायकी अवस्थिति की अपेक्षा से लोक “अघट्टिप” अवस्थित
है । इससे यह सारांश निकला कि काल से लोक “णिष्वे” नित्य है
सर्वदा एक ही स्थिति वाला है “नत्थि पुण से एते” अतः इस अपेक्षा
यह लोक अन्त रहित है—अनन्त है । क्योंकि काल की अपेक्षा यह
लोक पछिछे भूतकाल में भी था, इस समय भी है और आगे भवि-
ष्यकाल में भी रहेगा, तथा यह लोक ध्रुव है, नित्य है, शाश्वत है, अक्षय

માની શકાય છે પણ લોકની બાબતમાં એવું નથી તે તો “અઘ્વપ” અઘ્યય
(અવિનાશી) છે કેહ પણ કાળે તેના ક્ષય થતો નથી. બહુતર (વહુ)
પ્રદેશોની અપેક્ષાએ પણ પદાર્થને અક્ષય માની શકાય છે, પણ આ લોક એવો
નથી પણ આ લોક તો અઘ્યય છે એટલે કે તેના તમામ પ્રદેશો વ્યય રહિત
હોય છે તેમા વધારો કે ઘટાડો થતો નથી તેના પ્રદેશોમાં પણ દ્રવ્યરૂપે
અઘ્યય પણ સંભવી શકે છે પણ લોકમા તે પ્રકારનું અઘ્યય પણ નથી પણ
લોકની જે અનંત પર્યાયો છે તે સદાકાળ તેમા અનંત રૂપે અવસ્થિત મોજુદ
રહે છે તેથી પર્યાયની અવસ્થિતિની અપેક્ષાએ લોક “અઘ્વટ્ટિપ” અવસ્થિત છે
કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે કાળની અપેક્ષાએ લોક “ણિષ્વે” નિત્ય છે, હંમેશાં
એક સરખી સ્થિતિ વાળો છે “નત્થિ પુણ સે એતે” કાળની અપેક્ષાએ લોક
આન્ત (અંત સહિત) નથી પણ અનંત (અંત રહિત) છે કારણ કે કાળની
અપેક્ષાએ આ લોક ભૂત કાળમાં હતો, વર્તમાન કાળે પણ છે અને ભવિષ્ય
કાળે પણ રહેશે, તથા આ લોક ક્ષય છે શાશ્વત છે, નિત્ય છે, અક્ષય છે,

તુ આસીદેવ ભવત્યેવ ભવિષ્યતિ ચ નન્ બ્રૂયસ્ય અસ્તિત્વરૂપપ્રકૃતાર્થવોધકત્વ
નિયમાત્ તથા ચ સર્વથૈવાસીત્ ભવતિ ભવિષ્યતિ ચેત્યર્થ , એતદર્થમેવ વિધિમુખેન
સ્પષ્ટયતિ—‘ ભવિસુ ય ભવિસ્સહ ય ’ અભૂત્ ચાચ્છલોકઃ પૂર્વમપિ, ભવતિ ચેદાનીમ્ ,
ભવિષ્યતિ ચાનાગતકાલેપિ, યતઃ પૂર્વમપિ લોક આસીદિનાનોમપિ વર્તતેઽનાગત
કાલેઽપિ રથાસ્યતિ અત એવ ‘ ધ્રુવે ધ્રુવઃ અચલતાત્ , સ ચાનિયતરૂપોપિ કદાચિત્
સ્યાત્ અત આહ—‘ નિયત્ ’ નિયત એકસ્વરૂપત્વાત્ નિયતરૂપઃ કાદાચિત્કોપિ
પદાર્થઃ સ્યાદત્ આહ—‘ સાસત્ ’ શાશ્વતઃ પ્રતિક્ષણં સદ્ભાવાત્ સ ચ નિયતકાલા-
પેક્ષ્યાપિ સ્યાદત્ આહ—‘ અક્ષત્ ’ અક્ષય ક્ષયરહિતઃ અવિનાશિતાત્ અક્ષયશ્ચ

હૈ કિન્તુ ભૂતકાલ મેં લોક થા વર્તમાનમેં વહ હૈ, ઓર ભવિષ્યત્ મેં વહ
રહેગા। તીનોં કાલો મેં લોક કા અસ્તિત્વ હૈ। યહ લોક થા હૈ ઓર
રહેગા। હસી વાન કો સૂત્રકાર વિધિમુગ્ધ સે પ્રતિપાદન કરતે હુએ કહતે
હેં કિ—‘ ભવિસુ ભવહ, ભવિસ્સહ ’ યહ લોક કાલકી અપેક્ષા પહિલે થા
હસ સમય હૈ ઓર ભવિષ્યત્ કાલ મેં રહેગા। હસલિયે યહ લોક—‘ ધ્રુવે ’
અચલહોને કે કારણ ધ્રુવહૈ। ધ્રુવ હોકર ભી વહ કદાચિત્ અનિયતરૂપ-
વાલા ભી હો સકતા હૈ તો હસ આશંકા કી નિવૃત્તિ કે લિએ સૂત્રકાર
કહતે હૈ કિ વહ એસા નહીં હૈ કિન્તુ—“ નિયત્ ” વહ લોક એકસ્વરૂપ-
વાલા હોને કે કારણ નિયત્ હૈ। નિયતરૂપવાલા ભી કોઈ એક પદાર્થ
કાદાચિત્સભી હો સકતા હૈ સો એસા વહ લોક નહીં હૈ કિ નિયત
સ્વરૂપવાલા હોકર ભી કાદાચિત્કતા ઉસમેં હો—વહ તો “ સાસત્ ”
શાશ્વત હૈ—પ્રતિક્ષણ મેં ઉસકા સદ્ભાવ રહતા હૈ। પ્રતિક્ષણ મેં પદાર્થ કા
સદ્ભાવ નિયતકાલકી અપેક્ષાસે ભી માના જા સકતા હૈ અતઃ વહ લોક

ન હોય પણ ભૂતકાળમાં લોકનું અસ્તિત્વ હતું, વર્તમાન કાળે છે અને ભવિ-
ષ્યમાં પણ રહેશે જ ત્રણે કાળોમાં લોકનું અસ્તિત્વ હોય છે. એટલે કે લોક
હતો, લોક છે અને લોક હશે એજ વાતનું સૂત્રકાર હવે હકાર વાચક વાક્યો
વડે પ્રતિપાદન કરે છે “ ભવિસુ, ભવહ, ભવિસ્સહ ” કાળની અપેક્ષાએ લોકના
અસ્તિત્વનો વિચાર કરવામાં આવે તો તે પહેલાં હતો, હાલમાં છે, અને ભવિ-
ષ્યમાં પણ રહેશે તેથી આ લોક “ ધ્રુવે ” અચલ હોવાને કારણે ધ્રુવ છે
ધ્રુવ હોવા છતાં પણ તે કદાચ અનિયત સ્વરૂપ વાળો સંભરી શકે છે તે
આશંકાનું નિવારણ કરવા માટે સૂત્રકારે તેને “ નિયત્ ” નિયત કહેલ છે લોક
એક સ્વરૂપ વાળો હોવાથી નિયત છે “ સાસત્ ” તે શાશ્વત છે સદા તેનું
અસ્તિત્વ રહે છે કોઈ પણ ક્ષણે એવી નથી હોતી કે જ્યારે તેનું અસ્તિત્વ
ન હોય પ્રતિક્ષણે પદાર્થનો સદ્ભાવ (અસ્તિત્વ) નિયત કાળની અપેક્ષાએ પણ

પ્રદેશપ્રદેશપેક્ષયાપિ સ્યાદત આદ-‘ અધ્યય ’ અધ્યયઃ સત્પ્રદેશાનામ્ વ્યપરિ-
તત્વાત્ । સત્પ્રદેશાનામધ્યયસ્ય ચ દ્રવ્યરૂપેણાપિ સમઘટીત્યત આદ-‘ અઘટ્ટિય ’
અવસ્થિતઃ પર્યાયાબામનન્તસયા અવસ્થિતત્વાત્ । પસાન્તતા વિમુક્ત મવતિ ! તમાર
-‘ ગિચ્ચે ’ નિત્યઃ આઘન્તરહિત સર્વદૈકરૂપેણ સ્થિતિમાન્ કાલતો લોક इति
‘ નતિય પુણ સે અંતે ’ નાસ્તિ પુનસ્તત્પાન્તઃ યતઃ કાલતોય લોકઃ પૂર્વમપ્યાસીત્
હવાની વર્તતે મવિપ્યતિ ધાનાગતકાલેપિ તયા ધુષો નિયતઃ શાશ્વતોઽસ્યોઽવ્યયોઽપ-

એમાં નહીં હૈ કિન્તુ “અસ્તય” અક્ષય હૈ-અધિનાશી હૈ-કિસી મી કાલમે
હમકા ક્ષય નહીં હૈ । પદ્ધતર પ્રદેશોં કી અપેક્ષા સે મી પદાર્થ અક્ષય
માના જા સકના હૈ-સો એસા યહ લોક નહીં હૈ, કિન્તુ અધ્યય હૈ
હસકે સમસ્ત પ્રદેશ વ્યય સે રહિત હૈ । હસ મેં ઘટતી ઘટતી નહીં હોતી
હૈ । હસકે પ્રદેશોં મેં અવ્યયતા દ્રવ્યરૂપ સે મી સંમઘટી હૈ સો હસ રૂપ
સે હી અવ્યયતા લોક મેં નહીં હૈ કિન્તુ લોક કી જો અનન્તપર્યાયે હૈ મે
સદાકાલ હસમેં અનન્તરૂપ સે અવસ્થિત રહતી હૈ અતઃ હસ રૂપ
સે-પર્યાયકી અવસ્થિતિ કી અપેક્ષા સે લોક “ અઘટ્ટિય ” અવસ્થિત
હૈ । હસસે યહ સારાંશ નિકલા કિ કાલ સે લોક “ ગિચ્ચે ” નિત્ય હૈ
સર્વદા એક સી સ્થિતિ ધાલા હૈ “ નતિય પુણ સે અંતે ” અતઃ હસ અપેક્ષા
યહ લોક અત સહિત હૈ-અનન્ત હૈ । કયોં કિ કાલ કી અપેક્ષા યહ
લોક પહિછે મૂતકાલ મેં મી ધા, હસ સમય મી હૈ ઓર આગે મવિ
વ્યકાલ મેં મી રહેગા, તથા યહ લોક ધુષ હૈ, નિત્ય હૈ, શાશ્વત હૈ, અક્ષય

માની શકાય છે પણ લોકની બાબતમાં એવું નથી. તે તો “ અસ્તય ” અક્ષય
(અનિનાશી) છે કેઈ પણ કાળે તેના ક્ષય થતો નથી બદ્ધતર (ધ્રુવ)
પ્રદેશોની અપેક્ષાએ પણ પદાર્થને અક્ષય માની શકાય છે, પણ આ લોક એવો
નથી પણ આ લોક તો અવ્યય છે એટલે કે તેના તમામ પ્રદેશો વ્યવ રહિત
હોય છે તેમાં વધારા કે ઘટાડો થતો નથી તેના પ્રદેશોમાં પણ દ્રવ્યરૂપે
અવ્યય પણ સમાવી શકે છે પણ લોકમાં તે પ્રકારનું અવ્યય પણ નથી પણ
લોકની જે અનન્ત પર્યાયો છે તે સદા કાળે તેમાં અનન્ત રૂપે અવસ્થિત મોજુ
રહે છે તેથી પર્યાયની અવસ્થિતિની અપેક્ષાએ લોક “ અઘટ્ટિય ” અવસ્થિત છે
કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે કાળની અપેક્ષાએ લોક “ ગિચ્ચે ” નિત્ય છે, હમેશાં
એક સરખી સ્થિતિ વાળો છે “ નતિય પુણ સે અંતે ” કાળની અપેક્ષાએ લોક
સાન્ત (અત સહિત) નથી પણ અનન્ત (અત રહિત) છે કારણ કે કાળની
અપેક્ષાએ આ લોક મૂત કાળમાં હોતો વર્તમાન કાળે પણ છે અને ભવિષ્ય
કાળે પણ રહેશે, તથા આ લોક ધ્રુવ છે, શાશ્વત છે, નિત્ય છે, અક્ષય છે,

સ્થિતો નિત્યથ તસ્માદેવ કારણાદસ્ય લોકસ્ય કાલતોઽતો વિનાશો નૈવ ભવતીત્યર્થઃ।
 ‘ભાવઓ ણં લોણ અણંતા વણ્ણપજ્જવા’ ભાવતઃ સ્વલુ લોકઃ અનંતા વર્ણપર્યવાઃ
 વર્ણવિશેષાઃ એકગુણકાલત્વાદયઃ, ભાવતો લોકઃ અનંતવર્ણપર્યાયરૂપ ઇતિ, તથા
 ‘અણંતા ગંધપજ્જવા’ અનન્તા ગન્ધપર્યાવાઃ, ‘અનન્તા રસપજ્જવા’ અનન્તા રસ-
 પર્યાવાઃ ‘અનંતાફાસપજ્જવા’ અનન્તા સ્પર્શપર્યાવાઃ, અનન્તગન્ધરસસ્પર્શપર્યાય-
 રૂપો ભાવતો લોક ઇતિ તથા ‘અણંતા સંઠાણપજ્જવા’ અનંતાઃ સંસ્થાનપર્યાવાઃ,
 અનન્તસંસ્થાનરૂપો લોકો ભાવત ઇતિ, તથા ‘અણંતા ગુરુચલહુયપજ્જવા’ અનન્તા
 ગુરુલઘુકપર્યાવાઃ અનંતગુરુલઘુપર્યાયરૂપો લોકઃ વાદરસ્કધેષુ તત્સદ્ભાવાત્ ‘અણંતા
 અગુરુચલહુય પજ્જવા’ અનંતા અગુરુકલઘુપર્યાવાઃ-અનન્તાગુરુલઘુપર્યાયરૂપો

હૈ, અવપય હૈ, અવસ્થિત હૈ ઓર નિત્ય હૈ ઇસી કારણ ઇસ લોક કા
 કાલ કો અપેક્ષા કમી ભી વિનાશ નહીં હોતા હૈ । “ભાવઓ ણં લોણ
 અણંતા વણ્ણપજ્જવા” ભાવ સે લોક-અનંત વર્ણપર્યાયરૂપ હૈ- એક
 ગુણકાલત્વઆદિ વર્ણ વિશેષ હૈ અર્થાત્ વર્ણપર્યાય હૈં એસી એક ગુણ
 કાલત્વ આદિ પર્યાય સે લેકર અનંત વર્ણ પર્યાયરૂપ યહ લોક ભાવ કી
 અપેક્ષા સે હૈ । તથા “અણંતાગંધપજ્જવા, અણંતા રસપજ્જવા અણંતા
 ફાસપજ્જવા” ઇસી તરહ સે ભાવ કી અપેક્ષા યહ લોક અનન્ત ગંધપ-
 ર્યાયરૂપ અનંત રસ પર્યાયરૂપ ઓર અનન્ત સ્પર્શપર્યાયરૂપ હૈ । “અણંતા
 સંઠાણપજ્જવા” ભાવ કી અપેક્ષા યહ લોક સંસ્થાન કી અનંત પર્યાયો
 રૂપ હૈ “અણંતા ગુરુચલહુયપજ્જવા” ગુરુ લઘુ ગુણો કી અનંત પર્યાય
 રૂપ હૈ । ગુરુ લઘુ ગુણ વાદરસ્કંધાં મેં રહના હૈ । “અણંતા અગુરુચલહુય
 પજ્જવા” તથા ભાવકો અપેક્ષા સે યહ લોક અગુરુ લઘુગુણ કી અનંત

અવ્યય છે અવસ્થિત છે આ દૃષ્ટિએ વિચારવામાં આવે તો કાળની અપેક્ષાએ
 આ લોકોનો કદી પણ નાશ થતો નથી અત્રે સિદ્ધ થાય છે.

“ભાવઓ ણં લોણ અણંતા વણ્ણપજ્જવા” ભાવની અપેક્ષાએ લોક અનંત
 વર્ણપર્યાય રૂપ છે એક ગુણ કાળત્વ વગેરે વર્ણ વિશેષ છે એટલે કે વર્ણપર્યાય
 છે ભાવની અપેક્ષાએ એક ગુણ કાળત્વ વગેરે પર્યાયોથી લઈને અનંત વર્ણપ-
 ર્યાય રૂપ આ લોક છે તથા “અણંતા ગંધપજ્જવા અણંતા રસપજ્જવા અણંતા
 ફાસપજ્જવા” એજ પ્રમાણે ભાવની અપેક્ષાએ આ લોક અનંત રસપર્યાય
 રૂપ અનન્ત ગંધપર્યાયરૂપ અને અનન્ત સ્પર્શ પર્યાય રૂપ છે “અણંતા
 સંઠાણપજ્જવા, અણંતા ગુરુચલહુય પજ્જવા, અણંતા અગુરુચલહુય પજ્જવા”
 ભાવની અપેક્ષાએ આ લોક સંસ્થાનની અનેક પર્યાયો રૂપ છે, ગુરુ લઘુ ગુણોની

પર્યાયરૂપ છે । યહ અશુરલણુ ગુણ પરમાણુઓમાં, સૂક્ષ્મસ્કંધોમાં અને અમૂર્ત દ્રવ્યોમાં પાવા જાતા છે । તાત્પર્ય હમ કા યહ છે કિ માથમાં દ્રવ્ય ગત રૂપ, રસ, ગંધ, સ્પર્શ, સંસ્થાન આદિ લિયે જાતે છે । અતઃ જહાં કદીં પર મો માથકો ઠેકર વિચાર કિયા જાતા છે ઘડાં હીં રૂપ રસાદિકાં કો ઠેકર હીં વિચાર કિયા ગયા છે, એસા જાનના વાહિય । રૂપ ગુણ વક હીં પર્યાયવાલા નહીં હોતા છે-કિન્તુ જિસ પ્રકાર દ્રવ્યમાં અનન્ત પર્યાયો હોતી છે વસી પ્રકાર ગુણોમાં મો અનન્તપર્યાયો હુઆ કરતી છે । ગુણોમાં જો હીનાધિકતા હોતી છે વહીગુણપર્યાય છે । વ્યજનપર્યાય દ્રવ્યમાં હોતી છે ઓર અર્થપર્યાય ગુણમાં હોતી છે । ડસી અર્થપર્યાય કો ઠેકર વદસ્થાનપતિત જ્ઞાનિ વૃદ્ધિ હોતી રહતી છે । આગમગ્રંથોમાં હસ વિષય કો વહુન હીં અચીં તરહસે સ્પષ્ટરૂપમાં સવજ્ઞાયા ગયા છે । ગુણ પર્યાય કા નામ વસરે શાસ્ત્રોમાં ગુણાંશ કહા ગયા છે । અતઃ માથસે લોક રૂપ, રસ, ગંધ, સ્પર્શ કી અનન્ત પર્યાયરૂપ હોતા છે । હસી તરહસે વહસંસ્થાન જો દ્રવ્યગત હોતા છે વહ મો વક ૨ પ્રકારમાં અનન્ત પર્યાય વાલા હોતા છે અતઃ માથસે લોક સંસ્થાન કો અપેક્ષા અનન્ત છે । અશુરલણુ ગુણ અમૂર્તદ્રવ્યોમાં પરમાણુઓમાં એવં સૂક્ષ્મસ્કંધોમાં પાવા

અનન્ત પર્યાયો રૂપ છે અને અશુરલણુ ગુણની અનન્ત પર્યાયો રૂપ પણ છે શુરલણુ ગુણ બાહ્ય (સ્થા) સ્કંધોમાં રહે છે અને અશુરલણુ ગુણ પરમાણુઓમાં, સૂક્ષ્મ સ્કંધોમાં, અને અમૂર્ત દ્રવ્યોમાં રહેલો હોય છે કહેવાતુ તાત્પર્ય એ છે કે ભાવમાં દ્રવ્યમાં રહેલાં રૂપ, રસ, ગંધ, સંસ્થાન વગેરેનો સમાવેશ થાય છે તેથી જ્ઞાને ભાવની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે ત્યારે તે રૂપ, રસ વગેરેની દૃષ્ટિએ વિચાર કરવામાં આવે છે એમ સમજવું રૂપ, રસ વગેરે શુદ્ધ એકજ પર્યાયવાળા હોતા નથી, પણ જેમ દ્રવ્યમાં અનન્ત પર્યાય હોય છે તેમ શુદ્ધોગ્ય પણ અનન્ત પર્યાયો હોય છે શુદ્ધોગ્યને વૃદ્ધિ અથવા તે હાનિ થાય છે તેનેજ શુદ્ધપર્યાય કહે છે બ્યજન પર્યાય રૂપમાં હોય છે અને અર્થ પર્યાય શુદ્ધમાં હોય છે એજ અર્થ પર્યાયની અપેક્ષાએ ૫, (૭) સ્થાન પતિત હાનિ વૃદ્ધિ થતી રહે છે આગમ શ્રેયોમાં આ ત્રિયને ઘણી સારી રીતે સ્પષ્ટતા પૂર્વક સમજવામાં આયો છે શુદ્ધ પર્યાયનુ બીજું નામ શુદ્ધાંશ કહેલું છે આ રીતે ભાવની અપેક્ષાએ હોય રૂપ, રસ, ગંધ, સંસ્થાન વગેરે અનન્ત પર્યાય રૂપ હોય છે એજ પ્રમાણે દ્રવ્યગત સંસ્થાન પણ મત્યેક દ્રવ્યમાં અનન્ત પર્યાયવાળું હોય છે તેથી ભાવની અપેક્ષાએ જોઈએ તો સંસ્થાનની દૃષ્ટિએ પણ હોય અનન્ત છે અશુરલણુ ગુણ અમૂર્ત (અદૃષ્ટ) દ્રવ્યોમાં, પરમાણુઓમાં અને સૂક્ષ્મ

સ્થિતો નિત્યથ તસ્માદેવ કારણાદય લોકસ્ય કાલતોડ્તો વિનાશો નૈવ ભવતીત્યર્થઃ।
 'ભાવત્રો ણં લોણ અણંતા વણપડ્જવા' ભાવતઃ સલ્લુ લોકઃ અનંતા વર્ણપર્યાયાઃ
 વર્ણવિશેષાઃ; એકગુણકાલત્વાદયઃ, ભાવતો લોકઃ અનંતવર્ણપર્યાયરૂપ ઇતિ, તથા
 'અણંતા ગંધપડ્જવા' અનન્તા ગન્ધપર્યાયાઃ, 'અનન્તા રસપડ્જવા' અનન્તા રસ-
 પર્યાયાઃ, 'અનંતા કાસપડ્જવા' અનન્તા સ્પર્શપર્યાયાઃ, અનન્તગન્ધગ્મસ્પર્શપર્યાય-
 રૂપો ભાવતો લોક ઇતિ તથા 'અણંતા સંઠાણપડ્જવા' અનંતાઃ સંસ્થાનપર્યાયાઃ,
 અનન્તસંસ્થાનરૂપો લોકો ભાવત ઇતિ, તથા 'અણંતા ગુરુચલહુયપડ્જવા' અનન્તા
 ગુરુલઘુરૂપર્યાયાઃ અનંતગુરુલઘુપર્યાયરૂપો લોકઃ વાદરસ્કંધેષુ તત્સજ્ઞાવાત્ 'અણંતા
 અગુરુચલહુય પડ્જવા' અનંતા અગુરુચલહુયપર્યાયાઃ-અનન્તાગુરુલઘુપર્યાયરૂપો

હૈ, અવપય હૈ, અવસ્થિત હૈ ઓર નિત્ય હૈ ઇસી કારણ ઇમ્ લોક કા
 કાલ કો અપેક્ષા કમી ખી વિનાશ નહીં હોના હૈ । “ભાવત્રો ણં લોણ
 અણંતા વણપડ્જવા” ભાવ સે લોક-અનંત વર્ણપર્યાયરૂપ હૈ- એક
 ગુણકાલત્વઆદિ વર્ણ વિશેષ હૈ અર્થાત્ વર્ણપર્યાય હૈં એસી એક ગુણ
 કાલત્વ આદિ પર્યાય સે લેકર અનંત વર્ણપર્યાયરૂપ યહ લોક ભાવ કી
 અપેક્ષા સે હૈ । તથા “અણંતાગંધપડ્જવા, અણંતા રસપડ્જવા અણંતા
 કાસપડ્જવા” ઇસી તરહ સે ભાવ કી અપેક્ષા યહ લોક અનંત ગંધપ;
 ર્યાયરૂપ અનંત રસ પર્યાયરૂપ ઓર અનન્ત સ્પર્શપર્યાયરૂપ હૈ । “અણંતા
 સંઠાણપડ્જવા” ભાવ કી અપેક્ષા યહ લોક સંસ્થાન કી અનંત પર્યાયો
 રૂપ હૈ । “અણંતા ગુરુચલહુયપડ્જવા” ગુરુ લઘુ ગુણો કી અનંત પર્યાય
 રૂપ હૈ । ગુરુ લઘુ ગુણ વાદરસ્કંધાં મેં રહના હૈ । “અણંતા અગુરુચલહુય
 પડ્જવા” તથા ભાવકો અપેક્ષા સે યહ લોક અગુરુ લઘુગુણ કી અનંત

અન્યથ છે અવસ્થિત છે આ દૃષ્ટિએ વિચારવામા આવે તો કાળની અપેક્ષાએ
 આ લોકોનો કદી પણ નાશ થતો નથી અર્થુ મિદ્ધ થાય છે.

“ભાવત્રો ણં લોણ અણંતા વણપડ્જવા” ભાવની અપેક્ષાએ લોક અનંત
 વર્ણપર્યાય રૂપ છે એક ગુણ કાળત્વ વગેરે વર્ણુ વિશેષ છે. એટલે કે વર્ણુપર્યાય
 છે ભાવની અપેક્ષાએ એક ગુણ કાળત્વ વગેરે પર્યાયથી લઈને અનંત વર્ણુપર્યાય
 રૂપ આ લોક છે તથા “અણંતા ગંધપડ્જવા અણંતા રસપડ્જવા અણંતા
 કાસપડ્જવા” એજ પ્રમાણે ભાવની અપેક્ષાએ આ લોક અનંત રસપર્યાય
 રૂપ અનંત ગંધપર્યાયરૂપ અને અનંત સ્પર્શ પર્યાય રૂપ છે. “અણંતા
 સંઠાણપડ્જવા, અણંતા ગુરુચલહુય પડ્જવા, અણંતા અગુરુચલહુય પડ્જવા”
 ભાવની અપેક્ષાએ આ લોક સંસ્થાનની અનેક પર્યાયો રૂપ છે, ગુરુ લઘુ ગુણોની

પર્યાયરૂપ છે । યદ્ અગુરુલઘુ ગુણ પરમાણુઓમાં, સૂક્ષ્મસ્કંધોમાં અને અમૂર્તી દ્રવ્યોમાં પાયા જાતા છે । તાત્પર્યે હમ કા યદ્ હે કિ ભાવમે વ્રવ્ય ગત રૂપ, રસ, ગંધ, સ્પર્શ, રાસ્થાન આદિ સિધ્ધિ જાતે છે । અતઃ જદાં કર્તૃ પર ઓ ભાવકો ઉકર વિચાર કિયા જાતા છે ઘદાં હહીં રૂપ રસાદિકોં કો ઉકર હી વિચાર કિયા ગયા છે, એમા જાનના ચાહિયે । રૂપ ગુણ એક હી પર્યાયવાલા નહીં હોતા હૈ-કિન્તુ જિસ પ્રકાર વ્રવ્યમે અનંત પર્યાયે હોતી હૈં ઉસી પ્રકાર ગુણોંમે ઓ અનંત પર્યાયે હુઆ કરતી હૈં । ગુણોંમે જો હીનાધિકતા હોતી હૈ ઘહીં ગુણપર્યાય હૈં । વ્યજનપર્યાય વ્રવ્યમે હોતી હૈં ઓર અર્થપર્યાય ગુણમે હોતી હૈં । હસી અથ પર્યાય કો ઉકર પદ્ધસ્થાનપતિત્વ દાનિ વૃદ્ધિ દાતી રહતી હૈં । આગમગ્રંથોંમે હસ વિષય કો પદ્ધત્ત હી અચ્છી તરહસે સ્પષ્ટરૂપમે સવખાયા ગયા હૈં । ગુણ પર્યાય કા નામ દુસરે શ્લોકોંમે ગુણાંશ જદા ગયા હૈં । અતઃ ભાવસે લોક રૂપ રસ, ગંધ, સ્પર્શ કી અનંત પર્યાયરૂપ હોતા હૈં । હસી તરહસે ઘદ્ધસ્થાન જો વ્રવ્યગત હોતા હૈં ઘદ્ધ ઓ એક ૨ પ્રકારમે અનંત પર્યાય વાલા હોતા હૈં અતઃ ભાવસે લોક સંસ્થાન કો અપેક્ષા અનંત હૈં । અગુરુ લઘુ ગુણ અમૂર્તદ્રવ્યોંમે પરમાણુઓંમે એવં સૂક્ષ્મસ્કંધોંમે પાયા

અનંત પર્યાયે રૂપ છે અને અગુરુ લઘુ ગુણની અનંત પર્યાયે રૂપ પણ છે ગુરુ લઘુ ગુણ બાદર (શ્લોક) રૂપોમા રહે છે અને અગુરુ લઘુ ગુણ પરમાણુઓમા, સૂક્ષ્મ રૂપોમા, અને અમૂર્ત દ્રવ્યોમા રહેલા હોય છે કહેવાનું તાત્પર્યે એ છે કે ભાવમા દ્રવ્યમા રહેલાં રૂપ, રસ, ગંધ, રાસ, સસ્થાન વગેરેનો સમાવેશ થાય છે તેથી ભાવે ભાવની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે ત્યારે તે રૂપ, રસ વગેરેની દૃષ્ટિએ વિચાર કરવામાં આવે છે, એમ સમાજનું રૂપ રસ વગેરે ગુણો એકજ પર્યાયવાળા હોતા નથી, પણ એમ દ્રવ્યમા અનંત પર્યાય હોય છે તેમ સુલ્લોમા પણ અનંત પર્યાયે હોય છે સુલ્લોમાને વૃદ્ધિ અથવા તેા દાનિ થાય છે તેનેજ ગુણપર્યાય કહે છે વ્યજન પર્યાય દ્રવ્યમા હોર છે અને અર્થ પર્યાય ગુણમા હોય છે એજ અર્થ પર્યાયની અપેક્ષાએ ૫૨, (૭) સ્થાન પતિત્વ દાનિ વૃદ્ધિ થતી રહે છે આગમ ગ્રંથોમા આ વિષયને ઘણી ચાલી રીતે સ્પષ્ટતા પૂર્વક સમાજવામા આવ્યો છે ગુણપર્યાયનું બીજુ નામ ગુણાંશ કહેવું છે આ રીતે ભાવની અપેક્ષાએ લોક રૂપ રસ ગંધ સ્પર્શ વગેરે અનંત પર્યાય રૂપ હોય છે એજ પ્રમાણે દ્રવ્યગત સસ્થાન પણ પ્રત્યેક દ્રવ્યમા અનંત પર્યાયવાળું હોય છે તેથી ભાવની અપેક્ષાએ એધએ તેા સસ્થાનની દૃષ્ટિએ પણ લોક અનંત છે અગુરુલઘુ ગુણ અમૂર્ત (અદૃશી) દ્રવ્યોમા, પરમાણુઓમા અને સૂક્ષ્મ

લોક', પરમાણુ સૂક્ષ્મસ્કન્દેષુ અમૂર્તેષુ ચ તત્સદ્ભાવાત્ ' નતિ પુન સે અંતે ' નાસ્તિ પુનરતસ્યાન્તઃ, ભાવાપેક્ષયા લોકસ્યાન્તો નાસ્તીત્યર્થઃ । ઉપસંહરન્નાહ— ' સે ત્તં ' ઇત્યાદિ । ' સે ત્તં સ્વંદયા દ્વઓ લોષ સ અતે સ્વેત્તઓ લોષ સ અંતે કાલઓ લોષ અણતે ભાવઓ લોષ અણતે ' તદેતત્ સ્કન્દક ! દ્રવ્યતો લોકઃ સાંત' ક્ષેત્રતો લોકઃ સાંતઃ કાલતો લોકોડનંતો ભાવતો લોકોડનંતઃ । હે સ્કન્દક પૂર્વોક્તયુક્તિભિઃ પ્રતિપાદિતચતુર્વિધલોકેષુ દ્રવ્યક્ષેત્રાભ્યામન્તવત્ત્વં લોકસ્ય, કાલભાવાભ્યાં ચાનંતત્વમેવ પુનર્લોકસ્યેતિ ભાવઃ । ઇતિ પ્રથમપ્રશ્નસ્યોત્તરમ્ । ૧ ।

લોકવિષયકપ્રશ્નસ્યોત્તર દત્ત્યા જીવવિષયકપ્રશ્નસ્યોત્તરમાહ— જે વિ' ઇત્યાદિ

જાતા હૈં । યહ અગુરુલઘુગુણ મી અનન્ત પર્યાય વાલા હોતા હૈં । હસી તરહ ગુરુલઘુગુણ બાદર સ્કંધોમેં પાયા જાતા હૈં, હસ અપેક્ષા ગુરુલઘુગુણ મી અનન્ત પર્યાયવાલા હોતા હૈં । હસ તરહ ભાવસે લોક કા કમી મી અંત નહીં હોતા હૈં । અતઃવહ ભાવ સે લોક અનન્ત કહા ગયા હૈં । યહી વાત " નતિ પુન સે અંતે " હસ સૂત્ર પાઠ ઢારા વ્યક્ત કી ગઈ હૈં । અવ હસ વિષય કા ઉપસંહાર કરતે હુણ મગવાન્ સ્કન્દક સે કહતે હૈં કિ ' સે ત્તં સ્વંદયા ! દ્વઓ લોષ સ અંતે, સ્વેત્તઓ લોષ સઅંતે, કાલઓ લોષ અણતે, ભાવઓ લોષ અણતે ' હે સ્કન્દક ! હસ તરહ વિચાર કરને પર દ્રવ્ય સે લોક સાન્ત-અન્તસહિત હૈં, ક્ષેત્ર સે લોક સાન્ત-અન્ત સહિત હૈં, કાલ સે લોક અનન્ત હૈં ઓર ભાવ સે લોક અનન્ત હૈં । હસ પ્રકાર સે યહ પ્રથમ પ્રશ્ન કા ઉત્તર હૈં ।

લોકવિષયક પ્રથમપ્રશ્ન કા ઉત્તર દેકર અવ શ્રમણ મગવાન્ મહા-

સ્કંધોમા હોય છે તે અગુરુલઘુગુણ ૫ણ અનત પર્યાયો વાળો હોય છે. ગુરુલઘુગુણ બાદર (સ્થૂળ) સ્કંધોમા હોય છે ગુરુલઘુગુણ ૫ણ અનત પર્યાયો વાળો હોય છે આ રીતે ભાવની અપેક્ષાએ લોકનો કડી ૫ણ નાશ થતો નથી તેથી ભાવની અપેક્ષાએ લોકને અનત (અત રહિત) કહ્યો છે. એજ વાત " નતિ પુન સે અંતે " આ સૂત્રપાઠ વડે વ્યક્ત કરવામા આવી છે હવે આ વિષયનો ઉપસંહાર કરતા ભગવાન મહાવીર સ્કન્દકને કહે છે કે— " સે ત્તં સ્વંદયા ! દ્વઓ લોષ સ અંતે, સ્વેત્તઓ લોષ સ અંતે, કાલઓ લોષ અણતે, ભાવઓ લોષ અણતે " હે સ્કન્દક ! આ રીતે વિચાર કરતા દ્રવ્યની અપેક્ષાએ લોક સાન્ત (અતયુક્ત) છે, ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ ૫ણ લોક સાન્ત છે. ૫ણ ક્ષાણની અપેક્ષાએ લોક અનત (અંતરહિત) છે, અને ભાવની અપેક્ષાએ ૫ણ લોક અનંત છે. આ પ્રકારનો તમારા પહેલા પ્રશ્નનો ઉત્તર છે.

લોક વિષેના પહેલા પ્રશ્નનો ઉત્તર આપીને હવે શ્રમણ ભગવાન મહા-

જે વિ ય તે સ્વદયા જાવ સ અંતે જીવે અણંતે જીવે ય વિ ચ તે સ્વન્દક ! યાવત્
 સાન્તો જીવોઽનતો જીવઃ યાત્વપદેન-તવ મનસિ અયમેતદ્ભૂષ આધ્યાત્મિકચિત્તિત
 કલ્પિતઃ માર્ધિતઃ મનોગત સફલ્પઃ સમુદવણત કિમ્ હત્યસ્ય સગ્રહઃ । 'તસ્સ
 વિ ય ણં અયમદ્વે' તસ્યાપિ ચ સ્વલુ અયમર્થઃ જીવવિપયક પ્રશ્નસ્વેદમુષ્તરમ્ 'એવં
 સ્વલુ યાવત્-અપ્ર યાત્વપદેન 'મયા સ્કન્દક ! ચતુર્વિધો જીવઃ પશ્ચાત્, તથયાદ્યગ્યત
 ક્ષેત્રત કાલતો માયતઃ' હિતિ । સગ્રહઃ, 'વૃક્ષમો ણ ણગે જીવે સ અંતે' દ્રવ્યતઃ
 સ્વલુ એવો જીવઃ સાંતઃ દ્રવ્યાપસ્યા એક જીવમાયિત્ય સાન્તો જીવ હિતિ ।

બીજા જીવવિપયક દ્વિતીયપ્રશ્ન કા ઉત્તર સ્કન્દક કો વેતે હુણ કહતે
 હૈ-“ જે વિ ય તે સ્વદયા ! જાવ સ અંતે જીવે અણંતે જીવે ” હે સ્કન્દક !
 જો તુમ્હારે ચિત્ત મેં યહ ચિકલ્પ વઠા જીવ સાન્ત-અન્ત સહિત હૈ ?
 યા અનન્ત-અન્ત રહિત હૈ ? 'તસ્સ વિ ય ણં અયમદ્વે' સો ઇસકા બી
 યહ અર્થ-ઉત્તર હૈ, અર્થાત્-હે સ્કન્દક ! જો તુમ્હેં પેસા મન મેં સંકલ્પ
 હુઆ હૈ કિ કયા જીવ સાન્ત અન્ત સહિત હૈ યા અનન્ત-અન્ત રહિત
 હૈ ? સો ઇસકા ઉત્તર ઇસ પ્રકાર હૈ-‘એવં સ્વલુ જાવ’ ઇસ પ્રકાર હૈ
 સ્કન્દક ! મૈને જીવ ચાર પ્રકાર કા પ્રસ્તુતિ કિયા હૈ યહ ઇસ પ્રકાર
 સે-એક દ્રવ્ય કી અપેક્ષા દૂસરા ક્ષેત્રકી અપેક્ષા સે ત્રીસરા કાલ કી
 અપેક્ષા સે ઓર ચૌથા માય કી અપેક્ષા સે । “વૃક્ષમો ણ ણગે જીવે
 સ અંતે” દ્રવ્ય કી અપેક્ષાસે એક જીવ સાન્ત-અન્ત સહિત હૈ । તાત્પર્ય
 ફહને કા યહ કિ યહાં દ્રવ્ય કી અપેક્ષા સે એક જીવ કો હેકર જીવ
 સાન્ત હૈ પેસા કહા ગયા હૈ । ક્યોં કિ એક કે બાદ દો જય આતે હૈ તો
 એક સંખ્યા સાન્ત-અન્ત સહિત હો જાતી હૈ । વેસે સિદ્ધાન્ત મેં

બીજા સ્કન્દકે પૂછેલા એવ વિષેના જીવ પ્રશ્નનો ઉત્તર આપે છે „ જે વિ ય
 તે સ્વદયા ! જાવ સ અંતે જીવે અણંતે જીવે ” હે સ્કન્દક ! તમારા મનમાં
 એવના વિષયમાં આ પ્રમાણની શકા ઉદ્ભવેલ છે કે 'એવ જા ત સહિત છે કે
 અન્ત સહિત ?' " તસ્સ વિ ય ણં અયમદ્વે " તો તેનો ઉત્તર આ પ્રમાણે
 છે-“ એવ સ્વલુ જાવ ” હે સ્કન્દક ! એ એવના ચાર પ્રકાર પ્રદર્શા છે (૧) જ
 વહા) તે આ પ્રમાણે છે (૧) દ્રવ્ય (૨) ક્ષેત્ર (૩) કાળ અને (૪) માય
 આ ચારની અપેક્ષાએ એવની સાન્તતા અને અનન્તતાનો વિચાર કરવો
 એમણે “વૃક્ષમો ણ ણગે જીવે સ અંતે” દ્રવ્યની અપેક્ષાએ એક એવ સાન્ત-
 અન્ત સહિત-છે કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે બીજી દ્રવ્યની અપેક્ષાએ તથા
 એક એવની અપેક્ષાએ એવને સાન્ત (અન્ત સહિત) કહેલ છે કારણ કે

લોક', પરમાણુ સૂક્ષ્મસ્કન્ધેષુ અમૂર્તેષુ ચ તત્સદ્ભાવાત્ ' નત્થિ પુન સે અંતે ' નાસ્તિ પુનરતસ્માન્તઃ, ભાવોપેક્ષયા લોકસ્યાન્તો નાસ્તોત્યર્થઃ । ઉપસંહરન્નાહ— ' સે સંતે ' इत्यादि । ' સે સંતે સંદયા દબ્બઓ લોણ સ અંતે સેત્તઓ લોણ સ અંતે કાલઓ લોણ અણંતે ભાવઓ લોણ અણંતે ' તદેતત્ સ્કન્દક । દ્રવ્યતો લોકઃ સાંતઃ ક્ષેત્રતો લોકઃ સાંતઃ કાલતો લોકોડનંતો ભાવતો લોકોડનંતઃ । હે સ્કન્દક પૂર્વોક્તયુક્તિભિઃ પ્રતિપાદિતચતુર્વિધલોકેષુ દ્રવ્યક્ષેત્રાભ્યામન્તવચ્ચં લોકસ્ય, કાલભાવાભ્યાં ચાનંતત્વમેવ પુનર્લોકસ્યેતિ ભાવઃ । इति प्रथमप्रश्नस्योत्तरम् । १ ।

લોકવિષયકપ્રશ્નસ્યોત્તર દત્ત્વા જીવવિષયકપ્રશ્નસ્યોત્તરમાહ— જે 'વિ' इत्यादि

જાતા હૈં । यह अगुरुलघुगुण भी अनन्त पर्याय वाला होता है । इसी तरह गुरुलघुगुण वादर स्कंधोंमें पाया जाता है, इस अपेक्षा गुरुलघुगुण भी अनन्त पर्यायवाला होता है । इस तरह भावसे लोक का कभी भी अंत नहीं होता है । अतः वह भाव से लोक अनन्त कहा गया है । यही बात “ नत्थि पुण सें अंते ” इस सूत्र पाठ द्वारा व्यक्त की गई है । अब इस विषय का उपसंहार करते हुए भगवान् स्कन्दक से कहते हैं कि 'से संतं संदया ! दब्बओ लोण स अंते, सेत्तओ लोण सअंते, कालओ लोण अणंते, भावओ लोण अणंते' हे स्कन्दक ! इस तरह विचार करने पर द्रव्य से लोक सान्त-अन्तसहित है, क्षेत्र से लोक सान्त-अन्त सहित है, काल से लोक अनन्त है और भाव से लोक अनन्त है । इस प्रकार से यह प्रथम प्रश्न का उत्तर है ।

લોકવિષયક પ્રથમપ્રશ્ન કા ઉત્તર દેકર અવ શ્રમણ ભગવાન્ મહા-

સ્કંધોમા હોય છે તે અગુરુલઘુગુણ પણુ અનંત પર્યાય વાળો હોય છે. ગુરુલઘુગુણ વાદર (સ્કંધ) સ્કંધોમા હોય છે ગુરુલઘુગુણ પણુ અનંત પર્યાય વાળો હોય છે આ રીતે ભાવની અપેક્ષાએ લોકનો કંડી પણ નાશ થતો નથી તેથી ભાવની અપેક્ષાએ લોકને અનંત (અત રહિત) કહ્યો છે. એજ વાત “ નત્થિ પુણ સે અંતે ” આ સૂત્રપાઠ વડે વ્યક્ત કરવામા આવી છે હવે આ વિષયનો ઉપસંહાર કરતા ભગવાન મહાવીર સ્કન્દકને કહે છે કે—“ સે સંતં સંદયા ! દબ્બઓ લોણ સ અંતે, સેત્તઓ લોણ સ અંતે, કાલઓ લોણ અણંતે, ભાવઓ લોણ અણંતે ” હે સ્કન્દક ! આ રીતે વિચાર કરતા દ્રવ્યની અપેક્ષાએ લોક સાન્ત (અતયુક્ત) છે, ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ પણ લોક સાન્ત છે. પણ ક્ષણની અપેક્ષાએ લોક અનંત (અતરહિત) છે, અને ભાવની અપેક્ષાએ પણ લોક અનંત છે. આ પ્રકારનો તમારા પહેલા પ્રશ્નનો ઉત્તર છે.

લોક વિષેના પહેલા પ્રશ્નનો ઉત્તર આપીને હવે શ્રમણ ભગવાન મહા-

જે વિ ચ તે સંદ્યા જાવ સ અતે જીવે અણતે જીવે યે વિ ચ તે સ્કન્દક ! યાવત્
 સાન્તો જીવોઞ્જનો જીવઃ યાવત્પદેન-તવ મનસિ અયમંતદ્રૂપ આધ્યાત્મિકચિન્તિત
 ફલિત પ્રાર્પિતઃ મનોમતઃ સકલ્ય સમુદપણત કિમ્ હત્યસ્ય સગ્રહ । ‘તસ્સ
 વિ ચ ણ અપમદ્દે’ તસ્યાપિ ચ રુલુ અયમર્થ જીવવિષયક પ્રશ્નસ્યદમુષ્ટરમ્ ‘એવ
 સ્વલ્લ યાવત્-અપ યાવત્પદેન ‘મયા સ્કન્દક ! ચતુર્વિધો જીવ મદ્દતઃ, તથા-દ્રુપત
 ક્ષેમત’ કાલતો માવત’ ઇતિ । સગ્રહ, ‘દુશ્વઓ ણં યગે જીવે સ અતે’ દ્રવ્યતા
 રુલ્લુ ઇકો જીવઃ સાંત દ્રવ્યાપેક્ષયા એક જીવમાભિત્ય સાન્તો જીવ ઇતિ ।

ધીર જીવવિષયક દ્વિતીયપ્રશ્ન કા ઉત્તર સ્કન્દક કો વેતે કુળ કહતે
 હૈ-“જે વિ ચ તે સંદ્યા । જાવ સ અતે જીવે અણતે જીવે” હે સ્કન્દક !
 જો તુમ્હારે ચિત્ત મેં વહ ચિત્તલ્પ ડઠા જીવ સાન્ત-અન્ત સહિત હૈ ?
 યા અનન્ત-અન્ત સહિત હૈ ? ‘તસ્સ વિ ચ ણ અપમદ્દે’ સો ડસકા જી
 વહ અર્થ-ઉત્તર હૈ, અર્થાત્-હે સ્કન્દક ! જો તુમ્હેં એસા મન મેં સંકલ્પ
 કુઠા હૈ કિ કયા જીવ સાન્ત અન્ત સહિત હૈ યા અનન્ત-અન્ત સહિત
 હૈ ? સો ડસકા ઉત્તર હસ પ્રકાર હૈ-‘એવં સ્વલ્લ જાવ’ હસ પ્રકાર હૈ
 સ્કન્દક ! મૈને જીવ ચાર પ્રકાર કા પ્રસ્તુતિ કિયા હૈ વહ હસ પ્રકાર
 સે-એક દ્રવ્ય કી અપેક્ષા દુસરા ક્ષેત્રકી અપેક્ષા સે ત્રીસરા કાલ કી
 અપેક્ષા સે ઔર ચૌથા માવ કી અપેક્ષા સે । “દુશ્વઓ ણં યગે જીવે
 સ અતે” દ્રવ્ય કી અપેક્ષાસે એક જીવ સાન્ત-અન્ત સહિત હૈ । તાત્પર્ય
 પહને કા વહ કિ વહાં દ્રવ્ય કી અપેક્ષા સે એક જીવ કો લેકર જીવ
 સાન્ત હૈ એસા કહા ગયા હૈ । કયોં કિ એક કે વાદ દો જય આતે હૈ તો
 એક સંખ્યા સાન્ત-અન્ત સહિત હો જાતી હૈ । એસે સિદ્ધાન્ત મેં

ધીર સ્કન્દકે પૂછેલા છત્ર વિષેના જીવ પ્રશ્નો ઉત્તર આપે છે, “જે વિ ચ
 તે સંદ્યા । જાવ સ અતે જીવ અણતે જીવે” હે સ્કન્દક ! તમારા મનમાં
 છત્રના વિષયમાં આ પ્રશ્નની શકા ઉદ્ભવેલ છે કે ‘છત્ર અત સહિત છે કે
 અન્ત સહિત ?’ “તસ્ય વિ ચ ણ અપમદ્દે” તો તેનો ઉત્તર આ પ્રમાણે
 છે-“એવં સ્વલ્લ જાવ” હે સ્કન્દક ! મેં છત્રના ચાર પ્રકાર પ્રકૃતિ છે (૧) સદા
 આ પ્રમાણે છે (૨) દ્રવ્ય (૩) ક્ષેત્ર (૪) કાળ અને (૫) માવ
 આ ચારની અપેક્ષાએ છત્રની સાન્તતા અને અન્તતાનો વિચાર કરવો
 બેઠાએ. “દુશ્વઓ ણં યગે જીવે સ અતે” દ્રવ્યની અપેક્ષાએ એક છત્ર સાન્ત-
 અન્ત સહિત-છે કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે બહી દ્રવ્યની અપેક્ષાએ તથા
 એક છત્રની અપેક્ષાએ છત્રને સાન્ત (અન્ત સહિત) કહેલ છે કારણ કે

‘સ્વેત્તઓ ણં જીવે અસંખેજ્જપણસિ’ ક્ષેત્રતઃ સ્વલુ જીવોઽસંખ્યેયપ્રદેશિકઃ, ક્ષેત્રાપેક્ષ્યા અસંખ્યેયપ્રદેશવાન્ એવો જીવ इत्यर्थः, તથા ‘અસંખેજ્જ પણસોગાદે’ ‘અસંખ્યેયપ્રદેશાવગાદઃ’ લોકાકાશસ્ય અસંખ્યેયપ્રદેશેષુ અવગાહનાવાનિત્યર્થઃ, ‘અત્થિપુણ સે અંતે’ અસ્તિ પુનઃ ‘સે’ તસ્યાન્તઃ જીવઃ-દ્રવ્યત એક જીવ

જીવ રાશિ અક્ષય અનન્ત માની ગઈ છે સો उस अपेक्षा यह विचार नहीं है । यह विचार तो एक जीव की अपेक्षा से किया जा रहा है । क्यों कि एक जीव स्वतंत्र द्रव्य है । अतः द्रव्य की अपेक्षा एक जीव को लेकर सान्त कहा है । (स्वेत्तओ णं जीवे असंखेज्जपणसि) क्षेत्रकी अपेक्षा से जब जीव सान्तत्व अनन्तत्व का विचार किया जाता है तब भी जीव सान्त ही फलित होता है । जीव असंख्यात प्रदेशवाला है- अर्थात् एक जीव के असंख्यात प्रदेश होते हैं अतः वह लोकाकाश के असंख्यात प्रदेशों में अवगाहनावाला है । यदि यहां पर ऐसी आशंका की जावे कि लब्धपर्याप्तक निगोदिया जीव कि जो असंख्यात प्रदेशी ही होता है उस की जघन्य अवगाहना अंगुल के असंख्यातवें भाग प्रमाण होती है । अतः वह कैसे लोकाकाश के असंख्यात प्रदेशों में अवगाहना वाला हो सकता है ? तो इसका उत्तर यह है कि “ एक जीव लोकाकाश के असंख्यात प्रदेशों में अवगाहना वाला होता है ”

એક પછી બ્યારે બેનો વિચાર કરવામાં આવે છે ત્યારે એક સખ્યા સાન્ત (અન્ત સહિત) બની જાય છે. આમ તો સિદ્ધાંતોમાં એવ રાશિને અક્ષય, અનંત માનવામાં આવેલ છે. પરંતુ અહીં એ રીતે વિચાર કરવામાં આવ્યો નથી. અહીં તો એક એવની અપેક્ષાએ જ વિચાર કરવામાં આવ્યો છે, કારણ કે એક એવ સ્વતંત્ર દ્રવ્ય છે તેથી દ્રવ્યની અપેક્ષાએ એક એવને સાન્ત (અત યુક્ત) કહેલ છે

ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ પણ એવ સાન્ત (અન્ત સહિત) છે એવું પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે એવ અસંખ્યાત પ્રદેશ વાળો છે એટલે કે એક એવના અસંખ્યાત પ્રદેશ હોય છે તેથી તે લોકાકાશના અસંખ્યાત પ્રદેશોમાં અવગાહના વાળો છે અહીં કદાચ એવી આશંકા સેવવામાં આવે કે લબ્ધ પર્યાપ્તક નિગોદિયો એવ, કે જે અસંખ્યાત પ્રદેશી હોય છે, તેની જઘન્ય (આછામાં આછી) અવગાહના અશુદ્ધના અસંખ્યાતમાં ભાગ પ્રમાણ જ હોય છે તો તે કેવી રીતે લોકાકાશના અસંખ્યાત પ્રદેશોમાં અવગાહના વાળો હોઈ શકે ? તેનું સમાધાન આ પ્રમાણે છે એક એવ લોકાકાશના અસંખ્યાત પ્રદેશોમાં

ऐसा जो कहा गया है वह सामान्य जीव की अपेक्षा को लेकर कहा है । तात्पर्य कहने का यह है की आत्मा का परिमाण आकाश की तरह न व्यापक माना गया है और न परमाणु की तरह अणुरूप माना गया है किन्तु जिस जीव को जो शरीर प्राप्त होता है आत्मा उसी प्रमाण पन जाता है । इस प्रमाण में प्रदेश संख्या की न हानि होती है और न वृद्धि होती है वह तो सब जीवों की परास्पर ही रहती है । परन्तु अचगाहना में लंघाई चौड़ाई आदि में अन्तर आ जाता है । अतः सिद्धा न्तकारोंने ऐसा कहा है कि एक जीव का आधार क्षेत्र लोकाकाश के असंख्यातधे भाग से लेकर सम्पूर्ण लोकाकाश तक हो सकता है । लोकाकाश के प्रदेशों का परिमाण असंख्यात है-और असंख्यात के भी असंख्यात भेद कहे गये हैं । अतः लोकाकाश के ऐसे असंख्यात भागों की कल्पना की जासकती है जो अंगुलासम्मेयभागपरिमाण हों । इतना छोटा एक भाग भी असंख्यात प्रदेशात्मक ही होता है । उस एक भाग में कोई एक जीव रह सकता है उतने २ दो भागों में भी रह सकता है । इसी तरह एक २ भाग पड़ते २ आग्निरकार सर्वस्रोत में भी एक जीव रह सकता है । कहने का अभिप्राय ये है कि एक जीव इन्द्र

અવગાહના વાળો હોય છે" આ કથન સામાન્ય હરને અનુક્રમીને કથકું છે કહેવાનો બાવાય છે કે આત્માનું પરિમાણ આકાશની જેમ બધું જ માનવામાં આ ચું નથી, અને પરમાણુની જેમ બધું જ માનવામાં આ કું નથી. પણ જે હવને તેનાકર્મ અનુસાર જે શરીરની પ્રાપ્તિ થાય છે તે શરીર પ્રમાણ આત્મા બની બાય છે એટલે કે મધ્યમ પરિમાણ માનવામાં આવે છે તે પ્રમાણમાં પ્રદેશોની સંખ્યા ન્યૂન અધિક થતી નથી- તે તો સધળા હવેમાં બરાબર જ રહે છે પણ અવગાહના (તબાઈ પડોળાઈ વગેરે માં ફર પડે છે તેથી સિદ્ધાંતકર્તાએ એવું કહ્યું છે કે એક હવનું આધાર શેત્ર લોકાકાશના અસંખ્યાતમાં બાજમી લઈને સૂત્ર લોકાકાશ સુધીનું હોય શકે છે લોકાકાશના પ્રદેશોનું પરિમાણ અસંખ્યાત છે અને તે અસંખ્યાતના પણ અસંખ્યાત ભેદ કહેવા છે તેથી લોકાકાશના એવા અસંખ્યાત ભાગોની કમ્પના કરી શકાય છે કે જે અનૂતના અસંખ્યેય ભાગ પ્રમાણ હોય એવેટા નાનો એક ભાગ પણ અસંખ્યાત પ્રદેશાત્મક જ હોય છે તેવા એક ભાગમાં પણ કેટલેક હવ રહી શકે છે, એને એવા જ ભાગોમાં પણ એક હવ રહી શકે છે આ રીતે એક એક ભાગ વધતાં વધતાં છેવટે સર્વલોકમાં પણ એક હવ રહી શકે છે કહેવાનું તત્ત્વાર્થ એ છે કે એક હવ ઇન્દ્રિયનું જોણમાં જોણ આધાર શેત્ર

‘સ્વેત્તઓ ણં જીવે અસંખેજ્જપણસિ’ ક્ષેત્રતઃ સ્વલુ જીવોઽસંખયેયપ્રદેશિકઃ,
 ક્ષેત્રાપેક્ષયા અસંખયેયપ્રદેશવાન્ એવો જીવ ઇત્યર્થઃ, તથા ‘અસંખેજ્જપણસોગાદે’
 ‘અસંખયેયપ્રદેશાવગાદઃ લોકાકાશસ્ય અસંખયેયપ્રદેશેષુ અવગાહનાવાનિત્યર્થઃ’,
 ‘અત્થિપુણ સે અંતે’ અસ્તિ પુનઃ ‘સે’ તસ્યાન્તઃ જીવઃ-દ્રવ્યત એક જીવા

જીવ રાશિ અક્ષય અનન્ત માની ગઈ છે સો તસ અપેક્ષા યહ વિચાર
 નહીં છે । યહ વિચાર તો એક જીવ કી અપેક્ષા સે કિયા જા રહા છે ।
 કયોં કિ એક જીવ સ્વતત્ર દ્રવ્ય છે । અતઃદ્રવ્ય કી અપેક્ષા એક જીવ કો
 લેકર સ્થાન્ત કહા છે । (સ્વેત્તઓ ણં જીવે અસંખેજ્જપણસિ) ક્ષેત્રકી
 અપેક્ષા સે જબ જીવ સ્થાન્તત્વ અનન્તત્વ કા વિચાર કિયા જાતા છે તપ
 મી જીવ સ્થાન્ત હી ફલિત હોતા છે । જીવ અસંખ્યાત પ્રદેશવાલા છે-
 અર્થાત્ એક જીવ કે અસંખ્યાત પ્રદેશ હોતે હૈં અતઃ વહ લોકાકાશ કે
 અસંખ્યાત પ્રદેશોં મેં અવગાહનાવાલા છે । યદિ યહાં પર એસી આશંકા
 કી જાવે કિ લઘ્યપર્યાપ્તક નિગોદિયા જીવ કિ જો અસંખ્યાત પ્રદેશી
 હી હોતા છે તસ કી જઘન્ય અવગાહના અંગુલ કે અસંખ્યાતવેં ભાગ
 પ્રમાણ હોતી છે । અતઃ વહ કેસે લોકાકાશ કે અસંખ્યાત પ્રદેશોં મેં
 અવગાહના વાલા હો સકતા છે ? તો ઇસકા ઉત્તર યહ છે કિ “એક
 જીવ લોકાકાશ કે અસંખ્યાત પ્રદેશોં મેં અવગાહના વાલા હોતા છે”

એક પછી બ્યારે બેનો વિચાર કરવામા આવે છે ત્યારે એક સખ્યા સ્થાન્ત
 (અન્ત સહિત) બની જાય છે. આમ તો સિદ્ધાન્તમા જીવ રાશિને અક્ષય,
 અનન્ત માનવામાં આવેલ છે પરંતુ અહીં એ રીતે વિચાર કરવામાં આવ્યો
 નથી. અહીં તો એક જીવની અપેક્ષાએ જ વિચાર કરવામાં આવ્યો છે, કારણ
 કે એક જીવ સ્વતત્ર દ્રવ્ય છે તેથી દ્રવ્યની અપેક્ષાએ એક જીવને સ્થાન્ત
 (અન્ત યુક્ત) કહેલ છે

ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ પણ જીવ સ્થાન્ત (અન્ત સહિત) છે એવું પ્રતિપાદન કર-
 વામા આવ્યું છે જીવ અસંખ્યાત પ્રદેશ વાળો છે એટલે કે એક જીવના
 અસંખ્યાત પ્રદેશ હોય છે તેથી તે લોકાકાશના અસંખ્યાત પ્રદેશોમા અવગા-
 હના વાળો છે અહીં કદાચ એવી આશંકા સેવવામાં આવે કે લઘ્ય પર્યા-
 પ્તક નિગોદિયો જીવ, કે જે અસંખ્યાત પ્રદેશી હોય છે, તેની જઘન્ય (ઓછામા
 ઓછી) અવગાહના અંગુલના અસંખ્યાતમાં ભાગ પ્રમાણ જ હોય છે તો
 તે કેવી રીતે લોકાકાશના અસંખ્યાત પ્રદેશોમાં અવગાહના વાળો હોઈ શકે ?
 તેનું સમાધાન આ પ્રમાણે છે એક જીવ લોકાકાશના અસંખ્યાત પ્રદેશોમા

ત્મેષ, મદિષ્યત્તેષ, અત્તેષ ધ્રુવો નિયત શાશ્વતોઽશ્વયોઽશ્વયોઽવસિયત્ત્વમ્ । ત્યન્તે સમાશ્વમ્ । યતો ધ્રુવાદિસ્વમાશ્વકોઽત્ત્વ એવં 'નરિયપુત્ર સે અત્તે' નાસ્તિ પુનસ્તત્ત્વ ધીરસ્યાન્તઃ । 'માવઓ ણં જીવે અર્ણતા ણણપજ્જવા' માવતઃ સલ્લ જીવ અર્ણતા જ્ઞાનપર્યાયા = જ્ઞાનપર્યાયાઃ કેવલિધુદ્ધિકૃતાઽવિમાગપરિચ્છેદાઃ મારતો પ્રીયોઽનર્થજ્ઞાનપર્યાયાત્મકો મરતીતિ માવઃ । " અર્ણતા વંસગપજ્જવા ' અર્ણતા દર્શન

એસા કોઈ સા મી કાલ નહીં હૈ કિ જિસમેં હસકા સજ્જાવ ન રહા હો-
મૃતકાલ મેં જીવ નહીં થા, એસા નહીં કહા જા સકતા વર્તમાનકાલમેં
જીવ નહીં હૈ એસા મી નહીં કહા જા સકતા ઓર મદિષ્યત્
કાલ મેં જીવ નહીં હોગા-એસા મી નહીં માના જા સકતા । હસલિયે
એસા હી માનના આહિયે કિ મૃતકાલ મેં જીવ થા વર્તમાન મેં મી હસકા
સજ્જાવ હૈ, ઓર મદિષ્યત્કાલ મેં મી હસકા અસ્તિત્વ રહગા । ક્યોં કિ
યહ જીવ ધ્રુવ આદિ સ્વમાશ્વમાલા હૈ । અત્ત એવં ' નરિય પુત્ર સે અત્તે "
હસલિયે કાલ કી અપેક્ષા સે જીવકા અત્ત નહીં હૈ । " માવઓ ણં જીવે
અર્ણતાણાણ પજ્જવા " માવકી અપેક્ષા જય જીવ કી સાત્તા ઓર
અનન્તતા કા વિચાર કિયા જાનાહૈ તો ઠસ સમય યહ જીવ અનન્ત સિદ્ધ
હોના હૈ ક્યોં કિ જીવ દ્રવ્ય અનન્ત જ્ઞાન પર્યાયરૂપ હૈ । જ્ઞાન કી પર્યાયે
કેવલી કી બુદ્ધિ સે હી કલ્પિત કી જા સકતી હૈ યે જ્ઞાનપર્યાયે
અવિમાગ પરિચ્છેદ રૂપ હોની હૈ અત્ત માવ કી અપેક્ષા જીવ અનન્ત
જ્ઞાન પર્યાયરૂપ હૈ, " અર્ણતા વંસગ પજ્જવા " અનન્ત દર્શનગુણપર્યાયરૂપ

કોઈ પણ કાળ નથી કે બ્યારે તેનું અસ્તિત્વ ન હોય-મૃતકાળમાં હવ ન હોય
એવું કહી શકાય તેમ નથી, વર્તમાન કાળમાં હવ નથી એવું પણ કહી શકાતું
નથી, અને મદિષ્ય કાળમાં હવ નહીં હોય એવું પણ માની શકાતું નથી.
તેથી એમજ માનવું પડ્યે કે મૃતકાળમાં હવ હોય, વર્તમાનમાં છે અને
મદિષ્યમાં પણ શહેરો ત્રણે કાળમાં હવનું અસ્તિત્વ હોય છે કારણ કે હવ
ધ્રુવ, શાશ્વત, નિત્ય વગેરે સ્વભાવ વાળો છે (મદિય પુત્ર સે અત્તે) તેથી સિદ્ધ
થાય છે કે કાળની અપેક્ષાએ હવ સાન્ત અત્ત સંહિત-છે " માવઓ ણં
અર્ણતા ણાણપરજ્જવા ' ભાવની અપેક્ષાએ હવની અત્ત સંહિતતા કે અત્તરહિતતા
નો વિચાર કરવામાં આવે તો હવને અનન્ત અત્તરહિત સાબિત કરી શકાય છે
કારણ કે હવદ્રવ્ય અનન્ત જ્ઞાન પર્યાય રૂપ છે જ્ઞાનની પરાયેની કલ્પના
કેવલી ભવવાનના કેવળ જ્ઞાન થી જ થઈ શકે છે-તે જ્ઞાન પર્યાયે અવિમાગ
પરિચ્છેદ રૂપ હોય છે તેથી ભાવની અપેક્ષાએ હવને અનન્ત જ્ઞાન પર્યાય
કહી છે " અર્ણતા વંસગ પજ્જવા " હવદ્રવ્ય અનન્ત જ્ઞાન ગુણ પર્યાય રૂપ છે

પેક્ષયા સાન્તઃ । ક્ષેત્રતોઽપિ એકજીવાપેક્ષયા સાન્તઃ । કાલઓ ણં જીવે ન કયાઈ નાસી જાવ નિચ્ચે ' કાલતઃ સ્વલુ જીવઃ કદાચિત્ નાસીત્ યાવત્ નિત્યઃ, હહ યાવત્કરણાત્-ન કદાચિન્ન ભવતિ ન કદાચિન્ન ભવિષ્યતિ અપિ તુ આસીદેવ ભવ-

કા છોટે સે છોટા કમ સે કમ આધાર ક્ષેત્ર અગુલકે અસંખ્યાતવે ભાગ પ્રમાણ હોતા હૈ જો અસંખ્યાત પ્રદેશી લોકાકાશ કા એક અસંખ્યાતવાં ભાગરૂપ હોતા હૈ । તથા અધિક સે અધિક સમ્પૂર્ણ લોકાકાશ મ્હી એક જીવદ્રવ્ય કા આધાર ક્ષેત્ર હોતા હૈ । હસ કથન સે યહ બાત સ્પષ્ટ હો જાની હૈ કિ લઘ્વપર્યાયત્ક નિગોદિયા જીવ કી જગન્મ અવગાહના કે અનુસાર જિતના ઉસકા આધાર ક્ષેત્ર હોગા-વહ મ્હી અસંખ્યાતપ્રદેશાત્મક હી હોગા । પરન્તુ વહ અસંખ્યાત પ્રદેશી લોકાકાશ કા અસંખ્યાતવાં ભાગરૂપ હી કહલાયેગા । હસ તરહ જીવ લોક કે અસંખ્યાતપ્રદેશોં મેં અવગાહનાવાલા હૈ યહ કથન નિર્દોષ હૈ । “ અતિથ પુન સે અતે ” ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા જીવ અન્તસહિત હૈ । હસ તરહ દ્રવ્ય કી અપેક્ષા સે એક જીવદ્રવ્ય સાન્ત હૈ ઓર ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા સે મ્હી એક જીવદ્રવ્ય સાન્ત હૈ । “ કાલઓ ણં જીવે ન કયાઈ નાસી જાવ નિચ્ચે ” કાલ કી અપેક્ષા સે જવ જીવ દ્રવ્ય કી સાન્નતા ઓર અનંતતા કા વિચાર કિયા જાતા હૈ તો વહ અનંત સિદ્ધ હોતા હૈ । ક્યોં કિ તીનોં કાલોં મેં સે

અગુલતા અમખ્યાતમા ભાગ પ્રમાણ હોય છે અને તે આધાર ક્ષેત્ર અમખ્યાત પ્રદેશી લોકાકાશના એક અમખ્યાતમાં ભાગ રૂપ પણ હોય છે. તથા એક જીવ દ્રવ્યનું વધારેમાં વધારે આધારક્ષેત્ર સંપૂર્ણ લોકાકાશ પણ હોય છે. આ કથનથી એ વાત સ્પષ્ટ થાય છે કે લઘ્વ પર્યાયત્ક નિગોદિયા જીવની જગન્મ (ઓછામાં ઓછી) અવગાહના પ્રમાણે જ જે તેનું આધારક્ષેત્ર હશે તે પણ અમખ્યાત પ્રદેશાત્મક જ હશે પરંતુ તે અમખ્યાત પ્રદેશી લોકાકાશના અમખ્યાતમા ભાગ રૂપ જ કહેવાશે આ રીતે જીવ લોકના અમખ્યાત પ્રદેશોમા અવગાહના વાળો છે, એ કથનમા કોઈ પણ પ્રકારનો દોષ જણાતો નથી. અતિથ પુન સે અતે ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ જીવ સાન્ત (અન્ત યુક્ત) છે આ રીતે દ્રવ્યની અપેક્ષાએ એક જીવદ્રવ્ય સાન્ત (અન્ત સહિત છે, અને ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ પણ એક જીવદ્રવ્ય અન્ત યુક્ત છે

“ કાલઓ ણ જીવે ન કયાઈ નાસી જાવ નિચ્ચે ” કાળની અપેક્ષાએ જીવની સાન્નતા અનંતતાનો બ્યારે વિચાર કરવામાં આવે છે ત્યારે જીવ અનંત (અત સહિત) છે અથુ સિદ્ધ થાય છે, કારણ કે ત્રણે કાળમાથી એવો

સ્મક્ત્વાત્ । इति द्वितीय प्रश्नस्योत्तरम् ॥ २ ॥ ‘जे वि य ते खद्या पुच्छ’ यो
 पि च स स्कन्दक ! पृच्छा, पृच्छापदेन पिङ्गलकस्य सिद्धिविषयक सर्वोपि
 प्रश्ना वाच्य, द्विपस्पृश्यन्तमित्याह—‘जाव’ इत्यादि । जाव’ यावत्-यावत्प
 देन ‘अयमेतद्रूप आध्यात्मिकादिविचार समुत्पद्य’ इति संग्रहः, ‘किं स
 अथा सिद्धी अणता सिद्धी’ किं सांता सिद्धिरनतासिद्धि ‘तस्या वि य ण अयममे’
 तस्यापि च खल्वयमर्थ ‘एवं खलु मय खद्या ! अउग्विहा सिद्धि पण्यत्ता’ एवं
 खलु मया स्कन्दक ! चतुर्विधा सिद्धि ग्रहणा, ‘स जहा’ तद्यथा ‘दन्वओ
 खेचओ कालओ भावओ द्रव्यत क्षेत्र कालतो भावत ‘दन्वओ ण एगो सिद्धी
 स भंता’ द्रव्यतः खलु एका सिद्धि सांता एकत्वेन सांनत्वात् ‘खेचओ ण सिद्धी पण
 भी अवस्था में अ-न नहीं आ सकना है, अ-न जब जीव भाव की
 अपेक्षा अनन्त ज्ञान दर्शन आदि पर्यायरूप है-तो इसका अर्थ यही
 होता है कि भाव की अपेक्षा जीव अनन्त है । इस प्रकार यह द्वितीय
 प्रश्न ना उत्तर है ।

‘जे वि य ते खद्या पुच्छा’ हे स्कन्दक ! तेरा तीसरा प्रश्न यह है
 कि सिद्धि सान्त है कि अनन्त ? इसका अर्थ इस प्रकार से है-‘एवं
 खलु मय खद्या ! अउग्विहा सिद्धी पण्यत्ता’ हे स्कन्दक ! मैंने सिद्धि
 चार प्रकार की कही है-‘स जहा’ जो इस प्रकार से है-‘दन्वओ,
 खेचओ, कालओ भावओ’ द्रव्य से, क्षेत्र से, कालसे और भाव से ।
 ‘दन्वओ ण एगो सिद्धी स भंता’ द्रव्य से एक सिद्धि है । और यह
 एक होने के कारण ही सान्त-अन्त सहित है । क्षेत्र की अपेक्षा सिद्धि

છે-તેમનો કોઈ પણ અવસ્થામાં અત સમાવનો નથી તેથી એ ભાવની
 અપેક્ષાએ એવ અનંત નાન દશન વગેરે પર્યાયરૂપ કોઈ તેનો અર્થ
 એ થાય છે કે ભાવની અપેક્ષાએ એવ અનંત અત સહિત છે આ રીતે બીજા
 પ્રશ્નનું સમાધાન કરવામાં આવ્યું છે

“जे वि य ते खद्या पुच्छा” हे स्कन्दक ! तमां नीजे प्रश्न आ प्रभावे
 છે- સિદ્ધિ ત્રાન્ત (અન્ત સહિત) છે કે અનંત (અતસહિત) છે ? -
 તેનું સમાધાન આ પ્રમાણે છે-‘एव खलु मय खद्या ! अउग्विहा सिद्धी
 पण्यत्ता’ હે સ્કન્દક ! મે સિદ્ધિ ચાર પ્રકારની કહી છે (સ જહા) તે ચાર
 પ્રકારો આ પ્રમાણે છે- દન્વઓ રવ્યઓ કાલઓ ભાવઓ (૧) દન્વની
 (૨) રવ્યની, (૩) કાળની અને (૪) ભાવની અપેક્ષાએ સિદ્ધિની અતસહિતતા
 અને અતસહિતતાનો વિચાર કરવો જોઈએ. “दन्वओ ण एगो सिद्धी स
 भंता” દ્રવ્યની અપેક્ષાએ નિદિ એક છે અને તે એક કોવાને કારણે જ
 અતસહિત છે ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ નિદિની અનાર્થ પહોળાઈ ૪૫ થાય એવા

પર્યાયાઃ દર્શન પર્યાયા इत्यर्थः भावतोऽनंतदर्शनपर्यायात्मकत्वं जीवस्येति । ‘अणंता चारित्तपञ्जवा’ अनंता चारित्रपर्यायाः, ‘अणंता अगुरुलघुपञ्जवा’ अनंता अगुरुलघुपर્યાयाः औदारिकशरीराणि प्रतीत्यानंतागुरुलघुपर्यायाः कार्मणादि द्रव्याणि जीवस्वरूपं चाश्रित्यानंता अगुरुलघुपर्याया इति, ‘नत्थि पुण से अंते’ नास्ति पुनस्तस्यांतः भावतो जीवस्यांतो नास्ति अनंतज्ञानदर्शनादि पर्यायात्मकत्वादिति भावः । ‘से तं दव्वओ जीवे स अंते’ तदेतत् द्रव्यतो जीवः सान्तः, ‘खेत्तओ जीवे स अंते’ क्षेत्रतो जीवः सान्तः, ‘कालओ जीवे अणते’ कालतो जीवोऽनंतः, ‘भावओ जीवे अणते’ भावतो जीवोऽनन्तः अनंतज्ञानदर्शनपर्याया-

है, क्या कि दर्शन गुण की भी पर्याये अनंत होती हैं । “अणंता चरित्त पञ्जवा” अनन्त चारित्रपर्याय रूप है क्यों कि चारित्र गुणकी भी अनंत पर्याये होती हैं । “अणंता अगुरु य लघु पञ्जवा” अनन्त अगुरुलघु पर्यायरूप है । औदारिक शरीर को लेकर अनन्त गुरुलघुपर्यायरूप है तथा कार्मण शरीर, और जीव के स्वरूप को आश्रित करके अनन्त अगुरु लघु पर्यायरूप है । “नत्थि पुण से अंते” इस तरह भाव की अपेक्षा से जीव अनन्त-अन्तरहित है । “से तं दव्वओ जीवे स अंते, खेत्तओ जीवे स अंते, कालओ जीवे अणंते भावओ जीवे अणंते” इस सब कथनका अब उपसंहार करते हुए सूत्रकार कहते हैं कि द्रव्यसे एक जीव सान्त है, क्षेत्र से भी वह सान्त है । पर काल और भाव की अपेक्षा से वह अनन्त है-सान्त नहीं है । तात्पर्य कहने का यह है कि जीव के ज्ञान, दर्शन और चारित्रपर्याय अनन्त रूप है-इनका किसी

કારણ કે દર્શન ગુણની પણ અનંત પર્યાયો હોય છે “અણતા ચરિત્તપજ્જવા” એવ અનંત ચારિત્ર પર્યાય રૂપ છે, કારણ કે ચારિત્ર ગુણની પણ અનંત પર્યાય હોય છે ‘અણતા અગુરુલઘુ પજ્જવા’ એવ અનંત અગુરુ લઘુ પર્યાયરૂપ છે ઔદારિક શરીરની અપેક્ષાએ અનંત ગુરુ લઘુ પર્યાય રૂપ છે તથા કાર્મણ શરીર અને એવના સ્વરૂપની અપેક્ષાએ અનંત અગુરુ લઘુ પર્યાય રૂપ છે. “નત્થિ પુણ સે અંતે” આ રીતે ભાવની અપેક્ષાએ એવ અનંત રહિત છે,

હવે એવની સાન્તતા અને અનંતતા વિષેના સમસ્ત કથનને ઉપસહાર કરતાં સૂત્રકાર કહે છે કે “સે ત્ત દવ્વઓ જીવે સ અંતે, ખેત્તઓ જીવે સ અંતે, કાલઓ જીવે અણતે ભાવઓ જીવે અણતે” દ્રવ્યની અપેક્ષાએ એક એવ સાન્ત અત્યુક્ત છે, ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ પણ તે સાન્ત છે, પણ કાળ અને ભાવની અપેક્ષાએ એવ અનંત ‘અતરહિત’ છે કહેવાનું પ્રયોજન એ છે કે એવની જ્ઞાન, દર્શન અને ચારિત્રપર્યાય અનંતરૂપ

ને કદાચિત્તાસીત્, 'આય ણિચ્છા' યાવજિતયા અર યાયત્થવેન 'ન કયાઈ ન મવઈ ન કયાઈ ન મવિસ્સઈ, મર્મિસુ ય, મવઈ ય, મવિસ્સઈ ય, ધુગા, ગિદયા, સાસયા, અક્કલયા, અચ્ચયા, અવઠ્ઠિયા' इति सप्राज्ञम् । कान्तं पूर्वमप्यासीत् सिद्धिरिदानीं विद्यते भविष्यति चानागतकालेपि अतो धृवाधारम्य नित्या चेति भावः । 'भावओ य जहा लायस्स तहा माणियच्चा' भावस्य यथा लोहस्य तथा भणितव्या, भावतश्च सिद्धेर्वक्तव्यता लोहवदेव ज्ञातव्यमिति भावः । तथा च- भावतः सिद्धिरनन्तवर्णगन्धरसस्पर्शपर्यायरूपा, अनन्तसुखज्ञानपर्यायानन्तगुरु धूलपर्यायानन्तागुरुपर्यायरूपा, नास्ति तस्या अन्त इति । 'तस्य दब्बओ सिद्धी स अंता' तत्र द्रव्यतः सिद्धिः सांता 'खेवओ सिद्धी स अंता' क्षेत्रतः सिद्धिः

તથા હો સિદ્ધ હોતા છે । કયોં કે સૂતકાલ મેં કમી મી કોઈ દિન પેસા નહીં હુઆ કિ જય સિદ્ધિકા સદ્ધાશ ન રહા હો । 'જાવ ન કયાઈ ન મવઈ, ન કયાઈ ન મવિસ્સઈ, મર્મિસુ ય, મવઈ ય, મવિસ્સઈ ય, ધુયા, ગિદયા, સાસયા, અક્કલયા અચ્ચયા, અવઠ્ઠિયા ણિચ્છા' કાન્તસે સિદ્ધિ પહિલે મી ધી અપ મી હૈ, ઓર આગે મી રહેગી । હસ કારણ વહ બ્રુચ હૈ નિયત હૈ શાશ્વત હૈ અક્ષય હૈ અવ્યય હૈ અવસ્થિત હૈ ઓર નિચ હૈ । 'ભાવઓ જહા લોયસ્સ તહા માણિયચ્ચા' ભાવ કી અપેક્ષા સે સિદ્ધિ વિષયક વક્તવ્યતા ભાવ સે લોક કી વક્તવ્યતા કે સમાન જાનની વાઙ્મયે । હસ તરહ ભાવ સે સિદ્ધિ અનન્તવર્ણ, ગંધ, રસ સ્પર્શ પર્યાયરૂપ હૈ, અનન્તસુખજ્ઞાન પર્યાયરૂપ હૈ । અનન્ત ગુરુલગ્નયાયરૂપ અને અગુરુલગ્ન પર્યાયરૂપ હૈ । હસકા કમી અન્ત નહીં આતા હૈ । હસ તરહ 'દબ્બઓ સિદ્ધિ સ અંતા' લેક્ષઓ સિદ્ધી સ અંતા' દ્રવ્ય ઓર ક્ષેત્રસે સિદ્ધિ સાન્ત હૈ તથા

સામિત યાય છે કાણુ કે ભૂતકાળમાં જ્યેવો કોઈ પણ સમય ન હોયો કે જ્યારે તેનું અસ્તિત્વ ન હોય 'જાવ ન કયાઈ ન મવઈ, ન કયાઈ ન મવિસ્સઈ મર્મિસુ ય મવઈ ય, મવિસ્સઈ ય ધુગા ગિદયા સાસયા અક્કલયા, અચ્ચયા અવઠ્ઠિયા ણિચ્છા" કાળની અપેક્ષાએ ભૂતકાળમાં સિદ્ધિનું અસ્તિત્વ હતું વર્તમાન કાળમાં પણ છે અને ભવિષ્યમાં પણ રહેશે. કાણુ કે તે ખુબ નિશ્ચત શાશ્વત, અક્ષય, અવ્યય, અવસ્થિત અને નિત્ય છે "ભાવઓ ય જહા લોયસ્સ તહા માણિયચ્ચા' ભાવની અપેક્ષાએ હોકની અનતતા ને રીતે સામિત કશ્વામાં આવી છે જ્યેન રીતે સિદ્ધિની પણ અનતતાનું પ્રતિપાદન કરી શકાય છે આ રીતે ભાવની અપેક્ષાએ સિદ્ધિ અનત વસ્તુ, ગમે તે સ્વસ્થ અને સસ્થાન પર્યાયરૂપ છે- તે અનત ગુરુલગ્નપર્યાયરૂપ છે અનત અગુરુલગ્ન પર્યાયરૂપ છે. તેનો કહી અત નથી આ રીતે 'દબ્બઓ સિદ્ધી સ અંતા, લેક્ષઓ સિદ્ધી સ અંતા" દ્રવ્યની અને ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ સિદ્ધિ અનતવસ્તુ

ચાલીસં જોયણસયસહસ્તાઈં આયામવિષ્કંભેણ' ક્ષેત્રતઃ સ્વલુ સિદ્ધિઃ પંચચત્વાર્શિ-
શતસહસ્રાણિ આયામવિષ્કંભેણ, તત્રાયામો દૈર્ઘ્યમ્ વિષ્કંભો વિસ્તારસ્તથા ચ દૈર્ઘ્ય-
વિસ્તારાભ્યાં ક્ષેત્રતઃ મિદ્ધિઃ પંચચત્વાર્શિદ્વયોજનશતમહસપરિમિતા । અથ પરિ-
ધિમાહ—' एमा जोयणक्रोड़ी त्रायान्सिं च जोयणसयमहस्ताईं तीसं च जोयण-
सहस्ताईं दोण्णि य अउणा पन्नजोयणमए किंचि विसेसादिए परिक्षेवेण ' एका
योजनक्रोटी द्विचत्वारिंशत् च योजनशतसहस्राणि त्रिंशत् च योजन सहस्राणि द्वे
च एकोनपंचाशद्योजनगते किंचित् त्रिणेषाधिके परिक्षेपेण । यद्यपि इह सिद्धिः
परमार्थतः सकलकर्मक्षयरूपा सिद्धाधारा आकाशप्रदेशरूपा वा । तथापि सिद्धा-
नामाधारभूता आकाशप्रत्यागन्नत्वेन ईषत् प्राग्भारा पृथिव्येवेह सिद्धिशब्देन
प्रोक्तेति । ' अत्थि पुण से अंते ' अस्ति पुनस्तस्या अतः । द्रव्यક્ષेत्राभ्यां મિદ્ધિ
ત્રિવિચ્ય કાલતસ્તામાહ—' કાલઓ ન સિદ્ધી ન કયાઈ ન આસી ' કાલતઃ સિદ્ધિ

પૈતાલીસ ૪૫ લાખ યોજન લઘી ચૌડી છે' । इसकी परिधि एक करोड
बयालीस लाख तीस हजार दो सौ गुनचास योजन से कुछ अधिक है,
यदि सिद्धि का विचार वास्तविक दृष्टि से किया जावे तो वह सकल
कर्म क्षयरूप ही है, अथवा सिद्ध जितने आकाश रूप स्थान में बसते हैं
वह सिद्धि है। परन्तु फिर भी सिद्धि शब्दसे यहाँ ईषत्प्राग्भारा-सिद्ध-
शिला-पृथिवी ही ली गई है। क्यों कि वह सिद्धों के आधारभूत
आकाशरूप स्थान के पास आई हुई है। 'अत्थिपुण से अंते' इस
तरह उसका अन्त है। अतः द्रव्यसिद्धि और क्षेत्रसिद्धि ये दोनों अन्त
सहित हैं। 'कालओ णं सिद्धी न कयाइ न आसी' कालसे जब सिद्धिके
सान्तत्व और अनन्तत्व का विचार किया जाता है तब उसका अनन्त-

ન પ્રમાણ છે તેની પરિધિ (ઘેરાવો) એક કરોડ બેતાલીશ લાખ ત્રીસ
હજાર બસો એાગણપચાશ (૧૪૨૩૦૨૪૯) યોજનથી પણ થોડી વધારે છે.
જો વાસ્તવિક દૃષ્ટિએ સિદ્ધિનો વિચાર કરવામા આવે તો તે સકળ કર્મના
ક્ષયરૂપ જ છે, અથવા જોટલા આકાશરૂપ સ્થાનમા સિદ્ધ ભગવતો વસે છે તે
સ્થાનને સિદ્ધિ કહે છે પણ અહીં “સિદ્ધિ” પદ વડે ઈષતપ્રાગભારા-સિદ્ધ
શિલા-પૃથ્વી જ ગ્રહણ કરવામા આવેલ છે, કારણ કે તે સિદ્ધોના અધારભૂત
આકાશરૂપ સ્થાનની પાસે આવેલી છે “અત્થિ પુણ સે અંતે” તેથી તે અત-
વાળી (સાન્ત) છે આ રીતે દ્રવ્યથીસિદ્ધિ અને ક્ષેત્રથીસિદ્ધિ અન્ત યુક્ત છે.
“કાલઓ ન સિદ્ધી ન કયાઈ ન આસી” કાળની અપેક્ષાએ સિદ્ધિની
સાન્તતા અને અનન્તતાનો વિચાર કરવામા આવે તો તેની અનન્તતા જ

‘સ્વેત્ત્વો ણ મિદે અસંલેજ્જપણસિય’ ક્ષેત્રતઃ સ્વલુ સિદ્ધોઽસલ્પેયમદ્વિજ્ઞાન્ મન્વતિ ।
 તદા-‘અસલેજ્જપણસોગાદે’ અસલ્પેયમદેશાવગાદઃ અસલ્પેયેષુ મ્તાનપ્રદેશેષુ મન્-
 ગાહના વિધતે યસ્ય સ અસલ્પેયમદેશાવગાદઃ । ‘અત્યિ પુણ સ અતે’ અસ્તિ
 પુનસ્તસ્માન્તઃ ક્ષેત્રતઃ સ્વલુ મન્તવ્યાન્ સિદ્ધો મન્વતીત્યર્થઃ । ‘કાલ્લપા ણ સિદ્ધે
 સાદીપ અપજ્જમ્મસિય’ કાલ્લતઃ સ્વલુ સિદ્ધઃ સાદિકઃ અપર્પયસિતઃ, સારિકઃ
 એકમાથિત્ય આદિમાન્ અર્પયત્સિતઃ । અણેપકર્મસપરુપારિ સિદ્ધિઃ, સા ષ જ્ઞાન
 વર્ધન ચારિત્રાદિરૂપનારણેનોત્પાદયતે इति સિદ્ધિ વિશિષ્ટમીરસ્યાપિ સાદિત્વ
 મહત્ત્વવતિમાવ , ‘નત્યિ પુણ સે અતે’ નાસ્તિ પુનસ્તસ્પાંત કાલાપસ્યા સિદ્ધ
 સિદ્ધ કી અપેક્ષા સિદ્ધ સાન્ત હે ‘સ્વેત્ત્વો ણ સિદ્ધે અસંલેજ્જ પાસિય’
 ક્ષેત્ર સે મિદ્ધ અસલ્પ્યાન્ પ્રદેશાવાલા હે તથા ‘અસલેજ્જપણસોગાદે’,
 આકાશ કે અસલ્પ્યાન્પ્રદેશોં મેં વહ અવગાહનાયાલા હે । આકાશ કે
 અસલ્પ્યાન્ પ્રદેશોં મેં જિસકી અવગાહના હાતી હે વહ અસલ્પ્યાન્પ્રદે
 શાવગાદ કહલાતા હે । અત્યિ પુણમમતે ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા સિદ્ધ સાન્ત
 અન્તસંહિત હે । ‘કાલ્લપા ણ સિદ્ધે સાદિપ અપજ્જમ્મસિય’ કાલ સે
 મિદ્ધ સાદિક-આદિસંહિત ઓર અર્પયત્સિતઅન્ત સંહિત હે । એક કો
 આશ્રિત કર ક સાદિક હે તથા અનેક નિદ્ધોં કો આશ્રિત કર કે વહ
 અપરમિત-અનન્ત હે । સમસ્ત કર્મોં કે ક્ષયરૂપ નિદ્ધિ હોતી હે । વહ
 નિદ્ધિ જ્ઞાન, વર્ધન યવ ચારિત્ર આદિરૂપ કારણોં કી પૂર્ણતા સે રૂપમ
 હોતી હે । મમ હમ નિદ્ધિ સે વિશિષ્ટ જો જીવ હે વહ બી એક કી
 અપેક્ષા સાદિ હે જેમા ધાના જાના હે ‘નત્યિ પુણ સે અતે’ હસ

એક નિદ્ધની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો નિદ્ધ સાન્ત છે - ‘સ્વેત્ત્વો
 ણ મિદ્ધે પ્રમલ્લપણસિય’ ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ નિદ્ધ અસંલેજ્જપણ પ્રદેશમાં છે
 તથા ‘અસલેજ્જપણસોગાદે’ તે આકાશના અસંલેજ્જપણ પ્રદેશમાં અસંલેજ્જ
 પાણ છે જેની અવગાહના આકાશના અસંલેજ્જપણ પ્રદેશમાં હોય છે તેને
 અસંલેજ્જપણ પ્રદેશાવગાદ કહેવામાં આવે છે અત્યિ પુણ સ અતે , તેથી ક્ષેત્રની
 અપેક્ષાએ નિદ્ધ સા તથાન્ત મહિત છે કાલ્લપો ણ સિદ્ધે મદ્વિપ અપજ્જમ્મસો
 કળની અપેક્ષાએ નિદ્ધ સાદિક અન્ત છે એટલે કે આદિ સંહિત છે અને
 અન્ત સિત છે એક નિદ્ધની અપેક્ષાએ નિદ્ધનો જીવ આદિ મહિત છે તથા
 અનેક નિદ્ધોની અપેક્ષાએ નિદ્ધ ના જીવો આદિ મિત અનાદિ અન્ત છે
 નિદ્ધિ નપૂન કમીના ક્ષય રૂપ હોય છે તે નિદ્ધિની ઉત્પત્તિ નાન, ઘટન,
 ચારિત્ર વગેરે રૂપ કારણોની પૂણતાથી થાય છે તેથી તે સિદ્ધિથી પુણ જે
 જીવ છે તે સિદ્ધ કરે છે એ સિદ્ધ જીવની અપેક્ષાએ પ્રાપ્તિ (આદિમી ૫મી)
 અને અન્ત મનોય છે પરંતુ યજ્ઞ જીવોની અપેક્ષાએ અનાદિ અન્ત છે

સાંતા 'કાલઓ સિદ્ધિ અણતા' કાલતઃ સિદ્ધિરનતા, 'ભાવઓ સિદ્ધી અણતા' ભાવતઃ સિદ્ધિરનંતા હે સ્કન્દક તવ મનસિ યોયં સંકલ્પોઽભૂત કિમિયં સિદ્ધિઃ સાંતા અનંતા વેતિ તસ્ય સંક્ષેપત ઇદમુત્તરમ્ દ્રવ્યક્ષેત્રાભ્યાં સિદ્ધિઃ સાંતા કાલભા-વાભ્યાં ચાનંતા । ઇતિ તૃતીયપ્રશ્નોસ્યોત્તરમ્ ॥ ૩ ॥ 'જે વિ ય તે સ્વદયા' યોપિ ચ તે સ્કન્દક ! 'જાવ' યાવત્-યાવત્પદેન-'તે મનસિ એતાદશ આધ્યાત્મિકા-દિવિચારઃ સમુદપદ્યત કિં સાંતઃ સિદ્ધ.' ઇતિ સંગ્રાહમ્ । 'કિં અણંતે મિદ્ધે' કિં અનન્તઃ સિદ્ધઃ : તં ચેવ 'તદેવ લોકુક્તવ્યતાવદેવાત્રાપિ વાચ્યત્ ક્રિયત્પ-ર્યન્તમિતિ શાહ-'જાવ' યાવત્-યાવત્પદેન દ્રવ્યક્ષેત્રકાલભાવતઃ સિદ્ધશ્ચતુર્વિધો મયા પ્રણસસ્તન્ન-'દ્રવ્યઓ ણં એગે મિદ્ધે સ અંતે' દ્રવ્યતઃ સ્વલુ એક. સિદ્ધ સાંતઃ,

'કાલઓ સિદ્ધા અણતા, ભાવઓ સિદ્ધી અણતા' કાલસે સિદ્ધિ અનન્ત હૈ ઓર ભાવસે સ્ત્રી વહ સિદ્ધિ અનન્ત હૈ । હે સ્કન્દક ! તુમ્હારે મનમેં જો યહ સંકલ્પ હુઆ હૈ કિ સિદ્ધિ સાન્ત-અન્ત સહિત યા અનન્ત અન્ત રહિત હૈ ઉસકા સંક્ષેપ સે યહ ઉત્તર હૈ કિ દ્રવ્ય ઓર ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા સિદ્ધિ સાન્ત અન્ત સહિત હૈ ઓર કાલ ઓર ભાવ કી અપેક્ષા સિદ્ધિ-અનન્ત-અન્ત રહિત હૈ । હસ પ્રકાર યહ તૃતીય પ્રશ્ન કા ઉત્તર હૈ ।

'જે વિ ય તે સ્વદયા ! જાવ કિં અણંતે મિદ્ધે' હસ તરહ હે સ્કન્દ-ક ! જો તુમ્હારે મન મેં ઉત્પન્ન હુઆ હૈ કિ સિદ્ધ સાન્ત-અન્ત સહિત હૈ કિ સિદ્ધ અનન્ત-અન્ત રહિત હૈ સો હસ વિષય મેં સુનો હે સ્કન્દક ! દ્રવ્ય સે, ક્ષેત્ર સે, કાલ સે ઓર ભાવ સે મૈને મિદ્ધ ચાર પ્રકાર કે પ્રરૂપિત કિયે હૈ-હનમેં 'દ્રવ્યઓ ણં એગે સિદ્ધે સ અંતે, દ્રવ્ય સે એક સિદ્ધ સાન્ત-અન્ત સહિત હૈ । અર્થાત્-એક

(સાન્ત) છે પણ "કાલઓ સિદ્ધી અણતા, ભાવઓ સિદ્ધો અણતા" કાળ અને ભાવની અપેક્ષાએ સિદ્ધિ અનન્ત છે હે સ્કન્દક ! તમારા ત્રીજા પ્રશ્નોને સંક્ષેપમા આ પ્રમાણે ઉત્તર છે.-દ્રવ્ય અને કાળની અપેક્ષાએ સિદ્ધિ સાન્ત છે, પણ કાળ અને ભાવની અપેક્ષાએ સિદ્ધિ અનન્ત (અન્તરહિત) છે આ રીતે ત્રીજા પ્રશ્નનું સમાધાન કરવામા આવ્યું છે.

"જે વિ ય તે સ્વદયા ! જાવ કિં અણંતે મિદ્ધે" હે સ્કન્દક ! તમારા મનમા એવી શકા કાક્ષા વગેરે ઉદ્ભવેલ છે કે "સિદ્ધ" સાન્ત (અન્ત યુક્ત) છે કે અનન્ત (અન્ત રહિત) છે ?" તેના સમાધાન આ પ્રમાણે છે-હે સ્કન્દક ! દ્રવ્યની અપેક્ષાએ, ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ, કાળની અપેક્ષાએ અને ભાવની અપેક્ષાએ એમ ચાર પ્રકારે મે સિદ્ધની પ્રત્યક્ષા કરી છે "દ્રવ્યઓ ણં એગે સિદ્ધે-સ અંતે" દ્રવ્યની અપેક્ષાએ એક સિદ્ધ સાન્ત અન્ત સહિત છે. એટલે કે

‘કાલઔ ણ સિદ્ધે અણંતે’ કાલતઃ સ્વલુ સિદ્ધોઽનંત ‘માઘઔ ણ સિદ્ધે અણંતે’ માઘતઃ સ્વલુ સિદ્ધોઽનંત, દ્રવ્યક્ષેત્રાપેક્ષયા સિદ્ધસ્યાન્તત્ત્વં કાલમાત્રાપેક્ષયા ચાન્તત્વમ્ માઘતો જ્ઞાનદર્શનાઽમુલ્લઘુપર્યાયસ્વરૂપેઽ ચાન્તસ્યામાત્રાદિતિ તસ્માત્ હે સ્કન્દક લોકાદિ પદાર્થ દ્રવ્યક્ષેત્રાભ્યાં સાંત એવ કાલમાત્રાભ્યાં ત્વનન્ત એવ મય તીતિ । ઇતિ ચતુર્યપ્રશ્નસ્યોપરમ્ ॥ ૪ ॥

લોકાદારમ્ય સિદ્ધપર્યન્તઘસ્ટુપુ સાતત્વાનંતસ્વવિષયકસંશયસ્ય નિરાકરણં કૃત્વા સામ્પત્ત મરણવિષયકપ્રશ્ન સ્પષ્ટયતિ—‘જે વિ ય’ ઇત્યાદિ । ‘જે વિ ય તે સંદ્યા’ યોપિ ચ તે સ્કન્દક ! ‘इमेयारूढे अज्ज्ञातिप चित्तिप जाव समुपज्जित त्या अयमेतद्रूप आध्यात्मिकचिंतितो यावत् समुदपपद्यत, इह यावत्करमात्’ ક

હાર કરતે હું (સે ચ દ્રવ્યઔ ણ સિદ્ધે સ અંતે, સ્વેત્તઔ ણ સિદ્ધે સ અંતે) સાન્તદ્રવ્ય સે સિદ્ધ અન્નસહિત હૈ તથા ક્ષેત્ર સે મી સિદ્ધ અન્તસહિત હૈ પરન્તુ (કાલઔ ણ સિદ્ધે અણંતે માઘઔ ણ સિદ્ધે અણંતિ) કાલ સે સિદ્ધ અન્તરહિત હૈ ઔર માઘ સે મી સિદ્ધ અન્તરહિત હૈ । इसत्तिपे हे स्कन्दक ! लोकादि पदार्थ द्रव्य और क्षेत्र की अपेक्षा से सांत हूँ और काल एवं माघ की अपेक्षा से वे अनंत हैं । इस प्रकार का यह चतुर्यप्रश्न का उत्तर है ।

इस तरह लोक से लेकर सिद्धतक की घस्तुओं में सांतता अनन्तता विषयक संशय का निवारण करके अथ भगवान् मरण विषयक प्रश्न का स्पष्टीकरण करते हैं—‘जे वि य ते संध्या इमेयारूढे अज्ज्ञातिप चित्तिप जाव समुपज्जितया’ हे स्कन्दक ! जो तुम्हें यह इस प्रकार का आध्यात्मिक, चिन्तित यावत् मनोगत सकल्प उत्पन्न हुआ है, कि

‘સે ચ દ્રવ્યઔ ણ સિદ્ધે સ અંતે, સ્વેત્તઔ ણ સિદ્ધે સ અંતે’ દ્રવ્ય અને ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ નિદ્ધ અત સહિત છે પણ ‘કાલઔ ણ સિદ્ધે અણંતે, માઘઔ ણ સિદ્ધે અણંતે’ કાળ અને માઘની અપેક્ષાએ સિદ્ધ અતસહિત છે આ પ્રમાણે ધોધા પ્રશ્નનુ સ્પષ્ટીકરણ કરવામાં આ મુ છે, હે સ્કન્દક ! લોક પગેરે પદાર્થો દ્રવ્ય અને ક્ષેત્રની અપેક્ષાએ સાન્ત (અત સહિત) છે, પણ કાળ અને માઘની અપેક્ષાએ અન્ત (અત સહિત) છે

આ રીતે લોકથી શરૂ કરીને સિદ્ધ સુખીની સાન્તતા અને અન્તતાની ભાજતા પ્રશ્નોનુ સમાધાન કરીને હવે ભગવાન મરણ વિષયના પ્રશ્નનુ સમાધાન કરે છે

“જે વિ ય તે સંદ્યા । इमेयारूढे अज्ज्ञातिप चित्तिप जाव समुपज्जितया” હે સ્કન્દક ! તમને આ પ્રકારનો આધ્યાત્મિક, ચિન્તિત, (યાવત્) મનોમત

સ્યાંતો ન ભવતિ સદૈવવિદ્યમાનત્વાત્ । 'ભાવઓ ણં સિદ્ધે અણંતા ણાણપજ્જવા' ભાવતઃ સ્વલુ સિદ્ધઃ-અનંતા જ્ઞાનપર્યાયાઃ જ્ઞાનપર્યાયાણામનંતત્વેન જ્ઞાનસ્ય ચ જીવસ્વરૂપતયા જ્ઞાનાત્મકભાવેન સિદ્ધ જીવોપ્યનંતો ભવતીત્યર્થઃ, 'અણતા દસણપજ્જવા' અનંતાદર્શનપર્યાયાઃ યથા જ્ઞાનપર્યાયા અનંતાસ્તથા દર્શનપર્યાયા અનંતઃસ્તથા દર્શનપર્યાયા અપીતિ, 'અણંતા અગુરુલ્હુપજ્જવા' અનંતા અગુરુલઘુપર્યાયાઃ, અનંતા અગુરુલઘુપર્યાયાઃ જીવસ્વરૂપમાશ્રિત્યાગુરુલઘુત્વપર્યાયત્વં વોધ્યમિતિ । 'નત્થિ પુણ સે અંતે' નાસ્તિ પુનસ્તસ્યાંનઃ તસ્ય સિદ્ધસ્ય ભાવતઃ કદાચિદપિ અન્તો ન ભવતિ સદૈવ વિદ્યમાનત્વાદિતિ ભાવઃ । 'સે ચં દવ્વઓ ણં સિદ્ધે સ અંતે' તદેતત્ દ્રવ્યતઃ સ્વલુ સિદ્ધઃ સાંતઃ 'સ્વેત્તઓ ણં સિદ્ધે સ અંતે' ક્ષેત્રતઃ સ્વલુ સિદ્ધઃ સાંતઃ,

સિદ્ધ જીવ કા કાલ કો અપેક્ષા સે અંત નહી હોતા હૈ ક્યોં કિ વહ સદા વિદ્યમાન રહતા હૈ । 'ભાવઓ ણં સિદ્ધે અણંતા ણાણપજ્જવા' ભાવ સે સિદ્ધ અનન્તજ્ઞાનપર્યાયરૂપ હૈં । તાત્પર્ય યહ હૈ કિ-જ્ઞાન કી પર્યાયે અનન્ત હોતી હૈં-ઔર જ્ઞાન જીવ કા નિજસ્વરૂપ હૈં ઇસલિયે જ્ઞાનરૂપ હોને કે કારણ સિદ્ધ જીવ મી અન્ત રહિત હૈ-અનન્તહૈં, (અણંતા દસણ પજ્જવા) જિસ પ્રકાર સે જ્ઞાનકી પર્યાયે અનન્ત હૈં । ડસી તરહ સે દર્શન કો મી પર્યાયે અનન્ત હૈં । અણંતા અગુરુલ્હુપજ્જવા 'અગુરુલ્હુ ગુણ કી પર્યાયે મી અનન્ત હૈં-જીવ કે સ્વરૂપ કા આશ્રિત કર યહાં અગુરુલ્હુપર્યાયતા જાનનો ચાહિયે । ઇસલિયે (નત્થિપુણ સે અંતે) સિદ્ધ જીવ કા કમી મી ભાવ કી અપેક્ષા સે અન્ત નહીં હોતા હૈં । ક્યોં કિ ઇસ અપેક્ષા વહ સદા વિદ્યમાન માના ગયા હૈં । ઇસ કથન કા અવરોધ-

“નત્થિ પુણ સે અંતે” પણુ તે સિદ્ધ જીવનો અંત હોતો નથી કારણ કે તેનું અસ્તિત્વ સદા કાળ રહે છે માટે અનંત છે (અંત રહિત) છે “ભાવઓ ણં સિદ્ધે અણંતા ણાણપજ્જવા” લાવની અપેક્ષાએ જીવ અનંત જ્ઞાન પર્યાય રૂપ હોય છે-તાત્પર્ય એ છે કે જ્ઞાનની પર્યાયો અનંત હોય છે-અને જ્ઞાન જીવનું નિઃસ્વરૂપ છે તેથી જ્ઞાન રૂપ હોવાને કારણે સિદ્ધ જીવ પણુ અનંત (અંત-રહિત) હોય છે અણંતા દસણપજ્જવા” જેમ જ્ઞાનની પર્યાયો અનંત હોય છે તેમ સિદ્ધને દર્શનની પર્યાયો પણુ અનંત હોય છે “અણંતા અગુરુલ્હુપજ્જવા” અને અગુરુ લઘુ ગુણની પર્યાયો પણુ અનંત હોય છે-જીવના સ્વરૂપને અનુલક્ષીને અહીં અગુરુ લઘુ પર્યાયો સમજવી તેથી “નત્થિ પુણ સે અંતે” લાવની અપેક્ષાએ સિદ્ધજીવનો કંઠી પણુ અંત હોતો નથી તે અન્તરહિત હોય છે. હવે આ કથનનો ઉપસહાર કરતા સૂત્રકાર કહે છે કે

મગવાનાદ—‘ચાલમરણે’ શ્ત્યાદિ, ‘ચાલમરણે દુવાલસત્તિદે પણ્ણતે’ ચાલમરણ
 દ્વાદશવિધ મજ્જસમ્મ । ‘ત જહા’ સઘયા—‘ચલ્યમરણે’ ચલ-મરણમ્, ચલ્લતઃ
 ધુમ્મસાપિપાસાદિ પરિગતસ્થેન ચલ્લચ્છાયામાનસ્ય ચલ્ મરણ તદ્વચ્ચ-મરણમ્ અયથા
 સપમાત્ પતિતો જીવસ્ય ચન્મરણં તદ્ ચન્-મરણમિતિ ૧ ‘ચલ્લમરણે’ ચલ્લાર્તમ-
 રણમ્, ચન્નેનન્દ્રિયયાગધીનન શ્વતસ્ય પીઢિતસ્ય પ્રદીપ્તપદ્મીતગાલિત ધમુપા
 પત્તગસ્યેવ ચ-મરણં તદ્વચ્ચ-મરણમ્ વિશયાધીનગ્ધિચ્ચ-મરણમિતિ યાવત્ ૨ ।
 ‘અતો સલ્લમરણે’ અન્તઃ ક્ષલ્પમરણમ્ અન્તઃ શરીરમધ્ય પ્રવિષ્ટસ્ય માયાદિરૂપ
 ક્ષલ્પસ્થાનુદ્ધરણેન ચન્મરણમ્ તદન્તઃ શલ્પમરણમ્ ૩ । તથા ‘તન્મચમરણે’ તન્મ-

મરણે દુવાલસત્તિદે પણ્ણતે’ હે સ્કન્દક ! ચાલમરણં ૧૨ પ્રકાર કા હોતા
 હૈ । ‘ત જહા’ ‘તસ કે લે પ્રકાર લે હૈ—‘ચલ્યમરણે’ ચલ-મરણ । અથ
 પદ્મ અધિક મૂલ્ચ પ્યાસ આદિ સે જીવ તલ્લપકાને લગતા હૈ તય લહ
 તલ્લપકાતા હુઆ મરણ કો પ્રાપ્ત હો જાતા હૈ—હમ મરણ કા નામ ચલ્ય
 મરણ —ચલ-મરણ હૈ । અયથા-સંયમ સે ભ્રષ્ટ હુપ જીવ કા જો મરણ
 હૈ લહ ચલ્યમરણ હૈ ૧ । ‘ચલ્લમરણ-ચલ્લાર્તમરણે-પ્રદીપ્ત વીપક ક
 પ્રકાશ સે આકૃષ્ટ હુપ નેત્રલાલે પતંગિયે કી તરહ શ્દિયો કી
 આધીનતા સે દુઃખિત હુપ જીવ કા જો મરણ હોતા હૈ લહ ચલ્લાર્તમરણ
 હૈ ૨ । ‘અતો સલ્લમરણે’ અન્તઃ ક્ષલ્પ મરણ-શરીર કે મોતર પ્રવિષ્ટ
 માયાદિશલ્પ કે અનુદ્ધરણ સે જો મરણ હોતા હૈ લહ અન્ત ક્ષલ્પમરણ
 હૈ ૩ । ‘તન્મચમરણે’ તન્મચમરણ-મનુષ્યાદિ પર્વાય મેં રહતે હુપ જીવ કા

મરણે દુવાલસત્તિદે પણ્ણતે” હે સ્કન્દક ! જાલમરણનાં જાલ પ્રકાર કયાં છે
 (ત જહા) તે પ્રકારે જા પ્રમાણે છે

૧ “ચલ્યમરણ” જાલમરણ (ચલ્મરણ) જ્યારે લણી ન જૂળ, તરલ
 વગેરેથી તરલકીને જીવ મરણ પામે છે ત્યારે તે મરણને ચલ્યમરણ કહે છે
 જ્યારે સ્વયમથી ભ્રષ્ટ થયેલા માણસના મરણને પણ ચલ્યમરણ કહે છે

૨ “ચલ્લમરણ” ચલ્લાર્તમરણ-સજાતી હીવાથી આકર્ષાઈને જેવી રીતે
 પતંગિયા મરે છે તેવી રીતે ઈન્દ્રિયોના ગુલામ બનીને દુખિત થયેલા જીવ
 ને મરણ થાય છે તેને ચલ્લાર્તમરણ” કહે છે

૩ “અતો સલ્લમરણ” અન્ત ક્ષલ્પ મરણ આત્મામાં પ્રવેશેલ માયા વગેરે
 શબ્દો ન નીકળવાને કારણે જે મરણ થાય છે—જેટલે કે માયા વગેરે શબ્દોના
 પરિવાસ કયાં વિના જે મરણ થાય છે તેને અન્ત ક્ષલ્પ મરણ કહે છે
 ૪ “તન્મચમરણ” તન્મચ મરણ—મનુષ્ય વગેરે પર્વાયમાં ઉત્પન્ન થયેલ જીવન

લ્પિતઃ પ્રાર્થિતો મનોગત સંકલ્પઃ ' ઇત્યાદીનાં ગ્રહણં કર્તવ્યમ્ । યત્- ' કેળ વા મરણેણં મરમાણે જીવે વડ્ઢહ વા હાયહ વા ' કેન વા મરણેન મ્રિયમાણો જીવો વર્ધતે વા હીયતે વા, કીદશં હિ મરણ જીવસ્ય સંસારં વર્ધયતિ કીદશં ચ મરણં સંસારં હાસયતીતિ પ્રશ્નઃ । ' તસ્સ વિ ય ણં અયમદ્દે ' તસ્યાપિ ચ સ્વલુ અયમર્થઃ ' એવં સ્વલુ સ્વંદયા ' એવં સ્વલુ સ્કન્દક ! ' મણ દુવિહે મરણે પન્નત્તે ' મયા દ્વિવિધ મરણં પ્રજ્ઞસમ્, ' તં જહા ' તથથા ' વાલમરણે ય પંડિયમરણે ય ' વાલમરણં ચ પંડિતમરણં ચ । મરણસ્ય વાલપંડિતભેદદ્વયં શ્રુત્વા કિમિદં વાલ મરણમિતિ વાલમરણવિષયકજિજ્ઞાસાવાનાહ- ' સે કિં તં ' ઇત્યાદિ । ' સે કિં તં વાલમરણે ' અથ કિં તદ્ વાલમરણમ્ ? હે ભગવન્ યદિદં દેવાનુપ્રિયેણ વાલ- પાંડિત્યભેદેન મરણસ્ય દ્વૈવિદ્યત્વં પ્રદર્શિતં તત્ર કિમિદં વાલમરણ નામેતિ પ્રશ્નઃ

“ જીવે ” જીવ ‘ કેળ વા મરણેણં મરમાણે વડ્ઢહ વા હાયહ વા ’ કિસ મરણ સે મરકર વઢતા હૈ ઓર કિસ મરણ સે મરકર ઘટતા હૈ । તાત્પર્ય ઇસ્કા યહ હૈ કિ કૈસા મરણ જીવ કે સંસાર કા વર્ધક હોતા હૈ ઓર કૈસા મરણ જીવ કે સંસાર કા હાસ કરને વાલા હોતા હૈ । ‘ તસ્સ વિ ય ણં અયમદ્દે ’ સો ઇસ પ્રશ્નકા મો યહ ઉત્તર હૈ “ એવં સ્વલુ સ્વંદયા ! મણ દુવિહે મરણે પણ્ણત્તે ’ કિ હે સ્કન્દક મૈને મરણ દો પ્રકાર કા કહા હૈ । ‘ તંજહા ’ જો ઇસ પ્રકાર સે હૈ- ‘ વાલ મરણે ય પંડિય મરણે ય ’ એક વાલ મરણ ઓર દૂસરા પંડિત મરણ । સ્કન્દક ને જવ મરણ કે યે દો પ્રકાર સુને-તવ ઉસે વાલમરણ કા કયા સ્વરૂપ હૈ એસી જિજ્ઞાસા હુઈ અતઃ ઉસને પ્રશ્ન સે પૂછા કિ ‘ સે કિં તં વાલમરણે ’ હે ભગવાન્ ! આપ દેવાનુપ્રિય ને વાલમરણ ઓર પંડિત મરણ કે ભેદ સે મરણ દો પ્રકાર કા કહા હૈ-સો હનમેં વાલમરણ કયા હૈ ? ઇસ પ્રકાર સ્કન્દન કી વાલમરણ કી જિજ્ઞાસા જાનકર પ્રશ્નને ઉસે કહા કિ ‘ વાલ

સકલ્પ ઉત્પન્ન થયો છે કે “ જીવે કેળ વા મરણેણ મરમાણે વડ્ઢહ વા હાયહ વા ” કેવા પ્રકારના મરણે મરવાથી જીવ પોતાનો સંસાર વધારે છે, અને કેવા પ્રકારના મરણે મરવાથી જીવ પોતાનો સંસાર ઘટાડે છે ? “ તસ્સ વિ ય ણ અયમદ્દે ” તે તમારા તે પ્રશ્નનો ઉત્તર આ પ્રમાણે છે ‘ એવં સ્વલુ સ્વંદયા ! મણ દુવિહે મરણે પણ્ણત્તે ” છે સ્કન્દક ! મેં જે પ્રકારના મરણ કહ્યા છે (ત જહા) તે જે પ્રકારે આ પ્રમાણે છે- “ વાલમરણે ય પંડિયમરણે ય ” (૧) બાલમરણ અને (૨) પંડિતમરણ ત્યારે સ્કન્દકે મહાવીર પ્રભુને પૂછ્યું કે “ સે કિં ત વાલમરણે ? ” છે ભગવન્ ! બાલમરણનું સ્વરૂપ કેવું હોય છે ? આ પ્રમાણે સ્કન્દકની જિજ્ઞાસા બાણીને પ્રભુ તેને કહે કે “ વાલ-

તરુપતનમ્ વૃક્ષાઘાત્ પતતો યન્મરણ તત્ તરુપતનમરણમ્ ૬ । તથા ' જલપ્પવેસે ' જલપ્રવેશઃ, અથ પ્રવિશ્ય યન્મરણ તજ્જનપ્પવેશમરણમિતિ ૭ । તથા ' જલણપ્પવેસે ' જલણનપ્રવેશ જલણે=પ્રાણો પ્રવિશ્ય યન્મરણત્ તજ્જનપ્પવેશમરણમ્ ૮ । તથા ' વિપમક્કણે ' વિપમક્ષણમ્, વિપ પીત્વા યન્મરણ તદ્વિપમક્ષણમરણમ્ ૯ । તથા ' સત્થોવાઢણે ' શસ્ત્રાઘપાટનમ્ શસ્ત્રેણ કરવાલાદિના અઘ્પાટનં વિદારણં યસ્મિન્ મરણે તત્ શસ્ત્રાઘપાટનમરણમ્ ૧૦ । ' વેદાયસે ' વૈદાયસમ્, વિદાયસિ આઠાઢે મયમ્ વૃક્ષાદિ શાસ્ત્રાદ્યુચ્ચન્ધનેન યત્ મરણ સત્ વૈદાયસમરણમ્ ૧૧ । ' ગિદ્ધપદ્ધે ' ગુદ્ધસ્પૃષ્ટમ્ ગુરૈરામમાંસમયકે પક્ષિવિશેષેઃ, અથવા ગુરૈ માસલુચ્ચકે ઘ્રાણાદિમિઃ સ્પૃષ્ટસ્ય=વિદારિતસ્ય અથવા કરિકરમરાસમાદિશરીરાન્તર્ગતત્વેન યન્મરણ

ગિર કર મરના યહ તરુપતન મરણ હૈ ૬ । ' જલપ્પવેસે ' જલ મેં દૂધ કર જો મરણ હોતા હૈ વહ જલપ્રવેશ મરણ હૈ ૭ । ' જલણપ્પવેસે ' અગ્નિ મેં કૂદ કર જલ જાના યહ જ્વલન પ્રવેશ મરણ હૈ ૮ । ' વિપમક્કણે ' વિપ મક્ષણ-વિપ પાન કર મરના યહ વિપમક્ષણ મરણ હૈ ૯ । ' સત્થોવાઢણે ' તલવાર આદિ શસ્ત્રોં સે અપને શરીર કો વિદારણ કર મરના યહ શસ્ત્રાઘપાટન મરણ હૈ ૧૦ । ' વેદાયસે ' વૃક્ષ આદિ કી ઘાત્તા પર ફાંસી લટકા કર જો મરણ હોતા હૈ વહ વૈદાયસમરણ હૈ ૧૧ । ' ગિદ્ધપદ્ધે ' માંસ સ્નાને ઘાઢે પક્ષિવિશેષોં કે દ્વારા વિદારિત કિયે જાન પર જો મરણ હોતા હૈ વહ ગુદ્ધસ્પૃષ્ટ મરણ હૈ । અથવા-હાથી, કૂટ આદિ કે પૈરોં કે નીચે આ જાને પર અર્થાત્ ઉનકે પાંડ કે નીચે વચ જાને પર જો મરણ હો જાતા હૈ વહ ગુદ્ધસ્પૃષ્ટ મરણ હૈ । અથવા-માંસ લુચ્ચક

ધાય છે તેને વૃક્ષ પતન મરણ કહે છે ૭ " જલપ્પવેસે " પાણીમાં ડૂબી જવાથી જે મરણ ધાય છે તેને જળ પ્રવેશ મરણ કહે છે ૮ " જલણપ્પવેસે " અગ્નિમાં ડૂબી પડી ને બળી મરણથી જે મરણ ધાય છે તેને જ્વલન પ્રવેશ મરણ કહે છે ૯ " વિપમક્કણે " -વિપ ખાવાથી જે મરણ ધાય છે તેને વિપ મક્ષણ મરણ કહે છે ૧૦ " સત્થોવાઢણે " તલવાર વગેરે શસ્ત્રોના ઘાથી જે મરણ ધાય છે તેને શસ્ત્રાઘપાટન મરણ કહે છે ૧૧ " વેદાયસે " ગજે શસ્ત્રો ખાઈ ને જે મરણ ઉપજાવવામાં આવે છે તેને વૈદાયસ મરણ કહે છે ૧૨ " ગિદ્ધપિદ્ધે " ગીધ વગેરે માંસાહારી પક્ષીઓ વડે શરીર ખવાવાથી જે મરણ ધાય છે તેને ગુદ્ધસ્પૃષ્ટ મરણ કહે છે અથવા- હાથી, કૂટ વગેરે પ્રાણીઓના પગ તળે અગાધ જવાથી જે મરણ ધાય છે તેને ગુદ્ધસ્પૃષ્ટ મરણ કહે છે, અથવા માંસાહારી શિયાળ વગેરે જાનવરો વડે ભક્ષિત થવાને કારણે

વમરણમ્, તસ્મૈભવાય મનુષ્યાદેઃ સતો મનુષ્યાદાવેવ વદ્વાયુક્તસ્ય યન્મરણં તત્
તદ્વમરણમ્ મનુષ્યદેહં પરિત્યજ્ય પુનરપિ મનુષ્યે એવ પ્રાદુર્ભાવઃ એવ તિર્યગ્ શરીરં
પરિત્યજ્ય પુનસ્તત્રૈવ જન્મગ્રહણમિતિ, इदं च तद्भवमरणं मनुष्यतिरश्चोरेव संभ-
वति न तु देवनारकयोः देवोदेवशरीरं परित्यज्य नैव देवेषु समुत्पद्यते न वा
नारको नरकं परित्यज्य पुनर्नરके एव समुत्पद्यते इति ४ । ‘ गिरिपङ्के ’
गिरिपतनम्, पर्वताग्रात् पतित्वा मरणं गिरिपतनमिति ५ । तथा ‘ तरुपङ्के ’

उसी पर्याय का आयु बंध कर जो मरण होना है वह तद्भव मरण
है ४ । तात्पर्य कहने का यह है कि जीव जिस पर्याय में है—उस पर्याय
को छोड़कर पुनः उसी पर्याय में जन्म धारण करना यह तद्भव मरण है
जैसे कोई मनुष्य मनुष्यपर्याय को छोड़कर पुनः मनुष्यपर्याय में जन्म
करता है तो यह उसका तद्भव मरण है—(तस्मै भवाय मरणं) तद्भव-
मरण ऐसी इसकी व्युत्पत्ति है इसी तरह तिर्यक् शरीर का
परित्याग कर कोई तिर्यक् जीव पुनः उसी पर्याय में जन्म
धारण करता है तो यह उसका तद्भव मरण है । यह तद्भव
मरण मनुष्यगति और तिर्यक्गति के जीवों में ही संभवता है ।
देव और नारकगति के जीवों में नहीं, क्योंकि यह सैद्धा-
न्तिक नियम है कि देव मर कर देव नहीं होता और नारक मर
कर नारक नहीं होता है । तथा ‘ गिरिपङ्के ’ गिरिपतन-पर्वत के ऊपर
से गिरकर के मरना—यह गिरिपतन मरण है ५ । ‘ तरुपङ्के ’ वृक्ष से

ખીળે લવે તેજ પર્યાયનેા આયુષ્ય બધ બાંધીને જે મરણ થાય છે તે મરણ
ને તદ્ભવ મરણ કહે છે એટલે કે જે પર્યાયમાં જીવ જન્મ પામ્યો હોય તે
પર્યાયમાંથી મરીને ફરીથી પાછો તેજ પર્યાયમાં ઉત્પન્ન થતો હોય તો તેના મર-
ણને તદ્ભવ મરણ કહે છે. જેમ કે કોઈ જીવ મનુષ્ય પર્યાયને છોડીને ફરીથી
પાછો મનુષ્ય પર્યાયમાં જ જન્મ ધારણ કરે તો તેના મરણને તદ્ભવ મરણ કહે છે
તદ્ભવ મરણની વ્યુત્પત્તિ આ પ્રમાણે થાય છે— “ તસ્મૈ ભવાય મરણ ” એજ
પ્રમાણે કોઈ જીવ તિર્યક યોનિમાં જન્મ ધારણ કરીને ત્યાથી મરીને ફરીથી
તિર્યક યોનિમાં જન્મ ધારણ કરે તો તેના મરણને તદ્ભવ મરણ કહે છે.
તે તદ્ભવ મરણ મનુષ્ય ગતિના જીવોમાં જ સંભવે છે—દેવ અને નારક ગતિના
જીવોમાં તે મરણ સંભવતું નથી, કારણ કે સિદ્ધાંતોમાં, અર્થ કહ્યું છે કે દેવ
મરીને દેવ થતો નથી અને નારક જીવ મરીને નારક ભવમાં જન્મ લેતો નથી.

૫ “ ગિરિપદ્મ ” “ ગિરિપતન—પર્વત પરથી નીચે પડવાથી થતા મરણને
ગિરિપતન મરણ કહે છે. ૬ “ તરુપદ્મ ” વૃક્ષ પરથી પડી જવાથી જે મરણ

તરુપતનમ્ દુષાપ્રાત્ પતતો યન્મરણં તત્ દરુપતનમરણમ્ ૬ । તથા 'જલપ્પવેસે' જલપ્રવેશઃ, જલ પ્રવિશ્ય યન્મરણ તજ્જનપ્પવેશમરણમિતિ ૭ । તથા 'જલ્લપ્પવેસે' જલનપ્રવેશ જ્વલતે=અગ્નૌ પ્રવિશ્ય યન્મરણત્ તજ્જલનપ્રવેશમરણમ્ ૮ । તથા 'વિપમક્ષણે' વિપમક્ષણમ્, વિપ પીત્વા યન્મરણ તદ્વિપમક્ષણમરણમ્ ૯ । તથા 'સત્થોવાહણે' સત્થાવપાટનમ્ શસ્ત્રેણ કરવાલાદિના અરપાટનં વિદારણં યસ્મિન મરણે તત્ સત્થાવપાટનમરણમ્ ૧૦ । 'વેદાયસે' વેદાયસમ્, વિદાયમિ આઠાશ્વે મશ્મ્ દુષાદિ શાલાધુન્ધ્રન્બનેન યત્ મરણ તત્ વેદાયસમરણમ્ ૧૧ । 'ગિદ્દપટે' ગુદસ્પૃષ્ટમ્ ગુદૈરાપમાંસમક્ષકૈઃ પક્ષિવિશેષૈઃ, અથવા છુત્રૈઃ માંસલુચ્ચે કુગામા વિભિઃ સ્પૃષ્ટસ્ય=વિદારિતસ્ય અથવા કરિકરમરાસમાદિશરીરાતર્ગતત્ત્વેન યન્મરણં

ગિર કર મરના યહ તરુપતન મરણ હૈ ૬ । 'જલપાયેસે' જલ મેં હૂબ કર જો મરણ હોતા હૈ ઘહ જલપ્રવેશ મરણ હૈ ૭ । 'જલ્લપ્પવેસે' અગ્નિ મેં હૂદ કર જલ જાના યહ જ્વલન પ્રવેશ મરણ હૈ ૮ । 'વિપમક્ષણે' વિપમક્ષણ-વિપ પાન કર મરના યહ વિપમક્ષણ મરણ હૈ ૯ । 'સત્થોવાહણે' તલયાર આદિ શસ્ત્રોં સે અપને શરીર કો વિદારણ કર મરના યહ શસ્ત્રાવપાટન મરણ હૈ ૧૦ । 'વેદાયસે' વૃદ્ધ આદિ કી શાલા પર ફાંસી લટકા કર જો મરણ હોતા હૈ ઘહ વેદાયસમરણ હૈ ૧૧ । 'ગિદ્દપટે' માંસ છાને ઘાહે પક્ષિવિશેષોં કો દ્વારા વિદારિત કિયે જાને પર જો મરણ હોતા હૈ ઘહ ગુદસ્પૃષ્ટ મરણ હૈ । અથવા-દાપી, કુદ આદિ કો પેરોં કો નીચે આ જાને પર અર્થાત્ ઉનકો પાડ કો નીચે દબ જાને પર જો મરણ હો જાતા હૈ ઘહ ગુદસ્પૃષ્ટ મરણ હૈ । અથવા-માંસ લુચ્ચક

થાય છે તેને વૃદ્ધ પતન મરણ કહે છે ૭ "જલપાયેસે" ખાલીમાં ફૂલી જવાથી જે મરણ થાય છે તેને જળ પ્રવેશ મરણ કહે છે ૮ "જલ્લપ્પવેસે" અગ્નિમાં ફૂલી પડી ને બળી ગયાથી જે મરણ થાય છે તેને જ્વલન પ્રવેશ મરણ કહે છે "વિપમક્ષણે"-વિપ ખાવાથી જે મરણ થાય છે તેને વિપ બક્ષણ મરણ કહે છે ૧૦ "સત્થોવાહણે" તલયાર વગેરે શસ્ત્રોના પાથી જે મરણ થાય છે તેને શસ્ત્રાવપાટન મરણ કહે છે ૧૧ "વેદાયસે" ગ્રેહ ક્ષીણ ખાઈ ને જે મરણ ઉપજવવામાં આવે છે તેને વેદાયસ મરણ કહે છે ૧૨ "ગિદ્દપટે" ગીધ વગેરે માંસાહારી પક્ષીઓ નહે કાઢી ખવાવાથી જે મરણ થાય છે તેને ગુદસ્પૃષ્ટ મરણ કહે છે અથવા-દાપી, કુદ, વગેરે કાઢી ખોના પગ તળે અગદાઈ જવાથી જે મરણ થાય છે તેને ગુદ પૃષ્ઠ મરણ કહે છે, અથવા માંસાહારી શિયાળ વગેરે બાનરો નહે ભક્ષિત થવાને કારણે

તત્ ગૃધ્રસ્પૃષ્ઠં વા અથવા ગૃધ્રૈર્મશ્વિતપૃષ્ઠસ્ય યન્મરણં તદ્ ગૃધ્રસ્પૃષ્ઠમરણમિતિ
 ૧૨ । ‘ઇચ્છેતેણં સ્વંદયા દુઘાલસવિહેણં વાલમરણેણં મરમાણે જીવે અણંતેહિં
 નેરહ્યભવગ્ગહ્ણેહિં અપ્પાણં સંજોણ્હ’ इत्येतेन स्कन्दक द्वादशविधेन वालमरणेन त्रि-
 जीवोऽनंतैर्नैरयिकभवग्रहणैरात्मानं संयोजयति, द्वादशविधवालमरणेन त्रिय-
 माणस्य जीवस्यानन्तनारकभवप्राप्तिर्भवतीति भावः । ‘तिरियमणुय देव० अणा-
 इयं च णं अणवद्गगं दीहमद्धं चाउरंतं संसारकंतारं’ अणुपरियट्ट’ तिर्यग्मनुष्य-
 शृगाल आदि जानवरों द्वारा भक्षित किये जाने पर जो मरण होता है
 वह गृध्र स्पर्श मरण है । अथवा गिद्धपक्षियों द्वारा पृष्ठभाग खा जाने पर
 जो मरण होता है वह गृध्रस्पर्श मरण है । ‘करिकभरासभादि
 शरीरान्तर्गतत्वेन’ इस पद का यह अर्थ होता है कि हाथी के भव में
 ऊँट के भव में अथवा रासभ-गधा आदि के भव में वर्तमान जीव का
 गृध्रपक्षियों के द्वारा शरीर विदारित किये जाने पर जो मरण हो जाना
 है वह गृध्रस्पर्श मरण है १२ । ‘इच्छेतेणं स्वंदया ! दुघालसविहेणं वाल-
 मरणेणं मरमाणे जीवे अणंतेहिं नेरह्यभवग्गह्णेहिं अप्पाणं संजोण्ह’
 हे स्कन्दक ! इन बारह प्रकार के वालमरणों से मरता हुआ जीव अन-
 न्त नारक जीवों के भवग्रहणों से अपने को युक्त करता है अर्थात्
 बारह प्रकार के वालमरण से मरते हुए जीव को अनन्त नारक भवों
 की प्राप्ति होती है यही उसके संसार बंध जाने से उसकी वृद्धि है ।
 ‘तिरियमणुय देव० अणाइयं णं अणवद्गगं दीहमद्धं चाउरंतं संसार-
 कंतारं अणुपरियट्ट’ इसी तरह से इन बारह प्रकार के वालमरणों से

જે મરણ થાય છે તેને ગૃધ્રસ્પૃષ્ઠ મરણ કહે છે અથવા ગીધ વગેરે પક્ષીઓ
 વડે પૃષ્ઠ ભાગનું ભક્ષણ થઈ જવાને કારણે જે મરણ થાય છે તેને ગૃધ્રસ્પૃષ્ઠ
 મરણ કહે છે “કરિકભરામભાદિ શરીરઅંતર્ગતત્વેન” આ પદોનો આ પ્રમાણે
 અર્થ થાય છે- હાથીના ભવમાં, ઊટના ભવમાં, અથવા ગધેડા વગેરેના ભવમાં
 વિદ્યમાન જીવના શરીરને ગીધો વડે કાઢી ખાવામાં આવ્યું હોય તો તેમના
 તે મરણને પણ ગૃધ્રસ્પૃષ્ઠ મરણ કહે છે

“ઇચ્છે તેણ સ્વંદયા ! દુઘાલસવિહેણ વાલમરણેણ મરમાણે જીવે અણંતેહિં
 નેરહ્યભવગ્ગહ્ણેહિં અપ્પાણં સંજોણ્હ” હે સ્કન્દક ! આ બાર પ્રકારના બાલ-
 મરણોથી મરતો જીવ પોતાની જાતને અનંત નારક જીવોના ભવગ્રહણથી યુક્ત
 કરે છે એટલે કે એવા જીવોને અનંત નારક ભવોની પ્રાપ્તિ થાય છે. આ
 રીતે તેનો સંસાર વધી જવાથી તે જીવની વૃદ્ધિ થાય છે એમ કહેવામાં
 આવ્યું છે ‘તિરિય-મણુય-દેવ-અણાઇય ણ અણવદ્ગગ દીહમદ્દં ચાઉરંત-સંસાર-
 કંતાર અણુપરિયટ્ટ’ આ પ્રમાણે બાર પ્રકારના બાલ મરણોથી મરતો જીવ

દેવ મરપ્રહૃણૈરાત્માન સયોજયતિ આનાદિકં ચ સ્વલુ અનવદ્ય ધીર્ધૌર્ધ્વં ચાતુરન્ત
સસારકાન્તારમનુપર્યેટસિ, 'સે ચ મરમાણે ષઙ્ગુ' તદેતત્ મ્રિયમાણો વર્દતે
અમેન પ્રકારેણ મ્રિયમાણો જીવો ષદ્દતે સંસાર ધીર્ધૌકરોતીર્યથ, 'સે ચં ચાલ-
મરણે' તદેતત્ ચાલમરણમ્, ચાલમરણં નિરૂપ્ય પઢિતમરણં નિરૂપયિતુમાહ—'સે
કિં ત પંઢિયમરણે' ઇત્યાદિ । અથ કિં તત્ પંઢિતમરણમ્, મગધાનાહ—'પંઢિય
મરણે' ઇત્યાદિ । 'પંઢિયમરણે દુચિહે પળ્લસે' પંઢિતમરણં દ્વિવિધં મહત્તમ્,
તત્સાત્ત્વત્રિવેકપિકલસ્ય જીવસ્ય ચ મરણ તદ્વાલમરણમ્, તથા તત્સાત્ત્વત્રિવેક

મરા જીવ અનન્ત તિર્યચ સયધી અનત મનુપ્ય સયધી ઔર અનત દેવ
સંયધી મર્ષો મેં જન્મ મરણ કરતા રહતા હૈ હસ તરહ ઘહ અનાદિ
અનત હસદીઘ માગંઘાલે ચતુર્ગતિરૂપ સંસાર મેં હી ચાર ૨ જન્મ મરણ
કે ચસ્કર મેં પહ્કર અપને લિયે સંસાર પડાવા રહતા હૈ । 'સે ચં મરમાણે
ષઙ્ગુ' હસ પ્રકાર સે સંસાર કા જો ષઙ્ગુના હૈ ષહ જીવ કા ષઙ્ગુના હૈ ।
ફહને કા તાત્પર્ય યહી હૈ કિં ચાલમરણ સે મરા હુમ્મા જીવ અપને સસાર
પો દીઘ કરતા હૈ । 'સે ચં ચાલમરણે' હસ પ્રકાર સે ષહ ચાલમરણ
કે વિષયમેં સ્પષ્ટીકરણ હૈ । 'સે કિં ચં પંઢિયમરણે' હ મદત ! પંઢિત
મરણ ક્યા હૈ ? 'પંઢિયમરણે દુચિહે પગસે' પંઢિત મરણ દો પ્રકાર
કા કહા ગયા હૈ તરચ ઔર અતરચ કે વિવેક સે ચિત્ત ચને છુઃ પ્રાણી
કા જો મરણ હોતા હૈ ષહ તો ચાલ મરણ કહલાતા હૈ—ઔર તરચ પદ
અતરચ કે વિવેક સે યુક્ત હુપ પ્રાણી કા જો મરણ હોતા હૈ ષહ પંઢિત
મરણ કહલાતા હૈ । ષહ પોદપોપગમન ઔર મક્તપ્રત્યાસવાન કે મેદ સે

તિર્યચ, મનુષ્ય અને દેવના જનત ભવોમા જન્મ મરણ કરતો રહે છે, એટલે
કે તે અનિ જનત અને દીઘ માર્ગ વાળા ચાર ગતિ રૂપ સંસાર ચંતારમાં
ચાર વાર પરિભ્રમણ કર્યા કરે છે આ રીતે તે જીવને સંસાર વધતો રહે છે
“સે ચ મરમાણે ષઙ્ગુ” આ રીતે સંસારના વધવાને જીવનું વધવું કહેવામાં
આવ્યું છે કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે બાર પ્રકારનાં બાહ્યમરણથી મરતો
જીવ પોતાના સંસારની વૃદ્ધિ કરે છે ‘સે ચં ચાલમરણે’ આ પ્રમાણે બાહ્ય
મરણનું વધવું કરવામાં આવ્યું છે

પ્રશ્ન— સે કિં ત પંઢિયમરણે પંઢિત મરણ એટલે શું ?

ઉત્તર— પંઢિયમરણે દુચિહે પળ્લસે 'પંઢિત મરણ' એ પ્રકારનાં કલાં કે
તત્ત્વ અને જાતત્વના વિવેકથી શ્લેષિત જીવનું જે મરણ હોય છે તેને બાહ્યમરણ
કહે છે, અને તત્ત્વ અને જાતત્વના વિવેકથી મુક્ત જીવનું જે મરણ હોય છે.

વતોમરણં તત્ પંડિતમરણં તત્ચ પંડિતમરણં દ્વિવિધમ્ દ્વિવિધપ્રકારકં પ્રજ્ઞસમ્, 'તં જહા' તથથા 'પાઓવગમણે ય ભક્તપચ્ચક્ષણે ય' પાદપોપગમનં ચ ભક્ત પ્રત્યાખ્યાનં ચેતિ । 'સે કિં તં પાઓવગમણે' અથ કિં તત્ પાદપોપગમનમ્ ? મગવાનાહ—'પાઓવગમણે' इत्यादि । 'પાઓવગમણે દુવિદ્ધે પળ્લણ્ણે' પાદપોપગમનં દ્વિવિધં પ્રજ્ઞસમ્ 'તં જહા' તથથા—'નીહારિમે ય અનીહારિમેય નિયમા અપ્પહિકમ્મે' નિર્હારિમં ચ અનિર્હારિમં ચ નિયમાત્ અપ્રતિકર્મ પાદપો વૃક્ષસ્તસ્યેવોપગમનં નિષ્ક્રિય-તયાઽવસ્થાનમ્ इति પાદપોપગમનમ્, યથા છિન્નમૂલો વૃક્ષઃ સમે વિષમે વા સ્થાને પતિતઃ સન્ તથારૂપેણૈવાવતિષ્ઠતે તથૈવ સમે વિષમે વાઽવસ્થિતઃ સન્ યાવજ્જીવમવસ્થિતો ભવેદ્ યત્ર મરણે તત્ પાદપોપગમનમરણમિત્યર્થઃ । इह પાદપોપગમનનામકં મરણં ચતુર્વિધાદારપરિત્યાગેન ભવતીતિ, તાત્પાદપોપગમનનામકં મરણં દ્વિવિધમ્ નિર્હા-

દો પ્રકાર કા હોતા હૈ । પાદપોપગમન કે નિર્હારિમ ઓર અનિર્હારિમ એસે દો ભેદ કિયે ગયે હૈં ઇન દોનોં ભેદોં મેં પ્રતિકર્મ નહીં હોતા હૈ । ઇસ કથન કા સ્પષ્ટ અર્થ ઇસ પ્રકાર સે જાનના ચાહિયે—પાદપ નામ વૃક્ષ કા હૈ સો ઇસ મરણ મેં મુનિ કટે હુવ વૃક્ષ કી તરહ કેવલ નિષ્ક્રિય રૂપ સે હી રહતા હૈ । જિસ પ્રકાર છિન્ન મૂલ વાલા વૃક્ષ જિસ કિસી સ્થાન મેં ચાહે વહ સમ હો અથવા વિષમ હો જિસરૂપ મેં ગિરતા હૈ ડસી રૂપ મેં ઘઘીં પડા રહતા હૈ ડસી પ્રકાર સે સમ અથવા વિષમ સ્થાન મેં રહતા હુઆ મુનિ યાવજ્જીવ નિષ્ક્રિયરૂપ સ્થિતિ મેં જિસ મરણ મેં રહતા હૈ વહ પાદપોપગમન પંડિત મરણ હૈ । યહ પાદપોપગમન નામકા મરણ ચારોં પ્રકાર કે આહાર પરિત્યાગ કર દેને સે હોતા હૈ । ઇસમેં વૈયાવૃત્ય કરાના

તેને પંડિત મરણુ કહે છે. પંડિત મરણુના આ પ્રમાણુ એ પ્રકાર છે— (૧) પાદપોપગમન અને (૨) ભક્તપ્રત્યાખ્યાન પાદપોપગમન મરણુના એ ભેદ છે— (૧) નિર્હારિમ અને (૨) અનિર્હારિમ તે બન્ને ભેદોમાં પ્રતિકર્મ થતુ નથી તે કથનનું સ્પષ્ટીકરણુ નીચે મુજબ છે પાદપ એટલે વૃક્ષ પાદપોપગમન મરણુમાં મુનિ તૂટી પડેલા વૃક્ષની જેમ જે નિષ્ક્રિય રૂપે રહે છે જેવી રીતે જડમૂળભાથીઉખડી પડેલું વૃક્ષ જે સ્થાને પડ્યુ હોય તે સ્થાને એક જ સ્થિતિમાં પડ્યું રહે છે—સ્થાન સમ હોય કે વિષમ હોય છતાં પડતી વખતે જે સ્થિતિમાં વૃક્ષ પડ્યું હોય એજ સ્થિતિમાં પડ્યું રહે છે એજ પ્રમાણુ સમ અથવા વિષમ સ્થાનમાં રહેલો મુનિ જે મરણુમાં જીવનો અન્ત આવે ત્યાં મુધી નિષ્ક્રિય દશામાંજ પડ્યો રહે છે તે મરણુને પાદપોપગમન પંડિતમરણુ કહે છે આ પાદપોપગમન મરણુ ચારે પ્રકારના આહારના પરિત્યાગથી થાય છે, તેમાં સેવા કરવામાં આવતી નથી કારણુ કે તે નિયમથી

રિમ્ અનિર્હારિમ્ ચ નિયમતઃ પ્રતિકુર્મરહિતં વૈયાહૃત્પરહિતમિત્યર્થઃ । સ્ત્ર નિ
 રેણ પ્રામાદર્ધર્હિર્નિષ્કાસનેન નિર્હૃત યન્મરણં તત્ નિર્હારિમ્, ય ઉપાધયે ત્રિપ
 તસ્યે સન્મરણં મત્રતિ, યઃ સાધુરુપાથયાદૌ શરીર ત્યજતિ તસ્ય મૃતસ્ય શરી
 સાધુમિ ભાયકાદિભિર્બાં ધર્હિર્નિષ્કાસને તત્ નિર્હારિમમરણમ્ । ય અરમ્પાદૌ ત્રિપ
 તસ્ય મરણમનિર્હારિમમરણમ્ । इदं च द्विविधमपि मरणं साधुकृतवैयाहृत्यपरहित
 मवतीति । ‘सं सं पाओषगमणे’ तदेतत्पादपोषगमनम् । अथ भक्तप्रत्याख्यान
 मरणस्य स्वरूपं दर्शयितुमाह—‘से किं तं’ इत्यादि ‘से किं तं’ मत्पञ्चकल्याणे

નહીં હોતા હૈ । ક્યોં કિ યહ નિયમ સે વૈયાહૃત્ય સે રહિત હોતા હૈ
 હસકે જો નિર્હારિમ ઓર અનિર્હારિમ યેસે જો દો બેદ કહે ગયે હૈ સો
 જનમેં સે નિર્હારિમ કા તાત્પર્ય યહ હૈ કિ જો મરણ નિર્હાર સે હોતા હૈ
 યહ નિર્હારિમ મરણ હૈ અર્થાત્ જો સાધુ ઉપાધય મેં મરતા હૈ ઓર ફિર
 હસકા મૃતક શરીર સાધુઓ દ્વારા યા આવકોં દ્વારા જો બાહર
 નિકાલા જાતા હૈ સો યહ નિર્હારિમ પાદપોષગમનમરણ હૈ । નિર્હાર
 શબ્દ કા અર્થ બાહર કાઢના હૈ પૂર્વોક્ત સાધુકા શબ બાહર
 કાઢા જાતા હૈ—હસકિયે હસકા યેસા મરણ નિર્હારિમ કહ
 છાતા હૈ । તયા જો સાધુ અપને શરીર કો અટવી મેં હી ડોડના હૈ
 હસકા શબ બાહર કાઢને મેં નહીં આતા હૈ—અતઃ યેસા મરણ અનિર્હારિમ
 મરણ હૈ । ઘોનોં બી પ્રકાર કા યહ મરણ સાધુઓં દ્વારા કિયે ગયે વૈયા
 હૃત્ય સે રહિત હોતા હૈ । ‘સં સં પાઓષગમણે’ હસ પ્રકાર યહ પાદપોષ
 ગમન કા કપન હૈ । ‘સે કિં તં મત્પન્ચકલ્યાણે’ ભક્તપ્રત્યાખ્યાન કા

જ સેવાથી રહિત હોય છે તેના નિર્હારિમ અને અનિર્હારિમ બેવા ને ને
 બેદ કહ્યા છે તે બેદનુ સ્પષ્ટીકરણ આ પ્રમાણે છે— ને મરણ નિર્હારિમ
 થાય છે તેને નિર્હારિમ મરણ કહે છે ‘નિર્હાર’ એટલે બહાર કાઢવું તે ને
 સાધુ ઉપાધય વગેરેમાં મરણ પામે છે અને પછી તેના મૃતશરીરને શબો
 વડે બહાર કાઢવામાં આવે છે, તે સાધુના મરણને નિર્હારિમ પાદપોષગમન
 મરણ કહે છે આ રીતે મરણ પામતાં સાધુના શબને બહાર કાઢવામાં આવે છે
 તેથી તેના મરણને નિર્હારિમ કહે છે પણ ને સાધુ પ્રથમ થી જ ઉપાધય
 વગેરે છોડી ને વનમાં પહોંચ ઉપર જઈને પાદપોષગમન મરણથી વનમાં કે
 પહોંચ ઉપર મરણ પામે છે તેના શબને બહાર કાઢવાની જરૂર રહેતી
 નથી. જે પ્રકારના મરણને “અનિર્હારિમ મરણ” કહે છે આ બન્ને પ્રકારનાં
 મરણ સાધુઓ દ્વારા કરવામાં આવતી સેવાથી રહિત હોય છે “સં સં
 પાઓષગમણે” પાદપોષગમન મરણનું આ પ્રકારનું સ્વરૂપ છે

અથ કિં તદ્ ભક્તપ્રત્યાખ્યાનમ્ ભગવાનાહ—‘ ભક્તપચ્ચક્ષણે દુવિહે ’ પન્નત્તે ભક્ત-
પ્રત્યાખ્યાનં દ્વિવિધં પ્રજ્ઞપમ્ ‘ તં જહા ’ તથથા—‘ નીહારિમે ય અનીહારિમે ય
નિયમાસપ્પઙ્કિમે ’ નિર્હારિમં ચ અનિર્હારિમં ચ નિયમાત્ સપ્રતિકર્મ ’ સે ત્તં
ભક્તપચ્ચક્ષણે ’ તદેતત્ ભક્તપ્રત્યાખ્યાનમ્ ‘ ઇચ્છેતેણં સંદયા ’ इत्येतेन स्क-
न्दक ‘ દુવિહેણં પંડિયમરણેણં મરમાણે જીવે ’ દ્વિવિધેન પંડિતમરણેન મ્રિયમાણો
જીવઃ ‘ અણંતેહિં નેરહ્યમવગ્ગહણેહિં અપ્પાણં વિસંજોણ્હ ’ અનન્તૈ નૈરયિક-
મવગ્રહણૈઃ આત્માનં વિસંયોજયતિ=પૃથક્કરોતિ નરકેષુ નૈવ ગચ્છતીતિ ભાવઃ ।
‘ જાવ ’ યાવત્-યાવત્પદેન ‘ તિરિયમણુયદેવમવગ્ગહણેહિં અપ્પાણં વિસંજોણ્હ,
સ્વરૂપ કયા હૈ ? સો હસકા સ્વરૂપ પ્રકટ ક્રિયા જાતા હૈ—ભક્તપ્રત્યા-
ખ્યાન મ્હી દો પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ—એક નિર્હારિમ ઓર દૂસરા
અનિર્હારિમ, યહ ભક્તપ્રત્યાખ્યાન મરણ પાદપોષગમન મરણ કી તરહ
પ્રતિકર્મસે રહિત નહીં હોતા હૈ કિન્તુ ‘નિયમા સપ્પઙ્કિમે, યહ નિયમસે
પ્રતિકર્મ સે સહિત હોતા હૈ । ‘સે ત્તં ભક્તપચ્ચક્ષણે’ હસ તરહસે યહ
ભક્તપ્રત્યાખ્યાનકા સ્વરૂપ હૈ । ‘ ઇચ્છેતેણં સંદયા ! દુવિહેણં મરણેણં મર-
માણે જીવે અણંતેહિં નેરહ્યમવગ્ગહણેહિં અપ્પાણં વિસંજોણ્હ ’ હસ પ્રકાર
સે હે સ્કન્દક ! જો જીવ ભક્ત પ્રત્યાખ્યાન ઓર પાદપોષગમન હન દો
પ્રકારકે મરણોસે યુક્ત હોકર મરતા હૈ અર્થાત્ હન દો પ્રકારકે મરણકો
સ્વીકાર કર અપને શરીર કા ત્યાગ કરતા હૈ, વહ જીવ અનન્ત નૈરહ્યક
મવસંબંધી મવગ્રહણ સે અપને આપકો રહિત વના લેતા હૈ, અર્થાત્
—મર કર એસા સાધુજીવ નરકોં મેં જન્મ નહીં લેતા હૈ । ‘ તિરિય મણુય
દેવ મવગ્ગહણેહિં અપ્પાણં વિસંજોણ્હ ’ ફિર વહ અનન્ત તિર્યંચ મવ

પ્રશ્ન—“સે કિં તં ભક્તપચ્ચક્ષણે” લક્ષતપ્રત્યાખ્યાન મરણુનું કેવું સ્વરૂપ છે ?

ઉત્તર—લક્ષતપ્રત્યાખ્યાનનાં પણુ બે પ્રકાર કહ્યાં છે (૧) નિર્હારિમ
અને (૨) અનિર્હારિમ તે લક્ષતપ્રત્યાખ્યાન મરણુ પાદપોષગમન મરણુની બેમ
પ્રતિકર્મથી રહિત હોતુ નથી. ૫૧ “ નિયમા સપ્પઙ્કિમે ” તે નિયમથી પ્રતિ-
કર્મથી યુક્ત જ હોય છે “ સે ત્તં ભક્તપચ્ચક્ષણે ” આ પ્રકારનું લક્ષતપ્રત્યા-
ખ્યાનનું સ્વરૂપ છે.

“ ઇચ્છેતેણં સંદયા ! દુવિહેણં મરણેણં મરમાણે જીવે અણંતેહિં નેરહ્યમ-
વગ્ગહણેહિં અપ્પાણં વિસંજોણ્હ ” હે સ્કન્દક ! જે જીવ આ બે પ્રકારના પંડિત
મરણુથી પોતાના શરીરનો પરિત્યાગ કરે છે તે અનન્ત નારક લવોથી પોતાની
બાતને રહિત બનાવે છે એટલે કે તે પ્રકારનો સાધુ મરણુ પામીને નરક
ગતિમાં ઉત્પન્ન થતો નથી. “ તિરિયમણુયદેવમવગ્ગહણેહિં અપ્પાણં વિસંજોણ્હ ”

અણાદ્યં ચ ણં અણવદન્ના વીહમદ્દં ષાઠરત્તસસારકર્તાર' इति सप्रहः, 'वीरियय' व्यतिप्रप्रति, अयं मावः-अनन्तैस्तिर्यङ्मनुजदेवमवग्रहणैरारमान निसयोमपति= पृथकरोति नरकतिर्यगादिमयान् न प्राप्नोति इत्यर्थः, तर्हि किं करोषीत्याह-मानादिकं च खलु अनवताग्रम्-अनन्त संसारकान्तारं=ससाराटवी व्यतिप्रप्रति=उल्लङ्घयति-न पुन संसार प्राप्नोतीति मावः । 'से च मरमाणे हाय' तदेवन्मियमाणो हीयते पठितमरणेन म्रियमाणो जीवः संसार समुत्सङ्गयतीति मावः ।

સંબંધી, અનંત મનુષ્ય સંબંધી, અનંત દેવસંબંધી 'અર્થો' સે અપને કો વર કરતા હૈ । હસ તરહ યહ 'અણાદ્યં ચ ણં અણવદન્ના વીહમદ્દં ષાઠરત્ત સંસારકર્તાર' અનાદિ અનંતરૂપ હસ સસાર અટવી કો કિ જિસકા માર્ગ યહુત યદા સંવા હૈં ઓર જો ચતુર્ગતિરૂપ હૈ 'વીર્યયહ' બિલકુલ પાર કર દેતા હૈ, અર્થાત્ મોક્ષપદ કો પ્રાપ્ત કર લેતા હૈ । 'સે સં મર માણે હાયહ' હસ તરહ સે મરને ઘાલા જીવ ઘટતા હૈ-અર્થાત્-અપને સંસાર કા અંત કર દેતા હૈ-યહી જીવ કા ઘટના હૈ । તાત્પર્ય કહને કા યહ હૈ કિ સસાર દશા મૈં જીવ કા પકા રહના બિના કર્મ કે સંબંધ કે હોતા નહીં હૈ અતઃ કર્મ કે સમ્પન્ન કા હોના માનો યહી જીવ કા બજનદાર યનના હૈ ઓર જો બીજ બજનદાર હોતી હૈ ઘહ નહીં બજન દાર વસ્તુ કી અપેક્ષા યહી હી માની જાતી હૈ-હસલિયે સસાર સે પાર હોને ઘાલે જીવ કી અપેક્ષા જો સંસાર મૈં હી પકા હુઆ હૈ વેસા

વળી તે અનંત તિર્થ ચ ભવેાથી, અનંત મનુષ્ય ભવેાથી અને અનંત દેવ ભવેાથી પણ પોતાની ભતને રહિત બનાવે છે એવે કે તેને તિર્થ મનુષ્ય અને દેવેમાં પણ જન્મ લેવા પડતા નથી. આ રીતે તે “અણાદ્ય ચ અણવદન્ના વીહમદ્દં ષાઠરત્તસસારકર્તાર” અનાદિ, અનંત, હિવેમાર્મવાળા અને આશ્રમતિવાળા શ્રાસારૂપી વનને “વીર્યયહ” એળગી બાધ છે, એટલે કે મોક્ષપદને પ્રાપ્ત કરે છે “સે ચ મરમાણે હાયહ” આ પ્રમાણે મરતાં છપ સસારને યટાડવાથી ઘટે છે એવે કે પઠિત મશ્વુથી મશ્વુ પામનાર છવને સસાર ઘટે છે સસારમા પરિભ્રમણ કરવાનો અનંત બાવી બાધ છે કહેણુ વાતપર્વ એવું છે કે કર્મને કારણે જ છવને સસારમા ભ્રમણ કરવું પડે છે. કર્મના સબધ વિના છવને સસારમાં રહેવું પડતું નથી. કર્મના સબધથી છવ આરંભી બને છે એવી રીતે વળનદાર વસ્તુ પાણીમા રૂમેલી રહે છે તેમ કર્મના સબધથી આરંભી બનેલા છવને સસારસાગરમાં તાબિ કાળ રૂમેલા રહેવું પડે છે વળનદાર ચીજને હલકી ચીજ કરતાં બારે માનવામાં આવે છે-તે કારણે સસારને પાર પામનારા છવ કરતાં સસારમાં પડેલા

અથ કિં તદ્ ભક્તપ્રત્યાખ્યાનમ્ ભગવાનાહ—‘ ભક્તપચ્ચક્ષાણે દુવિહે ’ પન્નતે ભક્ત-
પ્રત્યાખ્યાનં દ્વિવિધં પ્રજ્ઞપ્રમ્ ‘ તં જહા ’ તથથા—‘ નીહારિમે ય અનીહારિમે ય
નિયમાસપ્પઙ્કિમે ’ નિર્હારિમં ચ અનિર્હારિમં ચ નિયમાત્ સપ્રતિકર્મ ’ સે તં
ભક્તપચ્ચક્ષાણે ’ તદેતત્ ભક્તપ્રત્યાખ્યાનમ્ ‘ ઇચ્છેતેણં સંદયા ’ ઇત્યેતેન સ્ક-
ન્દક ‘ દુવિહેણં પંડિયમરણેણં મરમાણે જીવે ’ દ્વિવિધેન પંડિતમરણેન મ્રિયમાણો
જીવઃ ‘ અણંતેહિં નેરહ્યમવગ્ગહણેહિં અપ્પાણં વિસંજોણ્હ ’ અનન્તૈ નૈરયિક-
મવગ્રહણૈઃ આત્માનં વિસંયોજયતિ=પૃથકરોતિ નરકેષુ નૈવ ગચ્છતીતિ ભાવઃ ।
‘ જાવ ’ યાવત્-યાવત્પદેન ‘ તિરિયમણુયદેવમવગ્ગહણેહિં અપ્પાણં વિસંજોણ્હ,

સ્વરૂપ કયા હૈ ? સો હસકા સ્વરૂપ પ્રકટ કિયા જાતા હૈ—ભક્તપ્રત્યા-
ખ્યાન ભી દો પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ—એક નિર્હારિમ ઓર દૂસરા
અનિર્હારિમ, યહ ભક્તપ્રત્યાખ્યાન મરણ પાદપોપગમન મરણ કી તરહ
પ્રતિકર્મસે રહિત નહીં હોતા હૈ કિન્તુ ‘નિયમા સપ્પઙ્કિમે, યહ નિયમસે
પ્રતિકર્મ સે સહિત હોતા હૈ । ‘સે તં ભક્તપચ્ચક્ષાણે’ હસ તરહસે યહ
ભક્તપ્રત્યાખ્યાનકા સ્વરૂપ હૈ । ‘ ઇચ્છેતેણં સંદયા ! દુવિહેણં મરણેણં મર-
માણે જીવે અણંતેહિં નેરહ્યમવગ્ગહણેહિં અપ્પાણં વિસંજોણ્હ ’ હસ પ્રકાર
સે હે સ્કન્દક ! જો જીવ ભક્ત પ્રત્યાખ્યાન ઓર પાદપોપગમન હન દો
પ્રકારકે મરણોસે યુક્ત હોકર મરતા હૈ અર્થાત્ હન દો પ્રકારકે મરણકો
સ્વીકાર કર અપને શરીર કા ત્યાગ કરતા હૈ, વહ જીવ અનન્ત નૈરહ્યક
મવસંબંધી મવગ્રહણ સે અપને આપકો રહિત બના લેતા હૈ, અર્થાત્
—મર કર એસા સાધુજીવ નરકોં મેં જન્મ નહીં લેતા હૈ । ‘ તિરિય મણુય
દેવ મવગ્ગહણેહિં અપ્પાણં વિસંજોણ્હ ’ ફિર વહ અનન્ત તિર્યંચ મવ

પ્રશ્ન—“સે કિં તં ભક્તપચ્ચક્ષાણે” ભક્તપ્રત્યાખ્યાન મરણુતું કેવું સ્વરૂપ છે ?

ઉત્તર—ભક્તપ્રત્યાખ્યાનનાં પશુ બે પ્રકાર કહ્યાં છે (૧) નિર્હારિમ
અને (૨) અનિર્હારિમ તે ભક્તપ્રત્યાખ્યાન મરણુ પાદપોપગમન મરણુની બેમ
પ્રતિકર્મથી રહિત હોતુ નથી પણ “ નિયમા સપ્પઙ્કિમે ” તે નિયમથી પ્રતિ-
કર્મથી યુક્ત બ હોય છે “ સે તં ભક્તપચ્ચક્ષાણે ” આ પ્રકારતુ ભક્તપ્રત્યા-
ખ્યાનતું સ્વરૂપ છે.

“ ઇચ્છેતેણં સંદયા ! દુવિહેણં મરણેણં મરમાણે જીવે અણંતેહિં નેરહ્યમ-
વગ્ગહણેહિં અપ્પાણં વિસંજોણ્હ ” હે સ્કન્દક ! જે જીવ આ બે પ્રકારના પડિત
મરણુથી પોતાના શરીરનો પરિત્યાગ કરે છે તે અનન્ત નારક ભવોથી પોતાની
જાતને રહિત બનાવે છે એટલે કે તે પ્રકારનો સાધુ મરણુ પામીને નરક
ગતિમાં ઉત્પન્ન થતો નથી. “ તિરિયમણુયદેવમવગ્ગહણેહિં અપ્પાણં વિસંજોણ્હ ”

मूस्म—“एस्थ ण से खदए कच्चायणस्स गोत्ते सवुद्धे समण
 भगव महावीर वदइ नमसइ वदिता नमसिता एव वयासी
 इच्छामि णं भते तुच्च अतिए केवलपघ्नत्त धम्म निसामि
 तए, अहासुह देवाणुप्पिया मा पढिबन्ध करेइ, तएणं समणे
 भगव महावीर खंदयस्स कच्चायणस्स गोत्तस्स तीसे य महइ
 महालयाए परिसाए धम्म परिकहेइ धम्मकहाओ भाणियव्वा
 तएण से खदए कच्चायणस्स गोत्ते समणस्स भगवओ महा
 वीरस्स अतिए धम्म सोच्चा णिसम्म इट्ठुट्ठु जाव हियए
 उट्ठाए उट्ठइ उट्ठित्ता समणं भगव महावीर तिक्खुत्तो आया
 हिण पयाहिणं करेइ करित्ता वदइ नमसइ वदिता नमसिता
 एव वयासी सव्वहामि णं भते ! णिग्गंध पावयण पत्तियामि णं
 भते ! णिग्गंध पावयणं रोएमि ण भते ! णिग्गंध पावयणं
 अब्भुट्ठेमि णं भते ! णिग्गंध पावयणं एवमेय भते ! तहमेय
 भते ! अवित्तहमेय भते ! अत्तदिद्धमेय भते ! इच्छियमेयं
 भते ! पढिच्छियमेयं भते ! इच्छियपढिच्छियमेय भते ! से
 जहेय तुच्चमे वयइत्ति कहु समणं भगव महावीर वदइ नम
 सइ, वदिता नमसिता, उत्तरपुरत्थिम दिसिभाग अवक्कमइ
 अवक्कमित्ता तिदइ च कुडिय च जाव धाउरत्ताओ य एगंते
 एट्ठेइ एट्ठित्ता जेणेव समणे भगव महावीरे तेणेव उवागच्छइ

कान्तार को पार कर देता है । यही जीव का घटना है, इस प्रकार से
 भगवान ने स्कन्दक के प्रश्नों का उत्तर दिया ॥० १२॥

जेनु नाम व लुपनु “अथवा लुपना ससावुनु” यदुं ॥ ५५ प्रभावे
 भगवाने स्कन्दक परिमाणकना पावे प्रश्नोना उत्तर आप्या ॥ १२ ॥

‘ સે ત્તં પંડિયમરણે ’ તદેતત્ પંડિતમરણમ્ ‘ હચ્ચેણ ચંદયા દુવિદ્દેણં મરણેણં મરમાણે જીવે વડ્ઢહ વા હાયહ વા ’ इत्येतेन हे स्कन्दक ! द्विविधेन मरणेन म्रियमाणो जीवो वर्द्धते वा हीयते वा, एतयो द्विविधमरणयोर्मध्ये बालमरणेन म्रियमाणो जीवः अनन्तैर्नारकादिभवग्रहणैरनादिकमनन्तं दीर्घमार्गं संसारकान्तारं भ्रमति, पण्डितमरणेन च म्रियमाणो जीवः संसारकान्तारं समुल्लङ्घयतीति भावः । अनेन प्रकारेण स्कन्दक प्रश्नानां भगवानुत्तरं दत्तवानिति ॥ सू० १२ ॥

જીવ કર્મ બંધ કે કારણ વજનદાર હોને સે વઢા હુઆ હૈ ઓર જો કર્મ બંધ સે રહિત હો ગયા હૈ વહ વિના વજન કે હોને કે કારણ ઉસકીં અપેક્ષા હલકાં હૈ હસ પ્રકાર હ્રદ્ય ધારણ કર સૂત્રકાર ને જીવ કા સંસાર કા વઢના હૈ ઓર જીવ કા સંસાર કા અત હોના ઘટના હૈ એસા કહા હૈ સંસાર કેસે વઢતા હૈ ઓર કેસે વહ ઘટતા હૈ યહ સબ વિષય હી હસ સૂત્ર દ્વારા પ્રકટ કિયા ગયા હૈ । ‘ સે ત્તં પંડિત મરણે ’ હસ પ્રકાર સે યહ પંડિત મરણ કા સ્વરૂપ હૈ । હસ કથન કા ઉપસંહાર કરતે હુણ પ્રશ્ન અત મેં સ્કન્દક સે કહતે હૈં કિ-‘હચ્ચેણ ચંદયા । દુવિદ્દે ણં મરણેણં મરમાણે જીવે વડ્ઢહ વા હાયહ વા ’ હે સ્કન્દક ! હન દો પ્રકાર કે મરણોં મેં સે બાલમરણ સે મરતા હુઆ જીવ અનંત નારક આદિ કે ભવગ્રહણોં સે અનાદિ અનંત દીર્ઘ માર્ગ વાલે હસ સંસાર કાંતાર મેં ભ્રમણ કરતા રહતા હૈ યહી જીવ કા વઢના હૈ ઓર પંડિત મરણ સે મરતા હુઆ જીવ હસ પૂર્વોક્ત વિશેષણ વાલે સંસાર

જીવને કર્મબંધને કારણે ભારે કર્મો માનવામાં આવે છે, પણ કર્મબંધથી રહિત થયેલા જીવને વજન વિનાનો હોવાથી હળુકર્મો માનવામાં આવે છે. આ પ્રકારે સૂત્રકારે જીવના સંસારની વૃદ્ધિને જીવની વૃદ્ધિ કહી છે અને જીવના સંસારની હાનિને જીવનો ઘટાડો કહ્યો છે. જીવના સંસારની વૃદ્ધિ કેવી રીતે થાય છે અને ઘટાડો કેવી રીતે થાય છે, તે આ સૂત્રમાં સૂત્રકારે સમજાવ્યું છે. “ સે ત્તં પંડિયમરણે ” પંડિતમરણતું આ પ્રકારનું સ્વરૂપ છે. આ કથનને ઉપસંહાર કરતા મહાવીર પ્રભુ સ્કન્દકને કહે છે કે- “ હચ્ચેણ ચંદયા । દુવિદ્દેણં મરણેણં મરમાણે જીવે વડ્ઢહ વા હાયહ વા ” હે સ્કન્દક ! તે બે પ્રકારનાં મરણોમાંથી બાલમરણથી મરતો જીવ અનાદિ, અનંત, દીર્ઘ માર્ગવાળા આ સંસારરૂપી વનમાં અનંત વાર નરક વગેરે ચારે ગતિમાં ભ્રમણ કરે છે. એનું નામ જ જીવનું (અથવા જીવના સંસારનું) વધનું છે. પણ પંડિતમરણથી મરતો જીવ પૂર્વોક્ત વિશેષણોવાળા સંસારરૂપી વનને ઓળંગી નથી જાય છે.

मूष-“एस्थ ण से खदए कच्चायणस्स गोत्ते सबुद्धे समणं
 भगव महावीर वदइ नमसइ वदिता नमसिता एव वयासी
 इच्छामि णं भते तुव्व अतिए केवलपन्नत्त धम्म निसामि
 चए, अहासुइ देवाणुपिया मा पडिबन्ध करेइ, तएणं समणे
 भगव महावीर खदयस्स कच्चायणस्स गोत्तस्स तीसे य महइ
 महालयाए परिसाए धम्म परिकहेइ धम्मकहाओ भाणियव्वा
 तएण से खदए कच्चायणस्स गोत्ते समणस्स भगवओ महा
 वीरस्स अतिए धम्म सोच्चा णिसम्म हट्टुट्टु जाव हियए
 उट्ठाए उट्ठइ उट्ठिता समणं भगव महावीर तिवसुत्तो आया
 हिण पयाहिणं करेइ करिता वदइ नमसइ वदिता नमसिता
 एव वयासी सइहामि णं भते ! णिगंथ पावयण पत्तियामि णं
 भते ! णिगंथ पावयणं रोपमि ण भते ! णिगंथ पावयणं
 अब्भुट्टेमि णं भते ! णिगंथ पावयणं एवमेय भते ! तहमेय
 भते ! अवितहमेय भते ! असदिद्धमेय भते ! इच्छियमेय
 भते ! पडिच्छियमेय भते ! इच्छियपडिच्छियमेय भते ! से
 जहेय तुव्वे वयइत्ति कहु समणं भगव महावीर वदइ नम
 सइ, वदिता नमसिता, उत्तरपुररियम दिसिमाग अवक्कमइ
 अवक्कमित्ता तिदड च कुडिय च जाव धाउरत्ताओ य एगंते
 एदेइ एडित्ता जेणेव समणे भगव महावीरे तेणेव उवागच्छइ

कान्तार को पार कर देता है । यही जीव का घटना है, इस प्रकार से
 भगवान ने स्कन्दक के प्रश्नों का उत्तर दिया ॥ ० १२ ॥

ओनु नाम च एवमु “अथवा एवमा स साधु” यदुं छे आ प्रभावे
 भगवाने स्कन्दक परिमाणकना पांवे प्रश्नेना उत्तर आभ्या ॥ स. १२ ॥

उवागच्छित्ता समर्णं भगवं महावीरं तिवखुत्तो आयाहिण
 पयाहिणं करेइ-करित्ता वंदइ नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता एवं
 वयासी, आलित्तेणं भंते ! लोए पलित्तेणं भंते ! लोए आलित्त-
 पलित्तेणं भंते ! लोए जराए मरणेण य से जहाणामए केइ
 गाहावई आगारंसि, जिझयायमाणंसि, जे से तत्थ भंडे भवइ
 अप्पभारे मोल्लगुरुए तं गहायआयाए एगंतमंतं अवक्कमइ-एस-
 नित्थारिए समाणे पच्छापुराय हियाए सुहाए खेमाए-निस्सेय
 साए अणुगामियत्ताए भविस्सइ एवामेव देवाणुप्पिया मज्झवि
 आया एगे भंडे इट्ठे कंते पिए अणुण्णे मणामे थेज्जे वेस्सा-
 सिए समए अणुमए बहुमए भंडकरंडगसमाणे माणं सीयं
 माणं उण्हं माणं खुहामाणं पिवासा माणं चोरा माणं वाला
 माणं दंसा माणं मसया माणं वाइय पित्तियसेमिय सन्ति-
 वाइय विविहा रोगायंका परीसहोवसग्गाफुसंतु त्तिकट्टु
 एस मे नित्थारिए समाणे परलोयस्स हियाए सुहाए
 खेमाए निस्सेयसाए अणुगामियत्ताए भविस्सइ तं
 इच्छामि णं देवाणुप्पिया सयमेव पव्वाविउं सयमेव
 मुंडाविउं सयमेव सेहाविउं सयमेव सिक्खाविउं सयमेव
 आयारगोयरं विणय वेणइय चरणकरणजाया मायावत्तियं
 धम्ममाइक्खिउं । तएणं समणे भगवं महावीरं खंदयं कच्चा-
 यणस्सगोत्तं सयमेव पव्वावेइ जाव धम्ममाइक्खइ एवं
 देवाणुप्पिया गंतव्वं एवं चिद्धियव्वं एवं निसीइयव्वं एवं
 तुयइयव्वं एवं भुंजियव्वं एवं भासियव्वं एवं उट्ठाए

उद्धाय पाणहिं भूएहिं जीवेहिं सत्तेहिं सजमेणं सजमियव्वं
अस्सि च ण अट्टे णो कि चि वि प माइयव्व । तएणं से खदए
कच्चायणस्स गोत्ते समणस्स भगवओ महावीरस्स इम पया-
रुधधम्मिय उवएस सम्म सपाडियज्जइ तमाणाए तह गच्छइ
तह चिट्ठइ तह निसीयइ तह तुयइइ तह मुजइ तह भासइ
तह उद्धाए उद्धाय पाणेहिं भूएहिं जीवेहिं सत्तेहिं सजमेणं
सजमेइ अस्सि च ण अट्टे णो पमायइ तएण से खदए कच्चा
यणस्स गोत्ते अणगारे जाए हरियासमिए भासासमिए
एसणासमिए आयाणभडमत्तनिक्खेवणासमिए उच्चारणा
सवणखेलजल्लसिंघाणपारिट्टावणियासमिए मणसमिए,
वयसमिए, कायसमिए, मणगुत्ते, वयगुत्ते, कायगुत्ते, गुत्ते,
गुत्तिदिप, गुत्तवभयारी, चार्इ, लज्जु धम्मे, खतिखमे, जिइ
दिप, सोहिप, अणियाणे, अणुस्सुए, अवहिल्लेसे सुसाम
मण्णरए दत्ते इणमेव णिग्गथ पावयणं पुरओ काउ विहरइ ॥१९॥

छाया—अत्र गच्छ स स्कन्दकः कात्यायनगोत्रः संकुदः भगवन्-
महावीरं बंदते नमस्पति वन्दिस्मा नमस्त्यस्मा एवमादीन् इच्छामि सत्तु भवंतः,

‘एतय णं से खदए’ इत्यादि ।

सूत्रार्थ—(एतय णं से खदए कच्चायणस्सगोत्ते संकुदे) इस विषय में
अर्थात् अपने किये हुए प्रभों का यथार्थ उत्तर पालने पर वे कात्यायन
गोत्रीय स्कन्दक संकुद होगये—घोष प्राप्त होगय, अतः व-होंने (समण
भगवं महावीर बंदइ नमंसइ) अमण भगवान महावीर को बंदना की,

“ एतय णं से खदए ” इत्यादि

सूत्रार्थ—(एतय णं से खदए कच्चायणस्स गोत्ते संकुद) पाते पूछे
प्रश्नो मधार्थ उत्तर भगवाणी कात्यायन गोत्री स्कन्दक संकुद यथा, तेभने
वाधनी प्राप्ति मध तेधी तेभने (समण भगवं महावीर बइ नमंसइ) अमण

तवान्तिके केवलप्रज्ञप्तं धर्मं निगमयितुम् यथा मुखं देवानुप्रिय ! मा प्रतिबन्धं कुरु । तत्र खलु श्रमणो भगवान् महावीरः स्कन्दकाय कात्यायनगोत्राय तस्यै च महात्तिमहालयार्थे पण्डितं धर्मं परिकथयति । धर्मकथा भणितव्या ततः स स्कन्दकः कात्यायनगोत्रः श्रमणस्य भगवतो महावीरस्यान्तिके धर्मं श्रुत्वा निगम्य हृष्टं तुष्टं यावत् हृदय उत्थानेनोत्तिष्ठति उत्थाय श्रमणं भगवन्तं महावीरं

उन्हें नमस्कार किया । (वंदित्ता नमसित्ता एवं वयासी) वंदना नमस्कार कर फिर उन्होंने प्रभु से इस प्रकार कहा—(इच्छामि णं भंते ! तुब्भं अंतिण केवलपन्नत्तं धम्मं निसामित्ताए) हे भदंत ! मैं आप से केवल प्रज्ञप्त धर्म सुनने की इच्छा करता हूं (अहासुहं देवाणुप्पिया-मा पडिवंधं करेह) हे देवानुप्रिय ! तुम्हें जैसा अच्छा लगे वैसा करो इस शुभ कार्य में ढील मत करो । (तण्णं समणे भगवं महावीरे खंदयस्स कच्चायणस्स गोत्तस्स तीसे य महइ महालयाए परिसाए धम्मं परिकहेइ) इसके बाद श्रमण भगवान् महावीर ने कात्यायन-गोत्रीय स्कन्दक को और उपरिथत उस बहुत बड़ी भारी सभा को धर्म का उपदेश दिया । (धम्मकहा भाणियव्वा) यही धर्मकथा कहनी चाहिये । इस धर्मकथा का वर्णन औपपातिकसूत्र के पूर्वार्ध में छप्पनवें सूत्र में देख लेना चाहिये । (तण्णं से खंदए कच्चाय-णस्स गोत्ते समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए सोच्चा णिसम्म हट्टतुट्ट जाव हियए उट्ठाए उट्ठेइ श्रमण भगवान् महावीर

भगवान् महावीरने वदन करी, नमस्कार कया । (वंदित्ता नमसित्ता एवं वयासी) वंदन नमस्कार करीने तेमण्णे महावीर प्रभुने आ प्रभाण्णे कहु—(इच्छामि णं भंते ! तुब्भं अंतिण केवलपन्नत्तं धम्मं निसामित्ताए) हे भगवान् ! हुं आपनी पायेथी देवलिप्रज्ञपित धर्मंनुं श्रवणु करवानी छच्छा राणुं छुं (अहासुहं देवाणु-प्पिया मा पडिवंधं करेह) हे देवानुप्रिय ! आपने जेभ सुण उपजे तेभ करे परतु शुभ कार्यमा ढील करेशो नहीं (तण्णं समणे भगव महावीरे खंदयस्स कच्चायणस्स गोत्तस्स तीसे य महइ महालयाए परिसाए धम्मं परिकहेइ) त्थार भाइ श्रमणु भगवान् महावीरे कात्यायन गोत्री स्कन्दकने तथा त्यां उपस्थित धरुी ज मोटी परिधने धर्मने उपदेश आये। (धम्मकहा भाणियव्वा) अहीं धर्मकथा कहेवी जेधये ते धर्मकथानुं वर्णन औपपातिक सूत्रना पूर्वा-र्धना छप्पनमां सूत्रमांथी वाची लेवुं (तण्णं से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए धम्मं सोच्चा णिसम्म हट्टतुट्ट जाव हियए उट्ठाए उट्ठेइ) श्रमणु भगवान् महावीर प्रभुने भुजेथी धर्मकथा सांभलीने तथा

પ્રિકૃત્વઃ આદશિષમદશિષાં યતોતિ, કૃત્વા ચન્દસે નમસ્પતિ, ષન્દિત્વા નમસિ
તૈવમવાદીત્-શ્રદ્ધે સ્વલુ મદન્ત ! નૈર્ગ્મ્ય પ્રવચનમ્ પ્રત્યમિ સ્વલુ મદન્ત ! નૈર્ગ્મ્ય
પ્રવચનમ્ રોચ્યામિ સ્વલુ મદન્ત ! નૈર્ગ્મ્ય પ્રવચનમ્ અમ્યુતિષ્ઠામિ સ્વલુ મદન્ત !
નૈર્ગ્મ્ય પ્રવચનમ્, એવમતદ્ મદન્ત ! સમ્યમેતદ્ મદન્ત ! અવિતયમેતદ્ મદન્ત !

પ્રમુ કે મુન્વ સે ધર્મકથા સુનકર ઉસે હૃદયમેં અવધારણ કર શે
કાત્યાયન ગોઘ્રીય સ્કન્દક યદુત હર્ષિમ હુગ, યદુત તુષ્ટ હુપ યાક્ષ
ચિકસિત હૃદયચાલે, હુગ ઓર અપની ઉત્થાન શક્તિ સે ડટે (ઘડિસા
સમયે મગધ મહાવીર તિફલુસો આપાદિષપયદિષિં કરેઈ કરિસા
બંદહ નમંસહ ચદિસા નમસિસા) ડઠકર ડુરોં ને શ્રમણ મગધાન
મહાવીર કો યિધિ પૂર્વક બંદના કી નમસ્કાર કિયા બંદના નમસ્કાર
કર કે (એવ વયાસી) પ્રમુ સે હવ પ્રકાર કહા-(સદશમિ ણં મંતે!
ગિર્ગમ્ય પાવયણ પસિયામિ ણં મંતે ગિર્ગમ્ય પાવયણ) હે મદન્ત મેં
હસ નિર્ગ્મ્ય પ્રવચન મેં શ્રદ્ધા કરતા હુ હે મદન્ત ! મેં હસ નિર્ગ્મ્ય પ્રવ
ચન મેં પ્રતીતિ-પ્રીતિ-રમ્બતા હુ (રોષમિ ણં મંતે ! ગિર્ગમ્ય પાવયણ) હે
મદન્ત ! મેં હસ નિર્ગ્મ્ય પ્રવચન મેં રુચિ રમ્બતા હુ અર્થાત્ યહ નિર્ગ્મ્ય
પ્રવચન મુક્ષે રુચના હે ! (અમ્યુદેમિ ણં મંતે ! ગિર્ગમ્ય પાવયણ) હે
મદન્ત ! મેં હસ નિર્ગ્મ્ય પ્રવચન કો સ્વીકાર કરતા હુ ! (એવમેયં મંતે !
તહમેયં મંતે ! અવિતહમેયં મંતે) હે મદન્ત ! યહ નિર્ગ્મ્ય પ્રવચન હસી
તરહસે હે ! હે મદન્ત ! યહ નિર્ગ્મ્ય પ્રવચન હસી રીતિસે હે ! હે મદન્ત !

તેને હૃદયમા ખારણુ કરીને કાત્યાયન જોત્રી સ્કન્દકને ધણે જ હર્ષ થયે,
ધણે જ સ્તોષ થયે, (આવત) તેનું મન આનંદથી નાચી ઊઠ્યું અને તે
પોતાની ઉત્થાનશક્તિથી ઊભા થયા (ઘડિસા સમયે મગધ મહાવીરે તિફલુસો
આપાદિષપયદિષિં કરેઈ કરિસા બંદહ નમંસહ વદિસા નમસિસા) ઊઠીને તેમણે
શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને વિધિપૂર્વક વંદન નમસ્કાર કર્યા. વંદન નમસ્કાર
કરીને (એવ વયાસી) તેમણે ભગવાનને આ પ્રમાણે કહ્યું -(સદશમિ ણં મંતે !
ગિર્ગમ્ય પાવયણ પસિયામિ ણં મંતે ! ગિર્ગમ્ય પાવયણ) હે ભગવન ! હું આ
નિર્ગ્મ્ય પ્રવચનમાં શ્રદ્ધા રાખુ છું, હે ભગવાન ! હું આ નિર્ગ્મ્ય પ્રવચન પ્રત્યે
પ્રીતિ ખરાબુ છું (રોષમિ ણં મંતે ! ગિર્ગમ્ય પાવયણ) હે ભગવાન ! મને
આ નિર્ગ્મ્ય પ્રવચન રુચિ છે (અમ્યુદેમિ ણં મંતે ! ગિર્ગમ્ય પાવયણ) હે ભગ
વન ! હું આ નિર્ગ્મ્ય પ્રવચનનો સ્વીકાર કરું છું એવમેયં મંતે ! તહમેયં મંતે !
અવિતહમેયં મંતે' હે ભગવન ! આ નિર્ગ્મ્ય પ્રવચન સાચું છે હે ભગવન ! આ
નિર્ગ્મ્ય પ્રવચન યથાર્થ છે, હે ભગવન ! આ નિર્ગ્મ્ય પ્રવચન અનિર્ગ્મ્ય (અનિર્ગ્મ્ય)

तवान्तिके केवलप्रज्ञप्तं धर्मं निगमयितुम् यथा मुखं देवानुप्रिय ! मा प्रतिबन्धं कुरु । तत्र खलु श्रमणो भगवान् महावीरः स्कन्दकाय कात्यायनगोत्राय तस्यै च महातिमहालयायै परिषदे धर्मं परिकथयति । धर्मकथा भाणितव्या ततः स स्कन्दकः कात्यायनगोत्रः श्रमणस्य भगवतो महावीरस्यान्तिके धर्मं श्रुत्वा निगम्य हृष्ट तुष्ट यावत् हृदय उत्थानेनोत्तिष्ठति उत्थाय श्रमणं भगवन्तं महावीरं

उन्हें नमस्कार किया । (वंदित्ता नमसित्ता एवं वयासी) वंदना नमस्कार कर फिर उन्होंने प्रभु से इस प्रकार कहा- (इच्छामि णं भंते ! तुब्भं अंतिए केवलपन्नत्तं धम्मं निसामित्ताए) हे भदंत ! मैं आप से केवल प्रज्ञप्त धर्म सुनने की इच्छा करता हूं (अहासुहं देवानुप्पिया-मा पडिवंधं करेह) हे देवानुप्रिय ! तुम्हें जैसा अच्छा लगे वैसा करो इस शुभ कार्य में ढील मत करो । (तएणं समणे भगवं महावीरे खंदयस्स कच्चायणस्स गोत्तस्स तीसे य महइ महालयाए परिसाए धम्मं परिकहेइ) इसके बाद श्रमण भगवान् महावीर ने कात्यायन-गोत्रीय स्कन्दक को और उपस्थित उस बहुत बड़ी भारी सभा को धर्म का उपदेश दिया । (धम्मकहा भाणियव्वा) यही धर्मकथा कहनी चाहिये । इस धर्मकथा का वर्णन औपपातिकसूत्र के पूर्वार्ध में छप्पनवें सूत्र में देख लेना चाहिये । (तएणं से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए सोच्चा णिसम्म हट्टतुट्ट जाव हियए उट्टाए उट्टेइ श्रमण भगवान् महावीर

भगवान् महावीरने वंदन करी, नमस्कार कथा (वंदित्ता नमसित्ता एवं वयासी) वंदन नमस्कार करीने तेमण्णे महावीर प्रभुने आ प्रभाण्णे कथुं- (इच्छामि णं भंते ! तुब्भं अंतिए केवलपन्नत्तं धम्मं निसामित्ताए) हे भगवान् ! हूं आपनी पासैथी डेवदिप्रज्ञित धर्मानुं श्रवणुं करवान्नी धन्धा राणुं छु (अहासुहं देवानु-प्पिया मा पडिवंधं करेह) हे देवानुप्रिय ! आपने जेम सुण उपजे तेम करे परंतु शुभ श्रार्थमा ढील करशो नही । (तएणं समणे भगव महावीरे खंदयस्स कच्चायणस्स गोत्तस्स तीसे य महइ महालयाए परिसाए धम्मं परिकहेइ) त्थार भाइ श्रमणु भगवान् महावीरे कात्यायन गोत्री स्कन्दकने तथा त्या उपस्थित धणुी न मोटी परिषदने धर्माने उपदेश आप्थो । (धम्मकहा भाणियव्वा) अही धर्मकथा कडेवी जेधजे ते धर्मकथानु वर्णन औपपातिक सूत्रना पूर्वार्धना छप्पनमा सूत्रमाथी वांथी लेवु (तएण से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए धम्मं सोच्चा णिसम्म हट्टतुट्ट जाव हियए उट्टाए उट्टेइ) श्रमणु भगवान् महावीर प्रभुने सुजेथी धर्मकथा सालणीने तथा

પ્રિકૃષ્ઠઃ આદક્ષિણમદક્ષિણાં કરોતિ, કૃત્વા ઘન્દતે નમસ્પતિ, ઘન્દિત્વા નમસ્પિ
ત્વૈવમવાદીત્-શ્રદ્ધે સ્વલુ મદન્ત ! નૈર્ગ્રંથ પ્રવચનમ્ પ્રત્યેમિ સ્વલુ મદત ! નૈર્ગ્રંથ
પ્રવચનમ્ રોચયામિ સ્વલુ મન્ત ! નૈર્ગ્રંથ પ્રવચનમ્ અમ્યુત્તિષ્ઠામિ સ્વલુ મદંત !
નૈર્ગ્રંથ પ્રવચનમ્, ઇષમેતદ્ મદત ! સ્વયમેતદ્ મદત ! અવિતયમેતદ્ મદત !

પ્રમુ કે મુસ્થ સે ધર્મકથા સુનકર હસે હૃદયમેં અવધારણ કર જે
કાસ્પાયન ગોત્રીય સ્કન્ધક યદુન હર્ષિન હુપ, યદુત તુષ્ટ હુપ યાષત્
ધિકસિત હૃદયવાલે, હુપ ઓર અપની ઉત્પાન શક્તિ સે હટે (ઉદ્ધિષ્ઠા
સમળ મગધ મહાવીર તિસ્તુત્તો આયાહિણપયહિણં કરેહ કરિષ્ઠા
ઘંદહ નમંસહ ઘદિષ્ઠા નમસિષ્ઠા) ઊઠકર ઉન્હોં ને અમળ મગધાન
મહાવીર કો ધિધિ પૂર્વક ઘદના કી નમસ્કાર કિયા ઘદના નમસ્કાર
કર કે (પવ ઘયાસી) પ્રમુ સે હવ પ્રકાર કહા-(સદ્દામિ ણં મતે!
જિગંથ પાવયણં પત્તિયામિ ણં મતે જિગંથ પાવયણ) જે મદંત મેં
હસ નિર્ગ્રંથ પ્રવચન મેં શ્રદ્ધા કરતા હુ જે મદન્ત ! મેં હસ નિર્ગ્રંથ પ્રવ
ચન મેં પ્રતીતિ-પ્રીતિ-રગ્વતા હું (રોપમિણં મતે ! જિગંથ પાવયણ) જે
મદંત ! મેં હસ નિર્ગ્રંથ પ્રવચન મેં રુચિ રગ્વતા હુ અર્થાન્ યહ નિર્ગ્રંથ
પ્રવચન સુષ્ટે રુચના હે ! (અન્નુદ્દેમિ ણં મતે ! જિગંથ પાવયણ) જે
મદન્ત ! મેં હસ નિર્ગ્રંથ પ્રવચન કો સ્વીકાર કરતા હું ! (ઇષમેયં મતે !
તદ્દમેય મતે ! અવિતદ્દમેય મતે) જે મદન્ત ! યહ નિર્ગ્રંથ પ્રવચન હસી
તરહસે હે ! હે મદન્ત ! યહ નિર્ગ્રંથ પ્રવચન હસી રીતિસે હે ! હે મદન્ત !

તેને હૃદયમા ખારલુ કરીને કાસ્પાયન ગોત્રી સ્કન્ધકને ઘલો ૪ ૬૫ થયો,
ઘલો ૪ સતો ૫ થયો (યાવત) તેનુ મન આનંદથી નાથી ઉઠતું, અને તે
પોતાની ઉત્પાનશક્તિથી ઉભા થયા (ઉદ્ધિષ્ઠા સમળ મગધ મહાવીર તિસ્તુત્તો
આયાહિણપયાહિણ કરેહ કરિષ્ઠા ઘંદહ નમંસહ ઘદિષ્ઠા નમસિષ્ઠા) હસીને તેમણે
અમળ મગધાન મહાવીરને વિધિપૂર્વક વદન નમસ્કાર કર્યા. વદન નમસ્કાર
કરીને (પવ ઘયાસી) તેમણે મગધાનને આ પ્રમાણે કહ્યું -(સદ્દામિ ણં મતે !
જિગંથ પાવયણં પત્તિયામિ ણં મતે ! જિગંથ પાવયણ) હે મગધાન ! હું આ
નિર્ગ્રંથ પ્રવચનમા શ્રદ્ધા રાખુ છું હે મગધાન ! હું આ નિર્ગ્રંથપ્રવચન પ્રત્યે
પ્રીતિ ધરાવુ છું (રોપમિ ણં મતે ! જિગંથ પાવયણ) હે મગધાન ! મને
આ નિર્ગ્રંથ પ્રવચન રુચિ છે (અન્નુદ્દેમિ ણં મતે ! જિગંથ પાવયણ) હે મગ
ધાન ! હું આ નિર્ગ્રંથ પ્રવચનનો સ્વીકાર કરું છું 'ઇષમેયં મતે ! તદ્દમેય મતે !
અવિતદ્દમેયં મતે' હે મગધાન ! આ નિર્ગ્રંથ પ્રવચન સાચુ છે હે મગધાન ! આ
નિર્ગ્રંથ પ્રવચન યથાર્થ છે, હે મગધાન ! આ નિર્ગ્રંથ પ્રવચન અવિતય (સત્ય)

તદ્ ભદંત) અસદિગ્ધમેતદ્ ભદંત । ઈપ્સિતમેતદ્ ભદંત ! પ્રતીપ્સિતમેતદ્ ભદંત !
 ઈપ્સિતપ્રતીપ્સિતમેતદ્ ભદંત । તદ્ યથૈતદ્ યૂયં વદથ, ઇતિ કૃત્વા શ્રમણં ભગવન્તં
 મહાવીરં વન્દતે નમસ્યતિ વન્દિત્વા નમસ્યિત્વા ઉત્તરપૌરસ્ત્યં દિગ્ વિભાગમવક્રામતિ
 અવક્રમ્ય ત્રિદંડં ચ કુણ્ડિકાં ચ યાવત્ ધાતુરક્તાંશ્ચૈકાન્તે એદયતિ એદયિત્વા યત્રૈવ

યહ નિર્ગ્રન્થ પ્રવચન અવિતથ-સત્ય હૈ । (અસંદિગ્ધમેયં ભંતે !) હે ભદ-
 ન્ત ! યહ નિર્ગ્રન્થ પ્રવચન સર્વથા અસંદિગ્ધ હૈ । (ઈચ્છિયમેયં ભંતે !)
 હે ભદન્ત ! યહ નિર્ગ્રન્થ પ્રવચન ઈપ્સિત-વાંછનીય હૈ । (પટિચ્છિયમેયં
 ભંતે !) હે ભદન્ત યહ નિર્ગ્રન્થ પ્રવચન પ્રતીપ્સિત-અત્યન્ત વાંછનીય હૈ !
 (ઈચ્છિયપટિચ્છિયમેયં ભંતે !) હે ભદંત ! યહ નિર્ગ્રન્થ પ્રવચન ઈપ્સિત
 પ્રતીપ્સિત-એકાંતવાંછનીય હૈ । (સે જહેયં તુબ્ધં વયહ ત્તિ) યહ
 નિર્ગ્રન્થ પ્રવચન જૈસા આપને કહા હૈ વહ વૈસા હી હૈ । ઇસ પ્રકાર
 (કદ્દુ) કહ કર સ્કન્દક ને (સમણં ભગવં મહાવીરં વંદઈ નમંસઈ)
 શ્રમણ ભગવાન્ મહાવીર કો વન્દના કી, ઉન્હે નમસ્કાર કિયા ।
 (વંદિત્તા નમંસિત્તા) વંદના નમસ્કાર કરકે ફિર વે (ઉત્તરપુરત્થિમં
 દિસિમાગં અવક્રમઈ) ઉત્તર પૌરસ્ત્ય દિગ્વિભાગ મેં ઉત્તર પૂર્વદિશા કે
 કોને મેં-અર્થાત્ ઈશાનકોણ મેં ગયે (અવક્રમિત્તા તિદંડંચ, કુણ્ડિયં
 ચ, જાવ ધાતુરક્તાઓ એગંતે એદેઈ) વહાં જાકર ઉન્હોં ને અપને
 ત્રિદંડ કો, કમણ્ડલુ કો યાવત્ ગૈરિક આદિ ધાતુ સે રંગે હુએ
 વસ્ત્રોં કો એકાન્ત મેં-રખ દિયા । (એદિત્તા) ઉન્હે એકાન્ત મેં

છે. તેમાં કોઈ શકાને સ્થાન જ નથી ‘અસંદિગ્ધમેયં ભંતે !’ હે ભગવાન્ આ
 નિર્ગ્રન્થ પ્રવચન સર્વથા અસંદિગ્ધ સ્પષ્ટ છે “ઈચ્છિયમેયં ભંતે !” હે ભગવન્
 આ નિર્ગ્રન્થ પ્રવચન ઇચ્છવા યોગ્ય છે, ‘પટિચ્છિયમેયં ભંતે’ હે ભગવન્ ! આ
 નિર્ગ્રન્થ પ્રવચન અત્યંત ઇચ્છવા યોગ્ય છે ‘ઈચ્છિયપટિચ્છિયમેયં ભંતે !’ હે ભગવન્
 આ નિર્ગ્રન્થ પ્રવચન ઇપ્સિત પ્રતીપ્સિત ઇચ્છિત તથા વિશેષ ઇચ્છિત છે.
 (સે જહેય તુબ્ધ વયહત્તિ) આપના કહેવા પ્રમાણે જ તે નિર્ગ્રન્થ પ્રવચન છે.
 આ પ્રમાણે (કદ્દુ) કહીને સ્કંદકે (સમણ ભગવ મહાવીર વંદઈ નમંસઈ)
 શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને વંદન કરી, નમસ્કાર કર્યા (વંદિત્તા નમંસિત્તા)
 વંદન નમસ્કાર કરીને તેઓ (ઉત્તરપુરત્થિમ દિસિમાગં અવક્રમઈ) ઉત્તર અને
 પૂર્વદિશા વચ્ચેના ખૂણામાં-ઇશાન ખૂણામાં-ગયા. (અવક્રમિત્તા તિદંડંચ, કુણ્ડિયં
 ચ, જાવ ધાતુરક્તાઓ એગંતે એદેઈ) ત્યાં જઈને તેમણે તેમના ત્રિદંડ, કમંડળ
 અને આગળ જણાવેલી ભગવા વસ્ત્રો સુધીની મધી વસ્તુઓ એકાંતમાં મૂકી

અમળાં મગધાન્ મહાવીરસ્ત્રૈવોપાગચ્છતિ ઉપાગત્ય અમળ મગધન્ત મહાવીર
 પ્રિકૃત્વ આદક્ષિણપ્રદક્ષિણાં કરોતિ કૃત્વા વન્દતે નમસ્યતિ વન્દિત્વા નમસ્યિત્વા
 પચમવાદીત્ આદીત્ સ્વલુ મદત્ । લોકઃ, પ્રદીપ્તઃ સ્વલુ મદત્ । લોક , આદીપ્ત
 પ્રદીપ્ત સ્વલુ મદત્ । છોકઃ, જરયા મરણેન ચ । તન્ યથા નામ કષિદ્ગૃહપતિ
 રગારેષ્માપમાને યત્ તત્ર માષ્ઠં મશતિ અલ્પમારમૂલ્યગુરુર્કં તત્ ગૃહીત્વા આત્મના
 રસ્ત્રકર (જેણે સમળે મગધ મહાવીરે તેણે- ઉઘાગચ્છત્)
 ફિર એ જહા અમળ મગધાન્ મહાવીર ધિરાજમાન એ વહા આવે
 (ઉઘાગચ્છિત્વા સમળં મગધન્ત મહાવીરં તિવસ્તુત્તો આપારિણ
 પયાહિર્ણ કરેદ્ કરિત્તા વંદેદ્ નમસદ્) વહાં જાકર વન્દેને અમળ
 મગધાન્ મહાવીર કો વિધિપૂર્વક વદન નમસ્કાર ક્રિયા । (વંદિત્તા
 નમસિત્તા) વદના નમસ્કાર કરકે (એ વયાસી) ફિર ઉન્હોં ને અમળ,
 મગધાન્ મહાવીર સે હસ પ્રકાર કહા—(આલિત્તેણ મંતે ! છોપ
 પલિત્તેણ મંતે ! છોપ, આલિત્તપલિત્તેણ મંતે ! છોપ) હે મદન્ત ! જરા
 ઔર મરણ સે યહ લોક જલા હુઆ હૈ । હે મદન્ત યહ લોક ડન દોનોં
 સે વહુત મધિક જલા હુઆ હૈ । હે મદન્ત ! યહ લોક જરા ઔર મરણ
 સે ચારોં તરફ સે આદીત્ પ્રદીપ્ત-જ્વલિત-પ્રજ્વલિત હો રહા હૈ, વહાં
 દૃષ્ટાન્ત કહતે હૈં (સે જહાણામપ્ કેદ્ ગાહાયર્ આગારસિ જિત્તિયાયમા
 ણં સિ) જૈસે કોઈ ગૃહસ્થ અપને મકાન કે જલને પર અર્ધાત્ મકાન મેં
 આગ લગને પર (જે તે તત્ત્વ અપ્પમાર મોલ્લગુરુપ મંદે મવદ્) જો

શ્રીમ્, (વંદિત્તા) તે વસ્તુઓને એકાત્રમાં મૂકીને (જેણે સમળે મગધ મહાવીરે
 તેણે ઉઘાગચ્છત્) તેઓ ત્યાં અમળ મગધાન્ મહાવીર સ્વામી ધીરાજમાન હતા
 ત્યાં ગયા (ઉઘાગચ્છિત્વા સમળં મગધ મહાવીર તિવસ્તુત્તો આપારિણપયાહિણ
 કરેદ્ કરિત્તા વંદેદ્ નમસદ્) ત્યાં જઈને તેમણે અમળ મગધાન્ મહાવીરને
 વિધિપૂર્વક વદન નમસ્કાર કર્યાં (વંદિત્તા નમસિત્તા) વદન નમસ્કાર કરીને
 (એ વયાસી) તેમણે અમળ મગધાન્ મહાવીરને આ પ્રમાણે કહ્યું (આલિ
 ત્તેણ મંતે ! છોપ, પલિત્તેણ મંતે ! છોપ, આલિત્તપલિત્તેણ મંતે ! છોપ) હે મગધાન્ !
 આ લોક જરા અને મરણથી બગી રહ્યો છે—અગતી રહ્યો છે હે મગધાન્ !
 આ લોક તે બન્નેથી પ્રજ્વલિત થઈ રહ્યો છે એવું છે અત્યંત બગી રહ્યો છે
 હે મગધાન્ ! આ લોક યોગેશ્વરી જરા મરણથી આદીત્ પ્રદીપ્ત (જ્વલિત પ્રજ્વ
 લિત થઈ રહ્યો છે) આથી એક દૃષ્ટાન્ત આપે છે—(સે જહાણામપ્ કેદ્ ગાહાયર્
 આગારસિ જિત્તિયાયમાયમિ) એવી રીતે કોઈ ગૃહસ્થના મકાનમાં આગ લાગે
 ત્યારે તે (જે તે તત્ત્વ અપ્પમાર મોલ્લગુરુપ મંદે મવદ્) ત ગાહાય આગપ

તદ્ ભદંત) અસદિગ્ધમેતદ્ ભદંત ! ઈપ્સિતમેતદ્ ભદંત ! પ્રતીપ્સિતમેતદ્ ભદંત !
 ઈપ્સિતપ્રતીપ્સિતમેતદ્ ભદંત ! તદ્ યથૈતદ્ યૂયં વદથ, ઇતિ કૃત્વા શ્રમણં ભગવન્તં
 મહાવીરં વન્દતે નમસ્યતિ વન્દિત્વા નમસ્યિત્વા ઉત્તરપૌરસ્ત્યં દિગ્ શ્રી વિભાગમવક્રામતિ
 અવક્રમ્ય ત્રિદંડં ચ કુણ્ડિકાં ચ યાવત્ ધાતુરક્તાંથૈકાન્તે એડયતિ એડયિત્વા યત્રૈવ

યહ નિર્ગ્રન્થ પ્રવચન અવિતથ-સત્ય હૈ । (અસંદિગ્ધમેયં ભંતે !) હૈ ભદ-
 ન્ત ! યહ નિર્ગ્રન્થ પ્રવચન સર્વથા અસંદિગ્ધ હૈ । (ઈચ્છિયમેયં ભંતે !)
 હૈ ભદન્ત ! યહ નિર્ગ્રન્થ પ્રવચન ઈપ્સિત-વાંછનીય હૈ । (પટ્ટિચ્છિયમેયં
 ભંતે !) હૈ ભદન્ત યહ નિર્ગ્રન્થ પ્રવચન પ્રતીપ્સિત-અત્યન્ત વાંછનીય હૈ !
 (ઈચ્છિયપટ્ટિચ્છિયમેયં ભંતે !) હૈ ભદંત ! યહ નિર્ગ્રન્થ પ્રવચન ઈપ્સિત
 પ્રતીપ્સિત-એકાન્તવાંછનીય હૈ । (સે જહેયં તુઝમં વયહ ત્તિ) યહ
 નિર્ગ્રન્થ પ્રવચન જૈસા આપને કહા હૈ વહ વૈસા હી હૈ ! હસ પ્રકાર
 (કહુ) કહ કર સ્કન્દક ને (સમણં ભગવં મહાવીરં વંદહ નમંસહ)
 શ્રમણ ભગવાન્ મહાવીર કો વન્દના કી, ઉન્હે નમસ્કાર કિયા ।
 (વંદિત્તા નમંસિત્તા) વંદના નમસ્કાર કરકે ફિર વે (ઉત્તરપુરત્થિમં
 દિસિમાગં અવક્રમહ) ઉત્તર પૌરસ્ત્ય દિગ્વિભાગ મેં ઉત્તર પૂર્વદિશા કે
 કોને મેં-અર્થાત્ ઈશાનકોણ મેં ગયે (અવક્રમિત્તા તિદંડચ, કુંડિયં
 ચ, જાવ ધાતુરક્તાઓ એગંતે એડેહ) વહાં જાકર ઉન્હોં ને અપને
 ત્રિદંડ કો, કમણ્ડલુ કો યાવત્ ગૈરિક આદિ ધાતુ સે રંગે હુણ
 વસ્ત્રોં કો એકાન્ત મેં-રખ દિયા । (એડિત્તા) ઉન્હે એકાન્ત મેં

છે. તેમા કોઈ શકાને સ્થાન જ નથી 'અસંદિગ્ધમેયં ભંતે' હે ભગવાન્ આ
 નિર્ગ્રન્થ પ્રવચન સર્વથા અસંદિગ્ધ સ્પષ્ટ છે "ઈચ્છિયમેયં ભંતે ।" હે ભગવાન્
 આ નિર્ગ્રન્થ પ્રવચન ઇચ્છવા યોગ્ય છે, 'પટ્ટિચ્છિયમેયં ભંતે' હે ભગવાન્ ! આ
 નિર્ગ્રન્થ પ્રવચન અત્યંત ઇચ્છવા યોગ્ય છે 'ઈચ્છિયપટ્ટિચ્છિયમેયં ભંતે !' હે ભગવાન્
 આ નિર્ગ્રન્થ પ્રવચન ઇપ્સિત પ્રતીપ્સિત ઇચ્છિત તથા વિશેષ ઇચ્છિત છે.
 (સે જહેય તુઝમ વયહત્તિ) આપના કહેવા પ્રમાણે જ તે નિર્ગ્રન્થ પ્રવચન છે.
 આ પ્રમાણે (કહુ) કહીને સ્કન્દકે (સમણ ભગવ મહાવીર વંદહ નમંસહ)
 શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને વંદન કરી, નમસ્કાર કર્યા (વંદિત્તા નમંસિત્તા)
 વંદન નમસ્કાર કરીને તેઓ (ઉત્તરપુરત્થિમ દિસિમાગં અવક્રમહ) ઉત્તર અને
 પૂર્વદિશા વચ્ચેના ખૂણામા-ઇશાન ખૂણામા-ગયા. (અવક્રમિત્તા તિદંડચ, કુંડિયં
 ચ, જાવ ધાતુરક્તાઓ એગંતે એડેહ) ત્યાં જઈને તેમણે તેમના ત્રિદંડ, કમંડળ
 અને આગળ જણાવેલી ભગવા વસ્ત્રો સુધીની અધી વસ્તુઓ એકાન્તમાં મૂકી

मात व्यासा मातं मलका मात वातिकपैचिकश्लैष्मिकसानिपातिका विविधा रोगा
संका परिपहोपसर्गा स्पृशन्तु इति कृत्वा एष मे निस्तारितः सन् परलोकस्य हिताय
सुखाय क्षेमाय निःश्रेयसाय आनुगामिकतायै भविष्यति, तद्विच्छामि मल्ल देवानुमिय
स्वयमेव प्रव्रजयितुम् स्वयमेव मृण्मयितुम् स्वयमेव संघितु स्वयमेव क्षिप्तयितुम्

है । (माणं सीयं, माणं षण्हं, माणं सुहा, माणं पिवासा, माणं चोरा, माणं
बाला, माणं वंसा, माणं मसया, माणं चाइय पित्तियसें भिय सप्तियवाइय
विधिहारोगायका परीसहोवसग्गा फुसंतु) इसलिये इसे शीतज-यबाधा
उष्णज-य बाधा क्षुधा अन्यबाधा, व्यास अन्यबाधा न हो चोर इसे दुर्गलित
न करे व्यास-सर्प इसे कष्ट न पहुँचावे वंशमहाक इसे न काटे बात
संघी, पित्तसंघी, श्लेष्म संघी सन्निपात संघी अनेक प्रकार के
रोग और आतंक इसे पीछित न करे, तथा परीषद् एव उपसर्ग इस
के पास तक न आवे (सि फहु) इस प्रकार विचार करके मैं (पस
नित्यरिए समाणे) इसे यदि इन पूर्वोक्त विघ्नों से बचाकर जरामर
णादि से जलते हुए इस संसाररूप गृह से निकाल दूँ तो वह मुझे
(परलोयस्त हियाए) परलोक में हितकारक (सुहाए) सुखकारक
(क्षेमाए) क्षेमकारक, (नीस्सेयसाए) कल्याण कारक, तथा (अणुगा
मियसाए) परम्परा के लिये भी कल्याणकारक (भविस्सइ) होगा
(तं इच्छामि णं देवानुमिय) इसलिये हे देवानुमिय ! मैं चाहता हूँ

सीय, माण षण्ह माण सुहा, माण पिवासा, माण चोरा, माण बाला, माण
वसा, माण मसया, माण चाइयपित्तियसे भिय—सप्तियाइय—विधि रोगायका
परीसहोवसग्गा फुसंतु) तैथी तेने ठी, जशभी, भूभ, तरस वजरे भुरकेबीजे।
सहन करवी न पडे ते भाटे, ब्यास तेने दुःख न करे ते भाटे, व्यास-सर्प
तेने कष्ट न पहुँचावे ते भाटे, वंश तथा मच्छर तेने करडे नहीं ते भाटे,
बात, पित्त, कड़े अने सन्निपातना रोगो अने अतंक तेने पीछी शके नहीं ते
भाटे, तथा परीषद् अने उपसर्ग तेनी पास आवी पवु न शके ते भाटे
(सि फहु एस नित्यरिए समाणे) भास अनभां जेवे विचार आन्ये छे के
तेने पूर्वोक्त विघ्नाभाधी जगानीने न भ, नश अने मरखु इपी दुःखना
अभिभां जगता संसारइपी घरभाधी जकार काढी लउ तो ते भाटे भाटे
(परलोयस्त हियाए) परलोकाभां हितकारक (सुहाए) सुखकारक, (क्षेमाए)
क्षेमकारक, (नीस्सेयसाए) कल्याण कारक निवसरी अने (अणुगामियसाए)
परंपरा पवु कल्याण कारक (भविस्सइ) थरो (त इच्छामि णं देवानुमिय।
स्वयमेव प्रव्रजयिष्ये) तो हे देवानुमिय ! आप चेतो न भने शिक्षा आपो जेवी

एकान्तमंतमवक्रामति एतन्मे निस्तारितं सप्तश्वात् पुराच हिताय सुखाय क्षेमाय
निःश्रेयसायानुगामिकतायै भविष्यति, एवमेव, देवानुप्रिय ! ममाप्यात्मा एकं
भाण्डमिष्टकान्तप्रियो मनोज्ञो मनोऽमः स्वैर्यः, वैश्वासिकः, संमतोऽनुमतो बहुमतो
भाण्डकरण्डकसमानः मा खलु तं शीतं मातमुष्णं मातं क्षुधा मातं पिपासा मातं चौराः

सामान वजन में हल्का और कीमत में अधिक होता है (तं गहाय
आयाए एगंतमंतं अवक्कमइ) उसे लेकर स्वयं एकान्त स्थान में चला
जाता है कारण कि वह इस प्रकार से सामान के बसाने के निमित्त
विचार करता है—कि (एस मे नित्थरिए समणे पच्छापुराए हियाए
सुहाए खेमाए निस्सेयसाए, आणुगामियत्ताए भविस्सइ) जो मैं इस
जलते हुए घरमेंसे अल्प वजनवाली कीमती वस्तु को निकाल लूंगा
तो वह मेरे लिये आगे पीछे हितकारक होगी, सुखकारक होगी क्षेम
कारक होगी अभ्युदय (भाग्योदय) के निमित्त होगी और भाविवंश
परंपरा के उपभोग के किमित्त होगी इसलिये वह ऐसे विचार से ऐसे
सामान को जैसे भी बनता है—निकाल लेता है (एवामेव देवाणुप्पिया ।
मज्झ वि आया एगे भंडे इट्ठे, कते, पिए मणुण्णे, मणामे, थेज्जे, वेस्सा
सिए संमए अणुमए, बहुमए, भंडकरंडगसमाणे) इसी तरह से हे
देवानुप्रिय ! मेरा भी आत्मा एक भांड है, वह मुझे इष्ट है, कांत है,
प्रिय है, मनोज्ञ है, मनोम है, स्थिर रूप है, वैश्वासिक है संमत है,
अनुमत है, बहुमत है और आभूषणों से भरे हुए करंडिये के समान

एकान्तमंत अवक्कमइ) પોતાના ધરમાંથી ઓછા વજનનો પણ કીમતી સામાન
લઈને કોઈ સુરક્ષિત-સ્થાનમાં આવ્યો જાય છે. કારણ કે તેના મનમાં વિચાર
આવે છે કે (એસ મે નિત્થરિયે સમાણે પચ્છાપુરાયે હિયાયે સુહાયે ખેમાયે નિસ્સેયસાયે,
આણુગામિયત્તાયે ભવિસ્સઈ) જો આ સળગતા ધરમાંથી હું ઓછા વજનવાળી પણ
ભારે કીમતી વસ્તુ બહાર કાઢીશ, તો તે વસ્તુઓ, ભવિષ્યમાં મારે માટે હિતકારક,
સુખકારક, ક્ષેમકારક, અને અભ્યુદય (ભાગ્યોદય) કારક થઈ પડશે. તથા મારી
ભાવી પેઢી માટે તે ઉપયોગી થઈ પડશે આ જાતનો વિચાર કરીને તે બનતો
પ્રયત્ન કરીને કીમતી વસ્તુઓને બળતા ધરમાંથી બહાર કાઢી લે છે (એવમેવ
દેવાણુપ્પિયા ! મજ્જ વિ આયા એગે મંડે ઇટ્ઠે, કતે, પિયે, મણુણ્ણે, મણામે, થેજ્જે,
વેસાહિયે. સંમયે, અણુમયે, વહુમયે, મંડકરંડગસમાણે) ઓજ પ્રમાણે હે ભગવન
મારો આત્મા પણ એક એવી વસ્તુ છે કે જે મને ઇષ્ટ (ગમતી વસ્તુ) છે.
કાંત છે. પ્રિય છે, મનોજ્ઞ છે, મનોમ છે, સ્થિરરૂપ છે વિશ્વાસ યુક્ત છે, સંમત છે,
અનુમત છે, બહુમત છે, અને આભૂષણોથી ભરપૂર કરડિયા સમાન છે. (માર્ગ-

व्यम्, एव त्वग् वसितव्यम्, एवं भोक्तव्यम्, एव भाषितव्यम्, एवमुक्तयो
 त्वाय माणेषु भूतेषु जीवेषु सत्त्वेषु सयमेन सयमितव्यम्, अस्मिन्मार्गेन किञ्चिदपि
 प्रमादयितव्यम्, तव रुद्र स स्कन्दक-कात्यायनगोत्रः भ्रमणस्य भगवतो महा
 वीरस्य ममेतद्व्य धार्मिकमुपदेशं सम्यक् सप्रतिपद्यते । तदाज्ञया तथा गच्छति, तथा

से बचना चाहिये—(एवं चिद्विषय) इस प्रकार से ठहरना चाहिये
 (एवं निस्सिद्धयर्थ) इस प्रकार से बैठना चाहिये (एव तुयद्विषय) इस
 तरह से करवट बदलना चाहिये । (एव सुजियन्व) इस प्रकार से
 आहार करना चाहिये (एवं भामियन्व) इस प्रकार से धोना चाहिये
 (एवं उद्धाय उद्धाय) आपनी आत्मशक्ति से उठकर—प्रमाद निद्रा का
 परित्याग कर मोक्ष समझकर (पाणेहिं) प्राणियों में, (भूएहिं) भूतों
 में (जीवेहिं) जीवों में (मत्सेहिं) सत्त्वों में (सजमेण संजमियन्व)
 संयम से प्रवृत्ति करनी चाहिये (अस्मिन् ण अहे णो किञ्चि वि पमाइ
 यन्व) इस विषय में थोड़ा सा भी प्रमाद नहीं करना चाहिये । (तएण
 से एवं कच्छायणस्तगोसे समणस्स भगवओ महावीरस्स इमं
 एयाख्वं वम्मियं उवएस सम्म सपडियज्जइ) इसके बाद कात्यायन
 गोत्रीय स्कन्दक ने भ्रमणभगवान महावीर का यह इस प्रकार का
 धार्मिक उपदेश अच्छी तरह से स्वीकार कर लिया (तमाणाए)
 भ्रमण भगवान महावीर की आज्ञा के अनुसार अब वे स्कन्दक मुनि

चिद्विषय) आ प्रभावे उवा शब्दों में, (एव निस्सिद्धयर्थ) आ रीते
 वेदेषु में, (एव तुयद्विषय) आ रीते पशुपु हेतवु में, (एव सुजि
 यन्व) आ रीते आहार करवे में, (एव भाषियन्व) आ प्रभावे वेदेषु
 में (एवं उद्धाय उद्धाय) आनी रीते पोतानी आभयशक्तिही उद्दिनि—प्रमाद
 निद्राने परित्याग करीने समस्त विचारने (पाणेहिं) प्रणीतों में, (भूएहिं)
 भूतों, में, (जीवेहिं) जीवों में (मत्सेहिं) सत्त्वों में (सजमेण
 संजमियन्व) संयमपूर्वक वर्तवु में तभी ही ठीक प्रवृत्तिही तेमनी वाञ्छी
 न दुष्प्राप्त, तेमनी हिंसा न धाम वगेरे ध्यानभा रागवु में (अस्मि
 न् ण अहे णो किञ्चि वि पमाइयन्व) आ आभयतमा वरा पक्ष प्रमाद करवे
 नहीं। तएण से एवं कच्छायणस्तगोसे समणस्स भगवओ महावीरस्स इमं
 एयाख्वं वम्मियं उवएस सम्म सपडियज्जइ) त्वाए ते कात्यायन गोत्रीय स्कन्दके
 भगवु भगवान महावीरने ते प्रकारने धर्मोपदेश सारी रीते अद्वय भोले
 (तमाणाए) भगवु भगवान महावीरनी आज्ञा प्रभावे उवे ते स्कन्दक मुनि

સ્વયમેવાચારગોચરં વિનયવૈનયિકચરણકરણયાત્રામાત્રાપ્રત્યયં ધર્મમાખ્યાતુમ્ ।
તતઃ સ્વલુ શ્રમણો ભગવાન્ મહાવીરઃ સ્કંદકં કાત્યાયનગોત્રં સ્વયમેવ પ્રત્રાજયતિ
યાવત્ ધર્મમાખ્યાતિ એવં દેવાનુપ્રિય ! ગંતવ્યમ્ , એવં સ્થાતવ્યમ્ , એવં નિપત્ત-

કિ આપ (સયમેવ) સ્વયં હી (પન્વાવિડં) મુઝે દીક્ષા પ્રદાન કરે ।
(સયમેવ મુંડાવિડં) આપ સ્વયં હી અપને હાથ સે મુઝે મુંડિત કરે
(સયમેવ સેહાવિડં) આપ સ્વયં હી મુઝે પ્રતિલેખનાદિ ક્રિયા સિખાવે,
(સયમેવ સિક્ષાવિડં) આપ સ્વયં હો મુઝે સૂત્ર ઓર ડનકા અર્થ
પઢાવે, તથા (સયમેવ આચારગોચર વિણયવેણઙ્ગ્ય ચરણકરણજાયા
માયાવત્તિયં ધમ્મમાહક્ષિવડં) આપ સ્વયં હી મેરે લિયે આચાર
જ્ઞાનાદિ પાંચ આચાર ઓર ગોચર-ભિક્ષાચર્યાં કા ઉપદેશ કરે તથા
વિનયવાલે ઓર વિનયજન્ય ફલ વાલે ચરણ-વ્રતાદિચરણસત્તરી,
ઓર કરણ-પિંડવિશુદ્ધ્યાદિ કરણ સત્તરી, યાત્રા-સંયમયાત્રાવાલે
ઓર માત્રા-આહારાદિ કી માત્રા વાલે એસે ધર્મ કા ઉપદેશ દેવે ।
(તણ સમણે ભગવ મહાવીરે) ઇસકે વાદ શ્રમણ ભગવાન્ મહાવીર
ને (સ્કંદયં કચ્ચાયણસગોત્તં સયમેવ પન્વાવેઙ્ગ જાવ ધમ્મમાહક્ષવઙ્ગ)
કાત્યાયનગોત્રીય સ્કન્દક કો અપને હાથ સે હી દીક્ષિત ક્રિયા યાવત્
અપને આપ હી ડન્હે ધર્મ કા ઉપદેશ દિયા-ઇસમેં ડન્હોને ડન્હે
સમજાયા કિ (એવં દેવાનુપ્પિયા ! ગંતવ્વં) હે દેવાનુપ્રિય ! ઇસ પ્રકાર

મારી ઇચ્છા છે (સયમેવ મુંડાવિડં) આપ બાતે જ આપના હાથથી મને
મુંડિત કરો-દીક્ષા પ્રદાન કરો, (સયમેવ સેહાવિડં) આપ બાતે જ મને પ્રતિ-
લેખના વગેરે ધર્મ ક્રિયાઓ શિખવો, (સયમેવ સિક્ષાવિડં) આપ પોતે જ
મને સૂત્રો અને તેમના અર્થ લખાવો, તથા (સયમેવ આચારગોચરં વિણય-
વેણઙ્ગ્ય ચરણકરણ જાયામાયા વત્તિયં ધમ્મમાહક્ષિવડં) આપ પોતે જ મને
આચાર (જ્ઞાનાદિ પાંચ આચાર) અને ગોચર (ભિક્ષાચર્યા) તથા વિનયવાળા
અને વિનય થી પ્રાપ્ત થતાં ક્ષણવાળાં ચરણ-વ્રતાદિ (ચરણસિત્તરી,) અને
કરણ (પિંડવિશુદ્ધિ), વગેરે કરણ (સિત્તરી) અને યાત્રા (સંયમ યાત્રા) અને
માત્રા (આહારાદિકની માત્રા) વાળા ધર્મને ઉપદેશ આપો (તણ સમણે-
ભગવ મહાવીરે) ત્યારે શ્રમણ ભગવાન્ મહાવીરે (સ્કંદયં કચ્ચાયણસગોત્તં-
સયમેવ પન્વાવેઙ્ગ જાવ ધમ્મમાહક્ષવઙ્ગ) કાત્યાયન ગોત્રી સ્કંદકને પોતાને હાથે
જ દીક્ષા આપી અને (સ્કંદકે ઉપરોક્ત જેવી, ઇચ્છા દર્શાવી હતી તે પ્રકારે)
ધર્મોપદેશ આપ્યો તે ઉપદેશ વડે ભગવાન્ મહાવીરે તેને 'સમબળવ્યુ' કે (એવં-
દેવાનુપ્પિયા ! ગંતવ્વં) હે દેવાનુપ્રિય ! આ પ્રમાણે આલવું બેઠ્યો. (એવં-

व्यम्, एव त्वग् वसितव्यम्, एवं भोक्तव्यम्, एवं भाषितव्यम्, एवमुत्पयो
 त्वाय प्राप्तेषु भूतेषु जीवेषु मत्स्येषु रायमनसगमितव्यम्, अस्मिन्मार्गेण किंचिदपि
 प्रमादयितव्यम्, सव स्तु स स्वन्दकः कात्यायन गात्रः अमणस्य भगवता महा
 वीरस्य ममैतन्मय धार्मिकमुपदेशं सम्यक् सप्रतिपद्यते । तदाज्ञया तथा गच्छति, तथा

से चक्षणा चाहिये—(एवं चिद्विषयः) इस प्रकार से ठहरना चाहिये
 (एवं निस्सिद्ध्यन्त्य) इस प्रकार से बैठना चाहिये (एवं सुपद्विषयः)
 इस तरह से फरबट पदलना चाहिये । (एवं सुजिष्यन्त्य) इस प्रकार से
 आहार करना चाहिये (एवं भामिष्यन्त्य) इस प्रकार से घोलना चाहिये
 (एवं उद्घ्राय उद्घ्राय) आपनी आत्मशक्ति से उठकर—प्रमाद निद्रा का
 परित्याग कर सोच समझकर (पाणेहिं) प्राणियों में, (भूगहिं) भूतों
 में (जीवेहिं) जीवों में (मसेहिं) सर्वों में (सजमेण सजमिष्यन्त्य)
 सजम से प्रवृत्ति करनी चाहिये (अस्मिन् ण अट्टे णो किंचि वि पमाइ
 यन्त्यं) इस विषय में थोड़ा सा भी प्रमाद नहीं करना चाहिये । (तण्णे
 से त्वग् कच्छायणस्सगोसे समणस्स भगवओ महावीरस्स इमं
 एयास्स वम्मियं उवएसं सम्मं सपडिक्कज्जइ) इसके बाद कात्यायन
 गोत्रीय स्कन्दक ने अमणभगवान महावीर का यह इस प्रकार का
 धार्मिक उपदेश अच्छी तरह से स्वीकार कर लिया (तमाणाए)
 अमण भगवान महावीर की आज्ञा के अनुसार अब वे स्कन्दक मुनि

चिद्विषय) आ प्रभावे उभा रथेषु लेधंजे, (एव मिसीइयन्त्य) आ रीते
 वेसु लेधंजे (एव सुपद्विषय) आ रीते पड्थु हेसु लेधंजे, (एव सुजि
 ष्यन्त्य) आ रीते आढार करेवे लेधंजे, (एव मासिष्यन्त्य) आ प्रभावे वेसु
 लेधंजे, (एवं उद्घ्राय उद्घ्राय) आभी रीते पोतानी आत्मशक्तिवी उडिने—प्रमाद
 निद्रानो परित्याग करीने समल विचारिने (पाणेहिं) प्रणीको प्रत्ये, (भूरहिं)
 भूतो, प्रत्ये (जीवेहिं) एवे प्रत्ये अने (मसेहिं) सर्वे प्रत्ये (सजमेण
 सजमिष्यन्त्य) सयमपूर्वक वर्तवु लेधंजे तमासी ठाई प्रवृत्तिवी तेमनी तागणी
 न दुआय तेमनी दिसा न बाध ववेरे ध्यानभा राणवु लेधंजे (अस्मि
 न् ण अट्टे णो किंचि वि पमाइयन्त्य) आ आणतमा अरा पण प्रमाद करेवे
 नहीं. तण्णे से त्वग् कच्छायणस्सगोसे समणस्स भगवओ महावीरस्स इमं
 एयास्स वम्मियं उवएसं सम्मं सपडिक्कज्जइ) त्वाए ते कात्यायन गोत्रीय स्कन्दके
 अभव भगवान महावीरने ते प्रकाएने धर्मापदेश जारी रीते अरुण भो
 (तमाणाए) अभव भगवान महावीरनी आज्ञा प्रभावे हवे ते स्कन्दक मुनि

तिष्ठति तथा निपीदति तथा त्वग् वर्त्तयति तथा भुङ्क्ते, तथा भाषते तथोत्थायी
स्थाय प्राणेषु भूतेषु जीवेषु, सत्त्वेषु, संयमेन संयमयति, अस्मिन् खलु अर्थे न प्रमा-
द्यति । ततः खलु स स्कन्दकः कात्यायनगोत्रोऽनगारो जातः ईर्यासमिती भाषा-
समिति एषणासमिति आदानभाण्डामन्त्रनिक्षेपणासमिति उच्चारप्रस्रवणखेल-

(तह गच्छइ, तह चिट्ठइ, तह निसीयइ, तह तुयट्ठइ, तह भुंजइ, तह
भासइ, तह उट्ठाए उट्ठाए पाणेहिं भुएहिं जीवेहिं, सत्तेहिं संजमेणं
संजमइ) उस प्रकार से चलने लग गये, उस प्रकार से ठहरने लग
गये उस प्रकार से बैठने लग गये, उस प्रकार से करबट बदलने लग
गये, उस प्रकार से आहार करने लग गये, उस प्रकार से बोलने लग
गये, और उस प्रकार से प्रमाद निद्रा को परित्याग पूर्वक सोच समझ
कर प्राणियों में, भूतों में, जीवों में, सत्त्वों में, संयम से प्रवृत्ति करने
लग गये । (अस्सि च णं अट्ठे णो पमायइ) इस विषय में उन्होंने ने
थोड़ा सा भी प्रमाद नहीं किया । (तएणं से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते
अणगारे जाए) इस तरह वे कात्यायनगोत्रीय स्कन्दक अनगार हो
गये । (ईरियासमिए, भासासमिए, एसणासमिए, आयाणभंड-
मत्त निक्खेवणासमिए उच्चारपासवणखेलजल्लसिंघाणपरिट्ठावणिया-
समिए) इस अवस्था में उन्होंने ने ईर्यासमिति, भाषासमिति एषणा
समिति, आदानभांडमात्र निक्षेपणासमिति, उच्चार-प्रस्रवण-खेल-

(तह गच्छइ) ते प्रमाणे आलवा लाग्या, (तह चिट्ठइ) ते प्रमाणे उठवा
लाग्या, (तह निसीयइ) ते प्रमाणे भेसवा लाग्या, (तह तुयट्ठइ, तह भुंजइ,
तह भासइ) ते प्रमाणे पडणुं द्वेववा लाग्या, ते प्रमाणे आडार करवा लाग्या
ते प्रमाणे ओलवा लाग्या, (तह उट्ठाए उट्ठाए पाणेहिं, भूएहिं, जीवेहिं, सत्तेहिं-
संजमेणं संजमइ) अने ते प्रमाणे प्रमाद रहित अनीने समल विचारीने
भूतो अत्थे, प्राणीओ अत्थे, एवे अत्थे अने सत्त्वो अत्थे संयम पूर्वकतु वर्त्तन
राखवा लाग्या अट्ठे के अट्ठे एवेने हु अ न थाय अ रीते यतना पूर्वक संयमी
एवन एववा लाग्या (अस्सि च णं अट्ठे णो पमायइ) आ आणतमां तेओ
णिलकुव प्रमाद करता नही, (तएण से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते अणगारे जाए)
आ रीते कात्यायन गोत्री ते स्कंदक अणुगार अनी गया (ईरिया समिए,
भासासमिए एसणासमिए, आयाणभंडमत्तनिक्खेवणासमिए, उच्चारपासवण
खेलजल्लसिंघाणपरिट्ठावणियासमिए) तेओ (१) ईर्यासमिति (२) भाषा-
समिति (३) एषणा समिति (४) आदान भांड-मात्र निक्षेपणा समिति

શિષ્યાખ્યજ્ઞપરિષ્ઠાપનિકા સમિતઃ મનસ્સમિતઃ ચત્તઃ સમિતઃ કાયસમિતઃ મનો
 ગુપ્તો વધોગુપ્તઃ કાયગુપ્તો ગુપ્તો ગુપ્તેન્દ્રિયો ગુપ્તઃ પ્રજ્ઞચારી ત્યાગી સ્વજ્ઞાચાર
 ધ્યજુઃ પન્થ સ્તાંતિ સમોમિતેન્દ્રિય ધોધિતાઽનિદાનોઽનુસ્મૃતોઽવરિલેશ્યઃ સુખા
 મખ્યરતો દાન્ત , ઇદમેવ નૈર્ગ્ન્ય પ્રવચન પુરત કૃત્યા વિહરતિ ॥ સૂ. ૧૧ ॥

જહ્યુ શિષ્યાનક પરિષ્ઠાપનિકાસમિતિ, જન પાંચ સમિતિયોં કા અન્ધી
 તરહ્ સે પાલન કરને લગે, ઇસલિયે ઘે (મનસમિતિ, વચસમિતિ, કાય
 સમિતિ, મણગુપ્તે, વચગુપ્તે કાયગુપ્તે) ઘે મન કી ક્રિયા મેં સાવધાન હોને
 સે મનઃ સમિત, વચન કી ક્રિયા મેં સાવધાન હોને સે વચ સમિત,
 કાય કી ક્રિયા મેં સાવધાન હોને સે કાયસમિત, તયા મન કો વશ મેં
 કરને સે મનોગુપ્તિ સે યુક્ત, વચન કો વશ મેં કરને સે વચનગુપ્તિ સે
 યુક્ત ઓર કાય કો વશ મેં કરને સે કાયગુપ્તિ સે યુક્ત હો ગયે, (ગુપ્તે
 ગુપ્તિદિપ, ગુપ્તચમચારી, વાઈ, લજ્જુ ધન્ને, ચંતિસ્વમે, જિહ્વિદિપ,
 સોહિપ, અગિયાણે અપુસ્તુપ, અવદિન્લેસે સુસામખ્યરપ વ્તે જ્ઞમેવ
 ધિગયં પાવયણં પુરતો કાઠં વિહરહ) તયા જીવોં કી રક્ષા કરને વાલા
 હોને સે ગુપ્ત અપની પાંચોં હી દિન્દ્રિયોં કો અપને વશ મેં કરને સે
 ગુપ્તેન્દ્રિય, નવ વાઠસહિત પ્રજ્ઞચર્યકે પાલને સે ગુપ્ત પ્રજ્ઞચારી હો ગયે ।
 વાઈ-સન્ને ત્યાગી બન ગયે । લજ્જુ-સરલ પ્રકૃતિ સે સંપન્ન હો ગયે ।
 વચ-અન્ધોં ને અપને જીવન કો ધન્ય બના લિયા । સંતિસ્વમે-ઘે સ્તાંતિ

(૫) ઉચ્ચાર-એલ-અલ્લ શિષ્યાનક પરિષ્ઠાપનિકા સમિતિ નું વચાર્ પાલન
 કરવા લાગ્યા (મનસમિતિ વચસમિતિ, કાયસમિતિ મણગુપ્તે વચગુપ્તે કાયગુપ્તે)
 તેઓ મનની ક્રિયામાં સાવધાન હોવાથી મન સમિતિ થઈ ગયા, વચનની
 ક્રિયામાં સાવધાન હોવાથી વચન સમિત થઈ ગયા અને કાયાની ક્રિયામાં
 સાવધાન હોવાથી કાય સમિતિ થઈ ગયા મન વચન અને કાયા પર કાબૂ
 રાખવાને કારણે તેઓ મનોગુપ્તિ વચન ગુપ્તિ અને કાય ગુપ્તિથી મુક્ત બની
 ગયા. (ગુપ્તે, ગુપ્તિદિપ ગુપ્તચમચારી વાઈ, લજ્જુ ધન્ને અતિ, જ્ઞમે જિહ્વિદિપ,
 સોહિપ, અગિયાણે અપુસ્તુપ, અવદિન્લેસે સુસામખ્યરપ વ્તે જ્ઞમેવ ધિગય
 પાવયણં પુરતો કમ્પ વિહરહ) તયા તેઓ જીવોની રક્ષા કરનારા હોવાથી ગુપ્ત
 પાતાની પાંચે દિન્દ્રિયોને કાબૂમાં રાખતા હોવાથી ગુપ્તેન્દ્રિય અને નવ વાઠ
 સહિત પ્રજ્ઞચર્યનું પાલન કરતા હોવાથી પ્રજ્ઞચારી બન્યા. તેઓ
 “ વાઈ ”-સાચા ત્યાગી બન્યા (લજ્જુ) સરળ સ્વભાવના બન્યા તેમણે
 તેમના જીવનને ધન્ય સાચક બનાવ્યું ‘ સંતિસ્વમે ’ તેઓ કામ અને

टीका—“एत्थ णं से खंदए कच्चायणस्सगोत्ते” अत्र खलु स स्कंदकः कात्यायन गोत्रः “संबुद्धे” संबुद्धः सम्यग् रूपेण बोधं प्राप्तः लोकजीवसिद्धि-सिद्धमरणविषयकोत्तरं भगवतः सकाशात् संप्राप्य यथार्थविषयकज्ञानवान् भवति ततः संजातबोधो भगवति समुत्पन्नश्रद्धो भूत्वा “समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ” श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्यति “वंदिता नमंसिता एवं

क्षम, जितेन्द्रिय, शोधित-आत्मशुद्धि वाले और अनियाणे-निदान बंध से विहीन बन गये। अप्पुस्सुए- उत्कंठाभाव उनके भीतर विलकुल नहीं रहा। अबहिल्लेसे-असंघस्य संबंधी मनोवृत्ति से बहिर्भूत हो गये सुसामण्णरए-श्रमणधर्म में तीन योगों से युक्त बन गये। दंते-क्रोधादि कषायों पर उन्होंने विजय प्राप्त कर लिया। इस प्रकार निर्दोष निर्ग्रन्थ अनगार बनकर वे स्कन्दक मुनि इस जिनोक्त नैर्ग्रन्थ प्रवचन को आगे करके विचरने लगे ॥ सू-१३ ॥

टीकार्थ—“एत्थ णं से खंदए कच्चायणस्सगोत्ते” लोक, जीव, सिद्धि, सिद्ध एवं मरण इन पदार्थों की सान्त्वना अनंतता के विषय में वे कात्यायनगोत्रीय स्कन्दक भगवान से यथार्थ उत्तर प्राप्त कर जब अच्छी तरह से बोध को प्राप्त हो गये-यथार्थ विषयक ज्ञान संपन्न बन गये-तब भगवान के ऊपर उन्हें सच्ची श्रद्धा उत्पन्न हो गई। इस तरह सच्ची श्रद्धा से युक्त बन कर उन्होंने “समणं भगवं महावीरं वंदइ”

शान्तिथी युक्त जितेन्द्रिय “शोधित” आत्म शुद्धि पाणा, “अने अनियाणु” नियाणुथी रहित अन्या “अप्पुस्सुए” तेजो कुतूहलवृत्ति थी रहित अन्या. “अबहिल्लेसे तेजो असंघभी वृत्तिथी तदून रहित था. “सुसामण्णरए” मन, वचन अने कथना योग्यथी तेजो श्रमण धर्ममा दीन था, “दंते” तेमणु क्रोधादि कषायो पर विजय भगवी दीधो, आ रीते निर्दोष निर्ग्रन्थ-अणुगार अनीने, स्कंदक मुनि जिनेश्वर लगवाने कहेल विग्रन्थ प्रवचननुं पालन करता करता बिहरवा लाग्या

टीकार्थ—“एत्थ णं से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते” लोक, एव, सिद्धि, सिद्ध, अने मरणुनी सान्त्वना (अन्त युक्तता) अने अनंतताना विषयमां कात्यायन गोत्री स्कंदक लगवान महावीर वडे यथार्थ उत्तर भगवाथी लगवान महावीर उपर तेमने साथी श्रद्धा उत्पन्न थध, अने तेजो ते विषयना यथार्थ ज्ञानी अन्या आ रीते लगवान महावीरमां तेमने श्रद्धा उत्पन्न थाथी तेमणु “समण भगव महावीर वंदइ” श्रमणु लगवान महावीरने वंदन करी

वयासी " वन्दित्वा नमस्यित्वा एवमवादीत् वन्दनादि करणानन्तरमेवमुक्तवान्, किमुक्तवान् तत्राह—“ इच्छामि णं भंते ” इत्यादि “इच्छामि णं भंते” इच्छामि खलु मर्दंत ! “ तुम्भ अति ए केवलपन्नस धम्मं नित्तमिच्छे ” युष्माकमतिके केवलप्रपन्न धर्म निश्चयमितुम् “ तुम्भ ” युष्माकम् अति ए ” अतिके-समीपे इत्यर्थः “ केवलपन्नस ” केवलप्रपन्न केवलाना समुत्पन्नकेवलज्ञानवता पुरुषेण प्रपन्नम् प्रकाशितम् “ धम्म ” धर्मम् “ नित्तमिच्छे ” निश्चयमितुम् भोक्तुम्—हे भगवन् ! अहं मयन्मुखात् केवलप्रतिपादित धर्मं भोक्तुमिच्छामि इति भावः । भगवानाह—“ अहामुहं देवाणुप्पिया ” यथा सुखं देवानुप्पिय ! हे देवानुप्पिय ! ये रोचते तथा कुरु किन्तु “ मा पडियच्चं करेह ” मा प्रतिवचं कुरु विम्वं मा कुरु “ तपणं समणे भगव महावीरे ” तत खलु धमणो भगवान् महावीर खंदयस्स कच्चायणस्स गोचस्स ” स्कन्दकाय कात्यायनगोत्राय “ तीसेय महइ

अमण भगवान् महावीर को वदना की वन्दे नमस्कार किया। “ वदित्वा नमसित्वा ” वदना नमस्कार करके वन्दे ने प्रभु से “ एव वयासी ” इस प्रकार कहा—“ इच्छामि णं भंते । तुम्भ अति ए केवलपन्नस धम्मं नित्तमिच्छे ” हे भदन्त ! मैं आपसे-अर्थात् आप के सुख से केवल-प्रपन्न-समुत्पन्न केवलज्ञानशाली भगवान् द्वारा प्ररूपित प्रकाशित-धर्म धृतचारिधरूप धर्म-सुनना चाहता हूँ । इस प्रकार केवलप्रपन्न धर्म सुनने की स्कन्दक की तीव्र जिज्ञासा जानकर भगवान् ने उससे कहा—“ अहामुहं देवाणुप्पिया ! ” हे देवानुप्पिय ! जैसा तुम्हें रुचे-वैसा करो परन्तु ‘ मा पडियच्चं करेह ’ बिलम्ब मत करो । ‘ तपणं समणे भगवं महावीरे ’ इसके बाद अमण भगवान् महावीर ने ‘ खंदयस्स कच्चायणस्स गोचस्स ’ कात्यायनगोत्रीय स्कन्दक के लिये-तथा (तीसे य महइ महालयए)

नमस्कार कर्था “ वदित्वा नमसित्वा एव वयासी ” वदना नमस्कार करीने तेमळे प्रभुने ज्या प्रभाळे विनंति करी. “ इच्छामि णं भंते । तुम्भ अति ए केवलपन्नस धम्मं नित्तमिच्छे ” हे भगवन् ! तुम्हापने सुजेथी केवलप्ररूपित धर्म सांभलवा भाशु छु ज्या प्रकारनी केवलि प्ररूपित धर्म सांभलवानी तेमनी जिज्ञासा नेहने भगवान् महावीरे तेमने कळु—“ अहामुहं देवाणुप्पिया ! ” हे देवानुप्पिय ! तमने जेभ सुण ठपणे तेभ करेह “ मा पडियच्चं करेह ” शुभ कामां विवज करेवो नेहणे नही—“ तपणं समणे भगव महावीरे ” त्याह जाह अमण भगवान् महावीरे “ खंदयस्स कच्चायणस्स गोचस्स ” कात्यायन गोत्री स्कन्दक तथा “ तीसे य महइ महालयए ” त्या

टीका—“ एत्थ णं से खंदए कच्चायणस्सगोत्ते ” अत्र खलु स स्कंदकः कात्यायन गोत्रः “ संबुद्धे ” संबुद्धः सम्यग् रूपेण बोधं प्राप्तः लोकजीवसिद्धि-सिद्धमरणविषयकोत्तरं भगवतः सकाशात् संप्राप्य यथार्थविषयकज्ञानवान् भवति ततः संजातबोधो भगवति समुत्पन्नश्रद्धो भूत्वा “ समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ ” श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्यति “ वंदित्ता नमंसित्ता एव

क्षम, जितेन्द्रिय, शोधित-आत्मशुद्धि वाले और अनियाणे-निदान बंध से विहीन बन गये। अप्पुस्सुए- उत्कंठाभाव उनके भीतर विलकुल नहीं रहा। अवहिल्लेसे-असंयम संबंधी मनोवृत्ति से बहिर्भूत हो गये सुसामण्णरए-श्रमणधर्म में तीन योगों से युक्त बन गये। दंते-क्रोधादि कषायों पर उन्होंने विजय प्राप्त कर लिया। इस प्रकार निर्दोष निर्ग्रन्थ अनगार बनकर वे स्कन्दक मुनि इस जिनोक्त नैर्ग्रन्थ प्रवचन को आगे करके विचरने लगे ॥ सू-१३ ॥

टीकार्थ—“ एत्थ णं से खंदए कच्चायणस्सगोत्ते ” लोक, जीव, सिद्धि, सिद्ध एवं मरण इन पदार्थों की सान्तता अनंतता के विषय में वे कात्यायनगोत्रीय स्कन्दक भगवान से यथार्थ उत्तर प्राप्त कर जब अच्छी तरह से बोध को प्राप्त हो गये-यथार्थ विषयक ज्ञान संपन्न बन गये-तब भगवान के ऊपर उन्हें सच्ची श्रद्धा उत्पन्न हो गई। इस तरह सच्ची श्रद्धा से युक्त बन कर उन्होंने “ समणं भगवं महावीरं वंदइ ”

शान्तिथी युक्त जितेन्द्रिय “ शोधित ” आत्म शुद्धि वाणा, “अने अनियाणु” नियाणुथी रहित अन्या “ अप्पुस्सुए ” तेओ कुतूहलवृत्ति थी रहित अन्या. “ अवहिल्लेसे तेओ असंयमी वृत्तिथी तद्दुन रहित थया “ सुसामण्णरए ” भन, वचन अने धायना योगथी तेओ श्रमणु धर्ममा लीन थया, “ दंते ” तेमणे क्रोधादि कषायो पर विन्य भेणवी लीघो, आ रीते निर्दोष निर्ग्रन्थ-अणुगार अनीने, स्कंदक मुनि जिनेश्वर भगवाने कडेल विग्रन्थ प्रवचननुं पालन करता करता बिहरवा लाग्या.

टीकार्थ—“ एत्थ णं से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते ” लोक, जीव, सिद्धि, अने मरणुनी सान्तता (अन्त युक्तता) अने अनंतताना विषयमा कात्यायन गोत्री स्कंदक भगवान महावीर वडे यथार्थ उत्तर भणवाथी भगवान महावीर उपर तेमने साग्री श्रद्धा उत्पन्न थय, अने तेओ ते विषयना यथार्थ ज्ञानी अन्या आ रीते भगवान महावीरमा तेमने श्रद्धा उत्पन्न थवाथी तेमणे “ समण भगव महावीर ” श्रमणु भगवान महावीरने वंदन करी

बयासी ” वन्दित्वा नमस्यित्वा एवमवादीत् वन्दनादि करणानन्तरमेवमुक्तवान्, किमुक्तवान् तत्राह—“ इच्छामि णं भते ” इत्यादि “इच्छामि णं भते” इच्छामि खलु भवत ! ” तुम्ह अंतिए केवलियभक्त धम्म निसामिचए ” युष्माकर्मतिके केवलिप्रद्वष्ट धर्म निशमयितुम् “ तुम्ह ” युष्माकम् अंतिए ” अतिके—समीपे इत्यर्थः “ केवलियभक्त ” केवलिप्रद्वष्ट केवलिना समुत्पन्नकेवलज्ञानवता पुरुष प्रद्वष्टम् प्रकाशितम् “ धम्म ” धर्मम् “ निसामिचए ” निशमयितुम् भोतुम्—हे भगवन् ! अह भवन्मुत्वात् केवलियमतिपादित धर्म श्रोतुमिच्छामि इति भावः । भगवानाह—“ अहामुहं देवानुप्पिया ” यथा सुखं देवानुप्पिय ! हे देवानुप्पिय ! ते रोचते तथा कुरु किन्तु “ मा पडिबन्धं करेह ” मा प्रतिबन्धं कुरु बिलम्भं मा कुरु “ तएणं समणे भगव महावीरे ” ततः खलु भ्रमणो भगवान् महावीरः खंदयस्स कच्चायणस्स गोचस्स ” स्कन्दकाय कात्यायनगोत्राय “ तीसेय महइ

अमण भगवान् महावीर को वन्दना की उन्हें नमस्कार किया। “ वंदित्वा नमसित्वा ” वन्दना नमस्कार करके उन्होंने ने प्रभु से “ एव बयासी ” इस प्रकार कहा—“ इच्छामि णं भते ! तुम्ह अंतिए केवलियभक्त धम्म निसामिचए ” हे भदन्त ! मैं आपसे—अर्थात् आप के मुख से केवलि प्रद्वष्ट—समुत्पन्न केवलज्ञानशाली भगवान् द्वारा प्ररूपित प्रकाशित—धर्म भूतचारित्र्यरूप धर्म—सुनना चाहता हूँ । इस प्रकार केवलिप्रद्वष्ट धर्म सुन ने की स्कन्दक की तीव्र जिज्ञासा जानकर भगवान् ने उससे कहा—“ अहामुहं देवानुप्पिया । ” हे देवानुप्पिय ! जैसा तुम्हें रुचें—वैसा करो परन्तु ‘ मा पडिबन्धं करेह ’ बिलम्भ मत करो । ‘ तएणं समणे भगवं महावीरे ’ इसके बाद अमण भगवान् महावीर ने ‘ खंदयस्स कच्चायणस्स गोचस्स ’ कात्यायनगोत्रीय स्कन्दक के सिये—तथा (तीसे य महइ महालयाय)

नमस्कार करी “ वंदित्वा नमसित्वा एव बयासी ” वन्दन नमस्कार करीने तेमखे प्रभुने आ प्रभाखे विनति करी। “ इच्छामि णं भते ! तुम्ह अंतिए केवलियभक्त धम्म निसामिचए ” हे भगवन् ! तुम्ह आपने सुखेधी केवलिप्रद्वष्ट धर्म सांभलया भाशु हूँ आ प्रकाशनी केवलि प्रद्वष्ट धर्म सांभलयानी तेमनी जिज्ञासा ओछने भगवान् महावीरे तेमने कहुँ—“ अहामुहं देवानुप्पिया । ” हे देवानुप्पिय ! तमने जेभ सुख उपजे तेभ करेह ‘ मा पडिबन्धं करेह ’ शुभ कामयां विरल करेओ ओछजे नही— तएणं समणे भगवं महावीरे ’ त्वाए जाइ अमण भगवान् महावीरे “ खंदयस्स कच्चायणस्स गोचस्स ’ कात्यायन गोत्री स्कन्दक तथा “ तीसे य महइ महालयाय ” त्वां

મહાલાયા પરિસાઈ ” તસ્યૈ ચ મહાતિમહાલાયાયૈ પરિપદે “ ધમ્મં પરિકહેઈ ” ધર્મ પરિકથયતિ “ ધમ્મકહા માણિઅન્વા ” કર્મકથા મણિતવ્યા “ અત્થિ લોઈ અત્થિ અલોઈ ” ઇત્યાદિ રૂપા ધર્મકથા ઔપપાતિકસૂત્રસ્ય પૂર્વાર્ધે પદ્મશ્વાગત્તમે સૂત્રે વિલોકનીયા, “તણ્ણં સે સ્વંદણ કચ્ચાયણસ્સ ગોત્તે” તતઃ સ્વલુ સ સ્કન્દકઃ કાત્યાયન ગોત્રઃ “ સમણસ્સ મગવઓ મહાવીરસ્સ અંતિઈ ધમ્મં ” શ્રમણસ્ય મગવતો મહાવીરસ્યાંતિકે ધર્મ “ સોચ્ચા ” શ્રુત્વા ” ણિસમ્મ ” નિશમ્ય હૃદિ અવધાર્ય “ હઠ્ઠુ તુઠ્ઠુ જાવ હિયઈ ” અત્ર યાવત્પદેન “ ચિત્તમાણંદિઈ પીઠ્ઠમણે પરમસો-

ઉસ આઈ હુઈ વડી ભારી પરિપદ કો (ધમ્મં પરિ કહેઈ) ચારિત્ર રૂપ ધર્મ કા ઉપદેશ દિયા । (ધમ્મકહા માણિઅન્વા) ધર્મકથા કહની ચાહિયે-(અત્થિ લોઈ અત્થિ અલોઈ) ઇત્યાદિરૂપ ધર્મકથા ઔપપાતિક કે પૂર્વાર્ધ મેં છપ્પનવેંસૂત્ર કે અંદર હૈ, સો વહાં સે દેખ લેની ચાહિયે । (તણ્ણ સે સ્વંદણ કચ્ચાયણસગોત્તે સમણસ્સ મગવઓ મહાવીરસ્સ અંતિઈ ધમ્મં સોચ્ચા ણિસમ્મ હઠ્ઠુ તુઠ્ઠુ જાવ હિયઈ) સ્કન્દક પરિત્રાજક ને શ્રમણ મગવાન મહાવીર કે મુખ સે જવ ધર્મકથા સાવધાન હોકર સુની તો સુનકર ઓર ઉસે હૃદય મેં અવધારણ કર ઉસકા ચિત્ત વહુત હર્ષિત હુઈ, અતિતુષ્ટ હુઈ, દ્રષ્ટ તુષ્ટ કા તાત્પર્ય અતિતુષ્ટ હૈ । અથવા-હ્રષ્ટ શબ્દ કા અર્થ હર્ષિત ઓર તુષ્ટ શબ્દ કા અર્થ-ધર્મકથા કે શ્રવણ સે પ્રાપ્ત સંતોષવાલા એસા હૈ ચિત્ત જિસકા-વહ હ્રષ્ટ તુષ્ટ ચિત્ત હૈ । ઇસી લિયે આનંદ કો પ્રાપ્ત હુઈ-માનસિક ઉલ્લાસવાલે હુઈ (પીઠ્ઠમણે) મન મેં તૃપ્તિ સે યુક્ત હુઈ અર્થાત્ મગવાન્ની કી અમૃત જૈસી

લેગી થયેલી ઘણી જ મોટી સલાને “ ધમ્મ પરિકહેઈ ” શ્રુત ચારિત્ર રૂપ ધર્મનો ઉપદેશ દીધો “ ધમ્મકહા માણિઅન્વા ” અહીં ધર્મ કથા કહેવી બોધ્યે તે ધર્મકથા કઈ? “ અત્થિ લોઈ અત્થિ અલોઈ ” ઇત્યાદિ રૂપ ધર્મકથા ઔપપાતિક સૂત્રના પૂર્વાર્ધમાં છપ્પનમાં સૂત્રથી જિજ્ઞાસુઓએ તે ધર્મકથા વાંચી લેવી. “ તણ્ણ સે સ્વંદણ કચ્ચાયણસ્સ ગોત્તે સમણસ્સ મગવઓ મહાવીરસ્સ અંતિઈ ધમ્મં સોચ્ચા ણિસમ્મ હઠ્ઠુ તુઠ્ઠુ જાવ હિયઈ ” કાત્યાયન ગોત્રીય સ્કન્દક પરિત્રાજકે બ્યારે તે ધર્મકથા શ્રમણુ ભગવાન મહાવીરને મુખેથી એકચિત્તે સાંભળી અને હૃદયમાં અવધારણ કરી ત્યારે તેમને ઘણો હર્ષ થયો, અને તેમને ઘણો સંતોષ થયો (હ્રષ્ટ તુષ્ટ એટલે અતિશય તુષ્ટ અથવા હ્રષ્ટ એટલે હર્ષિત અને તુષ્ટ એટલે ધર્મકથા સાંભળીને સંતોષ પામેલ) તેમના ઉદ્દાસનો પાર ન રહ્યો, “ પીઠ્ઠમણે ” ભગવાનની અમૃત જેવી વાણી સાંભળીને તેમનું મન પ્રસન્ન થયું, તેમનું મન “ પરમસો-

मणस्सिप हरिसवसविसप्पमाण " इति सण्ह " इदुतुच्चित्तमाणंदिए " इदुतुच्चिचानन्दितः—इदुतुएम्=अवितुएम्, यद्वा इष्टं=इष्टितम्, तुष्टम्=धर्मकया भवेन प्राप्तसन्तोषम्, सादृश चित्त यस्य स इष्टतुष्टचित्तः, अतएव आनन्दित=आनन्दं प्राप्तः सजातमानसोऽस्मास इत्यर्थः "पीडमणे" प्रीतिमना—प्रीतिः=वृष्टिर्मनसि यस्य स प्रीतिमनाः अमृतोपमषाणीभवेनेन तृप्तमानसः अतएव "परमसोमणस्सिप" परमसौमनस्यित—परमम्=उत्कृष्टञ्च तत् सौमनस्यं=प्रसन्नचित्तावेति परमसौमनस्यं, तदस्य सजात परमसौमस्यितः परमानुरागपूर्णमनस्कः । "हरिसवसविसप्पमाणदियए" इपेवसविसर्पद् इदय इपेवसनेन विसर्पत्=परितः उच्छ्वत् इदयं यस्य तथा भगवदुक्तधर्मधवणादमन्दानन्दतरङ्गसमुच्छास्तिचित्त इत्यर्थः "उट्टाए उट्टेइ" उत्थया उत्थानक्रियया उचिष्ठति, "उट्टिचा" उत्थाय "समणं भगव महावीर" अमणं भगवन् महावीरम् । तिक्खुतो त्रिक्खुत्त त्रिवारमित्यर्थः "आयाहिणपयाहिण करेइ" आदक्षिणप्रवक्षिणा करोति " करिचा " 'वंदइ नमसइ' वन्दते नमस्यति 'वंदिचा नमंसिचा' वन्दित्वा नमस्यत्वा 'एव वयासी' एवम्=वक्ष्यमाण वचनम्—अवादीत् उक्तवान् "सवहामि ण

षाणी के सुनने से तृप्त मन वाले हुए इसी से (परमसोमणस्सिप) जिनका चित्त परम प्रसन्नता से भर गया है—अर्थात् परम अनुराग से पूर्ण मन वाले ऐसे वे स्कन्दक परिघ्राजक उस समय अपार हर्ष के मारे प्रफुल्लित हुए उनका हृदय (हरिसवसविसप्पमाणदियए) भगवान् द्वारा कथित धर्म के अवगण से होने वाले हर्षोत्सास के उक्तर्ष से कूट गया । वह उसी समय (उट्टाए उट्टेइ) अपनी उत्थानशक्ति से उठे 'उट्टिचा' और उठकर (समणं भगवं महावीर) उन्होंने भगवान् महावीर को (तिक्खुत्तो) तीन बार (आयाहिणपयाहिणं करेइ करिचा वंदइ नमसइ) आदक्षिणप्रवक्षिणापूर्वक वन्दना नमस्कार करते हैं (वंदिचा नमंसिचा) वन्दना नमस्कार करके (एव वयासि) फिर अमम

मणस्सिप " प्रसन्नताधी आशुगमु— जेट्ठे के अक्षित आवधी पूर्य मनवाण् स्तेनके परिमाणेणु इदय " हरिसवसविसप्पमाणदियए ' अवधानेन धर्मापदेशं साधयित्वा उभेदसाधनी नाथी उठयु

जेल समने 'उट्टाए उट्टेइ' तेजो पोतानी उत्थानशक्तिधी उठवा. " उट्टिचा " अने उठीने समण भगव महावीर ' तेमजे अमण् अवधान भक्तावीरने " तिक्खुत्तो " त्रय बार ' आयाहिणपयाहिण करेइ करिचा वंदइ नमसइ " आदक्षिण प्रवक्षिणापूर्वक वन्दन नमस्कार कर्या " वंदिचा नमंसिचा एव वयासी ' वन्दन नमस्कार करीने तेमजे अवधान भक्तावीरने आ प्रभाजे ठह

મંતે ” શ્રદ્ધે इदं यथार्थमेवास्तीति विश्वसिमि० खलु भदंत ! “णिग्गंथं पाव-
यणं” निर्ग्रंथं प्रवचनम् निर्ग्रंथसंवन्धिशास्त्रे मे श्रद्धा समुत्पन्ना यस्य शास्त्रस्यानुगामी
भवत्सदृशः केवली तत् शास्त्रमवश्यमेवोपादेयमित्याकारिका मे श्रद्धा समुत्पन्ना-
ऽतोहं श्रद्धे प्रवचनमितिभावः । “पत्तियामि णं भंते निग्गंथं पावयणं ” प्रत्येमि
खलु भदन्त । निर्ग्रंथं प्रवचनम् , लोकादि स्वरूपमित्यमेवेति प्रीतिं प्रत्ययं विश्वासं
वा करोमि “रोएमि णं भंते णिग्गंथं पावयणं ” रोचे खलु भदंत । नैर्ग्रंथं प्रवच-
नम् रोचे पीयूषधारावत् वांछामि निर्ग्रंथप्रवचनम् “ अब्भुट्टेमि णं भंते णिग्गंथं
पावयणं ” अभ्युत्तिष्ठामि खलु भदंत । नैर्ग्रंथं प्रवचनम् अभ्युत्तिष्ठामि । अङ्गीक-

भगवान् महावीर से इस प्रकार कहा—(सद्वहामि ण भंते । णिग्गंथं
पावयणं) हे भदन्त ! यह निर्ग्रन्थ प्रवचन ही यथार्थ है—इस कारण मैं
इस पर श्रद्धा करता हूं । श्रद्धा करने का कारण यह है कि आप जैसे
केवली इसकी प्ररूपणा करने वाले हैं अतः यह अवश्य ही उपादेय है,
इस प्रकार की श्रद्धा मुझे उत्पन्न हो गई है अतः मैं इस निर्ग्रन्थ प्रवचन
के ऊपर अटूट श्रद्धा वाला बन गया हूं । (पत्तियामि णं भंते । निर्ग्रन्थं
पावयणं) हे भदन्त ! लोकादिक का स्वरूप जैसा आपने प्रतिपादित किया
है वह ऐसा ही है इस प्रकार मैं इस निर्ग्रन्थ प्रवचन पर प्रीति-प्रत्यय
-विश्वास करता हूं । (रोएमि णं भंते ! णिग्गंथं पावयणं) जिस प्रकार
अमृत हर एक प्राणी की रुचि का एकान्ततः विषयभूत बनता है उसी
प्रकार से हैं भदन्त ! यह निर्ग्रन्थ प्रतिपादित प्रवचन भी मेरी रुचि का
विषयभूत बन गया है । (अब्भुट्टेमि णं भंते । णिग्गंथं पावयणं) इसलिये
हे भदन्त ! मैं आज से इस निर्ग्रन्थ प्रवचन को अंगीकार करता हूं,
(एवमेयं भंते !) हे भदन्त ! आपने जो उपदेश दिया है वह ऐसा ही

“ सद्वहामि ण भंते ! णિग्ગંથં પાવયણં ” હે ભગવાન્ ! આ નિર્ગ્રંથ પ્રવ-
ચન જ યથાર્થ છે, તે કારણે મને તેમાં શ્રદ્ધા ઉત્પન્ન થઈ છે. શ્રદ્ધા ઉત્પન્ન
થવાનું મુખ્ય કારણ એ છે કે આપ જેવા કેવલી ભગવાન તેની પ્રરૂપણા કરનાર છો
તેથી તે અવશ્ય ગ્રહણ કરવા યોગ્ય છે એવી શ્રદ્ધા મારા મનમાં ઉત્પન્ન થઈ છે
તેથી આ નિર્ગ્રંથ પ્રવચનમાં હું અટૂટ શ્રદ્ધા યુક્ત બની ગયો છું. “ પત્તિ-
યામિ ણ ભંતે ! નિર્ગિગ્ગંથં પાવયણં ” હે ભગવાન્ ! લોક વગેરેનું સ્વરૂપ આપે
પ્રતિપાદિત કર્યા પ્રમાણે જ છે એવી પ્રતીતિ મને થઈ ગઈ છે તેથી નિર્ગ્રંથ
પ્રવચન પર મારી પ્રીતિ-વિશ્વાસ વ્યક્ત કરૂં છું. “ રોએમિ ણં ભંતે ! નિર્ગિગ્ગંથ-
પાવયણં ” જેમ અમૃત દરેક જીવને રુચિ કારક થઈ પડે છે તેમ આ નિર્ગ્રંથ
પ્રવચન શ્રવણ કરવાની મારી રુચિ પણ વધતી જ નથી છે “ અબ્ભુટ્ટેમિ ણં
ભંતે ! નિર્ગિગ્ગંથં પાવયણં ” તેથી હે ભગવાન્ ! આજથી હું આ નિર્ગ્રંથ પ્રવ-

રોમીત્યર્થ “અવમેય મતે” અવમેતત્ મદત્ ! હે મગધન્ ! યદ્ મવાનુપદિશતિ
 તદ્ અવમેવાસ્તિ “તદ્મમેય મતે” તયૈતદ્ મદત્ ! હે મગધન્ ! મમતા યતુપદિષ્ટ
 તત્તથૈવ । “અવિતદ્મમેય મતે” અવિતમમેતદ્ મદત્ ! હે મગધન્ ! મવદુક્તમેતત્
 સર્વે સત્યમેવ । “અસંવિદ્મમેય મતે” અસંવિદ્મમેતત્ મદત્ ! હે મગધન્ !
 એતત્ સંવેદ્યરહિત—દેશશંકા સર્વશંકા ધર્મિતમ્ । “ઈચ્છિયમેય મતે”
 ઇષ્ટમેતદ્ મદત્ ! = હે મગધન્ ! એતદ્ મધ્યધન સઘ મયા લાઙ્ગિચ્છતમઘ
 પદિચ્છિયમેય મતે” પ્રતીષ્ટમેતદ્ મદન્ત્ ! = હે મગધન્ ! પુનઃ પુનરિષ્ટ-
 મેતદ્ મધ્યધનમ્ ‘ઈચ્છિયપદિચ્છિયમેય મતે’ ઇષ્ટપ્રતીષ્ટમેતદ્ મદત્ =
 હે મગધન્ ! એતદ્ મગધ ધનમ્ ઇષ્ટપ્રતીષ્ટોમયરૂપ વર્ષતે ‘સે જહેય તુન્ન
 વદહ’ તત્ત યયૈતદ્ યુય વદય = તદેતન્ન યયા મવન્ન કયયતિ તત્તથૈવ
 ‘સિદ્ધુ’ ઇતિ કૃત્વા—ત્યુક્ત્વા ‘સમગ્ર મગધ મહાવીર વદહ નમસહ’ ધર્મ્ય

હૈ, (તદ્મમેય મતે) હે મદન્ત ! જેસા આપને પ્રતિપાદિત કિયા હૈ વહ અક્ષર
 વા પિલકુલ ધેના હી હૈ । (અવિતદ્મમેય મતે) હે મદન્ત ! આપકે દ્વારા
 કહા હુઆ યહ સય સત્ય હી હૈ । (અસંવિદ્મમેય મતે) હે મદન્ત ! હસ
 આપકે પ્રવચન મેં ન દેશશંકા કા સ્થાન હૈ મૌર ન સર્વશંકા કા હી સ્થાન
 યહ સર્વ પ્રકાર સે શંકા રહિત હૈ ‘ઈચ્છિયમેય મતે’ । હે મદન્ત ! યે
 આપકે વચન મેરે લિયે લાંછિત હી હૈ । ‘પદિચ્છિયમેય મતે’ હે
 મદન્ત આપકે યે વચન પુનઃ પુનઃ ઇષ્ટ હૈ । ‘ઈચ્છિયપદિચ્છિયમેય
 મતે’ । હે મદન્ત ! યે આપકે વચન ઇષ્ટ હૈ પ્રતીષ્ટ દોનોં રૂપ હૈ ।
 ‘સે જહેય તુન્ન વદહ’ આપને જેસા કહા હૈ વહ સર્વપ્રકાર સે

અનેને અગ્રીકાર કરે છુ “અવમેય મતે” હે મગધાન્ આપે ને તત્ત્વોના
 ઉપદેશ આપ્યો છે તે વધારા જ છે, તદ્મમેય મતે ! આપે ને તત્ત્વોનું પ્રતિ
 પાદન કર્યું છે, તે અક્ષરે અક્ષર સત્ય છે—તેમાં કોઈ પણ પ્રકારની શંકાને
 સ્થાન નથી ‘અવિતદ્મમેય મતે’ । હે મગધન્ ! આપે ને કર્યું છે તે સત્ય
 જ છે ‘અસંવિદ્મમેય મતે’ । હે મગધન્ ! આપની વાત સંવેદ્ય રહિત છે
 તેમાં શંકાને માટે બિલકુલ અવકાશ જ નથી તે સર્વ પ્રકારે શકા રહિત જ છે
 “ઈચ્છિયમેય મતે” । હે મગધન્ ! આપનાં વચન ઇચ્છિયા યોગ્ય છે—આપના
 વચન આમગવાની અભિલાશ અને ધ્યાન કરે છે ‘પદિચ્છિયમેય મતે’ । હે
 મગધન્ આપનાં વચનો અતિશય ઇષ્ટ છે ‘ઈચ્છિયપદિચ્છિયમેય મતે’ ।
 હે મગધાન્ ! આપનાં વચન ઇષ્ટ અને પ્રતીષ્ટ છે ‘સે જહેય તુન્ન વદહ’
 આપે ને કર્યું તે સર્વ પ્રકારે વધારા ને છે, “ઈતિ કદુ” આ પ્રમાણે કહીને

મંતે " શ્રદ્ધે શ્દં યથાર્થમેવાસ્તીતિ વિશ્વસિમિં સ્વલુ ભદંત ! " ણિગ્ગંથં પાવ-
યણં" નિર્ગ્રંથં પ્રવચનમ્ નિર્ગ્રંથસંવન્ધિગાહે મે શ્રદ્ધા સમુત્પન્ના યમ્ય શાસ્ત્રસ્યાનુગામી
ભવત્સદ્દશઃ કેવલી તત્ શાસ્ત્રમવશ્યમેવોપાદેયમિત્યાકારિકા મે શ્રદ્ધા સમુત્પન્ના-
સ્તોહં શ્રદ્ધે પ્રવચનમિતિભાવઃ । " પત્તિયામિ ણં મંતે નિર્ગ્ગંથં પાવયણં " પ્રત્યેમિ
સ્વલુ ભદન્ત ! નિર્ગ્રંથં પ્રવચનમ્ , લોકાદિ સ્વરૂપમિત્યમેવેતિ પ્રીતિં પ્રત્યયં વિશ્વાસં
વા કરોમિ " રોણમિ ણં મંતે ણિગ્ગંથં પાવયણં " રોચે સ્વલુ ભદંત ! નૈર્ગ્રંથં પ્રવચ-
નમ્ રોચે પીયૂષધારાવત્ વાંઙ્ગમિ નિર્ગ્રંથપ્રવચનમ્ " અબ્હુટ્ટેમિ ણં મંતે ણિગ્ગંથં
પાવયણં " અભ્યુત્તિઠામિ સ્વલુ ભદંત ! નૈર્ગ્રંથં પ્રવચનમ્ અભ્યુત્તિઠામિ । અઙ્ગીક-

ભગવાન મહાવીર સે સ્વ પ્રકાર કહા-(સદ્દહામિ ણ મંતે ! ણિગ્ગંથં
પાવયણં) હે ભદન્ત ! યહ નિર્ગ્રંથ પ્રવચન હી યથાર્થ હૈ-ઇસ કારણ મૈ
ઇસ પર શ્રદ્ધા કરતા હું । શ્રદ્ધા કરને કા કારણ યહ હૈ કિ આપ જૈસે
કેવલી ઇસકી પ્રરૂપણા કરને વાલે હૈં અતઃ યહ અવશ્ય હી ઉપાદેય હૈ,
ઇસ પ્રકાર કી શ્રદ્ધા મુક્તે ઉત્પન્ન હો ગહ હૈં અતઃ મૈં ઇસ નિર્ગ્રંથ પ્રવચન
કે ઉપર અદ્ભુટ શ્રદ્ધા વાલા બન ગયા હું । (પત્તિયામિ ણં મંતે ! નિર્ગ્રંથં
પાવયણં) હે ભદન્ત ! લોકાદિક કારવરૂપ જૈસા આપને પ્રતિપાદિત કિયા
હૈ વહ એસા હી હૈ ઇસ પ્રકાર મૈં ઇસ નિર્ગ્રંથ પ્રવચન પર પ્રીતિ-પ્રત્યય
-વિશ્વાસ કરતા હું । (રોણમિ ણં મંતે ! ણિગ્ગંથ પાવયણં) જિસ પ્રકાર
અમૃત દરેક પ્રાણી કી રુચિ કા એકાન્તતઃ વિષયભૂત બનતા હૈં ઉસી
પ્રકાર સે હૈં ભદન્ત ! યહ નિર્ગ્રંથ પ્રતિપાદિત પ્રવચન બી મેરી રુચિ કા
વિષયભૂત બન ગયા હૈં । (અબ્હુટ્ટેમિ ણં મંતે ! ણિગ્ગંથ પાવયણં) ઇસલિયે
હે ભદન્ત ! મૈં આજ સે ઇસ નિર્ગ્રંથ પ્રવચન કો અંગીકાર કરતા હું,
(એવમેયં મંતે !) હે ભદન્ત ! આપને જો ઉપદેશ દિયા હૈં વહ એસા હી

“ સદ્દહામિ ણ મંતે ! ણિગ્ગંથ પાવયણ ” હે ભગવાન્ ! આ નિર્ગ્રંથ પ્રવ-
ચન જ યથાર્થ છે, તે કારણે મને તેમા શ્રદ્ધા ઉત્પન્ન થઈ છે. શ્રદ્ધા ઉત્પન્ન
થવાનું મુખ્ય કારણ એ છે કે આપ જેવા કેવલી ભગવાન તેની પ્રશ્નણા કરનાર છો
તેથી તે અવશ્ય ગ્રહણ કરવા યોગ્ય છે એવી શ્રદ્ધા મારા મનમા ઉત્પન્નથઈ છે
તેથી આ નિર્ગ્રંથ પ્રવચનમા હું અતૂટ શ્રદ્ધા યુક્ત બની ગયો છું “ પત્તિ-
યામિ ણ મંતે ! નિર્ગ્રંથ પાવયણ ” હે ભગવાન્ ! લોક વગેરેનું સ્વરૂપ આપે
પ્રતિપાદિત કર્યા પ્રમાણે જ છે એવી પ્રતીતિ મને થઈ ગઈ છે તેથી નિર્ગ્રંથ
પ્રવચન પર મારી પ્રીતિ-વિશ્વાસ વ્યક્ત કરૂ છું “ રોણમિ ણં મંતે ! ણિગ્ગંથ-
પાવયણ ” જેમ અમૃત દરેક જીવને રુચિ કારક થઈ પડે છે તેમ આ નિર્ગ્રંથ
પ્રવચન શ્રવણ કરવાની મારી રુચિ પણ વધતી જ નાય છે “ અબ્હુટ્ટેમિ ણં
મંતે ! ણિગ્ગંથ પાવયણ ” તેથી હે ભગવાન્ ! આજથી હું આ નિર્ગ્રંથ પ્રવ-

અમણો મગવાન્ મહાવીરઃ 'તેણેવ ડવાગચ્છઈ' સત્રૈવોપાગચ્છતિ 'ડવાગચ્છિતા' ડવાગમ્ય 'સમણ મગવ મહાવીર' અમણ મગવન્તં મહાવીરમ્ 'તિક્ષુત્તો' ત્રિ કૃત્વ 'આયાહિણં પયાહિણં કરેઈ' આદક્ષિણમ્પ્રદક્ષિણાં કરોતિ 'કરિષા' કૃત્વા 'વદઈ નમસઈ' વન્દતે નમસ્યતિ 'વદિષા નમસિષા' વન્દિત્વા નમસ્યિત્વા 'પર્વં વયાસી' પર્વમવાદીત્ 'આલિષ્ઠે ણ મંતે છોઈ' આદીપ્ત સ્વલુ મદંત ! છોકા આદીપ્તઃ-આસમન્તાત્-દીપ્ત જ્વલિત લોકો જીવલોક હે મગવન્ ! પરિદશ્યમાનો જીવલોકા સર્વથ મદીપ્ત ઇશામાતીત્પર્યઃ, 'આલિષ્ઠપલિષ્ઠે ણ મંતે છોઈ' મા

ધિરાજમાન યે 'તેણેવ ડવાગચ્છઈ' ઘઘાં પર આવે 'ડવાગચ્છિતા' ઘઘા આકર ડન્હોં ને 'સમણ મગવ મહાવીર' અમણ મગવાન મહા-વીર કો 'તિક્ષુત્તો' ત્રીન વાર 'આયાહિણં પયાહિણ' આદક્ષિણ પ્રદક્ષિણા (કરેઈ) કી (કરિષા) ત્રીન વાર આદક્ષિણ પ્રદક્ષિણા કરકે 'વદઈ નમસઈ' ફિર ડન્હોં ને અમણ મગવાન્ મહાવીર કો વદના કી ડન્હેં નમસ્કાર કિયા । (વદિષા નમસિષા પર્વં વયાસી) વદના નમ સ્કાર કરકે ફિર ઘદ મગવાન મહાવીર સે ઇસ પ્રકાર કહને લગા- (આલિષ્ઠે ણ મંતે છોઈ) હે મદન્ત ! યહ જીવલોક ચારોં તરફ સે જલ રહા હૈ અર્થાત્ જિતના મી યહ જીવલોક દિશ્વલાઈ પડ રહા હૈ ઘદ સવ ઓર સે પ્રદીપ્ત કી તરહ માલૂમ હોના હૈ (પલિષ્ઠે ણ મંતે ! છોઈ) હે મદન્ત ! યહ જીવલોક સામાન્ય રૂપ સે હી જલ રહા હો મો યાત નહીં હૈ કિન્તુ યહ તો યહૂત હી અધિક વિદોષ રૂપ સે પ્રજ્વલિત જૈસા હો રહા હૈ (આલિષ્ઠપલિષ્ઠે ણ મંતે ! છોઈ) હે મદન્ત ! જહા પર મી દેલ્લો

અમણ મગવાન મહાવીર સ્વામી વિશ્વાશ્રમાન હવા "તેણેવ ડવાગચ્છઈ" ત્યાં અર્થ "ડવાગચ્છિતા" ત્યાં આવીને તેમણે 'સમણ મગવ મહાવીર' અમણ મગવ ન મહાવીરની 'તિક્ષુત્તો' ત્રણ વાર 'આયાહિણ પયાહિણ' આદક્ષિણ પ્રદક્ષિણા 'કરેઈ' કરી (કરિષા) ત્રણ વાર આદક્ષિણ પ્રદક્ષિણા કરીને (વદઈ નમસઈ) તેમણે મગવાન મહાવીરને વદન કરી નમસ્કાર કર્યો 'વદિષા નમસિષા પર્વં વયાસી' વદન નમસ્કાર કરીને તેમણે અમણ મગવાન મહાવીરને આ પ્રમાણે કહ્યું "આલિષ્ઠે ણ મંતે છોઈ" હે મગવન્ ! આ લોક ચારે તરફથી અગતી રહ્યો છે એટલે કે આ આગ્રામ છાર લોક ચારે તરફથી અગતી રહ્યો છે 'પલિષ્ઠે ણ મંતે ! છોઈ' હે મગવન્ ! આ અપસેક સામાન્ય રૂપે જ અગતી રહ્યો છે એવું નથી પણ તે તો ખૂબ અધિક પ્રમાણમાં પ્રજ્વલિત હોય એવું લાગે છે આલિષ્ઠપલિષ્ઠે ણ મંતે ! છોઈ "

भगवन्त महावीरं वन्दते नमस्यति “वन्दित्ता नमंसित्ता” वन्दित्वा नमस्यित्वा
 “उत्तरपुरत्थिमं दिसिभायं अवक्कमइ” उत्तरपौरस्त्यं दिग्भागम् अवक्रामति
 “उत्तरपुरत्थिमं” उत्तरपौरस्त्यम् उत्तरपूर्वयोरन्तरालं “दिसिभायं” दिग्भा-
 गम् ईशानकोणम् “अवक्कमइ” अवक्रामति गच्छति “अवक्कमित्ता” अवक्रम्य
 स स्कन्दक ईशानकोणे गत्वेत्यर्थः, “तिदंडं च कुंडियं च जाव धाउरत्ताओय
 एगंते एडेइ” त्रिदण्डं च कुंडिकां च यावत् धातुरक्ताश्चैकान्ते एडयति, त्रि-
 दण्डादिकं संन्यासि सम्बन्धिसर्वमुपकरणं धातुरक्ताः शाटिकाश्च एकान्ते एडयति
 =मुञ्चति, तापसस्य यानि चिन्हानि आसन् तानि सर्वाण्येव स्कन्दकः परित्यजति
 “एडित्ता” एडयित्वा परित्यज्य, सदोरकमुखवस्त्रिका-रजोहरण-चौलपट्टक
 “चदरादि” रूपं मुनिवेषं धृत्वा च “जेणेव समणे भगवं महावीरे” यत्रैव

वैसा ही है ‘इतिकहु’ इस प्रकार कहकर उन स्कन्दक ने ‘समणं
 भगवं महावीरं वंदइ नमसइ’ श्रमण भगवान् महावीर को वंदना की,
 उन्हें नमस्कार किया। ‘वन्दित्ता नमंसित्ता’ वंदना नमस्कार कर चुकने
 बाद फिर वह ‘उत्तरपुरत्थिमं दिसि भायं अवक्कमइ’ उत्तर और पूर्व
 दिशा के अंतरालवर्ती दिशा में-अर्थात् ईशानकोण में गये। ‘अव-
 क्कमित्ता’ वहां जाकर उन्होंने ‘तिदंडं च, कुंडियं च, जाव धाउरत्ताओ
 एगंते एडेइ’ अपने त्रिदण्ड को, कमण्डलु को, यावत् गैरिक आदि धातु
 से रंगे वस्त्रों को एकान्त में रख दिया। तात्पर्य कहने का यह है कि स्क-
 न्दक ने अपने तापस संबंधी जितने भी चिह्न थे और उपकरण थे उन सबका
 परित्याग कर दिया। ‘एडित्ता’ उन्हें एकान्तस्थान में रखकर “सदो-
 रकमुखवस्त्रिका रजोहरण, चौलपट्टक, चदर आदिरूप मुनिवेष को धारण
 कर ‘जेणेव समणे भगवं महावीरे’ जहां श्रमण भगवान् महावीर

स्कन्दके “समणं भगव महावीर वंदइ नमसइ” श्रमण भगवान् महावीरने
 वंदन नमस्कार किये। “वन्दित्ता नमंसित्ता” वंदन नमस्कार करीने तेआ
 “उत्तरपुरत्थिमं दिसिभाय अवक्कमइ” उत्तर अने पूर्व दिशानी वरयेना
 प्रणामा (ईशान प्रणामा) गया (अवक्कमित्ता) त्यां जईने तेमणे
 “तिदंड च, कुंडियं च, जाव धाउरत्ताओ एगंते एडेइ” तेमना त्रिदंड, कमंडल
 गैरिक वगेरे धातुथी रंगेला वस्त्रो (लगवां कपडां) वगेरे वस्तुओ एकान्तमां
 भूझी दीधी कडेवानो लोकार्थ ओ छे के स्कन्दके परित्राजक तरीकेना ने ने
 यिहो छतां तेना परित्याग किये “एडित्ता” ते जधी वस्तुओने एकान्त
 स्थानमां भूझीने द्वारा सहित भुजवस्त्रिका (मुडपत्ती,) रजोहरण, चौलपट्टक,
 पछेली, वगेरे मुनिवेष धारण करीने “जेणेव समणे भगवं महावीरे” जथां

તથા હે મગધન ! યદિ અહં વિચાર્ય્યં પશ્યામિ તદાડ્યં ઝીવન્નોકો જરામરણાભ્યાં
 દશ્યતે તસ્ય સાંત્વને મયતસશ્ચવીર એવં વીર इति कृत्वा मयता क्षरणागतोऽहमतो मां
 सदुपदेशद्वारा संसारकांताराद्ब्रह्मति માવાર્થ ! एतदेव दृष्टान्तेन स्पष्टयति—‘से
 जहाणामए केई गाहावई’ तथया नाम कश्चित् गाथापति कश्चिद् गृहस्वामी
 ‘अगारंसि’ अगारे गृहे ‘जिज्ञयायमाणसि’ ज्ञायमाने दक्षमाने प्रवृत्तसि
 सति ‘जे से तत्त्व भंडे भवई’ यत् तत् तत्र मांडम् उपकरणं भवति स्थित भव-
 तीत्यर्थः । कीदृशमित्याह ‘अप्यमारे’ अप्यमारम् अप्यो भारो यस्य तत् अप्यमा

करने के लिये जैसे किसी हाथ में पानी लिये हुए रक्षक वीर की
 आवश्यकता होती है उसी तरह हे मगधन यह तो निश्चित रूप से दिख
 लाई ही पड़ रहा है कि यह समस्त जीवलोक रातदिन इस जरा मरण
 रूप अग्नि से ‘भस्मसात्’ सा हो रहा है, अतः इसकी रक्षा करने के
 लिये मैं देख रहा हूँ कि हे नाथ ! आपके सिवाय और कोई वीर नहीं
 है आप ही एक ऐसे वीर हैं—जो इस जरा मरण से बचा सकते हैं—इस
 लिय मैं इस अग्नि से बचने के लिये आपके चरणों की धारण में आया
 हुआ हूँ—आप मेरी सदुपदेश प्रदान द्वारा इस संसार कान्तार से रक्षा
 करें । इसी घात को स्कन्दक दृष्टान्त द्वारा पुष्ट करता है—(से जहाणामए
 केई गाहावई) जैसे कोई गाथापति—धनिक गृहस्थ हो, (अगारंसि
 जिज्ञयायमाणसि) और उसके घर में आग लग जावे तो वह उस
 स्थिति में (जे से तत्त्व भंडे भवई) जो उस भवन में उपकरण होता
 है— कैसा उपकरण—कि (अप्यमारे मोरलगुणए) जिसका भार तो हो

માટે હાથમાં પાણી લઇને અગ્નિને યુગ્મવનાર કોઈ વીર પુરુષની બદર પડે ।
 તેથી જ રીતે જરામરણ રૂપ અગ્નિથી અવિનતપણે સળગી રહેલા છવની
 રક્ષા માટે આપના સિવાય કોઈ પણ જોવા વીર નથી કે જે સમર્થ હોય
 આપજી જોવા વીર છે કે જે જરામરણ રૂપ અગ્નિથી અમારૂં રક્ષણ કર-
 વાને સમર્થ છે. તેથી કે નાથ ! જરા અને મરણરૂપ અગ્નિથી બચવાને
 માટે હું આપને શરણે આવ્યો છું આપ આપના સદુપદેશ રૂપ વચનનામુવત્તં
 પાન કરાવીને આ સંસાર રૂપી વનમાંથી અને પાર ઉતારી જોજ વાતની પુષ્ટિ
 માટે સ્કન્દક જોકે દૃષ્ટાંત આપે છે—(સે જહાણામએ કેઈ ગાહાવઈ) જેમ કે
 કોઈ જોકે આયાપતિ ધનિક (ગૃહસ્થ) છે (અગારંસિ જિજ્ઞાસમાણસિ) તેના
 ઘરમાં આગ લાગે છે તો (જે સે તત્ત્વ મંડે મવઈ અપ્યમારે મોરલગુણ)
 તેના ઘરમાં જે ઉપકરણો વસ્તુઓમાં હલકાં પણ મૂક્યવાન હોય છે તે ઉપર

પ્રદીપપ્રદીપઃ સ્વલ્પ મદંત ! લોકઃ, હે મદંત ! સર્વપ્રકારેણાયં લોકઃ ડગલતિ ચેતિ-
ભાવઃ । કેન કારણેનેત્યાદ-‘ જરાઈ ’ ઇત્યાદિ ‘ જરાઈ મરણેણ ય ’ જરયા
મરણેન ચ જરા વાર્દ્ધવ્યમ્ મરણં પ્રાણપરિત્યાગ રૂપમ્ એતદ્રૂપેણ વન્દિના જરામરણયો
રતિશયકષ્ટકારકત્વાદ્ વહ્નિસાદૃશ્યં કથિતમ્, યથા વહ્નિના ગૃહાદિર્દહ્યતે તથા
જરામરણાભ્યાં જીવલોકોઽહર્નિશમતિશયેન જ્વલતીવેતિભાવઃ તથા યથા વહ્નિ-
પ્રદીપગૃહસ્ય ત્રાણાય વીરસ્ય કસ્યચિદ્ રક્ષકસ્ય જલાદિહસ્તસ્યાવશ્યકતા મવતિ

હસ જીવલોક મેં એસા કોઈ સા મી સ્થાન નહોં વચ્ચા હૈ કિ જહાં યહ
આદીસ ન હો રહા હો । હસે જલાને વાલે યે હૈ—

(જરાઈ મરણેણ ય) જરા ઓર મરણ । વુઢાપે કા નામ જરા ઓર
પર્યાય સે પર્યાયાન્તરિતિ હોના હસકા નામ મરણ-અર્થાત્-શુદ્ધમાન
આયુ કે સમાપ્ત હોને પર પ્રાણત્યાગરૂપ અવસ્થા હોતી હૈ વહ મરણ હૈ ।
જરા ઓર મરણ યે દોનોં એક પ્રકાર કી અગ્નિ હૈં । અગ્નિ સે જલે હુઈ
વ્યક્તિ કો મારણાન્તિક કષ્ટ હોના હૈ-ઁસી પ્રકાર સે જરા ઓર મરણ
સે ઘિરે હુઈ પ્રાણી કો મહાદુઃખ હોતા હૈ । હસી અતિશય કષ્ટ કારકતા
રૂપ સાદૃશ્ય કો લેકર જરા મરણ કો અગ્નિ કી ઉપમા સે ઉપમિત
કિયા ગયા હૈ । જિસ પ્રકાર અગ્નિ કે સંબંધ સે ગૃહાદિક જલ જાતે
હૈં, ઁસી પ્રકાર જરા ઓર મરણ હન દોનોં સે યહ જીવલોક રાત દિન
અતિશયરૂપ સે જલતા સા રહતા હૈ । વહ્નિ સે જલતે હુઈ ઘર કી રક્ષા

હે ભગવન્ ! આ જીવલોકમા એવુ કોઈ પણ સ્થાન નથી કે જે આદીપ
થઈ રહુ ન હોય. તેને સળગાવનાર આ વસ્તુઓ છે- “ જરાઈ મરણેણ ય ”
તેવુ કારણ જરા અને મરણ છે વૃદ્ધાવસ્થાને જરા રહે છે. અને એક પર્યા
યમાંથી બીજી પર્યાયમાં ઉત્પન્ન થવુ તેવુ નામ મરણ છે એટલે કે જે ગતિમાં
જન્મ થયો હોય તે ગતિનુ આયુષ્ય પૂરું થતા પ્રાણત્યાગ રૂપ જે અવસ્થા આવે
છે તેને મરણ કહે છે. જરા અને મરણ એ બંને પ્રદીપ અગ્નિસમાન છે જેવી
રીતે અગ્નિથી બળી ગયેલી વ્યક્તિને અત્યંત કષ્ટ થાય છે એવીજ રીતે જરા
અને મરણ પણ જીવોને મહાદુઃખ રૂપ થઈ પડે છે. આ રીતે અગ્નિ જેવી
રીતે અતિશય કષ્ટ કારક છે તેવી જ રીતે જરા, મરણ પણ અતિશય કષ્ટ
કારક છે બંનેમા કષ્ટકારકતાની સમાનતા હોવાથી જરામરણને પ્રદીપ
અગ્નિની ઉપમા આપવામા આવી છે જેવી રીતે અગ્નિથી ઘર વગેરે બળી
જાય છે, એજ રીતે જરા અને મરણથી આ જીવલોક રાત દિવસ અતિશય
રૂપે બળતો રહે છે જેવી રીતે અગ્નિથી સળગતા ઘરનું રક્ષણ કરવાને

मज्जिमसुल्लसङ्गसहितसत् 'पच्छापुरायण' पथात् पुरा च तत्र पथात्-आगामिनि
 काष्ठे पुरा च=दूर्ध्वमिदानीमेव "हियाण" हिताय=उपकाराय "सुहाण" सुताय
 सुखोत्पादनाय 'खेमाण' खेमाय कल्याणाय 'निस्सेयसाण' निःश्रेयसाय=
 अभ्युदयाय 'आणुगामियत्ताण' आनुगामिकतायै भाविशपरम्परोपयोगाय
 'मविस्सइ' मविष्पति एव विचार्य गृह्यति मज्जिमसुल्लसङ्गसहितसत् स्वल्पमारं बहुमूल्यं
 मणिगणादिवस्तुभासमादाय सुरक्षितस्थाने गत्वा निपसतीति भावः । इष्टान्तं
 प्रदर्श्य दार्ष्टान्तिकमाह 'एवामेव' इत्यादि 'एवामेव देवानुप्पिया' एव
 मेव देवानुप्पियः हे देवानुप्पिय ! मगधन् । यथा तस्य गृहपतेस्तादृशमल्पमारं
 बहुमूल्यकं वस्तु रक्षितं सत् हिताद्यर्थे मविष्पतीति विचारो भवति, विचार्य तत्र

हुए घर से निकाली गई यह अल्पमारवाली कीमती वस्तु (पच्छापुराय)
 आगामी काल में और इस समय में "हियाण" यह उपकारक हो रही
 है, इसी तरह से (सुहाण) सुख के लिये, (खेमाण) कल्याण के लिये
 (निस्सेयसाण) भाग्योदय के लिये (आणुगामियत्ताण) भावी वंश
 परम्परा के उपभोग के लिये (मविस्सइ) होगी इस प्रकार विचार कर
 वह गृहस्थ जलते हुए अपने घर से स्वल्पमारवाली कीमती वस्तु-रत्न
 मणिक्पादि को-छेकर के सुरक्षित स्थान में जाकर रहने लगता है।
 इस प्रकार इष्टान्त प्रदर्शित कर इस का समन्वय अब वह दार्ष्टान्त
 के साथ करते हुए कहते हैं कि-(एवामेव) इसी तरह से (देवानु
 प्पिया) हे देवानुप्पिय ! मगधन्-जिस प्रकार से उस गृह्यति का यह
 अल्पमारवाली कीमती वस्तु रक्षित होती हुई हितादिक के साधन के
 लिये है (ऐसा विचार होता है और ऐसा विचार कर ही वह उसके

जोछा वचननी पक्षु बाहे भूस्थनी वस्तुजो (पच्छा पुराय) केवे पछीन
 भमभमा भने (हियाण) हितकारक, (सुहाण) सुभकारक, (खेमाण) कल्याण
 कारक, (निस्सेयसाण) जाने भाग्योदय कारक भनये, (आणुगामियत्ताण) जाने
 भारी भावी पीढीने भाटे पक्षु उपयोगी (मविस्सइ) यर्ध पउसे आ रीते
 विचार करीने, ते गृहस्थ पीतान्ना सजगता भकानभायी बण्ण जोछा वचननी
 पक्षु कीमती वस्तुजो (रत्न, मणि वज्रे) छहते सुरक्षित स्थानभां भनने
 रहे ॥ आ प्रभाजे इष्टान्त आपीने केवे स्कन्धक पीतानी सश्रामवणी पक्षु ते
 गृहस्थनी साथे करवां ठडे ॥ हे (एवामेव) जेव प्रभाजे (देवानुप्पिया)
 हे देवानुप्पिय भारी पासे पक्षु आत्मा इपी रत्न गोणुठ छे जेवी रीते चेदा
 भूदस्थे जेवो विचार कर्यो हे जोछा बाहे वाणी पक्षु कीमती वस्तुने जो
 सजगता घरभांभी जकाए करी देवामा आवये तो ते पीताने भाटे उपयोगी,

સ્મ-યસ્મિન્ વસ્તુનિ ભારાતિશયો ન ભવેદપિતૃ ઉત્થાપને યત્ સરલં લઘુ ભવતિ તત્ તથા 'મોલ્લગુરુ' મૂલ્યગુરુકમ્ યસ્ય વસ્તુનો મૂલ્યમધિકં ભવતિ તત્ મણિરત્નાદિકમ્ 'ત ગદાય' તદ્ ગૃહીત્વા, 'આયા' એગંતમંતં અવક્રમઙ્ 'આત્મના' એકાન્તમન્તમવક્રામતિ, તદ્ તાદૃશમલ્પભારં વહુમૂલ્યકં ચ વસ્તુ ગૃહીત્વા આત્મના સ્વયમેવ એકાન્તં જનરહિતમ્ અન્તં=ધૂભાગમ્ અવક્રામતિ=ગચ્છતિ ગૃહે દહ્યમાને સતિ ગૃહપતિર્ગૃહે યદધિકમૂલ્યકમલ્પભારં ચ વસ્તુ ભવતિ તત્સ્વયમેવ ગૃહીત્વા સુરક્ષિતસ્થાનં ગચ્છતીત્યર્થ' કિંચિચાર્ય એકાન્તસ્થાનં ગચ્છતીત્યાહ 'એમ મે' ઇત્યાદિ 'એસ મે નિત્યારિ' એ સમાણે, એતન્મે નિસ્તારિતં સત્-એતત્ અલ્પભારકમતિમૂલ્યકમિદમેવ વસ્તુ

હલ્કા ઓર કીમત હો વહુત વઢી દેરે મણિરત્નાદિરૂપ ઉપકરણ કો લેકર (આયા એગંતમંતં અવક્રમઙ્) અપને આપ કિસી એકાન્ત નિરૂપદ્રવ સ્થાન મેં જાતા હૈ મકાન મેં આગ લગને પર વજનદાર મી કીમતી વસ્તુ કા ઉઠાના (ઉઠાને મેં કઠિનતા પડ્ ને કે કારણ) નહીં હો સકતા હૈ । ઇસલિયે બુદ્ધિમાન્ ગૃહસ્થ યહી કરતા હૈ કિ જો અલ્પભાર વાલી સારભૂત કીમતી વસ્તુ હોતી હૈ ઉસકો જિતની જલ્દી વનતા હૈ ઉઠા લેતા હૈ ક્યોં કિ ઇમી મેં કુશલતા ઓર આનંદ હૈ દેર કરને પર તો ફિર ઉઠાના હી વઢા કઠિન હોતા હૈ ઓર ઉઠાને વાલે કા મી વહ નાશ કારક હો જાતા હૈ । વહ ગૃહસ્થ અલ્પ વજનવાલી સારભૂત વસ્તુ રત્નાદિ કો ઉઠાકર જો એકાન્ત નિરૂપદ્રવ સ્થાન મેં જાતા હૈ ઉસકા કારણ યહ હૈં કિ વહ વિચારતા હૈ કિ-“એસ મે નિત્યારિ એ સમાણે” જલતે

થોને (મણિ રત્નાદિ રૂપ વજનમાં હલકાં પણ ભારે મૂલ્યવાળાં) લઈ ને (આયા એગંતમંતં અવક્રમઙ્) તે કોઈ સુરક્ષિત સ્થાને ચાલ્યો જાય છે મકાનને આગ લાગે ત્યારે વજનદાર, કીમતી વસ્તુઓને બહાર કાઢવામાં ઘણી મુશ્કેલી પડે છે તેથી હાલો માણસ વજનદાર કીમતી વસ્તુઓને બહાર કાઢવાને બદલે વજનમા હલકી પણ ઘણી મૂલ્યવાન હોય એવી વસ્તુઓને જ બની શકે તેટલી ઝડપથી ઉપાડી ને બળતા ઘરમાથી બહાર નીકળી જાય છે. કારણ કે તેમા જ તેનુ શ્રેય રહેલુ છે જો આમ કરવામાં તે મોડુ કરે તો તે મૂલ્યવાન વસ્તુઓને બચાવવાનું પણ મુશ્કેલ થઈ પડે છે, અને ક્યારેક તો તે વસ્તુ બહાર કાઢ્યા જનારને પોતાના પ્રાણ પણ ગુમાવવા પડે છે તેથી બુદ્ધિમાન માણસ, હલકા વજનની, સારભૂત, અને મૂલ્યવાન રત્નાદિક વસ્તુઓ ને જ તદ્દન સુરક્ષિત સ્થાને લઈ જાય છે. કારણ કે તે એવો વિચાર કરે છે કે (એસ મે નિત્યારિ એ સમાણે) બળતા ઘરમાથી બહાર કાઢવામા આવતી આ

त्वात्, 'बहुमण बहुमत'—सर्वैरपि माननीयत्वात् 'भंडकरद्वयसमाणे' भाण्डकरद्वय
समान भाण्डकरद्वयम् आभरणमात्रेण तत्तमानस्तत्पुरुष आदेयत्वादिति ।
भाण्डसाहचर्यमात्मनि कथितम्, भाण्डानाञ्चानित्यस्य प्रत्यक्षमिति तदुक्त्य
त्वादात्माप्यनित्यो भविष्यति तस्य कस्य मास स्यादिति शंका निराकर्तुमात्मना
नित्यत्वप्रतिपादनायाह 'माण सिर्य' इत्यादि 'माण सिर्य' मान शीतम्=ममा
स्मान शीत मा स्पृश्यतु=मा पांड्यतु=एवमग्रेऽपि स्पृशु धातार्यथायोगं सम्प्र-
कर्णीय 'माण उण्ड' मातम्-उण्डम् 'माण सुहा' मात सुधा 'माण पिनासा'

होने से अनुमत है। (बहुमण) समस्त आत्मयात्री सिद्धान्तकारों द्वारा स्वी-
कृत किया गया होने से बहुमत है। (भंडकरद्वय समाणे) आभरणों से
भर हुआ करद्वय समान आदेय होने से यह भाण्ड करण्डक के जैसा है।

यहां कोई एसी आशंका कर सकता है कि आत्मा में जो भाण्ड
साहचर्यता कही गई है वह ठीक नहीं है, क्यों कि इस प्रकार के कथन
से तो अनित्यता सिद्ध होती है, कारण—आत्मा नित्य वस्तु माना
गया है और भाण्ड अनित्य भाण्ड की अनित्यता प्रत्यक्ष दृष्ट होने से
दृष्टान्त ठीक नहीं बैठता है। अतः यदि आत्मा में भाण्डसाहचर्य प्रकट
किया जाता है तो आत्मा भी अनित्य हो जायगा फिर मोक्ष किसको
प्राप्त होगा सो ऐसी आशंका की निग्रह के लिये आत्मा में नित्यत्व
का प्रतिपादन करने के निमित्त कहा जाता है कि—(माण सिर्य) मेरी
इस आत्मा को शीत पीटा न कर, (माण उण्ड) उण्ड पीटा न करे,
(माण सुहा) सुधा पीटा न करे, (माण पिनासा) प्यास पीटा न कर

यत् आनन्द रोषादी अनुमत छे) (बहुमत) तन्मात्र आत्मवादी सिद्धान्तवादी
बड़े बड़ीदृष्ट कथावेत्त रोषादी अनुमत छे (भंडकरद्वयसमाणे) आभरणों
(परेण) की लदेवा करिग ममान अधवा कीमती वस्तुधो लदेवी पेगी केरो छे
अरी हो जेही श्रद्धा करे के आत्माने का (वाग्य) धार्य शर
अवेरो ते मेरा नथो उपेका कथनमा दोष ल्प्याय छे शरत्त के आत्माने
नित्य मानव भा आवेत्त छे ज्यारे काड (वाग्य) नी अनित्यता तो प्रत्यक्ष
अनुभवो शरत्त छे मागे का उपेका नानावर ल्प्यानी नथो आरने जे
आत्माने का पाननी मये मर्यादवाभा आवे तो आत्माने पत्त अनित्य
भनरो पये तो पत्तो प्रे ल्पि प्रमि होने धये ? आ अनुनी शरत्त
निपात १२वा भागे का भाग नित्यपत्तु प्रतिपत्त करे. भा १५ छे ?
(मन्त्र सिर्य) मर का आत्माने डी १५ न प ड्ये (मन्त्र सुहा) तने
मरभी १५ न प ल्या ? (मन्त्र सुहा) तने सुधा १५ न प ड्ये न पये,

ક્ષણાય પ્રયત્નતે તથા મમાપિ એકં રત્નં વિદ્યતે યત્ પ્રદીપ્તગૃહાદ્રક્ષણયોગ્યમિવ વિદ્યતે
 इति भावः मज्झवि आया एगे भंडे इट्ठे' ममापि आत्मा एकं भाण्डम्=भाण्डरूप एक
 आत्मा इष्टः वाञ्छितार्थपूरकत्वात्, 'कंते !' कान्तः कमनीयः हितप्रायकत्वात् 'पिए'
 प्रियः-सुखोत्पादकत्वात् 'मणुण्णे' मनोज्ञः शुभगतिदायकत्वात् "मणामे" मनोऽमः
 अक्षय सुखदायकत्वात् 'थेज्जे' स्थैर्यम् स्थिरस्वरूपः, अविनाशितत्वात् 'वेस्सासिए'
 वैश्वासिकः मोक्ष प्राप्तौ विश्वासपात्रत्वात् 'संमए' संमतः तत्कृतकार्याणां संमतत्वात्
 'अणुमए' अनुमतः=अनु पश्चात् मतः=अनुमतः विपरीतकरणादनन्तरमपि माननीय-

सरक्षण के लिये प्रयत्न करता है, उसी प्रकार मेरे पास भी एक रत्न
 मौजूद है जो प्रदिस-जलते हुए घर से रक्षा करने योग्य वस्तु की तरह
 रक्षा करने योग्य है-यही बात वह प्रदर्शित करते हुए कहते हैं-(मज्झ
 वि आया एगे भंडे) कि हे भदन्त ! मेरा आत्मा भी एक भाण्ड कीमती
 वस्तु है । (इट्ठे) वह सुझे वांछित-मनोत्थरूप-अर्थ का पूरक होने से
 इष्टरूप है । (कंते) हितकी प्राप्ति कराने वाला होने से-कान्त है ।
 (पिए) अव्याबाध सुख का उत्पादक होने से प्रिय है । (मणुण्णे) शुभ-
 गति का दाता होने से मनोज्ञ है । (मणामे) अक्षय सुखका दाता होने
 से मनोम है । (थेज्जे) अविनाशी होने से स्थिररूप है । (वेस्सासिए)
 मोक्ष की प्राप्ति में विश्वास पात्र होने से वैश्वासिक है । (संमए) तत्कृत
 कार्यों को संमत होने से संमत है । (अणुमए) विपरीत आचरण
 करने पर भी माननीय होने से-अनुकूल प्रवृत्ति नहीं करने पर भी मान्य

તથા કલ્યાણકારી થઈ પડશે, એવી જ રીતે મારી પાસે પણ એક રત્ન મોજૂદ છે
 કે જેની પણ બળતા ઘરમાંથી રક્ષા કરવા લાયક વસ્તુની જેમ-રક્ષા કરવાની
 જરૂર છે. એજ વાત આ રીતે પ્રગટ કરવામા આવી છે- (મજ્ઞ વિ આયા-
 એગે મહે) હે ભગવાન મારો આત્મા પણ એક અતિશય કીમતી વસ્તુ છે
 તે એક ભાંડ (પાત્ર) ના સમાન છે (ઇટ્ઠે) તે મારે માટે વાંછિત-અર્થનો
 પૂરક હોવાથી ઇષ્ટ રૂપ છે, (કંતે) તે હિતની પ્રાપ્તિ કરનાર હોવાથી કાન્ત
 છે, (પિએ) તે અવ્યાબાધ સુખ દેનાર હોવાથી મને પ્રિય છે, (મણુણ્ણે)
 તે શુભગતિ અપાવનાર હોવાથી મનોજ્ઞ છે, (મણામે) અક્ષય સુખનો દાતા
 હોવાથી મનોમ છે, (થેજ્જે) અવિનાશી હોવાથી સ્થિરરૂપ છે, (વેસ્સાસિએ)
 મોક્ષની પ્રાપ્તિ માટે વિશ્વાસ પાત્ર હોવાથી વૈશ્વાસિક છે (સમએ) તેની
 મારફત કરાયેલાં કાર્યો સાથે સમત હોવાથી સમત છે, (અણુમએ) (વિપરીત
 આચરણ કરવા છતાં પણ માનનીય હોવાથી-અનુકૂલ પ્રવૃત્તિ ન કરવા છતાં

ત્વાત્, 'બહુમય બહુમત - સર્વેરપિ માનનીયત્વાત્' મહાર્કસમાણે' માણ્ડકરુણક સમાનઃ માણ્ડકરુણકમ્ આમરણમાત્રન સત્સમાનસ્વપુત્રય આદેયગાદિતિ । માણ્ડસાદૃશ્યમાત્મનિ વ્યક્તિત્વમ્, માણ્ડનાશ્ચાનિત્યત્વમ્ પ્રત્યક્ષદૃષ્ટિમિતિ તદ્વસ્તુ ત્વાદાત્માપ્યનિત્યો મધિગ્યતિ તત્તથ કસ્ય મોક્ષ સ્યાદિતિ શંકાં નિરાકર્તુમાત્મનો નિત્યસપ્રતિપાદનાયાહ 'માર્ણં સિર્યં' इत्यादि 'માર્ણં સિર્યં' માન શ્રીષ્ટમ્=મમા ત્માનં શ્રીષ્ટં મા સ્પૃષ્ટપતુ=મા પાંદ્યતુ-સ્વપન્નેડપિ સ્પૃષ્ઠ પાતાર્યયાયોગં સમ્બન્ધઃ કર્મણીયઃ 'માણ ડહ્' માતમ્-ઉષ્ણમ્ 'માર્ણં સુહા' માત છુધા 'માણ પિવાસા'

હોને સે અનુમત છે । (બહુમય) સમસ્ત આત્મવાદી સિદ્ધાન્તકારોં દ્વારા સ્વીકૃત ક્રિયા ગયા હોને સે બહુમત છે । (મહાર્કસમાણે) આમરણોં સે ભરે છુપ કરંડક સમાન આદેય હોને સે યહ માણ્ડકરુણક કે જેસા છે ।

યહા કોઈ એમી આશંકા કર સકતા છે કે આત્મા મેં જો માણ્ડ સાદૃશ્યતા કહી ગઈ છે વહ ઠીક નહીં છે, ક્યોં કે હસ પ્રકાર કે કથન સે તો અનિર્ણયિત હોતી છે, કારણ-આત્મા નિત્ય વસ્તુ માના ગયા છે ઓર અણ્ડ અનિત્ય, માણ્ડ કી અનિત્યતા પ્રત્યક્ષ દૃષ્ટ હોને સે દૃષ્ટાન્ત ઠીક નહીં પેઠતા છે । અતઃ યદિ આત્મા મેં અણ્ડસાદૃશ્ય પ્રકટ ક્રિયા જાતા છે તો આત્મા ખી અનિત્ય હો જાવેગા ફિર મોક્ષ કિસકો પ્રાપ્ત હોગા મો જેમી આશંકા કી નિવૃત્તિ કે લિપે આત્મા મેં નિત્યત્વ કા પ્રતિપાદન કરને કે નિમિષા કહા જાતા છે કે-(માર્ણં સિર્યં) મેરી હસ આત્મા કો ઘીત પીઢા ન કરે, (માણ ડહ) ઉષ્ણ પીઢા ન કરે, (માર્ણં સુહા) છુધા પીઢા ન કરે, (માર્ણં પિવાસા) વ્યાસ પીઢા ન કરે

પણ માન્ય હોવાથી અનુમત છે) (બહુમય) તમામ આત્મવાદી સિદ્ધાન્તકારો વડે સ્વીકૃત કરાયેલ હોવાથી અનુમત છે (મહાર્કસમાણે) આમરણો (પરણ) કી ભરેલા કરડિયા સમાન અથવા કીમતી વસ્તુથી ભરેલી પેટી જેવો છે

અહીં કોઈ એવી શંકા કરે કે આત્માને શાંત (વાસણ) સાથે શરૂ આવેલો તે યોગ્ય નથી, ઉપરોક્ત કથનમાં દોષ જણાય છે કારણ કે આત્માને નિત્ય માનવામાં આવેલ છે, જ્યારે શાંત (વાસણ) ની અનિત્યતા તો પ્રત્યક્ષ અનુભવી શકાય છે માટે આ ઉપમા બરાબર જણાતી નથી. આ રીતે જો આત્માને ભાત-પાત્રની સાથે સરખાવવામાં આવે તો આત્માને પણ અનિત્ય માનવો પડે. તો પછી આશંકા પ્રાપ્તિ કેને થશે ? આ બાતની શક્યતાં નિરાશજ કરવા માટે આત્મામાં નિત્યપણાનું પ્રતિપાદન કરવા માટે કહ્યું છે કે (માર્ણં સિર્યં) માશ આ આત્માને ઠીક કપ્ડ ન પડેઆટે (માણ ડહ) તેને ઝરમી કપ્ડ ન પડેઆટે, (માર્ણં સુહા) તેને છુધા સંપન કરવી ન પડે

मातं पिपासा 'माणं चोरा' मातं चौराः 'माणं वाला' मातं व्यालाः, श्वापद-
भुजंगादयः 'माणं दंसा' मातं दंशाः दंशो नाम क्षुद्रजन्तुविशेषो बृहदाकारो
मशकवत् रक्तपानकर्त्ता । 'माणं मसया' मातं मशकः 'माणं' मातम् 'वाइय पित्तिय
सेमिय सन्निवाइय' अत्र प्रथमा बहुवचनलोपो बोध्यः तेन वातिकपैत्तिकश्लैष्मिकसां-
निपातिकाः इति, वातिकाश्च पैत्तिकाश्च श्लैष्मिकाश्च सांनिपातिकाश्चेति तथा,
अत्र वातिकाः=वातविकारजनिताः, पैत्तिकाः पित्तविकारजनिताः, श्लैष्मिकाः=
श्लेष्मा कफः, तज्जनिताः कफविकारजनिताः, सांनिपातिकाः=संनिपातः=
वातपित्तकफविकाररूपस्त्रिदोषः, तज्जनिता त्रिदोषजनिताः 'विविहा' विविधाः=
ननाप्रकाराः 'रोगायंका' रोगातङ्का तत्र रोगाः=चिरघातिनो ज्वरादयः, आत-
ङ्काः=सद्योघातिनो हृदयशूलदयः, तथा 'परिसहोवसग्गा' परिषहोपसर्गाः-
परिषहाः द्वाविंशतिभेदभिन्नाः उपसर्गा देवादिकृताः-अथवा परिषहा एव उपसर्गाः
विघ्नकारका इति परिषहोपसर्गाः 'फुसंतु' स्पृशन्तु अत्र 'मा' इतिपदमनु वर्त्तनीयं

(माणं चोरा) चोर पीडा न करें, (माणं वाला) श्वापद भुजग आदि
पीडा न करें, 'माणं दंसा' दंश (डांस) पीडा न करें, 'माणं मसया'
मशक-मच्छर पीडा न करें 'माणं वाइय पित्तिय सेमिय सन्निवाइय'
वात विकार जनित रोग, पित्त विकारजनित रोग और वातपित्तकफ
इन तीनों के एक साथ विकार से त्रिदोष से उत्पन्न रोग इत्यादि 'विवि-
हारोगायंका' अनेक प्रकार के चिरकाल में घातकरने वाले ज्वरादिक
रोग और शीघ्रता से घात करने वाले हृदयशूल आदि आतंक इसे
पीडा न करें 'परिसहोवसग्गा' बाईस प्रकार के परिषह और देवादिकृत
उपद्रवरूप उपसर्ग अथवा-विघ्नकारक होने से परिषहरूप उपसर्ग
'माणं फुसंतु' इसे पीडा न करें, ये शीतादिक मेरी आत्मा को पीडा न

(माणं पिपासा) तेने तृषा सहन करवी न पडे, (माणं चोरा) तेने चोरा
वडे पीडा सहन करवी न पडे, (माणं वाला) तेने श्वापद, सर्प वगेरे पीडा
न पडोआडे, (माणं दंसा) तेने डांस पीडा न पडोआडे, (माणं मसया)
मच्छरे तेने पीडा न पडोआडे, (माणं वाइय पित्तिय सेमिय सन्निवाइय)
तेने वात, पित्त के कक्षना विकारथी उत्पन्न थता रोगो तथा वात, पित्त अने
कक्ष अने त्रिषुने अने साथे विकार थवाथी थता सन्निपात वगेरे रोग सहन
करवा न पडे, (विविहा रोगायंका) लाखे समये प्राणु डरनारा अनेक प्रकारना
ताव वगेरे रोग तथा रुका समयमा न प्राणु डरनारा हृदयशूल वगेरे तेने
सहन करवा न पडे, (परिसहोवसग्गा) बावीस प्रकारना परिषद अने देवा
भनुष्य वगेरे कृत उपद्रव रूप उपसर्ग अथवा विघ्न कारक होवाथी परिषदरूप
उपसर्ग- (माणं फुसंतु) तेने पीडा न पडोआडे- कडी वगेरेना कठो भारा

તેન મા સ્પૃશન્તુ' इत्यन्वयः, एते शीताक्षय ममात्मानं मा पीडयन्तु, इतिमात्रः ।
 ' तिरिद्रु ' इति कृत्या-इति सम्पत् विचार्याऽयमात्मा मया सुन्दृतया रक्षित
 इतिमात्र । स किमर्थं रक्षित इत्यत आह ' एस मे ' इत्यादि ' एस मे निस्पारिए
 समाने ' एष मे निस्तारितः सन् एष मे मम आत्मा निस्तारित सन् जरामरणादि
 बहिना जलतः संसारसृष्टात् निष्कासित सन् ' परलोपस्व ' परलोकस्व ' हि
 याए ' हियाए ' सुहाए ' सुबाए ' खेमाए ' खेबाए ' निस्सेयसाए ' निःश्रेय
 साए ' आणुगामियसाए ' आनुगामिकतायै ' भविस्सइ ' भविष्यति ' तं इच्छामि
 णं देवानुप्पिया ' तदिच्छामि खलु देवानुप्पियः, तस्मात् कारणात् हे देवानु
 प्पिय ! भगवन् ! इच्छाम्यह ' समयेव पञ्चाविडं ' स्वयमेव प्रव्रजयितुम् स्वयमेव
 भगवतो इस्तेनैव प्रव्रजयितुं श्रवणां ग्राहयितुम्, सदोरकमुत्सवस्त्रिहारमोह

પહુંચાયે- ' તિરિદ્રુ ' એસા અચ્છી તરહ સે વિચાર કરકે મૈને યહ આત્મા
 અચ્છી તરહ સે રક્ષિત કિયા હૈ । યહ કિસ પ્રયોજન કે લિયે મૈને રક્ષિત
 કિયા હૈ ? હસે વહ સ્પષ્ટ કરતે હુવ કહતે હૈં કિ- ' एस मे निस्पारिए
 समाने ' જરા ઓર મરણ આદિ રૂપ અગ્નિ સે જલતે હુવ હસ સસારરૂપ
 ગ્રહ સે નિકાલા ગયા યહ આત્મા મુક્તે ' परलोपस्व ' પરલોક મેં
 ' हियाए ' હિતકે લિયે ' सुहाए ' સુસ્ત્ર કે લિયે, ' खेमाए ' કલ્યાણ કે
 લિયે ' निस्सेयसाए ' અમ્યુદય કે લિયે ઓર ' आणुगामियसाए ' અનુ
 ગમિકતા કે લિયે અર્થાત્ પરમશ મેં સુસ્ત્ર કે લિયે ' भविस्सइ ' હોગા
 ' तं इच्छामि णं देवानुप्पिया ' હસલિયે હે દેવાનુપ્પિય ! ભગવન્ ! મેં જાહ
 ના હું અર્થાત્ મેં પ્રાર્થના કરતા હું કિ- (समयेव पञ्चाविडं) મેં આપકે
 હાથ સે હી વીક્ષિત હોડે-આપ સ્વયં હી મુક્તે સદોરકમુત્સવસ્ત્રિકા,

આત્માને પીડા ન પહોંચાડે- (तिरिद्रु) એવ સમજાને મેં મારા આત્માનું
 બધી સારી રીતે રક્ષણ કરું છે આ માટે તેનું રક્ષણ કરું છે । તે તેનું
 સ્વપ્રીકરણ કરવાને માટે સ્વદેહ કહે છે કે (एस मे निस्पारिए समाने)
 જરા મરણ વગેરે રૂપ અસિધી સળગતા આ સસાર રૂપી ધરમાથી બંધાઈ
 કાઢવામા આવેલો આ આત્મા (परलोपस्व) પરલોકમાં (हियाए) મારા
 હિતને માટે, (सुहाए) સુખને માટે, (खेमाए) કલ્યાણને માટે (निस्सेयसाए)
 અમ્યુદયને માટે અને (आणुगामियसाए) આનુગમિતાને માટે-એટલે કે પર
 ભવમાં સુખને માટે (भविस्सइ) તપશ્ચોગ્રી વર્ધ પડશે (तं इच्छामि णं
 देवानुप्पिया) તેથી કે દેવાનુપ્પિય ! મારી એવી ઇચ્છા છે કે હું આપને
 વિનંતિ કરું છું કે (समयेव पञ्चाविडं) આપ પોતે જ અને વીક્ષા આપી
 આપ જાતે જ અને દોશ સંક્ષિત મુકપત્તિ પનોકરણ વગેરે રૂપ મુનિવેશ

रणादि मुनिवेषदाने 'सयमेव मुंडाविड' स्वयमेव मुण्डयितुम् केशलुंचनेन 'सयमेव सेहाविड' स्वयमेव सेधयितुम्, प्रत्युपेक्षणादि क्रियाकलापग्राहणेन 'सयमेव सिक्खाविड' स्वमेय शिक्षयितुम्, ग्रहणासेवना शिक्षाग्रहणेन 'सयमेव' स्वयमेव=स्वात्मनैव 'आयारगोयरं' आचारगोचरम्, तत्र आचारः=श्रुतज्ञानादि विषयकमनुष्ठानं कालाध्ययनादिः गोचरो भिक्षाटनम्-तथाचाचार-गोचरयोः समाहारद्वन्द्वः तथाचाचारगोचरं स्वयमेवाख्यापयितुमिच्छामीति क्रियया सम्बन्धः। तथा 'विणयवेणइयचरणकरणजायामायपत्तीयं' विनयवैनयिकचरणकरणयात्रामात्राप्रत्ययिकम् तत्र विनयो गुरुश्रृषारूपः, वैनयिकं विनयजनितं तत्फलं कर्मक्षयादिकम् कीदृशेन विनयेन शीघ्रं कर्मक्षयो भवतीत्यादिरूपम्, चरणं व्रतादि, करणं पिण्डविशुद्ध्यादि, यात्रा=संयमयात्रा मात्रा=संयमनिर्वाहार्थमेवाहारमात्रा, अत्र विनयादीनां द्वन्द्वः ततश्च विनयादीनां

रजोहरण आदिरूप मुनिवेष प्रदान करें 'सयमेव मुंडाविड' आप स्वयं ही मुझे मुण्डित करें-अर्थात्-आपसे ही मैं केशों का लुंचन कराऊं, 'सयमेव सेहाविड', आप से ही प्रतिलेखन आदि क्रियाकलाप को ग्रहण करूँ 'सयमेव सिक्खाविड' ग्रहणशिक्षा और आसेवनाशिक्षा आप स्वयं ही मुझे सिखावे। तथा 'सयमेव आयारगोयरं' श्रुतज्ञानादि संबंधी अनुष्ठान-कालाध्ययन आदि आचार को तथा भिक्षाटनरूप गोचर को इन्हें आप स्वयं मुझे समझावें ऐसा मैं चाहता हूँ। तथा—'विणयवेणइयचरणकरणजायामायवत्तियं धम्ममाइक्खिउं' विनय-गुरुश्रृषारूप विनय, वैनयिक-कर्मक्षयादि रूप विनयजन्य फल, व्रत वगैरह चरण, पिण्ड विशुद्धि आदि करण, संयम संबंधी यात्रा-सयमयात्रा, तथा संयम के निर्वाह निमित्त ही जो ग्रहण करना वह मात्रा-आहार मात्रा, इन सब विनयादि विषय का जिसमें समा-

धारणु करावे। (सयमेव मुंडाविड) आप पोते न मने सु डित करे। मारा केशने दोय करे। (सयमेव सेहाविड) आप प्रतिलेखेना वगेरे क्रिया ओ शीभवाडे। (सयमेव सिक्खाविड) आप पोते न मने अडणुशिक्षा तथा आसेवना शिक्षा प्रधान करे। तथा (सयमेव आयारगोयरं) श्रुतज्ञानादि संबंधी अनुष्ठान-कालाध्ययन वगेरे आचार, तथा भिक्षाटन रूप गोचरी वगेरे आपनी पासे न हुं शीभवा भाणु छु तथा विणयवेणइयचरणकरणजायामायवत्तिय धम्ममाइक्खिउं) विनय- गुरु श्रृषा रूप विनय, वैनयिक-कर्मक्षयादि रूप विनयजन्य फल, व्रत वगेरे चरण, पिण्डविशुद्धि वगेरे करण, संयमना निर्वाडने भाटे न अडणु करवाना आहारनी मात्रा वगेरे विषयने न्हेमां

वृत्तिर्वर्धनं यत्रासौ विनयवैनयिकचरणकरणयात्रामात्रावृत्तिः, तम् एतादृशम् धम्म ' धर्मम् ' आश्नित्वं ' आख्यापयितुम् भरत्सकाशादेव विज्ञातुमिच्छामीति भावः । स्कन्दकस्य प्रव्रज्याविषयकमुत्साहं तद्वहनसामर्थ्यं च केवललोकेन विज्ञोक्त्य भगवान् स्वयमेव स्कन्दकं प्रव्रजयतीत्याशयनाह—' तएण समणे ' इत्यादि । ' तएण ' तव खलु तवस्तदनन्तरम् स्कन्दकस्य प्रार्थनानन्तरम् ' समणे भगव महावीरे ' अमणो भगवान् महावीरः ' खइय कञ्चायणस्तगोचं ' स्कन्दकं कात्यायनगोत्रम् ' सयमेव पञ्चावेइ ' स्वयमेव प्रव्रजयति ' जाव-धम्म माइखइ, यावत् धर्ममाख्याति' इह यावत्पदेन ' मुंडाविठ ' इत्यारम्भ ' भाषा वृत्तिं ' इत्यन्तं सर्वमव पद बोध्यम् । धर्माख्यानप्रकारमेव दर्शयति ' एवं देवाणुप्पिया, गतब्बं ' एव देवानुमिय ! गन्तव्यम्, एव=मदुकप्रकारेण युग-

वेषा हो ऐसे धर्म का आप स्वयं मुझे उपदेश करें ऐसा मैं चाहता हूँ । " इस तरह प्रभु ने जब स्कन्दक का प्रव्रज्या ग्रहण करने काउत्साह और प्रव्रज्या ग्रहण करने का सामर्थ्य अपने केवलज्ञानरूप आलोक (प्रकाश) से देखलिया तब उन्होंने ने उनको स्वयं अपने हाथों से दीक्षा दी" । अब सूत्रकार इसी बात को स्पष्ट करने के लिये कहते हैं कि (तएण) स्कन्दक की प्रार्थना के बाद (समणे भगव महावीरे) अमण भगवान् महावीर ने ' खइय कञ्चायणस्तगोचं ' कात्यायनगोत्रीय स्कन्दक को (सयमेव पञ्चावेइ) स्वयं अपने हाथ से ही दीक्षा प्रदान की । (जाव धम्म माइखइ) यावत् उनको मुनिधर्मका उपदेश दिया । प्रभु ने मुनिधर्म उसे किस रूप से समजाया ? यही बात अब सूत्रकार प्रकट करते हैं— (एवं देवाणुप्पिया गतब्बं) हे देवानुप्रिय ! स्कन्दक । इस प्रकार से चलना चाहिये,

समावेश यतो होय जेवा धर्मानो आप पोते व भने उपदेश आपो जेवी भारी धम्म ॥ आ रीते ज्यारे भगवान् महावीरे स्कन्दकने प्रव्रज्या दीक्षा अहंशु करवानो उत्साह ज्यो जे तेनु पावन करवानुं तेमनुं सामर्थ्य पोताना जेवणज्ञानरूप प्रकाशची लक्ष्मी लीधु, त्यारे भगवाने पोतेव तेने दीक्षा आपी हवे जेव पातनु स्पष्टीकरणु करवाने भारे सूत्रकार कहें छे हे (तएण) स्कन्दकणी उपश्रुत विनंति साधणीने (समणे भगव महावीरे) अमण भगवान् महावीरे (खइय कञ्चायणस्तगोचं) कात्यायन गोत्रीय स्कन्दकने (सयमेव पञ्चावेइ) पोतना होय व दीक्षा आपी (जाव धम्म माइखइ) जे उपश्रुत जे प्रकारणी धम्म तेमजे प्रकट करी कती ते रीते मुनिधर्म तेमने समज्यो, हवे सूत्रकार जे भतावे छे हे भगवान् महावीरे स्कन्दकने मुनिधर्म देवी रीते समजानो (एवं देवाणुप्पिया गतब्बं) हे देवानुप्रिय, स्कन्दक आ प्रभावे जातनुं

માત્ર ભૂન્યસ્તદ્દિષ્ટરૂપયા ઈર્યાસમિત્યા, હે દેવાનુપ્રિય ! ત્વયા ગન્તવ્યમ્=ગમનં
કર્તવ્યમ્ ' એવં ચિદ્વિયવ્વં ' એવં સ્થાતવ્યમ્ જનનાં ગમનાગમનવર્જિતે સ્થાને
સંયમાત્મપ્રવચન-વિરાધનાપરિહારપૂર્વકમૂર્ચસ્થાને સ્થાતવ્યમ્ ' એવં નિસીદ્ય-
વ્વ ' એવ નિપત્તવ્યમ્-ભૂમિભાગં પ્રમાર્જ્ય ઉપવેષ્ટવ્યમ્ ' એવં તુયદ્વિયવ્વં ' એવં

પ્રભુ ને સ્કન્દક અનગાર કો સમજાયા-કિ હે દેવાનુપ્રિય ! હસ મુનિ
ધર્મ કો નિર્દોષ રૂપ સે પાલન કરને કે લિયે તુમ્હેં ચાહિયે કિ તુમ યુગ
માત્ર ભૂમિ કો આગે દેખતે હુએ ચલો ! હસસે યહ લાભ હોતા હૈ કિ
અપની અસાવધાની સે જીવ કી વિરાધના નહીં હોવે ! હસ તરહ સે
ચલ ને કી પ્રવૃત્તિ કરને વાલા સાધુ ઈર્યાસમિતિ કા આરાધક કહલાતા
હૈ ! મુનિધર્મ કો નિર્દોષ રૂપ સે નિર્વાહ કરને કે લિયે હસ સમિતિ કા
પાલન આવશ્યક હૈ ! હસમેં પર કે પ્રાણોં કી રક્ષા કરને કે સાથ ૨
અપને અહિંસારૂપ મહાવ્રત કા રક્ષણ અચ્છી તરહ સે હોતા હૈ ! (એવં
ચિદ્વિયવ્વં) તથા હે દેવાનુપ્રિય ! જિસ જગહ અનેક લોગોં કા ગમનાગમન
હો એસી જગહ મેં, સંયમ મેં વાધા ન હો, અપની નિજ કી કોઈ વાધા
ન હોય, તથા પ્રવચન મેં કોઈ વાધા ન આવે, હસ તરહ સ્થિર રહના
પર ચાહિયે ! (એવં નિસીદ્યવ્વં) તથા મુનિ કા યહ મી કર્તવ્ય હૈ કિ જહાં
વહ બેઠના ચાહતે હૈ તો પહિલે વહ ડસ કો અપને પ્રમાર્જિકા સે પ્રમા-

નેધએ તાત્પર્ય એ છે કે મુનિએ, મુનિધર્મનું પાલન કરવાને માટે જે માર્ગે
ચાલવાનું હોય તે માર્ગે ધરાણર સામે નજર નાખીને ચાલવું નેધએ આ
પ્રમાણે સાવધાની રાખવાથી જીવની હિંસા થતી નથી આ પ્રમાણે ચાલનાર
સાધુ ઈર્યાસમિતિનું પાલન કરનાર ગણાય છે. મુનિધર્મનું નિર્દોષપણે પાલન
કરવા માટે ઈર્યાસમિતિનું પાલન કરવું આવશ્યક ગણાય છે એમ કરવાથી અન્ય
જીવોના પ્રાણોનું રક્ષણ થાય છે એટલું જ નહીં પણ અહિંસા રૂપ મહાવ્રતનું
પણ સારી રીતે પાલન થાય છે

(એવં ચિદ્વિયવ્વં) હે દેવાનુપ્રિય ! જે જગ્યાએ ઘણા માણસોની અવશ
જવર થતી હોય એવી જગ્યામાં, સંયમના પાલનમાં કોઈ મુશ્કેલી ન પડે,
તથા પોતાના તરફથી અન્ય જીવોને કોઈ જાતની મુશ્કેલી ન પડે, એ રીતે
હિંસા રહેવું નેધએ.

(એવં નિસીદ્યવ્વં) મુનિની એ ક્ષેત્ર છે કે જ્યાં તે બેસવા માગતા
હોય તે જગ્યાને પેટેલાં રોહડરણુથી સાફ કરવી નેધએ, ત્યારપછી ત્યાં બેસવું

स्वर्गचिंतव्यम्—प्रमार्जनपूर्वकमेव पार्श्वपरिवर्त्तनं कर्तव्यम् । 'एवं मुञ्जियन्' एवं
 मोक्तव्यम् अङ्गारधूमादिदोषवर्जितमाहारादि मोक्तव्यमिति भावः 'एव मा
 सियन्' एव मापितव्यम्—साध्यामापा परिवर्त्तनेन मापासमित्या वक्तव्यम् ।
 'एव उद्वाप उद्वाय' एवमुत्पयोत्पाय एवम्—प्रमादनिद्रानिराकरणेन उत्पया आत्म-
 शक्त्या उत्पाप 'पाणेहिं भूपहिं जीवेहिं सत्तेहिं' प्राणेषु भूतेषु जीवेषु सर्वेषु
 एकेन्द्रियादारभ्य पञ्चेन्द्रियपर्यन्तेषु तत्र प्राणाः=द्वि वि चतुरिन्द्रियास्तेषु तथा
 भूताः=वनस्पतयस्तेषु, जीवा एकेन्द्रियास्तेषु सर्वाः=पृथिव्यपूतेशो वायव
 स्तेषु 'सजमेणं' सयमेन=तद्रसणेन सजमियन्' सयन्तव्यम्=यत्तितव्यम् यथा

जित करछे पश्चात् वहां बैठे । (एव तुपट्टियन्) सोते समय वसे इस
 घात की सावधानी रखनी चाहिये कि यदि वह करवट बदलता है तो
 वसे पहिले उस स्थान को और अपने पार्श्वभाग को प्रमार्जिका आदि से
 प्रमार्जित कर लेना चाहिये, तब जाकर वह करवट बदले । (एवं मुञ्जिय
 न्) इस प्रकार से भोजन करना चाहिये अर्थात् आहार संबंधी दोषों
 को टालकर एवं अंगार धूम वगैरह दोषों को दूर कर मुनि को शुद्ध
 आहार करना चाहिये । (एव मासियन्) योलते समय भाषा समिति के
 अनुसार ही योलना चाहिये । माधु को सावधमापा का परिहार सदा
 करना चाहिये—हित, मित, वचन ही योलना चाहिये । (एवं उद्वाप उद्वाय)
 अपनी आत्माशक्ति से उठकर—अर्थात् प्रमाद निद्रा का त्याग पूर्वक साव
 धान होकर—विवेक युक्त होकर (पाणेहिं, भूपहिं, जीवेहिं, सत्तेहिं) भ्रमण
 निर्धन्य का कर्तव्य है कि वह प्राण, भूत, जीव और सर्वों की यतना
 से सदा रक्षा करता रहे । यही धाम (सजमेणं संजमियन्) सूत्रपाठ

नेधं जे, (एवं तुपट्टियन्) पशु जलती वजते पशु मुनिजे सावधानी
 राखवी नेधं जे—सूती वजते पशु जलपानी वृद्ध पडे त्तारे मुनिजे के
 जालु पशु जलपु होय ते आगने रनेकरपुखी आह करीने पशु देवपु
 नेधं जे, (एवं मुञ्जियन्) आ प्रमाजे योगन करु नेधं जे भूनिजे निद्रा
 आहार करु करु नेधं जे—आहार सजधी होयो राभीने आहार देवो
 नेधं जे (एवं मासियन्) जलती वजते भाषा समितितुं पाव करु
 नेधं जे. माधुके सावध (देव मुञ्ज) भाषानो सदा परित्याग करु नेधं जे
 हित, मित वचनो जे जलपानी नेधं जे

(एवं उद्वाप उद्वाय) पोतानी आत्म शक्तिथी छीने—जेठवे के प्रमाद
 तथा निद्रानो त्याग करीने, सावधती पूर्वक—विवेकयुक्त यत्ने (पाणेहिं
 भूपहिं जीवेहिं, सत्तेहिं) मुनिजे प्राण भूत, एवं जने सर्वेजनी यतना
 पूर्वक रक्षा करवी नेधं जे. जेठ वात (सजमेणं संजमियन्) आ सूत्र पाठ

પ્રાણાદિનાં વિરાધના ન ભવેત્તથા કર્તવ્યમિત્યર્થઃ । 'અસ્મિં ચ ણ અદ્વે ણો કિંચિ વિ પમાદ્યવ્વં' અસ્મિંશ્ચ સ્વલુ અર્થે પ્રાણાદિ રક્ષણરૂપે પ્રયોજને ન કિંચિદપિ પ્રમાદયિતવ્યમ્ હે સ્કન્દક ! યોડ્યઃ ચારિત્રપાલનરૂપો ધર્મઃ પ્રતિપાદિતસ્તસ્મિન્નર્થે ત્વયા કથમપિ પ્રમાદો ન વિધેય ઇતિ, 'તણ્ણં સે સ્વંદણ કચ્ચાયણસગોત્તે' તતઃ સ્વલુ સ સ્કન્દકઃ કાત્યાયનગોત્રઃ 'સમણસ્સ ભગવઓ, મહાવીરસ્સ' શ્રમ-દ્વારા સમજાઈ ગઈ છે । દ્વીન્દ્રિયજીવ, ઓર ચૌદ્વિન્દ્રિયજીવ યે પ્રાણ શબ્દ સે, વનસ્પતિકાયાિક જીવ ભૂતશબ્દ સે, પંચેન્દ્રિય જીવ જીવશબ્દ સે ઓર પૃથિવીકાયાિક, અપ્કાયાિક, તેજસ્કાયાિક ઓર વાયુકાયાિક યે એકેન્દ્રિય જીવ સત્ત્વશબ્દ સે ગ્રહણ ક્રિયે હૈં તાત્પર્ય કહને કા યહ હૈં કિ સંયમી સાધુ કોં અપની હરેક પ્રકાર કી પ્રવૃત્તિ એસી કરની ચાહિયે કિ જિસસે કિસી બી જીવકા વિરાધના ન હો ।

(અસ્મિં ચ ણ અદ્વે ણો કિંચિ વિ પમાદ્યવ્વં) હિસ પ્રાણાદિ રક્ષણ રૂપ પ્રયોજન-સંયમ મેં થોડા સા બી પ્રમાદ નહીં કરના ચાહિયે । પ્રભુ સ્કન્દક અનગાર કો સમજાતે હુએ ઉનસે કહ રહે હૈં કિ હે સ્કન્દક ! જો ચારિત્ર પાલનરૂપ અર્થધર્મ-તુમ્હે મૈંને પાલન નિમિત્ત પ્રતિપાદિત ક્રિયા હૈં ઉસ અર્થ મૈં-કર્તવ્ય મેં કથમપિ પ્રમાદ કા સેવન નહીં કરના ચાહિયે । (તણ્ણં સે સ્વંદણ કચ્ચાયણસગોત્તે) હિસ પ્રકાર જબ શ્રમણ ભગવાન મહાવીર પ્રભુને ઉનકો અનગાર ધર્મ કા સ્વરૂપ સમજાયા-તબ ઉન કાત્યાયન ગોત્રીય સ્કન્દક ને (સમણસ્સ ભગવઓ મહાવીરસ્સ હિમં

વડે સમજાવવામા આવી છે (પ્રાણુ) પદ્ધતી દ્વીન્દ્રિય, ત્રીન્દ્રિય અને ચતુ-રિન્દ્રિય જીવો ગ્રહણ કરવામા આવ્યા છે (ભૂત) પદ્ધતી વનસ્પતિકાયાના જીવો ગ્રહણ કરાયા છે (જીવ) પદ્ધતી પંચેન્દ્રિય જીવો અને (સત્ત્વ) પદ્ધતી પૃથિવીકાયા, અપ્કાયા, તેજસ્કાયા અને વાયુકાયાના જીવો ગ્રહણ કરવામા આવ્યા છે. ઠહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે સંયમી સાધુની પ્રત્યેક પ્રવૃત્તિ એવી હોવી જોઈએ કે જેનાથી જીવોની વિરાધના ન થાય.

(અસ્મિં ચ ણ અદ્વે ણો કિંચિ વિ પમાદ્યવ્વં) આ પ્રાણુ વગેરેના રક્ષણ રૂપ પ્રયોજનમા (સંયમમા) બિલકુલ પ્રમાદ કરવો જોઈએ નહીં ભગવાન મહાવીર સ્કન્દકે અણુગારને સમજાવે છે કે હે સ્કન્દક ! જે શ્રુતચારિત્ર રૂપ ધર્મનું પાલન કરવાનો મેં તમને ઉપદેશ આપ્યો છે, તેના પાલનમાં તમારે બિલકુલ પ્રમાદ સેવવો નહીં (તણ્ણં સે સ્વંદણ કચ્ચાયણસ્સ ગોત્તે) આ રીતે જ્યારે ભગવાન મહાવીરે કાત્યાયન ગોત્રી સ્કન્દકને અણુગાર-ધર્મનું સ્વરૂપ સમજાવ્યું ત્યારે તેમણે (સમણસ્સ ભગવઓ મહાવીરસ્સ હિમં પચારૂવ)

भस्य भगवतो महावीरस्य ' इम एयास्व ' इममेतद्रूपम् ' धम्मिय ' धार्मिकम्
 धर्मप्रधानं चारित्र्यपालनरूपम् ' उवएस ' उपदेशं ' सम्म सपडिबज्जइ ' सम्पद्
 संप्रतिपद्यते, सयम स्वीकरोतीत्यर्थः । अयासौ स्क-इकः तस्य किंकरोतीत्या-
 ' तमाणाए ' इत्यादि । ' तमाणाए ' तदाशयाः=भगवदाज्ञया ' तह गच्छइ ' तथा
 गच्छति तथा = ईयासमित्या गच्छति = गमनागमनं कराति, ' तह चिट्ठइ '
 तथा तिष्ठति, सयमारमप्रवचनविराधनापरिहारेण तिष्ठति ' तह निसीयई '
 तथा निपीदति भूमिप्रमाजनपूर्वकमुपविशति ' तह तुयइइ ' तथा त्वग्वर्चपति=

एयास्व) अमण भगवान् महावीर के इस प्रकार के (धम्मियं) धार्मिक
 -धर्मप्रधान-चरित्र पालनरूप (उवएसं) उपदेश को (सम्म पडिबज्जइ)
 अच्छी तरह से स्वीकार कर लिया अर्थात् सयम को धारण कर लिया ।

अथ सूत्रकार यह प्रकट करते हैं कि संयम को अंगीकार करने के
 बाद स्कन्दक ने क्या किया—(तमाणाए तह गच्छइ) अथ वे स्कन्दक
 अनगार प्रभु की आज्ञा के अनुसार (तह गच्छइ) ईयासमिति से
 गमनागमन करने लगे । (तह चिट्ठइ) सयम में अपने में तथा प्रवचन
 में जिस तरह विराधना न हो इस प्रकार से वे खड़े रहने लगे । (तह
 निसीयई) प्रभु ने बैठने के लिये जैसा उन्हें समझाया था उस भाँति
 अथ वे बैठने लगे—अर्थात् बैठने की भूमिका पहिले प्रमाजन कर लेते
 बाद में वहाँ बैठते (तह तुयइइ) त्वग्वर्चन-करबट के बदलने के
 समय में साधु को क्या करके करबट बदलना चाहिये इस विषय में
 जैसा प्रभु ने स्कन्दक को उपदेश दिया था वे उस मार्ग के अनुसार
 यतनापूर्वक अपना पार्श्वपरिवर्चन-करबट बदलना करने लगे अर्थात्

अमण भगवान् महावीरना ते प्रधारणा (धम्मिय) धार्मिक-चरित्र पालनरूप
 (उवएसं) उपदेशना (सम्म पडिबज्जइ) धर्मी सारी रीते स्वीकारी कीये
 ज्येठे के संयम धारण कर्यो अने निर्धम धम जु बसोइया रीते पालन करवा भाइयु

इवे सूत्रकार जे जतावे छे के संयम अंगीकार कर्वा पछी स्कन्दक प्रभुभार
 शु धर्यु ? (तमाणाए तह गच्छइ) इवे ते स्कन्दक प्रभुनी आज्ञानुसार
 ईयासमितितु पालन करीने अवसर नवर करवा लाग्या. (तह चिट्ठइ) संयमभा
 तथा प्रवचनमां विशाधनान साथ ते रीते उभा रहेवा लाग्या (तह निसीयई)
 भिसती बजते केवी रीते भिसवु, जे जागतमां प्रभुजे के आशा आपी
 हती ते प्रभाजे इवे प्रमाणना करीने (एवेकइयथी भिसवाणी न्या साइ
 करीने) यतना पूवक भिसवा लाग्या. (तहतुयइइ) प्रभुनी आज्ञानुसार यतनापूर्वक
 पडयु हेरववा लाग्य ज्येठे के पडयु हेरववा पडेबां ते न्यानु तथा ते

પ્રાણાદિનાં વિરાધના ન ભવેત્તથા કર્તવ્યમિત્યર્થઃ । 'અસ્મિંચ ણ અદ્દે ણો કિંચિ વિ પમાઇયવ્વં ' અસ્મિંચ ચ્વલુ અર્થે પ્રાણાદિ રક્ષણરૂપે પ્રયોજને ન કિંચિદપિ પ્રમાદયિતવ્યમ્ હે સ્કન્દક ! યોડર્થઃ ' ચારિત્રપાલનરૂપો ધર્મઃ પ્રતિપાદિતસ્તસ્મિન્નર્થે ત્વયા કથમપિ પ્રમાદો ન વિધેય ઇતિ, 'તણ ણં સે સંદણ કચ્ચાયણસગોત્તે' તતઃ ચ્વલુ સ સ્કન્દકઃ કાત્યાયનગોત્રઃ ' સમણસ્સ ભગવઓ, મહાવીરસ્સ ' શ્રમ-

દ્વારા સમજાઈ ગઈ છે । દ્વીન્દ્રિયજીવ, ઓર ચૌદ્વિન્દ્રિયજીવ યે પ્રાણ શબ્દ સે, વનસ્પતિકાયિક જીવ ભૂતશબ્દ સે, પંચેન્દ્રિય જીવ જીવશબ્દ સે ઓર પૃથિવીકાયિક, અપ્કાયિક, તેજસ્કાયિક ઓર વાયુકાયિક યે એકેન્દ્રિય જીવ સત્ત્વશબ્દ સે ગ્રહણ ક્રિયે હૈં તાત્પર્ય કહને કા ગહ છે કિ સંયમી સાધુ કોં અપની હરએક પ્રકાર કી પ્રવૃત્તિ એસી કરની ચાહિયે કિ જિસસે કિસી મી જીવકા વિરાધના ન હો ।

(અસ્મિં ચ ણં અદ્દે ણો કિંચિ વિ પમાઇયવ્વં) હિસ પ્રાણાદિ રક્ષણ રૂપ પ્રયોજન-સંયમ મેં થોડા સા મી પ્રમાદ નહીં કરના ચાહિયે । પ્રમુ સ્કન્દક અનગાર કો સમજાતે હુણે ઉનસે કહ રહે હૈં કિ હે સ્કન્દક ! જો ચારિત્ર પાલનરૂપ અર્થધર્મ-તુમ્હે મૈને પાલન નિમિત્ત પ્રતિપાદિત ક્રિયા છે ઉસ અર્થ મૈ-કર્તવ્ય મેં કથમપિ પ્રમાદ કા સેવન નહીં કરના ચાહિયે । (તણં સે સંદણ કચ્ચાયણસગોત્તે) હિસ પ્રકાર જબ શ્રમણ ભગવાન મહાવીર પ્રમુને ઉનકો અનગાર ધર્મ કા સ્વરૂપ સમજાયા-તથા ઉન કાત્યાયન ગોત્રીય સ્કન્દક ને (સમણસ્સ ભગવઓ મહાવીરસ્સ હમં

વડે સમજાવનામાં આવી છે (પ્રાણ) પદ્ધતી દ્વીન્દ્રિય, ત્રીન્દ્રિય અને ચતુરિન્દ્રિય જીવો અહંણ કરવામાં આવ્યા છે (ભૂત) પદ્ધતી વનસ્પતિકાયાના જીવો અહંણ કરાયા છે (જીવ) પદ્ધતી પંચેન્દ્રિય જીવો અને (સત્ત્વ) પદ્ધતી પૃથિવીકાય, અપ્કાય, તેજસ્કાય અને વાયુકાયના જીવો અહંણ કરવામાં આવ્યા છે કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે સંયમી સાધુની પ્રત્યેક પ્રવૃત્તિ એવી હોવી જોઈએ કે જેનાથી જીવોની વિરાધના ન થાય

(અસ્મિં ચ ણં અદ્દે ણો કિંચિ વિ પમાઇયવ્વં) આ પ્રાણ વગેરેના રક્ષણ રૂપ પ્રયોજનમાં (સંયમમાં) બિલકુલ પ્રમાદ કરવો જોઈએ નહીં ભગવાન મહાવીર સ્કન્દક અણુગારને સમજાવે છે કે હે સ્કન્દક ! જે શ્રુતચારિત્ર રૂપ ધર્મનું પાલન કરવાનો મેં તમને ઉપદેશ આપ્યો છે, તેના પાલનમાં તમારે બિલકુલ પ્રમાદ સેવવો નહીં (તણ સે સંદણ કચ્ચાયણસ્સ ગોત્તે ! આ રીતે જ્યારે ભગવાન મહાવીરે કાત્યાયન ગોત્રી સ્કન્દકને અણુગાર-ધર્મનું સ્વરૂપ સમજાવ્યું ત્યારે તેમણે (સમણસ્સ ભગવઓ મહાવીરસ્સ હમં ઇયારૂવ)

કીદશો જાત ઇત્યાહ= 'ઈરિયા સમિપ' 'ઈયાં સમિતઃ'=ઈરણમીર્યા, ઈર્યા-રાગદ્વેષ
રાહિત્યેન યતનયા ગમનમ્ = પ્રત્વરતરસહસ્રકરકરનિકરપ્રકાશિતાસુ દિશાસુ
પદાર્થસીક્ષણસમે ચક્ષુર્દ્રવ્ય મનુષ્યરયચક્તુરગચ્છુરહુષ્ણતુપારાદૌ પ્રાસુક્માર્ગે
તદેકવાનમનસો મુનેઃ ધર્મેર્વિન્યસ્તચરણસ્ય સક્ષુચિતનિઝપૂર્વાપરગાત્રસ્ય પુરતોમૂન્ય
સ્તયુગમાપ્રદૃષ્ટ્યા ચેદનમ્, તથા સમિતઃ=સમ્યક્મકારેણ યુક્તઃ, ઈર્યાસમિતિમાનિ

તરહ જે કાત્યાવનગોત્રીય સ્કન્દક અનગાર હો ગયે । અર્થાત્ મગધાન
કા ઉપદેશ સુનકર જે મગધસપ્તિપાવિત ધર્મકા આચરણ કરતે હુપ
દ્રવ્ય ઔર માથ સે અનગાર હો ગયે । જે કેસે અનગાર હુપ ? હસકે
મિયે કહતે હૈં કિ (ઈરિયાસમિપ) રાગ ઔર દ્વેષ સે રહિત હોકર
પતના પૂર્વક ગમન કરના હસકા નામ ઈયાં હૈં । અર્થાત્-જબ સૂર્યકી
પ્રત્વર કિરણોં સે માર્ગ અઝીતરહ સે પ્રકાશિત હો ચુકા હો સબ દિશા
ઓં મેં પ્રકાશ ફેલ ગયા હો-આંઘોં સે કિસી ખી પ્રકાર કી દેલનેમેં
પાધા ન હો, દોનોં આંઘોં સે પદાર્થકા નિરીક્ષણ અઝી તરહ સે હો
સકે પેસે આંધુકી હોતયા તુપાર આદિ સે યુક્ત માર્ગ મનુષ્યોં કે સંચાર
સે, રયશ્વક કે સંચાર સે, તુરગ આદિ કે સુરોં સે છુળ્ણ-શક્ત પરિણત
અર્થાત્ અચિત્ત હો ચુકા હો પેસે પ્રાસુક માર્ગ પર ચલને મેં ઉપયોગ
સહિત હોતે હુપ મુનિકા જો ધીર ૨ આગે ૨ કી સુસરા પ્રમાણ મૂમિ દેલ
કર શરીરકો ડહર ડહર દિશાયે કુલાયે બિના ગમન હૈં હસકા નામ

બન્ધા એટલે કે બાંધવાનો ઉપદેશ સાંભળીને તેમણે પ્રપેદ ધર્મનું આચરણ
કરતા કરતા દ્રવ્યે અને ભાવે અણગમ થઈ ગયા, તેણે કેવા અણગમ થઈ
ગયા ? તે બતાવવાને માટે સૂત્રકાર કહે છે કે-(ઈરિયાસમિપ) તેણે
ધર્માસમિતિ યુક્ત બન્ધા રાગ દ્વેષથી રહિત બન્યાને મતના પૂર્વક ગમન કરતું,
તેનું નામ (ઈયાં) છે એટલે કે બન્ધાને સૂર્યના તેજસ્વી કિરણોથી માત્ર
સારી રીતે પ્રકાશિત થઈ ગયો હોય, આરે દિશાઓમાં પ્રકાશ ફેલાયો હોય
કોઈ પણ વસ્તુને આખો વડે બેવામાં કોઈ પણ પ્રકારની મુશ્કેલી નથી ન
હોય, બને આખોથી વસ્તુનું બરાબર નિરીક્ષણ કરી શકાતું હોય, તથા
બાકી વગેરેથી રહિત એવો માર્ગ છે જે મનુષ્યોના અવર જવરથી, રથ
ચક્રના સંચારથી, અને અન્ય વગેરે પ્રાણીઓના પગની ખરીબી સાથે
(અચિત્ત) થઈ યુક્તો હોય એવા પ્રાસુક (હોય રહિત) માર્ગ પર માત્રની
પૂંસરી પ્રમાણ ભૂમિને બોધને, ખીને ખીસે શરીરને આમ તેમ ટેકાબા બિના
મુનિનું જે ગમન થાય છે તેને ઈયાં કહે છે તે ઈયાંથી જે સમિત(યુક્ત)

પ્રમાર્જનપૂર્વકં પાર્શ્વપરિવર્તનં કરોતિ 'તહ ઝુંજઈ' તથા ઝુઙ્ઙત્તે=અઙ્ગારધૂમાદિદોષ વર્જનેનાહારાદિ કરોતિ । 'તહ માસઈ' તથા માપતે સાવધપરિવર્જનેન ભાષા સમિત્યા વદતિ, 'તહ ઉઢાઈ ઉઢાય' તથોત્થાયોત્થાય=તથા=નિદ્રાપ્રમાદવર્જનેન ઉત્થયા ઉત્થાય આત્મગત્તયા પૂર્ણરૂપેણ સાવધાનીભૂયેત્યર્થઃ 'પાણેહિં ભૂઈહિં જીવેહિં સત્તેહિં' પ્રાણેષુ ભૂતેષુ જીવેષુ સત્ત્વેષુ=પ્રાણાદિષુ 'સંજમેણ' સંયમેન = રક્ષણ-રૂપેણ 'સંજમેઈ' સંયમયતિ=યતતે જીવરક્ષાયાં યતનાવાન્ ભવતિ-इत्यर्थः 'अस्मि च णं अट्टे णो पमायइ' अस्मिंश्च खलु अर्थे संयमपालनरूपे नो प्रमाद्यति =प्रमादं न करोतीति । 'तएणं से खंदए कच्चायणस्स गोत्ते' ततः खलु स स्कन्दकः कात्यायनगोत्रः 'अणगारे जाए' अनगारो जातः भगवत उपदेशं श्रुत्वा भगवत्प्रतिपादितं श्रुतचारित्रादि धर्ममाचरन् द्रव्यतो भावतश्चानगारोऽभवदिति भावः।

કરબટ વદલ ને પહિલે વે ઉસ કરબટ ઔર સ્થાન કા પ્રમાર્જન કર લેતે-તવ કહીં વે કરબટ વદલતે-(તહ ઝુંજઈ) અઙ્ગારદોષ ઔર ધૂમાદિદોષ સે વર્જિત વે આહાર આદિ કર ને લગે । 'તહ માસઈ' સાવધ-વચન કા પરિહાર કરકે અવ વે ભાષા સમિતિ કે અનુસાર બોલ ને લગે 'તહ ઉઢાઈ ઉઢાય' તથા અપની આત્મશક્તિ સે ઉઠ કર પ્રમાદ નિદ્રાકા ત્યાગ કરકે સોચ સમજી કર અર્થાન્ પૂર્ણરૂપ સે સાવધાન હોકર-'પાણેહિં, ભૂઈહિં, જીવેહિં, સત્તેહિં, પ્રાણોં મેં, ભૂતોં મેં, જીવોં મેં ઔર સત્ત્વોં મેં 'સંજમેણં' ઉનકે રક્ષણ રૂપ સંયમ સે પ્રવૃત્તિ કરને લગે અર્થાત્-જીવોં કી રક્ષા કરને મેં વે યતનાવાન્ બન ગયે । 'અસ્મિ ચ ણં અટ્ટેણો પમાયઈ' હસ અર્થમેં-સંયમ પાલન રૂપ જિન કર્તવ્ય મેં-વે થોડા સા મી પ્રમાદ નહીં કરતે । 'તણં સે કંદણ-કચ્ચાયણસ ગોત્તે' હસ

પડખાતુ પ્રમાર્જન (પૂછ લેવાની ક્રિયા) કરતા હતા (તહ ઝુજઈ) ભગવાનની આજ્ઞાનુસાર નિર્દોષ-પ્રાસુક-અહાર ગ્રહણ કરવા લાગ્યા એટલે કે અગાર દોષ અને ધૂમાદિ દોષથી રહિત આહાર ગ્રહણ કરવા લાગ્યા (તહ માસઈ) સાવધ વચનને ત્યાગ કરીને નિર્વંધ (દોષ રહિત) વચન બોલવા લાગ્યા -ભાષાસમિતિનુ પાલન કરવા લાગ્યા (તહ ઉઢાઈ ઉઢાય) તથા પોતાની આત્મશક્તિથી ઉઠીને-પ્રમાદ નિદ્રાને ત્યાગ કરીને, સાવધાની પૂર્વક (પાણેહિં, મૂઈહિં જીવેહિં, સત્તેહિં, સંજમેણ) પ્રાણ, ભૂત, જીવ અને સત્ત્વોની રક્ષા થાય એવી રીતે વર્તવા લાગ્યા એટલે કે તેઓ યતના પૂર્વક જીવોની રક્ષા કરવા લાગ્યા. અસ્મિ ચ ણં અટ્ટેણો પમાયઈ) આ અર્થમા (સંયમનુ પાલન કરવા રૂપ પોતાના કર્તવ્યમા) તેઓ ત્રિલકુલ પ્રમાદ કરતા નહી (તણ સે કંદણ કચાયણસ ગોત્તે) આ રીતે કાત્યાયન ઓત્રી સ્કંદક સાથા અર્થમા અણુગાર

કીદશો જાત ઇત્યાહ= 'ઈરિયા સમિપ' ઈયાં સમિત =ઈરણમીર્યા ઈયાં-રાગદ્વેષ
રાહિત્યન યતનયા ગમનમ્ = પ્રત્યક્ષરસહસ્રકરકરનિકરપ્રકાશિતાસુ દિશાસુ
પદાર્થધીમણસમે ચક્ષુર્દ્યે મનુષ્યરચક્રતુરગતુરક્ષુણ્ણતુપારાદૌ પ્રાપ્તુમાર્ગે
તથેકવાનમનસો મુને ક્ષનૈર્વિન્યસ્તચરણસ્ય સક્ષુચિતનિમપૂર્વાપરગાપ્રસ્ય પુરતોયૂન્ય
સ્તયુગમાપ્રદૃષ્ટયા ચેષ્ટનમ્, તયા સમિત =સમ્પરૂપકારેણ યુક્ત, ઈયાંસમિતિમાનિ-

તરહ વે કાત્યાયનગોત્રીય સ્કન્દક અનગાર હો ગયે । અર્થાત્ મગવાન
કા ઉપદેશ સુનકર યે મગવત્પ્રતિપાવિત ધર્મકા આચરણ કરતે હુપ
દ્રષ્ય ઓર માય સે અનગાર હો ગયે । વે કૈસે અનગાર હુપ ? ઇસ્કે
લિધે કહતે હૈં કિ (ઈરિયામમિપ) રાગ ઓર દ્વેષ સે રહિત હોકર
યતના પૂર્વક ગમન કરના ઇસ્કા નામ ઈયાં હૈં । અર્થાત્-જબ સૂર્યકી
પ્રત્તર કિરણોં સે માર્ગ અઢીતરહ સે પ્રકાશિત હો જુકા હો સબ દિશા
ઓં મેં પ્રકાશ ફેલ ગયા હો-આંચોં સે કિસીં ખી પ્રકાર કી દેલનેમેં
પાવા ન હો, દોનોં આંચોં સે પદાર્થકા નિરીક્ષણ અઢી તરહ સે હો
સકે એસે આંચુકી હોતયા તુપાર આદિ સે યુક્ત માર્ગ મનુષ્યોં કે સંચાર
સે, રચચક્ર કે સંચાર સે, તુરગ આદિ કે સુરોં સે ક્ષુણ્ણ-શક્ત પરિણત
અર્થાત્ અચિત્ત હો જુકા હો એસે પ્રાપ્તુક માર્ગ પર ચલને મેં ઉપયોગ
સહિત હોતે હુપ મુનિકા જો ધીરે ૨ આગે ૨ કી જુસરા પ્રમાણ મૂમિ દેખ
કર શરીરકો ડહર ડહર હિલાયે કુલાયે ચિના ગમન હૈં ઇસ્કા નામ

બન્યા કોટલે કે બગવાનનો ઉપદેશ સાંભળીને તેમણે પ્રત્યેક ધર્મનું આચરણ
કરતાં કરતાં દ્રબ્યે અને બાવે અલગગાર થઈ ગયા. તેઓ કેવા અલગગાર થઈ
ગયા ? તે બતાવવાને માટે સૂત્રકાર કહે છે કે-(ઈરિયાસમિપ) તેઓ
ધર્માસમિતિ મુખ્ય બન્યા. રાગ દ્વેષથી રહિત બનીને યતના પૂર્વક ગમન કરતું,
તેનું નામ (ધર્મા) છે. કોટલે કે બ્યારે સૂચના તેજસ્વી કિરણોથી માર્ગ
સારી રીતે પ્રકાશિત થઈ ગયો હોય, બ્યારે દિશાઓમાં પ્રકાશ ફેલાયો હોય
કોઈ પણ વસ્તુને આખો વડે બોવામાં કોઈ પણ પ્રકારની મુશ્કેલી નહીં ન
હોય, બન્ને આખોથી વસ્તુનું બરાબર નિરીક્ષણ કરી શકાતું હોય, તથા
ઝાઝળ વગેરેથી રહિત કોવો માર્ગ છે જે મનુષ્યોના અવર જનરથી, રમ
બકેના સચારથી, અને અશ્વ વગેરે પ્રાણીઓના પગની ખરીબી થોડાં
(અચિત્ત) થઈ ચુક્યો હોય, કોવા પ્રાપ્ત (દોષ રહિત) માર્ગ પર ચાલતી
પૂસરી પ્રમાણ ભૂમિને બોધને, ધીમે ધીમે શરીરને આમ તેમ ઠોલાવ્યા વિના
મુનિનું જે ગમન થાય છે તેને ધર્મા કહે છે તે ધર્મથી જે સમિત(યુક્ત)

ત્યર્થઃ ૧ । ‘ ભાસાસમિષ્-ભાષાસમિતઃ-ભાષણ ભાષા = કાર્કશ્યાદિરહિતહિત-મિતસ્ફીતમૃદુભાષણરૂપા, તથા સમિતઃ = યુક્તઃ ૨ । ભાષાસમિતિમાનિત્યર્થઃ ‘ એસણાસમિષ્ ’ એષણા સમિતઃ-એષણા - નવકોટિવિશુદ્ધભિક્ષાગ્રહણરૂપા, સા ચ ગવેષણા ગ્રહણેષણા-પરિભોગૈષણાદિભેદેન ત્રિવિધા ભવતિ તથા સમિતઃ=સમ્યગુપયોગયુક્તઃ, એષણા સમિતિમાન્ ઇત્યર્થઃ । ‘ આયાણમંડમત્તનિક્ષેવણાસમિષ્ ’ આદાનમાણ્ડમાત્રનિષ્કેષણા સમિતઃ, તત્ર-આદાનેન=ગ્રહણેન સહ માણ્ડમાત્રાયાઃ=ઉપકરણસમૂહરૂપાયાઃ યદ્વા માણ્ડસ્ય પાત્રસ્ય, માત્રસ્ય=વસ્ત્રાદિરૂપોપકરણસ્ય, યદ્વા માણ્ડમાત્રયોઃ-ઇતિચ્છાયા પક્ષે માણ્ડસ્ય યા નિષ્કેષણા=

ઈર્ષ્યા હૈ । હિસ ઈર્ષ્યા સે જો સમિત હૈ- અચ્છી તરહ સે યુક્ત હૈ-વે ઈર્ષ્યા સમિત હૈ । અર્થાત્ ઈર્ષ્યાસમિતિ વાલે હૈ । હિસ પ્રકાર કી ઈર્ષ્યા સમિતિ વાલે વે સ્કન્દક અનગાર હો ગયે । ‘ ભાસાસમિષ્ ’ કર્કશતા આદિ સે રહિત હિત, મિત, મૃદુ ભાષણ કરના હિસ કા નામ ભાષા સમિતિ હૈ । હિસ ભાષા સમિતિ સે જો યુક્ત હોતે હૈ વે ભાષાસમિત કહલાતે હૈ । સ્કન્દક અનગાર હિસ ભાષા સમિતિ સે યુક્ત બન ગયે । ‘ એસણાસમિષ્ ’ નવકોટિ સે વિશુદ્ધ ભિક્ષા કા ગ્રહણ કરના હિસકા નામ એષણા હૈ । યહ એષણા- ગવેષણા, ગ્રહણેષણા ઓર પરિભોગૈષણા આદિ કે ભેદ સે ત્રીન પ્રકાર કી હૈ । હિસ એષણા સે જો યુક્ત હોતે હૈ અર્થાત્ જો હિસ મેં અચ્છી તરહ સે ઉપયોગ રખતે હૈ વે એષણા સમિત હૈ । વે સ્કન્દક સુનિ હિસ એષણા સમિતિ સે યુક્ત બન ગયે । ‘ આયાણમંડમત્તનિક્ષેવણાસમિષ્ ’ ઉપકરણ સમૂહ રૂપ માંડ માત્રા કે ગ્રહણ કરને મેં ઓર ઉઠાને મેં અથવા માંડ પાત્ર, એવં માત્ર-વસ્ત્રાદિરૂપ ઉપકરણોં કે ધરને મેં, ઉઠાને

હોય છે, તેને ઈર્ષ્યાસમિત અથવા ઈર્ષ્યાસમિત વાળો કહે છે. તે સ્કન્દક અણુગાર તે પ્રકારની ઈર્ષ્યાસમિતિ વાળા થઈ ગયા. (ભાસાસમિષ્) કર્કશ પણું વગેરે રહિત, હિત, મિત, મૃદુ વાણી બોલનારને ભાષાસમિતિથી યુક્ત કહેવામા આવે છે. સ્કન્દક અણુગાર ભાષાસમિતિથી પણુ યુક્ત બન્યા (એસણાસમિષ્) વિશુદ્ધ ભિક્ષાને “ એષણા ” કહે છે. તે એષણાના આ પ્રમાણે ત્રણ પ્રકાર છે- (૧) ગવેષણા, (૨) ગ્રહણેષણા, અને (૩) પરિભોગૈષણા. આ એષણાથી જે યુક્ત હોય છે એટલે કે તેનું જે બરાબર પાલન કરે છે તેને એષણા સમિત કહે છે. સ્કન્દક અણુગાર એષણા સમિતિથી યુક્ત બની ગયા- (આયાણમંડમત્તનિક્ષેવણાસમિષ્) માંડ એટલે પાત્ર અને માત્ર એટલે વસ્ત્રાદિ રૂપ ઉપકરણો પાત્ર અને વસ્ત્રાદિ રૂપ ઉપકરણોને મૂકતી વખતે

મ્યાસઃ, તસ્યાં માણ્દોપકરણાનાં ગ્રહણે સ્થાપને ચેત્યર્થઃ સમિત=યતનાપાત્ સુપ
તિલેલિત સુપ્રમાર્જિતાદિ ક્રમેણ પ્રવર્તક इत्यर्थः । ‘ ઉચ્ચારપાસવળસેલજલ્લ
સિંધાણપરિદ્વાવણિયાસમિષ ’ ઉચ્ચારપ્રસવળસેલજલ્લશિદ્ધાણપરિષ્ઠાપનિકા
સમિત ’ તપ્ર-ઉચ્ચારા=પુરીપં, પ્રસવળ=મૂત્ર, સેલ દુષ્કેમા, જલ્લ=દેદમ્પ,
શિદ્ધાણ=નાસિકામલ્લમ્, પતેપાં પરિષ્ઠાપનિકા=વ્યુત્સર્જનં તપ્ર સમિત=યતનાપાત્

મેં જો યતના પૂર્વક પ્રવૃત્તિ થી જાતી છે અર્થાત્ જિસ સ્થાનપર-ઉત્તે ધરના
હો સો પહિલે ડસ સ્થાન થી પ્રમાર્જના કર છેની ઓર જો ઉપકરણ ઉઠાના
હો ડસકી ઉઠાનેસે પહિલે પ્રતિલેખના પ્રમાર્જના કર છેની હસકા
નામ આદાન માંદમાત્રનિક્ષેપણસમિતિ હૈ । હસ સમિતિ સે જો યુક્ત
હોતે હૈં વે આદાનમાંદમાત્રનિક્ષેપણા સમિતિ ઘાલે કહલાતે હૈં । સ્કન્દક
અનગાર હસ સમિતિ સે યુક્ત થન ગયે । અર્થાત્ જય વે ધર્મોપકરણોંકો
ધરતે ઉઠાતે વે તપ ડસકી વે પહિલે અચ્છી તરહ પ્રતિલેખના કર છેતે
ઓર અચ્છી તરહ સે ડસકી પ્રમાર્જના કર છેતે-તપ કહીં વે ડસે ધરતે
ઓર ઉઠાતે વે । ઉચ્ચારપાસવળસેલજલ્લસિંધાણપરિદ્વાવણિયા-
સમિષ, ઉચ્ચાર નામ ધડી નીત કા હૈ, પ્રસવળ નામ-સધુનીત કા હૈ,
સેલ નામ સ્વકાર-‘લેખમાકા હૈ, જલ્લ નામ શરીર કે મેલ કા હૈ, શિદ્ધા
ણ નામ નાક કે મેલકા હૈ । હન સય થી પરિષ્ઠાપનિકા ક્રિયા મેં અર્થાત્
હનકે પરઠને મેં યતનાકરના હસકા નામ ઉચ્ચારપ્રસવળ સેલ જલ્લ

તથા લેતી વખતે યતના પૂર્વક જે પ્રવૃત્તિ કરવામાં આવે છે-એટલે કે તેમને
જે સ્થાને મૂકવા હોય તે સ્થાનને પહેલાં સ્વેદસ્વચ્છી પુલ્કવાની અને જે
ઉપકરણને ઉઠાવવાનું હોય તેને ઉઠાવતા પહેલાં તેની પ્રમાણના કરવાની ક્રિયાને
આદાનમાંદમાત્ર નિક્ષેપણ સમિતિ કહે છે તે સમિતિથી જે મુક્ત હોય છે તેને આ
દાનમાંદમાત્ર નિક્ષેપણ સમિતિ કહે છે સ્કન્દક અણુગાર આદાનમાંદમાત્ર નિક્ષેપણ
સમિતિથી મુક્ત બન્યા તાત્પર્ય એ છે કે સ્કન્દક યુનિ કોઈ પણ પ્રમેયોપકરણને
મૂકતાં કે ઉપાડતાં પહેલાં તેની સારી રીતે પ્રતિલેખના અને પ્રમાણના કરી
લેતા હતા (ઉચ્ચારપાસવળસેલજલ્લસિંધાણપરિદ્વાવણિયાસમિષ) (ઉચ્ચાર)
એટલે મળ, બાઠા (પ્રસવળ) એટલે મૂત્ર (પેશાબ,) (સેલ) કહે, (જલ્લ)
એટલે શરીરનો મેલ, (શિંધાણ) એટલે નાકમાંથી નીકળતો થીકણો પદાર્થ
(શેષ,) એ બધી વસ્તુઓ પરકવાની ક્રિયા યતનાપૂર્વક કરવી તેનું નામ ઉચ્ચાર
પ્રસવણ એલ જલ્લ શિંધાણ-પરિષ્ઠાપનિકા સમિતિ છે તે સમિતિથી મુક્ત યુનિને
ઉચ્ચારપ્રસવણ એલ જલ્લ શિંધાણ પરિષ્ઠાપનિકા સમિત કહે છે સ્કન્દક

‘मणसमिष्ट’ मनःसमितः—मनः=अन्तःकरणं, तत्र समितः निरवद्यमनःप्रवृत्ति-
मान् कुशलमनोयोगवानित्यर्थः । ‘वयसमिष्ट’ वचः समितः=वचसि अतृप्त
कटुत्वसावद्यादि दोषरहितवचने समितः=उपयोगवान्, हितमितप्रियसत्यवचो
योगवानित्यर्थः । ‘कायसमिष्ट’ कायसमितः कायः=शरीर, तत्र समितः प्राण्यु-
पघातादिदोषपरिहारपूर्वकमाकुञ्चनप्रसारणादि क्रियाकारकः । ‘मणगुत्ते’ मनो-
गुप्तः, मनसा=मनोव्यापारेण गुप्तः रक्षितः संयमितमनोव्यापारः मनोजन्या

शिधाणपरिष्ठापनिका समिति है । इस समिति से जो युक्त होते हैं वे उच्चार प्रस्रवण खेल जल्ल सिधाणपरिष्ठाननिकासमितिवाले कहलाते हैं । ये स्कन्दक अनगार इस समिति से युक्त बन गये । ‘मणसमिष्ट’ वे मनः समित वाले हो गये मन नाम अन्तः करण का है । इस अन्तः-करण में वे समित यतना शाली हो गये अर्थात् निरवद्यमनः प्रवृत्ति से युक्त हो गये—अकुशल मनोयोगको त्याग कर वे कुशल मनोयोग वाले बन गये । ‘वय समिष्ट’ वचन में समित हो गये, अर्थात् असत्य, कटुक, सावद्य आदि दोषों से रहित ऐसे वचन में उपयोग वाले हो गये, हित, मित, प्रिय ऐसे सत्यवचन रूप योग से युक्त हो गये । ‘कायसमिष्ट’ काय नाम शरीर का है, इसमें समित हो गये, अर्थात् जीवों का उप-घात अपघात होने रूप दोष का परित्याग करते हुए वे स्कन्दक अन-गार अपने शरीर की आकुञ्चन, प्रसारण आदि क्रिया करने लगे (मण-गुत्ते) संयमित मनोव्यापारवाले हो गये, अर्थात् अपने मन को उन्होंने वे वश में कर लिया । मनोयोग से जो कर्मरूप कचरा आता था उसका

अणुगार ते समितिथी पणु युक्त भनी गया । (मणसमिष्ट) त्थार भाद तेओ मन-समित भनी गया । ओटले के निरवद्य (दोष रहित) मननी प्रवृत्तिवाणा भनी गया—अशुल मनोयोगनो परित्याग करीने तेओ शुलमनोयोगवाणा भनी गया । (वयसमिष्ट) तेओ वचन समित भनी गया । ओटले के असत्य, कटु श सावद्य (दोष युक्त) वगेरे दोषोथी रहित वचनो भोखवा लाग्या । हित, मित, अने प्रिय सत्यवचन रूप योगथी युक्त भनी गया (कायसमिष्ट) काय ओटले शरीर, तेओ कायसमित भनी गया ओटले के पोताना शरीरनी क्रियाओ अथवा पोताना अगोना खुलनचलन ओवी रीते करवा लाग्या के ओथी कोष्ठ पणु विराधना न थाय तेनुं ध्यान राभता थथ गया (मणगुत्ते) तेभओ पोताना मनने पूरे पूरे वश करी लीधुं तेओ मनना संयमथी युक्त थथ गया मनोयोगथी के कर्म रूप रचनो प्रवेश थतो छतो तेनो

અનુકર્મકચરનિરોધકા, અકુશલમનોયોગનિરોધકો યા । યદા મનાગુપ્તાઃ
મનો ઘૃપ્તિમાન્ તન્ન મનોઘૃપ્તિસિદ્ધિઃ, યથા-આર્તરોદ્રધ્યાનાનુષ્ઠિપદવપનાજાલ-
વિયોગલક્ષણા પ્રથમા ૧, શાસ્ત્રાનુગામિની પરલોકસાધિની ધર્મધ્યાનાનુષ્ઠિની
માધ્યસ્થ્યપરિણામરૂપા દ્વિતીયા ૨, કુશલાકુશલમનોઘૃષ્ઠિનિરોધેન વિરામ્યસ્તયોગ-
સમ્પાદિતાવસ્થા વિશ્લેષજ-યા-આત્મસ્વરૂપરમણરૂપા તૃતીયા ૩ ।

ઉક્તચ્છ-“ વિમુક્તકલ્પનાજાલ, સમત્વ સુપતિષ્ઠિતમ્ ।

આત્મારામ મનસ્તઃકર્મનોઘૃષ્ઠિરુદાહતા ॥ ૧ ॥ ’ શ્લોક ॥

જેને નિરોધ કર દિયા । અથવા-અકુશલ મનોયોગ કો અકુશલ
માનસિક વ્યાપાર કો જેને રોક દિયા । અર્થાત્-જે મનોગુપ્તિ સે યુક્ત હો
ગયે । મનોગુપ્તિ ત્રીન પ્રકાર કી હોતી હૈ-જેસે આર્ત રોદ્ર ધ્યાન સંબંધી
કલ્પનાજાલ કા ત્યાગ કરના યહ પ્રથમ મનોગુપ્તિ હૈ । શાસ્ત્ર માર્ગકા
અનુસરણ કરને ચાલી એવ પરલોક કો સુધારને ચાલી તથા ધર્મધ્યાન
કે અનુષ્ઠાણાલી એસી જો માધ્યસ્થ્ય પરિણતિ રૂપ વૃત્તિ (મધ્યસ્થ માધ
ચાલી વૃત્તિ) હોતી હૈ સહ દુસરી મનોગુપ્તિ હૈ । કુશલ એવ અકુશલ
મનોઘૃષ્ઠિનિરોધ પૂર્વક વિરામ્યસ્ત યોગ દ્વારા સંપાદિત અવસ્થાવિશેષસે
જનિત હોતી હૈ એસી આત્મસ્વરૂપ મેં રમણરૂપ ત્રીસરી મનોગુપ્તિ હૈ ।

કહા યી હૈ-“ વિમુક્તકલ્પનાજાલ, સમત્વે સુપતિષ્ઠિતમ્ ।

આત્મારામ મનસ્તઃકર્મ-મનોગુપ્તિરુદાહતા ” ॥ ૧ ॥

મનોગુપ્તિ હસ તરહ સે ત્રીન પ્રકાર કી કહી ગઈ હૈ-૧૫૫ મનોગુપ્તિ
થહ કિ મિસમેં કલ્પનાઓં કા સર્વથા અમાધ રહે-કિસી યી પ્રકાર કી

તેમણે નિરોધ કરી લીધો એવે કે અશુભ મનોચેત્રને (માનસિક પ્રવૃત્તિને)
તેમણે રોકી લીધો એ રીતે તેઓ મનોગુપ્તિથી મુક્ત બની ગયા મનોગુપ્તિના
બા પ્રમાણે ત્રણ પ્રકાર છે- આર્ત રોદ્રધ્યાન વાળી તમામ ઇચ્છાઓના ત્યાગ
કરવો તે પહેલી મનોગુપ્તિ છે શાસ્ત્રમાર્ગ અનુસરનારી અને પરલોકને સુધાર
નારી તથા ધર્મધ્યાનના અનુષ્ઠાણવાળી, એવી જે મધ્યસ્થ ભાવવાળી વૃત્તિ
હોય તેને બીજી મનોગુપ્તિ કહે છે કુશલ અને અકુશલ મનોઘૃષ્ઠિના નિરોધ
પૂર્વક, લાંબા અભ્યાસથી અને યોગ વડે પ્રાપ્ત થયેલી અવસ્થા વિશેષથી આત્મ
સ્વરૂપમાં જેમ રમણતા થાય છે તે મનોગુપ્તિ છે, કહું પણ છે કે-

(વિમુક્તકલ્પનાજાલ સમત્વે સુપતિષ્ઠિતમ્)

આત્મારામ મનસ્તઃકર્મ મનોગુપ્તિરુદાહતા ॥ ૧ ॥

મનોગુપ્તિ બા પ્રમાણે ત્રણ પ્રકારની કહી છે એક મનોગુપ્તિ એવી છે કે
જેમાં કલ્પનાઓના ત્યાગ અભાવ રહે છે કેઈ પણ પ્રકારની કલ્પના મનમાં

‘मणसमिष्ट’ मनःसमितः—मनः=अन्तःकरणं, तत्र समितः निरवधमनःप्रवृत्ति-
मान् कुशलमनोयोगवानित्यर्थः । ‘वयसमिष्ट’ वचः समितः=वचसि अनृत
कटुत्वसावधादि दोषरहितवचने समितः=उपयोगवान्, हितमितप्रियसत्यवचो
योगवानित्यर्थः ‘कायसमिष्ट’ कायसमितः कायः=शरीर, तत्र समितः प्राण्यु-
पघातादिदोषपरिहारपूर्वकमाकुञ्चनप्रसारणादि क्रियाकारकः । ‘मणगुत्ते’ मनो-
गुप्तः, मनसा=मनोव्यापारेण गुप्तः रक्षितः संयमितमनोव्यापारः मनोजन्या

शिधाणपरिष्ठापनिका समिति है । इस समिति से जो युक्त होते हैं वे उच्चार प्रस्रवण खेल जल्ल सिधाणपरिष्ठाननिकासमितिवाले कहलाते हैं । ये स्कन्दक अनगार इस समिति से युक्त बन गये । ‘मणसमिष्ट’ वे मनः समित वाले हो गये मन नाम अन्तः करण का है । इस अन्तः-करण में वे समित यतना शाली हो गये अर्थात् निरवधमनः प्रवृत्ति से युक्त हो गये—अकुशल मनोयोगको त्याग कर वे कुशल मनोयोग वाले बन गये । ‘वय समिष्ट’ वचन में समित हो गये, अर्थात् असत्य, कटुक, सावध आदि दोषों से रहित ऐसे वचन में उपयोग वाले हो गये, हित, मित, प्रिय ऐसे सत्यवचन रूप योग से युक्त हो गये । ‘कायसमिष्ट’ काय नाम शरीर का है, इसमें समित हो गये, अर्थात् जीवों का उपघात अपघात होने रूप दोष का परित्याग करते हुए वे स्कन्दक अनगार अपने शरीर की आकुचन, प्रसारण आदि क्रिया करने लगे (मणगुत्ते) संयमित मनोव्यापारवाले हो गये, अर्थात् अपने मन को उन्होंने ने वश में कर लिया । मनोयोग से जो कर्मरूपकचरा आता था उसका

अणुगार ते समितिथी पणु युक्त भनी गया (मणसमिष्ट) त्थार भाद तेओ मनःसमित भनी गया ओटले के निरवध (दोष रक्षित) मननी प्रवृत्तिवाणा भनी गया—अशुल मनोयोगनो परित्याग करीने तेओ शुलमनोयोगवाणा भनी गया (वयसमिष्ट) तेओ वचन समित भनी गया. ओटले के असत्य, कर्कश सावध (दोष युक्त) वगेरे दोषोथी रक्षित वचनो जोलवा लाग्या. हित, मित, अने प्रिय सत्यवचन रूप योगथी युक्त भनी गया (कायसमिष्ट) काय ओटले शरीर, तेओ कायसमित भनी गया. ओटले के पोताना शरीरनी क्रियाओ अथवा पोताना अगोना छलनयलन ओवी रीते करवा लाग्या के जेथी केछ पणु निराधना न थाय तेनु ध्यान राखता थछ गया (मणगुत्ते) तेभणु पोताना मनने पूरे पूरे वश करी दीधु तेओ मनना संयमथी युक्त थछ गया मनोयोगथी जे कर्म रूप रचनो प्रवेश थतो छतो तेनो

દ્વિતીયા-શુભમાપૃચ્છ્ય શરીરસસ્તારકપતિલેખનપ્રમાર્જનાદિ સમયોચિત્ક્રિયા સમૂહસમ્પાદનપૂર્વક શયનામનાદિ વિધેયમ્, સત્તો શુરુનિર્દેશેન શયનાસનનિષેપા દાનાદિપુ સ્વતઃપ્ર ચેષ્ટાત્યાગેન નિયતકાયચેષ્ટારૂપા ।

ઉક્તશ્ચ—“ ઉપસર્ગપ્રસન્નેઽપિ કાયોત્સર્ગજુપોમુનેઃ ।

સ્થિરીમાય શરીરસ્ય, કાયગુપ્તિર્નિર્ગચતે ॥ ૧ ॥

શયનાસનનિષેપાઽઽદાનસક્રમણેયુ ષ ।

સ્થાનેપુ ચેષ્ટા નિયમઃ, કાયગુપ્તિસ્તુ સાઽપરા ” ॥૨॥ इति ।

કરતા હૈ। દ્વિતીય પ્રકાર મેં-શુભની આશા કે અનુમાર શારીરિક ક્રિયા ઓં કા કરના હોતા હૈ। અપની ઇચ્છા કે અનુમાર કાયિકી ક્રિયા કી સ્વતઃપ્ર પ્રવૃત્તિ સાધુ નહીં કરતા હૈ। જૈસે શાસ્ત્ર કી વહ આશા હૈ કિ સાધુ જપ શયન આસન આદિ કાર્ય કરે તો ઉસે પૂછકર હી વહ કાર્ય, અપને શરીર કી ઓર સસ્તારક કી પ્રતિલેખના પ્રમાર્જના આદિ કરતે હુપ (તરસમયોચિત્ક્રિયાસમૂહસમ્પાદન) પૂર્વક હી કરના ચાહીયે। હસ તરહ વહ હસ દ્વિતીય પ્રકાર મેં શુભ કે આદેશ સે હી શયન, આસન, નિષેપ, આદાન આદિ ક્રિયાઓં મેં પ્રવૃત્તિ કરતા હૈ ઓર અપની વહ સ્વતઃપ્ર ચેષ્ટા કા ત્યાગ કરતા હૈ। હસ પ્રકાર સે વહ નિયત કાયચેષ્ટા રૂપ દ્વિતીય પ્રકાર કાયગુપ્તિ કા જાનના ચાહીયે। કહા બી હૈ

“ ઉપસર્ગપ્રસન્નેઽપી, કાયોત્સર્ગજુપો મુનેઃ ।

સ્થિરીમાય શરીરસ્ય, કાયગુપ્તિર્નિર્ગચતે ॥ ૧ ॥

બીજે પ્રકાર આ પ્રમાણે છે-તેમાં સિદ્ધાંત પ્રમાણે આશાનુસાર શારીરિક ક્રિયાઓ કરવાની ટોચ છે પોતાની ઇચ્છા મુજબ કાયિકી ક્રિયાની સ્વતઃપ્ર પ્રવૃત્તિ મુનિ કરતા નથી. જેમ કે જ્યારે માધુ ગોચરી માટે નીકળે શયન વગેરે ક્રિયા કરે ત્યારે તેણે શુરુની આશા લેવી પડે છે, જોવી શાસ્ત્રાનુ છે. અને કોઈ પણ ઉપસર્ગજુ પ્રવૃત્તિ કરતી વખતે અથવા કોઈ જગ્યાએ જોઈતી વખતે તે જગ્યાનુ અને ઉપસર્ગજુ પદ્ધતિનુ (પ્રતિલેખના) તથા પ્રમાર્જન કરવું પડે છે આ રીતે બીજા પ્રકારની કાયગુપ્તિના પાલન માટે માધુ પોતાના શુરુની કે વતિ મુનિની આશાનુસાર શયન, આસન નિષેપ, આદાન વગેરે ક્રિયાઓ કરે છે અને પોતાની સ્વતઃપ્ર પ્રવૃત્તિઓનો પરિત્યાગ કરે છે આ રીતે કાયગુપ્તિનો બીજો પ્રકાર નિયમ મદ્દિનની કાયાની પ્રવૃત્તિનો સમજવો કરવું પડે છે—

ઉપસર્ગપ્રસન્નેઽપિ, કાયોત્સર્ગજુપો મુન ।

સ્થિરીમાય શરીરસ્ય, કાયગુપ્તિર્નિર્ગચતે ॥ ૧ ॥

एतादृशमनोगुप्तिमानित्यर्थः ' वयगुत्ते ' वचोगुप्तः, निरुद्धवाक् प्रसरः वचो-
गुप्तिमानित्यर्थः ' कायगुत्ते ' कायगुप्तः, कायेन=कायक्रियया गमनागमनप्रच-
लनस्पन्दादिरूपया गुप्तः=रक्षितः कायक्रियया उपयोगवान् । कायगुप्तिमानि-
त्यर्थः, कायगुप्तिर्द्विधा-चेष्टानिवृत्तिरूपा १, यथागमं चेष्टानियमनलक्षणा २
चेति तत्र । तत्र प्रथमा कायोत्सर्गादिना परीपहसदनपूर्वककायनिश्चलताकरणरूपा

कल्पना मन में न उठे १, द्वितीय मनोगुप्ति वह कि जिसमें मन माध्य-
स्थ्यपरिणति में बना रहे २ तीसरी वह कि जिसमें मन आत्मारूपी
बगीचे में रमण करने वाला बन जाय, अर्थात् आत्मस्वरूप के चिन्तन
में लीन हो जाय ३ । ' वयगुत्ते ' अपनी वाणी का प्रसार रोक देने के
कारण वे वचोगुप्तवचनगुप्ति से युक्त-तथा ' कायगुत्ते ' कायसंबंधी गमन
आगमन, प्रचलन, स्पन्दन, आदिरूप क्रिया से रक्षित होने के कारण
अर्थात् कायिकी क्रिया में उपयोग वाले होने के कारण कायगुप्ति से युक्त
हो गये । कायगुप्ति दो प्रकारकी होती है-एक प्रकार कायगुप्ति का वह है
दूसरा की जिसमें कायसंबंधी चेष्टा की निवृत्ति कर दी जाती है । और
प्रकार कायगुप्ति का वह है कि जिसमें आगम के अनुसार क्रिया चेष्टा
का नियमन किया जाता है । प्रथम प्रकार में साधु कायोत्सर्ग करते
समय परीषह और उपसर्ग आजाने पर भी अपने शरीर में निश्चलता
रखता है । उस समय वह कायसंबंधी किसी भी प्रकार की क्रिया नहीं

ઉદ્ભવતીજ નથી. જેમાં મન મધ્યસ્થવૃત્તિવાળું બની બંધ છે એવી બીજા પ્રકારની
મનોગુપ્તિ છે ત્રીજી મનોગુપ્તિ એવા પ્રકારની છે કે જેમાં મન, આત્મારૂપી
બગીચામાં રમણ કર્યા કરે છે એટલે કે આત્મસ્વરૂપના ચિન્તનમાંજ લીન થઈ બંધ છે.

(વચગુત્તે) પોતાની વાણીના સયમને કારણે તેઓ વચનગુપ્ત (વચન-
ગુપ્તિથી યુક્ત) બની ગયા તથા (કાયગુત્તે) કાયા સંબંધી અવર જવર,
પ્રચલન, સ્પન્દન વગેરે રૂપ ક્રિયાથી રક્ષિત હોવાને કારણે એટલે કે કાયિકી
ક્રિયા યતનાપૂર્વક કરતા હોવાથી-તેઓ કાયગુપ્તિથી યુક્ત બની ગયા કાય-
ગુપ્તિ બે પ્રકારની હોય છે-તેનો એક પ્રકાર એવો છે કે જેમાં કાયાની ચેષ્ટા
(પ્રવૃત્તિ) નો નિરોધ કરવામાં આવે છે, અને બીજો પ્રકાર એવો છે કે
જેમાં આગમ અનુસાર પ્રવૃત્તિ કરવાનો નિયમ કરવામાં આવે છે. એટલે કે
મુનિ કાયોત્સર્ગ (કાચસર્ગ) કરતી વખતે પરીષદ અને ઉપસર્ગ આવી પડતા
છતાં પણ પોતાના શરીરને નિશ્ચલ રાખે છે તે વખત તેઓ કાયાથી કંઈ પણ
પ્રકારની ક્રિયા કરતા નથી. આ કાયગુપ્તિ પહેલો પ્રકાર થયો, કાયગુપ્તિનો

રજ્જુઃ=રજ્જુરિવ રજ્જુઃ સરલસ્વાત્, ધન્યમધારરહિત્વમ્ इत्यर्थं यद्वा 'सज्ज' इति लज्जावान्, लज्जेति सयમ, तद्वान् । 'घण्णे' घन्य=लम्बघमपनः । 'रंतित्वमे' सान्तिक्षमः-क्षान्त्या=यमया क्षमते नत्वसमर्थतयति सान्तिक्षमम्=स्वामाधिक્ષमाशील इत्यर्थः, यत् प्राक् 'गुप्तेन्द्रियः' इत्युक्तं सत् तु इन्द्रियविकारगोपनमात्रेणापि स्यादत आह-'जिह्वेन्द्रिय' जितेन्द्रिय=इन्द्रियजन्यविकारमावात्-बशीकृतेन्द्रिय' । 'सोद्विष' सोधितः=धुद्विसम्पन्न निराकृताविचार

ગયે । અપવા-લજ્જા નામ સંયમ કા હૈ, વસસે યુક્ત અર્થાત સંયમવાનુ હો ગયે । 'ઘન્યે' ધર્મરૂપ ઘન કો ઉન્હો ને પા લિયા । 'સંતિસ્વમે' કા તાત્પર્ય હૈ-સ્વયં શક્તિસંપન્ન હોતે હુપ મી સહનશીલ બનના । ફસપ્રકાર લે સ્કન્દક અનગાર સ્થયે મેં વિશિષ્ટ શક્તિશાલી હોતે હુપ મી આવે હુ'સ્વો કો શાંતિ પૂર્વક સહન કરતે લે-ફસલિયે । (ક્ષાન્ત્યા ક્ષમતે હિતિ ક્ષાંતિક્ષમ) ફસ વ્યુત્પત્તિ કે અનુસાર જો વ્યક્તિ અસમર્થ હોનેકે કારણ દુસરોં કે અપરર્થોકો ક્ષમા કર દેતા હૈ બહ ક્ષાંતિક્ષમ નહીં હૈ । જો પહિલે (ગુપ્તેન્દ્રિય) એસા વિશેષણ સ્કન્દક અનગાર કા કહા હૈ-સો યહ ગુપ્તેન્દ્રિયતા ઇન્દ્રિયોં કે વિકારોં કો છુપાને માત્ર સે મી હો સક્તી હૈ-અતઃ કોઈ એસા યહાં ન સમજાલે ફસકે લિયે (જિહ્વેન્દ્રિય) યહ વ્ય પ્રયુક્ત કિયા ગયા હૈ । યહ વદ યહ પ્રકટ કરતા હૈ કિ ઇન્દ્રિય જન્ય વિકાર કે અમાલ સે ઉમમં બશીકૃતેન્દ્રિયતા થી અર્થાત્ ઇન્દ્રિયોં કો બશ

માંથી વક્તાનેા જિહ્વકુલ પરિચાગ કરી લીધા અથવા સમમને લક્ષ્ય કહે છે તેજી સમમી બની ગયા એવો અર્થ પણ થઈ શકે છે “ ઘન્યે ” તેમજે ધર્મરૂપ ધન પ્રાપ્ત કરી લીધુ, (રંતિસ્વમે) શક્તિ શાળી હોવા છતાં પણ ક્ષમાશીલ બન્યા પોતે શક્તિસંપન્ન હોવા છતાં પણ સહનશીલ બન્યુ, તેનું નામ ક્ષાંતિક્ષમ છે સ્કન્દક અવગાર પોતે વિશિષ્ટ શક્તિ શાળી હોવા છતાં પણ ખાલી પડ્યા હુ જે અને અપરર્થોને શાંતિ પૂર્વક સહન કરતા હતા તેથી તેમને ક્ષાંતિક્ષમ કહ્યા છે (ક્ષાન્ત્યા ક્ષમતે હિતિ ક્ષાંતિક્ષમ) આ વ્યુત્પત્તિ પ્રમાણે નિજ જતાને કારણે જીભ લોકોના અપરાધોને માફ કરનાર વ્યક્તિને ક્ષાંતિક્ષમ કહી શકાય નહીં. આગળ સ્કન્દકને ‘ ગુપ્તેન્દ્રિય ’ કહેવામા આવ્યા છે ઇન્દ્રિયોના વિકારોને છુપાવવાથી પણ ગુપ્તેન્દ્રિય પણ સંભવી શકે છે પણ સ્કન્દકના ગુપ્તેન્દ્રિયપણાના વિવચના એવી વ્યાપક કા કોઈને પણ ન થાય તે માટે તેમને (જિહ્વેન્દ્રિય) જિતેન્દ્રિય કહ્યા છે આ વદ એ બતાવે છે કે ઇન્દ્રિયોથી વૈપત્ત થતા વિકારોના અભાવને કારણે તેમનામાં ઇન્દ્રિયોને વશ

અતएव 'ગુત્તે' ગુપ્તઃ પૂર્વોક્તમનોગુપ્ત્યાદિ યુક્તઃ, ગુત્તિદિએ 'ગુપ્તેન્દ્રિયઃ ગુપ્તાનિ=સ્વસ્વવિષયાન્નિવૃત્તાનિ ઇન્દ્રિયાણિ યસ્ય સ તથા 'ગુપ્તવંભચારી' ગુપ્તવ્રહ્મચારી-ગુપ્તઃ=રક્ષિતઃ વ્રહ્મણઃ=કુશલાનુષ્ઠાનસ્ય ચારઃ=ચરણં યાવજ્જીવનં મૈથુન-વિરમણલક્ષણઃ, સ યસ્યાસ્તીતિ તથા 'ચાઈ' ત્યાગી=સમ્યક્ત્યાગવાન્ 'લજ્જૂ'

શયનાસનનિષ્કેપાદાનસંક્રમણેષુ ચ ।

સ્થાનેષુ ચેષ્ટા નિયમઃ કાયગુપ્તિસ્તુ સાઽપરા ॥ ૨ ॥ "

તાત્પર્ય ઇસકા યહી હૈ કિ કાયોત્સર્ગ કરતે સમય મુનિ કો યદિ કિસી ખી પ્રકાર કે ઉપસર્ગ કા પ્રસન્ન આજાતા હૈ તો વહ ઉસ સમય જો અપને શરીર મેં અનિશ્ચલતા ન કરાત, હુઆ-અર્થાત્ સમાધિ સે વિચલિત ન હોતા હુઆ-સ્થિરતા કારણ કરતા હૈ એક તો વહ કાયગુપ્તિ હૈ, ઓર દૂસરી કાયગુપ્તિ વહ હૈ, કિ જિસમેં શયન, આસન, નિષ્કેપ આદિ ક્રિયાઓ મેં શરીર કી ચેષ્ટા કા સંયમન ક્રિયા જાના હૈ ઇસ પ્રકાર વે સ્કન્દક અનગાર પૂર્વોક્ત ઇન મનોગુપ્તિ આદી સે સંપન્ન બન કર (ગુપ્તે) ગુપ્ત બન ગયે । (ગુત્તિદિએ) ઉન્હોં ને અપની પ્રત્યેક ઇન્દ્રિય કો અપને ગ્રાહ્ય વિષય સે નિવૃત્ત કર લિયા । (ગુપ્તવંભચારી યાવજ્જીવ વે મૈથુન કે પરિત્યાગ કરદેનેસે ગુપ્ત વ્રહ્મચારી બન ગયે । (ચાઈ) સર્વથા નિઃસંગ-અસંગ હો ગયે । વક્રતાપૂર્વક વ્યવહાર કરને કા ઉન્હોં ને બિલકુલ પરિત્યાગ કર દિયા, ઇસલિયે 'લજ્જૂ' રસસી કી તરહ સરલ હો

શયનાસનનિષ્કેપાદાનસંક્રમણેષુ ચ ।

સ્થાનેષુ ચેષ્ટા નિયમઃ કાયગુપ્તિસ્તુ સાઽપરા ॥ ૨ ॥

ભાવાર્થ-કાયોત્સર્ગ કરતી વખતે કોઈપણ પ્રકારના ઉપસર્ગ આવવા છતાં પણુએ મુનિ પોતાના શરીરને સ્થિર રાખે કાઉસગ્ગમાં સ્થિરતા રાખે, તો તે પહેલા પ્રકારની કાયગુપ્તિથી યુક્ત ગણાય છે ખીલ પ્રકારની કાયગુપ્તિ એ છે કે જેમાં શયન, આસન નિષ્કેપ વગેરે ક્રિયાઓમાં શરીરની પ્રવૃત્તિઓ નિયમન કરવામાં આવે છે-પ્રતિલેખના, પ્રમાર્જના, ચુરુઆસા વગેરે રૂપ નિયમન કરવામાં આવે છે સ્કન્દક અણુગાર પણુ પૂર્વોક્ત મનોગુપ્તિ વગેરેથી યુક્ત થવાથી (ગુપ્તે) ગુપ્તિઓથી યુક્ત બની ગયા. (ગુત્તિદિર) તેઓ ગુપ્તેન્દ્રિય બની ગયા એટલે કે તેમણે પોતાની બધી ઇન્દ્રિઓને પોત પોતાના વિષયોથી નિવૃત્ત કરી દીધી (ગુપ્તવંભચારી) જીવન પર્યાન્ત અબ્રહ્મનેા પરિત્યાગ કરવાથી તેઓ ગુપ્તવ્રહ્મચારી બની ગયા (ચાઈ) બિલકુલ નિઃસંગ-અસંગ થઈ ગયા, (લજ્જૂ) દોરીના જેવા સરળ થઈ ગયા એટલે કે તેમણે જીવન

તમિદાનમ્, તત્ અવિધમાન યસ્ય સ તથા-પૈથિક પારમૌકિક મુસલાલસાધિ
 ઇત્યર્થ । ‘અપુસ્તુર’ અલ્પૌત્સુમ્ય ઉત્કણ્ઠાવર્જિત । ‘અવહિન્લેસે’ અવહિન્લેસ્ય
 અવિધમાનાવદિ છેદયા=મનોવૃત્તિર્યસ્વાર્સો તથા અસયમમનાવૃત્તિરિદિત ઇત્યર્થ
 ‘મુસામખરણ’ મુસામખરણ-મુ=મુદ્દુતયા મામખ્ય=મમણધર્મે રત =તત્પર-
 શુદ્ધસાધુધર્મપાલક ઇત્યર્થ । ‘અન્ત’ દાન્ત ક્રોધાદિવિમનાત્, યદા ‘દ્યપન્ત’
 ઇતિચ્છાયાપક્ષે દ્વયો=રાગદ્વેષયો અન્ત-વિનાશા યથ સ તથા રાગદ્વેષવર્જિત

થાહે કુટાર સે હસ કુશલ કર્મરૂપ કલ્પવૃક્ષ કો કાટ દેતા હૈ। એસા
 યહ નિદાન હોતા હૈ। હસ નિદાન સે-હસ લોક મપધી ઓર પરલોકસ
 યધી સુખ કી લાલસા સે યે રહિત યે (અપુસ્તુર) હનકે ચિત્ત મેં કિસી
 પદાર્થ આદિ કે સેવન કરને કી યા હસકે અવલોકન કાને કી બિલકુલ
 કિસી તરહ સે ખી ઉત્કટા નહોં રહી યી। (અવહિન્લેસે) ઓર હનકી
 મનોવૃત્તિ મયમ આદિ અનુષ્ઠાન કે પરિપાલન કરને મેં હસની ણકામ
 યનગઈ યી કિ બહ યક ડાળ ની હમસે યાહિર નહોં જાતી યી અર્થાત્
 અમયમમાયકી તરહ હનકી ચિત્તવૃત્તિ સ્થમ મેં નહોં જાતી યી। ‘મુસા
 મખરણ’ યે અચ્છી તરહ સે શુદ્ધ સાધુધર્મ કે પાલન કરન મેં જી
 જાન સે તત્પર રહતે યે। (વંતે) ક્રોધાદિકવાપ કા ઘઠોં ને ઇકાન્તત
 વમન કર દિયા યા। અર્થાત્-(વંતે) પદ કી છાયા દ્યપન્ત ખી હોતી હૈ।
 હમ પક્ષ મેં (અન્તે) રાગ દ્વેષ હન દોનો કા અન્ત-વિનાશ-કર દિયા

અને ઈંદ્ર વગેરે પદવીની પ્રાપ્તિરૂપ પરદેશના મુખની અભિલાષારૂપ તીક્ષ્ણ પ્રા-
 વાળી નિષાણ્ણા રૂપી કુહાડીથી ઇંદ્રી નાખવામા આવે છે તાત્પર્ય એ છે કે નિષાણ્ણ
 કરવાથી મોક્ષપ્રાપ્તિ હર ઠેકામ છે અને છવને સ આશમા વારવાર પરિશ્રમરૂપ રૂપુ
 પડે છે સ્વદેશ અલ્પમાર આ પ્રકારના નિષાણ્ણથી શક્તિ હતા તેઓ આલેક અને
 પરદેશના મુખની લાલસાથી શક્તિ હતા (અપુસ્તુર)કેાપખ્યુ રાધયુ સેવન કરવાની
 કે અવલોકન કરવાની કૈંક ઠાથી તેઓ રહિત હતા અવહિન્લેસે મ મમ વગેરે
 અનુષ્ઠાનના પરિપાલનમા અત્યંત સ્તીન જની જવાથી એક હવ્યમાન પશુ તેમની
 ચિત્તવૃત્તિ અન્નયમ ભાવ તરફ વળતી ન હતા એટલે કે તેમની મનોવૃત્તિ અસ્થિર
 ભાવ તરફ સ્વપ્નમાં પણ જતી ન હતી ‘મુસામખરણ’ તેઓ શુદ્ધ સાધુ
 ધર્મનુ પાલન કરવામા સદા તત્પર રહેતા હતા તાત્પર્ય કે પોતાના પ્રાણની
 પણ પરવા ક્યા વગર તેઓ સાધુધર્મનુ ઉકટ ની પાલન કરતા હતા
 રત ક્રોધાદિ કરાવને તેમણે નિતક્રુર રનાવી રીધા હતા અપમા- (રત)
 પતની છાયા (દ્યપન્ત) પણ યાય છે તેથી એ અથ પણ વગરી શકાય-કે તેમણે
 રાગદ્વેષ ન નેનો અન્ત નાશ કરી નાખ્યો હોનો આ રીને સાધુના વમામ

ત્વાત્, યદ્વા 'શોભિતઃ' इतिच्छायापक्षे शोभासम्पन्नः त्यागवैराग्यवन्त्वात्, 'अनियाणे' 'अनिदानः-नि=नितरां दीयते=छिद्यते-आत्मभूमिजात-सम्यक्त्वा-ङ्कुरित-विविध विमलभावनासलिल संवर्द्धित-ध्यानक्रियापल्लवित्ताऽखण्ड तपः समयमाद्यनुष्ठानपुष्पित-मोक्षफल सुभूपिक कुशलकल्पवृक्षो येन=ऐहिक चक्रवर्त्यादि पारलौकिक देवद्वर्त्यादि पदप्राप्तिजन्यविषयसुखाभिलाषरूपनिशितधारकुठारेण में रखने वाले थे । (सोहिए) पद यह प्रकट करता है कि स्कन्दक अन-गार अपने महाव्रतों में निर्दोष थे, अतिचारों से रहित थे । अथवा-शोभित थे । अर्थात् त्याग और वैराग्यशाली होने से शोभासम्पन्न थे । (अणियाणे) महाव्रतों की आराधना करते हुए भी उन्हें इसलोक संबंधी या परलोक संबंधी किसी भी प्रकार के सुखों की चाहना नहीं थी । अर्थात् ये निदान बंध रहित थे । (नितरां दीयते छिद्यते) (इति निदानम्) इस व्युत्पत्ति के अनुसार यह निदान, आत्मा रूप भूमि में उत्पन्न हुए कुशल कर्मरूप कल्पवृक्ष को कि सम्यक्त्वरूप अङ्कुर वाला होता है, तथा अनेक प्रकार की निर्मल भावना रूप जल से सिंचित होकर जो आत्मारूप भूमि में वृद्धिगत होता है, ध्यान रूप क्रिया ही जिसके पल्लव होते हैं, अखण्ड तप एवं संयम आदि रूप अनुष्ठानही जिसके जीवन में सुन्दर २ विकसित पुष्प होते हैं, और मोक्ष रूप फल से जो अच्छी तरह से शोभित होता है वह इसलोक संबंधी चक्रवर्ती आदि पद की प्राप्ति जन्य तथा परलोक संबंधी देवआदि पद की प्राप्ति जन्य विषयसुख की अभिलाषारूप निशित-तीक्ष्णधार

રાખવાનું સામર્થ્ય હતુ. (સોહિએ) સ્કન્દક આણુગાર મહાવ્રતોમાં નિર્દોષ હતા એટલે કે અતિચારોથી રહિત મહાવ્રતોનું પાલન કરનાર હતા. અથવા ત્યાગ અને વૈરાગ્યના ગુણોથી સુશોભિત હતા. (અણિયાણે) મહાવ્રતોની આરાધના કરવા છતાં પણ તેઓ આલોક કે પરલોકના સુખની ઇચ્છા વગરના હતા. એટલે કે તેઓ નિયાણુથી રહિત હતા. (નિતરાં દીયતે છિદ્યતે इति निदानम्) નિદાનની આ પ્રમાણે વ્યુત્પત્તિ થાય છે એટલેકે-આત્મારૂપી ભૂમિમાં ઉત્પન્ન થયેલ કુશલ કર્મ રૂપ કલ્પવૃક્ષ કે જે સમ્યક્ત્વ રૂપ અકુર વાળું હોય છે, તથા જે અનેક પ્રકારની નિર્મળ ભાવનાઓ રૂપી જળ વડે સિંચિત થઈને આત્મારૂપી ભૂમિમાં વૃદ્ધિ પામતું હોય છે તથા ધ્યાનરૂપી ક્રિયા જ જેનાં વાદળાં છે તથા અખડ તપ અને સંયમ રૂપ અનુષ્ઠાનો જ જેના સુદર પુષ્પો હોય છે, અને મોક્ષ રૂપી ફળથી જે અત્યંત શોભાયમાન હોય છે, તેવા કુશલ કર્મરૂપ કલ્પવૃક્ષને, ચક્રવર્તિ વગેરે પદવીની પ્રાપ્તિ રૂપ આલોકના સુખ

તથાનિદાનમ્, તત્ અવિદ્યમાન યસ્ય સ તથા-પેદ્ધિક પારલૌકિક સુસલાન્સારશિ
 ર્થસ્ય । ‘અપુસ્તુર’ અલ્પૌસ્તુક્ય ઉત્કષ્ઠાવર્જિત । ‘અવહિન્લેસ’ અવહિન્લેસ્યા
 અવિદ્યમાનાવદિ છેડ્યા=મનોરથિર્યસ્યાસૌ તથા અસયમમનોરથિરિહિ ર્થસ્ય ।
 ‘સુસામળરપ’ સુધામળ્યરત -સુ=સુદૃઢતથા ધામળ્ય=ધમળધર્મ રત=તત્પર —
 શુદ્ધસાધુધર્મપાલક ર્થસ્ય । ‘દત’ દાત ક્રોધાદિદમનાત્, યદા ‘દ્યન્ત’
 ર્થિરિચ્છાયાપસે દ્યયોઃ=રાગદેપયો અન્ત-વિનાશો યમ્ સ તથા રાગદેવર્જિત

બાહે કુઠાર સે ઉસ કુશલ કર્મરુપ કલ્પવૃક્ષ કો ફાટ દેતા હૈ। એસા
 યહ નિદાન હોતા હૈ। હસ નિદાન સે-હસ લોક સપધી ઓર પરલોકસ
 ધધી સુખ્મ કી ઇલાસા સે યે રહિત થે(અપુસ્તુર) હનકે નિસ મેં કિસી
 પદાર્થ આદિ કે સેવન કરને કી યા ઉમકે અલ્લોકન કાને કી ચિલકુલ
 કિસી તરહ સે બી ઉત્કઠા નહીં રહી થી। (અવહિન્લેસે) ઓર હનકી
 મનોવૃત્તિ મયમ આદિ અનુષ્ઠાન કે પરિપાલન કરને મેં હતની ંકામ
 યનગઈ થી કિ વહ ંક ંળ બી ઉમસે બાહિર નહીં જાતી થી અર્થાત્
 અમયમમાયકી તરહ હનકી ચિત્તરૂપિ સ્યમ મેં નહીં જાતી થી। ‘સુસા
 મળરપ’ યે અચ્છી તરહ સે શુદ્ધ સાધુધર્મ કે પાલન કરન મેં બી
 જાન સે તત્પર રહતે થે। (દતે) ક્રોધાદિકવાય કા ઉન્હોં ને ંકાન્તતઃ
 દમન કર દિયા થા। અર્થાત્-(દતે) પદ કી છાયા દ્યન્ત બી હોતી હૈ।
 હસ પક્ષ મેં (ઉન્હોંને રાગ દેપ હન દોનો કા અન્ત-વિનાશ-કર દિયા

અને ઉદ્ધ વગેરે પદ્ધતીની પ્રાપ્તિરૂપ પરલોકના સુખની અભિલાષરૂપ તીક્ષ્ણ ધાર
 ધાળી નિવાણા રૂપી કુહાડીથી ઉઠી નાખવામા આવે છે તાત્પર્ય એ છે કે નિમ્મલ
 કરવાથી મોક્ષપ્રાપ્તિ દ્વર ઠેકાય છે અને છવને સ આરંભ વાર વાર પરિશ્રમજી કરવું
 પડે છે સ્કન્ધક અવ્યભાર આ પ્રકારના નિવાળાથી રહિત હતા તેઓ આલોક અને
 પરલોકના સુખની લાલસાથી રહિત હતા (અપુસ્તુર)કાઠપણ પદ્ધતિનું સેવન કરવાની
 કે અવલોકન કરવાની ઉત્કેહાથી તેઓ રહિત હતા ‘અવહિન્લેસ’ સંયમ વગેરે
 અનુષ્ઠાનના પરિપાલનમા અત્યંત લીન બની જવાથી એક ક્ષત્રુમાત્ર પણ તેમની
 ચિત્તવૃત્તિ અનયમ બાવ તરફ વળતી ન હતી એટલે કે તેમની મનોવૃત્તિ અસંયમ
 બાવ તરફ સ્વપ્નમાં પણ જતા ન હતી “સુસામળરપ” તેઓ શુદ્ધ સાધુ
 ધર્મનું પાલન કરવામા સદા તત્પર રહેતા હતા તાત્પર્ય કે પોતાના પ્રાણની
 પણ પરવા ઠરા વગર તેઓ નાધુધર્મનું ઉત્કેહ રીતે પાલન કરતા ના
 દત ’ ક્રોધાદિ કરાવને તેમણે બિલકુલ કમાવી દીધા હતા અથવા- (દત)
 પરની છાયા (દ્યન્ત) પણ યાવ છે તેથી એ અથ પણ ધગરી શકાય-કે તેમણે
 રાગદેપ જ નેના અન્ત નાશ કરી નાખ્યો હતો આ રીતે સાધુના વધામ

इत्यर्थः, स एतादृशः सन् स्कन्दकः 'इणमेव' इदमेव=जिनोक्तमेव 'निगमं पाव-
यणं' नैर्ग्रन्थं प्रवचनं 'पुरओ काउं' पुरतः कृत्वा=अग्रे कृत्वा मार्गानभिज्ञो मार्गज्ञ-
जनमिव पुरतः कृत्वा प्रधानीकृत्य 'विहरइ' विहरति तिष्ठतीति ॥ सू० १३ ॥

स्कन्दकस्य दीक्षाग्रहणानन्तरं भगवतो जिनपदविहरणं स्कन्दकस्य तपश्च-
रणादिकञ्च दर्शयन्नाह 'तएणं समणे इत्यादि ।

मूलम्—तएणं समणे भगवं महावीरे कयंगलाओ नयरओ
छत्तपलासयाओ चेइयाओ पडिनिक्खमइ पडिनिक्खमित्ता वहिया
जणवयविहारं विहरइ तएणं से खंदए अणगारे समणस्स भगवओ
महावीरस्स तहारुवाणं थेराणं अंतिए सामाइय माइयाइं
अंगाइं अहिज्जइ अहिज्जित्ता जेणेव समणे भगवं महावीरे
तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं वंदइ
नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासीइच्छामिणं भंते तुब्भेहिं
अब्भणुण्णाए समाणे मासियं भिक्खुपडिमं उवसंपज्जित्ताणं
विहरित्तए अहासुहं देवाणुप्पिया मा परिवंधं करेह तएणं से
खंदए अणगारे समणेणं भगवया महावीरेणं अब्भणुन्नाए
समाणे हट्ठे जाव नमंसित्ता मासियं भिक्खुपडिमं उपसंप-
ज्जित्ताणं विहरइ । तएणं से खंदए अणगारे मासियं भिक्खु

था । ऐसा अर्थ होता है । इस प्रकार की स्थिति सम्पन्न बने हुए वे
स्कन्दक अनगार (इणमेव) इस जिनोक्त ही 'निगमं पावयणं' नैर्ग्र-
न्थ प्रवचन को 'पुरओ काउं' मार्ग को नहीं जानने वाले को आगे कर
के चलता है उसी प्रकार ये स्कन्दक अनगार (विहरइ) भगवान के
साथ निर्ग्रन्थ प्रवचन को आगे कर के विचरने लगे ॥ सू० १३ ॥

शुश्रूषी युक्त जनेका डोवाथी स्कन्दक अणुगार "इणमेव" जिनोक्त " निगमं
पावयण पुरओ काउ विहरइ" (जैसी रीते मार्गथी अणुगार व्यक्ति मार्ग ज्ञानुत्तारने
आगण राणीने तेनी पाछण जय छे तेवी रीते निर्ग्रन्थ प्रवचनने आगण करीने
(निर्ग्रन्थ प्रवचनने) अनुसरिने लगवाननी साथे विचरवा लाग्या ॥ सू १३ ॥

पडिम अहासुत्त अहाकप्प अहामग्गं अहातच्च अहासम्म काएण
 फासेइ पालेइ सोहेइ तीरेइ पुरेइ किंहेइ अणुपालेइ आणोए
 आराहेइ । सम्म काएण फासित्ता जाव आराहेत्ता जेणेव समणे
 भगव महावीरे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता समण भगव
 महावीर वदइ नमसइ वदित्ता नमसित्ता एव वयासी इच्छामि णं
 भते । तुब्भेहिं अब्भणुस्साए समाणे दोमासिय भिक्खुपडिम
 उवसपज्जित्ताण विहरित्तेए । अहासुह देवाणुप्पिया । मा परिवध
 करेइ त चेष । एव ते मासिय चउम्मासिय । पचमासिय । छम्मा
 सिय । सत्तमासिय । पढम सत्तराइदिय दोब्ब सत्तराइदिय । तच्च
 सत्तराइदिय । अहोराइदिय । एगराइय । तएण से खदए अणगारे
 एगराइय भिक्खुपडिम अहासुत्त जाव आराहेत्ता जेणेव समणे भगव
 महावीरे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता समणं भगव महा
 वीर वदइ नमसइ वदित्ता नमसित्ता एव वयासी-इच्छामि णं
 भते । तुब्भेहिं अब्भणुस्साए समाणे गुणरयण सवच्छर तवो
 कम्म उवसपज्जित्ताण विहरित्तेए, अहासुह देवाणुप्पिया ।
 मा पडिधध करेइ । तएण से खदए अणगारे समणेणं भगवया
 महावीरेण अब्भणुस्साए समाणे गुणरयणसवच्छर तवोकम्म
 उवसपज्जित्ताण विहरइ । त जहा-पढमं मास चउत्थं चउत्थे
 णं अणिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं दिया ठाणुक्कुट्टए सूरामिमुहे
 आयावणभूमीए आयावेमाणे रसिं धीरासणेण अवाउढेणय ।
 एव दोच्च मास छट्ठ छट्ठेण अणिक्खित्तेणं दिया ठाणुक्कुट्टिए

सूराभिमुहे आयावणभूमीए आयावेमाणे रत्तिं वीरासणेणं अवा-
उडेण य । एवं तच्चं मासं अट्ठमं अट्ठमेणं । चउत्थं मासं
दसमं दसमेणं । पंचमं मासं बारसमं बारसमेणं । छट्ठं मासं
चउद्दसमं चउद्दसमेणं । सत्तमं मासं सोलसमं सोलसमेणं ।
अट्ठमं मासं अट्ठारसमं अट्ठारसमेणं । नवमं मासं वीसइमं
वीसइमेणं । दसमं मासं वावीसइमं वावीसइमेणं । एक्कारसमं
मासं चउवीसइमं चउवीसइमेणं । बारसमं मासं छव्वीसइमं छव्वी-
सइमेणं तेरसमं मासं अट्ठवीसइमेणं अट्ठवीसइमेणं । चउद्दसमं
मासं तीसइमं तीसइमेणं । पण्णरसमं मासं बत्तीसइमं बत्तीसइमेणं
सोलसं मासं चोत्तीसइमं चोत्तीसइमेणं । अणिविखत्तेणं तवो
कम्मेणं दिया ठाण्णकुडिए सूराभिमुहे आयावणभूमीए आया-
वेमाणे रत्तिं वीरासणेणं आवाउडेणं, तएणं से खंदए अणगारे
गुणरयणसंवच्छरं तवोकम्मं अहासुत्तं, अहाकप्पं जाव आग-
हेत्ता, जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ, उवाग-
च्छित्ता समणं भगवं महावीरं वंदइ, नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता
बहूहिं चउत्थछट्ठमदसमदुवालसेहिं मामद्धमासखमणेहिं
विचित्तेहिं तवो कम्मेहिं अप्पाणं भावे माणे विहरइ । तएणं
से खंदए अणगारे तेणं उरालेणं, विउलेणं, पयत्तेणं, पग्गहि-
एणं, कल्लाणेणं, सिवेणं, धन्नेणं मंगल्लेणं, सस्सरिएणं, उद-
ग्गेणं, उदत्तेणं, उत्तमेणं, उदारेणं, महाणुभागेणं, तवोकम्मेणं
सुक्के, लुक्खे, निम्मंसे, अट्ठिचम्मावणच्चे किडिकिडियाभूए, किसे
धमणिसंतए जाए याविहोत्था । जीवं जीवेण गच्छइ । जीवं

जीवेण चिट्ठइ । भास भासित्ता विगिलाइ, भास भासमाणे
गिलाइ, भास भासिस्सामीति गिलाइ । से जहानामए कट्ट
सगडियाइवा पत्तसगडियाइवा, तिलसगडियाइवा भडगस
गडियाइवा, परडकट्टसगडियाइवा, इगालसगडियाइवा० उण्हे
दिण्णा सुक्का समाणी ससइ गच्छइ, ससइ चिट्ठइ एवामेव
खदए वि अणगारेससइ गच्छइ, ससइ चिट्ठइ, उवाचिए तवेणं
अवचिए मससोणिएण ह्रयासणे विव भासरासिपडिच्छणे तवे
णं, तेएणं, तवसेयसिरीए अईव अईव उवसोभेमाणे चिट्ठइ॥१४॥

छाया—ततः स्वच्छ भ्रमणो भगवान् महावीरः कृतगलातो नगरीतं छत्र
पलाशतक्षेत्यात् प्रतिनिष्कामति, प्रतिनिष्क्रम्य बहिर्जनपदविहारं विहरति । ततः
स्वच्छ स स्कन्दकोउनगार भ्रमणस्य भगवतो महावीरस्य तयारूपाणां स्यवित्तां

स्कन्दक की वीक्षा हो जाने के बाद भगवान बाहर जनपद में
विहार किया और स्कन्दक ने तपस्वरण आदि कार्य किये, इन यात को
प्रदर्शित करने के लिये सूत्रकार कहते हैं—‘तएणं समणे भगव
महावीरे’ इत्यादि

सूत्रार्थ—(तएणं समणे भगव महावीरे) इसके बाद भ्रमण भगवान्
महावीर (कयंगलाओ नयरीओ) कृतगला नगरी से (छत्रपलासयाओ
वेइयाओ) छत्रपलाशक क्षेत्र से (पडिनिक्खमइ) निकले (पडिनिक्खमि
त्ता) निकलकर (बहिया अणययविहारं विहरइ) वे जनपद में विहार

स्कन्दक की वीक्षा शब्द तथा पछी भगवान् महावीर देश विदेश में विहार
शब्द कर्मों अने स्कन्दक तपस्या करवा भाडी जो यात सूत्रकार नीजिना सूत्र
पठे जातावे छे—त एणं समणे भगव महावीरे इत्यादि

सूत्रार्थ—(तएणं समणे भगव महावीरे) जोर जोर भ्रमण भगवान्
महावीर (कयंगला ओ नयरीओ) कृतगला नगरीना (छत्रपलासयाओ वेइयाओ)
छत्रपलाशक नामना क्षेत्रभाषी (तयान भाषी) (पडिनिक्खमइ) पलाश नीजिना
(विहार कर्म) (पडिनिक्खमिता) भाषी नीजिनीने (बहिया अणययविहार
विहरइ) तेजो जनपद में विहार करवा लाया (तएणं से खदए अनगारे)

मन्तिके सामायिकादीनि एकादशानि अधीते अधीत्य यत्रैव श्रमणो भगवान् महावीरस्तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्यति वन्दित्वा नमस्यित्वा एवमवादीत् इच्छामि खलु भदन्त ! युष्माभिरभ्यनुज्ञातः सन् मासिकीं भिक्षुप्रतिमामुपसंयद्य विहर्तुम् । यथासुखं देवानुप्रिय ! मा प्रतिबन्धं

करने लगे । (तण्णं से खंदण अणगारे) इसके पश्चात् वे स्कन्दक अनगर (समणस्स भगवओ महावीरस्स) श्रमण भगवान् महावीर के (तहारूवाणं थेराणं अंतिण) तथारूप स्थविरो के पास (सामाइय-माइयाइं एक्कायसअंगाइं अहिज्जइ) सामायिक आदि ग्यारह अङ्गों का अध्ययन करने लगे । (अहिज्जित्ता) अध्ययन कर के फिर वे (जेणेव समणे भगवं महाविरे तेणेव उवागच्छइ) जहाँ श्रमण भगवान् महावीर विराजमान थे वहाँ आये (उवागच्छित्ता) आ करके (समणं भगवं महावीरं वंदइ नमसइ) उमने श्रमण भगवान् महावीर को वंदना की और नमस्कार किया (वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी) वंदना नमस्कार करके वे उनसे इस प्रकार कहने लगे (इच्छामि णं भन्ते ! तुव्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे मासियं भिक्खुपडिमं उवसं पज्जित्ता णं विहरित्तण) हे भदन्त ! जो आप आज्ञा प्रदान करें तो मैं मासिक भिक्षु प्रतिमा को स्वीकार करके-विचरूँ । (अहासुहं देवानु-प्पिया) भगवान् महावीरने तब उनसे कहा हे देवानुप्रिय ! तुम्हें जिस प्रकार से सुख हो वैसा करो । (मा पडिबन्धं करेह) विलम्ब मत करो ।

त्यारे स्कन्दक अणुगारे (समणस्स भगवओ महावीरस्स) श्रमण भगवान् महावीरना (तहारूवाणं थेराणं अंतिण) तथा प्रकारना स्थविरेनी पासे (सामाइयमाइयाइं एक्कायसअंगाइं अहिज्जइ) सामायिक वगेरे अगियार अंगोनु अध्ययन करुं (अहिज्जित्ता) अध्ययन करीने (जेणेव समण भगव महाविरे तेणेव उवागच्छइ) जया श्रमण भगवान् महावीर भिराजता छता त्यां गया. (उवागच्छित्ता) त्या जईने (समण भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ) तेमणे श्रमण भगवान् महावीरने वदन नमस्कार कर्यां (वंदित्ता नमंसित्ता-एव वयासी) वदन नमस्कार करीने तेमणे भगवानने आ प्रमाणे कहुं (इच्छामि णं भन्ते ! तुव्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे मासियं भिक्खुपडिमं उवस-पज्जित्ता णं विहरित्तण) हे भगवन् ! जे आपनी आज्ञा डेय तो भडिनानी भिक्षुप्रतिमा अंगीकार करीने विचरवानी भारी छच्छा छे (अहासुहं देवा-नुप्पिया) त्यारे महावीर भगवाने तेमने कहुं तमने जेम सुख उपजे तेम

कुरु । ततः सख्यं स स्कन्दकोऽनगारो मासिकीं मिश्रप्रतिमां यथा सूत्रं यथाहर्षं यथामार्गं यथा तर्क्यं यथा सम्यक् कायेन स्पर्शयति पारयति, क्षोषयति तीरयति पूरयति कीर्तयति अनुपासयति, आहूया आराधयति, सम्पक् कायेन स्पर्शयित्वा यावदाराध्य यद्यैव धमणो भगवान् महावीरस्तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य भगवन्

(तर्पणं से खंदप अणगारे समणेणं भगवत्वा महावीरेणं भगवणुत्तरेणं समाणे इहे जाव नमस्तिता मासिय मिश्रपुपडिमं उषसपज्जिस्ताणं विहरह) इसके बाद उन स्कन्दक अनगार ने अमण भगवान श्री महावीर स्वामी से आज्ञा लेकर मासिक मिश्रप्रतिमा को धारण किया । (तर्पणं से खंदप अणगारे मासियं मिश्रपुपडिमं अहासुत्तं अहाकप्यं, अहामगं, अहातच्चं, अहासम्मं काएण फासेह) इसके बाद उन स्कन्दक अनगा(ने उस मासिक मिश्रप्रतिमा का सूत्र के अनुसार, कल्प के अनुसार, मार्ग के अनुसार, सत्यता पूर्वक बहुत ही अच्छी तरह काय से स्पर्श-आवरण किया (पाछेह) उसका पालन किया (सोहेह) उसे शोधित किया (तीरेह, पूरेह किहेह, अणुपाछेह, आणाए आराहेह) उसे समाप्त किया, उसे पूर्ण किया, उसका कीर्तन किया, अनुपालन किया और आज्ञा के अनुसार उसे आराधित किया । (सम्म काएण पासित्ता जाव आराहेत्ता जेणेव समणे भगवन् महावीरे तेणेव उवागच्छह) अच्छी तरह काय से स्पर्श-आवरण कर यावत् उसे आराधित कर फिर वे जहां अमण

करी (मा पडिक्क करेह) ५२८ विहम्भ करेयो नही (तर्पणं से खंदप अणगारे समणेणं भगवत्वा महावीरेणं भगवणुत्तरेणं समाणे इहे जाव नमस्तिता मासिय मिश्रपुपडिमं उषसपज्जिस्ताणं विहरह) त्याग्याह स्कन्दक अणुगारे अणुवान महावीरनी आज्ञा एउने मासिक मिश्रप्रतिमा अज्जीकार करी अने प्रभुने पढन नभउत्ताह करीने बियरवा छाब्बा (तर्पणं से खंदप अणगारे मासिय मिश्रपुपडिमं अहासुत्तं, अहाकप्यं अहामगं अहातच्चं, अहासम्मं काएण फासेह) त्याग्याह ते स्कन्दक अणुगारे मासिक मिश्रप्रतिमानु सूत्रानुसार, कल्पानुसार, मार्गानुसार अने सत्यतापूर्वक धर्मी ए सारी रीते आयाधी आराधन कर्हुं, " पाछेह " तेनु पालन कहु (सोहेह) शोधन कहु, (तीरेह पूरेह किहेह अणुपाछेह आणाए आराहेह) तेने समाप्त कहु तेने पूछं कहु, तेनु कीर्तन कहु तेनु अनुपालन कहु अने आज्ञानुसार तेनी आराधना करी. (सम्म काएण पासित्ता जाव आराहेत्ता जेणेव समणे भगवन् महावीरे तेणेव उवागच्छह) त्याग्याह मासिक मिश्रप्रतिमानु आयाधी सारी रीते आराधन करीने यावत् उपदेशकन आराधना सुधीनी बिधि पूरी करीने

मन्तिके सामायिकादीनि एकादशांगानि अधीते अधीत्य यत्रैव श्रमणो भगवान्
महावीरस्तत्रैवोपागच्छति, उपागत्य श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्यति
वन्दित्वा नमस्यित्वा एवमवादीत् इच्छामि खलु भदन्त ! युष्माभिरभ्यनुज्ञातः सन्
मासिकीं भिक्षुप्रतिमामुपसंपद्य विहर्तुम् । यथासुखं देवानुप्रिय ! मा प्रतिबन्धं

करने लगे । (तण्णं से ग्वदण अणगारे) हमके पश्चात् वे स्कन्दक
अनगार (समणस्स भगवओ महावीरस्स) श्रमण भगवान् महावीर
के (तहास्सवाणं थेराणं अंतिण) तथारूप स्थविरो के पास (सामाह्य-
माह्याइं एक्कारसअंगइं अहिज्जइ) सामायिक आदि ग्यारह
अङ्गों का अध्ययन करने लगे । (अहिज्जित्ता) अध्ययन कर के
फिर वे (जेणेव समणे भगवं महाविरे तेणेव उवागच्छइ) जहाँ
श्रमण भगवान् महावीर विराजमान थे वहाँ आये (उवागच्छित्ता)
आ करके (समणं भगवं महावीरं वदइ नमसइ) उगने श्रमण भगवान्
महावीर को वंदना की और नमस्कार किया (वंदित्ता नमंसित्ता एवं
वयासी) वंदना नमस्कार करके वे उनसे इस प्रकार कहने लगे (इच्छा
मि णं भंते ! तुव्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे मासियं भिक्खुपडिमं उवसं
पज्जित्ता णं विहरित्तए) हे भदन्त ! जो आप आज्ञा प्रदान करें तो मैं
मासिक भिक्षु प्रतिमा को स्वीकार करके-विचरूँ । (अहासुहं देवाणु-
प्पिया) भगवान् महावीरने तब उनसे कहा हे देवानुप्रिय ! तुम्हें जिस
प्रकार से सुख हो वैसा करो । (मा पडिवंधं करेह) विलम्ब मत करो ।

त्यारे स्कन्दक अणुगारे (समणस्स भगवओ महावीरस्स) श्रमण भगवान्
महावीरना (तहास्सवाणं थेराणं अंतिण) तथा प्रकारना स्थविरेनी पासे
(सामाह्यमाह्याइं एक्कारसअंगइं अहिज्जइ) सामायिक वगेरे अगियार
अंगोनुं अध्ययन करुं (अहिज्जित्ता) अध्ययन करीने (जेणेव समण भगवं
महावीरे तेणेव उवागच्छइ) तथा श्रमण भगवान् महावीर भिराजता हुता त्यां
गया. (उवागच्छित्ता) त्यां गइने (समण भगवं महावीरं वदइ नमसइ)
तेमणे श्रमण भगवान् महावीरने वदन नमस्कार कर्यां (वंदित्ता नमंसित्ता-
एव वयासी) वदन नमस्कार करीने तेमणे भगवानने आ प्रभाणे कहुं
(इच्छामि णं भंते ! तुव्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे मासियं भिक्खुपडिमं उवसं-
पज्जित्ता णं विहरित्तए) हे भगवन् ! जे आपनी आज्ञा होय तो भडिनानी
भिक्षुप्रतिमा अगीकार करीने वियरवानी भारी छ अछ छे (अहासुहं देवा-
णुप्पिया) त्यारे महावीर भगवाने तेमने कहुं. तेमने जेभ सुथ उपजे तेम

रात्रि दिवां, तृतीयां सप्तरात्रिं दिवां, अहोरात्रिं दिवां, एकरात्रिकीम् । ततः
 त्वत्तु स स्कन्दकोऽनगार एकगत्रिकीं मिश्रप्रतिमां यथाशुभं यावदागम्य यत्रैव
 भ्रमणा भगवान् महावीरस्तत्रावागच्छति उपागत्य भक्षणं भगवन्तं महावीरं
 वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्यित्वा एवमवादीत्, च्छामि त्वत्तु मरुतं, युष्मा
 मिरभ्यनुशात सन् गुणरत्न सत्सरं तप कर्मापिसपथं विहर्तुम् । यथाशुभं दवा

(दोच्छं सप्तरात्रिं दिवं) दूसरी अर्थात् चौथी सात दिनरात की (तच्छ
 सप्तरात्रिदिवं) तीसरी अर्थात्-दूसरी सात रात दिन की (अहोरात्रिदिवं)
 चौथी अर्थात् ग्यारहवीं एक अहोरात्रकी (एगरात्रि) पाँचवीं अर्थात्
 पारहवीं एक रात की, इस प्रकार इन पारह मिश्रप्रतिमाओंका उन
 स्कन्दक अनगार ने आराधन किया । (तर्पणं से स्वर्ण अणगारे) इसके
 बाद वे स्कन्दक अनगार (एगरात्रि मिश्रपश्चिम आहामुस्तं जाव आरा
 हेत्ता) एक रातवाली पारहवीं मिश्रप्रतिमा की यथाशुभं यावत्
 आराधना करके (जेणेव समणे भगव महावीर तेणेव उवागच्छह)
 जहा भ्रमण भगवान् महावीर विराजमान थे वहाँ आये । (उवागच्छित्ता)
 वहा आकर उन्होंने (समण भगव महावीर वदह नमसह) भ्रमण भग
 वान महावीर को वदना की नमस्कार किया (वन्दित्वा नमसित्ता)
 वदना नमस्कार करके (एव वयासी) ऐसा कहा (इच्छामि ण मंते ।)
 तुम्हें-अभ्यनुशात समाणे गुणरत्न सत्सरं तप कर्मापिसपथं विहर्तुम्

पहेली-जेठले के आठवीं सात रात्रिदिवसनी, ' दोच्छ सप्तरात्रि दिवं ' पीछ
 जेठले के नववीं सात दिवस रातनी तच्छ सप्तरात्रि दिवं ' तीछ जेठले के
 इसवीं सात रात्रि दिवसनी ' अहोरात्रि दिवं ' चौथी-जेठले के अत्रिवासी
 जेठ दिवस रात्रिनी, ' एगरात्रि ' पाचवीं जेठले के आरवीं जेठ रात्रिनी,
 आ प्रभावे आरे मिश्र प्रतिमानु आराधन कथु ' तर्पणं से स्वर्ण अणगारे
 एगरात्रि मिश्रपश्चिम आहामुस्तं जाव आराहेत्ता ' त्यार आह जेठ रात्रिनी
 आरवीं मिश्रप्रतिमानु सुत्रानुसार आराधन करीने स्त ॥ अणुवार ' जेणेव
 समणे भगव महावीर तेणेव उवागच्छह ' अथ अणु भगवान् महावीर भित्त
 अमान कीता त्या आन्वा उवागच्छिता त्या आपाने तेमजे ' समण भगव
 महावीर वदह नमसह ' अणु भगवान् महावीरने वदना नमस्कार कथो
 ' वन्दित्वा नमसित्ता एव वयासी ' वदना नमस्कार करीने तेमजे महावीर
 प्रभुने आ प्रभावे कथु- (इच्छामि ण मंते । तुम्हें अभ्यनुशात समाणे गुणरत्न
 सत्सरं तप कर्मापिसपथं विहर्तुम्) के भगवान् ! ने आप

भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्यति, वन्दित्वा नमस्यित्वा एवमादीत्, इच्छामि खलु भदंत ! युष्माभिरनुज्ञातः सन् द्वैमासिकीं भिक्षुप्रतिमामुपसंपद्य विहर्तुम् । यथासुखं देवानुप्रिय ! मा प्रतिबन्ध कुरु तदेव, एवं त्रैमासिकीं, चातुर्मासिकीं, पंचमासिकीं, षण्मासिकीं, सप्तमासिकीम्, प्रथमां सप्तरात्रि दिवां, द्वितीयां सप्त

भगवान् महावीर विराजमान ये वहां आये (उवागच्छित्ता) वहां आकर के (समणं भगवं महावीरं जाव नमसित्ता एवं वयासी) उन्होंने ने श्रमण भगवान् महावीर को यावत् नमस्कार करके उनसे इस प्रकार कहा—(इच्छामि णं भंते ! तुम्हेहिं अब्भणुण्णाए समाणे दो मासियं भिक्खुपडिमं उवसंपज्जित्ता णं विहरित्ताए) हे भदन्त ! जो आप आज्ञा प्रदान करें तो मैं द्विमासिक भिक्षुप्रतिमा को धारण करने की इच्छा करता हूं । (अहासुहं देवानुप्पिया मा पडिवंधं करेह) हे देवानुप्रिय ! तुम्हें जैसे सुख हो वैसा करो विलम्ब मन करो । (तं चेव एवं ते मासियं) इसके बाद उन स्कन्दक अनगार ने द्विमासिक भिक्षुप्रतिमा को भगवान् से आज्ञा प्राप्त कर इत्यादि समस्त कथन वहां पहिली भिक्षुप्रतिमा के विषय में जैसा कहा गया है वैसा अक्षरशः समझ लेना चाहिये । इसी तरह से त्रिमासिक (चउम्मासियं) चतुर्मासिक (पंचमासियं) पंचमासिक (छम्मासियं) छहमासिक (सत्तमासियं) सप्तमासिक तथा (पढमं सत्तराहं दिव) प्रथम अर्थात् आठवीं सात रात्रि दिवस की

तेषां न्यां श्रमणु भगवान् महावीर विराजमान होता त्या आन्था- (उवागच्छित्ता) त्यां आवीने “ समण भगवं महावीरं जाव नमसित्ता एवं वयासी ” श्रमणु भगवान् महावीरने विधि पूर्वक वंदन नमस्कार करीने आ प्रभाणु कलु—“ इच्छामि णं भंते ! तुम्हेहिं अब्भणुण्णाए समाणे दो मासियं भिक्खुपडिमं उवसंपज्जित्ता णं विहरित्ताए ” छे लगवन् । ने आपनी आज्ञा डोय तो हुं द्विमासिक (दो मासनी) भिक्षुप्रतिमा अंगीकार करवानी छब्ब रात्रि छु. “ अहासुहं देवानुप्पिया ! मा पडिवंधं करेह ” छे देवानुप्रिय ! तमने सुअ उपणे तेम करे परतु आवा शुल कार्यमां विदंभ करेशो नडीं. “ तं चेव एवं तेमासियं ” त्थार गाढ लगवाननी आज्ञा लधने स्कन्दक अणुगारे द्विमासिक भिक्षुप्रतिमा अंगीकार करी. मासिक भिक्षु प्रतिमाना पादनमां ने वणुन उपर करवामां आणुं छे तेवुं वणुन द्विमासिक भिक्षु प्रतिमाना पादनमां पणु अक्षरशः समणु लेवुं ओज रीते स्कन्दक अणुगारे त्रिमासिक “ चउम्मासियं ” त्थार मासिक, पंचमासियं पांच मासिक “ छम्मासियं ” छमासिक “ सत्तमासियं ” सात मासिक, तथा “ पढमं सत्तराहं दिव ”

रात्रि विंशं, तृतीयां सप्तरात्रिं विंशं, अहोरात्रिं विंशं, एकरात्रिकीम् । तत्र
 खलु स स्कन्दकोऽनगार एकरात्रिकीं मिधुप्रतिमां यथासुत्रं यावदाराध्य यज्ञेन
 भ्रमणा भगवान् महावीरस्तत्रापागच्छति उपागत्य भक्षणं भगवन्तं महावीरं
 वन्दते नमस्यति, वदित्वा नमस्यित्वा एवमवादीत्, च्छामि खलु मदत्, पुष्पा
 भिरभ्यनुज्ञात सन् गुणरत्न सप्तसर तप कर्मपसेपथं विहर्तुम् । यथासुतं देवा

(दोच्छं सप्तरात्रं दिवं) दूसरी अर्थात् नौवीं मान दिनरात की (तच्छं
 सप्तरात्रं दिवं) तीसरी अर्थात्-दूसरी मान रात दिन की (अहोरात्रं दिवं)
 चौथी अर्थात् ग्यारहवीं एक अहोरात्रकी (एगरात्रं) पाँचवीं अर्थात्
 बारहवीं एक रात की, इस प्रकार इन बारह मिधुप्रतिमाओंका उन
 स्कन्दक अनगार ने आराधन किया । (तर्पणं से त्वं अणगारे) इसके
 बाद वे स्कन्दक अनगार (एगरात्रं मिधुपुष्टिम आहामुक्त जाय आरा
 ह्स्ता) एक रातवाली बारहवीं मिधुप्रतिमा की यथासुत्र यावत्
 आराधना करके (जेनेष समणे भगव महावीरे तेनेष उवागच्छह)
 जहाँ भ्रमण भगवान् महावीर विराजमान एवहाँ आये । (उवागच्छिता)
 वहाँ आकर उन्होंने (समण भगव महावीरं वदह नमसह) भ्रमण भग
 वान् महावीर को वदना की नमस्कार किया (वदित्वा नमसित्वा)
 वदना नमस्कार करके (एव यथासी) ऐसा कहा (च्छामि णं मते ।)
 सुस्मेदि-अभ्यनुज्ञात समाणे गुणरत्न सप्तसरं तवो कर्म उवसपत्ति

पछेही-छेदे के आठवीं सात रात्रिदिवसनी ' दोच्छं सप्तरात्रं दिवं ' नील
 छेदे के नववीं सात दिवस रातनी, तच्छं सप्तरात्रं दिवं ' त्रील छेदे के
 इक्षुभी सात रात्रि दिवसनी ' अहोरात्रं दिवं ' चौथी-छेदे के अनिधारभी
 छेदे दिवस रात्रिनी ' एगरात्रं ' पाँचवीं छेदे के बारभी छेदे रात्रिनी,
 आ प्रभावे बार मिधु प्रतिमानु आराधन कर्तुं ' तर्पणं से खद अणगारे
 एगरात्रं मिधुपुष्टिम आहामुक्त जाय आराह्ता " त्पार बाद छेदे रात्रिनी
 बारभी मिधुप्रतिमानु सूत्रानुसार आराधन करीने छेदे अणुभार " जेनेष
 समण भगव महावीरे तणष उवागच्छह " आ अभ्यनुज्ञात भगवान् महावीर निरा
 नमान छेदा त्पार आ-आ उवागच्छिता ' त्पार आनीने तेमछे " समणं माव
 महावीर वदह नमसह अभ्यनुज्ञात भगवान् महावीरने वदन नमस्कार कर्तुं
 वदित्वा नमसित्वा एव यथासी " वदन नमस्कार करीने तेमछे महावीर
 प्रभुने आ प्रभावे कर्तुं- (च्छामि णं मते । सुस्मेदि अभ्यनुज्ञात समाणे गुणरत्न
 सप्तसरं तवो कर्म उवसपत्ति) के भगवान् । आ

નુપ્રિય મા પ્રતિવન્ધં કુરુ, તતઃ સ્કન્દકોડનગારઃ શ્રમણેન ભગવતા મહા-
વીરેણ અભ્યનુજ્ઞાતઃ સન્ ગુણરત્નસંવત્સર તપઃકર્મોપસંપદ્ય વિહરતિ તદ્યથા
પ્રથમં માસં ચતુર્થચતુર્થેનાનિક્ષિપ્તેન તપઃ કર્મણા દિયા સ્થાનોત્કુટુકઃ સૂર્યાભિ-
મુલ્લઃ આતાપનભૂમૌ આતાપયન્, રાત્રિ વીરાસનેનાપ્રાવૃતશ્ચ । એવં દ્વિતીયં માસં
તાળં વિહરિત્તા ૧) હે ભદ્રન્ત ! મૈં ચાહતા હૂં કિ આપ સે આજ્ઞા પ્રાપ્ત
કર મૈં ગુણ રત્ન સવત્સર નામક તપ ધારણ કરૂં । પ્રભુને કહા (અહાસુહં
દેવાણુપ્પિયા) હે દેવાણુપ્રિય ! તુમ્હે જૈસા સુખ હો વૈસા કરો । (મા
પડિવંધં કરેહ) હસ શુભકાર્ય મૈં વિલમ્બ મત કરો । (તણ સે સંદણ
અનગારે સમણેણં ભગવયા મહાવીરેણં અઞ્ઞણુણાણ સમાણે ગુણરયણં
સંવચ્છરં તવોક્કમ્મં ઉવસંપજ્જિત્તા ણં વિહરઈ) હસ પ્રકાર સે શ્રમણ
ભગવાન મહાવીર પ્રભુ કો આજ્ઞા પ્રાપ્ત કરે ઉન સ્કન્દક અનગાર ને
ગુણરત્ન સંવત્સર નામક તપ ધારણ ક્રિયા । (તંજહા) હસ તપ કી વિધિ
હસ પ્રકાર સે હૈ—(પદમં માસ ચઉત્થં ચઉત્થેણં અણિક્ખલ્લેણં તવોક્કમ્મેણં
દિયા ઠાણુક્કુટુહ સૂરાભિમુદ્દે, આયાવણભૂમીણ આયવેમાણે રત્તિ
વીરાસણેણં અવાચ્છેણ ય) પહિલે માસ મૈં નિરન્તર વ્યવધાન રહિત
એકાન્તર ઉપવાસ કરે તથા દિવસ મૈં ઉકડા આસન સે બેઠે ઓર
સૂર્યકી તરફ મુંહ કરકે આતાપના ભૂમિ મૈં આતાપના લેવે । તથા રાત્રિ

આજ્ઞા આપો તો હવે ગુણરત્ન સવત્સર નામક તપ કરવાની મારી ઇચ્છા
છે ભગવાને કહ્યું—(અહાસુહં દેવાણુપ્પિયા) હે દેવાણુપ્રિય ! આપને સુખ ઉપજે
તેમ કરો (મા પડિવંધં કરેહ) પરંતુ શુભકાર્યમા વિલમ્બ કરવો નહીં
(તણ સે સંદણ અનગારે સમણેણ ભગવયા મહાવીરેણ અઞ્ઞણુણાણ સમાણે-
ગુણરયણં સંવચ્છર તવોક્કમ્મ ઉવસંપજ્જિત્તા ણ વિહરઈ) આ રીતે શ્રમણ ભગ-
વાન મહાવીરની આજ્ઞા લઈને સ્કન્દક આણુગારે ગુણરત્ન સવત્સર તપની
આરાધના કરવા માડી (ત જહા) તે તપની વિધિ આ પ્રમાણે છે—(પદમં
માસં ચઉત્થં ચઉત્થેણ અણિક્ખલ્લેણ તવોક્કમ્મેણ દિયા ઠાણુક્કુટુહ સૂરાભિમુદ્દે,
આયાવણભૂમીણ આયવેમાણે રત્તિ વીરાસણેણ અવાચ્છેણ ય) પહેલા મહિનામાં
નિરન્તર (એક પણ દિવસ છોડ્યા સિવાય) એકાન્તર ઉપવાસ કરવા દિવસે
ઉકડક આસને બેસીને, સૂર્યની તરફ મુખરાખીને તડકાવાળી જમીનમા આ-
તાપના લેવી તાપ સહન કરવો અને રાત્રે વસ્ત્ર ઓઢ્યા વિના વીરાસને
બેસવું. (એવં ગોચ્ચં માસ છટ્ટુ છટ્ટેણ અણિક્ખલ્લેણ દિયા ઠાણુક્કુટુહ સૂરાભિમુદ્દે

पृष्ठपृष्ठेनानिर्दिष्टत्वेन दिवास्थानात्कुटुम्बः सूर्याभिमुख आतापनभूमौ आतापयन्
 रात्रिं वीरासनेना प्रावृत्तम् । एवं तृतीय मासमष्टमाष्टमन । चतुर्थ मासं दशम
 दशमेन । पचम मास द्वादशद्वादशेन । षष्ठ मास चतुर्दशचतुर्दशेन । सप्तम
 में वस्त्र ओढे विना वीरासन करे । (एवं दोन्ध मास छट्ठ छट्ठेण अणि
 विस्रसेण विना ठाणुक्कुडप सूर्याभिमुखे आपावणभूमौ आपावेह
 रत्तिं वीरासणेण अघाउधेण य) इसी प्रकार से दूसरे महीने में निरन्तर
 दो दो उपवास-घेले घेले पारणा करें । दिन में वस्त्रोढासन
 करे सूर्य के सामने आतापन भूमि में आतापना लेवे । एवं
 रात्रि में वस्त्र ओढे विना वीरासन करें । (एवं तच्च मासं)
 अष्टम अष्टमेण, चतुर्थ मास दशम दशमेण, पचम मासं पारसमं-वार
 समेण, छट्ठ मास चउदसमं-चउदसमेण, सप्तम मास सोलसमं-सोळ
 समेण) इसी तरह से तीसरा महीना भी उपलब्ध करना चाहिये अर्थात्
 जैसे प्रथममास और द्वितीयमास के दिन और रात्रि में रहने की विधि
 कही गई है उसी प्रकार की विधिपूर्वक इस मास में रहना चाहिये
 परन्तु इस तीसरे मास में निरन्तर अष्टम की तीन उपवास करने की
 तपस्या करे । चतुर्थमास में और सप्तविधि पहिछे की तरह से जाननी
 चाहिये परन्तु उपवास बार बार करें । पांचवें मासमें और सप्त विधि
 पहिछे जैसी ही है परन्तु उपवास पाँच पाँच करें । छठवें महीना में भी
 और सप्त विधि पहिछे जैसी ही जाननी चाहिये परन्तु उपवास छह-छह
 करें । सातवें महीना में भी दिन रातकी सप्त विधि पहिछे जैसी ही है

आपावणभूमौ आपावेह रत्तिं वीरासणेण अघाउधेण य) केवल प्रभात में भी
 महीनाभ्यां निरन्तर छठने पारखे छह करे दिनसे उठकर आसन से उठने तत्पश्चात्
 भुज शशीने तड्डा वेठे जाने रात्रे ओढा विना वीरासन करे (एवं तच्च
 मासं अष्टमेण चतुर्थ मास दशम दशमेण, पचम मासं पारसमं-वार
 समेण, छट्ठ मासं चउदसमं-चउदसमेण, सप्तम मासं सोलसमं-सोलसमेण) त्रीन्
 महीनाभ्यां निरन्तर अष्टम (त्रय उपवासने) पारखे अष्टम करवा केवल
 जाने जाहीनी तमात्र विधि पहिछा जाने त्रीन् मासानी विधि प्रभात में
 समझनी विधा महीनाभ्यां निरन्तर बार उपवासने पारखे बार उपवास करवा
 केवल जाने जाहीनी विधि पहिछा मास प्रभात में समझनी पांचवें महीने
 पाँच उपवासने पारखे पाँच उपवास करवा जाने जाहीनी सप्तमी विधि आश्विन
 प्रभात में समझनी छठे महीने छ उपवासने पारखे छ उपवास करवा जाने
 जाहीनी तमात्र विधि पहिछा मास प्रभात में समझनी सातवें महीने सात
 उपवासने पारखे सात उपवास करवा, द्विचर जाने रात्रे करवानी त्रीन् विधि

मासं षोडशषोडशेन । अष्टमं मासमष्टादशाष्टादशेन । नवमं मासं विंशतितमं विंशतितमेन । दशमं मासं द्वाविंशतितमद्वाविंशतितमेन । एकादशं मासं चतुर्विंशतितमचतुर्विंशतितममेन । द्वादशं मासं षड्विंशतितमषड्विंशतितमेन । त्रयोदश मासम् अष्टाविंशतितमाष्टाविंशतितमेन । चतुर्दशतम मासं त्रिंशत्तमत्रिंशत्त-

परन्तु उपवास सात-सात करे । (अष्टमं मासं अष्टारसमं अष्टारसमेणं) आठवें मास में भी और सब विधि पहिले जैसी ही है-परन्तु यहां उपवास आठ-आठ करे । (नवमं मासं बीसइमं बीसइमेणं) नौसे महिने में भी विधि और सब पहिले जैसी ही है परन्तु उपवास इस में नौ-नौ करे । (दसमं मासं बावीसइमं-बावीसइमेणं) दशवें महिने की विधि भी और सब पहिले जैसी ही है-परन्तु उपवास इसमें दस दस करे । (एकारसमं मासं चउबीसइमं-चउबीसइमेणं) ग्यारहवें महिने में भी और सब विधि पूर्वोक्त रूप से ही है-परन्तु उपवास इसमें ग्यारह-ग्यारह करे । (बारसमं मासं छव्वीसइमं-छव्वीसइमेणं) बारहवें महिने में भी दिन रात की जैसी विधि पहिले कही गई है-वैसी ही है परन्तु उपवास यहाँ बारह-बारह करे । (तेरसम मासं अट्ठावीसइमं अट्ठावीसइमेणं) तेरहवें महिने में भी और सब विधि पहिले जैसी ही है-परन्तु यहां उपवास तेरह-तेरह करे । (चउदसमं मासं तीसइमं तीसइमेणं) चौदहवें महिने में भी और सब विधि पहिले जैसी ही है-

आगण मुज्जण सभज्जी (अष्टम मासं अष्टारसमं अष्टारसमेणं) आठमे भडिने आठ उपवासने पारखे आठ उपवास करवा भाडीनी विधि आगण मुज्जण सभज्जी (नवमं मासं बीसइमं बीसइमेणं) नवमे भडिने नव उपवासने पारखे नव उपवास करवा भाडीनी विधि आगण मुज्जण न करवी (दसमं मासं बावीसइमं-बावीसइमेणं) दसमे भडिने दस उपवासने पारखे दस उपवास करवा भाडीनी विधि आगण मुज्जण न सभज्जी (एकारसमं मासं चउबीसइमं चउबीसइमेणं) अगियारमे भडिने अगियार उपवासने पारखे आगियार उपवास करवा भाडीनी अधी विधि आगण मुज्जण स नज्जी, (बारसम मासं छव्वीसइमं छव्वीसइमेणं) बारमे भडिने बार उपवासने पारखे बार उपवास करवा भाडीनी अधी विधि आगण प्रभाखे न करवी (तेरसम मासं अट्ठावीसइमं-अट्ठावीसइमेणं) तेरमे भासे तेर उपवासने पारखे तेर उपवास करवा भाडीनी अधी विधि पडेवा भास प्रभाखे न करवी (चउदसमं मासं तीसइमं तीसइमेणं) चौदमे भडिने चौद उपवासने पारखे चौद उपवास करवा भाडीनी तमाम विधि पडेवा भास मुज्जण सभज्जी

મેન । પંચદશ માસં દ્વાત્રિંશતમદ્વાત્રિંશતમેન । પોઢશ માસ વતુસ્તિંશતમવતુસ્તિ-
શતમેનાનિસિપ્તેન તપઃ કમળા દિવાસ્યાનોત્કુદુક સૂર્યામિમુન્ન આતાપનશ્મૌ
આતાપયન્ રાત્રિં વીરાસનેનાપ્રાવૃત્તઃ । તતઃ સ્લુપ સ્વંદકોઽનગારો ગુણરત્નસંવત્સરો
તપઃ કર્મ યથાસૂત્રં યથાકલ્પ યાવદારાધ્ય યત્રેવ ધમ્મણો મગવાન્ મહાવીરસ્ત

પરન્તુ ઉપવાસ ચૌદહ ચૌદહ કરે । (પળ્લરસમ માસ વસીસહમ્બસીસ
હમેણ) પંદ્રહવે મહિને મેં મી ઓર સપ વિધિ પહિછે જૈસી હી હૈ પરન્તુ
ઉપવાસ યહા પન્દ્રહ પંદ્રહ કરે । (સોલસ માસં ચોતીસહમ્બ-ચોતીસ
હમેણ) સોલહવે મહિને મેં મી ઓર સપ વિધિ પહિછે જૈસી હી હૈ, પર
ન્તુ હસમેં સોલહ સોલહ ઉપવાસ કરે । (અણિક્કિત્ત્વેણ તલોકમ્મેણ
દિવા ઠાણુ સ્કુદિપ સૂરામિમુદ્દે આયાવળપૂમિપ આપાવેમાણે રત્તિં વીરા
સણેણ અવાઠઢેણ) તોસરે ચૌથે પાંચવેં આદિ માસ સે છેકર સોલહવે
મહિના તક દિન ઓર રાત્રિ સપથી કર્નકળ્ય વિધિ પ્રથમ માસ
તથા દિતીય માસ મેં કળિમ વિધિ જૈસી હી હૈ-હસી વાત કો હસ સૂત્ર
પાઠ દ્વારા પ્રદર્શિત કિયા હૈ । અર્થાત્ તીમરે ચૌથે આદિ મહિને સે
છેકર સોલહવે મહિને તક દિવસ મેં ઉત્કુદુક આસન સે વેઠે સૂર્ય કી
તરફ દ્રષ્ટિ રલ્લ કર આતાપન શૂમિ મેં આતાપના લેવે તથા રાત્રિ મેં
બલ્લ ઓઢે વિના વીરાસન સે રહે । (તણ સે લક્ષ અનગારે ગુણરત્ન
સંવત્સરં તલોકમ્મેં અહાસુત્તં, અહાકલ્પં, જાવ અરાહેસા) હસ પ્રકાર

(પળ્લરસમ માસ વસીસહમ્બ વસીસહમેણ) ૫૬૨મે મહિને ૫૬૨ ઉપવાસ
ને પારલે ૫૬૨ ઉપવાસ કરવા બાહીની વિધિ આગળ કહ્યા પ્રમાણે અમલગરી.
(સોલસ માસ ચોતીસહમ્બ-ચોતીસહમેણ) સોળમે મહિને સોળ ઉપવાસે પારલે
સોળ ઉપવાસ કરવા બાહીની વિધિ આગળ કહ્યા પ્રમાણે ૪ કરવી (અણિ-
ક્કિત્ત્વેણ તલોકમ્મેણ દિવા ઠાણુ સ્કુદિપ સૂરામિમુદ્દે આયાવળપૂમિપ આપાવેમાણે
રત્તિં વીરાસણેણ અવાઠઢેણ) ત્રીજાથી લઇને સોળમા માસ સુધી દિવસ અને
રાત્રિ સબધ કલબ્ય વિધિ પહેલા અને બીજા માસની જે વિધિ બતાવી છે
તે પ્રમાણેજ છે બેજ વાત સૂત્રકારે આ સૂત્રપાઠ વઢે બતાવી છે કહેણાનુ
વાતપ્રધ એ છે કે ત્રીજા મહિનાથી સોળમા મહિના સુધી દિવસે સૂર્યની સામે
મુખ રાખીને ઉમઠક બાસને ત કામાં બેસીને ત કો ચક્રન કરવો અને રાત્રે
વશ બોઢવા વિના વીરાસને બેગી ને કઢી સઢી કરવી (તણ સે લક્ષ
અનગારે ગુણરત્ન સંવત્સરં તલોકમ્મેં અહાસુત્તં અહાકલ્પં જાવ અરાહેસા)
આ રીતે ૨૬-૬૬ અળખારે ગુણરત્ન મન્ત્રર નામના તપની સૂત્રાનુસાર,

त्रैवोपागच्छति, उपागत्य श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्यति वन्दित्वा नमस्यित्वा बहुभिश्चतुर्थषष्ठाष्टमदशमद्वादशैर्मासार्धमासक्षमणैर्विचित्रस्तपःकर्म-भिरात्मानं भावयन् विहरति । ततः खलु स स्कन्दकोऽनगारस्तेनोदारेण विपु-लेन प्रयत्नेन प्रगृहीतेन कल्याणेन शिवेन धन्येन मांगल्येन सत्रीकेण, उदग्रेण,

स्कन्दक अनगार ने गुणरत्न संवत्सर नाम का तप की यथासूत्र यथाकल्प यावत् आराधना करके फिर वे (जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ) जहां श्रमण भगवान महावीर विराजमान थे वहां पर आये । (उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ वहां आकर उन्होंने श्रमण भगवान महावीर को वंदना की और नम-स्कार किया । (वंदित्ता नमंसित्ता) वंदना नमस्कार कर (वडूहिं चउत्थ-छट्टम दसम दुवालसेहि मासद्व मासखमणेहि विचित्तेहि तवोकम्मेहि अप्पाणं भावेमाणे विहरइ) अनेक उपवास, छट्ट अष्टम दशम तथा द्वादशम रूप तपस्या से एवं मासखमण तथा अर्धमास खमण रूप विचित्र तपस्या से अपनी आत्मा को भावित करते हुए विचरने लगे । (तएणं से खंदए अणगारे तेणं उरालेणं, विडलेणं पयत्तेणं, पग्ग हिएणं, कल्लाणेणं, सिवेणं, धन्नेणं, मंगल्लेणं, सस्सिरीएणं, उदग्गेणं, दउत्तेण, उत्तमेणं उदारेणं, महाणुभावेणं तवोकम्मेणं) इसके बाद वे स्क-न्दक अनगार उस उदार, विपुल, प्रगृहीत, कल्याणरूप, शिवरूप, धन्य-

कहानुसार (यावत्) आराधना करी (आहु) (यावत्) पढ़ वडे पड़ेकी लिखु प्रतिभासा आवतो तभास पाठ आराधना करी त्या सुधीने पाठ अडणु करवानो छे आराधना करीने तेओ (जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ) न्यां श्रमणु भगवान महावीर विराजमान हुता त्या आव्या (उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीर वंदइ नमंसइ) त्या आवीने तेभणु श्रमणु भगवान महावीरनेव दत्त नमस्कार कर्था “ वंदित्ता नमसित्ता ” वदत नमस्कार करीने “ वडूहिं चउत्थ छट्टम-दसम-दुवालसेहि, मासद्वमासखमणेहि विचित्तेहि-तवोकम्मेहि अप्पाण भावेमाणे विहरइ) अनेक उपवास, छट्ट, अठम, दशम (चार उपवास,) अने द्वादशम (पाच उपवास) इय तपस्याथी अने भास भमणु तथा अर्धमास भमणु वगेरे विविध प्रकारनी तपस्याओथी चोताना आत्माने भावित करता विचरना लाग्या (तएण से खंदए अणगारे तेणं उरालेणं, विडलेण, पयत्तेण, पग्गहिण, कल्लाणेणं, सिवेण, धन्नेण, मंगल्लेण, सस्सिरीएण, उदग्गेण, उदत्तेण, उत्तमेण, उदारेण, महाणुभावेणं तवोकम्मेणं) त्यार आह ते उदार, विपुल, प्रदत्त, प्रगृहीत, कल्याणरूप, शिवरूप धन्यरूप, भगवत् रूप,

उदाचेन, उच्यते उदाचरेण महाभुक्त्वाचेन तप कर्मणा शुक्लो रुसो निर्मासः अस्मि
धर्मादनद्ध किटकिटिक्वाभूतः कृष्टः धर्मानसततो जातश्चाप्यभूत् । जीवं जीवेन
गच्छति, जीवे जीवेन तिष्ठति, मापां मापित्वाऽपि म्नायति मापां मापमापो
म्नायेति मापां मासिष्ये इति म्नायति । एव यथा नामकाष्टगकटिका इति वा ।

रूप, मंगल रूप, शोभायुक्त, उदग्र उदात्त उज्ज्वल, उत्तम, उदार, महान्
भावशाली तप कर्म से तपस्या से (सुकृते, सुखले, निम्नसे, अद्विजम्मा
वणत्वे किटकिटिक्वाभूत्, किसे, धमणिसतए जाए यावि होत्या) सुख गये
बिलकुल रुखे हो गये सर्वथा मांस रहित बन गये सिर्फ उनकी हड्डियां
धमकी से बंधी रह गई अर्थात् बंधी रह गई चलते समय उनकी
हड्डियां आपस में खटखटाकर किट किट शब्द कर धजने लगती इतने
वे कृश हो गये । धमनियों का समुदाय उनके उस कृश शरीर में एकदम
दिखलाई पड़ने लगा । (जीव जीवेन गच्छति) वे केवल अपने
आत्मपल से ही चलते । शरीर पल से नहीं । (जीव जीवेन चिह्न)
आत्मपल से ही वे बैठते शरीरपल से नहीं । (भास भासिष्ठा विगिलाह)
घोलकर धकजाते । (भास भासमाणे गिलाह भास भासिस्सामि सि
गिलाह) घोलते घोलते भी धक जाते । मुझे घोलना होगा-पसा पसो
आने पर भी वे धक जाते तथा (से जहानामए कट्टसगटियाह वा,
पससगडियाह वा, तिससगडियाह वा, परट्टकट्टसगडियाह वा)

शोभायुक्त, उदग्र उदात्त, उज्ज्वल, उत्तम, उदार અને महाभावशाली तप
धीरान्ध्र आयुगाश्नु (सुकृते, सुखले, निम्नसे अद्विजम्मावणत्वे किटकिटिक्वाभूत्
किसे, धमणिसतए जाए यावि होत्या) शरीर सुकाई जसु इक्ष यध अर्ध
(वज्र सुक्ष यध अर्ध) तेभनु शरीर अर्धभा भास रहित जनी गसु शरीरभा
इक्ष दांडा અને धामकी न रही. बालती बजते तेभना शरीरना दांडा
जेक पीला साथे धमाधने (कट कट) अवाज करवा लाव्या तेज्जोनु शरीर
धलु न कृश यध गसु तेभना ते कृश शरीरनी नजे पण देणवा दात्री
(जीव जीवेन गच्छति) तेज्जो पोताना आत्मजगधी न बालता दता, शरीर
जगधी नहीं. (जीव जीवेन चिह्न) तेज्जो पोताना आत्मजगधी न जेभता,
दता (भास भासिष्ठा विगिलाह) भाषा जोखीने पण धाडी नता (भास
भासमाणे गिलाह भास भासिस्सामि सि गिलाह) भाषा जोखतां जोखतां पण
धाडी नता भास जोखतां पण-जेवो विचार आचराधी पण तेज्जो धाडी
नता तथा (से जहानामए कट्टसगटियाह, पससगटियाह वा तिससगटियाह
वा, परट्टकट्टसगडियाह वा) जेभी शीते दांडजधी पांठ जधी तानी सिजोधी

त्रैवोपागच्छति, उपागत्य श्रमणं भगवन्तं महावीरं वन्दते नमस्यति वन्दित्वा नमस्यित्वा बहुभिश्चतुर्थपष्ठाष्टमदशमद्वादशैर्मासार्धमासखमणैर्विचित्रस्तपःकर्म-भिरात्मानं भावयन् विहरति । ततः खलु स स्कन्दकोऽनगारस्तेनोदारेण विपु-लेन प्रयत्नेन प्रगृहीतेन कल्याणेन शिवेन धन्येन मांगल्येन सत्रीकेण, उदग्रेण,

स्कन्दक अनगार ने गुणरत्न संवत्सर नाम का तप की यथासुत्र यथाकल्प यावत् आराधना करके फिर वे (जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ) जहां श्रमण भगवान महावीर विराजमान थे वहां पर आये । (उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ वहां आकर उन्होंने श्रमण भगवान महावीर को वंदना की और नम-स्कार किया । (वंदित्ता नमंसित्ता) वंदना नमस्कार कर (वहुहिं चउत्थ-छट्ठम दसम दुवालसेहि मासद्वमासखमणेहि विचित्तेहि तवोकम्मेहि अप्पाणं भावेमाणे विहरइ) अनेक उपवास, छट्ठ अष्टम दशम तथा द्वादशम रूप तपस्या से एवं मासखमण तथा अर्धमास खमण रूप विचित्र तपस्या से अपनी आत्मा को भावित करते हुए विचरने लगे । (तएणं से खंदए अणगारे तेणं उरालेणं, विउलेणं पयत्तेणं, पगं हिणं, कल्लणेणं, सिवेणं, धन्नेणं, मंगल्लेणं, सस्सिरीएणं, उदग्रेणं, उदत्तेणं, उत्तमेणं उदारेणं, महाणुभावेणं तवोकम्मेणं) इसके बाद वे स्क-न्दक अनगार उस उदार, विपुल, प्रगृहीत, कल्याणरूप, शिवरूप, धन्य-

कल्याणानुसार (यावत्) आराधना करी (अही) (यावत्) पढ पडे पडेकी लिखु प्रतिभाभा आवतो तमास पाठ आराधना करी त्यां सुधीना पाठ अहणु करवाने छे. आराधना करीने तेओ (जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ) त्यां श्रमण भगवान महावीर विराजमान हुता त्या आओ (उवागच्छित्ता समण भगव महावीर वदइ नमंसइ) त्यां आवीने तेओ श्रमण भगवान महावीरने वदन नमस्कार कर्या “ वंदित्ता नमसित्ता ” वदन नमस्कार करीने “ वहुहिं चउत्थ छट्ठम-दसम-दुवालसेहि, मासद्वमासखमणेहि विचित्तेहि-तवोकम्मेहि अप्पाण भावेमाणे विहरइ) अनेक उपवास, छट्ठ, अष्टम, दशम (चार उपवास,) अने द्वादशम (पाथ उपवास) रूप तपस्याथी अने मास भमण तथा अर्धमास भमण वगेरे विविध प्रकारनी तपस्याओथी पोताना आत्माने भावित करता विचरता छे ज्या (तएण से खंदए अणगारे तेणं उरालेणं, विउलेण, पयत्तेणं, पगं हिण, कल्लणेणं, सिवेण, धन्नेण, मंगल्लेणं, सस्सिरीएण, उदग्रेण, उदत्तेण, उत्तमेण, उदारेण, महाणुभावेण तवोकम्मेणं) त्थार आह ते उदार, विपुल, प्रदत्त, प्रगृहीत, कल्याणरूप, शिवरूप धन्यरूप, भगवरूप,

टीका—‘तएणं समणे भगवं महावीरे’ तत् खलु भ्रमणो भगवान् महावीरः ‘कयंगलाओ’ कृतगलात् नगरीत् ‘छत्तपलासयाओ वेइयाओ’ छत्तपलासकात् चैत्यात् छत्तपलासकनामकाधानात् ‘पठिनिक्खमई’ प्रतिनिष्कामति ‘पठिनिक्खमिस्सा वहिया जणवयविहार विहरइ’ प्रतिनिष्कम्य वहिर्मेनपइविहारं विहरति । ‘तएणं स खट्ठ अणगारे’ तत् खलु स स्कन्दकोटनगरं । तदन्तरं भगवतो महावीरस्य विहरणानन्तरम् स्कन्दकनामानगरः ‘समणस्स भगवओ महावीरस्स’ भ्रमणस्य भगवता महावीरस्य ‘तहारूपाण येराणं अतिप’ तथारूपाणां स्पष्टिराणामेविक सपीप ‘सामाइयमाइयाइ ण्कारसुअगाई अरिक्ख’ जय प्रभाष से उनका आत्ममयल विशेषरूप से उद्गीत था । अतः वे भ्रमण से इकी हुई अग्नि की तरह से प्रकाशित थे । (तवेणं तेएणं तत्तयेयसिरिप अईव अईव उवसोमेमाणे बिट्ठइ) इस सूत्रपाठ द्वारा यही बात प्रकट की गई है । अर्थात् वे तप से तेज से और तप तथा तेज की शोभा से बहुत बहुत शोभित थे ॥ सू० १४ ॥

टीकार्थ—(तएणं समणे भगवं महावीरे) इसके बाद भ्रमण भगवान् महावीर (कयंगलाओ नयरीओ) कृतगला नगरी से (छत्तपलासयाओ वेइयाओ) छत्तपलासक चैत्य-उद्यान से (पठिनिक्खमई) निकले । (पठिनिक्खमिस्सा) निकलकर (वहिया जणवयविहार विहरइ) याहर ये जनपद में बिहार करने लगे । (तएणं से खट्ठ अणगारे) भगवान् महावीर के बिहार के अनन्तर वे स्कन्दक अनगर (समणस्स भगवओ महावीरस्स) भ्रमण भगवान् महावीर के (तहारूपाण येराणं अतिप)

पक्ष तपना प्रभावधी तेभनु आत्मनो वधाये प्रदीप्त धनुं क्षुं क्षुं तेधी तेओ शान्ती नीये दहायेता अग्नि केवा डेवीअमान क्षुता (तवेणं तेएणं तत्तयेयसिरिप अईव अईव उवसोमेमाणे बिट्ठइ) अथ सूत्र पाठ १४ उपदेशना वात व भकट करवाभा आनी ॥ ओन्हे के तेओ तपधी अने तेओधी तथा तपना तेओधी अतिशय शोभायमान लागता क्षुता ॥ सू० १४ ॥

टीका—‘तएणं समणे भगवं महावीरे’ त्पार जाइ अभय भगवान् महावीर ‘कयंगलाओ नयरीओ’ कृतगला नगरीना ‘छत्तपलासयाओ वेइयाओ’ छत्तपलासक चैत्यमाया (नगरीमा) मायी (पठिनिक्खमई) विहार करीं । पठिनिक्खमिस्सा त्पामी विहार करीने वहिया जणवयविहार विहरइ’ जणवय विहारमा विहारमा लागता ‘तएणं स खट्ठ अणगारे’ त्पार जाइ स्कन्दक अनगर ‘तहारूपाण येराणं अतिप’ तथा भगवता स्पष्टिराणी पासे

पत्रशकटिका इति वा तिलशकटिका इति वा भण्डकशकटिका इति वा, एरंडका-
ष्ठशकटिका इति वा, अंगारशकटिका इति वा, उष्णे दत्ता शुष्का सती सशब्दं
गच्छति, सशब्दं तिष्ठति । एवमेव स्कन्दकोऽपि अनगारः सशब्दं गच्छति सशब्दं
तिष्ठति उपचितस्तपसा, अपचितो मांसशोणितेन हुताशन इव भस्मराशि प्रतिच्छि-
न्नस्तपसा तेजसा तपस्तपः श्रिया अतीवोपशोभमानस्तिष्ठति ॥

जैसे कोई लकड़ियों से भरी हुई गाड़ी हो, पत्तों से भरी हुई गाड़ी हो,
तिलों की फलियों से भरी हुई गाड़ी हो, एरंड के काष्ठों से भरी हुई
गाड़ी हो, (भण्डगसगडियाइ वा) घर्तनों से भरी हुई गाड़ी हो ।
(इगालसगडियाइ वा) अथवा अंगारा-कोयलों से भरी हुई कोई गाड़ी
हो (उण्हे दिण्णा सुक्का समानी ससइ गच्छइ, ससइ चिट्ठइ) और
जब वह धूप में खूब सूक जाती है-तब वह खड़ खड़ शब्द करती हुई
चलती है, ठहरने पर भी उसमें से खड़ खड़ शब्द निकलता है (एवा-
मेव) इसी तरह से (खदए वि अणगारे ससइ गच्छइ, ससइ चिट्ठइ)
स्कन्दक अनगार भी जब चलते तब उनके शरीर में से हड्डियों का ढेर
अवशिष्ट मात्र रह जाने के कारण उनके परस्पर के संघर्षण से खड़
खड़ शब्द निकलता । (उवचिए तवेण अवचिए मंससोणिणं हुयास-
णेविव भासरासिपडिच्छण्णे) इस तरह वे यद्यपि शरीर से कृशता की
पराकाष्ठा को पहुँच चुके थे-अर्थात् मांस और शोणित से वे बिलकुल
बिहीन बन चुके थे पर फिर भी वे तप से उपचित थे । अर्थात् तपस्या

अर डीना साठाथी, (भण्डगसगडियाइ वा) वासणुथी, (इगालसगडियाइ वा) अथवा
डालसाथी लरेखु डाल गाडु डाय (उण्हे दिण्णा सुक्का समानी ससइ गच्छइ, ससइ
चिट्ठइ) अने न्यारे उपरोक्त वस्तुओ धणुअ तापमे दीधे धणुअ शुष्क
थय नय छे तेवी वस्तु ओथी लरेखु गाडु आलती वणते (अट, अट)
अवान करतु आले छे, अने न्यारे ते गाडु उलु रडे छे त्यारे पणु
(अट, अट अवान थाय छे (एवमेव) ओअ प्रमाणे (खदए वि अणगारे-
ससइ गच्छइ, ससइ चिट्ठइ) न्यारे स्कन्दक अणुगार आलता त्यारे तेमनां
डाउंका ओअ णीज साथे धसावाथी तेमाथी (अट, अट) ओवो अवान थतो
डतो तेमनुं शरीर डाउंकाना माणणा नेवु णनी नवाने डारणे ओवु अनतु
डतुं (उवचिए तवेण अवचिए मंससोणिणं हुयासणेविव भासरासिपडिच्छण्णे)
आ रीते ने के तेमनुं शरीर कृशतानी पराकाष्ठाओ पडोथी गथुं डतुं-ओटवे
के मांस अने शोणित (लोडी) थी मिलकुल बिहीन णनी गथुं डतुं-तो

યદિ, સ્કન્દસ્ય પ્રવચ્ચાપ્રણાત્ પૂર્વકાલ એવ ચક્રાદશાનિ આસન્, તર્હિ ત્વમ્
સ્કન્દકસ્ય વર્ગનં કયમ્પૂત્ર, તદા સ્કન્દસ્યાનગાસ્યૈગસત્ત્વાદિતિ ચેદ્મોપતે-
મહાવીરસ્ય મગધતસ્તૈર્વા નૈવ વાચનાઃ સન્તિ તમ્ સન્નાચનાસુ સ્કન્દકચરિતાત્
પૂર્વકાલે યે સ્કન્દકચરિતામિવેવા અગસતે ચરિતાતરકારૈર્મ મજ્જાપ્યત્ । સ્કન્દક
ચારિતોપચયન ડાચ મગધજા સુધર્માસ્વામિના જમ્બૂનામાન સ્વાકેવશિષ્યમભિહત્સ
મસ્તુતવાચનાયામસ્વા સ્કન્દકચરિતપ્રહરણા કૃત્વૈત્વ ન કોડપે વિરાષ્ હતિ ।

અર્થ સ્કન્દકઃ કિંબુક્તવાનિત્યોહ—‘ઈન્દ્રગિમિ ન મતે । હસ્યાદિ । ‘ઈન્દ્રગિમિ ન
મતે ’ ઇન્દ્રગિમિ સ્તુત મદન્ત । ‘તુમ્હર્હિ અમ્મણુણાપ સમાણ ’ યુધામિરમ્પ્યન્તુ

વતીસુત્ર મેં જો ઉનકા ચરિત્ર કહને મેં આયા હ વહ સગત નહોં બેઠતા
હૈ, કયા કિ પહિલે યને હુપ ગ્યારહ અગ્રો મેં જૂપ યહ ચરિત્ર કહો ગયા
હૈ તો ડસ સમૂપ મેં ‘સ્કન્દક’ અનગાર, ચે હી નહોં । કયા કિ વે તો
અનગારાવસ્થાપમ અવ હુપ હૈ । અત યહ યાત પરસ્પર વિરોધવાલા બન
જાતી હૈ સા હસ કા સમાધાન હસ પ્રકાર સે હૈ—મગધાન મહાવીર ક
તોપ મેં નૌ વાચનાપૂં થો । ડન સવ વાચનાઓ મેં ‘સ્કન્દક’ ચરિત્ર સે
પહિલે જો સ્કન્દક ચરિત્ર-અમિવેવ કા અર્થ યા બહ દૂસર ચરિત્ર દ્વારા
પ્રજ્ઞાપિત કિયા ગયા યા । સ્કન્દકચરિત્ર કા ઉત્પત્તિ કે મનતર
‘મગધાન સુધર્મા સ્વામી’ ને અપને શિષ્ય અંબુસ્વામી કોં હેકર હસ પ્રસ્તુત
વાચના મેં સ્કન્દક કે ચરિત્ર કો પ્રરૂપણા કા હૈ । હસ તરહ સે હસમેં
વિરોધ આને જૈસી કોઈ યાત નહોં હૈ ।

મગધાન સે સ્કન્દક ને કયા કહા ? સો કહતે હૈ—(ઇન્દ્રગિમિ ન
મતે) તુમ્હે હિં અમ્મણુણાપ સમાણે માસિય મિલ્લુપદિમં ડવસેપ-

તેમનું ને જીવન ચરિત્ર વર્ણવ્યું છે તે સુધગત વાચનું નથી કારણ કે પહેલાં
બનેલાં અજિયાર અગ્રિની રચના વખતે તે સ્કન્દક અલુગાર હયા જ નહીં-
તેઓ અલુગાર તો ત્યારપછી જ બન્યા હતા તેથી જા વાતમા વિરોધાભાસ જણાય
છે તો તે ચક્રાત્ આ પ્રમાણે સમાધાન કરી ચકાય છે—ભગવાન મહાવીરમા
શાસનમા નવ વાચનાઓ હતી તે બધી વાચનાઓમા સ્કન્દકચરિત્રમા પહેલાં ને
સ્કન્દકચરિત્ર અભિધેય અથ હતું તે બીજા ચરિત્ર પહે પ્રગટ કરવામાં આ કુ હતું
સ્કન્દકચરિત્રની ઉત્પત્તિ પછી ભગવાન સુધર્માસ્વામીએ જે તાના શિષ્ય અંબુસ્વામીને
જો બોધીને આ પ્રસ્તુતવાચનામા સ્કન્દકના ચરિત્રની પ્રરૂપણા કરી છે આ રીતે
તેમા વિરોધાભાસ રૂબું કહ રહેતું નથી. સ્કન્દકે ભગવાનને શુ કહ્યું ? સુત્રપ્રર તે
બતાવે છે— ઇન્દ્રગિમિ મતે । તુમ્હે હિં અમ્મણુણાપ સમાણે માસિય મિલ્લુપદિમ અર્થ
પરિવ્રત્તાણ વિહરિત્તવ ’ કે ભગવાન । જો આપની આજ્ઞા હોય તો માસિક મિલ્લુ

सामायिकादीनि एकादशांगानि अधीते “अहिज्जित्ता” अधीत्य “जेणेव समणे भगवं महावीरे” यत्रैव श्रमणो भगवान् महावीरः । “तेणेव उवागच्छइ” तत्रैवोपागच्छति “उवागच्छित्ता” उपागत्य “समणं भगवं महावीरं” श्रमणं भगवन्तं महावीरम् “वंदइ नमंसइ” वन्दते नमस्यति “वंदित्ता नमंसित्ता” वन्दित्वा नमस्यित्वा “एवं वयासी” एवं वक्ष्यमाणप्रकारेणावादीत्=उक्तवान् अत्रैकादशाङ्गविषये कश्चिदेवं शङ्कते-ननु अनेन स्कन्दकचरितात् पूर्वकाले एव एकादशाङ्गानां निष्पत्तिः पर्यवस्यति, पञ्चमाङ्गं श्री भगवतोऽस्य तस्यान्तर्भूतमिदं स्कन्दकचरितमुपलभ्यते ततः कथं न विरोधो भवति ।

तथारूप स्थवीरों के समीप (सामाढय माइयाइं एकारसअंगाइं) सामायिक आदि ग्यारह अङ्गों को (अहिज्जइ) पढ़ने लगे । (अहिज्जित्ता) पढ़कर (जेणेव समणे भगवं महावीरे) वे जहां श्रमण भगवान् महावीर थे (तेणेव उवागच्छइ) वहां पर आये । (उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ) वहां आकर के उन्होंने श्रमण भगवान् महावीर को वंदना की-नमस्कार किया और (वंदित्ता नमंसित्ता) वंदना नमस्कार करके (एवं वयासी) फिर उन्होंने प्रभु से इस प्रकार कहा-

यहां एकादशाङ्ग के विषय में कोई ऐसी आशंका करता है-(स्कन्दक अनगार ने ग्यारह अंगों का अध्ययन किया) सो इस कथन से तो यह बात साबित होती है कि ग्यारह अंग स्कन्दक अनगार के पहिले ही बन चुके थे, यदि यह बात न होती तो फिर वे उन्हें पढ़ते कैसे ? तथा जब यह बात निश्चित हो जानी है-तो फिर इस पंचम अंग भग-

“सामाइयमाइयाइ एकारसअंगाइं” सामायिक आदि अगियार अंगोने
 “अहिज्जइ” अभ्यास करवा लाग्या. “अहिज्जित्ता” तेने अभ्यास करीने
 “जेणेव समणे भगव महावीरे” त्या श्रमणु लगवान मंड वीर विराजमान
 छता “तेणेव उवागच्छइ” त्या आल्या. (उवागच्छित्ता) त्यां आवीने “समणं-
 भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ” तेमणु श्रमणु लगवान मंडावीरने वंदन नम-
 स्कार क्यो “वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी” अने वंदन नमस्कार करीने आप्रभाणुंछु
 शंका-अर्द्धी कोछने आ प्रकारनी शंका उद्बलवे के” स्कन्दक अणुगारे
 अगियार अंगोने अभ्यास क्यो. ” आ कथन सुजण तो ओम न मानवु
 पडे के अगियार अंगनी रथना स्कन्दक अणुगारनी पडेता न थन गछ छरो.
 ने ओवु न अणु छोट तो तेमणु केवी रीते ते अंगोने अभ्यास क्यो
 छोट ? ने ओ बात सिद्ध थाय तो आ पायभा अंगइय लगवतीसूत्रभा

માસિકી મિથુપતિમા ગચ્છાભિર્ગત્ય સ્વીક્રિયતે ! અસ્પામેક્માસપર્યન્ત પ્રતિદિન મેકાદષિર્મૌજનસ્ય, એકૈચ ચ પાનકસ્ય ગૃણતે ।

ઉક્તચ્છ—“ ગચ્છા ણિજ્ઞાનમિત્તા, પઢિવજ્ઞા માસિયં મહાપઢિમ ।

દત્તેગ મોયણસ્સ, પાણસ્સ વિ ઇગગ્ગા માસ ” ॥ ૧ ॥

છાયા—ગચ્છાદિનિષ્ક્રમ્ય પ્રતિપદ્યતે માસિકીં મહાપતિમામ્ ।

દષિમેકાં મોઝનસ્ય, પાનસ્યાપિ એકાં યાવન્માસમ્ ॥ इत्यादि ।

અસ્પાઃ સ્વરૂપ સત્તિસ્તર દશાશ્રુતસ્કન્ધકસૂત્રે સપ્તમાધ્યયને તૃતીયસૂત્રા દોરમ્ય દ્વાર્શિશ્રુતિતમસૂત્રપર્યન્ત વિલોકનીયમ્ । વ્યાસ્યાપિ તર્જીવ મસ્કુત્તાપાં મુનિર્હર્ષિણીટીકાયામવલોકનીયા इति ।

एक मास में पूर्ण होतो है । इसमें मिथु अभिग्रहविशेषों का पालन करता है—यह गच्छ से बाहर रहकर आराधित की जाती है । इसमें एक मास तक प्रतिदिन एक दत्ति आहार की ली जाती है और एक दधि पानी की ली जाती है । कहा भी है—

“ ગચ્છા વિ ણિજ્ઞાનમિત્તા, પઢિવજ્ઞા માસિયં મહાપઢિમે ।

દત્તેગમોયણસ્સ ચ, પાણસ્સ વિ ઇગ ગામાસ ” ॥ ૧ ॥

इस गाथा द्वारा यही बात समझाई गई है इसका विस्तार सहित स्वरूप दशाश्रुत स्कंधसूत्र में सप्तम अध्यायन में तृतीय सूत्र से लेकर पाईसवे सूत्र तक लिखा गया है सो वहां से जान लेना चाहिये । इन सूत्रों की व्याख्या सो वहीं मुनिर्हर्षिणी नाम टीका में देख लेना चाहिये । कोई यहां पर इस प्रकार की घोषा करता है कि स्कन्दक अनगार तो ग्यारह अंग के ही पाठी-धारक थे और प्रतिमाओं की भी आराधना इन्होंने की है सो ऐसा जो कहा गया है वह समझ में नहीं

અનુક પ્રકારના અભિગ્રહનું પાલન કરે છે—તેની આરાધના ગચ્છની બહાર રહીને કરાય છે તેની આરાધના કરનાર એક માસ સુધી દરરોજ એક દત્તિ આહારની અને દત્તિ પાણીની લે છે દત્તિ એટલે પાશવથી તૃણા વિના બેટલું બહેરાવવામા આવે તેટલા બાત્રને એક દત્તિ કહેવાય છે. ૬૬૫૫ છે

“ ગચ્છા વિ ણિજ્ઞાનમિત્તા, પઢિવજ્ઞા માસિયં મહાપઢિમ ॥

દત્તેગ મોયણસ્સ ચ, પાણસ્સ વિ ઇગ ગા માસ ॥ ૧ ॥

આ ગાથા વડે ઉપરોક્ત વાત જ સમજાવવામા આવી છે દશાશ્રુતસૂત્ર સૂત્રના સાતમા અધ્યાયનના ત્રીજા સૂત્રથી લઈને બાવીસમા સૂત્ર સુધીમાં તેનું સ્વરૂપ વિસ્તારથી સમજાવ્યું છે તેા જિજ્ઞાસુઓએ ત્યથી વાચી લેવું તે મુત્રોની વ્યાખ્યા પણ તેમાંજ આપેલી મુનિર્હર્ષિણી નામની ટીકામાંથી વાચી લેવી

જાતઃ સન્ “ માસિયં મિત્રલુપડિમં ” માસિકીં મિશ્રુપ્રતિમામ્ ‘ ઉવસંપજ્જિ-
ત્તાણં વિહરિત્તણ્ ” ઉવસંપદ્ય સ્વલુ વિહરિત્તુમ્ । હે ભગવન્ યદિ દેવાનુપ્રિયાણામાજ્ઞા-
ભવેત્તદાહં માસિકીં મિશ્રુપ્રતિમાં સ્વીકૃત્તુ મિન્છામીતિ ભાવઃ, ભગવાન્ કથયતિ
‘ અહાસુહં દેવાણુપ્પિયા મા પહિવંધં કરેહ ” યથાસુખં દેવાનુપ્રિય ? યથા તે
રોચંતે તથા કુરુ કિન્તુ મા પ્રતિવન્ધ કુરુ=વિલમ્બ મા કુરુ ઇતિ ભાવઃ । ‘ તણ્ણં સે
સંદણ અણગારે ” તતઃ સ્વલુ સ સ્કન્દકોડનગારઃ “ સમણેણ ભગવયા મહાવીરેણ ”
શ્રમણેણ ભગવતા મહાવીરેણ “ અબ્ભણુત્તાણ સમાણે ” અભ્યનુજ્ઞાતઃ પ્રાપ્તાજ્ઞઃ સન્
“ હદ્દે જાવ નમંસિત્તા ” હૃષ્ટો યાવત્ નમસ્યિત્વા, અત્ર યાવત્પદેન તુષ્ટચિન્તાન-
ન્દિતઃ પ્રીતિમનાઃ પરમસૌમનસિયતઃ હર્ષવશવિસર્પિતહૃદયઃ શ્રમણં ભગવન્ત મહા-
વીરં વન્દતે નમસ્યતિ વન્દિત્વા ‘ ઇત્યસ્ય ગ્રહણં કર્તવ્યમ્ । એનાદશઃ સ્કન્દકો
ભગવન્તં નમસ્કૃત્ય “ માસિયં મિત્રલુપડિમં ઉવસંપજ્જિત્તાણં વિહરિ ” માસિકીં
મિશ્રુપ્રતિમામુપસંપદ્ય સ્વલુ વિહરિતિ, ‘ માસિયં ’ ઇતિ એકમાસસંપાદ્યામ્ ‘ મિત્રલુ-
પડિમં ’ મિશ્રુપ્રતિમામ્ — સમારાધનીયમભિગ્રહવિશેષં સ્વીકૃત્ય તિષ્ઠતિ, ઇય-
જ્જિત્તાણં વિહરિત્તણ્) હે ભદન્ત ! યદિ આપ દેવાનુપ્રિય ! આજ્ઞા પ્રદાન
કરે તો મેં માસિક મિશ્રુપ્રતિમા કી આરાધના કરના યાહના હું । તવ
પ્રશ્ન ને કહા (અહાસુહં દેવાણુપ્પિયા મા પહિવંધં કરેહ) જૈસા વિચાર
ક્રિયા હૈ વૈસા સુખપૂર્વક કરો પરન્તુ શુભ કામ મેં વિલમ્બ મત કરો ।
(તણ્ણં સે સંદણ અણગારે) તવ ડન સ્કન્દક એનગાર ને (સમણેણ
ભગવયા મહાવીરેણ) શ્રમણ ભગવાન મહાવીર સે (અબ્ભણુત્તાણ સમાણે)
આજ્ઞા પ્રાપ્તકર (હદ્દે જાવ નમંસિત્તા) હૃષ્ટ યાવત્ તુષ્ટ આનન્દિત
ચિત્ત હોકર નમસ્કાર કર (માસિયં મિત્રલુપડિમં ઉવસંપજ્જિત્તા ણં
વિહરિ) માસિક મિશ્રુ પ્રતિમા ધારણ કરલી । યહ પ્રથમ મિશ્રુપ્રતિમા

પ્રતિમાની આરાધના કરવાની મારી ઇચ્છા છે ત્યારે ભગવાન મહાવીરે તેમને
જવાબ આપ્યો— “ અહાસુહં દેવાણુપ્પિયા મા પહિવંધં કરેહ ” તમારી ઇચ્છા
પ્રમાણે સુજેથી કરો પરન્તુ શુભ કાર્યમા વિલમ્બ કરવો નહીં “ તણ્ણં સે
સંદણ અણગારે ” ત્યારે તે સ્કન્દક આણુગારને “ અબ્ભણુત્તાણ સમાણે ” ‘ સમણેણ-
ભગવયા મહાવીરેણ ” શ્રમણ ભગવાન મહાવીરની આજ્ઞા મેળવાથી “ હદ્દે જાવ
નમંસિત્તા ” ધણે હર્ષ તથા સંતોષ પામ્યા અને તેઓએ ભગવાન મહાવીર
ને વંદન નમસ્કાર કર્યા. વંદન નમસ્કાર કરીને “ માસિયં મિત્રલુપડિમં ઉવસં-
પજ્જિત્તાણ વિહરિ ” તેમણે માસિય મિશ્રુપ્રતિમાની આરાધના કરવા માટે આ
પહેલી મિશ્રુપ્રતિમા એક માસમા પૂજા થાય છે તેની આરાધના કરનાર મિશ્રુ

વીર ઠીર્યકરોપદેષેન મદ્વત્ત્વાન્ન કોઽપિ દોષ' સર્વજ્ઞા હિ દ્રવ્ય-ક્ષેત્ર-કાલમાત્ર
જ્ઞાત્વૈવ યત્કિંચિત્ કલ્પયન્તિ ઇતિ ।

“ તપ્ત સે સંદપ્ અળગારે ” તતઃ સત્ત્વ સ સ્કન્દકોડનગારઃ “ માસિય
મિસ્ત્રુપદ્ધિમ ” માસિકીં મિશ્રુપ્રતિમામ્ “ અહામુત્ત ” યથાસૂત્રમ્=સૂત્રનિર્દિષ્ટ-
વિષ્ણુનુસારમ્ । ‘ અહાકર્ણ ’ યથા કલ્પમ્=કલ્પ્ય=સ્થાવિરાદિકલ્પમનતિક્રમ્ય-
કલ્પાનુસારમિત્યર્થઃ । ‘ અહામર્મ ’ યથામાર્ગમ્=જ્ઞાનદર્શનચારિત્રરૂપમોક્ષમાર્ગા
નતિક્રમેણ, ક્ષયોપશ્ચમભાવાનતિક્રમેણ વા । ‘ અહાતત્ત્વ ’ યથા તત્ત્વમ્=તત્ત્વજ્ઞાન-
તિક્રમેણ યદ્વા ‘ યથા તદ્વ્યમ્ ’ ઇતિચ્છાયાપદ્ધે સત્યાનુસારમ્ ‘ અહા મર્મ ’
યથા સામ્ય = સમભાવમનતિક્રમ્ય — સુષ્ટુપ્રકારેણ કર્મનિર્જરણભાવનયેત્યર્થ
‘ કાણ ’ કાણેન=શરીરેણ ન પુનરભિલાપમાત્રેણ ‘ ફાસેઃ ’ સ્પૃશ્વતિ-સમુચિતકાલે
સવિધિમદ્વજાત્ ‘ પાલેઃ ’ પાલયતિ = વારંવારમુપયોગેન તત્યાં તત્પરત્વાત્ ।

હસ લિપે હસ કથન મેં કોઈ વિરોધ નહીં હૈ । કયોં કિ સર્વજ્ઞ મગધાન
જો કુછ કહતે હૈં ઘહ દ્રવ્ય ક્ષેત્ર કાલમાત્ર કો દેખકર હી કહતે હૈં ।
(તપ્ત સે સંદપ્ અળગારે) માસિકી પ્રથમ મિશ્રુ પ્રતિમા ધારણ કર
છેને કે બાદ ઇન સ્કન્દક અનગાર ને વસ (માસિય મિસ્ત્રુપદ્ધિમ)
માસિક મિશ્રુ પ્રતિમા કો (અહામુત્ત) સૂત્રકથિત વિધિ કે અનુસાર
(અહાકર્ણ) સ્થાવિરાદિ કલ્પ કે અનુસાર (અહામર્મ) સમ્યગ્દર્શન
સમ્યગ્જ્ઞાન ઓર સમ્યક્ ચારિત્ર રૂપ મોક્ષમાર્ગ કે અનુમાર અથવા
યથાતથ્ય-સત્ય કે અનુમાર, (અહામર્મ) સમભાવ કે અનુમાર
અથવા કર્મ નિર્જરા કો ભાવના કે અનુમાર, (કાણ) અપને શરીર
સે કિન્તુ અભિલાપા માત્ર સે નહીં (ફાસેઃ) સ્પર્શ ક્રિયા અર્થાત્-સમુ-
ચિત કાલ મેં વિધિ સહિત વસે મદ્વજાતિ કર્યા । અતઃ (પાલેઃ) વારંવાર

મહાવીર પ્રભુની આજ્ઞા લઈને મિશ્રુપ્રતિમાનુ આરાધન કર્યુ હવે તેથી તે
કથનમા કોઈ શંકા રહેતી નથી । કારણ કે સર્વજ્ઞ મગધાન ને કંઈ કહે છે તે
દ્રવ્ય ક્ષેત્ર કાલ અને ભાવને જોઈને જ કહે છે

“ તપ્ત સે સંદપ્ અળગારે ” ત્યાર બાદ સ્કન્દક અળગારે “ માસિય
મિસ્ત્રુપદ્ધિમ ” માસિક મિશ્રુપ્રતિમાનુ ‘ અહામુત્ત ’ સૂત્રમાં જતાવેલી વિધિ
પ્રમાણે, ‘ અહામર્મ ’ સમ્યક્ દર્શન સમ્યક્ જ્ઞાન અને સમ્યક્ ચારિત્ર રૂપ
મોક્ષમાર્ગાનુસાર અથવા પોતાના ક્ષયોપશ્ચમ ભાવઅનુસાર ‘ અહા તત્ત્વ ’
તત્ત્વ અનુસાર અથવા સત્યને અનુસરીને, ‘ અહામર્મ ’ સમભાવ અનુમાર
અથવા કર્મ નિર્જરાની ભાવના અનુસાર, ‘ કાણ ’ પોતાના શરીરથી નહીં
કે માત્ર અભિલાષથી જ-“ ફાસેઃ ” સ્પર્શ કર્યો-જેટલે કે જ્યેક માસ સુધી
વિધિ સહિત તેની આરાધના કરી પાલેઃ ચતના પૂર્વક આરાધના કરવાને

‘અથાયમેકાદશાંગધારીકથિતઃ, પ્રતિમાશ્ચ વિશિષ્ય શ્રુતવાનેવ કરોતિ તદુક્તમ્—

“ ગચ્છે ચ્ચિય નિમ્માઓ, જા પુઞ્વા દસ ભવે અસંપુણ્ણા ।

નવમસ્સ તદ્વય વત્થુ, હોઢ જહ્ણો સુયાહિગમો ॥ ૧ ॥ ”

હાયા—ગચ્છે એવ કુશલઃ નિર્માતો યાવત્ પૂર્વાણિ દશ ભવંત્યસંપૂર્ણાનિ ।

નિયમસ્ય તૃતીય વસ્તુ ભવતિ જગન્ય શ્રુતાધિગમઃ ॥ ૧ ॥ ઇતિ ॥

હત્યાદિ શાસ્ત્રાદેવમવગતં ભવતિ યત્ યો દિ ઉત્કૃષ્ટેન કિશ્ચિદ્ન દશ પૂર્વ-ધરઃ, જગન્યેન નવમપૂર્વમ્ય તૃતીય વસ્તુ પાઠાતો ભવેત્ સ એવ ભિક્ષુપ્રતિમાં કર્તું શક્તુયાત્ સ્કન્દકસ્તુ ન પૂર્વધારી તત્કથમેતસ્યૈતાદશ તપો વિશેષેઽધિકારઃ કથિતઃ ઇતિ ચેદુચ્યતે—પ્રકૃતશ્રુતનિયમઃ પુરુશાન્તરવિષયઃ । સ્કન્દકસ્ય તુ સર્વધિન્મહા-

આતા કારણ કિ પ્રતિમાઓં કી આરાધના તો જો વિશિષ્ટ શ્રુતજ્ઞાન વાળા હોતા હૈ વહી કર સકના હૈ એસા હી સિદ્ધાન્ત મેં કહા ગયા હૈ કી—

“ ગચ્છે ચ્ચિય નિમ્માઓ, જા પુઞ્વા દસ ભવે અસંપુણ્ણા ।

નવમસ્સ તદ્વય વત્થુ, હોઢ જહ્ણો સુયાહિગમો ” ॥ ૧ ॥

જો ગચ્છ મેં કુશલ ઔર ઉત્કૃષ્ટ સે કુછ કમ દશ પૂર્વકા ધારી હો તથા જગન્ય સે નૌવેં પૂર્વકો તૃતીય વસ્તુ કા જ્ઞાતા હો, વહી ભિક્ષુ પ્રતિમાઓં કી આરાધના કર સકના હૈ સ્કન્દક અનગાર તો પૂર્વ કે ધારી યે નહીં તો ફિર इनका इन प्रकार के तपोविशेष में अधिकार कैसे कहा ? । उत्तर—शास्त्र में जो ऐसा कहा गया है सो ऐसा यह नियम दूसरे पुरुषों के लिये हैं—સ્કન્દક અનગાર કે લિયે યહ નિયમ લાગુ નહીં પડતા હૈ કપોં કિ વે જો ભિક્ષુ પ્રતિમા પાલન કરને મેં પ્રવૃત્ત હુએ સો સાક્ષાત્ સર્વજ્ઞ ભગવાન મહાવીર તીર્થંકર કે ઉપદેશ સે હી હુએ હૈં ।

શકા—ભિક્ષુ પ્રતિમાઓતું આરાધન તો વિશિષ્ટ શ્રુતજ્ઞાન વાળા જ કરી શકે છે એવુ સિદ્ધાન્તમાં કહ્યું છે એમ કે—

“ ગચ્છે ચ્ચિય નિમ્માઓ, જા પુઞ્વા દસ ભવે અસંપુણ્ણા ।

નવમસ્સ તદ્વય વત્થુ, હોઢ જહ્ણો સુયાહિગમો ” ॥ ૧ ॥

ભિક્ષુપ્રતિમાની આરાધના એજ મુનિ કરી શકે છે કે જે ગચ્છમા કુશલ હોય, જે વધારેમા વધારે દસ પૂર્વથી કંઈક ઓછા જ્ઞાનનો ધારી હોય અને ઓછામા ઓછો નવમાં પૂર્વની ત્રીજી વસ્તુનો (વત્થુનો) જ્ઞાતા હોય. બ્યારે સ્કન્દક અણુગાર તો પૂર્વના ધારક ન હતા તેઓ તો અગિયાર અંગના જ પાઠી (ધારક) હતા તો આ પ્રકારના વિશિષ્ટ તપની આરાધના કરવાનો અધિકાર તેમને કેવી રીતે હોઈ શકે ?

ઉત્તર—શાસ્ત્રનો એ નિયમ ખીજી વ્યક્તિઓને માટે છે પણ સ્કન્દક અણુગારને તે નિયમ લાગુ પાડી શકાય નહીં, કારણ કે તેમણે સાક્ષાત્ સર્વજ્ઞ

“અણુપાલેહ” અણુપાલયતિ-પ્રતિમાસમાપ્તૌ સ્વનુમોઽનાત્ । કિમુત્તરં મવતિ ?
 “આળાપ આરાહેહ” આગ્રયા=માધદાશ્ચાનુમારણ આરાધયતિ । “સમ્મં કાણ
 કાસિચા” સમ્યક્ કાયન સ્પૃષ્ટ્વા ‘જાવ આરાહૃષા’ યાવત્=મારાધ્ય, અથ
 યાવત્પદેન-‘પામિષ્ઠા સોહિષ્ઠા તીરિષ્ઠા પૂરિષ્ઠા કિટ્ઠિષ્ઠા અણુપાલિષ્ઠા આળાપ’
 इति छाया—पालयित्वा शार्घयित्वा (शामयित्वा तीरयित्वा पूरयित्वा कीर्त-
 यित्वा अनुपालयित्वा आह्वया) इति संग्रह ।

स्कन्दकोऽनगारा मासिकीं भिक्षुप्रतिमां सविधिं समाराध्य “जेणेव समणे
 भगव महावीर” यज्ञेय धमणो भगवान् महावीरः “तेण्व उवागच्छ” तर्ज
 प्रतिमा में अच्छी तरहसे आराधित हुआ है अतः मैं प्रतिमा को अच्छी
 तरह से पालित कर चुका हूँ इस प्रकार से उसका कीर्तन करते ।
 (अणुपालेह) प्रतिमा की समाप्ति होने पर भी वे उसकी अनुमोदना
 किया करते । इस तरह उन स्कन्दक अनगारने उस पहिली भिक्षु
 प्रतिमा का (आणाय आराहेह) प्रभुकी आज्ञा के अनुसार आराधन
 किया । (सम्मं कोण पामिष्ठा) इस प्रकार व स्कन्दक अनगार प्रथम
 भिक्षु प्रतिमा का अपने शरीर से स्पर्श करके (जाव आराहेत्ता) यावत्
 उसका सविधि आराधन करके यावत्स्कन्द से “पालिष्ठा, सोहिष्ठा,
 तीरिष्ठा, पूरिष्ठा, किट्ठिष्ठा अणुपालिष्ठा आणाय” इस पाठ का यहाँ
 संग्रह किया गया है—उन पत्रों का अर्थ—पालन करके, शोभित या शोभि
 त करके, तीरित करके, पूरित करके, कीर्तित करके, अणुपालित करके,
 आज्ञा से आराधित करके (जेणेव समणे भगव महावीर) जहाँ भ्रमण
 भगवान् महावीर विराजमान थे (तेणेव उवागच्छ) वहाँ पर आय ।

હતો અને એ આ ભિક્ષુપ્રતિમામાં તે અભિષેકનું આરી રીતે પાલન કરું છે
 તે કારણે ભિક્ષુપ્રતિમાનું બરાબર પાલન કરું છે એ પ્રભાણે તેનું શ્રીવન
 અણુપાલન કરું અણુપાલેહ : ભિક્ષુપ્રતિમાની સમાપ્તિ થયા પછી પણ તેણે
 તેની અનુમોદના કર્યા હતા આ પ્રભાણે ૩૩ ૬૩ અણુપાલે પહેલી ભિક્ષુ
 પ્રતિમાનું આળાપ આરાહેહ પ્રભુની આજ્ઞા અનુસાર આરાધન કરું
 ‘સમ્મ કાણ્ય પામિષ્ઠા આ રીતે પદ્ધતિ ભિક્ષુપ્રતિમાનું પાલનની કથાથી
 બરાબર આરાધન કરીને માધ્ય આરાહૃષ્ટા તેનું પાલન કરીને તેને શોભિત
 અથવા શોભિત કરીને તીરિત કરીને પૂરિત કરીને, કીર્તિત કરીને, અણુ
 પાલિત કરીને અને અનયાનના આજ્ઞાનુસાર આરાધન કરીને “જેણે
 ભગવ મહાવીરે બધા ભ્રમણ ભગવાન મહાવીરે વિરાજમાન થતા, ‘જેણે

‘सोहेइ’ शोधयति-अतिचारपङ्कप्रक्षालनात्, यद्वा ‘शोभयति’ इति-छायायां पारणदिने गुर्वादिदत्तावशिष्टभोजनात् । ‘तीरेइ’ तीरयति-पूर्णेऽपि तदवधौ सत्यकालावस्थानात् ‘पूरेइ’ पूरयति-पूर्णेऽपि तदवधौ तत्कृतपरिमाणपूरणात् । ‘किट्टेइ’ कीर्तयति-पारणादिने “अयमयं चाभिग्रहविशेषः कृत आसीत्, अस्यां प्रतिमायां स चारावित एव, अधुना पारितप्रतिमोऽहम्, इति गुरुसमक्षं कीर्तनात् ।

उपयोग पूर्वक उसमें तत्पर रहने के कारण उन्होंने उसका अच्छी तरह से पालन किया । (सोहेइ) इसमें किसी भी प्रकार से अतिचार रूप पङ्क मेल न लग जाय इस बात का सदा ध्यान रखने के कारण अथवा लगे हुए अतिचाररूप पङ्क (कीचड़) के प्रक्षालन करने के कारण उन्होंने उसे शोधित किया । अथवा (सोहेइ) की छाया (शोभयति) ऐसी भी हो सकती है सो इस पक्ष में इसका अर्थ ऐसा होता है कि पारणा के दिन गुरु आदि द्वारा दिये गये अवशिष्ट भोजन करने से उसको उन्होंने शोभायुक्त किया । ‘तीरेइ’ उसकी अवधि समाप्त हो जाने पर भी वे उसे थोड़े समय तक और भी पालन करते रहते इस कारण मानों वे उसे उन्होंने तीरयुक्त किया अर्थात् समाप्त किया । ‘पूरेइ’ उसकी अवधि समाप्त हो जाने पर भी उस संबंधी कार्यों के परिमाण की वे पूर्ति करते रहते इस कारण उन्होंने उसे पूरा किया । ‘किट्टेइ’ जब पारणा करने का दिन आता तब वे गुरु के समक्ष जाकर ऐसा कहते कि मैंने ऐसा अभिग्रह लिया था-और वह मेरा अभिग्रह इस

कारण तेमणु सारी रीते तेनुं पालन क्युं. “सोहेइ” तेमा कोछ पणु प्रकारना अतिचार (दोष) रुप मेल लागी न जय तेनी काणल राभवाने कारणु अथवा ने अतिचाररुप मेल लाग्यो डाय तेने साइ करवाने कारणु तेमणु तेने शोधित क्युं-शुद्ध क्युं अथवा-“सोहेइ”नी छाया “शोभयति” पणु थछ शके छे ने जे दृष्टिजे तेना अर्थनो विचार करवामा आवे तो तेना अर्थ आ प्रमाणु पणु घटावी शक्य के पारणाने द्विसे शुरु वगेरे भास्कृत अपायेकुं वधेकुं कोजन करवाथी तेमणु तपस्यानी शोभामा अलिवृद्धि करी. “तीरेइ” तपनी समयभर्याहा पूरी थया पछी पणु थोडा समय सुधी तेमणु तेनुं पालन कर्था क्युं. ते कारणु जणु के तेजो तेने तरी गया जेटवे तेमणु लिक्षुप्रतिमाने ममाप्त करी. (पूरेइ) तपनी अवधि पूर्ण थछ जया छता पणु तपस्या संभधी कार्योना परिमाणुनी तेजो पूर्ति करता रह्या, ते कारणु तेमणु ते पूरी करी, (किट्टेइ) जयारे पारणाने द्विसे आव्यो त्यारे तेमणु शुरुनी पामे जधने जेबुं क्युं के जे आ प्रकारनो अभिग्रह लीथो

વિશેષસ્ત્વેતાવાનેવ-અપ્ર ત્રૈમાસિકયાં મિષ્ટુપ્રતિમાયાં દ્વે દત્તી મોજનસ્ય દ્વે પ
પ્રતિદિન મામદ્વયપર્યન્ત ગ્રાહીતવ્ય મન્તઃ ।

જાપ સર્વ માસિકી મિષ્ટુપ્રતિમાવદેવ વિજ્ઞેયમિતિ 'એવં' એવમ્-અનનૈવ પ
“તેમાસિય, ચાત્રમાસિય, પંચમાસિય, છમાસિય, સત્તમાસિય, ’ ત્રૈમાસિક
ચાતુર્માસિકીં પચ્ચમાસિકીં, પાષ્ણમાસિકીં, સપ્તમાસિકીં, મિષ્ટુપ્રતિમા દ્વી
સ્થ દ્વી વિદ્યતિ યથાગિતિ સમાચયતિ । ત્રિશપઃ કેવલમપમ્ યતુ-ત્રૈમાસિ
મોજનરાનગોસ્તિસ્તસ્તિસ્તોદત્તપઃ, ચાતુર્માસિકયાં ચત્સ્રઃ ૨, પચ્ચ માસિકયાં પ
પાષ્ણમાસિકયા પટ ૮, સપ્તમાસિકયાં સપ્તસપ્તદ્વયો ગ્રાહીતવ્યા મન્તિ

ઔર પાન-પાની કી એક-એક દસિ હોતી હૈ-યહાં ઘે દો દા હાત
અર્થાત્ આહાર કી દો દસિયાં ઔર પાની કી દો દસિયાં દો મહિને ।
પ્રતિદિન લી જાતી હૈં । ચાકો કા ઔર સબ કથન પ્રથમ મિષ્ટુપ્રતિમા
તરફ સે હી જાનના ચાહિયે । ઈસી પ્રકાર સે (ત્ર માસિય, ચાત્રમાસી
પચ્ચમાસિય, છમાસિય, સપ્તમાસિય) ત્રીનમાસવાલી ત્રીમરા િ
પ્રતિમા, ચારમાસવાલી ચૌત્રી મિષ્ટુપ્રતિમા, પાંચમાસવાલી પાંચઠી મિ
પ્રતિમા છમાસવાલી છઠી મિષ્ટુપ્રતિમા, સાતમાસવાલી સાતઠી મિષ્ટ
પ્રતિમા કે વિષય મેં જી જાનના ચાહિયે । વિશેષતા કેવલ ઈનમેં જાત
હી હૈ કિ સાતમાસવાલી મિષ્ટુપ્રતિમા મેં આહાર ઔર પાની કી ત્રીન
ત્રીન દસિયાં હોતી હૈં, ચારમાસવાલી ચૌત્રી મિષ્ટુપ્રતિમા મેં આહાર
ઔર પાની કી ચાર-ચાર દસિયાં હોતી હૈં । પાંચમાસ કી અવધિ ચાત
પાંચમી મિષ્ટુપ્રતિમા મેં આહાર ઔર પાની કી પાંચ-પાંચ દસિયાં હોત
હૈં । છમાસવાલી છઠી મિષ્ટુપ્રતિમા મેં આહાર ઔર પાની કી છ
છ દસિયાં હોતી હૈં । સાતમાસવાલી સાતઠી મિષ્ટુપ્રતિમા મેં આહાર

અને પાણીનાં એક એક હાત ચકલ્લ કથાય છે બપોરે બીજી મિષ્ટુપ્રતિમામાં
આહાર અને પાણીની બે બે હાત ચકલ્લ કરવામાં આવે છે આહારની બે
દસિયો બે માથ સુધી દરદેશ લેવામાં આવે છે બાકીનું સમસ્ત કથન પહેલી
મિષ્ટુપ્રતિમા પ્રમાણે જ સમજવું એ જ પ્રમાણે “તેમાસિય, ચાત્રમાસિય,
પચ્ચમાસિય, છમાસિય, સપ્તમાસિય” ત્રૈમાસિક ચતુર્માસિક, પચ્ચમાસિક છમા
સિક અને સપ્તમાસિક પ્રતિમાઓના વિષયમાં પણ સમજવું તેમાં નિશિષ્ટતા
આ પ્રમાણે છે-ત્રમાસિક મિષ્ટુપ્રતિમામાં આહાર અને પાણીની ત્રણ ત્રણ
દસિયો લેવાય છે ચતુર્માસિક મિષ્ટુ પ્રતિમામાં આહાર અને પાણીની ચાર
ચાર દસિયો લેવાય છે પાંચ માથ ચાલતી પાંચમી મિષ્ટુ પ્રતિમામાં આહાર
અને પાણીની પાંચ પાંચ દસિયો લેવાય છે છ માસની અવધિમાં છઠી
મિષ્ટુ પ્રતિમામાં આહાર અને પાણીની છ છ દસિયો લેવાય છે સાત માસની

वोपागच्छति “ उवागच्छिता ” उपागत्य “ समणं भगवं महावीर वंदइ नमंसइ वंदित्ता नममित्ता ” श्रमणं भगवन्त महावीरं वन्दते नमस्यति वन्दित्वा नमस्यित्वा “ एवं वयासी ” एवं वक्ष्यमाणप्रकारेणावादीत्—“ इच्छामि ण भंते ” इच्छामि खलु हे भदत ! “ तुव्भेहि अब्भणुण्णाए समाणे ” युष्माभिरभ्यनुज्ञातः सन् “ दोमासियं भिक्खुपडिमं उवसंपज्जित्ता विहरित्तए ” द्वैमासिकीं भिक्षुप्रतिमा-मुपसंपद्य खलु विहर्तुम् भवदाजया द्वैमासिकीं भिक्षुप्रतिमा स्वीकर्तुमिच्छामीति भावः, ततो भगवान्-अवादीत् “ अहामुहं देवाणुप्पिया ” यथासुखं देवानुप्रिय ! “ मा पडिवंधं करेह ” मा प्रतिबन्ध कुरु शुभकार्ये विलम्बो न करणीय इति भावः “ तं चेव ” तदेव-मासिकी भिक्षुप्रतिमावदेव-सर्वोऽपिपाठोऽध्येतव्यः ।

(उवागच्छिता) वहां आकर उन्होंने ने (समणं भगव महावीर वंदइ नमंसइ) श्रमण भगवान महावीर को वंदन किया उन्हें नमस्कार किया । (वंदित्ता नममित्ता) वंदना नमस्कार करके फिर उन्होंने ने प्रभु से (एवं वयासी) इस प्रकार कहा—(इच्छामि णं भंते!) हे भदन्त ! मैं चाहता हूं कि (तुव्भेहि अब्भणुण्णाए समाणे) मैं आप से आज्ञा प्राप्त कर (दो मासीयं भिक्खुपडिम उवसंपज्जित्ता णं विहरित्तए) दो मास की अवधिवाली भिक्षुप्रतिमा का पालन करूं। तब भगवान ने उनसे कहा—(अहामुहं देवाणु प्पिया मा पडिवंधं करेह) हे देवानुप्रिय ! तुम्हें जैसा रुचे वैसा करो-शुभकार्य में विलम्ब मत करो । (तचेव) इस द्वितीय भिक्षुप्रतिमा के संबंध में भी प्रथम भिक्षु प्रतिमा की तरह समस्त पाठ लगा लेना चाहिये । यहाँ पर जो विशेषता है वह इस प्रकार से है—कि जिस प्रकार से प्रथम भिक्षु प्रतिमा में अन्न-आहार

उवागच्छइ ” त्या गया. ‘ उवागच्छिता ” त्या जघने तेमणे “ समण भगव महावीर वदइ नमंसइ ” श्रमणु लगवान महावीरने वदत नमस्कार कया “ वंदित्ता नममित्ता ” वंदन नमस्कार करीने तेमणे तेमने “ एवं वयासी ” आ प्रभाणे उछु—“ इच्छामि णं भंते ! ” हे लगवन् ! मारी जेची भज्ज छे के “ तुव्भेहि अब्भणुण्णाए समाणे ” आपनीजे आज्ञा छाय तो ‘ दो मासियं-भिक्खुपडिम उवसंपज्जित्ताण विहरित्तए ” जे मासनी अवधिवाणी भिक्षुप्रति-म नी आराधना उइ त्यारे लगवाने स्कन्दक अणुगारने उछु—‘ अहामुहं देव-णुप्पिया मा पडिवंधं करेह ” हे देवानुप्रिय ! तमने जेम सुण उपजे तेम करे शुभ कार्यामा विलज करवे नही. “ तं चेव ” आणीछु भिक्षुप्रतिमाना प्रथमा पणु तमास सूत्र पाठ पडेली भिक्षुप्रतिमा प्रभाणे ज समण देवा. पणु तेमां आ प्रभाणे विशेषता छे—पडेली भिक्षुप्रतिमाना हरेशे आहार

મિષ્ટુપ્રતિમામુપસમ્પદ્ય સ્વત્વો ધિરતિ, વિધિપુરુષ સમારાધ્ય આજ્ઞા આરાધનો મયતિ ઇતિ । તપ્રાપ્તમ્યાં મિષ્ટુપ્રતિમાયાં ચતુર્વિધાદારપરિત્યાગપૂર્વકં મેવાન્તરોપવાસસેવનમ્, પ્રામાદ્વદિ કાયોત્સગકરણમ્, ઉત્તાનક-પાર્શ્વિક-નૈષધિકેતિ ધિપુ આસનેષુ એકસ્યાસનસ્ય સ્વીકરણમ્ । તપ્ર યદિ ક્ષયીત તદા ઉત્તાન એકપાશ્વો વા ક્ષયીત । યદિ આસીત તદા નૈષધિકેનાસનેન આસીત । નિષધયા મતી નૈષધિકમ્ । નિષધાનામ-ઉપવેશનમ્કારઃ સા પચ્ચવિધા-સમપાદપુતા-૧, ગોત્રિ પદિકા-૨, રિતિશુદ્ધિકા ૩, પચ્ચક્રા-૪, અદ્યપચ્ચક્રા-૫, એતિ । તપ્ર યર્યાં સમૌ

હોતી હૈ, તયા ત્તમીય મિષ્ટુ પ્રતિમા કો અર્થાત્ દશર્થી મિષ્ટુ પ્રતિમા કો કિ જો સાત દિનગત મેં આરાધિત હોતી હૈ વન સ્કન્દક અનગાર ને સન્નિધિ આરાધિન કર લે (આજ્ઞા આરાધનો મયતિ) આજ્ઞા સે इनका आराधन करने बाछे बन गये । इन प्रथमा, द्वितीया और तृतीया प्रतिमाओं के बीच में जो प्रथमा-आठवीं-मिष्टुप्रतिमा है-उसमें चतुर्विध आहार का परित्याग करते हुए एकान्तरोपवास करना चाहिये । गांव से बाहर कोपोत्सग करना चाहिये । उत्तानक, पार्श्विक, एवं नैषधिक इन तीन आसनों में से किसी एक आसन को स्वीकार करना चाहिये । यदि सोचे तो उस समय उत्तानक या एक पार्श्व होकर सोचे यदि बैठे तो उस समय नैषधिक आसन से बैठे । (निषधया) यह बैठने का एक प्रकार होता है इससे होने वाला नैषधिक कहलाता है । निषधया पांच प्रकार की बही गई है-१ समपादपुता, २ गोत्रिपदिका ३ रितिशुद्धिका, ४ पचक और ५ अद्यपचक । जिस आसन में दोनों पैर और हुत-बैठक मृमि का स्पर्श

અને ત્રીજી પ્રતિમા એટલે કે ત્રીજી મિષ્ટુ પ્રતિમા કે જેની આરાધના પણ સાત દિનગત કરવા પડે છે તેનું પણ સ્કન્દક અનગારે (ધિ પૂર્વક) “આજ્ઞા આરાધનો મયતિ” શાસ્ત્રાજ્ઞા પ્રમાણે આરાધન કર્યું” આ ત્રણ પ્રતિમાઓમાંની પહેલી (આઠમી મિષ્ટુપ્રતિમા) નું આરાધન કરનારે ચાર પ્રકારના આરાધનો ત્યાગ કરાને એકાન્તર ઉપવાસ કરવા બોધ્યો. ગામની બહાર કાયોત્સગ કરવો બોધ્યો. ઉત્તાનક પાર્શ્વિક અને નૈષધિક એ ત્રણમાંના કોઈ પણ એક આસને બેસવું બોધ્યો. સૂરે સ્થાપે થત્યા અથવા એક પડખે સૂવે એ સે ત્યારે નૈષધિક આસને બેસે નિષધા એ બેસવાની એક રીત છે તે દાશ બનતાં આસનને નૈષધિક કહે છે તે નિષધા પાંચ પ્રકારની થઈ છે-(૧) સમપાદપુતા (૨) ગોત્રિપદિકા (૩) રિતિશુદ્ધિકા, (૪) પચકા અને (૫) અદ્યપચકા

સર્વે પૂર્વવદેવ । એતાસ્તિસ્રઃ પ્રથમા દ્વિતીયા તૃતીયેતિ શબ્દેન કથ્યન્તે । તા એવાહ-
અષ્ટમી નવમી દશમી એતારિત્સોઽપિ સપ્ત સપ્ત રાત્રિન્દિવા સંપાદ્યા ભવન્તિ ।
“ પદ્મં સત્તરાઈંદિયં ” ઇત્યાદિ । ‘ પદ્મં ’ પ્રથમામ્ તત્રાષ્ટમ્યાં ભિક્ષુપ્રતિમાયાં
ચતુર્વિધાહારપરિત્યાગપૂર્વક = અષ્ટમ્યાદિષુ તિમ્ષુ પ્રથમામ્ = અષ્ટમીમિત્યર્થઃ
“ સત્તરાઈંદિય ” સપ્તરાત્રિન્દિવાં = સપ્તહોરાત્રસંપાદ્યાં ભિક્ષુ-પ્રતિમામુપમમ્પદ્ય
સ્કન્દકો વિહરતીતિ સમ્બન્ધઃ । ‘ એવમ્ ’ ‘ દોચ્ચં ’ દ્વિતીયાં = નવમીમિત્યર્થઃ ।
“ સત્તરાઈંદિય ” સપ્તરાત્રિન્દિવાં = સપ્તાહોરાત્રસંપાદ્યામ્ । ‘ તચ્ચં ”
તૃતીયાં દશમીમિત્યર્થઃ ‘ સપ્તરાઈંદિય ’ સપ્તરાત્રિન્દિવાં સપ્તાહોરાત્રસંપાદ્યાં

और पानी की सात-सात दत्तियां होती हैं। बाकी का सब कथन
पहिली प्रतिमा की तरह से इन प्रतिमाओं में भी जानना चाहिये।
इनके बाद आठवीं भिक्षु प्रतिमा आती है सो यह (प्रथमा) इस शब्द
से और नवमीं प्रतिमा (द्वितीया) शब्द से और दसवीं प्रतिमा (तृती-
या) शब्द से कही जाती है। ये तीनों ही प्रतिमाएँ सात-सात दितरात
के प्रमाणवाली होती हैं-अर्थात् इनके पालन करने का प्रमाण सात-
सात दिनरात का है। यही बात (पदम सत्तराईंदियं) इस पूत्रपाठ द्वारा
समझाई गई है। अष्टमीं-नवमीं और दशवीं इनमें से जो पहिली
भिक्षु प्रतिमा है अर्थात्-आठवीं भिक्षु प्रतिमा है वह सात दिनरात में
आराधित होती है। इस सात दिन रात की मर्यादावाली भिक्षु प्रतिमा
को उन स्कन्दक अनगर ने धारण किया। इसी तरह द्वितीय प्रतिमा
को अर्थात् नवमी भिक्षु प्रतिमा को कि जो सात दिनरात में आराधित

અવધિવાળી સાતમી ભિક્ષુ પ્રતિમામાં આહાર અને પાણીની સાત સાત દત્તિયો
લેવાય છે બાકીનું સમસ્ત કથન આ પ્રતિમાઓમાં પણ પહેલી પ્રતિમા પ્રમાણેજ
સમજવું. ત્યાર બાદ આઠમી ભિક્ષુપ્રતિમા આવે છે તેને “ પ્રથમા ” શબ્દથી
ઓળખવામાં આવે છે નવમી પ્રતિમાને “ દ્વિતીયા ” શબ્દથી અને દસમી
પ્રતિમાને “ તૃતીયા ” શબ્દથી ઓળખવામાં આવે છે તે ત્રણ પ્રતિમાઓની
આરાધના કરવાની અવધિ સાત સાત દિનરાતની છે એજ વાત “ પદ્મં સત્ત-
રાઈંદિય ” સૂત્ર દ્વારા સમજાવવામાં આવેલ છે આઠમી નવમી અને દસમી
પ્રતિમાઓમાંથી જે પહેલી ભિક્ષુપ્રતિમા છે તેનું, એટલે કે આઠમી પ્રતિમાનું
સાત દિનરાત આરાધન કરવું પડે છે તે સાત દિનરાતની અવધિવાળી ભિક્ષુ
પ્રતિમાનું પણ સ્કન્દક અણુગારે આરાધન કર્યું એજ પ્રમાણે બીજી પ્રતિમા,
એટલે કે નવમી ભિક્ષુ પ્રતિમા કે જેની આરાધના સાત દિનરાત કરવી પડે છે,

પાદૌ પુતૌ ચ ભૂમિ સ્પૃશન. સા સમપાદપુતા ૧, યસ્યાં ગોરિવોપવેશનં સા ગોનિ-
પથિકા ૨, યસ્યાં ચ સમપાદાભ્યાં સમપુતાભ્યાં ચોપવિશ્યૈકસ્ય પાદસ્ય હસ્તિ-
શુળ્ડાકારેણ પ્રસારણં ભવતિ સા હસ્તિશુળ્ડિકા ૩ । પર્યઙ્કા=પદ્માસનરૂપા ૪,
યસ્યામેકં જાનુમુત્પાદયતિ સા-અર્ધપર્યઙ્કા ૫, ઇતિ ।

નવમ્યાં ભિક્ષુપ્રતિમાયામપિ ચતુર્વિધાહારારિહારપૂર્વકમેકાન્તરોપવાસસેવ-
નમ્ । વિશેષસ્ત્વાસનવિષયક એવ । અત્ર દળ્ડાસનં, લગળ્ડાસનમ્, ઉત્કુલ્ડાસનં
ચેતિ । તત્ર-દળ્ડાસનં નામ પાદાગ્રાદિપ્રસારણેન દળ્ડવત્પતનરૂપમ્ । ૧ લગળ્ડ
વક્રકાણ્ઠમ્, તદ્વત્ મસ્તક પાણ્ય્યાદિ ભાગાનાં ભૂમિસમ્બન્ધેન, પૃષ્ઠસ્ય ચ સમ્બ-

કરતે હૈં વહ સમપાદપુતાનિપદ્યા હૈ । જિસ મેં ગાય કે જૈસા વૈઠના હોના હૈ
વહ ગોનિપથિકા હૈ । જિસ નિષદ્યા મેં દોનોં પૈરોં સે ઓર દોનોં પુનોં સે
સમાન વૈઠ કર ફિર હાથી કીમુંડ કે સમાન એક પૈર ફૈલાકર જો વૈઠના
હોતા હૈ વહ હસ્તિશુળ્ડિકા હૈ । પદ્માસન માડકર વૈઠના યહ પર્યઙ્કા
નિપદ્યા હૈ । જિસમેં એક પૈર જો દૂસરે પૈર પર વૈઠના હોતા હૈ વહ અર્ધ-
પર્યઙ્કા નિપદ્યા હૈ । નૌમી ભિક્ષુપ્રતિમા મેં બી ચતુરવિધ આહાર કા
પરિત્યાગ કરકે એકાન્તરોપવાસ ક્રિયા જાતા હૈ । ઇનમેં વિશેષતા કેવલ
આસન કો લેકર હોતી હૈ । ઇસમેં દળ્ડાસન ૧, લગળ્ડાસન ૨ ઉત્કુલ્ડ-
કાસન ૩ યે ત્રીન આસન હોતે હૈં । પાચોં કે અગ્રભાગ આદિ કે ફૈલા
ને સે દળ્ડ કી તરહ પહજાના યહ દળ્ડાસન હૈ ૧ । વક્ર કાણ્ઠ કા નામ
લગળ્ડ હૈ ઇસ આસન મેં મસ્તક એવ પાર્ણિ-એડિ આદિ ભાગ ભૂમિ સે

જે આસનમા બન્ને પગ અને પુત (કુલા) બેસવાની ભૂમિને સ્પર્શે
છે, તે આસનને (સમપાદપુત નિષદ્યા) કહે છે જે આસનમાં ગાયની જેમ
બેસવું પડે છે તે આસનને " ગોનિપથિકા " કહે છે જે નિષદ્યામા બન્ને
પગ અને બન્ને પુતોથી સમાન બેસીને એક પગને હાથીની સૂંઠની જેમ
લબાવીને બેસવામા આવે છે તે આસનને (હસ્તિ શુળ્ડિકા) કહે છે પદ્માસને
બેસવાની રીતને (પર્યઙ્કાનિષદ્યા) કહે છે જે આસનમા એક પગને બીજા પગ
પર રાખીને બેસવામા આવે છે તે આસનને " અર્ધપર્યઙ્કા નિષદ્યા " કહે છે
નવમી ભિક્ષુ પ્રતિમામા પણ ચાર પ્રકારના આહારને પરિત્યાગ કરીને
અકાન્તર ઉપવાસ કરવા પડે છે જેમાં આસનની ૪ વિશિષ્ટતા હોય છે. તેમાં
(૧) દડાસન, (૨) લગડાસન અને (૩) ઉત્કુલ્ડાસન એ ત્રણ આસનો
હોય છે જે આસનમા પગના અગ્રભાગ આદિને ફેલાવીને ઢંઢની જેમ પડી
જવાય છે તે આસનને દડાસન કહે છે " લગડા " એટલે વક્રકાણ્ઠ લગડા
સનમાં મસ્તક અને એડી આદિ ભાગ ભૂમિને સ્પર્શે છે પણ પીઠનો ભાગ

સમારાધ્ય આદ્યા આરાધકો મર્ધાત । અન્યાં પ્રતિમાયાં ગ્રામાર્ધદેહિઃ કાયોત્સર્ગ
કરણમ્ । અપાનક પટ્ટ મક્તમ્-ઉપવાસદ્વય કરણીયં મવતિ । કન્ધસ્થાનન સ્થિતસ્પ
દ્વૌ પાર્દો કિશ્તિત્સકાચ્ય પ્રમ્ભિત્વ હસ્તસ્પ જાનુપર્યન્ત પ્રસારિતમ્બ્રસ્પાવસ્થાનમ્ ।

અથ દ્વાદશીં પ્રતિમામાહ-“એગરાહ્યં” ઇત્યાદિ । ‘એગરાહ્ય’-એકરાષિ
કીમ્-એકરાષિસપાદ્યા દ્વાદશીં મિધુપ્રતિમાગ્રુપસપદ્ય સ્કન્દકો વિહરતીતિ । એવા
ચતુર્વિંશાદારપરિત્યાગપૂર્વકમુપવાસપ્રયણ સમારાધ્યતે । ગ્રામાર્ધદેહિઃ કાયોત્સર્ગ-
કરણમ્ । અસ્વામીપન્થતો નર્મીયૂતન કાયન, એકપૃથ્લમ્થિતયાઽનિમપયા દૃષ્ટ્યા
સ્થિરીકૃતશરીરાણ્યૈ પાદદ્વયસમલનેન, અવમ્ભિતમ્બ્રાખ્યામવસ્થાન મવતિ ।
એતાદૃશાવસ્થાયાં ય કવિત્ દ્વમનુપ્યર્તિર્યક્ત્વા ઉપસર્ગા સમુપસ્થિતા મવન્તિ યે
સુપણિહિતમનોશકાયૈ સમ્પક્ષોદ્ગ્ન્યા ઇત્યેવ રૂપાં દ્વાદશીં મિધુપ્રતિમાં સ્કન્દકો

એક રાત્રિ સે આરાધિત હોનેવાલી પારદર્શી મિધુપ્રતિમા કો સંબિધિ
આરાધિત કર લે સ્કન્દક અનગાર આજ્ઞા કે આરાધક બને । યહ પાર
દર્શી પ્રતિમા ચપારદર્શી પ્રતિમા કે વાદ તેલા કરક ઉસરાત કો ગામ
સે બાહર હમસાન આદિ ઝૂન્યસ્થાન મેં જારુર વહાં એક રાત્રિમર કાયો
ત્સર્ગ કરકે આરાધન કી જાતી હૈ, ઇસમેં જો અવસ્થાન હોતા હૈ-આગે
કા શરીર કુછ જુકા સા હોતા હૈ । આંલે દિમકાર રહિત હોતો હૈ અપા
ત્ આંચો પલકમાર ઘિના કી રખી જાતી હૈ, દોનોં પૈર આંપસ મેં જુઢે
હુપ રલે જાત હૈ । હાથ દોનોં લટકતે રહતે હૈ । દૃષ્ટિ એક કિસો પુરુષ
પર લગાઈ જાતી હૈ । ઇસ અવસ્થા મેં જો કુછ મો દેવ, મનુષ્ય, તિર્યક
કુલ ઉપસર્ગ ઉપસ્થિત હોતે હૈ લે મન ઘચન ઓર કાયકી એકાગ્રતા કરતે
હુપ સહન કરતે હૈ । ઇસ પ્રકાર સ્કન્દક અનગાર ને ઇસ પારદર્શી મિધુ

રાત્રિમા જેના આરાધના થાય છે તે બારમી મિધુપ્રતિમાનુ સ્કન્દક અવમાર
વિધિપૂર્વક આરાધન કરવા લાગે બારમા મિધુપ્રતિમાની વિધિ આ ગ્રામાર્ધે છે
અગિયારમી પ્રતિમાનુ આરાધન કર્યા પછી બીજા કરીને-ત્રણ ઉપવાસ કરીને-
આમની બહાર રમશાન આદિ નિજન જગ્યામા જઈને રાત્રિમાર કાયોત્સર્ગ
કરીને આ પ્રતિમાની આરાધના કરાય છે તે પ્રતિમાના અરાધકે નીચે ઇશાંબા
પ્રમાણે ઉભા રહીને કાયોત્સર્ગ કરવો પડે છે-શરીરને આગલો ભાગ સહેજ
ઢોકેલો હોય છે આખો અનિમિષ (ખાલસા) રહે છે બન્ને પગ બેકે બીજા
માથે બેઠાયેલા અને બન્ને હાથ લાગેલા રહે છે ત્રણ કોઈ બેકે પુરુષ પર
સ્થિર કરાય છે આ અવસ્થામા મનુષ્ય દેવ અને નિચલો દ્રાણ જે ઉપસર્ગો
થાય છે તન મન ઘચન અને કાયાની બેકાગ્રતા રાખીને ત્રહન કરે છે સ્કન્દક

પ્રતલાધ્યાસવસ્થાનમ્ । આમ્રકુન્જાસનમ્=આમ્રત્ કુન્જાસનમ્, સર્વ શરીરં સંકો-
ચ્યોપવેશનમિતિ । આસુ-અષ્ટમી-નવમી-દશમીરૂપાસુ તિસૃષુ પ્રતિમાસુ પ્રત્યેક
પ્રતિમાયામુક્તાનામાસનાનામન્યતમાસનાવલમ્બનેનાવસ્થાનમિતિ સમુદિતાર્થઃ ।
અયૈકાદશીં ભિક્ષુપ્રતિમામાહ—‘ અહોરાઈંદિયં ’ इत्यादि । अहोराईंदियं । अहो-
रात्रिन्दिवाम्, एकादशी भिक्षुप्रतिमा ‘ अहोरात्रिन्दिवा ’ इति नाम्ना कथ्यते ।
ताम् एकाहोरात्रसंपाद्या भिक्षुप्रतिमापुसंपन्न स्कन्दको विहरति । एनां विधिपूर्वकं
इस आसन में दोनों पैरों के अग्रभाग से बैठना होता है २ । समस्त
शरीर को संकुचित करके जिस आसन से बैठा जाता है वह आम्रकु-
न्जासन है ३ । इन आठवीं नौवीं दसवीं भिक्षुप्रतिमाओं में जो ये
आसन कहे गये हैं उनमें से किसी एक आसन का अवलम्बन कर
बैठना चाहिये (१०) अब ग्यारहवीं भिक्षुप्रतिमा को सूत्रकार कहते हैं
(अहोराईंदिए) ग्यारहवीं जो भिक्षुप्रतिमा है वह (अहोरात्रिन्दिवा)
इस नाम से कहो जानो है । इस (अहोरात्रिन्दिवा)(दिनरात)भिक्षुप्रतिमा
को विधिपूर्वक पालन करके वे स्कन्दक आज्ञा के आराधक बनें । इस
प्रतिमा में ग्राम से बाहर कायोत्सर्ग किया जाता है । चतुर्विधाहारत्या
गूर्वक प्रणमन को तपस्या को जाती है । इस प्रतिमा में दोनों पैर
कुछ सकोव कर और दोनों हाथ जानु पर्यन्त लटकाकर खड़े रहना होता
है । अर्थात् इस रूप से कायोत्सर्ग किया जाता है ११ । अब बारहवीं
भिक्षु प्रतिमा का कथन करते हुए सूत्रकार कहते हैं कि (एगराइयं)

નાર વ્યક્તિ જેણે છે તેવી રીતે જે આસનમા બેસવું પડે છે તે આસન
ગોઠોહિકાસન કહે છે. તે આસનમાં બંને પગના અગ્રભાગ પર બેસવું પડે છે.
સમસ્ત શરીરને સંકુચિત કરીને જે આસનમા બેસાય છે તે આસનને આને
કુખ્જાસન કહે છે આઠમી, નવમી, અને દસમી ભિક્ષુપ્રતિમામાં જે આસનો
દર્શાવ્યા છે તેમાના કોઈ પણ એક આસને આરાધકે બેસવું જોઈએ, હવે
સૂત્રકાર અગિયારમી ભિક્ષુપ્રતિમાનું કથન કરે છે—“ અહોરાઈંદિય ” અગિયારમી
ભિક્ષુપ્રતિમાને ‘ અહોરાત્રિન્દિવા ’ નામથી ઓળખવામા આવે છે. સ્કન્દક
અણુગારે તે અગિયારમી ભિક્ષુપ્રતિમાનું વિધિપૂર્વક આરાધન કર્યું આ પ્રતિ-
માની આરાધના કરનારે ગામની બહાર જઈને કાયોત્સર્ગ કરવો પડે છે અને
ચાર પ્રકારના આહારના પરિત્યાગ પૂર્વક ષષ્ઠલક્ષ્મી તપસ્યા કરવી પડે છે,
એટલે કે છઠું કરવો પડે છે કાયોત્સર્ગ કરતી વખતે બંને પગ એક બીજા
સાથે સ્પર્શે તેમ ઉભા રહેવું પડે છે. અને બંને હાથ લટકતા રહે છે. હવે
સૂત્રકાર બારમી ભિક્ષુપ્રતિમાનું વર્ણન કરતાં કહે છે—(ઇગરાઈયં) એક જે

उवागच्छ' यथैव भ्रमणो भगवान् महावीरस्तथैवोपागच्छति ' उवागच्छित्वा
 उपागत्य ' समर्प्य भगव महावीर वदइ नमसइ वदित्वा, नमसित्वा ' धर्म्यं मा-
 न्तं महावीरं वन्दते नमस्यति वदित्वा नमस्यित्वा ' एवं वयासो ' एवमत्रादीः
 ' इच्छामि ण भते । इच्छामि खट्ठ हे मदन्त ! ' तुम्हेहि अम्मणुग्गाए समाणे
 गुणरयण सघच्छर सवोक्कम्म ' गुणरत्न सत्तर नामकं तप
 कर्म ' उपसपज्जेता ण विहारणए' उपसपय स्वच्छ निर्दुत्तम्, गुणरत्नसंस्तारण
 प्रनिमा का विधिपूर्वक आराधन किया। इस तरह ब स्कन्दक अनगा
 (एगराह्य भिक्खुपञ्चिम) एक रात की अवधिवाली इस पारहवीं मित्र
 प्रतीमा को ' अहासुत्तं ' सूत्र में इसके आराधन करने की जैसी विधि
 कही गई है उसके अनुसार 'जाब आराहेत्ता यावत् आराधित करके
 ' जेणेव समणे भगव महावीरे तेणेव उवागच्छइ ' जहां भ्रमण भग
 वान् महावीर विराजमान थे वहां पर आये । (उवागच्छित्वा) भ्रमण
 भगवान् महावीर के पास आ करके उन्होंने ने (समर्प्य भगव महावीर
 वदइ नमसइ) भ्रमण भगवान् महावीर को वदना की नमस्कार किया
 (वदित्वा नमसित्वा) वन्दना नमस्कार करके फिर उन्होंने उनसे
 इस प्रकार प्रार्थना की (इच्छामि ण भते !) हे मदन्त ! मैं चाहता हूँ
 कि ' तुम्हेहि अम्मणुग्गाए समाणे ' आप से आज्ञा प्राप्त कर
 गुणरयण सघच्छर सवोक्कम्म ' गुणरत्न सत्तर नामक तप
 स्वीकार करें। अर्थात् मैं गुणरत्न संवत्सर नामका तप स्वीकार
 करना चाहता हूँ। ' गुणरयण सघच्छर ' इसकी संस्कृत छाप

अनुगारे ते आरभी भिक्षुप्रतिभानु विधिपूर्वक आराधन कयु आ शीते
 स्कन्दक अनुगारे (एगराह्य भिक्खुपञ्चिम) एक रातकी अवधिवाली आरभी
 भिक्षुप्रतिभानु (अहासुत्त) सूत्रभा तेना आराधनानी के विधि बतायी छे ते
 प्रभावे (जाब आगहेत्ता) यावत् आराधन करीने (जेणेव समणे भगव महावीरे तेणेव
 उवागच्छइ) त्पारपत्री जथा भ्रमण भगवान् महावीर विराजता छेता त्था तेओ
 गया (उवागच्छित्वा) त्था जधने (समर्प्य भगव महावीर वदइ नमसइ) तेभवे
 भ्रमण भगवान् महावीरने वदना नमस्कार कर्षा (वदित्वा नमसित्वा) वदना
 नमस्कार करीने ते के तेभने आ प्रभावे विनिति करी- (इच्छामि ण भते)
 हे मदन्त ! आशी जेवा छेता छे के (तुम्हेहि अम्मणुग्गाए समाणे) आपनी
 आज्ञा प्राप्त करीने (गुणरयण सघच्छर सवोक्कम्म) गुणरत्न सत्तर नामक
 तपनी आराधना करे जे से के हूँ गुणरत्न सत्तर तपनी आराधना करे
 नाथ छे (गुणरयण सघच्छर) नी संस्कृत छाप (गुणरत्न संवत्सर)

विधिपूर्वकं समराधयतीति । ततः किमित्याह—‘ तएणं से ’ इत्यादि । ‘ तएणं से खंदए अणगारे ’ ततः खलु स स्कन्दकोऽनगारः । ‘ एगराइयं भिक्खुपडिमं ’ एकरात्रिकीं भिक्षुप्रतिमाम् ‘ अहामुत्तं ’ यथामूत्रम् सूत्रमनतिक्रम्य सूत्रप्रदर्शित मार्गानुसारेण ‘ जाव-आराहेत्ता ’ यावत्-आराध्य अत्र यावत्पदेन ‘ यथाकल्पम्, इत्यारभ्य, आज्ञया इति पर्यन्तानां मासिकी भिक्षुप्रतिमोक्तानां सर्वपदानां संग्रहः कार्यः तेन आराध्येति, आज्ञया आराध्य ‘ जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव

२१

प्रतिमायंत्र

प्रतिमा समयः विशेषविधिः

- १ प्रथमा एकमासिकी भोजनपानयोरेकैका दत्तिग्राह्या ।
- २ द्वितीया द्वैमासिकी भोजनपानयोर्द्वेद्वे दत्तिग्राह्ये ।
- ३ तृतीया त्रैमासिकी भोजनपानयोस्तिस्रस्तिस्रो दत्तयो ग्राह्याः ।
- ४ चतुर्थी चातुर्मासिकी भोजनपानयोश्चतस्रश्चतस्रो दत्तयो ग्राह्याः ।
- ५ पञ्चमी पञ्चमासिकी भोजनपानयोः पञ्च पञ्चदत्तयो ग्राह्याः ।
- ६ षष्ठी षण्मासिकी भोजनपानयोः षट् षट् दत्तयो ग्राह्याः ।
- ७ सप्तमी सप्तमासिकी भोजनपानयोः सप्त सप्त दत्तयो ग्राह्याः ।
- ८ अष्टमी सप्तरात्रिन्दिवा अपानकैकान्तरोपवासपारणके आचामाम्ले तपः) ग्रामादेर्वहिः कायोत्सर्गः, उत्तानकेमेकपार्श्विकेनैष-धिकमिति त्रिष्वेकस्यासनस्य सेवनम् तत्रागत परिपहोपसर्गसहनं च ।
- ९ नवमी सप्तरात्रिन्दिवा अन्यत्सर्वमष्टमी प्रतिमावत्करणम् । विशेष आसने—दण्डासन—लगण्डासनोत्कुटुकासनेष्वेकस्य सेवनम् ।
- १० दशमी सप्तरात्रिन्दिवा वीरासन गोदोहिकासननाम कुब्जासनमिति । अन्यत्सर्वं पूर्ववत् स्थातव्यम् ।
- ११ एकादशी एकाहोरात्रा अपानकषण्ठं तपः ग्रामादेर्वहिः प्रलम्बितभुजाभ्यां कायोत्सर्गकरणम् ।
- १२ द्वादशी एकरात्रिकी अगानकमष्टमं तपः ग्रामादेर्वहि एरु पुहलस्थापित । निर्मेष दृष्ट्या ईपदवनतकार्येन प्रलम्बितभुजाभ्यां कायोत्सर्गः तत्रागत परिपहोपसर्गसहनञ्च —



पठिष्वं करेह' मा पठिष्वं विलम्बं कुरु, अथ स्कन्दको गुणरत्नसंवत्सरतपः
स्वीकरोतीत्याह 'तपस्य से' इत्यादि । 'तपस्यं से त्वं ए अणगारे' तपः सत्
स स्कन्दकोऽनगारः 'समणेण भगवया महावीरेण' अमणेन भगवता महावी
रेण 'अन्मणुणाप समाणे' अन्मणुणातः सन् 'जाव नमसिप्ता' यावत् नमसिप्ता
अत्र, 'इदृ' इत्यग्रे 'जाव' पदान् 'तुष्टचित्तमाणादिप पीडमणे पीडसोमसिप्ता
हरिसवसिप्तापमाणादिय ए समण भगव महावीरं वंदह नमंसह वंदिषा' इति
पदानां संग्रहः । व्याख्यात्यत्रैव प्रकरणे पूव कृता ततोऽनसेयेति । 'गुणरत्न-
सवच्छर तवोक्म उचसपज्जिप्ताण विहरह' गुणरत्नसवत्सरतपः कर्म उपस-

वह तप गुणरत्न सवत्सर है । इस गुणरत्न संवत्सर तप के विषय में
स्कन्दक ने जय प्रभु से पूछा तब प्रभु ने उनसे कहा— अहासुहं देवापु
प्पिया । मा पठिष्वं करेह) हे देवानुमिय ! तुम्हें जिस प्रकार से सुख
हो वैसा करो—पर शुभकार्य में विलम्ब मत करो । इस तरह प्रभु की
आज्ञा प्राप्त कर स्कन्दक ने इस गुणरत्न सवत्सर तप को स्वीकार कर
लिया—इसी बात को भगवत् सूत्रकार समझाने के लिये कहते हैं—(तपस्यं
से त्वं ए अणगारे समणेण भगवया महावीरेण अन्मणुणाप समाणे
जाव नमसिप्ता गुणरत्नसवच्छरतवोक्म उचसपज्जिप्ता णं विहरह)
जब स्कन्दक अनगार के लिये अमण भगवान महावीर ने गुणरत्न
संवत्सर तपको आराधित करने की आज्ञा प्रदान कर दी तब वे इन्द्र
तुष्ट चित्त में आनन्दित होते हुए मन की प्रसन्नता के माधुर्यपूर्ण रूप
होकर उस तप को अमग भगवान महावीर को वंदन नमस्कार कर

गुणरत्न सवत्सर है । अथ गुणरत्न सवत्सर तपनी व्याशधना करवा भाटे न्यारे
स्कन्दक अणुआरे महावीर प्रभुनी आज्ञा भाजी त्वारे प्रभुजे कथं (अहमुह
देवापुप्पिया मा पठिष्वं करेह) हे देवानुमिय ! तबने सुभ उपजे तेभ करे
पद्य शुभकार्यं—। विलम्ब करेवा जोड जे नही अथ सीते महावीर प्रभुनी
अनुज्ञा भेजनीने स्कन्दक अणुआरे ते गुणरत्न सवत्सर तपने अजीकार कथं
जेव पात सूत्रकार करे पछीना सूत्रभां कहे छे—(तपस्यं ए त्वं ए अणगारे
समणेण भगवया महावीरेण अन्मणुणाप समाणे जाव नमसिप्ता गुणरत्नसव
च्छरतवोक्म उचसपज्जिप्ता णं विहरह) न्यारे अमण भगवाने अहं
अणुआरने ते गुणरत्न सवत्सर तपनी व्याशधना करवानी रत्न आपी त्वारे
स्कन्दकने प्रजे सतोष थयो. चित्तनी प्रसन्नता अने भवना आनंद सुदित ते
तपतो स्वीकार कर्यो. भगवान महावीरने वदवा नमस्कार करीने तेअ त्वारी

કર્મસ્વીકર્તુમિચ્છામીત્યર્થઃ ‘ગુણરચનં સંવત્સરં’ इत्यस्य गुणरचनसंवत्सरमिति-
 च्छाया, तत्र गुणानां कर्मनिर्जराविशेषाणां रचनं संवत्सरेण सत्रिभागवर्षेण यस्मिन्
 तपोविशेषे भवति तद् गुणरचनं संवत्सरम्-अथवा ‘गुणरचनं संवत्सरं’ इत्यस्य
 गुणरत्नसंवत्सरमितिच्छायापक्षे गुणा निर्जरा विशेषा एव रत्नानि यस्मिन् स गुण-
 रत्नः गुणरत्नश्चासौ संवत्सरश्चेति गुणरत्नसंवत्सरः गुणरत्नसंवत्सरो विद्यते
 यत्र तपोविशेषे तत् गुणरत्नसंवत्सरम् । तदेवं गुणरत्नसंवत्सरतपोविशेषे स्फुन्द-
 केन पृष्ठो भगवान् कथयति ‘अहामृहं देवाणुप्पिया’ यथासुखं देवानुप्रिय ? मा

‘गुणरचनं संवत्सरं’ ऐसी होनी है इसका अर्थ—(गुणानां कर्मनिर्ज
 राविशेषाणां रचनं संवत्सरेण सत्रिभागवर्षेण यस्मिन् तपोविशेषे
 भवति तत् गुणरचनं संवत्सरं) अपने तीसरे भागमहित एक वर्ष तक
 अर्थात्-सोलह महिने तक जिस तपविशेष में एक जान की कर्मनिर्जरा
 विशेष रूप गुणों की रचना-उत्पत्ति होनी है वह तप गुणरचन
 संवत्सर है । अथवा जब (गुणरत्नं संवत्सरं) ऐसी छाया रखते हैं तब
 इस पक्ष में इसका अर्थ ऐसा होता है कि— “ गुणा निर्जरा विशेषा
 एव रत्नानि यस्मिन् स गुणरत्नः, गुणरत्नश्चासौ संवत्सरश्चेति गुणर-
 त्नसंवत्सरः, गुणरत्नसंवत्सरो विद्यते यत्र तपोविशेषे तत् गुणरत्न
 संवत्सरम्) अर्थात् निर्जराविशेष गुणरूप रत्न जिसमें हों वह गुणरत्न
 है, गुणरत्न रूप जो संवत्सर है वह गुणरत्न संवत्सर है । यह गुणरत्न
 संवत्सर जिस तपविशेष में मौजूद रहना है वह तप गुणरत्न संवत्सर
 है । तात्पर्य—इस कथन का यह है कि—पूरा एक वर्ष जिस तप में कर्मों
 की निर्जरा विशेष गुणरूप रत्नों से युक्त हुआ व्यतीत किया जाता है

થાય છે તેનો અર્થ આ પ્રમાણે થાય છે—(ગુણાના કર્મનિર્જરા વિશેષાણાં રચન
 સવત્સરેણ સત્રિભાગવર્ષેણ યસ્મિન્ તપો વિશેષે ભવતિ તત્ ગુણરચનં સંવત્સરં) એક
 પૂર્ણાંક એક તૃત્યાંશ વર્ષ સુધી-એટલે કે ૧૬ માસ સુધી જે તપની આરાધના
 કરીને કર્મનિર્જરા રૂપ શુભોત્તી રચના (ઉત્પત્તિ) થાય છે તે તપનું નામ
 શુભરચના સવત્સર છે જે (ગુણરત્ન સંવત્સર) એ છાયા રાખવામા આવે
 તે તેનો અર્થ આ પ્રમાણે થાય છે—(ગુણા નિર્જરા વિશેષા એવ રત્નાનિ યસ્મિન્-
 સ ગુણરત્ન) નિર્જરાવિશેષ શુભ રૂપ રત્ન જેમા હોય તેને શુભરત્ન કહે છે
 (ગુણરત્નશ્ચાસૌ સવત્સરશ્ચેતિ ગુણરત્નસવત્સર ગુણરત્નસવત્સરો વિદ્યતે યત્ર તપોવિશેષે
 તત્ ગુણરત્નસંવત્સરમ્) તે શુભરત્ન રૂપ જે સવત્સર છે તેને શુભરત્ન સવત્સર
 કહે છે જે તપમા શુભરત્ન સંવત્સરનું અસ્તિત્વ હોય છે તે તપને શુભરત્ન
 સંવત્સર તપ કહે છેકહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે જે તપની આરાધનામાં આપું
 વર્ષ કર્મોની નિર્જરા રૂપ શુભરત્નથી યુક્ત વ્યતીત થાય છે, તે તપનું નામ

સ્વશરીર તાપયન્, તથા ' રત્તિ ' રાત્રી=રાત્રિસમયે ' ધીરાસર્જણે ' ધીરાસર્જન-
પૂર્વોક્તપ્રકારેણ, તથા ' અઘાઠઢેણ ' અમાઠુતેન=સદોરકમુલપશ્ચિ કારનોરભ-
ષોભપટ્ટકાવિરિક્તવસ્ત્રરક્તિતેન શરીરેણ વિઘ્નતીતિ ।

' एवं दोच्छ मासं ' एष द्वितीयं मासम् एषम्=प्रनेनेत्र विधिना द्वितीयमासम्
' छट् छट्ठेण ' पट्ट पट्ठेन, द्विकट्टिकोपवासेन । शेष सर्वे प्रथममासपदेव विज्ञेयम्
' एष, तच्च मासं अट्ठम अट्ठमे ण ' एवं तृतीयं मासम् त्रिणुपवासेन अष्टमाष्टमेन ।

जाती है । आतापना का अर्थ है सूर्य की वृष से अपने शरीर को तपाना । इस तरहकी स्थिति सपरा धनकर ये विषय, को व्यतीत करे और रात्रि में, शरीर को खुला करके धीरासन से रहे । “अघाठडेण” जो ऐसा पद दिया है—सो इससे यह बात प्रकट की गई है कि उस स्थिति को सदा कमुलपश्विका, रजोहरण और चोलपट्टक इनके अनिरिक्त और बल अपने शरीर पर नहीं रखना चाहिये । “एवं दोच्छ मास” इसी तरह से द्वितीय मास को भी इसी पूर्वोक्त विधि के अनुसार उसे व्यतीत करना चाहिये—पर इस महीने में, उसे दो दो उपवास करना चाहिये—बाद में पारणा करना चाहिये—फिर दो उपवास करना चाहिये बाद में पारणा करना चाहिये । इस तरह बीस दिन तपस्या के होते हैं । और दस दिन परणा के होते हैं । “एवं तच्च” इसी विधि के अनुसार तृतीय मास को भी समाप्त करना चाहिये । पर यहाँ “अट्ठम अट्ठमे ण” तीन २ उपवास करके पारणा करना चाहिये । इस तरह इस मास में चौबीस दिन तपस्या के होते हैं और आठ दिन पारणा के होते हैं ।

આ રીતે તે આખો દિવસ વ્યતીત કરે છે અને રાત્રે શરીર ખૂબ રાખીને વીરાસને બેસે છે “અઘાઠઢેણ” પણ વાત, એ દર્શાવવામાં આવ્યું છે કે આશ્રમક મુનિ દોષ સંહિતની મુદ્ધપત્તિ રત્તિદશ્ય અને ચોલપટ્ટક વિવાય કોઈ પણ વસ્ત્ર કપડું પોતાના શરીરપર રાખી શકતો નથી. “એવ દોચ્ચ માસ” બીજો માસ પણ પૂર્વોક્ત વિધિ પ્રમાણે જ તેણે વ્યતીત કરવો પડે છે પણ બીજા માસ દરમિયાન તેણે છઠ્ઠ (બે ઉપવાસ) ને પાસણે છઠ્ઠ કરવા બેઠ્ઠા. આ રીતે વીસ દિવસ ઉપવાસના અને દસ દિવસ પારણાના આવે છે ‘એવ તચ્ચ’ આ વિધિ પ્રમાણે જ ત્રીજો માસ પણ વ્યતીત કરવો બેઠ્ઠા. પણ ત્રીજા માસ દરમિયાન, અટ્ઠમને પાસણે અટ્ઠમ (ત્રણ ઉપવાસને પાસણે ત્રણ ઉપવાસ) કરવા બેઠ્ઠા. આ રીતે ત્રીજો મહિને ચોવીસ દિવસ તપસ્યાના અને આ

મ્પદ્ય સ્વલુ વિહરતિ । ગુણસ્ત્નતરમા વિધિં દર્શયન્નાહ—‘તં જહા’ ઇત્યાદિ । ‘તં જહા’ તથા ‘પદમં માસં ચત્થં ચત્થેણ’ પ્રથમં માસં ચતુર્થં ચતુર્થેણ, એકાન્ત-રોપવાસેન ‘અણિક્વિત્તેજં’ અનિક્ષિત્તેન નિરન્તરેણ=વ્યવધાનમર્જિતેન ‘તવો કમ્મેણં’ તપઃ કર્મણા ‘દિયા’ દિશ=દિવસે ‘ઠાણુક્કુડુ’ સ્થાનોત્કુટુકઃ સ્થાનેન=આસનેન ઉત્કુટુકઃ ઉત્કુટુકાસનસ્થિત ઇત્યર્થ ‘સૂરામિમુદે’ સૂરામિ-ગુલ્મઃ=સૂર્ય સમ્પ્રગ્લ્ભસ્થિતઃ સન્ ‘આયાવળભૂમી’ આતાપનભૂમૌ-આતાપનાર્થ મેવ નિયતીકૃતપ્રમાર્જિતપ્રત્યુપેક્ષિતમ્થાને ‘આયાવેમાણે’ આતાપયન્ સૂર્યાતપેન

અંગીકાર કિયા હસ ગુણસ્ત્નસંવત્સર તપ કી વિધિ કયા હૈ હસ વાત કો પ્રદર્શિત કરને કે નિમિત્ત સૂત્રકાર કહતે હૈ—તં જહા—વહ વિધિ હસ પ્રકાર સે હૈ—(પદમં માસં ચત્થં ચત્થેણં આણિક્વિત્તેજં તવોકમ્મેણં દિયા ઠાણુક્કુડુ સૂરામિમુદે આયાવળભૂમિ આયાવેમાણે, રત્તિ વીરા-સણેણં અવાડહેમ ચ) પ્રથમ મહિનો મેં એકાન્તર ઉપવાસ—એક દિન ઉપ-વાસ એક દિન પારણા એસે નિરંતર અર્થાત્ વ્યવધાન રહિત કરના ચાહિયે । હસ તરહ પ્રથમ મહિનો મેં નિરન્તર એકાન્તર ઉપવાસ કરના ચાહિયે—હસ કથન કે અનુસાર યહ વાત સમઘ્ન મેં આ જાતી હૈ કિ પ્રથમ મહિને મેં પન્દ્રહ ઉપવાસ ઓર પન્દ્રહ પારણા હો જાતે હૈ । હસ તપસ્યા વાલે સાધુ કો દિવસ મેં ‘ઠાણુક્કુડુ’ ઉત્કુટુક આસન સે બેઠના ચાહિયે ઓર સૂર્યકી તરફ મુઠ્ઠ કારકે આતાપના ભૂમિ મેં આતાપના લેના ચાહિયે । યહ આતાપનભૂમિ પહિલે સે હી નિયત કી હુઈ હોતી હૈ । હસ ભૂમિ કી પ્રત્યુપેક્ષણા પ્રમાર્જના કરકે આતાપના લી

વિદાય થયા અને ગુણસ્ત્ન સંવત્સર તપની આરાધના કરવા લાગ્યા હવે તે ગુણસ્ત્ન સંવત્સર તપની વિધિ સત્રકાર બતાવે છે (તં જહા) તેની વિધિ આ પ્રમાણે છે (પદમં માસં ચત્થં ચત્થેણં આણિક્વિત્તેજં તવોકમ્મેણં દિયા ઠાણુક્કુડુ સૂરામિમુદે આયાવળભૂમિ આયાવેમાણે, રત્તિ વીરાસણેણં અવાડહેમ ચ) પહેલે મહિને નિરંતર એકાન્તર ઉપવાસ કરવા બેઠ્યો—બેઠ્યો કે ઉપવાસને પારણે ઉપવાસ કરવા બેઠ્યો આ રીતે પહેલો મહિને પદર ઉપવાસ અને પદર પારણા થાય છે ઉપવાસ અને પારણાને દિવસે આરાધક સાધુએ “ઠાણુક્કુડુ” ઉત્કુટુકાસને (ઉભડક આમને-પગના અગ્રભાગને આધારે) સૂર્યની તરફ મુખ રાખીને તડકા વાળી ભૂમિમા સૂર્યનો તાપ સહન કરવો બેઠ્યો તે તડકાવાળી જગ્યા પહેલેથી જ નિયત કરવામા આવેલી હોય છે તે ભૂમિની પ્રત્યુપેક્ષણા પ્રમાર્જના કરીને જ ત્યાં તાપમાં બેસવામા આવે છે

સ્વશરીર તાપવન્, તથા ' રર્ષિ ' રાત્રી=રાત્રિસમયે ' વીરાસનેષ ' વીરાસનેષ
પૂર્વોક્તપ્રકારેણ, તથા ' અઘાઠઢેણ ' અપાઠ્ઠેન=સદોરકમુલપલ્લિકારમોહરન-
ચોલપટ્ટકાવિરિક્તવસ્ત્રરહિતેન શરીરેણ સિદ્ધમીતિ ।

' એવ દોઢ્ઢં માસં ' એવ દ્વિતીયં માસમ્ એવમ્=મનેનૈવ વિધિના દ્વિતીયમાસ
' છઠ્ઠ છઠ્ઠેણ ' પઘ્ઠ પઠ્ઠેન, ત્રિકલ્લિકોપવાસેન । શેષ સર્વે પ્રથમમામયદેશ વિશેષ
' એવ, તત્ત્વ માસં અઢ્ઢમ અઢ્ઢમે ણં ' એવં તૃતીય માસમ્ ત્રિણ્યુપવાસેન અઢ્ઠમાઢ્ઠમેન,

જાતી; હૈ । આતાપના કા અર્થ હૈ સૂર્ય કી ઘૂપ સે અપને શરીર કો તપાના
ઇસ તરહકી સ્થિતિ સંપન્ન થનકર યે વિવસ, કો બ્યતીત કરે ઓર રાત્રિ
સે, શરીર કો યુલા કરકે વીરાસન સે રહે । "અઘાઠઢેણ" જો એસા પદ
વિધા હૈ-સો ઇસસે યહ યાત-પ્રકટ કી, ગઈ હૈ કિ ઇસ સપ્તમ કો સદોર
કમુલપલ્લિકા, રજોહરણ ઓર ચોલપટ્ટક ઇનકે, અનિરિક્ત ઓર ક્લ
અપને શરીર પર નહીં રખના ચાહિયે । " એવં દોઢ્ઢં માસ " ઇસી તરહ
સે દ્વિતીય માસ કો બી ઇસી પૂર્વોક્ત વિધિ કે અનુસાર ઇસે બ્યતીત
કરના ચાહિયે-પર ઇસ મહિને મેં, ઇસે દો દો ઉપવાસ કરના ચાહિયે-
બાદ મેં પારણા કરના ચાહિયે-ફિર દો ઉપવાસ કરના ચાહિયે બાદ મેં,
પારણા કરના ચાહિયે । ઇસ તરહ વીસ દિન તપસ્યા કે હોતે હૈ । ઓર
દસ દિન પરણા કે હોતે હૈ । " એવં તત્ત્વં " ઇસી વિધિ કે અનુસાર
તૃતીય માસ કો બી સમાપ્ત કરના ચાહિયે । પર ઘણાં " અઢ્ઢમ અઢ્ઢમે
ણ " ત્રીન ૨ ઉપવાસ કરકે પારણા કરના ચાહિયે । ઇસ તરહ ઇસ માસ
મેં ચોત્તીસ દિન તપસ્યા કે હોતે હૈ ઓર આઠ દિન પારણા કે હોતે હૈ ।

આ રીતે તે આખો દિવસ બતીત કરે છે અને શત્રે શરીર ખૂબ રાત્રીને
વીરાસને બેસે છે ' અઘાઠઢેણ " પદ દ્વારા, એ દર્શાવવામાં આવ્યું છે કે
આશ્રમક યુનિ દેશ સહિતની મુદ્દપત્તિ રજોહરણ અને ચોલપટ્ટક ત્રિવાપ કેમ
પણ વસ્ત્ર કપડું પોતાના શરીરપર રાખી શકતો નથી. " એવ દોઢ્ઢં માસ " બીજો
માસ પણ પૂર્વોક્ત વિધિ પ્રમાણે જ તેણે બતીત કરવો પડે છે પણ બીજા
માસ દરમિયાન તેણે છઠ (બે ઉપવાસ) ને પારણે છઠ કરવા બેઠ્ઠ્યો. આ
રીતે વીત્ર દિવસ ઉપવાસના અને ઇસ દિવસ પારણાના આવે છે ' એવ તત્ત્વં '
આ વિધિ પ્રમાણે જ ત્રીજો માસ પણ બતીત કરવો બેઠ્ઠ્યો પણ ત્રીજા માસ
દરમિયાન અઢ્ઠમને પારણે અઢ્ઠમ (ત્રણ ઉપવાસને પારણે ત્રણ ઉપવાસ)
કરવા બેઠ્ઠ્યો. આ રીતે ત્રીજે મહિને ચોવીસ દિવસ તપસ્યાના અને આ

ત્રિપુપવાસેન 'ચૌત્થં માસં દસમં દસમેણ' ચતુર્થ માસ દશમદશમેન, ચતુશ્વતુરુપવાસેન 'પંચમં માસં વારસમં વારસમેણ' પંચમં માસં દ્વાદશદ્વાદશેન, પંચ પંચોપવાસેન "છટ્ઠં માસં ચૌદસમં ચૌદસમેણ" ષષ્ઠં માસ ચતુર્દશચતુર્દશેન, ષષ્ઠમાસે પદ્મપવાસેન "સત્તમં માસં સોલસમં સોલસમેણ" સપ્તમં માસં પોડશપોડશેન સપ્તસપ્તોપવાસેન "અઠ્ઠમં માસં અઠ્ઠાદસમં અઠ્ઠાદસમેણ" અષ્ટમં માસમ્ । અષ્ટા-

"ચૌત્થં માસં દસમં દસમેણ" ચતુર્થમાસકો મીં હસી પ્રકારકી વિધિકે અનુસાર વ્યતીત કરના ચાહિયે । પર હસ મેં ચાર ચાર ઉપવાસ કરકે પારણા કરના ચાહિયે । હસ તરહ દસ માસ મેં તપસ્યાકે દિનોં કી સંખ્યા ચૌવીસ ૨૪ આતી હૈ ઓર છહ દિન પારણાકે આતે હૈં । "પંચમં માસં વારસમં વારસમેણ" પાંચવેં મહિને મેં પાંચ પાંચ ઉપવાસ કે વાદ પારણા કિયા જાતા હૈ । વાકી સવ વિધિ પહિલો જૈસી હી હૈ । હસમેં તપસ્યા કે દિન પચ્વીસ હોતે હૈં ઓર પારણા કે પાંચ દિન હોતે હૈં । "છટ્ઠં માસં ચૌદસમં ચૌદસમેણ" છટે મહિને મેં છહ-છહ ઉપવાસ કરને કે વાદ પારણા કિયા જાતા હૈ । હસ તરહ હસ મહિને મેં તપસ્યા કે દિન ચૌવીસ આતે હૈ ઓર પારણા કે દિન ચાર હાતે હૈં । "સત્તમં માસં સોલસમં સોલસમેણ" સાતવેં મહીને મેં સાત-સાત ઉપવાસ કરકે પારણા કિયા જાતા હૈ । વાકી સવવિધિ પહિછે જૈસી હી હૈ । હસ મહિને મેં તપસ્યા કે દિનોં કી સંખ્યા હવ્કીસ આતી હૈ ઓર સાત પારણા કે દિન હોતે હૈં । "અઠ્ઠમં માસં અઠ્ઠાદસમં અઠ્ઠાદસમેણ"

દિવસ પારણા ના આવે છે (ચૌત્થ માસં દસમેણ) ચોથા મહિને પણ શ્રુવેક્ષિત વિધિ પ્રમાણે જ વ્યતીત કરવો જોઈએ પણ ચોથા મહિનામાં ચાર ઉપવાસને પારણે ચાર ઉપવાસ કરવા જોઈએ ચોથા મહિનામાં ઉપવાસના ૨૪ દિવસ અને પારણાના ૬ દિવસ આવે છે (પંચમં માસ વારસમ વારસમેણ) પાંચમા મહિનામાં પાંચ ઉપવાસને પારણે પાંચ ઉપવાસ કરવા જોઈએ, આઠીની બધી વિધિ આગળ કહ્યા પ્રમાણે સમજવી તેમાં તપસ્યાના દિવસ પચીસ અને પારણાના દિવસ પાંચ આવે છે. (છટ્ઠં માસ ચૌદસમ ચૌદસમેણ) છટે મહિને છ ઉપવાસને પારણે છ ઉપવાસ કરવા જોઈએ આ રીતે તપસ્યાના ચોવીસ દિવસ અને પારણાના ચાર દિવસ આવે છે. (સત્તમ માસં સોલસમે-સોલસમેણ) સાતમાં મહિના દરમિયાન સાત ઉપવાસને પારણે સાત ઉપવાસ કરવા પડે છે આઠીની બધી વિધિ આગળ કહ્યા પ્રમાણે જ સમજવી સાતમાં મહિનામાં તપસ્યાના દિવસો ૨૧ આવે છે અને પારણાના દિવસો ૩ આવે છે (અઠ્ઠમ માસં અઠ્ઠાદસમ અઠ્ઠાદસમેણ) આઠમા મહિના દરમિયાન આઠ ઉપ-

દશાષ્ટાદશેન, અષ્ટાષ્ટોપવાસેન “ નવમ માસ વીસદશ વીસદશમેજ ” નવમ માસ વિંશતિતમવિંશતિતમેન, નવનવોપવાસેન “ દસમ માસ વાવીસદશ વાવીસદશમેજ ” દશમ માસ ટ્રાવિંશતિતમટ્રાવિંશતિતમેન, દસદશોપવાસેન “ એકારસમ માસ વડ વીસદશ વડવીસદશમેજ ” એકાદશ માસ ચતુર્વિંશતિતમચતુર્વિંશતિતમેન, એકાદશોપવાસેન “ બારસમ માસ છઠ્ઠીસદશ છઠ્ઠીસદશમેજ ” દ્વાદશ માસ પદ્ધવિંશતિતમ

આઠવે મહિને મેં આઠ-આઠ ઉપવાસ કરકે પારણા કિયા જાતા હૈ । વાકી ઓર સવયિધિ પહિલે કી તરહ સે હી હૈ । હસમેં તપસ્યા કે દિનોં કી સંખ્યા ચૌવીસ આતી હૈ ઓર પારણા કે દિન ત્રીન હોતે હૈ । “ નવમ માસ વીસદશ વીસદશમેજ ” નૌમે મહિને મેં નૌ ઉપવાસ કરકે પારણા કિયા જાતા હૈ, વાકી અષ્ટાષ્ટ વિધિ પહિલે જૈસે હી હૈ । હસ માસ મેં તપસ્યા કે દિનોં કી સંખ્યા સસાદશ આતી હૈ ઓર પારણા કે દિન ત્રીન હોતે હૈ । “ દસમ માસ વાવીસદશ વાવીસદશમેજ ” દસવેં માસમેં દસ-દસ ઉપવાસ કરકે પારણા કિયા જાતા હૈ । હસમેં તપસ્યા કે દિનોં કી સંખ્યા ત્રીસ આતી હૈ ઓર પારણા કે દિન ત્રીન હોતે હૈ । “ એકારસમ માસ વડવીસદશ વડવીસદશમેજ ” ગ્યારહવેં મહિને મેં ગ્યારહ-ગ્યારહ ઉપવાસ કરકે પારણા કિયા જાતા હૈ । હસમેં તપસ્યા કે દિનોં કી સંખ્યા તેત્રીસ આતી હૈ, ઓર પારણા કે દિન ત્રીન હોતે હૈ । (બારસમ માસ છઠ્ઠીસદશમેજ છઠ્ઠીસદશમેજ ” બારહવેં મહિને મેં બારહ-બારહ ઉપવાસ કરકે પારણા કિયા જાતા હૈ । હસ માસ મેં તપસ્યા કે દિનોં

વાસને પારણે આઠ ઉપવાસ કરવા પડે છે આ મહિનામાં તપસ્થાના ૨૪ દિવસ આવે છે અને પારણાના ત્રણ દિવસ આવે છે બાકીની બધી વિધિ પહેલાં માસ પ્રમાણે જ છે (નવમ માસ વીસદશ વીસદશમેજ) નવમાં મહિને નવ ઉપવાસને પારણે નવ ઉપવાસ કરવા પડે છે બાકીની અમલ વિધિ પહેલાં મહિના જેવીજ છે આ માસમાં તપસ્થાના ૨૭ સત્યાગ્રીહ દિવસો અને પારણાના ત્રણ દિવસો આવે છે (દસમ માસ વાવીસદશ વાવીસદશમેજ) દસમાં મહિના દરમિયાન દસ ઉપવાસને પારણે દસ ઉપવાસ કરવા પડે છે બાકીની વિધિ આગળ મુજબ હોય છે આ માસમાં તપસ્થાના દિવસ ૩૦ ત્રીસ અને પારણાના દિવસ ત્રણ આવે છે (એકારસમ માસ વડવીસદશ વડવીસદશમેજ) અગિયારમાં મહિને અગિયાર ઉપવાસને પારણે અગિયાર ઉપવાસ કરાય છે તે માસમાં ઉપવાસના દિવસો તેત્રીસ અને પારણાના દિવસો ત્રણ આવે છે (બારસમ માસ છઠ્ઠીસદશમેજ છઠ્ઠીસદશમેજ) બારમાં માસ દરમિયાન બાર ઉપવાસને પારણે બાર ઉપવાસ કરવા પડે છે તે માસમાં તપસ્થાના દિવસ ચૌવીસ અને પાર

ત્રિષ્ણુપવાસેન 'ચતુર્થ માસં દસમં દસમેણ' ચતુર્થ માસ દશમદશમેન, ચતુશ્વત્તરુપવાસેન 'પંચમં માસં વારસમં વારસમેણ' પંચમ માસં દ્વાદશદ્વાદશેન, પંચ પંચોપવાસેન " છટ્ઠં માસં ચૌદસમં ચૌદસમેણ " ષષ્ઠં માસં ચતુર્દશચતુર્દશેન, ષષ્ઠમાસે પદ્મપવાસેન " સત્તમં માસં સોલસમં સોલસમેણ " સપ્તમં માસં ષોડશષોડશેન સપ્તસપ્તોપવાસેન " અષ્ટમં માસં અઢાદસમં અઢાદસમેણ " અષ્ટમં માસમ્ । અષ્ટા-

"ચતુર્થ માસં દસમં દસમેણ" ચતુર્થમાસકો મ્હી હસી પ્રકારકી વિધિકે અનુસાર વ્યતીત કરના ચાહિયે । પર હસ મેં ચાર ચાર ઉપવાસ કરકે પારણા કરના ચાહિયે । હસ તરહ દસ માસ મેં તપસ્યાકે દિનોં કી સંખ્યા ચૌવીસ ૨૪ આતી હૈ ઓર છહ દિન પારણાકે આતે હૈં । " પંચમં માસં વારસમં વારસમેણ " પાંચવેં મહિને મેં પાંચ પાંચ ઉપવાસ કે વાદ પારણા કિયા જાતા હૈ । વાકી સવ વિધિ પહિલો જૈસી હી હૈ । હસમેં તપસ્યા કે દિન પચ્વીસ હોતે હૈં ઓર પારણા કે પાંચ દિન હોતે હૈં । " છટ્ઠં માસં ચૌદસમં ચૌદસમેણ " છટે મહિને મેં છહ-છહ ઉપવાસ કરને કે વાદ પારણા કિયા જાતા હૈ । હસ તરહ હસ મહિને મેં તપસ્યા કે દિન ચૌવીસ આતે હૈં ઓર પારણા કે દિન ચાર હાતે હૈં । " સત્તમં માસં સોલસમં સોલસમેણ " સાતવેં મહિને મેં સાત-સાત ઉપવાસ કરકે પારણા કિયા જાતા હૈ । વાકી સવવિધિ પહિલે જૈસી હી હૈ । હસ મહિને મેં તપસ્યા કે દિનોં કી સંખ્યા ઇક્કીસ આતી હૈ ઓર સીન પારણા કે દિન હોતે હૈં । " અષ્ટમં માસં અઢાદસમં અઢાદસમેણ "

દિવસ પારણાના આવે છે. (ચતુર્થ માસં દસમેણ) ચોથા મહિને પણ ખૂવેકિત વિધિ પ્રમાણે જ વ્યતીત કરવો જોઈએ. પણ ચોથા મહિનામાં ચાર ઉપવાસને પારણે ચાર ઉપવાસ કરવા જોઈએ ચોથા મહિનામાં ઉપવાસના ૨૪ દિવસ અને પારણાના ૬ દિવસ આવે છે (પંચમં માસ વારસમ વારસમેણ) પાંચમા મહિનામાં પાંચ ઉપવાસને પારણે પાંચ ઉપવાસ કરવા જોઈએ, બાકીની બધી વિધિ આગળ કહ્યા પ્રમાણે સમજવી તેમાં તપસ્યાના દિવસ પચીસ અને પારણાના દિવસ પાંચ આવે છે. (છટ્ઠં માસ ચૌદસમ ચૌદસમેણ) છઠ્ઠે મહિને છ ઉપવાસને પારણે છ ઉપવાસ કરવા જોઈએ આ રીતે તપસ્યાના ચોવીસ દિવસ અને પારણાના ચાર દિવસ આવે છે. (સત્તમ માસ સોલસમે સોલસમેણ) સાતમાં મહિના દરમિયાન સાત ઉપવાસને પારણે સાત ઉપવાસ કરવા પડે છે બાકીની બધી વિધિ આગળ કહ્યા પ્રમાણે જ સમજવી સાતમાં મહિનામાં તપસ્યાના દિવસો ૨૫ આવે છે અને પારણાના દિવસો ૩ આવે છે. (અષ્ટમં માસ અઢાદસમ અઢાદસમેણ) આઠમા મહિના દરમિયાન આઠ ઉપ-

पूर्वोक्ततपसा “दिया ठाणुबहुइए” दिवा स्थानोत्कृष्टक विषसे उत्कृष्टभोजन
 “सुराभिमुदे” सुर्याभिमुखः “आयावणभूमीए आयावमाणे” आतापनभूमि
 आतापयन् “रसिं वीरासणेणं” राश्रीं वीरासनेन “अवाउडेण” अमावृतेन
 विहरतीति पूर्वेषां सम्बन्धः “तएणं से खंदए अणगारे” तप्तं खलु स स्कन्दके
 अनगारः “गुणरयणसबरच्छरं तबोक्कम्मं” गुणरत्नसंबत्सरं तपः कर्म, “आ
 सुचं” यथासुखं सूत्रानतिक्रमेण “अहाकप्प” यथाकल्पं कल्पानतिक्रमेण “ताव
 आराहेचा” यावदाराध्य, अत्र यावत्पदेन अहामर्गं अहातन्त्रं अहामर्मे कारण
 फासेइ, पाछेइ सोहेइ, तीरेइ, पूरेइ, किहेइ, अणुपालेइ, आणाए” इत्येत
 त्पदसमूहस्य ग्रहणं कर्तव्यम् । तथा च यथा सूत्रादिषु आद्यामा आराधना इत्ये-
 त्यर्थः । गुणरत्नसंबत्सर तपो यथा—

तपःकर्म से वे स्कन्दक मुनि अपना समय व्यतीत करते । दिवस में वे
 उत्कृष्ट आसन से स्थिर होकर सूर्य की ओर मुख करके आतापन भूमि
 में आतापना छेते तथा रात्रि में वीरासन से स्थित रहते और सर्वो-
 त्कृष्टभोजन, रजोहरण एवं खोलपट्टक के सिवाय और वस्त्र नहीं रखते ।
 इस तरह “तएणं से खंदए अणगारे” वे स्कन्दक अनगार “गुणर-
 यण संबच्छरं तबोक्कम्मं” गुणरत्न संबत्सर तप कर्म की “अहासुचं”
 सूत्र के अनुसार “अहाकप्प” कल्प के अनुसार ‘जाव आराहेचा’
 यावत् आराधना करके ‘जेणेव समणे भगव महावीरे तेणेव उवागच्छ-
 इ’ जहां भ्रमण भगवान् महावीर विराजमान थे—वहां पर आये । कहने
 का तात्पर्य यह है कि स्कन्दक अनगार ने गुणरत्न संबत्सर तपकी आरा-
 धना प्रभु की आज्ञा के अनुसार यथासुख आदि मर्यादा से की । और
 करके फिर वे प्रभु महावीर के पास आये ।

संबत्सर तपनी आराधना करवा स्कन्दक मुनि पोताने। समय पसारे करते
 कता। दिवसे तेजे उभयके आसने भेसिने सूर्यनी तरफे भुज शायीते आतापन
 भूमिमां (उत्कृष्टा वाणी अभ्यासां) आतापना बैठा कता अने रात्रे वीरासने
 भेसता कता। सर्वोत्कृष्टभोजन, रजोहरण अने खोलपट्टक सिवाय वीरु उभय
 पक्ष वस्त्र शयिता नहीं आरीते (तएणं से खंदए अणगारे) ते स्कन्दक
 अनगार (गुणरयणसबरच्छरं तबोक्कम्मं) गुणरत्न संबत्सर तपनी (अहासुचं)
 सूत्रनी आसनुसार (अहाकप्प) कल्प प्रमाणे (जाव आराहेचा) आराधना
 करीने (जेणेव समणे भगव महावीरे तेणेव उवागच्छइ) जहां भगव भगवान्
 महावीर निराजता कता तहां आया। कहेवानु तात्पर्य जे छे ते स्कन्दक
 अनगार गुणरत्नसंबत्सर तपनी आराधना भगवाननी आसनुसार, यथा-
 नुसार आदि मर्यादानु पालन करीने करी अने आराधना पूरी करीने तेजे

પદ્વિંશતિતમેન દ્વાદશદ્વાદશોપવાસેન “તેરસમ માસં અઢ્ઢાવીસહમં અઢ્ઢાવીસહમેળ” ત્રયોદશં માસમષ્ટાવિંશતિતમાષ્ટાવિંશતિતમેન, ત્રયોદશત્રયોદશોપવાસેન “ચૉદહ-સમં માસં તીસહમ તીસહમેળ ” ચતુર્દશં માસં ત્રિંશત્તમત્રિંશત્તમેન, ચતુર્દશચતુર્દ-શોપવાસેન “પળ્ળરસમં માસં વત્તીસહમં વત્તીસહમેળ ” પંચદશમાસં દ્વાત્રિંશત્તમ દ્વાત્રિંશત્તમેન પંચદશપંચદશોપવાસેન । “સોલસમં માસ ચોત્તીસહમં ચોત્તીસહમેળ ” ષોડશં માસં ચતુઃશ્ચિંશત્તમચતુઃશ્ચિંશત્તમેન, ષોડશષોડશોપાસેન, “અળિચ્ચિત્તેળ” અનિચ્ચિત્તેન નિરન્તરકૃતેન “તવોકમ્મેળ” તપઃ કર્મણા

કી સંખ્યા ચોવીસ આતી હૈ, પારણા કે દિન દો હોતે હૈં । “તેરસમં માસં અઢ્ઢાવીસહમં અઢ્ઢાવીસહમેળ” તેરહવે માસ મેં તેરહ-તેરહ ઉપવાસ કરકે પારણા ક્રિયા જાતા હૈ । ઇસ મહિને મેં તપસ્યા કે દિનોં કી સંખ્યા છાઈસ આતી હૈ, ઓર દો દિન પારણા કે હોતે હૈં । “ચૉદહસમં માસં તીસહમં તીસહમેળ ” ચૉદહવે મહિને મે ચૉદહ-ચૉદહ ઉપવાસ કરકે પારણા ક્રિયા જાતા હૈ । ઇસ મહિને મેં તપસ્યા કે દિનોં કી સંખ્યા અઢ્ઢા-ઈસ આતી હૈ, ઓર પારણા કે દો દિન હોતે હૈં । “પળ્ળરસમ માસં વત્તીસહમં વત્તીસહમેળ ” પન્દ્રહવે મહિને મેં પન્દ્રહ-પન્દ્રહ ઉપવાસ કર કે પારણા ક્રિયા જાતા હૈ । ઇસ માસ મેં તપસ્યા કે દિનોં કી સંખ્યા તીસ ૩૦ આતી હૈ, ઓર પારણા કે દો દિન હોતે હૈં । “સોલસમં માસં ચોત્તીસહમં ચોત્તીસહમેળ” સોલહવે માસ મેં સોલહ-સોલહ ઉપવાસ કરકે પારણા ક્રિયા જાતા હૈ । ઇસ માસ મેં તપસ્યા કે દિનોં કી સંખ્યા વત્તીસ આતી હૈ, ઓર પારણા કે દિન દો હોતે હૈં । ઇન સવ ઉપવાસોં કો “અળિચ્ચિત્તેળ” નિરન્તર-અપવધાન-રહિન કરના ચાહિયે । એસે

જાના દિવસો યે આવે છે, (તેરસમ માસ અઢ્ઢાવીસહમ અઢ્ઢાવીસહમેળ) તેરમા મહિનામા તેર ઉપવાસને પારણે તેર ઉપવાસ કરવા લેઇએ આ માસમાં તપસ્યાના દિવસો ૨૬ છઠ્ઠીસ અને પારણાના દિવસ યે આવે છે (ચૉદહસમ માસ તીસહમ તીસહમેળ) ચૉદમા મહિને ચૉદ ઉપવાસને પારણે ચૉદ ઉપવાસ કરવા પડે છે આ મહિનામા તપસ્યાના ૨૮ અઠ્યાવીસ અને પારણાના ૨ યે દિવસ આવે છે, (પળ્ળરસમ માસ વત્તીસહમ વત્તીસહમેળ) પંદરમા મહિને પંદર ઉપવાસને પારણે પંદર ઉપવાસ કરવા પડે છે તે માસમા તપસ્યાના ૩૦ તીસ અને પારણાના ૨ યે દિવસો આવે છે, (સોલસમ માસ ચોત્તીસહમ ચોત્તીસહમેળ) સોળમે મહિને સોળ ઉપવાસને પારણે સોળ ઉપવાસ કરવા પડે છે, તે મહિનામાં તપ સ્યાના ૩૨ બત્રીસ અને પારણાના ૨ યે દિવસ આવે છે તે બધા ઉપવાસ (અળિ-ચ્ચિત્તેળ) નિરન્તર-આંતરે પાડ્યા વિના કરવા લેઇએ. આ પ્રકારની યુષ્મરત્ન

પષ્ટ માસે-પટ્ટપટ્ટપવાસન ચતુર્વિંશતિસ્તપોદિનાનિ ચત્વારિ ચ પારખકદિનાનિ ॥
 સપ્તમ માસે-સપ્તસપ્તાપવાસન પચ્ચવિંશતિસ્તપોદિનાનિ ત્રીણિ ચ પારખકદિનાનિ
 અષ્ટમે માસે-અષ્ટાષ્ટોપવાસેન-ચતુર્વિંશતિસ્તપોદિનાનિ ત્રીણિ ચ પારખકદિનાનિ ॥
 નવમ માસે-નવતપોપવાસેન સપ્તવિંશતિસ્તપોદિનાનિ ત્રીણિ ચ પારખકદિનાનિ ॥
 દશમે માસ-દશદશોપવાસન ત્રિંશચપોદિનાનિ ત્રીણિ ચ પારખકદિનાનિ ॥ ૧૦ ॥
 એકાદશે માસે-એકાદશોપવાસેન ત્ર્યશ્ચિંશચપોદિનાનિ ત્રીણિ ચ પાર-
 ખકદિનાનિ ॥ ૧૧ ॥

(૬) છઠે મહીનમે ૬-૬ છઠ-છઠ ઉપવાસની તપસ્યાસે ૨૪ ચૌષીસ દિવસ
 તો તપસ્યા કે હોતે હૈં ઓર ૪ ચાર દિન પારણા કે હોતે હૈં ।

(૭) સાતમે મહિને મેં ૭-૭ સાત સાત ઉપવાસ ની તપસ્યા સે ૨૧
 ઈકીસ દિન તો તપસ્યા કે હોતે હૈં ઓર ૩ દિન પારણા કે હોતે હૈં ।

(૮) આઠમે મહિને મેં ૮-૮ આઠ-આઠ ઉપવાસ ની તપસ્યા સે ૨૪
 ચૌષીસ દિન તો તપસ્યા કે હોતે હૈં ઓર ૩ ત્રીનદિન પારણા કે હોતે હૈં ।

(૯) નવમે મહિનેમે ત્રી-ત્રી ૯-૯ ઉપવાસની તપસ્યાસે ૨૭ સતારીસ
 દિન તો તપસ્યા કે હોતે હૈં ઓર ૩ ત્રીન દિન પારણા કે હોતે હૈં ।

(૧૦) દશમે મહિને મેં ૧૦-૧૦ દશ-દશ ઉપવાસની તપસ્યાસે ૩૦
 ત્રીસ દિન તો તપસ્યા કે હોતે હૈં ઓર ૧ ત્રીન દિન પારણા કે હોતે હૈં ।

(૧૧) ગ્યારહમે મહિનેમે ૧૧-૧૧ ગ્યારહ-ગ્યારહ ઉપવાસની તપ-
 સ્યા સે ૩૩ તેત્રીસ દિન તો તપસ્યા કે હોતે હૈં ઓર ૩ ત્રીન દિન પારણા
 કે હોતે હૈં ।

(૧) છઠા માસમાં ૬-૬ છઠ-છઠ ઉપવાસની તપસ્થાના ૨૪ ચૌષીસ દિવસ
 અને પારણાના ૪ ચારદિવસ હોય છે

(૭) સાતમાં માસમાં ૭-૭ સાત-સાત દિવસના ઉપવાસની તપસ્થાના
 ૨૧ એકીસ દિવસ અને પારણાના ૩ ત્રણ દિવસ હોય છે

(૮) આઠમાં માસમાં ૮-૮ આઠ-આઠ દિવસના ઉપવાસની તપસ્થાના
 ૨૪ ચૌષીસ દિવસ અને પારણાના ૩ દિવસ હોય છે

(૯) નવમાં માસમાં ૯-૯ નવ-નવ દિવસના ઉપવાસની તપસ્થાના ૨૭
 સત્રાવીસ દિવસ અને પારણાના ૩ ત્રણ દિવસ હોય છે

(૧૦) દશમાં માસમાં ૧૦-૧૦ દશ-દશ ઉપવાસની તપસ્થાના ૩૦ ત્રીસ
 દિવસ અને પારણાના ૩ ત્રણ દિવસ હોય છે

(૧૧) ગ્યારહમાં માસમાં ૧૧-૧૧ ગ્યારહ ગ્યારહ દિવસના ઉપવાસની
 તપસ્થાના ૩૩ તેત્રીસ દિવસ અને પારણાના ૩ ત્રણ દિવસ હોય છે

પ્રથમે માસે એકાન્તરોપવાસેન પશ્ચદશ તપોદિનાનિ પશ્ચદશૈવ પારણકદિનાનિ ભવન્તિ ॥ ૧ ॥

દ્વિતીયે માસે-ષષ્ઠ ષષ્ઠતપસા ત્રિંશતિસ્તપોદિનાનિ દશ ચ પારણકદિનાનિ ॥ ૨ ॥

તૃતીયે માસે-અષ્ટમાષ્ટમતપસા ચતુર્વિંશતિસ્તપોદિનાનિ, અષ્ટપારણકદિનાનિ ॥ ૩ ॥

ચતુર્થમાસે-ચતુર્ચતુરુપવાસેન ચતુર્વિંશતિસ્તપોદિનાનિ ષદ્ ચ પારણકદિનાનિ ॥ ૪ ॥

પશ્ચમે માસે પશ્ચપશ્ચોપવાસેન પશ્ચવિંશતિસ્તપોદિનાનિ પશ્ચ ચ પારણકદિનાનિ ॥ ૫ ॥

યહ ગુણરત્ન સંવત્સર હસ પ્રકાર સે આરાધિત કરને પર તપસ્યા ઔર પારણા કે દિનોં કી સંખ્યા હસ પ્રકાર સે હૈ ।

(૧) પ્રથમ માસ મેં એકાન્તરોપવાસ કે દિન ૧૫ પંદર હોતે હૈ ઔર પારણા કે દિન મી પંદરહ ૧૫ હી હોતે હૈ ।

(૨) દ્વિતીયમાસમેં ૨-૨ દો-દો ઉપવાસ કી તપસ્યા સે વીસ ૨૦ વીસ દિન તો તપસ્યા કે હોતે હૈ ઔર દસ ૧૦ દિન પારણા કે હોતે હૈ ।

(૩) તૃતીય માસ મેં ૩-૩ ત્રીન-ત્રીન ઉપવાસ કી તપસ્યા સે ૨૪ ચૌવીસ દિન તો તપસ્યા કે હોતે હૈ ઔર આઠ ૮ દિન પારણા કે હોતે હૈ ।

(૪) ચૌથે માસમેં ચાર-ચાર ૪-૪ ઉપવાસકી તપસ્યાસે ૨૪ ચૌવીસ દિન તો તપસ્યા કે હોતે હૈ ઔર છહ ૬ પારણા કે દિન હોતે હૈ ।

(૫) પાંચવે મહિને મેં પાંચ-પાંચ ૫-૫ ઉપવાસ કી તપસ્યા સે ૨૫ પચીસ દિન તો તપસ્યાકે હોતે હૈ ઔર પાંચ ૫ દિન પારણા કે હોતે હૈ ।

મહાવીર પ્રભુની પાસે આવ્યા આ ગુણરત્ન સવત્સર તપની આરાધના ઉપ-
રોક્ત વિધિથી કરવામા આવે છે. તેમા પ્રત્યેક માસના ઉપવાસ અને પારણાના
દિવસોની સખ્યા નીચે પ્રમાણે છે-

(૧) પહેલા માસમા એકાન્તર ઉપવાસના દિવસો ૧૫, ૫-૬૨ હોય છે અને
પારણાના દિવસ પણ ૧૫ પંદર હોય છે.

(૨) બીજા માસમા ૨-૨ બે-બે ઉપવાસની તપસ્યાના ૨૦ વીસ દિવસ,
અને ૧૦ દસ દિવસ પારણાના હોય છે

(૩) ત્રીજા માસમા ૩-૩ ત્રણ-ત્રણ ઉપવાસની તપસ્યાના ૨૪ ચૌવીસ દિવસ
અને પારણાના આઠ ૮ દિવસ હોય છે

(૪) ચોથા માસમા ૪-૪ ચાર-ચાર ઉપવાસની તપસ્યાના ૨૪ ચૌવીસ
દિવસ, અને પારણાના ૬ છ દિવસ હોય છે.

(૫) પાંચમા માસમા ૫-૫ પાંચ-પાંચ ઉપવાસની તપસ્યા થવાથી ૨૫
પચીસ દિવસો તપસ્યાના અને પાંચ દિવસ પારણાના હોય છે.

તપોદિનાનિ સપ્તોચર

ચતુદશતમ્ (૪૦૭)

પારણકદિનાનિ

અ્યુચરસપ્તત્વિ (૭૩)

૨૨	૧૬-૧૬	૨
૩૦	૧૫-૧૫	૨
૨૮	૧૪-૧૪	૨
૨૬	૧૩-૧૩	૨
૨૪	૧૨-૧૨	૨
૩૩	૧૧-૧૧-૧૧	૩
૩૦	૧૦-૧૦-૧૦	૩
૨૭	૯-૯-૯	૩
૨૪	૮-૮-૮	૩
૨૧	૭-૭-૭	૩
૨૪	૬-૬-૬-૬	૪
૨૫	૫-૫-૫-૫-૫	૫
૨૪	૪-૪-૪-૪-૪-૪	૬
૨૪	૩-૩-૩-૩-૩-૩-૩-૩	૮
૨૦	૨-૨-૨-૨-૨-૨-૨-૨-૨-૨	૧૦
૧૬	૧-૧-૧-૧-૧-૧-૧-૧-૧-૧-૧-૧-૧-૧-૧-૧	૧૫

૪૦૭

૭૩

તપોદિનાનિ (૪૦૭) પારણકદિનાનિ (૭૩) ચ મિમિસ્યા સર્વદિનાનિ-
મશીત્યુચરં ચતુદશતમ્ (૪૮૦) ષિશુરિનિર્માને હ્રતે માસા પોઢશમાસાઃ (૧૬)
પત્તવપઃ પોઢશમાસે સપન્ન મવતિ, અથ યમ માસે અષ્ટમાદિ તપસો વાવન્તિ
સે કુલ દિન ૪૮૦ હોતે હિં. હનમે ૧૦ દિનોં કા ભાગ કરમે સે ૧૬
માસ આતે હિં. હસ તરહ યહ તપ સોલહ મહિનોં મેં સપન્ન હોતા હે।
યહાં પર કોઈ પેસી આધાકા કરસકના હ કિ મહિમે કે દિન તો કુલ
૬૦ હી હોતે હિં-પર ૩૦ વસીસ ઓર તેતીસ દિન ખી વતલાયે ગયે હિં-

ગીને કુલ ૪૮૦ માસોએ સી દિવસો માય છે તેને ૩૦ ત્રીસ વડે ભાગવાથી ૧૬ ભાગ
માસ આવે છે આ તથ મેળ ભાગમાં ૫૩ માસ છે અહીં-કેઈ એવી યા ૩૩ આવે
કે મહિનાના દિવસો ૩૦ જ દેાય છે છતાં અહીં ૩૨ અને તેત્રીસ દિવસ ૫૭
અથવા ૬૦ તથા કેઈ કેઈ માસમાં તપસ્યાના દિવસો ૩૦ થી બોધ ૫૭

द्वादशे मासे—द्वादश द्वादशोपवासेन चतुर्विंशतिस्तपोदिनानि द्वे च पारणकदिने ।
त्रयोदशे मासे—त्रयोदशत्रयोदशोपवासेन—षड्विंशतिस्तपोदिनानि द्वे च
पारणकदिने ॥ १३ ॥

चतुर्दशे मासे—चतुर्दशचतुर्दशोपवासेन — अष्टाविंशतिस्तपोदिनानि द्वे च
पारणकदिने ॥ १४ ॥

पञ्चदशे मासे—पञ्चदश पञ्चदशोपवासेन—त्रिंशत्तपोदिनानि द्वे च पारणकदिने

षोडशे मासे—षोडशषोडशोपवासेन—द्वात्रिंशत्तपोदिनानि द्वे च पारणकदिने ॥

गुणरत्नसंवत्सरतपः सूचकग्रन्थमिदम्—

(१२) बारहवें महिनामें १२-१२ बारह-बारह उपवासकी तपस्यासे
२४ चौबीस दिन तो तपस्याके होते हैं और दो २ दिन पारणाके होते हैं ।

(१३) तेरहवें महिनामें १३-१३ तेरह-तेरह उपवास की तपस्यासे
२६ छब्बीस दिन तो तपस्याके होते हैं और २ दो दिन पारणके होते हैं ।

(१४) चउदहवें महिने में १४-१४ चौदह-चौदह उपवासकी तपस्या
से २८ अठ्ठाईस दिन तो तपस्याके होते हैं और २ दो दिन पारणाके होते हैं ।

(१५) पन्द्रहवें महिने में १५-१५ पंदरह-पंदरह उपवासकी तपस्या
से ३० तीस दिन तो तपस्याके होते हैं और २ दो दिन पारणा के होते हैं ।

(१६) सोलहवें महिनेमें १६-१६ सोलह-सोलह उपवासकी तपस्या
से ३२ बत्तीस दिन तो तपस्याके होते हैं और २ दो दिन पारणा के होते हैं ।

इस प्रकार तपस्या के दिन ४०७ और पारणा के दिन ७३ मिलाने

(१२) बारमा मासमा १२-१२ बार बार द्विसता उपवासनी तप-
स्याना २४ चौबीस द्विस अने पारणाना २ ये द्विस होय छे

(१३) तेरमे महिने १३-१३ तेर-तेर द्विसाना उपवासनी तपस्याना
२६ छब्बीस द्विस अने पारणाना २ ये द्विस होय छे

(१४) चौदमा मासमा १४-१४ चौद-चौद द्विसना उपवासनी तप-
स्याना २८ अठ्ठावीस द्विस अने पारणाना २ ये द्विस होय छे

(१५) पंदरमा मासमा १५-१५ पंदर-पंदर द्विसना उपवासनी तप-
स्याना ३० तीस द्विस अने पारणाना २ ये द्विस होय छे,

(१६) सोणमां मासमा १६-१६ सोण-सोण द्विसना उपवासनी तपस्याना
३२ बत्तीस द्विस अने पारणाना २ ये द्विस होय छे,

आ रीते तपस्याना ४०७ बारसोसात द्विसो अने पारणाना ७३ तोतेर द्विसो म-

ईमासत्वमपेदि " मासार्धमाससप्तमौ " विचित्रेहि तत्रोक्तमेहि " विचित्रै
 र्मानामकारकैः तप कर्मभिः 'अप्याण मावे माणे विहरह " आत्मानं मासपर
 विहरति तदनन्तर स स्कन्दकोऽनेकप्रकारकतपसः स्वस्वर्षं प्रात्मा मगवतो नम-
 स्कोरादिकं कृत्वा नानाविधैस्तप कर्ममिरात्मानं भावयन् विहरतिस्मेत्सर्षः ॥

पूर्वोक्ततपः करणात् स्कन्दकस्य कीदृशी स्थितिरभूदिति प्रार्थयितुमाह-
 'तपेण से स्वदप' इत्यादि 'तपेण से स्वदप अणगार' ततः स्वसु स स्कन्द
 कोऽनगार 'तेण उराळेण' तेण उदारेण प्रधानेन-इहलोकपरलोकासंसारानि
 स्यात् प्रधानश्च स्वल्पमपि स्यादत आह-'विउलेण' विपुलेन विस्तीर्णेन बहुवर्षं
 सेवितवतात् (विपुलश्च) गुर्वानामन्तरेण मयत्नराहित्येनापि वा मवदत आह-'प
 यत्तेण' प्रयत्नेन गुरुभिरितीर्णत्वात् अथवा 'पयत्तेण' इत्यस्य 'प्रयत्नेन'
 इतिव्यपिर्णं मयत्नेन मयत्नवता ममावरहितत्वात् एवविधं सामान्यतोऽङ्गीकृत-
 मपि स्यादित्यत आह 'पग्गहिणं' प्रगृहीतेन बहुमानेन स्वीकृतत्वात्

स्वीकृतं तु इहलोकपरलोकासंसारानि निमित्तमपिस्यादत आह 'कहाणेण' कथा
 नेन नैक्यकारणात्वात्, नेरुत्थं तु ऐहिकपारलौकिकमपि स्यादत आह-'सिक्खेण'
 शिखेन सर्वदुःखान्तकारकत्वात्। एव विधं तु सामान्येनापि स्यादत आह-'धन्नेण'
 धन्येन भूतचारिप्ररूपधनभाषकत्वात्।

एतावदेव नेत्याह-'मंगल्लेण' मगल्येन दुरितोपशमनकारकत्वात्। मत्तएव
 'सत्तिरीएण' सत्तीकेण सम्यगाराधनेन क्षोभामपक्षम्भात् सत्तीकं तु सामान्यरूपेणा-
 पि स्यादत आह-'उदग्गेण', उदग्गेण=वर्धमानपरिणामादुत्तरोत्तरवृद्धिं गतत्वात्

उपपत्त्यर्थं) अनेक पञ्चोला (पाथ उपपत्त्यर्थः) श्री, अनेक मास अभ्युद्यो-
 तथा अनेक अथ भाष्यअभ्युद्योधी पौतान्ता आत्माने कारित कर्त्ता रक्षा-
 'अथ प्रकाशनां तप कर्त्ता कर्त्ता स्कन्दकं अणुगारनी शारीरिक स्थिति इवी मय
 अर्थ ते एवे सूत्रकार अत्तावे छे

(तपेण से स्वदप अणगारे तेण उराळेण विउलेण पयत्तेण, पग्गहिणं,
 कहाणेण सिक्खेण धन्नेण मगल्लेण, सत्तिरीएण उदग्गेण उदग्गेण, उचमेण,

ओं से अनेक पञ्चोलाओं से तथा अनेक मास तपमर्णा से पूर्व अनेक
 अर्धमासतपमर्णा से अपनी आत्मा को भाषित करते रह।

इस तरह पूर्वोक्त इन अनेक तपों के तपते २ स्कन्दक अनगार की
 शारीरिक स्थिति कैसी हो गई अथ सूत्रकार इस बात को प्रकट करने
 के लिये कहते हैं (तपेण से स्वदप अणगारे तेण उराळेण विउलेण पय
 र्तेण पग्गहिणं कहाणेण, सिक्खेण, धन्नेण, मंगल्लेण, सत्तिरीएण,

दिनानि न पूर्यन्ते तावन्ति दिनानि-अग्रेतनमासादाकृष्य पूरणीयानि अधिकानि चाग्रेतनमासे क्षेप्तव्यानीति विज्ञेयम् ॥ इति गुणरत्नसंवत्सरनामकं तपः ॥

एवं गुणरत्नसंवत्सरं तपः कृत्वा स्कन्दकोऽनगारः-“जेणेव समणे भगवं महावीरे ” यत्रैव श्रमणो भगवान् महावीरः “तेणेव उवागच्छइ ” तत्रैवोपागच्छति “उवागच्छित्ता ” उपागत्य “समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ ” श्रमणं भगवन्तं महावीर वन्दते नमस्यति “वंदित्ता नमंसित्ता ” वन्दित्वा नमस्यित्वा बहूहिं चउत्थछट्ठमदसमदुवालसेहिं ” बहुभिश्चतुर्थपण्टाष्टमदशमद्वादशैः “ मास-

तथा तपस्या के ३० तीस दिनों में से कहीं दो कम भी बतलाये गये हैं तो फिर एक एक मास की तपस्या के दिनों का प्रमाण कैसे माना जा सकता है ? तो इसका उत्तर यह है कि इस तप में जिस महिने में अष्टमादितपस्या के दिनों का प्रमाण पूरा न होता हो-धटता हो तो-उतने दिनों को आगे के मास में से लेकर उस प्रमाण को पूरा करना चाहिये, तथा जिस मास में अधिक दिन होते हों उनको आगे के मास में शामिल कर देना चाहिये । इस प्रकार से गुणरत्नसंवत्सर नाम का तप होता है ।

इस गुणरत्नसंवत्सरतप को समाप्त कर वे स्कन्दक अनगार श्रमण भगवान् महावीर के पास आये । (उवागच्छित्ता) वहाँ आकर उन्होंने ने (समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ) श्रमण भगवान् महावीर को वंदना और नमस्कार किया (वंदित्ता नमंसित्ता) वन्दना नमस्कार करके (बहूहिं चउत्थछट्ठमदसमदुवालसेहिं) वे अनेक चतुर्थ-उपवासों से अनेक बेलाओं से अनेक तेलाओं से, अनेक चोला-

पताव्या छे तो ते प्रमाणेने ओक ओक मासनी तपस्यानु प्रमाणे डेवी रीते गण्णी शक्या ! तो ते शक्याने पुलासे आ प्रमाणे आपी शक्या-जे मासमा अद्रुम आदितपस्याना दिनानु प्रमाणे पूरं थतुं न होय, ते भडिनामां पछीना मासना भूटता द्विसो लघिने ते प्रमाणे पूरं करबुं ओछिं जे मासमा तपस्याना अधिक द्विसो-आवता होय ते मासना ओटला द्विसोने पछीना मासमां शामिद करी देवा ओछिं जे आ प्रकारनु गुणरत्न संवत्सर तप होय छे.

ते गुणरत्न संवत्सर तप पूरं करीने स्कन्दक अणुगार श्रमण भगवान् महावीर पासो आव्या. (उवागच्छित्ता) त्या आवीने तेभणु (समणं भगवं महावीरं वंदइ नमंसइ) श्रमण भगवान् ! महावीरने वंदणु नमस्कार कर्या (वंदित्ता नमंसित्ता) वंदणु करीने तेओ (बहूहिं चउत्थछट्ठमदसमदुवालसेहिं) अनेक उपवासोथी, अनेक छठ्ठी, अनेक अद्रुमोथी, अनेक चोलाओथी (आइ

ऐसी भी होती है—सो इसका तात्पर्य ऐसा होता है कि प्रमाद से रहित होकर ही प्रयत्न पूर्वक यह तपःकर्म आश्रित किया था। गुरु द्वारा दिये गये जाने पर भी यह तपःकर्म सामान्यरूप से भी ग्रहीत मानी जा सकता है—सो यह तपःकर्म ऐसा नहीं था किन्तु अनगार स्कन्द ने इस तपःकर्म को (पद्महिपण) बहुमान के माय गुरुमहाराज के समीप स्वीकार किया हुआ था। गुरु महाराज के समीप स्वीकृत किया गया तपःकर्म इसलोक तथा पर परलोक की आशंसा के निमित्त भी हो सकता है सो यह तपःकर्म स्कन्दक अनगार के द्वारा इस निमित्त से स्वीकार नहीं किया गया होने से यह (कल्याणस्व) कल्याणस्व था अर्थात् यह तपः निरोगिता का कारण था इसलिये कल्याणस्व था। निरोगिता का जो कारण होता है वह इस लोक सबषी भी निरोगिता का कारण हो सकता है परलोक सबषी भी निरोगिता का कारण हो सकता है सो यह तपःकर्म ऐसा नहीं था—यह तो सर्व दुःखों का अन्त कारण होने से (सिवेण) शिवस्वरूप था। सर्वदुःखों का अन्त करने वाला यह सामान्यरूप से भी हो सकता है—तो इसके लिये कहा गया है कि सामान्यरूप से ऐसा नहीं था—किन्तु (घन्नेण) भुतचारित्र रूप घनकी प्राप्ति कराने के कारण यह घन्य था। दुरितों—पापों के

પણ માય છે તે તપ પ્રમાણથી સહિત યદન પ્રયત્ન પૂર્વક કરવામાં આવ્યું હતું એવું તેણે વ્યત્પર્ક છે તે વા. ગુરુદ્વારા દેવામાં આવેલું હોવા છતાં સામાન્ય રીતે ગ્રહીત થયેલું પણ હોઈ શકે છે પણ સ્કંદ અણગારું તપ એવું ન હતું સ્કંદક અણગારે તે તપનો (પદ્મહિપણ) બહુ માન સહિત ગુરુમહારાજ પાસે સ્વીકાર કરેલો હતો ગુરુમહારાજની સમક્ષ અંગીકૃત કરાયેલું તપ આલોક તથા પરલોકની આશંકા પરિપૂર્ણ કરવાને માટે પણ કરાયું હોય છે પણ સ્કંદક અણગારે એવાં કોઈ નિમિત્તથી આ તપની આરાધના કરી ન હતી તેથી તેમણે તપ (કલ્યાણસ્વ) કલ્યાણરૂપ—નીશીઝી વાન્ય કારણરૂપ હતું, માટે જ તેને કલ્યાણરૂપી કહ્યું છે એ વસ્તુ નીશીઝીવાન્ય કારણરૂપ હોય છે તે આલોક સજાથી નીશીઝીતા અને પારલોકિક નીશીઝીવાન્ય કારણ રૂપ હોય છે પણ સ્કંદકનું તપ કર્મ બે પ્રકારનું ન હતું તે તે સમસ્ત દુઃખોનું અન્તકારક હોવાથી (સિવેણ) શિવસ્વરૂપ હતું તે સામાન્ય રૂપે સમસ્ત દુઃખોનું અન્તકારક પણ હોઈ શકે છે, પણ સ્કંદક અણગારું તપ તે પ્રકારનું ન હતું પણ તે (ઘન્નેણ) ભુતચારિત્રરૂપ ધનની પ્રાપ્તિ કરવાના હોવાથી (ધન્ય) હતું, આથી તે ઉપચયન કરવાના કારણરૂપ હોવાથી

ઉદગ્મેણ, ઉદત્તેણં ઉત્તમેણં, ઉદારેણં મહાણુભાવેણ તવોક્ત્તમેણં) વે
સ્કન્દક અનગાર ઉસ ઉદાર, વિપુલ, પ્રદત્ત, પ્રગૃહીત, કલ્યાણરૂપ, શિવ-
રૂપ, ધન્યરૂપ, મંગલરૂપ, શોભાયુક્ત, ઉત્તમ, ઉદાત્તસુદરં, ઉદાર વડે
પ્રભાવશાલી તપ સે (સુક્કે) શુષ્ક હો ગયે (લુલ્લે) રુક્ષ હો ગયે ।
(નિમ્મંસે) માંસ વિહીન હો ગયે, સિર્ફ (અદ્વિચમ્માવણદ્વે) હાડ ચમડી
સે હી ઢકે રહે । તપ કે યહાં જો ઉદાર આદિ અનેક વિશેષણ દિયે
હૈં-અનેકી સાર્થકતા ઇસ પ્રકાર સે હૈં-સ્કન્દક અનગાર ને ઇસ તપ કો
કિસી મી પ્રકાર કી ઇસ લોક પરલોક વંચધી આશંસા-ઈચ્છા સે
પ્રેરિત હોકર નહીં કિયા થા અતઃઆશંસા સે રહિત હોને કે કારણ યહ
તપઃકર્મ (ઉદારેણં) પ્રધાન થા । પ્રધાન હોકર મી કોઈ ૨ અલ્પ મી
હોતાં હૈં-અતઃયહ તપઃકર્મ એસા નહીં થા-કિન્તુ અનેક વર્ષોત્ક લગા-
તાર સેવિત હોને કે કારણ (વિરલેણં) વિપુલ-વિસ્તૃત થા । કોઈ ૨
વિપુલ એસા મી હોતા હૈં કિ જિસમેં ગુરુમહારાજ કી અનુમતી નહીં
હોતી, અથવા-જિસકે પ્રારંભ કરને મેં વિશેષ પ્રયત્ન કી આવશ્યકતા
નહીં હોતી હૈં-તો ઇસકે લિયે સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ યહ તપ કર્મ એસા
નહીં થા કિન્તુ (પયત્તેણં) ગુરુ મહારાજ દ્વારા દિયા હુઆં ઓર વિશેષ
પ્રયત્ન દ્વારા સાધ્ય થા । અથવા (પયત્તેણં) કી સંસ્કૃત છાયા (પ્રયત્નેન)

ઉદારેણ મહાણુભાવેણ તવોક્ત્તમેણ) સ્કન્દક અણુગાર તે ઉદાર, વિપુલ, પ્રદત્ત
પ્રગૃહીત કલ્યાણકારી, શિવરૂપ, ધન્યરૂપ, મંગલરૂપ, શોભાયુક્ત, ઉત્તમ, ઉદાત્ત,
સુદર, ઉદાર અને અતિશય પ્રભાવશાળી તપથી (સુક્કે લુલ્લે) શરીરે શુષ્ક
તથા રુક્ષ થઈ ગયા (નિમ્મંસે) તેમજ શરીર માંસ રહિત થઈ ગયું.
(અદ્વિચમ્માવણદ્વે) અને હાડ અને ચામડીના માળખા જેવું દેખાવા લાગ્યું.
હવે (ઉદાર) આદિ વિશેષણોની સાર્થકતા બતાવવામા આવે છે સ્કન્દક
અણુગારે આલોક કે પરલોકની કોઈ પણ પ્રકારની આકાંક્ષાથી પ્રેરાઈ ને તે
તપ કર્યું ન હતું આ રીતે નિઃસ્વાર્થ ભાવે થયેલું હોવાને કારણે તેને માટે
યોજવામા આવેલું (ઉદાર) વિશેષણ સાર્થક છે તે તપ સામાન્ય ન હતું.
લગાતાર અનેક વર્ષો સુધી તેની આરાધના કરી હતી તે કારણે તે (વિરલેણં)
વિપુલ-વિસ્તૃત હતું. કોઈ કોઈ વિપુલ તપ એવું હોય છે કે જેમાં ગુરુમહારાજ
ની અનુમતિ મળી હોતી નથી, અથવા જેનો પ્રારંભ કરવામાં વિશેષ
પ્રયત્નની જરૂર રહેતી નથી પણ સ્કન્દક અણુગારનું તપ એવું ન હતું તે
તપ તે (પયત્તેણ) ગુરુમહારાજ દ્વારા દેવામા આવેલું હતું અને વિશેષ
પ્રયત્ન દ્વારા સાધ્ય હતું અથવા (પયત્તેણ) ની સંસ્કૃત છાયા (પ્રયત્નેન)

અદ્વિચમ્માચળદ્વ” અસ્થિચર્માચનદ્વઃ અસ્યીનિ ચર્મમાષ્ટ્રેણ અચનદ્વાનિ માણ્વતિ
 યસ્ય સ અસ્થિચર્માચનદ્વ માયો માંસશ્ચોણિતરાહિત્યાત્ । અતપ્ત્વ ”કિટિકિટિકા
 મૂપ” કિટિકિટિકામૂતઃ કિટિકિટિકાનામ ઉત્પાનોપવશનાદિ ક્રિયાત્રિતિ
 શબ્દવિશેષઃ તાદૃશીં કિટિકિટિકામૂત પ્રાપ્તા યઃ સ કિટિ કિટિકામૂત, વસ્ત્ર-
 ત્પાનાદિ ક્રિયાસુ કિટિકિટિકાશબ્દ સજાયતે, “કિસે” કષ્ટાઃ દુર્વસાઃ-શકિતિર્વ

યા । જય મનુષ્ય કે શરીર મેં માંસ ઓર રૂબ નહીં રહતા હૈ-જય કેસ
 હાથોં કા એક પિંજર માત્ર હી રોપ રહ જાતા હૈ । થહ જય ઊઠતા હૈ યા
 પેઠતા હૈ અથવા ચલતા હૈ-તપ્ત્વ ઉસ સમય દાઢકોં કે લોલાલાહે શરી
 મેં સે જો આવાજ નિકલતી હૈ ઉસકા નામ કિટિ કિટિકા હૈ । ઊન સ્ક-
 ન્દક અનગાર કી હઙ્ગિયાં ઊઠતે પેઠતે ફિરતે સમય કિટ કિટ આવાજ
 કરતી થીં । પ્રાય માંસ ઓર શોણિત સે રહિત જય સ્કન્દક કા શરીર
 હો ગયા તપ્ત્વ (અદ્વિચમ્માચળદ્વ) ઊનકે શરીર કી હઙ્ગિયાં ઉસ સમય
 ચર્મમાત્ર સે અચનદ્વ-મઠી છુઈ થીં-હસસે ઊનકે યુધન સુલ નહીં પાપે
 ઓર ન વે આપસ મેં ચિમ્બર હી પાઈ । જૈસે પટ્ટી સે કોઈ વસ્તુ કસ ડી
 જાતો હૈ ઊસી પ્રકાર સે વે સયકી સય આપસ મેં ચમઢી સે કસી રહીં ।
 યહી યાત્ (અદ્વિચમ્માચળદ્વ) હસ પદ સે સૂત્રકાર ને પ્રકટ કી હૈ ।
 હસી કારણ સે સ્કન્દક અનગાર કે શારીરિક ગતિમિયા કરતે સમય
 શરીર મેં સે કટ કટ-લટ લટ હસ તરહ કી આવાજ નિકલન લગ
 ગઈ । (કિસે) ઊનકી શારીરિક શક્તિ કા પિલ્લુલ એક તરહ સે શસ

હંતુ અચારે માણસના શરીરમા માંસ અને રક્ત રહેવા નથી ત્યારે તે શરીર
 હાઠ્યામના માળખા જેવું થઈ જાય છે ત્યારે માણસ અચારે હલનચલન કરે
 છે ત્યારે તેના હાઠ્યાના ધપલુથી જે અવાજ થાય છે તેને ‘કિટિકિટિકા’ કહે
 છે સ્કન્દક યુનિના હાઠકા પણ હલતા બેસતા તથા ચાલતાં કિટકિટનો અવાજ
 કરતા હતા અચારે સ્કન્દક અણુગણનુ શરીર લગભગ માંસ અને રક્તથી રહિત
 થઈ ગયું ત્યારે ‘અદ્વિચમ્માચળદ્વ’ તે શરીર હલત વ્યામઢીથી મઢયું હોય જેવું
 લાગતું હંતુ તેથી તે અસ્થિના બંધન છૂટા પડી જવાં નહીં અને તે બેઠ
 બીજાથી અલગ પડી જવાં નહીં જેમ પટ્ટીની મઢરથી કાંઈ વસ્તુને બીજી
 વસ્તુ સાથે બાંધી રાખવામા આવે છે તેમ સ્કન્દક યુનિનાં અદ્વિચ વ્યામઢીથી
 પટ્ટી વડે બેઠાયેલા રહ્યાં બોજ વાત સૂત્રકારે (અદ્વિચમ્માચળદ્વ) પર દાસ
 ખતાવી છે આ કારણે શરીરનુ હલન ચલન કરતી વખતે તેમના હાઠ્યાંના
 ધપલુથી અ-અટ અવાજ નીકળતો હતો (કિસે) તેમની શારીરિક શક્તિને

अतएव 'उदत्तेण' उदात्तेन उच्चपरिणामस्य स्थैर्यात् । एवं तु सामान्येनापि स्यादत आह 'उत्तमेण' उत्तमेन मलिनभावराहित्यात् एतच्च सस्पृहमपिस्यादत आह उदारेण " औदार्येण, निस्पृहत्वातिशयात् । एतादृशं सम्भाव्यपि भवेदत आह— 'महाणुभावेण' महानुभावेन लोकातिशायिप्रभावजनकत्वात् । एतादृशेन तपः कर्मणा " सुक्के " शुष्कः शोणितरहितत्वात् " लुक्खे " रूक्षः क्षुभावशेन रूक्षी भूतत्वात् " निम्मसे " निर्मासः यथेष्टाहाराभावेन शुष्कमांसत्वात्, अतएव

उपशमन का कारण होने से यह (मंगल्लेण) स्वयं मंगलरूप था । तथा सम्यक आराधना से शोभासंपन्न होने के कारण यह तप कर्म (सस्सिरीएण) सश्रीक था । इस तप कर्म को आचरित करते समय स्कन्दक अनगार के परिणाम इसकी आराधना करने में उत्तरोत्तर वृद्धिसंपन्न होते रहते थे इसलिये यह तप कर्म (उदग्गेण) उदग्रउन्नत था । इसकी आराधना में उच्चपरिणामों की स्थिरता होने से (उदत्तेण) उदात्त था । इस तप के करने में किसी भी प्रकार से परिणामों में मलिनता नहीं आने से यह (उत्तमेण) उत्तम था । इस तप कर्म में निस्पृहता की पराकाष्ठा होने के कारण यह (उरालेण) उदार था । यह स्कन्दक द्वारा आचरित तपःकर्म सामान्यप्रभाववाला नहीं था किन्तु (महाणुभावेण) लोकातिशायी प्रभाव का जनक था । ऐसे तपकर्म के निरन्तर करने से स्कन्दक अनगार का शरीर खून रहित होने के कारण काष्ठ के जैसा शुष्क हो गया था । भूख के प्रभाव से वह चिलकुल रुखा हो गया था । (निम्मसे) यथेष्ट आहार के अभाव के कारण वह मांस रहित हो गया

ते (मंगल्लेण) 'म गणस्वइप' इतुं, सम्यक आराधनाथी शोभायमान होनाथी ते तप कर्म (सस्सिरीएण) (सश्रीक) इतुं, आ तप कर्म करती वपते स्कन्दक अणुगारना परिणाम तेनी आराधना करवामा उत्तरोत्तर वृद्धि पावता रहेतां इता, तेथी ते तप कर्म (उदग्गेण) उदग्र-उन्नत इतुं, तेनी आराधनामा उच्च परिणामोनी स्थिरता होवाथी ते (उदत्तेण) उदात्त इतु आ तपनी आराधना करता परिणामोमा केरि पणु प्रकारनी मलिनता प्रवेशवाथी ते (उत्तमेण) उत्तम इतु ते तपमां निस्पृहतानी पराकाष्ठता होवाथी ते (उरालेण) उदार इतु. ते तप सामान्य प्रभाववाणुं नइतु पणु (महाणु भावेण अलौकिक प्रभावनु जनक इतु आ प्रकारनी तपस्या निरन्तर कर्या करवाथी स्कन्दक अणुगारनु शरीर दोहीथी रहित थइ गयु इतुं तेथी ते काष्ठ जेवुं शुष्क दागतुं इतु भूषणा प्रभावथी ते तदन रुक्ष थइ गयु इतु (निम्मसे) आवश्यक आहारने अभावे तेमनु शरीर मांसरहित थइ गयु

तिष्ठति, आत्मपक्षेनैव स्थित्यादि क्रियां करोति न तु शरीरबलेन पुनश्च "मासिशा विगिलाह" मासं मापित्वाऽपि ग्लायति । "मासं मासमाणे गिमाह" मासं मापमाणो ग्लायति "मास मासिस्सामीति गिमायति" मासं मापित्वा इति ग्लायति, अनेन कालत्रयेऽपि मापमाणे ग्लानि सूचितम् ।

स स्कन्दकोऽनगारः पुनः कीदृशो जातः, इति दृष्टान्तेन विज्ञायति 'से जहाणामए' इत्यादि, 'से जहाणामए' तद् यथा नाम यथा 'कटुसगडियाह' काष्ठस्रकटिका इति वा काष्ठेन मृता परिपूरिता स्रकटिका काष्ठस्रकटिका, काष्ठपरिपूरितस्रकटिकेत्यर्थः "पत्तसगडियाह वा" पत्तस्रकटिका इति वा मृत्स्रकटिका तिलसगडियाह वा । तिलस्रकटिका इति वा तिलफलीकेभृता स्रकटिका "मंडसगडियाह वा" मंडस्रकटिका इति वा, माण्डानां मृन्मयमात्रनानां मृता स्रकटिका "परंडसगडियाह वा" परण्डकाष्ठस्रकटिका इति वा, परण्डकाष्ठमृता वा

तरह से आत्मबल से ही खड़े रहते ये शरीर बल से नहीं । पुन (मासं मासिस्सा विगिलाह, मासं मासमाणे गिमाह, मास मासिस्सामिति गिलाह) इन पदों से कालत्रय में भी बोलने में उन्हें रुचि नहीं होती थी, अपि तु ग्लानि ही होती थी यह बात सूचित की है । स्कन्दक अनगार की स्थिति-शारीरिकदशा-अथ सूत्रकार दृष्टांत द्वारा स्पष्ट प्रकट करते हुए कहते हैं—(से जहाणामए कटुसगडियाहवा) जैसे मानों कोई काष्ठ समूह से-लकड़ियों से-भरी हुई गाड़ी हो—(पत्तसगडियाहवा) पत्तों के समूह से लवालब भरी हुई कोई गाड़ी हो, (तिलसगडियाहवा) तिलफली से भरी हुई कोई गाड़ी हो, (मंडसगडियाहवा) माण्ड-मिट्टी के घने हुए वर्तनों से भरी हुई कोई गाड़ी हो (परंडसगडियाहवा परंड के काष्ठसे भरी हुई कोई गाड़ी हो (इण्डसगडियाह

इण्डा रहेता इता शरीरभगधी नहीं (मास मासिस्सा विगिलाह मास मास माणे गिमाह, मास मासिस्सामिति गिलाह) आ पट्टे दाश सूत्रकार के इच्छा-पवा भावे छे के जेव्हे ठाणभां तेमने जेव्हेवानी रुचि यती नही, जेव्हे जेव्हे पाने प्रसंग आवे तो ग्लानि न यती इती. २३-२४ मनुजानेनी शारीरिक दशांत केवी सध अर्थ इती तेनु सूत्रकार इण्डांत दाश २५पथी३२७ ३२ छे (से जहाणामए कटुसगडियाहवा) लकड़ानी भरेली डोण आनी डोय, (पत्तसगडियाह वा) पत्तसगडियाह सभुसधी भीआ भीय भरेली डोण आनी डोय, (तिलसगडियाह वा) तिलनी शिगेवानी भरेली डोण आनी डोय, (मंडसगडियाह वा) माटीनी बाधेवानी भरेली डोण आनी डोय, (इण्डसगडियाह वा) डोणानी भरेली डोण आनी डोय, (परंडसगडियाह वा) जेरंडा काष्ठानी भरेली

“ ધમણિસંતપ ” ધર્મનીસંતતઃ ધમનીસંતતો નાડીવ્યાપ્તઃ માંસક્ષયેણ પરિદૃશ્યમાન નાડીક इत्यर्थः ” જાણે યાવિ હોત્યા ” જાતશ્ચાપ્યભૂત્ પૂર્વોક્તરૂપો જાતઃ, ઘોરા-તિઘોરતપશ્ચરણાત્ । નતુ યદિ તપઃ કરણેન શરીરમેતાદૃશં જાતં તદા ઉત્થાનાદિ ક્રિયા તસ્ય કથં ભવતીત્યાહ-‘જીવં જીવેણ’ इत्यादि । ‘જીવં જીવેણ’ જીવજીવેન અત્ર પ્રથમો જીવશબ્દઃ આત્મવાચકઃ દ્વિતીયજીવશબ્દો બલવાચકસ્તેન જીવજીવેન જીવવલેન ‘ગચ્છહ’ ગચ્છતિ ગમનાદિક્રિયાં કરોતિ, આત્મવલેનૈવ ચલનાદિ ક્રિયાં કરોતિ, ન તુ શરીરવલેનેતિ ભાવ “જીવં જીવેણ ચિદ્વહ” જીવં જીવેન

હો જુકા થા-અતએવ-વે દુર્બલ હો ગયે થે । (ધમણિસંતપ) માંસરહિત હો જાને કે કારણે ઉનકે શરીર મેં નાડિયાં સ્પષ્ટ નજર પડને લગીં થીં । સો યહ સવ ઉનકે શરીર કી હાલત ઘોરાતિઘોરતપસ્યા કે કરને સે હુઈ । અર્થાત્-ઘોરાતીઘોર તપસ્યા કે કરને સે ઉનકા શરીર પૂર્વોક્ત સ્થિતિવાલા બન ગયા પર ઉત્થાનાદિ ક્રિયાં વે કૈસે કરતે થે, તો હસ આશંકા કે પરિહાર નિમિત્ત સૂત્રકાર કહતે હૈં-“ જીવં જીવેણ ગચ્છહ ” જીવ જીવેન ગચ્છતિ-વે શરીર કે બલ સે નહીં ચલતે થે, અપિ તુ આત્મબલ સે હી ચલતે થે । યહાં પ્રથમ જીવ શબ્દ આત્મા કા વાચક હૈ ઓર દ્વિતીય જીવ શબ્દ બલ કા વાચક હૈ । આત્મબલ સે હી ગમનાદિ ક્રિયા કરતે થે શરીર કે બલ સે નહીં । હસ તરહ સ્કન્દક અનગાર શારીરિક બલકી ક્ષીણતા હોને પર ભી આત્મબલ સે હી ચલનાદિ રૂપ ક્રિયા કરતે થે-શરીર કે બલ સે નહીં । (જીવં જીવેણ ચિદ્વહ) હસી

ખિલકુલ હાસ થઈ ગયો હતો તેથી તેઓ અતિશય દુર્બળ થઈ ગયા હતા. (ધમણિસંતપ) તેમના માંસ રહિત શરીરમાથી તેમની નસો સ્પષ્ટ દેખાતી હતી કઠિનમા કઠિન તપસ્યાને કારણે તેમના શરીરની બે એવી હાલત થઈ ગઈ હતી, તો એવા શરીરે તેઓ ઉત્થાન આદિ ક્રિયાઓ કેવી રીતે કરતા હશે? તો આ શકાના નિવારણ માટે સૂત્રકાર કહે છે કે-(જીવ જીવેણ ગચ્છહ) જીવ જીવેન ગચ્છતિ ! તેઓ શરીરના બળથી ચાલતા નહીં પણ તેમના આત્મબળથી જ ચાલતા હતા અહીં પહેલો (જીવ) શબ્દ આત્માનો વાચક છે અને બીજો (જીવ) શબ્દ શારીરિક બળનો વાચક છે કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે તેઓ આત્મબળથી જ ગમનાદિ ક્રિયા કરતા હતા, શારીરિક બળથી નહી. શારીરિક બળ ન હોવા છતાં તેઓ આત્મબળથી જ ચલનાદિ ક્રિયા કરતા હતા (જીવં જીવેણ ચિદ્વહ) એજ પ્રમાણે તેઓ આત્મબળથી

અયમાશ્વય યથા મસ્મપતિચ્છબો મહિર્નાશ્વત્વા તેમોરિશ્વત્વ ઇત્યર્થે અન્ત
ર્હસ્વાતુ તેવસા અલત્યેવ તથા સ્કન્દકોઽપિ અપગતમાસશોનિતત્વાત્ મરિસ્તમાર
રિતઃ અન્તસ્તુ શુમધ્યાનતપસા જાજ્વલ્યમાનોઽસ્ત્યથેતિ ॥ સૂ૦ ૧૪ ॥

‘અતિ વિલક્ષણામેકતપઃકર્મકરણાનન્તર સ્વન્દક કિં કરોતીત્યાદિ-’ ‘તેજ
કાલેનં તેજં સમર્ણં’ इत्यादि ।

મૂલ્—તેજ કાલેનં તેજ સમર્ણ રાયશ્વે નયરે સમો
સરણ જાવ—પરિસા પદિગયા તપણ તસ્સ સ્વદયસ્સ અળ-
મારસ્સ અળ્લયા કયાઈ—પુન્નવરસાવરત્ત કાલસમયસિ ધમ્મ
જાગરિય જાગરમાણસ્સ હમેયારૂવે અશ્મરિય ચિંતિય
જાવ સમુપ્પાજિસ્થા ઇવ સ્વલુ અહ હમેણ ઇયારૂવેણ ઓરા
લેણ જાવ કિસે ધમણિસતપ્ જાપ્ જીવ જીવેણ ગચ્છામિ ।
જીવ જીવેણ ચિટ્ઠામિ જાવ ગિલામિ । જાવ ઇવામેવ અહપિ
સસહ ગચ્છામિ સસહ ચિટ્ઠામિ ત મરિય તામે ઉટ્ટાણે કમ્મે
થલે વીરિય પુરિસકારપરકમ્મે ત જાવ । તામે અસ્થિ ઉટ્ટાણે
કમ્મે થલે વીરિય પુરિસકારપરકમ્મે જાવ ય મે ધમ્માયરિય

સે (અઈચ અઈચ ઉવસોમેમાણે ચિટ્ઠહ) મહુત મહુત શોમાયમાન હો રહે
યે । તાત્પર્ય કહને કા મહ હે કિ વિસ પ્રકાર સે ‘મસ્મ સે હફી હુઈ પ્રતિ
પાહર મેં તો તેજ રહિત જેસી પ્રતીત હોતી હૈ, પરન્તુ મીતર મેં મહ તેજ
સે પ્રત્યક્ષિત હી રહતી હૈ, ડસી પ્રકાર સે સ્કન્દક અનગાર મી માંસ
ઔર જોનિત સે રહિત હોમે કે કારણ પાહર મેં તેજ સે રહિત યે—પરન્તુ
ફિર મી મીતર મેં શુમધ્યાન ઔર તપ સે જાજ્વલ્યમાન હી હે
॥ સૂ૦ ૧૪ ॥

(અન્તિથી) (અઈચ અઈચ ઉવસોમેમાણે ચિટ્ઠહ) અતિશય શોકતા હતા. હટેવાળ
વાતપર્થ એ છે કે એમ શાખથી અગ્નિ બહારથી જોતાં તો તેજની દાગે છે
પણ અહરથી તો તેજથી સંગતો રહે છે તેમ સ્કન્દક અવમારણ સરી
માંસ અને શોષિતથી રહિત હોવાને કારણે બહારથી તો નિસ્તેજ લાગતુ હડ
પણ તેમને આત્મા તો શુભધ્યાન અને તપસા દેહીધ્યાન હતા ॥ સૂ. ૧૪ ॥

શકટિકા “ હંગાલસગડિયાઃ વા ” અઙ્ગારશકટિકા ઇતિ વા । અઙ્ગારપરિપૂરિતા કોયલા ઇતિ ભાષા પ્રસિદ્ધ વસ્તુજાત સંમૃતા શકટિકા “ ઉળ્હે દિળ્ળા ” ઉળ્ળે દત્તા ઉળ્ળે=આતપાદૌ દત્તાઃ પ્રસારિતા અત એવં ‘ સુક્કા સમાળી ’ શુષ્કાસતી “ સસદ્દં ગચ્છહ ” સશબ્દં ગચ્છતિ “ સસદ્દં ચિદ્દહ ” સશબ્દં તિષ્ઠતિ, યથા શુષ્કકાષ્ઠાદિ પરિપૂરિતા શકટિકા યદિ ચલતિ તિષ્ઠતિ વા તદા કાષ્ઠત્રાદીનાં શુષ્કત્વેન શબ્દં કરોત્યેવેત્યર્થઃ “ એવામેવ સ્વદદ વ્રિ અળગારે ” એવમેવ સ્કન્દકોપ્યનગારઃ “ સસદ્દં ગચ્છહ ” સશબ્દં ગચ્છતિ “ સસદ્દં ચિદ્દહ ” સશબ્દં તિષ્ઠતિ ઉપવિગતીત્યર્થઃ ગતિસ્થિતિસમયેઽસ્થિસંઘર્ષેણ શરીરસ્ય શબ્દાયમાનત્વાત્ ।

સ સ્કન્દકોડનગારઃ “ ઉવચિદ્દત્તવેળ ” ઉપચિતસ્તપસા “ અવચિદ્દ મંસસોળિણં ” અપચિતો માંસશોણિતેન, માંસશોણિતરાહિત્યેનાપચિતઃ ક્ષીણતાં પ્રાપ્તઃ । “ હુયા-સળેવિવ ભાસરાશિપદિચ્છળ્ળે ” હુતાશન ઇવ ભસ્મરાશિપ્રતિચ્છન્નઃ ‘ તવેળં તેણં ’ તપસા તેજસા “ તવતેયસિરીણ ” તપસ્તેજઃશ્રિયા ‘ અતીવ અતીવ ઉવસોમેમાળે ચિદ્દહ ” અતીવાતીવોપશોભમાનસ્તિષ્ઠતિ ।

વા) કોયલોં સે ભરી હુઈ કોહ ગાડી હો, (ઉળ્ળે દિળ્ળા) ઔર વહ ઘામ-ધૂપ મેં સૂઝાઈ ગઈ હો, હસ પ્રકાર (સુક્કા સમાળી) સૂઝ જાને પર જૈસે વહ (સસદ્દં ગચ્છહ) ચ્લટ ચ્લટ શબ્દ કરતી હુઈ ચ્લતી હૈ (સસદ્દં ચિદ્દહ) ચ્લટ-ચ્લટ શબ્દ કરતી હુઈ ઠહરતી હૈ, ઁસી તરહ સ્કન્દક અનગાર કા શરીર ભી ગતિ, ઔર સ્થિતિ કે સમય મેં આપસ મેં અસ્થિયોં કે સંઘર્ષ સે શબ્દાયમાન હોતા થા વે સ્કન્દક અનગાર (ઉવચિદ્દ તવેળ) તપ સે ઉપચિત પુણ્ટ થે પરન્તુ (અવચિદ્દ મંસસોળિણં) માંસ ઔર શોણિત સે અપચિત-ક્ષીણ થે, (હુયાસળે વિવ ભાસરાશિપદિચ્છળ્ળે) પરન્તુ ફિર વે સ્કન્દક અનગાર ભસ્મરાશિ સે પ્રચ્છન્ન અગ્નિ કી તરહ (તવેળં તેણં) તપ ઔર તેજ કી શ્રી-શોભા

કોઈ ગાડી હોય, (ઉળ્ળે દિળ્ળા) અને તે સૂર્યના તાપથી સૂકાઈ ગયેલી હોય, (સુક્કા સમાળી) એ રીતે સૂકાઈ જવાને લીધે જેમ તે (સસદ્દં ગચ્છહ) ખટ-ખટ અવાજ કરતી ચાલે છે. (સસદ્દં ચિદ્દહ) અને તેને ચાલતી અટકાવીએ ત્યારે ખટ ખટ અવાજ કરતી ઉભી રહે છે, એજ પ્રમાણે હલન ચલન કરતી વખતે સ્કન્દક અણુગારના હાડકા પણ એક બીજા સાથે ઘસાવાથી ખટ ખટ અવાજ થતો હોતો સ્કન્દક અણુગાર (ઉવચિદ્દ તવેળ) તપથી ઉપચિત (પુણ્ટ) હોતા, પણ (અવચિદ્દ મંસસોળિણ) પણ માંસ અને રક્તથી અપચિત (ક્ષીણ) હોતા (હુયાસળે વિવ ભાસરાશિપદિચ્છળ્ળે) પણ તેઓ રાખની નીચે ઢકાયેલા અગ્નિની જેમ (તવેળ તણં) તપ અને તેજની શ્રીથી

પત્ત્વ મતિગતા તત્ત્વઃ સ્વલ્પ તસ્ય સ્કન્દસ્પાનગારસ્પાન્યદા કદાચિત્ત્વ પૂર્વરામાત્ર
રાત્રકાલસમયે ધર્મજાગરિકાં જાગ્રતઃ અયમસમૂપ આધ્યાત્મિકચિત્તિતા વાત્
સમુદપધતઃ ॥ અહ સ્વલ્પ અહમનેન પત્ત્વમૂળોદારણ યાવત્ કુસો ધમનીસત્ત્વો માત્ર

અતિવિલક્ષણ અનેક તપ કરને કે પાદ સ્કન્દક અનગાર તે કથ
કિયા સો કહતે હૈં—(તેળં કાલેળં) इत्यादि ।

સૂત્રાર્ય—(તેળં કાલેળં તેળં સમર્પણં) उस काल में और उस
समय में (रायगिह नयरे) राजगृह नगर या यहाँ (समोसरणं) सम-
न का आगमन हुआ (जाब परिस्ता पडिगया) यावत्-धर्मकथा सुनकर
समा विसर्जित हो गई (तएणं तस्स न्दयस्स अणगारस्स) इसके पश्चात्
वस स्कन्दक अनगार का (अण्णया कयाई) किसी समय (पुम्भरत्ता
वरत्तकाल समयसि) रात्रीके पिछले पहर में (धम्मजागिय आगरमाणस्स)
धर्म जागरण करते समय (इमेयारुवे अज्झस्सियण, चित्तिप, जाब, समुत्प
जित्था) इस प्रकार का आध्यात्मिक, चिंतित यावत् मनोगत संकल्प उत्पन्न
हुआ, (एव सल्ल अह इमेण एयारुवेण ओराळेण जाब किसे धमणिसंतप
ए जाए) मैं इस प्रकार के उद्धार तप के आराधन करने से यावत् दुर्बल
हो गया हूँ—तथा मेरे शरीर की समस्या धमनियाँ—नाडियाँ बाहर स्पष्ट

આ પ્રકારે । અનેક અતિ વિલક્ષણ તપ કર્યા પછી સ્કન્દક અનુગારે હું
હું” તે હવે સૂત્રકાર કહે છે ‘તેળં કાલેળં इत्यादि ।’

સૂત્રાર્યઃ (તેળં કાલેળં તેળં સમર્પણં) તે કાળે અને તે સમયે (રાયગિ-
હ નયરે) રાજગૃહ નામે નગર હેતુ (સમોસરણં) તથા મહાવીર પ્રભુ પ્રત્યર્થ
તથા સમોસરણ રથાત્તુ (જાબ પરિસ્તા પડિગયા) (પરિપક ધમ કથા નીકળી
તથાથી શરૂ કરીને (ધમ કથા સાંભળીને સભા વિસર્જન થઈ) તથા સુખી
કથન આગળ પ્રમાણે સમજવું (તएणं तस्स न्दयस्स अणगारस्स) ત્યાર બાદ
તે સ્કન્દક અનુગારને અણ્ણયા કયાઈ એક વખત ‘પુમ્ભરતાવરત્તક-
સમયસિ’ શત્રિના ઉચ્ચ પ્રકારે ‘ધમ્મજાગરિય આગરમાણસ્સ’ ધર્મજાગરણ
કરતી વખતે (इमेयारुवे अज्झस्सियण, चित्तिप जाब समुत्पजित्था) આ પ્રકારને
આધ્યાત્મિક, ચિત્તિત મનોગત સંકલ્પ થયો—(અહીં મનોગત પચન્તના
વિશેષણો આગળ પ્રમાણે સમજવા) (एव सल्ल अह इमेण एयारुवेण ओराळेण
जाब किसे धमणिसंतप जाए) આ પ્રકારનું ઉદાર તપ કરવાથી હું કુબલ
થઈ ગયો છું, મારા શરીરની નસો બહાર ૧૫૮ દેખાય છે (जीब जीरेव

धम्मोवदेसए समणे भगवं महावीरे जिणे सुहत्थी विहरइ
 तावता मे सेयं कल्लं पाउप्पभायाए रयणीए फुल्लुप्पलक-
 मलकोमलुम्मिलियम्मि अहापंडुरे पन्नाए, रत्तासोयप्पगासे
 किंसुयसुयमुहगुंजद्धरागसरिसे कमलागरसंडवोहए, उट्ठिय-
 म्मि सूरे सहस्सरस्सिम्मि दिणयरे तेयसा जलंते समणं भगवं
 महावीरं वंदित्ता नमंसित्ता जाव पज्जुवासित्ता, समणेणं
 भगवया महावीरेणं अब्भणुण्णाए समाणे सयमेव पंचमह-
 व्वयाइं आरोवेत्ता समणाय समणीओ य खामेत्ता तहारूवेहिं
 थेरेहिं कडाईहिं सद्धिं विउलं पव्वयं सणियं सणियं दुरुहित्ता
 मेहघणसंनिगासं देवसन्निवायं पुढवीसिलापट्टयं परि-
 लेहित्ता दब्भसंधारगं संधरित्ता दब्भसंधारोवगयस्स संले-
 हणा झोसणा झूसियस्स भत्तपाणपडियाइक्खियस्स, पाओ-
 वगयस्स, कालं अणवकंखमाणस्स विहरित्तिए त्तिकट्ठु एवं
 संपेहेइ संपेहित्ता कल्लं पाउप्पभायाए रयणीए जाव जलंते
 जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव जाव पज्जुवासइ खंदयाइ
 समणे भगवं महावीरे खंदयं अणगारं एवं वयासी से णूणं
 खंदया, पुव्वरत्तावरत्तकालसमयंसि, धम्मजागरियं जागरमा-
 णस्स इमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था, एवं खलु
 अहंइमेणं एयारूवेणं तवेणं ओरालेणं विउलेणं तं चेव जाव
 कालं अणवकंखमाणस्स विहरित्तिए त्तिकट्ठु एवं संपेहेइ
 संपेहित्ता कल्लं पाउप्पभायाए जावजलंते जेणेव मम अंतिए
 तेणेव हव्वमागए से णूणं खंदया अट्ठे समट्ठे ? हंता
 अत्थि अहासुहं देवाणुप्पिया मा पडिवन्धं करेह ॥सू०१५॥

छाया-तस्मिन्काले तस्मिन् समये राजगृहेनगरे समवसरणम् यावत् परि-

પત્ત્વિગતા તતઃ સ્વલ્લ તસ્ય સ્કન્દસ્યાનગારસ્યાન્યદા કદાચિત્ પૂર્વભાગા
રાત્રિકાલસમયં ધર્મજાગરિકાં જાગ્રત અયમેતદ્વ્યુષ આધ્યાત્મિકદિવિતો વાચ
સમુદપઘત૦ અહ સ્વલ્લ અહમનેન એતદ્વ્યુષેનોદારણ યાન્ત કુશો ધમનીસ્ત્વતો ધાત

અતિચિલક્ષણ અનેક તપ કરને કે યાદ સ્કન્દક અનગાર ને ક્યા
કિયા સો કહતે હૈ—(તેણ કાલેણ) इत्यादि ।

સૂત્રાર્ય—(તેણ કાલેણ તેણ સમર્ણ) उस काल में और उस
समय में (रायगिहे नयर) राजगृह नगर या वहां (समोसरण) भाग
न का आगमन हुआ (जाव परिस्ता पडिगया) यात्र-धर्मरूपा सुनकर
समा विसर्जित हो गई (तएणं तस्म खंदयस्स अणगारस्स) इसके बाद
वस स्कन्दक अनगार को (अण्णया कयाई) किसी समय (पुनरत्त
घरसकाल समयसि) रात्रीके पिछले महर में (धम्मजागरियं जागरमाणस्स)
धर्म जागरण करते समय (इमेयारूवे अज्झत्थिए, चित्तिए, जाव, समुप्प
जित्था) इस प्रकार का आध्यात्मिक, चित्तित यावत् मनोगत संकल्प उत्पन्न
हुआ, (एवं स्वल्ल अह इमेणं एयारूवेणं ओरालेणं जाव किसे धमनिसत्त
ए जाए) मैं इस प्रकार के द्वार तप के आराधन करने से यावत् दुर्बल
हो गया हूँ—तथा मेरे शरीर की समस्त धमनियाँ—नाडियाँ बाहर स्पष्ट

આ પ્રકારે । અનેક અતિ વિલક્ષણ તપ કર્યા પછી એ કે અણુગારે ડું
કહ્યું તે હવે સૂત્રકાર કહે છે 'તેણ કાલેણ' इत्यादि ।

સૂત્રાર્યઃ (તેણ કાલેણ તેણ સમર્ણ) તે કાળે અને તે સમયે (રાયગિ
મયરે) રાજગૃહ નામે નગર હતું (સમોસરણ) તથા મહાવીર પ્રભુ પ્રધર્મ
ત્યાં સમીપસરણ રચાયું (જાવ પરિસ્તા પડિગયા) (પરિવ્રજ ધર્મ) કથા નીકળી
ત્યાથી થઈ કરીને (ધમકથા સાંભળીને સભા વિસર્જન થઈ) ત્યાં સુધીને
કથન આગળ પ્રમાણે સમજાવું (તપણ તસ્મ સ્વંદયસ્સ અણગારસ્સ) ત્યાર બાદ
તે સ્કન્દક અણુગારને 'અણ્ણયા કયાઈ' એક વખત 'પૂનરત્તારસકાલ
સમયસિ' રાત્રિના છેલ્લા પ્રકારે "ધમ્મજાગરિયં જાગરમાણસ્સ" ધર્મજાગરણ
કરતી વખતે (इमेयारूवे अज्झत्थिए चित्तिए जाव समुप्पजित्था) આ પ્રકારનો
આધ્યાત્મિક, ચિત્તિત મનોમત સંકલ્પ થયો—(અહીં મનોમત પર્વન્તના
વિશેષણો આગળ પ્રમાણે સમજાવ્યા) (एवं स्वल्ल अह इमेण एयारूवेण ओरालेण
जाव किसे धमनिसत्त जाए) આ પ્રકારનું ઉદાર તપ કરવાથી હું દુર્બલ
થઈ ગયો છું, માથા શરીરની નસો બહાર ૧૫૫૮ ડેખાય છે (जीवं जीरेम

જીવં જીવેન ગચ્છામિ જીવં જીવેન તિષ્ઠામિ યાવત્ ગ્લાયામિ યાવદેવમેવાહમપિ
સશબ્દં ગચ્છામિ સશબ્દં તિષ્ઠામિ, તદસ્તિ તાવન્મમોત્થાનં કર્મવલં વીર્યં પુરુષકાર
પરાક્રમસ્તદ્ યાવત્તાવન્મમાસ્તિ ઉત્થાનં કર્મવલં વીર્યમ્ પુરુષકારપરાક્રમો યાવત્ત
મમ ધર્માચાર્યો ધર્મોપદેશકઃ શ્રમણો ભગવાન્ મહાવીરો જિનઃ સુહસ્તી વિહરતી
તાવતા મમ શ્રેયઃ કલ્યં પ્રાદુષ્યમાતાયાં રજન્યાં ફુલોત્પલકમલકોમલોન્મીલિતે

રૂપે સે દીક્ષ રહી હૈં (જીવં જીવેણ ગચ્છામિ) મૈં શરીર બલ સે નહીં,
કિન્તુ આત્મબલ સે ચલતા હું, (જીવ જીવેણ ચિદ્વામિ) આત્મબલ સે હી
ઠહરતા હું (જાવ ગિલામિ) યાવત્ બોલતે ૨ બી ગ્લાનિયુક્ત હો જાતાં
હું (જાવ એવામેવ અહંપિ સસદં ગચ્છામિ, સસદં ચિદ્વામિ) યવત્ હસી
તંરહ સે મૈં બી ચટ-ચટ શબ્દ કરતે હુએ ચલતા હું ઓર ચટ-ચટ શબ્દ
કરતે હુએ હી બેઠતા હું (તં અત્થિ તા મે ઉદ્ધાણે) ફિર બી મુદ્ધ મૈં અબી
ઉત્થાન શક્તિ હૈ (કમ્મે, બલે, વીરિએ, પુરિસક્કારપરક્કમે) કર્મ હૈ થલ
હૈ, વીર્ય હૈ, પુરુષકાર પરાક્રમ હૈ (તં જાવ તા મે અત્થિ ઉદ્ધાણે, કમ્મે,
બલે, વીરિએ, પુરિસક્કારપરક્કમે) તો જવતક મુદ્ધ મૈં ઉત્થાન કર્મ,
વલ, વીર્ય, ઓર પુરુષાર્થ પરાક્રમ હે ઓર (જાવ ય મે ધમ્માચરિએ-
ધમ્મોવદેસએ સુહત્થી સમણે ભગવં મહાવીરે) જવતક મેરે ધર્માચાર્ય
ધર્મોપદેશક શ્રમણ ભગવાન્ મહાવીર (જિણે) જિન (સુહત્થી) પુરુષોં મૈં
ગન્ધહસ્તી જૈસે (વીહરહ) વિચરતે હૈં અર્થાત્ વિદ્યમાન હૈં (તાવતા-મે
સેય કલ્લં પાડપ્પમાયાએ રચણીએ) નવતક અર્થાત્ ભગવાન્ મહાવીર

ગચ્છામિ) હું શરીરબળથી નહીં પણ આત્મબળથી ચાલુ છું (જીવ જીવેણ
ચિદ્વામિ) આત્મબળથી જ સ્થિર રહુ છું, (જાવ ગિલામિ) બોલતાં પણ
શ્વાનિ અનુભવુ છું (જાવ એવામેવ અહંપિ સસદં ગચ્છામિ સસદં ચિદ્વામિ) હું
ન્યારે ચાલુ છું ત્યારે મારા હાડકાના ઘર્ષણથી ખટ-ખટ અવાજ થાય છે,
બેસતી વખતે પણ ખટ ખટ અવાજ થાય છે (ત અત્થિ તા મે ઉદ્ધાણે)
છતા પણ હજી મારામાં ઉત્થાન શક્તિ છે (કમ્મે' બલે, વીરિએ પુરિસક્કાર-
પરક્કમે) કર્મ છે, બળ છે વીર્ય છે અને પુરુષકાર પરાક્રમ છે (તં જાવતા
મે અત્થિ ઉદ્ધાણે, કમ્મે, બલે, વીરિએ, પુરિસક્કારપરક્કમે) તો ન્યા સુધી
મારામાં ઉત્થાન શક્તિ, બળ, વીર્ય અને પુરુષાર્થ પરાક્રમ મોજુદ છે, (જાવ
ય મે ધમ્માચરિએ ધમ્મોવદેસએ સુહત્થી સમણે ભગવ મહાવીરે જિણે વિહરહ)
ન્યાસુધી પુરુષોમાં ગન્ધહસ્તી સમાન મારા ધર્માચાર્ય ધર્મોપદેશક, જિને
શ્વર શ્રમણ ભગવાન મહાવીર વિદ્યમાન છે, (તાવતા મે સેય કલ્લ પાડપ્પ-
માયાએ રચણીએ) ત્યા સુધી મારૂં શ્રેય છે, તો આવતી કાલે રાત્રિ પૂરી થાય

यथा पांडुरे प्रभाते रक्ताशोकप्रकाशे किंशुकशुकमुखयुग्मद्वारागसरसे कमलाकरपद्म
 बोधके उत्थिते सूर्ये सहस्ररश्मौ दिनकरे तेजसा ज्वलति सति भगवत महावीर
 पन्दिता नमस्यित्वा यावत् पर्युपास्य भगणेन भगवता महावीरेणाम्यनुज्ञातः सन्
 स्वयमेव पद्ममहाप्रतान्यारोप्य भगणांश्च भगवोश्च समयित्वा तथारूपैः स्पर्शैः

प्रभु के समक्ष " मे भग्य , मेरे लिये भग्यस्कार है आगामी दिवस जब
 रात्रि प्रकाशवाली हो जायगी तथा (फुल्लुप्पकमलकोमलुम्मिलियम्मि
 महापट्टरे पमाए) जब ऐसा प्रभात हो जावेगा कि जिसमें सामान्य
 तथा चिरुस्मित हुए कमल के दलों का और हरिणविशेष के नेत्रों का
 उन्मीलन-खिलना हो जावे अर्थात् धवल प्रकाश फैल जावे, तथा
 (रक्ता सोयप्पगासे) रक्त अशोक वृक्ष के जैसे प्रकाशवाला (किंसुप्प-
 सुहट्टगुजद्वारागसरसे) किंशुक-पलाश पुष्प शुकमुख-तोंते का मुख
 एवं गुजार्ध-रस्तिका के अर्धभाग जैसा (कमलागरसइयोहए) सरोवर
 आदि में कमल समूह को चिरुस्मित करने वाला (सहस्सरस्सिम्मि)
 एक हजार किरणों वाला, (दिनकरे) दिवस करने वाला (तेयसा जल्लते
 सूर्रे उट्ठियम्मि) तेजसे प्रदिस ऐसा सूर्य जब उदित हो जावेगा तब मैं
 (समण भगवं महावीर वदिता नमसिस्ता जाव पज्जुयासिस्ता) भगवन्
 भगवान् महावीर के पास जाकर उनको वदना करूंगा और नमस्कार
 करूंगा । धंदना नमस्कार करके यावत् उनकी पर्युपासना करूँ (समणेण
 भगवया महावीरेण अज्मणुत्ताए समाणे) उन भगवन् भगवान् महावीर की
 आज्ञा प्राप्त करूंगा, आज्ञाप्राप्त कर फिर मैं (स्वयमेव) अपने भाप (पंच

फुल्लुप्पकमलकोमलुम्मिलियम्मि महा पट्टरे पमाए) अने भगणेने तथा उदि-
 त्तेना नेत्रेने विकसावनाए सुयने। प्रकाश देवार्ध तथा (रक्त सोयप्पगासे)
 रक्त अशोक वृक्षना जेवा प्रकाश वाणे। (किंसुप्पसुहट्टगुजद्वारागसर से)
 किंशुक पलाश आणा। तु पुष्प पोपट । पुष्प समान, अने थोड़ीनी अर्ध
 भाग समान रक्त रजने, (कमलागरसइयोहए) सरोवर आदिमा कमल
 पुन्देने चिरुस्मित करनाए। (सहस्सरस्सिम्मि) जोक कमल किरणो वाणे। (दिन
 कर) दिवस करनाए। (तेयसा जल्लते सूर्रे उट्ठियम्मि) तेजधी उदीप्पमान सूर्य
 न्नाए उदित प.भग्ये त्वारे (समण भगव महावीर वदिता जाव पज्जुयासिस्ता)
 हु भगव भगवान महावीर पासे जधने तेभने वइजा नमस्कार करीय
 वइजा नमस्कार करीने तेभनी पर्युपासना पणन्तनी विधि करीने (समणेण
 भगवया महावीरेण अज्मणुत्ताए समाणे) हु भगव भगवान महावीरनी आज्ञा
 लपय. आज्ञा लधने (स्वयमेव) भारी अते न (पंचमदइयया आरोरेणा)

જીવેન ગચ્છામિ જીવં જીવેન તિષ્ઠામિ યાવત્ ગ્લાયામિ યાવદેવમેવાહમપિ
દં ગચ્છામિ સગચ્છં તિષ્ઠામિ, તદસ્તિ તાવન્મમોત્થાનં કર્મવલં વીર્યં પુરુષકાર
ત્મસ્તદ્ યાવત્તાવન્મમાસ્તિ ઉત્થાનં કર્મવલં વીર્યમ્ પુરુષકારપરાક્રમો યાવચ્ચ
ધર્માચાર્યો ધર્મોપદેશકઃ શ્રમણો ભગવાન્ મહાવીરો જિનઃ સુહસ્તી વિહરતી
તા મમ શ્રેયઃ કલ્પં પ્રાદુષ્યભાતાયાં રજન્યાં ફુલોત્પલકમલકોમલોન્મીલિતે

સે દીગ્ધ રહી હૈં (જીવં જીવેણ ગચ્છામિ) મૈં શરીર વલ સે નહીં,
નતુ આત્મવલ સે ચલતા હું, (જીવં જીવેણ ચિદ્ધામિ) આત્મવલ સે હી
રતા હું (જાવ ગિલામિ) યાવન્ બોલતે ૨ મી ગ્લાનિયુક્ત હો જાતા
(જાવ એવામેવ અહંપિ સસદં ગચ્છામિ, સસદં ચિદ્ધામિ) યવન્ इसी
રહ સે મૈં મી ચટ-ચટ શબ્દ કરતે હુए ચલતા હું ઓર ચટ-ચટ શબ્દ
રતે હુए હી બૈઠતા હું (તં અત્થિ તા મે ઉદ્ધાણે) ફિર મી મુદ્ધ મૈં અમી
ઉત્થાન શક્તિ હૈ (કમ્મે, વલે, વીરિય, પુરિસકારપરકકમે) કર્મ હૈ થલ
હૈ, વીર્ય હૈ, પુરુષકાર પરાક્રમ હૈ (તં જાવ તા મે અત્થિ ઉદ્ધાણે, કમ્મે,
વલે, વીરિય, પુરિસકારપરકકમે) તો જવતક મુદ્ધ મૈં ઉત્થાન કર્મ,
વલ, વીર્ય, ઓર પુરુષાર્થ પરાક્રમ હે ઓર (જાવ ય મે ધમ્માયરિય-
ધમ્મોવદેસए સુહત્થી સમણે ભગવં મહાવીરે) જવતક મેરે ધર્માચાર્ય
ધર્મોપદેશક શ્રમણ ભગવાન્ મહાવીર (જિણે) જિન (સુહત્થી) પુરુષોં મૈં
ગન્ધહસ્તી જૈસે (વીહરइ) વિચરતે હૈં અર્થાત્ વિચરમાન હૈં (તાવતા-મે
સેય કલ્પં પાડપ્પમાયાए રચણીए) તચતક અર્થાત્ ભગવાન્ મહાવીર

ગચ્છામિ) હું શરીરબળથી નહીં પણ આત્મબળથી ચાલુ છું (જીવ જીવેણ
ચિદ્ધામિ) આત્મબળથી જ સ્થિર રહું છું, (જાવ ગિલામિ) બોલતાં પણ
ગ્લાનિ અનુભવું છું (જાવ એવામેવ અહંપિ સસદં ગચ્છામિ સસદં ચિદ્ધામિ) હું
ન્યારે ચાલુ છું ત્યારે મારા હાડકાંના ઘર્ષણથી ખટ-ખટ અવાજ થાય છે,
બેસતી વખતે પણ ખટ ખટ અવાજ થાય છે (ત અત્થિ તા મે ઉદ્ધાણે)
છતા પણ હજી મારામાં ઉત્થાન શક્તિ છે (કમ્મે વલે, વીરિય પુરિસકાર
પરકકમે) કર્મ છે, બળ છે વીર્ય છે અને પુરુષકાર પરાક્રમ છે (તં જાવતા
મે અત્થિ ઉદ્ધાણે, કમ્મે, વલે, વીરિય, પુરિસકારપરકકમે) તો ન્યા સુધી
મારામાં ઉત્થાન શક્તિ, બળ, વીર્ય અને પુરુષાર્થ પરાક્રમ મોજુદ છે, (જાવ
ય મે ધમ્માયરિય ધમ્મોવદેસए સુહત્થી સમણે ભગવ મહાવીરે જિણે વિહરइ)
ન્યાસુધી પુરુષોમાં ગન્ધહસ્તી સમાન મારા ધર્માચાર્ય ધર્મોપદેશક, જિને
શ્વર શ્રમણ ભગવાન મહાવીર વિદ્યમાન છે, (તાવતા મે સેય કલ્પં પાડપ્પ-
માયાए રચણીए) ત્યા સુધી મારે શ્રેય છે, તો આવતી કાલે રાત્રિ પૂરી થાય

मिति कृत्वा एवं सपेक्षते सप्रेक्ष्य कर्त्तव्यं मादुष्यमासायां रमण्यां यावत् ज्वलति यन्मै
 भ्रमणो मगधान् महावीरस्तत्रैव यावत्पर्युपास्ते । स्कन्दक इति भ्रमणो मगधान्
 महावीर स्कन्दकमनगारमेवमवादीत्, तद् भूत तव स्कन्दक ! पूर्वराधापररात्र
 काष्ठसमये धर्मजागरिकां आग्रतोऽयमेतद्रूपजाध्यात्मिको यावत् समुदपपत्,
 एवं खल्वहमनेनैतद्रूपेण तपसोदारेण विपुलेन तदेव पावत्कालमनवर्त्तततो

मै अपने मरण की आशंका- इच्छा नहीं करूंगा । (सिकंदर) इस प्रकार
 की भावना से प्रेरित होकर उन स्कन्दक अनगार ने (एवं सपेक्षेह)
 ऐसा विचार किया । (सपेक्षिता) इस प्रकार विचार कर के कर्त्तव्य
 पाठ्यमायाए रमणीय जाव जलते) जय प्राणाकाण हुआ यावत् सूर्य
 का प्रकाश फैल चुका तब वे स्कन्दक अनगार (जेणेव समणे मगध
 महावीरे) जहां भ्रमण मगधान् महावीर विराजमान थे (तेणेव जाव
 पञ्जुवासइ) वहां आये । यावत् उनकी वे पर्युपासना करने लगे ।
 (खदयाइ समणे मगध महावीरे खदयं भगगारं एव बयासी) हे स्कन्दक ! इस
 प्रकार संबोधित करते हुए भ्रमण मगधान् महावीर ने स्कन्दक अनगार
 से ऐसा कहा- (से जूणं खदया पुष्परत्तावत्सकाल समयसि) हे स्कन्दक
 रात्री के पिछले प्रहर में (धम्मजागरियं जागरमाणस्म) धर्मजागरणा
 करते हुए तुम्हें (इमेवाकवे भज्जत्थिए जाव समुप्पज्जित्था) यह इस
 प्रकार का आध्यात्मिक यावत् मनोगत संकल्प उत्पन्न हुआ कि (एवं

भरवुनी आशंका नहीं करूँ (सि क्) आ भ्रमणो भावनाधी प्रेशधने
 स्कन्दक अशुभारे (एवं सपेक्षेह) उपर वक्ष्याम्य प्रभावे स ४४५ ध्ये । (सपे
 क्षिता) आ भ्रमणो स ४४५ करीने (कस्त पाठ्यमायाए रमणीय जाव जलते)
 न्याये आतकण ध्ये न्याये सूयने प्रकाश होताये-अर्द्धी सुधने प्रकाश
 होताये त्यां सुधीनु धयन उपर भुज्जण अक्षय करवानु थे-त्यारे स्कन्दक अशु
 गार (जेणेव समणे मगध महावीरे) न्यां भ्रमण मगधान् महावीर विराजमान
 होता (तेणेव जाव पञ्जुवासइ) त्यां न्याया त्यां आधीने भरवुनी पञ्च भ-
 सना पञ्चत्तनी क्रिया करी । (खदयाइ समणे मगध महावीरे खदयं भगगारं एव
 बयासी) त्यारे भ्रमण मगधान् महावीरे स्कन्दक अनुगारने आ प्रभावे ४४
 थे स्कन्दक । (से जूणं खदया पुष्परत्तावत्सकाल समयसि) रात्रिना उपर ४४
 (धम्मजागरियं जागरमाणस्म) धम्मजागरण करती बघते तबने (इमेवाकवे
 भज्जत्थिए जाव समुप्पज्जित्था) आ भ्रमणो आध्यात्मिक, मनोगत संकल्प
 उत्पन्न ध्ये ४४ (एवं खल्वह इमेण एवाकवेण तवेण ओराकेण विवडेण

कृतादिभिः साधं विपुलं पर्वतं शनैः शनैर्दुस्त्य मेघसंनिगाशं देवमन्निपातं पृथिवी-
शिलापट्टकं प्रतिलेख्य दर्भसंगतारकं संस्तीर्य, दर्भसंस्नारकोपगततरय संलेखनाजो-
पणाजुपितस्य भक्तपाणप्रत्याख्यातरय पादपोपगतस्य काञ्चमनवकांक्षतः विहर्तु-

महव्रयाङ् आरोवेत्ता) पांचमहाव्रतीं को स्वीकार करके (समणा य सम-
णीओ य खामेत्ता) श्रमण तथा श्रमणीओं से (क्षमापना) खमतखामणा
करूंगा, खमत खामणा करके कराके (नहारूवेहिं थेरेहिं कडाईहिं
सद्धिं) तथारूप स्थविरों के साथ कि जो संथारे में स्थित साधु के
संरक्षक होते हैं अर्थात् सहायता करते हैं (विउलं पव्वयं) विपुल
पर्वत पर विपुलाच्च पर (सणियं सणियं) धीरे२ (दुरुहत्ता) चढकर
(मेहघणसंनिगासं) मेघ के समूह जैसे वर्ग वाले (देवमन्निवायं)
देवों के सन्निपात वाले ऐसे (पुढवीमिलापट्टयं) पृथ्वी शिलापट्टक की
प्रतिलेखना करूंगा (पडिलेहत्ता) प्रतिलेखना करके उस पर (दम्भ
संथारियं संथरित्ता) दर्भका संथारा बिछाऊंगा-बिछाकर (दम्भसंथारोव
गयस्स) उन्म दर्भ के संथारे पर स्थित हुआ मैं (संलेहणा झोसणा
झूसियस्स) संलेखना को बड़े ही आदर भाव से धारण
करता हुआ (भक्तपाण पडियाडक्खियस्स) चतुर्विध आहार का परि-
त्याग करूंगा और (पाओवगयस्स) पादपोपगमन संथारे में रहता
हुवा (कालं अणवकंखमाणस्स विहरित्ताए) इस स्थिति में रहा हुआ

पांच महाव्रतो अगीक्षा० करीश (समणा य समणीओ य खामेत्ता) अने साधु
साध्वीओने भमत-भम.सण्णा करीश भमत भमासण्णा करीने तथा करावीने
(तहारूवेहिं थेरेहिं कडाईहिं सद्धिं) सथारे करनारा साधुओने जेवो सडायता
करे छे तेवा स्थविरेनी साथे (विउल पव्वय) विपुल पर्वत पर विपुलाच्चल
पर (सणियं सणियं) धीरे धीरे (दुरुहत्ता) चढीश त्या चडीने (मेहघण-
संनिगासं) मेघना समूह जेवा वर्ण वाणा, (देवसन्निवायं) देवाना निवस
स्थान वाणा (पुढवीमिलापट्टयं) पृथ्वीशिलापट्टकनी प्रतिलेखना करीश
(पडिलेहत्ता) तेनी प्रतिलेखना करीने तेना उपर (दम्भसंथारियं संथरित्ता)
दर्भने संथारे बिछावीश (दम्भसंथारोवगयस्स) ते दर्भना सथारा पर
उला रडीने (संलेहणा झोसणा झूसियस्स) हु धाया आदर भाव सहित
संलेखना (सथारे) अगीक्षार करीश (भक्तपाणपडियाडक्खियस्स) थार
प्रकारना आहारने त्याग करीश (पाओवगयस्स) हु पादपोपगमन सथारे
करीश (काल अणवकंखमाणस्स विहरित्ताए) ओ स्थितिमा रडेयो हु भारा

સમયસરણ્યમ્ “ જાણ પરિણા પઢિગયા ” યાચન્ પપત્ પ્રસિગતા “ તર્ણં તસ્સ
ત્વદયસ્સ ઝળગારસ્સ ” સત્ત સ્વત્તુ તસ્ય સ્વ-દમ્ય તદ્ધામપાનગારસ્સ “ અપ્પયા
કયાઈ ” અન્યદા કદાચિત્ , અન્યસ્મિન્ કર્મિમિત્તકાલે ” इत्यर्थ-“ પુનર્રતા
પરત્તકાલસમયસિ ” પૂર્વરાત્રાપરરાત્રકાલસમય પૂર્વરાત્ર રાત્રે પૂર્વોભાગઃ અપર
રાત્રાપરકૃષ્ટા રાત્રિ પશ્ચિમસ્તદ્ માગ इत्यर्थ- પૂર્વગત્રાત્રમઠા યઃ કાલસમય કાલ
સ્વરૂપ સમયઃ સ્ત પૂર્વરાત્રાપરરાત્રકાલસમયસ્તસ્મિન્ પૂર્વરાત્રાપરરાત્રકાલ-
સમય, રાત્રેર્મધ્યમાગ પશ્ચિમમાગે ચો ‘ ચમ્મજાગરિય જાગરમાણસ્મ ” ધર્મ-
જાગરિકા જાગ્રતઃ ધર્મજાગરિયાં કુર્વન્ इत्यर्थઃ ‘ હમયારુવે ” અયમેતદૂપ “ અન્ન
સિય” આશ્યામિષ આત્મગત મનસિચ્ચિત્ इत्यर्थઃ “ ચિંથિય ” ચિન્તિત “ જાણ

પ્રત્યુક્તા આગમન હુઆ । (જાણ પરિણા પઢિગયા) યાચન્ સમા ચિમ્મજિત
હુઈ । (તર્ણ) તય (તસ્મ સ્વદયસ્સ ઝળગારસ્સ) ડન સ્કન્દક ઝન
ગાર કો (ઝળગયા કયાઈ) કિસી સમય મેં (પુનર્રતાપરત્તકાલ-
સમયસિ) રાત્રિ ક મધ્યમાગ મેં અથવા રાત્રિ કે પશ્ચિમમાગ મેં જય
કિ યે (ચમ્મજાગરિય જાગરમાણસ્સ) ધર્મજાગરણા કર રહે યે—તય
હમ પ્રકાર કા મનોગત સૈકલ્ય-ચિચાર ઉત્પન્ન હુઆ, (રાત્રિ કા પૂર્વ
માગ પૂર્વરાત્ર ઓર રાત્રિ કા અપરમાગ અપરરાત્ર હે । પૂર્વરાત્ર ઓર
અપરરાત્ર રૂપ જો કાલસમય-કાલમ્યરૂપ સમય વા પૂર્વરાત્રાપરરાત્ર
કાલસમય હે—ડનમેં અર્થાન્ રાત્રિ કે મયમાગ મેં અર્થવા રાત્રિ કે
પશ્ચિમ માગ મેં ધર્મ કે નિમિત્ત જો કી જાની હે વહ ધર્મજાગરણા હે ।
ધર્મ જાગરણ કરતે સમય સ્કન્દક ઝનગાર કે (હમેયારુવે અન્નસિયપ
ચિંથિય જાણ સમુપ્પજિગત્થા) હમ પ્રકાર કે આશ્યામિષ ચિન્તિત,

આગમન થયુ ત્યાંથી ગયું હતીને ‘ જાણ પરિણા પઢિગયા ’ સમા વિશ્લેષિત
થઈ, -ત્યાં સુધીનુ થયેન ત્યાંથી આગળ મુજબ જવનુ કરવુ “ તર્ણ ” ત્યારે
મુખા વિશ્લેષિત થઈ ત્યાર બાદ સત્ત ત્વદયસ્સ ઝળગારસ્સ ” તે ૨૩ થકે
અવગણને ‘ ઝળગયા કયાઈ ” કા- જોકે પ્રથમે ‘ પુનર્રતાપરત્તકાલસમ
યસિ ’ રાત્રિના પાછલા ભાગે (મધ્ય રાત્રિ પછી) “ ચમ્મજાગરિય જાગરમા
ણસ્સ ” ધર્મજાગરણુ કરતા આ પ્રકારનો મનોગત વિચાર ઉત્પન્ન થયો (રાત્રિના
આગલા ભાગને પૂર્વરાત્રિ અને પાછલા ભાગને અપરરાત્રિ કહે છે પૂર્વરાત્ર
અને અપરરાત્ર રૂપ જે કાળ સમય છે તેને ‘ પૂર્વગત્રાપરરાત્ર કાલ સમય ”
કહે છે તે પ્રથમે-જોકે છે મધ્યરાત્રે અથવા પાછલી રાત્રે ધર્મને નિમિત્તે
જે યત્નરણુ કરાય છે તેને ધર્મ યત્નરણુ કહે છે) આ પ્રકારનુ ધર્મ યત્નરણુ
કરતા ૨૪-૨૬ અવગણને ‘ હમયારુવે અન્નસિય ચિંથિય જાણ સમુપ્પજિગત્થા ’

વિહર્તુમિતિ કૃત્વા એવં સંપ્રેક્ષસે સંપ્રેક્ષ્ય કલ્યં પ્રાદુષ્પ્રમાતાયાં યાવત્ જ્વલતિ યત્રૈવ મમાન્તિકં તત્રૈવ શીઘ્રમાગતઃ તન્નૂનં રક્ત્વક । અર્થઃ સમર્થઃ ? હન્ત અસ્તિ યથા સુખં દેવાનુપ્રિય ! મા પ્રતિવન્ધં કુરુ ॥ સૂ૦ ૧૫ ॥

ટીકા—‘તેણં કાલેણમ્’ ઇત્યાદિ “તેણં કાલેણ” તસ્મિન્ કાલે “તેણં સમણં” તસ્મિન્ સમયે “રાયગિહે નયરે” રાજગૃહે નગરે “સમોસરણં”

ખલુ અહમ્ ઇમેણં ય્યારુલ્લેણં તવેણં ઓરાલેણં વિઝલેણં તંચેવ જાવ કાલં અણવકલ્પમાણસ્સ વિહરિત્તે) મેં હસ પ્રકાર કે પૂર્વોક્ત ઉદાર વિપુલ આદિ વિશેષણ વાલે તપ સે વહુત દુર્બલ હો ગયા હં (યહાં સવ પહિલે જૈસા કહા ગયા હૈ—વૈસા કહ લેના ચાહિયે) અતઃ યાવત્ કાલ કી આકાંક્ષા કિરે વિના મેં પાદપોપગમન સંચારા કરૂં હસી મેં મેરા કલ્યાણ હૈ (ત્તિ કદ્દુ એવં સંપેહદ્—સંપેહિત્તા કલ્લં પાડપ્પમાયાં જાવ જલંતે જેણેવ મમં અંતિયે તેણેવ હવ્વમાગયે) હસ પ્રકાર વિચાર કર તુમ પ્રાતઃકાલ હોતે હી યાવત્ સૂર્ય કા પ્રકાશ ફેલતે હી જલ્દી મેરે પાસ આયે હો (સે જૂર્ણં સંદયા ! અદ્દે સમદ્દે ।) કહો હે સ્કન્દક ! યહ વાત સત્ય હૈ ન ? તવ સ્કન્દક કહતે હૈં (હંતા અત્થિ) હાં ભદન્ત ! યહ વાત સચ હૈ (અહાસુહં દેવાણુપ્પિા મા પહિવંધં કરેહ) હે દેવાનુપ્રિય ! તુમ્હેં જૈસે સુખ હો વૈસા કરો । શુભ કાર્યમેં વિલમ્બમત ॥ સૂ૦ ૧૪ ॥

ટીકાર્થ—‘તેણં કાલેણં તેણં સમણં’ ઉસ કાલ ઓર ઉસ સમય મેં (રાયગિહે નયરે) રાજગૃહ નગર થા વહાં (સમોસરણં) ભગવાન્ મહાવીર

તં ચેવ જાવ કાલં અણવકલ્પમાણસ્સ વિહરિત્તે) હુ આ પ્રકારના પૂર્વોક્ત ઉદાર, વિપુલ આદિ વિશેષણોવાળા તપથી ધણે જ દુર્બળ થઈ ગયો છું.—અહીં સમગ્ર આગળ કહ્યા પ્રમાણે સ્કન્દકના સંકલ્પ વર્ણન કરવાનું છે—મરણની અપેક્ષા રાખ્યા વિના હું પાદપોપગમન સંચારો કરું ત્યાં સુધીનું પૂર્વોક્ત કથન અહીં સમજી લેવું તેમાં જ માફ કર્યાણુ છે, (ત્તિ કદ્દુ એવં સંપેહદ્—સંપેહિત્તા કલ્લં પાડપ્પમાયાં જાવ જલંતે જેણેવ મમં અંતિયે તેણેવ હવ્વમાગયે) આ પ્રકારનો સંકલ્પ કરીને પ્રાતઃકાળ થતા જ અને સૂર્યનો પ્રકાશ ફેલાતાજ તમે જલ્દી મારી પાસે આવ્યા છો—(સે જૂર્ણં સંદયા ! અદ્દે સમદ્દે) હે સ્કન્દક ! મારી વાત સાચી છે ને ? ત્યારે સ્કન્દકે કહ્યું—(હંતા અત્થિ) હે ભદન્ત ! આપની વાત સાચી છે. (અહાસુહં દેવાણુપ્પિયા મા પહિવંધં કરેહ) ભગવાન મહાવીરે તેમને કહ્યું હે દેવાનુપ્રિય ! તમને રુચે તે ન કરો શુભ કાર્યમાં વિલંબ કરવો જોઈએ નહીં ॥ સૂ૦ ૧૫ ॥

ટીકાર્થ—વિવેચન—“તેણં કાલેણ તેણં સમણં” તે કાળે અને તે સમયે “રાયગિહે નયરે” રાજગૃહ નગરમાં “સમોસરણ” ભગવાન મહાવીરનું

રૂપેણ વિધાર' સમુદયયત, 'અહં દમેણં યયાસ્વેણં ઓરાલેણં" અહમનેનૈતદ્રૂપેણ ઉદારેણ 'જાય ક્ષિસે ધમણિ સતપ જાણ' યાત્ત્ કુશા ધમનીસતત્તો માતોડસિ, અત્ર યાવત્પદેન વિપુલેન પ્રયત્નેન પ્રગૃહીતેન ફલપાણેન શિવેન ધ-યેન મંગલ્યેન સમીકેણોદગ્રેણોદાસેનાત્તમનોદારેણ મહાનુમાયેન તપ ગર્મયા શુદ્ધો રૂસો નિર્માસોડસ્થિચર્માવનન્દઃ કિટિકિટિષા ભૂત ઇતિ પર્યંતવિશ્લેષણાનાં પ્રહણ મમતિ । "જીવ જીવેણ ગચ્છામિ" જીવો જીવેન ગચ્છામિ । જીવચલેન ગમનાદિ ક્રિયાં કરોમિ ન તુ શરીરચલેનેતિ "જીયં જીવેણ ચિદ્વામિ" જીવો જીવેન તિષ્ઠામિ "જાવ ગિલામિ યાવત્ સ્લાયામિ । યત્ર યાવત્પદેન ભાષાં માપિતરાડપિ સ્લાયામિ

અપાન હી શાશ્વતસિદ્ધિપદ કા હાયક હે) હમ તરદ્દ બી દહતાસ્પ સે યુક્ત હોને કે કારણ તથા બાહિર અમીતક પ્રકાશિત ન કરને કે કારણ વહ મનોગત કહા ગયા હૈ । હસ પ્રકાર કે ચિન્તાર ઉત્પન્ન હોને કે કારણ અપા યા-સો સૂત્રકાર હસ ધાત કો સ્પષ્ટ કરતે છુપ કહતે હું-અન સ્કન્દક અનગાર ને જય દેસ્વા કિ "અહં દમેણં યયાસ્વેણં ઓરાલેણં જાય કિસ ધમણિસતપ જાણ' મં હસ ૨ પ્રકાર કે ઉદાર આદિ પૂર્વોક્તિ વિશેષણોં બાલે તપ સે કુશ હો ગયા હૈ, શરીર કી સમસ્ત ધમનિકોં-નાહિયોં કા સમૂહ બાહર મેં પિલકુલ સ્પષ્ટ નજર લગા હૈ । (જીવ જીવેણ ગચ્છામિ) શારીરિક ધલ તો ક્ષીણ હો ગયા હૈ મં આત્મા કે હી ધલ સે ચલતા હૈ ઓર (જીવ જીવેણ ચિદ્વામિ) આત્મા કે હી ધલ સે ટહરતા હું, શરીર ધલ સે ન ચલતા હું ઓર ન ટહરતા હું (જાય ગિલામિ) યાવત્ જય મેં બોલ્સે ૨ બી ગ્લાનિયુક્ત હો જાતા હું (ધોલના પહેગા) એમા સમક્ષકર મી સ્થાનિયુક્ત હો જાતા હૈ ઓર જૈસે સૂચે કાષ્ટ સે મૂચે પત્તો સે સૂચી તિલ-

મત્સ્યાખ્યાન શાશ્વત સિદ્ધિપદ અપાવનાર છે" તે પ્રકારની ૬૬ મહાથી મુખ્ય ઠોવાને કારણે તથા તે વિચાર હલ ઠોળની સમક્ષ પ્રકટ કરવામાં આવ્યો ન હતો તેથી તેને મનોગત કહેવામાં આવેલ છે આ પ્રકારના વિચાર અપવાદ કારણ થા હતું ? સૂત્રકાર કહે તેનું કારણ બતાવે છે-“અહં દમેણં યયાસ્વેણં ઓરાલેણં જાય કિસે ધમણિસતપ જાણ" સ્કન્દક અણુપારે અપારે બેધુ કે આ પ્રકારના વિચાર આદિ પૂર્વોક્ત વિશેષણો વાળા તપથી માફ શરીર દબાજ થઈ પડ્યું છે શરીરની બધી નસોના સમૂહ બહારથી પૂરે પૂરે દેખાવા લાગ્યો છે "જીવ જીવેણ ગચ્છામિ" માફ શારીરિક બળ કીજુ અધ ગમ્યું છે પણ હું આત્માના બળથી ચાલું છું "જીવ જીવેણ ચિદ્વામિ" આત્માના બળથી જ સ્થિર રહી શકે છે એટલે કે શારીરિક બળથી શરીરનું હલનચલન આદિ થતું નથી. "જાય ગિલામિ" બાલતાં બાલતાં પણ આત્મા

સમુપજ્જિત્યા ” યાવત્ સમુદપદ્યત, અત્ર યાવત્પદેન કલ્પિતઃ પ્રાર્થિતો મનોગતઃ
સંકલ્પઃ इत्यस्य ग्रहणं भवति तेन आध्यात्मिकः, चिन्तितः, कल्पितः, प्रार्थितः,
મનોગતઃ સંકલ્પઃ, इति संग्रहो भवति । तत्र आध्यात्मिकः, अहं भक्तप्रत्याख्यानं
કરોમીતિ—આત્મગતઃ—અંકુર इव समुत्पन्नः । ‘ चित्ति ए ’ चिन्तित —स एव पुनः
પુનઃ વિચારઃ સ્મરણરૂપો વિચારઃ દ્વિપત્રિત इव । ‘ कप्पि ए ’ कल्पितः—भगवदाज्ञा
પુરસ્સરભક્તપ્રત્યાખ્યાનકરણેચ્છારૂપો વિચારઃ પલ્લવિત इव । ‘ पत्थि ए ’ प्रार्थितः
ભક્તપ્રત્યાખ્યાનાર્થે ભગવદગ્રે પ્રાર્થનારૂપો વિચારઃ પુષ્પિત इव “मणोगए संकप्पे”
મનોગતઃ સંકલ્પઃ ‘ इदमेव भक्तप्रत्याख्यानं शाश्वतसिद्धिपददायकम् , इति दृढ-

कल्पित प्रार्थित और मनोगत संकल्प उत्पन्न हुए । आध्यात्मिक आदि
વિશેષણોં કી સાર્થકતા યહાં ઇસ પ્રકાર સે જાનના ચાહિયે—સ્કન્દક
અનગાર ને જલ એસા વિચાર કિયા કિ મેં “ ભક્ત પ્રત્યાખ્યાન કરૂંગા”
તલ ઇસ પ્રકાર કા યહ વિચાર અંકુર કી તરહ ડનકી આત્મા મેં
ઉત્પન્ન હુઆ, ઇસ લિયે વહ આત્મગત હોને કે કારણ આધ્યાત્મિક કહા
ગયા। પીછે યહી વિચાર લારંબાર હોને લગા અતઃ દ્વિપત્રિત કી તરહ યહી
વિચાર, ચિંતિત—સ્મરણરૂપ કહા ગયા । “ભગવાન કી આજ્ઞાપૂર્વક હી મેં
ભક્તપ્રત્યાખ્યાન કરૂંગા” ઇસ પ્રકાર સે વહી વિચાર ભગવદાજ્ઞાપુરસ્સર
ભક્તપ્રત્યાખ્યાનકરણેચ્છારૂપ વિશેષના લાલા હોને સે પલ્લવિત હુએ કી
તરહ કલ્પિત કહા ગયા। “ભક્તપ્રત્યાખ્યાન કે લિયે મેં ભગવાન કે આગે
પ્રાર્થના કરૂંગા” ઇસ પ્રકાર વહી વિચાર અધિક વિશેષતા લોલા
હોને સે પુષ્પિત કી તરહ પ્રાર્થિતરૂપ સે કહા ગયા। તથા યહ ‘ભક્તપ્રત્યા-

આ પ્રકારનો આધ્યાત્મિક, ચિન્તિત, કલ્પિત, પ્રાર્થિત અને મનોગત સકલ્પ
ઉત્પન્ન થયો હવે આધ્યાત્મિક આદિ વિશેષણોની સાર્થકતા બતાવવામા આવે
છે—સ્કન્દક અણુગારે ત્યારે એવો વિચાર કર્યો કે હું ઉપવાસના પ્રત્યાખ્યાન
કરીશ ” ત્યારે તે વિચાર અંકુરની જેમ તેમના આત્મામા ઉત્પન્ન થયો હતો,
તે વિચાર આત્મગત હોવાથી તેને માટે આધ્યાત્મિક વિશેષણ યોગ્ય છે પાછ-
ળથી તે વિચાર વારંવાર આવવા લાગ્યો તેથી દ્વિપત્રિતની જેમ એજ વિચાર
ચિંતિત—સ્મરણરૂપ કહેવાયો ભગવાનની આજ્ઞાપૂર્વક હું ઉપવાસના પ્રત્યાખ્યાન
કરીશ ” આ રીતે તે વિચાર ભગવાનની આજ્ઞા લઈને પ્રત્યાખ્યાન કરવાની
ઇચ્છારૂપ વિશેષતા વાળો બની જવાથી પલ્લવિત થયો હોય એવો બતાવથી
તેને કલ્પિત વિશેષણ લગાડયું છે “ ઉપવાસના પ્રત્યાખ્યાન માટે હું ભગવા-
નની સમક્ષ પ્રાર્થના કરીશ ” આ પ્રકારનો વિચાર વધારે વિશિષ્ટતાવાળો બન-
વાથી તેને પ્રાર્થિત વિશેષણ લગાડવામા આવ્યું છે. તથા “ આ ઉપવાસના

પુરિસકારપાકમે' ઉત્થાને કર્મે'શલં ધીર્યે પુરુષકારપરાક્રમઃ તથા 'જાણ ય મે ધમ્મા-
યરિણ ધમ્મોવ્વેસણ' ચાલુચ્ચ મે ધર્માચાર્યઃ ધર્મોપદેશકઃ 'સમણે મગથં મહાવીરે'
ભ્રમણો મગથાન્ મહાવીર ' જિણે ' જિન ' સુહસ્તી ' સુહસ્તી પુરુષવરગન્ધર્વ
સ્તી ' ચિહરણ ' ચિહરણિ । એતથિન્તનં મગવત્સાસિયો વિધિર્મહાફલો મવિપ્પતિ
હસ્યમિમાયેણ કુટ મનેનેતિ । અથવા મગવન્નિર્વાણે શ્લોકદુ સ્વમાઝન મા ધૂમહમ્
હસ્યમિમાયેણ ચિન્તિતમનેનેતિ । તાવતા મ સેયં' તાવતા મમ ધેયઃ તાવદેવ મમ
ધેયસ્કર હિતકરમિત્યર્થઃ । યત્ 'કલ્લ' કરુપમ્-આગામિનિદિને ' પાઠ્ઠમાયા
યાણ માઠુપ્પમાતાયામ્ માઠુર્મવિષ્વત્પ્રમાતાયામ્ ' રણિણ ' રજન્યા માઠ'
ફાલે હત્યર્થઃ

‘ ફુલ્લુપ્પલકમલકોમલુમ્મિલિયમ્મિ ’ ફુલ્લોત્પલકમલકોમલોન્મીલિયે
ફુલ્લં સામાન્યતયા વિવસિતં તત્ત્વત્ ઉત્પલંવેસિ ફુલ્લોત્પલમ્ તત્ત્વ તયા કમલક-

ધીર્ય હૈ, પુરુષકાર હૈ, પરાક્રમ હૈ । ફલિયે “ત જાણ તા મે અલ્પિ ઠહા
ણે, કમ્મે વહે, ધીરિણ, પુરિસકારપરકકમ ” અતતક મુક્ત મેં યે સજ
હત્થાન કમ, વલ ધીર્ય, પુરુષકાર, પરાક્રમ વને હુણ હૈ, ઔર ‘જાણ ય મે
ધમ્માયરિણે ધમ્મોવ્વેસણ ” અતતક મેરે ધર્માચાર્ય ધર્મોપદેશક
“સમણે મગથ મહાવીરે ” અમણ મગથાન્ મહાવીર જિનસુહસ્તી
-ગરહસ્તી કે સમાન ચિહર રહે હૈ “તાવતા મે સેયં ” તત્ત્વત
મેરે મિયે ઐયસ્કર હૈ કિ મેં “કલ્લં” આગામી દિન જપ કિ
“પાઠ્ઠમાયાણ રણિણ ” રાત્રિ પ્રમાણ કે પ્રકાશ સે યુક્ત હો જાયેગી
અર્થાત્ પ્રાત કાલ હો જાવેગા તથા “ફુલ્લુપ્પલકમલકોમલુમ્મિલિ
યામ્મિ ” અર્થ થઈ પ્રમાણ કમલ કે વગ્ર મિલિ જાય ઔર કમલ નામક

ફલે, ધીરિણ પુરિસકારપરકકમે ” કમ્મે હૈ । જાણ છે ધીર છે અને પુરુષાથ
પરાક્રમ પણ છે ‘ ત જાણ તામે અલ્પિ ઠહાણે, કમ્મે વહે ધીરિણ પુરિસકાર
પરકકમે ’ આં સુધી ગારામાં ઉત્થાન કમ્મે જાણ ધીર અને પુરુષાથ પરા
ક્રમ મોજૂદ છે અને ‘ જાણ ય મે ધમ્માયરિણે ધમ્મોવ્વેસણ ’ આં સુધી માણ
ધર્માચાર્ય ધર્મોપદેશક “ સમણે મગથ મહાવીરે ” જિનેન્દ્ર જાગવાન જ પદ
સ્તી સમાન મગથ જાગવાન મહાવીર વિજયાન ॥ ‘ તાવતા મે સેયં ” આં
સુધીમાં આ પ્રમાણે કરવામાં જ માફ કરવાળું છે “ કલ્લં ” આવતી કાલે
આરે ‘ પાઠ્ઠમાયાણ રણિણ ’ પ્રાત કાળ થાય (રાત્રિના અધેરાત્રની અંધારાએ
પ્રગાશ દેશાય) ‘ ફુલ્લુપ્પલકમલકોમલુમ્મિલિયમ્મિ ” આરે કમળ વગ્ર વિદેશી
જાય અને કમલ નામના ફરજીના જ ને કોમલ નવનો આરે વિદેશિત થાય,

ભાષાં ભાષમાણો ગ્લાયામિ ભાષાં ભાષિષ્યે इति ગ્લાયામિ इति “ જાત્ર એવામેવ અહંપિ ” યાવદેવમેવાહમપિ અત્ર યાત્રત્પદેન તદ્ યથા નામ કાષ્ઠશકટિકા તિલ-
શકટિકા માણ્ડશકટિકા ઇરણ્ડકાષ્ઠશકટિકા અંગારશકટિકા ઉષ્ણે દન્તાશુષ્કાસતી
સશબ્દં ગચ્છતિ સશબ્દં તિષ્ઠતિ इत्यંતસ્ય પદજાતસ્ય ગ્રહણં ભવતિ તદ્વદહમપિ
“ સસદ્ ગચ્છામિ ” સશબ્દં ગચ્છામિ । કાષ્ઠાદિપૂરિતશકટાદિવત્ અહમપિ સશબ્દં
ગચ્છામિ इत्यर्थः “ સસદ્ ચિદ્વામિ ” સશબ્દં તિષ્ઠામિ અસ્થિ સંઘર્ષજન્યશબ્દયુ-
ક્તસ્તિષ્ઠામીત્યર્થઃ “ તં અસ્થિતામે ” તદસ્થિતાવન્મે ‘ ઉદ્ઘાણે ’ ઉત્થાનમ્ તદેવ-
મપિ સર્વથા શારીરિકચરિતસ્યાપિ તાવન્મે ઉત્થાનાદિ ન સર્વથા ક્ષીણમિતી
“ કમ્મે વલે વીરિણ પુરિસકારપરકમે ” કર્મ વલમ્ વીર્યમ્ પુરુષકારપરાક્રમોઽસ્તિ
“ તં તાવતા મે અસ્થિ ” તત્ યાવત્ તાવત્ મે અસ્થિ “ ઉદ્ઘાણે વમ્મે વલે વીરિણ

ફલિયોં સે મિટ્ટી કે મોંડોં સે ભરી હુઈ ગાડી સ્વડ સ્વડ આવાજ કરતી
હુઈ ચલતી હૈં ઓર ઠહરતી હૈં (એવામેવ અહંપિ) ઉસી પ્રકાર સે મૈં બી
અસ્થિમાત્રાવશિષ્ટ હોને કે કારણ (સસદ્ ગચ્છામિ) ઉનકે સંઘર્ષ સે
હોને વાલે શબ્દ સે યુક્ત હોકર ચલતા હું ઓર (સસદ્ ચિદ્વામિ) શબ્દ
સે યુક્ત હોકર ઠહરતા હું ઇસ પ્રકાર સે યહ મેરે શરીર કી દગ્ગા હો
રહી હૈં અર્થાત્-મૈં શારીરિક વલ સે ઇસ સમય સર્વથા રહિત હો રહા હું
“ ફિર બી મુદ્ધ મેં ઉત્થાનાદિક કર્મ સર્વથા ક્ષીણ નહીં હુએ હૈં ” યહી
વાત દિશાને કે લિયે સૂત્રકાર કહતે હૈં કિ વે સ્કન્દક અનગાર વિચારતે
હૈં કિ ઇસ સ્થિતિ મેં બી અભીતક મુદ્ધ મેં “ તં અસ્થિ તા મે ઉદ્ઘાણે ”
ઉત્થાન હૈં “ કમ્મે, વલે, વીરિણ, પુરિસકારપરકમે ” કર્મ હૈં, વલ હૈં,

યુક્ત થઈ જાઉ છું “ જોલવુ પડશે ” એવા વિચારથી પણ મનમાં ગ્લાનિ
અનુભવું છું અને સૂકા કાષ્ઠ, સૂકા પાન, સૂકી તલ શિંગો, કે માટીનાં વાસણોથી
ભરેલી ગાડી જેમ ખટ-ખટ અવાજ કરતી ચાલે છે કે ખટ-ખટ અવાજ
કરતી ઉભી રહે છે “ એવામેવ અહંપિ ” એજ પ્રમાણે માગ શરીરમાં પણ
માત્ર હાડકાં જ હોવાને કારણે ‘ સસદ્ ગચ્છામિ ’ હું ખટ-ખટ અવાજ કરતો
ચાલુ છું- (હાડકાના ઘર્ષણથી તે અવાજ થતો હોય છે) “ સસદ્ ચિદ્વામિ ”
અતે ઉઠતા તથા બેસતા પણ ખટ-ખટ અવાજ થાય છે આ રીતે હું શારી-
રિક રીતે નિર્બળ થઈ ગયો છું, મારામાં શારીરિક શક્તિ તો બિલકુલ રહી
જ નથી છતાં પણ ઉત્થાન આદિ કર્મ કરવા જેટલી શક્તિ તો હજી પણ
બાકી રહી હતી તે બતાવવાને સૂત્રકાર કહે છે- “ ત અસ્થિ તામે ઉદ્ઘાણે ”
સ્કન્દક અણુગાર વિચાર કરે છે કે હજી પણ મારામાં ઉત્થાન છે, “ કમ્મે,

‘समण भगवं महावीरं’ भ्रमणं भगवन्तं महावीरं, ‘वन्दिता नमसिचा जाव प-
ज्जुवासिचा’ वन्दित्वा नमस्यित्वा यावत् शुश्रूषया विनयेन पर्युपास्य ‘समणे य
भगवया महावीरेणं’ भ्रमणेन भगवता महावीरेण ‘अम्मणुत्ताए’ अम्पनुत्तातः
आहूतः सन् ‘सयमेव पंचमहब्बयाणि आरोवेत्ता’ स्वयमेव पंचमहाव्रतानि
आरोप्य भगवतो महावीरस्याहामादाय पुनः स्वयमेव पंचमहाव्रतानि स्वीकृ-
त्वेत्यर्थः ‘समणा य समणीओ य त्वामेत्ता’ भ्रमणां य भ्रमणीष्व भ्रमपित्वा
‘तहाक्खेहि धेरेहि कडाहि सद्धिं’ तयारूपैः स्थितैः कृतादिभिः संस्तारक
सत्सित्तस्य रत्नैः सार्धम् ‘विपुलं पम्बयं सणियं सणियं वुद्धिचा’ विपुलं तदा-
क्यं परितः धनैः धनैः मन्दगया दूरस्थं अधिस्थं ‘मेघघणसंनिगासं’ मेघघन
संनिगाशं घनमेघसमूहं सान्द्रजलदसमानं कृष्णवर्णमित्यर्थः ‘देवसनिवायं’

भ्रमणं भगवान् महावीर को वंदन करके ‘नमसिस्ता नमस्कार करके
‘जाव पज्जुवासिस्ता’ यावत् शुश्रूषाद्वारा-विनयद्वारा उनको पर्युपासना
करके ‘समणेणं भगवया महावीरेण’ उन भ्रमण भगवान् महावीर से
पादपोषगमन संयारा चारण करने की अनुमति मांगू ‘अम्मणुत्ताए’ जब
वे इसे चरण करने की मुझे अपनी अनुमति दे देंगे तब मैं ‘सयमेव पंच
महब्बयाई आरोवेत्ता’ अपने आप पांच महाव्रतों को स्वीकार करके
(समणा य समणीओ य त्वामेत्ता) भ्रमण और भ्रमणों से क्षमापन
(क्षमत्तव्वामासणा) करके (तहाक्खेहि धेरेहि सद्धिं) फिर मैं तयारूप स्थ-
वितों के साथ कि जो (कडाहि) संस्तारक में स्थित मुनि के सहायक
होते हैं, उनके साथ (विपुलं पम्बयं) विपुलाच्छल-जल पर (सणियं
सणियं) घीरे २ चट्ट (वुद्धिचा) चढ़कर फिर मैं (पुडवीसिलापट्ठयं)
पेसे पृथिविसिलापट्टक कि जो (मेघघणसंनिगासं) काले मेघ के

वीरने वड्डु। करीने “नमसिस्ता” नमस्कार करीने “जाव पज्जुवासिस्ता”
जाने सेवा शुश्रूषा द्वाश-विनय द्वाश तेमणी पर्युपासना करीने “समणेणं
भगवया महावीरेण” ते भ्रमण भगवान् महावीर पासे पादपोषगमन संयारे
करवानी रत्न माणीस। ‘अम्मणुत्ताए’ तेज्जा ते भाटे अनुमति आपे ते
“सयमेव पंच महब्बयाई आरोवेत्ता” भारी जाते पाच महाव्रतो अचीकार करीने
“समणा य समणीओ य त्वामेत्ता” साथ तथा स भणीओनी साथे क्षमापना करीने
‘तहाक्खेहि धेरेहि सद्धिं कडाहि’ संयारे करवानी साथने सदाचर्य साथ जेवा
स्थविरानी साथे ‘विपुलं पम्बयं’ विपुलाच्छल जल पर ७५२ ‘सणियं सणियं
वुद्धिचा’ भीधे भीधे अरीस “पुडवीसिलापट्ठयं मेघघणसंनिगासं देवद्वानि

हरिणविशेष इति फुल्लोत्पलकमलौ तयोः कोमलमकठोरम् उन्मीलितम्-उत्पल
दलानां मृगनयनयोश्च उन्मीलनं यस्मिन् तत् तथा तस्मिन् फुल्लोत्पलकमलकोमलो
न्मीलिते 'अहा' अथेति रजनीविभातानन्तरं 'पंडुरे' पाण्डुरे-धवले प्रकाश-
युक्ते एतादृशे 'प्रभाए' प्रभाते सति तथा—'रक्तासोयप्पगासे' रक्ताशोक
प्रकाशे रक्ताशोकसदृशप्रकाशसंपन्ने पुनः 'किंसुय-सुयमुहगुजद्वारागसरिसे'
किंशुकशुकमुखगुजार्द्धरागसदृशे किंशुकरय पलाशपुष्पस्य शुकमुखस्य गुजार्द्धस्य
च रागेण सदृशः तुल्यस्तस्मिन् किंशुकशुकमुखगुजार्द्धरागसदृशे पुनः 'कमला-
गरसंडबोहए' कमलाकरपण्डबोधके कमलाकराः सरोवरादयस्तेषु ये पण्डाः=
कमलसमूहाः तेषां बोधको विकाशको यः स कमलाकरपण्डबोधकस्तस्मिन्
कमलाकरपण्डबोधके 'उट्ठियम्मि' उत्थिते उदिते 'सूरे' सूर्ये कथंभूते सूर्ये त
ब्राह्—'सहस्सरस्सिम्मि' सहस्रस्रमौ सहस्रकिरणधारके 'दिणयरे' दिनं करोति
यः स दिनकरस्तस्मिन् दिनकरे पुनश्च 'तेयसा जलंते' तेजसा ज्वलतिसति
यदा रात्रिरपगता भविष्यति अथ च तेजसा सूर्यः प्रकाशकरो भविष्यति तदनन्तरं,

हरिण विशेष के कोमल दोनों नयन खुल जायेगा और "अहा पंडुरे"
रात्रि के समाप्त होजाने के बाद जब वह प्रकाश से युक्त हो जावेगा तथा
—"रक्तासोयप्पगासे" लाल अशोक के जैसे प्रकाशसे युक्त, (किंसुय-
सुयमुह-गुजद्वारागसरिसे" किंशुक-पलाशपुष्प, शुकमुखतोते का मुंह
और गुंजा के आधे भाग के राग जैसे लाल 'कमलागरसंडबोहए'
सरोवर आदि में रहे हुए कमलों को विकसित करने वाले 'सहस्सरस्सि-
म्मि' हजारकिरणोंवाले 'दिणयरे' तथा दिवस को करने वाले, एवं,
'तेयसा जलंते' तेज से प्रकाशित ऐसे 'सूरे' सूर्य के (उत्थिए) उदित
हो जाने पर अर्थात् जब रात्रि व्यतीत हो जायेगी और सूर्य अपने तेज
से जब चमकने लगेगा तब उसके बाद 'समणं भगवं महावीरं वंदित्ता'

"अहापंडुरे" रात्रि पूरी થઇને न्यारे ते प्रकाशयुक्त થશે तथा "रक्तासोय-
प्पगासे" लाल अशोकना જેવા પ્રકાશથી યુક્ત, "કિંસુય-સુયમુહ-ગુજદ્વારાગસ-
રિસે" કિંશુક-પલાશપુષ્પ, શુકમુખ (પોપટનું મુખ) અને ચણીનીના 'અર્ધ-
ભાગનાં' જેવા લાલ, "કમલાગરસંડબોહએ" સરોવરોમાં રહેલા કમલવૃન્દોને
વિકસાવનાર "સહસ્સરસ્સિમ્મિ" હજાર કિરણોવાળો, "દિણયરે" દિવસ કર-
નારો, "તેયસે જલંતે" તેજથી પ્રકાશિત એવો "સૂરે" ઉત્થિય "સૂર્ય" ન્યારે
ઉદય પામશે ત્યારે-એટલે કે રાત્રિ વ્યતીત થઈ ગયા પછી ન્યારે સૂર્ય પ્રકા-
શવા લાગશે ત્યારે "સમણ ભગવ" વંદિત્તા "શ્રમણ ભગવાન મહા

‘एव सपेहेइ’ एवं सप्रेषते एष पूर्वोक्तप्रकारेण संप्रेषणे=विचारयति ‘सपेहिता’ समेक्ष्य पूर्वोक्तप्रकारेण विचार्य ‘कस्मै पाउप्पमाए रयणीए’ कस्मै पाउप्पमा-
तायां रजन्याम् प्रकाशयुक्तप्रभातमायायां रात्रीं आय जगंते’ यावत् उज्जित अत्र
यावत् पदेन रक्ताशोकप्रकाशे विशुद्धकामुन्वयुनर्गिरागमदने कमलाकरपण्ड
षोडशके उत्थिते सूर्ये सहस्ररश्मीं दिनकर ‘जणेव समणे भगव महावीरे’ वज्री
धमणो भगवान् महावीर ‘तेणेव’ तथैव ‘जाव पज्जुवासइ’ अत्र यावत् पदेन
चन्दते नमस्यति वन्दित्वा नमस्यित्वा धुधूपया विनयनं माञ्जलिपुत्रः। विविधभा
पर्युपासनया पर्युपासते।

स्कन्दपर्युपासनाकाण्डे भगवान् यस्म्यपति तदाह-त्वद्याह’ इत्यादि-
‘त्वद्याह’ स्कन्दक इति हे स्कन्दक इति एवं रूपेण संबोध्य ‘समणे भगव
महावीरे’ धमणो भगवान् महावीर ‘स्वदयं अणगार एव वयासी’ स्कन्दक-
निश्चय करक (सपेहेइ) ऐसा पूर्वोक्त रूप से विचार किया (सपेहिता),
ऐसा विचार करके (कस्मै पाउप्पमायाए रयणीए) वे आगामी दिवस
में जब कि रजनी प्रभात प्राय हो रही थी (जाव जयते) यावत् सूर्य
अपने तेज से कमल ने लग गयाथा उस समय (जणेव समणे भगव
महावीरेतेणेव जाव पज्जुवासइ) जहां भ्रमण भगवान् महावीर विराज
मान थे वहां आपे वहां आकर उन्होंने ने यावन् वनफी पर्युपासना की।

स्कन्दक अनगार जब भगवान् की पर्युपासना करने में लगे हुए थे
उस समय भगवान् ने जो उनसे कहा उसे प्रकट करते हुए सूत्रकार कहते
हैं—(समणे भगव महावीरे) भ्रमण, भगवान् महावीर, उस समय
उनको (स्वदयाह) हे स्कन्दक! इस रूप से संबोधित करते हुए (स्वदयं
अणगार) उन स्कन्दक अनगार को (एवं वयासी) इस प्रकार कहा—

स्कन्दक भगवान् भगवान् को प्रभाते निश्चय करीने “सपेहेइ” पूर्वोक्त ४
४५ वीं “सपेहिता” जेवे स ४४५ करीने “कस्मै पाउप्पमायाए, रयणीए”।
जीने दिवसे न्याहे रात्रि भसार थ, जने प्रातः काण थये, “जाव जयते”
न्याहे सूर्य पोताने प्रकाश होवाववां छाये। त्याहे “जणेव भगव, महावीरे,
तेनेव जाव पज्जुवासइ” तेजो न्या भगवान् महावीर प्रभु विशालमान, कत्त
त्या गथा जने त्या जेठने नमस्कारथी पशु पासना पयन्तनी विधि करी।
स्कन्दक भगवान् न्याहे भगवान् की पशुपासना करी रक्ता कत्त त्याहे
भगवान् तेभने जे वयने। कथा ते सूत्रकार नके करे छे—“समणे भगव
महावीरे” भ्रमण भगवान् महावीर त्याहे “स्वदयाह” के स्कन्दक जेठ
सु निपन करीने “स्वदय अणगार” स्कन्दक भगवान् “एवं वयासी”

દેવસંનિપાતમ્-દેવાનાં સંનિપાતઃ સમાગમો રમણીયત્વાત્ યત્ર સ દેવસંનિપાત
સ્તમ્ 'પૃથ્વીશિલાપટ્ટયં' પૃથિવીશિલાપટ્ટકં પૃથિવીશિલારૂપમાસનં 'પઢિલે-
હિતા' પ્રતિલેખ્ય 'દંભસંથારગં સંથરિત્તા' દર્ભસંસ્તારકં સંસ્તીર્ય 'દંભસંથારો
યગયસ્સ' દર્ભસંસ્તારકોપગતસ્ય 'સંલેહ્ણાદ્ધોસગાઙ્ગસિયસ્સ' સંલેખના-
જોપણાજુપિતસ્ય સંલિખ્યતે કૃશીક્રિયતે શરીરં કપાયશ્ચાનયા ઇતિ સંલેખન-
તપોવિશેષઃ તસ્યાસ્તપોરૂપાયાઃ જોપણા=સેવનં તથા જુષ્ટઃ યુક્તસ્તસ્ય 'ભક્તપાણ-
પઢિયાદ્ધિવિચ્ચયસ્સ' ભક્તપાનપ્રત્યાખ્યાતસ્ય=પ્રત્યાખ્યાતભક્તપાનકસ્ય 'પાઓ-
વગયસ્સ' પાદપોપગતસ્ય સ્વીકૃતપાદપોપગમનસંસ્તારકસ્ય 'કાલં અણવકંઠ્ઠ-
માણસ્સ' કાલમનવર્કાક્ષતઃ ઉપલક્ષણાત્ જીવિતમપ્યનિચ્છતઃ 'ત્રિહારિત્તે'
વિહૃત્તુમ્-શ્રેયઃઇતિ પૂર્વેણ સમ્બન્ધઃ 'ત્તિકદ્દુ' ઇતિ કૃત્વા=ઇતિ મનસિ નિશ્ચિત્ય

જેસા કૃષ્ણવર્ણવાલા હૈં ઓર (દેવસંનિવાયં) સુન્દરતા કે કારણ જિસપર
દેવોં કા સમાગમ હોતા હૈં ડસકી 'પઢિલેહિતા' પ્રતિલેખના કરકે
'દંભસંથારગં' ડસ પર દર્ભકે સંસ્તારકકો વિહ્વાઝ 'સંથરિત્તા' વિહ્વા-
કર 'દંભ સંથારોવગયસ્સ સંલેહ્ણા દ્ધોસગા ઙ્ગસિયસ્સ' મૈં ડસ પર
થૈઠ જાઝ ઓર રાગદ્વેપ સે રહિત ઘન કર મૈં કાંય ઇવં કપાય કો કૃશ
કરનેવાલી સંલ્લેખના કો આદર કે સાથ સ્વીકાર કરું ડસ સમય મૈં
'ભક્તપાણપઢિયાદ્ધિવિચ્ચયસ્સ' ચારોં પ્રકાર કે આહાર કા યાવજ્જીવ
પ્રત્યાખ્યાન કરું. ડસ તરહ 'કાલં અણવકંઠ્ઠમાણસ્સ' મૈં અપને
મરણ ઓર જીવન કી આશંસા સે રહિત હો કર 'પાઓવગયસ્સ'
પાદપોપગમન સંથારા ધારણ કરું-તો ડસીમૈં મેરા કલ્યાણ હૈં. 'ત્તિકદ્દુ'
ડસ પ્રકાર સે સ્કન્દક અનગાર ને ધર્મજાગરણા કરતે સમય અપને મનમૈં

ઘાયં" ત્યાં ચીડીને ડાળા મેઘના જેવા શ્યામ વર્ણુવાળા અને જેના પર દેવોના
સમાગમ થાય છે એવા સુદર પૃથ્વીશિલાપટ્ટકની "પઢિલેહિતા" પ્રતિલેખના
કરીને "દંભ સંથારગં" તેના ઉપર દર્ભને સંસ્તારક બિછાવીશ "સંથારિત્તા"
સંસ્તારક બિછાવીને "દંભસંથારોવગયસ્સ સંલેહ્ણા દ્ધોસગા ઙ્ગસિયસ્સ" તેના
પર બેસીશ અને રાગદ્વેષથી રહિત બનીને શરીર અને કપાયને ક્ષીણ કરનારી
સંલેખના (સંથારો) આદર સહિત અંગીકાર કરીશ. 'ભક્તપાણપઢિયાદ્ધિ-
વિચ્ચયસ્સ' ચારે પ્રકારના આહારને જીવન પર્યન્ત ત્યાગ કરવાના પ્રત્યાખ્યાન
કરીશ આ રીતે "કાલ અણવકંઠ્ઠમાણસ્સ" હું અને મારા જીવન અને મર-
ણની આશંસા રાખ્યા વિના "પાઓવગયસ્સ" પાદપોપગમન સંથારો અંગી-
કાર કરું તો તેમા મારું કલ્યાણ છે. "ત્તિકદ્દુ" ધર્મજાગરણ કરતી વખતે

માદુષ્પમાતાપાં યાત્ન જ્વન્તિ યત્રૈશ્વ મમાન્તિક તત્રૈવ ધીઘમાગત રૂપ યાત્ન
પદન ' રવળીષ્ ફુન્નુષ્પલકમ્પકામનુમ્મિલિયમ્મિ અદાવાંદુર પમાણ રવાસોય
પ્પગાસ કિંમુયમુપમુરંગુજટરાગસરિસ કમલાગરમરિસ કમલાગરસંહનોરુ ઉદ્ધિ
યમ્મિ સુરે સદમ્મરસ્સિમ્મિ ધિળયરે તજસા ' રૂપતપા મદ્ધણ મવતિ । 'સે જૂળં
સ્વદયા ' તન્નૂનં હ સ્કન્દક ! ' અદ્દે સમદ્દે ' અર્થઃ સમર્થઃ હ સ્કન્દક ! ત્વ
કિમયમર્થઃ સમર્થ સત્થ ? સ્કન્દકઃ કથયતિ 'હંતા અત્થિ-હત પ્રત્તિ યદ્ દેવાનુ-
પિયૈરુચ્ચતે સન્મથ સત્પમિતિ ।

તત્તો મગવાન્ કથયતિ ' અદામુહં દવાણુપ્પિયા ' યયા સુત્તં દવાનુપિય !
હ દવાનુપિય ! યયા સુત્ત યયા સત્ત સુર્વ મથત્ત તયા કુરુ ' મા પદિર્વંચ કરેદ '
મા પ્રતિવન્ચ કુરુ અથ શુભકાર્યે વિલમ્બ મા કુરુ સ્વયા સસ્તારકવિપય યદ્વચારિત
તન્ શીઘ્ર સમાચરતિ માત્ર ॥ ૧૫ ॥

મગધતા તીર્થકરણ તપોચિપયનુસાર સ્કન્દકોડનગારઃ કિં કૃતવાન્ રૂપાર
' તળ્યં સ રંદપ ' રૂપાદિ ।

મૂમ્મ-“તણ્ણ સે રંદપ અળગારે સમળેણં મગધયા મહા
વીરેણં અભ્મણુણાપ્પ સમાળે હદ્ધતુટ્ટ જાત્ત હિયપ્પ ઉદ્ધાપ્પ ઉદ્ધેદ્ધ,
હી યાત્ન સૂર્યકા પ્રકાશ ફેલ્લને પર મેરે પામ શીઘ્ર આપે હો । (સે જૂળં
પ્વંદયા ! અદ્દે સમદ્દે) તો કહો હે સ્કન્દક ! યહ યાત્ર મથ હૈ ન ? અથ
પ્રસુ કા રૂપ પ્રકાર કા કપન સ્કન્દક અનગાર ને સુના-તપ વે શોભે-
(હંતા અત્થિ) જાં મદ્ધન ! યહ આપકા કપન મર્થયા સત્થ હૈ । તથ
પ્રસુ ને સ્કન્દક અનગાર સે કહા- (અદામુહં દવાણુપ્પિયા ! મા
પદિર્વંચ કરેદ) હે દેવાનુપિય ! તુમ્હે જિમ પ્રકાર સે સુખ્વહો-તુમ બેસા
હી કરો કિન્તુ રૂપ શુભકાર્ય મેં વિલમ્બ મત્ત કાતો । અર્થાત્-સંચાર
કે ચિપય મેં બેસા તુમને નિશ્ચય કિયા હૈ બેમા હી પાદપોપગમનસપારા
કરકે અપના કરયાણ કરો ॥ ૧૫ ॥

લેગલ રૂપમાગ ' માત્રકાઝ યર્થા અને સૂર્યનો પ્રકાશ દેવાવવા જ તમે શીઘ્ર
મારી પાસે આવ્યા છો. 'સે જૂળં મથયા ! અદ્દે સમદ્દે' તો કહો, હે
સ્કન્દક ! તે પાત્ર આવી છે ને ? પ્રભુનું જોડું કથન આભળીને સ્કન્દક અપ
મારે કહ્યું, “ હતા અત્થિ ” હા, મદ્ધન ! આપનું કથન અથવા અન્ય છે-ત્યારે
પ્રભુએ સ્કન્દક અણુતારને કહ્યું 'અદામુહં દવાણુપ્પિયા ! મા પદિર્વંચ કરેદ' હે
દેવાનુપિય ! તમને જે રીતે મુજ ઉપર તેમ કહે આ શુભ કાર્યમાં વિલમ્બ
કરવો જોઈએ નહીં. જોડે છે તમે પાદપોપગમન સપારે રૂપનો જે નિર્ણય
કર્યો છે તે નિર્ણય અમરમાં મૂકીને તમારું કથન કરો ॥ ૧૫ ॥

मनगारमेवमवादीत्—‘ से णूणं तव खंदया ’ तन्नूनं तव हे स्कन्दक ! ‘ पुव्वत्ताव-
रत्तकालसमयंसि ’ पूर्वरात्रापररात्रकालसमये ‘ धम्मजागरियं जागरमाणस्स ’
धर्म जाग्रिकां जाग्रतः “ इमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्झित्था ” अयमेतद्वूपो
आध्यात्मिको यावत् समुदपद्यत इह यावत् पदेन चिन्तितः प्रार्थितः कल्पितो
मनोगतः संकल्पः, इतिग्रहणम् तदेव दर्शयति ‘ एवं खलु अहं इमेणं एयारूवेणं
तवेणं ओरालेणं विपुलेण तं चेव जाव कालं अणवकंखमाणस्स विहरित्तिए ’ एवं
खलु अहमनेनैतद्वूपेण तपसोदारेण विपुलेन तदेव यावत्कालमनवकांक्षतो विहर्तुम् ।
यावत् पदेन ‘ पयत्तेग ’ इत्यारभ्य ‘ पाओवगयस्स ’ इत्यन्तं पूर्वोक्तंसर्वं ग्राह्यम्
‘ त्तिकहु ’ इति कृत्वा ‘ एवं संपेहेसि ’ एवं संपेक्षसे ‘ संपेहित्ता ’ संपेक्ष्य
‘ कल्लंपाउप्पभायाए जाव जलंते जेणेव मम अंतिए तेणेव हव्वमागए ’ कल्ये

(से णूणं तव खंदया) हे स्कन्दक ! तुम्हें (पुव्वरत्तावरत्तकालसम-
यंसि) पूर्वरात्र और अपररात्र के समय में—जब तुम (धम्मजागरियं
जागरमाणस्स) धर्मजागरणा कर रहे थे तब (इमेयारूवे अज्झत्थिए
जाव समुप्पज्झित्था) यह इस प्रकार का आध्यात्मिक यावत् मनोगत
संकल्प उत्पन्न हुआ था कि—(एवं खलु अहं इमेणं एयारूवेणं तवेणं ओ-
रालेणं विपुलेणं तं चेव जाव कालं अणवकंखमाणस्स विहरित्तिए) मैं इस
प्रकार के तप से कि जो उदार, विपुल आदि विशेषणों वाला है उससे
बहुत दुर्बल हो गया हूं । अतः यावत् मरणाशंसा से रहित होकर मैं
पादपोषगमन संधारा करूँ तो इसी में मेरा कल्याण है । (त्तिकहु) सो
तुमने अपने मन में ऐसा निश्चय कर (एवं संपेहेसि) ऐसा विचार
किया है और ऐसा (संपेहित्ता) विचार करके (कल्ल पाउप्पभायाए
जाव जलंते जेणेव मम अंतिए तेणेव हव्वमागए) तुम प्रातः काल होते

आ प्रमाणे कहुं—“ से णूणं तव खंदया । ” हे स्कन्दक ! तमने “ पुव्वरत्ता-
वरत्तकालसमयंसि ” पूर्व अने अपररात्रिना समये “ धम्मजागरियं जाग-
रणस्स ” धर्मजागरण करती-वधते “ इमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्झित्था ”
ओवे आध्यात्मिक, चिन्तित, कल्पित प्रार्थित, मनोगत विचार थये डतो हे
“ एवं खलु अहं एयारूवेणं तवेणं ओरालेणं विपुलेणं तं चेव जाव कालं अणवकं-
खमाणस्स विहरित्तिए ” हु आ प्रकारना उदार, विपुल आदि विशेषणोथी युक्त
तपथी हुणं थय गये छुं त्याथी शङ्करीने ने-हुं मरणनी आङ्क्षा
राभ्या-विना पादपोषगमन संधारे डर-तो तेथी भाइ कल्याण थये सुधीने
सूत्रपाठ आगण प्रमाणे समण देवे। “ त्तिकहु ” तो तमे तमारा-मनभां
ओवे निश्चय करीने “ एवं संपेहेसि ” अ प्रकारना संकल्प कये छे (संपे-
हित्ता ओवे संकल्प करीने—“ कल्लं पाउप्पभायाए जाव जलंते जेणेव मम अंतिए

धीरस्स तहारूपाण थेराण आतिण समाइयमाइयाइ पकारस
अगाइ अहिज्जित्ता घट्टपुडिपुण्णाइ दुवालसवासाइ सामण
परियाणं पाउणिता मासियाए सलेहणाण अत्ताण धूसित्ता सट्ठि
भत्ताइ अणसणाए छेदिता, आलोइय पडिक्कत समाहिपत्ते
आणुपुव्वीए काल गण ॥ सू० १६ ॥

छाया-सतः ग्वलु म स्कन्दकोऽनगारः धमणेन भगवता महावीरेणाभ्यनुष्ठितः सत्
हृष्टस्तुष्ट यायवृद्धदय उस्थया ठसिष्ठति-अथाय धमणं भगवन्त महावीरं विष्ठरा
आदक्षिण दाक्षिणं करोति (कृत्वा पन्दते नमस्वति पन्दिस्वा नमस्विता स्वयमेव
पञ्चमहाप्रतापारापवति) भाराप्य धमणांश्च धमणीश्च समयति धमविष्ठा तथास्मै।

‘भगवान्’ तय कर के भार। सधारा के विषय में आज्ञा प्राप्त कर
स्कन्दक अनगार ने क्या किया-खो कहते हैं-(तण से) इत्यादि।

सुत्रार्थ—(तण) इस वं याइ (से पद्वण अनगारे) वे स्कन्दक
अनगार (भगवया महावीरण) भगवान् महावीर से (अभ्यनुष्ठाप स
माणे) अनुमति प्राप्त कर (हट्टपुड जाव हिण) बहुत अधिक दक्षिण
हुए, बहुत अधिक संताप सपन्न हुए यायत् बहुत अधिक विक्षिप्त
हृदयवाले हुए (उट्ठाण उट्टेइ) याइ में वे अपनी उत्थानशक्ति से उठे
(उट्ठित्ता समणं भगव महावीरं) उठकर उन्होंने ने भ्रमण भगवान्
महावीर को (तिस्सुतो आगाहिणपयाहिण करेइ करित्ता परइ
नमंसइ) प्रदक्षिणापूर्वक चढ़न किया नमस्कार किया (धंदिता नमसि
त्ता) धंदना नमस्कार करके (सयमेव) अपने आप फिर उन्होंने ने (पंच

तीथ कर भगवान् पासेधी सधारा भगवानी अनुज्ञा प्राप्त करीने स्कन्दक अब
गारे शु क्खु ते सूत्रकार कहे छे-“ तण से ” इत्यादि।

सुत्रार्थ—(तण) त्वाए आइ (से पद्वण अनगारे) ते स्कन्दक अब
आइ (भगवया महावीरण) भगवान् महावीरनी (अभ्यनुष्ठाप सामणे) अनु
मति भगवानी (हट्ट पुट्ट जाव हिण) अतिशय दय पाया, अतिशय सतुष्ट
क्या जाने तेभनु उदय प्रकुम्भित थयु (उट्ठाण उट्टेइ) पछी तेजो तेभनी
उत्थान शक्ति थी उठया (उट्ठित्ता समणं भगव महावीर) उठीने तेभने भ्रमण
भगवान् महावीरने (तिस्सुतो आगाहिणपयाहिण करेइ करित्ता परइ नमंसइ)
प्रदक्षिणा पूर्वक चढ़या करी नमस्कार कर्मा (धंदिता नमसित्ता)
चढ़या नमस्कार करीने (सयमेव) चोतानी आते व (पंचमहाप्र

उट्टिता समणं भगवं महावीरं तिवखुत्तो आयाहिण
 पयाहिणं करेइ--करित्ता वंदइ नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता सय-
 मेव पंच महव्वयाइं आरोवेइ, आरोवित्ता समणा य समणी
 ओय खामेइ, खामित्ता तहारूवेहिं थेरेहिं कडाइहिं सद्धिं विउलं
 पव्वयं सणियं सणियं दुरुहेइ दुरुहित्ता मेहघणसंनिगासं देव-
 संनिवायं पुढवीसिलावट्टयं पडिलेहेइ पडिलेहित्ता उच्चार-
 पासवणभूमिं पडिलेहेइ पडिलेहित्ता, दब्भसंथारगं संथरइ,
 संथरित्ता पुरत्थाभिमुहे संपलियंकनिसन्ने करयलपरिग्गहियं
 दसनहं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं कट्ठु एवं वयासी,
 नमोत्थुणं अरिहंताणं भगवंताणं जावसंपत्ताणं नमो-
 त्थुणं समणस्स भगवओ महावीरस्स जाव संपाविउकामस्स
 वंदामि णं भगवंतं तत्थगयं इहगए पासउ मे भगवं तत्थगए इह
 गयं ति कट्ठु वंदइ नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी
 पुठ्विं पि मए समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए सव्वे
 पाणाइवाए पच्चक्खाए जावजीवाए, जाव मिच्छादंसणसल्ले
 पच्चक्खाए जावजीवाए, इयाणिं पि य णं समणस्स भग-
 वओ महावीरस्स अंतिए सव्वं पाणाइवायं पच्चक्खामि
 जावजीवाए जाव मिच्छादंसणसल्लं पच्चक्खामि जावजीवाए
 एवं सव्वं असणपाणं खाइमं साइमं चउव्विहं पि आहारं
 पच्चक्खामि, जावजीवाए जं पि य णं इमं सरीरं इट्ठं कंतं
 पियं जाव मा फुसंतु त्ति कट्ठु एयं पि णं चरमेहिं उस्सास-
 नीसासेहिं वोसिरामि त्ति कट्ठु संलेहणा झूसणा झूसिए,
 भत्तपाणपडियाइक्खिए, पाओवगये कालं अणवकंखमाणे
 विहरइ, तएणं से खंदए अणगारे समणस्स भगवओ महा-

एवमवादीत् नमोऽस्तु खलु अहम्यो यावत् भगवद्भूषो संप्राप्तेभ्य नमोस्तु भ्रमणाय
भगवते महावीराय यावत् सप्ताप्तुकामाय वन्दे खलु भगवन्तं तत्र गतम् इहगतः
पश्यतु मां भगवान् तत्रगत इहगतमिति कृत्वा वन्दते नमस्पति वन्दित्वा
नमस्यित्वा एवमवादीत् पूर्वमपि मया भ्रमणस्य भगवतो महावीरस्याति ते सर्वे

करके पर्यकासन से बिराजमान हो गये। (करघलपरिगृह्यं वसनं
सिरसावतियं मन्त्रं अञ्जलिं कटु एव वयासी) पर्यकासन से बिराज
मान होकर दशानख सहित दोनों हाथों को अञ्जलि के रूप में जोड़कर
उन्हें मस्तक पर लगाया और लगा कर फिर इस प्रकार कहा
(नमोऽस्तु अरिहताण भगवताण जाव संपत्ताण) अर्हत भगवन्तों
को मेरा नमस्कार हो जो आदिकर यावत् सिद्धिगति नाम के स्थान
को प्राप्त हो चुके हैं तथा (नमोऽस्तु समणस्स भगवन्तो महावीरस्स
जाव संपाविठकामस्स) सिद्धिगति को प्राप्त करने वाले भ्रमण
भगवान् महावीर को मेरा नमस्कार हो। (वदामि णं भगवन्तं तत्थं
गयं इह गए) यहाँ पर रहा हुआ मैं वहाँ पर बिराजमान भगवान्
महावीर को मैं नमस्कार करता हूँ (पासउ मे भगवं तत्थगए इहगयति)
वहाँ बिराजमान भ्रमण भगवान् महावीर वहाँ रहे हुए मुझे देखें।
(सिद्धु वंदइ नमसइ) ऐसा कहकर उन्होंने ने भ्रमण भगवान् महावीर
को वंदना की—उन्हें नमस्कार किया (वेदिता नमसिस्ता) वंदना
नमस्कार करके (एव वयासी) फिर उन स्कन्दक अनगर ने ऐसा

वचिप-मन्त्रं अञ्जलिं कटु एव वयासी) पर्यकासने वेदीने इस नभ खडित
अन्ने दावेने अविधिपे वेदीने, तेमने भस्तक पर वेदीने तेमने आ
भगावे वेदीने—(नमोऽस्तु अरिहताण भगवताण जाव संपत्ताण) सिद्ध भति
प्राप्त करेनाइ अहं त भगवतोने भाश नमस्कार डे। (अदी सिद्धिगति
पयन्तने सभभ पाठ अहं कसे वेदीने) "नमोऽस्तु समणस्स भगवन्तो
महावीरस्स जाव संपाविठकामस्स" सिद्धिगतिने अविध्यभा प्राप्तकरेनाइ भ्रमण
भगवान् महावीरने भाश नमस्कार डे। "वदामि णं भगवन्तं तत्थं गयं इह गए"
अदी देखेदे हु त्थां बिराजता भगवान् महावीरने नमस्कार डे। १३ (पासउ
मे भगवं तत्थगए इह गयति) त्थां बिराजता महावीर भ्रमण त्थां रहा
रहा भते निदावे। (सिद्धु वंदइ नमसइ) आ भगावे कड़ीने तेमने सभभ
भगवान् महावीरने वंदना करी, नमस्कार कसे (वेदिता नमसिस्ता) वंदना
नमस्कार करीने (एव वयासी) आ भगावे वेदीने (पुर्वि वि मय समणस्स

स्थविरैः कृतादिभिः सार्द्धं त्रिपुलं पर्वतं शनैः शनैर्दूरो हति दूरुह्य मेघघनसं-
निकाशं देवसंनिपातं पृथिवीशिलापट्टकं प्रतिलेखयति प्रतिलेख्योच्चारप्रस्र-
वणभूमिं प्रतिलेखयति प्रतिलेख्य दर्भसंस्तारकं संस्तृणोति संस्तीर्य पौरस्त्या-
भिमुखः संपल्यंकनिपण्णः कर्गलपरिगृहीतं दशनखं शिरसावृत्तं यस्तकेऽजलिकृत्वा

महव्वयाहं आरोवेह) पांच महाव्रतों को स्वीकार किया (आरोवित्ता) पांच
महाव्रतों को स्वीकार करके (समणा य समणीओ य खामेह) श्रमण एवं
श्रमणियों आदिसे क्षमाग्ना (खमतखामणा) किया (खामित्ता) खमा कर
तहारुवेहि थेरेहि कवाइहिं सद्धिं) बाद में तथारूप स्थविरों के साथ,
कि जो संधारा करने वाले के सहायक होत हैं उनके साथ (विउलं पव्व-
यं) विपुलाचल पर्वत पर (सणियं सणियं) धीरे २ (दुरुहेइ) चढ़े
(दुरुहिता) वहां चढ़ कर (मेहघमसंनिगासं देवसंनिवायं पुढवी
सिलावट्टयं पडिलेहेइ) उन्होंने ने सान्द्र मेघ के समान वाले तथा
देवों के सन्निपात वाले पृथिवीशिलापट्टककी प्रतिलेखना की (पडिलेहि-
त्ता उच्चारपासवणभूमिं पडिलेहेइ) उसकी प्रतिलेखना करके फिर उन्होंने
ने उच्चारप्रस्रवण भूमि की प्रतिलेखना की (पडिलेहिता) उसकी प्रति-
लेखना करके फिर उन्होंने (द्वमसंधारगं संथरइ) पृथिवि शिलापट्टक
पर अपना दर्भका संधारा बिछाया। (संथरित्ता पुरत्थामिसुहे संपलियंक
निसन्ने) संधारा बिछाकर फिर वे उस पर पूर्व दिशाकी तरफ मुंह

याइं आरोवेह) पांच महाव्रतो अंगीकार कर्था (आरोवित्ता) पांच महाव्रतो
अंगीकार करीने (समणा य समणीओ य खामेह) तेमण्णे साधु अने साध्वी-
ओने भमतभामण्णा कर्था (खामित्ता तहारुवेहिं थेरेहिं कवाइहिं सद्धिं) त्थार
भाइ संधारे करनार साधुओने सहायइय थाय ओवा स्थविरान्नी साथे (विउलं
पव्वयं) विपुलाचल पर्वत पर (सणियं सणियं दुरुहेइ) धीमे धीमे आरो-
हण्ण कर्थुं (दुरुहिता) तेना उपर आरोहण्ण करीने (मा हघणसनिगासं
देवसनिवायं पुढवीसिलावट्टयं पडिलेहेइ) तेमण्णे मेघना जेवा कोणा वण्णवाणा
तथा देवाना समागम वाणा पृथ्वीशिलापट्टकनी प्रतिवेचना करी (पडिलेहिता
उच्चारपासवणभूमिं पडिलेहेइ) तेनी प्रतिवेचना कर्था पछी तेमण्णे उन्थार
प्रस्रवण्ण भूमिनी प्रतिवेचना करी (पडिलेहिता) तेनी प्रतिवेचना करीने तेमण्णे
(द्वमसंधारगं संथरइ) पृथ्वीशिलापट्टक पर दर्भाना संधारे बिछाव्यो (संथरित्ता
पुरत्थामिसुहे संपलियंकनिसन्ने) संधारे बिछावीने तेओ तेना पर पूर्वदिशाभां
मुण राभीने पर्थ करीने जेसी गया (कर्गलपरिगहियं दशनहं शिरसा

મૈરુચ્છવાસનિઃશ્વાસૈઃ વ્યુસ્પૃજામિ ઇતિ કૃત્વા સલેલ્લના ઓપના ઝુપિત મક-
પાનપ્રત્યાલપાતઃ પાદપોષગત કાલમનષકાસન્ બિહરતિ । તત્ સલ્લ સસ્કન્દ-
કોડનગાર* ધ્રમણસ્ય મગધતો મહાવીરસ્ય તથારૂપાણાં સ્થાવિરાણામતિકે
સામાયિકાદીનિ પદ્માદશાંગાન્યધીસ્ય બહુ પ્રતિપૂણાનિ દ્વાદશ વર્ષાભિ મામખ્ય

હું । (જ પિ ય નં હમે સરીરં હું કંત પિય જાવ કુસતુ સિકદુ પયં પિ
નં ચરમેહિં કસાસ નીસાસેહિં ઘોસિરામિ) તથા જો યહ મેરા શરીર
કિ જો મુક્તે પહિલે હૃદય થા કાન્ત થા પ્રિય થા યાવન્ હસે કિસી મી
પ્રકાર કે ઉપસર્ગે ઓર પરીપહ પીડિત ન કરેં હસ માલના સે મૈને
હસ કો સુરક્ષિત રહ્યા થા સો અય ચરમ ઉચ્છવાસ નિઃશ્વાસો સે-
અર્થાત્ મરને કે સમય મેં હસકો મી છોડતા હું (સિકદુ) હસ પ્રકાર
વિચાર કરકે તન સ્કન્દક અનગાર ને (સલેલ્લના ઘૂસણા ઘૂસિય)
કાવ ઓર કપાયકો કૃષ કરને ચાલી સંલેલ્લના કો આદર પૂર્વક ધારણ
કર લિયા । (મત્સપાણપહિયાદિક્ષિપ) મત્સપાણ કા પ્રત્યાલપાન
કર દિયા (પામોષગય કાલં અણયકલ્પમાણે વિહરહ) પાદપોષગમન
સંધારે મેં સ્થિર થન ગયે ઓર મરનાશંસા ઓર જીવિતાશંસા સે
પિલકુલ રહિત હો ગયે ।

(તપ્તે સે સ્વદ્ય અનગારે સમગ્રસ્ય મગધતો મહાવીરસ્ય તથારૂપાણા
ધેરાણં અતિષ્ઠ સમાધ્યમાદ્યાઈં દયકારસઅંગાઈં અહિગ્રિષ્ઠા ષટ્પહિ
પુણ્ણાઈં દુષ્કાલસવાસાઈં સામણ્ણવરિયાગ પાસણિયા) હસ પ્રકારે તન

નં હમે સરીરં હું કંત પિય જાવ મા કુસતુ પિ કદુ પયં પિ નં ચરમેહિં
કસાસ નીસાસેહિં ઘોસિરામિ) આ માફ શરીર કે જે પહેલાં મને ઈશ્વર
હતુ કાન્ત હતુ પ્રિય હતુ અને કાંઈ પ્રકારના પરીપહ અને ઉપસર્ગ તેને
મી । પહેલાંથી ન શકે એવી આવનાથી હું જે શરીરની રક્ષા કરતો હતો
હવે અશ્વ ઉચ્છવાસ નિઃશ્વાસો લેતી વખતે એકલે કે મરણ કાળે તેને પથ
હું ત્યાગ કરે છું (સિકદુ) આ પ્રમાણે વિચાર કરીને સ્કન્દક અણુપાય
(સંલેલ્લના ઘૂસણા ઘૂસિય) કાયા અને કપાયેને ધીલુ કરનારી સંલેલ્લના
(મંથારે) આદરપૂર્વક ધારણ કર્યો । (મત્સપાણપહિયાદિક્ષિપ) અણુપાય
આરે પ્રકારના આદરના પ્રત્યાલપાન કર્યો (પામોષગય કાલં અણયકલ્પમાણે
વિહરહ) પાદપોષગમન સંધારામા સ્થિર થઈ ગયા અને મરણની આશંકા
કે ઉપનની અકાશથી રહિત બની ગયા (તપ્તે સે સ્વદ્ય અનગારે સમગ્રસ્ય
મગધતો મહાવીરસ્ય તથારૂપાણાં ધેરાણં અતિષ્ઠ સમાધ્યમાદ્યાઈં દયકારસ
અંગાઈં અહિગ્રિષ્ઠા ષટ્પહિપુણ્ણાઈં દુષ્કાલસવાસાઈં સામણ્ણવરિયાગ પાસ
ણિયા) આ રીતે તે સ્કન્દક અણુપાયે અમણુ અગવન મહાવીરના એવા

પ્રાણાતિપાતઃ પ્રત્યાખ્યાતઃ યાવજ્જીવં યાવન્મિથ્યાદર્શનશલ્યં પ્રત્યાખ્યાતં
યાવજ્જીવમ્ इदानीमपिच श्रमणस्य भगवतो महावीरस्यांतिके सर्वं प्राणातिपातं
प्रत्याख्यामि यावज्जीवम् यावन् मिथ્યાदर्शनशल्यं प्रत्याख्यामि यावज्જીવम् एवं
सर्वमशनपानखादिमस्वादिमं चतुर्विधमप्याहारं प्रत्याख्यामि यावज्જીवम् यदपि
च खल्विदं शरीरम् इष्टं कान्तं मियं यावत् मा स्पृशन्तु इति कृत्वा एतदपि चर-

કહા- (પુર્વિવપિ મએ સમણસ્સ ભગવઓ મહાવીરસ્સ અંતિએ જાવજ્જી
વાએ સર્વં પાણાહવાએ પચ્ચક્ખાએ) મેં પહિલે ભી શ્રમણ ભગવાન્
મહાવીર કે સમીપ યાવજ્જીવ-જીવનપર્યન્ત સમસ્ત પ્રાણાતિપાત કા
પ્રત્યાખ્યાન કર ચુકા હું, (જાવ) યાવત્ (મિચ્છાદંસણસલ્લે પચ્ચ
ક્ખાએ જાવજ્જીવાએ) મૃષાવાદ સે લેકર મિથ્યાદર્શન શલ્યતક કા
ભી જીવનપર્યન્ત પ્રત્યાખ્યાન કર ચુકા હું (ઇયાણિં પિ ય ણં સમણસ્સ
ભગવઓ મહાવીરસ્સ અંતિએ સર્વં પાણાહવાએ પચ્ચક્ખામિ) અવ ભી
મેં શ્રમણ ભગવન્ત મહાવીર કે સમીપ સમસ્ત પ્રાણાતિપાત કા પ્રત્યા
ખ્યાન કરતા હું (જાવજ્જીવાએ) જીવન પર્યન્ત ઓર (જાવજ્જીવાએ)
જીવનપર્યન્ત હી (જાવ) યાવત્-મૃષાવાદ સે લેકર (મિચ્છા દંસણ
સલ્લં પચ્ચક્ખામિ) મિથ્યાદર્શન શલ્યતક કા પ્રત્યાખ્યાન કરતા હું
(એવં સર્વં અસણ-પાણ-ખાઈમં-સાઈમ ચરુવિહં પિ આહારં જાવ
જ્જીવાએ પચ્ચક્ખામિ) હસી પ્રકાર સે સમસ્ત અશન, પાન યાદ્ય જો
ચાર પ્રકાર કા આહાર હૈં ઉસકા ભી જીવન પર્યન્ત પ્રત્યાખ્યાન કરતા

ભગવઓ મહાવીરસ્સ અંતિએ જાવજ્જીવાએ સર્વં પાણાહવાએ પચ્ચક્ખાએ) મે
પહેલા પણુ શ્રમણુ લગવાન મહાવીરની સમક્ષ જીવનપર્યન્ત સમસ્ત પ્રાણાતિ-
પાતના પ્રત્યાખ્યાન કરેલાં છે (જાવ મિચ્છાદસણસલ્લે પચ્ચક્ખાએ જાવજ્જીવાએ)
મિથ્યાવાદથી લઈને મિથ્યાદર્શન શલ્ય પર્યન્તના પણુ જીવનપર્યન્તના મેં
પ્રત્યાખ્યાન કરેલાં છે. (ઇયાણિં પિ ય ણ સમણસ્સ ભગવઓ મહાવીરસ્સ અંતિએ
સર્વં પાણાહવાએ પચ્ચક્ખામિ) અત્યારે પણુ શ્રમણુ લગવાન મહાવીરની સમક્ષ
સમસ્ત પ્રાણાતિપાતના પ્રત્યાખ્યાન કરે છે - (જાવજ્જીવાએ) જીવનપર્યન્ત તે
પ્રત્યાખ્યાન કરે છે. (જાવજ્જીવાએ જાવ મિચ્છાદંસણસલ્લં પચ્ચક્ખામિ) મૃષા
વાદથી લઈને મિથ્યા દર્શન શલ્ય પર્યન્તના જીવન પર્યન્ત પ્રત્યાખ્યાન કરે છે
(એવં સર્વં અસણ-પાણ-ખાઈમં-સાઈમ ચરુવિહં પિ આહારં જાવજ્જીવાએ પચ્ચ-
ક્ખામિ) એજ પ્રમાણે સમસ્ત અશન, પાન, યાદ્ય અને સ્વાદ્ય, એ ચારે
પ્રકારના આહારનુ પણુ જીવનપર્યન્ત પ્રત્યાખ્યાન કરે છે (જે પિ ય

વિસર્પદ હૃદયઃ ઇત્યન્તપરજાતસ્ય મહર્ણં મવતિ “ઉદ્ઘાણ ઉદ્ઘે” ઉત્પયા ઉચિ
 “ઉદ્ઘિષા” ઉત્પાય “સમર્ણં મગચ્ચ મહાવીરચ્ચ” ધમણ મગચ્ચ મહા
 “તિક્ષ્ણુતો” ત્રિક્ષ્ણુ ત્રિવારચ્ચ “આયાહિણપયાહિણં કરે” આદસિણપદ
 કરોતિ ‘કરિષ્ણા વદ્ધ નમસહ વદિષ્ણા નમસિષ્ણા’ કુત્સા વદ્ધે નમસ્યતિ વન્નિ
 નમસ્પિત્વા “સયમેવ પંચમહધ્વયાઈ આરોધે” સ્વયમેવ પંચમહાવ્રતાન્ધારોપય
 સ્વીકરોતિ આરોધિષ્ણા આરોપ્ય “સમણાય સમણીઆય સ્વામે” ધમ્મણાંચ ધમ્મ
 સમયતિ ‘સ્વામિષ્ણા’ સમયિત્વા તદ્ધારુવેદિં ઘેરેદિં કરાદિં સદ્ધિં તથાસ્તુઃ સ્વા
 કુતાદિમિ સાર્દ્ધં વિઝલં ત્રિપુલ્લં પચ્ચયં પર્વતં ‘સણિય સણિય’ ધનૈઃ
 ‘દુકહે’ દુઃખેદિં વિપુલગિરિનામક પર્વત કુતાદિસ્થવિરે સહ મન્દગત્યા સ
 રાદિતિ ઇત્યર્થ ‘મેઘપણસાનિગાસં’ મેઘપનસંનિકાશ્ચ ધનમેઘસદૃશં કુલ્લવર્ષં ‘વે

અર ગયા ‘તપ વે હસી સમય ‘ઉદ્ઘાણ ઉદ્ઘે’ અપની હી ઉત્પાન ધાર
 સે હેઠે ઓર ‘ઉદ્ઘિષા’ ઉઠરુર ઉન્હોં વે ‘સમર્ણ મગચ્ચ મહાવીર તિક્ષ્ણુ
 આયાહિણપયાહિણ કરે’ શ્રી ધમણ મગચ્ચ મહાવીર પ્રભુ કો તો
 વાર પ્રદક્ષિણા પૂર્વક ‘વદ્ધ નમસહ’ વદ્ધના કી નમસ્કાર, કિ
 ‘વદિષ્ણા નમસિષ્ણા’ વદ્ધના નમસ્કાર કર ‘સયમેવ પંચમહધ્વયા
 આરોધે’ અગને આપ હી ધન્હોં ને પાંચ મહાવ્રતોં કો સ્વીકાર ક
 લિયા। ‘આરોધિષ્ણા’ પાંચ મહાવ્રતોં કો સ્વીકાર કરને કે વાદ ફિ
 ધન્હોં ને ‘સમણા ચ સમણીઆ ચ સ્વામે’ ધમણ ઓર ધમણોયોં સે
 સમતસામણા કિયા। ‘સ્વામિષ્ણા’ સમતસામણા કરકે ફિર કે
 ‘તદ્ધારુવેદિં ઘેરેદિં કરાદિં સદ્ધિં વિઝલં પચ્ચય સણિય સણિય દુકહે’
 વિપુલાચલ પર્વત પર ધન તથાસ્તુ કદાહ-સ્વધોરોં કે સાય

એજ વખતે ‘ઉદ્ઘાણ ઉદ્ઘે’ તેજો તેમની ઉત્પાનસક્રિયથી ઉડ્યા, અને
 “ઉદ્ઘિષા” ઉડાને ‘સમર્ણ મગચ્ચ મહાવીર તિક્ષ્ણુતો આયાહિણપયાહિણં કરે’
 તેમણે ત્રણ વાર પ્રદક્ષિણા પૂર્વક અમણુ અગવાન મહાવીરને “વદ્ધ નમસહ”
 વદ્ધના નમસ્કાર કર્યા વદિષ્ણા નમસિષ્ણા” વદ્ધના નમસ્કાર કરીને “સયમેવ
 પંચમહધ્વયાઈ આરોધે” પોતાની બાતે જ તેમના પાંચ મહાવ્રતો અગ્રીકાર
 કર્યા ‘આરોધિષ્ણા’ પાંચ મહાવ્રતોને સ્વીકાર કરીને તેમણે ‘સમણા ચ
 સમણીઓ ચ સ્વામે’ અમણુ અને અમણિયોથી (સાધુ આશ્વીને) અમતપ્પા
 મણાં કર્યા ‘સ્વામિષ્ણા’ અમતપ્પામણાં કરીને ‘તદ્ધારુવેદિં ઘેરેદિં કરાદિં
 સદ્ધિં વિઝલં પચ્ચય સણિય સણિય દુકહે” જે સ્થવિરે સદ્ધિજનના (સચારા)
 ની વિધિ કરાવવામા કુશળ ક્રિયા એવા સ્થવિરોને સાથે લઈને ખીમે ખીમે

पर्यायं पालयित्वा मासिक्या संनलेखमयाऽऽत्मानं जोषयित्वा षष्ठिभक्तानि अनश-
नेन छित्त्वा आलोचितप्रतिक्रान्तः समाधिप्राप्तः आनुपूर्व्यां कालं गतः ॥ सू० १६ ॥

टीका—“ तएणं से खंदए अणगारे ” ततः खलु स स्कन्दको-नगारः
“ समणेणं भगवया महावीरेण ” श्रमणेन भगवता महावीरेण “ अब्भणु
न्नाए समाणे ” अभ्यनुज्ञातः सन् “ हट्टतुट्टे जाव हियए ” हट्टतुट्ट यावद् हृदय
इव यावत् पदेन हट्टतुट्टचित्तानन्दितः प्रीतमनाः परमसौमनस्यितः वर्षवश

स्कन्दक अनगार ने श्रमण भगवान् महावीर के तथारूप स्थचिरो के
पास सामायिक आदि ग्यारह अंगों का अच्छी तरह से अध्ययन करके
पूरे चारह वर्षतक आमण्य पर्याय का पालन करके (मासियाए संलेहणाए)
एक मास की संलेखना से (अत्ताणं झूसित्ता) अपने आप को युक्त कर
के (सट्ठि भत्ताइं अणसणाए छेदेत्ता) साठ भक्तों का अनशन द्वारा
छेदन करके (आलोइयपडिक्कंते) एवं आलोचना तथा प्रतिक्रमण करके
(समाहित्ते) समाधि प्राप्त कर (आणुपुञ्जीए कालधम्मगए) क्रमशः काल-
धर्म को (मरणको) प्राप्त किया ॥ सू० १६ ॥

टीकार्थ—(तएणं से खंदए अणगारे समणेणं भगवया महावीरेण
अव्भणुन्नाए समाणे) इसके बाद अर्थात् संथारा करनेकी आज्ञाजब
स्कन्दक अनगार ने श्रमण भगवान् महावीर प्रभु से प्राप्त करली तब वे
स्कन्दक अनगार भगवान् की उस आज्ञा की प्राप्ति से अपने आप बहुत
ही अधिक हर्षित हुए ' उन्हें चित्त में इतना अधिक संतोष प्राप्त हुआ
कि कुछ कहा नहीं जा सकता उनका हृदय आनंदोल्लास से अत्यन्त

स्थचिरोनी पासे सामायिक आदि अगियार अंगोनुं सारी रीते अध्ययन कथुं
अने पुरां गार वर्षं सुधी श्रमणु पर्यायनु पावन करीने (मासियाए संलेह-
णाए) ओक मासना संथाराथी (अत्ताणं झूसित्ता) पोताने युक्त करीने (सट्ठि
भत्ताइ अणसणाए छेदेत्ता) साठ लङ्कोनु अनशन द्वारा छेदन करीने-ओट्ठे के
२६ उपवासो पूरा करीने (आलोइयपडिक्कंते) आलोचना तथा प्रतिक्रमण करीने
(समाहित्ते) समाधि प्राप्त करीने (आणुपुञ्जीए कालधम्मगए) क्रमशः काल-
धर्म पाभ्या-भरण पाभ्या ॥ सू० १६ ॥

टीकार्थ—“ तएण से खंदए अणगारे समणेण भगवया महावीरेण अब्भ-
णुन्नाए समाणे ” तयारे स्कन्दके अणुगारने श्रमणु भगवान् महावीरे संथारे
करवानी अनुज्ञा आपी तयारे तेमने मनमा धुण्णो न छर्षं थयो, तेमना चित्तमां
अवर्णुनीय संतोष थयो, अने तेमनु हृदय आनंदोल्लासथी परिपूर्णं थयं ग थुं

પસ્યાસૌ શિરસ્યાર્ત્તં તમ્ શિરસિ પરિભ્રમણયુક્તમ્ “ મસ્થપ અઞ્જલિં કુ”
 મસ્તકે અઞ્જલિં કૃત્વા પૂર્વોક્તમકારેણાઞ્જલિં મસ્તકે કૃત્વેત્યર્થઃ ૧૬૦ વપાસી”
 ૧૬ વક્ષ્યમાણમકારેણાવાદીત્ ઉક્તવાન્ । કિમુક્તવાન્ તત્રાહ “નમોત્પુર્ણ”
 ઇત્યાદિ । “નમોત્પુર્ણ અરિહંતાર્ણ મગધતાર્ણ જાવ સંપત્તાર્ણ” નમોઽસ્તુ સત્ત
 અર્હદ્ભ્યો મગધદ્ભ્યો યાવસ્તા પ્રાપ્તેભ્યઃ સિદ્ધિગતિનામકસ્થાનં ગતેભ્યો યાવત્પદેન
 “નમોત્પુર્ણ” ઇત્યસ્ય સર્વોઽપિ પાઠઃ સંગ્રાહઃ “નમોત્પુર્ણ સમણસ્ત મગધો
 મહાવીરસ્ત” નમોઽસ્તુ સ્વસ્તુ શ્રમણાય મગધતે મહાવીરાય ‘જાવ સંપાવિઙ્કામસ્ત’
 યાવત્ સંપાવિઙ્કામાય સિદ્ધિગતિનામધેયસ્થાનં પ્રાપ્તયે પ્રપતમાનાય “વદામિ ષં
 મગધત તત્યગય ઇદગય” વદે સ્વસ્તુ મગધન્ત તથગત સમવસરણેસ્થિતમિદગત
 ઇદેવ સ્થિતોઽહમિત્યર્થ “પામત મે મગધ તત્યગયે ઇદગય” પદ્યન્તુ માં મગ-

કે રૂપ મેં જાઢા કિ જિસસે વણોં હો નસ્વ આપસ મેં ૧૬ વૃસરે નહોં
 કે સાય મિલ જાવે-ફિર ઉસ અંજલિ કો વહોં ને મસ્તક કે પાસ સે
 દક્ષિણ કી ઓર સે લેકર તીન યાર ધુમાયા, ધુમાકર ફિર ડહોં ને ઉસ
 અંજલિ કો અપને મસ્તક-લલાટ કે પાસ રહ્યા-ઝોર ઇસ પ્રકાર સે
 ઉચ્ચારણ કિયા-ડહોંને કયા કહા સો કહા જાતા હૈ—(નમોત્પુર્ણ
 અરિહંતાર્ણ મગધતાર્ણ જાવ સંપત્તાર્ણ) યાવત્ સિદ્ધિગતિ નામક
 સ્થાન કો પ્રાપ્ત હુય અર્હત મગધતોં કો મેરા નમસ્કાર હો । (નમોત્પુર્ણ
 સમણસ્ત મગધો મહાવીરસ્ત) શ્રમણ મગધાન્ મહાવીર કો મેરા
 નમસ્કાર હો । (જાવ સંપાવિઙ્કામસ્ત) કયોં કિ ષે યાવત્ સિદ્ધિગતિ
 નામક સ્થાન કી પ્રાપ્તિ કરને વાલે હૈ । (વદામિ ષં મગધતં તત્યગય
 ઇદગય) યહાં પર રહા હુઆ મેં સમવસરણમેં સ્થિત ડન શ્રીશ્રમણ મગધાન્
 મહાવીરપ્રભુ કો વદના કરતા હુ (પામત મે મગધ તત્યગય ઇદગય)

ત્યાર પછી તેમણે પેતાના અબ્બલિજદ હસ્તોને મસ્તકની પાસેથી જમણી
 બાજુથી યાદ કરીને વદણા કરવા માટે ત્રણ વાર જુમાન્યા અને ત્યાર બાદ
 મસ્તક (લલાટ) ની પાસે અબ્બલિ રાખીને આ પ્રમાણે બોલ્યા—“ નમોત્પુર્ણ
 અરિહંતાર્ણ મગધતાર્ણ જાવ સંપત્તાર્ણ ” સિદ્ધિ ગતિ નામના સ્થાનમા વિરાજમાન
 અર્હત જમવતોને મારા નમસ્કાર હો । “ નમોત્પુર્ણ સમણસ્ત મગધો મહા
 વીરસ્ત શ્રમણ મગધાન્ મહાવીરને મારા નમસ્કાર હો । ‘ જાવ સંપાવિઙ્કા
 માસ્ત ’ શ્રમણાન્ મહાવીરને નમસ્કાર થા માટે કરે છે ? તેઓ સિદ્ધિગતિ
 પ્રાપ્ત કે વાના હોવાથી તેમને નમસ્કાર કરે છે । ‘ વદામિ ષં મગધતં તત્યગય
 ઇદગય ’ આ સ્થાને રહેલો હું સમીચરણમા વિરાજમાન શ્રીશ્રમણ જમવાન્
 મહાવીરપ્રભુને વદણા કરે છું (પામત મે મગધ તત્યગય ઇદગય) સમીચરણમાં

संनिवायं' देवसन्निपातं देवागमनस्थानं रमणीयत्वात् 'पृथ्वीसिलापट्टयं' 'पृथिवीशि-
लापट्टकम्' "पडिलेहेइ" प्रतिलेखयति "पडिलेहिता" प्रतिलेख्य प्रतिलेखनं कृत्वा
'उच्चारपासवणभूमिं पडिलेहेइ' उच्चारप्रस्रवणभूमिं प्रतिलेखयति "पडिलेहिता"
प्रतिलेख्य "दम्भसंधारगं सथरइ" दर्भसंस्तारकं संस्तृणोति "संधारित्ता" संस्तीर्य
'पुरत्थाभिमुहे' पोरस्त्याभिमुखः पूर्वाभिमुखः "संपलियकनिसन्ने" संपल्यक
निर्पणः पल्यङ्कासनेनोपविष्टः "करयलपरिगहियं" करतलपरिगृहीतम् करत-
लाभ्यां परिगृहीतम् "दसनहं" दशनखम् संयोजितद्वस्तद्वयस्य दशनखं भवति
"सिरसावत्तं" शिरस्यावर्त्तम् । शिरसि आवर्त्तः दक्षिणावर्त्तेनावर्त्तनं परिभ्रमणं

मन्दगती से यतनापूर्वक चढे कि जो कडाइ स्थविर सलेखना की
विधि संपादन कराने में कुशलमनि थे । वहाँ जाकर उन्होंने ने
'मेहघणसन्निगासं देवसन्निवायं पृथ्वीसिलावट्टयं पडिलेहेइ' काले
मेघ के जैसे वर्णवाले-काले पृथ्वी शिला पट्ट की जिमकी सुन्दरता
से आकृष्ट होकर जिस पर देव आने रहते थे प्रतिलेखना की । (पडि-
लेहिता (उसकी प्रतिलेखना करने के बाद फिर उन्होंने ने (उच्चार
पासवणभूमिं पडिलेहेइ) उच्चार प्रस्रवण योग्य भूमि की प्रतिलेखना
की । (पडिलेहिता) इस तरह जब उनका प्रतिलेखना का कार्य समाप्त
हो चुका-तब उसके बाद उन्होंने (दम्भसंधारगं सथरइ) दर्भ का
बंधारा बिछाया (संधारित्ता) बिछाकर फिर वे उस पर (पुरत्थाभिमुहे)
पूर्वदिशा की ओर मुँह करके (संपलियंकनिसन्ने) पद्मासन से बैठ
गये । बैठकर (करयलपरिगहियं दसनहं सिरसावत्तं मत्थए अंजलिं
कट्टुं एव वयासी) उन्होंने ने अपने दोनों हाथों को इस प्रकार से अंजलि

यतनापूर्वक, तेमण्णे विपुलायत्त पर्वत पर आरोहणं कर्तुं" त्यां जन्ने "मेह-
घणसन्निगासं देवसन्निवायं पृथ्वीसिलावट्टयं पडिलेहेइ" काला मेघना जेवा श्याम
वेणुवाणा, अने जेनी सुंदरताने कारण्णे हेवा पण्ण आकर्षाज्जिने त्या आवतां
हता जेवा पृथ्वीशिलापट्टकनी तेमण्णे प्रतिलेखना करी "पडिलेहिता" तेनी
प्रतिलेखना करीने "उच्चारपासवणभूमिं पडिलेहेइ" उच्चार प्रस्रवण्णे योग्य
भूमिनी प्रतिलेखना करी "पडिलेहिता" तेनी प्रतिलेखना करीने "दम्भ-
संधारग सथरइ" दर्भाने संधारे बिछाज्जे "संधारित्ता" संधारे बिछा-
वीने तेना पर "पुरत्थाभिमुहे" पूर्व दिशा त इ भुण्ण करीने "संपलियक
निसन्ने" पद्मासन करीने जेसी गया जे आसने जेभीने "करयलपरिगहियं
दसनहं सिरसावत्त मत्थए अंजलिं कट्टु एव वयासी" तेमण्णे तेमना जने
हाथ जेवी रीते जेडया के जेक-हाथना नण्ण भीम हाथना नण्णना स्थितिं उदे

प्रत्याख्यामि यावज्जीवम् " जाव मिच्छादंसणसत्तल पच्चक्खामि" यास्तु मिथ्या दर्शनश्चर्यं प्रत्याख्यामि " एव सच्चं भसणपाणत्ताइमसाइम चउच्चिहं पि आहार पच्चक्खामि जावज्जीवाए " एव सर्वमश्नपानत्तादिम चतुर्विधमप्याहारं प्रत्याख्यामि यावज्जीवम् " जं पि य णं इमं सरीरं इहं फलं पियं जाव फुसंतु " यद् यद् पि च खलु इदं शरीरमिष्टं कान्तं मियं यावत् स्पृशन्तु, इह यावत्पदेन "मशुनं" मनोग्रम् इत्यारभ्य ' परीक्षोवसगा ' परीपहोपमगा, इत्यन्तानां पशानां प्रश्नं कर्षण्यम् ' फुसंतु ' इति मा स्पृशंतु इति सम्बन्धः, ' पि फहु ' इति कृत्वा-इति विचार्य प्रयत्नेन परिपोषितम् " एण पि ण ' एतदपि खलु शरीरमपि "चरमेहि वस्सासनिस्सासेहि ' चरमेरत्तिमेः उच्छ्वास-निःश्वासेः "वोसिरामि" व्युत्सृजामि

भी मैं वन्हीं श्रमण भगवान महावीर की साक्षी पूर्वक समस्त प्राणानि पात का यावज्जीव-जय तक जीवन है तब तक-परित्याग करता हूँ (जाव मिच्छादंसणसत्तल पच्चक्खामि) यावत्-मृपायाद से लेकर मिथ्या दर्शन शरय तक के अठारह पापों का भी परित्याग करता हूँ। (एवं) इसी तरह से सव्य अस्त्रं, पाण, स्वाइम साइम चउच्चिहं पि आहारं पच्चक्खामि जावज्जीवाए) समस्त अशन का, पान का, प्राण्यका, और स्थायका इन चारों प्रकार के आहार का जीवन पर्यन्त के लिये त्याग करता हूँ। तथा- 'जं पि य णं इमं सरीरं इहं फलं पियं जाव फुसंतु' जो यह मेरा शरीर है कि जिसे मैंने पहिले इष्ट 'का-व' मिय आदिरूप में मान रखा था तथा इसे किसी भी परीपह आदि का स्पर्श न हो इस विचार से जिसे मैंने परिपालित किया था सो ' एव पि य ण चरमेहि वस्सासनिस्सासेहि ' अब इस शरीर को भी मैं चरम उच्छ्वास निः

वीरनी साक्षीके हूँ समस्त प्राणतिथाने। एवमप्यन्त त्याग ३३ ३ ' जाव मिच्छादंसणसत्तल पच्चक्खामि " मिथ्यादर्शन शरय पय तन्म अहारे पापस्थानेने। पण एवमप्यन्त परिस्थान ३३ ३ " एव " आ शीते ' सच्चं भसणं पाणं स्वाइम साइम चउच्चिहं पि आहार पच्चक्खामि जाव ज्जीवाए ' समस्त अशन पान, प्राण्य अने स्थाय्य के चारे प्रशरना आदा रने। एवमप्यन्त त्याग ३३ ३ तथा " जं पि य णं इमं सरीरं इहं फलं पियं जाव फुसंतु " भाहू आ शरीर के अने मे पदेतां छत्त, कान्त निव आदि भा यु दंतु अने तेने ठाई पण प्रशरनी पीज मदन करी न ३३ ते भाटे हूँ ध्यान राखतो अने अने ते प्रशारे तेनु परिपालन करतो अने। अने शरीरने। पण " एव पि य णं चरमेहि वस्सास निस्सासेहि ' चरम उच्छ्

वान् तत्र गत इह गतम् ज्ञानदृष्ट्या “ चि कट्टु ” इति कृत्वा, ‘ वंदइ नमंसइ ’
 वन्दते नमस्यति “ वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी ” वन्दित्वा नमस्यित्वा एवम
 वादीत् “ पुर्वि पि मए ” पूर्वमपि मया “ समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए ”
 श्रमणस्य भगवतो महावीरस्यान्तिके = समीपे “ सव्वे पाणाइवाए पच्चक्खाए
 जावज्जीवाए ” सर्वः प्राणातिपातः प्रत्याख्यातो यावज्जीवम् “ जावमिच्छादंसण-
 सल्ले पच्चक्खाए जावज्जीवाए ” यावत् मिथ्यादर्शनशल्यं प्रत्याख्यातं यावज्जी-
 वम् । अत्र यावत्पदेन ‘ मुसावाए पच्चक्खाए ’ इत्यारभ्य “ मायामोला पच्च-
 क्खाए ” इत्यन्तानां अष्टादशानां पापानां ग्रहणं कार्यम् ‘ इयाणिं पियणं ’ इदानी-
 मपि च खलु “ समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए श्रमणस्य भगवतो महावीर
 स्यान्तिके “ सव्वे पाणाइवाए पच्चक्खामि जावज्जीवाए ” सर्वं प्राणातिपातं

समवसरण में स्थित हुए वे भगवान् अपनी ज्ञानदृष्टिद्वारा यहां रहे
 हुए सुझे देखें । (चि कट्टु) ऐसा कहकर उन स्कन्दक अनंगारं ने
 (वंदइ नमंसइ) श्रमण भगवान् महावीर को वहां से वंदना की उन्हें
 नमस्कार किया (वंदित्ता नमंसित्ता) वंदना नमस्कार कर फिर उन्होंने
 (एवं वयासी) इस प्रकार से कहा—(पुर्वि पि मए समणस्स भग
 वओ महावीरस्स अंतिए) मैंने पहिले भी श्रमण भगवन महावीर
 के समीप (सव्वे पाणाइवाए पच्चक्खाए जावज्जीवाए) समस्त
 प्राणातिपातों का जीवन पर्यन्त त्याग कर दिया था (जाव मिच्छा
 दंसण सल्ले पच्चक्खाए जावज्जीवाए) यावत् मृषावाद से लेकर
 मिथ्यादर्शन शल्य तक के अठारह पापों का भी जीवन पर्यन्त त्याग
 कर दिया था । (इयाणिं पियणं समणस्स भगवओ महावीरस्स
 अंतिए सव्वे पाणाइवाए पच्चक्खामि जावज्जीवाए) अब इस समय

विराजता भगवान् महावीर तेमनी ज्ञानदृष्टि द्वारा अच्छी रહેला भने जेवे
 “ चि कट्टु ” ओ प्रभाणु कहीने ते स्कन्दक अणुगारे “ वदइ नमंसइ ” श्रमण
 भगवान् महावीरने त्याथी ज वदणु नमस्कार कर्था “ वंदित्ता नमंसित्ता एव
 वयासी ” वदणु नमस्कार करीने आ प्रभाणु जेदथा “ पुर्वि पि मए सम-
 णस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए ” ओ पड़ेला भगवान् महावीरनी सभक्ष
 “ सव्वे पाणाइवाए पच्चक्खाए जावज्जीवाए ” समस्त प्राणातिपातोनो एवन
 पर्यन्त त्याग कर्था हुतो “ जाव मिच्छादंसणसल्ले पच्चक्खाए जावज्जीवाए ”
 तथा मृषावादथी लखने मिथ्यादर्शन शल्य पर्यन्तना अठारे पापोनो ओ
 एवनपर्यन्त त्याग कर्था हुतो “ इयाणिं पियणं समणस्स भगवओ महावीरस्स
 अंतिए सव्वे पाणाइवाए पच्चक्खामि जावज्जीवाए ” अत्यारे पणु भगवान् महा-

विमत्ता "एकादशाङ्गायधीत्य" बहुपट्टिपुष्पाङ्ग "बहुपट्टिपूर्वनि" दुबालसवा-
साङ्ग "द्वादशवर्षाणि" समणपरियागं पाउणिष्ठा "आमण्यपर्याय पालसिक्का
"मासिपाए सलेहणाए" मासिपया संलेखनया "अवाणं वृत्तिष्ठा" आत्मानं
ओपयित्वा "सद्धिं भत्ताङ्ग अणसणाए छेदिता" पट्टि भक्तानि भनञ्जनेन छित्ता
"आलोइय पट्टिक्कते" आलोचितप्रतिक्रान्तः=आलोचितं गुरवे निवेदित यदति
चारजात सत्प्रतिक्रान्तम्=अवरणविपरीकृत यनासौ आलोचितप्रतिक्रान्तः स्वया
आलोचितध्यासौ आलोचना पापमयाक्षनालोचनामहणात् प्रतिक्रान्तमभिध्या-
दुपकृतदानात् । इति आलोचितप्रतिक्रान्तः । "समाद्विपत्ते" समाधिप्राप्तः शान्त
मिथः "आणुपुञ्जी" आनुपूर्व्या=क्रमेण 'कालंगए' कालगतः मरणं प्राप्तः ॥१६॥
भगवान् महावीर के (तहारुवाणं घेराण अंतिण) तथा रूपवाले स्वयिरी
के समीप (सामाइयमाइयाहं) सामाइक आदि (एक्करम अगाइ)
प्यारह अगों का (अद्विजिता) अच्छी तरह से अध्ययन करके (बहु
पट्टिपुष्पाङ्ग) ठीक (दुबालसवासाङ्ग) प्यारह वर्षतक (सामणपरियाग
पाउणिष्ठा) आमण्यपर्याय का पालन किया-उसे पालन करके (मासि
पाए सलेहणाए) एक मास की संलेखना द्वारा वन्दों ने 'अस्सार्णं वृत्तिष्ठा'
'अपनी आत्मा को युक्त करते हुए अर्थात्-लगानार-एक महिने
'तक संलेखना का पालन करते हुए 'सद्धिं भत्ताङ्ग अणसणाए छित्तिष्ठा'
भनञ्जान द्वारा साठ भक्तों का छेदन करके 'आलोइय पट्टिक्कते' गुरु के
समक्ष अपने अनिवारों के निवेदन करने से, उनसे फिर नहीं करने के
कारण प्रतिक्रान्त बन अथवा अपने पापों के प्रकाशन द्वारा युहीत मिथ्या
बुद्धि से आलोचित होकर प्रतिक्रान्त बन 'समाद्विपत्ते' शान्त चित्त
होकर 'आणुपुञ्जी' क्रमछा 'कालंगए कालधर्म को प्राप्त किया ॥१७॥
भगवान् महावीरना ते भजना स्थविशे पासे सामाइयमाइयाहं "आमावि
आदि 'एक्करमअगाइ" अजियाए अजोतु 'अद्विजिता" आरी रीते
अध्ययन करीने "बहुपट्टिपुष्पाङ्ग" पूरा "दुबालसवासाङ्ग" आर वषं बुझी
"सामणपरियागं पाउणिष्ठा" आमण्य पर्याय पालन क्यु तेनु पालन करे
"मासिपाए संलेहणाए" ओके भासना समाशायी "अवाणं वृत्तिष्ठा" पातानी
जतने सुछा करीने—"सद्धिं भत्ताङ्ग अणसणाए छेदिता" भनञ्जान द्वारा साठ
भक्त्येनु छेदन करीने (२६ उपवास पूरा करीने) 'आलोइय पट्टिक्कते'
शुद्धी समक्ष पातानी अतिथारो (बोयो) न निवेदन करीने जने जे रीते
तेनी आतोचना द्वारा प्रतिक्रान्त जनीने 'समाद्विपत्ते' शान्त चित्ते "आणु
पुञ्जी" अमथा 'कालंगए' कालधर्म प्राप्त ॥ १६ ॥

=परित्यजामि शरीरविषयं मोहमपि परित्यजामीति भावः “ त्तिकट्टु ” इति कृत्वा=इति परिचिन्त्य “ संलेहणा झूमणा झूसिए ” संलेखना जोषणा जुष्टः भक्तपाणपडियाइक्खिए ” भक्तपानप्रत्याख्यातः=प्रत्याख्यातभक्तपानः “ पाओवगए ” पादपोषगतः पादपोषगमननामकं संस्तारकं संप्राप्तः “ कालं अणवकंखमाणे विहरइ ” कालं मृत्युम् अनवकांक्षन् अनिच्छन् विहरति तिष्ठतीति। “ तएणं से खंदए अणगारे ” ततः खलु स स्कन्दकोऽनगारः “ समणस्स भगवओ महावीरस्स ” श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य “ तद्दहस्वाणां धेराणमतिए ” तथारूपाणां स्थविराणामतिके “ सामाडयमाइयाइ ” सामायिकादीनि “ एकारसअंगाइ अहि-

श्वास तक छोड़ता हूं। अर्थात् मैं शरीरविषयक मोह का भी परित्याग करता हूं। ‘त्तिकट्टु’ इस प्रकार मन में विचार कर ‘संलेहणा झूमणा झूसिए’ काय और कषाय की कृश करनेवाली संलेखना को स्वीकार लिया ‘भक्तपाणपडियाइक्खिए’ उन स्कन्दक अनगार ने भक्त पान का प्रत्याख्यान कर दिया और ‘पाओवगए’ पादपोषगमन नामक संधारे में स्थित हो गये। उस स्थिति में उन्होंने ‘कालं अणवकंखमाणे विहरइ’ अपने मरण की चाहना नहीं की, तात्पर्य कहने का यह है कि संलेखना में स्थित हुआ मुनि यदि अपने मरण की या जीवन की आशंका करता है-तो उसमें उसको अतिचार का पात्र होना पड़ता है। इसलिये यहां कहा गया है कि स्कन्दक अनगार ने पादपोषगमन संधारा धारण कर अपने मरण की आकांक्षा नहीं की अर्थात्-वह पादपोषगमन संधारा उनका बिलकुल निरतिचार था। (तएणं से खंदए अणगारे) इस तरह उन स्कन्दक अनगार ने (समणस्स भगवओ महावीरस्स) श्रमण

वास निश्वास पर्यन्त त्याग कर छु-ओटवे के ओ शरीरने मोह पण छोडुं छुं “ त्तिकट्टु ” मनमां ओवे विचार करीने “ संलेहणा झूमणा झूसिए ” काया अने कषायेने क्षीण करनार संधारे कये। “ भक्तपाणपडियाइक्खिए ” तेमणे थारे प्रकारने आहारने त्याग कये “ पाओवगए ” पादपोषगमन नामने संधारे कये ओ स्थितिमा तेमणे “ काल अणवकंखमाणे विहरइ ” पोताना भरणुनी पण आकाक्षा राणी नडीं. कारण के संधारे करनार मुनि ओ पोताना भरणुनी के उपननी आकाक्षा राणे तो तेने अतिचार दोष लागे छे. तेथी ओ अडी कहु छे के स्कन्दक अणुगारे पादपोषगमन संधारे करीने पोताना भरणुनी आकाक्षा करी नडीं. ओ रीते तेमने पादपोषगमन संधारे अतिचार दोषथी रहित छेते “ तएण से खंदए अणगारे ” आ रीते ते स्कन्दक अणुगारे “ समणस्स भगवओ महावीरस्स तद्दहस्वाणां धेराणं अतिए

पायीस सागरोधमाहृ टिहृ पणत्ता से णं भत्त सन्दग दयताओ
 देवलायाओ आउक्खवाणं भयक्खण्ण टिहृक्खण्ण अणत्त
 च णं चट्ठत्ता कहिं गच्छिहिहृ कहिं उययज्जिहिहृ गोयमा महा
 धिदहे पासे सिद्धिहिहृ बुद्धिहिहृ मुच्चिहिहृ परिणि-याहिहृ
 सव्वदुक्खाण अत्त करोहिहृ ॥ सू०१७ ॥

॥ धिनियसयस्स पढमो उदेसा समत्तो ॥ २ ॥

छाया—ततः गच्छतं तस्यैव भगवतः सन्द्गमनमारं कास्यगतं द्वारा
 परिनिर्वाणवृत्तिं कायोत्सर्गं कर्तव्यं कृत्वा पापभीषाणि वृद्धाणि वृद्ध्या विपु
 लात् पर्ययात् क्षुभैः क्षुभैः प्रत्यक्षोक्तिं प्रत्यक्षं यत्नीय भ्रमणो भगवान् महावीर
 स्तर्पणपागच्छति उपागत्य भ्रमणं भगवन् महावीरं पश्यन् तस्यैव पश्चिन्ता

‘तण्णसे’ इत्यादि ।

सुप्रार्थ—(तण्ण) इस के बाद (से धेरा भगवान्) उन स्व-
 पीर भगवन् को न (चट्ठ अणगार) चट्ठ अणगार को (कासगत
 जागित्ता) कासगत जान कर (परिनिष्वाणवृत्ति काउत्सर्ग
 करेति) उनके परिनिर्वाण निमित्त कायोत्सर्ग किया
 (करिता पत्तभीषाहं गिण्हति) कायोत्सर्ग करके फिर उन्होंने पात्र और
 पीषा का-चट्ठों को किया (गिण्हिता) लेकर फिर वे (विपुलाओ
 पक्खपाओ) उस विपुल वर्णन से (सणियं सणिय) पीर २-ईषावपणो
 धन करते हुए मन्दगति से (पगारुहति) नीचे उतरे । (पच्चोरुहिता)
 नीचे उतर कर (जेजेय समणे भगव महावीर सेजेय उपागच्छति)

“तण्ण से” इत्यादि ।

सुप्रार्थ—(तण्ण) त्वात्तं वाच्यं (त धरा भगवता) ते स्वनिर्वाणवृत्ति
 अर्थं के (चट्ठ अणगार) चट्ठ अणगार (कासगत जागित्ता) कासगत
 जागित्ता ॥ ते अण्णोने (परिनिष्वाणवृत्ति काउत्सर्ग करेति) तेभ्यो तेभ्यो
 परिनिर्वाण निमित्त कायोत्सर्गं कर्तव्यं (करिता पत्तभीषाहं गिण्हति) अथ
 त्वात्तं कर्तव्यं तेभ्यो तेभ्यो पात्र अने पत्रो वीषा (गिण्हिता) ते अण्णोने
 तेभ्यो (विपुलाओ पक्खपाओ) विपुलाओ पक्खपाओ (सणियं सणिय) भगव
 अतिथी (पगारुहति) नीचे उतरी पच्चोरुहिता) नीचे उतरीने
 जेजेय समणे भगव महावीर सेजेय उपागच्छति) अर्थं तेभ्यो भगवान् महावीर

मूलम्-तएणं ते थेरा भगवंतो खंदयं अणगारं कालगयं
जाणित्ता परिनिव्वाणवत्तिं काउसगं करेंति करित्ता पत्त-
चीवराइं गिण्हंति गिण्हित्ता विउलाओ पव्वयाओ सणियं
सणियं पच्चोरुहंति, पच्चोरुहित्ता जेणेव समणे भगवं महा-
वीरे तेणेव उवागच्छंति उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं
वंदंति नमंसंति वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी, एवं खलु
देवाणुप्पियाणं अंतवासी खंदए नासं अणगारे पगइ भइए
पगइ विणीए पगइ उवसंते पगइ पयणु कोहमाणमायालोभे
मिउमइवसंपन्ने अल्लीणे भइए विणीए से णं देवाणुप्पिए
णं अब्भणुत्ताए समाणे सयमेव पंचमहव्वयाइं आरोवित्ता
समणाय समणीओय खामेत्ता, अम्हेहिं सद्धिं विउलं पव्वयं
तं चेव निरवसेसं जाव अणुपुव्वीए कालंगएइमेयसे आयार
भंडए भंते, त्ति भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदइ
नमंसइ वंदित्ता नमंसित्ता एवं वयासी एवं खलु देवाणुप्पि-
याणं अंतवासी खंदए नासं अणगारे कालमासे कालं किञ्चा
कहिं गए कहिं उववन्ने गोयमाइ समणे भगवं महावीरे भगवं
गोयसं एवं वयासी एवं खलु गोयमासअ अंतवासी खंदए णामं
अणगारे पगइभइए जाव से णं सए अब्भणुत्ताए समाणे
सयमेव पंचमहव्वयाइं तं चेव सव्वं अवसेसिअं नेयव्वं जाव
आलोइअप्रडिक्कंते समाहिपत्ते कालमासे कालं किञ्चा अच्चुए
कप्पे देवत्ताए उववन्ने तत्थ णं अत्थे गइयाणं देवाणं वावीसिं
सागरोवमाइं ठिई पण्णत्ता तुस्स णं खंदयस्स वि देवस्स

तदेव निरवशेष यावदानुपूर्व्या कालं गतः इदञ्च तस्माचारमाण्डकम् ? मर्दत इति मगधान् गौतमः भ्रमणं भगवान् महावीरं वन्दते नमस्परिति वन्दित्वा नमस्परित्वा एवमवाधीत्—एव खलु देवानुप्रियाणामन्ते गसी स्कन्दको नामानगारः कालमासे कालं कृत्वा कुप गतः कुप्रोत्पन्नः गौतम इति भ्रमणो भगवान् महावीरो मगधन्त गौतममेवमवाधीत् ॥ एव खलु गौतम ! मगधसेवासी स्कन्दको नामानगारः प्रकृतिस्त्रिभुवः

(विजल पञ्चय तं चेन्न निरवशेषं जाय आणुपुष्कीण काल गत) विपुल पर्यन्तपर गये ये—(यहाँ सय अवशिष्ट कथन जैसा पहिले लिखा जा चुका है समझ लेना चाहिये) अथ ये स्कन्दक अनगार क्रमशः कालधर्म को प्राप्त हो चुके हैं (इमेय से आचारमण्डक) ये उनके आचारमाण्डक—उपकरण हैं । इतने में (अन्तेसि मगध गोयमे समणं भगव महावीर वदइ नमसइ) हे भदन्त ! ऐसा कहकर भगवान् गौतम ने भ्रमण भगवान् महावीर को वंदना की नमस्कार किया । (वदित्ता नमसित्ता) वन्दना नमस्कार कर (एवं वयासी) फिर प्रभु से उन्होंने ने इस प्रकार पूछा । (एवं खलु देवानुप्रियाणं अन्तेवासी स्कन्दक नाम अनगारे कालमासे कालं किरुचा कहिगए, कहि उवयन्ने) हे भदन्त ! आप देवानुप्रिय के शिष्य स्कन्दक नामके अनगार काल अक्षर में काल करके कहाँ गये हैं ? कहाँ उत्पन्न हुए हैं ? (गोयमा) हे गौतम ! इस प्रकार संबोधित करके (समणे भगवं महावीरे) भ्रमण भगवान् महावीर ने (मगधं गोयम एवं वयासी) भगवान् गौतम से इस प्रकार कहा

(वन्देहि सज्जि) अमारी साथे । विजल पञ्चय तं चेन्न निरवशेषं जाय आणुपुष्कीण काल गत) विपुलाक्षर पाँत पर गया वन्ता (अहाँ समस्त कथन आजण लुप्प्या प्रमाणे समझवुं) ते स्कन्दक अणुगार कथयः काणधम पाणीने छे (इमे य से आचारमण्डक) आ तेमना पात्र वन्न आदि उपकरणो छे त्वारे (मते कि मगध गोयमे समणं भगव महावीर वदइ नमसरं) भगवान् गौतमि भ्रमण भगवान् महावीर ने ' हे भदन्त ! ' जेवु संबोधन करीने वदइ नमस्कार कहाँ । (वदित्ता नमसित्ता एव वयासी) वदइ नमः । १ करीने तेमणे भगवाँर प्रभुने आ प्रमाणे प्रश्न पूछ्यो (एवं खलु देवानुप्रियाणं अन्तेवासी स्कन्दक नाम अनगारे कालमासे कालं किरुचा कहि गए कहि उवयन्ने) हे भदन्त ! आप देवानुप्रियाणा शिष्य स्कन्दक नामका अणुगार काण अक्षर काणधम पाणीने कहाँ गया छे ? कहाँ उत्पन्न वया छे ? (जेयवे हे भदन्त अतिमा जया छे) (गोयमा !) हे गौतम ! जे प्रभु संबोधन करीने (समणे भगवं महावीरे) भ्रमण भगवान् महावीर (मगध गोयम एवं

નમસ્યિત્વા એવમાદિષુઃ । એવં ચલુ દેવાનુપ્રિયાણામન્તેવાસી સ્કન્દકો નામાગારઃ
પ્રકૃતિભદ્રકઃ પ્રકૃતિવિનીતઃ પ્રકૃત્યુપશાન્તઃ પ્રકૃતિ પ્રતનુ ક્રોધમાનમાયાલોભો મૃદુ-
માર્દવસંપન્ન આલીનો ભદ્રકો વિનીતઃ સ ચલુ દેવાનુપ્રિયૈરભ્યનુજ્ઞાતઃ સન્ સ્વયમેવ
પશ્ચમહાવ્રતાન્યારોપ્ય શ્રમણાંશ્ચ શ્રમણીશ્ચ ક્ષમયિત્વા અસ્માભિઃ સાધં વિપુલં પર્વતં

જહાં શ્રમણ ભગવાન મહાવીર ચિરાજમાન થે વહાં પર વે આયે । (ઉવા-
ગચ્છિત્તા) વહાં આકર (સમણં ભગવં મહાવીરં વંદહ નમંસહ) ઉન્હોં ને
શ્રમણ ભગવાન મહાવીર કો વંદના કી-નમસ્કાર કિયા (વદિત્તા નમં-
સિસા) વંદના નમસ્કાર કર (એવં વયાસી) ફિર વે હસ પ્રકાર સે કહને
લગે- (એવં ચલુ દેવાનુપ્પિયાણ અતેવાસી ચંદણ નામં અણગારે પગહ-
મદણ પગહિવિનીણ ' પગહુવસંતે ' પગહપયણુકોહમાણમાયાલોભે) હે
ભદન્ત ! આપ દેવાનુપ્રિય કે શિષ્ય સ્કન્દક નામ કે અન્નગાર કિ જો
પ્રકૃતિ સે વિનીત થે ' પ્રકૃતિ સે ઉપશાન્ત થે ' પ્રાકૃતિ સે પ્રતનુ ક્રોધ
માન, માયા ઓર લોભ વાલેથે (મિડમદ્વસંપન્ને) પ્રકૃતિ સે અત્યન્ત
નિરભિમાની થે (અલીણે મદણ વિનીણ) તથા તપ સંયમ આદિ અનુષ્ઠા-
નોં કે કરને મેં જો સદા તત્પર રહતે થે ' ભદ્રક થે ' ઓર વિનીત થે
(સે ણં દેવાનુપ્પિણં અમણુન્નાણ સમાણે) વે આપ દેવાનુપ્રિય સે આજ્ઞા
પ્રાપ્ત કર (સયમેવ પંચ મહવ્વચાહં અરોચિત્તા) અપને આપ પાંચ મહાવ્રતોં
કો આરોપિતકરકે (સમણા ય સમણીઓ ચામેત્તા) તથા શ્રમણ ઓર શ્રમ-
ણિયાંસે (ક્ષમાપના) ચમતચામણા કરકે (અમ્હેહિં સદ્ધિં) હમલોનોંકે સાથ

ચિરાજતા હતા ત્યાં આવ્યા (ઉવાગચ્છિત્તા) ત્યાં આવીને (સમણ ભગવં મહા-
વીર વદહ નમંસહ) શ્રમણ ભગવાન મહાવીરને વદણા નમસ્કાર કર્યા (વદિત્તા
નમંસિત્તા) વદણા નમસ્કાર કરીને (એવં વયાસી) આ પ્રમાણે કહ્યું — (એવં
ચલુ દેવાનુપ્પિયાણ અતેવાસી ચંદણ નામ અણગારે પગહ મદણ, પગહ વિનીણ,
પગહ ચવસંતે, પગહપયણુકોહમાણમાયાલોભે) હે ભદન્ત ! આપ દેવાનુપ્રિય
ના શિષ્ય, સ્કન્દક નામના અણુગાર કે જે ભદ્ર, વિનીત અને ઉપશાન્ત
પ્રકૃતિવાળા હતા જેનામાં સ્વાભાવિક રીતે જ ક્રોધ, માન, માયા અદ્ય
પ્રમાણુ મા જ હતા, (મિડમદ્વસંપન્ને) જેઓ અત્યંત નિરભિમાની હતા,
(અલીણે મદણ વિનીણ) જેઓ તપ, સંયમ આદિ અનુષ્ઠાનો કરવા માટે સદા
તત્પર રહેતા હતા, જેઓ ભદ્ર અને વિનીત પ્રકૃતિવાળા હતા, (સે ણં
દેવાનુપ્પિણ અમણુન્નાણ સમાણે) તેઓ આપ દેવાનુપ્રિયની અનુજા લઈ ને
(સયમેવ પંચમહવ્વચાહં અરોચિત્તા) પોતાની જાતે જ પાંચ મહાવ્રતો અગીકાર
કરીને (સમણા ય સમણીઓ ચામેત્તા) સાધુ અને સાધ્વીઓને ખમાવીને

नृतरश्च त्वलु स्युत्वा कुत्र गमिष्यति कुत्र उपपत्स्यते गौतम ! महाविदेहे सर्वे सेत्स्यति मोत्स्यते मोत्स्यते परिनिर्वाप्यति सर्वदुःखानाम-त करिष्यति ॥ सू० १७ ॥

टीका—“तएण ते घेरा भगवंतो” ततः स्कन्दकस्य कालगमनानन्तरम् त्वलु ते स्पष्टिरा भगवतः “स्वदयं अणगारं कालगम्य जाणिता” स्कन्दकम् अनगारं कालगतं ज्ञात्वा “परिनिष्वाणवसियं काउसग्गं करेति” परिनिर्वाणप्रत्ययं कायोत्सर्गं कुर्वन्ति । परिनिर्वाणं मरणं तत्र मरणे यत् शरीरस्य परिष्ठापनं तदपि परिनिर्वाणमेव तदत्र मृत्यो हेतुर्पस्य स परिनिर्वाणप्रत्ययस्तम् परिनिर्वाणप्रत्ययम्

कहिं गच्छहिह, कहिं उववज्जिहहि) हे भदन्त ! वे स्कन्दक देव देव लोक से अपनी आयु के क्षय होने पर, भव के क्षय होने पर, स्थिति के क्षय होने पर च्ययकर कहा जायेंगे, कहा उत्पन्न होंगे ? (गोपमा) हे गौतम ! (महाविदेहे वासे सिज्झहिह, पुज्झहिह मुच्चिहिह, परिणिष्वाहिह, सब्बदुक्खाण अतं करेहिह) वे स्कन्दक देव अच्युत देवलोक सेच्यव कर महाविदेह क्षेत्र में सिद्ध होंगे, बुद्ध होंगे मुक्त होंगे परिनिवृत्त होंगे और समस्त दुःखों का अन्त करेंगे ॥ सू० १७ ॥

टीकार्थ—(तएण ते घेरा) स्कन्दक के कालगत हो जाने के बाद उन स्पष्टिर भगवन्तों ने (स्वदयं अणगारं कालगम्य जाणिता) स्कन्दक अनगार को कालगत जानकर (परिनिष्वाणवसियं काउसग्गं करेति) परिनिर्वाणप्रत्ययवाला कायोत्सर्ग किया । परिनिर्वाण शब्द का अर्थ मरण है । इस मरण में जो शरीर का परिष्ठापन होता है वह भी परिनिर्वाण ही है । यह परिनिर्वाण जिसे कायोत्सर्ग करने में कारण होता है, वह

वववज्जिहहि) हे भदन्त ! ते स्कन्दकदेव देवलोकभांथी तेभन्ना आबुने क्षय यत्ता, लवने क्षय यत्ता, स्थितिने क्षय यत्ता त्याभी आविने क्वां यथे ? क्वां उत्पन्न यथे ? (गोपमा !) हे गौतम ! (महाविदेहे वासे सिज्झहिह, पुज्झहिह मुच्चिहिह, परिणिष्वाहिह सब्बदुक्खम अतं करेहिह) ते स्कन्दक देव अच्युत देवलोकभांथी आविने महाविदेह क्षेत्रमां सिद्ध यथे, बुद्ध यथे मुक्त यथे, परिनिवृत्त यथे अने समन्त दुःखेने अतं करन्तां यथे ॥ सू० १७ ॥

टीका—(तएण ते घेरा त्वयं अणगारं कालगम्य जाणिता) ते स्वविशेने न्याये अप्पु हे स्कन्दक अणुआरं कालगमं पाग्गा छे, त्वां ते भवे (परिनिष्वाणवसियं काउसग्गं करेति) परिनिर्वाण प्रत्ययवाणे कायोत्सर्गं कथे परिनिर्वाण कोठे भव्णु आ भव्णुमा ने शरीरं परिष्ठापनं यथ छे तेन ना भव्णु परिनिर्वाणं छे आ परिनिर्वाणं ने कायोत्सर्गं करवां भव्णु

યાવત્ સંઘલુ મયામ્યલુજાત. સન્ સ્વયમેવ પશ્ચમદ્વાત્રતાન્યરોપ્ય તદેવ સર્વમવ-
શિષ્ટ નેતવ્યં યાવદાલોચિતપ્રતિક્રાન્તઃ સમાગ્રિપ્રાપ્તઃ કાલમાસે કાલ કૃત્વા
અચ્યુતે કલ્પે દેવતયોત્પન્નઃ તત્રાસ્ત્યેકેપાં દેવાનાં દ્વાવિંશતિઃ સાગરોપમાણિ સ્થિતિઃ
પ્રજ્ઞતા । તસ્ય સ્કન્દકસ્યાપિ દેવસ્ય દ્વાવિંશતિઃ સાગરોપાણિ સ્થિતિઃ પ્રજ્ઞતા ।
સ ભદન્ત ! સ્કન્દકો દેવસ્તસ્માત્ દેવલોકાદાયુઃ ક્ષયેણ મનશ્ચયેણ સ્થિતિક્ષયેણાન-

-(એવં સંઘલુ ગોચમા) હે ગૌતમ ! (મમ અતેવાસી સંદર્ષણામં અણગારે
પગહ્ ભદ્દર્ષણા જાવ સે ણં મર્ષ અન્નમણુજ્ઞાણ સમાણે સયમેવ પંચ
મહુવ્વયાઈ તં ચેવ સન્નં અવસેસિયં નેયવ્વ જાવ આલોહ્ય
પહિક્કંતે સમાહિપત્તે કાલમાસે કાલં કિચ્ચા અચ્ચુર્ણ કલ્પે દેવતાર્ણ
ઉવવન્ને) મેરા અતેવાસી સ્કન્દક અનગાર કિ જો પ્રકૃતિ ભદ્ર આદિ
પૂર્વોક્ત વિશેષણોં વાલે થે યાવત્ વે મુહુ સે આજ્ઞા લેકર સ્વયં પાંચ,
મહાવ્રતોં કો અગીકાર કરકે યાવત્ આલોચિત પ્રતિક્રાન્ત હોકર
સમાગ્રિ પ્રાપ્ત કર, કાલ અવસામેં કાલકર્ અચ્યુત નામકે વારહવેં દેવ-
લોકમેં દેવ કી પર્યાય સે ઉત્પન્ન હુર્ણ હૈં । (તત્થ ણં અત્યેગહ્યાણં દેવાણં
વાવીસ સાગરોવમાઈં ઠિઈં પળ્લન્તા) વહાં પર કિતનેક દેવોં કી વાઈસ
સાગરોપમ પ્રમાણ સ્થિતિ કહી ગઈં હૈં । (તસ્સ ણં સંદર્શસ્સ વિ દેવસ્સ
વાવીસ સાગરોવમાઈં ઠિઈં પળ્લન્તા) વહાં ઉસ સ્કન્દક દેવ કી મી
વાઈસ સાગરોપમ પ્રમાણ સ્થિતિ હૈં । (સે ણં મંતે ! સંદર્ષ દેવે તાઓ
દેવલોયાઓ આરુક્ષવણં ભવક્ષવણં ઠિ ઇક્ષવણ અણંતરં ચયં ચહ્મતા

વવાસી) ભગવાન ગૌતમને આ પ્રમાણે કહ્યું, (એવં સંઘલુ ગોચમા !) હે
ગૌતમ ! (મમ અતેવાસી સંદર્ષણામં અણગારે પગહ્ ભદ્દર્ષણા જાવ સે ણં મર્ષ
અન્નમણુજ્ઞાણ સમાણે સયમેવ પંચમહુવ્વયાઈં તં ચેવ સન્નં અવસેસિયં નેયવ્વ
જાવ આલોહ્યપહિક્કંતે સમાહિપત્તે કાલમાસે કાલં કિચ્ચા અચ્ચુર્ણ કલ્પે દેવ
તાર્ણ ઉવવન્ને) મારા શિષ્ય સ્કન્દક અણગાર કે જેઓ પ્રકૃતિ ભદ્ર આદિ પૂર્વોક્ત
વિશેષણોવાળા હતાં, જેમણે મારી અનુજ્ઞા મેળવીને સ્વયં પાંચ મહાવ્રતો
ધારણ કરીએ (અહીં પૂર્વોક્ત સમસ્ત કથન ગ્રંથે કરવાનું છે તે કથન કયા
મુખી ગ્રંથે કરવું જોઈએ ?) આલોચન દ્વારા પ્રતિક્રાન્ત થઈને, શાન્ત ચિત્તે,
કાળધર્મ પામીને અચ્યુત નામના ભારમા દેવલોકમા દેવની પર્યાયે ઉત્પન્ન
થયા છે. (તત્થ ણં અત્યેગહ્યાણં દેવાણં વાવીસ સાગરોવમાઈં ઠિઈં પળ્લન્તા) તે
દેવલોકમા દેવોની સ્થિતિ આવીસ સાગરોપમની કહી છે (તસ્સ ણં સંદર્શસ્સ
વિ દેવસ્સ વાવીસ સાગરોવમાઈં ઠિઈં પળ્લન્તા) ત્યાં આ સ્કન્દક અણગારની કાળ-
સ્થિતી પણ આવીસ સાગરોપમની છે (સે ણં મંતે ! સંદર્ષ દેવે તાઓ દેવલોયાઓ
આરુક્ષવણં ભવક્ષવણં ઈ અણંતરં ચયં ચહ્મતા કહિં ગચ્છિહિ, કહિં

‘ ઉવાગચ્છિન્ના ’ ઉપાગમ્ય “ મમળ મગધ મહાધીર ધર્મંતિ નમમતિ ” મમલ મગધન મહાધીર ધર્મંતિ નમમતિ “ યદિન્ના નર્મમિન્ના ” ચન્દિન્ના નમમિન્ના “ પર્થ પયામી ” પર્થ ધર્મમાણમકારણાપાત્તિષુ । વિમરદિપુતિમ્યાદ “ પર્થ ચદ્ય દયાનુમિયાણામતયામી । ” ચ્ચંદ્ય નામ અણગાર પગદ મદ્ય ” સ્વદ્ય નામાનગારઃ પ્રકૃતિષ્ટકઃ પ્રકૃત્યા સ્વભાષન મદ્ય ઇતિ પ્રકૃતિષ્ટકઃ “ પગદ વિણીષ ” પ્રકૃતિ વિનીષઃ સ્વભાષનૈય વિનયયાન્ “ પગદ ઉપગત ” પ્રકૃત્યુપગતઃ પ્રકૃત્યા સ્વભાષનૈયાપામટ્ટિમાનિત્યર્થઃ । “ પગદપયણુકોદમાદમાયાલામે ” પ્રકૃતિ પ્રત્યુકોદમાનમાયાલામે સ્વભાષન પર્થ પ્રત્યુકોદમાનમાયાલામે “ મિત્તમદ્યમપન્ને ” મુદ્યમાર્થર્મપન્ને પરિણામમુદ્યમાર્થર્મપન્ને “ અન્નીજ ”

જહાં શ્રી શ્રમળ મગયાન મહાધીરપ્રમુ પિગાજમાન યં વદા પર આપ । ‘ ઉવાગચ્છિન્ના ’ યદાં આકર ઉદ્દાન ‘ મમળ મગધ મહાધીર ધર્મંતિ નમમતિ ’ શ્રમળ મનયાન મહાધીર યો ધર્મના થી નમસ્કાર કિયા ‘ યદિન્ના નર્મમિન્ના ’ ધર્મના નમસ્કાર કરક ‘ પર્થ પયામી ’ ફિર ઉદ્દાં ને ઉનસ દમ પ્રકાર વળા, વળા વદા-ના મુદ્યમાર્થ ઇતી પામ થો પ્રકટ કરતે હું— ‘ પર્થ ચદ્ય દયાનુમિયાણં અતયામી સ્વદ્ય નામ અણગાર પગદમદ્ય ’ હ મદ્યન ‘ આપ દયાનુમિય ક અતયામી સ્વદ્ય નામ ક અણગાર જા સ્વભાષ સ મદ્ય છે ‘ ‘ પગદવિણીષ ’ સ્વભાષ સ હી વિનીષ છે ‘ ‘ ઉપગત ’ સ્વભાષ સ હી જો ઉપગાત્ત વૃત્તિ ચાલ છે ‘ ‘ પગદપયણુકોદમાદમાયાલામે ’ સ્વભાષ સ હી જિનર્મ પ્રાપ ‘ માન ‘ માયા જાગ મોન અનિશાય અત્ત માત્રા મં ધ ‘ ‘ મિત્તમદ્યમપન્ને ’ સ્વભાષ સ હી મુદ્યદ પરિણામવાક્ય માર્થર્મ ધર્મ સ જા મુદ્ય છે ‘ ‘ અન્નીજ ’ તપ ઓર મયમ આદિ થી

ત્યાં શ્રીશ્રમળ બનયાન મહાધીરપ્રમુ વિશાળતા દત્તા ત્યાં આપ્યા “ ઉવાગચ્છિન્ના ” ત્યાં આવીને નમનું ‘ મમળ મગધ મહાધીર ધર્મંતિ નમમતિ ” મમળ મમયાન મહાધીરને વદવા નમસ્કાર કર્યા “ યદિન્ના મગમિન્ના ” વદવા નમસ્કાર કરીને “ પર્થ પયામી ” આ પ્રમાણે કર્યું—“ પર્થ ચદ્ય દયાનુમિયાણં અતયામી મદ્ય નામ અણગાર પગદમદ્ય ” એ મદ્યન । આ દયાનુમિયાણ મિત્ત ૨૨-૨૩ નામના અણગાર કે જે સ્વભાષ બદ દત્તા, “ પગદવિણીષ ” જે સ્વભાષ વિનીષ દત્તા, ‘ ‘ પર્થ પયામી ’ જે સ્વભાષ ઉદ્દાનવૃત્તિવાળા દત્તા “ પગદ પયણુકોદમાદમાયાલામે ” આભાવિત રીતે જે બનતા ૧૧ કોષ, માન માયા અને મોલ અનિશાય અત્ત પ્રમાણમાં દત્તા, “ મિત્તમદ્યમપન્ને ” સ્વભાષથી જે મુખ્ય પશ્ચિમનાથ માર્થર્મ પદ્યથી જે સ્વભાષ મુખ્ય દત્તા, “ અન્નીજ ” તપ, ધર્મ

કાયોત્સર્ગમ્ મરણનિમિત્તં મરણાનન્તરં ક્રિયમાણં કાયોત્સર્ગં કુર્વન્તિ, અથવા મરણનિમિત્તકં ધ્યાનવિશેષં કુર્વન્તીત્યર્થઃ ‘કરિત્તા’ કાયોત્સર્ગં કૃત્વા ‘પત્તચીવરાઈ ગિળ્હંતિ’ પાત્રચીવરાણિ ગૃહ્ણન્તિ, તદીયપાત્રવસ્ત્રાદીનાં ગ્રહણં કુર્વન્તિ “ગેળિહ્ત્તા” ગૃહીત્વા “વિઝલાઓ પવ્વયાઓ સણિયં સણિયં પચ્ચોરુહન્તિ” વિપુલાત્ પર્વતાત્ શનૈઃ શનૈઃ પ્રત્યવરોહન્તિ-અથોઽવતરન્તિ - વિપુલનામકપર્વતે સ્કન્દકસ્ય મરણમભૂત્ । મૃતં તદીયં શરીરં પરિઠાપ્ય તદીયોપકરણાણિ - ઉપાદાય તે સ્થવિરાસ્તતઃ પર્વતાત્ નિવૃત્તા વખૂવુ ઇતિ ભાવઃ । “પચ્ચોરુહિત્તા” પ્રત્યવરુહ્ય “જેણેવ સમણે ભગવં મહાવીરે તેણેવ ઉવાગચ્છહ્” યત્રૈવ શ્રમણો ભગવાન્ મહાવીરસ્તત્રૈવોપાગચ્છન્તિ

કાયોત્સર્ગ પરિનિર્વાણ પ્રત્યય કાયોત્સર્ગ કહલાતા હૈં હસ કાયોત્સર્ગ કા કારણ મરણ હોતા હૈં ઓર યહ મરણ કે અનન્તર કિયા જાતા હૈં । અથવા- (પરિનિર્વાણવત્તિયં કાઉસર્ગં) કા તાત્પર્ય એસા ખી હોતા હૈં, કિ મરણ હૈં નિમિત્ત જિસકા એસા જો ધ્યાન વિશેષ કિયા જાતા હૈં વહ પરિનિર્વાણપ્રત્યય કાયોત્સર્ગ હૈં । (કરિત્તા) હસ કાયોત્સર્ગ કો કરકે ‘પત્ત-ચીવરાઈ’ સ્કન્દક અનગાર કે જો પાત્ર વસ્ત્ર આદિ થે વે સબ ડન્હોં ને લે લિયે ‘ગેળિહ્ત્તા’ ડઠાકર (વિઝલાઓ પવ્વયાઓ સણિયં સણિયં પચ્ચોરુહંતિ) વે ડસ વિપુલ પર્વત સે ધીરે ૨ મન્દ ચાલ સે યતનાપૂર્વક નીચે ડતરે । અર્થાત્ વિપુલ પર્વત પર સ્કન્દક કા મરણ હો ગયા સો ડનકે મૃત શરીર કી પરિઠાપના કરકે વે ડનકે ‘ઉપકરણોં કો લેકર વહાં સે વાપિસ લૌટ આયે । ‘પચ્ચોરુહિત્તા વાપિસ લૌટકર વે ‘જેણેવ સમણે ભગવં મહાવીરે તેણેવ ઉવાગચ્છહ્’

હોય છે, તે કાયોત્સર્ગને (પરિનિર્વાણ પ્રત્યય કાયોત્સર્ગ) કહે છે તે કાયો-ત્સર્ગનું કારણ મરણ હોય છે, અને તે મરણ પછી કરવામા આવે છે અથવા (પરિનિર્વાણવત્તિય કાઉસર્ગ) નું એવું તાત્પર્ય થાય છે કે જેનું નિમિત્ત મરણ છે એવા વિશિષ્ટ ધ્યાનને (પરિનિર્વાણ પ્રત્યય કાયોત્સર્ગ) કહે છે. (કરિત્તા) એવો કાયોત્સર્ગ કરીને, (પત્તચીવરાઈ) સ્કન્દક અણુગારનાં પાત્ર, વસ્ત્ર આદિ ઉપકરણ તેમણે લઈ લીધા ((ગેળિહ્ત્તા) તે ઉપકરણોને લઈને (વિઝલાઓ પવ્વયાઓ સણિય સણિય પચ્ચોરુહંતિ) તેઓ વિપુલાચલ પર્વત પરથી ધીરે ધીરે-મદ ગતિયે-યતના પૂર્વક નીચે ડતર્યા એટલે કે વિપુલાચલ પર્વત પર સ્કન્દક અણુગાર મરણ પામ્યા પછી તેમના મૃત શરીરની પરિઠાપના કરીને, તેઓ તેમના ઉપકરણોને લઈને ત્યાંથી પાછા ફર્યા (પચ્ચોરુહિત્તા) ત્યાંથી નીચે પાછા ફરીને તેઓ. (જેણેવ સમણે ભગવ મહાવીરે તેણેવ ઉવાગચ્છહ્)

स्कन्दकस्य पारलौकिकं वृत्तात्तं प्राहु भगवन्त पृच्छति गते इत्यादि । “ भवे सि
 भगव गोयमे ” भवन्त इति संबोध्य भगवान् गौतमः “ समर्णं भगवं महावीर
 वंदइ नमसइ ” भ्रमणं भगवन्त महावीर पन्दत नमस्यति “ वंदित्ता नमसित्ता एवं
 वयासी ” पन्दित्वा नमस्यित्वा एव वक्ष्यमाणप्रकारणावादीत् किमवादीत् उपार
 ‘ एवं खलु ’ इत्यादि एव खलु देवानुप्रियाणं अतेवासी खदण नाम अगगारे फल
 मासे काल किच्चा कडिगए कडि उववन्ने ” एवं खलु देवानुप्रियाणामंतवासी
 स्कन्दको नामानगारः कालमासे कालं कृत्वा । कुप्रगतः कुत्रोत्पन्नः ? भगवान्
 कथयति “ गोयमा ” हे गौतम इति संबोध्य “ समणे भगवं महावीरे ” भ्रमणो
 भगवान् महावीरः “ भगवं गोयम एव वयासी ” भगवन्त गौतममेवमवादीत्
 “ एवं खलु गोयमा ” एवं खलु हे गौतम ! “ मम अंतवासी खदण नाम अग
 गारे ” ममांतवासी स्कन्दको नामानगारः “ पगइ मरए ” प्रकृति मद्रकः ‘ भाव’

के मुख्य से ऐसे घटना को सुनकर ‘ भगवं गोयमे ’ भगवान्
 गौतम ने स्कन्दक के पारलौकिक वृत्तान्त को जानने के लिये ‘ भवे सि’
 हे भवन्त ! इस प्रकार संबोधित करके ‘ समर्णं भगवं महावीरं वइइ,
 नममइ’ पहिले भ्रमण भगवान् महावीर को वंदना की, नमस्कार किया ।
 ‘ वंदित्ता नमसित्ता ’ वंदना नमस्कार कर ‘ एवं वयासी ’ फिर उन्हों
 ने प्रश्न से इस प्रकार पूछा—‘ एवंखलु देवानुप्रियाणं अंतवासी खदण
 नाम अगगारे ’ हे भवन्त ! आप देवानुप्रिय के अंतवासी स्कन्दक अग
 गार ‘ कालमासे कालं किच्चा ’ कालमास में—कालके अघसर काल
 करके (कालं गए) मर और (कडि गए) कहाँ गये हैं ‘ कडि उववन्ने
 ’ और कहा पर उत्पन्न हुए हैं ? उत्तर देते हुए तब प्रश्न ने उनसे कहा
 —‘ गोयमा ’ हे गौतम ! ‘ मम अंतवासी खदण नाम अगगारे ’ मेरा
 अंतवासी स्कन्दक अनगार जो ‘ पगइ मरए ’ प्रकृति से भद्र ये ‘ से नं

अवधानी जिहासायी ’ भवेसि ” हे भवन्त ! जेवु संबोधन करिने, “ समर्णं
 भगवं महावीर वइइ नममइ’ भगव भगवान् महावीर पदेवांते वइइ करि,
 नमस्कार करि ‘ वंदित्ता नमसित्ता एव वयासी ” वइइ नमस्कार करिने
 तेमजे महावीर प्रभुने आ प्रभाजे पूछु—“ एवं खलु देवानुप्रियाणं अंतवासी
 खदण नाम अगगारे ” हे भवन्त ! आप देवानुप्रियना अंतवासी (शिष्य)
 स्कन्दक अवगार ‘ कालमासे कालं किच्चा ” कालमासे—काल अघसर काल
 पागीने—“ कालगए ” कालधर्म (भरण) पागीने ‘ कडि गए ” कहाँ गये ?
 (कडि उववन्ने ” कहाँ उत्पन्न भये ?) त्माइ प्रभुजे तेमने आ प्रभाजे कथाम
 आप्थो—“ गोयमा ! ” हे गौतम ! “ मम अंतवासी खदण नाम
 अगगारे ” भाव अंतवासी स्कन्दक अवगार, हे भवे ! पगइ मरए’ भद्र

आलीनः=तपः संयमादितत्परः “ भद्र ए ” भद्रकः=कल्याणस्वरूपः “ विणी ए ”
विनीतः=विनयसंपन्नः “ सेणं देवाणुप्पिएहिं अब्भणुन्नाए समाणे ” स खलु देवा-
नुप्रियैरभ्यनुज्ञातः सन् “ सयमेव पंचमहव्वयाइं आरोवित्ता ” स्वयमेव पञ्चमहा-
व्रतान्यारोप्य “ समणाय समणीओय खामेत्ता ” श्रमणांश्च श्रमणोश्च क्षमयित्वा
“ अम्हेहिं सद्धिं ” अस्माभिः सार्धम् “ विउलं पव्वयं ” विपुल पर्वतम् “ तं
चेव निरवसेसं ” तदेव निरवशेषम्=पूर्वोक्तमेव सर्वम् अत्र वाच्यम् । कियत्पर्यन्त
मित्याह=“ जाव आणुपुव्वीए कालं गए ” यावदानुपूर्व्यां कालं गतः, अत्र
यावत्पदेन “ सणियं सणियं दुरुद्ध ” इत्यारभ्य “ समाहिपत्ते ” इत्यन्तस्य ग्रहण
कर्त्तव्यम् । आनुपूर्व्यां मरणं प्राप्तः । “ इमेयसे आयारभंडए ” इदञ्च भवद्वये
स्थापितं तस्याचारभण्डकमस्तीति स्थविराणामेतादृशं वाक्यमाकर्ण्य गौतमः

आराधना में ही जिन्होंने अपना शेष जीवन व्यतीत किया ‘ भद्र ए ’
अतएव कल्याण स्वरूप ‘ विणी ए ’ विनीत ऐसे ‘ सेण ’ वे स्कन्दक
अनगार ‘ देवाणुप्पिएहिं अब्भणुन्नाए समाणे ’ आप देवानुप्रिय से
आज्ञा प्राप्त कर ‘ सयमेव पंचमहव्वयाइं ’ अपने आप पांच महाव्रतों
को आरोपित करके ‘ समणाय समणीओ य ’ श्रमण एवं श्रमणियों से
क्षमा याचना कर ‘ अम्हेहिं सद्धिं ’ हमलोगों के साथ ‘ विउल पव्वयं ’ विपुल
पर्वत पर ‘ सणियं सणियं ’ धीरे २ चढे यहां पर ‘ तं चेव निरवसेसं जाव
आणुपुव्वीए कालं गए ’ बाकी का और सब पूर्वोक्त कथन ‘ जाव आणु-
पुव्वीए कालं गए ’ यहां तक लगा लेना चाहिये । ‘ इमे य से आयार-
भंडए ’ ये जो हम लोगों ने लाकर आप के समक्ष स्थापित किये हैं ।
उन्हीं स्कन्दक अनगार के आचार भण्डक—उपकरण है । स्थविरों

आदिनी आराधनामा ५ ५५५५ पोतानुं आकीनुं एवम व्यतीत कथुं हुतुं,
“ भद्र ए ” ५५५५ अतिशय लक्षिक प्रकृतिवाणा हुता, “ विणी ए ” ५५५५ विनीत
हुता, ५५५५ “ सेण ” स्कन्दक अणुगार “ देवाणुप्पिएहिं अब्भणुन्नाए समाणे ”
आप देवानुप्रियनी आज्ञा लधने “ सयमेव पंचमहव्वयाइं ” पोतानी नते ५
पांच महाव्रतो अगीकार करीने “ समणा य समणीओ य ” श्रमणु अने
श्रमणिने (साध्वीयो) जभावीने “ अम्हेहिं सद्धिं ” अमारी साथे “ विउल-
पव्वय ” विपुलायल पर्वत पर “ सणिय सणिय ” धीरे धीरे आरोहण करीने
“ त चेव निरवसेस जाव आणुपुव्वीए कालं गए ” “ जाव अणुपुव्वीए कालं गए ”
सुधी सूत्रमा आवतु समस्त कथन अहणु करवुं “ इमे य से आयारभद्र ए ”
आ तेमना पात्र वस्त्र आदि उपकरण छे तेम स्थविराना सुअथी आ प्रकारनां
पथेना सासणीने “ भगवं गोयमे ” अणवान गौतमे स्कन्दकनुं पारलौकिक वृत्तांत

अयुतक्ष्णप दशो जात इति भावः "तत्तु न अत्येकस्याणं देवानां पात्रीसं गाग
रापमाइ तिर्ह पणत्ता" तम खलु अत्येकपां देवानां द्वाविन्नति सागरापमाणि
स्थिति प्रसता "तरग न स्वदयम्स वि देवग पात्रीग सागरापमाइ तिर्ह पणत्ता"
तस्य खलु स्कन्दकस्यापि दयस्य द्वाविन्नतिः सागरापमाणि स्थितिः प्रसता
गौतमः पृच्छति "न न भते" स खलु गर्वग ! "स्वदय दय" स्कन्दको दय
'ठाओ दयसापाओ' तरगात् भेयसावात् "आठवसाणं भववसाणं तिर्हकसएण"
आयुः क्षयण भवभयण स्थितिधयण, तत्र आयुः क्षयणापुच्छकर्मदयिक निर्द
यन भवक्षयण, दयभयनिवधाकर्माणां गत्यादीनां निजगणेन स्थितिधयण आयुष्क
र्मणः स्थितिर्दनन "अणत्तर" अनन्तात् "दय" देवगसम्बन्धिं श्री
"पात्ता" ज्युत्ता स्थित्या परि गच्छति "कुम गविप्यति" कर्हि उपजि
स्कन्दक अनगात् मर कर अज्युग कण में दय की पयौग से उत्तरम दृष्ट
हैं । (तत्तु न अत्येकस्याणं द्याण पात्रीसं सागरोपमाइ तिर्ह पणत्ता)
यहां पर कई एक देवों की पाईस सागरोपमाप्रमाण स्थिति कही गई है
सो (तस्मिन् न स्वदयम्स पि दयस्म पात्रीसं सागरोपमाइ तिर्ह पणत्ता) उस
स्कन्दक दय की भी पाईस सागरोपमा प्रमाण स्थिति है । अब भगवान्
गौतमस्यामी उस देव के विषय में पुनः प्रश्न से पूछते हैं—(से न भते ।
स्वदय दय साओ देवलोकाओ आठवसाणं, भववसाणं, तिर्हकसएण,
अणत्तरं भववदसा कर्हि गच्छति) हे स्कन्द ! यह स्कन्दक देव उस
देवलोक से आयुःकर्म के दलिकों की निर्मला होनेसे, देवभय के कार
णमून गत्यादिक कर्मों की निजरा होने से तथा आयुःकर्म की स्थिति
का वेदन कर करने से देव भयम्बन्धी पागेर का परित्याग कर कहा
जायेगा, कहा उत्पन्न होगा ? इसका उत्तर देते हुए प्रश्न कहते हैं—

आश्मा देवलोकां देवनी पयसि उत्पन्न मया । तत्तु न अत्येकस्याणं देवानां
पात्रीसं सागरोपमाइ तिर्ह पणत्ता" ते देवलोकां अनेका देवान् आयुष्य
आवीसं सागरोपमानु दाय छे 'तत्तु न अत्येकस्याणं देवानां पात्रीसं सागरो
पमाइ तिर्ह पणत्ता" कोल प्रमाण तानु स्कन्दक अज्युगारु आयुष्य पय आवीस
सागरोपमानु भववदसा जीतभस्वागी त देवना निगमां लीले प्रस पूछे छे 'ते
न भते । स्वदय दय साओ देवलोकाओ आठवसाणं भववसाणं तिर्हकसएण अण
त्तरं भव वदसा कर्हि गच्छति' । अदन्त । ते स्कन्दक देव, ते देवलोकां
आयुः कर्मना दिकोनी निजरा गतां, देवभयना क्षयवृत्त भयति कर्मनी
निज । गतां तथा आयुष्य कर्मनी स्थितिनु वेदन करी तीया पागी देवभय
सम्बन्धी भयिने परित्याग करीने कथो कथी, कहा उत्पन्न यये ? तने उत्तर

યાવત્ અત્ર યાવત્પદેન 'વિગાઃ ત્રિણીપ' ઇત્યારભ્ય 'ત્રિણીપ' ઇત્યન્ત સ્કન્દક
વિશેષણાનાં ગ્રહણં કર્તવ્યમ્ "સેળં મણ અઘ્મણુત્તાણ સમાણે" મ સ્કન્દકઃ સ્વલ્પ
મયાઽભ્યનુજ્ઞાતઃ સન્ "સયમેવ પચમહવ્વગાઠં આરોવિત્તા" સ્વયમેવ પશ્ચમહા-
વ્રતાન્યારોપ્ય "તં ચેવ સવ્વં અવસેસિયં નેયવ્વં" તદેવ મર્ચમર્ચશિષ્ટં નેતવ્યમ્
સમણા ય સમણીઓ ય સ્વમિત્તા" ઇત્યારભ્ય "સટ્ઠિમત્તાઠં અણસણાણ છેદિત્તા"
ઈતિ પર્યન્તં સર્વં જ્ઞાતવ્યમ્ 'આલોહય પહિકંતે' આલોચિત પ્રતિક્રાન્તઃ "સમા-
હિપ્તે" 'સમાધિપ્રાપ્ત' "કાલમાસે કાલં કિચ્ચા" કાલમાસે કાલં કૃત્વા
"અચ્ચુણ કપ્પે દેવત્તાણ ઉવવન્ને" અન્યુતે કલ્પે દ્વાદશદેવલોકે દેવતયા ઉપ-
પન્નઃ દેવો ભૂત્વા સમુત્પન્નઃ વિલક્ષણ તપશ્ચરણયુક્તં સંયમં સમારાધ્ય મૃત્વા સ્કન્દકઃ

મણ અઘ્મણુત્તાણ સમાણે સયમેવ પંચ મહવ્વગાઠં આરોહેત્તા તં ચેવ સવ્વં
અવસેસિયં નેયવ્વજાવ આલોહયપહિકંતે સમાહિપ્તે કાલમાસે કાલં
કિચ્ચા અચ્ચુણ કપ્પે દેવત્તાણ ઉવવન્ને 'યાવત્ મેરી અનુમતિ સે સ્વયં
પંચ મહાવ્રતોં કો આરોપિત કરકે (યહાં પર વાકી કા સમસ્ત કથન
પહિલે કહે હુણ કથન કી તરહ હી સમજ લેના ચાહિયે) યાવત્-આલો-
ચિત પ્રતિક્રાન્ત વનં સમાધિ પ્રાપ્ત કર કાલમાસ મેં કાલકરકે અચ્ચુન
દેવલોક મેં ગયે હેં ઓર વહાં દેવ કી પર્યાય સે ઉત્પન્ન હુણ હેં । 'તં ચેવ
સવ્વં અવસેસિયં નેયવ્વં' એસા જો કહા હૈ, સો ઉસસે (સમણાય
સમણીઓ ય સ્વામેત્તા) યહાં સે લગાકર (સટ્ઠિ મત્તાઠં અણસણાણ
છેદિત્તા) યહાં તક કા સવ પાઠ ગ્રહણ કરલેના ચાહિયે । તાત્પર્ય કહને
કા યહ હૈ કિ-વિલક્ષણ તપશ્ચરણ સે યુક્ત સંયમ કો આરાધિત કરકે

પ્રકૃતિના હતા. "સે ણ મણ અઘ્મણુત્તાણ સમાણે સયમેવ પચમહવ્વગાઠં આરો-
હેત્તા તં ચેવ સવ્વં અવસેસિયં નેયવ્વ જાવ આલોહયપહિકંતે સમાહિપ્તે
કાલમાસે કાલં કિચ્ચા અચ્ચુણ કપ્પે દેવત્તાણ ઉવવન્ને" મારી અનુજ્ઞા લઈને
પોતાની બંતે જ પાત્ર મહામતો અગીકાર કરીને (અહીં બાકીનું સમસ્ત
કથન પૂર્વોક્ત કથન પ્રમાણે જ ગ્રહણ કરવાનું છે) કયા સુધી તે કથન ગ્રહણ
કરવાનું છે ? તો સૂત્રકાર કહે છે કે "આલોચના દ્વારા પ્રતિક્રાન્ત બનીને
શાન્તચિત્તે કાળધર્મ પામ્યા, ત્યાસુધી પૂર્વોક્ત કથન ગ્રહણ કરવું કાળધર્મ
પામીને તેઓ અન્યુત્તરદેવલોકમાં દેવની પર્યાયે ઉત્પન્ન થયા છે "તં ચેવ
સવ્વં અવસેસિયં નેયવ્વ" આ પ્રમાણે જ કહેલું છે તેથી "સમણાય સમ-
ણીઓ ય સ્વામેત્તા"થી શરૂ કરીને 'સટ્ઠિ મત્તાઠં અણસણાણ છેદિત્તા' પર્યાંતનો
પાઠ ગ્રહણ કરવો જોઈએ, કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે વિલક્ષણ તપસ્યાથી
યુક્ત સયમની આરાધના કરીને સ્કન્દક અણુગાર મરીને અન્યુત દેવલોક નામના

॥ अथ द्वितीयशतके द्वितीयोद्देशक प्रारभ्यते ॥

द्वितीय शतकीय द्वितीयोद्देशकस्य सक्षेपेण विचारणीया विषयाः, यानि समुद्घाताः कियन्त इति गौतमस्य प्रश्नः । वेदनासमुद्घात-कषायसमुद्घात-मरणसमुद्घात वैकियसमुद्घात - तैजससमुद्घात-आहारकसमुद्घात-केवलिसमुद्घातमेवात् सप्तसमुद्घाताः इति भगवत् उच्यते । भावितात्मानगारस्य वर्णनमिति ॥

केन मरणेन मृतस्य जीवस्य संसारो वर्द्धते इति अयमेव शतकस्य प्रथमोद्देशके कथितम् मरणञ्च समुद्घातसमनवृत्तस्य भवति प्रकारान्तरेणापि भवतीति द्वार

दूसरे शतक का द्वितीय उद्देशक प्रारभ

द्वितीय शतक संप्रधी द्वितीय उद्देशक में जिन २ विषयों का विचार किया गया है, वे सक्षेप से इस प्रकार हैं ।

प्रश्न—समुद्घात कितने होते हैं—ऐसा गौतम का प्रश्न

उत्तर—समुद्घात सात होते हैं—एक वेदना समुद्घात, दूसरा कषाय समुद्घात, तीसरा मरण समुद्घात, चौथा वैकिय समुद्घात, पांचवां तैजस समुद्घात, छठा आहारक समुद्घात, और सातवां केवली समुद्घात, इस प्रकार से ये सात समुद्घात होते हैं—ऐसा प्रश्न का उत्तर, भावितात्मा अनगारका वर्णन (किस मरण से मरे हुए जीव का संसार बढ़ता है) ऐसा प्रश्न द्वितीय शतक के प्रथम उद्देशक में किया गया और उसका उत्तर भी वहीं पर दे दिया गया । इसी प्रश्न से यह बात भी स्पष्ट रहती है कि मरण दो प्रकारसे हो सकता है—एक मारणांतिकसमुद्घात पूर्वक और दूसरा मारणांतिकसमुद्घात के बिना, इसलिये द्वार गाथा

जीव शतकेना जीव उद्देशकेना प्रारभ

जीव शतके ना जीव उद्देशकेना के के विषयानु निश्चय कथनाभा आभुं
उ, ते विषये सक्षेपभा आ प्रभावे उ—

जीवमनो प्रश्न समुद्घात केटवा होय उ ?

उत्तर—समुद्घात सात होय उ (१) वेदना समुद्घात, (२) कषाय समुद्घात (३) मरण समुद्घात (४) वैकिय समुद्घात (५) तैजस समुद्घात (६) आहारक समुद्घात (७) केवलि समुद्घात आ प्रकारेना प्रश्न नो उत्तर भावितात्मा अनगारानु वर्णन ।

“कषा मरणधी भरता एवमो संसार वधि उ ?” आनो प्रश्न पठेता शतकेभा पूछनाभा आभ्यो उ अने तेनो उत्तर आपवाभा आभ्यो उ ते प्रश्न साथे आ वातने पण समथे उ के मरण नि प्रकारेना उ—(१) मारणांतिक

હિં ” કુત્રોત્પત્સ્યતે ભગવાનાહ—‘ ગોયમા ’ હે ગૌતમ । “ મહાવિદેહેવાસે સિજ્ઞિહિતિ ” મહાવિદેહે વર્ષે મહાવિદેહક્ષેત્રે સેત્સ્યતિ સિદ્ધો ભવિષ્યતિ ‘ બુઝ્ઞિ-
હિં ’ ભોત્સ્યતે કેવલાલોકેન લોકાલોકં જ્ઞાસ્યતિ “ મુચ્ચિહિં ” મોક્ષયતે કર્મ
બન્ધનાત્ પૃથક્ ભવિષ્યતિ “ પરિણિવ્વાહિં ” પરિનિર્વાસ્યતિ કર્મસંતાપાભાવેન
શીતલી ભવિષ્યતિ “ સન્વદુઃખાણં અન્તં કરિહિં ” સર્વદુઃખાનામ્=શારીરમાનસ
દુઃખાનામ્ અન્તં નાશં કરીષ્યતીતિ ॥ સૂ૦ ૧૭ ॥

इति श्रीविश्वविख्यात-जगद्गुरु-प्रसिद्धवाचकपञ्चदशभाषाकलितललितकला-
पालापरु-प्रविशुद्धगद्यपद्यनैरुग्रन्थनिर्मापक-वादिमानमर्दक-श्रीशाहूछत्रप-
तिकोल्हापुरराजप्रदत्त-‘ जैनशास्त्राचार्य ’ पदभूषित-कोल्हापुरराज-
गुरु-बालब्रह्मचारि-जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकरपूज्यश्री-घासीलाल-
व्रतिविरचितायां श्रीभगवतीसूत्रस्य प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां
व्याख्यायां द्वितीयशतके प्रथमोद्देशकः समाप्तः ॥२-१॥

(ગોયમા ! મહાવિદેહે વાસે સિજ્ઞિહિતિ, બુઝ્ઞિહિં, મુચ્ચિહિં, પરિ-
ણિવ્વાહિં સન્વદુઃખાણમન્તં કરિહિં) હે ગૌતમ । વહ સ્કન્દક દેવ વહાં
સે ચ્યુન હોકર મહાવિદેહ ક્ષેત્ર સે (સિજ્ઞિહિં) સિદ્ધ હોગે, (બુઝ્ઞિ-
હિં) કેવલ જ્ઞાનરૂપ આલોક સે લોકાલોકકે જાનને વાલે હોગે,
(મુચ્ચિહિં) કર્મબન્ધન સેસર્વથા પૃથક્ભૂત હોજાવેંગે (પરિનિવ્વાહિં)
શારીરિક, માનસિક સમસ્ત દુઃખોં કા અન્ત-અભાવ-કરદેંગે ॥ ૧૭ ॥

श्री जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्य श्रीघासीलालजी
महाराजकृत भगवतीसूत्रकी प्रमेयचन्द्रिका व्याख्या
के दूसरे शतकका पहला उद्देशक समाप्त ॥२-१॥

આપતાં પ્રભુ કહે છે—“ ગોયમા ! મહાવિદેહે વાસે સિજ્ઞિહિતિ, બુઝ્ઞિહિં, મુચ્ચિ-
હિં, પરિનિવ્વાહિં, સન્વદુઃખાણમન્તં કરિહિં ” હે ગૌતમ ! તે સ્કન્દક દેવ
ત્યાંથી વ્યવહારે મહાવિદેહ ક્ષેત્રમાંથી “ સિજ્ઞિહિં ” સિદ્ધ પદ પામશે, “ બુઝ્ઞિ-
હિં ” કેવળ જ્ઞાનરૂપ આલોકથી લોકાલોકને બાબુનાર થશે, “ મુચ્ચિહિં ”
કર્મબન્ધનથી સર્વથા મુક્ત થઈ જશે, “ પરિનિવ્વાહિં ” કર્મરૂપ સંતાપના
અભાવને લીધે મિવકુલ શીતલ થઈ જશે, અને (સન્વદુઃખાણમન્તં કરિહિં)
શારીરિક, માનસિક સમસ્ત દુઃખોના અન્ત (અભાવ) કરશે ॥ સૂ ૧૬ ॥
॥ ઇતિશ્રી જૈનાચાર્ય જૈનધર્મદિવાકર પૂજ્યશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજકૃત ભગવતીસૂત્રની
પ્રિયદર્શિની વ્યાખ્યાના બીજા શતકનો પહેલો ઉદ્દેશક સમાપ્ત ॥૨-૧॥

ગાયોક્ત સમુદ્ઘાતસ્વરૂપં નિરૂપયતિ “કઙ્ણં મંતે સમુદ્ઘાયા” ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—કઙ્ણં મંતે ! સમુદ્ઘાયા પન્નત્તા ગોયમા ! સત્ત સ-
મુદ્ઘાયા પન્નત્તા તં જહા વેયણાસમુદ્ઘાણ્ણં એવં સમુદ્ઘાય
પદં છાઝમત્થિયસમુદ્ઘાયવજ્જં ભાણિયવ્વં જાવ વેમાણિયાણં
કસાયસમુદ્ઘાયા અપ્પાબહુયં । અણગારસ્સ ણં મંતે ! ભાવિ-
યપ્પણો કેવલિસમુદ્ઘાયે જાવ સાસયં, અણાગયદ્ધં કાલં
ચિટ્ઠંતિ, સમુદ્ઘાયપદં નેયવ્વં ॥ ૧ ॥

છાયા—કતિ સ્વલુ ભદન્ત ! સમુદ્ઘાતાઃ પ્રજ્ઞાતાઃ ? ગૌતમ ! સત્ત સમુદ્ઘાતાઃ પ્રજ્ઞાતાઃ
તદ્યથા વેદનાસમુદ્ઘાતઃ એવં સમુદ્ઘાતપદં છાઝસ્થિકસમુદ્ઘાતવર્જં મણિતવ્યમ્
યાવદ્વેમાનિકાનામ્ ક્ષાયસમુદ્ઘાતાઃ અલ્પવહુત્વમ્ । અણગારસ્ય સ્વલુ ભદન્ત !

મેં કહે હુએ સમુદ્ઘાત કા સ્વરૂપ સૂત્રકાર નિરૂપિત કરતે હૈં—(કઙ્ણં
મંતે સમુદ્ઘાયા) ઇત્યાદિ ।

સૂત્રાર્થ—(કઙ્ણં મંતે સમુદ્ઘાયા પણ્ણત્તા) હે ભદન્ત ! સમુદ્ઘાત-
કિતને પ્રકારકે હૈં ? (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (સત્ત સમુદ્ઘાયા પણ્ણત્તા)
સમુદ્ઘાત સાત પ્રકારસે કહે ગયે હૈં । (તં જહા) જો સ્વ પ્રકાર સે હૈં
(વેયણાસમુદ્ઘાણ્ણં) વેદના સમુદ્ઘાત, (એવં સમુદ્ઘાયપદં છાઝમત્થિયસમુદ્ઘા-
યવજ્જં ભાણિયવ્વં) સ્વ તરહ સમુદ્ઘાત પદ જાનના ચાહિયે । પરંતુ સ્વમેં
આએ હુએ છાઝસ્થિક—છાઝસ્થ સમ્બન્ધી સમુદ્ઘાત નહીં કહના ચાહિયે ।
(જાવ વેમાણિયાણં કસાયસમુદ્ઘાયા અપ્પા બહુયં) સ્વ તરહ યાવત્
વેમાનિક તક જાનના ચાહિયે । ક્ષાયસમુદ્ઘાત તથા અલ્પવહુત્વ કહના

સમુદ્ઘાતપૂર્વક અને (૨) મારણાતિક સમુદ્ઘાત વગર, તેથી દ્વારગાથામાં કહેલા
સમુદ્ઘાતનુ સૂત્રકાર નિરૂપણ કરે છે—“કઙ્ણં મંતે । સમુદ્ઘાયા” ઇત્યાદિ

સૂત્રાર્થ—(કઙ્ણં મંતે ! સમુદ્ઘાયા પણ્ણત્તા ?) હે ભગવન્ સમુદ્ઘાત કેટલા
પ્રકારના છે ? (ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (સત્તસમુદ્ઘાયા પણ્ણત્તા) સમુદ્ઘાત
સાત પ્રકારના કહ્યા છે (તજહા) તે પ્રકારો આ પ્રમાણે છે (વેયણા સમુદ્ઘાણ્ણં)
વેદના સમુદ્ઘાત (એવ સમુદ્ઘાયપદ છાઝમત્થિયસમુદ્ઘાયવજ્જં ભાણિયવ્વં)
આદિના ભેદથી જે પ્રમાણે પ્રજ્ઞાપના સૂત્રમાં દર્શાવ્યા છે તે પ્રમાણે સાત
સમુદ્ઘાત સમજવા પણ તેમાં આવતા છાઝસ્થિક સમુદ્ઘાતને અહીં સમાવેશ
કરવો ભેદથી નહીં (જાવ વેમાણિયાણ કસાયસમુદ્ઘાયા અપ્પાવહુયં) એજ
પ્રમાણે વૈમાનિક પર્યન્ત જાણવું સમુદ્ઘાત તથા અલ્પ વહુત્વ કહેવું.

भावित्वात्मनः केवलिसमुद्घातः यावत् साध्यतम् अनागतद्वा काल विच्छेति
समुद्घातपद नेतव्यम् ॥

टीका—‘कश्च भते । समुद्घाया पणसा’ कति खलु मदन्त ! समुद्घाता
प्रज्ञाताः तथ हन्धातोः समुत्सृष्टकात् क्तप्रत्यये कृते सति समुद्घात इतिपदं सिध्य
ति हन्धातोर्हन्तन मितिरूपं भवति तत्र हन्तनं निर्मरणम् समुपसर्गस्य एकीभावो
ऽर्थः ‘उत्’ इत्युपसर्गस्य प्राप्त्यर्थः तथा ऐकीभावेन प्राप्त्येन च पाठोर्निर्माण
समुद्घातः अपेक्षीभावः केन सह कस्यापि विवक्षित ? इतिषेदमोच्यते यदा सद्य
आत्मा वेदनादिसमुद्घातगतो भवति तदा वेदनादि विषयकानुभवज्ञानाकारेण परि
कृतो भवतीतिवेदनाद्यनुभवज्ञानेन सहात्मन एकीभावो भवति । अयाय धातुः प्राक्

(अणगारस्स ण भते । भाविअण्णो केवलिसमुद्घाए जाव सासयं अजा
गयदं कालं विच्छेति ?) हे मदन्त ! भावितात्मा अनगर के केवलिसमु
द्घात होता है । यावत् वे सिद्ध साध्यत अनागतद्वाकालतक रहते हैं
क्या ? (समुद्घातपदं नेतव्य) समुद्घात पद जानना चाहिये ॥

टीकार्थ—(कश्च भते । समुद्घाया पणसा) हे मदन्त ! समुद्घात
कितने प्रकार के कहे गये हैं ? । एकीभाव से प्रयत्नापूर्वक हन्तन करना
याने आत्मप्रदेशों का बहार निकालना समुद्घात कहलाता है ।

शंका—आपने जो समुद्घात का ऐमा शब्दार्थ किया है—सो यह एकी भाव
किसका किसके साथ कहा विवक्षित हुआ है ? उत्तर—जब आत्मा वेदना
आदि समुद्घातवाला होता है उस समय वह वेदनादि के विषय करने
वालों अनुभवरूप ज्ञानके आकारसे परिणत हो जाता है । तात्पर्य—इस कथन

(अणगारस्स ण भते । भाविअण्णो केवलिसमुद्घाए जाव सासयं अजा
गयदं कालं विच्छेति ?) हे मदन्त ! भावितात्मा अणुगार केवलिसमुद्घात करे ?
(त्वांभी शङ्क कथीने) ते सिद्ध साध्यत, अनागतद्वाकाल सुभी रहे ?
(पदन्तुं कथन भक्षु कश्च) (समुद्घातपदं नेतव्य) अथ प्रश्नो
अणुगार प्रज्ञापनासूत्रना समुद्घात पदार्थ दर्शना प्रमाणे समर्थये।

टीका—“कश्च भते । समुद्घाया पणसा” हे मदन्त । समुद्घात
कैटवा प्रकारना कहा ? केवल भावभी प्रणजतापूर्वक घात निश्चय कश्च
तेनुं नाम समुद्घात छे।

शंका—आप समुद्घातमे अर्थ समझवता ने केवल अपनी बात
कहा छे ते कानो कानो साथेने केवल आप अर्था समर्थये ?

उत्तर—अपने आत्मा वेदना आदि समुद्घात वांछे धार छे त्वां
ते वेदनादिने विषय कश्चा अनुभव रूप ज्ञानना आकारे परिणत छे केवल

લ્યેન કથં ભવતીતિવેદત્ર કથયતે યસ્માત્કારણાત્ વેદનાદિસમુદ્ઘાતે પરિણત આત્મા
 બહૂન્ વેદનીયાદિકર્મપ્રદેશાન્ કાલાન્તરેऽનુભવયોગ્યાન્ ઉદીરણાકરણેનાકૃષ્યોદયે
 પ્રક્ષિપ્ય અનુભૂયચ નિર્જરયતિ આત્મપ્રદેશૈઃ સહ શિલ્ષ્ટાન્ શાતયતિ તતઃ પ્રાવલ્યેન
 ઘાતઈતિ કથયતે ભગવાનાહ—‘ ગોયમા ’ इत्यादि “ ગોયમા ” हे गौतम!

કા યહ હૈ કિ જિસ પ્રકાર ઘટ કો જાનને વાલા આત્મા ઘટ કો જાનતે
 સમય તાદ્વિષયક જ્ઞાન કે આકારસે પરિણત હો જાતા હૈ—તમી વહ ઘટ
 કો જાનતા હૈ—હસી પ્રકાર વેદના આદિ સમુદ્ઘાત કરને વાલા આત્મા
 મી જવ તક વેદના આદિ સમુદ્ઘાત કો વિષય કરનેવાલે જ્ઞાન સે યુક્ત
 નહીં હોગા, તવતક વહ વેદનાદિ સમુદ્ઘાત કો નહીં જાન સકેગા,
 અતઃ જવ વહ ઉન્હે જાનેગા તો યહ વાત નિશ્ચિત હૈ કિ વહ તદ્વિષયક
 જ્ઞાન કે આકાર મેં પરિણત હો ગયા હૈ। તમી વહ ઉન્હે જાન સકા હૈ।
 હસ તરહ સે જો વેદના આદિ કે અનુભવ-જ્ઞાન કે સાથ આત્મા કા તદા
 કારરૂપ સે પરિણમન હોતા હૈ વહી આત્મા ઓર વેદના આદિ અનુભવ
 જ્ઞાન કા એકીભાવ હૈ। તાત્પર્ય કહને કા યહી હૈ કિ જિસ સમુદ્ઘાત મેં
 આત્મા કી પ્રવૃત્તિ હો રહી હો ઉસકે અનુભવ જ્ઞાન કે સાથ વહ આત્મા
 એકમેક હોકર ઉન સંવધી કર્મો કો આત્મપ્રદેશોસે વહાર નિકાલના
 યહી સમુદ્ઘાત કા શબ્દાર્થ હૈ। ઓર જવ આત્મા વેદના આદિ
 સમુદ્ઘાત કે રૂપ મેં પરિણત હો જાતા હૈ—તવ વહ વેદનીય
 આદિ કર્મ કે પ્રદેશો કો કિ જો કાલાન્તર મેં અનુભવ કરનેકે
 યોગ્ય હોં ઉન્હે ઉદીરણા કે દ્વારા સ્વીચકર ઉદય મેં લાતા હૈ—ઉદય મેં

તાત્પર્ય એ છે કે જેમ ઘટ (ઘડો) ને જાણનારો આત્મા ઘડાને જાણતી
 વખતે તે ઘટને જાણે છે— એજ પ્રમાણે વેદના આદિ સમુદ્ઘાત કરનારો
 આત્મા પણ ત્યાં સુધી વેદના આદિ સમુદ્ઘાત વિષયક જ્ઞાન વાળો નહીં
 થાય, ત્યાં સુધી તે વેદનાદિ સમુદ્ઘાતને જાણી શકશે નહીં એ તે તેને જાણશે
 તો તે વાત નિશ્ચિત છે કે તે તેના વિષેના જ્ઞાનના આકારમાં પરિણત થઈ
 ગયો છે. ત્યારે જ તે તેને જાણી શકે છે એજ પ્રમાણે વેદના આદિના
 અનુભવ-જ્ઞાનની સાથે આત્માનું જે તદાકાર રૂપે પરિણમન થાય છે તેને જ
 આત્મા અને વેદના આદિ અનુભવ જ્ઞાનનો એકીભાવ કહે છે કહેવાનું તાત્પર્ય
 એ છે કે જે સમુદ્ઘાતમાં આત્મા એકમેક થઈને તેની સાથે સંબંધ રાખનારા
 કર્મેણે આત્મપ્રદેશોથી અલગ કરે છે, એનું નામજ સમુદ્ઘાત છે—એજ સમુદ્ઘાતનો
 શબ્દાર્થ છે, અને જ્યારે આત્મા વેદના આદિ સમુદ્ઘાતરૂપે પરિણમે
 છે ત્યારે તે કાલાન્તરે અનુભવવાને યોગ્ય કર્મપ્રદેશોને ઉદીરણ દ્વારા ખેંચીને

‘સત્સમુદ્ગધાયા પલ્લતા’ સત્સમુદ્ગધાતાઃ મહત્તા ‘તજહા’ સદ્યથા ‘વેદના સમુદ્ગધા’ વેદનાસમુદ્ગધાતઃ एते च वेदना समुदधातादय यथा प्रज्ञापनासूत्रे कथितास्तथैव इहापि दातव्या इत्याप्तयेनाह ‘एवं’ इत्यादि “एव समुदधातपय छाठमत्थियसमु ग्धायवज्ज माणियम्” एव समुदधातपद छप्रस्थिरसमुदधातवर्जं मणितम्पम् ‘छा

છાકર ડનકા વેદન કરતા હૈ—ફિર ડનકી નિર્જરા કરતા હૈ । અર્થાત્—આત્મપ્રદેશોં કે સાથસશ્લિષ્ટ દુષ્ઠ ડન વેદનીય આદિ કર્મ પ્રદેશોં કી વહ આત્મા પરિણાટના કરતા હૈ , યહી પ્રયલતા પૂર્વક ઘાત હૈ । તાત્પર્ય યહ હૈ કિ જો વેદનીય આદિ કર્મોં કે પ્રદેશ કાલ્પાન્તર મેં ડદ્ય આન કેયોગ્ય થે ડન્હે વેદનીયાદિ સમુદધાતઘાલા દુષ્ઠા આત્મા ડદીરણા કર ણરૂપ પ્રયલતા—કે ઘલ સે ડદ્ય મેં લાકર સ્વપા દેતા—દૂર કર દેતા હૈ—સો હસ પ્રકાર સે યહ સ્વપા દેના—દૂર કરના હી પ્રયલતા પૂર્વક ઘાત હૈ । હસ તરહ સમુદધાત કા અર્થ સ્પષ્ટકરકે મગવાન ગૌતમ સ્વામી કે પ્રશ્ન કા ઉત્તર દેતે દુષ્ઠ કહતે હૈ કિ—(ગોયમા) હૈ ગૌતમ ! (સત્સ સમુ ગ્ધાયાપલ્લતા) વે સમુદધાત સાત કહે ગયે હૈ । યે વેદના સમુદધાત આદિ કે મેદ સે સાત હો જાતે હૈ । ઓર જિસ પ્રકાર સે યે પ્રજ્ઞાપના સૂત્ર મેં કહે ગયે હૈ ડસી પ્રકાર સે યહાં પર મી જાનના ચાહિયે, હસી આશય સે સૂત્રકાર ને (એવ સમુદ્ગધાતપય છાઠમત્થિય સમુદ્ગધાયવજ્જ માણિયમ્) એસા કહા હૈ (છાપ્રસ્થિર સમુદધાતકો છોડકર) હસક

ઉદયમા લાવે છે—ઉદયમાં લાવતે તેમણે વેદન કરે છે અને ત્યાર બાદ તેની નિર્જરા કરે છે એટલે કે આત્મપ્રદેશોની સાથે સશ્લિષ્ટ (લાવેશો) તે વેદનીય આદિ કર્મ પ્રદેશોની તે આત્મા પરિણાટના કરે છે, એટલે નામ જ પ્રયત્નતા પૂર્વક ઘાત (નિર્જરણ) —છે કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે વેદનીય આદિ કર્મના જે પ્રદેશ કાળાન્તરે ઉદયમાં આવવા ચોખ્ખું હતા તેમને વેદનીય આદિ સમુદધાત મુક્ત થયેલા આત્મા ઉદીરણાકરણ રૂપ પ્રયત્નતા દ્વારા ઉદયમાં લાવતે ખપાવી નાખે છે—દૂર કરી નાખે છે—એ પ્રમાણે તેને દૂર કરવાની અથવા ખપાવવાની ક્રિયાને જ ‘પ્રયત્નતા પૂર્વક ઘાત’ કહે છે

આ પ્રમાણે સમુદ્ધાતનો અર્થ સ્પષ્ટ કરીને હવે સૂત્રકાર જીતમસ્વામીના પ્રશ્નોનો મગવાન મહાવીરે ચો ઉત્તર આપ્યો તે સમજાવે છે (ગોયમા !) કે જીતમ ! (સત્સમુદ્ગધાયા પલ્લતા) સમુદ્ધાત સાત કહ્યા છે વેદના સમુદ્ધાત આદિના કોઈથી તેના સાત પ્રકાર પડે છે તેનું પ્રજ્ઞાપનાસૂત્રમાં જે જણાવેલું છે તે જાહી બઢણ કરવાનું છે એમ સમજાવવા માટે સૂત્રકાર કહ્યું છે કે (એવ સમુદ્ગધાતપય છાઠમત્થિયસમુદ્ગધાયવજ્જ માણિયમ્) છપ્રસ્થિર સમુદ્ધાતને

મસ્થિય સમુઘાયદજ્જં ' ઇતિ યથા ' કઠ્ઠિણં ભંતે ! છાઉમસ્થિયસમુદ્ધાયાપન્નત્તા ' ઇત્યાદિ પ્રકરણસત્ર ન વાચ્યમ્ તેપાં પટકત્વાત્, અત્રતુ સપ્તસમુદ્ધાતાનાં પ્રકરણ મિતિ. " સમુઘાયપયં " ઇતિપ્રજ્ઞાપનાયાઃ પટ્ત્રિંશત્તમં સમુદ્ધાતપદમિહનેતવ્યમ્ તચ્ચેત્યમ્ ' કઠ્ઠિણં ભન્તે ! સમુઘાયા પણ્ણત્તા ' ' ગોયમા ! સત્ત સમુઘા પણ્ણત્તા ' " તે જહા " " વેયણા સમુઘાએ ઇત્યાદિ સમુદ્ધાતવિષયે ભવતિ ઇયં ગાથા—

“ વેયણકસાયસરણે વેઝવિયતેઉએ આહારે ॥

કેવલિએ ચેવમ્બે, જીવમણુસાણસત્તેવ ” ॥

તાત્પર્ય ઇસ પ્રકાર સે હૈ—(કઠ્ઠિણં ભંતે ! છાઉમસ્થિય સમુઘાયા પન્નત્તા) હે ભદન્ત ! છાઉમસ્થિક સમુદ્ધાત ક્રિતને કહેગયે હૈં ? સો ઇસ પ્રકરણકો યહાં છોડ દેના—અર્થાત્—યહ પ્રકરણ યહાં ગ્રહણ નહીં કરના ચાહિયે, ક્યોં કિ છાઉમસ્થિક સમુદ્ધાત છહ હોતેહૈં ઓર યહાં પ્રકરણ ચલ રહા હૈ સાત સમુદ્ધાતકા સો પ્રજ્ઞાપના સૂત્ર મેં જો સાત સમુદ્ધાત કા પ્રકરણ આયા હૈ, ઉસે હી યહાં સમુદ્ધાત પ્રકરણ સમજ્ઞનેકે લિયે ગ્રહણ કરના ચાહિયે, છહ સમુદ્ધાત કા વર્ણન કરનેવાલા પ્રકરણ યહાં ગ્રહણ નહીં કરના ચાહિયે । શેષ સચ ગ્રહણ કર લેના ચાહિયે । (સમુઘાયપયં) યહ પ્રજ્ઞાપના કા છત્તીસવાં પદ હૈ ઇસમેં સમુદ્ધાત સંબંધી વિવેચન હુઆ હૈ સો ઇસ પદ કો યહાં લેના ચાહિયે, યહ પદ ઇસ પ્રકાર સે હૈ (કઠ્ઠિણં ભંતે ! સમુદ્ધાયા પણ્ણત્તા ગોયમા સત્ત સમુદ્ધાયા પણ્ણત્તા, તે જહા વેયણા સમુદ્ધાએ, કસાયસમુદ્ધાએ) ઇત્યાદિ । સમુદ્ધાતકે વિષયમેં યહ ગાથા ભી હૈ—

છોડીને આ-કથનનુ તાત્પર્ય નીચે પ્રમાણે છે—(કઠ્ઠિણં ભંતે ! છાઉમસ્થિય સમુઘાયા પન્નત્તા ?) હે ભદન્ત ! છાઉમસ્થિક સમુદ્ધાત કેટલા છે ? તો તેને લગતા પ્રકરણને અહીં છોડી દેવાનુ છે—તે પ્રકરણ અહીં ગ્રહણ કરવાનું નથી, કારણ કે છાઉમસ્થિક સમુદ્ધાત છોડાય છે અને અહીં સાત સમુદ્ધાતોનું પ્રકરણ ચાલી રહુ છે પ્રજ્ઞાપના સૂત્રમા સાત સમુદ્ધાતોનુ બે પ્રકરણ છે તે પ્રકરણ બે અહીં સમુદ્ધાત પદથી ગ્રહણ કરવાનું છે, છ સમુદ્ધાતોનું વર્ણન કરનાર પ્રકરણ અહીં ગ્રહણ કરવાનુ નથી કારણ કે સમુદ્ધાત તો સાત છે. (સમુઘાયપય) તે પ્રજ્ઞાપના સૂત્રનું છત્રીસમુ પદ છે તેમા સમુદ્ધાતોનું વર્ણન કર્યું છે તો તે છત્રીસમુ પદ અહીં ગ્રહણ કરવાનું છે. તે પદ આ પ્રમાણે છે (કઠ્ઠિણં ભંતે ! સમુઘાયા પણ્ણત્તા ! ગોયમા ! સત્તસમુઘાયા પણ્ણત્તા, તે જહા—વેયણાસમુઘાએ, કસાયસમુઘાએ) ઇત્યાદિ । સમુદ્ધાત વિષે આ ગાથા પણ છે

छाया—वेदनाऽप्रायमरण वैमिषीभ्रमस्याधारकः॥

कषयिष्यमथ च जीवमनुष्याणां गतेषु ॥

तत्र जीवपद मनुष्यपद च समापि समुद्घाताः। भास्विभारकादिषु यथा बीज
मित्यर्थः। तत्र वेदनासमुद्घातान्न समवदन् आत्मा चक्षुर्गन्धस्पर्शपुद्गलानां घातनं विनाशं
करोति । १। कषायसमुद्घातेन समवदन् आत्मा कषायपुद्गलानां घातनं करोति
। २। मरणान्तिमसमुद्घातेन समवदन् आत्मा आयुर्वदकर्मपुद्गलानां घातनं करोति । ३।
वैमिषसमुद्घातान्न समवदन् आत्मा स्वमदच्छात्र शरीरात् बहिर्निष्क्राम्य शरीर
विर्गमनादव्यवसायम्, आयागतश्च संख्ययथात्मनपरिमितं दण्डं निवृत्तति नियुज्य

“ययणकमायमरणे, यउयिष्य य तेउय य आधार ।

वेयलिप्य वेय मये, जीवमणुरराण सरोय ॥ १ ॥

इस गाथा के अनुसार जीव पद और मनुष्यपद में च सात समुद्घात
होते हैं । नाशक आदि जीवों में तो इन सातों में से यथायोग्य समुद्घात
ही होते हैं । सात नहीं होते हैं ।

वेदना समुद्घात घाता जीव वेदनीय कर्मके पुद्गलों का नाश करता
है । १। कषाय समुद्घातघाता जीव कषायक पुद्गलों का नाश करता है । २।
मरणान्तिक समुद्घात से युक्त हुआ आत्मा आयुर्वद कर्म के पुद्गलों का
नाश करता है । ३। वैमिषसमुद्घात से युक्त हुआ जीव अपने आत्म
प्रदेशों को शरीर से बाहर निकाल कर उनका एक मोटा संख्यात
योजनरक ढंवा ढूँढ़ बनाता है, इस ढूँढ़ की गाथाई ढूँढ़ बनाने वाले
व्यक्ति के शरीर के जितनी ही होती है। ढूँढ़ करने के बाद वह आत्मा
यथास्यूल वैमिषशरीर नाम कर्मके पुद्गलोंको कि जिह्व इमने पहिसेसं

वेयण कमाय मरणे यउयिष्यतेउमआधार ॥

वेयलिप्य वेय गरी, जीवमणुरराण सरोय ॥ १ ॥

आ गाथायां अत्रात्रा प्रभावा एवमथ अने अनुष्यपदार्थं यात यशुद्घात
रेय उ नारकादि एवाभां तो ते यातगांभी येअता अनुसार यशुद्घातो अ
याय उ, सारी यशुद्घात यत्र नशी, वेदना यशुद्घातयात्रा एव वेदनीय कर्मोनां
पुद्गलोना नाश करे उ कषाय यशुद्घात नाश एव कषायनां पुद्गलोना नाश
करे उ मरणान्तिक यशुद्घातयात्रा एव आयुर्वदार्थोना पुद्गलोना नाश करे उ
वैमिष-यशुद्घातयात्रा एव याता ॥ आत्मपदार्थोने शरीरनी जरार शरीरने
तेना जोड भागे, अ आत्म सोअन प्रभावा यात्रा दद जनाने उ, ते ददनी
पदोनाउ ते दद जनानार अजिना शरीर जेटती अ होय उ दद जनाना
पडी ते अदगा यथारमथ वैमिष शरीर नाम कर्मोनां पुद्गलो के जेअने तथ

ચ યથાસ્થૂલાન્ વૈક્રિયશરીરનામકર્મપુદ્ગલાન્ પ્રાગ્નદ્વાન્ શાતયતિ = વિનાશયતિ, યથા સૂક્ષ્માંશ્વાદત્તે ।

“વેડવ્વિયસમુગ્ધાણં સમોદન્નહં સંખેજ્જાઈં જોયણાઈં દંડં નિસિરહં અહાવાયરે- પોગ્ગલે પરિસાહેઈ અહાસુહુમે પોગ્ગલે આઈન્તિ ”

વૈક્રિયસમુદ્ધાતેન સમવહંતિ. સંખ્યેયાનિ યોજનાનિ દ્વંડં નિસૃજતિ યથા વાદરાન્ પુદ્ગલાન્ પરિશાતયતિ યથા સૂક્ષ્માન્ પુદ્ગલાનાદદાતીતિ । છાયા--

एवं तैजसाहारकसमुद्घातावपि व्याख्येयौ केवलिसमुद्घातेन समवहतः केवलि वेदनीयादिकर्म पुद्गलान् शातयति इति ।

एतेषु सर्वेषु समुद्घातेषु शरीरात् जीवप्रदेशानां वहिर्निर्गमनं भवति. सर्वे चैते- समुद्घाता अन्तर्मुहूर्त्तमाना भवन्ति । केवलं केवलिसमुद्घातोऽष्टसामयिकः । एते च

બાંધ રક્ષા હૈ નષ્ટ કરતા હૈ ઓર ડનકે નષ્ટ કરનેકે બાદ વહ આત્મા યથાસૂક્ષ્મ વૈક્રિયશરીરનામકર્મકે પુદ્ગલોંકો ગ્રહણ કરતા હૈ । કહા મી હૈ ।

“વેડવ્વિયસમુગ્ધાણં સમોદન્નહં, સંખેજ્જાઈં જોયણાઈં દંડં નિસિરહં, અહાવાયરે પોગ્ગલે પરિસાહેઈ, અહાસુહુમે પોગ્ગલે આઈયંતિ ” જીવ વૈક્રિયસમુદ્ધાત કરતા હૈ । ઇસ સમુદ્ધાત મેં વહ સંખ્યાત યોજનતક અપને આત્મપ્રદેશોં કો દખ્ખાકાર રૂપ મેં લંચા કરતા હૈ, યથા વાદર પુદ્ગલોં કી વહ પરિશાટના કરતા હૈ ઓર યથાસૂક્ષ્મ પુદ્ગલોં કો વહ ગ્રહણ કરતા હૈ । ઇસી તરહ સે તૈજસ સમુદ્ધાત ઓર આહારક સમુદ્ધાત ઇન દો સમુદ્ધાતોં કો મી જાનના ચાહિયે ।

इन समस्त समुद्घातों में शरीर से जीव के प्रदेशों का बाहर निकलना होता है । इन सब समुद्घातों का काल अन्तर्मुहूर्त्त का होता है ।

પહેલેથી બાંધી રાખ્યાં હોય છે, તેમને નષ્ટ કરે છે અને તેમનો નાશ કર્યા પછી તે આત્મા યથાસૂક્ષ્મ વૈક્રિય શરીર નામકર્મના પુદ્ગલોને ગ્રહણ કરે છે. કહ્યું પણ છે- (વેડવ્વિય સમુગ્ધાણં સમોદન્નહં, સંખેજ્જાઈં જોયણાઈં દંડં નિસિરહં, અહાવાયરે પોગ્ગલે પરિસાહેઈ અહાસુહુમે પોગ્ગલે આઈયંતિ) ૭૫ વૈક્રિય સમુદ્ધાત કરે છે તે સમુદ્ધાતમાં તે પોતાના આત્મપ્રદેશોને દડાકારે સંખ્યાત યોજન સુધી લંબાવે છે, યથા બાદર પુદ્ગલોની તે પરિશાટના કરે છે અને યથાસૂક્ષ્મ પુદ્ગલોને તે ગ્રહણ કરે છે એજ પ્રમાણે તૈજસ સમુદ્ધાત અને આહારક સમુદ્ધાત વિષે પણ સમજવું તે બધા સમુદ્ધાતોમાં આત્મપ્રદેશોનું શરીરમાંથી બહાર નિર્ગમન (નીકળવાની ક્રિયા) થાય છે તે બધા સમુદ્ધાતોનો સમય અન્તર્મુહૂર્તનો હોય છે. ફક્ત કેવલિ નો કાળ આઠ સમયનો કહ્યો છે.

સમુદ્ધાતા એકેન્દ્રિય ચિક્ષેન્દ્રિયાણા માધ્યાસ્ય એવ મન્વન્તિ । વાયુનારક્ષાપાત્
 ચત્વારઃ સમુદ્ધાતાઃ । દેવાનાં પચ્ચેન્દ્રિયતિરથાં ચ પચ્ચ । મનુષ્યાનાં તુ સ્પ
 સમુદ્ધાતા મન્વન્તીતિ । એકેન્દ્રિયાદારમ્ય મનુષ્યપર્યન્ત સમુદ્ધાતેષુ અત્પત્ત્વહુત્વા
 વિદર્શયિતુમાર્હ ‘જાવ ઇત્યાદિ “ જાવ વેમાણિયાણાં ’ યાવત્ વૈમાનિકાનામ્ એકે
 ન્દ્રિયાદારમ્ય વૈમાનિકપર્યન્ત સમુદ્ધાતપ્રકરણ પ્રજ્ઞાપનાતો વિશ્લેષ્યમિતિ “ કસા
 યસમુદ્ધાયા અપ્પામહુયં ” કપાયસમુદ્ધાતાઃ અત્પમહુત્વં ચ વક્તવ્યમ્ । સપ્તસ
 દ્ધાતા મન્વન્તિ । તપ્ત વેદનાસમુદ્ધાત પૂર્વે કથિતઃ, અન્યે ચ પદ્ કપાયસમુદ્ધાત-

સિર્ફ એક કેવલિ સમુદ્ધાત હી એસા હૈ કિ જિસ કા કાલ આઠ સમય
 કા કહા ગયા હૈ । એકેન્દ્રિય ઓર ચિક્ષેન્દ્રિય જીવોં કે આદિ કે ત્રીન
 અર્થાત્-વેદનીય , કપાય ઓર મારણાન્તિક સમુદ્ધાત હોતે હૈ । વાયુ
 કાયિક જીવોં કે ઓર નારક જીવોં કે આદિકે ચાર અર્થાત્-પૂર્વોક્ત ત્રીન
 ઓર ચોથા વૈક્રિય સમુદ્ધાત હોતે હૈ । દેવ ઓર પંચેન્દ્રિય તિર્યચ્છ જન
 કે પાંચ અર્થાત્ પૂર્વોક્ત ચાર ઓર પાંચવા તૈજસ સમુદ્ધાત હોતે હૈ ।
 મનુષ્યોં કે સાતોં હી સમુદ્ધાત હોતે હૈ ।

એકેન્દ્રિય સે લેકર મનુષ્યપર્યન્ત જો સમુદ્ધાત કહે ગયે હૈ છનમેં
 સૂત્રપ્રકાર અત્પમહુત્વ કહને કેલિયે (જાવ વેમાણિયાણ) એસા કહતે હૈ-
 ઇસકા તાત્પર્ય યહ હૈ કિ એકેન્દ્રિયસે લેકર વૈમાનિક દેવોં તક સમુદ્ધાત
 કા પ્રકરણ પ્રજ્ઞાપના સૂત્ર મેં કહા ગયા હૈ સો જહાંસે યહ પ્રકરણ જાન
 લેના ચાહિયે । ‘ કસાયસમુદ્ધાયા અપ્પામહુયં ’ કપાય સમુદ્ધાત તથા
 અત્પ મહુત્વ કહના ચાહિયે સમુદ્ધાત સાત હોતે હૈ । છનમેં વેદના

એકેન્દ્રિય અને ચિક્ષેન્દ્રિય એવોં શરૂઆતના ત્રણ-એટલે કે વેદનીય, કપાય
 અને મારણાન્તિક-સમુદ્ધાત કરે છે વાયુકાયિક એવો તથા નારક એવો શરૂ
 આતના ચાર સમુદ્ધાત કરે છે-એટલે કે પૂર્વોક્ત ત્રણ સમુદ્ધાત અને ચોથો
 વૈક્રિયસમુદ્ધાત કરે છે દેવ અને પચ્ચેન્દ્રિય તિર્યચ્છ શરૂઆતના પાંચ-પૂર્વોક્ત
 ચાર અને તૈજસ-સમુદ્ધાત કરે છે મનુષ્યો સાતે સાત સમુદ્ધાત કરે છે

એકેન્દ્રિયથી લઈને મનુષ્ય પર્યન્તના જે સમુદ્ધાતો કહ્યા છે તેમાં આપ
 મહુત્વ બતાવવા માટે સૂત્રપ્રકાર કહે છે- (જાવ વેમાણિયાણ) તેનું તાત્પર્ય એ છે
 કે એકેન્દ્રિયથી લઈને વૈમાનિક દેવો સુધીના એવનું સમુદ્ધાતનું પ્રકરણ પ્રજ્ઞાપના
 સૂત્રમાં આપેલું છે તો અહીં તે પ્રકરણમાં આપ્યા પ્રમાણે કલન સમજવું
 (કસાય સમુદ્ધાયા અપ્પામહુયં) કપાય સમુદ્ધાત તથા અત્પમહુત્વ કહેલું
 એઈએ. સમુદ્ધાત સાત છે તેમાંથી વેદના સમુદ્ધાતના વિષયમાં આજ

તમારણાન્તિકસમુદ્ધાત-વૈક્રિયસમુદ્ધાત-તૈજસસમુદ્ધાતાહારકસમુદ્ધાતકેવલિ-
સમુદ્ધાતભેદાત્. અત્ર પ્રજ્ઞાપનાસૂત્રે ષટ્ત્રિંશત્તમં ચરમં સમુદ્ધાતપદં જ્ઞાતવ્યં કેવલ-
છાન્દસ્થિકસમુદ્ધાતો નાધ્યેતવ્યઃ અનેનૈવ પ્રકારેણ યાવદ્વૈમાનિકાનાં વૈમાનિક
પર્યન્તં જ્ઞાતવ્યમ્ તથા અલ્પબહુત્વશ્ચાપિ તત્રત્યમેવ વિજ્ઞેયમિતિ સમુદિતાર્થે इति.

ગૌતમઃ પુનઃ પૃચ્છતિઃ ‘અણગારસ્સ’ इत्यादि “અણગારસ્સ ણં મંતે ! ભાવિ-
યંપ્પણો’ અણગારસ્ય સ્વલ્લુ મદન્ત ! ભાવિતાત્મનઃ “કેવલિસમુદ્ધાએ” કેવલિ
સમુદ્ધાતો ભવતિ । અસ્ય વર્ણનં કેવલિસમુદ્ધાતગતં પ્રજ્ઞાપનાસૂત્રસ્ય ષટ્ત્રિંશત્તમ-
સમુદ્ધાતપદોક્તં સર્વં સંગ્રાહ્યમ્ કિપત્પર્યન્તમિત્યાહ ‘જાવ’ इति=યાવત્-તથાહિ-

સમુદ્ધાત પહિલે કહા ગયા હૈં) અન્ય ઔર છહ (કષાયસમુદ્ધાત,
મારણાન્તિક સમુદ્ધાત, વૈક્રિયસમુદ્ધાત તૈજસ-સમુદ્ધાત આહાર
કસમુદ્ધાત ઔર કેવલિસમુદ્ધાત) યે સમુદ્ધાત હૈં । પ્રજ્ઞાપના - સૂત્ર
મેં અન્તિમ છત્તીસવાં સમુદ્ધાત પદ હૈં-સો કેવલ છન્દાસ્થિક સમુદ્ધાત
યહાં નહીં લેના ચાહિયે । હસી તરહ સે વૈમાનિક પર્યન્ત જાનના ચાહિયે ।
તથા અલ્પ બહુત્વ ભી પ્રજ્ઞાપના સૂત્ર સે હી જાન લેના ચાહિયે । ગૌતમ
સ્વામી ભગવાનસે પુનઃ પૂછતે હૈં કિ (અણગારસ્સ ણં મંતે ભાવિયંપ્પણો
કેવલિસમુદ્ધાએ) હે મદન્ત ! ભાવિતાત્મા અણગાર કે કેવલિ
સમુદ્ધાત હોતા હૈં । હસકા વર્ણન કેવલિ સમુદ્ધાત પ્રકરણગત પ્રજ્ઞાપના
સૂત્ર કે છત્તીસવે સમુદ્ધાત પદમેં કિયા ગયા હૈં । સો વહ સવ વર્ણન
યહાં ગ્રહણ કર લેના ચાહિયે । યહ વર્ણન કહાં તક કા ગ્રહણ કરના
ચાહિયે હસકે લિયે કહા ગયા હૈ કિ (જાવ) તાત્પર્ય યહ હૈ કિ
(તત્થસિદ્ધો ભવહ-તેણં તત્થ સિદ્ધા ભવંતિ, અસરીરા જીવઘણા ણાણદં

કહેવામા આંચુ છે. બાકીના છ સમુદ્ધાત નીચે પ્રમાણે છે-કષાય સમુદ્ધાત,
મારણાન્તિક સમુદ્ધાત, વૈક્રિયસમુદ્ધાત, તૈજસસમુદ્ધાત, આહારકસમુદ્ધાત અને
કેવલિસમુદ્ધાત. પ્રજ્ઞાપના સૂત્રમાં છેલ્લું સમુદ્ધાતપદ છે-પણ છાન્દસ્થિકસમુદ્ધાત
અહીં ગ્રહણ કરવાનો નથી એજ પ્રમાણે વૈમાનિક પર્યન્ત સમજ લેવું, તથા
અલ્પબહુત્વ પણ પ્રજ્ઞાપનાસૂત્રમાથી બાણી લેવું ગૌતમસ્વામી મહાવીર પ્રભુને
પૂછે છે (અણગારસ્સ ણં મંતે ! ભાવિયંપ્પણો કેવલિસમુદ્ધાએ) હે મદન્ત !
ભાવિતાત્મા અણગારને કેવલિ સમુદ્ધાત થાય છે ? તેનું વર્ણન કેવલિસમુદ્ધાત
પ્રકરણમાં પ્રજ્ઞાપના સૂત્રના છત્તીસમા સમુદ્ધાત પદમાં કર્યું છે તે સમસ્ત
વર્ણન અહીં ગ્રહણ કરવું, બેઈએ તે વર્ણન કયા સુધી ગ્રહણ કરવું બેઈએ તે
ખતાવવા માટે કહેવામા આંચુ છે કે (તત્થસિદ્ધો ભવહ-તેણ તત્થ સિદ્ધા ભવતિ

“तत्त्वसिद्धो मया तेन तस्य सिद्धा भवति असरीराजीवध्यादंसणणापोचत्
 णिद्विपट्ठाणीरया निरेयणा वितिमिरा विमुद्धा” इति सप्राप्त सासय ममाग
 कालं चिद्वन्ति’ इत्यनेन सयोजनीयम् । ते सिद्धाः शाश्वताऽनागतादा कालपर्य
 तम् तिष्ठन्ति इति भावः ।

प्रज्ञापनासूत्रस्य पदत्रिंशत्तमसमुद्घातविषयस्य सविस्तरं विवेचनं कृतं
 संक्षेपेण प्रदर्श्यते—“इह सप्तसमुद्घाता समाहि वेदनाकपायमरणवैक्रिय तै
 साहारककेवलिसमुद्घातमेवात् ।

वेदनासमुद्घातः असंख्येयकर्मभ्रियः १। कपायसमुद्घातः कपायाखण्डनारिप्रमोहनीय
 कर्मभ्रियः २। मरणान्तिकसमुद्घातोऽन्तर्मुहूर्तशेषायु कर्मभ्रियः ३। वैक्रियतैजसाहा

सणोचत्ता णिद्विपट्ठा, णीरया, निरेयणा, वितिमिरा विमुद्धा) इ
 पाठ को लेकर (सासयमणागयद्ध कालं चिद्वन्ति) इस पाठ के सा
 जोड़ लेना चाहिये, इससे यह अर्थ होता है कि वे सिद्ध शाश्वत अनागताद्वकाल पर्यन्त रहते हैं ।

प्रज्ञापनासूत्र के छत्तीसवें समुद्घात पद में समुद्घात विषय का विस्तार
 रघुर्यक विवेचन किया गया है सो वह संक्षेप से यहाँ प्रकट किया जाता
 है—यहाँ समुद्घात सात कहे गये हैं—एक वेदना समुद्घात, दूसरा कपाय
 समुद्घात, तीसरा मरण समुद्घात, चतुर्थ वैक्रिय समुद्घात, पाँचवाँ
 तैजस समुद्घात, छठा आहारकसमुद्घात और सातवाँ केवलिसमुद्घात ।

इनमें जो वेदनासमुद्घात है वह आशानावेदनीय कर्म के आश्रय
 को लेकर होता है १। कपायसमुद्घात कपायनामक चारित्र मोहनीय
 कर्म के आश्रय को लेकर होता है २। मरणान्तिकसमुद्घात अंतर्मुहूर्त

असरीराजीवध्यानाणवसणोचत्ता णिद्विपट्ठा, निरया निरेयणा वितिमिरा विमुद्धा)
 आ पाठनी करने (सासयमणागयद्ध कालं चिद्वन्ति) आ पाठनी साधने
 देव नेत्रों, तभी नेत्रों अर्थ यात्र है के तेजों सिद्ध शाश्वत अनागता
 द्वाभवे पर्यन्त रहे ।

प्रज्ञापनासूत्रना छत्तीसवां समुद्घात पदमा समुद्घातो विषेण पद्वन
 विस्तारणी करवाग्न आन्वु है तो तेन अर्द्धी संक्षिप्त पद्वन करवाभा आवे
 है अर्द्धी समुद्घात सात कहा है (१) वेदना समुद्घात, (२) कपायसमु
 द्घात (३) मरणसमुद्घात, (४) वैक्रियसमुद्घात (५) तैजस समुद्घात,
 आहारक समुद्घात अने (७) केवलि समुद्घात

(१) वेदना समुद्घात आशानावेदनीय कर्मना आधार बने यात्र है (२) कपाय
 समुद्घात कपाय नामना चारित्र मोहनीय कर्मने आधार यात्र है (३) मर
 णान्तिक समुद्घात अंतर्मुहूर्त प्रभाय आयु आर्द्धी रहे त्यादे कपाय है तभी

કાઃ સમુદ્ઘાતાઃ યથાસંખ્ય વૈક્રિયશરીરતૈજસશરીરાહારકશરીરનામકર્માશ્રયાઃ ૬।
કેવલિસમુદ્ઘાતઃ સદસદ્વેદ્યથુભાથુભનામોચ્ચનીચૈર્ગોત્રિકર્માશ્રયઃ ૭। તત્ર વેદનાસમુ-
દ્ઘાતગતઆત્મા અસાતાવેદનીયકર્મપુદ્ગલાનાં પરિશાટ્ટં કરોતિ, તથાહિ વેદનામી
હિતો જીવઃ સ્વપ્રદેશાત્ અનન્તાનન્તકર્મસ્કન્ધવેષ્ટિતાન્ શરીરાદ્વહિરપિ નિશ્ચિપતિ।
તૈશ્વ પ્રવેશૈર્વેદનજઠરાદિરંધ્રણિ કર્મસ્કન્ધાદ્યવાન્તરાલા નિચાપૂર્ય્યાયામતો વિષ્કમ્ભ-

પ્રમાણ આયુ શોષ રહને પર ક્રિયાજાતા હૈ અતઃયહ અન્તર્મુહૂર્ત શોષાયુકર્મ કે
આશ્રય કો લેકર ક્રિયા જાતા હૈ ૩। વૈક્રિયસમુદ્ઘાત ૪, તૈજસમુદ્ઘાત ૫,
આહારકસમુદ્ઘાત ૬ યથાક્રમ સે વૈક્રિય શરીર, તૈજસશરીર ઓર આહારક
શરીર નામકર્મ કે આશ્રય કો લેકર ક્રિયે જાતે હૈ ૪। કેવલિ સમુદ્ઘાત સાતા
વેદનીય, ઓર અસાતા વેદનીય શુભનામ અશુભનામ, ઉચ્ચગોત્ર તથા નીચ-
ગોત્ર હન ત્રીન અઘાતિયા કર્મોં કે આશ્રય કો લેકર ક્રિયા જાતા હૈ ૭।
તાત્પર્ય હસ કથન કા યહ હૈ કિ વેદના સમુદ્ઘાત મેં રહા હુઆ આત્મા
અસાતા વેદનીય કર્મ કે પુદ્ગલોં કા નાશ કરતા હૈ-અર્થાત્-જબ કોઈ
જીવ વેદના સે અત્યંત પીડિત હો રહા હો એસી સ્થિતિ મેં વહ અપને
આત્મા કે પ્રદેશોં કો કિ જિનપર અનંતાનંત કર્મપુદ્ગલ ચિપકે રહતે હૈ
અપને શરીર સે બાહર નિકાલતા હૈ-અન્હેં ફેલાતા હૈ। વે પ્રદેશ, મુખ,
જઠર આદિ કે રન્ધ્રોં છિન્દ્રોં કો ઓર કર્મસ્કન્ધ આદિ કે અંતરાલ કો
ભરકર, અર્થાત્-હન સબ કે છિન્દ્રોં મેં અન્તરાલ મેં ભરકર-વ્યાસ હો
કર-આયામ ઓર વિષ્કંભ કી અપેક્ષા શરીરમાત્રક્ષેત્ર મેં વ્યાસ હો જાતે

તે અનતર્મુહૂર્તશોષ આયુકર્મને આધારે કરાય છે (૪) વૈક્રિય સમુદ્ઘાત,
(૫) તૈજસ સમુદ્ઘાત અને (૬) આહારક સમુદ્ઘાત અનુક્રમે વૈક્રિય શરીર
તૈજસ શરીર અને આહારક શરીર નામકર્મને આધારે કરાય છે. (૭)
કેવલિ સમુદ્ઘાત સાતાવેદનીય અને અસાતાવેદનીય, શુભનામ અને અશુ-
ભનામ, ઉચ્ચગોત્ર અને નીચગોત્ર, એ ત્રણ અઘાતિયા કર્મોના આધારે
કરાય છે, કહેવાનુ તાત્પર્ય એ છે કે વેદના સમુદ્ઘાતમા રહેલો આત્મા
અસાતા વેદનીય કર્મના પુદ્ગલોનો નાશ કરે છે. એટલે કે વેદના સમુદ્ઘાત
કરતી વખતે વેદનાથી અત્યંત પીડાતો જીવ, જેના પર અનંતાનંત કર્મપુદ્ગલો
ચોટી રહેલા હોય છે એવા પોતાના આત્મપ્રદેશોને ખહાર કાઢે છે-તેમને
ફેલાવે છે તે આત્મપ્રદેશો, મુખ, જઠર આદિના છિદ્રોને અને કર્મસ્કન્ધ
આદિના અંતરાલોને ભરી દઈને એટલે કે તે સૌના છિદ્રોમા અને અંતરા-
લોમા વ્યાપીને-લગાઈ અને પહોળાઈની અપેક્ષાએ શરીરમાત્ર વ્યાપી બન્ય છે

તથાશરીરમાત્ર ક્ષેત્રમભિવ્યાપ્યાન્તમુદ્ધૃષ્ય યાવદ્વચિષ્ઠતે । તસ્મિન્નન્તર્મુદ્ધૃષ્યે પ્રમૂતાસા-
 વાવેદનીયકર્મપુદ્ગલાનાં પરિશ્રાટ કરોષિ ॥ કપાયસમુદ્ધાત સમવશત આત્મા કપાય
 નામકચારિત્રમોહનીયકર્મપુદ્ગલનાં પરિશ્રાટ કરોષિ, તથાદિ-કપાયોદય સમાકુલો
 જીવઃ સ્વપ્રદેશાન્ શરીરાદિર્નિર્ણિષિતિ, સે પ્રદેસૈ ચવનોદરાદિર્ધ્રાણિ કર્મસ્કન્ધા
 ઘપાન્તરાલાનિચાપૂર્વ્યાપામસો વિસ્તારતઃપ્રદેહમાર્ગ ક્ષેત્રમભિવ્યાપ્યાવશ્વિતો ભવતિ
 તથાભૂતશ્ચ પ્રમૂતાન્ કપાયકર્મપુદ્ગલાન્ પરિશ્રાટયતિ ૨ । એવ મરણસમુદ્ધાત
 ગતો જીવઃ આયુ કર્મપુદ્ગલાન્ શ્રાટયતિ વિશેષઃ કેવલ મરણસમુદ્ધાતગતો વિસિષ્ઠ-

હું ઓર વહાં પર લે એક અન્તર્મુદ્ધર્તસમય તક ઠહરે રહતે હું । હસ અન્ત
 મુદ્ધર્ત કાલ મેં લે પ્રમૂત અસાતાવેદનીય કર્મપુદ્ગલોં કી નિર્જરા કર ઢાલતા
 હૈ । હસ ક્રિયા કે કરને કા નામ હી વેદનાસમુદ્ધાત હૈ ॥ કપાય
 સમુદ્ધાત મેં રહા હુઆ આત્મા કપાયનામક ચારિત્રમોહનીય કર્મપુદ્ગલોં
 કા નાશ કરતા હૈ, અર્થાત્-જય જીવ કપાય કે ઉદય સે અત્યન્ત
 આકુલ વ્યાકુલ હો ઉઠતા હૈ, તય યહ અપને પ્રદેશોં કો શરીર સે બાહર
 નિકાલ કર ઉન્હેં ફેલાતા હૈ । યહ ઉન પ્રદેશોં સે ઘવન, ઉદર આદિ
 કે છિન્દ્રોં કો ઓર કર્મસ્કન્ધ આદિ કે અન્તરાલ કો પૂર્ણકર (મરકર)
 આપામ ઓર વિસ્તાર કી અપેક્ષા વેદમાત્ર ક્ષેત્ર કો વ્યાપ્ત કર ઠહરતા
 હૈ । યહ હસ સ્થિતિ મેં એક અન્તર્મુદ્ધર્ત તક હી રહતા હૈ । હતને સમય
 મેં યહ કપાયવેદનીય કર્મ કે પુદ્ગલોં કો અપને ઉપર મેં ધિસેર લેતા
 હૈ-નષ્ટ કર લેતા હૈ ૨ । હસ તરફ મરણસમુદ્ધાત મેં રહા હુઆ
 આત્મા આયુકર્મ કે પુદ્ગલોં કો નષ્ટ કરતા હૈ । અર્થાત્-અપને મુગ્ધમાન

અને ત્યાં તેએ એક અતમુદ્ધૃત સમય સુધી રહે છે તે અન્તમુદ્ધૃતકાળમાં
 તેએ ઘણા જ અસાતાવેદનીય કર્મપુદ્ગલોની નિર્જરા કરી નાખે છે આ ક્રિયા
 નામજ વેદના સમુદ્ધાત છે

કપાય સમુદ્ધાતમાં રહેલો આત્મા કપાય નામના ચારિત્રમોહનીય કર્મ
 પુદ્ગલોના નાશ કરે છે એટલે કે બ્યારે કપાવના ઉદયથી એવ અત્યંત
 આકુળ-વ્યાકુળ થતો હોય છે, ત્યારે તે પોતાના પ્રદેશોને શરીરની બહાર
 ઠાકીને ફેલાવે છે તે ઘવન ઉદર આદિના છિન્દ્રોને તથા કર્મસ્કન્ધોના અતસલોને
 તે આત્મપ્રદેશોથી ભરી છાંતે લાગાઈ અને પહોળાઈની અપેક્ષાએ શરીર પ્રમાણ
 ક્ષેત્રમાં વ્યાપી જાય છે એ સ્થિતિમાં તે એક અતમુદ્ધૃતકાળ સુધીજ રહે છે
 એટલા કાળમાં તે કપાયવેદનીય કર્મના પુદ્ગલોની નિર્જરા કરી નાખે છે

એજ રીતે મરણસમુદ્ધાતમાં રહેલો આત્મા આયુકર્મના પુદ્ગલોના નાશ
 કરે છે એટલે કે તે સમુદ્ધાત કરતો એવ પોતે એટલું આયુષ્ય લેખવવાનું

કાઃ સમુદ્ઘાતાઃ યથાસંરૂપં વૈક્રિયશરીરતૈજસશરીરાહારકશરીરનામકર્માશ્રયાઃ ૬।
કેવલિસમુદ્ઘાતઃ સદસદેશશુભાશુભનામોચ્ચનીચૈર્ગોત્રિકર્માશ્રયઃ ૭। તત્ર વેદનાસમુ-
દ્ઘાતગતઆત્મા અસાતાવેદનીયકર્મપુદ્ગલાનાં પરિશાટં કરોતિ, તથાદિ વેદનાપી
હિતો જીવઃ સ્વપ્રદેશાત્ અનંતાનંતકર્મસ્કન્ધવેષ્ટિતાન્ શરીરાદ્યહિરપિ નિશ્ચિપતિ।
તૈષ્ઠ પ્રદેશૈર્દનજઠરાદિરધ્રણિ કર્મસ્કન્ધાદ્યવાન્તરાલા નિચાપૂર્યાયામતો વિષ્કમ્ભ-

પ્રમાણ આયુ શેષ રહને પર ક્રિયાજાતા હૈ અતઃયહ અન્તર્મુદ્ધર્ત શેપાયુકર્મ કે
આશ્રય કો લેકર ક્રિયા જાતા હૈ ૩। વૈક્રિયસમુદ્ઘાત ૪, તૈજસમુદ્ઘાત ૫,
આહારકસમુદ્ઘાત ૬ યથાક્રમ સે વૈક્રિય શરીર, તૈજસશરીર ઓર આહારક
શરીર નામકર્મ કે આશ્રય કો લેકર ક્રિયે જાતે હૈં। કેવલિ સમુદ્ઘાત સાતા
વેદનીય, ઓર અસાતા વેદનીય શુભનામ અશુભનામ, ઉચ્ચગોત્ર તથા નીચ-
ગોત્ર હન તીન અઘાતિયા કર્મોં કે આશ્રય કો લેકર ક્રિયા જાતા હૈ ૭।
તાત્પર્ય હસ કથન કા યહ હૈ કિ વેદના સમુદ્ઘાત મેં રહા હુઆ આત્મા
અસાતા વેદનીય કર્મ કે પુદ્ગલોં કા નાશ કરતા હૈ-અર્થાત્-જવ કોઈ
જીવ વેદના સે અત્યંત પીડિત હો રહા હો એસી સ્થિતિ મેં વહ અપને
આત્મા કે પ્રદેશોં કો કિ જિનપર અનંતાનંત કર્મપુદ્ગલ ચિપકે રહતે હૈં
અપને શરીર સે વાહર નિકાલતા હૈ-અન્હેં ફેલાતા હૈ। વે પ્રદેશ, મુખ,
જઠર આદિ કે રન્ધ્રોં છિન્દ્રોં કો ઓર કર્મસ્કન્ધ આદિ કે અંતરાલ કો
ભરકર, અર્થાત્-હન સવ કે છિન્દ્રોં મેં અન્તરાલ મેં ભરકર-વ્યાસ હો
કર-આયામ ઓર વિષ્કમ્ભ કી અપેક્ષા શરીરમાત્રક્ષેત્ર મેં વ્યાસ હો જાતે

તે-અનંતર્મુદ્ધર્તશેષ આયુકર્મને આધારે કરાય છે (૪) વૈક્રિય સમુદ્ઘાત,
(૫) તૈજસ સમુદ્ઘાત અને (૬) આહારક સમુદ્ઘાત અનુક્રમે વૈક્રિય શરીર
તૈજસ શરીર અને આહારક શરીર નામકર્મને આધારે કરાય છે (૭)
કેવલિ સમુદ્ઘાત સાતાવેદનીય અને અસાતાવેદનીય, શુભનામ અને અશુ-
ભનામ, ઉચ્ચગોત્ર અને નીચગોત્ર, એ ત્રણ અઘાતિયા કર્મોના આધારે
કરાય છે, કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે વેદના સમુદ્ઘાતમા રહેલો આત્મા
અસાતા વેદનીય કર્મના પુદ્ગલોના નાશ કરે છે એટલે કે વેદના સમુદ્ઘાત
કરતી વખતે વેદનાથી અત્યંત પીડાતો જીવ, જેના પર અનંતાનંત કર્મપુદ્ગલો
ચોટી રહેલાં હોય છે એવા પોતાના આત્મપ્રદેશોને ખડાર કાઢે છે-તેમને
ફેલાવે છે તે આત્મપ્રદેશો, મુખ, જઠર આદિના છિદ્રોને અને કર્મસ્કન્ધ
આદિના અંતરાલોને ભરી દઈને એટલે કે તે સૌના છિદ્રોમા અને અંતરા-
લોમા વ્યાપીને-લખાઈ અને પહોળાઈની અપેક્ષાએ શરીરમાત્ર વ્યાપી બન્ય છે

પુત્રલાન્ પૂર્વવદેવ ઘાટયતિ ૪ પચમેષ તૈજસાહારકસમુદ્ઘાતાવપિ ચિન્તનીયો
નવરં તૈવ્રસસમુદ્ઘાતઃ સેનોલેશ્યાધિનિર્ગમનકલે મયતિ, સ ષ તૈજસનામકર્મ-
પુત્રલાન્નાતને કારણત્વ ૫ । આહારસમુદ્ઘાતગતસ્તુ આહારકસરીરનામકર્મપુત્રલાન્
પરિઘાટયતિ ૬ । કવચિસમુદ્ઘાતગતો જીવ સદસદેષાદિકર્મપુત્રલાન્ પરિઘા-
ટન ક્રોતિ ૭ । નારકજીવાનામાધાશ્વત્વાર સમુદ્ઘાતા મયન્તિ । અસુરકુમારા
દીનાં સર્વેષામપિ દેવાનામાધા પચ્ચમસમુદ્ઘાતા મયન્તિ । વાયુકાયવર્જિતૈકેન્દ્રિય
વિકલેન્દ્રિયાણામાધાસ્રયઃ સમુદ્ઘાતા મયન્તિ । વાયુકાયિકાનામાયાસ્રય સમુ-
દ્ઘાતા, વૈક્રિયસમુદ્ઘાતસહિતાશ્વત્વારઃ સમુદ્ઘાતા મયન્તિ । પંચેન્દ્રિયતિર્વર્ગ-

શરીર નામ કર્મ કે પુત્રલોં કો નિર્જરા કરતા હૈ ૪ । હસી તરહ સે
તૈજસ-સમુદ્ઘાત ૫ ઓર આહારકસમુદ્ઘાત ૬ ખી જાનના ઘાહિયે
પરન્તુ વિશેષેના યહ હૈ, કિ તૈજસ સમુદ્ઘાત સેજોલેશ્યા કે ધિનિર્ગમ-
નિકલને કે કાલ મેં હોના હૈ, ઓર હસકે યત્ સે જીવ તૈજસ નામકર્મ
કે પુત્રલોં કા ઘિનાશ કરતા હૈ અતઃ યહ તૈજસ નામકર્મ કે ઘિનાશ
કરનેમેં કારણ હોતા હૈ ૫ । આહારક સમુદ્ઘાતમેં રહા કુઆ જીવ આહારક
શરીર નામકર્મકે પુત્રલોં કો પરિઘાતના કરતા હૈ ૭ નારક જીવોં
કે આદિ કે ચાર સમુદ્ઘાત હોતે હૈ અસુરકુમાર આદિ સબ દેવોં કે
આદિ કે પાંચ સમુદ્ઘાત હોતે હૈ । વાયુકાયિક કો છોષ્કર પંચેન્દ્રિય
જીવોં કે ઓર વિકલેન્દ્રિય જીવોં કે આદિ કે ત્રીન સમુદ્ઘાત હોતે હૈ ।
વાયુકાયિક જીવોં કે પહિલે કે ત્રીન સમુદ્ઘાત ઓર ચોથા વૈક્રિય
સમુદ્ઘાત હસ તરહ ચાર સમુદ્ઘાત હોતે હૈ । પંચેન્દ્રિયતિર્વર્ગોં કે આદિ

પ્રમાણે તજ્જ સમુદ્ઘાત અને આહારક સમુદ્ઘાતના વિષયમાં પણ સમજવું
જવું તેમાં નીચે પ્રમાણે વિશેષતા છે—તૈજસ સમુદ્ઘાત તેજોલેશ્યા નિકળવાના
સમયે થાય છે અને તેના પ્રભાવથી એવ તૈજસ નામકર્મનાં પુત્રલોંને નાશ
કરે છે તેથી તે સમુદ્ઘાત તૈજસ નામકર્મનાં ઘિનાશમાં કારણ બૂત અને છે
(૬) આહારક સમુદ્ઘાત કરતો એવ આહારક શરીર-નામકર્મની નિર્જરા કરે છે

નારક એવો શરૂઆતના ચાર સમુદ્ઘાત કરે છે અસુરકુમાર આદિ
અપખ દેવો શરૂઆતના પાંચ સમુદ્ઘાત કરે છે વાયુકાયિક સિંચાપના એકે-
ન્દ્રિય એવો અને વિકલેન્દ્રિય એવો શરૂઆતના ત્રણ સમુદ્ઘાત કરે છે.
વાયુકાયિક એવો શરૂઆતના ત્રણ અને ચોથો વૈક્રિય એમ ચાર સમુદ્ઘાત
કરે છે પંચેન્દ્રિય તિર્વર્ગો શરૂઆતના પાંચ સમુદ્ઘાત કરે છે મનુષ્યો સત

સ્વપ્રદેશો વદનોદરાદિરંધ્રાણિ સ્કન્ધાઘપાન્તરાલાનિ ચાપૂર્ય વિષ્કંભવાહલ્યાભ્યાં
સ્વશરીરપ્રમાણમાયામતઃ સ્વશરીરવ્યતિરેકતોજધન્યતોક્તુલાસંખ્યેયભાગમ્ ઉત્કર્ષતો-
સંખ્યેયાનિ યોજનાનિ એકદિશિ ક્ષેત્રમભિવ્યાપ્ય વર્તતે ઇતિ ૩ । વૈક્રિયસમુદ્ઘાત-
ગતોજીવસ્તુ આત્મપ્રદેશાન્ શરીરાદ્વહિર્નિષ્કાસ્ય શરીરવિષ્કંભવાહલ્યમાનમ્ આયામતઃ
સંખ્યેયયોજનપ્રમાણં દણ્ડં નિસ્રજતિ નિસ્રજ્ય ચ યથાસ્થૂલાન્ વૈક્રિયશરીરનામકર્મ-

આયુકર્મ કો ભોગતે હુણ કિસી જીવકા આયુકર્મ એક અન્નર્મુહૂર્ત પ્રમા-
ણ જવ વાકી રહતા હૈ તવ વહ અપને આત્મ પ્રદેશોં કો શરીર સે વાહર
નિકાલતા હૈ । વાહર નિકાલ કર વહ વદન, ઉદર આદિ કે છિદ્રોં કો
ઔર કર્મસ્કન્ધાદિક કે અંતરાલ કો उनसे पूरित कर फिर वह अपने
शरीर की अपेक्षा कम से कम अंगुल के असंख्यातवें भाग प्रमाण
लंबी और अधिक से अधिक असंख्यातयोजन लंबी ऐसी एक दिशा
संबंधी जगह में व्याप्त होकर एक अन्तर्मुहूर्ततक ठहरा रहता है । इतने
समय में वह आयुष्य कर्म के अनेक पुद्गलों को नष्ट कर देता है ।
इसका नाम मरण समुदघात है ३ । वैक्रियसमुदघात में रहा हुवा
जीव वैक्रिय शरीर नाम कर्म के पुद्गलों का नाश करता है, अर्थात्-
वैक्रियसमुदघात वाला जीव अपने आत्मप्रदेशों को शरीर से बाहिर
निकाल कर उन्हें शरीर का जितना विष्कंभ और बाहल्य होता है
उतने प्रमाण वाले और आयाम की अपेक्षा से संख्यात योजन प्रमा-
णवाले दण्ड के रूप में बनाता है । बनाकर फिर वह यथास्थूल वैक्रिय

હોય છે તેટલા અયુકર્મને ભોગવતા ભોગવતા બ્યારે એક અતર્મુહૂર્ત પ્રમાણ
આયુકર્મ ખાટી રહે ત્યારે પોતાના આત્મપ્રદેશોને શરીરની બહાર કાઢે છે
અને તે આત્મપ્રદેશોથી મુખ, ઉદર આદિના છિદ્રોને, તથા કર્મસ્કન્ધ આદિના
અંતરાલોને ભરી દઈને પોતાના શરીરની અપેક્ષાએ ઓછામાં ઓછા અંગુલના
અસખ્યાતમાં ભાગ પ્રમાણ લાખી અને વધારેમા વધારે અસખ્યાત યોજન
લાખી એવી એક દિશા સળધી જગ્યામા વ્યાપીને એક અંતર્મુહૂર્ત કાળ સુધી
તે સ્થિતિ રહે છે એટલા સમયમા તે આયુકર્મના અનેક પુદ્ગલોનો નાશ કરી
નાખે છે તે ક્રિયાનું નામ મરણસમુદ્ઘાત છે. વૈક્રિયસમુદ્ઘાત કરતો જીવ
વૈક્રિય શરીરનામકર્મના પુદ્ગલોનો નાશ કરે છે એટલે કે વૈક્રિયસમુદ્ઘાત
વાળો જીવ પોતાના આત્મપ્રદેશોને શરીરની બહાર કાઢીને, તેમને શરીર પ્રમાણ
વિષ્કંભ (પહોળાઈ) અને બાહલ્યવાળા અને સખ્યાતયોજન પ્રમાણ લાંબા
દણ્ડ પનાવીને વૈક્રિય શરીર નામકર્મના પુદ્ગલોનો નાશ કરે છે. એજ

યોનિકાનામાઘાઃ પચ્ચસમુદ્ધાતા મવન્તિ । મનુષ્યાણાં તુ સપ્તૈર સમુદ્ધાતા મવન્તીતિ પ્રજ્ઞાપનાસૂત્રસ્ય સંક્ષિપ્તો વિચારઃ ॥

इति श्री विश्वविख्यात-भगवत्पुत्र - प्रसिद्धवाचकपञ्चदशभाषाकलि-
तल्लिखकलापालापक-प्रविशुद्गपपथनैकग्रन्थनिर्मापक- वादिमानमर्क-
श्रीश्चाह उपपतिकोन्हापुररामप्रदत्त ' जैनशास्त्राचार्य ' पद्मपुत्र-
कोन्हापुरराजगुरु-बालग्रन्थधारि-जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकरपूज्यश्री
घासीलालव्रतिविरचिता श्री मगधतीसूत्रस्य प्रमेयचन्द्रिकाभ्यासां
व्याख्यायां द्वितीयशतकस्य द्वितीयोद्देशकः समाप्तः

કે પાંચ સમુદ્ધાત હોતે છે । મનુષ્યોં કે સાત સમુદ્ધાત હોતે છે-
એસા પ્રજ્ઞાપના સૂત્ર કા યહ સંક્ષિપ્ત વિચાર પ્રસ્તુત કિયા છે ।
હસ તરહ ઉપર્યુક્ત યંત્રસે યહ સ્પષ્ટ હો જાતા છે કિ કિસ સમુદ્ધાતકો
કૌન જીવ કરતા છે, સમુદ્ધાત કા કાલ કિતના છે, કિસ કર્મ સે સમુ-
દ્ધાત હોતા છે ઔર કિસ સમુદ્ધાત કરને કા કયા પરિણામ-ફલ છે ॥ ૧ ॥
જૈનાચાર્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજકૃત “મગધતી સૂત્ર”ની પ્રિયદર્શિની
વ્યાખ્યા કે દ્વિતીય શતક કે દ્વસરા ઉદ્દેશક સમાપ્ત

સમુદ્ધાત ૪૨ છે પ્રજ્ઞાપના સૂત્રમાં ક્યાવિલ માહિતી બહી સંક્ષિપ્તમાં
આપવામાં આવી છે

એ ઉપરથી એ સ્પષ્ટ થાય છે કે કયો સમુદ્ધાત કયો ૭૮ ૪૨ છે, તેને
કાળ કેટલો લેાય છે, કયા કર્મથી સમુદ્ધાત થાય છે, અને કયા સમુદ્ધાત
શુ ફળ મળે છે ॥ ૧ ॥

જૈનાચાર્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ કૃત જગવતી સૂત્ર ની પ્રિયદર્શિની
વ્યાખ્યાના બીજા શતકના બીજો ઉદ્દેશ સમાપ્ત થયો

समुद्घातनाम	केषां भवति	क्रियान् समयः	केन कर्मणा	परिणामः
१ वेदनासमुद्घातः	सर्वछद्मस्थ जीवानाम्	अन्तर्मुहूर्तम्	असातावेदनीय कर्मतः	असातावेदनीयकर्मणूनां विनाशः
२ कपायसमुद्घातः	"	"	कपायनामकचारित्र	कपायकर्मणूनां विनाशः
३ मरणसमुद्घातः	"	"	मोहनीय कर्मतः	आयुष्यकर्मणूनां विनाशः
४ वैक्रियसमुद्घातः	नैरयिक भवनपति- व्यन्तर० उयोतिष्क- वैमानिकपञ्चन्द्रियणाम् तिर्यग् छद्मस्थमनुष्याणाम्	"	आयुष्य कर्मतः	वैक्रियशरीर नाम कर्मणां प्राचीन- पुद्गलानां विनाशस्तथा नवीन- पुद्गलानां ग्रहणम्
५ तैजससमुद्घातः	भवनपतिव्यन्तर उयोतिष्क वैमानिकपञ्चन्द्रियतिर्यक् छद्मस्थमनुष्याणाम्	"	तैजस शरीरनाम कर्मतः	तैजस शरीरनामकर्मपुद्गलानां विनाशः
६ आहारकसमुद्घातः	मनुष्याणां चतुर्दश पूर्व धराणाम्	"	आहारक शरीर नाम कर्मतः	आहारकशरीरनामकपुद्गलानां विनाशः
७ केवलिसमुद्घातः	मनुष्याणां केवलज्ञान- वताम्	अष्टौ समयाः	आयुष्यवर्जित त्रिभ्योऽ- घातिकर्मभ्यः	आयुष्यवर्ज त्रयाणामवाति कर्म पुद्गलानां विनाशः

पिताः। तेषु च समुद्रघातेषु मारणान्तिक समुद्रघातोऽपि विद्यते। मारणान्तिक समुद्रघातेन च समवहता केचन पृथिवीषु च समुत्पद्यन्ते इति जीवोत्पत्तिकारणभूता पृथिव्यः इति पृथिवीप्रतिपादनं तथा द्वितीयशतकस्य द्वारगायायां “पुढवी” इति कथित उत्पत्तिपादनञ्च भवतीत्यनेन सबन्धेनायातस्यास्य तृतीयोद्देशकस्येदमादिषु सूत्रम् “कण्ण मते पुढवीओ” इत्यादि ॥ सू० १ ॥

मूलम्—कण्णं भते पुढवीओ पण्णत्ताओ, जीवाभिगमे नेरइयाण जो विसिओ उदेसो सो णेयव्वो पुढवी ओगाहिच्चा, निरया सठाणमेष वाहल्ल “विक्खभपरिक्खेवो वण्णो गधोय फासोय ॥ १ ॥ जाव किं सव्वे पाणाऽ उव वल्लपुव्वा, हता गोयमा ! असइ अदुवा अणतक्खुत्तो पुढवी उदेसो ॥ सू० १ ॥

उद्देशक के साथ इस प्रकार से सम्बन्ध है—द्वितीय उद्देशक में समुद्रघातों की निरूपणा हुई है। इन समुद्रघातों में एक मारणान्तिक समुद्रघात भी है। मारणान्तिक समुद्रघात करने वाले कितनेक जीव पृथिवीयों में उत्पन्न हो जाते हैं। इसलिये जीवों की उत्पत्ति के स्थानमूल उन पृथिवीयों का प्रतिपादन करना तथा द्वितीयशतक की द्वारगाया में प्रतिपादित पृथिवी का निरूपण करना यह प्रसङ्गोपास्त ही है अतः इस सम्बन्ध को लेकर इस तृतीय उद्देशक का प्रारंभ हुआ है। इसका सर्वप्रथम यह सूत्र है—(कण्णं भते) इत्यादि।

सम्बन्ध छे—जीव उद्देशकभां समुद्रघातोनी निरूपण करवाभां आवी ॥ ते समुद्रघातोनां जेठ मारणान्तिक समुद्रघात पल्ल छे मारणान्तिक समुद्रघात करनार डेटलाक एवो नरकेभां (पृथ्वीओभां) उत्पन्न बाय छे तेथी एवेनी उत्पत्तिना स्थान रूप ते पृथ्वीओनु प्रतिपादन करवानु तथा जीव उद्देशकनी द्वारगायाभां प्रतिपादित पृथ्वीनु निरूपण करवानु प्रसङ्गोपास्त लावे छे। ते जे प्रकारने सल्लभ होवाथी ज्ञा जीव उद्देशकने मारण करवाभां आवी छे तेनु सीधी पडेल्ल सूत्र ज्ञा प्रभावे छे—“कण्ण मते !” इत्यादि

॥ अथ द्वितीयशतके तृतीयोद्देशकः प्रारभ्यते ॥

तृतीयोद्देशकस्य संक्षिप्तविषयविचारः कतिपृथिव्यः सन्ति? इतिप्रश्नः। सप्तपृथिव्यः रत्नप्रभा. शर्कराप्रभा. बालुका-प्रभा. पंकप्रभा. धूमप्रभा. तमःप्रभा. तमस्तमःप्रभा इत्युत्तरम्। सर्वे जीवाः पूर्वं नरकेऽनेकवारं समुत्पन्नाः किमिति गौतमस्य प्रश्नः, सर्वे अनेकवारं नरके समुत्पन्ना इत्युत्तरं भगवतः। जीवाजीवाभिगमसूत्रीय द्वितीयोद्देशकस्यातिदेशः। उद्देशकपरिसमाप्तिश्चेति ॥

द्वितीयशतके द्वितीयोद्देशकं समाप्य तृतीयोद्देशकः प्रारभ्यते। अस्य तृतीयोद्देशकस्य द्वितीयोद्देशकेन सहायमभिसंबन्धः-द्वितीयोद्देशके समुद्घाताः निरू-

॥ दूसरे शतक के तीसरे उद्देशक का प्रारंभ ॥

तृतीय उद्देशक के विषयों का विवरण संक्षेपमे इस प्रकार से है-पृथिवी कितनी हैं ऐसा प्रश्न।

पृथिवी सात हैं-रत्नप्रभापृथिवी १, शर्कराप्रभापृथिवी २, बालुका-प्रभापृथिवी ३, पंकप्रभापृथिवी ४, धूमप्रभापृथिवी ५, तमःप्रभापृथिवी ६, तमस्तमःप्रभापृथिवी ७, ऐसा उत्तर। समस्त जीव क्या पहिले अनेक बार नरकों में उत्पन्न हुए हैं ऐसा गौतम का प्रश्न। हां, समस्त जीव पहिले अनेक बार नरकों में उत्पन्न हुए हैं ऐसा भगवान् का उत्तर। जीवाजीवाभिगमसूत्र संबंधी द्वितीय उद्देशक का अतिदेश, उद्देशक की परिसमाप्ति।

द्वितीय शतक में द्वितीय उद्देशक को समाप्त करके सूत्रकार अब तीसरे उद्देशक को प्रारंभ करते हैं। इस तृतीय उद्देशक का द्वितीय

બીજા શતકના ત્રીજા ઉદ્દેશકનો પ્રારંભ—

ત્રીજા ઉદ્દેશકના વિષયોનું સંક્ષિપ્ત વર્ણન આ પ્રમાણે છે.

પ્રશ્ન-પૃથ્વી કેટલી છે ?

ઉત્તર—પૃથ્વી સાત છે—(૧) રત્નપ્રભાવપૃથ્વી (૨) શર્કરાપ્રભા (૩) બાલુકાપ્રભા (૪) પંકપ્રભા (૫) ધૂમપ્રભા (૬) તમઃપ્રભા (૭) તમસ્તમપ્રભા પૃથ્વી

ગૌતમનો પ્રશ્ન-શું સમસ્ત જીવો પહેલાં અનેકવાર નરકોમાં ઉત્પન્ન થયા હોય છે ? ઉત્તર—હા સમસ્ત જીવો અનેકવાર નરકોમાં ઉત્પન્ન થાય હોય છે. જીવાજીવાભિગમ સૂત્રના બીજા ઉદ્દેશકનો અતિદેશ-ઉદ્દેશકની સમાપ્તિ.

બીજા શતકના બીજા ઉદ્દેશકની પૂર્ણાહુતિ કરીને હવે સૂત્રકાર ત્રીજા ઉદ્દેશકનો પ્રારંભ કરે છે આ ત્રીજા ઉદ્દેશકનો બીજા ઉદ્દેશક સાથે આ પ્રકારનો



ટીકા—‘કણ મંતે પુઠ્ઠીઓ પળ્લણાઓ’ કવિ સ્વલ્પ મદત ! પૃથિવ્ય નારક પૃથિવ્યઃ પ્રજ્ઞાતા ? હે મદંત ! નારકજીવાનામાધારમૂલ પૃથિવ્યઃ કવિસંસ્મરકાઃ સન્તીતિમ્મનઃ । મગયાનાહ—‘જીવામિગમે’ ઇત્યાદિ “નજીરામિગમે નેરયિયાણ જો વિતિમો ઉદેસો સો નેયબ્બો” જીવામિગમે નેરયિકાણાં યો દ્વિતીયઉદેશકઃ સઃ નેતબ્બા=દ્વાતથ્ય અપ્રાર્થ સંપ્રદગાપેયમ્ ‘પુઠ્ઠી’ ઇત્યાદિ તસ્મિન્ દ્વિતીયોદેશકે પૃથિવી સંબંધિવિચાર, નારકવિષયો વિચારઃ, નારકાણાં સંસ્થાનસંવન્ધો વિચાર । તથા નરકપૃથિવ્યાઃ સ્વરૂપાદિસમીર્તનષેતિસર્વ જીવામિગમ દ્વિતીયોદેશકઃ એવ

ટીકાર્થ—(કણ મંતે ! પુઠ્ઠીઓ પળ્લણાઓ) હે મદંત નારકપૃથિવિયાં કિતની કહી ગઈ હૈં ? હસ પ્રશ્ન કા સારાંશ યહ હૈ કિ ગૌતમ મહાવીર પ્રશ્નસે યહ પૂછ રહે હૈં કિ નારક જીવ જિન પૃથિવિયોં મેં રહતે હૈં એ પૃથિવિયાં કિતની હૈં ? હસ પ્રશ્ન કેઉત્તર મેં સૂત્રકાર જીવામિગમ સૂત્ર કા નિર્દેશ કરતે હૈં—“જીવામિગમે નેરયિયાણ જો વિતિઓ ઉદેસો સો નેયબ્બો” જીવામિગમ સૂત્ર મેં જો દ્વિતીય ઉદેશક હૈ—વહ હસ પ્રશ્ન કે ઉત્તર મેં જાનલેના ચાહિયે, હસવિષય કો સ્પષ્ટ કરનેચાલી સંપ્રદગાયા હસ પ્રકાર સે હૈ—(પુઠ્ઠી ઓગાહેસા હરયાદિ સમ્પ્રદ ગાયા દ્વારા યહ સ્પષ્ટ કિયા ગયા હૈ કિ જીવામિગમસૂત્ર કે દ્વિતીય ઉદેશક મેં પૃથિવી સંબંધી વિચાર કિયા ગયા હૈ, ઊન પૃથિવિયોં મેં રહે હુપ નરક ઘાસોં કા વિચાર કિયા ગયા હૈ, નરકઘાસોં કે સંસ્થાન કા વિચાર કિયા ગયા હૈ । તથા—નરકપૃથિવિયોં કે સ્વરૂપ આદિ કા વિચાર કિયા

ટીકાર્થ—(કણ મંતે ! પુઠ્ઠીઓ પળ્લણાઓ) હે મદંત ! નરકો (પૃથ્વીઓ) કેટલી છે ? કહેવાનું વાતપત્ર એ છે કે જે પૃથ્વીઓ (નરકો) માં નારક છવે રહે છે એ પૃથ્વીઓ કેટલી છે ? આ પ્રશ્નનો ઉત્તર બબ્બવા માટે સૂત્રકાર જીવામિગમસૂત્રનો નિર્દેશ કરે છે (જીવામિગમે નેરયિયાણ જો વિતિઓ ઉદેસો સો નેયબ્બો) જીવામિગમસૂત્ર । બીજા ઉદેશકમાંથી આ પ્રશ્નનો ઉત્તર બબ્બી લેવો બાઈએ આ વિષયને સ્પષ્ટ કરનારી સમ્પ્રદગાયા આ પ્રમાણે છે—
પુઠ્ઠી ઓગાહેસા ઇત્યાદિ

આ સમ્પ્રદગાયામાં એ વાતનું સ્પષ્ટીકરણ કરવામાં આવ્યું છે કે જીવામિગમસૂત્રના બીજા ઉદેશકમાં પૃથ્વીઓ વિષે વિચાર કરવામાં આવ્યો છે, તે પૃથ્વીઓમાં રહેનારા નારક છવેના વિચાર કરવામાં આવ્યો છે નારક છવેના સંસ્થાનને વિચાર કરવામાં આવ્યો છે તથા તે નરકો (પૃથ્વીઓ) ના સ્વરૂપ આદિનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું છે તેથી

છાયા-કતિ ભદંત ! પૃથિવ્યઃ પ્રજ્ઞાતાઃ, ૧ જીવાભિગમે નૈરચિકાણાં યો દ્વિતીય ઉદેશકઃ સ નેતવ્યઃ પૃથિવીમવગાહ્ય નિરયાઃ સંસ્થાનમેવ વાહલ્યવિષ્કંભપરિક્ષેપૌ વર્ણો ગન્ધથ સ્પર્શથ ॥ ૧ ॥ યાવત્. કિં રાર્વે પ્રાણા ઉત્પન્નપૂર્વાઃ ? હન્ત ગૌતમ! અસકૃત્ અથવા અનન્તકૃત્વઃ પૃથિવ્યુદેશકઃ) ૬ સૂ૦ ૧ ॥

દ્વિતીયશકસ્ય તૃતીયઉદેશઃ સમાપ્તઃ

સૂત્રાર્થ—(કહણં મંતે ! પુઢવીઓ પળ્લતાઓ) હે ભદન્ત ! પૃથિ વિયાં કિતની કહીગઈ હૈં ? (જીવાભિગમે નેરહયાણં જો વિતિઓ ઉદેસો સો ણેયવ્વો) જીવાભિગમ સૂત્ર મેં કહા ગયા જો નારક સંબંધી દૂસરા ઉદેશક હૈ વહ યહાં જાનના ચાહિયે । યહાં દ્વારગાથા હૈ

“ પુઢવી ઓગાહિત્તા નિરયા સંઠાળમેવ વાહલ્લં ।

વિક્લંભ પરિક્લેવો વળ્લો ગંધો ય ફાસો ય ॥ ૧ ॥

હસ ઉદેશક મેં પૃથિવી સંબંધી, (પૃથિવી કો અવગાહન કરકે કિતની દૂર નારક રહતે હૈં) હસ સંબંધી, સંસ્થાન સંબંધી, પૃથિવિયોં કી મોટાઈ સંબંધી, વિષ્કંભ પરિક્ષેપ સંબંધી, વર્ણ, ગંધ ઓર સ્પર્શ સંબંધી કથન હૈ । (જાવ કિં સવ્વે પાળા ઉવવન્નપુવ્વા) હે ભદન્ત । વહાં કયા સમસ્ત જીવ ઉપપન્નપૂર્વ-પહલે-ઉત્પન્ન હોયે હુણ-હૈં કયા ? । (હંતા ગોયમા ! અસહં, અદુવા અણંતકચ્ચુત્તો પુઢવી ઉદેસો) હાં, ગૌતમ ! અનેકવાર અથવા અનન્તવાર અનપૃથિવિયોં મેં સમસ્ત જીવ ઉપપન્નપૂર્વ હૈં । હસ પ્રકાર યહ પૃથિની ઉદેશક હૈ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

સૂત્રાર્થ—(કહણં મંતે ! પુઢવીઓ પળ્લતાઓ) હે ભદન્ત ! પૃથ્વીઓ (નરકો) કેટલી કહી છે ? (જીવાભિગમે નેરહયાણ જો વિતિઓ ઉદેસો સો ણેયવ્વો) જીવાભિગમસૂત્રના નારક વિષેના બીજા ઉદેશકમાથી આ વિષય બાણી લેવો. તેના વિષે આ દ્વાર ગાથા છે—

“ પુઢવી ઓગાહિત્તા નિરયા સંઠાળમેવ વાહલ્લં ।

વિક્લંભપરિક્લેવો વળ્લો ગંધો ય ફાસો ય ॥ ૧ ॥

આ ઉદેશકમા પૃથ્વી વિષે “ પૃથ્વીની અવગાહના કરીને કેટલે-દૂર સુધી નારકો રહે છે ” તે વિષે, સંસ્થાન વિષે, પૃથ્વીઓના વિસ્તાર વિષે, પૃથ્વીઓના વિષ્કંભ અને પરિક્ષેપ વિષે, વર્ણ ગંધ અને સ્પર્શ વિષે વર્ણન કર્યું છે (જાવ કિં સવ્વે પાળા ઉવવન્નપુવ્વા) હે ભદન્ત ! સમસ્ત જીવો શુ ત્યા પહેલાં ઉત્પન્ન થઈ ગયા હોય છે ? (હતા ગોયમા ! અસહં, અદુવા, અણંત-ચ્ચુત્તો પુઢવી ઉદેસો) હા, ગૌતમ ! અનેકવાર અથવા અનન્તવાર સમસ્ત જીવો તે પૃથ્વીઓમા ઉત્પન્ન થઈ ચુક્યા હોય છે. પૃથ્વી ઉદેશક આ પ્રકારનો છે । સૂ૦ ૧ ।

પિત્વા તત્ર ત્રિંશ્વલસનરકાવાસાઃ સન્તિ ૧। એવમેષશ્ચર્કરા પ્રમાદિ પૃથિવીષુ ચ્ચ-
યોગ વક્તવ્યમિતિ તથાહિ-દ્વિતીયાયાં ચર્કરાપ્રમાયાં પૃથિવ્યાં દ્વાત્રિંશ્વલસનોત્તરો
અનલસ્યવાહર્યાયામુપર્યેક યોજનસહસ્રમથગાઘાઽષ્ઠોઽપ્યેક યોજનસહસ્ર વર્જયિત્વા
તપ્ર પચ્ચવિંશતિલસનરકાવાસાઃ સન્તિ ૨। તૃતીયચાલુકાપ્રમાયાં પૃથિવ્યામપ્તવિંશ-
તિસહસ્રોત્તરયોજનલસવાહર્યાયામુપર્યેક યોજનસહસ્રમથગાઘાઽષ્ઠોઽપ્યેક યોજનસ
હસ્ર વર્જયિત્વા તપ્ર પચ્ચદશલસનરકાવાસા સન્તિ ૩। ચતુર્થપદ્મપ્રમાયાં પૃથિવ્યાં
ત્રિંશ્વલસનોત્તરયોજન લસવાહર્યાયામુપર્યેક યોજનસહસ્રમથગાઘાઽષ્ઠોઽપ્યેક યો-
જનસહસ્ર વર્જયિત્વા તપ્ર દશલસનરકાવાસાઃ સન્તિ ૪। પચ્ચમધૂમપ્રમાયાં પૃથિવ્યા

इसमें से एक हजार योजन ऊपर के भाग को तथा एक हजार योजन
नीचेके भागको छोड़कर अवशिष्ट स्थान में तीस लाख नरकावास हैं।
इसी तरह से शर्करा आदी पृथिवीयों में भी निम्नोक्त प्रकार से समझ
लेना चाहिये। जैसे- शर्कराप्रमा नामकी जो दूसरी पृथिवी है- उसकी
मोटाई एक लाख बीस हजार योजन की है- सो इसमें भी ऊपर
नीचे का एक-एकहजार योजन प्रमाण भाग छोड़कर बाकी के स्थान में
एकबीस लाख नरकावास हैं। तीसरी पृथिवी जो चालुकाप्रमा है उसकी
मोटाई एक लाख अट्ठाईस हजार योजन की है सो इसमें ऊपर नीचे
के एक-एक हजार योजन प्रमाण भाग को छोड़कर
बाकी के बीच के भागों में पन्द्रह लाख नरकावास-मारक जीवों के
रहने के स्थान हैं। चौथी पृथिवी जो पद्मप्रमा है उसकी मोटाई एक
लाख बीस हजार योजन की है सो उसका भी एक-एक हजार योजन
प्रमाण भाग ऊपर नीचे का छोड़ कर बाकी के भागों में दस लाख नर

તેમાંના ઉપરનો એક હજાર યોજન પ્રમાણ ભાગ છેડીને અને એક હજાર
પ્રમાણ નીચેના ભાગ ને છેડીને બાકીની જગ્યામાં ત્રીસ લાખ નરકાવાસ છે
એજ પ્રમાણે ચક્રશ્રમણા આદિ પૃથ્વીઓમાં પણ નીચે પ્રમાણે સમજવું-
ચક્રશ્ર નામની બીજી પૃથ્વીના વિસ્તાર એક લાખ બત્રીસ હજાર યોજનનો
છે તેનો ઉપરનો એક હજાર યોજન પ્રમાણ ભાગ અને નીચેનો એક હજાર
યોજન પ્રમાણ ભાગ છેડીને બાકીની જગ્યામાં પચીસ લાખ નરકાવાસ છે ત્રીજી
ચાલુકાપ્રમા પૃથ્વી ની ઊંચાઈ એક લાખ અઠ્યાવીસ હજાર યોજનની છે તેમાં
ઉપર તથા નીચેનો એક એક હજાર યોજન પ્રમાણ ભાગ છેડીને બાકીના
પંદર લાખ નરકાવાસ છે ચોથી પદ્મપ્રમા નામની પૃથ્વીની ઊંચાઈ
એક લાખ વીસ હજાર યોજનની છે તેનો પણ ઉપરનો તથા નીચેનો

જ્ઞાતવ્યમ્ । તત્ર (પૃથ્વીઓ) પૃથિવ્યો વાચ્યાઃ । તાથૈવમ્ “કઙ્ઘં મંતે પૃથ્વીઓ પન્નત્તાઓ” કતિ સ્વલ્લ મદંત । પૃથિવ્યઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ ? इति पृथिवीसंख्याविषयको गौतमस्य प्रश्नः भगवानाह—‘गोयमा सत्तपृथ्वीओ पन्नत्ताओ’ हे गौतम ! सप्त पृथिव्यः प्रज्ञप्ताः ‘तं जहा’ तद्यथा ‘रयणप्पभा शर्कराप्रभा वालुकाप्रभा पंकप्रभा धूमप्रभा तमःप्रभा तमस्तमःप्रभा इमाः सप्त नारकपृथिव्याः प्रज्ञप्ताः=कथिताः “ओगाहिता निरया” इति अवगाह्य निरयाः, पृथिवीमवगाह्य क्रियदूरे नारकावसन्तीतिवक्तव्यम् तत्र सप्तसु पृथिवीषु मध्ये या प्रथमा रत्नप्रभापृथिवीतस्याम्—अशीतिसहस्रोत्तर-योजनलक्षवाहल्यायाम्. उपर्य्येकं योजनसहस्रमवगाह्याधोप्येकं योजनसहस्रं वर्ज-

गया है । इसलिये जीवाभिगम सूत्र के द्वितीय उद्देशक से ही सब कुछ नरकसंवधि आदि विचार जानना चाहिये । पृथिवी संबंध में वहां ऐसा पूछा गया है कि—(मंते) हे भदंत ! (कङ्घं पृथ्वीओ पन्नत्ताओ) पृथिवियां कितनी कही गई हैं ? इस प्रकार से गौतम ने जब पृथिवी की संख्या के विषय में प्रभु से पूछा—तब प्रभु ने उन्हें कहा—(गोयमा सत्त पृथ्वीओ पन्नत्ताओ) हे गौतम ! पृथिवी सात कही गई हैं—(तं जहा) वे इस प्रकार से हैं—(रयणप्पभा) इत्यादि—रत्नप्रभा १, शर्कराप्रभा २, वालुकाप्रभा ६, पंकप्रभा ४, धूमप्रभा ५, तमप्रभा ६, और सातवीं तमस्तमःप्रभा ७ । (ओगाहिता निरया) पृथिवी को अवगाहित करके कितनी दूर जाने पर नारक जीव रहते हैं ? इस प्रश्न का भाव इस प्रकार से है—कि—कितनी पृथिवी को छोड़कर नारक जीवपृथिवी अवशिष्ट भाग में रहते हैं ? तो इसका उत्तर इस प्रकार से है—जैसे सात पृथिवीयों में से जो पहिली पृथिवी रत्नप्रभा है वह एक लाख अस्सी हजार योजन की मोटी है,

જીવાભિગમ સૂત્રના બીજા ઉદ્દેશકમાથી નરકો વિષે સમસ્ત વર્ણન વાચવાનું કહેવામા આવ્યું છે પૃથ્વી વિષે આહીં એવું પૂછવામાં આવ્યું છે કે (મંતે !) કે ભદ્રન્ત, (કઙ્ઘ પૃથ્વીઓ પન્નત્તાઓ ?) પૃથ્વીઓ કેટલી કહી છે ? ત્યારે ભગવાન મહાવીર ગૌતમસ્વામીને ઉત્તર આપે છે કે (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (સત્ત પૃથ્વીઓ પન્નત્તાઓ) પૃથ્વી સાત કહી છે (ત જહા) તેમના નામ આ પ્રમાણે છે—(રયણપ્પભા) ઇત્યાદિ રત્નપ્રભા, શર્કરાપ્રભા, વાલુકાપ્રભા, પંકપ્રભા, ધૂમપ્રભા, તમપ્રભા, અને તમસ્તમ પ્રભા (ઓગાહિતા નિરયા) કેટલી પૃથ્વીને છોડીને નારક એવો પૃથ્વીના અવશિષ્ટ (બાકીના) ભાગમાં રહે છે ? તેનો ઉત્તર આ પ્રમાણે છે—સાત નરકો (પૃથ્વીઓ) માંથી પહેલી રત્નપ્રભા નામની પૃથ્વી એક લાખ એશી હજાર યોજનના વિસ્તાર વાળી છે.

‘વાહલ્લ’ ઇતિનરકાવાસાનાં વાહલ્યમપિ વક્તવ્યમ્ તથા વાહલ્યં શ્રીશિયોન સહસ્રાણિ । તત્કયમ્ ? અથ એકમ્ યોજનસહસ્રમ્ મધ્યે એક યોજનસહસ્રં શુપિરમ ઉપા ચ યોજનસહસ્ર સંકોચો વિધતે ઇતિ= ‘વિવ્લમપરિક્ષેવો’ વિવ્લમપરિક્ષેવો વક્તવ્યો તત્ર સહ્યાતવિસ્તારવતાં નરકવાસનામ્ આયામો વિવ્લમઃ પરિક્ષેપત્વ પ્રત્યેક સહ્યાતયોજનમમાણોઽસ્તિ । તદ્ એવાં સુ આયામવિવ્લમપરિક્ષેપાશિમિત્તરૂપાણ્યમમ સ્તીતિ । “વળ્લો ગધો ય કાસો ય” વળ્લો ગંધઃ નરકાવાસનાં વળ્લમન્ધરસસ્યનાં વક્તવ્યાઃ તે ચ વળ્લાદિયોઽત્યન્તમનિષ્ઠઃ । ઇત્યાદિષદ્રુવક્તવ્ય વિધતે તત્સર્વમુદ્દેશકાન્ત મિદવક્તવ્યમ્ । “કિંસચ્ચે પાણાઠવચ્ચપૂર્વા” કિં સર્વે પાણા ઉપવચ્ચપૂર્વાઃ સર્વેત્રીશા ગોલ્લ હોતા હૈ, તિલ્લૂટા હોતા હૈ ઓર ચીલ્લૂટા હોતા હૈ તથા ફનકે સિવાય જો નરકાવાસ હૈ એ અનેક આકાર વાલે હોતે હૈ (વાહલ્લ) વાહલ્ય નામ મોટાઈ કા હૈ સો નરકાવાસોં કા વાહલ્ય-જાઢાઈ-તીન હજાર યોજન કી હૈ । યહ કિસ પ્રકાર સે હૈ ? સો કહતે હૈ-નીચે એક હજાર યોજન, મધ્ય મેં એક હજાર યોજન શુપિર (પોલ) ઉપર મેં એક હજાર યોજન સંકુચિત હૈ । (વિવ્લમપરિક્ષેવો) સહ્યાતવિસ્તાર વાલે જો નરકાવાસ હૈ ઊનકા આયામ, વિવ્લમ ઓર પરિક્ષેપ એ પ્રત્યેક સહ્યાત યોજન પ્રમાણ હૈ । ફનકે અતિરિક્ત જો નરકાવાસ હૈ ઊનકા આયામ, વિવ્લમ ઓર પરિક્ષેપ એ સબ મિલ ૨ પ્રમાણ મેં હૈ । (વળ્લો ગધો ય કાસો ય) નરકાવાસોં કે વળ્લ, ગંધ, સ્પર્શ, એ સબ અત્યન્ત અનિષ્ઠ હોતે હૈ ઇત્યાદિ સબ ફમે ઉદેશક કે અંતતક સમસ્ટ હેના હૈ । (કિં સચ્ચે પાણા ૦ ૪ વચ્ચમપુચ્ચા) યહાં પ્રશ્ન ફસ પ્રકાર સે કરના

આકાર ગોળ, ત્રિકોણીઆ કે ચતુષ્કોણીઆ હોય છે તે સિવાયના ને નરકાવાસો છે તે અનેક આકારવાળા હોય છે (વાહલ્લ) વાહલ્ય એટલે જાઢાઈ નરકાવાસોનું જાહલ્ય ત્રણ હજાર ચોજનનું હોય છે તે ઠેવી રીતે હોય છે ? તે તેના જવાબમાં કહે છે કે-નીચે જોઈ હજાર ચોજન મધ્યમાં જોઈ હજાર ચોજન અને ઉપર જોઈ હજાર ચોજન

(વિવ્લમપરિક્ષેવો) સહ્યાત વિસ્તારવાળા ને નરકાવાસો છે તેમના આયામ (જાઢાઈ) વિવ્લ (પહોળાઈ) અને પરિક્ષેપ (પરિમિતિ) સહ્યાત ચોજન પ્રમાણ છે તે સિવાયના ને નરકાવાસો છે તેમના આયામ, વિવ્લ અને પરિક્ષેપ બિલ્લ બિલ્લ પ્રમાણમાં છે-(વળ્લો ગધો ય કાસો ય) નરકાવાસોના પશ્ચીમ, દક્ષિણ અને ઉપર અત્યન્ત અનિષ્ઠ હોય છે ઇત્યાદિ સમસ્ટ આ ઉદેશકના અતલાગ સુખીમાં સમજાવવામાં આનું છે

(કિં સચ્ચે પાણા ૪ વચ્ચમપુચ્ચા) અહીં આ પ્રકારનો પ્રશ્ન સમજવો-

પઠાદશસહસ્રોત્તરયોજનલક્ષવાહલ્યાયામુપર્યેકં યોજનસહ સમવગાહ્યાધોઽપ્યેકં-
યોજનસહસ્રં વર્જયિત્વા તત્ર ત્રિલક્ષનરકાવાસાઃ સન્તિ ૫॥ પઠતમઃ પ્રમાયાં પૃથિવ્યાં
ષોડશસહસ્રોત્તરલક્ષવાહલ્યાયામુપર્યેકં યોજનસહસ્રમવગાહ્યાધોઽપ્યેકં યોજન
સહસ્રં વર્જયિત્વા તત્ર પશ્ચન્યૂનૈકલક્ષનરકાવાસાઃ સન્તિ ૬॥ સપ્તમતમસ્તમઃ પ્રમાયાં
પૃથિવ્યામષ્ટસહસ્રોત્તરલક્ષવાહલ્યાયામુપરિ સાર્ધદ્વિપશ્ચાશ્દ્યોજનસહસ્રમવગાહ્યાધોઽપિ
સાર્ધદ્વિપશ્ચાશ્દ્યોજનસહસ્રં વર્જયિત્વા તત્ર પશ્ચસંખ્યકા નરકાવાસાઃ સન્તીતિ
૭। “સંઠાણમેવ” ઇતિ-સંસ્થાનમેવ તત્ર યે આવલિકાપ્રવિષ્ટાઃ પંક્તિપ્રવિષ્ટાઃ નર-
કવાસાસ્તે વૃત્તાઃ ત્ર્યાસાઃ ચતુરસ્રાશ્ચ, ઇતરેતુ નાનાસંસ્થાનાઃ નરકવાસા ભવન્તિ ।

કાવાસ હૈં । પાંચવી પૃથિવી જો ધૂમપ્રભા હૈં उसकी मोटाई एक लाख
अठारह हजार योजन की है सो उसमें भी ऊपर नीचे के एक-एक
हजार योजन-के भाग को छोड़कर बाकी के भागों में तीन लाख नर-
कावास हॆं । छठी पृथिवी जो तम प्रभा है उसकी मोटाई एक लाख
सोलह हजार योजन की है-सो उसके ऊपर नीचे के एक-एक हजार
योजन प्रमाण भागको छोड़कर अवशिष्ट भागों में नारकजीवों के रहने
के पांचकम एक लाख नरकावास है । तथा सातवीं पृथिवी जो तमस्त-
मःप्रभा है उसकी मोटाई एक लाख आठ हजार योजन-की है-सो
ऊपर नीचे के साढेबावन-साढेघावन (५२॥-५२॥) हजार योजन
प्रमाण भागों को छोड़कर अवशिष्ट भागों में केवल पांच-ही नरकावास
हॆं । (संठाणमेव) संस्थान नाम आकार का है-सो जो नारक-जीवों
के आवास आवलिका में प्रविष्ट हॆं-पंक्ति में प्रविष्ट हॆं-उनका आकार

એક એક હજાર યોજન પ્રમાણ ભાગ છોડીને બાકીના ભાગમાં દસ
લાખ નરકાવાસ છે પાચમી ધૂમપ્રભા નામની પૃથ્વીની ઉંચાઈ એક લાખ
અઠાર હજાર યોજનની છે તેના પછી ઉપર તથા નીચેના એક એક હજાર
યોજન પ્રમાણ ભાગોને છોડીને બાકીના ભાગમાં ત્રણ લાખ નરકવાસ છે.
છઠ્ઠી તમપ્રભા પૃથ્વીની ઉંચાઈ અઠ્ઠલાખ સોળહજાર યોજનની છે તેના પછી
ઉપર તથા નીચેના એક એક હજાર યોજનપ્રમાણ ભાગ છોડીને બાકીની જગ્યામાં
૬૯૬૯૬ નવણહજાર નવસોનવાણ નરકાવાસ છે. સાતમી તમસ્તમપ્રભા નામની
પૃથ્વીની ઉંચાઈ એક લાખ આઠ હજાર યોજનની છે તેના ઉપર સાડા બાવન
હજાર (૫૨૥ હજાર) અને નીચેના સાડા બાવન હજાર પ્રમાણ ભાગને છોડીને
બાકીના ભાગમાં ફક્ત પાચ જ નરકાવાસ છે, (સંઠાણમેવ) સંસ્થાન એટલે
આકાર જે નારક જીવોના અવાસ આવલિકા (પંક્તિ) મા આવેલ છે, તેમને



‘વાહસ્ત’ ઇતિનરકાવાસાનાં વાહલ્યમપિ વક્તવ્યમ્ તત્ત્વ વાહલ્ય ગ્રીષિયોમ
સહસ્રાણિ । તરુણમ્ ? મધ્ય એકમ્ યોજનસહસ્રમ્ મધ્યે એક યોજનસહસ્રં છુપિરમ ઉપ
ધ યોજનસહસ્ર સ્કોયો વિધતે ઇતિ=‘ચિદ્વત્તમપરિચ્છેદો’ વિષ્કમપરિચ્છે
વક્તવ્યો તથા સંસ્થાતવિસ્તારવતાં નરકવાસનામ્ આયામો વિષ્કમ પરિચ્છેદવ પ્રત્યે
સંસ્થાતવોનનમમાણોઽસ્તિ । તદ્-યેર્ણાં તુ આયામવિષ્કમપરિચ્છપાવિમિત્તરૂપાવચન
ન્તીતિ । “વર્ણો ગંધો ય કાસો ય” વર્ણો ગંધમ્ નરકવાસનાં વર્ણગંધરસસ્પર્શ
વક્તવ્યો તે ચ વર્ણાદિયોઽત્યન્તમનિષ્ઠ । इत्यादिषु वक्तव्य विधत्ते तत्सर्वेष्वपेक्षान
मिद्वक्तव्यम् । “किं सर्वे पाणा उच्यन्तपूर्वा” किं सर्वे प्राणा उपपन्नपूर्वाः सर्वे जीना

ગોલ હોતા હૈ, તિસ્ત્રુટા હોતા હૈ ઓર ચૌસ્ત્રુટા હોતા હૈ તપા ફનર
સિવાય જો નરકાવાસ હૈં હે અનેક આકાર ઘાઠે હોતે હૈ (વાહસ્ત
વાહલ્ય નામ મોટાઈ કા હૈ સો નરકાવાસોં કા વાહલ્ય-જાહાઈ-તીન
હજાર યોજન કી હૈ । યહ કિસ પ્રકાર સે હૈં ? સો કહતે હૈં-નીચે ૧
હજાર યોજન, મધ્ય મેં ૧૬ હજાર યોજન છુપિર (પોલ) ઉપર મેં ૧૬
હજાર યોજન સંકુચિત હૈ । (વિષ્કમપરિચ્છેદો) સંસ્થાતવિસ્તાર
ઘાઠે જો નરકાવાસ હૈં ઉનકા આયામ, વિષ્કમ ઓર પરિચ્છેદ યે પ્રત્યેક
સંસ્થાત યોજન પ્રમાણ હૈં । ફનસે અતિરિક્ત જો નરકાવાસ હૈં ઉનકા
આયામ, વિષ્કમ ઓર પરિચ્છેદ યે સય મિત્ત ૨ પ્રમાણ મેં હૈં । (વર્ણો
ગંધો ય કાસો ય) નરકાવાસોં કે વર્ણ, ગંધ, સ્પર્શ, યે સબ અત્યન્ત
મનિષ્ઠ હોતે હૈં ઇત્યાદિ સય ફસ ઉદેશક કે અતતક સમજ્ઞ હેના હૈ ।
(કિં સર્વે પાણા ૦ ૪ ઉચ્ચત્તપુષ્પા) યહાં પ્રશ્ન ફસ પ્રકાર સે કરના

આકાર ગોળ, ત્રિકોણીઆ કે ચતુષ્કોણીઆ હોય છે તે સિવાયના ને નરકા
વાસો છે તે અનેક આકારવાળા હોય છે (વાહસ્ત) વાહલ્ય એટલે આકાર
નરકાવાસોનું વાહલ્ય ત્રણ હજાર યોજનનું હોય છે તે કેવી રીતે હોય છે ?
તે તેના જવાબમાં કહે છે કે-નીચે એક હજાર યોજન. મધ્યમાં એક હજાર
યોજન અને ઉપર એક હજાર યોજન

(વિષ્કમપરિચ્છેદો) સંસ્થાત વિસ્તારવાળા ને નરકાવાસો તેમને
આયામ (અંશ) વિષ્કમ (પહેળાઈ) અને પરિચ્છેદ (પરિમિતિ) સંસ્થાત
યોજન પ્રમાણ છે તે સિવાયના ને નરકાવાસો છે તેમને આયામ, વિષ્કમ
અને પરિચ્છેદ ત્રણ વિભાગ પ્રમાણમાં છે-(વર્ણો ગંધો ય કાસો ય) નરકા
વાસોના વર્ણ ૧૨૫, ગંધ અને ૨૫૨ અત્યન્ત મનિષ્ઠ હોય છે ઇત્યાદિ
અમરત આ ઉદેશકના અત્યન્ત સુખીમાં સમજાવવામાં આવ્યું છે

(કિં સર્વે પાણા ઉચ્ચત્તપુષ્પા) અહીં આ પ્રકારનો પ્રશ્ન સમજાવે-

કિં રત્નપ્રભાદિપૃથિવિ પૂર્વં સમુત્પન્નાઃ? અસ્ય ચૈવં પ્રયોગઃ-અસ્યાં રત્નપ્રભાપૃથિવ્યામ્ ત્રિશદન્તરકલક્ષેષુ કિં સર્વે પ્રાણાદયઃ ઉત્પન્નપૂર્વાઃ, ઇતિ પ્રશ્નઃ । ભગવાનાહ-“ હન્ત ગોયમા ” હન્ત ગૌતમ । “ અસઈ ” અસકૃત્. અનેકશોઽનેકવારમ્. અનેકવારન્તુ દ્વિવારાપેક્ષ્યાઽપિ સ્યાદત્તાહ-“ અહવા ” અથવા. “ અણંતક્ષુત્તો ” અનન્તકૃત્વ અનંતવારમ્ । સર્વે જીવા રત્નપ્રભાદિપુ સર્વાસુ પૃથિવીપુ પૂર્વં સમુત્પન્નાઃ ઇતિ ॥

ઇતિ શ્રીવિશ્વવિખ્યાત-જગદ્વલ્લભ-પ્રસિદ્ધવાચકપદ્મદશભાષાકલિતલલિતકલા-પાલાપક-પ્રવિશુદ્ધગદ્યપદ્યનૈકગ્રન્થનિર્માપક-વાદિમાનમર્દક-શ્રીશાહૂછત્રપ-તિકોલ્હાપુરરાજપ્રદત્ત-‘ જૈનશાસ્ત્રાચાર્ય ’ પદમૂષિત-કોલ્હાપુરરાજ-ગુરુ-ગાલગ્રહ્યચારિ-જૈનાચાર્ય-જૈનધર્મદિવાકરપૂજ્યશ્રી-ઘાસીલાલ-વ્રતિવિરચિતાયાં શ્રીભગવતીસૂત્રસ્ય પ્રમેયચન્દ્રિકાખ્યાયાં વ્યાખ્યાયાં દ્વિતીયશતકે તૃતીયોદ્દેશકઃ સમાપ્તઃ ॥૨-૧॥

ચાહિયે-રત્નપ્રભા પૃથિવી મેં જો ત્રીસ લાખ નરકાવાસ હૈં ડનમેં સમસ્ત પ્રાણી પહિલે ઉત્પન્ન હુએ હૈં કયા ? ઇસકા ઉત્તર દેતે હુએ પ્રભુ ગૌતમ સે કહતે હૈં કિ-(હંતા ગોયમા!) હાં, ગૌતમ ! સમસ્ત પ્રાણી (અસઈ) અનેક વાર (અદુવા) અથવા (અણંતક્ષુત્તો) અનંતવાર ઇન પૂર્વોક્ત રત્નપ્રભા આદિ પૃથિવિયોં મેં પહિલે ઉત્પન્ન હુએ હૈં ॥ સૂ ૧ ॥

શ્રી જૈનાચાર્ય જૈનધર્મદિવાકર પૂજ્ય શ્રીઘાસીલાલજી
મહારાજકૃત ભગવતીસૂત્રકી પ્રમેયચન્દ્રિકા વ્યાખ્યા
કે દૂસરે શતકકા ત્રીસરા ઉદ્દેશક સમાપ્ત ॥૨-૧॥

રત્નપ્રભાપૃથ્વીમા જે ત્રીસ લાખ નરકાવાસ છે તેમા સમસ્ત જીવો શુ પૂર્વે ઉત્પન્ન થયેલા હોય છે ? તેનો ઉત્તર દેતા પ્રભુ ગૌતમસ્વામીને કહે છે (હંતા ગોયમા!) હા, ગૌતમ ! સમસ્ત જીવો (અસઈ) અનેક વાર (અદુવા) અથવા-અણંતક્ષુતો) અનંત વાર રત્નપ્રભા આદિ સાતે પૃથ્વીઓમા પડેલા ઉત્પન્ન થયા હોય છે ॥ સૂ ૧ ॥

॥ઇતિશ્રી જૈનાચાર્ય જૈનધર્મદિવાકર પૂજ્યશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજકૃત ભગવતીસૂત્રની પ્રિયદર્શિનીવ્યાખ્યાના બીજા શતકનો ત્રીજો ઉદ્દેશક સમાપ્ત ॥૨-૧॥

॥ अथ द्वितीयशतके चतुर्थोद्देशक प्रारम्भ्यते ॥

चतुर्पादेषकोक्ताः ससिष्यविषया इमे कति इन्द्रियाणीति गौतमस्य प्रश्नः॥ पञ्चेन्द्रियाणि भोजेन्द्रिय-चक्षुरिन्द्रिय-घ्राणेन्द्रिय-रसनेन्द्रिय-स्पर्शनन्द्रिय भेदादित्युच्यते । प्रज्ञापनासूत्रस्येन्द्रियसंबन्धिप्रथमोद्देशकस्योद्धरणम् ? इन्द्रियाणां भेदप्रदर्शनम् इन्द्रियाणां संस्थानम् इन्द्रियाणां दीर्घत्वम् । इन्द्रियविषयादीनां विचारः । उद्देशकपरिसमाप्तिश्च ।

अथ द्वितीयशतकीयतृतीयोद्देशकं परिसमाप्य चतुर्थोद्देशकः प्रारम्भ्यते तृतीयोद्देशकनिरूपणानन्तरं चतुर्थोद्देशकनिरूपणेऽयमभिप्रेतः । तृतीयोद्देशके नारकाणां निरूपणं

द्वितीय शतक का चतुर्थ उद्देशक प्रारम्भ—

इस चतुर्थ उद्देशक में जो विषय प्रतिपादित किया है उनका विवरण इस प्रकार से है—

प्र०—इन्द्रिया कितनी हैं—ऐसा गौतम का प्रश्न ।

उ०—इन्द्रिया पांच हैं—भोजेन्द्रिय, चक्षुइन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, रसना इन्द्रिय और स्पर्शन इन्द्रिय ऐसा उत्तर ।

प्रज्ञापना सूत्र में इन्द्रियों के संबंध को लेकर जो प्रथम उद्देशक कहा गया है उसका उद्धरण, इन्द्रियों के भेदों का प्रदर्शन, इन्द्रियों का आकार इन्द्रियों की दीर्घता, इन्द्रियों के विषय आदि का विचार, उद्देशक की परिसमाप्ति ।

द्वितीय शतक के तृतीय उद्देशक को समाप्त कर अब सूत्रकार चौथे उद्देशक को प्रारंभ करते हैं । तृतीय उद्देशक के निरूपण के बाद चतुर्थ उद्देशक के निरूपण करने में संबंध इस प्रकार से है—तृतीय

બીજા શતકનો ચોથો ઉદ્દેશક પ્રારંભ

આ ચોથા ઉદ્દેશકમાં જે વિષયોનું પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું છે તે વિષયોનું સંક્ષિપ્ત વિવેચન આ પ્રમાણે છે

ગૌતમસ્વામીનો પ્રશ્ન—ઇન્દ્રિયો કેટલી હોય છે ?

પ્રશ્નનો ઉત્તર ઇન્દ્રિયો પાંચ છે—ભોજેન્દ્રિય, ચક્ષુરિન્દ્રિય, ઘ્રાણેન્દ્રિય, રસનેન્દ્રિય અને સ્પર્શેન્દ્રિય પ્રજ્ઞાપના સૂત્રમાં ઇન્દ્રિયોના વિષયમાં જે પહેલો ઉદ્દેશક કહ્યો છે તેનો અર્થેય ઇન્દ્રિયોના ભેદો, ઇન્દ્રિયોના આકાર ઇન્દ્રિયોની દીર્ઘતા, ઇન્દ્રિયોના વિષયો આદિનું નિરૂપણ—ઉદ્દેશકની સમાપ્તિ બીજા શતકનો ત્રીજો ઉદ્દેશક પૂર્ણ કરીને હવે સૂત્રકાર ચોથા ઉદ્દેશકનો પ્રારંભ કરે છે ત્રીજા ઉદ્દેશક સાથે ચોથા ઉદ્દેશકનો આ પ્રકારનો સંબંધ છે—ત્રીજા ઉદ્દેશકમાં નારક

કૃતમ્, તે ચ નારકાઃ પચ્ચેન્દ્રિયા ભવન્તીતિ-ઇન્દ્રિયપ્રરૂપણાય તથા દ્વિતીય
શતકાદૌ દ્વારગાથાંયામ્ 'ઇન્દિય' इत्युक्तमिति-ઇન્દ્રિયપ્રતિપાદનાય ચ ચતુર્થો-
દેશકઃ પ્રારમ્ભ્યતે, તદનેન સંવન્ધેનાયાતસ્ય ચતુર્થોદેશકસ્યેદમાદિમં સૂત્રમ્
“કઙ્ઘં મંતે ! ઇન્દિયા પન્નત્તા ” इत्यादि ॥

મૂલમ્-“ કઙ્ઘં મંતે ! ઇન્દિયા પન્નત્તા ? ગોયમા ! પંચ
ઇન્દિયા પન્નત્તા । તં જહા-પઢમિલ્લો ઇન્દિયઉદેસઓ નેય-
વ્વો, સંઠાણં, વહલ્લં. પોહત્તં, જાવ અલોગો, ઇન્દિય
ઉદેસો ॥ ॥ સૂ. ૧ ॥

॥ દ્વિતિયસપ્ત ચતુર્થો ઉદેસો સમત્તો ॥ ૨-૪ ॥

છાર્યા-કતિ સ્વલુ મદંત ! ઇન્દ્રિયાણિ પ્રજ્ઞાણિ ? ગૌતમ ! પચ્ચેન્દ્રિયાણિ
પ્રજ્ઞાણિ । તથથા-પ્રથમઃ ઇન્દ્રિયોદેશકો જ્ઞાતવ્યઃ સંસ્થાન વાહુલ્યં પૃથુત્વં યાવત્
અલોકઃ ઇન્દ્રિયોદેશકઃ ॥ સૂ. ૧ ॥

॥ દ્વિતીયશતકે ચતુર્થ ઉદેશઃ સમાપ્તઃ ॥ ૨-૪ ॥

ઉદેશક મેં નારક જીવોં કા નિરૂપણ ક્રિયા ગયા હૈ, વે નારક જીવ પાંચ
ઇન્દ્રિયાં વાલે હોતે હૈં અતઃ ઇન્દ્રિયોં કી પ્રરૂપણોં કે લિયે તથા દ્વિતીય
શતક કી આદિ મેં દ્વાર ગાથા મેં અભિહિત ઇન્દ્રિય પદ કે પ્રતિપાદન કે
લિયે હસ ચતુર્થ ઉદેશક કો પ્રારંભ ક્રિયા ગયા હૈં । હસ સંબંધ સેં
આવે હુએ હસ ચતુર્થ ઉદેશક કા યહ પહિલા સૂત્ર હૈ- (કઙ્ઘં મંતે) હં ।

સૂત્રાર્થ- (મંતે) હે મદન્ત ! (કઙ્ઘં ઇન્દિયા પન્નત્તા) ઇન્દ્રિયાં
કિતની કહી ગઈ હૈં ? (ગોયમા) હે ગૌતમ ! પંચ ઇન્દિયા પન્નત્તા) ઇન્દ્રિયાં
પાંચ કહી ગઈ હૈં । (તં જહા) વે હસ પ્રકાર સેં હૈં- (પઢમિલ્લો ઇન્દિય
ઉદેસઓ નેયવ્વો) પ્રજ્ઞાપના સૂત્ર કે પંદ્રહવે ઇન્દ્રિય પદ કે પ્રથમ ઉદેશક

અવેાનુ નિરૂપણ કયું છે, તે નારકો પાંચ ઇન્દ્રિયો વાળા હોય છે, તેથી
ઇન્દ્રિયોની પ્રરૂપણાને માટે તથા બીજા શતકની શરૂઆતમા આવતી દ્વાર
ગાથામા આવતા ઇન્દ્રિય પદનું પ્રતિપાદન કરવા માટે આ ચોથો ઉદેશક શરૂ
કર્યો છે તેનું પહેલું સૂત્ર આ પ્રમાણે છે (કઙ્ઘં મંતે ! इत्यादि ।

સૂત્રાર્થ- (મંતે) હે ભદન્ત ! (કઙ્ઘં ઇન્દિયા પન્નત્તા) ઇન્દ્રિયોં કેટલી
કહી છે ? (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (પંચ ઇન્દિયા પન્નત્તા) ઇન્દ્રિયો પાંચ કહી છે.
(તં જહા) તે આ પ્રમાણે છે- (પઢમિલ્લો ઇન્દિય ઉદેસઓ નેયવ્વો) પ્રજ્ઞાપના
સૂત્રના પહેલા ઉદેશકમા પંદરમાં ઇન્દ્રિયપદનું આહી કથન કર્યું છે.

ટીકા—“કઈણ મંતે હદિયા પજણા” કતિ સ્વલુ ભવન્ત ! ઇન્દ્રિયાણિ પ્રગ્ણાણિ । મગધાનાહ—‘ગોયમા’ ઇત્યાદિ “ગોયમા” હે ગૌતમ ! પંચ હદિયા પજણા” પચ્ચેન્દ્રિયાણિ પ્રગ્ણપ્તાણિ “તં જહા” તથા “પઢમિલ્લો હદિય ઉદેસઓ નેયલ્લો” પ્રથમ ઇન્દ્રિયોદ્દેશકો નેતવ્ય પ્રજ્ઞાપનાયામિન્દ્રિયપદામિષાત્સ્ય પચ્ચદ્વયપદસ્ય પ્રથમતદ્દેશકોઽપ્ત નેતવ્યો જ્ઞાતવ્ય ઇતિ ।

તથા ગાયા પ્રદર્શિતાનીમાણિ દ્વારાણિ—“સંઠાણ” ઇત્યાદિ “સંઠાણ” બાહસ્થ પોહણં માય અલોગા હદિય ઉદેસો” સંસ્થાનં બાહ્ય પૃથુત્વં વાસ્તુકા યદ્યાં કથન કરના ચાહિયે (સંઠાણબાહસ્થ પોહણં જાવ અલોગો) તથા ઉત્તમે કદે અનુમાર ઇન્દ્રિયોં કા આકાર, બાહ્ય—પૃથુત્વ મી કહનાં ચાહિયે વાયત્ અલોક તક કા ચિલેષન ઘાલા સમસ્ત ઇન્દ્રિય ઉદ્દેશક યદ્યાં કહ દેના ચાહિયે ।

ટીકાર્થ—(કઈણ મંતે ! હદિયા પજણા) હે ભવન્ત ! ઇન્દ્રિયાં કિત્તની કહી ગઈ હે ! તાત્પર્યે હસ પ્રશ્ન કા યદ્ હૈ કિ જિનકે દ્વારા જીવ કી પહિચાન કી જાતી હૈ વે જીવ કી લિંગરૂપ ઇન્દ્રિયાં કિત્તની હોતી હૈ !

હસ પ્રશ્ન કા ઉત્તર દેતે રૂપ પ્રશ્ન મહાવીર ગૌતમ સે કહતે હૈ કિ (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (હદિયા) વે ઇન્દ્રિયાં (પંચ પજણા) પાંચ કહી ગઈ હૈ । (તંજહા) વે હસ પ્રકાર સે હૈ—(પઢમિલ્લો હદિય ઉદેસઓ નેયલ્લો) પ્રજ્ઞાપનાસૂત્રમે ઇન્દ્રિય પદ નામ કા પન્નહર્વા પદ હૈ, ઉત્ત પદ કા પ્રથમ ઉદ્દેશક યદ્યા જાનના ચાહિયે । યદ્ ઉદ્દેશક કદ્યાં તક હેના ચાહિયે ? હસકે લિયે કહતે હૈ (સંઠાણબાહસ્થ પોહણં જાવ અલોગો હદિય ઉદેસો) સંસ્થાન બાહ્ય પૃથુત્વસે લેકર (અલોક) પર્યન્ત પચ્ચીસ દ્વારોં સે યુક્ત હો ગાયાઈ ગ્રહણ કરની ચાહિયે વે વો ગાયાઈ હસ પ્રકારસે હૈ—

(સંઠાણ બાહસ્થ પોહણં જાવ અલોગો) તથા તેમાં દેશ પ્રમાણે ઇન્દ્રિયોના આકાર, રીઘંતા આદિનું પચ્ચ વર્ણન કરવું એમને એકોક પદોના વિવેચન વાળો સમસ્ત ઇન્દ્રિય ઉદ્દેશક બહી કહેવો એમને.

ટીકાર્થ—(કઈણ મંતે ! હદિયા પજણા) હે ભવન્ત ! ઇન્દ્રિયો કટલી કહી છે ? પ્રશ્નનું તાત્પર્ય એ છે કે જેમના દ્વારા જીવને જોગબજામાં આવે છે તે જીવની નિશાની રૂપ ઇન્દ્રિયો કટલી છે ? આ પ્રશ્નનો મહાવીર પ્રશ્ન આ પ્રમાણે જવાબ આપે છે—(ગોયમા ! હદિયા પંચ પજણા) હે ગૌતમ ! ઇન્દ્રિયો પંચ કહી છે (તજહા) તે પ્રકારે આ પ્રમાણે છે—(પઢમિલ્લો હદિય ઉદેસઓ નેયલ્લો) પ્રજ્ઞાપના સૂત્રમાં (ઇન્દ્રિય) નામનું પદરૂપ પદ છે, તે પદને પહેલો ઉદ્દેશક વાચનાથી આ વિષે બાણુષા મળ્યો તે ઉદ્દેશક આં ધુપી વાંચ્યો ! (સંઠાણ બાહસ્થ પોહણં જાવ અલોગો હદિય ઉદેસો) સંસ્થાન બાહ્ય પદ

અલોકઃ હન્દ્રિયોદ્દેશઃ ।

મૂલે ગાથાત્પરિણમ્યકૃત્વા ' જાવ ' ઇત્યુક્તમિતિ યાવત્પદેન સંપૂર્ણ પશ્ચવિંશતિ દ્વારયુક્તં ગાથાદ્વયં સંગ્રાહ્યમ્ । અત્ર કિયત્પર્યન્તમિત્યાહ—' અલોગો ' અલોકઃ અલોકશબ્દપર્યન્તમિતિ । ગાથાદ્વય ચેદમ્—

“ સંઠાણં વાહલ્લં પોહત્તં કહ્પદેસ ઓગાઢે ।

અપ્પાવહુપુટ્ટવિટ્ઠ, વિસય અણગાર આહારે ॥ ૧ ॥

અદાય અસીયમણી, દુદ્ધપાણે તેલ્લ ફાણિય વસાય,
કંબલ ધૂળા થિગ્ગલ, દીવોદહિ લોગડ્ડલોય ॥ ૨ ॥

છાયા-સંસ્થાનં ૧, વાહલ્યં ૨, પૃથુત્વં ૩, કતિપ્રદેશઃ ૪, અવગાઢાનિ ૫, અલ્પવહુત્વં ૬, સ્પૃષ્ઠાનિ ૭, પ્રવિષ્ઠાનિ ૮, વિષયાઃ ૯, અનગારઃ ૧૦, આહારઃ ૧૧ ॥ ૧ ॥ આદર્શશ્ચ ૧૨, અસિશ્ચ ૧૩, મણિઃ ૧૪ દુગ્ધં ૧૫, પાનં ૧૬, તૈલઃ ૧૭, ફાણિતં ૧૮, વસા ચ ૧૯, કમ્બલ ૨૦, સ્થૂળા ૨૧, થિગ્ગલં (દેશી ભિત્તિ દ્વારમ્ ૨૨, દ્વીપોદધિ ૨૩, લોકઃ ૨૪, અલોકઃ ૨૫ ॥ ૨ ॥ ઇતિ ।

“ હંદિયઉદ્દેસો ’ હન્દ્રિયોદ્દેશઃ ગાથાદ્વયોક્ત પશ્ચવિંશતિ વિષયયુક્ત હન્દ્રિય પ્રતિ-

(સંઠાણં વાહલ્લં પોહત્તં કહ્ પપ્સ ઓગાઢે ।

અપ્પાવહુ પુટ્ટપવિટ્ઠ, વિસય અણગાર આહારે ॥ ૧ ॥

અદા ય અસી ય મણી, દુદ્ધપાણે તેલ્લ ફાણિય વસાય ।

કંબલ, ધૂળા થિગ્ગલ દીવોદહિ લોગડ્ડલોય ॥ ૨ ॥

(ઇતિ હંદિયઉદ્દેસો) હન દો ગાથાઓ દ્વારા યહ કહા ગયા હૈ કિ હન પચીસ દ્વારોં સે યુક્ત હન્દ્રિયોં કે પ્રતિપાદન કરને વાલે હન્દ્રિયનામક પ્રજ્ઞાપના સૂત્ર કે પન્દ્રહવેં પદ કા પ્રથમ ઉદ્દેશક હૈ—સો વહ ઉદ્દેશક યહાં સમ્પૂર્ણ રૂપ સે કહ લેના ચાહિયે । તાકિ હન્દ્રિય સંબંધી સમસ્ત કથન

ત્વથી શરૂ કરીને (અલોક) સુધીની પચીસ દ્વારોથી યુક્ત એ ગાથાઓ અહીં કરવા બેઠીએ તે એ ગાથાઓ નીચે પ્રમાણે છે

(સંઠાણં વાહલ્લં પોહત્ત કહ્પપ્સ ઓગાઢે)

(અપ્પાવહુ પુટ્ટપવિટ્ઠ, વિસય અણગાર આહારે ॥ ૧ ॥

(અદાય અસીય મણી, દુદ્ધપાણે તેલ્લ ફાણિય વસા ય ।

(કંબલ ધૂળા થિગ્ગલ દીવોદહિ લોગ ડ્ડલોય ॥ ૨ ॥

(ઇતિ હંદિયઉદ્દેસો) આ એ ગાથાઓ દ્વારા એ કહેવામાં આવ્યું છે કે આ પચીસ દ્વારો વાળી, હન્દ્રિયોનું પ્રતિપાદન કરનાર, પ્રજ્ઞાપના સૂત્રના હન્દ્રિય નામના પદનો પહેલો ઉદ્દેશક છે, તે ઉદ્દેશક અહીં પૂરે પૂરે કહેવો બેઠીએ. તેમ કરવાથી હન્દ્રિયો વિષેનું સમસ્ત વર્ણન સમજી શકાશે. તે

પાદક હિન્દ્રિયામિષપદ્મપદસ્ય પ્રથમઉચ્ચ સર્વોઽપ્ર વાચ્ય ઇતિ માયઃ । ઉચ્ચ
 " સંઠાણ " ઇતિ સસ્થાનમ્ ધોગેન્દ્રિયાદીનાં વક્તવ્યમ્ સસ્થાનમાકારવિશેષ
 ઉચ્ચ સંસ્થાનમિદમ્ ધોગેન્દ્રિય કદમ્બપુષ્પસંસ્થિતમ્ । ચક્ષુરિન્દ્રિયં મસૂરકચન્દ્ર-
 સંસ્થિતમ્ મસૂરવાલિકાવત્, ચન્દ્રવચ્ચ ગોલાકાર ચક્ષુરિન્દ્રિયમિતિ, ધ્રાણેન્દ્રિય-
 મતિમુક્તકચન્દ્રકસંસ્થિતમ્ અતિમુક્તકચન્દ્રકઇતિ પુષ્પવિશેષદલમ્ તથા પાતિ
 મુક્તકચન્દ્રકપુષ્પવિશેષદલમ્સનિર્મ ધ્રાણેન્દ્રિયમિતિ । રસનેન્દ્રિય ક્ષુરપસંસ્થિતમ્
 ક્ષુરપ વાસોત્પાટનાય પ્રયુજ્યમાન ક્ષુરવિશેષ ' સુરપા ' ઇતિ માયાપ્રસિદ્ધા
 ક્ષુરાકારવત્ રસનેન્દ્રિયમિતિ । સ્પર્શનેન્દ્રિય નાનાકાર મવતીતિ સસ્થાનવિધારમ્
 " વાહસ્લ " ઇતિ-હિન્દ્રિયાનાં ધોગાદીનાં વાહસ્ય વક્તવ્યમ્ સન્ધેત્યમ્-સર્વાધી-
 ન્દ્રિયાણિ અંગુલાઽસંખ્યેયમાગવાહસ્યાનિ ૨ ॥ ' પોહત્ત ' પૃષ્ઠત્વમ્ હિન્દ્રિયામાય,

અઢી તરફ સે સમજ મેં આ જાવે । इन दोनों गायाम्रो का अर्थ इस
 प्रकार से है - (सठाण) द्वार में इन्द्रियों का आकार कैसा होता है यह
 प्रकट किया है-जैसे-ओत्रेन्द्रिय का आकार कर्दय पुष्प के समान,
 चक्षु इन्द्रिय का आकार मसूर की दाल के समान, और चन्द्रमा के
 समान गोल है । ध्राणेन्द्रिय का आकार अति मुक्तक पुष्प के समान है ।
 रसनेन्द्रिय का आकार क्षुरप - खुरपा के जैसा है । स्पर्शन इन्द्रिय का
 आकार नियत नहीं है । यह अनियत आकार वाली होती है । वाहस्ल
 द्वार में ओत्रादिक इन्द्रियोंका वाहस्य-जाहापना प्रकट किया गया है
 जो इस प्रकार से है - जिननी भी इन्द्रिया हैं वे सब अंगुल के असंख्या-
 तर्बे भाग प्रमाण मोटी हैं । पोहत्तद्वार में इन्द्रियों का पृष्ठत्व- संख्यापना
 कहा गया है जो इस प्रकार से है-ओत्र, चक्षु और ध्राण इन का पृष्ठत्व
 अंगुल के असंख्यातबे भाग प्रमाण है । जिह्वा इन्द्रिय का पृष्ठत्व भी

જાને ગાયાઓનો અર્થ આ પ્રમાણે થાય છે-(સંઠાણ) દ્વારમાં ઇન્દ્રિયોના
 આકારો કેવા હોય છે તે બતાવ્યું છે જેમકે ઓત્રેન્દ્રિય નો આકાર કદમ્બ
 પુષ્પ જેવો, ચક્ષુ ઇન્દ્રિયનો આકાર મસૂરની દાળ જેવો અને ચન્દ્રમા જેવો
 ગોળ હોય છે ધ્રાણેન્દ્રિયનો આકાર અતિમુક્તક પુષ્પ જેવો, રસના ઇન્દ્રિયનો
 આકાર ક્ષુરપી જેવો છે અને સ્પર્શેન્દ્રિયનો કોઈ ચોક્કસ આકાર હોતો નથી
 (વાહસ્ય દ્વારમા) ઇન્દ્રિયોની આડાઇનું વચ્ચન કરવામાં આવ્યું છે તે વર્ણન
 આ પ્રમાણે છે- જેટલી ઇન્દ્રિયો છે તે બધી આગળના અસંખ્યાદ ભાગ
 પ્રમાણ બહી છે (પોહત્તદ્વાર) મા ઇન્દ્રિયોની ઘીર્ધતાનું વચ્ચન કર્યું છે
 તે વર્ણન આ પ્રમાણે છે-ઓત્ર, ચક્ષુ અને ધ્રાણેન્દ્રિયની ઘીર્ધતા એક આગળના

તત્ત્વેદમ્-શ્રોત્રચક્ષુર્ગ્રાણાનામ્ અહુલાસંખ્યેયભાગપરિમિતં પૃથુત્વમ્. જિહ્વેન્દ્રિયસ્ય નવાહુલપરિમિતં પૃથુત્વમ્ । રપર્જનેન્દ્રિયસ્ય શરીરમાનમ્. યસ્ય યાદૃશ શરીરમલ્પં વા વહુ વા ભવતિ તાવદેવ પૃથુત્વમ્ તદીય સ્પર્શેન્દ્રિયસ્ય ભવતિ ૩ । “કઢપ્પેસ” કતિપ્રદેશમ્. અનન્ત પ્રદેશિકાનિ પચ્ચાપીન્દ્રિયાણિ અર્થાત્ પ્રત્યેકેન્દ્રિયેણ અસં-
ખ્યાતાઽસંખ્યાતાઽઽકાશપ્રદેશા અવગાઢા પ્રત્યેકમિન્દ્રિયે અનન્તાઽનન્ત પુદ્ગલાઃ સન્તિ । અત એવ પચ્ચાપીન્દ્રિયાણિ અનન્તપ્રદેશિકાનિ સન્તિ ૪ ॥ ‘ઓગાઢેત્તિ’ અવગાઢમ્. અસંખ્યેય-પ્રદેશાદગાઢાનિ પચ્ચાપીન્દ્રિયાણિ ૫ ॥ “અપ્પાવહુ” ઇતિ અલ્પ વહુત્વમ્. સર્વસ્તોકં ચક્ષુરિન્દ્રિયમવગાહનાતઃ, તતઃ શ્રોત્રેન્દ્રિયં સંખ્યાત-
ગુણમ્ । ગ્રાણેન્દ્રિયં સંખ્યાતગુણમ્ । તતો રસનેન્દ્રિયમસંખ્યેયગુણમ્. તતઃ સ્પર્શને-

અંગુલ પ્રમાણ છે । સ્પર્શ ન ઇન્દ્રિય કા પૃથુત્વ-અપને ૨ શરીર કે પ્રમાણ તુલ્ય હોતા છે જિસકા શરીર જૈસા છોટા વડા હોતા છે ઉસકી સ્પર્શન ઇન્દ્રિય કી પૃથુતા વૈસી હી હોતી છે । “કઢપ્પેસ” દ્વાર મેં યહ સ્પષ્ટ કિયા ગયા છે કિ પાંચોં હી ઇન્દ્રિયાં અનંત પ્રદેશોં સે નિષ્પન્ન હુઈ છે । અર્થાત્ પ્રત્યેક ઇન્દ્રિયને અસંખ્યાત ૨ આકાશપ્રદેશોંકા અવગાઢ કિયા છે, ઓર એક એક ઇન્દ્રિયમેં અનંત અનંત પુદ્ગલ લગે હુએ છે । ઓગાઢ દ્વાર મેં યહ કહો ગયા છે કિ યે સમસ્ત ઇન્દ્રિયાં અસંખ્યાત પ્રદેશોં મેં અવગાઢ છે । અપ્પા વહુત દ્વાર મેં યહ સમજાયા ગયા છે કિ અવગાહના કી અપેક્ષા સવ સે સ્તોક ચક્ષુ ઇન્દ્રિય છે । ચક્ષુ ઇન્દ્રિય સે સંખ્યાતગુણી અવગાહના વાલી શ્રોત્રેન્દ્રિય છે । શ્રોત્રેન્દ્રિય સે સંખ્યાત-
ગુણી અવગાહનાવાલી ગ્રાણેન્દ્રિય છે । ગ્રાણેન્દ્રિય સે અસંખ્યાતગુણી

અસંખ્યાતમાં ભાગપ્રમાણ છે, જીભની દીર્ઘતા નવ આગળ પ્રમાણ છે, સ્પર્શેન્દ્રિયની દીર્ઘતા પોત પોતાના શરીરના પ્રમાણ જેટલી હોય છે શરીર જેવું નાનું કે મોટું હોય છે તે પ્રમાણે જ સ્પર્શેન્દ્રિય પણ નાની મોટી દીર્ઘતાવાળી હોય છે. (કઢપ્પેસે) નામના દ્વારમાં એ સ્પષ્ટ કરવામાં આવ્યું છે. કે પાંચે ઇન્દ્રિયો અનંત પ્રદેશોથી નિષ્પન્ન છે એટલે કે પ્રત્યેક ઇન્દ્રિયને અસંખ્યાત અમંખ્યાત આકાશ પ્રદેશ અવગાહવા છે અને દરેક ઇન્દ્રિયમાં અનંત પુદ્ગલ લાગેલા છે (ઓગાઢ) દ્વારમાં એ બતાવ્યું છે કે બધી ઇન્દ્રિયો અસંખ્યાત પ્રદેશોમાં અવગાઢે છે (અપ્પાવહુય) દ્વારમાં એ બતાવ્યું છે કે અવગાહનાની અપેક્ષાએ સૌથી સૂક્ષ્મ ચક્ષુઇન્દ્રિય છે ચક્ષુ ઇન્દ્રિયથી સંખ્યાતગણી અવગાહના શ્રોત્રેન્દ્રિયની હોય છે શ્રોત્રેન્દ્રિયથી સંખ્યાતગણી અવગાહના ગ્રાણેન્દ્રિયની હોય છે ગ્રાણેન્દ્રિયથી અસંખ્યાત ગણી અવગાહના

ન્દ્રિયે સંસ્પેયણમિતિ ૬ ॥ “પુદ્” સ્પૃષ્ટમ્ શ્રોત્રાદીનીન્દ્રિયાણિ ચક્ષુષ્યતિ
ક્ષોતિ સ્પૃષ્ટમૈ શુદ્ધન્તિ ચક્ષુરિન્દ્રિયમપ્રાપ્યકારિ રશરાણિ સર્વાણ્યપીન્દ્રિયા
પ્રાપ્યકારીણ ચક્ષુર્વિષયમપ્રાપ્યૈવ વિષયં પ્રકાશયતિ રશરાણિ તુ રન્દ્રિયાણિ ચિ
પ્રાપ્યૈવ વિષયપ્રકાશકાણિ મિશ્નતીતિ માત્રા ૭ ॥ એમવે “પચ્છિ” પ્રવેશ
ચક્ષુરિન્દ્રિયં ધર્ષયિત્વા સર્વેન્દ્રિયેષુ પુગ્ગલા સમાગત્ય પ્રવિશન્તિ ।

ચક્ષુરિન્દ્રિયે સુ પુગ્ગલા ન પ્રવિશન્તિ, અપ્રાપ્યકારિત્વાત્ ૮ ॥ ‘વિષયે
વિષયઃ સર્વેષામિન્દ્રિયાણાં સામાન્યેન જન્યન્તોઽનુભાસસ્મેયમાર્ગો વિષયઃ । ઉત્ક

દીર્ઘગાંહનાચાલી રસનારન્દ્રિય છે । રસનારન્દ્રિયની અપેક્ષા સંસ્પાતગુણ
દીર્ઘગાંહના ચાલી સ્પર્શન રન્દ્રિય છે । (પુદ્ દ્વાર મેં યહ કહા ગયા છે
કિ શ્રોત્રાદિક રન્દ્રિયાં કેચલ ચક્ષુ રન્દ્રિય કે સિવાય સ્પૃષ્ટ હુપે
અપને વિષયે કો પ્રકાશિત કરતી હેં । ચક્ષુ રન્દ્રિય વિષયે કો
સ્પર્શકર અપને પ્રાપ્ત વિષય કો પ્રકાશિત નહીં કરતી હેં ક્યોં કિ-
અન્ય રન્દ્રિયોં કી તરહં વહ પ્રાપ્યકારી સિદ્ધાન્ત મેં નહોં કહી ગઈ હેં ।
જો અપને વિષય કો સ્પર્શકર હસે પ્રકાશિત કરતી હેં વે રન્દ્રિયોં પ્રાપ્યકારી
માની ગઈ હેં ઓર એસી સ્પર્શન રસના ઘ્રાણ ઓર કર્ણ યે ચાર રન્દ્રિયોં
હેં । (પચ્છિ) હસે દ્વાર મેં યહ સમજાયા ગયા છે કિ ચક્ષુ રન્દ્રિય કો
હોલકર યાકી ચાર રન્દ્રિયોં મેં પુગ્ગલ આકાર પ્રવિષ્ટ હોતે હેં તમી જાકા
વે અપનેર વિષયોં કો ઘ્રહણ કર સકતી હેં । ચક્ષુ રન્દ્રિય મેં પુગ્ગલ
પ્રવિષ્ટ નહોં હોતે હેં-ક્યોં કિ વહ અપ્રાપ્યકારી હે (વિષય) દ્વાર મેં
યહ સ્પષ્ટ કિયા ગયા છે કિ સમસ્ત રન્દ્રિયોં કા વિષય સામાન્ય સે

વાળી રસનારન્દ્રિય છે અને રસના રન્દ્રિય કરતા સજ્જાત અહીં અવગાંહના
સ્પર્શરન્દ્રિયની હેાય છે (પુદ્) દ્વારમાં કો બતાવવામાં આવ્યું કે કેવલ
ચક્ષુરન્દ્રિય સિવાયની શ્રોત્રાદિક રન્દ્રિયો સ્પૃષ્ટ ધરેલા (સ્પર્શ પામેલા)
પોતાના વિષયને પ્રકાશિત કરે છે ચક્ષુરન્દ્રિય વિષયને સ્પર્શ કરીને પોતાના
પ્રાપ્ત વિષયને પ્રકાશિત કરતી નથી કારણ કે બીજી રન્દ્રિયોની જેમ તેને
પ્રાપ્યકારી કહેલ નથી. જે રન્દ્રિયો પોતાના વિષયને સ્પર્શ કરીને તેને પ્રકા
શિત કરે છે તે રન્દ્રિયોને પ્રાપ્યકારી ગણવામાં આવે છે સ્પર્શરન્દ્રિય, પ્રવે
શરન્દ્રિય, રસનેન્દ્રિય અને શ્રોત્રરન્દ્રિય પ્રાપ્યકારી છે (પચ્છિ) આ દ્વારમાં એવું
બતાવવામાં આવ્યું છે ચક્ષુરન્દ્રિય સિવાયની ચાર રન્દ્રિયોમાં બ્યારે પુગ્ગલો
આવીને પ્રવેશ કરે છે ત્યારે જે તેઓ પોતા પોતાના વિષયને ઘ્રહણ કરી
શકે છે ચક્ષુરન્દ્રિયમાં પુગ્ગલો પ્રવેશતાં નથી કારણ કે તે અપ્રાપ્યકારી છે (વિષય)
આ દ્વારમાં કો બતાવવામાં આવ્યું છે કે બીજી રન્દ્રિયોના વિષય સામાન્ય

પતસ્તુ શ્રોત્રેન્દ્રિયં શબ્દાન્તરૈર્વાતાદિભિશ્ચાપ્રતિહતં શબ્દં દ્વાદશયોજનપર્યન્તં
શ્રુણોતિ । ચક્ષુષસ્તુ સાતિરેકં યોજનલક્ષં વિષયઃ । શેષાણાં ઘ્રાણરસનસ્પર્શાનાં નવ
યોજનાનિ વિષયઃ ૯ । “અનગાર” અનગાર ઇતિ । અનગારસ્ય સમુદ્ઘાતયુક્તસ્ય
યે નિર્જરાઃ પુદ્ગલાઃ તાન્ છદ્મસ્થો મનુષ્યો ન પશ્યતીતિ ૧૦ ॥ “આહારે”
આહારઃ—નિર્જરાન્ પુદ્ગલાન્ નારકાદયો ન જાનન્તિ ન પશ્યન્તિ ન આહારયન્તિ ચ ॥

અત્ર—દ્વારગાયોક્તાદર્શાખ્યદ્વાદશદ્વારારાદારમ્ય ચતુર્વિંશતિતમલોકદ્વારપર્યન્તં
વહુવક્તવ્યમસ્તિ તત્તુ સર્વ પ્રજ્ઞાપનાસૂત્રે ઇન્દ્રિયપદે પ્રથમોદ્દેશકે વિલોકનીયમ્

જથન્યરૂપ મેં અંગુલ કે અસંખ્યાતવે ભાગ પ્રમાણ હૈ । ઓર ઉત્કૃષ્ટરૂપ મેં
શ્રોત્ર ઇન્દ્રિય કા વિષય ચારહ યોજનતકકા હૈ । યદિ હસકા વહ શબ્દ-
રૂપ વિષય શબ્દાન્તરાં દ્વારા યા પ્રતિકૂલ વાયુ દ્વારા પ્રતિહત ન કિયા
ગયા હો તો શ્રોત્રેન્દ્રિય ચારહ યોજનપર્યન્ત કે શબ્દ કો વિષય કર લેની
હૈ ઓર ચક્ષુ કા વિષય કુછ અધિક ઇક લાખ યોજનતક કા હૈ વાકી
ઘ્રાણ, રસના ઓર સ્પર્શન હન ત્રીન ઇન્દ્રિયોં કા અપના ૨ વિષય નૌ-
નૌ યોજન તક કા હૈ । (અનગાર) હસ દ્વાર મેં યહ સમજાયા ગયા હૈ
કિ સમુદ્ઘાત યુક્ત અનગાર કે જો નિર્જરા સંવંધી પુદ્ગલ હૈ ઉન્હેં છદ્મસ્થ
મનુષ્ય નહીં દેખ સકતા હૈ । (આહારે) હસ દ્વાર મેં યહ વ્યક્ત કિયા
ગયા હૈ કિ નિર્જરા સંવંધી પુદ્ગલોં કો નારક જીવ ન જાન સકતે હૈ,
ન દેખ સકતે હૈ કિન્તુ ઉનકા આહાર કર સકતે હૈ ।

હન દ્વાર પ્રદર્શક ગાથાઓં મેં કહે ગયે દ્વારોં મેં સે ગ્યારહ દ્વારોં ત્ક

રીતે ઓછામા ઓછો આગળના અસંખ્યાતમા ભાગ પ્રમાણ છે. અને વધારેમાં
વધારે શ્રોત્રેન્દ્રિયનો વિષય બાર યોજન સુધીનો છે એ તેનો તે શબ્દશ્ય
વિષય શબ્દાન્તરો દ્વારા કે પ્રતિકૂળ પવન દ્વારા પ્રતિહત થયો ન હોય તો
શ્રોત્રેન્દ્રિય બાર યોજન પર્યન્તના શબ્દને ગ્રહણ કરી શકે છે ચક્ષુઃન્દ્રિય
એક લાખ યોજન કરતા પણ દૂરના વિષયને ગ્રહણ કરી શકે છે. બાકીની
ઈન્દ્રિયો—ઘ્રાણેન્દ્રિય, રસનેન્દ્રિય અને સ્પર્શેન્દ્રિય નવ નવ યોજન પર્યન્તના
વિષયોને ગ્રહણ કરી શકે છે (અનગાર) આ દ્વારમાં એ વાત સમજાવી છે
કે સમુદ્ઘાતથી યુક્ત અણુગારના નિર્જરા સંબંધી જે પુદ્ગલો હોય છે તેમને
છદ્મસ્થ મનુષ્યો જોઈ શકતા નથી. (આહારે) આ દ્વારમાં એ બતાવવામા
આવ્યું છે કે નિર્જરા સંબંધી પુદ્ગલોને નારક છવો બાણી શકતા નથી,
જોઈ શકતા નથી અને તેમનો આહાર પણ કરી શકતા નથી.

એ દ્વારપ્રદર્શન ગાથાઓમાં કહેલા અગિયાર દ્વારોનું વિવેચન ઉપર

विस्तरमयादभनोच्यते अयं 'जाव अलोगो इति पदेन पञ्चविंशतितमबोधका
माह—'अलोगेण भन्ते' इत्यादि । "अलोगेण भन्ते ! किण्णाकुडे कइहि वा का
एहि पुञ्जा, गोयमा ! नो धम्मस्त्थिकाएण कुडे जाव नो आगासत्थिकाएण कुडे-
आगासत्थिकायस्स देसेण कुडे आगासत्थिकायस्स पपसेहि कुडे, नो पुब्बीकाएण
कुडे जाव नो अद्दासमएण कुडे एगे अजीवदव्वदेसे अगुरुल्लुएहि अणत्तेहि
अगुरुल्लुएणुणेहि सजुत्ते सम्भागासअणत्तमागूणे "

छाया—अलोक खल्ल भदत्त ! केन स्पृष्टः कविभिर्वा कायैः "पूञ्जा"
गौतम ! नो धर्मास्तिकायेन स्पृष्टः यावत् नो आकाशास्तिकायेन स्पृष्ट आकाश-
स्तिकायस्य देशेन स्पृष्टः आकाशास्तिकायस्य प्रदेशे स्पृष्ट नो पृथिवीक्षयेन स्पृष्ट
यावत् नो अद्दासमयेन स्पृष्टः एकः अजीवमदेशः अगुरुल्लुकेन तैः अगुरुल्लु-
कगुणैः सयुक्तः सर्वाकाशाऽनन्तमागोन " इति " ।

का तो विवेचन इस प्रकार से है याकी के पारहवें आवर्श द्वार से
चौथीस वे लोकद्वारतक जो और द्वार हैं उनके विषय में वक्तव्य बहुत
है सो यह सब प्रज्ञापना सूत्र में, इन्द्रियपद में, प्रथम उद्देशक में देख
लेना चाहिये, विस्तार हो जाने के भय से यहां नहीं कहा जाता है ।
(जाव अलोगो) इस पद द्वारा सूत्रकार ने पचीसवां द्वार कहा है, इस
द्वार में गौतमस्वामी ने प्रश्न से ऐसा प्रश्न किया है कि—(अलोगेण
भन्ते ! किण्णा कुडे, कइहि वा काएहि पुञ्जा ? " उत्तर—(गोयमा !
नो धम्मस्त्थिकाएण कुडे, जाव नो आगासत्थिकाएण कुडे, आगासत्थि-
कायस्स देसेण कुडे, आगासत्थिकायस्स पपसेहि कुडे, नो पुब्बी-
काएण कुडे, जाव नो अद्दा समएण कुडे एगे अजीवदव्वदेसे अगु-
रुल्लुएहि अणत्तेहि अगुरुल्लुएणुणेहि सजुत्ते सम्भागास अणत्तमागूणे)

प्रमाणे ॥ आशीना आरथी वधने बोधीसभा द्वार सुधीनुं कोटवे के (आरथी
द्वार) यी वधने (लोकद्वार) सुधीनुं विवेचन पधारि वांछु छे विस्तार
वध कथाना अयधी ते द्वारेनुं विवेचन अदी आभु नथी ते विवेचन
प्रज्ञापना सूत्रना पदेला उद्देशकना (इन्द्रियपद) भांथीवाणी लेवु (जाव अलोगो)
आ पद द्वारा सूत्रकारे पचीसवां द्वारनो उद्देशेण कयो छे आ द्वारा भातम
स्वामीके भदावीर प्रश्नने पूछु छे के—(अलोगेण भन्ते ! किण्णा कुडे,
कइहि वा काएहि पुञ्जा) उत्तर—(गोयमा ! नो धम्मस्त्थिकाएण कुडे, जाव
नो आगासत्थिकाएण कुडे आगासत्थिकायस्स देसेण कुडे, आगासत्थिकायस्स
पपसेहि कुडे नो पुब्बीकाएण कुडे जाव नो अद्दासमएण कुडे, एगे अजी-
वदव्वदेसे अगुरुल्लुएहि अणत्तेहि अगुरुल्लुएणुणेहि सजुत्ते सम्भागास अणत्तमागूणे

“અલોગેણં મંતે કિણ્ણા ફુડે ” અલોકઃ સ્વલુ મદંત । કેન સ્પૃષ્ટઃ ? “ કઈંહિં કાઈંહિં પુચ્છા ” કતિભિર્વાકાયૈઃ પૃચ્છા હે મગવન્ ! અલોકં કઃ સ્પૃશતિ કિ-
યન્તઃ કાયાઃ અલોકં સ્પૃશન્તીતિ અલોકસ્પર્શવિષયકઃ પ્રશ્નો ગૌતમસ્ય । મગ-
વાનાહ—‘ ગોયમા ’ ઇત્યાદિ “ ગોયમા ” હે ગૌતમ । ‘ નો ધમ્મસ્થિકાણં
ફુડે જાવ નો આગાસત્થિકાણં ફુડે ” નો ધર્માસ્તિકાયાનં સ્પૃષ્ટો યાવન્નો આકા-
શાસ્તિકાયાનં સ્પૃષ્ટઃ । ઇદં યાવત્પદેન અધર્માસ્તિકાયા-જીવાસ્તિકાયા-પુદ્ગલાસ્તિ-
કાયાનાં સંગ્રહો ભવતિ. કિન્તુ “ આગાસત્થિકાયાસસ દેસેણં ફુડે. આગાસત્થિ-
કાયાસસ પપ્પસેહિં ફુડે ” આકાશાસ્તિકાયાસ્ય પ્રદેશૈઃ સ્પૃષ્ટઃ આકાશાસ્તિકાયાસ્ય
દેશપ્રદેશાભ્યાં સ્પૃષ્ટો ભવત્યલોક ઇત્યર્થઃ ।

“ નો પુદ્ગલીકાણં ફુડે, જાવ નો અદ્ધાસમણં ફુડે ” નો પૃથિવીકાયાનં

इसका अर्थ इस प्रकार से है—गौतमस्वामी प्रभु से प्रश्न करते हैं कि-हे भदन्त । अलोकाकाश किस द्रव्यसे अथवा कितने कार्यों से स्पष्ट है ? तब गौतम स्वामी को समझाते हुए प्रभु कहते हैं कि हे गौतम ! अलोकाकाश किसी भी द्रव्य से किसी अस्तिकाय से स्पष्ट नहीं है, न वह धर्मास्तिकाय से स्पष्ट है, और न वह यावत्-आकाशास्तिकाय से स्पष्ट है । यहाँ जो (जाव) पद आया है उससे (अधर्मास्तिकाय, जीवास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय) इन तीन अस्तिकायों का ग्रहण किया गया है । तात्पर्य यह कि अलोकाकाश में न कोई द्रव्य है और न कोई अस्तिकाय ही है—किन्तु वह अलोकाकाश (आगासत्थिकायसस देसेणं फुडे) आकाशास्तिकाय के देश से स्पष्ट है, (आगासत्थिकायसस पपप्पसेहिं फुडे) आकाशास्ति काय प्रदेशों से स्पष्ट है । (नो पुद्वलीकाणं फुडे, जाव नो अद्धासमणं फुडे) पृथिवीकाय

ભાગૂણે) તેના અર્થ આ પ્રમાણે છે ગૌતમ સ્વામી પૂછે છે-હે ભદન્ત ! આલોકાકાશ કયા દ્રવ્યથી અથવા કેટલા અસ્તિકાયોથી સ્પૃષ્ટ છે ? ઉત્તર-હે ગૌતમ ! આલોકાકાશ કોઈ પણ દ્રવ્યથી, કે કોઈ પણ અસ્તિકાયથી સ્પૃષ્ટ નથી. તે ધર્માસ્તિકાયથી લઈને આકાશાસ્તિકાય પર્યન્તના કોઈ પણ અસ્તિકાયથી સ્પૃષ્ટ નથી અહીં જે (જાવ) પર્યન્ત પદ આવ્યું છે તેના દ્વારા અધર્માસ્તિકાય, જીવાસ્તિકાય અને પુદ્ગલાસ્તિકાયને શ્રદ્ધા કરવામાં આવ્યા છે કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે અલોકાકાશમાં કોઈ દ્રવ્ય પણ નથી અને કોઈ અસ્તિકાય પણ નથી પણ તે અલોકાકાશ (અગાસત્થિકાયાસસ દેસેણ ફુડે) આકાશાસ્તિકાયાના દેશથી સ્પૃષ્ટ છે, (આગાસત્થિકાયાસસ પપ્પસેહિં ફુડે) આકાશાસ્તિકાયાના પ્રદેશથી સ્પૃષ્ટ છે. (નો પુદ્ગલીકાણં ફુડે, જાવ નો અદ્ધાસમ

स्पष्ट यावत् नो अदासमयन स्पृष्ट अयमलोको न पृथिवीकायन स्पृश्यते न वा यावत् अदासमयन स्पृष्टो भवतीति । यदि न कोऽपि समलोक स्पृशति तदा कीदृशोऽसौ पदार्थस्तत्राह " एगे अजीवदध्यवेसे अगुरुलघुपहि अणतेहि अगुरु सहुयगुणेहि सजुचे " एक अजीवदध्यमदेस अगुरुलघुपैरनन्ते अगुरुलघुगुणैः संयुक्त " सत्त्वागासअणतभागूणे " सर्वाकाशाऽनन्तभागोऽयमलोकः । यो धर्मास्तिकायादिभिर्नस्पृष्टो भवति स च न, स्वरविपाणवत् अत्यन्तमसत् किन्तु

से यह अलोकाकाश स्पृष्ट नहीं है यावत्-अदासमय से यह अलोकाकाश स्पृष्ट नहीं है-इस प्रकार प्रभु का कथन सुनकर प्रभु से गौतम स्वामी ने पूछा-हे भइन्त ! जब अलोकाकाश को कोई द्रव्य या कोई अस्तिकाय स्पर्श नहीं करता है तो यह अलोकाकाशरूप पदार्थ कैसा है ? इस विषय को गौतमस्वामी को लिय समझाते हुए प्रभु उनसे कहते हैं-(एगे अजीवदध्यवेसे अगुरुलघुपहि अणतेहि अगुरुलघुगुणेहि सजुचे) यह अलोकाकाशरूप पदार्थ एक अजीव द्रव्य का देश रूप पदार्थ है और यह अनन्त अगुरुलघुगुणों से संयुक्त है । (सत्त्वागास अणतभागूणे) तथा अनन्तभाग से न्यून हुआ सर्वाकाशरूप है । यहाँ पर कोई ऐसी आकाश न कर सके कि (जब अलोकाकाश धर्मास्तिका याविकों से स्पृष्ट नहीं है तो फिर यह स्वरविपाण की तरह अत्यन्त असत् ही हुआ-क्यों कि यह अजीव द्रव्य प्रवेशरूप है, तथा अन्ततः

एवं कुठे) ते अलोकाकाश भूमीकाययो स्पृष्ट नथी अदासमय पथन्तया पथु अस्तिकायोयो स्पृष्ट नथी.

अगवाननु आ प्रकारनु कथन सांभलीने जीवम स्वामीजे पूछ्यु-हे भइन्त ! जे अलोकाकाशने कोछ पथु द्रव्य के अस्तिकाय स्पृश्यता नथी ते ते अलोकाकाशरूप पदार्थ केवा छे ? ते विषयनु स्पष्टीकरनु करवा भाटे प्रभु तेभने कहे छे के (एगे अजीवदध्यवेसे अगुरुलघुपहि अणतेहि अगुरुलघुगुणेहि सजुचे) ते अलोकाकाशरूप पदार्थ जेके अलव द्रव्यना देश रूप पदार्थ छे अने ते अनन्त अगुरुलघु गुणोधी युक्त छे (सत्त्वागास अणतभागूणे) तथा अनन्त भागधी न्यून यथेवा सर्वाकाश रूप छे अही कोछ जेवा प्रकार नी शक न करी शके के (जे अलोकाकाश धर्मास्तिकाय याविकी स्पृष्ट नथी ते ते कल्पनाना योशाना जेपु अत्यन्त असत् व मानवु पडे- कालु के ते अलव द्रव्य प्रदेशरूप छे, तथा अनन्त अगुरुलघु गुणोधी ते युक्त छे अने

“અલોગેણં મંતે કિણ્ણા ફુઢે ” અલોકઃ સ્વલુ મદંત ! કેન સ્પૃષ્ટઃ ? “ કઙ્ઘિં કાણ્હિં પુચ્છા ” કતિભિર્વાકાયૈઃ પૃચ્છા હે મગવન્ ! અલોકં કઃ સ્પૃશતિ કિ-
યન્તઃ કાયાઃ અલોકં સ્પૃશન્તીતિ અલોકસ્પર્શવિષયકઃ પ્રશ્નો ગૌતમસ્ય ! મગ-
વાનાહ—‘ ગોયમા ’ ઇત્યાદિ “ ગોયમા ” હે ગૌતમ ! ‘ નો ધર્મસ્થિકાણં
ફુઢે જાવ નો આગાસત્થિકાણં ફુઢે ” નો ધર્માસ્થિકાયેન સ્પૃષ્ટો યાવન્નો આકા-
શાસ્થિકાયેન સ્પૃષ્ટઃ ઇહ યાવત્પદેન અધર્માસ્થિકાય-જીવાસ્થિકાય-પુદ્ગલાસ્થિ-
કાયાનાં સંગ્રહો ભવતિ. કિન્તુ “ આગાસત્થિકાયસ્સ દેસેણં ફુઢે. આગાસત્થિ-
કાયસ્સ પપ્પસેહિં ફુઢે ” આકાશાસ્થિકાયસ્ય પ્રદેશૈઃ સ્પૃષ્ટઃ આકાશાસ્થિકાયસ્ય
દેશપ્રદેશાભ્યાં સ્પૃષ્ટો ભવત્યલોક ઇત્યર્થઃ ।

“ નો પુઢવીકાણં ફુઢે, જાવ નો અદ્ધાસમણં ફુઢે ” નો પૃથિવીકાયેન

इसका अर्थ इस प्रकार से है—गौतमस्वामी प्रभु से प्रश्न करते हैं कि-हे भदन्त ! अलोकाकाश किस द्रव्यसे अथवा कितने कार्यों से स्पष्ट है ? तत्र गौतम स्वामी को समझाते हुए प्रभु कहते हैं कि हे गौतम ! अलोकाकाश किसी भी द्रव्य से किसी अस्तिकाय से स्पष्ट नहीं है, न वह धर्मास्तिकाय से स्पष्ट है, और न वह यावत्-आकाशास्तिकाय से स्पष्ट है । यहाँ जो (जाव) पद आया है उससे (अधर्मास्तिकाय, जीवास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय) इन तीन अस्तिकायों का ग्रहण किया गया है । तात्पर्य यह कि अलोकाकाश में न कोई द्रव्य है और न कोई अस्तिकाय ही है—किन्तु वह अलोकाकाश (आगासत्थिकायस्स देसेणं फुडे) आकाशास्तिकाय के देश से स्पष्ट है, (आगासत्थिकायस्स पपप्पसेहिं फुडे) आकाशास्ति काय प्रदेशों से स्पष्ट है । (नो पुढवी काएणं फुडे, जाव नो अद्धासमएणं फुडे) पृथिवीकाय

ભાગૂણે) તેના અર્થ આ પ્રમાણે છે ગૌતમ સ્વામી પૂછે છે-હે ભદન્ત ! આલોકાકાશ કયા દ્રવ્યથી અથવા કેટલા અસ્થિકાયોથી સ્પૃષ્ટ છે ? ઉત્તર-હે ગૌતમ ! આલોકાકાશ કોઈ પણ દ્રવ્યથી, કે કોઈ પણ અસ્થિકાયથી સ્પૃષ્ટ નથી. તે ધર્માસ્થિકાયથી લઈને આકાશાસ્થિકાય પર્યન્તના કોઈ પણ અસ્થિકાયથી સ્પૃષ્ટ નથી અહીં જે (જાવ) પર્યન્ત પદ આવ્યું છે તેના દ્વારા અધર્માસ્થિકાય, જીવાસ્થિકાય અને પુદ્ગલાસ્થિકાયને ગ્રહણ કરવામા આવ્યા છે. કહેવાનું તાત્પર્ય એ છે કે અલોકાકાશમા કોઈ દ્રવ્ય પણ નથી અને કોઈ અસ્થિકાય પણ નથી પણ તે અલોકાકાશ (અગાસત્થિકાયસ્સ દેસેણં ફુડે) આકાશાસ્થિકાયના દેશથી સ્પૃષ્ટ છે, (આગાસત્થિકાયસ્સ પપ્પસેહિં ફુડે) આકાશાસ્થિકાયના પ્રદેશથી સ્પૃષ્ટ છે. (નો પુઢવીકાણં ફુડે, જાવ નો અદ્ધાસમ

લોકે સપ્તેન લોકાભાષવિરોધિનો લોકસ્ય કયમવસ્થાનમ્ અનવસ્થાને ક્ષં
લોકસ્યાલોકે સ્પર્શઃ ન હિ અવિધમાનસ્ય સ્પર્શઃ ક્ષયચિત્ સ્પૃષ્ટઃ ભુતઃ સંમરતિતેતિ
આકાશાસ્તિકાયસ્ય દેશપ્રદેશાભ્યામલોકસ્ય સ્પર્શો મયતિ આકાશાસ્તિકાય દેશપ્ર
દેશયોરલોકાગ્રસંલગ્નતાત્ એકમાસૌ અલોક અમીષદ્રવ્યપ્રદેશ આકાશદ્રવ્યદેશ-
રૂપત્વાદિતિ ॥ સૂ. ૧ ॥

इति श्री विश्वविख्यात-जगद्वल्लभ - प्रसिद्धवाचकपञ्चदशमापाकसि-
त्तमसिद्धकम्पावालापर-प्रविशुद्भगधपधनैकग्रन्थनिर्मापक- वादिमानमर्दक-
श्रीआह छत्रपतिकोल्हापुरराजप्रदत्त ' जैनशास्त्राचार्य ' पद्मपुपित-
कोल्हापुरराजगुरु-बालब्रह्मचारि-जैनाचार्य जैनधर्मविवाकरपूज्यश्री
घासीलालप्रतिधिरक्षिता श्री मगवतीसूत्रस्य प्रमेयचन्द्रिकाख्यायां
व्याख्यायां द्वितीयशतकस्य चतुर्थोद्देशक समाप्तः

અવસ્થાન કેસે માના જા સકના છે. હસ લિયે જવ વહાં લોક કા
અવસ્થાન (અન્ત)હી નહીં છે તો ફિર લોક કા અલોક મેં સ્પર્શ ક્રસા. જો
વસ્તુ જહાં અવિધમાન હોતી છે ઉમકા સ્પર્શ વહાં નહીં હોતા છે. અવિધમાન
વસ્તુ કા સ્પર્શ ન કહીં સુના ગયા છે ઓર ન કહીં દેતા મી ગયા છે.
આકાશાસ્તિકાય કે દેશ પ્રદેશો દ્વારા અલોક કા સ્પર્શ હોતા છે વેસા
જો કહા ગયા છે સો ઉસકા કારણ યહ છે કિ આકાશાસ્તિકાય કે દેશ
ઓર પ્રદેશ મેં અલોક કા અગ્રમાગ સંલગ્ન છે. યહ અલોકાક્રશ એક
છે ઓર આકાશદ્રવ્ય દેશરૂપ હોને કે કારણ યહ અમીષ દ્રવ્ય કા દેશ
ઓર પ્રદેશરૂપ છે ॥ સૂ. ૧ ॥

જેનાચાર્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજકૃત “મગવતી સૂત્ર”ની પ્રિયદર્શિની
વ્યાખ્યા કે દિતીય શતક કે ચૌથા ઉદ્દેશક સમાપ્ત

ઠેવી રીતે માની શકાય ? તથી જ ત્યાં બે હોઈતું અવસ્થાન જ નહીં તે
હોઈતો. અહોઈતો સ્પર્શ પણ ઠેવી રીતે ચાલી શકે ? જે વસ્તુ બધાં મોખડ
જ ન હોય ત્યાં તેનો સ્પર્શ જ ચાલી શકે નહીં અવિધમાન વસ્તુનો સ્પર્શ
કાઈ પણ ઠેકાણે કેખ્યો નહીં કે સાંભળ્યો નથી આકાશાસ્તિકાયના દેશ
અને પ્રદેશો દ્વારા અહોઈતો સ્પર્શ થાય છે એમ જે કહેવામાં આવ્યું છે તેનું
કારણ બે છે કે આકાશાસ્તિકાયના દેશ અને પ્રદેશોમાં અહોઈતો અગ્રમાગ
સંલગ્ન છે તે અહોઈકાશ એક છે અને આકાશદ્રવ્ય દેશરૂપ હોવાને લીધે
તે અલવદ્રવ્યના પ્રદેશરૂપ છે ॥ ૧ ॥

જેનાચાર્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ કૃત મગવતી સૂત્રની પ્રિયદર્શિની
વ્યાખ્યાના બીજા શતકના ચોથા ઉદ્દેશ સમાપ્ત થયો

અગુરુલઘુરૂપઃ અજીવદ્રવ્યપ્રદેશસ્તથાઽનન્તાગુરુલઘુકગુણવિશિષ્ટઃ સર્વાકાશાન્ત-
ભાગન્યૂનઃ, લોકાકાશ વિરહાત્ 'યતોઽયમાકાશસ્ય સ્વરૂપભૂતોઽનન્તા ગુરુલઘુક-
ગુણૈઃ સ્પૃષ્ટોઽત એવ નાયમલોકોઽત્યંતમસત્ ભવતિ કિન્તુ સદ્રૂપ એવ કેવલં પૃથિ-
વ્યાદિકાયૈઃ ધર્માસ્તિકાયાદિના સમયેન ચ અસ્પૃષ્ટઃ ન વ્યાપ્ત ઇત્યર્થઃ ।
કુતોઽલોકમાકાશાસ્તિકાયાદયો ન સ્પૃશન્તિ ઇતિ ચેદત્રોચ્યતે, યદિ પૃથિવ્યાદયઃ
અલોકે ભવેયુસ્તદા પૃથિવ્યાદય એવ લોકપદવાચ્યાઃ પૃથિવ્યાદિ કાયાદિના
આલોકસ્ય સ્પર્શો ભવેત્ કિન્તુ નત્વેવમ્ તત્રાલોકે પૃથિવ્યાદિ કાયાદીનામવર્તમાન-
ત્વાદેવાલોકસ્યાલોકત્વમ્ યત્ તત્ર લોકસ્યાભાવો વિઘટે । તતશ્ચ લોકાભાવસ્યા-

અગુરુલઘુગુણોં સે યહ વિશિષ્ટ હૈ । એવં લોકાકાશ કે હસમેં વિરહ હોને
સે યહ અનંતભાગન્યૂન સર્વાકાશરૂપ હૈ । અતઃ જય યહ અલોકાકાશ
આકાશ કા સ્વરૂપ ભૂત હૈ ઓર અનત અગુરુલઘુગુણોં સે યુક્ત હૈ તચ
યહ સ્વરવિષાળ કો તરહ અત્યન્ત અસત્ રૂપ નહીં હો સકના હૈ । કિન્તુ
યહ એક સદ્રૂપ પદાર્થભૂત હી હૈ । લોકાકાશ કી તરહ યહ કેવલ પૃથિ-
વ્યાદિક કાયા દ્વારા, ધર્માસ્તિકયાદિક દ્વારા ઓર સમયદ્વારા સ્પૃષ્ટ નહીં
હુઆ હૈ—વ્યાસ નહીં હુઆ હૈ । યહ અલોકાકાશ આકાશાસ્તિકાયાદિકોં
દ્વારા સ્પૃષ્ટ કયોં નહીં હોતા હૈ ? તો હસકા ઉત્તર યહ હૈ કિ—યદિ પૃથિ-
વ્યાદિક કાર્ય અલોકાકાશ મેં હોતે તો વે ઉસે સ્પર્શ કરતે વહાં તો
પૃથિવ્યાદિક કાય હેં હી નહીં—તય હસે સ્પર્શ કૌન કરે । અલોક મેં
અલોકતા હસી કારણ સે તો હૈ કિ વહાં પર પૃથિવ્યાદિક કાયરૂપ
લોક નહીં હૈ । જિસ કારણ વહાં લોક કા અભાવ હૈ હસી કારણ અલો-
ક મેં લોકાભાવ કા સત્ત્વ હૈ, અતઃલોકાભાવ કે વિરોધ લોક કા વહાં

તેમા લોકાકાશનો વિરહ (અભાવ હોવાથી તે અનત ભાગ ન્યૂન સર્વાકાશ
રૂપ છે.) તે માટે નીચે પ્રમાણે ખુલાસો કર્યો છે—આ અલોકાકાશ આકાશ
ના સ્વરૂપ ભૂત છે અને અનત અગુરુલઘુ ગુણોથી યુક્ત છે તેથી તે કલ્પનાના
લોકો જેવું અસત્ રૂપ હોઈ શકે નહીં પણ તે એક સદ્રૂપ (અસ્તિત્વ ધરા-
વનાર) પદાર્થ રૂપ છે લોકાકાશની જેમ તે ફક્ત પૃથ્વી આદિ કાયો દ્વારા,
ધર્માસ્તિકાય આદિ દ્વારા અને સમય દ્વારા સ્પૃષ્ટ નથી—વ્યાસ નથી તે અલો-
કાકાશ આકાશાસ્તિકાય આદિ દ્વારા સ્પૃષ્ટ કેમ નથી ?

ઉત્તર—જો પૃથ્વીકાય આદિ અલોકાકાશમાં હોત તો તેઓ તેનો
સ્પર્શ કરતા હોત પણ ત્યાં તો પૃથ્વીકાય આદિ છે જ નહીં—તો તેનો સ્પર્શ
કોણ કરે ! અલોકમાં અલોકતા એ કારણે જ રહેલી છે કે ત્યાં પૃથ્વીકાય આદિ
કાય રૂપ લોક નથી જે કારણે ત્યાં લોકનો અભાવ છે તેજ કારણે અલોકમાં
લોકાભાવનું સત્ત્વ છે, તેથી લોકાભાવથી વિરોધી લોકનું ત્યાં અવસ્થાન-અસ્તિત્વ

अण्णेसिं देवाण देवीओ आहिजुजिय आहिजुजिय परियारेइ
 णो अप्पणिच्चियाओ देवीओ अहिजुजिय अहिजुजिय
 परियारेइ अप्पणामेव अप्पण विउव्विय विउव्विय परिया
 रेइ, एगे वि य ण जीवे एगेण समएण दो वेय वेएइ त जहा
 इत्थिवेय पुरिसवेय च एव परउत्थियवत्तव्वया नेयव्वा
 जाव इत्थिवेय च पुरिसवेय च से कहमेय भते एव ?
 गोयमा ज ण ते अन्नउत्थिया एव आइक्खति जाव
 इत्थिवेय च पुरिसवेय च जे ते एव आइसु मिच्छंते एव
 आइसु अह पुण गोयमा ! एव आइक्खामि भासामि पन्न
 वेमि परूवेमि एव खलु णियटे कालगणं समाणे अन्नयेसु
 देवलोपसु देवत्ताए उववत्तारो भवइ महइएसु जाव म
 हाणुभावेसु, दूरगइएसु चिरट्टिइएसु, से णं तत्थ देवे भवइ
 महइए जाव दसदिसाओ उज्जोवेमाणे, पमासे माणे जाव
 पडिक्खे सेण तत्थ अन्नेदेवे अण्णेसिं देवाण देवीओ अमि
 जुजिय अमिजुजिय परियारेइ, अप्पणिच्चियाओ देवीओ
 अमिजुजिय अमिजुजिय परियारेइ नो अप्पणामेव अप्पणं
 विउव्विय, विउव्विय परियारेइ, एगेवि य ण जाव एगेण
 समएणं एग वेय वेएइ । त जहा इत्थिवेय चा पुरिसवेयं
 वा ज समय इत्थियवेय वेएइ णो तं समय पुरिसवेय
 वेएइ ज समय पुरिसवेय वेएइ, नो त समय इत्थियवेय
 वेएइ इत्थियवेयस्स उदएण नो पुरिसवेय वेएइ, पुरिस
 वेयस्स उदयेणं नो इत्थियवेय वेएइ एव खलु एगे जीवे

॥ द्वितीयशतके पञ्चमोद्देशकः प्रारभ्यते ॥

द्वितीयशतके चतुर्थमुद्देशक निरूप्य तदनन्तरम् पञ्चमोद्देशको निरूप्यते. चतुर्थपञ्चमोद्देशकयोरयं संबन्धः चतुर्थोद्देशके इन्द्रियाणि उक्तानि. इन्द्रियवलादेव विषयभोगरूपा परिचारणासंभवेदित्यतस्तन्निरूपणाय तथा द्वितीयशतकादौ द्वार गाथायम् “अन्नउत्थिय” इति कथितमित्यन्ययूथिकवक्तव्यता प्रतिपादनाय च पञ्चमोद्देशकः प्रारभ्यते, तदनेन संबन्धेनायातस्य पञ्चमोद्देशकस्येदमादिमं सूत्रम्—“अणउत्थिया” इत्यादि—

मूलम्—अणउत्थियाणं भंते ! एवं आइक्खंति भासंति पन्नवेन्ति, परूवेन्ति, तं जहा—एवं खलु नियंठे कालगए समाणे देववभूएणं अप्पाणेणं से णं तत्थ णो अन्ने देवे. नो

दूसरे शतकका पांचवां उद्देशक प्रारम्भ—

द्वितीयशतक में चौथे उद्देशक का निरूपण करके अब सूत्रकार पंचम उद्देशक निरूपण करते हैं। चतुर्थ उद्देशक का और इस पंचम उद्देशक का संबंध इस प्रकार से है—चतुर्थ उद्देशक में इन्द्रियां कही गई हैं—सो उन इन्द्रियों के बल से ही विषय भोगरूप परिचारणा हो सकती है। इसलिये उस विषय भोगरूप परिचारणा को निरूपण करने के लिये तथा द्वितीय—शतक की आदि में द्वार गाथा में (अन्न उत्थिय) इस रूप से कथित अन्य—यूथिकों की वक्तव्यता को प्रतिपादन करने के लिये सूत्रकार ने इस पंचम उद्देशक का प्रारंभ किया है। इस संबंध से आये हुए इस पंचम उद्देशक का यह आदि सूत्र है—(अण उत्थिया णं भंते !’ इत्यादि।

બીજા શતકનો પાંચમો ઉદ્દેશક પ્રારંભ

બીજા શતકના ચોથા ઉદ્દેશકનું નિરૂપણ પૂરૂ કરીને હવે સૂત્રકાર પાંચમા ઉદ્દેશકનું નિરૂપણ કરે છે ચોથા ઉદ્દેશક સાથે પાંચમા ઉદ્દેશકનો સંબંધ આ પ્રમાણે છે—ચોથા ઉદ્દેશકમાં ઇન્દ્રિયોનું નિરૂપણ કર્યું છે તે ઇન્દ્રિયો દ્વારા જ વિષય ભોગરૂપ પરિચારણા થઈ શકે છે તેથી તે વિષય ભોગરૂપ પરિચારણાનું નિરૂપણ કરવા માટે તથા બીજા શતકની શરૂઆતમાં આવતી દ્વારગાથામાં (અન્ન ઉત્થિય) અન્ય યૂથિકો (અન્ય મતવાદીઓ) નું પ્રતિપાદન કરવા માટે સૂત્રકારે આ પાંચમો ઉદ્દેશક શરૂ કર્યો છે આ પ્રકારના સંબંધથી શરૂ થતા આ પાંચમા ઉદ્દેશકનું પહેલું સૂત્ર આ પ્રમાણે છે—(અણ ઉત્થિયા ણં ભંતે !) ઈ

પરિચારયતિ એકોઽપિ ચ સ્વલ્લ ઝીવઃ એકેન સમયેન દ્વૌ વેદૌ વેદયતિ । તદ્ યથા સ્ત્રીવેદં ચ પુરુષવેદં ચ એવ પરપુરુષિક વક્તૃત્વતઃ નેતર્યા, યાવત્ સ્ત્રીવેદ ચ પુરુષવેદં ચ તત્કયમેતદ્ મદંત ! એવમ્ , ગૌતમ । યત્ સલ્લ તે અન્યપુરુષિકા એવમાસ્માન્તિ યાવત્ સ્ત્રીવેદ ચ પુરુષવેદ ચ, યત્તે એવમાહુર્મિથ્યા તે એવમાહુઃ અહં પુન ગૌતમ ! એવમાસ્મામિ માપે પ્રજ્ઞાપયામિ પ્રરુપયામિ, એવં સલ્લ નિર્ગ્રંથઃ કાલ્માણઃ સન્ અન્ય

યપરિચારેહ) વહ દેવ અપને આપ સે અર્થાત્-અપની ધિક્તિયાશક્તિ સે અપને દો રૂપ યનાતા હૈ । હનમેં એક રૂપ દેવ કા હોતા હૈ ઓર દુસરા રૂપ દેવી કા હોતા હૈ । હસ તરહ દો રૂપ મેં વિભક્ત હુઆ વહ દેવ સ્વયં હી દેવીરૂપમેં વિભક્ત હુએ અપને હી દુસરે રૂપ કે સાથ ધિયયમોગ કરતા હૈ । હસ તરહ (એગે વિ ય ણ ઝીવે એગેણં સમણં દો વેપ વેપહ) એક હી ઝીવ એક હી સમય મેં દો વેદોં કા અનુભવ કરતા હૈ । (ત જહા) વે દો વેદ હસ પ્રકાર સે હૈ (હસ્તિવેયં ચ પુરિસવેયં ચ) એક સ્ત્રીવેદકા ઓર દુસરે પુરુષવેદકા । (એવ પરપુરુષિક વક્તૃત્વતઃ નેતર્યા) હસ પ્રકારસે પરતીર્થિક જનોંકી વક્તૃત્વતઃ જાનની ચાહિયે (જાવ હસ્તિવેયં ચ પુરિસવેયં ચ) યાવત્ સ્ત્રી વેદ ઓર પુરુષવેદ તક (સે કસમેયં મંતે એવં) તો કયા હે મદંત ! વહ પરતીર્થિક જનોં કો માન્યતા ઠીક હૈ ? (ગોયમા) હૈ ગૌતમ । (જં ણં તે અમ્મહસ્તિયાએવ આહ્મકંતિ જાવ હસ્તિવેયં ચ પુરિસવેયં ચ) હૈ ગૌતમ ! જો વે અન્યતીર્થિક જન એસા કહતે હૈ યાવત્ એક ઝીવ એક સમયમેં દો વેદોં કો-સ્ત્રીવેદકો ઓર પુરુષ વેદ-અનુભવમા હૈ (જે

પરિચારેહ) તે દેવ પોતાની વૈદિક શક્તિથી પોતાના બે રૂપ બનાવે છે તેમાનું એક રૂપ દેવનું અને બીજું દેવીનું હોય છે આ રીતે બે સ્વરૂપમાં વિભક્ત થયેલા તે દેવ દેવીરૂપે વિભક્ત થયેલા પોતાનાજ બીલા રૂપની અર્થે વિધવશોગ સેવે છે આ રીતે (એગે વિ ય ણ ઝીવે એગેણં સમણં દો વેપ વેપહ) એક જ એવ એક જ સમયે બે વેદોનો અનુભવ કરે છે (તજહા) તે બે વેદ આ પ્રમાણે છે-(હસ્તિવેયં ચ પુરિસવેયં ચ) (૧) સ્ત્રીવેદ અને (૨) પુરુષવેદ (એવ પરપુરુષિક વક્તૃત્વતઃ નેતર્યા) આ પ્રમાણેનું અન્ય મતય હીઓનું વક્તૃત્વ છે તેમ સમજવું (જાવ હસ્તિવેયં ચ પુરિસવેયં ચ) સ્ત્રીવેદ પુરુષવેદ પર્યન્તનું (સે કસમેયં મંતે એવં) હે બદંત ! અન્યમતયહીઓની તે માન્યતા ॥ સાચી છે ? છે (ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (જં ણં તે અમ્મહસ્તિયા એવ આહ્મકંતિ જાવ હસ્તિવેયં ચ પુરિસવેયં ચ) અન્યમતયહીઓ એવું બે કહે છે કે એકજ એવ એક જ સમયે સ્ત્રીવેદ અને પુરુષવેદનો અનુભવ કરે છે (અહીં

એમેણં સમણં એમં વયં વેણં તં જહાં ઇત્થિવેયં વા પુરિ-
સવેયં વા ઇત્થાં ઇત્થિવેણં ઉદિણ્ણેણં પુરિસં પત્થેણં, પુરિસો
પુરિસવેણં ઉદિણ્ણેણં ઇત્થિં વેત્થેણં, દો વિ તં અણ્ણમણ્ણં
પત્થેતિ તં જહાં ઇત્થીં વા પુરિસં, પુરિસે વા ઇત્થિં ॥સૂ૦૧॥

હાયા—અન્ય યૂથિકાં' સ્વલુ મદત । એવાસ્યાંતિ ભાષન્તે પ્રજ્ઞાપયન્તિ પ્રરૂ-
પયન્તિ । તદ્ યથા એવં સ્વલુ નિર્ગ્રંથઃ કાલગતઃ સન્ દેવભૂતેનાત્મના સ સ્વલુ તત્ર
નોડ્ડ્યાન્ દેવાન્ , નોડ્ડ્યેપાં દેવાનાં દેવીરભિયુજ્યાભિયુજ્ય પરિચારયતિ, ત્તો
આત્મીયા દેવીરભિયુજ્યાભિયુજ્ય પરિચારયતિ । આત્મનૈવાત્માનં વિકુર્વ્યં વિકુર્વ્યં

સૂત્રાર્થ—(મંતે ? અન્નઉત્થિયાણં એવં આહ્વલંતિ, ભાસંતિ, પન્નવેંતિ
પરૂવેંતિ) હે મદન્ત । અન્યતીર્થિકજન એસા કહતે હિં, એસા ભાષણ કરતે
હિં, એસી પ્રજ્ઞાપના કરતે હિં એસી પ્રરૂપણા કરતે હિં (તંજહા) કિ
(એવં સ્વલુ નિર્ગ્રંથે કાલગણ સમાણે) જય નિર્ગ્રંથ કાલગત હો જાતા
હૈ તથ વહ (દેવભૂણં તુ અપ્પાણેણં) દેવ કી પર્યાય સે દેવલોક મેં
ઉત્પન્ન હો જાતા હૈ । ઉસ પર્યાય સે (સે ણં) વહ (નો અન્ને દેવે) ન
અન્યદેવોં કો, તથા (નો અન્નેસિં દેવાણ દેવીઓ) ન અન્ય દેવોં કી
દેવિયોં કો (અહિંજુજિય અહિંજુજિય) અપને વશ મેં કર કરકે (પરિ-
ચારેહ) વિષયભોગ કરતા હૈ (ણો અપ્પણિચ્ચિયાઓ દેવીઓ અહિંજુ-
જિય અહિંજુજિય પરિચારેહ) ઓર ન અપની દેવિઓં કો વશ મેં કરકે
ઉનકે સાથ વિષય ભોગ કરતા હૈ કિન્તુ (અપ્પણામેવ અપ્પાણં વિરુગ્ગિવ-

સૂત્રાર્થ—(મંતે ! અન્નઉત્થિકાણ એવં આહ્વલંતિ ભાસંતિ, પન્નવેંતિ,
પરૂવેંતિ) હે મદન્ત ! અન્ય મતવાદીઓ એવુ કહે છે, એવું ભાષણ કરે છે,
એવી પ્રજ્ઞાપના કરે છે, એવી પ્રરૂપણા કરે છે (તંજહા) કે (એવં સ્વલુ
નિર્ગ્રંથે કાલગણ સમાણે) બધારે નિર્ગ્રંથ કાળ પામે છે ત્યારે (દેવભૂણં તુ
અપ્પાણેણં) તે દેવલોકમાં દેવની પર્યાયે ઉત્પન્ન થાય છે તે પર્યાયમાં ઉત્પન્ન
થયેલ (સે ણં) તે (નો અન્નેદેવે, નો અન્નેસિં દેવાણ દેવીઓ) અન્ય દેવોને
અથવા અન્ય દેવોની દેવીઓને (અહિંજુજિય અહિંજુજિય) પોતાને વશ કરીને
(પરિચારેહ) વિષયભોગ ભોગવતો નથી, (ણો અપ્પણિચ્ચિયાઓ દેવીઓ અહિંજુજિય
અહિંજુજિય પરિચારેહ) અથવા તો પોતાની દેવીઓને વશ કરીને તેમની સાથે
વિષયભોગ કરતો નથી પણ (અપ્પણામેવ અપ્પાણં વિરુગ્ગિવ્ય વિરુગ્ગિવ્ય

પરિચારયતિ આત્મીયાદેવીરમિયુજ્યામિયુજ્ય પરિચારયતિ નો આત્મનૈવાત્માનં
વિક્લુર્ચ્ય વિક્લુર્ચ્ય પરિચારયતિ । ઇકોઽપિ ધ સત્ત્વ ઝીવેદ એકસ્મિન્ સમયે યદ્ વેદં
ચેદયતિ તદ્-યથા સ્ત્રીવેદ ધા પુરુષવેદ ધા યસ્મિન્ સમયે સ્ત્રીવેદં ચેદયતિ નો
તસ્મિન્ સમયે પુરુષવેદ ચેદયતિ, યસ્મિન્ સમયે પુરુષવેદં ચેદયતિ નો તસ્મિન્

વિદ્યાર્થીઓં કો પ્રકાશિત કરતા હૈ વેદીપ્યમાન કરતા હૈ । યાવત્ પ્રસેક
દેખને ઘાછે કો જિસકે રૂપ મેં નવીનતા હી નવીનતા દિસલાઈ પડતી
હૈ । (સે ણ તત્થ અન્ને દયે અન્નેસિં દેવાળ દેવીઓ) વહ વહાંપર અન્ય
દૂસરે દેવોં કો તથા દેવોં કિ દેવિણાં કો (અભિજુજિય અમિજુજિય)
અપને ઘણ મેં કરકે (પરિચારેહ) उनके साथ वैपयिक सुख
भोगता है । (नो अप्पणामेव अप्पाणं विउत्थियपरिचारेह) अपने
आपके विक्रियाशक्ति से देवी और दैव के दो रूप बना कर
वैपयिक सुखों का भोग नहीं करता है । (एगे वि य ण जीवे एगेण
समएणं एगं वेय वेयइ) इसी तरह एक जीव एक समयमें एक ही
वेदका अनुभव करता है । (त जहा) जो इस प्रकारसे हँ (इत्थिवेयं वा
पुरिसवेयं वा) स्त्रीवेद का अथवा पुरुषवेद का दोनों वेदों का एक ही
समय में एक जीव अनुभव नहीं करता क्योंकि (जं समयं इत्थिव
वेयं वेयइ णो तं समयं पुरिसवेयं वेयइ) जिस समय में वह स्त्री वेद का
वेदन करता है उस समय में वह पुरुषवेद का वेदन नहीं करता है
(जं समयं पुरिसवेयं वेयइ, नो तं समयं इत्थिववेयं वेयइ) और जिस

વિદ્યાર્થીઓને પ્રકાશિત કરતું હોય તથા પ્રત્યેક ભેનારને તેના રૂપમાં નવીનતામાં
દર્શન થતાં હોય (સે ણ તત્થ અન્ને દેવે અન્નેસિં દેવાળં દેવીઓ) એવો તે
દેવ ત્યાં અન્ય દેવોને તથા અન્ય દેવોની દેવીઓને (અભિજુજિય અમિજુજિય)
પોતાને વશ કરીને (પરિચારેહ) તેમની આજીવિયસોગ સોગવે છે (નો
અપ્પણામેવ અપ્પણં વિઉત્થિય પરિચારેહ) પોતાના શરીરતા વિક્રિય
શક્તિથી દેવ અને દેવીના બે રૂપ બનાવીને તે વિપયસોગ સોગવતો નથી.
(એગે વિ ય ણ જીવે એગેણ સમએણં એગં વેય વેયઇ) આ રીતે એક એવ
એક સમયે એક જ વેદનો અનુભવ કરે છે (ત જહા) તે વેદ આ પ્રમાણે છે
(ઇત્થિવેયં વા પુરિસવેયં વા) સ્ત્રીવેદ અથવા પુરુષવેદ એક જ એવ એક જ
સમયે સ્ત્રીવેદ અને પુરુષવેદનો અનુભવ કરતો નથી કારણકે (જં સમયં ઇત્થિ
વેયં વેયઇ ણો તં સમયં પુરિસવેયં વેયઇ) એ સમયે તે સ્ત્રીવેદનો અનુભવ
કરે છે તે સમયે તે પુરુષવેદનો અનુભવ કરતો નથી, (જ સમય પુરિસવેયં

તરેણ દેવલોકેણ દેવતયા ઉપપન્નો ભવતિ મહર્દિકેણ, યાવન્મહાનુભાવેણ દૂરગતિકેણ ચિરસ્થિતિકેણ સંઘલુ તત્ર દેવો ભવતિ મહર્દિકો યાવત્ દશદિશ ઉદ્યોતયન્ પ્રભાસયન્ યાવત્ પ્રતિરૂપઃ । સંઘલુ તત્ર અન્યાન્ દેવાન્ અન્યેણાં દેવાનાં દેવીરભિયુજ્ય-

તે ણ્વં આહંસુ) સો જો ઁઁઁો ને ઁસા કહા હૈ (મિચ્છં તે ઁવં આહંસુ) સો ઁસા વહ ઁઁઁો ને મિથ્યા કહા હૈ । (અહં પુઁ ઁોયમા ! ઁવં આહ-કલામિ ભાસામિ, પન્નવેમિ પરૂવેમિ) મૈં તો હે ઁૌતમ । ઁસા કહતા હું -ઁસા હી ભાપણ કરતા હૂ ઁસી હી પ્રજ્ઞાપના કરતા હું ઁસી હી પ્રરૂપણા કરતા હું કિ (ઁવં ઁલુ નિયંટે કાલગણ સમાણે) કોઈ નિર્ગ્રન્થ - કાલગત હોકર અન્નયરેસુ દેવલોઁસુ દેવત્તાઁ ઉવવત્તારો ભવઈ) કિસી ઁક દેવલોક મૈં દેવકી પર્યાય સે ઉત્પન્ન હો જાતા હૈ (મહદ્દિઁસુ જાવ મહાણુભાવેસુ દૂરગદ્દિઁસુ ચિરદ્દિઁસુ) સો ભી વહ સામાન્ય દેવલોકોં મૈં ઉત્પન્ન નહીં હોતા કિન્તુ જો દેવલોક વડી વડી ઋદ્ધિયોં સે સંપન્ન હોતે હૈં-યાવત્ મહાપ્રભાવશાલી હોતે હૈં, દૂરતક જાને કી શક્તિ સે યુક્ત ઁસે દેવોં સે સહિત હોતે હૈં તથા જિનમૈં આયુ વહુત લંબી હોતી હૈ ઁસે દેવલોકોં મૈં સે કિસી ઁક દેવલોક મૈં વહ ઉત્પન્ન હોતા હૈ । (સે ણં તત્થ દેવે ભવઈ મહદ્દિઁ જાવ દસ દિસાઁો ઉજ્જોવેમાણે પમાસેમાણે જાવ પડિરૂવે) વહાં ઉત્પન્ન હોકર વહ નિર્ગ્રન્થ ઁસા દેવ હોતા હૈ કિ જિસકી મહાન્ ઋદ્ધિ હોતી હૈ યાવત્ જો દશોં

પ્રશ્નમાંતુ સમસ્ત કથન ઁહણુ કરવાતુ) (જે તે ઁવં આહસુ) તેમણે ઁવું જે કહુ છે તે (મિચ્છં તે ઁવં આહંસુ) તેમણે મિથ્યા (ખોટુ) કહુ છે. (અહં પુઁ ઁોયમા ! ઁવં આહકલામિ, ભાસામિ, પન્નવેમિ, પરૂવેમિ) હે ઁૌતમ । હું તો ઁવુ કહુ છુ, ઁવું ભાપણુ કરુ છુ, ઁવી પ્રજ્ઞાપના કરુ છુ અને ઁવી પ્રરૂપણુ કરુ છુ કે (ઁવ ઁલુ નિયંટે કાલગણ સમાણે) કોઈ નિર્ગ્રન્થ કાળ પામીને (અન્નયરેસુ દેવલોઁસુ દેવત્તાઁ ઉવવત્તારો ભવઈ) કોઈ ઁક દેવલોકમા દેવની પર્યાયે ઉત્પન્ન થઈ જાય છે, (મહદ્દિઁસુ જાવ મહાણુભાવેસુ દૂરગદ્દિઁસુ ચિરદ્દિઁસુ) ભલે તે સામાન્ય દેવલોકમા ઉત્પન્ન થયો ન હોય, પણ અનેક ઋદ્ધિયોથી ભરપૂર દેવલોકમા ઉત્પન્ન થયો હોય, મહા પ્રભાવશાળી દેવલોકમા ઉત્પન્ન થયો હોય, લાખા આયુષ્યવાળા અને ઘણે દર સુધી જવાની શક્તિથી યુક્ત દેવલોકમા તે ઉત્પન્ન થયો હોય, (સે ણં તત્થ દેવે ભવઈ મહદ્દિઁ જાવ દસ દિસાઁો ઉજ્જોવેમાણે પમાસેમાણે જાવ પડિરૂવે) ત્યા ઉત્પન્ન થયેલા તે દેવની મહાન ઋદ્ધિ હોય, ઁવુ દેદીપ્યમાન સ્વરૂપ હોય કે જે દસે



ટીકા—“અજઠત્થિયાણ મંતે !” અન્યયુધિકાઃ સ્વલ્લ મદંત ! “એ આફસંતિ” એવં વક્ષ્યમાણપ્રકારેણ આસ્થ્યાન્તિ-હે મગધન ! પરદર્શનાદુપાયિનો વક્ષ્યમાણપ્રકારેણ કથયન્તિ । ‘માસતિ’ માપ-તે “પમ્પવેતિ” મજ્ઞાપયન્તિ “પરુવેતિ” પ્રસ્પર્યન્તિ । કિમાસ્થ્યાન્તિ-ઇત્યાહ-“તં નહા” તદ્વયથા-તદેવ દર્શયતિ-“એવ સ્વલ્લ” ઇત્યાદિ “એવ સ્વલ્લ નિયંઠે કાલગણ સમાણે” એવં સ્વલ્લ નિર્ગ્રંથઃ કાલગતઃ સન્ નિર્ગ્રંથઃ=સાધુ “કાલગણ” કાલગત “દેવ-મૂર્ણં અપ્પાણેણ” દેવમૂર્તનાત્મના કારણમૂતેન નો પરિચારયતિ-ઇતિ અગ્નિમેશ સંવત્સરઃ દેવમૂતેન દેવમાત્ર પ્રાપ્તેન દેવોમૂર્તૈસ્પર્યઃ “સે યં તત્ત્વ ણો અન્ને દેવે” સ સ્વલ્લ-નિર્ગ્રંથ જીવદેવઃ ‘તત્ત્વ’ તત્ત્વ-દેવલોકે “ણો અન્ને દેવે” નો અન્યાન્ દેવાન્ સ્વસ્મ્યતિરિક્તાન્ ‘ણો અણ્ણેસિં દેવાણં દેવીઓ’ નો અન્યેપાં દેવાનાં દેવી અન્યેપામાત્મવ્યતિરિક્તદેવાનાં દેવી અન્યદેવસમધિની દેવી “અહિંજુમિય અહિંજુમિય પરિયારેહ” અમિયુજ્યામિયુજ્ય સ્વવસં કૃત્વા નો પરિચારયતિ ન પરિચક્તે

ટીકાર્થ—(અજઠત્થિયા ણં મંતે) પ્રમુ સે પ્રમ્ન કરતે હુણ ગૌતમ પૂછતે હૈં કિ હે અદન્ત ! અન્યતોયિકજન (એવં આફસંતિ) જો એસા કહતે હૈં-વક્ષ્યમાણરૂપ સે હસ પ્રકાર સે કથન કરતે હૈં (આસંતિ) જનસમુદાય કે ધીચ મેં એસા હી આવળ કરતે હૈં (પમ્પવેતિ) રેતુ દૃષ્ટાન્ત આદિ દ્વારા એસા હી જતાતે હૈં (પરુવેતિ, શાસ્ત્રોં મેં હે એસી હી પ્રસ્પરણા કરતે હૈં-(ત જહા) કિ-(એવ સ્વલ્લ નિયંઠે) કોહ ની નિર્ગ્રંથ સાધુ (કાલગણ) જપ મૃત્યુ કો પ્રાપ્ત હો આતા હૈં તથ યહ પરમથ મેં દેવગતિ કો પ્રાપ્ત કરતા હૈં અર્થાત્-દેવગતિ મેં જાકર જન્મ લેતા હૈં યહ ઘઘાં પર (દેવમૂર્ણં અપ્પાણેણ) દેવરૂપ હુણ અપને શરીર સે (સેણ તત્ત્વ) યહ દેવ ઘઘાં પર અપને શરીર સે (ણો અન્ને દેવે ણો અન્નેસિં દેવાણં દેવીઓ અહિંજુમિય અહિંજુમિય પરિયારેહ) યહ નિર્ગ્રંથ સાધુ

ટીકાર્થ—જોતમસ્વામી મહાવીરસ્વામીને આ પ્રકારનો પ્રમ્ન પૂછે છે (અજઠત્થિયાણ મંતે !) હે અદન્ત ! અન્ય મતવાદીઓ (એવ આફસંતિ) એવું કહે છે (એવ માસતે) જનસમૂહની વચ્ચે એવું શાપણ કરે છે, (એવ પમ્પવેતિ) દર્શતાદિ દ્વારા એવું બતાવે છે, (એવ પરુવેતિ) શાસ્ત્રોમાં એવી પ્રત્યક્ષા કરે છે (ત જહા) કે (એવ સ્વલ્લ નિયંઠે) કોઈ પણ નિર્ગ્રંથ સાધુ (કાલગણ) મૃત્યુ પામીને દેવલોકમાં દેવગતિ પ્રાપ્ત કરે છે ત્યાં જઈને તે (દેવમૂર્ણ અપ્પાણેણ) દેવરૂપ થયેલા પોતાના શરીરથી, (સેણ તત્ત્વ) એવે દેવે ણો અમેસિં દેવાણં દેવીઓ અહિંજુમિય અહિંજુમિય પરિયારેહ) અન્ય દેવોને અને અન્ય દેવીઓને પોતાને વશ કરીને તેમની

સમયે સ્ત્રીવેદં વેદયતિ. સ્ત્રીવેદસ્યોદયેન નો પુરુષવેદં વેદયતિ પુરુષવેદસ્યોદયેન નો સ્ત્રીવેદં વેદયતિ. એવં સ્ત્રી એકો જીવ એકેન સમયેનૈકં વેદં વેદયતિ તદ્ યથા સ્ત્રીવેદં વા પુરુષવેદં વા. સ્ત્રી સ્ત્રીવેદેનોદીર્ણેન પુરુષં પ્રાર્થયતે. પુરુષઃ પુરુષવેદેનોદીર્ણેન સ્ત્રિયં પ્રાર્થયતે દ્વાવપિ તૌ અન્યોન્યં પ્રાર્થયતે. તદ્ યથા સ્ત્રી વા પુરુષં પુરુષો વા સ્ત્રિયમ્ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

સમય મેં વહ પુરુષ વેદ કા વેદન કરતા હૈ-ઉસ સમય મેં સ્ત્રી વેદ કા વેદન નહીં કરતા । (હૃત્થિયવેયસ્સ ઉદણં નો પુરિસવેયં વેણ, પુરિસવેયસ્સ ઉદણં નો હૃત્થિયવેણ વેણ) તથા સ્ત્રીવેદ કે ઉદય સે પુરુષવેદકા વેદન નહીં કરતા ઓર ન પુરુષવેદકે ઉદયસે સ્ત્રીવેદકા વેદન નહીં કરતા હૈ । (એવં સ્ત્રી એકો જીવે એણે સમણે એવં વેયં વેણ) હસ તરહ એક જીવ એક સમય મેં એક વેદ કા વેદન કરતા હૈ । (તંજહા-હૃત્થિયવેયં વા પુરિસવેયં વા) યા તો સ્ત્રીવેદકા વેદન કરતા હૈ યા પુરુષવેદ કા વેદન કરતા હૈ । (હૃત્થી હૃત્થીવેણ ઉદિણેણ પુરિસં પત્થેહ, પુરિસો પુરિસવેણ ઉદિણેણ હૃત્થિ પત્થેહ) સ્ત્રી સ્ત્રીવેદ કે ઉદય હોને પર પુરુષ કી અભિલાષા કરતી હૈ ઓર પુરુષવેદ કે ઉદય મેં પુરુષ સ્ત્રી કી અભિલાષા કરતા હૈ । હસ તરહ (દો વિ તે અણમણં પત્થેતિ-તંજહા-હૃત્થીવા પુરિસં પુરિસે વા હૃત્થિ) સ્ત્રી ઓર પુરુષ દોનોં હીં સ્ત્રીવેદ ઓર પુરુષવેદ કે ઉદય મેં એક દૂસરે કી ચાહના ક્રિયા કરતે હૈ-સ્ત્રી પુરુષ કી ઓર પુરુષ સ્ત્રી કી ॥ સૂ૦ ૧ ॥

વેણ, નો સમય હૃત્થિયવેયં વેણ) અને બ્યારે તે પુરુષવેદનુ વેદન કરતો હોય છે ત્યારે તે સ્ત્રીવેદનુ વેદન કરતો નથી, (હૃત્થિયવેયસ્સ ઉદણં નો પુરિસવેયં વેણ, પુરિસવેયસ્સ ઉદણં નો હૃત્થિયવેય વેણ) તથા સ્ત્રીવેદના ઉદયથી પુરુષવેદનુ વેદન કરતો નથી અને પુરુષવેદના ઉદયથી સ્ત્રીવેદનુ વેદન કરતો નથી (એવં સ્ત્રી એકો જીવે એણે સમણે એવં વેયં વેણ આ રીતે એક જીવ એક સમયે એક જ વેદનુ વેદન કરે છે-(તંજહા હૃત્થિયવેય વા પુરિસવેયં વા) કાતો સ્ત્રીવેદનુ વેદન કરે છે કાતો પુરુષવેદનુ વેદન કરે છે (હૃત્થી હૃત્થીવેણ ઉદિણેણ પુરિસં પત્થેહ) સ્ત્રીવેદનો ઉદય થતાં સ્ત્રી પુરુષની અભિલાષા કરે છે (પુરિસો પુરિસવેણ ઉદિણેણ હૃત્થિ પત્થેહ) અને પુરુષવેદનો ઉદય થતાં પુરુષ સ્ત્રીનો સમાગમ ઇચ્છે છે આ રીતે (દો વિ તે અણમણં પત્થેતિ-તંજહા-હૃત્થી વા પુરિસં પુરિસે વા હૃત્થી) સ્ત્રી અને પુરુષ બન્ને જ સ્ત્રીવેદ અને પુરુષવેદના ઉદયમા એક બીજાની અભિલાષા કરતા હોય છે-સ્ત્રી પુરુષની અને પુરુષ સ્ત્રીની અભિલાષા કરતા હોય છે.

દેવસ્ય નાન્યાસામગ્રી મવતિ અપિતુ સ્વાત્મનૈય દેવ્યાદિક સપાય પરિદ્રવતે
 અયથા-દર્દ પ્રતિપાદયતિ-“એગે વિ ય ઇત્યાદિ “એગે વિ ય ણ જીવે” એકોઽપિ
 સ્વદ્ય જીવ “એગેણ સમણે” એકસ્મિન સમયે “દો વેય વેપ્પ” દો વે
 વેવયતિ “ત જહા” સદ્ યથા “ઈતિયવેય ચ પુરિસવેય ચ” સ્ત્રીવેદં ચ પુ
 વેદં ચ “એવં પરઠત્થિયનચચયા નેયઙ્ગા” એવં પરપૂર્વિકચક્તવ્યતા નેતર
 જ્ઞાતવ્યા “જાથ ઇતિયવેયં ચ પુરિસવેયં ચ” યાવત્ સ્ત્રીવેદં ત પુરુષવેદં ચ પ
 પૂર્વિક ચક્તવ્યતા ચ ઇત્યમ્ । યાવત્પદેન ઇદં દ્રશ્યમ્-“જં સમય ઇતિયવેયં વેપ્પ
 તં સમયં પુરિસવેયં વેપ્પ, જં સમયં પુરિસવેયં વેપ્પ, તં સમયં ઇતિયવેયં વેપ્પ, ઇતિ
 વેયસ્સ વેયણાપ પુરિસવેયં વેપ્પ, પુરિસવેયસ્સ વેયણાપ ઇતિયવેયં વેપ્પ, એ
 સલુ એગે વિ ય ણ જીવે એગેણ સમણે દો વેયં વેપ્પ, ઇતિયવેય ચ પુરિસવેયં ચ

શરીર કે દો રૂપ ધનાતા હૈ । એક દેવ કા રૂપ ઓર દૂસરા દેવીકા રૂપ
 સો દેવ કા રૂપ દેવી કે સાથ વૈષધિક સુલ્લ કા અનુભવ કરતા હૈ ।
 હસ તરહ સે અપને હી દો રૂપ હોને કે કારણ વહી એક હી સમય મે
 દો વેદોં કા અનુભવ કરતા હૈ-એક પુરુષ વેદ કા હસરે સ્ત્રીવેદ કા
 હસ તરહ સે એક હી જીવ એક હી કાલ મેં દો વેદોં કા અનુભવ કરતા
 હૈ યહ કપન ધન જાતા હૈ । (એવં પરઠત્થિયનચચયા નેયઙ્ગા) હસ
 પ્રકાર સે અન્યતીર્થિકોં કી ચક્તવ્યતા જાનની યાહિયે (જાથ ઇતિયવેયં
 ચ પુરિસવેયં ચ) હસ પાઠ કો લગાને કે લિયે (જાથ) પદસે સુચિત
 પાઠ હસ પ્રકાર સે હૈ-“ જં સમય ઇતિયવેયં વેપ્પ, ત સમયં પુરિસ
 વેયં વેપ્પ, જં સમયં પુરિસવેયં વેપ્પ, તં સમયં ઇતિયવેયં વેપ્પ, ઇતિ
 વેયસ્સ વેયણાપ પુરિસવેયં વેપ્પ, પુરિસવેયસ્સ વેયણાપ ઇતિયવેયં વેપ્પ,
 એ સલુ એગે વિ ય ણ જીવે એગેણ સમણે દો વેયં વેપ્પ, ઇતિયવેયં ચ

બનાવે છે-એક દેવનુ રૂપ અને બીજુ દેવીનુ રૂપ. તે દેવનુ સ્વરૂપ દેવીરૂપની
 સાથે વિષયસુખ બોજવે છે આ રીતે પોતાનાં જ એ રૂપ બનાવવાને કારણે
 તે એવ એક સાથે પુરુષવેદ અને સ્ત્રીવેદનો અનુભવ કરે છે આ રીતે એક
 જ એવ એક સમયે બે વેદનુ વેદન કરે છે આ પ્રકારની માન્યતા અન્ય
 તીર્થિકોં ધરાવે છે

(એવં પરઠત્થિયન ચચયા નેયઙ્ગા) આ પ્રકારની અન્યતીર્થિકોંની
 માન્યતા સમજાવી (જાથ ઇતિયવેય ચ પુરિસવેય ચ) આ પાઠને બે વા માટે
 (જાથ) પદથી સુચિત થતો પાઠ આ પ્રમાણે છે-(જ સમય ઇતિયવેય
 વેપ્પ, ત સમયં પુરિસવેયં વેપ્પ, જ સમય પુરિસવેયં વેપ્પ, ત સમય ઇતિ
 વેય વેપ્પ, ઇતિયવેયસ્સ વેયણાપ પુરિસવેય વેપ્પ, પુરિસવેયસ્સ વેયણાપ ઇતિયવેય
 વેપ્પ, એ સલુ એગે વિ ય ણ જીવે એગેણ સમણે દો વેય વેપ્પ, ઇતિ

इत्यर्थः “अप्पणिच्चियाओ देवीओ अहिजुंजिय अहिजुंजिय परियारेइ” नो आत्मीयादेवीरभियुज्याभियुज्य परिचारयति. न परकीयादेवीः वशीकृत्य परिभुंक्ते न वा स्वकीयादेवीः वशीकृत्य परिभुंक्ते, किन्तु “अप्पणामेव अप्पाणं विउन्विय परियारेइ” आत्मनैवात्मानं विकुर्व्य विकुर्व्य परिचारयति स्वात्मनैव स्वात्मानं देवीरूपेण देवरूपेण वा विकुर्व्य परिचारयति. तत्र देवलोकगतस्य निर्ग्रन्थजीव-

का जीव जो देवलोक में देव की पर्याय से उत्पन्न हो गया है वह अन्य देवों को और अन्यदेवों की देवियों को (अहिजुंजिय अहिजुंजिय) वश में कर कर के उनके साथ विषयसुख नहीं भोगता है यहां पर जो (अन्ने देवे, अन्नेसिं देवाणं देवीओ) ऐसा पाठ कहा गया है उसका तात्पर्य यह है कि वह अपने से भिन्न देवों के साथ और अपने से भिन्न देवों की देवियों के साथ वैषयिक सुख नहीं भोगता है। और (जो अप्पणिच्चियाओ देवीओ अहिजुंजिय अहिजुंजिय परियारेइ) नहीं वह अपनी निज देवियों के साथ भी उन्हें वशीभूत कर वैषयिक सुख भोगता है यदि ऐसा है तो फिर वह किस तरह से वहां वैषयिक सुख भोगता है? इस बात को स्पष्ट करते हुए कहते हैं कि—(अप्पाणमेव अप्पाणं विउन्विय परियारेइ) वह देव अपनी वैक्रिय शक्ति के द्वारा अपने निज के ही दो रूप बनाता है और उनके साथ ही वैषयिक सुख भोगता है—तात्पर्य यह कि देवलोक में गये हुए उस निर्ग्रन्थ जीव देव के पास अन्य सामग्री तो होती नहीं है—इसलिये वह (अप्पाणमेव) अपने आप ही—अर्थात्—अपनी वैक्रिय शक्ति से ही—अपने

साथे विषयसुख भोगवता नथी. अही (अन्ने देवे, अन्नेसिं देवाणं देवीओ) ओवे जे पाठ आवे छे तेनुं तात्पर्य नीचे प्रमाणे छे—ते पोतानाथी बिस देवान्नी साथे अने पोतानाथी बिस देवान्नी देवीओ साथे विषयसुख भोगवता नथी अने (जो अप्पणिच्चियाओ देवीओ अहिजुंजिय अहिजुंजिय परियारेइ) ते पोतानी देवीओने वश करीने तेमनी साथे पण विषयसुख भोगवता नथी तो ते त्यां केरी रीते विषयसुख भोगवे छे? ते कहे छे—(अप्पाणमेव अप्पाणं विउन्विय विउन्विय परियारेइ) ते देव पोतानी वैक्रियशक्ति द्वारा पोताना जे जे रूप बनावे छे—ओके देवतु रूप अने भीजु देवीतु रूप अने तेनी साथे जे विषयसुख भोगवे छे कहेवानु तात्पर्य ओ छे के देवलोकमां गयेला ते निर्ग्रन्थ देवनी पासे अ य सामग्री तो होती नथी तेथी ते (अप्पाणमेव) पोतानी जते ज—ओटवे के पोतानी वैक्रियशक्तिथी पोताना शरीरमां जे रूप

“જાણ્ હૃતિયવેદ ચ પુરિસવેદ ચ” યાચત્ સ્ત્રીવેદ ચ પુરુષવેદ ચ । ઇદં યાચત્ કરવાન્ત માપન્તે પ્રજાપયન્તિ, પ્રરૂપયન્તિ અસૌ નિર્ગ્રંથદેવો ન પરકીયાં ઠેઘીમાસાપ સ્વઘ્ની યામ્ના આસાપ પરિચારયન્તિ કિન્તુ સ્વાત્માનમવ ચિકુર્ન્ય દેઘી રૂપતયા ષા પરિ મુંક્તે તયા ઇકોઘ્નીષ ઇકસ્મિન્ સમયે સ્ત્રીવેદં પુરુષવેદમ્મયમપિ વેદયતીત્યાદીનાં પ્રશ્નં કર્તવ્યમિતિ “જે તે ઇવં આહંસુ ” યત્ તે પરતીર્થિકા ઇદમાહુઃ “ મિચ્છં તે ઇવં આહંસુ ” મિથ્યા તે ઇવમાહુઃ, યતો દિ-સ્ત્રીરૂપકરણેઽપિ તસ્ય નિર્ગ્રંથ ઘ્નીષદેવસ્ય પુરુષરૂપત્વાત્ પુરુષવેદસ્યૈવ ઇકસ્મિન્ સમયે ઉદય સમયેત્ ન તુ સ્ત્રી વેદસ્ય સ્ત્રીવેદપરિવર્તને સ્ત્રીવેદસ્યૈવોદયઃ સ્યાત્ ન પુરુષવેદસ્યોદયઃ કયમપિ સમ વતિ સ્ત્રીવેદપુરુષવેદયોઃ પરસ્પરવિરુદ્ધસ્થેનૈકમ્ ઇકસમય ઉદયસ્યાસંભવાત્ યયોઃ

હૃતિયવેદયં ચ પુરિસવેદયં) કિ યાચત્ ઇક સમય મેં સ્ત્રીવેદ ઔર પુરુષવેદ ઇન દો વેદોં કા વેદન કરતા હૈ, (જે તે ઇવ આહસુ) સૌ અન્યતીર્થિક જનોં ન જો ઇસા પદ્ધા હૈ (મિચ્છ તે ઇવ આહસુ) વહ ઉહોં ને મિથ્યા કહા હૈ । કયોંકિ વહ દેવ જય સ્ત્રી કા રૂપ કરતા હૈ તથ ઘ્ની સ્યય પુરુષ હોને કે કારણ ઉસકે પુરુષ વેદ કા હી ઉસ સમય મેં ઉદય સંભવતા હૈ સ્ત્રીવેદ કા નહીં । સ્ત્રીવેદ કે પરિવર્તન હોને પર સ્ત્રી વેદ કા હી ઉદય હોતા હૈ પુરુષ વેદ કા નહીં । કયોં કિ પુરુષ વેદ ઔર સ્ત્રી વેદ યે દોનોં વેદ આગસ મેં ઇક દુસર સે વિરુદ્ધ હોતે હૈં । તાતપર્ય કહને કા યદ્દ હૈ કિ દશ મપને મૂલ ઘરીર મેં રહતા હુઆ ઘ્ની ઇક સમય મેં અનેકરૂપ પના સકતા હૈ । ઇક હી સમય મેં યદ્દ સ્ત્રી ઔર પુરુષ દોનોં રૂપોં મેં ઘન જાણા કરના હૈ પરન્તુ જય ઉસકા સ્ત્રી ઔર પુરુષ દોનોં કા રૂપ હોગા-તથ ઘ્ની રસ સમય ઉસ રૂપ ક-કૃત્રિમ તી કા ઇક પુરુષ

વ) કે ઐક ૪ ૭૫ ઐક ૪ સમયે સ્ત્રીવેદ અને પુરુષવેદનુ વેદન કરે છે (અદી ગીતમના પ્રશ્નમા આવતુ સમય કથન મન્વુ કરતું ભગ્વજે) (જે ઇ ઇવ આહસુ) અન્ય મનવાદીઓએ ઐવુ ને કરુ છે તે (મિચ્છ ને ઇવ આહસુ) તેમજે મિથ્યા કહેતુ છે એવે કે તેમનુ કથન સાનુ નાથી તારવકે તે દેવ બ્યારે સ્ત્રીનુ ઇવ ધારણ કરે છે ત્યારે પણ પોતે પુરુષ રોવાખી તે મમયે તેના પુરુષવેદનો / ઉદય સમયી શકે છે-સ્ત્રીવેદનો નની આવેદનુ પરિવર્તન કરવામા આવે ત્યારે સ્ત્રીવેદનો ૪ ઉદય કરે છે પુરુષવેદનો નની કારણકે સ્ત્રીવેદ અને પુરુષવેદ એક બી તાથી વિરુદ્ધ ૪ જાય છે કેવાનુ તાતપર્ય એ છે કે દેવે પુરુષ મૂળ ધરીરમા રહેવા છતાં પણ એક સમયે અનેક રૂપ જનાખી શકે છે દોર ૪ સમયે તે સ્ત્રી અને પુરુષ બની જઈ શકે છે પણ બ્યારે તો પુરુષ અને સ્ત્રી બનેનુ રૂપ ધારણ કરુ એવ ત્યારે પણ તે કૃત્રિમ કૃત્રીકરણ એકા પુરુષવેદનો ૪ ડાઉડે ૪

ઇતિ । યસ્મિન્ સમયે સ્ત્રીવેદં વેદયતિ તસ્મિન્ સમયે પુરુષવેદં વેદયતિ યસ્મિન્ સમયે પુરુષવેદં વેદયતિ તસ્મિન્ સમયે સ્ત્રીવેદં વેદયતિ સ્ત્રીવેદરય વેદનયા પુરુષવેદં વેદયતિ પુરુષવેદસ્ય વેદનયા સ્ત્રીવેદં વેદયતિ એવમ્ એકોઽપિ ચ સ્વલુ જીવ એકસ્મિન્ સમયે દ્વૌ વેદૌ વેદયતિ સ્ત્રીવેદઞ્ચ પુરુષવેદઞ્ચેતિ એવં હિ પર-તીર્થિકાઃ નિર્ગ્રંથજીવદેવવિષયે કથયન્તિ તત્ર ગૌતમો ભગવન્તં પૃચ્છતિ “ સે કહમેયં મંતે એવં ” તત્ કથમ્ એતત્ મદંત ! એવમ્ । હે ભગવન્ ! તત્ ઉક્ત પ્રકારેણ પરતીર્થિકોપન્યસ્તં કિમેવં યથા કથયતિ તથા સંભવેદિતિ પ્રશ્નઃ । ભગવાનાહ-‘ગોયમા’ ઇત્યાદિ “ ગોયમા ” હે ગૌતમ ! “ જં ણં તં અન્નઽત્થિયા એવં આહ-ક્ષંતિ ” યત્ સ્વલુ તે અન્યયૂથિકા એવામ્ભ્યાન્તિ એવં પૂર્વોક્તરૂપેણ કથયન્તિ.

પુરિસવેયં ચ ” જિસ સમય જીવ સ્ત્રીવેદ કો વેદતાહૈ ઉસી સમય વહ પુરુષવેદ કો બી વેદતા હૈ, ઓર જિસ સમય જીવ પુરુષ વેદ કો વેદતા હૈ ઉસી સમય વહ સ્ત્રીવેદ કો બી વેદતા હૈ । પુરુષવેદ કે વેદન સે જીવ સ્ત્રીવેદ કો વેદતા હૈ, (૧) ઓર સ્ત્રીવેદ કે વેદન સે જીવ પુરુષવેદ કો વેદતા હૈ (૨) હસ પ્રકાર સે એક જીવ એક સમય મેં દો વેદોં કો વેદતા હૈ । એક સ્ત્રીવેદ કો ઓર દૂસરે પુરુષવેદકો । હસ તરહ સે પર-તીર્થિક જન નિર્ગ્રંથ જીવ દેવ કે વિષય મેં કહતે હૈં-સો ગૌતમ સ્વામી ભગવાન્ સે પૂછતે હૈં કિ-‘ સે કહમેયં મંતે એવં ’ હે મદંત ! એસા અન્ય-તીર્થિકજનોં કા કહના જૈસા વે કહતે હૈં ઉસ પ્રકાર સે વહ સંભવિત હોતા હૈ કયા ? હસકા ઉત્તર દેતે હુએ ભગવાન્ ગૌતમ સ્વામી સે કહતે હૈં (ગોયમા) હે ગૌતમ ! (જં ણં તં અન્નઽત્થિયા એવં આહક્ષંતિ) જો વે અન્યતીર્થિક જન એસા કહતે હૈં (જાવ

વેય ચ પુરિસવેય ચ) જે સમયે જીવ સ્ત્રીવેદનું વેદન કરતો હોય છે તે સમયે તે પુરુષવેદનું પણ વેદન કરતો હોય છે જે સમયે જીવ પુરુષવેદનું વેદન કરતો હોય છે તે સમયે તે સ્ત્રીવેદનું પણ વેદન કરતો હોય છે. (૧) પુરુષ વેદના વેદનથી જીવ સ્ત્રીવેદનું વેદન કરે છે અને (૨) સ્ત્રીવેદના વેદનથી જીવ પુરુષવેદનું વેદન કરે છે. આ રીતે જીવ એક સમયે બે વેદનું વેદન કરે છે-(૧) સ્ત્રીવેદનું અને (૨) પુરુષવેદનું જે નિર્ગ્રંથ મરીને દેવગતિમા ઉત્પન્ન થયે હોય, તેને વિષે પરતીર્થિકો ઉપરોક્ત જે મતવ્ય ધરાવે છે તે વિષે ગૌતમ સ્વામી ભગવાન્ મહાવીરપ્રભુને પૂછે છે-(સે કહમેયં મંતે એવં) હે ભદ્રન્ત ! અન્ય તીર્થિકોં તેમના વિષેનું તે કથન શુ સંભવિત છે ? તેના મહાવીર પ્રભુ આ પ્રમાણે ઉત્તર આપે છે-(ગોયમા !) હે ગૌતમ ! (જં ણં તં અન્નઽત્થિયા એવં આહક્ષંતિ) તે અન્ય તીર્થિકો એવું જે કહે છે (જાવ ઇત્થિયવેય ચ પુરિસવેયં

પિયંઠે કાલગણ સમાળે” એ સ્વલ્પ નિર્ગ્રંથઃ કાલગતઃ સન્ “અન્નપરેસુ દેવલો
 યસુ દેવતાય ઉત્તવતારો મવહ” અન્યતરેપુ દેવલોકેપુ દેવતયા ઉત્તવતા મવતિ
 કીદશેપુ દેવલોકેપુ સપ્રાહ—“મહર્ષિયસુ જાણ મહાણુમાવેસુ” મહર્દિકેપુ યાસુ
 મહાણુમાવેપુ “મહર્ષિયસુ” મહર્દિકેપુ=વિશિષ્ટનિમાનપરિમારારિમુક્તેપુ ‘જાત
 મહાણુમાવેપુ’ યાવત્ મહાણુમાવેપુ=અચિન્ત્યપ્રમાથયુક્તેપુ અપ્ર યાવત્ પદેન ‘મહર્ષ
 ઇયસુ મહર્ષલેસુ મહાજસેસુ મહાસોમલેસુ’ છાયા-મહાધુતિકેપુ મહામલેપુ મહાપરસ
 મહાસૌમ્યેપુ ઇતિ મંગ્રહ કાર્યઃ “મહર્ષુરયસુ” મહાધુતિકેપુ=વિશિષ્ટપ્રમા
 માસ્વરેપુ ‘મહર્ષલેસુ’ મહામલેપુ=વિશિષ્ટવલસંપન્નપુ ‘મહાજસેસુ’ મહાપ
 રસુ=વિશાલ કીર્તિયુક્તેપુ ‘મહાસોમલેસુ’ મહાસૌમ્યેપુ = વિશિષ્ટસુતસંકુલે
 “દુરગઈયસુ” દુરગતિકેપુ=દુરગમનશક્તિસંપન્નદેવયુક્તેપુ ‘ચિરદ્વિઈયસુ’ ચિર
 સ્થિતિકેપુ ચિર=મથૂતકાલં સ્થિતિઃ=અવસ્થાન યન્ન, તેપુ દુરગઈયાદિ સમારામ

કરતા હુ કિ (એ સ્વલ્પ નિર્ગ્રંથે કાલગણ સમાળે) નિર્ગ્રંથ- સાધુ કાલ
 ગત હોકર સામાન્ય દેવલોકોં મેં ઉત્પન્ન નહીં હોતા હૈ-કિન્તુ જો તો
 (મહર્ષિયસુ જાણ મહાણુમાવેસુ દુરગઈયસુ ચિરદ્વિઈયસુ દેવલોપસુ અન્ન
 પરેસુ દેવલોપસુ ઉત્તવતારો મવહ) ટન દેવલોકોં મેં સે કિસી દેવ
 દેવલોક મેં ઉત્પન્ન હોતા હૈ કિ જિન દેવલોકોં મેં વિશિષ્ટ વિમાન પરિ
 વાર આદિરૂપ શ્રદ્ધિ હોતી હૈ, યાવત્ જો અપને અચિન્ત્ય પ્રમાથ સે સદા
 યુક્ત થને હુઈ રહતે હૈ તથા (જાણ) શબ્દ ગૃહીત (મહર્ષુરયસુ, મહર્ષ
 લેસુ, મહાજસેસુ મહાસોમલેસુ) જન પદોં કે અર્થાનુસાર જો અપની
 વિશિષ્ટપ્રમા સે સદા જમકતે રહતે હૈ, જો વિશિષ્ટ વલ સે સંપન્ન હોતે
 હૈ, વિશાલકીર્તિ કે જો મંદાર હોતે હૈ, ઓર જો વિશિષ્ટસુતોં કે
 વિધાન હોતે હૈ તથા-દુર દુર તક ગમન કરને વાલે દેવોં સે જો સર્વદા

કરે હુ કે (એ સ્વલ્પ નિર્ગ્રંથે કાલગણ સમાળે) નિર્ગ્રંથ સાધુ કાલગત પામીને આમાન
 દેવલોકોંમાં ઉત્પન્ન થતો નથી, પણ તે તો (મહર્ષિયસુ જાણ મહાણુમાવેસુ દુરગઈ
 યસુ ચિરદ્વિઈયસુ દેવલોપસુ અન્નપરેસુ દેવલોપસુ ઉત્તવતારો મવહ) જેવા કોઈ દેવલોકોંમાં
 ઉત્પન્ન થાય છે કે જ્યાં વિશિષ્ટ વિમાન પરિવાર આદિ રૂપ શ્રદ્ધિ હોય છે કે
 દેવલોકોં પોતાના અચિન્ત્ય પ્રમાથથી સદા યુક્ત હોય છે ખરી (યાવત્)
 (યાવત્) પણ જાણ (મહર્ષુરયસુ મહર્ષલેસુ, મહાજસેસુ મહાસોમલેસુ) આ
 પદોં શ્રદ્ધિ કરાયાં છે તેમનો અર્થ આ પ્રમાણે છે-કે દેવલોકોં પોતાની
 વિશિષ્ટ પ્રમાથી સદા જમકતા રહે છે કે વિશિષ્ટ વલથી યુક્ત હોય છે
 કે વિશાલ કીર્તિના મંદાર હોય છે, કે વિશિષ્ટ સુતોના અન્ન સેવક છે,
 તથા દુર દુર જમન કરનારા દેવોંથી કે સદા જમતા રહે છે અને આ રહેવા

परस्पर विरोधो न तयोरेकत्रैकदाऽवस्थानं दृश्यते यथा तमः प्रकाशयोः तथैव प्रकृतेऽपि स्त्रीवेदपुरुषवेदयोः परस्परविरुद्धतया नैकस्मिन्नधिकरणे सहावस्थानं संभवत्यतः परयूथिकमतं गिथ्येति । एतदेव भगवान् सविस्तरं प्रतिपादयति—‘अहं पुण’ इत्यादि । ‘अहं पुण गोयमा’ अहं पुन गौतम ! ‘एवं आइक्खामि’ एवमाख्यामि ‘भासामि पन्नवेमि पस्सुवेमि’ भाषे प्रज्ञापयामि प्ररूपयामि. किं तत् तत्राह ‘एवं खलु

उदय माना जावेगा—क्यों कि यह रूप मूल में जिसके पुरुषवेद का उदय है—उसी वेद वाले का एक रूपान्तर हैं । इसलिये एक समय में दो वेदों का उदय मानना न्यायसंगत नहीं है । क्यों कि एक ही समय में एक जगह दो वेदों का उदय होना विरुद्ध है । जिनका आपस में विरोध होता है—उनका एक ही जगह एक समय में अवस्थान होना नहीं देखा जाता है । जैसे—अन्धकार और प्रकाश का । उसी प्रकार से प्रकृत में भी स्त्रीवेद और पुरुषवेद ये दोनों आपस में विरुद्ध होने के कारण एक ही समय में एक साथ एक ही जगह किसी तरह से उदित नहीं हो सकते हैं । अतः परयूथिकों का एक ही जगह एक ही काल में दोनों स्त्रीवेद और पुरुषवेद का उदय मानना मिथ्या है ऐसा जानना चाहिये । इसी विषय को विस्तार पूर्वक समझाने के लिये भगवान् कहते हैं—(अहं पुण) इत्यादि । (अहं पुण गोयमा ! एवं आइक्खामि भासामि पन्नवेमि पस्सुवेमि) हे गौतम ! मैं तो ऐसा कहता हूँ ऐसा भाषण करता हूँ ऐसी प्रज्ञापना करता हूँ और ऐसी प्ररूपणा

छे, કારણકે પુરુષવેદનો જેનામા ઉદય છે એવા જગતુ તે એક રૂપાતર જ હોય છે. તેથી એક જ સમયે બે વેદોનો ઉદય માનવો તે ન્યાયસંગત લાગતું નથી કારણકે એક જ સમયે એક જ જગ્યાએ બે વેદોનો ઉદય થવો શક્ય નથી જેમની વચ્ચે પરસ્પર વિરોધ હોય છે તેમનું એક જ જગ્યાએ એક જ સમયે અસ્તિત્વ લેવામા આવતુ નથી. જેમકે જ્યાં પ્રકાશ હોય ત્યાં અંધકાર ન હોય કુદરતી રીતે જ સ્ત્રીવેદ અને પુરુષવેદ એક બીજાના વિરોધી હોવાથી એક જ સમયે અને એક જ જગ્યાએ તે બન્નેનુ અસ્તિત્વ સભવી શકતુ નથી તેથી ‘એક જ જગ્યાએ એક જ સમયે સ્ત્રીવેદ અને પુરુષવેદ એ બન્નેનો ઉદય થાય છે,’ એવી પરતીર્થિકોની માન્યતા મિથ્યા છે આ વિષયને વિસ્તારથી સમજાવવા માટે ભગવાન મહાવીર સ્વામી ગૌતમ સ્વામીને કહે છે કે (અહં પુણ ગોયમા ! एवं આइक्खामि, भासामि, पन्नवेमि, पस्सुवेमि) हे गौतम ! હું તો એવુ કહું છું, એવું ભાષણ કરું છું, એવી પ્રજ્ઞાપના કરું છું, અને એવી પ્રરૂપણા

વિશેષ ધમ્મચાલી 'મહાજસે' મહાયજ્ઞાઃ = વિચ્છાલકીર્તિસપ્તઃ, 'મહાસોરસે' મહાસૌરસ્ય = વિશિષ્ટ સુરસાલો 'મહાણુમાન' મહાણુમાનઃ = અધિન્યયમારપુત્રઃ, "હારધિરાણ્યવચ્છે" હારધિરાજિતવસા = હારણોમિતવશસ્યલઃ "કટપત્તુરિય મિયમ્મુપ" કટકપ્પટિનરતમ્મિતમુદ્ધઃ, સપ્ત કટકે = વચ્ચે, મુટ્ટિઃ = શાકુરચ્છ મૂળમિદ્ધપૈઃ સ્તમ્મિતાન્તસ્તમ્બીમૂલા સન્નિતેત્યર્થ મુદ્ધા યસ્ય સ તથા ધમ્મવાદુ રક્ષિફામિધાલ્લકારયુક્ત ઇત્યર્થઃ । "અગયુદ્ધમદ્ગદ્ધયમ્મકર્ણપીઠપારી" અગ્ર કુણ્ડલમૃદ્ગગન્ધતલ્લકર્ણપીઠપારી-અગ્રવાનિ શાદ્ધામરણાનિ, કુણ્ડલાભ્યાં મૃદ્ધે = ઘર્ષિતે ગન્ધતલ્લે = કપોલયુગલે, કર્ણપીઠે = કર્ણામરણઘ, તેપાં ઘર સચ્છીલો ય સ તથા શાદ્ધામરણકુણ્ડલકર્ણપીઠામિધમૂળમ્મૂપિત ઇત્યર્થ 'વિચિત્રવત્યામરણે' વિચિત્રવત્યામરણ = વિચિત્રાણિ નાનામકારાભિ વત્યાભિ આમરમાનિ ચ યસ્ય સ તથા "વિચિત્રમાભ્યામઠલિમઠલે" વિચિત્રમાભ્યામઠલિમઠલે અથવા પ્રાકૃતતત્ત્વ મૌલિદ્વન્દ્વસ્ય પરિણામસ્તત્ત્વ મૌલિદ્વન્દ્વો વિચિત્રવત્યાભ્યામઠલિમઠલે સયોગ્યઃ । અઠા- મૌલિવિચિત્રમાભ્યામઠલિમઠલે ઇતિ, તથા ચ મૌઠી = મસ્તકે વિચિત્રા = નાનામકારા માભ્યા = પુષ્પસ્રજાઃ મુદ્ધુન્ન યસ્ય સ તથા "કલ્લાભગપરવસ્યપરિરિપ" કલ્પાભગ પ્રવરવસ્યપરિરિપ્તઃ, અપ્રાપિ 'પરિરિપ્ત' કલ્પસ્ય કલ્પસ્યમસ્તેન પરિરિપ્ત કલ્પાભગ

અધિન્યય પ્રમાણ સે જો યુક્ત હોતા હૈ, જિમકા વક્ષઃસ્થલ સદા હારસે સુશોભિત રહ્યા કરતા હૈ જિસકી દોનોં મુજામેં વલ્લભ ઓર મુટ્ટિ-શાકુરચ્છ મૂળ મિયમ્મુપોં સે સન્નિત રહતી હૈ, અગર્વાં કો, મુજામોં કે મૂળોં સે, કુણ્ડલો સે મૃદ્ધ દોનોં કપોલોં કો, તથા કર્ણપીઠ-કર્ણ કે આમૂળના વિશેષ કો જો સદા ધારણ કિયે રહતા હૈ-અર્થાત-જિસકે દોનોં મુજા અંગદોં સે સદા સંઘિત રહતે હૈ, ગોલ કપોલપાલી જિમકી કુણ્ડલોં કી ફાંતિ સે સદા અમરમી રહતી હૈ ઓર કર્ણામરણવિશેષોં સે જિસકે દોનોં કાન વિશેષરૂપ સે વિમૂલિત રહતે હૈ, યન્નમ્મોર આમરણ જિસકે વિવિધ પ્રકાર કે હોતે હૈ, જિસકે મસ્તક ઉપર માનો પ્રકાર કી પુષ્પ

દોષ છે જેનું વક્ષસ્થળ સદા હારથી શોભતું દોષ છે જેની બન્ને બુજબો વલ્લભ અને મુટ્ટિ (જાદુ રક્ષક આશ્રયણ) થી વિમૂલિત દોષ છે, જેના બન્ને દોષ અમરો (અમરજી વિશેષ) થી મદા વિમૂલિત દોષ છે જેમના બાહ્ય મુળોની કાન્તિથી સદા અમરતા રહે છે અને કણ્ઠપીઠ (કણ્ઠના અમર વલ્લ) થી જેમના બન્ને કણ્ઠ સદા વિમૂલિત રહે છે, જેના વક્ષ અને અમરજી વિવિધ પ્રકારના દોષ છે, જેમના મસ્તક પર વિવિધ પ્રકારની પુષ્પમાળાઓ અને મુગદ રહે છે, માંગલિક અને કૃષ્ણ વર્ણોને જે સદા ધારણ હૈ છે

સ્થિતિકેષુ इत्यर्थः । एतादृशेषु देवलोकेषु निर्ग्रन्थो देवतया उच्यता भवति इति संबन्धः । तत्र स कीदृशो भवतीत्याह—‘ से ण ’ इत्यादि ‘ से णं तत्थ ’ स खलु तत्र—देवलोकेषु कस्मिंश्चिद्देवलोके ‘ देवे भवइ ’ देवो भवति देवतयोत्पद्यते । सदेव स्तत्र कीदृशो भवतीत्याह—‘ महड्डिए ’ महर्द्धिकः विमानपग्विवारादि ऋद्धियुक्तः ‘ जाव ’ यावत्, यावत्पदेन ‘ महज्जुइए ’ महाबले महाजसे महासोकखे महाणुभावे हारविराइयवच्छे कढयतुरियथभियञ्चए अंगयकुंडलमट्ठगंडयलकण्णपीठधारी विचित्रवत्थाभरणे विचित्तमालामउलिमउडे कल्लाणगपवरवत्थपरिहिए कल्लाणगपवर मल्लाणुलेवणे भासुरबौदी पलंबवणमालधरे दिव्वेणं वण्णेणं दिव्वेणं गंधेण दिव्वेणं रुव्वेणं एवं फासेणं संघाएणं संठाणेणं दिव्वाए इड्ढीए जुईए पभाए छायाए दिव्वाए अच्चीए दिव्वेणं तेएणं दिव्वाए लेस्साए ॥

छाया—महाद्युतिकः महाबलः महायशः महासौख्यः महानुभावः हारविराजितवक्त्राः कटकत्रुटितस्तम्भितभुजः अङ्गदकुण्डल मृष्ट गण्डतलकर्णपीठधारी विचित्रवस्त्राभरणः विचित्र मालामौलिमुकुटः कल्याणकप्रवरवस्त्रपरिहितः कल्याणकप्रवरमालयानुलेपनः भास्वरवोन्दिः प्रलम्बवनमालाधरः दिव्येन वर्णेन दिव्येन गन्धेन दिव्येन रूपेण एवं स्पर्शेन संघातेन, संस्थानेन दिव्यया ऋद्ध्या द्युत्या प्रभया छायाया दिव्येन अर्चिषा दिव्येन तेजसा दिव्यया लेख्यया ’ इति संग्रहः “ महज्जुइए ” महा तिकः=विशिष्टशरीराभरणादि प्रभाभास्वरः, ‘ महाबले ’ महाबलः

भरे हुए रहते हैं एव जहां पर रहने वाले देवों की स्थिति एक दो आदि सागरोपम की होती है । ऐसे देवलोकों में से किसी एक देवलोक में वह निर्ग्रन्थ साधु का जीव देव की पर्याय से उत्पन्न होता है । वहां पर वह कैसा देव होता है तो इसके लिये समझाते हुए प्रभु कहते हैं कि (से णं तत्थ देवे भवइ महिड्डिए जाव महज्जुइए) वह वहां पर ऐसा देव हाता है कि जिस की विमानपरिवारादिरूप ऋद्धि बहुत अच्छी होती है—जिसकी द्युति बहुत अधिक होती है, जो विशिष्ट बलशाली होता है, विशाल कीर्ति से जो संपन्न होता है, विशिष्ट सुखशाली होता है,

દેવોની ભવસ્થિતિ એક, બે આદિ સાગરોપમની હોય છે એવા દેવલોકોમાંના કોઈ એક દેવલોકમાં તે નિર્ગ્રન્થ સાધુનો જીવ દેવની પર્યાયે ઉત્પન્ન થાય છે તે દેવની ઋદ્ધિ કેરી હોય છે તે બતાવવાને માટે પ્રભુ ગૌતમને કહે છે કે (સે ણ તત્થ દેવે ભવઈ મહિડ્ડિય જાવ મહજ્જુઈ) ત્યાં તે એવા દેવ બને છે કે જેની વિમાન પરિવાર આદિ રૂપ ઋદ્ધિ ઘણી જ સારી હોય છે, જેની દ્યુતિ ઘણી જ વધારે હોય છે, જે વિશિષ્ટ બળસ પત્ર હોય છે, જે વિશિષ્ટ કીર્તિ અને વિશિષ્ટ સુખસ પત્ર હોય છે, અને જે અચિન્ત્ય પ્રભાવવાળો ।

‘પમાણ’ પ્રમયા-દિવ્યયા પ્રમયા=વિમાનદીપ્તયા ‘છાયાણ’ છાયયા-દિવ્યયા
 છાયયા=શરીરસ્થોમયા “દિવ્યાણ અન્વીણ” દિવ્યેન અર્ચિયા શરીરસ્થરત્નાદિ
 સમુદ્ભૂત ટેજસા, ‘દિવ્યેણં તેણં’ દિવ્યેન તેજસા = શરીરસમ્મન્વિકાન્તયા
 “દિવ્યાણ છેસ્તાણ” દિવ્યયા લેખયા=દેહસૈન્દર્યેણ, इति સમગ્રઃ ॥

‘દશ વિસાઓ’ દશદિશાઃ=દિગ્વિદિગ્ધ્વાંધોરૂપાઃ દશાપિદિશઃ “ઠગ્ગોવેમાણે”
 ઠગોતયન્=પ્રકાશયન્ ‘પમાસેમાણે’ પ્રમાસમાન.=વેદીપ્યમાન ‘જાણ પઠિરુવે’
 યાવત્ પ્રતિરૂપઃ-દ્રષ્ટાર દ્રષ્ટાર પ્રતિરૂપ=નાનારૂપ યસ્ય સ તથા, અથ યાવત્પદેન
 “પાસાઈણ દરિસણિજ્જે અમિરુવે” इति સમગ્રઃ, તથા ‘પાસાઈણ’ પ્રાસાદીય
 દર્શકાનાં ચિત્ત પ્રસાદજનક ‘દરિસણિજ્જે’ દર્શનીય ચત્તુર્દર્શને ચત્તુ ભ્રમો ન
 જાયતે । ‘અમિરુવે’ અમિરૂપઃ=મનોરૂપઃ इति ॥

“સેણં તત્થ અન્ને દેવે અન્નેસિં દેવાણં દેવીઓ અમિહંતિય અમિહંતિય
 પરિયારેહ” સ સ્વલ્પ તથા અન્યાન્ દેવાન્ અન્નેપાં દેવાનાં દેવીરમિયુક્ત્યામિયુક્ત્ય
 પરિચારયતિ ‘સેણ’ સ સ્વલ્પ નિર્ગ્રેય જીવદેવઃ “તત્થ” તથા-દેવલોકે “અન્ને
 દેવે” અન્યાન્ દેવાન્ આત્મભ્યતિરિક્તાન્ દેવાન્ “અન્નેસિં દેવાણં દેવીઓ”

શરીર મેં પહિને કુપ રત્નાદિ કી દિવ્યકાન્તિ સે, તથા શરીર સંયતી
 કાન્તિ સે ઇય દેહ કે સૌન્દર્ય સે (દસવિસાઓ) દશ વિશાઓં કો-
 જાર પૂર્વાદિવિશાઓં કો, તથા જાર પૂર્વાદિવિશાઓં કે જાર કોનોં
 કો ઇય ઉપર ઓર નીચે કો-(ઠગ્ગોવેમાણે) ઠગોતિત કરતા હુઆ
 (પમાસેમાણે) પ્રકાશિત કરતા હુઆ, (જાણ પઠિરુવે) યાવત્-ચહ દેસને
 ચાલોં કે ચિત્ત મેં પ્રસન્નતા કા જનક હોતા હૈ, દેસને ચાલોંકો આત્મે
 ઠસે દેસને ૨ કમી અઘાતી નહીં હૈ ચહ મનોરૂપ યાજા હોતા હૈ ઓર
 પ્રતિરૂપ દેસનેચાલોં કે મિયે ક્ષણ ૨ મેં નવીન ૨ રૂપ સે યુક્ત હુઆ જાત
 હોતા હૈ । (સે ણ તત્થ અન્ને દેવે અન્નેસિં દેવાણં દેવીઓ અમિહંતિય,
 અમિહંતિય પરિયારેહ) હસ પ્રકારકે દેવલોકોં મેં સે કિસી ઇક દેવલોક

શરીર પહેરેલાં રત્નાદિની દિવ્ય કાન્તિથી તથા શરીરની કાન્તિ અને દેહ
 સૌન્દર્યથી (દસ વિસાઓ) દસે વિશાઓને (પૂર્વાદિ જાર વિશા, અગ્નિ આદિ
 જાર જુદા તથા ઉપરની અને નીચેની વિશાઓ) (ઠગ્ગોવેમાણે) પ્રકાશિત
 કરતા (પમાસેમાણે) પ્રમાયુક્ત કરતા, (જાણ પઠિરુવે) બેનારના ચિત્તને
 પ્રસન્ન કરતા-તેમનું રૂપ બેટલુ બધુ બનેાન હોય છે કે તેમને બેનારની
 આંખે તેમનું રૂપ બોલે તુલિય અનુભવતી નથી. તેઓ બેનારની નજરે ધરે
 જાય નવીન રૂપ ધારણ કરતા હોય એવું લાગે છે (સે ણ તત્થ અન્ને દેવે
 અન્નેસિં દેવાણં દેવીઓ અમિહંતિય અમિહંતિય પરિયારેહ) ઉપશાહી સમુદિ

वरवस्त्रः—परिहितानि = यथास्थानं धृतानि कल्याणकानि = साङ्गलिकानि प्रवराणि श्रेष्ठानि वस्त्राणि येन स तथा — समीचीनधृतश्रेष्ठवस्त्र इत्यर्थः, “ कल्याणगववरमल्लाणुलेवणे ” कल्याणकप्रवरमाल्यानुलेपनः कल्याणकानि=कल्याणकारीणि प्रवराणि=सुन्दराणि माल्यानि = पुष्पमाला अनुलेपनानि=चन्दनादिविलेपनानि च यस्य स तथा । सुन्दराति सुन्दरपुष्पमाला चन्दनादि विलेपन युक्त इत्यर्थः । “ भासुरवौदी ” भास्वरवोन्दिः=भास्वारा=देदीप्यमाना वोन्दिः=शरीरं यस्य स तथा भासमानदेहधारीत्यर्थः । “ पलम्बवगमालधरे ” प्रलम्बवनमालाधरः, प्रलम्बः=शुम्बनकं तद् युक्ता वनमाला पादपर्यन्तलम्बमाना माला तस्याः धरः—धारकः—शुम्बनकयुक्तपादपर्यन्तलम्बमानमालायुक्त इत्यर्थः । एतादृशः स देवः “ दिव्येणं वण्णेणं ” दिव्येन वर्णेन देवसम्बन्धिवर्णेन, “ दिव्येणं गन्धेणं ” दिव्येन गन्धेन=देवसम्बन्धिसुरभिगन्धेन “ दिव्येणं रूपेणं ” दिव्येन रूपेण=दिव्याकारेण, एवम्—अनेन पूर्वोक्तेक दिव्यविशेषणयुक्तप्रकारेण “ फासेणं ” स्पर्शेन=दिव्येन स्पर्शेन सुकुमारादिरूपेण, “ संघाएणं ” संघातेन दिव्येन संघातेन दिव्येन देवयोग्येन संहननेन = शरीररचनारूपेण “ संठाणेणं ” संस्थानेन दिव्येन संस्थानेन = शरीराकारेण, तथा ‘ दिव्याए इड्डिए ’ दिव्यया ऋद्ध्या विमानपरिवारादिरूपया, ‘ जुईए ’ द्युत्या ‘ दिव्यया ’ इति विशेषणमग्रेऽपि योज्यम्, तेन दिव्यया द्युत्या=शरीरदीप्त्या,

मालाँ और मुकुट रहता है, मांगलिक एवं श्रेष्ठ ऐसे वस्त्रों को जो सदा पहिने रहता है, कल्याणकारी पुष्पमालाओं से एवं चन्दन आदि के सुगन्धिवाले लेपों से जो हमेशा विराजित रहता है, शरीर जिसको सर्वदा चमकीला बना रहता है, (पलम्बवगमालधरे) और शुम्बनयुक्त ऐसी पैरोतक लटकती हुई वनमाला से जो युक्त रहता है। ऐसा वह देव अपने दिव्यवर्ण से, दिव्यगन्ध से—देवसम्बन्धिसुरभिगन्ध से—दिव्य आकार से, दिव्य स्पर्श से,—सुकुमार आदि रूप स्पर्श से—दिव्यसंघात से, दिव्यसंहनन से, दिव्य संस्थान से, विमानपरिवार आदिरूप दिव्य ऋद्धि से, दिव्यद्युति से—

कल्याणकारी पुष्पमालाओंथी तथा चन्दन आदिना सुगन्धित लेपथी जेओ सदा शोभता होय छे, जेनु शरीर सदा द्देदीप्यमान होय छे, (पलम्बवगमालधरे) पग सुधी लटकती अने ओला लेती वनमालाथी जे युक्त होय छे, जेओ ते देव पोताना दिव्य वर्णथी दिव्यगन्धथी—देवसंगन्धथी सुरभिगन्धथी, दिव्य आकारथी, दिव्य स्पर्शथी—सुकुमार आदिस्पर्श स्पर्शथी दिव्य संघातथी, दिव्य संहननथी, दिव्य संस्थानथी, विमान परिवार आदिस्पर्श दिव्य ऋद्धिथी, दिव्य द्युतिथी—शारीरिक दीप्तिथी, दिव्य विमानना प्रभावथी दिव्य शरीर सौन्दर्यथी,

યસ્મિન્ સમયે સ્ત્રીવેદ વેદયતિ નો તસ્મિન્ સમય પુરુષવેદ વેદયતિ । ‘ ઈ સમય ’
 इत्यत्र द्वितीया सप्तम्यर्थे “ ज समय पुरिसवेय वेपइ नो त समय इत्थियवेय वेपइ ”
 यस्मिन् સમયે પુરુષવેદ વેદયતિ નો તસ્મિન્ સમયે સ્ત્રીવેદ વેદયતિ, “ इत्थिय
 वेयस्स उदण्ण नो पुरिसवेयं वेपइ ” સ્ત્રી વેદસ્યોદયન નો પુરુષવેદ વેદયતિ
 “ पुरिसवेयस्स उदयेण नो इत्थियवेयं वेपइ ” પુરુષવેદસ્યોદયેન નો સ્ત્રીવેદ વેદ
 यति “ एवं खलु एगे जीवे एगेणं समणं एरा वेयं वेपइ ” एवं સહુ ઇકો જીવઃ
 एकस्मिन् समये एकं वेदं वेदयति “ त जहा ” तद् यथा ‘ इत्थीवेय वा ’
 “ पुरिसवेय वा ” સ્ત્રીવેદસ્યા પુરુષવેદસ્યા એકેન જીવેન એકસા એક એવ વેદો
 वेद्यते न तु वेदान्तर मित्यत्र कारणमाह—“ इत्थीइत्थियवेण ” इत्यादि । “ इत्थी

कि (ज समय इत्थियवेयं वेपइ) जिस समय में वह स्त्री वेदका
 वेदन करता है (जो त समय पुरिसवेयं वेपइ) उस समय में वह
 पुरुषवेद का वेदन नहीं करता है (जे समय पुरिस वेयं वेपइ) और जिस
 समय में वह पुरुष-वेद का वेदन करता है (त समय इत्थियवेयं नो
 वेपइ) उस समय में वह स्त्रीवेद का वेदन नहीं करता है । (इत्थिय
 वेयस्स उदण्ण नो पुरिसवेयं वेपइ) स्त्रीवेद के उदय से पुरुषवेद का
 वेदन वह नहीं करता है और (पुरिसवेयस्स उदण्ण नो इत्थियवेयं
 वेपइ) पुरुषवेद के उदय से स्त्रीवेद का वेदन वह नहीं करता है ।
 (एव खलु एगे जीवे) इस तरह एक जीव (एगेणं समण) एक
 समय में (एरा वेयं वेपइ) एक ही वेद का वेदन करता है । (त जहा
 इत्थियवेय वा पुरिसवेयं वा) जिसे - या तो वह स्त्री वेद का वेदन करता
 है या पुरुषवेद का वेदन करता है । एक जीव एक समय में एक ही
 वेद का वेदन करता है- दूसरे वेद का नहीं इसमें क्या कारण है ? सो

એક જ સમયે એક સાથે વેદન કરતો નથી. કારણ કે (જ સમયે ઇત્થિયવેયં
 વેપઇ) જે સમયે તે ઓવેદનુ વેદન કરતા હોય (જો ત સમય પુરિસવેય
 વેપઇ) તે સમયે તે પુરુષવેદનુ વેદન કરતો નથી, (જ સમય પુરિસવેય વેપઇ
 ત સમયે જો ‘ ઇત્થિયવેય વેપઇ ’ બધારે તે પુરુષવેદનુ વેદન કરતા હોય છે
 ત્યારે તે સ્ત્રીવેદનુ વેદન કરતો નથી (ઇત્થિયવેયસસ ઉદણ્ણ નો પુરિસવેયં વેપઇ)
 સ્ત્રીવેદના ઉદયથી તે પુરુષવેદનુ વેદન કરતો નથી અને (પુરિસવેયસસ ઉદણ્ણ નો
 ઇત્થિયવેયં વેપઇ) પુરુષવેદના ઉદયથી તે સ્ત્રીવેદનુ કરતો નથી. (એવં સહુ ઇકો જીવે
 એગેણં સમણ એવ વેય વેપઇ) આ રીતે એક છતાં એક સમયે એક જ વેદનુ વેદન
 કરે છે (તજહા-ઇત્થીયવેય વા પુરિસવેય વા) કહી ઓવેદનુ વેદન કરે છે, કોને
 પુરુષવેદનુ વેદન કરે છે એક છતાં એક જ સમયે એક જ વેદનુ વેદન કરે છે,

અન્યેપાં સ્વાત્મવ્યતિરિક્તાનાં દેવાનાં સમ્બન્ધિનીઃ દેવીઃ “અભિજુંજિય અભિજું-
જિય ” અભિયુજ્યાભિયુજ્ય વશીકૃત્ય વશીકૃત્ય પરિચારયતિ, તૈઃ સહ વૈપયિકં
ભોગં પરિભુંક્તે इत्यर्थः ૨ । “અપ્પણિચ્ચિયાઓ દેવીઓ અભિજુંજિય અભિજુંજિય
પરિયારેહ ” આત્મીયાદેવીઃ સ્વસમ્બન્ધિનીઃ દેવીઃ અભિયુજ્યાભિયુજ્ય પરિચાર-
યતિ ૨ । “અપ્પણામેવ અપ્પાણં વિઙ્ગવિય વિઙ્ગવિય પરિચારેહ ” આત્મનૈવ સ્વે
નૈવ આત્માનં સ્વં દેવત્વેન દેવીત્વેન વા વિકુર્વ્ય વિકુર્વ્ય.નો પરિચારયતિ । ૩ ।
“એગે વિ ય ણં જીવે ” એકોઽપિ ચ રુદ્ધુ જીવઃ “એગેણં સમણં એગં વેદં વેણ ”
“એકસ્મિન્ સમયે એકમેવ વેદં વેદયતિ. “તં જહા इत्थिवेयं वा पुरिसवेयं वा ”
સ્ત્રીવેદં વા પુરુષવેદં વા “ જં સમયં इत्थिवेयं वेण्णो तं समयं पुरिसवेयं वेण्ण ”

મેં ઉત્પન્ન હુઆ વહ દેવ અન્યદેવોં કો તથા અન્ય દેવોં કી દેવિયોં કો
વાર વાર અપને વણ મેં કરકે અનેકે સાથ પરિચારણા કરતા હૈ । તથા-
(અપ્પણિચ્ચિયાઓ દેવીઓ અભિજુંજિય અભિજુંજિય પરિયારેહ) અપની
દેવિયોં કો વાર વાર અપને વણમેં કરકે અનેકે સાથ પરિચારણા કરતા
હૈ । (અપ્પણામેવ અપ્પાણં) અપને આપ સે અપને આપકો (વિઙ્ગવિય
વિઙ્ગવિય) વૈક્રિયશક્તિ દ્વારા દેવ ઔર દેવી કે રૂપ મેં ઉત્પન્ન કર કે
(નો પરિયારેહ) પરિચારણા નહીં કરતા હૈ । અતઃઇસ કથન સે યહી
નિષ્કર્ષ નિકલતા હૈ કિ (એગે વિ ય ણં જીવે) એકજીવ (એગેણં સમણ-
ણં) એકસમય મેં (એગં વેયં વેણ) એક હી વેદ કા વેદન કરતા હૈ ।
(તં જહાં) જૈસે (इत्थिवेयं वा पुरिसवेयं वा) યા તો વહ
એક સમય મેં સ્ત્રી વેદ કા વેદન કરેગા યા પુરુષવેદ કા
-દો વેદોં કા યુગપત્ એક સમય મેં વહ વેદન નહીં કરેગા । ક્યોં

આદિથી યુક્ત દેવલોકોમાંના કોઈ પણ એક દેવલોકમાં ઉત્પન્ન થયેલો તે દેવ,
અન્ય દેવોને તથા અન્ય દેવોની દેવીઓને વાર વાર પોતાને વશ કરીને
તેમની સાથે વિષયસુખ ભોગવે છે તથા (અપ્પણિચ્ચિયાઓ દેવીઓ અભિજું-
જિય અભિજુંજિય પરિયારેહ) પોતાની દેવીઓને વશ કરીને વાર વાર તેમની
સાથે વિષયસુખ ભોગવે છે (અપ્પણામેવ અપ્પાણં) પોતે જ પોતાની બાતને
(વિઙ્ગવિય વિઙ્ગવિય) વૈક્રિય શક્તિથી દેવ અને દેવી રૂપે ઉત્પન્ન કરીને
(નો પરિયારેહ) વિષયસુખ ભોગવતા નથી. આ કથનનું તાત્પર્ય એ છે-કે-
(એગે વિ ય ણં જીવે) એક જીવ (એગેણ સમણ) એક સમયે (એગ વેય
વેણ) એક જ વેદનું વેદન કરે છે (તજહા-इत्थिवेयं वा पुरिसवेयं वा)
કાતો તે સ્ત્રીવેદનું વેદન કરે છે, કાતો પુરુષવેદનું વેદન કરે છે અને વેદનું

(कइविहेणं भंते! वेए पणत्ते) कतिविधः खलु भदन्त! वेदः प्रज्ञप्तः?—हे भदन्त! वेद कितने प्रकार का होता है? (गोयमा! तिविहे वेए पणत्ते) गौतम त्रिविधो वेदः प्रज्ञप्तः—हे गौतम! वेद तीन प्रकार का होता है—(त जहा) तच्चथा—वे प्रकार ये हैं (इत्थीवेए, पुरिसवेए, नपुसगवेए) स्त्रीवेदः पुरुषवेदः नपुंसकवेदः—स्त्रीवेद, पुरुषवेद और नपुंसकवेद। (जेरइयाणं भंते! किं इत्थीवेया, पुरिसवेया णपुसगवेया पणत्ता) हे भदन्त! नैरयिका किं स्त्रीवेदाः पुरुषवेदाः नपुंसकवेदाः प्रज्ञप्ता—हे भदन्त! नारकजीव क्या स्त्रीवेद, पुरुषवेद और नपुंसकवेद वाले कहे गये हैं? (गोयमा! णो इत्थीवेया, णो पुरिसवेया णपुसगवेया पणत्ता) गौतम! नो स्त्रीवेदाः नो पुंवेदाः नपुंसकवेदाः प्रज्ञप्ताः—हे गौतम! नारकजीव न स्त्री वेदवाले कहे गये हैं, न पुरुषवेद वाले कहे गये हैं, किन्तु नपुंसक वेद वाले कहे गये हैं। (असुरकुमाराणं भंते! किं इत्थीवेया णपुसगवेया?) असुरकुमाराः खलु भदन्त! किं स्त्रीवेदाः पुरुषवेदाः नपुंसकवेदाः?—हे भदन्त! असुरकुमारदेव क्या स्त्रीवेद, पुरुषवेद और नपुंसकवेद वाले होते हैं? (गोयमा! इत्थीवेया पुरिसवेया णो णपुसगवेया) हे गौतम! असुरकुमाराः स्त्रीवेदाः पुरुषवेदाः नो नपुंसकवेदाः—असुरकुमारदेव स्त्रीवेद और पुरुषवेद वाले ही होते हैं नपुंसकवेदवाले नहीं होते हैं। (जाव थणियकुमारा) यावत्तनितकुमाराः—इसी तरह

शब्दार्थ—(कइ विहेण भंते ! वेए पणत्ते) कतिविधः खलु भदन्त ! वेदः प्रज्ञप्तः ?—हे भदन्त ! वेद के-ला प्रकारना होय छे ? (गोयमा ! तिविहे वेए पणत्ते) गौतम ! त्रिविधो वेदः प्रज्ञप्तः—हे गौतम ! वेद त्रय प्रकारना छे (तंजहा) तच्चथा —प्रकारे आ प्रमाणे छे—(इत्थीवेए, पुरिसवेए, नपुसगवेए) स्त्रीवेद, पुरुषवेद अने नपुसकवेद जेरइयाणं भंते ! किं इत्थीवेया, णपुंसगवेया पणत्ता ?) किं स्त्रीवेदाः, पुरुषवेदाः नपुसकवेदाः प्रज्ञप्ताः—नारकीलवे स्त्रीवेद, पुरुषवेदवाणा छे ? (गोयमा ! णो इत्थीवेया, णो पुरिसवेया णपुंसगवेया पणत्ता) गौतम ! नो स्त्रीवेदाः, नो पुंवेदाः नपुसकवेदाः प्रज्ञप्ताः—हे गौतम ! नारकीलवे स्त्रीवेदवाणा नथी, पुरुषवेदवाणा पण नथी नपुसकवेदवाणा कडेला छे (असुरकुमाराणं—भंते ! किं इत्थीवेया, पुरिसवेया, णपुंसगवेया ?) असुरकुमाराः खलु भदन्त ! किं स्त्रीवेदाः, पुरुषवेदाः नपुसकवेदाः ? हे भदन्त ! असुरकुमार देवा स्त्रीवेदवाणा होय छे, हे पुरुषवेदवाणा होय छे हे नपुसकवेदवाणा होय छे " (गोयमा ! इत्थीवेया, पुरिसवेया, णो णपुंसगवेया) हे गौतम ! असुरकुमाराः स्त्रीवेदाः पुरुषवेदाः नो नपुसकवेदाः—हे गौतम ! असुरकुमार देवा स्त्रीवेद वाणा अने पुरुषवेदवाणा होय छे नपुसकवेदवाणा होता नथी. (जाव थणियकुमारा) यावत् स्तनितकुमाराः—

से स्तनित कुमारान्तक जो नौ प्रकार के मयनपति देव हैं वे भी इन दोनों वेदांशों ही होते हैं नपुंसक वेद वांछे नहीं। (पुंस्वीप्राक तेज वाक पणस्सइ पिति चउरिंदिय संमुच्छिम पंविदियतिरिक्खसमुच्छिमम णुस्सा णपुसगवेया) पृथिव्यप्तेजो वायुवनस्पति द्वि त्रि चतुरिन्द्रिय समुच्छिममनुष्याः—पृथ्वीकायिक, अपक्रायिक, तेजस्कायिक, वायुकायिक, वनस्पतिकायिक, दो इन्द्रिय, ते इन्द्रिय चौ इन्द्रिय, संपूर्च्छिम पञ्चेन्द्रिय-तिर्यक् और संपूर्च्छिमनुष्य ये सय नपुंसक वेद वांछे होते हैं। ऋग्वेद पुरुषवेद वांछे नहीं होते हैं। (गर्भमवकतियमणुस्सा पंविदियतिरिया य तिवेया) गर्भजपुंस्कान्तिक मनुष्या पञ्चेन्द्रियतिर्यक् त्रिवेदा— तथा जो गर्भजमनुष्य और पञ्चेन्द्रियतिर्यक् हैं वे तीनों ही वेदवांछे होते हैं। (जहा असुरकुमारा तहा वाणमतारा जो इस्सिपेमाणिवा वि) यवा असुर कुमारास्तयाव्यन्तर उपोतिपिक वैमानिका अपि-निस प्रकार असुरकुमार देव पुरुष और ऋग्वेद वांछे होते हैं, उसी प्रकार से व्यन्तर देव, उपोतिपिकदेव, और वैमानिक देव भी होते हैं। देवों में नपुंसक वेद नहीं होता है ॥ सू १९४॥

टीका—‘कइविहणं भते ! वेए पण्णचे’ इत्यादि—इ भदत्त ! वेद

के ७ प्रमाणों स्तनितकुमार सुधीना के नव जयनपति देवों ॥ तेभो ! पण्ण के के वेदवाणा देव छे नपुंसक वेदवाणा होता नही पुंस्वीप्राक तेज वाक पणस्सइ पितिचउरिंदिय समुच्छिम पविदिय तिरिक्ख संमुच्छिम मणुस्सा णपुम गवेया) पृथिव्यप्तेजो वायुवनस्पति द्वित्रिचतुरिन्द्रिय संपूर्च्छिम पञ्चेन्द्रिय तिर्यक् संपूर्च्छिममनुष्याः—पृथ्वीकायिक, अपक्रायिक, तेजस्कायिक, वायुकायिक, दो इन्द्रिय त्रिन्द्रिय चतुरिन्द्रिय संपूर्च्छिम पञ्चेन्द्रिय तिर्यक्, अने संपूर्च्छिम मनुष्यो के जहा नपुंसक वेदवाणा होय ॥ पण्ण ऋग्वेद के पुरुषवेदवाणा होता नही (गर्भम अवकतिया मणुस्सा पंविदिय तिरिया य तिवेया) गर्भजपुंस्कान्तिक मनुष्या पञ्चेन्द्रियतिर्यक् त्रिवेदाः तथा ७ मनुष्यो अने पञ्चेन्द्रिय तिर्यक् त्रिवेद वाणां देव छे (जहा असुरकुमारा तहा वाणमतारा जो इस्सिपेमाणिवा वि) यवा असुर कुमारास्तया व्यन्तर उपोतिपिक वैमानिका अपि-निस प्रकार असुर कुमार देवो पुरुष अने ऋग्वेदवाणा होय छे ते ७ प्रमाणों व्यन्तर देवो अने वैमानिक देवो पण्ण पुरुष अने ऋग्वेद वाणा होय छे देवों में नपुंसक वेद वांछे नही ॥ सू. १९४॥

टीका—‘कइविहणं भते ! वेए पण्णचे’ इत्यादि—इ भदत्त ! वेद

ટીકા—‘કડવિદ્ધેણ મંતે’ इत्यादि—‘कडविद्देणं मंते ! वेए पणत्ते’ कतिविधः खलु भदन्त ! वेदः प्रज्ञप्तः ? ‘गोयमा ! तिविद्दे वेए पणत्ते’ त्रिविधो वेदः प्रज्ञप्तः, ‘तं जहा’ तद्यथा—‘इत्थीवेए’ स्त्रीवेदः—‘पुंसकामिता’, ‘पुरिसवेए’ पुरुषवेदः—‘स्त्रीकामिता’, ‘नपुंसयवेए’ नपुंसकवेदः—‘स्त्रीपुंसकामिता । ‘नेरइयाणं मंते’ ‘नेरयिकाः खलु भदन्त ! ‘किं इत्थीवेया पुरिसवेया णपुमगवेया पणत्ता’ किं स्त्रीवेदाः पुरुषवेदा नपुंसकवेदाः प्रज्ञप्ताः? स्त्रीवेदादयो मत्वर्थीयान्प्रत्ययान्तास्तेन स्त्रीवेदवन्तः पुरुषवेदवन्तो नपुंसकवेदवन्त इत्यर्थो बोध्यः । भगवानुत्तरयति—‘गोयमा !’ हे गौतम ! ‘णो इत्थीवेया णो पुवेया णपुमगवेया पणत्ता’ नो स्त्रीवेदाः नो पुवेदाः अपि तु नपुंसकवेदाः प्रज्ञप्ताः । ‘अमुरकुमारा णं मंते अमुरकुमाराः खलु भदन्त ! ‘किं इत्थीवेया पुरिसवेया णसगवेया’ किं स्त्रीवेदा पुरुषवेदाः नपुंसकवेदाः ? गोयमा ! इत्थीवेया पुरिसवेया णो णपुसगवेया’ हे गौतम ! अमुरकुमाराः स्त्रीवेदाः पुरुषवेदा नो नपुंसकवेदाः । ‘जाव थणियकुमारा’ यावत्स्तनितकुमाराः—अमुरकुमारातिरिक्ताः स्तनितकुमारान्ताः शेषा नव भवनपतयो देवा अपि स्त्रीवेदाः पुरुषवेदा नो नपुंसकवेदाः । तथा—‘पुढवी आउ तेउ वाउ वणस्सई’ इति चउरिंदियसंमुच्छिद्यपविंदियतिरिखसंम-

કિતને પ્રકાર કા હોતા હૈ ? હૈ ગૌતમ ! વેદ ત્રીન પ્રકાર કા હોતા હૈ। વે પ્રકાર યે હૈ—સ્ત્રીવેદ, પુરુષવેદ ઔર નપુસકવેદ। હૈ મદંત નારક જીવ કયા સ્ત્રીવેદ યા પુરુષવેદ અથવા નપુસકવેદવાલે કહે ગયે હૈ। હૈ ગૌતમ ! નારક જીવ ન સ્ત્રીવેદવાલે કહે ગયે હૈ ન પુરુષવેદ વાલે કહે ગયે હૈ, કિન્તુ નપુસક વેદ વાલે કહે ગયે હૈ। હૈ મદંત! અમુરકુમાર દેવ કયા સ્ત્રીવેદ, પુરુષવેદ ઔર નપુસક વેદ વાલે હોતે હૈ ? હૈ ગૌતમ અમુરકુમાર દેવ સ્ત્રીવેદ ઔર પુરુષવેદ વાલે હી હોતે હૈ—નપુસકવેદ વાલે નહીં હોતે હૈ। ઇસી તરહ સે સ્તનિતકુમારાન્તતક જો નૌ પ્રકાર કે ભવનપતિ દેવ હૈ વે મી ઇન દોનોં વેદ વાલે હી હોતે હૈ— નપુસક વેદ વાલે નહીં। પૃથ્વીકાયિક, અપ્સકાયિક, તેજસ્કાયિક,

પ્રકારના હોય છે ? હૈ ગૌતમ ! વેદના ત્રીએ પ્રમાણે ત્રણ પ્રકાર છે—સ્ત્રીવેદ, પુરુષવેદ અને નપુસકવેદ હે ભદ ત ! નારકજીવે સ્ત્રીવેદવાળા છે કે પુરુષવેદવાળા છે અથવા નપુસકવેદવાળા છે ? હૈ ગૌતમ ! નારકજીવે પુરુષવેદવાળા નથી, સ્ત્રીવેદવાળા પણ નથી તેઓ નપુસક વેદવાળા હોય છે હે ભદ ત ! અમુરકુમાર દેવે પુરુષવેદ વાળા હોય છે, કે સ્ત્રીવેદવાળા હોય છે કે નપુસકવેદવાળા હોય છે ? હૈ ગૌતમ ! અમુરકુમાર દેવે પુરુષવેદ અને સ્ત્રીવેદવાળા જ હોય છે નપુસક વેદવાળા હોતા નથી એ જ પ્રમાણે સ્તનિતકુમાર સુધીના જે નવ ભવનપતિ દેવે છે તેઓ પણ એ જ વેદવાળા હોય છે, પણ નપુસક વેદવાળા હોતા નથી

च्छिममनुस्ता' पृथिव्यन्तेओवायुवनस्थतिद्वित्रिषत्तुरिन्द्रियसमूर्च्छिमपञ्चेन्द्रियतिय
कसमूर्च्छिममनुप्या, 'अपुमगवेया' नपुसकवेदाः । तथा- गम्भत्रकतियमनुस्ता
पंचिदियतिरिया य तिवेया' गर्भेभ्युत्क्रान्तिकमनुप्याः पञ्चे न्द्रियतिर्यञ्च प्रवेदाः ।
'अथा अमुरकुमारा तथा प्राणमतरा जोइसियवेमानिया वि' यथा अमुरकुमारा
स्यया व्यन्तरज्योतिषिकवेमानिका अपि-अमुरकुमारसद् व्यन्तरज्योतिषिकवेमा
निका अपि स्त्रीवेदाः पुवेदा नो नपुसकवेदा इति भाष ॥सू १९४॥

पूर्वोक्ताः सर्वपदार्थाः समवसरणे स्थितान् भगवता प्रोक्ताः, अतः
समवसरणवक्तव्यतां कथयति—

मूस्म—तेण कालेणं तेण समएण कप्पस्स समोसरण णेयव्व,
जाव्व गणहरा सावञ्चा निरवञ्चा वोच्छिण्णा ॥सू १९५॥

वायुकायिक, वनस्पतिकायिक, दो इन्द्रिय, ते इन्द्रिय चौइन्द्रिय, संमूर्च्छिम
पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च, और संमूर्च्छिम मनुप्य ये मय नपुसकवदवाछे होत
हैं। स्त्रीवेद, पुरुषवेद पाछे नहीं होते हैं। तथा जो गर्भज मनुप्य और
पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्च हैं वे तीनों ही वेदवाछे होते हैं जिस प्रकार अमुरकुमार
देव पुरुष और स्त्रीवेदवाछे होते हैं, उसी प्रकार से व्यन्तर देव ज्योतिषिक
देव और वैमानिकदेव भी होते हैं। देवों में नपुसकवेद नहीं होता है ॥सू० १९४॥

ये पूर्वोक्त समस्तपदार्थ समवसरण में स्थित हुए भगवानने कहे
हैं अतः समवसरण के विषय में सूत्रकार कहते हैं—

शब्दार्थ—(तेण कालेणं) तस्मिन् काले—उस काल में—दुःपम सुपम
नामके चतुर्थभारे में जब कि (तेण समएणं) तस्मिन् समये—भगवान्

पृथिवी कायिक अपकायिक तेजस्कायिक वायुकायिक वनस्पतिकायिक, इन्द्रिय, त्रीन्द्रिय
अतुरिन्द्रिय संमूर्च्छिम पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अने संमूर्च्छिम मनुप्यो ते अथा
नपुसकवेदवाणा अ दोष छे स्त्रीवेद के पुरुषवेदवाणां होतां नथी तथा जलं अ मनुप्यो
अने पञ्चेन्द्रिय तिर्यञ्च अथ वेदवाणां दोष छे व्यन्तर ज्योतिषिक अने वैमानिक
देवो, अमुरकुमार देवोनी जेभ पुरुषवेद अने स्त्रीवेदवाणां दोष छे देवोभा नपुसक
वेद हातो नथी ॥सू १९४॥

पूर्वोक्त समस्त पदार्थों में अने समवसरणों में भगवान् द्वारा कहे छे तेभी
हुवे सूत्रकार समवसरणों वचन कहे छे—

शब्दार्थ—(तेण कालेणं) तस्मिन् काले—ते काले—दुःपम सुपम नामना के भा
आशामा न्भारे (तेण समएणं) तस्मिन् समये—भगवान् भट्टावीर स्वामी विद्वान्

टीका—‘तेणं’ इत्यादि—‘तेणं कालेणं’ तस्मिन् काले खलु=दुःपमसुपम नामके चतुर्थेऽरे ‘तेणं समयेणं’ तस्मिन् समये खलु भगवान् महावीरस्वामी यदा विचारति स्म तस्मिन् समये इत्युपक्रम्य ‘कप्पस्स समोसरणं णेयव्वं’ कल्पस्य समवसरणं नेतव्यम्=कल्पे यथा समवसरणवक्तव्यता प्रोक्ता तथैव वक्तव्या, किय-
त्पर्यन्तं वक्तव्या ? इत्याह—‘जाव गणहरा सावच्चानिरवच्चा वोच्छिण्णा’ यावद् गणधराः सापत्या निरपत्या व्युच्छिन्नाः=शिष्यप्रशिष्यसहितगणधरस्य सुधर्मस्वामी-

महावीर स्वामी विहार कर रहे थे उस समय में—इस पाठ से लेकर (कप्पस्स समोसरणं णेयव्वं) कल्पस्य समवसरणं नेतव्यम्=कल्पसूत्र में जिस प्रकार से समवसरण के विषय में कथन किया गया है उसी प्रकार का कथन (जाव गणहरा सावच्चा निरवच्चा वोच्छिण्णा) यावद् गणधराः सापत्या निरपत्या व्युच्छिन्नाः—यावत् शिष्य प्रशिष्य सहित सुधर्मस्वामी और दूसरे गणधर और उनके शिष्य प्रशिष्य दूसरे गणधर मोक्ष चले गये यहां तक का ग्रहण करना चाहिये । मु० १९५।

टीकार्थ—‘तेणं कालेणं तेणं समएणं’ इत्यादि—उस काल में दुःपम सुपम नामके चतुर्थ आरे में—जब कि भगवान् महावीर स्वामी विहार कर रहे थे—उस समय में—इस पाठ से लेकर कल्पसूत्र में जिस प्रकार से समवसरण के विषय में कथन किया गया है उसी प्रकार का कथन यावत् शिष्य प्रशिष्य सहित सुधर्मस्वामी और दूसरे गणधर शिष्यप्रशिष्य सहित दूसरे गणधर मोक्ष चले गये यहां तक का ग्रहण करना चाहिये। तात्पर्य इसका यह है कि समवसरण के विषय का कथन कल्पसूत्र में किया गया है—मो वह सब कथन “तेणं कालेणं तेणं समएणं” यहां से लेकर—“गणहरा

इत्ता इत्ता त्थारे—आ पाठ्थी यद् करीने (कप्पस्स समोसरणं णेयव्वं) कल्पस्य समवसरणं नेतव्यम्—कल्पसूत्रमा जे रीते समवसरण विषे वण्णं कथुं छे ते प्रकारनु वण्णं (जाव गणहरा सावच्चा निरवच्चा वोच्छिण्णा) यावद् गणधराः सापत्या निरपत्या व्युच्छिन्नाः—शिष्य प्रशिष्य सहित सुधर्मस्वामी अने ते सिपायना भीज गणधरे मोक्ष सिधाव्या त्या सुधीनु कथन अहणु करवु । ॥ सू १८५॥

टीकार्थ—‘तेणं कालेणं तेणं समएणं’ इत्यादि—‘ते काले—दुःपम नामना योथा आरामा न्यादे भगवान् महावीर स्वामी विहार करता इत्ता त्थारे’ त्थार्थी यद् करीने कल्पसूत्रमा जे प्रकारे समवसरण विषे कथन कथुं छे जे ज प्रकारनु कथन शिष्यप्रशिष्यो सहित सुधर्मस्वामी अने भीज गणधरे मोक्ष गया’ त्या सुधीनु कथन अहणु करवु जेधजे. तेनु तात्पर्य जे छे के समवसरण विषेनु कथन कल्पसूत्रमा करवामां आण्युं छे. ते ते समस्त कथन ‘तेणं कालेणं तेणं

મિનમ્તદ્રઢિતગણધરાણાં ચ મોક્ષવક્તવ્યતા યત્યયન્ત સત્યર્થન્ત કલ્પસ્ય સમવસરણ
વક્તવ્યમિત્યય ॥ મૂ. ૧૯૫ ॥

પ્રત્યક્સમવસરણનાયકો મગધાન્ મહાવીર કુલકરસ્ય વંશે સમુત્પન્નો મહાપુ
રુષધાસીત્, અત કુલકરાર્ણા મહાપુરુષાણા ચ વક્તવ્યતામાહ—

મૂળમ્—જમ્બુદ્વીપે ન દીવ ભારહે વાસે ત્રીયાપ્ ડસ્સપ્પિનીપ્ સત્ત
કુલગરાં હોત્થા, ત જહા—મિત્તદામે સુદામે ય, સુપાસે ય, સયપમે ।
વિમલઘોસે સુઘોસે ય, મહાઘોસે ય સત્તમે ॥૧॥ જમ્બુદ્વીપે ન દીવે
ભારહે વાસે ત્રીયાપ્ ઓસપ્પિનીપ્ દસ કુલગરા હોત્થા, ત જહા—
સયજલે સયાઠ ય અજિયસેણે અણતસેણે ય । કઙ્ગસેણે ભીમસેણે,
મહાભીમસેણે ય સત્તમે ॥૨॥ દઢરહે દસરહે સયરહે ॥ જમ્બુદ્વીપે ન
દીવ ભારહે વાસે ઇમીસે ન ઓસપ્પિનીપ્ સમાપ્ સત્ત કુલગરા
હોત્થા, ત જહા—પઢમેત્થવિલવાહણ (ચક્કુમજસમચ્ચઉત્થમભિચ્ચે ।
તત્તોય પસેણઈપ્ મરુદેવ ચેવ નામી યા ॥૩॥) વર્તેસિ ન સત્તણ્ઠ
કુલગરાં સત્ત મારિયા હોત્થા, ત જહા—ચદજસા ચદકંતા (સુરુવ
પઢિરુવ ચક્કુકતા ય । સિરિકતા મરુદેવી કુલગર પત્તીણ
નામાહ ॥૪॥) ॥ સૂ. ૧૯૬ ॥

સાવચ્છા નિર વચ્છા યોચ્છિણ્ણા” ગદ્યાત્મક સમવસરણ કે વિષય કા છે.
સો ઉસે વર્ણ સે મગાકર “ગણહરા સાવચ્છા” આદિ પાઠનક યદાં મગા
લેના ચાહિયે ॥મૂ. ૧૯૫॥

ઇસ સમવસરણ ક નાયક મગધાન્ મહાવીર કુલકર કે વંશ મેં
ઉત્પન્ન હુપ ચે ઓર મહાપુરુષ થો. અત કુલકરોં ઓર મહાપુરુષોં કા કથન

મમણ્ણ’ થી લઇને ‘ગણહરા સાવચ્છા નિરવચ્છા યોચ્છિણ્ણા’ સુધી સમ
વસ વ્ વિષે કથવામા આગ્યુ છે ત્યાંથી શરૂ કરીને ‘ગણહરા સાવચ્છા’ આદિ પાઠ
સુધીનુ વણન ત્યાંથી બોધ લેવુ ॥સૂ. ૧૯૫॥

આ સમવસરણના નાયક મગધાન્ મહાવીર કુલકરના વંશમાં જ મ પાચ્છા કરી
અને મહાપુરુષ હતા તેથી હવે સુતકાર કુલકરના અને મહાપુરુષોના કથન કરે છે—

अथ सूत्रकार करते हैं—

शब्दार्थ—(जम्बूद्वीपेण दीवे भारहे वासे)जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षे—जम्बूद्वीप नामके द्वीप में भारतवर्ष में (तीयाण उस्सप्पिणीए) तृतीयस्यामुत्सर्पिण्याम्—तीसरे उत्सर्पिणी काल में (सत्तकुलगरा होत्था) सप्त कुलगराः आसन्—सात कुलकर हुए हैं (त जहा) तद्यथा—वे इस प्रकार हैं(मित्रादामे) मित्रादामा—मित्रादामन्१, (सुदामे)सुदामा—सुदामन्२(सुपासे) सुपार्श्वः—सुपार्श्व३, (सयपभे) स्वयंप्रभः—स्वयंप्रभ४, (विमलघोसे) विमल-धोपः—विमलघोष५, (सुघोसे) सुघोपः—सुघोष६, (सत्तमे महाघोसे य) सप्तमः महाघोषश्च—सातवें महाघोष७। (जम्बूद्वीपेण दीवे भारहे वासे तीयाण ओसप्पिणीए दसकुलगरा होत्था) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षे तृतीयस्यामवसर्पिण्यां दस कुलकरा—आमन्—इस जम्बूद्वीप नामके द्वीप में तृतीय अवसर्पिणीकाल में दस कुलकर हुए हैं (त जहा) तद्यथा—उनके नाम इस प्रकार हैं—(सयजले सयाऊ य) स्वय जलः शतायुश्च—स्वयजल१, शतायु२(अजियसेणे)अजितसेनः—अजितसेन३(अणंतसेणे य)अनन्तसेनश्च—अनन्तसेन४(कज्जसेणे)कार्यसेनः कार्यसेन५ (भीमसेणे) भीमसेनः—भीमसेन६ (सत्तमे महाभीमसेणे य)सप्तमः महाभीमसेनश्च—सातवें महाभीमसेन७(दह

शब्दार्थ—(जम्बूद्वीपेण दीवे भारहे वासे)जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारतवर्षे—जम्बूद्वीप नामना द्वीपमा आवेला भारतवर्षमा (तीयाए उस्सप्पिणीए) तृतीयस्यामुत्सर्पिण्याम्—त्रीज उत्सर्पिणी काणमा (सत्त कुलगरा होत्था) सप्त-कुल-कराः आसन्—सात कुलकरे थर्ध जया छे (तंजहा) तद्यथा तेमना नाम आ प्रभाण्णु छे—(मित्रादामे) मित्रादामा—(१) मित्रादामन् (सुदामे)सुदामा— (२)सुदामन् (सुपासे)सुपार्श्वः—(३) सुपार्श्व, (सयपभे-स्वयंप्रभः (४) स्वय प्रभ, (विमलघोसे) विमलघोपः—(५) विमलघोष, (सुघोसे) सुघोपः—(६) सुघोष अने (सत्तमे-महाघोसे य) सप्तमः महाघोषश्च—(७) महाघोष (जम्बूद्वीपेण दीवे भारहे वासे तीयाण ओसप्पिणीए दसकुलगरा होत्था)—जम्बू द्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षे तृतीयस्यामवसर्पिण्यां दसकुलकरा आमन्—जम्बूद्वीप नामना द्वीपमा आवेला भारतवर्षमा त्रीज अवसर्पिणी काणमा दस कुलकरे थर्ध जया छे, (तंजहा) तद्यथा—तेमनानाम आ प्रभाण्णु छे— (सयजले सयाऊ य) स्वय जल शतायुश्च—(१) स्वय जल (२) शतायु ((अजियसेणे)अजितसेन—(३) अजितसेन, (अणंतसेणे य) अनन्तसेनः—(४) अनन्तसेन, (कज्जसेणे) कार्यसेनः—(५) कार्यसेन, (भीमसेणे) भीमसेनः—(६) भीमसेन, (सत्तमे महाभीमसेणे य) सप्तमः महाभीमसेनश्च—

रहे) दहरथो-दहरय (दसरहे) दशरथा-दशरथ? (मयरहे) शतरथ-दशवे
 शतरथा (जम्बूद्वीपेण दीपं भारहे वासे इमीसे ओसपिणी समाण सप्त
 कुलगराहोत्था) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षे अस्यामवसर्पिण्यां समायां
 मसकुलकरा आसन्-इम जम्बूद्वीप नामक प्रथम द्वीप में भारतवर्ष में इस
 खलु अवसर्पिणी काल में सात कुलकर हुए हैं (तं जहा) तथया-उनके
 नाम ये हैं-(पद्मेत्यविमलवाहण) प्रथमोऽत्र विमलवाहन-प्रथम विमल-
 वाहन (चक्रवर्तुम) अक्षुष्मान्-द्वितीयः अक्षुष्मान् (जसम) यशोमान्-तृतीय
 यशोमान् (चतुर्थमभिषदे) चतुर्थोऽभिषन्द्र-चतुर्थ अभिषन्द्र (ततो य)
 ततश्च-इनके बाद (पसेणईप) पसेनजित्-पांडव-प्रसनजित् (मरुदेवे) मरुदेव -
 छठवे मरुदेव (चैव नामीय) चैव नामिष-और सातवें नामिराय ।
 (एतेसि ण सत्तणं कुमगराण) एतेषां खलु सप्तानां कुलकराणां-इन सात
 कुलकरों की (सत्त मारिया होत्था) सप्तमार्गा आसन्-सात स्त्रीयां थीं।
 (तं जहा) तथया-उनके नाम इस प्रकार से हैं-(चंद्रवत्सा) चन्द्रवत्सा-
 चंद्रवत्सा १, (चंद्रकता) चन्द्रकान्ता-चन्द्रकान्त २ (सुरुषपडिहवचक्रु कंता य)
 सुरुषा प्रतिरुषा अक्षुष्कान्ता च-सुरुषा ३, प्रतिरुषा ४ अक्षुष्कान्ता ५ (सिरि
 कता मरुदेवी) भीकान्ता मरुदेवी-भीकान्ता ६ और मरुदेवी ७। (कुलगर

(७) महाभीमसेन, (दहरहे) दहरथो-(८) दहरथ, (दसरहे) दशरथा-दशरथ
 (सवरहे) शतरथा-अने (१०) शतरथ (जम्बूद्वीपेण दीपे भारहे वासे इमीसे
 ओसपिणीसमाण सप्तकुलगराहोत्था) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारतेवर्षे अस्या
 मवसर्पिण्यां समायां सप्तकुलकरा आसन्-आ ७ जम्बूद्वीप नामका पड़ोसी द्वीपमा
 आवेता आसतवर्षमां आ आलु अवसर्पिणीकाणमा सात कुलकरा तथा हैं (तं जहा)
 तथया-तेमनां नाम आ प्रभाक्षे छे (पद्मेत्यविमलवाहण) प्रथमोऽत्र विमल
 वाहनः-(१) विमलवाहन, (चक्रवर्तुम) अक्षुष्मान्-(२) अक्षुष्मान्, (जसम)
 यशोमान्-(३) यशोमान्, (चतुर्थमभिषदे) चतुर्थोऽभिषन्द्र-(४) अभिषन्द्र
 (ततो य पसेणईप) ततश्च पसेनजित्-(५) पसेनजित्, (मरुदेव) मरुदेवः-
 (६) मरुदेव अने (चैवनामीय) चैवनामिष-(७) नामिष (एतेसि ण सत्तणं
 कुलगराण) एतेषां खलु सप्तानां कुलकराणां-आ सात कुलकराणी (सप्तमारिया
 होत्था) सप्तमार्गा आसन्-सात पत्नीयां होती। (तं जहा) तथया-तेमनां नाम
 आ प्रभाक्षे छे-(चंद्रवत्सा) (१) चन्द्रवत्सा (२) (चंद्रकता) चन्द्रकान्ता, (सुरुष
 पडिहव चक्रु कता य) (३) सुरुषा (४) प्रतिरुषा (५) अक्षुष्कान्ता (सिरिकता

टीका—‘जंबुद्वीपेण’ इत्यादि—‘जंबुद्वीपे णं दीवे भारहे वासे’ जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षे ‘तीयाए उस्सप्पिणीए’ अतीतायामुत्सर्पिण्याम् ‘सत्तकुलगरा’ सप्तकुलकराः ‘होत्था’ आसन्, ‘तं जहा’ तद्यथा—मित्तदामे सुदामेय सुपासे य सयंपभे । विमलघोसे सुघोसे य महाघोसे य सत्तमे मित्रदामा सुदामा च सुपा-
 र्श्वश्च स्वयंप्रभः । विमलघोषः सुघोषश्च महाघोषश्च सप्तमः ॥१॥ ‘जंबुद्वीपे णं दीवे भारहे वामे तीयाए ओसप्पिणीए दस कुलगरा होत्था’ जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षे तृतीयस्यामवसर्पिण्या दश कुलकरा आसन्, ‘तं जहा’ तद्यथा—
 ‘सयंजले सयाऊय, अजियसेणे अणतसेणे य । कज्जसेणे भीमसेणे, महा-
 भीमसेणे य सत्तमे ॥ दहरहे दसरहे सत्तरहे ॥’ स्वयंजलः शतायुश्च, अजित-
 सेनोऽनन्तसेनश्च । कार्यसेनो भीमसेनो महाभीमसेनश्च सप्तमः ॥२॥ दहरथो
 दशरथः शतरथः । ‘जंबुद्वीपे णं दीवे भारहे वासे इमीसे ओसप्पिणी समाए

पत्तीण णामाह) कुलकर पत्नीना नामानि—कुलकरपत्नीनां नामानि—ये कुल-
 करों की पत्नियों के नाम हैं ॥सू० १९६॥

टीकार्थ—‘जंबुद्वीपे ण दीवे’ इत्यादि—जंबूद्वीप नामके द्वीप में भार-
 तर्ष में भूतकाल की उत्सर्पिणीकाल में सात कुलकर हुए वे इस प्रकार से हैं—
 मित्रदामन१ सुदामन२ सुपाश्वर्य३ स्वयंप्रभ४ विमलघोष५ सुघोष६ और
 सातवें महाघोष७ इस जम्बूद्वीप नाम के द्वीप में भारतवर्ष में तृतीय
 अवसर्पिणीकाल में दस कुलकर हुए हैं उनके नाम इस प्रकार से हैं—
 स्वयंजल१, शतायु२ अजितसेन३, अनन्तसेन४ कार्यसेन५ भीमसेन६ सातवें
 महाभीमसेन७ दहरथ८ दशरथ९ दशवें शतरथ१० इस जम्बूद्वीप—नामके
 प्रथम द्वीप में भारतवर्ष में इस चालू अवसर्पिणी काल में सात कुलकर-

मरुदेवी) (६) श्रीकान्ता अने (७) भग्देवी (कुलगरपत्तीणणामाहं) कुलकर
 पत्नीना नामानि—ये प्रमाणे कुलकरेना पत्नीयाणा नामो हतां ॥सू० १९६॥

टीकार्थ—जंबूद्वीपेण दीवे इत्यादि—जम्बूद्वीप नामना द्वीपमा आवेला
 भारतवर्षमा त्रीण उत्सर्पिणीकाणमा सात कुलकरे थया हता तेमना नाम आ
 प्रमाणे हता—(१) मित्रदामन् (२) सुदामन् (३) सुपाश्वर्य, (४) स्वयंप्रभ, (५)
 विमलघोष, (६) सुघोष, अने (७) महाघोष. आ जम्बूद्वीप नामना द्वीपमा
 आवेला भारतवर्षमा त्रीण अवसर्पिणीकाणमा दस कुलकरे हता तेमना नाम
 आ प्रमाणे छे—(१) स्वयंजल, (२) शतायु, (३) अजितसेन, (४) अनन्तसेन, (५)
 कार्यसेन, (६) भीमसेन, (७) महाभीमसेन, (८) दहरथ, (९) दशरथ अने (१०)
 शतरथ आ जम्बूद्वीप नामना द्वीपमा आवेला भारतवर्षमा वर्तमान अवसर्पि-

रहे) दृश्यो-दृश्यः (दृश्यहे) दृश्यः-दृश्यः (स्यरहे) दृश्यः-दृश्यः
 शतरथा (जम्बूद्वीपेण दीव भारहे वासे इमीसे ओमपिणी समाण सत्त
 कुलगराहोत्था) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षे अस्यामवसर्पिण्यां समायां
 मसकुलकरा आसन्-इम जम्बूद्वीप नामक प्रथम द्वीप में भारतवर्ष में इस
 खलु अवसर्पिणी काल म सात कुलकर हुए है (तं जहा) तथया-उनके
 नाम ये हैं-(पश्चिमेत्यविमलवाहन) प्रथमोऽप्रविमलवाहनः-प्रथम विमल-
 वाहन (चक्रवर्तुम) अष्टुप्मान्-द्वितीयचक्रुप्मान् (जसम) यशोमान्-तृतीय
 यशोमान् (चतुर्थमभिषेदे) चतुर्थोऽभिषेन्द्रः-चतुर्थ अभिषेन्द्र (ततो य)
 ततश्च-इनके बाद (पसेणईए) पसेनजित्-पाचवे-पसनजित् (मरुदेवे) मरुदेव -
 छठवे मरुदेव (चैव नामी य) चैव नामिध-और सातवे नामिराय ।
 (एतेसि ण सत्तण् कुलगराण) एतेषां खलु सप्तानां कुलकराणां-इन सात
 कुलकरों की (सत्त मारिया होत्था) सप्तमार्पा आमन्-सात स्त्रीयां थीं।
 (तं जहा) तथया-उनके नाम इस प्रकार से हैं-(चंद्रयसा-
 चंद्रयशा, (चंद्रकान्ता) चन्द्रकान्ता-चन्द्रकान्तः (सुरुषपडिरुषचक्रु कंता य)
 सुरुषा प्रतिरुषा चक्रुप्मान्ता च-सुरुषा, प्रतिरुषा चक्रुप्मान्ता (सिरि
 कंता मरुदेवी) भीकान्ता मरुदेवी-भीकान्ता और मरुदेवी। (कुलगर

(७) भट्टाभीमसेन, (दृश्यहे) दृश्यो- (८) दृश्य (दृश्यहे) दृश्यः-दृश्यः
 (स्यरहे) दृश्यः-अने (१०) दृश्य (जम्बूद्वीपेण दीव भारहे वासे इमीसे
 ओमपिणीसमाण सत्तकुलगराहोत्था) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षे अस्या
 मवसर्पिण्यां समायां सत्तकुलकरा आसन्-आ जम्बूद्वीप नामका पड़ोस द्वीपभा
 आवेता अस्तवर्षा आ आ अष्टु अवसर्पिणी द्वीपभा सात कुलकर थे। (तं जहा)
 तथया-तेभनां नाम आ प्रभवे छे (पश्चिमेत्यविमलवाहन) प्रथमोऽप्र विमल
 वाहन-(१) विमलवाहन, (चक्रवर्तुम) अष्टुप्मान्-(२) अष्टुप्मान्, (जसम)
 यशोमान्-(३) यशोमान्, (चतुर्थमभिषेदे) चतुर्थोऽभिषेन्द्रः-(४) अभिषेन्द्रः
 (ततो य पसेणईए) ततश्च पसेनजित्-(५) पसेनजित्, (मरुदेव) मरुदेव -
 (६) मरुदेव अने (चैव नामी य) चैव नामिध-(७) नामिराय (एतेसि ण सत्तण्
 कुलगराण) एतेषां खलु सप्तानां कुलकराणां-आ सात कुलकराणी (सत्तमारिया
 होत्था) सप्तमार्पा आमन्-सात स्त्रीयां थीं। (तं जहा) तथया-तेभनां नाम
 आ प्रभवे छे-(चंद्रयसा) (१) चंद्रयसा (२) चंद्रकान्ता चक्रुप्मान्ता, (सुरुष
 पडिरुष चक्रुप्मान्ता य) (३) सुरुषा (४) प्रतिरुषा (५) अष्टुप्मान्ता (सिरिकान्ता

चउवीसं तित्थगराणं मायरो होत्था, तं जहा—मरुदेवी विजयासेणा
[सिद्धत्था मंगला सुसीमा या पुहवी लक्खणा रामा नंदा विण्हूजया
सामा॥९॥ सुजसा सुव्वयअइरा सिरियादेवी पभावई पउमा । वप्पा
सिवा य वामा तिसला देवी य जिणमाया ॥१०॥ ॥सू. १९७॥

शब्दार्थ—(जंबुद्वीपे ण दीपे भारहे वासे इमीसे णं ओसप्पिए चउवीसं तित्थ-
गराणं पियरो होत्था)जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षेऽस्यामवसर्पिण्यां चतुर्विं-
शतिर्गोतीर्थकराणां पितर आसन्—इम् जम्बूद्वीप नामके द्वीप में भारतवर्ष में इस
अवसर्पिणी काल में चौबीस तीर्थकरों के पिता हुए हैं। (त जहा) तद्यथा—
उनके नाम इस प्रकार से है—[णामी य) नामि१, (जियसत्तू य) जितशत्रु
अ—जितशत्रु२ (जियारी) जितरिः—जितारि३, (सवरे इय) संवर इति—
संवर४, (मेहे धरे) मेघो धरः—मेघ५, धर६, (पड्डे य) प्रतिष्ठ—प्रतिष्ठ७
(महासेणे य) महासेन८ (खत्तिए) क्षत्रियः—क्षत्रिय (सुग्गीवे) सुग्गीवो—
सुग्गीव९ (दढरहे) दढरथो—दढरथ१०, (विण्हू) विष्णुः—विष्णु११ (वसु-
पूज्जे य) वसुपूज्य—वसुपूज्य१२ (खत्तिए) क्षत्रियः—क्षत्रिय, (कयवम्मा)
कृतवर्मा—कृतवर्मा१३, (सीहसेणे) सिंहसेनो—सिंहसेन१४ (भाणू) भानुः—
भानु, विस्ससेणे इय) विश्वसेन इति—विश्वसेन१५, (सरे, सुदंसणे, कुंभे
सुमित्त विजण समुद्विजए य) सर सुदर्शनः कुम्भः सुभिन्नो विजयः समुद्र-
विजय—सर१७ सुदर्शन१८ कुंभ१९ सुभिन्न२० विजय२१ समुद्रविजय२२

शब्दार्थ—जंबुद्वीपे ण दीपे भारहेवासे इमीसे णं ओसप्पिणीए चउवीसं

तित्थगराणं पियरो होत्था)जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षेऽस्यामवसर्पिण्यां चतु-
र्विंशतिर्गोतीर्थकराणां पितर आसन्—आ जम्बूद्वीप नामना द्वीपमा भारतवर्षमा
आ अवसर्पिणीदाणमा २४ तीर्थकरे ना पिता यध गया छे (तं जहा) तद्यथा—
तेमना नाम आ प्रभाण्णे छे—(णामी य) (१) नलि, (जियसत्तू य) (२) जितशत्रु,
(जियारी) (३) जितारि, (सवरे इय) (४) संवर, (मेहे धरे) (५) मेघ,
(६) धर, (पड्डेय) (७) प्रतिष्ठ, (महासेणे य) (८) महासेन (खत्तिए) (९),
क्षत्रिय, (सुग्गीवे) सुग्गीव, (दढरहे) (१०) दढरथ, (विण्हू) (११) विष्णु (वामुपु-
ज्जेय) (१२) वामुपूज्य, (खत्तिए कयवम्मा) (१३) क्षत्रिय कृतवर्मा, (सीहसेणे)
सिंहसेनो (१४) सिंहसेन, (भाणू) (१५) भानु (विस्ससेणे इय) (१६) विश्वसेन,
(सरे, सुदंसणे, कुंभे, सुमित्त विजण समुद्विजए य) (१७) सर, (१८)
सुदर्शन, (१९) कुंभ, (२०) सुभिन्न, (२१) विजय, (२२) समुद्रविजय, (रायाय

सप्तकुलगरा होत्या' जम्बुद्वीप खलु द्वापे भारत वर्षे अस्याभवसर्विण्यां समायां
सप्त कुलकरा आसन्, 'त जहा' तद्यथा—'पद्मपत्रविमलवाहण चक्षुमजसम
चउत्थमभिचदे । तथा य पसणईण मरुदेवे चेव नामी य । प्रथमोऽप्रविमलवाह
नश्चक्षुप्मान यश्चोमान चतुर्थाऽमिषन् । ततश्च प्रसेनजित् मरुदेवमेव नाभिषा ॥३॥
'एतस्मिं सप्तह कुलगराणं' एतेषां खलु सप्तानां कुलगराणां 'सप्त माहिया
होत्या' सप्तमार्गा आमन, 'त जहा' तद्यथा—'चद्रजसा चंद्रकटा सुरुचपट्टिरुच
चक्षुष्कता य । सिरिकता मरुदेवीकुलगरपत्नीणं नामाई ॥४॥' चन्द्रयशश्चन्द्र
कान्ता सुरुपा प्रतिरूपा चक्षुष्कान्ता च । श्रीकान्ता मरुदेवी कुलकरपत्नीनां
नामानि ॥४॥ घ १९६ ॥

मृगम्—जम्बुद्वीपे ण दीवे भारहे वासे इमीसे ण ओसिप्पणीए
चउवीस तित्थगराण पियरो होत्था, त जहा—णाभी य जियसत्तू य
(जियारी सवरे इय । मेहे घरे पइट्टे य, महसेणे य खत्तिए ॥५॥
सुग्गीव दढरहे यिण्हू वसुपुञ्जे य खत्तिये । कयवम्मा सीहसेणे भाणू
विस्ससेणे इय ॥६॥ सूरु सुदसणे कुमे सुमिच्चविजए समुहविजए य ।
राया य आससेणे य सिद्धत्थे चिय खत्तिए ॥७॥ उदितोदियकुलवसा
विसुद्धवसा गुणेहि उव्वेया । तित्थप्पवत्तयाण एए पियरो जिण
घराण ॥८॥ जम्बुद्वीपे ण दीवे भारहे वासे इमीसे ण ओसिप्पणीए

हुए हैं उनके नाम ये हैं—प्रथम विमल वाहन, द्वितीय चक्षुप्मान् वृत्तोय
यश्चोमान चतुर्थ अमिषन् इनके बाद पाँचव प्रसेनजित् छठवें मरुदेव और
मानवें नमिराया इन सात कुलकरों की सात स्त्रीयां थीं । उनके नाम इस
प्रकार स हैं—चद्रपशा १ चद्रकान्ता २ सुरुपा ३ प्रतिरूपा ४ चक्षुष्कान्ता ५ श्री
कान्ता ६ और मरुदेवी ७ ये कुलकरों की पत्नियों के नाम हैं ॥ सू० १९६ ॥

जीकाजर्मा सात कुलकर । यथा छ तेमना नाम आ प्रभावे छ—(१) विमलवाहन,
(२) चक्षुप्मान् (३) यश्चोमान् (४) अमिषन्, (५) प्रसेनजित्, (६) मरुदेव
अने (७) नमिराया ते सात कुलकरानी सात स्त्रीजोनां नाम नीक्षे प्रभावे छ—
(१) चद्रपशा (२) चद्रकान्ता (३) सुरुपा (४) प्रतिरूपा, (५) चक्षुष्कान्ता,
(६) श्रीकान्ता अने (७) मरुदेवी ॥ सू १९६ ॥

चउवीसं तित्थगराणं मायरो होत्था, तं जहा—मरुदेवी विजयासेणा
[सिद्धत्था संगला सुसीमा या पुहवी लक्खणा रामा नंदा विण्हूजया
सामा॥९॥ सुजसा सुव्वयअइरा सिरियादेवी पभावई पउमा । वप्पा
सिवा य वामा तिसला देवी य जिणमाया ॥१०॥ ॥सू. १९७॥

शब्दार्थ—(जंबुद्वीपे णं दीवे भारहे वासे इमीसे णं ओसप्पिए चउवीसं तित्थ
गराणं पियरो होत्था) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षेऽस्यामवसर्पिण्यां चतुर्वि-
ंशतिस्तीर्थकराणां पितर आसन्—इमं जंबूद्वीप नामके द्वीप में भारतवर्ष मे इस
अवसर्पिणी काल में चौबीस तीर्थकरों के पिता हुए हैं। (तं जहा) तद्यथा—
उनके नाम इस प्रकार से हैं—[णामी य) नामि१, (जियसत्तू य) जितशत्रु
अ—जितशत्रु२ (जियारी) जितरिः—जितारि३, (सवरे इय) सवर इति—
संवर४, (मेहे धरे) मेघो धरः—मेघ५, धर६, (पड्डे य) प्रतिष्ठ—प्रतिष्ठ७
(महासेणे य) महासेन८ (खत्तिए) क्षत्रियः—क्षत्रिय (सुग्गीवे) सुग्गीवो—
सुग्गीव९ (दढरहे) दढरथो—दढरथ१०, (विण्हू) विण्णुः—विण्णु११ (वसु-
पूज्जे य) वसुपूज्यश्च—वसुपूज्य१२ (खत्तिए) क्षत्रियः—क्षत्रिय, (कयवम्मा)
कृतवर्मा—कृतवर्मा१३, (सीहसेणे) सिंहसेनो—सिंहसेन१४ (भाणू) भालुः—
भानु, विस्मसेणे इय) विश्वसेन इति—विश्वसेन१५, (सुरे, मुदंसणे, कुंभे
सुमित्त विजए समुद्विजए य) सुर सुदर्शनः कुम्भः सुमित्रो विजयः समुद्र-
विजयश्च—सुर१६ सुदर्शन१७ कुंभ१८ सुमित्र२० विजय२१ समुद्रविजय२२

शब्दार्थ—जंबुद्वीपे ण दीवे भारहे वासे इमीसे णं ओसप्पिणी चउवीसं
तित्थगराणं पियरो होत्था) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षेऽस्यामवसर्पिण्यां चतु-
र्विंशतिस्तीर्थकराणां पितर आसन्—आ जंबूद्वीप नामना द्वीपमा भारतवर्षमा
आ अवसर्पिणीकाणमा २४ तीर्थकरे ना पिता थय गया छे (तं जहा) तद्यथा—
तेमना नाम आ प्रमाणे छे—(णामी य) (१) नलि, (जियसत्तू य) (२) जितशत्रु,
(जियारी) (३) जितारि, (सवरेइय) (४) सवर, (मेहे धरे) (५) मेघ,
(६) धर, (पड्डेय) (७) प्रतिष्ठ, (महासेणे य) (८) महासेन (खत्तिए) (९),
क्षत्रिय, (सुग्गीवे) सुग्गीव, (दढरहे) (१०) दढरथ, (विण्हू) (११) विण्णु (वामुपु-
ज्जेय) (१२) वामुपूज्य, (खत्तिए कयवम्मा) (१३) क्षत्रिय कृतवर्मा, (सीहसेणे)
सिंहसेनो (१४) सिंहसेन, (भाणू) (१५) भालु (विस्मसेणे इय) (१६) विश्वसेन,
(सुरे, मुदंसणे,, कुंभे, सुमित्त विजए समुद्विजए य) (१७) सुर, (१८)
सुदर्शन, (१९) कुंभ, (२०) सुमित्र, (२१) विजय, (२२) समुद्रविजय, (रायाय

(राया य आससेणे य सिद्धयेषिय स्वशिप) राजा च अश्वसेन मिदार्थ
इतिष क्षत्रिय-राजा अश्वसन२३ और क्षत्रियसिद्धार्थ२४। (तित्यप्पवरा
याग जिणवराण) तीर्थप्रवर्तकानाम् जिनवराणाम्-तीर्थ वर्मक जिनवरो के
(एण पिघरा) एते पितरो-ये पिता (उदिमोदिय-कुलवत्सा) उदिमोदित
कुलवत्सा-उशरोशर उत्कर्षमा को प्राप्त हुए कुलस्थ वंश वाले थे। (विमु
द्वयसा गुणेहि उववेया) विमुद्वयसा गुणैरुपेताः-मातृपितृसंघी यन् की
निर्मलता से युक्त थे। सम्पादार्थानादि तथा दयादान आदि सद्गुणों स
संपन्न थे। जंबुद्वीपे ण दीर्घे भारहे वासे इमीसे ओसपिणीण) जम्बूद्वीपे
मल्ल द्वीपे भारते वर्षेऽप्यामवसर्पिण्याम्-जम्बूद्वीप नाम के इस द्वीप में
भारतवर्ष में इस अवसर्पिणी काल में(चउचीम तित्यगराण मायरो होत्वा)
चतुर्विंशति तीर्थकराणां मातर आसम्-चौबीस तीर्थकरों की माताएँ हुई
हैं (न जहा) तज्या-जो इस प्रकारहैं-(मरुदेवी, बिजया-सेना सिद्धया,
मगया, सुसीमा य, पुरवी, मकम्बणा, रामा, नंदा, विण्हू जया, सामा)
मरुदेवी बिजया सेना सिद्धया मल्ला सुसीमा च पृथिवी लक्ष्मणा रामा
नंदा विष्णुजया इयामा-मरुदेवी१, बिजया२ मना३ सिद्धया४ मगया५
सुसीमा६ पृथिवी७ लक्ष्मणा८ रामा९ नंदा१० विष्णु११ जया१२ इयामा१३
(सुजमा सुध्वय अह्रा ण्वीपमावई पठमा वप्पा सिघा वामा-तिसमा दवी

आससेणे य सिद्धयेषिय स्वशिप) (२३) राजा अश्वसेन अने (२४) क्षत्रिय
सिद्धार्थ (तित्यप्पवरायाग जिणवराण) तीर्थप्रवर्तकानाम् जिनवराणाम्-
तीर्थप्रवर्तक जिनवराणा (ए ण पिघरो) एते पितरो-ये पिता (उदिमोदिय
कुलवत्सा) उदिमोदित-कुलवत्सा-उशरोशर के वंश थाभला कुलवत्स्य वंश वंशाला
(विमुद्वयसा गुणेहि उववेया)विमुद्वयसा गुणैरुपेताः-मातृपितृसंघी अने पितृ-
पितृनी शिद्धार्थीयुक्त हवा सम्पादार्थानां आदितया इया, दान आदि सद्गुणैः दीर्घायु
हवा (जम्बूद्वीपे ण दीर्घे भारहे वासे इमीसे ओसपिणीण)जम्बूद्वीपे मल्ल द्वीपे
भारते वर्षेऽप्यामवसर्पिण्याम्-जम्बूद्वीप न मना आ ६ यमा आवेला भारत
वर्षमा आ अवसर्पिणी काशमां (चउचीम तित्यगराण मायरो होत्वा) चतु
र्विंशति तीर्थकराणां मातर आसम्-२४ तीर्थकरानी २४ माताएँ। यध जध छे
(नं जहा) तज्या-नेमना नाम आ प्रभावे छे-(मरुदेवी बिजया, सेना,
सिद्धया, मगया, सुसीमा य पुरवी, मकम्बणा, रामा नंदा, विण्हू, सामा)
(१) मरुदेवी (२) बिजया (३) सेना, (४) सिद्धादी, (५) मज्जा, (६) सुन मा
(७) पृथिवी, (८) लक्ष्मणा (९) रामा, (१०) नंदा, (११) विष्णु (१२) जया, (१३) इयामा

टीका—‘जंबुद्वीवे णं’ इत्यादि—‘जंबुद्वीवे णं दीवे भारहे वासे इमीसे णं ओसणिणीए चउवीसं तित्थगराणं पियरो होत्था’ जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षेऽस्याम वमर्षिणा चतुर्विंशतिस्तीर्थकराणां पितरआसन, ‘तं जहा’ तद्यथा—‘णामी य १ जियसत्तू य २ जियारी ३ सवरे इय ४ । मेहे ५ धरे ६ पइहे य ७ महासेणे य ८ खत्तिए ॥ ५ ॥’ नाभिश्च जितशत्रुश्च जितारिः संवर इति । मेघो धरः प्रतिष्ठश्च महासेनश्च क्षत्रियः ॥ ५ ॥ ‘सुग्रीव ९ दहरहे १० विण्णू ११ वसुपुज्जे य खत्तिए १२ । कयवम्मा १३ सीहसेणे १४ भाणु १५ विस्ससेणे १६ इय ॥ ६ ॥’ सुग्रीवो दहरथो विष्णुर्वसुपूज्यश्च क्षत्रियः । कृतवर्मा सिंहसेनो भानुर्विश्वसेन इति ॥ ६ ॥ ‘मूरे १७ सुदंसणे १८ कुमे १९ सुमित्र २० विजए २१ समुद्रविजए य २२ । राया य आस-सेणे य २३ सिद्धत्थेच्चिय २४ खत्तिए ॥ ७ ॥’ मुरः सुदर्शनः कुम्भः सुमित्रो विजयः

य जिणमाया) सुयगाः सुव्रता श्री देवी प्रभावती पद्मावप्रा शिवा च वामा त्रिशला देवी च जिनमातरः—सुयशा १४, सुव्रता १५, अचिरा १६, श्री १७ देवी १८ प्रभावती १९ पद्मा २० वप्रा २१ शिवा २२ वामा २३ और त्रिशला २४ ये चौबीस २४ तीर्थकरो की माताएँ है ॥ सू० १९७ ॥

टीकार्थ—‘जंबुद्वीवे णं दीवे’ इत्यादि—इस जंबूद्वीप नामके प्रथम द्वीप में भारत वर्ष में इस अवसर्पिणी काल में चौबीस तीर्थकरो के पिता हुए हैं। उनके नाम इस प्रकार से हैं—नाभि १ जितशत्रु २ जितारि ३ संवर ४ मेघ ५ धर ६ प्रतिष्ठ ७ महासेन ८ क्षत्रिय सुग्रीव ९ दहरथ १० विण्णु ११ वसुपूज्य १२ क्षत्रिय कृतवर्मा १३ सिंहसेन १४ भानु १५ विश्वसेन १६ मुर १७ सुदर्शन १८ कुम्भ १९ सुमित्र २० विजय २१ समुद्रविजय २२ राजा

(सुजया सुव्वय, अडरादेवी प्रभावह परमा-वप्पा सिवा य वामा तिसला देवी य जिणमाया) (१४) सुयशा, (१५) सुव्रता, (१६) अचिरा, (१७) श्री, (१८) देवी (१९) प्रभावती, (२०) पद्मा, (२१) वप्रा, (२२) शिवा, (२३) वामा अने त्रिशला चौबीस तीर्थ करेनी २४ माताओंना नाम उपर सुजय छे ॥ सू १६७ ॥

टीकार्थ—“जंबुद्वीवे णं दीवे” इत्यादि—आ जंबूद्वीपमां आवेला आ भारतवर्षमा आ अवसर्पिणीकाणमा थयेला २४ तीर्थकरेना पिताना नाम आ प्रमखे (१) नाभि, (२) जितशत्रु (३) जितारि, (४) संवर, (५) मेघ (६) धर (७) प्रतिष्ठ, (८) महासेन, (९) क्षत्रिय सुग्रीव, (१०) दहरथ, (११) विण्णु (१२) वसुपूज्य, (१३) कृतवर्मा, (१४) सिंहसेन, (१५) भानु, (१६) विश्वसेन (१७) मुर १८) सुदर्शन (१९) कुम्भ, (२०) सुमित्र, (२१) विजय, [२२] समुद्रविजय (२३) राजा विश्वसेन अने

(राया य आससेणे य सिद्धत्येषिय स्वशिष्टे) राजा च अश्वसेन मिदार्थं इति च क्षत्रिय-राजा अश्वसेन २३ और क्षत्रियसिद्धार्थ २४। (तित्यप्पवत्ता याग जिणवराण) तीर्थप्रवर्तकानाम् जिनवराणाम्-तीर्थं वर्तकं जिनवरों के (ए ए पियरो) एते पितरो-ये पिता (उदितोदिय-कुलवत्सा) उदितोदित कुलवंशा-उत्तरोत्तर उत्कर्षणा को प्राप्त हुए कुलरूप वंश वाले थे। (विमुद्धवत्ता गुणेहि उववेया) विमुद्धवत्ता गुणैरुपयेता-मातृपितृसम्बन्धी वंश की निर्मलता से युक्त थे। सम्पददर्शनादि तथा दयादान आदि सदगुणों से संपन्न थे। जंबुद्वीपे ष दीवे भारहे वासे इमीसे ओसपिणीए) जम्बूद्वीपे स्वलु द्वीपे भारते वर्षेऽस्यामवसर्पिण्याम्-जम्बूद्वीप नाम के इस द्वीप में भारतवर्ष में इस अवसर्पिणी काल में (वउबीस तित्यगराण मायरो होत्या) चतुर्विंशति तीर्थकराणां मातर आसन्-चौबीस तीर्थकरों की माताएँ हुई हैं (न जहा) तद्यथा-जो इस प्रकार हैं-(मरुदेवी, विजया-सेना सिद्धत्या, मगला, सुसीमा य, पुडवी, लक्ष्मणा, रामा, नंदा, विष्णु जया, सामा) मरुदेवी विजया सेना सिद्धार्थ मगला सुसीमा य पृथिवी लक्ष्मणा रामा नंदा विष्णुजया इयामा-मरुदेवी १, विजया २ सेना ३ सिद्धार्थ ४ मगला ५ सुसीमा ६ पृथिवी ७ लक्ष्मणा ८ रामा ९ नंदा १० विष्णु ११ जया १२ इयामा १३ (सुजस्ता सुव्वय अइरा देवीपभावई पडमा ण्णा सिवा वामा-तिसवा दवी

आससेणे य सिद्ध त्येषिय स्वशिष्टे) (२३) राजा अश्वसेन अने (२४) क्षत्रिय सिद्धार्थ (तित्यप्पवत्तायाग जिणवराण) तीर्थप्रवर्तकानाम् जिनवराणाम्-तीर्थप्रवर्तक जिनवराना (ए ए पियरो) एते पितरो-ये पिता (उदितोदिय कुलवत्सा) उदितोदित-कुलवत्सा-उत्तरोत्तर के रूप में प्राप्त हुए कुलरूप वंश वाले थे। (विमुद्धवत्ता गुणेहि उववेया) विमुद्धवत्ता गुणैरुपयेता-मातृपितृसम्बन्धी अने पितृ वंश की विमुद्धवत्ता गुणैरुपयेता अने मातृपितृसम्बन्धी अने पितृ वंश की निर्मलता से युक्त थे। सम्पददर्शनादि तथा दयादान आदि सदगुणों से संपन्न थे। जंबुद्वीपे ष दीवे भारहे वासे इमीसे ओसपिणीए) जम्बूद्वीपे स्वलु द्वीपे भारते वर्षेऽस्यामवसर्पिण्याम्-जम्बूद्वीप नाम के इस द्वीप में भारतवर्ष में इस अवसर्पिणी काल में (वउबीस तित्यगराण मायरो होत्या) चतुर्विंशति तीर्थकराणां मातर आसन्-२४ तीर्थकरानी २४ माताओं वर ४४ थे, (तं प्रहा) तद्यथा-नेमना नाम आ प्रभावे थे-(मरुदेवी विजया, सेना, सिद्धत्या, मगला, सुसीमा य पुडवी, लक्ष्मणा, रामा नंदा, विष्णु, सामा) (१) मरुदेवी (२) विजया, (३) सेना, (४) सिद्धार्थ, (५) मगला, (६) सुसीमा, (७) पृथिवी (८) लक्ष्मणा, (९) रामा (१०) नंदा (११) विष्णु (१२) जया (१३) इयामा

मूलम्--जंघुद्दीवे णं दीवे भारहे वासे इमीसे णं ओसप्पिणीए
चउवीसं तित्थगरा होत्था, तं जहा-उसभ^१, अजिय^२, संभव^३,
अभिनंदण^४, सुमइ^५, पउमप्पह^६, सुपास^७, चंदप्पह^८, सुविहिपु-
प्फदंत^९, सीयल^{१०}, सिजंस^{११}, वासुपुज्ज^{१२}, विमल^{१३}, अनंत^{१४},
धम्म^{१५}, संति^{१६}, कुंथु^{१७}, अर^{१८}, मल्लि^{१९}. मुनिसुव्वय^{२०},
णमि^{२१}, णेमि^{२२}, पास^{२३}, वड्डमाणो^{२४} य । एएसिं चउवीसाए
तित्थगराणं चउवीसं पुव्वभवया णामधेया होत्था । तं जहां-पढ-
मेत्थ वड्डणाभे विमले तह विमलवाहणे चेव । ततो य धम्मसीहे
सुमित तह धम्ममित्ते य ॥११॥ सुंदरबाहु तह दीहबाहु जुगबाहु
लट्ठवाहु य । दिण्णे य इंददत्ते सुंदर माहिंदे चेव ॥१२॥ सीहरहे
मेहरहे रुप्पि य सुंसणे य वोद्धव्वे । ततो य नंदणे खल्लु सीहगिरी
चेव वीसइमे ॥१३॥ अदीणसत्तु संखे सुदंसणे नंदणे य वोद्धव्वे ।
ओसप्पिणीए एए तित्थगराणं तु पुव्वभवा ॥१४॥ एएसिं चोवीसाए
तित्थगराणं चोवीसं सीयाओ होत्था, तं जहा-सीया सुदंसणा सुप्पभा
य सिद्धत्थ सुप्पसिद्धा य । विजया य वेजयंती जयंति अपराजिया
चेव ॥१५॥ अरुणप्पभ चंदप्पभ सूरप्पभ अग्निसप्पभा चेव । विमला
य पंचवण्णा सागरदत्ता य णागदत्ता य ॥१६॥ अभय निव्वुयकरा
मणोरमा तह मणोरहा चेव । देवकुरुत्तरकुरा विसाल चंदप्पभा
सीया ॥१७॥ एयाओ सीयाओ सव्वेसि चेव जिणवराणं । सव्वजग-

१५, अचिरा^{१६} श्री^{१७} देवी^{१८} प्रभावती^{१९} पद्मा^{२०} वप्रा^{२१} शिवा^{२२}
वामा^{२३} और त्रिशला^{२४} ये चौबीस तीर्थकरों की^{२४} माताएँ हैं ॥सू० १९७॥

श्री, (१८) देवी, (१९) प्रभावती, (२०) पद्मा, (२१) वप्रा, [२२] शिवा, (२३) वामा
अने (२४) त्रिशला ये प्रमाणे २४ तीर्थंक्षेत्राणी मातायोगा नाम होता ॥मृ १६७॥

समुद्रपिजपश्च । राभा च अश्वसेनः सिद्धाय इति च क्षत्रियः॥७॥ 'उदितोदि
यकुम्बसा त्रिसुदक्षसा गुणेहि उवषेया । तित्यप्यवचयाण एए पियरो जिणव
राण॥८॥' उदितोदितकुम्बसा त्रिसुदक्षसागुणैरुपपेता । तीर्थप्रवर्तकानामते पितरा
जिनवराणाम् ॥ 'उदितोदियकुम्बसा' उदितोदितकुम्बसाः=उदितोदित =उत्तरा
जाम्बवन्तः प्राप्तः कुम्बवंशो येषां ते तथोक्ताः, तथा-'त्रिसुदक्षसा त्रिसुदक्षसाः-
त्रिसुदक्ष=निर्मल, वक्ष-मातृपितृवंशो येषां ते तथोक्ताः, तथा-'गुणेहि उवषेया
गुणैरुपपेता =गुणयुक्ता 'एए' एते नाम्नाद्वय 'तित्यप्यवचयाणं' तीर्थप्रवर्तकानां
जिनवराणाम् जिनवराणाम् ऋषमादीनां 'पियरो' पितरो विज्ञेयाः इति भाष ।
जम्बुद्वीपे ण द्वीप मारहे वामे इमीसे ओसपिणीए' जम्बुद्वीपे खल्व द्वीप मारते
वर्षेऽभ्यामवमर्षिण्याम्, 'वठवीस तित्यगराण भापरो होस्या' चतुर्विंशति तीर्थ
कराणां मातर आसन, 'त जहा' तद्यथा- मरुदेवी-विजया सप्ता सिद्धया मंगला
सुसीमा य । पुद्गलील्लमणा-रामा नंदाणिहू जया सामा॥९॥ सुमसा सुम्वयअइरा
दवी पमावई पउमा । वप्पा सिवा य वामानिसल्लादेवीय जिणमाया ॥१०॥
मरुदेवीविजया सेनासिद्धायामङ्गला मसीमा च । पृथिवी लक्ष्मणा रामा नंदा
विष्णुर्जया इयामा ॥१॥ सुयशा सुयसा अचिरा भीदेवी प्रमावतीपमा । वमा
शिवा च वामा चिन्नला देवी च जिनमातर ॥१॥ १९७॥

अश्वसेनः २ और क्षत्रिय सिद्धार्थ २४। तीर्थप्रवर्तक जिनवरों के य पिता
उत्तरारोत्तर उत्कर्षता को प्राप्त हुए कुलरूपवश चाहें थे। मातृपितृ मर्षी
धन की निर्मलता से युक्त थे। सम्यग्दर्शनार्थ तथा दयादान आदि सद्गुणों
से संपन्न थे। जम्बुद्वीप नामके इस द्वीप में भारतवर्ष में इस अवस
र्षिकाल में तीर्थेकरों की चौबीस मातारें हुई हैं। व इस प्रकार से हैं-
मरुदेवी १ विजया २, सेना ३ सिद्धार्थ ४ मंगला ५ सुसीमा ६ पृथिवी ७
लक्ष्मणा ८ रामा ९ नंदा १० विष्णु ११ जया १२ इयामा १३ सुयशा १४, सुमसा

[२४] क्षत्रिय सिद्धार्थ तीर्थप्रवर्तक जिनवरोंने ते पिता उत्तरारोत्तर उत्कर्षता प्राप्त
हुए वंशवागा हुता अने मातृपितृ अने पितृपुत्रानी त्रिसुदक्षसा मुक्त हुता सम्यक्
दर्शन आदि तथा दयादान आदि सुगुणोंवा हुता आ जम्बुद्वीपमा आवेला भारत
वर्षमा आ अवसरिणी कालमा २४ तीर्थकरानी ने २४ मातारो हुता तेमना
नाम आ प्रमाणे छे-(१) मरुदेवी (२) विजया, (३) सेना (४) सिद्धार्थ (५)
मंगला, (६) सुसीमा (७) पृथिवी (८) लक्ष्मणा (९) रामा (१०) नंदा, (११)
विष्णु (१२) जया, (१३) इयामा (१४) सुयशा (१५) सुमसा (१६) अचिरा (१७)

मूलम्--जंघुदीवे णं दीवे भारहे वासे इमीसे णं ओसप्पिणीए
चउवीसं तित्थगरा होत्था, तं जहा-उसभ१, अजिय२, संभव३,
अभिनंदण४, सुमइ५, पउमप्पह६, सुपास७, चंदप्पह८, सुविहिपु-
प्फदंत९, सीयल१०, सिजंस११, वासुपुज१२, विमल१३, अनंत१४,
धम्म१५, संति१६, कुंथु१७, अर१८, मल्लि१९. मुनिसुव्वय२०,
णमि२१, णेमि२२, पास२३, बड्डमाणो२४ य । एएसिं चउवीसाए
तित्थगराणं चउवीसं पुव्वभवया णामधेया होत्था । तं जहा-पढ-
मेत्थ बड्डरणामे विमले तह विमलवाहणे चेव । तत्तो य धम्मसीहे
सुमित तह धम्ममित्ते य ॥११॥ सुंदरवाहु तह दीहवाहु जुगवाहु
लट्ठवाहु य । दिण्णे य इंददत्ते सुंदर माहिंदे चेव ॥१२॥ सीहरहे
मेहरहे रुप्पि य सुंसणे य वोद्धव्वे । ततो य नंदणे खल्लु सीहगिरी
चेव वीसइमे ॥१३॥ अदीगसत्तु संखे सुदंसणे नंदणे य वोद्धव्वे ।
ओसप्पिणीए एए तित्थगराणं तु पुव्वभवा ॥१४॥ एएसिं चोवीसाए
तित्थगराणं चोवीसं सीयाओ होत्था, तं जहा-सीया सुदंसणा सुप्पभा
य सिद्धत्थ सुप्पसिद्धा य । विजया य वेजयंती जयंति अपराजिया
चेव ॥१५॥ अरुणप्पभ चंदप्पभ सूरप्पभ अग्निसप्पभा चेव । विमला
य पंचवण्णा सागरदत्ता य णागदत्ता य ॥१६॥ अभय निव्वुयकरा
मणोरमा तह मणोरहा चेव । देवकुरुत्तरकुरा विसाल चंदप्पभा
सीया ॥१७॥ एयाओ सीयाओ सव्वेसि चेव जिणवराणं । सव्वजग-

१५, अचिरा१६ श्री१७ देवी१८ प्रभावती१९ पद्मा२० वप्रा२१ शिवा२२
वामा२३ और त्रिशला२४ वे चौवीस तीर्थकरों की२४ माताएँ हैं ॥सू० १९७॥

श्री, (१८) देवी, (१९) प्रभावती, (२०) पद्मा, (२१) वप्रा, [२२] शिवा, (२३) वामा
अने (२४) त्रिशला ये प्रमाणे २४ तीर्थ क्षेत्रांनी माताओंना नाम होता ॥अ० १९७॥

वच्चल्लाण सव्वोउगसुभाए छायाए ॥१८॥ पुर्व्वि ओक्खित्ता माणु
 सेहि साहुं रोमकूपहिं । पच्छा वहति सीय असुरिंद सुरिंद नागिंद ।
 ॥१९॥ चलचवलकुडलधरा सच्छद विउविया भवणधारी । सुर
 असुरवदियाण वहति सीय जिणिंदाण ॥२०॥ पुरओ वहतिदेवा नागा
 पुण दाहिणम्मि । पच्चत्थिमेण असुरा गुरुला पुण उत्तरे पासे ॥२१॥
 उसभो य विणीयाए वारवईए भरिट्टनेमी । अवसेसा तित्थयरा
 निक्खत्ता जम्मभूमीसु ॥२२॥ सव्व वि एगदूसेण णिग्गया जिणवरा
 चउव्वीस । ण य णाम अण्णलिंगे ण य गिहिंलिंगे कुलिंगे य ॥२३॥
 एको भगव वीरो पासो मल्ली य तीहि तीहि सएहिं । भगव पि
 वासुपुजो छहि पुरिससएहिं णिक्खतो ॥२४॥ उग्गाण भोगाण
 राइण्णाण य खत्तियाण य । चउहि सहस्सेहिं उसभो सेसा उ
 सहस्स परिवारा ॥२५॥ सुमइत्थ णिच्चभत्तण णिग्गओ वासुपुज
 चोत्थेण । पासो मल्ली य अट्टमेण सेसा उ छट्ठेण ॥२६॥ सू० १९८॥

व्याख्यार्थ—(जम्बूद्वीपे णं दीवे) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे—जम्बूद्वीप नामक
 द्वीप में (भारहे वासे) भारते वर्षे भारत वर्ष (इमीसेण आमप्पिणीए)
 अस्पामवसर्पिणां इम अवसर्पिणी काल में (चउवीसं तित्थगरा होत्था)
 चतुर्विंशतिस्तीर्थकरा आसन्—वीथीस तीर्थकर हुए हैं (तं जहा) तद्वया—
 उनके नाम ये हैं (उत्तम-अजिय-संमय-अभिन्दण-सुमइ-पउमप्पइ
 सुपास-चइप्पइ, सुविहि-पुप्फदंत-सीयस-सिग्गस-वासुपुज-विमल-अनंत

अनंत—(जम्बूद्वीपेण दीवे) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे—जम्बूद्वीप नामक
 द्वीपमा (भारहे वासे) भारते वर्षे—भारतवर्षमां (इमीसेण ओसप्पिणीए) अस्या
 मवसर्पिण्याम्—आ अवसर्पिणी कालमां (चउवीस तित्थगरा होत्था) चतुर्विंशति
 स्तीर्थकरा आसन्—वीथीस तीर्थकर जथा ॥ (तं जहा) तेभन्ना नाम आ
 प्रभावे ॥ (उत्तम) अजिय संमय अभिन्दण सुमइ पउमप्पइसुपासचइ
 प्पइ, सुविहि पुप्फदंत सीयस सिग्गस वासुपुज विमल आत्त धम्म मति

धम्म-संतिकुथु-अर-मल्लि-मुनिसुव्वय णमि णेमि पासवड्ढमाणो य) ऋपभः
 अजितः, संभवः अभिनन्दनः सुमतिः पद्मप्रभः सुपार्श्वः चन्द्रप्रभः सुविधिः
 पुष्पदन्तः, गीतलः श्रेयांसः वासुपूज्यः विमलः अनन्तः धर्मः ज्ञान्तिः
 कुन्धुः अरः मल्लिः मुनिसुव्वतः नमिः नेमिः पार्श्वः, वर्द्धमानश्च-ऋपभः,
 अजितः, संभवः, अभिनन्दनः, सुमतिः, पद्मप्रभः, सुपार्श्वः, चन्द्रप्रभः,
 सुविधि-पुष्पदन्तः, गीतलः, श्रेयांसः, वासुपूज्यः, विमलः, अनन्तः, धर्मः, ज्ञान्तिः
 १४, धर्मः १५, ज्ञान्तिः १६, कुन्धुः १७ अरः १८, मल्लिः १९, मुनिसुव्वतः २० नमिः
 २१ नेमिः २२ पार्श्वः २३ और वर्द्धमानः २४। (एणसिं चउवीसाण तित्थगाराणं
 चउवीसं पुव्वभवया णामधेया होत्था) एतेषां चतुर्विंशतेस्तीर्थकराणां
 चतुर्विंशतिः पूर्वभवकानि नामधेयानि आसन् चौवीस तीर्थकरों के पूर्वभव
 संबंधीनाम् चौवीस थे (तं जहा) तद्यथा-वे इसप्रकार से हैं-(पढमेत्थ वड-
 रणामे विमले तह विमलवाहणे चेव) प्रथमोऽत्र वज्रनाभो विमलस्तथा
 विमलवाहनश्चैव-वज्रनाभः, विमलः विमलवाहनः (धम्मसीहे) धर्मसिंहः
 धर्मसिंहः (सुमिच्च) सुमित्रः-सुमित्रः, । (धम्ममित्ते य) धर्ममित्रश्च-धर्म-
 मित्रः, (सुंदरवाहुतहदीहवाहु जुगवाहु लड्ढवाहु य) सुन्दरवाहुस्तथा दीर्घवाहुः
 जुगवाहुः लष्टवाहुश्च-सुंदरवाहुः दीर्घवाहुः जुगवाहुः लष्टवाहुः १० (दिण्णे

कुन्धु अर मल्लि मुनिसुव्वय णमि णेमि पासवड्ढमाणो य) ऋपभः, अजितः,
 संभवः, अभिनन्दनः, सुमतिः, पद्मप्रभः, सुपार्श्वः, चन्द्रप्रभः, सुविधिः,
 पुष्पदन्तः, गीतलः, श्रेयांसः, वासुपूज्यः, विमलः, अनन्तः, धर्मः, ज्ञान्तिः,
 कुन्धुः, अरः, मल्लिः, मुनिसुव्वतः, नमिः, नेमिः, पार्श्वः, वर्द्धमानश्च-()
 ऋपभ, (२) अजित, [३] संभव, (४) अभिनन्दन, (५) सुमति, (६) पद्मप्रभ,
 (७) सुपार्श्व, (८) चन्द्रप्रभ (९) सुविधिपुष्पदन्त, [१०] गीतल, (११) श्रेयांस, (१२)
 वासुपूज्य, [१३] विमल, (१४) अनन्त, (१५) धर्म, [१६] ज्ञान्ति, (१७) कुन्धु,
 (१८) मल्लि, (१९) अर, (२०) मुनिसुव्वत, (२१) नमि, (२२) नेमि, (२३) पार्श्व,
 अने (२४) वर्द्धमान-(एणसिं चउवीसाण तित्थगाराणं चउवीसं पुव्वभवया णामधेया
 होत्था) एतेषां चतुर्विंशतेस्तीर्थकराणां चतुर्विंशतिः पूर्वभवकानि नामधेयानि
 आसन्-ते तीर्थकरानां पूर्वभवना चौवीस नामे (तं जहा) ते आ प्रमाणे हुता
 (पढमेत्थ वड्डरणामे विमले तह विमलवाहणे चेव) प्रथमोऽत्र वज्रनाभो विमल
 स्तथा विमलवाहनश्चैव-(१) वज्रनाभ, (२) विमल, (३) विमलवाहन, (धम्म-
 सीहे) धर्मसिंहः-(४) धर्मसिंह, (५) (सुमिच्च) सुमित्र, (धम्ममित्ते य)
 धर्ममित्रश्च (६) धर्ममित्र, (सुंदरवाहुतहदीहवाहु जुगवाहु लड्ढवाहु य) सुन्दर-
 वाहुस्तथा दीर्घवाहुः जुगवाहुः लष्टवाहुश्च-(७) सुंदरवाहु, (८) दीर्घवाहु, (९)

वच्छलाण सव्वोउगसुभाय छायाए ॥१८॥ पुर्वि ओक्खित्ता माणु
 सेहि साहुं रोमकूपहिं । पच्छा वहति सीय असुरिंद सुरिंद नागिंदा
 ॥१९॥ चलचवलकुडलधरा सच्छद विउविया भवणधारी । सुर
 असुरवदियाण वहति सीय जिणिंदाण ॥२०॥ पुरओ वहतिदेवा नागा
 पुण दाहिणम्मि । पच्चत्थिमेण असुरा गुरुला पुण उत्तरे पासे ॥२१॥
 उसमो य विणीयाय वारवईय अरिट्टनेमी । अवसेता तित्थयरा
 निक्खता जम्मभूमीसु ॥२२॥ सव्व वि एगदूसेण णिग्गया जिणवरा
 चउव्वीस । ण य णाम अण्णलिंगे ण य गिहिंलिंगे कुलिंगे या ॥२३॥
 एक्को भगव वीरो पासो मल्लि य तीहि तीहि सएहिं । भगव पि
 वासुपुज्जो छहि पुरिससएहिं निक्खतो ॥२४॥ उग्गाण भोगाण
 राइण्णाण य खत्तियाण य । चउहि सहस्सेहिं उसमो सेता उ
 सहस्स परिवारा ॥२५॥ सुमइत्थ णिच्चभत्तण णिग्गओ वासुउज्ज
 चोत्थेण । पासो मल्ली य अट्टमेण सेता उ छट्ठेण ॥२६॥ सू० १९८॥

शब्दार्थ—(जंबुद्वीपे णं दीपे) जम्बूद्वीपे स्थल द्वीपे—जंबूद्वीप नामक
 द्वीप में (भारते वासे) भारते वर्षे भारत वर्ष (इमीसेण आमप्पिणीण)
 अस्यामवसर्पिण्या इम अवसर्पिणी काल में (अउवीसं तित्थयरा होत्था)
 चतुर्विंशतिस्तीर्थकरा आसन्—बीबीस तीर्थकर हुए हैं (त जहा) तबधा—
 उनके नाम ये हैं (उसम—अजिय—संभव—अभिनिवण—सुमई—पठमप्पइ
 सुपास—चंडप्पर, सुविहि—पुष्पदंत—सीयस—सिद्धजय—वासुपुज्ज—विमल—अनंत

शब्दार्थ—(जंबुद्वीपेण दीपे) जम्बूद्वीपे स्थल द्वीपे—जंबूद्वीप नामक
 द्वीपभा (भारते वास) भारते वर्षे—भारतवर्षभा (इमीसेण ओसप्पिणीण) अस्या
 मवसर्पिण्याम्—आ अवसर्पिणी कालभा (अउवीसं तित्थयरा होत्था) चतुर्विंशति
 स्तीर्थकरा अभवन् बीबीस तीर्थकर हुए जहा छे (त जहा) तबधा नाम आ
 भगवो छे (उसम) अजिय संभव अभिनिवण सुमई पठमप्पइसुपासचर
 प्पइ, सुविहि पुष्पदंत सीयस सिद्धजय वासुपुज्ज विमल आंत धम्म मति

धम्म-संतिकुथु-अर-मल्लि-सुनिसुव्वय णमि णेमि पासवड्ढमाणो य) ऋषभः
अजितः, संभवः अभिनन्दनः सुमतिः पञ्चप्रभः सुपार्श्वः चन्द्रप्रभः सुविधिः
पुष्पदन्तः, शीतलः श्रेयांसः वासुपूज्यः विमलः अनन्तः धर्मः शान्तिः
कुन्धुः अरः मल्लिः सुनिसुव्वतः नमिः नेमिः पार्श्वः, वर्द्धमानश्च-ऋषभ^१,
अजित^२, संभव^३, अभिनन्दन^४, सुमति^५, पञ्चप्रभ^६ सुपार्श्व^७ चन्द्रप्रभ^८
सुविधि-पुष्पदन्त^९, शीतल^{१०} श्रेयांस^{११}, वासुपूज्य^{१२}, विमल^{१३}, अनन्त^{१४},
धर्म^{१५}, शान्ति^{१६}, कुन्धु^{१७} अर^{१८}, मल्लि^{१९}, सुनिसुव्वत^{२०} नमि^{२१}
नेमि^{२२} पार्श्व^{२३} और वर्द्धमान^{२४}। (एएसिं चउवीसाए तित्थगराणं
चउवीसं पुव्वभवया णामधेया होत्था) एतेषां चतुर्विंशतेस्तीर्थकराणां
चतुर्विंशतिः पूर्वभवकानि नामधेयानि आसन् चौवीस तीर्थकरों के पूर्वभव
संबंधीनाम चौवीस थे (तं जहा) तद्यथा-वे इसप्रकार से हैं-(पढमेत्थ वड-
रणाभे विमले तह विमलवाहणे चेव) प्रथमोऽत्र वज्रनाभो विमलस्तथा
विमलवाहनश्चैव-वज्रनाभ^१, विमल^२ विमलवाहन^३ (धम्मसीहे) धर्मसिंहः
धर्मसिंह^४ (सुमिच्च) सुमित्रः-सुमित्र^५, । (धम्ममित्ते य) धर्ममित्रश्च-धर्म-
मित्र^६, (सुंदरवाहुतह दीहवाहु जुगवाहु लड्ढवाहु य) सुन्दरवाहुस्तथा दीर्घवाहु.
जुगवाहुः लष्टवाहुश्च-सुंदरवाहु^७ दीर्घवाहु^८ जुगवाहु^९ लष्टवाहु^{१०} (दिण्णे

कुन्धु अर मल्लि सुनिसुव्वय णमि णेमि पासवड्ढमाणो य) ऋषभः, अजितः,
संभवः, अभिनन्दनः, सुमतिः. पञ्चप्रभः, सुपार्श्व, चन्द्रप्रभाः, सुविधिः,
पुष्पदन्तः, शीतलः, श्रेयांसः, वासुपूज्यः, विमलः, अनन्तः, धर्म, शान्तिः,
कुन्धुः, अरः, मल्लिः, सुनिसुव्वतः, नमिः, नेमिः, पार्श्व, वर्द्धमानश्च-(१)
ऋषभ, (२) अजित, [३] संभव, (४) अभिनन्दन, (५) सुमति, (६) पञ्चप्रभ,
(७) सुपार्श्व, (८) चन्द्रप्रभ (९) सुविधिपुष्पदन्त, [१०] शीतल, (११) श्रेयांस, (१२)
वासुपूज्य, [१३] विमल, (१४) अनन्त, (१५) धर्म, [१६] शान्ति, (१७) कुन्धु,
(१८) अर, (१९) मल्लि, (२०) सुनिसुव्वत, (२१) नमि, (२२) नेमि, (२३) पार्श्व,
अने (२४) वर्द्धमान-(एएसिं चउवीसाए तित्थगराणं चउवीसं पुव्वभवया णामधेया
होत्था) एतेषां चतुर्विंशतेस्तीर्थकराणां चतुर्विंशतिः पूर्वभवकानि नामधेयानि
आसन्-ते तीर्थकरानां पूर्वभवना चौवीस नामे (तं जहा) ते आ प्रमाणे हुता
(पढमेत्थ वडहरणाभे विमले तह विमलवाहणे चेव) प्रथमोऽत्र वज्रनाभो विमल
स्तथा विमलवाहनश्चैव-(१) वज्रनाभ, (२) विमल, (३) विमलवाहन, (धम्म-
सीहे) धर्मसिंहः-(४) धर्मसिंह, (५) (सुमिच्च) सुमित्र, (धम्ममित्ते य)
धर्ममित्रश्च (६) धर्ममित्र, (सुंदरवाहुतह दीहवाहु जुगवाहु लड्ढवाहु य) सुन्दर-
वाहुस्तथा दीर्घवाहुः जुगवाहुः लष्टवाहुश्च-(७) सुन्दरवाहु, (८) दीर्घवाहु, (९)

य इददत्ते सुन्दर माहिंद चेव) दत्ताश्च इन्द्राय सुन्दरो माहेन्द्रयैव—दत्त ११, सुन्दर १२ माहेन्द्र १४, (सीहरह) सिंहस्था—मिहरथ ११ (मेहरहे रुपि य सुदमणे य योद्धव्ये) मेहरथ रुक्मी च सुदर्शनश्च योद्धव्य—मेहरथ १६ रुक्मी १७ सुदर्शन १८ (नदणे) नन्दन—नन्दन १९ (सीह गिरी) सिंहगिरि—सिंहगिरि २० (अदीनशत्रु सखे सुदसणे णदणे य योद्धव्ये) अदीनशत्रु शस्त्र सुदर्शना नन्दनश्च योद्धव्य—अदीनशत्रु २१ शस्त्र २२ सुदर्शन २३ और नन्दन २४ (एण ओमपिणीए तित्थगराण तु पुण्यमया) अयमर्पिण्यामेते तीर्थकराणां तु पूर्वमया—ये अयमर्पिण्यां काल के तार्थक के पूर्वमव के नाम हैं (एणमि चौवीमाण तित्थगराण चौवीम सीयाओ हो १) एतेपा वतुर्विषयतेरीरराणां वतुर्विदति शिषिका आमन्—न चतुर्विदति तीर्थकरों की चौवीम शिषिका (पाल्ख) थी (त जहा) तद्यथा—उनके नाम इस प्रकार से हैं—(मीया सुदसणा सुपमा य सिद्धित्थ सुपमिद्धा य विजया य वेजयती जयति अपराजिया चेव, अरुणप्यम चदप्यम सुरप्यमा चेव, विमया य पववणा सागरदत्ता य णागदत्ता य, अमयनिष्ठु यकरा मणोरमा तट मणोरहा चेव, वेवकुल्लत्त (फुरा विसाल चदप्यमा सिया) शिषिका सुदर्शना—सुपमाय सिद्धार्थ सुप्रसिद्धा च, विजया च वेजन्ती जयती सुप्रसिद्ध (०) वट्ठमाहु (विण्ण य इददने सुदरमाहिंदे चेव) दत्ताश्च इददत्त सुन्दरो माहेन्द्रयैव (११) दत्त [१२] सु १४ च (१३) सु १९ [१४] म डे ६ (सिंहरहे) मिहरथ—(१५) सि ६२ च (मेहरहे रुपियसुदसणे य योद्धव्ये) मेहरथ, रुक्मी च सुदर्शनश्च योद्धव्य—[१६] मे ४ च (१७) रुक्मी, [१८] सु १५ च (नदणे) (१९) न १५ च (सीहगिरि) (०) सि ६ गिरि (अदीनशत्रु सखे सुदमणे णदणे य योद्धव्ये) अदीनशत्रु शस्त्र सुदर्शना नन्दनश्च योद्धव्य—(२१) अदीनशत्रु (२२) शस्त्र (२३) सु १५ च, अने (२४) न १५ च (एण ओमपिणीए तित्थगराण तु पुण्यमया) अयमर्पिण्यामेत तीर्थकराणां तु पूर्वमया—अयमर्पिणीअणना तीर्थकराणां पूर्वमया उपदेशव नामो वता (एणमि चौवीमाण तित्थगराण चौवीम सीयाओ होत्था) एतेपां वतुर्विषयते तीर्थकराणां चतुर्विदति शिषिका आमन्—ते चौवीम तीर्थकराणां चौवीम शिषिकाचे वती (त जहा) तद्यथा—तेभनां नाम आ अभ्याये छे—(मीया सुदसणा सुपमा य सिद्धित्थसुपमिद्धा य, विजया य वेजयती जयती अपराजिया चेव, अरुणप्यम चदप्यम अग्निप्यमा चेव, विमया य पववणा सागरदत्ता य अमयनिष्ठुयकरा मणोरमा तट मणोरहा चेव देवकुल्लत्त फुरा यिताय चदप्यमा मीया) शिषिका सुदर्शना सुपमाय सिद्धार्थ सुप्रसिद्धा च,

अपराजिता चैव, अरुणप्रभा चन्द्रप्रभा सूरप्रभा चैव विमला च पञ्चवर्णा
सागरदत्ता च नागदत्ता च, अभयकरा निर्वृत्तिकरा मनोरमा तथा मनोहरा
चैव, देवकुरा-उत्तरकुरा विशाला तथा चन्द्रप्रभा नाम्नी शिविका-सुदर्शना
सुप्रभा, सिद्धार्था सुप्रसिद्धा विजया वैजयन्ती जयन्ती अपराजिता
अरुणप्रभा चन्द्रप्रभा सूरप्रभा अग्निप्रभा विमला पञ्चवर्णा,
सागरदत्ता नागदत्ता अभयकरा निर्वृत्तिकरा मनोरमा मनोहरा
देवकुरा उत्तरकुरा विशाला और चन्द्रप्रभा
(एयाओ सीयाओ सव्वेसिं चैव जिणवरिंदाण सव्वजगवच्छलाणं सव्वोउग
सुभाए छायाए) एताः शिविकाः सर्वेषामेव जिनवराणाम् सर्वजगद्वत्सलानां
सर्वकृतुक शुभया छायाया-ये शिविकाए सर्वजगत के वत्सल जिनवरों की
थीं, समस्त कृतुओं के सुखों से ये युक्त थीं, शुभ छाया से ये सब
अन्वित थीं। (पुर्व्वि) पूर्व्व-पहिले इन शिविकाओं को (रोमकूपहिं माणुसेहिं)
रोमकूपैः मानुषैः-रोमकूपयुक्त अर्थात् हर्ष से युक्त मनुष्य (साहट्टे) संहृत्य
-लाकरके (ओविस्वत्ता) अवक्षिप्ताः-उपस्थित करते हैं, अर्थात् सबसे पहिले
इन शिविकाओं को मनुष्य उठाते हैं (पच्छा) पश्चात् बाद में (असुरिंद-

विजया च वैजयन्तीजयन्ती अपराजिताचैव, अरुणप्रभा चन्द्रप्रभा सूरप्रभा
अग्निसप्रभा चैव विमला च पञ्चवर्णासागरदत्ता च नागदत्ता च, अभय-
करा निर्वृत्तिकरा मनोरमा तथा मनोहरा चैव, देवकुराविशाला तथा चन्द्रप्रभा
नाम्नी शिविका-(१) सुदर्शना, (२) सुप्रभा, (३) सिद्धार्था, (४) सुप्रसिद्धा, (५)
विजया, (६) वैजयन्ती, (७) जयन्ती, (८) अपराजिता, (९) अरुणप्रभा (१०)
चन्द्रप्रभा, (११) सूरप्रभा, (१२) अग्निसप्रभा, (१३) विमला (१४) पञ्चवर्णा,
(१५) सागरदत्ता, (१६) नागदत्ता, (१७) अभयकरा, (१८) निर्वृत्तिकर (१९) मनो-
रमा, (२०) मनोहरा, (२१) देवकुरा, (२२) उत्तरकुरा, (२३) विशाला अने (२४)
चन्द्रप्रभा (एयाओ सीयाओ सव्वेसिं चैव जिणवरिंदाणं सव्वजगवच्छलाणं
सव्वो उग सुभाए छायाए) एताः शिविकाः सर्वेषामेव जिनवराणाम् सर्व-
जगद्वत्सलानां सर्वकृतुकशुभया छायाया-समस्त जगत पर वात्सल्यभाव
गणनारा ते जिनवरानी ते शिविकाओ समस्त कृतुओना सुभधी अने शुभ
छायाधी युक्त होती। (पुर्व्वि) पूर्व्व पहले ते शिविकाओने (रोमकूपहिं माणु
सेहिं) रोमकूपः मानुषैः-हर्षधी युक्त मनुष्यो (साहट्टे) संहृत्य-लावीने
(ओविस्वत्ता) अवक्षिप्ता-तथा दाह करे छे ओटले छे-तीर्थी पहले ते शिवि
काओने मनुष्यो उपडे छे (पच्छा) पश्चात्-तथा दाह (असुरिंदहुरिंद नागिंदः

सुरिदनागिदा सीयंवहति) असुरेन्द्रसुरेन्द्रनागेन्द्राः शिषिकां वहन्ति-इम-
 शिषिकाभों को असुरेन्द्र, सुरेन्द्र और नागेन्द्र उठाते हैं। (सुरअसुरवदि-
 याण जिणिदाय चलयवलकुण्डलधरा सच्छन्दविउवियाभरणधारी) सुरासुर
 वन्दितानां जिनेन्द्राणां चलयपलकुण्डलधराः स्वच्छन्दविकुर्षिताभरण-
 धारिण-सुर और असुर से वदित उन जिनेन्द्रों की शिषिका का चलयपल
 कुण्डलधारी दब कि जो अपनी इच्छानुसार विकुर्षित आभूषणों को धारण
 करने वाले होते हैं पूर्व की तरफ आगे पहन करते हैं (उठाते)।
 (नागा पुणो दाहिणम्मि पासम्मि) नागकुमारा देवाः पुनर्दक्षिणे
 पार्श्वे नागकुमारदेव दक्षिणपार्श्व में (पच्छिमेण असुरा) पश्चिमेन
 असुरा-असुरकुमारा पश्चिमपार्श्व में (गरुडा पुण उत्तरे-पामे गहंढा
 पुनः उत्तरे पार्श्वे-और उत्तर पार्श्व में सुपर्णकुमार नाम क भवनपति
 देव उस शिषिका को वहन करते हैं। अब सुपर्ण तीर्थकरों के दीक्षा
 स्थान का वर्णन करते हैं-(उसमो य विणीयाण) ऋषभश्च विनीतायां-ऋषभ
 देव ने विनीतानगरी में दीक्षा धारण की है (अरिहवरणेमीवारवईए)
 अरिष्टनेमि द्वारावस्याम्-अरिष्टनेमि-भगवान ने द्वारवती में-दीक्षा धारण
 की है (अवसेसा तित्थयरा निष्कवसा जम्मभूमिसु) अवशेषास्तीर्थकराः

मोयवहति) असुरेन्द्र सुरेन्द्र नागेन्द्र शिषिकां वहन्ति-ते शिषिकाने असुरेन्द्र
 सुरेन्द्र अने नागेन्द्र उपाडे छे (सुरअसुरवदियाण जिणिदाय चलयवलकुण्ड-
 लधरा सच्छन्दविउवियाभरणधारी) सुरासुरवन्दितानां जिनेन्द्राणां चलयपल
 कुण्डलधरा स्वच्छन्दविकुर्षिताभरणधारिण-सुर अने असुरेधी वहित ते
 जिने होने शिषिकाने चलयपल (हालाभमान) कुण्डलधारी देवा के ने पीतानां
 धम्म प्रभावे विदुर्वित आश्रयेने भावण करता कोय छे + पूर्व तरहधी वदत
 करीने आगजने आगज आले छे (नागा पुणो दाहिणम्मि पासम्मि) नागकुमार
 देवा पुनर्दक्षिणे पार्श्वे-नागकुमारदेवा दक्षिणपार्श्वी, (पच्छिमेण असुरा)
 पश्चिमेन असुराः-असुरकुमारदेवा पश्चिम तरहधी (गरुडा पुण उत्तरे पासो)
 गरुडाः पुनः उत्तरे पार्श्वे-अने उत्तर तरहधी सुपर्णकुमारे नामना भवनपति
 देवा ते शिषिकाने उपाडे छे इवे सुपर्ण तीर्थकरों की दीक्षास्थाननु वर्णन करे छे
 (उसमो य विणीयाण) ऋषभश्च विनीतायां-ऋषभदेवे विनीता नगरीमां दीक्षा
 दीधी इती (अरिहवरणेमीवारवईए) अरिष्टनेमिः द्वारावस्याम्-अरिष्टनेमि
 भगवाने द्वारावतीमां दीक्षा अरिहारे करी इती (अवसेसा तित्थयरानिकवसा
 जम्मभूमिसु) अवशेषास्तीर्थकराः निष्कान्ता जन्मभूमिसु-भाहीना भावीस

निष्क्रान्ता जन्मभूमिसु-वाकी के वाचास २२ तीर्थकरों ने अपने २ जन्म-
स्थान में दीक्षा धारण की है। अब सूत्रकार यह कहते हैं कि किस
रीति से इन तीर्थकरों ने दीक्षा धारण की है (सर्वे वि चउव्वीस जिणवरा
एगदूसेण णिग्गया) सर्वेऽपि चतुर्विंशति जिनेन्द्रा एक दृष्येण निर्गता-
समस्त चोवीस तीर्थकरोंने एक दृष्य वस्त्र धारण करके दीक्षा धारण की
है। (णय णाम अण्णलिंगे ण य गिहिलिंगे कुलिंगे य) न च नाम अन्य
लिंगं न च गृहिलिङ्गे कुलिङ्गे च इनतीर्थकरोंने जो दीक्षा धारण की सो वे
स्थिर कल्पित आदिरूप अन्यलिङ्ग में-दीक्षित नहीं हुए, न गृहस्थरूप-
लिङ्ग में दीक्षित हुए और न शाक्यादिरूप कुलिङ्ग में ही दीक्षित-हुए
किन्तु तीर्थकर रूप में ही दीक्षित हुए। अब सूत्रकार यह प्रकट करते हैं कि
'यौन २ से, तीर्थकर कितने २ परिवार' के साथ दीक्षित हुए हैं (एको
भगवं वीरो) एकाकी भगवान् वीरः-भगवान् महावीर ने एकाकी दीक्षा
धारण की है (पासो मलीयं तिहि तिहि सएहिं) पार्श्वो मल्लिश्च त्रिभि-
स्त्रिभिः शतैः-तथा पार्श्वनाथ भगवान् और मल्लिनाथ भगवान् ने तीन
२ सौ परिवारों के साथ दीक्षा धारण की है। (भगवंपि वासुपूज्जो छहिं
पुरिससएहिं णिकं वन्तो) भगवान् वासुपूज्यो पड्डिभः पुरुषशतैः निष्क्रान्तः-भग-

तीर्थं कृते चोपातपोताना न्मन्मथानेमा दीक्षा लीधी डती, डवे सूत्रकार ओ
अतावे छे डे ते तीर्थं कृते ओ केवी रीते दीक्षा धारण करी डती (सर्वे वि चउ-
व्वीस जिणवरा एगदूसेण णिग्गया) सर्वेऽपि चतुर्विंशति जिनेन्द्रा एक
दृष्येण निर्गताः-समस्त तीर्थं कृते ओ ओड न्मन्मथस्य धारण करीने दीक्षा अगी-
कार करी डती (णयणामअण्णलिंगे ण य गिहिलिंगे कुलिंगे य) नचनाम
अन्यलिङ्गे नच गृहिलिङ्गे कुलिङ्गे च-ते तीर्थं कृते ओ स्थविरकल्पक आदिश्च
अन्यादिग्गमा दीक्षा लीधी न डती, गृहस्थरूपदिग्गमा पणु दीक्षा लीधी न डती,
शाक्यादिश्च कुदिग्गमा पणु दीक्षा लीधी न डती पणु तीर्थं करुपे न दीक्षित
थया डतां, डवे सूत्रकार ओ आत अतावे छे डे कया कया तीर्थं करे डेटला डेटला
परिवार सहित दीक्षा ग्रहण करी डती- (एको भगवं वीरो) एकाकि भगवान्
वीरः-भगवान् महावीरे ओडला न दीक्षा लीधी डती (पासो मलीयं तिहि तिहि
सएहिं) पार्श्वो मल्लिश्च त्रिभिस्त्रिभिः शतैः-तथा पार्श्वनाथ भगवाने अने
मल्लिनाथ भगवाने ३००-३०० त्रणुसो-त्रणुमेमा परिवार सहित दीक्षा ग्रहण
करी डती (भगवंपि वासुपूज्जो छहिं पुरिससएहिं णिकं वन्तो) भगवान् वासु-
पूज्यो पड्डिभिः पुरुषशतैः निष्क्रान्तः-भगव न वासपण्ये ६०० छसे पुरुषो स थे

अभिनन्दनः४, सुमतिः५, पद्मप्रभः६, सुपार्श्वः७, चन्द्रप्रभः८, सुविधिः, त्रयै-
वापरनामपुष्पदन्तः९, शीतलः१०, श्रेयांसः११, वासुपूज्यः१२, विमलः१३,
अनन्तः१४, धर्मः१५, शान्तिः१६, कुन्धुः१७, अरः१८, मल्लिः१९, सुनिसु-
व्रतः२०, नमिः२१, नेमि२२, पार्श्व२३, वर्द्धमानश्च२४। एतेषां चतुर्विंशतेस्ती-
र्थकराणां चतुर्विंशतिः पूर्वभवकानि नामधेयानि आसन्, तद्यथा—प्रथमोऽत्र वज्र-
नाभो१, विमलस्तथा२, विमलवाहनश्चैव३। ततश्च धर्मसिंहः४, सुमित्रस्तथा५,
धर्ममित्रश्च६॥११॥ सुन्दरबाहुस्तथा७, दीर्घबाहुः८, जुगबाहुः९, लघुबाहुश्च१०।
दत्तश्च११, इन्द्रदत्तः१२, सुन्दरो१३, माहेन्द्रश्चैव१४।१२॥ सिंहरथः१५, मेघ-
रथः१६, रुक्मी१७ च सुदर्शनश्च बोद्धव्यः। ततश्च नन्दनः१९ खलु सिंहगिरि-
श्चैव विंशतितमः॥१३॥ अदीनशत्रुः२१ शंखः२२ सुदर्शनो२३ नन्दनश्च२४
बोद्धव्यः। अवसर्पिण्यामेते तीर्थकराणां तु पूर्वभवाः॥१४॥ एतेषां चतुर्विंशते-

ऋषभ१, अजित२, सभव३ अभिनन्दन४, सुमति५, पद्मप्रभ६, सुपार्श्व७ चन्द्रप्रभ८
सुविधि-पुष्पदन्त९ शीतल १०, श्रेयास ११, वासुपूज्य १२, विमल १३,
अनन्त १४, धर्म १५, शान्ति १६, कुन्धु १७, अर १८, मल्लि १९ सुनि-
सुव्रत २० नमि २१ नेमि २२ पार्श्व २३ और वर्द्धमान २४। इन चौबीस
तीर्थकरों के पूर्वभव संबंधी नाम चौबीस थे। वे इस प्रकार से हैं—वज्र-
नाभ१, विमल २, विमलवाहन ३ धर्मसिंह ४ सुमित्र ५, धर्ममित्र ६,
सुन्दरबाहु ७, दीर्घबाहु ८, जुगबाहु ९, लघुबाहु १० दत्त ११, इन्द्रदत्त १२
सुन्दर १३ माहेन्द्र १४ सिंहरथ १५, मेघरथ १६ रुक्मी १७, सुदर्शन १८
नन्दन१९, सिंहगिरि२० अदीनशत्रु२१, शंख २२, सुदर्शन २३, और
नन्दन२४। ये अवसर्पिणीकाल के तीर्थकरों के पूर्वभव के नाम हैं। इन चतु-

ऋषभ, (२) अजित, (३) सभव, (४) अभिनन्दन, (५) सुमति, (६) पद्मप्रभ, (७)
सुपार्श्व, (८) चन्द्रप्रभ, (९) सुविधि-पुष्पदन्त, (१०) शीतल, (११) श्रेयास, (१२)
वासुपूज्य, (१३) विमल, (१४) अनन्त, (१५) धर्म (१६) शान्ति, (१७) कुन्धु, (१८)
अर, (१९) मल्लिनाथ, (२०) सुनिसुव्रत, (२१) नमि, (२२) नेमि, (२३) पार्श्व, अने
(२४) वर्द्धमान ये २४ तीर्थकरों के पूर्वभव के नाम हैं। इन चतुर्विंशते-
(१) वज्रनाभ, [२] विमल, (३) विमलवाहन, (४) धर्मसिंह, (५) सुमित्र, [६]
धर्ममित्र, (७) सुन्दरबाहु, (८) दीर्घबाहु (९) जुगबाहु, (१०) लघुबाहु (११) दत्त
(१२) इन्द्रदत्त, (१३) सुन्दर, (१४) माहेन्द्र, (१५) सिंहरथ, (१६) मेघरथ, (१७) रुक्मी,
(१८) सुदर्शन, (१९) नन्दन, (२०) सिंहगिरि, [२१] अदीनशत्रु, (२२) शंख, (२३)
सुदर्शन अने (२४) नन्दन, अवसर्पिणी काल के तीर्थकरों के पूर्वभव के नाम हैं।

स्तीर्थकराणां प्रवृत्तिः शिविकाभासन, तथा—‘सीया सुदंशणा’ सुदर्शनाऽभ्यास
शिविका, तथा—सुप्रमा च सिद्धार्थं सुप्रसिद्धा च । विजया च वैजयन्ती अपरा
जिता चैव ॥१५॥ अरुणप्रभा चन्द्रप्रभा सूरप्रभा अग्निसप्रभा चैव । विमला च
पञ्चवर्णा सागरदत्ता च नागदत्ता च ॥१६॥ अमयकरा निर्गतिकरा मनोरमा
तथा मनोहरा चैव । देवकुरा विशाला तथा चन्द्रप्रभा नाम्नी शिविका ॥१७॥
‘एयामो सीयाश्च’ एता शिविका सर्वपापेभ्यः निवृत्तये । सर्वभगदत्तमार्गा
सर्वशत्रुघ्न शुभया छायायाः सर्वशत्रुघ्नसप्तपदा सप्तछायाश्च भिनवराणां शिविका
मयन्तीति मातृ । ‘पुष्टि’ पूर्वे ‘रोमकूपे’ माणुसर्हि’ रोमकूपे मानुषे = सवर्षे
पुरुषेः ‘साङ्गु’ सङ्गत्य आनीत्य ‘भोक्त्रिणा’ भवसिन्धुः स्थापिताः । पश्चात्
‘सीया’ शिविकाम् ‘असुरिन्दनागिन्दा’ असुरेन्द्रसुरेन्द्रनागेन्द्रा वदन्ति ॥१९॥ चतु

विंशति तीर्थकरां कीर्तिशिविकारं (पालम्बिया) थीं । उनक नाम इस प्रकार
स हैं—सुदर्शना, १, सुप्रमा २, सिद्धार्थ ३, सुप्रसिद्धा ४, विजया ५,
वैजयन्ती ६ जयन्ति ७, अपराजिता ८, अरुणप्रभा ९, चन्द्रप्रभा १०,
सूरप्रभा ११, अग्निसप्रभा १२, विमला १३, पञ्चवर्णा १४, सागरदत्ता
१५, नागदत्ता १६, अमयकरा १७, निर्गतिकरा १८, मनोरमा, १९,
मनोहरा २०, देवकुरा २१, वस्तारकुरा २२ विशाला २३ और चन्द्र
प्रभा २४। यहां ‘सीया’ शब्द शिविका अर्थका बोधक है। ये शिविकारं
सर्वभगत के वरमल जिनवरों की थीं। समस्त ऋतुओं के सुखों से ये
युक्त थीं। शुभ छाया से ये मय अन्वित थीं। पहिले इन शिविकारों
को रोमकूप युक्त अर्थात् इर्ष से युक्त मनुष्य ला करके उपविष्टन करते
हैं—अर्थात् मय से पहिले इन शिविकारों को मनुष्य उठाये हैं। पाद
में इन शिविकारों को असुरेन्द्र, सुरेन्द्र और नागेन्द्र उठाते हैं। पाद में

प्रभादे उ ते १४ तीर्थकरांनी १५ शिविकाओं की तेभनां नाम आ प्रभादे उ-
(१) सुदर्शना (२) सुप्रमा (३) सिद्धार्थ, (४) सुप्रसिद्धा, (५) विजया (६) वैजयन्ती
(७) जयन्ती, (८) अपराजिता, (९) अरुणप्रभा (१०) चन्द्रप्रभा (११) सूरप्रभा
(१२) अग्निसप्रभा, (१३) विमला, (१४) पञ्चवर्णा, (१५) सागरदत्ता (१६) नागदत्ता
(१७) अमयकरा (१८) निर्गतिकरा, (१९) मनोरमा (२०) मनोहरा (२१) देवकुरा
(२२) वस्तारकुरा (२३) विशाला आने (२४) चन्द्रप्रभा अर्थात् “सीया” शब्दना अर्थ,
शिविका (पालम्बी) का उ ते शिविकाओं का आ अमयकरा वास्तव्य का पाल्मनारा
चिन्तनार्थानी अर्थात् त शिविकाओं सप्तपदी ऋतुओंनां सुप्रमा युक्त होती ते शुभ
छाया पाल्मनारी पदेला रोमकूप युक्त-द्वय ही युक्त मनुष्यो ते शिविकाओंने उपाडे उ
त्याद पाद असुरेन्द्र सुरेन्द्र आने नागेन्द्र ते शिविकाओंने उपाडे हैं। त्याद पाद

चपलकुण्डलधराः स्वच्छन्दविकुर्विताभरणधारिणः—स्वेच्छानुसारविकुर्वितभूषणधारिणो देवाः सुरासुरवन्दितानां जिनेन्द्राणां शिबिकां वहन्ति ॥२०॥ 'पुरओ' पुरतो देवा वहन्ति, 'नागापुणो दाहिणम्मि' पामम्मि' नागकुमारा देवाः पुनर्दक्षिणे पार्श्वे । 'पच्छिमेण असुरा' असुरकुमाराः पश्चिमे खलु वहन्ति । 'गरुलापुणउत्तरे पासे' पुनः उत्तरे पार्श्वे गरुडाः—सुपर्णकुमाराख्या भवनपतिदेवाः वहन्ति ॥२१॥ अथ तीर्थकराणां दीक्षास्थानं वर्ण्यते—'उसभो य विणीयाए' ऋषभश्च विनीतायां नगरीं निष्क्रान्तः, 'वारवईए अरिद्वरणेमी' अरिष्टनेमिभगवान् द्वारावत्याम् । 'अवसेमातिथ्यरा' अवशेषास्तीर्थकराः 'निक्खता जम्मभूमिसु' निष्क्रान्ता जन्मभूमिपु=अवशिष्टास्तीर्थकृतः स्व स्व जन्मस्थाने दीक्षां गृहीतवन्त इत्यर्थः ॥२२॥ कया रीत्या निष्क्रान्ता इत्याह—'सव्वेवि' सर्वेऽपि चतुर्विंशतिजिनेन्द्रा 'एगदूसेण' एकदूष्येण—एकं वस्त्रमादाय 'निग्गया' निर्गताः—निष्क्रान्ताः दीक्षिता इत्यर्थः,

सुर और असुर से वंदित उन जिनेन्द्रों की शिबिका से चलचपल कुंडल धारी देव कि जो अपनी इच्छानुसार विकुर्वित आभूषणों को धारण करनेवाले होते हैं पूर्व की तरफ आगे २ वहन करते हैं—अर्थात् आगे २ चलते हैं। दक्षिण पार्श्व में नागकुमार देव, पश्चिम पार्श्व में असुरकुमार, और उत्तर पार्श्व में सुपर्णकुमार नाम के भवनपतिदेव उस शिबिका को वहन करते हैं—अब सूत्रकार तीर्थकरों के दीक्षास्थान का वर्णन करते हैं—ऋषभदेव ने विनीता नगरी में दीक्षा धारण की है। अरिष्टनेमि भगवाने द्वारावती में दीक्षा धारण की है। बाकी के बाईस २२ तीर्थकरों ने अपने २ जन्मस्थान में दीक्षा धारण की है। अब सूत्रकार यह कहते हैं कि किस रीति से इन तीर्थकरों ने दीक्षा धारण की है। समस्त चौबीस तीर्थकरों ने एक दूष्यवस्त्र धारण कर दीक्षा धारण की है। इन तीर्थकरों ने जो दीक्षा धारण की सो वे स्थवि-

पोतानी छच्छनुसार विकुर्वित आभूषणोने धारणकरनार, अलखपल कुंडलधारी देवा; सुर अने असुरो द्वारा वदाना येवा ते जिनेन्द्रोनी शिबिकाओने पूर्वोनी तरक्ष्थी वहन करे छे, दक्षिण तरक्ष्थी नागकुमार देवा, पश्चिम तरक्ष्थी असुरकुमार देवा अने उत्तर तरक्ष्थी सुपर्णकुमार नामना भवनपति देवा ते शिबिकाओने वहन करे छे छे सूत्रकार तीर्थ करेना दीक्षास्थानोना वस्त्र न करे छे—ऋषभदेव विनीता नगरीमा, अने अरिष्टनेमि भगवाने द्वारावती नगरीमा दीक्षा अंगीकार करी छती बाकीना बाबीस तीर्थ करेओ पोतपोताना जन्मस्थानोमां दीक्षा लीधी छती छे सूत्रकार ओ अतावे छे के ते तीर्थ करेओ देवी रीते दीक्षा ग्रहण करी छती—समस्त चौबीसे चौबीस—तीर्थ करेओ ओक ओक दूष्य वस्त्र धारण करेने दीक्षा ग्रहण करी

न च नाम-नाम इति निश्चय, अक्षलिङ्गे' अ पलिङ्गे=त्यरिरकल्पिकादिरूपे,
 'न य गिहिलिङ्गे' न च गृहिलिङ्गे=गृहस्थरूपे तथा-न च कुलिङ्गे=शाक्यादिरूपे
 निष्क्रान्ताः । किन्तु तीर्थङ्कररूपेणैव निष्क्रान्ता ॥२३॥ कस्तीर्थङ्कर' कियद्विः
 परिवारैः सा निष्क्रान्त इत्याह-'एको भगव बीरो' भगवान् महावीर एकाकी-
 निष्क्रान्त । तथा-पासोमल्लीयविहिंसिहिसर्हि' पार्श्वोमल्लिभ त्रिभिस्त्रिभिः सतैः
 परिवारैः सह निष्क्रान्त । भगव पि वामुपुज्जो' वामुपुज्यो भगवान् 'उहिं पु
 रिससर्हि पड्डि पुरुवसतै सह निष्क्रान्त ॥२४॥ तथा-'उग्गाण मागाण रा
 ण्णाग व स्रमियाण च' उग्रानां भोगानां राणां च स्रमियाणां च 'चउहिं सरस्सहिं'
 चतुर्भिः सहस्रैः सह 'उममो' ऋषमो निष्क्रान्तः । 'सेसाओ सहस्सपरिवारो'
 शेषास्तु तीर्थङ्करा सहस्रपरिवारैः सह निष्क्रान्ता इत्यर्थः ॥२५॥ 'सुमस्स
 णिम्मतेण णिग्गमो' सुमतिरभनियमकेन निर्गत =भगवान् सुमतिनायोऽनुतोप

रकल्पिक आदिरूप अन्यलिङ्ग में दीक्षित नहीं हुए, न गृहस्थरूपलिङ्ग
 में दीक्षित हुए और न शाक्यादिरूप कुलिङ्ग मही दीक्षित हुए किन्तु तीर्थ
 कररूप में ही दीक्षित हुए । अब मुद्रकार यह प्रकट करते हैं-कि कान
 २ से तीर्थंकर कितने २ परिवार के साथ दीक्षित हुए हैं-भगवान्
 महावीर ने एकाकी दीक्षा धारण की है । तथा पार्श्वनाथ भगवान् और
 मल्लिनाथ भगवान् ने तीन २ सौ परिवारों के साथ दीक्षा धारण की
 है । भगवान् वामुपुज्य ने छह सौ पुरुषों के साथ दीक्षा धारण की है ।
 उग्रवश के भोगवश के राजाओं और स्रमियों के ४ हजार परिवार के साथ
 ऋषभदेवने दीक्षा धारण की है । तथा इनसे अवशिष्ट जो तीर्थंकर हैं
 उन्होंने एक-एक हजार परिवार के साथ धारण की है । भगवान् सुमतिनाथ
 ने बिना उपवास के ही जिन दीक्षा धारण की है । तथा-पार्श्वनाथ

६८. ते तीर्थंकरे स्वविश्वं क्विचिद्विज्जं अविज्जं अविज्जं अविज्जं दीक्षा दीक्षा न क-
 १ गृहस्थरूपे विज्जं पण तेजो दीक्षित यथा न कृता अने शाक्यादि रूपे कुलिङ्गमा
 पण तेजो दीक्षित यथा न कृता पण तेजो तीर्थंकरेण दीक्षित यथा कृता
 २ वे सुमन्तां जे जतावे छि के कथा तीर्थंकरे केटलो परिवार सहित दीक्षा अक
 ३ की कृती-भगवान् महावीर जेकाही (किस पण परिवार बिना) दीक्षा धारण करी
 ४ की पार्श्वनाथ भगवान् तथा मल्लिनाथ भगवान् ३ -४ भाग्यसे साथ दीक्षा
 दीक्षा कृती भगवान् वामुपुज्ये ६ पुरुषो सहित दीक्षा दीक्षा कृती उग्रवश अने
 ७ उग्रवश के ४ हजार भगवान् अने स्रमियों के परिवार साथ भगवान् ऋषभदेव
 ८ सह २ सौ २५० निवासना तीर्थंकर जे जेके कथना परिवा दित दीक्षा दीक्षा
 ९ कृती भगवान् सुमतिनाथ उपवास कथा बिना दीक्षा धारण की १० वामुपुज्य

वासएव निष्क्रान्त इत्यर्थः । 'वासुपुञ्जचउत्थेण' वासुपूज्यश्चतुर्थेन=वासुपूज्यो भगवानेकमुपवासं कृत्वा दीक्षितः । 'पामोमल्लीय अट्टमेण' पार्श्वे मल्लिश्वाष्टमेन, 'सेसा उ छट्ठेण' शेषास्तु षष्ठेन=अवशिष्टास्तीर्थङ्कराः पठ कृत्वा निष्क्रान्ताः ॥सू. १९८॥

मूलम्—एएसिं णं चउवीसाए तित्थगराणं चउवीसं पढमभिक्षा दायारो होत्था, तं जहा--सिज्जंस वंभदत्ते सुरिंददत्ते य इंददत्ते य । पउमे य सोमदेवे माहिदे तह सोमदत्ते या ॥२७॥ पुस्से पुणव्वसू पुण्णणंदे सुणंदे जए य विजए य । तत्तो य धम्मसीहे सुमित्त तह वग्गसीहे या ॥२८॥ अपराजिय विस्ससेणे वोसइमे होइ उसभसेणे य । दिण्णे वरदत्ते धणे बहुले य अणुपुव्वीए ॥२९॥ एए विसुद्धलेसा जिणवरमत्तीए अंजलिउडा उ । तं कालं तं समयं पडिलाभेइ जिणवरिंदे ॥३०॥ संवच्छरेण भिक्खा लद्धा उसभेण लोयणाहेण । सेसेहि वीयदिवसे लद्धाओ पढमभिक्खाओ ॥३१॥ उसभस्स पढमभिक्खा खोयरसो आसि लोगणाहस्स । सेसाणं परमण्णं अमियरसरसोवमं आसि ॥३२॥ सव्वेसिं जिणाणं जहियं लद्धाउ पढमभिक्खाउ । तहियं वसुधाराओ सरीरमेत्तीओ बुद्धाओ ३३ ॥सू० १९९॥

भगवान् ने और मल्लिनाथ भगवान् ने तीन उपवास अट्टम कर के और अवशिष्ट तीर्थकरों ने छट्ट की तपस्या करके जिनदीक्षा धारण की है ॥सू० १९८॥

शब्दार्थ—(एएसिं णं चउवीसाए तित्थगराणं) एतेषां खलु चतुर्विंशते स्तीर्थकराणां इन चौबीस तीर्थकरों के लिये (पढमभिक्खा दायारो चउवीसं होत्था) प्रथम भिक्षादातारः चतुर्विंशतिः आसन्-सब से पहिले

भगवाने दीक्षा अ गीकार करी હતી પાશ્વનાથ તથા મલ્લિનાથ ભગવાને ત્રણ ઉપવાસ કરીને અને બાકીના તીર્થ કર્તાએ જે ઉપવાસ-છટ્ટ-ની તપસ્યા કરીને દીક્ષા ધા-ણ કરી હતી ॥ સૂ० ૧૯૮॥

शब्दार्थ—(एएसिं णं चउवीसाए तित्थगराणं) एतेषां खलु चतुर्विंशते स्तीर्थकराणां-ने चौबीस तीर्थकरोंने (पढमभिक्खा दायारो चउवीसं होत्था) प्रथमभिक्षादातारः चतुर्विंशतिः अभूवन्-सौथी पडेલા ભિક્ષા

मिक्षा ऋने बाळे श्रीवीम २४ सुए ह्रीं (तजहा) तथथा-उनके नाम ये
है (सिज्जसवमदत्ते सुरिंददत्ते य इददत्ते य पउमेय सोमदेवे माहिंदे तह
सोमदत्ते य) भेयासो अन्नदत्तः सुरेन्द्रदत्तश्च, इन्द्रदत्तश्च, पद्मश्च सोमदेवो
माहेन्द्रस्तथा सोमदत्तश्च-अयास १ अन्नदत्त २, सुरेन्द्रदत्त ३, इन्द्रदत्त ४
पद्म ५, सोमदेव ६, माहेन्द्र ७ सोमदत्त ८, (पुस्से, पुण्णवसू पुण्णवदे
सुणवे जाण य विजए य, तत्तो य घम्मसीहे सुमित्र तह वगामीहे य) पुण्य
पुनर्बसुश्च पूर्णानन्दः सुनन्दो जयश्च विजयश्च तत्तश्च धर्मसिंहः सुमित्र-
स्तथा वर्गसिंहश्च-पुण्य ९, पुनर्बसु १०, पूर्णानन्द ११, सुनन्द १२, जय
१३ विजय १४, धर्मसिंह १५ सुमित्र १६ वर्गसिंह १७, (अपरामिय
विस्समणे धीसइमे होइ उम्मसेणे दिण्णे वरदत्ते घणे बहुळे य आणु
पुम्मीए) अपराजितो विश्वसेनो विंशतितमो भवति ऋपमसेनश्च, दत्तो
वरदत्तो धनो बहुलश्च आनुपूर्व्या-अपराजित १८, विश्वसेन १९ तथा
धीसवें ऋपमसेन २० तथा २१ वरदत्त २२ धन २३ और बहुल २४।
ये क्रमशः २४ प्रथम भिक्षा दाता हैं। (एए) एते-इन २४ प्रथम भिक्षा
दाता जनोंने (जिणमसीए) भिनमक्कया-प्रभु भक्ति के बल से (विशुद्ध छेसा)
विशुद्ध छेसा युक्त होकर (पंजलिठहा) प्राज्ञसिपुक्ताः-और दोनों साथ

देनाश ने श्रीवीस भिक्षादाताओं के ता (तजहा) तथथा-तेमना नाम आः प्रभावे छे-
(सिज्जसवमदत्ते सुरिंददत्ते य इददत्ते य पउमे य सोमदेवे माहिंदे तह
सामदत्त य) भेयासो अन्नदत्तः सुरेन्द्रदत्तश्च इन्द्रदत्तश्च पद्मश्च सोमदेवो
माहेन्द्रस्तथा सोमदत्तश्च-() अर्थात्. (१) अन्नदत्त, (२) सुरेन्द्रदत्त, (३) इन्द्र-
दत्त (४) पद्म (५) सोमदेव [७] माहेन्द्र (८) सोमदत्त (पुस्से, पुण्णवसू पुण्णवदे
जाण य विजए य तत्तो य सुणवे घम्मसीहे सुमित्र तह वगामीहे य) पुण्य,
पुनर्बसुश्च पूर्णानन्दः सुनन्दो जयश्च विजयश्च तत्तश्च धर्मसिंहः सुमित्रस्तथा
वर्गसिंहश्च-(६) पुण्य (१) पुनर्बसु [११] पूर्णानन्द (१२) सुनन्द (१३) जय (१४)
विजय (१५) धर्मसिंह (१६) सुमित्र (१७) वर्गसिंह (अपरामिय विस्ससेणे
धीसइमे होइ उम्मसेणे दिण्णे वरदत्ते घणे बहुळे य आणुपुम्मीए) अप-
राजितो विश्वसेनो विंशतितमो भवति ऋपमसेनश्च दत्तो वरदत्तो धनो
बहुलश्च आनुपूर्व्या (१८) अपराजित (१९) विश्वसेन (२०) ऋपमसेन (२१) दत्त
(२२) वरदत्त (२३) धन अने (२४) बहुल वरदत्त प्रभु वे क्रमशः २४ प्रथम भिक्षादाताओं
के ता. (एए) एते-ते श्रीवीस भिक्षादाताओं के (जिणमसीए) भिनमक्कया-
प्रभु भक्तेनी अनन्व भक्तिधी भेसाधने (विशुद्धछेसा) विशुद्धछेसा-विशुद्ध छेसाधी
भुक्त भधने (पंजलिठहा) प्राज्ञसिपुक्ताः-अने साथ भेसाधने (त कालं तं

जोडकर (तं कालं त समयं) तस्मिन् काले तस्मिन् समये—उसकाल मे और उससमय में (जिणवरिंदे पडिलाभेइ) जिनवरेन्द्रान् प्रतिलम्भयति—जिनेन्द्रों को आहारदान दिया था। (संवच्छरेण भिक्षालब्धा उसमेण लोयणाहेण) संवत्सरेण भिक्षालब्धा ऋषमेण लोकनाथेन—लोक के नाथ ऋषभनाथ भगवान् ने एक वर्ष में प्रथम भिक्षा प्राप्त की है (सेसेहि वीय दिवसे लद्धाओ पढमभिक्षाओ) शेषैर्द्वितीयदिवसे लब्धाः प्रथमभिक्षा बाकी के तेवीस २३ तीर्थकरों ने दूसरे दिन भिक्षा प्राप्त की हैं। (उस भस्स पढमभिक्षा खोयरसो आसि लोगणाहस्स) ऋषभस्य प्रथमभिक्षा इक्षुरस आसीत् लोकनाथस्य—लोकनाथ ऋषभदेव की प्रथम भिक्षा इक्षुरसकी थी (सेसाणं परमणं अमिय रस रसोवमं आसि) शेषाणां परमान्नं अमृतरसरसोपमं आसीत्—तेवीस तीर्थकरों की प्रथम भिक्षा अमृतरसके समान ग्वीर की थी। (सव्वेसिं जिणाण जहिय लद्धा उ पढमभिक्षाउ तहियं वसुधाराओ सरीरमेत्तीओ वुट्ठाओ) सर्वैरपि जिनैर्यत्रलब्धाः प्रथम-भिक्षाः—तत्र वसुधाराः शरीरमात्राः वृष्टा—समस्त तीर्थकरों ने जहां २ प्रथमभिक्षा ग्रहण की, वहां २ शरीर प्रमाण द्रव्य की वर्षा हुई है॥सू०१९९॥

समयं) तस्मिन् काले तस्मिन् समये—ते क्षणे अने ते समये (जिणवरिंदे पडिलाभेइ) जिनवरेन्द्रान् प्रतिलम्भयति जिनेन्द्राने आहारदान दीधुं ढतुं (संवच्छरेण भि-क्खालब्धा उसमेण लोयणाहेण) संवत्सरेण भिक्षा लब्धा ऋषमेण लोकनाथेन—लोकना नाथ भगवान् ऋषभदेवे ओक वर्षे पडेही भिक्षा प्राप्त करी डती (सेसेहिं वीयदिवसे लद्धाओ पढमभिक्षाओ) शेषैर्द्वितीयदिवसे लब्धाः प्रथम भिक्षाः—भाडीना तीर्थकरे ओ भाडी दिवसे ओ प्रथम भिक्षा प्राप्त करी डती. (उसभस्स पढमभिक्षा खोयरसो आसि लोगणाहस्स) ऋषभस्य प्रथमभिक्षा इक्षुरस आसीत्—लोकनाथस्य—लोकनाथ ऋषभदेवने प्रथम भिक्षा इक्षुरस (शिरडाने रस) नी भणी डती (सेसाणं परमणं अमियरसरसोवमं आसि) शेषाणां परमान्नं अमृतरसरसोपमं आसीत्—भाडीना तेवीस तीर्थ-करेने प्रथम भिक्षाभा अमृतरस जेवी भीर भणी डती (सव्वेसिं जिणाणं जहियं लद्धाउ पढम भिक्षाउ, तहिय वसुधाराओ सरीरमेत्तीओ वुट्ठाओ) सर्वै-रपि जिनैर्यत्रलब्धाः प्रथमभिक्षाः तत्र वसुधाराः शरीरमात्राः वृष्टा—समस्त तीर्थकरेओ जथा जथा पडेही भिक्षा ग्रहण करी, त्या त्यां शरीरप्रमाणे द्रव्यनी वृष्टि भई डती ॥ सू १९९ ॥

टीका-‘एषसि णं’ इत्यादि-एतेषां सल्लु चतुर्विंशतस्तीथकराणां चतुर्विंशतिः
 ‘पद्ममिषादायारो’ प्रथममिक्षादायारः ‘होत्या’ अध्वर्युः, तद्यथा-धेयांसो
 प्रथमदत्त सुरेन्द्रदत्त इन्द्रदत्तः । पथः सोमदेवो माहेन्द्रस्तथा सोमदत्तः ॥२७॥
 पुष्य पुनर्वसु पूर्णानन्द सुनन्दो जयः विजयः । ततश्च धर्मसिंह सुमित्र
 स्तथा वर्गसिंहः ॥२८॥ अपराभिता विश्वसेना विंशतितमो भवति ऋषभसेनः ।
 दत्ता वरदो घनो बहुलः आनुपूर्वा ॥२९॥ ‘एष’ एते उपरि निर्दिष्टाश्चतुर्विं
 शतिभ्यः ‘जिणमत्तीए’ जिनमत्तया=जिनमत्तिवशाद् ‘विशुद्धेसा’ विशुद्ध
 छेद्याः-विशुद्धछेद्यावन्तः ‘पज्जलिठ्ठा’ माञ्जलिपुता=कृताञ्जलयः ‘त काय
 त समयं’ तस्मिन् काळे तस्मिन् समय ‘पडिलामहे’ जिणवरिंदे’ प्रतिजन्मयति
 जिनवरेन्द्रान् । ३ ॥ सवत्सरेण भिक्षा ऋष्या ऋषभेण लोकनाथना शपैर्द्वितीय

टीकाय-‘एषसि णं चउचीमाए’ इत्यादि-इन चौबीस तीर्थंकरों के
 लिये सब से पहिले भिक्षा देनेवाले चौबीस २४ हुए हैं। उनके नाम
 ये हैं-धेयांस १, प्रथमदत्त २, सुरेन्द्रदत्त ३, इन्द्रदत्त ४, पथ, ५, सोम
 देव ६, माहेन्द्र ७ सोमदत्त ८, पुष्य ९, पुनर्वसु १०, पूर्णानन्द ११,
 सुनन्द १२, जय १३, विजय १४, धर्मसिंह १५ सुमित्र १६ वर्गसिंह
 १७ अपराभित १८ विश्वसेन १९ तथा २० हैं ऋषभसेन, दत्त २१
 वरदत्त २२ घन २३ और बहुल २४। ये क्रमशः २४ प्रथम भिक्षा दाता
 हैं। इन २४ प्रथम भिक्षादाता जनोंने प्रभुमक्ति के वृक्ष से विशुद्ध छेद्या
 युक्त होकर और दानों द्वारा जोड़कर ठसकाल में और उस समय में
 जिनेन्द्रों को आहार दान दिया था। लोक के नाथ ऋषभनाथ महावान
 ने एक वय में प्रथमभिक्षा प्राप्त की है। लोकनाथ ऋषभदेव की प्रथमभिक्षा

टीकाय-‘एषसि णं चउचीमाए’ इत्यादि-ये चौबीस तीर्थंकरोंने चौबीस
 पहिली भिक्षा अपने-अपने २४ वे तीर्थंकरों के भिक्षुदाताओंना नाम आ प्रभु से छे-
 (१) धेयांस (२) प्रथमदत्त, (३) सुरेन्द्रदत्त (४) इन्द्रदत्त, (५) पथ, (६) सोमदेव
 (७) माहेन्द्र, (८) सोमदत्त (९) पुष्य, (१०) पुनर्वसु, (११) पूर्णानन्द, (१२)
 सुनन्द (१३) जय (१४) विजय (१५) धर्मसिंह, (१६) सुमित्र, (१७) वर्ग
 सिंह (१८) अपराभित (१९) विश्वसेन (२०) ऋषभसेन, (२१) दत्त, (२२) वरदत्त,
 (२३) घन जने (२४) बहुल के प्रभावसे अनुक्रमेण २४ तीर्थंकरोंने २४ भिक्षुदा
 ताओं तथा छे। ते २४ प्रथम भिक्षादाताओंके प्रभुलक्षितार्थी प्रशंसने विशुद्ध
 छेद्यायुक्त भिक्षा जने दाया जोड़ीने, ते दाया जने ते समयसे जिनेन्द्रदेवोंने
 आहारदान दीप्त करु दोहनाथ ऋषभदेवे प्रथम भिक्षा कोक वर्य प्राप्त करी कटी।

द्विसे लब्धाः प्रथमभिक्षाः ॥३१॥ ऋषभस्य प्रथमभिक्षा इक्षुम् आसीत् लो-
नाथस्य । शेषाणां तीर्थकराणां 'परमणं' परमान्नम्=पायसम् 'अमृतरसरसोवम्'
अमृतरसरसोपमम्=अमृतरसतुल्यं प्रथमा भिक्षा आसीत् ॥३२॥ सर्वैरपि जिनैर्वत्
लब्धाः प्रथमभिक्षाः । तत्र वसुधाराः वृष्टा शरीरमात्राः ॥३३॥ म १९९॥

मूलम्—एएसिं चउव्वीसाए तित्थगराणं चउवीसं चेइयरुक्खा
होत्था, तं जहा—णग्गोह सत्तिवणे साले पियए पियंगु छत्ताहे ।
सिरिसे य णागरुक्खे माली य पिलंक्खु रुक्खे य ॥३४॥ तिंदुक्क
पाडल जंबू आसत्थे खलु तहेव दहिवण्णे । गंदीरुक्खे तिलए अंब-
यरुक्खे असोगे य ॥३५॥ चंपय वउले य तहा वेडसरुक्खे य धाय-
ईरुक्खे । साले य वड्डमाणस्स चेइयरुक्खा जिणवराणं ॥३६॥ वत्तीसं
धणुयाइं चेइयरुक्खो य वड्डमाणस्स । णिच्चोउगो असोगो ओच्छण्णो
सालरुक्खेणं ॥३७॥ तिण्णेव गोउआइं चेइयरुक्खो जिणस्स उ-
भस्स । सेसाणं पुण रुक्खा सरीरओ वारसगुणा उ ॥३८॥ सछत्ता
सपडागा सवेइया तोरणेहिं उववेया । सुरअसुर गरुल महिया
चेइयरुक्खा जिणवराणं ॥३९॥ सू० २००॥

इक्षुरस की थी ! और २३ तीर्थकरों की प्रथमभिक्षा अमृतरस के समान
खीर की थी । समस्त तीर्थकरों ने जहां २ प्रथमभिक्षा ग्रहण की, वहां
२ शरीर प्रमाण द्रव्य की वर्षा हुई है ॥मू० १९९॥

शब्दार्थ—(एएसिं चउव्वीसाए तित्थगराणं चउवीसं चेइयरुक्खा होत्था)
एतेषां चतुर्विंशतेस्तीर्थकराणां चतुर्विंशतिश्चैत्यवृक्षा आसन्—चौबीस तीर्थ-

अने णाडीना २३ तीर्थ'करेअे णी'ने द्विसे ७ प्रथम भिक्षा भेणवी હતી. લોકનાથ
ઋષભદેવને પહેલી ભીક્ષામાં ઇક્ષુરસ મળ્યો હતો, અને ણાડીના ૨૩ તીર્થ'કરેને
પહેલી ભિક્ષામાં અમૃતરસ સમાન ખીર મળી હતી સમસ્ત તીર્થ'કરેઅે જે જે
સ્થાને પહેલી ભિક્ષા ગ્રહણ કરી, તે તે સ્થાને શરીર પ્રમાણ દ્રવ્યનો વરસાદ
થયો હતો, ॥સૂ. ૧૯૯॥

શબ્દાર્થ—(एए सिं चउव्वीसाए तित्थगराणं चउवीसं चेइयरुक्खा
होत्था) एतेषां चतुर्विंशतेस्तीर्थकराणां चतुर्विंशतिश्चैत्यवृक्षा आसन्—

करौक चौयीस बैत्यवृक्ष-ये जिनके नीचे कंचलज्ञान उत्पन्न हुआ व वृक्ष (तजहा) तद्यथा-उनके नाम य हैं (णग्गोह सत्तिवण्णे साछे पियए पियगु उणाहे सिरिसे य णागरुक्खे माली य पिलक्खुरुक्खे य) न्यग्गोष धामः पियकः पियम् उग्रामः शिरीषम् नागवृक्षः माली व पिलक्खुवृक्षम्-न्यग्रोष, सप्तपर्ण, शाल, पियक, पियगु, उग्राम, शिरीष, नागवृक्ष, माली, पिलक्खुवृक्ष, (तिन्दुकपाटल जंघ आसत्ये खलु तह्ये दहियण्णे, नदीरुक्खे तिलए अयपरुक्खे असोगे य) तिन्दुक पाटलो जम्बू श्वरथः खलु तथैव दधिपर्ण, नन्दीवृक्षस्तिमक आम्रवृक्षोऽशोकश्च तिन्दुक, पाटल, जम्बू श्वरथ, दधिपर्ण, नन्दीवृक्ष, तिलक, आम्रवृक्ष अशोक, (धपय वउछे य तहा वेडसरुक्खे य धार्इयरुक्खे, साछे य वट्टमाणस्स चेइयरुक्खा जिणवरणं) अपको पडुलम् तथा वतसरुक्षो घातरी वृक्षश्च, सालश्च वट्टमाणस्य बैत्यवृक्षा जिनवरणाम्-चंपक, पडुल, वतसरुक्ष घातकीवृक्ष और वट्टमाण भगवान का सालवृक्ष ये जिनवरों के बैत्यवृक्ष हैं । (पत्तीस पणुयाई चेइयरुक्खा य वट्टमाणस्स) द्वात्रिंशद् धनूपि बैत्यवृक्षश्च वट्टमाणस्य-वट्टमाण भगवान का बैत्यवृक्ष पत्तीस ३० धनुष ऊंचा था । (णिच्चोठगो असोगो ओच्छण्णो सालरुक्खेणं)

ते धोरीस तीर्थक्षेत्राणां धोरीस क्षेत्रेषु कृता ये वृक्षानां नामे देवप्रदानं येषु देवा ते वृक्षेन स्मृतवृक्ष इति च (तजहा) तद्यथा-नमः नाम आ प्रभावे छे- (णग्गोहसत्तिवण्णे माल पियए पियगु उणाहे सिरिसे य णागरुक्खे माली य पिलक्खुरुक्खे य) न्यग्रोष सप्तपर्ण शालः पियकः पियम् उग्रामः शिरीषम् नागवृक्षः माली व पिलक्खुवृक्षम्-न्यग्रोष, सप्तपर्ण, शाल पियक, पियगु उग्राम शिरीष, नागवृक्ष, माली, पिलक्खुवृक्ष, (तिन्दुक पाटल जंघ आसत्ये खलु तह्ये दहियण्णे नदीरुक्खे तिलए अयपरुक्खे असोगे य) तिन्दुक, पाटलो जम्बू श्वरथ खलु तथैव दधिपर्ण, नन्दीवृक्षस्तिमक आम्रवृक्षोऽशोकश्च- तिन्दुक पाटल जम्बू श्वरथ दधिपर्ण, नन्दीवृक्ष, तिलक, आम्रवृक्ष, अशोक (धरपयउछेय तहा वेडसरुक्खे य धार्इयरुक्खे, साछेय वट्टमाणस्स चेइयरुक्खा जिणवरणं) अपकोपडुलम् तथा वतसरुक्षो घातकीवृक्षश्च, सालश्च वट्टमाणस्य बैत्यवृक्षा जिनवरणाम्-चंपक, पडुल, वतसरुक्ष, घातरी वृक्ष अन वट्टमाण भगवाननु मावृक्ष जिनवरणानां ते बैत्यवृक्षा कृतां (पत्तीस पणुयाई चेइयरुक्खो य वट्टमाणस्स) द्वात्रिंशद् धनूपि बैत्यवृक्षश्च वट्टमाणस्य-वट्टमाण भगवाननु मावृक्ष जरीस (३२) धनुषप्रमाणे विमु कृता (मिणाउगो असोगो ओच्छण्णो मावृक्षत्थेणं) नित्यवृक्षोऽशोकोऽवच्छिन्नः

टीका—‘एएसि’ इत्यादि—एतेषां चतुर्भिर्गतेरतीर्थकराणां चतुर्भिर्गतिश्चैत्यवृक्षा आसन्, तद्यथा—न्यग्रोधः सप्तपर्णः शालः प्रियकः प्रियङ्गुः छत्राभः । शिरीषश्च नागवृक्षः माली च पिलहक्षुवृक्षश्च ॥३४॥ तिन्दुकः पाटलो जम्बुरध्वत्थः खलु तथैव नित्यवृक्षोऽशोकोऽवच्छिन्नः सालवृक्षौ—समस्त ऋतुभ्यो से दत्त युक्त था । शोकउपद्रव आदि से वह रहित था, तथा सालवृक्षो से वह विरा हुआ था (तिण्णोव गाउयाइ चेइयरुक्खो जिणस्स उसमस्स) त्रीण्येव गन्धवृक्षानि चैत्यवृक्षो जिनस्य ऋषभस्य—ऋषभनाथ भगवान् का चैत्य वृक्ष तीनकोश को ऊँचा था । (सेसाणं पुणरुक्खा सरीरओ वारस गुणाउ) शेषाणं पुनर्वृक्षाः शरीरतो द्वादश गुणास्तु—अवशिष्ट तीर्थकरों के चैत्यवृक्ष उनकी शरीर को ऊँचाई से चारह गुणी ऊँचाईवाले थे । (सच्छत्ता सपडागा सवेइया तोरणेहिं उववेया) सच्छत्राः सपताका सवेदिकास्तोरणैरुपपेताः—ये सब चैत्यवृक्ष छत्र सहित थे पताका सहित थे, वेदिकासहित थे, और तोरण सहित थे । (सुर असुर गरुल महिया चइयरुक्खा जिणवराणं) सुरासुरगरुडमहिताश्चैत्यवृक्षा जिनवराणाम्—सुर, असुर और गरुल—सुपर्ण-कुमारों से ये सब जिनेन्द्रों के चैत्यवृक्ष सेवित थे ॥सू० २००॥

टीका—‘एएसिचउन्वीसाए’ इत्यादि इन चौबीस तीर्थकरों के चौबीस चैत्यवृक्ष थे । उनके नाम ये हैं—न्यग्रोध १, सप्तपर्ण २, शाल ३, प्रियक ४, प्रियंगु ५, छत्राभ ६, शिरीष ७, नागवृक्ष ८ माली ९, पिलहक्षुवृक्ष १० सालवृक्षैः—ते समस्त ऋतुभ्यो युक्त इतु, शोक-उपद्रव आदिही रहित इतुं अने सालवृक्षेही धरायेहु इतुं (तिण्णोव गाउयाइ चेइयरुक्खो जिणस्स उसमस्स) त्रीण्येवगन्धवृक्षानि चैत्यवृक्षो जिनस्य ऋषभस्य—ऋषभदेव भगवाननु चैत्यवृक्ष त्रयु केश त्रियु इतु (सेसाणं पुणरुक्खा सरीरओ वारसगुणाउ) शेषाणं पुनर्वृक्षाः शरीरतो द्वादशगुणास्तु—आडीना तीर्थ करेना चैत्यवृक्षो तेभना शरीरनी त्रियाई करता गार गण्डी त्रियाधवाणा इता (सच्छत्ता सपडागा सवेइया तोरणेहिं उववेया) सच्छत्राः सपताका सवेदिकास्तोरणैरुपपेताः—ते भधा चैत्यवृक्षो छत्र, पताका, वेदिका अने तोरणेही युक्त इता. (सुरअसुर गरुलमहिया चेइयरुक्खा जिणवराणं) सुरासुरगरुडमहिताश्चैत्यवृक्षा जिनवराणाम्—ते भधा चैत्यवृक्षो सुर, असुर, अने सुपर्णकुमारो द्वारा सेवातां इतां ॥सू. २००॥

टीकाथ—‘एएसि चउन्वीसाए’ इत्यादि—ते चौबीस तीर्थ करेनां चौबीस चैत्यवृक्षो इता. ते चैत्यवृक्षेनां नाम आ प्रमाणे छे—(१), न्यग्रोध, (२) सप्तपर्ण, (३) शाल, (४) प्रियक, (५) प्रियंगु, (६) छत्राभ, (७) शिरीष, (८)

दधिपर्णः । नन्दीवृक्षरितलक आम्रवृक्षोऽशोकश्च ॥३५॥ घात्री वकुलश्च तथा
 वतसवृक्षो घातकीवृक्षश्च । सालश्च वर्द्धमानस्य चैत्यवृक्षा जिनवराणाम् ॥३६॥
 द्वात्रिंशद् धनूपि चैत्यवृक्षश्च यद्धमानस्य । नित्यवर्द्धोऽशोकाऽवच्छिन्नः सालवृक्षैः
 ॥३७॥ प्राप्य गव्यूतानि चैत्यवृक्षा जिनस्य ऋषभस्य । शपाण पुनर्वृक्षाः श्री
 रत्नो द्वादशगुणाम्बु ॥३८॥ सच्छत्रा सपताका सवेदिशरदारणैरुपपेता । सुरा
 म्रगरुद्धमहिताश्चैत्यवृक्षा जिनवराणाम् ॥३९॥ सू २० ॥

मूलम्—एषसि चउव्रीसाए तित्थगराण चउव्रीस पढमसीसा
 होत्था, त जहा—पढमेत्थ उस्सभसेणे वीइए पुण होइ सीहसेणे य ।
 चारू य वज्जणाभे चमरे तह सुव्वय विद्वमे ॥४०॥ दिण्णे य वराहे

ति-कुल ११ पाटल १२, जम्बू १३, अश्वत्थ १४ दधिपर्ण १५, नन्दीवृक्ष
 १६, तिलक १७, आम्रवृक्ष १८, अशोक १९ चपक २० वकुल २१, वतस
 वृक्ष २२, घातकीवृक्ष २३, और वर्द्धमान भगवान् का सालवृक्ष २४। ये
 जिनरत्नों के चैत्यवृक्ष हैं। वर्द्धमान भगवान् का चैत्यवृक्ष ३२ धनूप ऊँचा
 था। समस्त ऋतुओं से वह युक्त था। शोक-उष्ण आदि से वह रहित
 था। तथा सालवृक्षों से वह घिरा हुआ था। ऋषभनाथ भगवान् का चैत्यवृक्ष
 तीन कोश का ऊँचा था। तथा अषट्तिष्ठ तीर्थंकरों के चैत्यवृक्ष उनकी शरीर
 की ऊँचाई से बाह्य गुणी ऊँचाईवाले थे ये सब चैत्यवृक्ष छत्र सहित थे,
 पताका सहित थे वेदिका सहित थे और तोरण सहित थे। सुर असुर
 और गरुड-सुपर्णकुमारों से ये सब जिनेन्द्रों के चैत्यवृक्ष सेवित थे ॥सू० २०॥

नामवृक्ष (६) भाही, (१०) पिण्डसुवृक्ष, (११) ति-कुल (१२) पाटल (१३) जम्बू
 (१४) अश्वत्थ, (१५) दधिपर्ण, (१६) नन्दीवृक्ष, (१७) तिलक, (१८) आम्रवृक्ष
 (१९) अशोक (२०) चपक (२१) वकुल (२२) वतसवृक्ष (२३) घातकीवृक्ष अने
 (२४) वर्द्धमान भगवान् का सालवृक्ष आ आदि जिनवराणां चैत्यवृक्षानां नाम दत्ता
 वर्द्धमान भगवान् का चैत्यवृक्ष अतीस धनूपप्रमाण ऊँचा ऋतु से सभी ऋतुओं से
 युक्त ऋतु से शीत-उष्ण व आदिशी रहित ऋतु तथा सालवृक्षों की घेरावले ऋतु
 नामन भगवान् का चैत्यवृक्ष त्रय कोश ऊँचा ऊँचा आश्रीता तीर्थंकरानां चैत्य
 वृक्षा तमना शरीर इत्या आर मणी विचारना कर्ता ते सभी चैत्यवृक्षा छत्र
 पताका वेदिका अने तोरणशी युक्त कर्ता त नामाभि जिनेन्द्रानां चैत्यवृक्षा सुर
 असुर अने गरुडसुपर्णकुमारों द्वारा सेवित दत्ता ॥सू २० ॥

पुण आणंदे गोथुमे सुहम्मे य । मंदर जसे अरिट्ठे चक्काह सयंकु
कुंमे य ॥४१॥ इंदकुंमे य सुमे वरदत्ते दिण्ण इंदभूई य ।
उदितोदिय कुलवंसा गुणेहि उववेया । तित्थपवत्तयाणं पढत्ता
सिस्सा जिणवराणं ॥४२॥सू० २०१॥

शब्दार्थ—(एएसिं चउवोराए तित्थगराणं) एतेषां चतुर्विंशतेस्तीर्थकराणां
इन चौबीस तीर्थकरों के (चउव्वीसं पढमसीसा होत्था)चतुर्विंशतिः प्रथम
शिष्या अभूवन्—चौबीस प्रथमशिष्य थे (तं जहा) तद्यथा—उनके नाम ये हैं
(पढमेत्थ उसमसेणे) प्रथमोऽत्र ऋषभसेनो—प्रथमऋषभसेन (वीइए पुण
होइ सीहसेणे य) द्वितीयः पुनर्भवति सिंहसेनश्च द्वितीय सिंहसेन (चारुसेन
(चारु य वज्जणाभे चमरे तह सुव्वय विदम्मे) चारुश्च वज्जनाभश्चमरस्तथा
सुव्रतोविदर्भः तृतीयचारु, चतुर्थ वज्जनाभ, पंचम चमर. छठवें सुव्रत,
सातवें विदर्भ, (दिण्णे य वराहे पुण आणंदे गोथुमे सुहम्मे य, मंदर जसे
अरिट्ठे चक्काह सयंकुंमे य) दत्तश्च वराहः पुनरानन्दो गोस्तुभः सुधर्माच्च,
मंदरो यशा अरिष्टश्चक्राभः स्वयम्भुः कुम्भश्च—आठवें दत्त, नौवें वराह, दशवें
आनंद, ग्यारहवें गोस्तुभ, बारहवें सुधर्मा, तेरहवें मन्दर, चौदहवें यश,
पन्द्रहवें अरिष्ट, सोलहवें चक्राभ, मन्त्रहवें स्वयंभू, अट्ठाहवें कुभ, (इंदकुंमे
य सुमे, वरदत्ते दिण्ण इंदभूईय) इन्द्रःकुम्भश्च शुभो वरदत्तो दत्त इन्द्र-

शब्दार्थ—(एएसिं चउवीसाए तित्थगराणं)एतेषां चतुर्विंशतेस्तीर्थकराणां—
ये चौबीस तीर्थकरों के (चउव्वीसं पढमसीसा होत्था) चतुर्विंशतिः प्रथम
शिष्या अभूवन्—चौबीस पड़ेला शिष्ये तथा (तं जहा) तद्यथा—तेमना नाम
आ प्रमाणे छे—(पढमेत्थउसमसेणे)प्रथमोऽत्र ऋषभसेनो—पड़ेला ऋषभसेन
(वीइए पुण होइ सीहसेणेय)द्वितीयः पुनर्भवति सिंहसेनश्च—भीले सिंहसेन,
(चारु य वज्जणाभे चमरे तह सुव्वयविदम्मे) चारुश्च वज्जनाभश्च चमरस्तथा
सुव्रतोविदर्भः—(३) चारु (४) वज्जनाभ, (५) चमर (६) सुव्रत (७) विदर्भ,
(दिण्णे य वराहे पुणआणंदे गोथुमे सुहम्मे य मंदरजसे अरिट्ठे चक्काहसयंकुंमे
य) दत्तश्च वराह पुनरानन्दो गोस्तुभः सुधर्मा च, मंदरो यशा अरिष्टश्चक्राभः
स्वयम्भुः कुम्भश्च—(८) दत्त, (९) वराह (१०) आनंद, (११) गोस्तुभ, (१२)
सुधर्मा, (१३) मन्दर, [१४] यश, (१५) अरिष्ट (१६) चक्राभ, (१७) स्वयंभू,
(१८) कुभ, (इंदकुंमे य सुमे, वरदत्तेदिण्ण इंदभूईय) इन्द्रः कुम्भश्च शुभो

टीका—‘एषसि’ इत्यादि—एतेषां चतुर्विंशतस्तीर्थकारणां चतुर्विंशतिः प्रथमशिष्या अभून्, तद्यथा—प्रथमा प्र ऋषमसेनो द्वितीय पुनर्मवति सिंसे नम । चारुष वज्रनामधमरस्तथा सुवतो विदर्भ ॥४८॥ दत्तम वराहः पुनरानन्दो गोस्तुमः सुधर्मा च । मन्दरो यथा अरिष्टमक्राग स्वयम्भूः कुम्भम ॥४९॥ इन्द्रः कुम्भम शुभो वरदचो दत्त इन्द्रभूतिष । उदितोदितकुलवत्ता विशुद्धवत्ता गुणैरुपेता । तीर्थप्रवर्तकानां प्रथमाः शिष्यः ॥ जिनवराणाम् ॥४२॥ अ २०१॥

भूतिष—१९वें इन्द्र २०वें कुम्भ, २१वें शुभ, २२वें वरदच, २३वें दत्त और २४वें इन्द्रभूति। (उदितोदितकुलवत्ता गुणैर्हि उववया, तिष्ठपववसायणं पठमा सिस्सा जिणवराण) उदितोदितकुलवत्ता विशुद्धवत्ता गुणैरुपेता तीर्थप्रवर्तकानां प्रथमाः शिष्य जिनवराणाम् य सय शिष्या उत्तरोत्तर उत्कर्ष को प्राप्त हुए कुलरूपवत्ता बाछे ये मातृपितृसपथीवत्ता की निर्मलता से युक्त थे। तथा भगवद्दर्शन आदिगुणों से विराजित थे। इस प्रकार तीर्थप्रवर्तक जिनेन्द्र देवों के ये प्रथम शिष्य थे ॥ अ० २०१॥

टीकार्थ—‘एषसि चउषीसाए तिष्ठगराण’ इत्यादि—इमं बौधोस तीर्थे करों के बौधीस प्रथम शिष्य थे। उनके नाम ये हैं—प्रथम ऋषमसेन, द्वितीय सिंसेन, तृतीय चारु चतुर्थ वज्रनाम, पञ्चमवमर, छठवें सुवत सातवें विदर्भ, आठवें दत्त, नौवें वराह, दसवें आनन्द, ग्यारहवें गोस्तुम बारहवें सुधर्मा, तेरहवें मन्दर चौदहवें यष्ट, पन्द्रहवें अरिष्ट सोलहवें वक्राम, सत्रहवें स्वयम्भू अठारहवें कुम्भ, छनीसवें इन्द्रभीसवें कुम्भ इकीसवें

वरदचोदत्त इन्द्रभूतिष—(१८) ईश (१९) कुम्भ, (१) शुभ, [२] वरदच, (३) दत्त, अने (४) इन्द्रभूति (उदितोदितकुलवत्ता गुणैर्हि उववया तिष्ठ पववसायणं पठमासिस्सा जिणवराण) उदितोदितकुलवत्ता विशुद्धवत्ता गुणैरुपेताः तीर्थप्रवर्तकानां प्रथमाः शिष्या जिमवराणाम्—ते अथा शिष्ये उत्तरोत्तर उत्कर्षं भाग्या कुण्डेय वराणां कृत्वा अने आतृवत्ता अने पितृवत्तनी विशुद्धवत्ता कृत्वा, तथा तेभ्यो सम्प्रवृत्तान् आदि शिष्यांश्चो बुद्धवत्ता तीर्थप्रवर्तक जिनेन्द्र भगवानोता के प्रथम शिष्ये उत्तरोत्तर प्रकार्या कृत्वा अस्तु, २०१॥

टीकार्थ—‘एषसि चउषीसाए तिष्ठगराण’ इत्यादि—ये बौधीस तीर्थे जिन के पढ़ेता बौधीस शिष्ये तथा तेभनां नाम आ प्रभावे छे—(१) ऋषमसेन (२) सिंसेन, (३) चारु, (४) वज्रनाम (५) वमर (६) शुभ, (७) विदर्भ, (८) दत्त, (९) वराह [१] आनन्द (११) विष्टुल, (१२) सुधर्मा, (१३) मन्दर (१४) यष्ट (१५) अरिष्ट (१६) वक्राम, (१७) स्वयम्भू (१८) कुम्भ (१९) ईश

मूलम्—एएसि णं चउवीसाए तित्थगराणं चउवीसं पढमसि-
स्सिणी होत्था, तं जहा—वंभी य फग्गु सामा अजिया कासवीरई
सोमा । सुमणा वारुणि सुलसा धारणि धरणीय धरणिधरा ॥४३॥
पउमा सिवा सुयी तह अंजुया भावियप्पा य रक्खी य । वंधुवती
पुप्फवती अज्जा अमिला य अहिया य ॥४४॥ जक्खिणी पुप्फचूला
य चंदणज्जा य आहियाउ । उदितोदियकुलवंसा विसुद्धवंसा गुणेहिं
उववेया । तित्थप्पवत्तया णं पढमा सिस्सिणी जिणवराणं ॥सू. २०२॥

शुभ घाईसवें वरदत्त तेईसवें दत्त औ। चौवीसवें इन्द्रभूति। ये सब शिष्य
उत्तरोत्तर उत्कर्ष को प्राप्त हुए। कुलरूपंश वाले थे। मातृपितृ संबंधी वंश की
निर्मलता से युक्त थे। तथासम्बगदर्शन आदि गुणों से विराजित थे। इस
प्रकार तीर्थप्रवर्तक जिनेन्द्रदेवों के ये प्रथम शिष्य थे ॥सू० २०१॥

शब्दार्थ—(एएसि ण चउवीसाए तित्थगराणं) एतेषां खलु चतुर्विंशते-
स्तर्थाकराणां इन चौवीस तीर्थकरों की (चउवीसं पढमसिस्सिणी होत्था)
चतुर्विंशतिः प्रथम शिष्या आसन्—चौवीस प्रथम शिष्या थीं (तं जहा) तद्यथा
उनके नाम इस प्रकार से हैं—(वंभी य फग्गु सामा अजिया कासवीरई
सोमा, सुमणा वारुणि सुलसा धारणि धरणी य धरणिधरा) ब्राह्मी च
फल्लुः श्यामा अजिता काश्यपी रतिः सोमा, सुमना वारुणी सुलसा
धारणी धरणी च धरणीधरा—ब्राह्मी १ फल्लु २ श्यामा ३, अजिता ४,

(२०) कुल, (२१) शुभ, (२२) वरदत्त, (२३) दत्त अने २४) इन्द्रभूति ते सधना
शिष्यो उत्तरोत्तर उत्कर्षं प्राप्तवा इत्युच्यते। कुलरूपं वंशवाणा इति तेभ्यो मातृ अने पितृ
वंशनी निर्मलतायै युक्त इति, अने सम्बगदर्शन आदि गुणैश्चैव शोभता इति
अं प्रकारेण तीर्थप्रवर्तक जिनेन्द्रदेवानां प्रथम शिष्यो इति ॥सू. २०१॥

शब्दार्थ—(एएसि चउवीसाए तित्थगराणं) एतेषां खलु चतुर्विंशते-
स्तर्थाकराणां—ते चौवीस तीर्थकरों की (चउवीसं पढमसिस्सिणी होत्था)
चतुर्विंशतिः प्रथमशिष्या आसन्—चौवीस पहले ही शिष्याओं की (तं जहा)
तद्यथा—जैमना नाम आ प्रनाणु छे—(वंभीय फग्गुसामा अजियाकासवीरई
सोमा, सुमणावारुणि सुलसाधारणिधरणी य धरणिधरा) ब्राह्मी च फल्लुः
श्यामा अजिता काश्यपी रतिः सोमा सुमनावारुणी सुलसाधारणीधरणी
च धरणिधरा—(१) ब्राह्मी, (२) फल्लु, (३) श्यामा, (४) अजिता, (५) काश्यपी,

दोका-‘एषसि ण’ इत्यादि-एतेषां सल्ल चतुर्विंशतेस्तीर्यकराणां चतुर्विंशतिः प्रथमशिष्या भासन्, स जहा-ब्राह्मी च फल्लु इयामा भमिता काडयपीरतिः

काडयपी ५, रति ६ सोमा ७ सुमना ८ चारुणी ९ सुलसा १० चारणी ११ चरणि १२ चरणिचरा १३ (पउमा सिवा सुयी तह अजुया भाविपणा य रुक्खीय यधुवती पुप्फवती अज्जा अनिला य अहिया य) पद्मा शिवा भुविस्वयाऽङ्कुका भावितात्मा रत्ती च, यधुमती पुप्फवती आयाऽमिला भामिहिता-पद्मा १४ शिवा १५ भुति १६ अज्जा १७ रत्ती १८ यधु मती १९ पुप्फवती २० अमिला २१ (जक्खिणी पुप्फवला य चण्डणज्जा य भाटियाठ) यक्षिणी पुप्फवला च चन्दनायां च आसयाता -यक्षिणी २२ पुप्फवला २३ और चन्दना २४। ये आयागे भावितात्मायी। “उदिठो दितकुल्लवसा विमुद्धवसा गुणेहि उववेया” इन पदों का अर्थ पढ़िछे स्पष्ट कर दिया गया है। मा उसी के अनुसार जानना चाहिये (मित्थपय सयाण पढमा सिस्सिणी जिणवराणं) तीर्थप्रवर्तकानां प्रथमाः शिष्या जिन वराणाम्-ये स च पूर्वोक्त आयागे तीर्थप्रवर्तक जिनेन्द्र देवों की प्रथम शिष्याएँ थीं ॥मू० २०२॥

टीकार्थ-‘एषसि ण चउवीसाण’ इत्यादि-इन चौबीस तीर्थकर्तों की चौबीस प्रथम शिष्या थीं। उनके नाम इस प्रकार से हैं-ब्राह्मी १

(६) रति (७) सो (८) सुमना, (९) चारुणी, (१०) सुलसा (११) चारणी (१२) चरणि (१३) चरणिचरा, (पउमासिवासुयी तह अजुया भाविपणा य रुक्खीय य यधुवती, पुप्फवती अज्जा भमिला य अहिया य) पद्मा शिवा भुविस्वयाऽङ्कुका भावितात्मारत्ती च, यधुमती पुप्फवती आयाऽमिला भामिहिता-(१४) पद्मा, (१५) शिवा, [१६] भुति, (१७) अज्जा, (१८) रत्ती (१९) यधुमती (२०) पुप्फवती, (२१) अमिला, (जक्खिणी पुप्फवला य चण्डणज्जा य अहिया उ) यक्षिणी पुप्फवला च चन्दनायां च आसयाता -(२२) यक्षिणी (२३) पुप्फवला अने (२४) चन्दना ते आयागे भावितात्मा इती ‘उदिठोदि १ कुल्लवसा विमुद्धवसा गुणेहि उववेया’ आ पढाना अमती २ इता अमती सुप्रभां इयामा आवी छे तो तेभने अहं ते सुप्रभां लेहं वना (मित्थपयसयाणं पढमामिस्सिणी जिणवराणाम्) तीर्थप्रवर्तकानां प्रथमा शिष्या जिनवराणाम्-पूर्वोक्त ते आयागे तीर्थप्रवर्तक जिनेन्द्रदेवों की प्रथम शिष्या रत्ती ॥सू० २०२॥

टीका-‘एषसि ण चउवीसाण’ इत्यादि-ते चौबीस तीर्थकर्तों की प्रथम चौबीस शिष्याओं का नाम आ प्रमाण इति-[१] ब्राह्मी (२) जहा (३) चारणी (४)

गंगा । सुमना वारुणी सुलसा धारणी धरणी च धरणीधरा ॥४३॥ पद्मा शिवा
श्रुतिस्तथाऽञ्जुका भावितात्मारक्षी च । बन्धुमती पुष्पवती आर्याऽमिला चाभि-
हिता । यक्षिणी पुष्पचूला च चन्दनार्या च आख्याताः । उदितोदितकुलवंशा विशु-
द्धवशा गुणैरुपेताः । तीर्थप्रवक्तृकानां प्रथमाः शिष्या जिनवराणाम् ॥४५॥ सू. २०२॥

सम्प्रति द्वादशचक्रवर्तिनां पितृनामान्याह—

मूलम्—जम्बूद्वीपे णं दीपे भारहे वासे इमीसे ओसप्पिणीए
वारसचक्रवट्ठिपियरो होत्था, तं जहा—उसमे सुमित्ते विजए समु-
द्विजए य आससेणे य । विस्ससेणे य सूरु सुदंसणे कत्तवीरिए
चेवा॥४६॥ पउमुत्तरे महाहरि विजए राया तहेव य । बंभे वारमे
उत्ते पिउनामा चक्रवट्ठीणं ॥४७॥ सू. २०३॥

फल्लु २ इयामा ३ अजिता ४ काश्यपी ५ रति ६ सोमा ७ सुमना ८
वारुणी ९ सुलसा १० धारणी ११ धरणि १२ धरणिधरा १३ पद्मा
१४ शिवा १५ श्रुति १६ अञ्जुका १७ रक्षी १८ बन्धुमती १९ पुष्पवती
२० अमिला २१ यक्षिणी २२ पुष्पचूला २३ और चन्दना २४ ये आर्याए भावि-
तात्मा थीं । ‘उदितोदितकुलवंसा विशुद्धवंसा गुणेहि उववेया’ इन पदों का
अर्थ पढ़िले स्पष्टकर दिया गया है। सो उसी के अनुसार जानना चाहिये। ये
सब पूर्वोक्त आर्या ये तीर्थप्रवर्तक जिनेन्द्र देवों की प्रथम शिष्याएँ थीं ॥सू. २०२॥

शब्दार्थ—(जम्बूद्वीपे णं दीपे) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे—जम्बूद्वीप नामके इस
द्वीप में (भारहे वासे) भारते वर्षे—भारत वर्ष मे (इमीसे ओसप्पिणीए) अस्या-
मवसर्पिण्यां इस अवसर्पिणीकाल में (वारस चक्रवट्ठिपियरो होत्था) द्वादश-

अजिता, (५) काश्यपी, (६) रति, (७) सोमा, (८) सुमना, (९) वारुणी, [१०]
सुलसा, (११) धारणी, (१२) धरणि, (१३) धरणिधरा, (१४) पद्मा, (१५) शिवा,
(१६) श्रुति, (१७) अञ्जुका, (१८) रक्षी, (१९) बन्धुमती, (२०) पुष्पवती, (२१)
अमिला, (२२) यक्षिणी, (२३) पुष्पचूला, अने (२४) चन्दना ते आर्याओ भावि-
तात्मा हुती “उदितोदितकुलवंसा विशुद्धवंसा गुणेहि उववेया” ते पदोने
अर्थ आगण आपी दंडा छे तो त्या नेछे देवे ओ सधणी पूर्वोक्त आर्याओ
तीर्थप्रवर्तक जिनेन्द्रदेवोनी पछेदी शिष्याओ हुती ॥ सू. २०२॥

शब्दार्थ—(जम्बूद्वीपे णं दीपे) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे—जम्बूद्वीप नामना
आ द्वीपमा (भारहे वासे) भारते वर्षे—भारतवर्षमा (इमीसे ओसप्पिणीए)
अस्यामवसर्पिण्याम्—आ अवसर्पिणीकालमा (वारसचक्रवट्ठिपियरो होत्था)

टीका—‘जंपुरीव ण’ इत्यादि—जम्बूद्वीपे स्वर्ग द्वीपे भारते वर्षेऽह्मपारमर्षिणा
 द्वादश चक्रवर्तिपितर आसन, तद्यथा—ऋषभः सुमित्र विजय समुद्रविजयभ्रा-
 सनम् । विश्वसेनश्च सुरः सुदर्शनः कार्णवीर्यश्चैव ४६॥ पद्मोत्तरो महाहरि विजया
 राजा तथैव च । यद्वा द्वादश उक्तानि पितृनामानि चक्रवर्तिनाम् ॥४७॥ सु २०३॥

चक्रवर्तिपितर आसन्-या इ चक्रवर्तिर्गो के पितृजन हुए हैं (त जहा) मयाथा-
 उनके नाम इस प्रकार से हैं—(उसमे) ऋषभ—ऋषभ (सुमित्रे) सुमित्र—
 सुमित्र, (विजय) विजयः—विजय (समुद्रविजय य) समुद्रविजयभ्रम समुद्र
 विजय, (आससेणे य) अश्वसेनभ्रम—अश्वसेन (विस्त्रसेणे य) विश्वसेनभ्र-
 मिश्वमन (सुरे) सुर—सुर (सुदर्शने) सुदर्शन, (कतवीरिण चैव) कत
 घायक—कार्णवीर्य (पठमुत्तरे) पद्मोत्तर—पद्मोत्तर, (महाहरी) महाहरि—
 महाहरि (गया विजय) राजा विजय—राजा विजय (यारमे वमे) द्वादश
 ब्रह्मा—बारहवें ब्रह्मा (चक्रवर्ति ण पितृनामा उत्ते) चक्रवर्तिनां पितृनामानि
 उक्तानि—ये चक्रवर्तिगो के पितृजना के नाम कहें ॥ सु० २ ॥

टीकार्थ—जम्बूद्वीपे ण दीव भारद्वासे इत्यादि—जम्बूद्वीप नाम के इस
 द्वीप में भारतवर्ष में इस अवसरपिणी काल में बारह चक्रवर्तियों के
 पिता हुए हैं । उनके नाम इस प्रकार से हैं—ऋषभ, सुमित्र विजय,
 समुद्रविजय अश्वसेन, विश्वसेन, सुर सुदर्शन, कार्णवीर्य पद्मोत्तर, महाहरि,
 राजा विजय और बारहवें ब्रह्मा ये चक्रवर्तियों के पिता के नाम कहें ॥ सु २०३॥

द्वादशचक्रवर्तिपितर आसन्-या इ चक्रवर्तिथिना पितृनां नामोक्तानि (त महा)
 तद्यथा—या मनावे छे—(उसमे) ऋषभ—ऋषभ, (सुमित्रे) सुमित्र—सुमित्र,
 (विजय) विजयः—विजय, (समुद्रविजय य) समुद्रविजयभ्रम—समुद्रविजय,
 (आससेणे य) अश्वसेनभ्रम—अश्वसेन, (विस्त्रसेणे य) विश्वसेनभ्रम—विश्वसेन
 (सुरे) सुरः यः (सुदर्शने) सुदर्शन—सुदर्शन, (कतवीरिण चैव) कार्ण
 वीर्यश्चैव—कार्णवीर्य (पठमुत्तरे) पद्मोत्तरा—पद्मोत्तर, (महाहरी) महाहरि—
 महाहरि (गया विजय) राजा विजय—राजा विजय, (यारमे वमे) द्वादश ब्रह्मा—
 अने बारहवा ब्रह्मा (चक्रवर्ति ण पितृनामा उत्ते) चक्रवर्तिनां पितृनामानि
 उक्तानि—ये ब्रह्मावे चक्रवर्तिथिना पितृनां नाम कहें छे ॥ सु २ ॥

टीका—‘जंपुरीव ण दीव भारद्वासे इत्यादि—जम्बूद्वीपनामा भारत
 वर्षमा या अवसरपिणीकालमा ये बार चक्रवर्तिथि यथा तेभ्यः पितृनां नाम
 अनुक्रमेण प्रभावे छे—ऋषभ सुमित्र, विश्व समुद्रविजय अश्वसेन विश्व
 से सुर सुदर्शन, कार्णवीर्य पद्मोत्तर महाहरि राजा विजय अने ब्रह्मा
 उपरांत नामोक्तानि । पितृनां छे ॥ सु २ ॥

संप्रति चक्रवर्तिना मातृनामान्याह--

मूलम्--जंबूद्वीवे णं दीवे भारहे वासे इमीसे ओसप्पिणीए
वारसचक्रवट्टीमायरो होत्था, तं जहा-सुमंगला जसवती भद्रा
सहदेवी अइरा सिरिदेवी । तारा जाला मेरा वप्पा चुल्लणि य
पच्छिमा ॥ सू० २०४ ॥

टीका--'जंबूद्वीवे' इत्यादि-जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षेऽस्यामवसर्पिण्यां

चक्रवर्तियों की माताओं के नाम अब सूत्रकार कहते हैं-

शब्दार्थ--जंबूद्वीवे णं दीवे) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे-इस जंबूद्वीप नामके
द्वीप में (भारहे वासे) भारते वर्षे-भारतवर्ष में (इमीसे ओसप्पिणीए) अस्या-
मवसर्पिण्यां-इस अवसर्पिणी काल में (चक्रवट्टीमायरो वारस होत्था)
द्वादश चक्रवर्ति मातरोऽभूवन्-चक्रवर्तियों की बारह माताएँ थीं। (तंजहा)
तद्यथा-उनके ये नाम हैं (सुमंगला जसवती भद्रा सहदेवी अइरासिरि
देवी, तारा जाला मेरा वप्पा चुल्लणि य पच्छिमा) सुमङ्गला यशस्वती
भद्रा सहदेवी अचिरा श्री देवी, तारा ज्वाला मेरा वप्पाचुल्लनी च पश्चिमा
सुमंगला १ यशस्वती २, भद्रा ३ सहदेवी ४ अचिरा ५ श्री ६ देवी
७ तारा ८ ज्वाला ९ मेरा १० वप्पा ११ और अन्तिम चुल्लनी १२ ॥ सू० १०४ ॥

टीका--'जंबूद्वीवे णं दीवे' इत्यादि-इस जंबूद्वीप नामके द्वीप में भारत

द्वीपे सूत्रकार चक्रवर्तिनीना मातृना नाम उक्ते छे -

शब्दार्थ--(जंबूद्वीवे णं दीवे) भारहे वासे इमीसे ओसप्पिणीए चक्रवट्टि-
मायरो वारस होत्था) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षे अस्यामवसर्पिण्यां
द्वादश चक्रवर्तिमातरोऽभूवन्-जम्बूद्वीप नामना द्वीपमा आवेला भारतवर्षमा आ
अवसर्पिणीकालमा जे बोधीस तीर्थ उक्ते यथा तेमनी माताओना नाम अनुक्रमे आ
प्रभावे छे (तं जहा) तद्यथा-आ प्रभावे--(सुमंगला, जसवती, भद्रा,
सहदेवी, अइरा, सिरिदेवी, तारा, जाला, मेरा, वप्पा, चुल्लणि य पच्छिमा)
सुमङ्गला यशस्वती भद्रा सहदेवी अचिरा श्रीदेवी, तारा ज्वाला मेरा वप्पा
चुल्लनी च पश्चिमा-(१) सुमंगला, (२) यशस्वती, (३) भद्रा, (४) सहदेवी,
(५) अचिरा, (६) श्री, (७) देवी, (८) तारा, (९) ज्वाला, (१०) मेरा, (११) वप्पा,
अने छेलां (१२) चुल्लनी ॥ सू० २०४ ॥

टीका--'जंबूद्वीवे णं दीवे' इत्यादि-आ जम्बूद्वीप नामना द्वीपमा

द्वादश चक्रवर्तिमातरोऽष्टमन्त्र, तथा—सुमङ्गलायस्यस्वती भद्रा सहदेवी अचिरा
श्रीदेवी । तारा ज्वाला मेरा यमा बुद्धनी च पञ्चिमा ॥५०॥

समवि चक्रवर्तिनां उत्तरीरत्नानां च नामान्पाद—

मूलम्—जम्बूद्वीपे ण दीवे भारहे वासे इमीसे ओसपिणीण
वारसचक्रवर्ती होत्था, त जहा—भरहो सगरो मघव सणकुमारो य
रायसल्लो । सती कुथू य अरो हवइ सुभूमो य कोरव्वो ॥४८॥ नवमो
य महापउमो हरिसेणे चैव रायसल्लो । जयनामो य नरवई धारमो
वमदत्तो य ॥४९॥ एएसिं वारसण्ह चक्रवर्तीण वारस इत्थिरयणा
होत्था, त जहा—पडमा होइ सुभवा भइ सुणदा जया य विजया
य । किण्हसिरी सूरसिरी पउमसिरी वसुधरादेवी ॥५०॥ लच्छिमई
कुत्तमई इत्थिरयणाण नामाह ॥सू २०५॥

वर्ष में इस भवसर्पिणी काल में चक्रवर्तियों की चारह माताएँ थीं ।
उनके ये नाम हैं—सुमङ्गला यशस्यती भद्रा, सहदेवी, अचिरा, श्री, देवी
तारा, ज्वाला, मेरा, यमा, और अन्तिम बुद्धनी ॥सू० २०४॥

अब सूत्रकार चक्रवर्तियों के तथा उनके स्त्री रत्नों के नाम पकट
करते हैं—

जम्बूद्वीपे—(जम्बूद्वीपे ण दीवे) जम्बूद्वीपे ज्वलु द्वीपे—जम्बूद्वीप नामके द्वीप
में (भारहे-वास) भारते ययें—भारत वर्ष में (इमीसे ओसपिणीण) अस्या
महसर्पिण्यां—इस भवसर्पिणी काल में (वारस चक्रवर्ति होत्था) द्वादश चक्र

आवेदा अष्टवर्षां आ अवसर्पिणीकाले १२ चक्रवर्तिभेदां १२ माताभेदां
नाम अनुक्रमे आ प्रभावे उता—सुमङ्गला, यशस्यती भद्रा, सहदेवी, अचिरा,
श्री देवी तारा, ज्वाला मेरा यमा बुद्धनी ॥सू २०४॥

४८ सूत्रकार चक्रवर्तिभेदां तथा तेभना चलीरत्नानां नाम जतावे ॥—

मूलम्—(जम्बूद्वीपे ण दीवे) जम्बूद्वीपे ज्वलु द्वीपे—जम्बूद्वीप नामका
द्वीपमें आवेदा (भारहे-वास) भारते ययें—अष्टवर्षां (इमीसे ओसपिणीण)
अस्यामवसर्पिण्याम्—आ अवसर्पिणीकालमें (वारस चक्रवर्ति होत्था) १२

वर्तिनोऽभूवन्-वारह चक्रवर्ती हुए है (तजहा) तद्यथा-उनके नाम ये हैं
 भरहो सगरोमधव सणकुमारो य रायसदूलो मती कुयु य अरो य हवड
 सुभूमो य कोरव्वो) भरतः सगरो मधवा सनत्कुमारश्च राजशार्दूलः शान्तिः
 कुन्धुश्च अरो भवति सुभूमश्च कौरव्यः-भरत १ सगर २, मधवा ३ सनत्कुमार
 ४ ज्ञांति ५ कुन्धु ६ अर ७ सुभूम, ८ (नवमो य महापडमो हरिसेणे
 चेव रायसदूलो जयनामो य नरवई वारमो वंभदत्तो य) नवमश्च महापडो
 हारिषेणश्चैव-राजाशार्दूलः जयनामा च नरपतिर्द्वादशो ब्रह्मदत्तश्च-महा
 पड ९, हरिषेण १०, जय ११ और ब्रह्मदत्त १२। (एएसि वारसणं
 चक्रवर्तीणं वारसइत्थिरयणा होत्था) एतेषां द्वादशानां चक्रवर्तिनां द्वादश
 स्त्रीरत्नान्यासन्-इन वारह चक्रवर्तियों के बाह स्त्री रत्न थे। (तंजहा)
 तद्यथा-उनके नाम ये हैं-(पढमो होइ सुभद्रा, भद्र सुणदा, जया य
 विजया य किण्हसिरी सूरसिरी पडमसिरी वसुंधरा देवी लच्छी मई
 कुरुमई) प्रथमा भवति सुभद्रा, भद्रा सुनन्दा जया य च विजया च, कृष्ण
 श्रीः सूर श्रीः पद्मश्री वसुंधरा देवी लक्ष्मीवती कुरुमती-पहिली सुभद्रा
 फिर दूसरी भद्रा, तीसरी सुनन्दा, चौथी जया, पांचवी विजया छठवीं
 कृष्णश्री सातवीं सूर श्री आठवी पद्मश्री नववी वसुंधरा दसवीं देवी

चक्रवर्तिनो यथा तेभ्यो नाम आ प्रभाण्णे छि-(भरहोसगरो मधवंसणंकुमारो
 य रायसदूलो, संतीकुयु य अरो य हवड सुभूमो य कोरव्वो)भरतः सगरोम-
 धवासनत्कुमारश्च राजशार्दूलः, शान्तिः कुन्धुश्च अरो भवति सुभूमश्च
 कौरव्यः-(१) भरत, (२) सगर, (३) मधवा, (४) सनत्कुमार, (५) शान्ति, (६)
 कुन्धु, (७) अर, (८) सुभूम (नवमो य महापडमो हरिसेणे चेव रायसदूलो,
 जयनामो य नरवई वारमो वंभदत्तो य) नवमश्च महापडो हरिषेणश्चैव
 राजशार्दूलः जयनामा च नरपतिर्द्वादशो ब्रह्मदत्तश्च-(९) महापड, (१०)
 हरिषेण, (११) जय अने (१२) ब्रह्मदत्त (एएसि वारसणं चक्रवर्तीणं वारस
 इत्थिरयणा होत्था)एतेषां द्वादशानां चक्रवर्तिनाम् द्वादशस्त्रीरत्नान्यासन्-
 ते ऽथ चक्रवर्तिनां आर स्त्रीरत्नानां इत्ता (तं जहा) तेभ्योना नाम आ प्रभाण्णे इत्ता-
 (पढमो होइ सुभद्रा, भद्र सुणदा, जया य विजया य, किण्हसिरी सूरसिरी,
 पडमसिरी वसुंधरादेवीलच्छीमईकुरुमई) प्रथमा भवति सुभद्रा,भद्रा सुनन्दा
 जया च विजया च, कृष्णश्रीः सूरश्रीः पद्मश्रीः वसुंधरादेवी, लक्ष्मीवती
 कुरुमती-(१) सुभद्रा, (२) भद्रा, (३) सुनन्दा (४) जया, (५) विजया, (६)
 कृष्णश्री, (७) सूरश्री, (८) पद्मश्री, (९) वसुंधरा, (१०) देवी, (११) लक्ष्मीवती,
 १३७

टीका—'जंघुरीवे ण' इत्यादि—जम्बूद्वीप खलु द्वीपे भारते वर्षेऽस्यामस्तपिष्णो
 द्वादश चक्रवर्तिनाऽभ्युपन तद्यथा—भरत सगरा मधवा सुनत्कुमारश्च राजाश्चैन ।
 प्राति कुशुभ अरो भरति सुभूमश्च कौण्ड्य । ४८॥ नवमश्च महापद्मा हरिपण
 श्वेव राज्ञान्म । जयनामा च नरपतिर्द्वादशा ब्रह्मदक्षश्च॥४९॥ एतेषां द्वादशानां
 चक्रवर्तिनां द्वादशस्त्रीरत्नान्यासन्, तद्यथा—मयमा भवति सुभद्रा मद्रा सुनन्दा
 जया च विजया च । कृष्णश्री श्वरश्री पद्मश्रीर्वसु चरः, दक्षी ॥५०॥ रुक्मीचती
 रुक्मती स्त्रीरत्नानां नामानि ॥५०॥

ममति बन्धदेववामुदेराग्निनां मातृपितृनामान्याह—

सूत्रम्—जम्बुद्वीपे ण दीवे भारते वासे—इमीसे ओसम्पिणीए
 नव धलदेव नव वासुदेवपियरो होत्था, त जहा—पयावई य धमे य

ग्यारहवीं लक्ष्मीवर्ती और बारहवीं रुक्मती (इद्वीप रथपाण नामाङ्क) स्त्रीरत्नानां
 नामानि इस प्रकार उन चक्रवर्तिन्या के स्त्रीरत्नों के य नाम हैं ॥सू० २०५॥

टीकाय—जम्बुद्वीपे ण दीवे इत्यादि—जम्बूद्वीप नामके द्वीप में भारतवर्ष में
 इन अक्षरपिणीकाल में बारह चक्रवर्ती हुए हैं। उनके नाम ये हैं—भरत
 सगर, मधवा, मनत्कुमार, प्राति, कुशुभ, अर, सुभूम, महापद्म, हरिपण
 जय और ब्रह्मदक्ष। ये सब चक्रवर्ती राजाओं सिंह जैसे विविष्ट शक्ति
 वाली होते हैं। य बारह चक्रवर्तिन्या के नाम हैं—इन बारह चक्रवर्तिन्यों
 के बारह स्त्री रत्न थे। उनके नाम ये हैं—पहिली सुभद्रा, फिर इमरी
 मद्रा, तीसरी सुनदा, चौथी जया, पाँचवीं विजया छठी कृष्णश्री,
 सातवीं रुक्मी भारती पद्मश्री, नववीं वसुंधरा, दसवीं देवी, ग्यारहवीं
 लक्ष्मीवर्ती और बारहवीं रुक्मती, इस प्रकार उन चक्रवर्तिन्यों के स्त्री
 रत्नों के य नाम हैं ॥सू० २०५॥

अन (१) जम्बुद्वीपे (इथ्यायपाण नामाङ्क) स्त्रीरत्नानां नामानि—७५२३३३
 प्रसारना न चक्र नि येली य नीना नाम दत्ता ॥५२ २०५॥

टीकाय—'जंघुरीपण दीप' इत्यादि—जम्बूद्वीप नामके द्वीप में भारतवर्ष में इन अक्षरपिणीकाल में इन अक्षरपिणीकाल में
 नामना द्वादशमासपुत्रा आरुद्रवर्षाभां आरुद्रवर्षाभां यथा है तेमना नाम आ
 प्रमत्त ॥ भरत, मधवा, मनत्कुमार, प्राति, कुशुभ, अर, सुभूम, महापद्म
 हरिपण जय और ब्रह्मदक्ष। ये सब चक्रवर्ती राजाओं सिंह जैसे विविष्ट शक्ति
 वाली होते हैं। य बारह चक्रवर्तिन्या के नाम हैं—इन बारह चक्रवर्तिन्यों
 के बारह स्त्री रत्न थे। उनके नाम ये हैं—पहिली सुभद्रा, फिर इमरी
 मद्रा, तीसरी सुनदा, चौथी जया, पाँचवीं विजया छठी कृष्णश्री,
 सातवीं रुक्मी भारती पद्मश्री, नववीं वसुंधरा, दसवीं देवी, ग्यारहवीं
 लक्ष्मीवर्ती और बारहवीं रुक्मती, इस प्रकार उन चक्रवर्तिन्यों के स्त्री
 रत्नों के य नाम हैं ॥सू० २०५॥

हो सोमो सिवेइ य । महासीहे अगिसीहे दसरह नवमे य वसु-
देवे ॥५१॥ जंबुद्वीवे णं दीवे भारहे वासे इमीसे ओसप्पिणीए णव
वासुदेवमायरो होत्था, तं जहां—मियावई उर्मा चैव पुढवी सीया य
अम्मया । लच्छिमई सेसमई केकेइ देवई तथा ॥५२॥ जंबुद्वीवे णं
दीवे भारहे वासे इमीसे ओसप्पिणीए णवबलदेवमायरो होत्था,
तं जहां—भद्दा तह सुभद्दा य सुप्पभा य सुदंसणा । विजया
वेजयंती य जयंती अपराजिया ॥५३॥ णवमीया रोहिणी य
बलदेवाण मायरो ॥ सू० २०६ ॥

अब सूत्रकार बलदेव और वासुदेव आदिकों के मातापिताओं के नाम स्पष्ट करते हैं—

शब्दार्थ—(जंबुद्वीवे णं दीवे) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे—इस जम्बूद्वीप नाम द्वीप में (भारहेवासे) भारतवर्ष—जो भरत नाम का क्षेत्र है उसमें—(इमीसे ओसप्पिणीए) अस्यामवसर्पिण्यां इस अवसर्पिणी काल में (नव बलदेव नव वासुदेव पियरो होत्था) नवबलदेव नववासुदेवपितरोऽभूवत्—नौबलदेव के और नौ वासुदेव के पिता हुए हैं। (तजहां) तद्यथा उनके नाम इस प्रकार हैं (पयावई य वमे य रुहो सोमो सिवेइ य, महासीहे अगिसीहे दसरह नवमे य वसुदेवे) प्रजापतिश्च ब्रह्मा च रुद्रः सोमः शिव—इति च, महासिंहोऽग्निशिखो दशरथो नवमश्च वसुदेवः—प्रजापति १, ब्रह्मा २, रुद्र ३, सोम

इवे सूत्रकार बलदेवो अने वासुदेवो आदिना मातापिताना नाम छडे छे—

शब्दार्थ—(जंबुद्वीवे णं दीवे) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे—आ जम्बूद्वीप नामना द्वीपमा (भारहे वासे) भारतवर्ष—जे भरत नामनु क्षेत्र छे तेमां (इमीसे ओसप्पिणीए) अस्यामवसर्पिण्याम्—आ अवसर्पिणीकालमा (नव बलदेव नव वासुदेव पियरो होत्था) नवबलदेव नववासुदेव पितरोऽभूवन्—नव बलदेवना अने नव वासुदेवना पिता थथा छे, (तं जहां) तद्यथा—तेभनां नाम आ प्रभाषे छे—(पयावई य वमे य रुहो सोमो सिवेइ य, महासीहे अगिसीहे दसरह नवमे य वसुदेवे) प्रजापतिश्च ब्रह्मा च, रुद्रः सोमः शिवइति च, महासिंहोऽग्निशिखो दशरथो नवमश्च वसुदेवः—(१) प्रजापति, (२) ब्रह्मा

४, शिव ५, महासिंह ६, अग्निशिख ७, दशरथ ८ और नवमां-वासुदेव ९। (जमुदीवे ण दीवे) जम्बूद्वीपं स्वल्प द्वीपे-इस जम्बूद्वीप में(भारहे वासे) भारते वर्षे-भारतवर्ष में (इमीसे ओसपिणीए)इस अवसरपिणी कास में (णववासुदेव मायरो होत्था) नव वासुदेवमातरोऽभूवन नौ वासुदेव की माताएँ हुई हैं। (तजहा) तयथा-उनके नाम ये हैं-(मियावई उमाचैव पुदवी सीया य अम्मया,लच्छिमई सेसमई केके देवई तहा)मृगावती उमा चैव पृथिवी सीता च अम्बिका लक्ष्मीवती शोपमती कैकेयी देवकी तथा मृगावती १ उमा २ पृथिवी ३ सीता ४ अम्बिका ५, लक्ष्मीवती ६ शोपमती ७ कैकेयी ८ और नववीं देवकी ९। (जमुदीवे ण दीवे भारहे वासे इमी से ओसपिणीए णव वलदेवमायरो होत्था) जम्बूद्वीपे स्वल्प द्वीपे भारते वर्षेऽस्यामवसरपिण्यां नव वलदेवमायरो वम्बुः-इस जम्बूद्वीप नाम क द्वीप में भारत वर्ष में अवसरपिणीकास में नौ वलदेव की माताएँ हुई हैं। (तजहा) तयथा-उनके नाम इस प्रकार हैं-(भरा तह सुमरा य सुप्पमा य सुदंसणा विजया वैजयंती य जयंती अपराजिया) भद्रा तथा सुभद्रा च सुप्रभा च सुदर्शना, विजया वैजयन्ती च जयन्ती अपराजिता-भद्रा १ सुभद्रा २, सुप्रभा ३, सुदर्शना ४, विजया ५, वैजयंती ६, जयंती

(३) २३, (४) सोम (५) शिव, (६) महासिंह, (७) अग्निशिख, (८) दशरथ आने (९) वासुदेव (जमुदीवेण दीवे) जम्बूद्वीपं स्वल्प द्वीपे-आ जम्बूद्वीपमां (भारहे वासे) भारते वर्षे-भारतवर्ष नामना क्षेत्रम, (इमीसे ओसपिणीए) आ अवसरपिणीकास (णव वासुदेवमायरो होत्था)नव वासुदेवमातरोऽभूवन्-नव वासुदेवा । नव माताओ वर्य जयंती (तं जहा) तेभनां नाम आ प्र वि ६१। (मियावई उमाचैव पुदवीसीया य अम्मया,लच्छिमई सेसमई केके देवई तहा)मृगावती उमाचैव पृथिवी सीता च अम्बिका,लक्ष्मीवती शोपमती,कैकेयी देवकी तथा-(१) मृगावती, (२) उमा, (३) पृथिवी, (४) सीता (५) अम्बिका (६) लक्ष्मीवती (७) शोपमती, (८) कैकेयी आने (९) देवकी (जमुदीवे ण दीवे) जम्बूद्वीपेण स्वल्प द्वीपे-जम्बूद्वीपमां (भारहे वासे इमीसे ओसपिणीए) वलदेवमायरो होत्था) भारते वर्षेऽस्यामवसरपिण्यां नव वलदेवमायरो वम्बुः-भारतवर्ष मां आ अवसरपिणीकासमां नव वलदेवानां ये नव माताओ वर्य जयंती (तं जहा) तयथा-तेभनां नाम आ प्रभावे ३-(भरा तह सुमरा य सुप्पमा य सुदंसणा विजया वैजयंती य जयंती अपराजिया)-भद्रा तथा सुभद्रा च सुप्रभा च सुदर्शना, विजया वैजयन्ती च जयन्ती अपराजिता-(१) भद्रा (२) सुभद्रा (३) सुप्रभा (४) सुदर्शना (५) विजया, (६) वैजयन्ती (७) जयन्ती

टीका—‘जंबूद्वीपे’ इत्यादि—जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षेऽस्यामवसर्पिण्यां नववलदेवनवासुदेवपितरोऽभूवन्, तद्यथा—प्रजापतिश्च ब्रह्मा च रुद्रः सोमः शिव इति च । महाप्रिहोऽग्निशिखो दशरथो नवमश्च—वासुदेवः ॥५१॥ जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारतेवर्षेऽस्यामवसर्पिण्यां नववासुदेवमातरोऽभूवन्, तद्यथा—मृगावती उमा चैव पृथिवी सीता च अम्बिका लक्ष्मीवतीशोमती कैकेयी देवकीतथा॥५२॥ जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारतेवर्षेऽस्यामवसर्पिण्यां नववलदेवमातरो बभूवुः, तद्यथा—भद्रा तथा सुभद्रा च सुप्रभा च सुदर्शना । विजयावैजयन्ती च जयन्ती अपराजिता । नवमिका रोहिणी च चलदेवानां मातरः ॥५३॥ सु. २०६॥

७, अपराजिता ८ (णवमीया रोहिणी य) नवमिका—रोहिणी च—नौमी रोहिणी । (चलदेवाण मायरो) चलदेवानां मातरः—इस प्रकार ये नौ चलदेवों की नौ माताएँ हैं ॥सू० २०६॥

टीकार्थ—‘जंबूद्वीपे ण दीवे’ इत्यादि—इम जम्बूद्वीप नामके द्वीप में जो भरत नामका क्षेत्र है उसमें इस अवसर्पिणी कालमें नौ चलदेव और नौ वासुदेव के पिता हुए हैं । उनके नाम इस प्रकार से हैं—प्रजापति, ब्रह्मा, रुद्र, सोम, शिव, महासिंह, अग्निशिख, दशरथ और नवमां वसुदेव । इम जंबूद्वीप में भारतवर्ष में इस अवसर्पिणीकाल में नौ वासुदेव की माताएँ हुई हैं । उनके नाम ये हैं मृगावती १, उमा २ पृथिवी ३ सीता ४ अम्बिका ५ लक्ष्मीवती ६ शेषमती ७, कैकेयी ८ और नववीं देवकी ९ । इस जंबूद्वीप नाम के द्वीप में भारत वर्ष में इस अवसर्पिणी काल में नौ चलदेव की माताएँ हुई हैं । उनके नाम इस प्रकार से हैं

(८) अपराजिता (णवमीया रोहिणी य) नवमिका रोहिणी च—अने (९) रोहिणी (चलदेवाण मायरो) चलदेवानां मातरः—अने नव अणदेवोनी नव माताओंनां नाम हुतां ॥सू २०६॥

टीकार्थ—‘जंबूद्वीपे ण दीवे’ इत्यादि—आ जंबूद्वीप नामना द्वीपमा आवेला भरत नामना क्षेत्रमा आ अवसर्पिणीकाणमां नव अणदेव अने नव वासुदेवना पिता थया छे, तेमना नाम आ प्रमाणे छे—प्रजापति, ब्रह्मा, रुद्र, सोम, शिव, महासिंह, अग्निशिख, दशरथ अने नवमा वसुदेव. आ जंबूद्वीपमा आवेला भारतवर्षमा आ अवसर्पिणीकाणमा नव वासुदेवोनी जे नव माताओ हुनी तेमना नाम आ प्रमाणे छे—(१) मृगावती, (२) उमा, (३) पृथिवी, (४) सीता, (५) अम्बिका, (६) लक्ष्मीवती, (७) शेषमती, (८) कैकेयी अने (९) देवकी आ जंबूद्वीपमा आवेला भरतक्षेत्रमा आ अवसर्पिणीकाणमां नव अणदेवोनी जे नव

અધુના ધન્યદેવશાસુદેવાનો મુગનિર્દેશપૂર્વક નાથાયાદ—

મૂલમ—જબુદીવે ન દીવે મારદ્દે ઘાસે ઇમીસે ઓસપ્પિનીય
નવ દસારમદલા હોત્યા, ત જહા—ઉત્તમપુરિસા મજ્જિમપુરિસા
પહાણપુરિસા ઓયસી તેયસી વધ્ધસી જસસી છાયસી કતા સોમા
સુભગા પિયદસણા સુરુઆ સુહસીલસુહાભિગમસવ્વજળણયણકતા
ઓહવલા અનિવલા મહાવલા અનિહતા અપરાહ્યા સત્તુમદ્દણા રિપુ
સહસ્સમાણમહણા સાણુકોસા અમચ્છરા અચ્ચલા અચ્ચા મિયમ
જુલપલાવહસિયગમીરમધુરપદ્ધિપુણસચ્ચવયણા અવ્વુવગયવચ્છલા
સરણા લક્ષ્ણવજળણગુણોષવેયા માણુમ્માણપમાણપદ્ધિપુણસુજાય
સવ્વગસુદરગા સસિસોમાગારકતપિયદસણા અમરિસણા પયદદ્દ
પ્પયારા ગમીરદરિમણિજ્ઞા તાલદ્ધ આવ્વિદ્ધગરુલકેઝ મહાઘણુવિકદ્ધયા
મહાસત્તસાયરા દુદ્ધરા ધણુદ્ધરા ધીરપુરિસા જુદ્ધકિત્તિપુરિસા વિઝલ
કુલસમુચ્ચવા મહારયણવિહાદગા અદ્ધમરહસામી સોમા રાયકુલવ
સતિલયા અજિયા અજિયરહા હલમુસલકણકપાણી સત્થવચ્ચગય
સત્તિનદગધરા પવરુચ્ચલસુક્કતયિમલગોસ્થુમતિરીદ્ધધારી કુદ્ધલઝ્ઞોદ્ધયા
ળણા પુદ્ધરીયળણા પ્પકાવલિકટલદ્ધયવચ્ચા સિરિવચ્છસુલછણા
ધરજસાસવ્વોડય સુરમિક્કસુમરચ્ચિત્તપલ્લવસોમતકસવિકસત્તવિચિત્ત
વરમાલરદ્ધયવચ્છા અટ્ટસયવિમત્તલક્ષ્ણપસસ્થસુદરવિરદ્ધયમગા
મત્તગયવરિદ્ધલિયવિષ્ણમવિલસિયગદ્ધે સારયનવથળિયમદ્ધુરગમીર

મદ્દા, સુમ્મા, સુમ્મા, મુદ્ધાના, યિમ્મા, યેમ્માની પ્રપત્તી અપરાજિતા
ધીર નીમી રોદ્ધિની । ઇસ પ્રકાર પે નો વળટેયો પી નો સાવાળે દે ॥ મુ૦૨૦૬॥

માતાએ ધર્મ ગ્રંથ તેમના નામ આ પ્રમાણે ઉ-જદ્ધા મુજદ્ધા મુમ્મા મુદ્ધાના,
વિષ્ણુઃ વચ્ચવન્તા જ્ઞવન્તા વચ્ચવન્તિયા અને રોદ્ધિની ॥ સુ. ૬ ૬॥

कुचनिग्धोसदुंदुभिसरा कडिसुत्तगनीलपीयकोसेज्जवाससा पवरदित्त-
तेया नरसीहा नरवई नरिंदो नरवसहा मरुयवसभकप्पा अब्भहिय-
रायतेयलच्छीए दिप्पमाणा नीलगपीयगवसणा दुवे दुवे रामकेसवा
भायरो होत्था, तं जहा—तिविट्ट जाव कण्हे अयले जाव रामे
यावि अपच्छिमे ॥५४॥ सू० २०७॥

अब सूत्रकार बलदेव और वासुदेवों के गुण निर्देशपूर्वक नामों का
कथन करते हैं—

शब्दार्थ—(जंबूद्वीपे णं दीवे भारहे वासे इमीसे ओसप्पिणीए) जम्बूद्वीपे
खलु द्वीपे भारते वर्षेऽस्यामवसर्पिण्यां—इस जंबूद्वीप के वर्तमान भरतक्षेत्र
के अन्दर इस अवसर्पिणीमाल में (नव दसारमंडला होत्था) नव दशा-
रमण्डलानि आसन्—नौ वासुदेव और बलदेव हुए हैं (तं जहा) तद्यथा—(उत्तम-
पुरिसा) उत्तमपुरुषाः—तीर्थकरादिक ५४ उत्तमपुरुषों के मध्यवर्ती होने के
कारण उत्तमपुरुष, (मज्झिमपुरिसा) मध्यमपुरुषाः—तीर्थकर चक्रवर्ती और
वासुदेव आदिकों के बल आदि की अपेक्षा मध्यवर्ती होने के कारण
मध्यमपुरुष, (पहाणपुरिसाः) प्रधानपुरुषाः—उनके समय में उत्पन्न हुए पुरुषों
में शौर्य आदि की अपेक्षा प्रधान होने के कारण प्रधानपुरुष माने जाते हैं
(ओजंसी)ओजस्विनः—ओजस्वी प्रतापशाली थे, (तेयसी)तेजस्विनः—तेजस्वी थे,

इवे सूत्रकार णणदेवेऽने वासुदेवेना गुणाना निर्देश सङ्घित तेमना
नामे कहे छे—

शब्दार्थ—(जंबूद्वीपे णं दीवे भारहे वासे इमीसे ओसप्पिणीए) जम्बू-
द्वीपे खलु द्वीपे भारतेवर्षेऽस्यामवसर्पिण्यां—आ जंबूद्वीपना भरतक्षेत्रमा आ
अवसर्पिणी मालमा (नवदसारमंडला होत्था) नव दशारमण्डलानि आसन्—
नव वासुदेव अने णणदेव थया छे (तं जहा) तद्यथा—(उत्तमपुरिसा) उत्तम-
पुरुषाः—तीर्थकरादि ५४ उत्तम पुरुषोमां मध्यवर्ती होवाने कारणे उत्तमपुरुष,
(मज्झिमपुरिसा) मध्यमपुरुषाः—तीर्थकर, चक्रवर्ती अने वासुदेव आदिना णणनी
अपेक्षाये मध्यवर्ती होवाने कारणे मध्यमपुरुष अने (पहाणपुरिसा)प्रधानपुरुषाः—
तेमना समकालीन पुरुषोनी अपेक्षाये शौर्य आदि भावतमा प्रधान होवाने
कारणे तेमने प्रधान पुरुषो गणवाभा आवे छे (ओजंसी)ओजस्विनः—तेओ
ओजस्वी, (तेयंसी) तेजस्विनः—तेजस्वी, (वचंसी) वर्चस्विनः—वर्चस्वी,

(यवसी) यवस्त्रिन यवस्त्री ये, (जससी) यजस्त्रिन यजस्त्री ये, (छापसी) छाप
 यन्त छापयन्त-यमकीछे शरीरघाते ये (कता) कान्ता-कान्त ये (सोमा) सौम्य-सौम्य (सुमगा) सुमगा-
 सुमग ये, (पियदर्शना) प्रियदर्शना-प्रियदर्शन
 (सुरूवा) सुरूवा-सुरूवाले ये, (सुहसील) सुहामिगमसव्यजनयजकता
 शुभशील सुहामिगम्य सबजननयनकाता-इनका धर्माव यहा अक
 था, हर एक माभी इनसे बिना किसी शिष्टक के मिल सक्ता था। सम
 स्तजन उर्हे देखकर बहुत खुश होते थे। (ओहवला) ओहवला-ओह
 वलाले (स्वामाधिक) ये (अहवला) अतिथला-अधिक बलिष्ठ ये (महावला)
 महावला-इनका पराक्रम प्रशस्त था (अनिहता) अनिहता-निरुपद्रव आशुभाव
 होने के कारण ये घातवर्जित थे (अपराह्या) अपराजिता-अपराजित
 सधुमरणा) शत्रुमर्दना-शत्रुओं के य मर्दक ये (रिपुसहसमाणमहणा) रि
 सहस्रमानमयना-इनारों शत्रुओं का इनके समस्त मान मथिन हो जाता
 था (मानुकीसा) मानुकाशा-जो इनके समस्त शत्रु माना या उनके ऊपर
 ये महा दयालु रहते थे। (अमच्छरा) अमत्सरा-मत्सरभाव से ये राहत
 थे। (अचवला) अचपला-मन, वचन और काय की चपलता इनमें नहीं
 थी। (अचडा) अचडा-ये बिना कारण किसी के ऊपर कभी भी क्रोध
 (जससी) यजस्त्रिन-यजस्त्री (छापसी) छापयन्त-छापयन्त-छापयन्त
 शरीरयण (कता) कान्ता-कान्त (सोमा) सौम्य-सौम्य (सुमगा) सुमगा-
 सुमग (पियदर्शना) प्रियदर्शना-प्रियदर्शन-नेमनु इथन प्रिय छाने तेव
 अने (सुरूवा) सुरूवा-सुरूवाले (सुहसील) सुहामिगमसव्यजनय
 जकता) शुभशीलसुहामिगम्यसबजननयनकाता-तेभने १५भाव धमे।
 चारे। दता इहेक अनुभ्य तेभने डोर्धपण जातना थडोथ बिना भनी शकता दता
 अने तेभने जेष्ठने सबजा होके वजा पुथ यवा दता (ओहवला) ओहवला-
 तेभनाभां जजने। ते। ज्योथ दता (अहवला) अतिथला-तेज्ये धवा जजवान
 दता (महावला) महावला-तेज्ये प्रशस्त पराक्रमवाण्य दता, (अनिहता)
 अनिहता-निरुपद्रव आशुभाव जा दताधी डोर्धथी पण तेभनी दता थड शकती
 नहीं (अपराह्या) अपराजिता-तेभने डोर्ध दशनी शकत नहीं, (सधुमरणा)
 शत्रुमर्दना-तेज्ये शत्रुज्येनु मर्दन करनाय दता (रिपुसहस्रमाणमहणा)
 रिपुसहस्रमानमयना-दज्ये। शत्रुज्येना इप-मान-नु मदन करनारा दता
 (मानुकीसा) मानुकाशा-तेभन नभनाश करके तेज्ये महा दयालु रहत दता
 (अमच्छरा) अमत्सरा-अभिमानधी रहित दता (अचवला) अचपला-
 मन वचन अने शवानि चपलताधी रहित दता (अचडा) अचडा-डोर्धपण

नहीं करते थे (मियमंजुलपलावहसिया) मितमञ्जुलपलावहसिताः—
 ये परिमित वातचीत करते थे तथा जो भी कुछ कहते वह बहुत
 आनंददायक होता था इनका जो हास्य होता था वह भी परिमित एवं
 घडा मनोमुग्धकारी होता था । (गम्भीरमधुरपडिपुण्णसच्चवयणा) गम्भीर
 मधुरप्रतिपूर्णसत्यवचनाः—रोपतोष और शोक आदिविकार से वर्जित
 होने के कारण गम्भीर श्रवण—सुखकारी होने के कारण मधुर और अर्थ
 बोधजनक होने के कारण प्रतिपूर्ण ऐसे इनके सत्यवचन होते हैं ।
 (अवमुगयवच्छला) अभ्युपगतवत्सला ये शरणागतवत्सल होते हैं । (सरण्या)
 शरण्याः—दीन हीनजनों की रक्षा करने में ये कटिबद्ध रहते हैं (लक्खण-
 वंजणगुणोववेया) लक्षणव्यञ्जनगुणोपपेताः—वज्र स्वस्तिक और चक्र आदि
 चिह्नरूप लक्षणों तथा तिल, मसा आदिरूप व्यंजनों के महर्दिलाभादि
 रूप गुणों से ये युक्त होते हैं । (माणुम्माणपमाणपडिपुण्णसुजायसव्वंग
 सुंदरंगा) मानोन्मानप्रमाणप्रतिपूर्णसुजातसर्वाङ्गसुन्दराङ्गाः—मान, उन्मान
 और प्रमाण से परिपूर्ण होने के कारण यथोचित सन्निवेशवाले हैं अंग
 जिसमें ऐसे सुन्दर शरीरवाले ये होते हैं । (मसि सोमागारकंतपियंदमणा)
 शशिसौम्याकारकान्तप्रियदर्शनाः—जिनका अवलोकन चन्द्रमा के समान
 व्यक्ति पर तेजो विना कष्ट कुछ करता नहता, (मियमंजुलपलावहसिया)
 मितमञ्जुलपलावहसिताः—तेजो परिमित वातचीत करना, आनंददायक
 वचनवाणा अने परिमित तथा मने हर हास्यवाणा होता (गम्भीरमधुरपडिपुण्ण-
 सच्चवयणा) गम्भीर मधुर प्रतिपूर्ण सत्यवचनाः—रोष, शोक आदि विकारથી
 रहित होवाने कारणे गम्भीर, सामान्यनारने सुप्रदायी होवायी मधुर, अने अर्थ-
 बोधक होवाने कारणे प्रतिपूर्ण अथवा सत्यवचन होवाना होता (अवमुगयवच्छला)
 अभ्युपगतवत्सला—तेजो शरणागतवत्सल होता, (सरण्या) शरण्याः—दीन,
 अने निराधारनु रक्षणी करवाने भाटे सदा तत्पर रहता होता, (लक्खणवंजण
 गुणोववेया) लक्षणव्यञ्जनगुणोपपेता—वज्र, स्वस्तिक, चक्र आदि शुभ लक्षणों
 तथा तिल, मसा आदिरूप व्यंजनोंना महर्दिलाभादिरूप शुद्धोधी तेजो युक्त
 होय छे, (माणुम्माणपमाणपडिपुण्णसुजायसव्वंगसुंदरंगा) मानोन्मानप्रमाण
 प्रतिपूर्णसुजातसर्वाङ्गसुन्दराङ्गाः—मान, उन्मान अने प्रमाणनी परिपूर्णताने
 बीधि तेमना अवयवो सप्रमाण अने सुडोण लागे छे. अने सप्रमाण अगोने
 बीधि तेमना शरीर अतिथय सुहर लागे छे (ससिसोमागारकंतपियंदमणा)
 शशिसौम्याकारकान्तप्रियदर्शनाः—जेमनु दर्शन अन्धमानी जेम आनंदजनक

आहादजनक और विघ को हरण करनेवाला होता है। तथा वर्षाकनन के मन में अपूर्व आहाद का कारण होता है। (अमरिसणा) अमर्पणाः—अपकारी जनों पर भी इन्हें शोष नहीं आता है। (पर्यहर्द्व्यगारा) प्रकाण्डदण्डप्रकारा—इनका नीतिका मेदरूप दण्ड प्रकार उत्कृष्ट होता है। (गमीर दरिसणिज्जा) गम्भीर दर्शनीया—इनकी अन्तर्दृष्टि अलक्ष्यमाण होने से ये बहुत ही गम्भीर दिखलाई देते हैं। (तामद् भोविद् गकुलकेऊ) तालव्यजोद्विद्वगस्तकेतव—बसदबों की पताछाएँ—बज्जाएँ—तालव्य के चिह्नों से अस्ति होती है और वामुदेवों की बज्जाएँ गरुड के चिह्न से युक्त होती हैं। (महाविकृष्टया) महाविकृष्टकाः—बड़े स बड़े वीर भी जिस धनुष को नहीं बहा सकते हैं उस धनुष को ये बहाते हैं। (महासस्वसागरा) महासस्वसागरा—विशिष्टयम के ये घारी होते हैं (हुदरा) 'बुधरा'—रणाङ्ग में प्रहार के समय कोई भी धनुषारी इन्हें धारण नहीं कर सकता है अर्थात् इन पर उसके धनुष का भार नहीं होता है। (धनुदरा) धनुधराः—ये बड़े भारी धनुषारी होते हैं (धीरपुरिमा) धीरपुरुषा—धीरपुरुषों में ही इनका पुरुषकोर विधि होता है। कातरों में नहीं। (जुद्ध किचिपुरिमा) युद्ध कीर्तिपुरुषाः—ये युद्ध जनितकीर्ति प्रधान पुरुष होते हैं। (विउलकुलसमुग्मया) विपुलकुलसमुद्गया—ये बड़े ऊँचे स्थानदान के

अने चित्ताक्षर डोय छ अने दशकने (निनारने) मनमा अपूर्व आह्लासावक डोय छ (अमरिसणा) अमर्पणा—अपकारी डोय पर पक्ष तेभने डोय बने। नधी (पर्यहर्द्व्यगारा) प्रकाण्डदण्डप्रकाराः—तेभने नीतिना बेद्वय दण्डप्रकार उत्कृष्ट डोय छ (गमीरदरिसणिज्जा) गम्भीरदर्शनीयाः—तेभनी अन्तर्दृष्टि अभय शाय तेवी डोय नधी, तेयो तेयो पक्ष अभीर डोय छ (तामद् भोविद् गकुलकेऊ) तालव्यजोद्विद्वगस्तकेतवः—मजदेवनी भत्ताभयो तालव्यधना निशानवाणी डोय छ अने वामुदेवनी पताभयो मरुद्वय निशानवाणी डोय छ (महाविकृष्टया) महाविकृष्टकाः—ये धनुष्यने नीरमा वीर पुरुष पक्ष बहावी शकते नधी ते धनुष्यने तेयो बहावी शके छ (महामस्वसागरा) महासस्वसागरा—तेयो विशिष्ट लज्जी मुक्त डोय छ (हुदरा) बुधरा—समराज्यमा डोयपक्ष धनुषारी पताना धनुष्यमाधी तेभने पर प्रहारे करी शकते नधी, अथवा नीला डोयपक्ष धनुषारी धारण न करी छके तेवा धनुष्यने धारण करनाय डोय छ (धनुदरा) धनुधराः—तेयो वज्र भार धनुषारी डोय छ (धीरपुरिमा) धीरपुरुषा—धीरपुरुषाभा ने तेभने पुरवारा विधि डोय छ, अभयमा नही (जुद्धकिचिपुरिमा) युद्धकीर्तिपुरुषा—तेयो युद्धजनित कीर्तिवाजा पुरयो डोय छ (विउलकुलसमुग्मया) विपुलकुल

होते हैं (महारणविद्याङ्गा) महारणविद्याटकाः—अपने पराक्रम से ये भयंकर से भी भयंकर रण को छिन्न भिन्न कर डालते हैं। (अर्द्धभरहसामी) अर्द्धभारतस्वामिनः—भाधे भरतक्षेत्र के ये स्वामी होते हैं। (सौमा) सौम्याः—समस्त मनुष्यों को इनसे बड़ा सुख-आनंद मिलता है। (रायकुलवंमनिलया) राजकुलवंशतिलकाः—राजवंश के तिलक समान थे। (अजिया) अजिताः—इन्हें कोई भी नहीं जीत सकता था। (अजियरहा) इनके रथ पर कोई शत्रु कब्जा नहीं कर सकता था। (हलमुसलकणकपाणी) हलमुसलकणकपाणयः—हल, मुसल और बाण इनके हाथों में रहा करते हैं। (संखचक्रगयनंदणधरा) शङ्खचक्रगदानन्दकधराः—शंख, चक्र, गदा और नन्दक-तलवार को ये धारण किये रहते थे (पवरुज्जलमुक्कंतविमलगोत्थुभतिरीडधारी) पवरोज्ज्वलशुक्लान्तविमलकौस्तुभतिरीडधारिणः—इनका स्वभाव श्रेष्ठ, देदीप्यमान, और शुभ्र अवयवों से युक्त कौस्तुभमणि को और मुकुट को धारण करने का होता है। (कुंडलउज्जोड्याणणा) कुण्डलोद्योतिताननाः—कुंडलों की चमक से इनका मुख सदा प्रकाशित रहता है। (पुंडरीयणयणा) पुण्डरीकनयनाः—इनके नेत्रकमल जैसे होते हैं। (एकावलिकण्ठलड्यवच्छा) एकावलिकण्ठ-

समुद्भवाः—ते धृष्टा आनन्दान कुटुम्बना डोय छे (महारणविद्याङ्गा) महारण-विद्याटकाः—तेओ पोताना पराक्रमथी लयंकरभा लयंकर स आभने पणु छिन्नभिन्न करी शके छे (अर्द्धभरहसामी) अर्द्धभारतस्वामिनः—तेओ अधी भरतक्षेत्रना शासक डोय छे (सौमा) सौम्या—सौम्य डोय छे सधणा बोकेने सुप्रदायी डोय छे (रायकुलवंमनिलया) राजकुलवंशतिलकाः—राजवंशभा तिलक समान डता (अजिया) अजिताः—तेओ अजेय डता. (अजियरहा) डोयपणु शत्रु तेभने रथ कब्जे करी शकते नही. (हलमुसलकणकपाणी) हलमुसलकणकपाणयः—तेओ हल, मुसल अने बाणने पोताना हाथभा धारणु करता डता, (संखचक्रगयनंदणधरा) शङ्खचक्रगदानन्दकधराः—तेओ शंख, चक्र, गदा अने तलवारने धारणु करता डता (पवरुज्जलमुक्कंतविमलगोत्थुभतिरीडधारी) पवरोज्ज्वलशुक्लान्तविमलकौस्तुभतिरीडधारिणः—तेओ श्रेष्ठ, देदीप्यमान अने शुभ्र कौस्तुभमणिने तथा मुकुटने धारणु करता डता (कुंडलउज्जोड्याणणा) कुण्डलोद्योतिताननाः—कुण्डोनी धुति (तेज) थी तेभना वदन सदा प्रकाशित रहेता डता (पुण्डरीयणयणा) पुण्डरीकनयनाः—तेभना नयन कमण जेवा सुंदर डता. (एकावलिकण्ठलड्यवच्छा) एकावलिकण्ठलड्यवक्षसः—तेभने ओक सेभने

है । (कटिसूत्रक नीलपीतकौशेयवाससा) कटिसूत्रक नीलपीतकौशेयवाससाः—इनके नील पीत रेशमीवस्त्र कणदोरे—करधनी से युक्त होते हैं । (पवरदित्ततेया) प्रवरदीप्ततेजसः—इनका प्रवरतेज सदा दीप्त रहता है । (नरसीहा) नरसिंहा—ये मनुष्यों में सिद्ध जैसे रहा करते हैं (नरवर्द्ध) नरपतयः—ये नरपति (नरिंदा) नरेन्द्राः—नरेन्द्र (नरवसहा) नरवृषभाः—और नरवृषभ कहलाते हैं । (मरुयवसभकप्पा) मरुद्वृषभकल्पाः—देवराज इन्द्र जैसे होते हैं । (अवभाहिंयरायतेयलच्छीए दिप्पमाणा) अभ्यधिक राजतेजोलक्ष्म्या दीप्यमानाः—ये राजलक्ष्मी के तेजसे बहुत अधिक दीपते रहते हैं । (नीलगपीयगवसणा) नीलकर्पीतकवसनाः—ये जिनवस्त्रों को पहिरते हैं वे नीले और पीले होते हैं । [दुवे दुवे रामकेसवा भायरो] छौ छौ रामकेशवौ भ्रातरौ—“ऐसे ये दो दो राम और केशव आपस में भाई रहते हैं” इस क्रम से नव वासुदेव और नव बलदेव होते हैं । [तिविट्ट जाव कण्हे] त्रिपिण्डो यावत् कृष्णः—त्रिपृष्ठ से लेकर कृष्ण तक तो नौ वासुदेव हुए हैं [अयले जाव रामे यावि अपच्छिमे] अचलो यावद्रामश्चापि अपश्चिमः—अचलसे लेकर रामतक नौ बलदेव हुए हैं ॥सू. २०७॥

नीलपीतकौशेयवाससा) कटिसूत्रक नील पीतकौशेयवाससाः—तेમના નીલ, પીળા, રેશમી વસ્ત્રો કે દોરાથી યુક્ત હોય છે. (પવરદિત્તતેયા) પ્રવરદીપ્તતેજસઃ—તેઓ શ્રેષ્ઠ પ્રકારના સદા દેહીપ્યમાન તેજવાળા હોય છે. (નરસીહા) નરસિંહાઃ—તેઓ માણસોમા સિદ્ધ જેવા બળવાન હોય છે (નરવર્દ) નરપતયઃ—તેમને નરપતિ, (નરિંદા) નરેન્દ્રાઃ—નરેન્દ્ર, (નરવસહા) નરવૃષભાઃ—અને નરવૃષભ કહેવામા આવે છે (મરુયવસભકપ્પા) મરુદ્ વૃષભકલ્પાઃ—તેઓ દેવરાજ ઇન્દ્રના જેવા હોય છે. (અવભાહિંયરાયતેયલચ્છીએ દિપ્પમાણા) અભ્યધિકરાજતેજો લક્ષ્મ્યા દીપ્યમાનાઃ—રાજ્યલક્ષ્મીના તેજથી તેઓ અધિક દેહીપ્યમાન લાગે છે (નીલગપીયગવસણા) નીલકર્પીતકવસનાઃ—તેઓ નીલ અને પીળાં વસ્ત્રો ધારણ કરે છે (દુવેદુવે રામકેસવા ભાયરો) છૌ છૌ રામકેશવૌ ભ્રાતરૌ—“ઉપરોક્ત પ્રકારના રામ અને કેશવ એ બંને ભાઈઓ હોય છે આ ક્રમ પ્રમાણે નવ વાસુદેવ અને નવ બળદેવ થયા છે. (તિવિટ્ટ જાવ કણ્હે) ત્રિપૃષ્ઠો યાવત્ કૃષ્ણઃ—ત્રિપૃષ્ઠથી લઇને કૃષ્ણ સુધીના નવ વાસુદેવો થયા છે (અયલે જાવ રામે યાવિ અપચ્છિમે) અચલો યાવદ્રામશ્ચાપિ અપશ્ચિમઃ—અને અચળથી લઇને રામ સુધીના નવ બળદેવ થયા છે ॥સૂ. ૨૦૭॥

टीका—‘अपूरीवे ण’ इत्यादि—अम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षेऽस्यामसस
 विण्यां नव ‘दसारमहला’ दशाराग्यतिरिक्तत्वाद् दशारा नामुदेवबलदेवास्तेषां
 मण्डलानि=समुदायाः=वामुदेवबलदेवद्वयसमुदाया इत्यर्थः, ‘होत्या’ आसन्
 ‘त जहा’ सद्यया—‘उत्तमपुरिसा’ उत्तमपुरुषाः, तीर्थकरादीनां वतुप्यध्यासत
 उत्तमपुरुषाणां मध्यवर्तिन्त्वात्, ‘मग्निमपुरिसा’ मध्यमपुरुषाः—तीर्थकराणां
 चक्रवर्तिनां वामुदेवादीनां च बलाद्यपेक्षया मध्यवर्तिन्त्वात्, ‘पद्मणपुरिसा’ प्रधा-
 नपुरुषाः—तत्कालोद्भवपुरुषेषु शौर्यादिभिः प्रधानत्वात्, ‘भोजसी’ भोजस्विनः=
 मनोबलयुक्ताः, ‘तेयसी’ तजस्विनः—देदीप्यमानशरीरा- ‘बचसी’ बर्चस्विनः—
 शरीरवमयुक्ताः ‘जसमी’ यशस्विनः—पराक्रमित्वात्मसिद्धिं प्राप्ताः, ‘छायसी’

टीका—‘अपूरीवे ण दीवे’ इत्यादि—इस जंबूद्वीप के वर्तमान भारत
 क्षेत्र के अन्दर इस अवसर्पिणीकाल में नौ वासुदेव और बलदेव हुए
 हैं। यहाँ दशाहशब्द अपने से अग्यतिरिक्त—अभिन्न होने के कारण
 वामुदेव और बलदेव का वाचक है। मंडल शब्द समुदाय का वाचक है।
 अर्थात् एक बलदेव और एक वामुदेव इस तरह से इनके दो दो के
 नौ गुण हुए हैं। ये तीर्थकरादिक ५४ शोपन उत्तमपुरुषों के मध्यवर्ती
 होने के कारण उत्तमपुरुषा, तीर्थकरचक्रवर्ती और वामुदेव आदिकों के
 बल आदि की अपेक्षा मध्यवर्ती होने के कारण मध्यपुरुष तथा उनके
 समय में उत्पन्न हुए पुरुषों में शौर्य आदि की अपेक्षा प्रधान होने
 के कारण प्रधानपुरुष माने जाते हैं। ये मनोबल से युक्त थे—प्रम
 भोज्यो थे, इनका शरीर देदीप्यमान था इसलिये तेजस्वी थे। शरी-
 रिक बल से ये संपन्न थे इसलिये बर्चस्वी थे। पराक्रमी होने के

टीका—‘अपूरीवे ण दीवे’ इत्यादि—आ जंबूद्वीपमां आवेष्टा अस्तमेनमां
 आ अस्तपिदी आगमां नव वामुदेव अने नव जलदेव यत्र अथा ॥ अदी
 ‘दशाह’ शब्द अभिन्न होवाने कारणे वामुदेव अने जलदेवको वाचक छे अस्तमे
 छे अस्त जलदेव अने अस्त वामुदेव को प्रभावे तेमना अनेनां नव मुख बवा
 छे तीर्थकरादि ५४ शोपन पुरुषोमां तेमनी अखना यती होवाथा त न उत्तम
 पुरोः कथा छे तीर्थकर चक्रवर्ती अनेनी अपेक्षाजे जल आदिना अपेक्षाजे
 तेमो मध्यवर्ती अथा छे तीर्थ तेमने मध्यमपुरुष कथा छे तथा तेमना समस्त
 दीन पुरो मा शीर्ष आदिनी अपेक्षाजे तेमो अस्त कथा तेमो तमने प्रधानपुरोः
 कथा छे तेमो मने जगवाजा होवाने कारणे आशस्वी दत्ता तेमनु शरीर देदी-
 प्यमान होवाथी तेमो तजस्वी दत्ता शारीरिक जगवाजा होवाथी तेमो बर्चस्वी

छायावन्तः—शोभासंपन्नशरीराः, अतएव 'कंता' कान्ताः=कमनीयरूपलावण्य-
संपन्नाः. 'सोमा' सोम्याः—आल्लादकाकारसंपन्नाः 'सुभगा' सुभगाः—जगद्ब्रह्माः
'प्रियदर्शना' प्रियदर्शनाः—दर्शकजननयनानन्दजनकाः 'सुखा' सुखाः—सर्वाति-
शायिरूपलावण्योपेताः, तथा—'मुहसीलसुहाभिगमसव्वजणनयणकंता-शुभशील-
सुखाभिगम्यमर्वजननयनकान्ताः—शुभशीलाः=सुस्वभावाः, सुखाभिगम्याः=सर्व-
जनप्राप्याः, सर्वजननयनकान्ताः—सर्वजननयनानन्दजनकाः, एतेषां कर्मधारयः।
तथा—'ओव्वला' ओव्वला-पराक्रमप्रवाहयुक्ताः, 'अइवला' अतिवलाः—शेष
पुरुषापेक्षया प्रबलबलवन्तः, 'महावला' महावलाः=प्रशस्तपराक्रमयुक्ताः, 'अनि

कारण इनकी बहुत अधिक प्रसिद्धि थी इसलिये ये यशस्वी थे। इनका
शरीर विशिष्ट प्रकार की शोभा से सहित था इसलिये ये छायांसी-
छायावन्त थे। और इसी कारण से ये कमनीय रूप, लावण्य से मनोहर
थे अतः कान्त थे। लोगों को इनके देखने से बड़ा आह्लाद होता था
इसलिये ये सौम्य थे। जगज्जनो को विशेष प्रिय होने के कारण ये
सुभग थे। दर्शकजनों के नेत्रों को आनन्दजनक होने के कारण ये
प्रियदर्शन थे। सर्वातिशायीरूप और लावण्य से युक्त होने के कारण
सज्जनोचित याने सुखवाले थे। तथा इन का स्वभाव बड़ा अच्छा था, हर एक
प्राणी इनसे विना किसी शिक्षक के मिल सकता था। समस्तजन
इन्हें देखकर बहुत खुश होते थे। इनके पराक्रम का प्रवाह सदा एकसा
रहता था—इसलिये ये ओव्वलवाले थे। शेष मनुष्यों की अपेक्षा ये
अधिक बलिष्ठ थे। इनका पराक्रम प्रशस्त था। निरुपद्रव आयुवाले

हता. तेजो पराक्रमी हता, तेथी तेमनी प्रसिद्धिने कारणे तेजो यशस्वी हता.
तेमनु शरीर विशिष्ट प्रकारनी शोभावाणुं होवाथी तेमने छायांसी-छायावन्त कहल
छे, अने ओज कारणे कमनीयरूप अने लावण्यथी तेजो मनोहर हता तथा तेजो
कान्त हता. तेमना दर्शनथी होकेना हृदयमा आनंद थतो तेथी तेमने सौम्य
कह्या छे. जगतना होकेने तेजो घणु प्रिय होवाथी सुलग हता. दर्शनाने नेत्राने
अत्यंत आनंदजनक होवाथी तेजो प्रियदर्शन हता. सर्वातिशायीरूप अने लाव-
ण्यवाणा होवाथी तेजो सुख हता. तेमने स्वभाव ओटवो भधा सारे हतो के
हरेक मनुष्य को पणु प्रकारना उर सिवाय तेमने भणी शकता हता. तेमने
भेधने सधना होकेने घणु आनंद थतो हतो. तेमना पराक्रमने प्रवाह
सदा ओकधारे रहतो हतो तेथी तेमने ओघवणवाणा कह्या छे. भीज' मनुष्यो
करता तेजो वधारे जणवान हता. ते-प्रशस्त पराक्रमवाणा हता. निरुपद्रव आयु-

हता' अनिहताः निरुद्धायापुष्कत्वाद् घातवर्जिताः, 'अराह्या' अपराजिता-
 शम्भुतपराजपरहिताः 'सधुमहणा' शत्रुमर्दनाः-शत्रुमर्दका इत्यर्थः, 'रिपुसहस्र
 मानमहणा' रिपुसहस्रमानमयनाः-रिपुमानमर्दका इत्यर्थः, 'साण्कोसा' सानु-
 कोशाः-मणतेषु दयाकारका इत्यर्थः, 'अमच्छरा' अमत्सराः-परगुणस्यस्यापि
 प्राहका, 'अचवला' अचपला = मनोवाकायचाश्चत्यवर्जिता, 'अचढा' अचण्डा -
 निष्कारणकोपवर्जिता, 'मियर्मनुजपलावहसिया' मितमन्त्रुजपलावहसहिताः
 मितमन्त्रुषे मलापहमितं येषां ते तयोक्ताः-परिमितकोमलवचनवन्त परिमित
 मनाहरास्यवन्तश्चेत्यर्थः, तथा-गम्भीरमधुरपट्टिपुष्पसङ्घयणा' गम्भीरमधुरम
 तिपुष्पसत्यवचनाः-तत्र गम्भीरम्-रोपतोपशोकादिविकारवर्जितम्, मधुरं=भव
 जमुत्तकर, प्रतिपूर्णम्=अर्धेषाघजनक, सत्यं=व्यथार्थं वचनं येषां ते तयोक्ताः,

होने के कारण ये घातवर्जित थे। शत्रुओं द्वारा ये कभी पराजित
 नहीं हो सकने के कारण अपराजित थे। शत्रुओं के ये मर्दक थे।
 हजारों शत्रुओं का इनके समस्त मानमयित हो जाता था। जो इनके
 समस्त शत्रु जाता था उनके ऊपर ये सदा दयालु रहते थे। मत्सरभाव
 से ये रहित थे। दूसरों में जोड़ा सा भी यदि कोई गुण होता था
 तो उसे ये ग्रहण कर लेते थे। मन, वचन, और काव की खूबसूरती
 इनमें नहीं थी। ये बिना कारण किसी के ऊपर कभी भी कोप नहीं
 करते थे। ये परिमित बातचीत करते थे तथा जो भी कुछ कहते वह
 बहुत आनन्ददायक होता था। इनका जो हास्य होता था वह भी परि
 मित एवं सदा मनोपुष्पकारी होता था। रोप, तोप और शोक आदि
 विकार से वर्जित होने के कारण गम्भीर, अचण्डुलकारी होने के कारण
 मधुर और अर्धेषाघजनक होने के कारण प्रतिपूर्ण ऐसे इनके सत्यवचन

वाक्य होगया। तेमने बहुतदिवस रहेका छे शत्रुको दारा तेमने पराजित कते।
 नही तथा तेमने अपराजित कहा छे तेको शत्रुकोनु मर्दन करनारा दता-
 तेको दम्भरे शत्रुकोनु मानमदन क नाश दता तेमने नमनारा वरद तेको
 मद दय दिते शत्रुना दता अत्युत्तम (अजिमान) की ददित दता अचपला
 ये छे गुणना शत्रु तका ददक दता मन वचन अने भाषानी के गुण तमनाभा
 न दती तेको पिन कारण कह्यना उपर शोध करत नही तेको नितम भी दता
 नमनी वही अनदराक दती तेमनु दारय शत्रु परिमित अने मनने मुग्ध
 करनार दनु शेष तोप अने शोक आदि विहायया ददित होयाने कारणे अमीर
 अपन सुप्रसारी होयया मधुर अने अर्धेषाघ होयने कहे प्रणिपुत्र अना
 तेमना अत्यवचनो दता तेका शत्रुनामन क दता हीन दुःखीनी मेवा करवान

‘अव्युपगयवच्छला’ अभ्युपगतवत्सला=शरणागतवत्सला इत्यर्थः, तथा-‘सरणा’ शरण्याः=दीनहीनजनपरित्राणपरायणाः तथा-‘वज्रस्वस्तिक् चक्रादीनि चिह्नानि व्यञ्जनानि=व्यञ्जनगुणोपपेताः-तत्र लक्षणानि=वज्रस्वस्तिक चक्रादीनि चिह्नानि व्यञ्जनानि=तिङ्कमशकादीनि तेषां ये गुणाः-महर्द्धिलाभादयस्तरूपपेताः=युक्ताः, तथा-‘माणुम्माणप्रमाणपटिपुण्यसुजायसव्यसुंदरंगा’ मानोन्मानप्रमाणप्रतिपूर्णांशुमान-सर्वाङ्गसुन्दराङ्गा=तत्र-मानम्-मीयते परिच्छिद्यते पदार्थोऽनेनेतिमानम्, तुलाङ्गुली-प्रस्थादिना तोलनम्, यद्वा-जलपरिपूर्णकुण्डादिविष्टे पुरुषादौ यदा द्रोणपरिमित जलं निम्सरति तदा स पुरुषादिमानवानित्युच्यते तद्वत्, उन्मानम्=अर्धमान, यद्वा-अर्धभाररूपः परिमाणविशेषः, प्रमाणं=सर्वतो मानम्, यद्वा-निजाङ्गुलीमि-रष्टोत्तरगताङ्गुलिपरिमितोच्छ्वायः, इत्थं च मानं चोन्मानं च प्रमाणं चेत्येतेषां होते हैं। ये शरणागतवत्सल होते हैं। दीनहीनजनो की रक्षा करने में ये सदा कटिबद्ध रहते हैं। वज्र, स्वस्तिक और चक्र आदि चिह्नरूप लक्षणों, तथा तिङ्क, मसा आदिरूप व्यञ्जनों के महर्द्धिलाभादिरूप गुणों से ये युक्त होते हैं। मान, उन्मान और प्रमाण से परिपूर्ण होने का कारण यथोचित अवयवसन्निवेशवाले हैं अंग जिसमें ऐसे सुन्दर शरीर वाले ये होते हैं। जल से परिपूर्ण कुण्ड आदि में प्रविष्ट होने पर द्रोणपरिमित जल यदि उस कुण्ड से बाहिर निकल जाता है तो वह प्राणी मानवाला कहा जाता है। अथवा पदार्थ का वजन जिससे मापा जावे उसका नाम मान है। तुला, अंगुली और प्रस्थादि से जैसे व्यवहार में माप किया जाता है। इस मान का ही नाम उन्मान है। अथवा अर्धभाररूप परिमाणविशेष का नाम उन्मान है। अपनी अंगुलियों से १०८ एकसौआठ अंगुलीप्रमाण शरीर की ‘ऊँचाई’ का नाम प्रमाण है।

तेजो सदा तत्पर रहेता होता वज्र, स्वस्तिक, चक्र आदि चिह्नरूप लक्षणों तथा तल, मसा आदिरूप व्यञ्जनोना महर्द्धि, लाल आदिथी ते युक्त होता मान, उन्मान अने प्रमाणथी परिपूर्ण होवाने कारणे योग्य अवयव सन्निवेश गणा अगोथी युक्त सुंदर शरीरवाणा होता ओटवे के तेमना अंग उपागो अप्रमाण होता. पाणिथी परिपूर्ण कुंड आदिमा प्रवेश कृता द्रोण परिमित वजन ओ ने कुंड आदिमाथी गडार नीकणे तो ते मनुष्यने मानवाणो कहेवाय छे अथवा पदार्थनु वजन नेनाथी मापी शक्य तेने मान कहे छे तुला, अंगुली आदिथी नेवी रीते व्यवहारमा माप लेवामा आवे छे ते मानने व उन्मान कहे छे अथवा अर्धभाररूप परिमाण विशेषने उन्मान कहे छे पोतानी आगणी करता १०८ ओकसो आठ गण्ठी शरीरनी उपाधिने प्रमाण कहे छे माथाथी पत्र सुधीना

द्वे माना मानप्रमाणानि, ते परिपूर्णानि=सम्पन्नानि भवन् सुमातानि= यथानितारयसन्निवेशवन्ति सर्वाणि=सकलानि भवानि-मस्तकादारभ्य नरणा न्तानि यस्मिन् क्षरीर तमानो मानप्रमाणपरिपूर्णमुजातसर्वाङ्गम् भवन् तादृश सुन्दरमङ्ग यथा त तथोक्ता, तथा-‘ससिमायागात्कतरिपदमणा’ शशिसाम्या फारकान्तमिपदर्शनाः, शशिवर्मोम्पम्=भारवादर्क कान्त=रुमनीय=विनहारि, मिय=दर्शकजनमनारवादनक, दर्शनम्=प्रस्तावनं यथा त तथोक्ता, तथा- ‘अमरिसणा’ अमरस्या=कार्येऽनन्तता यथा-अमर्यम्=निरतरापकारिपि क्रोषरहिताः, तथा-‘पयदृढप्यगारा’ मकादृढदृढपकारा-मकादृढ=उत्कृष्टो- दृढमकारः-दृढनीतिमदो यथा ते तथोक्ताः, तथा-‘गमीदरमणिज्जा’ गम्भी रदर्शनीयाः-अमर्यमाणा=तृप्तिरूपेण गम्भीरा इत्य-ते ये त तथोक्ताः, तथा- ‘वाल्दुभोविद्वगवकज’ साम्प्रजोद्विद्वगवकेतवः-सामः=साम्प्रज्ञाङ्किता

मस्तक से लगाकर शरणतक के भयबर्षों का नाम भग है। तात्पर्य कहने का यह है कि इनके शारीरिक अययनों की रचना बड़ी सुन्दर प्रमा णोपेत होती है। शरीर की अपेक्षा जिस अंग की जितनी लम्बाई चोड़ाई होनी चाहिये उस अंग की उतनी ही लम्बाई चौड़ाई और मोटाई होती है। किसी भी अंग में किसी भी प्रकार की मान उमान आदि की अपेक्षा होना अधिकता नहीं रहती है। जिनका अवलाकन चन्द्रमा के समान आकाशजनक और विष को हरण करने वाला होता है। तथा दर्शकजन के मन में अपूर्व आकाश का कारण होता है। ये सदा कार्य में बालस्य रहित होते हैं-अथवा-अपकारीजनों पर भी इन्हें क्रोष नहीं आता है। इनका नीति का मेदरूप दृढप्रकार उत्कृष्ट होता है। इनको अन्तःवृषि अलक्ष्यमाण होने से य बहुत ही गम्भीर दिसमाई देते हैं।

अवयवोन्ने अज कहे कि कहेवन तात्पर्य अहे कि तेमना शारीरिक अवयवानी रचना बड़ी सुन्दर अने सप्रभाष्य कृती शरीरणी अपेक्षाये के अजनी नेटला सजाध आदर्श अने पढोआर्श होनी अर्थजे नटला अ ते अजनी सजाध अजान अने पढोअध कृती कहे पण अजना आपर्मा कहेपण्य अक रना न्यूनता ॥ अधिकता आता नथी तेमना कउन अ-द्रुमाना कशननी केअ कभियां आन इहाय अन बिगने कही बेनाय कोय कि अने दग्दिना भनभां अपूर्व आदलाह उत्पस कहे कि तेमो कभिया कान मा आणस रहिन कोय कि-अथवा अपकारी दोहो न हे पण तेमने सध यतो नथी तेमने नीतिन्य केवद्वय दठप्रकार दठक कोय कि तेमना अने आपोने समकथा सुरकेक कोवाधी तेका अलीय आवे कि जगदे

ध्वजो येषां ते तालध्वजा बलदेवा इत्यर्थः, उद्विद्धः=उच्छिन्ना गरुडः=गरुड अक्षितः
केतुः पताका येषां ते-उद्विद्धगरुडकेतव, अनयोद्वन्द्वसमासः, तथा-‘महावि-
कट्या’ महाविकृष्टकाः-महाधनुर्विकर्षकाः-महाप्राणाद्दुर्धराधनुस्तोत्तिन इत्यर्थः,
तथा-‘महासत्तसागरा’ महावत्त्वसागराः=महासत्वानामभयाधारस्थानानां इत्यर्थः,
तथा-‘दुद्धरा’ दुर्धराः-रणाङ्गणे प्रहरणसमये केनापि धनुर्धरेण धारयितुमशक्याः,
‘धणुद्धरा’ धनुर्धराः=धनुर्धारिणः अथवा-‘दुद्धरधणुद्धरा’ दुर्धरधनुर्धराः=अन्य-
धनुष्मदशक्यधारणधनुर्धरा इत्यर्थः, ‘धीरपुरिमा’ धीरपुरुषाः-वीरेष्वेव पुरुषाः=
पुरुषकावन्तो न तु कातरेषु, ‘युद्धकीर्त्तिपुरिसा’ युद्धकीर्त्तिपुरुषाः=युद्धजनिता
या कीर्त्तिस्तत्प्रधानाः पुरुषाः इत्यर्थः, ‘विउलकुलममुग्धवा’ विपुलकुलसमुद्भवाः,
‘महारणविहाडगा’ महारणविघाटकाः स्वपराक्रमेण महारणविघटनपरायणाः,

बलदेवों की पताकाएँ-ध्वजाएँ-तालवृक्ष के चिह्नो से अंकित होती हैं
और वासुदेवों की ध्वजाएँ गरुड के चिह्न से युक्त होती हैं। बड़े से
बड़े वीर भी जिस धनुष को नहीं चढ़ा सकते हैं उस धनुष को ये
चढ़ाते हैं। विशिष्टबल के ये धारी होते हैं। रणाङ्गण में प्रहार के समय
कोई भी धनुर्धारी इन्हें धारण नहीं कर सकता है अर्थात् इन पर उसके
धनुष का वार नहीं होता है। ये बड़े भारी धनुर्धारी होते हैं। अथवा-
“दुद्धर धणुद्धरा” जिस धनुष को अन्य धनुषधारी धारण नहीं कर
सकते हैं उस धनुष को ये धारण करते हैं। धीर पुरुषों में ही इनका
पुरुषकार विशिष्ट होता है। कातरों में नहीं। अर्थात् धीर पुरुषों की
अपेक्षा ही इनका पुरुषकार-सामर्थ्य विशिष्ट माना गया है। कातरों की
अपेक्षा नहीं। ये युद्धजनित कीर्त्तिप्रधान पुरुष होते हैं। ये बड़े ऊँचे
स्वानदान के होते हैं। अपने पराक्रम से ये भयंकर से भी भयंकर

वैनी पताकाओं-ध्वजों-तालवृक्षों के चिह्नो से अंकित होय छे आने वासुदेवों की
ध्वजों गरुडों के चिह्नो से अंकित होय छे जे धनुष्य अडाववाने वीरमा वीर
पक्ष समर्थ होने नथी ते धनुषने तेओ अडावी शके छे तेओ विशिष्ट जगवणा
होय छे. समरांगणमा केछ पक्ष धनुर्धर तेमना उपर धनुषमाथी तीरने प्रवाह
करी शकते नथी. तेओ महान धनुर्धर होय छे. अथवा ‘दुद्धर धणुद्धरा’ जे
धनुषने अन्य धनुर्धर धारण करी शकता नथी ते धनुषने तेओ धारण करे छे.
धीरपुरुषोमा ज तेमने पुरुषकार विशिष्ट थाय छे. कायरमा नही ओटवे के धीर-
पुरुषोनी अपेक्षाओ ज तेमनु सामर्थ्य विशिष्ट बनाय छे-कायरोंनी अपेक्षाओ नही.
तेओ युद्धजनित कीर्त्तिप्रधान पुरुषो होय छे तेओ जिया कुणना होय छे. योताना
पराक्रमधी भयंकरमां भयंकर शत्रुसैन्यने पक्ष अस्तव्यस्त करी नाथे छे तेओ

इद्रे माना मानवमाणानि, तै परिपूर्णानि=सम्पन्नानि भवन् सुमातानि= यथावितायसन्निवश्वन्ति सर्वाणि=सफलानि भङ्गानि=मन्तकादारभ्य परा-
 तानि यास्मिन् शरीर तमाना मानवमाणपरिपूर्णसुमातसर्वाङ्गम् भवन् तादृश
 सुन्दरमङ्ग यथा त तथोक्ता, तथा-‘ससिप्तोमागाकृतयिदंयणा’ अश्लिसाभ्या
 कारकान्तमियदर्शनाः, शशिरम्भोम्पम्=भारद्वाज्य कान्त=कमनीय=विनहारि,
 मिय=दर्शकमनमनाष्टादजनक, दर्शनम्=भारद्वाजने यथा ते तथोक्ता, तथा-
 अमरिसणा’ अमरसणा=कार्येणनमस्ता यडा=भमर्यवा =निरतरापकारिजिपि
 कोपरहिता, तथा-‘पयद्वद्वप्यगारा’ पकाण्डद्वद्वमकारा-पकाण्डः=उत्कणे-
 दण्डमकारः=द्वन्द्वनीतिमदा यथा त तथोक्ता, तथा-‘गमीरदरमणिज्वा’ गमीरा
 रदर्शनीयाः=अमर्यमाणान्तरुचित्वन गमीरा दृश्यत य त तथोक्ता, तथा-
 ‘तामद्वप्रविद्वगकृष्कज’ तामद्वप्रविद्वगकृष्कजतय —ताल=तालद्वसाहितो

मस्तक से लगाकर शरणवक के अवयवों का नाम आग है। तात्पर्य कहने का यह है कि इनके शारीरिक अवयवों की रचना यही सुन्दर ममा णोपेत होती है। शरीर की अपेक्षा जिस अंग की जितनी लंबाई चौड़ाई होनी चाहिये उस अंग की उतनी ही लंबाई चौड़ाई और मोटाई होती है। किसी भी अंग में किसी भी प्रकार की मान उमान आदि की अपेक्षा होनाचिकता नहीं रहती है। जिनका अवलोकन चन्द्रमा के समान आहादजनक और विश्व को हरण करने वाला होता है। तथा दशाजन के मन में अपूर्व आहाद का कारण होता है। ये सदा चार्म में आलस्य रहित होते हैं-अथवा-अपकारीजनों पर भी इन्हें क्रोध नहीं आता है। इनका नीति का स्वरूप दण्डमकार उरकृत होता है। इनमें अन्त इषि अलक्ष्यमाण होने से य बहुत ही गमीर दिखलाई देते हैं।

अवयवोने अज कहे छे कहेव न ता पर्थ को छे ई तेमना शारीरिक अवयवानी रचना यही सुन्दर अने समभाष्य कृती शरीरणी अपेक्षाको को अजनी नेटका लजाछ अर्थात् अने यदोणार्थ होनी अर्थको नेटका व ते अजनी लजाछ अर्थात् अने पद लजाछ कनी केछ पक्ष अजना मापमा केछपक्ष प्रभरनी न्यूनता के अधिकता जाता नभी तेमनी इह न अन्धमाना इहानी केम क भिशां अथ इहवक अने बिचने करी लेनार कोय छे अने इहोकेना मनमां अपूर्व आकृति उत्पत्त करे छे तेको क भिशा भाष मा अलस रहित कोय छे-अथवा अपकारी तोडे न छे पक्ष तेमने भाष भयो नभी तेमने नीतिना सेवक प ठमभाष उत्कट कोय छे तेमना अने आवेने अभवना सुरेष्ठ कोवाभी तेका जकीर कोय छे अजने

ध्वजो येषां ते तालध्वजा बलदेवादित्यर्थः, उद्विद्धः=उच्छिन्ना गरुडः=गरुड शक्तिः
 केतुः पताका येषां ते-उद्विद्धगरुडकेतव, अनयोद्वन्द्वसमासः, तथा-‘महात्रि-
 कट्टया’ महात्रिकुट्टकाः-महाधनुर्विकर्षकाः-महाप्राणाद्दुर्ध्वधनुरुत्तोलिन इत्यर्थः,
 तथा-‘महासत्तसागरा’ महामत्स्वसागराः=महासत्त्वानामक्षयाधारस्थानानां इत्यर्थः,
 तथा-‘दुद्धरा’ दुर्धराः-रणाङ्गणे प्रहरणसमये केनापि धनुर्धरेण धारयितुमशक्याः,
 ‘धणुद्धरा’ धनुर्धराः=धनुर्धारिणः अथवा-‘दुद्धरधणुद्धरा’ दुर्धरधनुर्धराः=अन्य-
 धनुष्मदशक्यधारणधनुर्धरा इत्यर्थः, ‘धीरपुरिमा’ धीरपुरुषाः-धीरेष्वेव पुरुषाः=
 पुरुषकारवन्तो न तु कातरेषु, ‘युद्धकीर्त्तिपुरिमा’ युद्धकीर्त्तिपुरुषाः=युद्धजनिता
 या कीर्त्तिस्तत्प्रधानाः पुरुषाः इत्यर्थः, ‘विउलकुलममुद्धवा’ विपुलकुलसमुद्धवाः,
 ‘महारणविहाडगा’ महारणविघाटकाः स्वपराक्रमेण महारणविघटनपरायणाः,

बलदेवों की पताकाएँ-ध्वजाएँ-तालवृक्ष के चिह्नो से अंकित होती हैं
 और वासुदेवों की ध्वजाएँ गरुड के चिह्न से युक्त होती हैं। बड़े से
 बड़े वीर भी जिस धनुष को नहीं चढा सकते हैं उस धनुष को ये
 चढाते हैं। विशिष्टबल के ये धारी होते हैं। रणाङ्गण में प्रहार के समय
 कोई भी धनुर्धारी इन्हें धारण नहीं कर सकता है अर्थात् इन पर उसके
 धनुष का वार नहीं होता है। ये बड़े भारी धनुर्धारो होते हैं। अथवा-
 “दुद्धर धणुद्धरा” जिस धनुष को अन्य धनुषधारी धारण नहीं कर
 सकते हैं उस धनुष को ये धारण करते हैं। धीर पुरुषों में ही इनका
 पुरुषकार विशिष्ट होता है। कातरों में नहीं। अर्थात् धीर पुरुषों की
 अपेक्षा ही इनका पुरुषकार-सामर्थ्य विशिष्ट माना गया है। कातरों की
 अपेक्षा नहीं। ये युद्धजनित कीर्त्तिप्रधान पुरुष होते हैं। ये बड़े ऊँचे
 खानदान के होते हैं। अपने पराक्रम से ये भयंकर से भी भयंकर

पानी पताकाओं-ध्वजों-तालवृक्षों के चिह्नो से अंकित होय छे अने वासुदेवनी
 ध्वजों गरुडों के चिह्नो से अंकित होय छे जे धनुष्य अडाववाने वीरमां वीर
 पक्ष समर्थ होने नथी ते धनुषने तेजो अडावी शके छे तेजो विशिष्ट अगवणा
 होय छे. समरांगणमा ठोड पक्ष धनुर्धर तेमना उपर धनुषमाथी तीरने प्रवाल
 करी शकते नथी. तेजो महान धनुर्धर होय छे. अथवा ‘दुद्धर धणुद्धरा’ जे
 धनुषने अन्य धनुर्धर धारण करी शकता नथी ते धनुषने तेजो धारण करे छे.
 धीरपुरुषोमां ज तेमने पुरुषकार विशिष्ट थाय छे. कायरोमा नही ओटवे के धीर-
 पुरुषोनी अपेक्षाज्ये ज तेमनुं सामर्थ्य विशिष्ट बनाय छे-कायरोनी अपेक्षाज्ये नही.
 तेजो युद्धजनित कीर्त्तिप्रधान पुरुषो होय छे तेजो जेज्या कुण्ठा होय छे. पानाना
 पराक्रमधीं लयंकरमां लयंकर शत्रुसैन्यने पक्ष अस्तव्यस्त करी नाथे छे तेजो

तथा—‘अद्भुतरसमामा’ अद्भुतारतस्त्राभिन, तथा—‘सोमा’ सौम्या—सकलजना
 स्थादजनका, रायकुम्भवसतिलया’ राजकुम्भवसतिलका—राज्ञां तिलक मट्ठा
 इत्यर्थ, ‘अजिता’ अजिता—न केनापि जिता इत्यर्थ, ‘अजियरहा अजित
 रया—न केनापि जिता रया यथा ते तथोक्ता, ‘हृत्पुमसकलकपाणी’ हनमु
 संप्रकाशकपाणय—हृत्पुमसले कणसा=गंगा पाणी यथा ते तथोक्ता, सत्यव
 क्तायनदगधरा सुद्वयकमदानन्दधरा, नन्दक खड्ग, ‘पद्मजसमुक्तविमल
 गा धुमतिगीढघारी प्रवराज्जलमु—‘उषिमलकौस्तुभतिरीटधारिण—प्रवर—भेषु
 उज्ज्वलम्—ददीप्यमानम् धुक्ता तम्—धुम्रावयवयुक्तम् कौस्तुभ—मणिविशेषम्,
 निराट—दृष्टं च प्रदीप्यमानं यथा ते तथोक्ता, ‘कुण्डलउज्जाडयाणना’ कुण्डलो
 धानितानना—कुण्डलनोधातितमाननं—सुख यथा ते तथोक्ता, कुण्डलप्रकाशि
 तमुक्ता इत्यर्थ, ‘पुण्डरीकनयना’ पुण्डरीकनयना—पद्मनभा इत्यर्थ, एकावपि
 कण्ठलप्यन्तु’ एकावपि कण्ठलग्नवत्तमः—एकावप्योद्धारविशेष, सा कण्ठे लग्ना
 गता घनसि वर्तते यथा ते तथोक्ता, ‘निरिवच्छुम्भलगा’ भीरुतमुल्लासना—

रण को छिन्नभिन्न कर डालते हैं। आगे भक्तकेत्र के ये स्वामी बात
 हैं। समस्त मनुष्यों को इनसे पढा सुल-आनन्द मिलता है। गानधरा
 के नित्यकममान हैं। इन्हें कोई भी नहीं जीत सकता है। इनके रथ
 पर कोई भी शत्रु बइजा नहीं कर सकता है। हल, सुमल, और बाण
 इनके हाथों में रहा करते हैं। शस्त्र, चक्र, गदा और नदक-तन्त्राङ्ग
 को ये धारण किये रहते हैं। इनका स्वभाव भेद्य, देदीप्यमान और
 शुभ्र अवयवा से युक्त कौस्तुभमणि को और मुकुट को धारण करने
 का होता है। कुण्डलों की चमक से इनका मुखमश्रु प्रकाशित होता है।
 इनके नेत्र कमल जैसे सुन्दर होते हैं। ये जिस रत्नमय परावलो द्वार या
 अपने कण्ठ में धारण किये रहते हैं वह इनकी छातीतक लटकता रहता है।

अर्थात् अवयवजना स्थायी होय है अथवा होकाने तेमना तद्वशी पक्ष शुभ प्राप्त
 पाय है तेमो शस्त्रयथा विश्व समान होय है तेमो अन्य होय है तार्थ
 पक्ष यत्तु तेमना रथ कलने करी शकतो नही तेमना दायिमा कल मुसल अने
 भाग्य रहे है यत्तु यत्तु गदा अने तलवारने तेमो धारण करता होय है अर्थात्
 देदीप्यमान अने शुभ्र अवयवोशी युक्त जेवा जगदेवा अने वामुदेवानो स्वभाव
 कौस्तुभमणि अने मुकुटने धारण करवाने होय है कुण्डलोना अथवादधी तेमनु
 वरत सदा प्रकाशित रहे है तेमनी नवनमन जेवां मुकुट होय है जिक सेरने जे
 रत्नमय द्वार तेमो अर्थात् पक्ष है ते तेमनी छानी शुभो पक्षोय है अर्थात्

श्रीवत्सस्वस्तिकस्य गुलाञ्छन येपा ते तथोक्ताः, 'वरजसा' वरयशसः=रं
 श्रष्टं यगो येपां ते तथोक्ता, मदायगस्विन इत्यर्थः, तथा- 'सव्वउयसुरभिकुमु
 मरइयपलंवसोभंतकंतविकसतविचित्रवरमालरइयवच्छा' सर्वक्रतुसुरभिकुसुमरचित
 प्रत्ययगोममानकान्तविकसद्विचित्रवरमालारचितवक्षस्काः-तत्र सर्वक्रतुकार्ण=
 सर्वक्रतुसम्बन्धीनि यानि सुरभिकुमुमानि, तै रचिताः प्रत्यया लम्बायमानाः
 गोममानाः कान्ताः-कमनीयाः प्रियन्त्या विचित्राः विचित्रगुप्फाः या वरमा-
 लाभ्यानिः रचितानि वक्षानि=वक्षस्थलानि येपा ते तथोक्ताः, 'अद्वतरसय
 विभक्तलक्षणपसत्थसुदरविरडयंगमगा' अष्टोत्तरशतविभक्तलक्षणप्रशस्तसुन्दरविर-
 चिताङ्गाङ्गाः=तत्र-अष्टोत्तरशतसंख्यकानि विभक्तानि=पृथक्पृथक्वरिथितानि यानि
 लक्षणानि=शब्दचक्रादीनि तैः प्रशस्तानि=वाङ्मयानि सुन्दराणि=मनोहराणि च
 विरचितानि=विहितानि अङ्गाङ्गानि-प्रत्यङ्गानि येपा ते तथोक्ताः, अष्टोत्तरश-
 तप्रशस्तलक्षणधारिण इत्यर्थः, तथा- 'मत्तगयवरिंदललियविक्रम्मविलसिथगई'
 मत्तगजारेन्द्रललितविक्रमगतयः-मत्तगजवरेन्द्राणां यो ललितो-मनोहरो विक्रमः=
 पादविक्षेपः, तद्वत् विलासिताः=विलामयुक्ता गतिर्येषां ते तथोक्ताः, तथा-
 'सारयनवयणियमदुरगभीरकुननिग्नोमदुंदुमिसरा' शागदनवस्तनितमधुरगभीरक्रौ-
 च्चनिर्गोदुन्दुमिग्नराः-शागदो यो नवस्तनितः=शरद्वत्सुगन्धी मेघशब्दः, तथा-
 मधुरगभीरगे यः क्रौञ्चनिर्गोपः=क्रौञ्चपक्षिशब्दः, दुन्दुमीनां-भेरीणां स्वरः=शब्द-

नी प्रत्यय स्वमेव का इनके विह्व होना है। ये बड़े यशस्वी होते हैं।
 इनका वक्षःस्थल सर्वक्रतुसंबन्धी सुरभित कुसुमों से रचित लम्बी० मालाओं
 से कि जिनकी रचना विचित्र प्रकार की होती है और जो डेग्वने से बड़ी
 सुहावनी लगती है युक्त रहा कम्ता है। इनके प्रत्येक अंग पृथक् २
 अवस्थित शब्द, चक्र आदि १०८ एकसौ आठ चिह्नों से युक्त रहा
 करते हैं अतः वे बड़े प्रशस्त और सुन्दर होते हैं। मदनोन्मत्त श्रेष्ठ
 गजगजों की मनोहर गति जैसी इनकी गति-चाल विलामयुक्त होती
 है। इनकी स्वर शरद्वत्सु संबंधी मेघ के गर्जन के समान तथा क्रौंच

स्वस्तिक चिह्न तेमने डोय छे तेओ धणु यशस्वी डोय छे सर्वक्रतुना सुगन्धयुक्त
 पुष्पोमाधी बनावेदी अपूर्व शोभावाणी लाणी लाणी भाणाओधी तेमनु वक्षःस्थल
 युक्त डोय छे तेमना प्रत्येक अंग पर शब्द, चक्र, आदि १०८ एकसौ आठ
 लक्षणो अलग अलग स्थाने डोय छे तेथी तेओ धणु प्रशस्त अने सुदर डोय छे
 तेमनी याव मदनोन्मत्त श्रेष्ठ गजराजनेनी मनोहर गति जेवी विलासयुक्त डोय
 छे तेमनो याव शरद्वत्सुना मेघनी गजगज-जेवी, क्रौंच पक्षीना मधुर गभीर

स्तद्वत् यथा त तथाक्ताः तथा—कटिमुत्तमनासपीयकासेज्जवाससा' कटिमुत्तम
 कनीलपीतकौशेयवाससाः—कटिमुत्तम—कटिमुत्तम 'कणदोरा' इति प्रसिद्धम्, तेन
 युक्तानि नोक्तानि पितानि कौशेयवासांनि 'रश्मि' ति भाषामसिद्धवस्त्राणि येषां
 ते तपोक्ताः, तथा—'नरसीहा' नरसिंहा—नरेषु सिंहा इव य ते तपोक्ताः, 'नर
 बई' नरपतयः 'नरिंदा' नरेन्द्राः नरवसहा' नरवृषभा—नरभेष्टा 'मरुवसम
 कृपा' मरुद्वृषमकृत्वाः=मरुतो देवास्तेषु वृषम भेष्ट—देवराजस्तस्य कृत्वा
 सहसा, 'अन्महियरापतेयमच्छीए विप्पमाणा' अभ्यधिकराजतेजोमहत्त्वा दीप्य
 माना 'नीलमपीयगवसणा' नीलकपोतकवसना—नीलपीतवस्त्रधारिण 'दुवेदुवे
 रामकेसवा मायरो' द्वौ द्वौ रामकेशवौ ध्यानरौ, इतिक्रमेण नववासुदेवा नव
 बलदेवाः 'होस्या' बभूवुः 'ते महा' तद्यथा—'तिष्ठिदू जाव कणे' त्रिपिप्पि यावत्—
 कृष्याः, 'मपछे जाव रामे यावि मपच्छिमे' अचलो यावद्भामद्यापि अपश्चिमः॥सू २०७॥

पत्नी के मधुर, गंभीर शब्द के समान और दुन्दुभी के स्वर के समान
 होता है। इनके नीलपीत रेशमीवस्त्र कणदोरे—करधमी से युक्त होते हैं।
 इनका प्रवर तेज सदा वीर रहता है। ये मनुष्यों में सिंह जैसे रहते
 करते हैं। ये नरपति नरेन्द्र और नरवृषभ कहलाते हैं। एवं देवराज
 इन्द्र जैसे होते हैं। यहाँ वृषभ शब्द भेष्ट अर्थका वाचक है। ये राज
 रश्मि के तेज से बहुत अधिक दिपते रहते हैं। ये जिनवस्त्रों को
 पहिरते हैं वे नीले और पीले होते हैं। अर्थात् बलदेव नीलाम्बर
 कहलाते हैं और वासुदेव पीताम्बर होते हैं। देग ये 'दो दोराम और
 केशव आपस में भारी होते हैं' इस क्रम से नव वासुदेव और नव
 बलदेव होते हैं। त्रिपृष्ठ से लेकर कृष्णतक वो नौ वासुदेव हुए हैं और
 अवस से लेकर रामतक नौ बलदेव हुए हैं॥सू २०७॥

शब्द समान होने दुन्दुभीना नाव समान होय छ तेमनां नील होने पीला वस्त्रे
 पर कटोरा होय छ तेमनु केष्ट तेज सदा देदीप्यमान रह्ये छ मनुष्योमां तयो
 सिद्ध भेवा होय छ तेमने नरपति, नरेन्द्र जाने नरवृषभ कहे छ त । देवराज
 इन्द्रना भेवा होय छ जहाँ वृषभ जेटवे केष्ट समानवानु छ तेमो राज
 रश्मीना तेमने तीषे बधा शोके छ तेमनां वस्त्रे नीला के पीला होय छ
 जेटवे के जणदेवने नीलाम्बर होय छ जाने वासुदेवने पीताम्बर होय छ भेवां
 ते 'राम जाने केशव' जन्ने लार्ध—लार्धनु समवष्य होय छ आ प्रभावे नव
 वासुदेव जाने नव जणदेव बधा छ त्रिपृष्ठपीछने कृष्ण सुभीना नव वासुदेव जाने
 अवसपीछने राम सुभीना नव जणदेव बधा छ ॥सू, २०७॥

बलदेववासुदेवानां पूर्वभक्तिकानि नामान्याह—

मूलम्—एएसि णं णवण्हं बलदेववासुदेवाणं पुव्वभविया नव नामधेज्जा होत्था, तं जहा—विस्सभूई पव्वयए धनदत्त समुद्दत्त इसिवाले । पियमित्त ललियमित्ते, पुणव्वसु गंगदत्ते य ॥५५॥ एयाइं णामाइं पुव्वभवे वासुदेवाणं । एत्तो बलदेवाणं जहकमं कित्तइस्सामि ॥५६॥ विसनंदी य सुवंधू सागरदत्ते असोगललिए य । वारह धम्मसेणे अपराइयरायललिए य ॥५७॥ सू० २०८॥

शब्दार्थ—(एएसि णं णवण्हं बलदेववासुदेवाणं) एतेषां बल नवानां बलदेव वासुदेवानां—इन नौ बलदेव और वासुदेवों के पुव्वभविया नव नामधेज्जा होत्था, पूर्वभक्तिकानि नव नामधेयानि आसन्—पूर्वभवसंबंधी जो नाम थे (तं जहा) तथा—वे इस प्रकार से हैं—(विस्सभूई पव्वयए) विश्वभूतिः पर्वतको—विश्वभूति१, पर्वतक२ (धनदत्त समुद्दत्त इसिवाले) धनदत्तः समुद्दत्त ऋषिपालः—धनदत्त३, समुद्दत्त४, ऋषिपालः५, (पियमित्त ललियमित्ते) प्रियमित्रो ललितमित्रः—प्रियमित्र६, ललितमित्र७, (पुणव्वसु गंगदत्ते य) पुनर्वसुर्गङ्गादत्तश्च—पुनर्वसु८ और गंगदत्त९ । (एयाइं णामाइं पुव्वभवे वासुदेवाणं) एतानि नामानि पूर्वभवे आसन् वासुदेवानाम्—ये पूर्वभव संबंधी नाम वासुदेवों के हैं । (एत्तो बलदेवाणं जहकमं कित्तइस्सामि) इतो बलदेवानां यथाक्रमं कीर्तयिष्यामि—अब बलदेवों के पूर्वभक्तों के नाम

शब्दार्थ—(एएसि णं णवण्हं बलदेववासुदेवाणं) एतेषां बल नवानां बलदेव वासुदेवानां—ने नव भगदेव अने वासुदेवाना (पुव्वभविया नव नामधेज्जा होत्था) पूर्वभक्तिकानि नवनामधेयानि आसन्—पूर्वभवना नाम होता। (तं जहा) तथा—ने नामो आ प्रभावे होता—(विस्सभूई पव्वयए) विश्वभूतिः पर्वतको—विश्वभूति१, पर्वतक२, (धनदत्त समुद्दत्त इसिवाले) धनदत्त३, समुद्दत्त४, ऋषिपालः५, (पियमित्त ललियमित्ते) प्रियमित्रो ललितमित्रः—प्रियमित्र६, ललितमित्र७, (पुणव्वसु गंगदत्ते य) पुनर्वसुर्गङ्गादत्तश्च—पुनर्वसु८ अने गंगदत्त९ (एयाइं णामाइं पुव्वभवे वासुदेवाणं) एतानि नामानि पूर्वभवे आसन् वासुदेवानाम्—वासुदेवाना पूर्वभवनां ते नामो होता (एत्तो बलदेवाणं जहकमं कित्तइस्सामि) इतो बलदेवानां यथाक्रमं कीर्त

टीका—‘एषि ण’ इत्यादि । एतेषा खलु मनानां बलदेवामुदवानां पूर्वमधिकानि नव नामधेयानि ‘होत्या आसन्, तद्यथा—विश्वभूतिः प्रवृत्ता धनदत्त समुद्रदत्त ऋषिपालः । मियमित्रो ललितमित्र पुनर्वसुर्गङ्गदत्त ॥५५॥ एतानि नामानि पूर्वमेषे आमन् वासुदेवानाम् । इतो बलदेवानां पूर्वमवनामानि ‘जहकम्’ यथाक्रम ‘विचिह्नस्सामि’ कीर्तयिष्यामि ॥५६॥ तानि नामान्याह—विश्वनन्दी च सुबधुः सागरदत्तोऽशोकोललितश्च । वाराहो धर्मसेनाऽपराजितो रामललितश्च ॥५७॥ सू० २०८॥

यथाक्रम से कहंगा (विसनंदी च सुबंधू सागरदत्ते असोगललिप च वाराहधम्मसेणे अपराइयरायललिप य) विश्वनन्दी च सुबधुः सागर दत्ताऽशोकोललितश्च, वाराहो धर्मसेनोऽपराजितो राजललितश्च—विश्वनन्दी १ सुबंधु २, सागरदत्त ३, अशोक ४, ललित ५, वाराह ६, धर्मसेन ७, अपराजित ८ और राजललित ९ ॥ सू २०८॥

टीकार्थ—‘एषि ण णवण्’ इत्यादि—इन नौ वामुदवों के पूर्वमव सचवों जो नाम थे, वे इस प्रकार से हैं—विश्वभूति १, प्रवृत्त २, धनदत्त ३, समुद्रदत्त ४, ऋषिपाल ५, मियमित्र ६, ललितमित्र ७, पुनर्वसु ८ और गंगदत्त ९ । अब बलदेवों के पूर्वमव के नाम यथाक्रम से कहवा हूँ—विश्वनन्दी, सुबंधु, सागरदत्त, अशोक, ललित, वाराह, धर्मसेन, अपराजित और राजललित ॥ सू २०८॥

यिष्यामि—इसे जणदेवोंने। पूर्वभवनां नामे। अनुक्रमे ऋषिः (विसनन्दी च सुबंधू सागरदत्ते असोगललिप च वाराहधम्मसेणे अपराइयरायललिप य) विश्वनन्दी च सुबधुः सागरदत्तोऽशोको ललितश्च, वाराहो धर्मसेनोऽपराजितो राजललितश्च—विश्वनन्दी सुबधु आगरदत्त, अशोक, ललित वाराह धर्मसेन, अपराजित अने राजललित ॥ सू. २०८॥

टीका—‘एषि ण णवण्’ इत्यादि—ते नव वामुदेवानां पूर्वभवनां नामे। अनुक्रमे आ प्रभाषे कृतां—(१) विश्वभूति, (२) प्रवृत्त (३) धनदत्त (४) समुद्रदत्त, (५) ऋषिपाल (६) मियमित्र (७) ललितमित्र, (८) पुनर्वसु अने (९) गंगदत्त जणदेवोंने। पूर्वभवनां नामे। अनुक्रमे नीचे प्रभाषे कृतां—(१) विश्वनन्दी (२) सुबधु (३) सागरदत्त, (४) अशोक (५) ललित, (६) वाराह, (७) धर्मसेन (८) अपराजित (९) राजललित ॥ सू. २०८॥

मूलम्—एएसि नवण्हं बलदेववासुदेवाणं पूवभविया नव-
धम्मायरिया होत्था, तं जहा—संभूय सुभदसुदंसणे य सेयंस कण्ह
गंगदत्ते । सागरसमुदनामे दुमसेणे य णवमए ॥५८॥ एए धम्मा-
यरिया कित्तीपुरिसाण वासुदेवाणं । पुव्वभवे एयासिं जत्थ निया-
णाइं कासी य ॥५९॥ सू० २०९॥

शब्दार्थ—(एएसिं णवण्हं बलदेववासुदेवाणं) एतेषां नवानां बलदेव
वासुदेवानां—इन नौ बलदेव और वासुदेवों के (पुव्वभविया) पूर्वभविका—
पूर्वभव में जो (नव धम्मायरिया होत्था) नवधर्माचार्य हुए हैं (तं जहा)
तद्यथा—वे इस प्रकार से हैं—(संभूयसुभदसुदंसणे य सेयंस कण्ह गंगदत्ते,
सागरसमुदनामे दुमसेणे य णवमए, संभूतः सुभद्रः सुदर्शनश्च श्रेयासः
कृष्णो गङ्गदत्तश्च, सागरः समुद्रनामा दुमसेनश्च नवमकः—संभूत, सुभद्र,
सुदर्शन, श्रेयांस, कृष्ण, गङ्गदत्त, सागर, समुद्र और नौमे दुमसेन ।
(एए धम्मायरिया कित्ती पुरिसाण वासुदेवाणं, पूव्वभवे एयासिं जत्थ-
नियाणाइं कासी य) एते धर्माचार्याः कीर्तिपुरुषाणां वासुदेवानाम्, पूर्व
भवे आसन् यत्र निदानान्यकार्षुश्च—ये नौ धर्माचार्य इन कीर्तिपुरुष वासु-
देवों के पूर्वभव में हुए हैं ॥सू० २०९॥

शब्दार्थ—(एएसिं णवण्हं बलदेववासुदेवाणं पुव्वभविया नव धम्मा-
यरिया होत्था) एतेषां नवानां बलदेववासुदेवानां पूर्वभविकाः नव धर्मा-
चार्या अभवन्—ते नव भगवद्वेदा अने वासुदेवोना पूर्वभवना के नव धर्माचार्यो
हता. (तं जहा) तद्यथा—तेभना नाम आ प्रमाणे छे—(संभूयसुभदसुदंसणे य
सेयंसकण्हगंगदत्ते, सागरसमुदनामे दुमसेणे य णवमए) संभूतः सुभद्रः
सुदर्शनश्च श्रेयांसः कृष्णो गङ्गदत्तश्च, सागरः समुद्रनामा दुमसेनश्च नवमकः—
(१) संभूत, (२) सुभद्र, (३) सुदर्शन, (४) श्रेयांस, (५) कृष्ण, (६) गङ्गदत्त,
(७) सागर, (८) समुद्र अने (९) दुमसेन (एए धम्मायरिया कित्तीपुरिसाण
वासुदेवाणं, पूव्वभवे एयासिं जत्थजियाणाइं कासी य) एते धर्माचार्याः
कीर्तिपुरुषाणां वासुदेवानाम् पूर्वभवे आसन् यत्र निदानान्यकार्षुश्च—ये
कीर्तिपुरुष वासुदेवोना पूर्वभवमा ते नव धर्माचार्यो यथा हता ॥सू० २०९॥

टीका—‘एएसि’ इत्यादि—एतेषां नवानां वसुदेववासुदेवानां पृथमस्मिन्
नव धर्माचार्या आसन्, तद्यथा—संपूत सुमद्र सुवर्धनश्च भेषांसः कृष्णो
गङ्गदत्तश्च । सागर समुद्रनामा हुमसेनश्च नक्षत्र ॥५८॥ एत धर्माचार्या
कीर्तिपुरुषाणां वासुदेवानाम् । पूर्वमव ‘एवासि’ आसन् यत्र निहा
नान्यकापुत्र ॥५९॥ सू २००॥

मूलम्—एएसि नवण्ह वासुदेवानां नवनियाणभूमीओ होत्था,
तं जहा—महुरा य कणगवत्थू सावत्थी पोयण च रायगिह । कायदी
कोसवी मिहिलपुरी हत्थिणपुर च ॥६०॥ एएसि ण णवण्ह वासुदे
वाण नव नियाणकारणा होत्था, त जहा—गावी जुवे सगामे तह
इत्थीपराहओ रगे । भज्जाणुरागपरह्मी माउया इय ॥६१॥ एएसि
णवण्ह वासुदेवाण नव पढिसत्थू होत्था, त जहा—अस्सगीवे तारण
मेरय महुकेढवे निसुभे य । बलिपहराय सह रावणे य जरासधो ॥६२॥
एय खल्ल पढिसत्तु कित्तिपुरिसाण वासुदेवाण । सव्वेवि चक्कजोही
सव्वे वि ह्या सचक्केहि ॥६३॥ एको य सत्तमीए पच य छट्ठीए पच
मीए एको । एको य अउत्थीए णव्हो पुण तच्च पुढवीए ॥६४॥
अणियाणकढारामा सव्वे वि य केसवा णियाणकढा । उड्ढगामी

टीका—‘एएसि णवण्ह’ इत्यादि—इन नौ बलदेव और वासुदेवों
के पूर्वमव में जो नौ धर्माचार्य हुए हैं । वे इस प्रकार से हैं—संपूत,
सुमद्र, सुवर्धन, भेषांस, कृष्ण, गङ्गदत्त, सागर, समुद्र और नामे हुमसेन ।
ये नौ धर्माचार्य इन कीर्तिपुरुष वासुदेवों के पूर्वमव में हुए हैं ॥५८॥ २०१॥

टीका—‘एएसि णवण्ह’ इत्यादि—ते नव णवण्हे अने वासुदेवोना
पूव णवमां के नव धर्माचार्यो यधुं का तेमनां नाम नीखे उभावे छ—(१) कृष्ण,
(२) सुमद्र, (३) सुवर्धन, (४) भेषांस, (५) हृष्य (६) गङ्गदत्त, (७) सागर
(८) समुद्र अने (९) हुमसेन ते कीर्तिपुरुष वासुदेवोना पूवधवमा ते नव
धर्माचार्यो यथा कथा ॥ सू, २०६ ॥

रामा केसवा सव्वे अहोगामी॥६५॥ अट्टकडाराम एगो पुणवमलोय
कप्पम्मि । एक्कासे गवभवसही सिज्झिस्सइ आगमिस्सेणं॥६६॥ सू.२१०॥

अब हम इन वासुदेवों की इन निदानभूमियों को कहते हैं कि
जहां पर इन्होंने निदान किया था—

शब्दार्थ—(एएसिं नवण्हं वासुदेवाणं) एतेषां नवानां वासुदेवानां—इन
नौ वासुदेवों की (नव निद्याणभूमिओ होत्था) नव निदानभूमय आसन्—
नौ निदानभूमियां थीं (तं जहा) तद्यथा—वे इस प्रकार से हैं (महुरा
य कणगवत्थू सावत्थीपोयणं च रायगिहं, कायंदी कोसंबी, मिहिलपुरी हत्थि-
णपुर च) मथुरा कनकवास्तुश्च श्रावस्ती पोतनं च राजगृहम्, काकनन्दी
कौशाम्बी मिथिलापुरी हस्तिनापुरं च—मथुरा, कनकवास्तु, श्रावस्ती, पोतन,
राजगृह, काकन्दी, कौशाम्बी, मिथिलापुरी और हस्तिनापुर । (एएसिं
णं णवण्हं वासुदेवाणं णव निद्याणकारणा होत्था) एतेषां खलु नवानां
वासुदेवानां नव निदानकारणान्यभूवन्—इन नौ वासुदेवों के नौ नौ निदान
कारण हुए हैं (तं जहा) तद्यथा—वे इस प्रकार से हैं (गावी जुवेसंगामे
तह इत्थीपराइओ रंगे, भज्जाणुरागपरइड्डी माउयाइय) गौर्यूपः संग्रामः
स्त्रीपराजित रङ्गः, भार्यानुरागो गोष्ठीपरक्रुद्धिर्मातेति—गाय, यूप, संग्राम,
स्त्रियों से पराजय, रङ्ग, भार्यानुराग, गोष्ठी, परक्रुद्धि और माता ।

इवे सूत्रकार ते वासुदेवानी ते निदानभूमियो निवे कडे छे के जथा तेमने
निदान कथुं छुं—

शब्दार्थ—(एएसिं नवण्हं वासुदेवाणं) एतेषां नवानां वासुदेवानां—
ते नव वासुदेवानी (नवनिद्याणभूमिओ होत्था) नव निदानभूमय आसन्—
नव निदानभूमियो छती, (तं जहा) तद्यथा—तेमना नाम आ प्रभाछे छे—(महुरा
य कणगवत्थू सावत्थीपोयणं च रायगिहं, कायंदीकोसंबी, मिहिलपुरी
हत्थिणपुरं च) मथुराकनकवास्तुश्च श्रावस्तीपोतनं च राजगृहम् काकनन्दी
कौशाम्बीमिथिलापुरी हस्तिनापुरं च—मथुरा, कनकवास्तु, श्रावस्ती, पोतन,
राजगृह, काकन्दी, कौशाम्बी, मिथिलापुरी अने हस्तिनापुर (एएसिं णं णवण्हं
वासुदेवाणं णव निद्याणकारणा होत्था) एतेषां खलु नवानां वासुदेवानां नव
निदानकारणान्यभूवन्—ते नव वासुदेवानां जे नव निदानकारणो छता (तं जहा)
तद्यथा—ते आ प्रभाछे छे—(गावीजुवे संगामे तह इत्थीपराइओ रंगे, भज्जा-
णुरागपरइड्डीमाउयाइय) गौर्यूपः संग्रामः स्त्रीपराजितं रङ्गः, भार्यानु-
रागो गोष्ठीपरक्रुद्धिर्मातेति—गाय, यूप (गीता), संग्राम, स्त्रीयो द्वारा पराजय,

(एषां षडङ्ग वासुदेवाय नमःपठिसत्थु होत्या) एतेषां नवानां वासुदेवानां नव प्रतिशप्रव आसन्-इन नव वासुदेवों के जो प्रतिशप्रपतिनारायण हुए हैं, (त जहा) तथा-अनेक नाम इस प्रकार से हैं । अस्मगीवे तारा मेरु मेहुकेहवनिस्तुमेय, पलिपहराण तद् रावणे जरासंधे) अश्वघ्नीवस्तारको मेरुको मधुकैटभा निशुम्भम्, पलिप्रभराजस्तयारावणम् नवमो जरासन्ध - अश्वघ्नीव, तारक, मेरु, मधुकैटभ निशुम्भ, पलि, प्रभराज, रावण और नरोमप। (एषां स्वस्त्यु पश्चिमस्तु किस्तिपुरिसाण वासुदेवानां) एते स्वस्त्यु प्रतिशप्रव कीर्तिपुरुषाणां वासुदेवानाम्-इस प्रकार ये कीर्ति पुरुष वासुदेवों के प्रतिशप्र हुए हैं (सर्वे वि चक्रजोही सर्वे वि ह्या सच देहिं) सर्वेऽपि चक्रयोपिन सर्वे इता स्वचक्रेण-ये सब प्रतिशप्रदेव वासु देवों के साथ चक्र से युद्ध करते हैं और अपने उसी चक्र से अन्त में मारे जाते हैं। (एषो य सप्तमीय पंच य छट्टीय पंचमीय एको, एको य अठ्ठीय कण्डो पुन तच्च पुडवीय) एक सप्तम्यां पञ्च य छष्ट्या पञ्च म्यामेका, एक चतुर्थ्या कृष्ण पुनस्तृतीयपृथिव्याम्-वासुदेवों में से एक-प्रथम वासुदेव सप्तमरक्त में गये हैं, पाँच वासुदेव अर्ध-द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ, पंचम और षष्ठ वासुदेव छठे नरक में गये हैं, एक-सातवें वासु

देव आयातु। ग गोष्ठी परकृति अने भवा। (एषां षडङ्ग वासुदेवाय नमः पठिसत्थु होत्या) एतेषां नवानां वासुदेवानां नव प्रतिशप्रव आसन्-दे नव वासुदेवाना के प्रतिशप्रप्रतिनारायण थे। तथा तेभानां नाम आ प्रभावे छ- (अस्मगीवे तारा मेरु मेहुकेहवे निस्तुमेय, पलिपहराण तद् रावणे जरा संधे) अश्वघ्नीवस्तारको मेरुको मधुकैटभो निशुम्भम्, पलि प्रभराजस्तथा रावणम् नवमो जरासन्धः-(१) अश्वघ्नीव (२) तारक (३) मेरु (४) मधुकैटभ (५) निशुम्भ (६) पलि (७) प्रभराज, (८) रावण (९) जरासन्ध (एषां स्वस्त्यु पश्चिमस्तु किस्तिपुरिसाण वासुदेवानां) एते स्वस्त्यु प्रतिशप्रव कीर्तिपुरुषाणां वासुदेवानाम् आ प्रभावे कीर्तिपुरुष वासुदेवाना प्रतिशप्रव थे। तथा छ (सर्वे वि चक्रजोही सर्वे वि ह्या सच देहिं) सर्वेऽपि चक्रयोपिन सर्वे इताः स्वच क्रेण-ये तथा प्रतिशप्रदेव वासुदेवाना साथ चक्र पडे लड़ना कता अने पोटाना तेच चक्रों आधारे साथ जाता (एषो य सप्तमीय पंच य छट्टीय पंचमीय एको, एको य अठ्ठीय कण्डो पुन तच्च पुडवीय) एक सप्तम्यां पञ्च य छष्ट्या, पञ्चम्यामेका, एक चतुर्थ्या कृष्ण पुनस्तृतीय पृथिव्याम्-वासु देवों में से एक प्रथम वासुदेव सातवीं नरक में गया छ। अर्ध तृतीय तथा आश्वघ्नी अने छष्ट्य के पाँच वासुदेव छठी नरक में गया छ। सातवां वासुदेव

टीका—‘एणसिं’ इत्यादि—एतेषां नवानां वासुदेवानां पूर्वमपि नव निदान-
भूमय आसन्, ‘तं जहा’—तद्यथा—मथुरा कनकवास्तुश्च श्रावस्तीपोतनं च राज-

देव पंचम नरक में गये हैं, एक—आठवें वासुदेव चतुर्थनरक में गये हैं,
और नवमें वासुदेव कृष्णवासुदेव तृतीय नरक में गये हैं। (अणियाण-
कडा रामा सव्वे वि केशवा नियाणकडा, उड्डगामी रामा केशवा सव्वे अहो-
गामी) अनिदानकृता रामाः सर्वेऽपि च केशवा निदानकृताः, उर्ध्वगामिनो
रामाः केशवाः सर्वेऽधोगामिनः—जितने भी बलदेव होते हैं वे सब
बिना निदान के होते हैं अर्थात् ये निदानबंध नहीं करते हैं। तथा
जितने भी वासुदेव होते हैं ये सब निदान करके होते हैं, बलदेव
उर्ध्वगामी और केशव—वासुदेव नरकगामी होते हैं। (अट्टतकडारामा एगो
पुण वंमल्लोयकप्पम्मि, एक्का से गर्भवसहीसिज्जिअसड आगमिस्सेणं) अष्टा-
वन्तकृता रामाः एकः पुनर्ब्रह्मलोककल्पे, एका तस्य गर्भवसतिः सेत्स्यति
आगमिष्यति खलु (काले)—आठ बलदेव तो मोक्षगामी हुए हैं, एक
ब्रह्मलोककल्प में गये हैं। अतः ये ब्रह्मलोभगत बलदेव भी मनुष्यपर्याय
पाकर आगामीकाल में मोक्ष जावेंगे ॥सू. २१०॥

टीकार्थ—‘एणसिं णवण्ह वासुदेवाणं’ इत्यादि—इन नौ वासुदेवों की
नौ निदानभूमियाँ थीं। वे इस प्रकार से हैं—मथुरा, कनकवास्तु, श्रावस्ती,

पाथभी नरकमा गया छे, आठमा वासुदेव चौथी नरकमा गया छे, अने नवमा
कृष्ण वासुदेव त्रीण नरकमा गया छे (अणियाणकडा रामासव्वे वि य केशवा
नियाणकडा, उड्डगामीरामाकेशवा सव्वे अहोगामी) अनिदानकृता रामाः
सर्वेऽपि च केशवाः निदानकृताः, उर्ध्वगामिनो रामाः केशवाः सर्वेऽधो-
गामिनः—बेटवा भणहेवो थाय छे तेओ निदान बिनाना होय छे—बेटवे के
नियाण आधना नथी पणु बेटवा वासुदेवो थाय छे ते अधा नियाणु आधीने
थाय छे भणहेवो उर्ध्वगामी होय छे पणु केशव—वासुदेवो अधोगामी—नरकगामी
होय छे (अट्टतकडारामा एगोपुण वंमल्लोयकप्पम्मि, एक्का से गर्भवसही-
सिज्जिअसड आगमिस्सेणं) अष्टावन्तकृतारामाः एकः पुनर्ब्रह्मलोककल्पे,
एका तस्य गर्भवसतिः सेत्स्यति आगमिष्यति खलु (काले)—आठ भण
हेवो तो मोक्षे गया छे, ओक भणहेव ब्रह्मलोक कल्पमा गया छे, तेथी ते ब्रह्मलोकमा गयेउ
भणहेव पणु मनुष्यपर्याय पाभीने आगामीकाले मोक्षे अशे ॥सू. २१०॥

टीकार्थ—‘एणसिं णवण्ह वासुदेवाणं’ इत्यादि—ते नव वासुदेवानां नव
निदानभूमि हती तेमना नाम आ प्रमाहे छे—मथुरा, कनकवास्तु, श्रावस्ती गो...

सुहृत् । काकन्दी कौशाम्बी मिथिलापुरी हस्तिनापुरं च ॥६०॥ एतेषां सप्त
चवानां वासुदेवानां नानिदानकारणा यधूवन, तद्यथा-गोयुवः सश्रामः क्षीप
रानित रत्न । भार्यानुरागो गोष्ठी परशुद्धिर्मात्रेति ॥६१॥ एतेषां नाना
वासुदेवानां नवप्रतिष्ठप्रथ भासन तद्यथा—अश्वघ्नीस्तारकी मेरका मधुकैमो
निशुम्भश्च । बन्धि ममराजस्तथा रावणश्च नवमो जरासन्ध ॥६२॥ एते सप्त
प्रतिष्ठप्रथकीर्तिपुरुषाणां वासुदेवानाम् । सर्वेऽपि चक्रयोधिन सर्वे हताः स्वच
क्रिय ॥६३॥ एकश्च सप्तम्यां पञ्च च पष्ठ्यां पञ्चम्यामकः । एकश्च चतुर्थ्यां
कृष्ण पुनस्तृतीयपृथिव्याम् । ६४॥ अनिदानकृता रामाः सर्वेऽपि च केशवा

पोतन रामशूर, काकन्दी, कौशाम्बी मिथिलापुरी और हस्तिनापुर ।
इन ती वासुदेवों के जो जो निदानकारण हुए हैं, वे इस प्रकार से हैं—
गाय, युव सश्राम, स्त्रीयों से पराजय, रत्न, भार्यानुराग, गोष्ठी, पर
शुद्धि और माता । इन नव वासुदेवों के जो प्रतिष्ठप्र-पत्तिनारायण नौ
हुए हैं । उनके नाम इस प्रकार हैं—अश्वघ्नी, तारक मेरक, मधुकै
टम्, निशुम्भ बन्धि, ममराज, रावण और जरासन्ध । इस प्रकार ये
कीर्तिपुरुष वासुदेवों के प्रतिष्ठप्र हुए हैं । ये सब पतिवासुदेवों के साथ
एक स युद्ध करते हैं और अपने उसी चक्र से भक्त में मारे जाते
हैं । वासुदेवों में से एक—प्रथमवासुदेव सप्तम नरक में गये हैं, पाँचवा
देव अर्थात्—द्वितीय, तृतीय चतुर्थ, पंचम, और पष्ठ वासुदेव उन्हें
नरक में गये हैं एक—सातवें वासुदेव पंचम नरक में गये हैं एक—आठवें
वासुदेव चतुर्थ नरक में गये हैं और नवम वासुदेव कृष्णवासुदेव तृतीय
पृथिवी में गये हैं । जितने भी पल्लव होते हैं वे सब बिना निदान के
होते हैं अर्थात्—ये निदानबन्ध नहीं करते हैं । तथा जितने भी वासुदेव

सप्तशुद्ध काकन्दी कौशाम्बी, मिथिलापुरी जने हस्तिनापुर ते नव वासुदेवाना
निदान का जो नीचे प्रमाणों द्वारा—गाय, युव, सश्राम, स्त्रीयोद्धार पराजय रत्न
भार्यानुराग गोष्ठी परशुद्धि जने जाता। ते नव वासुदेवाना के नव प्रतिष्ठप्र-
प्रतिष्ठप्रदेवा चक्र जथा तेमना नाम नीचे प्रमाणों से—अश्वघ्नी, तारक, मेरक
मधुकै न निशुम्भ बन्धि ममराज रावण जने जरासन्ध ते कीर्तिपुरुष वासु
देवाना प्रतिष्ठप्रदेवा कथर प्रमाणों द्वारा। ते जथा प्रतिवासुदेवा वासुदेवानी साथ
एकही युद्ध करतां द्वारा जने चोतानां ज ते एकही जायने भागो जथा वासु
देवामांको जेक—प्रथम वासुदेव सातवी नरकमां जथा छ, पाँच वासुदेवो—जेठवे
छे जीवन्ती छुन सुधीन वासुदेवो छुन नरकमां जथा छ, आठवां वासुदेव पाँचवी
नरके जथा छ जेठवां वासुदेव जेठवी नरके जने नवमां वासुदेव कृष्णवासुदेव
तीन नरके जथा छ जेठवा जेठवेवा साथ छ ते बिना निदानना जेठ छ—जेठवे

નિદાનકૃતાઃ । ઊર્ધ્વગામિનો રામાઃ કેશવાઃ સર્વેઽધોગામિનઃ ॥૬૫॥ અષ્ટાવન્ત-
કૃતાઃ રામાઃ એકઃ પુનર્બ્રહ્મલોકકલ્પે । એકા તસ્ય ગર્ભવસતિઃ સેતસ્યતિ
આગમિષ્યતિ સ્વલુ (કાલે) ॥૬૬॥ મૃ. ૨૧૦॥

મૂલમ્--જંબુદ્વીપે ણં દીવે ઇરવણ વાસે ઇમીસે ઓસપ્પિણીણ
ચત્તવીસં તિત્થયરા હોત્થા, તં જહા--ચંદાણણં સુચંદં અગ્ગીસેણં ચ
નંદિસેણં ચ । ઇસિદિણં વયહારિં વંદિમો સોમચંદં ચ ॥૬૭॥ વંદામિ
જુત્તિસેણં અજિયસેણ તહેવ સિવસેણં । બુદ્ધં ચ દેવસમ્મં સયયં
નિલ્લિલ્લત્તસત્થં ચ ॥૬૮॥ અસંજલં જિણવસહં વંદે ય અગંતયં અમિ-
યણાણિં । ઉવસંતં ચ ધુયરયં વંદે સ્વલુ ગુત્તિસેણં ચ ॥૬૯॥ અતિપાસં
ચ સુપાસં દેવેસરવંદિયં ચ મરુદેવં । નિલ્લાણગયં ચ ધરં સ્વીણદુહં
સામકોટ્ટં ચ ॥૭૦॥ જિયરાગમગ્ગિસેણ વંદે સ્વીણમગ્ગિ ઉત્તંચ ।
વોક્કસિયપિજ્જદોસં વારિસેણં ગયં સિદ્ધિ ॥૭૧॥ સૂ. ૨૧૧॥

હોતે હૈં યે સબ નિદાન કરકે હોતે હૈં । વલ્લદેવ ઊર્ધ્વગામી ઓર કેશવ-
વાસુદેવ-પૃથિવીગામી હોતે હૈં । આઠ વલ્લદેવ તો મોક્ષગામી હુણે હૈં, એક
બ્રહ્મલોકકલ્પ મેં ગયે હૈં । અતઃ યે બ્રહ્મલોકગત વલ્લદેવ ખી મનુષ્યપર્યાય
પાકર આગામીકાળ મેં મોક્ષ જાવેંગે ॥મૃ. ૨૧૦॥

શબ્દાર્થ--(જંબુદ્વીપે ણં દીવે ઇરવણ વાસે ઇમીસે ઓસપ્પિણીણ
ચત્તવીસં તિત્થયરા હોત્થા) જંબુદ્વીપે સ્વલુ દ્વીપે ઇરવતે વર્ષેઽસ્યામવસ-
ર્પિણ્યાં ચતુર્વિંશસ્તીર્થક્રુરા આસન્-જંબુદ્વીપ નામક દ્વીપ મેં ઇરવતક્ષેત્ર મેં

કે નિયાણુ બધતા નથી. પણ જોટલા વાસુદેવો થાય છે તે બધા નિયાણુ બાધીને
થાય છે બળદેવ ઉર્ધ્વગામી હોય છે, વાસુદેવ નરકગામી હોય છે આઠ બળદેવ
તો મોક્ષ ગયા છે, અને એક બળદેવ બ્રહ્મલોક કલ્પમા ગયા છે. તે બ્રહ્મકલ્પમા
ગયેલા બળદેવ પણ મનુષ્યભવ પામીને મોક્ષે જશે ॥મૃ. ૨૧૦॥

શબ્દાર્થ--(જંબુદ્વીપે ણં દીવે ઇરવણ વાસે ઇમીસે ઓસપ્પિણીણ ચત્તવીસં
તિત્થયરા હોત્થા) જંબુદ્વીપે સ્વલુ દ્વીપે ઇરવતે વર્ષેઽસ્યામવસર્પિણ્યાં ચતુ-
ર્વિંશતિસ્તીર્થક્રુરા આસન્-જંબુદ્વીપ નામના દ્વીપમા આવેલા અરવતક્ષેત્રમા

इस उत्सर्पिणीकाम म खीयोम सीरकर कृप (त जहा) सध ११--उनक नाम इस प्रकार है (चद्रागणं, सुषंद, अग्नीसेण च नदिसेण च) चन्द्रा नन सुचन्द्रमग्निसन नन्दिसेन च-चद्रानन^१ सुचन्द्र^२, अग्निसन^३, नदि सेन^४ (इसिदिष्णं वयहारिविदिमो सोमचंद्र च) ऋषिदत्त व्रतधारिण बन्दा महे सोमचंद्र च-ऋषिदत्त^५ व्रतधारी^६ और सोमचंद्र^७ मैं उनक लिए नमस्कार करता हू। (वद्रामि जुगिसेण अजियसेण तद्देव सिधसेण) वदे युक्तिसेनमजितसेन तथैव शिषसेनम्-तथा युक्तिसेन^८ अजितसन^९ शिषसेन^{१०}, (युद्ध देवसम्मं सयय निक्खित्तसत्थं च) युद्ध च देवशर्मा^{११} सतत निक्षिप्तशस्त्रं च-युद्ध-तत्त्वज्ञदेवशर्मा^{१२}, तथा निक्षिप्तशस्त्र नामक निन दध^{१३} को नमस्कार करना हू। (अभजलं जिणवसां वदे य अभतय भमियाणार्णि, उवसं घुपरययं वदे खलु गुलिससं च) असज्वलं जिन हृषं वदे यातकममिज्जानिनम्, उपशान्तं च घुतरजसं वदे खलु गुलिसेनं च असज्वलं^{१४} जिनहृषम^{१५} को मैं नमस्कार करता हू। भमि तज्ञानी अनतनाथ को मैं नमस्कार करता हू^{१६}। जिन्होंने कर्मरत्न का नाशकर दिया है-ऐसे उपशान्त नामक जिन को मैं नमस्कार करता हू^{१७}। गुप्तिसन को मैं नमस्कार करता हू^{१८}। (भतिपासं च सुपासं दवेसर आ उत्सर्पिणीअणमां भावांस तीर्थंइते यथा छ (त जहा) सुपासां-तेमना नाम आ भमवे छ (चद्रागणं सुषंद, अग्नीसेणं, च नदिसेणं च) चन्द्राननं सुचन्द्रमग्निसन नन्दिसेनं च-(१) चद्रानन, (२) सुचन्द्र, (३) अग्निसेन (४) नन्दिसेन (इसिदिष्णं वयहारिविदिमो सोमचंद्रं च) ऋषिदत्त व्रतधारिण बन्दा महे सोमचन्द्र च-(५) ऋषिदत्त, (६) व्रतधारी (७) सोमचंद्र तेमने हू नम स्कार इति छ (वद्रामि जुगिसेणं अजियसेणं तद्देव सिधसेणं) वदे युक्ति सनमजितसन तथैव शिषसेन-तथा (८) युक्तिसेन, (९) अजितसन आने (१०) शिषसेनने हू नमन इति छ (युद्ध देवसम्मं सययं निक्खित्तसत्थं च) युद्धं च देवशर्मा^{११} सततं निक्षिप्तशस्त्रं च-(१२) युद्ध तत्त्वज्ञदेवशर्मा, आने (१३) निक्षिप्तशस्त्र नामका जिनदेवने पण नमस्कार इति छ (असजलं जिणवसां वदे य अभतय भमियाणार्णि, उपसंतं घुपरययं वदे खलु गुलिससं च) अस ज्वलं जिनहृषं वदे पान्तक ममिज्जानिनम् उपशान्तं च घुतरजसं वदे खलु गुप्तिसेनं च-(१४) असज्वलन आने (१५) जिनहृषन, ने नमस्कार इति छ (१६) भमितज्ञानी अनतनाथने हू नमन इति छ (१७) नेभवे भमरत्नो नाश इति छ कोवा उपशा त न भना जिनेयने हू नमन इति छ (१८) गुप्ति

टीका-‘जंबूद्वीवे णं’ इत्यादि-जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे ऐरवतं वर्षेऽस्यामवम-
पिण्यां चतुर्विंशतिस्तीर्थङ्करा आसन्, तथा-चन्द्रानन सुचन्द्रमग्निसेन नन्दि-
सेन च । ऋषिदत्तं व्रतधारिण वन्दामहे सामवन्दं च ६७॥ वन्दे युक्तिसेन-
मजितसेनं तथैव शिवसेनम् । बुद्ध च देवगर्मांगं सततं निक्षिप्तगन्धं च ॥६९॥

(अथ च मरुदेवं, निर्व्वाणगय च धर खीणदुहं सामकोट्टं च) अतिपार्श्व
सुपार्श्वं देवेश्वरवन्दितं च मरुदेवम्, निर्व्वाणगतं क्षीणदुःखं श्यामकोष्ठ
धरं जिनं वन्दे-अतिपार्श्व १८, सुपार्श्व १९ और देवेश्वरवन्दित मरुदेव २०
जिन व मैं नमस्कार करता हूँ । निर्व्वाणगत, दुःख का क्षयकरने वाले
और श्यामकोष्ठवाले धर नामक जिन को मैं नमस्कार करता हूँ २१ ।
(जियरायमग्निसेणं वन्दे खीणरायमग्नि उत्तं च, वोक्कसियपिज्जदोस्स वारि-
सेणं गयं सिद्धिं) जितरागमग्निसेननामानं जिन वन्दे, क्षीणरागमग्निपुत्र-
नामानं जिनं च वन्दे, व्युत्कृष्टप्रेमद्वेष वारिसेन गतं सिद्धिम्-जितरागवाले
अग्निसेन को २२, क्षीणरागवाले अग्निपुत्र को २३ एवं रागद्वेषरहित होकर
सिद्धिगति को प्राप्त हुए वारिसेन २४ जिनको मैं नमस्कार करता हूँ ॥सू. २११॥

टीकार्थ- जंबूद्वीवे णं दीवे’ इत्यादि-जम्बूद्वीप नामक द्वीप में ऐरवतक्षेत्र
में इस उत्सर्पिणीकाल में चौबीस तीर्थंकर हुए, उनके नाम इस प्रकार
हैं-चन्द्रानन १, सुचन्द्र २, अग्निसेन ३, नन्दिसेन ४, ऋषिदत्त ५, व्रतधारी ६
और सोमचन्द्र ७ मैं इनको नमस्कार करता हूँ । तथा युक्तिसेन ८ अजि

सेनने हूँ नमन ३३ छ (अतिपास च सुपासं देवेसर वंदियं च मरुदेवं,
निर्व्वाणगय च धरं खीणदुहं सामकोट्टं च) अतिपार्श्व च सुपार्श्वं देवेश्वर
वन्दितं च मरुदेवं, निर्व्वाणगतं क्षीणदुःखं श्यामकोष्ठं धरं जिनं वन्दे-(१८)
अतिपार्श्व, (१८) सुपार्श्व, (२०) देवेश्वर वन्दित मरुदेव, अग्निसेनदेवने हूँ
वन्दन ३३ छ (२१) निर्व्वाण पासेला, हूँ अने क्षय कराने अने श्याम कोष्ठवाला
धर नामका जिनदेवने हूँ नमः छ (जियरायमग्निसेणं वन्दे खीणरायमग्निउत्तं
च, वोक्कसिय पिज्जदोस्सवारिसेणं गयं सिद्धिं) जितरागमग्निसेननामानं जिन
वन्दे, क्षीणरागमग्निपुत्रनामानं जिनं च वन्दे, व्युत्कृष्टप्रेमद्वेष वारिसेन गतं
सिद्धिम्-(२२) रागने जितनार अग्निसेनने (२३) क्षीणरागवाला अग्निपुत्रने
अने (२४) रागद्वेष रहित थधने सिद्धिगति प्राप्त करनार वारिसेन जिनदेवने
हूँ नमस्कार ३३ छ ॥ सू. २११ ।

टीकार्थ-‘जंबूद्वीवे णं दीवे’ इत्यादि-जम्बूद्वीपना ऐरवतक्षेत्रमा आ
उत्सर्पिणीकागमां ७० ये चौबीस तीर्थंकर थध गया तेभना नम आ प्रम ले छे-
(१) चन्द्रानन, (२) सुचन्द्र, (३) अग्निसेन, (४) नन्दिसेन (५) ऋषिदत्त, (६)
व्रतधारी, अने (७) सोमचन्द्र, अग्निसेनदेवने हूँ नमस्कार ३३ छ (८) युक्तिसेन,

भस्मज्जल मिनवृषभं च देवानां तत्र ममित्तानिनाम् । उभश्चा त च धुतरजस च दे
 सल्लु गुप्तिसेन च ॥६७॥ अतिपार्श्वं च सुपार्श्वं देवश्वरश्च दित च मरुदेवम् ।
 निर्वाणगर्भं क्षीणदुःखस्यामकोष्ठ धरन्धरनामकं मिनं च दे ॥७०॥ मितराग
 मन्निसेननामानं मिनं च ॥ क्षीणरागमग्निपुत्रनामानं मिनं च वन्दे । व्युत्कृष्टमेवैष
 रागदेपरहित सिद्धिं गत वारिसेननामानं च मिनं च दे ॥७१॥ सू २११॥

मृषम्—जबुक्षीव ण दीवे आगमिस्साए उस्सपिणीए भारहे
 वासे सत्त कुलगरा भविस्सति, त जहा—मियवाहणे सुभूमे य सुप्पमे
 य सयपमे । दत्ते सुहुमे सुवधू य आगमिस्सा ण होक्खति ॥७२॥
 जबुक्षीवे ण दीवे आगमिस्साए उस्सपिणीए एरवण वास दस कुलगरा

तसेन ९ शिवसेन १०, बुद्ध-तत्त्वज्ञदेवशर्मा ११ तथा निक्षिप्तशस्त्र नामक
 मिनदेव १२ को नमस्कार करता हूँ । असज्जल १३, मिनवृषभ १४ को मैं
 नमस्कार करता हूँ । अमितज्ञानी अनन्तनाथ को मैं नमस्कार करता
 हूँ १५ । जिन्होंने कर्मरज का नाश कर दिया है—एसे उपशान्त नामक मिन
 को मैं नमस्कार करता हूँ १६ । गुप्तिसेन को मैं नमस्कार करता हूँ १७
 अतिपार्श्व १८ सुपार्श्व १९ और देवश्वर वदित मरुदेव २० जिनको मैं नम
 स्कार करता हूँ । निर्वाणगत, दुःख का क्षय करनेवाले और व्यामकोष्ठ
 वाले धर नामक मिनको मैं नमस्कार करता हूँ २१ । मितरागवाले अग्निसेन
 को २२, क्षीणरागवाले अग्निपुत्र को २३ एवं रागदेपरहित होकर सिद्धिगति को
 प्राप्त हुए वारिसेन २४ मिनको मैं नमस्कार करता हूँ ॥ सू २११॥

(६) अजितसेन, (१०) शिवसेन, (११) बुद्ध-तत्त्वज्ञदेवशर्मा, तथा (१२) निक्षिप्त
 शस्त्र नामका मिनदेवने हुं नमन करे छु (१३) असज्जलजन जाने (१४) मिन
 वृषभने हुं वन्दन करे छु (१५) अमितज्ञानी अनन्तनाथने हुं नमस्कार करे छु
 (१६) कर्मरजने नाश कराने उपशान्त नामका मिनदेवने हुं वन्दन करे छु
 (१७) गुप्तिसेनने हुं नम्रु छु (१८) अतिपार्श्व, (१९) सुपार्श्व जाने ०
 देवश्वर वदित मरुदेव जिनेन्द्रने हुं वन्दन करे छु (२१) निर्वाण पाये,
 हुं जाने क्षय कराने श्याम केदवाणा धर नामका मिनदेवने हुं नमस्कार करे छु
 (२२) राग पर विजय भोजनान् अग्निसेनने (२३) राजने क्षय कराने अग्निपुत्रने
 तथा (२४) रागद्वेष वदित धर्मे सिद्धिगति प्राप्त हुए वारिसेन नामका
 मिनदेवने हुं नमन करे छु ॥ सू २११॥

भविस्सन्ति, तं जहा—विमलवाहणे सीमंकरे सीमंधरे खेमंकरे खेमंधरे
दढधणू, दसधणू, सयधणू, पडिसुई सुमइत्ति ॥७३॥ सू० २१२॥

शब्दार्थ—(जंबूद्वीवे णं दीवे) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे—इस जंबूद्वीप नामके
द्वीप में (आगमिस्साए उस्सप्पिणीए भारहे वासे) आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्यां
भारते वर्षे—आनेवाले उत्सर्पिणीकाल में भारतवर्ष में (सत्त कुलगरा भवि-
स्सन्ति) सप्त कुलकरा भविष्यन्ति—सात कुलकर होंगे । (तं जहा) तद्यथा—
उनके नाम इस प्रकार से हैं (मियवाहणे सुभूमेय सुप्पभे य सयंपभे,
दत्ते सुहुमे सुबंधू य आगमिस्सा ण होक्खन्ति) मितवाहनः सुभूमा च
सुप्रभश्च स्वयंप्रभः, दत्तः सूक्ष्मः सुबन्धुश्च आगमिष्यति खलु भविष्यन्ति—
मितवाहन१, सुभूम२, सुप्रभ३, स्वयंप्रभ४, दत्त५, सूक्ष्म६ और सुबंधु ये
आगामीकाल में होंवेंगे । (जं द्दीवे णं दीवे आगमिस्साए उस्सप्पिणीए
ऐरवए वासे दस कुलगरा भविस्सन्ति) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे आगमिष्य-
न्त्यामुत्सर्पिण्यामैरवते वर्षे दश कुलकरा भविष्यन्ति—जंबूद्वीप नामके द्वीप
में आगामी उत्सर्पिणीकाल में ऐरवतक्षेत्र में दस कुलकर होंवेंगे । (त
जहा) तद्यथा—उनके नाम ये हैं—(विमलवाहणे सीमंकरे सीमंधरे खेमंकरे
खेमंधरे दढधणू दसधणू सयधणू पडिसुई सुमइत्ति) विमलवाहनः सीमङ्करः

शब्दार्थ—(जंबूद्वीवे णं दीवे) जंबूद्वीपे खलु द्वीपे—जं द्दीप नामना आ
द्वीपमा (आगमिस्साए उस्सप्पिणीए भारहे वासे) आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्यां
भारते वर्षे—आगामी उत्सर्पिणीकाले भारतवर्षमा (सत्तकुलगरा भविस्सन्ति)
सप्तकुलकरा भविष्यन्ति—सात कुलकर थसे (तं जहा) तद्यथा—तेभना नाम
आ प्रभावे ढसे—(मियवाहणे सुभूमेय सुप्पभे य सयंपभे दत्ते सुहुमे सुबंधू य
आगमिस्सा ण होक्खन्ति) मितवाहनः सुभूमा च, सुप्रभश्च स्वयंप्रभः, दत्तः
सूक्ष्मः सुबन्धुश्च आगमिष्यति खलु भविष्यन्ति—(१) मितवाहन, (२) सुभूम,
(३) सुप्रभ, (४) स्वयंप्रभ, (५) दत्त, (६) सूक्ष्म अने (७) सुबन्धु, ते कुलकरा
आगमा जाणमा थसे (जंबूद्वीवे णं दीवे आगमिस्साए उस्सप्पिणीए ऐरवचे
वासे दस कुलगरा भविस्सन्ति) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे आगमिष्यन्त्यामुत्स-
र्पिण्यामैरवते वर्षे दश कुलकरा भविष्यन्ति—जं द्दीप नामना द्वीपमा
आगामी उत्सर्पिणीकालमा ऐरवतक्षेत्रे दस कुलकर थसे (तं जहा) तद्यथा—
तेभना नाम आ प्रभावे छि—विमलवाहणे सीमंकरे सीमंधरे खेमंकरे खेमंधरे
दढधणू दसधणू सयधणू पडिसुई सुमइत्ति) विमलवाहनः सीमङ्करः सीमंधरः

टीका—‘जम्बूद्वीपे ण’ इत्यादि जम्बूद्वीप खलु द्वीपे आगामिपन्त्तमाहुतम
विष्णां भारते वर्षे सप्त कुलकरा भविष्यन्ति, तद्यथा—मितवाहनः सुभूमा च
सुपमम स्वयममः॥ दत्त सुहमा सुव-सुभ ‘आगमिस्ता’ आगमिष्यति खलु
हाले ‘होक्वसि’=भविष्यति ॥७२॥ जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे आगमिष्यत्स्याद्
त्सर्पिण्यामेरवते वर्षे दश कुलकरा भविष्यन्ति, तद्यथा—विमलवाहनः सीमङ्करः
क्षेमङ्करः क्षम-पर ददधनुर्ददधनुः क्षतधनु प्रतिभृति सुमतिरिति ७३॥ सू २१२

मृम्म—जम्बूद्वीपे ण दीवे भारहे वासे आगमिस्ताय ओस्स
पिणीय चउवीस तित्थगरा भविस्सति, त जहा—महापंडमे सुरदेवे,
सुपांसे य सयपंमे । सव्वाणुभूर्इ अरहा देवस्सुंय य होक्खइ॥७३॥
उदयं पेढालपुत्ते य पोहिले सत्तकित्ति’ य । मणिस्सुंवय य असमे,

सीमन्वर क्षेमङ्करः क्षेम-पर ददधनुर्ददधनुः क्षतधनु प्रतिभृति सुमति
रिति—विमलवाहनः, सीमकरः, सीमपरः, क्षेमकरः क्षेमपरः ददधनुः
ददधनुः क्षतधनुः प्रतिभृतिः और सुमतिः १० ॥ सू २१२॥

टीकार्थ—‘जम्बूद्वीपे ण दीवे’ इत्यादि—इस जम्बूद्वीप नामके द्वीप में आग
वाले उत्सर्पिणीकाल में भारतवर्ष में सात कुलकर होंगे । उनके नाम इस
प्रकार से हैं—मितवाहनः सुभूमरः, सुपमरः, स्वयममरः, दत्तः, सुहमः
और सुपंधु । ये आगामीकाल में होंगे । जम्बूद्वीप नामके द्वीप में आगाम
उत्सर्पिणीकाल में पेरवतमेघ में दस कुलकर होंगे । उनके नाम ये हैं—
विमलवाहनः, सीमकरः, सीमपरः, क्षेमकरः, क्षमपरः ददधनुः,
ददधनुः, क्षतधनुः, प्रतिभृतिः और सुमतिः १० ॥ सू २१२॥

क्षेमङ्करः क्षम-पर ददधनुर्ददधनुः क्षतधनु प्रतिभृति सुमतिरिति—
(१) विमलवाहनः, (२) सीमकरः (३) सीमपरः (४) क्षेमकरः (५) क्षेमपरः (६) ददधनुः
(७) ददधनुः (८) क्षतधनुः (९) प्रतिभृतिः अने (१०) सुमतिः ॥ सू २१२॥

टीका—‘जम्बूद्वीपे ण दीवे’ इत्यादि—आ जम्बूद्वीपमा आगामी उत्त
पिणीकाला जलवपमा भात पुवउरै यथे तेमना नाम आ प्रम वे कथे—
(१) मितवाहनः, (२) सुभू (३) सुभल (४) स्वयमल, (५) दत्त, (६) सुहम,
अने (७) सुपंधु जम्बूद्वीप नामना द्वीपमा आगामी उत्सर्पिणी कालमा मेरव
क्षेत्रमा दस पुवउरै यथे तेमना नाम आ प्रमवे कथे—(१) विमलवाहन (२)
सीमकर (३) सीमपर (४) क्षेमकर, (५) क्षेमपर (६) ददधनु (७) ददधनु
(८) क्षतधनु (९) प्रतिभृति अने (१०) सुमति, ॥ सू. २१२॥

सर्वभावविज्ज जिणे ॥७४॥ अरहा णिकसाए य, निप्पुलाए य निम्ममे
चि उत्ते समाही य आगमिस्से णं होक्खइ ॥७५॥ संवरे' अणि-
यंही य विज्जए विमंलेति च । देवोववाए अरहा अगंतविज्जए इय
॥७६॥ एए बुत्ता चउव्वीसं भरहे वासम्मि केवली । आगमिस्से णं
होक्खंति धम्मतित्थस्स देसगा ॥७७॥ सू० २१३॥

शब्दार्थ—जंबूद्वीपेण दीवे भारहे वासे आगमिस्साए उस्सप्पिणीए चउ-
वीसं तित्थगं भविस्संति) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षे आगमिष्यन्त्या-
मुत्सर्पिण्यां चतुर्विंशतिस्तीर्थकरा भविष्यन्ति—जम्बूद्वीप नामके द्वीप मे
भारतार्प में आगामी उत्सर्पिणीकाल में चौबीस तीर्थकर होंगे । (तं जहा)
तद्यथा—उनके नाम इस प्रकार से हैं—(महापद्मे, मरुदेवे, सुपासे य
सयंपमे, सव्वाणुभूर् अरहा देवस्सुए य होक्खइ) महापद्मः—मरुदेवः सुपा
स्वयंप्रभः सर्वानुभूतिरर्हन् देवश्रुतश्च भविष्यति महापद्म १, मरुदेव २,
सुपार्श्व ३, स्वयंप्रभ ४ सर्वानुभूति ५, देवश्रुत ६, (उदये पेहालपुत्ते य पोद्दिले
सत्तकित्ति य, मुणिसुव्वय य अममे सर्वभावविज्ज जिणे) उदयः पेहालपुत्रश्च
पोद्दिलः सप्तकीर्तिश्च, मुनिसुव्रतश्च अममः सर्वभावविज्ज जिने—उदय ७ पेहाल-
पुत्र ८ पोद्दिल ९, सप्तकीर्ति १० मुनिसुव्रत ११ अमम १२ सर्वभावविज्ज १३
(अरहा णिकसाए य निप्पुलाए य निम्ममे, चित्त उत्ते समाही य आगमिस्से

शब्दार्थ—(जंबूद्वीपे णं दीवे भारहे वासे आगमिस्साए उस्सप्पिणीए
चउवीसं तित्थगं भविस्संति) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षे आगमिष्य
न्त्यामुत्सर्पिण्यां चतुर्विंशतिस्तीर्थकरा भविष्यन्ति—जम्बूद्वीप नामका द्वीपमा
आवेता भरतक्षेत्रमा आगामी उत्सर्पिणीकालमा २४ श्रावीमा तीर्थकरा यथे
(तं जहा) तद्यथा—तेभना नाम आ प्रभाषे ७४—(महापद्मे मरुदेवे सुपासे य
सयंपमे, सव्वाणुभूर् अरहा देवस्सुए य होक्खइ) महापद्मः मरुदेवः सुपार्श्वश्च
स्वयंप्रभः, सर्वानुभूतिरर्हन् देवश्रुतश्च भविष्यन्ति—(१) महापद्म, (२) मरुदेव,
(३) सुपार्श्व, (४) स्वयंप्रभ, (५) सर्वानुभूति, (६) देवश्रुत (उदये पेहालपुत्ते य
पोद्दिले सत्तकित्ति य, मुणिसुव्वय य अममे सर्वभाव विज्ज जिणे) उदयः
पेहालपुत्रश्च पोद्दिलः सप्तकीर्तिश्च, मुनिसुव्रतश्च अममः सर्वभावविज्ज जिने—
(७) उदय, (८) पेहालपुत्र, (९) पोद्दिल, (१०) सप्तकीर्ति, (११) मुनिसुव्रत
(१२) अमम, (१३) सर्वभावविज्ज (अरहा णिकसाए य निप्पुलाए य निम्ममे,
चित्तउत्त समाही य आगमिस्से णं होक्खइ) अर्हन् निष्कृताश्च निप्पुला

सर्वभावविज्ज जिणे ॥७४॥ अरहाणिक्कसाए य, निप्पुलाए य निम्ममे
चि उत्ते समाही य आगमिस्से णं होक्खइ ॥७५॥ संवरे^{१०} अग्नि-
यंही य विज्जए विमलेति च । देवोववाए अरहा अगंतविज्जए इय
॥७६॥ एए वुत्ता चउव्वीसं भरहे वासम्मि केवली । आगमिस्से णं
होक्खंति धम्मतित्थस्स देसगा ॥७७॥ सू० २१३॥

शब्दार्थ—(जंबूद्वीपेण दीवे भारहे वासे आगमिस्साए उस्सप्पिणीए चउ-
वीसं तित्थगा भविस्संति) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षे आगमिष्यन्त्या-
मुत्सर्पिण्यां चतुर्विंशतिस्तोत्रंकरा भविष्यन्ति—जम्बूद्वीप नामके द्वीप मे
भारतवर्ष में आगामी उत्सर्पिणीकाल में चौबीस तीर्थंकर होंगे । (तं जहा)
तद्यथा—उनके नाम इस प्रकार से हैं—(महापउमे, मरदेवे, सुपासे य
सयंपभे, सव्वाणुभूर् अरहा देवस्सुए य होक्खइ) महापद्मः—मरदेवः सुपा
श्व स्वयंप्रभः सर्वानुभूतिरर्हन् देवश्रुतश्च भविष्यन्ति महापद्म १, मरदेव २,
सुपार्श्व ३, स्वयंप्रभ ४ सर्वानुभूति ५, देवश्रुत ६, (उदये पेढालपुत्ते य पोद्दिले
सत्तकित्ति य, मुणिसुव्वय य अममे सर्वभावविज्ज जिणे) उदयः पेढालपुत्रश्च
पोद्दिलः सप्तकीर्तिश्च, मुनिसुव्रतश्च अममः सर्वभावविज्जिनः—उदय ७ पेढाल-
पुत्र ८ पोद्दिल ९ सप्तकीर्ति १० मुनिसुव्रत ११ अमम १२ सर्वभाववित् १३
(अरहा णिक्कसाए य निप्पुलाए य निम्ममे, चित्त उत्ते समाही य आगमिस्से

शब्दार्थ—(जंबूद्वीपे णं दीवे भारहे वासे आगमिस्साए उस्सप्पिणीए
चउवीसं तित्थगारा भविरसंति) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षे आगमिष्य
न्त्यामुत्सर्पिण्यां चतुर्विंशतिस्तोत्रंकरा भविष्यन्ति—जम्बूद्वीप नामका द्वीपमा
आवेका भरतक्षेत्रमा आगामी उत्सर्पिणीकालमा २४ बोधीय तीर्थंकरे यथे
(तं जहा) तद्यथा—तेभना नाम आ प्रभाणे ढशे—(महापउमे मरदेवे सुपासे य
सयंपभे, सव्वाणुभूर् अरहा देवस्सुए य होक्खइ) महापद्मः मरदेवः सुपार्श्वश्च
स्वयंप्रभः, सर्वानुभूतिरर्हन् देवश्रुतश्च भविष्यन्ति—(१) महापद्म, (२) मरदेव,
(३) सुपार्श्व, (४) स्वयंप्रभ, (५) सर्वानुभूति, (६) देवश्रुत (उदये पेढालपुत्ते य
पोद्दिले सत्तकित्ति य, मुणिसुव्वय य अममे सर्वभाव विज्ज जिणे) उदयः
पेढालपुत्रश्च पोद्दिलः सप्तकीर्तिश्च, मुनिसुव्रतश्च अममः सर्वभावविज्जिनः—
(७) उदय, (८) पेढालपुत्र, (९) पोद्दिल, (१०) सप्तकीर्ति, (११) मुनिसुव्रत
(१२) अमम, (१३) सर्वभाववित् (अरहा णिक्कसाए य निप्पुलाए य निम्ममे,
चित्तउत्ते समाही य आगमिस्से णं होक्खइ) अर्हन् निष्कयाश्च निप्पुला

गद्य—‘जम्बूद्वीपे ण’ इत्यादि जम्बूद्वीप मन्त्र द्वीप आगामिपन्त्यामुत्त
र्षिणां मारत र्षे सप्त कुलकरा भविष्यति, तद्यथा—मितवाहनः सुममा च
सुममश्च स्वयममः॥ दश मः सुष-पुष ‘आगमिस्ता’ आगमिष्यति सप्त
वाले ‘होवन्ति’=भविष्यति ॥७७॥ जम्बूद्वीप मन्त्र द्वीप आगमिपन्त्यामु
त्तर्षिणामारत र्षे दश कुलकरा भविष्यन्ति, तद्यथा—रिममवाहन मीमङ्गा
क्षमङ्गा क्षम-पर दम्पनुर्दक्षधनुः शतधनुः प्रतिभुति सुमतिरिति ॥७३॥ अ २१२

मूलम्—जम्बूद्वीपे ण द्वीपे भारहे धोमे आगमिस्ताण ओस्स
प्पिणीए चउवीस तित्थगरा भविस्सति, त जहा—महापेउमे सुरदेवे,
सुपात्ते य सयपमे । सव्वाणभूर्द्ध अरहा देवस्सुए य होक्खइ ॥७३॥
उदए पेढालपुत्ते य पोहिले सत्तकित्ति’ य । मणिसेव्वय य अममे,

मीम-पर क्षेमङ्गा क्षेम-परः दम्पनुर्दक्षधनुः शतधनुः प्रतिभुति सुमति
रिति-विमलवाहनः, सीमकरः, सीमपरः, क्षेमकरः क्षमपरः दक्षधनुः
दक्षधनुः शतधनुः प्रतिभुतिः और सुमतिः ॥ अ २१२॥

टीका—‘जम्बूद्वीपे ण द्वीप’ इत्यादि—इस जम्बूद्वीप नामक द्वीप में आग
वाले उत्तर्षिणीकाल में मारतर्ष में सप्त कुलकर होंगे । उनके नाम इस
प्रकार से हैं—मितवाहनः सुममः, सुममश्च, स्वयममः, दमः, गहम
और सुषधु । ये आगामीकाल में होंगे । जम्बूद्वीप नामक द्वीप में आगाम
उत्तर्षिणीकाल में गेरवतक्षेत्र में दस कुलकर होंगे । उनके नाम य हैं—
विमलवाहनः, सीमकरः, सीमपरः, क्षेमकरः, क्षमपरः, दक्षधनुः,
दक्षधनुः, शतधनुः, प्रतिभुतिः और सुमतिः ॥ अ २१२॥

क्षेमङ्गा क्षेम-परः दक्षधनुर्दक्षधनुः शतधनुः प्रतिभुतिः सुमतिरिति—
(१) विमलवाहन (२) सीमकर (३) सीमपर (४) क्षेमकर (५) क्षमपर (६) दक्षधनु
(७) दक्षधनु (८) शतधनु (९) प्रतिभुति अने (१०) सुमति । अ २१२॥

टीका—‘जम्बूद्वीपे ण द्वीप’ इत्यादि—आ जम्बूद्वीपमा आगामी उत्त
र्षिणीकालमा न रतपवमा सात कुलकरा वथे. तेभनां नाम आ प्रम वे वथे—
(१) मितवाहन, (२) सुमम (३) सुमम (४) स्वयमम (५) दम, (६) गहम
अने (७) सुषधु जम्बूद्वीप नामना द्वीपमा आगामी उत्तर्षिणी कालमा नैस्वत
क्षेत्रमा इत कुलकर वथे. तेभनां नाम आ प्रमवे वथे—(१) विमलवाहन (२)
सीम २ (३) सीमपर (४) क्षेमकर, (५) क्षेमपर (६) दक्षधनु (७) दक्षधनु
(८) शतधनु (९) प्रतिभुति अने (१०) सुमति, ॥ अ २१२॥

सर्वभावविज्ज जिणे ॥७४॥ अरहा णिकमाए य, निप्पुलाए य निम्ममे
चि उत्ते समाही य आगमिस्से णं होक्खइ ॥७५॥ संवरे^{१०} अणि-
यंही य विज्जए विमलेति च । देवोववाए अरहा अगंतविज्जए इय
॥७६॥ एए वुत्ता चउव्वीसं भरहे वासम्मि केवली । आगमिस्से णं
होक्खंति धम्मतित्थस्स देसगा ॥७७॥सू० २१३॥

शब्दार्थ—जंबूद्वीपेणं दीवे भारहे वासे आगमिस्साए उस्सप्पिणीए चउ-
वीसं तित्थगा । भविस्संति) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षे आगमिष्यन्त्या-
मुत्सर्पिण्यां चतुर्विंशतिस्तोर्थकरा भविष्यन्ति—जम्बूद्वीप नामके द्वीप मे
भारतवर्ष में आगामी उत्सर्पिणीकाल में चौबीस तीर्थकर होंगे । (तं जहा)
तद्यथा—उनके नाम इस प्रकार से है—(महापउमे, मुरदेवे, सुपासे य
सयंपभे, सव्वाणुभूर् अरहा देवस्सुए य होक्खइ) महापद्मः—मुरदेवः सुपा
श्वंश्च स्वयंप्रभः सर्वानुभूतिरर्हन् देवश्रुतश्च भविष्यति महापद्म १, मुरदेव २,
सुपाश्व ३, स्वयंप्रभ ४ सर्वानुभूति ५, देवश्रुत ६, (उदये पेढालपुत्ते य पोद्दिले
सत्तकित्ति य, मुणिसुव्वय य अममे सर्वभावविज्ज जिणे) उदयः पेढालपुत्रश्च
पोद्दिलः सप्तकीर्तिश्च, मुनिसुव्रतश्च अममः सर्वभावविज्जिनः—उदय ७ पेढाल-
पुत्र ८ पोद्दिल ९ सप्तकीर्ति १० मुनिसुव्रत ११ अमम १२ सर्वभाववित् १३
(अरहा णिकमाए य निप्पुलाए य निम्ममे, चित्त उत्ते समाही य आगमिस्से

शब्दार्थ—(जंबूद्वीपे णं दीवे भारहे वासे आगमिस्साए उस्सप्पिणीए
चउवीसं तित्थगारा भविस्संति) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे भारते वर्षे आगमिष्य
न्त्यामुत्सर्पिण्यां चतुर्विंशतिस्तोर्थकरा भविष्यन्ति—जम्बूद्वीप नामका द्वीपमा
आवेदा भारतक्षेत्रमा आगामी उत्सर्पिणीकालमा २४ बोधीय तीर्थकरे यथे
(तं जहा) तद्यथा—तेमना नाम आ प्रभावे ढशे—(महापउमे मुरदेवे सुपासे य
सयंपभे, सव्वाणुभूर् अरहा देवस्सुए य होक्खइ) महापद्मः मुरदेवः सुपाश्वश्च
स्वयंप्रभः, सर्वानुभूतिरर्हन् देवश्रुतश्च भविष्यन्ति—(१) महापद्म, (२) मुरदेव,
(३) सुपाश्व, (४) स्वयंप्रभ, (५) सर्वानुभूति, (६) देवश्रुत (उदये पेढालपुत्ते य
पोद्दिले सत्तकित्ति य, मुणिसुव्वय य अममे सर्वभाव विज्ज जिणे) उदयः
पेढालपुत्रश्च पोद्दिलः सप्तकीर्तिश्च, मुनिसुव्रतश्च अममः सर्वभावविज्जिनः—
(७) उदय, (८) पेढालपुत्र, (९) पोद्दिल, (१०) सप्तकीर्ति, (११) मुनिसुव्रत
(१२) अमम, (१३) सर्वभाववित् (अरहा णिकमाए य निप्पुलाए य निम्ममे,
चित्तउत्त समाही य आगमिस्से णं होक्खइ) अर्हन् निष्काराश्च निप्पुला

टीका—‘मधुरीषे ण दीषे’ इत्यादि—जम्बूद्वीपे स्वस्त द्वीपे मारते वर्षे
‘आगमिस्साए’ आगमिष्यन्त्यामुत्सर्गिण्यां चतुर्विंशतिस्तीर्थकरा मविष्यन्ति,
सद्यया—महापद्मः १ सूरदेवः २ सुपाप्म ३ स्वयंप्रभ ४ । सर्वानुभूतिर्न ५, देव
भुत ६ मविष्यति ॥७॥ उदय ७ पेडाळपुत्र ८ पोहिल ९ सप्तकीर्ति १० ।
मुनिसुव्रत ११ अमम १२ ‘सर्वभावविज’ सर्वभावविज १३ जिन ॥७४॥ मर्हन्

ण होक्खइ) अर्हन् निष्कपायश्च निष्पुलाकश्च निर्ममः । चित्रगुप्त समा
धिश्च आगमिष्यति काले मविष्यति—अर्हन् निष्कपाय १४, निष्पुलाक १५,
निर्मम १६ चित्रगुप्त १७, समाधि १८, सर्वरे अणियही य विजए विमले
ति च देवोवपाण अरहा अणतविजए इय) स्वरोऽनिवृत्तिश्च विमलाविजय
इति च, देवोवपातोऽर्हन्ननन्त विजय इति—सर्व १९, अनिवृत्ति २० विजय
२१ विमल २२ देवोवपात और अर्हन् अनन्तविजय २३ (एण बुत्ता चउ
व्वीस मरहे पासम्मि केवली, आगमिस्से ण होक्खंति धम्मतिथस्स देसगा)
एते उक्ताश्चतुर्विंशति मारते वर्षे केवलिन आगमिष्यति काले मविष्यति
धर्मतीर्थस्य देशका ये पूर्वोक्त चौबीस तीर्थकर मारतवर्ष म आगामीकाल में
धर्मतीर्थके उपदेशक केवली होंगे ॥सू० २१३॥

टीकार्थ—‘मधुरीषे ण दीषे’ इत्यादि—जम्बूद्वीप नामके द्वीप में मारतवर्ष
में आगामी उत्सर्गिकाल में चौबीस तीर्थकर होंगे । उनके नाम इस
प्रकार से हैं—महापद्म १, सूरदेव २ सुपाप्म ३ स्वयंप्रभ ४ सर्वानुभूति
५ देवभुत ६ उदय ७ पेडाळपुत्र ८ पोहिल ९ सप्तकीर्ति १०, मुनिसुव्रत
११ निर्ममः चित्रगुप्त समाधिश्च आगमिष्यति काले मविष्यति—(१४) अर्हन्
निष्कपाय (१) निष्पुलाक (१५) निर्मम (७) चित्रगुप्त (१८) समाधि
(सर्वरे अणियही य विजए विमलेति च देवोवपाण अरहा अणतविजए इय)
सर्वरोऽनिवृत्तिश्च विमलो विजय इति च देवोवपातोऽर्हन्ननन्त विजय इति—
(१६) सर्व (२०) अनिवृत्ति, (२१) विमल, (२२) विमल (२३) देवोवपात, (२४)
अर्हन् अनन्तविजय (एण बुत्ता चउवीस मरहे पासं केवली, आगमिस्से ण
होक्खंति धम्मतिथस्स देसगा) एते उक्ताश्चतुर्विंशति मारते वर्षे केवलिन,
आगमिष्यति काले मविष्यति धर्मतीर्थस्य देशकाः—पूर्वोक्त १४ चौबीस
तीर्थकर आगामीकाले मारतवर्ष में धर्मतीर्थना उपदेशक केवली होंगे ॥सू० २१३॥

टीका—‘जम्बूद्वीपे ण दीषे’ इत्यादि—जम्बूद्वीप नामका द्वीपमा आवेता
मारतवर्ष मा आगामी उत्सर्गिकालमा चौबीस तीर्थकर होंगे । तेमना नाम आ
प्रमाणे ७—(१) महापद्म, (२) सूरदेव, (३) सुपाप्म, (४) स्वयंप्रभ (५) सर्व
नुभूति (६) देवभुत, (७) उदय (८) पेडाळपुत्र, (९) पोहिल (१०) सप्तकीर्ति

निष्कषायश्च १४ निष्पुलाकश्च १५ निर्ममः १६ । चित्रगुप्तः १७ समाधिश्च १८
'आगमिस्सेण' आगमिष्यति काले भविष्यति ॥७५॥ संवरोऽनिर्वृत्तिश्च २०
विमलो २१ विजय २२ इति च । देवोपपातोऽर्हन् २३ नन्तविजय २४ इति ॥७६॥
एते उक्ताश्चतुर्विंशतिर्भारते वर्षे केवलिनः । आगमिष्यति काले भविष्यन्ति
धर्मतीर्थस्य देशकाः ॥७७॥ सू. २१३॥

मूलम्—एएसि णं चउव्वीसाए तित्थकराणं पुव्वभविया चउ-
व्वीसं नामदेज्जा भविस्संति, तं जहा—सेणिए सुपांस उदैए पोडिल्लं
अणगार तह दढाऊं य । कत्तिर्यं संखे य तहा नंद सुनंदे य सत्तए
य ॥७८॥ बोद्धव्वा देवई य कण्हं य तह सच्चई य बलदेवे । रोहिणि
सुलंसा चेव तत्तो खलु रेवई चेव ॥७९॥ ततो हवइ सर्याली बोद्धव्वे,
खलु तहा भय्याली य । दीवायंणे य कणहे, तत्तो खलु नारंए
चेव ॥८०॥ अंबडं दारुमंडे य साई बुद्धे य होइ बोद्धव्वे । भावी तित्थ-
गराणं णामाइं पुव्वभवियाइं ॥८१॥ एएसि णं चउव्वीसाए तित्थगराणं
चउव्वीसं पियरो भविस्संति, चउव्वीसं मायरो भविस्संति, चउ-
व्वीसं पढमसीसा भविस्संति, चउव्वीसं पढमसिस्सिणीओ भवि-
स्संति, चउव्वीसं पढमभिक्षादायगा भविस्संति, चउव्वीसं
चेइयरुक्खा भविस्संति ॥ सू० २१४ ॥

११, अमम १२ सर्वभाववित् १३ अर्हत निष्कषाय १४, निष्पुलाक १५
निर्मम १६ चित्रगुप्त १७ समाधि १८ संवर १९ अनिर्वृत्ति २० विजय
२१, विमल २२, देवोपपात २३ और अर्हन् अनन्त विजय २४ । ये
पूर्वोक्त चौबीस तीर्थकर भारतवर्ष में आगामीकाल में धर्मतीर्थ के उप
देशक केवली होंगे । सू० २१३॥

[११] मुनिमुत्त, (१२) अमम, (१३) सर्वभाववित्, (१४) अर्हत निष्कषाय, (१५)
निष्पुलाक, (१६) निर्मम, (१७) चित्रगुप्त, (१८) समाधि, (१९) संवर, (२०)
अनिर्वृत्ति, (२१) विजय, (२२) विमल, (२३) देवोपपात अने (२४) अर्हत
अनन्तविजय. ते पूर्वोक्त २४ चौबीस तीर्थकर भारतवर्षमा आगामीकालमा
धर्मतीर्थना उपदेशक केवली वशे ॥ सू. २१३ ॥

सद्वार्थ—(एएसि ण चउष्णीसाए तित्थगराण) एतेतां म्वलु चतुर्विंशते
स्तीर्थकराणा इन चौवीस तीर्थरुतो के (पुग्गमविया चउष्णीसं नामधेया
मावस्सति) पूर्वमविकानि चतुर्विंशति नानधेयानि भविष्यन्ति—पूर्वमव
सवघो जो चौवीस नाम धे वे य हं (सेणिण सुवाम उदप पोहिल अणगार
तदहदाऊ य, कणि य सखे य तहा नंद सुनंदे य ससए य) धे, णः सुपाम्भः
उदयः पोहिलोऽनगारस्मग्ग इहायुअ, कार्त्तिक शम्भ तथा नन्दः सुनन्दम्भ
शतम्भ—धेणिक् १, सुपाम्भ २, उदय ३ अनगार पोहिल ४ इहायु ५
कार्त्तिक ६ शम्भ ७ नंद ८ सुनंद ९ शतम्भ १० (चोदम्भा देवई य कण्ठय
तह सखई य यलदेवे रोहिणि सुलसा खेय ततो खलु रेवईखेय—चोदम्भा
देवकी च कृष्णम्भ तथा सात्यकिय यलदेव रोहिणी सुलसा खेय ततो खलु
रेवती खेय—) देवकी ११ कृष्ण १२ सात्यकि १३ यमदेव १४ रोहिणी १५
सुलसा १६ रेवती १७ (ततो इवई मयाभी चोदम्भे खलु तहा मयाली य
दीपायणे य कण्ठे ततो खलु नारए खेय) ततो भवति जामा लपोदम्भ खलु
तथा मयालिम्भ जेपायनम्भ कृष्णस्ततः खलु नारदखेय—शतलि १८ मयालि
१९ कृष्णजेपायन २० नारद २१ (अपर दारुमडे य साईयुदे य होइ
चोदम्भे मावी तित्थगराणं नामाह पुग्गमविया—अम्भडो दारुमट स्वाति

समवायं—(एएसि ण चउब्ब माए तित्थगराण) एतेतां म्वलु चतु
र्विंशते स्तीर्थकराणां—ते चौवीस तीर्थरुतेना (पुग्गमविया चउष्णीसं नामधेया
मावस्सति) पूर्वमविकानि चतुर्विंशति नानधेयानि भविष्यन्ति—५२^१ अण्णा १२
नाम ६११ व मा प्रभावे ६११ (सणिण सुवाम उदप पोहिल अणगार
तद इहाऊ य, कणि य सखे य तहा नंद सुनंदे य ससए य) धेणिक् सुपाम्भ
उदयः पोहिलोऽनगार तथा इहायुअ, कार्त्तिक शम्भ तथा नन्दः सुनन्दम्भ
शतम्भ—(१) शम्भ, (२) सुपाम्भ (३) उदय, (४) अनगार पोहिल (५) इहायु
(६) कार्त्तिक (७) शम्भ (८) नंद (९) सुनंद (१०) शतम्भ (चोदम्भा देवई
य कण्ठ य तह सखई य यलदेव, रोहिणि सुलसा खेय, ततो खलु रेवईखेय)
चोदम्भा देवकी च कृष्णम्भ तथा सात्यकिय यमदेव, रोहिणी सुलसा खेय
ततः खलु रेवती खेय—(११) देवकी (१२) कृष्ण (१३) सात्यकि, (१४) यमदेव
(१५) रोहिणी (१६) सुलसा (१७) रेवती (ततो इवई मयाभी चोदम्भ खलु
तहा मयाभी च दीपायणे य कण्ठे ततो खलु नारए खेय) ततो भवति जामा
लिपोदम्भः खलु तथा मयालिम्भ, जेपायनम्भ कृष्णस्ततः खलु नारदखेय—
(१८) शतलि (१९) मयालि (२०) कृष्णजेपायन, (२१) नारद, (अपर दारुमडे
य साईयुदे य होइ चोदम्भे, मावी तित्थगराणं नामाह पुग्गमविया) अम्भडो

बुद्धश्च भवति बोद्धव्यः भावि तीर्थकराणां नामानि पूर्वभविकानि) अम्बड
२२ दारुमृत २३ और स्वातिबुद्ध २४ । ये भावित्तिर्थकरों के पूर्वभव
संबंधी नाम हैं । (एएसिणं चउव्वीसाए तित्थगराणं चउव्वीसं पिथरो
भविस्संति, चउव्वीसं मायरो भविस्संति) एतेषां चतुर्विंशते तीर्थकराणां
चतुर्विंशतिः पितरो भविष्यन्ति, चतुर्विंशति मातरो भविष्यन्ति—इन चौबीस
तीर्थकरों के २४ पिता होंगे और चौबीस माताएँ होंगी (चउव्वीसा
पढमसीसा भविस्संति) चतुर्विंशतिः प्रथमशिष्या भविष्यन्ति—वृषभसेन
आदि की तरह चौबीस प्रथम शिष्य होंगे । (चउव्वीस पढमसिस्सीणीओ
भविस्संति) चतुर्विंशतिः प्रथमशिष्या भविष्यन्ति—ब्राह्मी आदि की तरह
२४ प्रथमशिष्याएँ होंगी । (चउव्वीस पढमभिक्षादायगा भविस्संति)
चतुर्विंशतिः प्रथमभिक्षादायका भविष्यन्ति—श्रेयांस आदि की तरह चौबीस
प्रथम भिक्षा के दाना होंगे । (चउव्वीसं चेइयक्खवा भविस्संति) चतु
र्विंशतिश्चैत्यवृक्षा भविष्यन्ति—जिनके नीचे तीर्थकरों को केवलज्ञान उत्पन्न
होना है, ऐसे वृक्षवेदिकावाले वृक्ष चैत्यवृक्ष कहलाते हैं । ये चैत्यवृक्ष इन
तीर्थकरों के २४ चौबीस होंगे ॥सू० २१४॥

दारुमृतः स्वातिबुद्धश्च भवति बोद्धव्यः, भावित्तिर्थकराणां नामानि पूर्वभवि
कानि—[२२] अम्बड, (२३) दारुमृत अने (२४) स्वातिबुद्ध, ये भावि तीर्थ-
कराना पूर्वभवना नामो छे (एएसि चउव्वीसाए तित्थगराणं चउव्वीसं पिथरो
भविस्संति, चउव्वीसं मायरो भविस्संति) एतेषां चतुर्विंशते तीर्थकराणां
चतुर्विंशतिः पितरो भविष्यन्ति, चतुर्विंशति मातरो भविष्यन्ति—ते चौबीस
तीर्थ कराना २४ पिता थशे अने २४ माता थशे (चउव्वीसं पढमसीसा
भविस्संति) चतुर्विंशतिः प्रथमशिष्याः भविष्यन्ति—वृषभसेन आदिनी जेम
चौबीस शिष्यो थशे. (चउव्वीस पढमसिस्सीणीओ भविस्संति) चतुर्विंशतिः
प्रथमशिष्या भविष्यन्ति—ब्राह्मी आदिनी जेम २४ प्रथम शिष्याओ थशे.
(चउव्वीस पढमभिक्षादायगा भविस्संति) चतुर्विंशतिः प्रथमभिक्षादायका
भविष्यन्ति—श्रेयांस आदिनी जेम चौबीस प्रथम भिक्षादानाओ थशे (चउव्वीसं
चेइयक्खवा भविस्संति) चतुर्विंशतिश्चैत्यवृक्षा भविष्यन्ति—ते तीर्थ कराना
चौबीस चैत्यवृक्षो थशे जेनी नीचे तीर्थ कराने केवलज्ञान उत्पन्न थाय छे, ओवां
आधेक्षी वेदिकावाला वृक्षने चैत्यवृक्ष कहे छे ॥ सू. २१४॥

टीका—‘एषसि ण’ इत्यादि—एतेषां चतुर्विंशत्स्तोत्रैर्यकराणां ‘पुण्यमविद्या’ पूर्वमविद्यानि चतुर्विंशतिनामधेयानि भविष्यन्ति, तथा—धेणिकः १ सुपार्श्व २ उदयः ३ पोटिलोऽनगारस्तथा ४ हृद्यु ५ । कार्तिकः ६ शस्त्र ७ तथा नन्द ८ सुनन्द ९ शतक १० ॥७८॥ बौद्ध्या देवकी ११ च कृष्ण १२ तथा सात्यकि १३ वन्देव १४ । रोहिणी १५ सुमसा १६ वैष ततः खलु रेवती १७ वैष ॥७९॥ ततो भवति शतालि १८ बौद्ध्याः खलु तथा मयाभि १९ । द्वीपा यन २० कृष्णस्ततः खलु नारद २१ ॥८०॥ अम्ब २२ दारुमृत २३ स्वातिबुद्ध २४ भवति बौद्ध्या । माषितीर्यकराणां नामानि पूर्वमविद्यानि ॥८१॥ अयं भावः—धेणिकाद्यो महापद्मादिनामानस्तोत्रैर्यकरा भविष्यन्ति । तत्र—धेणिको मयमो महापद्मनामा जिनो भविष्यति, तथा—सुपार्श्व सुरदेवो द्वितीयः, उदयः सुपार्श्वनामकरतुल्य, पोटिलानगार स्वयंप्रभनामकरतुल्यः, हृद्यु सर्वाङ्गभूति

टीकार्थ—‘एषसि ण चउत्थीसाए’ इत्यादि—इन चौबीस तीर्थकरों के पूर्वमव संबंधी जो चौबीस नाम थे वे य हैं—धेणिक सुपार्श्व उदय अनगार पोटिल हृद्यु कार्तिक शस्त्र नन्द सुनन्द शतक देवकी कृष्ण सात्यकि वन्देव रोहिणी सुलसा रेवती शतालि मयासि कृष्णद्वीपायन नारद अम्ब २ दारुमृत और स्वातिबुद्ध । ये माषि तीर्थकरों के पूर्वमव संबंधी नाम हैं । इसका तात्पर्य यह है—धेणिक आदि ये पूर्वोक्त नामधारी मनुष्य भविष्यत्काल में मयात् जानेवाले उत्सर्पिणीकाल में महापद्म आदि नामके तीर्थकर होंगे । इनमें धेणिक प्रथम महापद्म नामके जिन होंगे । सुपार्श्व सुरदेव नामके द्वितीय जिन होंगे । उदय सुपार्श्व नामके तीसरे जिन होंगे । पोटिल अनगार स्वयंप्रभ नामके चौथे जिन होंगे । हृद्यु सर्वा

टीकार्थ—‘एषसि ण चउत्थीसाए’ इत्यादि—त चौबीस तीर्थकराना पूरा अवर्ना नामो आ प्रभावे कर्ता—मेषिः सुपार्श्व उदय, अणुगार पोटिल, हृद्यु कार्तिक शस्त्र नन्द, सुनन्द, शतक, देवकी, कृष्ण, सात्यकि अणुदेव, रोहिणी, सुलसा, रेवती, शतालि मयासि, कृष्णद्वीपायन, नारद, अम्ब २, दारुमृत, अने स्वातिबुद्ध आ माषितीर्थकराना पूरावना नामो उ तेनु तात्पर्य को छे छे छे—मेषिः आदि पूर्वाक्त नामना मनुष्यो भविष्यतामना कोटवे छे आगामी उत्सर्पिणी कालमें महापद्म आदि नामना तीर्थकर यही मेषिः महापद्म नामना पढ़ेवा तीर्थकर यही, सुपार्श्व, सुरदेव नामना भीज जिनदेव यही उदय, सुपार्श्व नामना भीज जिनदेव यही पोटिल अणुगार स्वयंप्रभ नामना चौथा तीर्थकर यही हृद्यु

नाम पञ्चमः, तथा-कार्तिको देवश्रुतनामा षष्ठः, शंखः उदयो नाम सप्तमः, नन्दः
पेढालपुत्राख्योऽष्टमः, सुनन्दः पोटिलो नाम नवमः, शतकः शतकीर्तिनाम
दशमस्तीर्थङ्करो भविष्यति । तथा-देवकीमुनि सुव्रतनामा एकादशोऽर्हन् भवि-
ष्यति, कृष्णश्च अममो नाम द्वादशो भविष्यति, तथा-सात्यकिः सर्वभाववित्
नाम त्रयोदशः, बलदेवो निष्कषायो नाम चतुर्दशः, रोहिणी निष्पुलाको नाम
पञ्चदशः, सुलसा निर्ममो नाम षोडशः, रेवती चित्रगुप्तो नाम सप्तदशः, शतालिः
समाधिनाम अष्टादशः, भयालिः संवरो नामैकोनविंशतितमः, कृष्णद्वैपायनो-
ऽनिवृत्तिनाम विंशतितमः, नारदो विजयो नामैकविंशतितमः, अम्बडो विमलो
नाम द्वाविंशतितमो, दारुमृतो देवोपपातनाम त्रयोविंशतितमस्तथा स्वातिबुद्धश्च

नुभूति नामके पांचवें जिन होंगे । कार्तिक देवश्रुति नामके छठवें जिन
होंगे । शंख उदय नामके सातवें जिन होंगे । नन्द पेढालपुत्र नामके
आठवें जिन होंगे । सुनन्द पोटिल नामके नौवें जिन होंगे । शतरु
शतकीर्ति नामके दशवें जिन होंगे । देवकी मुनिसुव्रत नामके ग्यारहवें
तीर्थकर होंगी । कृष्ण अमम नामके बारहवें तीर्थकर होंगे । सात्यकिः
सर्वभाववित् नामके तेरहवें तीर्थकर होंगे । बलदेव निष्कषाय नामके
चौदहवें तीर्थकर होंगे । रोहिणी निष्पुलाक नामके पन्द्रहवें तीर्थकर होंगी ।
सुलसा निर्मम नामके सोलहवें तीर्थकर होंगी । रेवती चित्रगुप्त नामके
१७ वें तीर्थकर होंगी । शतालि समाधि नामके १८ वें तीर्थकर होंगे ।
भयालि संवर नामके १९ वें तीर्थकर होंगे । कृष्णद्वैपायन अनिवृत्ति
नामके बीसवें तीर्थकर होंगे । नारद विजय नामके इकीसवें तीर्थकर
होंगे । अम्बड विमल नामके बाबीसवें तीर्थकर होंगे । दारुमृत देवोपपात
नामके तेवीसवें तीर्थकर होंगे । तथा स्वातिबुद्ध अनन्तविजय नामके

सर्वानुभूति नामना पाचमा तीर्थ कर थशे कार्तिक, देवश्रुति नामना छठा जिनदेव
थशे शंख, उदय नामना सातमा तीर्थ कर थशे नन्द, पेढालपुत्र नामना आठमा
जिन थशे सुनन्द पोटिल नामना नवमा जिनदेव थशे शतक, शतकीर्ति नामे
दसमा तीर्थ कर थशे देवकी, मुनिसुव्रत नामे अगीयारमा तीर्थ कर थशे कृष्ण.
अमम नामे पारमा तीर्थ कर थशे सात्यकि णणदेव अने रोहिणी अनुक्रमे सर्व
भाववित्, निष्कषाय अने निष्पुलाक नामना तेरमा चौदमा अने पंदरमा तीर्थ कर
थशे सुलसा, अने रेवती अनुक्रमे निर्मम अने चित्रगुप्त नामना सोणमा अने
सत्तरमा तीर्थ कर थशे शतालि लयालि अने कृष्णद्वैपायन अनुक्रमे समाधि अने
अनिवृत्ति नामना १८मा १९मा अने २० मा तीर्थ कर थशे नारद, अम्बड,
दारुमृत अने स्वातिबुद्ध अनुक्रमे विजय, विमल, देवोपपात अने अनन्तविजय

नन्तविजयनामा चतुर्विंशतिसप्तमो जिनो भविष्यतीति । 'एषसि चतुर्विंशसा एति
त्यगाराण एतेषां चतुर्विंशतं महापद्मदीनां भाविनीर्यकराणां चतुर्विंशतिः पितरो
भविष्यन्ति, चतुर्विंशतिमो वरो भविष्यन्ति, वृषभसेनादिवत् चतुर्विंशतिः प्रथम
शिष्या भविष्यन्ति, तथा 'चतुर्विंश पद्ममिस्सणीप्रो भविस्सति' ब्राह्मीपद्म
विरत् चतुर्विंशति प्रथमशिष्या भविष्यन्ति, भेषांसादिवत् चतुर्विंशति प्रथम
मितादायका भविष्यां त, 'चतुर्विंश चेत्थक्कला भविस्सन्ति' चतुर्विंशतिभैत्य
वृत्ता भविष्यन्ति=यथापमस्तीर्यकराणां कवचमज्ञानमुत्पद्यते त वृद्धपीठा वृत्ता
भैत्यवृक्षा ठक्क-चे, ते च शूराभादि तीर्यकराणां यशोपादिवद् भाविनीर्यक
राणामपि चतुर्विंशतिसंख्यका भविष्यन्ति ॥५॥ २१४॥

मूमम्—जद्युद्धिवे ण दीधे भारहे वासे आगमिस्साए उस्सप्पि
णीण वारस चक्कवट्टिणो भविस्सति, तज्झा—भरहे य दीहदत्ते गूढदत्ते
य सुद्धदत्ते य । सिरिउत्ते सिरिमुई सिरिसोमे य सत्तमे ॥८॥ पउमे
य महापउमे विमलवाहणे विपुलवाहणे चेश । धरिद्वे वारसमे बुत्ते
आगमिस्सा भरहाहि था ॥८॥ एषसि ण वारसण्ह चक्कवट्टीण

२४वें तीर्थकर होंगे । इन बीबीस तीर्थकरों के २४ पिता होंगे और
२४ माताएँ होंगी । वृषभसेन आदिकी तरह चौबीस शिष्य होंगे । ब्राह्मी
आदि की तरह २४ प्रथम शिष्याएँ होंगी । भेषांस आदि की तरह चौबीस
प्रथम मित्रा देनेवाले होंगे । जिनके नीचे तीर्थकरों को कवचमज्ञान उत्पन्न होता
है उसे वृद्धवदिकावाले चोतरावाले वृक्ष भैत्यवृक्ष कहलाते हैं । ये भैत्यवृक्ष इन
चौबीस तीर्थकरों के चौबीस होंगे । जैसे पहिले कवचम आदि तीर्थ
करों के तपोष आदि भैत्यवृक्ष २४ हुए हैं ॥सू० २१४॥

नामना २१भा चौबीसभा, लेवीसभा जने चौबीसभा तीर्थकर भये. ते चौबीस
तीर्थकराना २४ पिता जने २४ माता भये. वृषभसेन आदिनी जेभ चौबीस प्रथम
शिष्य भये ब्राह्मी आदिनी जेभ चौबीस प्रथम शिष्याओ भये भेषांस आदिनी जेभ
२४ प्रथम मित्रादाता भये जेनी नीचे तीर्थकराने कवचमज्ञान याव छ जेवा भद्र
वेडिड मुक्क वृक्षने भैत्यवृक्ष कह छ जेवीसीते कवचमदेव आदि तीर्थकराना
त्यग्राध आदि चौबीस भैत्यवृक्ष भया छ ते प्रभावे उपपादित तीर्थकराना ५५
चौबीस भैत्यवृक्ष भये. ॥५॥ २१४॥

वारसपियरो भविस्सन्ति, वारस मायरो भविस्सन्ति, वारस
इत्थीरयणा भविस्सन्ति ॥ सू० २१५ ॥

शब्दार्थ—(जंबूद्वीपे णं दीवे) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे—जम्बूद्वीप नामके द्वीप
में (भारहे वासे आगमिस्साए उस्सप्पिणीए) भारते वर्षे आगमिष्यन्त्या
मुत्सर्पिण्यां—भारतवर्ष में आगामी उत्सर्पिणीकालमें (वारस चक्रवर्तिणो
भविस्सन्ति) द्वादश चक्रवर्तिनो भविष्यन्ति—वारह चक्रवर्ती होंगे । (तं जहा)
तद्यथा—उनके नाम इस प्रकार से हैं (भरहे य दीहदन्ते गूढदन्ते य सुद्ध-
दन्ते य सिरिउत्ते सिरिभूई सिरिसोमे य सत्तमे) भरतश्च दीर्घदन्तो गूढ-
दन्तश्च शुद्धदन्तश्च, श्रीपुत्रः श्रीभूतिः श्रीसोमश्च सप्तमः—भरत दीर्घदन्त,
गूढदन्त, शुद्धदन्त, श्रीपुत्र, श्रीभूति, सप्तम श्रीसोम, (पउमेय महापउमे
विमलवाहणे विपुलवाहणे चेव, वरिद्धे वारसमे वुत्ते आगमिस्साभरहाहि
वा) पञ्चश्च महापद्मो विमलवाहनो विपुलवाहनश्च वरिष्ठो द्वादशउक्तः आग-
मिष्यन्तो भरताधिपाः—पञ्च महापद्म विमलवाहन विपुलवाहन और वारहवें
वरिष्ठ । ये आगामीकाल में भरतक्षेत्र के—अधिपति होंगे । (एएसि ण
वारसण्हं चक्रवर्टीणं वारसपियरो भविस्सन्ति) एतेषां द्वादशानां चक्रवर्तिनां
द्वादश पितरो भविष्यन्ति—इन वारह चक्रवर्तियों के वारह पिता होंगे वारस

शब्दार्थ—(जंबूद्वीपे णं दीवे) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे—जम्बूद्वीप नामना
द्वीपमा (भारहे वासे) भारत वर्ष—भरतक्षेत्रमा (आगमिस्साए उस्सप्पिणीए)
आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्यां आगामी उत्सर्पिणी कालमा (वारसचक्रवर्तिणो
भविस्सन्ति) द्वादश चक्रवर्तिनो भविष्यन्ति—भारत चक्रवर्तियो यशे (तंजहा)
तद्यथा—तमना नाम आ प्रमाणे ढशे (भरहे य दीहदन्ते गूढदन्ते य सुद्धदन्ते य
सिरिउत्ते सिरिभूई सिरिसोमे य सत्तमे) भरतश्च दीर्घदन्तो गूढदन्तश्च
शुद्धदन्तश्च श्रीपुत्र श्रीभूति श्री सोमश्च सप्तमः—(१) भरत, (२) दीर्घदन्त,
(३) गूढदन्त, (४) शुद्धदन्त (५) श्रीपुत्र, (६) श्रीभूति, (७) श्री सोम, (पउमे
महापउमे विमलवाहणे विपुलवाहणेचेव वरिद्धे वारसमे वुत्ते आगमिस्सा भर-
हाहिवा) पञ्चश्च महापद्मो विमलवाहनो विपुलवाहनश्चैव वरिष्ठो द्वादश उक्तः
आगमिष्यन्तो भरताधिपाः (८) पञ्च, (९) महापद्म (१०) विमलवाहन, (११) विपुल
वाहन, अने (१२) वरिष्ठ, तेको आगामी कालमा भरतक्षेत्रना अधिपति यशे
(एएसि ण वारसण्हं चक्रवर्टीणं वारस पियरो भविस्सन्ति) एतेषां द्वादशानां
चक्रवर्तिनाम् द्वादशपितरो भविष्यन्ति ते भार चक्रवर्तिनानां पितृ यशे,

टीका—‘जंबुद्वीपे ण दीवे’ इत्यादि—जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे मारते वर्षे आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिष्यां द्वादश चक्रवर्तिनो भविष्यन्ति, तद्यथा—भरतश्च १ दीर्घदन्तो २ गूढदन्तश्च ३ शुद्धदन्तश्च ४ । भीष्मः ५ भीष्मूतिः ६ भीष्मोमश्च ७ सप्तमः ॥८२॥ पञ्चमः महापथो विमलवाहनो १० विपुलवाहनश्चैव । वरिष्ठो १२ द्वादश उक्तः, एते द्वादश ‘आगमिष्यामहाद्विचा’=आगमिष्यन्तो भारताधिपा ॥८३॥ एतेषां द्वादशानां चक्रवर्तिनां द्वादशपितरो भविष्यन्ति, द्वादश मातरो भविष्यन्ति, द्वादश स्त्रीरत्नानि भविष्यन्ति ॥सु २१५॥

सूत्रम्—जंबुद्वीपे ण दीवे भारहे वासे आगमिस्साए उस्सप्पिणीए नववलदेववासुदेवपियरो भविस्सति, नव वासुदेवमायरो भविस्सति, नव वलदेवमायरो भविस्सति, नव दसारमडला भविस्सति, त जहा—उत्तमपुरिसा, मज्झिमपुरिसा पहाणपुरिसा ओयसीतेयसी एव सो चेव वण्णओ भाणियव्वो जाव नीलगपीयगवसणा बुव बुव्वे रामकेसवा भायरो भविस्सति, त जहा—नदे’ य नदंमिस्से दीहवाहू तहा महार्वाहू । अह्वेले महार्वाले वलभंवे य सत्तमे ॥८४॥ बुविदू’ य

मायरो भविस्सति (द्वादश मातरो भविष्यन्ति—चारह माताएँ होंगे (पारस इत्थीरपणा भविस्सति) द्वादश स्त्री रत्नानि भविष्यन्ति—चारह स्त्री रत्न होंगे ॥सु २१५॥

टीकार्थ—‘जंबुद्वीपे ण दीवे’ इत्यादि—जम्बूद्वीप नामके द्वीप में भरतवर्ष में आगामी उत्सर्पिणीकाल में चारह चक्रवर्ती होंगे उनके नाम इस प्रकार से हैं—भरत दीर्घदन्त गूढदन्त शुद्धदन्त भीष्म भीष्मूति सप्तम भीष्मोम पञ्च महापथ विमलवाहन विपुलवाहन और चारहवें वरिष्ठ । य आगामीकाल में भरतक्षेत्र के अधिपति होंगे ॥सु० २१५॥

(पारस मायरो भविस्सति) द्वादशमातरो भविष्यन्ति—अने बार माताओं की (पारस इत्थीरपणा भविस्सति) द्वादश स्त्रीरत्नानि भविष्यन्ती—अने बार स्त्रीरत्नों की ॥सु. २१५॥

टीका—‘जंबुद्वीपे ण दीवे’ इत्यादि—जम्बूद्वीप नामका द्वीपमा आवेला भारतवर्षमा आगामी उत्सर्पिणी कालमा बार अक्षवर्तियों कीये. तेमना नम आ प्रभावे कीये—भरत, दीर्घदन्त गूढदन्त शुद्धदन्त भीष्म, भीष्मूति सोऽपि पञ्च महापथ, विमलवाहन विपुलवाहन अने बारमा वरिष्ठ तेको आगामी कालमा भरतक्षेत्रमा अधिपति कीये ॥सु २१५॥

तिवट्टं य आगमिस्साण विण्हणो । जयंते' विजंए भदे' सुप्पमे' य
सुदंसणे' । आणंदे' नंदणे' पउमे' संकरिसणे' य अपच्छिमे ॥८५॥
एएसि णं नवण्हं बलदेववासुदेवाणं पुव्वभविया णव नामधेज्जा
भविस्संति, नव धम्मायरिया भि स्संति, नवनियाणभूमीओ भविस्संति
नव नियाणकारणा भविस्संति, नव पडिसत्तू भविस्संति, तं जहा-
तिलंए य लोहजंघे वडरजंघे य केसरी पहरोए । अपरांइएय भीमे'
महाभीमे' य सुग्गीवे' ॥८६॥ एए खल्ल पडिसत्तू कित्तिपुरिसाण वासु-
देवाणं । सव्वे वि चक्कजोही हम्मिहिंति सच्चक्केहिं ॥८७॥ सू० २१६॥

शब्दार्थ—(जंबूद्वीवे णं दीवे) जम्बूद्वीपे खल्ल द्वीपे—इस जंबूद्वीप नामके द्वीप में
(भारहे वासे) भारते वर्षे—भारत वर्ष में (आगमिस्साए उस्सप्पिणीए)
आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्या—आगामी उत्सर्पिणीकाल में (नव बलदेव वासु-
देव पियरो भविस्संति) नव बलदेववासुदेव पितरो भविष्यन्ति—नौ बल-
देव और नौ वासुदेव के नौ पिता होंगे । (नव वासुदेव मायरो भविस्संति)
नव वासुदेवमातरो भविष्यन्ति—नौ वासुदेव की माताए होंगी, (नव
बलदेव मातरो भविष्यन्ति—नौ बलदेव की माताए होंगी, (नव दसार-
मंडला भविस्संति) नव दशार्ह मण्डलानि भविष्यन्ति—इस तरह नौ बलदेव
और नौ वासुदेव के मंडल होंगे—अर्थात्—एक बलदेव एक वासुदेव इस
तरह से इनके दो दो के नौ युगल होंगे । (उत्तमपुरिसा, मज्झिमपुरिसा

शब्दार्थ—(जंबूद्वीवेणं दीवे) जम्बूद्वीपे खल्ल द्वीपे—जंबूद्वीप नामका आ
द्वीपमा (भारहे वासे) भारते वर्षे—भारतवर्षमां (आगमिस्साए उस्सप्पिणीए)
आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्यां—आगामी उत्सर्पिणीकालमा (नव बलदेव वासुदेव
पियरो भविस्संति) नव बलदेव—वासुदेवपितरो भविष्यन्ति—नव बलदेव
अने नव वासुदेवना नव पिता थशे (नव वासुदेवमायरो भविस्संति) नव
वासुदेवमातरो भविष्यन्ति—नववासुदेवोनी नवमाताओ थशे (नव बलदेव
मायरो भविस्संति) नव बलदेवमायरो भविष्यन्ति—नवबलदेवोनी नव
माताओ थशे (नव दसारमंडला भविस्संति) नव दशार्हमण्डलानि भवि-
ष्यन्ति—आ रीते नव बलदेव अने नववासुदेवना नव भउण थशे—ओठवे के ओठ
बलदेव अने ओठ वासुदेव, ओठ बलदेवना नव युगल थशे (उत्तमपुरिसा, मज्झिम

पद्मानपुरिस्ता ओयसी तेयसी एष सो चेष वण्णओ भाणियम्भो जा
नील्लग पीयगवसणा बुबे बुबे रामकसवा मायरो भविस्सति) उत्तमपुरुषा
मध्यमपुरुषा प्रधानपुरुषा ओजस्विनः तेजस्विन एष स एष वर्णको मणि
तट्टपः यावत् नीलकपीतक वसना ओ द्वौ रामकसवा च्चातरो भविष्यन्त
इन सब पदों का अर्थ २१३ सूत्र की व्याख्या करते समय जित्त दिया
गया है। (तजहा) तद्यथा—उनके नाम इस प्रकार से होंगे। (नद य नन्दमिरो
दीर्घाहु तहा महापाहु, अइयळे महायळे चलमरे य सत्तमे इविट्ट य
तिविट्ट य) नन्दश्च नन्दमित्रो दीर्घबाहुस्तथा महापाहुः अनियसो महादलो
पल्लमद्रश्च सप्तमः द्विपृष्ठश्च त्रिपृष्ठश्च—नन्द, नन्दमित्र, दीर्घबाहु महापाहु,
अतिचल, महाचल, सातवें चलमद्र, द्विपृष्ठ और त्रिपृष्ठ। (आगमिस्साण
विष्णुणो) आगमिष्यन्त खलु विष्णवः—ये नाम आगामीकाल में उत्पन्न
होने वाले विष्णु—वासुदेव के होंगे। (जयंते विजये भरे सुप्पमे य सुदंसणे
आणवे, नदणे पउमे सकरिसणे य अपच्छिमे) जयन्तः विजयोभद्र सुप्रभश्च
सुदर्शन आनन्दो नन्दन पद्य सङ्कर्षणश्च अपधिम—जयन्त विजय, भद्र,
सुप्रभ, सुदर्शन, आनन्द, नन्दन, पद्य और अन्तिम सङ्कर्षण। ये नौ नाम
आगामीकाल में उत्पन्न होनेवाले बलवत्तों के होंगे। (एएमि णं नवन्त

पुरिस्ता, पद्मानपुरिस्ता ओयसी तेयसी एष सोचेष वण्णओ भाणियम्भो जाव
नील्लग पीयगवसणा बुबे बुबे रामकसवा मायरो भविस्सति) उत्तमपुरुषा
मध्यमपुरिषा प्रधानपुरुषाः आनस्विनः तेजस्विनः एष स एष वर्णको मणि
तट्टपः यावत् नीलकपीतकवसना ओ द्वौ रामकसवा च्चातरो भविष्यन्ति—
आ अथा पढोना अथ सूत्र २१३भा आभी दीधे ३ (तजहा) तद्यथा—वेभना
नाम आ प्रभाळे ६थे—(नन्देय नन्दमित्रा दीर्घबाहु तहा महापाहु, अइयळे महा
यळे चलमरे य सत्तमे इविट्ट य तिविट्टय) नन्दश्च नन्दमित्रो दीर्घबाहु स्तथा
महापाहुः अतिचलो महाचलो चलमद्रश्च सप्तमः द्विपृष्ठश्च त्रिपृष्ठ—(१)
नन्द (२) नन्दमित्र (३) दीर्घबाहु (४) महाबाहु (५) अतिचल (६) महाचल
(७) चलमद्र, (८) द्विपृष्ठ अने (९) त्रिपृष्ठ (आगमिस्साण विष्णुणो) आग
मिष्यन्त खलु विष्णवः—आगामी कालमें उत्पन्न यनाश विष्णुओं—वासुदेवाना
ते नामो ६थे—(जयंते विजय भरे सुप्पमे य सुदंसणे आणवे नदणे पउमे
सङ्करिसणे य अपच्छिमे) जयन्तो विजयो भद्र सुप्रभश्च सुदर्शन आनन्दो
नन्दन पद्यः सङ्कर्षणश्च अपधिमः—(१) जयन्त (२) विजय (३) भद्र (४)
सुप्रभ (५) सुदर्शन (६) आनन्द (७) नन्दन (८) पद्य अने (९) सङ्कर्ष
ण अथ नव आगामी कालमा जणवेवो ६थे (ए ए मि णं नवन्तं चण्णेल्ल—वासु

वलदेववासुदेवाणं पुंस्वभविष्या णव नामधेज्जा भविस्संति, नव धम्मयारिया भविस्संति, (नव नियान भूमीओ भविरसंति नव नियान करणा भविस्संति) एतेषां खलु नवानां वलदेववासुदेवानां पूर्वभवकानि नव नामधेयानि भविष्यन्ति, नव धर्माचार्याः भविष्यन्ति, नव निदानभूमयो भविष्यन्ति, नव निदानकारणानि भविष्यन्ति—इन नौ वलदेव और वासुदेवों के पूर्वभव संबंधी नौ नौ नाम होंगे, नौ धर्माचार्य होंगे, नव निदानभूमियां होंगी, नव निदान कारण होंगे (न पडिसत्तु भविस्सन्ति) नव प्रतिशत्रवो भविष्यन्ति—नौ प्रतिशत्रु होंगे, (तं जहा) तद्यथा—उन नौ प्रतिशत्रुओं के ये नाम हैं—(तिलए य लोहजंघे य वहरजंघे य केसरी पहराए अपराइए य भीमे महाभीमे य सुग्रीवे) तिलको लोहजङ्घो वज्रजङ्घश्च केसरी, प्रह्लादः अपराजितश्च भीमो महाभीमश्च सुग्रीवः— तिलक १, लोहजंघ २, वज्रजंघ ३, केशरी ४, प्रह्लाद ५, अपराजित ६, भीम ७, महाभीम ८, सुग्रीव ९, (एए खलु पडिसत्तु किञ्चिपुरिमाणवासुदेवाणं) एते खलु प्रतिशत्रवः कीर्तिपुरुषाणां वासुदेवानाम्—ये पूर्वोक्त प्रतिशत्रु कीर्तिपुरुष वासुदेवों के होंगे । (सन्वेवि चक्कजोही हम्महिंति सचक्केहिं) सर्वेऽपि चक्रयोधिनः सर्वे

देवाणं पुंस्वभविष्या णव नामधेज्जा भविस्संति नव धम्मयारिया भविस्संति नवनियानभूमीओ भविस्संति नवनियानकारणा भावस्सन्ति) एतेषां खलु नवानां वलदेववासुदेवानां पूर्वभवकानि नव नामधेयानि भविष्यन्ति नव धर्माचार्याः भविष्यन्ति नव निदानभूमियो भविष्यन्ति, नव निदानकारणानि भविष्यन्ति—ते णवदेवो अने वासुदेवेना पूर्वभवना नव नाम ६थे, नव धर्माचार्यो ७थे, नव निदानभूमियो ८थे अने नव निदानकारणो ९थे (नव पडिसत्तु भविस्संति) नवप्रतिशत्रवो भविष्यन्ति—नव प्रतिशत्रु वासुदेवो १थे, (तं जहा) तद्यथा—ते नव प्रतिवासुदेवानां नाम आ प्रमाणे ६थे—(तिलए य लोहजंघे वहरजंघे य केसरी पहराए अपराइए भीमे महाभीमे य सुग्रीवे) तिलको लोहजङ्घो वज्रजङ्घश्च केशरीप्रह्लादः अपराजितश्च भीमो महाभीमश्च सुग्रीवः— (१) तिलक, (२) लोहजंघ, (३) वज्रजंघ, (४) केशरी, (५) प्रह्लाद, (६) अपराजित, (७) भीम, (८) महाभीम अने (९) सुग्रीव (एए खलु पडिसत्तु किञ्चिपुरिमाण वासुदेवाणं) एते खलु प्रतिशत्रवः कीर्तिपुरुषाणां वासुदेवानां—पूर्वोक्त प्रतिवासुदेवो कीर्तिपुरुष वासुदेवानां प्रतिशत्रुओ १थे. (सन्वेवि चक्कजोही हम्महिंति सचक्केहिं) सर्वेऽपि चक्रयोधिनः सर्वे हनिष्यन्ते

टीका—‘जम्बूद्वीपे ण दीव’ इत्यादि—जम्बूद्वीपे खल द्वीपे मारते
 वर्षे आगमिष्यत्यामुत्सर्पिष्या नय बलदेववासुदेवपितरा मरिष्यति,
 नय वासुदेवमातरो मरिष्यन्ति, नय दक्षाईमण्डसानि मरिष्यन्ति,
 तद्यथा—उत्तमपुरुषाः मध्यमपुरुषाः प्रधानपुरुषा भोजस्विन तेमस्विनः
 ‘एष=भनेन प्रकारेणागम्य ‘सो चेव दणाभो मणियम्भो’ स एव दर्मको
 मणितन्त्र्यः—‘तुव’ यथा बलदेववासुदेवानां वर्णन कृतं तथैवात्रापि विज्ञेयम् ।
 दियद्वयं तत्सदृशं विज्ञेयमित्याह ? ‘जाव’ यावत् ‘नीलगपीपगवसया दुवे
 दुवे रामकेसवा मायरा’ नीलकपीतकवसना द्वी द्वी रामकेशवौ भ्रातरी इति
 कृत्वा नव बलदेवा नव वासुदेवा ‘मविस्सति’ मरिष्यन्ति, इदं तर्कं व्याख्यात
 इति ध्वन्ते स्वचक्रेण—ये सप्त प्रतिवासुदेव युद्ध में चक्र से मड़ेंगे और
 अन्त में अपने उसी चक्र से मारे जावेंगे ॥ सू० २१६ ॥

टीकाय—‘जम्बूद्वीपे ण दीव’ इत्यादि—इस जम्बूद्वीप नामके द्वीप में मरत
 क्षेत्र के अन्दर आगामी छ सर्पिणीकाल में नौ बलदेव और नौ वासुदेव
 के नौ पिता होंगे । बलदेव और वासुदेव के पिता एक ही होते हैं ।
 और माता भिन्न २ होती हैं । इसलिये यहाँ पर नौ पिता इन दोनों
 के कहे गये हैं । तथा—नौ वासुदेव की माताएँ होंगी और नौ बलदेव
 की माताएँ होंगी देसा सूत्रकार ने माताओं के विषय में अलग २ कहा
 है । इस तरह नौ बलदेव और नौ वासुदेव के मंडल होंगे—अर्थात् एक
 बलदेव एक वासुदेव इस तरह से इनके दो दो के नौ युगल होंगे । यहाँ
 पर ‘उत्तमपुरिस्ता’ से लेकर (“दुवे दुवे रामकेसवा मायरो मविस्सति”)
 वहाँ तकका पाठ मरिष्यकाल का प्रयोग करते हुए लगा देना चाहिये ।

स्वचक्रेण—ते जथा प्रतिवासुदेवो युद्धभां चक्रेणी भवन्ती वदन्ती यने ज ते
 ये ताना ज ते चक्रेणी भावो जये ॥ सू० २१६ ॥

टीका—‘जम्बूद्वीपे ण दीव’ इत्यादि—आ जम्बूद्वीप नामका द्वीपमा
 भारतक्षेत्रनी जहर आगामी उत्सर्पिणीकालमा नय जलदेव जने नय वासुदेवना
 नय पित यथे जलदेव जने वासुदेवना पिता जेह ज कोष छि, जने माता
 दुवी दु वे छ तेमा जही ते जनेना नय पिता कहेव छ तथा नय
 वासुदेवानी नय माताजो यथे जने नय जलदेवानी नय माताजो यथे जेभ
 सुवकारे कहेव छि आ हीते नय जलदेव जने नय वासुदेवना भवण यथे—जेटवे
 छ जेह जलदेव जने जेह वासुदेव जे प्रभाजे जनेना नय जल यथे जही
 ‘उत्तमपुरिस्ता’ थी वरुने ‘दुवे दुवे रामकेसवो मायरो मविस्सति’ जही
 सु नीना य छ सूत्र २१३ प्रभाजे जनि यकालना प्रयोग करीने समल देवो जेहने

पूर्वम् । किमभिधानास्ते भविष्यन्तीत्याह—तं जहा'तद्यथा—नन्दश्च? नन्दमित्रोऽ
दीर्घबाहुस्तथा? महाबाहुः४। अतिबलः५ महाबलः६ बलभद्रश्च७ सप्तमः॥८४॥
द्विपृष्ठश्च८ त्रिपृष्ठश्च९ एते 'आगमिस्साणं त्रिण्हुणो' आगमिष्यन्तः खलु विष्णवः=
भाविनो वासुदेवा विज्ञेया इत्यर्थः । अथ नव बलदेव नामान्याह—जयन्तो?
विजयोऽ भद्रः३ सुप्रभश्च४ सुदर्शनः५। आनन्दोऽ नन्दनः७ पद्मः८ सङ्कर्षणश्च९
'अपच्छिमे' अपश्चिमः=न विद्यते पश्चिमां यस्मादसौ अपश्चिमः=अन्तिमो बलदेवो
विज्ञेयः॥८५॥ एतेषां खलु नवानां बलदेववासुदेवानां पूर्वभक्तिकानि नव नाम-
धेयानि भविष्यन्ति, नव धर्माचार्याः भविष्यन्ति, नव निदानभूमयो भविष्यन्ति,
नव निदानकारणानि भविष्यन्ति, नव प्रतिशत्रवो भविष्यन्ति, तद्यथा—तिलको?
लोहजङ्घो? वज्रजङ्घश्च३ केशरी४ प्रह्लादः५। अपराजितश्च६ भीमो७ महा-

इन सब पदों का अर्थ २१३ सूत्र की व्याख्या करते समय लिख दिया
गया है । भविष्यत् काल में इनके क्या २ नाम होंगे ? इस शंका का
निवारण करने के लिये सूत्रकार कहते हैं कि—उनके नाम इस प्रकार से
होंगे—नन्द, नन्दमित्र, दीर्घबाहु, महाबाहु, अतिबल, महाबल सातवें
बलभः, द्विपृष्ठ और त्रिपृष्ठ । ये नाम आगामीकाल में उत्पन्न होने
वाले विष्णु-वासुदेव के होंगे । जयन्त, विजय, भद्र, सुप्रभ, सुदर्शन,
आनन्द, नन्दन, पद्म, और अन्तिम संकर्षण । ये नौ नाम आगामीकाल
में उत्पन्न होने वाले बलदेवों के होंगे । इन नौ बलदेव और वासुदेवों के
पूर्वभक्त संबंधी नौ नौ नाम होंगे, नौ धर्माचार्य होंगे, नौ निदानभूमियां
होंगी, नौ प्रतिशत्रु होंगे, उन नौ प्रतिशत्रुओं के ये नाम हैं—तिलक,
लोहजङ्घ, वज्रजङ्घ, केशरी, प्रह्लाद, अपराजित, भीम, महाभीम

ते अधा पदोना अर्थ सूत्र २१३नी व्याख्या करती वणते आपी दधिष छे भवि
ष्यकाणमां तेमना क्या क्या नाम हशे ? तेनो जवाण आपता सूत्रकार कहे छे छे
तेमना नाम आ प्रभाणु हशे—नन्द, नन्दमित्र, दीर्घबाहु, महाबाहु, अतिबल,
महाबल, बलभद्र, द्विपृष्ठ अने त्रिपृष्ठ अने नव विष्णु-वासुदेवो आगामीकाणमा
थशे. जयन्त, विजय, भद्र, सुप्रभ, सुदर्शन, आनन्द, नन्दन, पद्म अने संकर्षण
अने नव भणदेवो आगामीकाणमा थशे ते नव भणदेवो अने नव वासुदेवोना
पूर्वभक्ता नव, नव नाम हशे, तेमना नव धर्माचार्यो थशे, नव निदानभूमियो
हशे, नव निदानकारणो हशे अने नव प्रतिवासुदेवो थशे. ते नव वासुदेवोना
नव प्रतिशत्रुओ—प्रतिवासुदेवो—नां नाम आ प्रभाणु हशे—तिलक, लोहजङ्घ,
वज्रजङ्घ, केशरी, प्रह्लाद, अपराजित, भीम, महाभीम, अने सुश्रीव. श्रीतिथुरुप

मीमञ्च८ सुग्रीवः९।८६॥ एते सद्यः प्रतिश्रवणः=प्रतिषासुदेवः कीर्तिपुरुषानां
वासुदेवानाम् । सर्वेऽपि चक्रयोधिनः सर्वे हनिष्यन्ते स्वचक्रैः॥८७॥सु २१६॥

धम्म—जबुहीवे ण दीवे एरवण वासे आगमिस्साए उस्स
प्पिणीए चउव्वीस तित्थगरा भविस्सति, तजहा—‘जुमगले’ य सिद्धत्थे
निव्वाणे’ य महाजसे’ । धम्मज्झोए य अरहा आगमिस्साण होस्सइ
॥८८॥ सिरिचदे’ पुप्फकेऊ’ मर्हाचदे य केवली । सुयसांगरे य अरहा
आगमिस्साण होस्सइ ॥८९॥ सिद्धत्थे पुण्णेघोसे य, महाघोसे” य
केवली । सच्चसेणे’ य अरहा आगमिस्साण होस्सइ॥९०॥ सूरसेणे”
य अरहा, महासेणे” य केवली । सव्वाणदे” य अरहा, देवउसे य
होस्सइ॥९१॥ सुपासे’ सुव्वेए अरहा, अरहे य सुकोसले’ । अरहा
अणत्त विजए आगमिस्साण होस्सइ ॥९२॥ विमंले उत्तरे” अरहा,
अरहा य महावले । देवाणदे य अरहा, आगमिस्साण होस्सइ॥९३॥
एए बुत्ता चउव्वीस, एरवयम्मि केवली । आगमिस्साण होस्सति,
धम्मतित्थस्स देसगा ॥९४॥ सू० ११७॥

और सुग्रीव। ये पूर्वोक्त प्रतिश्रुति कीर्तिपुरुष वासुदेवों के होंगे। ये सब
प्रतिषासुदेव युद्ध में चक्र से लड़ेंगे और भय में अपने उसी चक्र से
भर जावेंगे। प्रतिषासुदेव युद्ध में वासुदेव के ऊपर मारने के लिये
चक्र चलाते हैं—सो यह चक्र वासुदेव का कुछ भी बिगाड़ नहीं कर सकता
है—प्रत्युत बापिस होकर अपने सामनेवाले प्रतिषासुदेव का इनन कर देता
है। ऐसा शास्त्रीय कथन है। उसी का यह सूचन है ॥सू० २१६॥

व सुदेवाना ते नव प्रतिश्रुज्जो कथे ते सवणा प्रतिषासुदेवो युद्धभां बद्धी दग्धे
अने अन्ते पिताना ए ते बद्धी तेजो भावां कथे. प्रतिषासुदेव युद्धभां वासु
देवने भासवाने भाटे बद्ध छीटे छि पण ते बद्ध वासुदेवने उनी आंन पण लभारी
शब्द नहीं पण ते पाछु इशने प्रतिषासुदेवनी ए दत्ता कथे छि जेवु शास्त्रीय
कथन छि ते कथनत्त ए आदी सूचन करवाभां आन्नु छि ॥सू० २१६॥

शब्दार्थ—(जम्बूद्वीपे णं दीवे) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे—जम्बूद्वीप नामके इसद्वीप में (एरवण वासे) ऐरवते वर्षे—ऐरवत क्षेत्र के अन्दर जो कि सातवां क्षेत्र है (आगमिस्साए उस्सप्पिणीए चउन्वीसं तित्थगरा भविस्सति) आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्यां चतुर्विंशतिस्तीर्थकरा भविष्यन्ति आगामीउत्सर्पिणी में चौबीस तीर्थकर होंगे। (तं जहा) तद्यथा—उनके नाम इस प्रकार हैं (सुमंगले य सिद्धत्थे निव्वाणे य महाजसे, धम्मज्जए य अरहा आगमिस्साण होस्सइ) सुमङ्गलश्च सिद्धार्थो निर्वाणश्च महायशाः धर्मध्वजश्च अर्हन् आगमिष्यति काले खलु भविष्यति—सुमंगल १ सिद्धार्थ २, निर्वाण ३, महायश ४ धर्मध्वज ५, (सिरिचंदे पुप्फकेऊ—महाचंदे य केवली, सुयसागरे य अरहा आगमिस्साण होस्सइ) श्रीचन्द्रः पुण्यकेतु महाचन्द्रश्च केवली, श्रुतसागरश्चार्हन् आगमिष्यति काले खलु भविष्यति—श्रीचंद्र, ६ पुष्पकेतु ७ महाचंद्र ८ अर्हन् श्रुतसागर ९ (सिद्धत्थे पुण्णघोसे य महाघोसे य केवली सच्चसेणे य अरिहा आगमिस्साण होस्सइ) सिद्धार्थः पुण्यघोषश्च महाघोषश्च केवली, सत्यसेनश्चार्हन् आगमिष्यति काले भविष्यन्ति—सिद्धार्थ १० पुण्यघोष ११, महाघोष १२ सत्यसेन १३ (सूरसेणे य अरिहा महासेणे य केवली, सव्वाणंदे य अरहा देवउत्ते य

शब्दार्थ—(जम्बूद्वीपे णं दीवे) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे—जम्बूद्वीप नामना आ द्वीपमां (एरवण वासे) ऐरवते वर्षे—ऐरवतक्षेत्र नामना सातमा क्षेत्रमां (आगमिस्साए उस्सप्पिणीए चउन्वीसं तित्थगरा भविस्सति) आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्यां चतुर्विंशतिस्तीर्थकरा भविष्यन्ति—आगामी उत्सर्पिणीकाणमा चौबीस तीर्थकरा थसे (तं जहा) तद्यथा—तेमना नाम आ प्रमत्ते छे—(सुमंगले य सिद्धत्थे निव्वाणे य महाजसे धम्मज्जए य अरहा आगमिस्साण होस्सइ) सुमङ्गलश्च सिद्धार्थो निर्वाणश्च महायशाः धर्मध्वजश्च अर्हन् आगमिष्यति खलु काले भविष्यन्ति—(१) सुमंगल, (२) सिद्धार्थ, (३) निर्वाण, (४) महायश, (५) धर्मध्वज, (सिरिचंदे पुप्फकेऊ महाचंदे य केवली सुयसागरे य अरहा आगमिस्साण होस्सइ) श्रीचन्द्रः पुष्पकेतुः महाचन्द्रश्च केवली, श्रुतसागरश्चार्हन् आगमिष्यति काले खलु भविष्यति—(६) श्रीचन्द्र, (७) पुष्पकेतु, (८) महाचन्द्र, (९) अर्हन् श्रुतसागर (सिद्धत्थे पुण्णघोसे य महाघोसे य केवली, सच्चसेणे य अरिहा आगमिस्साण होस्सइ) सिद्धार्थः पुण्यघोषश्च महाघोषश्च केवली, सत्यसेनश्चार्हन् आगमिष्यति काले भविष्यन्ति—(१०) सिद्धार्थ, (११) पुण्यघोष, (१२) महाघोष, (१३) सत्यसेन, (सूरसेणे य अरिहामहासेणे य केवली, सव्वाणंदे य अरहा देवउत्ते य होस्सइ) सूर

मीमक्षः सुग्रीवः १। ८६॥ एते खलु प्रतिशत्रवः प्रतिवासुदेवा कीर्तिपुरुषाणां
वासुदेवानाम् । सर्वेऽपि चक्रयोधिनः सर्वे हनिष्यन्ते स्वचक्रैः ॥ ८७॥ सु २१६॥

मम्म—जबुहीवे ण दीधे परवय वासे आगमिस्साण उस्स
पिणीए चउव्वीस तित्थगरा भविस्सति, तजहा—‘‘उमगले’’ य सिद्धत्थे
निव्वाणे’’ य महाजसे । धम्मज्झए य अरहा आगमिस्साण होस्सइ
॥ ८८॥ सिरिचदे पुप्फकेऊ’’ महाचदे य केवली । सुयसागरे य अरहा
आगमिस्साण होस्सइ ॥ ८९॥ सिद्धत्थे पुण्णेघोसे य, महाघोसे’’ य
केवली । सच्चसेणे’’ य अरहा आगमिस्साण होस्सइ ॥ ९०॥ सूरसेणे’’
य अरहा, महासेणे’’ य केवली । सव्वाणदे’’ य अरहा, देवउत्ते य
होस्सइ ॥ ९१॥ सुपासे’’ सुव्वेए अरहा, अरहे य सुकोसले’’ । अरहा
अणतं विजय आगमिस्साण होस्सइ ॥ ९२॥ विमले उत्तरे’’ अरहा,
अरहा य महावले । देवोणदे य अरहा, आगमिस्साण होस्सइ ॥ ९३॥
एए वुत्ता चउव्वीस, परवयम्मि केवली । आगमिस्साण होस्सति,
धम्मतिथस्स देसगा ॥ ९४॥ सू० ११७॥

और सुग्रीव। ये पूर्वोक्त प्रतिशत्रु कीर्तिपुरुष वासुदेवों के होंगे। ये सब
प्रतिवासुदेव युद्ध में चक्र से लड़ेंगे और अंत में अपने उसी चक्र से
मार जावेंगे। प्रतिवासुदेव युद्ध में वासुदेव का ऊपर मारने के लिए
चक्र चलाते हैं—सो यह चक्र वासुदेव का कुछ भी घिगाड़ नहीं कर सकता
है—प्रत्युत चापित होकर अपने चलानेवाले प्रतिवासुदेव का हनन कर देता
है। ऐसा शास्त्रीय कथन है। उसी का यह सूचन है ॥ सू० २१६॥

व सुदेवाना ते न च प्रतिशत्रवो यथे ते सवणा प्रतिवासुदेवा युद्धमां यथी लभी
जने जन्ते ये ताना च ते यथी तेजो भावां यथी प्रतिवासुदेव युद्धमां वासु
देवने भावने भादे यथे छोडे छे पण ते यथे वासुदेवने छीनी ज्ञां पण लभारी
शक्य नथी पण ते पाछे हरीने प्रतिवासुदेवनी च दत्ता कथे छे जेपु शास्त्रीय
कथन छे ते कथनय च अच्छी सूचन करवायां आणु छे ॥ सू० २१६॥

शब्दार्थ—(जम्बूद्वीपे णं दीवे) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे—जम्बूद्वीप नामके इसद्वीप में (एरवए वासे) एरवते वर्षे—एरवत क्षेत्र के अन्दर जो किं सातवां क्षेत्र है (आगमिस्साए उस्सप्पिणीए चउव्वीसं तित्थगरा भविस्संति) आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्यां चतुर्विंशतिस्तीर्थकरा भविष्यन्ति आगामीउत्सर्पिणी में चौबीस तीर्थकर होंगे। (तं जहा) तद्यथा—उनके नाम इस प्रकार हैं (सुमंगले य सिद्धत्थे निव्वाणे य महाजसे, धम्मज्जए य अरहा आगमिस्साण होस्सइ) सुमङ्गलश्च सिद्धार्थो निर्वाणश्च महायशाः धर्मध्वजश्च अर्हन् आगमिष्यति काले खलु भविष्यति—सुमंगल १ सिद्धार्थ २, निर्वाण ३, महायश ४ धर्मध्वज ५, (सिरिचंदे पुप्फकेऊ—महाचंदे य केवली, सुयसागरे य अरहा आगमिस्साण होस्सइ) श्रीचन्द्रः पुण्यकेतु महाचन्द्रश्च केवली, श्रुतसागरश्चार्हन् आगमिष्यति काले खलु भविष्यति—श्रीचंद्र, ६ पुण्यकेतु ७ महाचंद्र ८ अर्हन् श्रुतसागर ९ (सिद्धत्थे पुण्णघोसे य महाघोसे य केवली सच्चसेणे य अरिहा आगमिस्साण होस्सइ) सिद्धार्थः पुण्यघोषश्च महाघोषश्च केवली, सत्यसेनश्चार्हन् आगमिष्यति काले भविष्यन्ति—सिद्धार्थ १० पुण्यघोष ११, महाघोष १२ सत्यसेन १३ (सूरसेणे य अरिहा महासेणे य केवली, सव्वाणंदे य अरहा देवउत्ते य

शब्दार्थ—(जम्बूद्वीपे णं दीवे) जम्बूद्वीपे खलु द्वीपे—जम्बूद्वीप नामना आ द्वीपमा (एरवए वासे) एरवते वर्षे—एरवतक्षेत्र नामना सातमा क्षेत्रमा (आगमिस्साए उस्सप्पिणीए चउव्वीसं तित्थगरा भविस्संति) आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्यां चतुर्विंशतिस्तीर्थकरा भविष्यन्ति—आगामी उत्सर्पिणीकाणमा चौबीस तीर्थकरा थसे (तं जहा) तद्यथा—तेभना नाम आ प्रमात्ते ४—(सुमंगले य सिद्धत्थे निव्वाणे य महाजसे धम्मज्जए य अरहा आगमिस्साण होस्सइ) सुमङ्गलश्च सिद्धार्थो निर्वाणश्च महायशाः धर्मध्वजश्च अर्हन् आगमिष्यति खलु काले भविष्यन्ति—(१) सुमंगल, (२) सिद्धार्थ, (३) निर्वाण, (४) महायश, (५) धर्मध्वज, (सिरिचंदे पुप्फकेऊ महाचंदे य केवली सुयसागरे य अरहा आगमिस्साण होस्सइ) श्रीचन्द्रः पुण्यकेतुः महाचन्द्रश्च केवली, श्रुतसागरश्चार्हन् आगमिष्यति काले खलु भविष्यति—(६) श्रीचन्द्र, (७) पुण्यकेतु, (८) महाचंद्र, (९) अर्हन् श्रुतसागर (सिद्धत्थे पुण्णघोसे य महाघोसे य केवली, सच्चसेणे य अरिहा आगमिस्साण होस्सइ) सिद्धार्थः पुण्यघोषश्च महाघोषश्च केवली, सत्यसेनश्चार्हन् आगमिष्यति काले भविष्यन्ति—(१०) सिद्धार्थ, (११) पुण्यघोष, (१२) महाघोष, (१३) सत्यसेन, (सूरसेणे य अरिहामहासेणे य केवली, सव्वाणंदे य अरहा देवउत्ते य होस्सइ) सर

टीका—‘जंबुद्वीपे ण दीप’ इत्यादि—जम्बूद्वीपे रूख द्वीपे पेरवते येष
भागमिप्यन्त्यामुत्तमर्षिण्यां चतुर्विंशतिस्तीर्थकरा भविष्यन्ति, तथा—सुमगमः १
सिद्धार्थः २ निर्वाणधः ३ महायज्ञः ४। धर्मध्वजधः ५ अह्नः भागमिप्यति काले

(होस्मि) सुरसेनधारिन् महासेनध कंबली, सर्वानन्दधारिन् देवगुप्तध भवि
ष्यति—सुरसेन १४, महासेन १५ सर्वानन्द १६, (सुपास सुखवण अरहा
अरहे य सुकोसले) सुपाश्वः सुप्रतोऽह्नः अह्नः सुकोसले—सुपाश्व १७
सुप्रत १८ सुकोशल १९ (अरहा अणत विजय) अह्नः अणतविजय—अण
तविजय २० (विमल—उत्तरे अरहा अरहा य महायज्ञे, देवाण्ड य अरहा
भागमिप्साण—होस्मि) विमल उत्तरोऽह्नः अह्नः महायज्ञः देवानन्दध अह्नः
भागमिप्यति काले मालु भविष्यति—विमल २१, उत्तर २२ महायज्ञ २३
देवानन्द ४ (एण पुत्ता चउत्थीस परवयम्मि केवली, भागमिप्साण—होस्मि
धम्मतिथस्स देवगा) एते उक्ताश्चतुर्विंशतिरैरवते केवलिना, भागमिप्यति
काले त्वलु भविष्यन्ति, धर्मतीर्थस्य दशका—ये पेरवतक्षेत्रे क भविष्यन्
काल में होनेवाले तीर्थकर कहे गये हैं। य वहां आगामीकाल में धर्म
तीर्थ के उपदेशक होंगे ॥ सु० २१७॥

टीकार्थ—‘जंबुद्वीपे ण’ इत्यादि—जंबूद्वीप नाम क इस द्वीप में पेरवत
क्षेत्र के मन्दर जो कि सातवा क्षेत्र है। आगामी उत्तमर्षिणीकाल में
चौधीस तीर्थकर होंगे। उनके नाम इस प्रकार हैं। सुमगम, सिद्धार्थ,

सेनधारिन् महासेनध कंबली, सर्वानन्दधारिन् देवगुप्तध भविष्यन्ति—(१४)
सुरसेन (१५) महासेन (१६) सर्वानन्द, (सुपासे सुखवण अरहा अरहे य सुको
सले) सुपाश्व सुप्रतोऽह्नः, अह्नः सुकोसले—(१७) सुपाश्व (१८) सुप्रत
(१९) सुकोशल (अरहा अणतविजय) अह्नः अणतविजय—(२०) अणतविजय,
(विमले उत्तरे अरहा अरहा य महायज्ञे, देवाण्ड य अरहा भागमिप्साण
होस्मि) विमल उत्तरोऽह्नः अह्नः महायज्ञः देवानन्दध अह्नः, भागमिप्यति
काले त्वलु भविष्यन्ति—(२१) विमल, (२२) उत्तर (२३) महायज्ञ अह्नः (२४)
देवानन्द (एण पुत्ता चउत्थीस परवयम्मि केवली, भागमिप्साण होस्मि,
धम्मतिथस्स देवगा) एते उक्ताश्चतुर्विंशतिरैरवते केवलिना, भागमिप्यति
काले भविष्यन्ति, धर्मतीर्थस्य दशका जे भविष्यतक्षेत्रे भविष्यतीर्थ
कराना नाम करेतां छे तेभा त्या आगामीकालमा धर्मतीर्थना उपदेशक यथे। सु. २१७

टीकार्थ—‘जंबुद्वीपे ण’ इत्यादि—जंबूद्वीप नामना द्वीपमा आवेछ भविष्यत
आगामी सातवा क्षेत्रमा आगामी उत्तमर्षिणी कालमा भविष्यतीर्थ ३१ यथे। तेभनां
नाम मा प्रभावे यथे सुमगम, सिद्धार्थ निर्वाण, महायज्ञ धर्मध्वज धीध ५

ખલુ ભવિષ્યતિ ॥૮૮॥ શ્રીચન્દ્રઃ૬ પુષ્પકેતુ૭ મેઘાચન્દ્રશ્ચ૮ કેવલી । શ્રુતસા-
ગરશ્વાર્હન૯, આગમિષ્યતિકાલે ખલુ ભવિષ્યતિ ॥૮૯॥ સિદ્ધાર્થઃ૧૦ પુણ્યઘો
ષશ્ચ૧૧ મહાઘોષશ્ચ૧૨ કેવલી । સત્યસેનશ્વાર્હન૧૩ આગમિષ્યતિકાલે ભવિ-
ષ્યન્તિ ॥૯૦॥ સૂરસેનશ્વાર્હન મહાસેનશ્ચ૧૫ કેવલી । સર્વાનન્દશ્વાર્હન દેવગુપ્તશ્ચ=
દેવગુપ્તઃ=દેવવૃન્દસેવિતઃ સર્વાનન્દનામ યઃ પોડશસ્તીર્થકરો ભવિષ્યતિ ॥૯૧॥
સુપાર્શ્વઃ૧૭ સુવ્રતોઽર્હન૧૮, અર્હશ્ચ સુકોશલઃ૧૯। અર્હન્નનન્તવિજયઃ૨૦ આગ-
મિષ્યતિકાલે ભવિષ્યતિ ॥૯૨॥ વિમલ૨૧ ઉત્તરોઽર્હન૨૨, અર્હશ્ચ મહાવલઃ૨૩।
દેવાનન્દશ્ચ૨૪ અર્હન, આગમિષ્યતિકાલે ખલુ ભવિષ્યતિ ॥૯૩॥ એતે ઉક્તા-
શ્ચતુર્વિંશતિરૈરવતે કેવલિનઃ । આગમિષ્યતિકાલે ખલુ ભવિષ્યન્તિ, ધર્મતીર્થસ્ય
દેશકાઃ=ધર્મોપદેશકા इत्यर्थः ॥૯૪॥ સ્ ૨૧૭ ॥

નિર્વાણ, મહાયશ, ધર્મધ્વજ, ઓચંદ્ર, પુષ્પકેતુ, મહાચ્દ્ર, અર્હતશ્રુતસાગર,
સિદ્ધાર્થ, પુણ્યઘોષ, કેવલી મહાઘોષ, અર્હત સત્યસેન, અર્હત સૂરસેન
કેવલી મહાસેન, અર્હત સર્વાનન્દ એ દેવવૃન્દોં સે સેવિત ૧૬ વેં તીર્થકર
હોંગે । સુપાર્શ્વ, સુવ્રત, સુકોશલ, અર્હત અનન્તવિજય, વિમલ, અર્હત
ઉત્તર, અર્હત મહાવલ ઓર અર્હત દેવાનન્દ । યહા પર પ્રત્યેક ગાથા મેં
જો “આગમિસ્સાણ હોસ્સહ” એસા પાઠ આયા હૈ ઉસકા તાત્પર્ય એસા
હૈ કિ યે ભવિષ્યત્ કાલ મેં તીર્થકર હોંગે । “દેવગુપ્ત” યહ વિશેષણ
સર્વાનન્દ તીર્થકર કે સાથ જો આયા હૈ વહ સર્વ તીર્થકરોં કે સાથ
ભી સુગટિન હોતા હૈં । કયોં કિ સવ હી તીર્થકર દેવવૃન્દોં સે સેવિત હોતે
હૈં । અર્હન્ વિશેષણ ચાર ઘાતિયાકર્મોં કો નાશ કરને કે અર્થ કા ઘોતક
હૈ । સો યહ ભી પ્રત્યેક તીર્થકર કે સાથ લગાયા જા સકતા હૈ । પાદપૂર્તિ
કે નિમિત્ત હી હન વિશેષણોં કી સુત્રકાર ને કહીં ૨ પર હનકી ઘટના

પુષ્પકેતુ, મહાયશ, અર્હત શ્રુતસાગર, સિદ્ધાર્થ, પુણ્યઘોષ, કેવલી મહાઘોષ,
અર્હત સત્યસેન, અર્હત સૂરસેન, કેવલી મહાસેન, અર્હત સર્વાનન્દ, તે દેવવૃન્દોં સે
સેવિત ૧૬મા તીર્થકર થશે સુપાર્શ્વ, સુવ્રત, સુકોશલ અર્હત અનન્તવિજય,
વિમલ, અર્હત ઉત્તર અર્હત મહાવલ અને અર્હત દેવાનન્દ. આ સૂત્રમાં પ્રત્યેક
ગાથામાં બે “આગમિસ્સાણ હોસ્સહ” એવો પાઠ આવ્યો છે તેનું તાત્પર્ય એ
છે કે તેઓ ભવિષ્યકાળમાં તીર્થકર થશે “દેવગુપ્ત” આ વિશેષણ ‘સર્વાનન્દ’
તીર્થકરની સાથે આવેલું છે છતાં તેને બધા તીર્થકરો સાથે લઈ શકાય છે કારણ
કે સઘળા તીર્થકરોને દેવવૃન્દો વદન કરે છે-તેમની સેવા કરે છે ‘અર્હન્’ વિશેષણ
ચાર ઘાતિયા કર્મોનો નાશ કરવાના અર્થનું દર્શક છે તે વિશેષણ પણ સર્વે
તીર્થકરોને લગાડી શકાય છે પાદપૂર્તિ સૂત્રકારે તે વિશેષણો દોષ કોણ

मूलम्—धारस चक्रवर्तिणो भविस्सति, धारस चक्रवर्तिपियरो भविस्सति, धारस चक्रवर्तिमायरो भविस्सति, धारस इत्थीरयणा भविस्सति, नव धलदेववासुदेवपियरो भविस्सति, नव धासुदेवमायरो भविस्सति, नव धलदेवमायरो भविस्सति, नव दसारमडला भविस्सति, त जहा—उत्तमपुरिसा मज्झिमपुरिसा पहाणपुरिसा जाव दुवे दुवे रामकेसवा भायरो भविस्सति, णव पडिसत्तु भविस्सति, नव पुव्वभवणामधेज्जा, नव धम्मायरिया, नव नियाणभूमीओ, नव नियाणकारणा, आयाए एरवण आगमिस्ताए भाणियव्वा । एव दोसु वि आगमिस्ताए भाणियव्वा ॥सू० २१८॥

की है। ये पेरवतक्षेत्र के भविष्यत् काल में होनेवाले तीर्थकर कहे गये हैं। ये वहाँ आगामीकाल में धर्मतीर्थ के उपदेशक होंगे ॥ सू० २१७॥

शब्दार्थ—(धारस चक्रवर्तिणो भविस्सति) द्वादश चक्रवर्तिनो भविष्यन्ति धारह चक्रवर्ति होंगे (धारस चक्रवर्तिपियरो भविस्सति) द्वादशचक्रवर्ति पितरो भविष्यन्ति धारहचक्रवर्तियों के पिता होंगे। (धारसचक्रवर्तिमायरो भविस्सति) द्वादशचक्रवर्ति मातरो भविष्यन्ति—चक्रवर्तियों की धारह माताएँ होंगी। (धारस इत्थीरयणा भविस्सति) द्वादश स्त्रीरत्नानि भविष्यन्ति धारह स्त्री रत्नो होंगे। (नव धलदेव वासुदेव पियरो भविस्सति) नव धलदेववासुदेवपितरो भविष्यन्ति—नव धलदेवों और नव वासुदेवों

अन्धाले बापको छ औरवत क्षेत्रमा भविष्यकालमा उपदेशक तीर्थकरे बहाना छ भने तेको आगामी कालमा तहाँ धर्मतीर्थमा उपदेशक हने ॥सू २१७॥

शब्दार्थ—(धारस चक्रवर्तिणो भविस्सति) द्वादश चक्रवर्तिनो भविष्यन्ति—आर चक्रवर्तिथे भवे (धारस चक्रवर्तिपियरो भविस्सति) द्वादश चक्रवर्ति पितरो भविष्यन्ति—आर चक्रवर्तिथेना आर पिता भवे (धारस चक्रवर्तिमायरो भविस्सति) द्वादश चक्रवर्तिमातरो भविष्यन्ति—चक्रवर्तिथेनी आर माताको भवे (धारस इत्थीरयणा भविस्सति) द्वादशस्त्रीरत्नानि भविष्यन्ति—आर स्त्रीरत्नो भवे (नव धलदेव वासुदेव पियरो भविस्सति) नव धलदेववासुदेवपितरो भविष्यन्ति—नव धलदेवो भने नव वासुदेवोना नव पिता भवे (नव वासुदेवमायरो भविस्सति) नव धलदेवो भने नव वासुदेवोना नव माता भवे (नव वासुदेवमायरो भविस्सति) नव धलदेवो भने नव वासुदेवोना नव माता भवे

के नौ पिता होंगे । (नव वासुदेव मायरो भविस्संति, नव बलदेव मायरो भविस्संति) नव वासुदेव मातरो भविष्यन्ति, नव बलदेव मातरो भविष्यन्ति—नव वासुदेवों की नौ माताएँ होंगी और नव बलदेवों की नौ माताएँ होंगी । (नव दसार मंडला भविस्संति) नव दशार्ह मण्डलानि भविष्यन्ति नौ दशार्हमंडल होंगे । (तं जहा) तद्यथा—(उत्तमपुरिसा, मज्झिमपुरिसा पहाणपुरिसा जाव दुवे दुवे रामकेसवा भायरो भविस्संति) उत्तमपुरुषाः मध्यमपुरुषाः प्रधानपुरुषाः यावद् द्वौ द्वौ रामकेशवौ भ्रातरौ भविष्यन्ति इन पदों का अर्थ २१३ सूत्र की व्याख्या में लिख दिया है । सो उसे यहाँ पर भविष्यत्काल परक लगा लेना चाहिये (णव पडिसत्तू भविस्संति) नव प्रतिशत्रवो भविष्यन्ति—नौ प्रतिवासुदेव होंगे । (नव पुव्वभवणामघेज्जा) नव पूर्वभव नामधेयानि—नौ इनके पूर्वभव संबंधी नाम (नव धम्ममारिया) नव धर्माचार्याः—नौ इनके धर्माचार्य, (नव नियोणभूमिओ) नव नव निदान भूमयः—नौ इनकी निदानभूमियाँ (नव नियोणकारणा) नव निदान कारणानि च—नौ निदान कारण, (आयाए एरवए) आदाय ऐरवतम्—ऐरवत क्षेत्र के बीच में (आगमिस्साए) आगमिष्यन्त्याम्—आने वाले उत्सर्पिणीकाल में होंगे ऐसा (भाणियन्वा) भणितव्यानि—कथन कर लेना

भविस्संति, नव बलदेवमायरो भविस्संति) नव वासुदेवमातरो भविष्यन्ति, नव बलदेवमातरो भविष्यन्ति—नव वासुदेवोनी नव माताओ थशे अने नव बलदेवोनी नव माताओ थशे (नवदसारमंडला भविस्संति) नवदशार्हमण्डलानि भविष्यन्ति—नव दशार्हमंडल थशे. (तं जहा) तद्यथा—(उत्तमपुरिसा, मज्झिमपुरिसा, पहाणपुरिसा, जाव दुवे दुवे रामकेसवा भायरो भविस्संति) उत्तमपुरुषाः मध्यमपुरुषाः प्रधानपुरुषाः यावद् द्वौ द्वौ रामकेशवौ भ्रातरौ भविष्यन्ति—आ पढेना अर्थ २१३मा सूत्रमा आपी दीधा छे. अही त्या तेभने भविष्यकाणनी अपेक्षाओ समजवा जेछथे. (णव पडिसत्तू भविस्संति) नव प्रतिशत्रवो भविष्यन्ति—ते वासुदेवोना प्रतिशत्रु नव प्रतिवासुदेवो थशे. (नव पुव्वभवणामघेज्जा) नव पूर्वभवनामधेयानि—तेभनां पूर्वभवना नव नाम छथे. (नव धम्ममारिया) नव धर्माचार्याः—तेभना नव धर्माचार्यो थशे, (नव नियोणभूमिओ) नव निदानभूमयः—तेभनी नव निदानभूमियो छथे (नव नियोण कारणा) नव निदान कारणानि—नियोणाना नव कारणो छथे (आयाए एरवए) आदाय ऐरवतम्—तेओ ऐरवतक्षेत्रमा (आगमिस्साए—आगमिष्यन्त्याम्—आगामी उत्सर्पिणीकाणमा थशे ओम (भाणियन्वा) भणितव्यानि—

टीका—‘वारस चक्रवर्तिणो’ इत्यादि—द्वादश चक्रवर्तिनो भविष्यन्ति, द्वादश चक्रवर्तिपितरो भविष्यन्ति, द्वादशचक्रवर्तिमातरो, द्वादश स्त्रीरत्नानि भविष्यन्ति । नव बलदेववामुदेवपितरो भविष्यन्ति, नव वामुदेवमातरो भविष्यन्ति, नव बलदेव मातरो भविष्यन्ति, नव दशार्हमण्डलानि भविष्यन्ति, तद्यथा—उत्तमपुरुषा मण्य मापुरुषाः प्रधानपुरुषाः यावद् द्वौ द्वौ रामकेसवौ भ्रातराविति कृत्वा नव बल देववामुदेव भविष्यन्ति । नव प्रतिशत्रवो भविष्यन्ति । नव पूर्वभवनामधेयानि, नव धर्माचार्याः, नव निदानभूमयः, नव निदानकारणानि च ‘आयाए परवए’

आहिये । (एव दोसु वि आगमिस्साए माणियव्वा) एव इयोरपि आगमिष्यन्त्यां—मणितव्या—इस तरह भरत और ऐरवत क्षेत्र के बीच में आगामी उत्तम पिपी काल में बलदेव और वामुदेव आदि होंगे ऐसा जानना चाहिये॥ सू २१८॥

टीकार्थ—‘वारस चक्रवर्तिणो’ इत्यादि । बारह चक्रवर्ती होंगे । बारह चक्रवर्तियों के पिता होंगे । चक्रवर्तियों की बारह माताएँ होंगी । बारह स्त्री रत्न होंगे । नव बलदेवों के और नव वामुदेवों के नौ पिता होंगे । नव वामुदेवों की नौ माताएँ होंगी और नव बलदेवों की नौ माताएँ होंगी । नौ दशार्हमण्डल होंगे । “उत्तमपुरिस्ता” से लेकर “रामकेसवो मायरो भविस्सन्ति” यहाँ तक इन पदों का अर्थ २१३ सूत्र की व्याख्या में लिख दिया है । सो उसे यहाँ पर भविष्यत काल परक लगा लेना चाहिये । नौ प्रतिवामुदेव होंगे । नौ इनके पूर्वभव सर्वभू नाम नौ इनके धर्माचार्य, नौ इनकी निदान भूमियाँ, और नौ निदानकारण, ऐरवतक्षेत्र

अथ समष्टि देवानु ॥ (एवं दोसुवि आगमिस्साए माणियव्वा) एव इयो रपि आगमिष्यन्त्यां मणितव्या—आ प्रभावे जगदेवो अने वामुदेवो भरत अने ऐरवतक्षेत्रमा आगामी उत्तमपिपीकाणमां यथे तेम समष्टि ॥ सू, २१८॥

टीकार्थ—‘वारसचक्रवर्तिणो’ इत्यादि—आर चक्रवर्ति यो यथे आर चक्रवर्ति योना आर पिता यथे आर चक्रवर्ति भानी आर माताको यथे अने आर स्त्रीरत्नो यथे नव जगदेवो तथा नव वामुदेवानां नव पिता यथे नव वामुदेवो यथे नव माताको यथे अने जगदेवानी नव माताको यथे नव दशार्ह मण्डल यथे जगदेवो यथे जगदेव अने जगदेवो यथे वामुदेव यथे अण्जेना नव भुजल यथे “उत्तमपुरिस्ता” यी “राम केसवो मायरो भविस्सन्ति” सुधीना पढीना अर्थ २१३ भां सूत्रमां आपी दीया ॥ ते अर्हो भविष्यकाणमां तेभने समष्टिदेवानां ॥ ते वामुदेवोमां नव प्रतिशत्रु—प्रतिवामुदेवो यथे ते वामुदेवोना पूव भवनां नव नाम दथे नव धर्माचार्यो यथे, नव निदानभूमियो अने नव निदानकारणो यथे, तेभो आगामी उत्तमपिपीकाणमां

आदाय ऐरवतम्—ऐरवतक्षेत्रमधिकृत्य=ऐरवतक्षेत्रमध्ये इत्यर्थः, प्राकृतत्वाद् द्विती
यारथाने सप्तमी, 'आगमिस्साए' आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिणां भणितव्यानि=कथ-
नीयानि । उक्तमपि अर्थं पुनरपि स्पष्टयति—'एवम्' अनेन प्रकारेण 'दोसु वि'
द्वयोरपि=भरतैरवतक्षेत्रमध्ये इत्यर्थः, 'आगमिस्साए' आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिणां
रामवासुदेवादयो भणितव्याः ॥ सू० २१८ ॥

अनेन प्रकारेण अनेकविधपदार्थान् प्रदर्श्य संप्रति अधिकृतशास्त्रस्य
गुणनिष्पन्ननामान्याह—

मूलम्—इच्चेइयं एवमाहिज्जइ, तं जहा—कुलगरवंसेइ य एवं
तिथगरवंसेइ य गणधरवंसेइ य चक्रवट्टिवंसेइ य दसारवंसेइ य
ईसिवंसेइ य जइवंसेइ य । मुणिवंसेइ य । सुएइवा सुअंगेइ वा
सुयसमासे वा सुयखंधेइ वा समवाएइ वा संखेइ वा संमत्तमंगम-
क्खायं अज्झयणंति वेमि ॥सू. २१९॥

॥ इय समवायं चउत्थमंगं समत्तं ॥

के बीच में आनेवाले उत्सर्पिणीकाल में होंगे ऐसा कथन कर लेना
चाहिये । इस प्रकार से उक्त अर्थ को सूत्रकार पुनः स्पष्ट करते हुए
कहते हैं कि—इस तरह भरत और ऐरवत क्षेत्र बीच में आगामी उत्सर्पिणी
काल में बलदेव और वासुदेव आदि होंगे ऐसा जानना चाहिये ॥सू० २१८॥

इस प्रकार से अनेकविध पदार्थों का कथन करके अब सूत्रकार
इस अधिकृत शास्त्र के गुणनिष्पन्न नामों का कथन करते हैं ।—

शब्दार्थ—(इच्चेइयं एवमाहिज्जइ)(इत्येतत् एवमाख्यायते—यह शास्त्र
इस प्रकारसे इन नामों द्वारा कहा जाता है (तं जहा) तद्यथा—वे नाम ये
रवतक्षेत्रमां अशे ओ प्रभाणे सभल्ल लेपुं लेधंओ. आ प्रभाणे उक्त अर्थाने
इरीथी स्पष्ट करतां सूत्रकार कहे छे के—आगामी उत्सर्पिणीकाणमां भरत अने
ऐरवतक्षेत्रनी अहर उपरोक्त वासुदेव, गणदेव आदि थये ॥सू. २१८॥

आ प्रभाणे अनेक प्रकारना पदार्थोंनु कथन करीने छे वे सूत्रकार आ अधिकृत
शास्त्रना गुणयुक्त नामोंनु कथन करे छे—

शब्दार्थ—(इ इयं एवमाहिज्जइ) इत्येतत् एवमाख्यायते—आशास्त्र के
नामोक्षी ओणभाय छे. (तंजहा) तद्यथा—ते नामो आ प्रभाणे छे—(कुलगरवंसे

टीका--‘धारस चक्रवर्तिणो’ इत्यादि-द्वादश चक्रवर्तिनो भविष्यन्ति, द्वादश चक्रवर्षिपितरो भविष्यन्ति, द्वादशचक्रवर्षिमातरो, द्वादश स्त्रीरत्नानि भविष्यन्ति । न च बभ्रुदेववासुदेवपितरो भविष्यन्ति, न च वासुदेवमातरो भविष्यन्ति, न च वल्लदेव मातरो भविष्यन्ति, न च दृष्टार्हमण्डलानि भविष्यन्ति, तद्यथा-उत्तमपुरुषा मध्य मापुरुषाः प्रधानपुरुषाः यावद् द्वौ द्वौ रामकेशवौ भ्रातराविति कृत्वा न च बभ्रु देववासुदेव भविष्यन्ति । न च प्रतिश्वश्रवो भविष्यन्ति । न च पूर्वभक्तनामधेयानि, न च धर्माचार्याः, न च निदानभूमयः, न च निदानकारणानि च ‘आयाप्य परबभ्रु’

चाहिये। (एवं दोसु वि आगमिस्साए माणिषव्वा)एव द्वयोरपि आगमिष्यन्त्या-
मणितम्या -इत्त तरह् भरत और पेरवत क्षेत्र के बीच में आगामी उत्त
पिणी काल में पल्लवेष और पाम्रवेष आदि होंगे ऐसा मानना चाहिये॥श्रु २१८॥

टीका—‘वारस षक्ववर्णिगो’ इत्यादि। वारह षक्ववर्ती होंगे। वारह षक्ववर्तियों के पिता होंगे। षक्ववर्तियों की वारह माताएँ होंगी। वारह स्त्री रत्न होंगे। नव बलदेवों के और नव बामुदेवों के नौ पिता होंगे। नव बामुदेवों की नौ माताएँ होंगी और नव बलदेवों की नौ माताएँ होंगी। नौ दशार्हमण्डल होंगे। “उत्तमपुरिस्ता” से लेकर “रामकेसवा मायरो भविस्संति” यहाँ तक इन पदों का अर्थ २१३ सूत्र की व्याख्या में लिख दिया है। सो उसे यहाँ पर अभिष्यत् काल परक लगा केना चाहिये। नौ प्रतिशास्त्रवेष होंगे। नौ इनके पूर्वम्बर संबंधी नाम नौ इनके धर्माचार्य, नौ इनकी निदान भूमियाँ, और नौ निदानकारण, पेरवतसूत्र

અન સમજી દેવાનું છે (અર્થ દોઝાઈ આગમિસ્સાઈ માણિયજ્યા) અર્થ દુયો રવિ આગમિવ્યન્ત્યાં મણિતજ્યા - જા પ્રભાણે બહદેવે અને વામુદેવે ભરત અને એશ્વત્રીસ્રમાં જ્યાગ્રામી ઉત્સર્પિણીજાળમાં જશે તેમ સમજવું પ્રશ્ન, ૨૧૮॥

લીકાઈ—“પારસવલ્લવિષ્ણો” इत्यादि—જાણી જાણીને વચન બોલવાનું કાલેજીયું
 થોના જાણી પિતા થશે, જાણી જાણીને થોની જાણ માતાજી થશે અને જાણ જાણીને
 થશે નવ જગદેવો તથા નવ વાસુદેવોના નવ પિતા થશે, નવ વાસુદેવોના નવ માતાજી
 થશે અને જગદેવોની નવ માતાજી થશે નવ જગદેવોના નવ પિતા થશે એટલે કે એક જગદેવ
 અને એક વાસુદેવ એક જગદેવના નવ મુખ થશે “उत्तमपुरिसा” થી “राम
 केसवा आपरो भविस्सति” મુખોના પદોના જઈ ૧૧૩માં સૂત્રમાં જાણી લીકા
 છે તે જાણી જાણીને જાણમાં તેમને સમજાવનાં છે તે વાસુદેવોમાં નવ પ્રતિષ્ઠાનું
 પ્રતિષ્ઠાનું થશે. તે વાસુદેવોના પૂજાર્થના નવ નામ થશે, નવ પ્રતિષ્ઠા થશે,
 નવ નિધાનમુખિયો અને નવ નિધાનકારણો થશે, તેઓ જાણમાં ઉત્તરિણીકાળમાં

आदाय ऐरवतम्—ऐरवतक्षेत्रमधिकृत्य=ऐरवतक्षेत्रमध्ये इत्यर्थः, प्राकृतत्वाद् द्विती
यारथाने सप्तमी, 'आगमिस्साए' आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्यां भणितव्याति=कथ-
नीयानि । उक्तमपि अर्थं पुनरपि स्पष्टयति—'एवम्' अनेन प्रकारेण 'दोसु वि'
द्वयोरपि=भरतैरवतक्षेत्रमध्ये इत्यर्थः, 'आगमिस्साए' आगमिष्यन्त्यामुत्सर्पिण्यां
रामवासुदेवादयो भणितव्याः ॥ सू० २१८ ॥

अनेन प्रकारेण अनेकविधपदार्थान् प्रदर्श्य संप्रति अधिकृतशास्त्रस्य
गुणनिष्पन्नानामन्याह—

मूलम्—इच्चेइयं एवमाहिज्जइ, तं जहा—कुलगरवंसेइ य एवं
तित्थगरवंसेइ य गणधरवंसेइ य चक्रवट्टिवंसेइ य दसारवंसेइ य
ईसिवंसेइय जइवंसेइ य । मुणिवंसेइ य । सुएइवा सुअंगेइ वा
सुयसमासे वा सुयखंधेइ वा समवाएइ वा संखेइ वा संमत्तमंगम-
क्खायं अज्झयणंति वेमि ॥ सू. २१९ ॥

॥ इय समवायं चउत्थमंगं समत्तं ॥

के बीच में आनेवाले उत्सर्पिणीकाल में होंगे ऐसा कथन कर लेना
चाहिये । इस प्रकार से उक्त अर्थ को सूत्रकार पुनः स्पष्ट करते हुए
कहते हैं कि—इस तरह भरत और ऐरवत क्षेत्र बीच में आगामी उत्सर्पिणी
काल में बलदेव और वासुदेव आदि होंगे ऐसा जानना चाहिये ॥ सू० २१८ ॥

इस प्रकार से अनेकविध पदार्थों का कथन करके अब सूत्रकार
इस अधिकृत शास्त्र के गुणनिष्पन्न नामों का कथन करते हैं ।—

शब्दार्थ—(इच्चेइयं एवमाहिज्जइ)(इत्येतत् एवमाख्यायते—यह शास्त्र
इस प्रकारसे इन नामों द्वारा कहा जाता है (तं जहा) तद्यथा—वे नाम ये
रवतक्षेत्रमा थशे ओ प्रभाणु सभणु वेपुं नेधणे. आ प्रभाणु उक्त अर्थोने
इरीथी स्पष्ट करता सूत्रकार कहे छे के—आगामी उत्सर्पिणीकाणमां भरत अने
ऐरवतक्षेत्रनी अदर उपरोक्त वासुदेव, भणदेव आदि थशे ॥ सू. २१८ ॥

आ प्रभाणु अनेक प्रकारना पदार्थोनु कथन करीने हवे सूत्रकार आ अधिकृत
शास्त्रना शुष्युक्त नामोनु कथन करे छे—

शब्दार्थ—(इ इयं एवमाहिज्जइ) इत्येतत् एवमाख्यायते—आशास्त्र ने
नामोथी ओणभाय छे. (तंजहा) तद्यथा—ते नामो आ प्रभाणु छे—(कुलगरवंसे

है—(कुलगर वसेइ य एष तित्यगर वसेइ य गणहर वसेइ य चक्रवर्तिवसेइ य दत्तार वसेइ य) कुलकर वसेइति च एषम् तीर्थकरवसेइति च—गणपर वसेइति च चक्रवर्तिवसेइति च दत्तारवसेइति च—कुलकरों के वश का प्रतिपादक होने के कारण इस शास्त्र का नाम कुलकर वश है। तीर्थकरों के वश का कथन करनेवाला होने के कारण इस शास्त्र का नाम तीर्थकर वश है। इसी तरह से गणघरों के वश का प्रतिपादक होने के—कारण इस शास्त्र का नाम गणघर वश है। चक्रवर्तियों के वश का प्रतिपादक होने से इसका नाम चक्रवर्तिवश, तथा दत्तारवश का प्रतिपादक होने से दत्तारवश (ईति वसइ य जइ वसेइ य मुनिवमइ य) ऋषिवंश इति च, यतिवंश इति च, मुनि वंश इति च—ऋषियों—गणघरों से अतिरिक्त तीर्थकर त्रिव्यो के वश का प्रतिपादक होने से ऋषिवश तथा ऋषि मुनि, यति ये शब्द समान अर्थ वाले होने से यतिवश मुनिवश है। (सुपर वा सुअंगेइ वा सुयसमासेइ वा सुयवचेइ वा समवाएइ वा सखेइ वा) भूतेति वा भुताङ्गेति वा भुतसमा सति वा भुतस्कन्धेति वा समवापेति वा सरयेति वा—तथा त्रिकाल संबंधी अर्थ के बोधन कराने में समर्थ होने के कारण इसका नाम भुत है। प्रवचन पुरुष का भंग होने के कारण इसका नाम भुताङ्ग ऐसा भी है। समस्त सूत्रों के अर्थों का यहाँ संक्षेप में प्रतिपादन होने से इसका नाम भुतसमाम ऐसा भी है। भुत समुदायरूप होने से इसका नाम भुत

इ य एष तित्यगरवसेइ य गणहरवसेइ य चक्रवर्तिवसेइ य दत्तारवसेइ य) कुलकर वसेइति च एषम् तीर्थकरवसेइति च गणपरवसेइति च चक्रवर्तिवसेइति च दत्तार वसेइति च—कुलकराना वशम् प्रतिपादक होवाथी आ शास्त्रम् नाम कुलकरवश' है तीर्थकराना वशम् प्रतिपादक होवाथी आ शास्त्रम् नाम तीर्थकरवश' है ये च प्रभाषे अणुधराना वशम् कथन कराना होवाथी आ शास्त्रम् नाम अणु धरवश है चक्रवर्तिवशाना वशम् प्रतिपादक होवाथी आ शास्त्रम् नाम 'चक्रवर्ति वश' है तथा दत्तारवशाना प्रतिपादक होवाथी तेन नाम दत्तारवश' पणु है (ईमिवसइय जइवसेइय मुनिवमइय) ऋषिवंश इति च, यतिवंश इति च, मुनिवंश इति च—ऋषियों—अणुधर शिवायना तीर्थ कराना शिष्याना वशम् प्रतिपादक होवाथी तेन नाम ऋषिवश है ऋषि, मुनि, यति, ये शब्दों समान अर्थवाला होवाथी तेन नाम यतिवश मुनिवश है (सुपरवा सुअंगेइवा सुय समासेइ वा सुयवचेइ वा समवाएइ वा सखेइ वा) भूतेति वा, भुताङ्गेति वा भुतस मासति वा भुतस्कन्धेति वा समवापेति वा सरयेति वा—तथा त्रिकाल संबंधी अर्थ के बोधन कराने में समर्थ होने के कारण इसका नाम भुत है। भुत समुदायरूप होने से इसका नाम भुत

ટીકા—‘इच्चेइय’ इत्यादि—‘इच्चेइयं’ इत्येतत् शास्त्रम् ‘एवं’ अनेन प्रकारेण वक्ष्यमाणनामभिः ‘आहिज्जइ’ आख्यायते—कथ्यते, ‘त जहा’ तद्यथा—‘कुलग-
रवंसेइ य’ कुलकरवंशेति च—कुलकराणां वंशस्य प्रतिपादकत्वादयं ‘कुलकरवंश’
इति नाम्ना कथ्यते, इति शब्दः स्वरूपप्रतिपादकः, च शब्दः समुच्चयार्थः, अप-
स्कंध ऐसा भी है। तथा समग्र जीव और अजीव आदि पदार्थों को
यहां अभिधेयरूप मिलने के कारण इसका नाम समवाय ऐसा भी है।
एक आदि संख्याक्रम से पदार्थों का इसमें प्रतिपादन हुआ है इससे
इसका नाम संख्या ऐसा भी है। (सम्मत्तमंगमक्खाय) ‘समस्तमङ्गमा-
ख्यातं—भगवान् इस समवायाङ्ग को संपूर्णरूप से कहा है। (अज्झयणं)
अध्ययनमिति—यह एक ही अध्ययन है। (त्तिवेमि) इति ब्रवीमि—जंबू-
स्वामी से सुधर्मास्वामी कहते हैं कि हे जंबू ! जैसा यह समवायाङ्ग सूत्र
भगवान् से मैंने सुना है वैसा ही मैंने यह तुम से कहा है। अपनी
तरफ से मैंने इस से कुछ भी—घटाया बढ़ाया नहीं है। “इति” यह
शब्द शास्त्र की समाप्ति का बोधक है ॥सू० २१९॥

टीकार्थ—‘इच्चेइयं एवमाहिज्जइ’ इत्यादि—यह शास्त्र इस प्रकार से इन
नामों द्वारा कहा जाता है—वे नाम ये हैं—कुलकर वंश—इसशास्त्र में
कुलकरों के वंश का प्रतिपादन हुआ है अतः उनके वंश का प्रतिपादक
होने के कारण इस शास्त्र का नाम कुलकर वंश है। यहां इति शब्द स्वरूप
का और “च” शब्द समुच्चय अर्थ का प्रतिपादक है। इसी तरह से

नाम ‘श्रुतस्कंध’ પણ છે. તથા સમગ્ર જીવ અને અજીવ આદિ પદાર્થોનો આ અંગમાં
સમાવેશ થતો હોવાથી તેનું નામ ‘સમવાય’ પણ છે એક બે આદિ સંખ્યાક્રમથી
પદાર્થોનું આ અંગમાં પ્રતિપાદન કરવામાં આવ્યું હોવાથી તેનું નામ “સંખ્યા”
પણ છે (સમ્મત્તમંગમક્કયાય) સમસ્તમઙ્ગમાખ્યાતમ્—ભગવાનને આ સમવાયાગને
સંપૂર્ણરૂપે કહેલ છે (અજ્ઞયણં) અધ્યયનમિતિ તેમાં એક જ અધ્યયન છે (ત્તિવેમિ)
इति ब्रवीमि—सुधर्मास्वामी जंबूस्वामीने कहे છે કે ‘હે જંબૂ ! જે પ્રમણે
આ સમવાયાગ સૂત્ર મેં ભગવાન પાસેથી સાંભળ્યું છે તે પ્રમાણે જ તમને તે
કહું છું મારી તરફથી મેં તેમાં કંઈ પણ વધારો ઘટાડો કર્યો નથી ” “इति”
આ પદ શાસ્ત્રની સમાપ્તિ બોધક છે ॥સૂ ૨૧૯॥

ટીકાર્થ—“इच्चेइय एवमाहिज्जइ” इत्यादि—आ शास्त्रना आ प्रमाणे
બુદ્ધ બુદ્ધ નામો છે—કુલકરવંશ—આ શાસ્ત્રમાં કુલકરોના વંશનું પ્રતિપાદન કરાયું
છે તેથી તેમના વંશનું પ્રતિપાદક હોવાને કારણે આ શાસ્ત્રનું નામ ‘કુલકરવંશ’
છે. અહીં ‘इति’ શબ્દ સ્વરૂપનો અને ‘च’ શબ્દ સમુચ્ચય અર્થનો પ્રતિપાદક છે.

रमापि इति शब्दभेदमर्थकण्ठमिगन्तव्य । 'एषम्' अनेनैव प्रकारेण तित्थ
 गरवसेइय' तीर्थकरवशेति च-तीर्थकरवशप्रतिपादकत्वादिव 'तीर्थकरवश' इति
 नाम्ना कथ्यते, तथा-गणधरवशप्रतिपादकत्वादिव शास्त्र 'गणधरवसेइ य' गण
 धरवश इति नाम्ना च कथ्यते । तथा-चक्रवर्तिवशप्रतिपादकत्वादिव 'चक्र
 द्विवसेइ य' चक्रवर्तिवश इति च, तथा दशार्हवशप्रतिपादकत्वादिव 'दशार्हवश'
 इति, तथा-गणधरातिरिक्तास्तीर्थकरशिष्या ऋषय उच्यते, एतप्रतिपादकत्वादिव
 शास्त्र 'इसिवसेइ य' ऋषिवश इति च, ऋषिमुनियतीनां समानार्थत्वादिव 'अ
 पसेइ य'='यतिवश' इति च, 'मुनिवसेइ य'='मुनिवश' इति चामिधीयते । तथा-
 त्रिकालार्थबोधने समर्थत्वादिव 'सुपइवा' भुतेतिवा-भुतमिति प्रोच्यते । भुतस्य
 प्रवचनपुरुषस्याङ्गत्वादिव 'सुपगेइवा' भुताङ्गेतिवा=भुताङ्गमिति, तथा-समस्त

"तित्थगरवसेइ य" इत्यादि पदों के साथ आये हुए इन "इति" और
 "च" के विषय में जानना चाहिये । तीर्थकर वश-तीर्थकर के वश का
 कथन करने वाले होने के कारण इस शास्त्र का नाम तीर्थकर वश है ।
 इसी तरह से चक्रवर्तियों के वश का प्रतिपादक होने से इसका नाम
 चक्रवर्तिवश, तथा दशार्हवश का प्रतिपादक होने से दशार्हवश, ऋषियों
 के गणधरों से अतिरिक्त तीर्थकर शिष्यों यहाँ ऋषि कहे गये हैं उनके
 वश का प्रतिपादक होने से ऋषिवश, तथा ऋषि, मुनि और यति ये
 शब्द समान अर्थवाले होने से यतिवश एवं मुनिवश है । तथा-त्रिकाल
 संबन्धी अर्थ के बोधन कराने में समर्थ होने के कारण इसका नाम
 भुत है । प्रवचन पुरुष का अंग होने के कारण इसका
 नाम भुताङ्ग एसा भी है । समस्त सूत्रों के अर्थों का यहाँ

'तित्थगरवसेइ य' इत्यादि पदों की साथ वपरायेस 'इति' अने 'च' की नामों
 भां पदों के प्रभावे च समस्त तीर्थकरवश-तीर्थकरवश वश का कथन करने
 के वाधी का शास्त्र नाम तीर्थकरवश वश के अर्थ प्रभावे चक्रवर्तिवश वश का
 प्रतिपादक होवाधी तेन नाम चक्रवर्तिवश है, तथा दशार्हवश का प्रतिपादक
 होवाधी तेन नाम दशार्हवश है अथवा दशार्हवश वश करने के अर्थ
 है व है ते ऋषिवश वश का प्रतिपादक होवाधी का शास्त्र 'ऋषिवश,' तथा
 ऋषि, मुनि अने यति, के समानार्थी शब्दों होवाधी 'यतिवश' अने 'मुनिवश'
 के नाम पदों का शास्त्र के अंगत्व का वश होवाधी तेन नाम भुत वश वश है प्रवचनपुरुष का अंग
 होवाधी तेन नाम भुताङ्ग वश वश है अथवा भुताङ्ग वश वश है अथवा भुताङ्ग वश वश है

सूत्रार्थानामत्र संक्षेपेण प्रतिपादनादिदं 'सुयसमासेइ वा' श्रुतसमासेति वा श्रुतसमासमिति, तथा—श्रुतसमुदायरूपत्वादिदं 'सुयस्कंधेइ वा' श्रुतस्कन्धे-
तिवा—श्रुतस्कन्धमिति, तथा समग्राणां जीवाजीवादि पदार्थानामभिधेय-
तयेह समवायतान्मीलनादिदं 'समवाएइ वा' समवायेतिवा=समवायमितिवा, तथा—
एकादिसंख्याक्रमेण पदार्थानामत्र प्रतिपादनादिदं 'संखेइ वा' संख्येति वा
आख्यायते । तथा 'सम्मत्तमंगमक्खायं' समस्तमङ्गमाख्यातं=भगवता, इदं सम-
वायाङ्गं संपूर्णमुक्तम्, न तु आचाराङ्गवदत्रापि विभागद्वयमस्ति । तथा—'अज्झयणं'
अध्ययनमिति—इदं सम्पूर्णमेकमेवादध्ययनम्, अत्र आचाराङ्गादिमूत्रस्य शस्त्रपरि-
ज्ञादिवद् अध्ययनोद्देशादि विभागो नास्ति, 'त्तिवेमि' इति ब्रवीमि—इति शब्दः
शास्त्र समाप्तिमूचकः, सुधर्मास्वामी ब्रवीति—हे जम्बूः ! यथेदं समवायाङ्गं भगवतः
सकाशान्मया श्रुतम्, तथैव त्वां प्रतिब्रवीमि ॥ सू. ११९॥

इतीश्री विश्वविख्यात-जगदवलम्ब-प्रसिद्धवाचकपञ्चदशभाषाकलितललित-

कलापालापकप्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मापक-वादिमानमर्दक-श्री

शाहू छत्रपतिकोल्हापुरराजप्रदत्त-'जैनशास्त्रचार्य'-पदभूषित-

कोल्हापुरराजगुरु-बालब्रह्मचारिजैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर-

पूज्यश्री-वासीलाल-व्रतिविरचिता श्री चतुर्थङ्गस्य

समवायाङ्गमूत्रस्य भावबोधिनीटीका समाप्ता ॥

॥ शुभ भूयात् ॥

॥ श्रीरस्तु ॥

संक्षेप में प्रतिपादन होने से इसका नाम श्रुत समास ऐसा भी है । श्रुत
समुदायरूप होने से इसका नाम श्रुतस्कंध सा भी है । तथा समग्रजीव
और अजीव आदि पदार्थों को यहां अभिधेयरूप मिलने के कारण इसका
नाम समवाय ऐसा भी है । एक आदि संख्याक्रम से पदार्थों का इसमें
प्रतिपादन हुआ है । इससे इसका नाम संख्या ऐसा भी है । भगवान्
इस समवायाङ्ग को संपूर्णरूप से कहा है । आचाराङ्ग की तरह इस में दो
विभाग नहीं हैं । यह एक ही अध्ययन है । आचाराङ्ग आदि सूत्र के

धथेल હોવાથી તેનું નામ 'શ્રુતસમાસ' પણ છે. શ્રુતસમુદાયરૂપ હોવાથી તેનું નામ
'શ્રુતસ્કંધ' પણ છે. સમગ્ર જીવ અને અજીવ આદિ પદાર્થોના આ અંગમાં
અભિધેયરૂપે સમાવેશ થતો હોવાથી તેનું નામ 'સમવાય' પણ છે. એક, બે આદિ
સંખ્યાક્રમથી તેમાં પદાર્થોનું પ્રતિપાદન થયું છે, તેથી તેનું નામ 'સંખ્યા' પણ છે.
ભગવાને પોતે સંપૂર્ણરીતે આ સમવાયાંગનું કથન કર્યું છે. આચારાંગની જેમ તેમાં
બે વિભાગ નથી, તે એક જ અધ્યયનનું બનેલું છે. આચારાંગ આદિ શાસ્ત્રના

शस्त्रपरिज्ञा आदि की तरह अध्ययन उद्देश आदि का इसमें कोई विभाग नहीं है। “सिद्धि” यहाँ “इति” यह शब्द शास्त्र की समाप्तिका पोषक है। जन्मस्वामी से सुप्रभास्वामी कहते हैं—फि है जन्म ! जैसा यह समवायाङ्ग सूत्र भगवान् से मैंने सुना है वैसा ही मैंने यह तुमसे कहा है। अपनी गरफ से मैंने इस में कुछ भी घटाया बढ़ाया नहीं है ॥सू० २१९॥

समवायाङ्गसूत्र का हिन्दी अनुवाद संपूर्ण हुआ ॥

॥ श्रीरस्तु ॥

शस्त्रपरिज्ञा आदि अध्ययनो नेवां केरुं पक्ष विभागो आ समवायाङ्गमां नधी, ‘सिद्धि’ अही ‘इति’ शब्द शास्त्रनी समाप्तिनो पोषक छ सुप्रभास्वामी जन्मस्वामीने कहे छ छे जन्म ! मे ने प्रभावे आ समवायाङ्गनु भजवान् पासे अवयव कहुं छ मे प्रभावे ज तमने ते कही जगानु छ भारी तरहही तेमां केरुं पक्ष प्रकारनो पधारि। घटाठो कसबामां जाव्यो नधी” ॥सू० २१९॥

—समवायाङ्गसूत्रनो शुभराती अनुवाद समाप्त—

॥ श्रीरस्तु ॥

